टाडमहोदयकृत राजस्थानकी

भूमिका ।

भारतवर्षका इतिहास सर्वांग पूर्ण न पानेसे यूरोपमें बहुत कुछ निराशा हुई है, सबसे प्रथम जिस समय सर विलियम जौन्स साहब संस्कृत साहित्यकी महाखानकी खोजमें लगे थे उस समय बहुतसी आशाएँ की गई थीं कि इस साधनके द्वारा संसारके इतिहासकी बहुत कुछ प्राप्ति होगी, परन्तु वह आशाएँ आज तक भी पूर्ण न हुई, किन्तु उत्साहके स्थानमें उदासीनता और विरसता हो गई, इस बातको लोग स्वयं सिद्ध मानते हैं कि भारतवर्षका जातीय इतिहास नहीं है, और इस बातकी पुष्टिमें हम एक फरासीसी ओरियण्टलिष्टके कथनको यहां दिखाते हैं कि जिसने बडी बुद्धिमानीसे प्रश्न किया है कि हिन्दुओंके पुरातन इतिहासके निमित्त अब्बुलफ़ज़लने कहांसे सामग्री प्राप्त की थी। यथार्थमें मिष्टर विलसनने काश्मीरके राजतरंगिणी नामक इतिहासका अनुवाद करके इस विचारको बहुत कुछ कम कर दिया है, और जिससे यह बात स्पष्ट होती है कि ऐसा न था कि इतिहास लिखनेकी नियमबद्ध परिपाटी भारतवर्षमें न हो, और इस बातके सिद्ध करनेके लिये सन्तोषदायक प्रमाण मिलते हैं कि वर्त्तमान समयकी अपेक्षा किसी समय इतिहासकी पुस्तकें विशेष मिलती थीं यदि विशेष यत्न किया जाय तो और भी ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त हो सकती है, यद्यपि कोलब्रुक, विलकिन्स, विलसन तथा हमारे देशके दूसरे विद्वानोंके परिश्रमने फ्रांस और जर्मनके बहुतसे विद्वानोंके उत्साहसे स्पर्द्धावाले होकर यूरोपवालोंपर भारतवर्षीय विद्याभण्डारके कुछ गुप्त विषयोंको प्रगट कर दिया है, तो भी कोई दृढताके साथ नहीं कह सकता कि भारतवर्षीय ऐतिहासिक ज्ञानके द्वारेतक पहुंचनेके अतिरिक्त हम कुछ और विशेष कर-सके हैं, और इसी निमित्त इस विज्ञानके परिमाण वा गुणके विषयमें हम सिद्ध सम्मति देनेके निमित्त नहीं हैं इस भारतवर्षके भिन्न २ भागोंमें बडे २ पुस्तकालय, यवनोंके नष्ट करनेसे बच गये हैं, वे अबतक विद्यमान हैं, जिस प्रकार कि जैसलमेर और पट्टनके ग्रन्थ भण्डार क्रूरदृष्टिवाले अलाउद्दीन खिलजीके अनुसन्धानसे भी बच रहे, जिसने इन दोनों राज्योंको विजय कर लिया था, और जो इन पुस्तकालयोंके साथ वैसा ही कठोरपनका वर्ताव करता, जैसा कि उमरने सिकन्दरियाके * पुस्तकालयके साथ किया था, और भी दूसरे छोटे छोटे पुस्तकालय मध्यदेश और पश्चिम भारतमें अभी तक ऐसे विद्यमान हैं कि, जिनमें अब भी सहस्रों ग्रन्थ हैं, उनमें

---

* सन् ६४० में इस पुस्तकालयमें लिखी हुई लाखों पुस्तकें खलीफाकी आज्ञासे नष्ट कर दी गई यह पुस्तकें सिकन्दरियाके हम्मामर्में भेजी गई, इनसे छः महीने तक हम्मामका जल गरम होता रहा ।

कितनी एक तो वहांके महाराणाओंकी निजकी सम्पत्ति हैं, और कितने एक ग्रन्थ जैनियोंके हैं। ×

जो हम महमूद गजनवीकी चढाईसे लेकर भारतवर्षके राज्यपरिवर्तन और घटनाओंका विचार करैं तथा उनके अनुयाइयोंमेंसे बहुतोंके धर्मसम्बन्धी पक्षपातपूर्ण कट्टरपनकी ओर ध्यान लगावैं, तो हमें इस देशकी जातीय ऐतिहासिक ग्रंथोंकी न्यूनताका कारण विदित हो जायगा, हम लोग इस व्यर्थ विचारको अपने हृदयमें स्थान न देंगे कि हिन्दूलोग उस बातसे जिसको दूसरे देशवाले आदि समयसे उन्नति देते चले आते हैं परिचित न थे, क्या यह कभी होसकता है कि सद्विद्याओंके पूर्ण रूपसे प्रचारक, कला, शिल्प, कविता, संगीत शास्त्रादिके शिक्षक प्रत्येक जातिके लिये उत्तमोत्तम नियम बनानेवाले सभ्य हिन्दूजन अपनी ऐतिहासिक घटनाओंके अपने राजा महाराजाओंके आचार व्यवहार तथा उनके राजशासनके कार्योंको लिखनेकी रीतिमें कुछ भी न जानते हों, जहां बुद्धिमानोंके ऐसे चिह्न पाये जाते हैं। वहां हम कठिनाईसे यह विश्वास कर सकते हैं कि योग्य पुरुषोंकी घटनाओंके, लिखनेकी परिपाटीका 'जिसको समान कालके ऐतिहासिक लोग लिखनेके योग्य बताते हैं, अभाव रहा हो। हास्तिनापुर, अनाहिलवाडा, इन्द्रप्रस्थ, जैसे नगर चित्तौर और दिल्लीके विजयस्तम्भ गिरनार आबू सोमनाथ जैसेमंदिर, एलिफैण्टा' और इलौराके गुफामंदिर यह सब इसी विषयके प्रमाणरूप होनेसे हम यह कभी नहीं विचार सकते कि इस कारीगरीके समयमें कोई इतिहासका लिखनेवाला नहीं था, इतनेपर भी महाभारतके समयसे आरंभकर सिकन्दरकी चढाई तक तथा इस महान् युद्धसे महमूद गजनवीके समयतकका हिन्दू ऐतिहासिक तत्त्व कुछ भी विदित नहीं हुआ। दिल्लीके पिछले हिन्दू महाराजका वीरतामय इतिहास, जो उनके कवि चंदने लिखा है, उसके देखनेसे हमको यह विदित होता है, कि ऐसे ऐतिहासिक ग्रन्थ महमूद और शहाबुदीनके समय [सन् १००० से ११९३ ई०] के पहले विद्यमान रहे हों और इन यवनेश्वरोंके अत्याचारसे उनका लोप हो गया हो।

× जैनियोंकी हस्तलिखित पुस्तकोंकी कई एक प्रति जो मेरे पास थीं वे पांचसे आठ शताब्दी पीछेकी लिखी थीं वे मुझे जैसलमेरसे मिली थीं, वे मैंने रायल एशियाटिक सोसायटीको दे दीं, यह पट्टन और जैसलमेरके ग्रन्थ बहुत पुराने समयके हैं, इनके अक्षर उनके स्वामियोंके पढनेमें भी नहीं आते, अथवा केवल उनके प्रधान अध्यक्ष वा शिष्यही उन्हें पढ सकते हैं, इनमें तंत्रविद्याकी एक पुस्तक ऐसी पवित्र समझी जाती है, कि जैसलमेरके चिन्तामणि मंदिरमें सदा संकुलमें लटकी रहती है, और या तो बंधन पलटे जानेके समय वा नये प्रधान आचार्यके नियुक्त करनेके समय उतारी जाती है, कहते हैं कि यह ग्रन्थमें सोमादित्यसूरिका बनाया हुआ है, जो पिछले समयका एक यतिपुरुष था, जो यवनोंके सिन्धुनद पार करनेसे पूर्वका पुरुष था, जिसके धर्मका अधिकार सिन्धुनदके पार दूर तक फैला था, उसका करामाती कपडा अभी तक मौजूद है, नये आचार्यके गद्दीपर बैठनेके समय वह काममें लाया जाता है, वे अक्षर गोलशिरवाले पालीलिपिके विदित होते हैं, यदि हम लोग पंडितवर मांस ई वर्नफ साहबको उनके साथी डाक्टरलेसनके सहित उस मंदिरमें भेज सकते तो उस दुर्बोध ग्रन्थका कुछ तात्पर्य्य अवश्य समझमें आसकता, और उनकी आंखोंको किसी प्रकारकी हानि न पहुंचती जैसी कि एक जैन पुरुषने अन्तिम बार उसके आशय समझनेकी पापिष्ठ चेष्टा कर हानि उठाई थी.

अत्यन्त दुःखदायी कठोर यवनोंकी आठ सौ वर्ष पर्य्यन्त अधीनतामें रहनेसे तथा संस्कृतभाषाके मर्म न जाननेवाले असभ्य कट्टर और अत्यन्त क्रुद्ध शत्रुओंसे कई २ बार प्रत्येक राजधानी लूटने और बर्बाद होनेसे यह आशा कभी नहीं की जासकी कि देशके साहित्यको दूसरी उपयोगी वस्तुओंके साथ२ बडी भारी हानि न पहुँची हो, राजस्थानके इतिहासकी अपूर्णताकी समालोचना पर आगे लिखे वचनोंसे कई बार यथार्थ उत्तर दिया गया है कि जब हमारे राजा महाराजा उनकी राजधानी छूटजानेपर एक दुर्गसे दूसरे दुर्गमें खदेडे जाते थे, और यही नहीं विशेषकर उनको पहाडोंकी कन्दराओंमें रहना पडता था, जहां यह शंका रहती थी कि कहीं सामनेकी परोसी थाली भी न छोडनी पडै तब क्या उस समय ऐतिहासिक घटनाओंके लेख बद्ध करनेका विचार किया जाता ?

जो पुरुष हिन्दू जातिसे वैसे ग्रन्थोंकी आकांक्षा करते हैं, जैसे रोम और यूनानकी इतिहास सम्बन्धी पुस्तकें हैं, वे भारत निवासियोंके उन गुणोंकी उपेक्षा करनेमें बडी भूल करते हैं जो गुण उनको दूसरे देशवासियोंसे पृथक करते हैं तथा जो उनके सब विद्या विषयक ग्रन्थोंको पश्चिमीय विद्वानोंके ग्रन्थोंसे अत्यन्त ही विलक्षण बनाते हैं, उनके काव्य, उनके दर्शन शास्त्र, उनके शिल्पशास्त्रसे उनकी स्वतन्त्र रचनाके गुण प्रगट होते हैं, उनके इतिहासमें भी इसी बातके गुण होनेकी आशा कीजासकती है कारण कि उनकी रचना भी ऊपर कहीहुई विद्याओंके समान उनके धर्मसे घना सम्बन्ध रखती है, साथमें यह बात भी याद रखनी चाहिये कि जिस समय तक इंग्लैण्ड और फ्रांसकी साहित्यकी शैली यूरोपके पुरातन साहित्यग्रन्थोंके पठनपाठनसे ठीक नहीं की गई थी, तबतक इन देशोंका इतिहास ही नहीं बरन यूरोपकी सम्पूर्ण श्रेष्ठ जातियोंके इतिहास अभी तक उसी प्रकार अनघड व्यवस्था रहित प्राचीन राजपूतोंके इतिहासके समान शुष्क थे।

यद्यपि नियमबद्ध वास्तविक इतिहासके लेखोंका अभाव है तथापि दूसरे कई एक देशीय ग्रन्थ ऐसे हैं कि यदि वे किसी चतुर दृढ साहसी इतिहास शोधकके हाथमें पडैं तो भारतवर्षके इतिहासके लिये थोडी सामग्री न होंगे, इन ग्रन्थोंमें सबसे प्रथम पुराण और राजाओंके वंशवर्णन हैं, जो धर्म सम्बन्धी कथाओं, रूपकों और असम्भव [चमत्कारी] वृत्तान्तके साथ मिल जानेसे प्रायः गोलमालसे हो गये हैं, तो भी उनमें सत्य बातें ऐसी बहुतायतसे हैं कि जो इतिहासके जाननेवालोंको पथदर्शकका काम देती हैं। ह्यूमसाहबने सेक्सन सात*राज्योंके इतिहासों और इतिहास लिखनेवालोंके संबन्धमें जो वाक्य कहे हैं वे राजपूतोंके सात राज्यों (मेवाड, मारवाड, अम्बेर, बीकानेर, जैसलमेर' कोटा और बूँदी) के विषयमें यथार्थ रूपसे घट सकते हैं आशय यह कि उनमें घटनाओंका तो अत्यन्त अभाव है पर नामोंकी बहुतायत है वे परस्पर इस प्रकारसे

---

* जब रोमन लोग इंग्लैण्डको छोडकर चलेगये तो उनके पीछे ऐंग्लोसेक्शन जातिने उस देशको जीतकर वहां सात राज्य कायम किये जो सन् ४५७ से ८२, तक रहे।

कितनी एक तो वहांके महाराणाओंकी निजकी सम्पत्ति हैं, और कितने एक ग्रन्थ जैनियोंके हैं । ×

जो हम महमूद गजनवीकी चढाईसे लेकर भारतवर्षके राज्यपरिवर्तन और घटनाओंका विचार करें तथा उनके अनुयाइयोंमेंसे बहुतोंके धर्मसम्बन्धी पक्षपातपूर्ण कट्टरपनकी ओर ध्यान लगावें, तो हमें इस देशकी जातीय ऐतिहासिक ग्रंथोंकी न्यूनताका कारण विदित हो जायगा, हम लोग इस व्यर्थ विचारको अपने हृदयमें स्थान न देंगे कि हिन्दूलोग उस बातसे जिसको दूसरे देशवाले आदि समयसे उन्नति देते चले आते हैं परिचित न थे, क्या यह कभी होसकता है कि सद्विद्याओंके पूर्ण रूपसे प्रचारक, कला, शिल्प, कविता, संगीत शास्त्रादिके शिक्षक प्रत्येक जातिके लिये उत्तमोत्तम नियम बनानेवाले सभ्य हिन्दूजन अपनी ऐतिहासिक घटनाओंके अपने राजा महाराजाओंके आचार व्यवहार तथा उनके राजशासनके कार्योंको लिखनेकी रीतिमें कुछ भी न जानते हों, जहां बुद्धिमानीके ऐसे चिह्न पाये जाते हैं । वहां हम कठिनाईसे यह विश्वास कर सकते हैं कि योग्य पुरुषोंकी घटनाओंके, लिखनेकी परिपाटीका 'जिसको समान कालके ऐतिहासिक लोग लिखनेके योग्य बताते हैं, अभाव रहा हो । हास्तिनापुर, अनहिलवाडा, इन्द्रप्रस्थ, जैसे नगर चित्तौर और दिल्लीके विजयस्तम्भ गिरनार आबू सोमनाथ जैसेमंदिर, एलिफैण्टा' और इलौराके गुफामंदिर यह सब इसी विषयके प्रमाणरूप होनेसे हम यह कभी नहीं विचार सकते कि इस कारीगरीके समयमें कोई इतिहासका लिखनेवाला नहीं था, इतनेपर भी महाभारतके समयसे आरंभकर सिकन्दरकी चढाई तक तथा इस महान् युद्धसे महमूद गजनवीके समयतकका हिन्दू ऐतिहासिक तत्त्व कुछ भी विदित नहीं हुआ । दिल्लीके पिछले हिन्दू महाराजका वीरतामय इतिहास, जो उनके कवि चंदने लिखा है, उसके देखनेसे हमको यह विदित होता है, कि ऐसे ऐतिहासिक ग्रन्थ महमूद और शहाबुद्दीनके समय [सन् १००० से ११९३ ई०] के पहले विद्यमान रहे हों और इन यवनेश्वरोंके अत्याचारसे उनका लोप हो गया हो ।

× जैनियोंकी हस्तलिखित पुस्तकोंकी कई एक प्रति जो मेरे पास थीं वे पांचसे आठ शताब्दी पीछेकी लिखी थीं वे मुझे जैसलमेरसे मिली थीं, वे मैंने रायल एशियाटिक सोसायटीको दे दीं, यह पट्टन और जैसलमेरके ग्रन्थ बहुत पुराने समयके हैं, इनके अक्षर उनके स्वामियोंके पढनेमें भी नहीं आते, अथवा केवल उनके प्रधान अध्यक्ष वा शिष्यही उन्हें पढ सकते हैं, इनमें तंत्रविद्याकी एक पुस्तक ऐसी पवित्र समझी जाती है, कि जैसलमेरके चिन्तामणि मंदिरमें सदा संकुलमें लटकी रहती है, और या तो बंधन पलटे जानेके समय वा नये प्रधान आचार्यके नियुक्त करनेके समय उतारी जाती है, कहते हैं कि यह ग्रन्थमें सोमादित्यसूरिका बनाया हुआ है, जो पिछले समयका एक यतिपुरुष था, जो यवनोंके सिन्धुनद पार करनेसे पूर्वका पुरुष था, जिसके धर्मका अधिकार सिन्धुनदके पार दूर तक फैला था, उसका करामाती कपडा अभी तक मौजूद है, नये आचार्यके गद्दीपर बैठनेके समय वह काममें लाया जाता है, वे अक्षर गोलशिरवाले पालीलिपिके विदित होते हैं, यदि हम लोग पंडितवर मांस ई वर्नफ साहबको उनके साथी डाक्टरलेसनके सहित उस मंदिरमें भेज सकते तो उस दुर्बोध ग्रन्थका कुछ तात्पर्य्य अवश्य समझमें आसकता, और उनकी आंखोंको किसी प्रकारकी हानि न पहुंचती जैसी कि एक जैन पुरुषने अन्तिम बार उसके आशय समझनेकी पापिष्ठ चेष्टा कर हानि उठाई थी.

अत्यन्त दुःखदायी कठोर यवनोंकी आठ सौ वर्ष पर्य्यन्त अधीनतामें रहनेसे तथा संस्कृतभाषाके मर्म न जाननेवाले असभ्य कट्टर और अत्यन्त क्रुद्ध शत्रुओंसे कई २ बार प्रत्येक राजधानी लूटने और बर्बाद होनेसे यह आशा कभी नहीं की जासकी कि देशके साहित्यको दूसरी उपयोगी वस्तुओंके साथ२ बडी भारी हानि न पहुँची हो, राजस्थानके इतिहासकी अपूर्णताकी समालोचना पर आगे लिखे वचनोंसे कई बार यथार्थ उत्तर दिया गया है कि जब हमारे राजा महाराजा उनकी राजधानी छूटजानेपर एक दुर्गसे दूसरे दुर्गमें खदेडे जाते थे, और यही नहीं विशेषकर उनको पहाडोंकी कन्दराओंमें रहना पडता था, जहां यह शंका रहती थी कि कहीं सामनेकी परोसी थाली भी न छोडनी पडे तब क्या उस समय ऐतिहासिक घटनाओंके लेख बद्ध करनेका विचार किया जाता ?

जो पुरुष हिन्दू जातिसे वैसे ग्रन्थोंकी आकांक्षा करते हैं, जैसे रोम और यूनानकी इतिहास सम्बन्धी पुस्तकें हैं, वे भारत निवासियोंके उन गुणोंकी उपेक्षा करनेमें बडी भूल करते हैं जो गुण उनको दूसरे देशबासियोंसे प्रृथक करते हैं तथा जो उनके सब विद्या विषयक ग्रन्थोंको पश्चिमीय विद्वानोंके ग्रन्थोंसे अत्यन्त ही विलक्षण बनाते हैं, उनके काव्य, उनके दर्शन शास्त्र, उनके शिल्पशास्त्रसे उनकी स्वतन्त्र रचनाके गुण प्रगट होते हैं, उनके' इतिहासमें भी इसी बातके गुण होनेकी आशा कीजासकती है कारण कि उनकी रचना भी ऊपर कहीहुई विद्याओंके समान उनके धर्मसे घना सम्बन्ध रखती है, साथमें यह बात भी याद रखनी चाहिये कि जिस समय तक इंग्लैण्ड और फ्रांसकी साहित्यकी शैली यूरोपके पुरातन साहित्यग्रन्थोंके पठनपाठनसे ठीक नहीं की गई थी, तबतक इन देशोंका इतिहास ही नहीं बरन यूरोपकी सम्पूर्ण श्रेष्ठ जातियोंके इतिहास अभी तक उसी प्रकार अनघड व्यवस्था रहित प्राचीन राजपूतोंके इतिहासके समान शुष्क थे।

यद्यपि नियमबद्ध वास्तविक इतिहासके लेखोंका अभाव है तथापि दूसरे कई एक देशीय ग्रन्थ ऐसे हैं कि यदि वे किसी चतुर दृढ साहसी इतिहास शोधकके हाथमें पडें तो भारतवर्षके इतिहासके लिये थोडी सामग्री न होंगे, इन ग्रन्थोंमें सबसे प्रथम पुराण और राजाओंके वंशवर्णन हैं, जो धर्म सम्बन्धी कथाओं, रूपकों और असम्भव [चमत्कारी] वृत्तान्तके साथ मिल जानेसे प्रायः गोलमालसे हो गये हैं, तो भी उनमें सत्य बातें ऐसी बहुतायतसे हैं कि जो इतिहासके जाननेवालोंको पथदर्शकका काम देती हैं। ह्यूमसाहबने सेक्सन सात*राज्योंके इतिहासों और इतिहास लिखनेवालोंके संबन्धमें जो वाक्य कहे हैं वे राजपूतोंके सात राज्यों (मेवाड, मारवाड, अम्बेर, बीकानेर, जैसलमेर' कोटा और बूँदी) के विषयमें यथार्थ रूपसे घट सकते हैं आशय यह कि उनमें घटनाओंका तो अत्यन्त अभाव है पर नामोंकी बहुतायत है वे परस्पर इस प्रकारसे

* जब रोमन लोग इंग्लैण्डको छोडकर चलेगये तो उनके पीछे एंग्लोसेक्शन जातिने उस देशको जीतकर वहां सात राज्य कायम किये जो सन् ४५७ से ८२, तक रहे ।

गुथे हुए हैं कि परम चतुर लेखक भी उनको पाठकोंके लिये रुचिकर वा शिक्षाप्रद बनानेमें अवश्य हताश हो जायगा। ईसाई साधू (जैसे राजपूतोंमें ब्राह्मण) जो सांसारिक काय्योंसे पृथक् रहते थे लौकिककाय्योंको पारलौकिक काय्योंसे न्यून समझते थे उनको एक प्रकारकी शीघ्र विश्वासकता, आश्चर्य भरी घटनाओंसे प्रेम और प्रपंच करनेका स्वभाव पड गया था।

भारतवर्षीय युद्ध सम्बन्धी काव्य इतिहासका दूसरा साधन जानना चाहिये भाटलोग मनुष्य जातिके आदि इतिहास रचनेवाले हैं जबतक इन लोगोंका ध्यान कल्पित कथाओंकी ओर न लगा था वा जबतक इतिहास ऐसी श्रेणीके महात्माओंसे उन्नतिको प्राप्त न हुआ था कि जिन्होंने इसे एक साहित्यका पृथक विभाग बनालिया, तब तक भाटगण निःसन्देह सत्यघटनाओंको लिखने और अपने पूर्वजोंकी ख्यातिको अजर अमर करनेमें लगे हुए थे, जावके समकालीन व्यासजीके समयसे कवियोंमें कैलिओपीकी पूजा मेवाडके वर्त्तमान विख्यात लेखक बेनीदासजीके समयतक होती चली आई, कविगण पश्चिम भारतके मुख्य इतिहास लेखक हैं, यद्यपि यह नहीं कह सकते कि उनके सिवाय कोई दूसरा नहीं है और उस प्रसंगमें उनकी कमी भी नहीं है, कसर है तो यह कि वह अपनी एक प्रकारकी मुख्य बोली बोलते हैं, जिसकी समझने योग्य साधुभाषामें अनुवादकी आवश्यकता है, तिसपर भी उनकी लेखनीसे वाग्बाहुल्यता और अस्पष्टताकी पूर्ति बहुतायतसे होती है राजपूत राजाओंकी कठोरताका प्रभाव कवियोंके काव्योंपर नहीं पडता, उनकी वाणीरूपधारा बे रोक टोक चली जाती है। हम व्यासजीको ५००० वर्षसे ऊपर हुए मानते हैं जावके समयके नहीं, सम्पादक छन्द मात्राका नियम उनको अवश्य रोकता है यह बात इतिहास लेखककी स्वतंत्रताके रोकनेके लिये कम नहीं है, इसके प्रतिकूल राजा और काव्यकर्ताके मध्यमें एक प्रकारका स्वार्थ रहता है, जो प्रशंसा करनेसे विशेष धनका भागी होता है, इस बातसे इतिहासकी सत्यतामें कुछ दोष आजाता है, यह सुख्यातिका व्योहार जैसा कि भाटोंके कहनेकी शैली है, राजस्थानके कवियों और इतिहास लेखकोंके मध्यमें बराबर उस समय तक होता रहेगा जबतक पूर्ण शिक्षित और स्वतन्त्र लोगोंकी एक ऐसी श्रेणी समाजमें प्रगट न हों कि जो साहित्य विषयक व्यवसायके निमित्त सर्वसाधारण पुरुषोंमें सम्मानित होनेके सिवाय और किसी प्रकारका पारितोषिक न चाहैं।

इतनेपर भी इतिहासलेखक कभी २ ऐसी सत्य बातें कहनेका साहस कर दिखाते हैं, जो उनके स्वामियोंको बहुत बुरी लगती हैं जब उनका हृदय बहुत दुःखी होता है, वा अनीति देखकर सात्विकताके कारण कविजनोंका क्रोध बढ जाता है,

---

१ ईसाइयोंमें जाव एक प्रसिद्ध ईश्वरभक्त ईसासे बहुत पहले हुआ है।

२ यूनानदेशमें वीररसात्मक काव्यकी अधिष्ठात्री देवीका नाम केलोपिया था, जैसे हमारे यहां विद्याकी अधिष्ठात्री देवी सरस्वती हैं।

तब वे इस बातकी परवाह नहीं करते, कि इस बातका परिणाम क्या होगा जो पुरुष उनको क्रोध दिलाता है, उसकी बुराई होती है, बहुतसे हठी लोगों को उनके निन्दा और उपहासक काव्योंके फटकारनेके लिये उपहासका पात्र बना-दियाहै, यदि वे नायक उनको क्रुद्ध न करते तो उनके नामपर अपयशका धब्बा न लगता, राजपूत गण कवियोंकी विषमयी वाणीको शत्रुओंके शस्त्रसे भी अधिक तीक्ष्ण समझते हैं।

राजपूतोंके दरबारमें सर्वसाधारणके व्यवहार सम्बन्धी बातोंमें कोई भी भेद की बात गुप्त नहीं रहती थी उनमें सरदारोंसे लेकर नगरके द्वारपाल तक स्वार्थ लेते हैं, घटनाओंको लेखबद्ध करनेवाला बडा लाभ उठाता है, जब कि देशकी व्यवस्था उन रहित दशाके समय बडे गम्भीर विषयोंका गुप्त रखना आवश्यक प्रतीत हुआ, और उदयपुरके राणासे किसीने कहा कि इन विषयोंको गुप्त रक्खाजाय, तो उन्होंने यह उत्तर दिया कि यह चौमुखी [चार मुखवाली शंकरकी मूर्ति] का राज्य है, भगवान एकलिंगजी इसके स्वामी हैं, मैं उनका प्रतिनिधि हूं मेरा विश्वास उन्हींमें है, अपनी पुत्ररूप प्रजासे कोई बात नहीं छिपाना चाहता सर्वप्रकारकी सर्वसाधारण ऐक्यता होने-पर भी इस प्रकारके गुप्त रहस्योंका प्रगट होना देशके वैरियोंसे सामना करनेमें न्यूनता होनेका एक बडा कारण समझा जाता है, परन्तु शासनमें इससे एक प्रकारका पिता पुत्र सम्बन्ध हो जाता है, प्रजाजनोंके हृदयमें यदि पूर्ण राजभक्ति और देशभ-क्तिका भाव प्रगट न हो तो भी वह भाव कुछ न कुछ हृदयमें अंकित हो ही जाता है।

इन कवियोंके लिखे इतिहासोंमें एक बडी भारी न्यूनता यह है कि प्रायः उनमें उनके योधाओंकी वीरता और युद्धक्षेत्रके वृत्तान्त होते हैं वीरजातिके चित्त रंजनके निमित्त काव्यकर्ता उनमें राजव्यवस्थाके व्यवहार कलाकौशल शांतिमय जीवनचरित्रके विष-यमें कुछ भी नहीं लिखते, उनके प्रिय विषय प्रेम और युद्ध ही हैं भारतके प्रसिद्ध अन्तिम चन्दकविने अपने ग्रन्थकी भूमिकामें लिखा है कि मैं राजस्थानके नियम व्याक-रणका उपयोग विदेशी देशी राजदूतोंके व्यवहारसम्बन्धी बातें इस ग्रन्थमें लिखूंगा इस प्रकारसे उस कविने कहकर अपने संकल्पको उस ग्रन्थमें बहुतसे स्थलोंमें उपाख्यानोंके मिषसे उक्त विषयोंकी व्याख्या देकर पूर्ण किया है।

इसके सिवाय भट्टकवि राज्यव्यवस्थाकी प्रत्येक कार्यवाहीके गुप्त रहस्योंसे परि-चित होनेपर भी आपसके झगडे बखेडे और दरबारकी छोटी २ निन्दित बातोंमें अधिक लिप्त रहनेके कारण राजकार्य विषयक यथार्थ सम्मति प्रगट करनेके उपयुक्त पात्र नहीं रहते।

यह सब अवगुण रहनेपर भी इन देशी भट्टकवियोंके काव्योंसे बहुत सी काम-की उपयोगी बातें प्रगट होती हैं, यथार्थ घटनायें धर्मसंम्बन्धी विचार व्यवहार प्रणाली जिनमें अनेकों उपयोगी बातें लिखी होनेके कारण ऐसी हैं कि उनके ऐतिहा-

सिक प्रमाण होनेमें बहुत ही कम सन्देह है, चन्दकविने पृथ्वीराजरायसेमें बहुतसी ऐतिहासिक और भूगोलसम्बन्धी बातोंका वर्णन अपने महाराजकी लडाईके वृत्तान्तमें दिया है; कि जिन युद्धोंको उसने स्वयम् अपने नेत्रोंसे देखा था, कारण यह कि वह महाराज पृथ्वीराजका मित्र राजदूत न था, एलची था और अन्त में बहुत ही शोकसे पूर्ण कार्य उसने यह किया कि अपने महाराजकी अप्रतिष्ठा न होनेके निमित्त उनकी मृत्युमें भी सहायक हुआ मेवाडके बेड महाराणा अमरसिंहने जो शूर वीर साहित्यके सहायक तथा नीतिके जाननेवाले थे, चन्दकविके निर्माण किये हुए कविता-बद्ध इतिहासों को संग्रह किया था ।

दूसरे प्रकारके ऐतिहासिक लेख मन्दिरोंके दान भेंट तथा उनके गिरने टूटने और पुनरुद्धारके विषयमें पाये जाते हैं, ब्राह्मण लोग जो कुछ लिख रखते हैं, उनमें प्रसंग वश इतिहास और वंशावलियोंका वर्णन भी मिलता है, धर्मस्थानोंके महात्म्य तथा धर्मक्रिया शास्त्रोंके विधान तथा स्थानसम्बन्धी रीतियोंके साथ धर्मसे सम्बन्ध न रखनेवाली घटनायें मिली हुई हैं, जैनियोंके शास्त्रार्थोंसे भी बहुतसी इतिहास सम्बन्धी बातें प्राप्त होती हैं, जो विशेष कर गुजरात और नैहरवालोंके सम्बन्धमें चालुक्यवंशके समयकी हैं, यदि ध्यानसे जैनधर्मकी पुस्तकोंको बांचा जाय कि जिनमें उन सब विद्यासम्बन्धी बातोंका वर्णन है जिनको प्राचीन समयके जैन जानते थे, तो हिन्दू जातिके इतिहासकी बहुत सी त्रुटि पूर्ण हो सकती है, परस्पर विद्वेषी भारतके मताव" लम्बी जैनोंका पक्षपात अवश्य ही इतिहासकी शुद्धताका द्वेषी था, जिस बातके आधार पर ब्राह्मणोंने अन्य जातियोंपर अपनी प्रधानता स्थापन की वह देशवासियोंका अज्ञान ही था और यह बात जानी जाती है, कि भारतखण्डमें तथा इसी भाँति मिस्रमें भी पुराने समयमें धर्माचार्य और राजाओंके मध्यमें एक प्रकार का एका था और वह इस लिये कि वे मिलकर देशके सर्व साधारण जनोंको अज्ञानरूपी अन्धकार में आच्छादित कर अपने आधीन बनाये रक्खें ।

इस प्रकारके ऐतिहासिक और भौगोलिक वृत्तान्तसम्बन्धी पुस्तकें जिनका उपस्थित होना मुझे विदित है, राजाओंके छन्दोबद्धचरित्र, ऐसे पुराण; संबंधी लेख, जन श्रुतिके दोहे × तथा सत्यतासे भरे प्रमाण शिलालेख सिक्के ताम्रपत्र अधिकारकी सनदें जिनमें राजसम्बन्धी बहुत सी मुख्य बातें लिखी रहती हैं इतिहास लिखनेवालेके लिये यह कुछ कम सामग्री नहीं है इसके सिवाय उस समयके दूसरे वृत्तान्तोंसे भी सहायता मिल सकती है जो पुरातन समयके मूर्ति आराधक और पश्चात्के मुसलमान लेखकोंकी पुस्तकोंसे पुष्टिको प्राप्त किये जा सकते हैं, मेरा जबसे इस रमणीय देशके साथ राजकीय सम्बन्ध हुआ, तभीसे इसके पुरातन ऐतिहासिक लेखोंकी खोजमें लगा और वह इस

× इनमें कई एकमें उन बादशाहोंके नाम लिखे हैं जिन्होंने महमूद गजनवी और शहाबुद्दीनके मध्यमें भारतपर चढाई की फरिस्ता इतिहासमें इनके नाम नहीं दिये इनके द्वारा हमें अजमेरकी चढाई और बयानाराजधानीकी विजयका पता लगा ।

निमित्त कि जिसका वृत्तान्त यूरोपके लोगोंको अबतक कुछ भी विदित नहीं है उस जातिके विषयमें कुछ ज्ञान प्राप्त हो, और जिसमें दोनों ओरके पक्षवालोंको लाभ पहुँचे इस प्रकार मुझको इंगलिस्तानके साथ राजकीय सम्बन्ध बढाना उचित जान पडा। यदि इस विषयको उन्हें मैं स्पष्टतासे बताने लगूँ तो पाठकोंको यह बात निरस प्रतीत होगी, कि मैंने राजपूतोंके छिन्न भिन्न इतिहासको किस प्रकार इकट्ठा करके उनके आगे धरा है पुराणमें दीहुई पवित्र वंशावलीसे मैंने अपना कार्य आरंभ किया है, महाभारत चन्दकविकी कृति, जैसलमेर मारवाड मेवाडके बडे बडे ऐतिहासिक काव्य * खीची कोटा, बूँदी तथा हाडावंशीय राजाओंके इतिहासोंको अवलोकन किया, जो उनके प्रतिष्ठित भाटों के लिखे हुए हैं।

इस समयके हिन्दूराजाओंमें सबसे अधिक विद्योन्नतिकी इच्छा करनेवाले आमेर वा जयपुरके राजा जयसिंहने अपनी जातिका इतिहास निर्माण करनेके लिये बहुत सी सामग्री इकट्ठी की थी, उसमेंका कुछ भाग मेरे भी हाथ लगा, मुझे इस बातका विश्वास होता है कि वहां पर और भी बहुत सी सामग्री विद्यमान थी. जो उनके क्रमानुयायी विषयवासनामें तत्पर स्वर्गवासी महाराजने एक वेश्याको अपना राज्य विभागकरनेके समय राज्य पुस्तकालयके बटवारेमें कदाचित् देदी हो, राजस्थानभरमें यह पुस्तकालय सबसे उत्तम संग्रहका था। तैमूरवंशके कितने एक बादशाहोंके समान जयसिंह भी अपना रोजनामचा लिखते थे, जिसका नाम उन्होंने कल्पद्रुम × रक्खा था, इसमें वे प्रत्येक घटना लिखते थे, ऐसे समयके ऐसे पुरुषका लिखाहुआ ग्रंथ मिलना इतिहासके लिये बहुमूल्य सामग्री है। महाराजा दतियासे मैंने उनके उस पुरुषाकी दिनचर्याकी पुस्तक प्राप्त की थी, जिन्होंने औरंगजेबकी फौजके बडे २ सहायकारी राजाओंके बीचमें बडी प्रतिष्ठाका काम किया था, और स्काटने जिसमेंसे अपने दक्षिणी इतिहासमें बहुतसा लेख उद्धृत किया था। एक जैनीपंडितकी सहायतासे दश वर्ष तक मैं प्रत्येक ग्रन्थका सार निकालनेमें लगा रहा; राजपूतइतिहासकी जिनमें कोई भी बात या घटना मिल सकती थी, उनके व्यवहार वा चालचलनका जिसमें कुछ भी पता लग सकता था, मेरा जैनी सहायक इस

---

* मारवाडके इतिहाससम्बन्धी काव्योंमें सूर्यप्रकाश, विजयविलास तथा अख्यायिकाओंके सिवाय दूसरे राजाओंके चरित्रोंका भी कुछ अंश था, मेवाडके इतिहासविषयक खुमानरायसा एक नया ग्रन्थ है, जो पुरानी सामग्रियोंसे निर्मित है, जिस समय महमूदने चित्तौरपर चढाई की थी उस समयसे इसमें वर्णन दिया है, जो इस्लामधर्म्मावलम्बी सिन्धनि वासी किसी कासिमका पुत्र था, इसके सिवाय दूसरे जयविलास राजप्रकाश तथा जगतविलास काव्य हैं ये अपने नामसे प्रसिद्ध उन उन राजाओंके समयमें निर्मित हुए हैं, परन्तु इनमें पुराने ऐतिहासिक वृत्तान्त बहुत संक्षेपसे हैं, इसके सिवाय जयपुरके राजवंशका इतिहास दफ्तरोंसे मिला, और मानचरित्रमें राजा मानका इतिहास है।

× जयसिंहकल्पद्रुमग्रन्थ वेंकटेश्वरप्रेसमें छपा है, यह रत्नाकरपंडितका बनाया है, इसमें वर्षभरके व्रतोंको वर्णन है दिनचर्याका ग्रन्थ कोई दूसरा होगा।

प्रकारके सब ग्रन्थोंका सार निकाल निकालकर संस्कृतसे निकली हुई इन जातियोंकी सीधी बोलीमें अनुवाद करता जाता था । बहुत दिनोंतक साथ रहनेसे जिसे मैं सुगमतापूर्वक समझ सकता था प्रतिदिन घंटोंतक परिश्रम करके तथा बहुत कुछ भी व्यय करके केवल उनके इतिहास ही प्राप्तकरनेका यत्न नहीं किया, किन्तु उनके धर्म सम्बन्धी साधारण विचार, उनके स्वाभाविक व्यवहारके ज्ञांता उनके सरदार और कवियोंके संग रहकर उनकी आख्यायिका और रूप भरी कविताओंको ध्यानसे सुनकर उसका सार निकाला, ज्यों ज्यों मैं विशेष शोध करता जाता था त्यों त्यों मुझे इस बिषयमें अधिक ज्ञान प्राप्त होता जाता था; परन्तु जब मैं बहुधा रोगग्रस्त रहने लगा, तब इस सुखदायक और परिश्रमी कार्यके छोडने तथा जन्मभूमि लौट जानेके निमित्त बाध्य हुआ, जब कि मैं हिन्दू जनोंकी पूजनीया मिनर्वा[1] देवीकी ड्योढीमें जानेकी आज्ञा प्राप्त कर चुका था, ठीक उन्हीं दिनोंमें मुझे देश जाना पडा तथापि वहांसे थोडी सी प्राचीन पुस्तकें मैंने अपने साथ लीं, जिनकी जाँचका काम अब मैंने दूसरोंपर छोडा, जो मैं संस्कृत और भाषा लिखे ग्रन्थोंका बडा संग्रह इंग्लेण्डको लाया था, वह मैंने रायल ऐशियाटिक सोसाइटीको देदिया, जहां कि वह पुस्तकालयमें धरा हुआ है, अभीतक भी उसमेंसे बहुत सी जांच नहीं हुई, सम्भव है कि जांच करने पर उसमें बहुत सी इतिहास सम्बन्धी नई बातें निकलैं । मुझे केवल इतने ही यशका पात्र बनना है, कि मैंने यूरोपदेशके निवासियोंको उनसे परिचित कर दिया मुझे आशा है कि इससे दूसरे लोगोंको भी इसी प्रकारके यत्न करनेका उत्साह बढैगा ।

अबतक जो यूरोप निवासियोंको इन लोगोंका थोडा सा ठीक २ वृत्तान्त ज्ञात हुआ है उस ज्ञानसे यूरोप निवासियोंको अन्यराज्योंकी अपेक्षा इस विभागके महत्त्वका कुछ मिथ्या भ्रम हो गया है, यदि यह मानाजाय कि कविजनोंने उसके वर्णनमें अतिशयोक्ति की है तो भी इसमें कुछ सन्देह नहीं कि राजपूत राज्योंका वैभव इस देशके पुरातन इतिहासके समयमें निश्चय ही बढा चढा होगा, प्राचीन समयमें उत्तरीभारत बहुत ही धनी था, इसका सिंधु नदीके दोनों किनारेवाला भाग दारा[2]की सबसे अधिक ऐश्वर्यशालिनी सूबेदारी थी इसकी विचित्र घटनायें इतिहासके लिये बहुतसी सामग्री प्रस्तुत करती हैं, राजस्थानमें ऐसा कोई छोटा राज्य भी नहीं है, जिसमें धर्मापिली[3]के समान रणभूमि न हो और न कोई ऐसा नगर है कि जहांपर लियो निडास[4]

---

१ मिनवारोमन लोगोंकी पुरातन कलाकौशलकी अधिष्ठात्री देवी है, जैसे हमारे यहां सरस्वती, ड्योढीका अर्थ पुस्तकालय है ।

२ ईरानका बादशाह दारा ईसासे ५२१वर्ष पहले गद्दीपर बैठा था यह ईसासे ५००वर्ष पूर्व भारतमें आया और सिंधुका देश अपने आधीन किया यह ईसासे ४८५ वर्ष पहले मरा ।

३ यह उत्तर और पश्चिम यूनानके बीचकी एक तंग घाटी है ।

४ ईसासे४८०वर्ष पहले ईरानके बादशाहने यूनानपर चढाईकी उस समय वहांके छोटे२ राजाओंने मिलकर वीर राजा लियो निडासको थर्मापिलोकी घाटीमें ८००० सेनाके सहित ईरानियोंसे लडने भेजा था, अन्तमें सेनाकी विश्वासघातकतासे ईरानियोंसे उसकी सब सेना मारी गई ।

जैसा वीरपुरुष जन्मा हो, परन्तु उन घटनाओंको समयके परदेने जिन्हें इतिहास लिखनेवालेकी विचित्र लेखनी अत्यन्त बडाईका पात्र बनाती लुप्त कर दिया, डेलफसंसे सोमनाथकी तुलना की जाती, भारतकी लूटका माल लीवियनं महाराजकी समृद्धिके समान ठहरता, और यदि पाण्डवोंकी सेनाका समूह जर्कसीजकी सेनासे मिलाया जाता तो उसकी सेनासमुदाय उसके सामने कुछ भी नहीं जँचती, परन्तु हिन्दुओंके यहां या तो हरोडोटसे और जेनोफेनके समान इतिहास लिखनेवाले हुए ही नहीं और हुए हों तो अभाग्यवश उनके ग्रंथ लुप्त हो गये।

यदि इतिहासके प्रभावसे लोगोंके चित्तमें सहानुभूति प्रगट हो तो इन देशोंका इतिहास लोगोंके मनको खैंचनेके लिये अत्यन्त ही मनोहर होता, कई पीढियोंतक स्वाधीनता रक्षाके लिये एक वीरजातिका लडाई झगडे करते रहना अपने पिता पितामहकी धर्मरक्षाके निमित्त अपनी प्रियवस्तुकी भी हानि सहना, और प्राणपणसे भी शूरतापूर्वक अपने स्वत्त्व और जातीयस्वतन्त्रताको बचानेके निमित्त किसी प्रकारके भी लालचमें न आना, यह सब मिलकर एक ऐसा चित्र खैंचते हैं कि जिसका विचार करनेसे हमारे रोंएं खडे होजाते हैं, जिन स्थानोंमें यह घटनायें हुई थीं यदि मैं उस उत्साहयुक्त आनंदका एक अंश भी अपने पाठकोंके हृदयमें प्राप्त करसकूं तो उस अपनी उदासीनतापर विजय प्राप्तकरनेमें उत्साहरहित न हूंगा, जिसके निमित्त हमारे देशवासी भारतसम्बन्धी अधिक ज्ञान प्राप्त करनेका कुछ भी उद्योग नहीं करते हैं इस बातकी मुझे शंका नहीं है कि जो नाम हिन्दुओंके निमित्त प्यारे सार्थक तथा हितकारी हैं हमारे यूरोपनिवासी उन नामोंको सुनकर कर्णकटु और निरर्थक समझकर उकतावेंगे, कारण कि यह बात सदा याद रखने योग्य है कि पूर्व देशके सभी नाम किसीन किसी शारीरिक वा मानसिक गुणके बोधक होते हैं, पुराने नगरों के खंडहरोंमें बैठकर मैंने उनके टूटे फूटे विषयकी कहावतोंको ध्यान देकर सुना है अथवा उनकी वीरताकी चरचा उनके सन्तानोंके मुखसे उन स्मारक चिह्नोंके समीप स्थित होकर जो उनके स्मरणके निमित्त बनाये गये हैं श्रवणकी है जिस समय मरहठे इस देशको नष्ट कर रहे थे उनके साथ रह कर मैंने बहुतसे स्थानोंमें निवास और भ्रमण किया है, जहांपर कोई

---

१ यूनानदेशके एलफीनगरका प्रसिद्ध सूर्यमंदिर है ।

२ यह बादशाह अपनी समृद्धिके लिये प्रसिद्ध था, लीविया एशिया माइनरका एक प्रसिद्ध भाग है, यह सम्राट ईसवी ५४६ और ५६० के मध्य में राज्य करता था।

३ यह ईरानके बादशाहका पहला बेटा था; यह ईसासे ४६५ वर्ष पहले हुआ इसने जल स्थल सम्बन्धी २६४१४६० सेना लेकर ईरानियोंको जीता था ।

४ यह यूनानका विख्यात इतिहास लिखनेवाला हुआ है, ईसासे ४८४ वर्ष पहले इसका जन्म हुआ था, इसका लिखा इतिहास बडा प्रमाणिक है ।

५ यह विद्वान इतिहासलेखक सुक्रातका मित्र और शिष्य था, इसका जन्म ईसासे ४४४ वर्ष पहलेईरानकी राजधानी ऐथेन्समें हुआ था।

परस्परकी लडाई वा युद्ध हुआ है, अथवा विदेशके वैरियोंने आकर आक्रमण किया है, इस प्रयोजनसे कि युद्धमें मृतक हुए प्राणियोंके गँवारपनके स्मारक चिह्नों परसे उनके नाम तथा स्मारकका कुल अंश पाठ करूं, उनके इतिहास और चालचलनकी अनेक बातें उनकी कहानियां और लेख बताते हैं, किसी मंदिर वा किसी विजयस्तम्भके बनने अथवा उसके जीर्णोद्धार विषयक कविता भी बीतेहुए समयके विषयमें हमारे ज्ञानकी कुछ वृद्धि करनेको समर्थ हो सकती है, इस समय जो मध्य और पश्चिम ओरके भारत-का शासन करते हैं, उन राजकुलोंकी प्राचीनताके विषयमें हमें केवल दो खान्दान ऐसे मिले हैं, कि जिनकी उत्पत्ति इतिहास सम्बन्धी सम्भावन की सीमाके बहिर्भूत है, और शेषराज्योंकी वर्तमान स्थापना, तथा यवनोंकी युद्धसम्बन्धी उन्नतिके संगसंग होनेसे उनके इतिहासोंकी पुष्टि उनके विजेता यवनोंके इतिहासोंसे होती है, जैसलमेर मरु-स्थल और मेवाडके कितने एक छोटे२ राज्योंके सिवाय, वर्त्तमान समयके सभी राजवंश यथार्थमें यवनोंकी चढाइयोंके पश्चात् वर्तमान स्थानोंपर स्थित हैं। पँमार और सोलंकी-के समान दूसरे बडे बडे राजा जो धार और अनहलवाडामें राज्य करते थे कई सौ वर्ष बीते कि वे लुप्त हो गये।

मेरा सिद्धान्त यही रहा है कि भारतीय और पुराने यूरोपीय वीरजाति एक ही वंशवृक्षकी पृथक् पृथक् शाखायें हैं, और इसी भावके प्रमाणित करनेका मैंने उद्योग किया है, जैसा कि पहले समयमें यूरोपमें रिवाज था, और जिसके बचे खुचे चिह्न अबतक हमारी जातिके शासनकी रीतिमें पायेजाते हैं, मैंने भारतमें उस प्रकारकी जागीर-दारीकी रीति होनेके प्रमाणमें बहुत कुछ लिखा है, इस बातको मैं मानता हूं कि इस प्रकारके अनुमानकी सत्यतामें सन्देह हो सकता है, तथा लोग इसका उपहास भी कर सकते हैं, पर मैंने अपने जान जो कुछ प्रमाण देकर लिखा है इसमें किसी प्रकार-की हठधर्मी वा पक्षपात नहीं किया है, अब लोगोंमें ऐसी बुद्धि आ गई है कि इस प्रकारके ग्रंथकारके लेखोंसे कोई विचालित नहीं हो सकता, जो केवल अनुमानके भरोसे अपनी बातको प्रमाणित रखना चाहते हैं तो भी ऐसा समझमें आता है कि समयके संग संग बहुतसे असत्य विचार प्रगट होनेसे हम उलटे भ्रममें पडजाते हैं, और पूर्व पश्चिम देशवासियोंकी उत्पत्ति एक ही वंशसे होनेमें शंका करने लगते हैं, इतनेपर भी मैं अपने प्रमाणोंको निष्पक्षतापूर्वक सर्वसाधारणके सामने धरताहूं, दोनों जातियोंकी जो समानता मैंने प्रमाणित कीहै, यद्यपि उसमें विवाद हो सकता है तो भी विचारके साथ पढनेसे पाठकोंका श्रम निष्फल न होगा, किन्तु उनकी इच्छा इस विषयमें विशेष शोधकी होगी मुझे आशा है कि बुद्धिमान मेरी इस खोजकी सराहना करेंगे; जो मैंने इस विषयकी भूलीहुई कथाओं तथा अपूर्णलेखोंकी टिमटिमाती हुई ज्योतिके सहारेसे बडे अँधेरेवाले पुराने सोतेमें प्रवेश करके इस बातको प्रकाशमें लानेके निमित यत्न किया है।

मुझे विदित है कि इस ग्रन्थकी बहुत सी ऐसी बातें हैं, जो सर्वसाधारणको क्षमा करनी होगी, और उन त्रुटियोंके क्षमा करनेके लिये मुझे केवल यही कहकर सन्तोष दिलाना होगा कि मेरा स्वास्थ्य बिगड गया था। और उसके अन्यायसे संग्रहवाले ग्रन्थको अपूर्ण स्थितिमें प्रगट करना मेरे लिये कठिन ही नहीं किन्तु दुःसाध्य हो गया था, यहां यह कहना भी अनुचित न होगा कि मैंने इस विषयको इतिहासकी कठिनाई भरी लेख शैलीसे गठित करना नहीं चाहा था, जिससे कि राजनीतिक जाननेवाले और जिज्ञासु विद्यार्थियोंकी लाभदायक बहुतसी बातें इसमें छूट जातीं, मैं इस ग्रन्थको ऐतिहासिक सामग्रीके एक बृहत संग्रहके समान आगेके लिये इतिहास लिखनेवालोंकी सहायतार्थ उपस्थित करता हूं; इस विषयमें मुझे इस बातकी चिन्ता नहीं कि इस पुस्तकको मैंने बढा दिया, पर चिन्ता यही है कि इसमें सर्वसाधारणकी लाभदायक बातें कहीं छूट न जाँय।

अब मैं बहुत न बढाकर इस भूमिको अपने मित्र तथा सम्बन्धी मेजर बागके निमित्त धन्यवाद दिये विना समाप्त नहीं कर सकता कि जिन्होंने बडी बुद्धिमानीके साथ कारीगरीके उन चित्रोंको तैयार करके कि जिनका सम्बन्ध इस पुस्तकसे है जगत्को कृतज्ञताका परिचय दिया है।

राजस्थानके हिन्दी अनुवादकी

भूमिका ।

आज हम अपने देशवासियोंके सम्मुख एक ऐसी वस्तु लेकर उपस्थित होते हैं जिसका घनिष्ठ सम्बन्ध हमारे देशकी उन्नति और अवनतिसे है, भारतवर्ष संसारमें आदर्शरूप है, इसका सौभाग्य और दुर्भाग्य अलौकिक ही है, यहांका धर्म्मभाव अलौकिक है; जब कि पाश्चात्य शिक्षाका प्रभाव हमारी सब ही वस्तुओंपर हुआ. और इस समयके विद्वान उसी शैलीको अपनी उन्नतिका मार्ग मानते हैं इस विषयमें यदि विशेष विचार कियाजाय तो यथावत् इतिहास शिक्षाकी बहुत आवश्यकता है, सम्पूर्ण बुद्धिमानोंका इस विषयमें एक मत है कि इतिहासकी शिक्षापर ही देशकी उन्नति और अवनति निर्भर है, यदि समयानुसार अच्छे और सच्चे इतिहास देशवासियोंको पढने और सुननेको मिलैं तो उनका प्रभाव देशपर अच्छा और सच्चा होता है; पक्षपातसे भरे और व्यंग भाषामें लिखे इतिहास अपना यथार्थ प्रभाव दिखानेके बदले जनसमाजमें एक प्रकारका उलटा असर करते हैं, किसी भाषाका भण्डार यथावत् पूर्ण उस समय ही समझा जाता है जब कि उस भाषाके बोलनेवाले मनुष्य समाजके लिये जितनी आवश्यक सामग्री हैं सब ही उसमें विद्यमान हों, हमारे इस इतने लम्बे चौडे देशकी सार्वजनिक भाषा हिन्दी ही है दूरदेशमें जाकर चाहैं जो कुछ शब्दभेद वा अक्षर भेद उसमें उपस्थित होजायं परन्तु न्यूनाधिक सब ही प्रान्तिक भाषायें अंग प्रत्यंग रूपमें हिन्दी भाषाके भेद हैं । इस समय यदि दृष्टि पसारकर देखा जाय तो इस देशके लिये हितकारी हिन्दीभाषामें कोई ऐसा इतिहास नहीं है जो इस देशके निवासियोंको शिक्षाका देनेवाला हो ।

प्रचलित इतिहास विशेषकर अंग्रेजलेखकों द्वारा लिखित और प्रकाशित हैं, आवश्यकतानुसार उन्हींके अनुवाद भाषामें हुए हैं, कुछ भाग मुसलमानों द्वारा प्रकाशित भी विद्यमान हैं, जिनमें कोई २ तो फारसीमें लिखित बहुत पुराने इतिहासवेत्ताओंके परिश्रमका फल है, हिन्दीभाषामें तो इतिहास और इतिहास लिखनेवाले दोनोंहीकी संख्या इनीगिनी है, अनेक कारण तथा समयानुसार आवश्यकताके ध्यानसे यह सब ही इतिहास किसी न किसी अंशमें अपूर्ण और उपयोगी हैं ।

अंग्रेजोंके लिखे हुए अनेक इतिहासोंके देखनेका अवसर प्राप्त हुआ है, उनमें जहां तहां भेद पाया जाता है, एक लेखक पोरसकी कथा एक रीतिपर लिखता है तो दूसरा दूसरी रीतिपर लिखता है; एक सिकन्दरके पंजाबसे आगे न बढनेका कारण उसकी सेनाका आज्ञा भंग करना बताता है तो दूसरा बरसातके आजानेको ही प्रधान

कारण मानता है इसी भांति अनेक स्थलोंमें विदेशीयोंद्वारा लिखित इतिहास संभ्रमसे पूर्ण और अग्राह्य हैं विदेशी लेखक हमारे देशके आचार व्यवहार धर्म कर्म रहन सहन किसीसे भी पूर्ण रूपसे परिचित नहीं हैं, इस बातको अनेक विद्वान् अंग्रेजोंने भी स्वीकार किया है, ऐसी अवस्थामें उन विदेशी लेखकोंकी आलोचना हमारे पुरातन धर्माचारपर कैसे ग्राह्य हो सकती है प्रचलित इतिहासोंमें अधिकांश बात अनुमानसे लिखी गई हैं, किसी विषयका छायामात्र ज्ञान हुआ कि उसपर एक बडी आलोचना युक्त पुस्तक बना डाली एक ऐसा स्थान जिसमें कभी प्रवेश करनेतकका अवसर नहीं मिला जिसके विषयका इतना ज्ञान भी नहीं कि किस जातिका किस धर्मका कैसा आदमी इसका मालिक था, किस समय कैसे उसके अधिकारमें वह घर आया; और कबतक किस स्वभाववाले कितने स्वजनोंने उसमें निवास किया है, उस मकानके सहस्रों वर्षके पडे खण्डहर (कि जिसमें केवल एक दो । दीवारके सिवाय मट्टी ही मट्टी पडी है) के पास खडे होकर आप कैसे कह सकते हैं कि इसमें इस ओर रसोईका मकान था; इस ओर बैठनेका कमरा था दुतल्ले पर घरके स्वामीकी स्त्री बैठती थी, बाहर उसके पशु बाँधे जाते थे इत्यादि यदि दैववश उसमें कहीं कोयले पडे मिल गये तो बस अनुसंधान करनेवालोंको मस्तक लडानेकी एक अच्छी समस्या मिल गई, एक कहैगा कि निश्चय है कि यह कोयलेवाला भाग इस मकानके रसोई बनानेका स्थान है, दूसरा कहता है नहीं यह मकान जलकर नष्ट हुआ है कोयलोंकी आधिकाई इसको स्पष्ट कर रही है यदि तीसरे तत्त्ववेत्ताने अपना मस्तक लडाया तो वह सिद्ध करता है कि यह पूर्व समयकी लोहेके शोधनेकी भट्टी थी जब हम विचारके साथ पूछें कि इनमें किसकी बात सत्य है तो आप किसके बचनको ग्राह्य कह सकते हैं परोक्षकी बात है कोई इस समयका मनुष्यजीवित नहीं किसी पुस्तकमें उसका विवरण नहीं अनुमान भी तीन पृथक्२ स्वरूपमें हैं ऐसे अवसरपर विचारशील यही सिद्धान्त करेंगे कि उस खण्डहरके आस पासके ग्रामोंमें जो जनश्रुति उसके सम्बंधमें चली आती है उनको ध्यान पूर्वक सुनें उस देशका रहन सहन जो प्राचीन कालमें था उसको मनन करें फिर अनुमानसे निर्द्धारित फलोंको विचारें ऐसी अवस्थामें यदि उनको पूर्वकालका ज्ञान यथार्थ न होगा तो भी यथार्थके इतने निकट पहुँच जॉयगे कि वह सिद्धांत सर्व ग्राह्य होगा ।

यदि इसी प्रथापर हमारे देशके इतिहास तत्त्व प्रगट करनेवाले विद्वान् अपने २ अनुमानके संग इस देशकी पिछली रीति नीति शासन प्रणाली रहन सहनका ध्यान करते हुए अपने यहांके इतिहासोंको लिखते तो आज हमको यह आपत्ति न करनी पडती, सब कुछ विद्यमान रहते भी भारतवर्ष इतिहास हीन नहीं कहा जा सकता ।

यह कहना ही पडता है कि प्रचलित इतिहासोंके प्रकाशक गण पक्षपात और गौण-युक्तिको इतिहास लिखते समय हृदयसे पृथक् नहीं कर सके हैं, धर्म एक ऐसी वस्तु

है जो मनुष्यकी बोलचाल खानपान पहनाव सबमें स्वयं मिश्रित रहता है, किसी धर्म वा किसी जातिका लेखक अपनी लेखनीसे विपक्षियोंकी प्रशंसा नहीं करते तो कठोर आलोचना भी नहीं करते, वे अपने सद्गुणका यही परिचय देसकते हैं, परंतु जिन विद्वानोंने भारतके हित अनहित पर कुछ ध्यान न देकर केवल एक दूसरेके आधारपर वा छायामात्रपर स्वतन्त्र लेख लिख डाले हैं, वह लेख कैसे इस दशाका विवरण देनेवाले इतिहास कहे जासकते हैं, तिसपर भी अनेक इतिहास तो मिश्नरी गणोंके निर्मित हैं ये तो विशेषकर इसी अभिप्रायसे निर्माण किये गये हैं कि हिंदू-जातिके अबोध बालक उन्हींसे ज्ञान प्राप्त करके अपने पितृव्योंको मांसाहारी, ब्राह्मणोंके हाथका खिलौना, तथा मूर्ख जानते रहैं, और अपने घरको न पहचाननेवाले वत्सकी भांति जहांतहां भटकते फिरैं ।

पाठ्य पुस्तकोंमें जो इतिहास हैं वह बहुधा इसी प्रकारके हैं और उनका प्रभाव जो हिंदू सन्तानपर पड रहा है वह प्रत्यक्ष है, अंग्रेजीसे अपरिचित भारतवासियोंको यह एक मात्र विश्वास हो गया है कि अंग्रेजी विद्या ख्रीष्टधर्मपर आरूढ रखनेको जादू सा असर रखती है, अधिकांश इसी भयसे अपनी संतानको अंग्रेजीशिक्षा नहीं देते; परन्तु इस संभ्रमका कारण और ही है अंग्रेजी वर्णमालाके ३२ अक्षर कुछ जादू नहीं करते, अंग्रेजीमें निर्मित पुस्तकोंका आशय ही देशके नौजवानोंको धर्म्मच्युत करता है और वह भटकते फिरते हैं विज्ञ पादरियोंके द्वारा प्रकाशित प्रथम पुस्तकसे आरम्भ कर अन्तिम पुस्तकतक ख्रीष्टधर्मके उपदेशोंसे तथा हिन्दूधर्मकी हीनतासे पूर्ण होगी तो वह किस प्रकारसे आर्यकुलके बालकको उसके धर्म कर्म और देश हितका ज्ञानोपदेश कर सकती है ।

प्रायः इसी प्रकारकी दशा मैकसमूलर आदि संस्कृतके महा विद्वान् अंग्रेज लेखकोंके अंग्रेजी अनुवादमें पाई जाती है; कोई आर्य्य कुलमणि पूर्वजोंको गोभक्षक सिद्ध करता है, कोई वर्णाश्रम धर्मको आधुनिक प्रमाणित करता है कोई विधवा विवाह सिद्ध करता है इस बातका न्याय हम विचारवान् पाठकोंपर ही छोडते हैं कि वेद-प्रतिपादित हिन्दूधर्मके सिद्धान्त अनादि वा सादि हैं अथवा जैसा मेगस्थनीज मयु सन् २७८ का लिखना सत्य है जो कि वेक्ट्रिया [तुर्किस्तान] के महाराजा सल्कू-सका दूत था और दश वर्षके लगभग मगधदेशके महाराजा चन्द्रगुप्तकी सभामें रहा था, वह लिखता है कि उच्चवर्णमें ब्राह्मण और क्षत्रिय थे जो गोरे रंगके होते थे इत्यादि खेदसे यही कहना पडता है कि हमारे देशकी सच्ची अवस्थासे अनभिज्ञ तथा अन्यमतावलम्बी होनेके कारणसे ऐसे २ अविश्रान्त परिश्रम करनेवाले, संसारमें विद्या बुद्धिके सूर्य अकृत्रिम साहसके गुणोंसे अलंकृत, और अंग्रेजी विद्वान् भारतकी इस आवश्यक वस्तुकी उचित संयोजना न कर सके ।

प्राचीन तथा नवीन मुसल्मान लेखकोंके इतिहासोंको देखाजाय तो उनकी आलोचना भी ऊपरकी आलोचना पंक्तिको फिर उद्धृत करनेसे होजाती है, वरन् इनमें

एक और भी विशेषता पाई जाती है मुसलमानोंने अपने धर्म कर्म और रीति नीतिको हिन्दुओंमें प्रचार करनेके निमित्त ख्रिष्टधर्मावलम्बी पादरी गणोंकीसी युक्ति नहीं की, वरन् अन्याय और बलसे उनमें परिवर्तन किया, इस कारण उनके लेख तो पक्षपातकी प्रतिमूर्ति ही हैं, फारसीका सर्वश्रेष्ठ इतिहास फरिश्ता ऐसे बादशाहकी आज्ञासे निर्माण किया गया था जो अपनी हठधर्मीके लिये प्रसिद्ध था, जिसके अत्याचार हिन्दुओंके भ्रष्ट देवालयोंके स्वरूपमें अभी तक विद्यमान हैं, ऐसे धर्म द्रोही बादशाहकी आज्ञासे बनाहुआ इतिहास हिन्दुओंके धर्म और नीति रीतिका सच्चा इतिहास कैसे कहा जा सकता है, दूसरी एक प्रथा मुसलमान लेखकोंमें व्यर्थ प्रशंसाकी पाईजाती है, ठकुरसुहाती कहनेमें वह किसी बातका ध्यान नहीं करते, यह दोष सत्यको छिपानेमें बडी सहायता देता है और ऐसे ही कारणोंवश इन इतिहासोंको भी ग्राह्य मानना हृदयकी शक्तिसे बाहर हो गया है, जिन लोगोंने हिन्दूधर्मके मिटानेके लिये वर्षो हिन्दूजातिका रक्त बहाया है हिन्दुओंका सच्चा इतिहास वे लोग कब लिख सकते हैं।

अब इने गिने भाषाभण्डारके इतिहासोंको देखें तो इनमें अधिकांश तो अंग्रेजों द्वारा लिखित अंग्रेजी इतिहासोंके अनुवाद हैं और वे देशी विद्वानोंद्वारा लिखित हैं, परन्तु शोकका विषय है कि अपने रत्नभण्डारकी कुंजी संस्कृत विद्याकी अनभिज्ञता तथा इसकी दूसरी भाषा पाली प्राकृत आदिका न जानना तथा पुरानी संस्कृत पुस्तकोंका हठी और उत्साहरहित सज्जनोंके हाथमें रहना आदि अनेक कारणोंने हमारे देशी लेखकोंको भी अपनी स्वतन्त्र पुस्तकोंको अंग्रेजीकी लिखित पुस्तकोंके आधारपर लिखनेको बाध्य किया है, और यह आवश्यक वस्तु एक प्रकारसे आनाविष्कृत ही रह गई है।

सात आठ सौ वर्षके लगभग मुसल्मान राजाओंकी प्रजा बनी रहकर हिन्दूलेखकोंकी रीति नीतिने भी यवनोंके समान प्रशंसाकी शैली स्वीकार की है, हिन्दी भाषाके सुयोग्य लेखक देशहितकारी राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द भी अपने अमूल्य इतिहास तिमिरनाशकको इस कलंकसे मुक्त नहीं कर सके हैं, अनेक लार्ड और गवर्नरोंके कार्यकी यथावश्यक आलोचना करनेमें वे हिचक गये हैं, जिन मर्मतत्त्वोंको वे सत्यप्रिय अपनी जातिके गौरवस्तम्भ सुविज्ञ अनेक अंग्रेज × स्वयं लिख गये हैं, उन्हीं

× सत्यप्रिय वर्कमिल आदि अपने लेखोंमें किस प्रकार अत्याचारी गवर्नरोंकी आलोचना करते हैं वर्कलिखित।

"Impeachment of Warren Hastings."

"Sir Henery Mein has pointed out with admiral truth the consequences in India of the fact that English classical literature towards the end of the last country was "saturated with party politics."

"This" he says "would have been a less serious fact if, at this epoch, one chief topic of the great writers and rehotoricians, of-

बातोंके लिखनेमें राजा साहबने अपने स्वार्थकी हानि जानी है, ऐसे देशहितैषियोंने भी इस बातका ध्यान नहीं किया, किं बृटिशगवर्नमेंट कैसी सत्यप्रिय न्यायपरायण और उदार है, जिसने प्रत्येक व्यक्तिको अपने विचार स्वतन्त्रतापूर्वक प्रकाश करनेका अधिकार दे रक्खा है, इस समय भी ठकुरसुहाती लेखोंकी भरमार हो तो फिर निस्तारका समय कौन सा होगा प्रकाशित पुस्तक एक ऐसी वस्तु है जो चिरकालतक जैनसमाजपर अपना प्रभाव डालती है, और जब पुस्तकपर टिप्पणी नहीं रहतीं तो उसके सम्बन्धकी अनेक बातें कुछ की कुछ समझी जाया करती हैं, यदि मिथ्या तथा अपूर्ण संवादयुक्त ग्रंथ बहुत समयके पीछे जब उसके लेखक आदिका परिचय कुछ न रहा हो मिलै तो कौन कहैगा कि इस पुस्तकमें अमुक बात पक्षपातसे लिखी गई थी यह निर्मूल है यह घटना छोड दी गई है, इस कारण या तो इन ऐतिहासिक ग्रंथोंपर टिप्पणी की जाय या कोई सत्य इतिहास लिखा जाय ।

भारतवर्षके उन इतिहास वेत्ताओंमें जिनकी चर्चा हम ऊपर कर चुके हैं तीन चौथाईकी सम्मति यही है कि इस देशके पुराने विद्वानोंमें इतिहास लिखनेकी प्रथा ही न थी, बडे २ समारोहोंमें इन्होंने अपने मुखसे यही आक्षेप किया है कि भारतवर्षकी ऐतिहासिक विद्या बडी अल्प है, उनको अपने लिखे वाक्योंके प्रमाणमें यही प्रगट करते देखा और सुना गया है कि यदि ऐसा नहीं है तो कोई प्राचीन इतिहास इस देशमें क्यों नहीं पाया जाता, इस प्रमाणको ग्राह्य मान लेना ही वास्तवमें ऐतिहासिक तत्त्व प्रगट करनेवालोंके हतोत्साहकी पहली सीढी है ।

प्राचीन समयका शृंखलाबद्ध तथा क्रमानुसार इतिहास विद्यमान न होनेका कारण यहांके निवासियोंकी इस विषयसे अनभिज्ञता वा आलस्य नहीं है, परन्तु दुर्भाग्यवश

Burke and Sheridon, of Fox and Francis, had not been India itself. I have no doubt that the eiew of "Indian Government taken at the end of the century by Englishmen whose works and speeches are held to be models of English style has had deep effect on the mind of The educated Indian of this day. We are only now begining to see how excessively in accurate were there statements ef fact and how one-sided were their judgements."

सरहेनरी मेनने प्रशंसनीय सत्यतासे प्रगट किया है कि अंग्रेजी साहित्यभंडार पिछली शताब्दीके अंतिम समयमें भारतीय घटनाओंके सम्बन्धमें पक्षपातभरी युक्तियोंसे परिपूर्ण है, यदि बर्क शेरीडन तथा फाक्स और फ्रांकिस सरीखे प्रसिद्ध लेखक और कविगण इस लेखका प्रधान विषय हिन्दुस्तानको न बनाते इतना हानिकारक न था, मैं निसन्देह कहता हूं कि शताब्दीके अन्तिम समयमें गवर्नमेण्टके कार्योंकी आलोचना जो अंग्रेजोंके ऐसे अनुकरण योग्य भाषाके ग्रन्थ और व्याख्यानोंमें की गई है, पढे लिखे हिन्दुओंके चित्तपर आज कैसा प्रभाव दिखा रही है, अब यह हमने विचारना आरंभ किया है कि वह घटनाओंका कितना घोर मिथ्या विवरण था और उनकी निरधारणा कैसी एक पक्षकी थी ।

इस देशपर उत्तर पश्चिमके मार्गसे जो चढाई होती रही वही विशेष कारण है, चढाई करनेवालोंके तीन प्रधान कर्त्तव्य होते थे; पहला यथासम्भव देशको लूट लेना, अनेक यवन बादशाहोंने चढाई करते समय अपनी सेनाके सिपाहियोंको यही लोभ दिया कि किसी भांति खैबरकी घाटी पार कर लो, फिर तो ऐसे देशमें पहुंच जायंगे जहां सुवर्ण उत्पन्न होता है, दूसरा काम उन चढाई करनेवालोंका धर्म भ्रष्ट करनेका होता था, उनको यही लालसा रहती थी कि जब देशको विजय कर लिया तो क्यों नहीं वहांके निवासी विजेताके धर्मको स्वीकार करते ? इस लालसाके पूर्ण करनेके लिये उनको बडे२ अत्याचार करने पडते थे, और देशकी विजयके लिये जितना रक्तपात होता था उससे कहीं बढकर इस कार्यमें करना पडा था, सौभाग्यकी बात है कि भारतीय समाजके धर्ममें दृढ होनेके कारण वे इस कार्यमें नाममात्रकी ही सफलता प्राप्त कर सके थे ।

तीसरा महानिन्दनीय कार्य इस देशकी उन्नतिपर ईर्षा और डाह करना था, उन्होंने अनेक शिल्प और कलाकौशल इस देशसे सीखकर कृतघ्नतासे यही गुरुदक्षिणा दी कि इस देशके शिल्पादिपर भी अत्याचार करना आरंभ किया, बडे २ विशाल मंदिर जो संसारमें शिल्पकार्यके लिये अद्वितीय थे, उनको नष्ट किया । बडी २ वैज्ञानिक प्रदर्शिनी और यंत्रादि भस्म किये गये, लाखसे भी विशेष पुस्तकोंके भंडारको ऐसा बहाया कि अनेकों तो संसारसे लोप हो गई ।

प्राचीन आर्यपुरुषोंने उन्नतिके शिखरपर पहुंचकर अपने अनुभवसे जैसा इस धर्मको चिरस्थाई जाना वैसा ही अपनी पुस्तकोंको भी अटल रखनेका उद्योग किया, उन्होंने मुद्रालयोंकी सहायतासे एक पुस्तककी अनेक प्रति नहीं की, बरन अपने ग्रंथोंको चिरकालतक संसारमें स्थित रखनेके लिये ताम्रपत्र और शिलाओंपर खोदकर संग्रह किया था, आश्चर्य नहीं कि ऐसे पुस्तकालय शत्रुओंकी चढाईके समय पहाडोंकी अगम्य गुफाओंमें तथा पुराने स्थानोंके गोपनीय भागों [तहखानों] में दाब दिये गये हों, कहीं कहीं देवमंदिरोंमें तथा नवीन पद्धतिके म्यूजिअम आदिमें अनेक ऐसे शिलालेख और ताम्रपत्र आदि पाये जाते हैं । और बौद्धोंके समयका तो विशेष वृत्तान्त उस समयकी टूटीफूटी धर्मशाला विजयस्तम्भ और मंदिर आदिसे ही मिलता है, और दूसरे उनके अनेक ग्रंथ जैनसम्प्रदायवालोंमें पुराने भी मिल जाते हैं ।

इस भांति अनेक आपत्तियोंका झेलनेवाला भारतवर्ष, अपने सर्वस्वको खोदेनेवाला आर्य्यावर्त्त अपना पुराना इतिहास कहांसे प्रगट कर सकता है, जब इसके धर्मग्रंथ वेदमें [तमितिहासश्च पुराणञ्च] इस प्रकार इतिहास शब्द विद्यमान है तब इसके यहां इतिहास होनेमें सन्देह नहीं है इसका जो कुछ शेष है वह इस बातके सिद्ध करनेको बहुत है कि यह देश इतिहास ऐसी आवश्यक वस्तुसे अनभिज्ञ नहीं था, इसका पूर्वकालीन अद्वितीय महाभारतग्रंथ आजतक इतिहासके नामसे विख्यात है । जहां इतिहास शब्द है, वहां उसका वाचक नहीं यह कब संभव हो सकता है, ऊपर लिखी दुर्घटनाओंको ध्यानमें लाकर यहांके निवासियोंको आलसीपनका लांछन लगना यथेष्ट

ज्ञान नहीं पडता, बरन यह कहना उचित होगा कि फिर भी यहांके निवासी बडे दूर-दर्शी और साहसी निकले जो इतना कुछ बचा रक्खा है ।

यह कहना अत्युक्त न होगा कि यूरोपीय समस्त इतिहासोंके मध्यभागमें ईसू खीष्ट केन्द्रके समान विराजमान है प्रत्येक यूरोपीय देशनिवासी लगभग ईसासे उतने ही दिन पहलेकी शृंखलाबद्ध कथा कह सकते हैं--कि, जितने दिन ईसाको इधर बीत गये हैं इस गणितसे ४००० अथवा ५००० से अधिकका इतिहास संसारमें लोपसा हो गया है परन्तु भारतवर्षके इतिहासकी वह दशा नहीं है, इस देशका इतिहास इससे कहीं पुराने समयका मिल सकता है, पाँच हजार वर्ष तो महाराज युधिष्ठिरको ही हुए हैं युधिष्ठिरका संवत् उनके राजसूय यज्ञसे चला है इसके ३०४४ वर्ष बीतनेपर विक्रमका संवत् चला है जिसको १९६२ में ५००६ वर्ष होते हैं जिसके पीछे राज्य करनेवालोंकी एक तालिका भी हम यहां उद्धृत करते हैं ।

अब यह सिद्ध हो गया कि युधिष्ठिर कुरुवंशमें एक प्रकार पिछले चक्रवर्ती राजा हुए हैं इनसे पहले अनेक नृपति हो चुके हैं फिर केवल ५००० या चार सहस्र वर्षकी ही ऐतिहासिक घटनाकी अटकल लगाना भ्रम ही नहीं महाभ्रम है ।

जिस विस्तृत ग्रन्थकी यह भूमिका लिखी जाती है यद्यपि यह ग्रन्थ भी अंग्रेजीका ही अनुवाद है परन्तु इस ग्रन्थके निर्माताने पच्चीस तीस वर्षतक इस देशके आचार विचारकी खोज कर इस ग्रन्थको लिखा है । वह भूमिकामें लिखते हैं कि भारतवर्षीय इतिहासके अनेक प्रधान स्रोत हैं, वेद, स्मृति, महाभारत, अष्टादशपुराण, राज्यवंशावली, स्थानिक जनश्रुति, जगा और भाटोंके द्वारा कथित चरित्रविशेष घटना सम्बन्धी कवितायें, टूटे फूटे इतिहास तथा शिलालेख आदि इन्हींमें यथावश्यक परिश्रम करनेसे अनेक ऐतिहासिक तत्त्व ही नहीं निकलते बरन क्रमानुसार इतिहास प्रत्यक्ष होने लगता है ।

टाड साहबने जिस श्रद्धा और भक्तिसे आर्यवंशकी क्षत्रियजातिका इतिहास लिखा है ऐसी भक्ति सत्यपरायणता और सच्चरित्रताका उल्लेख और किसी अंग्रेज लेखकसे बन नहीं पडा है, टाड राजस्थानका अधिकांश सत्य पालनेमें है और इसी हेतु यह ग्रन्थ देशमें सर्वमान्य और ग्राह्य हो रहा है, इस ग्रन्थमें मेवाडवीरोंका चरित्र पढनेसे उनके आचार विचारपर ध्यान देनेसे उनकी धर्मपरायणता समझनेसे तथा स्त्रियोंकी पतिभक्ति विचारनेसे पढते २ मन ऐसा तदाकार होता है मानो यह सब वृत्तान्त आँखोंके आगे हो रहा है मन कभी वीर कभी करुणा कभी वात्सल्य रसमें मग्न हो जाता है इस बातको पाठक पढकर ही समझ लेंगे कि इसमें बाप्पारावलसे आरम्भकर महाराणा भीमसिंहके चरित्रतक मानों मोतियोंकी लडी गूंथी गई है ।

परन्तु इसमें भी सत्यवीर भक्त टाड अपने इस बृहत् ग्रन्थकी भूमिकामें स्पष्ट लिखते हैं कि " मेरा सिद्धान्त यही रहा है कि भारतीय और पुराने यूरोपीय वीरजाति

एक ही वंशवृक्षकी पृथक् २ शाखाएँ हैं और इसी भावको प्रमाणित करनेका मैंने उद्योग किया है।

I have been so hardy as to affirm and endeavour to prove the common origin of the martial tribes of Rajsthan and those of ancient Europe.

जिसको औरोंने अनुमानसे माना उसीको सिद्ध करनेका उद्योग करना पक्षपात है फिर एक स्थानमें भूमिकामें ब्राह्मणोंकी स्वार्थपरायण वृत्ति बडी निकृष्ट भावनासे दिखाई है।

The party spirit of the rival sects of India was doubtless, adverse so the purity of history; and the very ground upon which the Brahmins built their ascendancy was the ignorance of the people. There appears to have been in India, as well as in Egypt in early times, coalition between the hirarchy and the State, with the view of keeping the mass of the nation in darkness and subjugation.

अर्थात् निश्चय ही भारतमें प्रतिद्वंद्वीजातियोंका पक्षपात इतिहासकी सत्यताके विपरीत है और देशवासियोंकी अज्ञानता ही ब्राह्मणोंका सर्वोच्च बन बैठनेका प्रधान कारण है अनुमान होता है कि भारतवर्ष तथा पुराने मिश्रदेशमें वंशप्रथाके पोषक (ब्राह्मण) तथा राजाओंमें इस कारण मेल था कि वह जाति प्रजाको अन्धकार और अधीनतामें बनाये रक्खें; मानो ब्राह्मणोंने ऐसा किया, सम्पूर्ण हिन्दूजाति जिन ब्राह्मणोंकी प्रधानताको अपना पैतृक धर्म मानती है, जिनको देवता कहकर पुकारती है। उनपर यह अप्रमाणित लांछन सहसा टाडसाहबके अन्य मतावलम्बी होनेका प्रत्यक्ष फल है, यदि टाड साहब हिन्दू होते तो कभी आर्य्य कुलको उन्नतिपर पहुँचानेवाले कार्य्यपरायण तथा ब्रह्मवादी बनानेवाले भारतमार्तण्ड ऋषिगणोंपर यह दोषारोपण न करते, और यहां तो राजाओंपर भी लांछन लगाया है कि प्रजाको वशीभूत रखनेके प्रयोजनसे ही प्रजाको अज्ञानी रक्खा जाता था, यह लेख उक्त महोदयका उन्हींके कथनके विपरीत है वह पहले ही कह आये हैं कि—

The absence cf all mystery or reserve with regard to public affairs in the Rajput principalities in which every individual takes an interest, from the nobles to the porter at the city-gates is of great advantage in the chronicler of events.

राजपूत राजागण प्रजासम्बन्धी कार्य्योंमें कोई भेद वा गोपनीयता अपनी प्रजासे नहीं रखते थे। इन विषयोंमें प्रत्येक मनुष्य प्रधानसे लेकर नगरका द्वारपालतक स्वार्थ लेता था यह बात इतिहास लिखनेवालोंको बडी उपयोगी होती है, इस कथनके समर्थनमें मेवाडके राणाका उत्तर भी टाड साहबने लिखा है कि किसी समयमें आवश्यकतावश किसी व्यक्तिने राणाको समझाया कि अमुक भेद गोपनीय रक्खे जावें परन्तु राणा-

जीने उत्तर दिया कि यह एकलिंग शिवजीका राज्य है और मैं केवल उनका प्रतिनिधि हूँ मैं अपने बालक (प्रजा) से कोई भेद नहीं रखता विचारिये तो जहां इस देशके राणागणोंकी यह सम्मति है वहां कैसे अनुमान किया जा सकता है कि उन्होंने प्रजाको अन्धा बनाये रखनेके लिये अनेक विषय प्रजासे छिपाये जैसा ऊपर कह आये हैं यह सर्वथा मान्य है कि टाड महोदयने अधिकांशमें पक्षपात रहित ही उल्लेख किया है । परन्तु जिन बातोंमें उन्होंने अपनी उक्तिसे काम लिया है उस बातमें अवश्य गोलमाल हुआ है । इसमें संदेह नहीं कि पुराण फ्लासफी एक बडा गहन विषय है, उसमेंसे विषयोंका चुनना साधारण बात नहीं है, इसके लिये पुराणविद्यामें निपुण पंडितकी सहायताकी आवश्यकता थी, परन्तु टाड साहबको अन्यधर्मावलम्बी पंडितकी सहायता प्राप्त हुई जिससे प्रथम सृष्टिखण्डमें बहुतसी बातोंमें गडबड हो गई है और जिसको हमने परिशिष्टमें दिखाया है शकुन्तलाका पति भरत, विचित्रवीर्यकी कन्याओंको व्यासजीका पढाना वा स्वयं उनसे विवाह करना, अश्वमेध यज्ञको शीतकालकी संक्रांतिका त्योहार मानना, मेरुकी पुत्रीका नाम मेरा लिखना, आर्यावर्तकी पुण्यभूमिके आगे कुरुकी भूमि लिखना, अन्यदेशोंके देवता तथा भारतके देवी देवता तथा ऋषि मुनियोंकी एकता सिद्ध करनेके लिये बहुतसे शब्दोंका स्वयं निर्माण करना, व्यासजीको शन्तनुका पुत्र मानना इत्यादि बहुतसी बातें ऐसी लिखी गई हैं जिनका वर्णन पुराणोंमें अन्य रीतिसे लिखा गया है और टाड साहबने उसको अन्य प्रकारसे लिखा है हमको इस बातके माननेमें कोई सन्देह नहीं है कि टाडसाहबने इसमें दूरन्देशीसे काम नहीं लिया उन्होंने बडी मिहनत उठाकर यह काम किया है और ऐसा लिखा है कि इसके अनुशीलनसे बुद्धिमान बहुत सी कामकी बातें जान सकते हैं ।

यदि हम इस पुराणविषयक ऐतिहासिक तत्त्वको अनुवाद करते समय टिप्पणी देकर शुद्ध करते जाते तो पाठकोंको इसमें नीरसता प्रतीत होती इस कारण पुराणादि. ऐतिहासिक वृत्तान्त जो टाड महोदयने लिखा है प्रथम छः अध्यायोंमें उसका सार लिखकर उसका पूरा वर्णन नोट टिप्पणी देकर परिशिष्टमें लिख दिया है कि जिससे पाठकोंको ऐतिहासिक मर्म भली भांति स्पष्ट हो जायगा ।

भारतवर्षके बहुत थोडे ऐसे महात्मा हैं जिनको इतिहाससम्बन्धी कथाओंसे प्रेम हो कितनी ही बार कथा पुराण सुनते हैं पर इस बुद्धिसे कभी नहीं सुनते कि हमारे पुरुषाओंकी कुलपरम्परा कैसी थी और आजतक कितने महत्मा उस वंशको अलंकृत कर चुके इक्ष्वाकुसे महाराज रामचन्द्रजीतक ५८ ही राजाओंकी वंशसूची प्राप्त हुई है पर उन नामोंमें भी बडा भेद है फिर यह कैसे संभव हो सकता है कि आदि सृष्टिसे भगवान् रामचन्द्रतक ५८ ही राजा हुए हों मेरी समझमें जो वंशवृक्ष पुराणोंमें दिये गये हैं यह मुख्य मुख्य राजाओंकी नामावली है सब लिखना तो असम्भव है कारण कि वाल्मीकिजीकी वंशावलीमें ३७ ही राजाओंका नाम पाया जाता है इससे स्पष्ट है कि वंशावलियोंमें मुख्य नाम लिखे गये हैं तब उन५८नामोंसे प्रत्येक राजाके राजत्वकालका औसत

बीस वर्ष लगाकर सृष्टिके पांच हजार वर्षका मान लेना हिन्दूशास्त्रके अनुसार सिद्ध नहीं हो सकता जब कि हमारे यहां इस वैवस्वत मन्वन्तरके राज्यमें२८ वां कलियुग वर्त्तमान है और इस समय उसके५००८ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं।

वंशावलीमें जो कितने एक भिन्न २ समयके पुरुषोंकी समकालीनता लिखी गई है उनमें पुराणविद्याके अनुसार उन उन पुरुषोंकी तप और योगके द्वारा दीर्घायु मानी गई है और राजा परीक्षितकी कई पीढ़ी बाद तक भी कितने एक पुरुषोंने ८० अस्सी २ वर्षतक राज्य किया है, टाड साहबने २० वर्ष औसतके माने हैं। जो हमने आगे एक वंशावली उतारी है उसमें युधिष्ठिरसे यशपालतक १२४ राजाओंने ४१५७ वर्षतक राज्य किया है जिसका औसत निकालनेसे ३३॥ वर्ष प्रत्येकके राजसम्बन्धमें आते हैं और उस सूचीके देखनेसे यह भी ज्ञात हो सकता है कि टाड साहबने जो वंशवृक्ष नंबर दोमें परीक्षितसे वंश चलाया है इसके उसके नामोंमें कितना भेद है इस वंशावलीके देखनेसे विदित होता है कि दिल्लीमें महाराजा युधिष्ठिरसे यशपाल पर्यन्त १२४ राजा हुए हैं जिनका समय ४१५७ वर्ष ९ महीने और चौदह दिन है टाड साहबकी दी हुई राजावलीकी वंशावली और इसमें बडा भेद है टाड साहबने युधिष्ठिरसे राजपालतक ६६ राजा लिखे हैं इसमें ६९ हैं पर नामोंमें बडा भेद है इस लिये हम लिखते हैं—

राजा	वर्ष	मास	दिन	राजा	वर्ष	मास	दिन
१ युधिष्ठिर	३८	८	२५	१७ शूरसेन दूसरा	५८	१०	८
२ परीक्षित	६०	०	०	१८ पर्वतसेन	५५	८	१०
३ जन्मेजय	८४	७	२३	१९ मेधावी	५२	१०	१०
४ अश्वमेध	८२	८	२२	२० सोनचीर	५०	८	२१
५ द्वितीय राम	८८	२	८	२१ भीमदेव	४७	९	२०
६ छत्रमल	८१	११	२०	२२ नृहरिदेव	४५	११	२३
७ चित्ररथ	७५	३	१८	२३ पूर्णमल	४४	८	७
८ दुष्टशैल्य	७५	१०	१४	२४ कर्दवी	४४	१०	८
९ उग्रसेन	७८	७	२१	२५ अलमिक	५०	११	८
१० शूरसेन	७८	७	२१	२६ उदयपाल	३८	९	०
११ भुवनपति	६९	५	५	२७ दुवनमल	४०	१०	२६
१२ रणजीत	६५	१०	४	२८ दमात	३२	०	०
१३ ऋक्षक	६४	७	४	२९ भीममाल	५८	५	८
१४ सुखदेव	६२	०	२४	३० क्षेमक	४८	११	२१
१५ नरहरिदेव	५१	१०	२	यह सब मिलकर तीस पीढ़ी हुई वर्ष			
१६ शुचिरथ	४२	११	२				

१७७० महीने ११दिन१० हुए राजा क्षेमकके प्रधान विश्रवाने क्षेमकको मारकर १४ पीढी राज्य किया. जिसके वर्ष ५०० मास ३ दिन १७ होते हैं ।

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ विश्रवा	१०	३	२९
२ पुरसेनी	४२	९	२१
३ वीरसेनी	५२	१०	८
४ अनंगशायी	४७	८	२३
५ हरिजित	३५	९	१७
६ परमसेनी	४४	२	२३
७ सुखपाताल	३०	२	२१
८ कद्रुत	४२	९	२४
९ सज्ज	३२	२	१४
१० अमरचूड	२७	३	१६
११ अमीपाल	२२	११	२५
१२ दशरथ	२५	४	१२
१३ वीरसाल	३१	८	११
१४ वीरसालसेन	४७	०	१४

इस वीरसालसेनको वीरमहाप्रधानने मारकर १६ पीढी ४४५ वर्ष ५ मास ३ दिन राज्य किया इसका ब्योरा—

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ वीरमहा	३५	१०	८
२ अजितसिंह	२७	७	१९
३ सर्वदत्त	२८	३	१०
४ भुवनपति	१५	४	१०
५ वीरसेन	२१	२	१३
६ महीपाल	४०	८	७
७ शत्रुशाल	२६	४	३
८ संघराज	१७	२	१०
९ तेजपाल	२८	११	१०
१० माणिकचन्द	३७	७	२१
११ कामसेनी	४२	५	१०
१२ शत्रुमर्दन	८	११	१३
१३ जीवनलोक	२८	९	१७
१४ हरिराव	२६	१०	२९
१५ वीरसेन(२)	३५	२	२०
१६ आदित्यकेतु	२३	११	१३

आदित्यकेतुको प्रयागके राजा धन्धरने मारकर ९ पीढी, ३७४ वर्ष ११ महीने २६ दिन राज्य किया इसका ब्योरा—

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ धंधर	४२	७	२४
२ महार्षि	४१	२	२९
३ सनरची	५०	१०	१९
४ महायुद्ध	३०	३	८
५ दुरनाथ	२८	५	२५
६ जीवनराज	४५	२	५
७ रुद्रसेन	४७	४	२८
८ आरीलक	५२	१०	८
९ राजपाल	३६	०	०

राजपालको उसके सामन्त महानपालने मारकर १ पीढी राज्य किया ।

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ महानपाल	१४	०	०

इसपर विक्रमादित्यने उज्जैनसे चढाई करके इसे मार डाला और: उसका राज्य १ पीढी रहा ।

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ विक्रमादित्य	९३ *	०	०

विक्रमादित्यको शालिवाहनके उमराव समुद्रपालयोगी पैठनकने मारकर १६ पीढी ३७२ वर्ष ४ मास २७ दिन राज्य किया जिसका ब्योरा—

---

* परीक्षितसे विक्रमादित्य ३०६६ वर्ष होते हैं यदि ३० वर्षकी अवस्थामें संवत् चलाना मान लिया जाय तो संवत् १९६४ तक ५०६० वर्ष होते हैं और युधिष्ठिरके ३८ वर्ष मिलानेसे ५०९८ वर्ष होते हैं विक्रमका राज्य ९३ वर्ष लिखा है इसमें कुछ भूल है।

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ समुद्रपाल	५४	२	२०
२ चन्द्रपाल	३६	५	४
३ सहायपाल	११	४	११
४ देवपाल	२७	१	२८
५ नरसिंहपाल	१८	०	२०
६ सामपाल	२७	१	१७
७ रघुपाल	२२	३	२५
८ गोविन्दपाल	२७	१	१७
९ अमृतपाल	३६	१०	१३
१० बलीपाल	१२	५	२७
११ महीपाल	१३	८	४
१२ हरीपाल	१४	८	४
१३ससिपाल[भिमपाल]	११,१०		१३
१४ मदनपाल	१७	१०	१९
१५ कर्मपाल	१६	२	२
१६ विक्रमपाल	२४	१३	१३

राजा विक्रमपालने पश्चिमके राजा मलूखचन्द बोहरेपर चढाई की और मलूखचन्दने विक्रमपालको मारकर १० पीढी राज्य किया वर्ष १९१ महीना १ दिन १६

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ मलूखचन्द	५४	२	१०
२ विक्रमचन्द	१२	७	१२
३ अमीनचन्द (मानकचन्द)	१०	०	५
४ रामचन्द	१३	११	८
५ हरीचन्द	१४	९	२४
६ कल्याणचन्द	१०	५	४
७ भीमचन्द	१६	२	९
८ लोवचन्द	२६	३	२२
९ गोविन्दचन्द	३१	७	१२
१० रानी पद्मावती	१	०	०

पद्मावती गोविन्दचन्दकी रानी थी जब यह मर गई तब कार्यकर्त्ताओंने राजवंशमें किसीको न पाकर एक हरिप्रेम वैरागिको गद्दीपर बैठाया और मुसद्दी राज्य करने लगे यह राज्य ४ पीढी वर्ष ५० दिन २१ तक रहा।

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ हरिप्रेम	७	५	१६
२ गोविंदप्रेम	२०	२	८
३ गोपालप्रेम	१५	७	२८
४ महाबाहु	६	८	२९

यह महाबाहु राज छोडकर वनमें तप करने चला गया यह समाचार पाकर बंगालके राजा आधिसेनेन दिल्लीमें राज्याधिकार किया १२ पीढिविषे १५१ महीना ११ दिन तक रहा २ इसका ब्योरा—

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ आधिसेन	१८	५	२१
२ विलावसेन	१२	४	२
३ केशवसेन	१५	७	१२
४ माधसेन	१२	४	२
५ मयूरसेन	१०	११	२७
६ भीमसेन	५	१०	९
७ कल्याणसेन	४	८	२१
८ हरीसेन	१२	०	२५
९ क्षेमसेन	८	११	१५
१० नारायणसेन	२	२	२९
११ लक्ष्मीसेन	२६	१०	०
१२ दामोदरसेन	११	५	१९

दामोदरसेनने अपने उमरावको बडा कष्ट दिया इसलिये दीपसिंह उमरावने सेना मिलाके इसको मारकर राज्य किया ६ पीढी वर्ष १०७ महीना ६ दिन २२ इसका ब्योरा—

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ दीपसिंह	१७	१	२६
२ राजसिंह	१४	५	०
३ रणसिंह	९	८	११

राजा	वर्ष	मास	दिन
४ नरसिंह	४५	७	१५
५ हरिसिंह	१३	२	२९
६ जीवनसिंह	८	०	१४

जीवनसिंहने अपनी सेना कुछ कालके लिये उत्तरकी ओर भेजी थी विराटके राजा पृथ्वीराज चौहानने यह समाचार पाकर उसपर चढाई की और जीवनसिंहको मारकर वहां इंद्रप्रस्थका राज्य किया।

पांच पीढी वर्ष ८६ महीना० दिन २० इसका ब्योरा—

१ पृथ्वीराज	१२	२	१९
२ अभयपाल	१४	५	१७

राजा	वर्ष	मास	दिन
३ दुर्जनपाल	११	४	१४
४ उदयपाल	११	७	३
५ यशपाल	३६	४	२७

इसके ऊपर शहाबुद्दीन गोरीने चढाई की और इस राजाको पकडकर संवत् १२४९में प्रयागके किलेमें कैद किया और दिल्लीका राज्य अपने अधिकारमें किया इस राज्यकी पीढी ५३ वर्ष ७४५ महीना १ दिन१७ राज्य रहा इस राज्यका ब्योरा बहुत पुस्तकोंमें लिखा है इस कारण लिखनेकी आवश्यकता नहीं है इतिहासवेत्ता सब जानते हैं।

यह वंशावली हरिचन्द्रचान्द्रिका और मोहनचन्द्रिकामें लिखी हुई थी जो संवत् १७८२ की लिखी हुई एक पुस्तकसे संग्रहीत की गई थी और संवत् १९३९ मार्गशीर्ष शुक्ल पक्षके १९।२० अंकोंमें छपी थी।

इस प्रकार यदि पुराण और पुरातन ग्रन्थोंकी विशेषरूपसे खोज की जाय तो पुरानी वंशावलियोंका बहुत कुछ पता लग सकता है, और ऐसा होनेसे एक बहुत बडा आक्षेपका विषय दूर हो सकता है, भारतवासी यदि प्राचीन इतिहासकी ओर झुकैं तो बहुत कुछ पता लग सकता है, पर वे इस बातमें दत्तचित्त नहीं होते हां यदि परमात्माकी कृपा हुई तो अब कुछ ऐसा समय आता जाता है कि केवल अंग्रेजी पुस्तकोंका ही अवलम्बन न करके शिक्षित पुरुष अपने ग्रन्थोंकी ओर झुके हैं, पर ऐसे बहुत थोडे हैं ज्यों ज्यों संस्कृतविद्याका प्रचार होता जायगा त्यों त्यों पुरानी बातोंकी खोज लगती जायगी बडे हर्षकी बात है कि बहुत दिनोंके पीछे भारतवासियोंकी नींद अब खुलने लगी है, उन्हें पता लगने लगा है कि हमारी कितनी हानि हो गई है, कितना माल असबाब जाता रहा है किस उपायसे शेष सामग्री बच सकती है, किस उपायसे गया धन लौट सकता है, वे इस विषयकी मीमांसा करने लगे हैं यदि इस प्रकारकी मीमांसा और उद्योग होता रहा तो मुझे आशा है कि वे इसमें एक दिन सफल मनोरथ होंगे, पर जहां तक मेरा विचार है वह यही है कि भारतवासी अपने पूर्वजोंकी रीति नीति आचार विचारको देखैं कि, किन आचार विचारोंसे इस देशकी उन्नति हुई थी; और किन कारणोंसे देश अधोगतिको पहुंचा है, तो अवश्य सदुपायोंका अवलम्बन करनेसे हम अपने देशका शिर ऊँचा कर सकते हैं, इस राजस्थानके इतिहासमें इस बातका

निर्णय दर्पणके समान दिखाई देता है राजपूतगणोंको अपने देशका कैसा प्रेम था वे जननी और जन्मभूमिको स्वर्गसे भी विशेष मानकर उसका आदर करते हैं अपने देश अपने धर्म अपनी मानमर्यादाकी रक्षामें उन्होंने कितनी ही बार प्राणोंको विसर्जनकर देश और धर्मकी रक्षा की है, रजवाडेकी स्त्रियां पतिव्रत धर्मका आदर्श हो गई हैं उनमें प्रातःस्मरणीया महारानी पद्मावती सबकी शिरमौर गिनी जा सकती हैं, आज भी चित्तौर, वीर क्षत्रियोंकी लीलाभूमिका स्तम्भ है शरणागतवत्सलता, ऐक्यता, कृतज्ञता, मानमर्यादाकी प्राप्तिके लिये उद्योग, निर्भयता, साहस, न्यायपरायणता, बन्धुत्व, आस्तिकता, भाषा, वेष, भोजन और भाव जैसा पूर्वजोंमें था वह सब बातें इस राजस्थानमें भलीभांतिसे दिखाई देती हैं, जिस समय इसको पढनेके लिये पाठकगण बैठेंगे मुझे विश्वास है कि उनके हृदयमें अपूर्व भावोंका उदय होगा और मन लगनेसे ऐसा विदित होगा मानो यह सब चरित्र आंखोंके सामने उपस्थित हो रहे हैं, वा हम कोई सत्य घटनाओंका उपन्यास पढ रहे हैं।

जहां जहां इस ग्रन्थमें धर्मसम्बन्धी चर्चा आई हैं सुबीतेके लिये हमने धर्म सम्बन्धी श्लोक भी वहां उतार दिये हैं जिससे धर्मभावमें दृढता हो तथा जो बात ग्रन्थकर्ताकी भ्रममूलक प्रतीत हुई है वहांपर 'अनुवादक' इस संकेतसे वीच वीचमें टिप्पणी भी कर दी है।

मेरी समझमें क्या सब बुद्धिमान् इस वातको स्वीकार करेंगे कि राजपूत जातिके आचार विचार सम्बन्धमें क्रमानुसार वर्णन करनेवाला इससे उत्तम और कोई ग्रन्थ नहीं है। इसमें यह प्रत्यक्ष दिखा दिया है कि किन उपायोंके अवलम्बन करनेसे देश उन्नतिको प्राप्त हो सकता है और किन विषय वासनाओंके तथा सत्यानाशी फूटके अवलम्बन करनेसे देश हीनदशाको प्राप्त हो सकता है, साहससे मनुष्य क्या नहीं कर सकता, महाराणा प्रतापसिंह इसके एक उदाहरण हैं, ऐसे वीर साहसी अब कहां हैं, पाठकमहाशयो! इन सूर्यवंशी राजाओंके चरित्र पढते समय आप मुग्ध हो जायँगे आपके मनमें एक वार पुराने भाव समाकर आपके ध्यानको जननी जन्मभूमिकी ओर आकर्षित करेंगे, यह बडा अपूर्व ग्रन्थ है, इसमें मनुष्यके सुधारकी सहस्रों बातें हैं, इसके अनुकरणसे मनुष्य शिक्षित और सन्मानित हो सकता है, हमने जिस भाव और देशहितैषितासे इस ग्रन्थका अनुवाद किया है वह पढनेसे विदित हो जायगा और मेरा यह ग्रन्थ हिन्दीभण्डारके लिये एक उपयोगी पदार्थ होगा।

हिन्दीभण्डारके निमित्त कोई उपयोगी ऐसा ग्रन्थ जिसमें पूर्वजोंके आचार विचार धर्म कर्म देशके सुधार तथा जातिसुधारकी ऐतिहासिक बातें विद्यमान हों लिखनेका मेरा बहुत दिनोंसे विचार था संवत् १९५५ में मित्र गोष्ठीसे यह बात निश्चय हुई कि टाड राजस्थानका हिन्दी अनुवाद करके इस अभावको पूर्ण किया जाय, यह बात मुझे बहुत पसन्द आई यद्यपि यह कार्य महान् था तथापि इसके पूर्ण करनेका साहस करके मैंने टाड साहबका

अंग्रेजी ग्रन्थ तथा इसके अनुवाद, जो बँगला मरहठी गुजराती आदि भाषाओंमें थे एकत्रित किये तथा इसके सम्बन्धकी और भी बहुतसी ऐतिहासिक सामग्री एकत्रित की गई तो यह कार्य एक बडा उपयोगी विदित हुआ यह ग्रन्थ एक बृहत् आकारका होगा इसके प्रकाश करनेमें बहुत व्यय होगा इस कारण मैंने अपने परम सुहृद हितैषी शास्त्रोद्धारक जगद्विख्यात "श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम् यन्त्रालयाध्यक्ष सेठजी श्रीयुत खेमराज श्रीकृष्णदासजीको इसकी सूचना दी जिन्होंने तत्काल मुझे इसके निर्माण करनेका उत्साह दिलाया और कहा कि आप इसे तैयार कीजिये हम सहर्ष इसको प्रकाश करेंगे, सेठजीके उत्साह दिलानेसे मैं इस कार्यमें प्रवृत्त हुआ, और संवत् १९५८ में मैंने इस बृहत् ग्रन्थके प्रथमभागका अनुवाद करके सेठजी महोदयके पास भेज दिया, और दूसरे भागके अनुवादमें प्रवृत्त हुआ, परन्तु पहला भाग कुछ कालतक तो सेठजीके यहां धरा रहा जब इसके छपनेका समय आया तब एक महात्माने न जाने किस कारण इसमें यह पचडा लगा दिया कि इसके नामोंमें बहुत अन्तर है, इस कारण इसका छपना रुक गया और सेठजीके द्वारा यह ग्रन्थ रजवाडेमें किन्हीं महोदयके पास भेजा गया और वहां बहुत समयतक यह ग्रंथ पडा रहा जिसके कारण मेरा उत्साह भंग हो गया और आगेके अनुवादमें शिथिलता होने लगी, अन्तमें बहुतसी लिखापढी करनेसे यह ग्रंथ वापिस आया, जब मैंने उसे खोलकर देखा तो उसका प्रत्येक पत्र अत्यन्त जीर्ण शीर्ण हो गया था और कुछ पत्रे खो भी गये थे पर प्रत्येक पत्रेपर सही होनेके हस्ताक्षर विद्यमान थे उसमें यद्यपि भूगोल और टाड साहबकी भूमिका सर्वथा कटफट गई थी, पर उसके साथ थोडीसी उपयोगी सामग्री भी प्राप्त हुई, जिसको मैंने धन्यवादपूर्वक स्वीकार किया और पुस्तकके पत्रे बहुत जीर्ण हो जानेसे इसके दुबारा लिखानेकी आवश्यकता पडी, परन्तु इस झंझटमें कई वर्ष लग गये, पर विना इस ग्रंथके दुबारा लिखाये यह कम्पोजके योग्य नहीं हो सकता था इस कारण इसको दुबारा लिखानेके लिये दिया गया, और पहले जो कहीं कुछ इसमें कसर रही थी इस दुबारा लिखनेमें टिप्पणी और शोधनमें वह दूर कर दी गई ।

जहांतक मुझसे हो सका है मैंने इसका अनुवाद बहुत सरल सबके समझने योग्य सरल हिन्दीभाषामें किया है, यदि पाठक महोदयोंको यह रुचिकर होगा तो मैं अपने परिश्रमको सफल जानूंगा, पर मुझे आशा है कि महानुभाव इसको अवलोकन कर अवश्य प्रसन्न होंगे ।

अंग्रजीमें इस ग्रंथमें पहले खण्डमें हिंदूजातिका पुरातन इतिहास, पश्चात् राजपूत जातिके आचार विचार ५ अध्यायोंमें और फिर राजपूत जातिका इतिहास कनकसेनसे महाराणा भीमसिंहतक १८ अध्यायोंमें वर्णन किया है पीछे टाड साहबने २४ अध्यायतक मेवाडके पर्वोत्सव और शासनप्रणालीका वर्णन किया है पश्चात् अपना मेवाड जानेका वृत्तान्त ६ अध्यायोंमें लिखकर इस ग्रंथको पूर्ण किया है, सब तीस अध्यायमें पूर्ण किया है परन्तु विशेष सरसता और रोचकताके हेतु मैंने हिंदी अनुवादमें

इस क्रमका थोडा परिवर्त्तन किया है अर्थात् पहले खण्डके छः अध्यायोंमें पुरातन हिन्दू-जातिका इतिहास साररूपसे लिखकर पश्चात् सतरह अध्यायोंमें महाराजा कनकसेनसे महाराणा भीमसिंहतक इतिहास लिखकर महाराणा जवानसिंहजीसे श्रीयुत महाराणा साहब बहादुर फतहसिंहजीतकका इतिहास जो इस समय वर्तमान है चार अध्यायोंमें ग्रंथ कर्तासे विशेष वर्णन किया है इसके पीछे राजपूत जातिके पर्वोत्सव आचार विचार आत्मशासन प्रणाली और टाड साहबके मेवाड जानेका वृत्तान्त लिखा गया है, इतने परिवर्तनका कारण यह है कि राजपूतजातिका इतिहास अत्यंत ही चित्ताकर्षक है इसमें मन लगनेसे फिर पर्वोत्सव और आत्मशासन प्रणाली आदिको पाठक विशेष रुचिसे पढैंगे, इस कारण यह विषय पीछे लिखे गये हैं और सबसे पश्चात् छः अध्यायोंमें इस हिंदूजातिके पुरातन इतिहासका परिशिष्टभाग लगाया गया है जिसके अवलोकनसे पाठकोंको इतिहाससम्बन्धी बहुतसी बातें विदित हो जायंगी।

यथासम्भव मैंने इस ग्रंथमें ग्रन्थकर्ताका कोई विषय जानबूझकर नहीं छोडा है परन्तु यदि इसमें कोई त्रुटि रह गई हो तो सूचना करनेपर आगामी बार वह त्रुटि अवश्य दूर हो जायगी।

यदि रघुकुलकमलदिवाकर प्रातःस्मरणीय भगवान् रामचन्द्रने कृपा की तो मेरे इस ग्रन्थका हिन्दीसमाजमें आदर होगा और मैं जानता हूं कि इस समय इतिहाससम्बन्धी ग्रन्थका हिन्दीमें जैसा अभाव है उस अभावको यह राजस्थान का इतिहास थोडा बहुत अवश्य दूर करैगा, और इसके अनुशीलनसे भारतसम्बन्धी इतिहासकी खोजमें विद्वानोंकी रुचि बढैगी और अश्चर्य नहीं कि वे लोग भारतके सत्य इतिहासको खोज कर और इतिहास सम्बन्धी ग्रंथोंको प्रकाश करके भारतके इस कलंकको दूर करनेमें समर्थ हों कि पहले भारतवासियोंको इतिहास लिखने नहीं आते थे वा ऐतिहासिक ग्रंथोंमें उनकी रुचि नहीं थी।

यद्यपि इस समय हिन्दीके प्रेमी बढते जाते हैं और उनसे बहुत कुछ आशा की जाती है परन्तु नागरीप्रचारणी सभा आरा और नागरीप्रचारिणी सभा काशीसे कि जिनके कई एक सभ्योंसे मेरा प्रेम है इस विषयमें बहुत कुछ आशाकी जाती है कि यदि इन महानुभावोंका वास्तवमें नागरीसे ऐसा ही प्रेम उत्तरोत्तर वृद्धिको प्राप्त होता रहा तो एक दिन हमारी नागरी सर्वगुणआगरी होकर फिर प्रकाशमान होकर अपने गुणोंसे सर्वसाधारणको सन्तुष्ट कर सत्यधर्मका जयजयकार करा देगी।

मेरी परम अभिलाषा * है कि यह ग्रंथ शीघ्र ही प्रकाशित हो पर न जाने क्यों इसके प्रकाश होनेका समय अभीतक नहीं आता तथापि मैं अपने कर्त्तव्यमें लगा हुआ हूं दूसरा भाग भी शीघ्र ही पूर्ण होकर दोनों भाग पाठकोंके सम्मुख उपस्थित होंगे।

---

* आपकी परम अभिलाषा इस ग्रन्थके शीघ्र प्रकाशित होनेकी थी पर भगवानूको यह बात स्वीकार नहीं थी, ग्रन्थ दुबारा बम्बई पहुंचने न पाया था कि संवत १९६२ श्रावण शुक्ल सप्तमीको विशूचिकारोगसे अकस्मात् इनकी मृत्यु हो गई दूसरा भाग पूर्ण होनेमें थोडा ही शेष था जो पीछेसे पूरा किया गया।

जो एक दो जगह मूलग्रन्थसे कहीं विशेष लिखा गया है वह अमूलक न जानना वह भी पृथ्वीराज रायसे आदि दूसरे ऐतिहासिक ग्रंथोंसे उद्धृत कर इसमें सन्निविष्ट किया गया है ।

इस प्रकार यह ग्रंथ सब विषयोंसे अलंकृत कर सब प्रकारके सत्त्वसहित परमोदार सर्वगुणसम्पन्न जगद्विख्यात सेठजी श्रीयुत खेमराज श्रीकृष्णदासजी महोदयको समर्पण कर दिया है कि जिन्होंने संस्कृत और हिन्दी ग्रंथोंको प्रकाशकर देशका बहुत उपकार किया है ।

अब मैं अन्तमें अपनी मित्र मंडलीको धन्यवाद देकर इस भूमिकाको पूर्णकर जगदीश्वरसे प्रार्थना करता हूं कि वह सबपर कृपादृष्टि कर देशका मंगल करैं जगत्में शांति विराजै । ॐ तत्सत् ।

सज्जनोंका कृपाभिलाषी—

संवत् १९६२. { बलदेवप्रसाद मिश्र,
दिनदारपुरा–मुरादाबाद.

राजपूतानेका

भूगोल।

राजस्थानका भूगोल सम्बन्धी इतिहास जो मेरे दिये हुए नक्शेमें है उसके अनुसार पश्चिममें सिन्धुनदीका कछार, पूर्वमें बुन्देलखण्ड, उत्तरमें सतलजनदीके दक्षिण ओरका जंगल देशनामक मरुस्थल; और दक्षिणमें विन्ध्याचल पर्वत है, इतने प्रदेशमें अनुमानसे आँठ अक्षांस और नौ रेखांश आते हैं अर्थात् २१ से ३० उत्तर अक्षांश और ६९ से ७८ पूर्व देशान्तरतक फैला हुआ है, जिसका क्षेत्रफल ३५०००० वर्गमील है।

इस पुस्तकका मुख्य प्रयोजन तो उक्तदेशके भूगोलसे है, जिसमें इतिहास सम्बंधी और देशअवस्था सम्बन्धी वृत्तान्त प्रसंगवश पीछेसे दिये गये हैं, यथार्थमें प्रथम हमारी यह इच्छा थी कि इस ग्रंथको भूगोलसम्बन्धी भी बनाया जाय, परन्तु कई कारणोंसे मेरे लिये यह बात असम्भव हो गई, यहां तक कि जितनी सामग्री मुझे प्राप्त थी उसके अनुसार वैसा सही नक्शा * भी न बन सका, इसमें पाठकोंको तो इस लिये चिन्ता न होगी, कि भूगोलसम्बन्धी वृत्तांत उपयोगी होनेपर भी सर्वसाधारणकी दृष्टिमें नीरस और शुष्क जँचता है, पर मुझे इस बातका दुःख है कि मैं वैसा नक्शा जैसा कि मैं चाहता था, तैयार न कर सका।

मैं चाहता था कि इस नक्शेके साथ पुराणादि प्रतिपादित तथा प्रामाणिक ज्योतिष-शास्त्रके प्राचीन भूगोलका भी परस्पर मिलान करूं, परन्तु यह बात मैंने आगेके लिये छोड दी, यदि दुबारा फिर इस ग्रंथके प्रकाश होनेका समय आवेगा तो शीघ्रतामें जो बात रह गई है, आगामी बार वह त्रुटि दूर कर दी जायगी।

जब कि ग्रंथकर्ता मरहटोंके साथका युद्ध समाप्त होनेपर सन् १८०६ में सेंधियाके दरबारमें जानेवाले दूतके साथ भेजा गया था, तबसे इस परिश्रमशोधका आरम्भ समझना चाहिये, उसी समय मैंने यह सामग्री संग्रह की थी, इस सेंधिया सरदारकी सेना उन दिनों मेवाडमें उपस्थित थी, और यूरोप निवासी उन दिनों इस देशसे

---

१ भूमध्य रेखासे उत्तर वा दक्षिणके अन्तरको अक्षांस और नियत किये याम्योत्तरवृत्तके पूर्व वा पश्चिमके अन्तरको रेखांश वा देशान्तर कहते हैं उत्तर वा दक्षिण होकर गुजरनेवाले वृत्तको याम्योत्तर कहते हैं।

* यह नक्शा मिस्टर बाकर प्रसिद्ध कारीगरने निर्माण किया था यह महात्मा ईस्ट इण्डिया कम्पनीकी सेवामें था जिससे मुझे आशा है कि आगेको मेरे संग्रहकी पूर्तिमें यह उपयोगी होगा, विलायतके छपे राजस्थानमें वह नक्शा था भारतवर्षके किसी राजस्थानमें नहीं है।

इतने अपरिचित थे कि उदयपुर और चित्तौर यह विख्यात दो राजधानिये अच्छे नक्शेमें भी उलटे स्थानोंपर लिखी गई थीं, उदयपुरके पूर्व और ईशानकोणके मध्यमें चित्तौर होना चाहिये था, पर उसके बदले अग्निकोणमें लिखा गया था, जो ऊपर लिखी हुई मेरी बातका पूरा प्रमाण देता है । और दूसरी बातोंके लिये तो उसमें कुछ लिखा ही न था, १८०६ ईसवीके बने नक्शोंमें राजस्थानके पश्चिमी और मध्यवर्ती राज्य दिये ही नहीं गये; बहुत थोडे समय पहले यह बात उनकी समझमें आई थी कि राजस्थानकी सब नदियें दक्षिणको बहती हुई नर्मदामें जा मिलती हैं, भारतवर्षकी भूगोल विद्याके तत्त्वज्ञ प्रसिद्ध रेनल साहबने इस भ्रमको पहले शुद्ध किया था ।

टाड साहब कहते हैं—मैंने इस अपूर्ण बातको पूर्ण किया, पहिले पहल १८१५ ई० में नक्शा तैयार करके पिंडारोंकी लडाईके थोडे ही दिन पहले मार्किस आफ हैस्टिंगको भेंट किया, और उक्त सेनापतिको लाभदायक होनेके कारण मेरा दश वर्षका परिश्रम सफल हो गया; यहां मैं यह कहना भी अपना कर्तव्य समझता हूँ कि उसके पश्चात् जितने नकशे बने उन सबमें भारतके मध्य और पश्चिमके देश उसीके अनुसार लिखे गये हैं । *

उदयपुर जानेके लिये ऊपर लिखे दूतदलका मार्ग आगरेसे जयपुरके दक्षिण सीमामें होकर था, जिसका कुछ भाग डाक्टर डब्ल्यु हंटरने नापा था, और मैंने भी उनके खगोल निरीक्षासे नियत किये चिह्नोंको अपनी नापमें आधाररूप माना। इन्हीं हण्टर साहबका बनाया हुआ मार्गका एक उपयोगी नक्शा सेंधियाके दरबारमें भेजे हुए रेजिडेण्ट श्रीममर्सर महाशयके पास मौजूद था, १७९१ ई० में जिसके अनुसार राजदूत कर्नेल पामरने मार्ग तै किया था, उसके ठीक होनेका निश्चय कर मैंने अपनी पिछली पैमाइश उसीके सहारे आरंभ की, उसमें मध्य भारतके आगरा नर्वर झांसी दतिया सारंगपुर भोपाल उज्जैन आदि सब सीमान्त स्थान दिये गये थे, और

---

* सन् १८१७ ई० में पिंडारोंकी लडाईके समय मेरे नक्शेकी प्रतियां सब सेनाके विभागोंमें भेजी गयीं, उसकी हाथकी लिखी नकलें यूरोपमें गयीं, और फिर उसीके अनुसार दूसरे नक्शे तैयार होने लगे और वहांके लोगोंको यह ज्ञात हो गया कि इसका निर्माण करनेवाला ही उसकी सामग्री इकट्ठी करनेवाला है और मार्किस आफ हैस्टिंगका वह वाक्य पूरा हुआ जो उन्होंने इसके लिये कहा था कि ऐसी वस्तुका किसी मनुष्यकी निजसम्पत्तिरहना असंभव है, मुझे भय है कि दूसरे लोग इसके मालिक न बन बैठें, उसका कर्ता अपने परिश्रमसे पूरा लाभ उठावे इस इच्छासे उसने यह बात प्रगटकी कि गवर्नमेंटसे उसका प्रतिफल प्राप्त होनेका अभियोग आगेके निमित्त मुलतबी न रक्खा जाय; इसका यह प्रयोजन न समझना कि इस आलोचनासे ग्रन्थकारको आश्चर्य हुआ होगा, नहीं ! जब कि वह अपनेमें प्रथम संशोधककीका दावा करता है तो भी विद्याउन्नतिकी बाधा चाहनेवालोंमें वह अंतिम है कारण कि स्पर्द्धाका दरवाजा सहस्रोंके लिये खुला हुआ है ।

वहाँसे लौटते हुए कोटा बूंदी रामपुरा टौंक तथा बयानेसे लेकर आगरेतक दर्ज थे; खगोल निरीक्षणद्वारा यह सब स्थान कुछ न्यूनाधिक शुद्धिके साथ अपने स्थानोंमें स्थापित किये गये थे ।

हण्टर साहबके नक्शेने रामपुरा तक मुझको पथदर्शकका, काम दिया, यहांसे फिर उदयपुर तक नई पैमाइश आरम्भ की,जब सन् १८०६ जूनमासमें हम वहां पहुँचे तो विदित हुआ कि उस समय जो उदयपुरका स्थान बहुत ही अपूर्ण यंत्रों द्वारा नियत किया गया था उसके रेखांशमें केवल एक कलाका परिवर्त्तन जान पडा,और उसके अक्षांश में अनुमानसे पांच कलाका अन्तर जाना गया ।

पीछे हमारे साथकी सेना उदयपुरसे चित्तौरके समीप होती हुई मालवेके बीचमें होकर विंध्याचलसे निकलती हुई सब बडी बडी नदियोंका उल्लंघनकर खिमालसाके मध्य बुंदेलखण्डकी सीमापर पहुँची, वहां हमने कुछ समय तक विश्राम किया, पहले राजदूतके मार्गको इस सात सौ मीलकी यात्रामें मुझे दो बार उल्लंघन करना पडा और मुझे अपने नियत किये स्थानोंको हंटर साहबके नियत किये स्थानोंसे मिलता देखकर बडी प्रसन्नता हुई ।

१८०७ ई० में जब उस सेनाका पडाव राहतगढपर पडा तब मैंने यह विचारा कि मैं इस समयको जिसे मरहटे व्यर्थ खो रहे हैं हाथसे न जाने दूँ इससे मैंने थोडी सी सेना अपने साथ लेकर बेतवाके किनारे २ चंदेरी तकके अज्ञात स्थलोंमें होकर जानेका विचार किया और उसी रेखामें कोटेकी ओर पश्चिमको बढकर एक बार उन सब नदियोंके मार्गका पूरा पता लगानेकी, इच्छा हुई जो दक्षिण की ओरसे बहती हैं, तथा चम्बलके साथ काली सिन्धपार्वती और बूनासके संगमस्थानके पता लगानेकी उत्कंठा हुई; इस कामकी पूर्ति मैंने ऐसे समयमें की जो वर्त्तमान समयसे बहुत ही भिन्न था, कहीं लुटेरोंका सामना कहीं कोई विघ्न कभी २ आधी रातको डेरे उखाडकर कूंच करना पडता था; जो मार्गमें मुख्य मुख्य स्थान आये वह यह थे बेतवाके किनारे कोटडा, पूर्वी उच्च समभूमिपर खानियादाता सिन्धुनदीपर बडौदनगर, शाहाबाद पार्वतीनदीपर बाराकाली, सिन्धनदीपर पलायता; बडौदा, शिवपुर, चम्बलके मार्गपर पाली, रणथम्भोर करौली, मथुरा और आगरा थे ।

जब मैं यह कार्यकर मरहटोंके लशकरमें लौटा तो फिर भी मैंने अवकाश पाकर पश्चिमकी ओर भरतपुर कंठूमर सैत्री होतेहुए जयपुर टौंक,इन्द्र, इन्द्रगढ, गूगल, छपरा राधोगढ,आरीन, कुर्वाई,और भौंरासाके मार्गसे सागरतककी यात्रा की, इस एक सहस्र मीलकी यात्रा करके जब मैं लौटा तो मैंने मरहटोंकी सेना लगभग उसी स्थानमें पाई जहां मैं उसे छोड गया था ।

इस प्रकार सेंधियाके साथ १८१२ ई०तक बराबर घूमता और पैमायश करता रहा जब यह दरबार एक जगह जम गया तब मैंने उन देशोंकी पैमाइशका प्रबन्ध किया कि जहां मैं स्वयं नहीं जासका था ।

सन् १८१०-११ में मैंने नापनेवालोंके दो समूह एक सतलजके दक्षिणी मरुस्थलकी ओर दूसरा सिन्धुनदीकी ओर रवाना किया, पहला दल बडे योग्य पुरुष मदारीलालकी आधीनतामें रवाना हुआ जो पुरुष इस भूगोल विद्या सम्बन्धी ज्ञानमें बहुत ही चतुर हो गया था, इस भूगोलसम्बन्धी राजस्थानके विस्तीर्ण प्रदेशमें ऐसा कोई भी स्थान नहीं था जहां यह साहसी पुरुष न पहुँचा हो, इस उत्साही उद्योगी चित्ताकर्षी पुरुषने अपनी जानपर खेलकर मेरे कामको इस भांतिसे पूरा किया कि यदि कोई दूसरा पुरुष होता तो अवश्य मर जाता । *

दूसरा दल शेख अबुल बरकतकी आधीनतामें पश्चिमकी ओरको गया, जिसने उदयपुरके मार्गसे गुजरात सौराष्ट्र कच्छ लखपत हैदराबाद सिन्धकी राजधानीमें होकर सिन्धुनदी उतरकर नगर ठट्टेतककी पैमाइश की फिर उसके दहिने किनारेसे सेवानतक बढकर वहांसे सिन्धुनदीको फिर उल्लंघन कर उसके बायें किनारे होतेहुए खैरपुरतककी पैमाइश की, जो सिन्धके तीन सूबेदारोंमेंसे एकके रहनेका स्थान है, और मक्खरके टापूमें पहुंचनेके पीछे उमरसुराके रेतीले मार्गसे लौटकर जैसलमेर मारवाड और जैपुर होतेहुए नरवरके मुकामपर मुझसे आ मिला, यह भी बडा जानजोखमका कार्य था परन्तु शेख बडा साहसी और उद्योगी पुरुष था, तथा पढालिखा था तथा उसकी दिनचर्याकी पुस्तकमें बहुतसे भूगोलसम्बन्धी वृत्तान्त तथा उन देशोंके समाचार भी थे जिन देशोंमें होकर उसको जाना पडा था ।

मैं मरहटोंकी सेनामें सन् १८१२से १८१७ तक रहा इस अवसरमें दूर दूर देशोंके अच्छे२जानकार लोग पारितोषिककी इच्छासे सत्य वृत्तान्त कहनेके लिये मेरे पास आते थे १८१७ तक सिन्धुके कछार घाट उमरसुराके मरुस्थल वा राजस्थानके किसी भी पुरुषको मैं चाहे जब अपने पास बुला सकता था, वहांके प्यादे जैसा उन लम्बे स्थानोंका ठीक २ वर्णन करते हैं उसपर यूरोप निवासी तो कोई बिरले ही विश्वास करेंगे ।

यदि किसी एक देशके नापेहुए कोशका सही अन्दाजा लगजाय तो उसकी रेखा सरलता और शुद्धताके साथ समधरातलपर खैंची जा सकती है, मैंने यह बात पक्की तौरसे जानी है कि हिन्दू राजाओंमें भी सडकोंकी पैमाइश होती थी, इस काममें जैसा

---

* अन्तमें स्वास्थ्य बिगडनेसे यह पुरुष एकाएक मर गया पर जहांतक मुझे अनुमानसे विदित होता है कि वह विष देनेसे मरा ।

१ यह शेख मेरे पास नमूनेके तौरपर सिलीसियसजातिके पत्थरके टुकडे तथा बहुत पुराने सेवानकिलेकी ईंटका टुकडा और वहांके खण्डोंका कुछ जलाहुआ अन्न लाया जिसके लिये कहा जाता है कि वह विक्रमादित्यके भ्राता भर्तृहरिके समयका धराहुआ है, अनुमान होता है कि सिकन्दरके हमलेके समय यह अन्नजमीनमें गाडा गया हो पीछे आगसे जल गया हो।

यन्त्र लाया जाता था उसका वर्णन आबूमहात्म्यमें मिलता है, देशियोंके अनुमान किये हुए अन्तर भी किसी न किसी निश्चित नियमसे ही निकाले गये हैं, उनको निरा अनुमान मानना ठीक नहीं है।

मेरा सन्तोष मदारीलालके दलकी पैमाइशके सिवाय अन्य दलपर नहीं होता था, परन्तु सदा एक दलके ज्ञानको उसी स्थानको गमन करनेवाले दूसरे समूहकी सहायताका आधार बनाता था, और इस प्रकारसे फिर एक दूसरे दलकी जानकारी और कामकी बातोंसे जिनको वह मेरे पास कहते, प्रत्येक स्थानकी पूरी जांच परताल करनेसे मैं परम सन्तुष्ट होता था।

इस प्रकार इस बृहत् देशके मार्गोंकी रेखाओंसे मैंने कई जिल्दें भर डालीं, और जिन स्थानोंकी स्थिति निश्चय हो चुकी थी उनका सही नक्शा बना लिया और उसमें अपनी समस्त जानकारी लिख दी, विशेषकर मैं पश्चिमी राज्योंके वर्णन करता हूं, कारण कि मध्यदेश वा उस देशकी पैमाइश प्रत्येक ओरसे जो था तो पछाहमें ऊंची अर्वलीसे व दक्षिणमें विन्ध्यपर्वतसे निकलनेवाली चम्बल और उसकी सहयोगिनी दूसरी नदियोंसे सींचा जाता है, मैंने स्वयं ऐसी ठीक शुद्धताके साथ की है कि जबतक बडी पैमाइश त्रिकोणमितिके अनुसार दक्षिणसे आगे बढकर सारे भारतवर्षमें न हो तबतक यही प्रत्येक राजनैतिक और सैनिक पुरुषके लिये उपयोगी रहैगी।

इन देशोंमें उत्तर सतलज तक, और पश्चिममें सिन्धुनदीतक जो विस्तृत समान भूमि है और जहांपर भूगोलसम्बन्धी विषयोंका एक साथ समावेश करना उन स्थानोंकी अपेक्षा बहुत सरल है; जहां बीचमें पर्वती भूमि आगई है, इन भिन्न भिन्न रेखाओंको मैंने ऊपर लिखे नक्शेमें अंकित करके उसको त्रिकोणमितिसे जांचनेकी इच्छा की।

मैंने कर्मचारियोंको फिरसे इस कामके लिये भेजा जिससे वह भली प्रकार परिचित हो गये थे, उन्होंने वहां कार्य्य आरम्भ कर दिया, और मेरे अनुभवने भी इस विषयमें उन्हें बहुत चतुर कर दिया था, जहां जिसकी स्थिति नियत कीगई थी उनमेंसे प्रत्येकको उन्होंने केन्द्र मानकर २० मीलके अन्तर तक प्रत्येक नगरके जानेवाले मार्गको अंकित कर लिया चुने हुए स्थान बहुधा समत्रिबाहु और त्रिकोण बनाते थे, यद्यपि उनकी जानकारीको क्रमपूर्वक लगानां बडा कठिनकाम था, तो भी वह ऐसी रीति थी कि जिसके द्वारा देखनेवाला आप ही अपनी अशुद्धता जान लेता था, कारण कि ये रेखाएँ प्रत्येक दशामें एक दूसरेको काटती और परस्परको शुद्ध करतीं थीं, इस प्रकारके साधनोंसे मैंने उस अज्ञात देशमें कार्य साधा कि जिसका कुछ फल पाठकोंपर स्वयं प्रगट है, पर मैं क्या करूँ मेरा स्वास्थ्य मेरी इच्छाके विरुद्ध बहुतसा भाग मुझसे हठात् छुडाता है, जो विषय कि इस यात्रामें १० दश जिल्दोंमें मैंने लिखा था वह बहुत थोडेसे अंशमें दिया गया।

पहले ढांचेका नक्शा १८१५ ईसवीमें मैंने गवर्नर जनरलको भेंट किया था जो युद्धके समय बडा लाभदायक हुआ था, फिर युद्धके समय मालवेके विभागका एक दूसरा नक्शा बनाकर पिण्डारोंके युद्धके समय भेंट किया, जो वडा लाभ दायक हुआ, इसमें भी मुख्य २ विषय विंध्यपर्वतके साधारण स्थान उसमेंसे प्रत्येक नदीके निकलनेके स्थान पर्वत श्रेणीकी घाटियां जिनकी ऐसे युद्धके समय जानकारी प्राप्त करना बहुत आवश्यक थी सब अंकित था इसमें सीमाविभागमें कई देशोंकी सीमा भी बतलाई थी यह पेशवाके राज्यको नष्ट करनेमें बडा उपयोगी हुआ इस नक्शेके निर्माण करनेमें मैंने डाक्टर हंटरके और अपने नियत किये चिन्होंसे अनेक स्थानमें काम लिया था, मुझे इस बातसे बडी प्रसन्नता है कि यद्यपि उन स्थानोंमें कई बार पैमाइश हुई तो भी मेरी निश्चित की हुई रेखायें खास तौरसे उन नक्शोंमें स्थित रक्खी हुई हैं, यह उन नक्शोंकी बात है जो मुझसे पीछे बने हैं, और जो नई रेखा उनमें बढाई गई हैं, और भूगोलके ज्ञाता साहसी पुरुषोंने कई नये स्थाननियत किये हैं इस कारण मैं भी इस सुधारक अंशको बडी प्रसन्नतासे अपने नक्शेमें स्थान देता हूं ।*

१८१७ से सन् १८२२ तक मैंने कई पैमाइशी रेखा निर्माण कीं और यहां मैं अपने सम्बन्धी (कप्तान पी. टी. वाघ) दशवीं रजमट लाइट केवलरी बंगालके लिये कृतज्ञता प्रकाश किये विना नहीं रह सकता कि जिसकी सहायतासे मेरे भूगोल सम्बन्धी इस परिश्रममें सुधार हुआ, इस महोदयने एक वृत्ताकार पैमाइश की थी जिसमें मेवाडके लगभग सीमाके स्थान राजधानीसे आरंभ कर चित्तौर मण्डलगढ जहाजपुर राजमहल और लौटते हुए भिनाय वदनौर, देवगढसे लेकर जहांसे वह चले थे वहांतक आगये, इस पैमाइशके आधारपर मैंने सीमाके मध्यस्थान भी नियत किये, जिसके निमित्त मेवाड अपनी स्थिति पहाडियोंके कारण उपयोगी समझ रहा है ।

सन् १८२० ईसवीमें मैं अर्वलीको लाँघकर एक यात्रामें लगा जिसमें कुम्भलमेर पाली होकर मारवाडकी राजधानी जोधपुर, वहांसे मेरते होकर लूनीनदीके मार्गका पता लगाता हुआ उसके मूल स्थान तक अजमेर पहुँचा, और चौहान तथा मुगल राजाओंके इस प्रसिद्ध स्थानसे आगे वढकर भिनाय बनेडाके मार्गसे मध्यभागोंमें होता हुआ उदयपुर लौट आया ।

मेरे निश्चित किये जोधपुरके स्थानमें जो पश्चिम और उत्तरके भूगोल सम्बन्धी स्थलोंके नियत करनेमें मुख्य स्थानके समान काममें लाया गया है, इसमें अक्षांशमें केवल ३ कलाका और रेखांशमें इससे कुछ ही अधिक अन्तर पडा, जिसके द्वारा मैंने बीकानेरका

---

* इस नक्शेमें मालधा देशतक ही लिखा गया है । जिसका भूगोल कप्तान वैजरफील्डने बडे परिश्रमसे शोधकर सुधारा और बढाया, यद्यपि इस सब देशके भरनेको मेरी सामग्री ही बहुत थी परन्तु मैंने इसमें उन मुख्य स्थानोंको ही दर्ज किया जो इस राजस्थानसे मिलते हैं

स्थान नियत किया था वह मिस्टर एलफिन्सटन्‌के अंकित किये हुए चिह्नसे सर्वथा आनामिला, जो बात उसने काबुलमें एलचीके समान जाते हुए अपनी यात्राके वृत्तान्तमें लिखी है।

उदयपुर जोधपुर अजमेर आदिके स्थान जो मैंने निरीक्षणद्वारा नियत किये थे और हण्टर साहबके नियत किये अंकोंके सिवाय मैंने मिस्टर जे. बी. फ्रेजर खुरासानकी यात्रा नामक ग्रंथके निर्माताके दिये हुए थोडेसे स्थानोंसे भी काम लिया कि जिसने दिल्लीसे नागपुर और जोधपुर होकर उदयपुरकी यात्रा की थी।

और गुजरात×सौराष्ट्र प्रायद्वीप [दाक्षिण] कच्छदेशका स्थूल रूप जो विशेष कर सम्बन्ध दिखानेके लिये ही दर्ज किया गया है वह सर्वथा प्रसिद्ध भूगोल विद्याके जाननेवाले मृत जनरल रेनाल्डकी पुस्तकसे लिखा गया है; जनरल रेनाल्ड और मैंने इस एक ही भूखण्डके बडे भागका शोध किया, और उन देशोंके शोधको उत्तमताके विषयमें मेरी साक्षी उचित है, जिसमें वह स्वयं कभी नहीं गये, अब यह सिद्ध होगया कि उद्योग और ऊपर वर्णनकी हुई सामग्रीसे क्या क्या नहीं हो सकता। अब मैं शीघ्रतासे इन देशोंकी आकृतिका वर्णन करके इस निबन्धको समाप्त करूंगा इसके सूक्ष्म स्थानीय वृत्तान्त ऐतिहासिक विभागमें यथा स्थान लिखे जायँगे।

यदि राजस्थानकी आकृतिकी ओर पाठकोंका ध्यान दिलाऊं और उन्हें अलग खडे हुए आबू पहाडके सबसे ऊंचे गुरु[१] शिखरपर बैठाऊं तो भिन्न प्रकारकी आकृति दीखैगी और इस विस्तीर्ण भागपर जिसके पश्चिममें सिन्धुनदका नीला जल, पूर्वमें बेतसे ढकी हुई बेतवा (वेत्रवती) तक विस्तार है दृष्टिपात कराऊं तो भारतवर्षमें सबसे ऊंचे स्थानपरसे जहांसे अर्वलीश्रेणी १५०० फुट नीची है उसकी दृष्टि मेदपाट * [मेवाडका संस्कृत नाम] के मैदानोंमें पडपडैगी जिसके बीचमें मुख्य नदियां अर्वली पहाडसे निकलकर बेडस और बूनासमें जा मिलती हैं और पठार[२] वा मध्यहिन्दुस्तानकी उच्च सम पृथ्वी उनको चम्बलके साथ नहीं मिलने देती।

× सन् १८२२—२३ ईसवीके मध्य मेरी यात्रा उदयपुरसे सिन्धुनदीके मुहानोंके मध्यवर्ती देशमें हुई इसमें ऐतिहासिक और पुरावृत्तसम्बन्धी खोज विशेष की गई यह मेरी अन्तिम यात्रा सब यात्राओंसे विशेष लाभकारी हुई।

१ गुरु दत्तात्रेयकी यहां पादुका हैं यह तीर्थस्थान है।

* मेदपाट [मध्य—बीच] [पाट—चौडाई] टाड साहबका यह अर्थ ठीक नहीं यह देश मध्यपाट नहीं मेदपाट जिसका अर्थ मेद वा मेयलोगोंका राज्य है।

२ पट × मध्य × अर पहाड यद्यपि अरशब्दका अर्थ किसी ग्रन्थमें पहाड नहीं पर यह आरंभिक धातु जानपडती है जैसे अर बुद्द—बुद्दका पहाड, अर्वली—बलका पहाड इब्रानी भाषामें अरका अर्थ पहाड है यथा आरराद् यूनानी भाषामें यही शब्द ओरोस है। टाड, साहबकी यह उक्ति भी ठीक नहीं है, अर्वलीशब्द तो भाषा बोलचालमें आगया है, वास्तवमें यह आडावली नामवाला है—

विख्यात चित्तौरके समीप इस उच्च समान भूमिपर चढकर ठीक पूर्वी रेखासे दृष्टिको कुछ हटानेके पीछे रतनगढ तथा सींगोली होकर कोटाको जानेवाले सीधे मार्गपर दृष्टि डाली जाय तो देखनेवालेको उस उच्च भूमिके क्रमसे तीन मैदान दीख पडैंगे, जो कि मानो रूसी तातारके मैदानोंके छोटे दृश्य हैं और वहांसे यदि चम्बलके आरपार दृष्टि डालीजाय तो शाहाबादके किलेसे रक्षित हाडौतीकी उस पूर्वी सीमातक देखनेसे और वहांसे एक साथ इस उच्च समभूमिसे नीचे आकर छोटी सिंधुनदीकी तलैटीतक दृष्टि पसारने और फिर पूर्वकी ओर दृष्टि बढाते हुए चलैं तो वह दृष्टि बुन्देलखण्डकी पश्चिमी सीमामें मंचकी आकृतिवाले पहाडपर जाकर रुक जायगी।

मैं इस बातको अधिक स्पष्टकरनेके लिये आबूसे लेकर वेतवापरके कोटडातकके ऊपर वर्णन कियेहुए देशकी ऊँचाई निचाईका एक चित्र देता हूं। यह चित्र बातमापक यन्त्र द्वारा आबूसे चम्बलतक और चम्बलसे वेतवातक कीहुई मेरी पैमाइश और साधारण निरीक्षाओंका फल स्वरूप है इसका नतीजा यह है कि कोटडाके स्थानपर वेतवा सागरकी सतहसे एक सहस्र फुट ऊंची, और उदयपुर तथा उसके पर्वतोंकी बीचकी भूमिसे एक सहस्र फुट नीची है, जिस उदयपुरकी उंचाई समुद्रकी सतहसे दो सहस्र फुट है, और वह रेखा जिसकी मामूली दिशा गरम कटिबन्धसे कुछ ही दूरपर है वह अनुमान छः भौगोलिक अंश है, तो भी यह छोटासा देश अपने रहनेवालों और भूमि-सम्बन्धी गुप्त प्रगट [खनिज तथा वनस्पति] पदार्थोंसे और अनेक प्रकारके भेदोंसे भरा पडा है।

जिसका रुख अबतक पूर्वकी ओरको है, अपने उस उच्च स्थानसे अब हम उस रेखाके दक्षिण और उत्तर दृष्टि डालैं जो रेखा मध्यदेश अर्थात् राजस्थानकी मध्य-भूमिको लगभग दो समान भागोंमें बांटती है मेरे कहे मध्यदेशसे वह देश समझना चाहिये जो चम्बल और उसकी सहायकारी नदियोंके मार्गसे यमुनासंगम तक सब प्रकार उत्तम रीतिसे सीमाबद्ध किया गया है; और इसी प्रकार अर्वलीके ऊंचे परेके पश्चिमवाले देशके पश्चिमी राजस्थान नाम देना बहुत ही उचित है।

–अर्थात् रोकनेवाला वा बीचमें आया हुआ पर्वत, अर शब्दका देशमें कहीं भी पर्वत अर्थ नहीं है, टाड साहबकी यह निरी कल्पना है। अनुवादक.

१ इन देशोंसे मेरा भली भांति परिचय है और मुझे विश्वास है कि जब वेतवासे कोटातक वैसी पैमाइश की जायगी, तो परिणाममें बहुत ही स्वल्प अशुद्धता होगी, सो भी इतनी ही कि कोटा थोडा अधिक ऊँचा, और वेतवाके बहावकी भूमि कुछ अधिक नीची नियत कीहुई विदित होगी।

२ मध्य भारत नामक प्रयोग मैंने मध्य और पश्चिम सम्बन्धी भारतके नक्शेका नाम रखनेमें किया है, जो सन् १८१५ ई० में मार्क्किस--आफ हेस्टिंगकी भेंट किया था और तभीसे यह नाम पड गया.

३ यद्यपि अर्वलीका आकार मंचसा बना नहीं रहता, तो भी उसकी शाखा उत्तरमें देहली तक चली जाती है।

इधर दक्षिणकी ओरको दृष्टि पसारकर देखाजाय तो विन्ध्याचलकी दूरतक फैलीहुई श्रेणीपर जाकर दृष्टि रुक जायगी जो हिन्द और दक्षिणकी स्पष्ट सीमा है। यद्यपि आबूके गुरु शिखरपर चढकर देखनेसे विन्ध्याचल एक छोटी सी ऊंची श्रेणी-वाला जान पडैगा, और उसका कारण यह है कि उसके अवलोकनके लिये हमारा यह स्थान उपयोगी नहीं है, हां यदि दक्षिणकी ओरसे देखा जाय तो स्पष्ट दिखाई देगा, और इस उतारभरमें कितने ही एक ऐसे ऊंचे विषम स्थान हैं जो उतारके वैसे ही कठिन स्थलोंसे सैकडों फुट ऊंचे हैं।

अर्बलीको ही बिन्ध्याचलसे मिला हुआ कहा जा सकता है चंपानेरकी तरफ उसके मिलनेका स्थान है और अर्वलीका विन्ध्याचलसे निकलकर फैलना कहना अनुचित भी नहीं है, यद्यपि उत्तरकी अपेक्षा यहां उसकी ऊँचाई बहुत न्यून है; परन्तु दक्षिणभ-रमें लूनावाडा, डूंकरपुर और ईडरसे आरंभकर अम्बा भवानी और उदयपुरतक अपना विराटरूप धारण किये हैं। *

यदि आबूसे मालवेकी उच्चभूमिपर दृष्टि डालें तो विन्ध्याचलकी सबसे ऊंची चोटि-योंसे निकलकर उसकी काली मिट्टीके मैदान उत्तरकी ओरको बहनेवाले अनेक स्रोतोंसे कटेहुए दिखाई देते हैं, इनमें कई एक तो घुमाव खाते हुए घाटियोंमें जाकर टीलोंपर गिरते हैं, और दूसरी छोटी धारायें मध्यस्थानकी उच्च सम भूमिमें बलपूर्वक अपना मार्ग बनाती हुई चम्बलमें गिरती हैं।

यदि इसी प्रकार हम इस रेखाके उत्तर ओर दृष्टि डालें और कुछ कालतक अर्वलीके उच्चभागपर दृष्टि दौडावें और उसके एक भागको आबूपरके स्थानके रेखामें स्थित राजधानी उदयपुरसे लेकर ओगणा, पानडवा और मेरपुर होते हुए सिरोहीके पासवाले पश्चिम ओरके उतारतक देखें कि यह अनुमानसे साठ मील तक सीधी रेखामें चला गया, और जिस स्थानमें उदयपुरकी ओरके चढावसे लेकर मारवाडके उतार तक पहाडी पर पहाडियाँ और पर्वतों पर पर्वतोंके सिलसिले उठे हुए दृष्टि ले आते हैं, और इस सारे प्रदेशमें सिरोहीकी सीमातक प्राचीन जातिके लोग निवास करते हैं जो अपनी जंगली अवस्थाकी स्वतन्त्रतामें प्रसन्न रहते हैं, न वह किसीको कर देते न वे किसीके अधीन हैं * इनके मुखिया रावत उपाधिवाले एक ही

---

* बडौदेसे मालवातक यात्रा करनेवाले धरातलकी ऊँचाई निचाईके ज्ञानवाले इस बातको कि अर्वली और विन्ध्याचलका संबन्ध है अवश्य स्वीकार करेंगे।

१ बलवानोंकी रक्षाका स्थान यह नाम सार्थक है कारण कि इसने अपने पूर्व और पश्चिममें शासन करनेवाले प्राचीन सूर्य कुलोद्भव राजवंशको शरण दी थी।

* महाराणा उदयपुरके यह लोग आधीन हैं और कर भी देते हैं। सम्पादक।

२ रावतके सिवाय और भी उनकी उपाधियाँ हैं। अनुवादक।

वंशके होते हैं, ओगणाके रावतके अधीन पांच सहस्र धनुषधारी एकत्रित हो सकते हैं, और दूसरे भी इसी प्रकार कितने एक योधा एकत्रित कर सकते हैं । और चराई-का सुभीता देखकर बचावके स्थानोंके निकट यह छोटी २ जंगली बस्तियोंमें छिन्न भिन्न हुए रहते हैं ।

यदि कुम्भलमेरके किलेके ऊपरसे उस पर्वतश्रेणी पर दृष्टि डालें जो अजमेर तक उत्तरकी ओरको चली गई है तो उसका भव्याकार रूप थोडा ही दूरपर लुप्त हो जायगा। उसकी अनेक शाखा शेखावाटीके ठिकानों और अलवरमें ऊंचे २ कगारेवाले टीले बनकर चली गई हैं, जहांसे यह ऊंचाई कम होते दिल्लीतक समाप्त हो जाती है ।

[1]कुम्भलमेरसे अजमेरतकका सम्पूर्ण देश मेरवाडा कहाता है, और उस स्थानमें मेर जातिकी पहाडीजाति निवास करती है जिसका आचार व्यवहार और इतिहास हम आगे चलकर लिखेंगे। इसकी चौडाईका औसत ६ से लेकर १९ मीलतक है और उसकी उपत्यका तथा टीकरियोंपर लगभग १५० से अधिक गांव और खेडे पृथक् पृथक् बसे हुए हैं जहां जल और चारा बहुतायतसे होता है और उनकी आवश्यकताके अनुसार खेती बारी भी हो जाती है, यह बात सच है कि ऊंचे स्थानोंपर अत्यन्त ही श्रमसे खेती होती है, जैसे स्वीजरलैण्डमें राइन नदीपर अंगूरकी खेती होती है ।

गाडी चलनेके मार्गका इस पर्वतश्रेणीके आरपार कोई भी चिह्न दिखाई नहीं देता, इस कारण इसका आडा अर्थात् रोकनेवाला नाम बहुत ही सार्थक है कारण कि इस समयकी युद्धसामग्रीके सबसे प्रधान अंग तोपखानेको भी पश्चिम ओरके असाध्य उतारसे बचनेके निमित्त इस श्रेणीके उत्तरभागसे मोड कर ले जाना पडैगा । *

---

१ मेरी इच्छा इनके स्थानोंमें जानेकी थी और इनके स्वामियोंसे बातचीत होनेपर उन्होंने मुझसे कहा कि हम आपको सत्कारपूर्वक उन स्थानोंमें ले चलेंगे, और मुझे भी इस बातका पूरा विश्वास था कि सभ्यजातिकी अपेक्षा जंगली लोग अपने वचनका विशेष ध्यान रखते हैं, कई वर्ष पहले मेरे एक आदमी मदारीको इस देशमें होकर जाना पडा था । इन लम्बीवादियोंके पालमें दहाडका एक स्वामी मर गया था सब मनुष्य बाहर गये थे, उसकी विधवा स्त्री अकेली झोंपडीमें थी, मदारीने उससे अपना वृत्तांत कहा और मार्गमें जानेके लिये रक्षाके प्रबन्धकी इच्छा की तब उसकी स्त्रीने मृत पतिके तर-कससे एक तीर निकालकर उसको दिया और कहा इसको हाथमें लिये चले जाओ कोई भय न होगा इस तीरने वही काम दिया जो सरकारी कर्मचारी यूरोपनिवासीको मुहर छापवाला लम्बा चौडा पर-वाना देता ।

२मेरुशब्दका अर्थ संस्कृतमें पहाड है, इससे कुमल वा कुंभमेरका अर्थ कुंभाकी पहाडी वा पहाड है, ऐसे ही अजमेर अजयकी पहाडी अर्थात् जीतनेमें न आनेवाली पहाडीका है । " यह अनुमान टाड साहबका कल्पित है अजमीढका बसाया होनेसे यह अजमेर बिगडकर हो गया है । अनुवादक ।

* सेमरके रहनेवाले मेरे एक राजपूतमित्रने इसका ठीक ठीक वृत्तांत मुझसे कहा था यह उतारपर ही रहता था । थोडे दिनों पहले सिरोहीके पहाडी लुटेरे मेरे स्थानपर आक्रमण करके मेरी गायोंको ले—

यदि इस पर्वतश्रेणीपर दृष्टि डालें तो दोनों ओरकी घाटियोंकी रक्षा करते हुए इसके ऊपर कई किले दिखाई देते हैं और बहुतसे सोते निकलकर पर्वतश्रेणीमें अपना टेढा बांका मार्ग ढूँढते हुए नीचेकी ओरको बहते हैं। पूर्वकी बनास नदीमें बडेच, कोटेसरी, खारी, डाई यह सब नदियाँ मिलती हैं, जो गोडवाडके उपजाऊ प्रान्तको उर्वरा कर देती हैं, और खारी जलसे भरी लूनी नदीसे मिल कर यथार्थमें मरुभूमिकी सीमा कायम करती हैं, सकडी और बांडी इनमें मुख्य नदी हैं, और अन्य नदियाँ बारहों महीने नहीं बहतीं केवल वर्षामें ही बहती हैं; जिनके बहावका नाम रेला होता है, इस रेलेमें बहुतसा पहाडी खाद और मिट्टी होती है, जिससे नीचेकी पथरीली भूमि उपजके योग्य हो जाती है।

कुंभलमेरकी इस ऊंचाईसे इस पर्वतशिलाके क्रमरहित समूहका दृश्य चाहे कैसी ही विराट दृष्टिगोचर हो परन्तु यथार्थमें मारवाडके मैदानोंसे ही उसका पूर्ण महत्त्व अधिक स्पष्ट दिखाई देता है, जहां उसकी अनेकों चोटियाँ अनेक रूपमें एक दूसरेपर उठी हुई दृष्टि आती हैं, वा सघन वनसे ढके टेढे मेढे उतारवाले अंधेरिये ऊंचे नीचे दर्रादि स्थानोंको क्रूरदृष्टिसे मानो देख रहे हैं।

मनमें तो विचार उपस्थित होता है कि अर्बलीको हिंदुस्थानके ऐपिनाइन [इटलीदेशका पर्वत] अर्थात् प्रायद्वीपके मलवार तटके घाटोंसे सम्बन्ध रखनेवाला कहूं, मेरी इस कल्पनाको नर्मदा और ताप्तीका मार्ग उसके मध्य संकीर्ण भागमें होनेसे मिथ्या नहीं करता, जो उनकी भीतरी दशा और बनावटका मिलान करनेसे और भी दृढ हो सकती है।

अर्बलीकी प्राकृतिक बनावट ही उसका सामान्य रूप है ग्रेनाइट पत्थर बडे भारी ठोस तथा गहेरे नीलवर्ण स्लेटके पत्थरपर पडा हुआ अनेक प्रकारके कोने बनाता है, पूर्वकी ओरको इसकी साधारण ढाल है, यह स्लेट पत्थर अपने ऊपर स्थित ग्रेनाइट पाषाणकी सतह वा मूलसे कुछ ही ऊंचा पाया जाता है, कई प्रकारके कार्टज और प्रत्येक रंगतके सिसृटस् स्लेट पत्थर भी भीतरी घाटियोंमें बहुतायतसे पाये जाते हैं जिनके देखनेसे घरों और मंदिरोंकी छतका विचित्र सादृश्य दिखाई देता है, जिस समय उनके ऊपर सूर्यकी किरणें पडती हैं तब अपूर्व शोभा होती है मध्यमध्यमें नीच और सादनाइट जातिके चट्टान भी दिखाई देते हैं तथा अजमेरके पश्चिम और अनेक दिशाओंमें विस्तृत श्रेणियोंकी शृंगावली गुलाबी रंगके कांचके समान कार्टज जातिके पाषाणके विराट् समूहोंसे दृष्टिको चकाचौंध कर डालती हैं।

—गायें और सब माल लेकर बहुत ही समीपके विकट मार्गसे चले। यद्यपि पर्वतके पीछे ऐसे स्थानोंमें कूदते फांदते चले जाते हैं, पर वहां पहुंचकर वे गायें रुक गईं। उन मीनोंने उस कठिनाई को इस प्रकार मेट दिया कि एक गौको बधकर पहाडसे नीचेको लुडका दिया तब यह देख दूसरी गायें उसके पीछे २ उतर गईं।

अर्बली तथा उससे सम्बन्ध रखनेवाली पहाडियोंमें खनिज पदार्थोंकी कमी नहीं है, और यही धातुएं इस बातका प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि इन्हींके बलसे मेवाडके राणाओंने अपनेसे अधिक बलशाली बादशाहोंसे दीर्घकाल पर्यन्त मुकाबला किया और ऐसे बडे स्थान बनवाये जिनके कारण पश्चिमी शासक आजतक अपना गौरव समझते हैं, इन खानोंकी पैदावार राणाके निज आयमें वृद्धि करती हैं, आन दान खान इन तीन शब्दोंसे मिली एक कहावत है कि राजस्थानके राजाओंका मुख्य स्वत्व अर्थात् प्रजाकी उत्कट राजभक्ति, व्यापारसम्बन्धके कर तथा खानोंके स्वत्व संयुक्त रूपसे प्रगट है। किसी समय रांगकी खानें मेवाडमें बहुत उपजाऊ थीं, और कहते हैं उनमें चांदी बहुतायतसे निकलती थी, परन्तु खान खोदनेवाली जातिके नष्ट होने तथा राजनैतिक कारणोंसे धनकी प्राप्तिके ऐसे द्वार बन्द हो गये, यहां तांबा बहुत ही उत्तम निकलता है उसीके पैसे बनाये जाते हैं, सलम्बूर सरदार भी अपनी जागीरकी खानोंसे तांबा निकलवाकर राजाज्ञासे पैसे बनवाता है, पश्चिमी सीमापर सुरमा तामडा नीलमणि, लहसनियां बिल्लौर और छोटे मूल्यके पन्ने भी मेवाडमें पाये जाते हैं, यद्यपि मैंने इनका बहुमूल्य नमूना नहीं देखा तथापि राणाने मुझसे यह बात कही थी कि एक हमारे यहां बहुमूल्य, और प्रायः प्रत्येक प्रकारके खनिज पदार्थ पाये जाते हैं।

अब हम पठार वा मध्य भारतकी उच्च समभूमिकी ओर दृष्टि डालते हैं कि जिसकी आकृति इस मनोहर देशकी अपेक्षा कम उपयोगवाली नहीं है। यह दक्षिणकी ओर विन्ध्याचलसे और पश्चिमकी ओर अर्बलीसे पृथक् है, इस प्रकार इसकी रचना निश्चित प्रकारकी है, उसमें पिछली रचनाके वा ट्रैप जातिके पत्थर हैं, नक्शेमें इस उच्च समभूमिकी परिधि भलीभांतिसे दिखाई है इसका धरातल यद्यपि अत्यन्त ही विषमरूपसे दिखाई देता है, तथापि यह मंचाकृति रूपसे श्रेणियोंमें बराबर परिवर्तित होता चला गया है।

अब हम मण्डलगढसे आगे दक्षिणकी ओर पग बढाते हैं, और उच्च समभूमिसे पृथक् अलग खडे हुए चट्टानोंपर स्थित चित्तौडको पार्श्वभागमें छोडकर आगे जावद, दातौली रामपुरा (इसके निकट चम्बल पहले पठारमें प्रवेश करती है)

भानपुरा और मुकुन्दराकी घाटी [पहाडके बीचमें यह प्रसिद्ध है] होकर गागरौन [जिस स्थानसे काली सिन्धु अपने सामने आये हुए मंचाकार पर्वतमेंसे निकलकर इकलेरा जहां नेवज नदी पर्वतश्रेणीको तोडती जाती है] और मृगवास तक [जहां पार्वती नदी कम ऊंचाईका मौका पाकर मालवासे हाडौतीमें गमन करती है] वहांसे राघवगढ शाहाबाद, गाजीगढ और गसवानी होते हुए जादूवाटीतक चलैं तो जहां पूर्वमें चम्बलपर उच्च समभूमि समाप्त होती है, और मंडलगढसे आगे इसी प्रारम्भमें अपना पग बढावैं तो कुछ दूरपर ही उसका मंचाकार रूप लुप्त हो जाता है,

और कहीं २ पूर्वरूपमें दिखाई देनेवाली बडी बडी कतारें जैसे कि बूंदीके किलेमें इब-लाना इन्द्रगढ लाखेडी होती हुई रणथम्भोर और करौलीतक जाकर धौलपुर बाडीके समीप समाप्त हो जाती है।

इस भूमिकी ऊंचाई और टढाई इसको पश्चिमसे पूर्वकी ओर अर्थात् इन मैदानोंसे लेकर चम्बलके सतह तक पार करनेमें भलीप्रकारसे दिखाई देती है, कोटा और पाळीके घाटके मध्यवाली थोडी सी समानभूमिको छोडकर जहां यह बडी नदी चट्टानोंकी रुकावटोंमें होकर बडे जोरसे बहती हुई दीखती है।

रणथम्भोरके समीप यह उच्च समभूमि ऊंची २ कतारोंके रूपमें परिवर्तित हो जाती हैं जिसकी चोटियाँ धूपमें चमकती हैं, आकृतिमें यह विषम और शिखररहित है, यद्यपि यह पर्वतके सिलसिलेसे पृथक् है तथापि पहाडकी बनावट इसमें विद्य-मान है, यहांकी पृथक् सात श्रेणी सात पडासे कम नहीं हैं, इनमें होकर बुनास नदी जाते जाते चम्बलमें जा मिलती है, रणथम्भोरके आगे करौलीसे आरम्भ कर उस नदीतकका समस्त मार्ग एक असम मंचाकारकी भूमि है, जिसके शिखरके तटपर ऊत गिरि मण्ड-रायल और रणका विख्यात किला है, इसके पूर्वी पार्श्वमें एक दूसरा ढालू मैदान है कहते हैं कि सिंधुके सोतेके समीप लाटौती स्थानसे यह आरम्भ होता है और चन्देरी खनियादाना नरवर तथा ग्वालियर होता हुआ देवगढके समीप गोहदके मैदानमें समाप्त हो जाता है इसका उतार बुंदेलखण्ड और बेतयाकी वादीमें चला गया है।

यद्यपि मध्य भारतके धरातलमें यह देश प्रसिद्ध है तो भी इसकी चोटी विन्ध्याचलके शिखरके सामान्य ऊँचाईसे कुछ ही अधिक ऊंची और उदयपुरकी वादी तथा अर्बलीके मूलकी समानतापर है इसीसे इन दोनों श्रेणियोंका ढालू उतार ऊपर कही हुई उच्च और समभूमिकी जडोंतक विस्तृत और विषम है जिसका स्पष्ट प्रमाण नदियोंके साधारण मार्ग हैं; जैसा यहां जलके बहावका वेग कठोर चढानोंको तोडकर प्रबलतासे अपने मार्ग को बनाता है, ऐसे पृथ्वीमें बहुत थोडे विभाग होंगे यहां चार नदी बडे प्रबल वेगसे बहती हैं, जिनमेंसे चम्बल राइन [जो यूरोपकी रोन नदीके बराबर है जो ६५० मील लम्बी है] इन नदियोंने पर्वती जलकी सतहसे आरभकर चोटी पर्य्यन्त जो तीन सौ फीटसे छःसौ फीट तककी सीधी उंचाईपर है काट डाला है, जिससे वहांकी चट्टान मनुष्यके हाथकी टांकी दी हुईके समान प्रतीत होती है, इसके सिवाय पुरातत्त्वके ज्ञाता प्रकृतितत्त्वके प्रेमी जनको जिसे प्रकृतिकी ऐसी विषम दशा देखनेकी इच्छा हो रामपुरासे कोटातक ऐसे विशेष मनोरम स्थान बहुत थोडे मिलेंगे।

इस विषम भूमिका धरातल बहुत ही भिन्न प्रकारका है कोटेके समीप आगेको निकले हुए चट्टानपर कई एक स्थानोंमें तो वनस्पतिका चिह्न मात्र तक भी नहीं दीखता, तिस-

पर जहां वह तिरछा कोन निर्माण करता नदीके किनारोंतक पहुंचता है, वह भारत-वर्षकी सबसे अधिक उर्वरा और उपजाऊ भूमिमेंसे एक है । और वहां वृटिशभारतके प्रत्येक स्थानसे भी उत्तम जहां कृषि होती है, जैसा हिंगलाजके समीप नागराजका झरना है, वैसे उसके करारेदार पार्श्वभागोंमें अत्यन्त विचित्र दरे और गहरे गहरे खाले हैं इनसे छोटी नदियाँ निकलती हैं, और यहांकी कारीगरीका बहुतसा नमूना अब तक यहांके प्राचीन मंदिर और मकानोंमें विद्यमान है जो वहाँके दर्शन करनेवालोंके नेत्रोंको सफल करता है ।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है यह मध्यस्थ उंचाई पिछली रचनाकी है जिसको ट्रैप कहते हैं जहां चम्बलने इसको नग्न कर दिया है, वहां इसका रंग दूधके समान श्वेत है यह बडा कठोर है और मिलवा दानेदार है, यद्यपि उसपर टांकी कठिनतासे चल सकती है, तो भी बाडौली के पत्थरकी खुदाईका काम शिल्पकारके लिये उपयोगी हो सकता है; पश्चिमकी ओर भी उसका रंग सर्वथा श्वेत है, कटेके निकट श्वेत और बैंजनी मिला हुआ, तथा शाहाबादके समीप लाल और भूरा है जब जल-वायुका प्रभाव इसके पूर्वी ढलावपर पडता है तो यह खरदरा धरातल कंकरीला होनेका भ्रम दिलाता है ।

खानिज धातुओंके निमित्त यह बनावट उपयोगी नहीं है, यहां केवल सीसा और लोहा ही प्राप्त होता है, तथापि यह अनशोधी दशामें बहुतायतसे मिलते हैं, जिसमें लोहा अधिक मिलता है; कहाजाता है ग्वालिर प्रान्तमें बहुमूल्य खानें काले सुरमेकी हैं, जहांके नमूने भी मैंने मंगाये थे, परन्तु अब यह खानें बंद हैं देशी लोग खनिज पदार्थों के निकालनेसे डरते हैं यद्यपि उनके यहां रांगा सीसा तांबा बहुतायतसे पाये जाते हैं, तो भी वे अपने रसोई के वर्तन बनानेकी सामग्रीके लिये भी यूरोपवालोंके मुखकी ओर देखते हैं ।

छोटी पहाडियोंका वर्णन छोडकर अब मैं अपने पाठकोंका ध्यान रजवाडेके धरा-तलकी आकृतिके इस निरीक्षणसे निकलनेवाले केवल एक उपयोगी फलकी ओर दिलाऊंगा ।

दो ढलाव मध्य भारतमें स्पष्टरूपसे दिखाई देनेवाले हैं जिनमेंका मुख्यढलाव बडे प्राकाररूप अर्वलीसे (जो रेतीके बहावको उन मध्यमें स्थित मैदानोंमें जानेसे रोकता है जो चम्बल तथा उसकी शाखाओंसे कटे हुए हैं) बेतवा तक चला गया है, यह पूर्वसे पश्चिम को है और दूसरा मध्य देशके दक्षिणी पृष्ठ पोषक विन्ध्यपर्वतसे यमुनातक है यह दक्षिणसे उत्तरको है ।

हम यह भी कह सकते हैं कि यमुनाके बहावका वह मार्ग उस बहुत बडी वादीके मध्यमें स्थित दरेकी सूचना देता है जिसका उत्तरकी ओरका उतार-

हिमालय और दक्षिणका विन्ध्याचलके मूलसे है, यद्यपि मेरे पास साधनकी कमी नहीं है तो भी मेरी यह इच्छा नहीं है कि मैं विस्तीर्ण और अनेक रूप धारण करनेवाले नर्मदाके मार्गोंका वर्णन करूं कारण कि जिस कालमें हम भीष्मप्रधान विन्ध्यपर्वतके शिखरपर नर्मदाके कछारमें उतरनेके निमित्त चढते हैं तभी हमसे राजस्थान और राजपूतोंका सम्बन्ध छूट जाता है और हमारा मिलाप इस देशकी मुख्य प्राचीन जातियोंसे हो जाता है जो इस भूमिके पहले स्वामी हैं इनका वर्णन मैंने दूसरोंके निमित्त छोड दिया है और अपने वर्णनको मैं मध्यभारतकी नदियोंमें प्रधान नदी चम्बलसे आरम्भ करके उसीमें समाप्त करूंगा।

पहाडियोंके समुदायके बीचमें विन्ध्याचलके एक अति ऊँचे स्थानपर चम्बलके सोते हैं, उस स्थानपर इनका नाम जान पाया है, और उसी स्थानसे चम्बल चम्बेला और गम्भीर यह तीन सोते निकलते हैं और दाक्षिणी पार्श्वभागसे दूसरी नदियां निकलती हैं, जो नर्मदामें जाकर गिरती हैं और क्षिप्रानदी पीपलोदासे छोटी सिन्धु * देवासमे और दूसरी छोटी छोटी नदियां उज्जैनके पास होकर सबकी सब चम्बलमें पृथक् पृथक् स्थानोंपर उसके उच्च समभूमिमें प्रवेश करनेसे पहले मिल जाती हैं।

बागडीसे काली सिंधु और सोडादिया राघोगढसे उसकी छोटी शाखा, मोरसूकडी और मागडदासे नेवज वा जान्नीरी; और आमलखेडाकी घाटीसे पार्वती निकलती है, जिसकी दौलतपुरसे विशेष पूर्वी शाखा निर्गत होकर फरहर स्थान पर उसके साथ जा मिलती है, विन्ध्याचलके ऊंचे शिखरपर इन सबके निर्गत स्थान हैं, जहांसे यह उच्च समभूमिमें अपना मार्ग निकालकर ऊंचे स्थानोंपरसे गिरती हुई अन्तमें नुनेरा और पालीके घाटोंपर चम्बलमें मिल जाती हैं यह सब दाहिनी ओरसे मिलती हैं।

बूनास नदी बाईं ओरसे इसके जलको बढा रही है जो अर्वलीसे निकलकर बारहों मास बहनेवाली छोटी छोटी नदियों और उदयपुरकी झीलोंसे निकलनेवाली बेडचनदीका जल लेकर इसमें आन मिलती है, मेवाड उदयपुरकी दक्षिणी सीमा

---

* यह चौथी सिन्धु है, पहली सिन्धु, छोटी सिन्धु काली सिन्धु और चौथी लाटोतीके समीप सिरोजके ऊपरवाली पश्चिमी उच समभूमिपर बहनेवाली सिन्धु। सिन् शब्द सीथियन नदी वाचक है यह अब प्रचलित नहीं है।

१ कालीसिंधुका गागरौनकी चट्टानोंके समीप और पार्वतीनदीका प्रपात छपराके समीप बहुत ही मनोहर और देखने योग्य है। यह वहाँसे पांच मील है छपरामें दो बार ठहरनेपर भी मैं वहां न जा सका।

और करौलीकी ऊंची भूमिको सींचनेके पीछे यह बूनास नदी रामेश्वरके पवित्र संगमपर चम्बलसे मिलनेके निमित्त दक्षिणको मुडती है इस चम्बलमें कई छोटी २ नदियाँ मिलती हैं जिनका उल्लेख उपयोगी नहीं है और सहस्रों चक्कर खानेके पीछे यह इटावा और कालपीके मध्य पवित्र त्रिवेणी * स्थानके संगमपर यमुनासे मिल जाती है।

छोटे २ घुमावोंको छोडकर चम्बलकी लम्बाई पांच सौ मीलसे अधिक होगी, इसके किनारोंपर भारतवर्षके प्रत्येक जातिके लोग निवास करते हैं सेंधिया, सिसोदिया, चन्दावत, जादू, गोड, हाडा, सीकरवाल [गूजाट] तवर, चौहान, भदौरिया, कछवाहा, सेंगर बुंदेला यह निर्धनीसे लेकर बडे धनियोंतक चम्बल और कुमारीके मध्य अपने समूहों सहित बसे हुए हैं। इस प्रकार अर्वलीके पूर्व ओरवाले तथा मध्यभागवाले राजस्थानकी आकृतिका वर्णन कर अब मैं मरुभूमिकी रेतीली पहाडियोंपर पाठकोंको ले जाकर अर्वलीके पश्चिम विभागपर सामान्यरूपसे सिन्धुके कछार तकका दृश्य दिखाऊंगा।

मरुस्थल देखनेके कौतुकियोंको आबूपर ही खडा रहना चाहिये, जिससे मरुस्थलके टीबोंकी कठिन यात्रा न करनी पडे, मरुस्थलकी मनोहर वस्तु खारे जलवाली लूनी नदी है, जो अर्वलीसे निकलकर अपनी शाखाओं सहित जोधपुर राजके सर्वोत्तम भागको उपजाऊ बनाती है, और हिन्दू जिसको मरुस्थली कहते हैं, बालूके उस बडे मैदानकी सीमाको सदा अपना स्थान बतलानेके लिये स्पष्टतासे अंकित करती है, मरुस्थलका ही अपभ्रंश मारवाड है। पुष्कर और अजमेरकी पवित्र झीलों तथा पर्वतसरसे निकलनेवाली लूनी नदीकी लम्बाई उसकी अधिक दूरवर्ती शाखासे लेकर उसके पश्चिमके विस्तारयुक्त खारे दलदलवाले मुहानेतक ३०० मीलसे कुछ अधिक है।

सिकन्दरके इतिहासलेखकोंने अपनी पुस्तकोंमें एरिनस शब्द लिखा है वह हमको रैण, वा रिणका अपभ्रंश विदित होता है, उसका प्रयोग अबतक बडे दलदलके लिये किया जाता है जो लूनी नदी तथा घाटके दक्षिणी मरुस्थलसे बहकर आनेवाली वैसे ही खारी जलसे पूर्ण नदियोंके बहावकी मिट्टी आदिसे बना है। यह रण १५० मील लम्बा है, और भुजसे बालियारी तक उसकी अधिकसे अधिक चौडाई ७० मीलके लगभग है, यात्री उसी मार्गसे इसको पार करते हैं कारण कि इस

---

* जमुना चम्बल और सिन्धु। १ यह दो जाति राजपूत नहीं हैं।

२ यह रण कदाचित अरण्य वा मरुस्थलका अपभ्रंश हो वर्त्तमान रीतिकी अपेक्षा यूनानियोंके लिखनेकी रीति अधिक सही है।

खारे दलदलके मध्यमें उनके ठहरनेके लिये एक पृथक् मनोहर भूमि है, गर्मीके दिनोंमें उसकी धोखा देनेवाली सतहपर जिसमें घोर भयानक रेती भरी हुई है, खारी नूनकी एक बडी उज्ज्वल पपडीके सिवाय और कुछ दिखाई नहीं देता; वर्षामें वहां मैला और खारी दलदल हो जाता है, बहुत स्थलमें इसकी गहराई ऊँटकी छातीतक होती है, यहां एक खारी कावा मनोहर स्थान है, यहां ऊँटके लिये चारा और यात्रियोंको विश्राम मिलता है ।

इस खारी दलदलके सूखे किनारोंपर मरीचिका भ्रमका दृश्य विलक्षण रूपसे दिखाई देता है जो थके यात्रियोंके सिवाय सबका मनरंजन करता है; कारण कि वहां पंक्तिबद्ध बुर्जों, शान्तिमय बस्तियों और सघन कुञ्जोंमें स्वर्गके समान विश्राम स्थानोंको अवलोकनकर उसकी ओर मृग व्यर्थ धावमान होता है और ज्यों ज्यों यह आगे बढता है त्यों त्यों वह दृश्य पीछे हटता जाता है यहांतक कि सूर्य अपने तेजसे इन मेघसे ढके बुर्जोंको लुप्त करके उसकी दौडको भी निष्फल कर देता है ।

मरुस्थलमें प्रायः ऐसे दृश्य बहुत दिखाई देते हैं, और जहां विशेषकर लवणकी पपडियां होती हैं वहां यह दृश्य अधिकाईसे दीखते हैं परन्तु भिन्न २ हेतुओंसे यह भिन्न २ प्रकारके होते हैं, कभी २ यह प्रबलतापूर्वक आकार बढाकर प्रतिबिम्ब डालनेवाली वस्तु एक लम्बीसी दीखती है पहले यह घनी और अपारदर्शक लम्बी होती है; फिर ज्यों ज्यों गरमी बढती है, त्यों त्यों पतली होती जाती है, और जब बहुत ही गरमी पडती है तब यह अत्यन्त सूक्ष्म होकर पतली पड जाती है और भाफ होकर उड जाती है; यह दृष्टिसम्बन्धी धोखा वा कौतूहलसी कोट अर्थात् शीतकालका किला कहाता है; राजपूत लोग इसको भली भाँतिसे जानते हैं और विशेषकर यह शीतकालमें ही दीखाता है और यह भी संभव है, कि इसी बातसे " शाटोओं एसपानी " कल्पित मनोरंजक दृश्यकी उत्पत्ति हुई हो, जो पश्चिममें विख्यात है । *

---

१ यहांपर गोरखर घूमते हैं वे जैसे अरबोंके पूर्वज इअके समयमें थे वैसे ही अब भी हैं उनका स्थान जंगल वा खारी स्थानोंमें होता है यह भीडभाडसे घबराता है और हांकनेवालेकी चिल्लाहट पर कुछ ध्यान नहीं देता । जाबकी पुस्तक ३४ । ६ । ७

* मैंने इसको हिसारके टूटे फूटे किलेकी चोटीपरसे देखा है, जहांसे दूरतक दृष्टि पहुँचती है जिसके रोकनेके लिये छोटे जंगलोंके सिवाय कोई आड नहीं है, पृथ्वीके सम्पूर्ण वृत्तभरमें गढ़लों बुरजों और हवाई स्वर्गीय स्तम्भोंकी एक ऐसी कतार बारी बारीसे अपनी क्षणिक स्थितिको समाप्त करती थी जिसका ध्यानमें आना बडी कठिन बात है, धाट और उमरसुमराके मैदानोंमें जहां गडरिये भेंड चराया करते हैं और जहां खारदार वृक्ष उगते हैं वहां पडतोंकी स्थिति एक सूत्रमें होनेसे जलमरीचिका विशेषकर प्रगट होती है यह वही भ्रांति है जिसको एक ईश्वरभक्त भविष्यद्वक्ताने कहा है,-

इस रेतीले प्रदेशका आरम्भ दक्षिणमें लूनीनदीके उत्तरी किनारेसे और पूर्वमें शेखावाटीकी सीमासे होता है, यह रेतीले मैदान ज्यों ज्यों पश्चिमकी ओर बढोगे त्यों त्यों परिमाणमें विशेष बढते जायँगे बीकानेर जोधपुर जैसलमेर यह रेतके ही मैदानमें हैं, इस देशका सम्पूर्ण यह विभाग रेतीले मैदानके अवलम्बवाला है, जितने कुएँ जोधपुरसे अजमेरतक खुदाये गये सबमें ही एक प्रकारका रेत कंकर और खडियाँ मट्टी निकली ।

जैसलमेरके चारों ओर भी मरुस्थल है, और जिसमें गेहूं जौ तथा चावल उपजते हैं, राजधानीके समीपके इस विशालको मरुस्थलकी उर्वराभूमि कहा जाय तो अनुचित न होगा, यहांका दुर्ग पहाडी श्रेणीपर कई सौ फुटकी ऊंचाई पर निर्मित है, जिसका पता उसकी दक्षिणी सीमाके परे पुराने चौहटोंके ऊँडहरोंतक बताया जाता है, जो जमीपर निर्मित है और जिसके विषयमें यह कहावत है कि हापड़ (जो जालौरके चौहान राजा काडणदेवके भाई सालमसिहका पुत्र था, और संवत् १३६८ में विद्यमान था) जातके राजाकी राजधानी था अब जिसका कोई दूसरा चिह्न नहीं मिलता, और यह भी सम्भव है कि कदाचित् यह टीबा उस पहाडी से मिला हो जो जालौरके उर्वराप्रान्तमें होकर गई है, और कदाचित् यह आबूके मूलसे प्रगट होनेवाली एक शाखा हो ।

यद्यपि यह सब देश मरुस्थल कहाते हैं(जो रेतीले मैदानोंका एक प्रभावोत्पादक और लाक्षणिक नाम है) तथापि यह नाम उसी भागके लिये प्रयुक्त है जिसपर राठौरजातिका अधिकार है ।

लूनीनदीके बालोतरा स्थानसे आरंभकर सब थाट उमरसुमरा और जैसलमेरके पश्चिम ओरके विभाग दाऊद पोत्रा तथा बीकानेरकी दक्षिणसीमाओंके बीचके इस चौडे खण्डमें बिलकुल उजाड है, पर सतलज नदीसे आरंभ कर रणतक पचासले सौ मील तककी चौडाई और पांच सौ मीलकी लम्बाईवाले देशमें पृथ्वीके अनेक भाग उपजाऊ पाये जाते हैं, जहाँ सिंधुके कछारमें आकर गडरिये अपनी भेडें चराते हैं यहांके जलझरनोंके नाम तीरपार रार और दर हैं यह सब जलके वाचक हैं, जिनके समीप मरुस्थलके रहनेवाले सोडा, राजडा मांगलिया और सहराई लोग एकत्रित होते हैं । *

–कि रेगिस्तानका मृगतृष्णारूपी जल सच्चा पानी हो जायगा। मरुस्थलनिवासी इसको चित्राम कहते हैं यह चित्रका अर्थ रखता है और इसके लिये यह नाम देना उचित ही है (बाटोआ एस्पानी मनके कल्पित महत्त्वके विचार मनमोदक)

* सहराई सहरा अर्थात् मरुस्थलसे बना है इस कारण सहराजन वा सहरासन सहरा मरुस्थल–

इस स्थानमें मैं सज्जीखारके क्षेत्रों लवणकी झीलों अथवा मरुस्थलोंके दूसरे पैदावारों अर्थात् वनस्पति और खनिज पदार्थोंका कथन नहीं करूँगा यद्यपि कानसम्बन्धी वर्णन शीघ्रतासे किया जा सकता है कारण कि जैसलमेरके समीप पीले पाषाणकी केवल एक ही पहाडी है, जिसका पत्थर आगरेकी उस प्रसिद्ध इमारत शाहजहां बेगमके 'ताज' नामक रोजेमें बहुतायतसे लगाया गया है ऐसी बनावट अरबदेशमें मकानोंकी बहुधा होती है ।

अब यहां न तो सिंधुनदीके कछारका वर्णन किया जायगा और न मरुस्थलके रेतीले टीबेकी अन्तिम सीमावाले उस नदीके पूर्वीभागका वर्णन करूंगा, किन्तु यहाँ अब इतना ही कहना बहुत होगा कि वह क्षुद्र नदी जो भक्खरके टापूसे सात मील दूर उत्तरमें दाराके समीप सिन्धुसे पृथक् होकर लखपतके घोरे सागरमें गिरती है और उस कछारके इस पूर्वी भागकी चौडाई प्रगट करती है जो मरुदेशकी पश्चिमी सीमा बनाता है, यदि कोई मुसाफिर इस खीची सिन्धुकी समानभूमिसे आगे पूर्वकी ओरको पग धरै तो वह मरुस्थलकी सीमाको उसके उन ऊंचे २ रेतीले टीवोंके सहित स्पष्टरूपसे देख लेगा, कि जिनके नीचे सोकडा नदी बहती है जो सामयिक वर्षाकी बाढोंके सिवाय प्रायः सूखी रहती है यह बालूके टीवे भी बडे २ ऊंचे ऊंचे हैं और मीठी नदी अर्थात् मीठा महाराण (सिन्धुनद) के बाढकी सीमा कहे जा सकते हैं मीठा महारण नदीका एक सीथियन तातारी नाम है जिसमें पंचनदसे आरंभ कर सागरतककी सिन्धुनदी तकका ही बोध होता है ।

इति ।

—और जदन मारना इन दोनों शब्दोंका संक्षिप्त अपभ्रंश है राहजनी—अर्थात् राहमें मारना । राहवर—मार्गपर पिंडारोंने इसको बिगाडकर लावर किया है, लावरके अर्थ उनके यहां लूटमारके हैं ।

१ घाग्गरनदीकी धाराका नाम साकडा है ।

२ महाराण सिथियन नहीं किन्तु मरुभाषाका शब्द है और यह महार्णव शब्दका अपभ्रंश बोध होता है जिसके अर्थ महासागरके हैं । महाराणा—मीठे जलका समुद्र ऐसा अर्थ हुआ । अनुवादक.

अनुवादक-पं० बलदेवप्रसाद मिश्र-मुरादाबाद ।
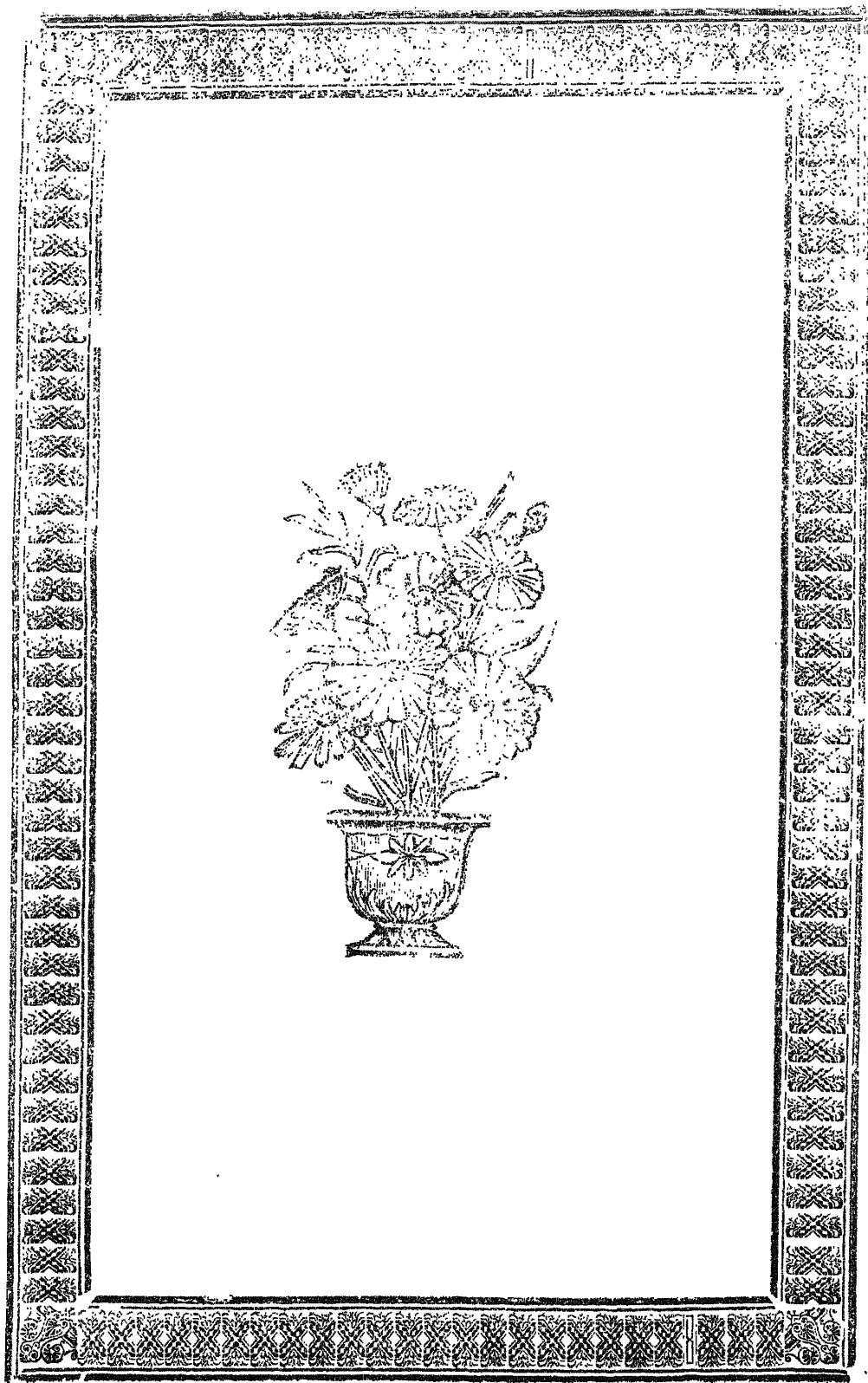
विज्ञप्ति।

प्रियभ्रातः !

यह तुम्हारा अनुवादित राजस्थानका इतिहास प्रथमभाग छपकर तैयार हो गया है, यह तुम्हारे परिश्रमकी एक अमूल्य सामग्री है, इसके कितने ही अंश तुमने मुझे अनुवाद करते समय सुनाये थे, इसके शीघ्र छपनेकी तुम्हें बडी ही लालसा थी पर वह तुम्हारी अभिलाषा उस समय पूर्ण न हुई। इस ग्रन्थके सम्पादन करनेके लिये आपने बहुत कुछ सामग्री सम्पादन की थी, जो तुम्हारे असमय परलोक सिधारनेके कारण स्वार्थीजनों द्वारा छिन्नभिन्न हो गई। तुम्हारे इस कार्यके सम्पादनमें अनेक विघ्नोंका सामना हुआ। जिनके ऊपर आपका बडा प्रेम था वे भी सहायतासे मुख मोड गये, जिनके लिये आप सब कुछ करते तथा निरन्तर जिनके कार्य करते थे वे भी निष्प्रयोजन इसमें एक पंक्ति लिखने तकको भी सहमत न हुए। इधर तुम्हारे वियोगने हृदयपर जैसा आघात किया वह अकथनीय है। एक वर्ष तक तो यह तुम्हारा ग्रन्थ उठाता और धरता रहा, कुछ करते न बना, इधर "श्रीवेंकटेश्वर" यन्त्रालयाध्यक्ष सेठजी श्रीयुत खेमराज श्रीकृष्णदासजीके अनुरोध-से [जिन्होंने तुम्हारी कीर्ति अचल रखनेके लिये इस ग्रन्थको प्रकाशित किया तथा और भी कुछ करनेका विचार है] मैंने मनको सँभाला और इस तुम्हारे ग्रन्थको सम्पूर्ण अवलोकन कर शुद्ध किया, मैं जानता हूँ कि तुम्हारे सामने यह ग्रन्थ प्रकाशित होता तो तुम बडे ही प्रसन्न होते कारण कि तुम्हारा परिश्रम इसमें सबसे अधिक हुआ है, अब यह प्रथम भाग तैयार हो गया है। वेद, शास्त्र और आर्ष वचनोंके विश्वासपर एक पुस्तक आपके पास भेजता हूँ, तुम स्वयं पढ-ना और जो तुम्हारी नई मित्र मण्डली हो उसको सुनाना और जो पुस्तक और चाहियें तो और भी मँगाना, तुम्हरी तारा चन्दा तुम्हें बहुत याद करती हैं, उन-का भी स्मरण करना। मुझे खेद है कि तुम अपनी अन्नपूर्णाको न देख सके न उसको तुम्हें देखनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। आपके विना मैं अपनी दशा क्या कहूँ? 'हृदय न बिदरेउ पङ्क जिमि, बिछुरत प्रीतम नीर' वा 'मिलहिं न जगत सहोदर भ्राता' आप तो पहले ही लिख गये कि, "चित्तौरके संग बांह द्विज बलदेवकी

गहि लीजिये'' पर हमारा तो आपके सिधारनेसे सब कुछ गया, तुम्हारे निकट रहनेके कारण मैं तुम्हारे गुणोंको जान सका, आपके निमित्त तुम्हारे विदेशी हितैषियोंने आंसू बहाए पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी, बाबू बालमुकुन्द गुप्त–भारतमित्र, "श्रीवेङ्कटेश्वरसमाचार'' राघवेन्द्र, ज्ञानसागर, मोहिनी आदिने तुम्हारे गुण बखाने पर मैं तो कुछ भी न जान सका; मेरी वही दशा रही 'घर आये भगवान, जाने हम न अहीरकर' अच्छा तुम भगवान् रामचन्द्रके समीप सुख पाओ मैं यह ग्रन्थ आपके पास भेजता हूं स्वीकार करना ।

मुरादाबाद.
चैत्रशुद्धपूर्णिमा
संवत १९६४.

तुम्हारा मिथ्या स्नेही–वज्रहृदय
ज्वालाप्रसाद.

राजस्थानका सूचीपत्र ।

ग्रन्थकी पूर्ति ।

श्रीगणेशाय नमः ।

राजस्थानका इतिहास ।

(राजपूतजातिका वृत्तान्त ।)

प्रथम अध्याय १

पुराणमें कहा हुआ सूर्य और चन्द्रवंशीय राजाओंका वृत्तान्त.

दोहा–वायुसूनु खलदलदलन, वंदों बारंबार ।
राजपूत गुण कहत कछु, द्रवहु समीरकुमार ॥ १ ॥
टाडमहोदय ग्रंथ जो, आंगल भाषामाहिं ॥
लिख्यो जु चेष्टाकर बहुत, जाहिं पढे भ्रम जाहिं ॥ २ ॥
सो भाषाकर कहत हों, अपनी मति अनुसार ॥
भ्रम प्रमाद जहँ होय कछु, बुधजन लेहिं सुधार ॥ ३ ॥
परमपूज्य गुणनिधि महा, ज्ञानी परम सुजान ॥
श्रीज्वालापरसाद यह, शोध्यो ग्रंथ महान ॥ ४ ॥
सेठ शिरोमणि विज्ञवर, अवनि अखण्ड प्रताप ॥
खेमराज छाप्यो मुदित, ग्रंथ बम्बई छाप ॥ ५ ॥

सर्वज्ञ सच्चिदानंद सर्वान्तर्यामी परमात्माको बारंबार प्रणाम करके राजस्थानका इतिहास आरंभ किया जाता है, कि जिस समय कुरुक्षेत्रकी महासमरभूमिमें वीरपूज्य आर्य नृपतिगण अनन्त निद्रामें शयन कर गये थे, उनके साथ २ इस देशका इतिहास तथा बहु-

तसा विद्याभंडार भी लुप्त हो गया था, जिन भारतवीर क्षत्रियोंके आगे एक दिन समस्त भूमंडल कम्पित होता था, भविष्यमें उन्हींके वंशमें होनेवाले लोग राजपुत्र कहलाये, इस राजपुत्र शब्दका ही अपभ्रंश राजपूत है, भारतवर्षके जिस विशाल देशमें राजपूत जातिका निवास है उसका शुद्ध नाम राजस्थान है, प्रचलित भाषामें इस स्थानको राजवाड़ा वा रायथाना कहते हैं इस समय अँगरेजोंने राजपूत राजको समझानेके निमित्त राजपूताना शब्द उत्पन्न किया है । सो केवल रायथाने शब्दका अपभ्रंश है ।

मुसलमान विजेता शहाबुद्दीन गोरीने जिस समय भारतवर्षको आधीनतारूपी जंजीरमें बांधा था उस समय राजस्थानकी सीमा कहांसे कहांतक पहुंच गई थी, इस बातका अनुमान एक प्रकार किया जा सकता है, उस समय राजस्थानकी सीमाने गंगा यमुनाको लांघकर हिमालयके चरणतलको चुम्बित किया था, परन्तु एक बातका अनुमान करना इस समय कठिन है कि, उस भारतविजेताके आनेसे पहले इस राजस्थानकी सीमा कहांतक फैली हुई थी. प्राचीन मालवा और गुजरात राज्यकी धारानगरी और अणहिलवाड़ाको नष्ट करके जब मुसलमानोंने इन नगरोंकी ध्वंसराशिपर अहमदाबाद और मांडूनगर बसाये उस समय राजस्थानकी सीमाका कितना विस्तार था सो आगे चलकर विदित होगा, उस समय पूर्वमें बुन्देलखण्ड, दक्षिणमें विन्ध्याचल पर्वत, पश्चिममें सिन्धु नदके विस्तारवाली खादिरभूमि और उत्तरमें शतलजके दक्षिण मरुभूमितक फैला हुआ था, वह भूमिभाग ३५०००० मील मुरब्बा था इस चार सीमावाले पृथिवीके बडे भागमें जो राजपूत नामवाली वीरजाति वास करती थी वह किस वंशमें उत्पन्न हुई है, इसका विचार आगे चलकर करते हैं ।

सूर्य और चंद्रवंश संसारमें यह दो अति प्राचीन और प्रसिद्ध राजवंश हैं, सूर्य और चंद्रवंशसे पहले भी भारतवर्ष वा संसारके किसी भागमें कोई राजप्रतिष्ठित हुआ था इसका वृत्तान्त जगतके किसी इतिहासमें नहीं पाया जाता, चीन असीरिया और मिसरमें जिन तीन राजवंशोंका वृत्तान्त पाया जाता है, वह भारतवर्षमें सूर्य चन्द्र वंशकी प्रतिष्ठाके बहुतकाल पीछे अपने देशमें प्रतिष्ठित हुए थे, सो यह दो वंश ही संसारके सब प्राचीन वंशोंसे पुरातन हैं, भगवान सूर्यके पुत्र मनुने सूर्यवंशकी और चन्द्रमाके पुत्र बुधने चन्द्रवंशकी प्रतिष्ठा की है, इन दोनों महापुरुषोंने एक ही समयमें अपने २ विशाल वृक्षवंशको इस पवित्रभूमि भारत क्षेत्रमें रोपित किया परन्तु विचारपूर्वक देखनेसे विदित होता है कि, बुधदेव मनुजीसे एक पीढी पीछे हुए हैं. कारण कि उन्होंने मनुसे एक पीढी पीछे उत्पन्न होकर उनकी कन्या इलाका पाणिग्रहण किया था, पुराणादि ग्रंथोंमें जो अन्यान्य राजाओंका वृत्तान्त पाया जाता है वे सब इन्हीं दो वंशोंकी शाखा प्रशाखाओंमें उत्पन्न हुए हैं ।

किस समय सूर्य और चंद्रवंशके आदि पुरुष सबसे पहले भारतवर्षमें आये थे, इसका पता लगाना बड़ा कठिन है, प्रसिद्ध पुराणोंमें जो कुछ वृत्तान्त पाया जाता है उससे विदित होता है कि सूर्यकुलकी प्रतिष्ठा करनेवाले मनु सातवें मन्वन्तरके समय प्रगट

हुए थे, इस कालान्तक मन्वन्तरके वृत्तान्तको लेकर ही संसारके प्रायः समस्त आदि सृष्टिके ग्रंथ रचे गये हैं कारण कि, सम्बन्धमें प्रायः सबकी एक बात देख पड़ती है।

इस ऐतिहासिक वृत्तान्त जाननेमें श्रीमद्भागवत, स्कन्दपुराण, अग्निपुराण, भविष्यपुराण यह प्रधान हैं, यद्यपि इनमें स्थान स्थानमें अनैक्यता दिखाई देती है, परन्तु विचार करनेसे यह भली भांति जान लिया जाता है कि सब पुराणोंने एक ही अभिन्न असाधारण कार्यके निमित्त प्रगट होकर भूमिकी अवस्थाके अनुसार भिन्न २ मूर्ति धारण की हैं विचारसे देखा जाय तो उद्देश्यमें भेद नहीं है।

संसारके चाहे जिस किसी सृष्टिकी उत्पत्तिके बनानेवाले ग्रंथको पढो उन सबमें प्रायः एक ही भाव दिखाई देगा, वही कल्प वही जलप्रलय वही भूमिकी उत्पत्ति और वही प्रजाका वर्द्धन मिलता है, अग्निपुराणकी वह एक ही छाया सृष्टि उत्पत्तिके वर्णनमें सबके साथ एकाकार दिखाई देती है, वहां लिखा है कि ब्रह्माजीके एक दिनमें चौदह मनु राज्य करते हैं प्रत्येक मन्वन्तरमें ७१ इकहत्तर चौकड़ी युग अर्थात् सतयुग त्रेता द्वापर और कलि बीत जाते हैं यह मनु बडे धर्मात्मा हैं इन मनुओंके द्वारा ही सृष्टिकी रचना होती है, यह चौदह मनु अपने २ समयमें* अपना २ सृष्टि रचना सम्बन्धी कार्य करते हैं जिस समयका हम वर्णन करते हैं उस सूर्य कुलकी प्रतिष्ठा करनेवाले मनु सातवें वैवस्वतके समय अवतीर्ण हुए थे।

१--स्वायंभुव, स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत, चाक्षुष, वैवस्वत, सावर्णि, दक्षसावर्णि, ब्रह्मसावर्णि, धर्मसावर्णि, रुद्रसावर्णि, देवसावर्णि, और इन्द्रसावर्णि यह चौदह मनु हैं, जितने कालमें एक मनु प्रजापालन करता है, उतने कालको मन्वन्तर कहते हैं यथा "मन्वन्तरं मनोः कालो यावत्पालयते प्रजाः ॥ एको.मनुः स कालस्तु मन्वन्तरमितिश्रुतः ॥" कालिकापुराण अ० २३

२--" कृतं त्रेता द्वापरश्च कलिश्चेति चतुर्थकम् । दिव्यमेकं युगं ज्ञेयं तस्य या चैकसप्ततिः । मन्वन्तरन्तु तज्ज्ञेयम्" इति पद्मपुराण स्वर्गखण्ड ३९ अध्याय.

* आद्यो मनुर्ब्रह्मपुत्रः शतरूपा पतिव्रता । धर्मिष्ठानां वरिष्ठश्च गरिष्ठो मनुषु प्रभुः ॥ १ ॥
स्वायम्भुवः शम्भुशिष्यो विष्णुव्रतपरायणः । जीवन्मुक्तो महाज्ञानी भवतः प्रपितामहः ॥ २ ॥
संप्राप कृष्णदास्यञ्च गोलोकं च जगाम सः । दृष्ट्वा मुक्तं स्वपुत्रं च प्रहृष्टश्च प्रजापतिः ॥ ३॥
तुष्टाव शंकरं तुष्टः ससृजे मनुमन्यकम् । स च स्वयम्भुपुत्रश्च पुरः स्वायम्भुवो मनुः ॥ ४॥
स्वारोचिषो मनुश्चैव द्वितीयो वह्निनन्दनः । राजा वदान्यो धर्मिष्ठः स्वायम्भुवसमो महान्॥५॥
प्रियव्रतसुतावन्यौ द्वौ मनू धर्मिणां वरौ । तौ तृतीयचतुर्थौ च वैष्णवौ तामसोत्तमौ ॥ ६ ॥
तौ च शंकरशिष्यौ च कृष्णभक्तिपरायणौ । धर्मिष्ठानां वरिष्ठश्च रैवतः पंचमो मनुः ॥ ७ ॥
षष्ठश्च चाक्षुषो ज्ञेयो विष्णुभक्तिपरायणः । श्राद्धदेवः सूर्यसुतो वैष्णवः सप्तमो मनुः ॥ ८ ॥
सावर्णिः सूर्यतनयो वैष्णवो मनुरष्टमः । नवमो दक्षसावर्णिर्विष्णुव्रतपरायणः ॥ ९ ॥
दशमो ब्रह्मसावर्णिर्ब्रह्मज्ञानविशारदः । ततश्च धर्मसावर्णिमनुरेकादशः स्मृतः ॥ १० ॥
धर्मिष्ठश्च वरिष्ठश्च वैष्णवानां सदा व्रती । ज्ञानी च रुद्रसावर्णिर्मनुश्च द्वादशः स्मृतः ॥ ११ ॥
धर्मात्मा देवसावर्णिर्मनुरेव त्रयोदशः । चतुर्दशो महाज्ञानी चेन्द्रसावर्णिरेव च ॥ १२ ॥

ब्रह्मवैवर्त्तप्रकृतिखण्ड ५१ अ०

यह चौदहों ७१ चौकडी युगकी दीर्घायुवाले होते हैं।

कहते हैं कि, उस सातवें मन्वन्तरके समयमें भगवान् वैवस्वत* मनु एक दिन कृतमाला[1] नदीके किनारे बैठे तर्पण कर रहे थे कि इतनेमें ही एक छोटीसी मछली नदीके जलके साथ उनकी अंजलीमें आकर गिरी. मनुजीने उसको नदीके जलमें फेंक देना चाहा परन्तु मछलीने उनको निवारण करके कहा हे नरोत्तम ! मुझ जलमें मत त्यागन करो मुझे जलके नाके आदि जलजन्तुओंसे बडी शंका होती है इस कारण मुझे किसी और स्थानमें रक्षित कीजिये. मनुजीने यह सुनकर उस मछलीको एक कलशमें रखखा परन्तु वह मछली पूर्वसे बडी होगई, और कहने लगी मुझको इससे किसी बडे स्थानमें राखिये तब मनुजीने उसको सरोवरमें रखखा, सरोवरमें पहुँचते ही देखते २ क्षणमात्रमें उस मछलीकी देह इतनी बढ गई कि सरोवरमें न समा सकी, तब मनुजीने उसको समुद्रमें पहुँचाया वहां वह मत्स्य क्षण भरमें लाख योजनका होगया, तब मनुजीने अत्यन्त विस्मित होकर भक्तिपूर्ण वचनसे कहा हे भगवन् ! आपको नमस्कार है और किस कारणसे मुझे भ्रमा रहे हो, तब मत्स्यने उत्तर दिया कि, आजसे सातवें दिन समुद्र उफनकर सारे संसारको डुबा देगा, उस समय तुम प्रत्येक जीव, जन्तु, और वृक्ष लता, गुल्मादिका एक एक बीज लेकर सप्तर्षियोंके साथ नावपर चढ जाना पीछे मेरे प्रगट होनेपर उस नावको मेरे सींगमें बांधदेना तब तुम्हारी रक्षा होगी

भविष्यपुराण देखनेसे जाना जाता है मनुजी सुमेरु पर्वतपर राज्य करते थे उनका एक वंशधर ककुत्स्थनामक अयोध्यामें आनकर राज्य करने लगा और क्रमसे उनकी बहुतसी सन्तति पर्वतके देशोंसे आकर संसारके सब देशोंमें फैल गई ।

---

* इनका दूसरा नाम श्राद्धदेव है यह सूर्यके औरससे विश्वकर्माकी पुत्री संज्ञाके गर्भमें उत्पन्न हुए हैं मनुके सहोदर यम और यमुना बहन है ॥

"अथ तस्मै ददौ कन्यां संज्ञां नाम विवस्वते । प्रसाद्य प्रणतो भूत्वा विश्वकर्मा प्रजापतिः ॥ १ ॥
त्रीण्यपत्यान्यसौ तस्यांजनयामास गोपतिः । द्वौ पुत्रौ स महाभागौ कन्याञ्च यमुनां नदीम् ॥ २ ॥
मनुर्वैवस्वतो ज्येष्ठं श्राद्धदेवः प्रजापतिः । तेषां यमो यमी चैव यमलौ संबभूवतुः ॥ ३ ॥"

मार्कण्डेयपुराण ॥

१ मलय गिरिकी उत्पन्न हुई नदियोंमें कृतमाला भी एक है.

"कृतमाला ताम्रपर्णी पुष्पजात्युत्पलावती । मलयाद्रिसमुद्भूता नद्यः शीतजला स्मृताः ॥ १ ॥"

मार्कण्डेयपुराण ॥

"मनुर्वैवस्वतस्तेपे तपो वै भुक्तिमुक्तये । एकदा कृतमालायां कुर्वतो जलतर्पणम् ॥ १ ॥
तस्याञ्जल्युदके मत्स्यः स्वल्प एकोऽभ्यपद्यत । क्षेप्तुकामं जले प्राह न मां क्षिप नरोत्तम ॥ २ ॥
ग्राहादिभ्यो भयं मेद्य तज्ज्ञात्वा कलशेऽक्षिपत् । स तु वृद्धः पुनर्मत्स्यः प्राह त्वं देहि मे बृहत् ॥ ३ ॥
स्थानमेतद्वचः श्रुत्वा राजाथोदञ्च अक्षिपत् । तत्र वृद्धोऽब्रवीद्भूपं पृथु देहि पदं मनो ॥ ४ ॥
सरोवरे पुनः क्षिप्तो ववृधे तत्प्रमाणवान् । ऊचे देहि बृहत्स्थानं प्राक्षिपच्चाम्बुधौ ततः ॥ ५ ॥
लक्षयोजनविस्तीर्णः क्षणमात्रेण सोऽभवत् । मत्स्यं तमद्भुतं दृष्ट्वा विस्मितः प्रब्रवीन्मनुः ॥ ६ ॥
को भवान्नतु वै विष्णुर्नारायण नमोऽस्तुते । मायया मोहयसि मां किमर्थं त्वं जनार्दन ॥ ७ ॥"

इस पवित्र सुमेरु * पर्वतके विषयमें भिन्न २ देशोंके धर्मग्रंथोंमें बडी विचित्र बातें देख पडती हैं भिन्न २ धर्मावलम्बी और भिन्न २ सम्प्रदायोंके उपासकोंने अपनी २ शक्तिके अनुसार भिन्न २ प्रकारसे वर्णन कर अपने २ उपास्य देवताका

---

* "दक्षिणेन तु नीलस्य निषधस्योत्तरेण तु । प्रागायतो महाभाग माल्यवान्नाम पर्वतः ॥
पश्चिमे तु तथैवास्ते पर्वतो गन्धमादनः । पूर्वे समुद्रकूलात्तु भद्राश्वं नाम वर्षकम् ॥
माल्यवानवधिस्तस्य केतुमालश्च पश्चिमे । गन्धमादनसीमान्तं नवसाहस्रयोजनम् ॥
परितस्तु तयोर्मध्ये मेरुः कनकपर्वतः । "

यह पर्वतराज सुमेरु दक्षिणमें नीलपर्वतसे उत्तरमें निषध पर्वतसे पूर्वमें माल्यवान पर्वतसे पश्चिममें गन्धमादन पर्वतसे व्याप्त है,पूर्वमें समुद्रके किनारेसे भद्राश्ववर्ष है,माल्यवान नाम पर्वततक उसकी अवधि है,पश्चिममें केतुमाल वह गंधमादनके सीमातक नौ सहस्र योजन है, इन्हीं दोनोंके बीचमें सुवर्णका पर्वत सुमेरु नामसे विख्यात है।

सुमेरु पर्वतके विषयमें जो विवर्ण प्रकाशित हुए हैं उनकी यथार्थ भूमिका निरूपण करना कठिन बात है कारण कि उस समयसे इस समय पर्यन्त कितने सहस्रवर्ष व्यतीत होगये इतने दीर्घकालमें इस भूमण्डलमें जितना विप्लव और परिवर्त्तन होगया है उससे यह बात सहजमें विदित होसकती है कि पुराणोंमें जिन पर्वत और प्रदेशोंका वर्णन आया है उनमें बहुतसे अब समुद्रके गर्भमें—लय होगेये, और अनेकों समुद्र विशाल मरुभूमिके गर्भमें समा गये,इसीसे पुराणोक्त नामावलीका इस समयकी नामावलीके साथ भेद पडता है, जो कुछ भी हो विचारसे यही स्थिर होता है कि सुमेरु पर्वत भारत वर्षके उत्तरकुरुके दक्षिणमें स्थित है यथा—

" स तु मेरुः परिवृतो भुवनैर्भूतभावनैः । यस्येमे चतुरो देशा नानापार्श्वेषु संस्थिताः ॥
भद्राश्वो भारतश्चैव केतुमालश्च पश्चिमे । उत्तराश्चैव कुरवः कृतपुण्यप्रतिश्रयाः ॥ " [मत्स्यपु०]
" तत्र देवगणास्सर्वे गन्धर्वोरगराक्षसाः । शैलराजे प्रमोदन्ते सर्वतोप्सरसस्तथा ॥"मत्स्यपु०अ०५॥

अर्थात् भूतभावन भुवनोंसे यह सुमेरु पर्वत व्याप्त होरहा है जिसके अनेक भागोंमें यह चार प्रदेश वर्त्तमान हैं, पूर्वमें भद्राश्व, दक्षिणमें भारतवर्ष, पश्चिममें केतुमाल और उत्तरमें उत्तर कुरुदेश है,वहां देवता, गन्धर्व, उरग, राक्षस, अप्सरा नित्य विहार करते हैं, नृसिंह पुराणके मतसे यह पृथिवीके मध्यमें स्थित है यथा हि—

" मध्ये पृथिव्यां विस्तीर्णो भास्वान्मेरुर्हिरण्मयः । "

भागीरथी गंगा इसी सुमेरु पर्वतके शिखरसे प्रवाहित हुई है यथा हि—

" तस्य शैलस्य शिखरात् क्षीरधारा महामते । पुण्या पुण्यतमैर्जुष्टा गंगा भागीरथी शुभा ॥
हिमालयं विनिर्भेद्य भारतं वर्षमेत्य च । लवणाम्बुधिं समभ्येति दक्षिणस्यां दिशि द्विज ॥ "

ज्योतिष शास्त्रके मतसे—

" अनेकरत्ननिचयो जाम्बूनदमयो गिरिः । भूगोलमध्यगो मेरुरुभयत्र विनिर्गतः ॥ ३४ ॥
उपरिष्टास्थितास्तस्य सेन्द्रादेवा महर्षयः । अधस्तादसुरास्तद्वद्द्विषन्तोऽन्योन्यमाश्रिताः ॥ ३५ ॥
ततः समन्तात्परिधिः क्रमेणायं महार्णवः । मेखलेव स्थितो धात्र्या देवासुरविभागकृत ॥ ३६ ॥
समन्तान्मेरुमध्यात्तु तुल्यभागेषु तोयधेः । द्वीपेषु दिक्षु पूर्वादिनगर्यो देवनिर्मिताः ॥ ३७ ॥
भूवृत्तपादे पूर्वस्यां यमकोटीति विश्रुता । भद्राश्ववर्षे नगरी स्वर्णप्राकारतोरणा ॥ ३८ ॥ "

इत्यादि सूर्यसिद्धान्त अ० १२

निवासस्थान कहा है ब्राह्मणोंने इस पवित्र पर्वतको वाघेश ❀ आदीश्वर महादेवजीका जैनियोंने जनाधिप आदि नाथका तथा ग्रीक लोगोंने वेकशका निवासस्थान बताया है, उनके मतमें इस स्थानमें ही मनुने मनुष्य जातिको कृषि शिल्प और दूसरी सभ्यविद्याओंकी शिक्षा दी थी ।

इस सम्पूर्ण विषयका विचार करनेसे यह स्पष्ट प्रती होता है कि संसारके ऐतिहासिक ग्रंथोंमें यह सम्पूर्ण भिन्न नाम एक ही स्थानके हैं, औ एक ही मनुके निवासस्थान हैं, उस समय हिन्दू और ग्रीक जातिमें कोई भेद न थ सब मिलकर एकसाथ ही जीवनयात्रा निर्वाह करते थे, कारण कि आदिनाथ आदीश्वर असिरीश, वाघेश, वेकश, मनु मीनेश और ❀ नू यह एक ही मानव पिताके भिन्न २ नाम हैं ।

जिसदेशके विशाल वक्षस्थलको धोती हुई आमुअक्सस वा जिहुन तथा अन्यान्य नदियें अपनी तरंगोंको विस्तारित करती हुई प्रवाहित हुई हैं, इन ही नदियोंसे मेखलाभूत हुए सुमेरु पर्वतके पवित्र शिखरको सूर्य और चन्द्रवंशीलोग अपना कुलगुरु और आदि स्थान कहते हैं । यह बात जगत्के इतिहाससे स्पष्ट है ।

संसारकी समस्त प्राचीन जातियें उनका आदि वासस्थान इस उच्च भूमिको ही बताती हैं और किसी देशका निरूपण नहीं करतीं ।

इन देवताओंसे सेवित उच्चभूमिको त्याग कर वैवस्वत मनु सिंधु गंगाके प्रवाहसे पवित्र हुई इस आर्य्यावर्त भूमिमें आये थे और अपने विशाल वंशका बीज आरोपण

---

* वाघेश अथवा व्याघ्रेश, हिन्दुओंके व्याघ्रेश और ग्रीक लोगोंके वेकश इन दोनों देवताओंकी प्रायः एक ही प्रकारकी उपासना वि धि देखनेमें आती है, दोनों ही देवता व्याघ्रचर्मपर विराजमान होते और व्याघ्रचर्मको धारण करते हैं, आदर्शरूप वाणलिंग दोनों सम्प्रदायोंमें पूजित होता है, मेवारमें इस समय भी व्याघ्रेशके अनेक मंदिर देखनेमें आते हैं—

१ इसपर महादेवजीका ही निवास नहीं ब्रह्मा और विष्णुका भी निवास है तथा हि—

" शृङ्गन्तु पश्चिमं यच्च ब्रह्मा तत्र स्थितः स्वयम् । पूर्वशृङ्गे स्वयं विष्णुर्मध्ये चैव शिवः स्थितः ॥ "

× यहूदी और मुसलमान इस शब्दको नू कहते हैं, तो क्या यह नू मनु शब्दका ही अपभ्रंश है ?

१ प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता सरवालटररेलेने अपने जगतके इतिहासमें स्पष्ट लिखा है कि पानीके तोफानके पीछे भारत वर्षमें ही सबसे पहले वृक्ष लतादिकी उत्पत्ति और मनुष्योंकी बसती हुई थी, अपने मतके समर्थन करनेके निमित्त जो प्रमाण उक्त महोदयने अपने ग्रंथमें दिये हैं, यदि उन सबको लिखा जाय तो एक बहुत बडा ग्रंथ तयार हो, इस कारण आवश्यकता समझकर उन प्रमाणोंका एक ही अंश यहां लिखते हैं, जो विशेष उपयोगी है, वह कहतेहैं मूसाने जिस अरारट् पर्वतका नाम लियाहै उससे किसी एक ही पर्वतका नाम ग्रहण नहीं हो सकता कारण कि अर्मनी भाषामें अरारट् शब्दका अर्थ पर्वतमाला है इस कारण यह अर्मनीमें न होकर काकेशस (कोहकाफ) की शैलमालाके किसी एक भागमें अवश्य स्थित होगा वह भाग अर्मनीकी अपेक्षा अधिक गर्म और उसके पूर्वकी ओर है इस प्रकार सरवालटररेलेके कथनसे प्रमाणित होता है कि इन्होंने मनुजीकी वासभूमिको भारतवर्ष और शाकद्वीपके मध्यमें बताया है ।

See Raleigh's History of the world.

किया और वह वृक्ष क्रमसे अनेक शाखा प्रशाखाओंमें शोभायमान हुआ और व सब शाखा शनैः शनैः सम्पूर्ण भारतवर्षमें फैल गई* ॥ ॥

दूसरा अध्याय २.

सूर्य और चंद्रवंशी राजाओंकी वंशावली और एक समयमें इनके होने या न होनेका विचार।

इंद्रपुरी अमरावतीके समान अयोध्यापुरीमें दीर्घकालसे जिन माननीय आर्य नरपतियोंने राज्य किया था। भुवनविदित श्रीरामचन्द्रजी जिनके कुलतिलक माने गये हैं उन पूर्णब्रह्म श्रीरामचन्द्रजीका चरित्र सबसे पहले कविगुरु वाल्मीकिजीके द्वारा गाथ

* ऊपरके विचार टाडसाहब तथा विदेशी पुरुषोंके हैं शास्त्रके गहरेविचारसे यह बात भली भांति स्पष्ट होजाती है कि आदि सृष्टिका स्थान भारतवर्षकी उत्तरीय पर्वतमाला और भारतवर्ष देश है,इस भारतवर्षमें ही ब्रह्मावर्त्त आर्यावर्त्त देश है " ब्रह्मणो ब्राह्मणा आवर्तन्ते उद्भवन्त्यत्रेति ब्रह्मावर्त्तः, आर्या आवर्तन्ते अत्रेत्यार्यावर्त्तः, ब्रह्मर्षीणां देशो मूलनिवासस्थानं ब्रह्मर्षिदेशः " जहां प्रजापति और ब्राह्मणोंने आदिसे निवास किया हो वह ब्रह्मावर्त्त, जहां आर्योंने सदासे निवास किया हो वह आर्यावर्त्त, सरस्वती और दृषद्वतीके बीचका देश ब्रह्मावर्त कहाता है, इस देशमें जो आचार सदासे चला आता है वह चारों--वर्णोंका तथा संकर जातिका सदाचार कहाता है. इस देशके ब्राह्मणोंसे सब पृथिवीके मनुष्य अपने २ आचार व्यवहारोंको सीखें। मनु अ० २ श्लोक १७।१८।२० ।

" सरस्वतीदृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम् । तं देवनिर्मितं देशं ब्रह्मावर्त्तं प्रचक्षते ॥ १७ ॥
तस्मिन्देशे य आचारः पारंपर्यक्रमागतः । वर्णानां सान्तरालानां स सदाचार उच्यते ॥ १८ ॥
एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः । स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन्पृथिव्यां सर्वमानवः " ॥ २० ॥

इन वचनोंसे स्पष्ट है सबसे प्रथमके यही देश हैं, यही आर्यगण तथा ब्रह्मर्षिगणोंकी उत्पत्ति हुई है, ब्रह्मर्षिदेशके समीप ही ब्रह्मावर्त है, ब्रह्माजीका आदि निवासस्थान यही, है पुराणोंके मतसे ब्रह्माजी विष्णु भगवानकी नाभिसे प्रगट हुए हैं, वही कमल पृथिवीरूपसे परिणत हुआ उसकी ही कर्णिका मेरु हुई,उसपर ब्रह्माजीने देवसृष्टि रची पश्चात् इस पवित्र यज्ञियदेशमें आकर मनु और ब्रह्मर्षियोंकी सृष्टि की, यहीस्थान ब्रह्मावर्त कहाया, मनुजी सुमेरु पर्वतपर भी गमनागमन करते थे, यद्यपि मनु चौदह हैं पर यहां जिनका वर्णन है यह वैवस्वत मनु सूर्यके पुत्र हैं, इन्होंने ही अयोध्या बसाई है, सम्वत् १९६३ तक इन मनुकी सृष्टिको १९७२९४९००६ वर्ष होते हैं २८ चौकडी युग इनके समयको वीते हैं ४३ चौकडी युग आगेको अभी इनका समय चलेगा, प्रत्येक चतुर्युगीमें पहलेके समान परिवर्तन होता है, आर्यावर्तके सिवाय सृष्टिके आरंभका हिसाब और किसी देशमें नहीं पाया जाता, इससे आदि सृष्टि यहीं हुई इसमें सन्देह नहीं ५००० वर्षसे अधिक कलियुगके बीत चुके हैं, सूर्यचंद्र वंश तो सृष्टिके आरंभसे हैं, इससे इनका आरम्भ सृष्टिके वर्षोंके समान पुराना है, आर्यावर्त्त देशका वर्णन इस प्रकार है कि—

" आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात् । तयोरेवान्तरं गिर्योरार्यावर्तं विदुर्बुधाः ॥ " मनु० २।२२

पूर्व समुद्रसे पश्चिम समुद्रतक विन्ध्याचल और हिमालयके मध्यका पवित्र देश आर्य्यावर्त कहाता है, इस प्रकार यह देश सनातन है और प्रथम यहींसे सृष्टिका आरंभ है।

अनुवादक.

बद्ध हुआ, बाल्मीकिजीकी अनुपम कविताके प्रभावसे आज भी उन अमरपूज्य राजाओंके वृत्तान्त संसारभरकी आंखोंमें विराज रहे हैं,
और आजतक भी उनकी नामावली प्रत्येक आर्यसन्तानकी जपमाला बनी हुई है, वाल्मीकिरामायणकी* रचनाके बहुतकाल पीछे कविकुलतिलक महार्षि कृष्णद्वैपायनने सूर्यवंशी राजाओंका धारावाहिक संक्षिप्त चरित्र अपने महाकाव्यमें संयुक्त किया, उन्होंने वाल्मीकिरामायणकी छायाका अवलम्बन करके ही सूर्यवंशका वर्णन किया है, परन्तु इन दोनों वंशावलियोंमें बहुत ही भेद पाया जाता है, वहभी सामान्य नहीं दोनोंमें २१ पीढियोंका भेद पाया जाता है ।

वैवस्वतमनु सूर्यवंशके आदि पुरुष हुए हैं, उनसे लेकर भगवान् रामचंद्रजीतक सब ३६ राजा वाल्मीकिजीके द्वारा और ५७ नरपति व्यासजीके द्वारा वर्णित हुए हैं, इन दोनों वंश सूचियोंमें इतना अन्तर क्यों दिखाई देता है, इसका जानना बडा कठिन है, जो पुराण इस समय प्राचीन आर्यगौरवके एकमात्र आधार हैं, जो अंधकारमें प्रवेश करनेको मार्ग दिखानेके निमित्त एकमात्र दीपकके समान हैं, जब उन पुराणोंमें इतना अंतर दिखाई दे तब भारतके प्राचीन वृत्तान्तके जाननेको उपाय क्या है, परन्तु साथ ही यहां यह प्रश्न भी उठता है कि जो अपने असीम विद्याबलके कारण तीन कालका वृत्तान्त जाननेवाले थे क्या वे भ्रममें पडे, अथवा अपने आगे होनेवाले वंशधरोंको भ्रममें डालनेके अभिप्रायसे उन्होंने यह लेख लिखा ? नहीं ऐसा कभी नहीं होसकता वे महापुरुष थे वे परमात्माको जाने हुए थे उनके पवित्र हृदयमें किसी प्रकार भी ऐसी पापभरी वृत्ति नहीं समा सकती, न उनमें असाधारण भ्रमकी बातें रह सकती हैं, उन्होंने जो कुछ भी लिखा है वह सब कुछ ही शुद्ध और भ्रमरहित है, इस भेदका कारण हमको यह जान पडता है कि उनके लिखे ग्रन्थ इस समय यथार्थ रूपसे नहीं पाये जाते, इस समय जो ग्रन्थ प्रचलित हैं लिपिकारोंकी भूलसे उनमें बहुतसे अंश छूट गये हैं और उनमें बहुतसा उलटफेर हो गया है, इस समय इस झगडे निवटानेकी हमको कोई बडी आवश्यकता नहीं है, इस समय विदेहवंशकी शाखाको इस वंशके साथ तुलना करके देखना चाहिये, कदाचित् ऐसा करनेसे थोडा बहुत इस भेदका पता लग जाय, एक वृक्षसे उत्पन्न हुई इन दो कुलशाखाओंके समान करनेकी चेष्टा करके फिर सूर्य और चंद्रवंशी राजाओंकी समालोचना की जायगी ।

विदेहवंश भी सूर्यवंशकी एक शाखा ही है, इस शाखाके गोत्रपति निमि वैवस्वत मनुके ज्येष्ठ पुत्र इक्ष्वाकुके पुत्र थे, कहते हैं महाराज इक्ष्वाकुके सौ पुत्र उत्पन्न हुए थे, सबसे बडे विकुक्षि पितृराज्यपर अभिषिक्त हुए, निमि और दंडकने × मध्यप्रदेशका राज्य पाया. शेषपुत्रोंने अपनी २ इच्छाके अनुसार एक २ प्रदेशमें अपना २ राज्य स्थापित किया,

* रामचंद्रके राज्यपर अभिषिक्त होनेपर त्रेताके अवसानमें वाल्मीकिरामायण लिखी गई है यथा—
"प्राप्तराज्यस्य रामस्य वाल्मीकिर्भगवानृषिः । चकार चरितं कृत्स्नं विचित्रपदमर्थवत् ।" बालकांड.

× इन्हीं राजाके देशका जब वन होगया तब दण्डकारण्य नामसे विख्यात हुआ.

महाराज निमि ही विदेह वंशके प्रथम राजा और इस वंशकी प्रतिष्ठा करनेवाले हुए, निमिके पुत्र मिथि हुए, इनहींके द्वारा मिथिलापुरी बसाई गई, वाल्मीकिरामायणमें लिखा है निमिसे लेकर जनक और कुशध्वजतक सब २३ राजा मिथिलाके सिंहासनपर आरूढ हुए, साध्वी जानकीजी इन जनकजीकी कन्या थीं जिनका नाम सीरध्वज था जानकीजीका पाणिग्रहण श्रीरामचन्द्रजीने किया था, इससे महाराज सीरध्वज और महाराज जनकका एक ही समयमें होना निश्चित होता है और वाल्मीकिजीकी तालिकाके अनुसार इन दोनों शाखाओंको मिलाया जाय तो दोनोंमें ग्यारह पुरुषोंका अन्तर दिखाई देता है, गोत्रपति निमि इक्ष्वाकुके सबसे छोटे पुत्र थे इससे जनक और कुश, ध्वज उनसे २४ पीढी पीछे हुए, इस ओर महाराज दशरथ जनक और कुशध्वजके समकालीन होनेपर भी इक्ष्वाकुसे ३४ पीढी पीछे हुए, इस प्रकारसे विदेहकुलकी अपेक्षा रघुकुलमें दश पीढी अधिक पाई जाती हैं।

और जो व्यासजीकी दी हुई वंशावलीसे दोनोंकी तुलना की जाय तो रघुकुलमें ३२ पीढियोंकी अधिकता दीख पड़ती है, इस दशामें दशरथ और सीरध्वज जनकका एक समयमें होना कैसे संभव हो सकता है। *

अब कुछ देरके लिये सूर्यवंशको छोडकर चन्द्रवंशकी आलोचना करनी चाहिये पीछे दोनों वंशोंके समसामयिक नरपतियोंकी जीवनीकी आलोचना करेंगे, चन्द्रवंश और सूर्यवंश दोनों वंशोंका बीज एक ही कालमें बोया गया था परन्तु दोनोंकी पुष्टि ठीक एक ही साथ नहीं हुई, चंद्रवंश धीरे धीरे पुष्ट हुआ और काल क्रमसे धीरे धीरे उसने बहुत बल प्राप्त किया इसी बलके प्रभावसे एक समय एशियाका आधा खण्ड उनकी सहायताके लिये तयार होगया था, परन्तु सूर्यवंशकी यह शैली नहीं रही, उदय होते ही उसका प्रभाव एक साथ ही बहुत कड़ा हो गया था, देखते २ असह्य होकर वह सम्पूर्ण भारतवर्षको दग्ध करने लगा, यहांतक कि एक समय भारत महासागरका प्रचण्ड लंकाद्वीप भी इस वंशकी दिग्दाही किरणोंसे भस्म होगया था परन्तु सूर्यवंशकी अपेक्षा चन्द्रवंशका बहुत विस्तार है।

---

* ऊपर जो विदेहवंशकी वंशावलीका वर्णन हुआ इससे यह नहीं समझना चाहिये कि इतने ही महाराज विदेहवंश और सूर्यवंशमें हुए हैं कारण कि मनुसे रामचंद्र तक लाखों वर्ष बीत गये हैं, यह मुख्य २ राजाओंकी वंशावली लिखी गई है, ऐसा ही भागवतमें लिखा है कि विस्तारसे तो कोई वंशावली सहस्रों वर्षोंमें भी नहीं कह सकता हम संक्षेपसे कहते हैं, जब कि व्यासजीकी संक्षिप्त तालिका वाल्मीकिजीकी तालिकासे बहुत विस्तृत है, तब विदित होता है कि वाल्मीकिजीने व्यासजीसे भी अधिक संक्षेप किया है, इसलिये दशरथजी और सीरध्वजकी समसामयिकतामें शंका नहीं है, और यह भी संभव है कि पूरी तालिका लुप्त होगई हो, पर समसामयिकतामें संदेह नहीं है, रघुवंशमें कालिदास कविराजने दिलीपसे रामचंद्रतक पांच-ही पीढी लिखी हैं, पर उन्होंने भी मुख्योंको लिखा है इस शैलीके अनुसार विदेहवंशकी तालिकामें मुख्य २ नरपति लिखे हैं।

चन्द्रमाके पुत्र भगवान बुधने चन्द्रवंशकी प्रतिष्ठा की है बुधने वैवस्वतमनुकी कन्या इलाका पाणिग्रहण करके उसमें राजर्षि पुरूरवाको प्रगट किया, इन महाराज पुरूरवाकी चौथी पीढीमें महाराज ययाति प्रगट हुए, इनकी दो स्त्री थीं एक तो शुक्राचार्यकी कन्या देवयानी, और दूसरी दानवेन्द्र वृषपर्वाकी कन्या शर्मिष्ठा महाराज ययातिने देवयानीमें यदु और तुर्वसु नामक दो पुत्र और शर्मिष्ठामें द्रुह्यु अनु और पुरु तीन पुत्र उत्पन्न किये, इन पांच पुत्रोंमेंसे यह अनु और पुरु इनसे चन्द्र वंशकी विशेष पुष्टि और विस्तार हुआ, यदुकुलमें विश्वविजयी कार्तवीर्यार्जुन हैहय तालजंघ और भगवान् श्रीकृष्णने जन्म ग्रहण किया अनुके कुलमें अंगराज और रोमपाद और महावीर कर्णके पालक पिता अधिरथि सूत आदि राजाओंने जन्म ग्रहण किया, और सबसे छोटे पुत्र पुरुके वंशमें पाण्डव धृतराष्ट्र और द्रौपदीका जन्म हुआ ।

इसी पुरुवंशमें मगधदेशके अधिराज महाराज जरासंधका जन्म हुआ, कंसराजाके वध करनेके कारण यह श्रीकृष्णजीके बडे शत्रु थे, और जरासंधके आतंकसे श्रीकृष्णको भी सावधान रहना पड़ता था, युधिष्ठिरके मध्यमभ्राता भीमसेनने जरासंधका वध किया, अब इसके आगे हम यह विचार चलाते हैं कि इनमें परस्पर कौन किसके समयमें प्रगट हुआ है ।

चंद्रवंशके सम्पूर्ण राजा बुधके ही वंशधर हैं बुध चंद्रमाके पुत्र हैं इन्होंने वैवस्वत मनुकी कन्या इलाके संग अपना विवाह किया, ऊपर जिन चंद्रवंशी राजाओंके नाम लिखे गये हैं, उनमें रोमपाद, कार्तवीर्यार्जुन, हैहय और तालजंघको छोडकर शेष सब ही एक दूसरेके समसामयिक हैं, पाण्डव और धृतराष्ट्रके पुत्र कर्ण, श्रीकृष्ण और द्रौपदी तथा जरासन्ध यह सब एक ही समयमें हुए हैं, और इनकी समसामयिकता सभी पुराणोंके ज्ञाता जानते होंगे, परन्तु आश्चर्यकी बात यह है कि इनमें कई एकोंमें प्रायः आठ दश पीढियोंका भेद पाया जाता है बुधकी गणना करनेसे युधिष्ठिर और दुर्योधन ४८ कर्ण ३८ श्रीकृष्ण ४७ द्रौपदी और जरासन्ध ४८।४८ पीढी पीछे प्रगट हुए हैं । *

अब हम पुराणादि पुरातन ग्रंथोंमें सूर्य और चंद्रवंशी राजाओंका जो समसामयिकत्व दिखाया गया है उसकी आलोचनामें प्रवृत्त होते हैं, जिस समयमें यह सब भूपालगण जन्में हैं वह समय अब नहीं है, इस कारण उनके सम्बन्धकी बातोंका निर्णय अनुमानकी सहायताके विना असम्भव है ।

१ इस ओर हरिवंशके देखनेसे जाना जाता है कि सूर्यवंशोत्पन्न ककुत्स्थकी गो नाम्नी कन्याके संग चन्द्रवंशी नहुषके पहले पुत्र ययातिका विवाह हुआ, तो नहुष और ककुत्स्थका एक ही समयमें होना निश्चय है और पहले यह सिद्ध करचुके हैं कि बुध और इक्ष्वाकु समसामयिक थे, कारण कि इक्ष्वाकुकी भगिनी इलाका पाणिग्रहण बुधने किया था,

---

* इससे ही स्पष्ट है कि यह वंशावली मुख्य २ नरपतियोंकी है, तथा यह पहलेके पुरुष दीर्घायुष थे इलाकी कथा सतयुगकी है, श्रीकृष्ण द्वापरके अन्तमें हुए तब बुधसे श्रीकृष्णतक ४७ पीढी होना कैसे संभव होसकता है ।

परन्तु बुधकी चार पीढीके पीछे नहुष और इक्ष्वाकुकी तीन पीढीके पीछे ककुत्स्थ हुए हैं इस विचारसे यहां एक ही पीढीका अन्तर पाया जाता है। (१)

२ सूर्य वंशोत्पन्न युवनाश्वकी कन्या कावेरीके संग चन्द्रवंशी जह्नुका विवाह हुआ युवनाश्व इक्ष्वाकुकी नौवीं पीढीमें और जह्नु बुधके तीसरे पौत्र अमावसुकी छठी अथवा बुधकी आठवीं पीढीमें प्रगट हुआ, सो इस स्थलमें भी दोनों वंशोंमें केवल एक ही पीढीका अन्तर विदित होता है.

३ सूर्यवंशमें उत्पन्न हुए युवनाश्वका चन्द्रवंशोत्पन्न मतिनारकी कन्या गौरीसे विवाह हुआ यह युवनाश्व पुराणप्रसिद्ध मान्धाताके पिता और धुन्धुमारके पुत्र थे, गणना करनेसे धुन्धुमार इक्ष्वाकुकी आठवीं पीढीमें और मतिनार बुधकी अठारहवीं पीढीमें हुए हैं इनमें एकबार ही दश पीढियोंका अन्तर पड़ता है, व्यासजीकी लिखी हुई सूर्यवंशकी सूचीमें मान्धातासे पहले युवनाश्व नामक दो पुरुषोंका नाम पाया जाता है, एक मान्धाताके पिताका जो इक्ष्वाकुकी अठारहवीं पीढीमें हुए थे दूसरे वह जो इक्ष्वाकुकी नवीं पीढीमें हुए थे.

४ सूर्यवंशी मान्धाताका चन्द्रवंशी शशविन्दुकी कन्या चैत्ररथीके साथ विवाह हुआ था, मान्धाता युवनाश्वके पुत्र थे इससे युवनाश्व और शशविन्दुका एक ही समयमें होना निश्चय है परन्तु खोज करनेसे दोनोंमें चार पीढियोंका अन्तर पाया जाता है, शशविन्दु महाराज ययातिके पहले पुत्र, यदुके दूसरे पुत्र क्रोष्टुके वंशमें उत्पन्न हुए थे क्रोष्टु बुधकी सातवीं पीढीमें, और शशबिंदु क्रोष्टुकी छठी पीढीमें हुआ, इस कारणसे बुधकी बारहवीं पीढीमें इनका होना निश्चय हुआ और ऊपर यह सिद्ध किया गया है कि मान्धाताके पुत्र युवनाश्वने महाराज इक्ष्वाकुकी नौवीं पीढीमें जन्म लिया था, इस ओर दोन वंशोंमें तीन चार पीढियोंका भेद पाया जाता है, यदि व्यासजीकी सूचीका यहां भी अव, लम्बन किया जाय तो इस सूर्यवंशकी शाखामें छःसात पीढियोंका अन्तर पड जायगा.*

५ पुराणमें लिखे विवरणके अनुसार हरिश्चन्द्र, विश्वामित्र, परशुराम, कार्त्तवीर्यार्जुन और रामचन्द्र यह महात्मा एक ही समयमें हुए हैं कारण कि हरिश्चन्द्र विश्वामित्रके समयकालीन थे, और विश्वामित्र रामचंद्रके समसामयिक थे, और परशुराम रामचंद्र तथा कार्तवीर्यार्जुन एक ही समयके थे इससे परशुराम रामचंद्र समसामयिक हुए, और विश्वामित्र तथा उनके समसामयिक हरिश्चंद्र थे, आशय यह कि हरिश्चंद्र

---

१ एक पीढीका अन्तर ही क्या समस्त वंशावली प्राप्त होनेसे फिर कुछ भेद न रहता।

* एकवंशमें एक एक नामवाले भी कई पुरुष होगये हैं जिन पुराणोंसे वंशावली ली गई है उनका पता भी लिखा होता तो विचारनेमें सुबीता होता। अनुवादक।

विश्वामित्र परशुराम कार्तवीर्यार्जुन और रामचंद्र एक ही समयमें वर्तमान थे परन्तु यह बात सर्वथा असम्भव प्रतीत होती है पुराणोंके जाननेवाले पाठक इस बातका विचार करके देखें कि पौराणिक आर्यवंशावलीमें कितनी गड़बड़ है,×

६ सूर्यवंशमें उत्पन्न हुए महाराज दशरथ और चंद्रवंशी रोमपादमें बड़ा प्रेम था, इस कारण यह दोनों समकालीन थे वाल्मीकिजीने लिखा है कि महाराज दशरथने पुत्रेष्टि यज्ञकी सिद्धिके निमित्त रोमपादके यहांसे ऋष्यशृंग ऋषिको बुलाया था, इससे रोमपाद और दशरथजी एक ही समयके थे, परन्तु दोनोंमें अनेक पीढियोंका भेद पाया जाता है, महाराज दशरथजी रामायणके अनुसार इक्ष्वाकुकी चौंतीसवीं पीढीमें जन्मे हैं, और रोमपाद बुधकी तेईसवीं पीढीमें जन्मे, इस प्रकारकी गणनासे दो एक नहीं एक साथ ही ग्यारह पीढियोंका अन्तर पाया जाता है. यदि व्यासजीकी सूचीका अनुसरण किया जाय तो और भी गड़बड़ पड़ती है कारण कि व्यासजीके मतसे महा राज दशरथजी इक्ष्वाकुकी ५१ वीं पढीमें जन्में इस गणनासे रोमपादसे ३२ पीढी पीछे हुए इस अवस्थामें तो वाल्मीकिजीकी सूचीसे थोडा बहुत प्रयोजन निकल सकता है।

यदि महर्षि व्यासजीकी वंशावलीका अवलम्बन करके सूर्यवंशीय राजाओंकी संख्या निरूपण की जाय तो बडा ही असमंजस होगा और समयका निर्णय नहीं हो सकैगा, अवश्य ही यह बात माननी पड़ैगी कि श्रीरामचन्द्रजीके बहुत पीछे युधिष्ठिर

× विश्वामित्रके साथ हरिश्चंद्र और रामचंद्रजीका इतिहास मिलनेसे टाडसाहबने अनुमान कर लिया कि यह सब एक ही समयके थे, सो यह अनुमान ठीक नहीं, जिस इतिहासपुराणसे जो निर्णय किया-जाय उसके दूसरे भी कथा भाग अवश्य देखने चाहियें,वाल्मीकिजीने लिखा है, कि विश्वामित्रजीने सहस्रों वर्ष तपस्या की, दशसहस्र वर्षोंसे अधिक तो एक ही दिशामें तपस्या की थी,इनके समयमें कितने ही राजा होगये कारण कि इनकी बहुत बडी आयु हुई, यह ब्रह्मर्षि कहाते हैं, तो हरिश्चंद्र त्रिशंकु तथा रामचंद्रजीका विश्वामित्रके समयमें होना समझकर यह तीनों समसामयिक नहीं हो सकते, इसी प्रकार इक्ष्वाकुसे आरंभ कर रामचंद्रजीसे बहुत पीछेतक सबके कुलगुरु एक वशिष्ठजी ही रहे तो इस हिसावसे वशिष्ठ रामचंद्रजी और आदिराजा इक्ष्वाकु यह सब एक ही समयमें माने जाने चाहियें, सो ऐसा नहीं हो सकता, ऋषि महर्षि दीर्घजीवी होते हैं, तथा अनेक राजा भी योगबलसे दीर्घजीवी होगये हैं महाराज दशरथजीकी साठसहस्र वर्षकी अवस्थामें रामचंद्रजी हुए हैं महाराज रामचंद्रजीने ग्यारहसहस्र वर्षतक राज किया परशुरामजी महादीर्घजीवी हैं इनके समयमें कितने ही राजा होगये कार्तवीर्यार्जुन रामचंद्रजी तथा द्वापरके अन्तमें भीष्मपितामहसे इनका संग्राम हुआ था, आगे इनकी गणना सप्तर्षियोंमें होगी फिर इनका अवलम्बन करके समसामयिकता नहीं हो सकती, हां ! इन विश्वामित्र परशुरामजीके समयमें अनेक नरपति हुए सूर्य्यवंषके अनरण्य राजासे रावणका संग्राम हुआ. उसकी कई पीढी पीछे रामचंद्रजी हुए हैं, इससे इनकी समसामयिकता नहीं होसकती और दीर्घायुके कारण इनको पीढियोंमें अन्तर पड़नेसे यह नहीं कहा जा सकता कि अमुक नृपतिके समय अमुक न था ।

१ रोमपाद और दशरथजी एक ही समयमें थे इसमें संदेह नहीं पीढीयोंका अंतर वंशावलीकी अपूर्णता है, और यह भी अनुमान है कि रोमपादके वंशमें भी कई राजा इतने दीर्घायुवाले हुए कि उनके सामने सूर्यवंशकी कितनी पीढी बीत गई ।

कृष्ण और दुर्योधनादि हुए थे । रावण और रामचन्द्रजीके बहुत समय पीछे कुरुक्षेत्रका युद्ध हुआ था, इस सम्बन्धमें केवल एक ही प्रमाण लिख देनेसे इस बातकी यथार्थता विदित होजायगी, श्रीमद्भागवतमें लिखा है कि बृहद्बल नामक एक सूर्यवंशी राजा कुरुक्षेत्रके महासमरके समय महाराज दुर्योधनकी ओरसे संग्राम करनेको आया था, अर्जुनके पुत्र अभिमन्युके हाथसे उसकी मृत्यु हुई, यह बृहद्बल श्रीरामचंद्रजीके ज्येष्ठपुत्र कुशके वंशमें उत्पन्न हुआ था, और गणना करनेसे विदित होता है कि यह श्रीरामचन्द्रजीकी तीसवीं पीढीमें जन्मा है, अब यह स्पष्ट हो गया कि युधिष्ठिर श्रीकृष्ण और दुर्योधनादिके बहुत समय पहले लंकाविजयी श्रीरामचन्द्रजीने अवतार लिया था, परन्तु व्यासजीकी वंशावलीके अनुसार गणना करनेसे रामचन्द्रजी इनसे पूर्व प्रगट हुए विदित नहीं होते, किन्तु पश्चात् होना पाया जाता है वह भी एक दो पीढीका नहीं युधिष्ठिरसे सात आठ पीढी पीछे होना प्रमाणित होता है यह बडे ही आश्चर्यका विषय है ऐसी ऐतिहासिक जटिल वंशावलीसे वृत्तान्तका पता लगाना बडी कठिन बात है ।*

इस कठिन स्थलमें यही कहा जा सकता है कि यदि वाल्मीकिजीकी लिखी वंशावलीपर निर्भर किया जाय तो दोनो ओरकी सरलता और श्रीरामचंद्रजीके पूर्वत्वकी अनेक अंशोंमें रक्षा होती है ॥

तीसरा अध्याय ३.

प्राचीन आर्य राजाओंके द्वारा भिन्न २ नगर और राज्योंका स्थापित होना ।

अयोध्या नगरी ही सूर्यवंशी राजाओंकी प्रथम और प्रधान कीर्ति है । भगवान् वैवस्वतमनुने इसकी प्रतिष्ठा की है इस प्रसिद्ध नगरीके समयका निरूपण

---

* बृहद्बलका प्रमाण भागवतके ९ स्कन्ध अध्याय १२ में लिखा है ।
"ततः प्रसेनजित्तस्मात्तक्षको भविता पुनः । ततो बृहद्बलो यस्तु पित्रा ते समरे हतः ॥"
संपूर्ण इतिहास पुराणोंसे यह बात सिद्ध है कि त्रेताके अंतमें रामचंद्र और द्वापारयुगके अंतमें श्रीकृष्ण और युधिष्ठिरादि जन्मे हैं, तब रामचंद्रके पहले होनेमें संदेह नहीं है, रही वंशावलीकी बात इसमें यही अनुमान होता है कि वंशावलीमें कहीं मुख्य राजा लिखे गये हैं कहीं मुख्य और गौण, इससे उनमें भेद होनेसे वह भेद नहीं तथा जो योगबलसे दीर्घजीवी हुए हैं उनके दीर्घजीवनपर भी विचार करना चाहिये और यह भी बात है कि परिश्रमके साथ यदि अष्टादश पुराणोंमें खोज किया जाय तो सम्भव है वंशावली पूर्ण मिल जाय और यह शंका दूर हो हम राजस्थानके अनुवादमें प्रवृत्त हैं इस कारण इस गहन विषयको यहां नहीं उठाते हैं ॥ अनुवादक ।

करना कठिन है कि यह कब बसाई गई कविकुलगुरु वाल्मीकिजीकी रामायण पढनेसे विदित होता है कि एक समय यह नगरी मर्त्यलोकमें अमरावतीके समान थी वह ग्रंथ पाठ करनेसे ज्ञात होता है कि रामचन्द्रजीके समय भारतवर्षमें अयोध्याके समान दूसरी नगरी भारतवर्षमें न थी, परन्तु क्या अयोध्यापुरीने एक ही कालमें ऐसी सुन्दरता और ऐसी समृद्धि प्राप्त की थी, नहीं ऐसा कभी नहीं हो सकता, अवश्य ही धीरे धीरे सौन्दर्यमयी और समृद्धिशालिनी होते होते विस्तारभावको प्राप्त होकर एक दिन उसने भारतवर्षके सम्पूर्ण नगरोंसे ऊँचा आसन प्राप्त किया था + ।

अयोध्या नगरीकी प्रतिष्ठाके समय ही महाराज इक्ष्वाकुके पौत्र मिथिने* मिथिलापुरीकी स्थापना की थी, मिथिके वंशधर जनकनामसे पुकारे जाते थे, क्रमशः यह जनक शब्द इस वंशमें सबके साथ उपाधि रूपसे संयुक्त हो गया, और सब ही कुलके नरपति जनक कहलाने लगे ।

इस बातका वर्णन कहीं भी दिखलाई नहीं देता कि अयोध्या और मिथिलाके पहले भारतभूमिमें और कोई नगरी स्थापित हुई थी वा नहीं । इन दोनों नगरियोंके बस जानेके पीछे वातस चम्पापुर आदि कई एक छोटी छोटी नगरी मनुके वंशधरोंने बसाई थीं । भगवान् बुधका लगाया हुआ चन्द्रवंशका वृक्ष बडे विस्तारवाला है । इस वृक्षकी भिन्न २ शाखाओंसे जो बडे पराक्रमी राजा उत्पन्न हुए थे उन सबने ही प्रायः भारतवर्षके भिन्न २ भागोंमें पृथक् पृथक् नगर स्थापन किये, उनमेंसे बहुतसे नगर इस समय कालरूपी समुद्रमें समा गये, जो दो एक इस समय अपने अस्तित्वको दिखा रहे हैं वह भी प्रायः विध्वस्त और खड़हर हो रहे हैं तो भी उस ध्वंस राशिसे उनका प्राचीन गौरव अब भी कुछ कुछ झलकतासा दिखाई देता है बहुतोंका मत है कि प्रसिद्ध

+ " कोशलो नाम मुदितः स्फीतो जनपदो महान् । निविष्टः सरयूतीरे प्रभूतधनधान्यवान् ॥
अयोध्या नाम नगरी तत्रासील्लोकविश्रुता । मनुना मानवेन्द्रेण या पुरी निर्मिता स्वयम् ॥
आयता दश च द्वे च योजनानि महापुरी । श्रीमती त्रीणि विस्तीर्णा सुविभक्तमहापथा ॥
राजमार्गेण महता सुविभक्तेन शोभिता । मुक्तपुष्पावकीर्णेन जलसिक्तेन नित्यशः ॥
तां तु राजा दशरथो महाराष्ट्रविवर्द्धनः । पुरीमावासयामास दिवि देवपतिर्यथा ॥
कपाटतोरणवतीं सुविभक्तान्तरापणाम् । सर्वयन्त्रायुधवतीमुषितां सर्वशिल्पिभिः ॥
सूतमागधसम्बाधां श्रीमतीमतुलप्रभाम् । उच्चाट्टालध्वजवतीं शतघ्नीं शतसङ्कुलाम् ॥
वधूनाटकसंघैश्च संयुक्तां सर्वतः पुरीम् । उद्यानाम्रवणोपेतां महतीं शालमेखलाम् ॥
दुर्गगम्भीरपरिखां दुर्गामन्यैर्दुरासदाम् । वाजिवारणसम्पूर्णां गोभिरुष्ट्रैः खरैस्तथा ॥
सामन्तराजसंघैश्च बलिकर्मभिरावृताम् । नानादेशनिवासैश्च वणिग्भिरुपशोभिताम् ॥ ५ सर्ग
मनुः प्रजापतिः पूर्वमिक्ष्वाकुश्च मनोः सुतः । तमिक्ष्वाकुमयोध्यायां राजानं विद्धि पूर्वकम् ॥ " सर्ग

* " निमेः पुत्रस्तु तत्रैव मिथिर्नाम महान्स्मृतः । प्रथमं भुजबलैर्येन तैरहूतस्य पार्श्वतः ॥
निर्मितं स्वीयनाम्ना च मिथिलापुरमुत्तमम् ॥ " भविष्यपुराण,
यह देश इस समय तरहूत त्रिहूत वा तिरहुत नामसे विख्यात है और मिथिला देश भी कहाता है दरभंगेके समीप जनकपुर इस समय नैपालके राज्यमें है ॥

प्रयागराज ही चन्द्रवंशी राजाओंकी प्रथम कीर्ति है, परन्तु विशेष विचार करनेसे एक नगरीकी प्रतिष्ठाका वर्णन और भी पाया जाता है इस नगरीका नाम माहिष्मती है जो इस समय नर्मदाके तटपर स्थित है। हैहयकुलोत्पन्न महावीर कार्तवीर्यार्जुनके द्वारा माहिष्मती पुरी प्रतिष्ठित हुई थी, इस समय भी यह पुरी अपने प्राचीन स्थानपर * महेश्वर नामसे प्रसिद्ध है ॥

भगवान् श्रीकृष्णजीकी प्रधान राजधानी कुशस्थली द्वारका थी, उसकी प्रतिष्ठा प्रयाग शूरपुर वा मथुरासे बहुत पहले हुई थी, भागवतमें लिखा है कि महाराज इक्ष्वाकुके सबसे छोटे भ्राता आनर्तने इस नगरीको बसाया था. परन्तु यदुवंशी नृपतियोंने कब वहां प्रतिष्ठा पाई इसका वृत्तान्त उक्त ग्रन्थमें नहीं मिलता.

जैसलमेरके प्राचीनभट्ट ग्रन्थमें लिखा है कि सबसे पहले प्रयाग फिर मथुरा और सबसे पीछे द्वारकाकी प्रतिष्ठा हुई । परन्तु हम नहीं कह सकते कि प्रयागसे पीछे * मथुरापुरी बसी इस बातका विश्वास कहांतक किया जाय इन तीनों नगरोंकी अवस्था और प्रकृति हिन्दूमात्र जानते हैं, इस कारण हमने इन नगरोंका कुछ विशेष वर्णन नहीं लिखा, इन तीनों नगरोंमें प्रयाग ही विशेष प्रसिद्ध है, एक समय पुरुवंशके प्रधान प्रधान राजा यहीं हुए थे, विख्यात यात्री मेगास्थिनीस अपनी भारतयात्राके समय इस नगरकी सुन्दरता देखकर एक साथ मोहित होगया था.

एलिकजेण्डर सिकन्दरके समयके इतिहासवेत्ता कहते हैं कि जब यह भुवनविजयी वीर सिकन्दर भारतके विजय करनेको आया था, उस समय मथुराके निकटके भूभाग शूर-सेनदेश और वहांके रहनेवाले शौरसेनी कहे जाते थे, भगवान श्रीकृष्णजीसे बहुत पहले दो शूरसेन और भी यदुकुलमें उत्पन्न हो गये थे, एक उनके पितामह और दूसरे उनसे

---

* वहांके रहनेवाले इस पुरीको सहस्रबाहुकी बस्ती कहते हैं नर्मदाके किनारे अहल्याबाईके बनाये घाटोंकी इस समय भी बडी शोभा है ।

१टाड साहबने आनर्तको कुशस्थलीका स्थापन करनेवाला और इक्ष्वाकुका भ्राता लिखकर धोखा खाया है, भागवतमें ऐसा नहीं लिखा, यह आनर्त वास्तवमें इक्ष्वाकुके भतीजे थे इनके पिताका नाम शर्याति था, शर्यातिके उत्तानबर्हि, आनर्त और भूरिसेन यह तीन पुत्र थे, आनर्तका रैवतनामक एक पुत्र था, इस रैवतने ही कुशस्थलीको बसाया था, देखो भागवतस्कन्ध ९ । अध्याय ३

उत्तानबर्हिरानर्तो भूरिषेण इति त्रयः । शर्यातेरभवन्पुत्रा आनर्ताद्रैवतोऽभवत् ॥ २७ ॥

सोन्तः समुद्रनगरीं विनिर्माय कुशस्थलीम् । आस्थितोभुंक्त विषयानानर्तादीनरिंदम ॥ २८ ॥

कुशस्थलीका दूसरा नाम आनर्तदेश है । भागवतमें लिखा है कि जरासंधके युद्धके समय कृष्णने वहां द्वारकापुरी फिर बसाई और तबसे ही यदुवंशियोंकी वहां प्रतिष्ठा हुई भागवत दशम स्कंध अ० ५० 'अन्तःसमुद्रे नगरं कृष्णाद्भुतमचीकरत् ।' ५० 'तत्र योगप्रभावेण नीत्वा सर्वजनं हरिः ॥ ५८ ॥'

* भागवतमें लिखा है कि लक्ष्मणके छोटे भ्राता शत्रुघ्नने मथुराकी प्रतिष्ठा की है इन्होंने लवणासुरको मारकर मधुवनमें मथुरापुरी बसाई. यथा—

"शत्रुघ्नश्च मधोः पुत्रं लवणं नाम राक्षसम् । हत्वा मधुवने चक्रे मथुरां नाम वै पुरीम् ॥ १४ ॥"

भागवतस्कन्ध ९ अ० ११ श्लो० १४

आठ पीढी पहले हुए थे, हम निश्चय नहीं कहसकते कि इन दोनोंमें किसने शूरपुरको बसाया उक्त (सिकन्दरके समयके) ग्रीक [यूनानी] इतिहास लेखकोंने लिखा है कि जब वह दिग्विजयी सिकन्दर भारतमें आया था, उस समय शौरसेनी देशमें मथुरा और क्लिशवुरा नामक दो नगरी थीं इस बातका समझना कठिन है कि क्लिशवुरा शब्द शूरपुरके स्थानमें लिखा है या कोई अन्य नगर है। बडे दुःखकी बात है कि ग्रीक लोगोंने पौराणिक नामोंको बहुत ही विग कर लिखा है।

चन्द्रवंशीय विख्यात राजा महाराजा हस्तीने हस्तिनापुर वसाया था। एक समय जो हस्तिनापुर पौरव राजाओंके तीक्ष्णतेज प्रभावसे मध्याह्नकालीन मार्त्तण्डके समान जान पडता था, जिसकी प्रकाशयुक्त गौरव गरिमा एक समय सारे संसारमें प्रचारको प्राप्त हुई थी, आज वही हस्तिनापुर भारतवर्षके नकशेसे दूर हो गया है। आज अजीत कालके कठोर भयंकर हस्तप्रहारसे उसका सम्पूर्णतासे नाश हो गया है; कालके इस प्रचण्ड प्रहारसे जो वह नाशको प्राप्त होकर यदि अपने प्राचीन गौरवके चिह्नको मलीनभावसे भी दिखलाता रहता तौभी हतभाग्य भारतवासियोंके हृदयमें कुछेक शान्ति रहती परन्तु दुर्भाग्यवशसे यह भी न रहा श्रीगंगाजी महारानी जगत् सुखदानीकी तीव्र तरंगोंके प्रचण्ड प्रभावसे महाराज हस्तीकी वह प्रधान कीर्ति लोप हो गई। और होती जाती है। शिवलोकके गगनभेदी शिखरको तोडती फोडती पहाडोंको चीरती फाडती दहाडती हुई श्रीगंगाजी जिस भारतवर्षके पुण्यस्थानमें उतरी हैं उस पवित्र हारिद्वारसे २० कोश दक्षिणमें आजतक हस्तिनापुर अपने दीन, हीन, मलीन, शरीरको दिखा रहा है परन्तु गंगाजीके प्रभावसे बराबर इस नगरका नाश होता चला जाताहै। इसके बचनेकी आशा नहीं है।

इस बातको प्रत्येक हिन्दूधर्मावलम्बी जानता है कि महाभारतके समरसे बहुत पहिले हस्तिनापुरकी प्रतिष्ठा हुई थी। इस भयंकर युद्धके होजानेपर अनुमानसे कोई आठसौ वर्ष पीछे प्रसिद्ध मेसिडोनीयन वीर एलेकजन्डर भारतपर चढाई करके आया था। उसके साथ कई एक ग्रीक पंडित भी आये थे, कि जिन्होंने भारतवर्षके अनेक नगरोंका वृत्तान्त अपने ग्रन्थोंमें लिखा है परन्तु बडे आश्चर्यकी बात है कि उन्होंने हस्तिनापुरका कुछ भी वृत्तान्त अपने ग्रन्थोंमें नहीं लिखा।

महाराज हस्तीके पश्चात् चन्द्रवंशमें; अजमीढ, द्विमीढ, और पुरुमीढकी यह तीन विशालशाखा उत्पन्न हुई इन तीन शाखाओंमें अजमीढकी शाखा ही अधिक प्रतिष्ठाको प्राप्त हुई थी। बाकी दो शाखाओंका वृत्तान्त पुराणादिमें कुछ पाया नहीं जाता।

महाराज अजमीढसे चार पुरुष नीचे बाह्याश्वनामक एक राजा उत्पन्न हुआ। कहतेहैं कि इस राजाने सिन्धुनदके निकटवाले किसी देशमें अपने राज्यको स्थापन किया था, बाह्याश्वके पांच पुत्र उत्पन्न हुए थे उनके द्वारा ही विशाल पंचनद (पंजाब) देशमें

प्रसिद्ध पांचालिक राज्य स्थापित हुआ था * इन पांच भ्राताओंमें एक भ्राताका नाम काम्पिल्य था, इसने अपने नामसे कांपिल्य नामक एक पुरी बसाई।

चन्द्रवंशमें प्रसिद्ध कुशनामक राजाके देवताओंके समान तेजस्वी कुशिक, कुशनाभ, कुशाम्ब और मूर्तिमान् यह चार पुत्र उत्पन्न हुए। इन चारों भ्राताओंमें कुशनाभ और कुशाम्ब ही विशेष प्रतिष्ठावान् थे। कहते हैं कि कुशनाभने गंगाजीके किनारे महोदयनामक एक नगरी बसाई थी। कुछ कालके बीत जानेपर महोदय नामके बदले इसका कान्यकुब्ज नाम हुआ। यह कान्यकुब्ज नगर बहुत दिनतक बडी प्रतिष्ठाके साथ विराजमान होता रहा। पश्चात् भारतविजयी शहाबुद्दीनके समयमें कान्यकुब्जके अयोग्य राजा जयचन्दके प्रायश्चित्तके साथ ही उक्त नगरके प्राचीन गौरवका भी अंत हो गया। कान्यकुब्जका एक और पौराणिक नाम गाधिपुर है। अब यह कन्नौज कहलाता है.

पुराणादि ग्रन्थोंमें कौशाम्बी नामक जो एक प्राचीन नगरीका वृत्तान्त पाया जाता है, उस नगरीको कुशाम्बने ही बसाया था। एक समय यह कौशाम्बी नगरी भारतमें विशेष गौरव और प्रतिष्ठाको प्राप्त हुई थी परन्तु आज उस गौरव और प्रतिष्ठाके स्थानपर केवल नाम ही नाम बाकी है। तथापि कोई २ अनुमानके ऊपर निर्भर करके बतलाते हैं कि कन्नौजसे चलकर कुछ दक्षिणमें गंगाजीके किनारे देखभाल करनेसे कौशाम्बी नगरीके टूटे फूटे चिह्न दिखाई देते हैं।

कहते हैं कि महाराज कुशके दो और पुत्रोंने धर्मारण्य और वसुमती नामक दो पुरी बसाई थीं, परन्तु यह दोनों पुरी कहाँ हैं, इस बातका कोई अच्छा प्रमाण नहीं पाया जाता। *

कौरवनाथ महाराज कुलके सुधन्वा और परीक्षित नामक जो दो महाधनुर्द्धर पुत्र उत्पन्न हुए थे, उनमें सुधन्वाके गोत्रमें महावीर जरासन्ध और परीक्षितके गोत्रमें शान्तनु और वाह्लीक उत्पन्न हुए पाण्डव और धार्त्तराष्ट्रगण शान्तनुके वंशधर कहलाये। जरासन्ध भी इन्हीं कुमार लोगोंके समयमें हुआ, जरासन्धकी राजधानीका नाम राजगृह था।

---

* मुद्गल, जवीनर, बृहदिषु, सञ्जय, काम्पिल्य यह इन पांच भ्राताओंके नाम थे। इसके विषयमें प्रथम वंशपत्रिका देखो।

* श्रीगंगाजीके किनारे कारानामक स्थानमें एक शिलालिपि निकली जिसमें यह लिखा था कि "यशपाल" नामक एक राजा कौशाम्बीका नरेश था विलायती इतिहास लेखक विलफोर्ड साहब अपने पौराणिक भूगोलमें एक जगह लिखते हैं कि कौशाम्बी नगरी—इलाहाबादके निकट है। महाराज कुशका तीसरा पुत्र अमूर्तरजस धर्मारण्य और चौथा पुत्र वसु, वसुमतीका बसानेवाला है। यथाः—

"अमूर्त्तरजसो नाम धर्मारण्यो महीपतिः। चक्रे पुरवरं राजा वसुर्नाम गिरिव्रजम्॥ ७॥
एषा वसुमती नाम वसोस्तस्य महात्मनः।" वाल्मीकिरामायण ३२ सर्ग।

धृतराष्ट्रके पुत्र प्राचीन हस्तिनापुरमें रहा करते थे। परंतु पाण्डव लोगोंने उनसे अलग रहकर इन्द्रप्रस्थनामक नगर बसाया था। बहुत दिनों यही नाम चलता रहा, फिर ईसवी आठवीं शताब्दीके मध्यभागमें इस नगरका नाम दिल्ली होगया।

बाह्लीकके पुत्रोंने पालिपोत्र और आरोड * नामक दो राज्य स्थापित किये। पालिपोत्र गंगाके किनारे और आरोड सिन्धुनदके किनारेपर स्थापित हुआ। चन्द्रवंशके यह समस्त राजा महाराज ययातिके प्रथम और छोटे पुत्र यदु व पुरु के वंशमें उत्पन्न हुए थे, महाराज ययातिके शेष पुत्रोंका वृत्तान्त कुछ भी नहीं जाना गया। परन्तु प्रयोजन समझ यहांपर उनका कुछ वृत्तान्त लिखा जाता है।

राजा ययातिके उक्त तीनों पुत्रोंमें अनु ही विशेष प्रतिष्ठावान् हुआ। इसके वंशमें अंग, बंग, कलिंग, कैकय और मद्रक आदि महात्मा उत्पन्न हुए इन सबने अपने २ नामके अनुसार एक २ नगर बसाया था। इन नगरोंमेंसे दो एक नगरोंका नाम अबतक इतिहासमें यथावत् वर्तमान है। परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि वह स्थान निश्चय ही पुराणलिखित स्थान है या नहीं?

राजा ययातिके दूसरे पुत्र तुर्वसुकी कीर्तिका कोई वृत्तान्त भी नहीं पाया जाता, ज्ञात होता है कि वह भारत भूमिको छोडकर और किसी देशमें चले गये थे। उनके तीसरे भ्राता द्रुह्युके कुलमें गान्धार और प्रचेता नामक जो दो राजा हुए उन्होंने भी एक२ राज्य स्थापन किया, पौराणिक गान्धार (वर्त्तमान कंधार) को गान्धारने बसाया परन्तु प्रचेताकी कीर्तिका कोई विशेष वृत्तान्त नहीं जाना जाता। कहते हैं कि वह किसी म्लेच्छदेशके राजा हुए थे।

कीलंजर, केरल, पाण्ड और चौलनामक यह चार पुत्र महाराज दुष्यन्तके उत्पन्न हुए थे। इन चारोंने अपने २ नामसे एक २ राज्य बसाया।

कालिञ्जर, बुन्देलखंडमें स्थापित है। अतिप्राचीन कालसे इसकी प्रसिद्धि है। केरल, देश मालावार देशसे मिला हुआ है इस देशको ही कोचीन कहते हैं।

मालावारके उपकिनारेपर पांडुमंडलनामक एक देशका वृत्तान्त पाया जाता है; कदाचित इसको पांडुने ही बसाया हो। अंग्रेज भूगोलवेत्ता इसको "रेजीया पांडीयना" कहते हैं। हम जानते हैं कि वर्त्तमान तन जौर ही उक्त पांडुमण्डलकी राजधानी है।

चौल, सौराष्ट्र देशमें प्रसिद्ध द्वारकाके निकट बसा हुआ है, आजतक उसका यही नाम है।

भगवान् मनु और बुधसे लेकर भगवान् श्रीरामचन्द्रजी और श्रीकृष्णजी तक सूर्य्यवंशीय और चन्द्रवंशीय राजाओंका संक्षिप्त वृत्तान्त लिखा गया। इन महा-

* आरोड़ वा आलोर सिन्धुदेशकी प्राचीन राजधानी है। यह पुरी, सिन्धुनदकी एक शाखाके किनारेपर बसी हुई है। जब अलेकजन्डर भारतवर्षमें आया था तब यह आरोड़पुरी विशेष प्रसिद्ध थी। कहते हैं कि बाह्लीकवंशीय शल्य इसका स्थापन करता हुआ। अब्बुलफजलने भी अपने ग्रन्थमें इसका वृत्तान्त लिखा है। परन्तु उक्त महाशयने आरोड़को, वर्त्तमान ठट्ठा लिखकर धोखा पाया है।

पुरुषोंका जीवनचरित्र और पवित्र कीर्ति विचार करते २ जो कुछ थोडासा ऐतिहासिक तत्त्व प्राप्त हुआ वही यथा स्थानमें मिलाया गया, विशाल समुद्रके समान पुराण शास्त्रोंका मथन करते २ जिस दिन शास्त्ररूपी समुद्रसे रत्नोंके ढेर निकलेंगे; संसारमें उस दिन एक युगका आगमन होगा। उस दिनसे यह दीन भारत आरतपनको छोड मलिनतासे मुखमोड सत्यसे सम्बंध जोड नये जीवनको पाय महावलवान् हो जायगा, वह दिन अब बहुत दूर नहीं है कालरूपी रात्रिके कराल और विशाल राज्यको लांघता हुआ वह दिन धीरे २ भारतकी ओरको चला आता है वह देखिये! आज भारतके भविष्य भाग्यगगनमें प्राची दिशाके द्वारपर उस दिनकी महीना २ किरणें अति मन्द २ भावसे उदय होरही हैं।

आजकल पुराण शास्त्रोंका प्रचार होनेसे प्राचीन ऋषि, मुनि और महीपाल गणोंके अनेक कार्य्यकलाप–क्रमानुसार प्रकाशमान हो रहे हैं। यदि कोई सज्जन चेष्टा करेंगे तो अवश्य पुराणरूपी समुद्रको मंथन करके अत्युत्तम रत्नराशि प्रकाशित होगी। ॐ

चतुर्थ अध्याय ४.

श्रीरामचन्द्रजी व राजा युधिष्ठिरके परवर्ती सूर्य और चन्द्रवंशीय राजाओंका संक्षिप्त वृत्तान्त व अन्यान्य राजवंशोंकी समालोचना।

महाराज इक्ष्वाकुसे लेकर श्रीरामचन्द्रजीतक और बुधसे लेकर श्रीकृष्ण व युधिष्ठिरतक सूर्य और चंद्रवंशकी संक्षिप्त समालोचना करके इस समय हम निचले राजाओंका विचार करते हैं।

जयपुर और बीकानेरके राजपूत लोग अपनेको श्रीरामचन्द्रके वंशमें उत्पन्न हुआ बताते हैं। इधर वर्त्तमान जैसलमेर और कच्छ देशके राजपूतगण भगवान् श्रीकृष्णजीका वंशधर कहकर अपनी महान कुलगरिमा का प्रचार करते हैं। महाराज

---

* यह बात हमको दुःखके साथ कहनी पड़ती है कि पुराणरूपी कथासागरमें गोता लगाकर ऐतिहासिक रत्नोंके बाहर निकालनेका कोई उद्योग नहीं करता।

युधिष्ठिर, जरासन्ध अथवा और किसी चन्द्रवंशीय राजासे भारतवर्षका और कोई हिन्दू राजपूत वंश उत्पन्न हुआ है या नहीं क्रमसे इस विषयका विचार भी किया जायगा ।

भगवान् श्रीरामचन्द्र आर श्रीकृष्णजीके परवर्ती कालमें सूर्य और चंद्रवंशके मध्यमें जो राजालोग उत्पन्न हुए थे उनकी पवित्र नामावली दूसरी वंशपत्रिकामें प्रगट हुई है इस पत्रिकामें क्रमानुसार तीन राजकुल सन्निवेशित हुए हैं ।

१ । सूर्यवंश और श्रीरामचन्द्रजीके वंशधरगण ।
२ । इन्दुवंश और महाराज परीक्षितके वंशधरगण ।
३ । इंदुवंश और महाराज जरासन्धके वंशधरगण ।

श्रीरामचन्द्रजीके लव और कुश नामक दो यमल पुत्र उत्पन्न हुए थे । उनमें ज्येष्ठ लवसे* मिवाडके राणालोग अपनी उत्पत्तिका प्रमाण देते हैं । छोटे पुत्र कुशसे माडवार और आमेरके राजालोग उत्पन्न हुए थे । कुशके वंशधर होनेके कारण उनका कुशावह (कछवाहे) नाम हुआ है । इस प्रकारसे मारवाडके राजा लोग भी उक्त कुशसे अपनी वंशोत्पत्तिका प्रमाण देकर अपनेको सूर्यवंशीय बताते हैं । परन्तु इस बातको बहुतसे हिन्दूलोग नहीं मानते । वह कहते हैं कि मारवाडके राजालोग राजर्षि विश्वामित्रके पूर्वपुरुष कुशसे उत्पन्न हुए ।

जिस दिन रविकुलतिलक श्रीरामचन्द्रजीने भ्रातृशोककी कठोर अग्निमें अपने जीवनका होम दिया; उस दिनसे जो राजालोग क्रमानुसार अयोध्याके सिंहासनपर बैठे, उनका वृत्तान्त भलीभांति श्रीमद्भागवतमें ही प्रकट हुआ है । उक्त महापुराणमें लिखा है कि श्रीरामचन्द्रजीके पश्चात् अट्ठावन राजा अयोध्याके सिंहासनपर बैठे, उनके पिछले वंशधरका नाम सुमित्र हुआ । इस बातका किसी पुराणमें कोई वृत्तान्त नहीं पाया जाता कि महाराज सुमित्रके पीछे सूर्यवंशमें और कोई राजा हुआ वा नहीं । परन्तु आमेरके प्रसिद्ध नरनाथ पंडितवर जयसिंहने जो सूर्यवंशकी एक वंशावली संग्रह की थी उसमें लिखा है कि महाराज सुमित्रके पश्चात् सूर्यकुलमें अनेक राजा हुए थे । वह राजालोग मेवाडके राणाओंके पूर्वपुरुष थे ।

अभिमन्युके पुत्र महाराज परीक्षित् राजा युधिष्ठिरके उत्तराधिकारी हुए । राजा परीक्षितसे लेकर सब समेत ६६ राजा पाण्डवोंकी लीलाभूमि "इन्द्रप्रस्थ" के सिंहासनपर

---

* टाड्साहबका लवको श्रीरामचन्द्रजीका ज्येष्ठ पुत्र कहना ठीक नहीं है पुराणोंके मतानुसार कुश ही बड़ा है । तथाः—

"यस्तयोः प्रथमं जातः स कुशैर्मंत्रसंस्कृतः । निर्म्मार्ज्जनीयो नाम्ना हि भविता कुश इत्यसौ ॥
यश्चावरज एवासील्लवणेन समाहितः । निर्मार्ज्जनीयो वृद्धाभिर्नाम्ना स भविता लवः ॥"

वा० रामायण.

विराजमान हुए थ, इस वंशके शेष उत्तराधिकारीका नाम राजपाल था। राजतरंगिणी और राजावलीके अतिरिक्त दूसरे ग्रंथमें किसी इन राजाओंका स्पष्ट २ वृत्तान्त नहीं पाया जाता है। कहते हैं कि महाराज राजपालने कमायूँके राज्यपर चढाई की और वहाँके राजा सुखवंतने उसको मारडाला। विजयी सुखवंत इस जय पानेसे महाहर्षित होकर अपने देशके वैरी राजपालकी इंद्रप्रस्थ नगरीपर अधिकार करनेके लिये उसकी ओर चढ धाया जाते ही राजधानीको अपने अधिकारमें कर लिया। परन्तु अधिक दिनोंतक वहां नहीं रहने पाया। क्योंकि शीघ्र ही महाराज विक्रमादित्यके प्रचंड प्रतापने उसको इंद्रप्रस्थसे निकाल बाहर किया.

चक्रवर्त्ती महाराज विक्रमादित्यने कुमायूँके राजा सुखवन्तके ग्राससे इंद्रप्रस्थको बचाया, परंतु उसकी पूर्वशोभाके बचानेका कोई यत्न न किया। यदि यत्न करते तो उसके सफल मनोरथ होनेमें कोई सन्देह नहीं था, क्योंकि उस समयमें महाराज विक्रमादित्य ही भारतके सार्वभौम राजा थे। सम्पूर्ण भारतवर्षकी सुंदरता और भारतीय आर्य्यकुलकी गौरवता उस काल उनकी अमरावतीतुल्य नगरीमें इकट्ठी हुई थी।

यदि महाराज विक्रमादित्य चाहते तो पाण्डवोंकी लीलाभूमि इंद्रप्रस्थको उसके प्राचीन गौरवकी ऊँची श्रेणीपर पहुंचा सकते थे। पर ऐसा न करके उन्होंने केवल सुखवन्तके हाथसे इसका उद्धार ही किया। और इन्द्रप्रस्थको छोडकर अपनी उज्जयिनी नगरीको लौट आये। जिस दिनसे वह उसको छोडकर चले आये तबसे लेकर आठ, दश शताब्दीतक इन्द्रप्रस्थका सिंहासन खाली रहा। जो इन्द्रप्रस्थ अपने सौन्दर्य और गौरवसे एक दिन सुरनगरी अमरावतीके समान हुई थी, इस दीर्घ कालकी अराजकतासे वह क्रमानुसार भयंकर श्मशानके समान हो गई। ऐसे समयमें अनंगपाल नामक राजाने उसको संजीवनी सामर्थ्यकी सहायतासे फिर जीवनदान दिया। भट्टग्रन्थमें अनंग पालको पाण्डुवंशीय क्षत्रिय कहा है। पूर्वपुरुषोंकी कीर्तिको उक्त महाराजने रक्षित तो किया परन्तु इन्द्रप्रस्थके बदले उसका दिल्ली नाम रक्खा।

प्रसिद्ध राजावली ग्रन्थमें लिखा है "भारतवर्षके उत्तरीयभाग कुमायूँ गिरिव्रजसे सुखवन्त नामक एक राजाने आकर चौदह वर्षतक इन्द्रप्रस्थका राज्य किया। फिर महाराज विक्रमादित्यने उसको मारकर इन्द्रप्रस्थका उद्धार किया। भारतसमरको हुए इस समयतक ३९१५ वर्ष बीत चुके थे" इसी ग्रंथमें और एक जगह ग्रंथकारने लिखा है "मैंने बहुतसे पौराणिक ग्रंथोंको पाठ करके देखा, परंतु किसी ग्रंथके बीच भी युधिष्ठिर और पृथ्वीराजके मध्यसमयमें एकशतसे अधिक क्षत्रिय राजाओंका नाम नहीं दिखाई देता इन एकशत राजाओंने ४१०० वर्षतक राज्य किया था। इनके राज्यका अन्त होनेके पीछे इंद्रप्रस्थ पुरी सूर्यवंशके अधिकारमें आ गई थी"।

जिस दिन महाराज युधिष्ठिर, अभिमन्युके पुत्र परीक्षितके हाथमें राज्यभार समर्पण करके महाप्रस्थानकी यात्रा कर गये; उस दिनसे महाराज पृथ्वीराजके

अभिषेकतक इंद्रप्रस्थके सिंहासनपर सब एक शत (१००) राजा बैठे थे। इन समस्त राजाओंका नाम उसी पुस्तककी दूसरी वंशपत्रिकामें लिखा गया है।

विशाल चंद्रवंशकी और एक बड़ी शाखाका वृत्तांत प्रयोजन समझ कर हमने यहां पर लिखा है। इस शाखाकुलमें महाराज जरासंध विख्यात हुआ। इसकी राजधानी राजगृहनामक नगरमें थी। श्रीमद्भागवतमें लिखा है कि जरासंधका पुत्र सहदेव और पौत्र मार्ज्जारिक महाभारत समर समयमें वर्तमान थे अतएव यह महाराज परीक्षित् समकालीनके हुए। महाराज जरासंधके पश्चात् उसके वंशके २३ राजा मगधके सिंहासनपर बैठे थे। इस वंशके २३ वें राजाका नाम रिपुञ्जय था। इस रिपुञ्जयका इसके मंत्रीने संहार किया। क्रूर मंत्री शनकने राजहत्याके पापसे अपना मुँह काला तो किया परंतु इस राज्यको स्वयं न भोगा। अपने पुत्र प्रद्योतको उस अधर्मप्राप्त सिंहासनपर आरूढ़ करके वह संसारसे बिदा हो गया.

राजघाती शनकके पुत्रसे लेकर उसके पांच वंशधरोंने मगधकी गद्दीका अभिषेक प्राप्त किया था। तदुपरान्त पिछले महाराज नंदिवर्द्धनके साथ शनकके राजकुलका नाश हो गया। इन पांच राजाओंने १३८ वर्षतक राज किया था।

उसी कालमें शिशुनागनामक एक विजयी राजा प्रचण्ड बलके साथ भारतभूमिमें आया। और जरासंधके सिंहासनको अपने अधिकारमें किया। कहते हैं कि वह तक्षक स्थान * नागदेशसे आया था। इस शिशुनागसे लेकर उसके वंशके पिछले राजा महानंदतक सब १० राजा मगधके सिंहासनपर बैठे थे। ऐसा वर्णन है कि महाराज महानंदने शुद्ध जाति क्षत्रिय राजाओंके साथ घोर युद्ध करके उनमेंसे बहुतोंको मारडाला ऊपर कहे हुए १० राजाओंने ३६० वर्षतक राज्य किया। इनके पश्चात् कितने एक शूद्र राजा मगधके राजसिंहासन पर बैठे थे।

शिशुनागका वंश लोप होते२ मौर्यवंशने मगधके वंशपर अधिकार कर लिया। भुवनाविख्यात महाराज चंद्रगुप्त इस वंशके प्रथम राजा हुए। इस महाराज चंद्रगुप्तकी कीर्ति और यश एक समय इंग्लेंड जर्मनी और फ्रांसतक फैल गया था। इस वृत्तांतको सभी विद्वान् लोग जानते हैं। इस मौर्यवंशमें सब १० राजा हुए थे। इन दश राजाओंने १३७ वर्षतक राज्य किया था।

मौर्यवंशके पिछले राजा महाराज बृहद्रथको राज्यसे अलग करके अष्टमित्र नामक एक राजाने बलात्कार मगधके सिंहासनपर अपना अधिकार किया। इस अष्टमित्रसे पांचवें वंशका मगधमें प्रतिष्ठा हुई। कहते हैं कि अष्टमित्र शृंगी देशसे आया था। इसके वंशमें आठ राजा अवतीर्ण हुए। महाराज अष्टमित्र भी इन्हीं आठ राजाओंके

* ग्रीक इतिहास लेखकोंने तक्षक स्थानका नाम तकारिस्थान कहा है इसका वर्तमान नाम तुर्किस्तानहै।

बीचमें हुआ । यह आठों राजा ११२ वर्षतक मगधके सिंहासनपर रहे थे । इस वंशके पिछले राजाका नाम देवभूत हुआ । महाराज देवभूतके राजत्वकालमें भूमित्र-नामक एक वीर कण्वदेशसे चढाई करनेके लिये मगध देशमें आया और शीघ्र ही देवभूतको संहार करके वहांके सिंहासनपर अपना अधिकार किया । महाराज देवभूतके साथ २ ही शृङ्गी देशके अष्टमित्रका वंश लोप हुआ ।

बीर भूमित्रने अपने विक्रमकी सहायतासे जिस सिंहासनपर अपना अधिकार किया उस सिंहासनपर क्रमानुसार उसके २३ वंशधरगण राज्य कर गये । परन्तु इनमेंसे राजा ही शूद्रकुलमें उत्पन्न हुए थे । भूमित्रसे चौथे पुरुषमें कृष्ण नामक एक राजा शूद्राणीके गर्भसे उत्पन्न हुआ । और इस राजासे ही इस वंशमें शूद्र पनका संचार हुआ । इस वंशके पिछले राजाका नाम शालाम्बुधी था । इस शालाम्बुधीको पाकर मगधमें राजवंशका लोप हो गया । एक समय जिस मगध देशका शासन दण्डवीर जरासंधके प्रचण्ड प्रतापसे प्रकाशित हुआ था, वही वंश उस महाराजके वंश लोप होनेके साथ २ ही क्रमानुसार छः वंशोंके द्वारा चलायमान होकर अन्तमें केवल शून्य नाम-से शेष रह गया । साथ ही मगधका सिंहासन सूना हुआ । फिर उसपर कोई न बैठा । अनुपम वीर जरासन्धका लीलाक्षेत्र—महानन्द और चन्द्रगुप्तकी साधनभूमि—भारत-के शोभनीय अंग; अजीत कालके कठोर करप्रहारसे आज छिनभिन्न होकर पृथ्वीमें लोप होना चाहते हैं ।

पंचम अध्याय ५.

जो जातियें भारतवर्षपर चढाई करके आई थीं उनका संक्षिप्त वृत्तांत ।

शाकद्वीपीय और स्कन्धनाभीय जातिके साथ राजपूत जातिकी समानताका विचार ।

भगवान् मनु और बुधसे लेकर महाराज विक्रमादित्यसे पिछले भारतवर्षीय हिन्दू राजाओंका संक्षिप्त वृत्तान्त तो लिख आए; अब हम उस पवित्र हिन्दूवंशको कुछ देरतक छोडकर कितनी एक अनार्य जातियोंकी समालोचना करेंगे । शाकद्वीप * स्कंध नाभ+ वा और किसी अनार्य देशसे चढाइयाँ करके समय समयपर भारतवर्षमें

---

* शाकद्वीप (Seythia) ग्रीक इतिहासवालोंने इसको शाकताइ और शिखियानामसे पुकारा है, पुराणका मत है कि इसका विस्तार जम्बूद्वीपसे दुगुना है ॥ यथा—"कथ्यमानं निवोधध्वं शाकद्वीपं द्विजोत्तमाः ॥जम्बूद्वीपस्य विस्ताराद्द्वीगुगस्तस्य विस्तरः ।" मत्स्य पुराण ॥ इतिहास वेत्ता छ्टोवाने लिखा है कि कास्पियन हृदका पूर्व स्थित देश शिखिया नामसे प्रसिद्ध है जहां वहुतसे पर्वत और नदियें हैं । सब नदियोंमें अक्सू: (Oxus) नदी प्रधान है । इस ओर पुराणवर्णित शाकद्वीपमें भी इक्षु नामक एक नदीका नाम देखा जाता है,यथा:—"इक्षुश्च पंचमी ज्ञेया तथैव च पुनः कसू ॥ मत्स्यपुराण ॥ " तो क्या यह इक्षु शब्द ही छ्टोवाके द्वारा अक्षनामसे पुकारा गया है ?

+ स्कन्धनाभ । (Scandinavia) वर्त्तमान नारवे और स्वीडनका प्राचीन नाम है ।

आई थीं, उनके आचार व्यवहारका विचार करना ही हमारे इस अध्यायका अभिप्राय है, वह समस्त आचार राजपूत जातिके किस किस आचार व्यवहारसे मिलते हैं वह सब बातें लिखी जायँगी।

जिन जातियोंको हम अनार्य कहते हैं वे अश्व, तक्षक, वा जित् वंशसे उत्पन्न हुई हैं, इन सब जातियोंकी पौराणिक उत्पत्ति वंशविवरण आचार व्यवहार आदि आर्योंके साथ मिलानकर देखनेसे इतनी सदृशता पाई जाती है कि उनका मिलान कर देखनेसे यह बात सहसा ध्यानमें आजाती है कि यह सब जातियां एक ही वंशसे प्रगट हुई हैं।

इस बातका निरूपण करना कठिन है कि यह अनार्य जातियें किस समय भारतवर्षमें आईं यहां यह बात सहजमें विदित होसकती है कि यह किन देशोंसे आई थीं।

जिन तातार और मुगल जातियोंका वृत्तान्त भारतके इतिहासमें लिखा है और जिन मुगल सम्राटोंके हाथमें एक समय सारे भारतवर्षकी वागडोर थी वहभी उन अनार्य जातियोंमें उत्पन्न हुए हैं प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता अबुलगाजीने मुगल और तातारवालोंकी उत्पत्तिके विषयमें जो कुछ लिखा है आगे वही बात लिखी जाती है।

अबुलगाजीने कहा है जिस महापुरुषने तातारियोंके वंशकी प्रतिष्ठा की उसका नाम मुगल था, उसके अंगुज नाम एक पुत्र हुआ, इसने तातार और मुगल जातिकी प्रतिष्ठा की।

इस अगुजके महाबली छः* पुत्र हुए उनमें पहलेका नाम कायन और दूसरेका आय था जिस ग्रंथमें अगुजके वंशका वृत्तान्त लिखा गया है तातारियोंके उस ग्रंथमें कायन और आयको सूर्य और चंद्रके समान कहा है पाठकगाण विचार करें कि यह आय शब्द पुराणोक्त आयु शब्दका अपभ्रंश तो नहीं है।

तातारवाले आयको अपना गोत्रपति मानकर अपनी उत्पत्ति चंद्रवंशसे बताते हैं यह पहले ही कह दिया है कि तातारियोंने आयुको चंद्रमाके समान कहा है, तब वे अपनेको चंद्रवंशसे उत्पन्न हुआ बतावैं तो इसमें कोई विचित्रता नहीं है, यही कारण है जो तातारी जाति पुरुषभावसे चन्द्रमाकी पूजा करती है.

---

* अगुजके इन छः पुत्रोंसे तातारियोंके छः राजकुल उत्पन्न हुए हैं इसी प्रकार आर्यजातिके पहले दो राजवंश थे फिर उनमें अग्निसे उत्पन्न चार कुल और मिल जानेसे छः होगये अन्तमें बढते २ यही कुल छत्तीस प्रकारके होगये।

१ महाभारतमें कहे चंद्रवंशके विवरणमें चार जनोंका नाम आयु पाया जाता है यह पुरूरवाके पुत्र थे उनमें पहला आयु नहुषका पिता था यथाहि—

षट् सुता जज्ञिरेथैलादायुर्धीमानमावसुः । दृढायुश्च वनायुश्च शतायुश्चोर्वशीसुताः ।
आयुषो नहुषः पुत्रो धीमान् सत्यपराक्रमः । महाभा० आदिपर्व ।

तातारी आयुके जुलदुस नाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ था इस जुलदुसके पुत्रका नाम हय * था, इसी हयसे चीनका प्रथम राजकुल उत्पन्न हुआ है.

आयकी नौवीं पीढीमें ईलखाँ नाम एक पुरुष उत्पन्न हुआ इस ईलखाँके कैयान और नागस नामक दो बलवान् पुत्र उत्पन्न हुए क्रमशः इन्हींका वंश वृद्धिको प्राप्त हो समस्त तातार भूमिमें फैल गया.

जिस महावीर चंगेजखांकी वीर्याग्निसे एक समय आधा संसार तप रहा था वह चंगेजखां अपनेको इसी वंशसे उत्पन्न हुआ बताता था.

× पुराणोंमें जो जितनाग और तक्षक जातिका वृत्तान्त पाया जाता है वह हम जानते हैं कि उसकी उत्पत्ति उस नागसके ही वंशमें हुई थी. प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता डीगायननेे तक्षकोंको तक्युक मुगलनामसे लिखा है.

पुराणोक्त चंद्रवंशकी उत्पत्ति वृत्तान्तके संगसंग तातारियों और मुगलोंकी वंशोत्पत्तिकी समानता दिखा चुके, मिलान करनेसे दोनोंमें स्थान स्थानपर सदृशता दिखाई दी पर वह समानता किस प्रकारकी है सो आगे लिखेंगे, पहले उनके गोत्रपति और प्राचीन देवताओंके विषयमें लिखते हैं.

प्रथम पौराणिक-भगवान् वैवस्वत मनुकी कन्या इला एक दिन वनमें विचरण कर रही थी कि ऐसे समय चंद्रपुत्र बुधसे उसका साक्षात् हुआ बुधने उसको अपनी पत्नी बनाया और उससे चंद्रवंशकी उत्पत्ति हुई।

दूसरे चीनवालोंके प्रथम महाराज यू (आयु) का जन्म वृत्तान्त, एक दिन कोई स्त्री घूमती हुई फो (बुध) नामक ग्रहके सामने पड़ गई फोने वलपूर्वक उससे सहवास किया, उसको तत्काल गर्भ रहा और यथासमय उसके एक पुत्र जन्मा जिसका नाम यू रक्खा, इसी यूने चीन देशके प्रथम राजवंशकी प्रतिष्ठा की इस यूने चीन देशको नौ भागोंमें बांटकर ईसासे २२०७ वर्ष पहले राज्य करना आरंभ किया।

इससे स्पष्ट होगया कि तातारी आय, चीनी यू और पौराणिक आयु उक्त तीनो जातियोंके चन्द्रवंशी स्थापन कर्ताओंके पृथक् २ नाममात्र हैं। पौराणिक चन्द्रपुत्र बुधकी छायाके द्वारा चीनवालोंका फो, यूरुपियन जातिवालोंका वो दिन तथा तुइतोति सभी कल्पित हुए हैं।

---

* महाभारतमें कहे चंद्रवंशके विवरणमें हय (हैहय) नामक एक राजाका उल्लेख पाया जाता है यह यदुके पांचवें पुत्र सत्यजित्का तीसरा पुत्र था, आर्यकुलकी वंशावलीमें इस हैहयसे हिंदू कुलोत्पत्तिका और कोई वर्णन नहीं पाया जाता. विदित होता है कि इस राजासे ही चीनीलोग अपनी चंद्रवंशोत्पत्तिका प्रमाण देते हैं।

+ पुराणोंमें जो नागतक्षकादिका विवरण पाया जाता है इन नाग तक्षक जातिके द्वारा सैंकडों राज्य नष्ट हुए अनेक राज्य बदल गये शाकद्वीप इनका पहला वासस्थान है यह बड़े मायावी थे अनुमान है कि यह जाति ईसासे ५०० वर्ष पहले भारतमें आई थी.

अब यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि बुधदेवने जिस धर्मका प्रचार किया था वह धर्म उस समयकी अनेक जातियोंका मुख्य धर्म हो गया, वह जातियें बहुत दिनोंतक उस धर्मका एक भावसे प्रचार करती रहीं, क्रमशः जब सूर्योपासकोंका प्रचण्ड प्रताप बढा तब उनकी तेजोमयी उपासना पद्धतिके सन्मुख बुधका धर्म स्थित न रह सका. धीरे धीरे बदलने लगा, बदलते २ वर्त्तमान शान्तिमय जैन धर्ममें परिणत होगया।

महात्मा डियाडोराने एक शक¹ जातिकी उत्पत्तिके विषयमे जैसा वृत्तान्त लिखा है, उससे हमारा लिखा हिन्दू चीन और तातारियोंका उत्पत्ति वृतान्त बहुत कुछ मिलता है, इस स्थानपर आवश्यकता देखकर हम डियाडोराकी लिखी बातको प्रकाशित करते हैं डियाडोराने लिखा है।

अरक्सस नदीकी विशाल तीरभूमि ही शक जातिकी आदि निवासभूमि थी, आधे मनुष्य और आधे सर्पके आकारवाली स्त्रीके गर्भसे वे जन्मे थे यह अपूर्व रूपवती स्त्री पृथिवीकी कन्या थी। जुपिटरने उसके साथ विवाह करके उसके गर्भसे शीथेश नामक एक पुत्र उत्पन्न किया. शीथेशके वंशधर उसीके नामसे प्रसिद्ध हुए उनके पलस और नापस नामक दो बडे वीर पुत्र जन्मे, यह दोनों ऐसे पराक्रमी हुए कि एक समय इन्होंने आफ्रीकासे लेकर नीलनद और पूर्व सागरके मध्यके विशाल देशतकको अपने अधिकारमें कर लिया।

महावीर शीथेशके लगाये हुए विशाल वंशवृक्षसे बहुतसे राजकुल उत्पन्न हुए उनमें शाकन, मन्साजिती और अरिआ सपियन प्रधान हैं एक समय इन वीरवंशवालोंने अपने पराक्रमसे असीरिया और मिडिया राज्य जीतकर वहांके निवासियोंको अरक्ससनदके किनारेपर वसा दिया था।

---

१ शक म्लेच्छजाति विशेष—इन्होंने सूर्यवंशके वाहु राजाको राज्यसे निकाल दिया था, तब बाहुके पुत्र महाराज सगरने इनको भली भांतिसे दण्ड दिया, कुलपुरोहित वशिष्ठजीके कहनेसे महात्मा सगरने इन लोगोंको मारा तो नहीं परन्तु शकोंका आधा शिर, यवन और कम्वोजोंका सव शिर मुंडवा दिया, कम्बोजोंको मुक्तकेश और पह्लव जातिको सदा डाढी मूछ रखानेकी प्रतिज्ञा कराकर इन विशेष २ दण्डचिह्नोंको देकर देशसे बाहर निकाल दिया। यथाहि—

"ततः शकान् सयवनान् कम्बोजान् पारदांस्तथा। पह्लवांश्चापि निःशेषान् कर्तुं व्यवसितो नृपः ॥ १ ॥
ते हन्यमाना वीरेण सगरेण महौजसा। वशिष्ठं शरणं जग्मुः सूर्यवंशपुरोहितम् ॥ २ ॥
वशिष्ठः शरणापन्नान् समरे स्थाप्य तानृषिः। सगरं वारयामास तेभ्यो दत्त्वाभयं तदा ॥ ३ ॥
सगरस्तान् प्रतिज्ञां तु निशम्य सुमहाबलः। धर्मञ्जघान तेषाञ्च वेशानन्यांश्चकार ह ॥ ४ ॥
अर्द्धं शिरः शकानान्तु मुण्डयामास भूपतिः। यवनानां शिरः सर्वं काम्वोजानामपि द्विज ॥ ५ ॥
पारदान्मुक्तकेशांस्तु पह्लवान् श्मश्रुधारिणः। निःस्वाध्यायवषट्कारान्सर्वानेव चकार ह ॥ ६ ॥"

पद्मपुराण स्वर्गखण्ड १५ अध्याय।

आधे मनुष्य और आधे सर्पके आकारवाली * स्त्रीसे उत्पन्न हुआ इनका वंश बहुत वृद्धिको प्राप्त हुआ प्रधान शकपति शीर्षक लगाये विशाल वंशवृक्षकी शाखासे उत्पन्न हुए बहुतसे राजकुल राजस्थानके छत्तीस राजकुलमें प्रतिष्ठित हो गये हैं परन्तु यह वृत्तान्त आगे चल कर लिखेंगे कि यह लोग किस समय दूसरे देश शाकद्वीपसे आकर भारतके राजस्थानमें बसे अब हम इस बातकी आलोचना करते हैं कि आर्यवीर राजपूतोंके धर्मसमाज, व्यवहार सम्बन्धी रीति नीतिके साथ शाकद्वीप के रहनेवालोंकी रीति नीति कहांतक मिलती है. विचार कर देखनेसे विदित होता है कि इनका मेल यहांतक मिलता है कि इनको पृथक् मानना कठिन विदित होता है ।

बेषपहनावा–प्रसिद्ध इतिहास लेखक × टसटिस कहता है कि पहले जर्मनके लोग लम्बे और ढीले कपडे पहना करते थे सबेरे बिस्तरपरसे उठते ही हाथ मुंह धो डालते थे डाढी मूंछोंके बाल कभी नहीं मुडाते थे और शिरके बालोंकी एक बेणीं बना कर गुच्छेके समान मस्तकके ऊपर गांठसी बांध लेते थे.

---

* वैवस्वतमनुकी कन्या इला विष्णुभगवानके वरसे पुंस्त्व धर्मको प्राप्त होकर प्रद्युम्न नामसे विख्यात हुई कुछ दिनके उपरान्त जब वह शिवजीके रक्षित वनमें जाकर जब फिर अपनी पूर्व अवस्थाको प्राप्त हुई तब बुधने उसके साथ पाणिग्रहणकर उससे पुरूरवा नामक पुत्र उत्पन्न किया, इलाके कुलपुरोहित वशिष्ठजीने शंकरका आराधन कर उनसे वर ले इलाको एक महीने पुरुष और एक महीने स्त्री रहनेका वरदान दिवाया । इलाका दूसरा अर्थ पृथिवी है प्रतीत होता है कि इस स्थलमें वही शब्द व्यवहार किया गया है। सघन कल्पना जालको भेद कर सत्यराज्यमें प्रवेश करनेपर अनेक अंशोंमें प्रतीत होगा कि शाकद्वीप निवासियोंने पौराणिक चंद्रवंशके स्थापन करनेवाले बुधसे अपने वंशकी उत्पत्ति मिलानेके निमित्त इस प्रकारके कौशलका अवलम्बन किया हो । इला पृथिवीसे आरंभ न करके उससे उत्पन्न हुई एक कन्यासे अपने वंशकी उत्पत्ति निरूपण करते, हैं किन्तु यह कन्या अर्द्धभुजंगिनी कैसे उई इसके उत्तरमें इतनाही कहना बहुत होगा कि शाकद्वीप निवासी लोग पहले बुध धर्मावलम्बी थे, भुजंग बुधकी प्रतिकृतिमात्रहै धर्मोपदेष्टा बुधकी प्रतिकृति अपनी कुलजननीके अर्धांगमें आरोपण करके पौराणिक इला और बुधसे अपने वंशकी उत्पत्ति सप्रमाण की है ।

Seythians worshipped Mercury (Boodha) Woden or odin and belived themselves his progeny. Pinkerton on the Goths Vol II.

जो जाति आरक्ससके किनारे बसी वह पराजित जाति आरमनियान् अर्थात् सूर्योपासक नामसे विख्यात हुई ।

× इसके अतिरिक्त इनके नित्यनैमित्तिक और २ कार्योंका जो वृत्तांत पाया जाता है उससे विदित होता है कि कदाचित् यह लोग शाकद्वीपके जित् कात्ति किम्ब्री,और शैवी एक ही वंशके हैं,यद्यपि टसिटसने यह स्पष्ट नहीं लिखा कि जर्मनीकी आदि निवासभूमि भारतवर्षमें थी परन्तु वह यह कहता है कि जिस जर्मनीमें रहनेसे शरीरके अंग प्रत्येक विकल होजाते है, उस जर्मनीमें एशियाके एक गर्मदेशको छोड़ आकर निवास करना क्या बुद्धिमानीका काम है, इससे निरशंक यह कहा जासकता है कि एशियाका कोई देश उनका आदिम स्थान था, और टसिटसको उसका वृत्तान्त विदित था.

इस समय जर्मनवाले लोग शतिप्रधान देशमें रहते हैं, इस कारण यह कभी नहीं माना जा सकता कि ऐसी रीति नीति और पहरावा उस देशके लिये उपयोगी हो अवश्य ही यह आचार व्यवहार उन्होंने एशियाके ग्रीष्मप्रधान पूर्वदेशसे सीखा होगा ।

देववंश–टुइष्ट(मंगल) और आर्था (पृथिवी) प्राचीन जर्मनवालोंके प्रधान देवता थे जर्मनवालोंके मतके अनुसार भगवान् मनुसके द्वारा आर्थाके गर्भसे टुइसकी * उत्पत्ति हुई है ।

जर्मनवालोंने उक्त टुइष्ट (मंगल) और बोधेन बुधको एक ही कहकर लिखा है जिससे स्थान स्थानपर उनको बहुत उलझनमें पडना पडता है ।

पूजाविधि–स्कन्धनाम देशमें जित नामक एक महापराक्रमी जाति निवास करती थी; इस जातिके वंशकी बहुतसी शाखायें थीं उन शाखाओंमें शैव और शैवी लोगोंकी विशेष प्रतिष्ठा थी कहते हैं उक्त शैवलोग भगवती पृथिवीकी पूजा करते थे और उसको प्रसन्न करनेके निमित्त अपने पवित्र कुंजोंमें नरवलि चढाते थे। शैव लोगोंके धर्मग्रन्थोंमें यह भी लिखा है कि उनकी पूजनीया भगवती वसुमतीका रथ एक गौके द्वारा खैंचा जाता था.

शैवी लोग भी मूर्तिपूजक थे, परन्तु वे आर्थाकी पूजा न करके ईशी (ईशानी वा गौरी) नामवाली देवीकी पूजा करते थे उक्त ईशीको प्राचीन मिसरवाले भी अपने देवताओंमेंसे एक आराध्य देवता समझते थे परन्तु यह मिश्रवाले केवल ईश ही की पूजा न करके एक साथमें युगलमूर्ति अशिरोश और ईशी (हरगौरी) की पूजा करते थे, उदयपुरमें विशाल सरोवरके किनारे आजतक जिस प्रकारसे भगवती ईशानीकी पूजा होती है वैसे ही मिश्र देशमें होती थी प्रसिद्ध इतिहासलेखक हेरोडोटसने जो कुछ इस विषयमें लिखा है उसकी साक्षी ही बहुत है ।

---

१ ईस्वी सनकी पांचवीं शताब्दीमें शालीन्द्रपुर (शालपुर) में जित जातिका एक राजा राज्य करता था, उसके राजत्वके सम्बन्धमें एक शिलालेख पाया गया है उसमें एक स्थानपर इस राजाको टुइष्टके वंशका कहा है तब यह टुइष्ट कौन है ।

* ज्योतिष शास्त्रके अनुसार मंगल ग्रह पृथिवीसे उत्पन्न है और पुराणोंमें भी इसे भूमिपुत्र लिखा है "उपेन्द्रवीजाद् भूम्यान्तु मंगलःसमजायत" ब्रह्मवैवर्त ॥ यद्यपि दूसरे पुराणोंमें मंगलकी उत्पत्ति दूसरे रूपमें वर्णित है परन्तु सबमें पृथिवीसे ही उत्पत्ति मानी गई है "मंगलो भूमिपुत्रश्च ऋणहर्ता धनप्रदः । धरात्मजो कुजो भौमो भूमिजो भूमिनंदनः १ " हिन्दुशास्त्रके अनुसार भगवती पृथिवी विशेष पूजनीया है स्वयं विष्णुजीने अनेक प्रकारसे उसकी पूजा की है । 'वसुन्धरायै स्वाहा । ' " इत्यनेनैव मंत्रेण पूजिता विष्णुना पुरा । आदौ च पृथिवी देवी वराहेण च पूजिता ॥ ततः सर्वैर्मुनीन्द्रैश्च मनुभिर्मानवादिभिः ॥ " ब्र०

१ गौ भी पृथिवीका नाम है,मूर्ति भी पृथिवीकी गौ है पुराणादि ग्रंथोंमें लिखा है कि अधर्मी राजा या असुरोंसे पीडित होकर पृथिवी गोरूप धारण करती थी. पुराणोंमें इसका प्रसंग बहुत है । "ततो ननाश त्वरिता गौर्भूत्वा तु वसुन्धरा । अपि च (मात्स्ये) ततो गोरूपमास्थाय भूः पलायितुमुत्सहत् ।"

वीरव्यवहार–यदुकुलमें एक बाह्याश्वनामक महातेजस्वी क्षत्रिय उत्पन्न हुआ था उसके वंशधर सिन्धुनद पार करके भारतके पश्चिमी देशोंमें फैल गये, उन क्षत्रिय कुमारोंके युद्ध सम्बन्धी आचार व्यवहारका जैसा वर्णन पाया जाता है वैसा ही वर्णन जित् शैवी और स्कन्धनाभीय लोगोंका पाया जाता है, कहते हैं कि जित् शैवी और स्कन्धनाभीयलोग भगवान् हरिकुलेश* दुइष्ट वा बोधनके प्रशंसासूचक गीत गाते थे, उनकी ध्वजा वा प्रतिमा लेकर संग्राममें जाते थे और युद्धके समय शूल या मुद्गरको काममें लाते थे।

आर्योंकी त्रिमूर्तिके समान स्कंधनाभवाले भी त्रिमूर्तिकी उपासना करते थे,खर, बोधेन और फ्रेया यह तीन नाम उनकी त्रिमूर्तिके हैं. यह मूर्ति त्रिगुणात्मिका[1] थी स्कन्धनाभ-वालोंकी उपास्य देवताकी उक्त त्रिमूर्ति प्रतिमाको शैवीलोग अपने मंदिरोंमें प्रतिष्ठित रखते थे।

जिस समय वसंतऋतुके आगमन होनेपर सम्पूर्ण पृथिवी एक नवीन जीवन धारण करती है उस समय स्कंधनाभनिवासी फ्रेयाका महोत्सव आरंभ करते थे और उक्त देवताके सन्मुख जंगली वराहकी बली चढाते थे।

शिवकी अर्द्धांगिनी वासन्ती देवी राजपूतोंकी पूजनीय देवता हैं वसंतऋतुका आगमन होते ही राजपूतगण सेना आदिको साथ लेकर आखेटको जाते और वराहका आखेटकर उसका मांस भक्षण करते हैं उस दिन वह राजा अपने जीवनका माया मोह त्यागकर शिकारमें लगते हैं कारण कि उन राजाओंके मतसे उस दिनकी जय पराजयके साथ सम्वत्सरका सुख दुःख निर्भर है, अपने जीवनका मोह करके जो राजपूत उस दिन पराजित होजाता है उसको भगवती महामायाकी क्रोधदृष्टिसे वर्षदिनतक कष्ट मिलते रहते हैं।

---

* ग्रीकवालोंके हरिकुलेशके साथ भारतीय हरिकुलेश (बलदेवजी) की अनेक बातोंकी तुलना करनेसे दोनोंमें बहुत न्यून अन्तर पाया जाता है टाडसाहबने दोनोंको एक ही अनुमान किया है परन्तु यह अनुमान कहांतक युक्तिसंगत है सो सहजमें समझमें आजायगा उन्होंने जो प्रमाण उनकी समता-में दिये है यहांपर उनके लिखनेसे नीरसता प्रतीत होगी आगे परिशिष्टमें इन बातोंका विचार किया-जायगा " बलदेवं द्विबाहुं च शंखकुन्देन्दुसन्निभम् । वामे हलायुधधरं दक्षिणे मुसलं करे । हालालोलं नीलवस्त्रं हेलावन्तं स्मरेत् परम् ।" ऐसा ही वर्णन लगभग ग्रीकवालोंके देवताका है.

१ त्रिगुणात्मिका उत्पत्ति पालन और संहार करनेवाली तीन मूर्ति । खर-संहारकर्त्ता, बोधन-पालन कर्त्ता, फ्रेया—आद्याशक्ति प्रकृतिरूपिणी देवी हिन्दूशास्त्रमें भी यही कार्यकर्त्ता त्रिदेव कहाते है।

राजपूतोंके देवता सेनापति कुमार हैं, पुराणोंमें उनको * सप्तमुख वर्णन किया है परन्तु शाकसेनोंके रणदेवता छःमुखवाले हैं शाकसेन कात्ति शैवी जित और कम्ब्रीगण सब ही उक्त षडानन (छःमुखवाले) समरदेवकी पूजा करते थे।

समरविलासी राजपूतोंके रण धर्म और शिवपूजा पद्धतिके साथ हिन्दुओंकी दूसरी सम्प्रदायकी बातें बहुत ही कम मिलती हैं, कारण कि हिन्दूजाति अधिकांशमें शांतिप्रिय और अहिंसक होती है. कन्द, मूल, फल, स्वच्छ सुंदर जल उनका प्रधान भोजन और पेय पदार्थ है. ध्यान धारणा देवताकी उपासना अथवा किसी प्रकारके दूसरे शांतिमय कार्यमें ही वह अपना जीवन बिता देते हैं यदि उनकी उपासना विधिसे युद्धप्रिय राजपूतोंकी उपासनाविधिका मिलान किया जाय तो दोनों ही पृथक् पृथक् ज्ञात होंगी आर्यवीर्य राजपूत लडाई दंगे तथा रक्तधारा बहानेसे ही अत्यन्त संतुष्ट रहते हैं। अपने इष्ट देवताको संतुष्ट करनेके लिये वह जो कुछ भोजन करने या पीनेका पदार्थ समर्पण करते हैं वह भी रुधिर या मांसके पदार्थ होते हैं, या केवल रुधिर होता है, अथवा सुरा होती है नरकपाल उनका खर्पर होता है इन पदार्थोंको अपने इष्ट देवताका संतुष्ट करनेवाला जानकर राजपूतलोग अच्छा समझते हैं। बालकपनसे ही उनके मनमें ऐसा विश्वास हो जाता है कि महादेवजी अपने उपासकलोगोंके शत्रुओंका रुधिर इस खर्परमें भरकर पिया करते हैं उन समर देवताकी मूर्ति और वेष अत्यन्त बिभत्स होता है सर्वांगमें राख लगी हुई, सर्प लिपटे हुए, दोनों आंखें भंग वा धतूरेका सेवन करनेसे लाल २ होकर चलायमान, रहती हैं उनकी बांई जांघपर देवी पार्वतीजी बैठी हुई हाथमें रुधिरसे भरा हुआ नरकपाल इस प्रकार भयंकर मूर्तिवाले महादेवजी राजपूत वीरोंके रणदेव हैं। भारतवर्षके जिस प्रदीप्त रतीले मैदानमें आर्यवीर राजपूत लोग वास करते हैं। क्या वहांपर इस बीभत्स वेषधारी देव मूर्तिकी कल्पना हो सकती है? हम नहीं जानते, परन्तु विचार करनेसे इस मूर्तिको हठात् रणवीर स्कन्दनाभीय लोगोंके वीराचारकी प्रतिमूर्ति कहा जा सकता है। मीराचारी राजपूतगण मृग, वराह, हंस और वनकुक्कुटको सिकार करके खा जाते हैं। सूर्य, खड्ग, और घोडेकी पूजा करते हैं। ब्राह्मणोंके धर्मपूर्ण उपाख्यानोंकी अपेक्षा उनको भट्टकविगणोंके रण संगीत प्यारे जान पडते

---

* टाडसाहबने न जाने किस आधारसे षडाननको सप्तानन कहा है कुमारको छः कृत्तिका एक साथ दूध पिलानेकी परम इच्छा करने लगी थीं इससे कुमारने उनकी प्रीति देख षड्मुख धारण किये थे यथा हि—

"तं कुमारं ततो जातं दृष्ट्वा सेन्द्रा मरुद्गणाः। तदा क्षीरप्रदानार्थं कृत्तिकाः सन्न्ययोजयन्॥
अन्योऽन्याः पिवतस्तासां तनयस्य मुखानि षट्। समभूवन् महाबाहो षण्मुखस्तेन विश्रुतः॥"

(वाल्मीकीय रामायण

हैं। भट्टग्रन्थोंमें उनकी अटल अचल भक्ति होती है। जिस दिन उस भक्तिका लोप होगा, उस ही दिन राजपूतोंके नाम भी पृथ्वीसे लोप होजायगा. आज जिस स्कन्दनाभदेशके वीरपुरुष लोगोंके साथ वीर राजपूतोंके साथ मिलानका विचार किया जाता है, अब उनकी वह अवस्था कहां हैं? जिसके साथ बराबरीका विचार करनेसे एक भारतीय आर्यलोगोंके अतिरिक्त और समस्त वीर जातियें गौरवमें नीचे उतरी जाती हैं, आज वीरजननी स्कन्दनाभ भूमिकी वह अवस्था कहाँ गई है? आज वह अवस्था निठुर कालके कठोर कार्य व आचरण करनेसे अपने वर्तमान पुत्रोंको छोडकर चली गई है। हतभागिनी भारतभूमिके समान, आज स्कन्दनाभ भूमिका भी केवल नाम ही नाम रह गया है–

भट्टकवि–राजस्थानके राजपूत राजाओंके चरित्रोंके वंशके वृत्तान्तको जो लोग गाथाबद्ध करके राजपूतोंके सामने उन चरित्रोंका वर्णन करते हैं, वह भट्टकवि * कहलाते हैं। महात्मा टासिटसके अनुपम इतिहासग्रन्थसे इसका भली भांतिसे प्रमाण मिलता है कि इस प्रकारके गाथाकर्त्ता प्राचीन जर्मनवालोंमें भी थे। टसिटस कहता है "समर यात्राके समयमें जब वह वीर रसामोदी कवि लोग, अमृत वर्षानेवाली वीणातंत्रीकी मनमोहन ध्वनिमें अपने मृदु, गम्भीर कंठस्वरको मिलाकर समर संगीतको गाया करते थे तब वास्तवमें वीररसका आगमन होनेके कारण प्रत्येक वीर अपने जीवनकी माया मोहको छोडकर मतवाला हो जाता था."

युद्धरथ–भारतवर्षके हिन्दूलोग और शाकद्वीपके रहनेवाले संग्रामके समय वह सबही लोग युद्धरथका व्यवहार करते थे। यही कारण है जो रथ, इन वीर लोगोंकी चतुरंगिणी¹ सेनाका एक अंग है। महाराज दशरथजीके समयसे लेकर उस समयतक कि जब मुसलमानोंने भारतको विजय किया, जितने युद्ध हिन्दूवीरोंने किये सबहीमें रथका व्यवहार होता रहा। परन्तु जिस दिनसे मुसलमानोंने भारतवर्षके स्वाधीनतारूपी रत्नको छीन लिया, जिस दिनसे हतभाग्य भारतसन्तान उस अनमोल रत्नको खोकर दासपनकी जंजीरमें बँधे, उसी दिनसे; उसी समयसे,–उनकी चतुरंगिणी सेनाका एक अंग भग

---

* ब्रह्मवैवर्त्त पुराणमें लिखा है कि शूद्रके औरससे वैश्याके गर्भमें भट्ट जाति उत्पन्न हुई। यथा:— "वैश्यायां शूद्रवीर्येण पुमानेको बभूव ह। स भट्टो वावदूकश्च सर्वेषां स्तुतिपाठकः॥" १० अध्याय। इसी पुराणमें और एक जगह लिखा है कि क्षत्रीके औरस और ब्राह्मण कन्याके गर्भसे भट्टजाति हुईहै॥ "क्षत्रियाद्विप्रकन्यायां भट्टो जातोऽनुवाचकः॥" इन दोनों भट्टजातियोंमेंसे यहांपर पिछली भट्ट जातिहीका वर्णन है।

१ चतुरंगिणी सेनामें हाथी घोडे रथ और पैदल होते हैं यथा "हस्त्यश्वरथपादातं सेनाङ्गं स्याच्चतुष्टयम्"

हो गया । तबसे ही उन्होंने युद्धरथका व्यवहार छोड दिया । कुरुक्षेत्रके महासमरमें भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकंदने अपने प्रियमित्र अर्जुनका रथ चलाया था । वैसे ही जब जरक्षे, शने ग्रीकसे शैलमंडित मैदानमें अपनी विजयी सेनाको चलाया था, और दारायुने जिस समय विशाल अरबली क्षेत्रपर अपनी विजय पताका फहराई थी, तब युद्धरथ ही दोनोंका प्रधान बल गिना गया था ।

परन्तु पहिले कही बातके बहुत दिन पीछेतक भी भारतके दक्षिण पश्चिम प्रान्तस्थित विशाल स्थानमें युद्धरथका व्यवहार होता था । जिन जातिवालोंने रथका व्यवहार किया था, उनमें कान्ति, कोमानि, और कोमारीगण ही प्रसिद्ध हैं यह जातियें आजतक सौराष्ट्र देशमें वास करके अपने पूर्वपुरुष शक लोगोंके आचार व्यवहारका बराबर विचार करती हैं । आज भी इनके पहले पाषाणस्तम्भोंमें स्पष्ट २ लिखा है कि उक्त जातियोंके पितृपुरुषगण रथपर चढे हुए युद्ध करते २ शत्रुओंके हाथसे मारे गये थे । स्त्रियोंके प्रति व्यवहार-आर्यवीर राजपूतगण अपनी गृहलक्ष्मियोंके साथ जसा श्रेष्ठ व्यवहार करते हैं प्राचीन जर्मनवाले तथा स्कंधनाभवाले और जित् लोग भी अपनी नारियोंके साथ ठीक वैसा ही व्यवहार किया करते थे, इस बातमें इन जातियोंमें जैसा मेल दिखाई देता है वैसा मेल और किसी विषयमें दिखाई नहीं देता ।

टसीटसने लिखा है कि जर्मनवाले विपत्तिके समय स्त्रीकी सम्मतिको पवित्र देववाणीके समान जानते थे, चन्द्रकविने अपने अमृतमय काव्यग्रंथमें राजपूतोंके सम्बन्धमें ऐसा ही लिखा है, कदाचित् इसीलिये राजपूत अपनी कुलकामिनियोंके नामके पीछे देवी-शब्द उपनामकी भांति लगा दिया करते हैं, स्त्री राजपूत और जर्मनवालोंके जीवनकी जीवनरूपिणी और हृदयकी अर्द्धभागिनी हैं, जबतक उनके शरीरमें प्राण रहते हैं,तबतक यह दुःखदायी ध्यान भी कि जो रमणी शत्रुओंके द्वारा पकडी जायगी, उसका वे धर्म बिगाड देंगे उनके हृदयको खंडखंड करडालता है । वीर राजपूत और जर्मन जिनके पवित्र हृदयमें सदा उनकी मूर्ति विराजती है जो हृदय दिनरात उनके मंगलको मनाया करता-है समय पडनेपर अपने हाथोंसे उन अपनी सुकुमार सन्तानका शिर काटनेमें भी शोच विचार नहीं करते, परन्तु ऐसा प्रयोजन क्या सदा पड़ा करता है नहीं, ऐसा काम वे उस समय करते हैं जब आशाका अन्त होजाता है, जब वे एकदम निरुपाय और निरालम्ब हो जाते हैं, जब वे यह देखते हैं कि प्रचण्डदेश वैरीके भीषण आक्रमणसे अब स्वाधीनतारूप लक्ष्मीकी रक्षा नहीं की जा सकती, और जब वे यह जानलेते हैं कि हृदयकी अर्द्धभागिनी रमणियोंका स्वर्गीय सतीत्वरत्न पापी शत्रुके द्वारा हराजाया चाहता है ऐसे संकट और निराशाके समय वे तेजस्वी राजपूतगण अपने हाथोंसे उनका शिर काटने

+ फारस राज्यके दारायुके साथ महावीर सिकन्दरसे जो संग्राम हुआथा । कहते हैं कि दारायु उसमें दोसौ युद्धरथ सजाकर लाया था ।

अथवा जीतेजी उनको आगमें जलानेके लिये भयंकर जुहारव्रतका * उद्यापन करते हैं इस हृदयविदारक दृश्यका पूरा वृत्तान्त आगे मेवाड वृत्तान्तके साथ लिखा जायगा ।

द्यूत जुआ–क्या राजपूत क्या जर्मन क्या सीथीय सभी प्राचीन जातियोंमें द्यूतप्रियताका विवरण पाया जाता है इस अनर्थकारी खेलसे महाअनिष्ट होते देख और सुनकर भी न जाने यह लोग क्यों इस खेलमें मन लगाते थे यह अश्चर्य है ।

जर्मनलोग अपना सब कुछ यहांतक कि अपनी स्वाधीनताकी भी बाजी लगाकर इस अनिष्टकारी खेलको खेलते थे यदि हार जाते तो जीतनेवाला उनको दास भावसे बेच दिया करता था ! इस सर्वनाशकारी द्यूतविलासितासे मोहित हो एक समय पांडवलोग अपनी समस्त सम्पत्तिको हारकर अन्तमें अपने हृदयको अर्धभागिनी द्रौपदीको दांवपर लगा बैठे । पाण्डवोंकी उस भयंकर द्यूताशक्तिसे भारतवर्षका जो महा अनिष्ट हुआ है उसका प्रकाशित चित्र आजतक कुरुक्षेत्रके भयंकर मैदानमें स्पष्टभावसे विराजमान है । उस चिह्नका–आर्यजातिके नष्टकारी प्रकाशमान् निदर्शनका–और भारत माताके हृदयमें उस गंभीर अस्त्ररेखाके अंकित होनेका भयानक वृत्तांत जानकर भी आर्यवीर राजपूतगण उस अनिष्टकारी खेलको बडे चाओंसे खेला करते हैं । कैसा आश्चर्य है कि यह भयंकर पाप चार उनके पवित्र धर्मग्रंथोंकी विधान पंक्तियोंमें स्थान पाये हुए हैं * उस विधानका अनुसरण करनेके लिये राजपूतलोग प्रतिवर्ष आजतक "दिवाली" ×उत्सवपर भगवती लक्ष्मीजीको प्रसन्न करनेके लिये उस अनर्थकारी खेलको खेला करते हैं ।

शाकुनिक और सामुद्रिक गणना, पक्षियोंके उडने, शब्द करने, पंख फटफटाने व और अंगोंके फडकनेसे आर्यलोग अपने शुभाशुभका विचार किया करते हैं विहंग किस ओरसे किस भावसे उड गया, किस समयपर किस प्रकारसे शब्द किया या अपने पंखोंको फैलाया, इन बातोंको जित और जर्मनलोग भली भांतिसे देखकर अपने शुभाशुभका विचार किया करते हैं । इसके सिवाय दैवज्ञ और सामुद्रिक जाननेवालेके विचारपर इन समस्त प्राचीन जातियोंको अटल विश्वास है ।

मदिरापानमें विकट आसक्तिः–जर्मन और स्कन्दनाभीय असिलोगोंके वीरोंका जितकुलसे उत्पन्न होनेका प्रमाण उनकी सुराप्रियताका विचार करनेसे ही प्राप्त हो जाता है । हिन्दूवीर राजपूतलोग भी इस विषयमें किसी प्रकारसे कमती नहीं हैं स्कन्दनाभीय और जर्मनलोगके समान यह लोग भी, अनेक प्रकारसे वारुणी देवी-

* जुहार नाम अन्तिमभेंटका है, राजपूतस्त्रियां रणभूमिमें भी प्राण देती थीं ।

* हिंदूशास्त्र द्युतक्रीडाका निषेध करता है " द्यूतमेतत्पुराकल्पे स्पष्टं वैरकरं महत् ॥ तस्माद्द्यूतं न सेवेत हास्यार्थमपि बुद्धिमान्" ॥ मनु०

× इस उत्सवमें सनातनधर्मावलम्बियोंके घर २ रोशनी हुआ करती है । बम्बईके बराबर दिवाली कहींपर नहीं होती । जुआ खेलनेका विधान धर्मशास्त्रमें नहीं किन्तु निषेध है आधार इतना मिलता है कि इस दिन कोई कृत्य इतनामात्र कर ले जिससे अपनी जय पराजय विदित होजाय ।

की पूजा किया करते हैं समरविलास देवपूजा, अतिथिसत्कार यहांतक कि सब ही बातोंमें राजपूतलोग मदिराका व्यवहार करनेका विशेष आडम्बर किया करते हैं। स्थानपर अतिथिके आते ही राजपूतलोग सबसे पहले सुरापूर्ण "मनौआप्याला" हाथमें लेकर अभ्यागतका मधुर स्वरसे सन्मान किया करते हैं। एक समय जो भयंकर शत्रु–जिसका कलेजा काटनेके लिये राजपूतका खड्ग सदा तैयार रहता था, यदि वह शत्रु भी पहुनई स्वीकार करके राजपूतके दिये "मनौआ प्यालेसे सुरापान करे तो वीर हृदय राजपूतगण समस्त शत्रुताको भूलकर बन्धुभावके द्वारा उसको भेटते हैं।" उस सुरापूर्णपान पात्रका गुणकीर्त्तन करते करते राजपूत और स्कन्दनाभीय कविलोगोंकी बीणासे बराबर अमृतकी धार निकलती रहती है। इस सुराको वह लोग अमृतमयी जानकर पृथिवीके समस्त सारद्रव्योंमें अच्छा मानते हैं। राजपूत और जित, वीर लोगोंका दृढ विश्वास-है कि यदि हम देशकी रक्षा करते हुए संग्राममें मारे जायंगे तो अनन्तसुखके स्थान स्वर्गलोकमें अप्सरायें मदिरासे भरा प्याला लेकर हमारा मान करेंगी। इसी विश्वा-सको हृदयमें धारण करके वह अतिउत्साहके साथ रणभूमिमें गमन करते हैं यदि रणभूमिमें धाव लगनेसे गिर भी गये तो भी प्रफुल्लमुखसे कहा करते हैं–"मैं मनुष्य जन्मसे छुटकारा पाकर स्वर्गके नित्य सुखदायी स्थानमें देवताओंके साथ सुरा-मृतको पान करूँगा।"

स्कन्दनाभीय वीरलोगोंके उपास्यदेवताका नाम खर है, इनके मतसे नरखोपड़ी-ही उक्त रणदेवताका पानपात्र है। हम जानते हैं कि वीर स्कन्दनाभीयलोगोंकी यह देव-कल्पना, रजपूतलोगोंके संग्रामदेवता महादेवजीसे संगृहीत हुई है। इस विषयका वर्णन इन लोगोंके काव्यग्रन्थोंमें इस प्रकारसे पाया जाता है कि संग्रामके समयमें उक्त रणदेव भयंकर मूर्ति धारण करके नरकपाल हाथमें ले समरभूमिमें दौडते हुए लड़ाईके बीचमें गिरे शत्रुओंका रुधिर बराबर पान किया करते हैं।

युद्धक्षेत्र जिनकी लीलाभूमिमें है। जो मदिराको पीनेकी वस्तुओंमें सारसे भी सार समझते हैं। भूतभावन भगवान् महादेवजी ही उन रणप्रिय राजपूतोंके प्रधान उपास्य देवता हैं। उन परमपूज्य भूतनाथके प्रसादको पानेके लिये राजपूत.गण पूजाके समय बहुतसी सुरा और रुधिर चढाया करते हैं। पूजाविधिके समाप्त होजानेपर जब महादेवजीके वह उपास्यलोग डगमगी चाल और विकट शब्द करके नृत्य किया करते हैं, तब वास्तवमें बीभत्स रसमूर्तिमान् होकर वहांपर आ जाता है। अन्त्येष्टि-क्रिया-हिन्दूवीर राजपूत लोग जैसा शवदेहका संस्कार किया करते हैं, स्कन्द-नाभवाले और शाकद्वीपवालेंके आचरण किये हुए उस विषयके सम्बन्धमें प्रायः वैसा ही वृत्तान्त पाया जाता है। इस अन्तिम संस्कारके साधन करनेके समय भिन्न २ जाति-वालोंके बीचमें जैसा मेल देखा जाता है उससे स्पष्ट २ ज्ञात होता है कि उक्त रीति भांति मनुष्य जातिके किसी आदिम वंशसे उत्पन्न हुई है, स्कन्दनाभीय उक्त विधिको

जिस कालमें जिस प्रकारसे पालन करतेथे उस समय वह उस रूपसे ही उनके पौराणिक ग्रन्थोंमें वर्णित हुई है, अर्थात् जिस समय वह मृतक देहको जलाते थे वह काल "अग्नियुग" और जिस कालमें उसको पृथ्वीमें गाड देते थे वह काल "मेरुयुग" कहलाता था।

स्कन्दनाभवालोंके प्राचीन ग्रन्थोंमें लिखा है कि वह पहले शव देहको जलाते नहीं थे पृथिवीमें गाड देते अथवा पर्वतकी कन्दरामें डाल देते थे। वोदेनकी शिक्षासे विशेष अवस्थाको प्राप्त हो वह लोग उस समयसे मृतक देहको जला दिया करते थे। कहते हैं कि मृतकके अग्निसंस्कारके साथ उसकी विधवा स्त्री भी जल जाती थी। हेरोडोटस कहता है कि यह सब प्रथा शाकद्वीपसे वहांपर आई हैं।

सती होनेके सम्बन्धमें स्कन्दनाभके शैवी लोगोंमें और एक नई रीति फैली हुई थी। यदि मृतक पुरुषके बहुतसी स्त्रियें होती थीं तो सबसे पहली विवाहिता स्त्री ही उस मृतकके साथ जल सकती थी। कहते हैं कि "वोदेनके साथ जितने महापुरुष गण स्कन्दनाभमें गये थे, उनमेंसे एकका नाम बलदार था। उक्त बलदारकी मृत्यु होनेपर "नन्ना" नामक उसकी बडी स्त्री ही उसके साथ एक चितापर भस्म हुई थी"। परन्तु क्रम क्रमसे स्कन्दनाभवाले इस रीतिपर अश्रद्धा करने लगे। मृतक देहको आगमें जलाकर उसकी प्रेतात्माको महा पीडा देना है, ऐसा विचार उनके मनमें युक्तिसिद्ध माना गया तब वह लोग धीरे २ इस पृथाको छोडने लगे।

हेरोडोटस कहता है कि शाकद्वीपके निवासी जब मरते थे तब उनके साथ उनके प्यारे घोडे जलाये जाया करते थे और स्कन्दनाभके जितने मरते थे उनके साथ घोडे भी पृथ्वीमें गाड़े जाते थे। इस प्रकारके संस्कारका मूल कारण उनका यही विश्वास था कि बिना घोडेके परलोकमें पैदल ही भगवान् बोधनके समीप नहीं पहुंच सकते हैं। स्कन्दनाभिय और शाकद्वीपवालोंके इस व्यवहारके साथ राजपूत लोगोंके अन्त्येष्टिविधानकी समालोचना की जाय तो दोनोंमें बहुतसी एकता जान पडती है। आर्यवीर राजपूत लोग अपने अस्त्र शस्त्रसे सजधज कर उस शेष यात्राके लिये जाया करते हैं। उनका प्यारा घोडा भी उनके साथ २ जाता है। यद्यपि वह घोड़ा जीवित ही भस्म नहीं किया जाता, तथापि उत्सर्ग करके पुरोहितको दे दिया जाता है।

चिताकी जिस अग्निमें इस प्रकारका रूपलावण्य और वीरविक्रम भस्म हो जाता है। वह चिता जहाँपर जलती है वह स्थान अतिपवित्र माना जाता है। इस पवित्र स्थानके विषयमें सब जातियोंके बीचमें अनेक प्रकारके उपाख्यान कहे जाते हैं। कहते हैं कि उन पवित्र चितावेदियोंके भीतर भीमरूपवाली डाकिनी शाकिनी सदा रहती हैं और जो कोई भाग्यहीन इच्छानुसार वहांपर चला जाता है, फिर उसका छुटकारा नहीं होता, वह भयंकर डायनें वैसेही संहार करके उसके हृदयका रुधिर पिया करती हैं। राजपूत लोग वार्षिक पिण्डदान करनेके समय ही उन डायनोंके रहनेके पवित्र स्थानोंमें प्रवेश करते हैं, और किसी समय वहाँपर नहीं जाते।

बहुधा सब देशोंके रहनेवाले मनुष्योंके मुखसे सुना जाता है कि भयानक श्मशान-भूमिमें प्रत्येक रात्रिको एक प्रकारका प्रकाश दिखाई दिया करता है। इस प्रकारके विषयमें स्कन्दनाभवालोंके पौराणिक ग्रन्थोंमें लिखा है कि बोधेन अपने आप ही घूमती हुई उल्काओंकी अग्निसे अपने वीर उपासक गणोंके समाधिक्षेत्रको तस्करभयसे रक्षा करते हैं।

स्कन्दनाभवाले और जाक्षरतीसके किनारे रहनेवाले जितलोग सजातीय मृतक पुरुषकी भस्मपर ऊंची वेदिका बनाया करते थे। आर्यवीर राजपूत लोगोंका भी ऐसा ही वृत्तान्त पाया जाता है।

जो वीर राजपूतलोग संग्राममें प्राण छोड गये हैं उनकी पवित्र चिता वेदिकाके ऊपर उनकी पत्थरकी मूर्ति ही स्थापित रहती है। राजवाड़ेके अनेक स्थानोंमें ऐसी मूर्तियें पाई जाती हैं। यह मूर्तियें पत्थरसे मिली ही खोदी जाती हैं। सबमें पूरे अंग होते हैं, सजा हुआ घोडा भी अपने स्वामीके पास होता है, बाई ओर साथ भस्म हुई सती विराजमान रहती है। फिर उस युगल मूर्तिके दोनों ओर चन्द्रमा और सूर्यकी भांति दो मूर्तियां खुदी हुई रहती हैं।

अस्त्रपूजा—अस्त्र शस्त्रको भी वीराचारी राजपूतलोग घोडेहीके समान आदरणीय वस्तु समझते हैं। उनके वीरधर्ममें दोनों वस्तुओंकी ही आवश्यकता है। यही कारण है जो वे समय २ पर भक्तिके साथ इन वस्तुओंको प्रणाम किया करते हैं। अपनी तलवार हाथमें लेकर शपथ करते हैं शाकद्वीपके जितलोगोंमें भी यह प्रथा ठीक इस ही भांतिसे है। जिस समय जितलोगोंकी बलाग्निसे सम्पूर्ण यूरूप संताप पा रहा था। उस काल यह प्रथा विशेषकर उन्नतिपर पहुँच गई थी। कहते हैं कि प्रचण्ड जित वीरोंने अटिला और एथेन्स नगरमें महाधूम धामके साथ अपने अस्त्रशस्त्रादिकोंकी पूजा की थी। महात्मा गिबनने अपने बनाये इतिहासमें इस विषयका अतिमनोहर चित्र खींचा है, परन्तु यह इतिहासलेखक यदि राजपूतोंकी खड्गपूजाको देखता तो नहीं कहा जा सकता कि उसका चित्र गुणमें कितना मनोहर व हृदयग्राही हुआ होता।

अश्वमेध—चराचर जगत्में ऐसी बहुत ही कम वस्तुयें देखनेमें आती हैं जो कभी न कभी मनुष्य जातिकी पूजनीय न हुई हो; सूर्य, चन्द्रमा, ग्रहमंडल, खड्ग, नद, नदी, पाषाण, सर्प, सरीसृपादि और गौ इत्यादिक पशुगण भी एक समय मनुष्य जातिके द्वारा पूजे गये हैं। परन्तु गवादि पशुगणमें अश्वके समान और कोई जन्तु भलीभांतिसे पूजित नहीं हुआ यह अश्व केवल विभिन्न पूजाका पदार्थ ही नहीं माना जाता था वरन इसके साथ और भी एक महान् पदार्थकी पूजा हो जाती थी इस पदार्थका नाम सूर्य है।

ऊषाकी सुषमामय गोदको त्यागकर रात्रिके अन्धकारको दूर करके जिस दिन तेजपुञ्ज भगवान् मरीचिमाली अज्ञानान्ध मनुष्यके आंखोंके सामने प्रकाशित हुए उस दिन उनका वह प्रकाशमान तेज उनकी वह विराट्मूर्ति निहार कर मनुष्य विस्मय आनन्द

और भक्तिके रसमें मग्न हो गया। उसी दिनसे सूर्य भगवान्को अपना देवदेव और जगतका ज्ञानरूप समझ कर पूजा करने लगा। तदुपरान्त जिस दिन उस मनुष्यके ज्ञाननेत्र खुल गये उसही दिनसे वह समझने लगा कि सूर्यसे ही दिन, रात, शीतग्रीष्म, वर्षा और शरदादि ऋतुयें उत्पन्न होती हैं, जीवजन्तु, वृक्ष लता आदि उत्पन्न होते और पुष्टि पाते हैं उस ही दिन उसका विस्मय दूर होगया उसके हृदयमें आनंद और भक्तिरस उमड पड़ा और सहसा ऊंचे स्वरसे बोल उठा "जो महापुरुष जगतके सविता (हर्ता हैं) जो हमारी बुद्धिवृत्ति प्रेरणा करते हैं हम उनके वरणीय तेजका ध्यान करते हैं फिर तो कान्तार (तातार) के मैदानों लेबियाके जलते हुए रेगिस्तानों पारसके घने पर्वतों, गंगाके किनारों और अरनी नौकोंको विशाल महावन आदि सभी स्थानोंमें सूर्यदेवकी समान रूपसे पूजा होने लगी।

जिस देशके लोगोंका जैसा आचार व्यवहार जैसी रुचि और जिस प्रकारकी रीति नीति थी, उस देशके पुरुष उसी रीतिके अनुसार सूर्यदेवकी स्तुति और पूजा करने लगे, एशियाके वलपूजक और ब्रिटेन तथा गालके वलीनसदेवके उपासना करनेवाले अपने उपास्य देवके संतोषके निमित्त नरबलि उत्सर्ग पूर्वक भयंकर नरमेध यज्ञका अनुष्ठान किया करते थे, उसमें यह बंधुजनोंकी बलि भी कर देते थे, इस ओर मिथोरा पूजक वे विलोनके लोग बल * और गंगा तथा जाक्षर तीसके किनारेके सूर्योपासक आर्य तथा जित अश्वका उत्सर्ग कर अपने उपास्य देवकी प्रीति लाभ करते थे, इस स्थानपर यह भी अवश्य जान लेना चाहिये कि एशियाके वल, ब्रिटेन और कालके वलीनसू, वेविलो नोंके मिथोरा यह समस्त भगवान् सूर्यके ही भिन्न नाम हैं।

जित अश्व स्कन्दनाभीय और राजपूत गण यह सब भिन्न २ देशीय और भिन्न २ जातीय होनेपर भी इस महोत्सवको एक ही समय किया करते थे, शास्त्रके अनुसार यह समस्त जातियोंके उत्सवका समय प्रसिद्ध 'शीतसंक्रान्ति, है।

हिंदू वीर राजपूत लोग जिस महाआडम्बर और उत्तम विधिके अनुसार उक्त अश्वमेध यज्ञको किया करते थे उसका वृत्तान्त भगवान् वाल्मीकि और भगवान् व्यासजीके अमृतमय महाकाव्यमें भलीभांतिसे पाया जाता है। जिस दिन क्षत्रिय वीर पृथीराजके नाश होनेके साथ २ भारतका नाश हुआ है। उस ही दिनसे यह जातीय महायज्ञ, भारतीय आर्य राजाओंके विस्मयकर वीराचारका प्रकाशमान उदाहरण भारतवर्षसे

---

* अतिप्राचीन समयमें भारतमें भी नरमेध गोमेध यज्ञ होता था पर कलिमें इन यज्ञोंका निषेध है कारण कि लोग इनका प्रयोजन नहीं जानते। यथाहि—

"दीर्घकालं ब्रह्मचर्यं नरमेधाश्वमेधकौ। महाप्रस्थानगमनं गोमेधं च तथा मखम्॥
इमान्धर्मान्कलियुगे वर्ज्यान्याहुर्मनीषिणः।" वृहन्नारदीय पुराण.

बलनाथके मंदिरमें नर (पशु) मेध होता था आजतक राजस्थानके अनेक देशोंमें बलनाथके मंदिर दिखाई देते हैं।

एक साथ ही लोप होगया है। अब इस बातकी आशा करनेका कोई भी साहस नहीं होता कि कभी आगेको फिर यह वीरप्रथा, विषाद रूप अन्धकार छाये निर्जीव भारतवर्षमें प्रचारित होगी। ×

षष्ठ अध्याय ६.

राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंका संक्षिप्त वृत्तान्त ।

हिन्दूवीर राजपूतोंके आचार व्यवहार समाजनीति, राजनीति और धर्मके साथ संसारकी और दूसरी प्राचीन जातियोंका मिलान करके अब हम राजस्थानके ३६ राजकुलोंकी संक्षिप्त समालोचना करते हैं। जहांतक समालोचनासे जाना गया तहांतक सम्पूर्ण विषय ही एक आदि वृक्ष—वंशसे संगृहीत हुए हैं।

पहिले ही वर्णन हो चुका है कि भारतवर्षके प्राचीन हिन्दू नृपति लोग दो महान् वंशसे उत्पन्न हुए हैं। समयके अनुसार वृहत्फलरूप और एक बडा कुल अर्थात् अग्निकुल इन दोनों कुलोंके साथ मिल गया। इस अग्नि कुलके राजा लोग एक समय प्रचण्ड प्रतापके साथ भारतवर्षमें राज्य करते थे। यहांतक कि सूर्य और चन्द्रकुलकी पूर्व गौरव प्रभा अत्यन्त मलीन हो जानेपर भी उक्त अग्निकुलके राजाओंने अपने महान् तेजसे भारतवर्षको प्रकाशमान किया था इन तीन विशाल राज वंशोंके साथ धीरे धीरे और भी ३३ छोटे राजकुलके संयुक्त हुए। उक्त नृपकुलोंके मध्यमें कुछ एक राजा लोग कदाचित् विशाल सूर्य और चन्द्रवंशवृक्षकी शाखासे उत्पन्न होकर समयानुसार एक पृथक् वंशवाले ही होगये हों। परन्तु विचार करनेसे यही मान लिया जाता है कि इन कुलोंकी प्रतिष्ठा करनेवाले अधिकांश मुसलमान जातिकी उन्नतिके बहुत पहिले भारतवर्षमें आये थे और यहीं उन्होंने प्रतिष्ठा पाई। स्वर्णप्रसू भारतभूमिकी उपजाऊ शक्ति और रमणीयता देखकर वह राजा अपने देशकी माया ममताको छोड इस विदेशको ही स्वदेशसे अधिक समझने लगे, कालके क्रमसे इन आनेवाले सरदारोंने अपने २ नामके अनुसार एक २ पृथक् कुलस्थापन करके इस संसारमें अपने नामको अमर किया। उन छत्तीस राजकुलोंका विचार क्रमसे अब किया जाता है।

+ आमेरके विख्यात राजा महाराज सवाईजयसिंहने पिछली वार इस महाअश्वमेध यज्ञको किया था। परन्तु टाडसाहब अनुमान करते हैं, कि उस यज्ञमें दिग्विजयके लिये घोडा नहीं छोडा गया। यदि छोडा जाता तो राठौर लोग अवश्य घोडेको पकडते। क्योंकि उस समयमें राठौरलोग ही विशेष पराक्रमी हो गये थे।

ग्रहलोट, वा गिह्लोट । भगवान् श्रीरामचन्द्रजीसे यह लोग अपनी उत्पत्ति बताते हैं । राजस्थानके भट्टलोग भी इनके मतको समर्थन करते हैं पहिले ही कहा है कि सुमित्रके पश्चात् और किसी सूर्यवंशीय राजाका नाम किसी पुराणमें नहीं देखा जाता । परन्तु यह ग्रहलोट कुलवाले उक्त सुमित्रसे ही अपनी उत्पत्ति बताते हैं ।

कैसी अवस्थामें पडकर किस प्रकारसे इनके पितृ पुरुषगण पवित्र कौशल राजको छोड आये । और उस राज्यको छोड उन्होंने किस २ स्थानमें अपने विशाल वंशकी शाखा उपशाखाओंको जमाया था, संक्षेपसे अब इस ही विषयकी समालोचना की जाती है. इसके अतिरिक्त इस कुलमें जा २ महात्मा राजा उत्पन्न हुए थे उनका विस्तारित वृत्तान्त मेवाडके इतिहासमें लिखा जायगा ।

इसका अनुमान करना बहुत ही कठिन है कि ग्रहलोटोंका आदिगोत्रपति ठीक किस समयमें अयोध्या नगरीको छोडकर आया था । तथापि विचारके अनुसार जहांतक जाना गया है उससे एक प्रकारका अनुमान होता है कि श्रीरामचन्द्रजीसे कई पीढी पीछे अनुमान सम्वत् २०० (सन् १०४) में कनकसेननामक एक सूर्यवंशीय राजाने पितृराज्यको छोडकर सौराष्ट्रमें आय अपने पितृपुरुषोंके विशाल वंशवृक्षको जमाया । राज्यधनको गवांकर पाण्डवलोगोंने जिस वैराटगढमें अपनेको छिपाकर अज्ञात वासकर समय बिताया था, श्रीरामचन्द्रजीके वंशधर महाराज कनकसेनने सौराष्ट्र देशमें आय उस ही विराटगढमें अपने नये राजपाटको स्थापित किया । तदुपरान्त कई वर्ष पीछे विजयसेननामक उसके एक वंशधरने इस देशमें विजयपुर* नामक एक नगर वसाया था । महाराज कनकसेनके वीरकुलमें उत्पन्न हुए राजालोगोंने बहुत दिनतक बल्लभीपुरका राज्य किया । क्रमानुसार वह राजा–"बालकराय" नामसे परिचित हुए । इसका अनुमान करना कठिन है र्यकुलतिलक भगवान् श्रीरामचन्द्रजीके वंशधर किस कारण और किस सूत्रसे "बालकराय" नामसे विख्यात हुए । लगभग हजारवर्ष यह उपाधि उक्त वंशवालोंके अधिकारमें रही थी ।

कालरूप जलधारके अनिवार प्रभावानुसार सौराष्ट्रम सूर्यवंशीय "बालकराय" की लीलाक्रमसे शेष होती चली । यहांतक कि सन् ५०० ई० के प्रभातकालको उनका पिछला राजा शिलादित्य म्लेच्छोंके द्वारा घिरकर मारा गया । शिलादित्यके मरते ही सूर्यवशका वृक्ष वहांसे उखडकर उस देशके निकट ही ईडरनामक स्थानमें बोया गया था । ग्रहादित्य नामक एक राजाने जो कि इस ही सूर्यवंशमें उत्पन्न हुआ था । कुछ दिनतक ईडर स्थानमें राज्य किया । इस ग्रहादित्यसे ही महाराज कनकसेनके वंशधरगण "ग्रहलोट" अथवा "गिह्लोट" कहलाये ।

कुछ वर्षोंके बीत जानेपर ग्रहलोटगण ईडरको छोडकर अहाड * नामक स्थानमें चले

---

* यह सदा ही "विजयपुर" वैराटगढके नामसे परिचित है ।

*यह अहाड़ा ग्राम उदयपुरसे १ मील पूर्वकी ओर रेलवे स्टेशनके पास है आजकल राणावंशका दग्धस्थान यही है और यह ग्राम तीर्थ भी माना जाता है ।

गये । इसके अनुसार ग्रहलोटनामके बदले इन्होंने आहर्यनाम धारण किया । इस ही नामसे थोड़े दिनोंतक विख्यात होते रहे । परन्तु शीघ्र ही इस नई आख्याके बदले "शिशोदिया" नाम पड़ गया, कालके क्रमसे यही नाम बलवान होगया । सम्पदविपद्में-भाग्यचक्रके बराबर घूमते रहनेमें भी फिर यह नाम नहीं बदला । एक दिन जिन राजाओंने अपने प्रचण्ड प्रतापसे सौभाग्यकी ऊँची सीढ़ीपर और भारतीय राजाओंके ऊपरीस्थानमें चढकर जिस शिशोदिया नामकी गौरव गरिमाका प्रकाशमान उदाहरण दिखाया था उनके वर्त्तमान वंशधर गण भी उस शिशोदिया नामसे ही आजतक विख्यात होरहे हैं ।

यद्यपि शिशोदिया नाम सब नामोंसे बलवान है तथापि राजस्थानके भट्ट कविगणोंने इसको ग्रहलोटवंशकी एक शाखा कहकर वर्णन किया है ।

यह ग्रहलोट कुल चौबीस शाखाओंमें विभक्त है । इन चौबीस शाखाओंमें आहर्य और शिशोदिया ही अधिक प्रसिद्ध हैं ।

यदु-यद्यपि महाराज ययातिने बड़े पुत्र यदुको भारतवर्षका सार्वभौम अधिपत्य न देकर कनिष्ठपुत्र पुरुको ही दिया था । तथापि कालक्रमके अनुसार यदुवंश ही विशेष उन्नतिपर पहुंच गया था ।

भगवान् श्रीकृष्णजीके अन्तर्द्धान होनेपर जब पाण्डवगण महाप्रस्थानको चले तब उनके साथ यदुकुलतिलक श्रीकृष्णजीके वंशवाले भी चले थे, परन्तु आगे न बढ़ सके और पंचनद क्षेत्रके दुआबे × गिरिदेशमें पहुँचकर कुछ समय बिताया, जब वहां सब बातोंमें असुभीता हुआ तो उस शैलमंडित भूभागको छोड़कर सिन्धुनदके दूसरी पार जाबालिस्थान नामक देशमें गये, और तहां ही अपने राजपाटके स्थापन करनेकी अभिलाषा करके प्रसिद्ध गजनी नगरीकी प्रतिष्ठा की । उस जाबालिस्थानमें यादव लोगोंका राज्य दृढ़ताईसे स्थापित होगया था एक समय वह था कि जब वह राज्य समरखण्ड (आधुनिकसमरकन्द) तक अप्रतिहत प्रभावसे विस्तारित होगया था परन्तु विधिलेखके अवश्य होनहार विधानके अनुसार यादवलोग बहुत दिनोंतक राज्य नहीं कर सके । भट्टग्रन्थमें पाया जाता है कि यह लोग वहांसे चले आये और फिर भारतवर्षमें आश्रय लिया ।

यह विषय स्थिर करना असम्भव है कि किस दैवदुर्विपाकसे श्रीकृष्णजीके वंशधरगण फिर भारतवर्षमें आये । तथापि इस विषयमें ऐतिहासिकज्ञ लोगोंने जो मत प्रकाश किये हैं उन सबका सार ग्रहण करनेसे यही अनुमान किया जा सकता है कि सिकन्दरसे परवर्ति राजाओंने उनको कहांसे निकाल दिया होगा । भट्टग्रंथोंके पढ़नेसे इतना अवश्य ज्ञात होजाता है कि श्रीकृष्णजीके वंशधरगण किसी दैवदुर्घटनाके वशसे ही पुनर्वार भारतवर्षमें आये थे ।

× यादवलोग जिस गिरिव्रजमें जा वसे थे वह सिन्धुनदके दोआबेमें है आजतक वहांके रहनेवाले उसको "जदुकाडुंग" कहते हैं ।

पुनर्वार भारतभूमिमें आनेपर यादवलोग पंजाबमें बसे और वहांपर शालिवाहन पुर-नामक एक नगर बसाया। इस नये नगरमें यह लोग बहुत दिनतक न रह सके शत्रुके द्वारा ताड़ित होकर शीघ्र ही राजस्थानके मरुस्थलमें आये इस मरुस्थलमें पहले लहंग, जोहिया और महिल आदि जातियें बास करती थीं। यादव लोगोंने उनको निकालकर उस देशको अपने अधिकारमें कर लिया। यहाँतक कि क्रमानुसार वहांपर राजा होकर राज्य करने लगे। समयानुसार फिर कई एक नगर स्थापन किये। उन समस्त नगरोंमें तेनोत, दरवाल और जैसलमेर * ही विशेष प्रसिद्ध हुए।

कुसमयके प्रचंड प्रभावसे जैाबालिस्थानसे दूर किये जाकर जब यादवलोग दुबारा भारतवर्षमें आये थे तब उनमें बहुतसे छोटे २ गोत्र विख्यात थे उन गोत्रोंमें भट्टिलोग विशेष पराक्रमी हुए। समयानुसार इस ही गोत्रकी अधिक प्रतिष्ठा हुई थी।

यदुकुलकी एक और प्रसिद्ध शाखाका नाम जारिजा है। यह शाखा उक्त कुला-ख्यान ग्रन्थमें भट्टिके कुछ नीचे ही स्थान पाये हुए है। इन दोनों शाखाओंके सम्ब-न्धमें लगभग एकसा ही वृत्तान्त पाया जाता है। यह दोनों ही श्रीकृष्णजीसे ही उत्पन्न हुई थी यदुकुलध्वंस होनेके पश्चात् ठीक एक समयमें ही इन दोनों शाखाओंके अगुए बचे बचाये यादवोंको साथ ले भारतके पश्चिम प्रदेशकी ओर चले गये थे, परन्तु जारिजा शाखा भट्टिके समान अपने राजत्वको अधिक दूर विस्तार नहीं कर सकी। सिन्धुन-दके पश्चिम किनारेपर शिवस्थान नामक एक जनपद था बहुतसे लोगोंका अनुमान है कि जारिजा लोगोंने उस शिवस्थानमें ही अपने राज्यको जमाया था। सिकन्दरके समयके इतिहासग्रंथों में यह बात सिद्ध होचुकी है कि वहांपर जारिजा लोगोंने अखण्ड प्रतापके साथ राज्य किया था। कहते हैं कि मसडोनियाके वीरोंने जिस समय चढाई करके भारतवर्षमें युद्धका डंका बजाया था, तब उक्त जारिजाकुलमें उत्पन्न हुआ शाम्ब नामक एक राजा उनके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये सामने आया। महाराजा शाम्बके निशानके नीचे जो शामन्त इकट्ठे हुए थे उनमेंसे अधिक लोग हरिकुलके थे। यद्यपि उस समय उनकी अवस्था बहुत ही कम होगई थी। तथापि अपने बसाते उन्होंने अपने पूर्वपुरुषोंके प्राचीन गौरव देनेमें किसी प्रकारकी कसर न की। उनकी चेष्टाका फल बहुत ही अच्छा हुआ।

महाराजा शाम्ब श्यामनगरमें राज्य करते थे। परन्तु ग्रीकवाले इसको श्यामनगरके बदले मीनगढ बताते हैं।

अनर्थकारी महाभयंकर उपद्रवसे यद्यपि भगवान् श्रीकृष्णजीका विशाल वंश लोप होगया था, परन्तु उस कालरूपी उपद्रवसे जितने यादवगण बच गये थे, उनकी संख्या भी कुछ कम नहीं थी। उनमेंसे प्रत्येक यादवका वंश कालके क्रमसे असं-

* सम्वत् १२१२ (सन् ११५६ ई०) में जैसलमेर नगरी वसी थी इस नगरीकी प्रतिष्ठा करनेके पहिले वह किसी प्राचीन जातिके हाथसे लोद्रवापत्तन नामक नगरको अधिकारमें करके कुछकालतक वहां रहे थे।

१ इस समय यह जबूलिस्तान कहाता है।

ख्य शाखा उपशाखाओंमें विभक्त होकर आज भारतके अनेक स्थानोंमें फैल गया है। यदुकुलकी आठ शाखाओंमें केवल भट्टि और जारिजा शाखा ही विशेष प्रतिष्ठावान् है।

तुआर—बहुतसे मनुष्य तुआरको भी यदुकुलकी शाखा समझते हैं परन्तु महाकवि-चन्द्रने इसको महाराज पाण्डुका एक शाखाकुल कहा है। यह अनुमान करना कठिन है कि इन दोनोंमें कौनसा मत विशेष युक्त सिद्ध है। क्योंकि इस कुलके नामकरण सम्बन्धमें हमको किसी प्रकारका कोई हेतुवाद दिखाई नहीं देता है। यदि इन बातोंको छोडकर केवल प्रतिष्ठा और विख्यातताके ही विषयमें भलीभांतिसे विचार करके देखा जाय तो भी इसको राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें एक ऊंचा आसन दिया जा सकता है।

वह प्रतिष्ठा और ख्याति जिन दो महापुरुषोंके द्वारा उपार्जित हुई थी, उनके नामकी आजतक प्रत्येक हिन्दूसन्तान माला जपता है। आजतक भी हतभाग्य हिन्दू-सन्तान गण उन पवित्र नामोंका जप करते २ अपनी वर्त्तमान दुखस्थाको भूल जाते हैं, और अतीतके गहरे पर्देको भेद कर अज्ञानवश उनके उस स्वर्गीय सुखमय राजत्वकालमें विचरण किया करते हैं। वह काल भारतवर्षके लिये स्वर्णयुग था। जगन्मान्य पंडितोंके द्वारा अलंकृत हो उस समय यह भारतवर्ष समस्त जगतके शीर्षस्थानपर अधिकार कर बैठा था। अब अधिक क्या कहें केवल इतना ही कहना बहुत है कि तुआरकुलमें उत्पन्न हुए उन दोनों महापुरुषोंके चरित्र गुणोंसे इस भारतवर्षमें दो नये और प्रतिष्ठित युग विराजमान होरहे थे। उन दोनों महापुरुषों-में प्रथम हिन्दूराज्यचक्रवर्त्ती उज्जयिनीनाथ महाराज विक्रमादित्य, और दूसरे, हिन्दू-राजकुलतिलक दिल्लीश्वर महाराज अनंगपाल थे। कुरुक्षेत्रके रुधिरसे पूर्ण महासरोवरमें आर्यगौरव रविके डूब जानेपर यह भारत बहुत समयतक विशादरूपी अन्धकारमें डूबा रहा था। परन्तु उस गाढ अन्धकारराशिको दूर करता हुआ उस अस्त हुए आर्य-गौरवरूपी सूर्यका आदर्शरूप हाकर कौन महापुरुष अमरावतीके समान अवन्तीके सिंहासनपर उदय हुआ था, किसकी कीर्तिसे और किस गौरवरविसे समस्त भारतवर्ष प्रकाशमान होगया था? वह किसकी सभा थी कि जिसके पंडितलोग भारतमाताके कण्ठ में अमोल रत्नहारकी माला होकर पहिरे गये थे, कौन नहीं कहैगा, कौन नहीं स्वीकार करेगा कि उस महापुरुषका नाम महाराजाधिराज महाराज विक्रमादित्य है? आज महाराज विक्रमादित्यका वंश कालक अनन्त समुद्रमें लीन होगया है। आज उस वंशका कोई चिह्न भी नहीं पाया जाता, जिस दिन उस वीरविक्रमने इस पुण्यधाम भारतवर्षमें अवतीर्ण होकर एक स्वर्णयुगका प्रचार कर दिया था, उस दिनको गये आज सैकडों हजारों वर्ष बीत गये हैं; भारतभूमिके हृदयपर कितने ही उपद्रवोंका पानी फिर गया है, कितने ही विदेशीय और विजातीय राजालोग भारतसन्तानके भाग्यचक्रको नियमित करके फिर न जाने कहांको चले गये। उनकी नामावली, उनकी कीर्ति भी अधिकतासे उनके साथ ही सिधार गई; परन्तु वह कितने हिन्दूसन्तान हैं कि जो

महाराज विक्रमादित्यके वीर व पवित्र नामको भूल गये हैं । क्या कोई इस पवित्र नामको भूल सकेगा? हमको तो विश्वास नहीं होता । इस संसारसे जिस दिन संस्कृतशास्त्रका नाम उठ जायगा,—जिस दिन उक्त महाराजका प्रतिष्ठित सम्वत् भारतमें कालचक्रका एक २ चक्कर बतलानेमें असमर्थ होगा उस दिन भी कदाचित् भारतवासी इस नामको हृदयमें धारण करे रहेंगे । उस दिनकी कल्पना करते हुए भी हृदय कम्पायमान होता है । शिरसे पांवतक सब अंग थर्रा उठते हैं ।

पीछे महाराज अंनगपालका कुछ थोडासा वृत्तान्त लिखा है इस कारण यहां-पर कुछ अधिक नहीं लिखा जायगा । केवल इतना ही लिखना बहुत है कि इस ही महापुरुषने अपने सजीवन मंत्रके बलसे नष्ट होते हुए और अधमरे इन्द्रप्रस्थ नगरको जीवदान दिया । महाराज विक्रमादित्यसे आठ शताब्दी पीछे यह महाराज सम्वत् ८४८ (सन् ७९२ ई०) में इन्द्रप्रस्थके सिंहासनपर विराजमान हुए । उक्त महाराजने सिंहासनपर बैठते ही इन्द्रप्रस्थके नष्ट हुए गौरवको अधिकाईसे उद्धार किया ।

महाराज अनंगपालके पश्चात् क्रमानुसार वीस राजाओंने उस वंशमें जन्म लेकर इन्द्रप्रस्थका राज्य किया था, इस वंशके पिछले राजाका नाम भी, अनंगपाल था । यह दूसरा अनंगपाल अपुत्रक रहा । यह किसी दूसरेको उत्तराधिकारी न पाकर अपने धेवते चौवान पृथ्वी राजको सम्वत् १२२० (सन् ११६४ ई०) में राज्यभार सौंपकर निश्चिन्त हुआ । और बुढापेके समय शान्तिमयी मुनिवृत्तिको धारण किया । तदुपरान्त जिस दिन वह पिछला अनंगपाल इस संसारसे बिदा हो गया उस ही दिन और उसके साथ प्रसिद्ध तुआर कुलका अंत हुआ । *

राठौर—इस कुलकी उत्पत्तिके विषयमें, अनेक प्रकारके वृत्त सुने जाते हैं । यह लोग श्रीरामचन्द्रजीके बड़े पुत्र कुशसे अपनी उत्पत्ति कहते हैं । यदि इनके ही मतको युक्ति-सिद्ध मानकर ग्रहण कर लिया जाय तो अवश्य ही कहना पड़ेगा कि राठौरगण भी पवित्र सूर्यकुलसे उत्पन्न हुए हैं; परन्तु राजस्थानके भट्टगणोंने इस सन्मानसे वंचित रखकर, इनकी उत्पत्तिके वृत्तान्तको और ही प्रकारसे वर्णन करनेकी चेष्टा की है; यह लोग कहते हैं कि " राठौर लोगोंका यह प्रमाणित करना कि रविकुल—तिलक भगवान् श्रीरामचंद्रजीके ज्येष्ठ पुत्रसे हमारी उत्पत्ति हुई है, सम्पूर्णतः भ्रम है । यह लोग महर्षि कश्यपके वंशमें उत्पन्न हुए किसी राजाके वीर्यसे किसी दैत्यकुमारीके गर्भसे उत्पन्न हुए है । " यदि इस मतको माने तो राठौर लोगोंको एक साथ ही पवित्र आर्यकुलोचित सन्मानसे अन्यायके द्वारा बंचित करना होता है परन्तु हमें यह मत समीचीन और न्याययुक्त नहीं ज्ञात होता ।

* तुआर कुलमें जो विशाल राज्य थे आज उनमेंसे केवल साधारण नगर उनके गौरवके पिछले स्मृति-चिह्नके भांति बसे हुए हैं । एक तुआरगढ (चम्बलके दक्षिण किनारेपर बसा हुआ है । दूसरा, पट्टन तुआरवती, इस समय यह नगरी जयपुरराज्यके अधिकारमें है ।)

राठौरोंको सूर्यवंशमें उत्पन्न हुआ न मानिये; तथापि उनको पवित्र आर्य कुलोचित सन्मानसे बंचित नहीं रक्खा जा सकता । चन्द्रवंशके विशालवंशमें उनको न्यायानुसार स्थान दिया जा सकता है । राजार्षि विश्वामित्रसे दो पुरुष पहिले जो कुशनामक महा-पुरुष उत्पन्न हुआ था उसके कुलमें राठौर लोग स्थान पा सकते हैं ।

भट्टग्रंथोंमें देखा जाता है कि राजर्षि विश्वामित्रका आदिस्थान गाधिपुर (कनौज) ही राठौरोंकी आदिम आवास भूमि है । पांचवीं ईस्वी (शताब्दी) के आरम्भमें यह लोग वहांपर विराजमान थे । इस समयसे पहिलेका इनके विषयमें कोई विशेष विवरण नहीं देखा जाता है । जो कुछ मिलता है सो वह बहुत ही बढ़ाकर लिखा गया है । अत एव इस विस्तारमेंसे सत्य बातका निकाल लेना एक प्रकारसे असम्भव है । यद्यपि राठौर लोग कौशल राजाओंके साथ समानता साधन करके अपनेको सूर्यवंशीय बतलाते हैं परन्तु इसके सम्बन्धमें कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता ।

यदि ईसवी पांचवीं शताब्दीको राठौर लोगोंके ऐतिहासिक जीवनका प्रथम युग कहा जाय तो कुछ अनुचित न होगा । क्योंकि उसी समयसे वह ऐतिहासिक सत्यमें आये थे । उसी समयसे इनका जीवनचरित्र स्पष्ट और विशद देखा जाता है । उसी समयसे इनका विशेष उदय दिखाई दे रहा है भट्टग्रंथोंमें लिखा है कि मुसल-मान वीर शाहबुद्दीनके समयमें राठौरगण भारतका सार्वभौम्य अधिकार प्राप्त करनेके लिये दिल्लीके तुआर और अनहलवाडाके बालकराय लोगोंके साथ बैर कर रहे थे ।

राज्य, धन, गौरव, सब ही अनित्य और सब ही चलायमान हैं; परन्तु उस उस अनित्य और चपल राज्य व गौरवको प्राप्त करनेके लिये राठौरोंने महा अनर्थ किया कि जिससे उनका सत्यानाश होगया । सम्पूर्ण भारतवासियोंके गलेमें इसलामोंकी गुलामीकी जँजीर पड़ गई । यदि राठौरलोग उस अनर्थकारिणी गौरवलिप्साके वशमें पड़ते तो कभी मुसलमान लोगोंका भारतवर्षमें आना संभव न था । ?

राठौरोंकी सत्यानाशकारी राजतृष्णासे ही भारतका नाश होगया, आर्य वीर पृथ्वी-राज शत्रुके हाथमें घिर गये । समरकेशरी समरसिंहने समरके स्थानमें प्राणदान दिया और उधर स्वदेशद्रोही पापी जयचन्दने गंगाजीके जलमें डूबकर अपनी विश्वासघातकता, नीचता, और कापुरुषताका उचित फल पाया ।

राठौर राजके पुरुष जयचन्दके शिवनामक एक पुत्र था । इस शिवने अपने पितृराजसे भागकर मारवाडके मरुदेशमें आश्रय लिया, इस देशमें पुरीहार लोगोंका मुन्दर नामक एक प्राचीन नगर था । शिवने इस ऊजड और श्रीहीन नगरका संस्कार करके उसमें अपने राठौर राज्यको स्थापित किया । क्रमानु-सार राजस्थानके मरुप्रान्तमें–प्राचीन पुरीहार कुलके ऊजड़ खड़हरपर विशाल माडवार राज्य स्थापित किया । देखते ही देखते इस राज्यने विराट मूर्ति धारण की और राठौर वीर शिवकी सन्तान सन्तति विपुल बल संग्रह करके महापराक्रमवान्

होगई। एक समय राठौर वीरोंके एक लक्ष भ्राताओंने अपने हृदयरुधिरको देकर मुगल शहन्शाहोंकी सहायता की थी, परन्तु आज उनकी वह वीर कीर्ति,-वह तेजस्विता मानो स्वप्नकीसी बात होगई है। आज उस शिवजीके वर्त्तमान वंशधरोंको देखनेसे उनमें प्राचीन गौरवका कुछ भी निदर्शन नहीं पाया जाता। *

कछवाहे (कुशावह)-भगवान् श्रीरामचन्द्रजीके पुत्र कुशसे कछवाह कुल उत्पन्न हुआ है। कहते हैं कि जिस कौशल राज्यसे दो शाखा कुल उत्पन्न हुए थे। इतनेमेंसे एक शाखाकुलने पंचनद देशमें आकर प्रसिद्ध लाहौर नगरको स्थापन किया, दूसरेने बहुत आगे न बढकर सोननदके किनारे रोतासको बसाया।

इस कुलके जो लोग पंजाबमें आये थे उन्होंने भी थोडे समयतक लाहौरमें रहकर फिर नरवर नामक एक नगर बसाया था। कहते हैं कि नरवर प्रसिद्ध राजा नलकी लीलाभूमि है। राजा नलके वंशधरगण बहुत दिनतक प्रचण्ड प्रतापके साथ राज्य करते रहे; वरन तातारवाले और मुगल लोगोंके शासनकालमें वे अपने पितृपुरुषोंके उस प्राचीन राज्यासनपर जमे रहे थे। बहुत दिनतक राज्य भोगनेके पीछे महाराज नलके वंशवालोंका दुर्द्धर्ष राज महाराष्ट्रियोंने खो दिया।

महाराज कुशके वंशधर गण बहुत दिनतक नरवरमें एक साथ रहे। फिर ईस्वी दशमी शताब्दीके मध्यभागमें इनकी दो शाखा हुई। एक शाखाकुल तो वहींपर राज्य करने लगा। दूसरा कुल स्वदेशको छोड कर अनार्य और असभ्य मीन लोगोंके निवासभूमिमें गया कि जहांपर इस कुलने बडी भारी चेष्टा करके मीनलोगोंको निकाला और उस देशमें आमेर नामक एक नगर बसाया।

उस अनार्य मीन देशके मध्यभागमें महाराज कुशके वंशवालोंका बसाया हुआ आमेर नगर राजस्थानके सब नगरोंमें क्रमानुसार विशेष प्रसिद्ध हो गया। तैमूरकुल-मणि सम्राट् अकबरके शासनकालमें अनेक राजपूतकुल क्रम २ से हीन होगये थे। परन्तु उस समयमें आमेरके कछवाहे वीर अपने गौरव और महत्त्वसे शिरमौर हो रहे थे।

अग्निकुल-सूर्य और चन्द्रमासे जिस प्रकार सूर्य और चन्द्रवंश उत्पन्न हुए हैं, वैसे ही अग्निकुलको अग्निसे उत्पन्न हुआ बताते हैं हिन्दुकुलाचार्य लोगोंके मतसे उक्त वंशतरु चार शाखाओंमें विभक्त है। प्रथम परमार, द्वितीय-परिहार, तृतीय-चौलुक वा शोलंकी और चतुर्थ चौहान हैं।

---

* राठौरगण--धांडुल--भदेल, चाक्कित, दुहुरिया, खोकचा, रामदेव, मलवत गागदेव, जयसिंह, धाविया, जोवसिया, जोरा, सुन्दु, कटैचा आदि चौवीश शाखाओंमें विभक्त हुए हैं गौतमजी इस कुलके गोत्राचार्य हैं, माध्यन्दिनी शाखा, शुक्राचार्य गुरु, मरुपाट अग्नि, पंखिनी देवी है, गौतम गोत्र होनेसे महात्मा टाडसाहबने इनको बौद्धधर्मावलम्बी अनुमान किया है।

कहते हैं कि जिस समय धर्मवीर पार्श्वनाथ * ने उदय होकर हिन्दूसमाजमें घोर विप्लव मचा दिया था, ठीक उस ही समयमें अग्निकुल उत्पन्न हुआ था उस ही भयंकर धर्मके संघर्ष कालमें वीर पराक्रमकारी जैन लोगोंकी चढाईसे अपने धर्मकी रक्षा कर नेके लिये ब्राह्मणोंने इस अग्निकुलको उत्पन्न किया था +

राजस्थानमें अबूवा अर्बुध नामक एक पर्वत है, इस पर्वतके ऊंचे शिखरपर ही यह भयंकर धर्म विप्लव हुआ । कहते हैं कि शैल शिखरके उस ऊंचे भागपर ही ब्राह्मणोंने अग्निकुण्डको प्रज्वलित करके उक्त वीरकुलको उत्पन्न किया था, । यह पवित्र, अग्निकुंड जिस स्थानमें जलाया गया था आज भी यह स्थान दिखाई देता है। बहुतसे लोगोंका अनुमान है कि दैवी शक्तिसंपन्न ब्राह्मणोंने नास्तिकोंके आक्रमणसे सनातन हिन्दूधर्मकी रक्षा करनेके लिये उन अग्निवीरोंको अपने धर्ममें दीक्षित कर लिया था ।और उनकी ही सहायतासे उस भयानक धर्मसंग्रामको करने लगे थे ।

ब्राह्मणोंके अद्भुत तपोबलके द्वारा अग्निके मध्यसे जो वीरकुल उत्पन्न हुआ था । वह अनेक दिनतक अपने प्रचण्ड प्रताप और धर्मानुरागको अटल रख सका था । परन्तु मुसलमानोंकी चढाईके समयमें अग्निकुलके अधिकांश लोग ब्राह्मणधर्मको छोडकर जैन या बौद्ध धर्मावलम्बी हो गये।

पँवार—प्रसिद्ध अग्निकुलमें पँवार ही सबसे पहले प्रतिष्ठाको प्राप्त हुए थे । सोलंकी और चौहानकुलके समान यह लोग यद्यपि विशेष संपत्तिवान् और पराक्रमी नहीं हुए तथापि इन तीनों कुलोंका इतिहास देखनेसे स्पष्ट ज्ञात होगा कि उक्त चौहान और चौलुक्य लोगोंकी अपेक्षा पँवार लोगोंने ही सबसे पहिले राज्योपाधि धारण की थी । यहाँतक कि अग्निकुलकी शाखासे उत्पन्न हुए परिहार लोग पँवार लोगोंके अधीनमें बहुत दिनतक सामन्त राजाके समान रहे थे।

---

* टाड्साहबके मतानुसार चार बुध जाने जाते हैं । साहब कहते हैं कि यह चारों बुध एकेश्वर वादी थे । और उक्त धर्मको एशियासे लाकर भारतवर्षमें प्रचार किया था । उनके समस्त धर्मशास्त्र एक प्रकारकी संकुशीर्षाकार वर्णमालामें लिखे हुए हैं । सौराष्ट्र, जैसलमेर और विशाल राजस्थानके जिस २ स्थानमें पहिले बुद्ध औ जैनलोग वास करते थे । टाड्साहब उन सब देशोंमें जाकर उनके धर्मकी अनेक शिलालिपी और ताम्रशासन लाये थे । उन चारों बुद्धोंका नाम नीचे लिखते हैं।

प्रथम बुद्ध (चन्द्रवंशकी प्रतिष्ठा करनेवाला) अनुमान ईसवीसे पहिले २५५० वर्षमें उत्पन्न हुआ ।
द्वितीय--नेमिनाथ (जैनियोंके मतसे बाईसवां) ,, ईसासे ११२० बर्ष पहिले हुआ ।
तृतीय--पार्श्वनाथ (,, तेइसवां) ,, ईसासे ६५० वर्ष पहले हुआ ।
चतुर्थ--महावीर (,, चौवीसवां) ,, इसासे ५३३ वर्ष पहिले उत्पन्न हुआ ।

+ ब्राह्मणलोग इन नास्तिकोंको दैत्य,दानव और राक्षसादि घृणित नामोंसे पुकारते हैं ।

कहते हैं कि वीर श्रेष्ठ कार्तवीर्य्यार्जुनकी प्राचीन माहिष्मती नगरीमें (प्रमार) पँवार लोग सबसे पहले प्रतिष्ठाको प्राप्त हुए थे । इस प्रसिद्ध माहिष्मती पुरीमें कुछ कालतक राज करके इन्होंने विन्ध्यके शिखरपर धारा और मांडु नामक दो नगरी स्थापन की थीं । बहुतसे मनुष्य कहते हैं कि प्रसिद्ध उज्जयिनी नगरीको भी इन्होंने ही बसाया था । *

पँवार कुलका राज्य नर्मदा नदीको लांघ कर वहाँसे दक्षिणको बहुत दूरतक फैल गया था । भट्टग्रन्थोंमें पाया जाता है कि संवत् ७७० (सन् ७१४)के प्रारम्भकालमें रामनामक एक प्रतिष्ठावान् राजा इस कुलमें उत्पन्न हुआ था इसने तैलंगदेशमें एक स्वतंत्र राज्यको प्रतिष्ठित किया।कविवरचन्द्रभट्टने लिखा है कि रामपँवार भारतवर्षका चक्रवर्ती राजा था। उसके आधीनमें बहुतसे राजपूत राजा सामन्तकी भांति रहते थे× रामपँवारके स्वर्गवासी होते ही एक २सामन्तने एक२राज्य स्थापन किया । गहिलोत कुलके उदय होनेके समय पँवार लोगोंका पूर्व गौरव बहुतायतसे लोप हो गया था । परन्तु पँवारकुलमें एक भोज नामक महाबली पराक्रमी राजा उत्पन्न हुआ। इसी महाराजकेयशसे और कीर्तिकलापके द्वारा इसका कुल अबतक प्रकाशमान हो रहा है । हिन्दूराज चक्रवर्ती महाराज विक्रमादित्यके समान इस महाराजकी सभामें भी नवरत्न थे । महाराज भोजके समयमें संस्कृतविद्याकी बहुत ही उन्नति हुई थी । इसी कारण पँवारकुलमें उत्पन्न हुए महाराज भोजका नाम कोई भी हिन्दूसन्तान नहीं भूल सका है, इस पृथिवीपर जबतक अमृतके समान संस्कृत भाषाका प्रचार रहैगा तबतक कोई भी इस पवित्र नामको न भूल सकेगा, तबतक किसी प्रकारसे महाराज भोजका पवित्र नाम आर्यराजाओंकी पवित्र नामावलीसे नहीं निकाला जायगा ।

पँवारकुलमें भोज * नामक तीन राजा पाये जाते हैं । वह तीनों विशेष विद्यानुरागी और विशेष पराक्रमशाली थे । यह नहीं कहा जा सकता है कि यहाँपर कौनसे भोजका नाम लिखा है ।

---

* पँवारलोगोंके अधिकारमें जो नगर थे । उनमेंसे कई एक विशेष प्रसिद्ध हैं यथा—महेश्वर (माहिष्मती), धारा, मान्डु, उज्जयिनी, चन्द्रभागा, चित्तौर, आबू, चन्द्रावती, मह्न, मैदान, पँवारवती । अमरकोट, विखार, लोहदुर्वा, और पाटन इन नगरोंमेंसे किसीको इन लोगोंने जीता था, किसीको बसाया था।

×प्रसिद्ध वर्दाई ग्रन्थमें लिखा है कि त्रैलंगके राजचक्रवर्ती महाराज रामपँबारने सिंहासनपर बैठकर राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंको भूमिवृत्ति दी थी । तुआरोंको दिल्ली, तौरोंको पाटन, चौहानोंको आमेर, कामध्वजोंको कन्नौज, परिहारोंको मरुदेश, यदुवंशियोंको सूरत, जावालोंको दक्षिण दिशा, पारणोंको कच्छ,कीहरोंको काठियावाड और रायपुहारोंको सिन्धु देश देकर उनको अपना सामन्त किया ।

*किसी एक शिलालिपिमें लिखा है कि संवत् ११०० (सन् १०४४ ई०,) में तीसरा भोज राजसिंहासनपर बैठा था । भोजप्रबन्ध नामक ग्रन्थमें ही यही सम्वत् पड़ा हुआ है । अतएव इस शिलालिपिका भली भांतिसे विश्वास किया जा सकता है,कहते हैं कि ग्रन्थमें यह भी वर्णन है कि पहला भोज सम्वत् ६३१ में और दूसरा ७२१ सम्वत्में हुआ था ।

जिस चन्द्रवंशकी महान कीर्ति और प्रतिष्ठाका वर्णन भारतवर्षके इतिहासमें सुवर्णके अक्षरोंसे लिख रक्खा है; उस महाराजको ग्रीक ऐतिहासिक लोग सिकन्दरका प्रचंड प्रतिद्वन्द्वी कहते हैं, चन्द्रगुप्तका जन्म पँवारकुलकी मौर्य नामक शाखामें हुआ था । पँवारकुलके विषयमें जो प्राचीन शिलालिपि निकलीं है उनके देखनेसे पाया जाता है कि उक्त शाखा कुलका प्रधान पुरुष तक्षककुलमें उत्पन्न हुआ था ।

हिन्दूराज चक्रवर्ती महाराज विक्रमादित्यके सिंहासनको हला देनेवाला प्रचण्ड बाहुबलशाली महावीर शालिवाहन भी तक्षक वंशसे उत्पन्न हुआ । उज्जयिनीनाथ विक्रमादित्यके सिंहासनको कम्पित कर विजयी शालिवाहनने उज्जयिनीके सिंहासनको अधिकारमें किया और महाराज विक्रमादित्यके सम्वत्को बन्द करके दक्षिणमें अपने सम्वत्को चलाया ।

जो पँवार अपने प्रताप और विपुल गौरवके प्रभावसे एक समय राजपूत राजाओंके शिरमौर हुए थे । अभाग्यसे आज उनपर पहिले प्रताप और गौरवका साधारण चिह्न भी नहीं है । भारतवर्षके स्थान २ में जो उनकी कीर्ति विराजमान थी । कालके कठोर करप्रहारसे आज वह सब चूर २ हो गई । आज उनका चूरा ही इस कुलके पूर्व गौरवका प्रतिविम्ब हो रहा है । संसारमें इस कालके माहात्म्यको कौन समझ सकता है? काल ही सृष्टि कर्ता और काल ही संहारकारी है । काल ही सुख दुःखका नियामक है । महाधनवान होकर गर्व व अहंकारके वश होनेसे आज जो मनुष्य सम्पूर्ण संसारको तिनकेकी नाईं तुच्छ बिचारता है । अपने नौकर चाकर इष्ट मित्रोंसे पशुसमान व्यवहार करता है; आश्चर्य नहीं कि कल या दो दिन पीछे सर्व नियन्ता कालके विधानानुसार उसका छिन्नमस्तिष्क श्मशानमें लौटता हो,--असम्भव नहीं जो गीदड़, कुत्ते आदि घिनोने जानवर उस मस्तकपर लातें मार रहे हों । जिस कालके अखण्ड माहात्म्यसे प्रतिदिन यह अवश्य होनहार बातें होती रहती है । उस ही कालकी अपार महिमासे आज पँवारकुलके गौरवका साधारण चिह्न भी दिखाई नहीं देता है । चन्द्रगुप्तादि भुवनविदित महाराजोंकी प्रदीप्तकीर्तिसे जो यह कुल दमक रहा था, मुगलराज वीर हुमायूं, वीर तैमूरके सिंहासनसे अलग किया जाकर एक समय जिस वंशके साधारण वंशजके आश्रयमें रहा था, आज भारतका मरुभूमिके* धात नगरका वर्तमान राजा ही उस पँवारवंशके पूर्व गौरव और प्रतापका साधारण नमूना है ।

पँवार कुलमें पैंतीस शाखा हैं । इसमें विहील शाखा ही विशेष प्रसिद्ध है । इस शाखाकुलमें जो राजा उत्पन्न हुए थे उन्होंने बहुत दिनोंतक अरावलीकी पश्चिम ओर बसी हुई प्राचीन चन्द्रावती नगरीके सिंहासनपर राज्य किया था ।

---

* यह पँवारकुलकी शाखा सोदा गोत्रमें उत्पन्न हुई इसी शाखामें इसराजाका जन्म हुआथा सिकन्दरके समयके इतिहासलेखक इस सोदाको सगदि कहतेहैं । इस सोदानामक गोत्रमें अमर व समर नामकदो प्रतिष्ठित राजा उत्पन्न हुए थे । इन दोनोंके नामसे अमरकोट और अमर समर नामक दो नगर बसे हैं ।

चाहुमान वा चौहान--इससे पहले इस कुलके गौरवादिका वर्णन बहुतायतसे हो चुका है--अतएव यहां अधिक लिखनेकी आवश्यकता नहीं समझी जाती हाँ जो बातें पहले नहीं लिखी गई हैं, वह आगे लिखी जायँगी । पवित्र अग्निकुलसे उत्पन्न हुई शाखाओंमें चौहान शाखा ही विशेष बलवान हुई । कहते हैं कि एक समय चौहान लोग ऐसे बलवान हो गये थे कि उनकी प्रचण्ड वीरताके सामने भारतवर्षके और राजाओंका गौरव प्रभावहीन हो गया । यद्यपि राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें बहुतसे मनुष्य बलवान् प्रचण्ड पराक्रमी और प्रतिष्ठित थे, यद्यपि "लाख तरवार राठौरान" अर्थात् लक्षराठौरोंकी वीरता भारतविदित है, तथापि विशेष विचार करनेसे ज्ञात होगा कि वीर केसरी चौहानोंने न्यायानुसार राजपूतोंके शीर्षस्थानमें आसन पाया है ।

इस प्रसिद्ध राजकुलकी उत्पन्न हुई शाखाओंने भी अपने मूल वंशवृक्षका यथार्थ गौरव बचाकर चौहान नामको सार्थक किया था । इस कुलकी शाखाओंमें हार, खीची, देवरे और शनिगुरु आदि ही विशेष प्रसिद्ध हैं, इन शाखाओंकी वीरता, प्रतिष्ठा और गौरवका वृत्तान्त आजतक भट्ट कविजनोंके मधुर काव्योंमें सुनहरी अक्षरोंसे लिखा हुआ है । आजतक इस वंशके मनुष्य उस भट्टगाथाको पढ़ते २ अपनी वर्तमान अवस्थाको भूल जाते हैं, और मुहूर्तभरके लिये पूर्वजोंकी प्रचण्ड वीरताको नेत्रोंके सन्मुख देखने लगते हैं ।

चौहान्कुलकी प्रतिष्ठा करनेवाले वीरवर चौहानका अत्यन्त मनोहर जन्मवृत्तान्त यहांपर बचे हुए तीन कुलोंकी उत्पत्तिके साथ लिखा जाता है ।

पहले ही कहा जा चुका है कि प्रसिद्ध सुमेरु और कैलासके समान अर्बुद (आबू) भी पवित्र पर्वत है । अग्निकुलमें उत्पन्न हुए वीरलोग इस पर्वतको देवदेव अचलेशकास्थान कहते हैं । कन्द, मूल, फलका भोजन करनेवाले, ईश्वरपरायण और विशुद्धात्मा तपस्वियोंके तप करनेका स्थान है । योगशील ब्राह्मण लोग पाखण्डी दैत्योंके आक्रमणसे अपने पवित्र सनातनधर्मकी रक्षा करनेके लिये इस अतिऊंचे पर्वतके शिखरपर रहा करते थे । परन्तु वहांपर भी उन दुष्टकर्मकारी दानवोंके पहुँचनेसे उनके तपमें विघ्न हुआ करता था ।

एक समय जब कि अत्यन्त धर्मानुरागी ब्राह्मणगण नैर्ऋत कोणमें अपने होमकुंडको खोदकर देवताओंको आहुति दे रहे थे । उस काल दलके दल असुरोंने आकर ऐसी प्रचण्ड आँधी उठाई कि सम्पूर्ण आकाश धूरिसे छाय गया । उस समयमें दुराचारी दैत्यगणोंने रुधिर, मांस, हड्डी, और भी अनेक प्रकारके दुर्गन्धयुक्त अपवित्र पदार्थोंकी वर्षा की । इन दुष्टोंके उपद्रवसे उन ब्राह्मणोंका योग भंग हुआ; और वह असुर अपनी मनःकामना पूर्ण करने लगे । ब्राह्मणोंको अभीष्ट वर न मिला ।

सनातनधर्मविरोधी, पापाचारी, दैत्योंके बराबर अत्याचार करते रहनेपर भी दृढ़प्रतिज्ञ ब्राह्मणोंकी चेष्टा और धीरता किंचित् भी विचलित न हुई । उन्होंने पुन-

बार अग्निकुण्डको जलाया और उस कुंडके चारो ओर बैठकर मंत्रोंको पढते हुए देवदेव महादेवजीको प्रसन्न किया ।

उस पवित्र अग्निकुंडसे * एक मूर्ति निकली परन्तु उसके सर्वांगमें किसी प्रकारका कोई लक्षण दिखाई नहीं दिया यह देखकर ब्राह्मणोंने उसको प्रतिहारी बनाकर द्वार-पर खडा किया । फिर दूसरी मूर्ति निकली । परन्तु चुलुकके समान आकार देखकर ब्राह्मणोंने उसका नाम चौलुक्य रक्खा । फिर उस अग्निकुंडसे क्रमानुसार तीसरी मूर्ति प्रकाशित हुई ब्राह्मणोंने इसका नाम (प्रमार) पँवार रक्खा । इसमें वीरताके चिह्न पाये जाते थे वीर चिह्नधारी और युद्धमें सामर्थ्य रखनेवाला होनेके कारण ऋषिगणोंने उस वीरको असुरलोगोंके विरुद्ध समरमें पठाया । यद्यपि पंवार वीरजनोंके साथ मिलकर दैत्योंसे संग्राम करने लगे, तथापि उनकी विजयलक्ष्मी प्राप्त न हुई ।

तदनन्तर वशिष्ठजी फिर आसन मारकर बैठे और बराबर मंत्र पढकर देवताओं-को आह्वान करने लगे । अबके जैसे ही महर्षिने आहुति दी, वैसे ही उस पवित्र अग्निकुंडसे एक वीरमूर्ति प्रकट हुई, इस मूर्तिका आकार बडा, ललाट ऊंचा, और चौडा, बाल अंजनके समान काले, नेत्र बडे और घूमते हुए, छाती चौडी और सुडोल हुई, उस भयानक मूर्तिके सर्वांग वर्मसे ढके हुए थे । कमरमें बाणोंसे भरा हुआ तरकश, हाथमें विशाल धमुष और प्रचण्ड तलवार थी । चारो हाथोंमें अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र थे । अत्यन्त बलवान् देखकर ब्राह्मणोंने उस मूर्तिका नाम चौहान रक्खा ।

वह महाबली और पराक्रमी चौहान वीर बहुत शीघ्र असुरोंसे लडनेके लिये भेजा गया । तपोधन वसिष्ठजी, उस चौहान वीरको समरमें भेजनेके समय भगवती आशापूर्णाकी प्रार्थना करने लगे । कुछ ही समयमें त्रिशूलधारिणी शक्तिदेवी सिंह-पीठपर सवार होकर उन सबके सामने प्रगट हुई । और चौहान वीरको आशीर्वाद देकर अत्यन्त उत्साहसे दैत्यसे संग्रामको भेजा । आशापूर्ण कालिका इस प्रकार भक्तों-को समझा बुझाके अन्तर्द्धान होगई । ब्राह्मणोंने उस चौहान वीरका अनहिल नाम रक्खा, और आनन्दसहित जय २ शब्द करने लगे । अनन्तर वीरवर अनहिल महाउत्साहसे अपनी सेनाको साथ ले असुरोंसे युद्ध करने लगा । दोनों दलोंमें भयानक संग्राम हुआ दुष्ट दैत्यलोग, अनहिलके प्रचंड विक्रमको सहन न कर सके और घोर पराजित हुए । बहुतसे तो लडाईमें मारे गये, और जो जीते रहे वह भागते हुए पातालमें घुसे । इस प्रकार दुराचारी दानवोंके पराजित होनेसे ब्राह्मणलोग निरु-पद्रव हुए । इस ही चौहानवीरके पवित्र कुलमें वीरवर पृथ्वीराजने जन्म लिया था ।

चौहानकुलकी सूचीमें देखा जाता है कि वीरवर अनहिलसे लेकर महाराज पृथ्वीराजतक इस चौहानकुलमें सब उनतीस राजा हुए ।

---

* जहाँपर अग्निकुन्ड जलाया गया था वहां पर स्वयं टाड्साहब गये थे साहब कहते हैं कि इस स्थानमें आदिनाथकी एक पाषाणमूर्ति वेदीके ऊपर रक्खी हुई है ।

परन्तु इस बातका विचार करनेका कोई उपाय नहीं पाया जाता कि वह सूची शुद्ध है या नहीं। विशेष विचार करके देखनेसे स्पष्ट ज्ञात हो जायगा कि कदाचित् वह सूची शुद्ध न हो। कारण कि भट्टकवियोंके ग्रन्थोंमें यह वर्णन है कि महाराज पृथ्वीराजसे पहले अग्निकुंड बनाया गया था और इधर इतिहासमें देखा जाता है कि महाराज पृथ्वीराज विक्रमादित्यके १२–१५ वर्ष पीछे हुए थे, भला फिर इस दीर्घकालके बीचमें केवल उनतीस ही राजाओंका अस्तित्व किस प्रकार युक्तिसिद्ध मानकर ग्रहण किया जा सकता है।

इस चौहानकुलमें अजयपाल नामक एक प्रतिष्ठावान् राजा उत्पन्न हुआ था। अजयमेरु (अजमेर) के प्रसिद्ध दुर्गको उसने ही बनाया था जिन नगरोंमें पहिले चौहानगण प्रतिष्ठित हुए थे अजमेर भी उन नगरोंमेंसे गिना जाता है।

बहुतसे पुरुषोंका अनुमान है कि उक्त अजमेर नगरकी प्रतिष्ठाके आरम्भमें प्रसिद्ध शम्भर ह्रदके * किनारे शम्भरनामक एक और नगर भी चौहानोंने स्थापित किया था शम्भरके नामानुसार इस नगरके राजालोग भी शम्भरीराव कहलाये। चौहानलोगका गौरव और प्रताप दीर्घकालतक इस नगरमें अचलभावसे विराजमान था। फिर जिस दिन हिन्दूराजा चक्रवर्ती महाराज पृथ्वीराज चौहान दिल्लीमें अपने नानाके सिंहासनपर बैठे। उस दिन चौहानकुलमें एक बार फिर प्रचण्डतेज आगया परन्तु वह तेज निर्वाण होते व टिमटिमाते हुए दीपकके प्रकाशके समान कुछ समयतक स्थाई रहा, अतएव उसके साथ २ ही चौहानकुलका गौरव व उनके बसाए हुए समस्त नगर क्रमानुसार श्रीहीन होने लगे।

यह पवित्र अग्निकुल केवल चौहान वीरगणोंकी अपूर्व वीरता और गौरवगरिमासे ही अमर हो गया है। इस कुलमें जितने धुरन्धर राजा उत्पन्न हुए, उनमें माणिकराय भी एक था। दुर्धर्ष मुसलमान लोगोंके प्रचण्ड आक्रमणप्रभावसे कम्पायमान होते हुए पंजाबको माणिकरायने ही सबसे पहले रोका था।

माणिकराय और पृथ्वीराजके सिवाय और भी अनेक महाबली व पराक्रमी चौहान-राजाओंका वृत्तान्त पाया जाता है, भिन्न जातिकी इतिहास पाठ करनेसे यह भली भांति ज्ञात होता है कि एक समयमें वह राजा लोग अत्यन्त बलवान् थे। मुसलमान तवारीखवाले भी मानते हैं कि जब दुर्द्धर्ष मुसलमान वीर महमूद प्रचंड सेनाको साथ लेकर सूरतको जा रहा था। तब अजमेर नगरमें ही एक प्रतापी राजाने * उसको भली भांतिसे पराजित और अपमानित किया उस चौहानवीरके प्रचंड असि–बल–प्रभावसे महमूदको विजयकी आशा छोड़कर युद्ध–क्षेत्रसे लौटना पड़ा था।

---

*राजपूतलोगोंकी प्रधान आराध्या देवी भगवती शाकम्भरीमाताकी एक पाषाणमूर्ति शम्भह्रद सांभरके बीचमें स्थापित हो रही है इस शाकम्भरीसे ही ह्रदका नाम सम्भर हुआ। साँभर सम्भर इस समय साँभरझील कहाती है।

* उस चौहान बीरका नाम धर्माधिराज है। यह विशालदेवका पिता था।

हिजरीकी प्रथम शताब्दीके शेषकालमें खलीफा वलीदके विख्यात सेनापति कासिमने माणिकरायको घेर लिया था। इतिहासमें लिखा है कि उस संग्राममें भली भांतिसे मुसलमानोंका बल मथा गया था। यह लोग इसी समयसे कई बार भारतमें आये और बहुतसे धन-रत्न लूटकर ले गये। जिस समय महाराज विशालदेव अजमेरके सिंहासनपर विराजमान थे, उस समय मुसलमान लोग और एक बार भारतवर्षमें आए। इस ही चढाईको उनका तीसरा आक्रमण कहना चाहिये। देशवैरी और सनातनधर्म-विद्वेषी मुसलमान लोगोंके अपवित्र ग्राससे अपने राज्य और धर्मकी रक्षा करनेके लिये चौहानवीर विशालदेव विशाल अनीकिनीको सजाय उनके सामने हुआ। शीघ्र ही घोर संग्राम होने लगा। उस भयंकर संग्राममें पराजित होकर मुसलमानगण युद्धसे भागे। उस भयंकर समरके समय, प्रतापवान् धीरधारी बहुतसे भूपालगण सामन्त बनकर महाराज विशालदेवकी सहायता करने आये थे। जो राजा सहायता करनेके लिये आए थे उनमेंसे पँवारकुलमें उत्पन्न हुआ वीर उदयादित्य ही विशेष प्रसिद्ध हैं। प्रायः सब ही भट्टग्रन्थोंमें लिखा हैं कि सन् १०९६ ई० में वीर उदयादित्यकी मृत्यु हुई थी। इस नियत समयका अवलम्बन करनेसे निश्चय ही प्रतिपन्न होगा कि यह महासमर महमूदके चौथे पुरुष विख्यात इमदादबादशाहके संग हुआ था। महाराज विशालदेव जो इस युद्धमें जय प्राप्त करसका था, उसकी यथार्थता दिल्लीके प्राचीन विजयस्तंभके ऊपर लगी हुई शिलालिपिके पाठ करनेसे भली भांति ज्ञात हो जायगी।

यद्यपि विशालदेवके प्रचण्ड विक्रमके सामने मुसलमान वीर इमदाद पराजित हुए, तथापि मुसलमान लोगोंका उत्साह पराजय न हुआ. वह झुंडके झुंड बारम्बार हिन्दुस्थानमें आकर भारतवासियोंपर अत्याचार करने लगे। उनके बराबर चढते रहनेसे भारतीय राजाओंके राज्यमें घोर अशान्ति फैल गई। क्रम २ से उनका गौरव और विक्रम लोप होता चला अन्तमें चौहानकुलके पिछले राजा महाराज पृथ्वीराजके कारावास और मरणके साथ २ भारतमें चौहानोंके विक्रम और बलका लोप हो गया।

सब समेत चौहानकुल चौवीस शाखाओंमें विभक्त हैं। इन चौवीस शाखाओंमें हारापदी जनपदके बूँदी और कोटाके राजवंश विशेष प्रसिद्ध हैं। इन्होंने अपने पूर्व पुरुषोंके प्राचीन गौरवकी भली भांतिसे रक्षा की थी इन दोनों राजकुलोंके बीचमें छः वीरोंने पितृद्रोही निष्ठुर औरंगजेबके हाथसे वृद्ध शाहजहांको बचानेके लिये प्रसन्नतासे अपने हृदयका रुधिर दान किया था। *

चौहानकुलके अनेक सामन्त राजाओंने अपनी वासभूमिकी रक्षा करनेके लिये पितृपुरुषोंके पवित्र सनातनधर्मको त्याग किया था× कहते हैं कि पृथ्वीराजके भतीजे ईश्वरदासने ही सबसे पहिले घृणित उदाहरण दिखाया।

---

* इनके अतिरिक्त गागरोन और रघुगढके खीचियों, सिरोहीके देवरों झालावाडके शनिगुरुओं, सुआरसांचोरके चौहानों और पावागढ़के पवैचोका नाम भी मिटने योग्य नहीं है इनमें कितने एक वंश अब भी पाये जाते हैं।

× चौहानकुलकी जिन जातियोंने मुसल्मानी धर्म ग्रहण कर लिया था उनमें कायखानी सखानी लवानी कुरुबानी और वेदवानी विशेष प्रसिद्ध हैं।

चौलुक्य वा सोलंकी—पहिले ही× कहा है कि सोलंकीकुल भी उस ही समयमें उत्पन्न हुआ था। जब कि पँवार और चौहानकुल उत्पन्न हुए थे। परन्तु ऐतिहासिक वृत्तान्तके योग्य सामग्री न मिलनेके कारणसे सोलंकी लोगोंका प्राचीन विवरण विदित नहीं होता। भट्टकविजनोंके काव्यग्रन्थोंमें पाया जाता है कि जिस समय राठौर वीरोंने कन्नौजको अपने अधिकारमें किया उस समय सोलंकीकुल विशेष प्रतिष्ठित हो गया था। इससे पहले वर्णन हो चुका है कि जिस समय भट्टीलोग मरुभूमिमें आनकर बसे थे तब लंगहो और तुगरों आदि कितने एक यवन लोगोंने उनसे विरुद्ध शत्रुता की थी। कहते हैं कि उक्त लंगह और तुगरगण पवित्र सोलंकीकुलमें उत्पन्न हुए, व कालक्रमसे मुसलमान हो गये थे। पहिले यह लोग मालावारके उपकूलमें बसते हुए कल्याण नगरमें बास करते थे। इस कल्याण नगरमें इन लोगोंके पूर्व गौरवके चिह्न अधिकाईसे पाए जाते हैं इस नगरसे सोलंकीकुलकी एक शाखा निकल कर समयके हेरफेरसे अनहलवाड़ा पाटनमें प्रतिष्ठित हुई थी।

प्राचीन सौर कुलमें भोजनामक एक राजा उत्पन्न हुआ। उसके पश्चात् फिर और किसी सौर राजाको सिंहासन प्राप्त नहीं हुआ। क्योंकि संवत् ९८७ सन् ९३१ ईसवीमें राजाकी मृत्यु होनेपर, उसके धेवते मूलराजने इस सिंहासनको अपने अधिकारमें किया। मूलराजने* नानाके सिंहासनपर क्रमानुसार अठारह वर्षतक राज्य किया। पश्चात् मूलराजकी मृत्यु होनेपर इसका पुत्र सिंहासनपर बैठा। इसके ही समयमें दुर्द्धर्ष मुसलमान वीर मुहम्मदग़ज़नवीने विजयी सेनाके साथ अनहलवाड़ा पट्टनमें पहुँच कर नगरका सत्यानाश किया, इस सर्वसंहारकारी संग्राममें मुहम्मद ग़ज़नवीने इतना धन रत्न लूटा कि जिसको श्रवण करके विश्वास नहीं होता है। परन्तु यदि इस बातका विचार किया जाय कि उस समय अनहलवाडा पट्टनका वाणिज्य कहांतक उन्नतिपर था लक्ष्मीने कहांतक इस नगरमें अपना दृढ़ निवास किया था तब अवश्य ही विश्वास करना पड़ता है कि महमूद ग़ज़नवीने इन रत्नोंकी अवश्य बड़ी भारी लूट की। उस समयमें यह अनहलवाडा समस्त भारतवर्षके बीच वाणिज्य व्यापारमें प्रसिद्ध था। यद्यपि महमूद ग़ज़नवी और उसके उत्तराधिकारियोंको बारंबार भयंकर आक्रमणसे अनहलवाड़ा पट्टनका समस्त रुधिर सूख गया था। तथापि क्रमानुसार उसने अपने बलको संग्रह कर लिया, जिस राजाके समयमें इस देशकी विशेष ख्याति हुई थी. उस महाराजका

× सोलंकी गोत्र विवरण इस प्रकार है कि माध्यन्दिनी शाखा भरद्वाज गोत्र गढलोह कोटनिवास सरस्वती नदी, सामवेद, कपिलेश्वरदेव कर्दुमानरिकेश्वर तिनपुर वारजिनार किनोज देवी महापालपुत्र।

१ मालखांसे उत्पन्न होनेके कारण यह मालखानी कहाते थे इस मालखाने ही सबसे पहले मुसलमानी धर्म ग्रहण किया था।

* मूलराजके पिताका नाम जयसिंह था, जयसिंहका विवाह भोजराजकी बेटीसे हुआ था।

नाम सिद्धराव जयसिंह है + कर्नाटक और हिमाचलके बीचमें बसे हुए २२ नगर एक समय सिद्धरायके छत्रकी छायामें थे परन्तु इस विस्तारित राज्यको सिद्धरायके वंशधर बहुत दिनतक नहीं भोग सके ।

कहते हैं कि महाराज सिद्धरायके उत्तर अधिकारियोंने किसी कारणसे पृथ्वीराज चौहानको कुपित कर दिया था। इसी कारणसे महाराज पृथ्वीराजने इन लोगोंको राज्यसे अलग किया ।

सिद्धरायका उत्तराधिकारी जब सिंहासनसे अलग हुआ, तब उस सिंहासनपर कुमार-पाल नामक एक राजा बैठा। उसके सिंहासनपर बैठनेसे अनहलवाड़ा पट्टनकी उस उत्तराधिकारिणी विधिसे जो कि सदासे चली आई थी। उलट फेर हुआ क्योंकि कुमार पालने चौहानकुलमें उत्पन्न होनेपर भी सोलंकी सिंहासन पर अपना अधिकार किया था। महाराज सिद्धराय और कुमारपाल यह दोनों ही बौद्धधर्मके विशेष उपासक थे। दोनोंके ही राजत्वकालमें स्थापित (थवईकार्य) की विशेष उन्नति हुई थी क्योंकि उस कालमें जो कई एक विजय स्तम्भ बनाये गये हैं। उनकी निर्माणकौशलको देखकर अत्यानन्द प्राप्त होता है। यहांतक कि थवईकार्यकी ऐसी उन्नति किसी हिन्दूराजाके समयमें नहीं हुई।

मुसलमान शहाबुद्दीनके प्रतिनिधियोंने घोर अत्याचार करके कुमारपालका शेष राजत्व अत्यन्त नष्ट कर डाला था। इन लोगोंके प्रचंड पीड़नप्रभावसे उसके राज्यकी समस्त शान्ति एकबार ही नष्ट हो गई। इस अशान्ति और उपद्रवके रोकनेमें असमर्थ होकर उसने कठोर दुःख और मानसिक पीड़ासे अपने शरीरको छोड़ दिया। महाराज कुमार पालके परलोकवासी होनेके पश्चात् मूलदेव उसके सिंहासनपर बैठा। मूलदेवकी मृत्युके साथ संवत् १२८४ (सन् १२२८ ई०) के मध्य अनहलवाड़ा पट्टनके सोलंकीकुलका अवसान हुआ।

अनहलवाड़ेका सिंहासन सोलंकीकुलसे निकल जानेपर भी जनशून्य नहीं हुआ विशालदेव नामक और एक वीरने शीघ्रतासे उसपर अधिकार किया। सिद्धरायके बघेला नामक एक शाखाकुलमें विशालदेवका जन्म हुआ था। महाराज विशालदेवके सिंहासन-पर बैठते ही राज्यकी शोभा और प्रतिष्ठा अत्यन्त बढ़ गई। सनातनधर्मविद्वेषी मुसलमा-नोंने भयंकर अत्याचार करके नगरके जिन स्थानोंको तोड़ा फोडा था उनमेंसे एक सोम-नाथके मन्दिरका नाश किया। सोमनाथका वह पवित्र मन्दिर व और भी टूटे फूटे महल दुमहले विशालदेवके सुशासन गुणसे फिर संस्कारित होकर शोभाको प्राप्त हुए इस प्रकारसे बालकरायके कुलका लीलाक्षेत्र अनहलवाडापट्टन धीरे २ प्राचीन गौरवको फिर प्राप्त कर रहा था कि इतनेमें ही यमराजके दूतके समान अलाउद्दीनने भयंकर विक्रमके साथ उस देशमें प्रवेश किया। उसके भयंकर आक्रमणको सहन न करके महाराजा गिहलकर्ण समरक्षेत्रमें गिर गये। इनके साथ ही अनहलवाड़ा पट्टनका भी नाश हो गया।

× सिद्धराज जयसिंहने सम्वत ११५० से १२०१ तक राज्य किया प्रसिद्ध निडवियन भूगोलवेत्ता (एल एड्रिसी) इसकी राजसभामें गया था। एल, एड्रिसि भी कहता है कि जयसिंह बौद्धध-मावलम्बी थे।

उस हिन्दूविद्वेषी तातार राजके निष्ठुर प्रतिनिधि लोगोंने भयंकर दुष्टता और दुराकांक्षा करके गुर्जर और सौराष्ट्र (सूरत) से धनशाली नगर व उपजाऊ शस्यक्षेत्र श्मशानके समान कर दिये । चारों ओर महल दुमहलोंके खँड़हरोंका दिखाई देना, चारों ओर प्रकृतिका भयंकर वेष हृदयको विषादसे व्याकुल करने लगा । इस समय ऐसा ज्ञात होता था कि नगरके सब स्थानोंमें मानो मुसलमान लोगोंका घोर अत्याचार मूर्ति धारण करके प्रगट हो रहा है । उन्होंने प्रचण्ड डाह और दुष्ट स्वभावके कारण आदिनाथका पवित्र मन्दिर चूरा २ करके उसकी टूटी फूटी सामग्रीसे वहांपर एक मुसलमान फकीरका समाधिमन्दिर बनाया इस प्रकारसे जो कुछ सुन्दर और जो कुछ पवित्र था वह सब ही दुर्दान्त मुसलमानोंके विषम विद्वेषसे नष्ट भ्रष्ट हो गया ।

सनातनधर्मविद्वेषी निठुर मुसलमानोंके अत्याचारसे विशाल सोराष्ट्र देश जिस दिन इस प्रकारसे श्मशान भूमि हो गया था उस ही दिन शोलंकी राजकुलकी राजलक्ष्मी इस देशको छोड गई । इस वंशके मनुष्य अपने पितृ पुरुषोंके राज्यको खोकर आश्रय प्राप्त करनेके अर्थ भारतवर्षमें चारों ओरको दौड़े तबसे लेकर सौ वर्षतक शोलंकी कुलका राज्यसिंहासन शून्य रहा । इस दीर्घकालके मध्यमें कोई भी हिन्दू राजा उस सिंहासनपर न बैठा ।

उस दीर्घकालव्यापिनी अराजकताके पश्चात् सौराष्ट्र देशके भग्नसिंहासनपर तक्षक वंशीय एक वीर पुरुष बैठा और शीघ्र ही कुछ २ उस देशकी पूर्वशोभाको फिर जीवित किया । यद्यपि सिंहरण तक्षकने सौराष्ट्रके पूर्वगौरवका उद्धार किया परन्तु सोलंकी कुलके लोप हुए गौरवको वह फिर उद्धार न कर सका । इसका कारण यह है कि उस महाराजने अपने पूर्व पुरुषोंके धर्मको जलांजलि देकर इसलाम धर्मका अवलम्बन किया मुसलमान धर्मको धारण करनेके पश्चात् वह सिंहरण तक्षक मुजफ्फरनामको ग्रहण करक गुर्जरा राज्यको शासन करने लगा ।

अत्याचारी मुसलमानोंके भयंकर उपद्रवसे सोलंकी वंशवृक्षके मूलसहित उखड़नेसे पहले इससे १६ शाखाकुल उत्पन्न हुए थे । इन शाखाकुलोंमें बघेले विशेष प्रसिद्ध हैं । यह लोग * जिस देशमें रहा करते थे वह देश अबतक बघेल खण्डके नामसे पुकारा जाता है । महाराज सिद्धरायके वंशधरगण बहुत दिनोंतक इस बघेलखंडके सिंहासनपर अधिकार कर रहे थे ।

प्रतीहार वा पुरीहार–यद्यपि पुरीहार कुल अग्निकुलके नीचे आसनपर स्थित है तथापि इसके विषयमें अनेक गौरवसूचक वृत्तान्त पाए जाते हैं । यह लोग किसी भी समयमें स्वाधीन राज्यको नहीं भोग सके । भट्टकविजनोंके काव्यग्रन्थोंमें पाया जाता है

* कदाचित् महाराज सिद्धरायके पुत्र भाग्यरायसे ही इस शाखा कुलका नाम भागिला वा बघेला हुआ है ।

कि पुरीहार कुलके राजालोग सदा दिल्लीके (तुआर) अथवा अजमेरके चौहान राजाओंके अधीनमें सामन्त राजा बनकर रहा करते थे उस आधीनजीवनके बीचमें स्वाधीनता पानेके लिये पुरीहारगण जो चेष्टा किया करते थे उससे ही उनका जीवनचरित्र सुवर्णके अक्षरोंमें लिखनेके योग्य हो गया है । केवल एक ही वीरके विस्मय कर वीराचरणसे पुरीहारकुल विख्यात हो गया है । यह प्रसिद्ध और प्रचण्डवीर नाहरराव. पृथ्वीराजके अधीनमें सामन्तराजा रूपसे विराजमान था । अधीन राज्यमें रहकर भी उसने एक समय स्वतन्त्रता और स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिये कठोर उद्यम किया था. इससे उसका नाम अन्यान्य राजपूत वीरोंकी पवित्र सूचीसे लिखा गया है। यद्यपि उसका वह पवित्र उद्यम फलवान् नहीं हुआ तथापि इसके द्वारा नाहरराव अपनी वीरताका प्रकाशमान दृष्टान्त छोड़ गया है ।

पुरीहार कुलकी प्राचीन राजधानीका नाम मण्डवार है । साधुभाषा संस्कृतमें इसको मन्दाद्रि कहते हैं । राठौर लोगोंका उदय होनेसे बहुत पहिले पुरीहार लोग मारवाड़में प्रतिष्ठित हो गये थे । यह मंडवार आज कल जोधपुरसे तीन कोश उत्तरमें बसा हुआ है । यद्यपि इस समय मन्दाद्रिका नाश होगया है तथापि प्राचीन स्तम्भ और अटा अटारियोंका गठन देखनेसे इसके पूर्व गौरवका भली भांतिसे निदर्शन पाया जाता है । कान्यकुब्जको छोडते ही राठौर लोगोंने पुरीहारोंके मन्दावर नगरमें आश्रय ग्रहण किया इन राठौरोंने कृतज्ञताके पवित्र मस्तकपर लात मारकर अपनेको आश्रय देनेवाले पुरीहारोंका विश्वासघातकतासे ध्वंस कराया जिस राठौरने इस हीन आचरणको किया उसका नाम चण्ड था वास्तवमें इस चण्डने पाशव धर्मानुसार उपकारी और मित्रपुरुषके उपकारका प्रतिफल देकर मण्डवारके दुर्ग शिखरपर अपनी कुकीर्तिको प्रचार करनेवाली राठौर नामांकित पताका स्थापित की, इस घटनासे पहिले मेवाडके राजाओंके प्रचण्ड प्रताप बलसे पुरीहार कुलका गौरव बहुतायतसे जाता रहा था । पहिले पुरीहारके राजालोग राणा, नामसे पुकारे जाते थे परन्तु गहिलोत राज राहुपने मंदाद्रिपर आक्रमण करके उनको पराजित किया और अपनी जयका निदर्शन दिखानेके लिये पुरीहार राजाओंकी राणा उपाधि छीन ली ।

आजकल भारतमें चारोंओर पुरीहारकुल फैल गया है । परन्तु दुःखकी बात है कि इस कुलके बीचमें किसी राजाको ही स्वाधीन जीवन सम्भोग करते हुए नहीं देखा जाता कोहारी, सिन्द, और चम्बल नदीके संगमस्थानमें पुरीहारलोगोंका एक प्राचीन उपनिवेश अबतक दिखाई देता है । इस उपनिवेशमें २४ ग्राम और अगणित छोटी २ पल्लियें हैं । पुरीहार कुलका यह प्राचीन स्थान पहले सेंधियाके अधिकारमें था, परन्तु अब बृटिशसिंहने अर्थात् अंगरेज सरकारने आवश्यकता समझकर उसको विराट् राज्यमें मिला लिया है।

* जिस पुरीहारराजाको पराजित करके राहुपने राणाकी उपाधि पाई थी उसका नाम मोकल था

परिहारकुलकी बारह शाखाओंमें इन्दो और सिन्धिल ही विशेष प्रसिद्ध हैं अबतक लूनीनदीके × किनारे इन दोनों शाखाकुलोंका साधारण चिह्न पाया जाता है।

सौर–एक समय भारतके इतिहासमें यह जाति विशेष प्रतिष्ठित होगई थी। भारतवासियोंने इस जातिकी कीर्ति और गौरव कथाको हर्षसहित गाया था परन्तु अभाग्यकी बात है कि आज भारतवर्षके किसी स्थानमें भी इस जातिकी कीर्ति और गौरव व प्रतिष्ठाका चिह्न कहींपर भलीभांति से नहीं दिखाई देता। यदि भट्ट लोगोंके काव्यग्रन्थोंमें सौरकुलका समस्त वृत्तान्त न लिखा होता, तो ज्ञात होता है कि अबतक भारतके इतिहाससे इसका लोप हो गया होता। सौर कुलके उत्पत्ति-वृत्तान्तको हम कुछ भी नहीं जानते हैं क्योंकि चन्द्र और सूर्य इन दोनों ही कुलोंमें इस कुलका नाम नहीं पाया जाता। ❋

यदि वीर भारतभूमिको इनकी आवासभूमि नहीं माना जायगा तो भी यह अवश्य मानना पड़ैगा कि प्राचीनकालसे इनका वंशवृक्ष भारतवर्षमें बोया गया था कारण कि भट्टग्रन्थमें लिखा है कि मेवाडवालोंके पूर्व पुरुषगण जिस समय वल्लभी पुरका राज्य कर रहे थे तब सौरलोगोंने इनके साथ विवाहका सम्बन्ध स्थापन किया।

सौरगणोंका सूर्योपासक होना इनके नामसे ही प्रमाणित होरहा है इन्हींके नामसे सौराष्ट्रका। × नामकरण हुआ है इनके स्थापन किये हुए अनेक नगरोंमें देवबन्दर ही विशेष प्रसिद्ध हैं, सौराष्ट्रकी सीमापर एक छोटा टापू था वह भी देवबन्दर कहा जाता था, सोमनाथजीके प्रसिद्ध मन्दिरके अतिरिक्त सौरकुलवालोंने और भी छोटे छोटे कई देवालय स्थापित किये थे।

कहते हैं कि देवबन्दरके स्वामी डाकुओंके समान दूसरे देशके व्यापारियोंके जहाजोंसे धनादि लूट लेते थे इसी कारण समुद्रने रुष्ट होकर उनका नगर ग्रास कर लिया, देवबन्दर इतनी नीची भूमिमें बसा हुआ था कि इस प्रकारकी किम्बदन्ती एकदम असत्य नहीं गिनी जा सकती यदि उस समयके भारतवाणिज्यका विचार किया जाय तो एक और सत्यताका पता लगता है, उस काल अरबदेशके साथ भारतका वाणिज्य होता था, अरबी सौदागर जहाज और धन लेकर सौराष्ट्रमें आते थे क्योंकि, यही राज्य उस समय भारतवर्षका प्रधान वाणिज्यस्थल माना जाता था कदाचित् देवबन्दरके अधिपतिने उनपर कोई अत्याचार किया, जिससे उन्होंने दलके दल आकर उस देशको विध्वस्त कर डाला हो, आगे चलकर मेवाड़के वृत्तान्तके संग इस प्रकार यह बात प्रमाणित हो जायगी कि इसी प्रकारकी किसी दुर्घटनाके कारण देवबन्दर वि-ध्वंस होगया था, उन राज्यके ऐतिहासिक ग्रंथोंके देखनेसे विदित होता है कि जब सौरकुलवाले देवबन्दरसे हटाये गये तब मेवाडके राजाओंके यहां उन्होंने आश्रय पाया।

× मारवाड़के दक्षिण पश्चिम भागमें यह नदी बहती है।

❋ इसी कारण महात्मा टाडसाहबने सौर कुलको 'शाकोत्पन्न' कहकर अनुमान किया है।

× सौराष्ट्र–सूरत।

पीछे सम्वत् ८०२ सन् ७४६ में सौरकुलके राजाबाणने अनहिलवाडा पाटन स्थापित किया, इससे पहले वल्लभी सौराष्ट्रदेशकी राजधानी थी, परन्तु अनहिलवाडा पाटन स्थापन होनेपर वल्लभीका गौरव घट गया, जब महाराज बाणकी नई राजधानीने उसका गौरव पाया ।

१८४एकसौ चौरासी वर्षतक अनहलवाडा पट्टन महाराज बाणके वंशधरोंके अधिकारमें रहा, यहां इन्होंने आठ पीढीतक राज्य किया. फिर इस वंशका पिछला राजा भोज भानजेके द्वारा सिंहासनसे उतार दिया गया. जिससे सौरकुलका राज्य एक बार ही अनहलवाडेसे लोप होगया. ❀

१ तक्षक अतिप्राचीन कालमें जो वीरगण चढाई करके दूरदेश शाकद्वीपसे भारतवर्षमें आये उनमेंसे तक्षक ही प्रधान हैं इस कुलके विशाल वंशवृक्षसे भिन्न २ शाखायें निकलकर चारों और फैल गई थीं जो जितवंश अनेक गोत्रोंमें विभक्त था जिसके असंख्य गोत्रोंसे अनेक महावीरोंने उत्पन्न होकर एक समय अपने वीरदर्पसे सारे भूमंडलको कँपा दिया था वह भी इस तक्षकवंशसे पहले प्रतिष्ठाको नहीं प्राप्त हुआ था ।

अबुलगाजीने उक्त तक्षकको तुर्कका + पुत्र तनक कहा है चीनके इतिहासवालोंने तुकशू और ष्ट्राबोंने तकारि वर्णन किया है इन तकारियोंने ग्रीकवालोंके प्रसिद्ध बख्तियार राज्यको ध्वंस करके एशियामंडलके एक देशको अपने नामानुसार नकारिस्थान (तुर्किस्तान) नामसे पुकारा था ।

❀ इससे पहले सोलंकी कुलके वृत्तान्तमें लिखा जा चुका है कि सन् ९३१ ईसवीमें भोजराजकी मृत्यु होनेपर उनका धेवता मूलराज उनके सिंहासनपर बैठा परन्तु यहाँ उसके विपरीत बात दिखाई देती है हमारी समझमें यह बात नहीं आई कि टाडसाहबने ऐसी गड़बड़ क्यों की इसओर एल्फिन्ष्टन् साहबक भारतवर्षीय इतिहासमें लिखा है कि सौरकुलका पिछला राजा ९३१ ई०में मृत्युको प्राप्त हुआ उसके कोई पुत्र नहीं था उसके पीछे उसके जमाताने उसके सिंहासनको पाया Elphinston' s History Of India, R. 2. अब इस बातका पता लगाना कठिन है कि इन मतोंमें कौन ग्रहण करनेके योग्य है यद्यपि यह मत भिन्न २प्रकारके हैं पर विशेष विचार करनेपर इनमें एक प्रकारकी एकता ही दिखाई देती है इन तीनों मतोंके पढनेसे विदित होता है कि ९३१ में सौरकुलकी समाप्ति होनेपर चौलुक्योंके राजाने जो सौरकुलकी किसी स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुआ था, पाटनका अधिकार पाया, पर यही पता नहीं लगता कि उस स्त्रीके स्वामी अथवा पुत्र किसने राज्यका अधिकार पाया विशेष विचारसे यह सिद्धान्त निकलता है कि नानाकी मृत्यु होनेपर उसके धेवते मूलराजने उसका सिंहासन प्राप्त किया था परन्तु उसके नाबालिग होनेके कारण उसके पिता जयसिंहने राजकाज संभाला था ।

× अबुलगाजी कहता है कि नावको छोडकर पृथिवीपर उतरकर नूहके अपने तीनों पुत्रोंको पृथिवी बांट दी उसके पहले दो पुत्र और दो राज्योंपर अभिषिक्त हुए छोटे जाफरने 'कत्तपसामाख नामक एक देशको पाया कास्पियनहद और भारतवर्षका मध्यस्थित प्रदेश उक्त कत्तपसामांख नामसे प्रसिद्ध था, कहते हैं कि जाफरने वहां २५० वर्षतक राज्य किया था उसके आठ पुत्र हुए थे उन आठपुत्रोंमें पहला तुर्क और सातवाँ कामारि विशेष प्रसिद्ध हुआ तुर्कके चार पुत्र हुए बडेका नाम तनक था तनकसे चार पीढी पीछे मुगल नाम एक पुरुष उत्पन्न हुआ इस मुगलका नाम प्रसिद्ध अग्रज हुआ ।

इससे पहले वर्णन होचुका है कि टेस्ट तक्षक और तकारी जातिके इतिहासके सम्बन्धमें बहुतसे शिलालेख राजस्थानके कई स्थानोंमें पाये गये थे उन शिलालेखोंमें इन तक्षकोंके आचार विचारके सम्बन्धमें जिस प्रकारसे लिखा है पुराणोंमें लिखो तक्षक जातिके साथ उसका बहुत कुछ मेल पाया जाता है, भगवान् कृष्णद्वैपायन व्यासके लेखसे इस बातका पूरा प्रमाण मिलता है कि इन तक्षकोंके द्वारा भारतीय राजाओंकी बहुत ही हानि हुई थी. बहुतेरे राजा इनकी क्रूरताके कारण अकालमें ही संसारसे विदा होगये व्यासजीके काव्यग्रन्थमें जो ऐतिहासिक रत्न छिपे हुए हैं यदि वे प्रकाशित किये जायँ तो एक नवीन युग उत्पन्न हो, पौरव भूपाल महाराज परीक्षितजो जब क्रूर चरित्र-वाले तक्षकके दंशनसे अनन्त धामको पधारे तब उनके पुत्र जन्मेजयने पिताके मारनेवाले दुष्टोंके क्रूराचरणसे दुखी हो उसका फल देनेके लिये जिस महासर्पसत्रका अनुष्ठान किया था उस बातको प्रत्येक आर्यसन्तान जानते हैं, परन्तु इस रूपकके परदेशमें जो ऐतिहासिक सत्य छिपा हुआ है उसको कितने लोग समझते हैं, उस सत्यका प्रगट करना कोई बडी बात नहीं है एक क्षण विचार करनेसे वह आप ही प्रगट हो जायगा। *

जिस समय महावीर सिकन्दरने भारतपर चढ़ाई की थी उस समय पारोपमिशन + पर्वतके निकट एक तक्षकोंकी जाति रहती थी, कहते हैं कि जिस तक्षकशीलने पूरुका पक्ष छोड़कर सिकन्दरका साथ दिया था वह इसी तक्षकवंशका एक राजा था, भट्टोंके इतिहासमें लिखा है कि जाबालिस्थान (जबूलिस्तान) से हटाये जाकर भारतवर्षमें प्रवेश करनेके समय उन्होंने तक्षकोंकी प्राचीन निवासभूमि जो सिन्धुनदीके किनारे थी, छीन ली थी, तक्षकोंकी शालिवाहन नाम एक नगरी थी भट्टियोंने यह नगर भी उनसे

---

* ऐसे वर्णनमें लोगोंको असत्यकी शंका होसकती है पर यदि काल्पनिक सर्पकी बात छोड़कर ऐतिहासिक सत्यता स्वीकार की जाय तो अवश्य मानना होगा कि तक्षकने छिपकर अन्यायसे महाराज परीक्षितकी हत्या की और जन्मेजयने उन तक्षकोंपर आक्रमण कर उनको अग्निमें भस्म करना आरंभ किया, नीचे लिखी घटनासे यह निरा अनुमान ही नहीं पाया जायगा किन्तु सत्य घटना घटैगी सन् १८११ में टाडसाहब चम्बला नदीके किनारे गूजर गढमें भूमिकी नाप करने गये थे उस समय यहां एक प्रबल जाति निवास करती थी उन्होंने सुना कि गूजरोंका सूर्यमल नाम एक राजा था उसने एक रातमें वहांके निवासियोंको सिकडोंसे बांधा और एक करके अग्निमें जलाकर मारडाला इस भयंकर हत्याकाण्डको बहुत दिन नहीं बीते हैं जब इतिहासमें ऐसे भयानक नरमेधका विवरण पाया जाता है तब पौराणिक जन्मेजका नागयज्ञ कैसे अमूलक और असत्य कहा जा सकता है।

हमारी समझमें परीक्षित्को दंशन करनेवाला तक्षक तक्षकजातिका पुरुष नहीं है, वह मनुष्य तथा सर्परूप धारी एक नागोंकी जातिका अधिपति है, कारण यह कि उसने ब्राह्मणके शापसे महाराजा परीक्षितको काटा था तक्षक जातिके मनुष्य इनसर्पोंसे भिन्न हैं ॥ अनुवादक।

× हिन्दूकुलशके दक्षिण जो पर्वतमाला है उसीका नाम पारोपमिशन है काबुल नदी इसी पर्वतके नीचेसे बहती है।

ले लिया युधिष्ठिरके ३००८ सम्वत्में यह घटना हुई, अब यह स्पष्ट होगया कि शालिवाहनने हिन्दूराज्यचक्रवर्ती महाराज [तुआर] विक्रमको पराजित किया था । वा उसीने इस शालिवाहन पुरकी प्रतिष्ठा की ।

बहुतलोग अनुमान करते हैं कि ईस्वी छः या सात शताब्दीके पहले तक्षकोंने शिशुनागनामक अधिपतिके साथ भारतवर्षमें प्रवेश किया था, यह अनुमान सत्य मानाजा सकता है कारण कि दूसरे इतिहासोंसे विदित होता है कि ठीक इसी समयमें मिश्र और सीरिया राज्योंमें प्रवेश करके इन्होंने वहां बडी वीरता दिखाकर बड़ी गडबड मचा डाली थी ।

पुराने तक्षककुलके सम्बन्धमें यहां विशेष बातें लिखनेकी आवश्यकता नहीं है इससे अब हम इस कुलके वर्तमान वंशधरोंके विषयमें लिखते हैं, भट्टोंके काव्यग्रंथोंमें लिखा है कि गिल्होटोंका अधिकार होनेसे प्रथम तक्षककुलक एक राजा चित्तौरके आसनपर आरूढ था, फिर वहांके सिंहासनपर गिल्होटोंका अधिकार होनेसे जिस समय मुसलमानोंने आक्रमण किया उस समय अनेक आर्यराजाओंने अपने देश और स्वजातिके प्रेमसे उत्साहित होकर चित्तौरवालोंकी सहायता की थी, उन सहायक राजाओंके नामके संग असीरगढके राजा * तक्षकराजका नाम भी पाया जाता है, असीरगढमें तक्षकोंने बहुत दिनोंतक राज्य किया था चन्दकविने कहा है कि इस वंशका एक मनुष्य दिल्लीनरेश पृथिवीराजकी सेनाका प्रधान अधिपति बनाया गया था × ।

यह प्रथम वर्णन होचुका है कि तक्षकवंशके शिहरण नामक राजाने अपना पुराना धर्म छोडकर मुसल्मानी धर्म स्वीकार किया था इस शिहरणके पीछे चौदह राजा गुर्जरके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए । फिर जिस दिन वहांके पिछले राजा मुजफ्फरने अपना शरीर त्यागा उस दिनसे तक्षकवंशके विशाल वृक्षकी मूल सदाके लिये उखड़ गई ।

जिस महाबली तक्षक जातिने अपूर्व पराक्रम और गौरव पाकर राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें आसन पाया था, भारतमें आज उसका कहीं कुछ चिह्न भी नहीं दीख पडता ।

जित–राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंकी प्राचीन सूचीमें जितोंका नाम भी पाया जाता है परंतु इस कुलके लोग कहीं भी राजपूत नहीं लिखे गये, न किसी राजपूत कुलने इनके साथ विवाहादि सम्बन्ध किया ।

जितोंके पुराने इतिहासके सम्बन्धमें पहले बहुत कुछ लिख चुके हैं इससे यहां उन बातोंको फिरसे लिखनेकी आवश्यकता नहीं है, महाराज साइरसके राजसमयसे लेकर इस्वी चौदहवीं शताब्दीतक इनका सामाजिक और राजनैतिक व्यवहार समान रहा, पर इसके पीछे इन्होंने अपना प्राचीन धर्म त्यागकर मुसल्मानी धर्म ग्रहण किया;

* यह स्थान खानदेशमें है और इस समय बृटिशराज्यके अधीन है ।

+ चन्द कविने इस तक्षकवंशी मनुष्यको पृथिवीराजका झंडाबरदार कहा है इसका नाम चित्त तक्षक था ।

हरोडोटस कहता है कि इससे पहले जितलोग एक ईश्वरवादी थे, आत्माके अमर होनेका उनको विश्वास था, और डिगायनने चीनी इतिहासवेत्ताओंके लेखोंका सार लेकर लिखा है कि बहुत प्राचीन कालमें उनका बौद्ध धर्म था।

जितोंके सम्बन्धमें जितनी जनश्रुति सुनी जाती हैं उनका सार ग्रहण करनेसे विदित होता है कि सिन्धुदेशके पार पश्चिम दिशाका कोई देश इनका आदि निवासस्थान था, टाडसाहबने ईस्वी पांचवीं शताब्दीकी* एक शिलालिपिका पता लगाया है उसमें लिखा है इस वंशके किसी राजाने यदुकुलकी एक रमणीके साथ विवाह × किया था कदाचित् इसीसे जितलोग अपनेको यदुवंशी कहते हों।

इस बातका पता नहीं लगता कि पांचवीं शताब्दीके कितने पहले यह लोग राजस्थानमें आये परन्तु ध्यान देकर उनकी जीवनी पढनेसे स्पष्ट विदित होता है कि सन् ४४० ईस्वीमें वे नवीन गौरवसे युक्त हुए थे और उस समय उनके प्रचण्ड पराक्रमने एशिया और यूरोप खण्डको एक बार ही दग्ध कर दिया था।

सिन्धुतीरके शालिवाहन पुरसे निकलकर यादवोंने शतद्रु (सतलज) पार करके

* कोटेके दक्षिण कुछ दूरपर कुनसूया नामकी एक छोटीसी नगरी है यहांके किसी मंदिरमें टाडसाहबने सन् १८२० में एक शिलालेख पाया था, शालपुरके महाराज शालीन्द्रजितके गुणोंके कथनके उपरान्त एक स्थानपर उस शिलामें लिखा था कि शालीन्द्रके कुलमें देवलिंग नामक एक और वीर जन्मा था उसके बेटेका नाम शम्बूक था शम्बूकसे दिगल जन्मा, दिगलने यदुवंशकी दो रमणियोंसे विवाह किया, उन दोनोंमें एकके गर्भसे वीरनरेन्द्र नाम एकपुत्र जन्मा कदाचित् इसी कारण जितगण अपनेको तक्षक वंशोत्पन्न कहते हों क्योंकि एक और शिलामें लिखा है कि "मैरे शत्रुको नमस्कार, उसका गौरव मैं किस प्रकार कथन करूं जो विख्यात जित कायिद भगवती पार्वतीके स्तनोंसे निकलनेवाले अमृतको पान करता है जिसके पूर्वपुरुष वीर तुरक्ष (तक्षक) देवदेव महादेवके गलेमें हारकी भांति विराजमान रहते हैं" इससे यह बात भलीभांति सिद्ध होजाती है कि जितलोग अपनी उत्पत्ति यदुकुलसे बतलानेपर भी तक्षककुलोत्पन्न हैं।

तुरुक्षका अपभ्रंश होकर ही क्या इस समय तुरुक शब्द होगया है। अनुवादक.

× सन् ४४९ ई० में हर्स्निष्ट और हर्षनामक जित भाइयोंने अपने विजयी सैन्यदलको जटलेण्डसे श्वेतद्वीपमें लाकर प्रसिद्ध केण्ट राज्यस्थापन किया, इधर जिस प्रकार इन दोनों भाइयोंने बडी वीरताके साथ अपना राज्य स्थापन किया, उसी प्रकार दूसरे जातिभाई अपनी तेजस्विताका परिचय देते हुए दूसरे स्थानोंमें अपनी विजयपताका उड़ाने लगे एक ओर जिस प्रकार एलादिक वीरतारूपी नाटक समाप्त हुआ वैसे ही पृथिवीके दूसरी ओर अफरीका और स्पेनकी विशाल छातीपर थियोडारिक और जिनसे टिक जा गिरे।

१ इसका दूसरा नाम शालपुर था बारहवीं शताब्दीमें इसको विशेष गौरव प्राप्त था, उस समय यह पंजाबके प्रधान नगरोंमें गिना जाता था, सोलंकीकुलके महाराज कुमारपालके राजसम्बन्धमें एक शिलालेख पाया गया है उसमें लिखा है कि महाराज कुमारपाल शालपुरतक अपनी विजयी सेना ले गये थे।

मरुभूमिनिवासी देहिया और जोहिया नामक राजपूतोंके नगरमें आश्रय लिया, वहां उन्होंने दिरावलकी स्थापना की वहां कुछ दिन निवास करनेके पीछे मुसलमानोंसे पीडित होकर उनको इसलाम धर्म स्वीकार करना पडा, मुसलमान होनेपर वे लोग जावद (जाट) कहलाने लगे यदुवंशियोंके प्राचीन भट्टग्रंथोंमें इन जाटोंके सम्बन्धमें चौवीस शाखाओंका वर्णन पाया जाता है, इस प्रकार यह जित जाति पंजाबमें स्थित होकर बहुत दिनतक अपने अटल प्रतापसे विराजमान रही, महमूदगजनवीकी चढाईका वृत्तान्त पढनेसे इस वृत्तान्तकी सत्यता भली भांतिसे प्रमाणित होती है कि जब महमूद सौराष्ट्र (सूरत) का युद्ध कर अपने देशको लौटा जाता था उस समय जितोंने उसे इतना दुःखी और तिरस्कृत किया कि ४१६ हिजरी सन् १०२६ में उसने बडी सेना लेकर फिर पंजाबपर आक्रमण किया, फारसी भाषाके तारीख फरिश्तेमें इस युद्धके विषयमें जो कुछ लिखा है उसका अनुवाद हम यहां प्रकाश करते हैं।

"जौद × पर्वतमालाके चरणोंको धोती हुई जो नदी बहती है उसके किनारेपर बसे हुए मुलतानके चारों ओर जो स्थान हैं उनमें जित लोग रहते थे, महमूदने मुलतानमें आकर देखा कि जितलोगोंकी बासभूमि बडे २ नद और नदियोंसे घिरी हुई है इससे जलयुद्धके सिवाय और किसी प्रकारके युद्धका सुबीता न जानकर उसने १५०० नावें ❀ बनवाई महमूद इस बातको भी जानता था कि जितलोग जलयुद्ध करनेमें चतुर होते हैं इस कारण उसने अपनी नावको निरापद रखनेके निमित्त एक एक नावके शिरेपर लोहेकी छः छः शलाकायें लगवाई, एक एक नावपर वीस २ धनुर्धर सिपाही नियत किये और गोली बारूदकी भी बहुत सामग्री एकत्रित की. यह प्रवन्ध करके वह मुलतानमें आकर युद्धकी प्रतीक्षा करने लगा. इस ओर जितोंने अपने बाल बच्चोंको-सिन्धुसागर * में भेजकर चार सहस्र [किसीके मतसे आठ सहस्र] नौका सज्जित करके गजनियोंका सामना किया, शीघ्र ही दोनों दलोंमें घोर संग्राम हुआ, परन्तु मुसलमानोंकी नौकाओंके आगे जो लोहेकी शलाकायें लगी हुई थीं उनसे टक्कर खाकर जितोंकी बहुतसी नावें फटकर जलमें डूब गईं जो फटनेसे बचीं वह गोलोंकी वृष्टिसे छिन्न भिन्न हो नष्ट होगईं। इस प्रकार इस युद्धमें बहुत थोडे लोगोंने अपने प्राणोंकी रक्षा पाई बचे हुए जितोंको मारे जानेवाले जितोंसे भी अधिक कष्ट उठाना पडा वे सब बन्दी बना लिये गये।

+ यदुकुलध्वंस होनेपर बचे हुए यादव अपने कुटुम्बियोंके संग भारतवर्षको त्याग कुछ दिनोंतक सिन्धुके दुआबेमें जा रहे थे, इससे उस देशका नाम यदुकाङ्कभी है।

× १३०० वर्ष पहले इसी स्थानके निकट सिकन्दरने वह बडी नाव तयार कराई थी जो वेवलोनको गई थी।

* इतिहासवेत्ता डोफारिश्तेके आधारपर लिखता है कि सिन्धुसार एक द्वीप है पर वास्तवमें वह द्वीप नहीं है टाडसाहबका कथन है कि डोसाहबने फरिश्तेके अनुवादमें बहुत जगह भूलें की हैं।

इस बातपर किसी प्रकार भी विश्वास नहीं किया जा सकता कि इस युद्धमें जित-वंश सर्वथा निर्मूल होगया था अवश्य ही कुछ लोग शेष रह गये थे जिन्होंने महमूदके हाथसे छुटकारा पानेके निमित्त दूसरे स्थानमें जाकर आश्रय लिया परन्तु उन्होंने पंजाबको एक साथ ही नहीं छोड दिया कारण कि अपना देश छोडकर जिस पंजाबदेशमें वे रहनेको आये थे सहस्र २ विपद पडनेपर भी वह उनसे न छोडा गया + यद्यपि महमूदके दारुण कोपसे वे उजड़ गये परन्तु कई व्यक्ति जो युद्धमें बचगये थे समय पाकर वे बडे बलवान् हुए और प्रतिष्ठाके सबसे ऊंचे शिखरपर आरूढ हुए.

हून-शाकद्वीपके जिन वीर लोगोंने राजस्थानकी छत्तीस जातियोंमें आसन पाया है हून जाति भी उसमेंसे एक है यह ठीक किस समय भारतवर्षमें आये सो भली भांतिसे निरूपण करना कठिन है यह विदित होता है कि उस द्वीपकी कात्तिवल्ल और मकबाहन आदि जातियां [जो अब भी प्रायः सौराष्ट्र द्वीपमें रहती हैं] जिस समय आई थीं उसी समय यह भी भारतमें आये ।

एक शिलालिपिमें लेख है कि विहार देशके किसी राजाने दिग्विजयके समय और और देशोंको जीतकर हूनलोगोंके दर्पको चूर्ण किया था, इस बातसे पहले हून जातिका वर्णन पहले कहीं दिखाई नहीं देता, * इसके पीछे मेवाड़के प्राचीन भट्टग्रन्थोंसे विदित होता है कि जिस समय मुसलमानोंने सबसे पहले चित्तौर-पर चढाई की थी, उस समय उसकी रक्षाके लिये जिन राजाओंने खड्गधारण किया था, उनमें हूनोंके राजा उङ्गटसी भी थे इतिहासवेत्ता डिगायनसाहब कहते हैं कि 'उंगुट, हूनो अथवा मुगलोंकी एक बड़ी समितिका नाम है परन्तु अबुलगाजी इस शब्दका दूसरा ही अर्थ करता है. वह कहता है जो तातारी चीन देशकी बडी दीवारकी रक्षा करते थे वे उंगुट नामसे पुकारे जाते थे इन उंगुट लोगोंका एक स्वाधीन राजा था, जो इनसे बहुत पुरस्कार और सन्मान पाता था प्रसिद्ध डैनविल साहब कहते हैं कि हून

+ जिन जितवीरोंके प्रचण्ड पराक्रमसे एक समय सब संसार कांप गया था, आज उनके वंशधर गण खेती करके अपना जीवन व्यतीत करते हैं उनके देखनेसे अब यह ज्ञात नहीं होता कि यह प्रचण्डवीर जितोंके वंशधर हैं, पंजाब देशमें अब भी यह लोग जित और जाट कहे जाते हैं भारतवर्षके अन्य स्थानोंमें भी यह ज्याट जाट कहाते हैं इनमें बहुतसे मुसल्मान हो गये हैं हिन्दूजाट अब भी पराक्रमी हैं ।

१ बहुतोंका अनुमान है कि महात्मा गुरुगोविन्दसिंहने जित लोगोंको लेकर ही शिख संप्रदाय प्रतिष्ठित किया था ।

* पौराणिक ग्रन्थोंसे विदित होता है कि भारतवासी बहुतकाल पहले हूनोंसे परिचित थे जिस समय वशिष्ठ और विश्वामित्रका महासमर हुआ था उनमें जिन वीरोंने वशिष्ठजीकी सहायता की थी उनमें हूनोंका नाम भी पाया जाता है यथा—

"चिवुकांश्च पुलिन्दांश्च चीनान् हूनान् सकेरलान् । ससर्ज फेनतः सा गौर्म्लेच्छान् बहुविधानपि॥"

महाभा० आदि०

रघुवंशके चौथे सर्गमें भी लेख है कि रघुने दिग्विजयके समय हूनोंको परास्त किया था । यथा—

"तत्र हूणावरोधानां भर्तृषु व्यक्तविक्रमम् । कपोल पाटलादेशि बभूव रघुचेष्टितम् ॥

भारतवर्षके उत्तरीय भागमें निवास करते थे यदि उनका यह मत ठीक मान लिया जाय तो अवश्य ही कहना पड़ेगा कि हूनोंने भारतवर्षमें क्रमशः प्रवेश करके सौराष्ट्र और मेवाडमें प्रतिष्ठा प्राप्त की थी ।

अतिप्राचीन समयमें चम्बल नदीके किनारे बरौली नाम एक नगरी थी कहते हैं कि सबसे पहले हून लोगोंने इस नगरीमें ही अपना पडाव डाला था. यहां यह जाति थोडे समयमें ही विशेष प्रतिष्ठाको प्राप्त हुई और इसी स्थानमें अपने गौरव और सम्पत्तिका चिह्न रखनेके निमित्त कई एक अटा अटारियें बनवाईं, इस समय उस स्थानपर भिन्सरोर बसाहुआ है कहते हैं वहां हूनोंने एक विशाल और. रमणीक सेनगढचोरीनामक आनन्दभवन बनवाया था ।

गुजरातके इतिहासमें इन लोगोंके लिये जो कुछ लिखा है उससे निश्चय होता है कि हून लोग बारहवीं शताब्दीमें विशेष प्रतिष्ठित हुए थे, इस समय यद्यपि वह इस प्रतिष्ठा और गौरवसे हीन होरहे हैं तो भी विशेष जांच करनेसे ज्ञात होजायगा कि उनके पूर्व गौरवके दो चार चिह्न अबतक सौराष्ट्र देशके स्थान स्थानमें दिखाई देते हैं, एक समय जिस भयंकर पराक्रमी हूनजातिके प्रचण्ड पदाघातसे सम्पूर्ण एशिया और यूरोपखण्ड कम्पायमान हुआ था, सैकडों नगर कसबे और ग्राम जिनकी भयंकर वीर्याग्निमें भस्म होगये थे आज यूरोप और एशियाके भिन्न २ स्थानोंमें उनका बहुत थोडा चिह्न दिखाई देता है,

कात्तियों (काठियों) के सम्बन्धमें पहले बहुत कुछ कहा जा चुका है इस समय इनके आचार विचार और रीति नीतिके विषयमें संक्षेपसे और भी कुछ कहाजाता है, राजस्थान और सौराष्ट्र देशके सभी भट्टग्रन्थोंके मतानुसार यह जाति राजस्थानके ३६ राजकुलोंमें प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकती है, सूरतमें एक समय इनकी बडी प्रतिष्ठा हुई थी, इस बातका यथार्थ प्रमाण वहांके भट्टीय काव्यग्रन्थोंमें पाया जाता है इनके ही गौरव और प्रतिष्ठाके प्रभावसे सौराष्ट्रके बदले काठियावाड नाम प्रचलित होगया है ।

जो जातियें शाकद्वीपसे आकर एक समय सौराष्ट्रदेशमें प्रभुताको प्राप्त हुई थीं उनमेंसे बहुत लोगोंने अपने पूर्वपुरुषोंकी रीति नीतिको छोड दिया परन्तु यह काठी जाति अभीतक अपनी पुरानी चालपर चली जाती है, इनके आचार व्यवहार इनका धर्म कर्म सब ही अबतक एक भावसे है ।

महावीर सिकन्दर जिस समय चढाई करके भारतवर्षपर आया था उस समय काठी जाति सिन्धुनदकी पांचो शाखाओंके संगमस्थानमें निवास करती थी, कहते हैं कि इन लोगोंने सिकन्दरको इतना सताया था कि उसने इनके अत्याचारका बदला लेनेके निमित्त एक बार स्वयं युद्धयात्रा की थी, उस युद्धमें बडी कठिनाईसे सिकन्दरकी जान बची थी, इसमें उसका बडा ही भाग्य समझना

चाहिये कि समस्त पूर्वके और पश्चिमके अधिकांश देश जीतकर सिन्धुनदके किनारे आकर वहांके निवासी कत्तियों * (काठियों) के हाथसे उसको अपने प्राण विसर्जन नहीं करने पड़े ।

अतिदूर पंजाबदेशका दक्षिण पूर्वी भाग छोडकर इसवी--शताब्दीके आरंभमें काठी-लोग सौराष्ट्रदेशमें आकर बसे थे जैसलमेरके पुराने भट्टग्रन्थोंमें देखा जाता है कि काठी-जातिके लोगोंने यादवोंसे बड़ा युद्ध किया था ।

राजपूतकुलतिलक महाराज पृथ्वीराज जिस घोर संग्राममें अपनी स्वाधीनता खो बैठे उसमें जो वीर इनकी तथा इनके प्रतिद्वन्द्वी जयचन्दकी सेनामें सम्मिलित थे उनमें विशेषकर काठी लोग ही थे यद्यपि उस समय यह लोग अनहिलवाडा पाटनके महा-राजके आधीन सामन्त राजाके समान राज्य करते थे तो भी विशेष खोज करनेसे जाना जाता है कि वे लोग अपनी इच्छासे ही पृथ्वीराज और जयचन्दकी सहायता करनेको संग्राममें गये थे ।

अबतक काठीलोग सूर्यभगवान्‌की पूजा किया करते हैं शान्तिसे अपने जीवन-का व्यतीत करना अच्छा नहीं समझते यद्यपि चोरी बहुत बुरी है तो भी यह उसे ही पसन्द करते हैं, जिस समय अच्छे घोडेपर सवार हो हाथमें त्रिशूल लिये काठीवीर पथिकोंसे पथकर ग्रहण करने लगते हैं उस समय उनके आनंदकी सीमा नहीं रहती ।

वल्ल–क्या नवीन और क्या प्राचीन सभी भट्टग्रन्थोंमें छत्तीसराजकुलके आसनपर वल्लजाति विराजमान है, भट्टलोगोंने इनको ' ठट्टमुलतानके राव, इस नामसे पुकारा है, इससे निश्चय होता है कि यह लोग सिन्धुनदके किनारे रहते थे वल्लगण अपनेको सूर्य-वंशी कहते हैं और अपनी जातिका परिचय दृढ करनेके निमित्त यह कहा करते हैं कि रामचंद्रजीके पुत्र लवके वंशमें वल्ला अथवा वप्पा नामक एक वीरने जन्म लिया था, वही हमारा गोत्रपति हुआ । वल्लगण सौराष्ट्र देशमें आकर प्राचीन धंक नगरमें स्थित हुए थे । प्राचीन कालमें इस धंक नगरका नाम मंगीपाटन था । कुछ दिनोंके पीछे ही इनलोगोंने उक्त नगरके चारों ओरके देशोंको जीत लिया । यही कारण है जो उस देशका नाम बल्ल क्षेत्र हुआ ।

वल्ललोगोंके एक और दलका विवरण पाया जाता है, वे लोग अपनी उत्पत्ति चंद्रवंशसे बताते हैं । वह कहते हैं कि सिन्धुनदके किनारे बसे हुए आरोरनगरमें बाह्लि कराजालोग रहते थे । वे ही हमारे पूर्वपुरुष हैं । अतएव इस समय वह मीमांसा करनी बडी कठिन है कि वल्लवंशकी उत्पत्ति किससे हुई सन् ईसवीकी तेरहवीं सदीमें वल्ललोग विशेष बढ गये थे । इस समय वह कभी २ मेवाडमें छापा मार जाते थे - कहते हैं कि इस कारणसे गहिलोत वीर हमीरने इन लोगोंको पराजित करके इनके राजाका वध किया था ।

* क्या कत्तीका बिगडकर खत्री शब्द तो नहीं बन गया ?

झालामकबाहन । झालाकुलको राजपूत कहते हैं, परन्तु चंद्र सूर्य और अग्नि-कुलमें इनका कोई वृत्तांत नहीं पाया जाता। ऐसा ज्ञात होता है कि यह लोग भारत के उत्तरदेशसे सूरत देशमें चले आये थे।

केवल एक कार्यके होजानेसे झालाकुल भारतवर्षमें विशेष प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित हो गया था वह कार्य असाधारण हुआ; वह कार्य विस्मयकर वीरता और अमानुषिक आत्मत्यागका मानो दूसरा नाम था। जिस दिन वीरश्रेष्ठ प्रतापसिंह दिल्लीश्वर अकबरकी भयंकर सेनासे घिर गये उस दिन एक झालावंशीय वीर पुरुषने अपने जीवनकी आहुति देकर उनके प्राणको बचाया था इस अपूर्व प्राणोत्सर्ग और वीराचरण करनेके लिये ही झालवंशवाले उस दिनसे ही राजपूतोंमें विशेष सन्मानको प्राप्त हुए। किसी इतिहासमें ही झालाकुलका प्राचीन वृत्तान्त नहीं पाया जाता और इस विषयका भी कोई वृत्तान्त नहीं ज्ञात होता कि ठीक कौनसे समयमें यह लोग सूरत देशमें आये थे, तथापि केवल इतना जाना जाता है कि, जब-सबसे पहले मुसलमानोंने चित्तौरको घेरा था तब भारतवर्षकी और और वीरोंके समान झाला लोगोंने भी अपनी २ सेनाके साथ चित्तौरनाथकी सहायता करनेके लिये संग्रामभूमिमें गमन किया था। *

जैत्व, जित्व, जेटवा, वा, कोमारीः—अति प्राचीन कालमें इन लोगोंकी प्रतिष्ठा सूरत देशमें हुई थी, समस्त कुल सूचियोंमें कामारियोंको राजपूत लिखा है। परन्तु किसी राजपूतके साथ इनके सम्बन्धका होना किसी जगह भी नहीं पाया जाता है।

कामारी लोगोंके प्राचीन जीवन सम्बन्धमें कुछ थोड़ासा वृत्तान्त अबतक प्रगट हुआ है परन्तु यह वृत्तान्त भी कपोल कल्पित बातोंसे ढका हुआ है, भट्टग्रंथोंमें देखा जाता है, कि कामारी लोग गुमलीनामक नगरमें बास करते थे। अपनेको महावीर हनूमान्-जीसे उत्पन्न हुआ कहते हैं, और मतको दृढ करनेके लिये अपने राजालोगोंको "पुच्छीरया" अर्थात् दीर्घ पुच्छ कहकर गर्वसहित अपना वर्णन करते हैं। भट्टग्रंथोंमें देखा जाता है कि गुमलीनामक नगरीमें इन लोगोंके एकसौ तीस राजाओंने राज किया था सन् ईसवीकी आठवीं शताब्दीमें यह लोग यहांतक बढ गये कि इन्होंने उन महाराज अनंगपालकी कन्यासे विवाह किया था कि जिन्होंने पुनर्वार दिल्लीकी प्रतिष्ठा की थी परन्तु जैत्वलोग उस गौरवको बहुत दिनोंतक नहीं भोग सके। भट्टग्रंथोंमें लिखा है कि बारहवीं शताब्दी में शिहकामारी इनके एक राजाको शत्रुओंने गुमली राजधानीसे

---

* इस जातिके नामपर सौराष्ट्र देशमें एक विशाल विभागका नाम झालावाड़ कहा जाता है। बंकनीर हुलवद और द्रङ्गद्र आदि कई एक सम्पत्तिशाली नगरोंसे झालावाड़ शोभायमान है।

निकाल दिया था उस दिन जैत्व × लोगोंने जो नीचा देखा तो फिर पीछे ऊपरको मुँह नहीं उठा सके । ×

गोहिलः—यह लोग एक एक समय बडे प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित हुए थे, परन्तु कालकी कठोर विधिके अनुसार वह प्रतिष्ठा और वह प्रसिद्धि आज किधरको लोप होगई । आज उन लोगोंके वर्तमान वंशधरगण उस पहले गौरवकी यादको भूल कर बनजव्योपारमें लगे हुए किसी प्रकार सुख दुःखसे अपने दिन काट रहे हैं ।

सबसे पहले यह गोहिललोग लूनी नदीके किनारे बसे हुए जूनाक्षीर नामक देशमें स्थित हुए थे ।

परन्तु इसका निरूपण करना जरा कठिन है कि यह लोग किस समय और कहांसे यहां आनकर बसे थे. कहते हैं कि खिरवानामक एक भीलराजाका संहार करके गोहिल लोगोंके पूर्वपुरुषोंने इस देशको अपने अधिकारमें किया था ।

उक्त क्षीरगढके सिंहासनपर गोहिल लोगोंने बीस पीढीतक राज किया था तदुपरान्त बारहवीं शताब्दीके शेषभागमें दुर्द्धर्ष राठौर वीरोंने बढकर इन लोगोंको उस देशसे निकाल दिया इसके पश्चात् गोहिल लोगोंने सूरत देशके अन्तर्गतपर मगढ़नामक स्थानमें कुछ कालतक राज किया । परन्तु इनकी मन्द भाग्यतासे यह नगर थोडे ही दिनोंमें विध्वंस होगया तब इनलोगोंके दो दल होगये और दोनोंने पृथक् २ स्थानोंमें आसरा लिया । एक दल बगवानाम जनपदमें जाकर वहांके राजाकी रक्षामें रहा । दूसरेने शिहोरमें जाकर उसके निकट भावनगर और गोगोकी स्थापना किया । यह भावनगर मिही उपसागरके किनारेपर स्थापित है. गोहिल लोग आजकल यहींपर रहते हैं । गोहिल लोगोंके नामानुसार सौराष्ट्र उपद्वीप का पूर्वभाग गोहिलवाड कहलाता है । सारव्य व सारियास्थ । इनकी ख्याति वा प्रतिष्ठाका कोई वृत्तान्त भी भारतवर्षमें नहीं पाया जाता आजके लोगोंकी गप्पों और कहावतोंसे ही इनकी पूर्वप्रसिद्धि और पूर्व प्रतिष्ठा ज्ञात होती है । भट्टकविकुलके कुलाख्यान ग्रन्थोंमें सारव्यगण "सत्रियसार" के नामसे पुकारे गये हैं, परन्तु शोककी बात है कि इनकी सारताका कोई उदाहरण भी किसी ग्रंथमें नहीं पाया जाता ।

सिल्लार वा सुलार—सारव्य लोगोंके समान इन सिलार लोगोंका केवल नाम ही आज कालके विशाल समाधिक्षेत्रमें शेष रह गया है । आज यह नाम ही उनके पहले जीवनकी गुप्त और पिछली परछाईं है और यही उनके जीवनका पिछला चिह्न है । विलायतके टोलिमी (Ptolemy) और दूसरे प्राचीन इतिहासकार सौराष्ट्र

+ इन जैत्व लोगोंसे सौराष्ट्रके एक जनपदका नाम जेतवार हुआ है ।

उसके पश्चिम किनारेपर इनका वर्तमान वासस्थान भी दिखाई देता है । जिसको आजकल पोरबन्दर कहते हैं ।

+ जैत्व राजालोग "राणा" उपाधिको धारण करते हैं ।

प्रदेशको लारिक नामसे पुकारते थे । बहुतोंका अनुमान है कि उक्त लारिक शब्द इस सुलारसे उत्पन्न हुआ है एक समय इस सुलार जातिकी सौराष्ट्र प्रदेशमें बड़ी प्रतिष्ठा थी, कहते हैं कि महाराज सिन्धरायजयसिंहने इनको अपने राज्यसे एकसाथ ही निकाल दिया था परन्तु आज वह गौरव केवल नाममात्रको शेष रह गया है । आज बौद्धधर्मावलम्बी कितने एक वणिक् लोगोंके सिवाय और किसीको भी इस नामसे पता बताते हुए नहीं देखा जाता ।

देवी या दावी—एक समय यह जाति सौराष्ट्रमें प्रसिद्ध थी । परन्तु आजकल कोई विशेष वृत्तान्त इन लोगोंका नहीं देखा जाता । केवल कहावत ही इनकी प्राचीन विख्यातिका पता बताती है । इनकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कोई विशेष संतुष्टकर प्रमाण नहीं पाया जाता किसी २ भट्टने देवी लोगोंको यदुकुलकी शाखा कह कर वर्णन किया है । परन्तु इस बातका कोई ठीक प्रमाण नहीं मिलता ।

गर या गोर—यद्यपि यह जाति एक समयमें राजस्थानके बीच सन्मान और प्रसिद्धिको प्राप्त हुई थी परन्तु विशेष प्रतिष्ठा और प्रभुता इनको कभी प्राप्त नहीं हुई । बहुतसे आदमी यह कहते हैं कि वंगदेशके लोगोंने इस ही कुलसे उत्पन्न होकर अपने नामानुसार लक्ष्मणावती नगरीका नाम रक्खा था ।

प्राचीन भट्टलोगोंके काव्यग्रन्थोंमें इन लोगोंको "अजमेरकेगर" कहकर वर्णन किया है । इससे ज्ञात होता है कि यह लोग चौहानोंसे पहले उस देशमें प्रतिष्ठित हुए थे । बहुतसे भट्टग्रन्थोंमें यह भी है कि गर लोगोंने संग्रामके समय अनेक वार आर्यवीर महाराज पृथ्वीराजकी सहायता की थी । परन्तु दुःखसे कहना पडता है कि इनके प्राचीन गौरवका कोई उदाहरण आजकल दिखाई नहीं देता ।

दर वा दोदा—यद्यपि समस्त वंशपत्रिकाओंमें इनका नाम लिखा हुआ देखा जाता है परन्तु चरित्रका कोई विवरण भट्टग्रन्थोंमें नहीं देखा जाता एक समय चौहान वीर महाराज पृथ्वीराजने इनपर विजय प्राप्त करके अपने भाग्यको धन्य माना था आज अनन्त कालसागरकी तलीमें इस जातिका इतिहास डूब गया है ।

घरोवाल या घरवाल—इस कुलमें वैसी ही वीरता थी, जैसी राजपूतोंमें है । ऐसा जान पडता है कि इस ही कारण इनको राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें आसन प्राप्त हुआ है । परन्तु अबतक किसी राजपूतने उनलोगोंके साथ अपनी व्याह शादी नहीं की । सबसे पहले यह घरोवाललोग काशीजीमें रहते थे । इनलोगोंका एक शाखाकुल बुन्देलनामसे पुकारा जाता है । अनेक लोगोंका यह अनुमान है कि बुन्देल शब्दसे ही बुन्देलखण्ड नाम रक्खा गया है । समयके अनुसार यह बुन्देला नाम ही घरवाल नामके बदले प्रसिद्ध हो गया कालिंजर, महिनी महोवा इसके प्रसिद्ध नगर हैं ।

ईसवीकी बारहवीं शताब्दीमें मानवीरनामक एक वीरपुरुष इस बुन्देला कुलमें उत्पन्न हुआ इस मानसे ही इन लोगोंके गौरवका आरम्भ हुआ। मान वीरसे पीछे तेरहवीं पीढीमें मधुकरशाहनामक एक महापराक्रमी राजा उत्पन्न हुआ। इसने प्रसिद्ध उरछा राज्यको स्थापित किया। बादशाही राज्यसे लेकर बुन्देला लोगोंकी वीरता विशेषतासे देखी जाती है। मुगल बादशाहकी अनुकूलताके लिये इन लोगोंने एक समय जिस असीम वीरता और प्रभुभक्तिको प्रकाशित किया था उसका वृत्तान्त अकबरशाहेजहां व औरंगजेबके जीवनचरित्रमें चमकीले अक्षरोंसे लिखा हुआ है

वीरगूजर--भट्टगण इन लोगोंको सूर्यवंशीय कहते हैं। गहिलोतोंकी नाई यह लोग भी अपनी उत्पत्ति श्रीरामचंद्रजीके पुत्र लवसे बताते हैं। एक समय वीरगूजरने धुन्धर देश * में अत्यन्त प्रतिष्ठा पाई थी, मछेरीका प्रसिद्ध पहाडी दुर्ग राजोर × बहुत कालतक इनकी राजधानी रही थी, राजगढ और अलवा भी इनके अधिकारमें थे परन्तु कुशावहोंने इनको उन स्थानोंसे निकालकर वहां अपना आधिपत्य जमाया।

सेंगर–इनका कोई विशेष वृत्तान्त नहीं पाया जाता और यह भी नहीं जाना जाता कि इन्होंने कभी गौरव वा प्रतिष्ठा प्राप्त की थी वा नहीं यमुनाके किनारेपर जो जगमोहनपुर बसा हुआ है, वही इनके गौरव कीर्तिकी साक्षी दे रहा है।

सीकरवाल–सेंगरोंकी भांति इस कुलने भी कभी राजस्थानके राजकुलमें प्रतिष्ठा वा प्रसिद्धि नहीं पाई, चम्बल नदीके किनारे यदुवतीके समीप इन लोगोंने सीकरवार नाम एक नगर स्थापित कियां था वह इस समय ग्वालियर राज्यके आधीन है।

वाईस या वेस–इस कुलने भी राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें स्थान प्राप्त किया परन्तु चन्द्रवरदाई और कुमारपालचरितमें इनका वर्णन नहीं पाया जाता, इससे यह बात सहजमें ही जान ली जाती है कि इस कुलने कभी भी प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं की इस ससय यह कुल असंख्य शाखाओंमें विभक्त होगया है।

देहिया–यह राजकुल प्राचीन है इसके लोग सिंधु और सतलजके संगमके समीप रहते थे, जैसलमेरके भट्टग्रंथोंमें इनका कुछ वर्णन मिलता है इनके नाम और राजस्थानके विषयपर विशेष ध्यान देनेसे विदित होगा कि सिकन्दरके कहे हुए दाही यही हैं।

जोहिया–यह लोग देहिया लोगोंके साथ बहुतायतसे रहा करते हैं और यही कारण है जो देहियाके साथ इनका नाम लिखा जाता है कुछ कालतक एक साथ रहनेके पीछे यह लोग गाराके पार हुए और भारतवर्षकी मारवाड भूमिमें बडी प्रतिष्ठाको प्राप्त किया-प्राचीन भट्टग्रंथोंमें इन लोगोंको "जंगलदेशपति" के नामसे पुकारा है।

---

* जयपुर और (मक्के) छारी, प्राचीन धुरन्धर राज्यके अन्तरगत थे।

× वर्तमान राजगढसे आठ कोश पश्चिमकी ओर राजोरके किलेका टूटा फूटा चिह्न अब भी दिखाई देता है, उसमें भगवान् नीलकण्ठका एक पुराना मंदिर है, यह मन्दिर अनेक प्रकारकी शिलालिपियोंसे भरा हुआ है।

गोहिल:—इस बातका समझना बडा कठिन काम है कि कौनसे गुणके होनेसे यह लोग राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें गिने गये ? भट्टलोगोंके काव्यग्रंथोंसे जो इनके सम्बन्धका कुछ पुराना वृत्तान्त पाया जाता है उससे ज्ञात होता है कि आजकल जहां बीकानेरका राज स्थापित है, यह लोग वहींपर राज करते थे फिर राठौर लोगोंने उस देशमें आकर इनको निकाल दिया था ।

निकुम्प—समस्त भट्टग्रन्थोंमें देखा जाता है कि एक समयमें निकुम्प जाति प्रसिद्ध थी । परन्तु इसका वर्णन कुछ भी नहीं पाया जाता कि कौनसे गुणसे यह जाति प्रसिद्ध हुई ।

* गहिलौतगणोंके द्वारा मंडलगढके लिये जानेसे पहिले यह मंडलगढ निकुम्प कुलके अधिकारमें था ।

राजपाली—इनका कोई विवरण अबतक प्रगट नहीं हुआ, समस्त भट्टग्रंथोंमें ही यह लोग राजपालि, राजपालिक या शुद्धपाल नामसे पुकारे गये हैं कोई २ कहते हैं कि राजपाल शक जातिसे उत्पन्न हुए हैं ।

दाहिर—केवल कुमारपालचरित्रकी वर्णनके अनुसार इन लोगोंको राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें आसन दिया जा सकता है वास्तवमें इनका ठीक और प्रामाणिक इतिहास अबतक नहीं लिखा गया, मुसलमान लोगोंने जबसे सबसे पहिले चित्तौरको घेरा, उस समय जो राजालोग चित्तौरनाथकी सहायता करनेके लिये संग्रामभूमिमें गये थे, उनके बीचमें देवलके राजा दाहिरका नाम भी देखा जाता है । सिंधुदेश इनके अधिकारमें था, अब्बुलफजलने जिस देवलपति राजाको शोचनीय मृत्युका वृत्तान्त लिखा है, वह इसी दाहिरकुलमें उत्पन्न हुआ था ।

दाहिमा—एक समय इस राजकुलने बडी प्रतिष्ठा और सामर्थ्य पाई थी । इस जातिके वीरचरित्र राजाओंके प्रकाशमान गौरवसे समस्त राजपूत कुल गौरवमान हुए थे, परन्तु अत्युन्नत कालसागरके प्रचंड प्रवाहमें गिरकर न जाने वह सामर्थ्य वह प्रतिष्ठा वह गौरव गरिमा कहांको बिला गई ? सो नहीं कह सकते, बियाना नामक प्रसिद्ध पहाडी किला इनके अधिकारमें था, और चौहान वीर पृथ्वीराजके अधीनमें यह लोग सामन्त राजा होकर रहते थे । उस सामन्तभावके समयमें इन लोगोंने एक समय जिस प्रचंड वीरताको प्रकाशित किया था, उसका प्रत्यक्ष वर्णन महाकवि चंदभट्टके महाकाव्यमें स्पष्ट लिखा हुआ है । दिल्लीश्वर पृथ्वीराजके समयमें इस वीरवंशके तीन वीर भ्राता

---

*गहिलौत कुलकी सूचीमें लिखनेवालोंके भ्रमसे "देविल" शब्दको "दिल्ली" लिखा गया है, परन्तु विचार कर देखनेसे निश्चय ज्ञात होता है कि जिस वर्णनमें उपरोक्त देविल शब्द लिखा गया है, उस समय दिल्ली शब्द उत्पन्न ही नहीं हुआ था । चित्तौरके भट्टलोगोंके काव्यग्रन्थोंके देखनेसे देविल राजवंशका थोड़ा वर्णन पाया जाता है—परन्तु यह अल्प वर्णन ही भली भांतिसे विश्वास करनेके योग्य है यह हम मुक्तकंठसे कह सकते हैं ।

महाराजके अधीनमें तीन ऊँचे पदोंपर नियुक्त थे । इन तीनो भाइयोंका नाम कैमास पुण्डीर और चोयन्दराय था, बडा भाई कैमास महाराज पृथ्वीराजका एक प्रधान मंत्री था, वह जबतक इस पदपर आरूढ रहा तबतक चौहान राजका जीवनचरित्र दमकीले प्रकाशसे चमक रहा था, दूसरा पुण्डीर भारतके सन्मुख भाग लाहोरकी रक्षा करनेके लिये विराजमान था; तीसरा चोयन्दराय पृथ्वीराजका प्रधान सेनापति हुआ। कगगर नदीके किनारे घोर कठोर संग्राममें जिस दिन भारतवर्षका गौरव रवि अस्ताचलचूडावलम्बी हुआ, उस दिन दाहिम वीर चोयन्दरायने जिस अद्भुत वीरताको प्रकाश किया था, उसके प्रकाशित वर्णन महाकाव्य बर्दाई ग्रंथमें भलीभांतिसे लिखा है. वरन शहाबुद्दीनके समयमें जो मुसलमान इतिहासकार थे, उन्होंने दाहिम वीरकी उस विस्मयकर वीरताको स्वीकार करके अपने इतिहास ग्रंथोंमें लिखा हैं कि " मजकूर खांडेरा ओकी* खोफनाक तलवारसे शहाबुद्दीनने बडी मुशकिलसे अपनी जान बचाई थी। उस दुर्दिनमें भारतवर्षके उस सर्वग्रासी प्रलय कालमें हतभाग्य भारतसंतानकी घोर अवनतिके साथ, पृथ्वीराजके मुख्य सहायक, यवनगर्वखर्वकारी महावीर चमुण्डरायके वीर दाहिमा कुलका जड मूलसे विनाश हो गया।×

---

* मुसलमानोंने चोयन्दरायके खँडिराओ लिखा है।

× पृथ्वीराज रिश्तेमें चोयन्दरायके भगिनीपति थे, महाराज पृथ्वीराजका पुत्र रणजीतसिंह, इस दाहिमवीरकी भगिनीके गर्भमें उत्पन्न हुआ था दाहिम कुमारीके साथ पृथ्वीराजका विवाह वृत्तान्त महा कवि चंद्रभट्टने अत्यन्त सुन्दरताईसे वर्णन किया है। चोयन्दरायको किसीने चान्दराय लिखा है।

प्रथम खण्ड समाप्त.
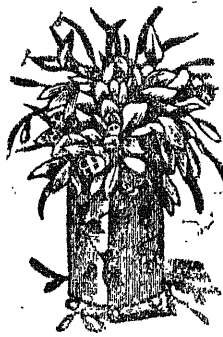
"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-यन्त्रालय-बंबई.

दूसरा खण्ड।

मेवाड।

प्रथम अध्याय १.

विषय.

राजस्थान विभाग, प्रमाणके लिये अनेक भट्टग्रंथ और शिलालेखोंका वर्णन, कनकसेन, सौराष्ट्र देशमें कनकसेनका प्रवेश, वहां उपनिवेशका स्थापन करना वल्लभीपुर, शिलादित्य, म्लेच्छोंकी वल्लभीपुरपर चढाई वल्लभीपुरका ध्वंस होना।

आर्यवीर राजपूत जातिकी वंशावली और उत्पत्तिके सम्बंधमें यथाशक्ति अनुसंधान करके इस समय राजस्थान देशका इतिहास लिखनेकी चेष्टा की जाती है।

विशाल राजवाडा आठभागोंमें बटा हुआ है जिस क्रमसे टाडसाहबने यह विवरण लिखा है उसीका यथार्थ अनुवाद करके यहां समस्त वर्णन लिखा जायगा।

पहला मेवाड वा उदयपुर।
दूसरा मारवाड वा जोधपुर।
तीसरा बीकानेर व किशनगढ।
चौथा कोटा। } हारावती।
पांचवां बूंदी। }
छठा आमेर वा जयपुर।
सातवां जैसलमेर।
आठवां भारतवर्षकी मरुभूमि।

आठ भागोंमें बटे हुए इस विशाल राजस्थानमें मेवाड और जैसलमेर यह दोनों राज ही विशेष प्राचीनता और गौरवमें प्रसिद्ध हैं। जिस दिन भारतभूमिने अपनी स्वाधीनताको खोया उस दिनसे आजतक लगभग आठसौ वर्ष बीत गये इस दीर्घकालसे व्यापी हुई पराधीनताके बीचमें कितने ही राजनैतिक हेरफेर हो गये, कितने ही विदेशीय और विजातीय भूपालोंने भयंकर गर्व करके भारत संतानके भाग्यचक्रको जलाया है। और भारतके हृदयके रुधिरको चूसा है। उनके कठोर शासन दंडके प्रहारसे भारतवर्षके कितने ही राज एक साथ चूर चूर होकर खाक धूलमें मिल गये। बहुतसे राज्य ऐसे हो गये कि आज जिनका निशानतक भी कहीं दिखाई नहीं देता. इस दीर्घ समयके बीचमें भारतवर्षके दूसरे जनपदोंके समान मेवाडराज भी अनेक घोर कठोर शत्रुओंके प्रहारसे कितने ही बार चलायमान हो गया है, कितने ही हिन्दू विद्वेषी आक्रमणकारियोंने इसपर चढाई करके धन रत्न माल ख़जानेको लूटा है, मेवाडके नगर और गांवोंको तहस नहस कर दिया है, परन्तु इस राज्यका जैसा विस्तार तब था वैसा ही अब है, इसमें किसी भांतिकी कमती बढती नहीं हुई। एक समय मेवाड अपने महान गौरवके बलसे सम्पूर्ण राजस्थानका शिरमोर हो गया था, यद्यपि आज समयके हेर फेरसे ऊंचा आसन खोकर नीचेमें आ गिरा है, परन्तु इसका विस्तार, इसके मनुष्य अबतक जैसेके तैसे ही हैं, जिस समय मेवाड इस प्रकार अपने गौरवसे दीप्तिमान हो रहा था, उससे बहुत समय पहिले जिस दिन घोरपराक्रमकारी महमूदगजनवी सिन्धु नदके "नीलेजल" * के पार हो चढाई करके भारतवर्षमें आया था उस समयमें मेवाड राज्यका जितना विस्तार था आज इस आठसौ वर्षके पीछे मेवाडकी इस वर्तमान शोचनीय दशामें भी मेवाडका उतना ही विस्तार देखा जाता है। जिन प्राचीन ग्रन्थोंमें मेवाड राजका ऐतिहासिक वृत्तान्त थोडा बहुत लिखा हुआ है, उन सबमें "जयविलास" "राजरत्नाकर" और "राजविलास" विशेष प्रसिद्ध और विश्वासके योग्य है इनके सिवाय खुमानरायसा मामदेव परिशिष्ट तथा अनेक जैन और भट्टग्रंथोंमें मेवाडका कुछ २ वृत्तान्त देखा जाता हैं, इन ग्रंथोंमें अनेक मत भिन्न २ पाये जाते हैं, परन्तु भली भांतिसे विचार कर लेनेपर उन पृथक् २ पुस्तकोंसे एक अभिन्न ऐतिहासिक सत्य प्रगट हो सकता है, हम ऐसे सत्यकी सहायतासे ही मेवाडका इतिहास तैयार करनेको तत्पर हुए हैं।

पहले कह आये हैं कि राजस्थानके भट्टकविगण महाराज कनकसेनको ही मेवाडका बसानेवाला कहते हैं। उनका मत है कि कनकसेन भारतवर्षके किसी उत्तर देश

---

* टाड साहब कहते हैं कि, जलका रंग नील होनेसे मिसरका बडा नद "नीलनद" कहलाता है, सिन्धु शब्दके साथ तातारके और दो एक चीन शब्दोंके मिलान दिखाकर वे कहते हैं कि, तातारियोंमें सिन और चैन शब्द हैं, यह दोनों शब्द नदीके अर्थबोधक हैं, और इसी कारणसे सिंधु नदके उत्तर किनारेपर रहनेवाले इसको आवेसिन अर्थात् श्रेष्ठनद कहते थे। तो क्या इस कारणसे ही अरबवाले आफ्रिकाके नीलनद तीरवर्ती उस विशालदेशको आवेसिनियाके नामसे पुकारते हैं।

(संभव है कि लोहकोट) में वास करते थे समयके फरसे उस देशको छोड सम्वत् २०० (सन् १४४ ईस्वी) में सौराष्ट्रके राज्यमें आये। भट्टलोगोंका यह मत जयपुराधीश महाराज जयसिंहने मान लिया है। पंडितवर जयसिंहने अपने बनाये इतिहासमें इस मतकी पोषकता करके सूर्यवंशके साथ राजवंशकी समानता सिद्ध की है*

इसमें कोई सन्देह नहीं कि महाराज कनकसेन लोहकोट× राज्यको छोडकर सौराष्ट्र देशमें आ बसे थे, परन्तु वे किस मार्गसे होकर दक्षिणको गये थे सो निरूपण करना असम्भव है, कारण कि भट्टग्रंथोंमें इसका कोई वर्णन नहीं पाया जाता कहते हैं कि जब वह सौराष्ट्रमें पहुँचे तब वह देश पँवारवंशके किसी राजाके अधिकारमें था। राजा कनकसेन उस पँवारराजाको हराकर उसके सिंहासनपर आप बैठा; और शीघ्र ही अपने राजको दृढ करनेमें मन लगाया, तदुपरान्त सन् १४४ ई० में उसने वीरनगरनामक एक नगर बनाया।

---

* महात्मा टाडसाहबको मेवाड़का इतिहास बनानेमें जिन ग्रन्थोंसे सहायता मिली थी उनके नाम अभी लिख चुके हैं। अब नीचे इस विषयको अधिकतासे लिखते हैं, जिससे ज्ञात होगा कि टाडसाहबको इस ग्रन्थके बनानेमें कितना परिश्रम पडा है।

उदयपुरकी राजसभामें गमन करनेसे अनेक वर्ष पहिले भट्टलोगोंके पाससे टाडसाहबको मेवाडके राजाओंकी वंशपत्रिकाके कई खर्रे मिले व और भी कई एक वंशपत्रिका मिलीं राणाकी सम्मतिसे उनके पुस्तकालयके पुराने खर्रे पढे तथा प्रयोजन समझकर विशेष २ ग्रन्थोंकी नकल की थी। उनमेंसे कई एक ग्रन्थोंकी सूची दी जाती है।

(१) खुमानरायसा—यद्यपि यह ग्रन्थ कुछेक आधुनिक है, तथापि सबसे अधिक प्रसिद्ध और प्रयोजनीय है, श्रीरामचन्द्रजीसे लेकर इसके बनानेतक सूर्यवंशी राजाओंका क्रमानुसार वर्णन इसमें लिखा हुआ है।

(२) राजविलास—मानकुवेश्वरके द्वारा यह सम्पूर्ण ग्रन्थ व्रजभाषामें लिखा गया है।

(३) राजरत्नाकर—सदाशिवभट्टरचित। उक्त दोनों काव्य राणा राजसिंहके समयमें बनाये गये।

(४) जयविलास—राजसिंहके पुत्र राणा जयसिंहके समयमें यह ग्रन्थ बना, मेवाडके राजाओंकी बहादुरी और संग्रामके पूर्व समयकी बातको ग्रहण करके इस ग्रन्थकी अवतरणिका लिखी गई है।

(५) मामदेव परिशिष्ट कमलमीरके देवमन्दिरमें जो शिलालेख रक्खे हुए हैं यह समस्त उन्हींसे संग्रह किया हुआ ग्रन्थ है।

(६) शत्रुंजय माहात्म्य—(जैनग्रन्थ है)।

ऊपरके ग्रन्थ हस्तलिखित हैं इनके सिवाय कितने एक अप्रसिद्ध भट्टग्रन्थों वंशपत्रिकाओं शिलालिपियों ताम्रपात्रों जैनग्रन्थों, आईनअकबरी, शाहनामा, जहांगीरनामा, तारीख फरिश्ता आदि अनेक फारसी अरबीके ग्रन्थोंसे मेवाडका ऐतिहासिक वृत्तान्त संग्रह किया है।

× यह लोहकोट ही कदाचित् इस समय लाहौर नामसे प्रसिद्ध है।

कनकसेनसे नीचे चौथी पीढीमें विजयसेन※ नामक एक राजा उत्पन्न हुआ था, कहते हैं कि इस विजयसेनने ही विजयपुरको स्थापित किया था । बहुत लोगोंका यह अनुमान है कि सौराष्ट्रके उत्तर अंशमें विजयपुर बसा हुआ था, समयानुसार वह नगर ऊजड हो गया उसके खँडहरपर वर्तमान धोलकानगरी स्थापित हुई है, भट्टग्रंथोंमें देखा जाता है कि महाराज विजयसेनने वल्लभीपुर और विदर्भ नामक × और भी दो नगरी बसाई थी । उक्त नगरोंके बीचमें वल्लभी ही विशेष प्रसिद्ध है, परन्तु दुःखकी बात है, कि वल्लभीपुर कहां प्रतिष्ठित है, इस बातका निरूपण करना कठिन है, तथापि अनुसन्धान करनेवाले, पूरा तत्त्वको जाननेवाले परिव्राजकोंके सूक्ष्म खोजके बलसे यह निश्चय हो गया है कि वर्तमान भावनगरके पांच कोश उत्तर पश्चिममें वल्लभीनामक जो एक नगरी दिखाई देती है, वही प्राचीन वल्लभीपुरका बचा हुआ भाग है ।—"शत्रुंजय–माहात्म्य" नामक एक जैनधर्म ग्रंथमें उक्त राज्यकी सत्यता सम्पूर्ण भावसे प्रमाणित हो गई है ।

बहुतसे लोग यह कहा करते हैं कि उक्त वल्लभीपुरसे ही मेवाडका राजवंश उत्पन्न हुआ है, यह बात सत्य है या नहीं, इसका निश्चय करनेमें इससे पहिले अनेक लोगोंके अनेक मत देखे गये थे, परन्तु कुछ ही काल बीता कि रानाके राज्यसे पूर्वकी ओर एक भग्न शिवालयके खँडहरमेंसे एक शिलालेख निकला । इस लेखमें मेवाड राजकुलका पूर्व वर्णन संक्षेप रीतिसे लिखा हुआ है, अपने ज्ञानके अनुसार सम्पूर्ण बातोंका वर्णन करके लिपिकर्ताने अपने प्रगट किये हुए वृत्तान्तकी सत्यताको प्रमाणित करनेके लिये एक स्थानमें लिखा है, "यह बात सत्य है या नहीं, इसकी प्रकाशित साक्षी वल्लभीकी दीवारें हैं" इसके अतिरिक्त राणा राज्यसिंहके समयकी बातोंका अवलम्बन करके जो एक ग्रंथ बनाया गया है उसकी अवतरणिकामें ही लिखा है कि "पश्चिममें सौराष्ट्र नामक एक देश प्रसिद्ध है । म्लेच्छोंने उसपर चढाई करके बालकनाथोंको जीत लिया था, जिस समय वल्लभीपुरका यह नाश हुआ था उस समय बालकनाथराजको बेटीके सिवाय और सब मारे गये थे" और एक कुलाख्यान ग्रंथमें देखा जाता है कि वल्लभीपुरके विध्वंस होनेपर तहांके रहनेवाले मद्रदेशमें (मारवाडमें) भाग और वहां वल्ली संदेरी और नादोलनामक तीन नगर बसाये । वह तीन नगर अबतक एक ही भावसे प्रसिद्ध हो रहे हैं, छठी ईस्वी शताब्दीके आरंभमें जिस दिन म्लेच्छोंने वल्लभीपुरका विध्वंस किया था, उस दिन वहांपर जैन धर्मका प्रचार था और आज उन्नीसवीं शताब्दीके पिछले भागमें भी वह प्राचीन जैनधर्म वहांपर उसी प्रकारसे चलता हुआ दिखाई देता है इन तीन नगरोंके सिवाय बहुतसे खरोंमें और एक

※ आमेरके राजा गयासिंहने विजयसिंहको नोशेरवां लिखा है ।

× आज कल इसका नाम शिहोर है, दूसरी विदर्भनगरी जहां दमयन्तीने जन्म लिया था वह इस समय बडे नागपुरके नामसे पुकारी जाती है ।

नगरका नाम भी पाया जाता है; उसका नाम गायिनी* है। कहते हैं कि वल्लभीपुराधीश महाराजा शिलादित्यका परिवार सौराष्ट्रसे भाग कर इस गायिनी नगरमें पिछली वार जा रहा था। भट्टलोगोंके और एक काव्यग्रंथकी सूचनामें लिखा है कि "म्लेच्छ लोगोंने महाराज शिलादित्यके गायिनी नगरको जीता उस नगरकी रक्षा करनेमें महाराजके सहकारी प्रधान २ वीरगण समरभूमिमें गिर गये; वंश निर्मूल होगया, केवल उनका नाममात्र शेष रह गया।"

इस बातका निरूपण करना कठिन है कि कौनसी म्लेच्छ जातिने वल्लभीपुरको विध्वंस किया था। अवश्य यह लोग पौराणिक शाकद्वीपमें जमे हुए होंगे। परन्तु कोई इतिहासवेत्ता निश्चय नहीं कर सका कि यह लोग कौन जातिके थे। प्राचीन इतिहासोंके देखनेसे ज्ञात होता है ईसवीकी दूसरी शताब्दीमें सिन्धुनदके किनारेपर बसे हुए श्यामनगरमें थोडेसे पारदलोग रहते थे, ज्ञात होता है कि उन्होंने ही वल्लभीपुरपर चढाई की थी, कहते हैं कि प्राचीन यादवलोगोंने इस श्यामनगरमें बहुत दिनोंतक राज किया था। पंडित एरियनने श्यामनगरको मीनगढ* और अरबके भूगोलवालोंने मनकर नामसे लिखा है।

---

* गायनि वा गजान। यह वर्तमान काम्बेका प्राचीन नाम है, वर्तमान नगरके तीन मील दक्षिणमें इसका खंडहर अबतक दिखाई देता है, भट्ट ग्रंथोंमें इस प्रकारसे और भी प्राचीन वा लुप्त नगरोंका नाम पाय जाताहै, इन नगरोंका वर्णन पाठ करनेसे ज्ञात होता है कि एक समय बालक रायगण भारतके दाक्षिण देशमें राज करते थे, भट्ट लोगोंके काव्यग्रन्थोंमें लिखा है कि वर्तमान देवगढ प्राचीन कालमें बिलविलपुर पट्टनके नामसे पुकारा जाता था, इस बिलविलपुर पट्टनमें मेवाडपतिके पूर्व पुरुषगण राज करते थे। टाडसाहबने बहुत परिश्रम और भ्रमण कर इस नगरके यथार्थ तत्त्वको निरूपण किया है, इससे ज्ञात होता है कि बिलविलपुर पट्टन सौराष्ट्रमें ही है।

१ इस अभियानके और इस म्लेच्छ जातिके सम्बन्धमें अनेक मत हैं। टाडसाहबने इस जातिको पारद और वेदने इन्दुवाक्रिय अनुमान किया है परन्तु ऐतिहासिक एलफिनस्टोन पारसीक बताता है। एलफिनस्टोनने जो प्रमाण दिये हैं वह माननेके लायक हैं। इस लिये इस आक्रमणको पारसियोंका ही कहा जा सकता है। विशेषतः जैन परिव्राजक और पारसीक तवारीखोंमें देखा जाता है कि सन् ६०० ई० के प्रारंभ कालमें, बादशाह नौशेरवांने सिन्धु देशपर आक्रमण किया था। यद्यपि तवारीखमें वल्लभीमें ध्वंस होनेका कुछ लेख नहीं मिलता तो भी वर्णनशैलीसे इतना प्रतीत हो सकता है कि जब पारसीक लोगोंने सिन्धु देशपर आक्रमण किया था तब ही उनकी आंखोंमें धन सम्पत्तिशालिनी वल्लभी नगरी खटक गई होगी। दूसरी बात यह है कि वल्लभी विग्रह और नौशेरवाँके द्वारा सिन्धु देशपर आक्रमण एकही समयमें हुआ था (सन् ५८४ ई०)।

* मीनगढके सम्बन्धमें विलायती पंडितोंके लेखकी बहुतसी बातें जानी जाती हैं डेनविलसे लेकर सरहेनरी पोटिञ्जरतक सबने इसके ठीक स्थानका पता लगानेकी चेष्टा की थी, और कोई २ महाशय उसमें कृतार्थ भी हुए। खलीफा मनसूर (अब्बासी) के सेनापति उमरने सिन्धुदेशको जीतकर उसका नाम मंसूरगढ रक्खा फिर बहुत दिनोंतक इसका यही नाम रहा डेनबिलने इसको २६ लघिमाके निकट और उलगवेगने इसको कुछ उत्तर २६४ में कहा है, जो कुछभी हो टाडसाहबने बडे अनुसन्धान तथा ऐरियन--

सिन्धुनदके किनारे जिस विशाल देशमें पारदगण निवास करते थे वह अबतक अनेक विदेशी आक्रमण करनेवालोंके निमित्त द्वारकी भांति खुल रहा था। उस खुले हुए द्वारमें प्रवेश करके अनेक जातियोंने पवित्र भारतभूमिमें आकर भारतको नष्ट कर दिया, जित हून कामारि काठी मकवाहन वल्ल और अश्वारियां आदि प्रचण्ड विक्रमकारियोंने आकर एक समय सूरतदेशमें बडी प्रतिष्ठा पाई थी, यह सबलोग भी भारतवर्षके उस खुले द्वारसे ही आये थे, उस समय इन जातियोंके लिये मानो यह सुवर्ण युग था, उस समय यह मध्य एसियाकी उच्च भूमिको छोड कर एक साथ ही यूरुप और भारतकी ओर चल पडे थे, प्रसिद्धयात्री परिव्राजक कासमस चीन नरेश ❀ जस्टीनियनके राज्यशासन समयमें भारतवर्षमें विद्यमान था, वह वल्लभीराजका कल्याणनगर देखने गया था, उसने अपनी भ्रमणपुस्तकमें लिखा है कि ठीक वल्लभीपुरके नष्ट होनेके समय कुछ हून सिन्धुनदके किनारेके देशमें अपनी बस्ती स्थापन करके निवास करने लगे थे,उस समय जो उनका राजा वा सरदार था उसका नाम गोलस था।

इस ओर एरियनकी लिखावटसे दूसरी ही बात विदित होती है ईस्वी दूसरी शताब्दीमें एरियन साहब वरना [भडौच] नगरमें थे, वह कहते हैं कि सिन्धु और नर्मदाके बीचके विशालदेशमें उस समय पारदोंका विस्तृत राज्य स्थापित था. मीनगढ उनकी राजधानी थी, अब यहां यह पता नहीं लगता कि कासमसने पारदोंको ही हून नामसे लिखा है अथवा हूनोंने पारदोंको निकालकर वहां अपना आधिपत्य जमाया था, परन्तु यह तो अवश्य ही मानना पडेगा कि इन्हीं दोनों जातियोंमेंसे किसीने वल्लभीपुरको विध्वंस किया था।

सूर्यवंशी महाराज कनकसेनसे आठवीं पीढीमें शिलादित्य नाम एक राजा उत्पन्न हुआ, इसीके राज्यसमयमें म्लेच्छोंने वल्लभीपुरपर आक्रमण करके उसको तहस नहस कर दिया महाराज शिलादित्यके सम्बन्धमें एक विचित्र किंवदन्ती सुननेमें आती है उस कथाके जिस अंशसे उनके जन्म और उनकी बाल्यावस्थाका जो विवरण प्रगट होता है प्रयोजन समझकर हम उसको यहाँ लिखते हैं, वह यह कि गुर्जरराज्यमें कैयर नाम नगर है उस नगरमें देवादित्य नाम एक वेदवेदांगका जाननेवाला ब्राह्मण रहता था।

--टालमी,अलबिरूनी, ऐड्रीसी डेनविल आदि पुरातन तत्त्ववेत्ता पंडितोंके भिन्न मतोंका मिलान करके अन्तमें यह स्थिर किया है कि सिन्धु नदके किनारे सिवानेपर २६ ११ मीनमढ स्थित है।
Viede

Elphinstone's History of India IV P. P. 232 233 Sir John Malcolm's Persia, Vol I. P. 141 De Guignes, Vol II P. 469 Sir Henry Pottinger's Travel, etc., P. 386.

❀ इतिहासोंसे इस बातका पता लगता है कि प्रचीन समयमें भारत और चीनके राजोंमें परस्पर पत्र-व्यवहार या विशेषकर चीनी सामलीम और तामवंशीराजोंके समयमें भारतके राजोंने अपने दूत भेजे थे।

उसके सुभगा नामक एक बेटी थी । देवादित्यने अपनी कन्याका विवाह कर दिया, परन्तु अभागिनी विवाहकी रातमें ही विधवा होगई । सुभगाके गुरुने उसको बीजमंत्रकी शिक्षा दी थी । एक दिन सुभगाने असावधानीसे उस मंत्रका उच्चारण कर लिया, तब भगवान् दिवाकरने प्रगट होकर उसको आलिंगन किया और तत्काल ही अन्तर्द्धान होगये, थोड़े दिनोंमें ही सुभगाको गर्भके लक्षण जान पडे, तब देवादित्य मन ही मनमें अत्यन्त व्याकुल हुआ परन्तु जब योगबलसे इसके मूल कारणको जाना तब उसका खेद और समस्त व्याकुलता जाती रही । परन्तु सुभगाको अपने घरमें न रखकर एक दासीके साथ वल्लभीपुरमें भेज दिया । इस नगरीमें आय सुभगाके एक पुत्र और साथ ही एक कन्या उत्पन्न हुई । बडा होनेपर सुभगाका पुत्र विद्यालयमें भेजा गया, उसके इष्ट मित्रगण गूढ़ जन्म वृत्तान्तको जानकर उसे गैवी (गुप्त) नामसे पुकार कर उसपर अनेक अत्याचार किया करते थे, इन अत्याचारोंसे "गैवी" का हृदय अत्यन्त दुःखित होने लगा, शयन, स्वप्न या भोजनके समय भी वह किसी प्रकारसे सुखी नहीं होता था, मनमें महाचिन्ता रहती, भांति २ का संदेह होता, सहपाठी लडके पिताका नाम पूंछते तब निरुत्तर होजाता, यह क्या कुछ कम दुःखकी बात है ? जो पिता जगतमें लाया, उसी पिताको नहीं जान सका कि कौन है ? एक बार उसको देखातक नहीं, कभी भी पिता कहकर पुकारा नहीं ? यह पीडा उस बालकके हृदयमें अत्यन्त कसकने लगी । अल्प कालमें ही बालकका कोमल हृदय चिन्तारूपी विषके कारण जर्जर होने लगा "गैवी" सहपाठी लडके पिताका नाम पूछ कर उसे बहुत ही जलाया करते, मनके दुःखको मनमें ही छिपाकर वह रोता हुआ घरको चला आता और अपनी मातासे सब वृत्तान्त कहकर पिताका नाम पूछा करता, परन्तु सुभगा कोई उत्तर न देती, पुत्रको गोदीमें लेकर अनेक प्रकारसे समझाया बुझाया करती, इस प्रकारसे कुछ काल व्यतीत होगया, क्रमसे बालकको ज्ञान होगया, ज्ञानोदयके साथ ही उसका हृदय अत्यन्त ही दुःखित हुआ ।

एक समय "गैवी" सहपाठियोंके अत्याचारसे अत्यन्त दुःख पाय क्रोधमें भरे सिंहके समान अपनी माताके निकट जा पहुँचा, और कडी आवाजसे कहा कि यदि मेरे पिताका नाम न बतावेगी तो इसी समय तेरा प्राण संहार कर डालूंगा "गैवी" के इस डरावने वाक्यके पूर्ण होनेसे पहिले ही सूर्य भगवान उसके सामने प्रगट हुए और सब वृत्तान्त कहा, फिर एक पत्थरका टुकड़ा "गैवी" के हाथमें देकर बोले इस पत्थरके टुकडेको हाथमें लेकर तुम जिसको छूओगे वही तत्काल गिर जायगा "गैवी" ने उस पत्थरके टुकडेसे अपने सहपाठी लड़कोंको पराजित किया, शीघ्र ही वह समाचार वल्लभीके राजापर गया, वह राजा "गैवी" को बुलाकर अनेक प्रकारसे डरवाने लगा. तब "गैवी" ने भगवान् सूर्यके दिये

हुए पत्थरके टुकड़ेसे राजाको स्पर्श करके उसको पराजित किया और सिंहासनपर अपना अधिकार जमाया।

उस कालसे गैवी शिलादित्यके नामसे पुकारा जाने लगा ※

वल्लभीपुरके राजा महाराज शिलादित्यके सम्बन्धमें इस प्रकारकी और भी अद्भुत व मनोहर कहावतें सुनी जाती हैं, कहते हैं कि वल्लभीपुरमें उस काल "सूर्यकुण्ड" था, जहां कोई संग्राम आ पड़ता वैसे ही शिलादित्य उस कुण्डके समीप जाकर भगवान् भास्करकी प्रार्थना करते थे, उनके प्रार्थना करते ही सूर्यके रथको खेंचनेवाला सप्ताश्व नामक एक बडा घोड़ा कुंडसे निकलता था, उस प्रचंड घोड़ेको अपने रथमें जोतकर शिलादित्य शत्रुओंको जीत लेता था, परन्तु अपने किसी पापात्मा मंत्रीकी विश्वासघातकतासे राजा शिलादित्य संग्रामके समय इस पवित्र देवानुकूलतासे वंचित रहा, महाराज शिलादित्यका पापात्मा मंत्री इस गूढ विषयको जानता था; उसने शत्रुओंको यह भेद बता दिया और सलाह दी कि उस पवित्र कुंडमें गौरक्त डाल दो, तदनुसार वह पवित्र कुंड इस प्रकारसे अपवित्र हो गया, तब महाराज शिलादित्यके, सौभाग्यमार्गमें काँटा लग गया उसके नाशका आरंभ हुआ, म्लेच्छगण प्रचंड विक्रमके साथ उसके नगरको घेर कर गगनभेदी शब्दसे बारम्बार सिंहनाद करने लगे।

उस काल महाराज शीघ्रतासे कुंडके समीप गये और कातर स्वरसे बारम्बार इष्ट देवताको पुकारने लगे, परन्तु पुकारना वृथा हुआ, अति करुणा और विनयके साथ बारम्बार पुकारनेसे भी वह सात मुखवाला देवअश्व दिखाई न दिया, निराशा घोर निराशाकी विषम अंकुशकी चोटसे शिलादित्यका हृदय अत्यन्त ही दुःखी हुआ, उनको चारो ओर अंधकार दिखाई देने लगा तथापि अंतिम साहसपर भरोसा रखकर अपनी सेनाके साथ भयंकर शत्रुओंका सामना किया, परन्तु उनके प्रचंड विक्रमको न सहकर सेनासहित समरशायी हुए। उस दिन महाराजकी शोचनीय मृत्युके साथ २ वल्लभीपुरसे उनका वंशवृक्ष भी जडसे उखड गया॥ ※

---

* भारत वर्षके इतिहासमें एक दूसरे शिलादित्यका नाम भी पाया जाता है, परन्तु वह वैश्य था और ईस्वी सातवीं शताब्दीके मध्य भागमें कन्नौजके सिंहासनपर विराजमान था। प्रसिद्ध चीन निवासी हियनसंग इस महाराज शिलादित्यके ही शासन कालमें इसकी कन्नोजमें गया था

Vide Trevels of Houen Sheang

P. 215

* शक और पारसियोंके मध्यमें भी ऐसे सूर्यकुंडका वर्णन देखा जाता है, इस समय इस उपरोक्त सूर्यकुण्डका वृत्तान्त कल्पनाके महाजालमें ढका हुआ है, उस जालको अलग करनेसे यथार्थ वात ज्ञात होजायगी, तब जाना जायगा कि शत्रुओंने महाराजके दुर्गगढ खायके जलमें विष मिला दिया था विषेले जलके पीनेसे सेनाका नाश होते हुए देख दुर्गद्वार खोल महाराज शत्रुओंके सामने हुए। इस कूट उपायके करनेसे बहुतसे राजाओंकी जीत हुई है, अलाउद्दीनने भी ऐसे ही दुष्ट उपायका अवलम्बन कर अजयसिंहका दुर्जय दुर्ग सहजमें जीत लिया था परन्तु कौनसे आक्रमणकारीके आक्रमणसे वल्लभीपुर विध्वंस हुआ था, सो नहीं जाना जाता, इसके विषयमें अनेक मत हैं। कर्नैल साहब तो इनको पारथ अथवा हन कहते हैं।

दूसरा अध्याय २.

विषय

गोहिलके जन्मका वृत्तान्त,-ईडुर राज्यकी प्राप्तिः-"हिह्लोट" शब्दकी उत्पात्ति; वप्पाका जन्मः-

गिह्लोट लोगोंकी पुरानी पूजाविधिः-वप्पाका वर्णनः-अगुणा पानोर वप्पारावलका शिवमन्त्र ग्रहण करनाः-चित्तौरके राज्यकी प्राप्तिः-वप्पाका आश्चर्यकारी वर्णनः-दूसरीः और ग्यारहवीं शताब्दीके बीचवाले मेवाड इतिहासके चार प्रधान समयका निरूपण ।

विश्वासघातक म्लेच्छ लोगोंकी भयंकर विक्रमानलमें महाराज शिलादित्य पतंगके समान भस्म होगए, उनका वल्लभीपुर भी विध्वंस होकर शोचनीय श्मशान-

—परन्तु वाडेनने उनको इन्दुवक्रय और एलफिनष्टनने पारसी बताया है अब इन मतोंमें किसको उत्तम समझकर ग्रहण करना चाहिये, सो निश्चय करना कुछ सहज नहीं है, इन सबकी मतकी समालोचना करने-पर एलफिनष्टनको सबसे ऊपर आसन दिया जा सकता है। अपने मतको प्रमाणिक करनेमें एलफिनष्टनने बहुतसे प्रमाण दिये हैं, इस कारण इसी मतको संमत समझ कर ग्रहण किया जा सकता है, एलफिनष्टनका मत है,-- जिस म्लेच्छ जातिने वल्भीपुरको विध्वंस किया था कर्नलटाडने उनकी पारद और वाडनने इन्दुवक्रय कहा है, परन्तु विचारपूर्वक देखनेसे उनको पारद नहीं कहा जा सकता, यदि यहां उनको पारसियोंके समान कहा जाय तो कुछ अनुचित न होगा नोशेरवांने ५३१ से लेकर सन् ५७९ ई० तक राज्य किया था, सर जानमालकमने बहुतसे पारसीके ग्रन्थोंका मत लेकर प्रतिपादन किया है कि उक्त-पारसिक वीर (नौशैरवां) उत्तरमें परगना और पूर्वमें भारतकी छातीतक अपनी विजयिनी सेनाको ले आ-या था। बहुतसे चीनी ग्रंथोंमें नौशेरवांकी पहिली चढाईका वृत्तान्त लिखा है। इस ओर सरहेनरीपीढिंजरने अति सूक्ष्म और संभव प्रमाण दिखाकर कहा है कि नौशेरवांने शिकारने नदीके किनारेसे आकर सिन्धु देशपर आक्रमण किया था। अतएव जब कि वल्भीपुर सिंधु देशके बहुत ही निकट है, तब हम सहजसे ही विश्वास कर सकते हैं कि नौशेरवांने यहींसे चढाई करके वल्भीपुरका नाश किया होगा।

Elphin's History of India
P. P. 210-211

भूमिके समान बन गया, इष्टमित्र, बंधु बांधव सब ही शस्त्र धारण करके संग्रामभूमिमें शयन कर गये ।

महाराज शिलादित्यके बहुतसी रानियां थीं उनमें रानी पुष्पवतीके सिवाय और सब ही राजाके साथ सती हो गईं । विन्ध्यपर्वतकी तलैटीमें चन्द्रावती नामक एक नगरी है । इस नगरीमें उस समय प्रमारवंशके राजा राज्य करते थे, रानी पुष्पवतीका उस प्रमार कुलमें जन्म हुआ था । इस अनर्थकारी घोर संग्रामके होनेसे पहिले रानीको गर्भके लक्षण दिखाई दिये थे, रानीने पुत्रकी कामनासे अनेक देवी देवताओंकी विशेष करके जगदम्बा देवी भवानीकी; जो उसके राज्यमें वर्त्तमान थी बहुतसी पूजा की, इस समय कामनासिद्धिके सम्पूर्ण लक्षण देख कर षोडशोपचारसे भवानी-जीकी पूजा करनेके लिये रानी अपने पिताके घर चली आई थी । पूजाविधि समाप्त करके पतिगृहमें लौट आनेके समय मार्गमें महाघोर संकटका समाचार सुना, पुष्पवतीके मस्तकपर मानो वज्र टूट पड़ा, सब आशा भरोसा जाता रहा, शोकके वेगके न सह सकनेके कारण रानी वहींपर मूर्च्छित होगई । अभागिनी पुष्पवतीने आशा की थी कि राजमाता होजाऊंगी, परन्तु वह आशा सफल होकर भी पूरी न हुई ।

क्या यह साधारण दुःखकी बात है ? साथकी सखियोंने भली भांतिसे यत्न किया सावधान होकर रानी बारंवार विलाप करती हुई, अपने भाग्यको धिक्कार देने लगी, आशाके फलवती होनेका रानीको कुछ दुःख न था, दुःख तो केवल यही था कि जिनके सहारेसे जीवित थी, निठुर कालने उसी प्राणाधार वीर शिलादित्यको अपने गालमें रख लिया, रानीपर यही गाज काम कर गई, यदि गर्भवती न होती तो तत्काल ही सती होकर स्वामीके पास पहुंच जाती । परन्तु क्या करे ? विचारी निरु-पाय रही, इस कारण संतान होनेके समयतक जीवन धारण करनेके लिये मलिया नामक शैलमालाकी एक गुफामें जा रही । वहां समयको पाकर एक पुत्र उत्पन्न हुआ ।

उस मलिया शैलमालाके निकट ही वीरनगर नामक एक साधारण वस्तीमें कमला-वती नामक ब्राह्मणी रहती थी. रानी पुष्पवतीने उस ब्राह्मणकुमारीके हाथमें अपने बालक कुमारको समर्पण कर स्वामीका अनुगमन करनेके लिये चिता की दहकती हुई आगमें प्रसन्नतासे प्रवेश किया और पतिके साथ अनन्त धाममें पहुँच गई । जिस दिन सती होनेको थी, उस दिन सवेरे ही कमलावतीके चरण धारणकर विनय पूर्वक कहा " हे देवि ! अपने हृदयके धन प्राणप्यारे कुमारको तुम्हारे हाथमें सौंपती हूं, अब तुम ही इसकी माता हो, देखो, इसको अपना पुत्र समझ-कर ही लालन पालन कीजियो, तथा एक प्रार्थना यह भी है कि कुमारको ब्राह्मणोचित शिक्षा देकर समयानुसार एक राजपूतकन्याके साथ विवाह भी कर दीजियो ।

प्राणपतिके पास जानेके समयमें पतिपरायणा रानी पुष्पवतीने जो प्रार्थना की थी ब्राह्मणकुमारी कमला उन बातोंको भूल न गई। वह विनयवचन उसके कानोंमें देवाज्ञाके समान गुंजारने लगे। उनके प्रतिपालन करनेमें कोई न्यूनता न हुई। एक समय कमलाने भी गर्भकी कठोर पीडाका अनुभव किया था, इस कारण यह भली भांतिसे जानती थी कि पुत्र कैसी प्यारी चीज होती है। इस समय अपने पुत्रकी नाईं समझकर उस अनाथ बालक राजकुमारका पालन करने लगी। गुहामें जन्म हुआ था इस कारण कमलाने राजकुमारका गोह नाम रक्खा यद्यपि गोहको कमला पुत्रके समान पालती थी, परन्तु गोहसे उसको एक क्षणभरके लिये भी सुख नहीं मिलता था, कारण कि राजकुमार अत्यन्त ढीठ और दुष्ट हो गया। आयुकी वृद्धिके साथ उसकी दुष्टता भी दिन २ बढने लगी, वह कमलावतीकी आज्ञाको लंघन करके हमजोली राजपूतकुमारोंके संग दिन रात खेलता फिरता, और विद्याके सीखनेमें एक पलभरको भी मन नहीं लगाता था, कभी २ पक्षियोंके बच्चे पकडकर निर्दईपनसे उनको मार डालता, कभी २ गंभीर वनमें प्रवेश करके शिकार खेलता, इस प्रकार एक २ वर्ष करके कुमारने ग्यारहवें वर्षमें पांव रक्खा, उस काल उसकी दुष्टता पूर्ण मात्राको पहुँच गई, पालन करनेवाली ब्राह्मणी किसी प्रकारसे उसको न रोक सकी, यहांपर भट्ट कविगणने कहा है।-भला यह कैसे रोक सकती सूर्य भगवानका प्रचंड तेज क्या ढका जा सकता है?

मेवाडके दक्षिण पार्श्वकी घनी शैलमालाके भीतर ईडरनामक एक भीलराज्य है, मंडलीक नामक एक भीलराजा उस कालमें सिंहासनपर विराजमान था, गोह इन ईडरवाले भीललोगोंके साथ दिन रात बन २ में घूमा करता था भीललोगोंकी ऊधमी आदतके साथ गोहका स्वभाव भली भांतिसे मिल गया था इसी कारणसे वह शान्तस्वभाव ब्राह्मणोंके संगको छोड़कर उनके साथ दिन रात रहना पसंद करता था। भील लोग भी उसपर विशेष प्रीति करते थे। क्रमानुसार उन वनपुत्रोंका अनुराग इतना बढ गया कि एक समय उन्होंने शैल काननयुक्त संपूर्ण ईडर भूमिको गोहके हाथमें सौंप दिया, अब्बुलफजल और भट्टकविगण इस वर्णनको इस भांतिसे लिखते हैं। कहते हैं कि एक समय राजपूतबालक गोहके साथ भीलोंके लड़के खेल रहे थे, उसी समयमें उन भील बालकोंका खेल २ हीमें यह विचार हुआ कि अपनेमेंसे किसीको राजा करैं, जितने बालक वहाँपर थे सबने इस कार्यके लिये राजकुमारको भलीभांतिसे योग्य और उचित समझा। तदनुसार एक भील बालकने तत्काल अपनी उँगली काटकर उसके रुधिरसे नये राजाके माथेपर राजतिलक खेंच दिया। उस दिन-उस गंभीर सघन बनके भीतर खेल ही खेलमें भील कुमारगणने जो राजतिलक गोहके माथेपर खेंच दिया, फिर उस राजतिलकको कोई भी न मिटा सका, वृद्ध भीलराज माण्डलिकने यह वृत्तान्त सुनकर बड़ी प्रसन्नतासे गोहको राजभार सौंप दिया और स्वयं वृद्धताके

कारण राज काजसे छुट्टी ली, परन्तु इस बातका उपसंहार अत्यन्त बुरा और घिनौना है इससे गोहके स्वभावमें कृतघ्नता और विश्वासघातका घोर कलंक लगा हुआ है। कहते हैं कि भीलोंके जिस राजाने अपने पुत्रोंको न देकर अपनी इच्छा और प्रसन्नतासे अपना सिंहासन उसको दिया. कुमारने उस ही भीलराजका प्राण संहार किया। इस बातका निश्चय करना कठिन जान पड़ता है कि किस कारणसे राजकुमारने ऐसा कठोर काम किया था अब्बुलफजल और भट्टगण भी इसमें कोई कारण नहीं बताते, गोहका नाम उसके वंशधरोंका गोत्र होगया। गोहके वंशधर उस ही दिनसे 'गहिलोत' वा "गिह्लोट" नामसे पुकारे जाने लगे।

इन प्राचीन राजालोगोंके जीवनचरित्रके बारेमें थोड़ा ही सा वृत्तान्त पाया जाता है उस थोडेहीसे वृत्तान्तमें यह प्रतीत होता है कि गोहसे नीचे आठवीं पीढीतक उस गिरिकानन पूर्ण इडुर देशमें गहिलोतोंका राज रहा। आठ पीढीतक बराबर स्वाधीनताप्रिय भील लोगोंने राजपूतोंके चरणोंमें अपने स्वाधीनतारत्नको बेचकर सुख दुःखसे विजातीय पराधीनताको सहन किया था; परन्तु वे सदासे स्वाधीनताके चाहनेवाले थे, स्वाधीन जीवन सदासे उनको प्यारा था। उनके पितृ पुरुषगण उस स्वाधीन जीवनको भोग करके यथार्थ स्वर्गसुखको भोगकर गये हैं। आज किस पापका उदय होनेसे वे उस सुखसे हटाये जाकर पराधीनताकी जंजीरको पहर रहे हैं? अधिक क्या कहैं आगेको भीलगण न सह सके। गोहसे नीचे आठवीं पीढीमें नागादित्यनामक एक राजा उत्पन्न हुआ। एक समय वह राजा शिकारके लिये बनमें जाकर हरिनके पीछे पड़ा; उसी समयमें भीललोगोंने प्रचंड विक्रमके साथ राजाको घेर लिया और वहींपर संहार करके अपने ईडुर राज्यपर अधिकार किया।

जिस दिन अभागे नागादत्तने भीलोंके हाथसे प्राण खोये उस ही दिन उसके परिवारमें हाहाकार पड गया।—विपदकी विकट मूर्ति सबको ही डर दिखाने लगी, चारो ओर भील ही भील हैं;—कहाँ भागकर जाँय? क्रोधसे उन्मत्त हुए उन भील लोगोंकी क्रोधाग्निसे कौन राज परिवारकी रक्षा करे? कदाचित् महादित्यका वंश इस समय निर्मूल हुआ? इस भांतिसे राजपूत अत्यन्त ही व्याकुल हुए, चिन्ता बारम्बार उनको सताने लगी। उस समय नागादित्यके बप्पा नामक एक तीन वर्षका पुत्र था, उस पुत्रके मारे राज परिवारको और भी अधिक चिन्ता हुई परन्तु भगवान् उस अनाथ राजकुमारके सहायक थे, नारायणजीकी अपार करुणाके बलसे शीघ्र ही बालककी रक्षा हो गयी। वीर नगरीकी रहनेवाली कमलावतीने जिस प्रकार गोहके जीवनको बचाया था, उसही कमलाके वंशवालोंने, संकटके समय महाराज शिलादित्यके राजवंशकी रक्षा करनेके लिये फिर अपनी छातीको अडा दिया। उन्होंने विचार कर लिया कि चाहै इस छातीपर हजारों वज्र गिरैं, तथापि बालककी रक्षा अवश्य ही करेंगे। वह लोग उस समय गहिलोत राजकुमारके कुलपुरोहित थे आज पुरोहित नामको

सार्थक करनेके लिये अपने प्राणोंको संकटमें डाल राजकुमार वप्पाकी रक्षा करने-के लिये तैयार होगये। नागादित्यके बालक राजकुमारको लेकर सत्यपरायण ब्राह्मणोंने भांडेर * नामक किलेमें गमन किया। वहांपर एक भीलने जो कि यदुवंशी था उन ब्राह्मणोंको आश्रय दिया। परन्तु तहां बालकको सब प्रकारसे निरापद न समझकर पराशर नामक स्थानमें ले गये। वह वन बडे २ और घने २ वृक्षोंसे परिपूर्ण था। उस दीर्घवृक्षश्रेणीकी निविड शाखा पत्रोंको भेदकर ऊंचा मस्तक किये त्रिकूट पर्वत खडा हुआ है। त्रिकूट गिरिकी तलैटीमें नागेन्द्र × नामक एक साधारण नगर बसा हुआ है। उसमें शिवोपासक शान्तियुक्त ब्राह्मणगण परम सुखसे वास करते थे। वप्पाको उन शान्ति शील ब्राह्मणोंके हाथमें सौंपा गया। इस निविड महावनकी गंभीर शान्तिमय शीतल छायामें ऊंचे पर्वतकी विशाल प्रान्तभूमिमें भगवद्भक्त शान्तचित्त ब्राह्मणगणोंके द्वारा रक्षित होकर राजकुमार वप्पा १ स्वच्छन्दतासे इच्छानुसार भ्रमण करने लगा।

उस पराशर नामक महावनके गंभीर स्थानमें जहां कि विराट त्रिकूट पर्वतकी घोर कंदरायें हैं, जहां मेघोंसे युक्त होकर बडे पर्वतशिखर शोभायमान होरहे हैं, जहांसे प्रत्यक नदियां निकली हैं वहांपर अनेक प्राचीन देवमन्दिर दिखाई देते हैं। प्रकृति-की मधुर मुसकान शान्त रसमें मिलकर वहांपर एक ऐसे अद्भुतभावको उदय कर देती हैं कि इस मनुष्यशून्य वनमें प्रवेश करते ही हृदयमें महान् भक्ति, भय और आनन्दका विकाश होता है। इस पवित्र वनके रहनेवाले अति प्राचीन कालमें केवल महादेवजीकी ही पूजा करते थे। यहांतक कि "वन कुमार" असभ्य भीलगण भी उनकी भुजंगभूषित मूर्तिको और उनके वाहन वृषभको अतिपवित्र समझकर भक्तिके साथ पूजा करते थे।

इन शान्त और गम्भीर वनस्थलियोंमें भूतभावन भगवान् महादेवजीकी पूजाविधि बहुत समयसे चली आती है। यद्यपि आज वर्त्तमान मेवाड राज्यकी शोचनीय अव-स्थामें उनकी पूजाका आडम्बर बहुत कम होगया है तथापि शिवरात्र्यादि विशेष उत्सवोंमें उदयपुरकी शिवपूजा देखनेयोग्य होती है, यहांतक कि भिन्न धर्मावलम्बी जैन और वैष्णवलोग भी उन उत्सवोंमें बडे हर्ष व चावसे मिलते हैं। आजतक मेवाडके राजालोग अपनेको "एक लिंगका दीवान" कह कर गौरवके साथ परि-चित करते हैं। गंगा यमुनाकी तीरवाली बस्तियोंमें यदि अनेक देवी देवताओंकी

---

* जारोलीके १५ मील दक्षिण पश्चिममें स्थित है।

× चलित भाषामें इसको नागदा कहते हैं। उदयपुरसे दश मील उत्तरमें स्थित है। अबतक तीर्थस्थान कहाता है। महात्मा टाडसाहबको यहाँसे गहिलोतकुलके इतिहासकी बहुतसी शिलालिपि मिली थी।

१ प्यारका नाम वप्पा था, यथार्थमें इस राजकुमारका नाम शैलाधीश कहते हैं।

उपासनाका प्रचार न होता, तो कदाचित् शिवपूजा अबतक पूर्ण प्रतापसे होती रहती। गाहिलोतकुलके सर्वश्रेष्ठ प्रधान उपास्य देवता भगवान् एकलिंग आजतक अखण्ड प्रतापसे अपनी पूजाको भोग करते हैं। उदयपुरमें प्रवेश करनेके एक छोटे गिरिमार्गके ऊपर भगवान् एकलिंगजीका पवित्र मंदिर बना हुआ है । मंदिर बहुत बडा और दर्शन करनेयोग्य है जो संगमरमरका बना हुआ है । भीतर खुदाईका काम भी अत्युत्तम बना है। देखते ही ज्ञात हो जाता है कि इस मंदिरके बनवानेमें बहुतसा धन व्यय हुआ होगा। निःसन्देह यह मंदिर दर्शनीय है। परन्तु हिन्दूविद्वेषी म्लेच्छगण इस मार्गसे ही चढ़ाई करते थे, इस कारण उन्होंने इसके बहुतसे स्थान तोड फोड डाले हैं। सन्मुख ही ढका हुआ आंगन है, उसके ऊपर वेदिका बनी है, वेदिकाके ऊपर भगवान् एकलिंगके ठीक सामने धातुकी बनी हुई एक वृषभकी मूर्ति विराजमान है। भीतरसे यह मूर्ति खुक्कल है इसका शरीर सुन्दर और चिकना बना हुआ है। परन्तु अर्थपिशाच तातारवालोंने धन रत्नकी खोज करते हुए कठिन मुद्गर मारकर इस वृषभमें दो एक जगह छेद कर दिये हैं।

जिस तरह कि दूसरे कुलोंके प्रतिष्ठा करनेवाले महात्माओंके विषयमें अनेक अपूर्ण वर्णन देखे जाते हैं, वैसे ही कुमार वप्पाके सम्बन्धमें अनेक अद्भुत बातें सुनी जाती हैं जिन ब्राह्मणोंके हाथमें उसके लालन पालनका भार था, कुमार वप्पा उनकी गायोंको चराया करता। राजपूतबालक आनन्द चित्तसे गायोंको चराता। सूर्यवंशी महाराज शिलादित्यका वंशधर आज गोपकार्यको कर रहा है; कोई भी उसके भाग्यका विचार नहीं करता। वप्पाके उस शांतिमय बालकपनकी बातोंके विषयमें भट्टलोगोंने अनेक प्रकारकी सुन्दर और हृदयग्राही वार्ता लिखी हैं। शारदीय झूलनोत्सव राजपूतोंमें एक विख्यात आनन्दवासर है। उस उत्सवके आते ही लडकी लडके आनन्दमें मतवाले होकर झूलनलीलाके मेलेमें मिल जाते हैं। कहते हैं कि उस काल नगेन्द्र नगरमें कोई सोलंकीवंशीय राजा राज करता था। ऊपर कहे हुए झूलनोत्सवके आनेपर उस राजाकी लडकी अपनी सहेलियोंके साथ व नगरकी और २ लडकियोंको भी संगमें ले विहार करनेके लिये कुंज वनमें गई। परन्तु वहां झूला डालनेकी रस्सी न थी, इस कारण सब इधर उधर देखने लगीं। इतनेहीमें राजकुमार वप्पा वहां आ पहुँचा, वप्पाको देखते ही राजकुमारियोंने उससे रस्सी मांगी, परन्तु कुमार चंचलस्वभाव और हँसमुख था इस कारण हँसकर कहा कि "जो तुम पहिले मुझसे विवाह कर लो तो मैं अभी रस्सी ला दूंगा।" कौतुकके ऊपर कौतुक हुआ;—तमाशा देखनेकी लालसासे राजपूतलडकियोंने इस बातको मान लिया, फिर क्या था विवाह होगया। सोलंकी राजकुमारीके डुपट्टेसे वप्पाके डुपट्टेकी गाँठ बांधी गई व और सम्पूर्ण लड़कियें परस्पर एक दूसरीका हाथ पकड़े हुए उनके सहित एक साथ पांति बांधकर एक बडे आमवृक्षके चारो ओर प्रदक्षिणा करने लगीं। वप्पा कुमारने इस बातका विचार नहीं किया था कि आज—इस

शारदीय शुभ झूलनोत्सवके दिन इस विशाल आम्रवृक्षकी छायाके नीचे जो नकली विवाह हुआ है, यह अल्प कालमें ही यथार्थ विवाह हो जायगा । इस होनहारसे कुमारके भाग्यका चमकना आरम्भ हुआ । परन्तु नागेन्द्रनगरका रहना कठिन पड़ गया, शीघ्र ही नगरको छोडा यद्यपि उसी दिनसे कुमारका भाग्याकाश चमका, परन्तु वह सारी राजपूतकुमारियें उसके गलेका हार होगई । उन लड़कियोंके वंशवाले आजतक उस लीला विवाहका वृत्तान्त कहकर अपनेको बप्पाकुलसे उत्पन्न हुआ कहते हैं ।

खेल तमाशा पूरा हुआ–राजपूतोंकी लड़कियें अपने २ घर लौटकर उस दिनके वृत्तान्तको भूल गईं । राजकुमारियोंने यह न सोचा कि विधाताने भाग्यकी ओटमें बैठकर कुमार बप्पाके साथ हमारे भाग्यका गूढ बन्धन बाँध दिया है । इस भांति कुछ दिन बीतनेपर क्रमानुसार सोलंकी राजकुमारी विवाहके योग्य हुई । पिताने वर खोजकर विवाहकी सम्पूर्ण तैयारी की । इतनेहीमें वरपक्षके एक ज्योतिषी ब्राह्मणने आय राजकुमारीके हाथको देखकर कहा, "इसका विवाह तो पहले ही हो चुका है" । इस अद्भुत बातको सुनकर राजभवनमें चारो ओर कुलाहल पड़ गया । सब विमूढ और ज्ञानरहित होगये । इस नाटकके अभिनय करनेमें किसने चातुरी दिखाई, इसके जाननेमें सबको उत्कंठा बढी चारो ओर गुप्त दूत भेजे गये । कुमार बप्पाने भी सब समाचार सुना और शोचा कि साधारण वार्ताके प्रकाशित होनेसे भी विपत्तिमें पडूंगा । इस कारण अपने सखा गोपलोगोंको विशेष सावधान कर दिया । गोपलोग बप्पाकी जैसी भक्ति करते थे और बप्पा कुमारकी जैसी प्रभुता उनपर थी, इसको देख सुनकर इस वृत्तान्तके प्रकाशित होनेकी कुछ भी सम्भावना नहीं थी । तथापि कुमारने एक कठोर प्रतिज्ञासे उनको बाँध लिया । उस प्रतिज्ञाका विवरण नीचे लिखा जाता है । एक छोटासा गढा खोदकर अपने हाथमें एक पत्थरका टुकड़ा उठाय बप्पाने धीर गंभीर स्वरसे कहा "शपथ करो, सुख, दुःख, सम्पद, विपदमें मेरे साथी रहोगे, प्राण जानेपर भी मेरी कोई बात किसीसे न कहोगे, दूसरोंकी सब मुझसे कहोगे । कहो–शपथ करो । यदि ऐसा न कर सकोगे तो तुम्हारे पितृ पुरुषोंके सत्कर्म-समूह इस पत्थरके समान धोबीके गढेमें गिरेंगे ×" कुमारने यह कहकर उस पत्थरके टुकड़ेको गढेमें डाल दिया । समस्त गोपने तत्काल ही एकमत होकर वह शपथ की, उन्होंने कभी अपनी शपथको मिथ्या नहीं किया । परन्तु जिस गूढ बातके डोरेपर कमसे कम छः सौ राजपूतबालाओंके भाग्यकी गांठ लगी थी वह कबतक छिपा रहेगा ? इस कारण थोड़े ही दिन पीछे इस बातका समस्त भेद सोलंकीराजको मालूम होगया, उनको निश्चय होगया कि यह सारी करतूत कुमार बप्पाकी है ।

× राजपूत धोबीके गढेको बहुत ही अपवित्र समझकर घृणा करते हैं टाडसाहब कहते हैं कि यह गढे नदियोंके ही किनारे खोदे जाते हैं।

इस ओर कुमारके साथियोंने इस वार्ताको सुनकर सारा वृत्तान्त उससे कह सुनाया, कुमारने सुनकर समझा कि इससे मुझपर विपत्ति आ सकती है ऐसा विचार कर पर्वतमालाके एक गुप्त स्थानमें जा रहे। यह गुप्त स्थान अत्यन्त विजन था। कुमारके वंशधरगण अनेक बार वहां आनकर छिपे थे। भागनेके समय वालीय और देवनामक भीलोंके दो लडके उसके साथ गये, वालीय उन्द्रीका रहनेवाला और देव अगुनपानोर नामक भीलोंकी बस्तीका रहनेवाला था, इन दोनों भील-कुमारोंने दुःख सुख, सम्पद, विपद या घोर संकट समयमें भी क्षणभरके लिये भी कुमारको अकेला नहीं छोड़ा, उनका जीवन वप्पा कुमारके साथ जुड़ा हुआ रहा। जब भाग्यलक्ष्मीकी प्रसन्नतासे कुमारवप्पाने चित्तौरके सिंहासनपर अधिकार किया, उस समय वालीय और देवने अपने रुधिरको लेकर कुमारके माथेपर राजतिलक किया था।

वालीय और देव यद्यपि असभ्य भीलकुलमें उत्पन्न हुए थे, परन्तु उनका हृदय जिस पवित्र भावसे परिपूर्ण था;—वह भाव कितने सभ्य मनुष्योंके ज्ञानप्रकाशित हृदयमें भरा हुआ है। वे दोनों भील जिस पवित्र चरित्रकी संसारमें प्रचार कर गये हैं, उसके समान चरित्र और कितने पुरुषोंने दिखाया है, जो कुछ उन्होंने प्रतिज्ञा की थी वह पूरी की। इस प्रतिज्ञाके कारण उन्होंने घरका रहना इष्ट मित्रोंका संग शरीरका सुख सब ही छोडकर कुमार वप्पाके साथ कष्ट कर वनवास स्वीकार किया।

अनेक बार अनेक विपत्तियोंमें पडे, कितने दिनतक बराबर रातोंको जागे तथापि एक दिनके लिये भी अपनी प्रतिज्ञासे टल जानेका विचार नहीं किया, कभी कुमारको अपने साथसे अलग करनेका विचार नहीं किया। वास्तवमें यही कुमार वप्पाके जीवनसखा और उसके सुखमें साथी थे, यदि कुमारको ऐसे मित्र न मिलते तो न जाने उसके भाग्यका पलटा किस ओरको होता, कदाचित् अज्ञातवासमें रहकर चित्तौरके राजसिंहासनको प्राप्त न कर सकता, कदाचित् आज उनका नाम वीरकुलके नमूनेमें न गिना जाता। महात्मा भील जातिके दो मित्रोंने जो उपकार कुमारका किया था कुमारने उस उपकारको कभी भी चित्तसे नहीं भुलाया, उनके साथ रहनेसे अपनेको सन्मानित और सुखी समझा और अनेक प्रकारसे उनके प्रति कृतज्ञता दिखाना भला विचारा, आज भी उस पवित्र कृतज्ञताका चिह्न मेवाडमें अटल भावसे विराजमान हो रहा है, जिस दिन वीरकेशरी महाराज वप्पाने उन दो भीलमित्रोंके साथ अपार आनन्दको भोग किया था आज यह दिन अनन्त कालसागरकी सबसे पिछली तलीमें लीन हो गया है; जिस चित्तौरके

सुवर्णमय सिंहासनपर विराजमान होकर महाराजने पवित्र हृदयसे उन दोनो मित्रों-का दिया हुआ राजतिलक ग्रहण किया था, वह चित्तौर आज खँडहर बना हुआ है। चूर २ होकर धूरमें लोट रहा है; एक दिन जो भूमि जगन्मान्य राजकुलकी लीला-भूमि थी आज वनके हिंसक जीव वहांपर विहार करते हैं।

यद्यपि कालचक्रका इतना परिवर्तन होगया है, तथापि उन्हीं बप्पा रावजीके वंशधरगण अबतक उस बालीय और देवके वंशवालोंका दिया हुआ राजतिलक आनन्दसे ग्रहण करके अपनेको सन्मानित समझते हैं ❀।

सम्पूर्ण भारतवर्षमें केवल अगुण पानोरके रहनेवाले ही एक प्रकारकी स्वाभाविक स्वतन्त्रताको भोगते हैं। यह स्वतन्त्रता और किसी राजाके अधीनमें नहीं है, और किसी राजाके साथ यह अपना सम्बन्ध नहीं रखते। इनका स्वामी "राणा" उपाधिको धारण करके कानन विराजित कमसे कम सहस्रों ग्रामोंके ऊपर अपना अधिकार रखता है, आवश्यकता पडनेपर कमसे कम पांच हजार धनुषधारी भीलोंकी सेनाको साथ लेकर संग्रामभूमिमें उपस्थित हो सकता है। सोलंकी राजकुमारियोंके गर्भ या भूमि और भीलके औरससे इन लोगोंके पूर्व पुरुष उत्पन्न हुए थे। इस ही स्वत्त्वसे वह अपनेको राजपूत बताते हैं। अगुणाके इस भीलकुलमें ही महात्मा देवने जन्म लिया था प्रयोजन समझकर हम मूलवार्तासे दूर चले आये हैं; अब फिर कुमार बप्पाकी ओर चलते हैं।

विचार करनेसे कुमार बप्पाका इस प्रकारसे भागना और भागनेका कारण स्वाभाविक और ठीक ज्ञात होता है परन्तु भट्टलोगोंके काव्यग्रन्थोंमें यह वर्णन और ही प्रकारसे पाया जाता है। उन्होंने कुछेक ऊंची पदवीका अनुसरण करके वर्णन किया है कि सम्पूर्णतः देवताके उपदेशसे ही उन्होंने नगेन्द्रनगरको छोडा था। यह बात सत्य है कि जगतके अति प्राचीन महा पुरुषोंका वृत्तान्त अनेक प्रकारके कल्पनाजालमें जड़ा हुआ होता है, परन्तु वीरवर महाराज बप्पा सैकडों आर्य राजाओंके पितृपुरुष वास्तवमें देवताके समान पूजे जाते थे। अलौकिक वीरताका आधार समझकर शत्रुकुल उनके नामसे थर थर कांपता था। जिनकी देह परमाणुमें विलीन होनेपर भी अबतक जो "चिरंजीव कहकर पुकारे जाते हैं, उस अनुपम वीर राजपूतकुलतिलक महाराज बप्पाका जीवनचरित्र और अभ्युदयवृत्तान्त

❀ अभिषेकके समय देवका वंशवाला राजाका हाथ पकड कर राज्यसिंहासनपर बैठाता है, और बालीयके वंशका भील चावलका चूर्ण और दहीका पात्र हाथमें लेकर खडा रहता है। इस अभिषेकके समयमें जब समय अच्छा था तो मेवाडकी एक वर्षकी आमदनी खर्च हो जाती थी। इसमें खर्च बडा था, परन्तु आजकल आडम्बर बहुत कम होता है। राणा जगतसिंहके अभिषेकसमयके पश्चात् इस प्रथामें कुछ हीनता देखी गई है।

क्या कल्पनाके घोर जालमें छिपा रह सकता है ? । दुःखका विषय है कि भट्टलोगोंने बप्पाकी उन्नतिका वृत्तान्त जिन अलंकारोंसे सजाया है, उसमें मेवाडवालोंका इतना दृढ़ अनुराग है कि यदि उनको निकाला जाय तो मेवाड़वासियोंके मतसे देवापमानरूप गंभीर पापको अपने शिरपर लेना पडेगा भट्टकविगण कहते हैं कि कुमार बप्पा गोपवेषसे उस नगेन्द्र नगरके विस्तारित जंगलमें अपने प्रतिपालन करनेवाले ब्राह्मणोंकी गायें चराता था । सूर्यवंशी महाराज शिलादित्यका वंशधर गोपालरूप तुच्छ कार्य करके भी सुखसे समय बिताने लगा परन्तु उसके शान्तिमय सुखमें विघ्न हुआ । कुमार जितनी गायें चराते थे उनमें एक गाय बहुत ही दुधारी थी । आश्चर्यकी बात है कि संध्यासमय जब वह आश्रममें आती तो उसके थनोंमेंसे दूध नहीं निकलता था । ब्राह्मणोंके मनमें विषम सन्देह हुआ । उन्होंने समझा कि कुमार ही एकान्तमें इस गायका दूध पी जाता है । धीरे २ यह सन्देह उनके मनमें जमने लगा वे ब्राह्मणलोग बडी सावधानीके साथ कुमारके प्रत्येक कार्यकी परीक्षा करने लगे । कुमारने सब समझा, परन्तु क्या करे ? जबतक इस सन्देहके दूर करनेका यथार्थ उपाय दृष्टि नहीं आता तबतक मनके दुःखको मनमें ही रखकर धीरभावसे कार्य करने लगे । कुमारने गायपर विशेष दृष्टि रखनेकी प्रतिज्ञा की । दूसरे दिन जब गायें चरनेके लिये जंगलको चलीं तो कुमार उस ही गायके पीछे २ भ्रमण करने लगे । वह जिस ओरको गई, वे भी उस ही ओरको गये । गइया एक निर्जन कन्दरामें घुसी कुमार बप्पा भी उसके पीछे २ वहींपर पहुँचे । अकस्मात् एक अद्भुत दृश्य देखा । कि गइया एक बेलपत्तोंके ढेरकी चोटीपर दूधकी धार छोड रही है । कुमार विस्मित हुए । उन्होंने उस लताके ढेरके निकट जाकर देखा कि उसमें एक शिवलिंग स्थापित है और उस शिवलिंगकी चोटीपर ही गायके थनमेंसे दूधकी धार निकलकर गिर रही है ।

कुमारने समझा कि इसी कारणसे गायका दूध थनमेंसे निकल जाता है, उन्होंने शिवलिंगके निकट और एक विचित्र दृश्य देखा कि उसके सन्मुखवाले एक बेतवनके भीतर ध्यान किये हुए एक योगी विराजमान हैं, कुमार जैसे ही उस निर्जन बनमें गए वैसे ही उस योगीका ध्यान टूट गया । परन्तु करुणानिधान तपस्वीने ध्यानमें विघ्न करनेवाले कुमारसे कुछ न कहा ।

यह गिरिकंदरा अतिनिर्जन है, शांतिने इसके भीतर अपना घर बना लिया है पूर्वकालके योगी और तपस्वियोंके अतिरिक्त और किसीने उस पवित्र स्थानको कभी नहीं देखा, कुमार बड़े पुण्यवान् थे, नहीं तो विना चेष्टा और यत्नके वह पवित्र स्थान* कैसे देख सकते । उस तपस्वीका नाम हारीत था । योगीवर हारीत भी उस गायकी दुग्धधारको प्राप्त करते थे ।

---

* ठिक इसी स्थानमें एकलिंगजीका पवित्र मन्दिर बना है । टाडसाहबके समयमें जो पुजारी उस मंदिरमें था वह महर्षि हारीतसे ६६ वीं पीढी पीछे हुआ उसने टाडसाहबको एक लिखा हुआ शिवपुराण भी दिया था ।

हारीतका ध्यान भंग होनेपर कुमारने उनके चरणपर गिरकर साष्टांग प्रणाम किया, योगीने आशीर्वाद देकर नाम धाम पूछा। राजकुमार जहांतक अपने वृत्तान्तको जानते थे, अकपट भावसे कह गये, उपरान्त मुनिवरका आशीर्वाद पाय उस दिन अपनी गायोंको लेकर आश्रममें चले गये। दूसरे दिनसे प्रतिदिन कुमार योगीके पास आने जाने लगे, प्रति दिन भक्तिके साथ उनके दोनो चरणोंको धोकर पीनेके लिये दूध उपहारमें देते और पूजाके योग्य फूल बीनकर ला देते थे। ऐसी कपटहीन भक्ति देख तपोनिधि हारीत परम प्रसन्न हो कुमारको अनेक प्रकारकी नीति सिखाने लगे। इस प्रकारसे कुछ काल बीत गया, क्रमानुसार योगीजी यहांतक संतुष्ट हुए कि कुमारको शैव मंत्रकी शिक्षा दे गलेमें यज्ञोपवीत पहरा दिया और महागौरवके चिह्नस्वरूप "एकलिंगका दीवान" उपाधि दान की वप्पा कुमारकी अकपट भक्ति और गाढ़ शिवपूजा देखकर भगवती भवानी भी अत्यन्त प्रसन्न हुई थीं। वे कुमारको आशीर्वाद देनेके लिये स्वयं सिंहासनपर सवार हो सन्मुख प्रगट हुई। तथा अपने हाथसे उनको विश्वकर्माके बनाये शूल धनुष बाण तरकश असि चर्म और एक बहुत बडा खड्ग इत्यादि उत्तमोत्तम दिव्यास्त्र दिये।

इस प्रकारसे आदिदेव भगवान् महादेवजीके पवित्र मंत्रसे दीक्षित और भगवती भवानीजीके द्वारा दिव्यास्त्रस सज्जित हो कुमार वप्पा शत्रुओंके लिये अजित होगये। तब उनके गुरु महर्षि हारीतने शिवलोकमें जानेका विचार किया और कुमारसे यह विचार कह सुनाया और कहा जिस दिन हम शिवलोकको जायँ उस दिन तुम शीघ्र ही यहांपर आना। परन्तु कुमारको उस दिन बड़ी गाढी नींद आई, और वे ठीक समयपर वहां न पहुँचकर देरमें पहुँचे, पश्चात् उस नियत समयके बीत जानेपर उन्होंने शीघ्र ही वहां पहुँचकर देखा कि योगीश्रेष्ठ हारीत अप्सराओंसे खेंचे जाते हुए रथपर सवार होकर आकाशमंडलमें कुछ दूरतक पहुँच गये हैं महर्षिने अपने प्यारे शिष्यको पिछला अनुराग दिखानेके लिये रथकी चालको रोका और आशीर्वाद देनेके लिये वप्पा कुमारको समीप उठनेके लिये कहा देखते ही देखते कुमारकी देह एक साथ बीश * हाथ बढगई परन्तु तो भी गुरुके निकट न पहुँच सके। तब मुनिने मुख फैलानेके लिये कहा तत्काल वप्पाने आज्ञाका पालन किया हारीतने उनके मुँहमें थूक दिया परन्तु अपनी समझके दोषसे कुमार एक अमूल्य वरको प्राप्त न कर सके उसकी घृणा और अवज्ञा करके मुख बंद करलेनेपर वह निष्ठीवन चरणोंपर गिरा, यदि कुमार घृणाके साथ गुरुजीके दिये हुए स्नेहोपहारका अपमान न करते तो निश्चय ही अमर होजाते, परन्तु यह उनके भाग्यमें न था, इस कारण अक्षय वर भी न मिल सका, यद्यपि वह

* ऐसे अनेक वृत्तान्त वप्पारावलके विषयमें सुने जाते हैं, कहते हैं कि उनके पहरनेका वस्त्र कुछ कम पांचसौ हाथ लंबा था, भगवती भवानीजीने जो तलवार इन्हें दी थी उसका वजन ३२ सेर था।

अमर न होसके तथापि उनका देह सर्व प्रकारके अस्त्र शस्त्रोंसे अभेद्य हो गया । यह भी उनके लिये साधारण सौभाग्यकी बात नहीं थी इस ओर महर्षि हारीत धीरे २ आकाशमण्डलको उठ गये और वह विमान दिखाई नहीं दिया ।

" जिस दिन कुमारपर भगवतूकी यह कृपा हुई, उसी दिनसे उनके भाग्याकाशमें चमक आगई, उसी दिनसे उन्होंने मूल मंत्रकी साधनाके कठोर कार्यक्षेत्रमें आनेकी प्रतिज्ञा की, कुमारने अपनी मातासे सुना था कि मैं चित्तोरके सूर्यवंशी राजाका भानज हूं, जो कि उस समय वहाँ राज करते थे, इस निकट सम्बन्धका वृत्तान्त जानकर यह कुमार अपना प्रयोजन सिद्ध करनेमें दूने उत्साहित होगये । चरवाहोंके आलसी-जीवनसे अत्यन्त घृणा उत्पन्न हो गई । " कुमार कितने एक साथियोंको लेकर गंभीर बनवासको छोड़कर वस्तीमें आगये । पहली बार वस्तीके दर्शन हुए । इससे पहिले उन्होंने नहीं देखा था कि नगरकी वस्तीका स्थान कैसा होता है । इस समय बस्तीवालों-का श्रेष्ठ उद्यम देखकर और भी उत्साहित हो गये । भाग्य बलवान होनेसे चन्द्रमा भी सन्मुख होजाता है उस निविड बनवास भूमिसे निकलनेके समय मार्गमें नाहरा मगरानामक गिरिकूट—* की तलटीसे वनमें प्रसिद्ध गोरखनाथ सिद्धके दर्शन हुए । गोरखनाथजी ने एक दुधारी तलवार कुमारको दी तलवारमें यह गुण था कि यदि मंत्र पढकर चलाई जाती तो पहाडके भी दो टुकडे हो जाते थे । कुमार बप्पाके सौभाग्यका मार्ग इससे पहिले निर्मल हो चुका था, उस समय जो कुछ विघ्न शेष थे वह भी इस सिद्धदत्त तलवारकी सहायतासे दूर होगये, अब तो आठो सिद्धि करतलगत हो गई । +

मौर्य वंशवाले भी प्रमारकुलकी शाखा हैं, जो इससे पहिले मालवके सिंहासन-पर विराजमान थे, और भारतके चक्रवर्ती राजा थे. जिस समय कुमार बप्पाने चित्तौरमें आगमन किया उस समय इस नगरमें मौर्य-वंशका मान नामक राजा राज करता था, महाराज मानने अपने आये हुए भानजेको भली भांतिसे आदर कर ग्रहण किया व अपने अधीनका सामन्त बनाय भरण पोषणके लिये थोडी भूमि दे दी । मौर्य महाराज मानसिंहके राजके समयका जो शिलालेख निकला है, उसके पढ़नेसे जाना जाता है

---

* उदयपुरके पूर्वमें जो पहाडी मर्ग है, उससे ७ मील दूर नाहरा मगरा अर्थात् व्याघ्रमेरु है ।

× राजपूत लोगोंसे ऐसा सुना है कि राणा अवतक उसी दुधारी तलवारकी पूजा भक्तिके साथ प्रति वर्ष किया करते हैं । टाडसाहबको राणाकुलके प्रधान भट्टलोगोंने यह वृत्तान्त सुनाया था । उन्होंने इस वृत्तान्तको कहनेके समय खड्ग शुद्धिका जो मंत्र उच्चारण किया था उसका मर्म यह है:-"गुरू गोरक्ष-नाथ, देवदेव; एक लिंग, तक्षक, महर्षि, हारीत और भगवती भवानीकी आज्ञासे आघात कर ।"

कि उस कालमें राजस्थानके बीच सामन्तप्रथा अधिकाईसे चल रही थी। राजपूत सामन्त गण बहुतसी भूमिकीर्तिको भोग करके मान राजाकी सहायताके लिये संग्रामभूमिमें आय शत्रुसे भि जाते थे, इससे पहिले महाराज मानको समस्त सामन्त गण बहुत मानते थे तथा महाराज भी उनसे विशेष प्रसन्न रहते थे, परन्तु जिस दिन कुमार बप्पा महाराज मानकी प्रीतिमयी आखोंमें पडा उसी दिनसे सामन्त लोगोंसे अनुराग करना छोड दिया, समस्त लोग समझ गये कि यह बप्पा ही इस अनर्थकी जड है, अतएव कुमारसे महा डाह करने लगे और कुछ बुरा करनेका यत्न सोचते रहे।

उसी समयमें एक विदेशिय शत्रुने आकर चित्तौरपुरीको घेर लिया, तब महाराजने सामन्तोंको शत्रुओंसे लडनेकी आज्ञा दी। परन्तु उन्होंने अपनी भूमिवृत्तिके पट्टे अत्यन्त दर्पके साथ दूर फेंक दिये, और कहा कि "महाराज अपने प्यारे सेनापतिको युद्धमें भेजें" कुमारने यह बातें सुनी परन्तु वह इससे कुछ भी भीत वा शंकित नहीं हुए, वरन दूने उत्साहसे उत्साहित होकर अकेले ही उस देशवैरी शत्रुके साथ संग्राम करनेको चले गये। विद्वेष करनेवाले सामन्तोंने अपनी २ भूमिकावृत्तिको त्याग कर तो दिया, परन्तु लोकलाजके मारे वह भी कुमारके साथ गये। कुमारके प्रचण्ड विक्रमको न सहन करके शत्रुगण हार गये। बप्पा कुमार शत्रुओंको जीतकर विजयी वेषसे चित्तौर में न आये वरन अपने पितृपुरुषोंकी राजधानी गजनी नगरमें चले गये। उस काल गजनी नगरमें एक म्लेच्छराजाका राज था, इस राजाका नाम सलीम कहते थे। बप्पाने उसको सिंहासनपरसे उतारा और उस गद्दीके ऊपर एक सूर्यवंशी सामन्तको स्थापित किया और अपनी सेनाको साथ ले चित्तौर आये, व उस ही समयमें अपने शत्रु सलीमकी बेटीसे विवाह किया।

डाहसे सताये हुए सर्दारगण राजमानसे अत्यन्त असंतुष्ट हो उसे छोडकर चित्तौरसे चले गये। राजाको अत्यंत दुःख हुआ। राजाने सामंतोंके बुलानेकी बारम्बार दूत भेजे परन्तु किसीसे कुछ न हुआ। रोषमें अन्धे हुए सामंत गण किसी भांतिसे सावधान न हुए। वरन उन्होंने गुरुकी आज्ञाको भी लंघन किया। जो दूत उनके पास गया था उन्होंने कहा कि "हमने महाराणाका 'नमक' खाया है, इस कारण एक वर्षतक बदला न लेंगे"। वे सामंतलोग अपने हृदयकी डाहका बदला लेनेके लिये एक योग्य सरदारकी तलाश करने लगे। जिस बप्पा कुमारसेनके हृदयमें यह मनोविकार उत्पन्न हुआ था; पश्चात् उसकी ही अनुपम शूरता और गुणावलीसे मोहित हो उनलोगोंने सन्मानके सहित उसको ही अपना सरदार बनाया। राजका लालच कैसा भयंकर है, इसकी मोहिनी मायासे मोहित होकर मनुष्यको हिता-हितका ज्ञान नहीं रहता। धर्म ज्ञान जाता रहता है और कृतज्ञताके मस्तकपर लात मारकर उपकारी मित्रका सत्यानाश करनेमें भी संकोच नहीं होता, दुराकांक्षी कुमार बप्पाने यही किया, जो मौर्यवंशीय राजा, कुमारका मामा था। जिसका अनु-

यह ही कुमारके लिये सौभाग्यका प्रधान द्वार हुआ; जो राजा कुमारके लिये अपने सामन्तोंका विरागभाजन हुआ; कुमार वप्पाने उस मामाके समस्त उपकारोंको भूलकर— छातीके आगे पत्थर रखकर उसको ही सिंहासनसे उतार दिया और उन विद्वेषयुक्त सामन्तोंकी सहायतासे चित्तौरका सिंहासन प्राप्त किया । भट्टकविगणोंने यहांपर वर्णन किया है कि:—"वप्पाने मौर्य राजाके समयसे चित्तौरको छीन लिया, और उस देशके 'मौर' अर्थात् मुकुट स्वरूप होगये । चित्तौरके सिंहासनपर बैठते ही सर्व साधारणकी सम्मतिसे "हिन्दू सूर्य" "राजगुरु" और "चक्वै" सार्वभौम यह तीन पदवी धारण कीं ।

महाराज वप्पाकी बहुतसी संतान थीं । उनमेंसे कुछ संतान तो अपने पितृपुरुषोंके प्राचीन राज सौराष्ट्र काठियावाड क्षेत्रमें चली गई, और समयके अनुसार महा पराक्रमशाली हुई, आईन "अकबरी" में देखा जाता है कि उनके मध्यमें पचास हजार वीर तो अकबरके समयमें अत्यन्त ही प्रभावशाली हो गये थे । वप्पाके दूसरे कुमारोंमेंसे पांच पुत्र मारवाड़ देशमें जा बसे वहां उनका गोहिल नाम हुआ, परन्तु थोड़े ही दिनोंमें निकाले जाकर वह लोग इस समय वल्लभीपुरके ऊजड़ मैदानमें अतिदीन भावसे समयको व्यतीत कर रहे हैं, आज वे लोग अपने पवित्र कुलगौरवको भूल कर अरबवालोंके साथ बनिज व्योपार करते हैं ।

महाराजाधिराज वप्पाके अंतिम जीवनका वर्णन सबसे अधिक अद्भुत है । उस अद्भु-त वृत्तान्तको गुप्त रखनेके लिये उनके जातिवालोंकी बहुत ही अभिलाषा रहती है । जिस समय महाराज वप्पाकी आयु पचास वर्षके लगभग हुई उस समय वे अपनी मातृभूमि संतान सन्तति और इष्ट मित्रोंको छोडकर खुरासान राज्यमें चले गये और उन देशोंको जीतकर वहांकी बहुतसी म्लेच्छस्त्रियोंसे विवाह किया उनके गर्भसे भी महाराजके बहुतसे पुत्र और कन्या हुई । *

पूरी एकसौ वर्षकी आयु पाकर वीरकेशरी महाराज वप्पाने परम धामको पयान किया । देलवाडा नरेशके पास एक प्राचीन ग्रंथ है, उसमें देखा जाता है कि महाराज वप्पाने इस्फनहानकन्धार, काश्मीर, ईराक, ईरान, तूरान, और काफरिस्तान आदि पश्चिम देशके राजाओंको पराजित करके उनकी बेटियोंसे विवाह किया, तथा अन्तमें तपस्वी लोगोंके समान रहकर मेरु पर्वतकी तलेटीमें अपने जीवनको व्यतीत किया था, कहते हैं कि महाराजने जीवित शरीरसे ही समाधि ली । उन सब स्त्रियोंके गर्भमें महाराज वप्पाके १३० पुत्र उत्पन्न हुए थे, जो इतिहासमें नौशेरा पठान कहलाये ।

---

* यह बात असत्य है, प्राचीन पुस्तक एकलिंग माहात्म्यसे ज्ञात होता है कि वप्पारावलजीने सम्वत् ८१० अर्थात् ७५४ में सन्यास लिया । मेवाडका इतिहास पृष्ठ ६ देखो ।

उनके एक २ पुत्रने एक २ वंशकी प्रतिष्ठा की थी, हिन्दू स्त्रियोंसे ९८ पुत्र जन्मे थे वे सब ही "अग्नि उपासी, सूर्यवंशी नामसे प्रसिद्ध हुए।"

भट्टग्रंथोंमें और भी एक विचित्र वृत्तान्त पाया जाता है, कहते हैं कि महाराजके परम धाम सिधारनेपर मुसलमान तो यह कहते थे कि हम देहको समाधि देंगे, और हिन्दू कहते थे कि हम दाह करेंगे। इस कारण दोनों पक्षमें घोर विवाद हो रहा था, दोनों अपनी२ ओरको खेंचते थे, वाद बिवादमें कोई नहीं हारा, अतएव इस दुरूह प्रश्नकी मीमांसा न हुई, इस प्रकार झगडा करते २ उन्होंने महाराजके शरीरपर ढका हुआ कपड़ा उघाड़कर देखा, कि उस नाशवान पंच तत्त्व-मय देहके बदले वहांपर फूले हुए कई एक कमल जिनका रंग श्वेत था विराजमान हो रहे हैं। वहांसे उन कमलफूलोंको उखाडकर मान सरोवरमें जमा दिया गया। फारस देशके नोशेरवां बादशाहके सम्बन्धमें भी ठीक ऐसा ही वृत्तान्त सुना जाता है।

मेवाडके राजवंशके आदि प्रतिष्ठापक बीरवर बप्पा रावलका संक्षिप्त जीवन-चरित्र यहाँपर लिखा गया है, इस समय हम ठीक २ यह लिखेंगे कि वह कौनसे समयमें हुए थे। पहले ही लिखा जा चुका है कि महाराज शिलादित्यके राजत्व काल सम्वत् २०५ में बल्लभीपुर पतन हुआ और उनकी नौवीं पीढीमें बप्पा रावलका जन्म हुआ परन्तु आश्चर्यकी बात है, कि राणाके महलोंमें जो भट्टग्रंथ रक्खे हुए हैं, उन सबमें देखा जाता है कि संवत् १९१ सन् १३५ ई० में बप्पा रावलने जन्म लिया था। इस और एक शिलालिपिमें * खुदा हुआ है, कि सम्बत् ७७० सन् ७१४ में चित्तौरके मध्य मौरमान राजाका आधिकार था राणाके राजभवनमें भट्टग्रंथ रक्खे हैं, वे स्पष्टाक्षरसे प्रकाशित करते हैं, कि बप्पा-रावल महाराजके भानजे थे। पन्द्रह वर्षकी उमरमें बप्पा रावलके मामाने भानजेको अपने सामन्तोंमें नियत किया था। महाराज बप्पाने सरदार लोगोंकी सहायतासे महा-राज मानको गद्दीसे उतार चित्तौरपर अधिकार किया। अब इन अमलमतोंमेंसे किसको ठीक समझकर ग्रहण किया जावे? इसके ग्रहण करनेसे यथार्थ समय कैसे हाथ आवेगा? यदि महाराज बप्पाको मौर राजाका भानजा और उसका समकालीन निर्णय किया जावे तो भी ठीक नहीं, फिर क्या गहिलोत कुलातिलक वीरकेशरी महा-

---

* चित्तौरके प्रसिद्ध मानसरोवरके किनारे एक विजय स्तम्भसे यह शिलालिपि निकली थी इसमें एक जगह लिखा है कि एक समय महाराज माननगरमें घूम रहे थे इसी समय एक अतिबूढा आदमी उनके सामनेसे धीरे २ चला गया, बूढेको देखकर मानसिंहके हृदयमें एक गंभीर भावका उदय हुआ। उन्होंने विचारा मनुष्यका जीवन क्षण भंगुर है, कमलकी पंखडी पर लगे जलकी बूँदकी नाईं चंचल है राज और धन रत्न सबही क्षण भंगुर हैं। इस प्रकारसे अनेक सोच विचार कर अपना नाम अक्षय रखनेके लिये इस विशाल सरोवरकी प्रतिष्ठा की, इस सरोवरसे महाराज मानकी विशाल कीर्ति चली जाती है।

राज बप्पाका वृत्तान्त अलीक और कल्पना ही समझा जायगा ? सौराष्ट्रमें सोमनाथके ❀ मंदिरमें एक शिलालिपि मिली है उससे यह सन्देह दूर हो जाता है, उस शिला खण्डमें वल्लभीनामक एक स्वतंत्र सम्वत्के विषयमें कुछ लिखा है, यह सम्वत् विक्रम सम्वत्के ३७५ वर्ष पीछे प्रचलित हुआ है।

ऊपर कहचुके हैं कि २०५ सम्वत्में, वल्लभीपुर विध्वंस हुआ था, अब निश्चय हो गया कि संवत् २०५ यही वल्लभी संवत् था, और यह संवत् वैक्रमीय संवत्के ३७५ वर्ष पीछे आरंभ हुआ तब ३७५ में २०५ जोडनेसे ५८० विक्रम संवत् [अथवा सन् ५२४ ई०] में वल्लभीपुर म्लेच्छोंने विध्वंस किया।

इधर मौर्य राजाओंके शासन संबन्धी शिलालेखसे विदित होता है कि बप्पाका जन्म ७७० संवत्में हुआ अब यदि ७७० मेंसे ५८० घटा दिये जांय तो १९० बचते हैं, केवल इसमें एक ही वर्ष जोड देनेसे भट्टकवियोंका बताया समय ठीक हो जाता है, भट्टोंने लिखा है कि संवत् १९१ में बप्पाका जन्म हुआ था अब यह स्पष्ट है कि हमारे निरूपित किये समयमें केवल एक वर्षका अन्तर रहजाता है ऐसी अवस्थामें यही मानना होगा कि एक वर्षकी न्यूनाधिकता कोई वस्तु नहीं है।

सिंहासनपर बैठनेके समय महाराज बप्पाकी आयु १५ वर्षकी थी परन्तु यह अभी दिखाया जा चुका है कि उसका जन्म सम्वत् मौर्य शिला लेखसे एक वर्ष कम है अर्थात् सम्वत् ७६९ में उसका जन्म हुआ था, इस प्रकार सम्वत् ७६९×१५०७८४ अथवा [७२८ ई०] में उसने चित्तौरका सिंहासन प्राप्त किया, और इसी सम्वत्से❀ गिह्लोटोंका आधिपत्य प्रारंभ हुआ, इस समयसे लेकर ११०० वर्षतक ५९ राजा मेवाड़के सिंहासन पर बैठे।

❀ इस बातका निश्चय करनेके लिये टाडसाहबने बहुत उद्योग किया, अन्तमें इस विषयमें उन्होंने सफलता प्राप्त की, शिलालिपि ताम्रपत्र प्राचीन मुद्रा, खोदित स्तम्बादि मेवाडके सम्बन्धमें जो उपकरण जहां जहां मिल सके, वहां २ जाकर परिश्रमके साथ उन्होंने उनको देखा, और उनके द्वारा सत्य वृत्तान्त जानना चाहा इस प्रकार खोज करते २ छः वर्ष बीत गये, पर फल कुछ न हुआ, इसी सन्देह और चिन्तामें आखिर वे उदयपुरसे सौराष्ट्र देशको चले गये उन्होंने सोचा कि गिह्लोट कुलके उक्त प्राचीन स्थानमें भी चलकर एक बार अनुसन्धान करना चाहिये, भाग्यसे वहां जानेपर उनका मनोरथ और परिश्रम सफल हुआ, बहुत अनुसन्धानके पीछे सोमनाथजीके प्रसिद्ध मंदिरमें उन्होंने वह शिलालिपि पाई जिसका वृत्तान्त ऊपर लिखा है। उस शिलालेखमें एक शिवसिंह सम्वत्का और भी लेख पाया जाता है यह सम्वत् विक्रमके११६९ सम्वत्में चला था।

❀ गिह्लोट कुलके १५ राजा इस प्रकारसे लिखे हैं--ग्रहादित्य, भोज, महेन्द्र, नागादित्य, शैल, (बप्पा), अपराजित, महेन्द्र, खलभोज, खुमान, भर्तृपाद, सिंजी, श्रीललित, नरवाहन, शालिवाहन, शक्तिकुमार।

गिह्लौटकुलतिलक वीर श्रेष्ठ बप्पा रावलकी उत्पत्तिका ठीक समय निरूपण किया गया और उसकी प्राचीनता प्रमाणित होगई, यह थोडे हर्षकी बात नहीं है कि वह अपने समयके पृथिवीके अन्यान्य वीरोंसे पहले प्रगट हुआ था उस समय कालोविंजका वीर-वंश पश्चिमी देशमें प्रचण्ड बल प्राप्त करके धीरे २ अपना विराट् मस्तक उठा रहा था, और खलीफा बलीदकी विजयिनी सेनायें इब्री नदीके किनारे अपने हरे रंगकी पताका उडाकर बडी वीरतासे समस्त यूरूप देशको कम्पायमान कर रही थीं।

मेवाड राज्यमें आयुतपुरनामक एक प्राचीन समृद्धशाली नगर था, वह नगर इस समय बहुत टूटी फूटी तथा बुरी अवस्थामें है, असभ्य भील और जंगली जन्तु अब वहां निवास करते हैं, बहुत लोग अब इस नगरका नाम भी नहीं जानते, इस आयतपुरके खंडहरोंमें एक शिलालिपि पाई गई है, उसमें महाराज शक्तिकुमारतक मेवाडके चौदह राजाओंका धारावाहिक वंश विवरण लिखा है उक्त शिलालिपिमें वीरकेशरी महाराज बप्पाका भी वर्णन शैल नामसे किया गया है। भट्टग्रन्थ और राजपरिवारकी पत्रिकाके साथ उक्ति शिलालिपिकी सब बातोंमें ही प्रायः एकता है। केवल उसमें एक ही नाम अधिक लिखा है।

ह्यूम साहब कहते हैं कि " यद्यपि कविकुल अपनी कल्पनाके बलसे यथार्थ इतिहासको भी क्लिष्ट कर देते हैं। यद्यपि वे अपनी इच्छाके वशसे सत्य वार्ताको भी अद्भुत अलंकारोंसे सजा देते हैं। परन्तु जब कि वही प्राचीन जगतके अकेले इतिहासकार हैं, तब उनके गहरे रँगे हुए वृत्तान्तके भीतर यथार्थ वृत्तान्त भी सदा ही मूलभावसे विराजमान रहता है। " उनका यह ज्ञानगर्भ वाक्य इस स्थानपर भली भांतिसे चरितार्थ होता है। कारण कि निर्जन और विध्वंस हुए आइतपुरके खँडरके साथ जिनके नामकी सूची धीरे २ मनुष्योंकी आंखसे लोप हुई जाती थी मेवाडके भट्टकुलके मोहनकारी सघन ढकनेमें वह समस्त नाम गुप्त भावसे ज्योंके त्यों विराजमान हैं, वीरवर बप्पाके समयमें ही मुसलमान लोग सिन्धुनदके पार हो सबसे पहिले भारतभूमिमें आये थे। हिज्री सम्वत् ९५ में खलीफा वलीदका सेनापति मुहम्मद बिनकासिम सिन्धुदेशको जीतकर भागीरथी गंगाजीके किनारेतक चला आया था। यह वृत्तान्त अरबवालोंकी तवारीखोंमें लिखा हुआ है। यद्यपि एलमेकिनके ग्रन्थमें मुसलमानोंके द्वारा सिन्धराजपर चढाई करनेका वृत्तान्त पाया जाता है तथापि उस समय जो अवस्था भारतवर्षकी थी उसका विचार करनेसे भली भांति विदित हो जायगा कि उस काल भारतवर्षके अनेक देश विदेशीय शत्रुकुलके आक्रमणसे तित्तर बित्तर होगये थे, अजमेरके राजा माणकरायका राज्य ईस्वी आठवीं शताब्दीके मध्यमें शत्रुओंके द्वारा उजाडा गया था, कहते हैं कि वह शत्रुगण नावपर सवार होकर आये और अंजननामक स्थानमें उतरे थे। यद्यपि उस आक्रमणकारीको कोई कासम समझनेमें सन्देह करे तो

सिन्धुराज दाहिरका वृत्तान्तपाठ करनेसे वह सन्देह दूर हो जायगा * अब्दुलफजल कहता है कि हिज्री ९५ में (सन् ७१३ ई०) में कासिमने दाहिर राजाको मारा और राज्यको विध्वंस किया था राजाका बेटा चित्तौरसे भागकर मौर्यराजाके पास चला गया ।

बप्पासे लेकर शक्तिकुमारके बीचतक (दो शताब्दियोंमें) चित्तौरके सिंहासनपर दश राजा बैठे, इनमें चार बड़े वीर और प्रतापी निकले इन दोसौ वर्षोंके बीचमें जो चार धुरन्धर राजा उत्पन्न हुए उनको लेकर मानो चार प्रधान युगकी अवतारणा हुई है, पहले कनकसेन सन् १४४ ई० में, दूसरे शिलादित्य सन् ५२५ में इन्हींके समय वल्लभीपुर विध्वंस हुआ था तीसरे वप्पा सन् ७२८ में, चौथे शक्तिकुमार सन् ९६८ में ।

तीसरा अध्याय ३.

बप्पा और समर सिंहके मध्यवर्ती राजाओंका वृत्तान्तः–वप्पाकी सन्तान सन्ततिः–अरबवालोंका भारतवर्षपर चढाई करनाः–चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये जिन हिन्दूराजाओंने खड्ग धारण किया था उनका संक्षेप वृत्तान्त इससे पहिले वर्णन हो चुका है कि गिह्लोट कुलतिलक महाराज वप्पा सम्वत् ७८४ सन् ७२९ में चित्तौरके सिंहासनपर बैठे थे । वह जिस दिन चित्तौरके राज्यको छोडकर ईरानको चले गये उस दिनसे लेकर महाराज समरसिंहके राजतक भट्टग्रन्थोंके वृत्तान्तसे सामर्थ्यके अनुसार ऐतिहासिक वृत्तान्तसंग्रह किया जाता है, उस समयमें सारे मेवाड ही क्या वरन सारी भारतभूमिमें एक नवीन युगका अवतार हुआ था । जिस दिन प्रचंड मुसलमान वीरोंके गगनविहारी भैरवसिंहनादसे आर्य लक्ष्मी चंचल हुई भारतवर्षका राजमुकुट भारतवर्षीय आर्यराजाओंके मस्तकसे उतारा जाकर यवनोंके शिरपर स्थापित हुआ इस बातको कौन स्वीकार नहीं करेगा कि उस दुर्दिनके मध्य सम्पूर्ण भारतवर्षमें एक नवीन युगका संचार हुआ । वीरवर वप्पा रावलका ईरानमें जाना और समरसिंहका सिंहासनपर बैठना इस अन्तरमें चार शताब्दी बीत गई, इन चारसौ वर्षके बीच मेवाडके सिंहासनपर सब अठारह राजा बैठे थे । उनके राज्यका ठीक वर्णन भट्टलोगोंके काव्यग्रंथोंमें यद्यपि नहीं पाया जाता तथापि जो कुछ पाया जाता है, उससे यथार्थ

---

* इस अवसरमें मुहम्मदबिनकासिम चित्तौरकी ओर बढा था वहां पहुँचनेपर वप्पाने उसे पराजित किया ।

१--१ गोहिल २ भोज ३ शील ४ खलभोज ५ भर्तृ ६ आधिसिंहजी ७ शुभायकजी ८ खुमानजी ९ अल्लटजी १० नरवाहनजी ।

ज्ञान होता है कि वह राजा महाराज बप्पाके योग्य वंशधर थे। उनकी अनुपम कीर्ति-कथा आज भी राजस्थानेके अनेक गिरि गात्रोंमें अक्षय भावसे विराजमान हो रही है।

आयतपुरकी शिलालिपिकी सहायतासे इससे पहिले प्रतिपादित हो गया है कि महाराज बप्पा और समरसिंहके बीचमें शक्तिकुमार नामक एक राजा सम्वत् १०२४ (सन् ९६८ इस्वीमें) मेवाडका अधिकारी था, इस ओर एक पुराने विश्वसनीय जैनखरेंसे यह मालूम होता है कि महाराज शक्तिकुमारसे चार पीढी पहिले सम्वत्९२२सन् (८६६ ई०)में और एक प्रतिष्ठावान राजा चित्तौरके सिंहासनपर विराजमान था, जिसका नाम अल्लटजी या खुमानरासा नामक एक पुराने काव्यग्रंथमें देखा जाता है कि बप्पा और समरसिंहके मध्यवर्ती कालमें मेवाड राज्यपर एक वार मुसलमान लोगोंने चढाई की थी। खुमान राणाके राज्यमें यह चढ़ाई हुई थी। महाराज खुमानने सन् ८१२ ई० से लेकर सन् ८३६ ई० तक राज किया था।

भारतका इतिहास इस समय घोर अंधकारसे ढका हुआ था। अतएव उस अंधकारमय अतीतकालके गर्भमें प्रवेश करके भारतके ऐतिहासिक वृत्तान्तका उद्धार करना कठिन कार्य है। तथापि भट्टकवि, आईनअकबरी और फरिस्ता आदि जो ग्रंथ इस अंधकारमें साधारण उजालेके समान विराजमान हो रहे हैं, हम उनकी ही सहायतासे अपनी सामर्थ्यके अनुसार मेवाड़के इतिहासका उद्धार करेंगे अतएव इस समय पहिले महाराज बप्पाकी सन्तान सन्ततिका वर्णन करते हैं।

पहिले ही कहाँ जा चुका है कि गिह्लोटकुलमें सर्वसमेत चौबीस शाखायें हैं। इन चौबीस शाखाओंमेंसे कुछ शाखायें महाराज बप्पासे उत्पन्न हुई। चित्तौर जीत लेनेके कुछ दिन पीछे ही महाराज बप्पा सूरतदेशमें गये सूरतदेशके निकट जो बंदरद्वीप है उस कालमें वहांपर इस्फगुल * नामक राजा राज करता था इस राजाके एक बेटी थी महाराज बप्पाने उसके साथ विवाह किया और उसको लेकर चित्तौरमें आये। उस समय देवबन्दरमें बाणमाता नामक एक मूर्ति थी। नवीन दुलहनके साथ महाराज बप्पाजी उस बाणमाताकी पवित्र प्रतिमाको भी साथ ही राजधानीमें ले आये। उन्होंने उस पवित्र मूर्त्तिको जिस मन्दिरमें स्थापन किया था, आजतक भी वह मूर्ति वहांपर वैसे ही विराजमान हो रही है। भगवती बाणमाता आज भी मेवाड़के इष्टदेव भगवान् एकलिंगके साथ समान पूजाको प्राप्त करती हैं, देवबन्दरके राजा इस्फगुलकी बेटीके गर्भसे महाराज बप्पाके अपराजित नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। इसके पहिले महाराजने द्वारकाके निकट बसे हुए कालीवाव नगरके परमार राजाकी बेटीसे भी विवाह किया था, उसके गर्भसे असिल नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जो सबसे

---

* ऐसा वर्णन है कि चौलराज्यमें इस्फगुलका अधिकार था। बहुतसे लोग इसको बाणराजाका पिता कहते हैं।

बडा था । परन्तु पिताके राज्यको छोड कर मामाके यहां रहता था इस कारण चित्तौरका राजमुकुट इसको प्राप्त नहीं हुआ, छोटा सौतेला भाई अपराजित ही राजसिंहासनपर बैठा × असील यद्यपि पिताके राज्यको प्राप्त नहीं कर सका, परन्तु उसने सौराष्ट्र देशमें एक राज्य स्थापन करके वहां एक शाखाकुलकी प्रतिष्ठा की, तदनुसार उसके वंशवाले " असिल गहिलोत " नामसे पुकारे गये, समयके अनुसार वह ऐसे प्रतापी हो गये कि मुगलकुलतिलक बादशाह अकबरके समयमें पचास हजार सेनाको संग्राममें सजा लाये थे । अपराजितके राज्यसमयका हमें कोई वृतान्त ऐसा नहीं मिला कि जिसका वर्णन किया जाता । अपराजितके दो पुत्र हुए खलभोज और नन्दकुमार । उत्तराधिकारकी प्राचीन विधिके अनुसार बड़ा खलभोज ही सिंहासनपर बैठा था, नागदाकी उपत्यका भूमिमें टाडसाहबने एक शिलालिपि निकाली उस शिलालिपिसे जो वृत्तान्त प्रगट होता है उसके द्वारा स्पष्ट जाना जाता है कि महाराज अपराजित एक वीर्यवान् राजा था । छोटे नन्दकुमारने दोदावंशके राजा भीमसेनका संहार करके दक्षिणमें बसे हुए देवगढ़ नामक राज्यको हस्तगत किया था !

महाराज खलभोज × के परलोक चले जानेपर प्रसिद्ध महाराज खुमान चित्तौरके सिंहासनपर बैठे । मेवाड़के इतिहासमें महाराज खुमान अत्यन्त प्रसिद्ध हैं, जिनकी कीर्ति भी अधिकतासे फैली हुई है । महाराज खुमानके सिंहासनपर बैठते ही मुसलमानोंने राज्यपर चढाई की । स्वतंत्रकी लीलाभूमि पवित्र चित्तौरपुरी बलशाली यवनोंसे घिर गई । यह अवस्था देखकर उस कालके क्षत्री राजा अपनी २ सेनाको साथ ले चित्तौरकी रक्षा करनेको मैदानमें आ गये । उनकी सहायतासे महाराज खुमानने कठोर शत्रुओंके प्रचंड विक्रमको जैसी अद्भुत वीरतासे रोक दिया था उसका वर्णन भली भांतिसे खुमानरासेमें लिखा हुआ है । कविकी जीवन्त कवित्वशक्तिके प्रभावसे उस समयके वृत्तान्तकी मूर्ति अत्यन्त ही तेजस्विनी हो गई है । इस ग्रंथके पाठ करनेसे ऐसा ज्ञात होता है कि मानो सामने ही संग्राम हो रहा है । कहते हैं कि प्रचंड शत्रुदलने चित्तौरपुरीको घेरकर गहिलोट राजा खुमानसे कर मांगा इस बातको सुनकर महाराजको महाक्रोध आया, उनके रोम २ से मानो चिनगारियें निकलने लगीं उन्होंने दर्प और निरादरके साथ म्लेच्छोंकी इस घिनौनी बातको सुनी अनसुनी करके प्रचंड निर्घोषसे रणसिंगा बजवा दिया । तत्काल ही वीरगण तैयार होकर घोर उत्साहके साथ शत्रुओंसे लड़नेके लिये संग्राममें आये । वीरवर बप्पा रावलकी "हेममंडित लोहित विजय वैजयन्ती" को

× जिस प्राचीन लेखसे यह वृत्तान्त लिखा गया है उसमें एक जगह लिखा है कि असिलने अपने नामके अनुसार एक किलेका नाम असीलगढ रक्खा था असीलके पुत्रका नाम विजयपाल था, विजयपाल देवीवंशीय लोगोंके हाथसे कम्वे राज्यके अधिकार पानेकी चेष्टा करनेके समयमें मारा गया ।

× खलभोजका दूसरा नाम कर्ण था । इसने ही महर्षि हारीतके आश्रममें भगवान् एकलिंगके पवित्र मंदिरकी प्रतिष्ठा की थी ।

गर्वसहित उठाकर क्षत्रियोंकी सेना म्लेच्छोंके साथ घोर संग्राम करने लगी। मुसलमानोंने बुरे मुहूर्तमें चित्तौरपुरीको घेरा था, बुरे दिन उन्होंने गर्वके मदसे मतवाले होकर महाराज खुमानसे कर मांगा था। आज उन्होंने अपने इस अपमान करनेका फल भली भांतिसे पा लिया। क्षत्रियोंने ऐसी बहादुरी दिखाई कि बहुतसे मुसलमान खेत रहे जो बचे वह अपने प्राणोंको लेकर इधर उधर भाग गये। परन्तु तो भी उनका पीछा न छुटा विजयी खुमानने पीछा करके उनके सेनापति महमूदको पकड लिया और उसे चित्तौरमें ले आये परन्तु यह महमूद कौन सा मुसलमान वीर था? इस समरसे दो शताब्दी पीछे जो प्रचंड मुसलमान वीर गजनीके पहाडी देशसे भारतवर्षपर चढ आया था, उसके नामके साथ इसके नामका मेल होता है, तथापि क्या एक नाम एक ही आदमीका हो सकता है? इस प्रश्नका उत्तर देनेके लिये भारतवर्षके साथ अरबदेशके उस समयका समय निर्णय किया जाता है। किस बुरे क्षणमें भारतवर्षके लाल जवाहर विदेशियोंकी खटकती आँखोंसे देखे गये, इस धन रत्नके लोभसे यह लोग यमदूतोंका भेष बनाकर भारतवर्षमें आये और घोर मूर्ति धारण कर भारतके मालखजानेको लूटने लगे। भारतसंतानगणको इन्होंने बडी २ कठोर पीडा दी है—भारतके नगर ग्रामोंका सत्यानाश कर डाला है जिस समयमें खलीफा उमर बुगदादके सिंहासनपर विराजमान था, उस समयमें ही मुसलमान लोग सबसे पहिले भारतवर्षमें आये। उस समय वाणिज्यके लिये भारतके दो स्थान विख्यात थे, गुर्जर और सिन्धुराज। इन दोनोंमें सम्पत्तिशाली राज्योंके सौदागरी मालको अधिकारमें करनेके लिये खलीफाउमरने टाइग्रेसनदके किनारेपर बसोरा शहर बनाया। भारतके बनज व्योपारकी पूरी उन्नति देखकर उसकी दुरभिलाषा धीरे २ बढती ही गई, सौदागरी मालके बदलेसे वह दुरभिलाषा पूरी न हुई इस सुवर्णकी उत्पन्न करनेवाली भूमिमें बडे मोलके रत्न और बनज व्योपारकी सामग्री किस प्रकारसे उत्पन्न होती है उसको देखनेके लिये अब्बुलआयस नामक सेनापतिके साथ एक बडी भारी सेना भारतवर्षकी ओरको भेजी गई। अब्बुलआयस अपनी सेनाको लेकर सिन्धुराज्यमें आया। परन्तु तबतक कभी भारतवासियोंका वीर विक्रम शांत नहीं हुआ था म्लेच्छोंके दुष्टपन करनेसे अल्पकालमें ही आरोर नामक स्थानमें आर्योंके विक्रमकी आग प्रचण्ड तेजसे सुलग उठी। आयस उस आगमें तिनकेके समान जल गया उसकी आशा और प्यास एक ही साथ बुझ गई परन्तु आयसके मारे जानेसे कहीं खलीफाकी दुराशा मिट सकती थी? उमरके मरनेपर खलीफा उसमानगद्दीपर बैठा और गद्दीपर बैठते ही भारतवर्षकी भीतरी परीक्षा करनेके लिये दूत भेजा और आप भी चढाई करने-

के लिये बडी भारी सेनाको सजाने लगा, परन्तु उस मानका अरमान भी दिलका दिलमें ही रह गया । कुछ समयके बीतनेपर जब खलीफा अलीबुगदाद सिंहासनपर बैठा तब उसके सेनापतियोंने सिंधुदेशको जीता था, परन्तु वह सेनापति भी बहुत दिन-तक इस देशपर अपना अधिकार नहीं कर सके । खलीफाके मरनेपर उसपर ऐसी आपत्तियें आ पड़ीं कि विवश होकर भारतवर्षको छोडना पडा तदुपरान्त खलीफा अब्बुलमलिक और खुरासानके बादशाह इजीदके समयमें भी इस प्रकारसे भारतवर्ष-के जीतनेकी तयारियें हुई थीं, परन्तु वह अपनी सब तयारियोंसे वंचित रहा । इस प्रकारसे कुछ काल बीत गया, तब अवश्य होनहार लेखके अनुसार भारतकी कठोर भवितव्यताका समय धीरे २ भारतकी ओरको पांव बढाने लगा । इन बातों-के पीछे खलीफा वलीद पिताके सिंहासनपर बैठा, राज्यको पाते ही विशाल सेना-दलको सजाकर वह भारतवर्षपर चढ धाया । उस प्रचण्ड चढाईको कोई भी नहीं रोक सका क्रमसे सिन्धुराज्य और निकटके कई स्थान खलीफाने ले लिये । कहते हैं कि गंगाके पश्चिमी किनारोंपर बसे हुए देशोंके राजालोग भी विजयी वलीदके प्रचण्ड विक्रमसे हार कर अपना छुटकारा करानेके लिये कर देने लगे । मुसलमान वीरों-की इस समय शबबरात हो रही थी । कारण कि उस समय उनके विक्रमकी आग जिस तेजीसे जल रही थी उसको बुझानेके लिये बहुतसे राजा तइयार हुए और पतंगके समान जल गये, उस वीरता और उत्साहके वृत्तान्तका पाठ करनेसे हृदय धडक जाता है । अधिक क्या कहें उस काल एक साथ ही पूर्व और पश्चिम मंडलके दो विशाल राज्य मुसलमानोंके प्रचण्ड विक्रमसे विध्वंस हो गये थे । इस ओर सिन्धुनदके सैकतमें बसते हुए देवलाधिपति दाहिरराज्यकी अवनतिके साथ ही भारतवर्षके सत्या-नाश होनेकी सूचना हुई, उधर वीरवर रडरिक सम्राट्ने अपने विस्तारित अन्दलुसका राज्य और गथराजकुल अंत किया ।

यह दो दो भयानक घटना मुसलमानोंके विक्रमका अक्षय और दृढ नमूना दिखा-कर संसारके इतिहासमें रुधिरके अक्षरोंसे सदाके लिये लिखी हुई रहेंगी ।

खलीफा वलीदके सेनापति मुहम्मद बिनकासिमने ९९ हिजरी (सन् ७१८ ईस्वी) के प्रारम्भमें ही भारतभूमिमें आकर सिन्धुके राजा दाहिरके राज्यपर चढाई की । म्लेच्छ वीरोंके कराल ग्राससे देशकी रक्षा करनेके लिये दाहिरराजमें घोर संग्राम किया । परन्तु वह किसी प्रकारसे देशकी रक्षा न कर सका । उस मुसल-मान सेनापतिके पंजेमें फँसकर उस राजाको अपना राज्य धन, वीर गौरव वरन प्राणोंतककी आहुति देनी पड़ी थी । विजयी बिनकासिमने जय और लूटकी

सामग्रीके साथ क्षत्रियराज्यकी दो लावण्यमयी कन्याओंको भी खलीफाके पास भेंटकी भांति भेजा परन्तु इन दोनो वीर बालाओंसे ही बिनकासिमका नाश हुआ। आईन अकबरी और फरिश्ता इतिहासमें यह लिखा है कि जब वह दोनो क्षत्रियकुमारी दमिश्क नगरमें पहुंचीं तो खलीफाने उनके रूप लावण्यकी बड़ी प्रशंसा सुनी उसका हृदय जो कि विजयकी प्राप्तिसे फूल रहा था दूना फूल गया। उन दोनो सुन्दरियोंको अनुपम लावण्यराशिको भोग करनेके लिये उसके हृदयमें पापकी प्यास उत्पन्न हुई। विहारभवनमें आकर खलीफाने बड़ी राजकुमारीको अपने सामने लानेका हुक्म दिया, शीघ्र ही आज्ञाका पालन हुआ क्षत्रियकुलकी कमलिनी कामसे उन्मत्त हुए हाथीके समान निर्दयी यवनके सामने लाई गई।

सहायरहित–निराश्रय–अनाथा राजपूतबाला म्लेच्छकी विलास भोग होनेके लिये कठोर स्थानमें भेजी गई, कौन रक्षा करे? सिन्धुराज दाहिरके पवित्र कुलको अनन्त कलंकसे कौन बचावे? सत्यानाश हुआ ही चाहता है–राजपूतोंका सम्मान अभिमान आज सब जाया ही चाहता है। बडी राजकुमारीने अपने सतीत्व (धर्म) रत्नकी रक्षा करनेका और कोई उपाय न देखकर चतुराईसे काम लिया। खलीफाके सामने आते ही वह रोने लगी और कहा, "कि साहन्शाह सलाम! आप मुझको न छुएँ यह जिस्म आपके दस्त मुवारकसे छुआ जानेके काबिल नहीं है, नालायक कासिमने जबरदस्ती करके पहिले ही हम दोनोकी इज्जत ले ली है" इस अद्भुत बातको सुनकर खलीफा आगबबूला हो गया, उसके रुओंसे चिनगारियां निकलने लगीं, उसने शीघ्रतासे कासिमके लिये कठोर दंडकी आज्ञा दी "कासिमको जीता हुआ ही दुर्गन्धवाली कच्ची खालमें भरवा कर यहांपर ले आओ" बहुत जल्दी बादशाहकी आज्ञाका पालन हुआ। हतभाग्य कासिमने खलीफाके क्रोधाग्निमें पडकर अपनी प्रतिष्ठा और जान दोनोको खो दिया, पवित्र हृदयवाली राजपूतसतीने चतुराईस अपनी पवित्रताको बचाया चक्रवर्ती यवनराजा इस भेदको नहीं जान सका।

इतिहासग्रंथोंमें इसका कोई वर्णन नहीं पाया जाता है कि उपरोक्त घटनाके पीछे मुसलमानोंने भारतमें आकर हिंदूराज्यको अपने अधिकारमें किया। केवल इतना ही पाया जाता है कि वलीदके पीछे मनसूरके राज्यसमयमें उसका सेनापति इजीद जब बाद हो गया तो सम्राट्की क्रोधाग्निसे अपनी रक्षा करनेके लिये उसका बेटा सिन्धुदेशको भाग गया यह बहुत ही साधारण बात है। अतएव इसको ढूंड भाल करनेसे कोई लाभ नहीं। जिस समय अलमनसूर स्वयं खलीफा नहीं किन्तु खलीफा अब्बासका एलची था

उस समय सिन्धुराज्य और भारतके अन्यान्य पश्चिमीराज्य उसके अधिकारमें थे ❀उसके ही समयमें वीरवर बप्पारावल अपने देशको छोडकर ईगनको गये थे।

गहिलोट राजा और मुसलमान बादशाहोंकी एक संक्षिप्त सूची यहां लिखी जाती है जो कि एक ही समयमें हुए थे।

❀ गिह्लोट.	राजका समय.		मुसलमान राजा.	राज्यका समय.	
	संवत्	सन् ई.	बुगदादके खली०	हिजरी.	सन् ई.
बप्पाका जन्म	७६९	७१३	वलीद (११ वां)	८६से९६ तक	७०५से७१५
चित्तौर अधिकार	७८४	७२८	दूसराउमर (१३वां	९९०से१०२	७१८से७२१
मेवाड शासन	,,	,,			
चित्तौरत्याग	८२०	७६४	हसन (१५ वां)	१०४से१२५	७२३से७४२
अपराजित	,,	,,	मनसूर (२१ वां)	१३६से१५८	७५४से७७५
खलभोज	,,	,,			
खुमान	८६८ से ८९२तक	८१२ से ८३६तक	हारूंरशीद(२४वां)	१७०से१९३	७८६से८०९
भर्तृभाट	,,	,,	मामून (२६ वां)	१९८से२१८	८१३से८३३
उल्लुट	,,	,,			
नरवाहन	,,	,,			
शालिवाहन	,,	,,	गजनीके नृपाति.		
शक्तिकुमार	१०२४	९६८	अलप्तगीं.	३५०	९५७
अम्बाप्रसाद	,,	,,			
नरवर्म	,,	,,	सुबुक्तगीं.	३६७	९७७
यशोवर्म	,,	,,	महमूद.	३८७से४१८	९९७से१०२७

भुवनविदित नरपति शिरमौर शार्लिमानके समकालीन खलीफा हारूंरशीदने अपने पुत्रोंमें राज बांटनेके समय दूसरे पुत्र अलमामूनको, खुरासान, जबूलिस्तान, काबुल सिंधु और भारतवर्ष दे दिया था, पुनः खलीफाके मरनेके कुछ दिन पीछे मामूनने अपने बडे भाईको गद्दीसे उतारा और सन् ८१३ ई० में आप खलीफा बन बैठा, मामूनने ८३३ ई० तक राज भोगा इसके शासनमें महाराज खुमान चित्तौरके सिंहासनपर विराजमान थे उदयपुरके राजभवनमें जो भट्टग्रंथ रक्खे हैं उनमें देखा जाता है कि खुरासानाधिपति महमदने जबूलिस्तानसे आकर चित्तौरपर चढाई की, इस चढाईका जो समय निरूपित हुआ है उसके बीच खलीफा लोगोंके इतिहासग्रंथमें खुरासानके किसी महमूदका नाम नहीं पाया जाता इससे ज्ञात होता है कि लिखनेवालोंने धोखेसे मामूनके बदले महमूद नाम लिखा दिया है।

इस घटनाके पीछे फिर २० बीस वर्षतक भयंकर पराक्रमी मुसलमानोंने फिर भारतवर्षमें प्रवेश नहीं किया, इस समय उनका प्रभाव धीरे धीरे तेजहीन होने लगा, भारतवर्षके जिन देशोंपर उन्होंने अधिकार किया था उनमेंसे सिन्धुदेशको छोडकर और सब देश उनके हाथसे निकल गये उस समय हारूंरसीदका पोता मुताविकेल बुगदादकी गद्दीपर बैठा उस समय ईसवी सन् ८५० था, बुताविकेलके मरनेपर उसके बडे बूढोंकी पुरानी बादशाहत खोखली जडवाले शालके वृक्षके समान बारंबार कम्पायमान होने लगी इस राज्यके अधःपतनके समाचारको पढकर जी उमड आता है जिस बुगदादके खलीफाने अपनी वीरतासे किसी समय यूरूप और एशियामें हलचल मचा दी थी वह बुगदाद साधारण सौदागरी वस्तुओंके समान खुले आम नीलाम कर दी गई जिसने अधिक दाम दिये उसीने खरीदी।

जिस दिन बुगदादकी यह शोचनीय दशा हुई उसी दिनसे खलीफाओंका भारतवर्षसे रहा सहा सम्बन्ध भी टूट गया, तबसे भारतभूमिने मुसलमानोंके आक्रमणसे कुछ दिनको छुट्टी पाई। परन्तु दुर्भाग्यसे यह छुट्टी बहुत ही थोडे दिनोंको हुई कारण कि भारतके भावी नाशका बीज बोनेके लिये शीघ्र ही खुरासानका शासन करनेवाला * सुबुक्तगीं अपने दलबलसहित आ चढा, ३६५ हिजरी सन् ९७५ ई. में उसने सिंधुनद

* टाडसाहबने कहा है सुबुक्तगींके बापका नाम अलिप्तगीं था, परन्तु डिगायनडिहारविल्ट और त्रिगप्रभृति इतिहासवेत्ताओंके मतका अवलम्बन कर एलफिनष्टन साहब लिखते हैं कि यथार्थमें वह अलिप्तगींका मोल लिया हुआ गुलाम था तुर्किस्तानके किसी सौदागरसे उसने इसे मोल लिया था फिर उसके अच्छे गुण देखकर उसे बडे ओहदेपर पहुंचाया, और पीछे अपनी कन्यासे उसका विवाह कर दिया अबुलफिदाने कहा है कि अलिप्तगीनने सुबुक्तगींके साथ अपनी लडकीको शादी करके स्वयं ही उसको उत्तराधिकारी बनाया परन्तु फरिस्ता कुछ और ही कहता है, कि अलिप्तगींके इसहाक नामका एक पुत्र था, जो पिताके परलोकवासी होनेपर गद्दीपर बैठा। परन्तु थोडे ही दिन पीछे उसके मर जानेपर सुबुक्तगीनने गद्दीपर बैठकर अलिप्तगींकी बेटीके साथ शादी की।
Elphinst'Ones History of India P. 320

पार करके भारतमें प्रवेश किया, उस समय उसके प्रचण्ड विक्रमके सामने सैकडों हिन्दू पतंगकी भांति जलकर भस्म हो गये सैकडों पुरुषोंसे सनातन धर्म छुडाकर मुसलमान होनेको विवश किया गया, इसी शताब्दिके अन्तमें सुबुक्तगीने एक बार फिर भारतपर चढाई की इस बार भी उसके सैनिकोंने कुरान और तलवार हाथमें लिये हुए आकर भारतवासियोंको घोर दुःख पहुँचाया तथा अपनी घोर नीचता और कठोरताका परिचय दिया ।

उस बार जो खराबी भारतवर्षकी हुई थी, उसका विचार करनेसे आजतक हृदयेंम शोककी तरंगें उठने लगती हैं । सुबुक्तगींकी इस पिछली चढाईमें उसका बेटा भारतका प्रचण्ड राहु, दुरन्त महमूद भी अपने बापके साथ हिन्दुस्थानमें आया था, महमूदकी उस समय उमर बहुत ही थोडी थी परन्तु उस सुकुमार अवस्थामें ही पिताके अनर्थकारी मंत्रका जप करना सीख लिया था ! भारतकी रत्नशालिताको निहार कर भारतके सत्यानाश करनेकी कल्पना उस कालसे ही उसके हृदयेंम उत्पन्न हो गई थी । पिताकी गद्दी मिलते ही महमूदने अपने विचारको कार्यमें लानेका विचार किया। महमूदकी उस पैशाचिकी कल्पनाके सिद्ध होनेमें भारतवर्षका जो नाश हुआ आजतक उसके शोचनीय चिह्न भारतवर्षके स्थान २ में विराजमान हो रहे हैं । आजतक सोमनाथ चित्तौर और गिरनारके देवमंदिर उसके उन पशुके समान अत्याचारोंकी कलंक कहानीकी संसारभरमें साक्षी दे रहे हैं । निर्दयी महमूद बारह बार यमदूतके रूपसे भारतवर्षपर चढ़कर आया । धन सम्पत्तिको लूटा, नगर ग्राम और मंदिरोंको फोड़ फाड़ कर धूरमें मिला दिया यहांतक कि भारतको श्मशान ही कर दिया । तले ऊपर बारह बार चढ़ाई करनेसे भारतके हृदयमें जो गंभीर घाव हो गया वह अबतक किसी वैद्यकी चिकित्सासे आराग्य नहीं हुआ । जिस दिन उस हिन्दूविद्वेषी मुसलमानने सर्वसंहारी मंत्रको जपकर जगत्में पिशाचके समान निर्दयीपन स्वार्थपन और कठोरताका नमूना दिखाया था, आज वह दिन अनन्तकालके गर्भमें न जाने किधरको बिला गया । आज महमूद किस ओरको पडा है, इस बातको कोई जानतातक नहीं । जिस गजनी नगरके सजानेके लिये वह भारतवर्षकी इन्द्रपुरी समान नगरियोंके गहने लूटकर ले गया था उसकी अत्यन्त प्यारी गजनी नगरी उन अलंकारोंसे सजकर एक समय यवनराजकी शिरमौर मानी गई थी आज उस ही गजनीकी घोर दुर्दशा हो रही है मानो उस खँडहरमेंसे प्रकृति ऊँचे और गंभीर स्वरसे यह वचन कह रही है कि मनुष्यका जीवन कितने दिनके लिये है ? अखर्व गर्व कितने दिनके लिये है ।

हिजरीकी पहिली शताब्दीसे लेकर चौथी शताब्दीके शेषतक खलीफा लोगोंके साथ भारतवर्षके राजाओंका जो अल्प वर्णन पाया गया उसकी संक्षेप समालोचना की गई । आवश्यकता समझकर हम अल्प वर्णनसे बहुत दूर चले आये थे, इस समय फिर अपने मौलिक वृत्तान्तपर आते हैं । पाहिले कहा जा चुका है कि मौर्यवंशी चित्तौरनाथ महाराज

मानसिंहके राज्यसमयमें म्लेच्छोंने उनके राज्यपर चढाई की थी, और उस ही समयसे वीरश्रेष्ठ महाराजाधिराज वप्पारावलकी उन्नतिका आरंभ हुआ था। ऐसा ज्ञात होता है कि इजीद इन्हीं म्लेच्छोंका अगुआ था। अथवा महम्मद बिनकासिमने सिन्धु देशसे आकर मानराजापर चढ़ाई की थी। इस बातका निर्णय करना बहुत कठिन जान पडता है कि कौनसे मुसलमान वीरने चित्तौरपर चढाई की थी, क्योंके मुसलमानी तवारीखों-में इस बातका कोई भी जिकर नहीं पाया जाता। जिन लडाइयोंमें खलीफाके लोगोंने अथवा उनके सिपहसालर लोगोंने हिन्दुओंपर जो विजय प्राप्त की थी मुसलमानी तवा-रीखोंमें केवल उन्हींका वर्णन लिखा है, परन्तु खलीफाके सेनापति और विद्रोही लोग जो बहुधा भारतवर्षपर चढ आया करते थे उनका भी कोई वर्णन इन तवारीखवालोंने नहीं किया। अपनी जातिवालोंकी अप्रतिष्ठा या निरादर छिपानेके लिये कदाचित् उन्होंने इनके हालातोंको न लिखा हो। उन संग्रामोंका वृत्तान्त केवल एक भट्टलोगोंके काव्य-ग्रंथोंमें ही पाया जाता है * यद्यपि वह सब बहुत ही मिलेजुले लिखे गये हैं तथापि अनुसन्धान करनेपर उनमेंसे बहुतसा ऐतिहासिक वृत्तान्त इकट्ठा हो सकता है। खली-फालोगोंके समयमें तो हिन्दुस्थानपर मानो साढसाती ही आ गई थी। कितने ही अभागे राजा गद्दीसे उतारे गए, कितने ही जानसे मार डाले गये उस काल चारो ओरसे मार २ की ध्वनि आती थी, चारो ओरसे प्रजा इस प्रकार हाय २ करती थी कि जिसको सुनकर कलेजा थर्राने लगता था। जिस कठोर मुसलमान वीरने भारतवर्षमें यह द्वन्द्व मचा दिया था। हिन्दुइतिहास ग्रन्थोंमें उसका वर्णन अनेकानेक प्रकारसे पाया जाता है। उस हिन्दूविद्वेषी यवनको कहीं दैत्य कहीं राक्षस और कहींपर जादूगरके नामसे पुकारा। कभी वह सिन्धुराज्यसे आया, कहीं जहाजपर चढकर समुद्रके मार्गसे आया; मूल बात

---

* भट्टलोगोंके काव्यग्रन्थोंमें लिखा है कि रोशनअली नामक एक फकीरने गढबिटली (अजमेरका प्राचीन नाम है) में आकर वहांके राजाके नवनीतपात्रमें हाथ डाल दिया। राजाकी आज्ञासे उसकी उँगली कटवाई गई, वह कटी हुई उंगली आकाशमें उडती २ मक्में पहुँकेची, जब खलीफाके निकट लाई गई तब उसने फौरन उस उँगलीको पहिचाना, तथा हिन्दूराजाके इस अत्याचारका पलटा लेनेके लिये फौजको सजानेका हुक्म दिया। इस फौजने घोडोंपर सवार हो सौदागरोंका भेष बनाया और अजमेरको जा घेरा। इस वर्णनकी कल्पनाको छोडनेसे ज्ञात होजायगा कि जिस समय मुसलमानधर्मका प्रथम प्रचारक रोशनअली हिंदुस्थानमें आया, तो अजमेरके महाराजने उसका कुछ निरादर किया होगा। खलीफाने अपमानका बदला लेनेके लिये राजासे लडाई करनेकी तइयारियाँ कीं। मुसलमानोंकी उस चढाईके समय अजमेरमें अजयपाल नामक एक राजपूत राजा राज्य करता था। जहाजपर चढे हुए यवन लोगोंको आता सुनते ही महाराज अजयपाल, कच्छके उपकूलमें बसे हुए अंजर नामक नगरमें सेना सहित चलेगये। वहांपर दोनों दलोंमें घोर संग्राम हुआ। राजा मुसलमानोंको नहीं रोक सका और उस ही जगह मारा गया। उस संग्रामस्थानमें एक वेदी बनाई गई उस वेदीके ऊपर महाराज अजयपालकी एक पाषाण मूर्ति स्थापित हुई, उस मूर्तिमें महाराज घोडेपर सवार हुए हाथमें भाला ताने हुए हैं. संग्रामकी जगह "अजयपालकामेला" नाम करके वार्षिक मेला हुआ करता है जिसमें हजारों आदमी इकठे होते हैं।

यह है कि,—भारतको शान्तिको गारत करनेवाला वह प्रचंड वैरी कोन था, उसके विषयमें अनेक प्रकारके भिन्न भिन्न मत सुने जाते हैं ।

गिह्लोट चौहान सौर और जादवलोगोंके इतिहासग्रन्थोंमें पाया जाता है कि संवत् ७५० से ७८० तक सन् ईस्वी ६९४ से ७२४ तक उपरोक्त नृपतिकुलके राज्यमें महा- कुलाहल मचा था । परंतु यह नहीं जाना जाता कि, वह कुलाहल किसने मचाया था । कहते हैं कि हिजरी ७५ संवत् ७५० में एक यदुवंशीय भट्ट राजाने अपनी राजधानी शालपुरसे निकाले जाकर शतद्रु नदीके पूर्व पारकी मरुभूमिमें आनकर आश्रय ग्रहण किया । जिस शत्रुने उस राजाको इस शोचनीय दशापर पहुँचाया था, भट्टग्रंथोंमें उस- का नाम फरीद लिखा है, और फिर इधर देखा जाता है कि अजमरके चौहानराजा माणिकरायने भी ठीक इसी ही समय शत्रुओंसे घिर जानेपर अपने देशकी रक्षा करनेके लिये समरभूमिमें प्राण दिये थे । ×

पंजाबदेशका सिन्धुसागर नामक दुआबा उस समय खींचीवंशके पहिले राजाके अधिकारमें था । और हारस कुलके पूर्व पुरुषगण गोलकुंडेमें रहते थे । यह दोनों अपने राज्यसे एक ही समयमें निकाले गये । जिस शत्रुने इनको राज्यसे दूर किया था, भट्टलोगोंने उसको दानवके नामसे पुकारा है । उसका नाम "गैर-आराम" अर्थात् विश्राम होता था । कहते हैं कि गंगोत्रीके निकटके "गजलिवन्द गजारण्यराय" नामक किसी पहाड़ी देशसे वह असुर भारतवर्षमें आया था तथा पट्टन नगरकी प्रतिष्ठा करने- वालेका पूर्व पुरुष भी ठीक उस ही भयंकर समयमें सूरतके अनुकूलमें बसे हुए द्वीप- बन्दरसे दूर किया गया था । आश्चर्य है ! एक समयमें ही भारतके भिन्न २ देश किस विदेशकी आँखोंमें खटकने लगे थे । किसने भारतमें यह महाउपद्रव मचाकर भारतसन्तानोंको शान्तिसुखसे अलग किया था ? हिन्दू इतिहासकारोंकी लिपिसे इस बातकी मीमांसा नहीं हो सकती ? मुसलमानी तवारीखोंसे ज्ञात होता है कि ईजिद ठीक इस समयमें ही खलीफाका प्रतिनिधि बनकर खुरासान राज्यमें रहता था, तथा खलीफा वलीदकी विजयिनी सेना गंगाजीके किनारेतक बढ आई थी, इसके सिवाय इस समयमें और किसी मुसलमान बादशाहकी चढाईका वर्णन किसी ग्रंथ- में नहीं पाया जाता । इससे यह होता है कि ईजिदकासिम अथवा वालीद इनमेंसे किसीके प्रतिनिधि या सिपहसालारने भारतवर्षमें चढकर इस उपद्रवको मचाया था

+ ऐसा वर्णन है कि मुसलमानोंकी उस चढाईके समय माणिकरायका पुत्र लोट जिसकी आयु बहुत थोडी थी किलेकी दीवारके ऊपर खेल रहा था कि शत्रुपक्षके किसी आदमीने तीर चलाकर उसको गिरा दिया । उस समय राजकुमारके पांवसे एक प्रकारका गहना चांदीका पडा हुआ था, तबसे चौहान- लोग उस गहनेको नहीं पहनते । राजपूत बच्चोंकी अकालमृत्यु होनेपर वे "पुत्रक" नामवाले देवता- ओंमें गिने जाते हैं । तबसे लोटभी उन्हींमें गिना गया राजपूतोंकी स्त्रियें आजतक लोटकी पूजा किया करती हैं ।

परन्तु मुसलमानोंकी कुल तवारीखोंमें ही ईजीद और कासिमकी ही विशेष २ चढाइयोंका वृत्तान्त पाया जाता है अतएव निस्सन्देह यही अवगत होता है कि ईजिद्ने या कासिमने भारतवर्षके राजाओंको सताया था, मौर्यवंशीय चित्तौरनाथ मानराजाकी सहायता करनेके लिये जिन राजाओंने तलवार पकडी थी उनके नामोंको पढनेसे हमारा लिखना सत्य ही जान पडेगा। महाराज मानने मौर्यकुलमें जन्म लिया था, उनका विशेष वृत्तान्त पहिले ही लिखा जा चुका है। मौर्यकुलके मूलवंशसे उत्पन्न हुए प्रमार राजालोग ही उस समय भारतवर्षके चक्रवर्त्ती राजा थे। भट्टग्रंथोंमें लिखा है कि वह राजालोग कभी २ उज्जयिनीमें अपनी राज्यपीठको स्थापित किया करते थे। *

उस भयंकर उपद्रवके समयमें अपनी स्वाधीनताकी लीलाभूमि चित्तौरपुरीकी रक्षा करनेके लिये जो राजालोग युद्धमें मानराजाकी सहायता करने गये थे उनके नाम नीचे प्रगट किये जाते हैं।

अजमेर सूरत, और गुर्जरके नृपतिगण हूनराज अगुटसी उत्तर देशाधिपति बूसा, जारिजास राजकुमार शिव, जंगलदेशका स्वामी जोहिया और अश्वरिया, शिवपत, कुह्लर, मालून, ओहिल और हूल इत्यादि साधारण २ राजा अत्यन्त उत्साहसे अपनी २ सेनाको लेकर वैरियोंसे लडनेके लिये संग्रामभूमिमें गये थे, इनके सिवाय और राजाओंके नाम भी पाये जाते हैं परन्तु इस समय उनके वंश सम्पूर्णत: लोप हो गये हैं, इन समस्त राजाओंमें देविलदेशका स्वामी दाहिर ही प्रसिद्ध है। यद्यपि लेखकोंकी कमसमझीसे इस देविलके बदले तुवर राजधानी दिल्ली लिखी गई है। तथापि सेनापति कासिमके युद्धवृत्तान्तसे उक्त दाहिरराज्यका ही विशेष पता लगता है। जब सिन्धुराज दाहिरको कासिमने मार डाला तब उसके पुत्रने चित्तौर नगरका आश्रय लेकर पितृघाती यवनसे संग्राम किया था।

म्लेच्छोंकी उस प्रचण्ड चढाईसे चित्तौरपुरीकी रक्षा करनेके लिये वीरबालक राजकुमार वप्पाने ही सबसे अधिक वीरता प्रगट की थी। केवल इस कुमारके ही प्रबल विक्रमसे शत्रुगण हारकर सूरत और सिन्धुराज्यमें भाग गये थे, विजयी वप्पाराव शत्रुओंको दबाते २ अपने पितृराज्य गजनी नगरमें पहुँचे। पहिले ही कहा जा चुका है कि सलीमनामक एक म्लेच्छ बादशाह उस समय गजनीकी गद्दीपर बैठा हुआ था। महाराज

---

* मौर्यराजाकी राज्यसभामें जो सामन्त वर्तमान रहते थे उनका वृत्तान्त पाठ करनेसे जाना जाता है, कि महाकवि चन्द्रभट्टने जो उन सामंतोंका वर्णन किया है जो कि रामप्रमारके अधीनमें थे। वह समस्त सत्य है कारण कि प्रमारगण ही उस कालमें भारतके चक्रवर्ती राजा थे। सिलीयुक्सके समयवाले ग्रीक-इतिहास लेखकोंके ग्रंथ पढनेसे इस वाक्यकी सत्यता भली भांतिसे विदित हो जायगी। कहते हैं कि ग्रीकके महाराज सिलीयुक्सने मौर्यवंशीय महाराज चंद्रगुप्तके साथ अपनी बेटीकी शादी करके उनके साथ गाढी मित्रता कर ली थी। ग्रीकके इतिहासग्रंथोंमें यह बात साफ २ लिखी हुई है कि महाराज चन्द्रगुप्तके आधीनमें बहुतसे ग्रीक सिपाही नौकरी करते थे।

वप्पाने उसको सिंहासनपरसे उतारकर अपने भानजेको वहांका राज्य दिया और उस मुसलमान बादशाहकी बेटीको ब्याह कर चित्तौर चले आये।

अब हम महाराज खुमानके राज्यसमयके यवन उपद्रवकी समालोचना करते हैं। यह वृत्तान्त सन् ८१२ से ८३६ ई० तकका है। इस भयंकर चढाइका नायक यद्यपि खुरासानका बादशाह "महमूद" कहा गया है तथापि अब यह देखना उचित है कि महमूद कौन था। उस भयंकर यवनाक्रमणसे चित्तौरपुरीकी रक्षा करनेके लिये जो हिन्दूनरनाथ आये थे उनके नामोंकी सूची पाठ करनेसे ज्ञात होता है "खुरासानपति महमूद" सुबुक्तेगानके पराक्रमी पुत्र महमूदसे दो शताब्दी पहिले हुआ था, इस ओर देखा जाता है कि ठीक उसी समयमें ही "खलीफा हान" उल रसीदने अपने बेटोंको राज्य बांट दिया था। तथा उस विभागके अनुसार उसके दूसरे बेटे मामूको खुरासान, सिन्धुदेश और समस्त भारतीय यवनराज दिया गया। उक्त मामू जब कि खुमानके समयमें था तब विशेष विचार कर देखनेसे निश्चय ज्ञात हो जायगा कि उसके बदले नकल करनेवालोंने महमूद नाम लिखा है। इतिहासमें उस समयका लिखा हुआ बहुत ही थोडा वर्णन पाया जाता है। जो कुछ पाया भी जाता है, वह नीरस है क्योंकि उसमें थोडे हिन्दूराजाओंके नामकी सूची पाई जाती है।

परन्तु नीरस और अप्रीतिकर होनेपर भी प्रयोजन समझकर हम उसका विचार करते हैं। "गजनीसे गिह्लौट, असरिके टाक नादोलके चौहान, राहिर गढके चालुक्य"

"सेतबन्दरके जीरकेडा, मंडोरके खेरावी, मागरोलके मछवाना, जेतगढ़से जोडिया।"

"तारागढ़से खेड, नरवडसे मछवाहे, शंचोरसे कालम जूनागढके यादव"

"अजमेरसे गौड, लोदरगढ़से चन्दाना, कसौदीसे डोडर, दिल्लीसे तुवर[५], पाटनसे चावडा"

---

(१) सेतबन्दर मलवारके किनारे है, परन्तु इसके स्वामी जोरकेराका कोई वर्णन नहीं पाया जाता।

(२) मंडोरसे आये हुए खेरावीके सम्बन्धमें जो कुछ वर्णन पाया जाता है, उससे केवल यही समझा जाता है कि यह प्रमारकुलकी एक शाखा है।

(३) जूनागढ (गिरनार) से जो जादवराजा आये थे उनके वंशवालोंने बहुत दिनतक उक्त देशका राज्य किया था।

(४) डोड और उसकी राजधानी कसूदीके सम्बन्धमें जो कुछ प्रगट हुआ है, उससे केवल यह ही निरूपित हो सकता है कि उक्त नगर गंगाजीके किनारे कन्नौजसे कुछ दक्षिणमें बसा हुआ है।

(५) यह साधारण दुःखकी बात नहीं है, कि किसी भद्रग्रन्थमें भी दिल्लीके तुवरराजाका नाम नहीं पाया जाता, परन्तु विचार कर देखनेसे स्पष्ट ज्ञात होगा कि उस लडाईके होनेसे १०० वर्ष पहिले अनंगपालने पुनर्वार दिल्लीकी प्रतिष्ठा की थी।

"मालोरसे शोनगडे, शिरोहीसे देवरा, गागरोनसे खीची, पाटरीसे झाला जैनगढसे दुसाना"

"कन्नौजसे राठौर, छोटियालासे वल्ल, पीरनगढसे गोहिल, जैसलमेरसे भाटी, लाहोर से बुस"

"रोनीजांसे संकला, खैरलीगढसे शिहट, मंडलगढ़से निकुम्प, गजोडसे बडगूजर, कुरनगढसे चंदेल"

" सीकरीसे सिकरवार, ओमरगढ़से जेतवा, पल्लीसे वारेगोत, खुनतरगढ़से जारिजा, जीरगांसे खेरवरे "

---

(६) मंगलोरसे जो शोनगडोंके राजा आये थे वे चौहानोंके शाखाकुलमें उत्पन्न हुए थे। परन्तु उनके वंशधरोंने कितने समयतक इस दुर्गपर अधिकार किया था सो नहीं कह सकते।

७ लाहोरसे जो बुस आये थे उनके कुलका यथार्थ वृत्तान्त किसी ग्रन्थमें नहीं पाया जाता। फरिस्तेमें बहुधा देखा जाता है कि जिस समय सबसे पहिले मुसल्मानोंने भारतवर्षपर चढाई की, उस समय लाहोरमें किसी हिन्दूराजाका राज्य था, परंतु उसके नाम या कुलका वृत्तान्त कहीं नहीं लिखा। खलीफा अलमनसूरके समयमें (सन् ७६१ ई०) पेशावर और कारमानके रहवासी अफगान इतने बढ गये थे कि उन्होंने सिन्धुनदके पार ही लाहोरके हिन्दूराजासे बहुतसे राज्य छीन लिये थे। तबतक इन अफगानोंने इसलाम धर्म ग्रहण नहीं किया, लाहोरके राजाके साथ जब उनकी लडाई हुई तब खलीफाके सेनापति गण उनकी सहायता करनेके लिये जावालिस्तानमें आये थे। लाहोरका हिन्दूराजा उनसे इतना संतापित हो गया था कि पांच माससे कुछ अधिक समयमें ही उसको २७ वार लडना पडा, पिछले युद्धमें अफगानोंने हारकर राजासे सन्धि कर ली। सुलहनामोंमें यह शर्त ठहरी कि सिन्धुनदके पश्चिम प्रान्तवाले समस्त देश उनको दिये जायँ, और जिससे विदेशी शत्रुगण अचानक भारतवर्षपर न चढ आवें, उसके लिये कोहे गिरदामन मार्गमें एक वडा किला बनाकर उनको वहां रक्षकके समान रहना पड़ेगा, तदनुसार उक्त गिरमार्गके शिखरपर विख्यात खैबरदुर्ग बनाया गया। लाहोरके राजाके साथ अफगानोंने बहुत दिनतक इस सन्धिको स्थापित रक्खा था। यहांतक कि अलिप्तगीके शासन समय सन् ९७६ ई० तक यह लोग परस्पर मित्र रहे। अलविरोनीनामक एक इतिहासकपंडितके वृत्तान्तसे जाना जाता है, कि ईसवी दशवीं शताब्दीमें एक हिन्दूराजवंश काबुल और लाहोरमें राज्य करता था। सामन्त नामक एक ब्राह्मण उस समय इन दोनों राज्योंका राज करता था। इसके उत्तराधिकारियोंमें कई एक राजपूतोंका नाम पाया जाता है उन नामोंसे एक जयपालका भी नाम है। जयपालके पुत्र अनंगपालके चलाये हुए रुपयोंपर उक्त सामन्तका भी नाम पाया जाता है। (Journ R. A. S. V. E. IX) परन्तु महाराज खुमानके राज्यत्वकालके सौसे अधिक वर्ष पीछे (सन् ९७६ ई०) जयपाल हुआ था। इससे ज्ञात होता है कि महाराज सामंतका राजकुल उक्त बुस नामसे पुकारा गया होगा।

(८) सांकल और उसके राज्य रुनीजाका वृत्तान्त विदित है। यह प्रमारकुलकी शाखा है रुनीजा मारवाडके अन्तर्गत वर्तमान है।

(९) खैरली गढसे जो सिहोट आये वह सिन्धुनदके किनारे राज्य करते थे,प्राचीन भट्टग्रंथोंमें विशेषतासे इनका वृत्तान्त पाया जाता है। भट्टलोगोंके साथ शिहोटकुलके विवाहका वृत्तान्त भी मिला। टाडसाहबने इनको यदुकुलकी शाखा कहा है।

(१०) कुरनगढसे जो चंदेल आये थे, उनके निवासस्थानका नाम आधुनिक बुंदेलखण्ड है।

"और काशमीरसे पुरीहर * परिहार आये थे ।"

जब खुरासानके बादशाहने चित्तौर नगरपर चढ़ाई की, तब चित्तौरनाथ खुमानकी सहायता करनेके लिये यही समस्त हिन्दूराजा अत्यन्त उत्साहके साथ देशके प्रेममें आकर अपनी २ सेनाको साथ ले चित्तौरनगरमें आये थे । देशवैरी कठोर म्लेच्छोंके करालग्रासमें चित्तौरपुरीकी रक्षा करनेके लिये उन्होंने जो प्रचण्ड वीरता अनुसरण कौशल और अद्भुत प्राण न्योछारका प्रकाशमान उदाहरण दिखाया था, वह आजतक भारतीय इतिहासमें चमकदार अक्षरोंसे लिखा हुआ है । महाराज खुमान चौबीस वार शत्रुओंके विरुद्ध अस्त्र धारण करके संग्रामभूमिमें गये थे । उन लड़ाइयोंमें जो अद्भुत वीरता उन्होंने प्रकाशित की उससे उनका पवित्र नाम रोमसम्राट् सीजरके समान उनके वंशवालोंके लिये गौरवकी सामग्री हुआ था । उनके स्वदेशी राजपूतगण उनके अपूर्व गुणग्रामसे ऐसे मोहित हुए थे कि अबतक प्रातःस्मरणके लिये और दूसरे राजाओंकी पवित्र नाममालाके साथ खुमानके नामकी माला भी जपा करते हैं ।

यदि उदयपुरमें कोई ठोकर खाकर गिरता है या गिरनेको होता है तो वैसे ही पासमें खडा हुआ दूसरा मनुष्य ऊंचे स्वरसे यह कहकर आर्शीवाद करता है कि खुमान तुम्हारी रक्षा करें, ब्राह्मण लोगोंकी सलाहसे महाराजा खुमानने अपने छोटे पुत्र जगराजके हाथ राज्यका भार सौंप दिया था, परन्तु थोड़े ही कालमें उनका भाव बदल गया फिर स्वयं राज्य ग्रहण करनेका संकल्प किया और जिन ब्राह्मणोंने महाराजको राज देनेकी सलाह दी थी उनको मारकर पुत्रके हाथसे राज्य ले लिया वह ब्राह्मणोंसे ऐसे अप्रसन्न हुए कि उनके नामपर सौ सौ धिक्कार देते थे, इसी कारण समस्त ब्राह्मणोंको राज्यसे निकाल दिया । खुमानको इस पापका फल हाथोंहाथ मिला ।

निर्दोष ब्राह्मणोंके रुधिरसे अपने हाथ कलंकित करके जिस सिंहासनपर अधिकार किया था उसको अधिक दिनतक न भोग सका । शीघ्र ही मंगलनामक पुत्रने उसे मार डाला, और अपने आप गद्दीपर बैठा । यद्यपि साधारण सिंहासनकी प्राप्तिके लिये मंगलने अपने हाथसे पिताको मारा, परन्तु उस सिंहासनको अधिक दिन आधिकारमें न रख सका, मेवाडके सरदारोंने मिलकर उसे गद्दीसे उतार दिया । मंगल

---

* उस भयंकर उपद्रवके समयमें जिन हिन्दूराजाओंने महाराज खुमानकी सहायता करनेके लिये शत्रुओंके साथ संग्राम किया था, उनकी सूची लिखी गई । गजनीसे गहिलोत राजा आये थे, इनका वर्णन पहिले ही विस्तारसे लिखा जा चुका है और यही कारण है जो असीरगढके राजा तक्षकके सम्बन्धमें हम यहां पर कुछ न कहेंगे । तिस असीरगढमें तक्षकराजाका राज्य था, आज वह हमारी सरकारके राज्यमें मिला हुआ है । नादौडसे चौहान आये थे, वह अजमेरके राजाके एक शाखाकुलमें उत्पन्न हुए थे, इनका गोत्र झालोरके शोनगडे हैं, और शिरोहीके देवरागढमें इनका जन्म हुआ था ।

राज्यसे निकाला जाकर उत्तरमरुके मैदानमें जा बसा और वह केलोदड्वानामक स्थानपर अधिकार करके उसी स्थानपर अपने वंशवृक्षको बो दिया । उस लोदडवा पट्टनमें उसके वंशवाले माँगलीय "गहिलोत" नामसे पुकारे जाते हैं ।

पितृघाती मंगलके निकाले जानेपर भर्तृभाट चित्तौरके सिंहासनपर बैठा इसके और इसके पीछे जो राजा हुए उन सबके समयमें चित्तौरके अधिकारकी सीमा बहुत ही बढ गई, महानदीके किनारे और आबू पर्वतकी तलेटीके विशाल मैदानमें जो असभ्य मनुष्य रहा करते थे वे सब ही चित्तौरके राजाओंके प्रचण्ड प्रतापसे पराजित होकर उनके आधीन होगये थे, इस बडे वनमें जो किले बने थे उनमें धरनगढ और अजरगढ अबतक वर्तमान हैं । महाराज भर्तृभाटने मालव और गुर्जरराज्यके १३ स्वतंत्र राज्योंमें अपने १३ पुत्रोंको * स्थापित किया था । तबसे उनके यह समस्त पुत्र "गाटेरा गाहिलोत" नामसे पुकारे जानेलगे । महाराज खुमानसे पीछे पन्द्रह पीढीतक जो राजा चित्तौरके सिंहासनपर बैठे,उनके समयमें ऐसी बातें बहुत ही थोडी हुई कि जिनका कुछ वर्णन किया जाय, उपरोक्त पन्द्रह पुरुषोंके जीवनचरित्रमें कोई विचित्र वार्ता नहीं हुई । अतएव उस वृत्तान्तको विस्तारसे यहां नहीं लिखा,उस समयमें चित्तौरके गहिलोत और अजमेरके चौहानोंमें कभी मित्रता और कभी प्रचण्ड वैरभाव हो जाता था । कभी वह परस्पर रुधिर बहानेको तइयार हो जाते और कभी एकताके दृढ बन्धनमें जकड कर देशवैरी यवनोंके आक्रमणसे मातृभूमिकी रक्षा करनेके लिये संग्रामभूमिमें जा अडते । चित्तौरनाथ वीरसिंहने कोवारिव नामक समरखेतमें चौहानराज दुर्लभका संहार किया । परन्तु राजपूत जातिका माहात्म्य अपूर्व है । दुर्लभके पुत्र महाराज वीसलदेवने पिताके शोकको भूलकर स्वदेशप्रेमके स्वर्गीय मंत्रसे प्रचंड विद्वेषभावको दूर करके पितृघाती वीरसिंहके उत्तराधिकारी रावलतेजासिंहके साथ अभिन्न मित्रता कर ली । और हिन्दूविद्वेषी मुसलमानोंके प्रचंड प्रतापको रोकनेके लिये संग्रामभूमिमें विराजमान हुए । महात्मा राजपूतोंके चरित्रका यह अपूर्वगुण केवल भट्टग्रंथोंमें ही नहीं लिखा है, अनेक शिलालेखोंमें भी उसका प्रदीप्त विवरण पाया जाता है । उन शिलालेख और ग्रन्थोंमें उनके आचरणका वृत्तान्त जिस प्रकारसे मिलता है उससे बोध होता है कि वे स्वभावसे ही वर्णज्ञानहीन और तेजस्वी थे, प्रचंड मूर्तिधारण करके यौवनके समय परदारादि हरण करके बुढापेमें ऐसे एसे पापोंको दूर करनेके लिये मंदिरादि बनाते थे । हथियार, घोड़ा और शिकार उनके हृदयकी प्यारी सामग्री थी, उन्हीं बातोंमें वह अपने अधिकांश समयको बिताते और जब शत्रुकुलके आक्रोशसे छुटकारा पाकर

---

* इन्होंने त्रयोदश (१३) राज स्थापन किये थे । उनमेंसे केवल (११) का नाम पाया जाता है यथा कूलानगर, चम्पानेर, चौरेता, भोजपुर, लुनार, नीमखोर, सोदारु, जोधगढ, मन्दपुर, आहतपुर और गंगाभाव ।

मेवाड राज्यमें शान्तिसुख भोगा करते थे तब वे अपने सहकारी सामन्तोके साथ अकारण ही लडाई झगडा करके उस शान्तिको भंग कर देते थे ।

चौथा अध्याय ४.

महाकवि चंदलिखित ऐतिहासिक विवरणः—अनंगपाल समरसिंह तातार वासियोंका भारतको जीतनाः—समरसिंहकी वंशावली; राहप तथा राहपके उत्तराधिकारी गण ।

सम्वत् १२०६ में समरसिंहने जन्म लिया । यद्यपि समरसिंहके जीवनचरित्रका चित्तौरके राजभट्टकविगणोंने भली भांतिसे अनुशीलन किया है तथापि हम केवल महाकवि चन्द्रभट्टके प्रगट किये हुए वर्णन × से महाराजके पवित्र जीवनचरित्रका विचार करेंगे । इस जीवनचरित्रका विचार करनेसे पहिले हम एक अत्यन्त प्रयोजनीय ऐतिहासिक वृत्तान्तकी समालोचना करते हैं । प्रसिद्ध दिल्लीनगरीसे वीरचरित्र तुवर राजवंशका राज्य जब लोप हो गया उस समय भारतके राजनैतिक चित्रने किस मूर्तिको धारण किया और हिन्दूस्थानका कौन देश किस हिन्दूराजाके अधिकारमें था उसका विचार करना आवश्यकीय ज्ञात होता है । अत एव महात्मा चन्द्रभट्टके प्रसिद्धग्रंथसे उसका यथार्थ अनुवाद किया जाता है, लोहे शरीर चौलुक्य राज भोलाभमि पाटननगरमें स्थित हैं आबूपर्वतपर प्रमारवंशीय जित, रणक्षेत्रमें ध्रुवनक्षत्रके समान अचल अटल हैं, मेवाडमें समरसिंह हैं जो अत्यन्त पराक्रमसे भी कर ग्रहण करते हैं, और दिल्लीश्वरके शत्रु कठोर यवनोंके मार्गको रोकनेवाले लोहेकी शलाकाके समान विराजमान हैं, मरुभूमिके प्रतापस्वरूप अपने बलसे बलवान निडर तेजवान मुकुन्द राज नाहुर इन सबके मध्यमें विराजमान हैं. दिल्ली नगरीमें सबके स्वामी महाराजाधिराज अनंगपाल स्थित हैं इनकी आज्ञाको शिरपर धारण करके, मंदोब, नागोर, सिंधु, जलावत और इनके निकट बसे हुए दूसरे देश जैसे, पेशावर, लाहोर, कांगडा, और इनके पर्वतीराजालोग तथा काशी प्रयाग और देवागिरिके राजालोग अतिविनीतभावसे आज्ञापालन करनेके लिये

× कविवर चन्द्रभट्ट प्रणीत वरदाईरासा एक उत्तम ग्रन्थ है । असाधारण कविताईकी मायामयी वर्णनाके परदेमें उन्होंने ऐतिहासिक रत्न टांके हैं, उसका पाठ करनेसे हृदय अपूर्व भक्ति प्रीति और कृतज्ञताके रससे परिपूर्ण हो जाता है, इस ग्रन्थमें ६९ सर्ग हैं ।

राजस्थानके प्रायः समस्त वंशोंका वृत्तान्त इसमें लिखा हुआ है ।

तैयार रहते हैं। सीमरके अधीशगण इनके प्रचंड पराक्रमके भयसे सदा विपत्तिकी शंका करते रहते हैं। दिल्लीके पिछले तुवर सम्राट्के राजत्वकालमें वह समस्त हिन्दूराजालोग भारतके अन्यान्य भूभागमें अपना राज करते थे महाराजा अनंगपाल उन दिनोंमें इन सब राजाओंके शिरमौर थे ।

जिस दिन भट्टगण जावालिस्तानसे भागकर भारतवर्षमें आये तबसे थोडे ही समयमें उन्होंने पंजाबके शालिवाहन पुर, तान्नोट और मारवाडके लादड़वाको अपने अधिकारमें कर लिया, फिर देरयालनगरीको स्थापन करके प्रसिद्ध जेसलमेरनगरीकी प्रतिष्ठा करनेका यत्न करने लगे, जिस समयमें चौहान वीर महाराज पृथ्वीराज दिल्लीके सिंहासनपर बैठे उस समय भाटी लोग जैसलमेरकी प्रतिष्ठा करनेमें लगे हुए थे। जैसलमेर उस समयमें अधिक प्रसिद्ध नहीं हुई थी, इस नगरीके प्रतिष्ठित होनेसे बहुत दिन पहिले ही वे उस अप्रशस्त भूभागमें स्थित होकर खलीफाके उन सेनापतियोंसे जो कि अरारेमें रहते थे घोर संग्राम करने लगे, इस भांति दोनो ओरसे घोर संग्राम हुआ करता. बहुधा उन संग्रामोंमें भाटीलोगोंकी जीत होती थी और वह सिन्धुनदीके किनारेवाले तक्षकराजकी राजधानीतक अपने पूर्वपूरुषोंके राज्यको पुनरुद्धार किया करते थे ।

जिन दिनोंमें मुसलमानलोगोंके कठोर विक्रमके प्रभावसे एक महाउपद्रव मचा हुआ था उस समयमें भाटीलोग उस छोटे राज्यमें स्थित रहकर बहुत ही कम उन्नतिपर पहुँचे थे। बस चौहानराज महाराज पृथ्वीराजके समयमें ही उनकी उन्नतिका आरम्भ हुआ था। इस समयसे उनका वीरविक्रम क्रमानुसार बढता ही गया। भारतीय इतिहासमें वर्णन है कि पृथ्वीराजके अधीनमें अरवलेशनामक एक प्रसिद्ध सेनापति था जिसको भाटीराजका सहोदर कहते हैं।

पहिले ही लिखा जा चुका है कि उस काल महाराज अनंगपाल भारतके चक्रवर्त्ती राजा थे, महाराज अनंगपाल दिल्लीके प्रथम तुवर राज्य विहलनदेवसे १९ पीढ़ी पीछे हुए। महाराज विक्रमादित्यके द्वारा भारतवर्षकी प्रधान राजपीठ जब उज्जयिनी नगरीमें स्थापित हो गई तब महाराज युधिष्ठिरकी लीलाभूमि सैकडों वर्षतक शोचनीय श्मशानकी भांति पडी रही उस बहुत समयकी अराजकताके पीछे जिस महापुरुषने संजीवन मन्त्रसे उसको पुनर्वार जीवित किया उसका नाम विहलनदेव था। उक्त महाराजने असाधारण यत्न और परिश्रम करके दिल्लीको पूर्वशोभासे फिर शोभित कर दिया। तथा अनंगपाल नामको धारण करके दिल्लीके सिंहासनपर विराजमान हुआ। उसके उत्तराधिकारियोंके राजत्वकालमें अजमेरके चौहानगण दिल्लीके आधीनमें सामन्तोंकी भांति रहते थे, परन्तु चौहानराज्यके विहलनदेवके अत्यन्त विक्रमशाली होनेसे आधीनताकी यह जंजीर नाममात्रको बाकी रह गई। समयकी अपूर्व महिमासे वह अधीनता चौहानोंके लिये कुछ भी कष्टदायी न हुई। कारण कि उस समयसे ही चौहा-

नोंका भाग्यरूपी आकाश सौभाग्य लक्ष्मीकी प्रसन्नतासे क्रमानुसार निर्मल होगया तथा इस बातकी भी सूत्रपात हो गया कि शेषमें भारतका राज यही लोग करेंगे ।

जिस समय दिल्लीके सिंहासनके ऊपर महाराजा शेष अनंगपालके साथ कन्नौजके राठौरोंका घोर संग्राम हुआ उस समय सोमेश्वरनामक एक चौहान राजा अजमेरके सिंहासनपर विराजमान था । सोमेश्वरने उस संग्रामके समय महाराज अनंगपालकी विशेष सहायता की जिससे यह उनपर बहुत प्रसन्न हुए और अपनी बेटीका विवाह उसके साथ कर दिया । इस ही लडकीके गर्भसे पृथ्वीराजका जन्म हुआ । इससे पहिले महाराज अनंगपालने अपनी एक कन्याका विवाह कन्नौजके राजा विजयपालसे कर दिया था, क्रूरचरित्र स्वदेशद्रोही जयचन्द इसस.ही संभोगका विषमय फल हुआ । जयचन्द और पृथ्वीराज दोनों ही दिल्लीश्वर अनंगपालके धेवते थे, वीरश्रेष्ठ पृथ्वीराजसे जयचन्द बडा था । दोनो ही अपने नानाको अत्यन्त प्यारे थे । कुभाग्यसे नानाके उस स्नेहको खो दिया, महाराज अनंगपाल पुत्रहीन होनेके कारण पृथ्वीराजका अत्यन्त आदर करते थे, इस कारण बुढापेमें उनके ही हाथमें अपने विशाल राज्यका भार सौंप कर इस लोकसे चले गये ।

जयचंदका आशा भरोसा गया, वह जन्मसे यह चाहता था कि नानाका सिंहासन मुझे मिले, न्यायसे इस राज्यके मिलनेका जयचंदको अधिकार भी था क्योंकि वह बडी पुत्रीसे जन्मा था परंतु भाग्यके आगे कोई क्या कर सकता था, पृथ्वीराजकी-अवस्था ८ वर्षकी थी तथापि जयचंदको दिल्लीका सिंहासन न मिला, उसको पृथ्वीराजने ही पाया, यह अन्यायका पक्षपात जयचंदसे सहा नहीं गया, उसके हृदयमें डाहकी दारुण आग जलने लगी, उस विषम हृदयज्वालाके बुझानेमें उसने आप ही अपने पाँवमें कुल्हाडी मार ली और सम्पूर्ण भारतको गारत कर डाला, महाराज पृथ्वीराज दिल्लीके सिंहासनपर बैठे, परन्तु जयचंदने उनके सार्वभौमत्वको अंगीकार नहीं किया, वरन वह दुराचारी इस बातकी तैयारी करने लगा कि मैं ही भारतका सार्वभौम सम्राट् हो जाऊं, मन्दोरका परिहार राज्य और अनहलवाडा पट्टनके राजा चौहानकुलके पुस्तैनी शत्रु थे, इस भीतरी झगडेके समय उन्होंने जयचंदका पक्ष अवलम्बन करके पृथ्वीराजके विरुद्ध उसको अत्यन्त ही उभारा, यद्यपि महाराज पृथ्वीराज इस बातको जान गये थे तथापि पहिले उपरोक्त दोनो राजाओंसे कुछ न बोले, परन्तु फिर पूरीहार राजने महाराजका ऐसा अपमान किया कि उन्होंने उसके विरुद्ध तलवार पकड महाराज पृथ्वीराजके सिंहासनपर बैठनेपर मंदोरराजने अपनी बेटी उनको देनी चाही उदार हृदय महाराजने उस बातको स्वीकार कर लिया, विवाहकी तैयारी होने लगी, दुष्टमति मंदोरराज्यने धोका देकर अपनी बेटीसे उनका विवाह नहीं किया, इससे पृथ्वीराज घोर अपमानित हुए और इस बातका बदला लेनेके लिये

युद्धका विचार किया, इस युद्धमें ही चौहान वीर पृथ्वीराजके भावी गौरवकी सूचना हुई, तथा धीरे २ विक्रमका प्रकाश भी होने लगा, उनकी उन्नति जयचंदके हृदयमें तीरसी खटकने लगी, इस उन्नतिको रोकनेके लिये पृथ्वीराजके रणकुशल सिपाहियोंको अपनी सेनामें भरती करने लगा, इस कर्तव्यसे ही जयचंदके सत्यानाशका सूत्रपात हुआ. उसका होनहार भाग्याकाश घोर काले बादलोंसे ढक गया, उसने अपनी दुरभिलाषाके सिद्ध करनेको जो कूट उपाय अवलम्बन किया उसीसे सारे भारतवर्षका सत्यानाश होगया क्योंकि हिन्दूवैरी दुरंत मुहम्मद गोरीने इस विवादके संयोगको अच्छा अवसर समझकर भारतभूमिमें आय भारतकी स्वाधीनताको हरण करके इसके पवित्र हृदयमें इस्लामकी विजयपताकाको गाड दिया।

चित्तौरके राजा समरसिंहने दिल्लीश्वर पृथ्वीराजकी बहन पृथाका पाणिग्रहण किया था, इस मंगलमें संबन्धको बढानेके लिये वह दोनों मित्रताकी जिस कठोर जंजीरसे जकडे गये थे सहस्रों आपत्तियोंके आजानेसे भी वह बंधन ढीला नहीं पडा इन दोनोंने कभी क्षणभरके लिये भी अमित्रभावका वर्त्ताव नहीं किया। जिस दिन यह दोनो स्वदेशप्रेमी परममंत्रका जप करके कग्गरके किनारे परमधामको सिधारे उसी ही दिन संसारमें उनका बिछोहा हुआ, परन्तु यह कौन कह सकता है कि अनन्त सुखधाममें उनका मिलाप नहीं हुआ होगा। हाय ? किस कुघडीमें भारतके मध्य फूटका बीज बोया गया था, किस कुघडीमें अभागी भारत संतानने सजातीय भाइयोंके हृदयरुधिरका बहाना सीखा था, उसी कुदिनसे भारतके उजाड होनेका आरंभ होने लगा, विश्रामस्थान भारतवर्ष असीम दुःखका कारागार और अनन्त यंत्रणामें अंधनरककूपकी भांति हो गया है। कुरुक्षेत्रकी भयंकर श्मशानभूमि आर्यगणोंकी गृहफूटका रुधिरमय नमूना दिखा रही है। सब बातोंको जान बूझकर भी भारतसंतान किस लिये परस्पर लडा भिडा करते हैं इस मर्मको भगवान ही जाने। भारतभूमिने किसी समय भी फूटसे निस्तार नहीं पाया। इसके माया मोहमें पडकर न जाने अबतक कितने भारतसंतान अकालमें इस लोकसे चले गये हैं। मतवालेसे होकर अपना ही सत्यानाश कर बैठे हैं, इनकी गिनती कोई भी नहीं कर सकता; इसका शोकदायक आदर्श आजतक स्वर्णप्रसू भारतवर्षमें चमक रहा है, किन्तु भारतसंतानके गृहविवादमें भी एक विचित्रता पाई जाती है। यह घराऊ झगडे कभी सदाके लिये अथवा कभी बराबर प्रचंडभावसे नहीं चलते रहे। वह झगडेकी आग कभी प्रचंडतेजसे बल उठती थी, कभी जाती थी, कभी तेज कभी हीनतेज हो जाती थी। जब यह आग बहुत ही तेज हो जाती थी तो भट्टकुलाचार्यगण परस्पर विवाद करनेवाले राजाओंके बीचमें पडकर उनके कुलकी प्रशंसा करते हुए दोनोंको शान्त कर देते थे, और उनकी विवादाग्निमें शान्तरूपी जल छिडक कर उस शत्रुभावको मित्रतामें बदलकर अत्यन्त दृढ प्रीतिबंधनसे दोनोको बांध देते थे। बहुधा इस प्रकारकी शान्ति परस्परके विवाहबंधनसे हुआ करती थी, परन्तु दुःखकी बात है कि वह मित्रभाव दो पीढीसे अधिक नहीं ठहरता था।

फिर वही प्रचंड वैर ! परस्परमें घोरविद्वेष !! फिर परस्पर पिशाचीमूर्ति धारण करके एक दूसरेका खून पीनेके लिये तैयार हो जाते, भारतके राजाओंकी सदासे यही राजनीति रही। अभागिनी भारतमाताकी भाल लिखनको जरा देखिये तो ! इस ही दुराचारके वश हो उन्होंने अपने अपने पांवमें कुल्हाडी मारी, अपने सौभाग्यके मार्गमें अपने हाथसे कांटे बोये, उनकी इस दुर्नीतिसे भारतभूमि विजातीय शत्रुओंके ग्रासमें पड गई। आज नन्दनवन श्मशान बन गया !! आज इस ही कारणसे–परशुराम, कार्त्तवीर्यार्जुन, अर्जुन, भीम, भीष्म, द्रोण, कर्ण इत्यादि प्रातः स्मरणीय भारत वीरगणोंकी माता घोर कठोर जंजीरोंसे जकडी पडी है।

महाराज पृथ्वीराजके प्रचण्ड शत्रु पाटन और कन्नौजके दोनो राजा महाराज समरसिंहसे भी शत्रुता करते थे। इस कारण महाराज समरसिंहको भी खड्गधारण करना पडा। इसके अतिरिक्त अपने प्यारे मित्र पृथ्वीराजकी उन्होंने कई वार सहायता की थी। नागोरकोटके किसी स्थानसे दबे हुए ७०००००० सात करोड रुपये निकले, कहते हैं कि यह खजाना प्राचीन कालसे वहां गडा हुआ था, महाराज पृथ्वीराजने जब उस रुपयेको लिया तो कन्नौजके राजा और पाटनके राजाके मनमें अत्यन्त शंका उत्पन्न हुई। एक तो महाराज पृथ्वीराजकी सेना ही बहुत बडी है दूसरे उनको यह बडी भारी सम्पत्ति मिली अत एव उनके ऊपर जय पानेकी आशा किस प्रकारसे की जाय। इस शंकाके फेरमें पडकर उक्तदोनो राजाओंने पृथ्वीराजके प्रचण्डबलको रोकनेके कारण बादशाह शहाबुद्दीनसे सहायता चाही। जिस दिन उनके मनमें यह सत्यानाशी कल्पना उत्पन्न हुई उसी ही दिन भारतके होनहार आकाशमें घोर बादल छा गये। अचानक महाराज पृथ्वीराजका सिंहासन बारम्बार कंपायमान होने लगा। इससे पहिले ही शहाबुद्दीनकी मनहूस आँखें हिन्दुस्थानके ऊपर लग चुकी थीं, और वह अपनी अभिलाषाके पूर्ण होनेका अवसर खोज रहा था, कि उस समय वह अवसर आपहीसे आ गया, फिर भला वह निश्चिन्त रह सकता है ? राजा जयचन्दके साथ मिलकर शीघ्र ही बडी भारी सेनाको सजाय महाराज पृथ्वीराजकी ओरको चला।

महाराज पृथ्वीराज इस बातको जान गये कि जयचन्द मेरे राज्यका नाश किया चाहता है। उसकी अभिलाषाका नाश और उसके पापका भली भांतिसे फल देनेके लिये महाराजने भी तइयारी की, व इसकी सूचना देनेके लिये महाराज समरसिंहपर भी दूत पठाया। चण्डपुंडीरनामक एक सामन्तराजा उस समय लाहौरका राज्य करता था, महाराज पृथ्वीराजने उसको ही दूत बनाय समरसिंहके पास भेजा। महाराज पृथ्वीराजके यहां जो सामन्त रहते थे उनमें चण्डपुंडीर सामन्त महाविक्रमशाली था। उसके प्रचंड पराक्रम, अद्भुत स्वदेशहितैषिता, कठोरउद्यम तथा श्रमशीलताका वृत्तान्त महाकवि चन्दने अवेगमयी वाणीसे वर्णन किया है। जिस दिनसे वह महा प्रतिष्ठित वीर दौत्यकार्यमें नियुक्त हुआ उस

ही दिनसे जीवनके पीछले दिनतक वह चण्डपुंडीर भारतके इतिहासमें जो महान चरित्र रख-गया है। उसको पढनेसे स्पष्ट ही जाना जाता है कि उसने अपने जीवनको अपने देशपर ही बलिहारी कर दिया था, तथा देशपर ही प्राणोंको नेछावर करके वह वीर अनन्त सुखधाममें चला गया, जिस समय शहाबुद्दीन विशाल अनीकनीको साथमें लेकर भारतवर्षके ऊपर धाया उस काल उस राजपूत वीर चण्डपुण्डीरने ही उसकी प्रचन्डचालको रोकनेके लिये रावी नदीके किनारे अपना भयंकर शूल गाड दिया था। यद्यपि वह अपनी मनोकामना पूर्ण नहीं कर सका तथापि जो वीरता उस समय दिखाई थी उसके द्वारा ही उसका पवित्र नाम सदाके लिये इतिहासमें अटल रहेगा।

दूतश्रेष्ठ चण्डपुण्डीर, दिल्लीश्वरसे बहुतसी भेंट पाकर महाधूमके साथ चित्तौरमें आया। महाराज समरसिंहने आदरपूर्वक उसको ग्रहण किया, तथा वास करनेके लिये उत्तम स्थान दिया। कुछ कालतक विश्राम करनेके पीछे उसने महाराजका दर्शन करना चाहा। शीघ्र ही मनोकामना पूर्ण हुई। समरसिंहने तत्काल उस दूतको अपने सामने बुलाया। महाराज समरसिंह उस समय अपने विश्रामगृहमें व्याघ्र-चर्मके आसनपर बैठे थे, लाल वस्त्र धारण किये सब अंगोंमें विभूति लगाये मस्तकपर जटा बढाये गलेमें कमलगट्टोंका हार पहिरे विराजमान थे। दूतके आते ही सादर कुशल पूछी और बैठनेके लिये सामने ही आसन दिया। महाराजकी वह शान्ति गंभीर मूर्ति तपस्वियोंके योग्य भेष और अत्यन्त उदार व्यवहार देखकर दूतके हृदयमें अपूर्व भक्ति उत्पन्न हुई। उसने महाराजको योगीन्द्र नामसे पुकार कर भक्ति गद्गद स्वरसे कहा "आप यथार्थमें ही भगवान महादेवजीके प्रतिनिधि हैं"। यह समस्त वृत्तान्त और इसके पश्चात् जो कुछ वार्ता परस्पर हुई उसका यथार्थ वर्णन चन्द्रवर्दाईने अत्यन्त तेजस्वी भाषामें अपने ग्रन्थके बीच वर्णन किया है।

दो एक दिनके बीचमें ही महाराज समरसिंह अपने प्यारे मित्र व बान्धव पृथ्वी-राजका नेवता मानकर सेनासहित दिल्लीको चले। दिल्लीश्वरने आगे बढकर उनकी अगवानी की और मानके साथ ग्रहण किया, परस्पर कुशल प्रश्न करके फिर कर्त्त-व्य कार्यका विचार होने लगा। शीघ्रतासे दो कर्त्तव्य निश्चय किये गये, प्रथमः--पत्तन-राजके गर्वका दूर करना, दूसरेः--मुसलमानोंके आक्रमणमें विघ्न करना, समरसिंह पत्त-नराजके साथ वैवाहिक सम्बन्धसे बँधे हुए थे, अत एव उससे युद्ध करनेका विचार कर-के मुसलमानोंकी चढाईको रोकनके लिये दिल्लीमें रहे। इधर महाराज पृथ्वीराज सेनासहित पट्टनकी ओर बढे शीघ्र ही रणोन्मत्त राजपूत वीरगण भी गगनभेदी भयंकर शोरसे उसका उत्तर देकर महोत्साहके साथ उनके सामने हुए, दोनो सेना-ओंमें घोर संग्राम होने लगा। परन्तु उस संग्राममें किसीकी जय पराजयके कोई लक्षण

न ज्ञात हुए । इस प्रकारसे तला ऊपर कई संग्राम हुए, परन्तु विजयलक्ष्मी किसीकी अंकशायिनी न हुई। इस ओर महाराज पृथ्वीराज पट्टनराजका गर्व खर्व करके जयके आनन्दसे पूर्ण हो मित्रसे आ मिले । इस काल दोनो वीरोंका प्रचण्ड विक्रम एक होकर भयंकर तेजसे बदल उठा । इस भयंकर विक्रमाग्निमें असंख्य मुसलमान तिनकेके समान जल गये ।–मुसलमान वीर शहाबुद्दीन बडी कठिनाईसे अपने प्राण लेकर भागा । उसके सेनापतिको विजयी राजपूतोंने कैद कर लिया ।

महाराज पृथ्वीराजकी जीत हुई और समस्त बाधा दूर होगई । नगरकोटकी जमीनमें जो गड़ा हुआ खजाना उनको मिला था उसका आधा अंश महाराज पृथ्वीराजने समरसिंहको दे दिया । परन्तु समरसिंहने स्वयम् उसको ग्रहण न करके अपनी सेनामें बांट दिया । महाराज पृथ्वीराजने उनकी सेनामें और भी बहुतसा द्रव्य बांटा । फिर महाराज समरसिंह बिदा लेकर अपनी राजधानीमें चले गये ।

इस प्रकारसे कई वर्ष बीत गये । साधारण २ लड़ाइयोंमें जातकर पृथ्वीराज और समरसिंह कुछ कालतक सुख भोगते रहे, इधर एक २ दिन बिताती हुई भारतकी होनहार कालरात्रि करालवेषसे आन पहुँची । पट्टनके ऊपर जय प्राप्त करके महाराज पृथ्वीराजने विचारा था कि इसी गौरवके साथ हमारे दिन व्यतीत होंगे; अत एव निश्चिन्त हो संयुक्ता * महारानीके साथ परमानन्दसे दिन यामिनीको व्यतीत करने लगे । परन्तु विधिलेखके कठिन अनुशासनसे उनके सुखका दिन धीरे २ बीतने लगा । क्रमानुसार समय आगया । महाराज पृथ्वीराजको आलसी असावधान जानकर शहाबुद्दीन भयंकर सेनाको साथ ले फिर भारतवर्षपर चढ धाया । फिर उसके मतवाले वीरोंकी सिंहनादसे भारतभूमि कांपने लगी । महाराज पृथ्वीराजका सिंहासन भी मानो उसके साथ ही साथ डोलने लगा और उनकी नींद टूटी उस संकटसे छुटकारा पानेके लिये उचित उपाय खोजने लगे और अपने प्यारे मित्र, समरसिंहसे सहायता चाही । अबतक जिस मनमोहनीके अनुपम प्रेमसे मोहित होकर महाराज संपूर्णतः आलसभावसे ही समयको व्यतीत करते थे । आज वही मनमोहनी

---

* संयुक्ता कन्नौजके राजा जयचन्दकी बेटी थी । जयचन्दने अपनी कन्याके स्वयंवरमें भारतवर्षके समस्त राजाओंको नेवता भेजकर बुलाया था । परन्तु जयचन्दके साथ वैरभाव होनेके कारण महाराज पृथ्वीराज और समरसिंह उस सभामें न गये । जयचंदने इन दोनो राजाओंकी हेममयीमूर्ति बनवाकर पृथ्वीराजकी मूर्तिको द्वारपालकी जगह स्थापन किया, स्वयंवरमें जितने राजा आये थे संयुक्ताने उनमेंसे किसीके गलेमें माला न डारकर पृथ्वीराजकी सुवर्णकी मूर्तिके गलेमें माला डाल दी । पृथ्वीराज भी उस समय राजभवनसे थोडे ही दूरपर छिपे हुए थे । इस वृत्तान्तको जानते ही वह तेजसहित सभामें पहुँचे, और राजकुमारी संयुक्ताको लेकर अपने नगरमें चले गये, सभामें बैठे हुए किसी राजकुमारसे उनकी प्रचंडगति नहीं रोकी गई ।

सावधान होकर खडी हो गई और यथार्थ वीरनारीके समान प्राणपतिसे संग्रामभूमिमें जानेके लिये कहा। महात्माचन्दने यहांपर जैसा वर्णन किया है उसका ही अनुवाद ठीक २ नीचे किया जाता है।

जिस दिन पिछली बार शहाबुद्दीन पृथ्वीराजके ऊपर सेना सहित चढा, उस ही दिन रात्रिके समय महाराजने एक भयंकर स्वप्न देखा था। तिससे उनका हृदय व्याकुल हो गया और मनमें अत्यन्त चिन्ता उत्पन्न हुई। प्रभात होते ही प्राणप्यारी संयुक्तासे वह अपने स्वप्नका वृत्तान्त इस प्रकारसे कहने लगेः-

"कल रात्रिके समय जब कि निद्राकी कोमलगोदीमें विश्राम कर रहा था उस समय देखा कि रम्भाके समान एक परमरूपलावण्यवती स्त्रीने आकर कठोर भावसे मेरा हाथ पकड लिया। तत्पश्चात् ही उसने तुमको आक्रमण किया; तुम अपनी रक्षाके लिये अनेक प्रकारके यत्न करने लगीं। इतनेहीमें-अहो! भयानकः-भीम दर्शन राक्षसके समान एक बडा मदमत्त हाथी शूड हिलाता हुआ मेरी ओरको आया। भयस नींद टूट गई। भीत और चकित नेत्रोंसे चारोंओरको देखा। तो उस रंभाको भी न देखा और न उस हस्तीको देख पाया, हृदय कांप गया; सर्वाङ्ग कंटाकित हो गये; दबे हुए कंठके द्वारा मीठी वाणीसे "हर, हर" कहकर उठ बैठा, देखो अबतक हृदय कांप रहा हैः-अबतक भी रोएँ खडे हैंः-भगवान ही जाने भाग्यमें क्या बदा है।"

स्वप्नको सुनते हुए महारानी संयुक्ताके प्रभातकमलतुल्य बदनमंडलपर एक अपूर्व जोति प्रकाशित हो गई, और मृदु गंभीर कंठसे कहा, "हे चौहान कुलके गौरव सूर्य! इस जगतमें आपके समान इतनी सम्पत्ति और इतने सुख व ऐश्वर्य कौन भोग रहा है? तथापि आपकी तृष्णाकी शांति कहाँ है? आप साधारण स्वप्न देखकर होनहारकी शंकासे किस कारण व्याकुल हो रहे हैं? हे प्राणनाथ! मृत्यु तो सबहीके लिये है; इस दुर्निवार मृत्युके हाथसे देवतागण भी छुटकारा नहीं पा सकते, पुराने छोड़कर नए कपडे पहरनेको किसकी इच्छा नहीं होती? परन्तु हे नाथ! विचारकर देखिये जो श्रेष्ठ कार्यमें अपने प्राणोंको न्यौछावर कर देता है, जो गौरवके साथ मृत्युको आलिंगन करता है, वह मरकर भी सदैव जीवित रहता है। मैं अल्प बुद्धिवाली स्त्री हूं आपको क्या समझाऊं? आप स्वार्थको मनमें स्थान न दीजिये और ऐसा उपाय भी कीजिये कि जिसमें मृत्युलोकके बीच आपका नाम अमर हो जाय। अपनी उस कराल करवालको लेकर शत्रुओंका संहार कीजिये मेरे लिये शोच न कीजिये। अभीसे ऐसे कार्यके करनेमें यत्न करती हूँ कि जो आपकी अर्द्धांगिनीके योग्य होगा।"

महाराज पृथ्वीराजने सभामें आकर भट्टकविको बुलाय समस्त वृत्तान्त कह सुनाया। भट्टने उसका भावार्थ कहा और राजकुल गुरुने एक जयकवच लिख दिया। दिल्ली-

श्वरने उस मंत्रपूर्ण कवचको अपनी पगडीके भीतर रक्खा । इस ओर नवग्रहको प्रसन्न करनेके लिये सहस्र कलशोंमें भरा हुआ उत्तप और शुद्ध दूध चन्द्रदेवताको पानार्थ दिया गया ।

दश दिगपालोंके लिये दश भैंसे उत्सर्ग किये गये, दीन दरिद्र मनुष्योंको चांदी सोना दिया गया, परन्तु रुधिर या दुग्धको उत्सर्ग करके अथवा दान ध्यान करके क्या कोई कभी होनहारकी गतिको रोक सकता है ?

"यदि रोक सकता तो नल और पाण्डवोंको वह कठोर विपत्ति कभी न भोगनी पड़ती ।"

विषम संकटमें घिरकर महाराज पृथ्वीराजने अपने प्यारे मित्र समरसिंहसे सहायता चाही । महाराज समरसिंह क्या बन्धुकी विपत्तिका वृत्तान्त सुनकर चुप चाप रह सकते हैं ? वह विलम्ब न करके शीघ्र ही सेना सहित दिल्लीकी ओर चले इस ओर महाराज पृथ्वीराज अपने सेनापति और सामन्तोंका बुलाकर युद्ध करनेका विचार करने लगे । इस भयंकर युद्धके समय भारतवर्षके समस्त राजाओंको एक अभिन्न मित्रकी डोरमें बांधना चाहिये था, देशवैरी यवनके आक्रमणसे अपने देशका उद्धार करना उचित था । स्वदेशानुरागसे उत्साहित होकर पृथ्वीराजकी सहायताको खड्ग पकडना चाहिये था । परन्तु कार्य इसके विरुद्ध हुआ । उनमेंसे बहुतसे राजा तो मौन धारण करके बैठ रहे, विशेष करके कन्नौज पाटन और धारानगरीके राजा तुच्छ जनोंके समान डाहके वश हो भीतर ही भीतर यह चाहते थे कि पृथ्वीराजका नाश हो जाय । तथा इसका यत्न भी करते थे । राजपूतकुलकलंक हतभाग्य राजाओंने पाप मोहके वश होकर जो कापुरुषोचित कार्य किया उसका विषमय फल उन सबको शीघ्र ही भोगना पड़ा । शीघ्र ही यवनोंकी दासत्व जंजीरमें वे सबकेसब बँध गये ।

दिल्ली यात्राकी समस्त तैयारी हो गई । राज्य कार्यका भार अपने छोटे पुत्र करण-सिंहके हाथमें समर्पण करके महाराज समरसिंह अपने इष्टमित्र और सेना सामन्त-को साथ ले दिल्लीकी ओर चले × चित्तौर छोडनेके समय अचानक उनका हृदय कांपने लगा मानो किसीने अचानक उनके कानमें आकर कहा "देखो जी भरकर एक बार चित्तौरको देख लो, अब तुमको यह नगर देखनेको नहीं मिलेगा" समर-सिंह चकित होगये । परन्तु तत्काल अपने उत्साह को सँभाला और अपने इष्टदेव-ताका स्मरण करके चल दिये । चंदवरदाईके महासमरनामक पिछले सर्गमें महाराज-समरसिंहकी इस शेष दिल्ली यात्राका वृत्तान्त उत्तमतासे लिखा है, वही नीचे लिखा जाता है ।:-

---

× छोटे पुत्र कर्णसिंहपर यह आयौक्तिक अनुराग देखकर बडापुत्र कुम्भकर्ण पितासे अत्यन्त अप्रसन्न हो, कितने एक साथियोंको साथ ले पिताके राज्यको छोड दक्षिणा वर्त्तमें चला गया । वहांपर विदौर नामक एक हबशी बादशाहके आश्रयमें उसने एक नये राज्यकी प्रतिष्ठा की ।

इसके उपरान्त महाराज पृथ्वीराजने समरसिंहके आनेका वृत्तान्त सुना, और दरबारमें जाय समस्त सरदारोंको बुलाये उत्साहका डंका बजाया, सबके एकत्र होनेपर धूम धामसे सवारी निकली, महाराज पृथ्वीराज इस समय बहुतायतसे महलोंमें ही रहा करते थे। आज मित्रका सत्कार करनेके लिये बाहर आये हैं, बहुत दिनके पीछे अपने महाराजका दर्शन पाकर सारी प्रजा आनन्दमें मग्न हो गई। घर घर रोशनी होने लगी आनन्दके बाजे बजने लगे। उस समय दिल्लीकी शोभा अपूर्व थी। महाराज पृथ्वीराज समरसिंहको साथ ले आये और उस दिन बडा दर्बार किया। महाराज पृथ्वीराज और समरसिंहको बराबर बैठा हुआ देखकर समस्त प्रजा अत्यन्त प्रसन्न हुई। इस प्रकारके बाजे बजे कि कानपड़ी आवाज नहीं सुनी जाती थी।

इस भांति आनन्द हो रहा था कि राजदर्बारके चौककी बिचली शिला फट गई और उसमेंसे सदाशिवका वीरभद्रनामक गण बाहर निकला। कविवरचन्द्रने यहां इस प्रकारसे लिखा है:-

रंग राग वामन थद्दयं। घन घोर सोर प्रगद्दयं॥
सुनि अलख वीर सजग्गयं। सिर पलट ऊंधिम पग्गयं॥
लम्बी असीं गज सज्जग्यं। पच्चास चौडिय गज्जयं॥
दश गज सुदल परमानयं। तिही गुफा खुली अमानयं॥
रुद्राक्ष मुद्रा धारयं। मुख शंभु शंभु उचारयं॥
कर खड्ग खप्पर राखयं। मुख शंभु शंभु भाखयं॥
पृथिराज कीन प्रणामयं। बोल्यो न वीर सतामयं॥
तहां देव रावल समरसी। छंडचो न आसन रघुवंसी॥
पूछंत चन्द सुवत्तियं। कहो होनहार सुकत्थियं॥
यह होनहार सहोयहे। दिल्ली न थिरता सोयहे॥
पुनि म्लेच्छ दलबल जोर है। अर शहर दिल्लीय तोर है॥
पृथिराज युद्ध न जीत है। रण समय रावल बीत है॥
चामुण्ड राय गुरु रामही। कट परही भारत कामही॥
पृथिराज बंध ही पावही। खट मास विपति विहावही॥
नृप शाह चंदरु तीनयं। रहे एक ठौर सुलीनयं॥
गोरी सुदिल्ली आनयं। पुनि वरत हिंदुसथानयं॥
तिहि दुर्ग देवल भाजयं। आति आनरत्थ स साजयं॥
वरते स बरसां दोयसे। तो पीछ चकता आवसे॥

हिंदवान दंड भरावही । नृप घर घर हि घिय व्यावही ॥
दख नाद खुंदल आवही । तिहि तखत दिल्ली न पावही ॥
ता पीछे टोपी आवही । बहु इलम कलम चलावही ॥
नारी सुराजा बज्जसी । हिन्दू तुरक सब भज्जसी ॥
इहि तखत दिल्लीय आवही । नृपघेरघरहि सुख पावही ॥
वह धर्मराज जमावही । प्रतिपाल न्याय कहावही ॥
जब न्याय बन्धन छूटसी । तब आव पेटा फटसी ॥
मिलि बलक काबुल थट्टियं । तीजी सभूपत पट्टियं ॥
विंद्धस दिल्ली यारंह । रहि वरस खट पर नाट्यं ॥
सीसोद दिल्ली आवही । शिर राण छत्र धरावही ॥
पैंतीस वरस प्रमानही । भोगवे हिन्दू संथानही ।
अजमेर पीर सजग्गही । पुनि तख्त दिल्ली मंगही ॥
तुंवरस दिल्लिय घेरही । पुनि आंण दिल्लिय फेरही ॥
राठौर दिल्ली आवही । फिर धर्मनीति चलावही ॥

भावार्थः—इस समय जो यह शिला फट गई थी, यह अस्सी हाथ लम्बी, पचीस हाथ चौड़ी और दश हाथ मोटी थी, इस शिलाके नीचे एक गुफा थी । उस गुफासे रुद्राक्षकी माला धारण किये, हाथमें खड्ग और नर पाल लिये "शंभु शम्भु" उच्चारण करता हुआ वीरभद्र बाहर निकला । पृथ्वीराज ने उस भयंकर मूर्तिवाले पुरुषको आगे बढकर प्रणाम किया । परन्तु वह पुरुष कुछ भी न बोला, तब सदाशिवके भक्त महाराज समरसिंहरावलने उसको आगे बढकर प्रणाम किया, उस समय चन्द्रने वीरभद्रसे कहा कि अब आगे क्या २ होगा सो महाराजाको बताइये, तब वीरभद्र सबके सम्मुख इस प्रकारसे कहने लगा, "मैंने दक्षप्रजापतिका यज्ञ विध्वंस करके अपने पिता महादेवजीके क्रोधको शान्त किया, फिर उनकी आज्ञा लेकर यहां निश्चिन्त हो विश्राम लेनेके लिये आया । इस समय मैं गाढ़ी नींद में सो रहा था, परन्तु आज इस तुम्हारी विलक्षण गडबडी और कोलाहलसे मेरी नींद टूटी तथा मैं बड़ा दुःखी हुआ । महादेवजीने मुझे वर दिया था कि जो कोई तेरी निद्रा भंग करेगा उसका नाश हो जायगा । इसी कारणसे अब तुम्हारा नाश होगा । अब आगे म्लेच्छलोग प्रबल होकर दिल्लीको जीत लेंगे, पृथ्वीराजकी पराजय होगी । इस समय रावल समरसिंह बहुत काम आवेंगे, चामुंडराय और रामगुरु युद्धमें कट-जांयगे, पृथ्वीराज पराजित होकर छः मासतक बंदी रहेगा और दुःख पावेगा । शहाबुद्दीन गोरी प्रबल होकर हिंदुस्थानमें अत्यन्त उपद्रव मचावेगा, हिन्दूराजाओंके

किले व मंदिर छिन्न भिन्न करेगा इस प्रकार एक वर्षतक बडाभारी अनर्थ रहेगा । अनन्तर मुगलोंकी चढाई हिन्दुस्थानपर होगी, और यह भी अत्यन्त उपद्रव करेंगे । वे राजालोगोंके घरोंमें घुसकर उनकी बेटियोंके साथ व्याह करेंगे । फिर दक्षिणसे कुछ सेना उनको पराजित करनेके लिये आवेगी । इस सेनासे उसका कुछ प्रबंध न होगा । फिर टोपीवाले आवेंगे उनके राजकी मालिक रानी होगी जो कि सब हिन्दू मुसलमानोंको अपने वशमें कर लेगी । वह दिल्लीके तख्तपर अपनी स्थापना करके राज्याभिषिक्त होगी. उसके राजमें सबको सुख मिलेगा। वह धर्मानुसार राज्य करके न्याय पूर्वक प्रजाका प्रतिपाल करेगी परन्तु आगे जैसे ही उसकी न्यायरीतिका बन्धन छूटेगा वैसे ही टोपीवालोंको निकालकर काबुल और बलखवाले तथा एक भट्टीराजा एकत्र होकर दिल्लीपर अपना अधिकार जमावेंगे, इनकी अमलदारी छः वर्षतक दिल्लीमें रहेगी । फिर उदयपुरके शिशोदिया वंशवाले राजा होंगे वह ३५ वर्षतक राज करेंगे । फिर अजमेरका पीर उठेगा । तत्पश्चात् तुवर और तुवरके पीछे कठोर वंशका राजा होकर वह धर्मनीतिको स्थापन करेगा ।

वीरभद्रकी भविष्य वाणी सुनकर पृथ्वीराजको अत्यन्त शोक हुआ । तब वीरभद्र कहने लगा हे राजन् ! किसी बातका शोक न करना चाहिये । यह वसुदा सदा किसीके पास नहीं रही । बहुधा इसके अधिकारमें उलट फेर हुआ ही करता है, राजा वेन, विश्वंभर, सुरराज, हिरण्याक्षादि बहुतसे राजा होगए परन्तु पृथ्वी किसीकी न हुई । महान् याज्ञिक बली राजा होगया, परन्तु वामनजीने उसको पातालमें भेजा। वैसे ही मान्धाता, व जलन्धर राजा हुए; उनकी कैसी दशा हुई ? साक्षात् भगवान्‌के अवतार पृथु राजा हुए। परशुरामजीने अवतार लेकर २१ वार क्षत्रियोंका संहार करके ब्राह्मणोंको पृथ्वीका राज दिया, शिवभक्त महाबली और पराक्रमी लंकापति रावण होगया । दुर्योधन कैसा बली योद्धा था, परन्तु अर्जुनके साथ लड़कर अपनी अठारह अक्षौहिणी सेना समेत मारा गया, किसी कविने कहा है–

दातासों दिलीप मानधातासों महीप भयो, जाके गुण द्वीपद्वीप अजहू लों छाये हैं ।
बालि ऐसो बलवान् को भयो जहान बीच, रावण समान को प्रतापी जग जाये हैं ॥
बानकी कलानमें सुजान द्रोण पारथसे, जाके गुण दीनदयाल भारतमें गाये हैं ।
कैसे कैसे शूर रचे चातुरी विरंचि जूने, फेर चकचूर कर धूरमें मिलाये हैं ॥ १ ॥

सारांश यह है रणक्षेत्रमें जो वीर लडते हैं, उनको कभी यश मिलता है कभी मौत मिलती है । धन दौलत, इष्ट, मित्र सब मिथ्या हैं, कि केवल कीर्ति ही सदा अमर रहती है । इस प्रकार कहकर वीरभद्र अन्तर्द्धान हो गया । जो शिला टूट गई थी वह साबित होकर जहांकी तहां लग गई । वहांकी जमीन साफ होगई ।

कुछ देर विश्राम लेकर समरसिंहने प्यारे मित्रसे संग्रामकी वार्ता छेड़ी और यह पूछा कि शत्रुओंका मार्ग रोकनेके लिये अबतक तुमने कोनसा उपाय किया ? पृथ्वीराजने कहा कि अबतक मैंने कुछ उपाय नहीं किया न कुछ सोचा विचारा। "चि-त्तौरनाथ यह सुनकर विस्मित हुए और दिल्लीश्वरका मीठे वचनोंसे तिरस्कार किया तथा ऐसा परामर्श करने लगे कि जिससे कोई उचित उपाय निकल आवे। महाकविचन्दने इस उत्तमतासे यह वृत्तान्त लिखा है कि प्रत्येक मनुष्यका हृदय राज पूतवीरोंके महान् चरित्रकी ओर खिंच जाता है।

भली भांतिसे युद्धके सामान हो गये महाराज समरसिंहकी आज्ञासे राजपूतोंकी भारी सेना दिल्लीके तोरणद्वारको लांघकर शत्रुदलकी ओर इस प्रकारसे झपटी कि जैसे प्रचंड पहाडी नद आगे बढता है, हथियारोंकी झनकार मतवाले हाथी और घोडों-का विकट शब्द और रणोन्मत्त राजवीरोंका श्रवण भैरव चिल्लाना तथा पृथ्वीका बार-बार कम्पायमान होना, महाभय उत्पन्न करता था। किस मार्गसे कौन दिशामें और किस प्रकारसे श्रेणीबद्ध होकर राजपूत वीरोंको बढना चाहिये, मार्गमें कहां कहां विश्राम करना उचित है ? इन सब बातोंमें समरसिंहका परामर्श लिया गया। महाराज समरसिंहकी सलाहके विना महाराज पृथ्वीराज कोई भी कार्य नहीं करते थे महाकवि चन्दभट्टने समरसिंहको राजपूत सेनाका इयुलिसीस कहकर वर्णन किया है। वह साहसी धीरस्वभाव और समरचतुर थे। वे धर्मनिष्ठ, सत्यप्रिय और शुद्ध चरित्र थे! शृंगाल विहंगादिकी चाल और दूसरे लक्षणोंको देखकर कोई शाकुनिक या दैवज्ञ उनके समान सुन्दर रूपसे भावी फलाफलको नहीं बता सकता था। समरसिंहके इन अनुपम गुणोंके कारण गहिलोत और चौहान समस्त सैनिक और सामन्त अधिकारी उनमें अत्यन्त श्रद्धा भक्ति करते थे। सांझको जब संग्राम हो जाता तब राजपूतवीर और सामन्तगण उनके डेरेमें आया करते थे वे उनसे स्नेह पूर्वक सादर संभाषण करके अनेक प्रकारकी नितिशिक्षा देकर उपदेश करते थे। इस मनोहर शिक्षा और वक्तृताको श्रवण करते २ समस्त डेरेवालोंमें परमानन्द छा जाता था। महाकवि चन्दभट्टने मुक्तकंठसे स्वीकार किया है कि मेरे महाकाव्यमें राज-शासनकी जितनी नीति है उनका अधिक अंश महाराज समरसिंहके उपदेशसे लिखा है। और धर्मनीति, राजनीति, समाजनीति, मंत्रीनिर्वाचन और राजदूतोंके आचरण विशेष करके राजा और राजपूतोंका जो कुछ कर्तव्य था। तथा जो सुन्दर उपाख्यान व रूपकालंकार मैंने अपने काव्यमें लिखे हैं उन सबके वक्ता चित्तौ-राधिप सुपंडित महाराज समरसिंह हैं।

पुण्यभूमि ब्रह्मावर्तके मैदानमें बहनेवाली पवित्र जलमयी दृषद्वती (आजकल इसको कगगर कहते हैं) के किनारेपर क्षत्री और मुसलमानोंका घोर संग्राम हुआ, यह संग्राम तीन दिनतक बराबर होता रहा। प्रथम दो दिनतक तो किसी और

की जय पराजयके कुछ लक्षण दिखाई न दिये । क्रमसे तीसरा दिन कालनिशा होकर भारतके प्राची द्वारपर दिखाई दिया । राजपूतगण दृषद्वतीके पवित्र जलमें स्नान कर प्रातःकृत्यादि समाप्त करने लगे । भगवान् मरीचिमाली मानो एक बार अनन्तकालकेलिये भारतसन्तानका गौरव देखनेको धीरे २ उदयाचलपर विराजमान हुए । इस ओर महाराज पृथ्वीराज अपनी प्यारी नारी संयुक्ताके निकट खड होकर बिदा ले रहे हैं ।

संयुक्ता अपने हाथसे प्राणनाथको सजाने लगी-बख्तर पहिराकर प्राणपतिकी कमरमें खड्ग बांध दिया । इतनेहीमें आकाशमंडलको विदीर्ण करते हुए रणके मारू बाजे बजने लगे । उन गम्भीर बाजोंकी ध्वनि आकाशमें लीन भी नहीं होने पाया थी कि राजपूत गण भी सिंहनाद करने लगे ।

महाराज पृथ्वीराज विस्मित हुए । उन्होंने यह नहीं समझा था कि विश्वासघातको यवन इतने सबेरे ही लड़ाईका ढोल बजा देंगे । अत एव उन्होंने तत्काल ही रणभूमिमें प्रस्थान किया । उस पिछले रणरंगमें भारतके उस शेष गौरवके दिन-भारतके अनुपम वीर महाराज समरसिंह * और उनका पुत्र कल्याण महापराक्रमके द्वारा शत्रुसेनाका संहार करके स्वदेशप्रेम तथा अद्भुत वीरताका प्रकाशमान उदाहरण दिखाकर अपनी तेरह हजार १३००० राजपूतसेना और प्रसिद्धि सामन्तोंके साथ सदाके लिये समरभूमिमें शयन कर गये । उस दिन दृषद्वतीके उस रुधिर मिले जलमें भारतवर्षका गौरवरूपी सूर्य सदाके लिये डूब गया, भारतकी सम्पूर्ण आशा लोप हो गई, वीरशेखर समरसिंहकी पतिव्रता महारानी पृथाने जब यह भयंकर समाचार सुना; कि प्राणनाथ वीरशिरोमणि समरसिंह आततांई यवनोंके कपटचरित्रसे मारे गये; प्यारे भ्राता पृथ्वीराज जंजीरोंसे बांधे गये-भारतका आशा भरोसा और भारतके वीरगण उस समरक्षेत्रमें जो कि कगगर नदीके किनारे बनाया गया था सदाके लिये शयन कर गये-तब उसने क्षणभरकी विलम्ब न की । पुरजन, परिजन, बन्धु, बान्धव किसीका समझाना न सुना, शीघ्र ही चिताग्निमें तन त्याग करके पतिलोकको चली गई । दृषद्वतीकी सैकतभूमि आज भयंकर श्मशान बन गई है ।

जिसके पवित्र किनारेपर बैठकर आर्यगौरव महर्षिगण सुधामय साम गानसे देवतालोगोंको आनंदित करते थे, जिनके श्रवण मोहन वेदगानसे मोहित होकर

---

*उदयपुरके कविराज श्यामलदासजीने पृथ्वीराजरायसोके विरुद्ध एक छोटीसी पुस्तक छपाई थी उसमें लिखा है कि चित्तौरके रावल समरसिंह पृथ्वीराजके समयमें नहीं हुए, किन्तु प्रायः सौ वर्ष पीछे हुए ह यदि यह लेख सत्य माना जाय तो वे पृथ्वीराजके बहनोई माने जा सकते हैं, और न उनका पृथ्वीराजके युद्धमें उपस्थित होना माना जासकता है, परंतु मथुराके पं० मोहनविष्णु पण्डजी (जो मेवाड़ राज्यके कौन्सिलके सेक्रेटरी रह चुके हैं) ने उनकी इस पुस्तकके प्रतिवादमें एक पुस्तक छपाई हैं उसमें उन्होने लिखा है कि " राज समंदपर एक बड़े शिलालेखमें जो माघसुदी पूर्णिमा सम्वत् १७२२ का खुदा हुआ है निम्न लिखित श्लोक हैं-

पवित्र जलवाली देव तरंगिणी नृत्य करती हुई बहती थी, आज उसकी वह पुण्यमयी सकतभूमि भयंकर श्मशान बन गई है। उस भूमिके ऊपर अगणित शृगाल व कुत्ते और गृद्ध विकट उच्चस्वरसे शब्द कर रहे हैं। आज उसकी स्वच्छ छाती नररुधिरसे गीली हो रही है, उस बीभत्स श्मशान दृश्यमें भुजा बढ़ाकर पिशाचके समान यवनसेना गिरे हुए आर्यवीरोंके अंगरागको हरण करने लगी। अहो! अब कौन उस पिशाचोंकी प्रचण्ड गतिको रोकेगा? कौन स्वदेश प्रेम भक्तिके पवित्र मंत्रसे प्रेरित हो हाथमें खड्ग लेकर यवनोंको दूर करेगा? कोई नहीं! संसारने बिकट शब्दसे कहा—कोई नहीं?। भारतकी राजलक्ष्मी यवनोंकी जंजीरसे जकडी जाकर हाय हाय करती हुई बोली—कोई नहीं। भारतभूमि आज अनाथिनी पतिपुत्र हीन होकर शत्रुओंकी कैदमें पड़ गई है!

उस भयंकर श्मशानभूमिकी भयंकरताको बढाता और रणभूमिमें पड़े हुए राजपूत-वीरोंके कटे हुए शिरोंको ठुकराता हुआ विजयी शहाबुद्दीन दिल्लीकी ओर चला। उस काल दिल्लीके पिछले आर्यवीर चौहानकुलप्रदपिके कुलदीपक वीर युवक रणसिंहने अत्यन्त पराक्रम दिखाकर संग्रामभूमिमें अपने प्राणोंकी न्यौछावर कर दिया। इसकी शोचनीय मृत्युसे दिल्ली अनाथ हो गई। उस रक्षकहीन श्मशानके समान नगरमें प्रवेश करके यवनलोगोंने पाण्डवप्रवर महाराज युधिष्ठिरके पवित्र सिंहासनको अपने अधिकारमें किया। इस ओर क्षात्रियकुलकलंक कायर जयचंदको भी उसकी विश्वासघातकता और स्वदेशद्वेषताका फल भली भांति मिल गया। जब मुसलमानोंने उसके कन्नौज राज्यपर अपना अधिकार किया तो वह दुष्ट नावपर चढ़ा हुआ गंगाजीके मार्गसे भागा जाता था, कि वह नाव डूब गई और प्राणोंके साथ ही दुष्ट जयचंदकी आशा भी लोप हुई। फूटका यही फल है कि दोनों बरबाद हों—उस दिनसे हिन्दूविद्वेषी निठुर मुसलमानोंने

"ततः समरसिंहाख्यः पृथ्वीराजस्य भूपतेः। पृथाख्याया भगिन्यास्तु पतिरित्यतिहार्दतः॥ २४ ॥
गोरीशाहबुदीनेन गज्जनोशेन संगरम्। कुर्वतोऽखर्वगर्वस्य महासामंतशोभिनः॥ २५ ॥
दिल्लीश्वरस्य चौहाननाथस्यास्य सहायकृत्। स द्वादशसहस्रैः स्वैर्वीराणां सहितो रणे॥ २६ ॥

अर्थ—समरसिंहने भूपति पृथ्वीराजकी बहिन पृथाके पति होनेके कारण बडे प्रेमसे १२००० वीरोंके साथ चौहाननाथ (पृथ्वीराज) दिल्ली अधिपतिको जो बडे २ सामन्तोंसे सुशोभित थे गजनीके बादशाह शहाबुद्दीन गोरीके युद्धमें प्रवृत्त होनेपर सहायता की।

भीखारायसामें लिखा है कि समरसिंह पृथ्वीराजके समयमें हुये। उन्होंनें अन्तिम चौहान राजेश्वर पृथ्वीराजकी बहिन विवाही थी और शहाबुद्दीन गोरीके युद्धमें अपने सालेको सहायता दी थी
बद्धा गोरिपतिं दैवात् स्वर्यातः सूर्यबिंबभित्॥ २७ ॥
भीखारासा पुस्तकेस्य युद्धस्योक्तेस्तु विस्तरः

यह श्लोक समरसिंहजीके संबन्धमें एक हस्तलिखित पुस्तकमें था जो पं० मोहनलाल पण्डाजीने हाडौति और टौंकके एजन्टके अनुरोधसे सर जान मियरको झालावाडके भाटसे १५) रुपयेमें खरीद कर दी थी।

(इतिहास मेवाड १७। १८ पृष्ठ)

भारतका जो सत्यानाश आरंभ किया उसका शोचनीय वृत्तान्त भारतसन्तानके रुधिरसे लिखा रह कर आजतक दमकके साथ विराजमान हो रहा है ।

कैदमें जानेके पीछे महाराज पृथ्वीराजका क्या हुआ ? इसके सम्बंधमें दो मत हैं । टाडसाहब लिखते हैं कि " शत्रुने पकडकर पृथ्वीराजको मार डाला, उनकी प्रिय भार्या संयुक्ता उनके साथ सती हो गई ।" राजा शिवप्रसाद बनारसी भी इसी बातको मानते हैं । दूसरा मत यह है कि केवल पृथ्वीराजको कैद ही कर लिया, मारा नहीं, गलेमें सौ मनका तोक और बेडी हथकडी डालकर गजनीके जेलखानेमें रक्खा । वहींपर एक साथ शहाबुद्दीन, कविचंद और महाराज पृथ्वीराजकी मृत्यु हुई । इस प्रकारका लेख पाया जाता है । कि जिस समय युद्ध हो रहा था उस समय चंद वरदाईका देवीके मंदिरमें जाना ऊपर लिख आये हैं । चंदने वहां बैठकर "रासा" ग्रन्थ सम्पूर्ण किया । फिर मंदिरसे बाहर आनकर देखा तो समस्त दिल्लीको उजडा पाया तथा यह भी सुना कि यवनगण राजाको कैद करके गजनी ले गये. चंदने विचार किया कि राजाको किसी उपायसे अवश्य ही छुटाना चाहिये वहांपर जाकर कविवर चंदने अतिचतुराईसे पृथ्वीराज महाराजसे मिलनेकी आज्ञा बादशाहसे ले ली जाकर देखा कि दुष्टोंने राजाकी आँखें फोडकर अंधा कर दिया है । गलेमें सौ मनकी जंजीरें पडी हुई हैं । यह देखकर चंदको अत्यन्त दुःख हुआ अपने मिलनेके लिये कविवर चंदका आना सुनकर जो सुख महाराज पृथ्वीराजको हुआ वह लिखनेमें नहीं आता । जंजीरोंके बोझ और अन्धे हो जानेसे महाराज अत्यन्त दीन हो रहे थे । परन्तु चंदके निकट जाते ही वह अत्यन्त सावधान हुए व सर्व दुःख और विपत्तियोंको भूलकर अतिप्रेमके साथ मित्रसे मिले । फिर दोनोंमें अपने सुख दुःखकी वार्ता चली, शहाबुद्दीनके जासूसने यह समस्त समाचार बादशाहसे कहा । जब शहाबुद्दीनने सुना कि चंदके देखनेसे राजा जंजीरोंको कुछ न मान उठकर मिला तब हुकम दिया कि और भी ज्यादा वजनकी बेडी राजाके डाली जायँ । परन्तु चंदने जाकर बादशाहसे विनती करी कि "दृष्टि जानेसे राजा सब प्रकार कर्तव्यहीन हो गया, अब उसको अधिक पीडा देना आपसे वीरलोगोंको उचित नहीं है । " इस प्रकारकी उत्तम व मधुर वाणी सुनकर बादशाहने डेढ सौ मनकी बेडी डालनेकी आज्ञा न दी । तत्पश्चात् चंदने बादशाहसे कहा "मैं इस कारणसे यहाँ आया हूं कि राजाको इस दुःखके वक्तमें तसल्ली दूँ, लेकिन आँखोंके जानेसे राजा सम्पूर्णतः दीन हीन हो रहा है उसपर यह भारी वजनकी बेड़ियोंने उसको और भी दुःख दे रक्खा है । राजाको कैदसे रिहाई देकर उससे बडे २ चमत्कार सीखिये, वह अत्यन्त गुणवान् है शब्दवेधी होनेसे उसका शरसन्धान अत्यन्त तीव्र है यद्यपि वह अंधा हो गया है तथापि सौ सौ मन वजनके सात तवे तला ऊपर रक्खे हुए अवश्य ही वेध कर देगा । यह अद्भुत कार्य देखनेके लायक है । "शहाबुद्दीनने जब इस कर्त्तव्यको देखनेका निश्चय किया तब चंदने कहा कि " इस समय पृथ्वीराज असमर्थ हो रहा है उनके हाथ पांवोंकी जंजीर निकालकर पुष्ट भोजन दिया कीजिये तब वह अवश्य ही इस प्रकारके

कौतुक दिखावेंगे। " यह सुनकर शहाबुद्दीनने ऐसा ही करनेकी आज्ञा दी और इस प्रकार भोजन पानेसे महाराज शीघ्र ही पूर्ववत् सामर्थ्यवान् हो गये। फिर चमत्कार देखनेकी तारीख मुकर्रिर की। तारीख आनेपर महाराज पृथ्वीराजको तीर कमान देकर सब तैयारियां की गई। राजाने धनुष हाथमें लेकर जैसे ही कमान चढाई कि तत्काल टूट गई। दूसरा धनुष दिया गया, वह भी टूट गया, इस प्रकार सात आठ धनुषोंके टूट जानेपर शहाबुद्दीनने स्वयं महाराज पृथ्वीराजका धनुष मँगवा दिया। यह धनुष तातारखां यहांपर लाया था भंडारमें रक्खा हुआ था। यद्यपि यह वेधकार्य देखनेका उत्सव किया गया तथापि इस समय महाराजको वही पूर्वोक्त १०० मनकी जंजीर हाथ पांवमें पहिरा दी थी। इस चमंत्कारको देखनेके लिये दरबारमें अत्यन्त भीड हुई। स्वयं शहाबुद्दीन सजे हुए एक ऊंचे मंचपर सिंहासन बिछाकर बैठा, दूसरी ओर सात तवे रक्खे गये तवेपर कंकडी मारकर आवाज की जाय, तब शहाबुद्दीन, 'शाबास' कहकर महाराज पृथ्वीराजको उत्साह दे, और तत्काल महाराज पृथ्वीराज तीर छोडकर उन तवोंको वेधें; कविचंदने इस प्रकारसे शहाबुद्दीनसे निश्चय कर रक्खा था। हाथ पांवमें जंजीरें डालकर महाराज पृथ्वीराजको चौकमें खडा किया था, उनकी दाँईओर कवि-श्रेष्ठ चंद खडे थे, आस पास शहाबुद्दीनके पहिरेदार हथियार लगाये हुए खडे थे, निशाना लगानेसे पहिले कविचंदने महाराज पृथ्वीराजको अपनी भाषाकी कवितामें इस प्रकार सूचित किया।

दोहा—चार वंश चौवीस गज, अंगुल अष्ट प्रमान॥
एतेपर सुलतान है, मत चूके चहुँआन॥

और भीः—

इही बाण चहुआन, राम रावण उत्थप्यो।
इही बाण चहुआन, कर्णशिर अर्जुन कट्यो॥
इही बाण चहुआन, शंभु त्रिपुरासुर सँध्यो।
इही बाण चहुआन, भ्रमर लछमन कर वेध्यो॥
सो बाण आज तो कर चढ्यो, चढे विरद सांचो चवे।
चहुआन राज संभर धनी, मत चूके मोटे तवे॥

प्रगट रूपसे चंदकी कवितासे दुराग्रह नहीं पाया जाता परंतु महाराज पृथ्वीराज इसके गूढार्थको समझे। निश्चय होनेके अनुसार तवेपर कंकड मार आवाज करनेपर बादशाहने अत्यन्त उत्कंठासे मंचसे बाहर शिर निकाल करतब देखनेके लिये चंदकी पूर्वसूचनाके अनुसार "शाबास"! कहकर उत्साह दिया। इतनेमें महाराज पृथ्वीराजने मुँह फिराकर धनुषसे बाण चलाही तो दिया, वह बाण शहाबुद्दीनका मस्तक वेधकर पार निकल गया। बादशाह अचेत होकर मंचसे नीचे गिरा और तत्काल मर गया.

बादशाहकी मृत्यु होते ही बडा अनर्थ हुआ सारे दरबारमें हाहाकार मच गया। शहाबुद्दीनके सिपाही पृथ्वीराजके ऊपर धाये। चन्द और पृथ्वीराजने पहिले ही यह विचार कर लिया था कि म्लेच्छके हाथसे मरनेपर सद्गति नहीं मिलेगी। इस कारण चंदने महाराज पृथ्वीराजका मस्तक खड्गसे उडाया और साथ ही महाराजके खड्गसे कविचंदका मस्तक पृथ्वीपर गिरा। इस प्रकार भारतके यह दोनों महावीर एक साथ समाप्त हो गये।

इस प्रकारसे इस नाटकका पिछला अंक समाप्त हुआ। टाडसाहब और दूसरे इतिहासोंमें जो भेद है वह ऊपर दिखलाया गया। इस भेदके दो कारण हैं। टाड साहबका इतिहास ज्यादातर मुसलमानी तवारीखोंसे सहारा लेकर बना है। ऐसा मालूम होता है कि मुसलमान लोगोंने अपना अपमान समझकर इस उपरोक्त ऐतिहासिक वृत्तान्तको छिपाया है। टाडसाहबके ग्रन्थको ध्रुव सत्य माननेवाले लोग भी उपरोक्त वृत्तान्तको सम्पूर्णतः नहीं समझते हैं। ऐतिहासिक लोगोंके आगे इस समय यह प्रमाण आता है कि भट्टलोगोंके ग्रन्थोंमें यह वार्ता लिखी है तथा जयपुरमें इस वृत्तान्तके चित्र भी खैंचे जाते हैं। जो चित्र आगेके पृष्ठमें दिया जाता है, यह एक फोटोग्राफसे उतारा गया है। तथा यह फोटोग्राफ जिस तसबीरसे लिया गया है उसको जयपुरके एक चित्रकारने एक सौ वर्ष पहिले खैंचा था। हमने दोनों मतकी बातें सामने उतार धरी हैं अब इसमें सत्यासत्यका निर्णय करना पाठकगणोंपर निर्भर है।

यवनगणोंने भारतके शोभायुक्त नगर ग्राम व मंदिर चूर्ण कर दिये। भारतके असीम धन रत्नको लूट लिया,—भारतसन्तानके हृदयका रुधिर चूंस लिया! मानो समस्त भारत एक बडा भारी श्मशान बन गया!—मानों एक सर्वसंहारकारिणी बिकट पिशाची भयंकर मूर्ति धारण करके भारतके घर घरमें घूमने लगी! जिन पवित्र वस्तुओंका भोगादि देवताओंको लगाया जाता था नीच पुरुष जिन्हें छूने भी नहीं पाते थे, पापी म्लेच्छोंने उन वस्तुओंको तोड ताडकर पाँवोंसे ठुकराया! जो सुन्दर वस्तुएँ भारतके शिल्पमें कारीगरीका नमूना थीं कठोर हृदयवालोंने उन सबको ध्वंस कर दिया! मानो भारतका प्रलयकाल आ पहुंचा! परन्तु इस भयंकर प्रलयकालके कठोर अत्याचारोंको सहकर भी आर्यवीर राजपूतोंका जातीय जीवन वीरभावसे स्थिर रहा, तथा यथाकालमें यवनलोगोंको इस अत्याचारका बदला भी भली भांतिसे दिया गया। वह महान् तेज किसी भांतिसे नष्ट नहीं हुआ।—यद्यपि यह आज अत्यन्त तेजहीन हो गया है, परन्तु कौन कह सकता है कि वह कलको दूने तेजसे प्रकाशित न होगा! प्रतीच्य जगतकी वीरता और स्वाधीनताके विहारस्थान रूम और ग्रीस पतित हुए थे परन्तु उनका जातीय जीवन नष्ट नहीं हुआ था। इसी कारणसे वह दोनों फिर उन्न-

तिको पहुंचे हैं ! फिर क्या भारत-वीरता सत्यता, स्वाधीनताकी आदि जननी-भारत-भूमि फिर न उठ सकेगी नहीं नहीं यह अलीकस्वप्न ! और उन्माद प्रलाप है ! !

जिनके हाथमें धनुष बाण हैं, गलेमें जंजीर पड़ी है, जो बीचमें खडे हैं, यह महाराज पृथ्वीराज चौहान हैं । शहाबुद्दीन गोरी ने इनको अन्धा कर दिया है । महाराज पृथ्वीराजके सामने भाला हाथमें लिये कविवर चन्द विराजमान हैं। पृथ्वीराजके सामने बाँई ओर लोहेके सात तवे टंगे हैं। उनको बाण मारकर वेधनेका निश्चय किया गया था। पृथ्वीराजके सामने ही ऊंचे स्थानपर शहाबुद्दीन गोरी दरबारियोंसहित बैठा है, महाराज पृथ्वीराजका बाण बादशाहके मस्तकमें लगा जिसके लगनेसे वह तसबीरमें नीचे तख्तसे गिर रहा है फिर नीचेकी ओरसे परस्पर एक दूसरेकी गर्दनमें खड्ग मार रहे हैं वे पृथ्वीराज चहुआन और चंद भट्ट हैं राजपूतलोग स्वभावसे ही तेजस्वी होते हैं। उनका हृदय धीरता गंभीरता इत्यादि गुणोंसे शोभायमान होता है । इन्हीं कारणोंसे वे कठोर अत्याचार सहन करके भी शत्रुसे बदला लेनेके लिये अवसर देखते रहते हैं कभी तो राजपूत वीरोंने प्रचंड उद्यम व कठोर वीरतासे शत्रुकुलका संहार किया है, कभी निरुपाय और आश्रयहीन होकर वीरभावसे कठोर अत्याचारको अपने ऊपर सहन किया है । इनके विक्रमसे मुसलमानोंकी शतशः राजधानियें धूरिमें मिल गई हैं । कितने ही मुसलमानोंका वंश एक साथ लोप हो गया है। परन्तु इन सब बातोंका कोई भी फल नहीं हुआ । उन उजडे हुए स्थानोंमें नये राज्य बस गये । यह समस्त वंश अत्यन्त ही अत्याचारी हुए, सबने हिन्दुओंसे वैरभाव किया । जिस पाशवी स्वभावसे उनके पूर्व स्वजातीय चलायमान होते थे । उस ही स्वभावसे उनका हृदय कठोर होने लगा। उस पाशवी प्रवृत्तिके कुटिल नेत्रोंके आगे पाप पुण्य धर्माधर्म और न्यायान्यायका विचार कुछ भी नहीं है ! उन्होंने अपनी स्वभावकी दुर्नीतिसे नरहत्याको पवित्र माना है-परसम्पत्ति हरण और परदारा हरण उनकी समझमें न्यायका कार्य है इस भयंकर दुर्नीतिके पीछे चलकर यवनलोगोंने भारतकी पवित्र छातीपर जो जो भयंकर उत्पात किये थे, उन उत्पातोंके सब संहारक प्रभावसे कितने ही हिन्दूराज्य और राजवंश समयके अनन्त सागरमें न जाने किधरको डूब गये हैं ! आज तो उनका नाम ही नाम सुना जाता है ।

पृथ्वीपर ऐसी कौनसी जाति है, जो वीरता धीरता महानता सहनशीलतामें राजपूतकुलके समान हो सकती है ? और कौनसी जाति है जिसने सैकडों वर्षतक दासभावसे रहकर तथा अनेक अत्याचारोंको सहन करके अपने पितृपुरुषोंकी तेजस्विता सभ्यता अथवा आचार व्यवहारकी बराबर रक्षा की है, यद्यपि राजपूतवीरोंका स्वभाव प्रचंड और निडर है तथापि वे प्रयोजनानुसार सहनशीलताको ग्रहण करके अत्याचारको सहते हुए वैर लेनेके कारण अवसर ही तलाश किया करते हैं । जिन लोगोंके धर्मग्रंथ नर-

हत्या और संसारको संहार करनेका विधान बताते हैं इस प्रकारके पाषाणहृदयवाले असभ्य शत्रुओंके द्वारा जिस प्रकारके कठोर अत्याचार हो सकते हैं और रक्त मांससे बने हुए मनुष्यका हृदय जहांतक उन अत्याचारोंको सहन कर सकता है संसारके इतिहासको खोलकर देखो, तत्काल दिखाई देगा कि इस विशाल संसारमें केवल एक राजस्थान ही उसका नमूना है, निर्दयी, निठुर यवन लोगोंके पैशाचिक अत्याचारसे राजस्थानके कितने ही जनपद कितने ही नगर और कितने ही गांव सम्पूर्णतः श्मशान बन गये हैं । बहुतसे राजपूतकुलोंका नामनिशानतक मिट गया है । परन्तु केवल राजपूतोंके जातीय जीवनकी रक्षा होनेसे अमितप्रभाव सैकड़ों उपद्रवोंको सहन करके भी स्थितिस्थापक पदार्थके समान फिर भी तत्काल चैतन्य हो गया है, समस्त विघ्न, विपत्ति और अत्याचारोंने शानशिलाकी नाईं उनके साहसरूपी अस्त्रको सहस्रगुण तीक्ष्ण कर दिया है । रोमनलोगोंके एक ही आघातसे प्राचीन ब्रिटनगण घोर अवनतिको पहुंच गये थे, उस दारुण अवनतिसे निकलकर उन्नति प्राप्त करनेमें और रोमनलोगोंके कराल कौरसे अपने प्राचीन धर्म और रीति नीतिका उद्धार करनेके लिये उन्होंने कितने परिश्रम किये थे ? परन्तु सब ही निरर्थक-कोई चेष्टा फलवती नहीं हुई । रोमन लोगोंकी अधीनतारूपी जंजीरसे वे छूटना ही चाहते थे कि इतनेमें ही शाकसेन लोगोंने उन्हें अपने दासपनकी बेड़ियाँ पहिरा दीं, परन्तु इससे भी छुटकारा नहीं मिला फिर देनामार लोगोंने आकर इनके बंधे बंधाये हुए शरीरको और भी जकडकर बांधा, इसके उपरान्त इन जेत और विक्रीत दलोंके संयोगसे जो कई एक संकरजातियें उत्पन्न हुईं, उन सबको दुर्द्धर्ष नार्मन लोगोंने उजाड दिया, केवल एक ही युद्धमें उनके भाग्यकी मीमांसा हो गई । वे जन्मभूमिसे निकाले गये, अथवा नया राज्य जीतकर उसमें जा बसे, उनकी रीति नीति उनका धर्म जीतनेवालोंके धर्ममें लोप हो गया । परन्तु आर्यवीर राजपूतलोगोंके साथ उनका मिलान करके देखिये कि वे किसी भांतिसे इनकी समानता नहीं पा सकते । अपने कितने ही राज्योंसे राजपूतलोग अलग हो गये, तथापि कभी तिलभर भी उन्होंने अपने बडे बूढोंके सनातन धर्म और आचार विचारको नहीं छोडा । इनके कितने ही राज्य एक साथ राजपूतानेकी अधिकारसीमाके नकशेमेंसे सदाके लिये निकल गये हैं ।

जातिवैर स्वदेशद्रोहिताका विषमय फलस्वरूप गर्वित राठौरोंका अहंकारयुक्त कन्नौजका तथा गौरवान्वित चालुक्य राज्यके अनहल बाडेका आज केवल नाम ही नाम शेष रह गया है, अकेले मेवाडने ही पवित्र धर्मके अटल दुर्गमें सैकडों उपद्रवोंको सहन करके भी रक्षाके बदले कभी अपने प्राचीन गौरवको नहीं खोया है उस ही महान् पुण्यके बलसे आजतक मेवाड दृढतासे विराजमान है, जिस दिनसे आर्य-

वीर समरकेसरी महाराज समरसिंहने स्वदेशानुरागके स्वर्गीय मंत्रका सिद्ध करनेके लिये संग्रामभूमिमें अपने प्राण दिये, उस दिनसे मेवाड़भूमिके उस गौरव धर्म और उस स्वाधीनताकी रक्षाके लिये उनके वंशधरगण आनन्दसे अपने हृदयकी रुधिरधाराको निकालते चले आये हैं।

महाराज समरसिंहकी मृत्युके पीछे उनकी विधवा रानी कर्मदेवीने थोडे दिनतक राजकार्य किया, जबतक राजकुमार कर्ण * समर्थ नहीं हुए तबतक राजका भार रानीके ही हाथमें रहा, रानी कर्मदेवीका जन्म पत्तनके राजकुलमें हुआ था, अपने पिताके महान् वीरकुलसे भी महान् कुलमें वे समपर्ण की गई थीं, वीरनारी वीरदुहिता वीरवधू वीरवती कर्मदेवीने अपने पिता और पतिके गौरवकी रक्षा करनेमें किञ्चित् भी आलस्य नहीं किया, पुत्रकी बाल्यावस्थामें जब राज्यका भार महारानीके हाथमें था उस समयमें जो अद्भुत वीरता उन्होंने दिखलाई थी इसी कारणसे उनका नाम वीरनारी राजपूत बालाओंका शिरमौर बना हुआ है,महारानीके उस अपूर्व विक्रमके प्रभावसे वीरवर कुतुबुद्दीन घायल हो हार मान अत्यन्त कठिनतासे अपने प्राण लेकर भागा था, मेवाडपर चढाई करनेके अभिप्रायसे यवन प्रतिनिधि सेनासहित चला आता है, यह समाचार शीघ्र ही महारानी कर्मदेवीने सुना, घृणा रोष और वैर स्मरण करके उनके रोम रोमसे अग्निकी चिनगारिये निकलने लगीं, महारानीने भली भांतिसे उनके दुराचारका फल देनेके लिये अपने सिपाही और सामन्तोंको बुलाय संग्राम करनेकी आज्ञा दीं, और स्वयं भी संग्राम करनेको तइयार हुई महारानीने अपने सुकुमार शरीरपर लोहेका बख्तर पहरा, जिन हाथोंमें मणि मुक्तासे जडे कंकन शोभायमान होते थे आज उनमें लोहेके हथियार लिये गये, बाल खोले भयंकररूप धारण किये घोडेपर चढ़कर महारानी कर्मदेवी रणचंडीके वेषसे यवनदलका संहार करनेको संग्रामभूमिमें आई, नौ क्षत्रियराजा और रावत उपाधिधारी ग्यारह सामन्त उनकी सहायता करनेके लिये साथ आये। महारानी कर्मदेवीने अम्बरके निकट कुतुबुद्दीनकी सेनाको देखा, वैसे ही वह अपनी सेनाको सजाय युद्ध करनेके लिये खडी हो गई. क्रमानुसार दोनो दलोंमें घोर संग्राम होने लगा, महारानीकी सेनासे संग्राम करके कुतुबुद्दीन घायल हुआ, उसकी सेना तित्तर बित्तर होकर चारो ओरको भाग गई, बडी कठिनाईसे नवाबका प्राण बचा। कुमार कर्ण समर्थ हुए, संवत् १२४९ (सन् ११९३ ई०) में वहां पिताके सिंहासनपर बैठे, परन्तु विधाताकी कठोर लिपिसे उनके वंशवाले मेवाडमें

* समरसिंहके कई पुत्र उत्पन्न हुए थे, बडा पुत्र कल्याण तो पिताके साथ ही संग्राममें मारा गया, दूसरा कुंभकर्ण पिताके राज्यको छोड दक्षिणपर्वतमें विदौरके निकट जा बसा, तीसरेने भारतके उत्तरमें जाकर गोरक्षकुलकी प्रतिष्ठा की सबसे छोटा पुत्र कर्ण घर रहा ।

प्रतिष्ठा नहीं पा सके * बहुधा समस्त भट्टग्रंथोंमें ही देखा जाता है कि कुमार कर्णसिंहके माहुप और राहुप दो पुत्र उत्पन्न हुए थे, परन्तु विशेष विचार करनेसे यह बात ठीक प्रमाणित नहीं जान पडती, महाराज समरसिंहके सूर्यमल्लनामक एक भ्राता थे, इनके भरतनाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ, समरसिंहके पुत्र कर्णसिंहका विवाह चौहानवंशकी एक राजकुमारीके साथ हुआ था, इस राजकुमारीके गर्भसे माहुपका जन्म हुआ, जब कर्णसिंह मेवाडके राजसिंहासनपर बैठे तब सरदार लोगोंने कपटजाल फैलाकर भरतको मेवाडसे निकाल दिया, भरत सिन्धुदेशकी ओर चला गया, सिन्धुदेशके अरोर नगरमें उस समय एक मुसलमानका राज्य था, भरतको उस मुसलमानने अरोर नगर दे दिया, पुगल भट्टराजकी बेटीसे भरतका विवाह हुआ था, इस शुभ विवाहका फल राहुप हुआ। महाराज कर्णसिंह भरतको पुत्रसे भी अधिक प्यार करते थे, जिस दिन भरत कर्णसिंहको राजके समय छोड गया उस दिनसे कर्णसिंहका हृदय अत्यन्त दुःखित रहने लगा, फिर इसके ऊपर एक मानसिक पीडा और भी आ पडी, कर्णसिंहका पुत्र माहुप अत्यन्त निकम्मा था, दिन रात मामाके यहां पडा रहता था,एक तो भरतके वियोग और शोकसे उनका हृदय अत्यन्त पीडित रहता था, तिसपर पुत्रकी यह दशा ? मर्माहत महाराज कर्णका हृदय दिन २ दुर्बल होने लगा, अन्तमें इस लोकसे बिदा होकर सब दुःखोंसे छूट गये।

महाराज कर्णसिंहने अपनी इकलौती बेटीका विवाह कालौरके सौनगढ वंशवाले सरदारके साथ किया था, इस राजकुमारीके गर्भसे रणधवल नाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ, सौनगढके सरदारको अभिलाषा थी कि अपने पुत्र रणधवलको चित्तौरके सिंहासनपर स्थापन करूं, प्रतिदिन इस अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये शुभ अवसरकी बाट जोह रहा था, कि इतने में ही वह अवसर आ पहुंचा; महाराज कर्ण परलोक सिधारे, उनका सिंहासन सूना हुआ, यह समस्त समाचार विदित होनेपर भी माहुप सिंहासनपर अधिकार करनेके लिये न आया,इसी अवसरमें क्रूरकर्म कर्ण कालौर सर्दारने चित्तौरके प्रधान प्रधान सरदारोंको मारकर अपने पुत्रको उस सिंहासनपर स्थापित किया, गिल्हौरकुलकेसरी बीरवर वप्पाका सिंहासन क्या साधारण सरदारके अधिकारमें रहेगा. यदि यही होगा तो मेवाडसे एक साथ ही गिलहौरका नाम लोप हो जायगा यह गंभीर चिन्ता राजपरिवारके एक प्राचीन भट्टके मनमें उदय हुई, उसने इस होनहार अनर्थको रोकनेके लिये वृद्ध भरतके निकट गमन किया, और उनको सब समाचार सुनाकर कहा कि आप शीघ्र ही मेवाडके राज्यमें चलिये, भरतने शीघ्र ही सिन्धुदेशीय सेनाके साथ अपने पुत्रको चित्तौरकी ओर भेजा, इस ओर सौनगढके सरदार इस बातको जानकर राहुपके

---

* महाराज कर्णके श्रीवाननाम एक पुत्रने वणिकवृत्ति अवलम्बन की थी इसके वंशवाले श्रीवानियां नामसे प्रसिद्ध हैं।

अभिप्रायको व्यथ करनेके लिये सेनासहित आगे बढा, मार्गमें पल्लीनामक स्थानमें दोनों दलोंके मध्य मुठभेर हुई युद्ध होने लगा, विजयलक्ष्मी राहुपकी अंकशायिनी हुई, इस शुभ समाचारके पाते ही चित्तौरके सरदार और सामन्तगण बडे आनन्दके साथ विजयी राहुपकी जयपताकाके निकट एकत्रित हुए और उनको उद्धार करनेवाला जानकर चित्तौरके सिंहासनपर अभिषिक्त किया, राज्यपदपर प्रतिष्ठित होते ही राहुपने अपने पिता माताको लानेके लिये सिन्धुदेशमें दूत भेजा अनन्तर संवत् १२५७ (सन् १२०१ ई०) में महाराज राहुप चित्तौरके सिंहासनपर विराजमान हुए, राज्याधिकार प्राप्त होनेके कुछ दिन पीछे उन्होंने यवन सेनापति शमशुद्दीनके साथ घोर संग्राम किया, यह संग्राम नगरकोटके मैदानमें हुआ था, संग्राममें राहुपकी जीत हुई, राहुपके राज्यकालमें मेवाडमें दो महान् फेरफार हुए, अबतक तो मेवाडका राजकुल केवल गिल्हौट नामसे पुकारा जाता था परन्तु महाराज राहुपके समयमें गिल्हौटके बदले शिशोदीय नाम * प्रसिद्ध हुआ, दूसरी बात यह कि इस समयतक गिल्हौटके राजाओंकी रावल उपाधि होती थी, परन्तु अब यह राणा नामसे पुकारे जाने लगे, इन नये नामोंके प्राप्त होनेका वृत्तान्त नीचे लिखा जाता है ।

मुन्दराधिपति परिहार राजमुकुल राणा राहुप महाराजका एक प्रचण्ड शत्रु था उसके घोर वैराचारसे अत्यन्त पीडित हो महाराज राहुपने सेनासहित उसके राज्यपर चढाई की और भलीभांतिसे पराजित कर उसकी राजधानीमें उसे कैद कर लिया, राणा मुकु-लने अपने छुटकारेके बदले अपनी राज्य उपाधि और गदवाड नामक समस्त देश विजयी राहुपको दे दिया, अनन्तर महाराज राहुपने अपने नगरमें लौटकर विजयके चिह्नरूप राणा उपाधिको धारण किया, तबसे गिल्हौट कुलके राजा राणा कहे जाने लगे, महाराज राहुप अडतीस वर्षतक राज्य करके परलोक सिधारे, मेवाड राज्यके नष्ट हुए गौरवका उद्धार करके घोर संकटके समय उन्होंने इस प्रकार चतुराईसे राज्य काजका संचालन किया कि जिससे उनके राज्योचित गुण भलीभांतिसे विदित होते हैं ।

महाराणा राहुपसे नौ पीढी पीछे राणा लक्ष्मणसिंह हुए * यह नौ पीढी आधी शताब्दीके मध्यमें व्यतीत हो गई, इनमेंसे छः महापुरुषोंने तो संग्रामभूमिमें अपने प्रा-ण गमाये, यवनलोगोंके अपवित्र ग्राससे पवित्र गया तीर्थको उद्धार करनेके लिये उस ही पवित्र तीर्थमें उन राजोंने अपने शरीरको बलिहार कर दिया था, इन छः राजपूत वीरोंमें जिस महापुरुषने अपने हृदयका रुधिर बहाकर सनातन धर्मकी रक्षा की थी उसका नाम पृथिवीमल्ल था, स्वधर्मप्रेमी और स्वधर्मानुरागी इन कई एक राजपूत वीरोंके

* शिशोदा नामके एक नगरसे शिशोदीय नामकी उत्पत्ति हुई है । यह शिशोदा नगर मेवाडके पश्चि-मकी ओर पर्वतमालामें वसा हुआ है, कहते हैं कि मेवाडके किसी निकाले हुए राजाने बहुत देरतक पीछा करके यहांपर एक शशक (खरगोश) वध किया था उसीके स्मारकरूप इस स्थानमें शशदा (शिशोदा) नाम एक नगर बसाया ।

* मेवाडके रहनेवाले चलितभाषामें इनको राणा लक्खमसी कहते हैं ।

प्रबल धर्मानुराग और प्राण निछावरका महान् उदाहरण देखकर यवनगण भीत और स्तंभित हुए थे, इसी कारणसे उन्होंने महाराज पृथिवीमल्लकी देह छूट जानेके पीछे बहुत दिनोंतक सनातन धर्मपर हाथ नहीं डाला। यही कारण है जो अलाउद्दीनके समयतक सनातन धर्मावलम्बियोंने बहुत दिनतक निर्विघ्नतासे अपने धर्मका अनुष्ठान किया, परन्तु इस शान्तिमय समयके बीचमें भी एक बार चित्तोरनगर शिशोदीय कुलके हाथसे निकल गया था, भट्टग्रन्थोंमें देखा जाता है कि राहुप और राणा लक्ष्मणसिंहके मध्यवर्ती समयमें सिंह × नामक एक शिशोदीय राजाने अपने पितृपुरुषोंकी निवासभूमि चित्तौरनगरीका पुनः उद्धार करके प्रजाको अपनी राणा उपाधि स्वीकार करानेके लिये विवश किया था, इससे स्पष्ट विदित होता है कि उपरोक्त राजाके समयसे पहले चित्तौर किसी दूसरी जातिके अधिकारमें था, महाराज राहुप और लक्ष्मणसिंहके मध्यवर्ती कालमें जो ना राजा हुए थे उनके मध्यमें केवल दो बातें प्रसिद्धिके योग्य हुई थीं, इनके अतिरिक्त और जो वृत्तान्त पाया जाता है उसके पढनेसे प्रमाणित होता है कि उनका राज्य अनेक प्रकारके उपद्रव और झगडे झंझटसे व्याकुल था, किसी विशेष विवरणके न मिलनेसे इस समय हम मेवाड़ इतिहासके दूसरे प्रसिद्ध वंशकी समालोचना करते हैं, यद्यपि यहांका वृत्तान्त सम्पूर्णतः ऐतिहासिक है परन्तु आदिसे अन्ततक इस प्रकारकी औपन्यासिक सुन्दरतासे शोभायमान है कि जिसके देखनेसे यही प्रतीत होता है कि मानो हम एक उपन्यास पढ रहे हैं।

पञ्चम अध्याय ५.

राणा लक्ष्मणसिं –चित्तौरपर अलाउद्दीनकी चढ़ाई; अलाउद्दीनकी दगाबाजी। भीमसिंहको उद्धार करनेके लिये चित्तौरके सरदारोंका खड्ग पकड़ना; राणाजी तथा उनके पुत्रोंका अपूर्व आत्मोत्सर्ग; तातारवालोंका चित्तौरको उजाड़ना; राणा अजयसिंह;– हमीर;–हमीरको चित्तौरकी प्राप्ति;–मेवाड़की प्रसिद्धि;-श्री वृद्धिका वर्णन-क्षेत्रसिंह-लाक्षम।

राणा लक्ष्मणसिंह संवत् १३३१ (सन् ११७५ ई०) में चित्तौरके सिंहासनपर बैठे। यहांपर यह कहना उचित होगा कि इनके समयमें चित्तौरके लिये एक नये युगका

× भनसिंहके दूसरे पुत्र चंद्रको चम्बल नदीके किनारे एक भूमिवृत्ति मिली थी, इसके वंशवाले चन्द्रावत नामसे प्रसिद्ध हैं यह वंश मेवाडके पराक्रमी सामन्तोंमें गिना जाता है इनकी उस भूमिवृत्तिका नाम रामपुर (भनपुर) है इसकी वार्षिक आय नौ लाख रुपया है।

अवतार हुआ । कारण कि जो चित्तौर पहले वीरविक्रम और स्वाधीनताका दुर्गम दुर्ग था, भारतकी अन्यान्य नगरियें यद्यपि यवनोंके कठोर अत्याचारसे ऊजड हो गई थीं, तथापि इतने दिनतक जो चित्तौर सही सलामत था, बेरहम, दुराचारी, कठोर अलाउद्दीनके गुस्सेकी आगमें आज वही चित्तौर सम्पूर्णतः भस्म हो गया । इस हिन्दूवैरी बादशाहने दो बार चित्तौरपर अपनी चढाईका वार किया था । यद्यपि इस ही पहली चढाईमें मेवाडके प्रधान २ वीरोंने चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये अपने २ प्राण दे दिये थे, तो भी अलाउद्दीन चित्तौरको हाथ नहीं लगा सका था; अत एव उसके सर्वसंहारक ग्राससे यह नगर निकल आया । उसके पश्चात् दूसरी चढाई हुई—मुसलमानोंकी इस दूसरी चढाईसे चित्तौरनगर ध्वंस और ऊजड हो गया । चित्तौरकी सारी सुन्दरता नष्ट हो गई ।

राणा लक्ष्मणसिंह छोटी उमरमें ही युवराज हुए थे । जबतक यह समर्थ न हुए तबतक इनके चचा भीमसिंह ही राजकार्य करते थे । राणा भीमसिंहने लोकललामभूता विख्यात रानी पद्मिनीसे विवाह किया था । महाराणी पद्मिनी चौहानकुलमें उत्पन्न हुई थी । उनके पिताका नाम हमीरशंख था । हमीरशंख सिंहलमें रहते थे । रानी पद्मिनीकी जगद्विख्यात सुन्दरता ही शिशोदीया लोगोंके लिये महा अमंगलदायक हुई । उनकी लावण्यता व सुन्दरताका यहांतक बखान था कि सारे भारतवर्षमें एक रानी पद्मिनी ही सर्वांगसुन्दर समझी जाती थी । इस पवित्र नामका गौरव राजपूतोंके वंशमें बराबर बढ़ता गया । आजतक बहुतसे राजपूत अपनी कन्या और बहिनोंका नाम पद्मिनी रक्खा करते हैं । देवांगनाके समान रानी पद्मिनीकी सुन्दरता, गुण गौरव, महिमा और मृत्युका वृत्तान्त व महारानीकी सम्पूर्ण बातें राजवाडेमें भलीभांतिसे प्रसिद्ध हैं । भट्टलोगोंने अपने ग्रंथोंमें वर्णन किया है कि "पद्मिनीको प्राप्तकरनेके लिये ही अलाउद्दीन चित्तौरपर चढा था नहीं तो वह डाह या यशकी प्राप्तिके लिये नहीं आया था। कहते हैं कि उसने चित्तौरको घेरकर सर्वत्र यह ढँढोरा फेर दिया था कि पद्मिनीको पाते ही अपने देशको मैं लौट जाऊंगा। परन्तु और२ग्रंथोंको देखकर विचार करनेसे जाना जाता है कि बहुत कालतक चित्तौरके घेरे रहनेसे जब कोई फल न हुआ तब अलाउद्दीनने यह ढँढोरा फेरा था । बादशाहकी ओरका यह समाचार पाते ही राजपूत क्रोधमें भरकर उन्मत्त हो गये थे । क्या जीवनकी जीवरूप गृहलक्ष्मी यवनकी अंकशायिनी होगी ? क्या देवकन्याको पापिष्ठ दनुज भोग करेंगे ? इस घृणित अपमानकारी प्रस्तावको कौन हृदयवान् अनुमोदन कर सकता है । क्या राजपूतगण वीर नहीं हैं ? क्या उनकी देह निर्जीव मांस पिण्ड है ? क्या उनकी नाडियोंमें पवित्र आर्यशोणित प्रवाहित नहीं होता है ? फिर

क्या वह इस घृणित प्रस्तावको मान लेंगे ?-कभी नहीं । दुराचारी अलाउद्दीनकी यह दुरभिलाषा सफल नहीं हुई, तथापि वह रानी पद्मिनीका ध्यान अपने हृदयसे दूर नहीं कर सका। फिर उसने यह प्रस्ताव किया कि रानी पद्मिनीकी मोहिनी परछाईंको दर्पणमें निरखते ही मैं चित्तौरसे कूच कर जाऊंगा। महाराणा भीमसिंहने इस बातको मान लिया।

अलाउद्दीन इस बातको भलीभांतिसे विश्वास करता था कि राजपूतलोग मिथ्यावादी या विश्वासघातक नहीं होते। इस विश्वासके बलसे वह कई एक शरीररक्षक ही अपने साथ लेकर चित्तौर नगरमें गया और स्वच्छ दर्पणमें रानी पद्मिनीकी मोहिनी परछाईं निरखते ही अपने डेरेको लौटा। जिस दुराचारी शत्रुसे चित्तौरको अत्यन्त हानि पहुंची, जिसने पवित्र राजपूतकुलमें घोर कलंक लगाना चाहा था आज वही अतिथि बनाया गया । अतिथि होनेके कारणसे ही आज वह निडर होकर चित्तौरमें आया। वीरहृदय तेजस्वी राजपूत महाराजने उसके समस्त अपराधोंको क्षमा करके इष्टमित्रके समान आदर सत्कार किया। जबतक शत्रु भी अतिथि-सत्कारकी रक्षा करेगा, तबतक वह भी मित्रसे अधिक प्यारा है। इसी कारणसे महाराणा भीमसिंहने अलाउद्दीनकी विशेष पहुनई की और उसको पहुंचानेके लिये सिंहपौरीतक चले गये। उस समय अलाउद्दीन भी महाराणा भीमसिंहसे अपना अपराध क्षमा कराने लगा इस प्रकारसे अनेक वार्तालाप करते २ महाराणा, बादशाहके साथ जारहे हैं कि इतने ही में एक गुप्त स्थानसे कितने एक अस्त्रधारी यवन सिपाहियोंने आकर असावधान राजपूतलोगोंको एक साथ ही बन्दी कर डाला, और शीघ्रतासे उन सबको अपने डेरोंमें ले गये। हा ! दुराचारी विश्वासघाती यवनोंने क्या राजपूतोंके पवित्र और गाढ़े विश्वासका यही बदला दिया। महाराज भीमसिंह जो कि सीधे साधे आदमी थे कपटी बादशाहके धोकेमें आगये। फिर उस दुराचारीने यह प्रचार कर दिया कि,—"पद्मिनीको पाते ही भीमसिंहको छोडे दिया जायगा नहीं तो नहीं।"

महाराजके बन्दी होनेका यह शोचनीय समाचार शीघ्र ही चित्तौरनगरमें फैल गया। चित्तौरनिवासी इस विषम समाचारको पाकर निराशासे विमूढ और भग्नहृदय हो गये। महाराज भीमसिंहकी मुक्तिके लिये क्या वह महाराणी पद्मिनीका त्याग करेंगे ? या अनन्त साहससे सहारा पाकर खड्गकी सहायतासे राजप्रतिनिधिका उद्धार करेंगे ? यदि उनका समस्त करा कराया विफल हो जाय यदि वह प्राणोंका दाव लगाकर भी भीमसिंहका उद्धार न कर सके ? तो फिर क्या होगा ? फिर क्या पद्मिनीको ही त्याग करना ठीक है ? राणाके सरदारगण इस प्रकारके अनेक विचार करने लगे। परन्तु कोई बात पक्की न हुई। इस ओर महाराणी पद्मिनीने भी

यह समाचार सुना । महाराणीजीका स्वयं इस विषयमें क्या विचार है, इस बातको जान लेनेके लिये सबलोगोंको उत्कंठा हुई । शीघ्र ही सबने सुना कि महाराणाका उद्धार करनेके लिये महाराणीजी बादशाहके पास चली जायँगी । इस समाचारके सुनते ही समस्त नगरवासी अत्यन्त विस्मित हुए । क्या पतिव्रता महाराणीजीने इस घृणित व्यवहारको स्वीकार कर लिया है ? क्या वे सब यथार्थ ही पापी यवनके हाथमें स्वर्गीय सतीत्व धनको समर्पण कर देंगी ? सिद्धान्त यह है कि उस समय महाराणीजीने अपने गूढअभिप्रायको सर्वसाधारणपर प्रकाशित नहीं किया । उनके पितृराज्यके दो कुटुम्बी चित्तौरमें रहते थे । उनमेंसे एक महाराणीजीके चचा थे जिनका नाम गोरा था और दूसरे उनके बादल नामक भ्राता थे। दोनो महाशय वीर होनेके साथ२ ही मंत्रणा-कुशल भी थे । महाराणीजीने इनको बुलाया और गुप्तपरामश करने लगी । इस गुप्तपरामर्शका यही प्रधान उद्देश्य था कि महाराणीजी किस प्रकारसे अपने पातिव्रतधर्मको बचाकर महाराणाका उद्धार करें । सुखकी बात है कि उद्देश्य सिद्ध हुआ । उन दोनों चतुर राजपूत वीरोंने जो विचार किया, उससे सती साध्वी पद्मिनीजीके पातिव्रतधर्ममें तिलमात्रका भी अन्तर न हुआ और महाराज भीमसिंह अलाउद्दीनके फंदेसे निकल आये ।

इसके उपरान्त शीघ्र ही अलाउद्दीनके पास दूत भेजा गया उस दूतने बादशाहके पास जाय शिर झुकाकर निवेदन किया कि" महाराज ! चित्तौरको आक्रमण करनेसे छोड़कर जिस समय आप अपनी फौजको उठा लेंगे महाराणी पद्मिनी उस ही दिन हजूरके पास आजावेंगी । " दूतने यह भी कहा "हजूर ! आप खुद बादशाह हैं और महाराणीजी भी राजपूतोंके आली खान्दानसे हैं, इस लिये दोनों तरफकी महमानदारी और खातिरदारीमें किसी तरहका दरंग न हो । वह अपने कुलशासनके साथ हजूरकी कदमबोसी हासिल करेंगी । राजपूतोंकी जो औरतें उनकी सहेली हैं, जो बिना उनके देखे लहमाभर भी नहीं जी सकती हैं वह सब उनको उम्रभरके लिये रुखसद करनेको इस डेरेतक उनके साथ आवेंगी । इनके सिवाय जो राजपूतोंकी मस्तूरात उनके साथ देहलीमें जायंगी, वह भी सब हमराह होंगी । वह सब खान्दानी औरतें हैं, उन्होंने कभी घरके बाहरतक कदम नहीं रक्खा; आज हजूरके हुक्मकी तामील करनेके लिये वह भी अपने पुश्तेनी रेवाजको छोडकर यहाँपर आवेंगी ।

हजूर अब सिर्फ इतनी ही गुजारिश है कि वे जिस तरहसे जहांपनाहके खुश करनेको अपने खानदानका तौरतरीका छोडकर यहांपर आती हैं वैसे ही हजूरको भी उनकी इज्जत आबरूहका खयाल रखना चाहिये । कहीं ऐसा न हो कि कोई बिलावजहकी दिल्लगी करनेको उनकी पालकीके पास जा पहुँचे । अगर ऐसा हुआ तो उनके कायदेमें खलल आ जायगा । "अलाउद्दीन इस बातपर राजी हो गया । मोहमयी

आशाके छलावेके फेरमें पडकर उसने एक बार भी न सोचा कि पतिव्रता हिन्दूललनागण अपने हाथसे अपने हृदयको भी छेद सकती हैं, हँसती २ अग्निकी शिखामें अपने प्राणोंका होम कर सकती हैं, तथापि प्राणोंसे तथा पुत्रसे भी अधिक प्यारे सतीत्व धनको नहीं छोड सकतीं।

इस साक्षात्के लिये जो दिवस निश्चय किया गया था वह आन पहुँचा। बातकी बातमें ७०० पालकी चित्तौरके द्वारसे बाहर निकलकर बादशाहके डेरोंकी ओरको आने लगीं। प्रत्येक पालकीमें कपटवेष धारण किये और गुप्त हथियार लगाये हुए छः छः सैनिक कहार लगे हुए थे। यह सब सिपाही थे। प्रत्येक डोलेके भीतर चित्तौरका एक एक साहसी वीर गूढभावसे विराजमान था। धीरे २ वह ७०० डोले बादशाही डेरोंके सामने आ पहुँचे। उन सब डेरोंके चारों ओर कनातें लगी हुई थीं। प्रत्येक डोला तम्बूके भीतर पहुँच गया। महाराणी पद्मिनीको देखनेके लिये महाराज भीमसिंहको केवल आधे घंटेका समय दिया गया था। तदनुसार महाराज जैसे ही उन डोलोंके निकट आये, वैसे ही चित्तौरके फौजी सिपाहियोंने उनको एक पालकीमें गुप्तभावसे सावधान करके विराजमान कराया और तत्काल ही उस पालकीको लेकर डेरोंसे बाहर हो गये। साथमें कुछ और पालकियें भी चलीं। जो सैनिक वहां रहे वे सब अलाउद्दीनके आगमनकी बाट देखते हुए धीर और गंभीर भावसे पालकीके भीतर ही अपनी मूर्तिको धारण किये बैठे रहे। आधा घंटा बीत गया; तथापि भीमसिंहको लौटता हुआ न देखकर अलाउद्दीनके मनमें अत्यन्त डाह हुआ। डाहसे संदेह और सन्देहसे क्रोध आगया; बादशाहकी इच्छा नहीं थी कि भीमसिंहको छोडा जावे। इस समय विलम्ब होता हुआ देखकर उसे महाक्रोध आया और न सह सका, वह मूर्ख उन पालकियोंके निकट चला आया। आनेके साथ ही पालकियोंमें राजपूतवीरोंने छलांग मारकर बादशाहपर धावा किया। परन्तु अलाउद्दीन भलीभांतिसे रक्षित था अत एव वहींपर दोनो सेनाओंका घोर संग्राम होने लगा। इस ओर महाराणा भीमसिंहको पकडनेके लिये यवनसेनाका एक दल चित्तौरकी ओरको चला परन्तु युद्ध करते हुए उन राजपूत वीरोंने उस यवनदलके सामने अडकर उसको आगे न जाने दिया। इन राजपूत वीरगणोंमेंसे जबतक एक मनुष्य भी जीवित रहा, तबतक महाराणाके पकडनेको मुसलमानलोग आगे न बढने पाये। महाराणा भीमसिंहके लिये एक शीघ्रगामी घोडा तैयार था, उस घोडेपर चढकर वह निर्विघ्नतासे चित्तौरमें पहुँच गये। इस ओर यवसेनाने दुर्गके निकट आकर सिंहद्वारपर चढाई की। चित्तौरके प्रधान २ वीरगण उस चढाईको रोकनेके लिये यवनसेनाके साथ भयंकर संग्राम करने लगे। उस भयानक संग्राममें वीरवर गोरा और उनके भतीजे युवक वीर बादलने ही सबसे अधिक वीरता दिखलाई थी! उनकी वीरता और उनके तेजको देखकर राजपूतसेना भी अत्यन्त उत्साहके साथ घोर कठोर रणरंग करने लगी।

बारह वर्षकी उमरके राजपूत बालक बादलका अद्भुत रणकौशल देखकर यवनसेना विस्मित और चकित हो गई । उसकी तलवार और भालेने अनेक यवनोंको यमलोकमें पहुँचाया । उसके अपूर्व रणरंगसे कितने ही रणविशारद हिन्दू और मुसलमानोंके गर्व खर्व हो गये । पद्मिनीके सन्मान और शिशोदीय कुलके गौरवकी रक्षा करना ही बादलका मूलमंत्र था । उसके ही वीरमंत्रसे उत्साहित होकर राजपूत वीरगण प्रचण्ड वेगसे शत्रुके सामने डट गये । उस महासमरमें वीरवर गोराने अद्भुत वीरता दिखाकर अनन्त कालके लिये शस्त्रशय्यापर शयन किया । बहुतसे राजपूतोंने उसका साथ दिया । उस भयानक संग्रामसे केवल बादल और कितने एक राजपूत बचकर चित्तौरमें आये । कुछ दिनके लिये अलाउद्दीनकी दुरभिलाषा रुक गई । राजपूतोंके कठोर उद्यम व वीरताको निहार तथा अपनी सेनाका संहार देखकर बादशाहने कुछ दिनके लिये युद्ध करनेका विचार छोड़ दिया ।

इस घोर संग्राममें वीरवर गोराने अपने प्राणोंको न्यौछावर कर दिया । उनका भतीजा बालक बादल रुधिरसे भीजा हुआ घायल होकर अपनी चाचीके पास आया । उसको अकेला आता हुआ देखकर राजपूतबालाके हृदयमें अत्यन्त शोक उपस्थित हुआ । परन्तु इस ही बातका उसको धीरज था, कि प्राणनाथने स्वदेशकी रक्षा करनेके लिये संग्रामभूमिमें अपने प्राण दिये हैं । वीर बालक बादलको चुपचाप सन्मुख खड़ा हुआ देखकर, गोराकी शोकार्ता विधवा भार्याने धीरे २ कहा;—"बादल ! अब और क्या कहोगे; मैं सब जान चुकी हूँ; अब जो पूछती हूँ सो बताओ कि प्राणेश्वरने युद्धमें किस प्रकारकी वीरता प्रकाशित करके देहका त्याग किया । कहो बेटा ! मुझे इस बातके श्रवण करनेसे शांति मिलेगी ।" यह सुनकर बादलके बड़े २ नेत्र डबडबा आये, उसके घावोंसे रुधिर बहने लगा । उसने कहा— "मइया ! अपने तातकी वीरताका क्या वर्णन करूँ ? आज केवल उनके ही वीरविक्रमसे शिशोदीय कुलके गौरवकी रक्षा हुई है; शत्रुकी अगणित सेनाको उन्होंने सरलतासे तिनकेके समान काट डाला । मैंने तो केवल उनके पीछे घूम २ कर शत्रुके दो टुकडे हुए शरीरोंको घाव पहुँचाये हैं । उनके कराल ग्राससे जो दो चार मुसलमान बच गये थे, मैंने तो केवल उनका ही संहार कर पाया है । इस प्रकार अलौकिक वीरता प्रकाशित करके वे कालशय्यापर—शत्रुकुलके मृतक शरीरोंका बिछौना बिछाकर अनन्त निद्रामें सो रहे हैं ! उनके तकियेकी जगह एक यवन राजकुमारका द्विखण्डित देह लगा हुआ है ।" राजपूतबालाने फिर पूछा;—"बेटा बादल ! यह फिर बताओ कि मेरे प्राणप्यारेने संग्रामभूमिमें किस प्रकारकी वीरता की ।"

बादलने फिर उत्तर दिया-"हे मात: ! अब अधिक क्या कहूँ ? उनकी असीम वीरताका कहांतक वर्णन करूँ ? उनकी वह अद्भुत वीरता देखकर शत्रुसेनाने भी भीत और चकित होकर अनेक प्रकारसे उनकी प्रशंसा की थी। आज उनमेंसे एक भी नहीं बचा।" वीरवर गोराकी विधवा भार्याने हँसकर बादलसे बिदा ली और "विलम्ब करनेसे प्राणप्यारे मेरा तिरस्कार करेंगे।" यह कहकर जलते हुए अग्निकुण्डमें कूदकर अपने प्राणोंका होम कर दिया।

बहुधा मेवाडके रहनेवाले "चित्तौरके उजाडनेका पाप छुए" यह कहकर शपथ किया करते हैं। उन लोगोंके कहनेसे जाना जाता है कि साढेतीन वार चित्तौर ऊजड हुआ था। उनमेंसे एक बारको वह आधा बतलाते हैं। यद्यपि इस महासंग्राममें चित्तौर ऊजड नहीं हुआ या शत्रुने इसपर अधिकार नहीं किया; परन्तु इस संग्राममें चित्तौरके जिन साहसी वीरोंने प्राणत्याग किया था उनसे शिशोदीय कुलकी भारी हानि हुई थी। इंस कारण इस ऊजड होनेको आधा नहीं कहा जा सकता। प्रसिद्ध 'खोमानरासा' ग्रन्थमें इस वर्णनको अत्यन्त तेजस्विनी भाषामें वर्णन किया है। इस भयंकर हानिकी पूर्ति होते न होते ही चित्तौरपर फिर यवनोंने चढाई की। अबकी वार निस्तार होना सम्भव नहीं, इस बार दुर्द्धर्ष अलाउद्दीन बहुतसी सेनाको साथ लेकर आया है। इस आक्रमणसे कौन चित्तौरपुरीकी रक्षा करेगा ? स्वदेशप्रेमके महामन्त्रको पढकर, यवनसेनाकी गति रोकनेके लिये कौनसा वीर संग्रामभूमिमें विराजमान होगा ? चित्तौरके महाविक्रमशाली प्रचण्ड वीरगण, जो कि वीरशिरोभूषण समझे जाते थे, पिछले युद्धमें देशकी रक्षाके लिये प्राण दे चुके; इस समय चित्तौर निराधार है ! इस भयानक अवस्थामें बादशाह अलाउद्दीनने फिर चढाई की। भट्टकविगण कहा करते हैं कि संवत् १३४६ (सन् १२९० ई०) में यह महासंग्राम हुआ था। परन्तु फरिस्ताग्रन्थमें कुछ और ही समय लिखा है। अस्तु ! यवनसम्राट् अलाउद्दीनने दक्षिण छोरके गिरिकूटपर अधिकार करके अपनी छावनी डाली, चारों ओर खाई खुदवा दी। चित्तौरके रहनेवाले आजतक दूरसे उस खाईको दिखलाया करते हैं और मेवाडकी बीती हुई विपदका विषय विचार कर लंबे श्वास लेते हैं। इस संग्रामके पीछे जिन्होंने आक्रमण किया उन्होंने वहां इतनी परिखा बना दी है कि जिनसे यह निश्चय करना कठिन हो जाता है कि अलाउद्दीन की परिखा कौनसी है। निष्ठुरहृदय यवनराजने शिशोदीय कुलपर महासंकट पडनेके समय चित्तौरको घेर लिया परन्तु क्या चिन्ता है, चित्तौरपुरी अब भी वीरशून्य नहीं है। क्या विना विवाद और विना विघ्नके यवनलोग स्वाधीनताकी लीलाभूमि चित्तौरपर अधिकार कर लेंगे ? नहीं, ऐसा कभी नहीं हो सकता। जबतक वीर्यवान् राजपूतोंकी नाडियोंमें रुधिरकी एक बूंद भी रहेगी-जबतक उनकी देहमें प्राण रहेगा तबतक वह कभी भी स्त्रीका अंचल पकडकर घरके

एक कोनेमें न बैठेंगे । तबतक वह किसी प्रकारसे भी अत्याचारी देशवैरीके विरुद्ध रण क्षेत्रमें खड्ग धारण करनेसे विमुख न होंगे । जैसे ही अबकी बार अलाउद्दीनने चित्तौर-पुरीको घेरा वैसे ही चित्तौरके समस्त वीरगण प्रचंड क्रोधमें आकर बदला लेनेके लिये मतवालेसे हो गये और यवनोंके दुराचरणका फल भली भाँतिसे देनेके लिये खड्ग लेकर उनके सामने आये ।

खुमानरासग्रन्थके बनानेवालेने इस भयानक संग्रामका वृत्तान्त अपनी मोहिनी लेख-शक्तिसे रंग विरंगा वर्णन किया है । उन रंगोंमेंसे एक रंग सबसे उत्तम चढा है । दिनके समय घोर संग्राम करके एक दिन आधीरातके समय महाराणा लक्ष्मणसिंह अपने विश्रामभवनके भीतर बैठे हुए घोर चिन्ता कर रहे हैं । रात्रिका दूसरा पहर व्यतीत होना चाहता है, समग्र संसार निद्रादेवीकी गोदीमें शयन कर रहा है; कहीं चुँचकारका शब्द भी नहीं होता । केवल निशाकी समीरण हहर २ कर बारम्बार प्रचंड वेगसे विश्रामभवनके किवाडोंको टकराती है, तथा सियारोंके घोर शब्दसे हुहुआना भी रात्रिके मौन धारणमें विघ्न डाल रहा है । इस गंभीर रात्रिके समय महाराणा विश्राम-भवनमें एकान्त मनसे मानो चित्तौरके होनहार भाग्यपटकी गूढ लिखनका पाठ कर रहे हैं । चित्तौरके मुख्य २ सरदार लोग, प्रचंड यवनाक्रमणसे चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये प्रतिदिन संग्रामभूमिमें शयन करते जाते हैं,--मानो शिशोदिया कुलकी राजलक्ष्मी मलीन और शोकाकुल होकर चित्तौरको त्याग करनेकी तइयारियें कर रही हैं;--अब चारों ओर संकट है, चारों ओर विपत्ति है;--चारों ओर भयका सामना है ! अब कौन चित्तौरपुरीकी रक्षा करेगा । इस घोर संकटके समय कौन शिशोदीयकुलके गौरवका उद्धार करेगा ? इस महासंकटके सर्व संहारकारी ग्राससे किस प्रकार महाराणीके बारह पुत्रोंमेंसे केवल एक जन भी जीता जागता रहकर पितृगणोंको पिण्डदान करनेके लिये उद्धार पा सकेगा ? राणाजी इस प्रकारसे अनेक बिचार कर रहे थे कि इतनेमें ही उस घोर रात्रिकी गंभीर शान्तिको भंग करके कोई गंभीर कंठसे कह उठा कि,--"मैं भूखी हूं" महाराणाकी प्रचण्ड चिन्ता तितर बितर हो गई । वे चकित हो गये,--जिधरसे वह शब्द हुआ था उस ओरको देखा; वैसे ही एक अपूर्व दृश्य दिखलाई दिया । दीपकके उस क्षीण प्रकाशमें महाराणाको दिखाई दिया कि पत्थरके खंभोंके बीचमें चित्तौरकी अधि-ष्ठात्री देवी भयंकर रूपसे प्रगट हुई है । भगवतीको देखते ही महाराणाका हृदय घोर अभिमान और विषादसे पूर्ण हो गया !

उन्होंने शोकपूर्ण स्वरसे चिल्लाकर कहा--"अबतक तुम्हारी क्षुधा शान्ति नहीं हुई ? पिछले दिनोंमें हमारे राजवंशके आठ हजार वीरपुरुषोंने संग्रामभूमिमें प्राण नेवछावर करके तुम्हारे भयंकर खप्परको पूर्ण किया,क्या इससे भी तुम्हारी दारुण रुधिर--पिपासा दूर न हुई ?" "मैं राजबलि चाहती हूं, जो राजमुकुटधारी बारह राजकुमार चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये संग्रामभूमिमें प्राण न देंगे तो मेवाडका राज्य शिशोदीयकुलके हाथसे निकल जायगा ।" देवीजी इतना कहकर अन्तर्हित हो गई ।

महाराणा विषम संकट में पड़े। उस रात्रिको घडीभरके लिये भी नींद न आई। प्रभात होते ही सेनापतियोंको बुलाकर सबके सामने रात्रिके अद्भुत वृत्तान्तको प्रगट करके कहा;—परन्तु किसी सर्दारको विश्वास न आया, सबने यही समझा कि महाराणाको भ्रम हो गया। परन्तु राजाने सबकी बातोंको अग्राह्य करके कहा कि "यद्यपि आपलोग अविश्वास करते हैं परन्तु आज रात्रिको निशीथकालके समय इस घरमें रहकर देखो कि देवीजी फिर भी आती हैं या नहीं।" सर्दारोंने इस बातको मान लिया और उस नियमित समयपर राणाके गृहमें एकत्र हो उस अद्भुत दृश्यको देखा। देवीजी फिर प्रगट हुई और पुनर्वार अपनी प्रतिज्ञा कही "यद्यपि प्रतिदिन सहस्र सहस्र म्लेच्छ संग्रामभूमिमें शयन करते हैं, परन्तु मुझे इससे क्या? प्रतिदिन एक २ राजकुमारको राज्यासनपर अभिषेक करो, किरण छत्र और चामरसे सजायकर उसको यथा योग्य राज्य सन्मानसे सन्मानित करो, तीन दिनतक उसकी आज्ञाका पालन होवे; तीन दिन बीत जानेपर चौथे दिन वह संग्रामभूमिमें आकर भाग्यकी आज्ञाका अनुसरण करे। जो इस प्रकारसे बारह राजकुमार संग्रामभूमिमें प्राण दें तो मैं चित्तौरमें रह सकती हूं।" देवीजी यह कहकर अन्तर्द्धान हुई और चित्तौरके सर्दारलोग अत्यन्त विस्मित हुए। वीरहृदय राजपूत लोगोंको देवीजीका इस प्रकारसे दर्शन होना कुछ असम्भव नहीं है। देवताके इस अपूर्व अभिनयमें राजपूतोंका दृढ विश्वास है। यह विश्वास किसी प्रकारसे नष्ट होनेवाला नहीं। विशेष करके चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवी चतुर्भुजाने दुर्ग छोडनेका जो हेतुवाद दिखाया था, वह स्वदेशप्रेमी, तेजस्वी, राजपूतोंके वीरचरित्र और संस्कारके अनुसार भली भांतिसे उचित माना जा सकता है। यद्यपि देवीजीकी आज्ञा कठोर थी परन्तु राजपूतगण उसको पालन करनेके लिये उत्कंठित हुए। वे लोग इस बातको किसी प्रकारसे सहन नहीं कर सकते कि उनके जीवित रहते हुए दुराचारी यवनलोग चित्तौरपुरीमें प्रवेश करके उनका सर्वस्व लूटें; उनकी प्राणाधार स्त्रियोंके सतीत्व धनको छीन लें। इस कारणसे समस्त राजपूतगण भगवान एकलिंगकी शपथ करके देवी चतुर्भुजाकी आज्ञाका पालन करनेके लिये संग्रामभूमिमें आये और प्रतिज्ञा की, कि जबतक हमारी देहमें प्राण रहेगा, तबतक चित्तौरके भीतर किसी प्रकारसे मुसलमानोंको न घुसने देंगे। अब राणाजीके बारह पुत्रोंमें यह तर्क वितर्क होने लगा कि सबसे पहिले कौनसा कुमार देवीजीकी आज्ञाका पालन करे। सबसे बड़े अरिसिंह सबसे बड़े होनेका हेतु दिखाकर देवीजीकी आज्ञाके अनुसार राज्यासनपर विराजमान हुए। फिर तीन दिनतक यथायोग्य राजसन्मान प्राप्त करके चौथे दिवस यवनसंग्राममें भयानक विक्रम दिखाय इस नाशवान संसारसे सदाके लिये बिदा लेकर अनन्तधाममें चले गये। तदनन्तर उनसे छोटे अजयसिंह बडे भ्राताके पीछे आनेको तइयार हुए! परन्तु महाराणा समस्त पुत्रोंकी अपेक्षा इससे अधिक स्नेह करते थे, अत एव किसी प्रकारसे

भी अजयसिंह संग्रामभूमिमें न जाने पाये । अजयसिंहने बहुतेरा चाहा, परन्तु पिताने एक न मानी । विवश होकर अपने छोटे भ्राताओंको देवाज्ञा पालन करनेके लिये संग्रामभूमिमें जानेकी अनुमति दी । इस प्रकारसे ग्यारह राजकुमारोंने संग्राममें जाय स्वदेश प्रेमका उदाहरण दिखाय हर्ष सहित अपने २ प्राणको जन्मभूमिके ऊपर बलिहारी कर दिया । इस समय केवल अजयसिंह राणाके पुत्रोंमेंसे शेष हैं । अजय प्राणोंसे भी अधिक प्यारा है, प्राण जाँय तो जावें, परन्तु प्राण रहते इस पुत्रको रणमें न जाने देंगे । हाय ! अजयसिंहके संग्रामभूमिमें जाते ही शिशोदीयकुल निर्मूल हो जायगा । वीरवर बाप्पारावलके पवित्र पितृगणको कोई अंजलिभर पानी देनेके लिये भी जीवित न रहेगा ! फिर क्या होगा ?–यवनलोगोंके भयंकर आक्रमणसे कौन चित्तौरपुरीको उद्धार करेगा ?–ऐसा कौन है जो गिह्लोट कुलको अनन्त नाशसे बचा लेगा ? तदुपरान्त महाराणाजीने स्वयं संग्रामभूमिमें जाकर प्राण निछावर करनेके अभिप्रायसे सर्दारोंको निकट बुलाकर कहा "अबकी बार हमारा काल पूर्ण हो गया; इस बारमें चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये संग्रामभूमिमें अपने प्राणोंका बलिहार करूँगा । "

इसके उपरान्त महाराणाजी अपने हृदयके रुधिरका दान करके देवीजीका खाली खप्पड पूर्ण करनेके निमित्त तइयार होने लगे । इस भयंकर संग्रामके होनेसे पहले एक भयंकर कार्यका कर लेना अत्यन्त आवश्यक समझा गया ।

इस भयंकर कार्यको "जुहार" या "जुहारव्रत" कहते हैं । राजपूतकुलवालाओंको प्रज्वलित अग्निकुण्डमें डालकर विजयी शत्रुओंके हाथसे उनके सतीत्व और स्वाधीनताकी रक्षा करनेके लिये यह भयंकर "जुहारव्रत" किया था । जब शत्रुके प्रचण्ड आक्रमणसे राजपूतगण अपने देशकी रक्षा या स्वाधीनताके बचानेका कोई उपाय नहीं देखते, जब उनका समस्त आशा भरोसा लोप हो जाता है, उस भयंकर समयमें–आशाके उस अन्तसमयमें राजपूत गण इस भयंकर व्रतका उद्यापन करनेके लिये तइयार होते हैं । चित्तौरपर आज वही भयंकर समय आ पहुँचा है;–आज चित्तौरकी रक्षाका कोई उपाय बाकी नहीं है; अत एव इस भयंकर जुहारव्रतका उद्यापन करना आवश्यकीय कार्य है । राजपुरीके रनवासके बीचोंबीच पृथ्वीके नीचे एक बडी सुरंग थी, दिनके समय भी उसमें घोर अन्धकार छाया रहता था । इस भयंकर सुरंगमें सालकी लकडियोंके ढेर डालकर चिता जलाई गई । देखते ही देखते बाल खोले हुई अगणित राजपूतबाला हृदयविदारक शोक संगीतसे चित्तौरपुरीको गुंजारती हुई उस भयंकर सुरंगकी ओरको बढ़ने लगीं । रूप लावण्यवती जिन क्षत्रियाणियोंको देखकर दुराचारी मुसलमानोंके हृदयोंमें पाशवी वृत्तिका उदय होना सम्भव था वे सब ललना उस समय प्राण देनेको तइयार हुई । उन सबके पीछे सुरमन मोहिनी महाराणी पद्मिनीजी भी चलने लगीं । चित्तौरकी वीर मंडली चुप चाप है; अपने हृदयको वज्रके समान कडा

करके वह भयंकर कार्यको खड २ देख रही है। स्नेहकी आधारमाता, हृदयको प्रसन्न करनेवाली माता व आनन्दमयी बहिन भानजी और कन्यागण सदाके लिये बिदा लेकर उनके सामने–उनकी आंखोंके सामने प्रबल अग्निमें गिरकर प्राण छोडनेको जारही हैं, तथापि उनके नेत्रोंसे आँसूकी एक बूँद नहीं गिरती आज वह नेत्र सूख गये, आज उन नेत्रोंमें ललाई आगई आज मानो उनसे संसारको दग्ध करनेवाली आगकी लपट निकल रही है ! एक समय जो हृदय प्रेमका स्रोत था, आज वही मरुमय श्मशान हो गया ! आज इस ही कारणसे उन्होंने इस भयंकर कार्यका अनुष्ठान किया। धीरे २ समस्त स्त्रियें उस सुरंगके द्वारपर आन पहुँचीं। सामने ही सीढियां बनी हुई हैं; धीरे धीरे एक एक करके वे सब नीचे उतरीं। तत्काल ऊपरसे भयंकर शब्दके साथ सुरंगका बडा और भयानक लोहकपाट बन्द हुआ। एक पलभरके बीचमें अगणित हतभागनियोंका करुणा शोकनाद लीन होगया ! –और कुछ भी न सुना गया !–हाय ! आज समस्तकी समाप्ति हो गई !--रूप, यौवन, लावण्य, गौरवादि सबको ही सर्वसंहारकारी अग्निने भस्म कर दिया। *

---

*"हमलए चित्तौर" नामक नाटकमें स्त्रियोंके चितामें जलनेका वर्णन अत्यन्त मनोहरतासे किया है। राजपूत ललना गण चितामें भस्म होनेके समय कहती हैं। [ठुमरी पीलू] अगन अब राखो लाज हमारी ॥ टेक ॥ हम सब बाला निपट बिहाला पतिबिन परम दुखारी। वेग चिताधकि भस्म करो प्रभु हम सब सखा तिहारी ॥ टेक ॥ सुन रे यवन अधम चण्डालो हृदय दियो तुम जारी। साखी सुर प्रतिफल पाओगे भोगोगे दुख भारी ॥ टेक ॥ दूसरा गीत ॥ केहि सुखलागि राखत प्रान, पिता पुत्र पति रनमें जैहैं, अब है कहाँ कल्यान ॥ टेक ॥ दुग्ध भयो हिये तनहूमें सोई; शोक करे सोई पान ॥ टेक ॥ दूर हो भूषन वसन, रतन सब पति बिन आज पयान ॥ टेक ॥ खोल केश परवेश अगन कर अब सुख नाहीं आन। केहि सुख लगि राखत प्रान ॥ टेक ॥ अगन सहाय होऊ याही छिन पतिनसों करहु मिलान। असहाया अबला दुख बूडीं कृपा करो भगवान ॥ २ ॥ (गीत तीसरा) जग देख खोलकर नयना। हम पतिव्रतधर्म तजैंना। रवि शशि गगन सकल सुर देखो, देखो यवन अपैना। तृणसम प्राण अनलमें दहतीं सती धर्मते टरैंना।

"जब समझा स्त्रियें चितामें भस्म हो गईं तब अलाउद्दीन बादशाह राजपूतोंको मार कर शहरमें आया लेकिन घर २ में चिताके धुएँके सिवाय कुछ न पाया, तब अफसोसके साथ हाथ मल २ कर कहने लगा।"--"गजल—

"आये थे गुलके वास्ते बस खार ले चले। हिजराँका पद्मिनीके यह आजार ले चले ॥ १ ॥
दिलकी जो थी हविस वो न निकली हजार हैफ। गो जेवरो जवाहर बेशुमार ले चले ॥ २ ॥
इस हेत जिंदगीके लिये हाय क्या किया। जख्मी बनाके लाखोंको नाचार ले चले ॥ ३ ॥
बस चार गज कफनके सिवा गंजेदहरसे। हमराह अपने कुछ भी नजरदार ले चले ॥ ४ ॥
वस्ले पद्मकी दिलमें निहायत थी आरजू। बदले खुशीके हसरते दीदार ले चले ॥ ५ ॥
हसरत पुकारती है यह कुश्तोपैः फौजके। चित्तौरकी बहार यह सरदार ले चले ॥ ६ ॥
किस जिन्दगी पै शहर यह वीराना कर दिया। अफसोस बाज कालका अबार ले चले ॥ ७ ॥

इस भयंकर और कठोर "जुहरव्रतका" उद्यापन करके महाराणा स्वयं ही लडाईमें जानेकी तइयारी करने लगे, परन्तु प्यारे पुत्र अजयसिंहने उनके जानेमें बाधा दी अजयसिंहकी इच्छा किसी भांतिसे भी महाराणाको रणमें भेजनेकी नहीं थी। पिता पुत्रमें बहुतसा तर्क वितर्क हुआ, परन्तु अन्तमें राणा ही जीते। विवश हो अजयसिंहको पिताकी आज्ञाका पालन करना पडा और वह चित्तौरको छोड गये। तथा कितने एक सिपाहियोंको साथ ले शत्रुके डेरोंके बीचमें होकर बेखटके कैलवाडादेशमें जा पहुंचे। अब राणाजीको किसी बातकी चिन्ता न रही,–पितृगणोंको पिंड देनेके लिये पुत्र तो वर्तमान है ही, वाप्पा रावलका वंश लोप नहीं होने पाया फिर अब क्या चिन्ता है?

इस समय राणा निश्चिन्त और निश्शंक होकर रणभूममें प्राण त्यागनेके लिये उत्साहित हुए, तथा प्रचण्ड रणभेरी बजाकर अपने सर्दारोंको पास बुलाया आज समस्त सरदारगण मतवाले हो रहे हैं, अपने देहकी चिन्ता जाती रही है;–जीवनकी ममता छोड दी है। किलेका फाटक खोलकर अपने स्वामीके साथ प्रचण्ड विक्रम करते हुए शत्रुकी विशाल सेनामें कूद पडे। उन रणोन्मत्त भयंकर राजपूतोंकी तलवारसे अनेक अभागे मुसलमान तिनकोंके समान काट डाले गये परन्तु इनका मारना भी कुछ काम न आया। उफने हुए समुद्रके समान विशाल यवनसेनाके बीचमें यह थोडेसे वीर इस प्रकारसे शीघ्र बिलाय गये कि जैसे पानीके बुलबुले पानीमें बिला जाते हैं। आज चित्तौरपुरी जीवनशून्य हुई। आज इस अपूर्व नगरीने श्मशानका वेष धारण किया। इधर उधर अगणित मृतकदेह पडे हुए हैं समस्त स्थान मनुष्योंके रुधिरसे भीगे हुए हैं। किसीके हाथ पांव कट गये हैं,-किसीका शिर दो टुकडे हो गया है; कोई किसी यवनके मुँहपर अपने विकट दांतोंको लगाये हुए वीभत्स भावसे गिरा पडा है। मानो अबतक भयंकर प्रतिहिंसा लेनेके लिये उन्मत्त भावसे शत्रुको चबा जानेको तइयार है। हृदयको पानी कर देनेवाले इस महाश्मशानके भयंकर रूपको सौगुणा बढाकर यवनोंकी सेना पिशाचोंके समान इधर उधर घूमने लगी। पिशाचबुद्धि बादशाह अलाउद्दीनने उस जीवशून्य श्मशानरूपी चित्तौरपर अधिकार किया। चित्तौरपर अधिकार करते ही वह अपनी जीवनतोषिणी महाराणी पद्मिनीकी खोजमें उन्मत्तके समान इधर उधर घूमने लगा। हा मूर्ख। अबतक तेरा भ्रम न गया। रे दुराचारी! तैंने अबतक पद्मिनीकी आशाको न छोडा? पद्मिनी कहां है? तुझ राक्षसके चित्तको मोहित करनेवाली मानस सरसीकी प्रफुल्लित सरोजिनी सती सीमन्तिनी पद्मिनी अब कहां है? नृशंस पापी और नारकीके पैशाचिक पीडनसे वह सती शिरोमणि सुरसुन्दरी आज विश्व ब्रह्मांडको रुलाकर, चित्तौरपुरीको श्मशान बनाकर इस पापी संसारको त्याग कर गई! सुरंगके बीच बनी हुई जिस प्रचण्ड चितामें उस देवकुमारीका सजीव पवित्र देह भस्म हुआ है, गह्वरके भीतरसे अबतक उसका

धुआँ इस प्रकारसे निकल रहा है कि जैसे ज्वालामुखी पहाडसे धातु निकलती रहती है। वह पवित्र धुआँ स्वर्गीय सामग्रीसे परिपूर्ण है,-वह शतशः अनुपम सुन्दरताई सतीत्व और गुणगरिमाके परमाणुओंको लेकर सूर्यलोकको उडा जाता है। उस धूमराशीके स्पर्श करनेसे वह विकट सुरंग उस शोचनीय दिनसे पवित्र गिनी जाने लगी। उस दिनसे कोई किसी प्रकारसे भी उस सुरंगमें प्रवेश नहीं कर सकता। उसके साथका दीपक उस भयंकर अजगरके श्वास लेनेके पवनसे तत्काल बुझ जाता है। *

इस प्रकारसे अमरावती तुल्य चित्तौरपुरी सन् १३०३ ई० में अलाउद्दीनके भयंकर दंडप्रहारसे आधी ऊजड हो गई। चित्तौरनगरपर अपना अधिकारकर झालौरके शौनगडे वंशीय मालदेवनामक एक सरदारके हाथमें अलाउद्दीनने उसका शासनभार अर्पण किया बादशाह अलाउद्दीन एक तेजस्वी और पराक्रमी बादशाह था, मतलबके सिद्ध होजाने-में कपटता एक अमोघ उपाय है; इस बातमें बादशाह अव्वल दरजेका होशियार था; यही कारण है जो बहुधा उसकी जय हुआ करती थी। इस विषयमें वह हिन्दूवैरी औरंगजेबके समान गिना जाता था। अलाउद्दीनने तख्तपर बैठते ही "सिकन्दरसानी" (अर्थात् दूसरा शिकन्दर) की उपाधि धारण की और जिसको उसने अपने चलाये हुए सिक्कपर भी खुदवा दिया था, उसकी यह उपाधि कभी निरर्थक न हुई, उसके कठोर हाथके भयंकर प्रहारसे राजस्थानके सैकडों नगर ग्राम ऊजड हो गये। गर्वित अनहलवाडा प्राचीन धारा और अवन्ती तथा सुन्दर और देवगढादि जिन गौरववाले नगरोंमें एक समय शोलंकी परमार पुरिहार व तक्षकादि प्रसिद्ध राजाओंके पवित्र सिंहासन विराजमान हुए थे, उन सबको ही अलाउद्दीनने उजाड़ दिया जिस अग्नि-कुलके उत्पन्न हुए राजाओंके भृकुटी विलाससे एक समय समस्त भारतवर्षका भाग्य चलायमान होता था, आज इस प्रचण्ड मुसलमान वीरके अत्याचारसे उनका नाम निशानतक मिट गया। जिस जयसलमेर, गाग्रौन और बून्दीको भट्टलोग, खीची और हारवंशके राजाओंकी लीलाभूमि कहा करते थे, आज अलाउद्दीनके अत्याचारसे उनकी दशा अत्यन्त हीन हो गई है। परन्तु कालके अवश्य होनहार प्रभावसे यह समस्त राज्य उस नीची अवस्थासे फिर निकल आये हैं। जिस समय अलाउद्दीनके प्रचण्ड अत्याचारसे राजस्थानके देश ऊजड़ हो रहे थे, उस कालमें मारवाडके राठौर और अम्बरके कुशावह लोग भारतके इतिहासमें नाममात्रको दिखाई दिये थे।

---

* कर्नेल टाडने इस सुरंगके भीतर जाना चाहा था, परन्तु अनेक प्रकारके विषधर सर्प और प्राण-नाशक दूषित वायुके भयसे अपनी इच्छाको पूर्ण न कर सके, यदि उसके भीतर जाते तो उनके ऊपर महाकष्ट आ पडता।

उस काल यह राठौर लोग, पुरीहार राजालोगोंके अधीनमें सामन्त राज बन कर रहते थे। उस अधीन जीवनमें ही धीरे २ वह लोग अपना सिर उठा रहे थे। परन्तु कुशावह जाति उस समयतक घोर कुदशामें पड़ी हुई थी। इस दुरवस्थामें पड़ा हुआ देखकर असभ्य मीनगण उनको बारंम्बार सताते और चढाई करते थे। मीन लोगोंकी इस चढाई और इस दुःख देनेको कुशावह जातिवालोंसे न रोका गया। इधर विजयोत्सवमें मत्त होकर कई दिनतक अलाउद्दीन चित्तौरमें रहा। इस समयमें बादशाहने चित्तौरके शोभायमान अटा अटारी देवमन्दिर और अत्यन्त विचित्र बने हुए स्तम्भ महल दुमहले व चैत्यादि सबको ही तुडवा दिया था। परन्तु केवल महाराणी पद्मिनीका महल ही उसके सर्व संहारक हाथके भयंकर प्रहारसे बच गया था। ज्ञात होता है कि पद्मिनीपर अनुरागी होनेके कारण अलाउद्दीनने उसको नहीं तुडवाया।

इस भयंकर संग्रामके पीछे शिशोदीय कुलका पिण्ड देनेके लिये केवल अजयसिंह जीवित रहे। पहले ही कह आये हैं कि कुमार अजयसिंह केवलवाड़ा नामक देशको चले गये। मेवाडमें पश्चिमकी ओर आरवली पर्वतमालाकी तलैटीमें शेरोनल नामक एक सम्पत्तियुक्त देश है। उसकी ही चोटीपर कैवलवाडा बसा हुआ है। उस पहाडी देशमें निकाले हुएके समान रहकर राणा अजयसिंह हृदयको थामकर अपने पितृराज्यके उद्धार करनेका उचित अवसर देखने लगे। जो चित्तौर उनके पूर्व पुरुषोंकी लीलाभूमि है, उस ही चित्तौरमें आज एक सरदार राज्य करता है। आज वही चित्तौर पराया हो गया है। इस प्रकार अनेक भांतिकी चिन्ताओंसे ग्रस्त होकर भी राणा अजयसिंह किंचित भी हताश या निरुत्साह न हुए। वरन दूने साहस और आग्रहके साथ अपना कार्य सिद्ध करनेके लिये उचित तइयारियें करने लगे। जिस समय राना लक्ष्मणसिंह संग्राममें जाते थे उस समय उन्होंने अजयसिंहसे कहा था कि तुम्हारे पीछे तुम्हारे बडे भ्राता अरिसिंहका पुत्र सिंहासनपर बैठेगा। इस बातको अजयसिंहने भली भांतिसे याद रक्खा। सोते, जागते और कष्टोंमें पडकर भी अरिसिंहके पुत्रकी याद राना अजयसिंह किया करते थे; परन्तु बडे भाईके उस पुत्रका कहीं भी पता न लगता और अजयसिंहके पुत्र किसी कार्यके नहीं थे; इधर बुढापा भी आया ही चाहता था, ऐसी अवस्थामें वह समझते थे कि पिताका उपदेश ही फलवान होगा। जिस पुत्रके लिये महाराणाने कहा था, उसका नाम हमीर था, इस हमीरने ही शिशोदिया कुलके नष्टगौरवको उद्धार किया था। मेवाडके भट्टीय काव्यग्रन्थोंमें हमीरके जन्म और बालकपनका वर्णन अत्यन्त विस्तारसे किया है।

राणाके प्रथम पुत्र अरिसिंह कितने. एक युवा सरदारोंके साथ अन्दवानामक वनमें शिकार खेलनेको गये। वहां एक वराहको देखकर उन्होंने बाण चलाया। परन्तु निशाना चूक जानेसे सूकर भागकर जुवारके खेतमें घुस गया। अरिसिंह भी उसे पछियाते हुए खेतमें चले गये। उस खेतमें एक टांड बना था उसपर एक स्त्रीको इन्होंने

देखा, अरिसिंहको देखकर वह स्त्री टांडसे नीचे उतरी और नम्रवचनसे बोली। "अब आपके परिश्रम करनेकी आवश्यकता नहीं है, मैं अभी इसी बराहको लाये देती हूं।" इस खेतमें जो जुवारके पेड़ थे वे सात या आठ २ हाथके बड़े होंगे। राजपूतबालाने उनमेंसे एक वृक्षको उखाडा और उसकी नोकको अत्यन्त तेज कर लिया फिर वह अपने टांड़पर चढी और उस लकडीके भालेको धनुषपर चढाकर ऐसे वेगसे मारा कि लगते ही शूकर तत्काल मर गया। तब वह उसको राजकुमारके निकट लाकर अपने कार्यको चली गई। वीर्य्यवान् राजपूतबालाओंकी अपूर्व वीरता और प्रचंड भुजबलका वृत्तान्त राजकुमारको भली भांतिसे विदित था, परन्तु ऐसा अद्भुत कार्य उन्होंने कभी नहीं देखा। राजकुमार अरिसिंह और उसके साथी अत्यन्त विस्मित हुए और उस वीरबालाके विक्रमका वर्णन करते २ सब ही एक नदीके किनारे पहुंचे। वहांपर भोजनकी तइयारियें होने लगीं। क्रमानुसार भोजनके पदार्थ तइयार करके सजाये गये।

भोजन करनेके समय भी सब ही उस बालाके असीम बाहुबलकी प्रशंसा करते जाते थे, उस ही समय उस ज्वारके खेतकी ओरसे मिट्टीका ढेला आकर राजकुमारके घोडेके लगा, वैसे ही वह तुरंग तत्काल गिर पडा। सबने चकित होकर उस खेतकी ओरको देखा कि वही स्त्री टांडपर चढ़ी हुई ढेले फेंककर पक्षियोंको खेतसे उड़ा रही है। सब लोग समझ गये कि कृषक कन्याके चलाये हुए ढेलेसे ही घोडेका पाँव टूट गया। वह स्त्री भी तत्काल इस वृत्तांतको जानकर अपना अपराध क्षमा करानेके लिये राजकुमारके पास आई। उसकी निडरता, सभ्यता और शीलको देखकर राजकुमार अपने साथियों सहित आश्चर्य करने लगे। साधारण कृषक कन्यामें क्या इस प्रकारके अपूर्व गुण हो सकते हैं? क्षमा करना तो एक ओर रहा, उन्होंने इस कार्यको दोष हीन समझा। इस समय राजकुमारके हृदयमें उस युवतीका ध्यान बँध गया।

अपने साथियोंके साथ शिकार खेलकर कुमार अरिसिंह राजभवनको जा रहे थे कि मार्गमें फिर वह युवती मिली। उस काल वह क्षेत्रपालबाला अपने शिरपर दूधका एक वर्तन धरे हुए दोनों हाथोंसे भैंसके दो बच्चोंको हांक रही थी। अरिसिंहके साथ जो उनके मित्र थे उनमेंसे एकने कौतुकसे दूधका वर्तन पृथ्वीमें गिरानेके अभिप्रायसे उस कन्याकी ओरको अपना घोडा चलाया। कृषकबाला इस अभिप्रायको समझ गई और उस मुसाहबको निकट आता हुआ देखकर चालाकीसे भैंसके एक बच्चेको सवारके घोडेके अगले पांवमें इस प्रकारसे लिपटा दिया कि वह कौतुकामोदी रसिकबर राजाका सखा घोडेके साथ ही पृथ्वीपर गिर पडा। खोज करनेसे राजकुमारको ज्ञात हुआ कि चंदानीकुल *के मध्यमें एक दीन राजपूतके घर इस बलवान कन्याने

* यह चौहान कुलकी एक शाखा है।

जन्म लिया है । राजपूतकी बेटी है तो क्या उसके साथ राजकुमारका व्याह नहीं हो सकता है ? दूसरे दिन अति सबेरे उन्होंने अपने मित्रोंके साथ वहां जाकर उस कन्याके पितासे मिलना चाहा। कुमारका एक सखा उस बूढे राजपूतके घरमें गया और उससे राजकुमारका आशय कहा, बूढा तत्काल उसके साथ राजकुमारके स्थानपर चला आया। राजकुमारने उसका अत्यन्त आदर करके सामने ही बैठनेको आसन दिया। वृद्ध उस आसनपर न बैठकर राजकुमारके ही आसनके एक कोनेमें बैठ गया। उसका यह प्रगल्भ व्यवहार देखकर राजकुमारके मित्रगण हँसने लगे, परन्तु जब उन्होंने देखा कि राजकुमारने इस व्यवहारसे किंचित भी अप्रसन्न न होकर अत्यन्त आदरके साथ अपना विवाह करना चाहा, तब वे समस्त ही विस्मित हुए। फिर जराही विलम्बके पीछे जब उस बूढेने राजकुमारकी बातको अस्वीकार किया, तब तो समस्त इष्ट मित्र मंडलीके विस्मयकी सीमा न रही। आशाको पूर्ण होता हुआ न देखकर कुमार अरिसिंह कुछ अनमने हुए। परन्तु भाल लिखी लिपिको कौन मेट सकता है? उस बूढे राजपूतने घर आकर यह समस्त वृत्तान्त अपनी स्त्रीसे कहा, स्त्री विशेष बुद्धिमती थी उसने स्वामीका यह घोर अनुचित कार्य सुनकर उसे बहुत फटकारा और राजकुमारके साथ मिलकर उनसे क्षमा मांगनेके लिये कहा। भार्याके ताडन करनेसे राजपूत चैतन्य हुआ और शीघ्र ही राजकुमारके निकट आय अपनी कन्याके देनेको कहा। अल्प कालमें ही कुमार अरिसिंहका विवाह उस बलवती कन्याके साथ होगया। इस ही शुभ संयोगका फल वीरवर हमीर हुआ। जब चित्तौरमें उपरोक्त महासंग्रामकी तयारियें हो रही थीं, उस काल हमीरकी आयु केवल बारह वर्षकी थी। उस समय उसको कोई भी नहीं जानता था, उस काल वह कृषिजीवनका सुख अनुभव करके मामाके यहां सुखपूर्वक रहते थे। किन्तु इस शांतिको वह अधिक दिनतक भोग नहीं कर सके। सन्मुख ही कठोर कार्यक्षेत्र है; भयंकर तलवारको हाथमें लेकर वह चित्तौरके नष्ट गौरवको उद्धार करनेका विचार करने लगे.

दिल्लीकी यवन सेनाके पग धरनेसे तबतक भी मेवाडकी भूमि प्रत्यक पलमें कम्पायमान हो रही थी। उस कालतक भी विजयोन्मत्त तातार सेनाका भयंकर कुलाहल चित्तौरके परकोटेपर सुनाई देता था। आज स्वर्गपर दानवोंकी सेनाने अधिकार किया है। आज निष्ठुर हृदयवालोंने आर्यलक्ष्मीको जकडकर बांध लिया है और उसको निष्ठुर रूपसे पद दलित करते हैं। इस विपत्तिसे कौन चित्तौरपुरीका उद्धार करेगा? ऐसा कौन है जो स्वदेश प्रेमिकताके महामन्त्रसे उत्साहित होकर पीडित निगृहीत और पद दलित आर्यलक्ष्मीका उद्धार करेगा? केवल महाराणा अजयसिंहका नाम ही इस विषयमें लिया जा सकता है। परन्तु वह अकेले क्या क्या करेंगे? उनके पास न किसी प्रकारका बल है, न कुछ

धन सम्पत्ति है ! एक ओर तो मुसलमानोंके ग्राससे चित्तौरका निकालना अत्यन्त आवश्यक है और दूसरी ओर उन पहाडी भील सरदारोंके अत्याचारोंका रोकना भी कर्तव्य कार्य है । इस समय पहिले किस कार्य्यको करना चाहिये, महाराणा इसका कुछ भी विचार न कर सके । उन भील सर्दारोंमें मुंजावलैचा नामक एक महावीर था । अजयसिंहसे इसकी घोर शत्रुता थी एक समय इस भीलने राणाके स्थान शेरोमल्लपर चढाई करके उनके साथ भयंकर द्वन्द्वयुद्ध किया था । उस द्वन्द्वयुद्धमें राणाजीने उस भीलके मस्तकपर भाला मारा था । राणाके दो पुत्र थे बडा आजीमसिंह और छोटा सुजनसिंह । एककी उमर पन्द्रह और दूसरेकी सोलह वर्षकी थी । इस तरुण अवस्थामें ही राजपूतोंके वीरचरित्रका उदाहरण दिखाई देजाता है, परन्तु अजयसिंहके विपत समयमें इन दोनो पुत्रोंने बहुत ही थोडा कार्य किया, उस विपत्तिकालमें चित्तौरके उस शोचनीय विपत्तिकालमें अजयसिंहने बहुत खोजनेके पीछे हमीरको उसके मामाके यहांसे बुलवाया । बारह वर्षके राजपूत कुमार शांतिमय जीवनको छोडकर स्वदेशका उद्धार करनेके लिये समरकी रंगभूमिमें आये । सबसे पहले तो महाराणा अजयसिंहने कुमार हमीरसिंहको अपने प्रचण्ड वैरी भील सरदार मुंजाके ऊपर चढाइ करनेको भेजा । कुमार अस्त्र शस्त्रसे सजकर असभ्य शत्रुका संहार करनेके लिये आगे बढे । बिदा लेनेके समय कुमारने अपने चचाके चरणोंको छूकर कहा कि "मुंजका सिर काटकर देशमें आऊँगा, नहीं तो नहीं ।" इसके उपरांत थोडे ही दिनोंके पीछे सबने देखा कि मुंजके कटे हुए शिरको भालेकी नोंकपर लटकाये कुमार अपने घोडेपर चढे कैलवाराके पर्वतमार्गसे आरहे हैं । कुमार हमीरने धीर और नम्रभावसे अपने जयकी भेंटको चचाके चरणोंमें रखकर शान्तभावसे कहा "तात अपने शत्रुका मस्तक पहिचान लीजिये ! अजयसिंह अत्यन्त आनन्दित हुए । तत्काल ही राणा लक्ष्मणसिंहकी भविष्यद्वाणी उनको याद आई । वह समझ गये कि विधाताने कुमार हमीरके भाग्यमें ही राज्यकी प्राप्ति लिखी है । उन्होंने परम प्रसन्न हृदयसे विजयी भतीजेका मुँह चूम लिया और उस विजित शत्रुके कटे हुए मस्तकसे रुधिर लेकर कुमारके ललाटपर राजतिलक खेंच दिया । उस ही मुहूर्तमें अजयसिंहके दोनों पुत्रोंके गूढभाग्यकी लिखन हमीरके कपाल फलकपर रक्तके अक्षरोंसे साफ २ दिखलाई दी । वे समझ गये कि हमको राज्य नहीं मिलेगा । पराये आसरेसे रहकर जीवन व्यतीत करना पडेगा । इस भयंकर चिंताके डसनेसे दुर्बल हो बडे अजीमसिंहने कैलवाडामें शरीर त्याग कर दिया और सुजनसिंह इसलिये दूसरे राज्यमें भेजा गया कि कदाचित् यह किसी प्रकारका झगडा झंझट

न उठाव । इस बातसे अत्यन्त दुःखित होकर सुजनसिंहने दक्षिण देशमें जाकर अपने वंश वृक्षको बोया आगे इस ही वंशमें एक महावीरने जन्म लिया था, उस वीरके प्रचण्ड प्रतापसे एक समय समस्त भारतवर्ष कम्पायमान हो गया था । उस महावीरका महाराष्ट्र कुलतिलक यवनदर्पहारी महाराज शिवाजी नाम था । *

सम्वत् १३५७ (सन् १३०१ ई०) में वीरश्रेष्ठ हमीरका मेवाडराज्यपर अभिषेक हुआ। परन्तु उनके राज्य धन और सहायता सावल सबपर ही शत्रुका अधिकार था। जिस दिन राणा जयसिंहने अपने भतीजेके माथेपर राजतिलक खेंचा उस दिनसे ही क्रमानुसार चौंसठवर्षके बीचमें राणा हमीरसिंहने मेवाडके नष्ट हुए गौरवका भली भांतिसे उद्धार कर लिया । राजस्थानमें "टीका दौड" नामक एक रीति अबतक प्रचलित है । राजपूत नृपतिगण पितृराज्यपर अभिषिक्त होते ही सैन्य सामन्तको साथ लेकर निकटके या दूरके किसी शत्रुराज्यपर चढाई करते हैं, यदि देशमें चारों ओर शान्ति विराजमान रहती है, यदि किसीके साथ शत्रुता अथवा विद्वेषभाव नहीं रहता है, तो नवीन राजा उस शान्तिको भंग नहीं करता, उस समय वह लीलाके अभिनयसे ही अपने पूर्व पुरुषोंके प्राचीन वीराचारकी रीतिको पूरी किया करते हैं×महाराज हमीरने जिस दिन राज्यका भार ग्रहण किया उस ही दिन इस वीरभावके करनेको तइयार हुए । तथा अपने चचाके वैरी बलैचाके राज्यपर आक्रमण करके उसके सेलिओ नामक गिरिदुर्गपर अपना अधिकार किया । इस सिद्ध टीकादौडकी रीतिपर जो प्रचण्ड वीरता महाराज हमीरसिंहने प्रकाशितकी थी उससे ज्ञात हो गया था कि यही महावीर चित्तौरके नष्टगौरवका उद्धार करेगा ।

भट्टग्रन्थमें लिखा है कि " जिस दिन अजमल्ल (अजयसिंह) ने अपरमार्ग (परलोक) की यात्रा की थी, उस दिनका खुला हुआ हमीर राणाका खड्ग फिर उनके हाथसे न छूटा ।" वास्तविक बात यह है कि हमीरसिंहका सम्पूर्णजीवन, प्रचंड देशवैरीके,विरुद्ध खड्ग धारण करनेमें ही बीत गया था । हम ऊपर लिख चुके हैं कि अलाउद्दीन चित्तौरका राज मालवदेवको सौंप गया था सो मालवदेव दिल्लीकी सेनाके साथ चित्तौरमें रहता था ।

---

* मेवाडके भट्टग्रन्थोंमें शिवाजीके वंशका वर्णन विस्तारसे पाया जाता है,प्रयोजन समझकर अति-संक्षेपसे यहां लिखा गया है । अजयसिंह, सुजनसिंह, दिलीपजी, शिवजी, तैरवजी, देवराज, उग्रसेन, माहुलजी, खेलजी, जनकजी, सत्यजी, शम्भुजी, शिवाजी (महाराष्ट्र साम्राज्यके स्थापक) और रामराजा; इनके पीछे पेशवालोगोंने महाराष्ट्रके सिंहासनपर अपना अधिकार किया था ।

× जब जयपुरके राजाओंने दिल्लीके बादशाहके चरणोंमें अपने कुलकी प्रतिष्ठा और स्वाधीनताको बेच डाला तब मेवाड़के राजालोग उनसे भीतरी घृणा करने लगे और इस ही कारणसे उन्होंने जयपुरवालोंके मालपुर देशको जो कि मेवाडवालोंकी सरहदसे लगा हुआ था--टीकादौड़का अभिनयका स्थान कर रक्खा था ।

हमीर राणाका सहायताके लिये जो लोग उस समय थे यदि उनको मुट्ठीभर भी कहा जाय तो ठीक होगा। फिर वह किस प्रकारसे थोडीसी सेनाको साथ ले दिल्लीकी विशाल अनीकिनीके सामने आवें ? ऐसी अवस्थामें उन्होंने जिस मार्गका आश्रय लिया उसके द्वारा उनका कार्य भलीभाँतिसे सिद्ध हुआ। वह शत्रुओंके लिये केवल परकोटायुक्त नगरोंको छोडकर शेष देश २ और गाँव २ को ऊजड करने लगे ! अनन्तर इस प्रकारका ढंडोरा फेर दिया गया कि " जो लोग महाराना, हमीरसिंहको अपना स्वामी मान वह अपने २ वासस्थानको छोडकर परिवारके सहित पूर्व और पश्चिम प्रान्तमें स्थित हुए गिरिमार्गके भीतर आन बसे, नहीं तो देशके शत्रुओंमें गिने जांयगे और उनको अत्यन्त कष्ट मिलेगा।" इस ढोंडोके फिरते ही लोग अपने घरोंको छोड़कर झुंडके झुंड आरावली पर्वतकी शैलमालाके भीतर जाय अपने लिये नये नये घर बनाने लगे। महाराणा हमीरने देशवैरी मुसलमानोंके ऊपर यथा संभव अत्याचार करनेमें कोई कसर नहीं रक्खी। जब प्रजामंडली मेवाडके जनस्थानोंको छोड गई तब राज्यके मार्ग घाट अत्यन्त दुर्गम हो गये। शत्रुगण जब उस ओरसे आते जाते तब महाराना हमीर अपने दलके साथ उनके ऊपर टूट पडते और उनका संहार करके फिर अपने उन स्थानों-को चले आते कि जो एकान्तमें बने हुए थे। महाराना हमीरसिंह इस प्रकारकी नीतिका सहारा लेकर धीरे २ शत्रुओंका संहार करने लगे। शत्रुओंने बहुतेरी चेष्टा की परन्तु वह किसी भांतिसे भी दुर्गम वनके घाटोंमें उनको न खोज सके। इस प्रकारसे शत्रुओं-की बहुतसी सेना मारी गई। राणा हमीरके इस प्रकार आचरण करनेसे मेवाडकी तलैटियें श्मशान बन गई। जिन मैदानोंमें हरे हरे नाजकी लहरें लहराया करती थीं, आज वह मैदान जंगली घास कूडोंसे छा गये हैं। पेंठ, वाणिजागार, हाट बजार सब सूने हो गये; सब ही टूट फूटकर खंडहर हुए। इस प्रकारसे समयानुसार नीतिका अवलम्बन करके वीरवर हमीरने अत्यन्त बुद्धिमानीका कार्य किया था इस प्रकारकी नीति गिल्हौट कुलके लिये पूर्णतासे लाभदायक हुई। सन् इसवीकी दशवीं शताब्दीके मध्यभागमें जिस समय महमूद गज़नवीके भयसे समस्त भारतभूमि कम्पायमान हो रही थी। उस समयसे लेकर अठारहवीं शताब्दीमें दिल्लीश्वर महम्मदके समयतक, मेवाडके राजालोग अत्याचारी यवनोंके महा अत्याचारसे गिल्हौट कुलकी प्रतिष्ठाको बचा-नेके लिये कभी २ इस ही प्रकारकी नीतिका अवलम्बन करते थे। मेवाडके इतिहासमें इसका वर्णन विस्तारसे किया गया है।

महाराणा हमीर कैलवाडेमें ही रहने लगे। जो कैलवाडा * देश अबतक सूना पहाडी देश कहलाता था, आज महाराणा हमीरकी अद्भुत चतुरतासे वह मनुष्योंसे भरा हुआ

* यहांपर महाराणा हमीरने एक तडाग बनवाया, जिसका नाम हमीरका तलाव रक्खा गया, इस-हीके किनारे मेवाडकी अधिष्ठात्री देवीका एक मंदिर भी प्रतिष्ठित किया गया। इन कीर्तियोंका दर्शन करनेसे स्पष्ट ज्ञात होता है कि महाराणा हमीर एकान्तमें वास करते थे।

स्थान बन गया । उनकी प्रजा मेवाडकी तलैटीको छोडकर उस देशमें आन बसी, कि जहाँपर कोई भी बसना नहीं चहता था । ऐसे संकटके समयमें ऐसे दुर्गम स्थानमें बस्ती बसाकर महाराज हमीरने बडी चतुरता की थी । यह देश असंख्य पहाडियोंके बीचमें स्थापित है । इन पहाडियोंके बीचमें दो चार गुप्त मार्ग भी बने हुए हैं, कभी ही ऐसा होता है कि उन कूट मार्गोंको लांघकर कोई विदेशीय यात्री वहांपर निरापद पहुँच सके । कैलवाडा, पहाडके शिखरपर बसा हुआ है । उस शैल शिखरपर ही, उपरोक्त बातोंके बहुत दिन पीछे कमलमेरका प्रसिद्ध किला बना है । देखनेमें कैलवाडा अतिमनोहर है, इसके चारों ओर सघनवन विराजमान हैं; बीच २ में असंख्य सोतेवाली नदियें कल २ करती हुई बही जाती हैं, और प्रकृतिके गंभीर भावको दूना बढाती हैं । जगह २ बडे २ खेत और चारणक्षेत्र सुन्दर भावसे शोभायमान हैं । यहांपर भांति २ के स्वादिष्ट कन्द मूल फल भी पाये जाते हैं । इस देशका विस्तार २५ कोशमें है । यह देश पृथ्वीसे आठसौ और समुद्रकी समतल भूमिसे दो हजार हाथ ऊंचा है । इस ऊंचे पर्वतके चारों ओर अगणित गुप्तमार्ग विराजमान हैं उन कूटमार्गोंसे उतरकर वहांके निवासी, गुर्जर मारवाड अथवा पश्चिमप्रान्तमें स्थित हुए सुहृद्भाव पूर्ण भीलोंके राज्यमें आते जाते और आवश्यकतानुसार उनसे सहाय बल भी पाया करते थे । अगुनापानोरके उन भीलोंसे गिह्लोटके राजालोगोंको समय२पर कितना उपकार प्राप्त हुआ है उसकी संख्या नहीं की जा सकती । राणाओंकी रक्षा करनेके लिये भील लोगोंने प्रसन्नमुखसे अपने प्राण दिये हैं--अनाहार रहकर--रातोंभर जागकर तथा अत्यन्त कष्टोंको सहकर भी उन्होंने गिह्लोटकुलके लिये पान भोजनकी सामग्री पहुँचाई है । हाथमें धनुष बाण धारण करके उनकी सहायता करनेमें लगे रहते इस प्रकार यह भील राजपरिवारकी सर्व विपत्तियोंसे रक्षा करते थे।इस ही कारणसे मेवाडके राजालोग उनके साथ कृतज्ञताके बन्धनसे बँधे हुए हैं, यह बन्धन किसी प्रकारसे भी शिथिल नहीं हो सकता । इस महोपकारका यथार्थ बदला हो ही नहीं सकता; यह महोपकार पवित्र और स्वर्गीय है । इसके अतिरिक्त मेवाडके पूर्वप्रान्तमें स्थित विशाल पर्वतमालाके बीचवाले सघन वन और निर्जन कन्दराओंके भीतर आश्रय ग्रहण करके मेवाडके निवासी अत्याचारी मुसलमानलोगोंके सतानेसे बच गये थे; परन्तु निठुर अलाउद्दीनने घूम २ कर उन सबका सत्यानाश कर डाला ।

जिस समय मेवाडकी यह दशा हो रही थी, उस समयमें इस देशके किले और उत्तम २ नगर शत्रुओंके अधिकारमें थे, यहाँके खेत और शान्तिमय स्थान जब राणा हमीरकी कठोरनीतिके अनुसार भयानक श्मशान बन गये थे उस ही समय चित्तौरके राजा मालदेवके यहांसे एक सगाई आई । इस संग्रामके समयमें मालदेवने किस अभिप्रायसे प्रचण्ड शत्रु हमीरके साथ अपनी बेटीका विवाह करना चाहा है, इस बात-

को कोई समझ न सका । मंत्रियोंको इस विषयमें अनेक संदेह होने लगे । परन्तु महा-राणा हमीरसिंहने किसीकी बात न मानी और विवाह करना अंगीकार किया । राणाने एक वार भी इस बातका विचार नहीं किया कि इस भयंकर संग्रामके समयमें मालदेवने किस अभिप्रायसे विवाहके सम्बन्धकी सूचना करनेके लिये नारियल भेजा है क्या राणा हमीरको अपमानित करनेके लिये या विपत्तिमें डालनेके लिये यह चाल चली गई है ? राणाके इष्टमित्र अनेक प्रकारका शोच विचार करने लगे । परन्तु राणाको कुछ भी चिन्ता नहीं थी, इष्टमित्रोंने बहुतेरा चाहा कि यह सम्बन्ध न हो, जब उन्होंने बहुत कहा तब राणाने धीर और गंभीर भावसे उत्तर दिया कि "तुम क्यों होनहारकी चिन्तासे इतने व्याकुल होते हो ? मालदेवका जो कुछ अभिप्राय हो सो हो, नारियलके ग्रहण करनेमें कौनसी हानि है ? यदि उसने कोई चाल चली है तो इसका भी मुझे कोई डर नहीं है । इस विवाहके होनेसे मुझे इतना अवसर तो प्राप्त होगा कि जहां हमारे पितृगण रहते थे वहांके दर्शन तो हो जांयगे । करोडों हजारों विपत्ति भी चाहें एक साथ आनकर घेर लें, उन सबको सहनेके लिये राजपूतोंको छाती खोलकर तइयार रहना चाहिये । साहससे कमर बाँधकर और मूलमंत्र हृदयमें धारण करके राजपूत कार्य करनेको चलेंगे तो विजयलक्ष्मी अवश्य ही प्राप्त होगी । मान लिया कि एक दिन संग्राममें घाव भी खाय, अपना स्थान भी छूट गया परन्तु भली-भांतिसे स्मरण रक्खो कि दूसरे ही दिन विजयमुकुटको धारण करके सिंहासनपर विराजमान होंगे । राजकुमारकी यह प्रतिज्ञा देखकर फिर किसीने कुछ न कहा ।

विवाहकी तइयारियें हो गई । महाराणा हमीर ५०० घुडसवारोंको साथमें लेकर पितृराज्यकी ओर चले । विवाहका तो बहाना है, परन्तु हृदयमें चित्तौरके उद्धार करने-का मूलमंत्र जपा जाता है । मन ही मनमें प्रतिज्ञा की है कि या तो मंत्रका साधन करेंगे, नहीं तो चित्तौरकी अँगनईमें प्राणोंको छोडकर अपने पितृपुरुषोंसे मिलेंगे ।

बरात धीरे २ चित्तौरके निकट पहुँच गई, दूरसे शहरका ऊंचा फाटक दिखाई देने लगा । चौहानके पांच पुत्रोंने अगवानी करके उनको सादर ग्रहण किया, परन्तु नगरके सिंहद्वारपर तोरण * या, विवाह सूचक किसी प्रकारका चिह्न

* राजपूतोंमें तोरण विवाहका प्रसिद्ध चिह्न माना जाता है, एक समबाहु त्रिभुजके आकारमें काठके तीन बराबर डंडोंपर यह बना होता है । इसके ऊपर एक प्रकारकी गाँठ लगी रहती है । यह चिह्न कन्या-के घरके बाहरके द्वारपर रक्खा रहता है । कन्याकी सहेलियें उस तोरणकी रक्षा करनेके लिये उस फाट-ककी छत्तपर खडी रहती हैं । वर जिस समय घोडेपर सवार होकर आता है, तो भालेको उठाये हुए तोरणको तोरना चाहता है, तब वे औरतें समयानुसार गीत गाती हुई अबीर गुलाल फेंककर उस वरके साथ नकली लडाई लडती हैं । जब वह तोरण टूट जाता है, तब वीर नारियें युद्धमें हारकर वहांसे भाग जाती हैं । यूरुपके उत्तर देशोंमें भी इसी प्रकारका आचार हुआ करता है इससे सिद्ध होता है कि संसा-रके प्राचीन मनुष्य विक्रमकी सहायतासे ही स्त्रीरत्नको प्राप्त करते थे । भारतीय आर्यलोगोंके बीचमें भी यह प्रथा बहुत दिनोंसे चली आती थी । जगज्जननी जानकीजी और महारानी द्रौपदीजीके स्वयंवरका वृत्तांत पाठ करनेसे इसका प्रमाण मिल जायगा ।

न देखकर हमीरके मनमें महाशंका हुई । उन्होंने विचारा कि इष्टमित्रोंका कहना ठीक ही होता दीखता है ।

तिसपर भी उन्होंने अपने हृदयसे धीरभावको न जाने दिया । मालदेवके पुत्रोंसे कुमारने इसका कारण पूछा, उत्तरमें जो कुछ सुना उससे संदेह भली भांतिसे तो न गया परन्तु हृदय शान्त हो गया । क्रमानुसार बरात चित्तौरके बीचमें पहुंच गई । वीर पूज्य पितृपुरुषोंकी असीम वीरता और गौरवकी विशाल स्तम्भश्रेणी आज पहली पहल ही कुमारने देखी । एक साथ ही हृदयमें सैकडों दुःख सुखकी चिन्ता उदय हो गई, इस प्रकार चिन्ता करते २ अपने बडे बूढोंकी विशाल अटाअटारियोंके भीतर पहुँचे । वहांपर मालदेव, तथा उसके पुत्र वनवीरने सब सरदारोंके साथ हाथ जोडकर कुमारका आदर किया । कुमार विवाहमंडपमें आये । परन्तु वहां भी विवाहकी कोई धूम धाम न पाई गई, मालदेवने शीघ्र ही अपनी पुत्रीको लाकर हमीरके हाथमें समर्पण किया । परन्तु विवाहकी कोई रीति भांति न हुई । केवल गँठ जोड़ा हुआ और वर कन्याका हाथ एक दूसरेके हाथपर रक्खा गया । कुलपुरोहितने धीर और नम्र वचनसे कहा कि धैर्य धारण कीजिये, कल समस्त कामना पूर्ण होगी । कुमार इन बातोंके मर्मको न समझे । उनके हृदयमें अनेक प्रकारके संदेह और खटके उदय होने लगे । तदनन्तर वर दुलहिन एकान्त गृहमें लाये गये । परन्तु कुमार उस समय चिन्ताग्रस्त थे । उनको इस प्रकारसे म्रियमाण और अत्यन्त शोकाकुल देखकर नववधू चरणोंमें गिरकर आर्तवाणीसे कहने लगी "प्राणपति हृदयनाथ ! इस दासीके अपराधको ग्रहण न कीजिये ! आपकी विकलताके कारणको मैं जानती हूं । पिताने जिस कारण इस दासीको गुप्तरीतिसे आपको समर्पण किया है, उस कारणको मैं जानती हूं, यदि आज्ञा हो तो श्रीचरणोंमें निवेदन करूं ।" हमीरने उस बालिकाके मुखमंडलकी ओर देखा कि वह मुख सुकुमार है, सरलताका आधार है, उसपर विमल प्रकाशकी आभा विराजमान है । उन्होंने आदर स्नेह और प्रेमपूर्ण हृदयमें अपनी भार्याको पृथ्वीपरसे उठाया और अभय देकर उस गूढ वृत्तान्तके प्रकाश करनेको कहा । राजपूतबालाने कहना आरम्भ किया । "प्राणपति ! आप विस्मित न हों मैं विधवा हूं, परन्तु इस दासीसे आप घृणा न करें । अति बालकपनमें भट्टवंशीय किसी राजकुमारके साथ मेरा विवाह हुआ था, उस समय मैं इतनी छोटी थी कि, विवाहकी बात भी याद नहीं है, यह भी स्मरण नहीं है कि स्वामी किस प्रकारके थे । परन्तु जो कुछ मातासे सुना है, वही आपसे निवेदन करूंगी । विवाहके थोडे ही दिन पीछे संग्राममें स्वामी मारे गये, तबसे ही मैं अभागिनी विधवा और अनाथा हुई । आज आपको प्राप्त होकर मेरे मनका दुःख दूर हो गया, परन्तु नहीं कह सकती कि अब मेरी भाग्यमें क्या बदा है ?" बालासे और न बोला गया वह सरला बालिका अपने प्राणप्यारेके हृदयमें अपना मुँह छिपाकर रोने लगी । उसकी सरलता, सत्यप्रियता और गाढे प्रेमको देखकर कुमारने उसके आंसू पोंछ दिये और भली भांतिसे समझाया बुझाया,

स्वयं भी संदेहके कारणसे छूटे। उस समयके राजपूतलोग विधवाविवाहको अतिघृणित और अपमानकारी समझते थे आज मालदेवने चाल करके राणा हमीरका अपमान किया, तेजस्वी कुमारने केवल भार्याका मुख देखकर इस अपमानको सहन किया*। उस पतिव्रता राजपूतबालाने इस अपमानका बदला लेनेके लिये स्वयं प्राणपतिको उत्साह दिलाया, तथा इसके विषयमें परामर्श भी की कि किस प्रकारसे मनोरथ सिद्ध होकर चित्तौरका उद्धार हो सकता है। स्त्रीके परामर्शके अनुसार हमीरने अपने श्वशुर मालदेवसे दहेजमें जलधर नामक एक सरदारको मांग लिया, मेहतावंशीय जलधर चित्तौरका अतिचतुर कर्मचारी था। मालदेव जामाताके कहनेको टाल नहीं सका, इसके उपरान्त एक पखवाडेके पीछे कुमार हमीर जलधरको साथ लेकर स्त्री सहित अपने कैलवाडा नगरमें पहुँच गये, और चित्तौरके उद्धारका अवसर देखते हुए सावधानीके साथ समय बिताने लगे।

कुछ काल बीतनेपर हमीरसिंहके, मालदेवकी पुत्रीके गर्भसे एक पुत्र हुआ। इस आनन्दोत्सवके समयमें मालदेवने राणा हमीरको वह समस्त पहाडीदेश दे दिये। जो कि अपने अधिकारमें थे। कुमार क्षेत्रसिंहने जब बारहवें मासमें पांव रक्खा तब एक गणक आया और उसने विचार करके कहा कि "इस लडकेपर चित्तौरके पुत्रकेदेवता क्षेत्रपालकी कुदृष्टि पडी है, अब इसका खंडन नहीं किया जायगा तो राजकुमारका अमंगल होना सम्भव है।" हमीरकी महाराणीको यह कुअवसर भी सुअवसर हो गया। रानीने विचार किया कि इस सुअवसरपर चित्तौरमें जाकर प्राणप्यारेका मनोरथ सिद्ध करनेमें सहायता करूंगी। इस ही कारणसे शीघ्रता पूर्वक ग्रह शान्तिका उपाय मालदेवको पत्रमें लिख भेजा। मालदेवने इस पत्रको पाते ही अपनी कन्या और धेवतेको बुलानेके लिये कई एक हथियारबंद सिपाहियोंको भेजा। महारानी उनके साथमें पिताके घरपर आई। आते ही देखा कि पिता मादेरियाके मीरलोगोंको दमन करनेके अभिप्रा-

---

* विवाहके हो जानेपर हमीरने जिस कारण इसमें मौनता स्वीकार की इसके कई कारण हैं उन्होंने सोचा कि इस बातका विवाद उठानेसे अब प्रतिष्ठामें बाधा पडेगी, और दूसरे उपहासका कारण होगा फिर इस बालिकाका ऐसे समयमें विवाह हुआ है कि इसको अपने पतिकी सुध भी नहीं है और सबसे विशेष उन्होंने यह बात समझ रक्खी थी, कि इस सम्बन्धसे हम चित्तौरका पुनः उद्धार कर सकेंगे, यही विचार कर उन्होंने इसमें आनाकानी न की, यद्यपि राजपूतोंकी छोटी जातियोंमें लोग विधवास्वीकारकी प्रथा बताते हैं, परन्तु सबका लक्ष्य इस हमीरमहोदयके समयसे ही कहा जाता है, विधवासे सम्बन्ध करनेवाले नातरायत राजपूत कहाते हैं, विधवाके संग विवाह नहीं किन्तु नाता होता है, जिन राजपूतोंमें नाता नहीं होता वे नातरायत राजपूतोंको कुछ नीचा समझते हैं, परन्तु कुछ कालमें उनका अभेद हो जाता है [नारायतकी तीजी पीढी गढ चढे] अर्थात् तीन पीडियोंमें नातरायत राजपूतकी धेवती वा परधेवती गढपतियों [राजाओं] में प्राप्त हो जाती है इस कहावतके अनुसार उनमें भेद नहीं रहता पर यह प्रथा शास्त्रसम्मत नहीं है।

यसे राज्यके प्रधान २ सरदारोंको साथ लेकर गये हैं । इस अवसरको ही हमीरके सौभाग्यका द्वार समझा गया । उस समय क्षेत्रसिंहकी माताने उन सरदारोंको जलधरकी सहायतासे शीघ्रतासे अपने वशमें कर लिया, कि जो मालदेवके साथ न जाकर चित्तौरमें रह गये थे । इस ओर कुमार हमीर भी दल बल सहित चित्तौरके निकट आन पहुँचे, उन्होंने बागोरनामक स्थानमें समाचार पाया कि सब काम ठीक है । अब तो विना विलम्ब किये चित्तौरमें प्रवेश किया, परन्तु उनकी गतिको प्रचण्डतासे रोका गया । यदि उस विघ्नको न रोक सकते तो कदाचित् वहींपर उनके जीवनकी आशा जाती रहती । उनका अभिप्राय आकाशके फूलके समान होजाता । परन्तु केवल असाधारण उत्साहके बलसे ही उन्होंने खड्ग हाथमें लेकर समस्त विघ्नोंका नाश किया, और अपने प्राचीन स्थानपर अधिकार किया । जैसे ही चित्तौरपर कुमार हमीरने अधिकार किया वैसे ही नगरके बालक वृद्ध और युवा पुरुषोंने शपथ करके उनकी आधीनताको स्वीकार किया ।

शोनगडा मालदेव शत्रुओंको जीतकर शीघ्र ही चित्तौरमें आया, परन्तु यहांकी अवस्था देखकर उसका आनन्द, निरानन्द हो गया । मालदेवको चित्तौरमें आता हुआ देखकर सरदारोंने एक पटाका छोडकर उसका सन्मान किया । इस प्रकारकी उपहासकारी सलामी देखकर मालदेवके मनमें विषम सन्देह पैदा हुआ । नगरमें प्रवेश करते ही समस्त समाचार जाने, आशाका अन्त हो गया । हमीरसिंहने जिस प्रकारसे चित्तौरके सरदारोंको अपने वशमें किया था उससे मालदेवको सिंहासन पानेकी तिलभर भी आशा न रही । अत एव वह निरुपाय होकर अलाउद्दीनके उत्तराधिकारी महम्मदखिलजी * के पास अपना दुःख सुनानेके लिये दिल्लीकी ओर चला आज राणा लक्ष्मण-

* तवारीखफरिस्तामें इस युद्धका वृत्तान्त नहीं पाया जाता । अतएव इस बातका जानना कठिन है कि यह महम्मद कौन था । हिन्दोस्थानके इतिहासमें लिखा है कि अलाउद्दीन खिलजीके बाद खिलजीके वंशका केवल एक ही बादशाह दिल्लीके तख्तपर बैठा था । इसका नाम मुबारक था । यह अलाउद्दीनका तीसरा बेटा था । मुबारकके मरनेपर दिल्लीमें खिजलीके वंशका अंत हो गया । यहां प्रश्न होता है कि फिर यह महम्मदखिलजी कौन था । एलफिनष्टन साहबने लिखा है कि अलाउद्दीनकी वफातसे पहिले (सन् १३१२ ई०) में राणा हमीरने चित्तौरपर अधिकार किया था । सन् १३१६ ई० की १६ दिसम्बरको अलाउद्दीन परलोकवासी हुआ । यदि इस मतको लेकर विचार किया जाता है, तो स्पष्ट ज्ञात होता है कि अलाउद्दीनके मरनेसे चारवर्ष पहिले राणा हमीरने चित्तौरको ले लिया था, परन्तु यह नहीं लिखा कि हमीरके हाथसे चित्तौरको लेनेके लिये फिर भी अलाउद्दीनने कोई चेष्टा की थी या नहीं ? केवल इतना ही लिखा है कि वह इस खबरके मालूम करने व और भी आपत्तियोंके हाल सुननेसे अलाउद्दीनकी बीमारी बढी, और वह जल्दीसे दुनियाको छोड गया । अत एव ऐसा जान पडता है कि अलाउद्दीनके बेटे मुबारकके ही यहांपर मुहम्मद लिखा है । जिस समय मुबारक गुजरात और दक्खनपर चढा था, तब उसने चित्तौरके लेनेकी भी कोशिश की थी, ऐसा अनुमान होता है । यह जान पड़ता है कि तवारीखफरिस्तामें इस वृत्तान्तको न पाकर एलफिनष्टन साहेबने भी अपनी तवारीखोंमें न लिखा होगा ।

Elephinstone's History of India P. P. 39400.

सिंहकी भविष्यद्वाणी पूर्ण हुई। आज अरिसिंहके पुत्र वीर हमीर उस भविष्यद्वाणीको पूर्ण करके चित्तौरके सिंहासनपर विराजमान हुए। चित्तौरनिवासियोंके आनन्दकी सीमा न रही। दुराचारी यवनोंके कराल ग्राससे मेवाडभूमिको छुटा हुआ देखकर नगरके समस्त नरनारी महोत्सव करने लगे। शिशोदिया जातिके राजकुमारने आज शिशोदीय कुलकी उस स्वाधीनता व मान गौरवका फिर उद्धार किया है, आज फिर वीरकेशरी बाप्पा रावलकी सुवर्ण-प्रतिमा-खचित प्रचंड विजय-वैजन्ती-चित्तौरके दुर्गपर फहराने लगी। उसको निहारकर निर्वासित नगरनिवासी अत्यन्त हर्षित हो कमलमीरके वनका रहना छोडकर चित्तौरनगरमें आने लगे। आज सबके हृदय आनन्दसे परिपूर्ण हैं। इस प्रकार हमीरको उद्धारकर्ता मानकर मेवाडके दलके दल लोग आकर उनके झंडेके नीचे इकट्ठे हुए। उनके मनोरथकी रक्षा करनेके लिये सब ही मालदेवके विरुद्ध संग्राम करनेको तइयार हुए राणा हमीरने इस सुयोगको हाथसे नहीं जाने दिया। प्रजाके ही बलसे राजा राज्यकी रक्षा कर सकता है। वही प्रजा आज हमीरके लिये अपना प्राणतक देनेको तइयार है। बुद्धिमानलोग कभी ऐसे अवसरको हाथसे नहीं जाने देते। इसी समयमें यह समाचार आया कि मालदेवकी सम्मतिके अनुसार महम्मदखिलजी अपनी फौजको साथ लेकर चित्तौरपर चढा आता है हमीरपर विलम्ब करना नहीं सहा गया। वे भी अपनी सेना और सामन्तोंको लेकर बादशाहकी गति रोकनेके लिये उस ही ओरको चले। महम्मद बुरी घडीमें चित्तौरपर चढाई करके आया था, जीतना तो दूसरी बात है, उसको वीरहमीरके हाथमें अपनी स्वाधीनतातक गवानी पडी थी। अपनी दुर्बुद्धिसे विषम भ्रममें पतित होकर वह उन दुर्गम मार्गोंसे जो कि मेवाडके पूर्वप्रान्तमें थे, अपनी सेनाको लाया, ऐसा करनेसे उसकी बडी हानि हुई। वह देश इतना जटिल है कि उसमेंसे बाहर न निकल पाकर बादशाहकी बहुतसी सेना एक साथ नाकाम हो गई। बहुतसे आदमी मर गये। इस प्रकार बहुतसे कष्ट और संकटोंका सामना करके बादशाहने शिंगौलीनामक स्थानमें छावनी डाली। महाराणाकी सेनाने वहींपर उनका सामना किया। दोनों दलोंमें घोर संग्राम होने लगा। महाराणा हमीरसिंह प्रचंड केशरीके समान अकेले ही यवनसेनाको दलित करने लगे। उस स्थानमें महाराणा हमीरने मालदेवके पुत्र हरीसिंहके साथ घोर युद्ध किया। परन्तु उस द्वन्द्वयुद्धके प्रथम आक्रमणमें ही अभागा हरीसिंह मारा गया।

अभागे मालदेवकी चिकनी चुपडी बातोंमें आकर बादशाह खिलजीने चित्तौरपर हमला किया था। जिस आशयसे वह संग्राम करने आया था वह आशय पूरा न हुआ, हमीरके प्रचण्ड बाहुबलसे हारकर बादशाहको राणाकी कैदमें आना पडा। हमीरकी जीत हुई। बादशाहको कैद करके चित्तौरके जेलखानेमें डाल दिया गया। वहांपर तीन महीनेतक अत्यन्त कष्ट उठाकर बादशाहने अजमेर, रणथंबौर, नागौर, शुआ, शिवपुर और पचास-लाख रुपये व १०० हाथी अपने बदलेमें देकर छुटकारा पाया। खिलजीको बिदा करनेके

समय तेजस्वी हमीरने कहा, "यह न समझना कि दिल्लीका बादशाह समझकर डरसे आपको छोडा गया है। आपके मुआफिक सैकडों दुश्मनोंका हमला रोकनेके लिये मेरी शमशीर हमेशा तइयार रहेगी। आप नाहक मगरूर होकर चित्तौरको अपनी कदीमी दौलत समझकर फौज लेकर आये, इस ही लिये आपका यह हाल किया गया। इसमें कोई शक नहीं कि आप बडे ही जलील हुए, अगर कुछ दम रखते हो फिर मेरे राजपर चढकर आना; हमीर हमेशा आपकी खातिरदारी करनेके लिये चित्तौरके दरवाजेपर खडा मिलेगा।"

जब मालदेवका समस्त परिश्रम विफल हुआ तब उसके बडे पुत्र बनवीरने राणाकी आधीनताको स्वीकार किया, हमीरने उसका आदर करके नीमच, जीरण, रतनपुर और कैवारादि कितने एक देश इसलिये उसको दे दिये कि जिससे सुसरालवाले मर्यादाके साथ अपनी जीविकाको चलाये जाँय। उस भूमिवृत्तिके दानपत्रपर हस्ताक्षर करनेके समय महाराणा हमीरने अपने सालेसे कहा कि "विश्वासी होकर हमारी सेवा करते रहो और अपना पालन किये जाओ। एक समय तो तुम तुरकोंके दास थे; परन्तु आज स्वधर्मवाले हिन्दूके दास हुए, यह ठीक है कि तुम अपने पिताका राज्य जानेसे दुःखी हुए होगे, परन्तु जरा विचार कर एक बार देख तो लो कि यह राज्य है किसका? मैंने किसके राज्यपर अधिकार किया है? यह तो हमारा ही राज्य है; बस अब तो यह समझना चाहिये कि हमारी चीज हमें मिल गई। जिस मेवाडके पहाडोंपर हमारे बड़े बूढोंका रुधिर लगा हुआ है, आज सौभाग्य लक्ष्मीकी कृपासे उस ही देशको पाया है, और वही सौभाग्य लक्ष्मी हमको सब विपत्तियोंसे बचावेगी।

तुम यह न समझना कि इस राज्य और इस धनको रमणीकी पूजा करनेमें स्वाहा कर दूंगा।" बहनोईके उपदेश वाक्य बनवीरके हृदयमें गड गये उसने उनको सार्थक करनेके लिये मेवाडराज्यके बढानेका संकल्प किया और थोडे ही समयमें भिनसरोर शहरके राज्यपर चढाई करके उसको जीता और मेवाडमें मिला दिया। इस प्रकार वीरवर हमीरके अनन्त प्रभावसे मेवाडके गौरवका उद्धार हो गया। यह देखकर राजस्थानके समस्त राजा परमानन्दमें पूर्ण हो अपनी इच्छानुसार विधि विधानसे महाराणा हमीरकी पूजा करने व आवश्यकतानुसार अपनी सेनाको भी भेजकर उनकी सहायता करने लगे।

उस कालमें सारे भारतवर्षके बीच महाराणा हमीर ही एक प्रबल पराक्रमी राजा थे, भारतके प्राचीन राजवंश उस समय बहुधा मुसलमानोंके सतानेसे ऊजड हो गये थे। माडवार और जयपुरके वर्तमान राजाओंके पूर्व पुरुषगण और बूंदी, ग्वालियर, चंदेरी, सरैसीन, सीकरी, काल्पी और आबू आदिके राजा लोग अति विनीतभावसे चित्तौरके चक्रवर्ती नरेश महाराज हमीरकी पूजा करके उनकी आज्ञाको देववाक्य समझकर पालन करते और अपनी २ सेना लेकर उनकी सहायता करनेको शत्रुसे संग्राम करते थे।

जिस कुदिनमें भारतकी स्वाधीनताका हार तातारियोंके गलेमें डाला गया उस ही दिनसे मेवाड राज्यका पूर्वप्रताप बहुतायतसे मंद हो गया था। यद्यपि वह प्रताप विशेष अधिक और प्रचण्ड था, परन्तु उसके चले जानेसे मेवाडकी कोई विशेष हानि नहीं हुई। कारण कि एक ओरसे जिस प्रकार वह कम हुआ, दूसरी ओरसे वैसे ही राज्यकी प्रभुता अखण्ड भावसे स्थापित हो गई। यदि विचार कर देखा जाय तो ज्ञात होगा कि मेवाडका यह दृढीकरण वीर हमीरके ही राज्यमें सबसे पहिले हुआ। बाबरके समयतक मेवाड इसी प्रकारसे दृढ रहा उन दिनोंमें बडे २ प्रतिष्ठित राजा मेवाड़के सिंहासनपर बैठे थे यद्यपि वह निष्कंटक राज नहीं कर सके, यद्यपि मालव, गुर्जर, और दिल्लीके मुसलमान बादशाह बारंबार उनसे वैर किये जाते थे; तथापि चित्तौरकी वह दृढ प्रभुता किसी प्रकारसे खंडित न हुई। चित्तौरके राजालोग क्रम २ से शत्रुओंकी चढाईको व्यर्थ करने लगे। विशेष करके जब दिल्लीके सिंहासनके विषयमें खिलजी, लोदी और सूरवंशके बादशाह आपसमें झगडा करने लगे, तब मेवाडकी दशा अत्युत्तम हो गई थी। कारण कि उस आपसके झगडेके समय सुभीता पाकर मेवाड़के राजाओंने अपनी उस दृढ प्रभुताको दूना दृढ़ कर लिया था। उस काल वे राजालोग देशवैरियोंके आक्रमणको ही रोककर चुप चाप नहीं रहते थे, वरन अपनी २ विजयिनी सेनाको लेकर दिग्विजयके लिये भी यात्रा करते थे, एक ओरसे नगरकोटके पहाडपर और दूसरी ओर दिल्लीके सिंहद्वारपर अपने विजयकी छापको लगा देते थे इस समय मेवाडराज्यमें केवल शान्ति ही नहीं भोगी थी वरन सौभाग्य लक्ष्मीके प्रसादसे यहांके रहनेवाले अत्यन्त धनवाले हो गये थे। कारण कि इस समय मेवाडराज्यमें जो कई एक विशाल मंदिर और स्तम्भ बनाये गये थे उनके व्ययका अनुमान करनेसे हमारी उक्ति भली भांतिसे प्रमाणित होगी। उस समय इस प्रकारके एक जयस्तम्भके बनवानेमें एक राजाको अपने समयकी सारी आमदनी लगा देनी पडती थी। यदि उस समयके मेवाडकी दश वर्षकी आमदनी भी एक स्तम्भको लगा दी जाय तो भी उसका तइयार होना कठिन हो। पहिले ही कह आये हैं कि महाराणी पद्मिनीके महलके अतिरिक्त और समस्त ही सुन्दर २ स्थान अल्लाउद्दीनने तोड दिये थे, परन्तु एक और भी जैन धर्म मंदिर उसके करालग्राससे बच गया था। जैन सम्प्रदायके प्रतिष्ठित सज्जनोंने इस मंदिरको बनवाया था। ऐसा ज्ञात होता है कि जैनधर्मावलंम्बियोंकी एकेश्वरवादिताको जानकर अलाउद्दीनने उनके पवित्र धर्ममंदिरको विध्वंस न किया होगा। इन स्थानोंका दर्शन करनेसे साफ मालूम होगा कि शिशोदियाकुलके राजालोग शिल्पशास्त्रके अत्यन्त अनुरागी थे। भूमिकरके सिवाय हिन्दूराजाओंको उस कालमें और कोई विशेष आमदनी नहीं थी परन्तु केवल भूमिकरकी आमदनीसे किस प्रकार इतने २ खर्च करके वह अपनी विशाल सेनाका निर्वाह करते थे इस बातका विचार करनेसे हृदय बिस्मित होता है। अत एव निश्चय यही जान पडता है कि शिशोदीय राजालोग दीर्घ कालतक राज्य भोग करके अपने राज्यको धीरता, चतुरता और सुशृंखलतासे पालन करते थे।

यदि ऐसा न करते तो इस प्रकारकी महान् कीर्तियें किसी प्रकारसे प्रतिष्ठित नहीं होतीं। उस उच्च और संपत्तियुक्त अवस्थामें मेवाडकी प्रजाने भी अपने कीर्तिस्तम्भों-को राजके समान स्थापित किया था। परन्तु कालके कठोर और प्रचंड प्रहारसे वह समस्त कीर्तिस्तम्भ आज टूट फूटकर विध्वंस हो गये। राजस्थानके त्यागे हुए विजन दुर्गम देशोंमें आजतक उनके खँड्हर दिखाई देते हैं गौरव और सम्पत्तिके ऊंचे आसनपर विराजमान होकर महाराणा हमीरने वृद्ध अवस्थामें परलोक यात्रा की। महाराणा हमीर अतिधीर, तेजस्वी, साहसी और चतुर थे. उनके अपूर्व गुणोंका वर्णन आजतक मेवाडवाले किया करते हैं। वे लोग आजतक गिह्लोट कुलके दूसरे पवित्र और माननीय राजाओंके साथ वीर; धीर हमीरके नामका जप किया करते हैं।

महाराणा हमीरके परलोकवासी होनेपर उनका बडा पुत्र क्षेत्रसिंह (खेतसिंह) पिताजीके दिये हुए विशाल राज्यभारको पाकर सम्वत् १४२१ (सन् १३-६५ ई०) में चित्तौरके सिंहासनपर बैठा। बालक क्षेत्रसिंह अपनी चतुरता और बुद्धिमानीके प्रभावसे बहुत शीघ्र पिताका योग्य पुत्र हुआ। अल्पकालमें ही पिताकी प्रचण्ड जिगीषा वीरता और तेजस्विताका अनुकरण करके उसने अजमेर और जहाजपुरको जीता और मंडलगढ दसूरि तथा समस्त चंपनको अपने विशाल राज्यमें मिला लिया। वकरौलनामक स्थानमें दिल्लीश्वर हुमायूँ * के साथ उसकी एक लडाई हुई। दिल्लीकी विशाल फौजको उसने भली भांतिसे जीत लिया। परन्तु कुभाग्यतासे उनका वह विजय गौरव, वह वीरता तेजस्विता अतिसाधारण बातपर इति हो गई। उसके अनमोल जीवनकी पवित्र गांठ, इस लोकके मध्य अकालमें टूट गई। मेवाडके भीतर जो बनोदानामक स्थान बसा हुआ है, उसके हारावंशीय सामन्तराजकी बेटीसे क्षेत्रसिंहकी सगाई हुई थी, परन्तु अभाग्यतासे उस सुविवाहके होनेसे पहले ही उस हारासरदारने क्षेत्रसिंहको गुप्तभावसे मार डाला। कौनसी पाशवी वृत्तिका पोषण करनेके लिये इस दुराचारीने अपने राजाको मार डाला इसका भेद कुछ भी ज्ञात नहीं हुआ।

---

* यह हुमायूं कौन था। हिन्दोस्थानके इतिहासमें सन् १३६५ ई० से लेकर सन् १३८३ ई० तक किसी हुमायूंका नाम नहीं पाया जाता। फिर यहांपर टाडसाहबने किसको हुमायूं कहा है? मुगलखान्दानके हुमायूंका सब इतिहासलेखक जानते हैं यह बादशाह ईसवीकी सोलहवीं शताब्दीमें हुआ है। अत एव साफ मालूम होता है कि यहांपर उसका वर्णन नहीं है। एलफिनष्टनसाहबने निजरचित भारत-के इतिहासमें लिखा है कि दिल्लीश्वर नसीरुद्दीन तुगलकका हुमायूंनामक एक बेटा था सन् १३९४ ई० में वह अपने बापके पीछे गद्दीपर बैठा। समयका कुछ अन्तर जरूर पड़ता है और सब बातोंमें यह टाडसाहबके कहे हुए हुमायूंसे मिलता है, इसने बुढापेमें दिल्लीका तख्त पाया और डेढ महीनेके बाद परलोकको सिधारा। ऐसा ज्ञात होता है कि टाडसाहबने इस ही हुमायूंका नाम यहांपर लिखा है। यद्यपि सन् १३९४ ई० से पहिले इसको सिंहासन नहीं मिला। परन्तु यह बात किसी प्रकारसे असम्भव नहीं है कि यह सन् १३६५ ई० में जीता जागता था।

जब क्षेत्रसिंहकी इस प्रकारसे अकाल मृत्यु हुई तब राणालाक्ष (लाखा) (सम्वत् १४३९) (सन् १३८३ ई०) में चित्तौरके सिंहासनपर बैठे। सिंहासनपर बैठते ही राणा लाक्षने मेरवाडानामक पहाड़ी देशको जीता, और वहांके प्रसिद्धदुर्ग विराट गढ़को ऊजड करके उसके ही खंडहरपर विदनौरके प्रसिद्ध दुर्ग स्थापन किया। राणा लाक्षने एक सबसे बडा कार्य और भी किया कि जिसके करनेसे वह भली-भांतिसे प्रसिद्ध हुए और इसीसे उनका राज्य बढा। राणा क्षेत्रसिंहने भीलोंके जिस चप्पनदेशको जीत लिया था उसके भीतर वसे हुए जावडानामक स्थानमें चांदी और टीनकी एक खानि निकली। कहते हैं कि इस खानिमें बहुतायतसे सप्तधातु* पाई जाती है, परन्तु इस समय यह वार्ता ठीक नहीं जान पडती। सोनेका तो कोई पता ही नहीं पाया जाता हां चांदी, टीन, तांबा, सीसा और रसांजन यह वस्तु बहुतायतसे निकलती हैं। परन्तु चांदी और टीन जिस एक ही खनिज पदार्थसे निकलती थीं, और जिनको उस पदार्थसे पृथक् २ कर लिया जाता था, आज बहुतसी टीनको पृथक् करनेपर भी थोडी ही चांदी निकलती है।

लाक्षराणाके शाशनकालमें मेवाडकी अत्यन्त श्री वृद्धि हुई थी। और महाराणाका गौरव भी अत्यन्त बढा था। अम्बरके अन्तर्गत नगराचलनामक स्थानमें शंकलावंशके कितने एक राजपूत बास करते थे, राणा लाक्षने उनको भी पराजित किया। केवल अपनी जातिके विरुद्ध ही उन्होंने खड्ग नहीं धारण किया था, वरन दिल्लीके बादशाह लोदीसे भी उन्होंने संग्राम किया था, और विदनौरनामक स्थानमें बादशाहकी भली भांतिसे खबर ली थी। राणा लाक्ष जिस प्रकारके वीर थे वैसे ही वीरोचित पवित्र कार्यमें उन्होंने अपने प्राणोंको नैछावर कर दिया था, उपरोक्त संग्राम होनेसे कुछ ही दिन पीछे पुण्यभूमि गयाजीपर म्लेच्छोंने चढाई की थी। पापी म्लेच्छोंके द्वारा गयातीर्थके घिरजानेपर, सनातनधर्मकी विपत्तिके समयपर क्या सनातनधर्मावलम्बी वीर भूपाल गण चुप चाप रह सकते हैं? सम्पूर्ण भारतवर्षमें एक घोर संघर्षण हुआ। क्षत्री वीरगण, यवनोंके कलुषमय कवलसे पुण्यभूमिका उद्धार करनेके लिये अपनी २ सेनाको लेकर चले। शिशोदीय वीर राणा लाक्ष भी इस धर्मयुद्धमें अपनी सेनाको लेकर गये थे। महाराणाने उस धर्मयुद्धमें अनुपम वीरता प्रकाशित करके

---

* स्वर्णं रौप्यञ्च ताम्रञ्च रंगं पारद मेव च।
सीसं लौहञ्च सप्तैते धातवो गिरिसम्भवाः॥

भावप्रकाश। कहते हैं कि सप्तधातुओंके साथ सात ग्रहोंका भी विशेष सम्बन्ध है।

× बहुतदिनोंसे यह अन्मोल खानें छूटी हुई पड़ी हैं। अव वहांपर दुर्गम वन हो गया है, वहां जानेकी किसीको हिम्मत नहीं होती। वहांके रहनेवालोंने उन खानियोंकी अधिष्ठात्री देवियोंके जो मंदिर बनाये थे वह भी इस समय टूटे फूटे पड़े हैं। कोई एक फूल चढाकर भी अव उनकी पूजा नहीं करता। वहांके भीलगण इन पुराने देवताओंको छोडकर नए २ देवताओंकी पूजा करते हैं। वहांपर इस समय भगवती लक्ष्मीजीकी पूजा छूट गई और शीतलादेवीजीकी पूजा हुआ करती है।

वहांपर अपने प्राणोंको न्योछावर कर दिया। स्वधर्मानुराग और स्वदेश प्रेमिकताहीके कारणसे उनका नाम माननीय मेवाड़के प्रसिद्ध और प्रातःस्मरणीय राजाओंकी पवित्र नाममालाओंमें ऊंचे स्थानको प्राप्त हुआ है। महाराणा लाक्ष जिस प्रकारसे स्वदेशानुरागी थे वैसे ही शिल्पके भी प्रेमी थे। अपने देशकी शोभा बढानेके लिये वे जिन शिल्पकार्योंको कर गये हैं, आजतक वह कार्य्य ज्योंके त्यों वर्तमान रहकर उनकी गंभीर शिल्पप्रियताकी साक्षी दे रहे हैं। राज्यके स्थान २ में बडी २ पुष्करिणियें और नकली सरोवर उन्होंने बनाये। जिन खानियोंका हम पहिले वर्णन कर आये हैं उनसे जो कुछ भी आमदनी होती वह समस्त देशोन्नतिके कार्यमें लगा दी जाती थी। विशेष करके दुष्ट अलाउद्दीनने जिन सुन्दर स्थानोंको और देवमंदिरोंको तुडवा दिया था, महाराणा लाक्षने उस विपुलसम्पत्तिकी सहायतासे उन सब स्थानोंको फिरसे बनवा दिया। महाराणी पद्मिनीका महल जिस प्रकारसे बना था, ठीक उस ही प्रकारका एक दूसरा मनोहर महल बनाया गया। इस महलका कुछ अंश आजतक दिखाई देता है। इन सबके सिवाय राणाजी बहुत धन लगाकर ब्रह्माजीका भी एक बडा मंदिर बनवाया। यह अद्वितीय मंदिर एकेश्वरदेव भगवान् ब्रह्माजीके नामपर उत्सर्ग किया गया। इस ही कारणसे इसमें किसी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा नहीं हुई। ज्ञात होता है कि इससे ही हिन्दूविद्वेषी आक्रमणकारियोंकी प्रचण्ड विद्वेषानलसे इसने निस्तार पाया है। नहीं तो अभीतक इसका भी खंडहर ही दिखाई देता।

राणा लाक्षके बहुतसी सन्तान हुई थी, अवसर आनेपर इस समस्त सन्तानने राजस्थानके भिन्न २ देशोंमें अपने २ नामका एक २ गोत्र स्थापित किया। उनमें लूनावत और दुलावतवाले प्रसिद्ध हैं। आज भी अगुणा पानोरके पास और आरावलीके दूसरे देशोंके रहनेवाले स्वाधीन जिमीदारलोग इस दुलावत और लूनावतके नामसे अपना परिचय बताते हैं * महाराणा लाक्षके बडे पुत्रका नाम चण्ड था सबसे बडा होनेपर भी चंड पिताके सिंहासनपर नहीं बैठा। किस प्रकारके कारणसे सदाकी रीतिमें अन्तर आ गया, और उससे मेवाड राज्यमें कैसे २ अनर्थ हुए थे उनकी यथा योग्य समालोचना आगेके छठे अध्यायमें की जायगी।

---

* चप्पनके निकटवाले कानूरके सायंगदेवल सरदार और सिन्धुनदके तीरवाले शोडवारके सामन्तगण राणा लाक्षके ही वंशमें उत्पन्न हुए हैं।

षष्ठ अध्याय ६.

राजपूतोंके नारी विषयक शिष्टाचार;-मेवाड़में बड़े पुत्रके उत्तराधिकार-की रीतिमें फेर। न्यायानुसार उत्तराधिकारी चण्डके बदले छोटे भ्राता मुकुलजीको सिंहासनकी प्राप्ति;-मेवाडमें राठौर लोगोंकी अन्याय प्रभुतासे अनेक प्रकारके झगडोंका उत्पन्न होना; उनको चित्तौरसे निकालकर बीरवर चण्डका मंदोर-नगर प्राप्त करना;-मेवाड और मारवाडराज्यके बीचमें परस्पर वैषयिक संबंधका बंधन मुकुलजीका राज्य-शासन, और उनकी हत्याका वृत्तान्त।

आजकल बहुतसे महाशय यह कहते हैं कि जो लोग स्त्रीजातिके विशेष अनुरागी हैं वह सबसे अधिक सभ्य हैं। यदि इस सिद्धान्तका अनुमोदन किया जाय, यदि स्त्रीजातिके प्रति अनुराग और शिष्ट व्यवहारके परिमाणके अनुसार जातीय सभ्यता-की बराबरीकी तुलना करनी हो तो अवश्य ही राजपूतलोगोंको सभ्यताका अग्रनायक स्वीकार करना चाहिये। राजपूत लोग अपने हृदयमें आराध्य देवताकी भांति स्त्रीकी पूजा किया करते हैं, यदि इस देवताका किंचित् भी अपमान हो जाय, यदि उसके सन्मान या शिष्टाचारमें जरा भी अन्तर पड जाय तो तेजस्वी राजपूतोंके हृदयमें आगसी बल उठती है, और जबतक अपमानकारीके हृदयके रुधिरसे अपनी आग नहीं बुझा लेते तबतक किसी प्रकारसे उनकी शान्ति नहीं होती। आगा पीछा न शोचकर साधारण उपहासकी रीतिसे इस रीतिमें विघ्न डालनेवाले एक बन्धुको भी राजपूतोंने भयंकर शत्रु गिना था। जो राठौर और कुशावहलोग बहुत दिनसे एक अभिन्न सौहार्दकी डोरीमें गुँथे हुए थे, इस शिष्टाचारके विरोधी विद्वेषात्मक वाक्यसे वे परस्पर एक दूसरेके शत्रु होगये। इस शत्रुतासे दोनों ओरकी बडी भारी हानि हुई जिस समय वे दोनों मित्रभावसे रहते थे तब उन दोनोंका बल एक साथ मिलकर अत्यन्त दुर्धर्ष हो गया था। यहांतक कि प्रचंड महाराष्ट्री भी उनके सामनेसे तृणके समान उठ गये थे। परन्तु जब उस अनर्थकारी विवादसे दोनो अलग २ हो गये तब उन महाराष्ट्रियोंने सुयोग पाकर उन दोनोंको पराजित करके उनकी घोर हानि की अत एव समझना

चाहिये कि तेजस्वी राजपूतोंके लिये रमणी विषयक शिष्टाचार साधारण बात नहीं है। स्त्रियोंके विषयमें अतिसाधारण परिहास करनेसे मेवाडके स्वामी महाराणा लाक्षने जो अग्नि अपने बडे पुत्र चंडके हृदयमें जला दी थी वह सहजसे ही नहीं बुझी। उसके बुझानेमें राज्यकी एक पुरानी रीतिको उलटा करना पडा और उसके उलटा करनेसे मेवाडमें जो अनिष्ट हुआ वैसा अनिष्ट मुसलमान या महाराष्ट्रियोंके आक्रमणसे भी होना सम्भव नहीं था।

सुख दुःखसे अपने दीर्घजीवनको व्यतीत करके राणा लाक्ष बूढे होनेको आये। इस समयमें अनर्थकारिणी विषय चिन्ताको छोड़कर परमार्थचिन्तामें मन लगाय अन्तमें अपने समयको शान्तिसे व्यतीत करना चाहते थे। उनके बेटे पोते यथायोग्य वृत्ति और भूसम्पत्तिको पाकर परमानन्दसे समयको व्यतीत कर रहे हैं। अब उनको किस बातकी चिन्ता है? अब केवल बडे पुत्र चण्डको यौवराज्यपर अभिषेक कर देनेसे ही वे निश्चिन्त होकर भगवानका भजन करेंगे। परन्तु विधाताने वाम होकर फिर उनको संसाररूपी नदीकी धारके भँवरजालमें डाला। राणाकी परमार्थचिन्तामें विघ्न हुआ, शान्तिके मार्गमें कांटा पडा। वह इस विषमयी संसारचिन्ताके स्रोतसे किसी भांति न निकल सके।

एक दिन राणा लाक्ष मंत्री, पारिषद और प्रतिष्ठित सामन्तोंके साथ अपनी राजसभामें बैठे थे कि इतनेहीमें मारवाडके राजा रणमल्लका पठाया हुआ एक दूत वहां "नारियल" लेकर आया। राणाने उस दूतका यथायोग्य सन्मान करके मारवाडके भूपालकी कुशल पूछकर उसके आनेका कारण पूछा। दूतने कहा—"महाराणाके बडे पुत्र युवराज चण्डके साथ अपनी कन्याका व्याह ठहराकर महाराज रणमल्लने यह नारियल भेजा है"। चण्ड उस समय राजसभामें नहीं था; इस कारणसे राणाने दूतको कुछ देरतक ठहरनेके लिये कहा और धीरे २ बोले कि "इसी समय चण्ड सभामें आकर इस विवाहमें अपनी सम्मति देगा।" अनन्तर अपनी डाढीको चढ़ाते हुए हँसकर बोले कि "मैं जानता हूं कि मेरी समान सफेद डाढी मूंछवालेके लिये आपलोग इस प्रकार खेलकी सामग्रीको नहीं भेजते।" राणालाक्षके मधुर और कौतुकयुक्त वचन सुनकर समस्त सभासद परम पुलकित हुए और रसीले वचनकी विशेष प्रशंसा करके बारम्बार उस बातको कहने लगे।

इतनेहीमें कुमार चण्डने सभामें आकर इस समाचारको सुना। पिताने कौतुकके वश होकर भी जिस सम्बन्धको जरा देरके लिये अपना समझा है, फिर पुत्र उस सम्बन्धको किस प्रकारसे अपना कर सकता है? चंडके हृदयमें यह कूट चिंता खलबलाने लगी। बारम्बार इस प्रकारसे विचार करके चंडने निश्चय किया कि यह सम्बन्ध मैं किसी भाँतिसे नहीं करूंगा। चंडके इस सिद्धान्तको शीघ्र ही राणाने सुना। पुत्रके इस सिद्धान्तको अनुचित कहकर राणाने बारम्बार उसको बहुतेरा समझाया, परन्तु चंडके

एक भी ध्यानमें न आया। वे चण्डके दृढसंकल्पको किसी प्रकारसे भी नहीं टाल सके। राणाको उभय संकट हुआ! एक ओर चण्डकी कठोर प्रतिज्ञा और संकल्प, दूसरी ओर मारवाडके राजा रणमल्लका घोर अपमान। क्रमसे यह अपमान अनिबार होने लगा। कारण कि राणाके हजारों उपदेश, स्नेह वचन, अनुरोध, आदेश अन्तमें भय दिखाना भी निष्फल हो गया। दृढ़प्रतिज्ञ चण्डने किसी प्रकारसे उस विवाहमें अपनी सम्मति न दी। तब तो राणा पुत्रसे अत्यन्त अप्रसन्न हुए और रणमल्लको अपमानसे बचानेके लिये स्वयं उस विवाहको करना स्वीकार किया। कहां तो बुढापेमें संसार-कार्यको छोडकर अन्त समयको शान्तिसे बिताना सोचा था, परन्तु सो न होकर फिर संसारके चक्रमें घूमना पडा। जिस पुत्रको प्राणोंसे भी अधिक समझते थे, जिसको यौवराज्यपर अभिषेक करके संसारसे छुटकारा लेनेकी तइयारी की थी; उस पुत्रका ऐसा आचरण? पुत्र होकर पिताके सुख दुःखका कुछ भी ध्यान न किया पिताके मुखकी ओर भी न देखा? फिर वह पुत्र किस काम आवेगा? राणा इन बातोंको सोचकर अत्यन्त रुष्ट हुए। क्रोधके मारे अत्यन्त तिरस्कार किया तेजस्वी चण्ड चुपचाप है--मौन भावसे पिताके समस्त तिरस्कारको सहा। दारुण अपमानके मारे उसका हृदय खलबलाने लगा। परन्तु वह स्थिरभावसे खडा रहकर उस भयंकर तिरस्कारको सहन करता रहा। कुछ भी उत्तर न दिया। फिर राणाने गंभीर कंठसे कहा "अच्छा मैं ही उस स्त्रीका पाणिग्रहण करता हूं; परन्तु तुम निश्चय जानियो कि उस स्त्रीके गर्भसे यदि कोई पुत्र हुआ तो तुम्हारे उत्तराधिकारका अधिकार जाता रहेगा—शपथ करो।" इस कठोर वचनको सुनकर तेजस्वी चण्डके शिरका एक केश भी तो कम्पायमान नहीं हुआ, वह अचल अटल और स्थिरभावसे खडे रहकर धीरभावसे बोला। "हां पिता! मैं भगवान एकलिंगकी शपथ करके कहता हूं कि पुत्र होनेपर मैं अपने उत्तराधिकारको स्वयं ही छोड दूंगा।

होनहारकी गूढ लिखनको कौन मेट सकता है? बारह वर्षकी कन्यासे पचास वर्षके महाराणाका विवाह हुआ। इस विचित्र संयोगसे होनेवाले पुत्रका नाम मुकुलजी हुआ जब मुकुलजी पांच वर्षका हुआ तो राणाने सुना कि यवनलोगोंने पुण्यतीर्थ गयाजीपर चढाई की है और उन दुराचारियोंके ग्राससे इस पवित्रक्षेत्रका उद्धार करनेके लिये भारतवर्षके समस्त राजालोग उस ही ओरको चले हैं। तब महाराणा लाक्षने भी उस कठोर व्रतका अवलम्बन करके अपने अन्तकालको पवित्र करनेका संकल्प किया। भारतवर्षके सनातनधर्मावलम्बी राजाओंका ऐसा विश्वास था "कि राज्य करनेसे राजाको अनन्त पापका भागी होना पडता है।" अन्तकालके समय राज्य धन और विषयवासनाको छोडकर कठोर मुनिवृत्तिका अवलम्बन करके व्रतानुष्ठान, परमार्थचिन्ता, तीर्थगमन और दानादि पुण्यकार्यका अनुष्ठान न करनेसे किसी प्रकार इस पापसे निस्तार नहीं होता। इस ही विश्वासको हृदयमें धारण करके इस कठोर संग्राममें प्राण देनेको तइयार हुए। परन्तु इसलाम धर्मावलम्बी तातार-

वाले जिस दिन हिन्दुओंके सनातनधर्मको कलंकित करनेके लिये तइयार हुए, और जिस दिन वे उस कुअभिप्रायको सिद्ध करनेके लिये खड्गसे काम लेनेको तइयार हुए; उस ही दिन हिन्दूराजाओंने उस शान्तिमय जीवनको त्यागकर कठोर बीर धर्म्मके धारण करनेका लक्षण दिखाया। उस ही दिन उन्होंने शतद्रू और कग्गर नदीके विशाल किनारे रक्तस रंग दिये और गया तीर्थका उद्धार करना उनका प्रधान साधन हुआ। उनका दृढ विश्वास था कि यदि वे लोग पापिष्ठ यवनोंके कलुषित ग्राससे पुण्यतीर्थ गया धामको उद्धार कर लेंगे तो पुनर्जन्म न होगा। तथा अप्सरागण दिव्यविमानमें बैठालकर उस साधन भूमिसे स्वर्गलोकमें ले जांयगी। विश्वास ही कार्यका प्रधान प्रणोदक और अग्र नायक होता है। इस ही विश्वासके वशवर्ती आर्य नृपतिगण बुढापेमें दुर्द्धर्ष म्लेच्छोंके साथ घोर संग्राम करनेके लिये तइयार हुए। उनकी तपस्या यही है आज महाराणा लाक्ष उस ही कठोर तपस्याको करने के लिये भयंकर संग्राम करनेको अवतीर्ण हुए। इस दुस्साध्य व्रतको अवलम्बन करनेसे पहिले उन्होंने विचार किया कि अपने राज्यकी व्यवस्था भी कर दें। राज्यसे बिदा ग्रहण करनेपर किसी प्रकारका झंझट न हो इस बातका प्रबन्ध करना ही उन्होंने परम कर्तव्य समझा। उस काल महाराणाने चण्डसे इस बातका कोई परामर्श न किया कि उत्तराधिकारी कौन होगा? अथवा यह राज्य किसको दिया जायगा। केवल इतना ही कहा कि, "मैं जिस कठोर व्रतको करनेके लिये जाता हूँ, इसमें ऐसी आशा नहीं है कि फिर उद्यापन करके भी देशमें लौट आऊं। यदि मैं न लौट सकूं तो फिर मुकुलकी उपजीविकाका क्या उपाय होगा? फिर मुकुलके लिये कौनसी सम्पत्ति निर्द्धारित होगी?" तेजस्वी चण्डने स्थिरभावसे खडे होकर धीर और गंभीरभावसे उत्तर दिया कि "चित्तौरका राजसिंहासन।" कदाचित इस सरल और उदार उत्तरको सुनकर राणाके मनमें कुछ सन्देह हो इसलिये बुद्धिमान चंडने पिताकी गयायात्रासे पहिले ही मुकुलके अभिषेक कार्यको करनेका विचार किया। चंडकी दृढ प्रतिज्ञा और अद्भुत आत्मत्याग देखकर भी राणाके मनमें सन्देह हुआ इससे युद्धमें जानेसे प्रथम ही उन्होंने मुकुलजीको राजपर अभिषेक कर देना चाहा, शीघ्र ही अभिषेककी सामग्री एकत्र हुई। पांच वर्षके बालक मुकुलको राजसिंहासनपर विराजमान करके चंडने सबसे पहिले उसको राजोपयोगी सन्मान और आदर दिखाया, वह उसके निकट अनुगत और विश्वासी रहनेकी प्रतिज्ञा की। इस महान् स्वार्थत्यागके बदले मंत्रभवनमें उनको सबसे ऊंचा आसन दिया गया और यह भी विधि हो गई कि उस दिनसे जिस किसी सामन्तको भूमिवृत्तिका दान किया जायगा, उसके दानपत्रपर राणाके हस्ताक्षरोंसे ऊपर चंडके खड्गका चिह्न बना रहेगा। चित्तौरके राजाओंने उस

दिन से जिसको जो कुछ भूमिवृत्ति दान की उस दानपत्रके ऊपर सालुम्ब्रा पतिके खड्गका चिह्न बना हुआ दिखाई देता है।

कुमार चन्द्रका हृदय जिस महत्त्व, वीरता सहनशीलता और उदारता आदि सुन्दर गुणोंसे भूषित था, यदि मुहूर्त भरतक उनके आत्मत्यागका विचार किया जायगा तो भली भांतिसे यह बात प्रमाणित होगी कि पिताके पीछे अपने लघुभ्राता मुकुलका और सम्पूर्ण मेवाडराज्यकी भलाई व श्रीवृद्धिके लिये अतिचतुरताके साथ समस्त राज्यभारको भली भांतिसे देखने लगे। परन्तु मुकुलकी माता उनके प्रबन्धसे अत्यन्त अप्रसन्न थी। यह चाहती थी कि मुकुलके समर्थ होनेतक मैं स्वयं राजकार्यका प्रबन्ध करूंगी। परन्तु उसकी यह आशा पूर्ण न हुई, इस कारणसे मनमें महादुःख हुआ! कुटिल हिंसा और विद्वेषके चलायमान करनेसे उसने पवित्र कृतज्ञताको हृदयमें स्थान न दिया! उस समय उसका हृदय पशुके समान हो गया था। नहीं तो जिस चंडके स्वार्थ त्यागके विना वह कभी भी "मेवाडकी राजमाता" न हो सकती थी, हृदयपर पत्थर रखकर यथार्थ राक्षसी और पिशाचनीकी मूर्ति बनाय उस ही चंडके अपूर्व गौरवको भूल गई। तथा उसहीका बुरा चेतनेके विचारमें लगी! वीरवर चण्डके प्रत्येक कार्यको यह राजमाता डाह और घृणाके साथ देखने लगी। फिर पीछे किसी प्रकारका छिद्र न देख पानेसे केवल अमूलक संदेह और घिनौने स्वभावके वशमें पडकर चंडके सीधे सादे कार्योंमें भी दोष लगाकर कहा। "राजकार्यको चलानेके बहानेसे चंड स्वयं ही राणा बने जाते हैं, यद्यपि वह अपनेको राणा नहीं कहते हैं; परन्तु इस उपाधिको केवल नाममात्र रखना चाहते हैं। धीरे२ यह समस्त बातें चण्डने सुनीं। वे भली भाँतिसे अपने हृदयको पवित्र और सरलभावको जानते थे, उनको दृढ विश्वास था कि छोटे भाईके मंगलके लिये और राज्यकी संपत्ति वृद्धिके लिये हमने राजसन्मानको न्यौछावर कर दिया है! हा क्या इन बातोंका यही बदला है? यह चण्ड यह भी जानते थे कि पुत्रके स्वार्थके लिये माताका हृदय बारम्बार व्याकुल और संदेहयुक्त रहता है। परन्तु कैसा ही हो; कहीं हितकारी मनुष्यकी सरलता, उदारता और स्वार्थत्याग, यह बातें क्या कुटिल कपटतामें गिनी जायँगी। संसारमें तब तो किसीको भी सरल व्यवहार नहीं करना चाहिये।

चण्डके उदार हृदयपर घोर घाव पहुँचा। वह समझ गये कि करनेका समय नहीं है शत्रुकी भयंकर छूरीको हृदयमें ग्रहण किया जा सकता है, परन्तु इस प्रकारका अन्याय और कलंक पलभरको नहीं सहा जा सकता। इस अन्याय और दुर्नामता तथा संदेहके लिये उन्होंने माताको मधुर तिरस्कार करके कहा "आपकी समझमें फेर है,

---

* चंडके वंशवाले चण्डावत (चन्दावत) नामसे पुकारे जाते हैं। उनके स्वामी और सरदारके रहनेका स्थान सालुम्ब्रा है। मेवाडके सरदारोंकी सभामें सालुम्ब्रापति सर्वश्रेष्ठ गिने जाते हैं।

यदि मुझको चित्तौरके राजसिंहासनपर बैठनेकी अभिलाषा होती तो आज कौन आपको राजमाता कहकर पुकारता । अच्छा, इससे मेरी कोई हानि नहीं न कुछ दुःख ही है, केवल यह पछतावा रहा कि चित्तौरके राज्यको छोडकर जाता हूं । चित्तौरके भाग्यमें तो गाढी स्याहीसे भयंकर होनहारका होना लिखा है, उसहीका विचार करनेसे मुझे दुःख होता है ! अच्छा, मैं जाता हूं; राज्यका समस्त प्रबन्ध आप ही लीजिये; अब केवल आपहीके ऊपर राज्यका सुख, दुःख, सम्पत्ति इत्यादि समस्त विषय निर्भर करते हैं, देखियो ! शिशोदिया कुलका गौरव कहीं नाश नहीं हो जाय । " चण्ड चित्तौरको छोडकर मान्दूराज्यकी ओर चला गया । वहांके राजाने भली भांतिसे आदर मान करके अपने यहां रक्खा और हल्लरनामक राजस्थान शीघ्र ही उनको भूमिवृत्तिमें दे दिया ।

पृथ्वीके किस स्थानपर यथार्थ कृतज्ञता है ?–यह कृतज्ञताका पार्थिव और स्वर्गीय धन है । हिंसा, द्वेष, स्वार्थपरता और विश्वासघातकताके नरक कूपमें कहीं यह स्वर्गीय रत्न रह सकता है ?–जिसके हृदयमें यह दिव्यरत्न विराजमान है, वह मनुष्य होनेपर भी देवता है,–वह अत्यन्त साधारण होनेपर भी सम्पूर्ण संसारका पूजनीय है । कुमार चण्डने एक साथ स्वार्थको छोडकर अपने राजमुकुटको छोटे सौतेले भइयाके मस्तकपर अपने हाथसे उढाया; जो उनका दास होनेके योग्य भी नहीं था, विवश होकर उसहीकी सेवा करनी पडी;–इस उदारता और महानताके कितने चित्र मनुष्योंके इतिहासमें दिखाई देते हैं? इस अद्भुत स्वार्थत्याग करनेके बदलेमें उनको क्या मिला ? हिंसा, द्वेष, स्वार्थपरता और घातकताके भंडार इस संसारमें उसके साथ कौनसी भलाई की? वे अपने पितृराज्यको छोडकर चले गये, दुष्ट राजमाताने एक बार भी उनके ठहरनेके लिये न कहा, एक बार भी उनके ले आनेकी चेष्टा न की । बरन उलटी प्रसन्न हुई; विशेष करके पिता भ्राता और मैकेके दूसरे कुटुम्बियोंके आनन्दकी सीमा न रही । मन्दोरनगरको छोडकर वे लोग क्रम २ से चित्तौरमें आने लगे । सबसे पहले मुकुलके मामा जोधने (इन्होंने ही जोधपुर बसाया) मारवाडकी मरुभूमिको छोडकर मेवाडकी शीतल छायामें आनकर विश्राम लिया । कुछ दिन पीछे जोधके पिता रणमल्ल और अगणित सेवकादि भी आ गये । ज्वारकी रोटी खाते २ मारवाडमें जिनके गले सूख गये थे आज वह लोग हरे भरे मेवाडकी गेहूंकी बनी रोटियें खाकर परम प्रसन्नतासे बालक मुकुलका जय २ कार करने लगे ।

ऐसे कितने आदमी हैं, जो क्रूरनीति मनुष्योंके हृदयका भाव समझ सकते हों ? मारवाडके गरम रेतीले मैदानमें बैठकर जो लोग उस स्थानको स्वर्गके सुखका भंडार समझकर गर्व करते थे, आज वही महानुभाव वीरगण उस "स्वर्गादेव गरीयसी" जननी जन्म भूमिको छोडकर मेवाडकी भूमिमें किस कारणसे आये हैं ? कौन जाने कि उनके हृदयमें कौनसा विचार उदय हुआ है ? अपने बालक धेवतेको गोदमें लेकर वे बाप्पा

रावलके सिंहासनपर विराजमान हुए। राणाके छत्र चामर और किरण उनके चारों ओर शोभा पाते थे; उनके हृदयमें सुखकी कितनी ही लहरें उठा करती थीं, मन ही मनमें अनेक प्रकारके स्वप्न देखा करते थे। जिस समय बालक मुकुल खेलनेके लिये राजसभासे चला जाया करता था; तब वह अकेले ही सिंहासनपर बैठे रहते थे। वे समस्त राजचिह्न उस समय भी उनके मस्तकपर शोभायमान रहते थे। कोई इन बातोंको देखकर भी न देखता था। कोई भी साहस करके उनसे इस विषयकी पूछ पाछ न करता था। परन्तु केवल एक जन इस अभिप्रायको समझा। राठौर राज्यका यह व्यवहार देखकर वह मनमें अत्यन्त ही दुःखित हुआ। शिशोदिया कुलकी यह एक बूढी धात्री थी * राजकुमारकी रक्षाका भार इसके ही हाथमें था। क्या वीरवर बप्पा रावलके सिंहासनपर राठौरलोग अधिकार करेंगे। क्या दुर्जनकी बिश्वासघातकतासे शिशोदिया कुल सदाके लिये पातालमें चला जायगा? धात्रीके मनमें इस प्रकारकी गूढ चिन्ता होने लगी।

दारुण दुःख घृणा और अभिमानसे जर्जरित होकर मुकुलकी माताके पास जाकर कहा। "क्या तुम कुछ देखती नहीं हो। क्या कुछ समझमें नहीं आता? क्या तुम्हारे पिताका कुटुम्ब तुम्हारे बच्चेको चित्तौरके सिंहासनसे अलग रक्खैगा?" मंगलकी अभिलाषा करनेवाली धाईके मुखसे यह बात सुनकर राजमाताको अत्यन्त सन्देह हुआ; अबतक इस प्रकारकी चिन्ताका उनको स्वप्नमें भी ध्यान नहीं था। अब वह समझी कि हमारी दशा संकटमें पहुँच गई है अब विपत्तिसे उद्धार पानेकी फिकर पडी। परन्तु अब कौनसा उपाय है? उन्होंने मतिभ्रममें आकर आप ही अपने पांवमें कुल्हाडी मारी। यदि कुमार चण्ड चित्तौरमें होते तो किसी प्रकार यह विपत्ति न पडती, परन्तु उन्होंने पिशाचिनी बनकर अपने आप ही अपना सत्यानाश किया। विपत्तिसे छूटनेका कोई उपाय न देखकर महाराणी अपने पिताके पास गई और तीव्र अभिमान करके उनसे उपरोक्त बातोंका कारण पूछा, उत्तरमें जो कुछ सुना उससे उनका हृदय व्याकुल हो गया, शिर चकराने लगा, उनके हृदयमें दृढ विश्वास हो गया कि पिता रणमल्ल, प्राणप्यारे मुकुलका जीवन नाश करके स्वयं राज्य लेना चाहता है। इस विपत्तिकालमें राजमाताने सुना कि चण्डके दूसरे भाई रघुदेवको रणमल्लने गुप्तभावसे मार डाला। इस कुसमाचारके सुनते ही राजमाता अत्यन्त व्याकुल हुई। रघुदेवको कैलवाडा और कवेरीगाँवनामक दो भूमिवृत्तियें मिली थीं। रघुदेव कैलवाडेमें ही रहते थे। एक समय रणमल्लने उनके पास एक सन्मानसूचक पहरावा भेजा, पहिरावा प्राप्त करते ही राजपूतलोग पहर लिया करते हैं।

---

* टाडसाहब कहते हैं कि हिन्दूराजपरिवारमें उस धात्रीका विशेष आदर था। उसकी सन्तानको एक २ राजपूत राजाके साथ "धाई भाई" का सम्बन्ध रखना पडता है। इन लोगोंको सदाके लिये भूमिवृत्ति दी जाती है। हिन्दूराजालोग इनको बड़े २ कार्यौंमें नियुक्त करते हैं।

यह उनमें एक विशेष शिष्टाचार समझा जाता है । रघुदेव जैसे ही उस पहिरावेको धारण कर रहे थे कि वैसे ही उस दुराचारीके गुप्तचरने उनको छूरीसे मार डाला ! इस गुप्तघातकको रणमल्लने ही भेजा था । रघुदेव अत्यन्त श्रीमान्, धर्मपरायण और साहसवान् युवा पुरुष था । उनके अनुपम गुणोंसे व सुन्दर होनेसे राजपूतलोग उनसे इतना स्नेह करते थे कि उनकी मृत्युसे सब मेवाडके रहनेवालोंको अत्यन्त शोक हुआ । मृत्युके पीछे वह देवसन्मानको प्राप्त होकर मेवाडके "पितृदेवताओं" में गिने गये । तबसे मेवाडका प्रत्येक मनुष्य अपने घरमें उनकी मूर्ति स्थापन करके भक्तिके साथ पूजा करने लगा । प्रतिदिनकी पूजाके सिवाय रघुदेवको पूजा प्रतिवर्षमें दो बार तो महाधूमधामके साथ हुआ करती है । इस समयमें राणासे लेकर राज्यका भिखारीतक इस धूमधाममें मिल जाता है *

अब तो राजमाताकी शंका और चिन्ताकी सीमा न रही । वह समझ गई कि जब इस दुराचारीने रघुदेवको मार डाला तो अब मुकुलके संहार करनेका भी शीघ्र ही विचार करेगा । वे इस विपत्तिसे बचनेका उपाय खोजने लगीं । जिस ओर देखतीं उस ओर संकट ही संकट दिखाई देता है । चारों ओर शत्रु ही शत्रु हैं, रणमल्लके आदमी चारों ओर लगे हुए हैं । चित्तौरमें जितने बडे २ पद हैं, उन सबपर रणमल्लके आदमी डटे हुए हैं । उनके सिवाय चित्तौरके सबसे बडे आसनपर जयसलमेरका एक भट्टी राजपूत विराजमान है ।

रणमल्लने सबको ही अपने वशमें कर लिया है;वह सबको ही पुतलीकी तरह नचाता है । फिर इस समय ऐसा कौन है जो रानीकी ओर खडा होकर शिशोदिया कुलकी लाजके जहाजको न डूबने दे । बाप्पा रावलके लगाये हुए वंशवृक्ष कौन इस आंधीसे बचावेगा ?–कोई नहीं । केवल एक आदमी;–वही देवताके समान उदारहृदय वीरवर चण्ड । क्रमसे रानीका आशा भरोसा लोप होने लगा । वह चारों ओर अन्धकार देखनी लगीं । इस संकटमें पडकर ही उन्होंने चंडको याद किया था । चण्डकी कही हुई होनहार वाणी उनके कानोंमें गुंजार रही थी । ज्यों ज्यों समय बीतता था, त्यों त्यों रानीका हृदय सूना होता जाता था, राणी हाथ मलकर पछताई और जब दुख न सहा गया तो चण्डके पास अपना सारा वृत्तान्त कहला भेजा । यद्यपि चण्ड उस समय

* दशहरेके दिन मेवाडमें एक उत्सव हुआ करता है । उस उत्सवके दिन और प्रतिमासके दशवें दिन मेवाडके प्रत्येक घरमें रघुजीकी वेदी साफ की जाती है । उनकी मूर्तिको स्नान कराकर उस वेदीपर रखते हैं । राजपूतोंकी स्त्रियें उस वेदीकी पूजा करके उनसे अपने पुत्रोंके मंगलकी कामना करती हैं, और राजपूत लोग पुत्रकामना करते हैं । रघुदेवजीके देवत्व प्राप्त होनेसे पहिले बाप्पा रावलका कुलेश नामक एक संतान मेवाडमें पुत्रकदेवताकी भांति पूजा जाता था, परन्तु अब कोई उनकी पूजा नहीं करता । अब तो क्षेत्रपालदेव और रघुदेवजी ही मेवाडवासियोंके प्रधान उपास्य देवता हैं । रघुदेवकी पूजाविधिके साथ ग्रीसके ओडोनिस देवताकी पूजाविधि बहुतायतसे मिलती है ।

दूर था, परन्तु चित्तौरके समस्त समाचार उनको प्रतिदिन मालूम हो जाते थे। वह पहलेसे ही जान गये थे कि पीछे पछताकर मुकुलकी माता मेरी ही सहायता चाहेगी। दुराचारी राठौर लोगोंके ग्राससे चित्तौरका उद्धार करनेके लिये वह पहलेसे ही तइयार हो गये थे। इस समय विमाताका पत्र पाकर शीघ्र ही चित्तौरकी ओर चले। जब पहले चित्तौरको छोडकर कुमार चंड मांदूनगरमें गये तब दोसौ (२००) अहेरिये भील (शबर) अपने स्त्री पुत्र और परिवारको चित्तौरमें छोडकर उनके साथ चले गये थे इस समय चंडकी अनुमति लेकर वे भी अपने भाई बन्धु और स्त्री पुत्रोंसे मिलनेके लिये चित्तौरके भीतर गये थे। दुर्गप्रवेश करते ही वह द्वारपालोंकी सेवा करने लगे। वहांपर सेवा करनेमें दिन बिताते हुए विश्वासी भीलगण अवसरकी बाट देखते रहकर बडी सावधानीसे कार्य करने लगे। इस ओर कुमार चंडने सौतेली मातासे कहला भेजा कि "चारों ओरके गांव गोटमें भोजन बांटनेके बहाने प्रतिदिन बहुतसे विश्वासी दास दासियोंको भेजा करो, और अवसर पाकर उनके ही साथ मुकुलको लेकर तुम भी चली आया करो, क्रमानुसार फिर उन गांवों भी आया करो जो चित्तौरसे बहुत दूरपर हों। परन्तु याद रहे कि दिवालीके दिन * गोमुंडानगरमें पहुंच जानेको न भूलियो। यदि भूल जावोगी तो फिर कोई उपाय न चलेगा।"

इस उचित उपदेशको पाकर मुकुलकी माताका हृदय सावधान हुआ। चंडीकी आज्ञाके पालन करनेमें उन्होंने एक घडीका भी विलम्ब न किया। वरन वे दूने उत्साह और दूनी सावधानीके साथ कार्य करने लगीं। धीरे २ दिवालीका त्यौहार आ गया। अपने आदमियोंको साथ लेकर मुकुल चित्तौरसे गोमुंडानगरमें आगया। राजमाता सारे दिन नगरवासियोंको उत्तम २ भोजन कराकर रात्रिके होनेकी बाट देखने लगी। धीरे २ सन्ध्याका सूक्ष्म अंधकार सम्पूर्ण संसारमें विस्तार पा गया, तथापि चंडका आगमन नहीं हुआ। फिर संध्याका कुछेक गंभीर तिमिर कृष्णचतुर्दशीकी रात्रिके गाढ़ तममें लीन होगया, तथापि कुमार चंडके दर्शन न हुए। पुरोहित, धात्री और उनके संगी साथी निराश होने लगे। अन्तमें यह सब राजकुमारको लेकर चित्तौरी नामक कोट—भीतके निकट पहुंचे ही हैं कि इतनेमें ही पीछे घोडोंकी टापोंका शब्द सुना जाने लगा। शब्दको सुनकर सबके हृदयमें नवीन आशाका संचार हुआ। बातकी बातमें चालीस सवार अतिशीघ्रतासे घोड़ोंको चलाते हुए उनके आगेसे चले गये। इन सवारोंमें सबसे आगे कुमार चंड थे भेष बदला हुआ था। छोटे भ्राता मुकुलके आगे पडते ही चंडने संकेतसे उनको वही सन्मान

* चित्तौरसे मालवेको जानेके लिये जो एक सुन्दर मार्ग है, गोमुण्डा उस ही मार्गके ऊपर भागमें चित्तौरसे ७ मील दूरपर बसा हुआ है।

दिखाया, कि जो सन्मान राजालोगोंका किया जाता है, और अपने चुने हुए आदमियोंको लेकर चित्तौरके सिंहद्वारपर शीघ्रतासे जा पहुंचे। जो रह गये वे भी उनके पीछे२ जाने लगे। अबतक किसीने चंडकी गतिको नहीं रोका। इस समय "रामपोल" * नामक द्वारपर पहुंचते ही द्वारपालोंने इनके सामने आकर पूछा कि आप लोग कौन हैं? कुमार चंडने उत्तर दिया "कि हम सब राजपूत सरदार हैं, चित्तौरके ओरे धोरेके गांवमें रहते हैं, राजकुमारके साथ गोमुंडा गये थे, हम लोग अब दुर्गमें उनको पहुंचानेके लिये साथ आये हैं।" यह सरल उत्तर सुनकर फिर किसीको कोई संदेह न हुआ और यह विना किसी रुकावटके किलेके भीतर चले परन्तु जब बाकी लोग भी जो पीछे थे आ गये तो द्वारपालोंको संदेह बढ गया सोचने लगे इन बातोंका प्रयोजन क्या है, वह समझ गये कि शीघ्र ही हमारा सत्यानाश हो जायगा। यह विचारकर समस्त द्वारपाल तलवार लेकर कुमार चंडके सामने हुए कुमार भी तत्काल नंगी तलवार हाथमें ले क्रोधित हुए सिंहके समान उनकी ओर झपटे, दोनों दलोंमें घोर संग्राम हुआ। इस ओर चंडकी मेघगंभीर सिंहनादको सुनकर उनके सेवक शबरगण भी अपनी मूर्तिको धारण करके द्वारपालोंका संहार करने लगे। यहांपर चतुर चंडने भट्टीसरदारको जो किलेदार था शीघ्रतासे पकडकर कैद कर लिया। दारुण क्रोधके वश होकर उसने चंडके सामने आना चाहा, परन्तु उनके सवारोंकी गतिको न रोक सकनेके कारण आगे न बढ सका और दूरसे ही चंडको ताककर अपनी तीखी तलवार ऊपर फेंकी। वह तलवार चंडके लगी, घावमेंसे रुधिर निकलने लगा। परन्तु तेजस्वी चंडने तत्काल धावा करके उसे नीचे गिरा दिया। इधर कुमारकी सेनाने द्वारपालोंको भी टुकडे कर डाला। तथा प्रत्येक राठौरको उसके नौकर चाकरोंके साथ ही गुप्त स्थानोंसे पकड २ कर लाये और कठोरभावसे संहार करने लगे।

चतुर्दशीकी उस गम्भीर रात्रिमें केवल दो चार ही राठौर चंडके विक्रमसे निस्तार पा गये होंगे। परन्तु इनमेंसे अभागे रणमल्लकी मृत्युका वृत्तान्त पढकर शोकके स्थानपर हँसी आती है। इस दुराचारीने उस दिन अपनी कन्याकी किसी दासीपर, जो अत्यन्त सुन्दर थी मोहित होकर बलात्कार कर अपनी कामवृत्तिको चरितार्थ किया था। वह इस बातको नहीं जानता था कि बाहर क्या हो रहा है, न उसको यह विदित था कि, शत्रुगण मेरे समस्त इष्टमित्र और बन्धु बान्धवोंका संहार करके अब यहांको चले आते हैं। मदिरा अफीमके खाने पीने और सबसे अधिक प्रेमके आसवसे मतवाला हो यह बूढा अपनी प्यारी कामिनीके गलेमें बांहें डाले अचेतनके समान पड़ा हुआ था। कामकी नीच वृत्तिके वश होकर दुष्ट रणमल्लने सती स्त्रीके अनमोल रत्नको छीन लिया, अभागिनीके निर्मल चरित्रमें कलंक लगा दिया। आज स्त्रीकी शापाग्निने यह अभागा

* तोरणके पार होकर "रामपोल" फाटकमें पहुँचते हैं।

भस्म हो जायगा। आज इस लोकको छोडकर उसे नरककी अनन्त ज्वालामें गिरकर छटपटाना पडेगा, राजपूत ललनाके स्वर्गसे भी उत्तम सतीत्व धनको जिस पाखण्डीने हरण किया है क्या राजपूतबाला अपमानित और पददलित होकर उसको क्षमा कर सकती है?—कभी नहीं। रणमल्लसे पापाचारका बदला लेनेके लिये वह अवसर ढूँढ रही थी; आज वह अवसर आपसे आप आ गया। इस समय राजपूतबालाने धीरे २ विस्तरसे उठकर उस दुष्ट मारवाडीकी * पगडी खोली और पगडीके द्वारा उसको चारपाईसे भलीभांति कसकर बाँध दिया। बाँधनेसे भी रणमल्लकी नींद न टूटी। इस प्रकारसे अभागे रणमल्लको भाग्यको सौंपकर राजपूत ललना घर छोडकर चली गई। थोडी ही देरमें चण्डके यमदूत समान सिपाही उसके घरमें पहुँचे तब भी वह पाखण्डी न जागा। परन्तु जैसे ही उन सिपाहियोंने गगनविदारी सिंहनाद किया वैसे ही उस पापीका सारा मतवालापन उतर गया। आँखें खुलनेपर जान गया कि बडा कुसमय आन पहुँचा। देखा कि रणोन्मत्त शत्रुओंसे घर भर रहा है। सब ही तलवार उठाए हुए प्रचण्ड वेगसे सामनेको चले आते हैं। क्रोध और घातक स्वभावके मारे उसके सब अंग जलने लगे, अभागेने शीघ्रतासे उठनेकी चेष्टा की परन्तु उस मनमोहि-नीकी कठोर प्रेमजंजीरने उसको बारम्बार रोका। बहुतसा बल करनेपर मूढ खड़ा न हो सका बल करनेसे भी उस कठोर प्रेमबन्धनसे निस्तार न पाया, फिर अभागा चारपाईके साथ ही खड़ा हो गया वह चारपाई उसकी पीठपर लगी हुई ऐसी शोभायमान होती थी मानो कुब्जकी पीठ लग रही है। पास ही पीतलका बना हुआ एक पानपात्र गिलास रक्खा था, और कोई अस्त्र न पाकर विवश होकर पानपात्रके ही आघातसे रणमल्लने कई एक सिपाहियोंको घायल किया। परन्तु शत्रुकी अगणित सेनामें वह कबतक जीवित रहता शीघ्र ही उसके बन्दूककी एक गोली × लगी कि जिससे वह

* मारवाडीकी पगडी लगभग ६० हाथकी लम्बी होती है।

× बहुतसे लोगोंकी यह सम्मति है कि पहले बन्दूक और तोपके समान किसी अस्त्रको भारतवासी नहीं जानते थे, और पुराणादि ग्रन्थोंमें जो आग्नेयास्त्र आदिका वर्णन है, वह कवि कल्पनाके सिवाय कुछ भी नहीं है। हम निश्चय कहते हैं कि ऐसा समझना उनकी बडी भारी भूल है, उनलोगोंने भारतवर्षके इतिहासको जरा भी नहीं देखा। दुःखकी बात है कि ऐसे आदमी पराये कानसे सुनकर पराई बातोंपर अन्धा विश्वास करके अनेक प्रकारके असार और भ्रांत मतिका उद्गार किया करते हैं, जिसकी जो इच्छा हो सो कहो परन्तु हम निश्चय जानते हैं और निःसंकोच कह सकते हैं कि भारतवर्षवाले अति-प्राचीन समयसे ही तोप बंदूक समान आग्नेयास्त्रको जानते थे, और इनके चलानेमें भी होशियार थे। नीचे शुक्रनीतिके कुछ श्लोक लिखे जाते हैं, उनको पढकर देखिये कि बन्दूक और तोपको बृहन्नालीक नामसे पुकारा है। यथा:--

" नालीकं द्विविधं ज्ञेयं बृहत्क्षुद्रविभेदतः। तिर्यगूर्द्ध्वं छिद्रमूलं नालं पंचवितस्तिकम् ॥
मूलाग्रयोर्लक्ष्यभेदि तिलबिन्दुयुतं सदा। युक्ताष्ठोपाङ्गबुध्नश्च मध्यांगुलिबिलान्तरम् ॥
स्वान्तेऽग्निचूर्णसधातृशलाकासंयुतं सदा। लघुनालीकमप्येतत् प्रधार्यं पत्तिसादिभिः ॥
यथायथा तु त्वक्सारं यथा स्थूलविलान्तरम्। यथा दीर्घं बृहद्गोलं दूरभेदि तथातथा ॥
बृहन्नालीकसंज्ञन्तत्काष्ठबुध्न--विवर्जितम्। प्रवाह्यं शकटाद्यैस्तु सुयुतं विजयप्रदम् "

मर गया । रणमल्लका जोधरावनामक पुत्र उस समय नगरके दक्षिण भागमें था । पिता और इष्ट मित्रोंकी यह गति सुन शत्रुके हाथसे छुटकारा पानेके लिये वह एक तेज घोडेपर सवार होकर वहांसे भागा । उस दिन उस दिवाली उत्सवके उपलक्षमें—उस कृष्णचतुर्दशीकी घोर रात्रिके समय कपटी दुराचारी, राठौरोंने अपनी विश्वासघातकता और पराई स्त्रीके धर्म्म बिगाड़नेका फल भली भाँतिसे पा लिया । और वे सब शिशोदियावीरोंकी क्रोधाग्निमें भस्म हो गये ।

इतनेपर भी कुमारचण्डका क्रोध कुछ भी शान्त नहीं हुआ । जोधरावके भाग जानेपर वह उसको पकड़नेके लिये उसके पीछे मन्दोरनगरकी ओर चले । जोधरावचण्डके प्रचण्ड बलको किसी प्रकारसे सहन न कर सका और मन्दोरनगरको छोड़कर हरभांकलनामक एक पराक्रमी राजपूतके यहाँ आश्रय लिया । इस ओर वीरचण्डने सावधानीसे मन्दोर नगरपर अधिकार किया, और जबतक कन्होजी और मुंजाजीनामक इनके दोनों पुत्र नई सेनाको लेकर उनके साथ न मिल गये, तबतक वह नगरसे बाहर न हुए । जिस दिन राठौरोंको उनकी विश्वासघातकता और कपटाचारिताका भली भाँतिसे फल दिया गया उस दिनसे लेकर बारह वर्षतक मन्दोरनगर शिशोदियाकुलके अधिकारमें रहा था । बारह वर्ष बीतनेपर राठौरोंने फिर उसपर अधिकार किया । जोधपुरके बसानेवाले जोधराजको यहाँपर ही छोडकर इस मेवाड़का इतिहास लिखते; परन्तु ऐसा करनेसे एक पूरा वृत्तान्त छूटा जाता है, इस कारण इसको न छोड सके इस समय शिशोदीय और राठौरकुलमें जो भयंकर वैर बँध गया उस वैरकी भीतरी बातें परस्पर इस प्रकार मिली हुई हैं कि एक बातके छोड देनेसे दोनोंका भीतरीपन और दोनोंकी रमणीयता जाती रहेगी । अत एव इस ही कारणसे यहांपर कुछ उपरोक्त बातोंका वर्णन किया जाता है । शिशोदिया लोगोंने किस प्रकारसे गोढ़ार देशको पाया था, तथा राठौर वीर जोधने किस प्रकारसे फिर मन्दोर नगरपर अपना अधिकार किया था, इसका ही वर्णन आगे किया जाता है । इसका वर्णन हो जानेके पीछे मुकुलजीके राज्यका इतिहास लिखा जायगा ।

"विपत्तिकी उपयोगिता" सुफल दिया करती है । विपत्ति ही सम्पत्तिकी माता है जो मनुष्य विपत्तिके समय धीर धारण करके कार्य करता है, उसको शीघ्र ही सम्पत्ति मिल जाती है, फिर उसपर कभी भी विपत्ति नहीं आती । महावीर जोधरावका राज्य जाता रहा, इष्ट मित्र सब ही मारे गये । परन्तु यह विपत्ति ही उनके लिये सम्पत्तिकी देनेवाली हो गई । यदि जोधराव कायर पुरुषके समान मूढ बनकर व्याकुल हो जाते तो नहीं कहा जा सकता कि राठौर कुलके भाग्यमें क्या होता ?—और उनके विशाल कीर्तिक्षेत्र जोधपुरकी प्रतिष्ठा कौन करता ? उनपर सब प्रकार विपत्ति पड रही थी

परन्तु वे एक पलके लिये भी निराश नहीं हुए। केवल अनन्त साहस कठोर उद्यम और परिश्रम करनेसे ही वह महान सम्पत्तिशाली हुए थे।

पहिले ही कहा जा चुका है कि विपत्तियोंसे घिर कर जोधरावने हरवाशंकल नामक एक पराक्रमी राजपूतका सहारा लिया। राजस्थानमें एक प्रकारकी धर्मसम्प्रदायक है, इस सम्प्रदायके लोग सदा कुमार रहते हैं बिवाह नहीं करते। यद्यपि यह लोग क्षत्री होते हैं, तथापि उस क्षत्रियोचित वीर धर्म्मके साथ तापस धर्म्मके अपूर्व मेलसे इनका जीवन पवित्र और स्वर्गीय भावसे परिपूर्ण रहता है। अतिथिसेवा और परोपकार करना ही इनके धर्मका मूल मंत्र है, यदि आधीरात्रिके समयमें भी कोई पाहुना आ जाय तो यह भली भांतिसे आदर सत्कार करके तत्काल उसके खाने पीनेका प्रबन्ध कर देंगे। पाहुनेका आदर सत्कार करनेसे चाहे अपनेको अनाहार रहना पडे तो भी वीर तापसगण दुःखित नहीं होते। यदि कोई प्रचंड शत्रु भी इनकी शरणागत हो जाय तो यह समस्त वैर और विद्वेषको भूलकर आदर मानके साथ उसको ग्रहण करते हैं, और उसको बचानेके लिये अपने प्राणोंको भी संकटमें डाल लेते हैं। यह हरवा शंकल राजपूत भी इसही प्रकारका क्षत्रिय संन्यासी था। इस सम्प्रदायकी शाखायें आजतक राजवाड़ेके बहुतसे स्थानोंमें दिखाई देती हैं। पहाडोंके ऊंचे २ शिखरोंपर, हिंसक जन्तुओंसे बसे हुए सघन बनोंमें, श्मशानमें अथवा शान्तिमय मनोहर तपोवनोंमें इन महात्माओंके पवित्र आश्रम दिखाई देते हैं। इनकी पहुनई " सदाव्रत " नामसे प्रसिद्ध है। यह सदाव्रत केवल इस संप्रदायके मनुष्योंकी अनुकूलतासे ही नहीं चलता; बरन राजा, प्रजा, सरदार सामन्त व और २ संप्रदायवाले भी प्रसन्नतासे उसकी सहायता किया करते हैं। मेवाडकी इस शोचनीय अवस्थामें भी यहांके रहनेवाले अपने राणाके सहित सदाव्रतकी सहायता करनेमें किंचित् भी कसर नहीं करते! बहुतसे लोग यह कहते हैं कि मनुष्य अपनी अर्द्धसभ्य अवस्थासे ही अतिथिसत्कार करता आया है। यदि कुटिल कपटता और स्वार्थपरता कोही सभ्यताका फल कहा जाय। यदि एक भ्राताको भोजनादि न देकर अपने उदरके भरनेसे ही सभ्यता प्रकाशित होती हो तो ऐसी सभ्यताको लेकरके हम क्या करेंगे? यह संसार सदा ही असभ्यताकी गोदमें पडा सोता रहे, तथापि इस प्रकारकी सभ्यताको हमें पलभरके लिये भी ग्रहण नहीं कर सकते। जो हरवा शंकलके समान श्रेष्ठ और विश्वप्रेमिक महात्मागण भी अर्द्धसभ्य गिने जायँ तो फिर इस संसारमें सभ्य कौन है? उत्तम वस्त्र भूषण पहरनेसे जो सभ्यता होती है; अनाथ, दीन, दरिद्र, और भिखारीको भगा देनेसे जो सभ्यता होती है; उस सभ्यताका नाम पशु सभ्यता है। हरवा शंकलके समान परमकारुणिक महात्मागण स्वार्थको छोड लोभसे नाता तोड़ संसारका महान् उपकार

साधन करते हुए जिस विमल स्वर्ग सुखको भोग करते हैं, क्या आज कलके स्वार्थी; कपटाचारी सभ्य महोदयगणोंने एक पलभरके लिये भी उस अमृतके स्वादको चाखा है ?

आधीरात्रिका समय है । सदाव्रतका कार्य शेष करके संन्यासी हरवा शंकल शयन करनेको विश्रामभवनमें जा चुका है । इस ही समयमें १२० अनुचरोंको साथ लिये जोधराव उस आश्रममें पहुँचा । हरवाने उठकर भली भांतिसे सबका आदर सत्कार किया । सब आसनपर बैठे । अब हरवा शंकलको इस बातका विचार हुआ कि उनके खाने पीनेका क्या प्रबंध किया जाय ? गृहमें जो कुछ सामग्री थी वह सब चुक गई । पास कोई गाँव या नगर भी नहीं है कि शीघ्र ही वहाँसे सब सामान आ जाय । इस प्रकार सोचते विचारते थोडे ही समयमें कोई बात निश्चय कर ली । उस समय वहाँपर * मुजदनामक एक प्रकारका काठ रक्खा था, जो कि जलानेके काममें आता था । परन्तु अकाल या अन्न कष्टके आ पडनेपर मारवाड़के रहनेवाले दीन दुखिया लोग इसको ही खाकर अपने प्राण रखते थे । अन्नके न होनेसे हरवा शंकलको इस अवसरपर यह लकडी ही व्यवहारमें लानी पड़ी । इस लकडीके टुकडोंको पीसकर मैदा, चीनी और मसालेके साथ मिलाया गया । फिर एक साथ पकाकर इनका ही उत्तम भोजन तैयार हुआ । हरवा संन्यासीने जोधराव व उनके नौकर चाकरोंके आगे यह भोजन परोस कर विनीतभावसे कहा । "भिक्षा करके जो कुछ प्राप्त किया था उसका अधिकांश चुक गया । इस समय जो कुछ बाकी था उससे ही एक प्रकारका भोजन बनाकर आपलोगोंको निवेदन करता हूँ । रात्रि अधिक हो जानेसे और कुछ न कर सका, अनुग्रह करके आज इससे ही प्रसन्न हूजिये । कल प्रभात होते ही खाने पीनेका उत्तम प्रबन्ध होजायगा ।" संन्यासीकी नम्रता और शीलता देखकर सब ही परमप्रसन्न हुए, और उसके अतिथि सत्कारकी बारंबार प्रशंसा करके भोजन करने लगे । थोडे ही समयमें निद्राकी कोमल गोदमें शान्ति प्राप्त करके यह समस्त यात्री ऐसे सोये कि चित्तौरकी सब बातोंको भूल गये ।

---

* सालोमनने जिस काठसे अपने उपास्य देवता जिहोवाके मंदिरको बनाया था उसका नाम "अल मुज" था टाडसाहब कहते हैं कि यहांपर अलउपसर्ग विशेषणकी भांतिसे व्यवहार किया गया है, इधर गुजरातके प्राचीन इतिहासमें देखा जाता है कि वहांके आदिनाथका मंदिर भी मुजहीकी लकडीका बना हुआ था तब क्या यह दोनों एक ही लकडीके बने थे ? कदाचित् बने हों, कारण कि जगतके इतिहासमें लिखा है कि फिनिसिया और मिसरदेशके सौदागर खरीदनेके लिये भारतके किनारे आते जाते थे । कदाचित् वे ही लोग इस अलमुजलकडीको सूरतसे ले गये हों ! बहुतसे लोगोंका मत है कि यह लकडी किसी प्रकारसे नष्ट नहीं होती । यहांतक कि आगसे भी नहीं जलती । इसका रंग ताँबेके समान होता है ।

"मुज" की लकडीके मेलसे उनकी डाढी मूछें रँग गई थीं। प्रभात कालके समय जाग कर सब ही अत्यन्त विस्मित हुए और एक दूसरेका मुँह देखने लगे। किसीने इस बातको न जाना कि डाढी मूँछे कैसे रँगी गई, परन्तु चतुर संन्यासीने इसके गूढ कारणको छिपाकर उनको उत्साह देनेके लिये कहा "बुढापेके केशोंने जिस प्रकार नवीन जीवनकी ऊषासे नवीन राग धारण किया है, वैसे ही मैं निश्चय कहता हूं कि आपके भाग्यको नवीन जीवन प्राप्त होगा और आप लोग फिर मंदोरनगरपर अधिकार करेंगे।

जब हरवा शंकलने ऐसे उत्साहित वचन कहे तो उन सबने इसको भी अपने दलमें मिला लिया तथा उसको संगमें लेकर मीवोनामक स्थानके सरदारके पास गये। इस सरदारके असतबलमें १०० घोडे चुने हुए थे। स्वयं मिवोंका सरदार और पवनजी-नामक एक दूसरा राजपूत सरदार भी अपने "अंगारकृष्ण" * घोडेपर चढकर जोधरावके दलमें मिल गये। इस प्रकारसे और भी दो चार राजपूत सरदारोंकी सहायता पाकर पितृराज्यके उद्धार करनेका संकल्प किया और मन्दोरनगरकी ओर चले। चण्डके दोनों पुत्रोंको इसका कुछ भी समाचार ज्ञात नहीं था। वह निश्चिन्त होकर राज्य करते थे कि इतनेमें ही जोधरावने सेना सहित वहाँ पहुँचकर उनपर हमला किया। यद्यपि यह चढाई गुप्तभावसे की गई थी परन्तु शिशोदिया वीरगण उत्साहित होकर शत्रुसे घोर युद्ध करने लगे। कंटोजीने एक बार भी इस बातका विचार न किया कि जोधरावका बल कैसा है? या कौन २ वीर उसकी सहायता करनेके लिये आये हैं? वरन वह उसकी सेनाको अतितुच्छ समझकर संग्राम करनेके लिये सामने आया। इस अदूर दर्शिता और मूर्खताका फल उसने हाथों हाथ भोगा। जोधरावके बलको सहन न कर सकनेके कारण कंटोटाजी अपनी बहुतसी सेनाके साथ लडाईमें मारा गया। इधर छोटा भाई मुंजजी अपनी रक्षाका कोई उपाय न देख शीघ्रगामी घोडेपर चढकर भागा। परन्तु जोधरावके कराल ग्राससे छुटकारा न पाया, गोद्वार राज्यकी सीमापर पहुँचते ही विजयी जोधरावने उसको जा पकडा और वहींपर मरवा डाला। इस प्रकारसे जोधरावने शिशोदियाकुलसे अपने पिछले बैरका बदला लिया। परन्तु भली-भाँति विचार करनेपर ज्ञात हो जायगा कि दोनों ओरकी प्रतिहिंसा बराबर न हुई। कारण कि मन्दोरके एक राजपूत सरदारके बदलेमें चित्तौरके दो राजकुमारोंका प्राण संहार किया गया। पितृराज्यका पुनरुद्धार और बहुतसी हत्या करनेपर भी जोधरावके जीकी शंका न मिटी। उसको दिनरात यही ज्ञात होता था कि कुमार चंड भयंकर मूर्ति धारण किये हुए मेरे पीछे २ आ रहा है। इस प्रकार चिन्ता करके एक बार अच्छी रीतिसे अपनी अवस्थाको विचारा तो जान लिया कि चण्डकी और मेरी अवस्थामें पृथ्वी

* कोयलेके समान काला। Coal black Stee,d

आकाशका अन्तर है। मैं पराई सेना और पराये बलके भरोसे ही इस कठोर कार्यके करनेको समर्थ हुआ हूँ। मान लिया कि मित्रोंने एक बार या दो बार मेरी सहायता की, परन्तु जब मेवाडकी विशाल अनीकिनी मेरे ऊपर चढ धावेगी, तब किसकी सहायतासे अपनी रक्षा करूंगा, तिसपर हमारे पिता रणमल्लका ही इस विषयमें अधिक अपराध है, और वही इस झगडेके कारण हुए थे,अत एव इस अवस्थामें जहांतक हो झगडेका मिटा देना ही आवश्यकीय कार्य है। इस प्रकार सात पांच विचारकर जोधरावने चंडके पास सन्धिका पत्र भेजा और सन्धि प्राप्त करनेके लिये उनको मुण्डकाटि * अर्थात् रुधिरके बदलेमें दण्डकी भांति समस्त (गोद्वार) देश देनेके लिये सम्मति दी।

चंडका दूसरा पुत्र मुञ्ज जहांपर गिरा था वह स्थान मारवाड और मेवाड राज्यकी सीमा माना गया। इस प्रकारसे संधि करके दोनों कुल पुराने बैर भावको भूल गये। और परस्पर एक दूसरेको हृदयमें धारण करके कुछ दिनके लिये गाढ मित्र हुए। इस सन्धिसे मेवाडके राणाको गोद्वारदेश हाथ आया, इसको तीनसौ वर्षतक मेवाडके राजाओंने अपने अधिकारमें रक्खा सदाके चले आये हुए उत्तराधिकारमें अन्तर पडनेके कारण ही (गोद्वार) देश मेवाडवालोंके हाथ आया था और तीन सौ वर्ष पीछे इस ही कारणसे निकल भी गया था।

मुकुलका सौभाग्यसूर्य वीरवर उदारचरित कुमार चंडहीकी असीम सहायतासे उदय हुआ परन्तु वह बहुत देरतक प्रकाशमान् नहीं हुआ। मध्याह्नके ऊंचे आकाशमें पहुँचते न पहुँचते अकस्मात् राहुने ग्रस लिया। यद्यपि अल्प वयसमें ही राणा मुकुल राजाओंके योग्य गुणोंसे शोभायमान होकर शिशोदियाकुलके राज्य करनेको समर्थ हो गये थे, परन्तु विधाताने उनको वह गौरव बहुत दिनतक न भोगने दिया। सन् १३९८ ई० में जब वह चित्तौरके सिंहासनपर बैठे, उस समय सम्पूर्ण भारतवर्षमें एक नवीन युगका आरम्भ हो गया था:-भारतकी ऐतिहासिक धारा-एक, नई ओरको प्रवाहित हो रही थी वीरकेशरी तैमूर अपनी विजयी सेनाको साथ लेकर इस समय भारतवर्ष पर चढ आया था। उसकी घोर कठोर चढाईसे दिल्लीका सिंहासन चूर हो गया, परन्तु मेवाडको उसके आक्रमणसे कोई हानि नहीं पहुची। भट्टग्रन्थोंमें केवल इतना ही लिखा है कि दिल्लीके बादशाह फीरोजशाहने एक बार इस समय मेवाडपर चढनेकी तइयारी की थी। परन्तु विचारनेसे ज्ञात हो जायगा कि भट्टलोगोंने जिसको फिरोजशाह कहा है, वास्तवमें वह फिरोजशाहका पोता था।

---

* श्रेष्ठ कुलवाले राजपूतको मार डालनेसे मारनेवालेको जो दंड दिया जाता है, राजस्थानकी साधारण भाषामें उसका नाम "मुण्डकाटी" है। इस प्रकारकी रीति प्राचीन जर्मनवालों और शाकसेन लोगोंमें भी चलती थी।

अतएव यहांपर भट्टलोगोंने धोखा खाया है * भारतका इतिहास पढनेसे हमारे इस लेखका प्रमाण मिलैगा। तैमूरके भयंकर हमलेको बरदास्त न कर सकनेके सबबसे फीरोजशाहका यह पोता दिल्लीको छोडकर गुजरातकी तरफ भाग गया। इस कारणसे यह बात संभव हो सकती है कि मेवाडके भीतर होकर जानेके समय उसने मेवाडपर चढाई करनेका विचार किया हो। जो कुछ भी हुआ हो। चाहे जिसने मेवाड़की शान्तिमें विघ्न डाला हो, पर राणा मुकुल पहलेसे ही उसके अभिप्रायको जान गये थे, और शत्रुकी फौजको रोकनेके लिये आरावलीके दूसरे प्रान्तमें बसे हुए रामपुरनामक स्थानमें उसका सामना किया। उस रामपुरके संग्राममें राणा मुकुलने ऐसी अद्भुत वीरता दिखाई थी कि उसको देखकर बादशाहकी फौज तित्तर बित्तर हो कर भाग गई। भागनेपर भी बिचारोंको छुटकारा न मिला। राणाने उनका पीछा करके बहुतसी सेनाको मार डाला और सांभरनामक देश और उसकी लवण-झीलको अपने अधिकारमें कर लिया। यहांपर यह कहना बहुत ही ठीक होगा कि तैमूरकी चढाईसे भारतवर्षमें शोर खलबली मच गई थी, उसने मुकुलके सौभाग्य और प्रतिष्ठाके मार्गको बहुतायतसे कंटकहीन कर दिया था। इसी सुअवसरमें राणा मुकुलने अपने राज्यको और अपनी सेनाको दृढ करके मेवाडके दूसरे भागोंमें भी अपना राज्य जमा लिया था। बहुतसे शोभायमान अटा अटारी और देवमंदिर भी इन्होंने बनाये। इनमें लाक्षभवननाम राणाका महल + और चतुर्भुजा देवीका मंदिर ही विशेष प्रसिद्ध है।

राणा मुकुलके तीन पुत्र हुए और परम रूपवती एक कन्या उत्पन्न हुई। कन्याका नाम लालबाई था। गागरौनके खीची वंशवाले सर्दारके साथ लालबाईका विवाह हुआ। इस सर्दारने विवाह करनेके समय राणाको शपथ दिलाकर यह प्रतिज्ञा करा ली थी कि "मैं आपसे और कुछ नहीं चाहता, केवल इतनी प्रतिज्ञा कीजिये कि जिस समय शत्रुगण मेरे राज्यको घेरें उस समय आप मेरी सहायता करें।" राणाने इस बातको मान लिया। विवाह हो जानेसे कई वर्ष पीछे मालवेके शासनकर्ता हुसंगने गगरौनपर चढाई की; खीचि सरदारका बेटा धीरज, राणाके पास सहायता लेनेके लिये आया। परन्तु उस काल राणा मादेरियाके पहाडियोंका वि-द्रोह दबानेको सेना सहित चले गये थे। धीरज वहींपर जाकर राणासे मिला; तथा

---

* इसका नाम महम्मद तुगलक था। यह तुगलक फीरोजशाहके बडे बेटे नसीरुद्दीनका छोटा लडका था।

+ लाक्षराणाने ही इस महलका बनवाना आरंभ किया था, जब यह थोड़ा ही बना था कि वह परलोकको चले गये इस समय वह महल बिलकुल टूट फूट गया है। खँडहर पड़ा है, तो भी उसमें अबतक मेवाडके गौरव चिह्न पाये जाते हैं।

आवश्यकतानुसार सेना साथ लेकर अपने देशको लौटा । राणा मुकुलजीके लिये यह मादेरिया ही जीवन नाटककी अन्तिम रंगभूमि हो गई; इस काल रंगभूमिमें दो आतता-यी विश्वासघातकोंके द्वारा उनको संसारलीला समाप्त हुई । इन दोनों पाखण्डियोंका नाम चाचा और मैर था । यह दोनों राणाके चचा थे । इन दोनों दुराचारियोंने विना किसी दोषके, शीलवान् तथा नीतिवान् राणा मुकुलका संहार किया ।

राणा मुकुलके दादा राणा क्षेत्रसिंहके औरससे किसी नीचकुलकी सुन्दरी दासीके गर्भमें इन दोनों पाखंडियोंका जन्म हुआ था । बहुतसे ऐसा कहते हैं कि वह दासी बढईकी लडकी थी । मेवाडमें ऐसे पुत्रोंको "पाँचवाँ पुत्र नामसे पुकारा जाता है । राजाके औरस-से जन्म ग्रहण करनेपर भी वे लोग किसी प्रकारका राजसन्मान नहीं पा सकते । यद्य-पि राजालोग अनुग्रह करके कभी २ उनको अपने कार्यमें लगा दिया करते हैं, तथापि वे ऐसे अभागे हैं कि मेवाडके दूसेर दरजेके सरदारोंके समान भी नहीं गिने जाते । चाचा और मेरकी प्रतिष्ठा भी इससे अधिक नहीं बढी थी । मेवाडके शुद्ध सरदारलोग इनसे आन्तरिक घृणा करते थे; तथापि राणा मुकुलजी अनुग्रह करके सात सौ सवारोंका अफसर बनाकर इनको अपने साथ मदेरियामें ले गये थे । दासीपुत्रोंके ऊपर इस प्रका-रका अनुग्रह देखकर सर्दारोंको अत्यन्त डाह हुआ, उन्होंने समझा कि चाचा और मैर-को उनकी योग्यतासे अधिक पद दिया गया है । यह सिद्धान्त करके वे सब इनको अ-पमानित करनेका अवसर देखने लगे । होनहारकी प्रवलतासे उनकी मनोकामनाके सिद्ध होनेकी घडी भी आई, परन्तु इस अभिप्रायके सिद्ध करनेमें राणा मुकुलका प्राण जा-ता रहा । जिन दिनों मदेरियामें लडाई बहुत हो रही थी, उस समय एक दिन राणा अपने सर्दार सामन्तोंको लिये हुए एक प्रमोद कुंजमें बैठे थे; इस ही समय बनमें उन्हों-ने एक नया वृक्ष देखा कि जिसका नाम उनको ज्ञात नहीं था । जितने सभासद बैठे थे सबसे उस वृक्षका नाम पूछा गया । चौहान सामन्त उनके निकट ही बैठे थे वे जा-नकर भी अजान हो गये और धीरेसे राणाजीसे कहा; "महाराज ! मैं नहीं बतला सकता, आप इन दोनों भाइयोंमेंसे एकको पूछिये, वह अवश्य इसका पूरा २ विवरण जानते होंगे । " सीधे साधे राणाने चौहान सर्दारके कुटिल और गूढ वाक्यका अर्थ न समझकर सरलतापूर्वक पूछा, "काका ! इस वृक्षका नाम क्या है ? " राणाके इस कपटहीन प्रश्नको सुनकर चाचा और मैरके हृदयमें तीर सा लग गया ! उन्होंने समझा कि बढईकी कन्यासे हमारा जन्म हुआ है, इस ही कारणसे राणाने अपमान करनेके लिये हमसे यह प्रश्न किया उनका यह विचार धीरे २ पक्का हो गया । वह क्रोधके मा-रे मतवालेसे हो गये । एक दिन संध्याके समय संध्याकृत्यको समाप्त करके राणा भग-वानके नामकी माला जप रहे थे कि इतनेमें ही उन हत्यारोंने तलवारसे उनकी बाह काट डाली और मार गिराया ! यह दोनों पिशाच, सरलमति मुकुलका संहार करके अपने २

घोडोंपर चढकर चित्तौरकी ओरको दौडे, उनकी अभिलाष थी कि इस समय चित्तौरपर अधिकार करेंगे। परन्तु इस समय चित्तौरके निकट पहुँचते ही उन्होंने देखा कि दुर्गका द्वार बन्द है।

यद्यपि पहिले कहे हुए श्लेष प्रश्नके अतिरिक्त राणा मुकुलकी शोचनीय मृत्युका कारण और कोई नहीं पाया जाता तथापि ध्यान धरकर देखनेसे स्पष्ट ज्ञात हो जायगा कि राणाके विरुद्ध एक चक्रान्त पहिलेसे ही बनाया जा रहा था। राणा मुकुलके बडे पुत्र कुंभने किसी प्रकार इस चक्रान्तका समाचार पा लिया था और यही कारण था कि दुराचारी चाचा और मेरके प्रवेश करनेसे पहले ही उसने चित्तौरके फाटकको बन्द कर लिया था। जब हत्यारोंकी आशा पूरी न हुई तब वह उस किलेमें चले गये कि जो मदेरियाके निकट बना हुआ था। इधर बालक कुंभने इस संकटसे रक्षा पानेके लिये दूसरा कोई उपाय न देख कर मारवाडवालोंकी मित्रता और दयाशीलतापर निर्भर किया।

राजपूतोंकी महिमा कोई भी वर्णन नहीं कर सकता। जिन शिशोदियोंके द्वारा राठौरोंका राजा मारा गया, राठौरोंका राज्य छीना गया, आज शिशोदियोंके राजा कुंभने विपत्तिमें पडकर राठौर राजपुत्रसे सहायता माँगी। उदार बुद्धिवाले राजपूतकुमारने पिछले बैरको सम्पूर्णत: हृदयसे भुला दिया और तत्काल प्रतिज्ञा की कि जबतक उन दोनों राजघातियोंको भली भाँतिसे दंड नहीं दे लिया जायगा और जबतक बालक कुंभको चित्तौरके सिंहासनपर न बैठाल देंगे; तबतक शिरपैसे पगडी नहीं उतारेंगे; सेजपर शयन न करेंगे। यथार्थ बात यह है कि राजपूतोंके जीवनचारित्रमें इस प्रकारकी उदारता और सत्य प्रतिज्ञाके बहुतसे उदाहरण देखे जाते हैं। यह लोग स्वभावसे ही तेजस्वी और ऊधमी होते हैं। इनका हृदय केवल एक ही चोटके लगनेसे खलबला जाता है। जबतक कि वे उस चोटके मारनेवालेपर चोट नहीं पहुँचा लेते, तबतक हृदय किसी प्रकारसे शान्त नहीं होता। वे जरासे झगडेसे ही तेज हो जाते हैं और बदला लेनेके लिये कठोर प्रतिज्ञा कर बैठते हैं। विना प्रतिज्ञाके पूर्ण किये शान्ति नहीं मिलती। परन्तु जिस समय वह प्रतिज्ञा पूर्ण हो जाती है तब वैर निकालनेकी प्यास बुझ जाती है और पिछले समस्त वैरभावको भूलकर परस्पर मित्र बन जाते हैं। उस समय भट्टलोग दोनों पक्षवालोंका परस्पर विवाह कराकर वर कन्याका हाथ एक साथ बाँधनेके समय दोनों कुलकी कीर्तिका बखान किया करते हैं। भट्टलोगोंके मुखसे उस गौरवके कीर्तनको सुन २ कर राजपूतोंके हृदयमें अपूर्व आनन्द हुआ करता है।

बहुत दिनोंसे राजपूतलोग इस नीतिके अनुसार व्यवहार करते आये हैं। और जबतक उनकी विक्रमरूपी आगकी एक चिनगारी भी शेष रहेगी तबतक इस नीतिका व्यभिचार न होगा।

राणा मुकुलके वालक पुत्र कुंभने घोर संकटमें पडकर मारवाडके राजासे सहायता माँगी थी । राठौर राजाने दुराचारियोंका दमन करनेके लिये अपने पुत्रको सेनापति बनाकर सेनाके साथ भेजा । वे उस काल राज्यकी सीमापर थे । इस कारणसे राजकुमारने थोडे ही समयमें उनको घेर लिया । मेवाड और मारवाडके महावीरोंका प्रचण्ड आक्रमण न रोक सकनेके कारण चाचा और मेरे उस किलेको छोडकर पाईनामक स्थानमें भाग गये । पाई आरावली पर्वतमालाके बीचमें बसी हुई है । इसके निकट ही राताकोटनामक पर्वतका एक ऊंचा शिखर था । दुष्टोंने यहींपर एक दुर्ग स्थापन करके सावधानीसे रहनेका विचार किया । उदयपुरके चारों ओर जो विशाल गिरिव्रज गोलाकारसे विराजमान है, उसके शिखरपर इस राताकोटका टूटा फूटा भाग आजतक भी दिखाई देता है ।

उस राताकोटमें पहुँचकर इन दोनों दुराचारियोंने अपनेको बेखटके समझा और निशंक होकर वहाँ रहने लगे, और समझ लिया कि यहांपर शीघ्र ही कोई हमको नहीं घेर सकेगा । परन्तु उन दुष्टोंने एक बार भी इस बातका विचार न किया कि राठौर राजा और शिशोदिया नृपाल, इन दोनोंका प्रचण्ड क्रोध भयंकर दावानलके समान जलकर इस दुर्गमें स्थानमें ही हमको भस्म कर देगा । अब तो यह लोग निशंक होकर पापके ऊपर पाप करने लगे । अन्तको उन पापोंसे ही दोनोंका सत्यानाश हो गया । सुजान नामक एक चौहानकी अनूढा कन्याको पकडकर यह दोनों बलात्कार उस दुर्गम ले आये थे । सुजान क्रोधित होकर इस अपमानका बदला लेनेके लिये मजदूरोंके साथ गुप्त भावसे मिलकर राताकोट किलेपर गया और वहाँ जानेके समस्त मार्गोंको भलीभांतिसे देख आया था । इस प्रकार प्रचण्ड क्रोधको शान्त करनेके लिये सब भांतिसे तैयार होकर सुजान अपने राजाके पास आया था, कि इतनेमें उसने दूरसे ही कुंभ और राठौर राजाकी सेनाको देखा । तब तो उसको आशा लहराने लगी । दोनों हाथोंसे मुँहको ढककर वह रोने लगा और अपने वंशकी कलंक कहानी महाराजोंसे स्पष्ट २ कह डाली । उस पाशवी अत्याचारके श्रवण करनेमें जितने आदमी वहाँ थे सबके हृदयमें दारुण दुःख हुआ तथा क्रोध चढ आया । इस राताकोट दुर्गसे थोडी ही दूरपर दैलवाडानामक एक स्थान है, सेनाने दिनका समय वहींपर व्यतीत किया । रात्रिके होते ही वीरगण राताकोट किलेकी ओर को चले । अतिसावधानीसे किलेके नीचे पहुँचकर उसके ऊपर चढनेका विचार करने लगे । शीघ्र ही पर्वतपर बडी २ कीलें ठोकी जाने लगीं । घनी २ लता गुल्म और वनैले वृक्षोंकी शाखाओंको पकड़ २ कर उन कीलोंका सहारा लेते हुए वीरगण धीरता और सावधानीसे उस पहाडी किलेपर चढने लगे । रात्रि घोर अँधियारी है । जो अगणित तारे उस अन्धकारको हटानेके लिये प्राणपणसे परिश्रम कर रहे थे उन सबका प्रभाहीन और टिमटिमाता हुआ प्रकाश, उन घनेवन-वृक्षोंके पत्तोंको भेदकर कभी २ सेनाके वीरोंको दिखाई दे जाता था ।

उस गंभीर अन्धकारके चौडे परदेको उठाये राठौर और शिशोदिया वीरगण उत्साह और क्रोधके साथ परस्पर एक दूसरेका अंगरखा पकड २ कर धीरे २ ऊपरको चढे। शत्रुसे बदला लेनेके लिये सुजान चौहान अत्यन्त मतवाला व उतावला हो गया था। इस कारण वह मार्ग दिखाता हुआ सबसे पहिले आगे २ चलता था। सुजान जब कि पर्वतके ऊँचे स्थानपर चढ गया था तब किरणकी दो तीव्र रेखाओंने उसकी दृष्टिको अपनी ओर खैंचा। उसने चकित हो ध्यानसे देखा तो ज्ञात हो गया कि एक बाघिनीके प्रकाशमान नेत्रोंसे यह किरणेंसी निकल रही थीं। सुजान घबडाया और अपने निकट खडे हुए एक राजकुमारको इशारेसे वह बाघिनी दिखाकर पीछे हटने लगा।

राजकुमारने उसके भयका कारण देखकर तत्काल उस बाघिनीको तलवारसे मार डाला। राजपूत लोग ऐसी बातोंका होना शकुन समझते हैं। इस शकुनके होनेसे सबके हृदयमें दूना उत्साह हो गया। धीरे २ समस्त वीरगण रात्ताकोटके शिखरपर पहुँच गये। कोई वीर तो दुर्गकी भीतपर चढ गया था और कोई चढ रहा था, कि इतनेमें ही सबसे आगे चढे हुए भाटका पांव फिसलनेसे वह भीतके नीचे गिरा। गिरते ही उनका ढोल * घोर शब्दसे बज उठा। इस शब्दसे चाचाकी बेटी जो कि सो रही थी जाग उठी। कन्याको फिर सुलानेके लिये चाचाने कहा "क्यों क्या डर है? किसका भय है? केवल ईश्वरका भय करके सुखसे सोओ। भादोंमासका मेघ गर्ज रहा है, साथमें वर्षा भी हो रही है, इसी कारणसे ऐसा शब्द होता है। नहीं तो यह और कुछ भी नहीं है। हमारे शत्रु इस समय कैलवाडेमें हैं उनकी कोई चिन्ता नहीं।" चाचा इस प्रकार कह रहा था कि किलेमें महाकुलाहल होने लगा। राठौर और शिशोदिया वीरगण किलेमें आकर महाभयंकर सिंहनाद करने लगे। इस सिंहनादको सुनकर चाचाका हृदय कंपायमान होने लगा। वह बिस्तरसे शीघ्रतापूर्वक उठा और शस्त्र लेकर बाहर जाया ही चाहता था कि इतनेमें चंदानो सरदारने प्रचण्ड मूर्ति धारण करके उसको घेर लिया और वहींपर दो टुकडे कर डाले। भाईको गिरता हुआ देखकर दुष्ट मेर भागना चाहता था, परन्तु राठौर राजकुमारने उसको भी पकडकर जमीनपर गिरा दिया। इस प्रकार इन दोनों पापियोंको इनके पापका प्राणदण्ड दिया गया। राठौर और शिशोदिया वीरगण उस किलेके धन रत्न लूटकर जय गान करते हुए अपने २ देशमें आये।

---

* राजपूत सेनाके साथ जयकीतन करनेके लिये भट्टलोग भी संग्राममें जाया करते हैं। यह कवि लोग अपने साथमें एक २ नगाडा भी ले जाते हैं। युद्धमें जय होते ही उसको बजाकर समरके गीत गाये जाते हैं।

सातवाँ अध्याय ७.

कुम्भका सिंहासनपर बैठना । मालवपति महम्मदको जीत-कर और कैद करके राणा कुम्भका चित्तौरमें लाना;राणा कुम्भके गौरवकी बढती;–पुत्रके द्वारा राणा कुम्भकी गुप्त हत्या;–पिताके मारनेवालेको निकालकर रायमल्लका चित्तौरके सिंहासनपर बैठना;-दिल्लीके बादशाहका मेवाडको घेरना;-रायमल्लकी विजय;–घरेलू झगडे;–रायमल्लकी मृत्यु ।

सम्वत् १४७५ (सन् १४१९ ई०) में राणा कुंभ (कुंभाजी) चित्तौरके सिंहासनपर बैठे । इनके राज्यमें मेवाड़ उन्नतिके शिखरपर पहुँच गया था । हजारों विघ्नोंके रहते भी भली भांतिसे अपनी प्रजाका लालन पालन करते थे । परन्तु यदि मारवाडके राजाकी * सहायता न मिलती तो इस उन्नति होनेमें सन्देह था । कारण कि जैसी उमरमें उनपर बडे २ संकट पडे थे, यदि उस समय राठौरके राजा उनको अपना समझकर सहायता न करते तो न जानें आज मेवाडके इतिहासका क्या आकार होता । राठौर राजाने अत्यन्त परिश्रम, यत्न और चेष्टा करके कुंभकी सहायता करनेमें मन लगाया था। उसके बहुतसे कारण देखे जाते हैं। उनमेंसे एक विशेष कारण यह भी मान लेना होगा कि राणा कुम्भने उनसे सहायता मांगी थी । यदि इस प्रार्थना-को वह पूर्ण न करते तो उनके कलंककी सीमा न रहती। दूसरी बात यह है कि राणा कुम्भ राठौर राजके भानजे थे ।सिद्धान्त यह है कि कुछ तो कर्तव्य ज्ञानसे और कुछेक

* रणचर भट्टने अपने बनाये " राजरत्न " काव्यग्रन्थमें वर्णन किया है कि मारवाडके मन्दोर राव राणा मुकुलके प्रधान मंत्री थे, और इन्होंने नावा और दिहाना नामक दो स्थान जीतकर मेवाडमें मिला दिये थे ।

स्नेह ममताके वश होकर उन्होंने कुंभके लिये इतना परिश्रम और इतना कष्ट उठाना स्वीकार किया था।

मेवाडका राज्य जिस प्रकार चतुर और तेजस्वी राजाओंके द्वारा बहुत दिनोंतक शोभायमान होता रहा, ऐसा सौभाग्य और किसी राज्यको प्राप्त नहीं हुआ। राणा कुंभके समयमें मेवाड़का गौरव दुपहरके सूर्यके समान प्रचंड हो रहा था। हिन्दू विद्वेषी मुसलमानोंके घोर अत्याचारसे जिस भारतके नगर और ग्राम ध्वंस होकर खँडहर बन गये थे, आज उन यवनोंका पता भी नहीं पाया जाता था। मुसलमानोंके जिस प्रचण्ड वीरने भारतकी स्वाधीनताको छीन लिया था, आज सौ वर्ष बीत गये कि उसका शरीर परमाणु बन गया। यह कहना ठीक होगा कि इन सौ वर्षोंके बीचमें मेवाडके बीच नया युग वर्तमान हुआ। जिस भयंकर संग्रामके होनेसे ब्रह्माकी कठोर लिपि फलवती हुई। उसमें वीरवर समरसिंहके साथ जो राजपूत वीरगण संग्राम भूमिमें सो गये थे, आज उनकी भस्मछारसे अगणित शिशोदिया वीर उत्पन्न होने लगे। इस समय मेवाडमें किसी बातकी कमी नहीं है। बल, वीर्य, गौरव, प्रतिष्ठा आज सब ही शोभाओंसे मेवाड़ शोभायमान है। तथापि मेवाडके जाननेवाले महाराणा कुम्भ निश्चिन्तभावसे न रहकर अपने होनहार दर्शनके अद्भुत बलसे भारतकी होनहार भाग्य लिपिको एकान्त चित्तसे पढने लगे। उन्होंने देखा कि काकेशश पर्वतमालाके ऊंचे २ शिखरोंसे और उनके नीचे बहती हुई काकशस नदीके बडे किनारेसे घनघोर घटा घुटकर घटाटोप बाँधे हुए धीरे २ भारतवर्षकी ओरको फैलती जाती है। उस घोर घटाके भयंकर गुप्त गर्भमें जो प्रचंड बिजली धीरे २ उत्पन्न हो रही थी, वह अल्पकालमें ही पूर्ण रीतिसे जलकर मेरे पोते साँगापर गिरेगी। इस होनहारको राणा पहले ही जान गये थे, अत एव उस वज्राग्निके विश्वदाही तेजको रोकनेके लिये इस समय उचित उपाय करने लगे। जिन उपयोंकी सहायतासे उन्होंने बड़े २ कठिन कार्योंको साधन किया था, जिन उपायोंकी सहायतासे उन्होंने हमीरकी तेजस्विता, कार्यकुशलता, राणा लाक्षकी सुन्दर शिल्पप्रियता वरन इन दोनोंसे भी अधिक गुणवान होनेका परिचय दिया था;-यहांतक कि एक समय राणा कुंभने समरसिंहकी संग्राम-भूमि कग्गर नदीके किनारेपर भी "मेवाडका लाल झंडा" फहरा दिया था। आज उन्हीं गुणोंके द्वारा वे शत्रुसे बचनेका उपाय सोचने लगे। यहांपर हिन्दूराजाओंकी प्रजा हितकारिणी राजनीतिके साथ हम उस कालके मुसलमानोंकी अत्याचार करनेवाली राजनीतिकी समालोचना करेंगे। जिस दिन यवनवीर शहाबुद्दीनने भारतके स्वाधीनता रत्नको छीन लिया, जिस दिन समरकेशरी समरसिंहने उस रत्नके पुनरुद्धार

करनेमें इषद्वतीनदीके किनारे अपने प्राणोंका बलिदान कर दिया; उस दुर्दिनको महाराणा कुम्भके समयतक २२६ वर्ष बीत गये हैं। इन दोसौ वर्षके बीचमें दो विशाल राजवंशोंमें २४ यवन राजा हुए; इनमें यवनोंकी एक बेगम भी हो गई, तथा विद्रोह और पदच्युति आदि कुटिल चक्रमें पिसकर, धीरे २ यह समस्त बादशाह कालके गालमें चले गये। यदि मेवाडके साथ मिलान किया जायगा तो इन दोनोंमें बहुतसा भेद दिखाई देगा। क्योंकि उपरोक्त समयके बीचमें केवल ११ राणा मेवाडके सिंहासनपर बैठे। इनमेंसे बहुतसे तो ऐसे थे कि जिन्होंने मातृभूमिकी या किसी पुराणतीर्थकी रक्षा करनेके लिये संग्राममें अपने प्राण दिये थे। इस समय स्पष्ट ही ज्ञात होता है कि जो लोग प्रजा हितकारी नीतिके अनुसार राज्य पालन करते हैं वे बहुत दिनोंतक राजसिंहासनपर विराजमान रहते हैं।

जिस समय खिलजी वंशके पिछले बादशाहका जमाना था उस समय विजयपुर, गोलकुण्डा, मालवा, गुजरात, जौनपुर और कालपी आदि देशोंके राजा लोग, दिल्लीश्वरको अयोग्य जानकर अपनी २ अधीनतारूपी शंकलको काटकर अलग २ स्वतन्त्र राज्यकी प्रतिष्ठा करने लगे। जब राणा कुंभको राजचित्तौरका राजसिंहासन मिला, उस ही समय मालवे और गुजरातके दोनों नवाब सेना बढाकर अपने राज्यको बढाने लगे, वे मेवाडराज्यकी उन्नतिका वृत्तान्त जानकर डाह करने लगे। फिर दोनों एक साथ मिल गये और सम्वत् १४९६ (सन् १४४० ई०)में बडी भारी प्रचंडसेना साथ लेकर मेवाडराज्यकी ओर धाये।

राणा कुंभने शीघ्र ही इस समाचारको जान लिया। उनको अत्यन्त क्रोध हुआ। दोनों नवाबोंको भली भांतिसे दंड देनेका विचार महाराणाने किया, वह एक लाख घोडे व पैदल, और १४०० हाथी साथमें लेकर उन दोनों यवनोंके सामने आये। दोनों सेना आमने सामने खडी हो गई। घोर संग्राम हुआ। राणाकी फौजके सामने मुसलमानोंकी फौज ठहर न सकी, राणा कुम्भ मालवेवाले महम्मद खिलजीको बांधकर चित्तौरमें ले आये।

अबुलफजलने भी अपने बनाए हुए इतिहासमें राणा कुंभकी इस जय वृत्तान्तका वर्णन किया है। मुसलमान होनेपर भी इसने हिन्दूराजाके माहात्म्य और उदारताके वश हो बारम्बार उनकी तारीफ की है। उसने कहा है;—"कि उदार चरित्रवाले राणा कुम्भने विना किसी तरहका जुरमाना किये ही अपने शत्रु महम्मदको छोड दिया, वरन उसको अनेक प्रकारकी भेंट देकर आदरमानके साथ उसके राज्यमें पहुँचा दिया" इसमें कोई संदेह नहीं कि हिन्दूजातिका चरित्र ऐसा ही उदार होता है। विनीत शत्रुको कृपा करके छोड देना ही हिन्दू वीरोंका सनातनधर्म है। वे सदा ही इस धर्मके अनुसार कार्य किया करते हैं। महम्मदखिलजीके छूटनेका वर्णन भट्टग्रंथोंमें और प्रकारसे लिखा है। उन्होंने लिखा है कि राणा कुंभने छः मासतक महम्मद-

को कैद रखकर छोड दिया । कहते हैं कि जय प्राप्त करनेके चिह्नकी भांति और २ वस्तुओंके साथ राणाने उसके ताजको अपने पास रहने दिया था । वीरवर बाबरने सांगाके बेटेसे इस ताजको नजरमें पाकर अपनी जिंदगीके हालमें इस बातको भी दर्ज किया है, अत एव राजा कुंभकी प्रतिष्ठाके लिये यह कुछ साधारण बात नहीं है ! परन्तु इन सबकी अपेक्षा एक दूसरा स्मृतिचिह्न बहुत दिनसे उस विजय वानीका गान कर रहा है । महाराणा कुंभका बनाया हुआ एक विशाल विजयस्तम्भ इस विजयका चिह्न माना गया । " उफने हुए महासागरके समान विशाल सनाको साथ लेकर पृथ्वीको कंपायमान करते हुए गुजरात और मालवेके दो बादशाहोंने मध्य पाट * पर चढाई की " इसके पश्चात् जो कुछ हुआ था वह समस्त इस विजयस्तम्भपर लिखा हुआ है । इस लडाईसे ग्यारह वर्ष पीछे राणाने इसका बनवाना आरम्भ किया और दश वर्षके बीचमें बनकर पूरा हो गया । जो विशाल विजयस्तम्भ तइयार होकर आज मेरु पर्वतकी ओर घृणाकी दृष्टिसे देखता है उसका दश वर्षके बीचमें तइयार हो जाना कुम्भरानाकी कार्य तत्परताको सूचित करता है । परमेश्वरसे हमारी यही प्रार्थना है कि यह विजयस्तम्भ अचलभावसे विराजमान रहकर मेवाडके राजाओंका गौरबमान किया करे । राजा कुम्भकी उदारता और महानताके वश होकर मालवेका बादशाह उनका मित्र हो गया था। भट्टग्रन्थमें लिखा है कि एक बार दिल्लीश्वरकी सेनाके साथ झुंझजूनामक स्थानमें राणाका युद्ध हुआ, महम्मदखिलजी इस लडाईमें अपनी फौजको राजा कुम्भकी सहायताके लिये आया था राणाकी विजय हुई । उस समय दिल्लीके बादशाहकी सामर्थ्य यहांतक जाती रही थी कि मुल्लालोग दिनरात मसाजिदोंमें फतवा पढा करते थे कि बादशाह दिल्लीकी इज्जत बकरार रहे। अकेले मालवेके शासनकर्त्ताने ही दिल्लीके पिछले सुलतान गोरीको पराजित किया था ।

विदेशीय लोगोंके आक्रमणसे मेवाडभूमिकी रक्षा करनेके लिये जो ८४ दुर्ग वहांपर बने हैं, उनमेंसे ३२ महाराणा कुम्भने ही बनाये थे । इन बत्तीस किलोंमेंसे उनका बनाया हुआ कुंभमेरु कमलमीर दुर्गही विशेष प्रसिद्ध है । यह किला जैसे स्थानमें बनाया गया है, और इसके चारों ओर जैसी ऊंची दीवारें बनी हुई हैं, इस कारणसे उसको चित्तौरके किलेके सिवाय मेवाडके और दुर्गोंमेंसे श्रेष्ठ कहा जा सकता है, कुम्भमेरुकी यह दीवारें जहांपर बनी हुई हैं वहांपर एक प्राचीन किला बना हुआ था, यह किला बहुत दिनोंसे पहाडी भीलोंके अधिकारमें था महाराणा चन्द्रगुप्तके वंशमें संप्रीतनामक एक जैन राजा सन् ईसवीकी दूसरी

* मेवाडका पुराना नाम मध्यपाट है ।

शताब्दीमें हुआ था, बहुतसे आदमी कहते हैं कि इसने ही उस किलेको बनाया था, इस प्राचीन दुर्गके स्थान २ में जो जैनियोंके मन्दिर दिखाई देते हैं, उनकी अत्युत्तम बनावटको देखकर इस कहावतके ऊपर विश्वास करनेको जी चाहता है। इस कुंभमेरु किलेके एक प्रधान द्वारका नाम "हनुमान द्वार" है वहांपर वीराग्रगण्य महावीरजीकी एक बडी मूर्त्ति विराजमान होकर उस द्वारकी रक्षा कर रही है। जिस समय कुम्भराणाने नरकोटको जीता था उस समय इस नगरके सुन्दर किवाडोंके साथ हनुमानजीकी यह मूर्ति भी वह अपने नगरमें ले आये थे। आबू पहाडके एक शिखरपर परमारोंका एक बडा किला बना हुआ था, महाराणा कुम्भने उसमें एक बडा महल बनवाया था। बहुधा वह इस ही महलमें रहा करते थे। इस विशाल दुर्गका अस्त्रागार और रक्षकशाला आजतक महाराणा कुम्भके नामसे प्रसिद्ध है। मेवाडनिवासियोंके बहुतसे कार्योंसे इस बातका प्रमाण पाया जाता है कि महाराणा कुंभ प्रजाको अत्यन्त ही प्यारे थे। आबू पर्वतके कूटपर बसे हुए उस किलेके भीतर कुछेक मंदिर दिखाई देते हैं। उनमेंसे एकके भीतर कुंभकी और उनके पिताकी मूर्ति विद्यमान है। अबतक मेवाडके रहनेवाले देवता जानके उन मूर्तियोंकी पूजा करते हैं। जिस दिन महाराणा कुम्भने उस पहाडोंकिलेके भीतर विश्राम किया था उसदिनको आज कई सौ वर्ष बीत गये, उनके वंशवालोंने अपने अनन्त विक्रमको प्रकाशित किया था: आज वह भी अनन्त समुद्रके किसी गंभीर स्थानमें लोप हो गये हैं, तथापि इन समस्त कीर्तियोंका विचार करनेसे मनमें आपसे आप मेवाडके पूर्वगौरवका वृत्तान्त याद आ जाता है। मेवाडके पश्चिम प्रान्तको और आबू पहाडके बीचमें बने हुए मार्गोंको परकोटे आदिसे दृढ करके महाराणा कुंभने भानशिरोहीके निकट वसन्तीनामक एक किला बनाया। इसके अतिरिक्त आरावलीके रहनेवाले भैरलोगोंकी चढाईसे देवगढ और शेरोनलकी रक्षा करनेके लिये भी उन्होंने एक किला बनवाया था, इस किलेका नाम माचीन है। तथा जारोल और पानोरके दुर्द्धर्षभूमि या भीलोंको वशमें रखनेके लिये महाराणाने आहौरकी तथा दूसरे और भी प्राचीन किलोंकी मरम्मत कराई और मारवाडराज्यकी सीमाको नियत किया।

इनके सिवाय राणा कुम्भकी और कीर्तियें भी बहुतायतसे थीं कि जिनका धर्मसे सम्बन्ध था। इनमें छः अधिक प्रसिद्ध हैं।—एक—कुम्भश्याम। कुम्भश्याम आबू पहाडके ऊपरकी भूमिपर बना हुआ था, यदि किसी और स्थानपर बना होता तो अपनी सुन्दरतासे जगतमें प्रसिद्ध हो जाता। परन्तु यह स्थान अनेक सुन्दर पदार्थोंसे घिरा हुआ है, इस कारणसे कुम्भश्यामकी सुन्दरता हठात् अनुमान नहीं की जा सकती। दूसरी अटारी बहुत बडी है। इसको बनानेमें दश करोडसे कुछ अधिक रुपये खर्च हुए थे, राणाने खास अपने कोषसे इसके बनानेको आठ लाख रुपये दिये थे। यह विशाल अटारी मेवाडके पश्चिम भागमें बने हुए माद्रिनामक पहाडी मार्गके बीचमें बनी हुई है।

राणाकुम्भने श्रीऋषभदेव * जीके नामपर इस अटारीको उत्सर्ग किया था। मुसलमान लोगोंका सर्व संहारक हाथ इस कारणसे इस अटारीको नहीं तोड सका कि यह पर्वतके दुर्गममार्गके किनारे बनी हुई है।परन्तु दुःखकी बात है कि इस समय यह सम्पूर्णत: त्याग दी गई है। ऋषभदेवजीका जो पवित्र मन्दिर एक समय मेवाडका पवित्र स्थान समझा जाता था,जहाँपर प्रतिदिन अगणित नर नारी आते जाते थे;आज वहांपर मनुष्यका नामतक नहीं, केवल जंगल ही जंगल है। आज बनैले हिंसक जीवोंने उस अटारीके कमरोंमें अपने रहनेके स्थान बनाकर उस दुर्गम देशको और भी अधिक दुर्गम कर दिया है। राणा कुम्भ जैसे वीर शिल्पप्रिय और प्रतिष्ठावान थे वैसे ही कवि भी थे। राजस्थानके दूसरे कवियोंकी अपेक्षा राणाकी कविता विशेष प्रसिद्ध है।कारण कि राणाने दूसरे कवियोंकी नाईं अपने विक्रमके वर्णनमें या अपनी प्राणप्यारियोंकी सुन्दरताके कहनेमें अपनी बुद्धि और कवित्वशक्तिको खर्च नहीं किया। उन्होंने आध्यात्मिक रसका स्वाद चखनेवाले कविलोगोंकी विशुद्ध रुचिके पीछे जाकर अमृतमय "गीतगोविन्द" की एक सुन्दर परिशिष्ट बनाई है।

मारवाडके श्रेष्ठ सामन्त मैरतानिवासी राठौर सरदारकी मीराबाई नामक कन्यासे महाराणा कुम्भका विवाह हुआ था। ×मीराबाईजी जिस प्रकारसे अत्यन्त सुन्दरी थीं वैसी ही धर्ममें भी आस्था रखती थीं। इनके गुणोंकी बराबरी उस काल कोई भी राजकुमारी नहीं कर सकती थी। मीराबाईजी कविता रचनामें परम प्रवीण थीं। भगवान कृष्णचन्द्रजीकी स्तुतिके उन्होंने अनेक पद बनाये थे। वैष्णवलोग इनकी कविताको बहुत ही आदर करते थे, अबतक बहुतसे राजकुलोंमें मीराबाईजीके पवित्र भजन सुने जाते हैं। * अबतक वैष्णवलोग उनके सुन्दर भजनोंको गाते २ प्रेमानन्दमें

---

* राणाका एक मन्त्री जैनधर्मावलम्बी था, यह राठौर कुलमें उत्पन्न हुआ था। इस मंत्रीने ही सन् १४३८ ई० में यह मंदिर बनवाया। इसके बनानेमें सब प्रजाने भी चंदा दिया था। मंदिरके ३ खंड हैं। बहुतसे खंभोंके ऊपर बना हुआ है। प्रत्येक स्तम्भ ४० फुटसे अधिक ऊंचा होगा। इसकी कारीगरी देखने योग्य है; स्थान २ पर अनेक भांतिके चित्र खिंच रहे हैं जैनियोंके प्रसिद्ध सन्यासियोंकी मूर्तियें इस मंदिरके निचले भागमें बनी हुई हैं।

× बा देवीप्रसादजी मुन्सिफ जोधपुर अपने बनाये हुए "मीराबाईके जीवनचरित्र" में लिखते हैं कि "करनलटाडने सुनि सुनाई और अटकल पच्चू बातोंपर भरोसा करके मीराबाईको राणा कुंभाजीकी राणी लिखकर गलती की है ** * मीराबाई जोधपुरके राठौरखानदानसे थीं और उदयपुरके शिशोदिया खानदानमें महाराणा सांगाजीके कुमारभोजके साथ ब्याही गई थीं। (सफा २।३।) इनका विवाह सम्वत् १५७३ में हुआ था। " मीराबाईजी राजदूदाजीके मेडतिया राठौर रतनसिंहकी बेटी थीं।"

* मीराबाईनाटक जो बम्बईके प्रसिद्ध श्रीवेंकटेश्वर प्रेसमें छपा है, देखने योग्य है।

मग्न हो जाते हैं, राणा कुम्भजी भी कवि थे, परन्तु मीराबाईजीने उनसे ही कुछ सीखा था इस बातका निरूपण करना कठिन है, स्वधर्मपरायण पंडिता मीराबाईजीका जीवनचरित्र उपन्यासकी यथार्थ सुन्दरतासे परिपूर्ण है । यमुनाजीके किनारेसे लेकर द्वारका पुरीतक भगवान श्रीकृष्णजीके जितने मन्दिर थे,उन सबको मीराबाईजी देख आई थीं । पुरुषोंके समान व्यवहार करनेसे उनके कलंककी बहुतसी कहानी सुनी जाती हैं, परन्तु वे सब मिथ्या हैं और उनके चरित्रके अयोग्य हैं ।

वीर होनेके साथ राणा कुम्भ प्रेमिक भी थे । शृंगार और वीररसके अपूर्व मिश्रणसे उनका हृदय अपूर्व सुन्दर हो गया था । झालावारजनपदके स्वामीकी बेटीके साथ एक राठौर राजकुमारका विवाह निश्चय किया गया । परन्तु उस विवाहके होनेसे पहले ही राणा कुंभने उस राजकुमारीको हरण कर लिया । इससे पहिले राठौर और शिशोदिया राजाओंमें जो मित्रता हो गई थी, महाराणा कुम्भके व्यवहारसे वह टूट गई । फिर दोनों कुलोंमें प्राचीन कालका वैरभाव बँध गया. प्रेमविमूढ राठौर राजकुमारने अपने प्राणप्यारीका उद्धार करनेके लिये अत्यन्त चेष्टा की, परन्तु दुर्भाग्यवश उसके सारे परिश्रम निष्फल हो गये । तो भी वह राजकुमार उस लावण्यवतीकी आशाको नहीं छोड सका । रात दिन मन्दोरकी अटारीके सूने कमरेमें बैठकर वह उस सुन्दरीकी सुन्दरताईका ध्यान करता था. वर्षाके होनेपर जब आकाश साफ हो जाता था तब कुम्भके ऊंचे प्रासाद-शिखरसे मंदोरका किला साफ २ दिखाई देता था । उस समय राठौर राजकुमार प्राणप्यारीके वासस्थानका दर्शन किया करते थे । अनेक चिन्ता अनेक विचार उनके हृदयमें उदय हुआ करते;-कभी सुख कभी दुःख;-कभी आशा और कभी निराशा उनके हृदयपर अपना अधिकार किया करती थी । कभी २ विरह व्यथा सहते २ बहुत ही अधीर हो जाते थे । तथापि उस मोहकरी आशाको नहीं छोड सकते थे । या उस एकान्त स्थानको भी नहीं छोड सकते थे । रात दिन वह कुंभमेरुके महलको ही देखते रहते थे। कुम्भमेरुके दीपकका उज्ज्वल प्रकाश तारेके प्रकाशके समान दूरसे उनको दिखलाई दिया करता था; वह ध्यान लगाकर उसे ही देखा करते । बहुतोंका यह अनुमान था कि कुम्भमेरुकी अटारीमें जो दीपक रातको जलाया जाता था वह झालावारकुमारीके प्रेमका निदर्शन था । उसने राठौर राजकुमारको ही अपना प्राण समर्पण कर दिया था । महान कुलमें पहुँचनेपर भी राजकुमारी बालकपनकी प्रीतिको नहीं भूल सकी । पिताने, धनके लालचसे अपनी कन्याको उसके प्रणयपात्रके शत्रुको विवाह दिया । बेटीके सुख दुःखका कुछ भी विचार न किया । राजपूतबाला दिन रात अपने भाग्यको धिक्कार दिया करती थी । इस प्रकारसे कई वर्ष वीत गये । विरहमें जलते हुए राजकुमारने अत्यन्त चेष्टा की परन्तु प्राणप्यारीका दर्शन

किसी प्रकारसे न पाया। एक दिन यह राजकुमार उस वनमें होकर जो कि कुम्भमेरुके पश्चिम ओर था, किलेपर चढ गया। भट्टकविगणोंने यहां कहा है कि "वह राजकुमार झालवनसे तो निकल आया था, परन्तु झालनीके समीप किसी प्रकारसे नहीं आ सका।"

भली भाँतिसे प्रजा पालन और अखंड प्रतापसे ५० वर्षतक राज्यभोग करके राणाने बुढापेके चिह्न पाये। उनकी जातिके तथा देशके शत्रु राणाके भयंकर विक्रम मन्त्रसे मोहित हुए सर्पके समान चुपचाप पडे हैं। राणा कुंभजीने बहुतसे किले और मंदिरादि द्वार अपने राज्यको दृढ व शोभायमान करके जन्मभूमिकी अनन्त प्रतिष्ठाके साथ अपनी कीर्ति और प्रतिष्ठाकी नीम गाडदी। ऐसे समय मेवाडके ऐसे गौरवके समयमें राणाके बलवान वृक्षकी जडमें एक पाखण्डी नर राक्षसने कठोर कुल्हाडा मारा, जो वर्ष मेवाड देशके अतुल आनन्द और उत्सवका वर्ष गिना जाता था आज पिशाचकी करतूतसे शोकसागरके समान हो गया। उन वर्षोंमेंसे एक वर्षके कुदिनमें जो भयंकर कुकार्य हुआ उसके द्वारा भारतके इतिहासका एक पूरा अध्याय कलंककी स्याहीसे कलुषित हो गया। परमगुणाधार राणाकुंभ दीर्घकालसे शान्तिको भोग करते हुए बुढापेके मार्गमें घूम रहे थे; उनका पवित्र प्राण एक पिशाच घातककी छूरीके आघातसे अकालमें ही इस लोकसे पयान कर गया। यह घातक पिशाच और कोई नहीं था, राणाके पुत्रने ही इस भयंकर कार्यको किया था।

इस प्रकारसे संवत् १५२५ (सन् १४८९) का वर्ष इस भयंकर कुकार्यके होजानेसे कलंकित होगया। जिस नरराक्षस पिशाचने अपने हाथसे अपने जन्मदाता पिताका संहार किया; उसका पापी नाम सनातनधर्मावलंबियोंके पवित्र इतिहासमें लिखनेके लायक नहीं है। उस नामका मुँहसे कहना भी पाप है। इस पाखण्डी पितृघातीका नाम "ऊदा" (या उदयसिंह) था। राजस्थानके भट्टकविगण इसके घिनौने नामके बदले "हत्यारा" और "नरहन्ता" के नामसे इस अभागेको पुकारा करते हैं, जिस राज्यके लालचसे ऐसा बुरा कार्य किया, उस राज्यको वह बहुत ही थोडे समयतक भोग सका था। और इस थोडे समयमें भी एक पलको भी सुख नहीं पाया। पग २ पर जातिवालोंके विद्वेष रूपी विषको पान करते हुए उसको अपना समय व्यतीत करना भारी पड गया था। सगे, भले, इष्ट, मित्र, बन्धु, बांधव, सबने ही उसको त्याग कर दिया था। इस घृणित अवस्थाको पहुँचकर जब इस दुराचारीने अपनेको बचानेका उपाय न पाया, तब एक नीच पुरुषके साथ मित्रता की। कपट मित्रतासे अपने जालमें फाँसनेके लिये पापी ऊदाने देवडानामक सामन्त राजाको आबू पहाडपर स्वाधीन राजाकी भांति स्थापित कर दिया। तथा जोधपुरके * राजाको

* इस भयंकर घटनासे १० वर्ष पहले सम्वत् १५१५ में जोधरावने जोधपुर बसाया।

सांभर अजमेर और इनके निकटके कई एक परगने दे दिये । परन्तु तो भी इस दुष्ट-का खटका न गया । ऊदाने जिस प्रकार राज्य धनके बदलेमें इस मित्रताको मोल लिया था, उसका वह आशय पूरा न हुआ । मनमें अभिलाषा थी कि वह मित्र मेरे खोटे कामोंके करनेमें भी सहायता करेंगे, परन्तु मुँह खोलकर मित्रसे भी अपने भेदको प्रकाशित न कर सका । यदि कहता तो भी उसके कहनेके अनुसार कार्य होनेमें सन्देह ही था तब तो मनहीमनमें अत्यन्त दुःख पाने लगा; और अपनी कामनाको सिद्ध करनेके लिये राज्यमें भाँति २ के अत्याचार करने आरंभ किये । इसके अत्याचार और बुरे २ व्यवहारोंसे धीरे २ राज्यका नाश होने लगा । महाराणा कुम्भने वर्षोंतक परिश्रम करके जिस मेवाडराज्यको उन्नतिके शिखरपर पहुँचा दिया था, ऊदाने पांच वर्षके बीचमें ही उस राज्यकी हीन दशा कर दी । इस प्रकारके अत्याचार करनेपर भी दुष्टको शान्ति न मिली । जिनको बहुतसा धन देकर मित्र बनाया था, वह भी पापीको छोड गये और बाततक न सुनी । तब अभागा अपने स्वार्थकी रक्षाका दूसरा उपाय न देखकर दिल्लीके मुसलमान राजाके पास चला गया । और अपनी कन्या देनेका वचन देकर उनसे सहायता मांगी, " परन्तु भगवान्ने उसके इस दुगुने दुराचारको दूर करके दुरपनेय कलं-कसे बप्पा रावलके पवित्र वंशकी रक्षा की, और भली भांतिसे पापका फल दिया" जब कि यह पापी ऊदा बादशाहसे बिदा लेकर " दीवानखाने " से बाहरको आता था, उस ही समयमें शिरपर बिजली गिरी, और तत्काल यह पापी पृथ्वीपर गिरकर यमराजके यहांको चला गया । कठोर पापका कठोर प्रायश्चित्त हुआ; इस पापजीवन नाटकका परदा सदाके लिये पड गया । इस कठोर कार्यमें भट्ट-वंशके एक आदमीने भी ऊदाकी सहायता की थी, यही कारण है जो भट्टलो-गोंने अपनी जातिकी दुष्टता छिपानेके लिये इस वृत्तान्तको साधारण रीतिसे वर्णन किया है ।

राजस्थानके जो ब्राह्मण, यति, चारण और भाटगण दान लिया करते हैं वे मंगता कहलाते हैं । इन लोगोंमें परस्पर अत्यन्त विद्वेष होता है, एक दूसरेके ऊपर प्रभुता करने और हुकम चलानेको बहुत ही अच्छा समझते हैं । परन्तु बीरवर हमीर-के समयसे इन लोगोंमेंसे चारण बहुत ही बढ गये थे । एक ज्योतिषी ब्राह्मणने ज्योतिषके अनुसार प्रश्न लगाकर बतलाया था कि एक चारणके हाथसे ही राणा-कुंभ मारे जाँयगे । इससे पहले भी राणा कुंभ किसी कारणसे चारणोंके ऊपर अत्यन्त अप्रसन्न हुए थे, इस समय ज्योतिषीकी बात सुनकर और भी क्रोध आया, और चारण लोगोंकी समस्त धन सम्पत्ति छीनकर उनको अपने राज्यसे

निकाल दिया । इसमें कोई संदेह नहीं कि चारणोंको ऐसा कठोर दण्ड देकर राणाने अदूरदर्शिताका कार्य किया था । कारण कि आजतक कोई ऐसी हिम्मत नहीं रखता जो ब्राह्मणोंको एक साथ ऐसा दंड दे । परन्तु चारणलोगोंको देशनिकाले-का यह कठोर दंड बहुत दिनोंतक नहीं भोगना पडा । युवराज रायमलकी कार्य तत्परतासे इनको इस दण्डसे छुटकारा मिला । युवराज रायमल एक बार किसी अवैध प्रश्नको पूछने लगे थे * इसलिये राणा कुंभने इनको भी देशसे निकाल दिया था तब वह ईदरदेशमें चले गये, वहां एक चारणने विशेषतासे इनकी सहायता की । उस ही चारणने कौशल करके उनको प्रसन्न कर राणाका अनुग्रह और अपनी भूसम्पत्ति-को पुनर्बार प्राप्त किया था । परन्तु जिस कुटिल ज्योतिषीने यह प्रश्न लगाया था यदि, उसका शिर काट लियां जाता तो उसका होनहार बचन निश्चय निष्फल होता; परन्तु कुभाग्यसे वह होनहार बात बहुत शीघ्र पूरी हुई + अपने विक्रम और अपनी सामर्थ्यके प्रभावसे राणा रायमल सम्वत् १५३० (सन् १४७४ ई०) में राणा कुंभके सिंहासनपर बैठे । सिंहासनपर बैठनेके पहिले उन्होंने पितुघाती ऊदाके विरुद्ध खड्ग धारण किया था । पाखण्डी इस युद्धमें हारकर दिल्लीके बादशाहके पास

---

* एक समय राणा कुम्भने यवनराजके ऊपर झुन्झुनूनामक स्थानमें जय पाई, उसके दूसरे दिनसे उन्होंने यह नियम किया कि किसी आसनको ग्रहण करनेसे पहले एक मन्त्रको पढकर अपने खड्गको तीनवार मस्तकपर घुमाते थे, रायमलने एकवार ऐसा करनेका कारण पूछा, इस ही कारणसे राणाने क्रोधित होकर उनको राज्यसे बाहर निकाल दिया था ।

× सन् १८२० ई० में वर्षाकालके समय एकबार टाडसाहब उदयपुरमें गये थे । राणाको उस समय एक कठोर रोग होगया था । वर्षाके समय प्रतिवर्ष वह रोग राणाजीको होता था । राणाके रोगका समाचार पाय उनको देखनेके लिये टाडसाहब महलोंमें गये । रोगका यथार्थ कारण और रोगकी तात्कालिक अवस्थाको जानकर वह अत्यन्त ही विस्मित हुए । राजदरबारमें कुटिल ब्राह्मण, दैवज्ञ और चिकित्सकके कार्यपर नियत था, और राणाकी बडी बहनकी सम्पत्तिका भी प्रबन्धकारक यही था। इस कपटी ब्राह्मणने राणाकी जन्मपत्रिकामें लिखा था कि सन् १८२० में राणाको एक कठोर रोग होगा । आरोग्य होना अत्यन्त कठिन है । आश्चर्यकी बात है कि उस ही ब्राह्मणसे महाराणाकी चिकि-त्सा कराई जाती थी । इस ही कारणसे वह कपटी ब्राह्मण अपनी भविष्यद्वाणीको सफल करनेके लिये, रोगके दूर करनेवाली औषधियें न देकर सप्तधातु मिश्रित दवा देता था और वह मिश्रित विषैली सामग्रीसे तइयार हुआ था । टाडसाहबने इस औषधिकी परीक्षा करके राणाजीसे निवेदन किया कि "महाराज ! आप इस कपटीकी कपटताईमें यह रोग भोग रहे हैं, औषधिके बदलेमें आपको जहर खि-लाया जाता है, आप सहजसे समझ गये होंगे कि इससे आपके शरीरका कहांतक बिगाड़ होगा, अत एव निवेदन है कि इस जहरको छोडिये और अमृतको पीकर जीवनको प्राप्त कीजिये । " टाडसाहबकी बातोंने राणापर पूरा असर किया, उनके ज्ञाननेत्र खुल गये कि कपटी ब्राह्मणने अपनी होनहार वाणीको सफल करनेके लिये ऐसी औषधि दी है । फिर राणाने डंकननामक एक होशियार डाक्टरसे अपना इलाज कराया, उसके इलाजसे शीघ्र ही अच्छे हो गये, और वह पाखण्डी ब्राह्मण नौकरीसे निकाला गया ।

गया और वहां उन से अपनी कन्याके देनेकी प्रतिज्ञा की । परन्तु विधाताने उसकी प्रतिज्ञाको पूर्ण नहीं होने दिया । ऊदाके सिंहेशमल्ल और सूरजमल्लनामक दो पुत्र थे, अभागेकी शोचनीय मृत्युके पीछे बादशाह उन्हीं दो लडकोंको साथ लेकर मेवाडपर चढ आया । आज कलका नाथद्वारा उन दिनोंमें शियाहैनामसे प्रसिद्ध था । बादशाह यहीं अपने डेरे लगाकर युद्धकी बाट देखने लगा । मेवाडके सरदार और सामन्त भी राणा रायमल्लकी तरफ हुए, कारण कि वह रायमल्लको ही न्यायानुसार चित्तौरका राणा समझते थे । राणाकी पताकाके नीचे इस समय सरदारों और सामन्तोंके झुण्डके झुण्ड इकट्ठे होने लगे । आबूका राजा तथा गिरनारका नरेश यह दोनों भी सहायता करनेके लिये आये । ग्यारह हजार पैदल और अट्ठावन हजार सवारोंकी सेना लेकर राणा रायमल्लने घासा नामक स्थानमें शत्रुओंका सामना किया । शीघ्र ही भयंकर संग्राम हुआ । पितृघाती ऊदाके दोनों पुत्र प्रचण्ड विक्रमको प्रकाशित करके राणारायमल्लकी सेनाको मथने लगे । नदीके किनारे मनुष्योंके रुधिरसे भीग गये परन्तु राणा रायमल्लके भयंकर विक्रमको यह लोग किसी प्रकारसे न सह सके । अन्तमें पराजित होकर राणाके आधीन हो गये । राणाने समस्त अपराध क्षमा करके उनको आदरपूर्वक ग्रहण किया । बादशाह इस समरमें ऐसा घोर पराजित हुआ था कि फिर जिन्दगीभर उसने मेवाडकी सरहदपर भी पाँव नहीं रक्खा ।

राणा रायमल्लके दो कन्या और तीन धुरन्धर पुत्र उत्पन्न हुए थे । गिरनारके राजा यदुवंशीय शूरजी और शिरोहीके देवरा राज्य जयमलका इन दोनों कन्याओंसे विवाह हुआ था । जयमलके साथ कन्याका विवाह करनेके समय रायमल्लने विवाहके दहेजमें आबू पहाड भी उनको दे दिया था । राणाने भलीभाँतिसे अपने बडे बूढोंके गौरवकी रक्षा की थी मालवेके स्वामी गयासुद्दीनके साथ राणाका प्रचण्ड वैर हो गया था, इसहीके कारण बहुतसे युद्ध हुए, सब युद्धोंमें राणा रायमल्लकी जय हुई राणाके भतीजे सिंहेशमल्ल और सूरजमल्लके प्रचण्ड विक्रमसे ही बारम्बार विजय होती थी । अंतमें गयासुद्दीनने विजयकी कोई सम्भावना न देखकर अपने समस्त सत्व छोडकर राणासे सन्धि करनेकी प्रार्थना की । उदार हृदय रायमल्लने सन्धि करना स्वीकार कर लिया । तबसे मेवाडके राज्यको निष्कंटक होकर राणाजी पालन करने लगे । क्योंकि उस समय भारतवर्षमें कोई ऐसा राजा या बादशाह नहीं था कि जो रायमल्लके प्रचण्ड प्रतापके आगे घडीभरको भी रह सकता । इस समयसे पीछे लोदीका खान्दान दिल्लीके तख्तपर बैठा । मेवाडके उत्तरी परगनोंकी बाबत कई वार राणाजीने लोदी वंशवालोंसे संग्राम किया था ।

पहले ही कह आये हैं कि राणा रायमल्लके सांगा, पृथ्वीराज और जयमल्ल यह तीनों पुत्र महा पराक्रमी उत्पन्न हुए थे । सांगा और पृथ्वीराज विशेष प्रसिद्ध हुए। सांगाने वीरवर बाबरसे संग्राम किया था, और पृथ्वीराज उस समय भारतवर्षमें एक अनुपम

महावीर गिना जाता था । छोटा जयमल्ल भी वीरतामें इनकी बराबर ही था । यदि यह तीनों भाई मिलकर जननी जन्मभूमिका हित करते तो न जाने आज भारतका भाग्यचक्र किस ओरको फिरा होता । परन्तु भारतभूमिके कुभाग्यमें तो यवनोंकी आधीनता लिखी हुई थी, वह लेख कैसे मिटता, इस ही कारणसे इन तीनों भाइयोंमें फूट पैदा हुई और यह परस्पर एक दूसरेके खूनके प्यासे हो गये । इनके झगडे झंझटसे राणा रायमल्लजी बहुत दुःखी हुए, उनके सुखमें बाधा पड गई । उनको चारों ओरसे विपत्तिका घेरा दिखाई देने लगा । और फिर महाक्रोधित हुए राणाने तीनों पुत्रोंको अपराधी समझा और अपने राज्यमें शान्ति रहनेके लिये तीनोंको देशनिकाला देनेका विचार किया । बडा पुत्र (सांगाजी) तो उस भयंकर झगडेसे अपनी रक्षा करनके लिये स्वयं ही देशको छोडकर चला गया, पृथ्वीराजको राणाजीने निकाला और छोटा जयमल एक अन्याय कार्यके करनेसे इस लोकको छोड गया । राजपूतोंके घरेलू झगडोंका विचार करनेसे ज्ञात होता है कि यह लोग बडे कठोर होते हैं, इस चरित्रका अनुशीलन करनेसे स्पष्ट ज्ञात हो जायगा कि जब देशवैरी इनकी तलवार खानेको नहीं होता तो यह लोग मूर्खतासे लड झगड कर एक दूसरेका नाश करते हैं सांगा और पृथ्वीराज सगे भाई थे उनकी माता झाला वंशकी थी जयमल्ल उनका सौतेला भाई था देहलीके चौहान राजा पृथिवीराजका नाम भी पाठकोंको स्मरण होगा, इस चौहान पृथिवीराजसे इस शिशोदिया पृथिवीराजकी अनेक बातें मिलती थीं, इस पवित्र नामके अपूर्व माहात्म्यका विचार करनेसे बडा आनन्द होता है, इन दोनोंमें ऐसी समानता थी कि यदि हम उनको एक दूसरेकी आकृति कहैं तो अनुचित न होगा, शिशोदिया वीर पृथ्वीराजकी वीरतापर मेवाडके लोग इतने मुग्ध हैं कि मेवाडकी इस वर्तमान गिरी हुई अवस्थामें भी उसकी वीरताका स्मरण करके वे अपना सब कष्ट भूल जाते, और चिन्तासे शांति पाते हैं कभी २ अहेरसे लौटनेके पीछे जब शिशोदीय लोग एक संग भोजन करने बैठते हैं, या ग्रीष्म कालमें संध्या समय ठंढी हवा सेवन करनेके निमित्त गलीचा बिछाकर किसी उच्चस्थानमें एकत्र बैठते, शर्बत पीते तथा पान चबाते हुए भाटोंके मुखसे वीरवर पृथिवीराजकी वीरताका वर्णन सुनते हैं, तब उनके आनन्दका ठिकाना नहीं रहता, सांगा और पृथिवीराजमें बहुत अन्तर था, यद्यपि दोनों समान वीर और साहसी थे, परन्तु सांगा विचारकर लडाईमें हाथ डालते, और पृथ्वीराज प्रतिक्षण युद्धके लिये तत्पर रहते थे, क्षणभर भी अपनी तलवार म्यानमें रखना उनको पसन्द न था, तलवारके बलसे अपनी भविष्य उन्नतिके विषयमें वे कहा करते "कि ईश्वरने मेवाड राज्यका शासन करनेके निमित्त मुझे उत्पन्न किया है" सांगा उनके बडे भाई थे, पिताके प्रथम पुत्र होनेके कारण राज्यका अधिकार पाने योग्य वही थे, परन्तु पृथ्वीराजके वे इस स्वत्वका भी भोग न करसके, अन्तमें इस बातपर राणा रायमल्लके इन

दोनों पुत्रोंमें झगड़ा होने लगा, कि चित्तौरका अधिकारी कौन होगा, प्रत्येक अपना २ प्रयोजन सिद्ध करनेके निमित्त उद्योग करने लगा ।

एक दिन दोनों भाई अपने चाचा सूरजमलके पास बैठे उत्तराधिकारके विषयमें बहुतसे तर्क कर रहे थे कि, इस बीचमें सांगाजीने धीरे २ कहा । " न्यायके अनुसार तो मेवाडके दशहजार नगरोंका मैं ही उत्तराधिकारी हूँ । परन्तु तुम लोग मेरे विरोधी होते हो, अब इस झगडेका निबटारा सहजसे नहीं होगा, हाँ यदि तुम लोग नाहरामुगरा ❀ की चारणी देवीकी बातके ऊपर विश्वास करते हो तो अभी इस झगडेका निबटारा हो सकता है । जो मरजी हो तो उनके पास चलो । इस बातको सबने मान लिया, और चारिणी देवीके भवनको गये । उस निर्जन पहाडकी कन्दरामें पहुँच कर पृथ्वीराज और जयमल एक चौकीपर बैठ गये, सामने बिछे हुए एक व्याघ्रचर्मपर साँगाजी बैठे और उनके चचा सूरजमल भी उस व्याघ्रके चर्मासनपर अपना एक घुटना टेक कर बैठ गये । जैसे ही पृथ्वीराजने उस देवीकी सेविका उस सन्यासिनीसे अपनी अभिलाषा कही, वैसे ही उसने उंगली उठाकर व्याघ्रचर्मकी ओर इशारा किया । इससे समझ गया कि सांगाजी ही राजा होंगे, और सूरजमल भी राजके कुछेक अंशको भोग करेंगे । इस बातको जानकर पृथ्वीराज तलवार निकालकर साँगाजीका शिर काटनेको चला । सूरजमलने तत्काल बीचमें पडकर पृथ्वीराजके आघातको निष्फल किया ।

इस तरफ चारणी देवीकी सेविका अपनी रक्षा करनेके लिये भागी । तब पृथ्वीराजने सूरजमलको ललकारा । उस मंदिरके भीतर दोनोंका घोर युद्ध होने लगा । सहजसे यह युद्ध शांत नहीं हुआ । दोनों ही अगणित घावोंके लगनेसे निर्बल हो गये घावोंसे रुधिर निकलने लगा । सांगाजीके एक बाणका घाव लगा और पांच घाव तलवारके लगे. वे तो तत्काल वहांसे भागे; बाणके लगनेसे उनका एक नेत्र जाता रहा । उस विषम द्वंद्वस्थानसे भागकर वे चतुर्भुजा देवीके मंदिरकी ओर चले और शिवान्ति नगरके बीच २ में जाते २ बीदानामक एक राजपूतका सहारा लिया । इस राजपूतका जन्म उदावत् वंशमें हुआ था । बीदा विदेशको जानेके लिये कुल तइयारी करके घोडेपर चढना ही चाहता था कि इतनेमें ही रुधिरसे व्याप्त घायल हुए सांगाजीने आकर उससे सहायता माँगी । उदार राजपूतने तुरन्त ही उनको घोडेसे उतारा, इसी अवसरमें जयमल घोडा दौड़ता हुआ वहां पहुंच गया और सांगापर वार किया । शरणागतकी रक्षा करनेके लिये बीदा जयमलके सामने हुआ और वहींपर अपने प्राण दे दिये । इस अवसरमें सांगाजो वहांसे चल दिये ।

जब घाव भर गये तो तेजस्वी पृथ्वीराज अपने प्रचंडशत्रु कुमार सांगाजीकी तलाश करनेको चला। सांगाजीको यह समाचार ज्ञात होगया और वे अपना प्राण बचानेको गुप्त स्थानोंमें घूमने लगे। इस अज्ञातवासके समय उनको अत्यन्त कष्ट हुआ। जो विशाल मेवाडराज्यके युवराज हैं, आज वे अपने प्राणोंकी रक्षा करनेके लिये अनाथके समान दीनभावसे वन २ में भ्रमण करने लगे। विवश होनेसे जब कोई उपाय न सूझा तो बकरी चरानेवाले गडरियोंके पास गये; और बकरियां चराने लगे। बकरियें चरानी नहीं आती थीं इसलिये कभी वे गडरिये अप्रसन्न होकर निकाल देते थे, जब बहुतसी विनय करते तो फिर घरमें रख लेते थे; गडरियोंने इनको बकरियें चरानेमें चतुर न देखकर रोटी बनानेमें नियुक्त किया, यह रोटी बनानेमें भी अनजान थे। इस कारण गडरिये लोग सदा यह कहकर इनका तिरस्कार किया करते थे कि "खाना तो जानता है, और पकाना कैसे नहीं जानता।" इस प्रकार दीन दशासे कुमार अपने दिन काटते थे। एक समय कई एक राजपूत उधरको आये, उन्होंने कुछ अस्त्र शस्त्र और एक घोड़ा कुमारको दिया व इनको साथ लेकर श्रीनगर* के राव करमचंदनामक एक सरदारके पास गये। प्रमार-वंशका यह सरदार डाके डालकर अपना निर्वाह करता था। सांगाजी भी इस ही दलमें मिलकर डांका डालनेको विवश किये गये। सारे दिन लूट मार करके एक दिन कुमार सांगाजी विश्राम करनेके लिये बरगद (बड़) वृक्षकी छायामें घोड़ेसे उतर पड़े। तलवार शिरहाने रख लेट गये। शीघ्र ही नींद आ गई। उस वृक्षसे थोड़ी ही दूरपर जयसिंह बालिया और जैमूनामक विश्वासी सेवक उनके लिये भोजन बनाने लगे; तीनों घोडे भी निकट ही चरनेको छोड़ दिये गये। उस विशाल बट वृक्षके घने पत्रजालको फोडकर सूर्यभगवानकी एक तीक्ष्ण किरण सांगाजीके मुखमंडलपर गिर कर सहज २ कांप रही थी। धूपकी उस तेजीको अनुभव करके एक बडा सर्प सोते हुए सांगाके मस्तकपर अपने विशाल फनको धीरे २ उठा रहा था। यह देखकर देवी नामक × एक मंगलकारी पक्षी उस सर्पके मस्तकपर ऊंचे शब्दसे बोलने लगा। मारू नामके एक शकुन जाननेवाले अजपालकने इस वृत्तान्तको देखकर सब बात समझ ली, और जैसे ही सांगाजी सोकर उठे वैसे ही इसने उनको राजसन्मान दिया। परन्तु चतुर सांगाजीने झूंठी अप्रसन्नताके साथ उसके आदर मानको अस्वीकार किया। मारूने करमचंदसे यह समस्त वृत्तान्त कहा। सरदार करमचंद सब बातोंको छिपाए रहा और सांगाजीके साथ अपनी बेटीका विवाह कर दिया। जबतक साँगाजीने अपने सिंहासनको नहीं पाया, तबतक करमचन्दने उनको अपने स्थानपर ही रक्खा।

---

* यह श्रीनगर अजमेरके पास वसा हुआ है।

× यह पक्षी खंजनके समान होता है।

कुछ दिनोंके पीछे इस समाचारको राणा रायमलने सुना । यह जान गये थे कि पृथ्वीराज अपने उग्र स्वभावसे मेरे उत्तराधिकारीका ही संहार करना चाहता था। पृथ्वीराजके ऊपर उन्होंने अत्यन्त क्रोध किया अपने सामने बुलवाकर बहुत फटकारा और कहा । "तुम अभी मेरे राज्यसे निकल जाओ। तुम सरलतासे अपना निर्वाह करलोगे कारण कि तुम लडाई झगडेको अच्छा समझते हो,तुममें साहस और ऊधम बहुत है ।" पिताकी आज्ञाको पृथ्वीराजने धीर धारण करके सुना, पलभरके लिये भी उसको घबराहट या चंचलता उत्पन्न न हुई । केवल पाँच सवारोंको साथ लेकर × पिताके राजको छोड वालियोह नामक नगरकी ओर चला, यह नगर गोद्वार देशके अन्तर्गत था।

एक तो राणा कुम्भकी अकाल मृत्युसे मेवाडकी शान्ति नष्ट हो गई थी, तिसपर इन घरेलू झगडोंसे राज्यमें खलबली पड गई । वास्तवमें मेवाडका एक २ परगना—विशेष करके गोद्वारदेश तो सम्पूर्णभावसे अरक्षणीय हो गया । आरावलीके निकट ही गोद्वार बसा हुआ है । अत एव उस पर्वतके रहनेवाले असभ्य मीनगण उस देशके जनस्थानमें आकर देशको लूटने लगे । गोद्वारकी राजधानी नादौल नगरमें जो राजकीय सेना थी, उसको मीनोंने कुछ न समझा । और वह सेना भी इनकी प्रचंड. गतिको नहीं रोक सकी । पृथ्वीराजने यह समाचार सुनकर बालियोहकी ओरको जानेके समय कुछ देरतक नादौल नगरमें विश्राम करनेकी इच्छा की और प्रयोजनीय द्रव्यादिको मोल लेनेके लिये वहांके ओझा नामक व्यापारीके पास अपनी अंगूठीको गिरवी रखनेके लिये गये । भगवानकी महिमाका पार कोई भी नहीं पा सकता। इस ही ओझाने कुमारके हाथ यह अंगूठी बेची थी उसने तत्काल पृथ्वीराजको पहिचान लिया और उनके गुप्त वेश धारण करनेके कारणको भलीभांतिसे जानकर प्रतिज्ञा की कि मैं भलीभांतिसे आपकी सहायता करूंगा । वीर पृथ्वीराजने इस व्यौपारीको भी अपने दलमें मिला लिया। और उसकी सलाहसे मीनलोगोंको दमन करके गोद्वार राज्यमें शान्ति स्थापन करनेकी चेष्टा करने लगे । पृथ्वीराज वीर साहसी और तेजस्वी थे । पिताने इन गुणोंके कारण हो उनको राज्यसे निकाल दिया था,इससे क्या उनका पुरुषार्थ नष्ट हो जायगा । उनको निश्चय था कि राजकुलमें जन्म लेनेपर भी अपने पुरुषार्थ सहायतासे हम राजमुकुटको धारण कर सकते हैं । आज पिताके द्वारा त्यागे जानेपर भी अपने पुरुषार्थके बलसे ही बलवान होकर कुछ आदमी इकट्ठे कर लिये; उन्होंने प्रतिज्ञा की कि किसीसे सहायता न भी मिलेगी तथापि हम अपने मूलमंत्रको सिद्ध करेंगे । इस प्रकारकी प्रतिज्ञा करके दुराचारी मीनलोगोंके कराल ग्राससे गोद्वार राज्यके उद्धार करनेका उचित अवसर देखने

× इन पांच सवारोंके यह नाम थे,--यथा, यशसिंहल, संगम, अभय, जहूनु, पांचवां सवार भादैल राठौर गोत्रमें उत्पन्न हुआ था, इतिहासमें इसका नाम दिखाई नहीं देता ।

लगे। मीनलोग पहलेसे ही इन पहाडियोंपर रहते आते थे। उनके ही अधिकारमें यह समस्त परगने थे, समयानुसार राजपूतोंने चढाई करके इन समस्त परगनोंपर अपना अधिकार किया।

जिस समय कुमार पृथ्वीराज नादौलनगरमें पहुँचे, उस समय एक "रावत" उपाधिधारी मीनभूपाल नदालयनामक नगरमें अपनी राजधानीको स्थापन करके वहाँका राज करता था। वह इतना प्रभावशाली हो गया था कि बहुतसे राजपूत भी उसकी सेवा करते थे। ओझाके परामर्शके अनुसार पृथ्वीराजने दल-सहित उस मीन राजाके यहां नौकरी करना स्वीकार किया। राजपूत होकर भी उन्होंने अपनी जातिको छिपाया और उस असभ्य राजाकी सेवा करने लगे। वह गोद्वार राज्यके उद्धार करनेका शुभ अवसर टटोलते रहे, सौभाग्य वशसे यह अवसर आप ही आप आ पहुँचा। भील लोगोंमें अहेरिया अर्थात् शबरोत्सव नामक एक बडा उत्सव हुआ करता है। इस उत्सवके आनन्दमें नौकर चाकरलोगोंको कई दिनकी छुट्टी हो जाती है, पृथ्वीराजको भी कुछ दिनकी छुट्टी मिली। इस अवसरपर कुमा-रने अपनी अभिलाषाके सिद्ध करनेका विचार किया। नगरके बाहर आकर उन्होंने अपने दलके राजपूतोंको बुलाया और उनको इस अवसरपर मीनराज्यपर आक्रमण करनेकी आज्ञा दी। आज्ञा पाते ही वे राजपूत मीनोंके ऊपर इस प्रकार टूट पडे कि जैसे क्रोधित सिंह मृगझुंडपर टूट पडता है। नगरमें हाहाकार पड़ गया महाबलवान राजपूतोंकी मार खाकर भयसे मीनगण इधर उधर भागने लगे। कुमार पृथ्वीराज नगरके बाहिर खड़े हुए गुप्तभावसे इस सं ामको देखते रहे। धीरे २ महाभयंकर संग्राम होने लगा। मीनोंका राजा डरसे घोडेपर च कर नगर छोड भागा। भागते ही कुमार पृथ्वीराजने पीछा करके उसको पकड लिय,। पकडकर एक जंगली पेड़से बांधा, और अपने भालेसे उसको जीता हुआ ही छेद डाला, मीनराजको उसके अ-त्याचारका भलीभाँतिसे फल मिल गया। इसके उपरान्त कुमार पृथ्वीराजने नदालय और उसके साथके नगर गाँव और छोटी २ बस्तियोंमें आग लगाकर पशुके समान, मीनोंका संहार किया। मीनगण अग्निमें भस्म होनेके डरसे व्याकुल हो चारों ओर भा-गने लगे. परन्तु किसी प्रकारसे उनके प्राण न बचे, कुमार पृथ्वीराज और इनके बाँके वीरोंने प्रायः सबका ही संहार कर डाला। इस प्रकार केवल किलेके सिवाय और समस्त देश पृथ्वीराजके अधिकारमें आ गया; इस बचे हुए किलेका नाम देसौड़ी था, उस समय इसमें चौहान माद्रैचा लोग राज करते थे।

मीनलोगोंके हाथसे गोद्वार राज्यका उद्धार करक पृथ्वीराजने वहाँका राज्य ओझा और सदानामक एक सोलंकी राजपूतको दे दिया। सदा सोलंकीने इस समय सोदग-ढको अपने अधिकारमें कर लिया था। पट्टननगरके ध्वंस होनेके पीछे उसके किसी पूर्व

पुरुबने इन पर्वतोंमें आश्रय लिया था । सद्दाका विवाह माद्रैचा चौहानकी बेटीसे हुआ था, कि जिसका वर्णन हम पहिले कर आये हैं । इस कारणसे उसने श्वशुरका पक्ष छोडकर पृथ्वीराजकी ओर न आना चाहा; परन्तु जब विजयी राजकुमारने उसको देसौडीनगर और उसके परगने * सद्दाके लिये गुजारा करनेके लिये दे दिये । तब उसे विवश हो इनके पक्षमें होना पडा, जब यह समाचार राणा रायमलको शीघ्रतासे पहुंचा तब उन्होंने प्रसन्न होकर पृथ्वीराजको अपने राज्यमें बुला लिया ।

कुमार पृथ्वीराज लौट आये, उस काल जयमलके मारे जानेसे उनका मार्ग अधिकाईसे साफ हो गया, आवश्यकता समझकर यहांपर जयमलकी मृत्युका वृत्तान्त लिखा जाता है । प्राचीन तक्षशीला अब × तोडातंकके नामसे पुकारी जाती है, उस काल वह तोडातक राय शूरथाननामक एक राजपूतके अधिकारमें था । जिन चौलुक्य राजाओंने बहुत दिनोंतक अनहलवाडापट्टनमें राज्य किया था, राव शूरथान इनके ही वंशमें उत्पन्न हुआ था । सन् ईस्वीकी तेरहवीं शताब्दीमें यवनवीर अलाउद्दीनके प्रचण्ड बाहुलके प्रभावसे शूरथानके पितृपुरुषगण पट्टनसे निकाले गये और उन्होंने मध्यदेशमें आनकर आश्रय लिया । वहांपर बस कर इन चौलुक्य वंशवालोंने प्राचीन तक्षक कुलका उस तोडातंकपर अपना अधिकार किया । परन्तु उनके वंशवाले बहुत दिनोंतक इस नगरका राज्य नहीं भोग सके इसके उपरान्त लोल अफगानने शूरथान; रावको वहांसे निकाल दिया । और शूरथान राव विवश होकर आरावलीके नीचे बसे हुए वेदनौर नगरमें रहता हुआ सुख दुःखसे अपने दिन बिताता रहा । इसके ताराबाईनामक एक परम सुन्दरी कन्या उत्पन्न हुई थी, इसको देखकर ही वह प्राणधारण कर रहा था । कभी २ जब वह मानसिक कष्टोंसे अत्यन्त दुःख पाता और शोकाकुल होता, तब हृदयानन्ददायिनी कन्याके मुखकमलको देखकर सब दुःख भूल जाता था यदि ताराबाई को उसका प्राण या उसकी आशा कहा जाय तो भी कुछ अनुचित न होगा । ताराका सारा जीवन दुःखमें बीता था । वह राजकुमारी थी, और बलवान पवित्र सोलंकी कुलकी कमालिनी थी; परन्तु भाग्य दोषसे आज पहिले गौरवका चिह्नतक भी बाकी न रहा, बालक ताराको गोदमें लेकर शूरथान अपने बडे बूढोंकी कीर्ति उसको सुनाया करता था, वह भी कान लगाकर सुना करती थी । वह उपाख्यान—बालकपनकी वह मनोहर कहानियें किसी भांति

---

* इस भूमिवृत्तिके दानपत्रमें पृथ्वीराजने अपने वंशधरोंके प्रति शपथ दिलाकर लिखा था कि वे उसे न लौटा लें, उनके वंशधरोंने इस आज्ञाका पालन किया ।

× प्राचीन तक्षकलोग थवईके काममें बहुत चतुर थे इसका पता उनकी स्थापित तक्षशीला नगरीके राजमहलसे लगता है यद्यपि यह नगरी अब नष्ट होगई है तो भी बचे बचाये चिह्नोंसे पूर्व गौरवका पूर्ण परिचय मिलता है ।

उसके हृदयसे लोप नहीं हुई । बडी होनेपर जब कुछ २ समझने लगी तो अपने पूर्व पुरुषोंके साथ अपनी अवस्थाका मिलान किया करती । आज कलकी अवस्थासे तारा तृप्त न होती । सुकुमार अवस्थासे ही उसके हृदयमें चिन्ता होने लगी । कभी इस कारणसे वह अधीर भी हो जाती थी । सैकडों बार अपने भाग्यको धिक्कार दिया करती । अल्प वयसे ही स्त्रियोंके आचार विचार और पहिरने ओढनेके आडम्बरसे उसको घृणा हो गई, घोडेपर सवार होना और धनुर्विद्याका अभ्यास उसको भली भांतिसे हो गया । यह दोनों विद्या उसको इतनी सिद्ध हो गई थीं कि शीघ्रतासे अश्वको चलाती हुई निशानेपर बाण मार देती थी । शूरथानने जितनी बार तोडातंकके उद्धार करनेको संग्राम किया । तारा प्रचंड काठियावाडी घोडेपर चढकर उन सब लडाईयोंमें पिताके साथ गई थी । उसके अपूर्व रणविक्रमको देख बडे २ वीरोंने भी माथा नीचा कर लिया था । बहुतसे मुसलमानवीर उसके अमोघ बाणका निशाना हो गये थे । धीरे २ समस्त राजस्थानमें इस युवतीकी वीरताका यश फैल गया बहुतसे राजपूतोंको इस रत्नके प्राप्त करनेकी आशा हुई । परन्तु शूरथानकी प्रचंड प्रतिज्ञाको सुनकर सबकी आशा टूट गई । राव शूरथानने प्रतिज्ञा की थी "कि जो कोई राजपूत यवनोंके हाथसे तोडातंकका उद्धार कर देगा; उसके ही साथ ताराका विवाह कर दिया जायगा ।" इसकोसुनकर कुमार जयमल वेदनौरमें आया और ताराके साथ विवाह करनेकी इच्छा प्रगट की । परन्तु वीरनारी ताराने दम्भपूर्वक कहा कि "पहले तोडातंकको उद्धार कीजिये फिर मेरे साथ विवाह होगा" जयमलने इस बातको स्वीकार किया; परन्तु वह अपने कुकर्मसे इस सुन्दरी नारीको प्राप्त न कर सका! ताराके रूपसे वह ऐसा मोहित हो गया था कि विना अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण किये वह मूर्खताके कारण एक कुकर्मके करनेकी चेष्टा करने लगा; इस कारण शूरथानने क्रोधित होकर जयमलको मार डाला । भट्टलोगोंने यहांपर वर्णन किया है कि-"जयमलके भाग्याकाशके लिये तारा अनुकूल तारा न हुई ।"

जयमलके मारे जानेके समय सांगाजी छिपे हुए रहते थे । पृथ्वीराज भी देशसे निकाले हुए इधर उधर फिरते थे, जयमलके घरपर रहनेसे सबने यही निश्चय कर लिया था कि यही मेवाडका उत्तराधिकारी होगा, परन्तु अपने अभाग्यसे वह शूरथानके द्वारा मारा गया । रायमलको इससे अवश्य ही क्रोध होना उचित था । सभासद्गणोंने जयमलके मारे जानेका वृत्तान्त राणाजीको सुनाकर कहा कि शूरथानसे पुत्रका बदला लीजिये, परन्तु रायमलजीने उदारभावसे उत्तर दिया कि "जिस मूर्खने कुकर्मके करनेसे एक प्रतिष्ठित, सज्जन और विशेष करके विपतमें पडे उस राजपूतका अपमान करना चाहा था, उसको उसकी करनीका फल मिल-

गया ।" उदार राणा रायमल इतना कह कर ही मौन न हुए वरन उन्होंने उस सोलं-की सरदारको बेदनौरनामक जनपद वृत्तिमें दे दिया ।

जयमलका संहार होनेके समय कुमार पृथ्वीराज भी देश निकालेका दण्ड भोग-रहे थे परन्तु अधिक दिनतक उनको यह दण्ड न भोगना पडा । मीन लोगोंका दमन करनेसे राणा रणमलजी पृथ्वीराजसे प्रसन्न होगये और उन्हे देशमें बुला लिया । कुमार पृथ्वीराजकी वीरताका यश देशमें फैल गया था परम सुन्दरी ताराने भी कुमारका यश सुनकर उन्हींको अपना प्राण सौंप दिया था । कुमारका देशमें आना सुनकर ताराको आनन्दकी सीमा न रही । इस ओर पृथ्वीराजने भी देशमें आकर ताराके रूपगुणकी प्रशंसा सुना । और उसके पानेकी आशा बलवती हुई । उसी आशाका भरोसा रखके वह अपनी प्राणप्यारीके देखनेको बेदनौरनगरकी ओर चले । राव शूरथानने उनका बडा आदर मान किया; चित्तहारिणी तारा शीघ्र ही कुमारके सामने आई; परस्पर दोनोंने एक दूसरेको मन भरके देख लिया । दोनों-के हृदयमें अनेक प्रकारकी आशा और चिन्ता उदय हुई । पृथ्वीराज शूरथानके आगे अपनी आशाका वृत्तान्त कह कर बोलेः—" आप कुछ चिन्ता न करैं मैं शीघ्र ही तोड़ा-तंकसे मुसलमानोंको निकाल दूंगा आप देख लेंगे कि एक सप्ताहके पीछे वहांपर मुसलमानोंका नाम भी बाकी न रहेगा । " बिदाके समय कुमार ताराके देखने-को गये और प्रेमभरी मनोहर वाणीसे कहा "हे सुन्दरि ! तुम्हारे प्राप्त करनेकी आशासे ही मैं इस कठोर कार्यके करनेको तइयार हुआ हूं, देखियो ! उस आशा-से कहीं निराश न करना । " ताराने नम्रतासे उत्तर दिया " हे वीरवर ! यह हृदय आपहीका है, अनेक कष्ट और विपत्ति सहकर यह अबतक आपहीकी आशा-से अटूट रहा है; अब यही निवेदन है कि आपने जिस कठोर व्रतका आरम्भ किया है उसका उद्यापन भलीभांतिसे करनेकी चेष्टा कीजिये । दुराचारी यवनोंका संहार करके यथार्थ ही राजपूत वीरका परिचय दीजिये । " पृथ्वीराज बिदा होकर अपनी इष्ट सिद्धिका अवसर देखने लगे । भगवानकी कृपासे शीघ्र ही वह शुभ समय आ गया मुसलमानोंका मुहर्रम त्योहार आनेपर ही था उस समय पृथ्वीराज पांच सौ चुने हुए सवारोंको साथ लेकर तोडातंककी ओर चले, वीरनारी तारा भी उनके साथ सजकर चली । आज रणचण्डी पुरुषका वेष धारण करके यवनोंका संहार करनेके लिये रणमें विराजमान होगी । आज कौन लोग यवन लोगोंकी रक्षा करेगा ?

जब राजपूतलोग तोडातंकमें पहुँचे उस समय यवनलोग ताजिया महासमारोहसे दुर्गके बाहर निकाल रहे थे । पृथ्वीराज भी अपने दलके साथ उनमें मिल गए, पहिले तो उनको देखकर मुसलमानोंने कुछ विशेष सन्देह न किया इसकारण कार्य सिद्ध करनेका भला अवसर प्राप्त हुआ । क्रमसे ताजिया बादशाहके महलके निकट पहुँचा, उस समय

बरामदेके ऊपर खडा हुआ यवनराज वस्त्राभूषण पहिन रहा था; अनजाने सवारोंको देखकर वह मनमें भांति २ की चिन्ता करने लगा फिर पीछे घोर संदेह हुआ, वह इन सवारोंका नाम धाम पूछनेको ही था कि इतनेमें वीरनारी ताराने ताककर उसके एक तीर मारा साथमें पृथ्वीराजने भी अपने हाथका भयंकर शूल चलाकर उस अभागे अफगानको पृथ्वीपर लुटा दिया ! अफगानके गिरते ही यवनोंमें हाहाकार होने लगा । सब ही डरके मारे इधर उधर भागने लगे, पृथ्वीराजने सेनाके साथ यवनोंका संहार करना आरम्भ किया । इस प्रकार मार धाड करते हुए नगरके तोरण द्वारपर पहुँचे, परन्तु निर्विघ्नतासे उसमें प्रवेश न कर सके । एक प्रचण्ड मतवाला हाथी शूँडको हिलाता हुआ उस द्वारके मार्गको रोक रहा था ताराने एक विशाल फरसा लेकर उस हाथीकी शूंडको काट डाला । दारुण पीडा होनेके कारण वह हाथी चिघाडता हुआ दूर भाग गया । उस काल यवनलोग भी प्राणोंका मायामोह छोड घरबारसे नाता तोड पृथ्वीराजके ऊपर आ टूटे । शीघ्र ही दोनों दलोंमें घोर संग्राम होने लगा । कुमार पृथ्वीराज, क्रोधित हुए केशरीकी नाई यवनलोगोंको दलित करने लगे, मुसलमानोंके पाँव उखड गये; और वह मोरचे छोडकर इधर उधर भागे, परन्तु भागकर कहां जांयगे ? संसारमें इन अभागोंको किस स्थानमें सहारा मिल सकता है ? पृथ्वीराजके प्रचंड क्रोधसे कौन बच सकता है । इस प्रकार यवनलोग जिस ओरको भागते थे, पृथ्वीराज और उनके वीरगण उस ही ओर उनको घेरकर मार डालते थे। इस प्रकारसे तोडातंकका उद्धार करके वीरवर पृथ्वीराजने अपनी प्रतिज्ञाको पूरा किया। इस कार्यके हो जानेपर शुभ लग्नमें ताराके साथ उनका विवाह हो गया ।

जिस झगडेकी प्रबल तरंगमें पडकर कुमार पृथ्वीराज, सांगा और जयमल तीन तेरह हो गये थे इसके पैदा करनेवाले चतुर सूरजमल ही थे । जिस दिन चारिणी देवीकी परिचारिकाके कहनेसे उन्हें यह मालूम हुआ कि हमें भी चित्तौरका राज्य मिल जाना संभव है, उस दिनसे एक नई आशाने उनके हृदयमें जड जमाई । वे पलभरको भी उस आशासे अलग नहीं रहते थे, वह जहांपर भी जाते, वह आशा भी वहीं जाकर मधुर वचनसे उनको उत्साहित करती थी । उस आशाने यहाँतक उत्साह दिलाया कि आखिरकार वे अपनी मनोकामना सिद्ध करनेके लिये विपत्तियें झेलनेको भी तइयार हो गये । परन्तु कुमार पृथ्वीराजके देशमें लौट आनेसे उनके मार्गमें कांटेका खटका हो गया। उस कांटेके दूर करनेका कोई उपाय न दिखाई दिया तब सूरजमल, सारंगदेवनामक एक राजपूतके साथ मिलकर मालवेके बादशाह मुजफ्फरके पास गये उसने मददके लिये अपनी फौज भेजी, उस फौजकी मदद पाकर सूरजमलने मेवाडके दक्खिनी परगनोंपर चढाई की और थोडे ही समयमें सादी, वाटुरो और नाई तथा नीमचके बीचमें स्थित एक बडे परगनेको अपने अधिकारमें करके चित्तौरपर अधिकार करनेकी चेष्टा करने लगे । अब तो राणा रायमलसे न देखा गया, वे पलभरकी देर भी न कर सके तथा अपनी

थोडोसी सेनाको ही साथ लिये हुए राजद्रोहीको दंड देनेके अर्थ संग्रामभूमिमें गये। चित्तौरके निकट बहती हुई गंभीरी नदीके किनारेपर दोनों सेना आमने सामने डटकर खडी हो गई। युद्ध होने लगा, राणा स्वयं खड्ग हाथमें लेकर साधारण सिपाहीके समान प्राणपणसे युद्ध करने लगे बराबर तलवार चलाये जानेसे उनके बाईस घाव लगे। सब शरीर घावोंसे भर गया बराबर बाईस घावोंसे रुधिर निकल रहा है; तथापि विश्राम नहीं लेते; क्रमसे अंग प्रत्यंग पथराने लगे, मूर्च्छा आनेके पूर्व लक्षण प्रकाशित हुए। उस ही समयमें वीरवर पृथ्वीराज एक हजार घुडसवारोंके साथ आकर पिताके साथ मिल गये, और राणाजीको युद्धसे अलग भेज करके कुमार भीम विक्रमसे शत्रुदलको मथित करने लगे; और उस समय सूरजमलको लडनेके लिये खोजने लगे, युद्धनिपुण सूरजमल उनके सामने आये पृथ्वीराजने बडी शीघ्रतासे उनपर आक्रमण किया दोनोंमें घोर द्वंद्व युद्ध होने लगा। सूरजमलकी देहमें अगणित घाव लगे, परन्तु पिछाडीको पाँव नहीं रक्खा। बहुत कालतक संग्राम होता रहा, परन्तु किसी ओरकी सेनाने पीठ नहीं दिखाई। इसके उपरान्त फिर संग्राम बंद हो गया, और सब ही अपने २ डेरोंमें चले गये।

डेरोंमें लौटनेपर रणकी थकावटको दूर करके कुमार पृथ्वीराज, अपने चचा सूरजमलसे मिलनेके लिये उनके तम्बूमें गये इस समय परस्पर जो कुछ बात चीत हुई थी, उसके * पढनेसे राजपूत जातिके अनन्त माहात्म्यका प्रकाशित परिचय पाया जाता है संसारमें और कोई ऐसी जाति नहीं है कि जिसके चरित्र घने भावसे मिले रहते हैं। जिस दिन यह माहात्म्य संसारसे लोप हो जायगा। उसी दिन राजपूतोंका नाम भी पृथ्वीसे लोप होगा। हाय ! उस दिनकी बात याद करनेसे अब भी हृदय विदीर्ण होता है। अस्तु पृथ्वीराज चचाके डेरेपर पहुँचकर देखा कि वे एक साधारण विस्तरेपर लेटे हुए हैं, देहके घावोंसे रुधिर निकल रहा है। एक नाई घावोंको धोधोकर सी रहा है और पट्टी बांधता जाता है। जो भतीजा उनका प्रचण्ड विरोधी है, जो उनका प्रचण्ड शत्रु है, जिसके द्वारा वे इस दुर्दशाको पहुंचे हैं, जिसका संहार करनेके लिये संग्रामभूमिमें प्राणपणसे परिश्रम किया है आज उसके ही सामनेसे आता हुआ देखकर वीर सूरजमल विस्तरेसे उठ खडे हुए और भली भांतिसे आदर मान करके उनको ग्रहण किया। दोनोंके आकार और चेष्टासे उस समय ऐसा ज्ञात हुआ कि मानो इनके बीचमें कभी कोई झगडा फसाद ही नहीं हुआ था। मानो सूरजमलको कोई पीडा ही नहीं है। विस्तरेपरसे उठनेके समय झटका लगनेके कारण उनके घाव फट गये

* सूरजमलके उत्तरकालमें झाला सरदारको सादरीका राज्य मिला था। उसके पुस्तकालयमें एक लिखा हुआ खर्रा मिला था, उसमें यह वर्णन विस्तारसे है।

और उनसे रुधिर निकलने लगा । यह देखकर पृथ्वीराजके हृदयमें चोट पहुँची। परन्तु सूरजमलके मुखपर कष्टका कोई चिह्न दिखाई नहीं दिया । वरन अपने भतीजेको आदर सहित आसनपर बिठलाया । फिर दोनोंकी वार्ता आरम्भ हुई।

पृथ्वीराजने कहा,-" काकाजी ! तुम्हारे घाव कैसे हैं ?"

सूरजमल।-"बेटा तुमको देखकर अब मेरी समस्त पीडा जाती रही ?" पृथ्वीराज।- " काकाजी ! मैं अभी दीवान * जीसे नहीं मिला, आपको देखनेकी शीघ्रतासे यहां चला आया, परन्तु मुझे इस समय क्षुधा बहुत व्याकुल कर रही है, आपके पास क्या कुछ भोजनकी सामग्री है ?"

सूरजमलने अत्यन्त आनन्दित होकर शीघ्र ही भोजन मँगा दिया। दोनोंने एक साथ भोजन किया; पृथ्वीराजको कुछ भी सन्देह न हुआ, उन्होंने विदाके समय + पान खानेमें कुछ भी इधर उधर न किया; चचासे विदा लेनेके समय पृथ्वीराजने नम्रतासे कहा "काकाजी ! कल प्रभातके समय मेरे और आपके युद्धसे ही संग्रामकी समाप्ति हो जाय ?"

सूरजमल। " बहुत अच्छा, बेटा ! बहुत सवेरे चले आना।"

रात्रि बीत जानेपर प्रभात हुआ। ऊषाकी मनोहर ललाईके छिपनेसे पहिले ही पृथ्वीराज और सूरजमल प्रचण्ड युद्ध करनेके लिये तइयार होकर आ गये । उस काल न चाचाने भतीजेका मुँह देखा, न भतीजेने चचापर कुछ दया दिखाई । माया, ममता, प्रीति, दया सबको पानी देकर अपना २ मनोरथ सिद्ध करनेको दोनों तत्पर हो गये । उस दिन सारंगदेवने सबसे अधिक वीरता दिखाई । तलवारके प्रचण्ड प्रहारसे वह पृथ्वीराजकी सेनाको व्याकुल करने लगा; सारंगदेवके ३५ घाव लगे, उस भयानक संग्राममें दोनों ओरकी बहुतसी सेना खेत रही, यहांतक कि प्रत्येक राजपूतकुलके वीरगण समरभूमिमें शयन कर गये। डेढ घंटेके बीचमें ही तलवार, शैल, शूल और भाले आदिके हथियारोंके ढेरके ढेर दिखाई देने लगे । यद्यपि विद्रोहियोंकी बहादुरी भी कुछ कम नहीं थी, परन्तु वह पृथ्वीराजकी सिरोहीके आगे कबतक ठहर सकते थे। अन्तमें लडाईसे हटकर सादरीनगरकी ओर को भागे, विजय गौरवके हेममुकुटको शिरपर धारण करके कुमार पृथ्वीराज नगरमें लौट आये। इस संग्राममें कुमारके सात घाव लगे थे। पराजित होकर भी विद्रोही सूरजमल अपनी आशाको न छोड सका । जिस आशाके मोहिनी मंत्रसे मोहित होकर उसने कठोर कष्ट और विपत्तियोंको सरलतासे सह लिया, जिसकी सफलता

---

* एक लिंगके दीवान होनेसे राणा बहुधा दीवानके नामसे ही पुकारे जाते हैं।

\+ अक्सर विश्वासघाती लोग पानके साथ जहर या विषैली वस्तु मिलाकर दे दिया करते हैं। ऐसे उदाहरण बहुतसे पाये जाते हैं।

सिद्ध करनेके लिये आज अपने प्राण देनेको भी तइयार हो गया;—उस आशाको-प्राणोंकी प्राणरूप उस आशाको वह किस प्रकारसे छोडे ? अत एव वह किसी भाँतिसे उस आशाके त्याग करनेमें समर्थ न होकर दिन रात चित्तौरके लेनेकी कामनासे युद्धकी तइयारी करने लगा।

इस प्रकारसे बहुत दिन बीत गये। चचा भतीजोंने कई बार संग्राम किया, परन्तु कोई फल न हुआ। सूरजमलकी आशा न मिटी। पृथ्वीराजके साथ जब ही उनकी मुलाकात होती तबहीं पृथ्वीराज कहते कि "जबतक मेरे शरीरमें रुधिरकी एक बूंद भी रहेगी तबतक तुम्हें सुईकी नोकके बराबर भी मेवाडकी भूमि नहीं दी जायगी।" सूरजमल भी वैसे ही कठोर वाणीसे कहता "तुम्हारे शयन करनेके लिये जितनी भूमिकी आवश्यकता होगी उससे तिलभर अधिक भूमिपर भी तुम अपना अधिकार नहीं कर सकोगे।" सूरजमलकी आशा, आशा ही रही; तेजस्वी भतीजेके डरसे उनको सदा जिधर तिधर भागना पडता था वह जहांपर भागकर जाते पृथ्वीराज भी उनका पीछा करते हुए वहींपर पहुँचते थे, इस प्रकार भागते २ एक बार सूरजमलने वाटौरी नामक गम्भीर वनके भीतर आश्रय लिया और वहींपर एक कुटी बनाकर रहनेका विचार किया। वनके भीतर उनके आदमी और घोडे भी रहने लगे। एक दिन रात्रिके समय उस गंभीर वनमें सारंग देवके साथ बैठे हुए आग तापकर संग्रामके विषयमें अनेक प्रकारकी बात चीत कर रहे थे, कि इतनेहीमें असंख्य घोडोंकी टापोंके शब्द और हिनहिनानेकी आवाज आने लगी। उनकी बात चीत बन्द हो गई। सारंगदेवकी ओरको देखकर डरे हुए सूरजमलने कहा "कोई और नहीं,—यह पृथ्वीराज ही आता है।" वह यह कह ही रहे थे कि अपनी सेनाको साथ लिये हुए पृथ्वीराज वहां आ पहुँचे। अत्यन्त कोलाहल होने लगा। अस्त्रोंकी झनझनाहट तथा वीर सिपाहियोंके सिंहनादसे सारा वन गुञ्जार गया। पृथ्वीराज छलांग मारकर घोडेसे पृथ्वीपर उतरे और अपने चचाको घेर लिया। कुमारके एक ही आघातसे सूरजमल पृथ्वीमें गिर पडे परन्तु सारंगदेवने उनको बचाकर पृथ्वीराजसे कहा "इस समयका एक मूका भी, पहिले हथियारोंके बीस घावोंसे अधिक असह्य है।" इसपर सूरजमलने कहा, "और जब कि वह मूका मेरे भतीजेके हाथसे लगे।" अस्तु इस रात्रिको सूरजमलसे युद्ध नहीं किया गया। उन्होंने धीरे २ पृथ्वीराजसे कहा। "बेटा यदि मैं यहां मारा जाऊँगा, तब तो कुछ भी हानि नहीं है क्योंकि मेरे पुत्र राजपूत हैं, देशमें लूट मार करके भी अपना निर्वाह कर लेंगे, परन्तु तुम मारे गये तो चित्तौरकी क्या दशा होगी ? मेरे मुँहपर कलंक लग जायगा। फिर कैसे किसीको मुँह दिखाऊंगा, सदाके लिये अपयश होगा।"

युद्ध रोक दिया गया। चचा भतीजेने अपनी २ तलवारको म्यानमें किया, कुछ देरके लिये दोनों ही शत्रुताको भूल कर एक दूसरेके गले मिले पृथ्वीराजने सूरजमलसे कहा, "काका जी ! मेरे आनेके समय आप क्या कर रहे थे।"

सूरजमलने स्नेह सहित उत्तर दिया "बेटा ! और क्या करता ? भोजनादि करके इधर उधरकी बातें कर रहा था।"

पृथ्वीराज। "काकाजी ! मेरे समान शत्रुके शिरपर रहते हुए आप किस प्रकारसे निश्चिन्त हो गये थे।"

सूरजमल। "बेटा फिर क्या करूँ तुमने तो एक साथ ही मेरा नाश कर दिया फिर कहीं किसी प्रकारसे तो अपने दिन काटूँ ?"

कुछ देरतक दोनों चुप रह गये। सर्दार सामन्त और सिपाही लोग विश्राम करनेकी चेष्टा करने लगे, कुछ देर पीछे पृथ्वीराजने कहा "काकाजी ! इस वनके निकट जो कालिका देवी हैं सुना है कि उनकी जागती कला है, अत एव निश्चय किया है कि कल सबेरे उठकर उनकी पूजा करने जाऊँगा, क्या आप मेरे संग चलेंगे ? अथवा अपने प्रतिनिधिकी भांति सारंगदेवको भेजेंगे।"

सूरजमलने पलभरतक विचार करके कपटहीन होकर कहा, "मेरा शरीर अत्यन्त दुर्बल है, अत एव मेरे न जानेसे तुम दुःखित न होओ मैं सारंगदेवको अपना प्रतिनिधि करके भेज दूँगा।" पृथ्वीराज इस बातपर सम्मत हुए। प्रभात होते ही काली पूजाकी तैयारी करके सब लोग गये, बलिदान करनेका समय आया, कालिकाजीको एक भैंसा बलि दिया गया, फिर छाग बलिकी तैयारियें होने लगीं। इस समय पृथ्वीराजने अपना खड्ग निकाल कर सारंगदेवको जा दबाया। सारङ्गदेवके पास भी हथियार थे, दोनोंका घोर युद्ध होने लगा। दोनोंके बहुतसे घाव लगे। परन्तु सारङ्गदेव हार गया। और पृथ्वीराजने उसका शिर काटकर कालिकाजीके खप्परमें रख दिया। पीछे सूरजमलकी झोपडी वनमें जाकर तोड दी तथा सब असबाबको लूट लिया और शीघ्र ही बाटौर नगरपर अपना झण्डा जा गाडा।

अब सूरजमलके दुःखकी सीमा न रही आशा टूटी, पग २ पर संकटका सामना करना पडा और कुछ भी न हुआ। भाई, बन्धु, इष्ट, मित्र, सबको छोडना पडा, सदाके लिये राजद्रोही कहलाये, तथापि आशा पूरी न हुई। अपने प्राण बचनेका कोई उपाय न देखकर सूरजमल सादरीकी ओरको भागा। वहां पहुंचकर उसके मनमें एक नई आशाका संचार हुआ। उसने पहिले प्रतिज्ञा कर ली थी कि यदि सादरीकी

सम्पत्ति मैं न भोग सकूँगा तो ऐसे आदमीको दे जाऊँगा कि जिससे राजा भी किसी प्रकार न छीन सके, यह विचार कर ब्राह्मण और * भट्टलोगोंको सादरीका दान करके मेवाडभूमिका त्याग किया, सूरजमलने खनयलनामक महावनके भीतर जाते २ देखा कि एक छागके बच्चेको ले जानेके लिये एक व्याघ्र बारम्बार चेष्टा कर रहा है, परन्तु छागीके भली भांतिसे रखानेपर व्याघ्रका दाव नहीं लगता । इस बातको देखते ही सूरजमलको यह बात याद आ गई कि जिसको चारिणी देवीकी दासीने कहा था । वह समझा कि यहांपर रहनेसे कोई भी हमारा अधिकार नहीं छीन सकेगा । यह विचार कर वहीं ठहर गये और वहांके आदिम निवासियोंको परास्त कर उस ही स्थानमें देवलनामक एक किला बनवाया । इस नये किलेके चारों ओर जो छोटी २ सहस्र बस्तियें थीं वह भी थोडे ही समयमें प्राप्त होगईं । इस प्रकारसे प्रतापगढदेवल स्थापित हुआ था । कुमार पृथ्वीराज देशको लौट आये; राणा रायमलने आदर सहित उनको ग्रहण किया । एक समय जो पृथ्वीराज पिताके अत्यन्त विरागभाजन थे, आज राणाने उनको ही हृदयमें धारण करके अत्यन्त आनन्द प्राप्त किया और सुखसे दिन बिताने लगे पुत्रके गौरवसे ही उन्होंने अपना गौरव समझा, परन्तु ब्रह्माकी कठोर लिखनके बाधा डालनेसे बहुत दिनतक पृथ्वीराज इस सुखको नहीं भोग सके । कपटीकी कपटता दुष्टतासे कुसमयमें उनका शरीर छूटा । चचा सूरजमलके ऊपर विजय प्राप्त करके कुछ दिन चित्तौरमें ठहर कर कुमार पृथ्वीराज अपने वासस्थान कमलमेर दुर्गको चले गये । बडे भ्राताकी तलास भी करते रहे और प्राणप्यारी ताराके साथ आनन्दसे समय व्यतीत करने लगे । एक दिन कुमारने अपनी बहिनका एक पत्र पाया । यह बहन सिरोहीके राजा * पाभूरायके साथ व्याही गई थी । यह पाभूराय नशा अधिकाईसे खाया पिया करता था । प्रतिदिन रात्रिके समय कुसुमरस या अफीम खाकर मतवाला हो जाता और बुराई भलाईको भूलकर अपनी स्त्रीको अनेक प्रकारसे सताता था । कभी गालियें देना कभी मार धाड करना, कभी रातभर पृथ्वीमें लुटाये रखता था । फूलके समान वह सुकुमारी राजकुमारी पृथ्वीपर रातभर लोटती रहती थी । परन्तु दुराचारीको अपनी

---

* जो कोई ब्राह्मणकी वस्तुको छीनता है, शास्त्रानुसार उसको ६०००० वर्षतक विष्ठाका कीट रहना पड़ता है । भागवतमें लिखा है " स्वदत्तां परदत्तां वा ब्रह्मवृत्तिं हरेत्तु यः । षष्ठिवर्षसहस्राणि विष्ठायां जायते कृमिः ॥ " सूर्यमलकी दी हुई यह भूमि भिक्षाजीवी ब्राह्मणोंकी दुरभिलाषासे ऊजड़ होगई है । इनमेंसे एक ही नगरी १२००० बीघेकी उपजाऊ जमीनके साथ नष्ट होगई । इस प्रकारकी अज्ञानतासे ही आज मेवाड़की यह शोचनीय दशा है ।

* चौहानोंकी देवरकुल शाखामें पाभूरायका जन्म हुआ था, इसको जयमलके नामसे भी पुकारा गया है ।

योंपर जरा भी दया न आता। राजपूतबाला अनेक समझाती बुझाती थी, कुमार्गसे सुमार्गमें लानेकी बहुतेरी चेष्टा करती थी, परन्तु किसी बातसे कुछ भी काम न चलता, तब विवश होकर राजकुमारीने अपना समस्त वृत्तान्त खोलकर लिखके एक पत्र पृथ्वीराजके बापके पास भेजा। ऊपर ही इस पत्रका वर्णन कर आये हैं।

पृथ्वीराजने आरम्भसे लेकर अंततक अपनी भगिनीके पत्रको पढा, पढते ही क्रोध चढ आया, पापीको दंड देनेके लिये वह सीरोहीकी ओर चले और रात्रिके समय बहनोईके महलके पास पहुँचे सदर दरवाजा बंद था, इस कारण सीढियोंपर चढकर दीवार लांघ गये और जहाँपर बहन शयन करती थी, सीधे वहीं पहुँचे, घरमें पहुंचते ही भगिनीकी दुर्दशा अपनी आँखोंसे देख ली। बहनकी कोमल देह कठिन पृथ्वीपर लोट रही है, नींद छूट गई है, मुखपर लावण्यका पता नहीं, आँखोंसे आंसुओंका तार बँध गया है। भइयाको सामने देखकर हिया उमड आया, रुक न गया रोने लगी। पृथ्वीराजने उसको समझाकर अपना खड्ग निकाला और पाभूरायके गलेपर रख दिया। परन्तु " पतिव्रता राजपूतबाला भइयाके चरण पकडकर रोती हुई बोली। भीख दो भीख दो मुझको विधवा न करो, अपने विधवा करनेके लिये मैंने तुम्हें नहीं बुलाया है।" पाभूराय भी विनीत होकर पृथ्वीराजसे अपने प्राणोंकी भिक्षा करने लगा। पृथ्वीराजने बहनोईसे कहा, "यदि तुम मेरी बहनकी जूतियोंको अपने शिरपर रक्खो तो क्षमा कर सकता हूँ, यदि तुम उसके पांव छूओ, तो मैं तुझको क्षमा कर सकता हूँ" पाभूराय इस बातपर सम्मत हुआ। पृथ्वीराजने फिर उसको बन्धुभावसे माना और सब अपराध क्षमा किया। हृदयमें प्रेमानन्द उछलने लगा। पृथ्वीराज समझे कि पाभूराय भी इस बातको भूल गया, परन्तु यह उनका भ्रम था, इस भ्रमसे ही उनके प्राण गये। पाभूराय उनकी पहचानमें न आया। उन्होंने इस बातका विचार न किया कि बहनोई साहब कुटिल कपटी और विश्वासघातक हैं। पाभूरायने कुमारको पांच दिनतक अपने यहाँ ठहराना चाहा, पृथ्वीराजने आनन्द सहित उसके अनुरोधकी रक्षा की।

आनन्दपूर्वक पांच दिन बीत गये। छठा दिन आते ही पृथ्वीराज अपनी बहिनसे बिदा लेकर कमलमेरको ओरको चले। पाभूराय एक प्रकारके लड्डू बनाया करता था। सालेको बिदा करनेके समय उसने अपने बनाये हुए यह कई मोदक कुमारको भी दिये। पृथ्वीराज किंचित् भी नहीं जानते थे कि इस पापीने इनमें विष मिला दिया न उनको इस प्रकारका संदेह था। कमलमेरके सामने पहुँचते ही उन्होंने बहनोईके दिये हुए उन लड्डुओंमेंसे एकाध खाया। उसके खाते ही शिर घूमने लगा। समस्त अंग प्रत्यंग शिथिल होने लगे। बड़े कष्टसे देवी माताके मंदिरके आँगनतक पहुँचे, फिर एक कदम भी

आगे न बढ़ा गया । विवश होकर वहीं पड रहे ओर प्राणप्यारी ताराको समाचार देनेके लिये आदमी भेजा । परन्तु अब वह अपनी जिंदगीमें प्यारी ताराको नहीं देख सके । तारा नगरसे आ रही थी कि इसी बीचमें तेजस्वी वीरने सुरपुरको पयान किया । भारतका एक प्रकाशमान नक्षत्र अपने स्थानसे टूट कर महागंभीर समुद्रके नीरमें डूब गया ! सारा संसार हाहाकार करके रोने लगा । मानो त्रिलोकी किसी भयंकर भूपचालसे काँप उठी ! मानो किसी अपरिचित स्थानसे हृदयविदारी महाविलाप कलाप सुना जाने लगा ! कैसा शोक है कि ताराने अपने प्राणनाथको इस समय जीवित न पाया ? पृथ्वीराजकी निर्जीव देहको हृदयसे लगाकर वह जीतेजी आगमें जल मरी ।

राणा रायमलके ऊपर यह कठिन वज्र टूट पडा । जिसको पाकर वे सांगाके चले जानेका दुःख भूल गये थे–जयमलके मारे जानेका शोक भूल गये थे । जिसकी अतुल वीरताके द्वारा वह अपनी प्रतिष्ठा समझते थे; उस ही कुमार पृथ्वीराजको आज कालने विना समय ही अपने गालमें ग्रास कर लिया । पुत्रके शोककी आग उनसे न सहारी गई और प्राणोंको नेवछावर करके पुत्रका साथ दिया । मेवाड राज्यमें महा हाहाकार होने लगा । पृथ्वीराज और राणाके विषम शोकसे सब ही रातदिन विलाप करने लगे ।

यद्यपि राणा रायमल अपने बडे बूढोंके समान गुणवान् नहीं थे, तथापि देशमें उनका यश फैल रहा है । बडे २ कष्ट और संकटोंमें पडकर उन्होंने जिस श्रेष्ठ रीतिसे अपनी प्रजाका लालन पालन किया और बडे बूढोंके गौरवकी रक्षा की, इन कारणोंसे उनको अवश्य ही एक बुद्धिमान् गुणनिधान राणा कहा जायगा । प्रजागण हृदयके साथ उनकी भक्ति करते थे, यही कारण है जो राणा रायमलकी मृत्युसे सर्वसाधारणको अत्यन्त शोक हुआ ।

आठवाँ अध्याय ८.

राणा संग्रामसिंहका सिंहासनपर बैठना;-मुसलमानोंके राज्यका वृत्तान्त;-मेवाडका गौरव;-साँगाजीकी जय;-भारतपर भिन्न २ जातिकी चढाईका वृत्तान्त;-भारतपर बाबरकी चढाई;-दिल्लीके बादशाहका बाबरसे हारकर मारा जाना;-राणा साँगाका बाबरपर चढ़कर जाना;-कनूयास्थानका युद्ध साँगाजीकी पराजय;-साँगाकी मृत्युका वर्णन, तथा उनके चारित्र;-राणा रत्नका सिंहासनपर विराजमान होना;-उनकी मृत्यु;-राणा विक्रमाजित;-विक्रमाजितके आचरण;-सरदारोंसे विद्वेष;-चित्तौरपर मालवेके शाहकी चढाई;-चित्तौरध्वंस;-जुहारव्रत;-मुसलमानोंका चित्तौरको भली भाँतिसे लूटना;-चित्तौरकी रक्षाके लिये हुमायूँका आना;-चित्तौरका उद्धार करके उसके सिंहासनपर फिर भी विक्रमाजितको बिठलाना;-सरदारके द्वारा विक्रमाजितका सिंहासनसे उतारा जाना;-बनवीरको राना बनाना;-

विक्रमाजित्के मारे जानेका वृत्तान्त।

सम्वत् १५६५ (सन् १५०९) में राणा संग्रामसिंह चित्तौरके सिंहासनपर विराजमान हुए। इनकी सुन्दर राजनीतिसे मेवाड़का राज्य उन्नतिके ऊंचे शिखरपर पहुँच गया था। भट्टलोगोंने उनका वर्णन करनेके समय रूपकके छलसे लिखा है कि "महाराणा सांगा मेवाडके गौरवचोटीके सबसे ऊंचे कलश

थे। ” परन्तु दुःखकी बात है कि मेवाड़ राज्यने बहुत दिनोंतक इस गौरवको नहीं भोगा । कारण कि राणा संग्रामसिंहके साथ ही इस गौरवका अंत हो गया था । यद्यपि संग्रामसिंहकी मृत्युके पीछे उस मेवाड़ी गौरवके दो चार चिह्न दिखाई दिये थे, परन्तु विशेष विचार करके देखनेसे ज्ञात हो जायगा कि वह चिह्न छिपते हुए सूर्य भगवानकी पिछली किरणमालाके समान थोड़े ही समयके लिये विराजमान हुए थे ।

इन्द्रकी अमरावती नगरीके समान जो इन्द्रप्रस्थ नगरी पाण्डवोंकी पवित्र लीलाभूमि थी, जहाँपर तुआर लोगोंने बहुत दिनोंतक अखण्ड प्रतापसे राज्य किया था । जो हिन्दूराज चक्रवर्ती चौहान पृथ्वीराजकी प्रथम और शेष साधन भूमि हुई थी;—वही नगरी विधाताकी कठोर लिखनसे, गजनी, गोरी, खिलजी और लोदी वंशके यवन भूपालोंके प्रचंड पदाघातको सहन करती आती है, वह इन्द्रप्रस्थनगरी आज समयके हेर फेरसे छिन्न भिन्न हो गई है, आज उसके अगणित टुकड़े हो गए हैं और उन छोटे २ टुकड़ोंमें भी छोटे २ अनेक राज्य स्थापित हुए । उन समस्त राज्योंके शासनकर्त्ता प्रचंड निर्दयी और हिन्दुओंसे वैर रखनेवाले थे । परन्तु उनमें कुछ बल विक्रम नहीं था, इस कारण मेवाड़के राजालोग उनको कुछ भी नहीं समझते थे । इस समय दिल्ली और काशीके बीचमें चार स्वतंत्र राज्य स्थापित हो गए थे * परन्तु संग्रामसिंह इनको राजा नहीं मानते थे । जब मेवाडराज्यमें उपरोक्त घरेलू झगड़ा फैल रहा था, तब गुजरात और मालवेके दोनों राजा विद्रोहियोंमें मिल गए थे, परन्तु मेवाड़की वह कोई हानि नहीं कर सके और जिस समय वीरवर संग्रामसिंहने मेवाड़के वीर पुत्रोंको संग्रामभूमिमें भेजा था, तब वे दोनों बादशाह उन वीरोंके आगे नहीं खडे हो सके। राणा संग्रामसिंह उस समय भारतके चक्रवर्ती राजा समझे जाते थे । वरन मारवाड और अम्बरके × राजाओंने भेंट पूजा देकर उनके गौरवको बढाया था । ग्वालियर, अजमेर, सीकरी, राईसिन, कालपी, चन्देरी, बून्दी, गागरोन, रामपुर और आबू आदि देशोंके “ राव ” उपाधिधारी राजालोग सामन्त राजा बनकर उनकी सेवा किया करते थे । वास्तवमें महाराणा संग्रामसिंह ऐसे ही प्रतापवान थे । आठ हजार घुड़सवार, ऊंची श्रेणीके सात राजा, नौ राव, और “ रावल ” व “रावत” उपाधिधारी १०४ सर्दार और पाँचसौ रणमतवाले हाथी लेकर उपरोक्त राजालोग महाराणा संग्राम सिंहकी सहायता करनेको युद्धमें गए थे ।

---

* दिल्ली, बीना, कालपी और जौनपुर ।

× जिस अम्बरके राजाका यहां वर्णन है उसका नाम पृथ्वीराज था; वह अबतक भी रावके नामसे पुकारें जाते हैं । उनके बारह पुत्रोंसे (कछवाहे) कुलके बारह गोत्र उत्पन्न हुए । मुगल बादशाह हुमायूंके समयसे कुशावह लोगोंने राजसमाजमें मान पाना आरम्भ किया ।

विपत्तिके समयमें जिन्होंने महाराणा संग्रामसिंहकी सहायता की थी वे उनको सम्पत्तिके समयमें भी नहीं भूले अर्थात् उन्होंने सबका ही कुछ न कुछ प्रत्युपकार करके अपनी कृतज्ञताका परिचय दिया था। उन्होंने श्रीनगरके करमचंदको अजमेरकी एक भूमिवृत्ति दान कर दी थी। इस करमचंदके जगमलनामक एक पुत्र था चंदेरीनामक जनपदपर अधिकार करनेके समय जगमलने राणाकी सहायता की थी, इस कारणसे राणाने उसको रावकी उपाधि दी थी।

घरेलू झगडेके समय राज्यमें जो अशान्ति मच गई थी राणा संग्रामसिंहके सिंहासनपर बैठते ही पुनर्वार शान्ति स्थापित हो गई और सब झगडे दूर होगये। जोरके साथ यह बात कही जा सकती है कि राणा संग्रामसिंह वीर्यवान् और साहसी महाराज थे। इसपर यदि कोई कहने लगे कि फिर वह अपने उत्तराधिकारको छोड़कर बन २ में किस कारणसे मारे २ फिरे, इस प्रश्नके उत्तरमें इतना ही कहा जा सकता है कि इससे कायरपन या साहसहीनताका परिचय नहीं पाया जाता, बरन उसमें उनकी अपूर्वभावदर्शिता, वीरता, धीरता और सहनशीलता दिखाई देती है; यदि वह उस भावदर्शिताके बलसे मेवाडकी होनहार भाग्यलिपिको न पढ लेते, यदि वह आगा पीछा न विचार कर स्वार्थसाधनके लिये प्रकटमें ही विरोध करने लगते तो निस्सन्देह मेवाडकी अत्यन्त हानि होती।

संग्रामसिंह समर-विशारद महाराणा थे। उन्होंने श्रेष्ठ रणनीतिके अनुसार अपनी सेनाको शिक्षित किया था। इसही सेनाको साथ लेकर तैमूरके खानदानवालोंके साथ संग्राम करनेके पहिले दिल्ली और मालवेके बादशाहोंसे अठारह बार लड़ाई की और सबमें जय पाई। दिल्लीका इब्राहीम लोधी ही दो बार महाराणासे भिड़ गया था, परन्तु दोनों बार ही राणाके प्रचंड पराक्रमसे उसने नीचा देखा। विशेषतः घाटौलीके पिछले संग्राममें यवनदलपर ऐसी मार पडी थी कि दो एक सिपाही ही प्राण लेकर रणसे भाग सके थे। बादशाहके किसी रिस्तेदारको भी संग्रामसिंह उस लड़ाईमेंसे कैद कर लाये थे। मेवाडराज्यकी सीमा इस समय बहुत दूरतक फैल गई थी। उत्तरमें बीनाके * प्रान्तमें बहनेवाली पीलखाल, पूर्वमें सिन्धुनद दक्षिणमें मालवा और पश्चिममें मेवाडकी निविड और दुर्गम शैलमाला थी। इस प्रकार मेवाडदेशका शासन दंड वीरवर राणा संग्रामसिंहके हाथमें था। इस प्रकारसे विशाल राजस्थानके बडे भाग मेवाडके सिंहासनपर विराजमान होकर स्वदेशीय और स्वजातीय राजाओंके पूजोपचार ग्रहण करते हुए प्रतिष्ठाकी ऊंची सोपानपर पहुँच रहे थे, कि इतनेहीमें यवनवीर

---

* आगरेसे ५ मील दक्षिणको बीना बसा हुआ है।

बाबरका भयंकर सिंहनाद भारतवर्षके पश्चिम द्वारपर सुनाई दिया । उस भयंकर शब्दको सुनते ही भारतवर्षकी पृथ्वी कम्पायमान हो गई । वीरवर बाबरके साथ जो अक्षु और जाक्षरतीस किनारेपर रहनेवाले भयंकर उजबक × और तातारीसेना लेकर हिन्दोस्थानमें न आता, यदि भारतके क्षीणजीवी नृपालगण उसके झंडेके तले इकट्ठे न होते तो न जाने आज भारतका शासन भार किसके हाथमें होता । हम कह सकते हैं कि यदि देशद्रोही राजालोग उस यवनकी सहायता न करते तो भारतवर्षका राज-मुकुट फिर हिन्दुओंके ही शिरपर रक्खा जाता भारतकी विजयवैजयन्ती इन्द्रप्रस्थसे उतर कर चित्तौरके ऊंचे दुर्गपर फहराया करती । परन्तु अभागी भारतसन्तानके भाग्यमें यह सुख नहीं बदा था ।

एशियाके मध्यप्रदेशमें रहनेवाले अनार्यलोग सदासे भारतवर्षके वैरी हैं । उन्होंने सदासे ही इस देशकी अत्यन्त हानि की, जिसका प्रमाण भारतवर्षके इतिहासमें वर्त्तमान है, इस वृत्तान्तसे एक बातका तो विश्वास होता है कि भारतमें कभी भी भली-भांतिसे एकता नहीं हुई । परस्पर झगडा होनेके कारण इस देशमें बहुतसे छोटे २ राज्य होगये । अवसरपर इन लोगोंने परस्पर एक दूसरेकी सहायता की है; एकके राज्यको किसी विदेशीके आक्रमणसे रक्षा करनेके लिये कभी एक दूसरेने खड्ग धारण किया है, इस ऐक्यताके बलसे ही विदेशीय राजालोगोंके सामने भारतवर्षके राजाओंने शिर नहीं झुकाया । सिकन्दरकी चढाईके समय भी इस एकप्राणताका प्रकाशमान उदाहरण देखा गया है । जब वह महावीर भारतवर्षमें चढकर आया था, उस समय अकेले पंजाबमें ही छोटे २ बहुतसे राज्य थे, बहुतसी जगह प्रजातंत्र प्रणाली प्रचलित थी । सिकन्दरके बाद ईरानवाले हिन्दोस्थानमें आये । कहते हैं कि दारायुने अपने अधिकारके समस्त राज्योंमें भारतभूमिको ही उत्तम और श्रीमान् देश समझा था । इस ही प्रकारसे तक्षक, जित, पारद, हून, कार्त्त, ग्रीक, यूनानी, तातारी, गोरी और चकतई इत्यादि दुर्द्धर्ष अनार्यलोग क्रमानुसार भारी सेनाको लेकर बारम्बार भारतवर्षपर आते थे और यहांके धन रत्नको लूटकर चल देते थे ।

किसी २ ने भारतहीके उपजाऊ मयदानमें अपने वंशका वृक्ष लगा दिया और अपनी जन्मभूमिके शोकको भूल गये । जो जाति भयंकर सेना लेकर आई उसने ही

× उजबकलोग संकरवर्ण होते हैं । तुर्क, मुगल, और फिनिक इन कई एक मुसलमान जातियोंसे इनकी उत्पत्ति हुई है । देखनेमें यह लोग तुर्कसे मालूम होते हैं । पहिले साईबीरियाके एक बड़े भाग-पर इन्होंने अपना अधिकार कर लिया था। इस समय यह लोग अक्सस नदीके किनारोंपर बसे हुए हैं। (Erskeneas Baber, Introduction P. P ix) सन् १३४०ई० से यह लोग अपने सरदार उजबकखांके साथ मुसलमान होगये । बहुतलोग अनुमान करते हैं कि उजबकखांसे ही यह लोग उजबक कहलाये ।

कुछ कालतक यहांका राज्य किया और कुछ दिन पीछे न जाने कहांको बिलाय गई। परन्तु राणा संग्रामसिंहके प्रबल शत्रु वीरवर बाबरने अभागी भारतसन्तानोंके हाथोंमें जो पराधीनता की हथकडियें पहराई वे हथकडियें आजतक नहीं उतरीं। जबतक ज्ञानरूपी सलाईके द्वारा भ्रमान्ध भारतवासियोंके अज्ञानसे अन्धे हुए नेत्र नहीं खुलते हैं, जबतक सभ्यताकी माता भारतभूमि नवीन बलको पाकर नहीं जो उठती है, तबतक वह हथकडियें-वह परवशताकी जंजीर किसी प्रकारसे नहीं खुलैगी, उस समयतक भारतको दुःखनिशाको कोई भी दूर नहीं कर सकैगा। परन्तु सातसमुद्रोंके पारसे आकर कितने एक श्वेतद्वीपनिवासी ब्रिटिनवीरोंने मीढ पारद और तातारवालोंकी सल्तनतको अस्तव्यस्त कर डाला, तब तो आशा की जा सकती है, कारण कि सदा किसीके दिन एकसे नहीं रहते; न कोई सदा सुख पाता है न कोई सदा दुःखी रहता है। सुखके बाद दुःख और दुःखके पीछे सुखको देना ही परमेश्वरका नियम है। फिर भारतके लिये इस सदाके नियममें कोई परिवर्तन होजायगा! नहीं ऐसा कभी नहीं होसकता?-यदि ऐसा हो तो संसारी नियमोंमें बाधा पड जाय; सारा विश्व चूर्ण होकर परमाणुओंमें लीन होजाय। इसही नियमके अनुसार संसारके और अनेक राज्य हीनदशाको पहुँच गए हैं, कोई तो फिर उन्नतिको प्राप्त कर रहा है, कोई भारतके समान गंभीर निशामें डूब रहा है। परन्तु यदि उन समस्त देशोंके समानताकी बराबरी की जाय तो भारतवर्षमें एक बातकी प्रधानता देखी जाती है। विजातिय और विधर्मी जेता और शासनकर्त्ताओंके कठोर अत्याचारसे दूसरे देशोंके राज्यका मालिक धर्म भी नष्ट होगया; प्राचीन जातीयता लोप होकर अनेक संकर जातियोंकी उत्पत्ति हो गई। उनके प्रथम और प्राचीन पुरुषोंका नाम इतिहाससे एकवार ही उठ गया है, परन्तु संसारके एक छोरमें-सभ्यताके आदिभवनमें-भागीरथीके पवित्र जलसे धुले हुए इस पवित्र भारतवर्षमें कुछ और ही बात देखी जाती है। भारतवर्षने विजातीय और विधार्मियोंके जितने चरण प्रहार सहे हैं; उतने और किसी देशने नहीं सहे होंगे तथापि भारतका सनातनधर्म और भारतकी राजनीति आजतक प्राचीन भावसे विराजमान हो रही है। यही कारण है जो भारतके सपूत राजपूत वीरगण अगणित कष्टोंको सहन करते हुए-कठोर दासपनके द्वारा पीडित होकर आजतक अपने सनातनधर्मको पूर्वभावसे ही धारण किये हुए हैं-उन्होंने अपने प्राचीन आचार विचारको अबतक जलांजलि नहीं दी है। जिस समय महावीर सिकन्दर भारतवर्षपर चढकर आया था, उस समयको आज दो हजार वर्षसे अधिक बीत गये; भारतवर्षके मध्य उस समय जो धर्म विराजमान था, जो रीति नीति थी, जो विचार आचार थे, आजतक वह धर्म वह रीति, नीति, वह आचार विचार उस ही भावसे चले जाते

हैं, इस बातकी मीमांसा विज्ञान कर लेगा कि उनकी यह नीति रक्षण शील है या नहीं; हमारा तो केवल इतना ही कहना है कि जिस उदार जातिके हाथमें इस शोचनीय भारतकी सन्तानका भाग्य चक्र है, उसको चाहिये कि हितकारी विधिके अनुसार भारतवासियोंको प्रतिपालित करे, कारण कि दूरपर बसे हुए सात समुद्रके पारवाले इस देशकी चिताभस्ममें एक इस प्रकारकी तेजवान छोटीसी चिनगारी है, कि जो किसी समय प्रज्वलित होकर उनके मंगलामंगलको साधन कर सकती है। अस्तु ।

भविष्यपुराणमें भारतकी कठोर भाग्यलिपिका वर्णन इस प्रकारसे है कि "सूर्य और चन्द्र वंशके प्राचीन वैरी तक्षक लोग, तथा यवन व और दूसरे अनार्य विदेशीय लोग भारतवर्षके राजा होंगे" शाकद्वीपके अक्षु और जक्सरतीस नदी के किनारोंपर बसनेवाले पौराणिक तक्षक लोगोंके वंशवाले बाबरने आज इस भाविष्यद्वाणीको पूर्ण किया उन दिनोंमें यह फरगना राज्य * को शासन करता था। उनका राज्य जक्सरतीस नदीके दोनों किनारोंपर था। वह आतिपवित्र स्थान है, वहांपर जित लोगोंकी तौमीरी नामक रानी रहती थी, वहांपर बडे २ महावीरोंने जन्म लिया था भारतके उत्तर पश्चिमदेशमें एक समय इनकी ही विजयपताका उडी थी एक समय इन्हीं लोगोंकी तलवारसे समस्त यूरोप और एशिया काँप गई थी। यह अपने पुराने वासस्थानको छोडकर संसारमें चारों ओर फैल गए थे। एक समय इन जितलोगोंके एटिला, एलारिक इत्यादि वीरोंके प्रचंड विक्रमसे बालटिकसे मेडिटरेनियनसमुद्रतक समस्त देशोंमें थरथरी मच गई थी, इन वीर लोगोंकी वीरताका विचार करनेसे स्वयं ही उस देशकी महिमाका ज्ञान होजाता है। परन्तु उनमें बहुतसे वीरलोग लोकसंख्याकी अधिकाईसे राज्यके लोभसे उत्कंठित हो पूर्वोक्त देशोंमें आनेके लिये विवश हुए थे । परन्तु उस प्रतिकूल तरंगके समयमें भाग्य उनपर अत्यन्त अनुकूल हुआ और उनके सौभाग्यके मार्गको साफ कर दिया। वे लोग भाग्यके प्रभावसे ही २००० अनुचरोंको साथ लिये हुए भारतवर्षमें चले आये और पाण्डवोंके सिंहासनपर अपना अधिकार जमा लिया।

बादशाह बाबर सब भाँतिसे संग्रामसिंहकी बराबर था। राजपूत वीर सांगाके समान वीर बाबर भी सदा मुसीबतमें ही रहा था विपत्तिके विद्यालयमें राणाजीकी ही समान परिणाम दर्शिताका पाठ पढा था। यद्यपि संग्रामसिंहकी अपेक्षा बाबर बादशाहका जीवनचरित्र उपन्यासोंकी सुन्दरताईसे विशेष शोभायमान है, तथापि वह संग्रा-

* आजकल इसको कोकन कहते हैं। यह जक्सरतीस नदीके किनारेपर बसा हुआ है।

मसिहकी ही भांतिसे अपूर्व परिणाम दर्शिताके अनुसार सब कार्य किया करता था। उसने कभी भी अपनी बहादुरी या तेजीपर भरोसा रखके प्राणोंको विपत्तिमें नहीं डाला। सन् १४९४ ई०में बादशाह बाबर फरगनाकी गद्दीपर बैठा, उस काल बादशाहकी उमर केवल १२ ही वर्षकी थी। इस छोटी उमरमें ही उसकी वीरताकी सूचना होने लगी थी। गद्दीपर बैठनेसे चारवर्ष पीछे ही बहुतसे बादशाहोंको जीतकर फिर समरकन्दको फतह किया, फिर दो वर्ष बाद एकबार समरकन्द अधिकारसे निकल भी गया था, परन्तु अत्यन्त परिश्रम करके बादशाहने उसको फिर अपने कब्जेमें कर लिया। इस प्रकार सम्पद् विपद् तथा जय पराजयके अपूर्व मेलवाले बाबरके जीवनचरित्रको अपूर्व कहा जा सकता है, वह कभी तो अक्स नदीके किनारेपर बसे हुए देशोंका राज्य करता था, कभी वहांसे निकाला जाता था, कभी हारता था और कभी पराजित होकर अपने प्राणोंकी रक्षा करनेके लिये किसी दूरदेशमें भाग जाता था। कभी अपनी मनोकामनाको सिद्ध करनेके लिये खड्ग धारण करके शत्रुसे अकेला ही युद्ध करता और कभी पराजित-ताडित और पीडित होकर अकेला ही विना किसी सहायकके जहां तहां घूमा-करता। इन संग्रामोंमें और सर्व विपत्ति कालमें बहुधा बाबरकी जीत ही हुआ करती थी। बाबरने एक बार दुश्मनोंकी ओरके पांच पहलवानोंको एक साथ ही मार डाला था। परन्तु इन कार्योंका कोई फल न हुआ। जैसे २ समय व्यतीत होता गया वैसे उनके शत्रु भयंकर होते गये। तब बादशाहने रक्षाका कोई उपाय देखकर फरगनानामक स्थानको छोड दिया और हिन्दूकुशकी शैलमालाके पार होकर सन् १५१९ ई० में सिन्धुनदके पूर्व पार आनकर उतरा। पीछे काबुल और पंजाबके बीचमें ज्यों त्यों करके उसने सात वर्ष काटे और अपनी उन्नतिका उपाय करने लगा। उद्योगी और साहसी पुरुष हजारों कष्ट सहन करके भी सौभाग्यलक्ष्मीको प्राप्त कर ही लेता है। वह बादशाह-जो कि एक बडे राज्यका अधिकारी था;-जिसकी आज्ञाको सुनकर हजारों आदमी जान देनेको तइयार हो जाते थे-आज निर्वासित पीडित तथा दुःखी होकर देशविदेशमें मारा फिरता है-कोई बात भी नहीं पूछता-तथापि एक पलभरके लिये भी उसका साहस नहीं गया न वह अपने मूलमंत्रको भूला और धीरे २ दिल्लीके बादशाह इब्राहीम लोधीके सामने गया; सौभाग्यलक्ष्मीने प्रसन्न होकर बाबरके शिरपर विजयमुकुट पहिराया और उसकी गोदमें शयन किया। संग्राममें इब्राहीम मारा गया; सेना भाग गई, तब दिल्ली और आगरेके नगरवासियोंने दुर्गका फाटक खोलकर विजयी बाबरका आदर सत्कार किया। करुणानिधान भगवान्के इस अनुग्रहसे बाबर आश्चर्य करने लगा और कृतज्ञतापूर्ण भक्तियुक्त हृदयसे

कहने लगा कि " हे जगदीश्वर ! यह मेरी जय नहीं—वरन आपहीकी जय है—आपकी अपार करुणाकी जय है ।" *

दिल्ली विजय करनेके एक वर्ष पीछे ही बाबरने अपनी विजयिनी सेनाको महाराणा संग्रामसिंहसे लडनेके लिये भेजा । अबकी वार बराबरवालेसे बाबरका सामना है । आजतक जिन वीरोंके ऊपर उसने अपने खड्गको अजमाया था, महाराणा संग्रामसिंहके आगे वह अतितुच्छ थे । वह लोग वीरनामके योग्य नहीं हो सकते । बाबर स्वयं जैसा वीर था वैसे ही उसकी सेना भी थी । "मेचाचल" (रेतेका भाग) के विक्रमशाली तातारवाले वीरगण संग्राममें उसकी सहायता करनेको गये थे । तथापि आर्यवीर संग्रामसिंहके भयंकर विक्रमके प्रभावसे उनके प्राणोंपर आनबनी थी । बाबरका आशा भरोसा जाता रहा था; उसकी सेना निरुत्साह होगई थी; बाबरका बारबार उसकाना और उत्साह दिलाना सब ही निष्फल होगया था । लेकिन अंतमें जो उसको छुटकारा मिला सो बलकी या चालाकीकी सहायतासे नहीं मिला । केवल एकदेशके ही विश्वासघाती, कलंका और नराधमकी अनुकूलतासे बाबर इस बिपत्तिसे निकल गया । यदि इस असद् उपायका अवलम्बन न किया जाता तो उस पीततरंगिणी * के किनार सेनाके साथ बाबरको समरभूमिमें सोना पडता । उसका मुकुटशोभित पवित्रमस्तक शृगाल और कुत्तोंके पांवोंसे ठुकराता फिरता । बाबरने इस बातको समझकर ही एक समय शोकसे कहा था कि " क्या इस समय ऐसा कोई नहीं है कि जो इस संकटके समयमें पुरुषोचित वार्ता कहकर साहस और उत्तेजना दे । " ?

चित्तौरनाथ राणा संग्रामसिंहके प्रचण्ड बलको रोकनेके लिये आगरेके तोरण-द्वारको छोडकर वीर बाबर अपनी सेनाको साथ ले उनके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये सीकरी +की ओर चला । इस ओर राजपूतकुलशेखर वीर चूडामणि महाराणा संग्रामसिंह भी सेनासहित उसके सामनेको चले । राजस्थानके प्रायः समस्त ही राजा राणाकी सहायता करनेके लिये चित्तौरनाथकी पताकाके निकट आनकर

---

* एरस्किनसाहबने बाबरके जीवनचरित्रका अंगरेजी अनुबाद किया है । अंगरेज लोग इसको बडे चावसे पढते हैं ।

* पीततरंगिणी या पीलीखाल वा पीलूनदी यह बियानाके निकट बहती है, बाबरने इसहीके किनारे अपनी छावनी डाली थी ।

× आजकल इसको फतेपुर सीकरी कहते हैं । आगरेसे दश कोशपर बसी हुई है । इसके ही निकट केकनवा नामक स्थानमें राणा संग्रामसिंहके साथमें बाबरका महासंग्राम हुआ था । उस समरको अबतक फतहपुर सीकरीकी लडाई कहते हैं ।

एकत्र हुए। संवत् १५८४ (सन् १५२२ ई०) कार्तिक बदी ५ को * राणाजी कनवा और बियाना नामक स्थानमें बाबरके सामने आये। उस समय बाबरके आगे १५० तातारी सेना थी। राणाने उन सबका संहार किया! जो दो चार मुसलमान बच गए उन्होंने मूलदलमें जाकर यह समस्त समाचार सुनाया। इस पराजयका समाचार पाते ही बाबरकी समस्त सेना उत्साहहीन होगई। छावनीके चारोंओर परिखा खोदकर बीरगण सशंकभावसे डेरोंमें काल व्यतीत करने लगे! इस साहसहीन दलकी सहायता करनेके लिये जो और सेना आई वह भी संग्रामसिंहकी प्रचण्ड सेनाके रोकनेमें असमर्थ होकर अपने २ डेरोंकी ओर भागी; विजयी राजपूतोंने उस भागती हुई सेनाका पीछा किया और बहुतोंको पकडकर जानसे मार डाला। बाबर घोर संकटमें पड गया। परन्तु पलभरके लिये भी उसका उत्साह न गया। बालकपनसे कष्ट सहते २ उसको सहनशीलताका अभ्यास होगया था और समयपर सूझती भी बहुत दूर की थी। आज विपत्तिसे उद्धार पानेके लिये उस ही सहनशीलताका सहारा लेकर उपाय सोच लिया। बाबरने अपने डेरोंके चारों ओर बडे २ बांध बँधवा दिये और उन बांधोंपर अपनी तोपोंको क्रमानुसार लगा दिया। परन्तु इस उपायका भी कोई फल न मिला। उसने जिस ओरको आंख उठाई, उसही ओरसे विपत्तिकी भयंकर मूर्ति नजर आई। उसही ओरसे वीरकेसरी संग्रामसिंहकी विकट भ्रुकुटि उसको दिखाई देने लगी। उसही समय एक तातारी ज्योतिषीने ज्योतिषके अनुसार प्रश्न लगाकर कहा कि "जब कि मंगल ग्रह पश्चिममें है, तबतो जो लोग उसकी विपरीत दिशासे आनकर युद्ध करेंगे, वही पराजित हो जायँगे।" कदाचित् ज्योतिषीका प्रश्न ठीक ही हो, कदाचित् तातारवालोंका जड़मूलसे नाश होजाय। बाबरको महा चिन्ता हुई वह जितना २ ज्योतिषीके होनहार वचनका विचार करता था, उतना २ ही उसको दुःख होता जाता था। कहां तो फरगनाराज्य-कहां दिल्लीका सिंहासन कहां-उसकी मनमोहिनी आशाकी सरलमूर्ति? क्या वह आशा इस समय बाबरका साथ न देगी? उसका इतना यत्न इतना उद्यम और परिश्रम यह सब निष्फल ही हो जायगा। बाबर किसी प्रकारसे भी वीरवर संग्रामसिंहके प्रचंड बलको न रोक सका सेनाको किसी प्रकार धीरज न बँधा सका। मन ही मन अत्यन्त कष्ट हुआ। इस प्रकार चिन्ता करते १५ दिन बीत गये, कोई उपाय न सूझा। उस काल बाबरने मानवी शक्तिके तुच्छ आश्रयको छोडकर ईश्वरके ऊपर भरोसा किया और अपने पापोंका प्रायश्चित्त करनेके लिये भगवान्से प्रार्थना करने लगा, बाबरने अपने प्रायश्चित्तका विस्तारित वृत्तान्त अपने जीवनचरित्रमें भली भांतिसे लिखा है।

प्रायश्चित्त होजानेपर बाबरने समझा कि मेरा मनोरथ पूरा होनेमें अब कोई सन्देह नहीं, परन्तु बात उलटी हुई। उसने जो यह प्रतिज्ञा करके कि अब शराब न "पीऊंगा।"

---

* बाबरके जीवन वृत्तान्तमें लिखा हुआ है कि कनवाकी लडाई सन् १५२७ ई० की ११ जनवरी को हुई थी।

शराबके प्याले और बोतलोंको जमीनपर लुढका दिया था; इस कार्यके करनेसे उसकी सेनाका रहासहा उत्साह भी जाता रहाः—वीरोंने संग्राममें किसी भांतिसे नहीं जाना चाहा । तब बाबरने सबको ही धर्मभाव (जिहाद) से उत्साहित करनेकी चेष्टा की, यद्यपि उसका हृदय निराशाके घोर अंधकारसे ढका हुआ था, तथापि पुरुषोचित साहस और उत्साह अवलम्बन करके एक तेजस्विनी वक्तृता दी ॐइस वक्तृताको सुनकर सेना कुछ२ उत्तेजित हुई । जब बाबरने देखा कि अब कुछ काम चल गया तब प्रत्येक वीरके हाथमें कुरान देकर मेघगंभीर वाणीसे कहा कि "अहद करा, कुरानको छूकर खुदाका नाम लेकर कसम खाओ कि यातो फतह ही करेंगे वरना इस जंगमें अपनी जान दे देंगे ।", सबके हृदय उत्साहित हुए, सब ही वीरगण बाबरकी आज्ञामें अपनी सम्मति देकर भयंकर सिंहनाद करने लगे सेनाका उत्साह देखकर बाबरने शीघ्र ही छावनीको तोड दिया और विना बिलम्ब किये सेनाके साथ एक कोश आगे बढ आया और आगे न बढ सका । राजपूतोंके झुण्ड झुण्ड उसको तोपोंके आगे आकर तातारी सिपाहियोंपर हमला करने लगे । बाबरको विवश होकर वहींपर छावनी डालनी पडी । परन्तु सीमा दंड × और तोपोंके एक साथ रहनेमें छावनीके चारों ओर

---

* बाबरके जीवन--चरित्रका ३५७ सफा देखो । Memoirs of Baber, P. 358.

× छावनीके चारों ओर सीमा निश्चय करनेके लिये जो लकडीके डंडे गाडे जाते हैं, उनको सीमा-दंड कहा है ।

बाबरने लिखा है कि ९३३ हिजरी पहली जैमादीके तेरहवें दिन सोमवारको घोडेपर सवार हो अपनी फौज देखने चला, मार्गमें मुझे बडी चिन्ता हुई मैं प्रतिज्ञा करचुका था कि जो बातें हमारे मतके विरुद्ध होंगी मैं उनमें हाथ न डालूंगा, तथा अपने किये पापोंका प्रायश्चित्त करूंगा, इसका पालन आज तक न होसका, इसपर जो उसने कहा उसका भाव यह है "ऐ दिल तू कबतक पापका सुख भोगता रहेगा? पछतावा कडवा नहीं है उसका स्वाद ले । रे मूढ ! तू पापमें पडकर कितना निकृष्ट हुआ, निराशामें पडे पडे तैंने क्या सुख भोगा? कितने दिनतक तू ऐश्वर्यका दास बना रहा, तेरे जीवनका कितना समय व्यर्थ गया, आ मैं पवित्र धर्मकी ओर चलूं । जिससे कि मरनेके पीछे तुरंत मुक्ति मिलै नजात पानेके लिये जो मनुष्य अपना जीवनत्याग करता है वही बडा है और वही मुक्ति पाता है; इस कारण अरे मूर्ख मन ! उसके पानेके लिये सब बुरे भोग और बुरी वासनाओंको त्याग और जितने तेरे कुकर्म हों उन सबको छोड़ । यह तुर्कीकविताका अनुवाद है ।

इस प्रकार दुष्कर्मोंको छोड़कर मैंने प्रतिज्ञा की कि आजसे कभी मद्यपान न करूंगा; फिर सेवकोंको आज्ञा दी कि मद्यपानके सोने चांदी और शीशेके समस्त वर्तन लाये जांय, उनके आते ही मैंने उनको तोड डाला और आगेसे मद्य न पीनेकी प्रतिज्ञा की और उनको दीन भिखारी लोगोंमें बंटवा दिया, सबसे प्रथम जिस पुरुषने प्रायश्चित्त कर पापोंसे अलग होनेमें मेरा अनुकरण किया उसका नाम अक्सस है, मेरी भांति उसने भी डाढी न कटानेकी प्रतिज्ञा की, दूसरे दिन दरबार और सेनाके ३०० पुरुषोंने मेरे समान प्रायश्चित्त और मन शुद्ध करनेका प्रण किया, मैंने अपने पासकी मदिराको जमीनपर फेंक दिया और बाबा दोस्त जो थोडीसी मदिरा लाया था उसमें नमक मिलाकर सिरका बनानेको कहा, जहां मद्य फेंकी गई थी वहां पत्थरका एक खोखला स्तम्भ और यतीमखाना बनवानकी आज्ञा दी, ९३५ हिजरी--

कोई रोक न की जा सकी, इस कारण बहुतसा असुभीता उठाना पडा और वह अपनेको बेखटके नहीं समझ सका। परन्तु बाबरका समय अच्छा था, इस कारणसे राणा संग्रामसिंहने उस समय कोई आक्रमण ही नहीं किया। विपत्ति पडे हुए शत्रुको घेरना, राणा संग्रामसिंहके समान रणविशारद क्षत्रीके लिये नीतिविरुद्ध कार्य माना जा सकता है; परन्तु इस कार्यसे राणाजीकी ही बडी भारी हानि हुई। बाबरपर संकट पडा जानकर वह जितनी देर करते थे उतनी ही उनके लिये बुराई होती जाती थी। शत्रुगण धीरे २ बलवान् होते जाते थे। इसपर भी यदि राणाजीकी सेना वीरधर्मके साथ संग्रामभूमिमें विराजमान होती, यदि संग्रामसिंहकी भांति सेनाके हृदय भी स्वदेशप्रेम और वीरधर्मसे दीक्षित होते तो किसी प्रकारसे चित्तौरकी कोई हानि नहीं होती। परन्तु भारतवर्षके अभाग्यसे हितमें विपरीत हुई। राणा संग्रामसिंह उदार थे उन्होंने अपने सामन्त और सर्दारोंको भलीभांतिसे पहिचाना नहीं, उन्होंने इस बातको नहीं जाना कि यह लोग केवल भूमिकी अभिलाषा करने-

—मुहर्रमके दिनोंमें ढोलपुरसे सीकरी गमन करते समय जब मैं ग्वालियर देखने गया था, तब मैंने देखा कि वह सतून बनकर तैयार हो गया है, कुछ दिन पहले मैंने यह प्रतिज्ञा की थी यदि राणा संग्रामसिंहकी लडाईमें विजय प्राप्त करूंगा तो मुसल्मानोंपरसे स्टाम्पकर उठा दूंगा. जब मैं प्रायश्चित्त करने लगा तब मुहम्मद सर्वन और शेख जिनने मुझे इस बातकी सुध दिवाई, मैंने इसपर उन लोगोंको धन्यवाद दिया. मेरे राज्यमें जितने सलमान हैं उनसे स्टैम्पकर न लूंगा. यह कह कर अपने कार्य्याध्यक्षको बुलाया और आज्ञा दी कि यह फरमान सर्वत्र पहुंचाया जाय।

इससे पहले मैं कह चुका हूं कि ऊपर लिखी घटनाके हेतुसे उच्च नीच सभी भयसे उत्साहहीन होगये थे, किसीके मुखसे भी पुरुषार्थभरी साहसकी बात नहीं निकलती थी, कोई थोडा भी उत्साह वा उत्तेजना नहीं दिखाता था, जिन मंत्रियोंका प्रधान कर्तव्य उत्तम सम्मति देना है, वे मंत्रीगण और जिन अमीरोंके लिये बडी बडी जागीरें नियत थीं वे ऐसे हीन होगये कि उनमें कुछ भी साहस दृढता वा पुरुषार्थका लेश भी नहीं पाया जाता था, परन्तु खलीफानामक एक पुरुषने आदिसे अन्ततक सब बातोंका ठीक प्रबन्ध करनेके लिये अविश्रान्त परिश्रम और उद्योग किया, यद्यपि वह सर्वथा कृतकार्य न हो सका, तो भी उसका उद्योग और परिश्रम प्रशंसनीय है, अन्तमें सबको निराश देख चित्त स्थिर कर मैं सोचने लगा और उमराव तथा सेनाके लोगोंको बुलाकर कहा, माननीय सज्जन सैनिको! जो ही इस संसारमें आया है उसे मृत्युके आगे शिर झुकाना पडा है, जब हम इस असार संसारसे चले जांयगे, और जीवजन्तु कोई न रहेंगे तब परमेश्वरके सिवाय उस प्रलयसे बचानेवाला कोई न होगा, यह संसार जीवनका एक उत्सवस्थान है, इसमें मिलनेके लिये जो लोग आते हैं, वे इस उत्सवके समाप्त होनेसे पहले ही यहांसे चले जाते हैं। यह संसार दुःखका आगार और ध्वंसके मुसाफरखानेके समान है, सैकडों यात्राओंसे निकलकर जो कोई यहांतक पहुँचता हैं, निश्चय ही उसे एक दिन बिदा होना पडता है; परन्तु क्या हम इससे यह समझ लें कि मनुष्यके जीवनका कुछ भी उद्देश्य नहीं है. क्या कलंक और दुर्नामतामें पडकर जीवन बिताना चाहिये, पशुओंके समान इन्द्रियसेवन करते हुए सदा आलसमें रहनेके ही लिये, क्या दयामय परमेश्वरने मनुष्योंको इस जगत्में भेजा है, क्या हम लोग—

वाले लोभी जीव हैं इस ही कारण भली भांतिसे उनका विश्वास करते थे । वह समझत थे कि शत्रुगण कैसी ही तइयारी करे राजपूतगण अवश्य ही प्राणका दान लगाकर युद्ध करैंगे । यह विश्वास ही उनके लिये कालरूप होगया । वे निश्चिन्त हो बादशाहके आगे बढनेकी बाट देख रहे थे कि इतनेहीमें बाबरका एक दूत सन्धिका प्रस्ताव लेकर उनके पास आया । राणाजीने आदर सहित उसको ग्रहण किया । परन्तु उसके आनेका यथार्थ कारण न जाना । संधिका प्रस्ताव करते ही राणा अत्यन्त विस्मित हुए; क्योंकि बाबरका सन्धि करना असम्भव बात थी । उन्होंने एलचीसे पूछा " बादशाह कौन २ से नियमोंसे सन्धि करना चाहते हैं ? " एलचीने नम्रतासे उत्तर दिया " इस बातको उन्होंने आपहीके ऊपर छोडा है " शिलादित्य-नामक एक तुवर राजपूत उस समय राइसिनका हाकिम था, संग्रामसिंह उसपर अत्यन्त स्नेह करते थे और प्रयोजनीय कार्योंमें उससे परामर्श भी ली जाती थी। सन्धिके समय राणाने उसको ही बुला भेजा और इसकी संमति पूछी कि कौन२ से नियमोंसे सन्धि करनी चाहिये । तर्क वितर्कके पश्चात् निश्चय हुआ कि दिल्ली और उसके सब परगने बाबरके पास रहेंगे और बीनाके मयदानमें बहनेवाली पीलीखाल मुगल और मेवाड राज्यकी सीमा समझी जायगी । इसके अतिरिक्त प्रतिवर्षमें कुछ कर भी बाबर महाराणाको दिया करेगा । बाबरके जीवनचरित्रमें यह वृत्तान्त नहीं पाया जाता परन्तु भट्टग्रंथोंमें इसका विस्तारित विवरण है । दुःखकी बात है कि यह सन्धि अस्वीकृत हुई । एक स्वदेशद्रोही जातवैरी और विश्वासघाती राजपूतने इस सन्धिको नहीं होने दिया । इस क्रूर राजपूतका नाम तुवर शिलादित्य था।

—कीर्ति, मान, मर्यादाका भोग न कर सकैंगे, विचारकर देखो कि कलंक और अपयशसे दबे हुए मस्तकको लेकर जीवन व्यतीत करनेकी बनिस्बत सन्मान और प्रतिष्ठाका सुवर्णमुकुट शिरपर धारे हुए जीवनविसर्जन करना कितना बढकर और प्रसंशाके योग्य है । यह देह अनित्य है, जगत्में कोई किसीका नहीं है, सब ही मृत्युके वशीभूत हैं, मान, ज्ञान, गर्व, यश, एक दिन सब ही न रहैंगे, सब ही एक दिन कालके गर्भमें लीन हो जांयगे, जब मरना ही है तो यशके साथ क्यों न मरैं जिससे कि हृदयमें किसी प्रकारका दुःख न रह जाय । ओह ! जीवन जानेकी कुछ परवाह नहीं कलंक दूर कर यशके साथ देहत्याग करो ।

कृपालु ईश्वर हमसे सदा प्रसन्न है । जब उसने हमको इस घोर संकटमें डाला है तो निश्चय फिर विजय प्राप्त करके गौरवके साथ हम इस संकटसे निकलैंगे , मैं अपने निमित्त कहता हूं कि शत्रुओंको उनके कर्मोंका फल अवश्य चखाऊंगा, यदि न कर सका तो अपने प्राण दे दूंगा, यह भी अच्छा है इससे संसारमें सदा नाम बना रहेगा; बस आओ हमलोग ईश्वरका नाम लेकर प्रतिज्ञा करैं कि चाहे जो कुछ हो युद्धमें शत्रुओंको पीठ नहीं दिखावैंगे, जबतक इस देहमें प्राणका अंश भी रहेगा तबतक अपने उद्योगमें सफलमनोरथ होनेके लिये परिश्रम करनेसे कभी न हटेंगे, मेरी यह बात सबने स्वीकार की और हाथोंमें कुरान लेकर सबने कसम खाई । अन्तमें हमारा मतलब सिद्ध हुआ कि जिसकी खबर सब ओर फैल गई ।

बाबरने सन्धि करना चाहा था परन्तु सन्धि न हुई । इस कारणसे दोनों दल संग्रामके लिये तैयार हो गये । १६ मार्चको युद्धकी घोषणा प्रचार करके राजपूतोंकी सेनाने मोरचे लगाय अत्यन्त प्रचंडतासे तातारियोंकी सेनापर दक्षिण ओरसे चढाई की । बहुत देरतक दोनों दलोंमें घोर संग्राम होता रहा । घोडोंके हिन हिनाने, हाथियोंके चिंघाडने और प्रचण्ड वीरोंकी भयंकर सिंहनादसे संग्रामभूमि बारंबार कम्पायमान होने लगी । बीच २ में तोपोंका भयंकर गर्जन भी बारम्बार कानोंके परदोंको डांवाडोल करने लगा । तोपोंसे इतना धुआँ निकला कि संग्रामस्थलमें अंधकार हो गया । उस अन्धकार राशिको फाडते हुए, अग्निमय गोले वज्रके समान तडित वेगसे राजपूत सेनाकी ओरको दौडने लगे । उन भयंकर गोलोंके प्रहारसे शतशः राजपूत वीर गण न जाने किधरको बिलाय गये । तथापि राणा संग्रामसिंह अचल अटल रहे । यद्यपि यवन लोगोंके गोलोंकी मारसे बहुतसे सवार मारे गये, तथापि राणाजी अत्यन्त उत्साहके साथ शत्रुदलके व्यूहको फाडनेके लिये भीम विक्रमसे आगे बढने लगे । क्रमानुसार महाभयंकर संग्राम होने लगा । महाराणाजीने, राजपूत-कुल-कलंक शिलादित्यका विश्वास करके उसको सब सेनाके सम्मुख भागकी रक्षा करनेको नियत किया था । उनको अचल विश्वास था कि शिलादित्य प्राणपणसे युद्ध करके यवन लोगोंको पराजित करेगा । विशेष करके यह शिलादित्य उस समय इस प्रकारकी वीरता और प्रचंड विक्रमके साथ तातारियोंपर झपट रहा था कि राणाका विश्वास और भी प्रबल हुआ । परन्तु फिर सब परिश्रम निष्फल हुआ । वह दुराचारी शिलादित्य धीरे २ आगे बढकर बाबरकी सेनामें जा मिला तातारीलोग श्रवण भैरव शोर मचाकर सिंहनाद करने लगे ! प्रलयकालीन जलधरोंके समान मुसलमानोंकी तोपें गगनभेदी शब्द करके फिर एकबार गर्ज उठीं । समरभूमिमें फिर घोर अंधकार छा गया ! राणा संग्रामसिंहका हृदय अचानक कम्पायमान होने लगा । क्रमानुसार धुएँके दूर होनेपर महाराणाजीने विस्मय और व्याकुलताके साथ देखा कि विश्वासघाती पापी शिलादित्य बादशाह बाबरकी ओर चला गया । उनका हृदय मथित होने लगा, चारों ओर अंधकार दिखाई दिया ।

हा ! विश्वास करनेका क्या यही फल है ! राणाजीने विश्वास करके उस दुराचारीके हाथमें सेनाके सम्मुख भागकी रक्षा करनेका भार दिया था पापी विश्वासघातीने इस विश्वासका यह प्रतिफल दिया ! हा नराधम—आततायी विश्वासघातक—देशका नाश करके सजातियोंके माथेपर कलंकका टीका लगा कर–देशके वैरी यवनोंकी ओर जाकर मिल गया । पीडा और शोकसे व्याकुल होकर महाराणा संग्रामसिंह संग्रामभूमिसे चले गये ! जो राजपूत वीरगण स्वदेश प्रेमिकताके पवित्र मंत्रसे उत्साहित होकर अपनी सेनाके साथ उनकी सहायता करनेके लिये वहां आए थे वे सब ही स्वदेशानुरागी आत्मोत्सर्ग करनेवाले वीरोंका अकाट्य उदाहरण दिखलाकर अनन्त

काल के लिये शस्त्रशय्यापर सो गये । डूंगरपुरके रावल उदयसिंह * और उनके दोसौ चतुर सिपाही; सालुम्बाके राजा रत्नसिंह और उनके तीनसौ चन्द्रावत सिपाही मारवाडके राठौर राजकुमार रायमल और उसके मैरता निवासी दो साहसी वीर क्षेत्रसिंह और रत्नसिंह, शोनगडा सर्दार रामदासराव; झालापति ओझा, परमार वीर गोकुलदास मेवाडके चौहान मानकचंद व चन्द्रभान और निम्नश्रेणीके बहुतसे राजपूत वीर तथा सावन्त और सरदारगणोंने हृदय चीर कर इस भयंकर यवन समरमें अपने रुधिरको दान किया था। इनके अतिरिक्त दो मुसलमान वीर भी महाराणा संग्रामसिंहकी सहायता करनेके लिये आकर रणभूमिमें गिर गये थे । इनमेंसे एक तो पदच्युत अभागे इब्राहीम लोधीका इकलौता पुत्र था,—दूसरा मिवाडका स्वामी हुसेनखां था ।

यह समस्त वीर अपनी २ सेनाके साथ रणभूमिमें विस्मय कर वीरत्व प्रकाशित करके अनन्त निद्रामें सो गये । इनकी प्रचण्ड वीरतासे और विक्रमसे यवनलोगोंकी विश्वदाही तोपें अनेक बार विमुख होगई हैं, भयंकर पराक्रम करनेवाले अनेक यवन वीर इस लोकसे बिदा हुए । परन्तु यह सब कार्य वृथा होगये । यदि वह दुराचारी विश्वासघात न करता तो कौन कह सकता है कि वीरवर बाबरका छिन्न मस्तक उस पीलूके किनारे धूरिमें लोटता या नहीं ? परन्तु भविष्यपुराणके कठोरभावी लिखनको कौन खण्डन कर सकता है ? नहीं तो राजपूत होकर पवित्र तुवरकुलमें जन्म लेकर ऐसा कौन है जो दुराचारी शिलादित्यके समान अपने देशका सत्यानाश कर सकता है ? रणभूमिमें गिरे हुए राजपूतोंके कटे हुए मस्तक एकत्र करके विजयी बाबरने संग्रामस्थलमें बडे २ कई एक पजाये बनाये और उनकी खोपडियोंसे पर्वतके शिखरपर जो कि संग्रामभूमिके सामने ही विराजमान था एक अटारी बनाई । कपटाचारी नारकी, राजपूत कुलकलंककी विश्वासघातकताका प्रदीप्त विजयस्तम्भ राजपूतोंके मस्तकोंसे बनाया गया । बाबरने विजय पाय प्रमुदित हो अपनी जयका प्रचार करनेवाली " गाजी " नामक उपाधि धारण की । इसके वंशवालोंने भी बराबर इस उपाधिको धारण किया था ।

महाराणा संग्रामसिंह दारुण मानसिक पीडासे पीडित होकर मेवाडकी शैलमालाकी ओर बढे । उनके हृदयमें कष्टदायिनी चिन्ताका आविर्भाव हो रहा था । वह कर्त्तव्याकर्त्तव्यको कुछ भी न विचार सके । परन्तु चित्तौरमें न आये । उन्होंने प्रतिज्ञा की थी कि " जो युद्धमें मुसलमानोंका गर्व खर्व न कर सकूं तो युद्धक्षेत्र ही मेरा वासस्थान है, और आकाशमण्डल ही मेरा चँदोवा (शामियाना) होगा" एक पलभरके लिये भी वह इस प्रतिज्ञाको न भूले । आज इस प्रतिज्ञाके पालन

---

* बाबरके जीवनचरित्रके अनुवादमें रावल उदयसिंहको " मुल्कका वाली राजा " कहा है । परन्तु वास्तवमें यह उपाधि सांगाके उत्तराधिकारी राणा उदयसिंहको ही दी गई है। ऐसा मूलग्रन्थमें लिखा है। फिर वितानगरपुरके राजा रावलसिंहको यह उपाधि किस प्रकारसे मिल सकती है ।

करनेका समय आ गया है इस ही कारणसे राणाने चित्तौरकी ओरको न बढकर वनवासका कठोर व्रतका अवलम्बन किया। यदि शिशोदीय कुलके नष्ट गौरवका उद्धार न हुआ तो इस वनवासमें ही जीवन समाप्त होगा।

यदि महाराणा संग्रामसिंह कुछ दिनतक जीवित रहते तो उनकी यह प्रतिज्ञा निश्चय ही पूर्ण होती। परन्तु होनहारके कठोर लेखके अनुसार उनका पवित्र जीवन, उस पराजयके वर्षमें ही इस संसारको छोड गया। मेवाड़का गौरवरवि वसवा नामक स्थानके बीच अकालमें ही अस्त होगया। बहुत लोगोंका अनुमान है कि मंत्रियोंने ही विष देकर राणाजीको मार डाला था। इस अनुमानके सत्य होनेमें सन्देह है। परन्तु इसका विचार करनेसे भी हृदयके टूक टूक हुए जाते हैं। कहते हैं कि दुराचारी मंत्रियोंने शान्ति और स्वच्छन्दताको प्राप्त करनेकी आशासे ही यह पैशाचिक कार्य किया था। यदि दुराचारियोंके कुअभिप्राय साधन करनेका केवल एक यही कारण हो, अगर इस पापकारणके ही उकसानेसे उन्होंने राजहत्यारूप घोर पापका अनुष्ठान किया हो; तो उन मंत्रियोंको, उनकी स्वच्छन्दताको और उनकी शान्ति तथा कलंकमय जीवनको हजार वार धिक्कार है! प्रजावत्सल स्वदेशप्रेमी देवतुल्य राजाका प्राण नाश करनेके बदलेमें जो नराधम शांतिको मोल लेनेकी इच्छा करे वह जलती हुई अग्निशिखाका आलिंगन करके, मृगतृष्णासे मोहित होकर जलते हुए रेतेपर शयन करे। उन दुष्ट पिशाचोंने अनाहार और अनिद्रामें रहकर क्यों नहीं अगणित कष्टोंको सहन कर लिया? ऐसा करना उनके लिये अच्छा था। नहीं तो इस अघपूर्ण पापको करके अपनी जन्मभूमिके माथेमें जो कलंक उन्होंने लगाया उस कलंकको यदि सात समुद्रके जलसे भी धोया जायगा तो भी वह नहीं छूटेगा।

बहुतसे विवाह करना भी अत्यन्त बुरा है। इस कुप्रथासे संसारमें विशेष करके राजोंके यहां तो अत्यन्त अमंगल हो जाता है। पुत्रवती होनेसे सब रानियोंकी इच्छा यही होती है कि हमारा पुत्र सिंहासनपर बैठे, इस इच्छाके पूर्ण करनेमें उनको हिताहितका ज्ञान नहीं रहता। राणा संग्रामसिंहके परलोकवासी होनेपर उनकी रानियें परस्पर कलह करने लगीं। सबने अपने २ पुत्रको राजसिंहासनपर बिठलानेकी चेष्टा की। एक रानी तो अपने पुत्रको सिंहासनपर बैठालनेके लिये यहांतक उत्कंठित हुई कि दूसरा कोई उपाय न देखकर बाबरसे मेल किया। उसका आशय यही था कि बाबर उचित उत्तराधिकारीको छोडकर मेरे पुत्रको चित्तौरका सिंहासन दे दे। इस रानीने अपना मनोगत कार्य पूर्ण करनेके लिये बाबरको रनथम्भौरका किला और फतह किये हुए मालवराजका ताज भी घूसमें दे दिया।

राणा संग्रामसिंहका आकार मध्यम था, शरीरमें सामर्थ्य अधिकतासे थी । नेत्र बडे २ और शरीर गौरवर्ण था । उनके आकारको देखते ही ज्ञात हो जाता था कि यह महाविक्रमशाली वीर हैं । अनेक प्रकारके रणरंगमें उनके कई एक अंग प्रत्यंग जाते रहे थे * उनका साहस अनन्त और चेष्टा बराबर चलती जाती थी मालवके बादशाहको कैद करके उन्होंने भलीभांतिसे अपने साहसका परिचय दिया था । इसके अतिरिक्त रनथम्भौरका किला विजय करनेके समय जो अद्भुत वीरता उन्होंने दिखाई थी उससे उनका यश दूर२ तक फैल रहा था । संग्रामसिंहके इस प्रकारके उत्तम २ गुण थे इस ही कारणसे तो बाबरने भी उनकी प्रशंसा की है । बाबर राणाजीमें भक्ति करता और उनसे डरता भी था । इस ही कारणसे उसको महाराणाके साथ दूसरी बार युद्ध करनेका साहस नहीं हुआ । यद्यपि बाबरने संग्रामसिंहको 'बुतपरस्तान' और लडाईको अपने जीवनचरित्रमें "जहाद" लिखा है, परन्तु मेवाडका वर्णन करनेके समय वह कहता है कि "राणा सांगाने अपने असीम विक्रम और तलवारके जोरसे ही सन्मान और प्रतिष्ठाको पाया ।" इस लेखसे ज्ञात होगया कि बाबर भली भाँतिसे महाराणा संग्रामसिंहके गुणोंको जानता था । दुःखकी बात है राणाने अधिक दिनका जीवन नहीं पाया । राणाके मरनेसे प्रजाको अत्यन्त शोक हुआ । प्रजाने अपने हृदयकी भक्ति और कृतज्ञताका चिह्न अटल रखनेके लिये उनकी चिता-वेदीके ऊपर एक मन्दिर बनवाया । महाराणा संग्रामसिंहजीके सात पुत्र थे । उनमेंसे सबसे बडा और छोटा तो बालकपनमें ही मृतक हुए इस कारणसे तीसरे राजकुमार रत्नसिंहको पिताका सिंहासन मिला ।

संवत् १५८६ (सन् १५३० ई०) में राणा रत्नसिंह चित्तौरके सिंहासनपर बैठे । धीरता, वीरता आदि गुणोंमें रत्नसिंह भी अपने पिताके ही समान थे । पिताके समान उन्होंने भी प्रतिज्ञा की थी कि राजधानीको छोडकर बराबर युद्धक्षेत्रमें ही रहैंगे । चित्तौरके सिंहद्वारको दिन रात खुले रहनेकी आज्ञा देकर वह दर्पके साथ कहा करते थे कि एक ओर तो दिल्ली और दूसरी ओरसे माण्डू चित्तौरका द्वार है । यदि राणा रत्न भी वीर केसरी सांगाके समान कार्य करते, यदि वह यौवनोचित प्रगल्भता और तेजस्विताके वश न हो जाते तो वह अपनी प्रतिज्ञाको निश्चय ही पूर्ण करते, फिर तो बाबरके वंशधरगण किसी प्रकारसे हिन्दुस्थानके चक्रवर्ती बादशाह न होते । परन्तु अभाग्यवश युवा अवस्थाके प्रारंभमें ही महारा-

---

* एक आंख तो पृथ्वीराजके साथ लड़ाई होनेमें जाती रही थी । दिल्लीश्वर इब्राहीमलोधीके साथ युद्धमें उनका एक हाथ और तोपका एक गोला लगनेसे एक पांव टूट गया था । इसके अतिरिक्त उनके शरीरमें हथियारोंके अस्सी घाव थे ।

णाने इस लोकसे पयान किया । राजपूतोंके युवा अवस्थाका समय अत्यन्त ही भयानक होता है । इस समयमें यह लोग अनर्थक लड़ाई झगड़ेमें मतवाले होकर अपनी जिन्दगीको बवाले जान कर देते थे । ऐसे लड़ाई झगडोंसे अत्यन्त हानि होती थी, उन भयंकर झगडोंके कारणसे बहुतसे राजा अकालमें ही इस लोकसे विदा हो गये । दुःखकी बात है कि महाराणा रत्नका प्राण भी इस ही कारणसे गया था ।

राणा रत्नजीने छिपे २ अम्बरके राजा पृथ्वीराजकी बेटीसे विवाह किया था । यहांतक कि महाराज पृथ्वीराजको भी यह समाचार विदित नहीं था । इस ही कारणसे राजकुमारीके समर्थ होनेपर वह उसके विवाहकी तइयारियें करने लगे; और बूंदीके हाडावंशीय राजा सूरजमलके साथ विवाहका संबन्ध ठहराया । शीघ्र ही विवाह हो गया । राजपूतबालाने लाजके मारे किसीसे अपने पहिले विवाहकी बात नहीं कही । इस ही कारणसे किसीने इस विवाहको नहीं रोका । परन्तु थोडे ही दिनमें यह विवाह एक महा अनर्थका कारण हो गया । इस विवाहके वृत्तान्तको जान कर राणा मनमें अत्यन्त दुःखित हुए, सूरजमलके इस आचरणने उनके मनमें दारुण आघात पहुँचाया, उसका बदला लेनेके लिये राणा रत्नजी अधीर हो गये और अवसरकी बाट देखने लगे । सूरजमलसे राणा रत्नजीका निकट संबन्ध था, राणाजीने उसकी बहिनके साथ विवाह किया था; तथापि इस अपमानका बदला लेनेके लिये उन्होंने संबन्ध बन्धनको काट डाला और दाव देखते रहे । परन्तु इस झंझटमें अहेरिया (वासन्ती मृगया) उत्सवके आते ही राणाने वैर निकालनेका भला अवसर पाया । अपने सरदार और सामन्तोंको साथ लेकर शिकार खेलनेके लिये जंगलको चले । बूंदीके राजा सूरजमल्ल भी इस समय उनके साथ थे । बूंदीके हाडालोग मेवाडकी पूर्वी पार्श्वकी पहाड़ियोंके भीतर रहते थे । यद्यपि प्रगटमें उनका राज्य मेवाडके अन्तर्भुक्त नहीं था परन्तु वे लोग राणाओंकी पूजा करते थे । युद्धस्थलमें राजचिह्न धारण करते और मेवाडके लिये प्राणपणसे युद्ध करते थे । जिस दिन यवनवीर शहाबुद्दीनके प्रचंड आक्रमणको रोकनेके लिये आर्यवीर समरसिंहने पवित्र दृषद्वतीके किनारेपर अपने प्राणोंको दिया, उस दिन हाडावंशीय युद्धविशारद हमीरने भी भारतभूमिके ऊपर अपने प्राणोंको नेवछावर कर दिया था । यह हमीर सूरजमल्लका ही पितृपुरुष था । उस ही समयसे हमीरके वंशवाले गिह्लोटकुलके विशेष अनुगत हुए । परन्तु राणा रत्नजीकी कुबुद्धिसे बूंदीके साथ मेवाडका जो वैरभाव हुआ उससे दोनों राज्योंकी मित्रताका बन्धन कुछ दिनके लिये ढीला पड गया था ।

शिकार खेलनेको जाकर राणा रत्नजी एक गंभीर बनमें पहुँचे, उनके साथी पीछे रह गये थे। केवल सूरजमल्ल साथ था। अवसर समझकर राणाने अकस्मात सूरजमल्लके तलवार मारी। वैसे ही वह घोडेपरसे गिरा, परन्तु मरा नहीं। थोडी ही देरमें चैतन्य होकर दुपट्टेसे कसके घावको बांधा और आततायी रत्नजीको अनुसन्धान करनेके लिये तीक्ष्ण दृष्टिसे चारों ओर देखा तो राणाको दूर भागते हुए देखा। तब सूरजमल्लने दुःख और क्रोधसे अत्यन्त पीडित होकर कहा "अरे कायर पुरुष ! भाग-भाग, अब तू भाग सकता है; परन्तु तेरे इस कायरपन और घिनौने आचरणसे मेवाडके श्वेत यशमें सदाके लिये यह कलंक लगा" रत्नजीने यह सुना, वह समझे थे कि सूरजमल्ल मर गया, इस समय उसको जीता हुआ देखकर फिर आक्रमण किया परन्तु इस कुबुद्धिका फल शीघ्र ही उनको मिल गया। राणाको शीघ्रतासे अपने ऊपर झपटता हुआ देखकर सूरजमल्ल भी क्रोधित सिंहके समान झपटा और उनको पृथ्वीमें गिराकर छातीपर चढकर तलवार मारी, तलवारके लगनेसे राणाजीका काम होगया और शीघ्र ही अपने शत्रुके निकट अनन्त निद्रामें सो गये।

राणा रत्नजीने केवल पांच वर्षतक राज्य किया था। तथापि इस अल्प कालमें ही भलीभांतिसे राज्यकी उन्नति की। यवन लोग तो इनके समयमें चित्तौरकी सीमापर भी नहीं आ सके। राणाकी अकालमृत्युसे कुछदिन पीछे ही उनका भाई विक्रमाजित चित्तौरके सिंहासनपर बैठा।

सम्वत् १५९१ (सन १५३५ ई०) में विक्रमाजितको चित्तौरका सिंहासन मिला। राणा रत्नजीमें जितने राज्योचित गुण थे, विक्रमाजित उनमेंसे एक गुणका भी अधिकारी नहीं था, बडे भ्राताके गुण छोडे और अवगुण लिये। महाराणा रत्नकी ढिठाई, तेजस्विता और अपरिणामदर्शिता विक्रमाजितके चरित्रमें पूर्णमात्रासे विराजमान थी। इसके अतिरिक्त वह क्षमाहीन और प्रतिहिंसापरायण भी था। क्रमानुसार यह दोष यहांतक बढ गये कि मेवाडके सम्पूर्ण सरदार राणा विक्रमाजितसे अप्रसन्न हो गये। उनके अप्रसन्न होनेका एक और भी कारण था। राणा उनके साथ जरा देरको नहीं बैठते थे और रातदिन पहलवानोंकी कुश्ती और तरह २ की कसरतें देखा करते थे। विशेष करके राजपूत सवार लोगोंने जिस सम्मानको बहुत दिनसे पा रक्खा था, विक्रमने उनके उस सम्मानको छीनकर नीचपदवाले 'पाइक' (पदातिक) और उक्त मल्लोंको अर्पण करना आरम्भ किया। इस अपमानको देखकर सरदार लोगोंके हृदयमें घोर दुःख हुआ और वे अत्यन्त दीनभावसे अपने समयको बिताने लगे।

इस प्रकारसे सरदारलोगोंके अधिकारोंको छीन मल्लादि नीचपदवाले लोगोंको देकर राणा विक्रमाजितने एक नई रीति चलाई। कदाचित मुसल्मानोंसे राणाने यह नीति सीखी हो। वह मुसलमान पदातिक सेनाका भली भांतिसे आदर करके

राजपूतोंको अत्यन्त घृणाकी दृष्टिसे देखते थे। किसी किलेको घेरनेके समय अथवा जब कि राजपूतगण घोडेसे उतर कर गलीचा बिछाय अपनी थकावट दूर किया करते हैं केवल उस ही समय उनको पैदल सेनासे काम लेना पडता है, इसके अतिरिक्त और किसी समय वह उनका आदर सत्कार नहीं करते। मुसलमान लोग पहिलेसे ही पैदलोंकी सेना रखते थे, परन्तु संग्रामके बीचमें जबसे वह तोपें चलाने लगे उस समयसे पैदल सेनाका आदर विशेषतासे बढ गया। उस ही समयसे वह घोडे सवारोंकी सेनाको तुच्छ समझने लगे कारण कि पैदल सेना ही संग्रामभूमिमें तोपोंका व्यवहार सुभीतेसे कर सकती है परन्तु राजपूत लोगोंने अपनी पुरानी रीतिको नहीं छोड़ा। प्राचीन समयसे ही वह घोडा, खड्ग और भालेको प्राणसे भी अधिक समझते थे, जिसको धर्म युद्धकी प्रधान सामग्री समझते थे आजतक भी घोडे, खड्ग और भालेका वह उतना ही आदर करते हैं। नई सभ्यता और नई रोशनीके जमानेमें जो तरह २ के अस्त्र शस्त्र और चालाकीसे युद्ध करनेकी सामग्री बजती है, बाहुबलपर भरोसा रखनेवाले राजपूतलोग इनसे घृणा करते हैं। उनका विश्वास है कि तोप इत्यादिके व्यवहारसे बाहुबलका कुछ भी परिचय नहीं पाया जाता। इस प्रकारके अस्त्र शस्त्रकी सहायतासे जो विजय प्राप्त हो उसको वह विजयके नामसे ही नहीं पुकारते।

अपमानित सरदारोंके हृदयमें धीरे२ डाहकी आग जल उठी। राणाकी सारी प्रीति और ममता उनके हृदयसे जाती रही। परन्तु इतनेपर भी विक्रमाजितके नेत्र नहीं खुले। उन्होंने अपनी विपत्तिका कुछ भी विचार नहीं किया। राणाके आलस्य और दुष्टपनेसे राज्यमें घोर अराजकता छा गई। पहाडोंके रहनेवाले असभ्यलोग पहरेदारोंसे किञ्चित भी न डरकर चित्तौरकी दुर्गप्राचीरके सामनेसे ही बलपूर्वक गोमेषादिको छीनकर ले जाते थे। प्रजाको अपने धन और मानकी रक्षाका करना कठिन हो गया। सब ही प्रजा अत्यन्त पीडित होकर आर्तवाणीसे कहने लगी कि "फिर पपाबाई * का राज्य आ गया।" राणाने अपने सरदारोंको बुलाकर असभ्य पहाडियोंका दमन करनेके लिये कहा, तब समस्त सरदारगण एक साथ बोले कि "महाराज! अपने पायक लोगोंको भेजें।"

थोडे ही समयमें मेवाडका राज्य अराजकतासे पूर्ण हो गया। गुजरातके सुलतान बहादुरने अपने वैरका बदला लेनेके लिये यह अच्छा मौका समझा। शिशोदिया कुलभूषण कुमार पृथ्वीराज; गुजरातके बादशाह मुजफ्फरको पराजित करके

---

* अतिप्राचीन समयमें पपाबाई नामक कोई राजपूतरानी थी, उसके राज्यके समय प्रजामें अत्यन्त अराजकता फैल गई थी। तबसे राजपूतलोग प्रत्येक अराजक जनपदको पपाबाईका राज्य कहा करते हैं।

चित्तौरमें कैद करके ले आये थे । बादशाहका इस समय घोर अपमान हुआ था, आज बहादुरने उस अपमानका बदला लेनेकी प्रतिज्ञा की । गुजरात और मालवेमें जितनी रणविशारद सेना थी बादशाह उस समस्त सेनाको लेकर राणापर चढ धाया । राणा विक्रमाजित उस समय बूंदी राज्यके अन्तर्गत लैचानामक स्थानमें थे । बहादुरने अपनी विशाल अनीकिनीको साथ लिये हुए वहीं राणाजीको जा घेरा । बहादुरकी उस प्रचंड सेनाको बादलके समान उमडी आती देखकर राणा विक्रमाजितको कुछ भी भय न हुआ, उन्होंने वीरवर संग्रामसिंहके औरससे जन्म लिया था, अबतक उनकी नाडियोंमें प्रचंड वेगसे संग्रामसिंहका रुधिर बह रहा है, फिर राणा विक्रमाजित किस प्रकारसे कायर हो सकते हैं क्या वह देशवैरी यवनकी प्रचंड सेनाको रोकनेमें असमर्थ होंगे ? नहीं; ऐसा कभी नहीं हो सकता, शिक्षाके दोषसे यद्यपि उनका शरीर दूषित था परन्तु इतने कापुरुष नहीं थे कि शत्रुको आता हुआ देखकर निश्चिन्त बैठे रहते । उन्होंने निडर होकर बहादुरका मुकाबिला किया, दोनों दलोंमें घोर संग्राम होने लगा । परन्तु महाराणाकी वेतनभोगी पदातिक सेना, मुसलमानलोगोंके प्रचण्ड आक्रमणको नहीं रोक सकी । इस कारण वे घोर संकटमें पड गये । उनके इष्ट मित्र कोई भी इस विपत्तिमें सहारा न दे सके । राणाजीको उनकी निर्बुद्धिताका उपयुक्त फल भोग करनेके लिये रखकर इष्ट मित्रगण संग्रामसिंहके छोटे पुत्र उदयसिंहकी तथा चित्तौरपुरीकी रक्षा करनेके लिये नगरमें चले गये ।

चित्तौरनगरकी ऐसी अपूर्व महिमा है । गतयुद्धमें वीरवर संग्रामसिंहके साथ जो अगणित वीरगण अपने देशके गौरवकी रक्षा करनेके लिये समरभूमिमें गिर गये थे उससे चित्तौरपुरी वीरशून्य हो गयी थी । परन्तु आज जैसे ही सुलतान बहादुरने चित्तौरपुरीको घेरा कि वैसे ही उन वीरोंकी चिताभस्मसे फिर अगणित वीर उत्पन्न हो गये । जो राजपूत राजालोग इससे पहिले मेवाडके घोर शत्रु थे, आज वह भी शत्रुभावको छोडकर आत्मोत्सर्गका पवित्र मंत्र सीखकर चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये आये । बहुतसा दुःख पानेके पीछे जब सूरजमलको चित्तौर प्राप्तिकी आशा न रही तब उन्होंने वनमें देवलनगर बसाया था, आज उनका ही वंशधर बाघजी पितृपुरुषोंके वासस्थान चित्तौर नगरकी रक्षा करनेके लिये प्रसन्न होकर अपने हृदयका रुधिरदान करने आया था । इस ही भांतिसे बूंदीका राजकुमार भी अतितेजस्वी ५०० सौ हाडा वीरोंको लेकर और शौनगडे, देवर व अन्यान्य राजपूत वीरगण मेवाड़की रक्षा करनेके लिये खड्ग धारण करके आये ।

मध्यभारतके मुसलमान बादशाहोंने जितनी बार चित्तौरपुरीपर चढाई की यह चढाई उन सब चढ़ाइयोंमें भयंकर थी । इस भयंकर चढ़ाईमें एक चतुर

यूरूपियन गोलन्दाज भी बहादुरकी सहायता करनेके लिये समरभूमिमें आया था *
भट्टलोगोंने इस गोलन्दाजको "फिरंगानका लाब्रीखां" कहकर पुकारा है। इस ×
लाब्रीखांकी ही सहायतासे बहादुरने चित्तौरको विध्वंस करके अपने पुराने वैरका
बदला लिया था।

लैचास्थानमें राणा विक्रमाजितको परास्त करके विजयी बहादुर उस सेनाको साथ लिये हुए चित्तौरपर जा पहुँचा। आज चित्तौरपर घोर संकट आ पड़ा है! इस संकटसे कौन चित्तौरपुरीकी रक्षा करेगा? आज कौन शिशोदिया कुलके गौरवको उद्धार करेगा? थोडेसे जिन राजपूतोंने स्वदेशप्रेमके मंत्रसे व्रती होकर अस्त्र धारण किया है, बहादुरकी अनीकिनीसे अगर उसकी बराबरी की जाय तो वह लोग कुछ भी न थे;—अनन्त समुद्रके लिये मानो पानीके कुछ बबूले थे। तथापि भगवान एकलिंगके नामसे शपथ करके उन्होंने प्राणपणसे युद्ध करनेकी प्रतिज्ञा की और प्रचण्ड रणभेरी बजाकर शत्रुकी विक्रमाग्निको खलबला डाला। उनकी गंभीर रणभेरीका शब्द आकाशमें गुञ्जार हो रहा था कि उसी समय बहादुरकी कालसमान तोपें, मानो संपूर्ण संसारको पातालमें भेजनेके लिये विश्वसंहारकारी असंख्य वज्रोंके समान शब्द करके गर्ज उठीं। प्रकृति स्तंभित हो गई मानो पलक मारतेमें संसारका अस्तित्व लोप हो गया! मानो संसार सौ टुकडे होकर पातालमें प्रवेश करने लगा। राजपूत वीरलोग दूने उत्साहसे उत्साहित हो फिर सिंहनाद कर उठे; तथा अग्निमय गोलोंको ताक २ कर उनके ऊपर बाण छोडने लगे। कदाचित् उनके

---

* हम पहिलेही एक टिप्पणीमें लिख आए हैं कि प्राचीन समयमें भी आर्यलोग तोप और बन्दूकका व्यवहार करना जानते थे। पुराणोंके तत्त्वको न जाननेवाले इच्छानुसार बका करें, हमें उनसे कुछ सम्बन्ध नहीं; कारण कि हमको ज्ञात है कि प्राचीन आर्यलोगोंने अद्भुत विज्ञानके बलसे अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र बनाये थे। भली भांतिसे पुराणोंको पढनेपर इस बातके बहुतसे प्रमाण मिल जांयगे। महाकवि चन्दभट्टने भी अपने ग्रन्थमें तोप बन्दूकका वर्णन किया है, उन्होंने इन अस्त्रोंको "नलगोला" के नामसे लिखा है। परन्तु इस बातका निर्णय करना कठिन है कि मुसलमानोंने कबसे तोप और बन्दूकका व्यवहार करना सीखा, कहते हैं कि बादशाह अलाउद्दीन किलेपर आक्रमण करनेके समय "मुजनिक" नामक एक प्रकारकी कलका व्यवहार किया करता था, लेकिन यह कल बन्दूक या तोपके समान नहीं थी। जहांतक हमारा विचार पहुँचा उससे हम कह सकते हैं मुसल्मानोंमें सबसे पहिले बाबरने तोपका व्यवहार किया। इसकी तोपोंको रूमीखांनामक एक गोलन्दाज चलाता था। यह रूमीखां कौन था? टाडसाहबने इसको सीरिया देशका रहनेवाला बताया है।

× टाडसाहबने इस लाब्रीखां (फिरंगी) को पुर्तगीजवीर वास्कोडिगामाकी फौजका एक सिपाही बताया है। परन्तु जब (सन् १५३३ ई० में) बहादुरने चित्तौरको तबाह किया था, वास्कोडिगामा इससे बहुत पहिले मर चुका था, इस कारण ऐसा जान पडता है कि यह लाब्रीखाँ, किसी और पुर्तगालवाले नाविकके दलका था जो कि वास्कोडिगामासे पीछे हुआ था।

दो एक ही वीर निशानेसे चूके हों, अबकी बार और भी मुसलमानोंकी तोपें गरजीं ! तोपोंके धुएँसे संग्रामभूमिमें अंधकार छा गया । सूर्यभगवानकी तीव्र किरणें भी रुक गईं, पलभर तो कुछ भी दिखाई न दिया !–केवल अन्धकार ! घोर अन्धकार !–इस प्रकार बहुल देरतक घोर युद्ध होता रहा ! दोनों ओरके अगणित सिपाही मारे गये । बहादुर किसी भांति चित्तौरपर अपना अधिकार न कर सका । फिर चतुर लाब्री-खाँने वीका पहाडीके नीचे एक बडी भारी सुरंग खोदी और उसमें बारूद भरकर आग लगा दी । हजार वज्रके समान शब्द करके वह बारूद जल उठी । उसके साथ ही किलेकी ४५ हाथ जमीन भी एक साथ उड गई । उस स्थानमें हार राजकुमार वीर अर्जुन राव अपने पांचसौ सिपाहियोंको साथ लिये हुए युद्ध कर रहा था, वहांकी जमीनके उडते ही वह भी सेनासहित मारा गया ! चित्तौरके किलेकी भीत कई जगहसे टूट गई । उन्हीं छिद्रोंसे होकर किलेमें प्रवेश करनेके लिये यवनवाहिनी नदीके प्रवाहके समान दौडी । परन्तु चित्तौरपुरी अबतक वीरशून्य नहीं हुई है यमराजके समान कई राजपूत लोग अबतक जीवित हैं । जबतक देहमें प्राण रहेंगे नाडियोंमें जबतक रुधिर बहेगा तबतक क्या वह अपनी मातृभूमि चित्तौरपुरीको शत्रुओंके हाथमें जाने देंगे ? कभी नहीं । बातकी बातमें वीरवर दुर्गा राव, अन्य, दूदू नामक दो चन्दावत वीर और कितनी एक सेना उन छिद्रोंके सामने आनकर डट गई वह लोग अचल, अटल और पहाडके समान डटे । प्राण रहते हुए यहांपरसे कभी नहीं हट सकते ? मुसलमानोंके झुण्डके झुण्ड उस ओरको धाये । परन्तु वीरवर दुर्गा राव और उनके साथी वीरगण जबतक जीवित रहे तबतक मुसलमानोंकी एक न चली । परन्तु थोडेसे राजपूत मुसलमानोंकी अगणित प्रचण्ड सेनाको कबतक रोक सकते हैं ? बहुत देरतक अद्भुत विक्रम दिखाकर राजपूत वीरगण उन छिद्रोंके निकट ही गिर गये । रणमतवाले यवन लोग सिंहनाद करने लगे और बड़ी शीघ्रतासे उस छिद्र मार्गके निकट आये, अकस्मात् सब ही ठठक गये, सब यवनसेना इस प्रकारसे खडी हो गई कि जैसे सर्पगण मंत्रसे बँधकर चुपचाप रह जाते हैं। उन्होंने देखा कि केश बखेरे, भीम रूप धारण किये, वीर वेष बनाये एक स्त्री रणतुरंगपर चढी हुई हाथमें भयंकर भाला लिये, उस छिद्रके पीछे खडी है ।–यह स्त्री और कोई नहीं है;–राठौर कुलमें उत्पन्न हुई शिशोदीय महारानी जवाहरबाई यहां-पर खडी हैं ! बीरनारी जवाहरबाई रणचंडीका वेष धारण करके उस छिद्रमार्गको रोक कर खडी रही!मुसलमानोंको आगे बढता हुआ देखकर महारानी झपटकर उनके आगे आई । बीरांगनाके भालेसे बहुतसे यवनोंका संहार होगया । परन्तु यह सब वृथा ही है, उफनते हुए समुद्रके समान यवनगण एक साथ महारानीके ऊपर आ टूटे । तथापि वीरबालाका उत्साह न गया और अपूर्व वीरता दिखा कर मुसलमानोंसे युद्ध करने लगी आज वीरनारी अकेली है–कितने एक राजपूत वीरको साथ लिये हुए–अगणित यवनोंसे संग्राम कर रही है, बहादुर हाथीपर बैठा हुआ दूरसे इस कौतुकको विस्मित हो-

कर देख रहा था। वीरबालाका अद्भुत रणरंग देखकर वीरताका अभिमान करनेवाले यवन वीर अकचका कर रह गये ! क्या शक्तिरूपा महादेवीजी आज दैत्योंका संहार कर रही हैं ! परन्तु समुद्रके बीचमें तिनकेका क्या सहारा हो सकता है ? अन्त में चित्तौरकी रक्षाका कोई उपाय न देखकर वीरनारी जवाहरबाई सहित वेगसे अपने घोडेको चलाकर यवनसेनाके बीचमें घुस गई और संसारमें वीरनारीका अपूर्व उदाहरण और प्राण निवछावर करनेका अकाटय प्रमाण रखकर शत्रुओंके बीचमें ही अपने शरीरको त्याग दिया।

महाशक्तिकी शक्तिसे कुछ न हुआ। आज चित्तौरके दिन भले नहीं हैं, फिर इस संकटसे कौन चित्तौरपुरीका उद्धार करेगा ? सरदारलोगोंने एक बार फिर चित्तौरके भविष्य भाग्याकाशकी ओर देखा;–तब ज्ञात हुआ कि अब चित्तौरकी कोई आशा नहीं है, तथापि उस ही समय मानो किसीने चित्तौरके ऊंचे किलेपरसे जलद गंभीर वाणीसे पुकारा "राजबलिकी तैयारी करो" सरदारलोग हताश या निरुत्साह नहीं हुए। क्या चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवीको शोणित पान करनेकी दारुण प्यास लगी है ? परन्तु राजबलि कहांसे आवे ? केवल संग्रामसिंहका बालक पुत्र उदयसिंह है वह तो बालक है, वह किस प्रकारसे खड्ग धारण करके संग्रामभूमिमें जायगा ? किस प्रकारसे देवीकी आज्ञाका पालन किया जाय ? सरदारलोग किलेमें बैठे हुए इस प्रकारसे अनेक विचार कर रहे थे कि उस ही समयमें देवलपति बाघजीने उनके सामने आकर कहा "क्या बाघारावलका पवित्र रुधिर इस हृदयमें नहीं बहता है ? आप लोग राजबलिके लिये क्या चिन्ता करते हैं ? आज मैं ही प्राण दे कर देवीकी आज्ञाका पालन करूंगा। सबकी चिन्ता दूर हुई। जिस सूरजमलने चित्तौरके लिये वीरवर पृथ्वीराजके साथ भयंकर संग्राम किया था; यह बाघजी उसके ही वंशमें उत्पन्न हुआ है, यह भी शिशोदियाकुलका भूषण है। बाघजीने क्षणभरके लिये राजसम्मानको भोग किया। छत्र, चामर और किरण क्षणभरके लिये उनके मस्तकपर विराजमान हुए। फिर पीछे पीले कपडे पहिरे गये। जिसको देखो वही पीले कपडे पहिर रहा है ! अन्तकालका वीरवेष, पीले कपडोंका पहरना समाप्त हुआ। सर्दार सामन्त और प्रधान २ सेनापतियोंने सदाके लिये एक दूसरेसे बिदा ले ली। फिर महादर्पके साथ बाघजीके मस्तकपर बाघारावलकी विजय बैजयन्ती और उज्ज्वल छेंगी * उठाय श्रवण बिदारी वीरनाद करते हुए शत्रुओंके सामने हुए। इस ओर राजकुमार उदयसिंह बून्दीके विश्वासी राजा शूरथानके हाथमें समर्पण किये गये उस दिन–चित्तौरकी उस संकटापन्न अवस्थामें वीरवर बप्पारावलकी हैमतपन मंडित विजयपताका देवलराज्यके मस्तकपर इस अधिकाईसे शोभित हुई कि जैसी

* छेंगी महाराज बाघारावलका एक राजचिह्न है। एक लकडीके डंडेके ऊपर प्रायः दो हाथ लम्बा एक चमडा लगा रहता है उसके ऊपर शुतरमुर्ग और बीचमें सुवर्णका सूर्य बना होता है।

कभी शोभित नहीं हुई थी। राजबलिके गरम रुधिरसे चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवीका खप्पर भरनेसे पहिले ही भयंकर 'जुहारव्रत' का कार्य पूरा किया गया। अब समय नहीं है; यवनलोग छिद्रके मार्गसे धीरे २ चित्तौरमें चले आते हैं; अतएव चिता बनानेका तो समय नहीं है। सरदारलोगोंने इस भयंकर व्रतके शीघ्र समाप्त होजानेका एक उपाय सोचा। दुर्गके भीतर एक बडा भारी गढा खुदवाया, बारूदके ढेरके ढेर उसमें डाले गये तथा और भी दाहक पदार्थ डालकर आग लगाई प्रचण्ड शब्द करके अग्नि जलने लगी ! सबके देखते हुए महारानी कर्णावती तेरह हजार राजपूत बालाओंके साथ करुणा शोकके गीतोंसे सारी प्रजाको रुलाती हुई सरलता और प्रसन्नतासे उस अग्निमें कूद पडीं। एक मुहूर्तमें तेरह हजार वीरबालाओंने इस असार संसारसे पयान किया, किसीका चिह्नक भी शेष न रहा। रूप—यौवन—लावण्य गौरव पलभरके बीचमें इन सबका अन्त होगया। कुछ भी शेष न रहा। अब सरदारलोग निश्चिन्त हुए। इस समय किसीके मुँह देखनेकी आवश्यकता नहीं है—अब किसीके लिये आँसू नहीं बहाने पडेंगे, जिनके लिये हृदय रोता, जो यत्नका धन थीं, व्यथाकी सामग्री थीं वह प्रीतिदायिनी आनन्दमयी कन्या, बहन और स्त्रियें आज अनलमें प्रवेश कर चुकी हैं। शिशु राजकुमार उदयसिंह भी बेखटके रक्षित होगया। * फिर अब और किसका डर है और किसका सोच विचार है। चित्तौरके वीरगण रणमतवाले होकर बारंबार सिंहनाद करने लगे। श्रवण भैरव रवसे वसुधाको कम्पायमान करते हुए राजपूतोंके रणदमामें फिर बज उठे ! हाथमें नंगी तलवार लिये रणोन्मत्त बाघजी किलेका द्वार खोलकर चित्तौरके बचे हुए वीरोंके साथ झपट कर यवन वाहिनीके बीचमें प्रवेश कर गया। उन लोगोंके भयंकर खड्गप्रहारसे अनेक यवनलोग कालकवलित हुए परन्तु क्या होता है। यह थोडेसे राजपूत वीर इस प्रकारसे वहां लीन हो गये कि जैसे समुद्रमें २। ४ पानीके बबूले बिला जाते हैं।

आज बहादुरने भलीभांतिसे चित्तौरवालोंसे अपना वैर निकाला × राजपूत नर नारियोंके हृदयके रुधिरने उसके हृदयकी कठोर ज्वालाको बुझाया! उस समय वह दुराचारी अपनी विजयके चित्रको देखनेके लिये श्मशानरूपधारी चित्तौरमें आया। वह चित्र अत्यन्त बीभत्स—और हृदयस्तंभनकारी था। वह अत्याचारी भी अपनी करतूतको देखकर सहम गया ! उसके कठोर हृदयपर मानो बिजलीसी गिर पडी। चित्तौरकी गली २ में मनुष्योंका रुधिर बह रहा था। स्थान २ पर कटे हुए अगणित शिर, हाथ, पांव और लोहू लुहान मृतक देह पडे हुए थे। कहीं २ पर अगणित अधमरे मनुष्य मृत्युयंत्रणाका कठोर कष्ट सहते हुए हृदयमें ही आर्त्तनाद कर रहे हैं—यवनोंको

---

* जिस विश्वासी राजपूतने ऐसे भयंकर समयमें उदयसिंहकी रक्षा की थी उसका नाम चूकासेनधुण्डेरा था ऐसे महात्माका नाम अवश्य ही इतिहासमें लिखना चाहिये।

× सम्वत् १५८९ (सन् १५३३) के ज्येष्ठ कृष्ण द्वादशीको चित्तौरका यह विध्वंस हुआ था।

बारंबार शाप दे रहे हैं कोई अपमान और कारावासकी पीडासे छुटकारा पानेके लिये विषपान करनेको तैयार हैं। कोई २ तीक्ष्ण छूरीको अपने हृदयमें मार रहे हैं, चित्तौरमें आज प्रलयकाल आ पहुँचा है। कोई नहीं है-बालकोंसे लेकर बूढे और स्त्रियोंतकने अपनी जान दे दी है! आज चित्तौरपुरीकी जान निकल गई! राजस्थानके प्रधान २ सामन्तकुल रक्षक शून्य होगये;-प्रधान २ वीरवंश निर्मूल हुए! इस भयंकर संग्रामसे सब बत्तीस हजार (३२०००) राजपूत वीरोंने प्राण दिये थे! यह चित्तौरका दूसरा विध्वंस हुआ।

बहादुरशाहने पंद्रह दिनतक चित्तौरमें रहकर अनेक प्रकारके आनंद उत्सव किये। इतनेमें ही समाचार आया कि मुगल वीर हुमायूं चित्तौरका उद्धार करनेके लिये सेना सहित चला आता है। भयके मारे बहादुरशाह थर्रा गया; उसने विना विलम्ब किये देशको लौट जानेकी तैयारी की। इस बातका निर्णय करना जरा कठिन है कि कौनसे सम्बन्धके कारण हुमायूं वंगदेशकी विजयको छोडकर चित्तौरमें आया था। परन्तु यहांपर यह लोगोंकी युक्ति ही ठीक जान पडती है, वे कहते हैं कि एक पवित्र मित्रबन्धनके अनुरोधसे ही मुगल वीर हुमायूं बहादुरके कराल ग्राससे चित्तौरका उद्धार करनेके लिये आया था। उदयसिंहकी माता रानी कर्णवतीने हुमायूंको धर्म भ्राता बनाया था। राजपूत लोग इस पवित्र भ्रातृत्व बन्धनको "राखी बन्धन" के नामसे पुकारते हैं।

भट्टग्रंथोंमें लिखा है कि चित्तौरके भयंकर समरमें जब वीरनारी जवाहरबाईने अपने प्राण दिये, तब रानी कर्णवतीने अपने बालकपुत्रकी प्राण रक्षाका कोई निश्चित उपाय न देखकर विवश हुमायूंकी सहायता चाही और उसके पास पवित्र राखीबन्धन भेज दिया। वीर प्रथाकी योग्य विधिके अनुसार हुमायूंने उस भ्रातृसम्बन्धको पवित्र हृदयसे ग्रहण किया और धर्म-भगिनीको विपत्तिसे उद्धार करनेकी प्रतिज्ञा कर सेना सहित चित्तौरकी ओर चला। यदि हुमायूं कुछ पहिले चित्तौरसे आ जाता तो बहादुर शाहके द्वारा चित्तौरका यह कठोर विध्वंस न होता, और धर्म बहिनके उद्धार करनेकी जो प्रतिज्ञा की थी वह भी सब प्रकारसे पूर्ण हो जाती। परन्तु रानी कर्णवतीका दुर्भाग्य था यदि ऐसा न होता तो वह विलम्ब करके राखी क्यों भेजती। *

राखीका उत्सव वसन्तकालमें ही हुआ करता है। राजपूत बालागण इस समय अपने २ भाइयोंके पास राखी भेजती हैं और उनको अपनी धर्मभ्राता बनाती हैं। भारतेश्वर भुवनविदित अकबरका पुत्र जहांगीर तथा शाहेजहांन और अवरंगजेब भी * इस

---

* कहते हैं कि हुमायूंने बहादुरके सामने आकर उसके साथ कूटार्थमय सदैव वाक्‌युद्ध किया था।

* जो हिन्दूवैरी औरंगजेब राजपूतोंपर कठोर अत्याचार किया करता था उसने भी परमानंदके साथ उदयपुरकी राजमाताकी भेजी हुई राखी ग्रहण कर ली थी। उनके पास जो कई एक पत्र औरंगजेबने भेजे, उनकी लालित्यता और पवित्रता देखनेसे आश्चर्य होता है। टाड साहबको उसमेंके दो पत्र मिल गए थे, औरंगजेबने उन पत्रोंमें राजमाताको "धर्मकी बहिन" कहकर सम्बोधन किया है।

पवित्र बन्धनसे बन्धकर अपनेको कृतार्थ समझते थे । × कभी २ राजपूतोंकी कुमारी लडकियां भी राखी भेजा करती हैं । परन्तु विषम संकट अथवा अत्यन्त प्रयोजनके समय ही वह ऐसा करती हैं। नियत हुए मनुष्यके पास राखी भेजनेके समय राजपूत ललनागण उसको धर्मभ्राताके नामसे पुकारा करती हैं । इस उपाधीके साथ राखीको पाते ही धर्मभ्राता अपनी धर्मबहनका मंगल साधन करनेके लिये अपने प्राणतक भी दे देता है, और अवसर आ पडनेपर बराबर अपनी प्रतिज्ञाको पूरी करता है। परन्तु इस वीर व्यवहारमें भी एक बात विचित्र है । चाहे धर्मभ्राता अपनी धर्मबहिनके लिये अपने प्राणतकका दाव लगा दें, परन्तु कभी उस ललनाके लावण्यमय मुखकी प्रसन्न मुसकानको नहीं देखने पाते, कारण कि जिसके लिये वह अपने सुखको जलांजलि दे कर प्राणतकको दे डालते हैं, उस राजपूत बालासे कभी उनका प्रत्यक्ष साक्षात् नहीं होता; तथापि इस पवित्र भ्रातृ–बन्धनमें एक ऐसी मायामयी शक्ति है कि उसके प्रभावसे वीरगण मोहित होकर अपने इतने नीचे इस सम्बन्धकी चाहना किया करते हैं। जो राखीबन्धन इतनी पवित्र सामग्री है, जिसको पानेके लिये राजा महाराजा लोग भी ललचाते रहते हैं; उसके बनानेका कोई विशेष नियम नहीं है; सब ही अपने २ वित्तके अनुसार उसको बना लेते हैं। कोई रत्न, कोई २ सुवर्णका हार और कोई २ साधारण रेशमकी राखियें बनाकर अपने धर्मभ्राताको अर्पण किया करती हैं। राखीको प्राप्त करते ही वीरगण इसके बदलेमें पशमीना, साटन अथवा मुक्ताजडी जरीकी एक२ × चादर भेजा करते हैं, और कभी २ इस चादरके साथ एक २जनपद भी भेटमें दे देते हैं। बादशाह हुमायूंने महारानी कर्णवतीकी राखी पाकर अपनेको कृतार्थ समझा और आनन्दसे कहने लगा । " हमशीरासाहबने जो कुछ कहा है, मैं जहांतक मुमकिन होगा, सब तरहसे उनका काम बजाऊंगा । यहांतक कि अगर रनथम्भौरका किला लेनेकी भी उन्हें ख्वाहिश हो तो मैं वह भी उन्हें दे दूंगा । " सम्राटने अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये भलीभांतिसे यत्न किया । और अपनी धर्मबहिनको और भानजोंको विपत्तिसे बचानेके लिये बंगालकी चढाईको छोड़ आया था ❋ हुमायूंको सब प्रकारसे योग्य जानकर ही रानीने राखी भेजी थी।

× आजकल उत्तर पश्चिमादि देशोंमें तो राखीका उत्सव श्रावणीकी पूर्णिमाको हुआ करता है। कदाचित् राजपूतोंमें इस नामका कोई दूसरा उत्सव वसन्त समयमें होता होगा ।

+ ज्ञात होता है कि अपमान और विपत्तिसे धर्मबहिनोंको बचानेके लिये ही इस प्रकारकी चादर भेजी जाती है ।

❋ टाडसाहब लिखते हैं कि " राखी बन्धनके विषयमें और भी अनेक कहावतें सुनी जाती हैं । " टाडसाहब जैसे प्रतिष्ठित थे उनका पद ऊंचा था और स्वभाव अत्यन्त सरल था । इस कारणसे अनेक राजपूत बालाओंने राखी भेजकर उनको ' धर्मभइया ' बनाया था । इन राखी भेजनेवालियोंमें उदयपुर, बूंदी और कोटेकी रानियें तथा राणाजीकी अनूढा बहिन चांदबाई विशेष प्रसिद्ध हुईं। इन साधारण राखियोंको टाडसाहब अमूल्य और अपार्थिवरत्न समझकर हृदयमें धारण करते थे ।

हुमायूंमें वीरता, उदारता और सत्यप्रियता यह तीनों गुण समान भावसे विराजमान थे । पिता बाबरके साथ बियाना आदि स्थानोंके संग्रामोंमें रहकर उसने जैसी वीरता दिखाई थी, भारतके इतिहासमें भलीभांतिसे उसका वर्णन पाया जाता है और बाबरने भी अपने जीवनचरित्रमें इस वृत्तान्तको लिखा है । हुमायूंने भलीभांतिसे अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण किया । बहादुरको चित्तौरसे निकालकर भगाया और मालवेकी राजधानी माण्डुनगरको भी छीन लिया, इसके छीन लेनेका यह कारण था कि मालवेके बादशाहने बहादुरकी सहायता की थी । इस प्रकारसे चित्तौरका उद्धार करके वहांके सिंहासनपर राणा विक्रमाजितको विराजमान किया ।

दुःख कष्ट और अनेक पीडाओंको भोगकर फिर राणा विक्रमजितने चित्तौरके सिंहासनको पाया । परन्तु इतनेपर भी उनका चाल चलन न सुधरा । घोर संकटमें पडकर भी उनके हृदयमें ज्ञानका संचार न हुआ । थोडे ही दिनोंमें फिर वही कठोर स्वभाव हो गया, फिर अपने सरदारोंपर अनेक प्रकारके अत्याचार करने लगे । धीरे २ यह दुष्टता यहांतक बढी कि राणा अपनी मर्यादाको भूलकर पशुके समान व्यवहार करने लगे । जिस करमचंदने उनके पिताको विपत्तिके समय सहारा दिया था, और जो करमसिंह बुढापेकी अनीपर पहुंचकर संसारसे बिदा होनेकी तैयारी कर रहा था उस माननीय बूढे करमसिंह परमारपर भरी सभामें विक्रमाजितने प्रहार किया । यह अन्याय और यह दारुण अपमान देखकर समस्त सरदार गण अपने २ आसनसे उठ बैठे और सामन्त शिरोमणि चन्दावतवीर कर्णजीने क्रोधसहित चिल्लाकर कहा "भ्रातृगण ! अबतक तो हमलोग फूलकी गंध सूँघते रहे, परन्तु इस समय उसके फलको चाखेंगे ।" तब दलित घोर अपमानित करमसिंहने क्रोधमें भरकर कहा "कल ही उस फलका स्वाद मालूम हो जायगा।" तत्काल समस्त सरदारलोग दरबारमेंसे उठकर चले गये ।

राजपूतगण राजाको अपना आराध्य देवता समझते हैं, राजाको पवित्र भावसे पूजनेकी आज्ञा उनके धर्मग्रंथोंमें भी लिखी है; इस आज्ञाका उल्लंघन करनेसे उनका लोक परलोक बिगडता है ! परन्तु इस आज्ञाकी भी सीमा है, प्रयोजन आ पडनेसे इसका भी निरादर हो जाता है । राजा दुराचारी हो, अथवा उसके द्वारा प्रजाका कोई महान् अनिष्ट होता तो फिर वह देवताके समान नहीं समझा जाता । तब प्रजागण उसको साधारण मनुष्य समझकर राज्यके मंगलार्थ सिंहासनपरसे भी उतार देते हैं, राजपूतोंके विधान ग्रंथमें ऐसे अनेक उदाहरण पाये जाते हैं ।

परन्तु कभी ही ऐसी घटना होती है ऐसा कभी दैवात् ही होजाता है कि राजपूत नृपति प्रजापर अत्याचार करे। कारण कि राजाके साथ प्रजाका ऐसा दृढ प्रेमबन्धन होता है कि राजा उस बन्धनको तोडकर प्रजापर अत्याचार नहीं कर सकता। जिन अगणित नर नारियोंके भाग्यकी डोर उसके हाथमें होती है, जो राजाको पिता और देवताके समान समझकर भक्ति करते हैं, फिर वह राजा छातीपर पत्थर रखकर कैसे उनको सतावैगा ?

क्रोधित सरदारगण राजभवनको छोड़ वीरवर पृथ्वीराजकी उपपत्नीके गर्भसे उत्पन्न हुए पुत्र बनवीरके पास पहुँचे और समस्त समाचार कहकर उसको चित्तौरके सिंहासनपर अभिषेक करना चाहा। पहिले तो बनवीर इस बातपर राजी न हुआ; राजाको गद्दीसे उतारकर उसके सिंहासनपर अपना अधिकार करना उसने एक भयंकर कुकर्म समझा, परन्तु जब मेवाडकी शोचनीय दशाका विचार किया, जब देखा कि सरदारोंकी बात न माननेसे मेवाडकी बडी हानि होगी, तब चित्तौरका सिंहासन ग्रहण करनेकी अनुमति दी। अभागा विक्रमाजित् सिंहासनसे उतारा गया, इस घोर अपमानके थोडे ही दिन पीछे उसके जीवनरूपी नाटकका पिछला अंक खेला गया और जिस समय रणवासकी स्त्रियोंकी करुणा शोक ध्वनिने उसके जीवनावसानकी घोषणा कर दी, उस काल बनवीरके अभिषेक जनित आनन्द कुलाहलसे वह उच्च शोकध्वनि दबकर लोप होगई।

नवाँ अध्याय ९.

वनवीरका राज्यशासन।—संग्रामसिंहके बालक पुत्र उदयसिंहको मार डालनेके लिये वनवीरका उद्योग करना;—उदयसिंहकी प्राणरक्षा;—उनका बहुत समयतक गुप्त भावसे रहना,—सरदारोंका उदयसिंहको राणा समझना;—दूनाका वर्णन;—उदयसिंहका चित्तौरको पाना;—वनवीरका सिंहासनसे उतारा जाना;—नागपुरके भोंसलोंकी उत्पत्तिका वर्णन;—राणा उदयसिंहके राज्यका वर्णन;—उनकी अयोग्यता;—हुमायूंका राज्यभ्रष्ट होना;—अकबरका जन्म;—हुमायूँका दूसरी बार सिंहासनपर बैठना;—हुमायूँके परलोकवासी होनेपर अकबरका तख्तपर बैठना;—उदयसिंह और अकबरके परस्पर विवादी चरित्रकी समालोचना;—अकबरका चित्तौरपर चढना और राणाका चित्तौरको छोडकर भाग जाना;—चित्तौरकी रक्षाके लिये राजपूतवीरोंका खड्ग धारण करना;—जयमल और—पत्त; वीरनारी;—जुहारव्रत;—हिन्दू मुसलमानोंका तुमुलयुद्ध;—अकबरकी विजय;—नगरवासियोंकी हत्या;—उदयसिंहका उदयपूर बसाना;—उदयसिंहका परलोकवासी होना।

राज्य और संपत्तिमें कौनसी मोहिनी शक्ति है, इसको राजा या धनवानके अतिरिक्त दूसरा कौन जान सकता है? जिस वनवीरने इससे पहिले सरदार लोगोंके

अनुरोधको माननेमें अपनी सम्मति नहीं दी थी, विक्रमाजितको उतारकर जिस सिंहासनको अपने अधिकारमें कर लेना उसने घोर पापकर्म समझा था, आज केवल कई एक घंटेतक ही सिंहासनपर बैठकर उसके हृदयका संपूर्ण भाव एक साथ बदल गया। वह राज्यसामर्थ्यको ही सब सुखोंसे उत्तम समझने लगा। प्रथम बार राजवेष धारण करनेके समय उसने मन ही मनमें बहुतेरी इधर उधर की थी, विक्रमाजितके लिये कितना ही दुःख और खेद प्रकाशित किया था, परन्तु न जाने इस समय उसका वह सुकुमार भाव कहां गया? भगवान् एकलिंगकी पूजाको मानकर वह बारम्बार इस समय कहा करता "हे भगवन्! आपहीकी करुणाके वशसे आज मैंने मेवाडका सिंहासन पाया है, हे महादेव! कहीं इससे वंचित मत करना।" राज्यके मोहिनी मायाके फंदेमें फँसकर बनवीर इतना भ्रान्त हो गया कि उसने एकबार भी इस बातका विचार न किया कि यह मैं किसके राज्यको भोग करने चला हूं? यद्यपि सरदारोंने विक्रमाजितको गद्दीसे उतारकर बनवीरको राज्यसिंहासनपर विराजमान किया है, तथापि क्या बनवीर सदाके लिये इस सिंहासनपर विराजमान रहेगा? क्या बनवीरको यह समाचार विदित नहीं है कि संग्रामसिंहका बालक पुत्र उदयसिंह शुक्लपक्षके चन्द्रमाके समान दिन२ बढ रहा है क्या समर्थ होनेपर वह अपने अधिकारको न लेगा? यह कभी विश्वास नहीं किया जा सकता कि सरदारोंने बनवीरको कुछ ऐसी सम्मति दी हो। वरन ऐसा ज्ञात होता है कि उदयसिंहके समर्थ होनेतक बनवीरको राज्य दिया गया था परन्तु भट्टग्रंथोंमें इसका कोई भी विवरण नहीं पाया जाता।

सिंहासनपर बैठते ही बनवीरका हृदय बदल गया, तत्काल ही उसने प्रतिज्ञा की कि मेरे सुखके मार्गमें जो कई एक कांटे हैं उन सबको दूर करूंगा। पहिला और प्रधान कण्टक तो छः वर्षका बालक उदयसिंह है। इस कंटकका नाश करनेके लिये वह क्रूर रात्रिके होनेकी बाट देखने लगा। धीरे २ रात हो आई। कुमार उदयसिंहने भोजनादि करके शयन किया। उनकी धाई बिस्तरेपर बैठी हुई सेवा करने लगी, कुछ विलम्बके पीछे रनवासमें घोर आर्त्तनाद और रोनेका शब्द सुनाई आने लगा। इस शब्दको सुनकर पन्ना धाई विस्मित हुई वह डरसे उठना ही चाहती थी कि इतनेमें ही बारी, राजकुमारकी जूँठनादि उठानेको वहां आया और भय विह्वलभावसे कहने लगा "बहुत बुरा हुआ सत्यानाश होगया, बनवीरने राणा विक्रमाजितको मार डाला!" धाईका हृदय काँप गया वह समझ गई कि निष्ठुर बनवीर केवल विक्रमाजितको ही मार कर चुप न होगा, वरन उदयसिंहके मारनेको भी आवैगा। मानो किसी अदृश्य देवताने धाईके कानमें यह बात कह दी, उसने राजकुमारके बचानेका उपाय अत्यन्त शीघ्रतासे कर लिया। गृहके फलादिक रखनेका एक बडाभारी टोकरा

रक्खा हुआ था, निद्रित राजकुमारको उसमें बड़ी सावधानीसे शयन करा दिया, तथा कितने एक वनवृक्षोंके पत्तोंसे उसको ढक कर उस बारी * के हाथमें देकर कहा "अभी इस छबडीको लेकर दुर्गसे भाग जा।" विश्वासी नाईने तत्काल उसकी आज्ञाका पालन किया। धाई राजकुमारके स्थानमें अपने छोटे लड़केको बुलाकर वहांसे लौटती ही थी कि इतनेमें रुधिरसे अपने हाथ लाल किये वनवीर वहां आया और उदयसिंहको खोजने लगा। भयके मारे धाईका प्राण उड गया; कण्ठ सूख गया; उसने बिना कुछ बोले चाले कांपते २ राजकुमारकी शय्याको संकेतसे दिखा दिया और भय तथा व्याकुलतासे उस ओरको देखा-निठुर वनवीरने धाईके प्राणसम पुत्रके हृदयमें वह छूरी झोंक दी! केवल एक बार आर्त्त नाद;- फिर केवल छटपटाना!-अब उस बालकमें कुछ भी शेष न रहा! अभागिनी धाईकी आंखोंके सामने उसके हृदयका दीपक टिमटिमाकर बुझ गया, तथापि वह एक बार भी अपने पुत्रके लिये जी भरके न रोई। आँसू बहाती हुई प्यारे पुत्रका संस्कार करके चुपचाप किलेसे बाहर निकल गई! रनवासकी रानियोंको धाईके इस महान् कार्यका कुछ भी समाचार विदित न था। उन्होंने यही समझा कि दुराचारी वनवीरने महाराज संग्रामसिंहके छोटे पुत्र उदयसिंहको मार डाला इस कारण वे सबकी सब विलाप कलाप करके रोने लगीं उनको यह समाचार विदित नहीं था कि इस हेतु धाईने अपने पुत्रके रुधिरके बदलेमें राणा सांगाके वंशको अनन्त विनाशसे बचाया है। इतिहासमें अवश्य ही इस पवित्र धाईका नाम लिखना योग्य है। खीची राजपूत कुलमें इस पन्ना धाईका जन्म हुआ था; जबतक पृथ्वीपर राजपूतोंका नाम रहैगा तबतक ही पन्नाके पवित्र नामको मनुष्यगण याद किया करेंगे।

प्राणसम पुत्रकी चिताग्निको अपने आँसुओंसे बुझाकर अभागिनी पन्ना उस विश्वासी बारीकी तलाशमें किलेसे बाहर निकली। चित्तौरकी पश्चिम ओर बेरिस नदी बहती थी, उसके जनशून्य किनारेपर वह बारी राजकुमारको लिये हुए बैठा था। सौभाग्यसे चित्तौरके भीतर उदयसिंहकी आंख नहीं खुली। पन्ना भी वहां पहुँची और कुमारको साथ लेकर वीर बाघजीके पुत्र सिंहरावके पास जाकर रहनेकी प्रार्थना की; वनवीरके भयसे उसने राजकुमारकी रक्षा करना स्वीकार न किया और अत्यन्त शोकयुक्त होकर बोला। "मैं तो बहुतेरा चाहता हूं कि राजकुमारकी रक्षा करूं" परन्तु वनवीर इस बातको जानकर वंशसहित मेरा संहार कर डालेगा। मुझमें इतनी सामर्थ्य नहीं कि उसका सामना करूं। इसके उपरान्त पन्ना देवलको छोडकर डूंगरपुरनामक स्थानमें गई और वहांके रावल ऐशकर्ण (यशकर्ण) के पास राजकुमारको रखना चाहा, परन्तु उसने

---

* बारी, नाईकी श्रेणीमेंसे हैं, परन्तु हजामत नहीं बनाते केवल राजपरिवारकी उच्छिष्ट साफ करना ही इन लोगोंका प्रधान कार्य होता है।

भी भयके मारे राजकुमारको नहीं रकखा । तदुपरान्त विश्वासी और हितकारी भीलों‑के द्वारा रक्षित हो,आराबलीके दुर्गम पहाड और ईडरके कूटमार्गोंको लांघकर कुमारको साथ लिये हुए पन्ना कमलमेर दुर्गमें पहुँची । यहांपर पन्नाकी बुद्धिमानीसे कार्य सिद्ध होगया । दीप्राके बणिककुलमें उत्पन्न हुआ आशाशाह नामक एक जैन राजपूत उस समय कमलमेरमें राज करता था, पन्नाने उससे मिलना चाहा; आशाशाहने प्रार्थना स्वीकार करके विश्रामगृहमें पन्नाको बुलाया । वहां पहुंचते ही धात्रीने बालक राजकुमारको आशाकी गोदीमें रखकर नम्रतासे कहा,"अपने राजाका प्राण बचाइये" परन्तु आशाने अप्रसन्न और भीत होकर कुमारको गोदसे उतारना चाहा । आशाकी माता भी वहींपर थी, पुत्रकी ऐसी कायरता देखकर उसको फटकार और उपदेशपूर्ण वाक्यसे कहा " स्वामीमें हित रखनेवाले, श्वामीका हित साधन करनेके लिये किसी समय विपत्ति या विघ्नसे नहीं डरते । राणा समरसिंहका पुत्र तुम्हारा स्वामी है, विपत्तिमें पडकर आज तुम्हारा आश्रय चाहता है,इसको आश्रय देनेसे भगवान्‌के आशीर्वादसे तुम्हारे गौरव की वृद्धि होगी । " माताकी नीतिपूर्ण शिक्षासे आशाशाहके समस्त संदेह दूर होगये । उसने राजकुमारको अपना भतीजा कहकर प्रसिद्ध किया और यत्नके साथ लालन पालन करने लगा । पन्नाकी मनोकामना पूर्ण हुई । कमलमेरमें धाईको कोई नहीं जानता, ऐसा न हो कि श्रावक (जैनपुरोहित) के घरमें उसको देखकर कोई संदेह करे, इस ही कारण वह शीघ्र ही आशाशाहके भवनसे बिदा होगई ।

राणा संग्रामसिंहका पुत्र छिपकर आशाशाहके यहां अपना समय बिताने लगा । आशाशाहने कुमारको अपना भतीजा कहकर प्रसिद्ध किया, तथापि लोगोंके मनमें अनेक प्रकारके सन्देह होने लगे । आशाशाहके पिताका वार्षिक श्राद्ध‑दिन निकट आया, उसके स्थानपर बडी भीड हुई बहुतसे राजपूत भी नेवता पाकर उसके स्थानपर आये । समस्त सामग्रीके प्रस्तुत होनेपर सब लोग भोजन करनेके लिये बैठे । अनेक प्रकारके भोजन परसे जाने लगे । फिर दहीके परसनेका समय आया । इस ही समयमें उदयसिंहने एक परसनेवालेके हाथसे दहीका वर्त्तन छीन लिया । कुमारका यह अयौक्तिक व्यवहार देखकर सब ही विस्मित हुए ! सात वर्षके बालकका यह कैसा तेज है ? बहुतेरा समझाया, डरतक दिखाया; परन्तु कुछ भीत न हुआ । सप्तम वर्षीय राजकुमारकी प्रतिज्ञाको कोई भी नहीं टाल सका‑दहीका बर्त्तन कुमारने नहीं छोडा । इस प्रकार आशाशाहके यहां रहते २ सात वर्ष बीत गये । सात वर्षतक उदयसिंह बराबर छिपे रहे; परन्तु सत्य कितने दिनतक गुप्त रह सकता है ? फिर आपसे आप राजकुमारका समाचार प्रकट हो गया । झालौरके शौनगडे सरदार किसी कामके लिये आशाशाहसे मिलनेको आये । शाहजीने उनका आदर मान करनेके लिये उदयसिंहको नियुक्त किया । राजकुमारने इतनी उत्तमतासे इस कार्यको पूर्ण किया कि

उक्त सरदारोंको उसपर अत्यन्त सन्देह हुआ। उन्होंने निश्चय किया कि "उदयसिंह किसी प्रकारसे आशाशाहका पुत्र नहीं है।" धीरे २ यह समाचार चारों ओर फैल गया। मेवाडके सरदार और सामन्तगण वरन और दूसरे देशोंके राजा लोग भी आनन्दित होकर वीरवर सांगाके पुत्रको प्रणाम करनेके लिये वहां आने लगे। चण्डके प्रतिनिधि शालुम्ब्रापति साहीदास, कैलवापति जागो, वा गौरनाथ सांगा आदि चन्दावत गोत्रके अन्यान्य सामन्त गण; कोटोरिया और बेदलाके चौहानगण, विजौलीके परमाणगण, संचोरपति पृथ्वीराज और जैतावत लूनकरण यह सब ही राजा लोग आनंदमें मग्न होकर कमलमेरमें आये। पीछे धाई और बारीने राजकुमारकी रक्षाका समस्त विवरण कहकर सबके मनका सन्देह दूर किया।

उसही दिन कमलमेरके सभागृहमें बडाभारी दरबार हुआ। आशाशाहने सबके सामने राजकुमारका यथार्थ वृत्तान्त कह कर उसको मेवाड़के वृद्ध चौहान सामन्तके हाथमें सौंप दिया यह सरदार, राजकुमारके समस्त गूढ विषयोंको भली भांतिसे जानता था. इस कारण इस विषयमें उनको कुछ सन्देह नहीं रहा। आशाशाहके स्थानमें रहनेसे कदाचित् कोई किसी प्रकारका सन्देह करे उस ही कारणसे उस सरदारने एक पात्रमें कुमारके साथ भोजन किया, अब तो सबको पूर्ण विश्वास हो गया, वीरवर संग्रामसिंहके वंशधरको पाकर सब ही आनंदमें मग्न हो गये। वह आनंदध्वनि अनन्त गगनमार्गमें विस्तारित होकर शिखर २ पर टकराती हुई चित्तौरकी ओरको पहुँची। चित्तौरके सिंहासनपर बैठे हुए राष्ट्रोपहारक बनवीरने उस ध्वनिको सुना। उसका हृदय कम्पायमान होने लगा। अकस्मात् उसका सिंहासन कांपा! तब शोनगड़ा सरदार अखिलरावने अपनी कन्याके साथ उदयसिंहका विवाह करना चाहा, पहिले तो कुमारने अस्वीकार किया, कारण कि शोनगडे मालदेवने जिस दिन राणा हमीरके साथ अपनी कन्याका विवाह किया था, उस दिनसे राणा हमीरसिंहने नियम कर दिया था कि आगेसे कोई गिह्लोट शोनगडे गोत्रके साथ विवाह न कर सकेगा। उनका यह नियम इतने दिनतक पालन होता चला आया था,परन्तु आज उदयसिंहने उस नियमको उलंघन करके उक्त सरदारकी बेटीके साथ विवाह करना स्वीकार किया। विवाहका दिन नियत होने व और बातचीतके समाप्त हो जानेपर, महाराणा कुंभाजीकी उस बडी सभामें उदयसिंहने मेवाडके प्रधान २ सरदार और सामन्तोंसे पूजित होकर चित्तौरके राजतिलकको ग्रहण किया।

बनवीरने शीघ्र ही इस समाचारको सुना। सुनते ही हताश हो गया, उसको यह समाचार पहलेके समान जान पडा, उसने तो अपने हाथसे उदयसिंहको मारा था, अपनी आंखसे कुमारको तडपते हुए देखा था, फिर किस देवताके बलसे और कौनसे संजीवन मंत्रके प्रभावसे उदयसिंह जीवित हो गया? कुछ भी समझमें न आया।

वनवीरको तो बडी आशा थी; दिनरात भगवान् एकलिंगकी प्रार्थना किया करता था, परन्तु सब निष्फल हुआ । उस मूढने अपने मनमें किसी समय भी इस बातका विचार नहीं किया कि यह राज किसी दूसरेका हो जायगा, वरन उसको दृढ धारणा हो गई थी कि मैं निष्कण्टक हूं । इसही कारण सिंहासनपर बैठकर सरदारोंपर अनेक प्रकारके अत्याचार करने लगा । उसको राजमद इतना चढ गया था कि अपने हीन वंशको भूलकर मेवाडके शुद्ध राजाओंके योग्य सन्मानको बलपूर्वक भोग करने लगा । एक बार चण्डके किसी तेजस्वी वंशधरने उसका " दूना " अर्थात् उच्छिष्ट प्रसाद ग्रहण नहीं किया इस कारण वनवीरने उसका घोर अपमान किया था ।

" दूना" राजाका उच्छिष्ट प्रसाद होता है, इसके पानेकी कितने ही सरदार और सामन्तगण प्रार्थना किया करते हैं, परन्तु सबकी कामना सिद्ध नहीं होती। राणाजीके संग एक पंक्तिमें भोजन करनेका जिन सर्दारोंको अधिकार है, उनमेंसे कभी ही किसीको दोनों दिया जाता है। किसी उत्सवके अवसरमें या और किसी अवसरपर राणाजी अपने भोजनगृहमें ऊंचे पदवाले सरदारलोगोंके साथ भोजन करनेको बैठते हैं, सरदारगण भी अपनी २ योग्यताके अनुसार उनके चारों ओर विराजमान होते हैं। उस समय बाहिरी गंभीरताको छोडकर राणाजी सम्पूर्ण सरल और स्वाधीन भावसे सबके साथ मीठी २ बातें किया करते हैं। उस दिन जिसका भाग्य प्रसन्न होता है; उसहीको राजप्रसाद मिलता है। रसोइयेके हाथ उसहीके यहाँ "दूना" भिजवाया जाता है । जब वह प्रसाद मनोनीत मनुष्यके पास भेजा जाता है, तब सरदारलोग उत्कंठित भावसे उसकी ओर देखा करते हैं और उस भाग्यवानके भाग्यको बारम्बार धन्यवाद दिया करते हैं । उस दूनेके प्राप्त करनेसे राजपूत राजालोग भी अपनेको कृतार्थ समझते हैं । एक समय महाराज मानसिंहको वीरश्रेष्ठ राणा प्रतापसिंहका दूना न मिलनेके कारण जो मेवाडमें महा अनर्थ हुआ था, वही मेवाडकी शोचनीय दशाका कारण माना जाता है ।

शीतलसेनी नामक किसी दासीके गर्भसे वनवीर उत्पन्न हुआ था इस कारण मेवाडकी पुरानी रीतिके अनुसार उनको " पंचमपुत्र " कहते थे। संकटमें पडकर ही सरदारोंने उसको चित्तौरकी गद्दी दी थी । परन्तु उसका दिया हुआ "दूना " थोडे ही ग्रहण कर सकते थे । क्या पृथ्वीराजका पारशवपुत्र, मेवाडके ऊंचे कुलवाले सर्दारोंकी बराबर राजसन्मान पावेगा ? बनवीरकी इच्छा तो ऐसी ही थी, परन्तु उसकी इस इच्छाको कौन पूर्ण करेगा ? ऐसा कौन है जो अपनी कुलमर्यादाको जलांजलि देकर दासीपुत्रकी जूंठन खायगा ? पूर्वोक्त चन्दावत् सर्दारोंको जब उसने दूना दिया तब सर्दारने दूनेको फेरकर कहा " यदि बप्पारावलके यथार्थ वंशधरसे मिलता तो वास्तवमें यह प्रसाद गौरवका विषय था, परन्तु शीतलसेनी दासीके पुत्रके हाथसे उसका ग्रहण करना महाघोर अपमानके सिवाय और क्या हो सकता है" ? मूल बात यह

है कि सरदारगण धीरे २ यहांतक अप्रसन्न हुए कि उदयसिंहका अभिषेक करनेके लिये कमलमेर किलेकी ओर चले । यह लोग आरावलीके गिरी मार्गके भीतर होकर जा रहे थे, इतनेहीमें सामनेसे ५०० घोडे और दश सहस्र बैल जिनपर बडे मोलकी सामग्री लदी थी—आते हुए दिखायी दिये, एक सहस्र घरवाल राजपूत इनकी रक्षा करते हुए चले आते हैं । गुप्तभावसे पूछताछ करनेपर उनको मालूम होगया कि यह सब द्रव्य वनवीरकी बेटीके यौतुकमें कच्छदेशकी ओरसे चले आते हैं यह सुनकर सर्दारोंके आनन्दकी सीमा न रही, वे शीघ्रतासे उन घरवाल रक्षकोंके ऊपर टूट पडे जैसे कि सिंह मृगझुण्डपर टूट पडता है—सब रक्षक मारे गये और उस समस्त सामग्रीको लूटकर प्रसन्न मनसे उदयसिंहके सामने आये । लूटी हुई यह समस्त सामग्री श्रेष्ठ कार्यमें लगी । झालौरके शौनगडे सरदारकी बेटीके साथ उदयसिंहका विवाह हुआ, उसमें यह द्रव्य बडे काम आये । वीरवर हमीरकी आज्ञा यद्यपि लंघन की गई, परन्तु मेवाडका एक भारी कार्य सिद्ध होगया । मालदेव गिहोट कुलमें जिस कलंककी रेखाको लगा दिया था, आज उसही मालदेवके वंशधरने राष्ट्रोपहारक शिशोदिया वनवीरके ग्राससे मेवाडके सिंहासनका उद्धार करके कलंककी उस रेखाको दूर किया । झालौरके अन्तर्गत वह्नि नामक स्थानमें यह शुभ विवाह हुआ । राजस्थानके ही सर्दारोंके सिवाय और समस्त सर्दार सामन्तोंने इस उत्सवमें भांति २ के उपहार भेजकर सहायता की थी तथा पीछेसे आप भी उत्सवमें आन मिले । जो दो सर्दार इस विवाहमें नहीं आये उनमेंसे एकका नाम तो मालौजी था, और दूसरा शोलंकीकुलमें उत्पन्न हुआ था इसका नाम इतिहासमें नहीं लिखा । जिस विवाहमें राजस्थानके समस्त बडे २ सर्दार आये उसमें यह दो सर्दार किस कारणसे नहीं आये ? अवश्य ही इसमें कोई भेद होगा । राजाका अपमान करनेके कारण सर्दारोंने इन दोनोंपर चढाई की । अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखकर दोनों सर्दारों वनवीरकी शरण गये । वनवीर उन दोनोंकी रक्षाकरनेके लिये सेनासहित उन सर्दारोंके आगे आया; परन्तु उन दोनों अभागे सरदारोंकी रक्षा न हुई । मालजी तो मारा गया और शोलंकीने दूसरा कोई उपाय न देखकर फिर उदयसिंहकी वश्यता स्वीकार की । क्रम २ से अभागे वनवीरकी सहायता कम होती गई, बन्धु बान्धव, इष्ट मित्र सब ही छोड गये । उसका भाग्याकाश धीरे २ घनघोर बादलोंसे छा गया । तथापि जीवनदायिनी आशा न टूटी । उदयसिंहकी समस्त तैयारी और आयोजनको व्यर्थ करनेके अभिप्रायसे वनवीर अचलभावसे राजधानीमें विराजमान हुआ, परन्तु उसका यह अभिप्राय व्यर्थ होगया, उसके मंत्रीने नई सेनाके संग्रह करनेका बहाना करके राजकुमारके एक हजार विकराल सिपाहियोंको किलेमें बुला लिया । दुर्गमें प्रवेश करते ही उन्होंने द्वाररक्षकोंपर आक्रमण किया और उनको मारकर किलेके शिखरपर उदयसिंहकी विजय वैजयन्ती गाड दी । शीघ्र ही दूद और नगरवासी लोग बारम्बार उदयसिंहकी

जय २ पुकारने लगे । परन्तु किसीने बनवीरपर कोई अत्याचार नहीं किया । अपनी धन सम्पत्ति और परिवारवालोंको साथ लेकर वह बेखटके दक्षिणदेशमें जा बसा समयके अनुसार जो वहांपर उसकी सन्तान सन्तति हुई, वही नागपुरके भोंसले नामसे पुकारी गई ।

संवत् १५९७ (सन् १५४१-४२ ई०) में सरदारोंने उदयसिंहको चित्तौरके सिंहासनपर बैठाया । अभिषेकके समय सारी प्रजाको ही परमानन्द प्राप्त हुआ । घर २ में नाच और गाना होने लगा । * कुमलमेरके जिस शान्तिमय शैल शिखरपर उदयसिंहका बालकपन गुप्तभावसे बीता था, आज वे वहांसे बिदा होकर राजधानीमें आये । कुंभमेरुकी रहनेवाली कोकिलकण्ठी राजपूतबालागणोंने मधुर स्वरसे गाते हुए राजकुमारको बिदा किया, और स्तुतिपाठ करनेवाले स्तावक, भट्ट तथा बन्दियोंने मनोहरतासे आगमन संगीत गायकर राजकुमारकी अगौनी की । इस महोत्सवके समय जो गीत गाये गए थे, वह आजतक सुने जाते हैं; आज भी भगवती ईशानीके वार्षिकोत्सवके समय राजपूतबालागण एक साथ मिलकर उन गीतोंको गाया करती हैं । परन्तु वीरवर संग्रामकी शोचनीय पराजयके साथ २ जो कालनिशा भारतमें आई वह अबतक समाप्त न हुई । राणा रत्नकी प्रचण्ड ढिठाई,विक्रमाजित्की घोर अजानता,और वनवीरकी अयोग्यतासे बराबर यह रात्रि अधिक २ अंधकारमयी होती गई । अंतमें उदयसिंहने उसको अपनी कापुरुषतासे पूर्ण किया ! यह बात मेवाडके लिये कलंक हो गई, इसके द्वारा मेवाड़का एक पुराना नियम टूट गया । मेवाडमें राजापर राजा होते गये,चित्तौरका सिंहासन कभी सूना नहीं हुआ । परन्तु ऐसा अवसर कभी नहीं आया कि एक जारजके पीछे एक कापुरुष राजाके हाथमें शिशोदियाकुलका भार सौंपा गया हो; आज वही कुघडी आ गई है ! उदयसिंह कापुरुष है—मेवाडके सिंहासनपर बैठनेकी उसमें योग्यता नहीं; यदि उसकी कापुरुषता और अयोग्यताके साथ मिलान किया जाय तो राणा रत्न और विक्रमाजितके दोष भी तो गुणोंके समान जान पड़ेंगे । इस अयोग्यतासे मेवाडका जातीय जीवन सदाके लिये नष्ट हो गया । अबतक जिस मेवाडको अजीत समझा जाता था, आज वह गौरव उसका जाता रहा ।

महाकवि चन्दने कहा है,—"स्त्री अथवा व्यवहारको न जाननेवाला बालक जिस देशमें राजा होता है, उस देशकी भलाई किसी प्रकारसे नहीं होसकती । परन्तु अभागिनी मेवाडभूमिके अभाग्यसे यह दोनों दुर्निमित्त एकसाथ प्राप्त हुए । इस ही कारणसे अमंगल ही अमंगल दिखाई देने लगे । जो साहस और जो प्रचंड प्रताप गिह्लोट कुलका प्रधान धर्म है, उसका एक परमाणु भी उदयसिंहमें नहीं था । उदयसिंह दिन-रात विलास और आलस्यके वशमें रहता था, जो यह सदाशय हुमायूंके समय

* इसको कुंभलमेर भी कहते हैं ।

अथवा पठानोंके राष्ट्रविप्लवके समय अपने जीवनको व्यतीत करता तो मेवाडकी कुछ भी हानि नहीं होती, परन्तु सम्पूर्ण राजस्थानके दुर्भाग्यसे ऐसा नहीं हुआ। उदयसिंहके अभिषेक-जनित आनंद कुलाहलमें जो वर्ष कुंभलमेरके मेघमंडित महल दुमहलोंमें गुंजार उठा; उस वर्षमें ही भारतकी मरुभूमिमें बसे हुए ऊँचे शिखरसे भारतकी राजलक्ष्मीका घोर विलाप सुनाई दिया, उस ही विलापने राजपूतदर्पहारी अकबरके जन्मका वृत्तान्त सारे भारतवर्षमें प्रचार कर दिया। उस वृत्तान्तके श्रवण करते ही समग्र भारतभूमिमें डांवाडोल मच गया। मेवाडके घर २ में रोने और हाय २ करनेका शब्द सुनाई आने लगा! फिर वह रोदनध्वनि निवारित नहीं हुई। कारण कि अकबरने प्रचण्ड धूमकेतुके समान बढकर सम्पूर्ण भारतवर्षको, दासपनकी जिस कठोर जंजीरसे बांधा, वह जंजीर शीघ्रतासे नहीं खुली। उसके कठोर मिलापसे हिन्दुओंकी हड्डियेंतक चूर चूर हो गईं,–मेवाडका विध्वंस होगया। उस शोचनीय विध्वंसके पीछे भारतमें फिर उठनेकी सामर्थ्य न रही! यद्यपि कालके सर्वक्षयकारी कराल हाथके लगनेसे वह जंजीर आज बहुत ही कमजोर होगई है, परन्तु उसके घोर संघर्षणसे हिन्दू जातिके सारे शरीरमें अगणित घाव होगए हैं। वह घाव अच्छे ही नहीं हुए, वरन त्वचाको फाडकर कलेजेतक पहुंचे हैं! क्या इन रुधिर निकलनेवाले घावोंसे आरोग्यता पाय किसी समय भारतसन्तान फिर भी आनंदसे विहार करेगी? नहीं कह सकते कि अभी आगे २ भारतसंन्तानके भाग्यमें क्या २ बदा है। जो जाति दीर्घकाल-तक महान गौरव और स्वाधीनताको भोग कर एकबार दुर्दशाको प्राप्त होजाती है, वह जाति क्या फिर उठ सकती है? जिस पवित्र वीर्याग्निके प्रभावसे राजपूतगण चित्तौरके परकोटेकी और ग्रीकवाले थर्मोपोलीके गिरिमार्गकी रक्षा करते थे, क्या वह वीर्याग्नि फिर उनके दासत्वपीडित निर्जीव हृदयमें प्रचण्डभावसे जल उठैगी?–इसके विषयमें कुछ कहा नहीं जा सकता।–इसका योग्य उत्तर इतिहास ही पाठकगणोंके सामने उपस्थित करेगा।

भारतवर्षकी विशाल मरुभूमिके मध्यभागमें एक छाया कुंजके भीतर अमरकोट बसा हुआ है। सिकन्दरने जिसको पुराने शकलोगोंका * पुराना स्थान कहा है, वह अमरकोट ही है। अकबरका जन्म यहीं [१५४२ ई०] में हुआ था। अकबरके जन्मकालमें हुमायूँ दुर्दशाकी सीमातक पहुंच गया था, राज्यभ्रष्ट होकर इधर उधर भागता था। राज्यके पुनः प्राप्त होनेकी कोई आशा भी नहीं थी। तख्तपर बैठते ही बराबर दश वर्षतक हुमायूँने अपने झगडालू भाइयोंसे घोर विवाद किया इसके प्रत्येक भ्राता अलग २ एक २ राज्यके स्वामी थे, परन्तु इससे भी उन्हें संतोष नहीं हुआ, वे दुराकांक्षाके वशमें होकर उसके हाथसे दिल्लीका सिंहासन छीन लेनेकी फिक्रमें लगे हुए थे। परन्तु इस दुरभिलाषाका

* परमार कुलकी शाखाके शोदागणोंका भी यही नाम है।

फल उनको हाथों हाथ मिल गया, पठानवीर शेरशाहने प्रचंड वेगसे आकर उन सबको दमन किया, तथा बाबरका सिंहासन छीनकर उसपर पठानोंका अधिकार जमाया।

जिस दिन कन्नौजके युद्धमें भारतका राजमुकुट हुमायूंके मस्तकसे गिर पड़ा उस ही दिनसे उसके लिये घोर विपत्तिका सूत्रपात हुआ, शत्रुगण पीछे पड़कर बारंबार सताने लगे। हुमायूँको कहीं भी विश्राम न मिला! वह जहांपर भागकर जाता, शत्रुगण वहीं जाकर उसका पीछा करते थे। यमुनाके किनारेपर बसे हुए सुन्दर आगरेको छोडकर हुमायूँ लाहौरमें चला गया; वहांपर भी विश्राम न मिला, दुर्जन शत्रुओंने वहां भी पीछा किया। अंतमें निरुपाय हो अपने परिवारवर्ग और कितने एक विश्वासी नौकरोंको लेकर सिन्धके राज्यमें गया। मार्गमें अत्यन्त कष्ट पाया। अनाहार रहने और कठोर परिश्रम करनेके कारणसे हुमायूँको अत्यन्त व्याकुलता हुई। दूर देशमें किसीने उसको सहारा नहीं दिया। दो एक दिनके लिये दो एक हिन्दू राजाओंने अपने यहां रक्खा फिर निकाल दिया। क्रमानुसार हुमायूंके कुभाग्यने उसको बहुत ही व्याकुल किया, उसको किसी प्रकारका भरोसा न रहा। तथापि वह निरुत्साह नहीं हुआ। उत्साहपर भरोसा रखके यथासाध्य बलके साथ मुलतान और समुद्रके किनारेतकके सिन्धुतीरवर्त्ती सब किलोंको अपने काबूमें करनेकी चेष्टा की; परन्तु सब परिश्रम वृथा ही गया। शनिग्रहकी विश्वदाही विद्वेषाग्निमें उसका समस्त यत्न और समस्त उत्साह भस्म होगया। इसपर एक और भी कठोर विपत्ति आ पड़ी, उसके साथकी कुछ सेना और कई एक सरदार विद्रोही होगये। तब तो हुमायूँको चारों ओर अंधकार दिखाई दिया। जो लोग इतने दिनतक एक साथ रहते व कष्ट भोगते हुए बादशाहकी आज्ञामें रहे, आज उनको ही बागी होते देखकर हुमायूं अत्यन्त दुःखित हुआ। उन आदमियोंने–जो कि बागी होगये थे आगे जानेसे इनकार किया। विवश होकर उनको वहीं छोडा, और भाग्यकी ओर देखता हुआ परमेश्वरकी याद करता हुआ आगे चला। बागी लोग भी अपनी २ इच्छाके अनुसार जिधर तिधरको चले गये। कोई २ तो भूंख प्यास और मार्गके घामसे कातर होकर मार्गमें ही मर गया, तथा किसी २ ने हिन्दू राजाओंके यहां जाकर नौकरी कर ली, परन्तु हुमायूंका क्या हुआ? एक समय जो सारे भारतवर्षका अधीश्वर था, एक समयमें अगणित नर नारियोंका भाग्यसूत्र जिसके हाथमें था, आज वही मनुष्य अपने जीवनकी रक्षा करनेके लिये अनाथके समान द्वार २ पर फिरने लगा। धन्य है ब्रह्मा तुम्हारे कूटविधानको धन्य है! तुम्हारे कुटिल लेखके अनुसार आज हिन्दोस्थानका बादशाह दरदर मारा फिरता है।

जब कोई आशा न रही तो हुमायूंने जयसलमेर और जोधपुरके महाराजासे आश्रयकी प्रार्थना की, परन्तु दुःखकी बात है कि इन दोनों महाराजाओंमेंसे एकने भी

बादशाहकी प्रार्थनापर ध्यान नहीं दिया। आश्रय देना तो एक ओर रहा वरन जोधपुरके क्रूर हृदय राजा मालदेवने इस दुःसमयमें ही हुमायूंको कैद करना चाहा। हम नहीं कह सकते कि यह बात कहांतक ठीक है ? कारण कि महाग्रंथोंमें इसका कुछ भी वर्णन नहीं लिखा है, केवल तवारीख फरिश्तामें ही इसका विस्तारित विवरण पाया जाता है। अस्तु जो कुछ भी हो; बुद्धिमान हुमायूंने अपनी अद्भुत परिणाम दर्शिताके गुणसे हिन्दूराजाका यह कपटजाल भेदकर फिर भयंकर मारवाड़भूमिमें प्रवेश किया। इस देशमें आकर उसका कष्ट सीमातक पहुंच गया। दारुण कष्टके मारे उसकी सुकुमारी ललनागण भी कठोर पीडासे पीडित होने लगी। यदि अकेले उसे कष्ट भोगना पडता, तो पलभरके लिये भी न घबड़ाता, कारण कि पिताके स्नेहगुणसे उसने विपत्तिके सहनेका अभ्यास कर लिया था। परन्तु अब न सहा गया ! जिनको वह जीजानसे चाहता था, जिन्होंने पहिले कभी सूर्य भगवानका मुख भी नहीं देखा था, भूंख प्यासने जिनको आजतक नहीं सताया, आज दुर्भाग्यसे वही कोमल शरीरवाली बेगमगण तपतीं हुई रेतीली भूमिमें गिरकर भयंकर कष्ट पा रही हैं। यह हालत देखकर किसका जी नहीं दहलता ? ऐसा कौन है जो हुमायूंके साथ एकप्राण न होकर उनके लिये दो बूंद आंसू न गिरावैगा ? यदि हुमायूं इस समय अधीर हो जाता तो इस मरुभूमिमें ही परिवारके सहित उसका नाश होजाता, परन्तु उसमें धीरता इत्यादि समस्त पुरुषोचित गुण थे इस कारणसे ही बडे २ संकटोंसे छुटकारा पाया। हुमायूंके गुणोंका विचार करनेसे उसकी विपत्तिको देखकर अवश्य ही दो आंसू डालने पडेंगे। तवारीख.फारिस्तामें उस शोचनीय दुर्दशाका प्रदीप्त * चित्र खेंचा गया है। इस तवारीखमें.लिखा है कि मुगलवीर हुमायूंकी यह दुर्दशा देखकर अमरकोटके सोदाराजको अत्यन्त दुःख हुआ और उसने आदर पूर्वक हुमायूंको अपने यहाँ आश्रय दिया था।

---

* दो पहर रातके समय अपने घोडेपर चढकर हुमायूं अमरकोटको भागा। यह अमरकोट ठाटा (ठट्टा) नगरीसे एक सौ कोश दूर है। लम्बामार्ग चलनेसे अत्यन्त कातर हो बादशाहका घोड़ा तो मार्गमें ही मर गया। तब हुमायूँने अपने पारिषद तुर्दी बेगसे उसका घोडा मांगा। परन्तु राजमर्यादा उस समय इतनी हीन होगई थी कि मुसाहबने बादशाहकी, हुक्मे अदूली की। उसके कठोर हृदयमें लेशमात्र भी दया नहीं आई। इस ओर शत्रुगण भी हुमायूंका पीछा करते २ अत्यन्त निकट आ पहुँचे। उस काल अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखकर बादशाह ऊंटपर सवार हुआ। यह देखकर " नादिमकोका " नामक एक आदमीने अपनी बूढी माताको घोडेसे उतारकर वह घोडा हुमायूंको दिया। और बादशाहके उस ऊंटपर अपनी वालिदाको चढाकर आप पैदल चलने लगा। "रास्ता अत्यन्त भयंकर और रेतीला था, पानीका नाम नहीं, प्यासके मारे सिपाहियोंको घोर कष्ट होने लगा। कोई तो बेहोश होगया; कोई मर गया;-चारों ओर हाहाकार हुआ, प्रत्येक दिशासे प्यासोंका आर्त्त नाद और रोना सुनाई आता था। इतनेहीमें उन कष्टोंको बढाता हुआ समाचार आया कि शत्रुलोग अत्यन्त निकट आ गये। इस समाचारको पाते ही हुमायूं और भी सख्त हुआ और उसने उत्साहके सहित अपनी सेनाको पुकारकर कहा-

उस अमरकोटकी छायाकुंजके भीतर मुगलकुलतिलक अकबरने जन्म ग्रहण किया। अकबरके जन्म लेनेके कुछ दिन पीछे ही हुमायूं सोढा राजके आश्रयको छोडकर ईरानको चला गया। कहते हैं कि हुमायूँ ज्योतिष विद्याको भी भलीभांतिसे जानता था। उसके समान कोई ज्योतिषी भी होनहारका फल नहीं कह सकता था, परन्तु दुःख इतना ही है कि उसने अपने कामोंमें इस विद्याका कहीं सहारा नहीं लिया। यदि अपने कामोंमें सहारा लेता, यदि इस विद्याकी सहायतासे अपने होनहारके परदेके भीतर प्रवेश कर जाता—तो वह घटना,—जिसने उसके सौभाग्याकाशको—ढक रक्खा था, शीघ्र ही उड जाती और उसे कभी भी ईरानकी ओरको नहीं भागना पडता।

अपने पिता बाबरके स्नेह गुणसे हुमायूंने जिस विपत्तिके विद्यालयमें संसारनीतिकी शिक्षा की थी, इस समय अपने पुत्र अकबरको भी उस ही शिक्षामें नियुक्त किया। भाग्यचक्रकी बेरोक अदलवदलसे पदच्युत हुआ हुमायूं बहुत कालतक कहीं भी स्थिर होकर न ठहर सका। भारतवर्षसे भागनेके पीछे बराबर बारह वर्षतक वह देश २ की खाक छानता रहा; कभी तो ईरानकी राजसभामें, कभी अपने बडे बूढोंके

—"जिनको लड़नेकी ताकत है वह यहांपर रहैं और बाकी लोग रसद व औरतोंको साथ लेकर आगे बढैं।" परन्तु शत्रुओंके आनेके कोई चिह्न न पाये गये; तब बादशाह भी कुछ आदमियोंको साथ लेकर आगे बढा।

"उस विपत्तिके समयमें अन्धकारमयी रात्रि कालरूप धारण करके संसारमें आन पहुँची। इतना अंधकार हुआ कि हुमायूंकी सेनाके लोग जो पीछे रह गये थे रास्ता भूलकर भटकने लगे। उनको प्रभात होते ही शत्रुओंने घेर लिया। उन भटकते हुओंमें शेखअलीनामक एक साहसी व्यक्ति था। इस 'शेखअलीने केवल बीस आदमियोंकी सहायतासे शत्रुके रोकनेकी प्रतिज्ञा की और "जाँबाजीका दावाँ" करके शत्रुओंके सामने डट गया। केवल एक ही तीर चलाकर शेखअलीने दुश्मनोंके सेनापतिको जमीनपर गिरा दिया। अपने सरदारको गिरता हुआ देखकर दुश्मनोंकी फौज तित्तर वित्तर होगई। विजयी मुगलसेनाने दुश्मनोंका पीछा करके उनके घोडे और ऊंट छीन लिये। और अपना मार्ग लिया। कुछ दूरपर जाकर हुमायूंको एक कुएँके ऊपर बैठा हुआ देखा। बहुत तलाश करनेपर हुमायूंको यह कुआँ मिला था। शेखअली उसको देखकर परम प्रसन्न हुआ और अपना समस्त वृत्तान्त आद्योपान्त कह सुनाया।

"दूसरे दिन उस कुएँको छोडकर अपनी सेना सहित हुमायूं अमरकोटकी ओर चला। परन्तु रास्तेमें दो दिनतक कोई जलाशय न पानेसे पहिलेसे भी दुगुना कष्ट हुआ! तीसरे दिन फिर एक कुआँ देखा परन्तु वह इतना गहरा था कि पानी भरनेमें बहुत देर लगती थी। इस वक्त केवल एक ही डोल था, इस कारण ढोल बजाकर तत्काल सूचना दी गई कि नम्बरवार सबको ही पानी पिलाया जायगा। परन्तु उस सूचनाको कौन सुनता है? सब ही प्यासके मारे व्याकुल थे। सब ही पहिली पहिल जल पीना चाहते थे। जैसे ही डोल कुएँसे निकलता कि वैसे ही दश बारह आदमी उसके ऊपर २ पडते और पानीकी सफाई कर देते थे। उतनेहीमें डोलकी रस्सी टूट गई और कई आदमी उसके साथ ही कुएँमें गिर कर मर गये। इस भयंकर दुर्घटनाके होनेसे चारों ओर हाहाकार होगया! अत्यन्त शोकसे सब लोग चिल्लाने लगे—

प्राचीन राज्यमें, कन्धारके पहाडी देशोंमें और कभी काश्मीरके देवकाननमय गिरिमार्ग-के ऊपर भाग्यकी कठोर आज्ञाको मानकर धीर और अचलभावसे विराजमान रहता था। इस बारह वर्षके समयमें भारतवर्षके सिंहासनके ऊपर पठानोंके उत्तराधिकारियोंमें घोर झगड़ा झंझट पैदा हुआ। क्रमानुसार छः पठान बादशाह अल्पसमयके लिये दिल्लीका शासन दंड चला करके इस लोकसे बिदा होगये। इनके समयमें उत्तराधिकारीत्वकी प्राचीन विधि भलीभांतिसे उलट पुलट होगई थी। उन बादशाहोंमें जिसका बल अधिक था उसने ही सिंहासनपर अधिकार किया। "जिसकी लाठी उसकी भैंस" वाली कहावत चरितार्थ होगई। जिस समयमें वीरवर हुमायूं काश्मीरके निकट पहुँच गया था उस काल दिल्लीके तख्तपर बैठकर सिकन्दर अपने भाइयोंके साथ झगडा कर रहा था सिकन्दरको इन झगडोंमें लगा हुआ देखकर बुद्धिमान हुमायूंने अपने कामको निकाल-नेका यह अच्छा अवसर देखा। अल्पकालमें ही उसके लिये शुभ अवसर आ गया। उसने देखा कि धीरे २ इन झगडोंसे सिकन्दरका नाश हुआ जाता है। तब तो तत्काल-सिन्धुनदके पार हो सिकन्दरसे युद्ध करनेके लिये तयार हुआ। उसकी रणतुरईके प्रचण्ड निर्घोषसे अभागे पठान बादशाहके ज्ञाननेत्र खुल गये वह समझ गया कि अनर्थकारी घरेलू झगडा ही इस विपत्तिके लानेका कारण हुआ। बादशाह, हुमायूंके आनेसे निराश नहीं हुआ; वरन अपने शत्रुकी गति रोकनेके लिये बडीभारी सेना इकट्ठी करके आगे बढा। सरहिन्दूनामक स्थानमें दोनों दल भिड गये। हुमायूंने अपने जवान पुत्र अकबरको इस संग्राममें सेनापति बनाकर युद्ध आरम्भ करनेकी अनुमति दी। शीघ्र ही दोनो दलोंमें घोर संग्राम होने लगा। एक ओर समुद्रसमान पठान अ-

---

—कोई २ जीभ निकालकर तपे हुए रेतेके ऊपर लोटने लगे। कोई २ उन्मत्त होकर कुएँमें गिरकर मर गये। हा! न जाने इस हृदयविदारक दृश्यको देखकर हुमायूंको कैसा कष्ट हुआ होगा?

इसके पीछे दूसरे दिन उनको एक जलाशय और मिला, दुर्भाग्यसे इसके द्वारा और भी कष्ट पहुँचे। बहुत दिनसे ऊंट कसे होरहे थे, कई दिनसे उनको एक बूँद भी पानी नहीं मिला था, इस समय निकट ही जलाशयको देखकर उसमें अर्रा पडे और इतना जल पी गए कि तत्काल सबके सब मर गये। ऊंटोंको मरता हुआ देखकर कोई आदमी नहीं घबड़ाया और इच्छानुसार सबने ही जल पिया, अकस्मात् उनके हृदयमें एक विषम पीड़ा उत्पन्न हुई और देखते २ आधा घंटेमें बहुतसे और भी वहींपर परलोकवासी हुए।

"इस शोचनीय विपत्तिके पीछे बचे बचाये विश्वासी सेवकोंको अपने साथ लेकर शोकार्त्त हुमायूं अमरकोटनगरमें आया। अमरकोटका राजा अत्यन्त दयालु था उसने अत्यन्त आदरके साथ हुमायूंको ग्रहण किया, और सबके क्लेशको दूर करनेका यत्न करने लगा।"

"सन् हिजरी ९४९, रज्जब रविवारके हमीदाबानोबेगमके गर्भवासको छोड़कर राजकुमार श्रीमान् अकबर पृथ्वीपर अवतीर्ण हुआ। पुत्रका मुखकमल देखकर हुमायूंके समस्त कष्ट दूर हो गये। उसने परम कारुणिक परमेश्वरको धन्यवाद किया और अमरकोटके राणाकी शरणमें अपने परिवारको छोड़कर उसकी ही सेनाको साथ लेकर विकारसे युद्ध करनेके लिये चला।" Dow's Ferishta.

नीकिनीका प्रचण्ड सिंहनाद, दूसरी ओर समरविशारद कितने एक मुगलवीरोंका अद्भुत रणरंग तरुणवीर अकबरके तेजस्वी आचरणसे धीरे २ समरभूमि अत्यन्त भयंकर हो गई अकबर उस समय केवल बारह वर्षका बालक था । रणपीडित प्राचीन वीरगणोंने प्रथम तो उसकी वीरता और तेजस्विताको पागलपनका प्रलाप समझा था, परन्तु जैसे २ युद्ध प्रचण्ड होता गया वैसे २ ही उस तरुण मुगलवीरकी अद्भुत वीरता महा-वेगसे बढने लगी । इस वीरताको देखकर सबके हृदय प्रमुदित हो गये, सब वीरगण उसकी अपूर्व वीरतासे उत्साहित होकर उन्मत्तके समान शत्रुकी विशाल सेनाकी ओरको प्रचण्ड तेजसे बढने लगे । उन लोगोंके इन अल्पमात्र मुगलोंकी प्रचंड वीरताके आगे अगणित पठानसेना मथित, विमर्दित और खंड २ होकर भूतलशायी हुई ।

विजयलक्ष्मी अकबरको प्राप्त हुई, इस गौरवसे उसके होनहार यशोगौरवकी सूचना हुई । इतनी थोडी उमरमें इस प्रकारकी असीम वीरता प्रकाश करनेसे अपने दादा बाबरके समान प्रसिद्ध हुआ । कारण कि वीरवर बाबरने भी ठीक इस ही सुकुमार वयमें अगणित घोर विघ्न और विपत्तिके विरुद्ध अपने पैतृक राज्य फरगनाके सिंहासनपर अपनेको दृढ और अचल अटल रक्खा था । ऐसे पिताके औरससे-जन्म लेकर और इस प्रकारका पुत्ररत्न पाकर ही हुमायूँने अपनी योग्यताका परिचय दिया था । उस सरहिन्दके समरक्षेत्रमें अपने पुत्रके विजयगौरवसे गौरवान्वित होकर उसने आनन्दसहित दिल्लीके सिंहासनपर फिर अपना अधिकार किया । परन्तु दुःखकी बात है कि इस गौरवको अधिक दिनतक नहीं भोग सका । दिल्लीके सिंहासनको अधिकार करनेके अल्पकाल पीछे ही एक दिन अपने पुस्तकालयके ऊंचे सोपानमंचसे गिरकर हुमायूं परलोकवासी हुआ । उसकी इस शोचनीय मृत्युका कारण विचारकर देखनेसे पश्चिम देशका एक महान् भ्रम सरलतासे दूर हो जायगा । बहुतसे युरोपीय विद्वान प्राच्य राजाओंको मूर्ख और विलासी समझकर घृणा किया करते हैं वास्तवमें उनका यह बडाभारी भ्रम है । वे पंडितलोग पूर्वदेशीय राजाओंकी भीतरी अवस्थाका विना विचार किये ही ऐसे भ्रमपूर्ण अज्ञानको अपने हृदयमें स्थान दिया करते हैं । हुमायूं अपने खानदानके बादशाहोंके समान केवल विद्यानुरागी ही नहीं था, वरन उसकी पंडिताई और विद्याका बहुतसा परिचय पाया जाता है । यदि उन शाकतीय वंशवाले राजाओंकी विद्या और पंडिताईके साथ, उनके समयके यूरोपके राजाओंके गुणकी अपूर्व बराबरी की जाय तो पूर्वोक्त राजाओंकी विशेष प्रधानता दिखलाई देगी । यहांतक कि भुवनविदित महाराणी एलिजबेथ और फ्रान्सके विख्यात राजा चौथे हेनरीकी विद्याप्रियताकी चारों ओर धूम थी, परन्तु भली-भांति विचार करके देखनेसे मालूम हो जायगा कि यह दोनों भी पूर्वदेशीय राजाओंकी बराबरी करनेके योग्य नहीं हैं । विशेष करके जाक्षरतीसके किनारे जो नृपतिगण उत्पन्न हुए थे, वे अनेक विद्याओंमें पारदर्शी थे । इतिहास, पुराणतत्त्व, काव्य,

ज्योतिष, राजनीति, समाजनीति, धर्मनीति, और रणनीति इत्यादि चाहे जिस विद्याका विचार कीजिये वे राजा इन सबमें ही प्रवीण थे। इनकी इस अद्भुत विद्याका विचार करनेसे हृदयमें भक्ति और श्रद्धा उत्पन्न हो जाती है।

पिताकी शोचनीय मृत्युके कुछ दिन पीछे अकबर सिंहासनपर बैठा। सिंहासनपर बैठनेके कुछ ही दिन पश्चात् शत्रुओंने दिल्ली और आगरेको छीनकर अकबरको वहांसे निकाल दिया। तब अकबरने विवश हो पंजाबके एक देशमें जाकर आश्रय लिया। परन्तु सौभाग्यसे उसकी यह कुदशा शीघ्र ही दूर होगई; बैरमखांने शीघ्र ही उसके छिने हुए राज्यको शत्रुओंके हाथसे उद्धार कर दिया। इस बैरमखांको भारतीय सली * भी कहते हैं। उसके असीम विक्रम और चतुरताके प्रभावसे अकबरने अपने सिंहासनको पर्वतके समान दृढ कर लिया था। काल्पी, चन्देरी, कालिंजर, सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड और मालवा यह देश कुछकालमें ही उसके हाथ आ गये। अठारह वर्षका तरुण युवक इस विशाल राज्यको भलीभाँतिसे शासन करने लगा।

इस विशाल भारत साम्राज्यपर विराजमान होनेके थोडे ही दिन पीछे शहन्शाह अकबरने राजपूतोंके विरुद्ध युद्धघोषणा की तथा सबसे पहिले मारवाड राज्यकी ओर अपनी सेनाको साथ लेकर बढा। जिस समय हुमायूंका भाग्य बिगड रहा था और कष्टपर कष्ट बीत रहे थे, दुराचारी मालदेवने उस समय उसको बाँधना चाहा था, जान पडता है कि कदाचित् इस दुराचारका बदला लेनेके लिये ही अकबरने उसपर चढाई की हो। माडवारराज्यमें भैरतानामक एक समृद्धनगर है। उक्त राज्यके मध्य सम्पत्तिशालितामें इस नगरका दूसरा नम्बर है। मुगल सम्राट्ने इस नगरको अत्यन्त ही विदलित किया। शहन्शाहका अखण्डप्रताप और तेज देखकर अम्बरका राजा भरमल्ल अत्यन्त भीत हुआ और होनहार चढाईसे रक्षा पानेकी आशासे अपने पुत्र भगवानदासके साथ अकबरके सामन्तोंमें मिल गया। कायर अम्बरराजने केवल अपनी स्वाधीनताको ही नहीं बेचा, वरन सम्राट्की प्रसन्नता प्राप्त करनेके लिये अपने पवित्रकुल गौरवको पानी देकर अपनी बेटीको शाकतीय यवनराजके हाथमें अर्पण कर दिया। पवित्र कुलगौरव और अत्यन्त प्राणधारी स्वर्गीय स्वाधीनताके बदलेमें जो राजप्रसाद और शान्ति मोल ली जाय, उस प्रसाद और उस शान्तिका प्रयोजन क्या है ? वरन अनन्त कालतक यंत्रणामयी अशान्ति और विपत्तिके अंकुशोंका आघात सहना अच्छा है, तथापि इस प्रकारके कलुषित राजप्रसादका कुछ भी प्रयोजन नहीं है। सौभाग्यकी बात है कि भारामल्ल और राठोर राज पराधीनतारूपी जंजीरके बन्धनको बहुत

* मुगल सम्राट अकबर और फ्रांसका चौथा हेनिरी, तथा बैरमखाँ, तथा फ्रांसका मंत्री सली, यह चारों प्रायः एक समयमें ही विद्यमान थे। आश्चर्यका विषय है कि इन दोनों राजाओं और दोनों मंत्रियोंका चारित्र प्रायः एक ही प्रकारका था, परन्तु सलीकी अपेक्षा बैरमखाँके चरित्रमें कुछ विभिन्नता पाई जाती है बैरमखाँ अत्यन्त तेजस्वी और न्यायपरायण था। हृदयके रुधिरको देकर उसने जिस मुगलराज्यको दृढ किया, फिर अन्तमें इस ही राज्यका विद्रोही हुआ, इस अपराधके दंडमें उसको देशनिकाला हुआ। देशनिकालेसे उसका प्राण नहीं गया, परन्तु दुःखकी बात है कि एक गुप्त घातककी विषैली छूरीने उसका काम तमाम किया। बैरमखाँका जीवनचारित्र पढने लायक है।

दिनतक सहन न कर सकनेके कारण स्वाधीनताके प्राप्त करनेकी चेष्टा करने लगे। इतनेहीमें अकबरके उजबक सरदारगण विद्रोही हो उठे । सबसे पहिले उस विद्रोहके दबानेकी चेष्टा अकबरको करनी पडी । अतएव उसके हृदयमें राजस्थानके जीत लेनेकी आशा बलवती होगई थी वह कुछकालके लिये रुक गई । इस विशृंखलाको दूर करनेके पीछे अकबरने अपनी विजयिनी सेनाको साथ लेकर चित्तौरपर चढाई की थी ।

जिस राजाका राज्य श्रेष्ठ नियमपद्धतिके द्वारा भलीभांतिसे रक्षित होता है, जो किसी प्रकारकी दुर्लिप्सा या दुराकांक्षाके वशमें नहीं है; विज्ञानी और श्रेष्ठ चारित्रवाले मन्त्रियोंके साथ जो शुद्ध राजनीतिके अनुसार अपने गौरव, सन्मान तथा अपनी मर्यादाकी रक्षा कर सकता है, वही यथार्थ " प्रजापाल " नामका अधिकारी है; उसका राज्य ही स्वर्गीय सुखका स्थान और शान्तिका कुसुमोद्यान है । परन्तु जो राजा स्वेच्छाचारी है, जो एक लहमेभरको भी प्रजाके सुख दुःखका विचार नहीं करता, स्वार्थपरता जिसकी मूलमंत्र है, प्रजाके रुधिरका सुखाना ही जो यथार्थ राजधर्म समझता है; राजाओंमें उसको नीच समझना चाहिये—वह प्रजापालनामका कलंक है—वह स्वार्थपर पिशाचका पापमय अवतार है । उसका राज्य घडीके खटकेके समान सदा ही चंचल है, अभी है,—अभी नहीं है; वह अस्थिर और पतनशील है । मूल बात यह है कि जिस राजाकी इच्छाके ऊपर राज्यकी राजनीति बनाई जाती है, उसके राज्यमें सुख किसी प्रकारसे नहीं रह सकता । यदि सौभाग्यसे वह प्रजाहितैषी हुआ, तब तो वह राज्य उन्नतिके ऊंचे आसनपर अवश्य ही पहुंच जाता है, परन्तु उस उन्नतिके चिरस्थाई रहनेमें बराबर सन्देह ही रहता है । संभव है कि कालचक्रके अनिवार्य फेरसे उस प्रजाहितैषी राजाका उत्तराधिकारी प्रजापीडक और स्वार्थी हो तब वह सुखका राज्य—सुवर्णका मंदिर—निश्चय ही श्मशान और अन्धकूपके समान हो जायगा । संसारका यह अवश्यम्भावी नियम है । अकबर और उदयसिंहके राज्यमें पृथक २ यह दोनों चित्र दिखाई देंगे ।

अकबर और उदयसिंह एक ही उमरमें गद्दीपर बैठे थे * पिताकी शोचनीय मृत्युके पीछे तेरह वर्षकी उमरमें जिस दिन अकबरको भारतवर्षकी गद्दी प्राप्त हुई उस ही दिन शाकतीयकुलका भविष्य भाग्याकाश उज्ज्वल प्रकाशसे प्रकाशमान होगया; परन्तु तब भी अकबरको शान्ति प्राप्त न हुई । वह जिस पदपर पहुँचा था, उसके मार्गमें बहुतसे विघ्न थे उन सब विघ्नोंको दूर करके निष्कण्टक और निरातंकभावसे राज्यशासन करना उसको प्राप्त होगा या नहीं, इस ही विचारमें अकबर गोते खाने लगा । करोडो आदमियोंके भाग्यकी डोर जिसके हाथमें लगी हुई है; आज वह पुरुष भी अपने भाग्यकी चिन्तासे उत्कंठित हो रहा है । परन्तु विधाता एकान्तमें बैठकर जो उसकी भाग्यलिपिको लिख रहा था और आशापूर्ण भगवती सिद्धिदायी आनन्दमूर्ति धारण करके जो उसके शिरहाने निरन्तर विराजमान रहती थीं, इस बातका समाचार तो शहन्शाहको अबतक भी ज्ञात नहीं था । विधाताके

* सिंहासनपर बैठनेके समय अकबर और उदयसिंहकी उमर तेरह २ वर्षकी थी ।

अपूर्व विधानसे जिस नक्षत्रमें अकबरकी जन्मरात्रिमें अमरकोटके मयदानमें प्रसन्न प्रकाशका विकाश किया था, उसकी ही विमल विभासे खिंचकर महानुभाव बहराम तथा पंडित और धर्मात्मा अब्बुलफजलके समान चतुर मंत्रीगण उसको प्राप्त हुए थे। अकबर और उदयसिंह यद्यपि एक ही वयसमें सिंहासनपर बैठे, परन्तु दोनोंके चरित्रमें किञ्चित् भी मेल नहीं था। जन्मसे ही अकबर विपत्तिकी गोदमें रहा था, अस्थिर भाग्यचक्रके अनिवार हेर फेरसे उसने बालकपनसे संसारकी कितनी नई २ मूर्ति देखीं संसारकी कितनी प्रचण्ड तरंगोंकी चोट अपने हृदयपर सहीं उसका विचार कौन कर सकता है, इस ही कारणसे उसने मनुष्यकी प्रकृतिके गूढ तत्त्वमें जिस प्रकारका ज्ञान प्राप्त किया था वैसा ज्ञान उदयसिंहको कहां है ? उदयसिंह भी बालकपनसे एकान्तमें प्रतिपालित हुआ था, कमलमेरकी काननावृत शैलमालाके सिवाय दूसरी शोभा उसके देखनेको नहीं मिलती थी। उस संकीर्ण पहाडकी चोटीपर बने हुए महलमें रहकर वह बाहरका कोई भी समाचार नहीं जानते थे।

अतएव संसारनीतिका कोई सूत्र ही उदयसिंहको ज्ञात नहीं था। जिसको अपने जन्मका विवरण भी ज्ञात नहीं, बालकपनसे ही जो एकान्तके बीच पराये घरमें आदरके साथ पालित होरहा है, जो एक पलभरके लिये भी विपत्तिरूपी अंकुशके आघातसे पीडित नहीं हुआ, जिसने एक मिनटके लिये भी संसारी कूटनीतिकी विकट भ्रुकुटिको नहीं देखा, उसको संसारी व्यवहारमें किस प्रकार चतुरता प्राप्त हो सकती है ? संसारका व्यवहार न जाननेके कारणसे ही पीछे राणाजीको अत्यन्त कष्ट भोगना पडा। उन्होंने समझा था कि ऐसे ही सुखसम्पत्तिमें हमारा जीवन व्यतीत होगा। इस अनर्थकारी धारणाने ही राजकार्यसे उनके मनको उचाट कर दिया। प्रजाकी भलाई, राजाका कर्त्तव्य और राजकार्यका कुछ भी विचार उनको न रहा। राज्य क्या विलास लालसाकी तृप्ति साधन करनेका श्रेष्ठ उपाय है ? जिस शासन दंडमें हजारों आदमियोंका सुख दुःख मिला हुआ है वह क्या केवल गेंदका खिलोना है ? राजगुण समन्वित कौनसा शास्त्रदर्शी राजा इस बातका विचार नहीं कर सकता है ? और कोई करै या न करै-पर-राजपूत-कलंक-शिशोदीयकुलको डुबानेवाले उदयसिंहको इन बातोंकी कुछ भी परवाह नहीं थी, तथा इस ही कारणसे वह अत्यन्त अनाचार करता था। यद्यपि विगतयुद्धमें पाखण्ड बहादुरकी प्रज्वलित समरपिपासा शान्त करनेके लिये जाकर चित्तौरके चतुर मंत्रियोंने अपने प्राण खो दिये थे तथापि राणाको इच्छा होती तो वह किसी चित्तौरके राजनीति विशारदसे राजनीति सीख लेते, चतुर राजनीति विशारदके उत्साह, उद्दीपन, और सुशिक्षाके गुणसे उनके हृदयका अन्धकार दूर होजाता, ऐसा होनेपर फिर कोई भी उदयसिंहको कापुरुष न समझता। परन्तु दुर्भाग्यसे विधाताने उनको राज-

गुणोंसे भूषित नहीं किया, नहीं तो उनकी ऐसी कुबुद्धि क्यों होती ? और चतुर मंत्रियोंकी परामर्शपर क्यों नहीं ध्यान देते ? उदयसिंह कायर थे, राजा होनेसे क्या होता है जो हृदयमें राजगुण नहीं तो वह राजा ही क्या ? वह हृदय दूसरी सामग्रीसे बना हुआ था वह किसी दूसरी ही शक्तिसे चलायमान था कि जो प्रलय कर देनेवाली थी । वह शक्ति एक तुच्छ वेश्याके द्वारा चलाई जाती थी । यह वेश्या ही उदयसिंहकी सलाह देनेवाली,—जीवन सहचरी विद्या बुद्धि शिक्षा धारणा सबहीकी स्वामिनी थी । राणाजी सब प्रकारसे इसके दास थे, उनके भाग्यसूत्रको वह पिशाचिनी अपने हाथमें थाम रही थी राणा उदयसिंह वेश्याके दास गिह्लोटकुलकेशरी वीरवर बाप्पारावलका वंशधर —मेवाडका महाराणा;—यवन गर्व खर्वकारी राणा संग्रामसिंहका पुत्र अभागा उदयसिंह, पापिनी गणिकाकी आज्ञाके अनुसार चलता है आज वह गणिका अभागे उदयसिंहके भाग्य और अभागिनी मेवाड भूमिके शासनदण्डके चलानेको तैयार हुई है । मूर्ख उदयसिंह उसके ही ऊपर भरोसा रखके पाप विलासिताके पंकिलकुण्डमें डूब गया । राणाको इस प्रकारका आलसी और विलासमग्न देखकर चतुर अकबरने अपने अभीष्ट साधन करनेका अच्छा अवसर देखा । उसकी विद्वेषाग्निकी चिनगारीसे चित्तौरका गौरवस्तम्भ भस्म हो गया । उदयसिंहके पापाचारका उचित प्रायश्चित्त होगया ।

अक्षरतास नदीके किनारेपर बसे हुए दूरदेशके फरगना राज्यको छोडकर मुगलकुलतिलक बाबरने सुर नदी भागीरथीके प्रसन्न जलसे धुले हुए पुण्यक्षेत्र भारतवर्षमें आकर जो बीज बोया था, किसने विचार किया था कि एक समय यह छोटासा बीज एक बडा भारी वृक्ष हो जायगा ? किसने सोचा था कि एक समय उस वृक्षकी जडें दूरतक फैलकर बडकी जडोंके समान भारतकी हृदयरूपी अटारीको विदारित करेंगी ? बाबरका बोया हुआ वह बीज हुमायूंके यत्नसे अंकुरित हो गया था; परन्तु यदि अकबर उसको पानीसे न सींचता तो वह अंकुर अवश्य ही सूख जाता. अत एव अकबरके द्वारा ही इस पुण्यतीर्थ भारतवर्षमें मुगलबादशाहीकी जड जमी । अकबर ही राजपूत—सौभाग्य—सूर्यके लिये प्रचंड राहु हुआ । राजपूत स्वाधीनतारूपी अटारीपर अकबर ही वज्र होकर गिरा । अबतक जडसे उस अटारीको कोई भी नहीं गिरा सका था—परन्तु आज अकबरने उसे खुदवाकर फिकवा दिया । आज अकबरके भयंकर वज्रप्रहारसे वह अटारी चूर २ हो गई । स्वाधीनताकी ऊँची अटारीसे उतारकर अकबरने अभागी हिन्दू जातिको दुःखके अन्धे कारागारमें कठोर दासपनकी जंजीरसे जकड दिया । हम नहीं जानते कि कौनसे गुणके प्रभावसे और कौनसे महामंत्रके बलसे राजपूतोंने उस जंजीरके भारको हलका कर दिया था; नहीं जानते कि अकबरके कौनसे गुणसे मोहित होकर राजपूतोंने उसकी पहिराई हुई कठोर जंजीरको बारंबार चुम्बन किया था ? इस

गंभीर रहस्यका भेद करना कोई सहज बात नहीं है। विशेष परीक्षा करके देखनेसे अकबरका कोई गुण तो अवश्य ही दिखाई देगा, वह गुण यह था कि अकबरशाह मनुष्यके हृदयकी बातको जानता था, यह ज्ञान उसको यहांतक था कि मनुष्यकी गुप्तसे गुप्त बात भी उसे ज्ञात हो जाती थी; तथा आवश्यकता पडनेपर चतुरताके साथ सबको ही संतुष्ट कर देता था। इन्हीं अनुपमगुणोंकी सहायतासे अकबरने हिन्दूजातिके हृदयको प्रीति और भक्तिसे बांध रक्खा था। इस ही कारणसे एकबार आनन्दमें भरकर विजित हिन्दुओंने उसको "जगद्गुरू" और "दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा" कहकर पुकारा था। परन्तु इस गर्वित और महिमामयी उपाधिके पानेसे पहिले उसने अपने हाथसे कितने ही भारतसन्तानोंके हृदयको अम्लान होकर चीर डाला था, सनातनधर्मके कितने ही पवित्र मन्दिरोंको चूर चूर कर उन सबके ऊपर नमाजगाह बनवाई। भारतके कितने ही वीरवंश उसके कठोर हाथके भयंकर प्रहारसे एक बार ही विध्वंस हो गए थे, उसकी स्वेच्छाचारितासे कितने ही आर्यसन्तानोंके बडे २ मुखोंमें कलंककी कालिमा लगी है। अपनी अपूर्व अभिज्ञता और चतुरताके प्रभावसे जबतक उसने विजित दासपनकी जंजीरसे जकडे हुए, अभागे, भ्रमसे अन्धे हुए भारतसन्तानके हृदयकी प्रीतिका उपहार नहीं पाया था; तबतक वह निठुर शहाबुद्दीन और अलाउद्दीन आदि हिन्दूविद्वेषी कठोर हृदयवाले बादशाहोंका भी सरताज गिना जाता था। विचार करनेसे निश्चय ज्ञात होगा कि ऐसा कलंकित नाम कभी भी अन्याय और अविचारसे उसको नहीं दिया गया है, परन्तु इस कलंकने सदाके लिये उसमें घर नहीं किया था। जवानीके भयंकर मदसे मतवाले होकर अकबरने कठोर दुराकांक्षावृत्तिको तृप्त करनेके लिये हिन्दुओंके हृदयमें जो कठोर घाव कर दिये थे, बुढापेके समय उन सब घावोंको चंगा करके कोटिकोटि भारतवासियोंका आशीर्वाद प्राप्त किया था।

राजधर्महीन अकर्मण्य उदयसिंहके हाथमें मेवाडका राज्यभार सौंपा गया। बाप्पा, समरसिंह, हमीर आदि राजनीति विशारद और शास्त्रज्ञ राजाओंने जिस शासनभारको चलाया, आज वही गुरुभार उदयसिंहके हाथ आया; यद्यपि पहिले महाराजागण अत्यन्त चतुर और कार्यकुशल थे तथापि राजकार्यको अत्यन्त बडा काम जानकर सदा सावधान रहते थे, आज अकर्मण्य उदयसिंहने उस ही कार्यको अत्यन्त सहज और सीधा समझा; इसी कारणसे मेवाडकी दुःखराशि पूर्णमात्रासे परिपूर्ण हो गई। शिशोदीयकुलकी अधिष्ठात्री देवीने प्रतिज्ञा की थी कि बाप्पारावलके वंशधरगण जबतक मेरी आज्ञा पालन करेंगे तबतक किसी प्रकारसे चित्तौरपुरीको नहीं छोडूंगी। बाप्पारावलके वंशवालोंने इतने दिनतक उसको संतुष्ट करनेके लिये अपने हृदयका रुधिरतक भी दे दिया था; इस कारण महादेवीजीकी प्रतिज्ञा भी अबतक भलीभाँतिसे पूरी हुई थी। स्वदेशकी स्वाधीनता रक्षा करनेके लिये गिहोट वंशके राजाओंने जो अद्भुत

आत्मोत्सर्गका प्रकाशमान उदाहरण दिखाया; उसका ध्यान करनेसे हृदय विस्मयरससे परिपूर्ण हो जाता है। ऐसा कौन है जो चित्तौरकी स्वाधीनता रूपिणी उन भगवती चतुर्भुजा देवीके सामने प्राण विसर्जन करनेको तयार न हो ?—पहिला उदाहरण—वह प्रकाशित उदाहरण—उस दिन—जिस दिन हिन्दूविद्वेषी कठोर हृदय प्रचंड अलाउद्दीनकी प्रचंड विद्वेषाग्निकी चिनगारीसे सुवर्णकी चित्तौरपुरी भस्म होकर श्मशान हो गई थी, उस दिन—जिस दिन बारह राजकुमारोंने अपने हृदयके रुधिरको देकर चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवीकी उत्कट प्यास बुझाई और वीरवर वाप्पारावलकी लोहित विजय बैजयन्तीको मुसलमानोंके ग्राससे बचाया। वह दिन चित्तौरका कैसा गौरवमय दुर्दिन था। राजपूत वीरोंका उद्योग कैसा अनुपम हो गया था। उसके पश्चात् दूसरी बार—जिस दिन मेवाडकी दक्षिणसीमामें स्थित शैलराजिको भेद करके दुष्ट राजबहादुरकी बिजयिनी सेना अनन्त ज्वारभाटेके समान प्रचंड वेगसे मेवाड़के हास्यमय क्षेत्रमें आ पहुंची, उस दिन भी वाप्पा रावलके वंशधर वीरवर बाघजीने आत्मोत्सर्गका प्रकाशित उदाहरण रखकर भगवती चतुर्भुजाकी कठोर आज्ञाको पालन किया।

परन्तु अब तीसरी बार--चित्तौरके इस तीसरे घोर संकटमें, कठोर उद्यममें, शिशोदीयकुलके इस अनिवार्य संकटकालमें वाप्पारावलका कौनसा वंशधर प्राणका दाव लगाकर चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवीको संतुष्ट करेगा ? कौनसे वीरका हृदयरुधिर पीकर संतुष्ट हो भगवती चामुण्डा आज चित्तौरपुरीकी रक्षा करेंगी ? कोई भी नहीं आया ? कोई भी उस भयंकर संग्रामभूमिमें नहीं आया; क्या होगा ? कोई उपाय नहीं। चित्तौरका शोचनीय दारुण अधःपतन होना ही चाहता है; चित्तौरका स्वाधीनतारूपी सूर्य सदाके लिये इस समय अस्त होनेवाला है। वह मोहकरी महामाया कहाँ अन्तर्द्धान हो गई ? जिस गूढ भाग्यसूत्रने गिह्लोट कुलको इतने लंबे समयतक बांध रक्खा था, वह सूत्र भी सदाके लिये टूट गया। जिस महादेवीने गंभीर निशीथकालके समय समरसिंहकी दोनों आंखें खोलकर गंभीर स्वरसे कहा था कि "हिन्दू—गौरव लोप होना चाहता है"। जिन्होंने, चिन्ता करते हुए लक्ष्मणसिंहके सन्मुख प्रगट होकर बारह राजकुमारोंकी बलि चाही थी। वह—चित्तौरकी मूर्तिमान स्वाधीनता लक्ष्मी भगवती चतुर्भुजाजी अभागे उदयसिंहका कायरपन देखकर सदाके लिये चित्तौरको छोड गई। उनके साथ ही राजपूत जातिके एक महान् विश्वासका लोप हो गया। जिस विश्वासके बलसे वे लोग चित्तौरपुरीको पवित्र सनातनधर्म और स्वाधीनताका दुर्जय दुर्ग समझते थे, आज वही महान विश्वास उनके हृदयसे लोप हो गया, आज वे उसको अलीक कल्पनामात्र समझने लगे।

इस प्रकारका पवित्र विश्वास और अपूर्व देवभक्ति राजपूतोंकी जीवनशक्ति और देशरक्षाकी महाशक्ति है। इसके महामंत्रसे दीक्षित होकर अनेक देशोंके अनेक राजाओंने देशकी रक्षाके लिये रणक्षेत्रमें प्रसन्नमुखसे अपने प्राणोंको बलिहार कर दिया है, इसके बहुतसे

प्रमाण संसारके इतिहासमें प्रकाशमान अक्षरोंसे लिखे हुए हैं। जातीय जीवनके जो कई एक अत्यन्त उज्वल चित्र इतिहासमें दिखाई देते हैं उन सबकी ही जड़में यह महान् विश्वास और यह देवभक्ति बीजके समान वर्त्तमान है। वे ज्ञानिकलोगोंको अवश्य इस बातका विचार करना चाहिये कि राजपूतोंके जातीय जीवनसे राजपूतोंकी स्वाधीनता-लालसाका कौनसा सम्बन्ध है? इतिहासमें अनेक बार उनके असीमगुणोंका बखान किया गया है। हमारा विश्वास है कि यह विश्वास ही सदा उनकी विजयका कारण हुआ है।

अकबरने दो बार चित्तौरपर चढाई की थी। परन्तु तवारीखफरिस्तामें केवल एक ही बारकी चढाईका वृत्तान्त लिखा है। जिस बार उसकी प्रचंड क्रोधाग्निसे चित्तौर विध्वंस हो गया था, उसी बारके आक्रमणका वृत्तान्त तवारीखफरिस्तामें लिखा है। परन्तु जिस बार वह दलित, पराजित और निराश हो संग्रामभूमिसे भागा था उस बारका किंचित वृत्तान्त भी उक्त तवारीखमें नहीं पाया जाता। ज्ञात होता है कि पराजयरूप अपमानसे अपने शहंशाहको बचानेके लिये मुसलमान इतिहासलेखक इस बातको चबा गया। भट्टग्रंथमें इसी आक्रमणको अकबरकी पहिली चढाई लिखा है। उदयसिंहकी वीरा उपपत्नीके विक्रम बाहुबलसे उस बार अकबरको नीचा देखना पडा था। इसका वृत्तान्त इस प्रकार है कि सम्राट् अकबरने अपनी विजयिनी सेनाको साथ लेकर जोरशोरसे चित्तौरपर चढाई की। प्रथम तो कायर उदयसिंहने अकबरसे लडनेका साहस न किया। परन्तु सरदारोंके कहने सुनने और राज्यजानेके भयसे विवश हो संग्राममें गया। हृदयमें साहस नहीं, प्रतिज्ञा नहीं, दृढता नहीं फिर किसकी सहायतासे मुगलवीरको पराजय किया जायगा? चित्तौरकी सेनाने बहुत देरतक अकबरकी भयंकर मुगल सेनासे युद्ध किया। परन्तु विना अपने राजाका उत्साह और ढाढस पाये सेना कबतक युद्ध कर सकती है? अन्तमें विवश होकर राजपूतोंकी सेना भागी। अभागा उदयसिंह अकबरके हाथमें कैद हुआ। मुगलसम्राट राणाको अपने डेरोंमें ले गया। मेवाडका राणा मुसलमानोंके हाथमें कैद हुआ। वीरजननी मेवाडभूमिके माथेपर यह कलंकका टीका बहुत बुरा लगा। जो बात मेवाडमें आजतक नहीं हुई थी, आज कायर उदयसिंहसे वही असम्भव बात आगे आई। यह कुछ साधारण शोककी बात नहीं है। उदयसिंहके बन्दी होनेसे राजमंदिरमें अत्यन्त हाहाकार होने लगा। राणाके उद्धार करनेका उपाय किसीसे न सोचा गया। सरदारोंने राणाको छुटानेके लिये किंचित् चेष्टा भी नहीं की अधिक कहनेसे क्या है, बस इतना ही कहना अलम् होगा कि उस समय चित्तौरपुरी सब प्रकारसे निस्तेज हो गई थी। वह निस्पृह और निस्तेजभाव अवलोकन करके उदयसिंहकी उपपत्नीके हृदयमें दारुण अभिमान और क्रोध हो आया। क्या चित्तौरपुरी आज

वीर विहीन होगई ? क्या वीरमाता मेवाड भूमिने आज एक साथ ही अपना समस्त तेज खो दिया ? अबतक जो वह असंख्य जीव चित्तौरके भीतर वास कर रहे हैं क्या यह समस्त ही जीवरहित हैं?क्या यह केवल मांसके पिण्ड ही हैं? क्या क्षत्रियबालाओंने निर्जीव मांसपिंडोंको प्रसव किया है?क्षत्रियोंका साहस,वीरता,तेजस्विता और आत्माभिमान क्या एक साथ ही इस लोकसे लोप होगया ? नहीं तो अपनी आखोंसे अपने राजाका अपमान और कारावास देखकर वे किस प्रकारसे निर्जीव और निश्चिन्त होरहे हैं?वीरनारीने दारुण क्रोध और वधाभिलाषासे उन्मादित होकर अपने कोमल अंगपर कठिन लोह बख्तर धारण किया, तथा हाथमें धनुष बाण व तलवार लेकर घोडेपर सवार हो समरभूमिको चली । चित्तौरका वह निर्जीव और मौनभाव दूर कराके राजपूतोंकी सेनाको नवीन उत्साहसे उत्साहितकर कापुरुष उदयसिंहकी वीरा उपपत्नी सेनासहित भयंकर वेगसे मुगलोंके डेरोंपर जा टूटी, उसके हाथमें जो भयंकर भाला था, उसके दारुण आघातसे तथा धनुषके छूटे हुए बाणसे बहुतसी यवनसेना मारी गई । कुछ ही देर युद्धके पीछे मुसलमान लोग पीछे हटने लगे रुद्रचंडी राजपूतरमणी अत्यन्त उत्साह और विक्रमके साथ उनको भगाती हुई क्रमानुसार अकबरकी प्रधान छावनीकी ओर बढ़ने लगी । वीरनारीकी अद्भुत वीरता देखकर शहन्शाह अकबर विस्मित और चकित हुआ तथा अनेक प्रकारकी विपत्तियोंके भयसे संग्रामभूमिको छोड भागा । स्त्रीकी वीरतासे--केवल एक स्त्रीकी वीरतासे आज भारतका सम्राट् शेखर मुगलवीर अकबरशाह हार गया । नारीके विक्रमसे आज विजयिनी मुगलसेना छिन्न भिन्न होगई । राजपूतरमणियोंकी वीरताका यह एक प्रकाशमान उदाहरण इतिहासमें लिखा गया ।

उदयसिंह भी अकबरके कारागारसे छूट आये, अपने राज्यमें आकर अपनी प्यारी वेश्याकी बहुत कुछ प्रशंसा की, तथा उसकी वीरताको बहुत कुछ सराहा और प्रकाश्य राजदरबारमें गदगद होकर सबके सामने कहने लगे कि वीराकी बहादुरीसे ही हमारा छुटकारा हुआ । राणाजीके मुखसे उस बार वनिताकी बहुतसी प्रशंसा सुनकर चित्तौरके सरदारलोग घृणा लाज और अभिमानसे महाक्रोधित हो उठे तथा शिर झुकाकर राजसभासे एक साथ चले गये और विचार किया कि किसी न किसी प्रकारसे इस वेश्याको अवश्य मार डालना चाहिये, यह विचार कर उसके मारनेकी टोहमें रहे । अकेली स्त्री किस प्रकार उन अगणित सरदारोंके क्रोध और डाहसे बच सकती थी ? विचारी शीघ्र ही उनके हाथमें फँसकर मारी गई ।

कहां तो अकबरको जीतकर सरदार और सामन्तोंको आनन्द प्राप्त होता, और कहाँ अब उसके बदलेमें शोक प्राप्त हुआ, आपसके झगडे झंझटसे राज्यमें भयंकर अशान्ति उत्पन्न हुई । चित्तौरकी ऐसी अशान्तिका वृत्तान्त जानकर अकबर अपने निरादरका पूरा बदला लेनेको तयार हुआ और बडी भारी सेना साथ लेकर चित्तौरको

चला। अकबरकी उमर उस समय पच्चीस वर्षकी थी; शरीरमें विपुलबल और हृदयमें प्रचण्ड उत्साह था। उसके अखण्ड प्रतापसे प्रायः समस्त भारतवर्ष उसके चरणोंमें लोटता था, अनेक दुर्जेय दुर्ग उसके भयंकर विक्रमसे विध्वंस होकर चूर २ होगये थे; बहुतसे राजपूत राजालोग उसकी आज्ञाको पालन करनेके लिये हाथ जोडे हुए खडे रहते थे। फिर मेवाडराजाका शिर किस प्रकारसे उठा हुआ रह सकता है? मेवाडका गर्व किस प्रकारसे बना हुआ रह सकता है? मेवाडके राजालोग किस कारणसे उसके वशमें न होंगे। मुगल सम्राटकी प्रचंड अनीकिनी प्रचंड प्रभावसे मेवाडके भीतर बढती चली गई। चित्तौरके निकट बसे हुए पण्डौली×नामक गाँवसे बरशी जानेके समय, पाँच कोशका जो श्रेष्ठ राजमार्ग पडता है, उसके ही ऊपर भागमें मुगल शाहन्शाहकी बडीभारी छावनी पडी। यहांपर संगमरमरका एक शुण्डाकार स्तम्भ भी बना हुआ है। यह स्तम्भ "अकबरका दीवा" * अर्थात् अकबरका दीपक इस नामसे प्रसिद्ध है। अबतक यात्रीगण उस दीपागार अथवा मेवाडके अधःपतनके प्रकाशमान स्मृति स्तम्भको दूरसे देखकर ही चित्तौरकी अतीत दुरवस्थाका विचार करते २ आंसू बहाते हुए चले जाते हैं।

भट्टग्रंथोंमें लिखा हुआ है कि मेवाडके सत्यानाश करनेका विचार कर भयंकर मूर्तिसे जैसे ही अकबर चित्तौरके सामने आया वैसे ही डरपोक उदयसिंह नगरको छोड कर भाग गया। राणाजीके भागनेसे भी चित्तौर रक्षकशून्य नहीं हुआ। यद्यपि चित्तौरका छोटेजीका राणा चित्तौरको छोड गया, परन्तु चित्तौरके नामकी ऐसी पवित्र मोहिनी माया है कि न जाने कहांसे साहसी और विक्रमशाली अगणित वीरगण नंगीतलवार हाथमें ले चित्तौरकी रक्षा करनेको वनोंसे संग्राम करनेके लिये आन पहुंचे मानो किसी अप्रगट देवताके मृतसंजीवनमन्त्रके प्रभावसे चित्तौरकी समरभूमिमें गिरे

× टाडसाहबका मत है कि पण्डौली नामके दो गांव हैं। उनमेंसे यह तो चित्तौरके प्रसिद्ध मानसरोवरके किनारेपर बसा हुआ है। इस मानसरोवरके किनारेपर बने हुए पुराने स्तंभमेंसे जो एक शिलालेख उनको मिला था, उसकी ही सहायतासे उन्होंने गिह्लौट कुलके यथार्थ प्रादुर्भावकालको निरूपण किया था।

* टाडसाहब कहते हैं कि "यह दीपागार अबतक पूर्णशरीरसे विद्यमान है। इसकी कुल बनावट चूनेके पत्थरसे हुई है। इसकी उंचाई ३० फीट; तली वर्ग २० फीट और शीर्ष ४ फीट होगा। ऊपर चढनेके लिये इसके नीचे एक सीढी बनी हुई है। एक बडी अंगीठीमें आग जलाकर प्रतिरात्रिमें इसके ऊपर रक्खी जाती थी, यात्रीगण इसको ही चिह्न समझा करते थे।" टाडसाहब कहते हैं कि "यह दीपागार एक प्रकारकी मूर्तिकी नाईं बनाया गया था। हिन्दु, मुसलमान, ईसाई,अथवा यहूदी किसीके भी उपासना मंदिरसे मिलता हुआ इसको नहीं बनाया गया था। परन्तु यदि भली भांतिसे उसकी बनावटपर ध्यान दिया जाय तो ज्ञात होगा कि सब जातियोंके देवालयोंका निदर्शन उसमें पाया जाता है।"

हुए वीरगणोंकी भस्मसे अगणित वीरोंकी सृष्टि उत्पन्न हुई। राजस्थानके भिन्न २ जनपदोंसे सरदार और सामन्त गण अपनी २ सेनाको साथ ले चित्तौरके स्थानाकी रक्षा करनेको खडे होगये वीरवर सहीदास चन्दावत् वंशको बहुतसी तेजस्वी और साहसी सेनाको साथ लेकर चित्तौरके प्रधान तोरणद्वार-सूर्यद्वार, पर डट गया। मदेरियापति रावत दूदा गगावतों×की सेनाको लेकर रणरंगमें आन पहुंचा। वैदला और कटोरियानामक दो जनपदसे, दिल्लीश्वर हिन्दूराज चक्रवर्ती महाराज पृथ्वीराजके वंशसे उत्पन्न हुए दो बलवान सामन्त राजा और विजौलीके प्रमार तथा मादीके झालापति इत्यादि कठोर उत्साहके साथ संग्रामभूमिमें आकर अपने वीरोचित रणाभिनय और उत्साहसे अपनी २ सेनाको बढावा देने लगे। इनमेंसे बहुतसे मेवाडशासनके अन्तर्गत थे, इन सबके अतिरिक्त और भी बहुतसे विदेशीय राजपूत वीर अकबरके साथ संग्राम करनेके लिये आये थे। उनमें देवलपति बाघजीका वंशधर झालौरपति शोनगडेका राव, ईश्वरदास राठौर, करमचन्द कछवाहा, और ग्वालियरके युवराज यह समस्त वीर विशेष प्रसिद्ध हैं। इन लोगोंकी अद्भुत वीरता और रणरंगका वृत्तान्त सुवर्णके अक्षरोंसे इतिहासरूपी पटपर विराजमान है।

क्रमानुसार हिन्दू मुसलमानोंमें घोर युद्ध आरम्भ हुआ। यवनसेना भयंकर सिंहनाद करती समरभूमिको कँपाती उत्कट वेगसे चित्तौरके सूर्यद्वारपर धाई, इस ओर रणोन्मत्त राजपूत वाहिनी भी विकट शब्द करती हुई आकाशको विदारती दहाडती हुई धनुषबाण लेकर तयार हो गई। चन्दावत वीर सहीदास भीम गम्भीर हुंकार करके यवनसेनापर बाणोंकी बर्षा करने लगा। सूर्यतोरण द्वारके भीतर हो कर चित्तौरमें प्रवेश करनेके लिये मुगलोंकी सेना समुद्रके समान उफनकर उसकी ओरको आने लगी बन्दूकोंकी अग्निमय गोलियोंको चला २ कर मुगलसेना अनेक चन्दावत वीरोंको गिराती हुई आगे बढने लगी। वीरवर सहीदासने एक पांव भी पिछाडीको नहीं हटाया। एक २ करके उसके बहुतसे सिपाही गिर गए, तथापि उसका उत्साह ज्योंका त्यों बना रहा, जबतक उसके प्राणने शरीरको नहीं छोडा, जबतक उसकी नाडियोंमें रुधिरका प्रवाह रहा और जबतक उसकी वज्रमुष्टि शिथिल न हुई, तबतक किसी प्रकारसे शत्रुगण तोरणद्वारमें नहीं घुसने पाये।

चन्दावत वीर सहीदासकी इस अद्भुत वीरताको देखकर और राजपूतलोग भी प्रचण्ड उत्साहके साथ शत्रुओंका संहार करने लगे। परन्तु जिन दो महावीरोंने दुर्दान्त यवनोंका गर्व खर्व करनेके लिये मेवाडके उस शोकाच्छन्न भाग्याकाशको कुछ देरके लिये निकट उज्ज्वल प्रकाशसे चमका दिया था, जिनकी लोकविस्मयकारी अद्भुत वीरता और रणनिपुणताका वृत्तान्त लपटके समान चमक कर मेवाडके इतिहासके इस

× यह संगावतलोग राणा सांगा (सांगाजी) की संतान सन्तति नहीं है। वीरवर चंडके वंशमें जो संगनामक एक वीर हुआ था, यह लोग उसीके वंशमें उत्पन्न हुए थे।

अँधेरे अध्यायको प्रकाशित कर रहा है। स्वयं अकबरने उनकी वीरता तथा रणनिपुणताको अक्षय रखनेके अभिप्रायसे स्वयं उन दोनोंका वृत्तान्त प्रकट किया है। इन दोनों वीरोंका नाम जयमल और पत्ते * था। जयमल बिजनौरका राजा था। मारवाडके साहसी सामन्तोंमें यह विख्यात था इसका जन्म राठौरकुलकी शाखा मेरतिया गोत्रमें हुआ था। पत्ते कैलवाड़ेका स्वामी था, यह चन्दावत् कुलकी शाखामें उत्पन्न हुआ था। उसका गोत्र जगवत था। इन दोनों महावीरोंका आजतक राजपूतलोग जप किया करते हैं, आजतक प्रतःकालके समय विस्तरेसे उठकर प्रातःकालमें स्मरण करने योग्य महापुरुषोंकी पवित्र नाममालाका जप करनेके समय वे लोग उन महावीरोंके पवित्र नामको भी जप करते हैं। राजपूतोंकी स्त्रियें आजतक सन्ध्याबाती करनेके समय जयमल और पत्तेकी याद करके अपने लडका लडकीका मंगल मनाया करती हैं, तथा गृहस्थोंकी लडकियां भी आटा पीसनेके समय भट्टकविजनोंके बनाए हुए उनकी वीरताके गीतोंको सुन्दर वाणीसे गाया करती हैं। जबतक इस संसारमें वीरताका आदर रहैगा, जितने दिनतक आर्यवीर राजपूतलोगोंके हृदयमें गतकालकी वीरताका एक किनकामात्र भी शेष रहेगा, बीते हुए चित्रकी एक रेखा भी उनके स्मृतिरूपी वक्षपर अंकित रहेगी, तबतक किसी प्रकार भी जयमल और पत्तेका नाम इस संसारसे लोप नहीं होगा—ऐसी किसीमें सामर्थ्य नहीं है जो इन वीरोंके नामको लोप कर सके। जयमल और पत्तेने किसीके मोल लिये हुए उत्साह अपने उत्साहको नहीं बढाया था—वा किसीके बढावा देनेसे उन्मत्त होकर वे चित्तौरमें प्राण देनेको नहीं आते थे; उनके उदार और महान् हृदयने ही स्वदेशकी रक्षाके लिये उनको प्रेरण किया था। नहीं तो यशाकांक्षा या स्वार्थसाधनकी नीचप्रवृत्तिके वश होकर यवनोंसे संग्राम करनेके लिये तयार नहीं हुए थे। यह भयानक संग्राम केवल पुरुषोंका ही संग्राम नहीं था, बरन अन्तःपुरमें रहनेवाली अनेक राजपूत ललनागण भी परदेको छोडछाड कर अपने कोमल शरीरपर लोहबखतर पहर ढाल तलवार ले चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये समरभूमिमें गई थीं।

जिस समय शालुम्ब्रापति चंदावतवीर सहीदासने सूर्यद्वारपर गिरकर प्राण दिये, तब वीरवर पत्तेने बचे हुए चंदावत वीरोंकी सरदारीको ग्रहण किया। इस समय पत्तेकी आयु केवल सोलह वर्षकी थी, पिता गतयुद्धमें मारे गये थे। पिताके मारे जानेके समय पत्तेकी आयु बहुत ही छोटी थी, अतएव पुत्रका लालन पालन करनेके लिये माता पतिके साथ सती न हो सकी। अकेला पुत्र है, कैलवापतिका अकेला वंशधर है, इसका लोप होनेसे संसारसे जगवत गोत्रका नाम भी लोप हो जायगा। ऐसी अवस्थामें पुत्रका जीवन कितना मूल्यवान है सो सरलतासे समझा जा सकता है। परन्तु उसकी

× यथार्थनाम प्रताप था परन्तु पत्ते कहा करते थे।

माता वीरपत्नी थी । पुत्रके प्राणोंकी अपेक्षा उसने चित्तौरके गौरवको अधिक मूल्यवान समझा । पीले कपडे पहिराकर पुत्रको चित्तौरकी रक्षाके लिये भेज दिया । वह वीरपत्नी वीरजननी होनेके अतिरिक्त स्वयं भी वीरनारी है । यह चिन्ता उसके हृदयको पलभरके लिये भी व्याकुल नहीं कर सकी कि पुत्रके मृत्युके साथ विपुल जगवत कुल भी अनन्त कालके लिये लोप हो जायगा । वीरमाता केवल इतनेहीसे संतुष्ट थी कि मातृभूमिके लिये पुत्रका प्राण जाय और बराबर उसका यही व्रत रहे । इसी कल्पनासे संतोष प्राप्त करके उसने अपने प्यारे कुमारको प्राण होमनेके लिये संग्राममें भेज दिया और स्वयं भी वीरजननीका कर्त्तव्यसाधन करनेको तयार हुई । अपनी सुकुमार देहपर लोहेका बखतर पहिर हथियार लगाये, संग्रामकी तयारी करनेके समय उसको एक चिन्ता और भी हुई । घरमें सुकुमारी बालक पुत्रवधू है । ऐसा न हो कि कहीं पीछे वह कैलवा वंशके निर्मल माथेपर कलंकका टीका लगावै; इस कारण पत्तेकी माताने पुत्रवधूका भी वीरवेष बनाया । समस्त गहने उतारकर शरीरमें लोहेका कवच पहिरा दिया और हाथमें तीक्ष्ण शूल देकर उसको साथ लिये हुए पर्वतसे नीचे उतरी । और २ वीरबालाओंने भी पत्तेकी माताका उत्साह देखकर समरवेष धारण कर रणभूमिको पयान किया । इन समस्त वीरबालाओंने श्रवणभयंकर रणबाजोंके साथ वीररसपूर्ण गीत गाते २ भयंकर रणचंडी मूर्तिसे मुसलमानोंकी सेनापर आक्रमण किया ।

चित्तौरके वीरगण चुपचाप और वज्राहतके समान खडे होकर विस्मय विस्फारित अचल नेत्रोंसे उन वीरनारियोंकी अलौकिक वीरताको देखने लगे । जिन्होंने किसी समय भी अन्तःपुरकी छायाको नहीं छोडा था, इतने दिनोंतक सुकुमार आचार व्यवहार करना ही जिनके जीवनका मुख्य उद्देश्य था, आज वे समस्त स्नेह, समस्त ममता और समस्त सुकुमार अनुष्ठानोंको पानी देकर घोडेपर सवार हो देशकी रक्षाके लिये प्रचण्ड मुगलसेनाके साथ संग्राम कर रही हैं ? राजपूत वीरगणोंने अपने नेत्रोंसे यह व्यवहार देखा; कि वीरवर पत्तेकी माताने अपनी पुत्रवधू तथा सहेलियोंके साथ समरमें जाकर बडे २ मुगलवीरोंका संग्राम कर डाला तथा जब देखा कि अब यवनोंके हाथसे बचनेका हमैं कोई उपाय नहीं रहा तब अपनी २ तलवारसे अपना २ हृदय छेदकर सदाके लिये उस संग्रामभूमिमें सो गई ।

अपनी कन्या, बहन और स्त्रियोंको यह अद्भुत रणरंग करके प्राण नेवछावर करते देखकर चित्तौरके वीरगण समस्त संसारीबन्धन और माया ममताको भूलकर उन्मत्तके समान हो गये । उन्मत्तके समान झपटते हुए शत्रुकी सेनापर दौडे । मुगलोंकी विशाल अनीकिनी प्रचण्ड वेगसे उफने हुए समुद्रके समान भयंकर विक्रमके सहित चित्तौरके किलेकी ओर बढने लगी । प्रलयकालीन मेघोंके समान उनकी विकट तोपें जलते हुए गोलोंकी नेवछावर करके श्रवणभैरव सिंहनादसे गर्ज उठीं । उन गोलोंके प्रहारसे

सैकड़ों राजपूत खण्ड २ होकर आकाशको उछलने लगे-सैकडों राजपूत वीरोंकी वज्रमुष्टिसे विशाल धनुषबाण छूट पडे। इस प्रकार धीरे २ राजपूतोंकी सेना घटती गई; परन्तु वे तो भी निरुत्साह न हुए। उन्होंने किसी भांतिसे भी शत्रुओंकी शरणमें न जाना चाहा। शरण ! क्षत्रियकुलमें जन्म लेकर देशवैरी मुसलमानोंकी शरण ! धिक्कारके योग्य तथा नीच उपायका सहारा लेना राजपूतोंने उत्तम न समझा। ऐसे जीवनसे क्या प्रयोजन है ? शरणमें जाना तो दूर रहा, वह पापी चिन्ता भी तो राजपूतोंके हृदयमें उदित नहीं हुई। स्वदेशरक्षा और आत्मोत्सर्गके वीरमंत्रसे उत्साहित होकर वे लोग उन्मत्तके समान हो गये और हाथके तेज खड्गको चला २ कर छूटे हुए गोलोंमेंसे दो एकको काटकर बारंवार बिकट सिंहनाद करने लगे। परन्तु उनका यह समस्त यत्न वृथा हुआ ! इतनेहीमें एक गोली आकर प्रधान सेनापति जयमलके हृदयमें लगी। गोलीके लगनेमें जयमल घोडेसे नीचे गिरा; भयंकर क्रोध और शत्रुसेनाके मारनेकी इच्छासे उसका वीर हृदय उन्मत्तके समान हो गया। कापुरुष शत्रुओंने एक नीच उपायका सहारा लेकर दूरसे उस वीरको मारा। इसका विचार करके किस सहृदयके हृदयमें पीडा न होगी ?

उस भयंकर संकटके समय-चित्तौरकी उस अनिवार दुर्दशाके समय घायल जयमल चित्तौरकी होनहार दशाका विचार करके चिन्ता करने लगा-उसने देखा कि, अरक्षणीय चित्तौरकी रक्षाका अब कोई उपाय शेष नहीं रहा ! दारुण मर्मवेदनासे उसका हृदय विदीर्ण हो गया:-लाल २ नेत्रोंसे एक दो बूंद आंसुओंकी गिरीं। बिकट-क्रोध और प्रतिशोध पिपासाके मारे वह वीर दांत पीस २ कर अकबरको बारंबार धिक्कार देने लगा। क्रमानुसार कराल काल निकट आन पहुंचा। उस समय वीरवर जयमलके सामने उसकी दुर्दशाकी ओर प्राणप्यारी चित्तौरपुरीकी कठोर भाग्य-लिखनकी निबिड छाया बारम्बार घूमने लगी ! उस वीरने अपने अन्तिम जीवनको दर्प और गौरवके साथ त्याग करनेकी प्रतिज्ञा की। शीघ्र ही जुहार व्रतका अनुष्ठान हुआ। इस ओर आठ हजार राजपूत एक साथ "बीडा" * उठाय अन्तिम समयके पीले वस्त्र धारण कर एक दूसरेसे बिदा हो साहस और उत्साहके साथ मुगलसेनामें घुस पड़े। उस काल दुर्गका द्वार खोल दिया गया; उस खुले हुए राजमार्गमें प्राणोंका मायामोह छोडे उन्मत्त राजपूतगण प्रचंड गिरिनदके समान निकलकर शत्रुओंकी सेनाको दलित करने लगे। दोनों ओरकी अगणित सेना मारी गई ! परन्तु मुगल-सेना तो अनंत थी, यदि कुछ वीर मारे गये तो भी उसकी कौनसी बडी हानि हो सकती है। एक २ रक्तबीजका रुधिर निकलेसे शत शत रक्तबीज उत्पन्न होने लगे। ऐसी शक्ति किसमें है जो उन अगणित रक्तबीजोंकी गतिको रोक सकता है ? मूल-

* बिदा होनेके समय राजपूतगण यह "बीड़ा" या ताम्बूल ग्रहण किया करते हैं।

बात यह है कि चित्तौरकी दारुण दुर्दशा हुई । उस दुर्दशासे फिर चित्तौरमें उठनेकी सामर्थ्य नहीं रही । हम नहीं कह सकते कि फिर भी कभी चित्तौर उठैगा या नहीं ?

उस दिन—उस दुर्दिनमें पीले वस्त्र पहिरनेवाले किसी राजपूतने भी अपनी रक्षा करनेके लिये पापी यवनके हाथमें आत्मसमर्पण नहीं किया;—किसी राजपूतने भी उन पवित्र पीले कपडोंको कलंकित नहीं किया—किसीने राजपूत-गौरव और माहात्म्यको जलांजलि नहीं दी । वीरजननी चित्तौरपुरी आज वीररहित होकर शोचनीय श्मशानकी भांति बन गई है-कनकनगरीकी आज शोचनीय दशा हो रही है। आज तीस हजार राजपूत वीरोंने हृदयके रक्तको देकर—"जगद्गुरु" "नरपाल" अकबरकी रुधिरप्यास बुझानेका यत्न किया और उसकी प्रचंड विद्वेषानलमें पतंगके समान दग्ध हो गये । अगणित नरनारियोंके रुधिरकी कीचडसे चित्तौरके समस्त स्थान भयंकर हो गये । उन स्थानोंके ऊपर शोणित लगे छिन्न भिन्न अगणित मृतक देह इधर उधर पडे हैं ! रुधिरकी उस कीचडसे अपने पांवोंको भिगोता, उन छिन्नभिन्न मृतक देहोंको प्रसन्न चित्तसे ठुकराता हुआ—उस भयंकर चित्तौर श्मशानको और भी अत्यन्त भयंकर करता हुआ; निठुर कठोर पाषाणहृदय अकबर चित्तौरके भीतर घुसा । देशविद्रोहके अनेक राजपूतोंके सरदार सामन्तने तथा १७०० (सत्रहसौ) राणाजीके अति निकटके सम्बन्धियोंने उस कुदिनमें चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये अपने प्राण दे दिये केवल ग्वालियरके तुवर राजाने एक और होनहारकी कठोर लिपिका पालन करनेके लिये उस भयंकर समरमेंसे अपने प्राण बचा लिये थे । नौ रानियें, पाँच राजकुमारियें; दो बालक और समस्त सरदारकुलकी स्त्रियोंने उस दिन उस कठोर मुहूर्त्तमें जुहार व्रतको समाप्त करनेके समय अथवा कठोर रणरंगमें अपने प्राणोंको बलिहार कर दिया था । उस भयंकर दिनमें जो सत्यानाश चित्तौरका हुआ था वह भूलनेके लायक नहीं है जबतक इस संसारमें "हिन्दू " नाम अचल रहेगा तबतक कोई इस सत्यानाशकी कहानीको नहीं भूलैगा । जिस दिन चित्तौरके ऊपर यह सर्व संहारकारी विपत्ति पडी, उस ही दिन राजपूत स्वाधीनताकी महाशक्तिरूपिणी भगवती महामायाजी चित्तौरपुरीको छोडकर चली गई । उस ही दिन, उस कराल " आदित्यवार " (रविवार)* के दिन, पवित्र गिह्लोटकुलके अत्यन्त पूजनीय देवता भुवनप्रकाशक भगवान दिननाथने, एक बार अपनी गौरवमय किरणका चित्तौरके ऊपर विसार करके सदाके लिये नेत्र बन्द कर लिये ! उस दिनसे लेकर आजतक फिर वह सगौरव रश्मिपात किसीने न देख पाया ! जो चित्तौर इतने दिनतक स्वाधीनता और सनातन धर्मका अभेद किला समझा जाता था, आज उसकी दारुण दुर्दशा हुई । जिसकी शोभा और सुन्दरता एक समय इन्द्रपुरी अमरावतीको लजाती थी, आज निठुर अकबरने उसको भूतप्रेतोंके ताण्डव नृत्यका स्थान बना दिया । शोचायमान अटारियें और सुन्दर २ मंदिरोंको चूर्ण २ करके धूरिमें मिला

* रविवार, चैत्रसुदी ११ के दिन संवत् १६२४ (सन् १५६८ ई०) में यह भयंकर संग्राम हुआ था ।

दिया ! जिन नगाडोंके भीम गंभीर शब्दसे गिह्लोट राजाओंका पुरीमें आना और बाहर जाना सूचित होता था । जो बडे२ मोलके शोभायमान दीपवृक्ष भगवती विश्वमाता चतुर्भुजा देवीके मन्दिरमें विमल प्रकाश विस्तार कर देते थे, और जो दर्शनीय किवाड चित्तौरके सिंहद्वारमें शोभायमान थे, निर्दयी अकबर अपनी छातीपर पत्थर रखके अपने भावी नगर अकबराबादको सजानेके लिये इन सबको अपने साथ ले गया × ।

अकबरने अपने हाथसे, जयमलका प्राण संहार किया था । जिस बन्दूककी सहायतासे उसने-यह कायर पुरुषोंके समान कार्य किया था, उसका नाम "संग्राम" रक्खा । * इस वृत्तान्तका सत्यता अव्बुलफजल और बादशाह जहाँ-गीरके द्वारा प्रमाणित हुई है । यद्यपि अकबरने धर्महीन उपायसे जयमलका संहार किया था, परन्तु उसके गुणोंका भी ध्यान उसको विशेषतासे था । जयमलको मारकर अकबरने अपनेको कृत्य २ समझा था । यहांतक कि वीरवर जयमल और वीरबालक फत्तेकी लोकविस्मयकर वीरताको अचल रखनेके लिये उसने दिल्लीमें अपने किलेके सिंहद्वारपर एक ऊंचे चबूतरेके ऊपर उन दोनोंकी दो पाषाणमूर्तियें प्रतिष्ठा की थीं । ×

× "तीजो शाखा चित्तौरा" अर्थात् "तीसरी बार चित्तौरका ध्वंस" होनेसे अकबरका हिन्दू विद्वेष और कठोर अत्याचार सूचित होता है । कारण कि अलाउद्दीन अथवा राजबहादुरकी क्रोधाग्निसे जो महलदुमहले, मंदिर और स्तम्भादि टूटनेसे बच गये थे अकबरने उन सबको भी धूरिमें मिला दिया था । ऐसा कहते हैं कि अकबर अत्यन्त शिल्पानुरागी और मनुष्यप्रेमी था, परन्तु चित्तौरकी तबाही यह दोनों बातें मिथ्यासी जान पडती हैं । अलाउद्दीनकी चढाईसे ऐसा कुछ बहुत अनभल नहीं हुआ था कारण कि दुर्गरक्षाका भार एक हिन्दूराजाको ही दिया गया था और राजबहादुरने अपनी दुरभिलाषाको सिद्ध करनेके लिये बहुत ही कम समय पाया था । विशेष करके उस समयमें राजपूतलोग अपने टूटे फूटे मंदिरोंका संस्कार कर लेते थे । परन्तु अकबरके पश्चात् उनका यह भाव अधिकाईसे हीन हो गया था । अकबरके परवर्ती कालका इतिहास पढनेसे इस बातकी सत्यता विदित होगी। अकबरके पश्चात् तो राजपूतोंकी अपनी रक्षाकी ही चिन्ता रहती थी । मंदिरादिके बनाने या मरम्मत करानेमें उनका अनुराग नहीं था । देशकी दीनताके समयमें कभी शिल्पकी उन्नति नहीं हुई । शिल्पशास्त्रमें पारदर्शिता प्राप्त होनेपर भी जबतक उचित उपाय और श्रेष्ठ अवसर नहीं पाया जाता तबतक उस पारदर्शितासे कोई फल नहीं होता । अकबरके कठोर अत्याचारसे ध्वंस हो जानेपर फिर चित्तौरसे नहीं उठा गया; यही कारण है जो फिर चित्तौरकी पूर्व शोभा या सुन्दरताका उद्धार नहीं हुआ !

* "अकबरने जिस बन्दूकसे जयमलका संहार किया था, उसका नाम "संग्राम" रक्खा । संग्राम अत्युत्तम बन्दूक थी, इसकी सहायतासे अकबरने तीन चार हजार पक्षियोंका वध किया था।" जहांगीर नामा ।

× दो सौ पचास वर्ष पहिले इतिहासवेत्ता बर्नियरने भारतवर्षमें भ्रमण करनेके लिये आकर इन दोनों मूर्तियोंको देखा था । उसने भारतवर्षके सम्बन्धमें जो पत्र स्वदेशी मित्रोंको लिखे थे, उनमेंके अधिकांश पत्र सन् १६८४ ई० में लंडननगरमें छपे थे । उनमें जयमल और फत्तेकी प्रतिमूर्तिका वर्णन जिस पत्रमें है वह १ जौलाई सन् १६६३ ई० का लिखा हुआ है । बर्नियर कहता है:-"सिंहद्वारमें—

कार्थेज नगरके भुवनविदित महावीर हनिबलके प्रचण्ड प्रतापसे कनानामक समरभूमिमें रूमवाले जिन सवारोंने प्राणत्याग किये थे; विजयी हनिबलने उनकी अंगूठियोंको तोलकर अपनी जयका परिमाण निर्द्धारित किया था । वैसे ही अकबरने मृतक राजपूतोंके यज्ञोपवीतोंको तराजूमें तोलकर अपनी जयका परिमाण प्रमाणित किया ! तोलमें वे समस्त यज्ञोपवीत ७४॥ मन हुए * ! चित्तौरकी शोचनीय दुर्दशाका वह प्रकाशमान उदाहरण–वह ७४॥ मन 'तिलक' अथवा शपथकी भांति उस दिनसे व्यवहारित होने लगे । वणिक, सेठ, गृहस्थ, प्रेमिक, सब ही उस दिनसे उस शोणितमय ७४॥ चिह्नको अपने २ गुप्तपत्रके पीछे या सरनामेके कोनेमें लिखने लगे । इस साधारण तिलकांकके भीतर जो कठोर शपथ गुप्तभावसे वर्तमान है, उसको कोई भी निरादर नहीं कर सकता ! पत्र पानेवालेके सिवाय और कोई भी ७४॥ अंक लिखे हुए पत्रको नहीं खोल सकता । जो ऐसा करेगा उसको चित्तौरके ध्वंस करनेका पाप होगा । यद्यपि ऐसा वृत्तान्त इतिहासके लिये विशेष आवश्यकीय नहीं होता तथापि इसके भीतर जो नैतिक तत्त्व है; इसही कारणसे इतिहास इसका वर्णन करता है । यह नैतिक उद्देश साधारण नहीं है; कारण कि इस साधारण ७४॥ अंकके भीतर जो गंभीर भाव विराजमान है, उसका विचार करके किस भारतवासीका हृदय एक प्रकारकी तीक्ष्ण चिन्तासे उत्तेजित नहीं हो जाता ?–ऐसा कौन है जो वर्त्तमानको भूलकर अतीतके अँधियारे कुएँमें प्रवेश करके उस दुर्दिनका, उस रुधिरसे रँगे हुए चित्रको देख आवें ?

उदयसिंह चित्तौरको छोडकर गोहिललोगोंके पास चला गया ! यह गोहिललोग राजपिप्पलीनामक गंभीर वनमें रहते थे । अत्यन्त कष्टसे वहांपर कुछ दिन व्यतीत कर

—प्रवेश करनेके समय द्वारकी दोनों बगलोंमें दो बडे हाथियोंके अतिरिक्त देखनेयोग्य और कुछ भी नहीं पाया जाता । उन हाथियोंमेंसे एक हाथीके ऊपर चित्तौरका राजा (जयमल) और दूसरेके ऊपर उसके भाई पत्ते (फत्ते) की मूर्ति है । इन दोनों साहसी वीरोंने अपनी वीरमाताके साथ संग्रामभूमिमें आकर बडी वीरता दिखाई थी । यह लोग ऐसे वीर और साहसी थे कि प्राण रहते हुए शत्रुको शिर नहीं नवाया । इस गौरवके लिये शत्रुनें भी उनकी प्रतिमूर्ति प्रतिष्ठित की है ! राजभवनमें प्रवेश करते ही इन गजारूढ मूर्तियोंका दर्शन करनेसे मेरे मनमें एक अपूर्व भाव–भय, भक्ति और आनंद–मिश्रित एक उच्च भाव उदित हुआ था, कि जो मेरी समझमें भी नहीं आया । "

बर्नियर राजपूतोंके इतिहासको भलीभांतिसे नहीं जानता था; नहीं तो जयमलको चित्तौरका राजा और फत्तेको जयमलका भाई क्यों लिखता । किन्तु केवल इन दोनों वीरोंकी पाषाणमूर्ति देखकर जब कि उसके हृदयमें उपरोक्त गंभीरभाव उदय हुआ था, तब जिन्होंने अत्यन्त कष्ट और परिश्रम सहकर राजपूत जातिके इतिहासका उद्धार किया है, जिन्होंने जयमल और फत्तेके लीला क्षेत्रको अपने नेत्रोंसे देखकर उनकी चितावेदीके ऊपर भक्तिसहित उनके प्रसून दल चढाये, वरन राजपूतोंके अर्थ ही जिन्होंने अपने जीवनको दे दिया; उन टाडमहोदयके हृदयमें कौनसा ऊंचा और महानुभाव उदय हुआ था, उसको इस इतिहासके पढनेवाले पाठकगण भलीभांतिसे जान लेंगे ।

* वह मन पक्के चार सेरका था । डौसाहबने इसको ४० सेरका मन बताकर कई जगह धोखा खाया है।

वह गिह्लोटनामक स्थानमें चला गया, यह स्थान आरावलीकी शैलमालाके भीतर है। चित्तौरको जीतनेके पहिले उदयसिंहके पूर्व पुरुष वीरकेशरी बाप्पारावलने इस ही स्थानके निकट अज्ञातवास किया था। इस बार चित्तौरके ध्वंस होनेसे कई वर्ष पहिले उक्त गिरिकी उपत्यकाके मध्यभागमें उदयसिंहने एक विशाल झील बनवाई थी और अपने नामके अनुसार उसका नाम उदयसागर रक्खा। इस पहाडी तलैटीकी विशाल छातीको धोती हुई वहुतसी छोटी २ नदियें कल २ नाद करती हुई बांकेमाकारसे वही चली जाती हैं। उदयसिंहने इनमेंसे एक नदीकी धारको रोककर एक विशाल बांध स्थापन किया और उसके ऊपरवाले गिरिव्रजके शिखरदेशमें "नवचौकी" नामक एक छोटा महल बनवाया। शीघ्र ही इस महलके चारो ओर वडी २ अटारियें और महल बन गये। फिर एक छोटासा नगर होकर धीरे २ एक बडा नगर बस गया;– उदयसिंहने अपने नामपर ही उसका नाम रक्खा।–इस प्रकार उस दिनसे उदयपुर मेवाडकी राजधानी माना गया।

चित्तौरध्वंसके चार वर्ष पश्चात् मर्माहत् उदयसिंहने गोगुण्डा नामक स्थानके मध्य ४२ वर्षकी उमरमें परलोकका मार्ग लिया। उदयसिंह जिस समय परलोकवासी हुए उस समय इसके (पच्चीस) २५ पुत्र जीवित थे। यह लोग "राणावत" नामसे विख्यात हो समयानुसार विशाल शाखा प्रशाखाओंमें विभक्त हो गये। आज राणावत, पुरावत, अथवा कनौतगण उनके ही विस्तारित वंशतरुकी शाखा–प्रशाखा हैं। अन्त समयमें रीते शासन दंडको लेकर उदयसिंह अपने पुत्रोंमें विषम झगडेका बीज बो गया। सनातन उत्तराधिकारी विधिका निरादर करके वह अपने अत्यन्त प्यारे छोटे पुत्र जोगमलको ही अपना उत्तराधिकारी निश्चय कर गया। इससे ही झगडेका सूत्रपात हुआ। सिद्धान्त यह है कि राणाजीके अभिप्रायानुसार जोगमल ही मेवाडके राजसिंहासनपर बैठा। मेवाडके एक राजाका अन्त्येष्टी संस्कार और दूसरे राजाका राज्याभिषेक थोडे समयमें ही पूर्ण हो जाता है परिवारके लोग कुलपुरोहितके स्थानपर जाकर शोक करते रहते हैं और इस ओर नवीन भूपतिका अभिषेकोत्सव समाप्त करनेके लिये परिजन, पुरजन और मंत्रीगण राजभवनको अनेक प्रकारसे सजाया करते हैं। फाल्गुनमासकी वासन्ती पूर्णिमाके दिन जगमलके भ्राता उधर तो पिताका अंत्येष्टी–संस्कार करनेके लिये श्मशानमें गये हुए थे, उस समय जगमल उदयपुरके नवीन सिंहासनपर बैठा। परन्तु विधाताने उसके भाग्यमें राज्यका भोग नहीं लिखा था। कारण कि जिस समय स्तुतिवादक और दूतोंने उसके सिंहासनपर बैठनेकी घोषणा की उस समय श्मशानके मध्य उसके पिताके शव देहके चारों ओर मेवाडके सरदारलोग एक गुप्त परामर्श कर रहे थे उस गुप्त परामर्शका फल शीघ्र ही सबने जाना। पाठकगण इस बातको जानते हैं कि राणा उदयसिंहने शोनगडे सरदारकी पुत्रीका पाणिग्रहण किया था। उस राजकुमारीके गर्भसे उदयसिंहके औरससे वीर श्रेष्ठ प्रतापने जन्म लिया। प्रतापके मामा झालैरराव अपने भानजेको मेवाडके

राज्यपर अभिषेक करनेके लिये अत्यन्त व्यग्र हो उठे. उन्होंने मेवाडके प्रधान सामन्त चन्दावत शिरोमणि कृष्णजीसे पूछा "प्रतापने उपयुक्त उत्तराधिकारी होकर भी सिंहासन नहीं पाया, आपने जीतेजी इस अविचारमें कैसे सम्मति दी ?" यह सुन सामन्तशेखर कृष्णने नम्र वचनोंसे कहा "यदि रोगी अंतसमयमें थोडासा दूध पीनेको मांगे, तो क्या वह उसको न देना चाहिये" कृष्णका स्वर क्रमशः गम्भीर होता गया तथा उसने फिर यह कहा कि "रावजी ! आपके भानजेको ही मैंने मनोनीत किया है; मैं प्रतापके पार्श्वमें ही खड़ा हूंगा।"

जगमल भोजनागारमें प्रवेश करके राणाके बैठनेकी ऊंची गद्दीपर बैठा, इस ओर प्रतापसिंह मेवाडराज्यको छोडनेके लिये अपने घोडेको तइयार करने लगे कि इतनेमें ग्वालियरके पदच्युत नरेशको साथ लेकर रावतकृष्ण उस घरमें आया कि जहां भोजनागारमें जगमल बैठा हुआ था । प्रवेश करते ही दोनोंने जगमलकी बाँहें पकडीं और उनको गद्दीके सम्मुखवाले निचले आसनपर स्थित करा दिया। राणाकी गद्दीसे उतारनेके समय सामन्त शिरोमणि रावतकृष्णने धीर और मर्मभेदी वाक्योंसे कहा "महाराज ! आपको भ्रम हुआ है, इस आसनपर बैठनेका अधिकार केवल प्रतापसिंहको ही है।" इसके उपरान्त शालुम्ब्रापतिने राजवेश और देवीजीके दिये हुए खड्गसे सजायकर प्रतापसिंहको राज्यासनपर स्थापित किया तथा तीन बार पृथ्वीको स्पर्श करके उनको मेवाडके राणा नामसे पुकारा । और भी जितने सरदार तथा सामन्त थे उन सबने भी रावतकृष्णके कार्यका अनुमोदन किया । इस मंगलमय कार्यके समाप्त होते ही नवीन राणा प्रतापसिंहने सब लोगोंको बुलाकर कहा । "आहेरिया उत्सव आ पहुंचा; अतएव चलिये सब ही घोडोंपर चढकर शिकार खेलें और भगवती गौरीके सामने वराहबलि देकर आगामी वर्षका फलाफल जानें ।" परमानंदसे पुलकित होकर सब ही शिकार खेलने लगे । उन सबने अगणित वराहोंको संहार किया । उस दिन उस लीलायुद्धमें कृतकार्यता प्राप्त होनेसे सर्दार लोगोंने देखा कि मेवाडके भाग्यमें आगेको भी मंगल सूचना ही लिख रही है ।

दशम अध्याय १०.

प्रतापका सिंहासनपर बैठना;—अकबरके साथ राजपूत राजाओंका मेल;—प्रतापकी दीनावस्था; युद्धकी तयारियें;—मालदेवका अकबरके अधीनमें हो जाना;—प्रतापका राजपूत राजाओंसे सम्बन्ध छोड़ देना;—अम्बरके राजा मानसिंह;—राजकुमार सलीमकी मेवाडपर चढाई;—हलदीघाटका युद्ध;—सलीमके सामने आकर प्रतापका घोर युद्ध;—प्रतापका घायल होना;—झालासर्दारका प्रतापसिंहको बचाना;—प्रतापके भ्राता शक्तसिंहका भाईसे साक्षात, प्रतापपर शक्तसिंहकी अनुकूलता;—अकबरका कमलनेरको जीतना;—मुगल सेनाका उदयपुरपर अधिकार;—मुगलसेनापति फरीदका सेनासहित प्रतापसिंहके हाथसे मारा जाना;—भीलोंके द्वारा प्रतापसिंहके परिवारकी प्राणरक्षा;—खानखाना;--प्रतापपर महासंकट;--अकबरके साथ प्रतापसिंहकी संधि सूचना;--बीकानेरके राजकुमार पृथ्वीसिंह;—खुशरोजका वृत्तान्त;—मेवाड़को छोडकर प्रतापसिंहका सिन्धुनदकी ओर जाना;—उनके मंत्रीकी प्रभुपरायणता;—प्रतापका लौट आना;—एकाएक मुगलोंपर चढाई कर देना;—प्रतापसिंहके द्वारा कमलमेर और उदयपुरका पुनरुद्धार;—उनका विजयगौरव;—उनकी पीडा और मृत्युका वृत्तान्त ।

शिशोदीयकुलकी महान् मान मर्यादा और राजपदवीको पाकर राणा प्रताप मेवाडके विशाल राज्यपर अभिषिक्त हुए । परन्तु उनपर राजधानी, सहाय,

बल, उपाय अवलम्बनादि कुछ भी नहीं । बराबर २ विपत्तियोंके पडनेसे उनके समस्त सरदारलोग निस्तेज हो गये थे, परन्तु निडर प्रतापसिंह इससे किंचित् भी भयभीत न हुए । उनका हृदय पितृपुरुषोंके वीरमन्त्रसे दीक्षित था, उनकी तेजस्विता उनमें भरी हुई थी । उन अपूर्व राजगुणोंसे शोभायमान रहनेके कारण दिनरात यह चिन्ता करते रहते थे कि किस प्रकारसे चित्तौरके नष्ट हुए गौरवका पुनरुद्धार होगा ? किस प्रकारसे अपने बडे बूढोंके बलको प्राप्त करके अपमानकारी यवनोंके अत्याचारोंका फल दिया जायगा ? यह चिन्ता जैसे २ बलवती होने लगी वैसे २ ही उनका हृदय नवीन साहस और उत्साहसे दृढ हो गया । तथा वह महामन्त्रके सिद्ध करनेका उपाय देखने लगे । वह निश्चय जानते थे कि इस साधनाके प्रतिकूल-में अगणित विघ्न विराजमान हैं । उनको ज्ञात था कि मेरे पास सहायसेना या द्रव्य कुछ भी नहीं है और मुगल बादशाह अकबर विपुलबलसम्पन्न है । यह जानकर भी राणा प्रतापसिंहने अकबरके विरुद्ध द्विगुण उत्साहसे खड्ग धारण किया था ।

स्वदेशीय भट्टलोगोंके काव्य ग्रंथोंमें अपने पितृपुरुषोंकी अलौकिक वीरता और महानताका वृत्तान्त पढकर प्रतापसिंहको ज्ञात हुआ था कि गिह्लोटवंशके राजालोगों-ने किसी समय शत्रुके आगे माथा नहीं नवाया। कठोर विपत्तियोंमें पडकर भी उन्होंने कभी देशवैरीके शरणमें जाना स्वीकार नहीं किया। यद्यपि शहाबुद्दीनादि निठुर मुसल्मानोंके विद्वेषसे कई बार चित्तौर ऊजड हो चुका था, तथापि चित्तौर उनके अधिकारमें नहीं हुआ था । अधिकार करना तो एक ओर रहा उलटा कई एक मुसलमान बादशाहोंको चित्तौरके जेलखानेकी हवा खानी पडी थी । अब क्या उस चित्तौरपुरीका उद्धार नहीं होगा ? क्या चित्तौरविजेता अकबरका प्रचण्ड गर्व कभी चूर्ण नहीं होगा ? प्रतापको भलीभांतिसे विश्वास था कि यद्यपि आज चित्तौरको शत्रुओंने ग्रास कर लिया है, यद्यपि आज अकबरको महान् गौरव प्राप्त हुआ है, परन्तु परिश्रम और चेष्टा करनेपर एक दिन अवश्य ही चित्तौरका उद्धार हो जायगा; संभव है कि अदृष्ट चक्रके अनिवार्य परिवर्त्तनसे मुगलबादशाह अकबर उस ऊंचे आसनसे पाताल तोड कुएँमें गिरे । ऐसा हो सकता है कि मैं ही अकबरके सिंहासनको डांवाडोल कर दूं। वीरश्रेष्ठ प्रतापके ऐसे संस्कारको कभी भी न्यायविरुद्ध या भीरु सुलभ नहीं कहा जा सकता । परन्तु दुर्भाग्यसे इनके विरुद्ध जो अगणित विघ्न धीरे २ उत्पन्न हो रहे थे, चतुर अकबरने गुप्तभा-वसे बैठे हुए उनका उद्यम व्यर्थ करनेके लिये जो चक्र चलाया था, प्रतापसिंहको यह समाचार विदित नहीं था। जिस समय यह अपने मन ही मनमें इस संस्कारके वश होकर आशाबेलको बढा रहे थे उस समय प्रचण्ड वैरी अकबर प्रतापसिंहका समस्त उद्यम व्यर्थ करनेके लिये उनके जातिवालोंको वरन उनके परिवारवालोंको भी लोभमें फँसाकर उनसे युद्ध करनेके लिये उभाड रहा था ! मारवाड; अम्बेर और बीकानेरके राजकुमारगण–यहांतक कि मेवाडका दृढमित्र बूंदीराज भी, मुस-

लमानोंके लोभमें फँसकर स्वदेश और स्वजातिके विरुद्ध खड्ग धारण करनेको तइयार हुए। सबसे अधिक दुःखकी बात यह है कि प्रतापसिंहका भाई सागरजी भी * उन स्वदेशद्रोही कापुरुषोंकी भांति अपने भ्राताका सत्यानाश करनेको तइयार हुआ। सागरजीने भ्रातासे विश्वासघात करके बादशाहसे इसके बदलेमें अपने पितृ-पुरुषोंकी प्राचीन राजधानी और राज्योपाधिको पाया था।

इन अशुभ समाचारोंको प्रतापसिंहने भी सुना; जिस समय उन्होंने जाना कि स्वदेशीय और सजातीय गण और कुटुम्बपरिवारके लोग भी मुसलमानोंकी ओर होकर मुझसे संग्राम करनेको तइयार हुए हैं, तब वह अत्यन्त ही दुःखित हुए बारम्बार उन लोगोंको धिक्कार देने लगे परन्तु अपने महामन्त्रको और अपनी प्रतिज्ञाको एक पलभरके लिये भी न भूले। उनका उत्साह बराबर बढता ही गया। बडी २ विपत्तियें जैसे २ बढने लगीं जैसे ही उनका हृदय अधिक २ दृढ होने लगा, शत्रुका गर्व खर्व करनेके लिये वह तैसे ही तैसे तइयार होने लगे। प्रतापसिंहकी प्रतिज्ञा थी कि "माताके पवित्र दुग्धको कभी कलंकित न करूंगा।" इस प्रतिज्ञाका पालन उन्होंने पूर्ण प्रकारसे किया था इस ही प्रतिज्ञाके बलसे बलवान् हो उन्होंने अकेले ही पचीस वर्षतक मुगलोंके गर्वको गिराया और उनकी सेनाका सत्यानाश किया। इस लोक विस्मयकर कार्यके करनेमें उनको अनेक संकटोंका सामना करना पडा था। विना निद्रा और बिना भोजनके अनेक दिन ऐसे ही बिताने पडे हैं। इस लम्बे समयमें कभी तो भयंकर विक्रमके साथ जनस्थानोंको घेरकर उजाड कर देते और कभी एक पर्वतसे दूसरे पर्वतपर कभी एक वनसे दूसरे वनमें भागकर अपने प्राण बचाते; कभी २ असावधान शत्रुसेनापर गिरकर उसका ध्वंस कर डालते और कभी सघन बनोंमें जाकर छिप जाते थे। इस विपत्तिकालमें उनके परिवारको और बालकपुत्र अमरसिंहको अत्यन्त कष्ट होता था। राजाओंके योग्य भोजन न मिलनेसे केवल कडवे, कषैले, खट्टे, मीठे कंद, मूल, फलपर ही उनको निर्वाह करना पडता था। जिन्होंने कभी भी राजभवनके बाहर पांव नहीं रक्खा था आज वह भी वन २ में पैदल घूमते हैं; काँटोंके लगनेसे पांव लोहुलुहान हो रहे हैं। हा ! इससे अधिक और कौनसा दुःख हो सकता है ! ऐसी कठोरता, ऐसी बिपत्ति और कौनसा मनुष्य सहन कर सकता है ? ऐसा कौनसा मनुष्य है जो बराबर पच्चीस वर्षतक

---

* कन्धरनामक दुर्ग सागरजीके अधिकारमें था। इनकी सन्तानसन्तति सागरौत नामसे विख्यात हुई।

उन्होंने अम्बेरके विख्यात राजा सवाई जयसिंहके समयतक इस कन्धरा किलेको अपने अधिकारसे रक्खा था। सवाई जयसिंहके समयमें इन्होंने अम्बेरके कछवाहकुलके साथ विवाह करना स्वीकार न किया; इस कारण महाराज जयसिंहने उनसे यह दुर्ग छीन लिया। मध्यभारतमें इन लोगोंने बहुतसे जनपद अपने अधिकारमें कर लिये थे। उन जनपदोंमें ऊमरी, भदौडा, गणेशगंज और दिगदोली विशेष प्रसिद्ध हैं।

कभी भोजन पाकर, कभी उपवासी रहकर–देशोद्धारके पवित्र मंत्रको साधन कर सकता है ? प्रताप देवता है;– मनुष्यकुलमें देवता है;–इस पुण्यक्षेत्र भारतवर्षका म्लेच्छग्रामसे उद्धार करनेके लिये ही भूमंडलपर प्रतापका अवतार हुआ था । यद्यपि उनका वह पवित्र उद्देश सिद्ध नहीं हुआ था; यद्यपि भारतके दुर्भाग्यसे वह जननी जन्मभूमिका समस्त दुःख उनसे दूर नहीं हो सकता था तथापि इस कार्यको सिद्ध करनेके लिये जो कठोर वीरता उन्होंने प्रगट की थी, जो अद्भुत आत्मत्याग स्वीकार किया था उससे ही उनको स्वदेशप्रेमी संन्यासियोंके बीचमें सबसे ऊँचा आसन दिया है । इस भयंकर संकटमें पडकर भी वह अपने मंत्रका ध्यान नहीं भूले थे एक पलभरको भी अकबरके अनुग्रहकी प्रार्थना नहीं की थी । वीरवन्दनीय बाप्पारावलका वंशधर क्या एक म्लेच्छके सामने शिर झुकावेगा ? स्वाधीनताके हरनेवाले, हिन्दू-विद्वेषी म्लेच्छके अनुग्रहकी कामना करेगा ? कायरोंके योग्य इस पापमयी चिंताका विचार आनेसे भी प्रतापसिंहका हृदय टुकडे २ हो जाता था ! उनके अनन्त विक्रमको न रोक सकनेके कारण अकबरने कई बार सन्धिके लिये कहला भेजा था । परन्तु वीरवर प्रतापसिंहने घृणाके सहित उस सन्धिप्रभावको अग्राह्य करके कहा था "क्या ? संधि ? स्वाधीनताको चुरानेवाले मुगलतस्करोंके साथ सन्धि ? इस सन्धिका क्या अर्थ है ? क्या दासत्व और पराधीनता इस सन्धिका नामान्तर नहीं है ? " सिद्धान्त यह हुआ कि उन्होंने किसी प्रकारकी सन्धिको स्वीकार न किया । उनके स्वदेशवाले राजपूत कुलकलंकोंने अपनी बहन और कन्यायें तातारवालोंको समर्पण कर उनके अनुग्रहको प्राप्त किया था यद्यपि अकबरके पास महती सेना थी, धन भी बहुत था तथापि वीरवर प्रतापसिंहने उसके किसी प्रस्तावको ग्राह्य नहीं किया । वरन जिन लोगोंने मुगलोंके साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापन कर दिया था,शिशोदीय वीरने उनसे भी समस्त नातारिश्ता तोड दिया । महाराजा प्रतापसिंहके लोक विस्मयकर वीरत्व और अद्भुत कार्योंका ज्वलन्त निदर्शन आजतक मेवाडकी प्रत्येक उपत्यकामें प्रकाशमान होकर विराजमान है । उनके वह अपूर्व अनुष्ठान आजतक प्रत्येक राजपूतके हृदयमें सजीव होकर विराज रहे हैं, आजतक प्रत्येक राजपूत भक्तिपूर्ण हृदयसे उस महामंत्रका ध्यान किया करता है । क्या पृथ्वीमें कोई ऐसा मनुष्य है कि जिसका हृदय उस पवित्र मंत्रका जप करते २ प्रतापकी अनुपम वीरता और महानतासे नहीं उमड आता है ? प्रताप ऐसे गुणसंपन्न भूपाल थे कि शत्रुओंने भी अपने इतिहासोंमें उनकी प्रसंशा लिखी है । यदि आज भी कोई पुण्यक्षेत्र मेवाड भूमिमें जाकर उन सामन्त और सरदारोंके वर्तमान वंशधरोंसे उस अद्भुत वीरत्व और महत्वका वृत्तान्त पूछे तो आजतक भी वे लोग उत्साहके साथ उन गुणोंका बखान करते २ आँसुओंकी धार बहाया करते हैं । हाय ! जिन्होंने उस पवित्र भूमिके दर्शन नहीं किये हैं, जिन्होंने स्वदेशप्रेमिक संन्यासीश्रेष्ठ प्रतापसिंहकी पवित्र लीलाभूमिमें भ्रमण नहीं

किया है वह नेत्र रहते हुए भी अन्धे हैं; ऐसे आदमी तो प्रतापसिंहके इन स्मरणीय कार्योंको उपन्यास या कहानी समझेंगे।

यद्यपि अनेक राजपूतोंने लोभवश होकर मुसलमानोंका पक्ष ग्रहण किया था, तथापि प्रतापसिंह सहायहीन नहीं हुए थे; उन्होंने बडी ऊंची सहायता पाई थी विपुल धन देकर अथवा लोभ दिखलानेसे राजाको भी जो सहायता नहीं मिल सकती प्रतापसिंहको वही सहायता मिली थी। वह सहायता और अनुकूलता पवित्र और स्वर्गीय थी; वह पवित्र हृदयकी पवित्र सहानुभूति थी। उनपर अनुराग करनेवाले सरदार और सामन्तोंने इस सहानुभूतिको प्रकाश करके अनुकूलता दान की थी क्रूर कर्मकारी अकबरने उन सरदार और सामन्तोंको इस कारणसे बहुत लोभ दिखाये कि वे प्रतापका साथ छोड दें। किसी २ को धन सम्पत्ति दान करनी चाही थी, और किसी किसीको एक २ राज्य देना स्वीकार किया था परन्तु सब ही वृथा हुआ; किसीने इस लोभमें ध्यान भी नहीं दिया। चंड, जयमल, तथा फत्ते प्रभृतिके वीर वंशजोंने कठोर विपत्तिमें पडकर भी प्रतापकी छायामें खडे होकर प्रसन्न वदनसे अपने हृदयका रुधिर दान किया था इनकी वीरता, माहात्म्य और स्वार्थत्यागका वृत्तान्त मेवाडके इतिहासमें अत्यन्त गौरवमय समझा जाता है।

चित्तौरनगरीकी जो कुछ सुन्दरता थी और जो कुछ शोभा थी वह समस्त अकबरकी क्रोधाग्निमें भस्म हो गई थी। चित्तौरकी ऐसी दीन दशा देखकर भट्टकवि गणोंने उसको "वसन भूषणहीन विधवा स्त्री" के नामसे वर्णन किया है। जिस प्रकार माताके परलोक हो जानेसे पुत्रगण चैन आरामका सम्बन्ध त्याग कर देते हैं स्वदेशप्रेमिक प्रतापने भी वैसे ही जननी जन्मभूमिकी पराधीनता शोकसे अत्यन्त कायर हो सर्व प्रकारके भोगविलासको त्याग दिया था, सोने चांदीके बर्तन, जो भोजनपानमें व्यवहार किये जाते थे उनको दूर फेंककर वृक्षोंके पत्तोंके पात्रव्यवहार करने लगे, सुखदायी कोमल शय्याको छोडकर कठिन तृणशय्यापर शयन करने लगे। उन्होंने अकेले ही इन समस्त विलासोंको नहीं छोड दिया था वरन अपने वंशवालोंके लिये भी इस कठोर नियमका पालन करनेके लिये आज्ञा दी थी कि जबतक चित्तौरपुरीकी दुर्दशा दूर न हो, जबतक चित्तौरकी स्वाधीनताका उद्धार न हो तबतक प्रत्येक शिशोदिया राजपूतको शोकके इन चिह्नोंका व्यवहार करना चाहिये और समस्त सुखोंको छोडना उचित है। केवल इतना ही नहीं वरन जिससे चित्तौरका यह शोकावह दुर्भाग्य चित्र मेवाडवासियोंके हृदयमें भलीभांतिसे अंकित हो जाता, इसके लिये भी राणाजीने एक उत्तम उपाय निकाला। चित्तौरकी वर्तमान दुर्दशाके होनेसे पहिले राणाकुलके रणदमामें सेनाके सामने बजाये जाते थे, परन्तु प्रतापसिंहने आज्ञा दी कि "इस समयसे इन रणदमामोंको सबसे पीछे बजाया जाया करे।" परन्तु विधाताके कठोर विधानानुसार मेवाडका पूर्व गौरव उद्धार न हो सका। परन्तु यह आदेश–विशेष करके

पहिला आदेश तो अबतक प्रतिपालित होता आया है । आजतक भी शोक वाद्यों के समान वह रणदमामें मेवाडकी सेनाके पीछे ही बजा करते हैं । आजतक राजपूतलोग अपनी डाढी मूछोंपर अस्तुरा नहीं छुआते हैं । यहांतक कि यद्यपि उस आज्ञाके अनुसार आजकल इन वीरोंके सजातिगण अपने पूर्वजके आज्ञाके प्रति क्रमानुसार श्रद्धाहीन होते जाते हैं तथा सोने चांदीके वर्तन व्यवहार करते हैं, कोमल बिस्तरेपर शयन करते हैं, परन्तु उस आज्ञाको संपूर्णतः अबतक नहीं भूल सके हैं। तथापि अबतक वीरवर प्रतापके वंशधर उन सोने चांदीके वर्तनोंके नीचे एक २ तरुपत्र और एक एक तिनका रख देते हैं ।

मातृभूमिकी इस शोचनीय दुर्दशाको देखनेसे अत्यन्त कातर हो वीरकेशरी प्रतापसिंह सदा यह कहा करते थे कि यदि उदयसिंह उत्पन्न न होते, अथवा संग्रामसिंह या उनके बीचमें कोई शिशोदियाकुलमें उत्पन्न न होता तो कोई भी तुरक राजस्थानको आधीनताकी बेडियोंसे नहीं जकड सकता । उस दशाका विचार करनेपर--कि जिसमें हिन्दूलोग उस समयके प्रतापसिंहके उस वीरोचित वाक्यका ठीक २ अर्थ भलीभांतिसे समझमें आ जायगा उनके राज्याभिषेकसे पहिले, सौ वर्षके मध्यमें हिन्दूजातिका एक नया चित्र दिखलाई देता है । गंगा व यमुनाकी रेतीसे लेकर आरावली शैलमालातकका देश जो मुसलमानोंके कठोर अत्याचारसे ऊजड होगया था, प्रतापके अभिषेकित होनेसे पहिले उपरोक्त १०० वर्षके बीचमें वह एक नवीन बलसे बलवान् होकर धीरे २ अपने मस्तकको उठा रहा था । अम्बेर और मारवाड भी इस विशाल देशके अन्तर्गत थे । इन दोनों राज्योंके राजालोग धीरे २ इतने बलवान् हो गये थे कि अकेले मारवाडके राजाने ही दिल्लीश्वर शेरशाहके विरुद्ध खड्ग धारण किया था । इन दो देशोंके अतिरिक्त चम्बलनदके उत्तर तीरपर बसे हुए बहुतसे छोटे २ राज्य भी बलसंग्रह करके उन्नति कर रहे थे । पहले ही कह आये हैं कि इन राज्योंके स्वामी हिन्दूराजा थे । हिन्दुओंकी उन्नति और भारतवर्षकी लक्ष्मीका बढाना ही इन लोगोंका अभिप्राय था । उन सब लोगोंका बलविक्रम अधिकाईसे बढ गया था, परन्तु एक अभाव भी उन लोगोंमें विशेषतासे था । यदि वह अभाव भी पूरा होजाता तो वे निश्चय ही भारतके राज-मुकुटको यवनोंके शिरसे उतार लेते और अपने जाति गौरवको उन्नतिके शिखरपर पहुंचाते,साहस,बल,विक्रम; धन सब ही कुछ उनके पास था; परन्तु इन शक्तियोंको मिलाकर एक महाशक्तिको उत्पन्न करके श्रेष्ठ राजनीतिके अनुसार उस शक्तिको शत्रुओंपर चलानेके लिये एक सेनापतिका अभाव था । यह कहना उचित ही होगा कि वीरश्रेष्ठ राणा सांगाजीको पाकर उनका वह प्रभाव भलीभांतिसे दूर हो गया था । संग्रामसिंहके महान् कुलगौरव, राजमर्यादा और वीरोचित गुणग्रामोंका विचार करनेसे कहना पडता है कि वे इस कठिन कार्य्यके करनेको सब प्रकारसे योग्य थे । जिन ऊँचे गुणोंका परिचय प्राप्त होनेसे मनुष्यके हृदयरूप स्रोतसे स्वयं ही भक्ति और प्रीति उत्पन्न हुआ करती है, वीरवर संग्राम-

सिंहमें वह समस्त गुण वर्तमान थे। हिमालयसे लेकर सेतुबन्ध रामेश्वरतक सबने ही राणा संग्रामसिंहके गुणोंकी प्रशंसा की थी। समस्त भारत संतानने ही उनको भारतका उद्धार करनेवाला जानकर हृदयको अनन्त आशासे पूर्ण कर लिया था। परन्तु सबही वृथा हुआ; अभागिनी भारत भूमिके भाग्यमें बहुत समयके लिये यवनों-की दासी होनेका लेख लिख गया था। महाराणा संग्रामसिंह अकालमें ही इस लोकसे विदा होकर स्वर्गको सिधारे, इकट्ठा हुआ वह बल, विक्रम और जातीय जीवन धीरे २ नष्ट होता गया। आर्यगण पैतृक राज्यसे संपूर्णतः अलग हुए। भविष्यपुराणकी कठोर लिखन सफल हुई; भारतसन्तानके पावोंमें सदाके लिये कठोर बेडियां पड गई। यदि संग्रामसिंहके पीछे उदयसिंहका जन्म न होता, यदि संग्रामसिंहके पीछे तत्काल ही शिशोदीय कुलका शासनदंड प्रतापसिंहके हाथमें समर्पण किया जाता, अथवा यदि अकबरकी अपेक्षा कम समर्थवाले मुसलमानके हाथमें भारतका शासनदंड दिया जाता, तो भारतकी ऐसी दुर्दशा कभी न होती।

अकबरके पास बडी भारी सेना थी, प्रतापकी सेना बहुत थोडी थी, थोडी सेनाको लेकर किस प्रकार अकबरसे युद्ध करना चाहिये, किस उपायके करनेसे कार्य ठीक २ होगा, इसका उपाय निश्चय करनेके लिये प्रतापसिंहने अपने बुद्धिमान् सरदारोंको बुलाकर परामर्श की तथा परामर्श निश्चय होनेपर उसके अनुसार कार्य करना आरंभ किया। समयोपयोगी कार्यकी आवश्यकताका वर्णन करके वह सामन्तोंको नई २ भूमिवृत्ति दान करने लगे। प्रयोजन समझकर कमलमेरमें ही प्रधान राजपाट स्थापन किया, तथा साथ २ में कमलमेर, गोगुन्डा व और भी पहाडी किलोंकी मरम्मत कर ली। अल्प सेना होनेके कारणसे मेवाडकी समतलभूमिमें सेनाकी रक्षा करना प्रतापसिंहके विचारमें ठीक नहीं जचा। इस कारण उन्होंने अपने पितृपुरुषोंकी श्रेष्ठ रीतिका अनुसरण करके सघन और दुर्गम पहाडी स्थानोंमें अपनी सेनाके मोरचे जमाये। तथा शीघ्र ही इस मर्मकी आज्ञाका प्रचार किया कि "जिस किसीको हमारी अधीनता स्वीकार करनी हो वह शीघ्र ही बस्तीको छोडकर परिवारसहित पर्वतोंमें आश्रय ग्रहण करे; नहीं तो वह शत्रु समझा जायगा और प्राणदंडसे दंडित होगा।" इस आज्ञाके प्रचारित होते ही प्रजागण अपने २ स्थानोंको छोडकर दलके दल मेवाडकी पर्वतमालामें जाकर बसने लगे! अगणित प्रजाके चले जानेसे मेवाडके मार्ग और घाट पूर्ण हो गये। थोडे दिनोंके बीचमें ही मेवाडके अधिकांश स्थान सूने हो गये। यहांतक कि बुनस और बेरिस नदीके विमल जलसे सींचे जानेवाला उपजाऊ और शोभायमान विशाल भूभाग सम्पूर्ण "बेचिराग" अर्थात् निष्प्रदीप हो गया!!

जैसी कठोरताके साथ प्रतापसिंहने अपनी प्रजाको इस कठोर विधिका अनुसरण करनेके लिये बाध्य किया था, उसका बहुतसा वृत्तान्त भट्टग्रंथोंमें पाया जाता है। इस बातकी परीक्षा करनेके लिये-कि हमारी आज्ञाका भली भांतिसे पालन

होता है या नहीं, प्रतापसिंह कितने एक सवारोंको साथ लेकर एकान्त गिरिनिवासको छोडकर पर्वतके नीचे आते और सब स्थानोंको भलीभांतिसे देखभालकर दुर्गम पर्वतवासमें चले जाते थे । पहिले जो बस्ती आदमियोंके कुलाहल और आनंद-ध्वनिसे सदा गुंजारती रहती थी और सजीव जान पडती थी, आज मौन, निर्जीव और मरुभूमिके समान हो गई । जिन स्थानोंमें अंगनाकुलके विमलहास्य ज्योतिसे सदा उजाला रहता था, आज वह स्थान विषादके अंधकारसे भरा हुआ है ! जो खेत सांवरी नयनास्निग्धकारी हरी २ सुन्दरतासे लहरें लिया करते थे वे समस्त जंगली घास फूससे परिपूर्ण हो गये । जो चौडे २ मार्ग मनुष्योंके समागमसे परिपूर्ण रहते थे आज उनपर कटेरी और बबूरके वृक्ष उत्पन्न हो गये ! आज मेवाडकी वह सुन्दरता सम्पूर्णतः जाती रही । जिस सुन्दरताके प्रभावसे मेवाडभूमि, मनमोहन नन्दनकाननके समान सुखकर हो गई थी आज उसका वह सुन्दरता सब प्रकारसे नष्ट हो गयी । सुखदायक नंदनकानन आज शोकदायक श्मशान बन गया । मेवाडभूमिकी जिन अटा अटारियोंमें देवसुन्दरियोंके समान स्त्रियें रहा करती थीं आज वहांपर हिंसक जन्तु रहने लगे । राणा प्रतापसिंह इस प्रकारकी मेवाडभूमिकी रती २ करके परीक्षा करने लगे । एक समय वह अपने सेवकोंको साथ लिये हुए अन्तल्लानामक स्थानमें–जो कि बुनस नदीके तीरपर बसा हुआ था–भ्रमण कर रहे थे । उस समय उन्होंने देखा कि–एक अजपालक उन उपजाऊ खेतोंमें निर्भय होकर बकरियें चरा रहा है । अभागे चरवाहेने समझा था कि मुझे कोई भी नहीं देख पावेगा, इस ही कारण अपने राजाकी आज्ञाका निरादर करके निर्भय होकर घूम रहा था । राणाजीने राजाज्ञाका अपमान करनेके कारण दो चार प्रश्न करके उसे प्राणदंड दिया तथा राजविद्रोहियोंको ऐसा दंड दिया जाता है, इसके दिखानेको उसकी मृतक देह एक वृक्षपर टांग दी । प्रतापसिंहकी इस कठोर आज्ञाके कारणसे मेवाडकी सुन्दरभूमि श्मशानके समान हो गयी थी ! अतएव फिर उस श्मशान भूमिपर यवनोंके दांत पडनेको कोई शंका न रही । अर्थागमके समस्त उपाय प्रतापसिंहने छोड दिये थे, परन्तु इस समय अकबरके साथ जो भयंकर समय आरंभ किया जायगा, उसमें बहुतसे धनकी आवश्यकता है; प्रतापसिंहके पास उतना धन कहां है ? परन्तु उनके सरदारोंने धनके लिये एक दूसरा उपाय किया । उस समय योरूपवालोंके साथ मुगलोंका बनज व्योपार भली भांतिसे चल रहा था । वाणिज्यकी सामग्री मेवाडके भीतर होकर सूरत या और किसी बन्दरमें जाती थी । सरदारलोग अवसर पाकर उस समस्त सामग्रीको लूटने लगे ।

हिन्दू मुसलमानोंमें घोर समराग्नि प्रज्वलित हुई । एक ओर तो मुगल संम्राट् अकबरकी बड़ी भारी अनीकिनी बनी ठनी हुई थी–दूसरी ओर अकेले प्रतापसिंह–केवल साथमें थोडेसे सरदार थे । प्रायः समस्त राजपूत जाति और समस्त भारतवर्षने

अकबरके चरणोंमें शिर झुका दिया था। उन अभागे राजपूतलोगोंका उद्धार करनेकी बासनासे वीरकेशरी प्रतापसिंहने अकेले ही मुगलोंसे युद्ध करनेका विचार किया। यदि अकबरकी प्रचंड सेनाके साथ मिलान किया जाय—तो प्रतापसिंहकी सेना कुछ भी नहीं थी। परन्तु उस थोडीसी राजपूतसेनाकी नाडियोंमें सनातनवीरोंका रुधिर विजलीके प्रवाहके समान प्रवाहित हो रहा था, उसके हृदयमें जो महामंत्र जपा जाता था वह साधारण नहीं था। उस महामंत्रकी उत्तेजनासे वह समस्त राजपूतलोग स्वदेशके लिये अपने प्राण देनेको तइयार हो गए। उस ओर अकबर भी अपनी प्रधान सेनाको अजमेरमें स्थापित करके प्रतापसिंहसे युद्ध करनेके लिये आया। अकबरने लडाईकी ऐसी प्रचंड तइयारियां की थीं कि जिनको देखकर मारवाडका राजा मालदेव, अम्बरके राजा भगवानदासके समान मुगलोंकी शरणमें चला आया। इससे पहिले जिसने शेरशाहसे बलोंका प्रचंड विक्रम व्यर्थ कर दिया था, जिसने मैरता और जोधपुरकी कठोर चढाईको निष्फल करनेकी चेष्टा की थी, जो अबतक एक यथार्थ राजपूत समझा जाता था, न जाने आज दुर्भाग्यसे उसका वह समस्त साहस और तेज किधरको बिला गया ? उसने अपने बडे बेटे उदयसिंहको भांति २ की भेंटको साथ देकर अकबरके पास भेजा * उस समय अकबर अजमेरकी ओरको बढ रहा था। मार्गके बीच नागौर नामक स्थानमें राजकुमार उदयसिंहने बादशाहसे मुलाकात की। अकबरने अत्यन्त आदर मानसे भेंटकी सामग्रीको ग्रहण करके कुमारको राजाकी पदवी दी। उस कालसे मारवाडके रावगण "राजा" नामसे पुकारे जाने लगे। कहते हैं कि राठौर उदयसिंहका शरीर अत्यन्त स्थूल था, इस कारणसे राजपूतलोग उसको "मोटा राजा" कहा करते थे। अत एव यहांपर यह कहना अत्यन्त उचित होगा कि राठौरोंकी राजनैतिक उन्नतिका यहींसे आरंभ हुआ। कारण कि इस ही समयसे यह लोग बादशाहके "दाहिने हाथ" पर स्थान पाने लगे। परन्तु पवित्र कुलमर्यादाको पानी देकर मारवाडके राजाने जिस सन्मानको मोल लिया था, वह सन्मान क्या मारवाड राजके सन्तानकी ऊंचे सन्मानकी बराबरी कर सकता है ? इसके अतिरिक्त स्थूल उदयसिंहने सबसे पहिले एक घिनोना उदाहरण दिखाया था। कहते हैं कि राजपूत होकर उसने ही सबसे पहिले मुगलके हाथमें अपनी जोधबाईनामक कन्याको समर्पण किया था * जोधबाईके बदलेमें राजपूत कुलकलंक उदयसिंहको, चार जनपद × जो कि अति

---

* हिजरी ९७७ (सन् १५६९ ई०)।

* जोधबाईके गर्भसे धर्मप्रिय शाहेजहांका जन्म हुआ था। जोधबाईका मकबरा आगरेके निकट सिकन्दराबादमें बना हुआ है। अनेक लोगोंका कथन है कि राजपूत राजाओंने मुसलमानोंको अपनी रानियोंके गर्भसे उत्पन्न कन्यायें नहीं दीं किन्तु दासीपुत्रियां दीं।

× उन चार परगनोंकी सालियाना आमदनी इस प्रकारसे थी:—(गोद्वार) गदवाड़ नौलाख; उज्जयिनी २४९९१४) रुपये; देवलपुर १८२५००) रु०;—और बुदनाबरकी आमदनी २५००००) थी।

सम्पत्तियुक्त थे–मिले । प्रतिवर्ष इन चारों परगनोंसे वीस लक्ष रुपये राजकरमें वसूल होते थे । इन परगनोंके प्राप्त हो जानेसे मारवाड राजकी आमदनी पहिलेसे दूनी हो गई । अम्बेर और मारवाडके दो कायर राजाओंने जो घिनोना उदाहरण दिखलाया, थोडे ही समयमें बहुतसे राजपूत लोग उस उदाहरणके अनुसार कार्य करने लगे । इन दोनों राजाओंका यह अनर्थकारी रोग बहुतसे राजपूतोंको उडकर लगा था । उनके पास नैतिक बल नहीं था इस कारण शीघ्र ही मुगलोंके आधीन होगए । उपाधि और साधारण सन्मान गौरवके बदलेमें उन्होंने अमूल्य स्वाधीनता रत्नको बेचकर अपने हाथसे यवनोंकी पराधीनतारूपी जंजीरको अपने गलोंमें पहिरा । इस प्रकारसे राजस्थानके अधिकांश राजा अकबरके पदानत हुए, उनके विशाल राज्यसमूह मुगलोंकी बादशाहतमें लीन हो गए, इन समस्त हिन्दू राजाओंने थोडे ही समयमें मुगल बादशाहतका इतना बडा उपकार किया था कि मुसलमान तवारीख लेखक उन लोगोंको "मुगल राज्यका स्तम्भ और अलंकार स्वरूप" लिख गये हैं ।

बादशाह अकबरने उन समस्त राजपूत राजाओंको संग लेकर वीर श्रेष्ठ प्रतापके विरुद्ध खड्ग धारण किया । इससे पहिले जिन लोगोंके पितृपुरुषोंने मेवाडके लिये अपने प्राणतक दे डाले थे; आज वही लोग मेवाडभूमि ध्वंस करनेके कारण कुलाङ्गार बन मुसलमानोंकी ओर हो गए हैं । प्रतापसिंहके साथ युद्ध करनेको जो वह लोग आए थे इसका एक कारण और भी था । यवनोंके हाथ अपनी कुलमर्यादाको बेचकर वे लोग अपनी दारुण दुर्दशाका वृत्तान्त समझ गए थे । उन सबके क्रूर हृदयसे यह बात नहीं सही गई कि हम सबकी तो कुलमर्यादा जाय और प्रतापसिंह गौरवके ऊंचे आसनपर विराजमान रहे इस बातका विचार करके सबके हृदयमें डाहकी प्रबल आग जलने लगी । इस ही कारणसे इन कुलांगारोंने वीरश्रेष्ठ प्रतापसे युद्ध करनेका विचार कर लिया था । इस प्रकारसे राजस्थानके प्रायः समस्त हिन्दू राजा ही मुसलमानोंके लोभमें पडकर अकबरकी ओर हो गए । केवल बूँदीके हाडाराज *ने उस दुर्दशासे निस्तार पाया था । इसके उपरान्त प्रतापसिंहने उन समस्त राजाओंसे अपना सम्बन्ध छोड दिया कि जो मुसलमानोंसे मिल गये थे और दिल्ली पाटन, मारवाड, तथा धारानगरीके प्राचीन राजपूतोंका अनुसन्धान करके उनके साथ सम्बन्ध स्थापन करने लगे । जो नियम प्रतापसिंहने उस दिन नियत किया था उनके किसी वंशधरने कभी उनका निरादर नहीं किया । अधिक क्या कहें केवल इतना ही कहना यथेष्ट होगा कि किसी शिशोदिया वंशवाले वीरने अपनी कन्या या बहन मुगलोंको नहीं दी यहांतक कि मुगलोंकी पडतीके समयतक भी इस वंशका कोई राजपूत मारवाड या अम्बेरके राजकुलके साथ वैवाहिक संबन्धमें आबद्ध नहीं हुआ । इससे प्रतापसिंह-

---

* बून्दीके हाडराजकी कुलमर्यादा जिस कारणसे मुगलोंके सर्वग्राससे बच गई थी वह अत्यन्त अद्भुत कारण है । इसका वृत्तान्त बूंदीके इतिहासमें भली भांतिसे लिखा जायगा ।

की मान मर्यादाका बढना सहजसे ही प्रमाणित होता है। राजा धनकी तुच्छ लालसा-से अपनी कन्या तथा बहिनोंको मुगलोंके हाथमें अर्पण करके भी अंबेर, मारवाड़ तथा और २ देशोंके राजपूतगण गौरवहीन तथा कुलहीन हो गये थे, उनका प्राचीन कुल गौरव सब भांतिसे नष्ट हो गया था। अपने जाति भाइयोंमें वे घृणाकी दृष्टिसे देखे जाते थे, इस बातको स्वयं ही वे लोग समझकर अत्यन्त मर्माहत हो गये थे। जिस समय ही उनके मनमें यह चिन्ता उदित होती, जिस समय ही वह अपने कुल-कलंकका ध्यान करते, उस समय उनको अत्यन्त ही कष्ट होता था। इस वृत्तान्तकी सत्यता मारवाड और अंबेरके दो प्रधान राजाओंके पत्र पढनेसे भलीभांतिसे प्रमाणित हो जायगी। इन दोनों राजाओंका नाम भक्तसिंह और जयसिंह था। इन दोनों राजाओंने मुगलबादशाहोंके प्रसादसे एक समय महान शक्तिको प्राप्त किया था। राजस्थानमें एक समय यही दोनों राजा श्रेष्ठ माने जाते थे। परन्तु जिस समय यह चिन्ता उनके मनोंमें उदित होती थी, तब उनका मानसिक कष्ट सीमासे बाहर हो जाता था; अपनी हीनताका विचार करके महादुःखित होते और तुच्छ राज सन्मानको शतबार धिक्कार देकर शिर पीटा करते थे और शिशोदिया कुलके साथ वैवाहिक सम्बन्ध बन्धन करनेके लिये राणा प्रतापसिंहजीसे अनेक प्रकारकी विनय करके कहा करते थे कि " हे महाराज ! हम कलंकित हुए हैं, अधःपतित हुए हैं—राजपूतकुलकी मान मर्यादासे स्खलित हो गये हैं, अत एव आप अनुग्रह करके हम लोगोंको पवित्र करें, हमारा संस्कार करें तथा हमको यथार्थ राजपूत समझ कर ग्रहण करें।"

शिशोदीय वीर चूडामणि विक्रमकेशरी प्रतापसिंहने शिशोदियाकुलके गौरवकी रक्षा करनेके लिये कैसे २ भारी कार्य किये थे; निम्न लिखित वृत्तान्त पाठ करनेसे उसकी यथार्थता भलीभांतिसे प्रमाणित हो जायगी। राजा मान अंबेरके कछवाह राजा-ओंमें विशेष प्रसिद्ध थे इनके ही अभिषेककालसे अंबेर राज्यकी उन्नतिका आरंभ हुआ था। वीरवर बाबरने नई जीती हुई भारतकी विशाल बादशाहतको अचल रखनेके लिये जो श्रेष्ठ उपाय नियत किये थे सबसे पहिले अंबरके राजा मान-सिंहने ही उन उपायोंका व्यवहार किया था। राजपूतकुलमें मानसिंहने ही अपनी बहनको अकबरके हाथमें समर्पण करके सबसे पहिले बाबरके भावीदर्शनको सफल किया। अर्थात् मुगलराज्यकी उन्नति और दृढता साधन करनेमें राजपूतोंमें सबसे पहिले उन्होंने ही चेष्टा की थी। इससे पहिले कहा जा चुका है कि हुमायूंने भगवा-नदासकी कन्याके साथ अपने पुत्र अकबरका विवाह कर दिया था; अतएव अक-बर मानसिंहका बहनोई था। इस संबन्धके पीछे साले बहनोईमें परस्पर विशेष प्रीति उत्पन्न हो गई थी। मानसिंह साहसी, चतुर, और समर विशारद राज-पूत थे; अतएव अकबरके आश्रयमें आ जानेसे थोडे दिनोंके बीचमें ही वह मुगलोंके प्रसिद्ध सेनापति हो गये, इनके ही बाहुबलकी सहायतासे आधा राज्य जीता था।

अनन्त तुषारमंडित काकेशश शैलमालाकी तराईसे लेकर सुदूर "कनकचर्सनीस" तक बिशाल भूभाग एक समय मानसिंहके पराक्रमसे मथित होकर उनके चरणोंमें आ पडा था। अपने बाहुबलसे उन्होंने बादशाहका राज्य अधिकतर बढा दिया था, उसका विचार करनेसे हृदय एक साथ उनकी प्रशंसा करनेके लिये तइयार होता है कच्छावह (कछवाहे) भट्टकविगणोंने उनके असीम विक्रम तथा उनकी अनुपम वीरताका वृत्तान्त अति तेजस्विनी भाषामें वर्णन किया है। एक ओर काबुल और सिकन्दरकी पारोपमिशन शैलमाला;-दूसरी ओर काननकुन्तला अराकानभूमि; गिरिमेखला और सागराम्बरा यूस विशाल राज्यके मध्यमें प्रायः समस्त ही, राजा मानसिंहके प्रचण्ड विक्रमसे विजित होकर मुगल बादशाहतमें मिल गए थे। मान-सिंह हिन्दू होकर शास्त्रकारोंके विधानको लांघ किस कारणसे सिन्धुनदीके पार गए थे उसका विशेष कारण-अकबरकी-मान व हृदयज्ञता हुई। इस अपूर्व सामर्थ्यके प्रभावसे ही बादशाह अकबरने बहुतसे कार्योंको साधन किया था। ❀

शोलापुरके युद्धमें विजय पाकर महाराज मान-सिंह राजधानीको लौटते थे उस समय उन्होंने प्रतापसिंहके निकट अतिथि सत्कारग्रहण करनेकी वासनासे समाचार भेजा। उस समय प्रताप कमलमेरमें थे। अम्बेरनाथकी समाचार पाते ही उन्होंने ग्रहण करनेके लिये उदयसागरतक बढ आये। उस सरोवरके किनारे कि जहां चट्टाने बिछी हुई थीं, राजा मान-सिंहके लिये अनेक प्रकारकी खाद्यसामग्री प्रस्तुत हुई। भोजन तइयार होनेपर राजकुमार अमरसिंहने अम्बेरराजमान-सिंहको बुलाया मान-सिंहने वहां आते ही राणाप्रतापसिंहको देखना चाहा परन्तु राणाजीको वहां न देख पानेसे मनमें अत्यन्त सन्देह हुआ और अमरसिंहसे इसका कारण पूछा, अमर-

* काबुल राज्य उस समय मुगल राज्यके अन्तर्गत था। अकबरका छोटा भाई मिरजा हाकिम वहांका सूबा था। मिरजाने उस राज्यको स्वयं पचाना चाहा और बगावतका झंडा खडा कर दिया। तब अकबरशाहने विद्रोह दमन करनेके लिये सेना सहित मानसिंहको भेजा। राजा मानसिंह सिन्धू (अटक) नदीके किनारे पहुँचे, कारण कि काबुलको जाते हुए सिन्धु (अटक) नदी उतरनी पडती-है, और हिन्दू धर्मशास्त्रमें इस नदीके पार जानेका निषेध किया है। इस कारणसे राजा मानसिंह वहां ही रुक गये और इस विषयका पत्र अकबरके पास भेजा। उस काल वाक्यविशारद अकबरशाहने निम्न लिखित दोहा पत्रमें लिख भेजा;—

दोहा-सबै भूमि गोपालकी, वामें अटक कहा। जाके मनमें अटक है, सोई अटक रहा॥

इस सरसभाव पूर्ण कविताको पढकर मानसिंहने बादशाहकी आज्ञा शिर माथे चढाकर अटकके पार उतर काबुलमें जाना स्वीकार किया। अकबर, मानसिंहके हृदयको जानता था, इस कारण वही उपाय किया, जिससे मानसिंह प्रसन्न हो जाय। नहीं तो डर दिखाने या और किसी उपायसे मानसिंह मान-नेवाला नहीं था।

(परन्तु पंजाबके राजा रणजीतसिंहके कटक पार जानेमें यह किंवदन्ती सुनी जाती है। शास्त्रमें अटक पार होकर भी जाति पतित होना नहीं पाया जाता टिप्प. ज्वा० प्र०)

सिंहने नम्रतासे उत्तर दिया कि "पिताजीके शिरमें दर्द है इस कारण वह नहीं आ सके।" मान-सिंहका संदेह और भी बढ गया, उन्होंने किंचित गर्वके साथ सन्मानित स्वरसे कहा कि "राणाजीसे कहो कि मैं उनके शिरदर्दका यथार्थ कारण समझ गया हूं। अब जो कुछ होना था सो तो हो गया, जिस भ्रममें गिरा हूँ उसके शोधन करनेका कोई उपाय है ही नहीं, फिर यदि वे ही हमारे साथ भोजन न करेंगे तो और कौन करेगा?" प्रतापसिंहने और भी अनेक भांतिसे टाल बाल की, परन्तु मान-सिंहका सन्देह दूर न हुआ और वे भोजन करनेको सम्मत न हुए। तब राणा-प्रतापसिंहने कहला भेजा कि "जिस राजपूतने मुगलके हाथमें अपनी बहनको दिया है, उस मुगलके साथ उसने भोजन भी किया ही होगा, सूर्यवंशीय वाप्पारावलका वंशधर उसके साथ भोजन नहीं कर सकता।" राजा मान-सिंह स्वयं ही इस अपमानके भागी हुए थे। कुछ राणाजीने उनको नेवता नहीं भेजा था। मान-सिंह राणाकी प्रतिज्ञाको जानते थे तथा यह भी उनको विदित था कि राणाजीने हम लोगोंसे सम्पूर्णतः सम्बन्ध त्याग किया है। फिर उन्होंने किस साहससे राणाजीसे अतिथि-सत्कारकी प्रार्थना की थी? यदि स्वयं राणा प्रतापसिंह नेवता भेजते तो उनका यह व्यवहार अनुचित होता, परन्तु राणाजीका यहां कोई दोष नहीं था दोषी केवल मान-सिंह ही थे।

राजा मान-सिंहने भोजनको छुआ भी नहीं। केवल उन कई एक ग्रासोंको-जो कि इष्ट देवको अर्पण किये थे-पगडीमें रखकर वहांसे चले। मान-सिंहको आसनसे उठता हुआ देखकर प्रतापसिंह वहां आये उनको देखकर मान-सिंहने कहा "आपहीकी मान मर्यादा बचानेको हमने अपने मान गौरवको जलांजलि देकर अपनी कन्या और बहिन मुगलोंको दी। ऐसा करनेपर भी जब आपमें और हममें विषमता रही, तो आपकी स्थितिमें भी न्यूनता आवेगी; यदि आपकी इच्छा सदा ही विपत्तिमें रहनेकी है, तो यह अभिप्राय शीघ्र ही पूर्ण होगा। अब आपको मेवाडभूमि हृदयमें धारण नहीं करेगी।" पीछे अपने घोडेपर सवार हो प्रतापसिंहको कठोर दृष्टिसे निहारकर कहा "यदि मैं तुम्हारा यह मान चूर्ण न कर दूं तो मेरा नाम मान-सिंह नहीं।" प्रतापसिंहने घृणाके साथ उत्तर दिया, "अच्छा अच्छा, ! मैं आपके वचनसे प्रसन्न हुआ, संग्रामभूमिमें आपका दर्शन पानेसे परम संतोष प्राप्त होगा।"

उस ही समय महाराणा प्रतापसिंहका एक सहचर क्लेशयुक्त वाणीसे कह उठा कि "देखना! अपने बहनोई अकबरको भी साथ ले आना जिस स्थानपर मानसिंहके लिये भोजन सजाया गया था वह स्थान अपवित्र समझकर खोद डाला गया और उसपर गंगाजल छिडकवाया। पात्र इत्यादि तोडे गये और जो सरदार व सामन्तादि वहां थे वे सब मानसिंहको जातिभ्रष्ट समझकर घृणा किया करते थे। इस समय उस मान-सिंहको अपने सन्मुख देखकर उन लोगोंने अपनेको पतित समझा तथा

उस पापसे उद्धार पानेके लिये तत्काल स्नान किया और वस्त्रादि बदल डाले । उस दिन उस उदयसागरके किनारे जो जो कार्य हुए अकबरशाहने उन सबको सुना । मान-सिंहके अपमानसे उसने अपने मानका नाश समझा । बादशाहकी क्रोधाग्नि भडक उठी । अकबर समझा था कि राजपूत लोग अपने प्राचीन संस्कारोंको छोड बैठे होंगे, परन्तु यह उसकी भूल थी । मान-सिंहके निरादरका बदला लेनेके लिये अकबरने युद्धकी तयारी की । इन तइयारियोंसे जो भयंकर समर हुआ था उसमें ही विक्रम प्रकाश करके वीरकेशरी प्रतापसिंहने अपना नाम अमर किया था, उसी युद्धमें प्रचण्ड वीरता दिखानेसे प्रतापसिंहका नाम-स्वदेशप्रेमिक संन्यासियोंकी नाममालामें सबसे ऊपर लिखा गया है । युद्धका वह स्थान कि जिसमें प्रतापके प्रतापका प्रकाश चारों ओर फैल गया था-हलदीघाटके नामसे प्रसिद्ध है । जबतक मेवाडका शासन दंड किसी शिशोदिया वीरके हाथमें रहैगा, अथवा प्रतापसिंहकी वीरताका बखान करनेके लिये जबतक एक भट्टकवि भी जीवित रहैगा तबतक पुण्यक्षेत्र हलदीघाटका नाम कोई भी नहीं भूलेगा ।

प्रथम तो दिल्लीश्वर अकबरका बेटा तथा मुगल बादशाहतका भावी उत्तराधिकारी युवराज सलीम प्रचंड अनीकिनीको साथ ले प्रतापसिंहसे युद्ध करनेके लिये आया । राजा मान-सिंह और सागरजीका जातिभ्रष्ट विख्यात पुत्र मुहव्वतखाँ भी युद्धका परामर्शादि देनेके लिये युवराजके साथ आया था परन्तु वीरकेशरी प्रतापसिंहके पास इस समय कैसी सहायता थी? केवल २२००० (बाईस हजार) राजपूत और कितने एक भील ही उनके सहायक थे, तथा सबसे अधिक सहायक उनके हृदयका प्रचंड उत्साह था । इस ही सहायताके ऊपर निर्भर करके प्रतापसिंहने मुगलोंकी महान सेनाका सामना किया था । सबसे पहिले तो राणाजीकी सेना प्रचंड प्रतापसे आरावलीके बाहिरी पर्वतप्रदेशमें प्रवेश कर गई तदुपरान्त उस निबिड गिरिमार्गका पश्चिम भागस्थान जो कि सुगम था, उसमें होती हुई आरावली शैलमालाके प्रधान गिरिमार्गमें जा पहुँची ।

आरावली शैलमालाके इन दुर्गम स्थानोंमें वीरवर प्रतापसिंह सावधानीसे डटे रहे । यह स्थान नवानगर और उदयपुरकी पश्चिम ओरको था । इसकी लम्बाई दश योजन और चौडाई भी ४० कोश थी । यह सम चौकोन विशाल देश केवल पर्वत और बनोंसे घिरा हुआ है, बीच २ में छोटी २ नदियें बंकिमाकारसे बही जाती हैं । यदि उदयपुरको उस दुर्गम गिरि-देशका मध्यबिन्दु कहा जाय तो भी ठीक ही होगा । उदयपुरसे जो मार्ग वहांको जाता है वह दुर्गम और तंग पंथ है । वे मार्ग इतने सकरे हैं कि उनमें कठिनाईसे बराबर दो गाडियें आवागमन कर सकती हैं । उस निविडदुर्गम और कूट मार्गमें खड़े होकर जिधरको देखा जाय उधरसे ही पर्वतोंके ऊंचे २ शिखर और घने वृक्षोंके सिवाय दूसरी कोई वस्तु दिखाई नहीं देगी । उस ही स्थानका नाम हलदीघाट है । उस ही हलदीघाटके मनोहर ऊंचे शिखरोंपर तथा तलैटियोंपर

दृष्टि दौडाते हुए राजपूत वीरगण शस्त्र लगाकर खडे हो गए। दूसरी ओर विश्वासी भीलगण भी हाथमें धनुष वाण धारण किये पुनः पर्वतोंके ऊंचे २ शिखरोंपर डट गये। उन भीलोंके पास ही पर्वतोंके लाखों टुकडे पडे हैं, जैसे ही शत्रु सामने आवेंगे वैसे ही वाणवर्षा कर उन्हें छिन्न भिन्न करेंगे या पत्थरोंके टुकडोंसे शिर तोडकर उनको यमलोकका मार्ग दिखावेंगे।

हलदीघाटके उस भयंकर मैदानमें मेवाडके प्रधान २ वीरोंको साथ लेकर राणा प्रताप खडे हुए और शत्रुसेनाके आनेकी बाट देखने लगे। संवत् १६३२ (सन् १५७६ ई०) के श्रावण मासकी शुक्लपक्षी और सप्तमीको दोनो दल सामने भिडकर घोर संग्राम करने लगे। इस प्रकारका भयानक प्रचंड समर, स्वाधीनताकी रक्षाका ऐसा कठोर उत्साह भारतवर्ष और ग्रीकभूमिके अतिरिक्त संसारके और किसी स्थानमें नहीं देखा गया। यवनोंके करालग्राससे, मेवाडकी स्वाधीनता और गौरवका उद्धार करनेके लिये अपने राजपूतवीरोंको साथ लिये उत्कट् उत्साहसे उत्साहित हो प्रतापसिंह भयंकर विक्रमके साथ मुगलसेनाकी ओर बढे। निडर प्रतापसिंह सिंहविक्रम करते हुए सबके पहिले आये और शत्रुसेनाका व्यूह तोडनेका यत्न करने लगे। राणाजीके अद्भुत साहस, विक्रम और रणनिपुणतासे उन्मादित हो उनके सरदार और सामन्तगण मुगलसेनाके ऊपर इस प्रकारसे झपटने लगे कि जैसे सिंह अपने शिकारपर झपटता है। प्रतापसिंहका यत्न सफल हुआ; उनके प्रचंड विक्रमसे शत्रुओंके मोरचे टूट गए; उस तित्तर वित्तर हुई मुगलसेनाको दलित मथित और त्रासित करके प्रतापसिंह अपनी सेनाके साथ क्रोधमें भरकर राजपूत-कुलकलंक मानसिंहका अनुसन्धान करने लगे; परन्तु कहीं भी उसका खोज न पाया। सैकडों वीर उनकी कराल करवालसे खंड २ होकर पृथ्वीमें गिरे, कितने ही अभागे उनके भालेकी तीखी नोकसे बिंधकर धराशायी हुए; परन्तु प्रतापसिंह-के तीक्ष्ण वेगको रोकनेकी किसीमें सामर्थ्य नहीं थी। अपने प्रचण्ड शत्रु मान-सिंहका अनुसन्धान करते हुए राणाजी सलीमके सामने पहुँच गए। हिन्दूवैरी बादशाहके बडे बेटेको सन्मुख देखकर प्रतापसिंहका साहस और उत्साह दूना हो गया। उन्होंने भयं-कर खड्ग उठाय अपने प्यारे तुरंग चैतकको सलीमकी ओर चलाया। उस भयंकर तलवारके प्रचण्ड आघातसे सलीमके शरीर रक्षकगण तो अल्पकालमें ही दो टुकडे होकर पृथ्वीपर गिरे। पीछे मेवाडनाथने सलीमके मदमत्त रणमातंगके सोंही अपने प्रचण्ड तुरंगको चलाया। उनका चैतक अश्व मानो अपने स्वामीके अद्भुत वीरतासे अत्यन्त बलवान हो गया। अपने प्रभुके घोर शत्रु सलीमके प्रचंड रणमातंगकी शुंडको दबाकर चैतकने उसके मस्तकपर अपने दोनो पाँव रख दिये। तत्काल ही राणाजीने सलीमके ऊपर अपना भयंकर शूल चलाया। भाग्यसे सलीमका हौदा लोहेके मोटे पत्तरसे मढा हुआ था उसहीपर वह शूल टकराया और शहजादा बच-गया, नहीं तो उसके मारे जानेमें कोई सन्देह नहीं था। यद्यपि प्रतापसिंहका भयंकर

शूल सलीमको संहार नहीं कर सका, तथापि वह सम्पूर्णतः निरर्थक भी नहीं हुआ । हौदेमें लगे हुए लोहेके पत्तरपर टकराकर वह दूने तेजसे महावतके लगा । महावत तत्काल ही पृथ्वीपर गिरकर मर गया महावतके गिरते ही निरंकुश होकर हाथी सलीमको संग्रामसे लेकर भागा ।

सलीम भागा; परन्तु प्रतापसिंहने तब भी उसका पीछा नहीं छोडा । भागते हुए उस गजराजके पीछे अपने चैत्तकको भी दौडाया । उस काल दोनों दलोंमें कराल संग्राम होने लगा । एक ओर तो अगणित मुगलसेना शहजादेको बचानेके लिये खड्ग चलाने लगी, दूसरी ओर निडर और कठोर राजपूतगण,—प्रतापके प्रतापकी रक्षा करनेके लिये तथा मुगलोंका दाप चूर्ण करनेको प्राणका दाव लगाकर युद्ध करने लगे । शतशः मुगलवीर उनके हाथसे मारे गये, परन्तु इससे क्या होता है ? जो मुगल मरते थे उनके स्थानपर दूसरी मुगलसेना आनकर डट जाती थी । उस समय बहुतसे राजपूत वीरोंने प्रतापसिंहकी रक्षा करनेके लिये रणरूपी यज्ञमें अपने प्राणोंकी आहुति दे दी । प्रतापसिंहका पक्ष हीन होने लगा । परन्तु राणाजीने इसकी कुछ भी चिन्ता न की । राजपूतकुलकलंक मान—सिंहका अनुसन्धान करते हुए वह शत्रुकी सेनामें विचरण करने लगे ! परन्तु मस्तकपर मेवाडका राज्यछत्र लगा हुआ था उसको ताककर मुगलसेनाने इनको घेर लिया । इन राजचिह्नोंके धारण करनेसे पहिले भी तीन बार उनके प्राण संकटमें पड गए थे; परन्तु अपने असीम बिक्रमसे उन्होंने उस काल अपना उद्धार कर लिया था । तथापि प्रतापसिंहने उन राजचिह्नोंको नहीं छोडा; न इस युद्धमें छोडना चाहते हैं । परन्तु इस समय विशेष संकट आन पडा है युद्ध करते २ शत्रुओंके बीचमें आन फँसे हैं, निकटमें सरदार या सामन्त कोई भी नहीं हैं, जिस ओरको देखते थे, शत्रुसेनाके ही अगणित शिर दिखाई देते थे तथा सब ही ओरसे शत्रुगण उनके ऊपर दौडते थे ! महाराणाजी अपनी वर्त्तमान अवस्थाको समझ गए कि हम इस समय शत्रुओंसे घिर गए हैं । तथापि उनका उत्साह यथावत बना रहा । कठोर उद्यम, महान् उत्साह और खड्ग चलानेकी अपूर्व हस्तकौशलसे वह शत्रुसेनाको दलित, विभक्त और त्रासित करते हुए मतवाले गजराजके समान इधर उधर घूमने लगे । शत्रुके अविराम अस्त्राघातोंसे उनके अंग प्रत्यंगमें सात घाव हुए थे * कपडे रुधिरसे भीज गए थे, तथापि राणाजीके मनमें किंचित् भी उदासी नहीं थी । परन्तु अकेले कबतक युद्ध करेंगे ? वह समझ गए कि यदि अब अधिक देरतक युद्ध करेंगे तो यहींपर प्राण निकल जायँगे । अत एव अद्भुत रणनिपुणताके साथ वहांसे निकलनेकी चेष्टा करने लगे । इस ही समयमें दूसरे "जय, राणाप्रतापकी जय !" ऐसा शब्द सुना । उनका हृदय दूना उत्साहित हुआ और दंभ सहित सिंहनाद करने लगे । वह श्रवणभैरव जयनाद

---

* भालेसे तीन, गोलीसे एक और तलवारसे तीन इस प्रकारसे राणाजीके सात घाव लगे थे ।

पवनके द्वारा आकाशमार्गमें गुजार ही रहा था कि वीरवर झालापति मन्नाजी झपटते हुए सेना सहित प्रतापके निकट आन पहुंचे और प्राण न्यौछावरका प्रकाशित उदाहरण दिखला करके स्वामीके प्राण बचाये मन्नाजीने राणाजीके मस्तकसे मेवाडके राजचिह्नोंको उतारकर अपने शिरपर धारण किया और हेम-तपन मंडित लोहित वैजयन्ती उठाकर गर्व सहित शत्रुकी सेनामें प्रवेश किया । प्रकाशित राजचिह्नोंको देखकर शत्रुओंने इनको ही राणा समझा और मारनेके लिये चारों ओरसे टूटने लगे । प्रतापसिंहने दूरसे ही देखा कि वीरवर मन्नाजीने अपनी प्रचण्ड सेनाके साथ अद्भुत रण करके वहींपर प्राण दे दिये । इस अपूर्व प्राण न्यौछावरके कारण झालापति मन्नाजीके वंशधरगण मेवाडके राजचिह्नोंसे युक्त होकर राणाजीके दाहिनी ओर आसन पाते हैं + यद्यपि वीरकेशरी प्रतापसिंहके प्रचण्ड वीरत्वको देखकर राजपूतगण दूने उत्साहसे युद्ध करने लगे, परन्तु क्या होता है, इस युद्धसे कोई फल न हुआ । एक तो मुगलसेना, राजपूतोंकी सेनासे चौगुणी अधिक थी, उसपर फिर मुगललोग तोप, बन्दूक तथा और २ आग्नेयास्त्रोंसे युद्ध करते थे फिर भला राणाजीकी सेना और कबतक उनके सामने ठहर सकती है ? और कबतक राजपूत वीरगण दूसरे आते हुए गोली गोलोंकी गतिको रोकेंगे ? अधिकांश राजपूतोंने स्वदेशकी रक्षा करनेमें वहींपर अपने प्राण दे दिये । उस दिन जो बाईस हजार राजपूत संग्राम करनेके लिये रणभूमिमें गये थे उनमेंसे केवल आठ हजार रणभूमिसे लौटे थे !

उस हलदीघाटके प्रथम दिवसका भयानक रणरंग समाप्त होनेपर प्रतापसिंह चैत्तकपर चढकर अकेले रणभूमिसे चले आये । उनके सब अंगोंसे रुधिर निकलता था शत्रुसेनाका संहार करते २ थक गए थे । चैत्तककी भी यही दशा थी, परन्तु तो भी वह अपने स्वामीको पीठपर धारण करके निविड पर्वतकी ओर ले चला । परन्तु उस समय भी राणा निरापद नहीं थे । दो मुगल उनको छिपकर जाता हुआ देखकर पीछे लगे । इनमें एक मुलतानी और एक खुरासानी था । वे शीघ्रतासे प्रतापसिंहका पीछा करते हुए एक तीव्र और गहरी नदीके किनारेपर आन पहुंचे । तुरंगराज चैत्तक एक ही छलांग भर उस नदीके पार हो अपने स्वामीको दूर ले गया । वे दोनों मुगल चैत्तकके समान उस नदीके पार नहीं हो सके, इस कारण उनका वेग कुछ देरके लिये रुक गया । परन्तु चैत्तकके भी सब अंगोंमें घाव हो रहे थे, इस कारण वह भी पहिलेके समान शीघ्रतासे नहीं चल सका । इस कारण वे दोनों मुगल प्रतापसिंहके अत्यन्त निकट पहुँच गए । उस ही समय दूरसे बन्दूकका शब्द सुनाई दिया और

× टाडसाहब कहते हैं कि मन्नाजीके वंशधरगण सान्द्रीजनपद और प्रतापसिंहकी दी हुई अन्यान्य वृत्तियोंको अबतक भोगते हैं । उनका नगाडा राजभवनके द्वारतक उनके साथ २ बजता जाता है । ऐसा सन्मान और किसीको प्राप्त नहीं होता । इसके अतिरिक्त वे 'राजा' नामसे भी पुकारे जाते हैं ।

साथहीमें किसीने पीछेसे राणाजीकी मातृभाषामें गम्भीर स्वरसे कहा—"हो नीलघोडारा असवार ! " प्रतापसिंह चकित हुए और पीछे फिरकर देखा तो उनको दूना क्रोध हो आया । उन्होंने अपना पीछा करते हुए केवल एक ही सवारको देखा—यह सवार उनका भ्राता शक्तसिंह था !

अपने भाई प्रतापसिंहसे झगडा करके शक्तसिंह उनसे अलग हो गए और मेवाडभूमिको छोडकर अकबरका पक्ष अवलम्बन किया था । उनकी वासना थी कि भ्राताका नाश करके एक दिन हृदयकी क्रोधाग्निको निर्वाण करेंगे । उस दिन उन्होंने उस हलदीघाटके शोणितमय समरक्षेत्रमें अकबरकी सेनाके व्यूहके बीचसे खडे होकर देखा कि प्रताप नीले घोडेपर चढकर अकेले ही संग्रामभूमिसे भाग रहे हैं । बडे भ्राताके प्राण और स्वाधीनतापर संकट देखकर शक्तसिंहसे निश्चिन्त न रहा गया; सहसा उनका कठोर हृदय पसीज गया; क्रोध जाता रहा । पिछले वृत्तान्तको याद करके अत्यन्त दुःखित हुए और इस विपत्तिसे भ्राताका उद्धार करनेके लिये तत्काल मुगलसेनाको छोडकर उसके पीछे चले । मार्गमें प्रतापसिंहके पीछे पडे हुए दोनों मुगलोंका संहार करके वीरवर शक्तसिंह बडे भ्राताके निकट पहुंचे । दूरसे शक्तसिंहको आते हुए देखकर राणाजीको उत्कट शंका हुई । उनके हृदयमें क्रोध और अभिमानका हृदय हो आया । इस कारण विचार किया " क्या शक्तसिंह बदला लेनेके लिये आता है ? " " मेरी सहायहीन अवस्थामें क्या अपनी प्रतिज्ञाके पालन करनेको आता है ।" बाण लगे हुए सिंहके समान प्रतापसिंह गर्ज उठे और अपनी कराल करवालको उठाय शक्तसिंहकी प्रतीक्षामें खडे हुए । परन्तु शक्तसिंहका दीन, मलीन और क्षीण मुख देखकर उनके हृदयका सन्देह दूर हुआ । तथा फिर जब शिशोदिया वीरने बडे भ्राताके चरणोंमें गिरा आँखोंमें आँसूभर दीनवाणीसे क्षमाप्रार्थना की तब प्रतापसिंहके हृदयमें अद्भुत आनंदका संचार हुआ । आज परस्पर एक दूसरेको हृदयसे लगाकर दारुण दुःख और मानसिक पीडाको भूल गए ।

आज प्रतापसिंहके आँसुओंसे शक्तसिंहकी और शक्तसिंहके आँसुओंसे प्रतापसिंहकी छाती भीजी इस अपूर्व आनन्दके समय प्रतापसिंहके प्यारे अश्व चैत्तकने प्राण त्याग कर दिये । चैत्तक सब भांतिसे प्रतापसिंहके ही लायक था । उसके ही गुणसे राणाजी आज मुगलोंकी विशाल सेनाके मध्यसे निरापद चले आये थे । वह चैत्तकको अपना प्राणरक्षक समझते थे इस समय उस ही प्यारे घोडेको प्राण छोडकर पृथ्वीपर गिरता हुआ निहारकर राणाजीको अत्यन्त शोक हुआ। उनके अनन्त आनन्दजलमें किसने विष मिला दिया ? शक्तसिंहने भ्राताके चढनेको अपना घोडा दिया । प्रतापसिंहको विवश हो उसपर चढना पडा । जहांपर तुरंगराज चैत्तकने प्राण छोडे थे वहांपर एक वेदिका निर्मित हुई थी *

---

* उक्त वेदिका अबतक "चैत्तकका चबूतरा" इस नामसे प्रसिद्ध है । यह वर्तमान जालौरके अत्यन्त निकट बनी हुई है । उपरोक्त वृत्तान्तके पढनेसे जाना जाता है कि चैत्तक प्रतापसिंहका जीवन सहचर अत्यन्त प्यारा घोडा था । प्रतापसिंहके चित्रके साथ चैत्तकका चित्र भी मेवाडके घर२में खिचा होता है ।

बहुत दिनके पीछे प्रियजनके साथ प्रियजनका मिलना अत्यन्त सुखदाई होता है। परन्तु प्रताप और शक्तसिंहके भाग्यमें यह सुख बहुत देरतक नहीं लिखा था। कदाचित् पीछे सलीमके हृदयमें किसी प्रकारका सन्देह हो, इस शंकासे फिर शक्तसिंहने मुगलोंकी सेनामें गमन किया। बडे भ्राताके चरण स्पर्श कर बिदा लेनेके समय उनको धीरज बँधाकर कहा कि "अवसर प्राप्त होते ही मैं शीघ्र आपसे मिलूँगा" वे दोनों मुगल जो राणाजीका पीछा करते हुए आए थे, उनको शक्तसिंहने ही मारा था, इनमेंसे एक खुरासानका और दूसरा मुलतानका निवासी था। शक्तसिंह उस खुरासानी सैनिकके घोडेपर चढकर सलीमके दरबारमें पहुँचे; परन्तु जो कुछ शंका उन्होंने की थी वही आगे आई। आनेमें विलम्ब और उनके आकारको देखकर सलीमके हृदयमें तत्काल संदेह हुआ। शहजादेने शक्तसिंहसे खुरासानी और मुलतानी सैनिकका हाल पूछा तब उन्होंने इधर उधर करके कहा कि "वह दोनों प्रतापके हाथसे मारे गये; प्रतापने केवल उनको ही नहीं मारा बरन मेरे घोडेको भी मार डाला। इस कारण मैं विवश हो खुरासानी मुगलके घोडेपर सवार होकर आया हूं।" शक्तसिंहको इस प्रकार इधर उधर करते देख सलीमने अभय-दान देकर कहा कि "अगर आप सच २ कह दें तो मैं सब कसूर मुआफ कर दूँगा।" सलीमका वाक्य शेष होते न होते शक्तसिंहका बदन गंभीर हो गया, उन्होंने निःशंक होकर उत्तर दिया। "मेरे बडे भाईके कंधेपर एक विशाल राज्यका भार है, हजारों आदमियोंका सुख दुःख केवल उनहींके ऊपर निर्भर है, इस समय वह संकटमें हैं, फिर भला उनको संकटमेंसे उद्धार किये विना मैं कैसे निश्चिन्त रह सकता हूँ।" सलीमने पहिले ही शक्तसिंहको अभय दिया था इस कारण कुछ न कहा परन्तु अपने यहांसे उनको बिदा दे दी। शक्तसिंहके पक्षमें इससे मंगल ही हुआ। वह शीघ्र ही उदयपुरमें जाकर अपने भाई प्रतापसे मिले। उदयपुरमें आनेके समय शक्तसिंहने भिंसरोरनामक दुर्गपर आक्रमण करके उसको अधिकारमें किया। इस ही किलेको "नजर" में देकर अपने भ्राताके चरणोंकी वन्दना की। उदार प्रतापसिंहने वह नया जीता हुआ दुर्ग अपने भ्राताको ही भूमिवृत्तिमें दे दिया। शक्तसिंहके वंशवालोंने बहुत दिवसतक उसको अपने अधिकारमें रक्खा। * उस भयंकर विपत्तिके समयमें प्रतापसिंहका प्राण बचानेके कारण शक्तसिंहकी अत्यन्त प्रशंसा और मर्यादा हुई थी। उनके उस महान गौरवका विवरण आजतक भट्ट-

---

* शक्तसिंहकी माता बाईजी राज" अर्थात् राजमाता थी। परन्तु वह अपने बडे पुत्र राणा प्रतापसिंहको छोड भिंसरोरनामक दुर्गमें अपने प्यारे पुत्र शक्तके पास रहती थी। इससे अवश्य समझना चाहिये कि वह राजमाताके योग्य समस्त सन्मानको नहीं पाती थीं। पवित्र पुत्र स्नेहके लिये उन्होंने इस सन्मानको त्याग दिया था, इस कारण शक्तसिंहकी जननीगण "बाईजी राज" कहकर पुकारी जाती हैं।

लोगोंके मुखसे सुना जाता है । आजतक भी भट्टगण उनके किसी वंशधरको देखते ही आनन्दसे उन्मत्त होकर कहा करते हैं कि "खुरासानी मुलतानीका अग्गल" ×

संवत् १६३२ (जौलाई सन् १५७६ ई०) श्रावण शुक्ल ७ का दिन—आर्यकुलकी वीरताका एक प्रसिद्ध दिवस है यह आर्य गौरवका एक पवित्र पर्व हुआ ! जितने दिनतक मनुष्य वीरता और महानताकी पूजा करेंगे, जितने दिनतक जगतमें राजपूत जाति रहेगी, उतने दिनतक इस उपरोक्त दिनका वृत्तान्त मनुष्योंके इतिहासमें प्रकाशमान और रक्तमिश्रित अक्षरोंसे लिखा रहेगा । उतने दिनतक वह दिन अनन्त-काल एक भयंकर आवर्त्तको प्रकाश करेगा । उस दिन उस पुण्यभूमि हलदीघाटके शैलगात्र और समस्त गिरिमार्ग मेवाडके साहसी पुत्रोंके पवित्र शोणितसे भीग गये थे । जिन चौदह हजार वीरोंने आत्मोत्सर्गके महामंत्रसे उत्साहित होकर उस भयानक संग्राममें अपने प्राण दिये थे उन सबके नाम कहांतक गिनावें । परन्तु जो लोग प्रसिद्ध थे उनका संक्षेप वृत्तान्त यहांपर लिखा जाता है । राणा प्रताप-सिंहके अतिनिकटवाले पांचसौ कुटुंबी ग्वालियरके पदच्युत राजा रामशा * उनका पुत्र खाडे रावने विक्रमशाली साढ़ेतीनसौ तुवर वीरोंके साथ संग्रामभूमिमें प्राण देकर कृतज्ञताका प्रदीप्त परिचय दिखाया था । झालापति वीरवर मन्नाजीकी वीरता और सबसे अधिक और लोकविस्मयकर हुई थी । सबकी बात छोडकर यदि केवल उनकी ही अद्भुत वीरता और प्राणके दावका विचार किया जाय तो केवल उसके ही द्वारा उस दिनका अतुलनीय गौरव अचल रह सकता है ! जिस समय झालापति मन्नाजी १५० सामन्तोंके साथ सागरके समान उस विशाल मुगलसेनामें प्रवेश करके महोत्साहके साथ युद्ध करने लगे, जिस समय वे मुट्ठीभर वीर उस अनन्त मुगलसेनाको दलित और वित्रसित करके अनन्तधामको चले गये; उस समय जिसने उन राजपूतोंके अनन्त विक्रम और विस्मयकर रणनिपुणताको देखा उस-हीने उनका बखान किया । उस दिनकी बातको अबतक कोई नहीं भूला है । उस दिन मेवाड प्रत्येक वीरवंश सूना हो गया था, बहुतसी वीरबालाओंका सीमन्त—सिन्दूर अनन्त कालके लिये धुल गया था ।

विजयके आनंदको मनाता हुआ युवराज सलीम हलदीघाटके पर्वतस्थानको छोडकर चला गया । वर्षाकाल आ गया, नदियां भर गईं, पहाडी स्थान दुर्गम हो गये, इस कारण शत्रुके कार्योंमें विघ्न हुआ । इस सुअवसरमें प्रतापसिंहको कुछ दिनके लिये विश्राम मिला । परन्तु जब वसन्तके आगमनसे जैसे ही मार्गादि ठीक हुए कि

× खुरासानी और मुलतानीका अग्गल; अर्थात् उनके सौभाग्यमार्गके भीषण प्रतिरोधक स्वरूप

* बाबरने रामशाके पूर्व पुरुषोंको ग्वालियरसे निकाल दिया, वे आनकर मेवाडमें बसे । राणाजीने आदर सत्कारसे उनको ग्रहण किया, तथा उनके भरण पोषणके लिये प्रतिदिन ८००) रु० निर्द्धारित किये । तबहीसे यह लोग मेवाडमें रहते थे ।

वैसे ही फिर विशाल मुगलवाहिनी चढ धाई। अभाग्यसे उस युद्धमें भी राणाजी पराजित हुए और उन्होंने उदयपुरको छोडकर कमलमेरमें अपनी छावनी डाली × परन्तु वहांपर भी निश्चिन्त न हो सके बादशाहके सेनापति कोकाशहबाजखांने शीघ्र ही उस पहाडी किलेको घेर लिया। मुगलोंके भयंकर पराक्रमको रोकते हुए प्रताप बहुत दिनोंतक कमलमेरमें अटल भावसे रहे, परन्तु स्वदेशद्रोही देवराजकी शत्रुतासे उनको यह आश्रय स्थल भी त्याग करना पडा। कमलमेरमें नागननामक एक बडा कुवाँ था सब लोग इसहीके जलको पीकर प्राण धारण करते थे। दुष्ट देवराजने यह गूढ वृत्तान्त मुगलोंको सूचित किया तथा विषधर भुजंगद्वारा उस कुएँके जलको दूषित करनेका परामर्श दिया। तदनुसार उस कुएँका जल विषैला किया गया, प्रतापसिंहको जलके अभावसे अत्यन्त कष्ट होने लगा। इस कारण कमलमेरको छोडकर चोंड * नामक गिरिदुर्गमें चले गए। मुगलसेनाने उस स्थानको भी घेर लिया। शनिगुरु सरदार मानसिंहने मुगलसेनाके कराल ग्राससे चोंडका उद्धार करनेके लिये रणमें अपूर्व वीरता दिखाकर अंतमें अपने प्राणतक दे दिये। इस कठोर कार्यमें मेवाडका प्रधान भट्टकवि मारा गया। उसके हृदयोत्तेजक समर-संगीत और अद्भुत रणरंगको देखकर राजपूत वीरगण यहांतक उत्तेजित हो गए थे कि सबने स्नेह ममता सब भांतिकी सुकुमार प्रवृत्तियोंको जलांजलि देकर "निर्दई यवनराज" के कठोर आक्रमणको व्यर्थ करनेकी चेष्टा की। चौंडकी चढाईके समयमें उस भट्टकविने अपने राजाकी वीरताका बखान करके जो कई एक तीव्र कविताओंको बनाया था, आजतक भी प्रत्येक मेवाडवासी उत्साहके साथ उन कविताओंको गाया करते हैं परन्तु उस कविकी परलोक प्राप्तिके साथ वीरकेशरी प्रतापकी अमानुषिक वीरत्व सूचक कविता रचनाका अंत नहीं हुआ। यहांतक कि जिस हिन्दू या मुसलमानपर किंचित् भी कविता करनी आती थी, वह भी संन्यासीश्रेष्ठ पुण्यश्लोक प्रतापसिंहके विषयमें कुछ न कुछ कविता कर गया और फिर जिनके हृदयमें थोडा भी कवित्व था वे भी प्रतापसिंहका गुणकीर्त्तन करनेमें एक दूसरेको पराजित करनेका यत्न किया करते थे। वह कविता ऐसी तेज होती थीं कि उनके पाठ करनेसे निर्जीव और डरपोक आदमी भी नये बल और नये उत्साहसे जीवित हो जाता था। इस बातको सब ही जान सकते हैं कि वीरहृदय राजपूतलोगोंके लिये वह कविता कहांतक हृदय ग्राहिणी थीं।

× संवत् १६३३ माघशुक्ल ७ (सन् १५७७ ई०) को यह युद्ध हुआ था।

* मेवाडके दक्षिण पश्चिम पार्श्वके पर्वतदेशमें चप्पननामक एक भील जनपद है। चोंड इसके अन्तरका एक साधारण नगर है। चप्पनके मध्यमें प्रायः ३५० नगर और मौजे हैं। इन सब स्थानोंमें भील लोग रहा करते हैं।

कमलमेरके घिर जानेपर राजा मान-सिंहने धरमेती और गोगुण्डानामक दो पहाडी किलोंपर अधिकार किया । इस ओर मुहब्बतखांने उदयपुर ले लिया । अमीशाहनामक एक यवनराजकुमारने चोंड और अगुणापानोरके मध्यस्थलमें स्थित होकर भीलोंके साथ जो सम्बन्ध प्रतापसिंहका था उसको छिन्न कर दिया । दूसरी ओर फरीदखाँ नामक मुगल सेनापति चप्पनको घेरकर दक्षिणको वहांतक बढ गया कि जहां चोंडमें राणा प्रतापसिंह स्थित थे । चारों ओरसे चोंडको शत्रुओंने घेर लिया प्रतापसिंह भी सब ओरसे घिरकर आश्रयहीन हो गए । जिस मेवाडभूमिपर एक समय उनका अक्षत राज था, जहांपर उनके पूर्वपुरुष प्राचीन कालसे राज करते चले आये हैं; आज उस ही भूमिके प्रत्येक नगर, ग्राम, पट्टी और पहाडी दुर्गपर शत्रुओंका अधिकार हो गया है । आज उस ही मेवाडभूमिके किसी भागमें भी प्रतापसिंहके रहनेको स्थान नहीं मिलता आज मुगलगण उस विशाल मेवाड राजकी कन्दरा २ बन बन और शिखर २ पर उस प्रचंड राजपूतका पीछा करने लगे । परन्तु आश्चर्यका विषय है कि कोई भी उस वीरको नहीं पकड सका । ऐसा विदित होने लगा कि किसी अपूर्व ऐन्द्रजालिक बलसे प्रतापसिंह उनकी आँखोंमें धूल झोंक कर भ्रमण करते थे । वे कुछ प्राणभयसे पलायन करके नहीं घूमते थे वरन गुप्तभावसे छिपे रहकर शत्रुओंकी गति विधिको देखते भालते थे तथा जब उनको असावधान पाते उस ही समय आक्रमण करके जड मूलसे उनका संहार कर डालते थे । जिस समय शत्रुगण किसी वनमें छिपा हुआ जानकर उनका पीछा करते थे उस समय वे अपने सामन्त सरदारोंको एकत्रित करके पहाडके किसी ऊंचे शिखरपर परामर्श किया करते थे । इस प्रकारसे साधारण युद्ध करते २ बहुत दिन बीत गये । शत्रुगण किसी प्रकारसे भी वीरवर प्रतापको नहीं पकड सके । उनका पकडना तो दूर रहा वरन बहुतसे शत्रु उनकी प्रचंड क्रोधाग्निमें भस्म होगए । सेनापति फरीदखाँने चोंडनगरको घेरकर समझ लिया था कि प्रताप अवश्य ही मेरे हाथमें पकडा जायगा, परन्तु शीघ्र ही उसकी वह आशा निराशाके रूपमें बदल गई । उसकी चालाकी और विपुलसेना प्रतापसिंहकी रणचातुरीके आगे व्यर्थ हो गई । एक समय राणाजीने इस समस्त सेनाको एक गिरिसंकटमें घेरकर सम्पूर्णतासे संहार कर डाला । इस प्रकारसे कितने ही युद्धविशारद प्रचण्ड मुगलवीर प्रतापके तीक्ष्ण खड्गसे धराशायी हुए । प्रतापसिंहको कोई भी नहीं पकड सका । इस प्रकारसे वेतनभोगी मुगलसेनाका साहस धीरे २ घटता गया । राजपूतवीरके साथ युद्ध करनेका उत्साह उनमें नहीं रहा । इस ओर वर्षाकी अविरल जलधारासे नदीनाले उमड आए, राह घाट दुर्गम हुए, समस्त पहाडी स्थानोंसे एक प्रकारकी विषैली बाफ निकलकर सम्पूर्ण देशमें विस्तारित होगई । विवश होकर शत्रुओंने युद्ध बंद किया । इस भांतिसे जब वर्षाऋतुका समागम होता उसही समय महाराणा प्रतापसिंहको कुछ दिनोंके लिये विश्राम मिल जाता था ।

क्रमानुसार अनेक वर्ष व्यतीत होगए। संसारमें बहुतेरे अदल बदल हुए परन्तु प्रतापसिंहकी टेक उसी प्रकारसे बांकी रही, मुगलगण किसी प्रकारसे उनको नहीं पकड सके। परन्तु कालके प्रभावसे राणाजीके आश्रयस्थान एक २ करके मुगलोंके अधिकारमें जाने लगे, दुःख बढता गया। उनका परिवार ही उनकी चिन्ताका मूल कारण हो उठा। शत्रुओंसे अपनी रक्षाका उपाय तो वह थोडे ही समयतक विचारा करते थे, परन्तु यह शंका सदा उनको भस्म किया करती थी कि कहीं हमारे पुत्र कलत्रादि शत्रुओंके हाथमें न पड जायँ, अथवा पवित्र शिशोदिया वंशमें कोई कलंक न लग जाय। यह शंका अमूलक नहीं थी कारण कि परिवारवाले कई बार शत्रुओंके हाथमें पड गये थे। एक बार तो शत्रुओंने उनको सम्पूर्णताहीसे अपने अधिकारमें कर लिया था, परन्तु उस समय भी गिह्लौटकुलके सनातनमित्र विश्वासी भीलोंने उनका उद्धार किया। उस बार कावानिवासी भील लोगोंने राणाजीके परिवारको टोकरोंके भीतर रखकर जावरा स्थानकी खानिमें, जहां टीन निकला करती थी छिपा दिया था। परमहितकारी भीलगण आप तो भूंखे प्यासे रह जाते थे तथा उनको भोजन जुताते थे और दिन रात सावधानीसे उनकी रक्षा किया करते थे। इनके उस महोपकारका निदर्शन आजतक विद्यमान है। आजतक जावरा और चोंडके सून सान वनोंके विशाल २ वृक्षोंकी चोटियोंपर अगणित गडी हुई कीलें और लोहेके कडे दिखाई देते हैं। उन लोहेके कडोंमें तथा कीलोंमें बेतोंके टोकरे टांगकर परमविश्वासी भीलगण राजपूतोंको उनमें रखते थे तथा हिंसक जन्तुओंसे भी दिनरात उनकी रक्षा करते थे। राणा प्रतापसिंहके बालक बच्चे उन बेतके टोकरोंमें लालित हो कडवे कषैले कन्द मूल फल खाकर प्राण धारण करते थे। सुखसेव्य राजभोग करने और सुन्दर २ महलोंमें रहनेसे भी जिनकी तृप्ति नहीं होती थी, वे लोग अनाथ और निर्वासितके समान कन्द मूल फलोंसे क्षुधानिवारण करके वृक्षोंमें बँधे हुए टोकरोंके बीच पडे २ झूलते रहते थे, इस अवस्थाको देखकर भी महाराणा प्रतापसिंहका साहस नहीं जाता था।

इस प्रकारसे वीरश्रेष्ठ प्रतापसिंहकी वीरता, धीरता, सहनशीलता तथा महान् शक्तिका समाचार शीघ्र ही शहन्शाह अकबरने सुना। अकबरने बारम्बार राणाजीकी प्रशंसा की। तथापि सुनी हुई बातोंका सत्यासत्य जाननेके लिये अकबरने प्रतापसिंहके गूढ वासस्थानमें एक गुप्तदूत भेजा। उस गुप्तचरने वहां जाय दूर ही खडे होकर गुप्तभावसे देखा कि प्रतापसिंह अपने सामन्त सरदारोंसे वेष्टित होकर एक बडे वृक्षके तले तृणासनपर बैठे हुए भोजन करते और योग्य सरदारोंको आनंदसहित "दोना" (राजप्रसाद) दे रहे हैं। यद्यपि वह राजप्रसाद वनैले कंद मूल फलका ही बना हुआ था तथापि सरदारलोग उसको पाकर अपनेको कृतार्थ समझते थे। जिस समय प्रतापसिंह उदयपुरके महलोंमें रहकर उत्तम २ भोजन सरदारोंको "दोना" में दिया करते थे और उस समय सरदारलोग जैसे आनन्द व उत्साहके साथ उस राजप्रसादको ग्रहण करते थे आज भी

वैसे ही आनन्द और उत्साहके साथ वह राजपूत वीरगण उस प्रसादको ग्रहण करते हैं। उस गुप्तदूतने लौटकर यह समाचार दरबारमें जाकर अकबरसे कहा, इस समाचारको सुनकर सबके ही हृदयमें महती भक्तिका संचार हुआ,सब ही प्रतापकी असीम-महिमासे मुग्ध होकर उनकी प्रशंसा करने लगे;यहांतक कि जिन राजपूतोंने अपने कुल मर्यादाको तिलाञ्जलि दे दिल्लीश्वरके चरणोंमें आत्मसमर्पण किया था वह भी बारम्बार प्रतापसिंहके गुणोंका बखान करने लगे। भट्टग्रन्थोंमें देखा जाता है कि दिल्लीश्वरके प्रधान सामन्त खानखाना*प्रतापकी महिमापर इतने मोहित हो गए थे कि उसने उनके उत्साहको बढाकर इस प्रकारसे राणाजीकी प्रशंसा की "इस जगतमें समस्त वस्तुएँ अनित्य और चंचल हैं; राज और धन समस्त ही लोप हो जायगा। परन्तु एक महापुरुषकी असीम कीर्ति सदा ही अमर रहेगी। प्रतापने अपने राज्य धन इत्यादि समस्त पदार्थोंको छोडा, परन्तु कभी किसीके सामने अपने शिरको नहीं झुकाया। भारतवर्षके समस्त राजकुमारोंके बीचमें केवल वही अपने पवित्र क्षत्रियकुलके गौरवकी रक्षा कर सके हैं।"

बडी २ विपत्तियोंमें पडनेसे भी राणा प्रतापसिंहका उत्साह नहीं गया था। परन्तु जिनको वह प्राणोंसे भी अधिक प्यारा समझते थे, जिनके सन्मानकी रक्षा करनेके लिये वह बडे २ कष्ट भी सहन कर सकते थे; उन लोगोंकी अत्यन्त दुर्दशा देखकर कभी कभी वे उन्मत्त होजाते थे। प्रतापसिंहकी महाराणी सघनवनके बीच राणाजीसे छुटी पडी थीं, और प्राणप्यारे राजकुमारगण भी राजसुखको भोगनेके बदलेमें कंद मूल फल खाकर प्राणधारण करते थे, अभाग्यसे समय २ पर वह कन्द मूल फल भी नहीं पाये जाते थे, यदि पाये भी जाते थे तो कभी २ भोजन करनेका समय ही उनको नहीं मिलता था कारण कि कठोर मुगलगणोंने इस प्रकार उनका पीछा पकड़ा था कि एक दिन पांच बार भोजन तयार किया गया परन्तु पाँचो बार शत्रुओंने आ घेरा एक समय शत्रुओंके आक्रमणसे कुछ कालके लिये छुटकारा पाकर राणाजी अपने कुटुम्बके साथ एक सूने बनमें विश्राम कर रहे थे। महाराणीजीने तथा उनकी पुत्रवधूने उस समय तृणबीज * चूर्णकी कई एक रोटियें बनाई और उन मेंसे आधा भाग लडके लडकियोंमें बांटकर आधे भागको आगेके लिये रक्खा। राणा प्रतापसिंह भी उनके पास ही श्यामल तृणशय्यापर लेटे हुए अपने दुर्भाग्य और भारतकी होनहार दशाका विचार कर रहे थे; इतनेमें ही अपनी बेटीका मर्मभेदी चिल्लाना सुनकर वह चकित हुए, उनका ध्यान बढ गया। उन्होंने रोती हुई लडकीकी जिस अवस्थाको देखा उससे उनका हृदय फट गया, उन्होंने देखा कि एक बनबिलाव कन्याकी आधी रोटीको लेकर भागा इसीसे लडकी रोती है।

* वह रामखांके पुत्र मिरजाखाँको "खानखाना" का खिताब मिला था। यह खिताब ऊंचे दर्जेका समझा जाता है।

* इस घासका नाम मोल था।

प्रतापसिंहका मस्तक चकरा गया। चारों ओर अन्धकार दिखाई देने लगा। इससे पहिले उनका साहस और निश्चय किंचित् भी कम नहीं हुआ था। भयंकर समरभूमिमें उनके प्यारे पुत्रोंने तथा कुटुम्बके लोगोंने पास ही खडे होकर स्वदेशके लिये अपने प्राणोंको न्योछावर किया, प्रतापने अपने नेत्रोंसे यह भयंकर कार्य देखा, परन्तु इससे वह जरा देरके लिये भी व्याकुल नहीं हुए। कारण कि वह जानते थे कि जीवनका कर्त्तव्य साधन करनेके लिये ही हमारा जन्म हुआ है; यदि पुत्र और मित्रगण जीवनका कर्त्तव्य साधन करके समरभूमिमें गिर पडें तो फिर इसमें दुःखकी कौन बात है ? परन्तु आज भोजनके अभावसे प्राणप्यारी कन्याको रोते हुए देखकर वीरहृदय प्रतापका हृदय एक साथ ही अधीर होगया। वे चंचल होकर उन्मत्तके समान कह उठे कि "यदि इस प्रकारकी पीडाको देखकर राजमर्यादाकी रक्षा करनी पडे तो उस मर्यादाको शत बार धिक्कार हो" इस प्रकार विचार कर उन्होंने कुछ विलम्ब पीछे ही इस पीडाके दूर करनेकी प्रार्थना अकबरके पास भेज दी।

प्रतापसिंहके इस प्रार्थनापत्रको प्राप्तकर अकबर परमानंदमें मग्न होगया। इस हर्षके समय राज्य में नृत्य गीत और उत्सव होने लगे। घर२ आनन्दके बाजे बजते थे। मुगलकुलके आबालवृद्ध वनिता आनन्दमें मग्न होगये। बादशाह अकबरने अत्यन्त हर्षित होकर प्रतापसिंहका वह पत्र पृथ्वीराजनामक एक राजपूतको दिखाया। पृथ्वीराज बीकानेरके राजाके छोटे भाई थे, इस समय यह अकबरकी कैदमें जीवन व्यतीत करते थे। जिस वर्ष (संवत् १५१५ में) राठौरवीर जोधरावने मन्दौरसे अपने प्रतिष्ठा किये हुए मारवाडके सिंहासनको अन्तरित किया, उस ही वर्ष उनके एक पुत्र बीकाने भारतके मरुप्रान्तमें अपने नामसे उक्त बीकानेर राज्यको बसाया था बीकाके वंशधरलोगोंके विक्रम प्रभावसे बीकानेरका राज्य थोडे ही समयमें उन्नतिके अतिऊंचे शिखरपर पहुंच गया था। परन्तु विस्तारित और अवरोधहीन मरुभूमिमें बसनेके कारण बीकानेरके राजा रायसिंहने भी अपने बडे राजा मारवाडके अधिपति मालदेवके समान घृणित उदाहरण दिखाया। पृथ्वीराज इन्हीं रायसिंहके भ्राता थे। यद्यपि दैवकी विडम्बनाके कारण मुगललोगोंके हाथमें कैद होगये थे, परन्तु उनका हृदय असीमवीरता, महानता और स्वदेशप्रेमसे सुशोभित था केवल वीर ही नहीं वरन वह एक योग्य कवि भी थे। उन सुन्दर गुणोंसे विभूषित रहनेके कारण वह तेजस्विनी कवितासे मनुष्यके हृदयको उन्मादित कर सकते थे तथा आवश्यकता पडनेपर हाथमें तलवार लेकर उत्तेजना और उत्साहमें भी विलक्षण सहायता करते थे अधिक कहनेसे क्या है केवल इतना कहना ही बहुत होगया कि उस समय वे राजस्थानमें एक उत्तम वीर और कवि गिने जाते थे। काव्यरसदायिनी भगवती वीणापाणीके अनुग्रहसे पृथ्वीराजने राजस्थानके समस्त भट्टकवियोंके ऊपर जय पाई थी बाल्यकालसे ही प्रतापकी वीरता, उदारता तथा माहात्म्यसे उत्साहित होकर राजपूत कवि पृथ्वीराज,

राणाजीको देवभावसे पूजा करते थे । इस बातको सुनकर कि राणा प्रतापने सन्धिका प्रस्ताव किया है पृथ्वीराजको अत्यन्त कष्ट हुआ । कराल चिन्ताके विषैले डंकके लगनेसे उनको अत्यन्त पीडा होने लगी, उनको विश्वास नहीं हुआ कि प्रतापसिंहने सन्धिका प्रस्ताव करके यह पत्र पठाया है । पृथ्वीराजने अपनी स्वाभाविक सरलता और निडरताके साथ शहन्शाह अकबरसे कहा "यह पत्र प्रतापसिंहका नहीं है, मैं उनको भलीभांतिसे पहिचानता हूं यदि आप अपना राजमुकुट भी उनके शिरपर धर देवें तो भी वह दिल्लीके तख्तके आगे शिर झुकानेवाले नहीं ।" पृथ्वीराजने बादशाहकी आज्ञासे एक पत्र * लिखा और उसको बादशाहके एक दूतको देकर राणाजीके पास

---

* पृथ्वीराजके पत्रकी नकल पूरी नहीं मिलती पर ठाकुर पूर्णसिंहजी लिखित मेवाडके इतिहास नामक पुस्तकमें १७३ पृ० में कुछ दोहे सोरठे लिखे हैं सो यहां लिखते हैं ।

सोरठा–अकबर समद अथाह, सूरापण भरियो सजल ।
मेवाडो तिणमाहिं, पोयण फूल प्रतापसी ॥ १ ॥
अकबर एकण बार, दागल की सारी दुनी ।
अणदागल असवार, रहियो राणप्रतापसी ॥ २ ॥
अकबर घोरअँधार ऊँघाणा हिंन्दू अवर ।
जागे जुगदातार, पोहरे राणप्रतापसी ॥ ३ ॥
हिंदूपति परताप, पतिराखो हिंदुआणरी ।
सहे विपतिसन्ताप, सत्य शपथ कर आपणी ॥ ४ ॥
चौथो चीतोडाह, बाँटो वाजन्तीतणू ।
दीसै मेवाडाह, तो सिर राणप्रतापसी ॥ ५ ॥
चम्पो चीतो डाह, पौरसतणो प्रतापसी ।
सौरभ अकबरशाह, अडियल आ भडिया नहीं ॥ ६ ॥
पातलखाग प्रमाण, सांची सांगाहरतणी ।
रही सदा लगराण, अकबरसूं ऊभी अणी ॥ ७ ॥
दोहा–माई जण अहडा जणा, जहडा राणप्रताप ।
अकबर सूतो ओझकै, जाग सिराणे सांप ॥ ८ ॥
सोरठा–राओ अकवरियाह, तेज तिहारो तुरकडा ।
नम नम नीसरियाह, राण विना सह रावजी ॥ ९ ॥
सह गावडियें साथ, येकण वाडै बाडियां ।
राणा न मानी नाथ, तोडे राण प्रतापसी ॥ १० ॥
सोयो सो संसार, असुरप ढोले ऊपरे।
जागे जगदातार, पोहरे राण प्रतापसी ॥ ११ ॥
दोहा–धर वांकी दिन पांधरा, मरदन मूकेमाण ।
घणे नरिन्दां घेरिया, रहे गिरिन्दां राण ॥ १२ ॥

जानेको कहा । उस पत्रके पढनेसे सहसा बोध होता है कि मानो पृथ्वीराज इस कारणको प्रतापसिंहसे जानना चाहते हैं कि आप किस कारण बादशाहको शिर झुकाना स्वीकार करते हैं किन्तु इस पत्रके भीतर और भी एक भाव गुप्त था। वास्तविक बात यह थी कि पृथ्वीराजने प्रतापसिंहको उस अपमानसे बचनेके लिये अनुरोध किया था। उस पत्रकी कविता यहांतक तेजस्विनी और हृदयग्राहिणी थी कि आजतक भी बहुतसे राजपूतगण उसको पढते २ आनंदमें मग्न हो जाते हैं। पाठकोंके अवलोकनार्थ वह पत्र नीचे लिखा जाता है।

" हिन्दुओंका समस्त आशा भरोसा हिन्दूके ऊपर ही निर्भर करता है; तथापि राणा उन सबके छोडनेको तइयार हुए हैं। किन्तु यदि प्रताप न होते तो अकबरके द्वारा सब ही समान भूमिमें लाये जाते, कारण कि हमारे राजालोग जातीय वीरताको खो बैठे हैं। हमारी स्त्रियें पवित्र सन्मान गौरवसे अलग होगई हैं। राजपूत कुलरूप इस विशाल विपणी (बाजार) में केवल एक अकबर ही क्रेता (खरीददार) है। केवल उदयके पुत्रके अतिरिक्त बादशाहने और सबहीको मोल ले लिया; परन्तु प्रताप अमूल्य है। यथार्थ राजपूत होकर कौन है जो नौरोजेके लिये अपने कुलकी मान मर्यादाको त्याग सकता है?—तथापि कितने ही लोगोंने ऐसा किया है। क्षत्रियोंके सब ही बडे २ माल बिक गये, तो क्या अब चित्तौर भी इसी हाट (बाजार) में बिकनेको आवेगा? राज्य, धन, सुख, सम्पत्तिको तो पत्तने * त्याग कर दिया, तथापि उसने अमूल्य धनको अबतक नहीं छोडा है। ऐसे बहुतसे हैं जो निरुपाय और निरालम्ब होकर इस बाजारमें आय अपने नेत्रोंके सामने अपना अपमान देखते हैं। परन्तु केवल हमीरके वंशधर ही इस कलंकसे दूर रह सके हैं। संसार जिज्ञासा करता है कि प्रतापको कहांसे यह गूढ अनुकूलता प्राप्त हुई? अपनी तलवार और महाप्रतिज्ञाकी अनुकूलताके सिवाय यह अनुकूलता और कुछ भी नहीं है। उस तरवार और महाउत्साहसे ही उन्होंने क्षत्रियोंके गौरवकी भलीभांतिसे रक्षा की। मनुष्यरूपी पैंठका यह व्यापारी कुछ चिरंजीवी तो है ही नहीं; अतएव अतिक्रान्त होकर एक दिन उस व्योपारीको इस लोकसे जाना ही पडेगा। उस काल हमारे वंशगौरवकी रक्षाका भार प्रतापके हाथमें समर्पण किया जायगा; उस समय प्रताप ही राजपूत बीजको हमारे त्यागे हुए खेतोंमें बोवेगा जिससे इस कुलमानकी रक्षा हो, जिसके द्वारा इसकी पवित्रता एक दिन चमकने लगे, उसके लिये सब ही उत्कंठा सहित प्रतापसिंहकी ओर टकटकी लगाये देख रहे हैं

राठौरवीर पृथ्वीराजकी इस तेजस्विनी कवितोको पढकर प्रताप एक प्रचंड उत्साहसे उत्साहित होगए। उनको ज्ञात हुआ कि मानो दश हजार राजपूतवीरोंने आनकर सहायता दी। उस कविताके प्रकाशमान प्रभावसे क्षीण प्रतापका हृदय फिर नवीन बलसे बलवान

* प्रतापसिंहका प्रचलित भाषामें नामान्तर ।

होगया; कठोर कार्यका सामना करनेके लिये वह फिर तइयार हुए। जब कि प्रत्येक हिन्दू स्वदेशके गौरवका उद्धार करनेके लिये प्रतापके मुखकी ओर देख रहा है; तब क्या प्रताप निश्चिन्त रह सकते हैं ?

"यथार्थ राजपूत होकर ऐसा कौन है जो "नौरोज़े" के लिये अपने कुलकी मान मर्यादाको त्याग सकता है।" पृथ्वीराजके इस वाक्यके अन्तर्लीन "नौरोज़ा" शब्दका गूढ अर्थ प्रकाश करना यहांपर अत्यन्त आवश्यकीय जान पडता है। जिस समय भगवान भास्कर मेषराशिमें प्रवेश करते हैं, पूर्वदेशीय मुसलमानलोगोंमें उस समय "नौरोज़ा" (वर्षका नया दिन) नामक एक उत्सवका आरंभ हुआ करता है। परन्तु वीरवर पृथ्वीराजने अपने पत्रके बीच इस अर्थमें "नौरोज़ा" शब्दका व्यवहार नहीं किया है। पंडितवर अब्बुलफ़ज़लका इतिहास पढ लेनेसे "नौरोज़ा" शब्दका गूढ अर्थ समझमें आ जायगा।

"यह नौरोज़ा नव वर्षका दिन नहीं है, यह और एक महोत्सव है। अकबरने स्वयं इसकी प्रतिष्ठा करके इच्छानुसार इसका नाम "खुशरोज" (आनन्दका दिन) रक्खा था। प्रतिमासके अनुष्ठित महोत्सवके होजानेपर नवें दिन (नौरोज़) इस आनन्दमय उत्सवका आरंभ होता था। वह आनन्दवासर मुसलमानोंमें एक प्रसिद्ध उत्सव गिना जाता था। मुगल बादशाहतके बीच उस दिन सब ही परमानंदमें मग्न रहते थे। दुःख या विषादकी कालिमा किसीके बदनमंडलपर अंकित नहीं रहती थी; राजदरबारमें उस दिन सर्वसाधारणके आने जानेकी भी कोई रोक टोक नहीं थी। बेगम साहब भी बडी धूम धामके साथ दरबारमें विराजमान होती थीं। प्रतिष्ठित मुसलमानों और सामन्त राजपूतोंकी स्त्रियां भी उस दिन दरबारमें आती थीं। परन्तु यह खुशरोज़ और एक बातके लिये प्रसिद्ध था। इसी समयमें राजमंदिरसे सटे हुए एक गुप्तस्थानमें एक मेला हुआ करता था। इस मेलेमें स्त्रियोंके अतिरिक्त पुरुषोंका प्रवेश नहीं होसकता था। राजपूत और मुसलमान व्यौपारियोंकी स्त्रियें अनेक देशोंके शिल्पजात पदार्थ लाकर उस मेलेमें कारबार किया करती थीं* और राजपरिवारकी स्त्रियें वहां जाकर मनमानी सामग्री

---

* राजवंशोत्पन्न पुरुष और स्त्रियें शिल्पद्रव्य तइयार करके इन राजकीय प्रदर्शिनियोंमें प्रेषित करते थे बदलेमें इनको बहुत सा धन मिलता था। बहुतलोग इस बातको नहीं जानते होंगे कि एशिया महादेशके बहुतसे राजा एक एक कारबार करते थे। दृष्टान्तके लिये दोका नाम बताना ही यथेष्ट होगा। औरंगजेब टोपियें तइयार करके इस नौरोज़के मेलेमें वेचा करता था, इस कारबारसे जो धन इसने पैदा किया था, अन्त समयमें उसहीसे बादशाहकी अंत्येष्टि क्रिया हुई थी। खिलजी महम्मद भी एक इस ही प्रकारका कारबार करता था; कहते हैं कि वह साहित्यव्यवसाई था। उसके हस्ताक्षर परम मनोहर थे; वह ग्रन्थादि लिखकर अपने अमीर उमराओंको बेच देता और बदलेमें बहुतसा धन पाता था। यह बादशाह एक समय अपने अमीर उमराओंके साथ बैठा हुआ फारसीकी नज़्म पुस्तककी नकल कर रहा था, उस ही अवसरमें सभामें बैठे हुए एक मुल्ला साहबने एक शेरको संशोधन करके उसके बदलेमें—

मोल लिया करती थीं।"बादशाह भी वेष बदले हुए वहां जाकर भ्रमण किया करते थे। इस अवसरमें वह व्यौपारकी वस्तुओंका यथार्थ मोल जान लेते थे, तथा राजाकी अवस्था और राजकर्मचारियोंके ऊपर सर्वसाधारणका कैसा मत है इस विषयको भी वह जान जाते थे।" प्रत्येक बुद्धिमान पाठक इस बातको जान सकते हैं कि इस उत्सवकी जडमें एक प्रकारकी कुप्रवृत्तिका बीज गुप्तभावसे छिपा हुआ था। चालबाज अब्बुलफ़ज़लने इस दुरभिसन्धिको एक दूसरी प्रकारकी मूर्तिमें अवतारित करके संसारकी आंखोंमें धूल डालनेकी चेष्टा की है। सुखका विषय है कि उसकी वह चेष्टा फलवती नहीं हुई। समयके असीम माहात्म्यसे सत्यका उजाला आपसे आप ही प्रकाशित होगया। क्या अकबर सब भाषाओंको जानता था? अच्छा, ऐसा न सही, अनपढी मुसलमानियाँ और राजपूत रमणीगण जिस कठिन और मिश्र भाषामें परस्पर बातचीत करतीं थीं, क्या वह उस भाषाको समझ लेता था? कौन इस बातका प्रमाण दे सकता है ऐसा कौनसा बुद्धिमान् है जो चालबाज अब्बुलफ़ज़लकी चालाकीसे धोका खाकर शिर झुकाय प्रसन्न हृदयसे मुगलबादशाहकी उस भयंकर कुप्रवृत्तिको धन्यवाद देगा? जिसको साधारण ज्ञान है, जो अच्छे बुरेका विचार कर सकता है वह अवश्य ही कहेगा और अवश्य ही स्वीकार करेगा कि अकबरने अपने बुरे अभिप्रायको सिद्ध करनेके लिये ही इस अनर्थकर "नौरोज़ा" उत्सवको स्थापित किया था। इस पापमय "नौरोज़ा" उत्सवमें कितने ही राजपूत कुलोंकी पवित्र वंशमर्यादा कलंकके लगनेसे काली हुई है, अनेक अभागी राजपूतबालाओंको विवश हो अपने सतीत्वको यवनके हाथसे गवाना पडा है। भट्टकाव्यग्रंथोंमें भलीभांतिसे इन गुप्त अत्याचारोंका वर्णन किया गया है। राठौरवीर पृथ्वीराजने इसही "नौरोज़" की दुरभिसंधिका संकेत अपने पत्रमें किया है।

जिस अकबरने "जगद्गुरु" "दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा" इत्यादि पवित्र और संमानसूचक उपाधियोंको प्राप्त किया था; इतिहासने जिसको निरपेक्ष प्रजापालकके नामसे पुकारा है, सजातीय इतिहासलेखकोंने सत्यसन्ध, धर्मात्मा और विशुद्धहृदय कहकर वंदन किया है, वह अकबर, वही भुवनविदित "धर्मप्रिय अकबर" अपनी प्रभुताका कुव्यवहार करके कठोर हो निन्दित मार्गमें भ्रमण करता था, इस बातका विश्वास करनेमें हम हिंचकिचाते हैं; इस बातका विचार आनेसे भी हृदय बारम्बार डोल जाता है। भाग्यतरंगकी प्रचण्ड आंधीमें फँसकर जिन राजपूतोंने बादशाहके हाथ अपनी स्वाधीनताको बेच दिया था राजधर्मके मस्तकपर चरणप्रहार कर, मूर्ख मनुष्यके समान कामविमूढ हो उन राजपूतोंकी प्राणप्यारी स्त्रियोंका साररत्नका चुराना

—वहां अपने बनाए हुए मिसरेके लगानेको कहा; बादशाहने तत्काल वैसा ही किया; परन्तु उन मुल्लाजीके चले जानेपर उनके मिसरेको मिटाकर वहांपर वही पहिलेका मिसरा लिख दिया। एक उमरावने यह देखकर बादशाहसे इसका कारण पूछा बादशाहने जवाब दिया कि "एक वृथा विद्याभिमानीको लज्जित करनेकी अपेक्षा, लिखावटमें कालिमा चिह्न देना कई दरजे अच्छा है।"

जब याद आता है तब फिर उसको भारतका शाहंशाह मुगलकुलकेतु, "जगद्गुरु" अकबर कैसे पुकार सकते हैं; तब तो उसको कपटता, स्वार्थपरायणता और विश्वास-घातकताका मूर्तिमान पिशाच समझकर घृणा करनेकी इच्छा होती है । बादशाहके इस पापमय "नौरोज़ा" उत्सवके समय कितने पवित्र राजकुलोंमें कलंक लगा है उसकी गिनती नहीं हो सकती ! केवल बीकानेरके राजकुमार पृथ्वीराजने ही अपनी भार्याके असीम साहस और धर्म बलके प्रभावसे इस दारुण शोचनीय कलंकसे अपने कुलकी रक्षा की थी । इनकी भार्या पवित्र शिशोदिय कुलमें उत्पन्न हुई थी, वीरवर शक्तसिं-हकी पुत्री थी । यह वरिबाला प्रतिष्ठित वंशमें जन्म लेनेके कारण अत्यन्त गुणवती थी । इस वीरललनाके समान सर्वाङ्गसुन्दरी राजवाडेमें उस समय अल्प ही दिखाई देती थीं । यह कहना कुछ अनुचित न होगा कि कुमार पृथ्वीराजने अपने बडे ही पुण्यबलसे ऐसी भार्याको पाया था ।

अभाग्यसे पृथ्वीराज अकबरके बन्दी हुए, इनका सुख दुःख समस्त अकबरके अधीन था । परन्तु तथापि वह अकबरके प्रसादप्रयासी नहीं थे, न उन्होंने बादशाहको शिर नवाया था । सर्वगुणसम्पन्न भार्याके पवित्र प्रेमालापसे वह अधीनताके दुःखको कुछ नहीं समझते थे । उनकी भार्याके सर्वांगसुन्दर और सर्वगुणसम्पन्न होनेका प्रमाण निम्नलिखित वर्णनसे प्राप्त होगा । इस वृत्तान्तमें उस वीरबालाके अद्भुत सतीत्वकी पराकाष्ठा दिखाई गई है । एक समय दिल्लीश्वर अकबर "खुशरोज़" के आनन्द-बाजारमें गुप्तवेषसे घूमता फिरता था कि इस ही अवसरमें पृथ्वीराजकी स्त्री-की स्वर्गीय सुन्दरताका प्रतिबिम्ब उसके नेत्रोंमें पडा, उस अपूर्व रूपलावण्यको निहारकर बादशाहका प्राण मोहित हो गया । चित्रपुतलीके समान इकटक लोचन-से वह उस रूपसुधाको पान करने लगा । दिल्लीश्वरके हृदयमें पापवृत्ति बलवती हुई । विश्रामभवनमें आय अपने मनोरथके पूर्ण करनेका अवसर खोजने लगा । इस घृणित पाशवी वृत्तिके उकसनेके दो मुख्य कारण थे; प्रथम तो अपनी कामलालसाको तृप्त करना, दूसरे मेवाडके पवित्रकुलमें कलंक लगाना ! रोमाञ्च-कारी इन दो कारणोंके वश होकर मुगलसम्राट्ने कौशलसे उस सुरसुन्दरी राजपूतबा-लाको हस्तगत करनेकी चेष्टा की । रक्षक ही भक्षकका कार्य करनेके लिये तइयार हुआ, जिसके ऊपर सुख दुःख, धर्माधर्म, जीवन मृत्यु समस्त ही निर्भर है, आज वही निठुर कठोर और पशुकी नाई आचरण करनेको तइयार हुआ है जो साक्षात धर्मका अवतार कहकर पूजा जाता है, आज वही अधर्मकी सहायता करनेको तत्पर है । इसके विषम संकट—इस दारुण दुर्विपाक और—इस कठोर अग्निपरीक्षाके समय आज कौन पाति-व्रताके धर्मकी रक्षा करेगा ?

इसके उपरान्त वह सरला सुकुमारी मेलेसे घर लौटनेका विचार करने लगी । जिस आंगनके भीतर होकर वह सदा आया जाया करती थी, आज भी उस ही मार्गसे चलने लगी । कुछ दूर आके देखा कि चारों ओरके द्वार बन्द हैं, बाहर जानेका

और कोई मार्ग नहीं है; वह अत्यन्त विस्मित हुई, क्रमसे उसके हृदयमें अनेक प्रकारके सन्देह उत्पन्न होने लगे। उस ही समय एक ओरका द्वार खुल गया। उस खुले हुए द्वारसे दिल्लीश्वर अकबर धीरे २ आया और कामोन्मत्तभावसे अपनी दोनों बाहैं फैलाय उसके सामने खड़ा हो गया तथा अनेक प्रकारकी बातें कहकर उस वीरबालाको लालच दिखाने लगा। दारुण क्रोधसे सतीका हृदय मथित होने लगा, उसने तत्काल अपनी कमरसे एक छूरा निकालकर अकबरके ऊपर रख कठोर स्वरसे कहा "ईश्वरके नामसे शपथ करके कह कि और किसी राजपूतकुलमें कलंक लगानेकी इच्छा नहीं करूंगा:-कह-शपथ कर,-नहीं तो यह तीक्ष्ण छूरी अभी तेरे हृदयके रुधिरसे स्नान करेगी।" राजपूत सतीका अद्भुत साहस देखकर बादशाह हकाचका सा रह गया,-मानो उसके ऊपर वज्र गिर पडा! उसकी पाप प्रवृत्ति न जाने कहांको चली गई? पापकलुषित मोहान्धहृदय ज्ञानालोकसे प्रकाशित हो गया। बादशाहने तत्काल इस वीरबालाकी आज्ञाका पालन किया। भट्टग्रंथोंमें लिखा हुआ है कि उस समय मेवाडकी अधिष्ठात्री भगवती विश्वमाता उस पाप-विलासभवनकी सुरंगमें सिंहासनपर सवार होकर पहुँच गई उन्होंने ही पातिव्रत धर्मकी रक्षाके लिये उस वीरबालाके हृदयमें साहस और करकमलमें छूरीको सजाया था। इस राजपूत सतीके असीम साहस और स्वर्गीय विमलचरित्रके सम्बन्धमें भट्टग्रंथोंमें अनेक प्रकारके सुन्दर २ उपाख्यानोंका वर्णन किया गया है। पृथ्वीराजके बडे भ्राता रायसिंहको दुर्भाग्यसे ऐसी गुणवती भार्या नहीं मिली थी। पवित्र सती धर्मकी न्यूनतासे कहो अथवा कायरपनसे कहो रायसिंहकी भार्या अकबरके दिखाये हुए लालचमें फँस गई! साधारण रत्नभूषणके बदलेमें अमूल्य स्वर्गीय रत्नको बेचकर जब स्वामीके घर लौट आई तब तेजस्वी पृथ्वीराजने मर्मभेदी वाणीके द्वारा बडे भ्राता से कहा था "सुवर्ण और मणि रत्नके गहनोंसे पापमय शरीरको मंडित करके मनोरञ्जिनी ध्वनिके द्वारा चारों दिशाओंको प्रतिध्वनित करती यह तो आपकी धर्म प्रिया गृहलक्ष्मी आपके घरको लौट रही है; परन्तु भइया! यह क्या? आपकी अधर भूषण डाढी मूछोंको किसने चुरा लिया?" *

पुण्यश्लोक प्रतापसिंहके पवित्र जीवनचरित्रका विचार करते २ प्रयोजनके अनुसार हमको "नौरोजा" वर्णन करना पडा; इस समय पुनर्वार प्रतापकी अमरकीर्तिकी ओर पाठकगणोंको लिये चलते हैं। पृथ्वीराजकी तेजस्विनी कविता पढकर वीरकेशरी प्रतापसिंहको नया जीवन प्राप्त हो गया, वे दुर्द्धर्ष मुसलमानोंको उनके अत्याचारका बदला देनेके लिये तैयारियें करने लगे। उनको विनीत समझकर मुगल-सेनापतिगण अपने २ डेरोंमें अनेक प्रकारके उत्सव करने लगे। जब वह इस प्रकार आनन्दसे मग्न थे, तब प्रतापने अपनी सेना लेकर मुसलमानोंपर आक्रमण किया। बहुतसे मारे गये, बहुतसे प्राणोंको लेकर भागे, परन्तु इससे राणाजीको कुछ लाभ

* डाढी मूछोंको राजपूत गौरवका चिह्न समझते हैं।

न हुआ जो मुसलमानसेना मारी गई उसके बदलेमें दूनी तिगुनी सेना दिल्लीसे आगई। क्रमसे संख्या बढने लगी। पुनर्वार प्रतापको उत्तेजित देखकर यवनगण फिर वनवन और कन्दरा २ में उनका पीछा करने लगे, परन्तु कोई उनके एक केशको भी स्पर्श-नहीं कर सका। वे अपने गुप्तस्थानमें छिपे रहकर सुयोग और सुभीतेके अनुसार साधारण २ मुगल सेनापर छापा मारकर जडमूलसे उनका संहार करने लगे। इस प्रकारसे बहुत दिन बीत गये; अर्द्धाशन या अनशन और अनिद्राके कठोर क्लेशको सहन करके वीरश्रेष्ठ प्रतापने बहुत दिनोंतक मुसलमानोंसे युद्ध किया, क्रमसे उनकी सहायता घटती गई। कन्दमूल, फल, वृक्षोंके पत्ते और तृण बीजादि जिन हीन अपदार्थोंको भक्षण करके वह किसी प्रकार अपना निर्वाह करते थे, धीरे २ वह पदार्थ भी निबडते गये। वृक्षोंपर फल नहीं रहे, कन्दमूलका पता नहीं, तृणराजिमें बीज नहीं! क्या करें? क्या विना भोजनके अब पशुके समान मरना होगा? मरना हो तो कुछ हानि नहीं, कारण कि मृत्यु तो प्रत्येक प्राणीके लिये अवश्यम्भावी है।

परन्तु उन्होंने जो स्वदेशके लिये– "स्वर्गादपि गरीयसी" मातृभूमिके लिये इतने दिन तक महाकष्ट सहकर घोरयुद्ध किया, जन्मभूमिको मनुष्योंके रुधिरसे स्नान करा दिया, उस जन्मभूमिका क्या प्रबन्ध होगा? जिस अभिप्रायसे उन्होंने अपने राज्यको श्मशान बनाकर दीर्घकालतक वनवासके कठोर क्लेशको सहन किया, क्या वह अभिप्राय सफल हो गया? उनकी अर्द्धांगिनी दुःखकष्ट और विषमयी चिन्ताके विषदंशसे हीन, दीन, क्षीण, मनमलीन हो रही है; पुत्र कन्याको भलीभांति आहार न मिलनेके कारण दुर्बलताने सता रक्खा है, ऐसी अवस्थामें राणाजी कबतक यवनोंसे युद्ध कर सकते हैं? सहाय सहारा सब जाता रहा, अब स्वाधीनताके जानेकी बारी आई जिस स्वाधी-नताकी रक्षा करनेके लिये अबतक उन्होंने इतने कष्ट सहे थे, यदि वही स्वाधीनता चली जाय तो फिर कौनसी वस्तु निकट रह जायगी, बाप्पारावलके पवित्र कुलमें कलंक लग जायगा। अतएव दूसरा उपाय न देखकर वीरकेशरी प्रतापने स्वदेशको छोड जन्मभूमिसे मुख मोड, प्रीतिका नाता तोड सिन्धुनदके किनारेपर बसे हुए सगदी राज्यमें अपनी लोहित वैजयन्तीके गाडनेका पक्का बिचार कर लिया। यात्राकी समस्त तइयारी होगई। जिन सरदारोंने दुःखसुख समान विपदमें बराबर राणाजीका साथ दिया था वे अब भी सबके सब साथ चलनेको तइयार हुए। उन कई एक सरदारोंको और अपने स्त्री पुत्र कन्यागणको साथ ले शोकसहित प्रतापसिंह आरावली पर्व-तके शिखरपर चढे। एक बार मन भरकर जन्मभरके लिये अपने प्राण प्यारे चित्तौरकी ओरको देखा। उस शोकाच्छन्न हृदयमें कितनी ही चिन्ता कितनी ही भावना उठकर विषादकी रेखा खैंचती हुई लोप होने लगीं, उन्होंने विचार किया कि अब कदाचित् इस जीवनमें हमसे चित्तौरनगरका उद्धार न होगा। देवस्थानके समान मेवाडभूमिमें दानव यवन लोगोंको हम दूर नहीं कर सकेंगे। बालकपनके लीलास्थल–जीवन तोषिणी आशाके विलासक्षेत्र पवित्र मेवाड स्थानसे यही हमारी

अंतिम बिदा है। इस प्रकारकी अनेक चिन्ता राणाजीके हृदयको व्याकुल करने लगीं; इनके आघातसे वह अत्यन्त कातर हुए परन्तु बिधाताकी अपूर्व करुणासे वह समस्त चिन्ता एक साथ दूर हो गई। सौभाग्य लक्ष्मीने शीघ्र ही प्रसन्न मूर्ति धारण कर भारतके उस अनुपम महावीरको अपनी गोदमें ले लिया।

राणाजीको अपनी जन्मभूमिसे बिदा नहीं मांगनी पडी। आरावलीके शिखरसे उतर वह मरुभूमिकी सीमापर आये थे कि उनके परमविश्वासी मंत्री भामशाने असीम धन राशि लेकर राणाजीको समर्पण कर दी। अकेले भामशाने ही इस विपुलधनको उपार्जित नहीं किया था। वरन उसके पूर्वपुरुषोंने-जो कि बहुत दिनसे मेवाडके मंत्री होते आते थे इस धनको इकट्ठा किया था। सचिव भामशाने वही धन लाकर स्वामीके चरणोंमें निवेदन किया। वह इतना धन था कि जिसकी सहायतामें बारह वर्षतक पचीस हजार सेनाका भरण पोषण हो सके। इस महान् उपकार करनेके कारण महात्मा भामशा " मेवाडके उद्धार कर्त्ता कहलाए गये "। इस विपुल अनुकूलताको पाय राणा प्रतापसिंह अपने सरदार सामन्तोंको इकट्ठा करके अल्पकालमें ही मुगल सेनापति शहबाजखांके ऊपर ऐसे टूटे कि जिस प्रकार क्रोधित केशरी अपने शिकारपर टूटता है। प्रतापसिंहको चुपचाप देखकर मुगल लोग समझ चुके थे वह मारवाडकी ओर भाग गये परन्तु शीघ्र ही उनका वह सुखस्वप्न टूट गया। उस समय देवीरनामक स्थानमें छावनी डालकर सेनापति शहबाजखाँ निश्चिन्त होकर समय बिताता था; अब प्रतापका श्रवणभैरव सिंहनाद उसने सुना। बाण लगनेपर सोता हुआ शेर जैसे प्रचंड विक्रमके साथ आक्रमणकारी पर झपटता है, वीरेन्द्रसिंह प्रतापने भी वैसे ही अमित विक्रमके साथ मुगलसेनाको घेर लिया। देवीरके मयदानमें बहुत देरतक दोनों सेनाओंका घोर घमसान हुआ। बलगर्वित शहबाज़ख़ाँ उस स्थानमें अपनी समस्त सेनाके साथ प्रतापसिंहके हाथसे मारा गया। बहुतसे मुसलमानलोग आमैतनामक स्थानको भाग गये। इस स्थानमें मुसलमानोंकी दूसरी सेना पडाव डाले हुए थी। प्रतापसिंह उन भागे हुए मुगलोंका पीछा करते २ उस स्थानमें पहुँच गये। और उस समस्त यवनसेनाका संहार कर डाला। यह समाचार सुनकर मुगलोंमें अत्यन्त घबडाहट हुई। प्रतापसिंहको उनकी सेनाके साथ कैद करनेका विचार यवनलोग करने लगे। उनकी तैयारियाँ हो ही रही थीं कि इसी अवसरमें राणाजीने उस मुगलसेनाको घेर लिया कि जो कमलमेरमें पडी हुई थी। उस सेनाके स्वामी अब्दुल्लाको दलसहित प्रतापसिंहने रणभूमिपर गिरा दिया। इस प्रकार थोडे ही समयमें इस बीरने ३२ किले अपने अधिकारमें कर लिये। इन बत्तीस किलोंमें जितने मुसलमान थे वह समस्त ही राणाजीके हाथसे मारे गये। इस भांति थोडे ही समयमें प्रतापसिंहने संवत् १५८६ (सन् १५३० ई.) में चित्तौर, अजमेर और मंडलगणके अतिरिक्त और समस्त मेवाडभूमिको यवनोंसे छीन लिया। जो मानसिंह; प्रतापसिंहका भयंकर शत्रु था, जिसके विद्वेषसे उनको इतना कष्ट उठाना

पडा, बडी २ विपत्तियें भोगनी पडीं, अपने हाथसे जिसका प्राण संहार करनेके लिये जिन्होंने अपने जीवनका माया मोह एक बार छोड़ दिया था, उस राजपूतकुलकलंक स्वदेशद्रोही मानसिंहका विजय गौरवसे मत्त होकर निश्चिन्त बैठे रहना प्रतापसिंहसे न सहा गया । वह उसको स्वदेशद्रोहिताका भलीभांतिसे प्रतिफल देनेके लिये अम्बेरराज्यपर चढ गए तथा वहांके प्रसिद्ध वाणिज्य स्थान मालपुरको उजाड़कर अपने राज्यमें लौट आये ।

कुछ कालमें उदयपुरको भी अधिकारमें कर लिया, इस नगरके लेनेमें राणाजीको अधिक परिश्रम नहीं करना पडा । शत्रुगण बिना ही संग्राम किये उदयपुरको छोडकर चलते बने । कहते हैं कि जब उदयपुरके चारों ओर प्रतापसिंहने अपना अधिकार कर लिया तब बादशाहने विवश होकर इस नगरको छोडा था । परन्तु भट्टग्रंथोंमें देखा जाता है कि प्रतापके अपूर्व प्रताप, साहस, वीरत्व और असीम उत्साहको निहार बादशाहके हृदयमें दयाका संचार हुआ और उन्होंने भक्तिरसमें मग्न हो राणाजीको दुःख देनेका विचार छोड दिया ।

बादशाहने अनुग्रह करके प्रतापसिंहको युद्ध करनेसे शान्ति दी । क्या राणाजी इस कार्यसे प्रसन्न होसकते हैं ? प्रतापसिंहको सुख कहाँ ? मेवाडभूमिको श्मशान बनाकर प्रतापसिंहके इष्टमित्र और सरदारोंके हृदयका रुधिर बहाकर जो अकबर सुखसे दिल्लीमें राज्य करने लगा,–फिर राणा प्रतापसिंहके सुखकी इसमें कौनसी बात हुई ? उनके लिये अभीतक शान्ति दिखाई नहीं दी। उनको यही पछतावा रह गया कि शत्रुओंको उनके अन्यायका बदला भलीभांतिसे न दिया गया । जिस अभिप्रायसे राज्य धनको छोड अपने पराएसे मुख मोड वन २ में घूमकर इतना कष्ट सहा; क्या वह अभिप्राय और मनोरथ सिद्ध हो गया ? यदि सिद्ध नहीं हुआ तो फिर शान्ति कैसी ? स्वदेशका उद्धार करनेके लिये मुसलमानोंसे समर करनेके कारण यदि प्रतापको जन्मभरतक भी भयंकर समर–सागरमें सन्तरण करना होता तो वह एकपल भरके लिये भी न घबडाते; प्रतापसिंहने स्वप्नमें भी इस बातका विचार नहीं किया था कि जिस शत्रुने इतने दिनतक सताया, बीस हजार राजपूतोंका रुधिर मेवाडभूमिपर बहाया, अंतमें फिर वही युद्ध बंद करके चला जायगा । मनोरथ पूर्ण न होनेसे उनके कष्टकी सीमा न रही, मनकी आशा मनमें ही रह गई; चित्तौरका उद्धार भी न हुआ, दुर्द्धर्ष शत्रुको दंड न दे सके । जो चित्तौर उनके पितृपुरुषोंका प्राचीन निवासस्थान था, प्रायः सहस्रवर्षतक जहांपर उन्होंने अखण्ड प्रतापसे गिह्लौटकुलके राजदंडको चलाया था, आज वही चित्तौर प्रतापसे छूटा हुआ है । उनके लिये आज वही चित्तौर मानो अनदेखी और अनसुनी नगरी है। यह विषैली चिन्ता दिन रात राणाजीको सताती और विलखाती थी, कभी २ तो वह अत्यन्त ही व्याकुल होजाते थे । अकबरने समझा था कि मेरे दया करके युद्ध बंद कर देनेपर राणाप्रतापसिंहको प्रसन्नता होगी, परन्तु वह बादशाहकी भूल थी, अकबरके युद्ध बंद करदेनेसे उनको महादुःख हुआ । शत्रुको अनुग्रह जितना कोमल होता है,

वीरके हृदयमें वह उतना ही सालता है। अकबर यदि जन्मभरतक प्रतापसिंहको युद्धकी पीडा देता, तो वह क्षणभरके लिये भी दुःखी न होते; परन्तु शत्रुके इस अनुग्रहसे इस असह्य कठोर कुलिशके प्रहारसे वह अत्यन्त ही व्याकुल हुए, अकबरको और अनर्थकारी राजसन्मानको हजार बार धिक्कार देने लगे।

प्रताप प्रवीण अवस्थाको पहुँच चुके हैं। युवा अवस्थाके सम्पूर्ण उत्साह इस प्रवीण वयसमें ही लोप हुए, समयने इसी अवसरमें बुढापेकी सूचना दी। हम नहीं कह सकते कि जीवकी यह सीमा औरोंके लिये कैसी सुख या दुःखकी देनेवाली होती होगी, परन्तु वीर चूडामणि प्रतापने इससे किंचित् भी विश्राम नहीं पाया। चिन्ता क्लेश और संसारके कठोर कष्टोंके प्रहारसे प्रवीण अवस्थाके समय प्रतापको बुढापा प्राप्त होगया। उनके समस्त अंगोंमें शस्त्र लगनेके चिह्न थे, हृदयका प्रत्येक पर्त्त चिन्ताकी विषैली आगसे जलता था; शरीर दुर्बल होता गया और प्रकाशमान हृदय, जो एक समय तेजस्विनी आशाके मोहन मंत्रसे उत्साहित होकर संसाररूपी वनमें मत्तमातंगके समान झूमता हुआ फिरता था, इस समय शान्तमूर्तिको प्राप्त होगया है। बलवती न होनेपर भी उस आशाको प्रतापसिंह न छोड सके। चित्तौरका उद्धार उनसे न हुआ तथापि वे चित्तौरकी आशाको हृदयसे अलग न कर सके। उदयपुरके आगे स्थित हुए उस ऊंचे शैलशिखरपर बैठे हुए वह बहुधा चित्तौरके गगनभेदी स्तंभोंकी ओर एकटक दृष्टिसे देखते रहते थे। उनके जयशीलपुरुषोंने इस स्तंभराशिको अपनी २ विजय होनेपर स्थापन किया है। शत्रुओंके हाथसे उनको बचानेके लिये अनेक गिह्लौट वीरोंने अपने हाथसे अपने हृदयके रुधिरको निकालकर रण–पाचकोंको दान दिया है परन्तु प्रतापसिंहने क्या किया? कठोर उद्यम और परिश्रम सहन करके हजारों कष्ट उठाये, परन्तु शत्रुओंके ग्राससे चित्तौरपुरीका उद्धार न कर सके। इस भयंकर पछतावेसे प्रतापसिंह दिनरात व्याकुल होते रहते थे। वह एकाग्रचित्तसे चित्तौरके उस ऊंचे परकोटे और जयस्तंभोंको देखा करते थे; अनेक विचार उठकर हृदयको डांवाडोल करदेते थे। उन विचारोंके भयंकर प्रहारसे कभी वह उन्मादित कभी उत्तेजित और कभी २ स्वल्पकालके लिये अचेतनतामें मग्न हो जाते थे। मरीचिकामयी कुहकिनी आशाके हाथकी कठपुतली होकर प्रतापसिंहका प्रवीण जीवन अनन्तकाल स्रोतमें लीन होनेके लिये शीघ्रतासे परलोककी ओरको बढने लगा।

भट्टग्रन्थोंमें लिखा है कि एक समय ग्रीष्मऋतुकी संध्याके समय प्रतापसिंह उस ऊंचे शृंगपर बैठे हुए एकाग्र चित्तसे उन स्तंभोंकी ओर देख रहे थे। सूर्य भगवान दिनके लम्बे भागको व्यतीत करनेके कारण थककर अस्ताचलपर आरोहण कररहे थे। उनकी रक्ताभकिरणमाला, उस आकाशमें कि जो सूक्ष्म २ बादरोंसे छाय रहा है–तरंगायित होकर अनिर्वचनीय शोभा प्रकाशित कर रही है। अनन्तगगनका वह मनोहरचित्र चित्तौरके ऊंचे कोटेपर, स्तंभकी चोटियोंपर और नीचे पृथ्वीमें प्रतिबिम्बित होकर और भी

मनोहर जान पडता है । राणाजी चित्तौरकी उस लालकिरणमंडित दुर्गप्राचीर और स्तंभराशिकी ओर देख रहे हैं, परन्तु वह प्रकृतिकी उस सुन्दरताको नहीं देखते थे । उनके दोनों नेत्र खुले तो हैं, परन्तु अपने कार्यको नहीं कररहे हैं, वे शून्यदृष्टिमय हैं, वे नेत्र बाहिरी संसारको छोडकर अन्तजगत्के एक विशाल चित्रको देख रहे हैं । वह चित्र बहुत बडा और विचित्र बना हुआ है । बाहिरी जगत्की सीमा है । बाहिरी नेत्र, भौतिक बाधा रुकावट या परदेको भेदकर आगे नहीं बढ सकते, परन्तु अन्तरके नेत्रोंकी गतिको कौन रोक सकता है ? प्रतापके बाहिरी नेत्र चित्तौरपर लगे हुए थे, परन्तु आन्तरिक नेत्रोंके द्वारा वह अनन्त अन्तर्जगत्के अनेक चित्र और कार्य देख रहे हैं । उन्होंने भीतरी नेत्रोंसे देखा कि,मानों युवक बाप्पा रावलने मौर्यवंशीय मानराजाके मस्तकसे रत्न मंडित राजमुकुट उतारकर अपने शिरपर धारण किया । हैमतपन मंडित लोहिताभ "छेंगी"उनके मस्तकपर लगाई गई। तदुपरान्त वीरकेशरी समरसिंह यवनके बलसे भारत-माताका उद्धार करनेके लिये तइयार हुए और देशरक्षा करनेमें अपने प्राणोंको न्यौछावर करके वीरवर पृथ्वीराजके साथ दृषद्वतीके किनारे अनन्तनिद्रामें शयन किया। इतने ही में कहींसे काली २ घटा आकर चित्तौरके ऊपर छा गई। उस निबिड मेघमालाको छिन्न भिन्न करके चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवीकी दीप्तिमान मूर्ति चित्तौरके ऊंचे पर-कोटेपर विराजमान हुई, अकस्मात् श्रवणभैरव हुंकारनादसे सम्पूर्ण मेवाडभूमि कम्पा-यमान हो गई, उस विकट हुंकारध्वनिको प्रतिध्वनित करके राणा लक्ष्मणसिंहके बारह पुत्रोंने हृदयके रुधिरको दान करके चामुण्डादेवीका विकट खप्पड रँग दिया । क्रमशः वह भयंकर चित्र और भी अधिक भयंकर हो गया। वैसे ही देवल सरदार बावजी, वीरवर जयमल तथा फत्ते, फत्तेकी वीरमाता और वीरवधूने प्रचण्ड रणतुरंगपर सवार होकर रणरूपी समुद्रमें गोता लगाया ! फिर अकस्मात् चित्तौरका जीवन्तभाव लोप हो गया और अनन्त काली कराल घटाओंने भलीभांतिसे चित्तौरको ढक लिया ! उस मेघ-मालाको शत सहस्र तीव्र विज्जुचमकके समान छिन्न भिन्न करके चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवी चामुण्डाजी करुणायुत शब्द करती हुई चित्तौरको छोड़ गई । अन्धकार और भी अधिक घना हुआ, देखते २ निर्बलहृदय उदयसिंह स्वाँधीनताकी लीलाभूमि चित्तौरके गिरिदुर्गको छोड दूर भाग गया, उस काल सम्पूर्ण प्रकृति राज्यको रुलाता हुआ, चारों ओर विकट हाहाकार होने लगा। मानो संसारका प्रलयकाल आ पहुँचा ! दारुण विस्मय, शोक और मानसिक कष्टसे पीडित होकर प्रतापसिंह प्रचण्ड वेगसे कम्पायमान होने लगे । उनके यह सम्पूर्ण विचार क्षणभरमें लोप हो गये ! चैतन्यता प्राप्त हुई ! विस्मय और शोकसे चलायमान होकर उन्होंने बाहरी संसारमें मन लगाया, तो देखा कि,—सूर्य भगवान् छिपना चाहते हैं, समस्त संसार काले २ बादरोंसे ढका हुआ है, भयंकर पवन अत्यन्त वेगसे चल रही है । उस भयंकर पवनके प्रचंड प्रहार-से मेघावली छिन्न भिन्न होकर बारम्बार बिजलीरूप अग्निको उगलती हुई जगत्के एक छोरसे दूसरे छोरको भाग रही है ! कुछ जागते और कुछ सोते इस स्वप्नके

बीत जानेपर प्रतापसिंहको फिर अपना ध्यान आया; फिर उन्होंने एक बार बीतती हुई होनीका विचार किया कि वैसे ही नई नई बाधाओंने तत्काल उनके मनपर चोट दी। फिर वही रोष,—वही डाह और अपने मनका धिक्कार देना उनको याद आ गया। दांतसे दांत किसकिसाकर उन्मत्तसे होकर विकट चीत्कार कर उठे। शत्रुगण दया करके संग्राम करना बंद कर गये, क्या प्रतापसा वीर शत्रुओंके इस दयाभावको सहन कर सकता है? यवनोंकी दयाका स्मरण करके राणाजीके हृदयमें जो कठोर पीडा होती थी; यदि उसका मिलान किया जाय तो शत्रुओंका उपहास और घृणा यह दोनों बातें अत्यन्त ही साधारण ज्ञात होती थीं—अत्यन्त कठोर अत्याचार कुसुमप्रहारकी कोमलतासे हीनतेज हो जायगा। वीराग्रगण्य प्रतापसिंह पीडादायक बाणशय्यापर युग २ तक शयन कर सकते परन्तु शत्रुका अनुग्रह उनपर पलभर को भी नहीं सहा जाता।

उस वीरशेखर प्रतापसिंहके हृदयमें जो दारुण चोट लगी, उसकी पीडा किसी प्रकारसे न मिटी, दिन २ कष्ट बढता ही गया। यहांतक कि हृदय छिन्न भिन्न हुआ। जो हृदय एक समय अत्यन्त कठोर पीडा सहकर भी यथावत् था, आज वह बुरी तरहसे टूट गया। उस टूटे हृदयको साथ लेकर प्रतापसिंहको अधिक दिनतक संसारमें नहीं रहना पडा। वह अपने जीवनके मध्याह्नकालमें अति शीघ्र ही इस लोकसे चले गये। उनके अन्तसमयके वृत्तान्तको पढकर पत्थरका हृदय भी पसीज जाता है, फिर यदि मनुष्यके आंसू गिरे तो आश्चर्य ही क्या है? वह जिस प्रकार अलौकिक वीरता और महानताके साथ जीवित थे वैसे ही वीरत्व और महत्त्वके साथ संसारसे बिदा हुए थे। क्षत्रियोंके गौरव और माहात्म्यके आदर्श बनकर उन्होंने जन्म लिया था। राजकुलमें जन्म लेकर किसी मनुष्यकी ऐसी दुर्दशा नहीं हुई होगी कि जैसी दुर्दशा प्रतापसिंहने उठाई, उनके समान किसीने भी भयंकर संकट और विघ्नोंका सामना करके दीर्घकाल तक संग्राम नहीं किया था, किसीने भी ऐसे स्वदेशानुराग और सजाति प्रेमके पवित्र मंत्रसे दीक्षित होकर अपने स्वार्थको इस प्रकारसे नहीं छोडा था इसी कारणसे कहा कि राणा प्रतापदेवता—मनुष्यकुलमें—देवता थे। इस अभागिनी भारतभूमिका म्लेच्छ ग्राससे उद्धार करनेके लिये,—जगन्नाथ आर्य जातिकी हीन अवस्थामें प्राणके बलिहारी करनेका प्रकाशमान उदाहरण संसारको दिखानेके लिये, अभागे भारतसंतानोंके होनहार उद्धारकी श्रीगणेश करनेके लिये प्रतापका जन्म इस पापमय संसारमें हुआ था। नहीं तो अत्यन्त उत्तम राजकुलमें उत्पन्न हो विभव और सौभाग्यसंपत्तिका अधिकारी होकर किसने इच्छानुसार राज्यसुखको तिलांजलि दी है? ऐसा कौन हुआ कि जिसने विशाल राज्यका अधीश्वर होकर भी स्वदेशोद्धारका महामंत्र साधन करनेके लिये दीन भिखारीके समान बनबन कन्दर २, दुर्गम गिरि गहन और तत्ते रेतीले मयदानोंमें बराबर पचीसवर्षतक भ्रमण किया हो?

उत्तमोत्तम महल दुमहलोंको छोडकर राणा प्रतापसिंहने पेशोला सरोवरके किनारे पर कई एक कुटीरें * बनाई थीं । उन ही कुटियोंमें अपने समस्त सरदारोंके साथ रहकर राणाजी दिन व्यतीत किया करते थे। आज अंतकालके समय भी प्रतापसिंह उन्हींमेंकी एक साधारण कुटीमें लेटे हुए कालकी कठोर आज्ञाकी बाट देख रहे हैं; विश्वासी सरदारगण उनके चारों ओर बैठे हुए प्रत्येक दशाको भली भांतिसे देख रहे हैं इतने हीमें प्रचंड वेगसे शरीरको कम्पायमान करती हुई एक लंबी सांस राणाजीके देहसे निकली ! समस्त सरदार उस समय अत्यन्त दुःखित होकर आँसू बहाने लगे। उस काल शालुम्ब्रापतिने कातर होकर महाराणा प्रतापसिंहसे पूछा "क्यों, महाराज ! ऐसे कौनसे दारुण दुःखने आपकी पवित्र आत्माको दुःखित किया, इस पिछले समयमें किसने आपकी शान्तिको भंग किया ?" क्षणभरके पीछे धीरे धीरेसे राणाजीने उत्तर दिया । "सरदारजी ! अबतक भी प्राण नहीं निकलता; केवल एक ही धीरजकी वाणी सुनकर यह अभी सुखपूर्वक देहको छोड जायगा । वह धीरजकी वाणी आप हीके पास है। आप सब लोग शपथ करके मेरे सन्मुख प्रतिज्ञा करके कहें कि, जीवित रहते अपनी मातृभूमि किसी भांति तुर्कोंके हाथमें अर्पण नहीं करेंगे ।—कहो— यह सुनते हीमें सुखसे नेत्र बंद कर लूंगा । पुत्र अमरसिंह हमारे पितृपुरुषोंके गौरवकी रक्षा नहीं कर सकेगा । वह यवनोंके ग्राससे मातृभूमिको नहीं बचा सकेगा। वह विलासी है, वह कष्ट नहीं झेल सकेगा" यह कहते २ राणाजीका विशाल पीला बदन गंभीर हो गया, फिर उन्होंने अमरसिंहके बालकपनकी दो एक बात सुनाई। 'एक समय कुमार अमरसिंह उस नीची कुटीमें प्रवेश करनेके समय शिरकी पगडी उतारनी भूल गया था इस कारण शिरकी पगड़ी द्वारके निकले हुए बांसमें लगकर नीचे गिरी । अमरसिंहने इसको कुछ भी न समझा और दूसरे दिन मुझसे कहा कि यहांपर बड़े २ महल बनवा दीजिये ।' यह वार्ता कहते २ प्रतापका बदन और भी अधिक गंभीर हो गया। उन्होंने फिर लंबी श्वास ली और कहा । "इन कुटियोंके बदले यहांपर रमणीक महल बनेंगे, मेवाडभूमिकी दुरवस्था भूलकर अमर यहांपर अनेक प्रकारके भोगविलास करेगा; उससे इस कठोर व्रतका पालन न होगा । हा ! अमरसिंहके विलासी होनेपर वह गौरव और मातृभूमिकी वह स्वाधीनता जाती रहेगी कि जिसके लिये मैंने बराबर पचासवर्षतक वन २ और पर्वत २ पर घूमकर वनवासका कठोर व्रत धारण किया, जिसको अचल रखनेके लिये सब भाँतिकी सुखसम्पत्तिको छोडा । शोक है कि अमरसिंहसे इस गौरवकी रक्षा न होगी। वह अपने सुखके लिये उस स्वाधीनताके गौरवको छोड देगा । और तुम लोग सब उसके

---

* इन कुटीरोंके बदले आजकल इस स्थानमें सरोवरके किनारे संगमर्मरके महल बनरहे हैं। यह महल मेवाडकी हीनावस्थामें बने थे। इस हीनावस्थामें ऐसे महलोंके बनानेका विचार करनेपर विदित होता है कि मेवाडकी संपत्ति अटूट है ।

अनर्थकारी उदाहरणका अनुसरण करके मेवाडके पवित्र और श्वेत यशमें कलंक लगा लोगे।" प्रतापसिंहका वाक्य पूरा होते ही समस्त सरदारलोग मिलकर बोले "महाराज ! हमलोग बाप्पा रावलके पवित्र सिंहासनकी शपथ करते हैं कि जबतक हममेंसे एक भी जीवित रहेगा, उस दिनतक कोई तुरक मेवाडभूमिपर अधिकार नहीं करसकेगा; उतने दिनतक राजकुमारको महाराजकी आज्ञाका निरादर न करने देंगे, और जितने दिनतक मेवाडभूमिकी पूर्वस्वाधीनताको पूर्णभावसे उद्धार न करलेंगे उतने दिनतक इन्हीं कुटियोंमें हमलोग रहेंगे।" इस सन्तोषदायक वाणीको सुनकर राणाजीने प्रसन्नतासे समस्त चिन्ता, समस्त कष्ट और समस्त शंकाओंसे रहित होकर परमानंदके साथ अमरलोककी यात्रा की। संवत् १६५३ (सन् १५७० ई०) में राणा प्रतापसिंहने इस संसारसे बिदा ली थी।

उस दिन-उस शोचनीय बुरे दिनमें भारतके भाग्याकाशका एक प्रकाशमान नक्षत्र अनन्त कालके लिये अपने स्थानसे टूट पडा-एक प्रचंड भूचालसे सारी भारतभूमि बारम्बार कम्पायमान होने लगी; न जाने कहांसे हृदयविदारक हाहाकार ध्वनि श्रवणगोचर होने लगी। कौन रोया कौन नहीं रोया, इस बातको किसीने नहीं देखा, परन्तु सब ही रोने लगे। बालक, वृद्ध, वनिता, धनी, निर्धन, युवक, युवती यहांतक कि समस्त सर्वसाधारण लोग, स्वदेशप्रेमी संन्यासियोंमें श्रेष्ठ प्रतापसिंहके शोकसे अधीर होकर अत्यन्त रोदन करने लगे। उस बुरे दिनको बीते हुए सैंकडों वर्ष हो गये, संसारमें तबसे अनेक उलट फेर हो गये, भारतकी विशाल छातीमें अनेक विदेशीय और विजातीय शत्रु कडे पनसे चरण प्रहार कर चुके, अभागी भारतसन्तान तबसे बडे२ कष्ट सहचुकी; परन्तु इस लोकसे गये हुए महात्मा प्रतापसिंह अबतक किसीसे नहीं भूल गये। आदमी पुत्र शोकको तो भूल गये, परन्तु प्रतापसिंहके शोकको किसीने नहीं बिसराया। क्या कोई ऐसा भी समय आवेगा कि जब लोग प्रतापसिंहके कष्टको भूल जायँगे? इस भूल जानेका ध्यान आते हुए भी हमारी छाती फटने लगती है।

राजपूत कुलतिलक वीरश्रेष्ठ प्रतापसिंहके जीवनचरित्रको भलीभांतिसे भारतवासी पढें और अनुशीलन करें। जिन लोगोंमें जातीयभाव मिला हुआ है, जो लोग स्वदेश और स्वजातिकी हीनावस्थाका विचार करके कमसे कम दो बूँद भी आंसुओंको गिराया करते हैं, जो लोग जन्मभूमिके माहात्म्यको जानते हैं; उन सब हीको वीरकेशरी प्रतापसिंहके पवित्र जीवनचरित्रकी पठन पाठन करना उचित है। हमको सन्देह है कि प्रतापके सामने महावीर जगत्के किसी देशमें किसी समय पर कभी उत्पन्न हुआ हो। उनकी वीरता, महानता और स्वार्थत्यागका विचार करनेपर आज भी दीन हीन भारतवासियोंका हृदय एक प्रचंड शक्तिसे बलवान हो जाता है। जो अकबर उस समयमें समस्त भारतवर्षका शहन्शाह माना जाता था, जिसकी प्रचण्ड सेनाके विशालताका विचार करनेपर जरक्षस (Xerexes) की बडी सेना भी साधारण ही जान पडती थी; राजपूत वीरप्रतापने थोडीसी सेना और कितने एक सरदारोंको साथ लेकर बराबर

पचीसवर्षतक उस ही शहन्शाह अकबरके साथ युद्ध किया था । जो मेवाडमें एक थुसि- डाइडस * अथवा जिनोफन × उत्पन्न हुआ होता, यदि मेवाडके इतिहासको कोई रत्ती २ करके प्रगट करता तो पिलोपनीससके महासमरका वृत्तान्त अथवा" दशहजार " की दुर्दशाका शोचनीय वृत्तान्त अद्भुत होनेहारके परिमाणके आगे, इस वृत्तान्तकी बराबरी नहीं कर सकता । राणा प्रतापसिंहजी अलौकिक वीरता, अचल पराक्रम, उत्साह और उत्तम स्वदेशानुरागादि राजगुणोंसे शोभायमान थे, यही कारण हुआ जो उन्होंने पराक्रमी अकबरकी दुराकांक्षा और धर्मान्धताके विरुद्ध इतने लम्बे समयतक युद्ध किया था । इसी कारणसे शहन्शाह अत्यन्त बलकरनेपर भी प्रतापसिंहके हृदयको नहीं बदल सके । उस पवित्र देवहृदयकी अनुपम गुणराशिके विकाशित होनेका स्थान हलदी- घाटका समर हुआ । उस पुण्यतीर्थ हलदीघाटके विराट् पहाडी देशमें ऐसा कोई स्थान नहीं है, कि जो प्रतापसिंहकी वीरताके गौरवसे नहीं दमक रहा हो । इस संसारमें जितने दिनोंतक वीरताका आदर रहेगा, जितने दिनतक अतीतसाक्षी इतिहास, संसारमें एक ओर बसी भवली आर्यजातिके भूत वृत्तान्तको वर्णन करता रहेगा; उतने दिनतक प्रतापकी वह वीरता,माहात्म्य और गौरव संसारके नेत्रोंके सामने अचलभावसे विराज- मान रहेगा । उतने दिनतक वह हलदीघाट मेवाडकी थर्मोपोली* और उसके अन्तरगत देवीरक्षेत्र मेवाडका माराथन × नामसे पुकारा जाया करेगा ।

---

* थुसिडाइडस ग्रीसका प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता हुआ है । इसका जन्म ग्रीसदेशके एथेन्सनगरके बीच ईसाके जन्मसे ४७१ वर्ष पहिले हुआ था । एक समय यह इतिहासलेखक ग्रीसकी सेनाका सेनापति था । परन्तु शत्रुओंके द्वारा अपनी सेनाके पराजित होनेसे राजदंडकी शंका कर स्वदेशको छोड वीस वर्ष- तक अज्ञातवास किया था । ईसवी सन्से ४०३ वर्ष पहिले यह इतिहास लेखक अपने देशको लौटा, लौटनेके थोडे ही दिन पीछे इसकी मृत्यु हुई । पिलोपोनिसस समरका प्रथम कांड भी इसने बनाया था !

× जिनोफन भी एक ग्रीक इतिहासवेत्ता और सेनानायक था । साक्रेटिसका यह शिष्य था । जब फारसके विख्यात राजा साईरसने अपने भ्रातासे संग्राम किया था, उस समय जो दशहजार ग्रीकसेना साईरसकी सहायता करनेके लिये युद्धमें गई थी उपरोक्त जिनोफन भी उस सेनाके साथ था । ईसवी सन्से ४०१ वर्ष पहिले कुनाक्स स्थानमें जब साईरस अपने भाईके हाथसे मारा गया, तब विजयी राजाने निर्दयितासे ग्रीकवाले सिपाहियोंका संहार करना आरंभ किया । उस संकटके समय जिनोफन विशेष रणदक्षता और कौशल दिखाय बची हुई " दशहजार " सेनाको लेकर अत्यन्त कष्टके साथ संग्रामभूमिसे भाग आया । इसका जन्म एथेन्सनगरमें हुआ था; परन्तु एथेन्सके साथ स्पार्टाका भीषण समर होनेपर इसने अपनी जन्मभूमिके विरुद्ध खड्ग धारण किया । इसने बहुतसे ग्रन्थ बनाये; उनमें " साईरसकी युद्धयात्रा " " साईरसका जीवन चरित्र" और " साक्रेटिसका जीवनवृत्तान्त " यह ग्रंथ विशेष प्रसिद्ध हैं । साईरसकी युद्ध यात्रामें ही प्रसिद्ध " दशहजारकी दुर्दशा " विस्तारके साथ अति मनोहर भाषामें लिखा है ।

* थर्मोपोली ग्रीसदेशका एक छोटा गिरि मार्ग है । इस स्थानमें ग्रीसके महावीर लियोनिडसने सन् ईसवीसे ४८० पहिले कितनी एक सेनाको साथ ले, फारसी बादशाह जारक्ससकी प्रचंड सेनाको रोक लिया था ।

× ग्रीस राज्यके अन्तर्गत अटिका प्रदेशका एक छोटा गांव " माराथन " कहलता है । प्रसिद्ध ग्री- कवीर मिलटियोडसने एथेन्सकी सेनाको ले इस माराथनके मयदानमें फारसके बादशाहकी एक सेनाको सन् ईसवीसे ४९० वर्ष पहिले निर्मूल कर दिया था ।

एकादश अध्याय ११.

अमरसिंहका सिंहासनपर बैठना;-राजा मानसिंहको विष देकर मारनेकी इच्छा करनेमें स्वयं अकबरकी मृत्यु;-पिताके निकट की हुई प्रतिज्ञाके पालन करनेमें अमरसिंहकी आना कानी;-शालुम्ब्रा सरदारका आचरण;-अमरसिंहसे बादशाही सेनाका पराजित होना;-चित्तौरमें सुग्राजी (सागरजी) का राज्याभिषेक;-सागरजीका अमरसिंहको चित्तौर समर्पण करदेना;-नवीन २ जय चन्दावत और शक्तावतोंमें परस्पर झगडा;-शक्तावतलोगोंकी उत्पत्तिका वृत्तान्त;-राणाजीके विरुद्ध बादशाहके पुत्र परवेजका युद्धके लिये तइयार होना;-राणाजीका उसको पराजित करना;-महावतखाँकी पराजय;-सुलतान खुशरूकी मेवाडपर चढाई;-अमरसिंहका निराश;-इङ्गलैण्डसे दूत;-अमरसिंहका अपने पुत्रको राज्यभार देकर वनवास लेना;-अमरसिंहका परलोकवासी होना।

राजपूतकुल गौरव राणा प्रतापसिंहके सत्रह पुत्रोंमें अमरसिंह सबसे बडा होने के कारण सिंहासनपर बैठा! आठवर्षकी अवस्थासे लेकर पिताके परलोकवासी होने तक अमरसिंहने इतना समय पिताके पास ही बिताया था। पिताजीका दुःख कष्ट, विपत्ति, संकट अथवा कठोर परिश्रमके समय पास हीं रहकर कुमार अमरसिंहने उनके महान चरित्र पर चलनेकी चेष्टा की थी। उनका यह परिश्रम सफल भी हुआ था। वीरवर प्रतापकी वीरताके उदाहरणसे उत्साहित और उनके अतिपवित्र महामंत्रसे दीक्षित होकर अमरसिंहने युवा अवस्थाके मध्याह्नकालमें * मेवाडके राज्यका

* संवत् १६५३ (सन् १५९७ ई०) में अमरसिंह राजगद्दीपर बैठे थे।

भार ग्रहण किया था । उस समय इनके भी कई पुत्र हो गये थे. वे पुत्र बालक होने पर भी अत्यन्त बलशाली और तेजस्वी थे; यहांतक कि राज्यकार्यमें भी उनको चतुरता प्राप्त हो गई थी ।

वीरकुल मुकुटमणि प्रतापसिंहके परलोक सिधारनेसे आठवर्ष पीछे उनके भयंकर शत्रु अकबरशाहने भी इस लोकसे बिदा ली । जिस आशालताको हृदयमें जमाकर अकबर बादशाहने धनका अनन्त भंडार खर्च कर डाला, अत्यन्त परिश्रम किया, सहस्रों मनुष्योंका रुधिर गिराया, वह आशा फलवती न हुई । शहन्शाहका असीम यत्न और उत्साह समस्त ही व्यर्थ हो गया । प्रतापसिंहने किसी प्रकार उसकी " इतायत " स्वीकार न की । इस कारण और अधिक आयोजन करना निरर्थक जानकर अकबरने इस कठोर कार्यकी इति श्री कर दी । मेवाडका दग्ध रेतीला श्मशान फिर शान्तिरूपी जलके शीतल कणोंके स्पर्शसे भली भांति शान्त होगया । अकबरके पिछले जीवनमें अमरसिंहने भली भांतिसे शान्तिके सुखको भोग किया । यदि अमरसिंह चाहते तो शान्तिमें विघ्न करके अपने फूलोंके मार्गमें कांटा बो देते, परन्तु उनके परिपक्व ज्ञानमें यह बात उचित नहीं जान पडी । अतएव इसी कारणसे मुगलोंके विरुद्ध खड्ग नहीं धारण किया ।

पचास वर्षतक उत्तम रीतिसे राजकरके बादशाह अकबरने इस संसारसे बिदा ली । इस चलते समयके बीच सुन्दर राजनीतिके अनुसार उसने अपने विशाल राज्यको जिस प्रकार दृढ भीतके ऊपर स्थापित किया था, उसही से वह राज्य बहुत दिनोंतक अचल रहा ! इन सुन्दर राजगुणोंके साथ बराबरी करने पर देखा जाता है कि उस समयके यूरोपीय शहन्शाहभी अकबरके बराबर ही थे । यूरूपके इन राजाओंमें फ्रांसका चौथा हेनरी, स्पेनका पांचवां चार्लस और इङ्गलैण्डेश्वरी भुवनविदित महाराणी एलेजबेथको अकबरकी बराबर समझा गया है । रानी एलेजबेथके साथ अकबरका पत्रव्यवहार भी चलता था । रानी एलेजबेथने दिल्लीश्वरके पास एक दूत * भेजकर बन्धुभाव करना चाहा था । भाग्यकी प्रसन्नतासे अकबरने भी हेनरी अथवा एलेजबेथके मंत्रियोंके समान मंत्रियोंको पाया था । फ्रांसका राजमंत्री प्रसिद्ध सलीं जिस प्रसिद्ध धर्मनिष्ठा, विपुल रणपाण्डित्य और जिस नीतिज्ञानमें पारदर्शी था मुगलमंत्री बहरामखां को भी वैसेही रणचातुरी, वही धर्मनिष्ठा और धर्मज्ञान प्राप्त हुआ था यद्यपि सलीं इस ओर बहुदर्शितामें अब्बुलफजलकी बराबर हो तथापि धर्मपरायणता अथवा उदारतामें मुसलमान राजनीतिज्ञोंके साथ वह एक आसनपर बैठनेके योग्य नहीं हो सकता । अब्बुलफजल और बहरामकी उस असीम बहुदर्शिताके साथ मुगलसम्राट्का बल मिलानेसे एक प्रचण्ड शक्ति उत्पन्न हो गई थी । शोककी बात है कि इस प्रचण्ड शक्तिको अकबरने मेवाडका नाश करनेमें लगाया था । यद्यपि अकबरने मेवाडको धूरिमें मिला दिया था; तथापि

* सरटैम्समनरो दूत बनकर आया था । रानी एलेजबेथने इसको हिन्दोस्थानमें भेजनेकी तइयारियें की थीं, परन्तु महारानीके परलोकवासी होनेपर यह उसके पीछे सरजेम्सके राजत्वकालमें यहाँ आया ।

अपक्षपाती उदारचरित भट्टलोगोंने उसके गुणोंका बखान किया है उन राजगुणोंसे मोहित होकर उन्होंने अपने राजाके साथ ही शहन्शाह अकबरको एक आसनपर बिठलाया है। अकबरके राजनीतिज्ञ, समरविशारद, महानुभाव और दूरदर्शी होनेको कोई भी अस्वीकार नहीं करेगा; परन्तु उसका हृदय कितना उदार, सरल और ऊंचा था इसके विषयमें बहुतसे आदमी संदेह किया करते हैं। विशेष करके बूँदीके भट्टकविगणोंने जो बादशाह अकबरके पिछले कार्यका वर्णन किया है उसको पढनेसे हृदयपर चोट सी लग जाती है, संसारको कपटता, स्वार्थपरता और विश्वासघातकताका आगार कहनेको जी चाहता है। जो अकबर अपने विपुलबल और सामर्थ्यके प्रभावसे उस समय समस्त राजाओंका शिरमौर समझा जाता था, जिसकी साम्यवादिता, सूक्ष्मदर्शिता और न्यायपरायणताके बहुतसे वर्णन पाये जाते हैं, जो "जगद्गुरु"के नामसे पुकारा गया है; उस ही अकबरने-हाय! लिखते हुए लेखिनी कम्पायमान होती है-जिसको "दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा" की उपाधि मिली थी, मानसिंहको विष देकर मार डालनेका विचार किया इस विचारका फल उलटा हुआ, इस करतूतसे स्वयं बादशाहके जीवनपर विपत्ति पड गई। बूँदीके भट्टकविगणोंने इस वर्णनको खोलकर अपने काव्योंमें किया है। उन्होंने प्रतिदिनकी बातोंको अपने ग्रंथमें क्रमानुसार लिखा है, टाडसाहब बूँदीवाले कवियोंके लिखनेका अत्यन्त ही विश्वास करते हैं। मुसलमान तवारीख लेखकलोगोंकी एकदेश-दर्शिता, और पक्षपातके कलंकित मस्तकपर लात मारकर उन्होंने प्रयोजनके अनुसार अपनी जातिके पतित राजाओंका कलंक भी प्रकाश करडाला है। उनके काव्यग्रन्थोंमें लिखा है कि अम्बेरके राजा मानसिंहका प्रताप दिन दिन ऐसा बढने लगा कि अकबरके हृदयमें डाह उत्पन्न हुआ। डाहके विषैले डंकसे जर्जरीभूत होकर वह प्रतिमुहूर्त यही समझता था कि मानो मानसिंह मुझको राज्यसे उतारनेकी चेष्टा करता है। मानो मानसिंहके तीव्र दृष्टिपातसे दिल्लीका सिंहासन थरथर कांप रहा है। क्रमानुसार डाहकी चिन्ता, और चिन्तासे शंका हुई शंकासे मानसिंहको वध करनेकी लालसा हुई। अकबरने गुप्तभावसे मानसिंहके संहार करनेका विचार किया। क्रूर मनुष्योंके लिये ऐसा कोई कार्य नहीं है कि जिसको वे न कर सकते हों। अकबर बादशाह था, महाराज मानसिंह फिरभी उसके सेवक ही थे, कालकी गतिसे आज स्वामीने अनुगत सेवकके संहार करनेका विचार कर डाला। अकबरने एक प्रकारकी "माजून" बनवाई, जिसके आधेभागमें मानसिंहको देनेके लिये विष मिलवाया! परन्तु मारनेवालेसे जिलाने वाला बडा होता है। दैवकी विचित्रगतिसे बादशाहने भ्रम पाकर विषैली "माजून" ही स्वयं खाई, पापका प्रायश्चित्त आरंभ हुआ। निरपराधी, श्रद्धायुक्त तथा उपकारी सेवकके प्राण लेनेके विचारमें स्वयं शहन्शाहके प्राण गये। हमने माना कि राजा मानसिंहने यथार्थ उत्तराधिकारी सलामके बदले अपने भानजे खुशरोको दिल्लीके सिंहासनपर स्थापन करनेकी चेष्टा की थी परन्तु ऐसा होनेपर भी अकबरके समान राजाको इस प्रकारके कामरूपका व्यवहार नहीं करना चाहिये था। क्योंकि वह जो प्रतापमें भी

मानसिंहसे प्रतिकूलाचरण करसकते थे, यदि बादशाहकी इच्छा होती तो वह सम्मुख संग्राममें अपने मनोरथको पूरा करसकते थे, फिर किस कारणसे बादशाहने अपने विमल यशमें कलंक लगानेके लिये ऐसा कार्य किया ? कौन कह सकता है कि उसके हृदयमें क्या बात थीं ? *

जो हो, अब इस समय फिर मेवाडके इतिहासपर विचार किया जाता है । राज्य-गद्दीपर बैठते ही अमरसिंहने उन नियमोंका संस्कार किया कि जिनपर उनके राज्यका मंगल निर्भर था । सब खेतोंको दुबारा नापकर उन पर फिर नया महसूल लगाया गया, अपने सामन्त और सरदारोंको नई २ जागीरें दीं । इसके अतिरिक्त और भी कई नियमोंका प्रचार किया । उनमें पगड़ी बांधनेकी प्रथा ही विशेष प्रसिद्ध है * अमरसिंहके चलाये हुए उन नवीन नियम और नवीन रीति भांतिका वृत्तान्त आजतक मेवाड राज्यके स्तंभोंकी शिल्पलिपिमें खुदा हुआ पाया जाता है ।

दूरदर्शी अमरात्मा महाराणा प्रतापसिंहने जो शंका की थी वह शीघ्र ही फलवती हुई । विश्राम देनेवाली शान्ति वास्तवमें अमरसिंहके लिये अनर्थकारिणी हो गई । पिताकी पवित्र आज्ञाका निरादर करके अमरसिंह अत्यन्त ही आलस्यके वश हो

* यह बात तो सत्य है कि असार मनुष्यका हृदय कभी न कभी पापप्रवृत्तिसे चलायमान हो ही जाता है । कपटी मनुष्य ऊपरकी सरलताके साथ लोगोंका मन प्रसन्न करके अपने दुरभीष्टको साधन कर-लेते हैं, परन्तु ऐसा कभी नहीं होसकता कि सबही उस पापप्रवृत्तिके द्वारा चलायमान होकर अपने आ-दमीपनको भूल जायँ । यदि ऐसा होता तो मनुष्य और पशुमें कुछ भी भेद न रहता । अकवर भी तो आदमी ही था, उसके हृदयमें पापका आजाना भी कोई नई और अद्भुत बात नहीं हैं, परन्तु उसने अपने महान पदगौरव, और आदमीपनको भूलकर जो यह पिशाचके समान कार्य किया, इस बातपर विश्वास करनेको भी इच्छा नहीं होती । यह बात ठीक है कि अकबरकी अन्तिम वसयमें मुगल बादशा-हके उत्तराधिकारित्वके सम्बन्धमें मानसिंह और बादशाहके बीच कुछ वैमनस्य होगया था, परन्तु मान-सिंहके बाहुबलसे ही अकबरको आधा राज्य मिला था, मानसिंह उसके दरबारका रतन और राज्यका अलंकार समझा जाता था, जिसको अकबर अपना दाहिना हाथ समझकर गर्व करता था, कृतज्ञताके पवित्र मस्तकपर चरण प्रहार करके उस ही मानसिंहके मारडालनेका विचार करना, जहर देकर मारना, इस बातका विचार करनेसे भी मन व्याकुल होता है । इस कूटसमस्याकी मीमांसा करना कोई साधारण बात नहीं है; यदि अटकल पंचू इस बातका निर्णय करलिया जाय तो इतिहासके श्वेत यशमें कलंक लगनेका डर है । परन्तु टाडसाहबने बूंदीके भट्टग्रंथोंको सम्पूर्णतः विश्वास योग्य माना है; फिर भला किस भांतिसे उन ग्रंथोंका विश्वास न किया जाय ? तो अकबरने यथार्थ ही इस पिशाचोचित कार्यको किया था ! हाय ! मनुष्यकी करतूतका पार पाना जरा कठिन कार्य है । जिसके साथ अकबरका वैम-नस्य होता उस अमीर या दरबारीको अकबर इसी प्रकारसे मारता था दो प्रकारकी गोली उसके पास रहती थीं विषैली और विष रहित इसका भेद वही जानता था दरबारीको विषैली गोली दे आप उसके सामने निर्विषी खाता था ऐसे कई एकको मारा पर अन्तमें स्वयं भी उस गतिको प्राप्त हुआ ।

* वह पगडी " अमरशाही पगडी " के नामसे प्रसिद्ध है । राणाजी तथा मेवाडके बहुतसे सरदार अबतक उसको बांधते हैं ।

गए। उन्होंने पेशोला सरोवरके किनारे बनी हुई कुटियोंको छोडकर वहांपर एक "अमर महल" बनवाया। इस महलके भीतर खुशामदी सखाओंके साथ रहकर निश्चिन्त हो दिन व्यतीत किया करते थे। परन्तु इस प्रकारका सुख बहुत दिनतक नहीं भोगसके। अल्पकालके बीचमें ही बदशाह जहाँगीरकी रणभेरियोंने मेवाडकी सीमापर शब्द करके आलसी राणाको विलासकी तन्द्रासे जगा डाला। दिल्लीके तख्तपर बैठे हुए चारवर्ष भी नहीं हुए थे कि इस बीचमें ही जहाँगीरने समस्त घरेलू झगडोंको दूरकरके मेवाडनाथके ऊपर चढाई की। उस विशाल भारत साम्राज्यके एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्ततक जब कि समस्त राजाओंने ही दिल्लीश्वरकी अधीनताको मान लिया, फिर क्या एक मेवाड ही उस शहन्शाहके सामने गर्वसे अपना मस्तक उठाए रहेगा? जब कि सबने ही उनको भारतका सार्वभौम सम्राट् मान कर स्वीकार किया है, तब क्या एक शिशोदियावंश ही उसका प्रतिद्वंद्वी रहेगा? क्या राणाजीकी सेना बादशाहकी फौजसे सामना कर सकती है? फिर उनको इतना दर्प इतना गर्व और इतना अहंकार क्या है? वह दर्प वह गर्व वह अहंकार अवश्य ही चूर्ण करना चाहिये। इस प्रकार मुसाहिबलोगोंने जहांगीरको अमरसिंहके विरुद्ध उकसाया। इसीलिये जहांगीर क्रोध करके मेवाडकी ओर धाया।

राणा अमरसिंह बड़े संकटमें पडे। एक ओर तो तुच्छ विलासवासना उनको कठोर और उचित कार्यके करनेसे रोकने लगी। दूसरी ओर यशकी इच्छा भी उठी और उसने भी महाराजके हृदयको किंचित् साहस दिया। दुःखकी बात है कि यह साहस कुछ अधिक विलम्बतक न रहा न जाने कहांसे कुभावनाओंने उदय होकर उनके हृदयको आलस्यसे परिपूर्ण कर दिया। वह इस बातका विचार नहीं करसके कि अब कौन सा उपाय किया जाय? उस समय कितने एक हीन चाटुकार उन्हें अनेक प्रकारके लालच दिखाकर समझाने लगे। "महाराज संग्राम करके क्या होगा? क्यों वृथा विपत्तिको बुलाते हो? जब कि इस भारतवर्षके हिन्दू मुसलमान समस्त राजा और नवाब ही मुगलोंके प्रचंड बाहुबलके आगे पराजित हो गए हैं, तब क्या आप उसके सामने खडे रह सकेंगे? आपके पास न धन बल है, न सेना है। उसके साथ सन्धि होनेसे यदि सब भांतिसे सुभीता हो सके; तो फिर उसमें कौन हानि है? सन्धिके होजानेसे आपका राज्य धन और गौरव सदाके लिये अचल हो जायगा, और यह भी संभव है कि बादशाह संतुष्ट होकर आपके राज्यको और भी बढा दें।" इन कायर और भीरुलोगोंकी बातोंको सुनकर कुछ देरतक राणा अमरसिंहका मन दुःखित रहा परन्तु उनका हृदय उस समय इतना आलसी हो गया था कि इच्छा होनेपर भी वह उन बातोंका प्रतिवाद नहीं कर सके। राणाको उस विमूढ और उत्साह हीन अवस्थामें समय बिताता हुआ देखकर मेवाडके सरदारलोग अत्यन्त ही दुःखित हुए। वे सब इकट्ठे होकर "अमर महलमें" पहुँचे तथा राणाजीको विपत्तिके आगमनसे सूचित किया। सामन्त शिरोमणि चंदावत

वीरने अमरसिंहके सन्मुख आय भीम गंभीर स्वरसे कहा कि "हे महाराज ! क्या आप इस ही प्रकारसे अपनी प्रतिज्ञाकी रक्षा करेंगे तथा पिताके सत्यको पालन करनेके क्या यही नियम हैं ? वीरवन्दनीय प्रतापसिंहके बडेपुत्र होकर इस प्रकारसे ही अपने पवित्र कुल गौरवको अचल रख सकेंगे ? विचारकर देखिये कि आपने कौनसे कुलमें जन्म लिया है ? किसका रुधिर आपकी नसोंमें प्रवाहित होता है ? देशका वैरी प्रचंडशत्रु मुगल सर्वसंहारक रूपसे आपके सामने खडा हुआ है और आप तोषामोदी मित्रोंसे घिरे रहकर डरपोक और कायरके समान अपने समयको बिता रहे हैं। आपकी आंखोंके सामने मुसलमानलोग मेवाडका सत्यानाश करदेंगे, प्रजाको सतावेंगे, राजपूतबालाओंको अपने कलंकित हाथसे असती करेंगे, आप किस भांतिसे इन अत्याचारोंको देखकर बैठे रहेंगे ? आपके राज्यको आपके ऐश्वर्यको और आपके ऊँचे कुलगौरवको शतबार धिक्कार है ! यदि पितृपुरुषोंके पवित्र यशको अचल रखनेकी सामर्थ्य नहीं थी तो क्यों इस पवित्र शिशोदीयकुलमें जन्म लिया ?

शालुम्ब्रा सरदारकी इस तेजस्विनी व्याख्याको सुनकर समस्त सरदारोंके हृदय उत्साहसे भर गये, परंतु दुःखके साथ कहना पडता है कि अमरसिंहकी जडता इस आवेशमयी वाणीको सुनकर भी ज्योंकी त्यों रही । दारुण क्रोध और अभिमानसे चंदावतवीरके अंगोंमें आग लग गई। सभाग्रहके सामने ही योरूपका बना हुआ एक अत्युत्तम बडा दर्पण रक्खा था । क्रोधित शालुम्ब्रा सरदारने अपने पास और कुछ न देख कर, गलीचेके कोने पर रक्खी हुई एक पीतलकी छडको उस दर्पणकी ओर फेंका । तत्काल उस दर्पणके टुकडे टुकडे हो गये । तदुपरान्त उस चंदावतवीरने दाहिना हाथ पकडकर अकस्मात् राणा अमरसिंहको सिंहासनसे नीचे उतारकर गंभीरवाणीसे कहा कि "सरदारगण ! शीघ्र घोडे पर सवार कराकर प्रतापसिंहके पुत्रको कलंकसे बचाओ"। शालुम्ब्राके पतिके ऐसे आचरणसे राणाजी मनमें अत्यंत ही दुःखित हुए, और उसको "राजद्रोही" तथा "राजापमानकारी" कहकर वारंबार तिरस्कार किया, परन्तु ज्ञानी चन्दावत सरदार अमरसिंहके इस अनुचित वर्तावसे तिलभर भी दुःखित न हुआ । उसको भली भांतिसे विश्वास था कि कर्त्तव्यसाधनके लिये मुझको ऐसा कार्य करना पडा है, फिर इसमें दोष क्या है । बात भी ठीक यही थी कि शालुम्ब्रा पतिने अपना कर्त्तव्य ही प्रतिपालन किया था । यदि वह सरदार इस प्रकारका उपाय न करता तो अमरसिंहकी अत्यन्त ही दुर्दशा होती । दूसरे सरदारगण भी चन्दावत वीरकी यह कर्त्तव्यपरायणता देखकर अतीव प्रसन्न हुए थे। सबने एक मत ही राणाजीसे घोडेपर बैठनेको कहा, राणाजीका हृदय उस समयमें भी क्रोधसे जल रहा था। क्रोधके मारे आखोंसे आँसू निकल रहे थे । कुछ दूर चलकर किंचित् सावधानता आई । मेवाडके तेजस्वी सरदार और सामन्तगण राणाजीके मानसिक विकारकी अपेक्षा न करके सेना सहित पर्वतसे उतरने लगे । इस समय मेवाडके बीच जहांपर श्रीजगन्नाथजीका मंदिर बना हुआ है, उसी स्थानपर आकर भली भांतिसे राणाजीका

मनोविकार दूर हो गया। क्रमसे उनके ज्ञान-नेत्र खुल गये वह भली भांतिसे जान गये कि इसमें तो जो कुछ अपराध है सो हमारा ही है। इस प्रकार ज्ञानका विकाश होने पर राणाजी अपनी करनीपर स्वयं ही शतशः धिक्कार देने लगे। शीघ्र ही मेवाडकी वर्तमान अवस्थाका प्रतिबिम्ब राणाजीके मनरूपी दर्पणपर पड गया। शिरके ऊपर प्रचण्ड शत्रु करालवेशसे खडा हुआ है। शिशोदीयकुलके जिस गौरवकी रक्षा करनेके लिये राणाप्रतापने बहुत समयतक अत्यन्त कष्ट सहा है, आज वही गौरव जाना चाहता है क्या ऐसे समयमें अमरसिंहको निश्चिन्त रहना उचित है? राणाजी समझ गये कि कर्तव्यसाधनसे विमुख होकर हमने अन्यायका कार्य किया। परन्तु जो हो गया सो हो गया, उसमें किसीका क्या चारा? इस समय उत्साह और परिश्रम करनेके सिवाय इस उपस्थित विपत्तिसे उद्धार नहीं मिल सकता। राणाजी समझ गये कि यद्यपि हमारी सेना थोडी है, परन्तु उसके हृदयमें उत्साह अत्यन्त ही भरा हुआ है, इस हृदयको यदि हमारा बढावा मिले, तो यही सेना समुद्रके समान उफन जायगी। यह विचारकर राणाजी निश्चिन्त न रहे। अपने अपराधको क्षमा करनेके लिये समस्त सरदारोंसे प्रार्थना की और अपनी श्मश्रुओंपर हाथ फेरकर शालुम्ब्रापतिसे कहा, "शालुम्ब्रा सरदार! आप वास्तवमें ही शिशोदीयकुलके हितकारी हैं; मुझको मोहनिद्रासे जगाकर आपने वास्तवमें वीरपनका काम किया। मैं इस आपके उपकारमें सदा ही बँधा रहूंगा। प्रतापसिंह तो स्वर्गवासी हो चुके हैं; परन्तु प्रतापसिंहका पुत्र अब तक भी जीवित है, चलिये समरभूमिमें शत्रुके सामने चलिये, फिर देखना कि अमरसिंह प्रतापसिंहका योग्य पुत्र है या नहीं?" राणाजीका उत्साह देखकर समस्त सरदारोंके हृदयमें दूना उत्साह भर गया। सब ही हृदयोत्तेजक सिंह ही आय करके रणवाद्यके गगनविदारी नादसे मेवाडके पर्वतोंको कम्पायमान करते हुए शत्रुसेनाके सामने बढे। शत्रुकुल उस समय देवीर नामक स्थानमें पडा था। रणोन्मत्त राजपूतोंने एक साथ उस स्थानमें पहुंचकर प्रचंडतासे शत्रुओंपर आक्रमण किया। खानखानाका भ्राता उस समय मुगलसेनाका सेनापति बनकर आया था। उस देवेरा पर्वतप्रदेशके गिरिमार्गमें हिन्दूमुसलमानोंका घोर युद्ध आरम्भ हुआ। राजपूतोंको आगे बढता हुआ देखकर मुगलसेनापतिने भी अपनी सेनाको आगे बढाया। राजपूतगण राणा अमरसिंहके बढवा देनेसे उन्मादित होकर स्वदेशकी गौरवकी रक्षा करनेके लिये विस्मयकर वीरता प्रगट करते हुए युद्ध करने लगे। बहुत देरतक संग्राम होता रहा। दोनों ओरकी बहुतसी सेना मारी गई। परन्तु शीघ्रतासे यह मीमांसा न हो सकी कि कौन सा पक्ष इस समय जीतेगा? मध्याह्न काल बीत गया। सूर्य भगवान मध्य गगनको छोड कर धीरे २ पश्चिमकी ओरको बढते जाते हैं, परन्तु उनकी तीक्ष्णता किंचित् भी नहीं घटी है। उनका प्रचण्ड तेज उस समय भी प्रदीप्त अनलकणकी वर्षा कर रहा था। मुगलोंकी तोपें विकट गर्जन करती हुई अपने सघन धूमपटलसे प्रकाशमान और चमकीली किरणोंको ढक रही थीं। मानो प्रलयके बादलोंसे त्रिलोकी अंधकारमय हो

रही है । एक मुहूर्त भरतक तो कुछ भी दिखाई न दिया । रणवीर राजपूतगण उस गंभीर धूमराशिको भेद करके हृदयस्तंभनकारी सिंहनादके साथ मुगलोंकी ओरको बढने लगे । उनकी उस प्रचण्ड गतिको न रोक सकनेके कारण मुगलसेना पीठ दिखा कर रणसे भागने लगी । उनके अधिक सिपाही, विजयी राजपूतोंके हाथसे मारे गये । इस प्रकार संपूर्ण दिन घोर युद्ध करनेके पीछे राणा अमरसिंह विशाल यवनसेनाके ऊपर जय प्राप्त करके गौरव सहित अपने नगरको चले गए ।

संवत् १६६४ (सन् १६०८ ई०) को प्रसिद्ध देवीक्षेत्रमें यह महासंग्राम हुआ था । जिन रणविशारद राजपूत वीर गणोंके अद्भुत विक्रमसे मुसलमान हारे थे उनमें राणाजीके चचा वीरवर कर्ण अत्यन्त पराक्रमी थे । उनके ही बाहुबल और अपूर्व सुन्दर रणकौशलसे अमरसिंहने जय पाई थी । वीरवरकर्णसे ही विशाल कर्णावत गोत्रकी उत्पत्ति हुई है । यद्यपि राजपूतोंके बाहुबलसे अगणित मुगलसेना पराजित हुई, परन्तु उस पराजयसे बादशाहका उत्साह किंचित् भी कम नहीं हुआ, वरन उनको राजपूतोंपर पहिलेसे दुगुना क्रोध हो आया । एक वर्ष पीछे ही उसने संवत् १६६५के वसंतकालमें युद्धकी भयङ्कर तैयारियें करके बडी भारी सेनाके साथ अब्दुल्ला नामक सेनापतिको मेवाडके जीतनेकी आज्ञा दी, मुगलसेनापति अब्दुल्ला अपनी विशाल सेनाको देखकर अनन्त आशा करता हुआ राणा अमरसिंहसे संग्राम करनेके लिये चला । राणाजी भी उसके आनेका समाचार पाय सेना सहित आगे बढे । रणपुर नामक गिरिमार्गमें दोनो दलोंके बीच परस्पर घोर युद्ध आरंभ हुआ । रणविशारद तेजस्वी राजपूतगण स्वदेशप्रेमके पवित्र मन्त्रसे दीक्षित हो अद्भुत विक्रमके साथ मुगलसेनाके मोरचोंको तोडनेकी चेष्टा करने लगे; उनकी वह चेष्टा फलवती हुई । मुगललोगोंके विराट व्यूहको छिन्न भिन्न करके समस्त सेनाको दलित, त्रासित और नाश करके वे राजपूतगण क्रमानुसार आगे बढने लगे । प्रायः समस्त ही मुगलसेना मारी गई । बहुत थोडी सेना भागकर अपने प्राण बचा सकी। फाल्गुनशुक्ल ७मी के दिन यह भयंकर युद्ध हुआ था* उस दिन शिशोदीयकुलकी, बुझती हुई तेजाग्नि एक बार फिर प्रचण्डतासे धधक उठी; मेवाडकी गौरवगरिमाने एक बार प्रकाशमान ज्योतिसे चमक कर अति अपूर्व शोभा धारण की । गिह्लौटकुलकी वीरताके प्रकाशित होनेका वह एक प्रसिद्ध दिन हुआ। गिह्लौटकुलसिंह वीरवर बाप्पारावलकी लाल विजयपताका एक बार फिर गोद्वारराज्यकी चारों सीमाओंपर फहरा गई थी। जिन राजपूत वीरोंने स्वदेशप्रेमके पवित्र मन्त्रसे दीक्षित होकर उस दिन—उस पुण्यतीर्थ रणपुरक्षेत्रमें अपने प्राणोंको न्यौछावर किया था, उनकी नामावली स्वदेश—प्रेमियोंकी सूचीमें आदर सहित नाम पानेके योग्य है । ×

---

* तवारीख फरिश्तामें दूसरा समय लिखा है; यह तवारीख कहती है कि;—सुलतान खुर्रमके युद्धमें जानेसे कुछ दिन पहिले ही यह महासंग्राम हुआ था । टाडसाहब इस मतको नहीं मानते ।

× उन वीरोंके नाम यहांपर लिखे जाते हैं;—यथा—देवगढके ठाकुर दूधो संगावत, नारायणदास, सूरजमल, यशकर्ण, यह सब लोग शिशोदियावंशके मुख्य और प्रथम श्रेणीके सरदार थे । शक्तावत सरदार—

देवी और रणपुर यह दोनों स्थान मेवाडके अति पवित्र तीर्थ माने जाते हैं इन दोनों संग्रामोंमें बराबर पराजीत होनेसे बादशाहको अत्यन्त खटका हुआ। वह नहीं समझ सके कि थोडेसे राजपूत किस प्रकारसे हमारी अगणित सेनाको पराजित कर देते हैं। परन्तु बादशाहका उत्साह वैसा ही रहा। जिस समय वह उस पराजयके वृत्तान्तको याद करते थे, उसी समय उनको दूना क्रोध आता और झुंझलाहटके मारे चैन नहीं पडता था। इस बार एक प्रचण्ड सेनाको तैयार करनेका विचार किया। उस प्रचण्ड सेनाको मेवाडके विरुद्ध भेजनेसे पहिले जहांगीरने एक नई चालाकी खेलकर राणाजी॰ के बलको हीन करनेका विचार किया। बादशाहको हिन्दूलोगोंके प्राचीन संस्कारोंकी भलीभांतिसे जानकारी थी, आगेका लेख पढनेसे भली भांतिसे इस बातका प्रमाण मिल जायगा। परन्तु राजपूतोंके आगे बादशाहकी एक चालाकी न चली। राणा- जीका बल क्षय करनेके लिये बादशाह जहांगीरने चित्तौरनगरमें एक दूसरे राज- पूतका 'राणा' नामसे अभिषेक किया। इस राजपूतका नाम सागरजी था। सागरजीका वृत्तान्त इससे पहिले ही हम वर्णन कर चुके हैं। इस पाखण्ड राज- पूतकुलांगारने ही शिशोदीयकुलको कलंक देकर अकबरका पक्ष अवलम्बन किया था। जहांगीरने अपने हाथसे सागरजीका अभिषेक करके उसको खिलत दिया और तलवार भी दी। तदुपरान्त नवीन राणा मुगलसेनाके एकदलसे रक्षित होकर चित्तौरकी ध्वंशराशिमें राज करनेके लिये आगे बढा। यवनलोगोंके कठोर सतानेसे जो चित्तौरका थोडा सा भाग बाकी रहा, वह भी साधारण नहीं था। सान्ध्यगगनकी शेष रश्मिरेखाके समान उस नष्ट गौरवके क्षीण अवशेषको वर्णन करके सर टामसरो नामक प्रसिद्ध अंगरेज दूतने अपनी यात्राके इतिहासमें जो लेख लिखा है; उसके पाठ करनेसे विस्मित होना पडता है। *

—भानुसिंहका पुत्र पूर्णमल; राठौर हरिदास; सादीका भूपति झाला; कहिरदास कच्छवाहे; वेदलाका चौहान केशवदास; मुकुन्ददास राठौर और जयमलोत (जयमलके वंशज);।

* चित्तौर एक प्राचीन महानगरी है जो कि एक कठिन पर्वतके शिखरपर बसी हुई है। चारोंओर दीवारें हैं जिनकी लंबाई दश मील है। आजतक भी इसमें सैकडों टूटे फूटे देवमंदिर और मनोहर महल दुमहले दिखाई देते हैं। यद्यपि आज यह टूटे फूटे पडे हैं, परन्तु उनकी ध्वंसराशिमें भी प्राचीन गौरवका निदर्शन पाया जाता है। पत्थरके अगणित खंभे इन खँडहरोंमें खडे हुए हैं। विचार पूर्वक अंगरेज लोग जहांतक देख सकते हैं, उससे निश्चय ज्ञात होता है कि चित्तौरमें पत्थरके कमसे कम एक लाख स्थान हैं। नगरके ऊपर भागमें आरोहण करनेके लिये केवल सीढियां हैं जो एक ओरको बनी हुई हैं। यदि उन सीढियोंपर जाना हो तो चार दरवाजोंसे होकर पहुंचना होता है। चित्तौरके वर्त- मान रहनेवालोंमें "जूम" और 'वांहिम, तथा वनैले पशु और पक्षिगण ही प्रधान हैं। उन्नतिके समय जो सुन्दरता चित्तौरकी थी और जो गौरव था, आज भी खडहरोंमें उसकी परछाँई दिखाई देती है। "एक भारतवर्षीय राणाके पाससे यह विजित हुआ था। वह विजित हिन्दूराजा और उसके वंशवाले उस कालसे इस नगरको छोड पहाडके ऊंचे शिखरपर रहनेको चले गये। बादशाह अकबरने (कि—

राजपूत कुलांगार सागरजीने अपने पितृपुरुषोंके नष्ट हुए गौरवकी भस्मपर क्षणभंगुर सिंहासनको स्थापन किया । श्मशानके समान चित्तौर एक प्रकारकी अनदेखी सुन्दरतासे सुशोभित हुआ । परन्तु बादशाहने जिस आशासे सागरजीको चित्तौरकी गद्दी दी थी, वह आशा उनकी सफल न हुई । उसका कारण यह हुआ कि मेवाडके किसी निवासीने भी राणा अमरसिंहके पक्षको नहीं छोड़ा । कोई कौतूहलके वश होकर भी तो सागरजीके दर्शन करने न आया । अत्यन्त कष्ट और मानसिक पीडाको उठाते २ सागरजीने सात वर्ष चित्तौरमें राज्य किया । अपनी दुरवस्थाका विचार करके वह स्वयं ही खिन्न हुआ करता था । जिस चित्तौरपुरीको मेरे पूर्वपुरुषोंने अपने बाहुबलसे लिया था, आज एक यवनके अनुग्रहसे उसपर अभिषेकित हुआ हूं । और अभिषेकित होनेसे ही कौनसा फल मिला ? पग २ पर जातिवालोंकी घृणा और विद्वेष रूप विष पीकरके मुझको जीना पडता है । न मुझमें स्वतंत्रता है, न सामर्थ्य है, न उत्साह है । मुगल-बादशाहके प्रतापसे यह सिंहासन प्राप्त हुआ है, फिर धरोहरकी रीतिसे इसकी रक्षा करनी होगी । फिर इस सिंहासनके पानेसे लाभ कौन सा हुआ ? इस भांति अनेक प्रकारकी चिन्तासे निरन्तर पीडित होनेके कारण सागरजीको एक पलभरके लिये भी सुख नहीं प्राप्त होता था । वह स्थिर होकर एक क्षणके लिये भी कहीं नहीं ठहर सकता था । चित्तौरकी जिस वस्तुको वह देखता, उससे ही उसके हृदयमें अनेक भांतिकी शंका उदय हुआ करती थीं । इन चिन्ताओंके विषैले डंकोंसे उसको अत्यन्त पीडा होती थी । वह अपने कायरपन और राजसन्मानको बारम्बार धिक्कार दिया करता था । गृहके भीतर शान्ति न पानेके कारण वह कभी २ धवरहरेपर चढ जाता, परन्तु अभागेको कहीं भी शांति नहीं मिलती थी । छतके ऊपर जानेसे दूना कष्ट हुआ करता था । धवरहरेके ऊंचे शिखरपर चढकर जब चित्तौरके गौरवस्तम्भोंको वह देखता, तब उसको चेतना नहीं रहती थी । सारे संसारमें सूनसान और अंधकार दिखाई दिया करता था । "मेरे पूर्वपुरुषोंने हिन्दूविद्वेषी राजाओंके ऊपर जय प्राप्त करके इन गौरव स्तंभोंको बनवाया था, उन्होंने कितनी ही बार इन स्तंभोंके बचानेमें अपने हृदयके रुधिरका दान किया है, परन्तु आज मैं ही इनको कलंकित करके अपने पितृपुरुषोंके पवित्र यशको कलंकित करनेका उद्योग कर रहा हूं । क्या यह कम पछतावेकी बात है । इस परितापसे अभागे सागरजीका हृदय दिनरात जलता था । वह जिस ओरको देखता था, उस ही ओर उसको बड़े बूढोंकी भ्रकुटि दिखाई देती थी; जहांपर जाता, मानो वहींपर अगणित मस्तकोंको पददलित करके जाता था । इस प्रकार अत्यन्त कष्टके पडनेसे यह अभागा उन्मत्त सा होगया । भट्टग्रन्थोंमें लिखा है कि एक समय

—जिसकी सलतनतके वक्तमें यहांपर आया था, उसके ही पिताने) उस हिन्दू राजासे चित्तौरको लिया था । बहुत दिनोंतक घिरे रहने तथा आहार न मिलनेके कारण जब नगरनिवासी मृतकतुल्य हो गये, उस ही समय अकबर इसको ले सका था । यदि ऐसा न होता तो वह किसी प्रकारसे भी चित्तौरके जीतनेको समर्थ नहीं होता ।"

सागरजीका चित्त जब इस प्रकारसे उलझा रहा था, तब गंभीर निशीथकालके बीच भीमाकार भैरवनाथने उसके सामने प्रगट होकर कठोर वाणीसे कहा " रे दुराचारी राजपूताधम! इस पापराज्यको अभी छोड,नहीं तो किसी प्रकार तेरा मंगल नहीं होगा।" जो हो और चाहे जिस कारणसे हो शोकाकुल सागरजी बहुत दिनतक चित्तौरमें न रह सका। उसने अपने भतीजे अमरसिंहको बुलाकर चित्तौरका समस्त राज्यभार दे दिया, और मनुष्यसमागमरहित कन्धार * गिरिशृंगमें जाकर निवास करने लगा। परंतु वहां भी शांतिने उसका साथ न दिया। कुछ काल पीछेसे फिर बादशाहकी आज्ञासे राजसभामें आया वहांपर जहांगीरने उसका अत्यन्त तिरस्कार किया। वह कठोर तिरस्कार उसके हृदयमें बाणोंके समान लगा। भयंकर कष्टसे धीरज जाता रहा,इस कारण सब सभाके सामने अपने हृदयमें छूरी मार कर बादशाहके निकट ही प्राण छोड दिये। स्वदेश-द्रोही विश्वासघातीका प्रायश्चित्त इस ही भांतिसे होना उचित था × माता वसुमतीने एक गुरुभारसे छुटकारा पाया।

अमरसिंहने अपने प्यारे नगर चित्तौरको पाया। परन्तु ऐसी सेना और ऐसा धन तो पास है ही नहीं कि जिससे चित्तौरकी रक्षा हो सके। फिर किस प्रकारसे इसकी रक्षा होगी। राणाजीको चित्तौरके पानेसे जो आनन्द हुआ था वह बहुत दिनतक नहीं रहा, और इस आनंदके साथ ही चित्तौरकी स्वाधीनता सदाके लिये लोप हो गई। यदि राणाजी अधिकतासे चित्तौरका भरोसा न करते, यदि गिह्लोटवीरोंकी सनातन रीतिका अवलंबन करके संकटके समय चित्तौरको छोडकर पर्वतोंके दुर्गम स्थानोंमें चले जाते और उन स्थानोंमें रहकर शत्रुओंको सताते, तो उनका यह स्वाधीनतारूपी रत्न न जाता रहता, और सब कुछ जाता रहता तथापि राणा अमरसिंह अपने पूज्य पिताके समान गौरवसे अपने जीवनको व्यतीत कर सकते। परन्तु ऐसा नहीं हुआ। दूरदर्शी अमरात्मा प्रतापसिंहका भावीदर्शन शीघ्र ही प्रत्यक्ष होगया। गिह्लौटकुलकी पवित्र स्वाधीनता सदाके लिये जाती रही। चित्तौरको प्राप्त करके राणा अमरसिंहजीने कमसे कम मेवाडके अस्सी किले और नगर अपने अधिकारमें कर लिये थे। उन किलोंमें अन्तला अनटीला दुर्गको उन्होंने जिस प्रकारसे लिया था, उसका वृत्तान्त आवश्यकीय समझकर नीचे लिखा जाता है। इस किलेको लेनेके समय मेवाडकी दो श्रेष्ठ सामन्त सम्प्रदाओंमें जो घोर विवाद हुआ, वैसा विवाद और कभी नहीं हुआ।

---

* कन्दरनामक खंडशैलपार्वती और चम्बलके संगमस्थानसे और रनथभौर किलेके मध्यवर्ती विस्तृत मैदानमें है।

× इस ही सागरजीके कुलांगारपुत्रने हिन्दूधर्मको छोड यवनधर्म ग्रहण किया था; उस पुत्रका नाम मुहब्बतखां था। जहांगीरके समयमें मुहब्बतखां ही साहसी सेनापति गिना जाता था।

जहांगीरकी तीसरी चढाईका समाचार पाकर राणा अमरसिंह भी यथासम्भव सेना इकट्ठी करने लगे। परन्तु मुगलोंके आनेमें देर विचारकर सोचने लगे कि इतनेमें कितने एक ग्राम और नगर ही मुगलोंसे छीन लें। युद्धकी सब तैयारी हो चुकी थीं कि इतनेमें ही चन्दावत और शक्तावतोंमें इस बातपर घोर झगड़ा हुआ कि सेनाके सन्मुखभागकी रक्षा कौन करेगा? चन्दावतके ठाकुर ही बड़े होनेके कारणसे अबतक इस सन्मानको प्राप्त करते आये थे, इस समय शक्तावत गण अत्यन्त विक्रमशाली होकर अपने विक्रमकी श्रेष्ठताका हेतु दिखाय "हिरोल" *चलानेकी सामर्थ्यको अधिकार करनेके लिये तैयार हुए। राणाजी बड़ी कठिनाईमें पड़े। किस पक्षको वह सन्मान दिया जाय, किसको न दिया जाय, इसका कुछ भी विचार उनसे न हुआ। यदि एक दलका किया जायगा तो दूसरा दुःखित होकर यहांसे चला जायगा।

और जबतक यह दोनों सम्प्रदाय सहायता नहीं करेगी, तबतक विपत्तिसे भी छुटकारा नहीं मिल सकता। राणाजीने बहुतेरे तर्क वितर्क किये परन्तु कुछ भी समझमें न आया। जब महाराणाजीको मौन देखा तब दोनों सम्प्रदाओंके सामन्तलोग अन्तमें खड्गकी सहायतासे उस कूटप्रश्नकी मीमांसा करनेपर उतारू हुए। इस ही समयमें राणा अमरसिंहने ऊंचे और गंभीर स्वरसे कहा, "अन्तलादुर्गमें जो दल पहिले पहुंच जायगा, उसको ही हिरोलकी रक्षाका भार प्राप्त होगा।" जैसे ही राणाजीने यह वाक्य कहा वैसे ही चन्दावत और शक्तावतगण सब प्रकारके वादविवादको छोडकर अन्तलादुर्गकी ओर चले।

राजधानीसे नौ कोश पूर्वको उक्त अन्तलादुर्ग स्थित है; जो कि ऊँची भूमिके ऊपर बना हुआ है चारों ओर पत्थरके समान परकोटा बना हुआ है। उसके ऊपर भागमें एक एक गोलाकार रक्षकशाला बीच २ में बनी हुई है। परकोटेकी तलीको धोती हुई एक नदी बही जाती है। इस दुर्गके बीचमें दुर्गरक्षकका महल है, इस महलके चारों ओर खाई खुदी हुई हैं × कोटके भीतर प्रवेश करनेके लिये केवल एक ही द्वार है। ऊषाकी ललाईसे पूर्वगगनके रँगनेसे पहिले उपरोक्त दोनों सामन्त अपनी २ सेनाको लेकर अन्तलाकिलेकी ओर चले। इतने दिनतक जो लोग विक्रम प्रकाश करनेमें परस्परके प्रतिद्वंद्वी थे, आज यशकी लालसासे उत्साहित हो उस विक्रमका यथार्थ परिचय देनेके लिये कठोर कार्य करनेको आगे बढे। इस दुर्गपर यवनोंका अधिकार है, जो वीर दुर्गरक्षक यवनका संहार करके अन्तलाका उद्धार कर लेगा, आज वही गौरवके हेममुकुटको मस्तकपर धारण करेगा; आज उसके ही हाथमें मेवाड़की सेनाका सन्मुख रक्षणभार प्राप्त होगा। प्रचण्ड उत्साह और विजयी वृत्तिके द्वारा

---

* सेनाके सन्मुखभागको हिरोल कहते हैं।

× टाड साहब कहते हैं कि इस समय वह दुर्ग विध्वंस होगया है, केवल परकोटा और दो एक महल अबतक हैं।

त्साहित होकर आज मेवाडके दो प्रधान सामन्त मेवाडनाथकी कठोर प्रतिज्ञाको पालन करने चले हैं। भट्टकविगण उदात्तस्वरसे वीणा बांधकर उनका मंगलगीत गाने लगे । राजपूतोंकी स्त्रियें भी उस स्वरमें अपने कोकिलकंठस्वरको मिलाकर वीरोंको दूना उत्साह देने लगीं।

सूर्यदेव उदय होचुके हैं, उनकी किरणें वृक्षोंकी चोटियों और पर्वतोंके शृंगोंपर क्रीडा कर रही हैं, इसी समय शक्तावतगण अन्तलाके सन्मुख द्वारके निकट पहुंचे और उस समय वहांपर आक्रमण किया कि जिस समय शत्रुगणोंको असावधान पाया। परन्तु यवनगण उनके अभिप्रायको समझ अल्पकालमें ही अस्त्र शस्त्र लगाय परकोटेके ऊपर तैयार होगए। उस काल दोनों दलोंमें घोर संग्राम होने लगा। इस ओर चन्दावत-गण मार्ग भूलकर एक बडे भूमिमें जा पडे जो कि जलमय थी। उस दुर्गम भूमिसे बाहिर निकलनेका मार्ग न पाकर वे लोग इधर उधर भटक रहे थे कि इतने हीमें एक गडरिया उनको मिला। गडरिया मार्ग दिखाता हुआ उनको ले चला जिससे वह वीरगण शीघ्र ही अन्तलादुर्गके सामने पहुंचे। चन्दावतगण अपनी बुद्धिमानीसे साथमें लकडीकी कई एक सीढी ले आए थे, उनको किलेकी दीवारपर लगाकर चन्दावत सरदार परकोटेपर चढने लगे। मुसलमानोंने गोला छोडा, वह गोला सरदारके लगा और वह सीढियोंसे खसककर प्राचीरके नीचे गिरा। विधाताने उसके भाग्यमें हिरोलके चलानेका भार नहीं लिखा। क्रमानुसार दोनों दलोंकी प्रचण्ड गति रुक गई। चन्दावत और शक्तावत-गण पलभरतक चुपचाप रहकर फिर भयंकर बलके साथ शत्रुओंको परास्त करनेकी चेष्टा करने लगे। शक्तावत सरदार एक बडे हाथीपर चढा हुआ था। दूसरा उपाय न देखकर उसने दुर्गके बंदद्वारपर उस गजराजको चलाया। भयंकर चिंघाड करके वह प्रचण्ड मातंग भयंकर बलके साथ उस फाटकपर धाया। परन्तु किवाडोंमें लोहेके अत्यन्त तीक्ष्ण कांटे लग रहे थे, इस कारण उस गजराजकी एक चाल न चली, वह किसी प्रकार उस द्वारको न तोड सका बहुतसे शक्तावत वीरगण उस द्वारको तोडनेकी चेष्टामें काम आये, परन्तु शक्तावत सरदारका उत्साह यथावत् रहा। अकस्मात् गगनमण्डलको फाडता हुआ चंदावतलोगोंकी ओरसे घोर जयजयकार शब्द होने लगा। शक्तावत सरदारका हृदय कम्पायमान होगया। दूसरा उपाय न देखकर वह सरदार हाथीसे उतरा, और उन तीक्ष्ण कीलोंके ऊपर जो कि किवाडोंमें लगी हुई थीं—चढ गया। चढनेके पश्चात् महावतको उन्मत्तभावसे पुकारकर कहा "हाथीको मेरे ऊपर दौड़ा, नहीं तो अभी तेरा शिर काट डालूँगा।" महावतने स्वामीकी आज्ञाका पालन किया। अंकुशकी भयंकर पीडासे अत्यन्त दुःखित हो घोर शब्द करते हुए उस प्रचंड गजरा-जने कठोर बलसे दुर्गद्वारपर टक्कर मारी। उसके भयंकर वेगको न सँभालनेके कारण दोनों किवाड खंड २ हो गये; परन्तु साथमें शक्तावत सरदारने भी पृथ्वीमें गिरकर प्राण छोड दिये। सेनाने इस बातपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया। सरदार मारा गया, उसकी देह पृथ्वीपर गिरी, परन्तु राजपूत वीरोंने उस ओरको देखातक नहीं वे उस

शरीरपर पांव धरते हुए प्रचंड वेगसे खुले हुए द्वारके भीतर चले। परन्तु प्राणोंको इस प्रकार अपूर्व रीतिसे नेवछावर करके भी शक्तावत सरदारने उस दिन अपने पक्षके लिये हिरोलका सन्मान न पाया। शक्तावतोंके दुर्गमें पहुंचनेसे पहिले ही चन्दावत सरदारका मृतकदेह किलेके ऊपर पड़ा हुआ था। प्राण देनेके कुछ समय पहिले चंदावतलोगोंका जयशब्द जो उन्होंने सुना, वह उस ही समय हुआ था कि जब चंदावत ठाकुर दुर्गमें प्रवेश कर चुके थे। शत्रुके चलाये गोलेसे जब चंदावत सरदार मरकर जैसे ही नीचे गिरा वैसे ही एक दूसरे चन्दावत ठाकुर अपने पक्षका सेनापति बना, यह नया सेनापति प्रथम सरदारसे नीचेकी पदवीपर काम करता था। इसका नाम वान्दा ठाकुर था जो वीरगण अति कठोर विपत्तिको झेलनेसे भी नहीं घबडाते, आवश्यकता होनेपर जो लोग प्रचंड व्याघ्रके साथ कुश्ती लडनेको तैयार रहते हैं जिनको माया मोह कुछ भी नहीं होता; इस ही प्रकारके वीरोंमें वान्दा ठाकुरकी गिनती थी, वीरत्व, तेज, और निडरपनने इस वीरके हृदयमें अपना स्थान बना लिया था। जिस समय चन्दावत सरदारका मृतकदेह दुर्गकी दीवारके नीचे गिरा, उस ही समय वांदा ठाकुरने डुपट्टेमें उस देहको बांधकर अपनी कमरपर लादा और परकोटेपर चढने लगा, वह वीर हाथमें लिये हुए भयंकर शूलसे यवनोंका संहार करता हुआ धीरे २ आगे बढता गया और सरदारका सब देह अन्तलाके किलेके ऊपर फेंक दिया।

"हिरोल! हिरोल! चन्दावतगणोंने हिरोल पाई।" पलभरके बीचमें ही उन्मत्त चन्दावत सरदार कठोर शब्दसे इस प्रकार कहने लगा। यह शब्द अन्तलादुर्गके प्रतिशिखरपर गुंजारकर आकाशमें शब्दायमान होने लगा। उससे सारी प्रकृति कांप गई। वान्दा ठाकुरके प्रचंड बाहुबलने मुगलोंको पराजित किया। जो दो चार प्राण लेकर भागे वह बच गये। मेवाडकी जयपताका शीघ्र ही अन्तलादुर्गके शिखरपर उडने लगी* शक्तावत सरदार सेनासहित शिर झुकाये हुए लौट आये। "हिरोल" की रक्षाका भार चन्दावत ठाकुरोंपर ही रहा। इस प्रचंड अन्तर्विप्लवमें-इस भयानक जातिविद्वेषमें दोनों ओरके बहुतसे सिपाही, सेनानी और सरदार अन्तलादुर्गके ऊपर

* संगावत ठाकुरोंका भट्टकवि अमरचंद टाडसाहबका मित्र था। साहबने एक कथा इस मित्रसे सुनी थी वह नीचे लिखी जाती है। कहते हैं कि जिस समय राजपूतोंने अन्तलादुर्गको जीता था उस समय मुगलोंके सेनापति मन लगाकर शतरंज खेल रहे थे। पहरेदारोंने उनसे विपत्तिका समाचार बताया, परन्तु वे लोग खेलमें ऐसे मतवाले होगये थे कि पहरेदारोंकी बातपर ध्यान ही नहीं दिया। धीरे २ विजयी राजपूतोंका आकाशको फाडनेवाला जयनाद बारंबार होने लगा; उस समय भी वे चैतन्य न हुए। दोनों सेनापति एक दूसरेको मति देनेमें लगे हुए थे। बार २ शाहको शह दी जाती थी। इतने हीमें भ कर वेगसे राजपूत वहां आये और उन दोनोंको मारनेके लिये तैयार हुए, तब दोनों सेनापति सानुनय निवेदन करने लगे कि "बाजी खतम होनेतक आप लोग ताअम्मुल करें" राजपूतोंने इस बातको स्वीकार किया। परन्तु उनकी बाजीको पूर्ण न होता देखकर दोनों अभागोंका संहार किया।

मारे गए थे। प्रयोजन समझकर यहां पर शक्तावत ठाकुरोंकी उत्पत्तिका वर्णन लिखा जाता है। राणा उदयसिंहके चौबीस पुत्र हुए थे, इनमें शक्तसिंह दूसरा था। बालकपनसे ही यह तेजस्वी और निडर था। उस सुकुमार अवस्थामें ही शक्तसिंहमें यौवनकी तेजस्विता और निडरताका पूर्ण विकाश हुआ था, कहते हैं कि शक्तसिंहकी जन्मपत्री बनानेके समय ज्योतिषीने कहा था कि "यह शक्त मेवाडका कलंक होगा।" ज्योतिषीकी यह होनहार वाणी ठीक ही हुई थी। राणा उदयसिंह तबसे ही शक्तके ऊपर वीतस्नेह थे। परन्तु सन्तानका मोह अत्यन्त प्रबल होनेके कारण पुत्रपर किसी भांतिका बुरा व्यवहार नहीं किया। कालकी गति विचित्र है। निडर शक्तसिंह कालकी गतिसे ही पिताके नेत्रोंमें खटकने लगे। इसी कारणसे एक बार राणा उदयसिंह सन्तानकी माया ममता भूलकर अपने पुत्रका शिर काटनेको तैयार हुए थे।

शक्तसिंह बालकपनमें अत्यन्त निडर था, इसका प्रमाण नीचेके लेखसे भलीभांति मिलेगा। बालकपनमें एक दिन पिताके निकट बैठा हुआ खेल रहा था, इतने हीमें एक अस्त्रकार एक नई छूरी बनाकर राणाजीको देनेके लिये आया था। रुईके महीन २ गाले बनाकर छूरी इत्यादि अस्त्रोंकी धारकी परीक्षा की जाती है। इस ही प्रकारसे इस छूरीकी धारकी परीक्षा करनेका सामान होरहा था। इतने हीमें बालक शक्तसिंहने उस छूरीको अस्त्रकारके हाथसे छीनकर कहा, "पितः! क्या हड्डी और मांस काटनेको यह छूरी नहीं बनाई गई है?" यह कहते २ कुमारने अपने कोमल हाथके ऊपर जोरसे उस छूरीको मारा। तीव्र वेगसे रुधिर निकलने लगा। महाराजका आसन भी शक्तसिंहके रुधिरसे भीजकर लाल हो गया। परन्तु कुमारके सुकुमार मुखमंडलपर किंचित् भी कष्टका चिह्न दिखाई नहीं दिया। सभासद् यह देखकर अत्यन्त विस्मित हुए शक्तकी निडरता देखकर सब लोग अनेक प्रकारका तर्क वितर्क करने लगे। परन्तु राणा उदयसिंहके हृदयमें जो भाव पैदा हुआ उसको तो वह स्वयं ही जानते होंगे। कायरपनके कारणसे हो अथवा ज्योतिषीके फल कहनेसे हो। उन्होंने तत्काल ही कुमार शक्तसिंहका शिर काटनेकी आज्ञा दी। इस कठोर आज्ञाके पालन करनेकी तैयारियें होने लगीं। कुमारको भयंकर वध्यभूमिमें पहुचाया गया; इतने हीमें शालुम्ब्रा सरदारने राणाके सामने आकर सविनय निवेदन किया। "महाराज! कृपा करके मुझ दीनकी एक प्रार्थना सुनिये। मुझपर सन्तुष्ट होकर आपने अनेक बार वरदान देना चाहा परन्तु उचित अवसर न आनेसे अबतक महाराजसे कोई प्रार्थना न कर सका; इस समय वह उचित अवसर प्राप्त हुआ है, अतएव कृपा करके इस दीनकी एक कामना पूर्ण कीजिये।" राणाजीने अकपटभावसे उत्तर दिया "शालुम्ब्रानाथ! आपकी क्या अभिलाषा है, प्रगट करके कहिये, मैं अभी उसको पूर्ण करता हूँ।" सामन्तशिरोमणिके हृदयमें आशाका संचार हुआ। उन्होंने फिर साहस और नम्रतासे कहा "महाराज! धन, गौरव या ऊंचे पदकी मुझको अभिलाषा नहीं है; केवल एक प्रार्थना है कि दया करके राजकुमारको प्राणदंडाज्ञारहित

कीजिये। मेरे पुत्र कन्या कुछ भी नहीं है। इस विपुल धनसम्पत्तिका, इस ऊंचे कुलगौरवका कोई भी उत्तराधिकारी नहीं है; इस समय राजकुमारको धर्मपुत्रकी भांति ग्रहण करके चन्दावत गोत्रको अनंत विनाशसे रक्षा करनेकी कामना की है। यदि महाराज दीनकी प्रार्थनाको दया करके स्वीकार कर लेंगे तो सब भांतिसे मेरी रक्षा होजायगी। उदयसिंहने वचन दे देनेके कारण तत्काल शक्तसिंहकी प्राणदंडाज्ञा रोक दी। शालुम्ब्रापतिने उनको धर्मपुत्रके समान ग्रहण करके परम यत्न और आदरके साथ लालन पालन किया था। परन्तु वृद्धावस्थामें इस सरदारके एक पुत्र और कन्या जन्मी। तब तो शालुम्ब्रा सरदार एक प्रकारके संकटमें पड़ा। वह नहीं निश्चय कर सका कि दत्तक पुत्र शक्तसिंहको कौनसी सम्पत्ति दी जाय? उसही समय राणा प्रतापजीके पाससे आकर एक दूतने निवेदन किया कि "राणा प्रतापसिंहने अपने भ्राता शक्तसिंहको याद किया है।"

दोनों भ्राता मिल गये। अपने पालकपिता चन्दावत् सरदारकी अनुमति लेकर शक्तसिंह अपने बडे भ्राताके पास परमसुखसे समय बिताने लगे। परन्तु अपने अभाग्यसे उनका वैसा सौहार्द अधिक दिनतक अचल न रहा। एक बार शिकार खेलनेके समय निशानेके ऊपर दोनों भाइयोंमें घोर झगडा हुआ। दोनों ही अनेक प्रकारके सोच विचार करने लगे, परन्तु कुछ भी न हुआ। तब प्रतापने छोटे भ्राताकी ओर भ्रुकुटि चढाय हाथका शूलदण्ड उठायकर गंभीर बाणीसे कहा कि "आवो? अब देखा जायगा कि किसका निशाना ठीक है।" शक्तके मस्तकका एक केशतक भी नहीं कांपा, उन्होंने निडर होकर उत्तर दिया "अच्छा, अवश्य ही देखा जाय, आइये।" तत्काल दोनों भाइयोंके भयंकर शूल उठे। वीरोंकी प्रथाके अनुसार शक्तसिंहने बडे भ्राताकी चरणवन्दना करके उन चरणोंकी धूरिको अपने मस्तकपर चढाया, प्रतापने उनको आशीर्वाद दिया, इसके उपरान्त दोनोंने अपने २ शूलको उठाय परस्पर आक्रमण किया। वहांपर और जितने आदमी थे वह सब ही अपने सामने शिशोदीयकुलका नाश होता हुआ देखकर ऐसे खडे रहे कि जैसे सबके ऊपर वज्र गिर गया हो। रोकने अथवा बीचमें पडनेका किसीको साहस न हुआ। गिह्लौटकुलके परम पवित्र पुरोहितजीने दूरसे इस बातको देखा। वैसे ही वह "महाराज! क्या करते हो? क्या करते हो। ऐसा न कीजिये ऐसा न कीजिये" यह कहते हुए वहां दौड आये और दोनों भ्राताओंके बीचमें आनकर खडे होगये। दोनों भाइयोंको अनेक भांतिसे समझाया बुझाया, परन्तु उनका समस्त यत्न वृथा हुआ। पुरोहितजीने दूसरा उपाय न देखकर अपनी छूरीको लेकर अपने हृदयमें छेद लिया, और झगडा करनेवाले दोनो भाइयोंके बीचमें गिरकर प्राण छोड़ दिये। सामने ही ब्रह्महत्या हो गई। पुरोहितजीके पवित्र रुधिरसे दोनों राजकुमारोंके विमल चरित्रमें कलंक लगा। ब्रह्महत्याका महापातक उनके शिरपर अर्पण किया गया; तब उन मोहान्धभाइयोंकी आंखें खुलीं। वे दोनों इस बातका विचार करके शान्त होगये कि हमारी अज्ञानता-

से ही यह ब्राह्मण मारा गया। प्रतापसिंहने शक्तसिंहको मेवाडके छोडनेकी आज्ञा दी। तेजस्वी शक्त उनकी आज्ञाको मस्तकपर चढाय भ्राताके चरणोंमें शिर नवाय तत्काल ही मेवाड़के राज्यको छोडकर चले गये। और बदला लेनेके लिये अकबरका पक्ष अवलम्बन किया। प्रतापसिंहने विधि विधानसे उस उत्तम ब्राह्मणकी क्रिया की तथा श्राद्धादि समाप्त करके उनके पुत्रको एक बार ही सदाके लिये जागीर दी। उन पुरोहितजीकी सन्तान आजतक उस जागीरको भोगती हुई चली आती है। उस महाहितकारी श्रेष्ठ ब्राह्मणने अपने राजाका महोपकार करनेके लिये जिस स्थानमें अपने प्राण दिये थे वहां चबूतरा बाँधकर स्मारक स्तंभ स्थापित किया गया। वह स्तम्भ आजतक उस श्रेष्ठ ब्राह्मणके रुधिरसे भीगे स्थानपर खडा हुआ उसके अद्भुत प्राणत्यागका प्रकाशमान परिचय दे रहा है। उस दिन दोनों भाई अलग २ होगये। बहुत दिनतक दोनोंमें परस्पर अत्यन्त शत्रुता रही। तदुपरान्त जिस दिन शक्तसिंहने बडे भ्राताके प्राणोंको बचाकर "खुरासान-मुलतानका अग्गल" यह पवित्र नाम पाया, उस दिन दोनों भाई जिस भ्रातृपनके बन्धनमें बँधगये इस जन्ममें उनका वह बन्धन फिर नहीं टूटा।

शक्तसिंहके १७ पुत्र हुए। इन सबमें एकता या बन्धुताका लेशमात्र भी नहीं था। जिस दिन वीरवर शक्तसिंह इस लोकसे बिदा हो गये उस दिन उनके पुत्रोंकी धूमायमान विद्वेषाग्निने प्रचण्डतेजसे प्रगट होकर नाश करना आरम्भ किया। पिताजीकी और्ध्वदैहिक क्रिया करनेके लिये केवल बड़े पुत्र भानुजीकी अतिरिक्त और सब ही नदीके किनारे गये। विधि विधानसे समस्त कार्य करके वे सब भिन्सरौर किलेको लौटे; परन्तु उन्होंने दुर्गमें प्रवेश नहीं करने पाया। उनके आनेसे पहिले ही बडे भाई भानुजीने किलेका द्वार बंद कर लिया था। उन्होंने बारम्बार पुकारा, परन्तु द्वार नहीं खोला। जब इस अन्यायके आचरणका कारण पूछा गया तब भानुजीने दुर्गके भीतरसे ही कहा, "तुम लोग और कहीं आश्रय लो यहांपर तुम्हारे रहनेको स्थान नहीं है मुझे बहुतोंका पेट पालना पडेगा।" शक्तके दूसरे पुत्र अचलसिंहने अपने बड़े भ्राताका यह अन्याय देख अत्यन्त दुःखित हो किसी प्रकार प्रतिवादन करके नम्रताके साथ निवेदन किया "यदि आपकी मति ऐसी ही हो तो मैं उसका प्रतिवाद नहीं करना चाहता, इस समय एक वार किलेका द्वार खोल दीजिये, तो हम लोग स्त्री पुत्रादि, अश्व और अस्त्र शस्त्रोंको लेकर भिंसरोर दुर्गसे बिदालें।" किलेका द्वार खुल गया। अचलसिंहने अपने पंचदश लघुभ्राताओंके साथ दुर्गमें प्रवेशकर घोडे और अस्त्र शस्त्रादिको लेकर परिवारके साथ ईडरराज्यकी ओर गमन किया। ईडर उस समय मारवाडके राठौरोंपर था। अचल, अपनी गर्भवती स्त्रीको लेकर अत्यन्त सावधानीसे चले थे। वह सब पालौड नामक स्थानके निकट पहुंचे, इतने हीमें अचलकी स्त्री प्रसवपीडासे अत्यन्त पीडित हुई। इस कारण वह सब आगे न बढ सके और पालौडके शोनगडे सरदारसे आश्रय मांगा। परन्तु दुखःकी बात है कि ऐसे विपत्तिकालमें उस दुराचारी सरदारने उनको आश्रय न दिया। निकट ही श्रीगंगाजीका

एक टूटा फूटा मंदिर था*, दूसरा उपाय न देखकर अचलसिंहने यहीं पर आश्रय लिया । उसके एक कोनेमें जाकर आसन्नप्रसवा स्त्री लेट रहीं । उस ही समयमें प्रचड वेगके साथ मूसलधारसे वर्षा होने लगी । साथ२ में आँधी और प्रचंड वर्षाके कारणसे वह मंदिर बारंबार कम्पित होने लगा । उसकी दीवारका एक बडाभारी पत्थर खिसककर उस गर्भवती स्त्रीके ऊपर गिरा ही चाहता था कि अचलके छोटे भाई बल्लने जाकर उसको अपने मस्तकपर धारण किया । इसी समय अचलसिंहके दूसरे भाई निकटके वनसे एक बबूलके पेडको काटकर लाये और उसकी टेक उस पत्थरमें लगाई। जबतक टेक नहीं लगी थी तबतक बल्ल ही उसको शिरपर उठाये रहा था ।

विश्वमाता भगवती जाह्नवीके उस भग्नमंदिरमें भयंकर विपत्तिके समय शक्तावत वीर अचलकी स्त्रीने एक नवकुमार प्रसव किया । उस कुमारके लक्षणादि देखकर वे समस्त वीरगण अनेक प्रकारकी आशा करने लगे और सबने एकमत होकर उसका नाम " आशा "रक्खा । महामाया भगवती भागीरथीजी उन सबके प्रति सन्तुष्ट हो शीघ्र ही आशा पूर्ण करनेवाली वरदायिनी रुपसे उन सबके सामने प्रगट हुई । उनके प्रसादसे नवप्रसूतिने शरीरमें उचित बल पाया, तथा वह अपने स्वामी और देवरोंके साथ ईडरकी ओर चली । ईडरमें पहुँचनेपर वहांके शासनकर्त्ताने परम आदरके साथ उनको ग्रहण किया और उनके भरण पोषणको वृत्ति नियत कर दी ।

ईडरके शासनकर्त्ता राठौरराजके सरल और सादर व्यवहारसे परम प्रसन्न होकर अचलसिंह अपने भ्राताओंके साथ परम सुखसे वहां रहने लगे । उस समय एक बार राणाजीके प्रधान मंत्रीने, प्रसिद्ध जैनपीठ शत्रुंजय गिरि × में लौटकर एक रात विश्राम करनेके लिये ईडरमें अपना डेरा डाला । वह कुटुम्बके साथ डेरेमें विश्राम कर रहे थे कि आधीरातके समय घोर आंधी आई और मंत्रीजीका तंबू उड़ाने लगी; डरके मारे मंत्रीका प्राण उड़ गया । इस भयंकर अवसरमें प्राण बचनेका उन्होंने कोई उपाय न देखा। रात्रिके उस घोर समयमें परम हितैषी बल्ल और जोधने अपने कई एक भ्राताओंके साथ वहाँ पहुंचकर राजमंत्रीकी रक्षा की । उनका परमोपकार देखकर मंत्रीवर परमप्रसन्न हुए तथा हाथ जोडकर उनका वृत्तान्त पूछा । उनसे उत्तर पाकर नम्रभावसे बोले, " आपकी यहां रहनेमें शोभा नहीं है; चलिये उदयपुरको चलिये; मैं निश्चयसे कहता हूँ कि महाराज आपलोगोंको उचित पदपर स्थापन करेंगे । उन वीरोंने मंत्रीके अनुरोधको न मान करके कहा, " विना राजाके बुलाये वहां जाना कभी ठीक नहीं होगा, अतएव जबतक वह स्वयं हमको वहां नहीं बुलावेंगे, तबतक हमारा रहना यहीं पर ठीक होगा ।" मूल बात यह है कि अधिक दिनतक इनको ईडरमें नहीं रहना पडा ।

* इस मंदिरमें ही टाडसाहबको अनहलवाड़ पट्टनके प्रसिद्ध राजा कुमारपालके राजत्वके विषयमें एक शिलालिपि मिली थी । पालौड नीम्हैरा जनपदके अन्तर्गत है । इस समय यह मेवाडसे अलग है।

× शत्रुंजय जैनलोगोंके पांच पवित्र पर्वतोंमें गिना जाता है ।

दिल्लीश्वरके विरुद्ध खड्ग धारण करनेके लिये राणा अमरसिंह उस समय पहाडी सेना इकट्ठी कर रहे थे। मंत्रीसे अपनी जातिवालोंके विक्रम और हितानुष्ठानका वृत्तान्त जानकर राणाजीने शीघ्र ही उनके पास दूत भेजा। दूतके साथ वह समस्त वीरगण चले आये और राणा अमरसिंहने परम आदर मानके साथ उनको ग्रहण किया।

उदयपुरमें आकर राजभक्त शक्तावतलोगोंने जो कार्य किया था, यद्यपि वह साधारण था, तथापि उसके द्वारा उनकी सहायता और राज्यभक्तिका अटल परिचय पाया जाता है। यवन युद्धके समय एकबार रात्रिकालमें राणाजीने किसी पहाड़ी स्थानमें अपनी सेनाकी छावनी डाली थी। एक तो शीतकालकी रात्रि; तिसपर हिम (बरफ) युक्त पहाड़ी स्थान। कदाचित् राणाजीको यहांपर कोई कष्ट हो, यह विचारकर बल्ल और जोध वनसे बहुतसी लकडी ले आये और अग्नि जलाय रात्रिकालके दारुण शीतसे राणाजीकी रक्षा की। भट्टकविजनोंके ग्रंथोंमें इन शक्तावत वीरोंके-विशेष करके बल्ल और जोधकी शूरता तथा विक्रम व सहृदयताके बहुतसे वर्णन पाये जाते हैं। जिस दिन परस्परमें भयंकर झगडा हुआ था, जिस दिन शक्तावत और चन्दावत् गण अन्तला दुर्गपर पहुंचे थे उस दिन वीरवर बल्ल ही शक्तावतोंकी सेनाका सेनापति हुआ था। यद्यपि बडा भाई भानुजी भी उस समयमें आया था, यद्यपि गौरवको प्राप्त करनेके लिये उसने प्राणप्रणसे चेष्टा की थी, परन्तु उस दिन जिस वीरके अद्भुत प्राणोत्सर्गकी महिमाके गुणसे शक्तावत्कुलका यश दिग्दिगन्तमें फैला, उस हीका नाम बल्ल था। जिस समय महावीर बल्लने अन्तलाके दुर्गद्वारपर प्राण दिये, जिस समय वह विशाल दुर्ग मुसलमानोंके हाथसे छूट गया, उस समय बाकरोलका सामन्त राजा वह शुभ समाचार राणाजीके पास ले गया। राणाजीने सामन्तराजपर प्रसन्न होकर उनको भलीभांतिसे पुरस्कार दिया और स्वयं भी शीघ्र अन्तला दुर्गपर आये, राणा अमरसिंह जब अन्तला दुर्गपर पहुंचे थे उस समय वीरवर बल्लका अंतसमय निकट था। राणाजीको सन्मुख देखकर वीरवर बल्ल उत्साहके साथ बोल उठाः-

"दूना दात्तार, चौगुना जुझार।
खुरासानी मुलतानीका अग्गल।"*

मुमूर्षु शक्तावत्वीरका यह उत्साह पूर्ण तेजव्यंजक वचन सुनकर राणाजी अत्यानंदसे पुलकित हृदयसे उस वीरको आशीर्वाद देकर नगरको गये। वीरवर बल्लका यह

---

* दूना दान चौगुना प्राणदान" अर्थात् राजा उनपर जितना अनुग्रह करेंगे, उतना ही उनका आत्मोत्सर्ग अधिक होगा।"

चन्दावत लोगोंमें भी इस प्रकारका एक गौरवमय वाक्य है; यथा-"दश सहस्र मेवाडका बडा किवाड" अर्थात् मेवाडके दश हजार नगरीके सिंहद्वारके किवाड। कहते हैं कि चन्दावत् ठाकुरोंके इस गौरवयुक्त वाक्यको सुन शक्तसिंहको डाह हुआ और मेवाडके भट्टकविके निकट जाय शोकसे कहा "तो फिर हमारे पास क्या रहा।" इसके उत्तरमें भट्टकविने यह कहा था कि "किवाडका अग्गल" अर्थात् आप उस द्वारके अर्गल हैं।

शेष वचन आजतक भट्टलोगोंके मुखसे सुना जाता है। यद्यपि शक्तावत् लोगोंकी वह वीरता और वह तेजस्विता आज अधिकाईसे हीन होगई है, यद्यपि आलस्य और अफीमसे आज उनके वंशधर गण अत्यन्त दीन और कर्महीन होगए हैं, तथापि वह लोग उस सन्मानसूचक अभिवादनसे सम्पूर्णतः अलग नहीं हुए हैं। आज भी कोई शक्तावत् सरदार जिस समय राणाजीकी राजसभामें जाता है, अथवा अपने सामन्त भ्राताओंमें आसनपर बैठता है, भट्टकविगण वैसे ही ऊंची वाणीसे वीरवर बल्लुका वह शेष वाक्य कहकर उसको सम्बोधन करते हैं। इस वीरत्व और महत्त्वसूचक वाक्यको सुनते ही वर्त्तमान कालके दीन हीन शक्तावत्गण भी नवीन बल और उत्साहसे बलवान् होजाते हैं और वर्त्तमानकी बातको भूलकर अतीतके उस गौरवमय क्षेत्रमें विचरण किया करते हैं। वह अन्तलाक्षेत्र, परस्परके झगडेका वह प्रचंड स्थान तत्काल उनके नेत्रोंमें दिखाई देजाता है। वह विशाल अन्तला दुर्ग, वीरवर बल्लू उस ही प्रचंड रणमातंगपर चढे हुए दुर्गद्वारके सामने ही प्राणोत्सर्ग कर रहे हैं, उनके चार भ्राता-अचलेश, जोध, दल्लू और छत्रभान साथमें ही प्राणोंको देकर उस वीरका साथ दे रहे हैं, हृदयको उत्तेजित करनेवाला यह प्रकाशमान चित्र उनके ध्यानमें फिरा करता है, उस समय वे लोग अपने डाढी मूछोंको चढा २ कर एक दूसरेकी ओर देखा करते हैं। शक्तसिंहका ज्येष्ठ पुत्र भणजी इससे पहिले किसी कारणसे राणाजीका विरागभाजन हुआ था। इस कारणसे वह सदा दुःखित रहता। परन्तु ऐसे दुःखमें उसको बहुत दिनतक नहीं रहना पडा। भाग्यकी प्रसन्नतासे राणाजी शीघ्र ही उसपर प्रसन्न हुए। एक बार भिंदरके राठौरोंने राणाजीका अपमान किया, तब शक्तावत सर्दार तेजस्वी भणजीने अपनी सेनाको लेकर उनपर आक्रमण करके वह दुर्ग ले लिया, राठौरगण वहांसे भाग गये। जब भणजीने अपमानकारियोंको ऐसा दंड दिया, तब राणाजीने उनको परम प्रसन्न होकर पुरस्कारमें वह भिंदरकिला ही भिंसरोरके साथ मिलाकर दे दिया। वीरवर शक्तसिंहसे लेकर वर्त्तमान समयतक दश सरदार शक्तावत्कुलके शासनदंडको क्रमानुसार चला गये हैं *। उनका वंश अल्प समयमें ही इतना फैल गया था कि शक्तसिंहसे

---

* शक्तसिंह-१७ पुत्र
भणसिंह

दयाल | वीर | मान | गोकुलदास | पुरु

पुरु → सुबल → मोकम → अमर → पृथ्वीराज → जैत → उमेद → खुशाल → जोराधर

दो चार पीढी पीछे ही मेवाडके राणाजी आवश्यकता पडनेपर दश हजार शक्तावत वीरोंको संग्राममें भेज सके थे। परन्तु घोर गृहविवाद और कालके कठोर प्रभावसे शक्तावत गोत्रके अधिकांश वीरलोग इस संसारसे बिदा होगए। जो शक्तावत्सभा एक समय मेवाडकी श्रेष्ठ और विशाल समिति समझी जाती थी आज वह अत्यन्त दीन और हीन होगई है। जो लोग संग्रामभूमिको लीलाक्षेत्र और अस्त्रशस्त्रादिको खेलनेकी गेंद समझते थे, आज उनके वर्त्तमान वंशधरगण उन अस्त्रशस्त्रोंको स्पर्श करने और रणकी सीमापर जानेमें भी भयसे कांपा करते हैं।

प्रयोजन समझकर दूर पहुँच गए थे, अब फिर अपने मुख्य विषयका विचार करते हैं। राणा अमरसिंहसे बराबर तीन चार बार पराजित होकर बादशाह जहांगीर अत्यन्त भीत हुआ, परन्तु वह उत्साहहीन न होकर बराबर यही सोचता रहा कि किस प्रकार राजपूतोंका गर्व तोडा जाय। शीघ्र ही एक प्रचंड मुगलसेना तैयार हो मेवाडके भीतरसे होती हुई राणापर हमला करनेको चली। उस विशाल सेनादलका पर्यवेक्षणभार अपने आप ग्रहण करके बादशाहने अपने पुत्र परवेज़को सेनापति बनाया। सेना अजमेरमें इकट्ठी हुई। उस काल जहांगीरने अपने प्यारे--पुत्र परवेज़को पास बुलाकर कहा "बेटा! इस बार तुम्हारी बहादुरीका इम्तहान है, मालूम होगा कि तुम उस बडेगुरूर राजपूतका गरूर तोड सकते हो या नहीं। लेकिन मेरी इतनी बात याद रखना कि राणा अमर या उसका बड़ा लडका कर्ण अगर जंगको किनारे रखकर तुमसे मुलाकातके लिये आवे तब तुम खातिरदारीके साथ उनसे पेश आना। याद रक्खो, कि उस अदब कायदे और वर्त्तावमें--जो कि बादशाह, बादशाहसे करते आये हैं, किसी तरहका फरक नमूदार न हो, और यह भी याद रखना कि तुम्हारी मतवाली फौज मारवाडकी सलतनतका कोई नुकसान न करे।" *

सम्राटकी आशा आकाश कुसुमके समान अलीक होकर फलवती न हुई। अपनी सेनाकी अधिकता और दृढता देखकर उन्होंने समझा था कि अबके मेवाडका राजा अमरसिंह मजबूर होकर हमसे सुलह कर लेगा। इस प्रकारकी बेजड चिन्ताको हृदयमें स्थान देकर बादशाह निश्चय ही भ्रान्त हुए थे। सन्धि करना तो एक ओर रहा, हमको तो इसमें भी सन्देह है कि अमरसिंहके हृदयमें कभी ऐसी चिन्ता उदय हुई हो। देशवैरी यवनको विशाल सेनाके साथ मेवाडके ऊपर आता हुआ सुनकर अमरसिंह प्रचंड उत्साहसे उत्साहित हो उठे और अपने सामन्त सरदारोंको इकट्ठा करके मुगलवाहिनीके सन्मुख चले। आरावलीका द्वारस्वरूप एक प्रसिद्ध गिरिमार्ग था, उसमें दोनों दलोंकी मुठभेड़ हुई, इस गिरिमार्गका नाम खामनोर था; यहाँपर अनेक राजपूतोंने, हिन्दूविद्वेषी यवनलोगोंके आक्रमणसे स्वदेशकी रक्षा करनेके लिये प्रसन्नतासे अपने प्राणोंको दिया था, अतएव यह स्थान पवित्र है। खामनोरके उस ही पवित्र

* सन् १६११ ई० में यह संग्राम हुआ था।

क्षेत्रमें * विक्रमकेशरी राजपूतराजने अपने रणविशारद सामन्त और सरदारोंको साथ लेकर, मुगलसेनाके विरुद्ध प्रचंड खड्ग धारण किया था । दोनों दलोंमें घोर संग्राम होने लगा । वह विशाल अनीकिनी, रणवीर राजपूतोंकी मुट्ठीभर बनीठनी सेनाकी गति न रोक सकी । राजपूतोंके कठोर विक्रमसे यवनसेनाके मोरचे छिन्न भिन्न हो गये, मुगललोग पीठ दिखाकर भागने लगे, बहुतसे राजपूतोंके हाथसे मारे गये । बचे हुए सिपाही अजमेरकी ओर भागे । वह दिन मेवाडके लिये एक शुभ दिन था, यहांतक कि मुगलइतिहासवेत्ताने स्पष्ट ही माना है कि वह दिन मेवाडके लिये एक प्रकाशमय गौरवका दिन हुआ, शिशोदियाकुलकी वीरताके प्रगट होनेको वह दिन एक महापर्व था । उस पर्वके दिन मोहसे अन्धे हुए बादशाह जहांगीरका 'ख्वाब गफलत' छूटा था । उसकी बडीभारी सेनाका विध्वंस होगया; उसके प्यारे पुत्र परवेज़के प्राणोंपर आन–बनी थी । अब्बुलफ़ज़लने लिखा है कि "राजकुमार परवेज़ लडाईसे भागनेके समय पहाडी-रास्तेमें पहुँचा जहां कि उसपर घोर विपत्ति पडी थी, उसके सिपाहियोंने अत्यन्त कष्ट पाकर अनेक प्रकारके झगडे किये थे । शहजादेके लिये नई सेनाका इकट्ठा करना भी असंभव हो गया, यहां तक कि वह बडे कष्टसे अपने प्राण लेकर भागा था ।" इस प्रकारसे राजपूतवीरोंने अधिकांश मुगलसेनाका संहार कर डाला । परन्तु जहांगीर बादशाहने अपनी दैनिक लिपिमें एक बार ही इस सत्य बातको उडा दिया है । यथा;– "लाहौरमें मिलनेके लिये मैंने परवेज़को हुक्म दिया कि तुम लडाई छोडकर मेरे पास चले आओ और राणाकी चालढालपर नजर रखनेके लिये उसके एक लडकेको-मय कई एक सरदारोंके–वहां रहनेका हुक्म दिया।" धन्य सत्यसन्धता ! अपने अपमानको छिपानेके अभिप्रायसे बादशाह जहांगीरने सत्यको उडाकर संसारकी आंखोंमें धूल डालनेकी चेष्टा की थी, परन्तु उसने यह विचार नहीं किया कि संसारके बीच सत्यका प्रचार एक वार स्वयं ही विस्तारको प्राप्त होगा ।

जब पराजित परवेज़ पिताके पास पहुँचा तो बादशाहने उसके पुत्रको सेनापति बनाकर राणाजीके ऊपर भेजा । बारंबार पराजित होनेसे उसका डाह और क्रोध दूना बढ गया था।यही कारण था जो इस बार बादशाहने अपने पोते यवनवीर महाबतखांको भी भेजा । महाबतखां एक प्रचण्ड वीर था, इसकी सहायतासे बादशाहने अनेक बार जय पाई थी । अबकी बार इसको राणाजीके ऊपर भेजकर बादशाहके हृदयमें "सब्जबाग" की हरियाली छाई हुई थी; परन्तु उसकी कोई आशा फलवती न हुई । राजपूतोंके प्रचण्ड बाहुबलके सामने बलदर्पित मुगलसेनापति पराजित हुआ । परबेजका बेटा भी अपनी सेनाके साथ रणभूमिमें मारा गया । परन्तु तेजस्वी बादशाहका उत्साह रत्तीभर भी कम न हुआ । उसकी प्रचण्ड सेना किञ्चित्‌भी नहीं घटी । एक दल मारा जाता तो उसके बदले फिर दो तीन दल इकट्ठे होकर राणाजीपर दौडने लगते । राणाजीने उन समस्त चढाइयोंको व्यर्थ कर दिया ।

---

* टौसाहबने भ्रमसे खामनौरको ब्रह्मपुर नाम देकर दक्षिणमें स्थापन किया है । तवारीख फरिस्ताके अंगरेजी अनुवादमें डोसाहबने ऐसे बहुतसे भ्रम पाए हैं ।

किसीसे कुछ न हुआ। जिन रणदक्ष राजपूतवीरोंकी सहायतासे राणा अमरसिंहने बादशाहकी अगणित सेनाको बारंबार संहार किया था, इस समय एक २ करके वह वीरगण संग्राम भूमिमें शयन करने लगे। राणाजीकी सेना क्रमानुसार थोडी होती गई। अब न वीर रहे, न धीर रहे, न जुझार दिखाई देते हैं। जो थोडे से सैनिक बचे बचाये हैं वह समरविद्यामें भली भांतिसे चतुर नहीं। तथापि क्रमानुसार उनको ही शिक्षित करके राणा अमरसिंह जहांगीरकी विशाल सेनाका सामना करनेको चले। प्रचंड उत्साहसे उत्साहित और राणाजीके वीर उदाहरणसे अनुप्राणित होकर उन थोडेसे राजपूत वीरोंने यवनोंके अनन्त सेनासागरमें डुबकी लगाई। उनकी विश्व-दाही तेजाग्निके दमकीले प्रभावसे वह सेनासागर सूख गया, परन्तु उन राजपूतवीरोंमें भी दो चार ही ऐसे थे जो अक्षत देहसे अपने देशको लौटे थे। वीरश्रेष्ठ प्रतापसिंहके परलोकवासी होनेपर राणा अमरसिंहजीने इस प्रकार सत्रह बार संग्राममें यवनोंका संहार किया था। सत्रह बार ही विजयलक्ष्मी उनको प्राप्त हुई थी। परन्तु अबकी बार चित्तौरपर भयंकर संकट है। अठारहवीं बार बादशाहने क्रोधित होकर अपने चतुर पुत्र खुर्रमको राणाजीके विरुद्ध प्रेरणा किया। यह खुर्रम ही फिर शाहजहाँ नाम धारण करके दिल्लीके तख्तपर बैठा था। थोडी उमरमें ही अस्त्रविद्याको इसने भलीभांतिसे सीख लिया। बादशाहने जिस दिन इस वीरको सेनापति बनाकर भेजा, शिशोदिया-कुलके भाग्याकाशपर उस ही दिन घनघोर बादल छा गये। समग्र मेवाडभूमिमें मानो एक भयंकर भूचाल आगया। इस भयंकर संकटसे कौन चित्तौरपुरीकी रक्षा करेगा? इस समय कौन प्रचंड मुगलसेनाके विरुद्ध अवतीर्ण होकर सुलतान खुर्रमकी भयंकर गतिको रोकेगा? अमरसिंहने सावधान चित्तसे एकबार मेवाडकी वर्तमान अवस्थाका विचार किया, तो ज्ञात हुआ कि मेवाडकी अवस्था अत्यन्त शोचनीय है कोषागारमें धन नहीं,-दुर्गमें सेना नहीं;-अस्त्रशालामें अस्त्र शस्त्रोंका पता नहीं और समय भी इतना नहीं कि इन अभावोंको पूर्ण कर लिया जाय; अतएव अबकी बार मेवाडका मंगल नहीं दिखाई देता। ऐसा होनेपर भी क्या विना विवाद ही मेवाडभूमि यवनोंके हाथमें आत्मसमर्पण कर देगी? क्या मुगलबादशाह सरलतासे समस्त मेवाड-निवासियोंको बकरे और भेडोंके समान जंजीरोंसे बांध लेंगे? मेवाडके वीरगण पिछली सत्रह लडाइयोंमें समरभूमिपर शयन कर चुके हैं, परन्तु इस समय जो अगणित मनुष्य मेवाडकी विशाल छातीपर निवास करते हैं, वह क्या निर्जीव हैं?-या निर्जीव मांसपिंड हैं? क्या वीरजननी मेवाडभूमिने निर्जीव मांसपिंडोंको उत्पन्न किया है? जहांके बालक और जहांकी स्त्रियें भी संसारमें वीरताका अनुपम दृष्टान्त रख गई हैं, क्या वही मेवाडभूमि आज विना विवादके यवनोंकी शृंखला अपने हाथोंमें पहिर लेगी? कभी नहीं! यह ठीक है कि मेवाडके समरविशारद वीरगण संग्राममें शयन कर चुके हैं, परन्तु अबतक भी जो अगणित नर नारियें मेवाडमें वर्तमान हैं, वे अपने कर्त्तव्यको नहीं भूले हैं वे सब इस समयतक भी प्रतापसिंहके दीप्तिमान स्मरणको नहीं भूले हैं। शत्रु भयंकर-

वेषसे शिरपर खडा हुआ है, इसी समय मेवाडको विध्वंस कर देगा-राजपूतोंकी प्राणप्यारी वीरबालाओंपर अत्याचार करेगा। इस भयंकर अभिनयको कैसे देख सकेंगे ? मेवाडके बालक वृद्ध और युवा पुरुष केवल इस ही भांतिकी चिन्ता करने लगे, सबने प्रतिज्ञा की कि प्राण रहते हुए किसी प्रकार मेवाडभूमिको यवनोंके हाथमें नहीं जाने देंगे। वरन संग्रामभूमिके बीच शत्रुओंके हाथसे मर जायंगे, तथापि जीवित रहते जननी जन्मभूमिकी दुरवस्था न देख सकेंगे । इस प्रकारसे सब ही प्रतिज्ञा करके झुंडके झुंड अमरसिंहके झंडेके नीचे पहुंच गये। सामर्थ्यके अनुसार सब ही धन इकट्ठा करके राजकोषमें भेजने लगे। स्त्रियोंने अपने गहने बेच डाले, किसानोंने हल और बैलोंको गिरवी रख दिया, वणिकलोगोंने अपनी बचतके धनको प्रसन्नतासे छोड दिया । इस प्रकार क्रमानुसार धनागार तो धनसे परिपूर्ण हो गया । उस धन-की सहायतासे राणाजीने थोडे ही समयमें आवश्यकीय अस्त्रशस्त्रोंको तैयार करा लिया। तथा अपने पुत्रवर्ग और प्रस्तुत सेनाको साथ ले मुगलसेनाके आगे बढे। शीघ्र ही दोनों दलोंमें घोर संग्राम होने लगा। रणविद्याहीन अशिक्षित राजपूत वीरगण प्राणपणसे मुगल बादशाहके अगणित रणपंडित वीरोंके साथ संग्राम करने लगे। जिन्होंने इस संग्रामसे पहिले किसी समय भी अस्त्र धारण नहीं किया था, किसी समय युद्धमें गमन नहीं किया था, आज वही राजपूतगण इस प्रकारसे संग्राम करने लगे कि जिस प्रकार कोई महारणपंडित वीर संग्राम करता हो। परन्तु इससे क्या होता है ? समुद्रके स-मान उफनती हुई मुगलसेनाकी गतिको मुट्ठीभर राजपूतगण कैसे रोक सकते हैं ? अत एव जो कुछ हुआ, उसको लिखते हुए लेखनी भी थरथर कांपती है-हृदय शोकसे उमडा आता है। चिरपूज्य बाप्पारावलकी जो प्रचंड वैजयन्ती आठसौ वर्षसे भी अधिक विजयी गिह्लोटराजाओंके गर्वोन्नत मस्तकपर फहराया करती थी, आज वही विजयपताका सुलतान खुर्रमके सन्मुख झुक गई। उस दुर्दैवका वृत्तान्त-शिशोदिया कुलकी वह शोचनीय कथा हमसे नहीं लिखी जाती । जहांगीरने स्वयं अपने दैनिक विवरणमें इसका जो कुछ वृत्तान्त लिखा है, उसका ही अनुवाद नीचे लिखा जाता है।

" अपने राज्यके आठवें वर्ष सन् हिजरी १०२२ * में मैंने सोचा कि अजमेरमें जाते ही अपने खुशकिसमत पुत्र खुर्रमको अपनेसे पहिले भेज दूंगा। बाद इसके जब सफरका पूरा इन्तजाम हो गया, तब उसको तरह २-के कीमती खिलत, एक हाथी, एक घोडा, एक तलवार, एक ढाल और एक छूरी ईनाममें दी। जो फौज उसकी मातहतीमें थी उसको और उसके सिवाय १२००० हजार सवार ज़यादा भेज दिये और अजीमखांको उसका सिपहसालार मुकर्रर करके उसके कुल मातहत कारि-न्दोंको उनके लायक ईनाम दिया।"

* सन् १६१३ ई०

"बाद इसके मेरी सलतनतके नवें बरसके पहिले दिन ही, यानी हिजरी सन् १०२३ (सन् १६१४ ई०) को मैं अपने तख्तपर बैठा हुआ था कि मेरे लडकेने आलमगुमान हाथीके साथ अठारह हाथी और मामूली आदमी व कुछ मस्तूरातें जिनको बरवक्त जंगने पकड लिया था, मेरी नजरमें भेजे। दूसरे दिन उस आलमगुमान हाथी पर बैठकर मैं शहरमें घूमनेको निकला, और बहुतसी अशरफियें लुटाई।"

"इसके बाद मुझको यह खुशखबरी मिली कि राना अमरसिंहने सुलहका पैगाम भेजा और वह हमारा मातहत राजा होनेके लिये खुशीसे तैयार है। मेरे खुशकिस्मत बेटेने रानाके राज्यमें जिधर तिधर फौजके नाके कायम कर दिये हैं, व उसके ही आदमी वहांका इन्तजाम करते हैं। मुल्ककी आबहवा खराब है और कुल देश बनजर है, वहां मुश्किलसे पहुँचना होता है, इस वजहसे कुल मुल्कको कब्जेमें लाना नामुमकिन मालूम हुआ था। लेकिन मेरी फौजने गर्मी और बरसातकी कुछ परवाह न करके कुल मेवाडको अपने तहतमें किया था। और वहांके कितने एक सरदारोंको, व आमलोगोंकी मस्तूरातें और उनके लडके भी कैद किये; राना इन बातोंसे बहुत ही नाउम्मेद होगया, और यह समझ कर कि अगर कुछ दिनतक यह जुल्म और हुआ तो मुल्कको छोडना पडेगा, या कैदमें जाना होगा, बहुत आजिज होकर सुलहकी दरख्वास्तकी। सूपकर्ण व हरिदास झाला इन दो सरदारोंको खुर्रमके पास भेजकर रानाने कहला भेजा कि यदि वह मुझको क्षमा करके अपने हाथसे ग्रहण करें तो मैं भी उनका यथायोग्य सन्मान करूं, और दूसरे हिन्दूराजा जिस प्रकारसे उनकी सेवा करते हैं, वैसी ही सेवा करनेके लिये अपने पुत्र कर्णको भेज सकता हूँ; परन्तु बुढापा आजानेसे मैं स्वयं उनके पास नहीं रह सकूंगा इसके लिये क्षमा करनी होगी। इन कुल हालतोंको "नूरचश्मने शुक्रउल्ला अफ़ज़लखाँके ज़रियेसे मेरे पास भेजा था।"

"मेरी सलतनतके वक्तमें चित्तौर मातहत हुआ, इसलिये मुझको बडी खुशी हुई और हुक्म दिया कि उस (मेवाड) मुल्कके पुराने मुस्तहक वहांसे महरूम नहीं रहेंगे। इस बातका मुझको कामिल यकीन है कि राना अमरसिंह और उनके बडे बूढोंको अपनी ताकत और अपने ज़ोरपर पूरा एतकाद था, उनको पहाडी बाशिन्दोंकी ताकतका पूरा यकीन था, वे अपनी क़ौमके नामपर मग़रूर थे; वह हिन्दोस्थानके किसी राजाको राजा ही नहीं समझते थे, या उन्होंने कभी किसीके सामने शिर नहीं झुकाया था, इस अच्छे मौक़ेका हाथसे जाने देना, मुझको अच्छा नहीं मालूम हुआ; इस लिये फौरन ही अपने लडकेको वकील मुकर्रिर करके भेजा और रानाको माफी दी। व अपना एक फर्मान भेजकर रानाको लिख दिया कि आप मेरे साथमें बे खटके रहेंगे। अपने सादे बर्ताओंको साबित करनेके लिये मैंने उस फरमान पर अपना पंजा * भी लगा

* हृदयमें विश्वास उत्पन्न करनेके लिये सरल आचरणमें हाथमें हाथ देना अथवा स्वाक्षरित पत्रपर अपने हाथका पंजा लगाना अति प्राचीनकालसे सभ्यलोगोंमें चला आता है। सनातनधर्मावलंबियोंमें

दिया। और लडकेको यह भी लिख भेजा कि हरेक तरहसे उस मुअज्जिज़ राणाकी मनशाअ और ख्वाहिशके मुआफिक काररवाई करनेमें कसर न की जाय।"

"मेरे लडकेने वह फरमान और एक चिट्ठी सूपकर्ण व हरिदासके ज़रियेसे वहां भेजी, व इन दोनों सरदारोंके साथ शुक्रउल्ला व सुन्दरदासको भी रवाना किया। उसने रानासे कहला भेजा कि वह हमारे सादेपन और नेकीपर यकीन करके बादशाहके इस दस्तखती परवानेको कबूल करें। बाद इसके २६ तारीखको राना साहबका शाहज़ादेके पास आना क़रार पाया"

"शिकार खेलनेके लिये जब मैं अजमेर गया, उस वक्त शाहजादे खुर्रमका महम्मदबेगनामी नौकर मेरे पास आया उसने खुर्रमकी दस्तखती एक चिट्ठी मुझको देकर कहा कि रानाने शाहजादे साहबसे मुलाकात की थी।"

"इस खबरको सुनते ही मैंने महम्मदबेगको एक हाथी, एक घोडा और एक छूरी ईनाम दी, व उसको "जुलफिकारखाँ" के नामसे पुकारा। (यानी उसको जुलफिकारखाँकी पदवी दी)"

"सुलतान खुर्रमके साथ राना अमरसिंहकी और राजकुमार करनके साथ सुलतान खुर्रमकी मुलाकात और बेगम नूरजहाँका करनको इज्जतके साथ ओहदा देनेका बयान।"

"राना अमरसिंहने ता० २६ इकशम्बाके रोज़ बादशाहतके दूसरे मातहत राजाओंकी तरह इज्जत और लियाकतके साथ शाहजादेसे मुलाकात की। मुलाकातके वक्त रानासाहबने शाहजादे खुर्रमको एक बेशकीमत पद्मराग, बहुतसे हथियार जो कि तिलाई म्यानोंसे मढे हुए थे, बडी कीमतके साथ हाथी और नौ घोडे खिराजमें दिये। शाहजादेने भी उनको हलीमियत और इजतके साथ कुबूल किया। बादजाँ रानाने शाहज़ादेके घुटनोंको पकडकर माफी चाही, खुर्रमने भी अच्छी तरहसे उनको समझा बुझाकर दिलासा दिया, और एक हाथी, कई एक घोडे, एक तलवार व लायक खिलत भी उनको दिया। रानासाहबके साथमें जो राजपूत थे उनके लिये भी एकसौ बीस खिलत, पचास घोडे और रत्नोंसे जडे हुए बारह शिरपेच (कलगी) भेजे गये। अगरचे इन लोगोंमें सौ आदमियोंसे ज़्यादा इनाम पानेके लायक नहीं थे, तो भी यह सब सामान उनके दरम्यान बांट दिया गया। इन राजालोगोंमें एक रिवाज चला आता है कि बाप बेटे दोनों एक साथ हम लोगोंकी मुलाकातको नहीं आते हैं रानाने भी इस

—हाथमें हाथ देनेकी ही रीति है। शक और तातारवाले अपना पंजा किसी प्रकारके सन्धि पत्रपर, स्वीकृतिपत्रपर, या चुक्तिपत्रपर लगाया करते हैं। टाडसाहब कहते हैं कि बादशाह जहांगीरने राणा अमरसिंहके साथ सन्धि करके प्रमाणपत्रपर जो पंजा लगाया था वह राणाजीके दफ्तरमें अबतक वर्त्तमान है। वह कहते हैं कि लालचन्दनसे पांच उंगलियें भिगोकर उस प्रमाणपत्रपर लगायी हुई थीं। आजतक लाल रंगका पंजा स्पष्ट दिखाई देता है।

रिवाजके मुवाफ़िक काम किया; वह अपने लड़कोंको साथ नहीं लाये * उस दिन सुल-तान खुर्रमने अमरसिंहको रुख़सत कर दिया। रुख़सत होनेके वक्त उनसे बलीअहद करणके भेज देनेका अहद पैमान ले लिया। बकपर करण आया। हाथी, तलवार और छूरीके सिवाय तरह २ के खिलत उसको दिये गये, उस दिन ही शाहज़ादेके साथ वह मुझसे मुलाकात करनेके लिये आया।"

"सुलतान खुर्रमने मुझसे मुलाकात करके कहा कि अगर हुज़ूर हुक्म दें तो राजकुमार करण आपकी कदमबोसी हासिल करे, मैंने उसके लानेका हुक्म दिया। वह आजज़ी और अदबके साथ आया। बाद्ज़ाँ सुलतान खुर्रमकी सिफारससे मैंने उसको अपनी दाहिनी तरफ बिठलाया और एक उमदा खिलत दी। राजकुमार इस लिये शरमाया कि वह सख्त पहाड़ी मुल्कोंमें रहनेके सबब दरबारके कायदोंसे महज़ नावाकिफ और ऐश आरामके सामानोंसे बिलकुल नामालूम था। दरबार शाहीके दबदबेको उसने कभी नहीं देखा था। वह बहुत कम बोलता और इन लोगोंके साथ बहुत कम मिलना चाहता था। राजकुमार कर्णके दिलमें अपना यकीन करानेके लिये मैं रोज़ २ उसको अपनी कोशिश और अपनी मुहब्बतका एक न एक सबूत दिखलाता था। उसके मुकर्रर होनेसे एक दिन बाद मैंने उसको जवाहिरातसे जड़ी हुई एक छूरी और तीसरे दिन एक इराकी घोड़ा दिया। इस ही दिन मैं उसको बेगम नूरजहाँके पास ले गया। नूरजहाँने भी राजकुमारको सजासजाया हाथी, घोड़ा, तलवार और बहुतसे जवाहर ईनाममें दिये।"

"इस ही दिन मैंने भी उसको मोतियोंका एक बेबहा हार और दूसरे दिन एक हाथी बतौर ईनामके दिया। मेरी ज़ियादा ख्वाहिश थी कि शाहजादेको नफ़ीस और उमदा २ सामान दिया जावै। जिस वक्त मुझको कोई खूब सूरत और उमदा तोअफ़ा मिलता, मैं फौरन राजकुमारको दे देता। एक बार मैंने उसको तीन बाज और तीन तुरा जानवर दिये। वह जानवर यहांतक पोस मान गये थे कि हाथ बढ़ाते ही हाथपर आकर बैठ जाते थे। एक सजोवा और दो कीमती अँगूठियां भी उसको दी गईं और इस ही "महीनेकी पिछली तारीखको मैंने गलीचे, खूब सूरत ज़रीके कामकी आराम कुर्सियें, अतरकी शीशियें, तिलाई बरतन और दो गुजराती बैल दिये।"

"दशवाँ साल। इसवक्त करनको उसकी × जागीरमें जानेके लिये छुट्टी दी। रुखसतके वक्त एक हाथी, एक घोड़ा, और एक मोतियोंका हार जिसकी कीमत ५००००) रुपया

---

* टाडसाहब कहते हैं कि मुसलमानोंकी विश्वासघातकतासे शंकित हो हिन्दू राजालोग पुत्रके साथ शत्रुके यहां नहीं जाते थे।

× शोक है! कि स्वाधीनताकी खानि पवित्र चितौरपुरीके स्वामी बाप्पारावलके वंशधर गण आज इस नीच और कलंकित नामसे पुकारे गये। हा प्रताप! हा आर्य कुल-गौरव-रवि! तुम कहां हो? भगवन्! तुम तो आज इस वंशगानय कलंकसे छुटकारा पाकर अनन्तधाममें परमानंदसे विहार कररहे हो परन्तु तुम्हारी "स्वर्गादपि गरीयसी" पवित्र मेवाड़भूमिको आज मुगलमानोंने जागीरके नामसे पुकारा!

थी, दिया। उस बार कर्ण जितने दिनतक मेरे दरबारमें रहा, उतने अरसेमें उसको जितना सामान मेरे यहांसे मिला, उसकी कीमत दश लाखसे ज़ियादा होगी, उसमें उस ईनाम और सामानकी कीमत नहीं लगाई गई है जो शाहज़ादे खुर्रमने राजकुमारको दिया था। मैंने मुबारकखाँको करनके साथ रवाना किया और उसकी मारफत रानासाहबको एक हाथी, व घोडे वगैरह और कुछ पोशीदा खबरें भी भेजीं।"

"हिजरीसन् १०२४ सफरमहीनेकी आठवीं तारीखको शाहज़ादे कर्णके लिये पांचहजारी मनसबदारी दी गई * इस वक्त मैंने उसको एक कंठा भी ईनाममें दिया था कि जिसमें पन्ने लगे हुए थे।"

"बाद इसके मुहर्रमकी २४ तारीखको (सन् १६१५ ई०) कुमार कर्णका लडका जगतसिंह--जिसकी उम्र बारह वर्षकी थी, दरबारमें आया। उसने अदबके साथ आदाब बजा लाकर अपने वालिद और दादाकी अर्जी पेश की। उसके आलीखान्दानमें पैदा होनेका सबूत साफ़ २ उसके चेहरेसे ज़ाहिर हो रहा था × उसके साथ कुल वर्ताव महरबानीसे किया गया, मैं तरह २ को बखशिशें देकर उसको खुश करने लगा।"

"सावनके दशवें दिन जगतसिंह मेरी इजाज़त लेकर अपने मुल्कको गये। वक्तरुखसतके मैंने उसको (२००००) रुपये, एक घोडा, हाथी और तरह २ के खिलत दिये। राजकुमार कर्णके उस्ताद हरिदास झालाको (५०००) रुपये एक घोडा और खिलत और उस हीको मारफत रानाजीके पास सोनेकी छः + मूर्तियें भेजीं।"

"तारीख २८ रबि-उल-अव्वल। आज मेरी सलतनतका ग्यारहवाँ साल है। मेरे हुक्मसे रानासाहिब और उनके लडके कर्णकी दो मूर्तियाँ बनाई गई, यह मूर्तियें संगमरमरकी बनी थीं। जिस दिन वह दोनों मूर्तियें तैयार करके मेरे पास लाई गई,

---

* भट्टग्रन्थोंमें देखा जाता है कि राणाजीको मनसबदारीके वक्त खैरार, फूलिया, बेदनूर, मंडलगढ, जीरन, नीमच और भिन्सरोर इत्यादि परगने मिले, इसके अतिरिक्त उनको देवला और डोंगरपुरके भागोंपर भी अधिकार मिला था।

× सर टैम्स रो इङ्गलेंडके पहिले जेम्सके पाससे दूत होकर जहांगीरके पास आया था। हिन्दोस्थानमें आकर बादशाह और राजाओंके सम्बन्धमें जो पत्र उसने इङ्गलैण्डको भेजे थे, उनमें भी बहुतसी ऐतिहासिक बातें पाई जाती हैं। कन्टरबारीके प्रधान याजकके पास जो पत्र उसने २९ जनवरी सन् १६१५ई० को भेजा था, पयोजन समझकर यहां उसका कुछ अनुवाद किया जाता है। "महाराज पुरुके धर्मसम्मत वंशधरगण मुगलोंकी बादशाहीमें राजा बनकर रहते हैं। गतवर्षके पहिले कभी कोई इनको पराजित नहीं कर सका था। परन्तु यदि सत्य बात कही जाय तो यह कहना होगा कि यह लोग मोल लेकर यहां लाये गए हैं। इनका मुगलसम्राटोंकी वश्यता स्वीकार करना असिबलका प्रभाव नहीं, बरन उपहारादिकी मोहिनी शक्तिका प्रभाव है।"

+ टाडसाहब कहते हैं कि "इस प्रकारकी मूर्तियोंका वृत्तान्त बहुधा पाया जाता है, परन्तु वह किसकी मूर्तियें होती हैं और उनका मूल्य क्या होता है, सो नहीं जान पडता।"

उस ही दिनकी तारीख उनपर खुदवा कर उन्हें आगरेके बागमें फरोकश करनेका हुक्म दिया।"

"मेरी सलतनतके ग्यारहवें वर्षमें एतमादखाँने मुझको लिख भेजा कि सुलतान खुर्रम रानाजीके मुल्कमें गये। वहांपर राना और उनके लडकेने सात हाथी, सत्ताईस घोडे, जवाहरात और तिलाई गहने वगैरह नज़रानेमें दिये थे। इस नज़रानेमेंसे सुलतान खुर्रमने सिर्फ तीन घोडे लेकर बाकी सब सामान फेर दिया। उस दिन यह बात भी करार पाई कि राजकुमार कर्ण मय पंद्रह सौ (१५००) राजपूतोंके मयदान जंगमें शाहज़ादे खुर्रमके पास रहें।"

"अपनी सलतनतके तेरहवें वर्षमें कि जिस वक्त मेरा दरबार अिंदलामें लगा हुआ था, वहीं पर राजकुमार कर्णने आकर मुझसे मुलाकात की। मुझको मुल्क दक्खनमें जो फतह और कामयाबी हासिल हुई थी, उसके लिये खुशी जाहिर कर करनसिंहने १०० मोहर, १०००) रुपये तरह २ के नज़राने और २१०००) रुपयेके सोनेचांदीके जेवरात व बहुतसे हाथी, घोडे मुझको दिये। हाथी, घोडोंको वापिस करके बाकी सब नजराना मैंने ले लिया, दूसरे दिन मैंने उसको खिलत देकर फतेहपुरसे लौट जानेका हुक्म दिया। वक्त रुखसतके उसको एक हाथी, एक घोडा, तलवार व कटार और उसके बापके लिये एक उमदा घोडा यह सामान दिया"।

"चौदहवाँ साल। तारीख १७ रबीउल अव्वल हिज़री सन् १०२९ को मैंने अमरसिंहके बहिश्तनशीन होनेकी ख़बर पाई। रानाका बेटा भीमसिंह और पोता जगतसिंह यह ख़बर लेकर मेरे पास आये थे। उनको मैंने तरह २ के खिलत दिये और राजा किशोरीदासकी मारफत एक चिट्ठी जिसमें तसल्ली दी गई थी, कितने एक उमदा घोडे, तख्तनशीन होनेका ज़रूरी सामान रवाना करके कर्णसिंहको "राणा" का खिताब दिया। बादजा ७ वीं सव्वालको बिहारीदास वर्मनकी मारफत एक फरमान जिसपर मेरा पंजा लगा हुआ था—रवाना करके कहला भेजा कि उनका लडका मुकर्रिर फौज़को साथ लेकर मेरे पास हाज़िर हो।"

सम्राट् जहांगीरका हस्ताक्षरित वृत्तान्त यथार्थरीतिसे अनुवादित हुआ। इस समय प्रयोजन समझ कर कुछ विलम्बतक इसकी समालोचना की जायगी। जहांगीरका हृदय अति ऊंचा और महान् था, उसके लिखे हुए वृत्तान्तको पढनेसे ही यह बात भली भांतिसे प्रमाणित होती है। उस वृत्तान्तकी प्रत्येक पंक्ति और प्रत्येक शब्दसे उसकी महानता और उच्च हृदयताका पूर्ण परिचय दिखाई देता है। वीरकेशरी प्रतापसिंहके वीरपुत्रपर जय प्राप्त करके जो असीम आनंद उसको प्राप्त हुआ था, उसके द्वारा उनके महत्त्वका और भी अधिक विकाश हुआ। उस आनंदकी गंभीरतासे बादशाह जहांगीरका हृदय विचलित नहीं हुआ था उन्होंने अपने स्वाभाविक महत्त्वको नहीं छोड दिया। यद्यपि आद्योपान्त सूक्ष्मदृष्टिसे देखा है, निरपेक्षभावसे वर्णन किया है, तथापि दो एक स्थानोंमें भ्रम पाया है। जहांगीरको यह समाचार विदित नहीं

था कि कौनःभी महाशक्तिके प्रभावसे गिह्लौटवंशके राजालोग यवनोंके कठोर आक्रमणको व्यर्थ कर देते थे;—इस ही कारण भ्रमवश हो बादशाहने उनके आत्मसमर्पणका दूसरा कारण निर्देश किया है। ऐसा करने पर भी उन्होंने शिशोदीय वीर अमरसिंहके वीरगर्वकी अवमानना या खर्वता साधन नहीं की है। वह अमरसिंहके वीर गर्वको समझ गए थे—उस ही वीर वर्गसे बलवान होकर कहा था, "स्वदेश छूटेगा, अथवा बन्दित्व स्वीकार करना पडेगा" यह जानकर विवश हो राणाजीने अंतमें मस्तक झुकाया था। मर्माहत निरुपाय आश्रयहीन राजपूतकेशरीकी कठोर हृदयपीडासे जहांगीरके हृदयमें भी चोट लगी थी, इस ही कारण वह इस बातको समझ गये थे, और राणाजीकी विनयके अनुसार सब बातोंका प्रबन्ध किया था। जिस समय राणा अमरसिंह सब भांतिसे हताश हो गये थे, उस ही समय उन्होंने बादशाहको मस्तक नवाया था; उस ही समय उन्होंने और हिन्दू राजाओंके समान बादशाहके दरबारमें रहकर उसकी सेवा करना स्वीकार किया था; यद्यपि सेवा करना स्वीकार किया, परन्तु यह समझ कर कि स्वयं हमसे यह कठोर अपमान न सहा जायगा।—अपने पुत्र कर्णको भेजकर क्षमा प्रार्थना की थी। बादशाह समझ गया कि बडे कष्टसे वीरवर अमरसिंहने इन बातोंको कहा है, हृदयको छिन्न भिन्न करके यह कई एक शब्द उनके मुँहसे निकले हैं। जो गिह्लौट वीरगण सहस्र वर्षसे स्वाधीनताका सुख भोगते चले आते हैं, पराधीनताका नाम भी जिन्होंने कभी नहीं सुना, क्या यह साधारण पश्चात्तापकी बात है कि उनके ही वंशमें जन्म लेकर आज भाग्यहीन अमरसिंहको ब्रह्माकी दारुण करतूतके कारण उस स्वर्गीय स्वाधीनतासे अलग होना पडा! बादशाह जहांगीरने अपने हाथसे उनके गलेमें पराधीनताकी जंजीर पहिराई थी, अपने हाथसे गौरवमय आसनसे उतार कर उनको पाताली कुँएमें डाल दिया था। मंत्रसे बँधा हुआ अजगर जिस प्रकार विवश हो जाता है, वैसे ही अमरसिंहने भी इस अपमानको सहा, जिसको राजपूत वीरगण किसी प्रकारसे नहीं सह सकते हैं। अमरसिंहको वही अपमान सहना पडा था। नहीं तो उनके प्रत्येक अंगमें जो भयंकर आग जलती थी, उनकी प्रत्येक शिरामें जो तीक्ष्ण घाव लगा था, उसकी पीडा किसी प्रकारसे कोई दूसरा नहीं सह सकता। यदि कोई दूसरा होता, तो निश्चय ही उसकी छाती फट जाती, इन बचनोंको उच्चारण करनेसे पहिले उसकी रसना जडताको प्राप्त हो जाती। दलित और पीडित प्राण स्वयं ही शरीरसे बिदा हो जाता! अमरसिंहके हृदयमें इस प्रकारका कष्ट उत्पन्न हुआ था, परन्तु केवल अद्भुत सहन शीलताके बलसे ही वे इस कष्टको झेल गये थे; कारण उन्हें ज्ञात था कि मनुष्य होकर जिसने सहन शीलता न सीखी, वह मनुष्यनामके योग्य नहीं है, उसका मनुष्य देह धारण करना केवल विडम्बना ही है। यह अपूर्व तत्त्वज्ञान केवल अमरसिंहका ही नहीं था, बरन उनके पवित्र गिह्लौटकुलमें यह सनातनसे गुण मानकर व्यवहार किया जाता है।

"आज अमरसिंहने उस ही गुणकी कार्यकारिताको दिखाया। आज उस प्रचंड सहिष्णुताकी सीमाको उन्होंने दिखा दिया। स्वाधीनताके लोप हो जानेसे उनके हृदयमें कठोर पीड़ा हुई थी इस बातको बादशाह भी समझ गये थे। सम्राट्का हृदय भी इससे व्यथित हुआ था। इस ही कारणसे बादशाहने राणाके अनुरोधकी रक्षा करके कहा था कि हरेक तरहसे उस मुअज्जिज़ राणाकी मनशाय और ख्वाहिशके मुआफिक काररवाई करनेमें कसर न की जाय। *"

यद्यपि यह बात सत्य है कि वीरश्रेष्ठ प्रतापसिंहके पुत्र अमरसिंहपर विजय पाकर बादशाह आनन्दित हुए थे; परन्तु उनके इस आनंदमें अत्यानंद नहीं था, उसमें हीन-जनोंके समान प्रगल्भता नहीं थी; वरन वह आनंद शान्त और सरलतामय था। देशके गृह २ में साधारण आनन्दोत्सवकी तैयारी न कराकर बादशाहने केवल राणा-जीके प्यारे हाथी आलमगुमानपर सवार हो दीन दरिद्रोंको धन दान किया था, इससे ही उनके उस गंभीर-तथा शान्त आनन्दका विकाश स्पष्टतासे दिखाई देता है। राणा-पर विजय पाकर उन्होंने अपनेको गौरवान्वित समझा था; कारण कि उनको ज्ञात था कि शिशोदीय वंशके राजा ही राजपूतोंमें श्रेष्ठ होते हैं। उस वीरपूज्य श्रेष्ठ राज्य वंशके ऊपर जय प्राप्त करनेके लिये उसके दादे परदादेने कितना परिश्रम किया था, परन्तु अनन्त धन और अगणित सेनाका प्राण देकर भी उनकी चेष्टा फलवती नहीं हुई थी। आज जहांगीरसे वह कार्य हो गया, इस ही कारणसे उसने अपनेको गौरवान्वित समझा था। जो खड्गबलसे नहीं हुआ;--नृशंसता, स्वार्थपरता और सर्वग्रासके पापमंत्रसे दीक्षित हो पाशव असिबलके प्रयोगसे उनके पूर्व पुरुषगण जिस कार्यको सिद्ध नहीं कर सके; सत्रहवार बराबर कठोर समरभूमिमें आय अगणित हिन्दू मुसलमानोंके रुधिरको गिराकर वह स्वयं जिस कार्यको इतने दिनोंतक सिद्ध नहीं कर सके थे, आज उनके परम धार्मिक पुत्र सुलतान खुर्रमने अपने सदाचरण और सद्व्यवहारसे उस कार्यको सिद्ध कर दिखाया। वह जानता था कि भारतवर्ष पशुबल या खड्गकी सहायतासे झुकनेवाला नहीं है। इस गूढ़ तत्त्वको जाननेके कारणसे ही उस वीर पुत्रने सरलतासे राजपूत राजाओंको अपने वशमें कर लिया था। मुगलोंके सिवाय और किस विदेशी राजाने इस तत्त्वको जाना है कि भारत पशुबल या असिबलसे शासित नहीं हो सकता? और कौनसी जाति है कि जिसने हिन्दुओंपर जय पाकर अपनेको कृतार्थ समझा हो? अतीतकी साक्षी देनेवाला इतिहास आज मुगलोंकी उदारताको संसारके सामने अगणित मुखसे वर्णन कर रहा है। सूक्ष्मदर्शी निरपेक्ष जहांगीरकी पवित्र लेखनी आज सभ्यजगमें एक नवीन सत्यकी जय जयकार पुकार कर ढंढोरा पीट रही है; उस घोषणापत्रको पढकर संसार जान ले, संसारके समस्त राजा-लोग इस बातका ध्यान रक्खे कि-"भारत खड्गकी सहायतासे अथवा पाशव बलसे शासित नहीं होगा।"

* बादशाहकी यह आज्ञा उचित रीतिसे प्रतिपालित हुई थी।

बादशाह जहांगीरने मेवाडके राणाको पराजित करके अपनेको गौरवान्वित समझा । इस ही कारणसे उन राणाके बडे पुत्र कर्णको अपनी दाहिनी ओर अर्थात् भारतवर्षीय समस्त राजाओंके ऊपर--आसन दिया था । इस प्रकारसे राजपूत राणाके साथ बादशाहके जिस किसी वर्तावका वृत्तान्त पाठ किया जाता है उससे ही उनका उदारपन, वीरोचित गौरव और शिष्टाचारका उत्तम परिचय पाया जाता है । शिशोदियाकुलकी मानमर्यादा और शिशोदियाकुलके राणाको सदा सुखमें रखनेके लिये मानो जहांगीरशाहको सदा ही चिन्ता लगी रहती थी । परन्तु एक स्थानमें बादशाहने भ्रमसा पाया है उन्होंने मंत्रौषधिसे वशमें आये भुजंगशिशु कर्णके हृदयका भाव न जान करके भ्रान्त चित्तसे कहा है कि "कर्ण शरमीला है ।" परन्तु विचारकर देखनेसे कर्णकी वह "लाज" एक अधिक ऊंचे गौरवमय अभिधानमें नाम पानेके योग्य है । राजकुमार कर्णने प्रसिद्ध और पवित्र गिह्लौट् वंशमें जन्म लिया है, उनके पिता महाबलवान शतराजाओंके वंश--धर हैं। उनकी जन्मभूमि आर्य गौरव गरिमा और स्वाधीनताकी लीलाभूमि है । उस वीरोत्पन्नकारी पवित्र मेवाडक्षेत्रमें जन्म लेकर, उस योग्य पिताके पवित्र औरससे जन्म लेकर, उस जगत्पूज्य वीरवंशमें उत्पन्न होकर म्लेच्छोंके दास हुए। उनके बडे बूढोंने प्राण रहते हुए म्लेच्छोंको मेवाडभूमिकी सीमामें भी पांव न रखने दिया । जिनके साथ सम्बन्ध करनेके कारण कलंकित कहलाए जानेसे जिन सजातीय लोगोंको उनके बडे बूढोंने छोड दिया है, जिन लोगोंको उन्होंने "दैत्य दानव" आदि घृणा सूचक नाम दे रक्खे हैं, आज विधाताने उनको उस ही म्लेच्छका--उस ही घृणित म्लेच्छका दास बनाया; सहाय--आश्रय--उपाय--अवलंबन छीनकर सदाके शत्रु उन यवनोंकी अधीनतारूपी जंजीरमें बांधा;--कर्णके समान तेजस्वी राजकुमारका हृदय किस प्रकारसे इस दुःखको सहन कर सकता है ? राजकुमार कर्ण भी प्रसिद्ध शिशोदिय कुलका योग्य राजपुत्र हैं, उसका हृदय अवश्य ही इस पराधीनतासे दुःखी हुआ होगा। परन्तु जिनको राजपाटसे कोई भी संबन्ध नहीं है;-जिनके पास तिलभर भी व्यक्तिगत स्वाधीनता नहीं है; जन्मभूमिकी दुरवस्था देखकर,जातीय स्वाधीनताका लोप होना देखकर उन लोगोंका हृदय भी क्षुभित, मथित और चुटैल हो जाता है, और जिसके हृदयमें इस अवस्थाको देखकर दुःख नहीं होता, उसमें आदमीपन कहां है ? वह मनुष्यनामके योग्य नहीं है। कर्ण राजपूत होकर उस स्वाधीनताको खो बैठा । उनके बडे बूढोंकी वीरत्व गौरव और स्वाधीनताकी खानि मेवाडभूमि म्लेच्छोंके द्वारा "जागीर" नामसे पुकारी गई; जिस शत्रुने उन्हें इस शोचनीय दशाको पहुंचाया, वह किस प्रकार--हिलमिलकर उससे बात चीत करें ? उस ही शत्रुने उनको सन्तुष्ट करनेके लिये अधीनतारूपी जंजीरका भार कम कर दिया है, उनको हिन्दूराजाओंमें ऊंचे आसन पर स्थापित किया है, सदासे अलग हुए गोढ्वार राज्यको फिर दिला दिया "पांच हजारी सेनापति" के पदपर वरण किया; यह सब सत्य है--यह समस्त कौशल ही सुन्दर है; परन्तु इन सबके बदलेमें जो एक अमूल्य धन जाता रहा है, यदि उसके साथ मिलान किया जाय तो इन्द्रकी अमरावती और कुबेरका धनागार भी अतिहीन व तुच्छ

जान पडता है। कर्ण उस अमूल्य रत्न--"स्वर्गादपि गरीयसी" उस अमूल्य स्वाधीनता रत्नसे वंचित हुए; उस रत्नके उद्धार करनेका अब कोई उपाय नहीं है, इस बातको विचारकर ही वह चुपचाप रहते थे। इस ही कारणसे बादशाहने उनको "शरमीला" और "कमगो" कहकर वर्णन किया है।

उदार हृदय जहांगीरने राना अमरसिंहको जैसा मान दिया था, जैसा उनका गौरव किया था, जीतनेवालेसे किसी और पराजित राजाने भी ऐसा सन्मान या गौरव पाया है? हमको तो इस विषयमें सन्देह ही है। परन्तु तेजस्वी अमरसिंहके हृदयमें वह सन्मान और गौरव कांटेके समान खटकता था। बादशाहके दिये हुए सन्मान और गौरवका वह जितना विचार करते थे, उतना ही उनका हृदय उस कांटेके लगनेसे खटकता था। उस दारुण कष्टके प्रचंड पीडनसे कभी २ वह उन्मत्तसे होकर खुर्रमकी महानता व उदारता और जहांगीरके उस सन्मान और व्यवहारको हज़ारों बार धिक्कार दिया करते थे। राजपूतबालाके गर्भसे उत्पन्न होनेके कारणसे सुलतान खुर्रम * राजपूत वीरोंका अत्यन्त आदर सत्कार करता था। उसकी अकपट भक्ति आदर और राजपूतानुरागसे ही मोहित हो तेजस्वी अमरसिंहने जहांगीरकी वश्यता स्वकिार की और उसके साथ मित्रता करनेके लिये अपनी सम्मति दी थी। नहीं तो सम्पूर्ण जीवनभर समर सागरमें तैरते रहनेपर भी और कठोर अत्याचारसे पीडित होनेपर भी वह इस प्रस्तावको कभी स्वीकार नहीं करते। खुर्रमका स्वभाव अत्यन्त सरल और उदार था तथा उसके वाक्य भी वैसे ही मनोहर और सरल थे। खुर्रमकी वाक्यावली मानो अमरसिंहके कानोंमें अमृतकी वर्षा करती थी। इस शाहज़ादेने राणाजीके साथ सन्धि करनेकी वासना करके उस सन्धिके मूल्यमें उनकी मित्रताकी प्रार्थना की थी, और राणाजीसे कहला भेजा था कि "अगर आप शहरसे एक बार बाहर आकर बादशाहके फरमानको, जिस पर उनका पंजा लगा हुआ है, ले लेंगे, तो मैं उस ही वक्त कुल मुसलमानोंको मेवाडसे दूसरे मुकदूँगामपर भेज दूंगा-फिर आप मुसलमानोंके नामको बू, तक भी मेवाडमें नहीं पावेंगे"। इस वाक्यके श्रवण करनेसे तेजस्वी राणाका उदार हृदय प्रचंड तेजसे उफन उठा। उन्होंने शाहज़ादेका कहना स्वीकार न किया। वीरकेशरी प्रतापसिंहके पुत्र होकर—क्या वह एक मनुष्यकी-विशेषकरके स्वाधीनताके हरण करनेवाले मुगलकी अधीनताको स्वीकार करेंगे? देहमें प्राण रहते हुए वह कभी इस अपमान सूचक वाक्यको उच्चारण नहीं कर सकेंगे। यद्यपि उन्होंने सुलतान खुर्रमसे मित्रके समान साक्षात् किया तो, परन्तु उसके प्रस्तावको नहीं माना, वरन दर्प सहित उसके कहनेको अस्वीकार किया।

---

* अम्बेरके कछवाहे वंशकी राजकुमारीसे खुर्रमका जन्म हुआ था। इस ही कारणसे रसिक भट्टगणों ने उनको कच्छप कुलोत्पन्न कूर्म नामसे पुकारा है। अत एव खुर्रम और कछवाहेके बदले कूर्म और कच्छप नामका व्यवहार होता है।

जिस दिन सुलतान खुर्रमने राणाजीके पास यह प्रस्ताव भेजा, उस ही दिन उन्होंने राज्यभारको छोडकर शान्तिमयी मुनिवृत्तिको धारण करनेकी दृढ प्रतिज्ञा की। उस प्रतिज्ञाके पूर्ण होनेमें थोडा ही विलम्ब हुआ। खुर्रमके साथ साक्षात करके जब वह लौटे तब उन्होंने तत्काल सरदारोंको अपने पास बुलाया और उनके सामने अपनी प्रतिज्ञाको प्रकट किया तथा पुत्रके माथेपर राजटीका अर्पण करके राज्यसे विदा ली *। विदाके समय प्रणत पुत्रके शिरको चूमकर उन्होंने धीर गंभीर भावसे कहा "बेटा! देखियो, मेवाडका सम्मान गौरव इस समय तुम्हारे ऊपर ही निर्भर करता हूँ।" यह कह राजधानीको छोड राजनचौकी× के गिरिगहनमें सुख दुःखसे एक प्रकार अपने जीवनके दिन बिताने लगे। उस दिनसे फिर कभी उन्होंने उस तपसाश्रमको नहीं छोडा था और न राजधानीमें आये थे। जब संवत् १६७७ (सन् १६२१ ई०) में उनका पवित्रात्मा इस लोकको छोड स्वर्गमें चला गया, जिस दिन पाँच तत्त्व पांच तत्त्वोंमें मिल गए, उस ही दिन उनके देवदेहकी पवित्र भस्म, उनके पितृपुरुषोंकी भस्मराशिके साथ एकत्र रक्षित होनेके लिये राजभवनमें लाई गई।

अमरसिंहके देवचरित्रकी और विशेष क्या समालोचना कीजाय। वह वीरकेशरी प्रतापसिंहके योग्य पुत्र और पवित्रगिह्लौटकुलके परम पवित्र राजा थे। शारीरिक और मानसिक गुणग्राम जो वीरोंके अंगभूषण समझे जाते हैं; अमरसिंहमें वह समस्त ही गुण थे। मेवाडके समस्त राजाओंसे वह अधिक ऊंचे और अत्यन्त बलवान थे, परन्तु उनके समान महाराणा अमरसिंहका रंग गोरा नहीं था। उनके मुखमंडलपर शोक और गंभीरताकी कालिमा बहुधा दिखाई दिया करती थी, परन्तु यह भाव उनका प्रकृतिगत नहीं था। ज्ञात होता है कि जन्मभर विपत्तिके अंकुशसे पीडित होनेके कारण उनके वदनमंडलपर यह शोककी छाया पड गई थी। उदारता, वीरता, दया तथा न्यायपरायणता इत्यादि गुण ही राजपूतराजाओंके प्रधान गुण समझे जाते हैं, इन समस्त गुणोंके होनेसे ही सेना, सामन्त, इष्ट मित्र और प्रजाके मनुष्य देवभावसे अमरसिंहकी पूजा करते थे। राणाजीकी अपूर्व गुणगरिमाका अद्भुत वृत्तान्त भट्टग्रंथ, राजस्थानके अनेक स्तंभ और पहाडोंपर लिखा हुआ बहुतायतसे पाया जाता है।

---

* संवत् १६७२ (सन् १६१६ ई० में) राना अमरसिंहने अपने पुत्रको राज्यभार दिया था। परन्तु तवारीख फरिस्ताके अनुवादक महानुभाव डौ साहब कहते हैं कि संवत् १६६९ (सन् १६१३ ई०) में राज्यभार दिया था।

× टाडसाहब कहते हैं कि उक्त स्थानमें ही सुलतान खुर्रमने राणाजीसे मुलाकात की थी। नगरके उत्तरकी ओर एक गिरिमालाके ऊपर अबतक उस राजनचौकीका खण्डहर पडा है। इसको राणा उदयसिंहने बनवाया था।

द्वादशवाँ अध्याय।

कर्णके द्वारा उदयपुरका दृढ होना और उसकी शोभाका बढ़ाया जाना,--सम्राटकी सभामें जानेसे राणाओंका छुटकारा पाना; सम्राटकी सहायताके लिये राणाकी दी हुई सेनाके ऊपर भीमका सरदार होना;--परवेजके विरुद्ध सुलतान खुर्रमके साथ भीमका षड्यंत्र; राजद्रोहियोंके ऊपर जहांगीरका आक्रमण; भीमका मारा जाना; उदयपुरमें खुर्रमका भाग जाना; उसको मानसन्मानके साथ राणाका ग्रहण करना; राणा कर्णका परलोक जाना; राणा जगतसिंहका राजसिंहासन पर बैठना; जहांगीरकी मृत्यु और शाहजहां नामको धारणकर खुर्रमका सिंहासनपर बैठना; मेवाडमें गंभीरशान्तिका हो जाना, पेशोलाके वक्षविहारा द्वीपमें राणाका महल बनवाना; चित्तौरका पुनर्बार संस्कार;--जगतसिंहका मृतक हो जाना;राणा राजसिंहका राज्याभिषेक;शाहजहांको पदसे उतारकर औरङ्गजेबका सिंहासनपर बैठना, जहांगीर और शाहजहांका हिन्दुओंकी प्रेमिकताके विषयमें यथार्थ कारण निरूपण; औरंगजेबके चरित्रोंका विवरण, राजपूतोंके ऊपर उसका "जिजेया" वा मुंडकर स्थापन; रूपनगरकी राजकुमारीके साथ औरङ्गजेबके विवाहका सम्बन्ध; उसको हरण करके राणा राजसिंहका अपने नगरमें आना;--सम्राटके विरुद्ध युद्धका उद्योग; औरंगजेबका युद्धयात्रा करना; गिरवाकी उत्पत्ति, राजकुमार अकबरकी पराजय;--उसका गिरिसंकटमें फँसना; राणाके ज्येष्ठ पुत्रसे अकबरका संकटोद्धार;- दिलेरखांकी पराजय; राणा और उनकी सहायता करनेवाले राठौरगणोंसे औरंगजेबका अपमान; औरंगजेबका युद्धभूमिसे भाग जाना;--राजकुमार भीमका भयंकर आक्रमण;--राणाके मंत्रियोंसे मालवेका लूटा जाना; एकत्रित होकर राजपूतोंके दलका चित्तौरसे अजीमको परास्त करके उसको भगा देना;मुगलग्राससे मेवाडका उद्धार;--मारवाड़में भयंकर युद्ध;एकत्रित हुई शिशोदिया और राठौर शक्तिके बलसे सुलतान अकबरकी पराजय;--राजपूतोंका षड्यंत्र;--औरंगजेबको राजपदसे उतारकर अकबरको सिंहासनपर बैठालनेकी कल्पना करना; कल्पनाका निष्फल होना;--राणाके साथमें मुगलसम्राटकी संधिका विचार;--संधिका हो जाना; भयंकर आघातके लगनेसे राणाका मृतक होना;--राणाके चरित्रकी और औरंगजेबके चरित्रकी समालोचना;-समुन्दसरोवर; भयंकर दुर्भिक्ष और महामारी;--

मेवाड राज्यके शेष स्वाधीन नृपति महाराज अमरसिंहके ज्येष्ठपुत्र कर्ण अपने पिताके छोडे हुए राजसिंहासनपर संवत् १६७७ (अर्थात् सन् १६२१ ई.) में बैठे;--आज इस राजस्थानमें नंदनकाननके समान स्वाधीनताकी लीलाको छोड कर वीरोंकी मेवाडभूमिमें वह गौरव और वह प्रकाश नहीं है कि जिस गौरवसे गौरवान्वित होकर मेवाडकी भूमि एक समय सभ्य जगतकी शिरोमणि हुई थी; एक समय सूर्यवंशीय

बाप्पा रावलके वंशवाले जो कि एक प्रचंड सूर्यकी किरणोंके समान अमित तेज धारण किये हुए थे; आज वह गौरव इस मेवाडभूमिसे चला गया, यह मेवाडराज्यकी भूमि इस समय विषादके मारे श्मशानके समान हो गई है,—मेवाडके वह सूर्यकी प्रभाके समान राजपूतगण उस प्रखर ज्योतिको खोकर सामान्य नक्षत्रोंके समान क्षीणतेज होकर गिरे हैं; आज इस भारतके हिन्दूराजाओंकी समाजमें यह हीन दशा उपस्थित हो गई है, उनका तेज नहीं रहा; ज्योति नहीं है; कान्ति उनकी जाती रही; वह लोग अपनी शक्तिको खोकर दूसरोंकी शक्तिके आकर्षणसे खिंचकर अपनेको भूल गये, तथा प्रचंड मुगलरूपी सूर्यके चारों ओर घूमते फिरते हैं। जो महती शक्ति एक समय हिन्दुओंके रोमरूपी सूर्यसे निकलकर समस्त भारतवर्षके राजाओंकी गतिको रोकती थी; आज वह इस मुगलसूर्यसे परास्त हो गई है इस मुगल सूर्यके प्रचंड तेजको रोकनेकी किसी हिन्दु-राजामें सामर्थ्य नहीं है; कालके वशसे ही इसने उस तेज और उस शक्तिको पाया है, और कालके वशसे ही यह उनसे रहित हो जायगा; इस संसारमें अवश्य होनहारका नियम चला आया है, इस समस्त संसारमें कोई भी उस नियमको उल्लंघन नहीं कर सकता; उस उल्लंघन न करने योग्य नियमके ही आधीन होकर "हिन्दूसूर्य" बाप्पा रावलके वंशवाले अपने तेजसे हीन हो गये हैं और मुगलसूर्यकी प्रचंड शक्तिसे खैंचे जाकर साधारण नक्षत्रोंके समान उसके चारों ओर घूमते हुए फिरते हैं; यद्यपि वह लोग इस मुगलकी उस प्रचंड शक्तिको खैंचते तो हैं, परन्तु समय २ में उसकी गतिको नियमानुसार नहीं रोक सकते हैं, बिना अभ्यास किये हुए चरणोंसे घूमकर उस आकर्ष-णसे खिंचकर, कि जिसका उनको अभ्यास नहीं था वह समय २ पर अपने स्थानसे भ्रष्ट हो अपने स्वभाव और तेजकी तीक्ष्णताका प्रकाश करते हैं।

यद्यपि गौरववान वीरोंमें श्रेष्ठ बाप्पा रावलके वंशवाले अपनी पहली शक्ति और तेजको अपने अधिकारसे खो चुके थे, परन्तु तो भी वे अपनी पहली स्मृतिको नहीं भूल सकते, उस स्मृतिसे ही उनका जीवन है, उसके खोनेसे इनका अस्तित्व भी जाता रहेगा, राज-पूतोंका नामतक इस संसारसे सर्वदाके लिये उठ जायगा, जिस दिन वीरकेशरी महा-राज कनकसेनने सौराष्ट्रके शिखरपर अपनी विजयवैजन्तीको गाडा था, उस दिनसे लेकर आजके समयतक कि जिसका हम वर्णन करनेके लिये तैयार हैं, डेढहजार वर्ष व्यतीत हो गये हैं इस दीर्घकालके बीचमें अदृष्ट चक्रके बराबर घूमनेसे उन वीरों-के वंशकी अवस्था जैसी हो गई थी उसका वर्णन हम पहले ही भली प्रकारसे कर आये हैं, वह अवस्था प्रकाशित होकर चित्रके समान आजतक भी हमारे नेत्रोंके सामने ज्योंकी त्यों दिखाई दे रही है। सन् ईसवीकी दूसरी शताब्दीके बीचमें सूर्यवंशके महा-राज कनकसेनने लोहकोटको छोडकर सौराष्ट्रके किनारेपर अपनी विजयकी पताका-को स्थापन किया, वहां उनके वंशवालोंका शताब्दियोंतक राज्य करना, धीरे २ शिला-दित्यका आविर्भाव,—असभ्य पारद लोगोंका आक्रमण, उस आक्रमणके बेगको न रोक सकनेसे महाराज शिलादित्यका अपने कुटुम्बियोंके साथ रणभूमिमें मारा जाना;

उनके शोभायमान और नन्दनकाननके समान सौराष्ट्र राज्यका बर्बरोंके द्वारा उजड होना उस भयंकर समयमें सूर्यवंशके वृक्षकी प्राणप्रतिष्ठा करनेके लिये केवल रानी पुष्पवतीका जीवित रहना; धीरे २ ग्रहादित्यका उत्पन्न होना,-फिर " ग्रहिलोट " (गिह्लौट) नामकी उत्पत्ति, ईडरमें राज्यकी प्राप्ति,भीलोंके अत्याचारसे ईडरका त्याग, वीरकेशरी बाप्पारावलका प्रादुर्भाव; चित्तौरका अधिकार; उदयपुरकी प्रतिष्ठा; शिशो-दियाकुलका गौरवोच्छ्वास, अंतमें हीन दीन मलीन और शोचनीय अवस्थासे उस गौर-वका अंत होना, बाप्पाकी विजयवैजयन्तीका मुसलमानोंके सामने नीचेको झुकना, घटनाकी विचित्रतासे यह सम्पूर्ण चरित्र हमारे नेत्रोंके सामने प्रकाशित हो रहे हैं। हमने उस चरित्रके वर्णन करनेमें अपनी सामर्थ्यके अनुसार कुछ भी त्रुटि नहीं की, परंतु आज मेवाडमें एक नवीन युगका प्रारंभ हो चला है, श्वेतद्वीपको त्यागकर सात समुद्रोंके पार हो कितने ही अंग्रेज लोग आज इस दीन हीन मलीन अवस्थावाले शिशोदीय राजाओंका उद्धार करनेके लिये इस भारतभूमिमें आये हैं, उनके आनेसे इस समस्त भारतने किस प्रकारकी एक नवीन मूर्ति धारण की है, भारतवासियोंके जीवनका स्रोत किस रीतिसे एक नवीन ओरको बह चला है, अब इस समय आगे उसीका विचार किया जायगा।

महाराणा कर्णके चरित्र सम्पूर्णतासे वीरोंके योग्य थे, सहनशीलता, वीर्यवत्ता-इत्यादि जो समस्त सुंदर गुण राजपूतोंके चरित्रोंमें एक भूषण स्वरूप समझे जाते हैं; राणा कर्णमें सभी गुण विद्यमान थे, इसके अतिरिक्त उनका साहस और कर्त-व्य ज्ञान अत्यंत ही तेज था, बीते हुए युद्धके समयमें जब मेवाड राजके खजानेमें द्रव्यका नाम भी न रहा, तब महाराणा कर्णने जिस उपायका अवलम्बन करके उस-को पुनर्वार धनसे भरकर पहलेके समान ज्योंका त्यों कर दिया था, उससे उनके ऊपर कहे हुए दोनों गुणोंका विशेष परिचय पाया जाता है;बराबर युद्ध होनेसे मेवाड-राज्यका खजाना एकबार ही खाली हो गया था, राज्यके बीचमेंसे धनके इकट्ठा करनेका जब कोई उपाय न रहा, तब महाराणा कर्णके हृदयमें एक नवीन कल्पना उत्पन्न हुई। उसी कल्पनाकी सहायतासे वह धनके प्राप्त करनेका उत्तम उपाय सोचकर कृतकार्य हुए, किसीसे कुछ न कहकर कितने ही घुडसवार सेनाको अपने साथमें ले शत्रुओंकी सेनाको लांघ सूरतमें जा-पहुँचे, और अपनी वीरताकी सहायतासे शत्रुओंकी सेनाको भयभीत तथा त्रासित करके उनके धनको लूटकर फिर लौट आये, उस इकट्ठे किये हुए धनकी विपुल सहायतासे महाराणा कर्णने अपने देशकी हीन अवस्थाको दूर कर दिया था।

यह तो हम पहले ही कह आये हैं, कि महाराणा कर्ण एक साहसी और वीर्यवान् राजा थे, परन्तु दुःखका विषय है कि उचित अवसर न मिलनेके कारण वह इन अपने दोनों ऊंचे राजगुणोंका परिचय नहीं दे सके थे, बहुतसे लोग यहां यह प्रश्न कर सकते हैं कि, जब इनका तक्षिण गौरव और स्वाधीनताका वासस्थान पवित्र मेवाडराज जब

यवनोंसे घृणित होकर अपवित्र "जागीर" नामसे पुकारा गया, तब उस समय महाराणा कर्णने किस लिये मौन होकर इस बातको सहन किया था और वह अपनी तलवारकी सहायतासे उन शत्रुओंसे लगाये हुए इस भयंकर कलंकका बदला लेनेके लिये आगेको क्यों न बढे ? इस प्रश्नके उत्तरमें हम केवल इतना ही कह सकते हैं कि, यद्यपि बादशाहने मेवाडभूमिको "जागीर" नामसे पुकारा तो था परन्तु महाराणाजीसे कभी भी वह जागीरदारके समान व्यवहार नहीं करता था, वरन उनको अपने प्रधानमित्रके समान मानता था। सरलतासे मित्रका व्यवहार करके उसने अपने राज्यमें शान्तिका बीज बो दिया था, उस समय राणा कर्णकी कोई युक्ति भी फलवती न हुई,इस कारण उन्होंने शान्तिमें उपद्रव करनेकी कोई इच्छा न की होगी; यदि इच्छा करनेसे उनकी अभिलाषा पूर्ण हो जाती, तो वह उसको कर सकते थे; यदि ऐसा करते तो शिशोदियाकुलका गौरव व अस्तित्व एकबार ही लोप हो जाता, इस लिये देश काल और पात्रका विचार करके व्यवहार करना सभीको कर्तव्य है, और जो कोई इस नियमका उल्लंघन करता है; वह इस संसारमें कुछ भी प्रतिष्ठाको नहीं पा सकता; इन नीतिपूर्ण वाक्योंकी महिमा राणाजीको विदित थी; इस कारणसे वह उसीके अनुसार कार्य करके कर्तव्यको सिद्ध करनेके लिये उसमें ही एकाग्र चित्तसे अपने मनको लगाते थे। अपने प्रयोजनको जानकर महाराणा कर्णने उदयपुरके चारों ओर दीवार बनाई, और परकोटेके चारों ओर खाइयें खुदवा दीं; फिर पेशोला सरोवरके जलको रोकनेके लिये जो बन्ध बंधा था, उसको इस समय और भी अधिक लम्बा कर दिया, आजतक शिशोदियाकुलकी रानियें जिस अन्त:पुरकी वाटिकामें स्वतन्त्रभावसे निवास करती हैं; उसको भी राणा कर्णने ही बनवाया था।

गिह्लौट वंशवाले राजालोग डेढहजार वर्षतक सम्पूर्ण भारतभूमिके राजाओंके महाराजाधिराज हो ऊंचे गौरवका अधिकार करते आये हैं; यद्यपि आज महाराणा कर्ण उस ऊंचे गौरवसे नीचे गिरे हैं, तथापि उस ऊंचे आसनसे रहित नहीं हुए हैं, बादशाहने इस समय राणाको अपने सिंहासनके दाहिनी ओर विराजमान कर उनके सम्मानकी रक्षा की थी। यद्यपि बादशाहने उनकी स्वाधीनताको हरण कर लिया था, परन्तु उनके साथमें सामन्तराजाके समान व्यवहार नहीं करता था, पीछे मेवाडके अधिकारी लोग किसी प्रकारका अपमान समझें, यह विचार कर बादशाहने अमरसिंहके साथ संधि-करनेका विचार कर लिया था; उसमें नियम था कि शिशोदियावंशके राजकुमारगण जितने दिनोंतक मेवाडराजके सिंहासनपर अभिषेकित न होंगे, उतने दिनोंतक उनको बादशाहकी सभामें उपस्थित होना पडेगा; परन्तु जिस दिन उनको "राणा" कहकर पुकारा जायगा उसी दिनसे वह इस हाजिरीसे छुटकारा पावेंगे; हर्षका विषय है कि उसका यह नियम यथारीतिसे पालन होता गया; कारण कि महाराणा कर्ण जबतक अपने पिताके सिंहासनपर अभिषेकित न हुए थे, तभीतक उनको बादशाहकी सभामें उपस्थित होना पडता था; परन्तु जिस दिन और जिस मुहूर्तमें वह राणा कहे

जाकर जगतमें विख्यात हुए, उसी दिन और उसी मुहूर्तसे उनको बादशाहकी सभामें जानेसे छुटकारा मिला, फिर राणाजीके युवराज, वहीं कर्णके स्थान पर अभिषेकित हुए, इस रीतिसे शिशोदिया वंशवाले राजालोग अपने पूर्व पुरुषोंके ऊंचे गौरवसे नीचेको खसक कर भी ऊंचे आसनसे अलग नहीं हटे, बादशाहकी सभामें भारतवर्षके सम्पूर्ण हिन्दूराजाओंके शिरमौर स्थानमें शिशोदियावंशके राजा उस ही रीतिसे आदर सन्मानके साथ शिशोदियावंशके सरदारोंका आदर सन्मान बढाने लगे, और वह भी अपनी बराबरवाले राजपूत सरदारोंके ऊपर सन्मान और मर्यादाको पाने लगे, थोडे दिनोंके बीचमें ही शिशोदियावंशके सरदार लोग मुगलोंके आधीन होकर सामन्तोंके बीचमें विशेष प्रतिष्ठाको पाने लगे; इन समस्त शिशोदियासरदारोंके बीचमें महाराणा कर्णके छोटे भाई भीम विशेष प्रसिद्ध हुए; बादशाहकी सहायताके लिये महाराणाको जो सेना देनी पडती थी, भीम उसीके प्रधान नायक थे: वह स्वभावसे बडे साहसी और तेजस्वी थे, सुलतान खुर्रमने उनको बन्धुभावसे अत्यन्त ही अच्छा माना था, और उनकी बिना सलाह लिये कोई कार्य नहीं करता था; भीमकी निष्कपट बन्धुताको देखकर खुर्रम दिन २ प्रसन्न होने लगा, तथा पदवी बढानेके लिये अपने पितासे जाकर निवेदन किया, अपने प्यारे पुत्रकी अभिलाषाको बादशाहने पूर्ण किया। भीमको "राजा" की उपाधि देकर बूनासनदीके किनारेका एक छोटासा जनपद भी उनको अर्पण कर दिया था: तोडा उसीकी राजधानी है, उस जनपदको वृत्तिमें पाकर भी भीमकी अभिलाषा शांत नहीं हुई, वह अपने अमरत्वको प्राप्त करनेके लिये उपाय सोचने लगे, और उस बूनासनदीके किनारे एक नवीन नगरीकी प्रतिष्ठा की, वही नगरी अब राजमहल नामसे प्रसिद्ध हुई, वह राजमहल बहुत दिनों तक भीमके वंशवालोंके हाथमें रहा था, अब वह राजमहल विध्वंस हो गया है; परन्तु इस समय भी उस विध्वंस हुए राजमहलके खंडहरोंके भीतरसे उस नगरीका प्राचीन गौरव चिह्न बनकर दिखाई देता है, इससे तो निश्चय ही जाना जाता है कि यह नगरी एक समयमें विशेष समृद्धिवाली और शोभायमान थी; परन्तु इस समय दुर्जय कालके कठोर कर प्रहारसे वह राजमहल आज चूर्ण २ होकर धूरिमें मिल गया है; प्रकृति देवी उन विध्वंस हुए ढेरोंके भीतरसे मृदु स्वरसे कह रही है कि "मनुष्य कितने दिनोंके लिये हैं, यह शोभा और सुन्दरता कितने दिनोंकी है ? यह गौरव, दर्प, गरिमा, अहंकार कितने दिनके लिये हैं; दिनके पीछे दिन, महीनेके पीछे महीना, वर्षके ऊपर वर्ष अखंडित गतिसे बहते हुए अनन्त कालके समुद्रमें लीन होते जाते हैं, भाग्यका चक्र सुख दुःखके नियमानुसार ही बराबर घूमता रहता है; एक दिन जिस राजपूतको अपना बंधु जान कर बादशाहका बडा बेटा अत्यन्त ही प्रसन्न हुआ था, और जिस मित्रके अमृतके समान संभाषणसे उसने एक परम सुखको माना था, आज उसके ही अभागे वंशवाले लोग अपने दुर्भाग्यके नीचेसे नीचे दरजे पर जाकर दीनके समान एक रुपया रोजकी साधारण तनख्वाह पर नौकर होकर शाहपुरराजकी परिचर्य्या करते हैं।

महाराणा कर्ण स्वभावसे ही तेजस्वी और निडर थे; तुच्छ राज्य तथा राजाकी उपाधिके लिये उन्होंने अपने गौरव और पुरुषत्वको नहीं बेच दिया था, बादशाह जहांगीरने राणाको अपने अधिकारमें करनेका जो यत्न किया था, वह सिद्ध न हुआ, सैकडों अनुग्रह दिखाकर भी वह तेजस्वी भीमसिंहको अपने वशमें न कर सका, विशेष करके भीमके ऊपर सुलतान खुर्रमका अधिक स्नेह देखकर बादशाह अपने मनमें भांति २ के संदेह करने लगा, पीछेसे राज्यमें किसी प्रकारका उपद्रव न हो जाय इस कारण महा बलवान भीमको खुर्रमके पाससे अलग करनेका विचार कर उसको गुजरातका शाशनकर्ता नियुक्त किया, परन्तु भीमने इस पदवीकी कुछ परवाह न करके सुलतानके साथमें रहनेका दृढ संकल्प किया, बादशाहने जो संदेह किया था, वह वास्तवमें ठीक ही था, कारण कि खुर्रम अपने बडे भाई परबेज़के विरुद्ध पिताके सिंहासनको अपने अधिकारमें करनेकी चेष्टा करने लगा; परन्तु उसकी यह अभिलाषा फलीभूत होनेके पहिले ही राज्यके बीचमें एक महाभयंकर उपद्रव उत्पन्न हुआ, उस प्रज्वलित हुई अग्निकी शिखाके सामने यह अभागा परबेज़ पतंगके समान भस्म हो गया।

तेजस्वी भीमने जो बादशाहकी आज्ञाको विना शंकाके न माना था, इसका एक गूढ कारण था। वह परबेज़से अंतःकरणसे घृणा करता था, परबेज़ शिशोदिया वंशका परम शत्रु था और राजपूतोंका सत्यानाश करनेमें सर्वदा ही तैयार रहता था, उसने बीते हुए युद्धमें मेवाड पर चढाई करके उस देशका घोर अनिष्ट किया था, खुर्रमके जीवित रहते परबेज़का गद्दीपर बैठना भीमसे कभी नहीं देखा जा सकता, इस कारण जिस प्रकार परबेज़के हाथमें भारतवर्षका शाशनभार न जाय; भीम उसी कार्यके करनेको तइयार हुए तथा सुलतान खुर्रमके साथमें इसी विषयकी सलाह करने लगे, परामर्शमें निश्चय हुआ कि जो खुर्रमको बादशाह होनेकी इच्छा है तो विना विलम्ब किये हुए प्रकाशित शत्रुता करके परबेज़का संहार करना योग्य है; सुलतान खुर्रमपर और विलम्ब न किया गया उसने अपने कितने एक अनुचरोंको साथ ले परबेज़पर हमला किया; उसके आक्रमणसे अभागा परबेज़ मारा गया, तब सुलतान खुर्रमने दूसरा उपाय न देखकर पिताके विरुद्ध प्रगट विद्रोह किया, उसकी संकल्पसिद्धिकी सहायताके लिये बहुतसे राजपूत तइयार थे उन सहायकोंके बीचमें मारवाडके राजा गजसिंह अधिक-प्रसिद्ध है, राठौरके राजा गजसिंह खुर्रमके मातामह (नाना)थे, यदि कहा जाय तो वही इस कार्यके करनेवालोंमें प्रधान थे; परन्तु पीछे बादशाह किसी प्रकारका संदेह न करे, इस कारण वह अपनी चतुरतासे अलग ही रहकर काम चलाते थे।

उस विद्रोहकी अग्निको बुझानेके लिये स्वयं बादशाह शत्रुओंके दबानेको आगे बढा, राठौरोंके राजा गजसिंहके विद्रोहियोंके दलमें गुप्तभावसे मिलनेका संदेह बादशाहको पहले ही हुआ था। उस संदेहके सत्य वा मिथ्या होनेका यद्यपि उसको किसी प्रकारका पक्का प्रमाण नहीं मिला तो भी उसने गजसिंहपर किसी प्रकारका भार न देकर जयपुरके राजाको ही सेनापति बनाया; इससे गजसिंहने अपनी झंडीको झुकाकर एकान्त-

भावसे रहनेकी प्रतिज्ञा की, परन्तु भीमसिंहसे इस बातको नहीं देखा गया। गजसिंह खुर्रमके नाना हैं और वही इस विद्रोहकी अग्निको उत्तेजित करनेमें प्रधान कारण थे, इस समय वह अपनी चतुराईसे अलग रहते हैं, यह बात भीमके हृदयमें सहन न हुई; भीमने पहिले तो उनसे कुछ न कहा और कुछ समयतक प्रतीक्षा की जब दोनों दल आमने सामने आकर युद्धभूमिमें युद्ध करनेके लिये खडे हुए गजसिंह तब भी नहीं आये; तब भीमसिंहने उनसे कहला भेजा कि "आपका इस रीतिसे चुपचाप एक ओर खडे रहना ठीक नहीं है या तो इस समय आपको प्रकाशित भावसे हमारे साथ मिलना होगा, अथवा हमसे शत्रुके समान आचारण करना होगा" तेजस्वी भीमकी यह युक्ति सुनकर गजसिंहके हृदयमें वज्रघात लगा; और अपनी सेनाको लेकर प्रगटभावसे भीमके साथ शत्रुता करनेके लिये तलवारको ग्रहण किया, शिशोदीय वीर भीम इससे किंचितमात्र भी भयभीत न हुए, वरन पहिलेसे दुगुने उत्साहके साथ युद्ध करने लगे, परन्तु उनकी सेना तित्तर बित्तर हो गई और वह इस युद्धमें ही मारे गये * उस समय सुलतान खुर्रम कुछ उपाय न देखकर अपने सेनापति महावतखाँके साथ उदयपुरको भाग गया।

उदयपुरके शान्तिरूपी वृक्षकी छायाके नीचे सुलतानने कुछ दिनोंतक विश्राम किया, राणाने उसके लिये अपने महलका एक हिस्सा दे दिया था, उसी स्वतन्त्र भवनके अंशमें सुलतान खुर्रम अपने इष्ट मित्रोंके साथ रहकर समयको बिताने लगा परन्तु अपने अनुचरोंको राजपूतोंके सत्कारकी ओर उपेक्षा करता हुआ देखा सुलतान अत्यन्त

---

* शक्तावत सर्दार मानसिंह और उसका भ्राता गोकुलदास यह दोनों भीमको सलाह देनेवाले थे, उन्होंने महावतखाँके साथ मिलकर जहांगीरके विरुद्ध चक्रान्त किया था; खेरार जनपदका सनवारनगर मान–सिंहके हाथमें था, महावीर मान–सिंहने अमरसिंहसे युद्धके समय राणाके लिये जो असीम वीरता प्रकाश की थी; इसी कारण उस समयसे शिशोदीयकुलका महायोद्धा कहकर पुकारा जाने लगा उसके समस्त शरीरमें अस्सी घाव लगे थे; मुसल्मानोंके साथ युद्धमें एक २ समय उसका एक एक अंग प्रत्यंग नष्ट हो गया था परन्तु तो भी वह युद्धसे नहीं हटता था; मान भीमका परम मित्र था। इन दोनों ही के बीचमें परस्पर अकृत्रिम प्रेम हो गया था; एक जना दूसरेके दुःखको कभी नहीं सहन कर सकता था, भीमके मर जानेपर मान–सिंहसे यह वृत्तान्त गुप्त रक्खा गया; मान–सिंह इस विषयमें कुछ भी नहीं जान सके थे, कारण कि उस समय वह आघातोंके लगनेसे शय्यापर पडे थे, उनका सम्पूर्ण शरीर घाव लगनेके कारण पट्टियोंसे बंधा हुआ था, अत्यन्त रुधिरके निकलनेसे इस समय शरीर अत्यन्त ही दुर्बल हो गया, ऐसा कहा जाता है कि वह भीमके साथ ही भोजन करते थे, इसके उपरान्त भीमके मर जानेपर जब रसोइयेने भोजन बनाय उनके सामने रक्खा तब भीमको न देखकर मान–सिंहके हृदयमें भांतिरके संदेह हुए, उन्होंने रसोइये ब्राह्मणसे पूछा, परन्तु उसने सत्य बातको इनसे न कहा; उसको इधर उधर करता हुआ देखकर मानका संदेह दृढ हो गया; वह अपने दांतोंको पीस२कर प्रचंड बलके साथ शरीरमें बँधी हुई पट्टियोंको खोल२कर फैंकने लगे तथा उसी मुहूर्त्तमें अपने प्राणोंको त्यागकर दिया। मान–सिंहके छोटे भ्राता गोकुलदास भी एक प्रसिद्ध वीर हुए, भट्ट कवियोंने राणा कर्णके शान्तिमय राजका वर्णन करनेके समय कहा है कि कर्णके यशकी माला धीरे २ सूख रही थी; परन्तु गोकुलने अपने रुधिरकी धारासे उसकी जडको सींचकर पुनर्वार जीवित कर दिया था।

ही लज्जित हुआ, और उस राजमहलको छोड दूसरे स्थानमें रहनेकी अभिलाषा की, खुर्रमके इस उदारता युक्त भावको देखकर राणा परम प्रसन्न हुए, और शीघ्र हृदगभस्थ द्वीपके मध्यभागमें उसके रहनेको एक सुन्दर महल बनवा दिया. वह महल नानाप्रकारकी शोभायमान सामग्रीसे सजाया गया, उसके ऊपर इसलामधर्मकी सूचना देनेवाली अर्धचन्द्राकार झण्डियें उडती हुई सहस्र गुणी शोभाको बढाने लगी इससे वह स्थान और भी रमणीक हुआ, इस मनोहर महलके बनानेके समय उसके आंगनमें मदारशाह फकीरका स्मरण करनेके लिये एक चौतरा बनवाया गया पेशोला नदीके उज्ज्वल जलसे धोये हुए उस महलमें जाकर अपने अनुचर और सरदारोंको साथ ले सुलतान खुर्रमने बहुत दिनोंतक वहां निवास किया फिर नानाप्रकारकी चिन्ता और शंकाओंसे दुःखी हो भारतवर्षको त्याग ईरानको चला गया * । यद्यपि विधाताकी कठिन विधिके अनुसार मुगलोंके चरणोंमें मेवाडकी स्वाधीनता बिक तो गई, परन्तु उस विजित जातिके ऊपर जीतनेवाला जैसा व्यवहार करता है; जहाँगीर वा उनके पुत्र खुर्रमने कभी भी मेवाडके राणासे उस प्रकारका व्यवहार नहीं किया; सुलतान खुर्रम कर्णको अपने यथार्थ भाईके समान देखते थे, और कर्ण भी उनके साथमें अपने भाईकी ही समान व्यवहार करते थे. उनकी वह बन्धुता उनके जीवनके साथ तक ही शेष न हुई, सुलतान खुर्रमके मेवाडभूमि छोडनेसे राणा कर्ण अत्यन्त ही दुःखित हुए, उन्होंने आशा की थी कि उस द्वीपभवनमें खुर्रमको बादशाह कहकर सबसे पहिले पुकारेंगे; और सबसे पहिले उसको बादशाहके आसन पर सुशोभित करेंगे, परन्तु उनकी वह आशा पूर्ण न हुई ? आशाको फलवती न होती हुई देखकर कर्ण अत्यन्त ही दुःखित हुए, उन्होंने जो सुलतान खुर्रमको अपना यथार्थ बन्धु माना था; उसका प्रमाण आजतक भी पाया जाता है; खुर्रमने जो उनके अगणित उपकार किये थे, उनका बदला देनेके लिये राणा सब प्रकारसे समर्थ हुए थे; परन्तु उनका वह बदला पृथ्वीकी साधरण वस्तुसे पूर्ण नहीं था; उसको स्वर्गीय कहा जाय तो भी ठीक हो सकता है, वह स्वर्गीय हृदयकी पवित्र वस्तुका कृतज्ञता रत्न था, उस कृतज्ञता और पवित्र मित्रताकी निशानी बादशाहकी पगडी *थी महाराणान कर्णने बाद-

---

* कोई २ इतिहास लेखक कहते हैं कि वह गोलकुंडेको गया था ।

*"पगडीका बदलना राजपूतोंमें धर्मभाईका सम्बन्ध जताता है यह पगडी इसी भावसे आज तक रक्खी हुई है और मदारशाहकी समाधिके भीतर आजतक दीपक बाला जाता है, टाडसाहबने स्वयं अपने नेत्रोंसे यह बन्धुताकी दिखानेवाली पगडी और मदारशाहकी समाधिको देखा था, उन्होंने कहा है कि हितकारी परम मित्रोंकी मित्रताके समय ही पवित्र कृतज्ञताका चिह्न रखनेके लिये राजपूतोंने अपने महलके भीतर उस मुसलमानकी समाधि बनवाई थी, जब बादशाहके खानदानवालोंने शिशोदियावंशको पीडित किया, तब भी राजपूत उनकी उस पवित्रता और कृतज्ञताको नहीं भूले,ऐसी पवित्र मित्रता और कृतज्ञताका ऐसा परिचय और कहीं नहीं पाया जाता, इस जातिके बीचमें ऐसी मित्रताका व्यवहार कैसे हुआ,क्यों अब ऐसा नहीं होता,हमारा हृदयतो अज्ञानताके अंधकारसे ऐसे ढका हुआ—

शाह शाहजहांके स्नेहसे प्रसन्न होकर कृतज्ञतासे भरे हुए हृदयसे जिस समय उस पगडी को ग्रहण किया था उस समय उनका जो भाव था, आजतक भी वह भाव उसी प्रकारसे बना है; जिस महलके चिकने और सुथरे आंगनमें बैठकर उन्होंने उस प्रसादरूपी उपहारको ग्रहण किया था; उसी महलके अब अनेक स्थान टूट फूट गये हैं, परन्तु तो भी वह सदारशाहकी समाधिका मंदिर आजतक साफ रहता है,उस मंदिरकी शोभाको बढानेवाला दीपक आजतक एक मुहूर्तके लिये तेलके न होनेसे भी नहीं बुझता है; आज इस मेवाडकी हीन मलीन अवस्थामें भी शिशोदियावंशके राजालोग उस दीपकमें तेल डालनेको नहीं भूलते हैं महाराणा कर्ण संवत् १६८४ (सन १६२८ ई०) में अपने प्यारे पुत्र जगत्सिंहके हाथमें राज्यका समस्त भार सौंपकर इस लोकसे विदा हो सूर्यलोकमें जाकर अपने पूर्वपुरुषोंके साथ मिले; उन्होंने आठ वर्षतक राज किया था; यह आठ वर्ष गंभीर शान्तिसे व्यतीत हुए थे; उनके मरनेसे थोडे दिनके पीछे बादशाह जहाँगीर परलोकको चला गया, उस समय सुलतान खुर्रम सूरतमें था;महाराणा जगतसिंहके पिता और चचाने जो अपने प्राणप्यारे सुहृद खुर्रमको जिस राजसिंहासनपर स्थापित करनेके लिये प्राणतक देनेकी प्रतिज्ञा की थी, आज वही सिंहासन सूना पडा है, सिंहासनके साथ ही खुर्रमके भाग्यका आकाश साफ और निर्मल हो गया था: इस मंगलमय शुभसमाचारको अपने पितृबंधुसे विना कहे जगतसिंह न रह सके, उन्होंने क्षणमात्र भी विलम्ब न करके कितनी एक सेनाके साथ अपने भाईको सूरतमें भेज दिया, सुलतान खुर्रम उससे सम्पूर्ण वृत्तान्त जानकर तत्काल उदयपुरमें आकर राणासे मिले; * उस दिन उदयपुरके स्थान भांति २ के शोभायमान अलंकारोंसे शोभित थे, उसकी पवित्र शोभाको देखनेके लिये राजवाडेके अनेक राजालोग आये थे; उस शोभायमान उदयपुरमें "बादलमहल" के भीतर दिल्लीके सामन्त और आये हुए करद राजाओंने सबसे पहले सुलतान खुर्रमको "शाहजहाँ" नामसे पुकारा, उसी दिन उस शिशोदिया वंशके राजाओंकी बहुत दिनोंकी आशा पूर्ण हो गई, ऐसे मंगलमय अवसरपर उदयपुरके घर २ में नृत्य गीत और भांति २ के उत्सव होने लगे; और किसी

---है कि जिससे हम लोग ऐसे पवित्र भावको प्राप्त करनेमें सब प्रकारसे असमर्थ हैं" भारतबन्धु टाडसाहबके हृदयमें ऐसे भावका उत्पन्न होना कुछ विचित्र नहीं था,वह भारतवर्षके माहात्म्य और गौरवको भली भांति से समझ गये थे इसी कारणसे हीन अवस्थावाली भारतसन्तानके लिये एक बार उनका हृदय रोया था, एक बार उन्होंने जिस जातिको श्रेष्ठ कहकर पुकारा था आज उन्हींकी जातिके लोग जो कि ज्ञानका अहंकार करते हैं तथा अभिमानसे फूले रहते हैं भारतवासियोंको तथा राजपूतोंको असभ्य और निकृष्ट कहकर उनके साथ घृणा करते हैं।

* तवारीख परिश्ताका भूगोलवृत्तान्त साफ २ नहीं है, इस कारण इस ग्रन्थमें उसको वर्णन नहीं किया, परन्तु उसके सम्बन्धमें भट्टोंकी टिप्पणियोंके प्रमाण ठीक हैं; भट्टोंने वर्णन किया है महावत, अवदुल्लाखाँजहांने, और उसका कार्याध्यक्ष शादुल्लाखाँ राजछत्र इत्यादिको उदयपुरमें लाया था।

मुसलमान राजाके अभिषेकित होनेके समयमें हिन्दुओंने कभी ऐसा आनन्द और उत्सव नहीं किया था, परमधर्मात्मा शाहजहां थोडे दिनोंतक मित्रके यहां रहकर फिर उदयपुरसे चला गया; अपने नगरको जानेके पहिले जगत्‌सिंहको पांच स्थान उद्धार करके दे दिया, और एक बडे मोलकी पद्मरागकी मणि उपहारमें देकर उनको आज्ञा दी कि चित्तौरके महलोंको पुनर्वार बनवाओ।

राणा जगतसिंहने छब्बीस वर्षतक राज्य किया था, यह छब्बीस वर्ष विमल शांतिसे बीते थे, इस दीर्घकालके राज्यमें एक मुहूर्तको भी शांति भंग नहीं हुई अथवा किसी प्रकारका विघ्न भी नहीं हुआ था, परन्तु भट्टकविजनोंके किसी काव्यग्रन्थमें जगत्‌सिंहके राज्यका विस्तारित वर्णन नहीं पाया जाता। इसका कारण और कुछ नहीं केवल यही है कि मेवाडके भट्टगणोंको वीररस ही प्यारा था; वह हृदयको स्तम्भन करनेवाले वीररसका ही वर्णन करना अच्छा समझते थे; जिससे हृदय उत्साहित, उन्मादित अथवा स्तंभित हो, वही उनके काव्यकी प्रधान सामग्री थी, वह लोग जिस प्रकारसे वीररससे पूर्ण थे, उसी प्रकारकी अद्भुत चतुराई और अपनी लेखनीकी चातुर्यतासे उसको वर्णन कर सकते थे; जगतसिंहके शान्तिपूर्ण राज्यके समयमें शांतिमय ऊंचे शिल्पशास्त्रकी भली प्रकारसे आलोचना हुई थी; और २ ऊंचे अंगके शिलाकी अपेक्षा उनके राजमें थवईगीरीकी विशेष उन्नति हुई, उदयपुरमें जो ऊंचे २ महल और अटारियें उनके नामसे बनी हुई देखी जाती हैं, वह समस्त स्थान आजतक भी उसी भावसे बने हुए हैं उन सबकी शोभा सुंदरता तथा मनको हरण करनेवाली बनानेकी चतुराईको देखकर हृदय आनंदके मारे एक बार ही प्रफुल्लित हो उठता है, उस समय मनही मनमें स्वयं यह प्रश्न उत्पन्न होता था कि जिसका हम पहिले वर्णन कर आये हैं; अर्थात् पहले वर्णन किये हुए उन कठोर उत्पात और अनिष्ट तथा विपत्तिके पडनेपर भी मेवाडके राजाओंने किस प्रकारसे बहुतसे खर्चवाले उन कार्योंको किया था इस प्रश्नकी मीमांसा हमलोग पहिले ही अनेक स्थानोंमें कर आये हैं, इस कारण अब इसके विषयमें अधिक कहनेका प्रयोजन नहीं है, केवल इतना ही कहना ठीक होगा कि प्रजाकी हितैषिणी राजनीतिके न्यायानुसार चलनेसे सैकडों विघ्न विपत्तियोंको दूर करके राज्य सुखके यथार्थ ऊंचे स्थानपर पहुंच सकता है।

महाराणा जगतसिंहने जिन कई एक स्थानोंकी प्रतिष्ठा की थी, उनमेंसे जगनिवास और जगमंदिर यह दोनों बडे प्रसिद्ध हुए, पेशोला सरोवरके द्वीप हृदयमें जगमंदिर और उसके ऊँचे किनारेपर जगनिवास प्रतिष्ठित हैं, यह दोनों ही स्थान सुंदर और नेत्रोंको तृप्त करनेवाले अलंकारोंसे शोभायमान हैं, इनके समस्त अंग संगमर्मरके बने हुए हैं, स्तम्भ; स्नान करनेका स्थान; जलके रखनेका स्थान, जलयंत्र इत्यादि सभी वस्तुयें नेत्रोंको मोहित करनेवाली बनी हुई हैं, उन दोनों ही स्थानोंके दरवाजे और खिडकियोंके किवाडोंमें भांति २ के शीशे लगे हुए शोभायमान हैं जिस समय सूर्य भगवान्‌की उज्ज्वल किरणोंकी माला उन किवाडोंके ऊपर पडती है तब उन कमरोंकी

दीवारोंपर अगणित इंद्रधनुषोंका बोध होता था, उस समय जो शोभा उन स्थानोंकी होती है उसका वर्णन करना बहुत कठिन है, उस अनुपम भवनकी सुंदरताका वर्णन करते हुए हमारी लेखनी भी रुकती है, उस स्थानकी दीवारें ऐतिहासिक चित्रोंसे शोभायमान हैं, यद्यपि समयके हेरफेरसे अब वहांका कोई २ स्थान काला हो गया है और कहीं २ का रंग फीका हो गया है; परंतु तो भी उन संपूर्ण चित्रोंके देखनेसे ऐसा बोध होता है कि मानों यह जीवित खडे हुए अभी कुछ कहते हैं, महाराणा कनकसेनके समयसे लेकर मेवाडके भूतपूर्व राजाके विवाहोत्सवतक जो संपूर्ण घटना हुई थीं उन सभीका चित्र इन दोनों स्थानोंमें तथा उदयपुरके प्रधान २ महलोंकी दीवारोंपर खिंचा हुआ देखा जाता है, इन दोनों स्थानोंके चारों ओर नानाभांतिके फूल तथा फलवाले वृक्ष लगे हुए हैं; उन संपूर्ण वृक्षोंके साथ मिल जानेसे एक प्रमोद काननके बीच २ में बहुतसे कुंज बने हैं, कहीं दश बारह नारियलके पेड और ताडके पेड आकाशको छूनेकी इच्छासे परस्पर एक दूसरेकी ईर्षा करते हुए ऊपरको माथा उठाये खडे हैं, कहीं आम, इमली, जामुन इत्यादिके बडे २ वृक्ष अपनी सघन छायाको फैलाते हुए एक दूसरेसे अपनी शाखाओंको मिलाते हुए गंभीरभावसे खडे हैं; कहीं स्थान २ पर बहुतसे केले और गुवाक (सुपारी) के वृक्षोंने इकट्ठे होकर मनोहर और छोटे २ कुजोंको बनाया है उन छोटे २ कुंजोंके भीतर दर्शकोंके बैठनेके लिये काठके आसन बिछे हुए हैं, पेशोला नदीके किनारे सरदार और सामन्त लोगोंके लिये बहुतसे शोभायमान घाट बनाये गये हैं, वह सभी घाट संगमर्मरके बने हैं, घाटके ऊपर भागमें चांदनी बिछी रहती है, सामने ही साफ शोभायमान सीढियें बनी हुई हैं, उन सब सीढियोंके पार्श्वमें अलिंद बना हुआ है, सारांश यह है कि उसके घाटोंको एक २ कुंजवाटिका कही जाय तो भी ठीक हो सकता है, ग्रीष्म कालकी दुपहरियोंके समयमें सूर्यकी तीक्ष्ण धूपसे व्याकुल होकर सरदार लोग उनके भीतर शांति पानेकी इच्छासे जाते और अफीम तथा फूलोंके आसवको पी पी कर शीतल पत्थरोंकी चट्टानोंपर शयन करके भट्टलोगोंके मुखसे राजपूतोंकी वीरताके गुणोंको सुना करते हैं,दुपहरियाके तीक्ष्ण पवनके चलनेसे सरोवरकी तरंगोंसे उठे हुए शीतल जलके कण पवनमें मिलकर शीतका अनुभव कराते हैं, वह मारुत उस सरोवरमें खिले हुए कमलोंके परागको उडाकर सरदारोंके ऊपर मंद २ गतिसे पंखा करता है, उस शीतल मंद सुगंधवाली पवनके लगनेसे और उस मधुर वाणीसे भट्टलोगोंके गानको सुनते २ सब सरदारलोग सुखको देनेवाली निद्राकी गोदीमें शयन कर सुख पाते हैं; फिर जब तक सूर्यभगवान् अस्ताचलको नहीं जाते तबतक सरदारोंकी नींद नहीं टूटती; जब-फूलोंके आसव तथा अफीमका नशा धीरे २ दूर हो जाता है, तब उसी समय धीरे २ अपने नेत्रोंको खोल देते हैं, नींद टूटते ही अपने नेत्रोंके सामने जिस मनोहर चित्रको देखते हैं, इससे वह यथार्थ ही स्वर्गके समान सुख को अनुभव करते हैं, निद्राकी कोमल गोदीसे उठकर उस हृदयको मोहित करनेवाले चित्रको देखते ही उनको वह स्वप्नके

समान जान पडता है, वह जिस ओरको नेत्र उठाकर देखते हैं, उस ही ओर उनको संसारकी अनुपम सुन्दरता दिखाई देती है, अस्ताचलको जाते हुए सूर्यभगवानकी किरणोंकी माला पेशोला नदीके उज्ज्वल जलपर और उसके किनारेके वृक्षोंके ऊपर तथा सामनेके आरावली पर्वत मालाके शिखर पर अथवा उसके कोनेमें बसी हुई ब्रह्मपुरीकी चोटी पर गिरकर अनेक प्रकारके रंगोंसे विहार करती है, तब उस सम्पूर्ण चित्रका नकशा पेशोला नदीके निर्मल जलरूपी दर्पणमें खिचकर उस नीले जलमें हीरोंसे जडे हुए सहस्रों रेशमीन वस्त्रोंकी शोभाको विस्तार करता है; नींदसे जागे हुए सरदारलोग इस अनुपम सुन्दरताको एकटक नेत्रोंसे देखते रहते हैं; वह शोभा जब तक उनके नेत्रोंको दिखाई देती है तब तक वह उस पेशोलाके निर्मल किनारेको नहीं छोडते इससे उनका हृदय बढता है उनकी चिन्तारूपी सहेली गिह्लौटके वीरोंकी वीरताको सूचित करती हुई भांति २ के रंगोंके चित्र उनके बढे हुए हृदयके ऊपर खैंच देती है, फिर जब धीरे २ सूर्यभगवान् अस्त होते हुए संसारकी उस सुन्दरताको हरण करके अन्तर्द्धान हो जाते हैं, तब वह संध्यावंदनादि कृत्योंको समाप्त कर अपने २ घरोंको चले जाते हैं, और अस्त्रोंकी झनकार, और मतवाले वीरोंके हृदयको उत्तेजित करनेवाले सिंहनादके बदले शान्तिके उस मनोहर शब्दको सुनते २ शिशोदिया वंशावतंस राणाजी तथा सरदार लोग यह दोनों ही निश्चिन्त होकर विश्राम करके सुखको भोगते हैं ।

महाराणा जगतसिंह एक अति सन्मानित राजा थे, मुसलमानोंके निर्दयीपनसे मेवाडके हृदयमें एक बडा भयंकर घाव हो गया था, और मुगलोंकी कठोरतासे मेवाडके रहनेवालोंके हृदयमें जिस कष्टका उदय हुआ था, आज राणा जगत्‌सिंहने अपने उत्तम स्वभाव और सुन्दर प्रजापालनके गुणकी सहायतासे उस घावको दूर कर दिया; तथा उस कष्टदायक स्मरणको भली भांति राजपूतोंके हृदयसे दूर कर दिया था । उनके सरल स्वभाव और माहात्म्य, उदारतायुक्त व्यवहार और मनोहर मधुर संभाषणसे शत्रुओंके हृदय भी पिघल जाते थे । बहुत कहनेसे क्या है जो कोई उनके साथ एकवार भी बातचीत कर लेता था वह उनको जीवन तक नहीं भूल सकता था, उनकी उस सरलता, उदारता और महानताको मुसलमानोंके इतिहास लिखनेवालोंने भी अपने इतिहासोंमें वर्णन किया है, अधिक क्या कहें स्वयं बादशाहने अपने जीवनचरित्रमें और दूतवर सर टैम्स रो महोदयने भी उनके गुण और गौरवकी बहुत ही प्रशंसा की है । गिह्लौटवंशकी गौरव भूमि चित्तौरपुरी जो एक समय शोचनीय अवस्थासे मलीन होकर श्मशानके समान पडी हुई दिखाई देती थी, आज महाराणा जगत्‌सिंहने अपने प्रजापालनके सुन्दर गुणसे उसका भली प्रकार पुनरुद्धार किया । इन कार्योंके अतिरिक्त राणाजीने मालबुर्ज * सिंहद्वार क्षत्रकोट इत्यादि अनेक टूटे फूटे स्थानोंका संस्कार कराकर उनको ठीक कर दिया था ।

* चित्तौरके तीसरी वार विध्वंस होनेके समय अकबर बादशाहने इस मालबुर्जको बारूदसे उडा दिया था ।

महाराणा जगतसिंहने मारवाडके राजाकी कन्यासे विवाह किया था, उसके गर्भसे इनके दो पुत्र उत्पन्न हुए, उनमेंसे बडे पुत्र राजसिंह ही मेवाडके राजसिंहासनपर बैठे, घटनाकी विचित्रतासे मेवाडकी अवस्था एक साथ दूर हो गई; मेवाडराज्यके भीतर जो गंभीर शांति विराजमान थी, आज महाराणा राजसिंहके राज्यासनपर बैठते ही वह शांति कहाँको विलाय गई; देखते २ घोर अशांति भयंकर मूर्तिको धारण कर मेवाडके चारों ओर घूमती हुई फिरने लगी, जातिविरोध तथा हिन्दू मुसलमानोंके लडाई झगडेने पुनर्वार प्रज्वालित होकर मेवाड भूमिको पवित्र मेवाडभूमिको ही क्या,-वरन समस्त राजस्थानको भयंकर उपद्रवोंसे पूर्ण किया। यद्यपि यह सम्पूर्ण विपत्तियें परस्परकी विरोधताके सैकडों कारणोंसे उत्पन्न हुई थीं; परन्तु अधिक विचार करनेसे देखा जाता है कि मेवाडके राणा राजसिंह ही इन उपद्रवोंके प्रधान कारण थे, कारण कि उन भयंकर उपद्रवोंके उत्पन्न होनेमें उन्होंने बहुत सहायता की थी; धर्मपरायण शाहजहां इस समय बुढापेपर पहुँच गया था. इस समय मुगलराज्यका उत्तराधिकार पानेके लिये बादशाहके पुत्रोंमें झगडा होने लगा पिताके जीवित रहते ही सब पुत्र अनेक प्रकारकी कुबुद्धि करके सिंहासनको अपने अधिकारमें करनेका यत्न करने लगे। आपसके इन झगडोंसे राज्यके बीचमें जो भयंकर अग्नि उत्पन्न हुई थी उससे समस्त भारतभूमि तप गई और बहुतसे अभागे पतंगके समान उसमें भस्म हो गये थे,अपना स्वार्थ सिद्ध करनेकी अभिलाषासे बादशाहके चारों पुत्र राजस्थानके सम्पूर्ण राजाओंसे सहायता माँगने लगे; उस उपद्रवके समय बादशाहके चारों पुत्रोंने एक साथ ही महाराणा राजसिंहसे सहायता मांगी परन्तु उन्होंने केवल दाराका पक्ष लिया, दारा सबसे बडा पुत्र था, परंपराकी रीतिके अनुसार वही पिताके राज्य-सिंहासनपर बैठनेके योग्य था, उस योग्यताका समर्थन तथा मंडन करनेके लिये राजसिंहकी सम्मतिको मान राजस्थानके समस्त राजा दाराके झंडेके निकट आयकर खडे हुए, परन्तु इन लोगोंने कुअवसरमें औरंगजेवके विरुद्ध खड्ग ग्रहण किया था; उनकी यह अभिलाषा सफल न हुई, फतेहाबादकी रणभूमिमें केवल एक औरंगजेवकी ही भुजाओंके बलसे दाराके संपूर्ण उद्योग व्यर्थ हो गये, उस समय दारा, शुजा और मुराद इन सभीके मस्तकपर कठोर वज्र गिरा था।

फतेहाबादके युद्धमें विजयलक्ष्मी औरंगजेवको ही प्राप्त हुई; उसके भाग्यका मार्ग उत्तम रीतिसे साफ हो गया था, जो लोग उस मार्गके बीचमें कंटकके समान थे, औरंगजेवने तलवार हाथमें लेकर उन्हींको दूर करनेकी प्रतिज्ञा की थी, उसकी वह प्रतिज्ञा शीघ्र ही पूर्ण हुई कारण कि अपने पिता भ्राता बंधु बांधव और पुत्रतकके हृदयका रुधिर निकालनेमें औरंगजेवने भी कसर न की थी भयंकर दुराकांक्षा और राज्यके लालचसे उसने जो घिनौने और पैशाचिक कार्य किये थे, उनका ध्यान करते हुए भी हृदय कांपता है उस भयंकरी कुबुद्धिसे उत्तेजित होकर उसने यदि एक मुहूर्तके लिये भी अपने क्षणभंगुर जीवनका विचार किया होता अथवा तैमूरके वीरवंशकी होनहार

अवस्थाका एक बार भी विचार वह करता तो अवश्य समझ सकता था कि मैंने अपने हाथसे ही अपने मंगलमय वंशवृक्षकी जडमें कुल्हाडी मारी है।

तैमूरवंशावतंस बाबरने राज्यकी रक्षा करनेवाली जो नीति चलाई थी, अहंकारी औरंगज़ेब यदि उसीके अनुसार चलता और अपने वंशवालोंको भी उसीके अनुसार चलाता तो मुगलबादशाहतकी शीघ्र ही ऐसी दुर्दशा क्यों हो जाती? यदि ऐसा होता तो सत्यसन्ध प्रजावत्सल शाहजहां बादशाहका शोभायमान "मयूरासन" (तख्ततताऊस) आजतक दिल्लीके शीशमहलमें विराजमान होता; परन्तु दुराचारी औरंगजेबने पापके मोहमें पडकर अपने आपसे ही अपने पांवमें कुल्हाडी मारी, उस एक ही पापीके बुरे आचरणोंसे समस्त मुगलोंका नाश हो गया, उन लोगोंकी अंतिम अवस्था बिगड गई; मुगलकुलतिलक अकबरने अपने पितामहकी चलाई हुई रीतिके अनुसार ही काम किया था, इसी कारण वह असंख्य विघ्नोंके बीचमें भी अपने राज्यको अटल रखनेमें समर्थ हुआ, एक समय प्राच्य और प्रतीच्य मंडलके राजाओंमें वह अकबर ही ऊंचे आसन पर स्थापित हुआ था, उसने अपने पुत्र जहांगीरको इस नीतिका फल भली भांतिसे समझा दिया था, चतुर जहांगीरने भी भली भांतिसे उस ही नीतिके अनुसार कार्य किया, उस ही नीतिके फलसे उसने शाहजहांके समान पुत्ररत्नको पाया, शाहजहां भी योग्य पिताका पुत्र हुआ, पितासे उसने जिस नीतिको सीखा था उसको कार्य करनेके समय नहीं भूलता था, उसी कार्यके द्वारा उसने हिंदूराजाओंसे यथार्थ मित्रता करके बडे २ दुर्घट कार्योंको किया था। इस उत्तम पवित्र नीतिकी जडमें जो एक महान् नीतिका बल छिपा हुआ था, वह सरलतासे जाना जा सकता है, परन्तु दुःखका विषय है कि भारतवर्षके इतिहास लिखनेवालोंने उस नीतिबलके विषयमें आजतक कुछ विचार नहीं किया अत एव जाना जाता है कि वह लोग इस नीतिका भेद तक नहीं जानते थे, परास्त हुए हिन्दू राजाओंके साथ विवाह सम्बन्ध करके विजयी मुगल बादशाहोंने उस महान् नीतिके बलको दृढ किया था, फिर उसीकी सहायतासे असंख्य आपत्तियोंके प्रतिकूल मुगलकुलकी विजयपताकाको खडा रखनेमें समर्थ हुए थे। चतुर जहाँगीर और न्याय-परायण शाहजहाँके समयमें सम्पूर्ण भारतवर्षके मध्य जो विमल शान्ति विराजमान थी, उससे हिन्दू राजागणोंने यथार्थ और श्रेष्ठ रीतिसे धीरे २ अपने २ राज्यको ऊंचा और पुष्ट कर दिया था; दूसरे विदेशीय राजाओंके प्रजापालनके समय हिन्दूजाति कभी ऐसी उन्नति पर नहीं पहुँची, जहांगीर और शाहजहां हिन्दुओंके साथ अन्तःकर-णसे स्नेह करते थे और उनके मंगलके लिये सर्वदा तैयार रहते थे, इसका कारण बाब-रकी चलाई हुई उस ही नीतिका फल था, जहांगीर और शाहजहाँ यह दोनों ही मार-वाड राजकी पुत्रीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे, इसी कारण सर्वदा हिन्दुओंके कार्य सिद्ध करनेमें यत्नवान रहते थे, उनके उस यत्नको देखकर ही राजपूतलोग सरलतासे अपने प्राणोंको भी उनके लिये दे डालते थे, परन्तु जिस दिन उस नीतिका नाश हुआ, जिस दिनसे वह भयंकर जाति वैरताकी बेल फिरसे हरी हुई, उस ही दिनसे वह गूढ संबन्ध जो कि हिन्दू और मुसलमानोंमें अचल था सो जाता रहा, फिर तो परस्पर एक दूसरेका

नाश करना अच्छा समझने लगे, इस बातका कठोर उदाहरण हिन्दुओंका वैरी औरंगजेब था, यह तातारी स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुआ था; उसका शरीर तातारके रुधिरसे पुष्ट था, वह राजपूतोंमेंसे किसीका भी पक्ष नहीं करता था; इस कारण राजपूतलोग भी उसकी कुछ सहायता नहीं करते थे, उसने तो अपने भाई और कुटुंबियोंके रुधिरको पान किया था. अपने धर्मात्मा पिताको राज्यसिंहासनसे उतारकर स्वयं राज्य पर बैठनेका उद्योग करता था इसकारण किसी राजपूतने भी उसकी सहायता न की। सहायता करनी तो दूर रही वरन उसके उद्योगको व्यर्थ करनेकी अभिलाषासे सम्पूर्ण रजवाडे भी उसके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये रणक्षेत्रमें आये थे. इसका क्या कारण था? इसका कारण और कुछ भी नहीं था केवल उस यथार्थ नीतिका अभाव था, औरंगजेब स्वयं ही उस महानताके अभावको भलीप्रकारसे समझ गया था, वह अभाव ही उसके राज्यमें अग्नि स्वरूप होकर उठा था, औरंगजेब भी इस बातको समझता था इस ही कारणसे अंतमें उस नीतिका अनुसरण किया था, उसके उस अनुसरणका फल-शाहआलम, अजीम और कामबक्श हुए थे, परन्तु उसके कठोर अत्याचार और हिन्दू द्वेषने उसका नाश कर दिया था. उसी पापवृत्तिके वश होकर उसने इस नीतिके ग्रहण करनेको भी निष्फल कर दिया।

पिताके राज्यको अपने अधिकारमें करनेकी इच्छासे चारों भाइयोंने जो सम्पूर्ण भारतभूमिमें महा अग्नि जलाई थी, उसका विचार करना मेवाडके इतिहासका काम नहीं है, इस ही कारणसे यहांपर उसका वर्णन नहीं किया गया, उस वृत्तान्तको इतिहासके समस्त जाननेवाले जानतेही होंगे। औरंगजेबकी कुदृष्टिसे देखे जानेके कारण अभागे दाराकी महानता, मुरादकी तेजस्विता और शुजाकी कर्मचतुरता भस्म हो गई थी; भारतके इतिहासको जाननेवाला प्रत्येक मनुष्य इस बातको जानता है, इस कारण उस वृत्तांतको यहांपर लिखना आवश्यक नहीं है। हम उस विषयको छोडकर यथार्थ विषयका निर्णय करनेके लिये आगे बढते हैं।

बादशाह औरङ्गजेबके समयमें हिंदुस्थानमें बहुतसे प्रसिद्ध राजा एक साथ ही हुए थे इस बातको भारतके इतिहासमें एक नवीन चित्र कहा जासकता है, समस्त भारतवर्षके इतिहासमें किसी अध्यायके बीच ऐसा चित्र और कहीं नहीं देखा जाता, आठ भागोंमें विभक्त इस बडे राजस्थानके प्रत्येक राज्यमें एक २ साहसी और पराक्रमी राजपूत विराजमान था। वह समस्त भूपालगण तेजस्वी, वीर्यवान् और मंत्रणामें कुशल थे, अम्बेरके राजा जयसिंह, मारवाडके जसवंतसिंह और उनके आधीनमें बूँदी कोटेके राजा हाडा, बीकानेरके राठौर, उर्च्छा व दतियाके राजा लोग, यह सभी अत्यंत बलवान थे; यदि अहंकारी औरंगजेब मोहसे अंधा होकर उनके प्राचीन संस्कारोंको अपने पैरसे न ठुकराता, और अपने हिताहितका विचार करके उसीके अनुसार कार्य करता तो मुगलोंकी सामर्थ्य निश्चय ही अटल रहती; तथा मुगलोंके वंशकी इतनी शीघ्र ऐसी दुर्दशा न होती, परंतु उसका नाश तो केवल अहंकारने ही कर दिया, बलका अहंकार

कर मोहमें पडके उसने अपने हाथसे अपने पांवमें कुल्हाडी मारी, अपने सौभाग्यके मार्गमें अपने हाथसे ही कांटे बोये, जिन राजपूतोंके अनुरागको और सहायता पानेकी आशामें उसके पूर्व पुरुष सर्वदा तैयार रहते थे; जिनको संतुष्ट करना वे अपना मुख्य कार्य समझते थे, आज मोहसे अंधा हुआ औरंगजेब उन्हीं राजपूतोंके सुंदर गुणोंको भूलकर पाखंडोंके समान दुःखित करने लगा, अंतमें इस घिनौने व्यवहारसे ही उसका नाश हुआ, इसीकारण सम्पूर्ण हिंदू उसको विषैले नेत्रोंसे देखते थे, और उसका नाश करनेके लिये तैयार हो गये; हिंदुओंके वैरी कठोर हृदय औरंगजेबके हाथसे अभागी भारतसन्तानोंके उद्धार करनेके लिये वीरोंमें श्रेष्ठ शिवाजी महाराज प्रचंड सूर्यके समान उत्पन्न हुए, और अपनी मंत्रणाकी अपूर्व सहायतासे थोडेही दिनोंके बीचमें उस वीरवरने मुगल बादशाहके कठोर आचरणोंका यथार्थ प्रायश्चित कराया था।

जो मुसलमान बादशाह एक समय भारतवर्षमें भाग्यका चक्र चला गये थे उनमेंसे कोई भी कपटता, यथार्थ परायणता, वीर्यवत्ता वा विद्या व अभिमानमें * और-

---

* यूरोपके विद्वान एशियाके राजाओंको असभ्य, मूर्ख और ज्ञानहीन कह कर उनसे घृणा करते थे परन्तु महात्मा टाडसाहबने उनके भ्रमान्ध नेत्रोंको ज्ञानकी सलाईसे खोल दिया था, कि प्राच्यमंडलके राजा यूरोपके राजाओंकी अपेक्षा कितने विज्ञानी और बहुदर्शी थे, बादशाह औरङ्गजेब यद्यपि कठोर हृदय था परन्तु तो भी एक महापंडित था, इसकी सत्यता इसके बडे भारी लम्बे चौडे पत्रके पढनेसे भली प्रकार जानी जायगी, औरङ्गजबके बादशाह होनेपर उसके बालकपनकी शिक्षा देनेवाले मुल्ला सालहने बादशाहके पास बडा पद पानेकी आशासे जो युक्तिपूर्ण और खुशामदका भरा हुआ एक पत्र भेजा था तथा स्वयं भी आये उस पत्रको पढकर औरंगजेबने अपने उस्तादको क्रोधित होकर जो उत्तर दिया, प्रयोजन समझकर आदिसे अन्ततक उसका अनुवाद किया जाता है; बर्नियरने भारतमें घूमते हुए आकर यह पत्र तथा और भी अनेक मूल्यवान पत्रोंको इकट्ठे किया था, जो बातें उस पत्रमें लिखी हुई थीं; उनके होनेसे तीनसौ वर्ष पीछे (अर्थात् सन् १६८४ ई०) में उसका अंग्रेजी अनुवाद हुआ।

मुल्लाजी ! मेरे पाससे आप किस बातकी आशा करते हैं; क्या आप न्यायके अनुसार इच्छा कर सकते हैं, कि मैं आपको अपनी सभाके बीचमें एक श्रेष्ठ आसनपर स्थापित करूं? कर्त्तव्यके अनुसार मुझको कहना पडता है कि यदि आप मुझे उचित शिक्षा देते, तब मैं आपके उस कार्यका अनुग्रिहीत रहता; कारण कि मेरे मनमें ऐसा विश्वास था कि जितना ऋणी मनुष्य पिताका है उतनाही ऋणी यदि उपयुक्त शिक्षा मिले तो गुरुके निकट हो सकता है, परन्तु उस प्रकारकी शिक्षा तो आपने मुझको नहीं दी; भूगोलकी शिक्षा देनेके समय आपने मुझसे कहा था कि जिसको फरंगिस्तान कहते हैं, वह अत्यन्त ही सामान्य है, परन्तु मैं नहीं समझनेका कि वह कैसा साधारण है। जिस महाद्वीपके एकांशमें तो पुर्टगालका राजा श्रेष्ठ है, तत्पश्चात् हालैण्ड और तिसके पीछे इंगलैंडके राजाको नीचेके आसनपर स्थित कहकर वर्णन किया है; फिर फ्रांस और अन्दुलशिया आदि देशोंको आपने साधारण राज्य बताया है, आपकी दी हुई शिक्षासे यही ज्ञात हुआ कि उक्त राजाओंसे हिन्दुस्थानके कुल बादशाह अच्छे हुए। तथा इनमें हुमायूँ, अकबर, जहांगीर, और शाहजहां तो यथार्थ ही सौभाग्यवान, महानुभाव, विश्वविजयी और पृथ्वीका पालन करनेवाले थे। तथा फारस उजबक, कासगर, तातार, कात,

गजेबकी बराबर नहीं था, यह सम्पूर्ण गुण दोष उसके कठोर हृदयमें एक साथ विराजमान थे, जो विद्या और वीरता, परोपकार तथा सताए हुए का उद्धार करनेके लिये काम आती है, औरंगजेब अपना स्वार्थ सिद्ध करनेके लिये ही उसका व्यवहार करता था; संसारमें उसको किसीका विश्वास नहीं था; वह अपने प्यारे मित्रोंमें भी अपने अभिप्रायको नहीं कहता था:परन्तु उसकी दुराकांक्षा तो सबसे ही अधिक प्रबल हो गई

—पेगू, चीन और महाचीनके बादशाह भी हिन्दुस्तानी बादशाहोंका नाम सुनकर थरथर कांपतेहैं। न.हु ? "क्या भूगोल है ? इसकी अपेक्षा यदि मुझे इस प्रकारकी शिक्षा देते कि जिससे मैं सम्पूर्ण भिन्न २ देशोंको भली प्रकारसे जान सकता; जिससे सम्पूर्ण देशोंके राजाओंकी युद्धनीति, आचार, व्यवहार, धर्मनीति, प्रजा पालन और अर्थनीतिको सीख सकता, फिर सारगर्भ इतिहासोंको पढकर उन सबका उत्थान, उन्नति, और पतन, किस प्रकार घटनाकी विचित्रतासे राज्योंमें अदलबदल तथा गडबड हो जाती है, यदि आप यह शिक्षा मुझे देते तो मैं उचित शिक्षा पाता, अच्छा ! इन सब बातोंको दूर रहने दो; हमारे जो पूजनीय पिता और पितामह इस राज्यके अधीश्वर थे कि जिन्होंने मुगलराज्य स्थापन किया था, उन्होंने कौनसे उपायसे इतने बडे भारी राज्यमें जय प्राप्त की थी: दुःखका विषय है कि आपने इस विषयमें मुझे कुछ भी शिक्षा नहीं दी और अधिक तो क्या कहूँ, आपने तो उनके नाम तक भी मुझे न बताये, आपकी इच्छा तो मुझे केवल अरबी भाषामें लिखना पढना सिखानेकी थी, जिस भाषाके सीखनेमें दश बारह वर्षका प्रयोजन था: उसी भाषाके सिखानेमें आपने इतना अधिक समय लगाकर जो उपकार मेरे साथ किया था, निस्सन्देह मैं उसके लिये आपका अनुगृहीत हूं, जो लोग राजाके प्रतिवेशी हैं, जिनके साथ दिन रात निवास करना होता है जिसके बिना एक मुहूर्तका भी काम नहीं चल सकता, उस भाषाकी शिक्षाकी आवश्यकता अधिक है, या उस भाषाकी विशेष आवश्यकता है कि जिसके साथ हमारा कुछ भी सम्बन्ध नहीं है, आपका तो यह विचार था कि व्याकरण और व्यवहार शास्त्रको जानकर ही राजकुमार अपनेको ज्ञानवान समझें।

जिसका समय इतना मूल्यवान है, जिसके ऊपर इतना बडा भारी कार्य सौंपा हुआ है, उसको क्या ऐसे उपयुक्त ज्ञानका प्रयोजन नहीं है ?-आप ही कहिये, "परन्तु आपकी शिक्षाके विषयको विचार करके मैं अचम्भेमें हो गया हूं।" "महोदय ! क्या आप नहीं जानते कि मनुष्यकी बुद्धि बालकपनमें कितनी तीक्ष्ण होती है; इसी कारण उस सुकुमार अवस्थामें उत्तम शिक्षा देनेसे और उस मेधा शक्तिके भली प्रकार परिचालित होनेसे फिर उसका हृदय ऊंचे भावको धारण करता है, और उत्तम २ अनुष्ठानोंको कर सकता है, आपने अरबी भाषामें जो व्यवहारनीति, उपासनापद्धति और विज्ञान शास्त्रकी शिक्षा दी थी; उसके समान क्या ? हमारी मातृभाषामें वैसी शिक्षा नहीं हो सकती ? मेरे वालिद शाहजहांने आपसे कहा था कि आप मुझे विज्ञानशास्त्र पढावेंगे; ठीक है ! और मुझे भी भली भांतिसे स्मरण होता है कि आपने बहुत वर्षोंतक कितने एक शून्यगर्भ विषयके प्रश्न दिये थे; जो कि बिना जडबुनियादके थे, उन सबको विचारनेसे मनको तिलमात्र भी तृप्ति नहीं होती, वह शून्य और अलीकमात्र थे, विचार कर देखा जाय तो वह मनुष्यके किसी कामके नहीं थे; वास्तवमें वह सम्पूर्ण प्रश्न कुछ भी नहीं थे, वह समझमें तो सहजसे नहीं आते परन्तु भूले बडी सरलतासे जाते हैं: जिन सम्पूर्ण प्रश्नोंकी समालोचना करते २ अतिबुद्धिमान मनुष्यकी बुद्धि भी नष्ट हो जाती है, और उस समय मनमें जिन बुरे संस्कारोंका उदय होता है वह अत्यन्त ही कष्टके देनेवाले होते हैं. और मुझे यह भी स्मरण होता है—

थी, अंतमें इसीने उसका नाश कर दिया था;औरंगजेबने सैकडों हजारों पाप किये थे कि जिनका विचार करते ही हृदय काँप उठता है,यदि वह ज्ञानकी सहायतासे अपनी सामर्थ्यको चलाता तो निश्चय ही उस समयके राजाओंमें शिरमौर समझा जाता;परन्तु हाय उसकी कुबुद्धिने ही उसको पापके पंकमें डाल दिया और इसी कारणसे अंतमें उसकी बुद्धि नष्ट हो गई, अंतमें उसकी असीम सामर्थ्य उसका ही नाश करनेके लिये प्रबल होकर उसे पीडा देने लगी थी।

अपने बन्धु बान्धव और अपने मित्रोंके हृदयको अपने हाथसे ही चीरकर औरंगजेब समझा था कि 'जिन्दगीभर बेखटके बादशाहत करूंगा'; परन्तु उसकी यह आशा विफल थी, वह मनमें विचारता था, कि बेखटके रहूंगा परन्तु वह मन ही उसके अधीन नहीं था, यदि वह अपने चित्तकी वृत्तिको रोकता तो क्यों इस भयंकर कुबुद्धिके सोतेकी कीचडमें अपना पैर देता,यदि ऐसा होता तो वह मनुष्य होकर भी क्यों पशुओंके समान कार्य करता? उसने पिता भाई और पुत्र इत्यादिको मार इस कठोर पापके भारको अपने

—कि आपने इस विज्ञान शास्त्रकी समालोचना भी कुछ समयतक सिखाई थी (सो कितने दिनोंतक इसको मैं नहीं कह सकता) उसमेंसे जो कुछ मुझे याद रहा वह असार, दुर्बोध और जटिल शब्दमात्र है। उन वाक्योंसे श्रेष्ठ पंडितगण विरक्त और पीडित हुआ करते हैं, और जो आपके समान ज्ञानवान मनुष्य हैं; जिनके मन ही मनमें यह धारणा है कि हमी सम्पूर्ण शास्त्रोंके जाननेवाले हैं; मैं निश्चय ही कहता हूँ; वह सम्पूर्ण प्रश्न केवल उनकी धूर्तता और मूर्खताको ढकनेके ही लिये उत्पन्न हुए हैं। परन्तु जिस विज्ञान शास्त्रकी सहायतासे मन स्वयं उसको करना सीखना है; जिससे केवल सारगर्भ युक्तिके अतिरिक्त और कुछ भी सन्तोष प्राप्त नहीं होता; अथवा जिस ज्ञानके प्रभावसे मनुष्यका हृदय भाग्यके आक्रमणसे दूर भागना सीखता है अथवा जिसके बलसे मनुष्य विपत्तिमें व्याकुल और सम्पत्ति में आनंदित नहीं होता, और चिरकालतक स्थिर होकर अचल अटल रहता है;" आप यदि मुझे वह विज्ञान शास्त्र सिखाते तब मैं "कौन हू ?–कहांसे आया हू ? और कहां जाऊंगा इस ब्रह्मांडके पिंडका मूल तत्त्व क्या है ? यह कितना बडा है, और यह कितने अंशोंमें विभक्त है और वह सम्पूर्ण अंश किस प्रकारकी शक्तिसे चलाये जाते हैं ?" "यदि आप मुझे इस विज्ञान और इन गूढतत्त्वोंका उपदेश करते तो सिकन्दर अरस्तूका जितना ऋणी था मैं भी उससे अधिक आपका ऋणी होता और एक २ उत्तम पुरस्कार आपको देता, इस नीच और घृणित तथा इस चाटुकार्यकी अपेक्षा क्या आपको मुझे राजनीति और यथार्थ कर्मकी शिक्षा देनी उचित नहीं थी; प्रजाके ऊपर राजाका क्या कर्तव्य है; प्रजाको राजाके प्रति क्या कर्तव्य है, इस भांतिकी शिक्षाका देना क्या आपका कर्तव्य नहीं था ? हमारा जीवन राजमुकुटके लिये है, एक समय जिस हाथसे तलवारको ग्रहण करके अपने भाई बन्धुओंके सामने युद्धभूमिमें युद्धकरनेके लिये तैयार होना पडेगा, क्या इसका विचार करना आपको उचित नहीं था ? हिन्दुस्तानके राजकुमारोंके भाग्यमें क्या बहुधा ऐसा नहीं लिखा होता अच्छा ? किस रीतिसे शत्रुओंके किलेको घेरना होता है, किस प्रकारसे रणभूमिमें सेनाके व्यूहकी रचना की जाती है; क्या इस प्रकारकी शिक्षादेनेका आपने यत्न किया था? कभी नहीं मैं जोरके साथ कह सकता हूँ कि कभी नहीं ? इन सम्पूर्ण शिक्षाओंके लिये मैं दूसरोंका ऋणी हूँ, परन्तु आपका तो विलकुल भी नहीं; आप जिस मुकामसे आये हैं वहींको चले जाइये; देखिये कोई जान न सके कि आप कौन हैं, और आपका क्या हुआ है।"

शिर पर रखकर निश्चिन्त रहनेकी इच्छा की थी, वह केवल उसकी विडम्बनामात्र थी, जो हो ? वह सहस्रोंबार इच्छा करके सहस्रोंबार प्रतिज्ञा करके भी निश्चिन्त नहीं रह सका, उसे पग २ पर भांति २ की चिन्ताएँ आय २ कर भयंकर पीडा देने लगीं, उसके साथ २ ही हृदयकी शांति जाने कहांको चली गई, एक तो संसारमें किसीका विश्वास ही नहीं करता था, और फिर तिसपर उसके चित्तकी वृत्ति विगड गई; तथा पहले भावको वह वृत्ति सहस्र गुणा बढाने लगी,साथ ही साथ हृदयकी अशांति उसको भयंकर पीडा देकर दुःखित करने लगी, मुहूर्त २ में भांति २ की चिन्तायें और संदेह उत्पन्न होने लगे; मानो सभी संसार उसका शत्रु है, मानो उसके इष्ट मित्र और मंत्री इत्यादि सभासद लोग सभी मिलकर उसके विरुद्ध कपटजाल बना रहे हैं, यह सम्पूर्ण चिन्ताएँ जितनी ही बढने लगीं, उतना ही वह व्याकुल होने लगा;इस अवस्था में जीवनका व्यतीत करना केवल विडम्बनामात्र था, बुद्धिमान् औरंगजेब उसको भली भांति समझ गया था, इस कारण हृदयकी शांतिका उपाय खोजने लगा, वहुत चिन्ता करनेपर अन्तमें स्थिर किया कि अपनी जातिको ही संतुष्ट रखकर निश्चिन्ततासे राज्य भोग सकूंगा तब यह सम्पूर्ण विघ्न और समस्त शंकायें दूर हो जायँगी ।

जिस समय जिस मुहूर्त्तमें औरङ्गजेबके मनमें इस पापदायिनी चिन्ताका उदय हुआ था, उसी समय और उसी मुहूर्त्तमें उसके भाग्यका आकाश काले २ बादलोंसे ढक गया; हीरोंसे जडा हुआ मुकुट उसके शिरपरसे पृथ्वीपर गिर पडा; परन्तु वह उस समय भी नहीं समझा था कि मैं स्वयं ही अपना नाश करनेके लिये तैयार हुआ हूँ; सारांश यह है कि वह उस समय मोहसे इतना मोहित हो गया था; कि अपने हिताहितके विचारको एक बार ही भूल गया था; उसकी उस कल्पनाका वर्णन करते हुए हृदय काँपता है, लेखनी चलते २ रुक जाती है, उस दुर्बुद्धि पापी औरंगजेबने अपने मनमें विचारा था कि अपने कुटुम्बी और बन्धु बान्धवोंके संहार करनेसे जो हाथ कलंकित हुए हैं इन्हीं हाथोंको अब हिन्दुओंके रुधिरसे धोकर छुटकारा पाऊंगा, उस दुर्बुद्धिने अपने मनमें यह विचारा कि ऐसा कार्य करनेसे ही चिन्ताके हाथसे मेरा छुटकारा होगा, और मेरी सजातीय,स्वधर्मी प्रजा भी सन्तुष्ट हो जायगी । जिस घडी उसके हृदयमें यह विचार उत्पन्न हुआ था उसने उसी मुहूर्त्तमें अपने इष्टमित्रोंको बुलाय इस भयंकर आज्ञाका प्रचार करनेके लिये कहा । कि "हमारे राज्यके सम्पूर्ण हिन्दुओंको मुसलमान होना पडेगा; जो लोग इस आज्ञाको नहीं मानेंगे उनको बलात्कार इस धर्मपर चलाया जायगा । "इस महाभयंकर दुःखदाई आज्ञाका प्रचार होते ही सारे राज्यमें हाहाकार शब्दकी ध्वनि सुनाई आने लगी;सहायता और आश्रय हीन हो अभागे हिन्दूगण भयके मारे इधर उधर भागने लगे । आज सनातन धर्मकी रक्षाका कोई उपाय न रहा; वहुत हिन्दूलोग मुगलराज्यको छोड व्याकुल हो अतिशीघ्र दक्षिणकी ओरको चले गये, अनेक हिन्दूसन्तान शाही अहलकारोंके अत्याचारोंसे पीडित हो वहांसे भागनेका कोई उपाय न देखकर उन्मत्त हो अपने हाथसे ही अपने हृदयको छेदन करने लगे, जो

स्त्री, पुत्र और परिवार अपने प्राणोंसे भी अधिक प्यारी वस्तु है, निःसहाय हिन्दूगण पहले अपने हाथसे उनको मारकर फिर उसी कटारी तथा छूरीसे भयंकर शोकानलमें अपने जीवनकी आहुति देने लगे, सारा राज्य विना राजाके समान हो गया, चारों ओरसे हाहाकारा शब्द सुनाई आने लगा; उन दुःखित हुए हिन्दुओंका मर्मभेदी आर्तनाद: उन निरुपाय और निःसहाय हिन्दुओंके हृदयको विदीर्ण करनेवाला शोक ही, पल २ में सुनाई देता था । हिन्दुओंका मान और मर्यादा जाती है, कुल धर्म और जाति गौरव पातालको चला चाहता है, आज भारतवर्षमें प्रलयका समय आ पहुँचा है, कौन इस प्रलयके समयमें इन अभागे हिन्दुओंको यमराजके हाथसे बचावेगा ? कौन इस कुबुद्धिमान दानवके हाथसे सहायहीन भारत सन्तानोंका उद्धार करेगा, कोई भी नहीं ? जो रक्षा करनेवाला है यदि वही भक्षण करनेवाला हो जाय, जिसके ऊपर प्रजाकी मान मर्यादा है, जाति-धर्मका विचार स्थित है, यदि वही अपने परायेका विचार कर सजाति और विजातिके मनुष्योंको अलग २ नेत्रोंसे देखकर अपने हृदयसे पत्थरको बांधे और अपनी प्रजा तथा अपने आश्रितोंको पीडित करे तो वह निःसहाय प्रजा किसके सामने जाकर खडी होगी ? किसके निकट जाकर सहारा लेगी ? अपना और पराया, सजाति और विजातिको न विचारकर सबको बराबर नेत्रोंसे देखना राजाका अवश्यकीय कर्त्तव्य है, और जो इन कार्योंके पालन करनेसे विमुख है वह राजानामके योग्य नहीं, राजसिंहासन, उसके छूनेसे भी कलंकित होता है, राजसिंहासन पर बैठकर जो हिताहितका विचार नहीं करता और गर्व, मोह, क्रोध तथा अहंकार जिसके हृदयमें भरा हुआ है और जो अपनी विवेकशक्तिको खोकर क्रूरधर्मकी क्रूर बुद्धिसे परिचालित होता है, "वह राजा नहीं है, वरन राजाके नामको लजानेवाला है; वह प्रजाके सुखरूपी सूर्यका हरणकरनेवाला राहु है, देशके भाग्याकाशको घेरनेवाला प्रचंड धूमकेतु है; उसके असंख्य पापोंसे उसका राज्य शीघ्र ही पातालको चला जाता है; विधाताके सूक्ष्मदर्शनसे उस अत्याचारी पापीके मस्तकपर कठोर यमराजका दण्ड गिरता है।"

मुगल कुलपांसन पाखंडी औरंगजेबके कठोर अत्याचारसे सम्पूर्ण राज्यमें अराजकता उत्पन्न हो गई, पीडित हुए हिन्दुओंका भागना और आत्महत्या करनेसे नगर, ग्राम और सम्पूर्ण बाजार एक साथ ही सूने हो गये । तथा सब स्थान श्मशानके समान दिखाई देने लगे बनियोंके न होनेसे दूकानोंमें चोरोंने अपना निवास किया और बेचनेवालोंके न होनेसे सब बाजार सूने दिखाई देने लगे, किसानोंके चले जानेसे खेती वनके समान हो गई, इस भयंकर उपद्रवके समयमें बादशाहने देखा, कि राज्य अनेक प्रकारसे हीन अवस्था युक्त हो गया है, खजाना खाली हो गया अब राजकर्मचारी लोग कर नहीं दे सकते, जिसके पास जाकर कर मागें; जिसके पास जायँ उसको ही अधमरा पावें, तस्करोंके अत्याचारसे घर सूने हो गये । जब उस पापीने धन उपार्जन करनेका कोई उपाय न देखा तो भारतवर्षकी सम्पूर्ण हिन्दूप्रजाके ऊपर मुण्डकर (जिजिया) लगानेका विचार किया । इस भयंकर अत्याचारकी सूचना होते ही सम्पूर्ण भारत वर्षके

ऊपर मानो वज्र टूट पडा, कौनसा उपाय करनेसे इस भयंकर विपत्तिसे छुटकारा मिलेगा, इसको कोई भी स्थिर न कर सका, सब ही हताश, निरुत्साह और चेष्टा रहित होकर हाहाकार करने लगे; उस हृदयको विदीर्ण करनेवाले हाहाकार शब्दसे उस पापी बाद-शाहका हृदय किंचित् भी भयभीत न हुआ; अभागे हिन्दुओंकी शोचनीय अवस्थाको वह अपने नेत्रोंसे देखता रहा। उसके कठोर हृदयमें किंचित् भी दयाका संचार न हुआ। विख्यात अर्मके लिखे हुए वृत्तान्तको पढनेसे जाना जाता है कि जिस तीक्ष्ण चिन्ता और शंकाओंके हाथसे छुटकारा पानेकी इच्छासे उसने यह पैशाचिक कार्य किये थे, उस संकटसे तौ भी वह न छूटा, उन चिन्ता और शंकाओंसे छूटना तो दूर रहा वरन् वह उनके काटनेसे और भी अधिक दुःखित हुआ; जितने दिन बीतने लगे उतने दिनतक बराबर अधीर होता रहा, उस विषैली चिन्ताकी तीक्ष्णता जितनी बढने लगी उतना ही उसका धीरज घटने लगा, धीरे २ वह चिन्ता इतनी प्रबल हो गई कि वह कुछ भी स्थिर न रह सका; सोते, जागते किसी अवस्थामें भी निश्चिन्त नहीं रहता था, घोर रात्रिके दूसरे पहरके समयमें वह अपने आत्मीय और कुटुम्बियोंको देखता था मानो उसके पिता भ्राता और पुत्रोंके मर्मभेदी वचन उसको सुनाई आते थे, मानो उन सताए हुओंकी आत्मा तीक्ष्ण स्वरसे कह रही है "हे पापी! हमको मारकर क्या तू निश्चिन्त होकर राज्य भोग कर सकता है? देख दुराचारी! तेरे मस्तकपर गिरनेके लिये भयंकर यमराजका दंड तैयार हो रहा है।" उसी समय औरंगजेब आश्चर्यमें हो जाता और अपनी शय्यासे उठकर गृहसे बाहर जानेकी चेष्टा करता; परन्तु जा नहीं सकता, उन्हीं पैरोंसे लौटकर फिर आकर लेट रहता, कालकी विधिके नियमानुसार जिस समय धीरे २ उसकी परमायु क्षय होनेको हुई, जिस समय भयंकर यमराजका दंड धीरे २ उसके सामने आने लगा; उस समय उसको महा कष्ट होने लगा; उस कष्टसे दुःखित होकर फिर वह अपनी रक्षा न कर सका, आत्मरक्षा न करनेके शोकसे दुःखित और निराश हो सहसा चिल्ला उठा? "यह क्या है?" जिस ओरको मैं देखता हूं उसी ओर केवल देवता दिखलाई देते हैं। *

---

* औरंगजेब एक विद्वान् बादशाह था, उसका यथार्थ कारण नीचे लिखे उसके दो पत्रोंसे भले प्रकार जान पडेगा, मरनेके एक दो दिन पहिले उसने जो दो पत्र अपने प्यारे पुत्रोंको लिखे थे, उनसे अपने जीवनके विभीषिकामय शोकोद्दीपक चित्रको अपनी चतुराईसे खैंचा था, उन पत्रोंके पढनेसे आश्चर्य होता है, अपने अनुतापकी यंत्रणासे पीडित हो अनित्य संसारके सम्पूर्ण मूल तत्त्वका वर्णन किया था, उनके पढनेसे अत्यन्त पापियोंका हृदय भी कांप जाता है। हाय! यदि अनर्थकी देनेवाली बुद्धि उसको उत्पन्न न होती तो नहीं कह सकते कि वह इस संसारमें कितनी प्रतिष्ठा पाता।

"शाह आजिमशाहके पास"—

"हे पुत्र! आशीर्वाद देता हूं कि कुशलसे रहो; मेरा मन बहुत दिनोंसे तुममें लग रहा था। अब मैं वृद्ध हो गया हूं, ज्वर मुझे दिन २ दुर्बल करे डालता है; शान्ति और सामर्थ्य शरीरको धीरे २ छोडे जा रही है; मैं अकेला ही अपरिचितके समान इस संसारमें आया और अकेला ही अपरिचितके समान—

अभिषेक होनेके समय राजाओंमें जो रीतिकी जातीहै उनमें टीकादौरे विशेष प्रसिद्ध है बहुत दिनोंसे यह पुरानी रीति बंदसी हो गई थी, इससे विदित होता है कि, राणाकुलकी एक प्रधान रीति इतने दिनोंतक छिपी पडी थी, आज महाराज राजसिंहने राजसिंहासनपर बैठते ही उस छिपी हुई-विधिका उद्धार कर दिया, अजमेरमें बहुत घोर मालपुरनामका एक नगर है राणाजीने उस वीरप्रथाका पालन करनेके लिये उस

यहांसे बिदा लेता हूं; मैं कौन हूं ? और कहांसे आया, कहां जाऊंगा ? इसको कुछ भी नहीं जानता, सामर्थ्यकी धूमधामसे यह जो समय बीत गया है वह केवल दुःख और यंत्रणाहीको पीछे रख गया है; यह बादशाही मेरे हाथमें नहीं सौंपी गई थी; न मैंने इसकी रक्षा ही की "हाय ! मेरा ऐसा अमूल्य समय वृथा ही व्यतीत हुआ; मेरे हृदय मंदिरमें एक विवेक नामका रक्षक था; परन्तु मैं अभागा हूं ? मैं इन अन्धे नेत्रोंसे उस प्रज्वलित गौरवकी प्रभाको न देख सका; जीवन कभी स्थाई नहीं है; प्राणवायुके चले जानेपर फिर कुछ भी नहीं रहता और भाग्यका सम्पूर्ण आशा भरोसा नष्ट हो जाता है; यद्यपि मुझे ज्वरने छोड दिया है परन्तु इस शरीरमें मांस और हड्डियोंके सिवाय और कुछ भी न रहा, यद्यपि मेरा पुत्र कामबक्स विजयपुरकी ओरको गया है और वह इस समय है भी निकट ही; पर हे वत्स ! तुम सबसे ही अधिक निकट हो, शाह आलम बहुत दूर है; और मेरा पोता आजिम-हुसेन विधाताकी विधिके अनुसार भारतवर्षके निकट आ पहुँचा है, उसकी सेना और अनुचर सभी हमारे समान निःसहाय और शंकित हैं, यह सभी मेरे समान पीडित और कबूतरके समान चंचल हैं; वह अपने स्वामीके पाससे बिछुड गये हैं, इस समय उनका कोई स्वामी है या नहीं यह किसीको विदित नहीं है।

मैं इस संसारमें कुछ भी साथ लेकर नहीं आया, तथा मनुष्यकी दुर्बलताके अतिरिक्त और कुछ भी अपने साथ नहीं ले जाऊंगा; मैं अपनी मुक्तिके विषयको विचारकर कैसी पीडा पा रहा हूं,उसकी चिंता करके कितना शंकित हो रहा हूँ, यद्यपि उस जगदीश्वरकी दया दाक्षिण्यता और करुणाके ऊपर मेरा भरोसा है, परन्तु क्या करूं, मैं अपने कार्योंको विचारकर उन शंकाओंको कुछ भी अपने हृदयसे दूर नहीं कर सकता, परन्तु क्या हो सकता है, मैं चला जाऊँगा तब पीछे मेरी स्मृति कुछ भी बाकी नहीं रहेगी तब तो जो भाग्यमें है वही होगा, मेरी शरीररूपी नौका अनन्तकालके समुद्रमें डूबी जा रही है,इसकी रक्षा परमेश्वर ही करैगा, तौ भी इस उपस्थित हुई अवस्थाको विचारकर निश्चय ही बोध होता है कि, इस समय मेरे पुत्रोंको कुछ उद्योग करना अत्यन्त ही आवश्यक है, मेरा यह अंतिम आशीर्वाद मेरे पोते बेदरबख्तसे कहना; मैं इस समय उसको देख नहीं सका; परन्तु उसके दर्शनोंकी अभिलाषासे अत्यन्त ही क्लेश पा रहा हूँ;ऐसा जाना जाता है कि, उसकी पुत्री बेगम बहुत दुःख पा रही है,परन्तु कुछ कह नहीं सकता, ईश्वर ही मनुष्यके हृदयके भावको समझ सकता है, स्त्रियोंकी बुद्धिसे उत्पन्न हुई चिन्ता केवल उनकी निराशताको ही उत्पन्न करती है। रुखसत ! रुखसत !

"राजकुमारकामबख्शके पास--"

मेरे हृदयके पास ही रहनेवाले प्यारे पुत्र ! सामर्थ्यसे ऊंचे स्थानमें चढकर जगत्पति जगदीश्वर-की आज्ञासे मैंने तुमको बहुतसे उपदेश दिये थे और तुम्हारे साथ कठोर क्लेश भी मैंने भोगे परन्तु उन सब मन्त्रणाओंको ईश्वरकी इच्छाके विरुद्ध जानकर तुमने नहीं माना; इस समय मैं एक विदेशी और अपरिचितके समान इस संसारसे बिदा लेता हूं, और अपनी तुच्छताका विचार कर शोकसे

मालपुर पर ही आक्रमण किया; और भली भांति वीरताका परिचय दे, उस नगरको लूटकर अपने स्थानमें लौट आये, फिर थोडे ही समयके बीचमें इस विषयका समाचार वृद्ध शाहजहाँतक पहुँचा मंत्रियोंने इस वृत्तान्तको भांतिर के रंगोंसे चित्रित कर बादशाहके क्रोधको उत्तेजित करनेकी चेष्टा की; परन्तु बादशाहने उदार बुद्धिसे

—ढक रहा हूँ; तुम कहोगे कि इससे फायदा क्या? सम्पूर्ण मनुष्य ही अपूर्ण हैं. आज उसी अपूर्णता और अपने किये हुए पापोंके फलको लेकर मैं इस संसारसे बाहर होता हूँ; हाय! ईश्वरकी लीला कैसी विचित्र है, इस संसारमें मैं अकेला ही आया था और अकेला ही बिदा होता हूं, इस बडी भारी यात्राका मार्ग दिखानेवाला मुझे छोडकर चला गया है, बारह दिनसे जो ज्वर मुझे पीडा दे रहा था उसने भी इस समय छोड दिया है, इस समय जिस ओर को नेत्र उठाकर देखता हूं उसी ओर देवताके अतिरिक्त और कुछ भी दिखाई नहीं देता, मैं अपनी सेना और अपने सेवकोंकी अवस्थाको विचारकर शंकित हो रहा हूं परन्तु हाय! अपने विषयमें कुछ भी नहीं जानता, दुर्बलताके अधिक हो जानेसे कमर झुक गइ है, पैरोंमें चलनेकी शक्ति नहीं रही, जो स्वास बढ गया था; वह भी इस समय जाता रहा, हाय! वह एक सामान्य आशाको भी न छोड गया; मैंने असंख्यों पाप किये हैं; नहीं कह सकता कि उनका फल कैसा होगा? यद्यपि मनुष्योंका पालक जगदीश्वर छावनीकी रक्षा करेगा, परन्तु धर्मात्मा मनुष्योंको भी मेरे पुत्रोंके ऊपर यत्न करना उचित है, मैं जबतक जीवित था, तबतक मैंने एक मुहूर्तको भी यत्न नहीं किया, अब इस संसारसे चला, इस कारण पीछे उसका क्या फल होगा; उसको मैं नहीं कह सकता, इस बडे भारी मनुष्योंके समाजको ईश्वरने मेरे पुत्रोंके हाथमें सौंपा है। आजिमशाह इस समय मेरे निकट ही है, देखो सावधान रहना तुम्हारे राज्यमें कहीं कोई मुसलमान धर्मात्मा मनुष्य न मारा जाय यदि ऐसा होगा तो वह सम्पूर्ण पाप इकट्ठे होकर मेरे ही माथे पर गिरेंगे, मैं इस समय महाप्रस्थानके मार्गमें पहुँचा हूँ, अत एव तुम्हें और तुम्हारी माता अथवा पुत्रको ईश्वरके हाथमें सौंपकर चला; भयंकर पीडा मुझे धीरे२ पकड रही है, बहादुरशाह जहांपर था, वह अब भी उसी स्थानपर है; उसका पुत्र हिंदुस्थानके निकट आ पहुँचा है, वेदरबख्त गुजरातमें है; हयातुलनिशाने पहले कभी कष्ट नहीं देखा परन्तु आज उसे वह कष्ट भोग करना होगा; बेगमकी याद रखियो; मानो उसके साथ कोई सम्बन्ध नहीं है तुम्हारी गर्भधारिणी उदयपुरी (बेगम) (क) मेरी पीडाकी अंशभागिनी थी, वह इस समय मेरे साथ जानेकी इच्छा करती है, परन्तु सभी विषयोंका उपयुक्त समय नियत होता है। नौकर और पार्षद लोग चाहे कितने ही कपटी और दुराचारी क्यों न हों, परन्तु उनके साथ बुरा व्यवहार करना उचित नहीं; चतुराईसे अपना स्वार्थ ठीक कर लो; अपनी सीमाके मार्गसे बाहर पैर न फैलाना * * * मैं इस समय चला, पाप अथवा पुण्य जो कुछ भी मैंने किये हैं, वह केवल तुम्हारे ही लिये किये गये है, देखो इसके विपरीत विचार न करना, वेतन न पानेवाली सेनाकी प्रार्थना ज्योंकी त्यों बनी हुई हैं, दाराशिकोह न्यायी और चतुर था उसने लोगोंको बडे २ पारितोषिक नियत किये पर ठीक समयपर वेतन न मिलनेसे लोग उससे प्रसन्न न रहते थे। तुम्हारे ऊपर मैंने जो कुछ अन्याय किये थे, उन सभीको अब भूल जाना, देखो पुत्र! इसके पीछे तुम्हारे लिये मुझे और व्याख्या नहीं देनी होगी, कोई भी जीवात्माको अपने शरीरसे निकलता हुआ नहीं देख सकता, परन्तु मैं देख रहा हूं इस समय मेरी आत्मा मेरे शरीरको छोडे हुए जा रही है।"—

(क) अर्मने इसको कश्मीरकी स्त्री कहा है, वास्तवमें वह कभी भी उदयपुरके राणाके कुलमें उत्पन्न नहीं हुई थी, हां यह असम्भव नहीं कि इस बेगमने शाहपुर अथवा बुनराके राज्यवंशमें जन्म लिया हो, जब कि उसने साथ मरनेकी इच्छा की तब तो अवश्य ही वह राजपूतकुलमें उत्पन्न हुई होगी।

मुसकराकर कहा कि "मेरा भतीजा * बालक है इसी लिये उसने यह काम बिना जाने बूझे किया है ।"

राजपूतकुल गौरव वरिश्रेष्ठ प्रतापसिंहके साथ ही मेवाडकी वीरता एक प्रकारसे लोप हो गई थी परन्तु इस समय महाराणा राजसिंहके सिंहासनपर बैठते ही उस वीरताका फिर पूर्ण प्रकाश हो गया, शिशोदियाकुलके सरदार शान्तिकी कोमल गोदीको छोडकर तलवारको हाथमें ले आगे बढे । अब तो तलवारकी रगड तथा उन्मत्त हुए वीरोंके सिंहनादसे मेवाडभूमि बारम्बार काँपने लगी, महाराणा राजसिंह बाप्पा रावलके योग्य वंशधर थे, शिशोदियाकुलके योग्य वीर थे, वह जसे वीर थे, वैसे ही तेजस्वी भी थे । भट्टग्रन्थोंमें अपने पूर्वपुरुषोंकी अलौकिक वीरताका वृत्तान्त पढकर वह शत्रुके हाथसे अपने देश और शिशोदियाकुलके गौरवको पुनर्वार उद्धार करनेके लिये दृढ संकल्प हुए थे । इस समय यौवन अवस्थाके तीक्ष्ण उत्साहसे उन्मत्त होकर उस संकल्पके सिद्ध करनेका उपाय खोजने लगे, जब प्रतिज्ञा, संकल्प और साहससे हृदय बँध जाता है तब फिर कार्यके सिद्ध होनेमें कुछ भी विलम्ब नहीं रहता; राजसिंहका हृदय भी वैसे ही साहस और प्रतिज्ञासे बँधा हुआ था; इस ही कारण उनका चिरकालका संकल्प सिद्ध हो गया, वह अत्याचारी औरंगजेबसे आंतरिक घृणा करते थे और उसके नामपर सैकडों धिक्कार देते थे; इस समय उसी औरंगजेबको शाही तख्तपर बैठा हुआ देखकर उन्होंने तलवार हाथमें ले दृढ प्रतिज्ञा की; जिस दिन उन्होंने इस महाभयंकर प्रतिज्ञाको हृदयमें स्थापन किया, उसी दिनसे मुगलोंके साथ बहुतसे युद्ध करने पडे, उन सभी युद्धोंमें राणाजीकी असीम वीरता और प्रचंड वीर्यमत्ताके साथ पहला प्रताप पूर्णतासे प्रकाशमान हो गया था; विशेष सेनाकी सहायतासे अत्यन्त बलवान हुआ औरंगजेब भी इन युद्धोंमें कई बार परास्त हुआ था, यहां तक कि कई बार उसका प्राणतक संकटमें पड गया था, नहीं कह सकते कि वह अपने कौनसे पुण्यकी सहायताके कारण भयंकर कारागारकी पीडासे बचा रहा; जिस सूत्रको हाथमें लेकर तेजस्वी महाराणाने भयंकर औरङ्गजेबके विरुद्ध सबसे पहिले अपनी प्रचण्ड तीक्ष्ण तलवारको निकाला था; उसका वृत्तान्त संक्षेपसे नीचे प्रकाशित किया जाता है ।

मारवाडके राठौरकुलमें बहुतसे नवीन भाग बने हैं, उनमेंसे एक भागके कितने एक राजकुमार अपने प्राचीन राज्यको छोडकर रूपनगरमें आ बसे थे । रूपनगर मुगलोंके राज्यमें था, इस कारण वहांपर वे राठौरलोग मुगलोंके आधीनमें साधारण सामन्तरूपसे रहने लगे । जिस समय औरङ्गजेबके मस्तकपर भारतवर्षका राजमुकुट रक्खा गया था, उसी समय रूपनगरके सामन्त राजाके घरमें प्रभावती नामवाली कन्या दिन २ शशिकलाकी भांति बढती जाती थी, थोडे ही दिनमें परम सुन्दरी प्रभावतीके रूपलावण्यका वृत्तान्त और सुन्दरताका समाचार दुष्ट औरङ्गजेबने सुना, साथ ही साथ उसको रूप

* महात्मा टाडसाहब कहते हैं कि शाहजहां बादशाह 'राणा कर्ण' का धर्मभाई था ।

तृष्णा उत्पन्न हुई तब वह इस स्त्रीरत्नको पानेकी चेष्टा करने लगा, पश्चात् मनोरथ सिद्ध होनेका दूसरा उपाय न देखकर उसके साथमें अपना विवाह करनेका प्रस्ताव किया; औरंगजेबने अपने असीम गौरवसे मोहित होकर यह विचार किया कि यदि उस प्रभावतीके पास यह समाचार भेजा जायगा तो वह स्वयं ही इस बातपर राजी हो जायगी और विना विलम्ब किये मुझे अपनेको समर्पण कर देगी, परंतु उसका यह मनोरथ शीघ्र ही विफल हो गया, उसने अपनी पापकी तृष्णाका योग्य ही फल पा लिया; उसने प्रभावतीके पिताके पास यह समाचार पहुँचानेके लिये अपने दो सहस्र घुडसवारोंको रूपनगरकी ओर भेजा, परन्तु वह सम्पूर्ण आडम्बर वृथा हो गया।

ठीक समयपर औरङ्गजेबके भेजे हुए वह दो सहस्र घुडसवार रूपनगरमें जा पहुँचे, प्रभावतीके पितासे औरङ्गजेबके सम्पूर्ण संदेशा कहे, उस वृत्तांतको सुनते ही भयके मारे सामन्तराजके प्राण व्याकुल हो गये, वह कुछ भी स्थिर न कर सके कि अब क्या करें, फिर धीरे २ प्रभावतीने भी यह सम्पूर्ण समाचार सुना और पिताके निकट आकर बोली कि इस विपत्तिसे बचनेका उपाय कीजिये, परन्तु राठौर सामन्त उस समय इतने हताश हो गये थे कि उनसे कोई उपाय न सोचा गया। पिताको मौन देखकर प्रभावतीने स्वयं ही उपाय खोजनेकी प्रतिज्ञा की पहले तो अपनी उपस्थित अवस्थाको विचारकर देखा, कि मेरा कोई सहायक नहीं है, और न कुछ बल ही है, कारण कि पिता एक साधारण सरदार हैं तब क्या मारवाडके राजाके पास जाकर सहायताकी प्रार्थना की जाय? सो यह भी कैसे हो सकता है क्योंकि मारवाडके राजाको यदि बादशाहका वेतनभोगी कहा जाय तो भी ठीक ही है, अत एव ऐसी अवस्थामें कौन हमारी रक्षा करेगा; कौनसा वीर तलवार हाथमें लेकर बादशाहके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये तैयार होगा? तो अब कोई भी उपाय नहीं है, म्लेच्छके ग्राससे राजपूतसतीकी धर्मरक्षाका उपाय नहीं है; विष, छूरी, अग्नि, फाँसी इन उपायोंके करनेसे फिर किसीके भी मुखकी ओर नहीं देखना होगा; प्रभावतीने विचारा कि जब कोई उपाय न मिलैगा तब इन्हींका आसरा लूंगी परन्तु उसको इन कठोर उपायोंका आश्रय करना नहीं पडा; जिस समय वह यह विचार कर रही थी कि उसी समय उसके हृदयमें एक नवीन चिंता उत्पन्न हुई, मानो किसी आकाशके देवताने धीरे २ उसके कानमें यह कहा कि "निराश न होना? तुम्हारे उद्धारके करनेवाले मेवाडके राणा राजसिंह हैं" प्रभावतीका व्याकुल हृदय सावधान हो गया; उसने उसी समय महाराणा राजसिंहजीके हाथसे अपने उद्धार होनेका निश्चय विश्वास कर लिया।

प्रभावती पहले ही महाराणा राजसिंहके गुणोंका वृत्तान्त सुन चुकी थी, इसी लिये उसके हृदयमें दृढ विश्वास हो गया था; कि राणा राजसिंह जैसे वीर हैं वैसे ही रसिक हैं, और विशेष करके स्त्रियोंके ऊपर तो उनका अत्यन्त ही प्रेम है। राजसिंहके गुणोंका विचार करते २ प्रभावतीका हृदय उनके ऊपर धीरे २ आसक्त होने लगा, फिर कुछ विलम्ब न करके उसने महाराणासे कहला भेजा कि यदि मुझे इस उपस्थित हुए संकटसे उद्धार करके

मेरी मनोकामनाको पूर्णकरनेमें समर्थ होगे. तो मैं आपको अवश्य ही अपना पति बनाऊंगी; प्रभावतीने और किसीको विश्वासी न देखकर अपने पुरोहितको ही बुलाया और अपना समस्त वृत्तान्त सुनाया महाराणा राजसिंहके पास जानेको कहने लगी। बालिकाके इस कर्तव्यकार्यको देखकर परम हितैषी पुरोहित अत्यन्त ही आनन्दित हुआ;और एक मुहूर्तको भी विलम्ब न करके मेवाडकी ओर चला, ठीक ही समयमें महाराणा राजसिंहको सभामें पहुँचकर प्रभावतीकी लिखी हुई चिट्ठी दी, वह पत्र आदिसे अंततक सुन्दर हृदयभावसे पूर्ण था, इस कारण उसमेंका एक छोटाभाग नीचे लिखते हैं; अपने मनके भावको आदिसे अन्ततक वर्णन कर पत्रमें सबसे पहले लिखा था कि "महाराज ! क्या राजहंसीको बगलेकी सहेली होना होगा ? अथवा पवित्र राजपूतकुलकामिनी म्लेच्छकी अंकशायिनी होगी ? महाराज ! मैं आपसे निश्चय कहती हूं कि जो आप इस विपत्तिसे उद्धार नहीं करेंगे ता मैं अवश्य ही आत्मघात करके प्राणोंको त्याग कर दूंगी, " इस सुन्दर पत्रके गंभीर और तीक्ष्णभावको जानते ही महाराणा राजसिंह बाण लगे शेरके समान एक साथ ही तैयार हो गये, उनके शरीरकी प्रत्येक नसोंमें मानो किसीने गरम लोहेकी शलाका लगा दी, दारुण क्रोधके मारे उनका शरीर कांपने लगा, एक राजपूतकुलकी कन्याके ऊपर यवनोंके ऐसे अत्याचारको जानकर कौनसा राजपूत है कि जिसका हृदय क्रोधसे उन्मत्त न हो जायगा ? ऐसा कौन है जो उसका उद्धार करनेके लिये जीवनतक न दे देगा; फिर जब कि धर्मपरायण नारी अपनी रक्षाके लिये आर्तस्वरसे सहायता माँगे, तब क्या कोई वीर उसकी प्रार्थनाको विना पूर्ण किये रह सकता है ? कभी नहीं। यह तो हम पहिले ही कह आये हैं कि अत्याचारी औरंगजेबके भयंकर आचरणोंका योग्य फल देनेके लिये महाराणा राजसिंहजी इतने दिनोंसे अवसर देख रहे थे, आज ऐसे सुयोग्य अवसरको स्वयं ही आया हुआ देखकर अत्यन्त ही आनन्दित हुए, साथ ही साथ, साहस, उत्साह और जिघांसा सहस्रगुणी बढ गई,उन्होंने फिर किंचित् भी विलम्ब न करके दुराचारी मुगलोंके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये अपनी भयंकर तलवारको पकडा, उनके पितृपुरुषोंकी असीम गौरव राशिको यवनोंने अपने अत्याचारसे नष्ट कर दिया था "उनकी प्राणसे भी अधिक प्यारी " पवित्र स्वाधीनताकी लीलाकुंज मेवाडभूमि यवनोंके द्वारा "जागीर " नामसे कलंकित हुई, उसके पवित्र मस्तकपर भयंकर कलंकका भार रक्खा गया है; आज धुरन्धर वीर राणा राजसिंहजी अपने हाथमें तलवार ले उस लुप्त हुई गौरव गरिमाका पुनरुद्धार करनेके लिये तइयार हुए हैं। उनके सरदार और सेनाके सम्पूर्ण लोग राणाजीके तीक्ष्ण उत्साहको देखकर आनन्दित हुए और बाप्पा रावलकी भारी विजयपताकाको मस्तकके ऊपर लगाय रणभूमिमें राणा राजसिंहके साथ जानेको आगे २ हुए, उस समय अस्त्रोंकी झनकारके शब्दसे और प्रचंड रणवीरोंके सिंहनाद करनेसे मेवाडभूमि फिरसे जीवित हो गई; प्रभावतीके उद्धारको मुख्य कार्य समझकर महाराणा राजसिंहजी आगे बढे, और सम्पूर्ण सरदार व सेनाको साथ लेकर एक बार ही रूपनगरको ओरको चले वह नगर आरावली शैलमालाकी तलैटीमें स्थापित था, महाराणा राजसिंह उस बडे विस्तारवाले

स्थानको लांघकर तत्काल भयंकर विक्रमके साथ मुगलोंकी सेनाके ऊपर टूट पडे; बहुत देरतक दोनों दलोंमें घोर युद्ध होता रहा, परन्तु मुगल लोग राणाके प्रचंड विक्रमको न सहकर भलीभांतिसे दलित और परास्त हो गये, इनमेंसे कितनी एक सेना तो बडे कष्टसे अपने प्राणोंको बचाय भाग गई, इस प्रकार मुगलोंके दो सहस्र घुडसवार थोडेसे राजपूत वीरोंके हाथसे दलित और विध्वंस हो गये; महाराणा राजसिंह इसके पुरस्कारमें प्रभावतीको पाकर अत्यन्त आनन्दित हुए और अपने नगरमें आये। इनकी इस विपुल वीरताका वृत्तान्त सुनकर संम्पूर्ण राजपूत, राणाजीसे प्रीति करने लगे;प्रतापसिंहका योग्य वंशधर कहकर सहस्रों मुखसे धन्यवाद देने लगे, इस रीतिसे महाबली औरंगजेबके विरुद्ध राणा राजसिंहने यह प्रथम वीरताका कार्य किया था; मेवाडके रहनेवाले इनके इस कार्यको सफल हुआ देखकर मन ही मनमें अनेक प्रकारकी आशा करने लगे, प्रभावतीके उद्धारका विस्तृत वृत्तान्त मेवाडके इतिहासनामक ग्रंथमें जो कुमार हनुमन्तसिंह तथा पूर्ण सिंहजी लिखित है लिखा है, उपयोगी समझकर यहां हम उसको उतारते हैं। राजकुमारी रूपवती राजमहलोंसे अलग एकान्त स्थानमें भगवद्भक्ति और पूजापाठमें प्रवृत रहकर तथा गीताजीका पाठ व हरि कथा करके अपने दिवस व्यतीत किया करती थी। ईश्वरभक्तिमें इस राजकुमारीकी इतनी दृढ आस्था हो गई कि विवाहका स्वप्नमें भी उसे कभी ध्यान नहीं आता था। अपने निवासस्थानमें यह पुरुषकी छाया तक नहीं आने देती थी वैराग्यदशामें अपना समय बिताती थी। न किसीको वह अपने यहाँ बुलाती थी और न कहीं आप जाती थी। वैष्णव धर्मकी मर्यादाके अनुसार किसीके साथ स्पर्श भी अपना नहीं होने देती थी। यदि भूलसे जो कभी किसीका स्पर्श हो जाय तो वह उसी समय स्नान कर डालती थी। ऐसी पवित्र वृत्तिसे यह राजकुमारी रहा करती थी। परन्तु यह राजकुमारी अत्यन्त सुन्दरी थी इसलिये औरंगजेबने इसको विवाहना चाहा। जब इस बातकी चर्चा सर्वत्र फैली तो एक दिन राजमहलकी दासियोंने कुएँपर जल भरते २ राजकुमारी रूपवतीकी दासीसे कहा कि अरी बिहन! क्या तू भी अपनी बाईके साथ दिल्ली जावेगी। यह सुन वह दासी कुछ भी उत्तर न देकर पानी भरकर अपने घर गई,और सुनी हुई सब बात रूपवतीसे कही। इसपर वह राज-कुमारी बडी शोकातुर हुई और विचार करने लगी कि अब मुझे क्या उचित है? पन्द्रह दिनमें बादशाह यहाँ आ खड़ा होगा,जो उस समयमें निषेध भी करूंगी तो क्या हो सकेगा बादशाह मुझे बलात् ले जावेगा। अब क्या करूं, कहां जाऊं? अब अपनी विपत्ति किसे सुनाऊं। हाय! इन तुर्कोंसे मैं सदा घृणा किया करती हूं, जिन तुर्कोंको अस्पर्शनीय सम-झती हूं उन्हीं तुर्कोंके साथ उन्हीं धर्मशत्रुओंके साथ, अब मुझे स्पर्श करना पडेगा, हाय २ विवाह करना पडेगा। अरे रे!! मेरे इस जीवनको कोटि २ धिक्कार है। हाय मेरा यह दुर्भाग्य!!! जो मैं अभागिनी न होती तो क्या यह हृदयविदारी समाचार मुझे सुन पडता हे ईश्वर! आपकी क्या इच्छा है? हे अनाथके नाथ! इस संकटमें मेरी लाज रखनेवाले केवल आप ही हो। क्या करूं और कहां जाऊं ऐसा मार्ग आप ही बतलाइये। मैं इन धिक्कारपात्र तुर्कोंसे कदापि विवाह न करूंगी यह तो निश्चित ही है पर हे घट २ के स्वामी!

यदि आप क्षमा करें तो मैं आत्मघात करके आपकी शरणमें आऊं । जबतक इस देहमें प्राण हैं तबतक तुर्कसे व्याह कर अपवित्र होना नहीं चाहती । इससे कुछ उपाय शीघ्र सुझाइये,१५ दिनमें बरात चढकर आजावेगी, इस अंतरमें जो कुछ कर्तव्य हो करना चाहिये इसी समय राजकुमारीने अपने काकाको बुलाकर कहा। जिस भयसे मैं संसार त्याग एकान्त बास कर ईश्वर भक्तिमें अपना समय बिताती हूंऔर परपुरुषका मुखतक नहीं देखती हूं और पूजा पाठमें ही दिन बिताती हूं वही भय मेरे लिये उपस्थित हुआ है । मैंने सुना है कि शीघ्र ही म्लेच्छ बादशाह औरंगजेब मुझे व्याहनेको आनेवाला है । मैंने यह समाचार आज ही सुना है । अब मुझे अपनी रक्षाका एक भी उपाय नहीं सूझ पडता है । मैं म्लेच्छका मुख तक देखना नहीं चाहती हूं अत एव अपना प्राण त्यागना तो मुझे स्वीकार है परन्तु म्लेच्छके साथ व्याह करना अंगीकार नहीं । यदि कुछ उपाय न बना तो निश्चय ही आत्मघात करूंगी। इस बातको सुनकर उसके काकाने कहा मेरी समझमें तो दो बातें आती हैं । एक तो यह कि मेरे पास जो सेना है उसके द्वारा तेरी रक्षा मरते समय तक यथाशक्ति करूं । परन्तु मेरी सेना बादशाही लश्करके सामने ऐसी है जैसे सागरके सामने एक बूंद—इस लिये अन्तमें हमारा नाश अवश्य होगा। परन्तु तेरे धर्मकी रक्षा करते हुए जो मैंने मृत्यु पाई तो मेरी आत्माको संतोष प्राप्त होगा पर ऐसा करनेमें संदेह यही है कि तेरी प्रतिष्ठा पीछे कौन बचावेगा ? हमारे मर जानेपर भी आत्मघात तो तुझे करना ही होगा । दूसरा मार्ग यह है और यह बुद्धिमत्तासे भरा हुआ है कि तू अपना विवाह हिन्दुपति महाराणा उदयपुरके साथ कर । जो तू महाराणा उदयपुरसे विवाह करना स्वीकार करे और महाराणाजी बरात लेकर आवें तो हमारा मनोरथ सिद्ध हो जावे । आज समस्त भरतखंडमें ऐसा कोई वीर नहीं है जो बादशाहके साथ वैर करे । केवल उदयपुरके महाराणा राजसिंह ही शरणागतकी रक्षा करनेवाले तथा बादशाहसे निर्भयताके साथ वैर करनेवाले हैं, इसलिये जो तेरी इच्छा हो तो आज ही साँडिनी सवारद्वारा पत्री उदयपुर भिजवाऊं । यह सुन रूपवती बोली कि काकाजी उदयपुरके महाराणाजीके साथ विवाह करनेका निषेध मैं कैसे कर सकती हूं ? ऐसी पवित्र और निष्कलंक गद्दीका स्वामी क्या मुझे दूसरा कोई मिल सकता है ? जिन्होंने आजतक म्लेच्छोंसे सम्बन्ध नहीं किया यदि ऐसे राजकुलमें व्याहे जानेका मैं निषेध करूँ तो संसारमें कौन मुझसे अधिक मूर्खा होगी । मैं अपनी प्रतिष्ठा बचानेके लिये,और आत्महत्यापापसे पृथक रहनेके लिये राणाजीके साथ व्याही जानेको प्रसन्न हूं । आप एक पत्र लिखो और एक मैं भी लिखती हूं । इस प्रकार बातचीत होनेपर दोनोंने एक २ पत्र लिखा और एक मनुष्यको वे दोनों पत्र देकर एक दिवसमें उदयपुर पहुँचनेवाली सांडिनीपर चढाकर उसे विदा किया । दूसरे दिन वह मनुष्य पत्र लेकर उदयपुर जा पहुँचा और सीधा राणाजी के दर्बारमें चला गया ।

दर्बारमें राणाजी अपने जागीरदार चूडावत, शक्तावत, राणावत, दूदावत, झाला, परमार, हाडा, राठौर इत्यादिके साथ बैठे हुए हैं, तरह २ की बातें छिड रही हैं इतनेहीमें

उस मनुष्यने दोनों पत्र निकालकर राणाजीके हाथमें दे दिये । राणाजी पत्रोंको पढकर विचार करने लगे कि क्या करना चाहिये । वह मनुष्य उत्तर पानेकी इच्छासे सामने खडा हुआ है, परन्तु राणाजी किसी गम्भीर विचारमें डूबे हुए हैं । इस प्रकार चिन्तामें ग्रस्त राणाजीको देखकर पास बैठे हुए चूडावत सरदार बोले कि महाराज क्या है ? पत्र पढकर चुप कैसे हो गये ? राणाजीने विना कुछ कहे ही वे दोनों पत्र चूडावतके हाथमें दे दिये । चूडावत बोले कि क्या मुझे इनको बाँचनेकी आज्ञा है । राणाजीने कहा इनमें कुछ गुप्त बात नहीं है सब सामन्त सर्दार सुनें ऐसे बाँचिये । चूडावतने दोनों पत्रोंको पढकर सुनाया ।

इन पत्रोंको पढकर चूडावत बोले कि महाराणा साहब इसमें विचार करना क्या है ? इन पत्रोंको पढकर आप किस चिन्तामें मग्न हो गये ? यह विचारी अबला आपको मनसे वर चुकी है जो इसकी रक्षा आप न करेंगे तथा उससे विवाह न करेंगे तो क्या उसे म्लेच्छसे पकडवा दोगे ? क्या संसारमेंसे क्षात्रधर्मका विनाश ही होनेवाला है ? जो कन्या तुमको वर चुकी है उसे क्या तुर्क व्याह ले जावेगा और हिन्दूपतिकी प्रतिष्ठा छीन लेगा ? क्या जिस प्रतिष्ठाके लिये मेवाडने हमारे बाप दादाओं और हमारी माताओंके लाखों सुपुत्र भोग लिये हैं क्या उस मेवाडका अधीश्वर अपनी रानीको बादशाहके हाथ चली जाने देगा ? क्या शरणागत अबलाको आत्मघात करके मर जाने देगा ? जो मेवाडपति शरणागतकी रक्षा करने और प्रतिष्ठा बचानेके लिये लाखों क्षत्रियोंका बलिदान देता, अपने प्राण देता, राज खोकर जंगलमें भटकता फिरता और तरह २ के दुःख उठता, वही मेवाडपति आज क्या शरण आई हुई एक अबलाको सो भी अपनी जातीय राजकुमारीको म्लेच्छके हाथ जाने देगा ? क्या पृथ्वीपरसे क्षात्रियत्व उठ गया ? क्या क्षत्रियाणी अब क्षत्रिय पुत्र जनने बंद करके कायर पुत्र जनने लग गई हैं ? क्या मेवाडपति बादशाहसे डरेगा ? या जंगलमें भटकते फिरनेसे डरेगा ? अथवा युद्धभयसे महलमें छिपैगा ? महाराज ! आपको इन पत्रोंके उत्तर देनेमें क्या रुकावट आन पडी? मनुष्यमात्रको मरना है, क्या हमारे बाप दादे मरे नहीं जो हम अमर बैठे रहेंगे ? यह शरीर तो नाशवान ही है घरमें या बाहर, रणक्षेत्रमें मरना तो अवश्य पडेगा तो प्रतिष्ठा खोकर क्यों मरना चाहिये ? प्रतिष्ठा बचाते हुए रणक्षेत्रमें क्षत्रियकी मृत्युसे क्यों न मरे कि स्वर्ग मिले ? राणाजी बोले कि वीर चूडावत ! ऐसे उतावले बनकर अविचारसे मत बोलो, मैं राठौरनी व्याहनेका निषेध नहीं करता हूं । जैसे मेरे बाप दादे मर गये मुझे भी वैसे ही मरना है परन्तु राणा हमीर, सांगाजी, कुंभाजी तथा प्रतापसिंहजीकी भांति नाम अमर करके मरनेकी हौस मुझे भी है परन्तु मैं और आप दोनों युवा अवस्थाके हैं, अभी संसारका अनुभव नहीं किया, पीछे कोई यह न कहे कि राजसिंहने लडकपन किया कि बादशाहसे लडकर राज्य गँवा बैठा, राज्य बढाना तो छोडा और उसे खो बैठा । बादशाहके साथ वैर बाँधना है सो किसी वृद्ध पुरुषकी इस विषयमें सम्मति लेनी चाहिये । तब चूडावतने कहा कि महाराज आप यथार्थ कहते हैं । परन्तु हमारे बाप दादे जब सम्मति लिया करते थे तो राजबारहठ या राजकविकी सम्मति लिया करते थे । सो यदि आपकी इच्छा होवे तो उन वृद्ध,

अनुभवी और बुद्धिमान पुरुषोंको बुलाया जावे । राणाजीने उन वृद्ध जनोंको बुलाकर दोनों पत्र दिये और उनके विषयमें क्या करना चाहिये यह प्रश्न उनसे किया । तब राजकविने विचार कर यह उत्तर दिया;—

राणाजी आप युवा हो तो भी अपने वंशकी रीति जानते हो, और जान बूझ कर हँसी करनेके लिये मुझसे क्यों पूछते हो ? आपके वंशमें किसीने कभी नकार (निषेध) उच्चारण नहीं किया ? बाप्पारावलके वंशज चाहे जैसी आपत्तिमें क्यों न फँस जावें पर मुखसे "न" नहीं निकालते । अपनी गद्दीकी प्रतिष्ठा, प्रतापी प्रतापके नामकी प्रतिष्ठाका ध्यान कर कर्तव्य पालनपर दृढ रहो । कर्तव्य पालनसे तो पृथ्वी स्थिर हो रही है, सूर्य्य प्रकाश कर रहा है, गंगा बह रही है और भूमंडल स्थिर है । शरण आये हुएको राणा सांगाका वंशज यदि पीछे लौटा देगा तो पृथ्वी रसातलमें चली जावेगी, सूर्य पश्चिममें निकलेगा, ब्रह्माण्ड नष्ट हो जावेगा, और आकाश पाताल एक हो जावेगा । जो तुर्कोंको कन्या न देनेकी प्रतिज्ञा कर चुके, अपने शिशोदिया वंशज कटवा डाले, बाल बच्चों और सगे सम्बन्धियोंको रणक्षेत्रमें मरते देखा, राज पाट गँवाकर पहाड जंगलोंमें भटके २ फिरे और वनफल कन्दमूल आदिपर दिन विताये । वृक्षोंकी डालियोंके टोकरोंमें अपने राजकुमारोंको भीलोंकी भाँति भीलोंके बीचमें रहकर पालन पोषण किया, रोटीके टुकडोंके लिये भिखारियोंके बच्चोंको भाँति अपने राजकुमार व राजकुमारियोंको रुदन करते देखा और असंख्य शत्रुसेनाके पीछे पडने पर भी शत्रुओंके बीचमें इस पहाडसे उस पहाडमें निकल कर भागना पडा, परन्तु मुसलमानोंको कन्या देनेकी इच्छा कभी न की, उन्हीं प्रतापसिंहजीके वंशज अपनेको अन्तःकरणसे वरनेवाली कन्याको उन्हीं देशशत्रु और धर्म्मशत्रु मुसलमानोंके हाथमें जाने देवें ऐसा होना क्या कभी सम्भव है ? मैं वृद्ध हूं, मेरे शरीरमें बल नहीं रहा है सो ऐसा समझकर आपने यह समझा होगा कि मैं कोई आपको कायरपनेकी सम्मति दूंगा । क्या हुआ जो मैं वृद्ध हो गया हूं किन्तु अबतक मेरी रगोंमें सांगाजी, प्रतापसिंहजी और कुम्भा राणाकी प्रतापी गद्दीके अन्नका लोहू बह रहा है । अन्नदाता मैं भी आपका ही अन्न खाता हूं, फिर बुढापेमें भी क्योंकर कायरपना मुझमें आ सकेगा ? मैं देखनमें वृद्ध हूं मेरी देह वृद्ध है परन्तु मेरी आत्मा तो युवा है इस लिये वृथा विलम्ब क्यों करते हो ? रूपनगरके, मनुष्यको उत्तर देकर बिदा करो, और लडाईकी तइयारी करके राजकन्या व्याह लाओ । क्या राजहंसिनी राजहंसको छोडकर गीध[गृद्ध] के साथ जा सकती है ? इस लिये उठो तइयार होओ, और बरात लेकर राजकन्या व्याह लाओ, अब देर करनेमें भलाई नहीं है ।

यह सुनकर राणाजी चूडावतकी ओर लक्ष कर बोले राजकविने जो कहा सो ठीक है । हमको अपनी प्रतिष्ठाकी रक्षाके लिये अवश्य जाना चाहिये, परन्तु एक विघ्न दीख रहा है सो उसका क्या उपाय किया जावे ? हम अपनी सेना लेकर राठौरनीको लेनेके लिये चलेंगे, परन्तु इतनेमें बादशाह स्वयं अपना लश्कर लेकर आन पहुँचेगा और घोर युद्ध होगा । यदि उस लडाईमें बादशाहकी अधिक सेनाके आगे हम सब खप गये तो

हमारा मनोरथ पूर्ण न होने पावेगा, और उस समयमें भी राठौरनीको आत्मघात करना पडेगा, इसका क्या प्रबन्ध किया जावे ? चूडावत बोले कि महाराज ! मेरा विचार आपसे भिन्न है । आप थोडेसे मनुष्य लेकर राठौरनी व्याहनेके लिये रूपनगर जावें और मैं समस्त शिशोदिया दलको साथ ले बादशाहको रोकनेके लिये रूपनगरसे आगे जाता हूं, और आगरा व रूपनगरके बीचमें राह रोककर बैठूंगा । मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि आप व्याह करके जबतक उदयपुर लौटकर न आजावेंगे तबतक मैं बादशाहको रूपनगरका द्वार न देखने दूंगा, राणाजी बोले कि ऐसा हो तो चिन्ता ही क्या है । मेरे प्रिय शूरवीर ! तुम्हारी वीरता और बुद्धिमत्ताको धन्य है । तुमने जो उपाय बतलाया है वह ठीक है । पीछे उसका सफल होना श्रीएकलिंगजीके हाथमें है । सब सामन्त और राजकविने भी चूडावतके विचारकी सराहना की, और अपनी २ सेना लेकर बादशाहके रोकनेके लिये जानेका निश्चय किया । राणाजीने रूपनगरके मनुष्यको पत्र लिखकर दिया, और उसे बिदा किया । चूडावत अपने घर गये और अपनी राजधानीमें पहुँचकर लडाईका डंका बजवाया, जिसे सुनकर समस्त चूडावत योद्धा सावधान हो गये ।

दूसरे दिन प्रातःकाल चूडावत युद्धस्थलमें जानेको तइयार थे कि उन्होंने झरोखेमेंसे उझकती हुई अपनी रानीको देखा चूडावतकी अवस्था केवल सत्रह-अठारह वर्षकी थी, और हालहीमें विवाह करके लाये थे, अभी हाथका कङ्कन भी नहीं खुला था । इनकी रूपवती रानी भी सोलह वर्षकी युवती थीं । चूडावतने चौकमें आकर ज्योंही दृष्टि झरोखेकी ओर उठाई तो रानीका मुख ऐसा जान पडा मानो बादलमेंसे चन्द्रमा चमका हो । रानीका मुख देखते ही उनकी युद्धउमंग कुछ मंद पड गई और उनकी मुखाकृति फीकी पड गई । वे उतरे हुए मुखसे महलपर चढे, परन्तु उनकी चतुर रानीने पहचान लिया कि स्वामीका पहला तेज नहीं रहा वह बोली कि महाराज ! यह क्या हुआ ? क्या कोई अशुभ समाचार सुन पडा जो मुखकी कान्ति फीकी पड गई । बडी उमंगसे आप डङ्का बजवाकर चौकमें आये थे और उस समय आपकी आकृतिपर जो तेज विराजमान था वह तेज अब न जाने कहां उड गया ? लडाईका धौंसा आपने जिस उत्साहसे बजवाया था अब वह उत्साह क्यों मन्द पड गया सो बताइये । क्या कोई शत्रु चढ आया है जो लडाईका डंका बजवाया गया है ? यदि ऐसा है तो आपका मुखारविंद क्यों उतर गया ? लडाईका डंका सुनकर क्षत्रियको तो शूरताका आवेश होता है सो प्राणनाथ ! आपको भी शूरताका आवेश होना चाहिये था परन्तु आप इसके विरुद्ध शिथिल क्यों हो गये ? कोई कारण अवश्य है, आपको मेरी शपथ है जो आप सत्य २ न कहैं ।

चूडावतजीने उत्तर दिया कि रूपनगरकी राठौरवंशकी राजकुमारीको दिल्लीका बादशाह बलात् व्याहने आता है और वह राजकुमारी मन वचनसे हमारे राणाजीको वर चुकी है, इसलिये प्रातःकाल ही राणाजी उसे व्याहनेके लिये सिधारेंगे और बादशाहका मार्ग रोकनेके लिये समस्त मेवाडी सेना मेरे साथ जाती है वहां घोर संग्राम होगा, और

हमें फिर वहांसे लौटनेकी आशा नहीं है, क्योंकि बादशाहकी सेनाके सामने हमारी सेना बहुत थोडी है। मुझे मरनेका तो कुछ शोक नहीं है। मनुष्यमात्रको मरना है, जो मरनेसे डरूं तो मेरी माताकी कोखको कलंक लग जावे, मेरे पूर्वज चूडाजीके नामपर धब्बा लग जावे। मरनेसे तो मैं डरता ही नहीं हूं, अमर कोई नहीं रहा, और न मैं रहूंगा, अबेरा सबेरा मरना सभीको है परन्तु मुझे केवल तुम्हारी चिन्ता है। तुम अभी व्याही आई हो अभी व्याहका कुछ सुख भी नहीं देखा, और आज मरनेके लिये जाना है। मुझे तुम्हारा ही विचार व्याकुल कर रहा है। चौकमें आकर ज्यों ही मैंने तुम्हारा मुख देखा कि मेरा कठोर हृदय कोमल पड गया। यह सुन हाडी रानी बोली कि महाराज! यह आप क्या कहते हैं? यदि आप रणक्षेत्रमें विजय प्राप्त करेंगे तो इससे बढकर मेरे लिये इस जगत्में दूसरा कौनसा सुख है? मृत्यु समय आनेपर चलते २ खडे २ बैठे २ अथवा बातें करते २ अचानक ही मनुष्य कालके वशमें हो जाता है तब भी संसारका सुख छोड जाना ही पडता है? जिसकी मृत्यु नहीं वह रणक्षेत्रमें भी बचता है, और जब मृत्युका समय आ जाता है तो सुखशान्तिपूर्ण घरमें भी नहीं बचता। घरमें जब काल आकर ग्रसता है तो कौन बचा लेता है? इस लिये युद्धके लिये जाते हुए किसकि मोह करना या सांसारिक सुखोंकी वासना मनमें रखना उचित नहीं है, इसलिये किसी वस्तुमें ध्यान न रखकर सुखपूर्वक युद्धके लिये पधारिये और अपने स्वामी (महाराणाजी) का कार्य निश्चिन्ततासे करिये। आयु होगी और ईश्वरेच्छासे रणमें विजय मिलैगी तो जीते हुए संसारमें हमको सब सुख प्राप्त होगा और कदाचित् जो युद्धमें आप काम आये तो पीछे जो मेरा कर्तव्य है उसे मैं भलीभांति समझे हुए हूं। रणक्षेत्रमें मृत्यु मिलनेपर अनन्त काल पर्यन्त हम स्वर्गमें दाम्पत्य सुख भोगेंगे। सो हे प्राणनाथ! सहर्ष रणक्षेत्रमें पधारिये और जय पाकर पीछे आइये या वीरतापूर्वक युद्धमें काम आइये। हम दोनोंकी भेंट स्वर्गमें होगी ही। आप अपने कुलके योग्य सुयशको रणमें प्राप्त कीजिये और पीछे क्षत्रियाणीको अपना धर्म्म किस प्रकार पालना चाहिए यह मुझे ज्ञात ही है। मैं आपके पीछे अपने धर्म्म पालनमें किसी बातकी त्रुटि और विलम्ब न करूंगी।

इस भांति बातें होते २ हाडी रानीसे चूडावत बिदा होनेको ही थे कि रानीने कहा "महाराज! विजय पाकर शीघ्र लौटना। आप अपने कुलका धर्म जानते हैं इस लिये विजय कामनासे युद्धमें प्रवृत्त हूजिये और दूसरी किसी बातमें मन न रखकर रणक्षेत्रमें केवल शत्रुके संहार करनेमें ही ध्यान लगाइये।"

चूडावत बोले "हाडी जय पाकर पीछे लौटनेकी तो आशा ही नहीं है। मरना तो निश्चित ही है। शत्रुको पीठ दिखाकर जीता आना भी नहीं है इस लिये हमारी और तुम्हारी यह आन्तिम भेंट है। तुम समझदार हो इस लिये तुम अपने घरकी लाज रखना, और हम रणमें काम आ जावें तो पीछे तुम अपनी प्रतिष्ठाकी रक्षा करना।" हाडीजीने उत्तर दिया "महाराज! आप मेरी ओरसे तो निश्चिन्त ही रहिये। आप अपना धर्म्म पूरा करें और मैं अपने धर्ममें न चूकूंगी, यह बात आप पत्थरकी लकीर

समझें।" इस प्रकार विश्वास दिलाने पर भी चूडावतको संतोष न हुआ और यही द्विविधा रही कि जाने मेरे मरनेके पीछे हाडीजी सती होंगी कि नहीं। चूडावतका दृढ विश्वास था कि यदि मैं रणभूमिमें मारा जाऊं और हाडीजी मेरे साथ सती हो जावें तो स्वर्गमें जाकर निरन्तर सुख भोगूं। उनके हृदयमें यही संदेह जमा हुआ था कि संसारसुखका अनुभव न करनेवाली तरुणावस्थाकी हमारी रानी जाने सती होगी या नहीं। रानीको समझा बुझाकर चूडावत चल दिये परन्तु सीढ़ियोंसे उतरते २ फिर हाडीजीसे कहा कि हम तो जाते हैं तुम अपना धर्म्म न भूल जाना। फिर वह चौकमें पहुँचे और युद्धका धौंसा बजवाकर प्रस्थान करने लगे तो अपने निजका एक सेवक हाडी जीकी सेवामें भेजा और उसके द्वारा फिर कहलाया कि रानी आप अपना धर्म न भूलना। तब हाडीजी समझीं और उन्हें विदित हुआ कि मेरे स्वामीका मन मुझमें लगा है, और जबतक इनका चित्त मेरी ओर रहेगा इनसे रणक्षेत्रमें कुछ पराक्रम न किया जा सकेगा और जिस कामके लिये जाते हैं निष्फल होगा। हाडीजी उस सेवकसे बोलीं कि मैं तुमको अपना शिर देती हूं इसे ले जाकर अपने स्वामीको देना और कहना कि हाडीजी पहलेसे ही सती हुई हैं और यह भेंट भेजी है कि जिसे लेकर आप आनन्दके साथ रणक्षेत्रमें जाइये और विजय पाइये और अपना मनोरथ सफल कीजिये। किसी प्रकारकी दूसरी चिन्ता न रखिये। यह कहकर तलवारसे अपना शिर काट डाला उसे लेकर वह सेवक चूडावतके पास पहुँचा, और उन्हें रानीका शिर सौंपकर उनका सारा कथन उनको सुना दिया। यह देखकर चूडावत आनन्दमें मग्न हो गये। एक ग्रन्थकारने लिखा है कि "उन्होंने रानीके चुटीलेके दो भाग करके शिरको गलेमें लटका लिया, उसके लटकते ही चूडावतजी ऐसे जान पडे मानो शिवजी रुंडमाला धारण किये खडे हों" अब उन्हें घरकी चिन्ता मिटी। अब यही चिन्ता बढने लगी कि जिस प्रकार शीघ्रतासे हो सके शत्रुको मार स्वर्गको चलें कि हाडीजीके मिलनेमें विलम्ब न हो क्योंकि वहांपर वे व्याकुल हो रही होंगी। रुद्रकी भाँति क्रोधायमान हो रणक्षेत्रमें मुसलमानोंका विध्वंस करनेके लिये चल दिये। उनके पीछे समस्त चूडावत भी चल दिये। उनके निकलते ही अन्य सब सामन्त भी अपनी २ सेना लेकर साथ चल दिये।

उधर राणाजी प्रातःकाल होनेपर ज्यों ही न्हा धो भोजन कर शस्त्र बाँध घोडेपर सवार हुए कि उनके साथ जानेके लिये नियुक्त किये हुए १५ सौ मनुष्य घोडोंपर चढ राजमहलके बाहर आकर खडे हो गये। राणाजी भी चूडावतके जानेके समाचार सुनकर निकले और दोनों द्वारके बाहर एक दूसरेसे मिले, थोडी दूरतक मार्गमें इकट्ठे चले परन्तु जब मार्ग पृथक् हुए तो राणाजी और चूडावत दोनोंका वियोग हुआ। राणाजी तो सीधे रूपनगरको गये और चूडावतजी पूर्वके मार्गपर चले गये।

चूडावतके आधीन समस्त सेना पचास हजार राजपूतोंकी थी। उसे लेकर सबके आगे चूडावत आप चले। चलते २ वे एक नियत स्थानपर जा पहुँचे। यह स्थान आगरेसे

रूपनगर जानेके मार्गमें रूपनगरसे कुछ दूर था। यहीं मार्गमें सब लोग छावनी डालकर ठहर गये। डेरे डालनेके पीछे चूडावतने बादशाही लश्करका खोज लेनेके लिये कुछ मनुष्य भेजे। उन मनुष्योंने आकर समाचार सुनाया कि बादशाह हाथीपर बैठा आ रहा है और साथमें बहुत दल लाया है यह सुनकर चूडावतने अपने वीरोंको शस्त्र बाँध घोडेपर सवार होनेकी आज्ञा दी। सबलोग बादशाही सेनासे भिडनेके लिये तय्यार होकर खडे हो गये। इतनेमें बादशाही लश्कर आन पहुँचा। मार्गमें दूसरा दल खडा देख बादशाहने पता लगवाया कि यह किसका दल है और किस लिये मार्ग रोक रहा है? इसपर उसे विदित हुआ कि मेवाडके चूडावत सरदार अपनी सेना लेकर मार्ग रोक रहे हैं। तब औरंगजेब बादशाहने चूडावतको कहलाया कि आप हमको मार्ग दें। हम लडने नहीं आये हैं। हमको उदयपुर नहीं जाना है। हम तो और जगह जा रहे हैं सो आपको मार्ग रोकनेमें कुछ लाभ नहीं है। चूडावतने कहला भेजा कि इस प्रकार मार्ग नहीं मिल सकता है। हम क्षत्रिय हैं, तुमसे डरनेवाले हम नहीं हैं, तुमको आगे जाना है तो हमको भेदकर सुखसे चले जाओ; बादशाहने कहलाया कि व्यर्थ तुम हमारे कार्य्यमें किसलिये विघ्न डालते हो? हम तुम्हें विना हानि पहुंचाये ही चले जानेको कहते हैं। वृथा दीपकमें पतंगकी भांति तुम क्यों गिरना चाहते हो? क्यों अपने हजारों शूरवीर राजपूतोंको निष्प्रयोजन कटवाना चाहते हो? परन्तु क्या इस धमकी से कहीं चूडावत डरने वाले थे। वह बादशाहके रोकनेके लिये आये ही थे सो क्या सुखपूर्वक बादशाहको रूपनगर पहुँच जाने देते? जब किसी भांति चूडावतने न माना तो उनको हटाकर आगे बढनेकी आज्ञा बादशाहने अपने लश्करको दी। बादशाहके हुक्मको सुनना था कि मुसलमानी दल युद्धके लिये तइयार हो गया। इधर चूडावतजोने तो पहिलेहीसे अपनी सेना युद्धके लिये तइयार कर रक्खी थी। अब लडाई आरम्भ हो गई। सायंकाल होनेतक किसी ओरकी सेना किधरको ही चलायमान न हुई। शिशोदियालोग अचल पर्वतकी भांति अडे रहे और बडी दृढताके साथ मुसलमानोंको काटते रहे।

हिरोलमें जो शिशोदिये मरते उनके स्थानमें तत्काल दूसरे आ जाते। दोनों ओरके वीरोंमेंसे कोई भी न हटा। इस प्रकार युद्ध करते २ सन्ध्याकाल हो गया, अन्धेरा छा गया तब दोनों ओरसे लडाई बंद की गई।

प्रातःकाल होनेपर फिर बादशाहने कहलवाया कि तुम व्यर्थ क्यों राह रोक रहे हो अब भी तुम एक ओर हट जाओ परन्तु चूडावत किंचित् भी पीछे न हटे और न मार्ग छोडा। इस कारण फिर युद्ध आरम्भ हुआ। सूर्य्यास्त होनेतक तुमुल युद्ध होता रहा। दोनों पक्षके सहस्रों मनुष्य मारे गये। परन्तु किधरके ही वीर मन्द न पडे। उधर मुसलमान लोग यह समझकर कि बादशाहके लिये रूपनगर पहुँचनेकी शायत (मुहूर्त) टल जावेगी लडाई शीघ्र समाप्त करनेके विचारसे बडे वेगके साथ घोर युद्ध करने लगे। इधर राजपूत बादशाहको रोकनेके लिये और इतने समयतक मार्गमें डटे रहनेके लिये कि जितनेमें अपने राणाजी विवाह करके कुशलतासे पहुँच जावें बडे आवेशके

साथ मुसलमानोंपर टूटकर उन्हें काटते रहे परन्तु रात्रि होनेतक कोई पक्ष शिथिल न पडा। रात्रिके कारण फिर युद्ध बंद किया गया। अब तीसरा दिन हुआ कि सूर्य निकलनेसे पहिले ही सब लडनेके लिये तइयार हुए। रात्रिके समयमें भी राजपूत लोग शस्त्रबद्ध सोते थे कि कहीं मुसलमान लोग धोखेसे छापा न आ मारें, अथवा अपना प्रयोजन सिद्ध करनेके लिये छिपकर रात्रिमें न चले जावें इस लिये राजपूतोंको बड़ी सावधानी रात्रि समयमें भी करनी पडी थी। पहले एक दो बार क्षत्रियोंको मुसलमानोंने धोखा दे दिया था उसे याद करके चूडावत बहुत चैतन्य होकर रात दिन रहते थे। तीसरे दिनके युद्धमें मुसलमान लोग ऐसे पराक्रमसे लडे कि बहुतसे राजपूत मारे गये। राजपूतोंकी संख्या प्रतिदिन घटती जाती थी। यद्यपि मुसलमानी दलमें दुगुने तिगुने मनुष्य मारे गये थे परन्तु उनके अगणित दलमें वह न्यूनता कुछ जान नहीं पडती थी। मुसलमानोंकी अपेक्षा राजपूतोंका घटाव स्पष्ट जान पडता था। उनके थोडे ही वीर शेष रह गये। अब चूडावतजीने विचार किया कि यदि मुसलमानोंने अबकी बार फिर ऐसा ही आक्रमण प्रबल वेगसे किया तो यह लोग थोडेसे बचे हुए राजपूतोंको भेदकर चले जा सकेंगे। इस अवसरपर इन्हें वह वचन याद आया कि जो राणाजीको इन्होंने दिया था। इस कारण इन्होंने बडे आवेशमें आकर घोर युद्ध किया और बडे पराक्रमसे लडते हुए बादशाहके हाथीके समीप पहुँच अपना भाला बादशाहकी ओर चलाया। बादशाह बोला कि नाहक क्यों मारते हो विवाहकी घडी तो यहीं पूरी हुई जाती है। चूडावत बोले कि जो मैं माँगूँ सो अपनी कुरानकी शपथ खाकर देनेकी प्रतिज्ञा करो नहीं तो मेरा भाला तुम्हारे शरीरमें अब निकला ही चाहता है। बादशाहने प्राणका जोखिममें समझकर चूडावतका कथन स्वीकार किया। चूडावत बोले कि आजसे दश वर्षतक तुम उदयपुरपर चढाई न करना। इसके पीछे तुम्हारी इच्छा रही। बादशाहने यह वचन स्वीकार किया। तब चूडावतने अपना घोडा लौटाया। इतने अन्तरमें इनके शरीरपर इतने घाव लगे कि ये अपने घोडेपर सावधान न रह सके ज्योंही इन्हें घोडेपरसे नीचे उतारा कि अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण होनेके आनन्दमें मग्न होते हुए सुरपुर सिधारे उसी दिन चैत्रकी पूर्णिमा थी, और वहांसे रूपनगर पहुँचनेके लिये तीन दिनका मार्ग शेष था।

चूडावत मारे तो गये परन्तु अपना प्रण पूरा कर गये; उनकी सम्पूर्ण सेना कट गई। पचास हजारमेंसे कठिनतासे पाँच हजार राजपूत बचे थे जो कि उदयपुरको चले गये। चूडावतके मारे जानेपर बादशाहने लडाई बन्द करके शेष रहे हुए शिशोदियोंको आज्ञा दी कि वे अपने मृत सरदारोंके शरीरोंका दाह कर्म करें, और बादशाह वहां देरतक रुकना उचित न समझ आगेको बढा।

दूसरी ओर राणाजी भी रूपनगर ठीक पूर्णिमाको पहुँच गये थे, और राजकुमारी रूपवतीको ब्याहकर वैशाख वदी प्रतिपदाको रूपनगरसे बिदा होकर कुशलता पूर्वक उदयपुर पहुँच गये। उदयपुर पहुँचनेपर उनको चूडावतके साथसे लौटे हुए मनुष्योंसे

सारा वृत्तान्त सुना कि जिस प्रकारसे वीर चूडावतने पराक्रम दिखाया था तथा बादशाहसे उन्होंने जो वचन लिया था तथा उन सबने नवीन रानी प्रभावतीको विधि विधानसे मंगलाचरण करके राजभवनमें प्रवेश कराया।

जिस समय राणा राजसिंह प्रभावतीको उद्धार करके लाये उससे कुछ दिन पीछे राजस्थानमें जो कई एक बडे २ कार्य हुए थे, उनका स्पष्ट वृत्तान्त राजवाडेके किसी ग्रन्थमें नहीं पाया जाता, इस कारण उन कार्योंके विषयमें प्रथम संदेह भी हो सकता है, परन्तु भलीभांतिसे विचार करनेपर वह सभी संदेह दूर हो जाते हैं, और उनमेंसे यथार्थ ऐतिहासिक सत्य आपसे आप ही उत्पन्न हो जाता है, बादशाह औरंगजेबके कठोर हृदयमें जो हिन्दुओंकी विद्वेषानल बलवान होगई थी, उसको तृप्त करनेके लिये उसने नाना प्रकारके पैशाचिक कार्य करनेकी प्रतिज्ञा की, इसका वृत्तान्त संक्षेपसे पहले कह आये हैं, परन्तु मुगल बादशाहकी जो भयंकर प्रतिज्ञा इतने दिनोंतक सिद्ध नहीं हुई थी, उसका कारण इस प्रतिज्ञाके रोकनेवाले दो वीरोंका होना था, उन दोनोंमें पहले तो जयपुरके राजा जयसिंह, और दूसरे मारवाडके राजा जसवंतसिंह थे, जयसिंह और जसवंतसिंहने औरंगजेबके वेतन भोगी होनेपर भी अपने क्षत्री धर्मको नहीं छोडा था, विशेष करके यह दोनों ही प्रचंड तेजस्वी राजा थे, इस कारण बादशाह सहस्रों चेष्टा करने पर भी उनकी ज्ञान शक्तिको हरण नहीं कर सका, अपने पद और गौरवसे मोहित होकर उसने विचारा था कि मैं इन दोनों राजाओंकी सामर्थ्यको छीनकर उनको अपने हाथकी कठपुतली बनाऊंगा, परन्तु उसकी यह आशा सम्पूर्ण ही नष्ट हो गई, यदि औरंगजेब उनके साथ किसी प्रकारका भी अयौक्तिक कार्य करता तो वह क्रोधित हुए शेरके समान गर्जकर अपने तीक्ष्ण वेगसे उसके प्रस्तावको खंडन कर देते; बादशाह मन ही मनमें उनके मारनेका विचार किया करता था परन्तु प्रगटमें कुछ भी नहीं कह सकता था, यह दोनों ही राजा हिन्दू थे, स्वजाति और स्वदेशके ऊपर उनका गाढा प्रेम था, अतएव उनके सामने हिन्दुओंको पीडित करनेका कैसे साहस हो सकता है ? यद्यपि यह दोनों वीर ही मुगल बादशाहतके आधीन थे परन्तु इनमें सामर्थ्य बडी थी, बडीभारी सहायताका बल रखते थे, और मुगलोंकी सेनाका बडा भाग भी इनके ही हाथमें था, फिर इनके सामने ही जो इनके जातिवालों तथा भाई बन्धुओंको पीडित किया जायगा तो कदाचित् विरोधी हो जांय, ऐसा होनेपर इनके आधीनकी सभी मुगल सेना इनकी ओर होकर बादशाहसे युद्ध करनेके लिये तैयार हो जायगी, फिर सब राजपूत भी इनमें मिलेंगे, तदुपरांत इस राज्यके भीतर भयंकर उपद्रव हो जायगा; इस भांति नाना प्रकारकी चिन्ता और उपाय करनेपर भी वह दुर्बुद्धि औरंगजेब अपने अभिप्रायको सिद्ध न कर सका; अन्तमें बहुतसी चिंताओंके पीछे उसने जो प्रतिज्ञा अपने हृदयमें की उसका स्मरण करते हुए महा पाखंडियोंका हृदय भी थर २ कांप उठता है, उस दुष्टने इन दोनों राजाओंकी सामर्थ्यको हरण करनेका कोई उपाय न देखकर अंतमें दोनोंको मरवा डालनेका

संकल्प किया; मारवाडके राजा महाराज जसवंतसिंह उस समय कुछ दूर काबुलके राज्यमें रहते थे. और अम्बेरके राजा जयसिंहजी दक्षिणमें थे, राक्षसने उनको विष देकर मार डालनेके लिये अपने कितने ही दूतोंके द्वारा शीघ्र ही उन दोनों राजाओंको विष दिलाकर इस संसारसे बिदा कर दिया,यह दोनों राजा विश्वासी और धर्मपरायण थे वे अकालमें कालग्रास हुए, धर्मके मस्तकपर अधर्मने लात मारी, आज कृतज्ञता और प्रभु-परायणताको नीच और घिनौना फल मिला, इस हृदयस्तम्भन और पैशाचिक कार्यको करते हुए दुष्टात्माने विचारा था कि अब मेरा यह घृणित संकल्प सिद्ध हो जायगा परन्तु आनन्दका विषय है कि उसका वह मनोरथ सिद्ध न हुआ । अपने देशके प्रेमी वीरकेसरी राणा राजसिंहजीकी भयंकर वीरताके सामने उसका वह संकल्प शीघ्र ही छिन्न भिन्न हो गया, और अतिशीघ्र उसके असीम पाप कार्योंका असीम फल मिला ।

इन बुरे पैशाचिक कार्योंको करनेसे पापियोंके हृदयमें शान्तिका होना तो दूर रहा वरन उससे उनके हृदयका कठोर भाव और दूना बढ जाता है, भीरु कापुरुषके समान अत्यन्त घृणित कार्योंको करके भारतवर्षके दो प्रधान हिन्दू राजाओंके हृदय रुधिरसे अपने हाथोंको कलंकित करके नररूपी पिशाचका हृदय किंचित् भी शान्त न हुआ, उसने इस लोमहर्षणकारी कार्यको करके निरपराधी और सहायहीन जसवंत-सिंहके छोटे २ बालकोंको कैद करनेकी अभिलाषा की, और जिससे यह अभिलाषा शीघ्र ही सिद्ध हो जाय, ऐसा उद्योग भी करने लगा, परन्तु उसकी वह पैशाचिक प्रतिज्ञा सिद्ध न हुई, कारण कि राठौर राजाकी सेनाके सामन्तलोग उस विषयको भली प्रकारसे जान गये थे, और उन्होंने ऐसा उपयुक्त उपाय किया कि जिससे उन कुमारोंकी भली प्रकारसे रक्षा हो, उनके हृदयमें यह विश्वास दृढ था कि कठोर उत्साह तथा अपने प्राणोंको विना न्यवछावर किये हुए राठौर राजा महाराज जसवंत-सिंहकी विधवा रानी और उनके अनाथ पुत्रोंकी रक्षा इस दुष्ट बादशाहके हाथसे न होगी । इसी कारणसे उन्होंने इसके उचित उपाय किये थे । मारवाडके राजा जसवंत-सिंहके बहुतसे पुत्र थे, उनमेंसे सबसे बडेका नाम अजित था, जिस समय महाराज जसवंत सिंहजी पाखंडी औरंगजेबके तीक्ष्ण विद्वेषानलमें पतंगके समान भस्म हो गये थे, उस समय अजितकी अवस्था बहुत थोडी थी तथापि उसकी माताने अपने मनमें निश्चय कर लिया था कि इसको ही मारवाडके राजसिंहासनपर अभिषेकित करके फिर मैं आप ही राज्यके सम्पूर्ण कार्योंको देखूं भालूंगी, इसी आशाको हृदयमें रखकर रानीजी, महाराज जसवंतसिंहजीके साथ सती नहीं हुई थीं, परन्तु विधाताको भयंकर विधिके अनुसार उसकी वह आशा मनमें ही रह गई, कदाचित् प्राणनाथकी शोककी अग्निके विना मुझे ही दारुण पुत्रशोकसे पीडित होना होगा, जिस पुत्रके लिये उन्होंने अपने प्रीतमके भयंकर शोकको हृदयमें छिपा रक्खा था, उस पुत्ररत्नसे क्या यथार्थमें ही वंचित होना होगा ? निर्दयी विधाता क्या और भी निर्दयी होगा ? अजितकी माता भांति २ की चिन्ताओंसे व्याकुल होने लगी; अन्तमें कुछ उपाय न

देखकर राणा राजसिंहकी शरण ली। राणाजीने शिशोदियाकुलमें जन्म लिया था। इस समय उन्होंने शिशोदियाकुलकी रक्षा करनेवाले वीरश्रेष्ठ राणा राजसिंहके आश्रयकी छायाके नीचे विश्राम पानेकी इच्छा करके उनके पास अपने दूतोंको भेजा। महाराणा राजसिंहजी भी रानीकी बातपर राजी हुए, और राजकुमारोंको मेवाडमें बुलाकर उनके रहनेका प्रबंध भली प्रकारसे कर दिया, बुलावेको पाते ही कुमार अजितसिंह अपनी दो सहस्र सेनाको साथ ले मेवाडसे चले; आरावली "शैलमाला" के दुर्गम पहाडोंको लांघते हुए सब जा रहे थे, कि उसी समय कूटगिरिके एक संकीर्ण मार्गसे मुगलोंकी दो सहस्र सेनाने अतिवेगसे आकर इनकी संपूर्ण सेनाको रोक लिया और अजितसिंहको पकडनेका उद्योग करने लगी, दुराचारी मुगलोंकी सेनाका ऐसा भयंकर अत्याचार देखकर राठौर राजाकी सेनाके राजपूत क्रोधमें भरकर शत्रुको मार डालनेकी इच्छासे एक बार ही उन्मत्त होगये और अपनी तलवारको निकाल शत्रुओंको मारने लगे; इस छोटेसे मार्गके बीचमें राजपूतोंका और मुगलोंकी सेनाका बहुत देरतक भयंकर संग्राम होतारहा, इस ओर राजकुमार भी सरलतासे ही अपने शरीर रक्षकोंको साथमें ले वहांसे निकल मेवाडमें जा पहुँचे; भयंकर विक्रमशाली राठौर राजा की सेनाने यवनोंकी सेनाको परास्त कर दिया, फिर मुगलसेना अजितका पीछा न कर सकी। जिस समय राजकुमार अजीतसिंहजी मेवाडमें पहुचे उस समय महाराणा राजसिंहने प्रसन्न होकर आदर सन्मानके साथ उनको ग्रहण किया और रहनेके लिये कैलवानामक जनपद दे दिया, दुर्गादासनामक एक साहसी वीर राजपूत उनकी रक्षा करनेके लिये नियक्त हुआ, उस भयंकर राजपूतकी रक्षामें रहकर राजकुमार अजित कैलवादेशमें आनन्दके साथ रहने लगे, इस ओर अजितकी माता मारवाडमें गई और विश्वासघाती मुगल बादशाहके अत्याचारोंका बदला लेनेके लिये योग्य अवसर ढूढने लगी। उनके हृदयमें दारुण क्रोधाग्नि भड़क रही थी, उन्होंने इस अग्निको शान्त करनेके लिये एक बडाभारी कार्य अपने हाथमें लिया, वह भयंकर गुरुतर कार्य और कुछ नहीं था, केवल राजवाडेके प्रधान २ राजपूतोंका परस्पर एकात्रित होना था, महारानीने इस बडेभारी कार्यको सिद्ध करनेके लिये तन मन धनसे चेष्टा की और शीघ्र ही मेवाड, मारवाड और अम्बेरके राजालोग सहानुभूतिके एक सूत्रमें बँधकर मुगल बादशाहके विरुद्ध युद्ध करनेको तइयार हुए, राजपूतोंमें इस प्रकारका मेल पहिले कभी नहीं हुआ था, परन्तु दुःखका विषय है कि यह एकताकाबंधन बहुत दिनोंतक नहीं रहा और शिशोदिया राठौर तथा कुशावह लोगोंके बीचमें पिछला वैरभाव बहुत शीघ्र ही उत्पन्न होगया, यदि ऐसा मेल सौवर्षतक भी रहता, यदि वह एक रहकर अपनी प्रतिज्ञाका पालन करते, तो भारतवर्षमें दुःखकी रात्रिका प्रभाव घट जाता और भारतका राजमुकुट मुसलमानोंके मस्तकपरसे गिरकर हिन्दुओंके शिरपर स्थापित होता।

राजधर्मसे रहित मार्गमें जाकर अत्याचार और प्रजापीडनकी पराकाष्ठा दिखाय निर्मोही कठोर बादशाह औरंगजेबने अपने परम विश्वासी दो राजपूतोंको मारा

था, उसका यह पैशाचिक कार्य बहुत ही थोडे समयमें प्रसिद्ध होगया, दुःखका कारण कि वही दोनों वीर उसके दो कांटे थे, इस समय दोनों ही दूर हो गये इस कारण वह अपनी अभिलाषाको सिद्ध करनेका यत्न करने लगा, परन्तु फिर भी एक तेजस्वी बलवान राजाने औरंगजेबके मार्गमें कांटे बिछाये थे, वह तेजस्वी वीर कौन था? महाराणा राजसिंहजी; जब बादशाहने देखा कि मैं निष्कंटक होगया तब घृणित "मुंडकर" को स्थापन किया, जब इस भयंकर करके बोझसे सम्पूर्ण हिन्दूजाति हाहाकार करती हुई आर्तनादसे पुकारने लगी, तब वीर्यवान राजसिंहके हृदयमें एक गंभीर प्रश्न उत्पन्न हुआ, उन्होंने विचारा कि "क्या आज भीष्म,कर्ण, भीम इत्यादिकी जन्मभूमि क्षत्रियोंसे हीन हो गई? या विधाताने ही इस दुराचारी औरंगजेबको अमर करके इस संसारमें भेजा है? कभी नहीं; ऐसा तो हो ही नहीं सकता मुगलोंकी दासतामें पडकर यह अभागी हिन्दुसंतान बहुत दिनोंसे हीन होगई थी और अत्याचारी मुसलमानलोग अपने भयंकर पराक्रमसे इस भारतवर्षके भाग्यचक्रको पीसकर चले गये थे, परन्तु उनमेंसे किसीने भी ऐसे अत्याचार नहीं किये, "फिर भला भारतसंतानगण ऐसे कठोर अत्याचारोंको प्रसन्नतासे सहन कर लेंगे ?" इस प्रकारकी चिन्ता करते २ उन्होंने मुंडकर स्थापनके विरुद्ध कार्य करनेकी प्रतिज्ञा की और अतिशीघ्र उग्रभाषाका एक लम्बा चौडा पत्र लिखकर अपनी उस प्रतिज्ञाको पूर्ण किया। यदि उस पत्रको संसारकी प्रेमिकता और मनुष्योंकी हितकारिता और उदार नीतिका तीक्ष्ण उदाहरण कहा जाय तो भी ठीक हो सकता है,इस भारी संसारके बीचमें इस प्रकारका पत्र कभी भी किसीकी लेखनीसे निकला होगा या नहीं इसमें भी संदेह ही होता है, सारांश यह है कि उस पत्रके किसी स्थानको भी पढनेसे मोहित होना पडता है। *

---

* अर्मने यह पत्र सबसे पहले यूरोपमें प्रकाशित किया था, परन्तु शोकका विषय है कि उसने भूलसे इसको मारवाडके राजा जसवंतसिंहका लिखा हुआ बताया, महामान्यवर टाडसाहबने कहा है कि " यह पत्र कभी जसवंतसिंहका नहीं हो सकता, कारण कि इसमें जो " मुंडकर " का वृत्तान्त लिखा हुआ है वह उनके जीतेजी प्रचरित नहीं हुआ था और विशेष करके इस पत्रमें एक जगह रामसिंहका जो वृत्तान्त पाया जाता है वह जसवंतसिंहके समयमें हुए, तथा वही महाराज जयसिंहके उत्तराधिकारी थे और मारवाड राजके मरने उपरान्त एक वर्ष पीछे अपने पिताके सिंहासनपर बैठे थे " इस कारण स्पष्ट विदित होता है कि महाराज राजसिंहने ही इस पत्रको लिखा और भेजा था; टाडसाहबने और भी कहा है कि " हमारे उदयपुरके मुन्शीने उस असल पत्रकी मौलिक लिपिको पाया था। फिर तब तो यह यथार्थमें ही राजसिंहका लिखा हुआ है" कारण कि उस पत्रके प्रारम्भमें ही लिखा था कि " महाराणा श्री श्री राजसिंहजीके पाससे औरङ्गजेबके समीप यह पत्र भेजा गया " इस समय वह पत्र नीचे लिखा जाता है।

" सर्व प्रकारकी स्तुति, सर्व शक्तिमान् जगदीश्वरको उचित है और आपकी महिमा भी स्तुति करनेके योग्य है। आपकी उदारता और समदृष्टि चंद्र और सूर्यकी भांति चमकती है, यद्यपि मैंने आज कल अपनेको आपके हाथसे अलग कर लिया है, किन्तु आपकी जो सेवा हो सके उसको मैं सदा चित्तसे करनेको उद्यत हूं। मेरी सदा इच्छा रहती है कि हिन्दुस्तानके बादशाह, रईस,मिर्जा,राजे और—

इस तेजस्विनी पत्रिकाने औरंगजेबकी क्रोधाग्निके लिये घीका काम किया; जिस समय महाराणा राजसिंहजीने रूपनगरके सामन्तकी कन्या प्रभावतीको हरण करके दुष्ट औरंगजेबके हृदयमें छिपी हुई क्रोधकी अग्निको भडका दिया था, वही क्रोधाग्नि राजकुमार अजितसिंहको आश्रय देनेसे अत्यन्त बल उठी थी, परन्तु आज इस तीक्ष्ण प्रतिवाद भरे हुए पत्रको पढकर बादशाह अपनी क्रोधानलको न रोक सका, कारण कि उसकी वह तीक्ष्ण क्रोधानल बयाभिलापासे एक बार ही असह्य होगई थी। इस समय उसने अत्यन्त क्रोधित होकर मेवाड भूमिपर चढाई करनेकी प्रतिज्ञा की और शीघ्रही भयंकर संग्राम करनेके लिये अपनी सेनाको तइयार होनेका हुक्म दिया। उस ही दिन उसकी आज्ञाका पालन हो गया

रायलोग तथा ईरान, तूरान, रूम और शामके सरदारलोग और सातों बादशाहतके निवासी और वे सब यात्री, जो जल या थलके मार्गसे यात्रा करते हैं वे सब मेरी अभेद बुद्धि सेवासे उपकार लाभ करें।

"वह इच्छा मेरी ऐसी उत्तम है कि जिसमें आप कोई दोष नहीं देख सकते। मेरे पूर्वजोंने पूर्वकालमें जो कुछ आपकी सेवा की है, उसपर ध्यान करके मुझको अति उचित जान पडता है कि, मैं नीचे लिखी हुई बातोंपर आपका ध्यान दिलाऊं, जिसमें राजा और प्रजा दोनोंकी भलाई है। मुझको यह समाचार मिला है कि आपने मुझ शुभचिन्तकके विरुद्ध एक सेना नियत की है, और मैंने यह भी सुना है कि, ऐसी सेनाओंके नियत होनेसे आपका खजाना जो खाली होगया है, उसके पूरा करनेको आपने नाना प्रकारके कर भी लगाए हैं।

"आपके परदादा महम्मद जलालुद्दीन अकबरने, जिनका सिंहासन अब स्वर्गमें है, उन्होंने इस बडे राज्यको बावन वर्षतक ऐसी सावधानी और उत्तमतासे चलाया कि, सब जातिके लोगोंने उससे सुख और आनन्द उठाया। क्या ईसाई, क्या मूसाई, क्या दाऊदी, क्या मुसलमान, क्या ब्राह्मण, क्या नास्तिक, सबने उनके राज्यमें समान भागसे राज्यका न्याय और राज्यका सुख भोग किया और यही कारण है कि सब लोगोंने एक मुंह होकर इनको जगद्गुरुकी पदवी दी थी।

"शहन्शाह मुहम्मद नूरुद्दीन जहांगीरने, जो अब नन्दन वनमें विहार करते हैं, उन्होंने भी उसी प्रकार २२ वर्ष राज्य किया, और अपनी रक्षाकी छायासे सब प्रजाको शीतल रक्खा और अपने आश्रित या सीमास्थित राजन्यवर्गको भी प्रसन्न रक्खा और अपने बाहुबलसे शत्रुओंका दमन किया।

"वैसे ही उनके शाहजादे और आपके बडे परम प्रतापी शाहजहांने बत्तीस वर्ष राज्य करके अपना शुभ नाम अपने शुद्ध गुणोंसे विख्यात किया।

"आपके पूर्व पुरुषोंकी यह कीर्ति है। उनके विचार ऐसे उदार और महान् थे कि, जहां उन्होंने चरण रक्खा वहां विजयलक्ष्मीको हाथ जोडे अपने सामने पाया और बहुतसे देश और द्रव्यको अपने अधिकारमें किया। किन्तु आपके राज्यमें वे देश अब अधिकारसे बाहर होते जाते हैं और जो लक्षण दिखलाई पडते हैं, उनसे निश्चय होता है कि दिन २ राज्यका क्षय ही होगा। आपकी प्रजा अत्याचारसे अति दुःखी है और सब दुर्बल पड गये हैं, चारों ओरसे बस्तियोंके ऊजड पड जानेकी और अनेक प्रकारकी दुःख हीकी बातें सुननेमें आती हैं। राजमहलमें दरिद्रता छाई हुई है। जब बादशाह और शाहजादोंके देशकी यह दशा है तब और रईसोंकी कौन कहे? शूरता तो केवल जिह्वामें आ रही है, व्यापारी लोग चारों ओर रोते हैं, मुसलमान अव्यवस्थित होरहे हैं, हिन्दू महादुःखी हैं, यहां तक कि प्र-

परन्तु उस भयंकर युद्धको करनेके लिये जो बडी सेना इकट्ठी की गई थी उसको जानकर सहसा यह विश्वास होता है कि मानो बादशाहने किसी बडे भारी और प्रतापी राजाको जीतनेकी इच्छासे अपनी भयंकर विक्रमवाली सेनाको तैयार किया होगा, परन्तु जो राणा राजसिंह आज एक निर्बल राजा हैं भाग्यके दोषसे अपने पूर्व पुरुषोंके असीम गौरवसे अलग हुए तथा आज मुगलोंके द्वारा एक साधारण जमींदार माने जाते हैं; इस बडीभारी मुगल बादशाहतके सामने जिनका राज्य एक किनकामात्र गिना जाता है आज क्रोधसे उन्मत्त हुए औरंगजेबने उनको ही परास्त करनेकी इच्छासे अपनी बडीभारी सेनाको तैयार किया है; अपने प्रधान सेनापतिको बुलाकर औरंगजेबने कहा कि "मेरे राज्यमें जितनी सेना है, सबको इकट्ठी करके एक भयंकर प्रचंड और अजीत दल बनाओ, बादशाहकी आज्ञाका प्रचार होते ही विशाल मुगलोंके राज्यमें जितनी सेना थी जितने सामन्त सेनापति थे वह सब ही बादशाहके शोभायमान झंडेके नीचे आकर इकट्ठे होने लगे; इस भारी युद्धके पूर्ण करनेके और बढ़ानेके लिये राजकुमार अकबर अपने बंगराज्यसे और अजीम काबुल राज्यसे बुलाया गया था,

—जाको सन्ध्याकालके समय खानेको भी नहीं मिलता और दिनको सब, दुःखके मारे अपना शिर पीटा करते हैं।

"ऐसे बादशाहके राज्यका दिन स्थिर रह सकता है ? जिसने भारी करसे अपनी प्रजाकी ऐसी दुर्दशा कर डाली है ? पूर्वसे पश्चिमतक सबलोग यही कहते हैं कि, हिन्दुस्तानका बादशाह हिन्दुओंका ऐसा द्वेषी है कि, वह रंक ब्राह्मणसे बडा योगी, बैरागी और संन्यासीपर भी कर लगाता है, और अपने उत्तम तैमूरी वंशको, इन धनहीन और निरुपद्रवी उदासीन लोगोंको दुःख देकर कलंकित करता है। अगर आपको उस किताबपर विश्वास है, जिसको आप ईश्वरका वाक्य कहते हैं, तो उसमें देखिये कि ईश्वरको मनुष्यमात्रका स्वामी लिखा है, केवल मुसलमानोंका नहीं, उसके सामने हिन्दू और मुसलमान दोनों समान हैं। मनुष्यमात्रको उसीनें जीवनदान दिया है। नाना रंगके मनुष्य उसने ही अपनी इच्छासे उत्पन्न किये हैं, आपकी मसजिदोंमें उसहीका नाम लेकर चिल्लाते हैं और हिन्दुओंके यहां देवमंदिरोंमें उसीके निमित्त घण्टा बजाते हैं। किन्तु सब उसहीको स्मरण करते हैं, इससे किसी जातिको दुःख देना परमेश्वरको अप्रसन्न करना है, हम लोग जब कोई चित्र देखते हैं, उसके चितेरेको स्मरण करते हैं यदि हम उस चित्रको बिगाडें तो चितेरेकी अप्रसन्नता होगी और कविकी उक्तिके अनुसार जब कोई फूल सूंघते हैं उसके बनानेवालेको ध्यान करते हैं। उसको बिगाडना उचित नहीं।

"सिद्धान्त यह कि, हिन्दुओंपर जो आपने कर लगाना चाहा है, वह न्यायके परम विरुद्ध है, राज्यके प्रबन्धको नाश करनेवाला है, ऐसा करना अच्छे राज्याधीश्वरोंका लक्षण नहीं है, और बलको शिथिल करनेवाला है। हिन्दुस्तानकी नीति रीतिके अति विरुद्ध है। यदि आपको अपने मतका ऐसा आग्रह हो कि, आप इस बातसे बाज न आवें तो पहिले रामसिंहसे, जो हिन्दुओंमें मुख्य हैं, यह कर लीजिये और फिर अपने इस शुभचिन्तकको बुलाइये। किन्तु यों प्रजापीडन वा रणभंग, वीरधर्म और उदारचित्तके विरुद्ध हैं। बडे आश्चर्यकी बात है कि आपके मंत्रियोंने आपको ऐसे हानिकर विषयमें कोई उत्तम मन्त्र नहीं दिया!"

(गुजराती प्रेस बम्बईसे प्रकाशित औरंगजेब पुस्तकके पृष्ठ १६३।१६४।१६५ से।)

बादशाहका उत्तराधिकारी सुलतान मौजम महाराष्ट्रसिंह शिवाजीके साथ युद्ध करना छोडकर अपनी बडीभारी सेनाको साथ लेकर आया, दुष्ट औरंगजेब अपनी प्रचंड सेनाको ले मेवाड राज्यकी ओर चला, उफने हुए समुद्रके समान उस असीम मुगल सेनाका विकट गर्जन और कुलाहलका शब्द दूरसे ही महाराणा राजसिंहजीने सुना, वैसे ही उनके वीर हृदयमें उत्साह भर गया, उन्होंने तत्काल विकट तेजस्विनी भाषासे उत्साह देकर अपने सरदार और सामन्तोंको उन्मादित कर दिया। मुगलोंकी युद्ध खुजलाहटको दूर करनेके लिये अपनी सम्पूर्ण सेनाको तैयार होनेकी आज्ञा दी और अपनी सेनाको थोडी देखकर गिह्लोट् वीरगणोंकी पुरानी रीतिके अनुसार सेनाके साथ पहाडी किलेके बीचवाले उचित स्थानोंमें शिशोदीय वीरोंकी रक्षा करनेकी प्रतिज्ञा की, उनके साथही मेवाडकी प्रजा अपने नीचे स्थानोंको त्यागन करके दुर्भेद्य आरावलीकी तलैटीके भीतर जाय२ कर आश्रय लेने लगी; इस रीतिसे मेवाडके नीचेकी सम्पूर्ण भूमि खाली हो गई, दुष्ट औरंगजेबने उन सम्पूर्ण स्थानोंको खाली हुआ देखकर शीघ्र ही अपने अधिकारमें कर लिया, इस प्रकारसे चित्तौर मंगलगढ़ मन्दसौर जीरन व और२ देश तथा किले भी थोडे ही समयमें मुगलोंके हाथमें चले गये, बादशाह औरंगजेबने तत्काल उन किले और देशोंमें अपनी सेनाको स्थापित किया और राजपूत राणा राजसिंहजीके पकडनेकी इच्छासे आरावली पहाडके भीतर जानेकी प्रतिज्ञा की, इस भयंकर संग्राममें यवनोंकी सेनाके भारसे मेवाडकी भूमि बारम्बार कम्पायमान होने लगी, उनके घोर अत्याचारोंसे दुःखित हुए हिन्दू भयसे व्याकुल हो इधर उधर भागने लगे राणा राजसिंहने विचारा कि इस भयंकरयुद्धमें पवित्र शिशोदियाकुलका मान और गौरव ही नहीं जायगा वरन सबसे पहिले राजपूत जातिका सनातनधर्म और प्राचीन संस्कारोंतकके जानेकी नौबत आवैगी, जिस पवित्र धर्मको भयंकर म्लेच्छोंके ग्राससे बचानेके लिये पूर्व पुरुषोंने अपने हृदय रुधिर तकको दे दिया था, आज वह शुद्ध पवित्र सनातनधर्म नहीं रहैगा। अधिक कहनेसे क्या है कि जो राजपूतोंके जीवनका भी जीवन है और स्त्रियोंका स्वर्गीय सतीत्व रत्न है वह भी पापी दुराचारी मुगलोंके हाथसे जाना चाहता है, यह संकट देखकर क्या राजपूतगण निर्बल और निस्सहायके समान निश्चिन्त होकर घरमें बैठे रह सकते हैं? जिनके शिष्टाचारमें किंचित्मात्र भी हीनता आनेपर सहस्रों वज्र गिरते थे, म्लेच्छोंके पाप स्पर्शसे रक्षा करनेके लिये जिनको वह अपने हाथसे मारने अथवा जलती हुई अग्निके कुण्डमें डालनेसे भी नहीं हिचकते थे, आज वीरबालाओंका वही सतीत्व पापाचारी यवनोंके हाथसे कलंकित होगा, ऐसा कौन राजपूत पृथ्वीपर है जो अपने देहमें प्राण रहते हुए इस अत्याचारको सहन कर सकै? कोई भी कहीं भी नहीं? ऐसा कोई भी नहीं करैगा? इसी कारण बलवान औरंगजेबके इस भयंकर पराक्रमके रोकनेके लिये दृढ प्रतिज्ञा करके सम्पूर्ण राजपूत वीरगण राणा राजसिंहके लाल झंडेके नीचे दलके दल इकट्ठे होने लगे, अधिक तो क्या कहैं मेवाडके पश्चिम ओर रहनेवाले अरण्यचारी "पलिन्द और पलि-

पतगण " भी * सहस्रों धनुष बाण लेकर, राजा राजसिंहका सन्मान तथा गौरव रक्षा करनेके लिये उन्मत्त हृदय हो मेवाडके लाल झंडेके चारों ओर इकट्ठे हुए। आज बहुत दिनेंके पीछे वीरसिंह बाप्पारावलकी प्रचंड "छैंगी" भीम दर्पके साथ गिह्लौट राजके मस्तकपर शोभित हुई। उसकी तीक्ष्ण कांतिको देख घोर उत्साहसे उत्साहित हो सम्पूर्ण राजपूत सेना गम्भीर स्वरसे जय शब्दको उच्चारण करने लगी; वह जय शब्द आरावली पर्वतमालाकी तलैटीमें होता और कन्दरा पहाडोंमें टकराता हुआ बडी दूरतक पहुँचा, मुगलोंकी सेनाने भी "अल्लाहुअकबर" उच्चारण करके राजपूतोंकी सेनाका प्रत्युत्तर दिया इस प्रकारसे हिन्दू और मुसलमानोंकी सेना घोर उत्साहित हो परस्पर एक दूसरेका सामना करनेके लिये आगेको बढने लगी!

अनन्तर राणा राजसिंहजीने अपनी सम्पूर्ण सेनाको इकट्ठी हुई देखकर उसके तनि भाग किये और योग्य सेनापतिके आधीनमें उसको भिन्न २ स्थानोंपर स्थापित किया ज्येष्ठ राजकुमार जयसिंहने अपनी सेनाको आरावलीके शिखरपर ठहराकर उसके ऊपरके भागको बडी चतुराईके साथ सेनासे सजाया, जिससे शत्रुलोगोंका आक्रमण दोनों ओरसे ही बंद हो सकै, गुर्जर तथा उसके चारों ओर रहनेवाले भीलोंसे संपर्क नियत रखनेके लिये राजकुमार भीमसिंह गुजरातमें पश्चिम ओरसे पर्वतकी रक्षा करने लगे, इस ओर राणा भी स्वयं अपनी सेनाको लेकर नायननामक गिरिवर्त्मके बीचमें जाय विराजमान हुए, यदि उस स्थानको शत्रुओंसे अभेद्य कहा जाय तो भी ठीक होगा, उस संकटमय देशके बीचमें उन्होंने इस प्रकार चतुरता और निपुणतासे अपनी प्रचंड सेनाको स्थापन किया कि शत्रुलोगोंके भीतर आते ही वह उन्हें घेर लें, इस प्रकार सेनाके ३ भागों × को भिन्न २ स्थानोंमें टिकाय महाराणा राजसिंह विकट उत्साहके साथ शत्रु-सेनाके आनेकी बाट देखने लगे; यदि उस नायनगिरि मार्गमें औरंगजेब प्रवेश करता तो अवश्य ही राणा राजसिंहके हाथसे अपनी सेना सहित मारा जाता; परन्तु उसका बडा भाग्य कहना चाहिये कि वह इस मार्गसे न गया और बाहर ही बाहर चलकर देवारी-नामक भीलजनपदमें ठहर रहा, तथा बुद्धिमान तहव्वरखाँकी सलाहसे पचास हजार सेना साथ कर अपने पुत्र अकबरको उदयपुरकी ओरको भेजा और बादशाह अपनी सेनाके साथ उसी स्थानपर ठहरा रहा, वह स्थान जहां बादशाह ठहरा रहा राजधानीके चारों ओरसे अंडाकार था, उदयपुरको इसका मध्य बिन्दु मानकर उसके ऊंचे स्थानोंसे चारों ओरको देखनेसे इसका अंडाकारभाव भलीभांतिसे दीखता है. यह दक्षिण उत्तरको लम्बा और पूर्व पश्चिमको संकीर्ण है, इसकी लम्बाई चौदह और संकीर्ण

---

* इस देशकी चलित भाषामें इन गिरिभागोंको पलनामसे पुकारते हैं, इसी कारणसे वहांके अधीश्वरों को पगेन्द्र या पलिपति कहते हैं।

× कहते हैं कि शक्तावत सम्प्रदायके अधिपति गरीबदासने ही इस कौशलसे सेनाको स्थापित किया था, औरंगजेबको सेना दलके साथ आता हुआ देखकर उन्होंने अपनी सम्पूर्ण सेनाके सामने जो तेजस्वी व्याख्या की थी, भट्टग्रन्थोंमें उसका विस्तार सहित वर्णन है।

भाग प्रायः ११ ग्यारह मीलका होगा । विशाल आरावलीके विशाल शरीरसे बहुतसे शाखा पर्वतोंने निकलकर इस अंडाकार गिरिप्रदेशकी प्रशस्त देहको पुष्ट किया है–भूमिके नीचेसे इन शाखा पहाडोंका कोई २ स्थान छः सौ और कोई २ स्थान आठ सौ हाथ ऊंचा है, इसको एक ओर पेशोला प्रवाहित होकर इस देशकी सुन्दरताईको सहस्रों गुणा बढा रही है, इस निबिडभूमिसे बाहर आनेके लिये इसके पूर्वभागके जनस्थानमें आनेके समय केवल तीन गिरिमार्ग ही मिलते हैं, पहला तो अधिकतर उत्तरकी ओरको स्थित है, जो कि देलबाडाकी बगलमें होकर गया है, दूसरा पहले और तीसरेके बीचमें है, यह पूर्वोक्त देवारी स्थानकी बगलमें है, और तीसरा दुर्गम चप्पनकी ओरको फैला हुआ है, इसीका नाम नाइन है । महाराणा राजसिंहने इसी गिरिमार्गमें अपनी सेनाको स्थापित किया था, इन तीन पर्वती मार्गोंसे जो सबसे सरल है, बादशाह उसी स्थानसे गया और उस सरोवरके किनारे ही पर अपनी छावनीको डाल दिया ।

पिताकी आज्ञानुसार राजकुमार अकबर अपनी पचास हजार सेनाको साथ ले राजधानीकी ओर चला । "कोई भी उसकी गतिको न रोक सका; बहुतसे महल–बागसरोवर और द्वीप उसको दिखाई दिये, परन्तु उनमें कहीं भी कोई प्राणीका चिह्नमात्र न था; सभी मौन थे" अकबरने अपनी सेनाको ठहराया । अत्याचारी शत्रुसेनाके प्रचंड आक्रमणसे अपनी रक्षा करनेके लिये मेवाडकी प्रजा घरोंको छोड२ कर पहाडोंपर जाकर रही थी, इस बातको अकबर जानता था, इस कारण उसने इसका कुछ आश्चर्य न किया, वह अपनेको निष्कंटक जानकर निश्चिन्त हो रहने लगा; परन्तु ऐसी निश्चिन्तता बहुत दिनोंतक नहीं रही, शीघ्रही राणाजीके पाटवी राजकुमार जयसिंहने अपने प्रचंड विक्रमसे उसको घोर रूपसे दलित और त्रासित कर दिया।–भट्टकवियोंनें कहा है कि "कोई उस समय नवाज़ पढ रहे थे, कोई २ दावत खाकर आनन्द भोग रहे थे, कोई शतरंज खेल रहे थे, सारांश यह है कि चोरी करनेके लिये आकर सब सो गये थे, जो कुछ भी हो, वीरनन्दन जयसिंहने अकबरकी सेनाके ऊपर जाकर उसे भलीभांतिसे दलित और विताडित कर दिया, बहुतसी यवनोंकी सेना उन्मत्त हुए राजपूत सिपाहियोंके द्वारा तलवार और भांति २ के हथियारोंसे मारी गई, जो बाकी रही वह अपने प्राणोंको बचानेके लिये इधर उधर भागनेकी चेष्टा करने लगी; परन्तु चारों ओरसे मार्गको घिराहुआ देखकर फिर क्रोधमें भरे हुए राजपूतोंके तीक्ष्ण हथियारोंसे मारी जाने लगी, इस ओर अकबर भयभीत हो बादशाहसे सहायता पानेकी अभिलाषासे देवारीके आगे जानेकी चेष्टा करने लगा, परन्तु राणा राजसिंहने अपनी सेनाको उस गिरिमार्गके भीतर खडा करके सम्राटके पुत्र अकबरकी सम्पूर्ण चेष्टा व्यर्थ करदी, तब संकटमें पडा हुआ अकबर अपनी रक्षाका उपाय न देखकर गोगुण्डाके भीतर हो मारवाड राज्यके खेतोंमें होकर भागनेका उपाय करने लगा; परन्तु उसने विपत्तिसे मूढ हो चंदनके वृक्षके भ्रमसे भयंकर विषैले वृक्षका आश्रय लिया; फूलोंको तोड न पाकर कांटोंके वृक्षमें फँस गया; अपने छुटकारा पानेकी इच्छासे उसने जिस मार्गको लिया; वह अत्यन्त ही संकटसे भरा हुआ

था; पर्वतोंकी भूमिमें सामन्तलोग भीलोंकी सेनाको साथ लिये अकबरका मार्ग रोके हुए खडे थे, कोई २ संकीर्ण उपत्यकाभूमिके ऊपर काठका परकोटा बनाय पर्वतोंके शिखरपर चढकर शत्रुओंके ऊपर पत्थरोंकी व तोखे तीरोंकी वर्षा करने लगे; इस ओर राजकुमार जयसिंहने अकबरके पीछे खडे हो उसके जानेके मार्गको रोक दिया इस प्रकार चारों ओरसे घिरकर सम्राटका पुत्र अकबर बडीभारी विपत्तिमें पडा, वह जिस ओर को देखता, उसी ओर उसको दिखाई देता कि मानो मृत्यु भांति २ की भयंकर मूर्ति धारण करके भय दिखा रही है, इस रीतिसे भयंकर संकटमें पड कर अकबरने कितने ही दिन बिताये, धीरे २ जितने दिन बीतने लगे उतनी ही उसकी विपत्ति दूनी बढने लगी, अन्तमें भयंकर दुर्भिक्षकी विकट मूर्ति उसके ऊपर पडी;तब अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखकर जयसिंहसे अनुग्रह प्रार्थना करनेके लिये कहला भेजा, और उनको संतुष्ट करनेके लिये इस युद्धके होनेके कारणको भी नष्ट करनेकी प्रतिज्ञा की, उदारहृदय जयसिंहने उसके वचनोंपर विश्वास किया, और उसकी बुरी अवस्था देख दयालु होकर छोड दिया, अधिक क्या कहैं उसके साथ अपने कितने ही रक्षक मार्ग दिखानेके लिये जिलवाडाके गिरिमार्गतक भेज दिये, उन्हीं रक्षकोंकी सहायतासे उस अगम्य मार्गको पाकर बादशाहका पुत्र अकबर निर्विघ्नतासे चित्तौरके परकोटेके निकट पहुँच गया *

---

* प्रसिद्ध अर्मने औरंगजेबका वृत्तान्त अपने ग्रन्थमें लिखा है। उसने लिखा है कि औरंगजेब स्वयं भी अपनी सेनाके साथ ऐसी विपत्तिमें पडा था, और उसने भी उदार हृदय राजपूत राजाके वीरोचित गुणोंसे छुटकारा पाया। प्रयोजन समझकर कुछ थोडासा वृत्तान्त यहांपर लिखते हैं।

मुगलोंकी सेना पहाडोंके भीतर हो भयंकर परिश्रमके साथ आगेको बढने लगी, परन्तु औरंगजेबके साथ जो सेना थी वह इतनी अज्ञान थी कि थोडी ही दूर आगे बढकर उसकी गति छोटे२पर्वतोंने अकस्मात् रोक दी, इस ओर राजपूतोंने एक रात्रिके बीचमें ही उसके पीछेके भागको वृक्षोंकी लम्बी २ डालियोंसे घेरकर मुगलोंकी सेनाके पीछेका मार्ग रोक दिया, तब औरंगजेब बडेभारी संकटमें पडा यद्यपि उसने उस छोटे मार्गमें फँसकर अपनी सेनाके छुटानेका उपाय किया तो था परन्तु राजपूतवीरोंने पहाडोंके शिखरोंपर चढकर अस्त्रोंके प्रहारोंसे उसकी सम्पूर्ण चेष्टाओंको नष्ट कर दिया। उस अवरोधके बाहर शत्रुओंकी जो सेना थी उसने भी बहुतसी चेष्टा की, परन्तु कोई भी उस दारुण परकोटेको भेद नहीं कर सका, औरंगजेबकी अत्यन्त प्यारी बेगम भी इस उदयपुरके युद्धमें साथ आई थी, वह भी अपनी सेना और रक्षकोंको साथ ले उस पर्वतके एक स्थानमें ठहरी हुई थी, वह भी कैद हो गई, परन्तु बेगमके रक्षकोंने विपत्तिके डरसे अपनेको राजपूतोंके हाथमें समर्पणकर दिया;बादशाहकी बेगम राणा राजसिंहजीके पास गई;उदारचित्त बुद्धिमान् राणा राजसिंहजीने उसको उचित आदर सन्मान करके ठहरनेको स्थान दिया उस दुष्ट औरंगजेबको उस युद्धका भलीभांति फल दिखानेकी इच्छासे राणा राजसिंहने दो दिनतक उसकी बेगमको अपने यहां रखकर बादशाहको घोर संकटमें डाल रक्खा,यदि वह ऐसी दुःखित अवस्थामें कुछ अधिक दिनतक रहता तो उसको अवश्यही मृत्युके मुखमें जाना पडता; परन्तु महाराणा राजसिंहजीने तीसरे ही दिन अपने राजपूतोंको बुलाकर बादशाहके मार्गको साफ करनेकी आज्ञा दी;जब औरंगजेब उस भयंकर संकटसे छूट गया तब महाराणा राजसिंहने उसकी बेगमको अपने सेनापतियोंके—

प्रसिद्ध यवन वीर दिलेरखाँने मुगलोंकी सेनाको साथ ले देशूरी गिरिमार्गके भीतरसे जाय उस दुर्गम प्रदेशके बीचमें प्रवेश किया था; बहुतसे ऐसा अनुमान करते हैं कि वह राजकुमार अकबरका ही उद्धार करनेके अभिप्रायसे उस मार्गमें गया था, पहले तो कोई भी उस यवनसेनापतिकी गतिको न रोक सका, परन्तु जिस समय वह उस बडे भारी गिरिमार्गके बीचमें पहुंचा तब विक्रम शोलङ्की * और गोपीनाथ× राठौरने उसके ऊपर प्रचंड विक्रमके द्वारा घोर रूपसे आक्रमण किया, उस स्थानमें बहुत देर तक हिन्दू मुसलमानोंमें घोर युद्ध होता रहा परन्तु अभागा दिलेरखाँ राजपूतवीरोंके प्रचंड विक्रम को न रोक सका, अपनी सेनाके साथ उसी स्थानमें मारा गया, दोनों बारके युद्धोंमें पराजित हुई मुगलोंकी सेनाके हथियार और डेरोंकी बहुतसी सामग्री विजयी राजपूतोंके हाथमें आगई ।

यह पहाडी संग्राम बडी ही चतुराईके साथ हुआ था; फिर अकबर और दिलेरखाँके परास्त होते ही राणा राजसिंहने तत्काल बादशाह औरंगजेब पर हमला किया, आशाके मोहसे अंधा हुआ औरंगजेब अकबर और दिलेरखाँके युद्धका फलाफल जाननेकी इच्छासे अपने पुत्र अजीमके साथ उस देवारी ग्राममें ठहरा हुआ था, उसके हृदयमें आशाकी कितनी ही तरंगें उठ रहीं थीं, उस जीवनतोषिणी आशालहरीकी लीलाको देखते २ वह कितने ही सुखदाई स्वप्नोंको देखने लगा परन्तु उसके वह सम्पूर्ण स्वप्न शीघ्र ही भंग हो गये, शीघ्र ही वीर केशरी राजसिंहके प्रचंड आक्रमणसे उसको अपनी रक्षाका उपाय खोजना पडा । उस देवारी गिरमार्गके भीतर हिन्दू मुसलमानोंका भयंकर युद्ध हुआ, राजपूत सेनाके लोग राणा राजसिंहजीकी तीक्ष्ण वीरतासे उत्कंठित और उत्साहित हो मुगलोंकी सेनाके बडे भारी व्यूहको भेद करनेके लिये भयंकर पराक्रमके साथ उसकी ओरको बढने लगे; राठौर वीर साहसी दुर्गादासने अपनी कठोर प्रतिशोध पिपासासे उन्मत्त हो भयंकर पराक्रमवाले राठौर वीरोंको औरंगजेबके विरुद्ध भेजा । जिस दुष्टात्माने राठौर कुलका सर्व नाश किया है, पिशाचके समान घृणित मार्गमें पैर डालकर; शान्तमनवाले श्रेष्ठ धार्मिक राठौर राजाको बिष देकर संहार करके राठौरोंके हृदयमें भयंकर शोकानलको जला दिया, आज राठौरोंके हृदयमें वह शोकाग्नि भडक उठी है; उस प्रचण्ड अग्निको बुझानेके लिये उन्मत्त हुए राठौर वीरगण, रणवीर दुर्गादासके साथ मुगलोंके भयंकर व्यूहके सामने बढने लगे । आज औरंगजेब भारी संकटमें पडा है । जिसने पत्थरसे हृदयको बांध

—साथ उसके पास भेजदिया, और कहला भेजा कि "मैं इसके बदलेमें और कुछ नहीं चाहता केवल इतना चाहता हूं कि मार्गमें यदि कोई गो इत्यादि मिले तो तुम उसको न मारना; इसीसे मैं आपका अनुगृहीत होऊंगा । परन्तु दुराचारी औरंगजेबने राणा राजसिंहके कहनेपर किंचित भी ध्यान न किया और यह कहने लगा कि भविष्यत् युद्धसे छुटकारा पानेकी आशासे राणाने हमको जाने दिया था ।

* रूपनगरका स्वामी ।

× गानोरनगरका राजा । इस समय गोद्वार मेवाडसे अलग हो गया है ।

नृशंस, निठुर और पाखण्डीके समान हिन्दुओंको कठोर लोहदण्ड द्वारा ताडित किया था, जिसने उनका सत्यानाश करनेके लिये दृढ प्रतिज्ञ हो आज इस तीक्ष्ण समरानलको प्रज्वलित कर दिया है, वह लोग क्या आज उसके दुराचरणोंके उपयुक्त फलको न देकर वैसे ही छोड देंगे ?-कभी नहीं, चाहे बादशाहकी सेना इनकी सेनासे सहस्र गुणी भी क्यों न हो परन्तु शरीरमें प्राण रहते हुए कोई राजपूत भी अपनी सामर्थ्यके अनुसार आज उसको क्षमा नहीं करैगा। धीरे २ हिन्दू मुसलमानोंका युद्ध भयंकर रूपसे बढने लगा; रणविशारद मुसलमानोंकी ओरसे फिरंगी गोलंदाजोंने तोपोंका चलाना प्रारम्भ किया, उनके श्रवण भैरव निनादसे अनर्गल धुँयेंका ढेर निकलने लगा; उस हृदयको स्तम्भन करनेवाले भयंकर शब्दको सुनकर रणसे उन्मत्त हुए सम्पूर्ण राजपूतवीर अपने प्रचण्ड सिंहनादको मिलाय घोर उत्साहके साथ मुगलोंकी सेनाकी ओरको बढने लगे, तोपोंके धुँएसे सम्पूर्ण आकाश ढक गया, उन दिग्दाही गोलोंके संहार करनेके स्पर्शसे ही बहुतसे राजपूतोंका प्रचण्ड बाहुबल मथित हो गया, बहुतसे राजपूत एक पलके बीचमें ही न जाने कहांको विलाय गये, परन्तु इससे राजपूतोंका उत्साह कुछ भी मन्द न हुआ; वरन और भी दुगुना बढने लगा। तोपोंके निकले हुए उस बडे भारी धुएंका भेद करके अन्तमें वह लोग अपने प्रचण्ड केशरी विक्रमके साथ मुगलोंका सेनाके ऊपर जा पडे। उनके हाथकी तीक्ष्ण तलवारोंके भयंकर प्रहारसे फिरंगी गोलंदाज लोग मारे गये; तोपोंकी जंजीरोंने खंड २ होकर उनका मार्ग साफ कर दिया, फिर धीरे २ भयंकर मुगलोंका व्यूह भी छिन्न भिन्न हो गया, रणवीर राजपूतगण उस छिन्न भिन्न हुई सेनाके भीतर जाकर मतवाले हाथीके समान उसको दलित मथित और त्रासित करने लगे, उनकी भयंकर तलवारोंके आघातसे बची बचाइ मुगलोंकी सेना मारी गई, तब औरंगजेब अपनी रक्षाका उपाय न देखकर कुछ बची हुई सेनाको साथ ले युद्धभूमिको छोड भागा, उसकी तोपैं और बहुतसे अस्त्र शस्त्रें राजकीय ध्वजा, और बहुतसे हाथी और डेरोंमें रक्खे हुए बहुतसे द्रव्य विजयी राजपूतोंके हस्तगत हो गये। यह भयंकर संग्राम, राजपूतोंके धर्म और गौरवकी रक्षाका यह भयंकर भीषण संघर्ष; संवत् १७३७ वि० के * फाल्गुनमें वसंतके समय हुआ था; यद्यपि वीर श्रेष्ठ राणा राजसिंहने इस युद्धमें जय पाई थी परन्तु इसके बदलेमें मेवाडराज्यके बहुतसे राजपूत वीरोंका रुधिर दिया गया था।

पराजित और अपमानित हुआ औरंगजेब इस दुःखसे पीडित होने लगा, परन्तु एक मुहूर्त्तके लिये भी वह निरुत्साह न हुआ इस भयंकर पराजय और अपमानका बदला लेनेकी इच्छासे उसने अपनी सेनाको चित्तौरके परकोटेके नीचे इकट्ठा किया और अपने पुत्र सुलतान मुअज्जमको दक्षिणसे बुलाया, मुअज्जम, उस समय महाराष्ट्र केशरी महावीर शिवाजीके साथ युद्ध कर रहा था, परन्तु बादशाहने शिवाजीकी स्वाधीनताके हरण करनेकी अपेक्षा उत्तर देशके गौरवको नष्ट हुआ जानकर उसके

* मार्च, सन् १६८०-१।

जीवित करनेका प्रयोजन समझ अपने पुत्रको शीघ्र आनेकी आज्ञा दी परन्तु उसका यह उद्योग शीघ्र ही विफल हो गया, वीरवर जयमलके वंशवाले श्यामलदासने अपनी कितनी एक सेनाको साथ ले चित्तौर और अजमेरके बीचके स्थानोंमें जाकर इन दोनों नगरोंको भली भांतिसे छिन्न भिन्न कर दिया और मुगलोंकी सेनापर भयंकर आक्रमण करके उसको दलित और भयभीत करने लगा, उसकी रणचतुरताको देखकर औरंगजेब अत्यंतही भयभीत हुआ; अन्तमें अपनी स्वाधीनता और जीवनका भी खटका देखकर उस संकटदायी युद्धभूमिको छोडनेका विचार करने लगा; परन्तु उसके प्रतिशोधकी प्यास शान्त न हुई, जिस कारण वह मेवाडराज्यपर चढाई करके आया था उसका वह मनोरथ भी पूर्ण न हुआ, मनोरथ पूर्ण होना तो दूर रहा बरन स्वयं ही अपमानित और पराजित होकर समरभूमिको त्याग भागना पडा; बादशाहके मनमें जो पीडा हुई उसकी सीमा न रही, परन्तु करै क्या ? अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखकर उसने अपने पुत्र अकबर और अजीमको इस युद्धका भार सौंपा, तथा जबतक इस सेनामें मुगलोंकी और सेना आकर न मिल जाय तबतकके कर्तव्य कार्यकी परामर्श देकर अजमेरकी ओरको चला गया। अजमेरमें पहुंचते ही उसने अपने दोनों पुत्रोंकी सहायताके लिये बहुतसी सेना भेजी और राठौर वीर श्यामलदासके विरुद्ध खाँ रोहेला नामक सेनापतिको बारह सहस्र सेनाके साथ चित्तौरनगरको भेजा, युद्धविशारद बुद्धिमान् श्यामलदासने खाँ रोहेलाको सेनाके साथ आगे आता हुआ देखकर मारवाडकी सेनाके साथ पुरमंडल नामक स्थानमें शीघ्रतासे शत्रुसेनाके ऊपर हमला किया और उसको भयंकररूपसे परास्त करके अजमेरकी ओरको पुनर्वार भगाया; इस युद्धमें भी मुगलसेनाकी बहुतसी हानि हुई थी।

वीर केशरी महाराणा राजसिंह और उनके उत्तराधिकारी तथा साथके वीरगण आरावलीके पूर्वोक्त युद्धमें जय प्राप्त करके परमानन्द भोगने लगे। इस ओर राजकुमार भीम अपनी सेनाको साथ ले उस पर्वतकी पश्चिम एक नये प्रकारका वीराभिनय करने लगे; युद्ध प्यासकी शान्तिका दूसरा उपाय न देखकर उसने गुर्जर राज्यपर चढाई की ईडर नगर ध्वंस किया; वीरवर भीमने वहांके यवन बादशाह हुसेन और उसकी सेनाको वहांसे निकाल दिया, तथा वडनगरके मध्यमें हो सहसा पट्टनमें जा पहुँचे—पट्टन उस समय उस देशकी राजधानी थी। शिशोदीय राजकुमार भीमने उस नगरीको लूटा, इस प्रकारसे सिद्धपुर—मौडासा—तथा और नगरोंकी भी इनके द्वारा ऐसी ही दशा हुई। उनके कठोर आक्रमणसे पीडित हो दुःखको न सहनकर उस नगरीके रहनेवाले सम्पूर्ण मनुष्य अपने प्राणोंके भयसे चारों ओरको भागने लगे, और अत्यंत भयभीत हो राणाके पास क्षमा मांगनेके लिये आये, उनकी दीन दशाको देख कृपालु तथा उदारहृदय राजसिंहने अपने पुत्र भीमको लौटआनेके लिये कहला भेजा, भीम उस समय जय प्राप्त होनेके उत्साहसे उत्साहित होकर सूरत जा रहे थे, पिताकी आज्ञाको पाते ही उस युद्धको छोडकर मेवाडमें आ पहुँचे।

परास्त हुए शत्रुओंके ऊपर क्षमाका दिखाना वीर हृदय राजपूतजातिका एक प्रधान धर्म है; इस वीरमन्त्रके अनुसार ही वह लोग कार्य करते थे, परन्तु आज दुष्ट औरंगजेब के कठोर अत्याचारोंके झेलनेके कारण उन्होंने इस मंत्रके विरुद्ध कार्य किया। दुराचारी औरंगजेब जैसा निठुर था वैसा ही कृतघ्न भी था। उदारहृदय राणाने अनुग्रह करके उसको और उसके पुत्रको बंधनसे छोड दिया था, दुष्टमति औरंगजेब उस उपकारको भूल गया और उसने फिर उन्हींको सताना आरम्भ किया, परन्तु उस दुराचारी का वह आशय फलीभूत न हुआ, तो भी उसने अपने दुष्ट अभिप्रायोंको न छोडा, उसके पहिले किये हुए अत्याचारों की पीडाके विषयको राजपूत लोग न भूले वह अवश्य बदला लेंगे। राणाजीके दयालदास नामक एक अत्यंत साहसी और कार्य चतुर दीवान थे; मुगलोंसे बदला लेनेकी प्यास उनके हृदय में सर्वदा प्रज्वलित रहती थी, इन्होंने शीघ्र चलनेवाली घुडसवार सेनाको साथ लेकर नर्मदा और वितवा नदी तक फैले हुए मालवा राज्यको लूट लिया, उनकी प्रचंड भुजाओंके बलके सामने कोई भी खडा नहीं रह सकता था--सारंगपुर--देवास--सरोज--मांडू--उज्जैन और चंदेरी इन सब नगरों को इन्होंने बाहुबलसे जीत लिया, विजयी दयालदासने इन नगरोंको लूटकर वहांपर जितनी यवनसेना थी उसमेंसे बहुतसीको मारडाला; इस प्रकारसे बहुतसे नगर और गांव इनके हाथसे उजाडे गये, " इनके भयसे नगरनिवासी यवन इतने व्याकुल हो गये थे कि किसीको भी अपने बन्धु बांधवके प्रति प्रेम न रहा अधिक क्या कहैं वे लोग अपनी प्यारी स्त्री तथा पुत्रोंको भी छोड २ कर अपनी २ रक्षाके लिये भागने लगे; जिन सम्पूर्ण सामग्रियोंके ले जानेका कोई उपाय दृष्टि न आया अंतमें उनमें अग्नि लगाकर चले गये " अत्याचारी औरंगजेब हृदयमें पत्थरको बांधकर निराश्रय राजपूतोंके ऊपर पशुओंके समान आचरण करता था, आज उन लोगोंने ऐसे सुअवसरको पाकर उस दुष्टको उचित प्रतिफल देनेमें कुछ भी कसर नहीं की, अधिक क्या कहैं, हिन्दुधर्मसे वैर करनेवाले बादशाहके धर्मसे भी अपना पलटा लिया " काजियोंके हाथ पैरोंको बांधकर उनकी दाढी मूछोंको मुडा और उनके कुरानोंको कुएँमें फैंक दिया " दयालदासका हृदय इतना कठोर हो गया था कि, उसने अपनी सामर्थ्यके अनुसार किसी मुसलमानको भी क्षमा नहीं किया। तथा मुसलमानोंके मालवाराज्यको तो एकबार ही मरुभूमिके समान कर दिया, इस प्रकार देशोंको लूटने और पीडित करनेसे जो विपुल धन इकट्ठा किया वह अपने स्वामीके धनागारमें दे दिया और अपने देशकी अनेक प्रकारसे वृद्धि की थी।

विजयके उत्साहसे उत्साहित होकर तेजस्वी दयालदासने राजकुमार जयसिंहके साथ मिलकर चित्तौरके अत्यन्त ही निकट बादशाहके पुत्र अजीमके साथ भयंकर युद्ध करना

आरंभ किया, इस भयंकर युद्धमें मेवाडके वीरोंके सहकारी*राठौर और खीचीवीरोंकी अनुकूलतासे तथा उत्साहके साथ उनके सम्मिलित होनेसे अजीमकी सेनाको भयंकर रूपसे वीरवर दयालदासने दलित करके अन्तमें परास्त कर दिया पराजित अजीम प्राण बचानेके लिये रण थम्भौरको भागा। परन्तु इस नगरमें आनेसे पहिले ही उसकी बहुत हानि हुई थी। कारण कि विजयी राजपूतोंने उसका पीछा करके बहुतसी सेनाको मार डाला जिस अजमिने पहले वर्षमें चित्तोड़नगरीका स्वामी बनकर अकस्मात् उसको अपने हाथमें कर लिया था आज उसको उसका उचित फल दिया गया, परन्तु राजपूत केशरी राणा राजसिंहके बदलेकी प्यास शांत न हुई, जिस दुष्टमुगलने उसके असंख्य हिन्दुभाइयोंको पीडित करके दुःखित किया था, जिसने सोनेकी मेवाडभूमिको श्मशान के समान कर दिया था, जिसने सनातनधर्मको पैरके नीचे दलित कर दिया था, क्या उसका बदला थोडासा हो सकता है ? जबतक पवित्र मेवाडभूमि पापी म्लेच्छोंके अपवित्र चरणभारसे पीडित रहैगी, जबतक मुगलोंका एक सिपाही भी मेवाडराज्यके भीतर रहैगा तबतक राणाका क्रोध शान्त नहीं होगा और उनका हृदय ठंढा न होगा। उन्होंने मुगलोंकी सेनाको जडसे नाश करनेकी प्रतिज्ञा की और थोडे ही समयमें उस प्रतिज्ञाको सिद्ध करके कुछ कालके लिये शान्ति भोग करने लगे, परन्तु वह शान्ति थोडे ही समयके लिये थी, फिर शीघ्रही उनको अजितसिंहके स्वार्थकी रक्षाके लिये तलवार पकड़कर यवनोंके विरुद्ध युद्ध करना पड़ा।

राठौरकुलमणि धार्मिक श्रेष्ठ जसवंतसिंह पापी औरंगजेबकी प्रचंड विद्वेषाग्निमें गिरकर पतंगके समान भस्म हो गये थे। जिस दिन पिताके शोकसे शोकित हुए कुमार अजितसिंहको कैद करनेके लिये औरंगजेबने अभिलाषा की थी, उसी दिनसे राठौरकी राजरानीने मारवाडराज्यका भार अपने हाथमें ले लिया। उसी दिनसे वह अपने पुत्रके स्वार्थके लिये बडी चतुरता और बुद्धिमानीसे राजकाजको देखने भालने लगीं। कई बार में कितनी ही भयंकर विपत्तियोंने उनको आक्रमण किया था, कितनी ही बार उनको महासंकटमें पडना पडा था परन्तु एक तेजस्विता और बुद्धिकी सहायतासे उन्होंने उन सम्पूर्ण विपदों और संकटोंसे छुटकारा पाया, वरन् शत्रुओंसे अपना बहुतसा विभव छीन लिया था। वह वीर स्त्री थीं, बाप्पारावलके पवित्र वंशमें उत्पन्न हुई थीं, इस कारण जितने गुण वीर स्त्रियोंमें होने आवश्यक थे वे सब गुण उनमें विद्यमान थे, इतने दिनोंतक वह अपने उन समस्त गुणोंकी सहायतासे ही अपने पुत्रके स्वार्थकी रक्षा करने में समर्थ हुई थीं। परन्तु अब कठोर हृदय औरंगजेबने उनके ऊपर ऐसे कठोर अत्याचार

---

* सहकारी वीरोंके यह नाम हैं मेवाडके मुख्य सामन्त मोहकम और गंगा, शक्तावत, सलंबूर (सालंब्रा) के रतनसिंह, चूडावत, सादरीके चन्द्रसेन झाला, बेदलाके सबलसिंह चौहान और बीजोलीं के वैरीसाल पंवार थे। मुगलोंके साथ युद्ध करनेसे पहले इन चारों वीरोंने अपनी २ तेजस्विनी भाषाओंमें व्याख्यान दिये थे वह सम्पूर्ण व्याख्यान भट्टग्रंथोंमें लिखे हैं।

करने आरंभ किये कि उनका रोकना उनके पक्षमें सर्वथा असम्भव हुआ। तब राणा राजसिंह मारवाड और मेवाडकी सेनाको इकट्ठा करके अबकी बार गोद्वार (गोडवाड) जनपदके प्रधान नगर गनोरामें बादशाहके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये तैयार हुए। राजकुमार भीम अकेले ही उन राठौर व शिशोदियोंकी सेनाको लेकर अकबर और तहवरखाँ के सामने हुए, शीघ्र ही दोनों दलोंमें भयंकर संग्राम होने लगा, मुगललोग रणविशारद राजपूत भीमके पराक्रमको न सहकर रण स्थानमें भलीभांतिसे हार गये; ऐसा कहते हैं कि एक चतुर राजपूतकी अपूर्व चतुराईसे ही इस युद्धमें जय प्राप्त हुई थी। राजपूतोंने मुगलोंकी सेनामेंसे पांच सौ ऊंट छीन लिये, और उनकी पीठोंके ऊपर जलती हुई मसाल रखकर बादशाहकी सेनामें छोड़ दिये; रात्रिके घोर अंधकारमें जलती हुई मसालोंको देखकर मुगलोंकी सेना भयभीत हो इधर उधर भागने लगी, उस सुअवसरमें राजपूतोंने मुगलोंकी सेनापर आक्रमण कर उसे घोररूपसे परास्त कर दिया था।

औरंगजेबका कोई भी आशय सिद्ध न हुआ, असीम सुयोग और विपुल सहायताका बल होनेपर भी वह राजपूतोंके प्रचंड केशरी विक्रमको न रोक सका; उसको बारम्बार युद्धमें परास्त करके वीर श्रेष्ठ राजसिंह और उनके सहकारी मित्रभाव रखनेवाले राजपूत राजा और सामन्तोंने उसको तख्तपरसे उतारकर उसके पुत्र अकबरको अभिषेकित करनेका विचार किया। शीघ्र ही यह समाचार गुप्त भावसे अकबरको कहला भेजा, परम धार्मिक वृद्ध शाहजहांको तख्तपरसे उतारकर पितासे द्रोह करनेवाले दुष्ट औरंगजेबने संसारमें जो अत्यन्त घृणित उदाहरण स्थापित किया था, राजकुमार अकबर भी उस उदाहरणके अनुसार उस सुयोगको त्याग न कर सका, इस कारण उसने आनन्दित हृदयसे राजपूतोंके प्रस्तावको ग्रहण किया और शुभ कार्यको सिद्ध करनेके निमित्त राजपूतोंने अपने एक विश्वासी राजपूतको अकबरके पास भेजा, शीघ्र ही राजपूतलोग अपनी २ सेना लेकर इकट्ठे हुए। ज्योतिषीने आकर अकबरके अभिषेकका दिन निश्चय किया। गुप्तभावसे तैयारियें होने लगीं, परन्तु उसकी असावधानीसे शीघ्र ही वह समस्त तैयारियाँ निष्फल हुईं, और राजपूतोंके उद्देश भी व्यर्थ हो गये, जिस चतुरता और तीक्ष्ण बुद्धिसे औरंगजेबके कार्य सिद्ध हुए थे, यदि अकबर उन्हें किंचित्मात्र भी जानता होता तो उसकी यह अभिलाषा शीघ्र ही सिद्ध हो जाती, तब वह जान लेता कि जिस ज्योतिषीने उसके अभिषेकका दिन निश्चय कर दिया है वह कैसा कपटी और विश्वासघातक है; उस कपटाचारीने जब देखा कि राजकुमार अकबरके तख्तपर बैठनेकी सम्पूर्ण तैयारियाँ हो रही हैं और अब केवल सिंहासनपर बैठना बाकी है, तब वह बादशाहके पास गया और यह सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया, औरंगजेब एक मुहूर्तके लिये तो स्तम्भित हुआ, परन्तु उत्साहरहित न हुआ, उसने उस विपत्तिके समय एक बार अपनी अवस्थाको देखा कि मैं अकेला हूं, औरंगजेबके शरीर रक्षकोंके अतिरिक्त उस समय और कोई भी उसके पास नहीं था, मुअज्जम और अजीम बहुत दूरपर हैं, इस ओर अकबर भी थोडी ही दूर है, अजमेर

केवल एक दिनका ही मार्ग है, अब और उपाय क्या है? कौन पुत्रके हाथसे रक्षा करेगा? अकबरके साथ प्रगटमें युद्ध करना होगा, इस समय कोई मुगल वीर भी पास नहीं है अतएव ऐसी अवस्थामें क्या उपाय है ? एक दिनसे अधिक और समय भी नहीं है। ऐसे संकटके समयमें वह एक दिनको एक मुहूर्त्त जानने लगा, परन्तु एक दिनके उस एक मुहूर्तको वृथा कार्यमें न लगाकर बुद्धिमान् औरंगजेब अपनी रक्षाका उपाय ढूंढ़ने लगा। उपाय निकल आया। वह उपाय अत्यन्त सीधा था, उस उपायसे मनुष्योंकी हत्या अथवा रुधिर भी न बहेगा, बादशाह अपनी रक्षा करनेको भलीभांतिसे समर्थ हुआ; उसने अकबरको एक पत्र लिखा और अपने गुप्त दूतके हाथ उस पत्रको राजपूतके सेनापति दुर्गादासके डेरेमें डालनेको कहा, अकबरके ऊपर राजपूतवीरोंका संदेह होना ही उस पत्रका मुख्य उद्देश था, चतुर बादशाहने आज छल कपटसे उस मनोरथको सिद्ध किया। उस पत्रमें अकबरकी प्रशंसा करके बादशाहने लिखा था "हे वत्स ! तुम्हारी इस चतुरताके वृत्तान्तको जानकर मैं अत्यन्त ही सन्तुष्ट हुआ, परन्तु सावधान रहना देखो कहीं राजपूत-लोग इस हमारे गुप्त षडयन्त्रको न जान सकें, जब वह हमारे साथ युद्ध करने लगे उसी समय तुम अपनी सेनाको साथ लेकर भली भांतिसे उनका संहार करना, ऐसा करनेसे ही हमारी अभिलाषा सिद्ध होगी।" इस प्रकारसे ही कूटनीतिका अवलम्बन करके कूटबुद्धि शेरशाहने राजपूत मालदेवके हाथसे अपनी रक्षा की थी। तथा वर्तमान समालोच्य समयमें महाराष्ट्र वीर शिवाजीके विरुद्ध भी यह नीति सफल हुई थी। औरंगजेबकी वह कपटमयी पत्रिका दुर्गादासके * हाथमें पडी, अकबरके नामका सिरनामा और बादशाहके नामकी मोहर देखकर उस वीरने अत्यन्त ही शंका और संदेहसे उस पत्रको खोल प्रारम्भसे लेकर अन्ततक पढा। सब ही उनको स्वप्नकी समान दिखाई दिया, औरंगजेबकी छलनाको न जानकर दुर्गादासने उस पत्रको सत्य ही विचार लिया, जिस अकबरको बादशाह बनानेको उसने वह अपनी सेना तैयार की थी, वही अकबर विश्वासघातक है ? इस बातका विश्वास क्या सहजमें ही आ सकता है ? परन्तु राठौर वीर दुर्गादासने ऐसा विश्वास कर लिया, कारण कि वह जानते थे, कि चतुरता और विश्वासघातकता यवनजातिका धर्म ही है, अकबर भी यवन है, इस कारण वह ऐसी चतुरता और विश्वासघातकता कर सकता है, इस बातका दुर्गादासके

---

* महात्मा टाडसाहबको इस राठौर वीर दुर्गादासकी तस्वीर मिली थी, दुर्गादास लूनी नदीके किनारे पर स्थित दुरनार नामक स्थानका अधीश्वर था। उन्होंने ही कुमार अजितसिंहको दुराचारी औरङ्गजेबके हाथसे छुडाय उसके अत्याचारी व्यवहारोंसे कुमारकी रक्षाकी थी, और अपने देशकी स्वाधीनता पुनर्वार प्राप्त करनेके लिये बादशाहके विरुद्ध अगणित युद्ध किये थे, वह जिस समय अकबरको संकटसे छुटा कर लिये जा रहे थे; उस समय अजीमने उनके पास चालीस हजार मोहरें नजरके लिये भेजीं रिशवत देनेका उद्देश्य स्पष्ट था परन्तु सुलतान अजीमने साफ२ नहीं कहा था। यह कहना अनावश्यक है कि दुर्गादासने उन अशरफियोंको घृणाके साथ पैरसे ठुकरा दिया था।

हृदयमें दृढ विश्वास हो गया वह अत्यन्त ही दुःखी हुए और सहस्रों बार यवन जातिको धिक्कार देकर अपनी सेनाको साथ ले वहांसे लौट आये; राजपूतोंके एकबार ही बदल जानेका कारण अकबरने न जाना, वह अपने दुर्भाग्यको ही विचारकर अत्यन्त शोकित हुआ, उसका परम विश्वासी तहव्वरखाँ दारुण दुःखसे व्याकुल होने लगा, उसकी यह आन्तरिक इच्छा थी कि अकबर तख्तपर बैठे आज वह अभिलाषा पूरी होते हुए भी पूरी न हुई, इस कारण उसको जो दुःख हुआ था उसे वही जानता होगा उसके दुःखकी सीमा न रही, दुःखके पीछे निराशाने आकर घर दबाया उसी निराशासे उसका हृदय पत्थरके समान हो गया, अकबरके सौभाग्यके मार्गको साफ करनेके लिये उसने बादशाहको विष देकर मारडालनेकी अभिलाषा की थी, परन्तु उसकी वह अभिलाषा भी निष्फल हो गई, अन्तमें तहव्वरखाँका जीवन भी नष्ट हो गया, इस ओर औरंगजेबकी उस कूटनीतिके प्रकाश होनेसे पहिले ही मुअज्जम और अज़ीम उसके पास आ गये थे, तब औरंगजेब भलीभांतिसे निष्कंटक हो गया, अकबरने अत्यन्त भयभीत होकर राजपूतोंके पास आय उनका आश्रय लिया, राजपूतलोग बादशाहकी चतुराईको भली भांतिसे जान गयेथे इसकारण अकबरको आदरसहित ग्रहण करनेमें कुछ भी विचार न किया परन्तु अकबर तो भी निश्चिन्त न रह सका, वह जहां जहां जाता था वहां ही उसे यह दिखाई देता था कि मानो पिताकी क्रोधाग्नि पीछे २ आ रही है· वह अपने पिताके कठोर चरित्रोंको भलीप्रकारसे जानता था उन्ही चरित्रोंका विचार करते २ उसको दुगुना भय हो गया था, अन्तमें घोरे रहते हुए अपनी रक्षाका उपाय न देखकर उसने और स्थानपर जानेका विचार किया; राठौर वीर दुर्गादास उसकी इस उत्कण्ठाको देखकर पांच सौ राजपूतोंकी सेनाको साथ लेकर उसे पालवगढ़ स्थानमें महाराष्ट्र वीर सम्भाजीके पास लेजानेको मेवाड और डूँगरपुरके गिरिमार्गको उलंघन कर उस नगरमें जा पहुँचे, मार्गका कोई विघ्न तथा बाधा उनकी प्रचण्ड गतिको न रोक सकी; पालवगढ़में अकबर कुछ दिन रहा और इंगलैण्डके जहाज पर चढकर फारसको चला गया।

पंडितवर अर्मने कहा है कि "अपने भ्राता शुजाकी छायामयी प्रेममूर्तिको पठानोंके बीचमें देखकर औरंगजेब जैसी चिन्तासे पीडित हुआ था आज सम्भाजीके पास अकबरके जानेका वृत्तान्त सुनकर भी उसे उसी प्रकारका दुःख हुआ और फिर राजपूतोंसे अकबरकी मित्रताका होना उसके लिये और भी दुःखदायी हो गया, यदि उसकी अपेक्षा राजपूतोंसे युद्ध होता तो वह उतनी चिन्ता नहीं करता, यद्यपि राजपूत उसके प्राणोंको नाश करना नहीं चाहते थे वह केवल उसको तख्तसे उतारनेकी इच्छा करते थे। आज उन राजपूतोंको अकबरके साथ मिला हुआ देखकर बादशाह अत्यन्त शंकित हुआ, उसकी इच्छा राजपूतोंके साथ संधि करनेकी हुई परन्तु अपनी मर्यादाको विचारकर उसने स्वयं संधिका प्रस्ताव न उठाया, मुगलोंके सेनापति दिलेरखाँके आधीनमें एक विलक्षण राजपूत सैनिक अति प्रतिष्ठाके साथ कार्य करता था; इस समय उसने ही इस उपस्थित संकटसे बादशाहका उद्धार किया, अपने देशको जानेका बहाना कर उसने अपनी

सेनाको छोडा और मार्गमें जाते २ मानों बडे शिष्टाचारके वशमें ही महाराणासे साक्षात् किया दोनोंमें परस्पर वार्त्तालाप होता रहा; होते २ युद्धका वृत्तान्त भी आ पडा राजपूतोंने उसके लिये अधिक दुःख प्रकाश किया;ऐसा जाना जाता है वह दुःखप्रकाश काल्पनिक नहीं था, इसके उपरान्त उस सैनिकने राणाजीसे कहा कि "यद्यपि औरंगजेब स्वयं सन्धिके प्रस्तावको नहीं उठा सकता है परन्तु वह उसको स्वीकार कर लेगा" यह सुनकर राणाने अनुरोधके साथ कहा कि "तो आप ही हमारी तरफसे बादशाहसे संधिका प्रस्ताव उठाइये ।" यह वृत्तान्त मेवाडके भट्टकवियोंने अपने ग्रन्थोंमें लिखा है उन्होंने उस मध्यस्थ राजपूतको बीकानेरका राजा श्यामसिंह निर्देश किया है ।

श्यामसिंहसे राणाके मनका वृत्तान्त पाय चतुर औरंगजेबने अपने स्वभावके अवलम्बन करनेमें कुछ भी त्रुटी न की, राणाजी संधि करनेको तैयार हुएहैं यही उसके लिये एक योग्य अवसर था उसी सुयोग अवसरमें औरंगजेबने आज कल करके राणाको तो युद्धसे विमुख रक्खा और आप धीरे २ गुप्त भावसे युद्धकी तैयारियां करने लगा, इस प्रकारसे वर्षाऋतु आ गई अतएव राणाजीको युद्ध छोडना पडा वर्षाके बीतजानेपर दुष्ट औरंगजेब सेनाको साथ ले राणाके ऊपर चढाई करके आया, परन्तु उस समय दोनोंमें संधि हो गई दुःखका विषय है कि उस संधिपत्रमें मुण्डकरके दूर करनेका कोई प्रस्तावतक न रहा यहांतक कि उसका नामतक भी न आया । केवल उसमें यही लिखा गया कि राणा राजसिंहको चित्तौरके जनपद फिर मिल जाँय, जोधपुरके विषयमें भी उसमें लिखा था इस संधिके वृत्तान्तको भलीभांति अमेने लिखा है, संधिपत्रके अनुवाद देखनेसे उसकी यथार्थता प्रगट होगी ।*

---

* बादशाहके साथ शूरसिंह (राणा राजसिंहके चचा) और नरहर भट्टकी संधिका वृत्तान्त महाकुभावकी अभिलाषा और आह्वान (बुलाने) के अनुसार आपके दोनों सेवक नीचे लिखे हुए प्रस्तावोंके निवेदन करनेके लिये राणाजीके द्वारा श्रीमान्के निकट आये हैं आशा है कि जो कुछ यह पद्मसिंह निवेदन करेंगे उसमें श्रीमान् सम्मति देंगे ।

स्वहस्तलिखित "मंज़ूरी" शब्दके साथ बादशाहका पंजाया पंचांगुलिका अंक। — "मंज़ूरी" स्वीकार !
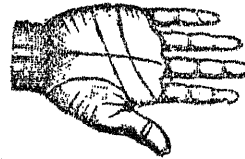
१ चित्तौरके अन्तर्गत और सन्निकट जनपदोंको लौटा देनेकी आज्ञा हो ।

२ हिन्दुओंके बहुतसे मंदिर तोड २ कर उन स्थानोंमें मस्जिदें बनवाई गई हैं इस बातके विषयमें हमको अब कुछ नहीं कहना है परन्तु आगेको ऐसा घृणित कार्य नहीं किये जायँ ।

३ राणाजी जिस प्रकारसे बादशाहकी अनुकूलता करते आये हैं वह वैसे ही रहेगी । परन्तु उसमें और अधिक दावा न किया जाय ।

४ 'हम आशा करते हैं कि स्वर्गीय राजा जसवंतसिंहके पुत्र और उनके कुटुम्बी अपनें २ कार्यको साधन करनेमें सामर्थ्यवान् होनेपर अपने राज्यको फिर पावें ।" (क)

(क) राणा राजसिंहने मारवाड कुमार अजितसिंहको राज्य दिलाने और जिजिया करको रोकनेके लिये ही खड्ग धारण किया था । अजित उस समय राणाजीके पास ही था ।—

परन्तु यह समस्त वृत्तान्त राणा राजसिंहके उत्तराधिकारी जयसिंहके ही राज्यमें हुआ इस कारण इस स्थानमें इसका भलीभांतिसे विचार करना युक्तियुक्त नहीं हो सकता, कारण कि सन्धिकी तैयारीके शेष न होते २ राजपूत वीर केशरी वीरश्रेष्ठ राणा राजसिंह इस असार संसारको छोडकर चले गये थे, जबसे राणा राजसिंह गद्दीपर बैठे थे तभीसे उन्होंने मुगलबादशाह औरंगजेबके साथ कितनी ही वार युद्ध किये इससे उनके अंगप्रत्यङ्गोंमें बहुतसे घाव हो गये थे, उन्हीं घावोंकी पीडा होनेसे उनका स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहा । एक तो उनको हृदयज्वरकी चिन्ता दिन रात भस्म करे डालती थी, फिर घावोंकी भयंकर पीडा अधिक सताती थी । वीर श्रेष्ठ राजसिंह उस भयंकर पीडासे छुटकारा पाय स्वर्गके सिंहासनपर अपने पूर्व पुरुषोंके साथ जाकर मिल गये । * जिस दिन हिन्दूकुलसूर्य वीर श्रेष्ठ प्रतापसिंहने अपने देशकी प्रेमिकता और संन्यासकी पराकाष्ठा दिखाकर इस लोकसे विदा ली थी, उस दिनसे मेवाडकी भूमि जिस विषादरूपी भयंकर अंधकारसे ढक गई थी उस अंधकारको, अमर, कर्ण अथवा जगतसिंह इनमेंसे कोई भी दूर न कर सका, परन्तु वीर केशरी राजसिंहने अपने अद्भुत विक्रम और प्रकाशमान देशकी प्रेमिकताके बलसे उसको भलीभांतिसे दूरकर मेवाडके नष्ट हुए गौरवका पुनरुद्धार किया । जैसे अविश्रान्त विक्रम और अध्यवसायके साथ उन्होंने दुष्ट औरंगजेबके विरुद्ध तलवार धारण कर उसके अखर्व गर्व और अहंकारको चूर्ण कर दिया था, इससे उनकी देशप्रेमिकताका स्पष्ट परिचय पाया जाता है, राणा राजसिंह, वीर श्रेष्ठ प्रतापसिंहके योग्य वंशधर थे । उन्होंने इस ही कारणसे भारतके उस भयंकर प्रलयकालमें दलित और पीडित अभागी भारतसन्तानोंका उद्धार करनेके लिये अपने तीक्ष्ण विक्रमसे औरंगजेबके विरुद्ध कठोर युद्ध किया था । भारतकी उस भयंकर दुर्दशाके समयमें यदि वह उत्पन्न न होते तो हिन्दूसन्तान और हिन्दुओंका धर्म अस्त होकर शीघ्र ही लोप हो जाता, उनके देवचरित्रके साथ पापाचारी औरंगजेबके किसी चरित्रकी बराबरी नहीं हो सकती, उन दोनोंके चरित्रोंको बराबर कहना सम्पूर्णता न्यायके विरुद्ध है, कारण कि प्रत्येकका चरित्र एक दूसरेके विपरीत था । विशाल एशियाभंडलमें जितने राजा हुए थे, उन सबमें कोई भी औरंगजेबके समान दुस्तर पापपंकमें नहीं फँसा था, किसीने भी उसके समान पशुवृत्तिसे जीवनको नहीं चलाया था; पराये जीवनके ऊपर अन्यायका दिखाना उसकी जाति और कुटुम्बियोंका एक मुख्य धर्म था, औरंगजेबने उस धर्मको भलीभांतिसे पढा था, उसका हृदय अत्यन्त कठोर था, जयके उल्लाससे उत्साहित होकर उसने कभी किसीके ऊपर तिलमात्र अनुग्रह न किया, जिन समस्त गुणोंके होनेसे इस लोकमें मनुष्य, मनुष्य नामके योग्य होता है, औरंगजेबके हृद-

---

—अपनी मर्यादाका विचार करके किसी प्रकारके नीच विषयको नहीं चाहता भुवनविकाशक भगवान दिवाकरकी किरणमालावत् श्रीमान्की सौभाग्यकी ज्योति सदैव वर्द्धित हो और कभी अस्त न होवे । श्रीमानके सेवक शूरसिंह और नरहरभट्टकी विनीत प्रार्थना ।

* संवत् १७३७ (अर्थात् सन् १६८१ ई०) ।

यमें उनमेंसे किसीने भी स्थान नहीं पाया । अधिक तो क्या कहें, शत्रु जिस समय उसकी शरणागत आता, वह पिशाच उसी समय अपने पैरसे ठुकराकर तत्काल उससे अपने वैरका पलटा लेता, उसके इन पापोंका तीक्ष्ण और भयंकर उदाहरण यह है कि गोलकुंडेके राजाको उसने भलीभांतिसे पीडित किया था, परन्तु संसारप्रेमी राजपूतोंके चरित्र इसकी अपेक्षा अत्यन्त विपरीत हैं।नृशंस बादशाह हृदयमें पत्थरोंको बांध असमि अनिष्टोंकें करनेमें तिलमात्र भी कसर नहीं करता था; करुणानिधान राणा राजसिंहने उसको असंख्यों बार क्षमा किया था,उनका हृदय दया, दाक्षिण्य, क्षमा इत्यादि गुणोंसे विभूषित था, इसी कारण अत्याचारी शत्रुओंने उनसे क्षमा पाई थी । यदि वह इच्छा करते तो औरंगजेबको सेनाके साथ संहार कर डालते,परन्तु उस अत्याचारी और उसकी स्वजातीय प्रजाका होनहार दुःखका विचारकर उन्होंने अपने विजयी पुत्र जयसिंहको युद्धसे लौटा लिया था । अपने देशकी रक्षाके लिये उन्होंने युद्ध विशारद सेनापति तथा तेजस्वी वीरके समान जो अद्भुत रणकुशलतासे प्रचंड विक्रम प्रकाश किया था; यदि उस वीरताकी स्वयं अनन्तदेव भी सहस्र मुखसे अनन्तकालतक प्रशंसा करैं तो उसका पार नहीं पा सकते, विशेष करके उन्होंने दुःखित हुए भारतसंतानोंका उद्धार करनेके लिये जो असीम वीरता और महानताका परिचय दिया था, उस वीरता और महानताकी उपमा इस संसारमें नहीं है, वह एक परम विद्वान् और हितैषी राजा थे, इसका प्रमाण उनकी लिखी हुई प्रथमोक्त पत्रिका है उस पत्रिकाकी रचनासे उन्होंने अनुपम लिपिचातुर्य और अपने उदार हृदयका परिचय दिया था; इससे उनको नीतिके जाननेवाले परम विद्वान् और महात्माओंमें ऊंचा स्थान दिया जा सकता है, वह एक शिल्पप्रिय राजा भी थे, इसका यथार्थ प्रमाण उनका बनवाया हुआ बडाभारी राजसमँद सरोवर है, उस राजसमँद सरोवरकी प्रतिष्ठाका कारण और उसका समस्त वृत्तान्त यथारीतिसे वर्णन करके हम मेवाडके इतिहासका यह दीप्तिमान् परिच्छेद समाप्त करेंगे ।

राजसमँद सरोवर । जातीय महती प्रतिष्ठा और राजपूतोंकी कीर्तिका विशाल प्रमाणक्षेत्र यह राजसमँद सरोवर राजधानीसे साढे बारह कोश उत्तर और आरावलीकी तलैटीसे एक कोशपर स्थित है, गोमती नामकी टेढी चलनेवाली पहाडी नदीकी धारको एक बडे भारी बंधेसे बांधकर इस सरोवरको बनवाया था । महाराणाने अपने नामके अनुसार ही उसका नाम "राजसमँद" (राजसमुन्द) रक्खा था, ईशान और वायुकोणके अतिरिक्त और सभी ओर बन्धा बँधा हुआ है । यह सरोवर बडा गहरा है, इसका घेरा प्रायः छः कोश १२ मीलतक होगा, यह संगमर्मरका बना हुआ है, इसके किनारेसे नीचेतक संगमर्मरकी रमणीय सीढियें बनी हुई हैं, जिन्होंने चारों ओरसे इस सरोवरको घेर रक्खा है, इस सरोवरके किनारे भी इस ही पत्थरके हैं, इसका बंधा भिट्टीके परकोटेसे घिरा हुआ है, यदि राजसिंह और कुछ दिन जीते तो चारों ओर सुन्दर २ वृक्षोंको लगाकर इसकी शोभा बढाई जाती, सरोवरके दक्षिण

और राणाने एक नगरी और किला बनवाया था, उस नगरको अपने नामके अनुसार ही "राजनगर" नामसे विख्यात किया, पूर्वोक्त बंधके ऊपरी भागमें श्रीकृष्णजीका एक अत्यन्त शोभायमान मन्दिर बनवाया गया, जिसमें समस्त कार्य संगमर्मरसे हुआ, इस मन्दिरके भीतर नाना प्रकारके मनोहर चित्र लगे हुए हैं, बीचमें एक स्थानपर बडे मोटे और साफ अक्षरोंमें लिखा हुआ उसकी प्रतिष्ठा करनेवालेका वृत्तान्त पाया जाता है। इसके बनवानेमें और इसकी प्रतिष्ठा करनेमें महाराणाने ९८ लाख रुपये खर्च किये थे, उनके सर्दार और प्रजाने भी बहुत सी सहायता की थी, इसमें जो मर्मर पत्थर लगाया गया था वह पहाडोंसे इकट्ठा किया गया, यदि राणा उसको भी मोल लेते तो न जाने कितना रुपया लगता कि जिसका अनुमान करना भी कठिन है, परन्तु मेवाडभूमि रत्नगर्भा थी, ऐसी मर्मर शिला तो उसकी मेखलारूपी अनेक शैलमालाओंसे इकट्ठी होसकती हैं, यह राजसमँद सरोवर शोभायमान और प्रयोजनीय है, सुन्दरतामें भी अनुपम गिना जाता है; परन्तु जिस कारण इसकी तिष्ठा हुई थी, उसका विचार करनेसे उसके भीतर जो एक गंभीर सुन्दरता दिखाई देती थी, उस सुन्दरताके साथ और सुन्दरताकी उपमा दी जाय तो वह अस्त हो जायगी, वह कारण अत्यन्त गंभीर है, राणा राजसिंहके समयमें मेवाडभूमि भयानक दुर्भिक्ष और महामारीसे पीडित हुई; असंख्य प्रजा भूँख प्याससे दुःखित होकर मृत्युका आश्रय लेने लगीं, अपनी प्रजाकी ऐसी दुर्दशा देखकर राणा अत्यन्त ही दुःखित और शंकित हुए और जिससे प्रजा इस भयंकर दुर्भिक्षके हाथसे छुटकारा पावै, जिससे सर्वसाधारणका महाउपकार हो और देशमें अनन्त कीर्ति स्थापित रहै उस कार्यके करनेकी राणा राजसिंहको अभिलाषा हुई; उन्होंने उस बडे भारी राजसमँद सरोवरको बनवाकर अपनी अभिलाषाको पूर्ण किया, यही राजसमँद सरोवरका इतिहास है।

राजस्थानमें नन्दनकाननके समान मेवाडभूमिके ऊपर प्रकृति देवीका अचल अनुग्रह था, इस लिये बहुधा देखा जाता है कि भारतवर्षके और देशोंकी अपेक्षा मेवाडभूमि दुर्भिक्ष और महामारीसे थोडे २ ही समयमें पीडित हो जाती है। सिंहासनपर बैठनेके सात वर्ष पीछे संवत् १७१७ (सन् १६६१) में मेवाडके ऊपर इन दोनों ही कुग्रहोंने इस प्रकारसे कठोर आक्रमण किया था कि जैसा पहले और कभी नहीं हुआ, भयंकर दुर्भिक्षसे पीडित हुई प्रजाके असीम कष्टका विचार करके "मेवाडके राणा इस प्रकारकी एक कीर्तिको स्थापना करनेमें दृढप्रतिज्ञ हुए कि जिससे उनकी अभागी प्रजाका पालन और उनका नाम सर्वदाके लिये स्मरण रह सके, ऐसी चिन्ता करनेके पीछे महाराणाने इस बडे भारी सरोवरके बनवानेका विचार किया, उसीके अनुसार ज्योतिषीका परामर्श लेकर पौष शुक्ल अष्टमी मंगलके दिन हस्त नक्षत्रमें पहला पत्थर स्थापित हुआ" यह सरोवर सात वर्षमें बनकर पूर्ण हुआ था, इसके प्रारम्भ और उपसंहारमें देवताओंकी षोडशोपचारसे पूजा की गई, तथा नाना प्रकारके बलिदान किये गये थे।

"आषाढका महीना बीत गया परन्तु एक बूंद भी पानी नहीं बर्षा, आकाश निर्मल हो रहा है यह देख कर राणाजी कृपा प्रार्थना करनेके लिये भगवती चतुर्भुजा देवीके मंदिरमें गये, परन्तु कुछ भी न हुआ, इस रीतिसे श्रावण और भादोंका महिना भी सूखा चला गया पर तो भी बादलोंका गर्जन सुनाई नहीं दिया।जलके न पडनेसे संपूर्ण संसार एक बार ही हताश हो गया दुःखसे पीडित हुई प्रजा उन्मत्त हो गई, जिस सामग्रीको मनुष्य यह नहीं जानते थे कि यह खानेकी वस्तु है, आज उसीको खाने लगे, स्वामी अपनी प्राणप्यारी स्त्रीको और स्त्री अपने पतियोंको अनायास ही छोडकर इधर उधरको भागीं, माता पिता अपने छोटे २ बालकोंको बेचने लगे, क्रमसे उस कालमें बहुतसे अनर्थ होने लगे । दारुण कुग्रह और महामारीकी छायाने बडी दूरतक विस्तार किया; अधिक क्या कहें, कीडे और पतंगतक भी प्यासके मारे मरने लगे, सहस्रों बालक, वृद्ध, युवा और स्त्रियोंने क्षुधासे व्याकुल होकर अपने प्राणोंको त्याग दिया । जो लोग एक दिनके खानेके लिये भोजनको पाते उसको वह दो दिन करके खाते थे, पछादिया पवन तीक्ष्ण वेगसे चलने लगा, वह पवन विषसे परिपूर्ण था, प्रायः रात्रिमें धूम्रकेतु इत्यादि नक्षत्र आकाशमें दिखाई देने लगे, दिनमें बादलोंका नाम निशानतक भी दिखाई नहीं देता था, बिजलीके प्रकाश बादलोंके गर्जनेकी ध्वनिको तो मानो लोग सम्पूर्णतः भूल ही गये थे, इन कुलक्षणोंको देखकर मनुष्य भयके मारे अत्यंत ही व्याकुल हो उठे; नद, नदी, सरोवर, झरने और सोते सभी सूख गये । धनवान मनुष्य भोजनकी सामग्रीको तोल २ कर बांटने लगे, धर्मचारी मनुष्य अपने कर्त्तव्य कर्मको भूल गये, अब जातिका भेद भी न रहा, ब्राह्मण शूद्रोंका विचार करना कठिन हो गया;बल, विक्रम, ज्ञान, गौरव, जाति, वर्ण सब ही जाता रहा, एकमात्र भोजन ही मनुष्योंका मोक्षका देनेवाला दिखाई देने लगा । चारोंवर्णोंने अपने २ जाति भेदोंको दूर फेंक दिया, केवल एक क्षुधाकी पीडासे ही सबका नाश होने लगा । फल, मूल, कन्द, वृक्षोंके पत्ते और वृक्षोंकी छालतकको मनुष्य खाने लगे; यहांतक कि मनुष्योंको मनुष्य खाने लगा, नगर गांव शहर इत्यादि सभी सूने हो गये । बीजके न होनेसे वंश नष्ट होने लगे । अब तालाबोंमें मच्छी इत्यादि जन्तु नहीं रहे सबका आशा भरोसा एकवार ही लोप हो गया *"

संवत् १७१७ के भयानक दुर्भिक्ष × और महामारीका लोम हर्षण वृत्तान्त प्रगट हुआ; जिस समय यह दोनों कुग्रह मेवाडभूमिको पीडित कर रहे थे उसी समय दुष्टात्मा औरंगजेबने भी यह युद्ध किये थे,उसके कठोर अत्याचारोंसे,दुर्भिक्षसे पीडित हुए मेवाडकी दुर्दशा और भी अधिक बढ गई थी, इसका अनुमान सहजसे ही किया जा सकता है, किन्तु उन पैशाचिक अत्याचारोंका योग्य फल बादशाहको भोगना पडा था,उसके नामको मुगलकुलकलंक कहकर इतिहासोंमें लिखा है, उसके वंशवाले अपने पितृपुरुषोंकी बादशाहत और राज्यसे उतर अलग हो गये थे।संसारमें किसीका भी गौरव स्थाई नहीं है।

* "राजविलास" से संकलित ।
× सन् १६६१ ई० ।

तेरहवाँ अध्याय १३.

राणा जयसिंह और उनके यमज भ्राताके सम्बन्धमें एक कहावत; राणा और राजकुमार अजीमकी वार्त्ता, संधि होना, संधिका टूट जाना, राणाजीका जयसमँद सरोवरको बनवाना, सांसारिक लडाई झगडे; युवराज अमरसिंहका विद्रोहाचरण, राणाका मृतक हो जाना;—अमरका सिंहासनपर बैठना;—औरंगजेबके उत्तराधिकारीके साथ उनकी संधिका हो जाना—युद्धके विषयमें विचार करना; मुंडकरका स्थापन होना, औरंगजेबके हाथसे राजपूतोंकी स्वतन्त्रताका होना; इसका कारण औरंगजेबकी मृत्यु;—राज्यमें झगडा; बहादुरशाहका मुगलोंके राज्यपर अभिषेक; सिक्खोंके द्वारा स्वाधीनताका प्रचार होना; मेवाड और अम्बेर राज्यके बीचमें एकताका होना; उनका परस्पर वैर, बहादुरशाहका मृतक हो जाना; फर्रुखसियरका अभिषेक होना;—मारवाडकी राजकुमारीके साथ उसका विवाह होना;—भारतमें बृटिशप्रधानताका सूत्रपात; बादशाहके साथ राणाजीकी संधि-होना; जाटोंका स्वाधीन हो जाना; राणा अमरसिंहजीका स्वर्ग वासी: होना; उनके चरित्रोंका विचार;—

राजपूतकुलकेशरी वीर श्रेष्ठ राजसिंह सम्पूर्ण राजस्थानकी भूमिको विषादरूपी अंधकारसे ढककर अकालमें ही इस लोकसे विदा होगये, उनके स्वर्गवासी होजानेपर समस्त राजपूत शोकसे कातर हुए; राजसिंहके मरनेके पीछे संवत् १७३७अर्थात् (सन् १६८१ई०में उनका दूसरा पुत्र जयसिंह मेवाडके सिंहासनपर बैठा, जयसिंहके जन्मके समयमें जिस प्रकारकी घटना हुई थी उसका वृत्तान्त पढनेसे राजपूत जातिके एक प्रसिद्ध आचार

व्यवहारका परिचय पाया जाता है, उस वृत्तांतका इस स्थानपर अत्यंत प्रयोजन जानकर हम वर्णन करते हैं; जयसिंहके जन्म होनेसे कुछ ही देर पहले उनकी सौतेली माताके एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम भीम था । नवीन कुमारके उत्पन्न होने पर सोवरमें ही राजपूत लोग उसके हाथमें अमरधव नामक एक प्रकारका स्वास्थ्यकर खँडुआ पहरा दिया करते थे, जो तिनकोंका बनता था । महाराणाने भी आज उसी खँडुएके पहरानेका आयोजन किया, किन्तु छोटे पुत्रकी माताके ऊपर अत्यन्त अनुराग करनेके कारण राणाजीने उसीके पुत्रकी भुजामें वह "अमरधव" पहरा दिया। राणाने इस कार्यको इस भावसे किया कि मानो भूलसे ही किया हो, परन्तु वास्तवमें भूल नहीं हुई, अस्तु अपनी सुकुमार अवस्थाको लांघकर दोनों भाई अब धीरे२ तरुणाईकी विचित्रमयी सीमा पर पहुंचे । छोटेके ऊपर पिताका अधिक प्रेम देखकर बडा पुत्र ईर्षासे परस्पर झगडा न करै, इस शंकासे शंकित हो राणाने एक समय भीमसिंहको अपने पास बुलाया और अपनी तलवारको म्यानमेंसे निकाल उसके हाथमें दे गंभीर स्वरसे बोले—" इस तलवार को लेकर शीघ्र ही अपने छोटे भाईको मार डाल, नहीं तो आगेको इस राज्यमें घोर विपत्तिके होनेकी सम्भावना है। " उदारहृदय तेजस्वी भीम अपने पिताकी इस अकपट युक्तिको सुनकर किंचित् भी विस्मित न हुए, पिताने जिस संकटमें पडकर यह कष्टकर वचन कहे थे, उसको भीम भी समझ गये थे, उस संकटसे उद्धार करनेके लिये भीमने स्थिर और अचल भावसे उत्तर दिया " हे पितः! आप कुछ भी शंका न करें मैं आपके सिंहासनका स्पर्श करके कहता हूँ, कि आजसे मैं अपने समस्त स्वत्वको त्यागकर जयसिंहको दे दूंगा, आजसे मैंने इस राज्यको भी छोडा, आपके चरणोंको छूकरके कहता हूं कि आजसे देवारी गिरिमार्गके बीचमें यदि एक बूंद जलतक भी पान करूं तो मैं महाराणा राजसिंहका पुत्र नहीं । यह कहकर भीमने पिताके निकटसे बिदा ली, तथा अपनी सेना और सामन्तोंको बुलाया और अपनी सौभाग्य लक्ष्मीका प्रसाद पानेकी आशासे उनके साथ उदयपुरसे बिदा हो गये ।

इस समय ग्रीष्मकालकी कठिन दुपहरी है, सूर्यदेव आकाशमें विराजमान होकर अग्निके समान अपनी किरणोंको वर्षाय २ पृथ्वीको दग्ध कर रहे हैं, प्रकृति स्थिर गंभीर और निश्चल है । वृक्षका एक पत्तातक भी नहीं हिलता, उदयपुरके सामने देवारी गिरिमार्ग दुपहरियाके सूर्यकी अग्निके समान तीक्ष्ण किरणोंके पडनेसे मानो एक बडा भारी अग्निकुंड होकर तप रहा है, इसी समयमें भीमसिंहने अपनी घुडसवार सेनाको साथ लिये हुए उस पर्वतके मार्गमें प्रवेश किया,—गरमीकी अधिक तीक्ष्णता होनेसे उनका सम्पूर्ण शरीर पसीनेसे भीज रहा था, अब और अधिक दूर चलनेकी सामर्थ्य न देखकर विश्राम करनेके लिये घन वृक्षकी छायाके नीचे घोडेसे उतरे और एक बार अपनी अवस्थाको विचारकर जन्मभूमिकी ओरको देखने लगे, हृदय उमड आया, बडे वेगसे दो दीर्घ श्वास लिये, उनके बडे २ नेत्रोंसे आँसुओंकी बूंदें पृथ्वीपर गिरने लगीं; कहां तो उत्तराधिकारी होकर नियमके अनुसार अपने देशपर राज्य करते और कहां

आज विधाताकी विडम्बनासे एक अपरिचित और निर्बलके समान जन्मभूमिको छोडकर भाग्यरूपी तरंगोंके भँवरमें घूमते हुए गोते खाने लगे; परन्तु तेजस्वी भीम इस दुर्दशाको विचार कर कुछ भी कातर न हुए, उनको अपने बाहुबल और हृदयकी दृढता पर अधिक विश्वास था, वह जानते थे कि कठोर संकटके पडनेसे अपने बाहुबल और हृदयकी दृढताकी सहायतासे छुटकारा पा सकैंगे, इस प्रकार धीरज धरकर निरुत्साह और हताश नहीं हुए। भीम प्यासके अधिक लगनेसे व्याकुल हो गये, पात्रवाहकको जल लानेकी आज्ञा दी। वह उसी समय चांदीके गिलासमें सामनेके झरनेसे शीतल जल ले आया और पीनेके लिये भीमके हाथमें दिया, भीमने उस शीतल जलसे भरे हुए पात्रको पीनेके लिये लिया और मुंहसे लगाना ही चाहते थे कि सहसा उनके हृदयमें एक दूसरे भावका उदय हुआ, उन्होंने उसी समय उस पात्रके शीतल जलको पृथ्वीपर डालकर पात्रको झरनेकी ओर फेंका,—और वनदेवीको पुकार कर कातर स्वरसे बोले कि "हे वनदेवि! अपराध क्षमा करना, मैं भूल गया था, इसीसे अपनी प्रतिज्ञाको भंग करना चाहता था, इस देवारी गिरिमार्गके भीतर मुझे एक बूंद जल पीनेका सामर्थ्य भी नहीं है।" इसके पीछे कुमार अपने घोडेपर सवार हुए और चावुक मारकर सेनाके सहित गिरिमार्गसे बाहर हो गये, वैसे ही देवारीका प्रचंड लोहकिवाड उनके पीछे ही भयंकर शब्द करके बंद हो गया। अपने देशको छोडकर कुमार भीमसिंह बादशाहके पुत्र बहादुरशाहके पास जा पहुँचे, बहादुरने उनको अत्यन्त आदर सन्मानके साथ ग्रहण करके तीन सहस्र घुड़सवार सेनाका सरदार बनाया, और उनके भरण पोषणके लिये बारह जनपद दे दिये, परन्तु मुगलोंके सेनापतिके साथ उनका झगडा होनेसे बहादुरशाहके द्वारा भीमसिंह थोडे दिनोंमें ही सिन्धुनदीके पल्लीपार भेजे गये, दुःखका विषय है कि काबुलदेशसे फिर इस भारतवर्षमें आनेका सुअवसर उनके भाग्यमें नहीं था। अपनी निर्बुद्धिके वशसे कठोर व्यायाम करते हुए वह अकालमें कालके गालमें गये।*

इस समय हम महाराणा जयसिंहजीके चरित्रोंकी समालोचना करेंगे, राजसिंहासनपर बैठनेके कुछ दिनों पीछे उन्होंने औरंगजेबके साथ संधि कर ली। बादशाहका पुत्र अजीम और मुगलसेनाका सरदार दिलेरखाँ उस संधिपत्रको लेकर राणाके निकट पहुँचा राणाजी उनको आदरसहित ग्रहण करनेके लिये दश हजार अश्वारोही और चालीस हजार पैदलोंकी सेनाको मेवाडके विस्तारित क्षेत्रमें लाकर उनकी बाट देखने लगे। यह कौतुक देखनेके लिये बडी भीड़ हुई, प्राणोंसे भी अधिक प्यारी मेवाडभूमिको बहुतकालके पीछे फिर देखनेके लिये परमानंदसे पुलकायमान होकर मेवाडके रहनेवाले लोग

* भीमसिंहके वंशधर बुनीराराजके निकटसे महात्मा टाडसाहबने इस वृत्तान्तको सुना था, ऐसा कहते हैं कि भीमसिंह एक श्रेष्ठ अश्वारोही थे, घोडेके शीघ्रतासे चलने पर भी वह उसकी पीठपर खडे हो वृक्षोंकी शाखाको पकड कर झूलने लगते थे; दुःखका विषय है कि ऐसे वीरताके कार्यको करनेसे ही उनको इस लोकसे अकालमें ही बिदा होना पडा।

पर्वतोंको छोडकर उस बडे विस्तारित क्षेत्रमें आय २ कर खडे हो गये, सभीके मुखार-विंदोंपर आशा, उत्साह और आनंदकी हास्यमयी प्रभा प्रकाशमान थी, जय और आनं-दके शब्दसे आकाशमंडलको कंपायमान करते हुए उस बडे भारी जनस्थानके भूभागमें सब लोग खडे थे कि इसी अवसरमें अजीम और दिलेरखाँ अपने कितने एक शरीरर-क्षकोंको साथ लिये हुए उस स्थानमें आ पहुँचे, उनको अपने सामने खडा हुआ देखकर राजपूतोंने "जय महाराज जयसिंहजीकी जय ! " कहकर भयंकर गंभीरस्वरका उच्चा-रण किया, लाख २ मनुष्योंके ऊँचे स्वरकी गंभीरता प्रतिध्वनित होकर अनंत आकाशमें जाकर गूंजने लगी दिलेरखाँके पहुँचनेपर राणाने उसको उचित आदर—सन्मानके साथ ग्रहण किया, राणा जयसिंहने भी दिलेरखाँकी गिरिसंकटके समय रक्षा की थी इसीसे मुगलसेनापतिने राणा जयसिंहके निकट बारम्बार कृतज्ञताको स्वीकार करके उनके स्व-र्गीय पिता आदिकोंको सहस्रों करोडों धन्यवाद दिये, राणाजीके भारी सेनाबलकी सहा-यताको देख अजीम मनही मनमें कुछ भयभीत हुआ, परन्तु विद्वान् दिलेरखाँ राजपूतोंकी महानता और उदारताके विषयको विचारकर कृतज्ञताके स्निग्धरसको पान करता हुआ मनही मनमें अतुल आनन्दको भोगने लगा । वह यह जानता था कि वीर हृदय राजपूत लोग कभी भी विश्वासघात करनेवाले नहीं हैं, अपने घरपर आये हुए शत्रुके ऊपर वह अन्याय नहीं करेंगे, विशेष करके जिस जयसिंहने अपना बदला लेनेमें सामर्थ्यवान होकर भी अनुग्रह करके एकबार छोड दिया था, वही राजा जयसिंह क्या आज अपने घर आये हुए शत्रुके ऊपर कुछ कठोरता करेंगे ? हीनबुद्धि अजीम राजपूतोंके चरित्रों पर यद्यपि अविश्वासी था परन्तु बुद्धिमान दिलेरखाँने उनपर किंचित्मात्र भी संदेह न किया; वह राणाजीके द्वारा ग्रहण किया जाकर अत्यन्त ही आनन्दित हुआ । संधि-बंधन समाप्त हो गया, अकबरके विद्रोहाचरणमें राणाजीने जो सहायता की थी उसके दंडमें उन्होंने तीन जनपद बादशाहको दिये । बादशाहके अभिप्रायके अनुसार अजीमने यह भी कहा कि राणा अपने लालडेरे और छत्रको अबसे व्यवहार नहीं कर सकेंगे, परन्तु यह दंड नाममात्रके ही थे, केवल बादशाहके सन्मानकी रक्षाके लिये इस प्रकारका प्रस्ताव उठाया गया था, परन्तु राणाजीको इससे भी लाभ ही हुआ कारण कि अजीमके हृदयमें विश्वासको उत्पन्न करनेके लिये दिलेरखाँने बिदा होनेके समय राणाजीसे कितनी ही बातें कहीं थीं उनके पाठ करनेसे हमारी युक्तिकी सत्यता प्रगट हो जायगी। जयसिंहसे बिदा होनेके समय मुगलसेनापतिने नम्रतापूर्वक कहा कि "आपके सरदार-लोग स्वभावसे ही कठोर हैं, और मेरा पुत्र आपके मंगलके लिये बंधक रक्खा गया है, परन्तु उसके जीवनके बदलेमें यदि आपके देशकी पूर्ण स्वाधीनताको पूर्णोद्धार कर सकूँ तो मैं इसमें भी न्यूनता नहीं करूँगा, आप अपने चित्तको स्थिर रखिये ! आपके स्वर्गीय पिताके साथ मेरी मित्रता थी ।"

राजपूतोंके मित्र दिलेरखाँका उद्योग सफल न हुआ; यद्यपि उसका वह उद्योग महान था परन्तु अनिवार्य कालकी गतिको रोकनेकी मनुष्यमें सामर्थ्य नहीं; दिलेरखाँ मनुष्य

है इस कारण उस प्रचण्ड घटनाकी परम्पराकी गतिको रोकनेकी उसमें सामर्थ्य नहीं हुई, उसका उद्देश विफल होनेपर राणाने अपने खड्गके ऊपर भरोसा किया, राजसिंहासन पर बैठनेके कोई चार पांच वर्षके पीछे उनको दुर्द्धर्ष कामोरी मुगलोंके कठोर आक्रमणोंसे अपनी रक्षाके लिये पुनर्वार पर्वतोंका आश्रय ग्रहण करना पडा था, कभी २ उन पर्वतोंसे बाहर आयकर भी युद्ध किया था। राज्यकी इस प्रकार दुर्दशाके समय और लगातार युद्धके अवसर पर राणाजीका बहुत सा धन खर्च हो गया था, परन्तु उस व्ययको निर्वाह करके भी राणाजीने जो अनन्त कीर्ति स्थापन की है, उसका विवरण पाठ करनेसे कहना पडेगा कि वास्तवमें मेवाडभूमि रत्नगर्भा है, प्रसन्न सलिला गिरिरंगिणीके बीचमें एक विशाल बंधेको बांधकर राणाजीने "जयसमुन्द" नामक एक विशाल सरोवर बनाया। भारतवर्षके बीचमें जितने सरोवर हैं, उन सबमें "जयसमुन्द" बडा सरोवर है; प्रकृतिकी अनुकूलतासे जयसमुन्द सरोवरके बनानेमें बहुत ही सहायता मिली थी, कारण कि जिस स्थानमें यह सरोवर बना है, वहां पहले भी ढेवर नामक एक छोटा तालाब था, महाराणा जयसिंहने बुद्धिबलसे उस तालाबकी असीम जलराशिको एकत्रित करके चारोंओर ऊंचा बंधा बँधवाया इस जयसमुन्दका घेरा पन्द्रह कोशसे कम नहीं है, जयसमुन्दसे हरे २ खेतोंका और विशेष करके धानोंके खेतोंका बडा उपकार हुआ। इस सरोवरके किनारे ही बंधेके ऊपर राणाजीने अपनी प्यारी रानी कमलादेवीके * लिये एक शोभायमान महल बनवाया था।

परिवारिक झगडोंमें बंधनेसे राणाका शेष जीवन अत्यन्त कष्टदायी हो उठा, उनकी आन्तरिक सुखशान्ति बहुतायतसे जाती रही, इस झगडेकी मूल जड उनकी अधिकतर स्त्रीपरायणता थी, इस अनर्थकारी प्रवृत्तिसे उनका सन्मान और गौरव सभी जाता रहा और फिर अपने उत्तराधिकारीसे भी अलग होना पडा, जयसिंहकी जितनी रानियें थीं उनके बीचमें उनके उत्तराधिकारी अमरसिंहकी माता ही सबसे बडी थीं; वह बूँदीके हाडाकुलमें उत्पन्न हुई थीं उस हाडाकुलसे गिह्लौटकुलके बहुतसे उपकार और अनिष्ट हुए थे, हाडाराजकुमारी सबसे बडी थीं, विशेष करके मेवाडके होनहार राजा अमरसिंहकी माता थीं। धर्मकी रीतिके अनुसार उस बडी रानीके ऊपर ही राणाजीको अधिक अनुराग और सन्मान करना सब प्रकारसे उचित था परन्तु वह तो कामके वशवर्ती थे इस कारण अपनी धर्म स्त्रीके ऊपर विराग प्रकाश करके नवीन कमलादेवी रानीमें आसक्त हुए, कमलादेवी छोटी होनेपर भी स्वामीकी अधिक सन्मान पात्री होनेसे अपनी सौतसे वैरभाव करने लगी, इसी वैरभावके कारण राणाके कुटुम्बमें झगडा बढ गया, इन झगडों हीके कारण शत्रु प्रबल हुए और मेवाडका राज्य अत्यन्त हीन दशाको पहुँच गया; अनर्थकारी लडाई झगडोंसे राज्यका जो अनिष्ट हुआ था वैसा अनिष्ट शत्रुओंके साथ युद्ध करनेसे भी नहीं हो सकता था, भारतवर्षके

* कमला देवीने पमारकुलमें जन्म लिया था। अपने देशमें यह "रुतारानी" नामसे पुकारी जाती थीं।

राजाओंको बहुतसे विवाह करनेसे जो कष्ट होता है, उसकी सत्यता इस वृत्तान्तके पढनेसे भलीप्रकार जानी जायगी, प्रधानता और प्रतिष्ठाकी प्राप्तिके लिये भारतवर्षके: अन्यान्य राजालोग जिस कुरीतिका अवलम्बन करके राज्यमें महा अनर्थ करते हैं, मेवाडके इतिहासको पाठ करनेसे जाना जायगा कि महाराज बाप्पारावलके वंशवाले कभी उस घृणित रीतिका अवलम्बन नहीं करते थे, इसका कारण और कुछ नहीं केवल गिह्लौटराजाओंकी श्रेष्ठ शासन नीति ही समझी जाती है, उन्होंने अपने पुत्रोंको वह नीति पढाई थी इस प्रकारके चरित्रोंसे राजपूतोंके चरित्र अत्यन्त उन्नत और ऊंचे भावको पहुँच गये थे ।

अमरसिंहकी मातासे कमलादेवीका सवतियाडाह दिन २ बढने लगा, अन्तमें वह इतना प्रबल हो गया कि उन दोनोंका एक साथ रहना असम्भव बोध होने लगा, जिन जयसिंहने इससे पहले औरंगजेबके साथ युद्धमें अद्भुत वीरता और प्रचंड विक्रम प्रकाश किया था, आज उन्होंने ही इन झगडोंसे छुटकारा पानेके लिये अपनी बडी रानियोंको छोडकर प्राणप्यारी कमलादेवीको साथ ले जयपुरके स्थानमें रहकर अपने जीवनको व्यतीत करनेका विचार किया, राजधानीको और अमर सिंहको पांचौली मंत्रीके हाथमें समर्पण कर उस चित्तविनोदिनीके स्वर्गीय प्रेमालापसे उस एकान्त स्थानमें अत्यन्त आलसीके समान समयको विताने लगे । परन्तु वहां भी शान्तिको न पासके शीघ्र ही उनको अपने पुत्रके अत्याचारोंसे उस स्थानको छोडकर अपने नगरमें आना पडा, अमरसिंहने अपनी युवावस्थाकी चंचलताके कारणसे एक मतवाले हाथीको नगरमें छोड दिया, उस मतवाले हाथीके द्वारा अनिष्टकी शंकासे अथवा और किसी कारणसे पांचौली मन्त्रीने राजकुमारका तिरस्कार किया इस कारणसे अमरसिंहने भी उसका घोर निरादर किया, मन्त्रीके ऊपर अमरको इन अत्याचारोंका वृत्तान्त शीघ्र ही राजातक पहुंचा वह पुत्रके ऐसे दुष्ट व्यवहारोंको विचारकर अपने मनमें अत्यन्त शंकित हुए और अमरको उचित शिक्षा देनेके विचारसे उस निर्जन स्थानको छोड मार्गमें चित्तौरपुरीको देखते हुए उदयपुर जा पहुंचे; परन्तु निर्बुद्धि अमरने अपने पिताके आनेकी बाट नहीं देखी; वरन उनकी आलस्यता अकर्मण्यताका विचार कर माताकी आज्ञाके अनुसार पितासे वैरभाव करनेके लिये दृढ प्रतिज्ञा की, तथा बून्दीके राज्यमें अपने मामा हाडाराजाके पास जाकर एक बार ही दश सहस्र अस्त्रधारी सेनाको साथ ले पिताके राज्यमें आया, इस समय अमरसिंह सरदारने भी अपने स्वामीकी सहायता की थी । धीरे २ यह झगडा अनिवार्य हो गया, क्रमानुसार बहुतसे सर्दार और सामन्त आलसी राजाको छोडकर अमरसिंहके पक्षका आश्रय लेने लगे । राणा बडे भारी संकटमें पडे, उसे न रोकने योग्य झगडेके निवारण करनेका उपाय न देखकर अन्तमें आरावलीके पार हो अपने राज्यसे गहवाड राज्यमें भाग गये और पुत्रको सावधान करनेके लिये वहांके प्रधान सामन्त राजाको उसके पास भेजा, परन्तु राज्यके बहुतसे सरदारोंकी सहायता पाकर अमर गर्वित हो गया था, इस कारण उसने पिताकी कोई बात न सुनी और

खजानेको अपने हाथमें करनेकी इच्छासे सेनाको साथ ले कमलमेरकी ओरको बढा। दिप्रा सरदारके हाथमें उस नगरका शासन भार था, यह सर्दार एक विद्वान् और चतुर योधा था, विद्रोही अमरसिंहके पास यद्यपि बहुतसी सेना थी तथापि उस सरदारने राजकुमारका समस्त परिश्रम नष्ट कर दिया। विफलमनोरथ होने पर भी अमर अपने पिताके वचनोंपर सम्मत न हुआ; तदुपरान्त जब उसने सुना कि राठौर लोग इस विद्रोहानलको क्षुभित करनेकी चेष्टा कर रहे हैं और राज्यके बहुतसे सर्दार भीतर ही भीतर इस राज्यको अपने हाथमें करनेका उपाय करते हैं, तथा राणाके सामन्तोंने जिलबाडा गिरिमार्गकी रक्षा करनेमें प्राणतकका दाव लगा दिया है * तब वह भयभीत हुआ और अपने पिताके साथ सन्धि करनेका विचार करने लगा, भगवान् एक लिङ्गजीके मंदिरमें जाकर पिता पुत्र दोनोंने संधिपत्रपर हस्ताक्षर किये, उस सान्धिके अनुसार यह निश्चय हुआ कि राणा तो जयसमँद सरोवरको छोडकर अपने नगरमें आ जायँ और अमरसिंह उस निर्जन महलमें जाकर पिताके जीवनकालतक निवास करैं।

राणा जयसिंहने बीस वर्ष तक राज्य किया था, सुकुमार अवस्थामें उन्होंने अपने जिन ऊंचे गुणोंका परिचय दिया था, यदि राजसिंहासनपर बैठकर उसी प्रकार सद्व्यवहार करते तो वह मुगलोंके ग्राससे अपने देशकी स्वाधीनताका भली भांतिसे उद्धार कर सकते थे, परन्तु स्त्रीपरायणताने ही उनका सत्यानाश कर दिया था, स्त्रीपरायणतारूपी पापोंसे मूढ होकर अत्यन्त आलसी और कर्महीन हो गये, बाल्यावस्थामें इकट्ठे किये हुए यश और गौरवको चिरकालके लिये खो बैठे। यदि जयसिंह उस बडे भारी सरोवरको न बनाते तो उनका नाम भी मेवाडके इतिहाससे शून्य हो जाता।

राणा राजसिंहके स्वर्गवासी होनेपर उनका बडा पुत्र अमरसिंह (दूसरा) संवत् १७५६ (सन् १७००ई०) में राजसिंहासन पर बैठा। अमरनामका जो माहात्म्य है उसका बहुतसा भाग इनमें था, अपने पूर्वपुरुष अमरसिंहकी भी वीरता और महानता इनमें बहुतायतसे थी, परन्तु पिताके साथ जो इनका बडाभारी झगडा था उससे इनका और मेवाडभूमिका बहुतसा आन्तरिक बल नष्ट हो गया था। यदि ऐसा न होता, यदि अमरसिंह झगडा करके अपने राज्यका सर्व नाश न करते तो मुगलोंके राज्यकी अवनति होनेके समय मेवाडभूमि अपने नष्ट हुए गौरवको फिर प्राप्त कर लेती; परन्तु मेवाड भाग्यहीन है, नहीं तो वीरश्रेष्ठ देशप्रेमी राजसिंहके पुत्र होकर अभागे जयसिंह स्त्रीपरायण क्यों होते? राणा राजसिंह और उनके राज्यका वृत्तान्त पढनेसे स्पष्ट ही विदित होता है कि राजाके चरित्रोंपर ही राज्यका दुःख सुख निर्भर रहता है। राजपूत कुलगौरव, स्वदेशानुरागी वीर केशरी राजसिंहने अपनी स्वभावसिद्ध वीरता महानता और तेजस्विताके बलसे अपने अनुगत मनुष्योंके हृदयमें प्रकाशमान स्वदेशानुराग तथा आत्मोत्सर्गको उद्दीपित कर दिया था, फिर उसी असीम स्वदेशानुराग आत्मोत्सर्गके

---

* जो कितने एक सरदार राजाके अनुगत थे उनमेंसे बिजौलीके बैरीशाल, सलंबूरके कुँडलसिंह, गनोराके गोपीनाथ और देशोरीका शोलंकी।

प्रभावसे मुगलबादशाहकी विपुल सेनाके विरुद्ध तलवार पकडकर बादशाहको और उनके पुत्रोंको तथा उसकी रणविशारद सेनाको परास्त किया था, परन्तु उनका उत्तराधिकारी मेवाडवालोंकी अनुकूलता तथा सहानुभूति पाकर भी मेवाडभूमिको ऐसी दीन हीन दशामें छोड गया कि और कोई सहस्रों चेष्टा करके भी उस दुरवस्थासे इस भूमिका उद्धार न कर सका।

राजसिंहासनपर बैठनेके थोडे दिन पीछे ही अमरसिंहने सम्राट्के उत्तराधिकारी शाह आलमके साथ संधि कर ली, ऐसी सन्धि करनेमें उनकी होनहार दूरदर्शिताका विलक्षण परिचय पाया जाता है। जिस समय वह अपने पिताके राज्यपर बैठे थे उस समयसे मुगलोंके राज्यमें एक भयंकर घरेलू झगडा हो रहा था, मुगलोंके राज्यकी ऐसी दुरवस्थाको देखकर दूरदर्शी राणा अमरने इसी कारणसे मुगलोंके होनहार बादशाह आलमके साथ सन्धि कर ली थी। यह सन्धि चुप चाप हुई थी, जिस समय शाह आलम सिन्धुनदके पश्चिम पार हो गया था उस समय मेवाडकी सहकारी सेनाने उसकी सहायता करनेके लिये वहां गमन किया और एक शक्तावत् सर्दारको सेनापति बनाकर उस स्थानपर अत्यन्त वीरता प्रकाश की थी। ऐसा कहा है कि उस सुअवसरमें उस दूरदेशके बीच शाह आलमके साथ यह संधि स्थापित की गई थी। *

---

* राणा और शाह आलम बहादुरशाहके मध्यमें गुप्त सन्धि, संधिपत्रपर शाह आलमके हस्ताक्षर हैं "प्रजागणके मंगलकारी जो छः प्रस्ताव श्रीमान्के द्वारा उठाये गये हैं और मुझकरके स्वीकार किये गये हैं, ईश्वरकी कृपासे वह सम्पूर्ण पूरे होंगे।"

"पहला, शाह आलमके समान चित्तौरका पुनर्वार संस्कार हो।"

"दूसरा; गोहत्या बंद हो" (क)

"तीसरा.–शाहजहांके समयमें जो सम्पूर्ण जनपद मेवाडके अन्तर्गत थे वह सब फिर हमको मिल जाँय।"

"चौथा;–जो (अकबर) स्वर्गधाममें निवास करते हैं, उनके शासनकालके समान हिन्दूलोग स्वाधीनता भावसे इष्टदेवकी पूजा तथा धर्माचरण कर सकैं।"

"पांचवाँ;–आप जिसको पदवीसे उतार देंगे राजाके समीप वह किसी अनुग्रहको न पा सकैगा।"

"छठा;–दक्षिणावर्तके युद्धमें अब आपको अपनी सेनाकी सहायता नहीं देनी होगी।" (ख)

(क) गोहत्यासे हिन्दूलोग अत्यन्त घृणा करते हैं, टाडसाहबने कहा है कि गोजातिके ऊपर हिन्दुओंकी आन्तरिक भक्तिके विषयको विचारनेसे हम एक महान् राजनैतिक शिक्षाको पा सकैंगे। सन् १८१७–१८में राजपूतोंके साथ ब्रिटिश गवर्नमेन्टकी जो संधि हुई थी उसमें सब प्रस्तावोंके बीचमें गोहत्याका निवारण ही मुख्य था।

(ख) मेवाडकी सहकारी सेना अजीमकी सहायताके लिये दक्षिणावर्तमें युद्ध कर रही थी। इस बातकी सत्यता राणाके पास भेजे हुए अजीमके पत्रको पढनेसे जानी जायगी।

"राणा अमरसिंहजीके समीप यह विज्ञापित हो कि अर्जी यथा समयमें मुझे मिल गई। आपकी माताके वृत्तान्तको जानकर मैं अत्यन्त ही दुःखित हुआ, परन्तु क्या किया जाय विधाताकी विधिको कोई भी उल्लंघन नहीं कर सकता। हमारे मंगलके लिये सर्वदा प्रार्थना कीजिये, राजा रायसिंहने आपके–

जिस चक्करमें पडकर मुगलोंके कुलका नाश हुआ, और जिसने इस दूरदेशमें आनेके लिये श्वेतद्वीपके निवासी ब्रिटिशसिंहकी प्रभुताका मार्ग साफ कर दिया उसका विचार करना इस स्थानमें अत्यन्त प्रयोजनीय बोध होता है, इस बातका विचार करनेसे एक अमूल्य राजनैतिक तत्त्व स्वयं ही प्राप्त हो जायगा, उस तत्त्वकी महिमासे मोहित होकर भारतबन्धु महात्मा टाडसाहबने साफ ही कह दिया है कि "इस तत्त्वने संकेतके समान हमारे सामने आकर सावधान कर दिया है कि नीतिबलकी सहायता न लेकर केवल खड्गके बलसे भारतवर्षको शासन करनेसे विपत्तिमें पडना होगा।"

हिन्दुओंके वैरी औरंगजेबके शासनकी रीतिका विचार करनेसे महात्मा टाडसाहबकी युक्तिकी सत्यता भलीभांति जानी जाती है। बलगर्वित दुराचारी औरंगजेब अपने असीम बलकी सहायताको विचारकर शुद्धाचरण करनेवाले राजपूतोंसे घृणा करता था इसीसे उसने अपने और अपने बडे भारी राज्यकी जडमें स्वयं ही कुल्हाडी मारी थी। बलसे अंधा होनेके कारण यद्यपि वह अपनी यथार्थ अवस्थाको नहीं जान सकता था, तथापि यह स्पष्ट देखा जाता है कि राजनीतिके जाननेवाले अकबरने जिस बडे भारी राज्यकी जडको जमाया था, वह जड केवल औरंगजेबके ही दुराचरणोंसे जड कटे हुए वृक्षके समान कंपायमान होती थी। औरंगजेब यदि एकपलभर भी अपने राज्यके सम्बन्धका विचार करके देखता तो, मुगलोंका अतिशीघ्र नाश न होता, इन बातोंको विचारनेपर दृढ विश्वास होता है कि राज्यशासन करनेमें चाहे कोई कितना ही चतुर तथा रण करनेमें कितना ही कुशल हो अथवा कितना ही सहाय बल और विक्रमका अधिकार करनेवाला हो परन्तु जबतक प्रजाके हृदयका अनुराग नहीं प्राप्त करेगा प्रजाको संतुष्ट नहीं करेगा तबतक वह कभी अपने राज्यपदको अखण्ड अथवा दृढ नहीं रख सकता है। महात्मा टाडसाहबके समयमें ब्रिटिशसिंहका राज्य जितनी दूरतक फैला हुआ था, औरंगजेबके समयमें मुगलोंकी राज्य उसकी अपेक्षा अधिक था, फिर मुगलोंके पास रक्षाके सामान भी अत्यन्त दृढ थे; तथा विशेष करके राजपूतोंके साथ उनका शोणित सम्बन्ध नियत हो चुका था। राजपूतलोग सताये जाकर भी उसके राज्यका मंगल करनेके अर्थ अपने प्राणोंतकके देनेमें भी न्यूनता नहीं करते थे, अधिक क्या कहैं वह सिंधुनदके पार हो काबुलमें पहुँच कर उसके लिये देश जय करते थे, भारतवासी चिरकालसे राजभक्त होते आये हैं, इस कारणसे उसके कठोर अत्याचारोंको सहन करके भी प्राण देनेको आगे बढते थे। भारतवासियोंकी राजभक्तिको अकबर भलीभांति समझ गया था, जहाँगीर और शाहजहां भी इस ही रीतिके अनुसार चलते थे, यही समझकर वह भारतसंतानोंको उस राजभक्तिका बदला दिया करते थे, परन्तु दुराचारी औरंगजेबने उस राजभक्तिकी

—लिये एक बातका अनुरोध किया था, आपको मैं अपना सम्बन्धी ही जानता हूं, राजभक्ति दिखाते रहकर आप निश्चिन्त रहैं; आपके महानुभाव पितृपुरुषोंकी समस्त भूमि सम्पत्ति आपकी ही होगी; परन्तु इस समय आपको कर्तव्य साधन करनेका अवसर है विशेष वृत्तान्त आपको अपने नौकरसे ज्ञात होगा। मुझे भूलियेगा नहीं। आपकी राजपूत सेनाने अत्यन्त उत्तम शूरता दिखाकर कीर्ति पाई है।"

महिमाको न जाना, अथवा जानकर भी समझनेकी इच्छा न की, कारण कि वह हिन्दुसन्तानोंकी राजभक्ति और उदारताको घृणित नामसे पुकारता था, वह कहताथा कि भारतवासीके मेरे प्रचण्ड विक्रमसे पवित्र राजभक्तिका यही शोचनीय पुरस्कार दिया गया। औरंगजेब यदि इच्छा करता तो सरलतासे ही अपने पितृपुरुषोंकी श्रेष्ठ रीतिको ग्रहण करके भारतसन्तानोंको ऊंची राजभक्ति और उदारताका उचित बदला दे सकता था, परन्तु ऐसा न करके उसने परम विश्वासी राजभक्त राजपूतोंके ऊपर पशुओंके समान आचरण किया और निकृष्ट घिनोना मुंडकर स्थापन करके उनकी उस अतुल राजभक्तिका यथोचित निरादर किया था, उस घृणित "जिजिया" करसे ही मुगल बादशाहका नाश हुआ, यदि औरंगजेब अपने वंशवालोंकी रीतिके अनुसार ही चलकर घृणित मुंडकरको स्थापन न करके भारतवासियोंपर कठोर अत्याचार न करता, तो मुगलबादशाहतका इतना शीघ्र अधःपतन न होता। दुराचारी औरंगजेबने सम्पूर्ण हिन्दुओंको बलपूर्वक इसलाम धर्मपर चलाना चाहा था, परन्तु राजपूत केशरी राजसिंहके प्रचंड विक्रमके भयसे इस दुष्ट अभिप्रायको सिद्ध न कर सका; आज उनके ऊपर उसी कठोर मुंडकरको स्थापन करके उसने अपने दुष्ट आशयको सिद्ध किया, उस दुष्टके इस करभारसे कोई हिन्दू भी छुटकारा न पा सका।

औरंगजेब हिन्दुओंका भयंकर वैरी था, उसके जीवनकी एक २ पंक्ति इसकी सत्यताका प्रमाण देती है, यदि कोई हिन्दू अपने धर्मको छोडकर इसलामधर्मको ग्रहण करता उसही को यह पापाचारी बादशाह आदर सहित अपने स्थानमें आश्रय देता था, बहुतसे कुलकलंक हिन्दूगण अपने धर्मको छोडकर उसके आश्रयको पाय अपने जातिवालोंकी क्रोधाग्निसे छुटकारा पाते थे, ऐसे धर्मसे वैर करनेवाले पाखंडियोंके बीचमें केवल एकका वृत्तान्त लिखते हैं, इस चरित्रके पढनेसे साफ जाना जायगा कि उसको आश्रय देकर ही औरंगजेबने अपने हाथसे अपने पांवमें कुल्हाडी मारी थी, अविचारिताके इस दोषसे जो विषैला फल उत्पन्न हुआ था उसे उसकी सन्तान और संततिको चिरकालतक भोगना पडा, मुगलबादशाहतके नाश होनेका मार्ग साफ हो गया, शिशोदियाकुलकी नीची शाखाके कुलमें रावगोपाल नामक एक राजपूत उत्पन्न हुआ, वह चंबल नदीके किनारेपर स्थित रामपुर * देशको सामन्त वृत्तिरूपसे भोग करता था, दक्षिणके युद्धके

---

* रामपुर टोंक नामका एक नगर और भी है; उसी रामपुर टोंकसे भेद करनेके लिये यह रामपुर भनपुर नामसे विख्यात है। राव गोपालने प्रसिद्ध चन्द्रावत गोत्रमें जन्म लिया था; चन्द्रावत कुलने बहुत दिनोंतक इस उत्कृष्ट भूमिवृत्तिको भोग किया था। फिर राणा जगतसिंह (दूसरे) ने अपने भानजे अम्बेर राजकुमार मधुसिंहको यह वृत्ति दे दी, मधुसिंहने सिंहासनपर बैठकर कृतज्ञता और न्यायके पवित्र मस्तकपर लात मारकर यह रामपुर जनपद हुलकरको दे दिया, इस प्रकारसे मेवाडका एक प्रधान अंग अलग हो गया, चन्द्रावत सामन्त अपने पितृपुरुषोंकी प्राचीन भूमिवृत्तिसे सम्पूर्णतया अलग नहीं हुआ, इसके भीतरी भागके आमूंद किलेके सहित थोडेसे अंशको वह भोग करता था; इस अंशको राजवाडेके समस्त दुःख और कष्टोंमें पडकर भी उसने नहीं छोडा और सन् १८२१ ई० तक भोगता रहा।

समय बहुत सी राजपूत सेनाने उसकी सहायता की, राव गोपाल दक्षिणको जानेके समय अपने पुत्रके हाथमें रामपुरका शासन भार सौंप गया था, परन्तु उसके कुलकलंक पुत्रने वहाँका कर पिताके पासको न भेजकर अपने पास ही रख लिया। तब राव गोपालने उसके नाम बादशाहके यहां अभियोग चलाया, वह मूर्ख अपने पिताके क्रोधित नेत्रोंसे और बादशाहके क्रोधाग्निसे छुटकारा पानेका उपाय ढूँढने लगा, बहुत समयके पीछे उपाय मिल गया; इस उपायसे ही उसका संकट छूटा और अभिलाषा पूर्ण हुई, वह उपाय यह था कि उस दुराचारीने अपने धर्मको छोड इसलाम धर्मको ग्रहण किया तब औरंगजेबने संतुष्ट होकर केवल उसको क्षमा ही नहीं किया वरन राव गोपालकी भूमिवृत्ति रामपुर जनपद भी उसको ही दे दिया, कुलकलंक पुत्रके ऐसे दुराचारोंसे राव गोपाल को अत्यन्त घृणा हुई उसने अत्यन्त दुःखित हो पाखंडी पुत्रको इस कार्यका प्रतिफल देने की इच्छासे सेनाके साथ रामपुर पर चढाई की, परन्तु उसका उद्योग सफल न हुआ; तब गोपाल रावने अपनी रक्षाका उपाय न देखकर राणा अमरसिंहका आश्रय लिया, दुष्टस्वभाव औरंगजेब इस बातको सह न कर सका, गोपालको आश्रय देनेके कारण राणाको वह विद्रोही समझने लगा और उनका चाल ढाल देखनेके लिये उसने अपने पुत्र अजीमको मालवराज्यमें रहनेकी आज्ञा दी, बादशाहका परम अनुगत एक राजपूत * अपने जीवनचरित्रमें औरंगजेबके उक्त दुराचरणोंका साफ २ वर्णन कर गया है उस ग्रन्थमें एक स्थानपर लिखा है कि "बादशाह अपने अत्यंत विश्वासी और सहकारी राजपूतों पर किंचित् ही अनुग्रह करता था। इसी कारणसे उसकी सेवा करनेमें राजपूतोंका आग्रह मंद हो गया था" बादशाहके दुष्ट अभिप्रायको जानकर ही राणा अमरसिंह ने उसके विरुद्ध तलवार पकडी थी, राणाकी सहायता करनेके लिये मालवराज भी युद्धभूमिमें आया था। अजीम उस समय नर्मदाके पलीपार था वहांपर महाराष्ट्रियोंने नीमसिन्धिया नामक एक रणविशारद महाराष्ट्रियको सेनापति बनाकर उस देशमें भयंकर झगडा मचा रक्खा था × उस ही भयंकर अग्निको बुझानेके लिये बादशाह औरंगजेबने राजा जयसिंहको अजीमके पास भेजा, परन्तु किसी ओर कोई फल न निकला उसके कठोर अत्याचारोंसे उस समय भारतके समस्त देशोंमें झगडेकी आग जल गई थी। सब लोग बादशाहकी अंतिम अवस्थाका विचार और परिवारके झगडोंसे छुटकारा पानेके लिये मुगलकी दासत्व जंजीरको तोडनेका उद्योग करने लगे, अब बादशाह किस ओरकी रक्षा करें? या किसको दमन करें? इस ओर तो भयंकर पराक्रमी महाराष्ट्री लोग वीरकेशरी शिवाजीके मंत्रसे दीक्षित हो स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिये उदय होते हुए सूर्यके समान धीरे धीरे गम्भीर मूर्ति धारण कर रहे थे और दूसरी ओर पीडित तथा दुःखित राजपूतलोग मुगलोंके राज्यसे अलग होते जाते थे, इन सम्पूर्ण झगडोंसे भयभीत होकर बादशाह छुटकारा न पा

* इनके जीवन चरित्रका कुछ एक अंश टाडसाहबको मिला था।

× १७०६-७संवत्में यह महाराष्ट्री झगडा हुआ था।

सका । उसकी अंतिम अवस्था देखकर बेटे पोते राज्यको पानेके लिये हृदयके रुधिरको निकालनेमें तैयार हुए, इन भयंकर झगडोंसे पीडित हो पचास वर्षतक भयंकर नीतिसे राज्य करके मुगल बादशाह औरंगजेब अपने नामसे बसाये हुए औरंगाबाद नगरमें सन् १७०७ ई० में (जिकादकी ९ तारीखको) इस असार संसारमें शांति करके यमराजके भवनको चला गया, उस ही दिन औरंगजेबके बेटे पोतोंमें महाकोलाहल मच गया पिताके मरनेका शोक करना तो दूर रहा, सभी तख्तको पानेकी इच्छासे राजधानीकी ओर दौडे, पहले तो बादशाहके दूसरे पुत्र अजीमने बादशाहतको अपने अधिकारमें किया, परन्तु अपने बडे भाई सुलतान मौअज्जमको सेनाके साथ आता हुआ देख उसका मनोरथ नष्ट करनेकी इच्छासे वह धात और कोटेके राजपूतोंको साथ ले * भाईकी गतिको रोकनेके कारण आगरेमें पहुंचा, मेवाड, मारवाड, राजवाडेके पश्चिम राज्यके समस्त राजा मौअज्जमके झंडेके नीचे आकर खडे हुए थे । उन सब राजपूतोंको साथ लेकर सुलतान मौअज्जमने जाजौ नामक स्थानमें अजीमकी सेनाका सामना किया, परन्तु अजीम अपने बडे भाईके भयंकर प्रतापको न सहनेके कारणसे कोटा और धातनगरके दोनों राजा तथा अपने बेटे वेदारवख्तके साथ उस ही युद्धमें मारा गया । पीछे मौअज्जम भलीभांतिसे निष्कंटक हो शाह आलम बहादुरशाह नामकी पदवीको धारण कर पिताके तख्तपर विराजमान हुआ । मौअज्जममें बहुतसे सुन्दर गुण थे, उन गुणों से मोहित होनेके कारणसे ही राजपूतलोग उससे स्नेह करते थे, विशेष करके इसका जन्म भी राजपूत स्त्रीके गर्भसे हुआ था, इसी कारणसे सब ही इसपर अनुग्रह करते थे, यदि सुलतान मौअज्जम हिन्दूहितैषी धर्मात्मा शाहजहाँके बाद ही दिल्लीके सिंहासनपर बैठता, तो वीरवर तैमूरका स्थापन किया हुआ वंशवृक्ष इतनी शीघ्रताके साथ भारत भूमिसे न उखड जाता, तब तो आजतक भी मुगल लोग तख्त ताऊसपर बैठकर एशियाके बीचमें एक प्रबल राजवंशके नामसे विख्यात हो सकते थे, परन्तु इस संसारमें

* ऐसे कितने एक अंग्रेज हैं जो दीन हीन अवस्था युक्त अभागी भारतसन्तानके लिये चिन्ता करते हैं और कितने महात्माओंने उनकी चिन्ता की है ऐसे लोगोंमें देवचरित्रमहात्मा टाडसाहब ही श्रेष्ठ हैं; हमलोग पदगौरवकी बराबरीसे इस श्रेष्ठताका बदला नहीं करते, यह श्रेष्ठता उनके उदार हृदयसे ही उत्पन्न हुई थी वह भारतहीके लिये इस संसारमें उत्पन्न हुए और भारतका हित साधन करके ही यहांसे बिदा हो गये; यद्यपि उनका वह महान् संकल्प संपूर्णतासे पूरा न हुआ था परन्तु तो भी वह जो कुछ कर गये हैं वही बहुत है, उस ही उपकारसे भारतसंतानगण बहुत कालतक देवताकी भांति उनकी पूजा करेंगे, उनके समान और कौनसा विदेशी, इस अभागी भारतसन्तानके बीते हुए गौरवका स्मरण करके शोकसे उन्मत्त हुआ था, उन्होंने इस भारतके लिये कितनी चिन्ता की है, उसका यथार्थ प्रमाण यह पवित्र " राजस्थान " ग्रन्थ है । औरंगजेब हिन्दुओंका भयंकर वैरी और अत्याचारी था, वह हिन्दुओंका अनुराग पानेके लिये उनको कैसा पुरस्कार देता था और अंग्रेजलोग आजकल कैसा पुरस्कार देते हैं, महात्मा टाडसाहबने एक स्थानमें इन दोनोंकी बराबरी करके कहा है कि "ब्रिटिन" आज भारतवासियोंकी राजभक्तिको प्राप्त करनेके लिये उनको कैसा पुरस्कार देता है? करके अधिक बढ जानेसे वह लोग परिश्रमसे बनाई हुई अपनी सामग्रीको नगरके हाट बजारोंमें भी नहीं ले जा सकते ।

किसीका भी गौरव सर्वदा स्थिर नहीं रह सकता, नहीं तो यह दुराचारी औरंगजेब बादशाहीपर बैठते ही अपनी प्रजाको लोहदंडके प्रहारसे पीडित क्यों करता, और क्यों उसका राज्य नरकके समान समझा जाता ? वीरवर तैमूरके वंशमें औरंगजेब अयोग्य हुआ। उसके पूर्वपुरुषोंने इस विस्तारित भारतवर्षके बीच अपने राज्यको अखंड रखनेकी इच्छासे जिन नीतियोंका आश्रय लिया था, मतवाले औरंगजेबने बलके घमंडसे उन्हीं श्रेष्ठ रीतियोंके मस्तकपर लात मारी। वह भारतका बादशाह था, समुद्ररूपी वस्त्रको धारण करनेवाली और पर्वतरूपी तगडीको पहरनेवाली विशाल भारतभूमि उसके चरणोंके नीचे गिरी थी, यदि वह इच्छा करता तो अपने पितृपुरुषोंकी श्रेष्ठ नीतिका अनुसरण करके विश्वासी राजपूतोंको एक जनपद वा प्रदेश देकर उत्साहित और अनुगृहीत कर सकता था, परन्तु उसकी कठोर हिन्दुविद्वेषिताने ही किसी प्रकारका उत्तम कार्य उसको न करने दिया * वीरवर बाबरने जिन हिन्दुओंको सर्वदा सन्तुष्ट रखनेकी इच्छा की थी, जिनकी मान मर्यादाको अटल रखनेके लिये उसके वंशवाले सर्वदा उद्योग किया करते थे, आज औरङ्गजेबके कठोर अत्याचारोंसे उनके हृदयमें जो भयंकर घाव उत्पन्न हो गया था उसे कोई भी आरोग्य न कर सका, उन समस्त घावोंकी भयंकर पीडासे दुःखित हो राजपूतोंने विष जानकर मुगल बादशाहके साथ सब सम्बन्ध छोड दिया; राजपूतप्रिय गुणवान बहादुरशाह अपने स्वल्पकालव्यापी राज्यके बीचमें उसको आरोग्य न कर सका। यद्यपि वह गुणवान था परन्तु राजपूतोंने उसका विश्वास नहीं किया, बहुत कालसे उत्पन्न हुई दूरदर्शितासे उनके हृदयमें ऐसा संस्कार उत्पन्न हो गया था कि सभी मुगललोग अविश्वासी और निष्ठुर हैं, उन्होंने भयंकर ज्वालाके समान राजस्थानके सम्पूर्ण रुधिरको शुष्क कर लिया है, बहादुरशाहका जन्म भी उसी मुगल वंशमें है, इस कारण वह भी तो राजवाडेके सम्पूर्ण रुधिरको शुष्क करनेकी इच्छा करेगा इसमें आश्चर्य ही क्या है ? ऐसा विचार करके राजपूतोंने एक दूसरेकी रक्षा करनेके लिये आपसमें संधि कर ली; बहादुरशाहने उनको सन्तुष्ट करनेके लिये अनेक चेष्टायें कीं, उनके पूर्वपुरुषोंके दृढ उदाहरणोंको दिखाकर उनको मुगलोंके साथ सम्बन्ध करनेके लिये बहुत ही कहा, परन्तु उसकी वह चेष्टा और यत्न सभी व्यर्थ हो गये × उनके मनमें जो दृढ विश्वास हो गया था वह किसी प्रकारसे भी न टला, वह निश्चय यह जान गये थे, कि अगणित कार्य साधन करके वृथा प्राणदान करके मुगलोंकी कृतघ्नता और निष्ठुरताके हाथसे छुटकारा न होगा, इसी कारणसे उन्होंने बहादुरशाहकी कोई बात न मानी, मुगल बादशाहकी आज्ञाको लेकर दूत उनके पास

* जिन निभासी राजभक्त सैनिकोंकी छातियें प्रशंसापदककी मालासे शोभायमान हैं उनको पुरस्कार स्वरूप वार्षिक १२० पौंड और (१२००) रुपये) से अधिक तनख्वाह नहीं मिलती, अधिक क्या कहें जिन संस्कारोंका निरादर करके औरंगजेब और उसके वंशवाले अनेक प्रकारका सुभीता होनेपर भी भारतके सिंहासनसे अलग हो गये थे, आज उन्हीं संस्कारोंके ऊपर अत्यन्त न्यून विचार किया जाता है।

× सन् १७०९–१० ई०

पहुंचा तब उन्होंने केवल यही कहा कि "देवताके विमुख होनेसे लोगोंको मतिभ्रम हुआ करता है।" राजपूतोंके ऐसे आचरणोंको देखकर बहादुरशाह शीघ्र ही यह समझ गया कि आगेको इससे बहुत कम सहायता मिलैगी। इस ही समयमें उसके छोटे भाई कम्बक्सके साथ बादशाहका भयंकर झगडा हुआ। कम्बक्सने दक्षिणमें अपनेको बादशाह कहकर विख्यात किया था,बहादुर शाहको इन सब कार्योंसे बिना ही छुटकारा पाये शीघ्र ही सिक्खोंके दबानेको उत्तरमें जाना पडा,गुरु नानकने इस विकराल जातिकी प्रतिष्ठा की थी,यह जाति सिक्ख (शिष्य) लोगोंकी थी। कहते हैं कि अक्सस नदी-के किनारे शाकद्वीपके प्राचीन जितकुलमें यह जाति उत्पन्न हुई थी पीछे चढाई करके ईसवीकी पांचवीं शताब्दीके मध्य भारतवर्षके पश्चिम देशमें आकर बसी, गुरु नानकके महामन्त्रसे दीक्षित होनेके एक शताब्दी पीछे अपनी रक्षा करने योग्य नीति और बल विक्रमसे युक्त हो सिक्खोंने क्रमशः अपनेको स्वाधीन कहकर विख्यात किया। आज बहादुरशाहके शासनकालमें सम्पूर्ण मुगलोंकी सलतनतके बीच केवल एक सिक्खोंकी ही जाति स्वाधीन है। इस समय उनकी स्वाधीनताको देखकर बादशाह सेनाके साथ पंजा-बकी ओरको चला,युद्ध करनेको जाते समय अम्बेर और मारवाडके दो राजाओंने शीघ्र ही जाकर बहादुर शाहसे साक्षात् किया, परन्तु उससे कुछ न कहकर और आज्ञाको बिना ही लिये वहाँसे चले गये, उनके ऐसे चित्तके बदलनेका कोई भी कारण नहीं जाना गया, परन्तु इतिहासके किसी २ ग्रन्थमें देखा जाता है कि वह लोग सिक्खोंके तीक्ष्ण भावको अनुसरण करके मुगलोंकी परतन्त्रतासे अपनेको छुटानेका विचार कर रहे थे।

भारतकी ऐसी हीन अवस्थाके समय पराक्रमी सिक्खोंके उदाहरणका दृष्टान्त लेकर राजपूतोंने मुगलोंकी आधीनता रूपी जंजीरको तोडनेका विचार किया, बादशाह बहादुरने उनको सावधान और शान्त करनेके लिये अपने बडे पुत्रको भेजा, तब वह बादशाहकी आज्ञाको उल्लंघन न कर सके, परन्तु सावधान नहीं हुए। राजपूतोंको सावधान करनेके लिये बादशाहने कितने ही यत्न किये परन्तु कोई यत्न भी फलीभूत न हुआ,इसके उपरान्त बादशाहकी विना आज्ञाके ही राजपूतलोग उन डेरोंको छोडकर उदयपुरमें राणा अमरसिंहके पास चले गये, वहां जाकर परस्पर संधि कर ली, इस प्रकारसे राजस्थानमें तीन महाबल एकत्रित हुए, छोडे हुए राठौर और कुशावह बहुत समयके पीछे राजपूतकुल चूडामणि परम पवित्र शिशोदियोंके साथ एकत्र भोजन करसके और विवाह इत्यादिक सम्बन्ध भी होने लगे,इस सन्मानको पानेके लिये ही उन्होंने बडी उत्कण्ठासे संधि की थी, इस संधि पत्रपर हस्ताक्षर करनेके समय मारवाड और अम्बेरके दोनों राजाओंने अपने २ इष्टदेवताका नाम लेकर शपथ की थी कि आजसे कोई कभी मुगल बादशाहके साथ पारिवारिक अथवा राजनैतिक किसी प्रकार कोई सम्बन्ध न करेगा, उसके साथ ही यह निश्चय भी होगया कि शिशोदियोंके कुलके साथ विवाह होनेके पीछे शिशोदीय राजकुमारियोंके गर्भसे जो सन्तान और सन्तति उत्पन्न होगी उसको ऊंचा सन्मान मिलेगा यदि पुत्र हुआ तो वह राजसिंहासनपर बैठेगा और कन्या

हुई तो ऊंचे राजकुलमें अर्पण की जायगी, प्राण रहते हुए उसको मुगलोंके हाथमें अर्पण करके अपने कुलको कलंकित नहीं करेंगे।

शिशोदीयकुलके निकट फिर अपने पहले सन्मानको पाकर मुगलोंकी जंजीरसे छूटनेकी इच्छासे राठौर और कुशावह दोनों राजाओंने इस प्रकारके व्यवस्थापत्रपर हस्ताक्षर कर दिये थे, परन्तु इससे उनकी एक और महाप्राचीन कालसे चली आई हुई अखंड रीतिका व्यभिचार हुआ। उसके एक साथ उलट पलट होनेसे जो विषैला फल उत्पन्न हुआ वह सरलतासे ही अनुमान किया जा सकता है, मारवाड़ और अम्बेरके राजाओंने इस चिरकालकी रीतिका उलट पलट करनेके समय राज्यमें जो भयंकर झगड़ा उत्पन्न किया था वह सरलतासे दूर नहीं हुआ, उसको निवारण करनेमें जो मध्यस्थ उपस्थित हुए, उनके कठोर स्पर्शसे सम्पूर्ण राजस्थान ही सूना हो गया। वह स्पर्श मुगलोंकी जंजीरकी अपेक्षा भी कठोर था। वह स्पर्श महाराष्ट्रियोंका था। उस त्रिबलात्मिका संधिसे राजपूतोंने बाबरके बडे भारी सिंहासनको पृथ्वीपर गिरा दिया, परन्तु उस अवसरपर जिन शत्रुओंने उनके घरमें प्रवेश किया उनसे ही राजपूतोंका नाश हुआ था।

जिस दिन हिन्दूवैरी औरंगजेबने कुलकलंक रतनसिंहको * उसके पिताकी क्रोधाग्निसे रक्षा करनेके लिये अपने यहां आश्रय दिया, उसी दिन हताश होकर राव गोपालने उदयपुरवालोंकी शरण ली. राणा अमरसिंह उस ही रामपुर वृत्तिका उद्धार करनेके लिये तैयार हुए थे, परन्तु संसारके अनेक कार्योंमें फँसनेके कारण अबतक इस कार्यको सिद्ध नहीं करसके, इस समय राठौर और कुशावह दोनों राजाओंके साथ मिलकर उन्होंने अपने पहले संकल्पको सिद्ध करनेका विचार किया, परन्तु उनका संकल्प सिद्ध न हुआ, राज मुसलिमखाँ × ने उनके सम्पूर्ण उद्योग व्यर्थ कर दिये, बादशाहने इस विजयका समाचार पाकर मुसलिमखाँको उचित पुरस्कार दिया, दूतने मुसलिमके जय समाचारको सुनानेके समय और एक वृत्तान्त कहा, उसका मर्म यह है कि "राणाने अपने राज्यको उजाड़ कर पर्वतोंपर जा बसनेकी दृढ प्रतिज्ञा की है।" इन दोनों समाचार पानेके कुछ काल पीछे बादशाहने और एक वृत्तान्त सुना कि राणाके सुबलदास नामक कर्मचारीने पुरुषमंडलके शासनकर्ता फीरोजखाँपर आक्रमण किया, उसके आक्रमणको निवारण न कर सकनेके कारण फीरोजखाँ अत्यन्त दुःखित और पीडित होकर अजमेरको भाग गया है। परन्तु वीरवर जयमलका वंशधर उस युद्धमें मारा गया * फीरोजखाँके वृत्तान्तको जानकर बादशाह अत्यन्त ही दुःखित हुआ, पहली

* रामपुर का राजा और राव गोपालका पुत्र। लोकहितवादीने निर्णयसागरके छापे राजस्थानके अनुवादमें इसका नाम हिम्मत राव लिखा है।

× मुसलमान धर्मके अवलम्बन करनेसे रतनसिंहका नाम मुसलिम हुआ था।

* जिस आज्ञाको पाकर सुवलदासने यह कार्य किया था, टाडसाहबको वह आज्ञा एक दफ्तरमें मिली थी, सुवलदासके पुत्रको यह आज्ञापत्र भेजा गया था।—

दोनों बातें भी उसको सत्यसी दिखाई देने लगीं, जो साहसी और बलवान दुर्गादास पितासे वैर करनेवाले अकबरको सहस्रों बाधा और विपत्तियोंके बीचमेंसे ले जाकर निष्कण्टक स्थानमें पहुंचा आया था वही वीर आज फिर मुगल बादशाहके इस सर्वजनीन संघर्षणके समय रंगभूमिमें आ पहुँचा है। उसके राजा इस समय उसको पालन पोषण न कर सके इस हीसे दुर्गादास उदयपुरमें चला आया था। राणाने आदर सन्मानके साथ उसको अपने यहां रक्खा और प्रतिदिन पांचसौ रुपये नियत कर दिये परन्तु इन सब राजपूत वीरोंके इकट्ठा होनेसे जिस महाबलकी उत्पत्ति हुई, उसके कार्यका आरम्भ शाह आलम बहादुर शाहके समयमें नहीं होने पाया, कारण कि उस महाबलवान शक्तिका कार्य आरम्भ होनेसे पहले ही शाह आलम बहादुर आततायी पाखंडियोंके विष देनेसे अकालमें ही इस लोकसे विदा हुए * यह एक सरल स्वभाववाला बादशाह था, परन्तु अभाग्यसे उसके दुराचारी पिताके असीम पापोंका फल सहस्रों करोड़ों वज्रोंका रूप बनाय अंतमें पुत्रके मस्तकपर गिरा, पिताके किये हुए पापोंका फल पुण्यवान पुत्रको भोगना हुआ, शाह आलमका आशा भरोसा सभी नष्ट हो गया, हिन्दुकुशसे प्रारंभ करके समुद्रतक फैले हुए समस्त देश औरंगजेबके अत्याचारसे उत्तेजित हो गये थे, बहादुर शाहने विचारा था, कि इन सम्पूर्ण उपद्रवोंको दूर करके मुगल राज्यमें सुख और शान्तिकी रक्षा करेंगे परन्तु दुर्भाग्यतासे उसकी वह आशा सफल न हुई, यदि पाखंडी और पिशाचके हाथसे छुटकारा पाकर वह और कुछ दिनतक जीवित रहता तो मुगल राज्यकी इतनी शीघ्र अधःपतन न होता, शाह आलम कार्यचतुर दूरदर्शी और शहनशील बादशाह था; यदि उसके जीवनरूपी वृक्षकी जडमें अकालमें कुठाराघात न होता तो वह अपने उत्तम गुणोंसे सलतनतकी रक्षा कर लेता, परन्तु विधाताकी विधिके अनुसार मुगलकुलका विध्वंस कौन रोक सकता है, नहीं तो अकालमें ही बहादुरकी मृत्यु क्यों होती ? या उसके सभी वंशधर अयोग्य क्यों होते ? इन लोगोंने अपनी अयोग्यतासे ही मुगल गौरवको रसातलमें फेंक दिया था, उसके उद्धार करनेकी सामर्थ्य किसीमें नहीं है।

जिस दिन साधुचरित्र शाह आलम बहादुर शाह विष देनेसे अकालमें ही इस लोकसे विदा हुआ, उस ही दिनसे वीरवर बाबरके सिंहासनकी जड मूल कटे हुए वृक्षके समान थरथर कांपने लगी, उस दिनसे ही मुगल राज्यके उत्तराधिकारियोंने शोणितसमरमें तैर करके उस कम्पायमान सिंहासनपर बैठना आरम्भ किया, परन्तु कोई भी उसको स्थिर न रख सका, अन्तमें गंगा यमुनाके संगमें स्थित हुए वैरानगरसे दो सह-

—" राठौर रायसिंह सोवलदासके प्रति महाराणा अमरसिंह।"

" आपके चारों ओर जितने स्थान हैं उन सबको उजाड दीजिये आपके परिवारको रहनेके लिये दूसरा स्थान प्राप्त होगा, विशेष समाचारको अवगत होनेके लिये चन्द्रावत दौलतसिंहके साथ साक्षात् कीजिये हमारी इस आज्ञाके पालन करनेमें त्रुटि न करना जी (सन् १७०८-९--दिसम्बर)।"

* आततायी पाखंडीने सन् १७१२ई० में शाह आलमको विष देकर मारा था।

यद भ्राताओंने * आकर मुगल सिंहासनको व्यापारकी वस्तु बना दिया, बाबर अकबर जहांगीर और शाहजहांके पवित्र रत्नसिंहासनको क्रूरचरित्र सइयदोंने जिसको चाहा उसको दिया, सनातनका उत्तराधिकार जाता रहा, धर्म और न्यायके पवित्र मस्तकपर पदाघात हुआ, धन देकर जो इन दोनों भाइयोंके मनको आनन्दित कर सके थे, वही भारतकी बादशाहतके सिंहासनको कुछ कालके लिये पाते थे; परन्तु कुछ दिनके पीछे पहलेको तख्तसे उतारकर किसी दूसरेको इन दोनोंने तख्तपर बिठलाया इस प्रकारसे मुगलोंका सिंहासन और मुगलके वंशधरगण हुसेनअली और अबदुल्लाखांके हाथकी कठपुतली बनकर मुगलकुलकी शोचनीय अवस्थाका वर्णन प्रचारित करते हुए अनन्तकालके समुद्रमें लीन हो गये। जिस समयमें राजस्थानका निर्बल मुगल राज्यके विरुद्ध कार्य करनेको तैयार हुआ, उसी समयमें उपरोक्त भाइयोंने फर्रुखसियरको तख्तपर बैठाया था, हिन्दूवैरियोंके दीर्घकालव्यापी कठोर अत्याचारोंको सहन करके भी केवल एक सहनशीलता होके बलसे तेजस्वी राजपूतलोग सब बातोंको सहते आये, इस समय दोनों सइयद भ्राताओंका अत्याचार और भारतमाताकी शोचनीय अवस्थाको देखकर वह लोग अधिक स्थिर न रह सके, इस कारण उनकी सहनशीलता चलायमान हो गई और उसके साथ ही अंतरमें छिपी हुई विद्वेषाग्नि प्रचण्ड तेजसे प्रज्वलित हो उठी, आततायी यवनोंने देवताओंके मंदिरोंको तोडकर वहां मस्जिदें बनवा लीं थीं; आज राजपूतोंने उन मस्जिदोंको चूर्ण २ करके मुगलोंके धर्म याजक अर्थात् मुल्लाओंका अपमान करना आरंभ किया, स्वाधीनताके स्वर्गीय मस्तकपर लात मारकर यवनोंने राजपूतोंका प्राय: सभी सामर्थ्यको छीनकर मुल्ला और काजियोंको उसका अधिकार दिया था, इस समय राजपूतोंने और विशेष करके राठौरोंने, उस सम्पूर्ण सामर्थ्यको पुन: ग्रहण करके उस स्वर्गीय स्वाधीनताको मुगलोंके पाससे अलग कर दिया, यशवंतसिंहके मृत्युकालके पीछेसे प्रतापवान राठौरगण मुगलोंके ग्राससे अपने सम्पूर्ण अधिकार भलीप्रकारसे रक्षा करते हुए आये हैं। इस समय अजितसिंहने मारवाडमें मुगलोंको भलीप्रकारसे परास्त कर दिया इस अवसरपर राजस्थानके यह तीनों प्रसिद्ध बल साम्बर सरोवरके किनारेपर इकट्ठे हुए थे, वह तालाब मेवाड मारवाड और अम्बेरका साधारण सीमारूपसे नियत हुआ और उससे जो कुछ आमदनी होती थी उसको यह तीनों बलवान परस्पर बांट लेते थे।

राजपूतोंका विक्रम और बाहुबल धीरे २ बढता ही गया, बादशाहने अंतमें उनके कठोर आचरणोंको रोकनेकी दृढ प्रतिज्ञा की, अमीरुलउमरा, *अजितसिंहके गर्वको चूर्ण करनेकी इच्छासे सेनाको साथ ले युद्ध करनेको चला, उस समय अजितसिंहके पास बादशाहके हाथका लिखा हुआ एक गुप्त पत्र पहुंचा। बादशाहने लिखा था कि इस मगरूर सइयदकी खबर अच्छी तरह लेना, बादशाहने अपने सेनापतिकी गति रोकनेके

* हुसेनअली और अबदुल्लाखाँ।

* हुसेनअली अमीरुलउमरा और उसका भाई अबदुल्ला कुतबुलमुल्क नामसे विख्यात हुआ।

लिये क्यों शत्रुके पास गुप्त पत्र भेजा था, उसका एक विशेष कारण था दोनों सइयद भ्राताओंके द्वारा बादशाहतको पाना तथा दिनरात उनके दबानेसे फर्रुखसियर समझ गया था कि मैं कुछ भी नहीं हूं। वह जानता था कि यह राज्यभोग केवल विडम्बना मात्र है। दोनों सइयदोंकी प्रतिष्ठा दिन २ बढने लगी इस कारण बादशाहके मनमें भय हुआ, उसने उनकी प्रातिज्ञा भंग करनेकी इच्छा और चेष्टा की थी परन्तु उनके द्वारा सइयदोंने और भी उन्नति पाई इस कारण बादशाहके मनमें भांति २ के संदेह उदय होने लगे, सइयदोंका दर्प चूर्ण करने और उन सम्पूर्ण सन्देहोंसे छुटकारा पानेको दूसरा उपाय न देखकर अंतमें अजितसिंहके पास वह गुप्त पत्र भेजा था * परन्तु उसका वह गूढ आशय सिद्ध न हुआ, राठौर राज अजितसिंहने दोनों सइयदोंके साथ संधि करली, और बादशाहको नियमित कर और अपनी कन्या देनेमें सम्मत होगये, ऐसा कार्य करके अजितसिंह मुगलोंकी सभामें विशेष सामर्थ्यवान् हो गये थे।

जिस दिन बादशाह फर्रुखसियरके साथ मारवाड राजकी राजकुमारीका विवाह स्थिर हुआ था, इस ही दिन सातसमुद्रके मध्यसे श्वेतद्वीपमें होकर बृटिशसिंहकी प्रभुताका मार्ग निष्कंटक हो गया; विवाहका सम्बन्ध होनेके कुछदिन पहले बादशाहकी पीठमें एक भयंकर फोडा निकल आया जो कि बहुत ही बढ गया था, हकीम और जर्राहोंने उसके आरोग्य करनेकी बहुतसी चेष्टा की परन्तु किसीकी भी चेष्टा फलवती न हुई; क्रमसे बादशाहकी पीडा अधिक बढने लगी; विवाहका दिन निकट आ पहुंचा तथापि उसको आराम न हुआ, विवाहका दिन बीत गया, बादशाह अत्यन्तही दुर्बल हो गया, यह देखकर सबका मन अत्यन्त भयभीत हुआ जो तइयारियाँ विवाहके निमित्त की गई थीं क्या वह शाहकी अंतिम क्रिया में लगाई जायगीं, यह विचारकर सबका ही मन अत्यन्त भयभित हुआ और चारों ओर ही इसके शान्त होनेका उपाय खोजा जाने लगा, इसी अवसरमें सूरतका रहनेवाला बृटिशकंपनीका एक दूत बादशाहकी सभामें आ पहुंचा, वह एक अच्छा डाक्टर था विशेष करके शस्त्र चिकित्सामें अत्यन्त ही चतुर था, सबकी चेष्टा व्यर्थ होने पर अन्तमें बादशाहने उनकी चिकित्सा करानेका विचार किया। उस चिकित्सकका नाम हेमिल्टेन था। महात्मा हेमिल्टेनने शाहके अंत:पुरमें जाकर थोडे ही दिनोंमें इस भयंकर फोडेको आराम किया, उसकी उत्तम चिकित्साके गुणसे आरोग्य होकर बादशाहने मारवाडकी मनमोहिनीके साथ विवाह किया, महा धूम धामके साथ विवाहका समारोह समाप्त हो गया × बादशाहने एक दिन महात्मा

---

* बादशाह फर्रुखसियरने जो गुप्तभावसे सइयदका अनिष्ट करनेकी चेष्टा की थी, उसको सइयद भ्राता उस समय तक नहीं जान सके; इस कारणसे ही वह बादशाहकी औरसे अजितसिंहके साथ युद्ध करने गये थे।

× यह विवाह महा धूमधामके साथ हुआ था। सर वाल्टर स्काटने इस प्रकारसे उसका वर्णन किया है, कि " अमीरुलउमराने कन्याकी ओरसे सम्पूर्ण उत्सव किया था, और विवाह भी ऐसी धूम धामके साथ समाप्त हुआ, कि इससे पहिले हिन्दुओंने इस प्रकारकी धूम धाम कभी नहीं देखी थी, आलोक मालाकी तीक्ष्ण ज्योतिप्रभा युक्त होकर नक्षत्र मंडलीको धिक्कार देती हुई चारों दिशाओंमें व्याप्त—

हेमिल्टेनको अपने पास बुलाया कि "आप हमसे क्या इनाम चाहते हैं ?" महानुभाव हेमिल्टेनने उत्तर दिया कि बादशाह ! मैं धन नहीं चाहता;--मानका अभिलाषी नहीं और ऊंचे पदगौरवकी भी इच्छा नहीं है, मै दूरदेशसे वाणिज्य करता हुआ आया हूं, आपके इस राज्यमें हमको पैर रखनेतकका भी स्थान नहीं है, इस समय केवल मेरी यही प्रार्थना है कि यदि आप कृपा ही करते हैं तो दया करके कुछ स्थान दान कीजिये और जिससे व्यापारमें हम लोगोंका सुभीता हो ऐसा कोई अपने हाथका परवाना दीजियेगा, बादशाहने संतुष्ट होकर उसकी प्रार्थनाको पूर्ण किया । उस दिन इस विशाल भारतक्षेत्रमें बृटिश प्रभुताका जो बीज बोया गया था वह थोडे ही समयमें अंकुरित होकर विशाल वृक्षका रूप बन सम्पूर्ण भारतभूमिमें फैल गया, आज उसी विशाल वृक्षकी छायाके नीचे अगणित भारतके संतान विश्राम कर रही है। विधाता ! कहीं इस वृक्षके नीचे कालसर्पका निवास न होजाय।

बादशाह फर्रुखसियर हेमिल्टेनका यथार्थ स्वदेशानुराग और आत्मत्याग देखकर अत्यंत विस्मित हुआ था, यदि हेमिल्टेन इच्छा करता तो निश्चय ही असीम धनका अधिकारी होजाता; परन्तु उसने अपने तुच्छ स्वार्थको त्याग करके स्वदेशका जो महोपकार किया था उस महोपकारका बदला कहां है ? जिस हेमिल्टेनके असीम महात्म्य और आत्मत्यागके गुणों से आज इस भारतवर्षमें ब्रिटिशसिंहका अखंड प्रभुत्व है उसने अपने देशवालोंसे इसका क्या बदला पाया था ? कुछ भी नहीं । दुःखका विषय है कि जिस दिन उस महात्माका जीवनरूपी पक्षी इस पवित्र देहरूपी पींजरेसे विदा होगया, उस दिन उसका पवित्र शरीर कलकत्तेके एक साधारण समाधि मंदिरमें आडम्बर शून्य विधानके साथ पृथ्वीके नीचे दबा दिया गया, उस दिन किस बृटिशने कृतज्ञताके पवित्र रससे अभिषिक्त होकर उसकी पवित्र समाधिपर किसी स्मरण चिह्नको स्थापित किया था ?—किसीने नहीं, उस निर्जन श्मशान क्षेत्रमें उस ब्रिटिश गौरवकी पवित्र देहके समस्त उपादान पंचभूतोंमें लीन हो गये, दुर्जयकाल उसके एक२ परमाणुको अनन्त सागरमें फेंक रहा है, परन्तु उसको कोई भी नहीं देखता है, न कोई जानता है कि इङ्गलैण्डका महाप्राण इस स्थानपर शयन कर रहा है ! शोक है कि इस संसारमें यथार्थ कृतज्ञता नहीं ।

मारवाड राजकुमारीके साथ सम्राट्का विवाह होने से बहुतोंने समझ लिया था कि बादशाह राजपूतोंके साथ उत्तम व्यवहार करेगा, परन्तु उन लोगोंकी आशाके विरुद्ध फल होने लगा। इस विवाहके कुछ दिन पीछे ही फर्रुख सियरने फिर वही घृणित जिजिया कर स्थापन किया था। औरंगजेबने जिस कठोरताके साथ इसका प्रचार किया था, यद्यपि इस समय वैसी कठोरताके साथ यह नहीं था * तथापि हिन्दूलोग तो इसका

—होगई थी, उस प्रखर ज्योतिके सामने सम्पूर्ण ग्रह भी हीन होगये थे, अमीरुलउमराके मंदिरमें यह विवाहकार्य समाप्त हुआ था, इसके उपरान्त बादशाह अनेक प्रकारके गीत बाजे और अनन्त जय नादोंसे अपनी नवीन रानीको अधिक धूम धामके सहित अपने नगरमें लाया था।"

* बादशाह फर्रुखसियर २०००) पर जिजिया करके १३) रु० लिया करता था।

नाम सुनते ही उत्तेजित हो गये। इसके पहिले मुगलोंके ऊपर जो उनका थोडा बहुत अनु-राग शेष रहा था, इस जिजिया करके पुनर्वार स्थापित होनेसे वह रहासहा अनुराग भी जाता रहा । वह समझ गये कि विश्वासघाती मुगलोंके सम्बन्धमें हमारी जैसी धारणा है वह किसी प्रकारसे मिथ्या न होगी ।--मुगललोग किसी समय भी हिन्दुओंपर सदय व्यवहार नहीं करेंगे, तथा जिस आशयसे मुंडकरकी यह घिनौनी रीति स्थापित हुई थी, उस आशयमें भी किसी भांतिका कोई हेर फेर न होगा । इन दोनों सइयद भ्राताओंकी असीम सामर्थ्यको हरण करनेके अभिप्रायसे क्षीण हृदयवाले बादशाह फर्रुखसियरने औरंगजेबके प्राचीन मंत्री इनायत उल्लाखाँको अपना दीवान बनाया । कहते हैं कि वह दीवान देशकाल और पात्रापात्रका बिना ही विचार किये हुए हिन्दूप्रजापर कठोर अत्या-चार करने लगा और इसके साथ ही साथ जिजिया कर भी पुनर्वार लगाया गया । यद्यपि यह जिजिया कर औरंगजेबके उस घृणित मुंडकरसे बहुत ही अलग था; यद्यपि सालियाना आमदनी पर यह महसूल बहुत ही कम दरके साथ लगाया था; यद्यपि लूले लँगडे अन्धे और दीन दरिद्रगण इस करसे छुटकारा पा गए थे, तथापि "यह महसूल काफिरोंसे लिया जाता है" इस विधिसे हिन्दुओंमें घोर विद्वेष उत्पन्न हुआ । ऐसा कौन है जो सामर्थ्यानुसार अपने ऊपर किसी प्रकारका कर लगने दे ? या मनुष्य होकर जो विना ही कारणके किसी दूसरेको अपने हृदयका रुधिर दान करनेकी इच्छा करे । जो धर्मभीरु भारतसन्तानगण, देवभावसे अपने राजाकी पूजा करते हैं, जिस राजाको मनुष्य समझना भी हिन्दूगण पाप मानते हैं, वह भारतसन्तान भी आज करभारसे पीडित होनेके कारण उस देवोपम राजाके कल्पित देवभावको भूल गई । इस प्रकारसे कर स्थापनकी वार्ताका विचार करते २ मनुष्यकी स्वार्थपरताको निहार कर हम स्तंभित होजाते हैं * !

राजस्थानके दूसरे छोर मरुमय मारवाड राज्यमें जब इस प्रकारका व्यापार हो रहा था, तब अमरसिंह इसको भलीभांतिसे जान गए थे । यद्यपि अनर्थ करनेवाली गौरव प्यासने त्रिबलके सन्धिपत्रको खंड२ करके अजितसिंहको राणाजीके निकटसे अलग कर दिया तथापि अमरसिंहका उत्साह इस बातसे कुछ भी कम न हुआ । पराई तुच्छ अनुकूलताको कुछ भी न समझ कर वह अपने विक्रम और अध्यवसायका भरोसा करने लगे । अनन्तर अपनी तथा समस्त राजपूत जातिकी स्वाधीनताको पुनः प्राप्त करनेके लिये कठोर कार्यको करनेके लिये दृढ प्रतिज्ञ हुए । किस प्रकारकी चतुरता और कैसे उत्साहके साथ राणाजी अपना संकल्प सिद्ध करनेको तैयार हुए थे; उसका एक विशेष प्रमाण भी पाया जाता है । एक सन्धिपत्र ही उसका प्रमाण है× बादशाह फर्रुखसियरने

---

* जिजिया करसे बहुत पहिले तेमगा (स्टाम्प कर) प्रचारित होगया था । संग्रामसिंहके ऊपर जय प्राप्त करनेके समय बाबरने हिन्दुओंके ऊपर इस करको लगाया था । यद्यपि जिजिया करके समान यह तेमगा कर दुर्भर नहीं था, तथापि हिन्दूलोगोंके हृदयमें इसके द्वारा विद्वेष उत्पन्न होता था ।

× यह सन्धिपत्र "प्रार्थनापत्र" के नामसे प्रसिद्ध हुआ है ।—

राणाजीके साथ यह सन्धि स्थापित की थी। इसके दूसरे नियममें ही जिजिया करके रहित करनेका लेख है।

इस सन्धिपत्रको आद्योपान्त देखनेसे भलीभांति ज्ञात हो जायगा कि अठारहवीं शताब्दीके आरम्भमें राजपूत और मुगललोगोंकी अवस्था किस दशामें थी। यद्यपि

"१–सातहजार सवारोंकी मनसवदारी हमको ही जाय"।

"२–पंजा लगे हुए प्रमाण पत्र द्वारा इस प्रकारकी प्रतिज्ञा प्रकाशित होती है कि जिजिया कर रहित होगा, अब हिन्दूलोगोंके ऊपर यह कभी भी स्थापित नहीं होगा। किसी प्रकारसे या किसी चथासे कोई बादशाह मेवाडमें इसको प्रचारित न कर सकेगा। यह एक साथ ही रहित होवे।"

"३–दक्षिण देशके लिये जो एकहजार राठौर सवार लिये जाते हैं, सरकार उनका लेना माफ करे।"

"४–हिन्दुओंके धर्ममंदिर जो मुसलमानोंने तोड डाले हैं, वह फिर बनवा दिये जायँ और हिन्दूलोग स्वाधीनभावसे अपने धर्मकी चर्चा करने पावें।"

"५–मेरे मामा, चचा, भ्राता, अथवा सर्दारगण यदि आपके (बादशाहके) निकट आवें, तो उन लोगोंको किसी प्रकारका आश्रय या उत्साह न दिया जावे।"

"६–देवल, बांसवाडा, डोंगरपुर, सिरोही तथा अन्यान्य समस्त भूम्यधिकारियोंके ऊपर मेरा आधिपत्य रहे, उनकी और बादशाहकी परस्पर भेंट न हो, उनकी मुलाकात मेरी मार्फत होनी चाहिये।"

"७–मेरे पास जो फौज है वह सर्दारोंकी है, बादशाहको जब आवश्यकता हो नियमित समयके लिये उसको मंगवा लें। जबतक वह सेना सहायमें रहैगी तबतक उसकी रसद इत्यादिका खर्च दर्बारसे होता रहैगा और कार्य शेष होते ही उसका हिसाब वेबाक करना होगा।"

"८–बादशाहकी नौकरीको जो हक्कदार, जमीदार व मनसबदार इत्यादि सरदार अंतःकरण पूर्वक उत्साहसे करते हैं, उनकी सूची मेरे पास भेजी जाय, और जो बादशाहकी आज्ञाका मान्य नहीं करते उनको मैं दंड दूंगा। परन्तु मेरे सरदार जब बादशाहके कार्यके लिये इधर उधर घूमेंगे, उस समय उस सेनासे खेत इत्यादिकी जो हानि होगी उसकी जवाबदारी मुझपर नहीं होनी चाहिये।"

"९–फूलिया, मंगलगण, बेदनोर, बसार, गयापुर, पुरधर, बांसवाडा वा डोंगरपुर यह महाल व उनके पांच हजार सवारोंकी मनसबदारी मुझे मिलनी चाहिये। इन पुराने ५००० सवारोंके अतिरिक्त गद्दीपर बैठनेके समय स्वीकार किये हुए व सिन्सिनीमें जय मिलनेके समय स्वीकार किये हुए १००० सवार, इस प्रकार ७००० हजार सवारोंका मनसब पहिले नियमके अनुसार मुझको मिलना चाहिये। व इस ही भांतिसे सिन्सिनीमें जय मिलनेके समय १००० सवारोंको पांच २ घोडोंकी परवानगी भी वचनके अनुसार मिलनी उचित है।

"१०–तीनकरोड दाम (क) पुरस्कारमें मिलने चाहियें। यथा;–दो करोड दाम संधिपत्रमें स्वीकार करनेके अनुसार व एक करोड दाम दक्षिणकी सेनाके वेतनका, यह ईनाम अब मिल जाय। उपरोक्त दो करोड दामोंकी तो मुझे इस ही समय अत्यन्त आवश्यकता है और उसके बदलेमें सिरोही प्रान्तका देना बादशाहने स्वीकार भी कर लिया है, अतएव वह प्रान्त मुझको मिलना उचित है।"

"११–इस समय जो महाल मुझे मिलने चाहियें उन सबके नाम इस प्रकार हैं, यथा;–ईडर, केक्रीमंडल, जिहाजपुर, मालपुर, व दूसरा एक (ख) यह मिलने उचित हैं।"

(क) चालीस दामका एक रुपया होता है। यह तीन करोड दाम साढेसातलाख रुपयेका हुआ।

(ख) इसके नामकी स्याही उड जानेसे साफ नहीं पढे जानेके कारण नाम नहीं लिखा गया।

सन्धिपत्रका नाम सुनते ही राजपूतनाथ अमरसिंहके सम्बन्धमें अपमान सूचक चिन्ता हृदयके बीच उदय होती है; परन्तु यदि विशेष विचारके साथ देखा जाय तो वह चिन्ता तत्काल ही दूर हो जाती है। आठवाँ सूत्र पढनेसे यह भली भांतिसे जाना जाता है कि राणाजीकी इससे कोई हानि नहीं हुई थी। क्योंकि इस सूत्रमें राणाजी बादशाहके रक्षक रूपसे सूचित हुए हैं। "सातहजारी मनसबदारी" का विचार करते ही तेजस्वी अमरसिंहकी याद आती है। उन्होंने राज्यधनको छोडकर वनवासव्रत अवलम्बन किया, तथा किसीकी अधीनता नहीं मानी थी। परन्तु राजपूत जातिकी भीतरी अवस्था बहुतायतसे बदल गई, संग संग में उसका मत भी बदलता चला। क्षण स्थाई लौकिकसन्मानके सम्बन्धमे राजस्थानके दूसरे देश मेवाडकी बराबर हो गए थे। पदके तुच्छ लालचसे सब हीने मुगलोंको सन्मानका खजाना समझा था। उस काल वे इस बातको नहीं समझे कि हमारा यह ध्यान सम्पूर्णतः भ्रमसंकुल है। स्वाधीनता और जातीय गौरवके बदलेमें जो सन्मान प्राप्त हो, उस सन्मानका क्या प्रयोजन है? इसके उपरान्त जेताके निकट दास जातिका सन्मान ही क्या? सहस्र सन्मानसे भूषित होकर जिसको जेताकी जूतियें उठानी पडे, उसका वह सन्मान किस अर्थका है? वह सन्मान तो केवल विडम्बनामात्र है, वह तो असारता, कायरता और पराधीनताका प्रकाशमान चिह्न स्वरूप है। राजस्थानकी और समस्त जातियें उस सन्मानसे अपनेको सन्मानित समझती हैं; परन्तु बाप्पारावलके वंशवालोंने कभी भूलते हुए भी बायें चरणसे उस सन्मानको नहीं ठुकराया। इस ही कारण दुर्दशाप्राप्त होनेपर भी वह अधिक सन्मानके पात्र थे। बादशाह फर्रुखसियरके साथ सन्धि करके राणा अमरसिंहको जैसा सन्मान प्राप्त हुआ था, उसका वृत्तान्त सन्धिके अन्यान्य नियमोंको पढते ही विदित होजाता है। उन अवशिष्ट नियमोंमें धर्माचरणकी स्वाधीनताका पाना, शिशोदीयकुलके प्राचीन सामन्तोंपर राणाजीका अधिकार पाना; गईहुई सम्पत्तिका प्राप्त होना, यह तीन अधिकार सर्वप्रधान थे। इन तीन अधिकारोंका अनुशीलन करनेसे स्पष्ट प्रतीत होगा कि मुगलकुलकी सौभाग्यलक्ष्मी मुगलोंको धीरे २ छोड रही थी। क्या वास्तवमें ऐसा ही था। भारतकी उस समयकी राजनैतिक अवस्थाका विचार करनेसे हमारे कथनकी सत्यता प्रमाणित होजायगी। विशाल दक्षिणदेशमें वीर महाराष्ट्रीयगण राजा साहुजीको अपना सर्दार बनाये हुए अपनी कठोर लूट खसोटकी वृत्तिको सिद्ध कर रहे थे। उनके प्रचंड भुजबलसे बहुतसे राज्य लौटपौट होगये। परन्तु वे महाराष्ट्रीयगण उन विजित राज्योंपर अपना अधिकार नहीं जमाते थे, वरन निठुराईके द्वारा सबसे "चौथ" और "दशमुकी" वसूल किया करते थे।

मुगल बादशाहतकी इस शोचनीय दुर्दशाके समय दिल्लीके निकट रहनेवाली एक और वीरजातिने स्वाधीनता प्राप्त कर ली। यह जाति 'जाट' के नामसे प्रसिद्ध थी। इससे पहले हम कई बार लिख आये हैं कि जाट लोग प्राचीन जितकुलके साखाकुलमें उत्पन्न हुये थे। यह लोग चम्बलनदके पश्चिम किनारे पर बसे हुए थे। मुगलोंके

कठोर अत्याचारोंको सहते हुए भी विकराल जाटगण धीरे२समयानुसार अपने बलको बढा रहे थे। इस समय मुगलबादशाहतकी हीनावस्था निहार, अवसर समझ, उन समस्त अत्याचारोंका बदला लेनेके लिये जाट लोगोंने अपने विशाल मस्तकको उठाया और भारतमें अपनी स्वाधीनताका डंका पीट दिया। उस समय प्राचीन जितवंशकी ऊंची पताका एकबार ही दिल्लीके सिंहद्वारपर फहराने लगी। सिन्सिनींके अवरोधका-लसे लेकर बहुत दिवसतक वह ध्वजा फहराती रही थी। अनन्तर बृटिश वीरकी चतु-रतासे जिस दिन भरतपुरका किला तोडा गया, उस ही दिन जाट–वीरोंके मस्तकपरसे विजय–मुकुट नीचे उतर गया। उनकी स्वाधीनतारूपी ध्वजा उखडकर बृटिशसिंहके चरणोंपर गिर पडी।

वह सन्धिबन्धन ही राणा अमरसिंहके जीवनका पिछला साधन हुआ। जिस दिन वह सन्धि हुई, उसके थोडे ही दिन पीछे वह अमरधामको चले गये। राणा अमरसिंह चतुर और उन्नतिशील नृपाल थे। भारतके सर्वव्यापी विप्लव और मुगल–राज्यकी भयंकर अराजकतामें भी वे अपने राज्यकी सुख सम्पत्तिको बढ़ाते रहे, उन्होंने भलीभां-तिसे अपने सन्मान और गौरवकी रक्षा की थी। खेती और कारीगरीके लिये वह अत्यन्त अनुकूलता करते और उत्साह देते थे। मेवाड़के स्मारक स्तंभोंपर इस बातका स्पष्ट प्रमाण लिखा है। कराल कालके सर्व संहारकारी हाथके लगनेसे वह समस्त स्तंभ जबतक पातालरूपी कुएँमें न समा जायँगे, तबतक कोई भी (दूसरे) राणाअमरसिं-हकी कीर्त्तिको लोप नहीं कर सकेगा। आजतक मेवाड़के रहनेवाले प्रातःस्मरणीय महाराजाओंकी पवित्र नाममालाके साथ उनके नामका जप किया करते हैं। उनके मतानुसार दूसरे अमरसिंह ही पवित्र शिशोदीयकुलके पिछले गौरवयुक्त महीपाल हुए;–उनके परलोक गमनके साथ साथ ही मेवाड़की शोचनीय अवनति हुई, गौरवा-न्वित शिशोदीयकुलका ऊँचा मस्तक अवनत होगया।

चतुर्दश अध्याय १४.

राणा संग्रामसिंह;—मुगलबादशाहतकी अवनति;—निज़ामुल्मुल्कके द्वारा हैदराबादराज्यकी प्रतिष्ठा;—सम्राट फर्रुखसियरकी हत्या; जिजिया करका रहितकरना;—महम्मदशाहका दिल्लीके सिंहासनपर बैठना;—सैदखाँके द्वारा अयोध्याकी प्राप्ति;—मेवाड़की शासननीति;—राणा संग्रामसिंहका परलोकगमन;—उनके विषयकी कई एक कहावतें;—राणा जगतसिंह (दूसरे) का सिंहासनपर बैठना;—मारवाड़ और अंबेरराजके साथ उनकी सन्धि;—महाराष्ट्रियोंका मालवा और गुजरातपर आक्रमण करके वहांपर अधिकार करना; हिन्दोस्थानपर नादिर शाहकी चढ़ाई;—दिल्लीका सत्यानाश;—राजपूतानेकी उस समयकी अवस्था;—मेवाड़की सीमा;—राजपूतोंके मेलका वर्णन;—बाजीरावका मेवाड़पर चढ़आना;—राणाजीपर वार्षिक कर लगाना;—अंबेरके सिंहासनपर-माधोसिंहका अभिषेक होनेमें झगड़ा;—राजमहलकी लड़ाई;—राणाकी पराजय, मल्हार राव हुलकरके साथ उनकी सन्धि;—विष पान करनेसे अम्बेरके ईश्वरीसिंहका प्राण त्याग;—राणाजीका परलोकवासी होना;—उनके चारित्रका वर्णन ।

जिसदिन वीरवर राणा अमरसिंह (दूसरे) अमरधामको चले गये, उस ही दिन संग्रामसिंह मेवाड़के सिंहासनपर बैठे। इस पवित्र नामका स्मरण करते ही बाबरवैरी उन प्रचंड वीर महाराणा संग्रामसिंहकी याद आती है। इस यादके साथमें ही मेवाड़का अतीत और वर्त्तमान चित्र मानसिक दर्पणपर प्रतिफलित होकर चित्तको आनंद और शोकके रसमें सराबोर कर देता है। यह उन्मत्त हृदय इस पवित्र नामामृतपानसे और अधिक उन्मत्त होकर जिज्ञासा करता है कि—क्या यह वही संग्रामसिंह हैं?

जिन्होंने तैमूरके वीरवंशधर वीर केशरी बाबरके असीम विक्रमको रोक दिया था--यह क्या वही संग्रामसिंह हैं ? आततायी विश्वासघातकने अधर्मयुद्ध करके जिनको परास्त किया था,--यह क्या वही संग्रामसिंह हैं ? सन्ध्याबाती हाथमें ले रात्रिकी अगौनी करनेके समय राजपूत ललनागण जिनका स्मरण किया करती हैं; गेहूं पीसनेके समय चक्की चलाती हुई कुमारीगण एकसाथ मिलकर जिनके वीरत्वकी गाथाका गीत गाया करती हैं; प्रभातकाल बिस्तरेपरसे उठनेके समय राजपूतगण जिनके पवित्र नामका जप किया करते हैं; चित्तौरके विजयखंभपर, आरावली पर्वतमालाके गगनस्पर्शी शृङ्गोंपर जिनका नाम खुदा हुआ दिखलाई देता है,यह क्या वही संग्रामसिंह हैं;अन्तरमें बैठकर मानो किसी देवताने तत्काल वज्रगंभीर कंठसे उत्तर दिया,--"अपूर्ण मनुष्यका तेज,वीर्य, गौरवादि सब ही अनित्य है ! आज उस ही अनित्यका संसारमें प्रचार करनेके लिये यह दूसरे संग्रामसिंह राणा, प्रथम संग्रामसिंहके आसनपर विराजमान हैं !"

जिस महम्मदशाहके साथ तैमूरके वीरवंशका प्रकाशमान गौरव निर्वाण होगया, जो पिछला "मुगल बादशाह" था, महाराणा संग्रामसिंह इस हीके समयमें सिंहासन-पर बैठे थे। इस ही बादशाहके समय (सन् १७१६--३४) में मुगलबादशाहतकी अवनति आरंभ हुई। बाबरका सिंहासन टूटकर खंड २ होने लगा । जलके बबूलोंके समान उन खंडोंपर छोटे २ स्वतन्त्र राज्य प्रतिष्ठित होने लगे । मुगल, पठान, शिया और सुन्नी, महाराष्ट्रीय और राजपूत यह सब ही स्वतन्त्रताकी ध्वजा उड़ाकर कुछ-समयके लिये राज्यसुख भोगने लगे। अनन्तर जिस समय होनहारके अवश्यम्भावी निय-मके पूर्ण होनेका दिन आया, जिस दिन हिमाद्रिसे लेकर सिंहलतक जल, थल, पर्वत, वन,--यह समस्त स्थान अचानक ताडित प्रभावसे कंपायमान होकर एक प्रचंड उपद्रव उत्पन्न करने लगे,उस ही दिन सात समुद्रके पार आय थोडेसे बृटनवीरोंने उन समस्त मुसल-मान, महाराष्ट्रीय और राजपूतोंके सिंहासनको धूरिमें मिलाय एक विशाल सिंहासनको स्थापित किया ! मुसलमान, महाराष्ट्रीय, शिख और राजपूतगण आज उस ही विराट-सिंहासनके सामने भयसहित शिर झुकाते हैं !

गुण गौरव और स्वामिभक्तिके ऊपर निर्भर करके अभागा मुगलबादशाह जिस किसी सेनापति या प्रतिनिधिपर किसी देशका शासनभार अर्पण करता था; वही सेना-पति या वही प्रतिनिधि कृतज्ञताके पवित्र मस्तकपर पदाघातकर विद्रोहितारूप कलंकित उपायके द्वारा उस स्थानको निगलजानेमें कसर नहीं करता था । इसभांतिके घृणित उपायके सहारे राज्यको हस्तगत करके भी यदि वे उत्तमतासे वहांकी प्रजाका पालन करसकते यदि राज्यकी दृढ़ भीतस्वरूप प्रजाके प्रति पुत्रके समान आचरण करके उनकी सुखसम्पत्तिको बढ़ाते, तो शीघ्रतासे ही पापका कठोर दंड उनके मस्तकपर न गिरता और बंगाल, अयोध्या, हैदराबाद व अन्यान्य राज्योंके अधर्मसे लिये हुए सिंहा-सनपर अबतक वह विश्वासघाती लोग बैठे रहते । परन्तु इस विषयमें महाराष्ट्रियोंका राष्ट्रतंत्र सम्पूर्णतः भिन्नभावसे दिखाई देता है । उनके अकस्मात् उन्नत होजानेका

विचार करके आश्चर्य होता है । न जाने किस दैवीशक्तिके प्रभावसे हिन्दूकुलचूडामणि महाराजाधिराज शिवाजीने दीन शान्तजीवन धर्मयाजक और किसानोंको चतुर राजकर्मचारी और रणविशारद सिपाही बना डाला था। यह बात सत्य है कि हिन्दुओंसे डाह करनेवाले मुगलबादशाह औरङ्गजेबके कठोर सतानेसे दुःखित होकर वीरवर शिवाजीने स्वदेशियोंको वीरमंत्रसे दीक्षित और रणाभिनयसे उत्साहित किया था; परन्तु उस अल्पसमयका विचार करके कि जिसमें यह कार्य पूर्ण होगया था, प्रत्येक हिन्दूका हृदय अत्यन्त उत्साहित होजाता है । ऐसा कौन है जो महात्मा शिवाजीको देशका उद्धार करनेवाला जानकर पूजनेके लिये आगे न बढ़ेगा ? परन्तु भारतका अत्यन्त दुर्भाग्य समझना चाहिये, कि वीरवर शिवाजीके महामंत्रपर उनके वंशवालोंने भलीभांतिसे अत्याचार किया था । यदि वे लोग अनन्त दुराकांक्षाके वशसे उन्मत्त होकर उस महामन्त्रका व्यभिचार न करते तो आज भी उन राज्योंको वह अपने अधिकारमें देखते कि जिनको महात्मा शिवाजीने औरंगजेबके हाथसे छीन लिया था । परन्तु भारतकी कठोर कर्मरेखको कौन मेट सकता है; नहीं तो वह जयशील होकर भी किस कारणसे दूसरी नीतिका अवलंबन करते ? नहीं तो उनका वीराचार, दुराचारका रूप किस कारणसे बनजाता ? वह महाराष्ट्रीयगण अपने असीम विक्रमके प्रभावसे जो राज्य जय करते थे, वहांपर प्रभुता स्थापन नहीं करते थे, वरन उनको लूट खसोटकर अपने देशको लौट जाते थे । इससे पहिले जो उन्होंने साहस, उत्साह, धीरता व शान्तिप्रियता आदि सुन्दर गुणोंका परिचय दिया था, आज अभाग्यसे उन सबको छोड दिया और उनके बदले शीघ्र ही दुराकांक्षा, चतुरता और लूट खसोट आदि घृणित दोषोंके समुद्र होगये । जिस दक्षिणावर्तमें उनका अखंड प्रताप विराजमान हो गया था, जहांके रहनेवालोंकी भाषा और आचार व्यवहारके साथ उनकी भाषा और आचार व्यवहारका सम्पूर्णतः मेल था; राजनीतिके श्रेष्ठ अनुशासनका अनुसरण करके अपनी पूर्व गुणावलीका अवलम्बन करके यदि वह वीरगण उस विशाल दक्षिणावर्त्तके अक्षय राज्यपर ही सन्तुष्ट रहते, तो उस विशाल देशसे महाराज शिवाजीका लगाया हुआ वंशवृक्ष शीघ्र ही न उखड जाता परन्तु उनकी प्रचण्ड अभिलाषा ही उनके लिये काल हो गई। उसके पापमन्त्रसे उत्साहित होकर उन्होंने जैसे ही उत्तरीय देशोंपर धावा मारना आरंभ किया; वैसे ही वह समस्त भारतवर्षकी हिन्दूसन्तानके नेत्रोंमें काँटेसे खटकने लगे । उनका मार्ग कंटकमय हो गया। राजपूत और महाराष्ट्र दोनों ही हिन्दू हैं,धर्म और जातिके विषयमें दोनोंके आशय सम्पूर्णतः एक ही हैं,परन्तु दोनोंके स्वभावमें परस्पर इतना अन्तर देखा जाता है कि जितना राजपूत और मुसलमानोंमें भी नहीं देखा जाता। यह ठीक है कि मुसलमानोंके शासनके भीतर अत्याचार जमा हुआ रहता है, परन्तु महाराष्ट्रियोंके समान वह अत्याचार घोर अनभल नहीं करता । इस ही कारणसे मुसलमानोंके दीर्घकालव्यापी राज्यसे भी राजस्थानकी उतनी हानि नहीं हुई थी कि जितनी हानि मरहटोंने थोडे ही

समयमें की । मुगलबादशाहतकी अवनतिके समय दीर्घकालव्यापी उपद्रवोंको सहकरके यदि भारतवर्षके रहनेवाले शान्तिसुखको प्राप्त करके धीरे २ जातीयबलको संग्रह कर सकते तो फिर भी भारतमें सौभाग्य सूर्यका उदय हो जाता । परन्तु मुसलमानोंके कठोर अत्याचारसे छूटते छूटते ही, महाराष्ट्रियोंके सतानेसे भारतवर्षका कलेजा टूट गया, उस पीडनके प्रभावसे भारतमेंसे सार निकल गया और भारतसन्तान फिर न उठ सकी । भीम, भीष्म, कर्ण, अर्जुन और प्रतापसिंहकी मातृभूमिने कितनी एक बृटिश-सन्तानके चरणोंमें एक साथ ही शिर झुका दिया ! हाय ! दुर्जयकालका माहात्म्य कैसा विचित्र है !

बादशाह फर्रुखसियरकी क्षणभंगुर हुकूमतका धीरे २ लोप होता चला, बादशाहने किस बुरी साइतमें सइयदोंके प्रभावको हरण करनेकी चेष्टा की थी और किस बुरे वक्तमें उसने दुष्ट इनायतउल्लाको अपना सलाहगीर बनाया था । शोक है कि इस इनायतउल्लाने ही बादशाहका सत्यानाश किया । बादशाहने जिस आशासे औरङ्गजेबके वृद्धमन्त्रीको अपना दीवान बनाया था—वह सफल नहीं हुई । दुष्ट इनायतउल्लाने औरङ्गजेबके पैंतरेपर पाँव धरके हिन्दुओंको सताना आरंभ किया । इस कारणसे समस्त हिन्दूलोग उससे घृणा करने लगे । तदुपरान्त दुर्द्धर्ष सइयदोंकी क्रोधाग्निने उसके ऊपर गिरकर एक साथ इनायतउल्लाको भस्म कर डाला ।

जिस निज़ाम-उल-मुल्कने हैदराबाद राज्यकी प्राणप्रतिष्ठा की थी, दोनों सइयदोंकी अयथाप्रभुता और अन्याययुक्त सामर्थ्यको हरण करनेके लिये बादशाहने उसको बुलाया । इससे पहिले यह निज़ाम-उल-मुल्क, मुरादाबादनामक देशका सूबेदार था; परन्तु उसके उत्तम ज्ञान और कार्यदक्षताका परिचय पाकर मालवराज्य देनेकी प्रतिज्ञा करके बादशाहने उसको दिल्लीमें बुलाया । दोनों सइयदभ्राता इस वृतान्तको सुनते ही महाराष्ट्रियोंकी दश हजार सेना लेकर राजसभामें आये और अत्यन्त क्रोधके साथ फर्रुखसियरको तख्तपरसे उतार दिया । बादशाहकी समस्त आशा धूरिमें मिल गई उस विपत्तिके समय अम्बेर * और बूँदीके दो राजाओंके सिवाय और कोई भी उसके पास न रहा । यदि

---

* टाडसाहबको महारानाके दफ्तरखानेमें, जयपुरनरेश महाराज जयसिंहका हस्ताक्षरित एक पत्रिका प्राप्त हुई थी, उसके पढनेसे अभागे फर्रुखसियरकी दुर्दशाका वर्णन भलीभांतिसे पाया जाता है । महाराज जयसिंहने यह पत्र राणाजीके दीवान विहारीदासको लिखा था ।

"अमीर-उलउमरा" आन पहुँचे, और बालाजी पंडितके द्वारा बातचीत ठीक हुई है। उन्होंने कहा है कि वह मुझको मित्र समझते हैं; परन्तु मुझको यात्रा करनेका अनुरोध किया है; किसनसिंह और जीवालालने भी ऐसा ही परामर्श दिया है, इसलिये मैंने बादशाहको एक अर्जी भेजी है, अर्जीमें इस परामर्शका समस्त वृत्तान्त लिख दिया और उनकी आज्ञाको अवगत होनेकी इच्छा प्रगट की है । परन्तु बादशाहने मुझको आज्ञा दी; सबकी इस प्रकार इच्छा होनेपर मैंने फाल्गुनके नवें दिन बृहस्पतिवारको यात्रा की और कुछ दूरतक चलकर श्रीबलसरायमें डेरे डाले । बूंदीके रावराजासे अपने साथ आनेको कहा; परन्तु यह बात उनकी मनोगत न हुई । वह कुतब-उल-मुल्कके साथ मिल गये । कुतब-उल-मुल्कने-

इस समय भी बादशाह इन महाराजाओंके उत्तम परामर्शको ग्रहण करता तो उसके प्राण अकालमें ही न निकलते; परन्तु उसके दुर्भाग्यने किसीकी बात न चलने दी । नहीं तो अपने परमहितैषी मित्रोंकी परामर्शपर बादशाहका ध्यान क्यों न होता? इन दोनों राजाओंने सम्राट्को यथार्थ वीरके समान प्रगट युद्धक्षेत्रमें जानेका परामर्श दिया था । परन्तु बादशाहने अत्यन्त भीरु और कायरमनुष्यके समान उनके किसी परामर्शपर ध्यान न दिया । इस कारण वह दोनों राजा भी उसको छोड गये । फर्रुखसियर अत्यन्त ही कायर था वह राजपूत राजाओंके परामर्शका निरादर करके "जनानखाने" में ही रहने लगा । उसको अपनी रक्षाका कोई उपाय न सूझा और शत्रुकी दयाका मार्ग देखना पडा क्रोधित सइयदने बादशाहसे कहला भेजा कि "अपने विश्वासी राजपूतोंको दूर कर दीजिये, और हमारे एक सेनापतिको दुर्गमें प्रवेश कर दीजिये, ऐसा होनेसे हम आपपर किसी प्रकारका अत्याचार न करेंगे ।"

अभागे फर्रुखसियरकी समस्त आशाएँ नष्ट हो गईं, उसने निराश होकर समझा कि शत्रुगण महलमें किसी तरहका ज़ोर ज़ुल्म नहीं करेंगे । इसीसे वह जनानेमें बेगमोंका दामन पकड कर बैठा रहा, परन्तु उसकी वह उम्मेद भी दूर हो गई । "असित वस्त्र पहिरनेवाली विभावरी (रात्रि) कराल वेश धारण करके संसारमें आई और दिवासती बादशाहके पतित भाग्य--नक्षत्रकी नाईं गंभीर अन्धकारमें लोप हो गई । दुर्गका द्वार बन्द हुआ; बादशाहका कोई भी मित्र किलेमें नहीं रहने पाया; केवल वज़ीर और अजितसिंह वहांपर थे । । विकल दर्शनवाली रात्रि नगरवासियोंको अनेक प्रकारके भय दिखाने लगी । सब ही को अत्यन्त चिन्ता थी । इस बातकी किसीको खबर नहीं थी कि महलमें क्या हो रहा था । दूसरी ओर अमीर--उल--उमरा महाराष्ट्रियोंकी दश हजार सेनाको सजाए हुए बाट देख रहा था । ऊषाके ललाई लिये रंगने नौबतके साथ साथ ही नये दिवसका आगमन और अभागे फर्रुखसियरकी दुर्दशायुक्त कहानीको संसारमें गंभीर नादसे प्रचार किया । सबकी आशा लोप हुई फर्रुखसियरकी पदच्युतिपर रफे--उल--दिर्जात् दिल्लीके तख्तपर बैठा ।" पूर्वदेशीय राजाओंकी पदच्युति और निधनके बीचमें थोडा ही समय लगा करता है । अभागे फर्रुखसियरके लिये भी ऐसा ही हुआ । यहांतक कि बन्दीलोगोंने जब नवीन बादशाहको "उम्रदराजहो" यह कहकर आशीर्वाद दिया, अभागे फर्रुखसियरके गलेपर उस समय भी धनुषकी डोरी लगी हुई थी ।*

-कितनी एक सेना देकर उनको अजितसिंहके साथ डेरे डालनेको कहा । रावराजाने ऐसा ही किया । कोटेके भीमसिंहकी सेना आ गई; उसके साथ एक युद्ध हुआ । इस युद्धमें जयसिंह हाडा मारा गया और रावराजा भयके मारे अलीवर्दीखाँकी सरायमें भाग गये । उनकी सहायताके लिये मैंने सेना भेजी थी । बादशाहने हमामखाना और तोशाखाना सइयदोंको दे दिया । सइयदोंने इच्छानुसार सब वस्तुओंको हजम किया और करते हैं । सइयदोंको तो आप भलीभांतिसे पहिचानते हैं । अब मैं स्वदेशको लौटा जाता हूं । हजूरसे (राणाजीसे) ज़बानी बहुतसी बातें निवेदन करनी है । इससे पहिले तुम मुझसे मिलनेके लिये आना । इति फाल्गुन शुक्ल ९ संवत् १७७५ (सन् १७१९ ई०)

*दोषीको मारनेके समय मुसलमान लोग उसके गलेमें धनुषका डोरा फांसीकी भांति लगा देते हैं ।

तख्तपर बैठते ही नये बादशाहने अजितसिंहको तथा और दूसरे राजाओंको संतुष्ट रखनेका विचार किया और इस ही कारण उसने जिजिया करको उठा दिया। राजपूतोंको प्रसन्न करनेके लिये चतुर सइयदोंने बादशाहके दीवान इनायत उल्लाको पदच्युत करके उस पदपर उनके एक स्वजातीयको नियत किया। इस नये दीवानका नाम राजा रत्नचन्द था। रफेउलदिर्जात केवल तीन मासतक बादशाहत करके परलोकवासी हुआ। इसको खाँसीका रोग अत्यन्त प्रबल हुआ था। इसकी मृत्युके पीछे और भी दो बादशाह राज्यके क्षणस्थाई सुखको भोगकर थोडे ही दिनोंमें संसार रंगभूमिसे बिदा हुए। तदुपरान्त बहादुर शाहका बडा बेटा रोशनअख्तर महम्मद शाह नाम धारण करके सन् १७२० ई० में दिल्लीके तख्तपर बैठा। महम्मद शाहने कुल तीस बर्षतक बादशाहत की थी। इसके ही समयमें मुगल बादशाहीकी सम्पूर्णतः अवनति हुई।राज्यमें अनेक प्रकार बादविवाद उत्पन्न हो गये, जिससे वह विशाल देश छिन्न भिन्न हो गया। उस झगडेके अवसरको अमूल्य समझकर मरहटे और पहाडी अफगानोंने भारतबर्षपर आक्रमण किया और नगर व गावोंमें लूट खसोट मचाने लगे।

एक तो राज्यमें अनेक प्रकारके उपद्रव हो रहे थे, उसके ऊपर तेजस्वी सइयदोंके कठोर अत्याचारसे घोर विनाश होने लगा। जो लोग उनसे मिले हुए थे, उनमें अधिकांश विशेष करके निजाम*—उनपर अत्यन्त अप्रसन्न हुआ। पहिले ही कह आए हैं कि निजाम एक चतुर सेनापति था। मालवेकी उद्धार और श्रीवृद्धिसाधन करनेमें उसने अत्यन्त चतुराईसे काम लिया था, इस कारण दोनों सइयदोंको उसपर अत्यन्त खटका हुआ। इस समय निजामको अप्रसन्न देखकर वह भय दूना बढा। परन्तु उन्होंने आप ही अपना काम बिगाडा, उनके ही दुराचारने भारतवर्षसे "मुगल बादशाहत" के नामको लोप कर दिया। गर्वसे मत्त हो अपनी सामर्थ्य अचल रखनेके लिये वह जिस २ को बादशाह बनाते थे वही अयोग्य निकलता था। अतएव यह कहना ठीक ही होगा कि प्रजाका उन दोनों भाइयोंसे किंचित् भी मंगल नहीं हुआ। उनके बनाए हुए बादशाह कठपुतलीके समान तख्तपर बैठे रहते थे। उनको कोई भी बादशाह नहीं समझता था; प्रजाकी जो कुछ भक्ति उनपर थी वह उनके कठोर अत्याचारसे निर्मूल हो गई, अमीरउलउमरोके द्वारा बादशाहका अर्थ शून्यनामसे प्रकाशित होनेपर सब ही स्वाधीन जीवनका आनंद लूटने लगे। चतुर निजामने भी इस अवसरमें अपना

---

* राजा जयसिंहने इस विषयमें राणाजीके मन्त्री विहारीदासको एक पत्र लिखा था, उसके कुछ अंशका अनुवाद यहां दिया जाता है:—

"आपने लिखा है कि आपके महाराज सेनाके लिये रुपया भेजते हैं:—इस विषयमें मेरा कोई हिसाब नहीं है ऊंटपर लादकर उन रुपयोंको जल्दी भिजवा दीजिये। नव्वाब निज़ामउलमुल्क उज्जैनसे शीघ्र ही यात्रा करते हैं और जबीलराम इधर आता है। आगरेसे समाचार आया है कि वह काल्पी नदीके पार होगया। दीवानजीसे कहना कि वह जल्दी फौज लेकर मिलें। देरका काम नहीं है। धन प्राप्त होनेसे समस्त कार्य हो जाता है। भाद्रपद शुद्ध ४ संवत् १७७६ (सन् १७२० ई०)

स्वाधीन होना प्रचार कर दिया और असीरगढ व बुरहानपुर इन दोनों शहरोंके किलोंपर अधिकार करके अपना बल बढाया। इन सैयदोंके हृदयमें अनेकभांतिकी शंका उठने लगीं। स्वार्थरक्षाका कोई उपाय न देखकर उन्होंने राजपूत सामन्तों * से सहायता माँगी। वैसे ही कोटा और नरवरके दोनों राजकुमार निजामकी सेनापर अधिकार करनेके लिये अपने सरदार और सामन्तोंको साथ लेकर नर्मदा नदीके किनारेपर आये। परन्तु यह दोनों राजपूत, संग्रामविशारद निजामकी प्रचण्ड सेनाको नहीं रोक सके और उस नर्मदाके किनारे ही निजामकी क्रोधाग्निसे कोटेका राजा भस्म होगया।

मुगलोंके हाथसे हैदराबादका राज्य निकलते ही अयोध्याका राज्य भी स्वाधीन हुआ चतुर सैयदखाँने × इस स्वाधीनताको प्राप्त किया था। जिस समय निजामने स्वाधीनताका झंडा उडाया सइयदखाँ उस समय वियानादुर्गकी सरदारी करता था। सइयदोंका गर्व तोडनेके लिये महम्मद शाहने उसको दिल्लीमें बुलाया। बादशाहकी आज्ञा पाते ही सआदतखाँ अमीरउलउमराके संहार करनेकी चेष्टा करने लगा। हैदरखाँ + नामक एक विश्वासघातीने, धोखेसे अमीरकी छातीमें छूरी मारकर उसको संहार किया। मुहम्मद शाह उस वक्त डेरोंमें था। अमीरउल-उमराकी मृत्युका समाचार पाते ही वह

---

* इस समय नागोरके राजा भक्तसिंहने राणाजीके प्रधानमंत्री विहारीदासको जो पत्र लिखा था उसके पढनेसे उस समयके बहुतसे समाचार ज्ञात होंगे।

"आपका पत्र पाया; उसको पढकर प्रसन्न हुआ। श्रीदीवानजीसाहबका रुक्का भी समयपर मुझको मिला, उनके मनोभावको मैं समझ गया। आप कहते हैं कि दोनों नव्वाब ही (सैयद) रणक्षेत्रमें आये हैं। वे दोनों महाराजा (कोटे और नरवर) भी उनसे जा मिले और तुम्हारी सेना भी उनकी सहाताके लिये जानेको तैयार हुई है। कारण कि पुरानी मित्रता किस प्रकारसे छिन्न हो सकती है? यह सब जाना। परन्तु नव्वाबोंमेंसे कोई भी रणमें न जायगा और कोई भी महाराज दक्षिणकी यात्रा न करेगा, वह सब ही निश्चिन्त हो घर बैठकर मौज उडावेंगे। परन्तु यदि कार्यवशसे नव्वाबोंको संग्राममें जाना पडे तो उनका ही पक्ष अवलम्बन करना इसके अतिरिक्त यदि दूसरे पक्षकी सहायता की जायगी तो आपको विपत्तिमें फँसना पडेगा। अच्छा, जो समाचार होगा वह मैं सूचित करता रहूंगा, इस समय सावधान रहियेगा। अपने हितके लिये यदि स्वयं आपमें सामर्थ्य है तो फिर उसमें दूसरेको यश आने देना ठीक नहीं?--आप ज्ञानवान हैं, और संकेतसे सबके मनोभाव समझ सकते हैं, जहांपर आपकी समाल कर्मचारी विद्यमान हैं, वहांपर किसीप्रकारकी विपत्ति संभावित नहीं।"

× सआदतखाँ एक खुरासानी सौदागर था, यह अपनी कोशिशसे ही सेनापतिके पदपर--और फिर अयोध्याका नव्वाब हो गया था। सआदतखाँने अपने हाथसे हुसेनअलीको नहीं मारा था।

+ हैदरखाँ अथवा मीर हैदर एक असभ्यकालमक था। हुसेनअलीको मारनेके लिये वह एक अर्जी हाथमें लेकर मार्गमें एक ओरको खडा होगया। हुसेनअली पालकीमें सवार होकर अपने आदमियोंके साथ उस ही मार्गसे जा रहा था, इस ही समय हैदरने ऊंचा हाथ करके अपनी अर्जी उसको दिखाई। अमीर-उल--मुल्कने हैदरको पास आनेके लिये कहा। आज्ञा पाकर वह निकट आया और अर्जी वजीरसाहबके हाथमें दी। वजीरसाहब मनलगाकर उस अर्जीको पढने लगे, इस ही समयमें दुष्ट हैदरने उसकी छातीमें छूरी मारी। तत्काल ही हुसेनअलीका मृतकशरीर पालकीसे नीचे गिरा। यह देखकर वजीरके अनुचरगण अत्यन्त क्रोधित हुए और उस ही स्थानमें हैदरके टुकडे २ कर डाले।

Elphinstone's Historyof India. P. 694.

उसके भ्राता अबदुल्लाको कैद करनेके लिये तैयार हुआ। दुष्ट वजीरने यह समाचार पाते ही दिल्लीके तख्तपर इब्राहीम नामक एक और मनुष्यको विठलाया और महम्मद-शाहको रोकनेके लिये युद्ध करनेको चला। इस संग्राममें राजपूतलोगोंने किसी पक्षसे भी शस्त्र नहीं पकडा था। अनन्तर दोनों दल मैदानमें आनकर सामने खडे हुए; परन्तु युद्ध शीघ्रतासे आरम्भ हुआ, कुछ काल बीता। दोनों ओरकी सेना ही युद्धके लिये अत्यन्त उत्कंठित हुई तदुपरान्त दीवान राजा रत्नचन्दको पकडकर उनका शिर कटवालेनेसे संग्रामके लिये दोनों ओरसे घोर उत्तेजना हुई। बहुत देरतक संग्राम होनेके पीछे, दिल्लीके सेनापति सआदतखाँने वजीरको पकडकर महम्मदशाहके शामने पेश किया, बादशाहने उसको तत्काल फांसीपर लटकाकर इस लोकसे विदा किया * सआदतखाँकी इस चेष्टासे बादशाह बहुत प्रसन्न हुआ। इसके लिये उसको बहादुरजंगकी उपाधि दी और अयोध्याका राज्य समर्पण कर दिया। राजपूत नृपतिगण विजयी बादशाहको बधाई देनेके लिये गये। राजाओंने इस युद्धमें किसी ओरका पक्ष ग्रहण नहीं किया था इस लिये बादशाह उनसे बहुत प्रसन्न हुए और इसके पुरस्कारमें अम्बेर और जोधपुरके राजाओंको कितने एक परगने दिये × गिरधरदासने + महाराष्ट्रियोंको आगे बढनेसे रोका था, इस लिये उनको मालवा दिया गया। और निजामको हैदराबादसे वजीर बनानेके लिये बुलाया।

भारतके घोर राजनैतिक विप्लवके समय मेवाडकी नीति सम्पूर्णतः भिन्न प्रकारसे ज्ञात हुआ करती है। जिस समयमें उनके सजातीय और आस पासके रहनेवाले राजा-लोग समयानुसार अवसर पाय, मुगलबादशाहतकी गडबडीमें पडकर सावधानीके साथ अपने २ राज्यको बढा रहे थे, उस समय मेवाडके राणागण आलसभावसे पडे हुए समय काट रहे थे। पराई उन्नति देखकर भी उनको डाह नहीं होता था। अम्बेरका प्रचंड प्रताप यमुना नदीके किनारे तक फैल गया था। इस ओर मारवाडके राजा अजयसिंहने अजमेर दुर्गके सौधपर अपनी विजयपताकाको उडा दिया और गुजरातके राज्यको छिन्नभिन्न करके अपनी विजयी सेनाको मरुभूमिसे द्वारकातक चलाया। ऐसे समयमें मेवाडके मध्य कुछ भी उत्कण्ठा दिखाई नहीं देती थी। मेवाडके राणा अपने * प्राचीन सामन्तराजाओंके साथ ही निश्चिन्त हो प्रसन्न रहते थे। इस प्रकारकी नीतिके व्यवहार करनेका मूल कारण खोजनेके लिये हमको अधिक दूर नहीं जाना पडेगा। केवल एकबार मेवाडकी प्राचीन नीतिका अनुशीलन करनेसे इसकी सत्यता हाथमें आ जायगी। जिस नीति और जिन संस्कारोंको अचल रखनेके लिये गिह्लौट वीरगणोंने प्रसन्नतासे अपने हृदयका रुधिर दान किया, कदाचित् पश्चात् उस नीति

* एलफिन्सटनसाहब लिखते हैं कि सैयद पढा, पवित्र वंशमें उत्पन्न हुआ था, इस कारण बादशाहने उसको नहीं मरवाया।

× जयसिंहको आगरा, व अजीतसिंहको गुजरात और अजमेर नगर मिला था।

+ गिरधरदास, रत्नचन्द्रके प्रधान कर्मचारी जुबीलराम नागर ब्राह्मणका पुत्र था।

* डुंगरपुर और बांसबाडा भी इसमें सम्मिलित था।

और उस संस्कारमें कुछ विघ्न पड जाय, या मुसलमानोंसे मेल करना पडे, इस ही भयके मारे वह अपना राज्य बढानेके लिये आगे नहीं बढते थे, तथा राजनीति विषयमें अपकर्ष सिद्ध होने पर भी उस नीति और संस्कारको नहीं छोड सकते थे। इस ही कारणसे उनके राज्यकी सीमा नही बढती थी। राज्यकी श्रीवृद्धि साधन करनेमें जो विरुद्ध सामन्त सम्प्रदाय भी प्रतिकूलाचरण किया करती थीं। इन दोनोंमें इतना विरोध था कि यदि एक दल किसी दूसरे राज्यको जीत लेता तो दूसरा दल उससे विरुद्ध कार्य किया करता था इस कारण पहिला दल पहले जीते हुए राज्यको छोड कर अपने देशमें लौट आता था। यहांपर एक ऐसा उदाहरण भी दिया जाता है। शक्तावत सर्दार साहसी जैतसिंहने राठौरोंके हाथसे ईडरदेश छीनकर कोलीबाडाके पर्वत प्रदेशतक समस्त भूमिको अपने अधिकारमें करलिया; फिर वह दूसरे देशोंको जीतनेके लिये आगे बढता था कि राणाजीने उसको युद्ध छोडकर उदयपुरमें लौट आनेकी आज्ञा दी। अतएव जैतसिंहकी जय असम्पूर्ण रह गई। इसका कारण यह था कि प्रतिद्वन्दी चन्दावत सर्दारने विद्वेषभावको ग्रहणकर राणाजीसे जैतसिं-हकी कुछ बुराई की थी, इस ही लिये राणाजीने शक्तावत् सर्दारको लौट आनेकी आज्ञा दी थी इसप्रकार परस्परके डाह और वैरभावसे ही मेवाडका भीतरी बल अधिकतासे हानि होगया था। इस समयमें मेवाडका कोई सामन्त भी अपने अधिका-रमें दुर्ग नहीं बनाने पाता था, इसका कारण यह था कि उसको तीन वर्षसे अधिकके लिये पट्टा नहीं मिलता था। भरण पोषणके लिये उनको भूसम्पत्ति दी जाती थी, देशकी पर्वतमाला उनको किलेका काम देती थी और सीमापर जो किले बने हुए होते थे, वही शत्रुओंसे उनकी रक्षा करते थे। जैसे २ मुगलोंका राज्य घटता गया--वैसे ही वैसे उनकी यह रक्षणनीति छूटती गई; परन्तु इसके थोडे दिन पीछे ही कठोर महाराष्ट्रीय और पठानगण जब प्रचंड वेगसे मेवाडभूमिमें घुसने लगे तब विवश होकर मेवाडके सर्दारोंने अपने देशको किलोंसे घेर दिया।

राणा संग्रामसिंहने अठारह वर्षतक राज्य किया था। मेवाडका सन्मान इनके समयमें अचल रहा था, तथा शत्रुओंने जो राज्य ले लिये थे वह फिर लौटा लिये गये थे। राणाजीने जो विहारीदास पांचौलीको अपना दीवान बनाया था इससे ही उनकी दूरदर्शिता और तीक्ष्ण बुद्धिका परिचय भलीभांतिसे प्राप्त होता है। विहारीदासके समान चतुर और विश्वासी मनुष्य इससे पहिले कभी मेवाडका मन्त्री नहीं बना था। इस बातकी सत्यता उनके समकालीन राजाओंके लिखे हुए पत्र पढनेसे भलीभांति जानी जायगी। विहारीदासने तीन राणाओंके राज्य तक अपने मन्त्री पदका भलीभांतिसे निर्वाह किया था। परन्तु राणा संग्रामसिंहके परलोकवासी होनेपर मेवाडमें जो प्रचण्ड महाराष्ट्रीय विप्लव प्रवाहित हुआ; उसकी तीक्ष्णधारको पंचौलीमंत्रीकी सहस्रों युक्तियें किसी प्रकारसे न रोक सकीं।

महाराणा संग्रामसिंहके चरित्र सम्बन्धमें बहुतसी बातें प्रसिद्ध हैं। उनका विचार करनेसे निश्चय होता है कि प्रजापालन, गृहपालन इत्यादि सब ही

विषयमें राणाजी विशेष पारदर्शी थे। राणाजी विज्ञ, न्यायी, दृढप्रतिज्ञ राजा जिस कार्यको आरंभ करते उसको बिना पूरा किये हुए नहीं छोडते थे; वह राजकीय और व्यवहारिक सब प्रकारका कार्य निर्वाह करते थे। यहांतक कि जिन बातोंमें वृथा ही बहुतसा व्यय हुआ करता था, उनको भलीभांतिसे परीक्षा करके खर्चको कम कर दिया करते थे। महाराणाजीकी कहावतोंमें जो बातें विशेष मनोहर ज्ञात हुई उनको ही आगे लिखा जाता है। मेवाडकी प्रथम श्रेणीके चौहानोंमें कोटारियोंके चौहान भी माने जाते हैं। राजसभामें इन लोगों की अत्यन्त प्रतिष्ठा थी। एक समय इन लोगोंने राणाजीके राजसाजको भारी करने की प्रार्थना की। प्रचलित शिष्टाचारके अनुरोधसे राणाजीने उनकी प्रार्थनाको स्वीकार किया। कोटारिया चौहानोंके आनन्दकी सीमा न रही। वह लोग इस बातका विचार करते २ कि राणाजीने हमारी प्रार्थनाको स्वीकार कर लिया--आनन्दके साथ अपनेको धन्यवाद देते हुए घरको गये। परन्तु राणाजीने अपने मंत्रीको बुलाकर आज्ञा दी कि " कोटारियोंकी जागीरमेंसे शीघ्र ही दो गांव अलग कर लो। " यह आज्ञा थोडे ही समयमें कोटारिया सरदारने सुना। उसने तत्काल राणाजीके गृहपर आय भयसहित पूछा " महाराज ! इस दीनसे कौनसा दुष्कर्म बनपडा जो श्रीमान्ने असन्तुष्ट होकर मुझे ऐसी दंडाज्ञा दी है। " राणाजीने मुस्कुराकर धीरे २ उत्तर दिया कि " कुछ भी नहीं रावजी ! तो भी जो आपने मेरे पहिरावके बढानेका अनुरोध किया है, मैंने भलीभांति विचार कर देखा कि इन दोनों गाँवों कि आमदनीसे ही इसका खर्च चल सकेगा। जब कि मेरी आमदनीका कुल रुपया अलग २ मदमें व्यय हुआ करता है, तब अपने बडे बूढोंके साज सरंजामके आडम्बरको बढाकर आपलोगोंका मनोभिलाष पूर्ण करना होगा, फिर यह खर्च आवै कहांसे इस कारण आपके दोनों गांवकी आमदनीके सिवाय यह खर्च और कहींसे नहीं किया जा सकता। " यह उत्तर सुनकर चौहान सर्दारके ज्ञाननेत्र खुल गए और उसने अपनी प्रार्थनाका प्रतिसंहार किया।

दूसरी कहावत।--स्मरणशक्तिकी हीनतासे अथवा भ्रान्तिसे एकबार राणाजीने स्वयं ही अपनी प्रतिष्ठित विधिका लंघन किया था। भोजनभवन, तोशाखाना और गुप्तकोषागार, रनिवास इन सबके खर्चको अलग २ भूमि नियत थी। इस भूमिको थुआ नामसे पुकारते थे। प्रत्येक थुआ एक २ कर्मचारीको सौंपा हुआ रहता था। इन कर्मचारियोंको थुआदार कहा जाता था, थुएदारलोग अपना २ हिसाब मंत्रीके पास दाखिल किया करते थे राणाजीने इनमेंसे एक थुएदारका एक थुआ अलग कर लिया था। परन्तु इसको वह भूल गए थे। एक समय राणाजी अपने सर्दारोंके साथ "रसोडा" भवन (भोजनागार) में भोजन करनेको बैठे। परोसनेवाला नियमानुसार सब पदार्थोंको परोसने लगा। क्रमानुसार दही परसा गया; परन्तु बूरा कोई न लाया। इसके लिये राणाजीने कार्य्याध्यक्षका तिरस्कार किया; तब उसने हाथ जोडकर विनीत भावसे उत्तर दिया कि " अन्नदाताजी ! मंत्रीसाहब कहते थे कि बूराके लिये जो गांव नियत

था उसको महाराजने अलग कर लिया ।" "ठीक है ।" राणाजीने प्रत्युत्तर दिया और विना कुछ कहे पूराविहीन दहीको ही भोजन कर लिया ।

तीसरी कहावत । कष्ट देनेवाले अप्राप्तव्यवहार कालके बीतजानेपर राणा संग्रामसिंह-ने राजकार्यके भारको ग्रहण किया था । पिताकी मृत्यु होने उपरान्त महाराजके बालिग होनेतक माताने ही राजकार्यको संभाला था । सिंहासनपर बैठनेके उपरान्त महाराणा संग्रामसिंहने किसी कारणसे दरियावतसर्दारकी भूमि सम्पत्तिपर राज्याधिकार कर लिया था । दोषीके अतिरिक्त राणाजी किसीको दंड न दिया करते थे, यह बात प्रसिद्ध थी । एकबार दंड देनेपर फिर वह किसीको क्षमा भी नहीं करते थे । अतएव कोई भी साहस करके उनके पास दरियावतसर्दारको क्षमा करानेके लिये नहीं गया । सम्पत्तिहीन सर्दारने बडे कष्टसे दो वर्ष वितायकर तीसरे वर्षके आरंभ में ही करुणाकी प्रार्थना करके बंदोरों * के द्वारा राजमाताके निकट एक आवेदनपत्र भेजा । उसने उस प्रार्थनापत्रमें दो लाख रुपयेका एक तमस्सुक भेजा था और पुरस्कारमें उन दासियोंको भी बहुतसा धन दिया था । दुहहारका भोजन करनेसे पहिले राणाजी प्रतिदिन माता-जीके चरणोंका दर्शन करनेके लिये जाया करते थे । एक दिन जब कि महाराज माता-जीके भवनमें गये तब उन्होंने उस सर्दारका प्रार्थनापत्र उनके हाथमें दिया और इस बातका विशेष अनुरोध किया कि उस सर्दारकी सम्पत्ति राज्यसे लौटाकर दे दी जाय । किसीको कोई भूमि सम्पत्ति दी जाती थी तो पहिले राणाजी मंत्रीको आज्ञा दिया करते थे । जिस दिन वह आज्ञा देते थे उस दिनसे पानेवालेके हाथमें दानपत्र पहुंचनेमें नियमानुसार आठ दिन लगते थे । कारण कि इन आठदिनके बीचमें उस दानपत्र पर आठ मोहर × छापी जाती थीं । मेवाडके राजकुलका यही सनातन नियम था । परन्तु राणा संग्रामसिंहने उस दिन इस नियममें फेरफार करके दर्यावद्को तत्काल ही दानपत्र देनेके लिये मंत्रीको आज्ञा दी । शीघ्र ही वह राणाजीके समीप आया । तब उन्होंने माताके हाथमें वह दानपत्र रखकर विनयसे कहा कि "यह दानपत्र उसको देकर तमस्सुक लौटा दीजो ।" तदुपरान्त राणाजी माताके चरणोंमें शिर नवायकर आशीर्वाद ले भोजन करनेको चले गये । दूसरे दिन एक घंटा पहिले भोजन सजानेकी आज्ञा देदी । परन्तु मातासे आशीर्वाद लेने न गये । इस बातसे सबको आश्चर्य हुआ;-परन्तु [illegible] माता [illegible] विस्मित होना राजमाताके विस्मित होनेसे कहीं घटकर था । वह दिन बीता, दूसरा दिन आया; तथापि माताको पुत्रका दर्शन प्राप्त न हुआ; अब तो उनका आश्चर्य शतगुण बढ गया । महारानीजीने पुत्रके पास आदमी भेजा; प्रत्युत्तरमें राणाजीने शिष्टाचारके साथ कहला भेजा कि "मुझको समय नहीं मिलता, इस कारण जानेमें असमर्थ हूं" पुत्रका विरागयुक्त भाव देखकर राजमाता अत्यन्त भयभीत हुई

---

* राजपूतबालाओंकी दासियें बन्दोर कहलाती हैं.

× मेवाडमें आठ मन्त्री हैं, जो नियमानुसार दानपत्रपर हस्ताक्षर किया करते हैं । इस ही भांति महाराष्ट्रियोंमें भी "अष्टप्रधान" विद्यमान थे ।

ऐसे चित्तविकारका कारण खोजने लगीं। अनन्तर उस "दानपत्र" के अतिरिक्त और कोई कारण नहीं देख पाया। यह जानकर मंत्रीसे अनुरोध करनेको कहा; परन्तु मंत्रीको महाराणासे कुछ कहनेका साहस न हुआ तब राजमाताने दूसरा उपाय अवलम्बन किया। परन्तु उनका वह उपाय भी न चला,-कोई चेष्टा फलवती न हुई। तब राजमाताजीके हृदयका शोक सीमासे बाहर होगया, हृदयमें क्रोधका संचार हुआ, विना ही अपराधके दासियोंको दंड देने लगीं-पश्चात् आहार करना छोड दिया। तथापि महाराणा संग्रामसिंहकी प्रतिज्ञा अचल और अटल रही। अनन्तर राजमाताजीने गंगास्नानको जानेका विचार किया, तीर्थयात्राकी सब तैयारियें हुईं; उनके शरीररक्षकगण सज्जित होकर चलनेकी बाट देखने लगे। विदाके समय पुत्रका मुखकमल देखनेकी इच्छासे कुछ विलम्ब किया, परन्तु संग्रामसिंह न आये। दुःखित होकर यात्रा की। सबसे प्रथम तो ब्रजकिशोर श्रीकृष्णजीकी पूजा करनेके अभिप्रायसे उन्होंने मथुराकी ओर जानेका विचार किया। जयपुरकी ओरको उनकी पालकी जाने लगी, इस नगरमें राजमाताजीका जामातृभवन था अतएव जानेके समय कन्या और जामाताके देखनेको महिषीने जयपुरनगरमें प्रवेश करनेके लिये कहा। महाराज जयसिंहने उचित आदर सन्मानके साथ (श्वश्रू) सासजी की अगवानी की और उनको अपने नये जयपुरनगरमें ले गये और प्रतिष्ठा बढानेके लिये सासकी पालकीके डंडेके नीचे क्षणभरको अपना कंधा लगाया।* सासके मुखसे सालेके मनोविकारका वृत्तान्त जानकर जयसिंहने उनको समझा बुझा ढाँढस बँधा कर कहा "मैं आपके सामने प्रतिज्ञा करता हूँ, कि जब आप तीर्थयात्रासे लौटैंगी, तब साथ ही उदयपुरमें जाकर राणाको मनाऊंगा।" तदुपरान्त तीर्थयात्राको समाप्त करके राजमाता अम्बेरको लौटीं और जामाताको साथ ले उदयपुरमें आई। राजपूतलोगोंमें अतिथि सत्कारका नियम अति कठोर है। अतिथि सत्कारमें साधारण त्रुटि होनेपर भी राजपूतगण उससे अपना घोर अपमान समझते हैं। राणा संग्रामसिंहने जयसिंहके उदयपुरमें आनेका अर्थ समझ लिया। वह जानते थे कि बहनोईका कहना किसीभांतिसे टालनेके योग्य नहीं है। इस कारण राणाजी पहलेसे ही तैयार होगये। उन्होंने जयसिंहको कहनेका अवसर भी न दिया और स्वयं ही माताके श्रीचरणोंका दर्शन किया। उनका हृदय माताके आचरणसे किंचित् दुःखित हुआ, यह बात राणाजीने किसीपर विदित न होने दी और आज भी उनका आशीर्वाद ग्रहण करनेको जानेके समय किसीसे कुछ नहीं कहा। प्रथमतः मानो जयसिंहका ही सन्मान करनेके लिये कितने एक अनुचरोंको साथ लिये हुए राजमन्दिरसे चले; परन्तु वहां जाकर सीधे माताके डेरोंकी ओरको गमन किया। समयानुसार माताके शिविरमें पहुँच कर उनके चरणोंकी वन्दना की और आशीर्वाद ग्रहण करनेके पीछे राजमन्दिर तक पहुँचा आये, फिर बहनोईका आदर सन्मान किया। इस सम्बंधमें उन्होंने केवल इतना ही कहा था कि "परिवारका क्लेश और झगडा परिवारमें ही छिपा रहना ठीक है।

---

* राजपूतोंकी यह सनातन रीति है।

चौथी कहावत ।-एक समय संग्रामसिंह मध्याह्नकालके भोजनपर बैठे थे, इतने हीमें समाचार आया कि मालवेके पठानोंने मन्दसोरप्रान्तके कितने एक खेडोंको लूटकर उजाड किया और वहाँके रहवासियोंको कैद करके मेवाडभूमिपर आक्रमण किया है। यह समाचार पाते ही राणा संग्रामसिंह भोजनको छोडकर तत्काल उठ खडे हुए और आचमनादि समाप्त करके अस्त्र शस्त्र सजाय वर्म धारण किया, फिर नगाडा बजानेकी आज्ञा दी; गंभीर ध्वनिसे नगाडेके शब्दने समस्त सर्दारोंको सजग करदिया। किसीको भी इस अचानक रणघोषणाका कारण विदित न हुआ। समस्त सेना शीघ्रतापूर्वक अस्त्र शस्त्र सजाय राजमंदिरके निकट आनकर खडी होगई। राणाजीने स्वयं सेनाके साथ जानेकी इच्छा प्रकाश की, परन्तु सबने उस समय एक वाणीसे यह कहा कि "महाराज! हमलोगोंके जीवित रहते एक साधारण शत्रुके दमन करनेके लिये श्रीमान्का समरक्षेत्रमें जाना ठीक नहीं और हम कदापि नहीं जाने देंगे, इससे आपके गौरवमें न्यूनता आवैगी।" सरदारोंका वाक्य राणाजीको ग्रहण करना पड़ा। सब ही युद्ध करनेको चले। सेनाके जानेपर कई घण्टे पश्चात् कानोड़का सरदार अस्त्र शस्त्र बाँधकर आया, इसका शरीर अत्यन्त रुग्ण था, बदन पीला और नेत्र ज्योतिहीन हो रहे थे, राणाजीकी आज्ञा पालन करनेके लिये ही वह सरदार अस्त्र शस्त्र बांधकर रणभूमिमें जानेके लिये आया था। सरदारकी ऐसी शोचनीय अवस्था देखकर राणाजीने बारम्बार उसे रणभूमिमें जानेके लिये निषेध किया, उस काल साहसी सरदारने गम्भीर स्वरसे कहा "महाराज! मुझको निषेध न कीजिये, हाथमें खड्गधारणकी शक्ति रहनेपर युद्धके समय किसी प्रकार निश्चिन्त न रह सकूंगा।" राणाजीने विवश होकर आज्ञा दी। जिस समय राजपूतोंने मुसलमानोंके साथ युद्ध आरंभ कर दिया उस ही समय तेजस्वी कानोडसर्दार उनके साथ जाकर मिल गया। राजपूतोंका प्रचंड विक्रम न सह सकनेके कारण यवनसेना पराजित होकर इधर उधर भागने लगी। परन्तु कानोड सर्दार इस युद्धमें मारा गया और उसका पुत्र घोररूपसे घायल हुआ। विजयी राजपूतगण विजयके आनन्दसे पुलकित होते हुए नगरमें लौट आये। तब राणाजीने रणपतित कानोडसर्दारके आहत पुत्रको अपने हाथसे "बीडा" * दिया। इस प्रकारके ऊंचे सन्मानको पाय कानोड सर्दारके घायल पुत्रने अपनेको कृतार्थ और धन्य मान आँसू भरकर कहा। "महाराज! आज मैंने पिताके जीवनके बदलेमें एक अमूल्य धन पाया।"

पांचवीं कहावत। एक समय एक खुशामदीने राणाजीके सामने बैठकर शालुम्ब्रा सर्दारके विरुद्ध उनके मनमें किसी प्रकारका सन्देह उपजानेकी चेष्टा की। परन्तु राणाने उसके कहनेका कुछ भी विश्वास न करके कहा "यह सन्देह निर्मूल है, यदि विश्वास करेंगे तो इससे रावतजीके ऊंचे हृदयका अपमान होगा।" रावतजीके प्रति उनका कैसा दृढ विश्वास था, उस पाखण्डीको यह दिखलानेके लिये ही राणाजीने

---

* मेवाडकी दूसरी श्रेणीके सर्दारोंको राणाजी अपने हाथसे बीडा नहीं देते। कानोडका सर्दार दूसरी श्रेणीका सर्दार था। राणाजीसे बीडा मिलनेके कारण उसके पुत्रको बहुत आनंद हुआ था।

शालुम्ब्रा सरदारको बुला भेजा। मालवराज्यमें यवनसेनाको जीतकर रावत शालु-म्ब्राजी देशमें लौट आये तथा इस राणाजीसे विदा लेकर घरको गये हैं। रात्रिका पहला पहर बीत गया है। रावतजीने अपने दुर्गद्वारपर पहुंचकर सिपाहियोंको अपने २ घर जानेकी आज्ञा दे दी और घोडेसे उतरकर महलकी ओर चले। अन्तःपुरके द्वारपर पहुंचे ही थे कि पहरेदारने आकर नम्रतासे कहा, "रावतजी! राणाजीने आपको अभि-वादन करके यह पत्र दिया है।" दीपकके उजालेमें पत्रको पढ़कर सरदारने अश्वपाल-कको घोडा तैयार करनेकी अनुमति दी। द्वारके सामने ही प्रेममयी स्त्री अपने प्यारे बच्चोंको लिये हुए सरदारका अभिनन्दन करनेको खडी थी। रावतजीने विचारा था कि सुकुमार बच्चोंको गोदमें लेकर थकावट दूर करेंगे, परन्तु सो न हुआ! तृष्णायुक्त नेत्रोंसे एक बार प्राणप्यारी वनिताके म्लायमान मुखकी ओर निहार, राजभक्त शालुम्ब्रा सर-दार केवल छः अनुचरोंको संग ले नगरकी ओर चले और जबतक नगरमें नहीं पहुंचे तबतक घोडेकी लगामको नहीं खींचा। रात्रि दो पहर बीत चुकी है; समस्त जगत् सुप्त है, प्रकृति स्थिर और गंभीर है, कहीं पत्ता तक नहीं हिलता। बीच २ में केवल झिल्लीकी झनकार और वायुका सन २ कार शब्द घोडोंकी टापध्वनिके साथ अनन्त आकाशमें प्रतिध्वनित होकर टकराता था। रावतजीका वासभवन शून्य था,—दास दासी या खाद्यपदार्थोंकी कुछ भी तैयारी न थी; परन्तु राणाजीने पहिलेसे ही समस्त तैयारियें कर रक्खी थीं। कारण कि उस निशीथकालमें उनका आगमन पुकारे जाते ही सरदार और अनुचरगणके लिये भोजनपानकी सामग्री उस वासभवनमें पहुंचाई गई। वाहनोंके लिये घास इत्यादिका प्रबन्ध हुआ। दूसरे दिन प्रभात होते ही शालु-म्ब्रा सरदार समयपर राजसभामें पहुंचा। राणाजी उसपर अत्यन्त प्रसन्न हुए थे। नियमित सन्मानके अतिरिक्त उन्होंने सरदारको उस दिन एक जमींदारी दान की। राणाजीका यह असीम प्रसाद पायकर शालुम्ब्रा सरदारको अत्यन्त आश्चर्य हुआ और इसका यथार्थ कारण जाननेके लिये गंभीरभावसे कहा "महाराज! मैंने ऐसा कौनसा असाध्य साधन किया है जिससे आपने आज ऐसा पुरस्कार दिया। और यदि कुछ किया भी है तो वह तो मेरा कर्त्तव्य ही था। कर्त्तव्यसाधनके लिये श्रीमानसे पुरस्कार कैसे लिया जा सकता है? मेवाडका मंगलसाधन करना बीरवर चंडके वंशधरोंका मुख्य कर्त्तव्य है। उस कर्त्तव्यके पालन करनेमें यदि मेरा प्राण भी चला जाय तो भी पुरस्कार लेना उचित नहीं। हे महाराज! इस पुरस्कारको लौटा लीजिये। चंडके वंशधरगण कर्त्तव्यपालनके लिये श्रीमान्से किसी पुरस्कारकी आशा नहीं करते हैं।" तेजस्वी शालुम्ब्रा सरदारने किसी प्रकार उस पुरस्कारको ग्रहण नहीं करना चाहा। पर-न्तु राणाजीका अत्यन्त आग्रह देखकर पुनर्वार कहा, "हे महाराज! राजप्रसाद न लेनेसे राजाका अपमान होता है, परन्तु इसके बदलेमें यदि श्रीमान् मेरा एक अनुरोध रख लें तो मैं अत्यन्त पुरस्कृत होऊंगा; वह अनुग्रह सदाके लिये हम लोगोंके स्मृतिपटपर अंकित रहैगा। आज राजभवनसे जो अनेक प्रकारके भोजन मेरे लिये आये, आगेको

श्रीमान् अथवा श्रीमान्का कोई वंशधर मुझको या मेरे किसी वंशवालेको पुनर्वार राजधानीमें बुलावें तो राजरन्धनशालासे इस ही प्रकारके खाद्य पदार्थ प्राप्त हुआ करे ।'' राणा संग्रामसिंहने हर्षके साथ सर्दारके अनुरोधको स्वीकार किया । उस ही दिनसे वीरवर चण्डके वंशवाले इस सन्मानको भोगते आते हैं।

इन बातोंसे संग्रामसिंहका महान् चरित्र भलीभांतिसे प्रमाणित होता है । अतएव इसके ऊपर कुछ मीन मेष लगाना ढिठाई करना है । उन्होंने अठारह वर्षतक राज्य करके भलीभांतिसे मेवाडका मंगलसाधन किया था । शत्रुओंसे देशकी रक्षा करनेको उन्होंने अठारह बार रणभूमिमें गमन किया था । यद्यपि संग्रामसिंहकी शासननीति अत्यन्त सीमाबद्ध थी, यद्यपि वह अपने बडे बूढोंके पुराने संस्कारोंको अल्प त्याग करके भी स्वदेशका अत्यन्त मङ्गल कर सकते थे; तथापि जो कुछ उपकार मेवाडदेशका उनके द्वारा हुआ था, उससे ही प्रजाका उनमें अत्यन्त अनुराग था । प्रजाका हितसाधन करने और कोरकसरको दूर करनेमें वह सदा ही दत्तचित्त और सावधान रहते थे । इस कारण स्वदेश और विदेशके सब ही स्थानोंमें उनका सन्मान था । महाराज बाप्पारावलके पवित्र वंशका ऊंचा सन्मान गिह्लौट वंशके जो भूपालगण अचल और अटल रख सके थे उनमें राणा संग्रामसिंहजी पिछले हुए, उनके परलोकवासी होनेके साथ ही मेवाडभूमिमें महाराष्ट्रोंकी प्रभुताका प्रारंभ हुआ । अब हम इस बातका वर्णन करेंगे कि उस प्रभुताके स्थापन होनेपर मेवाडका राजनैतिक स्रोत किस ओरको चला था।

राणा संग्रामसिंहके चार पुत्र थे उनमें बडा पुत्र जगत्सिंह (दूसरा) संवत् १७९० (सन् १७३४ ई.) में पिताके सिंहासनपर बैठा । इनके राज्यका पहिला कार्य राजपूतोंके तीन बलोंको एकत्र करना था । पहिले ही कह आये हैं कि दूसरे अमरसिंह राणाने इस बलका समीकरण किया था, फिर अजितसिंहकी विना विचारे कार्य करने (अविमृश्यकारिता) ने इस त्रिबलमें कुल्हाडी मारी की आज जगतसिंहने अमृतकुण्डका जल छिडककर फिर इसको जिलाया । तीनों राजाओंने जो वहांपर मौजूद थे, अपने २ देवताके नामसे शपथ करके कहा कि कोई भी मुसलमानोंके साथ विवाहादि सम्बन्ध न करेगा, और कभी कोई इस त्रिबल सन्धिको न तोडेगा । मेवाडके अन्तर्गत हुर्डा नामक नगरीमें उन तीनों राजाओंने अपने अपने सामन्तोंके साथ आकर इस सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर कर दिये । एक चित्तताको अटल रखनेके लिये एक नायकका प्रयोजन था; इस कारणसे सबने ही यह ऊंचा पद राणा जगत्सिंहको दिया और उनको ही समस्त राजपूत सेनाका अधिपति बनाया । क्रमानुसार सेना इकट्ठी होने लगी । सबने सन्मुख ही वर्षाऋतुका आगमन जानकर निश्चय करलिया कि वर्षाऋतुके व्यतीत होनेपर श्रीमान् राणा जगत्सिंहजी अपनी विशाल राजपूत अनीकिनीको साथ

ले मुगलोंसे संग्राम करने जायँगे । * युद्धकी सम्पूर्ण तैयारियें होगई । परन्तु अभाग्यसे यह कार्य फलीभूत न हुआ । तैयारियें होते २ ही फिर यह सन्धिपत्र शिथिल हो गया सब राजा अलग २ हुए । सामर्थ्यप्रियता राजपूतोंका एक सुन्दर गुण है, परन्तु समय २ पर इसका फल बुरा भी होता है । आज राजस्थानके अभाग्यसे इसने ही विषमय फल उत्पन्न किया । राजपूतोंकी ऐक्यता छिन्न भिन्न हो गई । मुगल बादशाहीकी अवनतिके समय अम्बेर और मारवाडके राजालोग बहुत ही बढ गये थे यहांतक कि मेवाडवालोंकी बराबरी करने लगे थे । सूर्यवंशीय महाराज कनकसेनके वंशधरगण

---

* सन्धिपत्र ।

राणाजीकी मनोहर ।

श्रीएकलिङ्ग
(क)

मान्यता ।	मान्यता ।	मान्यता ।
सीतारामो जयति. (ग)	व्रजाधीश. (ख)	अभयसिंह. (घ)

स्वस्तिश्री-ऐक्यताबद्ध चार राजाओंके द्वारा निम्नलिखित संधिपत्र स्वीकृत हुआ । इसकी विधिमें किसी प्रकारका व्यभिचार न होगा । संवत् १७९१ श्रावण शुद्ध १३ (सन् १७३५) मुकाम हुर्ला ।

(१) सम्पद् विपद्में सब ही ऐक्यताके सूत्रसे बंध गये । इस सम्बन्धमें सबने शपथ करके परस्पर एक दूसरेपर अपना विश्वास स्थापन किया । आगेको कोई भी इससे अलग नहीं होगा । जो कोई इसके विरुद्ध कार्य करेगा वह सबके विश्वाससे भ्रष्ट होगा । एकका जो मान है वही सबका मान है, एककी जो लाज है, वही सबकी लाज है; एकका अपमान दूसरेका अपमान है । इसमें सब कुछ आ गया ।

(२) जो कोई एकको विश्वासघातक जान पडेगा; उसको कोई भी विश्वास न करेगा । वह किसीके निकट आश्रय न पावेगा ।

(३) वर्षाकाल बीत जानेपर कार्यका आरंभ होगा । प्रत्येक सम्प्रदायके मुखियाको सेनासहित रामपुरमें पहुँचना होगा । यदि किसी कारणसे सरदार स्वयं न आ सके, तो वह अपने कुमारको अथवा किसी ऊंचे कर्मचारीको भेजे ।

(४) उस कुमारसे अनुभव न होनेके कारण जो कुछ भूल हो जाय उसको सुधारनेका अधिकार राणाजीके अतिरिक्त और किसीको नहीं होगा ।

(५) प्रत्येक महान् कार्यमें सब ही एक साथ मिलकर इन समस्त नियमोंके पालन करनेको बाध्य हैं ।

(क) एकलिङ्ग या महादेवजी सिशोदियावंशके कुलदेवता हैं ।

(ख) व्रजाधीश श्रीकृष्णजीका नाम है यह मारवाडस्थ हाड़ावंशके कुलदेवता हैं ।

(ग) सीताराम यह अम्बेरराजवंशके देवता हैं । इस राजवंशकी मूलपीठिका भगवान् रामचन्द्रजीसे आरंभ है ।

(घ) अभयसिंह मारवाड़का एक राजकुलीन पुरुष था ।

राजस्थानके अन्यान्य राजपूतोंपर अचल प्रधानता भोगते आये हैं, परन्तु उन्होंने किसी समय भी सबकी इकट्ठी सहानुभूतिको नहीं पाया । यह महान् अभाव ही उनकी ऐक्यतामें मुख्य विघ्न था । इस अभावके कारण ही वह स्वाधीनतासे अलग हो बैठे । यह महान् अभाव ही उनकी सामर्थ्यप्रियताका विषमय फल हुआ । इस ही प्रवृत्तिसे उक्साकर वह अपने २ स्वार्थकी रक्षा करनेको एक दूसरेके विरुद्ध अगणित समर किया करते थे कि जिनका वर्णन पहिले कर आये हैं । मेवाडके राजालोग जिस प्रकार सब भांतिसे उनके शिरमौर थे वैसे ही यदि वह भी उनको अपना अपना अगुआ मानकर एक साथ मिल बैठते तो भारतकी ऐसी दुर्दशा क्यों होती ? फिर तो किसी प्रकारसे भी विदेशी मुसलमान लोग भारतरत्नको नहीं लूट सकते । परस्परकी फूट और परस्परके वैरने ही भारतका सत्यानाश कर दिया । यह ठीक है कि राजपूत लोग स्वाधीनताको प्यारा समझते हैं, परन्तु जिस महान् सामग्रीसे जातीय स्वाधीनता प्राप्त होती और जिसके द्वारा उसकी रक्षा होती है, राजपूतोंमें वह सामग्री नहीं है । यही कारण है जो उनकी स्वाधीनताकी लालसा कभी फलवती नहीं हुई । आज राणा जगत्सिंहके समयमें--मुगल शहन्शाहीकी बुरी हालतके वक्तमें--सरलता और सुभीता होनेपर भी स्वाधीन होनेकी चेष्टा और ऐक्यताका परिश्रम सब ही विफल हो गया ।

निजामउलमुल्क--अधीनताकी जंजीरको तोडकर पूरा स्वाधीन बन गया था । बादशाह देहलीका सेनापति * निजामको दमन करनेके लिये जाकर स्वयं ही उसकी क्रोधाग्निमें भस्म हो गया था । चतुर निजामने उस अभागे मुगल सेनापतिका शिर काटकर बादशाहके पास भेज दिया और कहला भेजा कि "यह नालायक बागी हो गया था इस ही लिये इसका शिर काटकर हुजूरकी कदमबोसीमें रवाना किया है।" हीनबल महम्मदशाह निजामुलमुल्कके आशयको भलीभांतिसे समझ गया, परन्तु चारा क्या था, अपने राज्यकी स्वाधीनताको दृढ करके निजामने राजपूतोंके साथ मेल किया और मालवे तथा गुजरातमें मरहटोंकी विजयिनी सेनाको चालित करनेका उत्साह दिलाया इसके अनुसार महाराष्ट्रीय वीर बाजीरावने अपनी सेनाको साथ ले सबसे पहिले मालवेको घेरा और वहांके हाकिम दयाराम बहादुर × को युद्धमें संहार करके निजामकी अभिलाषा पूर्ण की । इसके उपरान्त अम्बेरके राजा जयसिंहको मालवेका राज्य दिया गया, परन्तु उन्होंने ग्रहण न करके बाजीरावको ही फेर दिया इस प्रकारसे मालवको राज्य मरहटोंके हाथ लगा । गुजरातका राज्य भी शीघ्र इस ही दशाको पहुंच गया । पहिले यह राज्य बादशाहने राठौरोंको दे दिया था, परन्तु राठौरोंने अपनी प्रतिज्ञाका पालन नहीं किया, इस कारण अजितसिंहके पुत्र अभयसिंहने उस

---

* इस सेनापतिका नाम मुबारिज़खाँ था । प्रथम तो निज़ामने चालाकी करके मुबारिज़खाँकी सेनामें फूट डलवानी चाही थी । परन्तु वह चेष्टा फलवती न हुई, इस कारण फिर प्रगट युद्ध करके उसको पराजित किया ।

(Elphinstone's History of India. P. 698.)

× दयाराम बहादुर मालवेके पूर्व शासनकर्त्ता गिरधरसिंहका भतीजा था ।

राज्यको घेरा और वहांके हाकिम सर बुलंदखाँको निकाल दिया। उस मौकेको अच्छा समझकर मरहट्टोंने राठौरोंके जीते हुए गुर्जरराज्यको अपने अधिकारमें कर लिया। राठौरराज्य अभयसिंहने इसको देखकर भी अनदेखा किया * उन्होंने केवल उस देशके उत्तरी परगनोंको ही अपने अधिकारमें कर लिया।

जिस समय दाक्षिणदेश और राजस्थानकी यह दशा हो रही थी उस समय बंगाल, बिहार और उडीसाके राज्यमें शुजाअ-उद्दौला अपने मशीर अलीवर्दीखाँके साथ अचल प्रभुताको भोग रहा था। इस ओर अयोध्याराज्यमें सआदतखाँका पुत्र सफदरजंग दृढभावसे विराजमान था। यद्यपि बादशाहकी प्रसन्नतासे ही सआदतखाँने अयोध्याका सिंहासन पाया था, परन्तु इस कृतघ्नीने शीघ्र ही इस पवित्र प्रसादका बदला एक घृणित और निन्दितकार्यके द्वारा चुकाया। सआदतखाँ कृतघ्न और विश्वासघातक था। इस दुराचारीने ही परमअत्याचारी नादिरशाहको भारतवर्षमें बुलाकर देहलीकी बादशाहतका सत्यानाश किया था।

मालवे और गुजरातमें जब महाराष्ट्रियोंकी प्रभुता दृढ हो गई तब विजयी मरहट्टोंने और और स्थानोंमें अपना पाँव गडानेकी इच्छा की और टीडीके समान नर्मदा नदीके पार हो उत्तरी देशोंपर टूटने लगे। उनकी विक्रमाग्निके प्रचण्ड प्रभावसे अनेक साधारण जातियें भी—जिनका अवतक कोई नामतक भी न जानता था—जोशमें आकर अपनी सेनाको बढाती हुई प्रतिष्ठा प्राप्त करने लगीं। उस काल शान्तजीवन भलेमानस किसान × लोग भी हल और गोधनको छोड कर तलवार हाथमें लेने लगे घोडोंपर चढने लगे और अजपालक अपने पेंने (पशु हांकनेकी लकडी) को छोडकर तेज भाला हाथमें लेने लगे। हुलकर, + सेन्धिया, पवाँरगण ? उन सम्प्रदाओंमें विशेष प्रसिद्ध है। इस प्रकारसे विपुल सेनाको प्राप्त किये हुए वीर राष्ट्रीय लोग हनिबल राजपूतोंके राज्यको घेरने लगे, उन देशोंको लूटते हुए उजाडने लगे फिर वहां ही रहने लगे। प्रयोजन अथवा सुयोग पाकर जबतक वह एक ही और एक झंडेके नीचे खडे होकर लडाई करते थे, तबतक कोई भी उनके प्रचण्ड प्रभावका सामना

---

* अभयसिंहने सहजसे ही गुजरातको नहीं छोड़ा था। इसके लिये उसको बहुत हानि उठानी पडी थी। अप्रैल सन् १७३१ में प्रचंडवीर बाजीरावने जब दोवारीको परास्त करके गुर्जरराज्यपर अधिकार किया तब इसका शासनभार पिलाजी गायकवाडको समर्पण किया गया। पिलाजी, गायकवाडियोंका पूर्व पुरुष था। अभयसिंहने गुप्तरीतिसे इसको मारकर गुजरातपर अधिकार किया था। पिलाजीके अन्यायरूपसे मारे जानेपर उसके पुत्र और भ्राताने अत्यन्त क्रोधित हो अभयसिंहपर चढाई की। उस चढाईको न रोक सकनेके कारणसे राठौरराजने विवश होकर गुजरातके राज्यको छोड़ दिया।

(Elphinstone's History of India. P. P. 703-705

× सेंधियाके बडे बूढे किसान थे।

+ हुलकर गड़रिया था।

? मालवेपर हमला करनेके समय बाजीरावने ऊदाजी पवार, मल्हारराव हुलकर और रणजी सेंधियाके ऊपर सेना चलानेका भार दिया था। समय पाकर यही लोग प्रधान हो गये और एक एक विख्यात वंशको प्रतिष्ठा की।

नहीं कर सका था। वीरवर बाजीराव (पहिला) ने महाशक्तिको सिद्ध करके उस महान् महाराष्ट्रीय बलके अपने हाथसे शृंखलित किया था, सन् १७३५ ई० में वह सबसे पहिले चम्बलनदीके पार हो दिल्लीके सिंहद्वार पर आ डटा। उसके कठोर विक्रमसे वह नगरी अत्यन्त ही उलट पुलट हो गई। फिर निर्बल बादशाहने चौथ देकर कठोर पीडासे छुटकारा पाया। बादशाहकी यह कायरता देखकर निजामके मनमें अनेक प्रकारके सन्देह होने लगे। बादशाहको जीतकर कदाचित् महाराष्ट्रीय लोग निजामराज्यपर आक्रमण करें इस भांति विचार कर निजामने महाराष्ट्रियोंको मालवेसे निकालनेका निश्चय कर लिया। उसके मनमें दृढ धारणा हो गई कि अगर महाराष्ट्रीय लोग मालवेमें भलीभांतिसे जम जायँगे तो फिर वहांसे इन लोगोंका निकालना कठिन होगा और फिर यह हमारे उत्तरदेशके सम्बन्धको एकदम तोड देंगे। यह विचार कर निजामने मालवे पर आक्रमण किया और बाजीरावको पराजित करके अपने खटकेको दूर हटाया। विजयी निजाम पराजित महाराष्ट्रियोंको वहांसे निकालनेकी तैयारीमें था ही कि उसने प्रचण्ड वीर महा अत्याचारी नादिरशाहके भारतवर्षमें आनेका समाचार पाया। यह सुनकर निजाम–उल–मुल्क अत्यन्त भयभीत हुआ और मरहटोंको छोडकर अपने राज्यमें चला आया। जिस समय * नादिरशाहको प्रचण्ड तुरहीका शब्द भारतवर्षके पश्चिम प्रान्तमें सुनाई दिया; उस काल मुगलबादशाहके विक्रमकी आग सम्पूर्णत: निर्वाण हो चुकी थी, नादिरशाहके बिगुलको सुनकर सम्पूर्ण भारतवर्ष बारम्बार इस प्रकारसे कांपने लगा कि जैसे भूचालसे पृथ्वी कांपा करती है। अभागे महम्मदशाहका रत्नमुकुट सहसा सिरसे उतरकर पृथ्वीपर गिर पडा! न जाने बारम्बार कहांसे रोनेका विकट शब्द सुनाई पडने लगा। इस संकटकालमें मुगलराज्यके इस अनिवार्य अध:पतन समयमें--अभागे महम्मदशाहने "राजपूतजातिके विक्रमपर बहुत कुछ आशा की थी।" परन्तु उसकी कोई आशा भी फलवती नहीं हुई। जिन राजपूतोंके बलकी सहायतासे भारतकी छातीमें मुगलोंका तख्त स्थापन हुआ था। जिन्होंने उस सिंहासनको अचल रखनेके लिये इतने दिनोंतक प्रसन्न हृदयसे अपना रुधिर बहाया था, आज उस ही सिंहासनपर संकट पडनेके समय उनमेंसे किसीने भी उसकी रक्षा करनेके लिये खड्ग नहीं पकडा। इस ही कारणसे करनालके भयंकर युद्धमें मुगलोंका "तख्ततांउस" छिन्न भिन्न हो गया और उसके साथ ही भारतकी होनहार कठोर रेख भी अभागे महम्मदशाहके माथेपर प्रकाशित अक्षरोंसे लिखी गई।

करनाल युद्धके शोचनीय परिणामसे निजाम और सआदतखाँको अत्यन्त भय हुआ। यह दोनों उस विजयी प्रचंड वीरकी सेनाको रोकनेके लिये मुगलोंसे मिल गये। परन्तु

* टाडसाहब कहते हैं कि सन् १७४० ई० में नादिरशाह भारतमें आया था। परन्तु एलफिंस्टनने नादिरनामा इत्यादि ग्रंथोंका अवलम्बन करके अपने बनाये भारतके इतिहासमें वर्णन किया है कि नादिरशाह सन् १७३८ ई० के नवम्बर मासमें भारतपर चढकर आया था।

यहां भी अभिप्राय सिद्ध न हुआ। अमीर-उल-उमरा तो संग्राममें मारा गया और महम्मदशाह् अपने वजीरके साथ नादिरशाहकी कैदमें हुआ। पाखण्डी वजीरकी कृतघ्नता और विश्वासघातकतासे आज दिल्लीके बादशाहकी ऐसी अवस्था हो गई। हतभाग्य महम्मदने संधिके लिये निजामको दूत बनाकर नादिरशाहके पास भेजा। एक प्रकारसे संधि भी हो गई परन्तु दुराचारी सआदतखाँने चाल चलकर सब बातोंको रद्द कर दिया और अपने पांवमें ही स्वयं कुल्हाडी मारी। सआदतखाँने नादिरशाहसे उसका लोभ बढानेके अभिप्रायसे कहा। "निज़ामने हुज़ूरको धोका दिया। खज़ानेमें इसकी बनिस्बत कहीं ज़ियादा दौलत है।" इस पापीने यह भी कहा कि "निजामने बदलेमें जितने रुपयेके देनेका वायदा किया है इतना तो वह सिर्फ अपने ही खजानेसे दे सकता है।" इस दुष्टके कहनेपर नादिरशाहको भलीभांति विश्वास होगया। उसका लोभ हज़ारगुणा बढा। निजामके साथ जो संधि हुई थी उसको तोडकर दिल्लीके खजानेकी समस्त कुंजियें माँगीं। अभागे महम्मदशाहका सुखस्वप्न टूटा, अर्थपिशाच नादिरके स्वीकार पत्रपर विश्वास करके उसने समझा था कि अब अधिक कष्ट न होगा, परन्तु यह उसकी भूल थी। सन्धिपत्र छिन्न करते ही दुष्ट नादिरशाह विजित दिल्लीश्वरको महादंभके साथ अपने डेरोंसे निकालकर ले गया और वीरवर तैमूरके सिंहासनपर बैठकर सन् १७४० ई० में मार्चकी ८ तारीखको अपना सिक्का चलाया। उस पर लिखा हुआ था;-

दो०-"शहन्शाह सब जगतको, नादिर है महाराज।
राजनको अधिराज है, समय नियामक आज॥

यद्यपि मुगललोगोंके यहाँ बहुतसा रुपया परस्परके विवाहमें खर्च हो गया था यद्यपि प्रतिद्वन्द्वी राजकुमारोंने अदूरदर्शीमें बहुतसे धनको स्वाहा कर दिया था, तथापि जो धन उस समय खज़ानेमें था * उसके प्राप्त होनेसे साक्षात् लोभकी भी तृप्ति हो जाती परन्तु आश्चर्यका विषय है कि दानव नादिरशाहका लोभ उस विपुल धनको पाकर घटनेकी जगह बढता गया! तब उसने चारों ओर ढोंडी फेर दी कि विना (२॥) ढाई करोड रुपयेके और पाये हुए मैं हिन्दोस्थानको नहीं छोडूंगा; अतएव जिस प्रकारसे हो शीघ्र इस रुपयेको अदा करना चाहिये। इस घोषणापत्रके पाते ही यमदूतके समान ईरानी लोग हाथमें तलवार लिये चारों ओरको धाये और कठोर अत्याचारके साथ २ पशुओंके समान आचरण करके नगरवासियोंका धन लूटने खसोटने लगे। उनके अत्याचारसे नगरमें हाहाकार मच गया। नगरनिवासी व्याकुल होकर इधर उधर भागने लगे। परन्तु भागकर जायँ कहां? कौन उनकी रक्षा करे? कोई भी नहीं,

* नादिरशाह भारतवर्षसे कितना धन ले गया था, अनेक ग्रंथोंमें इसका भिन्न २ मत है। टाडसाहब कहते हैं नगद रुपया और सोना चांदी व जवाहरात [illegible] माल कुल चालीस करोड; नादिर नामेका लेखक १५ करोड़, हानवे ३० करोड़ और फ्रेज़र भी ३० करोड़ बतलाता है।

ईरानियोंके सामने आज समस्त वीर लोगोंका बाहुबल निकम्मा हो गया! अतएव बचा-नेवाला अब कोई भी नहीं है ! सब ही अपनी २ रक्षा करनेके लिये इधर उधर भाग रहे हैं । ऐसा साहस किसीमें नहीं जो इन राक्षसोंके अत्याचारको रोके । भागनेसे भी अभागोंका निस्तार नहीं होता । पिशाचगण पीछे दौडकर उनका साधारण सहारा-केवल मार्गव्यय भी छीन लेते हैं;-उनकी प्राणप्यारी स्त्रियोंपर कठोर अत्याचार करते हैं! हाय! आज दिल्लीनगरमें प्रलयकाल उपस्थित है ! आज नगरवासियोंका प्राण और नगरवासियोंकी मानमर्य्यादा कठोररूपसे बोती जा रही है। उनका सर्वस्व लुट रहा है! ऊंचे पदके मनुष्य अपमानकी अपेक्षा मरनेको अच्छा समझते हैं। ऐसे लोगोंने पाखंडियोंसे रक्षाका कोई उपाय न देखकर पहिले तो अपनी स्त्रियोंको मार-डाला और तदुपरान्त उस शोकानलमें अपने प्राणोंको होम कर दिया । सिद्धान्त यह है कि आत्महत्याके सिवाय उस भयंकर अपमानसे बचनेका दूसरा कोई उपाय भी न था इसही भयंकर प्रलयकालमें यह 'अफवाह' (किंवदन्ती) उडी कि, राक्षस नादिरशाह मारा गया । पल भरमें यह बात चारों ओर फैल गई । तत्काल अनेक नगर-वासी नंगी तलवारें हाथमें लिये हुए इधर उधर मतवालोंके समान घूमते हुए दुष्ट ईरानियोंपर टूट पडे । किसीको अपने प्राणोंका मोह नहीं, कोई अपने इष्ट मित्र और सम्बन्धीका ध्यान नहीं करता, सब ही पाखंडियोंसे बदला लेनेके लिये उन पर टूटे और ऐसे संहार करने लगे कि जैसे कोई भेड बकरियोंको छांटता है । उस समय दोनों दलमें घोर घमसान होने लगा। ईरानी और नगरवासियोंके छिन्नभिन्न देहसे दिल्लीकी गलियें ढक गई * खूनके बहनेसे मार्ग और गलीकूचोंमें कीचड हो गई । जैसे ही यह समाचार नादिरशाहने सुना वैसे ही वह राक्षस एक मसजिदके ऊंचे मीनारपर चढकर अपनी निरुत्साहित सेनाको घोर उत्साह देने लगा और नगरके बूढे, जवान, बाल, बच्चे, स्त्री, पुरुष, सबको ही संहार करनेकी आज्ञा दे दी । इस भयंकर आज्ञाका प्रचार होते ही पिशाच नादिरशाहकी पिशाचसमान सेना नगरके द्वार २ पर जायकर सबको इस प्रकारसे बध करने लगी कि जैसे कसाई पशुओंका वध करता है । रोनेके शब्द और आर्त्तनादसे नगर गुंजारने लगा " नगरकी गलियोंमें रुधिरकी धार बहने लगी । " इन पिशाचोंने नगरवासियोंका सर्वस्व लूटकर प्रत्येक गृहमें आग लगा दी । यह रा-क्षसगण उस लपट उठती हुई अग्निमें मरे अधमरे और जीवित मनुष्योंके शरीरोंको डालने लगे! आज दिल्लीनगरी भयङ्कर श्मशान बन गई है;-श्मशानसे भी भयंकर-नरक-कुण्डके समान उसका दृश्य हो गया है × इस वीभत्स और शोकोद्दीपक तथा जघन्य-

* हाजिन नामक एक मुसल्मानने अपने नेत्रोंसे यह संहार देखा था, वह कहता है कि क्रोधित हिन्दु-ओंने ७०० ईरानियोंको मारा था । इसके बताये हुए ग्रंथका बेलफोर साहबने अङ्गरेजीमें अनुवाद किया है; इसमें ७००० का अंक पाया जाता है । एलफिनष्टन साहब कहते हैं कि यह छापेकी भूल है । इस ओर स्काट साहबने अपने इतिहासमें १००० लिखा है ।

× इस हत्याके रोकनेके मौलिक वृत्तान्तमें भिन्न भिन्न भाव पाये जाते हैं। कहते हैं कि जब ईरानी सेना दिल्लीवालोंपर ऐसा कठोर अत्याचार कर रही थी उस समय नादिरशाह बडे बाजारकी "रकमउद्दौला"-

कार्यके अभिनयमें यदि कुछ सन्तोषकर दृश्य पाया जाता है तो वह केवल दुराचारी सआदतखांका शोचनीय परिणाम है।

इस लोमहर्षणकारी घोर बधके समय नादिरशाहने पाखण्डी सआदतखाँके मन्त्रीको आज्ञा दी कि "तुम्हारी और सआदतखाँकी जो कुछ दौलत हो, उसके एक ठीक फह-रिस्त मैं इस ही वक्त देखना चाहता हूं, अगर इस फहरिस्तको नहीं दिखाओगे तो मैं तुम्हारा शिर कटवा डालूंगा।" तदुपरान्त निजामने जो ढाई करोड रुपये पणमें देने स्वीकार किये थे, नादिरशाहने इन रुपयोंको केवल वजीरसे ही लेना चाहा। इस कठोर आज्ञाको सुनते ही सआदतखाँको चारों ओर अन्धकार दिखाई दिया। उसको निराशाने आ घेरा। इस दुराचारीने मदमत्त होकरके अपने पांवमें आप ही कुल्हाडी मारी थी, आज उसका पाँव दुःख देने लगा। आज उसके ज्ञाननेत्र खुल गये; आज समझा कि नादिरशाहको बुलाकर मैंने स्वयं ही अपना नाश किया। जिस ओरको देखता उस ही ओरसे भयंकर दृश्य दिखाई देते थे; उस ही ओरसे यमदूतगण उसका संहार करना चाहते थे। इस विकट दुःखसे छुटकारा पानेके लिये ही अथवा नादिर-शाहकी क्रोधानलसे बचनेके लिये अभागे सआदतखाँने जहर खाकर परलोकका मार्ग लिया * उसके दीवान राजा मजलिसरावने भी विष पान करके स्वामीका अनुगमन किया। इस भयंकर नाटकका पिछला अंक इस प्रकारसे अभिनीत होनेपर राक्षस ना-

---

—नामक छोटी मसजिदमें चुपचाप गंभीर भावसे बैठा था। अनन्तर महम्मदशाह अपने सर्दारोंके साथ वहांपर पहुँचा। जब बादशाह शिर झुकाये बहुत देर वहां खडा रहा तब नादिरशाहने आज्ञा दी कि जो कुछ कहना है सो कहो, तब महम्मदशाहने आंखोंमें आसू भर कर विनय सहित प्रार्थना की कि "मेरी रइयतकी जां बखशी फरमाई जावे। इस लोमहर्षण संहारके वर्णनमें जितने लेख पाये जाते हैं, उनमें हाजिनका प्रमाण सर्वोत्तम है। हाजिन अपने नेत्रोंसे देखकर जो कुछ वर्णन कर गया है "शेरुलमुता-क्सरीज" नामक ग्रंथके रचयिताने बात २ में उसकी नक्किल की है और सरबुलन्दखाँके पास जो हिन्दू कारिन्दा था उसने उक्त हाजिनके विवरणको संग्रह करके एक पुस्तक बनाई थी। "नादिरशा-हका इतिहास" नामक ग्रंथमें फेजरसाहबने आद्योपान्त उसके अवलम्बनसे लिखा है। हाजिन कहता है कि आधे दिनतक यह हत्या होती रही थी और उसमें बहुत ही आदमी मारे गये थे। फेजरका अनु-मान है कि १२०००० और १५०००० के लगभग, और नादिर नाम ग्रंथका लेखक कहता है कि प्रायः सारे दिन ही यह भयंकर खूनखराबी होती रही है और अत्याचारियोंने उस दिन ३०००० आदमियोंका प्राण संहार कर डाला था। स्काटसाहवने दृढतासे प्रमाण दिया है कि केवल ८००० मनुष्य मारे गये थे परन्तु यह उन्होंने अपने ग्रंथमें नहीं लिखा है कि ऐसा प्रमाण कहांसे मिला। स्काट साह-बके लेख पर एल फिनस टोह साहबने अविश्वास किया है। वह कहते हैं कि बीस हजार बधिकोंने इतने समयमें केवल आठ हजार आदमियोंको भी मारा, इस बातका विश्वास कैसे किया जा सकता है।"

f[pdnioDlhiustone' sHistaory

* डौ साहवकृत "हिन्दुस्तान" नामक ग्रंथमें नादिरके आक्रमणकी कई एक कथा लिखी हैं। उन कथाओंमें लिखा है कि सआदतखाँ और आसफजा इन दोनोंने ही नादिरशाहको हिन्दुस्तानमें बुलाया—और इन्हीं दोनोंकी विश्वासघातकतासे कर्नालकी लडाईमें बादशाह हारा था। कहते हैं कि नादिरशाहने

दिरशाहने अभागे महम्मदशाहका दिया हुआ सन्धिपत्र ग्रहण किया और भारतवर्षका सर्वस्व लूटकर वसन्तकालमें श्मशानके समान दिल्लीको छोडकर अपने देशको सिधारा * । इस पत्रके अनुसार कावुल ठट्ठा सिन्ध और मुलतान आदि समस्त पश्चिमका राज्य ही नादिरशाहको दिया गया जिसको उसने ईरानमें मिलाया । इस विप्लव

—इन दोनोंकी डाढीपर थूका और सभासे निकलवाया । राजसभामें इस प्रकारका अपमान होनेसे ही इन दोनोंने आत्महत्या करके सांसारिक कष्टोंसे छुटकारा पाया । यह दोनों परस्पर प्रतिद्वन्द्वी और अविश्वासी थे । दोनों एक दूसरेके यहां गुप्तचर भेजा करते थे कि दूसरा क्या कर रहा है । आसफजा बडा चालाक था; वह एक प्रकारका स्वल्पहानि करनेवाला विष खाय छलसे मृतकके समान गिर पडा । मूढ और अभागे सआदतखांने उसको मृतक समझ कठोर कालकूट खाया और शीघ्र ही मर गया ! E. H. I. (P. 720)

* विदाका समय जितना ही निकट आता था इन राक्षसोंकी निठुरता उतनी ही बढती थी । इसके सम्बन्धमें एक प्रत्यक्ष देखनेवालेने जो कहा है वह प्रमाणके लिये यहांपर लिखते हैं "गत दिवसकी यंत्रणामयी स्मृतिने नगरवासियोंको भयंकर विपत्तिमें डाल दिया । अबतक तो केवल "कतलेआम" था; परन्तु इस वक्तसे "कतलेखास" होना आरंभ हुआ । नगरके प्रत्येक गृहसे हृदयभेदी आर्तनाद और रोनेका शब्द सुनाई आने लगा । वृत्तिविभागके कर्मचारी वसंतरायने कठोर अपमानसे छुटकारा पानेका कोई उपाय न देखकर पहिले तो सारे कुटुम्बको मार डाला और फिर इस शोकाग्निमें अपनी आहुति दी रूखा लिकयारखांने अपने हृदयमें खंजर मारकर जीवनका अन्त किया । इस ही प्रकारसे बहुतोंने विष पान करके आत्महत्या की । महामान्य प्रधान नगरपालको मार्गमें खडा कराकर कोडे लगवाये गये । निद्रा और शान्तिने नगरसे विदा ले ली थी । सभासदोंपर निठुरतासे प्रहार किये जाते थे । अनन्तर पिशाचोंने बादशाहके "फर्रोशखाने" में आग लगा दिये कि जिससे एक करोड रुपयेका सामान जल गया । नाज बहुत ही कम मिलता था । रुपयेके दो सेर मोटे चावल विकते थे । इस ओर नगरमें महामारी फैल गयी और अगणित नर नारी मरने लगे । नगरनिवासी गुप्त २ स्थानोंमें जाकर छिपने लगे । उससे भी किसीका निस्तार न हुआ । इस भांति चार पांच करोड आदमी इस लोकसे विदा हो गये । पांचवीं अप्रेलको बादशाहके भांडारसे नादिरशाहकी सील (मोहर) बाहर लाई गयी और उसके "प्रियभ्राताके ऊपर" देशीय सामन्त राजा स्थापन करें और राज्यमें शान्तिकी विज्ञापना हो इसका प्रमाणपत्र सबके पास भेजा गया । मेवाडके राणा, मारवाड, अम्बेर, नागौर, सितारा इन देशके राजाओंपर और पेशवा बाजीराव इत्यादिके पास यह फरमान भेजे गये । उन फरमानोंमें लिखा था कि;—"हमारे प्यारे भाई महम्मदशाहके साथ फिर हमारी सुलह और दोस्ती कायम हो गयी । बस सब हम एक जान दो कालिब हो गये । इस वक्त हमारे प्यारे भाई फिर इस बडी बादशाहतकी हुकूमतपर कायम होकर तख्तपर बैठ गये; अब दूसरे मुल्कोंको फतेह करनेके लिये हम लोग इस मुल्कसे जाते हैं; इस वक्त तुम लोगोंको मुनासिब है कि तुम्हारे दादा परदादा जिस तरह खान दान तैमूरके पिछले बादशाहोंके साथमें रहते और उनको इज्जत देते थे, तुम लोग भी हमारे प्यारे भाईके साथ वैसे ही बर्त्ताव करके उनपर यकीन करो, उनके खैरख्वाह रहो, उनको इज्जत दो ।–खुदा न करे । अगर तुम्हारी बगावतकी खबर मुझको लगी तो मैं दुनियांके सफेसे एकबार ही तुम्हारा नाम निकाल दूंगा !" Memoirs of Eradut Khan—Scott's History of the Dekhan; Vol. ii page 213

और संकटके समय भारतवासियोंकी कैसी दुर्दशा हुई थी;--वह भारतवर्षीय एक इतिहासलेखकके कई एक निम्नलिखित वाक्योंके पढनेसे भलीभांति विदित हो जायगी। वह कहता है कि "इस समय हिन्दोस्थानके रहनेवाले केवल आत्मरक्षा और आत्मतुष्टिके विषयका ही विचार किया करते थे। जो लोग कलेशकर कार्योंके आक्रमणसे छुटकारा पा सकते वह फिर उस बातका विचार नहीं करते थे और जो आदमी केवल स्वार्थपरताकी ही सेवा करता वह अपने मानव भ्राताओंके साथ किंचित् भी सहानुभूति प्रगट नहीं करता था। स्वार्थपरता अपने और पराये धर्मसे सम्पूर्ण विघ्नकारक है। जिस समय नादिरशाहने हिन्दुस्तानपर चढाई की थी, उस काल सर्वने ही इस स्वार्थपरताकी शरण ली थी। इस नैतिक बलके अपकर्षसे भारतवासी अपने धर्मसे जो छूटे तो फिर उसको प्राप्त न कर सके अतएव सुख और स्वाधीनताके अमृतमय स्वादसे उस ही दिनसे पृथक् हो गये।"

भारतके इस सार्वजनीन विप्लवकालमें--भारतीय राजनैतिक इतिहासके इस घटनापूर्ण समयमें आर्यवीर राजपूतगण अपने प्राचीन राज्यसे भ्रष्ट नहीं हुए थे। उनका राज्यसे भ्रष्ट होना तो दूर रहा वरन इसलामके उस छः सौ वर्षके शासनकालमें राजस्थानके तीन प्रधान कुलोंमेंसे दो वंशोंने--मारवाड और अम्बेरवालोंने कौशल और विक्रमकी सहायतासे साधारण २ स्थानोंके द्वारा जिन कई एक* स्थाई राज्योंको उत्पन्न किया था उनके राजा लोग आजतक भी बृटिश सिंहके साथ मित्रता स्थापन करके स्वाधीनताको संभोग कर रहे हैं। राजपूतकुलचूडामणि राणाकुलकी लीलाभूमि पवित्र मेवाडभूमिके विषयमें भी प्रायः ऐसा ही कहा जा सकता है। सन् ईसवीकी दशवीं शताब्दीके आरम्भमें जब प्रचण्ड वीर दुर्द्धर्प महम्मद गजनवीने भारतवर्षपर चढाई की थी उस समय मेवाडकी सीमा जहां तक फैली हुई थीं, आज सात सौ वर्ष पीछे भी ठीक वैसे ही फैली हुई हैं। यद्यपि बूँदी, आबू, ईडर और देवलादि कितने एक करद राज्य राणाजीके हाथसे निकल गये हैं तथापि उनका प्राचीन राज्य प्रायः पूरा पूरा विद्यमान है। पश्चिममें गोद्वार गदवाड देशकी उपजाऊ भूमि, मेवाडकी दैवी सीमा आरावली पर्वतमालाको लांघती हुई शिर झुकाये हुए महाराणाकी प्रभुताका कीर्तन कर रहीं हैं। प्रशस्त हृदयवाला चम्बल नद उसके पूर्वप्रान्तको धोता हुआ सूर्य्यवंशीय महाराज कनकसेनके वंशवालोंको शोचनीय वृत्तान्त सुरधुनी गंगाजीसे कहनेके कारण कलकल करता वेगसे दौडा चला जाता है। उत्तरमें खारी नदी अजमेर और मेवाडके बीचमे विराजमान है। और दक्षिणमें विस्तारित हुआ मालवा राज्य मरहटोंके सतानेसे अत्यन्त दीनदशामें पडा है। इस चार सीमावाले देशकी दीर्घता १४० और चौडाई १३० मील थी। इस देशमें दश हजार नगर व ग्राम बसते थे। रत्नगर्भा मेवाडभूमिके खेत अत्यन्त उपजाऊ हैं, किसानलोग खेतोंके कार्यमें कुशल और विशेष पारदर्शी थे,

* बीकानेर और किसनगढ मारवाडका और मछेरी अम्बेरका शाखा राज्य है। शिखा राज्यको भी अम्बेरका शाखाराज्य माना जा सकता है।

वणिकगण सदा ही व्यौपारमें मन लगाते थे। इस समस्त कार्यकुशल प्रजाकी सहायतासे मेवाडमें प्रतिवर्ष दश करोड रुपये राजकरमें आते थे। * इस ओर परमभक्त और अनुरागी सामन्तगण अपने हृदयका रुधिर दान करके मेवाडभूमिको शत्रुओंसे बचाते थे। पहिले वर्णन किये हुए दीर्घकालव्यापी कठोर उपद्रवके बीत जानेपर स्वाधीनताकी लीलाभूमि प्राचीन मेवाडराज्यकी ऐसी अवस्था थी। इस समय हम इस बातका वर्णन करनेके लिये तैयार होते हैं कि अब दुर्द्धर्ष महाराष्ट्रियोंके कठोर आक्रमणसे आधी शताब्दीके बीचमें इस राज्यकी कैसी दशा हो गई।

जिस दिन बादशाह महम्मदशाहने अपने दुष्ट मंत्रियोंके परामर्शको मानकर मरहटोंको अपने राज्यका चतुर्थांश चौथकी भांति दिया, उसही दिन विशाल राजस्थानके मध्यमें मरहटोंकी प्रभुताका मार्ग साफ हो गया × राजस्थान मुगलोंकी बादशाहतके अधीन था; जब कि महाराष्ट्रियोंने मुगलोंसे ही चौथ ले ली तब तो वह उन सब राजा और नव्वाबोंसे चौथ लेनेके अधिकारी हो गये कि जो मुगलबादशाहोंको खिराज देते थे। वह जहां जाते थे वहीं जयलक्ष्मी उनका साथ देती थी, वहींका राजा या नव्वाव हाथ जोडकर कर-चौथ देता और जैसे बनता वैसे उनको प्रसन्न करता। ऐसी अवस्थामें बिजित राजाओंसे कर अदा करनेके लिये विजयी महाराष्ट्रियोंने केवल पाशव बलको ही अपना साधन समझ लिया था या नहीं, इस बातका अनुमान करना कठिन है। परन्तु यह बात तो स्पष्ट ही पाई जाती है कि उन्होंने महम्मदशाहके इस प्रकारसे कर देनेको अपनी सिद्धिका एक प्रधान द्वार समझा था।

विजयोन्मत्त महाराष्ट्रीयगण जिस प्रकार प्रचंड विक्रमसे धीरे धीरे जय प्राप्त करने लगे, उससे राजपूतोंको अत्यन्त भय हुआ। वे उस भयसे छुटकारा प्राप्त करनेके लिये परस्पर मिल गये। उनकी सनातन रीतिके अनुसार उक्त ऐक्यताबन्धन वैवाहिक सम्बन्ध सूत्रद्वारा बांधा गया। राणा जगत्सिंहने मारवाडके उत्तराधिकारी कुमार विजयसिंहके हाथमें अपनी बेटीको देकर उक्त एकताकी प्राणप्रतिष्ठा की थी और मारवाड और अम्बेरके राजाओंमें जो घोर वाद विवाद चला आता था, उसको दूर करके परस्पर दोनोंका मेल करा दिया। उदयपुरकी सभाके आंगनमें यह ऐक्यतारूपी बन्धन बांधा गया था:+ परन्तु जिस प्रकारसे बहुधा देखा जाता है, वैसे ही इस मेलमिलापसे सर्व-

---

* कोई २ एक करोड बताते हैं।

× सन् १७३५ई०

\+ इस समयमें राजस्थानके भिन्न २ राजा, राजकुमार और राजपुरुषोंने जो कितने एक पत्र राणाजीके पास भेजे थे, वे सब अत्यन्त मनोहर हैं। विशेषकर उनको पढनेसे यह बात भलीभांतिसे विदित होती है कि अन्यान्य राजालोग राणाजीमें कैसी श्रद्धा और भक्ति रखते थे। प्रयोजन समझकर यहां उनमेंसे कई एक पत्र उद्धृत किये जाते हैं।

पहिला पत्र।

मारवाडके राजकुमार विजयसिंहके निकटसे श्रीश्रीश्रीमहाराणा जगत्सिंहके चरणकमलमें।

"महाराणा श्रीश्रीश्रीजगत्सिंहजीको मेरा सविनय नमस्कार विदित हो। रावत केशरीसिंह और—

साधारणका कोई उपकार नहीं हुआ। कारण कि फिर उन्हीं साम्प्रदायिक झगडोंने, जो कि सदासे इन जातियोंके बीचमें चले आते थे उस मेलरूपी डोरको तोड डाला। यहां तक कि जिस समय उस सन्धिके सम्बन्धमें राजपूतोंके बीच चर्चा हो रही

--विहारीदासको मेरे पास भेजकर और एक शुभ परिणय सूत्रमें आबद्ध होनेकी अनुमति देकर श्रीमान्ने मुझको विशेष अनुगृहीत किया। श्रीमान्का आदेश भवदीय सन्तानको शिरोधार्य है। मैं श्रीमान्का दास हूं आपकी समस्त आज्ञाओंका पालन करना मैं स्वीकार करता हूं। इस समय मैं श्रीमान्का सन्तान हूं और जबतक जीवित रहूंगा, तबतक श्रीमान्का ही रहूंगा। यदि मैं यथार्थ राजपूत हूं तो श्रीमान्के मानापमान और जीवन मरण समस्त हो पर निर्भर रहूंगा। आज बीस हजार राठौर श्रीमान्के दास हुए। यदि इस कार्यमें कृतकार्यता प्राप्त न हुई तो सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर हम लोगोंको शान्ति देगा। मेरे साथ जिनका शोणितसम्बन्ध है, वह भी श्रीमान्की आज्ञाका पालन करेंगे। अब यह निवेदन है कि इस शुभ विवाहसे जो फल उत्पन्न होगा वही राजसिंहासन पावेगा: और यदि कन्या हो, और उसको तुर्कोंके हाथमें समर्पण करूं तो मैं असल राजपूत नहीं। श्रीमान्की परामर्शके अनुसार वह किसी उपयुक्त पात्रको दी जायगी। यहांतक कि यदि बाबोजी (विजयसिंहके पिता इस ही नामसे पुत्रोंके द्वारा पुकारे जाते थे।) अथवा और कोई माननीय महाशय वैसा करनेका अनुरोध करें तो मैं ईश्वरका नाम लेकर शपथ करता हूं कि मैं उसे सम्मति न दूंगा। और कोई सम्मति दे या न दे;-संप्रदान करनेवाला तो मैं ही हूं। आषाढ शुक्र पूर्णिमा वि० सं० १७९१ (सन् १७३५–३६ ई०)"

"विशेष द्रष्टव्य।--यह लेख रावत केसरीसिंह और विहारीदास पंचोलीके देखते हुए कृष्णविलास मन्दिरके आंगनमे पंचोली लालाजीने लिखा और उसपर मारवाडके राजा बखतसिंहके पुत्र विजयसिंहने हस्ताक्षर किये।"

दूसरा पत्र।

विजयसिंहके निकटसे राणाजीके समीप;-

"यहांपर समस्त आनंदमंगल है। श्रीमान् अपना अनुग्रह और अपनी मित्रता सदा ही समान रक्खें। और कुशलसमाचारसे सदा मुझको सूचित करते रहा करें। जिसवेला वह सुदिन (विवाहका दिन) मुझे प्राप्त होगा, उस दिनका मूल्य निर्द्धारित नहीं हो सकता। श्रीमान्ने मुझको यथार्थ राजपूत कर डाला है। सामर्थ्यके अनुसार श्रीमान्की सेवा करनेमें त्रुटि न करूंगा। श्रीमान् कुलपति हैं योग्यताके अनुसार सबको पुरस्कार दिया करते हैं; श्रीमान् प्रतिवेशियोंके रक्षक और पालनकर्त्ता हैं; शत्रुओंको नाश करनेवाले; विद्वानोंको मान देनेवाले और ब्रह्माके समान बुद्धिमान हैं। त्रिलोकीनाथ सदा ही श्रीमान्को सुखसे रखकर रक्षा करें। आषाढवदी १३।"

तीसरा पत्र।

राजा बखतसिंहके निकटसे राणाजीके समीप।

" महाराणा श्रीश्रीश्रीजगतसिंहजीको बखतसिंहका प्रणाम। आपने मुझको यथार्थ राजपूत करडाला। इस प्रकारके आचरणसे आपका अनुग्रह जगतविदित हुआ। आप देख लेंगे कि सामर्थ्य रहते मैं किसी कर्मके साधन करनेमें कभी विमुख न हूंगा। जिसदिन आपके दर्शन प्राप्त होंगे, उस दिन मेरे सुखकी सीमा न रहैगी। आपके साथ सम्मिलित होनेके लिये हृदय अत्यन्त उत्कंठित हो उठा है आषाढवदी ११।"

थी उस समय उनकी पहिली ऐक्यताका विषमय फल उत्पन्न होकर राजपूतोंमें शत्रुताकी नीव डाल रहा था। अल्पकालमें ही इसकी यथार्थता प्रगट हो गई ।

मालवेपर अधिकार करके महाराष्ट्रीगणोंने वहांसे चौथ ले ली । अनन्तर वाजीराव सेनासहित मेवाडमें आया। उसके आनेका समाचार सुनकर समग्र मेवाडभूमि भयके मारे व्याकुल हो गई । राणाजीने उनके साथ मिलनेकी इच्छा प्रकाश न की और शार्लुम्ब्रासरदार व अपने प्रधान मन्त्री विहारीदासको दूतस्वरूप भेजा * । इस ओर

चौथा पत्र ।

जयसिंहसवाईके निकटसे राणाजीके समीप ।

" महाराणाजीके निकट सवाई जयसिंहका नमस्कार पहुंचे । श्रीदीवानजीकी आज्ञानुसार मैं उस करारनामेपर हस्ताक्षर करता हूं कि जो आपने मारवाडके अभयसिंहके साथ स्नेहबन्धन जोडा है । हिन्दू अथवा मुसलमान किसीके कारण भी मैं इससे अलग न हूंगा । इस सम्बन्धपत्रमें ईश्वर हम दोनोंके बीचमें है, और दीवानजी इसके साक्षी हैं । आषाढ सुदी ७ । "

पाँचवाँ पत्र ।

बखतसिंहके पाससे राणाजीके समीप ।

" आपका खास रुक्का पायकर और पढकर सुखी हुआ । जयसिंहका और मेरा पत्र आपके पास पहुंचा ही होगा । आपकी आज्ञाके अनुसार मैंने उनके साथ मित्रता कर ली है; और इसमें कोई संदेह नहीं कि इस मित्रताकी मैं भलीभांतिसे रक्षा कर दूंगा । कारण कि जब आपको प्रतिभू स्वरूप निर्देश किया है तब इस विषयमें किसी प्रकारका व्यत्यय न होगा । इस समय आप उनकी जामिनी लें । पिता, माता, या बन्धु जिसकी भांति आप मुझे देखें, परन्तु मैं हूं सबभांतिसे आपका ही । बिना आपके मैं इष्ट, मित्र, स्वजन और जाति, गोत्र, किसीको भी नहीं चाहता आषाढबदी ६ ।"

छठवाँ पत्र ।

अभयसिंहकी ओरसे राणाजीको ।

"महाराज अभयसिंह, महाराणा जगत्सिंहके समीप यह पत्र भेजते हैं, उनका 'मुजरा' (क) ग्रहण किया जाय । आपने जो परस्पर स्नेहबन्धन रखनेका वचन दिया है, उसका साक्षी ईश्वर है, इसको जो कोई तोडेगा, उसका दैव अमंगल करेगा । सुख, दुःख, सम्पत्ति और विपत्ति इन सबमें हम एक हुए; एकमन होकर ऐक्यतासे रहेंगे । स्वार्थपरता हमलोगोंको अलग २ न करे । आपके समस्त सर्दार हमलोगोंके साक्षी हैं । जो खरा राजपूत है वह कभी भी इस सम्बन्ध बन्धनसे अलग न होगा ।" आषाढ वदी ३ गुरुवार ।

अभयसिंह और भक्तसिंह यह दोनों मारवाडके राजा अजितसिंहके पुत्र थे । इन दोनों भ्राताओंमें अभयसिंह पिताके सिंहासनपर बैठा था और भक्तसिंहने नागौर राज्यको स्वाधीनभावसे अधिकार किया था । जिन विजयसिंहके साथ राणा जगत्सिंहकी कन्याका विवाह हुआ वह भक्तसिंहहीके पुत्र थे । इसके उपरान्त विजयसिंह ही मारवाडके सिंहासनपर बैठा था ।

* महाराष्ट्रियोंकी चढाईके समय राणा जगत्सिंहजीने अपने मन्त्री पंचोली विहारीदासजीको जो कई एक पत्र लिखे थे, उन पत्रोंके पढनेसे राणाजीके हृदयका भाव स्पष्ट पाया जाता है । उन पत्रोंका अनुवाद नीचे लिखते हैं ।—

बाजीरावको किस प्रकारसे ग्रहण करना चाहिये उसको कौन आसन दिया जायगा, इस विषयकी चर्चा होनेपर राजसभामें महावादानुवाद होने लगा। अनेक तर्क वितर्कोंके

--प्रथम पत्र।

(ख)

"स्वस्ति श्री मंत्रिप्रवरपाचोलीजी।जोहार। तुम्हारा स्मरण मुझे एक पलभरको भी नहींछोडता।दाक्षिणी (मरहटे) लोगोंके विषयमें जो व्यवस्था तुमने की, वह ठीक है परन्तु यदि संकट (ग) अनिवार्य ही हो जाय,तो वह केवल जनपदसे परली ओर हो,निकट होना ठीक नहीं।सेनाकी संख्या कुछ कम कर दो, भगवान्के आशीर्वादसे पैसेकी कमती न रहैगी। मनकर्पके अनुसार रामपुरका बन्दोबस्त करना। और दौलतसिंहको सूचित करना कि, फिर ऐसे सुअवसरके मिलनेकी संभावना नहीं। राजमाताजी इस समय रुग्ण हैं। गजराव और गजमाणिकने उत्तम युद्ध किया है और सुन्दरगजने भी सहस्रों भांतिकी लीला-कौशल दिखाई (घ) उस समय तुम्हारे न रहनेसे मुझे दुःख हुआ इस समय शोभारामको कैसे भेजा जाय ? आषाढ वदी ६ संवत १७९१ (सन् १७३५ई०)

(क) ऊंचे पदवालेको नीचे पदवाला जो मानमर्यादा दिखाता है उसको राजपूत लोग 'मुजरा' कहते हैं।

(ख) नीचे पदवालेसे ऊंचे पदवाला मनुष्य जो संभाषण किया करता है, उसको राजपूत लोग "जुहार"कहते हैं।

(ग)यहांपर पेशवाके साथ युद्ध होनेका संकेत है।

(घ) राणाजी, राजकार्यकी अपेक्षा गजलीलाको विशेष आनन्ददायक समझते थे. इस बातका प्रमाण आगे चलकर दिया जायगा।

दूसरा पत्र।

"मुझको इस बातका विश्वास नहीं होता; इस कारण उनके प्राप्य रुपयोंकी फहारिस्त और थोडेसे साक्षी भेजिये। बाजीराव आ पहुँचा है। जमीनके दावेको छोडकर यहाँसे कर ग्रहण करके अपनी कीर्तिको विस्तारित कर जायगा। उसने मेरे राज्यमें पांव अडाना आरंभ कर दिया। अन्यान्य राजोंकी अपेक्षा वह यहांसे बीस गुण अधिक लेगा। यदि नियमित होगा तो दिया जायगा। गतवर्ष मल्हार-राव आया था;। वह तो कुछ भी नहीं था बाजीराव उससे अधिक पराक्रमशाली है। यदि भगवानने प्रार्थना सुनी तो वह हमारी भूमि नहीं ले सकेगा और समस्त वृत्तान्त देवीसिंह कहैगा। बृहस्पतिवार, संवत् १७९२।"

"होलीके समय जगमंदिरमें अत्यन्त आनन्द हुआ था, परन्तु लवणके विना अन्नसे क्या है इस ही प्रकार बिना बिहारीदासके उदयपुर क्या है ?"

तीसरा पत्र।

"आपके समान मनुष्यके राज्यमें रहते हुए मैं इसकी दृढताके विषयमें एक पलभरको भी सन्देह नहीं करता। परन्तु दारिद्रताकी यह तामसी छाया किस लिये है ?कदाचित् आप कहैं कि इसमें मेरा क्या दोष है, जैसी आप आज्ञा देते हैं, वैसा ही मैं कहता हूं।" इसका अभिप्राय और कुछ भी नहीं है; पैसा ही सब कुछ है, उपस्थित विपत्तिको आपके सिवाय और कोई भी दूर नहीं करसकेगा और दूसरी सब प्रतिज्ञा भी वृथा है। आप यह कह सकते हैं कि " मेरे पास कुछ भी नहीं फिर किस प्रकार-से झगडे झंझटका निपटारा करूं?यद्यपि आप कुछ कालके लिये मेरे पाससे दूर चले गए हैं, तथापि--

पश्चात् यह निश्चय हुआ कि वह सिंहासनके सामने बनेडाराजके समानआसनपर बैठेंगे * इसके अनुसार बाजीराव गृहीत और सन्मानित हुआ । शीघ्र ही दोनों दलोंमें सन्धि स्थापित हो गई। उस सन्धिमें यह निश्चय हुआ कि राणाजी बाजीरावको एक नियमित वार्षिक कर देंगे × महाराष्ट्रीय लोगोंने दशवर्षतक इस सन्धिपत्रके नियमानुसार नियमित कर लिया था परन्तु फिर न ले सके। मेवाडके समस्त राजस्वको पचानेकी इच्छा करके उन्होंने उस सन्धिपत्रको तोड डाला ।

चतुर महाराष्ट्रीयलोग सुईके नकुएके समान छिद्रमें प्रवेश करके क्रमानुसार जो विराटमूर्ति धारण कर रहे थे वह क्रमशः ही प्रगट हुई । वह छिद्र क्या था ? राजपूतोंका परस्पर विरोध ! विरोधका यह बीज राजपूतानेमें किस प्रकारसे अंकुरित हुआ था, इसका वृतान्त एक प्रकार पहिले ही वर्णन किया जा चुका है; इस समय विस्तारसे वर्णन करेंगे । पहिले ही कहा जा चुका है कि राणाने अम्बेरराजपुत्रके हाथमें अपनी बेटीको अर्पण करनेके समय अम्बेरराजसे प्रतिज्ञा करा ली थी कि इस शुभ सम्मिलनका जो फल होगा उसको अग्रजस्वत्व प्राप्त होगा। इस समय उस विवाहके फलस्वरूप माधवसिंह उत्पन्न हुए। पाखण्डी नादिरशाहकी सर्वसंहारकारी चढाईके दो वर्ष पीछे महाराज सवाई जयसिंह इस लोकसे सिधार गये । उनके परलोक गमनके कुछ दिन पीछे ही महाराजका बडा पुत्र ईश्वरीसिंह अम्बेरके सिंहासनपर बैठा । परन्तु एक बलवान सम्प्रदायने अम्बेरराज्यकी पहिली प्रतिज्ञाके अनुसार राणाजीके भानजे माधवसिंहको अधिकार पर वरण करके सिंहासनपर उपवेशन करना चाहा । हम ठीक २ नहीं कह सकते कि सनातनरीतिको तोडकर माधवसिंहको सिंहासनपर विराजमान करनेके लिये महाराज जयसिंहकी इच्छा थी या नहीं । परन्तु यह भलीभांतिसे कहा जा सकता है कि माधोसिंह सिंहासनके लिये व्यग्र नहीं हुआ था । यदि वह सिंहासनके लिये व्यग्र हुए होते तो राणा संग्रामसिंहके दिये

-मानो सर्वदा ही आप मेरे निकट रहते हैं, परन्तु बहुत अच्छा हो यदि इस समय आप और भी निकट आ जाँय । कारण कि आपके आजानेसे मैं रुपयेके इकट्ठा करनेका उपाय कर सकता हूं । गुप्त करनेमें आप विख्यात हैं; परन्तु यह पुत्र आपसे कुछ भी न छिपावेगा (क) । अतएव आपका धन इकट्ठा करना वृथा है क्यों कि उसके उपयोग होनेमें सन्देहका उदय होता है आपका एक विश्वासी आदमीसे कुछ रत्न और कुछ तमस्सुक मिलेंगे, उनको मेरे पास ले आईयेगा । इन विवादोंको दूर करनेके लिये इसके अतिरिक्त दूसरा उपाय नहीं है । आप स्वयं ज्ञानी हैं,और अधिक क्या लिखूँ, आगेके परिणामपर लक्ष देकर जो करना उचित समझो सो करो इसके विषयमें मैं अब दूसरा पत्र आपको न लिखूँगा ।" संवत् १७९२

* राजसिंहका पुत्र, भीमसिंहका वंशधर । जो आसन बाजीरावको मिला था, वही फिर वृटिश प्रतिनिधिगणके लिये नियत हुआ था ।

×वार्षिक करमें १६०००० रुपये नियत हुए । यह रुपया हुलकर सेंधिया और पंवारके मध्यमें समानभागसे बट जाता था ।

(क) विहारीदास पंचौलीको राणा पिता कहकर पुकारते थे ।

हुए रामपुर जनपदको नियामित सामन्तप्रथाके अनुसार, भूमिवृत्तिमें न लेते । परन्तु इस ओर अनुज्ञापत्रमें इसका विपरीत भाव देखा जाता है, वहांपर उनको " स्वीमा " अर्थात् युवराजका स्वत्व प्राप्त हुआ है । जो कुछ भी हो इन बातोंके ऊपर किसी प्रकारका वादानुवाद अथवा झगडा उपस्थित होनेसे पहिले ही ईश्वरीसिंहने पांच वर्षतक राज्य किया । इस ही समयमें सवाई ईश्वरीसिंह * दुरानियोंकी गतिको रोकनेके लिये अपनी सेनाके साथ शतद्रुके किनारे पर गये । परन्तु यह वृत्तान्त अम्बेरके इतिहासका है यहांपर इसका विचार करनेकी आवश्यकता नहीं अतएव अम्बेरके इतिहासमें ही इसका समावेश किया जायगा ।

भागिनेय माधवसिंहके स्वार्थकी रक्षा करनेके लिये उनको साथ ले राणाजी सेनासहित ईश्वरीसिंहके सामने हुए । शीघ्र ही दोनों दलोंमें घोर संग्राम आरम्भ हुआ । शिशोदीय वीरगण ईश्वरीसिंहको पराजित करनेके लिये गये थे, परन्तु वह स्वयं ही हार गये । ज्ञात होता है कि अन्यायपक्ष समर्थन करना उनके विचारमें नीतिविरुद्ध था इस ही लिये वह इसके लिये उत्तेजित नहीं हुए। राणाजीकी सेना तित्तर वित्तर होकर युद्धसे भागी । इस प्रकार पराजित होनेसे राणाजी अत्यन्त ही व्यथित हुए। परन्तु जिस समय उन्होंने देखा कि सेनाके अनुत्साहसे ही यह हार हुई है, तब तो क्रोधसे अत्यन्त भर गये अत्यन्त क्रोधके न सहनेके कारण राणाजीने गिलहौटकुलकी प्रचण्ड तलवार एक साधारण बाराङ्गनाके हाथमें दे दी और व्यंगवाणीसे कहा कि "इस अवनतिकी अवस्थामें यह अस्त्र स्त्रीहीके व्यवहार करने योग्य है। " यह व्यंग वचन मेवाडभूमिके अवनतिकालके अनुसार ही था। मेवाडवासियोंके हृदयमें यह दृढतासे अंकित हो गया;यहांतक कि अबलों वहांके निवासी उसको नही भूले हैं ।

कोटा और बूँदीके हाडागणोंने गतयुद्धमें राणाजीकी सहायता की थी; इस ही कारणसे ईश्वरीसिंहने उनके आचरणका योग्य फल देनेके लिये आपाजी सेंधियाकी सहायता लेकर उनपर आक्रमण किया । हाडा रानाने उस आक्रमणको अत्यन्त वीरतासे रोक दिया । इस युद्धमें आपाजी सेंधियाका एक हाथ कट गया । इस युद्धके

---

* कन्धारको जीतनेके समय नादिरशाहने पराजित खिलजियोंके साथ अहमदखाँ आवेदली नामक एक अफगानको कैद किया था । अफगानिस्तानमें सादोती नामक एक वंश है, वहांके रहनेवाले इस वंशको अत्यन्त पवित्र मानते हैं। आवेदली इस वंशका गोत्र है। अहमदखाँ आवेदली इस ही वंशमें उत्पन्न हुआ था यह अत्यन्त तेजस्वी और पराक्रमी था । नादिरशाहने आदरसहित इसको छोड दिया और एक जमीदारी बखशीशमें दी। जब नादिरशाह गुप्तभावसे मारा गया तब अहमदशाहने उसके राज्यपर अधिकार किया और थोडे ही समयमें सन् १७४७ ई० के अक्टोबर महीनेमें कन्धारराज्यमें खुद मुखतार बादशाह माना गया । महाराज्य ईश्वरीसिंहजी इसहीको रोकनेके लिये शतद्रुनदीके किनारेपर चढ गये थे। अनन्तर अहमदखाँने अपने आवेदली गोत्रको "दुर्रानी " नामसे बदल दिया।
Gones' Nadirnameh, Vol. V. P. 274.

फलसे दोनों. दलोंको कुछ कुछ हानि पहुँची और दोनों राजाओंको सैंधियाके पेट भरनेको नियमित कर देना पडा। राणा जगत्सिंहने इस पराजयसे अत्यन्त दुःखित हो बदला लेनेके लिये मल्हारराव हुलकरसे सहायता चाही। बातचीत होनेमें उन्होंने मल्हारराव हुलकरसे प्रतिज्ञा की कि यदि आप ईश्वरीसिंहको सिंहासनसे हटा देंगे तो मैं ६४ लाख रुपया दूंगा। जिस दिन जगत्सिंहने इस प्रतिज्ञापत्रपर हस्ताक्षर किये उस ही दिन राजस्थानभूमिमें महाराष्ट्रियोंकी प्रभुता दृढतासे जमगई। इस समाचारको शीघ्रतासे ईश्वरीसिंहने सुना। अपनी पदच्युति और अपने अपमानको अनिवार्य जानकर अन्तमें अभागेने जहर पीकर प्राण देदिये। ईश्वरीसिंहके मरनेपर माधवसिंह अम्बेरके सिंहासनपर बैठे तथा चतुर हुलकरने अपने प्राप्य चौंसठ लक्ष रुपये लेकर महाराष्ट्रियोंकी विजयवैजयन्तीको राजस्थान क्षेत्रमें दृढतासे गाड दिया। राजपूतजातिकी दुर्दशाका यही मुख्य कारण हुआ। इस ही कारणसे शिशोदीय, राठौर और कुशावहगण अपने बडे बूढोंके अनन्त गौरवसे सदाके लिये बंचित हो दीन हीन दशामें गिर पडे। इस समयसे उनके भीतर जिस कठोर अन्तार्विवादने प्रवेश किया, वह उनके सारभागको भस्म करता गया। इसके उपरान्त महाराष्ट्रियोंने राजपूतोंका सर्वस्व हरण करके राजस्थानको श्मशान बना दिया। परस्परके इस प्रचण्ड क्लेश और महाराष्ट्रियोंके कठोर सतानेसे राजपूतगण बहुत समय तक दुःखित रहे, फिर सन् १७९७ ई०के सन्धिसूत्रके अनुसार अत्यन्त दयाशलि ब्रिटिश केशरीने उनको इस सङ्कटसे उद्धार किया।

अठारह वर्षके अयोग्य राज्यशासनके पीछे राणा जगत्सिंहजीने संवत् १८०८ (सन् १७५२ ई०) में परलोकका मार्ग लिया। जगत्सिंह बाप्पारावलके पवित्र सिंहासन और शिशोदीयकुलके अयोग्य राजा थे। हाथी युद्ध देखकर वह अपने समयको वृथा ही गमाया करते थे * महाराष्ट्रियोंके प्रचण्ड पराक्रमको रोकनेकी अपेक्षा वह इस प्रकारके क्रीडायुद्धको ही अत्यन्त प्रयोजनीय समझते थे। परन्तु एक बातमें भलीभांतिसे उनकी गुणग्राहकताका परिचय पाया जाता है। अपने बडे बूढोंके समान जगत्सिंह भी शिल्पशास्त्रके उत्कर्षमें अपनी प्रजाको उत्साहित किया करते थे। उदयपुरके राजमन्दिरको इन्होंने बहुत बढा दिया था। और पेशोलाके वक्षविहारी द्वीपपुंजके संस्कार करनेमें एक लक्ष रुपया व्यय कर दिया। तराईमें जो ग्राम दिखाई देते हैं उनकी प्रतिष्ठा जगत्सिंहने ही की थी। इसके अतिरिक्त आलस्य और विलासकी सूचना देनेवाले जो उत्सव अबतक उदयपुरमें हुआ करते हैं; इन सबकी प्रतिष्ठा भी राणा जगत्सिंह (दूसरे) ने की थी।

---

* राणाजीने अपने मंत्री बिहारीदास पंचोलीको जो पत्र लिखे हैं, उनमेंसे पहिला पत्र ही उस बातकी साक्षी देता है।

पंचदश अध्याय १५.

दूसरे राणा भतापसिंह;--दूसरे राजसिंह राणा;--राणा अमरसिंह;--हुलकरकी मेवाडपर चढाई और करभाति;--राणाजीको पदच्युत करनेके लिये विद्रोहाचरण;--विद्रोही सर्दारोंके द्वारा एक नकली राणाका निर्वाचित होना;--कोटेके जालिमसिंह;--सेंधियाकेसाथ नकली राणाका मेल;--इन दोनोंकी मिली हुई सेनापर राणाजीकी चढाई;--राणाजीकी हार;--सेंधियाकी मेवाडपर चढाई और उदयपुरको घेरना;--राणाजीका अमरचन्द्रको मंत्री बनाना;--अमरचन्द्रकी तेजस्विता;--सेंधियाके साथ सन्धि;--सेंधियाका वहांसे जाना;--मेवाडराज्यका क्षय;--विद्रोही सर्दारोंका राणाजीकी शरण आना;--गड्वाडप्रान्तका अधिकार जाना;--राणाजीका गुप्तवध;--राणा हमीरका सिंहासनपर विराजमान होना;--राजमाता और अमरचन्दमें परस्पर विवाद;--अमरचन्दका महान चरित्र,मृत्यु, स्वभाव,गुण इत्यादि;--मेवाड-राज्यकी क्षय प्राप्ति ।

दिनपर दिन जाता है; परन्तु जो दिन एक बार चला गया वह फिर लौटकर नहीं आता। जिस शारदीय पूर्णशशधरकी माधुरीमय मुसकानसे एक समय असीम आनंद प्राप्त किया था; उस चंद्रमाको तो तत्पश्चात् अनेक बार देखा, चन्द्रमाकी उस विमल कौमदीराशिने अनेक बार प्रकृतिको वैसे ही तरल रजतधारासे सिंचित किया है, परन्तु कहाँ? वह आनन्द तो फिरकर कहीं भी न पाया। वह आनंद जो कि उस शशधरकी अमृतभरी मुसकानके साथ उस अनन्तमें लीन हो गया; हमें आजतक फिर उसका पता ठिकाना न लगा? इस पता ठिकाना प्राप्त न होने और दर्शन न मिलनेका कारण और कुछ नहीं है-केवल उस दिनका पुनर्वार लौटकर न आना ही इसका

प्रधान कारण है–क्या कभी वह दिन आवैगा?--कह नहीं सकते। परन्तु प्राण रहते हुए प्राणदायिनी आशाको कौन छोड सकता है? 'तबतक स्वांसा जबतक आशा'की कहावत किसने नहीं सुनी? यह मनुष्य आशाका दास है। आशा ही इस क्षण भंगुर जीवनप्रसूनके लिये वृन्तस्वरूप है; एकवार इस वृन्तके गिरते ही जीवनरूपी प्रसून सदाके लिये अनन्त काल सागरमें डूब जायगा। आशा ही मनुष्यकी प्रधान सहेली है। परन्तु अभाव ही आशाको उत्पन्न करनेवाला है। जिसको अभाव नहीं, उसको आशा भी नहीं। उसका जीवन जड है, उत्साह हीन है। यह सत्य है कि अभाव आशाको उत्पन्न करता है; परन्तु उस आशासे फिर अभावको यथार्थ ज्ञान उत्पन्न हुआ करता है। उस अभाव–ज्ञानसे चेष्टा; चेष्टासे उद्योग; उद्योगसे सिद्धि प्राप्त होती है। आशा-से मूढ हुआ मनुष्य अपने अभावको नहीं समझ सकता; और जो समझकर भी उन अभावोंको पूर्ण करनेका उपाय नहीं करता; उसकी कोई भी अभिलाषा सिद्ध नहीं होती; वरन उसका जीवन ही कष्टकर होजाता है।

यूरोपकी रानीसे रोमका एक दिन पतन हुआ था; एक दिन उसके विश्व विजयी पुत्रोंके चरणोंमें दासपनकी भारी २ जंजीरें पड गई थीं, परन्तु वह रोम फिर उठा है;–उठा है केवल अपने आशामुग्ध पुत्रोंके अनन्त उद्योग और उत्साहके प्रभावसे वह अपने अभावको भलीभांतिसे समझ गये थे वह जान गये थे, कि इस समय वह इटली नहीं है। जिन इटलीवालों के प्रचंड प्रभावसे एक समयमें आधा संसार कंपायमान हो गया था; इटलीवाले इटली की अवनतिके समय समझचुके थे, कि अब वह इटली नहीं है, स्वाधीनतासे हम लोग पृथक् हो गये हैं शत्रुओंने दबाकर हमको सता रक्खाहै, इस समय हमलोग आस्ट्रेलियावालोंके दास हैं इटलीवालोंने स्वाधीनताके अभावको भलीभांतिसे अनुभव किया था, इसी कारणसे उस अभावके पूर्ण करनेकी चेष्टा की; अब शेषमें उद्योगिता और उद्यम शीलताकी सहायतासे उन्होंने अपनी अभिलाषाको सिद्ध किया। आस्ट्रेलियावालोंकी पहिरायी हुई दासपनकी कठोर जंजीरको खंड२करके समुद्रके अगाध जलमें डाल दिया, जननी जन्मभूमिके मस्तकपर स्वाधीनताका रत्नमुकुट पुनर्वार उढा दिया। इटली स्वाधीन होगई। परन्तु इस स्वाधीनता और उस स्वाधीनतामें बहुत भेद है उस स्वाधीनताके प्रकाशमान प्रतापने एक समय आधे जगतको खलवला दिया था। परन्तु यह स्वाधीनता केवल इटलीके ही परकोटेमें समाप्त हो गई। इटलीके भाग्यगगनको पुनर्वार स्वाधीनतारूपी सूर्य उदित हुआ है; परन्तु यह सूर्य वह सूर्य नहीं है। इस ही कारणसे कहा गया कि जो दिन एक बार गया वह फिर लौटकर नहीं आता। जो रक्त एक बार गया वह फिर दुबारा नहीं पाया जाता। संसारका नियम ही ऐसा है। इस ही विश्वजनीन नियमके आधीन होनेसे आज विश्व विख्यात भारतवर्ष दीन हीन अवस्थाको प्राप्त हुआ है। श्रीभगवान् रामचन्द्रजी गये,--लक्ष्मणजी गए,--वेदव्यासजीका आज पता नहीं लगता। इनकी चिताभस्मसे सम-यानुसार लक्षों वर्ष पीछे पुनर्वार भीष्म, द्रोण, भीम, अर्जुन, कर्ण, कृष्ण, व जरासन्धादि

महारथियोंने जन्म लिया । इसके उपरान्त फिर जिस दिन कुरुक्षेत्रकी भयंकर समरभूमिमें--आर्यगौरवके विशाल समाधिक्षेत्रमें यह समस्त महावीरगण महा-निद्रामें शयन कर गये; जिस दिन भगवान ब्रह्माजीने एकान्तमें बैठकर लौहलेख-नीसे भारतके होनहार कठोर विधानको धीरे २ लिखा; उस ही दिन भारतमें जिस कालरात्रिका आगमन हुआ, उसका प्रभात बहुत समयके पीछे हुआ;--प्रभात हुआ;--परन्तु भारतके उस प्रकाशमान गौरवका दिन फिर न आया। तदुपरान्त उस विशाल समाधि क्षेत्रसे पुरु, चन्द्रगुप्त, अशोक, पृथ्वीराज, समरसिंह, संग्रामसिंह और प्रताप-सिंह क्रमानुसार उत्पन्न हुए; इन महावीरोंने भारतकी जयका गीत गाकर,--एकता, महाप्रणता, आत्मोत्सर्ग और देशप्रेमकी विजयवैजयन्ती हाथमें लेकर पुनर्वार भारतको आनन्दमय कर दिया। परन्तु यह आनन्द और यह उत्साह क्षणभरके लिये था; काल-चक्रके धीरे २ बदलनेसे वह दिन शीघ्र ही व्यतीत हो गया। उस दिनके साथ ही भारतकी होनहार गति कठोरतासे पूरी हुई; पुनर्वार भारतका पतन हुआ। पुनर्वार सन्तानकी अधोगति हुई;--दारुण;--शोचनीय--अत्यन्त कठोर दुर्दशा हुई! शिशोदीय वीर प्रतापसिंहने आर्यवीरत्वकी परा काष्ठा दिखाकर महाप्राणता और प्राण निछाव-रका आदर्श रखकर पितृपुरुषोंके अनन्त मार्गका आश्रय लिया। उनके परलोक जानेसे ही--भारतका यह दारुण--शोचनीय और अत्यन्त कठोर अधःपतन हुआ! आज स्व-र्गके समान भारत भयंकर श्मशान बन गया है,--निर्जीव, निष्पन्द और जडभावको प्राप्त है आज उस अवनतिकी कहानीका प्रचार करनेके लिये--उस विश्वजनीन नैसर्गिक नियमकी सार्थकता सम्पादन करनेके लिये, पुरुषश्रेष्ठ प्रथम प्रतापसिंहके सिंहासनपर आपदार्थ, हीनजीवन, दूसरा प्रतापसिंह विराजमान हुआ! हाय! संसारमें कुछ भी स्थिरता नहीं!

दूसरा प्रतापसिंह सन् १७५२ ई० में मेवाडके सिंहासनपर बैठा। जिस गौरवमय पवित्र नामको धारण करके वह संसाररूपी रंगभूमिमें अवतीर्ण हुआ, उसको श्रवण करते ही उस प्रातःस्मरणीय संन्यासी श्रेष्ठ महात्मा प्रतापसिंहकी याद आती है; परंतु इतिहास तत्काल ही वज्रगम्भीर स्वरसे कह उठता है कि "यह प्रतापसिंह वह वीर श्रेष्ठ स्वजाति प्रेमिक प्रतापसिंह नहीं है, यह तो अकर्मण्य आपदार्थ हीनजीवन दूसरा प्रतापसिंह है; "प्रताप" नामका स्वर्गीय भाव नष्ट करनेके लिये ही पृथ्वीपर उसका जन्म हुआ है। इसके समयमें कोई वर्णन करने योग्य विशेष बात नहीं हुई। तीन वर्ष तक इसने राज्य किया, इस कालमें बराबर महाराष्ट्रीय लोग ही मेवाडभूमिको सताते रहे। इस तीन वर्षके समयमें दुर्द्धर्ष महाराष्ट्रियोंने * तीनबार मेवाडभूमिपर आक्रमण करके अभागे शिशोदीयराजासे कर और पण लिया था। अम्बेरके राजा जयसिंहकी कन्यासे प्रतापसिंहका विवाह हुआ था। इस कन्याके गर्भसे राजसिंह नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ; यह राजसिंह ही पश्चात् मेवाडके सिंहासनपर बैठे।

* सदवाजी, जनकोजी राव, और राघोबा दादा पेशवा, यह तीन सेनापति मेवाड़पर तीन बार चढे थे।

जिस वीर राजसिंहने क्षत्रियोंकी लोप होती हुई वीरताको पुनर्वार प्रचण्ड कर दिया था, जिसके प्रचण्ड प्रतापसे एक समय दुर्द्धर्ष औरंगजेबका सिंहासन कम्पायमान हो गया था, आज उन्हींके पवित्र नामको धारण करके मेवाडके सिंहासनपर एक दूसरा आपदार्थ राजा बैठा । इस दूसरे राजसिंहने सात वर्षतक राज किया था । इसके समयमें महाराष्ट्रियोंने मेवाडभूमिपर*सात बार चढ़ाई की थी । महाराष्ट्रियोंकी इन कठोर चढाइयोंसे मेवाडका यहांतक सत्यानाश हो गया था, मेवाडका राणा यहांतक धनहीन हो गया था, कि अपने विवाहके लिये राणाजीने अपने एक ब्राह्मणमन्त्रीसे धन लिया था । इस राणाका विवाह राठौर राजकुमारीके साथ हुआ था । यह दूसरे राजसिंहके परलोकवासी होनेके उपरान्त मेवाडकी सनातनरीतिमें भलीभांतिसे व्यभिचार हुआ था । राजसिंहके पश्चात् इसके चचाको मेवाडका सिंहासन मिला । इसका नाम आरिसिंह था ।

संवत् १८१८ (सन् १७६२ई०) में आरिसिंह अपने भतीजेके सिंहासनपर बैठा । इसका स्वभाव अत्यन्त क्रोधमय था । एक तो जगतसिंहकी चपलता और दूसरे प्रताप तथा राजसिंहकी अकर्मण्यतासे मेवाडराज्यकी दशा अत्यन्त हीन हो गई थी, इसके ऊपर वर्तमान राणाके कुटिल स्वभाव और अदम्य प्रकृतिने एक महा अनर्थ उत्पन्न किया। राज्यमें जो उपद्रव इस अनर्थसे हुए उन्होंने मेवाडका नाश कर दिया । इससे पहले भी महाराष्ट्रियोंके अत्याचारोंसे मेवाडपर बहुतसी विपत्तियें पड चुकी थीं, परन्तु इनसे मेवाडकी तिलभर भूमि भी अलग नहीं हुई थी । पंचोली मंत्रियोंकी दूरदर्शिता और सितारेके महाराजकी भक्तिसे अबतक मेवाडभूमि अपनी रक्षा करनेमें समर्थ थी। परन्तु जिस समय भयंकर उपद्रवने राज्यमें उत्पन्न होकर प्रजाके मेलमिलापका नाश करडाला, जिस समय महाराष्ट्रीयलोग भिन्न २ दलोंमें विभक्त होकर उस प्रजाकी सहायता करने लगे कि जो परस्पर विवाद कर रही थी–जिस समय महाराष्ट्रीयगण अवसर समझकर अपनी भेट भरने लगे, उसकाल धीरे २ राज्यकी दुर्दशा होने लगी । प्रतापको राजगद्दीसे उतारकर सिंहासनपर उसके चचा नाथजीका अभिषेक करनेके लिये मेवाडके सरदारोंने कई बार विद्रोहाचरण किया था, उस उपद्रवको दबानेके लिये मल्हारराव हुलकरको बुलाया गया । महाराष्ट्री नीतिके अनुसार चतुर हुलकरने इस समय तक मेवाडके बहुतसे अंश अपने अधिकारमें कर लिये थे; परन्तु इस समय अवसर पाकर और भी बहुतसे देश हडप जानेकी अभिलाषा की ।

यद्यपि शोणितसम्बन्ध और कृतज्ञताबन्धन कठिन है, परन्तु राजनीतिमें आवश्यकता पडनेपर यह बन्धन भी मकडीके तारके समान तोड दिया जाता है; परन्तु ऐसा होनेपर भी मानव धर्मशास्त्रके किसी परिच्छेदमें ऐसा नहीं लिखा है कि महोपकारीका अनभल

* संवत् १८७२में राजा बहादुरने संवत् १८१३ में मल्हारराव हुलकर और विट्ठल शिवदेव विंचूरकरने संवत् १८१४ में राणोजी सुठेने, इनके अतिरिक्त संवत् १८१३ (सन् १७५७ ई०) में सदाशिवराव भाऊ, गोविन्दराव और खानोजी जाधवने मेवाडके राणासे तीन बार कर लिया था ।

करके ही उसके उपकारका बदला दिया जाय ! अम्बेरके सिंहासनपर जिस माधोसिंहका अभिषेक करनेके लिये राणाजीने बहुतसा धन व्यय कर दिया, यहाँतक कि यदि राणाजी यह त्याग स्वीकार न करते तो माधोसिंहको कोई राजा भी नहीं कहता। उन्हीं माधवसिंहने अपने मामाके समस्त उपकारोंपर चरणप्रहार करके मेवाडका श्रेष्ठ अंग रामपुर नामक परगना मल्हारराव हुलकरको दे दिया * मेवाडपर जो कर बाजीरावने लगाया था, उसके उगाहनेका भार हुलकरको सौंपा गया था । परन्तु जिन नियमोंके अनुसार राणाजीने उस करका देना स्वीकार किया था, उन नियमोंको महाराष्ट्रियोंने तोड डाला;×अतएव राणाजीने उस करभारसे अपनेको छूटा हुआ समझा था। इस कारण बहुतसा रुपया बाकी पड गया। वह बाकी खजाना और चम्बल नदके ऊपरी भागके कई एक परगनोंका महसूल अदा करनेका बहाना करके मल्हाररा हुलकरने सेना सहित मेवाड पर चढाई की इससे पहिले हुलकरने राणाजीके पास कई एक पत्र भी भेजे थे जिनमें उनको बहुत सा भय दिखाया था, परन्तु इस समय मेवाडके वर्तमान अन्तर्विप्लवका सुअवसर पाकर सेना सहित मेवाडभूमिमें आया और राजधानीपर आक्रमण करनेकी तैयारियें करने लगा। उसकाल राणाजीने अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखकर हुलकरको इक्यावन लाख रुपये दिये और उससे सन्धि कर ली । + एक तो मेवाडके राज्यकी दशा वैसे ही अत्यन्त बुरी हो रही थी, इसके ऊपर यह इक्यावन लाख रुपया इकट्ठा करनेमें राज्यमें जो खराबियां उत्पन्न हुई थीं उनका अनुमान करना सहज है। इस ही वर्षमें एक दुर्भिक्ष पडा कि जिसने मेवाडभूमिका शेष रक्त भी चूंस लिया इस भयानक दुर्भिक्षके समय समस्त पदार्थ बहुत ही महँगे हो गए। गेहूँके आटे और इमलीका एक ही भाव हो गया। इस भयंकर दुर्भिक्षके दमन होनेके उपरान्त चार वर्ष पीछे मेवाडराज्यमें एक घोर विप्लव उत्पन्न हुआ । यह विप्लव केवल घराऊ झगडेका था। इस अनर्थकारी घरेलू झगडेसे मेवाडकी प्रजा इतनी निर्बल हुई थी कि तस्कररूप महाराष्ट्रियोंसे अपनी सम्पत्तिकी रक्षा भी कठिनतासे करती थी। इस प्रकार शोचनीय अवस्थामें पतित होकर मेवाडवासियोंने बहुत समय तक अनेक कष्ट सहे ! अनन्तर सन् १८१७ ई० में अनुग्रहवान बृटिशसिंहने उनके दग्ध हृदयपर शान्तिका जल छिडका और अपने आश्रयवृक्षकी छायामें आश्रय दिया।

सर्दारोंके विद्रोहका यथार्थ कारण अबतक किसीको भी ज्ञात नहीं हुआ और न कभी जाना जायगा ! कारण कि इस विषयमें सबके मत पृथक् २ हैं। तेजस्वी

* संवत् १८०८ में यह घटना हुई। इसके पश्चात् रामपुर जमीदारीका कोई २ अंश मेवाडके अन्तर्गत था। रामपुरके सम्बन्धमें इससे पहिले बहुत बातें कही जा चुकी हैं।

× बाजीरावके साथ जो सन्धि हुई उसमें निश्चय हुआ था कि अब महाराष्ट्रीयलोग मेवाडपर न चढेंगे। परन्तु इस समय उनको आक्रमण करता हुआ देखकर राणाजीने उस संधिपत्रको व्यर्थ जाना।

+ हुलकर अन्तलगढतक बढ गया।वहांपर कोणवारके अर्जुनसिंह और राणाके धायमाइयोंने उससे मिलकर ५१ लाख रुपये देनेका निश्चय किया।

. ❀ संवत् १८२० (सन् १७६४ईसवी।)

राजपूतोंने अपने राणाको महाराष्ट्रियोंके दुराचार रोकनेमें सम्पूर्ण असमर्थ देखकर उनको पदच्युत करनेका उपाय किया था। किसी २ का अनुमान है कि मेवाडकी प्रतिद्वन्द्वी सामन्त सम्प्रदायने ईर्षा और स्वार्थपरतासे ऐसा अनर्थ किया था। कहते हैं कि राणा अरिसिंह (राणा उरसी) ने अपने भतीजे राजसिंहको अन्याय उपायके द्वारा बध करके राजसिंहासनको अधिकारमें किया था। बहुत कालसे चली आती हुई किम्वदन्तियोंके पाठ करनेसे यद्यपि राणाके चरित्रोंपर घोर सन्देह उत्पन्न होता है, तथापि ऐसा कोई प्रमाण कहीं भी नहीं पाया जाता कि जिससे वह सन्देह दृढ हो। मेवाडकी सनातन उत्तराधिकारकी रीतिमें विघ्न होनेपर वहां अनेक प्रकारके अमंगल और अनर्थ उत्पन्न हुआ करते हैं, इस ओर मेवाडके सिंहासनपर अधिकार करनेकी सामर्थ्य भी राणा उरसीमें न थी। बहुत दिनसे इसका आसन शिशोदीयकुलके सोलह सर्दारोंके नीचे था। एक भूमिवृत्ति इसको प्राप्त हुई थी जिसकी आमदनीसे ३०००० हज़ार रुपये वसूल होते थे। यह राणा उरसी पहिले दूसरे दरजेके सर्दारोंमें गिना जाता था। जो सर्दार लोग बराबर इतने दिन ऊंचे आसनका सन्मान भोग करते आये हैं, वह क्या इस समय उसके आगे शिर नवाते? आज क्या वह उरसीको राजा समझकर सन्मान देते ?—कभी नहीं! अवैध राज्याधिकार प्राप्त करनेसे सब ही सर्दार उससे घृणा करते थे। दीर्घ कालतक साथ रहनेसे सर्दारलोग उसके समस्त गुप्त चरित्र जान गए थे; वह समझ गये थे कि राणा उरसीका स्वभाव अत्यन्त रूखा है और इसमें राज्य करने लायक कोई गुण भी नहीं है चरित्रके गुप्त भेद तक जाननेके कारणसे सर्दार उरसीसे अत्यन्त ही घृणा करते थे तथा उसे किंचित् भी सन्मान नहीं देते थे। राणाके कठोर स्वभावने शीघ्र ही मेवाडके प्रधान सरदार साद्रीपतिको अलग कर दिया* जिस महानुभाव

---

* साद्रीके ठाकुरने विहारीदास पंचोलीके वंशज यशवंतरावके पास जो उस समय मेवाडका दीवान था, एक पत्र भेजा, उसका अविकल अनुवाद नीचे लिखा जाता है।

"दीवान बहादुर यशवन्तराव पंचोलीजीको राजरघुरणदेवका प्रणाम। श्रीमान्का पत्र पाया। प्राचीनकालसे आप हमारे मित्र हैं और जन्मकालसे आप हमारा विश्वास करते आए हैं; कारण कि मैं राणाकुलके भक्तोंको ही हृदयसे स्नेह करता हूं। आपके निकट मैं कुछ भी नहीं छिपाऊंगा; इस ही कारणसे आज लिखता हूं कि काम करनेकी मेरी कुछ भी इच्छा नहीं। आगामी आषाढमें श्रीगयाजीको जानेका मेरा विचार है। (क) जब राणाजीके आगे यह विचार प्रगट किया तो उन्होंने श्लेष करके उत्तर दिया कि तुम द्वारकाकी यात्राकर सकते हो (ख)

(क) गयाजी परम पुण्यमय तीर्थ है।

(ख) राजपूतोंके मतानुसार द्वारका तीर्थ धर्मभीरु और युद्धसामर्थ्यहीन मनुष्योंके जाने लायक तीर्थ है।

"जो मैं रहूंगा तो राणाजी मेरी सम्पत्तिके परगनोंको जैतजीके समयके समान पुनरुद्धार कर देंगे। हमारे बडे बूढे भलीभांतिसे राणाओंकी सेवा कर गये हैं, और मैं भी १४ वर्षसे उस गद्दीकी सेवा प्रमाणिकपन और विश्वाससे करता चला आता हूं। इस समय मेरी सामर्थ्य जाती रही है; यदि दरबारकी इच्छा मेरे ऊपर करनेकी हो तो यही उचित अवसर है।"

झाला सरदारने हलदीघाटके भयंकर समरक्षेत्रमें निस्सहाय प्रतापकी जीवनरक्षा करके शिशोदीय कुलकी अनन्त कृतज्ञता पानेकी योग्यता प्राप्त की थी, आज राजाधम उरसीके कठोर आचरणने उसको भी शिशोदीयकुलसे अलग कर दिया। इस ओर देवगढके राजा यशवन्तसिंहके प्रति निर्बोध राणाने कुछ व्यंग्य वचन कहे, कि जिससे वह भी विद्वेष करने लगे। यशवन्तसिंहने तेजस्वी चंडके वंशमें जन्म लिया था। इस कारण वह भी इन व्यंग्य वचनोंके प्रतिफल देनेको अवसर खोजने लगे।

अपमानित विद्वेष भावापन्न सर्दारोंने अवसर देखकर राणा उरसीको सिंहासनसे उतारनेका चक्रान्त किया। उन्होंने प्रचार कर दिया कि इस सिंहासनका यथार्थ उत्तराधिकारी रत्नसिंह नामक एक व्यक्ति है। सर्दारगण इस प्रकारसे कहने लगे कि रत्नसिंहने राजसिंहके औरससे तथा गोगुण्डासर्दारकी बेटीके गर्भसे जन्म लिया है। इस बातके सत्य या मिथ्या होनेका अबतक कोई निराकरण नहीं हुआ, और अब आगेको भी इसके निराकरण होने की कोई आशा, नहीं। अनन्तर असन्तुष्ट और क्रोधित सर्दारगण उस रत्नसिंहको ही अपने विवादका मध्यबिन्दुस्वरूप समझकर द्वेषाग्निको भडकाने लगे। मेवाडके प्रधान सोलह सर्दारोंमेंसे अधिकांश सर्दार रत्नसिंहसे मिलगये। केवल पांच * सर्दार राणा उरसीकी ओर रहे। इनमेंसे शालुम्ब्रासर्दार तो सबसे पहिले ही रत्नसिंहकी ओर मिल गया था। परन्तु थोडे ही दिनोंमें उस पक्षको छोड राणाजीकी ओर चला आया। जिस महान राजभक्तिके द्वारा उत्साहित होकर चंडके वंशधरगण शिशोदीयकुलके लिये अपने प्राण तक दे देनेमें भी सोच विचार नहीं करते थे, वृद्ध शालुम्ब्राधिपतिने आज उस राजभक्तिके अनुरोधसे भी राणाजीका पक्ष ग्रहण नहीं किया। इसमें एक विशेष कारण था। सरदार प्रभुताका अभिलाषी था, उसने समझा था कि विद्रोहियोंमें मिल जानेसे विशेष प्रभुताई प्राप्त होगी। परन्तु जिस समय उसने यह जाना कि विरोधी शक्तावत सर्दारोंके सामने मेरी एक न चलेगी × तब वह विद्रोहियोंको छोडकर राणाके पक्षमें चला आया था।

दिप्रागोत्रमें उत्पन्न हुआ बसन्तपाल नामक सर्दार रत्नसिंहका मंत्री नियत किया गया। सन् ईसवीका बारहवीं शताब्दीमें बसंतपालके पूर्वपुरुष दिल्ली नगरीसे समरकेशरी समरसिंहके साथ मेवाडमें आये थे, तथा इससे पाहिले वह भारतके शेष सम्राट् महाराज पृथ्वीराजकी सभामें एक ऊंचे पदपर विराजमान थे। इन समस्त सर्दारोंके साथ "फितूरी" + ने कुम्हलमेर (कमलमेर) पर अधिकार किया और वहांपर सरदारोंके द्वारा यथाविधिसे अभिषेकित हो मेवाडका राणा बनजानेके कारण

---

* शालुम्ब्रा (चूडावत) बिजोली, अमाइत, गनौराके और बिदनोर सर्दारगण।

× भेंदर (शक्तावत) देवगढ, सादी, गोगुण्डा, देलवाडा, बेदला, कोठारियो और कान्होरके सर्दारगण, रत्नसिंहके पक्षके मुख्य सर्दार थे।

+ हिन्दीभाषामें चक्रान्ती, उर्दूमें फितूरी, और अंग्रेजीमें "प्रिटेण्डर" (Pretander) शब्दके बदले रत्नसिंहको "अपनृपति" कहना ठीक होगा।

राजनियमावलीपर स्वाक्षर करने लगा । राजनीतिके मूलतत्त्वका निरादर करके रत्नसिंहके सर्दारोंने अन्तमें इष्टसिद्धिके लिये जिस घृणित उपायका अवलम्बन किया उससे मेवाडका दुर्दिन और भी निकट आ गया । तदनन्तर उन सर्दारोंने सेंधियासे सहायता चाही और राणा उरसीको सिंहासनसे उतारनेके बदलेमें उसको १२५००००० रुपये देने स्वीकार किये ।

मेवाडके इस भयंकर अन्तार्विप्लवके समय जालिमसिंह नामक एक प्रचण्ड राजपूत-बीर राजस्थानकी रंगभूमिमें अवतीर्ण हुआ । जालिमसिंहने राजस्थानक्षेत्रमें विशेष करके मेवाडकी भूमिमें जिस प्रकारका अभिनय किया था उसको सुनकर सब ही गुण-ग्राही लोग उस वीरकी वीरता, महानता, तेजस्विता और राजनीतिज्ञताकी विशेष प्रशंसा करेंगे। मेवाडके क्षेत्रमें ही इस वीरकी तीक्ष्ण राजनीतिका विस्फुरण हुआ। यद्यपि यहांपर उसका वृत्तान्त लिखना प्रसंगानुसार नहीं है तथापि मेवाडकी रंगभूमिमें जो महान कार्य जालिमसिंहने किये थे इन कार्योंमें इनका जीवनचरित्र इतना जडा हुआ है कि उनका वर्णन करनेसे पहिले उनके जीवनचरित्रका कुछ अंश यहांपर लिखना भी आवश्यकीय है । माधोसिंहको अम्बेरके सिंहासनपर स्थापित करनेके विषयमें ईश्वरीसिंहके साथ राणा जगत्‌सिंहका जो संघर्ष उपस्थित हुआ, उसने ही जालिमसिंहके होनेवाले महान चरित्रका द्वार खोल दिया। ज़ालिमसिंहके पिता उस समय कोटेका शासन करते थे । बदला लेनेके लिये जब कि ईश्वरीसिंहने सेंधियाके साथ मिलकर कोटाराज्यपर आक्रमण किया उस समय जालिमसिंह वहीं पर थे उस समय महाराष्ट्री सेनाके साथ पहली बार उनकी मुठभेड हुई । इस प्रथम साक्षात्‌से ही महाराष्ट्रि-योंकी नीतिकौशलको वह उत्तमतासे सिख गये थे । तथा उस ही नीतिके अनुसार पचास वर्षतक उन्होंने कार्य किया था । अपने राजाके अनुग्रहको खोकर ज़ालिमसिंह कोटेसे दूर हो गये और आश्रय प्राप्त करनेके लिये राणाके पास आये । ज़ालिमसिंहकी ज्ञान बुद्धि और कार्यकुशलताका परिचय पाकर राणाजीने आदर सहित उनको अपनी सरदार श्रेणीमें ग्रहण किया । तथा "राजरण" उपाधिके साथ छत्रखैरीकी भूमि सम्पत्ति दान कर दी । ज़ालिमसिंहके परामर्शसे महाराष्ट्रीयसेनापति रघुपागेवाला और दौला-मिया नामक एक मुसलमान यह दोनों अपनी२ सेनाको साथ लेकर मेवाडमें आये। इस ओर राणाने प्राचीन पंचोलियोंको मंत्रीपदसे अलग करके उम्रजी महताके हाथमें राज्यका समस्त कारबार सौंप दिया । इस समय सं० १८२४ (सन् १७६८ ई०) में माधोजी सेंधिया; उज्जैननगरीमें विराजमान था, इस सेंधियाकी सहायता पानेके लिये प्रतिद्वन्द्वी सर्दारगण उज्जायिनीमें पहुँचे । सबसे पहिले रत्नसिंह गया । प्रथमसे ही सेंधियाके साथ बातचीत करके उसने क्षिप्रा नदीके किनारे अपना डेरा डाला, इस कारण राणा उरसीका समस्त आडम्बर वृथा हो गया ।

अनन्तर माधोजी सेंधियाकी सहायता न पाकर उरसी राणा स्वयं ही अपनृपति सेनाको रोकनेके लिये आगे बढा । शालुम्बाका सर्दार, शाहपुर और बुनेराके दोनों

राजे और जालिमसिंह तथा महाराष्ट्रीय सेनाने भी राणाकी सेनाकी सर्दारी ली और सब ही सहायताके लिये आगे बढे। इन सब हीने एक साथ मिलकर प्रचण्ड वेगसे माधोजी सेंधियाकी सेनापर आक्रमण किया। दोनों ओरसे घोर युद्ध होने लगा। राणाकी सेना अदमनीय वीरताके साथ शत्रुओंकी सेनाको मथित और वित्रासित करती हुई क्रमशः प्रचण्डगिरितरंगिणीके समान आगे बढने लगी। सेंधिया और अपनृपतिपर उस सेनाका वेग न सहा गया, तथा वह दोनों ही पराजित, अपमानित और अत्यन्त हानिग्रस्त होकर उज्जयिनीके द्वारभागमें पलायन कर गये। वहांपर फिर सेना इकट्ठी की और अपने पहिले अपमानका बदला लेनेके लिये दुबारा राजपूतोंकी सेनापर आक्रमण किया। विजयी राजपूतोंने विजयके आनन्दसे मतवाले होकर एकबार भी इस बातका विचार नहीं किया कि माधवजी सेंधिया सहजसे हमारा पीछा नहीं छोडेगा। इस कारण वह निश्चिन्त होकर शत्रुओंकी छावनीको लूट रहे थे। एक २ दल एक २ ओरकी लूटमें मग्न था, इसी समयमें माधवजीने रणसिंहा बजवा दिया। क्षणभरके लिये तो राजपूतगण विस्मित हो गये और फिर तत्काल अपनी अवस्थाको समझ लिया, वह समझ गये कि शत्रुगण सहजसे पीछा नहीं छोडेंगे। अभी राणाजीकी सेना श्रेणीबद्ध होकर खडी भी नहीं हुई थी कि माधोजीने भयंकर बलके साथ उनपर धावा कर दिया। सेंधियाके भयंकर बलको न सह सकनेके कारण, शालुम्ब्रा, शाहपुर और बुनेराके सर्दार रणभूमिमें मारे गये और सहकारी दौलामिया, नरवरका पदच्युत राजामान और सादीका उत्तराधिकारी कल्याणराज यह तीनों घोररूपसे घायल हुए। जालिमसिंह भी घायल हुए, इनका घोडा भी यहीं मर गया था, इस कारण रणभूमिसे भाग नहीं सके और शत्रुओंने उनको कैद कर लिया। कैद करलेने पर भी उनसे कैदियोंके समान व्यवहार नहीं किया। त्र्यम्बकजी नामक एक सदाशय महाराष्ट्रीने उनको अतियत्न और सन्मानके साथ ग्रहण किया। त्र्यम्बकजीका ही पुत्र प्रसिद्ध अम्बजी हुआ। पराजित और अपमानित राजपूतगण उदयपुरको भाग आये! इस ओर अपनृपतिके पक्षवाले उदयपुरपर चढाई करने और रत्नसिंहको वहांके सिंहासनपर स्थापित करनेके लिये सेंधियाको उत्तेजित करने लगे। विजयी महाराष्ट्रपतिने कुछ कालके पीछे विशाल सेनाको साथ ले गिरमार्गके भीतर प्रवेश करके उदयपुरको घेर लिया। सहायता व द्रव्यादिके अभाव होनेसे राणाजी हताश हुए। जो कितने एक साहसी वीर अबतक उनकी ओर थे उनमेंसे अधिकांश क्षिप्रानदीके किनारे रणभूमिमें गिर गये थे। अब इस समय राणाको कोई सहारा नहीं। महाराष्ट्रियोंके ग्राससे किसप्रकार उदयपुरकी रक्षा करें केवल शालुम्ब्राके भीमसिंह उनकी ओर उपयुक्त सर्दार थे। नगर रक्षाका भार इस ही सर्दारको समर्पण किया गया। उज्जयिनीके युद्धमें जो शालुम्ब्रा सर्दार मारा गया यह भीमसिंह उसका चचा और उत्तराधिकारी था। इस समय यही सरदार राणाजीके द्वारा सेनापति पदपर अभिषिक्त होकर वीरवर जयमलके वंशधर राठौर

वीर चिद्नौरपतिके साथ इस सङ्कट कालमें नगर और राजाकी रक्षा करनेके लिये भयंकर कार्यक्षेत्रमें अवतीर्ण हुआ। परन्तु केवल एक ही महापुरुषके कठोर उद्योग और उत्साहसे सब ओरकी रक्षा हुई। उस महापुरुषका नाम अमरचन्दबरवा था।

अमरचन्द बरवाका जन्म वैश्यकुलमें हुआ था। पहिले यह मेवाडका मन्त्री था। इसके समान चतुर और दक्षमन्त्री संसारमें विरला ही था। स्वर्गीय राणाजीके समय मेवाडमें जो महा अनर्थ हुआ था, अमरचन्दबरवाके सिवाय उस अनर्थको रोकनेकी और किसीमें सामर्थ्य नहीं थी। वास्तवमें यह मन्त्री मेवाडका स्तम्भस्वरूप था। इस समय राणा उरसीके समयमें अमरचन्दका मन्त्रीपद छीन लिया गया। जिस दिन इसका मन्त्रीपद गया उस ही दिनसे मेवाडको उपद्रवोंने घेर लिया। सर्दारोंके साथ विवाद, महाराष्ट्रियोंका सताना, इसके ऊपर राणा उरसीका तीव्र और रूढ आचरण यह समस्त अनर्थ क्रमशः इकट्ठे हो गये। इस समयमें अमरचन्द मन्त्रीपदको पुनः पानेकी आशा सम्पूर्णतः त्याग दी थी। अमरचन्दका स्वभाव प्रचण्ड और अरिसिंहके समान अदमनीय था। वर्त्तमान समालोच्य समयतक दशवर्ष व्यतीत हो गये कि अमरचन्द अपने कार्यसे अलग हो चुके थे। इन दशवर्षके मध्यमें मेवाडराज्यमें बहुतसा फेर बदल हो गया। जिन सर्दारोंने उरसी राणाके पक्षको छोडकर रत्नसिंहका पक्ष अवलम्बन किया, उनके स्थानमें वेतनभोगी सिंधीलोग नौकर रक्खे गये। इन सिंधीलोगोंने पूर्वोक्त सर्दारोंकी छूटी हुई भूमिपर अपना अधिकार करके राज्यमें मानो अप्रसन्नताका बीज बो दिया। इस बीजने मेवाडके समस्त विक्रम, तेज और बलका नाश कर डाला। इस अप्रसन्नताकी सघन छाया इतनी दूरतक फैल गई थी, कि जिन सर्दारोंने रत्नसिंहका पक्ष अवलम्बन किया था, वह भी सबसे अलग हो अपने किलेका द्वार बन्द करके गम्भीरभावसे रहते थे। इस भांति राणाकी आशा सबओरसे टूट गई थी। उनका पक्ष अत्यन्त दुर्बल हो गया था। जिस समय मेवाडपर यह विपत्ति पड रही थी, उस समय परमेश्वरके द्वारा प्रेरित हो अमरचन्द फिर भी कार्यक्षेत्रमें दिखाई दिये। उदयपुरके चारों ओर रक्षाके लिये खाई या परिखा कुछ भी न थी। कुछदूर दक्षिणमें एकलिंगगढ नामक एक ऊँचा शैलकूट था। यदि समझा जाय तो उदयपुरका यही प्रधान द्वार था। अतएव इसके चारों ओर परकोटा बनाने और तोपें लगानेसे उदयपुरकी रक्षाका होना विचार कर राणाजीने उक्त कार्यमें मन लगाया। एकलिंगगढ अत्यन्त दुरारोह था, यहांकी जमीन बराबर नहीं थी, इसकारण राणाजीकी समस्त कौशल वृथा हो गई। एक समय राणाजी उसकी देखभाल करनेको स्वयं वहां गये कि वहांपर अचानक अमरचन्दबरवासे उनका साक्षात् हुआ। अमरचन्दकी अप्रसन्नता दूर करनेके लिये राणाजीने अपने अपराधको स्वीकार किया और मधुर वचन कहकर वार्त्तालाप करने लगे। कुछ देरतक वार्त्तालाप होनेपर अरिसिंहने अमरचन्दसे पूँछा, आप कह सकते हैं कि इस कार्यको समाप्त करनेमें कितना रुपया और कितना समय लगेगा?" अमरचन्दने गम्भीरभावसे उत्तर दिया "कुछ धान्य और कई दिनका

समय।" तदुपरान्त राणाने अमरचन्दसे इस कार्यके करनेको कहा; तब मन्त्रीने संकोच छोडकर उत्तर दिया कि "जितने दिनतक इस कार्यका भार मेरे हाथमें रहै, तबतक इसमें मेरी आज्ञा ही चलै और किसीके हस्तक्षेपकी आवश्यकता नहीं, यदि यह अधिकार मिले तो मैं इस कार्यको कर सकता हूँ" राणाजी इस बातपर सम्मत हुए। अमरचन्दने तत्काल मजदूरोंको बुलाकर एक मार्ग बनवाया और कुछदिनके बीचमें ही एकलिंगगढके शिखरसे तोप छोडकर राणाजीको अभिवादन किया।

माधोजी सेंधियाने उत्तर, पूर्व और दक्षिणकी ओरसे उदयपुरको घेर लिया। केवल पश्चिमदिशा उसकी सेनासे छूट गई। उदयसागरके फैले हुए जलने पश्चिमदिशाको बचा लिया तथा ऊंचे २ शिखरपर और वनके वृक्षोंने भी सेंधियाके इस कार्यमें बाधा दी थीं। आवश्यकतानुसार नगरवासी इस पश्चिमदिशासे ही नगरके बाहर आते और उदयसागरके जलको नावपर बैठ पार करके अपने प्राचीनमित्र भीलोंको भोजन पहुंचाते थे। मेवाडके बडे बडे सर्दार शत्रुओंसे मिल गऐ, इस समय सिंधीसेनाके सिवाय राणाजीकी सहायता करनेवाला दूसरा नहीं था। इस समय केवल इस ही सेनाके ऊपर विश्वास और भरोसा था। परन्तु राणाजीकी अभाग्यतासे इस समय यह सेना भी बिगड खडी हुई और अपनी चढी हुई वेतन पानेके लिये झगडा करनेपर उतारू हुई। इस मूर्ख सेनाको राज्यका यह महाअनर्थ देखकर भी किंचित् दया न आई। बातचीतके दावेको छोडकर सिन्धीलोगोंने राणाके शरीरपर हाथ लगाकर राज्यका घोर अपमान किया। एकदिन राणाजी महलको जा रहे थे कि सिन्धीलोगोंने उनके डुपट्टेको पकडकर खेंचा उनसे छुटकारा पानेके लिये राणाने बलसहित अपने डुपट्टेको खेंचा। डुपट्टा फट गया। उस फटे हुए डुपट्टेको लेकर राणाजी रणवासमें चले गये। अपने तीक्ष्ण स्वभावके परिवर्तनमें अपमान सहना पडा। उनका संकट धीरे२ भारी होता गया। आशा भरोसा दूर हुआ। जिन सिंधीलोगोंको उन्होंने अपना सहारा समझा था आज वह भी विद्रोही हो गये। फिर अब इसका उपाय क्या है? चारों ओर विपत्तिकी भयंकर भ्रुकुटी दिखाई देने लगी। रघुदेव नामक एक व्यक्ति राणाका धाईभाई (दूधभाई) था। वह झाला सर्दारका उत्तराधिकारी होकर मंत्रभवनके कार्यको समाप्त करता था। इस महासंकटके समयमें उसने राणाको परामर्श दी कि "आप उदयसागरके पार होकर मंडलगढको चले जायँ।" कायरपनकी यह परामर्श देकर रघुदेवने अपनी अकर्मण्यताका पूरा प्रमाण दिया था। परन्तु राणाने इस परामर्शको न मानकर शालुम्ब्रासर्दारसे पूछा; उसने शोकित होकर कहा कि "मैं इसका निश्चय नहीं कर सकता कि इस संकटके समय कौनसा उपाय करनेसे मंगल होगा आप अमरचन्दको बुलावें।" अमरचन्द बुलाया गया। तथा संकटके रोकनेका समस्त भार उनको दिया गया। कार्य लेनेका समय अमरचंदने कहा "इस भारीकार्यके ग्रहण करनेकी मुझको कुछ भी सामर्थ्य नहीं है। न इसकी मुझे इच्छा है। महाराज भलीभांतिसे जानते हैं कि इससे पहिले मेवाडपर कितने कष्ट पड चुके हैं तथा दासने कैसे २ उपायोंसे उन अनर्थोंको दूर किया था। इस समय उनसे भी अधिक अनर्थ आ पडे हैं; इस समय भी उन्हीं

उपायोंके द्वारा मुझको यह अनर्थ दूर करने पडेंगे । " क्षणभरतक ठहरकर फिर अमरचन्दने कहा; " मेरे स्वभावमें बडा भारी दोष है कि जिसको आप जानते हैं, वह यह है कि मैं किसीकी आज्ञामें नहीं रहना चाहता । मैं जहां रहता हूं सर्व सर्वा होकर रहता हूं जो कुछ करता हूँ उसपर किसीकी बुद्धि नहीं चलने देता;--किसी गुप्त मंत्री या परामर्शदाताकी सहायताको मैं ग्रहण नहीं करता आपका धनागार रीता है, सेना विद्रोही हो रही है; भोजनकी समस्त सामग्री भी खर्च हो चुकी है;--यदि ऐसी अवस्थामें आप मेरे ऊपर निर्भर रहनेकी इच्छा करें, तो शपथ करके कहिये कि जिस बातकी मैं आज्ञा करूं वह न्याय हो, अन्याय हो, अच्छी हो, बुरी हो, परन्तु कोई भी उसके विरुद्ध कार्य न करेगा; यदि ऐसा होजाय तो जहांतक मनुष्यकी सामर्थ्य है वहांतक मैं समस्त कार्योंको सिद्ध करूंगा । परन्तु स्मरण रखियेगा कि " न्यायपरायण " अमर इस समय अन्याय परायण होगा और अपने पूर्व चरित्रके विपरीत कार्य करेगा ।" राणाने भगवान् एकलिंगके नामकी सौगन्ध लेकर कहा कि "आपकी समस्त वासना पूर्ण होगी, आप जो आज्ञा देंगे, उसका पालन किया जायगा । आप जो कुछ चाहेंगे वह दिया जायगा । यहांतक कि यदि आप रानीका रत्नहार और नथ भी मांगे तो उसके देनेमें भी मुझे आपत्ति न होगी ।" राणाके धाई भाई रघुदेवकी कायरतासूचक परामर्शको सुनकर अमरचंदको अत्यन्त क्रोध हुआ था । इस समय उसको सामने ही बैठा हुआ देखकर वह क्रोध दूना बढा । इस ही कारण रघुदेवका तिरस्कार करके कहा कि तुम्हारी जैसी अवस्था और विद्या बुद्धि हैं वैसे ही परामर्श तुमने राणाको दिया । यदि मान लिया जाय कि राणा उदयपुरसे मंडलगढको भाग जाते तो वहां पर कौन रक्षा करता ? तथा तुमने ऐसा कौनसा उपाय सोच रक्खा है, कि जिसके द्वारा तुम अपनी रक्षा कर लोगे ? इस प्रकारका कार्य तुम्हारे ही योग्य है; राजकार्यका विचार करनेकी अपेक्षा यदि इस समय अपनी पूर्ववृत्तिका अवलम्बन करके भैंस चराओ और दुग्ध बेचते फिरो तो बहुत अच्छा हो कारण कि इस वृत्तिका आश्रय लेना तुम्हारे कुलका धर्म है और तुम्हारी बुद्धि भी इसके योग्य है । तुम तो हो ही क्या वस्तु, राजकार्य तो अबतक तुम्हारे राजाको भी सीखने पडेंगे । अमरकी इस तेजस्विता और इस निडर आचरणसे राणा तथा समस्त सर्दारोंने शिर झुकाय लिया । पीछे प्राङ्गणमें आयकर तेजस्वी अमरचन्दने सिंधी सेनाको गम्भीर वाणीसे अपने पास लाकर कहा, " आओ ! हमारे पीछे आओ, मैं तुम्हारी चढी हुई समस्त वेतन दिये देता हूं परन्तु निश्चय जान लेना कि यदि तुम सफलकार्य न होगे तो समस्त दोष मेरे ही कंधेपर पडेगा ।" सेनाके जिन सिपाहियोंने पहिले राणाका अपमान किया था इस समय वे चुपचाप होकर मंत्रीके पीछे २ चले गये । अमरचन्दने उनके चढे हुए समस्त वेतनका हिसाब करके दूसरे दिन भुगतान करना चाहा और प्रतिहारीसे धनागारकी ताली मांगी । चाबी न देकर प्रतिहारी दूर भाग गया, तदुपरान्त अमरसिंहने कोषागारके किवाड तुडवाकर वहां पर जो कुछ धन रत्न या सोना चांदी था उन सबके रुपये

कर लिये और मणिरत्नादिको गिरवी रख दिया इससे जो धन इकट्ठा हुआ उससे सेनाका वेतन चुका दिया। बारूद, गोलों, गोली आदिकी खरीद हुई, अस्त्र शस्त्र भी मोल लिये गये, रसदका प्रबन्ध किया गया। इस प्रकारसे जो नया बल संग्रहीत हुआ उसकी सहायतासे अमरसिंहने शत्रुओंको दबाया और छः मास तक और भी उनके आक्रमणको रोक दिया।

नकली राणा रत्नसिंहने राणा उरसीकी अधिकांश "खास जमीन" हस्तगत करके उदयपुरकी तलैटीतक अपनी प्रभुताका विस्तार किया। परन्तु सेंधियाको उतना न दे सकनेके कारण कि—जितनेके देनेकी प्रतिज्ञा की थी—उस पर महाविपत्ति आपडी। चतुर महाराष्ट्रीय लोग समयको अमूल्य रत्न समझते हैं; उन्होंने समयको वृथा ही जाता हुआ देखकर अमरसिंहके साथ सन्धि स्थापन करनेकी वासना प्रगट की और कहला भेजा कि यदि सत्तर लाख (७००००००) रुपये दो तो हम रत्नसिंहको छोडकर चले जायँगे। इस बातको स्वीकार करके अमरचन्दने सन्धि की तैयारी की। सन्धिपत्र लिखा गया जब दोनों ओरके हस्ताक्षर उसपर हो गये तो सेंधियाने सुना कि यदि शीघ्र ही कोई आक्रमण किया जायगा तो विशेष फल प्राप्त होनेकी संभावना है। यह समाचार सुनते ही सेंधियाकी दुराकांक्षा दूनी बढ गई। उसने तत्काल अमरचन्दसे कहला भेजा कि वीस लाख (२००००००) रुपये और दो तो सन्धि होगी, नहीं तो नहीं। यह बात सुनते ही अमरचन्दको अत्यन्त क्रोध हुआ और अनेक प्रकारके आस्फालन करके सन्धिपत्रके टुकडे २ कर दिये और वह टुकडे विश्वासघातक महाराष्ट्रीयके पास भेज दिये विपत्तिके बढनेके साथ २ ही अमरचन्दका साहस और तेज बढने लगा। इससे पहिले जो अत्यन्त ही निराश हो गये थे अमरचन्दने उनके हृदयमें भी अपने उत्साहके द्वारा अत्यन्त उत्साह भर दिया। सिन्धी सेना और विश्वासी राजपूत सर्दार तथा और समस्त सेनाको संग्रह करके उन्होंने सब बातें समझाईं। अमरचन्द एक सद्वक्ता थे। जो वाणी मनुष्यके मर्मको भी स्पर्श कर देती है; अमरचन्दमें उस वाणीका भली भांतिसे विकाश था। अतएव असीम उत्साह और उद्बोधनके समय उनकी उस व्याख्यानशक्तिने प्रचण्ड वेगसे उनके सिपाही और सामन्तोंके हृदयमें प्रवेश करके सबको मतवाला बना दिया। यह वाणी इस प्रकारकी तीव्रतासे निकलती थी कि जैसी ज्वालामुखी पर्वतोंसे धातु उपधातु निकलती हों। सर्दारोंकी उत्साहाग्निमें योग्य ईंधन डालनेके लिये चतुर मंत्रीने उनको अनेक प्रकारके रत्नजटित गहने और बडे मोलके पदार्थ उपहारमें दिये।

राजकोषमें यह समस्त पदार्थ वृथा ही पडे हुए थे। राजनीति विशारद अमरचन्दने उन सबको सुकार्यमें लगाकर स्पष्ट ही अपनी कार्यपरायणताका परिचय दिया। नगरके या निकटके गांवगोंढोंमें गृहस्थ और व्यौपारियोंके यहां जितना धान्य था, उस सबको मोल लेकर हाट बाजारमें बेचनेके लिये भिजवाया गया। चारों ओर डोंडी पिटवा दी गई कि जो कोई वीर प्रार्थना करेगा उसको छः मासके भोजन योग्य धान्य

मिल जायगा । उससे पहिले रुपयेका आध सेर नाज बिक रहा था, इस समय अमर-चन्द एक साथ इतने धान्यको कहाँसे ले आया । इस बातका विचार करके शत्रुगण भी विस्मित हुए । सिन्धी सेनाके असन्तोषका समस्त कारण दूर हो गया । इस समय वह समस्त वीर अमरचन्दकी तेजस्वितासे उत्साहित होकर प्रगट सभास्थानमें राणा-जीको अपना विश्वास दिखानेके लिये एक साथ दरबारमें गये । राजसभामें जाते ही उनके सरदार आदिलबेगने * नम्रतायुक्त गंभीरभावसे कहा । "महाराज ! हमलोगोंने बहुत दिनसे आपका नमक खाया है व आपके पाक खानदानसे अब तक बहुतसे सलूक हमलोगोंपर किये गये हैं;इस वक्त हम सब कसम लेकर कहते हैं कि आपका साथ नहीं छोडेंगे। आज उदयपुर ही हमारी कदीमी जगह है, उदयपुरके साथ ही अपनी जान दे देंगे । अब हमको तनख्वाहकी जरूरत नहीं है;जब खानेपीनेका सामान खत्म हो जायगा, उस वक्त चोर मरहटोंकी फौज पर टूटकर शमशेर हाथमें ले मयदाने जंगमें जानको कुरबान करेंगे ।" तेजस्वी अमरचन्दने जो तेजस्विता सिन्धीसेनाके हृदयमें डाल दी थी, आज उसका प्रमाण स्पष्ट दिखाई दिया।सिन्धीलोगोंकी यह कसम सुनकर राणाके नेत्रोंसे आंसू निकल आये ।--आज पत्थर पसीज गया--वज्रमें शीतलताका संचार हुआ।राजाको विह्वल निहारकर सिन्धीलोग राजपूतोंके साथ मिलकर जयनाद करने लगे । राजपूतोंकी वीरता-का यह प्रचण्ड विस्फुरण शीघ्र ही दूरतक प्रवाहित हो गया,--उनका प्रचण्ड सिंहनाद भयंकर शब्दसे प्रतिध्वनित होकर दुराचारी सेंधियाके कानमें पडा । इस ओरसे उत्सा-हित राजपूतगण सेंधियाकी उस सेनापर--जो आगे बढ आई थी तोपोंकी मार करने लगे । राजपूतोंकी विक्रमाग्निको अचानक प्रचंड हुआ देखकर सेंधियाके मनमें अनेक प्रकारके सन्देह होने लगे । इस ही कारणसे उसने फिर सन्धिकी प्रार्थना की । इस बार अमरसिंहको जयका अवसर प्राप्त हुआ है उन्होंने चतुर महाराष्ट्रीयसे कहला भेजा कि "छः मास अवरोध सहनेसे जो खर्च हुआ है, वह पहिली निश्चित रकमसे काट लिया जायगा यदि इसमें आपकी सम्मति हो तो सन्धि स्वीकार है, नहीं तो युद्धके लिये तैयार हो जाइये।" आज राजपूतके जालमें चतुर सेंधियाको फसना ही पडा । अनन्तर साढे तिरसठ लाख (६३५००००) रुपये लेकर उसको अमरचंदके साथ सन्धि करनी पडी ।

मणि, रत्न, सोना, चांदी और सरदारोंको नई २ जागीरें दे राणाने ३३००००० रुपये इकट्ठा करके सेंधियाको दिया, शेष रुपया भुगतानके लिये स्थावर सम्पत्तिको गिरवी रखने लगे । इसके लिये जावद, जीरण, नीमच और मोरवण इत्यादि गांवोंका स्वतंत्र बन्दोबस्त हुआ । यहां पर यह नियम किया गया कि इन गांवोंका कर दोनों राज्योंके कर्मचारी मिलकर वसूल करेंगे और वर्षमें एक बार हिसाब साफ हो जाया करेगा। सन्धिबन्धन समाप्त हो गया । संवत् १८२५ से लेकर संवत् १८३१ तक इस सन्धिपत्रके नियमानुसार कार्य हुआ; परन्तु पिछले वर्षमें सेंधियाने राणाजीके

* इसके बेटे मिर्ज़ा अब्दुलरहीम बेगको राणाजीने एक जागीर दी थी ।

कर्मचारियोंको वहांसे दूर कर दिया और किसी प्रकारका प्रबन्ध करनेको राजी न हुआ। अतएव यह कई परगने मेवाडके अधिकारसे निकल गये संवत् १८५१ में विधाताकी लिखी कर्मरेखके अनुसार सेंधियाका भाग्यगगन काले २ बादलोंसे ढक गया। इस अवसरमें राणाने उन छूटे हुए परगनोंपर अपना अधिकार कर लिया,परन्तु यह अधिकार कुछ ही दिनके लिये था। पुनर्वार वह सब परगने हाथसे निकल गए। संवत् १८३१ में महाराष्ट्र समितिके प्रचण्ड सर्दारोंने पेशवाकी अधीनतारूपी जंजीरको छिन्न भिन्न करना चाहा फिर स्वतन्त्र होनेकी इच्छा करने लगे। सेंधियाने अपने प्रतिष्ठित राज्यके लिये पूर्वोक्त समस्त जनपदोंको रखकर केवल मारवण गांव हुलकरको दे दिया। मेवाडवालोंका ऐसा दुर्भाग्य था कि राज्यक्षयके अल्पकाल पीछे ही नीमबहेडा नामक जनपद भी राणाके हाथसे जाता रहा। दुष्ट हुलकरने सेंधियासे मोरवण पाय एक वर्षके पश्चात् ही राणासे इस नीमबहेडा नामक परगनेको मांगा और भय दिखाकर कहला भेजा कि यदि यह परगना न दोगे तो मैं भी वैसा ही व्यवहार तुम्हारे साथ करूंगा जैसा सेंधियाने किया था। राणाके दुर्भाग्यका वृत्तान्त कहांतक वर्णन किया जाय; यदि दुर्भाग्यकी करतूत न होती तो उनको वीरश्रेष्ठ महाराज बप्पारावलके वंशमें जन्म लेकर आज चोर महाराष्ट्रियोंके विकट भ्रुकुटिविलाससे भयके मारे किस कारणसे कम्पायमान होना पडता? यदि ऐसा न होता तो आज प्रतापसिंहके वंशधरको हुलकरकी अयोग्य और न्यायविरुद्ध आज्ञा क्यों पालन करनी पडती?

इस प्रकार संवत् १८२६ में दुर्द्धर्ष सेंधियाके आक्रमणसे उदयपुरको छुटकारा मिला। पहिले ही कह आये हैं कि मेवाडराज्यकी अन्तर्गत बहुतसी उपजाऊ भूमि राणाजीके हाथसे निकल गई थी परन्तु यह अवश्य याद रखना चाहिये कि यह समस्त जनपद न तो बिके ही थे,न सदाके लिये राणाजीने इनका स्वत्व ही छोडा था; केवल इनको गिरवी रक्खा था * किन्तु इससे भी मेवाडको अत्यन्त हानि हुई थी, इस हानिसे ही मेवाडका पतन शीघ्रतासे आरंभ हो गया। यद्यपि मेवाडकी शोचनीय दशा हो जानेसे राणाजी उन परगनोंको अपने अधिकारमें फिर नहीं कर सके;तथापि मेवाडवालोंने इन स्थानोंका स्वत्व कभी नहीं छोडा था। १० जनवरी सन् १८१७ई० में राणा भीमसिंहके साथ जो सन्धि गवर्नमेंटकी हुई थी, उसमें भी राणाके दूतोंने इस प्रस्तावको उठाया परन्तु दु:खकी बात है कि बृटिशसिंहने इस बिषयमें कोई भी फैसला नहीं किया। इसका वृत्तान्त भी उचित स्थानमें लिखा गया है।

अमरचंदके प्रचंड बलको न सहन कनेके कारण जिस दिन चतुर महाराष्ट्री सेनासहित उदयपुरको छोडकर चला गया, रत्नसिंह अभागेकी आशालता उस ही दिन निर्मूल हो गई। रत्नसिंहने बहुतसे दुर्ग अपने अधिकारमें कर लिये थे कि जिससे वह उदयपुरकी तलैटीमें दृढतासे जम गया था। परन्तु उसके भाग्यने साथ न दिया।

---

*केवल छोटी सिलौनी (गंगापुर) और इसकी लगी हुई भूमि अलग हो गई थी। इसका कारण यह था कि सेंधियाकी गंगाबाई नामक रानीको यह स्थान दिया गया था।

पराई सहायता और अनुकूलताके प्रभावसे जो उसने कई एक नगर, ग्राम और पलियोंको अपने अधिकारमें किया था, धीरे२वह सब ही स्थान उसके हाथसे निकल गये। राजनगर, रायपुर और अन्तला इनपर फिर उदयपुरवालोंका अधिकार हो गया। रत्नसिंहको छोडकर अनेक सर्दार उदयपुरको चले आये, राणाजीने अनुग्रह करके उनको उनकी भूमिवृत्ति भी दे दी। रत्नसिंहको फिर कोई भी आशा न रही। केवल देग्रामंत्री और मेवाडके सोलह उत्तम सर्दारोंमें जो कईएक उसकी ओर रहे उनमें देवगढ, भिण्डी और अमैताके तीन सर्दारोंके सिवाय और सब ही उसको छोड गये। यह झगडे शीघ्र नहीं दबे थे। फिर संवत्१८३१में उक्त तीन सर्दार भी मेवाडके मुकुट स्वरूप उर्वर गदवाड राज्यको जलांजलि देकर उदयपुरके राणाकी ओर आ गये। गदवाड देश मेवाडके और सब देशोंसे अधिक उपजाऊ है। इसके सीमावन्धनपर जो सामन्तलोग रहते हैं और २ सामन्तोंकी अपेक्षा वह लोग मेवाडपर अत्यन्त अनुराग करते हैं। राणावत,राठौर, तथा सोलङ्कीने बहुत दिनतक उत्तमराज भक्तिका परिचय देकर अपने विश्वासपात्र होने का प्रमाण दिया। गदवाडदेशकी अधिकांश जमीन सामन्तप्रथाके अनुसार इन सर्दारोंके ही पास रहती थी। यह सर्दारलोग (३०००) तीन हजार घोडे और बहुतसी पदातिसेनाको लेकर निश्चिन्ततासे अपने २ भूमिभागको भोगते थे। जोधपुरके बसनेसे पहिले सन्मानसूचक राणा उपाधिके साथ उक्त गदवाड (गोद्वार) जनपद मुन्दरके पुरीहार राजासे पाया गया था। राठौर वीर जोधके समयमें शिशोदीय वीर चंडके प्राणप्यारे कुमारके हृदयरुधिरसे कैसे इस देशकी सीमा बांधी गई थी, यह पहिले अनेकवार वर्णन किया जा चुका है। जब नकली राजा रत्नसिंह कमलमेरमें विराजमान हुआ तब राणा अरिसिंह (उरसी) ने जोधपुरके राजा विजयसिंहको गदवाडका शासन भार दे दिया। राणाजीके ऐसा करनेका एक विशेष कारण था। कमलमेर गदवाडके निकट ही बसा हुआ है, इस कारण राणाको संदेह हुआ था कि रत्नसिंह सुअवसर पाकर इसको छीन लेगा, इस ही शंकाके कारण यह जनपद विजयसिंहको दिया गया। इसके सम्बन्धमें जो चुक्तिपत्र राणा और विजयसिंहके बीचमें हुआ वह आजतक वर्त्तमान है। उस इकरारनामेके अनुसार मारवाडके राजकुमार राणाकी सहायता करनेके लिये उस देशकी आमदनीसे तीन हजार सिपाहियोंका भरण पोषण करनेके लिये नियत किये गए थे। यदि दुष्टके दुराचारसे राणा उरसी अकालमें इस लोकसे बिदा न हो जाते तो निश्चय ही इस गदवाड राज्यका उद्धार हो जाता, परन्तु ऐसा होनेसे ही समझा गया कि उनका भाग्य अत्यन्त मन्द था!

वासन्तिक अहेरिया उत्सव राजपूतोंका एक सनातन उत्सव है। परन्तु इस उत्सवके समयपर बहुधा मेवाड़में बहुतसे अनर्थ हुए हैं। मेवाड़के तीन राणा इससे पहिले अहेरियाउत्सवके समय अपने प्राण दे चुके थे। इस ही कारणसे किसी राजपूतबालाने सती होनेके समय जलती हुई चितापर चढ़कर कहा था कि "यदि अहेरिया मृगयाके समय राणा और राव मिलकर चलेंगे तो दोनोंमेंसे एकको अवश्य ही अपना प्राण देना

होगा।"राणा अरिसिंह इस पतिव्रताकी पवित्र भविष्यद् वाणीका निरादर करके शिकार खेलने चले थे। जब शिकार खेल कर राणाजी अपने घरको लौटने लगे कि इतने हीमें हाडाराजकुमार अजितने अचानक अपने घोड़ेको राणाकी ओर फेर कर उनके भाला मारा। राणाने बाणविद्ध केशरीके समान अजितकी ओर फिर कर देखा और कठोर शब्दसे चिल्लाकर कहा कि "रे हाड ! तूने यह क्या किया ?" राणाजी अचेतन होकर घोडेसे गिरा ही चाहते थे, कि तत्काल इन्दुगढ़के पाखंडी सर्दारने अपनी तलवारसे उनका शिर काट डाला। इस कार्यसे अजितके पिता अपने पुत्रपर इतने अप्रसन्न हुए, कि फिर उस दिनसे उन्होंने अपने पापीपुत्रका मुख नहीं देखा। कहते हैं कि समस्त हाड-वीरगण अजितपर अप्रसन्न हुए थे। इस भयंकर वधके समय एक रक्षकके अतिरिक्त और कोई भी राणाके साथ नहीं था। राणाजीके सर्दार और सामंन्तलोग इस समाचारको सुनते ही अपने २ डेरे और अपनी समस्त सामग्रीको छोडकर भयभीतके समान चारों ओरको भागे।

कहते हैं कि बूँदीराजकुमारने मेवाड़के सर्दारोंके द्वारा उकसाए जानेपर ही यह विश्वासघात किया था। इस बातका प्रमाण हम पहिले कईबार दे आये हैं कि सर्दारगण राणा अरिसिंहसे किंचित् भी स्नेह नहीं करते थे। राणाजी इस बातको भलीभांतिसे जानते और इसका उपाय करनेके लिये उचित अवसरकी प्रतीक्षा किया करते थे। यहांपर एक उदाहरण लिखनेसे ही इस बातका पक्का प्रमाण मिल जायगा—जिस शालुम्ब्रा सर्दारके पिताने राणाजीके लिये उज्जैनके संग्राममें अपने प्राण दे दिये थे; राणाने सन्देह करके एकसमय उसको अपने पास बुलाया और बिदा-सूचक पान हाथमें देकर कहा कि "तुम मेरे राज्यसे बाहर चले जाओ।" शालुम्ब्रा-सर्दारके ऊपर मानो वज्र टूट पडा। राणाकी यह अचानक अप्रसन्नता और इस कठोर आज्ञाके कारणको अवगत होनेके लिये सर्दारने विनयपूर्वक उनसे क्षमा मांगी। राणा-जीको कुछ भी दया न आई। वरन उन्होंनेअधिक कठोर स्वरसे चन्दावतसर्दारसे कहा कि "यदि तुम मेरी आज्ञाका पालन न करोगे तो अभी तुम्हारा शिर काट डालूंगा।" चन्दावतसर्दारने निरुपाय होकर क्रोधित हुए राणाकी आज्ञाका पालन किया। जानेके समय वज्रगंभीर कण्ठसे कहता गया कि "आपकी आज्ञाका पालन करता हूं, परन्तु इससे आपको और आपके परिवारको विशेष हानि पहुंचेगी।" अवमानित च-न्दावत वीरका दिया हुआ शाप शीघ्र ही फलवान् हुआ। परन्तु राणाके वधमें एक और कारण भी सुना जाता है। कहते हैं कि मेवाडके सीमाप्रान्तमें बिलैता नामक एक साधारण गांव है। मेवाडके अन्तर्गत हुए इस ग्रामपर बूंदीके राजाने बलपूर्वक अधिकार कर लिया। इससे ही झगडेकी जड जमी। अत एव ऊपर कहे हुए इन दो कारणोंमेंसे एक अवश्य ही इस वधलीलासे मिला होगा। परन्तु बूँदीके दुष्ट राजकुमारने राणाको विश्वासघातसे मार कर कायरपन और धूर्त्तपनका उत्तम नमूना दिखा दिया।

इस वधके समय समस्त सर्दार कायरपनके कारण राणाके शरीरको छोडकर चले गये; केवल राणाकी एक उपपत्नी वहांपर रही, इस उपपत्नीने ही क्रिया कर्म किये; श्रेष्ठ चन्दन मँगाकर उसने एक बडी चिताको बनानेकी आज्ञा दी। शीघ्र ही चिता बनी। बहुतसा चन्दन, घी, तिलसट, राल और फूलोंके हार इत्यादि सब सामग्री इकट्ठी हुई। राणाका मृतक देह गोदमें लेकर वह उपपत्नी चितापर बैठी सामने ही वटका एक बडा वृक्ष था उसको साक्षी मानकर वह मरनेको तैयार हुई स्त्रीने पतिके मारनेवालेको यह कठोर शाप दिया कि;–"हे वनस्पति! तुम साक्षी हो; यदि स्वार्थके लिये विश्वासघात करके मेरे प्राणपतिको किसीने वध किया है, तो निश्चय जानो कि दो महीनेमें उस पाखण्डीके सब अंग गल जांयगे;–संसारमें वह विश्वासघातक और राजघातक लोगोंका प्रकाशित उदाहरण स्थापन करेगा। किन्तु यदि प्राचीन वादविवाद अथवा पहिले किसी अपकारका बदला लेनेके लिये यह कार्य किया हो तो कुछ भी न होगा। देखो तुम साक्षी रहियो! यदि मैं सती हूं, यदि महाराज अरिसिंहके अतिरिक्त और किसीको हृदयमें स्थान न दिया हो तो मेरा यह वचन अवश्य ही फलीभूत होगा।" सतीका वाक्य पूरा भी नहीं हुआ था कि उस वटवृक्षकी एक बडी शाखा सहसा टूटकर गिर गई; वैसे ही चिता भी प्रचंड होकर धुधकारने लगी। उस वीरबालाने अरिसिंहके मृतक देहको गोदमें लेकर चिताकी अग्निमें अपने शरीरको प्रसन्नतासे होम दिया।

राजा अरिसिंह (उरसी) दो पुत्र छोडकर परलोकवासी हुए थे। उनमें पाहिलेका नाम हमीर और दूसरेका भीमसिंह था। संवत् १८२८(सन् १७७२ई०) में वीर हमीर मेवाडके गौरवहीन सिंहासनपर बैठा। यद्यपि यह वीर गिह्लौटकुलके एक पवित्र नामको धारण करके संसाररूपी रंगभूमिमें अवतीर्ण हुआ, परन्तु मेवाडके अभाग्यसे इस वीरके द्वारा उस पवित्रनामकी किंचित् भी सार्थकता न हुई। सिंहासनपर बैठनेके समय हमीर बारह वर्षका था, इस कारण राजकार्यको माता ही सम्हालती थीं, आज मेवाडके समस्त अनर्थ एक मूर्ति बनाकर प्रगट हो गये। एक तो मेवाडकी दशा, वैसे ही दीन थी, फिर महाराष्ट्रियोंका सताना, बालकका राज्य और स्त्रीका राज्यशासन–उसपर तुर्रा यह कि उस स्त्रीकी अभिलाषा भी अत्यन्त बढी थी अत एव आज कविवर चंदके कहे अनुसार मेवाडका सर्वनाश होना अनिवार्य है। इस ही समयमें आपसका झगडा उत्पन्न हो गया कि जिसने अनर्थके ऊपर अनर्थ किया। चन्दावत और शक्तावतोंमें सदाका विरोध था, आज इस विपत्तिके समयमें अपनी २ प्रधानता प्राप्त करनेके कारण दोनोंने प्रतिपक्षीगणोंके रुधिर बहानेका विचार कर लिया। शक्तावत् सरदारने राजमाताकी नीतिका अवलम्बन किया। इस ओर अपमानित शालुम्ब्रासरदार अरिसिंहके किये हुए अपमानका बदला लेनेके लिये स्वर्गीय राणाकी विधवा रानीके विरुद्ध कार्यक्षेत्रमें अवतीर्ण हुआ। इस भयंकर जातिवैरसे जो भयंकर अग्नि उत्पन्न हुई उससे सारी मेवाडभूमि श्मशान बन गई, अल्प दिनमें ही समस्त राज अनाथ हो गया। अवसर

पाकर चोरचकार तक भी मेवाडके धनको विना रोक टोकके लूटने खसोटने लगे। मेवाडके दीन किसानोंपर घोर अत्याचार होने लगा। आज मेवाड अत्यन्त शोचनीय दशाको पहुंच गया। मार्ग, घाट, मयदान, समस्त ही मनुष्योंके रुधिरसे गीले हो गए। राजस्थानका नन्दनकाननके समान मेवाड आज शोकोद्दीपक चिताभस्समय श्मशानकी मूर्ति बन बैठा।

तेजस्वी अमरचंदके उत्साह और तेजसे उत्साहित होकर जिन सिन्धीलोगोंने इससे पहिले विशेष राजभक्तिका परिचय दिया था, आज राणा अरिसिंहकी मृत्युके होते ही उन्होंने अपनी मूर्ति धारण की और बलपूर्वक राजधानीपर अधिकार करके अपनी चढी हुई वेतनको लेनेके लिये शालुम्ब्रासरदारको अनेक प्रकारके कष्ट देने लगे। राजधानीकी रक्षाका भार शालुम्ब्रासरदार हीके ऊपर था। इस सरदारको अपनी वेतन देनेमें अपारग जानकर सिन्धीसेना उसको तप्तलौह * पर बिठलानेकी तैयारियें कर रही थी; इस ही समय अमरचन्द बूँदीसे आया। पापिष्ठ सिन्धीलोगोंने अमरचन्दको देखते ही शालुम्ब्रासरदारको छोड दिया। मन्त्री अमरचन्दने शत्रुओंके आक्रमणसे राजकुमारके सत्यको रक्षा करनेकी दृढ प्रतिज्ञा कर ली। संसारके चरित्रको अमरचन्द भलीभांतिसे जानते थे, उनको ज्ञात था कि मन्त्रीपदपर बहुतसे आदमियोंका दांत है तथा मुझसे बहुतसे आदमी डाह करते हैं, राजकुमारकी रक्षाका भार लेनेसे बहुतसे आदमी इसमें भी मीन मेष लगावेंगे; अतएव ऐसा करना उचित है कि जिसमें किसी मनुष्यको भी कुछ कहने सुननेका अवसर न मिले। इस ही कारणसे मन्त्री अमरचन्दने अपनी सम्पत्तिका एक सूचीपत्र बनाया और वह समस्त सम्पत्ति राजमाताके निकट भेज दी। सुवर्ण, मोती, मणि, रत्न, चांदीके पात्रादि यहांतक कि तोषेखानेके समस्त वस्त्र भी भिन्न २ पात्रमें राजमाताके निकट भेजे गये। अमरचन्दका यह उदार अनुष्ठान देखकर सब हीको आश्चर्य हुआ, तथा माताका मन मन्त्रीकी ओरसे साफ हो गया। राजमाताने वह सम्पत्ति लौटानेके लिये अमरचन्दसे बारम्बार अनुरोध किया। परन्तु दृढप्रतिज्ञ अमरचन्दने उनका लौटा लेना अस्वीकार किया परन्तु राजमाताके कहनेसे केवल उन वस्त्रों को लौटा लिया कि जिनका वह व्यवहार कर चुके थे।

राजमाताकी दुराकांक्षा और अहंता दिन २ बढने लगी। रानी बुद्धिमान थी परन्तु शोकसे लिखना पडता है कि एक बुरी चालचलनकी स्त्रीने उसके ऊपर सबभांतिसे अपना प्रभाव जमा लिया था। जो कुछ वह कहती, राजमाताको वही करना पडता था, विना उस सहेलीकी परामर्श लिये हुए एक चरण भी नहीं धरती थी! इस सहेलीकी बुद्धिवृत्तिको एक साधारण युवक कर्मचारी चलाया करता था। अतएव यह

---

* अपराधियोंको दण्ड देनेके लिये राजपूतगण एक प्रकारका लोहपात्र गरम करके उसके ऊपर दंडित मनुष्यको बिठलाया करते थे।

कहना कुछ अनुचित न होगा कि परोक्षभावसे वह युवा ही राजमाताका नियन्ता था। वह अपने घरमें बैठकर जो चक्र चलाता, उसके अनुसार ही हमीरकी माताके समस्त कार्य हुआ करते थे। परन्तु वह कर्मचारी बहुत दिनतक जीवित नहीं रह सका। इस प्रकार उस पाखण्डीके द्वारा चलायमान होकर राजमाता प्रत्येक कार्यमें अमरचन्दकी विरुद्धता करने लगी। वह क्षणभरके लिये भी इस बातका विचार नहीं करती थी कि अमरचन्द मेरे पुत्रकी रक्षा करनेको ही यह सब कार्य करता है वास्तवमें उसकी दुर्बुद्धि यहांतक बढी कि वह चन्दावतोंकी अनुकूलता ग्रहण करके अमरचन्दके समस्त कार्योंका ही प्रतिवाद किया करती थी। कर्त्तव्य परायण अमर इससे किंचित् भी विचलित नहीं होता था। वह अपनी सिन्धी सेनाकी सहायतासे अपने पदपर अचल और अटल रहे। उन्होंने महाराष्ट्रियोंको नगरमें प्रवेश करनेसे रोक दिया और राजकीय भूमिकी भलीभांतिसे रक्षा की। परन्तु उनका शरीर भी तो रक्त मांस हीका बना हुआ था; क्रूर लोगोंके विद्वेषको इकला आदमी कब तक सँभाल सकता है? जिनके लिये उन्होंने सर्वस्वका त्याग कर दिया वही लोग अन्तमें कृतज्ञताको भूलकर पग २ पर अमरचन्दका अपमान करने लगे। इस बातसे ऐसा कौन मनुष्य है जो स्थिर रह सकता है? अमर स्वभावसे ही तेजस्वी थे; उनसे थोडा सा अपमान भी नहीं सहा-जाता था। परन्तु मन्त्रीपद पर आरूढ होनेके समयसे उन्होंने बहुतसे दुराचारियोंके वाग्बाण और अपमान सहे। केवल राजकुमार हमीरका स्वार्थ रक्षित रखनेके लिये उन्होंने यह वाग्बाण सहे थे। परन्तु आज उस हमीरकी माताको ही अपना शत्रु बना हुआ देखकर रोष, अभिमान और घृणाने अमरचन्दको उत्तेजित कर दिया। तथापि कर्तव्यपरायण अमरने कर्त्तव्यको हाथसे नहीं जाने दिया। एक समय मन्त्री अपने कार्यालयमें बैठे हुए थे कि दुष्टा रामप्यारी वहां आई और राजमाताका नाम लेकर किसी कार्यके सम्बन्धमें अमरचन्दका तिरस्कार किया। तेजस्वी अमरचन्दको क्रोध चढ आया उन्होंने इच्छानुसार उस पापिनी रामप्यारीको दुर्वचन कहकर घरसे निकलवा दिया। अपमानित रामप्यारी रोती हुई राजमाताके निकट गई और अपना समस्त वृत्तान्त रंगकर कह सुनाया। राजमाताने रामप्यारीकी कहानी सुनकर उससे अपना अपमान समझा और तत्काल एक पालकी मंगवाकर शालुम्ब्रासर्दारके पास चली। अमरचन्दने समझ लिया था कि आज कुछ अवश्य ही होनहार है, इस कारण वह तत्काल सभासे उठ चले और मार्गमें ही राजमाताकी पालकीको जाते हुए पाया, उन्होंने वाहक और अनुचरोंको राजभवनमें लौट जानेकी आज्ञा दी। ऐसी सामर्थ्य किसमें थी जो अमरचन्दकी आज्ञाको न मानता? जब पालकी रनवासके द्वारपर आ गई तो मंत्रीने राजमाताको प्रणाम करके धीर गंभीर भावसे कहा कि "देवि! रनिवाससे राजमार्गमें बाहर आकर क्या आपने अच्छा कार्य किया है? क्या इस कार्यसे आपके महामान्य स्वर्गीय स्वामीका अपमान नहीं हुआ? स्वामीकी मृत्युपर छः मासलों तो साधारण कुंभकारकी स्त्री भी घरसे नहीं निकलती। परन्तु आप शिशोदीयकुलकी

राजरानी महारानी होकर अपने स्वर्गीय पतिकी मृत्युका अशौचकाल व्यतीत होनेसे पहिले ही रनवास छोड कर बाहर जाती हैं। आप स्वयं बुद्धिमती हैं, आपको अधिक क्या समझाऊं? अमरचन्दको शुभ चिन्तकके अतिरिक्त अपना शत्रु न समझियेगा। अमर विश्वासघातक नहीं है कि महाराज अरिसिंहके कुमार बच्चेपर किसी प्रकारका अत्याचार करेगा मेरा एक निवेदन है कि इस समय मैंने एक गुरुतर कर्त्तव्य साधन करनेका विचार कर लिया है। इस कार्यपर आपका और आपके पुत्रोंका मंगल भलीभांतिसे निर्भर है। अतएव विरुद्धता करनेकी अपेक्षा इस समय मेरी सहायता करना आपको भलीभांतिसे उचित है। इस समय मेरे निवेदनको आप स्वीकार करें वा न करें, मैं निश्चय कहता हूं कि उस कर्त्तव्य कार्यको अवश्य ही साधन करूंगा। अमरके इन सारगर्भ वाक्योंने उस क्रूर हृदय राजमाताके हृदयमें स्थान न पाया। अमरचंद जब तक जीवित रहे उतने दिन राजमाताकी आंखोंमें खटकते ही रहे। अनन्तर जिस दिन उस न्यायवान धार्मिकप्रवर मन्त्रिशिरोमणिने इस लोकसे बिदा ली, जिस दिन उसका पवित्र देह जलकर राखकी ढेरी हो गया, उस ही दिन वह इस मनुष्य संसारकी स्वार्थपरता विश्वासघातकता और कृतघ्नतासे छुटकारा पाकर अनन्त सुखके धाम अमरलोकको चले गये। बहुतसे लोगोंका ऐसा अनुमान है कि उस पापिनी राजमाताने जहर दिलवाकर अमरसिंहका संहार कराया था! राजमाताकी दुराकांक्षा, क्रूरता, निठुरपन देखकर यह अनुमान सत्य ही जान पडता है। हा! मनुष्य कैसा निठुर है! कृतघ्नता कहां तक अपना बल करती है! स्वार्थपरता भी हो तो इतनी ही हो! यह संसार नरककी पीडाका भयंकर अन्धकूप है! यह कौन कहता है कि--पशुओंसे मनुष्य श्रेष्ठ है?--यदि श्रेष्ठ है तो कौनसे गुणसे श्रेष्ठ है? हिंसा, द्वेष, कृतघ्नता, स्वार्थपरता, विश्वासघातकता यदि यह उस श्रेष्ठपनके चिह्न गिने जाते हों, यदि एक भ्राताका सत्यानाश करके स्वार्थकी रक्षा करलेनेसे ही श्रेष्ठता प्रमाणित होती है, दुर्बलके ऊपर सबलका सताना ही यदि अच्छेपनको प्रगट करता है, जो वह श्रेष्ठता पशुजातिसे ऊंची श्रेष्ठता नहीं है;--उसको तो पशुपन कठोरपन और पिशाचपन कहना ही उचित होगा, उदारहृदय धर्मात्मा अमरचंदने अपनी मातृभूमिका उपकार करनेके लिये सर्वस्वका त्याग कर दिया, संसारमें जिस धनके लिये असंख्य उपद्रव हुआ करते हैं; विना याचित हुए ही वह अपार धन परोपकारमें लगा दिया; परन्तु इस परोपकारका उन्हें कौनसा बदला मिला? पग२ पर जातिवालों तथा इष्टमित्रोंका विद्वेष सहन करके जीवन धारण करना पडा। तथापि दृढप्रतिज्ञ अमरचंदने कर्तव्यकार्यसे किसी समय भी मुँह नहीं मोडा था। जिसके लिये उन्होंने इतना कष्ट सहा और इतना त्याग स्वीकार किया; जिसके लिये मंत्रिश्रेष्ठको अपने बिरानोंका विद्वेषभाजन होना पडा; उस ही पिशाची ने घृणित मार्गमें पांव रखके जहर देकर अपने हाथसे उस महात्माका प्राण संहार किया! हाय! मनुष्योंका चरित्र क्या इतना घृणित और इतना नरकमय है?

जिस महापुरुषने स्वदेशके लिये जीवन धारण करके अंतमें स्वदेशवालोंकी विश्वासघातकतासे इस लोकसे बिदा ली, वह किसी भी देशका गौरवस्वरूप हो सकता था।

परन्तु मेवाडका अत्यन्त दुर्भाग्य है कि,मेवाडकी अयोग्य रानीने मंत्री अमरचंदके गुणों का माहात्म्य नेक भी न समझा । संसारमें और भी दो चार मंत्री इस प्रकारके महान गुणोंसे विभूषित थे, परन्तु अमरचंदके समान किसीकी भी शोचनीय दशा नहीं हुई । यद्यपि अमरचंद एक प्रधान राज्यके मंत्री थे, परन्तु वह यहांतक बेसहार हो गये थे कि अन्तमें उनका अन्त्येष्टिसंस्कार नगरबासियोंने चन्दा डालकर किया था ! भारतके इतिहासका यह एक नया उदाहरण है! परंतु ऐसा होनेसे कोई यह न समझे कि भारतमें साधारण ज्ञानध्वनि नहीं है; या भारतीयगण गौरवका सन्मान करना नहीं जानते । जो ऐसा समझते हैं उनको भारतवर्षका पूरा २ ज्ञान नहीं है । कारण अमरचंदके महान् गुणोंका वर्णन अबतक भी कोई नहीं भूला है । यदि अबतक भी कोई वैसे गुणग्रामोंसे विभूषित होता है तो राजपूतगण उसको अमरचंदके नामसे पुकारा करते हैं ।

अभागिनी राजमाताने अनसमझीसे स्वयं ही अपने पांवमें कुल्हाडी मारी । अमरसिंहका संहार करके उसने समझा था कि अब कोई मेरी आज्ञाके विरुद्ध न चलेगा, परंतु थोडे ही समयमें उसका यह सुखस्वप्न भंग हो गया । संवत् १८३१(सन्१७७५ई०) में बेगू सर्दारने विद्रोही होकर उसके राज्यको नष्ट करना चाहा । बेगू एक मेघावत सावंतथा । मेघावत वंश चंद्रावत गोत्रकी एक बडी शाखा है । हीनबुद्धि राजमाताने इस मेघावत सरदारके प्रचंड प्रतापको रोकनेमें असमर्थ होकर सेंधियासे सहायता चाही । चतुर महाराष्ट्रीय वीरने सुअवसर समझकर सेनासहित बेगू सरदारपर चढाई की । बेगू सर्दारने राणाजीकी जिन "खास जमीनोंपर" दखल कर लिया था, उन सबको सेंधियाने छुडा लिया और विद्रोहके अपराधमें उस सर्दारपर १२००००० (बारह लाख!) रुपया जुरमाना किया * परन्तु अभागिनी राजमाताने सेंधियाको जिस आशयसे बुलाया था, स्वार्थी महाराष्ट्रीय वीरने उस आशाको पूर्ण न करके समस्त धन सम्पत्तिको अपने आप पचा लिया । उसको उचित था कि उसको बालक हमीरके हाथमें समर्पण करता, परन्तु कुमारको न देकर अपने जामाता बीरजी प्रतापको रतनगढखेडी और सिंगोली जनपदमें स्थापन करके अवशिष्ट ईरानिया जाठ विचूर व नदोयी आदि कई एक जनपद हुलकर सरकारको दे दिये । इन परगनोंकी वार्षिक आमदनी सालियाना ६००००० रुपये थी । मरहटे लोग मेवाडके केवल इन ही परगनोंको हजम करके शान्त न हुए; वरन उन्होंने पुनर्वार संवत् १८३०-३१ में चार × और संवत् १८३६ में और भी तीन + खंडानियोंका दावा किया । इस विपुल धनके प्राप्त न

* जिस संधिपत्रके अनुसार सेंधियाने इन परगनोंपर अधिकार किया, वह अबतक वर्तमान है ।

× यह चार खंडनियें निम्न लिखित मनुष्योंने ली थी । संवत् १८३० में वेगूका विद्रोह दबानेको माधोजी सेंधियाने संवत्१८३१में बीरजी तापने गोविन्दराव गणपतिरावकी मार्फत ली; संवत् १८३१में ही तीसरी खंडनी अम्बाजी इङ्गले और चौथी खंडनी बापू हुलकर तथा दादौजी पंडितने ली ।

\+ इन तीन खंडनियोंमेंसे पहिली हुलकरकी ओरसे आप्पाजी व सकाजीने ग्रहण की, दूसरी सोमाजीकी मार्फत तुकोजी हुलकरने ली; तीसरी सोमाजीकी मार्फत अलीबहादुरने ली ।

होनेसे उन्होंने मेवाडकी और भी बहुतेरी भूमि सम्पत्ति दबा ली। इस प्रकार दुरन्त महाराष्ट्रियोंके प्रचण्ड कष्टसे पीडित होकर और दारुण घेरलू झगडोंसे दिक होकर हमीर राजपूतने पूर्ण वयसमें * चरण न धरकर ही संवत् १८३४ (सन् १७७८) में परलोककी यात्रा की।

जिस दिन महाराष्ट्रीय लोग सबसे पहिले मेवाडभूमिमें आये थे उस दिनसे लेकर इस दूसरे हमीरके शासनकालतक मेवाडके अनेक स्थान राणाके पाससे निकल गये जिनका विचार आगे किया जाता है। यह समय लगभग ४० वर्षका हुआ होगा। इस लंबे-समयमें जिन निठुर महाराष्ट्रियोंने पाशवीय स्वार्थपरतासे उत्साहित होकर मेवाडकी जो भूमि ली और जितना धन लिया यदि उस सबका वर्णन किया जाय तो एक बडी सूची बनानी पडे। अतएव अनावश्यक समझकर ऐसा नहीं किया जाता। इस ४० वर्षके समयमें महाराष्ट्रियोंने मेवाडकी अत्यन्त ही दुर्दशा की कि जिसको वह देश फिर किसी समय दूर नहीं कर सका। यह सत्य है कि मुगल बादशाह भी स्वार्थपर और प्रजापीडक थे, यह भी सत्य है कि वह हिन्दू लोगोंके सुख दुःखका किंचित् भी विचार नहीं करते थे; परन्तु उनका राज्य था, वे भारतके रहनेवालोंको अपनी प्रजा समझते थे; ऐसा समझनेके कारणसे ही हिन्दुओंके ऊपर कठोर अत्याचार नहीं करते थे, इससे ही उनका अत्याचार कभी २ मन्द हो जाता था, परन्तु महाराष्ट्रीय वैसे नहीं थे। वह भारतके रहने वाले थे तो क्या हुआ ? वह पलभरके लिये भी भारतका विचार नहीं करते थे। महावीर शिवाजीने उनको जिस महामंत्रसे दीक्षित कर दिया था, यदि वह उस मन्त्रका पालन करते तो निश्चय ही अपनी जन्मभूमिके अनन्त कष्टको दूर कर सकते थे। परन्तु भारतकी कठोर ललाटलिखनको कौन मेट सकता है ? इस ही कारणसे उन्होंने महात्मा शिवजीके महामन्त्रका निरादर करके भारतको अपनी पैशाचिक लीलाके अविनय करनेसे भयंकर श्मशान बनाकर उसकी भयंकरताको सहस्रगुणा बढा दिया। महाराष्ट्रीय लोग रुधिरके प्यासे, पिशाचकुलके समान झुण्डके झुण्ड चारों ओर घूमा करते थे। जहां कहीं किंचित् भी धनकी गंध पाले, वहीं पर फैल कर समस्त रुधिरको चूंस जाते थे। हमने केवल तीन खण्डिनियोंको विचार करके देखा। इनमें मेवाडका एक करोड इक्यासी लाख रुपया खर्च हुआ। इसके अतिरिक्त राणाके कुटुम्बियों और सर्दारोंसे जो धन गया वह अलहदा × महाराष्ट्रियोंके पैशाचिक उत्पीडनसे मेवाडकी आज जो

---

* हमीरकी उमर अन्त समयमें केवल १८ वर्षकी थी।

× अंग्रेजी ईस्ट इण्डिया कम्पनीके कामदारोंमें भी राज्य स्थापन करनेके प्रारंभमें महाराष्ट्रियोंके अनुसार ही व्यवहार किया था। जहांतक हो सका धन लिया और फिर देश दबाया, उस बातको सब—

शोचनीय दशा हो गई है उसका विचार करनेसे छाती फटती है । आज उस चित्तौरकी भग्न प्राकारावलिके शिखरसे प्रकृति सती करुणापूर्वक रोती हुई गौरवगरिमाकी अनित्यता, मनुष्यकी स्वार्थपरता, विश्वासघातकर्ता और कृतघ्नताका बखान कर रही हैं ।

महाराष्ट्रियोंने मेवाडके राणाओंसे पृथक् २ नीचे लिखे संवतोंमें १८१००००० रुपये की खंडनियें लीं ।

६६ लाख रुपये वि० सं० १८०८ (सन् १७५२ ई०) में राणा जगत्सिंहसे हुलकरको मिले ।

५१ लाख रुपये वि० सं० १८२० (सन् १७६४ ई०) में राणा अरिसिंह (उरसी) से माधोजी सेंधियाको मिले ।

६४ लाख रुपये वि० सं० १८२६ (सन् १७७० ई०) में राणा अरिसिंह (") से माधोजी सेंधियाको प्राप्त हुए ।

१८१००००० सब जोड ।

इन रुपयोंके अतिरिक्त २८५०००० रु० के महाल भी महाराष्ट्रियोंने मेवाडसे लिये ।
९००००० रु० की आमदनीका रामपुरा व भनपुरा महाल वि० सं० १८०८ (सन् १७५२ ई०) में लिया ।

४५०००० रु० की आमदनीके जावद, जीरण नीमच और नीमबहेडा, यह महाल वि० सं० १८२६ (सन् १७७० ई०) में लिये ।

६००००० रु० की आमदनीके रतनगढखेडी, सिंगोली, इर्नया, जाठ, बिचूर और नदोई इत्यादि महाल वि० सं० १८३१ (सन् १७७५) ई० में लिये और इस ही वर्षमें

९००००० रु० की आमदनीका गदबाड महाल ले लिया ।

सब जोड २८५०००० रु० हुए ।

इस प्रकारसे महाराष्ट्रियोंने खंडनियें और महाल मिलाकर ४५०००००० चार करोड पचास लाख रुपया लिया; बछीना झपटीसे दो करोड और भी वसूल किया । इस भांति सात करोड रुपया उनके हाथ लगा । इस रुपयेके जानेसे उदयपुरखजानेमें पहिले के समान श्री नहीं रही व जिस दरिद्रताने मेवाडभूमिमें अपना पांव जमाया, वह अबतक भी मेवाडके रहनेवालोंका पीछा नहीं छोडती ।

—ही इतिहास पढनेवाले जानते हैं । काशीके महाराज, लखनऊकी बेगम और बंगालके नव्वाब शुजाउद्दौला आदिकोंसे अंग्रेजी अमलदारोंने करोडों रुपये अन्याय और अत्याचारसे लिये । तदनुसार लार्ड डलहौसीने भी पंजाब, नागपुर व सितारा आदि राज्योंको डुबाकर जप्त किया। बली लोग निर्बलोंपर ऐसा ही व्यवहार किया करते हैं । राजतृष्णामें धर्मबुद्धि और न्यायनुवर्त्तन तो कभी पाया जाता है ! ऊपर लिखे अनुसार अंग्रेजोंने इन रियासतोंमें पुष्कल अपहार किया, तथापि बडौदा, महसौर, धार इत्यादि दबाये हुए कुछ राज्योंको लौटा भी दिया।अंग्रेजोंके न्याय और उदारपनका यह एक उत्तम उदाहरणहै तथा इससे कम्पनीकी कीर्ति अवतक प्रसिद्ध है।ऐसा समंजसपन महाराष्ट्रियोंसे किंचित् भी नहीं हुआ !

षोडश अध्याय १६.

राणाभीम;-शिवगढका झगडा;-राणाजीका निकल गई हुई भूमिपर पुनर्वार अधिकार करना;-राणाकी सेनापर अहल्याबाईकी चढाई;-राणाकी पराजय;-चन्दावतसरदारका विद्रोह;-मंत्री सोमाजीका वध;-विद्रोहियोंका चित्तौरपर अधिकार;-राणाका माधोजी सेंधियासे सहाय माँगना;-चित्तौरपर चढाई;-विद्रोहियोंका शरणमें आना;-मेवाडमें अपना अधिकार स्थापित करनेके लिये जालिमसिंहका मनोरथ;-अम्बाजीके द्वारा उनका विद्रोहताचरण;-अम्बाजीका सूबेदार होना;-लखवाके साथ उसका झगडा;-झगडेका फल;-जालिमसिंहको जहाजपुरकी प्राप्ति;-हुलकरकी मेवाडपर चढाई;-नाथद्वारेके पुरोहितोंको बन्दी करना;-कोतारियोंके ठाकुरकी शूरता;-लाखूवाकी मृत्यु;-महाराष्ट्री सेनानियोंपर राणाकी चढाई;-जालिमसिंहके द्वारा उन सेनानियोंका उद्धार;-हुलकरका पुनर्वार उदयपुरमें आकर कठोर कर स्थापन करना;-सेंधियाकी चढाई;-कृष्णकुमारीका पाणिग्रहण करनेके लिये राजपूतोंमें झगडा;-परस्पर युद्ध;-कृष्णकुमारीका आत्मत्याग;-मीरखाँ और अजितसिंह;-उनका दुराचरण;-उदयपुरस्थ सेंधियाकी राजसभामें बृटिशदूतका आगमन;-अपमानित होकर अम्बाजीका आत्महत्याका विचार करना;-मीरखाँ और बापू सेंधियाके द्वारा मेवाडका ऊजड होना;-अंग्रेजोंसे राणाजीकी सन्धि।

राणा हमीरकी अकाल मृत्युके कुछ ही दिन पीछे उसका छोटा भाई भीमसिंह संवत् १८३४ (सन् १७७८ ई०) में मेवाडके सिंहासनपर बैठा। चालीस वर्षके बीचमें चार बालक राजकुमारोंने मेवाडके शासनदण्डको परिचालन किया। भीमसिंह इनमें चौथे हुए, जब यह सिंहासनपर बैठे तब इनकी अवस्था आठ वर्षकी थी। भीमसिंहने सब मिलाकर पचास वर्षतक राज्य किया था। इस आधी शताब्दीके मध्य मेवाडमें जो असीम अनर्थ उत्पन्न हुए थे उनका वृत्तान्त पाठ करनेसे सहसा विश्वास होता है कि विधाताने वीरवर बाप्पारावलके वंशको दीन हीन करनेके लिये ही मानो अन्तरमें बैठकर शिशोदीयकुलकी कठोर कर्मलेखको अङ्कित किया था।

अप्राप्त व्यवहारकाल व्यतीत हो जानेपर भी भीमसिंह बहुत दिनतक अपनी माताके अधीन रहे । इस दीर्घकालकी पराधीनतासे ही उनका भावी चरित्र गठित हुआ । वह स्वभावसे ही निस्तेज और उत्साहहीन हो गये; विशेष करके दुर्भाग्यके अंकुश ताडनसे राणाकी बुद्धि इतनी छोटी हो गई थी कि उनमें सामर्थ्य और विचारशीलताका नाम भी शेष न रहा । इस कारणसे कुछ एक कुचक्री आदमी उनको अपनी चालपर चलाने लगे । यद्यपि अपनृपति रत्नसिंहका दलबल बहुत ही हीन हो गया था; परन्तु यह बात नहीं थी, कि उसका नामतक शेष न रहा हो । परन्तु यह दल अपनी अकर्मण्यतासे इतना निःसहाय हो गया था कि भट्टग्रन्थोंमें आगे उसका कोई विवरण ही नहीं पाया जाता । यहांतक कि उसकी मृत्युका वृत्तान्त भी कहीं नहीं जाना गया ।

न जाने किस कुघडीमें भारतवर्षके बीच परस्परकी फूटने पांव धरा था। इसकी अन्तरदाही भयंकर अनलके प्रतापसे भारतकी समस्त भूमि दग्ध हो गई । सुवर्णका भारत मानो जलता हुआ श्मशान बन गया है ! यह सत्य है कि प्रभुताको सब ही मनुष्य चाहते हैं; परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि प्रभुताके लिये न्याय और ज्ञानके मूलमन्त्रपर चरणप्रहार किया जाय, परन्तु दुःखकी बात है कि राजपूतोंमें इस प्रकारकी अनर्थकारी सामर्थ्यप्रियताका विशेष प्रादुर्भाव देखा जाता है । पहिले ही कहा जा चुका है कि चन्दावतलोगोंको राणाजीने ऊंचापद दे रक्खा था । इस समय संवत् १८४० (सन् १७८४ ई०) में यह चन्दावतसरदारलोग अपने पुराने शत्रु शक्तावतोंका रुधिर गिरानेके लिये तथा वैरका बंदला लेनेके लिये राणाकी दी हुई उस सामर्थ्यका दुर्व्यवहार करनेके लिये तैयार हुए । कोराबाडका अर्जुनसिंह * और अमैतका प्रतापसिंह × यह दोनों शालुम्ब्रा सरदारके प्रधान सम्बन्धी थे । चन्दावत सरदारने इस समय उन दोनों राजपूतोंके साथ मन्त्रभवनपर अधिकार किया और समस्त सिन्धी सेना और उसके दोनों सेनापति चन्दन तथा सिदीकको वशमें करके अपनी दुरभिलाषाको सिद्ध करनेके लिये तैयार हुए । इतने दिनतक तो यह लोग सुअवसरकी बाट देख रहे थे। इस समय उस वांछित सुअवसरको पायकर शालुम्ब्रासरदारने अपने प्रतिद्वन्द्वी शक्तावत सरदार मोहकमके भेंदरकिलेको घेर लिया और तोपादि लगाकर सब भांतिसे युद्धके लिये तैयार रहा ।

शक्तावत गोत्रकी एक नीची शाखामें संग्रामसिंह नामक एक वीर पुरुष उत्पन्न हुआ था । इसके द्वारा मेवाडके होनहार इतिहासमें बहुतसे प्रसिद्ध कार्य हुए थे । परन्तु उसकी प्रतिष्ठा उस समय एकसाथ न बढकर धीरे २ बढ रही थी । भेन्दरको घेरनेसे कुछ पहिले संग्रामसिंहने अपने प्रतिद्वन्द्वी पुरावतसरदारके साथ एक घोर झगडा उठाया पुरावतसरदारका लव्हा नामक एक किला था । जब संग्रामसिंहने इस किलेको ले

* इसके भ्राता अजितसिंहने ही अंग्रेजोंसे संधि की थी।

× प्रसिद्ध जगवतकुलमें इसका जन्म हुआ था । प्रतापसिंह महाराष्ट्रियोंके साथ लडते २ उनके हाथसे मारा गया ।

लिया * तब दोनोंका झगडा मिट गया। तदनन्तर विजयी संग्रामसिंह अपने माननीय कुलपति शक्तावतसरदारका हितसाधन करनेके लिये कार्य करने लगा। भेंदरकिलेको चन्दावतलोगोंसे घिरा हुआ देखकर संग्रामसिंहने कोराबडके शासक अर्जुनकी भूमिवृत्तिपर चढाई करके वहां पर जितने गवादि पशु थे सबको अपने अधिकारमें कर लिया। जब कि वह उन पशुओंको लिये हुए आ रहा था उस समय अर्जुनसिंहके पुत्र सालिमसिंहने मार्ग रोक कर उसपर आक्रमण किया। थोडी देर तक इस स्थानमें युद्ध होता रहा। संग्रामसिंहने बर्छा मार कर सालिमसिंहके प्राण ले लिये। अर्जुनसिंहने शीघ्र ही इस समाचारको सुना। विषम शोकके मारे उसका मस्तक कांपने लगा। शीघ्रतासे शिरपर बँधा हुआ डुपट्टा दूर फेंक कर उसने वज्रगम्भीर कण्ठसे प्रतिज्ञा की कि "जबतक बदला नहीं ले लूँगा तबतक यह डुपट्टा शिरपर नहीं बाँधूगा।" अपनी सेनासे किसी प्रकारकी अकुशलका बहाना करके वह उस अवरोधकारी कटकसे बिदा हो कोराबडकी ओर यात्रा करके सहसा शिवगढकी ओर चला। संग्रामसिंहका वृद्ध पिता लालजी इस शिवगढमें रहता था। भीलदेश चप्पनके हृदय-विहारी अत्यन्त ऊँचे पहाडोंपर और महावनके भीतर यह शिवगढ बसा हुआ है अत्यन्त। दुर्गम और दुरारोह होनेसे संग्रामसिंहने समझा था कि शत्रुगण सहसा इसको अपने अधिकारमें न कर सकेंगे। इस ही कारणसे उसने यहांपर अपने स्त्री पुत्र और परिवारवर्गको रक्षित किया था। आज अर्जुनकी क्रोधाग्नि उस जनहीन वनके मध्यमें बसे हुए शिवगढ दुर्गके ऊपर प्रचंड दावानलरूपसे विस्तारित हो गई। अर्जुन सेनासहित इस किलेकी तलैटीमें आ पहुँचा और देखा कि दुर्ग रक्षकशून्य है। तदुपरान्त क्रोधित अर्जुनने प्रचंड नाद करके अपने रणसिंगेको बजाय मेघगंभीर रवसे सिंहनाद की। उस हृदय-स्तंभनकारी सिंहनादसे दुर्गवासियोंकी निद्रा भंग हुई। वह इस प्रकारसे चारों ओरको भागे कि जैसे दावानलसे डर कर हाथियोंके झुंड इधर उधरसे भागते हैं। लालजीके अतिरिक्त वहांपर और कोई युद्धविशारद वीर वर्तमान नहीं था। लालजीकी अवस्था लगभग सत्तर (७०) वर्षकी होगी। ग्रीष्मकालकी धूपोंने उसकी केशराशिको धूसरवर्ण कर दिया है, उसकी खाल लटक कर शिथिल हो गई है। तथापि वह वृद्धवीर प्रचंड उत्साहसे उत्साहित हो तरुण वीरके समान हाथमें खड्ग लेकर शत्रुओंके सामने आया। दोनों दलोंमें घोर संग्राम होने लगा। शत्रुओंकी संख्या बहुत थी, इस कारण वृद्धने रणभूमिमें प्राण दे दिये। किलेको शत्रुओंने ले लिया। विजयी अर्जुनने पुत्रहन्ता संग्रामसिंहके बच्चोंको पशुके समान बध करके अपनी पुत्रशोकानलको निर्वापण किया। उस भयंकर हत्याके समयमें संग्रामसिंहकी वृद्धा माताने अपने पतिका देह गोदमें लेकर चिताकी अग्निमें अपने प्राणोंको होम दिया।

कोराबडके शासक अर्जुनसिंहके इस कठोर अत्याचारसे प्रतिद्वन्द्वी सम्प्रदायोंमें जो भयंकर अनल प्रज्वलित हुई उसको कोई भी निर्वापण नहीं कर सका। इस अग्निने

* संग्रामसिंहके वंशवाले अबतक इसको भोगते हैं।

समस्त मेवाडभूमिको भस्म कर डाला । इसके ऊपर फिर बालक भीमकी अकर्मण्यता और राक्षस महाराष्ट्रियोंके बढते हुए अत्याचारसे जो शोचनीय दशा हुई उससे कोई भी मेवाडका उद्धार नहीं कर सका । समर संग्राम, प्रताप और राजसिंहकी साधनभूमि, राजस्थानका नन्दनकानन चित्तौर आज भस्ममय श्मशानवन हो गया । इन अनर्थोंके साथ २ चन्दावत और शक्तावतोंका पुराना वैर भी दिन २ बढने लगा । पहिले ही कहा जा चुका है कि चन्दावतगण राणाके प्रिय पात्र थे, इनका सरदार ही मेवाडका मंत्री किया गया था । परन्तु दुराकांक्षी भीमसिंहने अत्यन्त अभिमानके होनेसे इस ऊंचे पदका अपमान किया था । चित्तौर और उदयपुरके बीचमें जितनी राजकीय भूमि थी वह सब ही उसने सिन्धीसेनाको दे दी । यह समस्त सेना मंत्री भीमसिंहके ही अधिकारमें थी । राणाके साथ इसकी किंचित् भी सहानुभूति नहीं थी । कारण यह कि जिस समय राणा धनके अभावसे अत्यन्त कष्ट पा रहे थे उस समय यह मंत्री अपने इष्टमित्रोंके साथ अच्छी रीतिसे गुलछर्रे उडा रहा था, धनके लुटानेकी भरमार थी। यहांतक कि राणा भीमको ईडरमें अपना विवाह करनेके लिये रुपया कर्ज लेना पडा । परन्तु इस विश्वासघाती सामन्तने अपनी बेटीके विवाहमें प्राय: १०००००० रुपये प्रसन्नतासे व्यय कर दिये । चन्दावत सरदारका यह आचरण देख कर राजमाता अत्यन्त अप्रसन्न हुई और चन्दावतोंसे राज्यभारको छीनकर शक्तावतोंको निकट बुलाया तथा मेंदर और लव्हाके सामन्तोंको भलीभांतिसे सन्मानित करके प्रतिष्ठित किया। शक्तावतोंको राजमाताकी दी हुई प्रतिष्ठा मिली; परन्तु इन लोगोंके पास इतनी सेना नहीं थी कि यह लोग वैरियोंको पराजित करके उनके विक्रमको रोक सकते । इस कारण चारों ओर सहायताकी खोज करते २ कोटेके सरदार जालिमसिंहसे सहायताकी प्रार्थना की । जालिमसिंह चन्दावतोंसे बहुत ही अप्रसन्न था । इस ओर शक्तावतगण तो उसके अति निकटके सम्बन्धी थे; कारण कि इन लोगोंके साथ जालिमसिंहका वैवाहिक सम्बन्ध था । अतएव शक्तावतोंका अभिप्राय जानते ही उनके पक्षमें हो गया और अपने महाराष्ट्रीय मित्र नानाजी बल्लालके साथ १००००सेना लेकर अपने कुटुम्बियोंसे जा मिला । इस समय शक्तावतोंके दो कर्त्तव्य कार्य हुए; प्रथम तो विद्रोही चन्दावतोंका दमन करना; दूसरे अपनृपति रतनसिंहको कमलमेरसे भगाना;—चन्दावतलोग सिन्धियोंके साथ मिलकर चित्तौरके प्राचीन दुर्गमें स्थित हो राणाके विरुद्ध अनेक प्रकारके कपटजाल फैला रहे थे । इस समय सबसे इनका दमन करना ही शक्तावतोंने उचित कार्य समझा और वह इसके लिये तैयार हुए ।

जिस समय मेवाडमें यह बातें हो रही थीं उस समय माधोजी सेंधियाकी प्रचंड प्रभुता सहसा मारवाड और जयपुरवालोंके मिले हुए विक्रमसे एकसाथ ही छिन्न हो गई। तथा लालसोट क्षेत्रमें विजयी राजपूतोंकी जयलिपि विजयी महाराष्ट्रीय वीरोंके माथेपर स्पष्टभावसे दिखाई देने लगी । जब कराल माधोजीका विषैला दांत टूट गया तब राजपूतोंने अवसर पाकर अपनी समस्त भूमिसम्पत्तिको उनके ग्राससे उद्धार कर लिया।

विजयी राठौर और कछवाहोंके कार्यका अनुसरण करके शिशोदीय राजाने भी उस राज्यको,-जो कि महाराष्ट्रियोंने छीन लिया था उद्धार करनेका विचार किया। इस समयमें गिह्लौट वीरगणोंकी प्राचीन शूरता फिर भी एक मुहूर्तके लिये दमकने लगी। राणाजीके दीवान मालदास मह्ता और उनके सहकारी मौजीराम दोनों ही विशेष साहसी और बुद्धिमान् थे। इन्होंने प्रयोजन समझकर पहिले तो नीमबहेडा और उसके निकटवाले महाराष्ट्री किलोंको अपने अधिकारमें कर लिया। पराजित महाराष्ट्रियोंने अत्यन्त भयभीत होकर जावद नामक स्थानमें अपनी बिखरी हुई सेनाको इकट्ठा किया, परन्तु उनके समस्त उपाय विफल हो गये। कारण कि राजपूतोंने इस किलेको भी घेरकर वहांसे भी समस्त महाराष्ट्रियोंको भगा दिया। जावदका शासनकर्ता शिवाजीनाना विजित होनेपर भी विजयी राजपूतोंकी अनुमति लेकर निर्विघ्न अपने भाई बन्धु और द्रव्यसामग्रीके साथ किलेसे चला गया। इस ओर बेगू सरदार मेघसिंह * के पुत्रने एकत्र होकर महाराष्ट्रियोंको बेगू, सिंगौली और प्रान्तमें बसे हुए अन्यान्य परगनोंसे निकाल दिया। सुअवसर समझ कर चन्दावतोंने भी अपनी भूमिवृत्ति रामपुर जनपदको उद्धार कर लिया। इस प्रकारसे थोडे ही समयमें मेवाडवालोंके हाथसे निकले हुए समस्त राज्य ही कुछ दिनके लिये आनन्दमय हो गये। मेवाडका निविड विषादरूपी अन्धकार कुछ दिनके लिये लोप हो गया। वीरजननी मेवाडभूमि एक बार और भी हँसी--मेवाडके निवासी, महाराष्ट्रियोंकी कठोर बेडीसे छुटकारा पाकर आनन्दसे शिशोदियाकुलका जयजयकार करने लगे।

जयोत्फुल्ल राजपूतोंने मेवाड और मारवाडकी सीमापर बहनेवाली रिराकिया नामक नदीके किनारेपर बसे हुए चहूँनामक स्थानमें अपनी विजयिनी सेनाको मेवाडके और और स्थानोंमें भेजनेका उद्योग किया। परन्तु उनकी निबुद्धिने सब ही काम बिगाड दिये। जयमदसे मत्त होकर उन्होंने एक बार भी अपनी अवस्थाको विचार कर नहीं देखा कि हमको क्या करना है ? और विना सोचे विचारे जिधर तिधर तलवार चलानेको तैयार हो गये। महाराष्ट्रियोंने सन्धिपत्रका अपमान करके अन्यायसे जिन देशोंको अपने अधिकारमें कर लिया था यदि राजपूतगण उनका ही उद्धार करनेको तैयार होते तो उनका समस्त उद्योग सफल हो जाता, परन्तु उन्होंने भ्रांत और मूढ होकर समझा कि जब एकबार महाराष्ट्रीयलोग पराजित होगये तब तो वह फिर कभी भी शिर नहीं उठावेंगे। यह समझ कर राजपूतोंने उनसे वह जनपद (परगने) भी लेने चाहे कि जो महाराष्ट्रियोंकेही थे। परन्तु वीरनारी अहल्याबाईके प्रचण्ड बाहुबलने उनके समस्त कार्योंको विफल कर दिया। हुलकरराज्यकी महारानी अहल्याबाईने राजपूतोंको नीमबहेडा नामक जनपद हस्तगत करते देखकर अत्यन्त क्रोध किया। राजपूतोंको दलित करनेके लिये वह

---

* मेघसिंह बेगू जनपदका सरदार था, इसका जन्म चन्दावतगोत्रमें हुआ था। इसकी सन्तान सन्तति मेघावत नामसे प्रसिद्ध हुई। मेघसिंहके शरीरका रंग अत्यन्त काला था इसलिये "काला मेघ" नामसे भी पुकारा जाता था।

संधियाकी सेनाके साथ मिल गई। अहल्याबाईकी आज्ञाके अनुसार तुलाजीराव संधिया और श्रीभाई यह पांच हज़ार घुडसवारोंको साथ लेकर पराजित हुए शिवाजी नानाकी सहायता करनेके लिये मन्दसोरकी ओर चले। शिवाजी नाना उस समय मन्दसोरमें स्थित होकर अपने प्रचण्ड बाहुबलसे अवरोधकारी राजपूतोंको दलित कर रहा था। इस ही समयमें सहयोगी महाराष्ट्रीगण सेनासहित उस नगरके निकट पहुंचे और चुपचाप राणाकी सेनापर आक्रमण कर दिया। माघ शुक्ल ४ मंगलवार संवत् १८४४ (सन् १७८८ ई०) को दोनों सेनाका घोर युद्ध आरम्भ हुआ। राजपूतलोग असतर्क थे इस कारण महाराष्ट्रियोंकी गतिको न रोक सके और घोररूपसे पराजित हुए। राणाका मंत्री बहुतसे सैनिक और सामन्तोंके साथ संग्राममें मारा गया। कानोर और साद्रीके सरदार अपनी २ सेनाके साथ अत्यन्त ही घायल हुए। साद्रीपतिका घाव अधिक था इस कारण वह संग्रामभूमिसे भाग नहीं सका और शत्रुओंके हाथमें कैद हो गया * माधोजी संधियाके पराजित होनेसे राजपूतोंने जिन परगनोंको अपने अधिकारमें कर लिया था, केवल जावदके सिवाय और सबको पुनर्वार महाराष्ट्रियोंने ले लिया। वीर दीपचंदके अद्भुत विक्रमसे केवल जावद ही रक्षित रहा। दीपचंदने बराबर एक मासतक अत्यन्त वीरताके साथ जौदकी रक्षा करी फिर अपनी तोप, बन्दूक और सेनाके साथ शत्रुओंकी सेनाके मोरचे भेद कर मंगलगढ किलेको गया। इस प्रकार अभागे राजपूत लोगोंका दुःखनिशा प्रभात होते २ फिर भी गाढ़ अन्धकारसे छा गई। राजपूतोंके समस्त उपाय व्यर्थ हो गये।

इस भीषणसंघर्षमें केवल चन्दावतोंके अतिरिक्त और समस्त सरदार मिल गये थे। इससे चन्दावतोंकी आन्तरिक क्रूरताका स्पष्ट प्रमाण मिलता है। क्रमानुसार यह लोग यहांतक ढीठ हो गये कि राजमाता और राणाके नवीन सचिव सोमजीने उनको पूर्ण दबानेका विचार कर लिया परन्तु इनसे कुछ भी न हो सका इस कारण शान्त हो गये और मध्यस्थतामें रामप्यारीको शालुम्ब्रा सरदारके पास भेजा। शालुम्ब्रा सरदार शान्त हुआ और राजकुमारसे क्षमा प्रार्थी होनेको उदयपुरमें आया। उदयपुरमें आते ही उसने बहाना किया कि "मेरा विचार मंत्री सोमजीके साथ मिलकर कार्य करनेका है।" परन्तु उसका अभिप्राय यह था कि सामाजिक कौशलजालमें फसाकर अपना कार्य सिद्ध करूं। बुद्धिमान् सोमजीके द्वारा ही शालुम्ब्रासरदारके अभिलषित आशारूपी मार्गमें कांटा पडा था। इस समय नवीन मंत्रीका संहार करके उस कांटेका निकालना ही शालुम्ब्रा सरदारका अभिप्राय था। एक समय मंत्री सोमजी अपने कार्यालयमें बैठे हुए राजकार्य कर रहे थे, उस ही समयमें कोराबडके अर्जुनसिंह और भेदश्वरका सामंत सरदारसिंह यह दोनों वहां आये। मंत्री सोमाजीके सामने आते ही सरदारसिंहने तीव्र स्वरसे उनको कहा "आपने किस साहससे हमारी जागीरको जप्त किया। और

---

* यह दो वर्षतक कैदमें रहा फिर अपनी भूमिवृत्तिके चार उत्तम नगर देकर छूटा।

इस वाक्यको विना ही समाप्त किये अपनी छूरी मंत्रीके हृदयमें मारी" । इस लोमहर्षणकारी वधके होने से सारे राज्यमें अत्यन्त गोलमाल होने लगा । राजकर्मचारीगण चन्दावतोंके भयसे ७ ह ा न ही शंकित हो गये । उस समय राणाजी "सहेलियावाडी" (वनदेवताका बाग) नामक बगीचेमें बिदनौरके राजा जैतसिंह तथा अन्यान्य सरदारोंके साथ आनंद विहारके साथ समयको बिता रहे थे । अभागे सोमजीके दो भ्राता* "रक्षा करो २" कहते और चिल्लाते हुए वहांपर आये । अर्जुनसिंह भी उनका पीछा करता हुआ वहांपर आया । उसका दाहिना हाथ उस समय भी सोमजीके रुधिरसे लाल हो रहा था । अर्जुनसिंहका यह साहस देखकर सब ही चकित हुए और किसीपर कुछ भी न हो सका । केवल राणाने विश्वासघातक कहकर उसको दूरसे ही जानेकी आज्ञा दी । इसके उपरान्त इस बीभत्स और हत्याकाण्डके परिचालकगण अपने सेनापति शालुम्ब्रासरदारके साथ चित्तौरनगरको गये । मंत्रीका पद उसके भ्राता शिवदास और सतीदासको मिला । इन्होंने शक्तावतोंकी सहायता पाकर विद्रोही चंदावतोंसे अनेक बार युद्ध किया । इनलोंगोने जो युद्ध किये उनमेंसे केवल अकोला स्थानमें विद्रोहियोंपर जय पाई थी । इस युद्धमें कोरावडका सरदार अर्जुनसिंह चन्दावतलोगोंका सरदार बना था । परन्तु इस युद्धके थोडे ही दिन पीछे खैरोद स्थानमें शक्तावतगण फिर पराजित हुए । इस भयंकर संघर्षकालके समय राज्यमें ऐसी विश्रृंखला और ऐसा विद्रोह मच गया कि समस्त प्रजाको महाशंका होने लगी । मानो भयंकर अराजकता विद्रोहका वेष बनाकर मेवाडके द्वार २ पर भ्रमण करने लगी । जिस पक्षकी जय हुई, उसके ही उन्मत्त आचरणसे अभागी प्रजाका धन और प्राण नष्ट हुआ । किसानने अत्यन्त परिश्रम करके नाजको उत्पन्न किया परन्तु वह उसको भोग न सका । सुनार, लोहार, और चमारादि कारगिर लोग सामग्री बनाकर तैयार करते थे परन्तु फल उनको कुछ भी नहीं मिलता था । बनियें लोग सर्वस्व खर्च करके धान्यको मोल लेते थे; परन्तु उसको बेच नहीं पाते थे;—समस्त सामग्रीको चोर और ठग लूट लेते थे । पहिले समयमें चोरीका नाम ही नाम मेवाडमें बाकी था वास्तवमें जिसका अभिनय कहीं भी नहीं देखा जाता था, आज चन्दावतोंके अत्याचारसे मेवाडके घर २ में वह अभिनय होने लगा । धन संपत्तिके सिवाय प्रजाका प्राण और मर्यादा भी छिन्नभिन्न होने लगी । सब ही अपने २ स्थानको छोड कर इधर उधर भागने लगे। इस चोरी डकैतीके कारण थोडे ही समयमें मेवाडका आधा राज्य ऊजड हो गया । जमीदारोंके नाजके खेत, किसानोंके हल बैल, जुलाहोंका ताना बाना और बनियोंकी दुकानें यह सब ही स्थान शून्य हो गये । जिन शोभायुक्त महल दुमहलोंके भीतर स्त्रियोंका नाच गाना सुना जाता था, वहांपर इस समय श्मशानकी भयंकरता दिखाई देती थी । अब तो भयंकर बनैले हिंसक जन्तुओंने उन स्थानोंमें अपना अड्डा जमाया था ।

---

* शिवदास और सतीदासके साथ उनका चचेरा भाई जयचन्द था । उन्होंने भ्राताके वध करने वालेको मारकर बदला लिया था; परन्तु बदला लेनेमें इनके प्राण भी गये थे ।

मेवाडके इस सर्वव्यापी विप्लवके समय राजा, प्रजा, धनी, निर्धन किसीमें कुछ भेद न रहा। उस समय वही अपनी रक्षा करनेको समर्थ हुआ कि जिसमें कुछ बल था। शेष सब होंको पाखण्डी लोग सताते थे. मूल बात यह है कि राज्य अत्यन्त ही दीनदशाको पहुंच गया था। राणाकी अवस्था भी अत्यन्त शोचनीय हुई, कहाँ तो वह दीन प्रजाकी रक्षा करते और कहां अब स्वयम् ही आश्रयके लिये व्याकुल थे। अतएव प्रजाके साथ जो सम्बन्ध उनका था वह छिन्न हो गया। सब ही अपनी २ रक्षाके लिये बलसे काम लेने लगे, राणाकी इस अकर्मण्यतासे राज्यमें और भी कितने एक महाअनर्थ उत्पन्न हो गये। जिन किसानोंकी यह इच्छा नहीं थी कि अपनी मातृभूमिको छोडें उन्होंने अपनी आशाको पूर्ण करनेके लिये किसी एक वीरकी सहायता ले ली और उसकी सहायताके बदलेमें उसे कुछ धन देना स्वीकार कर लिया। स्वार्थके रक्षा करनेकी लालसा जैसे २ बढती गई, वैसे ही वैसे रक्षकोंकी चाह बढी। जो राजपूत लोग घोडेपर चढने और भाला चलानेमें कुशल थे वही वीर बन बैठे और बहुतसे मनुष्य उनकी सहायता चाहने लगे। यह अश्वारोही गण अनेक प्रकारसे धन पैदा करने लगे। वह लोग किसानोंके धनको अपनी की हुई सहायताके बदलेमें लेने लगे। वनियोंको भी इन लोगोंने भलीभांतिसे लूटा या उनके ऊपर कर लगाया। उन लोगोंका यह पिछला आचरण इतना प्रबल हो गया था कि विना महसूल दिये कोई वणिक् अपनी सामग्रीको विना विघ्नके कहीं पर नहीं ले जाता था। इस प्रकारसे कर ग्रहण करना राजपूतोंकी वृत्तिमें गिना जाने लगा। जब यह अत्याचार दूर हो गया उस समय भी तो उक्त राजपूतगण इस करका दावा करते थे। इस दावेकी मीमांसा करना फिर बहुत ही कठिन हो गया था। राज्यका सार इस विद्रोहसे शून्य हो गया। परन्तु इसके ऊपर जब महाराष्ट्रियोंके झुण्डके झुण्ड मेवाडभूमिके उपर टूटने लगे, तब जो दशा इस राज्यकी हुई उसका वर्णन करना हमारी सामर्थ्यसे बाहर है।

चन्द्रावतोंके विद्रोही होनेसे राज्यमें इस प्रकारका अनर्थ उत्पन्न होता हुआ देख कर राणा और उनके मंत्रियोंने चित्तौरसे विद्रोहियोंको निकालनेके लिये सेंधियाकी सहायता लेनेका विचार किया। जिस सेंधियाने रतनसिंहकी सहायता करनेको तैयार होकर मेवाडका आधा रुधिर चूस लिया था, आज विधाताकी विडम्बनासे राणाने उस कीही अनुकूलता चाही। वह अत्यन्त ही अकर्मण्य थे, नहीं तो मेवाडका सत्यानाश करनेवालेको किस कारणसे अपना वन्धु बतलाते? कहते हैं कि जालिमसिंहने राणाजीको इस विषयमें परामर्श दी थी। सेंधिया उस समय पुण्यक्षेत्र पुष्करजीके किनारेपर आनन्दपूर्वक छावनी डाले हुए पडा था, लालसोटमें * पराजित होकर उसने फ्रांसके विख्यात वीर डि-बोइन नामक सरदारको अपनी सेनाके कवायत सिखानेमें

* संवत १८४७ सन् १७९१ ई.

नियुक्त किया था, डि-बोइन अत्यन्त शस्त्रनिपुण वीर था। इसकी शिक्षाके गुणसे महाराष्ट्री सेनाने पुनर्वार अपने पूर्वविक्रमको प्राप्त कर लिया था। क्रमानुसार मैरता और पट्टन क्षेत्रमें उस महाराष्ट्री सेनाकी विक्रमाग्नि प्रचण्ड तेजसे जलने लगी। राठौरगण प्रचण्ड-वीरता और प्राणोंपर उतारू होकर भी उस विक्रमानलको निर्वापण न कर सके--वरन पराजित हुए। उनके पराजित होनेसे सेंधियाको वह प्रतिष्ठा पुनर्वार प्राप्त हो गई कि जिसको उसने लालसोट और जोधपुरकी लडाईमें खो दिया था। राणाजीकी आज्ञाके अनुसार जालिमसिंहने मेवाडके प्रधान मंत्रियोंके साथ उस पीठ-स्थानमें पहुंचकर अपना अभिप्राय सेंधियासे कहा। जालिमसिंहसे राणाजीके अभिप्रा-यको सुनकर सेंधिया सम्मत हुआ। इस घटनासूत्रसे बँधकर राजस्थानकी राजनैतिक रंगभूमिमें जो महामहोपाध्याय अवतीर्ण हुए उनके अद्भुत वीरानुष्ठानसे राजपूतानेके इतिहासमें एक नये युगका अवतार हुआ। इस समय प्रयोजन समझ कर हम संक्षेपसे उसका विचार करते हैं। *

इस बातसे पहिले ही जालिमसिंहको कोटेकी सूबेदारी मिलचुकी थी। इस प्रका-रके ऊंचे पदपर दृढभावसे स्थित रहके चारों ओरके वैरियोंको दबाकर रखना यद्यपि साधारण कार्य नहीं है तथापि जालिमसिंह इसको तुच्छ ही समझता था। उसके हृदयमें जो एक ऊंची अभिलाषा धीरे२ गुप्तभावसे फैलती जाती थी उसके सन्तोषको कोटेकी सूबे-दारी अत्यन्त ही साधारण थी। उस सीमा बद्ध अल्प राजनैतिक क्षेत्रमें विचरण कर-नेसे वह ऊंची अभिलाषा किसी प्रकारसे भी पूर्ण नहीं होगी। वह ऊंची अभिलाषा यह थी कि मेवाडराज्यकी गद्दी मिल जाय। राजनैतिक होनेके अतिरिक्त जालिमसिंह मनु-ष्यके हृदयस्थ विचारोंको भी भलीभांतिसे जान लेता था। इस अपूर्व पारदर्शिताके बलसे वह भलीभांति समझ गया था कि नाचीज राणा मेरी अभीष्टसिद्धिके विषयमें कुछ भी रोक टोक नहीं कर सकता है अतएव मेवाडके साथ हाडावतीका राजस्व इकट्ठा करके समस्त राजस्थान पर शासन करलेना फिर क्या कोई बडी बात है? जालिमसिंहको निश्चय था कि जयपुर और मारवाडके राजा यदि मिल भी जाय तो भी मुझको पराजित नहीं कर सकते। जयपुरके राजाको जालिमसिंह डरपोक तथा स्त्रीके नामसे पुकारता और घृणा करता था। इसमें कारण यह था कि उसने केवल कोटेकी सेनाकी सहायतासे ही कुशा-वह राजाकी विशाल सेनाको युद्धमें पराजित किया था। इस ओर मारवाडके श्रेष्ठ सामन्तगण उसके अनुरागी हो गये इससे जालिमसिंहने समझ लिया कि मेरे विरुद्ध वह लोग कदापि अस्त्र धारण नहीं करेंगे। राजनीतिविशारद, मनत-त्ववेत्ता जालिमसिंहकी आशा और अभिलाषा महान् थी, आशापूर्णा भगवती-की सिद्धिदायक वरदा मूर्ति उसके सामने खडी हो गई; केवल सौभाग्यरूपी लक्ष्मीका प्रसाद न पानेसे ही उसको अमूल्य वर न मिलसका; उसके साथ ही भारतका भाग-

---

* राणा भीमसिंह और जालिमसिंह आदिकोंने जो यह कार्य किया था। इसका वृत्तान्त टाडसाहबको इन्हीं लोगोंसे मिला था।

चक्र भी दूसरी ओरको घूमने लगा। भारतके भाग्यगगनमें फिर एकबार स्वाधीनता-रूपी सूर्यका उदय हो जाता;—विषादमयी कालरात्रि दूर होकर प्रभात हो जाता। परन्तु ब्रह्माजीने तो लोहेकी लेखनीसे अभागिनी भारतभूमिके कपालमें पराधीनता लिख दी है; वह गम्भीर लिखन शीघ्र मिटनेवाली नहीं है; इस ही कारणसे जालिमसिंहको वह अमूल्य वर प्राप्त न हो सका। अपने महामन्त्रको सिद्ध करनेके लिये उसने जिस कठोर कार्यक्षेत्रमें पांव बढाया था, उसमें विचरण करते हुए पांव रपट गया। उस बार गिर जानेसे फिर उस वीरपर नहीं सँभला गया। उस ही कारणसे भारतके सर्वमय कर्त्ता हर्त्ता न होकर जालिमसिंह केवल राजपूतानेका ही नेष्टर * रहा।

चतुर जालिमसिंहके हृदयमें जो आशा धीरे २ बढ रही थी, उसके पूर्ण होनेका अवसर प्राप्त हुआ। राणाने अपनी सेनाके दृढ करनेका भार जालिमसिंहको ही सौंप रक्खा था। इस भारी कार्यके साधन समयमें जालिमसिंह अपना कार्य सिद्ध करनेके लिये कौशलसे काम लेने लगा। यदि उसकी चालाकी सफल हो जाती, यदि उसका अभिप्राय सिद्ध हो जाता तो भारतवर्षके लिये एक बडा ही मंगलमय कार्य हो जाता। जिस गुरुभारको राणाजीने जालिमपर सौंपा उसके भलीभांतिसे साधन करनेमें बहुतसे धनका प्रयोजन था। इसके अतिरिक्त विद्रोहियोंके हाथसे चित्तौरके छुटानेमें भी बहुतसा धन लग जानेकी संभावना थी। विना धनके तो कोई भी कार्य नहीं हो सकता, इस कारण उस समय भी धनका प्रयोजन आ पडा। किन्तु यह धन आवे कहांसे ? जालिमसिंहको उस समय यही चिन्ता प्रबल हुई। चिन्ता करते २ निश्चय किया कि विद्रोहीगण ही जब कि इस धनके खर्च होनेमें प्रधान कारण हैं, तब तो उन लोगोंसे ही उसको संग्रह करना चाहिये। राजपरिवारकी जिन जागीरोंको चन्दावतलोगोंने दबा लिया है उन सबको लेकर (६४) चौंसठ लाख रुपया भी उनसे वसूल करना चाहिये। वह चौंसठ लाख रुपया पांच भागोंमें बाँट कर इसके तीन अंश सेंधियाको दिये जांयगे, बाकी रुपया राणाके आवश्यकीय कार्योंमें व्यय होगा। इस भांतिसे कार्यका निश्चय हो जानेपर जालिमसिंह एक बलवान् सेनाको साथ लेकर चित्तौरकी ओरको चला। अम्बाजी इंगले इस सेनाकी सरदारीपर नियत था। इस ओर सेंधिया भी मारवाडके राजासे खंडनीलेनेके लिये उस ओरको गयाथा। जालिमसिंह और अम्बाजी इंगले यह दोनों ही सेनासहित चित्तौरकी ओरको बढने लगे; उनकी दुर्द्धर्ष सेनाने बहुतसे हरेभरे खेतोंको कुचलकर नाश कर दिया। अनेक रमणीके ग्राम और मौजे अत्यन्त ही सताये गये।

* ग्रीसके इतिहासमें नेष्टर भलीभांतिसे प्रसिद्ध है। इसके पिताका नाम निलियस था। निलियसको वरुणदेवताका पुत्र कहा है। प्रसिद्ध इलियडग्रंथमें नेष्टरके गुणोंका बहुतसा वर्णन पाया जाता है। वह बुद्धिमान्, राजनीतिविशारद और रणकुशल राजा था, (ग्रीसके पुराणानुसार) यह बहुत दिनतक जिया था और अपने नेत्रोंसे इसने अपनी तीन पीढियोंका उद्भव और नाश देखा था।

विशेष करके जो ग्राम या नगर जालिमसिंहकी क्रोधाग्निमें पतित हुए उनकी तो अत्यन्त ही दुर्दशा हुई। जालिमसिंह इच्छानुसार वहांके हाकिम और ग्रामीणोंसे कर लेने लगा। धीरजसिंह नामक एक मनुष्य चन्दावत सरदार भीमसिंहका प्रधान परामर्शदाता था। जिस समय यह झगडा हो रहा था उस समय बुद्धिमान् धीरजसिंह हमीरगढका हाकिम था। विद्रोहियोंमें मिला हुआ जान कर जालिमसिंहने उसके हमीरगढको घेरा। छः सप्ताहतक दोनों दलोंमें घोर संग्राम हुआ। किसी ओरकी जय पराजयका कोई लक्षण दिखाई न दिया। इसके पीछे विधाताकी कठोर लिपिके अनुसार धीरजसिंहका भाग्य बिगडा। हमीरगढके समस्त कुएँ जालिमसिंहकी तोपोंकी रगडसे टूट फूट गये, जलके सोते बंद हुए, तब विबश होकर नगरवासियोंने किलेका द्वार खोल दिया। जालिमसिंहने हमीरगढको धीरजसिंहसे ले लिया। इस प्रकार और भी दो एक किलोंपर अधिकार करके राजकीय सेना क्रमानुसार चित्तौरकी ओरको बढी। मार्गमें बसी नामक और एक स्थानमें उनकी प्रचंड गति कुछ विलम्बके लिये रुक गई। बसी चन्दावतोंकी भूमिवृत्ति थी। परन्तु इसपर भी जालिमसिंहने अपना अधिकार स्थापित किया था, विजयके आनन्दसे मतवाला होकर चित्तौर पहुँचा। चित्तौरके ऊंचे परकोटेके नीचे स्थित होनेके कुछ ही समय पीछे उसको सेंधिया और उसकी सेनाकी सहायता प्राप्त हुई।

ऊंचा पद पाते ही मनुष्य गर्व और अहंकारसे फूलकर कुप्पा हो जाता है। जिन राणाजीका दर्शन पानेसे स्वयं पेशवा अपनेको कृतार्थ समझता था, आज माधोजी सेंधियाने उनको ही चित्तौरके सामने देखना चाहा। सेंधियाकी इस अन्याय अभिलाषासे जालिमसिंहके हृदयमें चोट लगी परन्तु चारा क्या था? गर्वित माधोजीकी अभिलाषा पूर्ण करनेको उन्हें चित्तौर जाना पडा। भाग्यचक्रका लौट फेर ऐसा ही होता है; गौरव-गरिमाकी ऐसी ही अनित्यता है कि जिन राणाजीके पूर्वपुरुषोंका दर्शन करनेके लिये भारतवर्षके अनेक भूपालगण भेंट लिये हुए शिशोदीय राजसभामें आते थे। आज उन्हीं राणाजीको एक महाराष्ट्रीसे साक्षात् करनेके लिये राजसिंहासन छोड राजमार्गमें आना पडा! राजधानीसे कुछ दूर "व्याघ्रमेरु"की शैलमालामें राणा और सेंधियाकी मुलाकात हुई। सेंधियाने सन्मानके साथ राणाको ग्रहण किया और उनको अवरोधकारी सेनाके निकट ले गया। वह कार्य बहुत ही थोडे समयमें हुआ परन्तु इस अल्प समयमें जो असाधारण कार्य हुआ उसके द्वारा चतुर जालिमसिंहके आशारूपी मार्गमें प्रचण्ड विघ्न उपस्थित हुआ उसके निर्मल भाग्याकाशको काले२ बादलोंने छा लिया। जिस समय सेंधिया और जालिमसिंहने राणाके साथ मुलाकात करनेके लिये चित्तौरको छोडा, उससमय केवल अम्बाजीही चित्तौरमें रहा था। जालिमसिंहके हृदयमें आशाकी नवीन बेल जो धीरे२ लहलहा रही थी, उसका समाचार अम्बाजीको विदित था। यद्यपि जालिमसिंहने अपनी अभिलाषाको किसीपर प्रकट नहीं किया था, परन्तु चतुर महाराष्ट्री वीर अम्बाजीने उसको जान ही लिया। जालिमसिंह जितना २ अपनी बातको छिपाता था

अम्बाजीके मनमें उतना ही अधिक सन्देह होता जाता था। अम्बाजीको भलीभांतिसे विश्वास था कि यदि जालिमसिंहकी आशा पूर्ण हुई तो मेरा नाश हो जायगा। तथा मुझको जालिमसिंहके अधीनमें सैनिकका कार्य करना पडेगा। इस ही कारणसे वह जालिमसिंहके अभिप्रायको व्यर्थ करनेका उपाय करने लगा। परन्तु इतने दिनतक सुअवसर नहीं मिला था। आज जालिमसिंहको दूसरे स्थानमें देखकर उसको विक्रम और बल दबानेके लिये वह अम्बाजी विद्रोही चन्दावतसरदारके साथ मिलकर कपटजाल रचने लगा। जालिमसिंह अम्बाजीको मित्र ही समझता था। यद्यपि उसने अपनी अभिलाषा अम्बाजीसे प्रकट नहीं की थी, तथापि उसपर विश्वास करता था वह जानता था कि अम्बाजी मेरा कोई अमंगल नहीं करेगा। इस विश्वाससे ही जालिमसिंहका कौशल जाल छिन्नभिन्न हो गया। यदि नीचपनमें जालिमसिंह अपने राजनैतिक प्रतिद्वन्द्वीके समान होता तो अम्बाजीके कपटजालको तोड कर अपनी चतुराईके बलसे अपने भाग्यके मार्गको साफ कर लेता। यदि उसको अपने विघ्नोंका समाचार पहिलेसे मिला होता तो वह अवश्य ही सँभल गया होता। परन्तु किसी अयोग्य उपायका आश्रय लेनेकी अपेक्षा उसने अपनी वर्तमान दशापर ही सन्तोष किया। इस कारणसे उसकी कल्पना नष्ट हो गई। जिस कल्पनाकी कार्यकारिताके बलसे वह विशाल भारत साम्राज्यके राज्यको पाय कर कोटि २ भारतसन्तानका शासन करता; आज उस कल्पनाके छिन्न हो जानेसे उसको केवल थोडेसे राजपूतोंकी सरदारी मिली। पुरुषका भाग्य कैसा भयानक और मलीन है!

शालुम्ब्रासरदार भीमसिंहने अम्बाजीके साथ कपटका दाव रचकर निश्चय किया कि "यदि जालिमसिंह इस कार्यसे विदा हो जाय तो मैं बीस लाख रुपया देकर राणाजीकी अधीनता स्वीकार करूँ।" चन्दावत सरदारकी इस कहनको सबने ही स्वीकार किया। इस प्रस्तावको सुनकर सबको ही यह विश्वास हुआ होगा कि जालिमसिंहसे शत्रुता होनेके कारण ही सरदारने इस प्रस्तावको पेश किया। परन्तु यथार्थमें यह बात नहीं थी। कपटी अम्बाजीने चन्दावत सरदारसे यह बात कहलाई थी। होनहारका प्रताप भी कैसा फेरफार कर देता है? उस ही समय सेंधियाको भी पूनामें लौट जानेकी अत्यन्त शीघ्रता थी। केवल विद्रोहियोंकी मीमांसा न होनेसे वह अबतक नहीं लौट सका था। इस समय चन्दावत सरदारका प्रस्ताव सुनकर उसको अभीष्ट सिद्ध करनेका अवसर मिला और तत्काल उसमें सम्मति दी।

जालिमसिंह स्वभावसे ही अम्बाजीको अपना मित्र समझता था। उज्जैनके युद्धमें महाराष्ट्र वीर त्र्यम्बकजीने प्राण और स्वाधीनता देकर जो महोपकार किया था यद्यपि उसका बदला जालिमसिंहने अभी नहीं दिया था तथापि इस उपकारको वह सदा ही अपने हृदयमें स्मरण किया करता था। उस ही उपकारके कारण सदासे अम्बाजीको भ्राता मानता आया। जहांपर दोनोंके स्वार्थकी टक्कर नहीं लडी, वहांपर ही उनकी मित्रता अटलभावसे रही। परन्तु आज दोनोंमें अत्यन्त ही मन चली हुई।

यह झगडा शीघ्र ही निवारण होनेवाला नहीं है। इससे जिस महाअग्निकी उत्पत्ति होगी उसके द्वारा एक ओर तो अवश्य ही भस्म होगी। अस्तु ! जिस समय राणाके साथ जालिमसिंह चित्तौरके निकट पहुंचा तो अम्बाजीने बनावटी दुःखसे कहा। विद्रोही भीमसिंह शरणमें आना चाहता है, परन्तु उसका कहना यह है कि "जालिमसिंहके यहां रहते हुए मैं किसी प्रकार राणाकी शरणमें न आऊंगा, अतएव इस विषयमें जो कुछ उचित हो सो कीजिये।" पीछे इस प्रस्तावमें असम्मत होनेसे शायद किसीके मनमें किसी भांतिका कोई सन्देह हो, इस ही कारणसे जालिमसिंहने सबसे पहिले उत्तर दिया; "यदि यही उसकी आपत्ति है, यदि मुझे ही वह प्रतिबन्धक समझता है, तो मैं हर्षसहित अभी इस स्थानसे बिदा होता हूं; विशेष करके मेरे यहां रहनेसे खर्च भी अधिक हो जानेकी सम्भावना है; यदि राणाजीकी इच्छा हो तो एक बार मैं अपने कोटा नगर को ही चला जाऊं।" आज चतुर जालिमसिंह महाराष्ट्री वीरके जालमें फँस गया। उसने समझा था कि मेरा अभिप्राय किसीने नहीं जाना, परन्तु यह समाचार विदित नहीं था कि अम्बाजीकी चतुर बुद्धिसे कोई बात छिपी नहीं रहती। जालिमसिंहका महान चरित्र एक विशेष उपकरणसे बना हुआ था, इस ही उपकरणकी सहायतासे युवा अवस्थामें वह महावीर और प्रखर बुद्धिसम्पन्न पुरुष हुआ। वह उपकरण गर्व था। यह गर्व दूसरोंके लिये चाहे दोष हो; परन्तु जालिमसिंहके चरित्रमें गर्वको भी गुण ही कहा जायगा। यह गर्व उसको ऊंचे स्थानपर ले गया था, शत्रुओंके आक्रमणसे इस गर्वने ही जालिमसिंहकी मानमर्यादाको बचाया था। जिस प्रकारकी दुराकांक्षा जालिमसिंहमें थी, उसके द्वारा परग २ पर उसे घोर अपमान सहना पडता, परन्तु इस गर्वने अपमानसे भी बचाया।

लम्बी अवस्थामें उसके समस्त गुण जाते रहे; एक गर्वने ही किसी समय साथ नहीं छोडा था। चतुर अम्बाजीने भलीभांतिसे जालिमसिंहके जीवनचरित्रका पाठ किया था। वह जानता था कि जालिमके सामने यदि शालुम्ब्रा सरदारके इस प्रस्तावको उठावैगा तो वह अवश्य ही सम्मति देगा।

जालिमसिंहका उत्तर सुनकर अंबाजीने श्लेषके द्वारा हँसते हुए कहा "आपकी कही हुई बात एक सुन्दर कहानी सी है, परन्तु जो लोग आपको नहीं जानते यदि उनसे यह बात कही जाय तो वह विश्वास कर लेंगे।" इस मधुर श्लेष वाक्यको श्रवण करके गर्वित जालिमसिंहने अपना वचन पालनेकी और भी अधिक दृढ प्रतिज्ञा की। उसकाल अंबाजीने विस्मित होकर कहा "तो क्या आपने सत्य सत्य ही जानेका विचार कर लिया है ?" "सत्य सत्य ही" गंभीर स्वरसे उत्तर देकर जालिमसिंह अकंपितभावसे खडा हो गया। उसके मस्तकका एक केश भी नहीं कांपा अंबाजी मन ही मनमें अत्यंत आनंदित हुआ; परन्तु उस आनन्दको मनमें ही गुप्त रखके उसने बनावटी गंभीरतासे कहा "अच्छा तो कुछ विलंबमें ही आपकी वासना सफल होगी।" जालिमसिंहको अधिक विचार करनेका अवसर विना ही दिये यह कूटनीतिवाला मरहटा अपने घोडेपर चढकर सेंधियाके डेरोंकी ओर चला गया।

जालिमसिंहको आज किसी ओरका भी सहारा न रहा। अम्बाजीके चले जानेपर उसको अपनी चिन्ता हुई कि जिसने अधीर कर डाला। क्या करें, किस ओरको जायं? इसका कुछ भी विचार न हो सका। चिरकालकी आशा आज नष्ट हो गई! फल आनेके समय मानो किसीने लहलही लताको काट डाला; यह क्या साधारण पश्चात्तापकी बात है? तथापि वह आशा जालिमसिंहसे न छूट सकी। उसने समझा कि अबाजी कभी सेंधियाकी वातको न मानेगा; यदि वह मान भी लेगा तो राणाजी प्रतिवाद करेंगे, क्योंकि वह मेरे विक्रमको भलीभांतिसे जानते हैं। सेंधियाके ऊपर आशा रखनेका एक विशेष कारण था। सेंधियाने गुप्तभावसे जालिमसिंहसे प्रतिज्ञा की थी कि "मेवाडका पुनरुद्धार करनेके लिये मैं तुम्हें बहुतसी सेना दूंगा।" इसके सिवाय एक भारी कारण यह भी हुआ कि जालिमसिंहने मनमें समझा था कि यदि मैं सहायता नहीं करूंगा तो सेंधिया कभी भी राणाजीसे अपनी खंडनीको नहीं वसूल कर सकेगा। * बुद्धिमान अम्बाजीने इस बातको समझकर पहिले ही सब प्रबन्ध कर लिया था। सेंधियाने जब उस अपनी बदनीके रुपयेको मांगा तब वह स्वयं उसके देनेको राजी हो गया× सेंधियाने भी अम्बाजीकी वातको मान लिया। अम्बाजीने वह समस्त रुपया दे दिया, रुपयेको पाते ही सेंधियाने पूनाकी यात्रा की। उस ही दिन राणा और जालिमसिंहके साथ उसका सम्बन्ध अलग हो गया। जानेके समय सेंधियाने अंबाजीको अपना प्रतिनिधि बनाया और इस बातके प्रबंध करनेके लिये कि वह समस्त रुपया अंबाजीको वसूल हो गया एक बडी सेना भी वहां स्थापित करता गया। सेंधियासे अपना कार्य निकालकर चतुर अंबाजी राणाके मंत्री शिवदास और सतीदासके पास गया और उनका अभीष्ट साधन करने और राणाजीका प्रताप अचल रखनेकी प्रतिज्ञा करके सब भांति सफलकार्य हुआ। कुछ थोडेसे घंटोंमें ही यह समस्त कार्य सिद्ध करके धूर्त अम्बाजी जालिमसिंहके पास पहुंचा और हृदयके आनन्दको छिपाता हुआ धीरभावसे बोला—"आपकी वासना पूर्ण करनेके लिये सबने सम्मति दे दी।" अंबाजीने इस कार्यको इतनी उत्तमतासे पूर्ण किया था कि जैसे ही जालिमसिंहसे वह यह वचन कह रहा था कि वैसे ही राणाके प्रतिहारीने आकर नम्रतासे निवेदन किया। "आपकी रुखसतकी नजर तैयार हैं।" जालिमसिंहकी समस्त आशा टूट गई, परन्तु वह किंचित् भी कातर न होकर शीघ्रतापूर्वक चित्तौरसे चले गये। इसके पश्चात् शालुम्ब्रासरदारने चित्तौरके दुर्गसे बाहर आकर राणाजीके चरणोंको छुआ और क्षमा प्रार्थना की। अम्बाजीकी आशा पूर्ण हुई और वह मेवाडका सर्वमय कर्त्ता होकर सुखसे अपना काल व्यतीत करने लगा।

---

* चन्दावतोंको चित्तौरसे दूर करनेकी एवजमें राणाने सेंधियाको २० लाख रुपया देना स्वीकार किया था। यहांपर उस ही खंडनीका वर्णन है।

× दक्षिणापथमें अम्बाजीकी जो सम्पत्ति थी, उस हीके ऊपर इसने हुंडी करके अपने नायबके पास भेज दी। उस ही सम्पत्तिसे सेंधियाको सम्पूर्ण रुपया दिया गया।

इस भांतिसे कपट प्रपंच रचकर अंबाजी आठ वर्षतक मेवाडमें रहा। इस आठ वर्षके समय राजकरको पचाकर उसने इतना धन इकट्ठा कर लिया था कि उस धनके ही कारण वह भारतवर्षमें प्रसिद्ध सेठ हो गया। मेवाडका भूमिकर पचाकर उसने १२००००० (बारह लाख) रुपया * संग्रह कर लिया,इसके द्वारा विद्रोह और मेवाडका समस्त झगडा झंझट मिट गया। राज्यके लिये यह भी कुछ साधारण मंगलकी बात नहीं थी। जो शान्ति बहुत दिन हुए मेवाडसे बिदा हो गई थी, आज अम्बाजीके गुणसे उसने पुनर्वार दर्शन देकर मेवाडको शान्त किया। बहुत दिनोंके पीछे मेवाडवासी लोग शान्तिको प्राप्त करके अम्बाजीको आशीर्वाद देने लगे। अम्बाजीको सेंधियाने कई एक आदेश दिये थे जिनका उल्लेख नीचे किया जाता है:--

१ म। राणाको फिरसे उनका समस्त अधिकार दिया जाय, तथा विद्रोह करनेवाले चन्दावत और वेतनभोगी सिन्धीलोगोंसे वह सब जमीन लेकर राणाजीको दे दी जाय कि जो इन लोगोंने दबा रक्खी है।

२ य। अपनृपति रत्नसिंहको कमलमेरसे दूर करना।

३ य। मारवाडके राजासे (गोद्वार) गद्वाड्प्रान्तका पुनरुद्धार करना।

४ र्थ। बूंदीके राजकुमारने राणा अरिसिंहका वध किया, इससे जो झगडा उत्पन्न हुआ है उसका निवारण करना।

जो बीस लाख रुपया सेंधियाको दिया गया था, उसको किस २ परगनेसे किस रीतिके अनुसार इकट्ठा किया जायगा,अम्बाजीने इसकी एक सूची बनाई और उस हीके अनुसार कार्य करने लगा। चन्दावतोंकी जागीरसे १२००००० और शक्तावतोंसे शेष आठ लक्ष रुपया लिया गया। इसके अतिरिक्त राणाजीने प्रतिज्ञा की थी कि और कार्योंके हो जानेसे अम्बाजीको सेनाका खर्च देकर भेंटमें और भी साठ लाख रुपये दिये जायँगे।अपनृपति रत्नसिंह दो वर्षमें कमलमेरसे दूर किया गया; विद्रोही रणावत सरदारसे जिहाजपुर व दूसरे सरदारोंसे राणाकी राजभूमिका पुनरुद्धार किया गया ×

---

* उपरोक्त बारह लाख रुपया इस प्रकारसे संग्रहीत हुआ था।

शाम्लुम्ब्रासंस्थानसे	३०००००)
देवगढ	३०००००)
सिंगिनगढवाले (उपरोक्त दोनों ठाकुरोंके) मंत्रियोंसे।	२०००००)
कुशीतल	१०००००)
अमाइत	२०००००)
कोरावड	१०००००)
कुल	१२०००००)

× सिन्धियोंसे रायपुर राजनगर; पुरावतोंसे गुरला और गादरमाला; सरदारसिंहसे हमीरगढ और शालुम्ब्रासरदारसे कुरजकुवारियो;-राजभूमिके अन्तर्गत इन परगनोंका उद्धार हुआ था।

इन कई एक कार्योंके सिद्ध हो जानेसे यद्यपि मेवाडका बहुत उपकार हुआ, परन्तु दो एक महान कर्त्तव्य जो थे उनका प्रबन्ध अम्बाजीने क्या किया ? मेवाडराज्यके मुकुटस्वरूप गदवाड जनपदका पुनरुद्धार, बूंदी और मेवाडके बीचके झगडेको दबाना और महाराष्ट्रीय लोगोंको छीनी हुई जागीरोंका उद्धार साधन करना । क्या अम्बाजीने इन तीन महान कार्योंका कुछ भी विचार किया था ? जिस प्रकार वह पहिले २ अनुरागके साथ मेवाडकी भलाइयें किया करता था, उनको देखकर सबने आशा की थी । परन्तु प्रभुताका स्वाद चखते ही अम्बाजी घोर स्वार्थी हो गया और तीन महान् कार्योंको विना साधन किये ही "मेवाडका सूबेदार बन बैठा । क्रूर विषधर और कितने दिनतक परोपकार मंत्रसे दीक्षित रहैगा ? कुछ कालके बीतते ही वास्थपर महाराष्ट्रीयने अपनी मूर्ति धारण की और तत्काल उन लोगोंके साथ हिल गया कि जो उस कालमें क्रूर कर्म किया करते थे; परन्तु राजपूतलोग उपकारको भूलनेवाले नहीं होते । यद्यपि चतुर और स्वार्थसे अंधे हुए अम्बाजीने इकरारनामेके अनुसार कार्य नहीं किया । यद्यपि उसने मेवाडका बहुतसा धन पचा लिया था, तथापि जो साधारण उपकार उसके द्वारा हुआ राजपूतगण उसको भूल नहीं सके। जबतक अम्बाजी मेवाडका उपकार करता रहा, उतने दिन तक मेवाडके रहनेवाले हृदयसे उसकी भक्ति करते थे । इस समयमें चन्दावतोंको राजसभामें उनके पूर्व अधिकार मिल गये थे, इस कारण राजमंत्री सतीदास और शिवदासकी शंकाकी सीमा न रही । भ्राता सोमाजीके शोचनीय वधकी बात याद करके वह प्रतिदिन भयके मारे कंपायमान हुआ करते थे । वह समझते थे कि यह चन्दावतलोग हमारे विरुद्ध कोई कपट जाल रच रहे हैं, या हमको भी सोमाजीकी भांतिसे मारडालनेका उपाय कर रहे हैं । इस प्रकार चिन्ताने उन्हें यहांतक व्याकुल किया कि अन्तमें दोनोंने अम्बाजीसे सेनाकी सहायता मांगी और इसके लिये विशेष अनुरोध किया कि मेवाडमें एक सहकारी सेना भी स्थित रहै । वह दोनों मंत्री इस बातको जानते थे कि विना अम्बाजीकी सहायताके राणा भी अपने अधिकारको रक्षित नहीं रख सकते, इस ही कारणसे इन मंत्रियोंने महाराष्ट्रीय प्रसादको प्राप्त होनेके लिये इतनी लालसा प्रगट की थी । अम्बाजी इस प्रबन्धके करनेको भलीभांतिसे सम्मत हो गया । उसकी सेनाके भरण पोषणके लिये वार्षिक आठ लाख रुपयेकी कुछ जागीरें दी गईं । राज्यपर क्रूरग्रहकी दृष्टि पडी, अब तो किसी भांतिसे भी मंगल नहीं हो सकता । अभागे राणाने अपने राज्यकी उन्नतिके लिये बहुतेरे उपाय किये, परन्तु उनके समस्त उपाय विफल होने लगे । राणाजी एक ओरकी रक्षा करते थे कि चटसे दूसरी ओर अमंगल हो जाता था; एक ओर बेदा लगाते थे, दूसरी ओर डूबने लगती थी । अब मेवाडका भला नहीं दिखाई देता। चारों ओर असन्तोष, अप्रसन्नता और हाहाकारकी ध्वनि सुनाई आने लगी । राज्यकी आमदनी न जाने किधरको खर्च हो जाती थी । शीघ्र ही खजाना खाली हो गया। और राणाजी यहां तक धनहीन हो गये कि उन्हें संवत् १८५१ में जयपुरके राजकुमार-

के साथ अपनी भगिनीका विवाह करनेके लिये महाराष्ट्री सेनापतिसे पांच लाख रुपया उधार लेना पड़ा। इस बुरे सालके बीतनेपर दूसरे वर्ष ऐसी तीन बातें मेवाडमें हुई थीं जो वर्णन करने योग्य हैं। राजमाताका परलोकगमन, राणाके यहां नवकुमारका जन्म और उदयसागरमें जलकी प्रचण्ड बाढ। इस पिछले उपद्रवसे मेवाडको अत्यन्त हानि पहुंची थी। मेवाडभूमिका दुर्भाग्य इस घटनाके होनेसे चौगुना बढ गया था। एक इस विशाल सरोवरमें अनन्त जलकी बाढ आनेसे नगर और नगरवासियोंका एक तिहाई हिस्सा डूब गया था। इन दिनोंमें यह किम्बदन्ती मेवाडमें फैल गई थी कि राणाजीने पार्वतीजीका एक नया उत्सव * प्रतिष्ठित किया; इस लिये चतुर्भुजा देवीने क्रोधित होकर यह उत्पात फैलाया था। इस कहावतमें कुछ सत्य हो, या न हो, परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह वर्ष मेवाड निवासियोंके लिये बहुत ही बुरा बीता था।

अम्बाजीकी भाग्याकाश धीरे २ और भी साफ हो गया। इस खोटे साल (संवत् १८५१) में सेंधियाने उसको हिन्दुस्थानमें अपना प्रतिनिधि नियत किया। अम्बाजीने इस पदको पाते ही गणेशपन्त नामक एक महाराष्ट्रीको मेवाडमें अपना प्रतिनिधि बनाकर वहांसे विदा ली। सवाई और श्रीजीमहता नामक × राणाके दो कर्मचारी थे। वह दोनों गणेशपंतके साथ मिलकर कार्य करने लगे। इन तीनोंने अपनी थोडेकालकी स्थिर रहनेवाली प्रभुताईसे ऐसे कठोर कार्य किये कि मेवाडका रक्त चूस लिया। विवश होकर अम्बाजीने गणेशपंतको पदच्युत किया और उस पदपर प्रसिद्ध रायचंन्दको स्थित किया। रायचन्द अम्बाजीका प्रतिनिधि हुआ तो परन्तु किसीने उसकी आज्ञाको मान नहीं दिया, न किसीने उसको प्रतिनिधि समझा। इस ही कारणसे फिर राज्यमें लडाई झगडे उत्पन्न होकर अराजकता फैल गई। फिर नगर वासियोंके धन मानपर आन बनी। प्रत्येक दलके मनुष्य अपना २ अभिप्राय पूर्ण करनेके लिये राज्यमें उपद्रव करके घोर अत्याचार करने लगे। अत्याचार, कष्ट और लोभने मेवाडभूमिको श्मशानभूमिके समान डरावना बना दिया। इस अवसरको मनमाना समझकर मरहटे, रुहेले और फिरंगीलोग विना रोक टोकके आयकर अभागे राजपूतोंकी समस्त संपत्ति लूटकर और भी भय उपजाने लगे। इस ही अवसरमें चन्दावतलोगोंने अपने गोत्रपति वीरवर चंडके मंत्रका निरादर करके दुष्ट सिन्धियासे मेल किया और उनकी सहायतासे लूट खसोट करने लगे। इन लोगोंके अत्याचारका निवारण करना कठिन विचार कर राणाजीने आज्ञा दे दी की चन्दावतोंकी जागीरें छीन ली जायं। इस आज्ञाको पाते ही राजकीय सेनाने कोरावडको अपने अपने अधिकारमें कर दिया और शालुम्ब्राकोट पर भी जाकर

* यह उत्सव भादोंके शुक्लपक्षमें हुआ करता है।

× इनमेंका पहिला मनुष्य सवाई महता टाडसाहबके समयमें राजकुमार जवानसिंहका प्राईवेट सेक्रेटरी था। टाडसाहब कहते हैं कि इसमें कुछ भी विद्या बुद्धि नहीं थी। श्रीजीमेहता इसका भाई था। जब मैं उदयपुरमें आया तो यह भी राणाजीका एक मन्त्री था। यह श्रीजी अत्यन्त कुचक्री होनेपर भी महा उत्साही और सदाशय था। यह विशूचिका रोगसे मृत्युको प्राप्त हुआ था।

तोपें लगा दीं । सिन्धीलोग यह देखकर शालुम्ब्राको छोड देवगढको भागे । तब तो चैंदावत लोगोंपर बडी विपत्ति आई । विपत्तिसे छुटकारा पानेका कोई उपाय न देखकर उनके मुख्य अध्यक्ष अजितसिंहने अम्बाजीके पास एक दूत भेजा और कह दिया कि हमें सहायता मिली तो हम दश लाख रुपये देंगे । लोभी मरहटा इस लोभको सँभाल न सका और ललचाया । दशलाख रुपयेके लिये उसने अपने प्रतिनिधि रायचन्दको मेवाड छोडकर जानेकी आज्ञा दी, तथा शिवदास और सतीदासका मंत्रिपद छीनकर चन्दावतोंकी अनुकूलता करनेको तयार हुआ * शालुम्ब्रा सरदारको राजसभामें फिर वही पहिली प्रतिष्ठा मिली और अग्रजी × मेहताको दीवान बनाया तथा विरोधी शक्ता-

* यह घटना संवत् १८५३ (सन् १७९७ ई०) में हुई थी।

× टाडसाहब जब उदयपुरमें पहुँचे, उस समय अग्रजीमेहता राणाजीका दीवान था । टाडसाहब कहते हैं कि "अग्रजी किसी प्रकारसे भी दीवानीके लायक नहीं था ।" जिस समय राजनीति जाननेवाले धर्मपरायण पचौलीगण मेवाड्की दीवानीसे अलग हुए हैं, उस ही समय मेवाडकी प्रतिष्ठापर घोर आघात हुआ है । मन्त्री विहारीदास पंचौलीके खानदानवालोंके अनेक लेख जिनपर उनके हस्ताक्षर थे, टाडसाहबको मिले । उन पत्रोंमें मेवाडका व्यतीत और वर्त्तमान चित्र ऐसी मनोहरतासे खैंचा गया है कि हम भी अपने पाठक गणोंके चित्तविनोदार्थ उनमेंसे कई एक पत्रोंका अविकल अनुवाद यहांपर लिखते हैं;-

जब मेवाडमें बहुतसे झगडे और विरोध हो रहे थे उस समय पंचौलियोंके हाथसे मंत्रिपद निकल गया । झगडा करनेवाले सरदारोंमें जिसकी जीत होगी वही अपनी ओरका मन्त्री बनाता । इन मंत्रियोंमें मेहता, देश और धाईभाईगण विशेष प्रसिद्ध हुए । मनुजी महाराजने मंत्रियोंके जो लक्षण कहे हैं, उन पर किसी राणाने ध्यान नहीं दिया, इस ही कारणसे मेवाडकी दुर्दशा दिन २ दूनी बढने लगी । पंचौलियोंके बहुतसे पत्र राणा और अग्रजी मेहताको लिखे गये थे । यह समस्त पत्र स्वदेशानुरागके पवित्र भावसे परिपूर्ण हैं; उनके पढनेसे मेवाडकी वर्त्तमान दशा भलीभांतिसे जानपडती है, संवत् १८५३ (सन् १७९७ ई०) में अमृतरावनामक एक पंचौलीने देशका अनर्थ करनेका एक उपाय शोचा था । चन्दावत और शक्तावतोंको राणाके मन्त्रभवनसे अलग करके उसने राज्यका दीवानीकार्य मेवाडके उन सरदारोंको देनेका प्रस्ताव किया कि जो इस राज्यकी सीमासे अलग रहते थे रूपकालंकारकी सहायतासे उसने इस प्रकार विचार किया;-

"जिन कई एक कारणोंसे देशका रोग बढ उठा है वह--हिंसा, डाह और साम्प्रदायिकता है । मेवाडमें तुर्क लोगोंके साथ यह रोग आया; परन्तु उस कालके राजा, मन्त्री और सरदार लोगोंका हृदय एक था यही कारण था जो दबा देनेसे बीमारी दूर हो गई । राणा जयसिंहके समयमें फिर यह रोग उभर आया; परन्तु उनके पुत्र अमरसिंहने रोगको रोक दिया । अशांतिको दूर करके उन्होंने राज्यकार्य और प्रजापालनमें उन्नति की । सब मनुष्योंको योग्य पदपर स्थापित किया । परन्तु राणा संग्रामसिंहने अपने निचले पक्षवाले चन्दावतोंका रामपुरजनपद अलग कर दिया । इस भांतिसे मेवाडका एक प्रधान पंख कट गया । मन्त्री विहारीदासके पुत्रने आत्महत्या की, तथा विहारीदासके अभाग्यने समस्त विपत्तियोंको दूना कर दिया । तिसके ऊपर फिर बाजीरावके साथ दक्षिणियोंका आना, जयपुरका उपद्रव (क) राजमहलकी पराजय तथा उसके कारण अपार धनका खर्च होना, इन अनर्थोंसे राज्यमें अत्यन्त अशान्ति हो गई । तदुपरान्त जगतसिंहके समयमें पंचौलियोंके ऊपर धाई भाइयोंने जो शत्रुता की थी, उसके कारण देश विदेश सबमें ही उनका सन्मान नष्ट हुआ । उस कालसे सबही लोग अपनेको राज्य करनेके योग्य--

वतोंपर चढाई की। फिर दोनों सम्प्रदायोंमें घोर विवाद हुआ। चुंडावतोंने अम्बाजीकी सहायतासे शक्तावतोंको पराजित किया तथा उनकी हीथा और सायमारी इन दो जागीरोंसे दश लाख रुपये इकट्ठे करके महालोभी अम्बाजीको छातीपर धरे।

एक समय जिस महाराष्ट्री वीरके भुजबलसे राजस्थानकी समस्त भूमि काँप गई थी, जिसकी लोभरूपी अग्निमें मेवाडभूमि भस्म हो गई थी आज वही माधोजी संधिया इस

-समझने लगे। उस कालसे किसीने राज्यमें सुख नहीं पाया। जगतसिंहका पुत्र, प्रताप, पितासे शत्रुता करने लगा। उसके दुराचरणसे, श्याम, सोलंकी व और भी अनेक सरदार मारे गये; राणाजीको इससे अत्यन्त कष्ट हुआ। उस समयसे सरदारोंकी राजभक्ति उड गई। उनका हृदय बुरे आचरणोंकी कलोंवसे काला हो गया, फिर उनका विश्वास किस प्रकारसे किया जा सकता है। तदुपरान्त प्रतापके अभिषेक समयमें महाराज नाथजीने दुराकांक्षाके पापमंत्रसे उत्साहित होकर अपने कुटुम्बियोंको बडे कष्टमें डाला। इससे शत्रुता सन्देह, धोखेबाजी, विश्वासघातकता, इत्यादि दुराचार चारों ओर फैल गए। जिस समय अमरचन्दके तेजस्वी आचरणने पंचोलियोंमें परस्पर झगडा फैलाया और देप्रालोगोंपर अमरचन्दका वैर जब प्रबल हो उठा तब मेवाडको चारों ओरसे विपत्तियोंने आ घेरा। इन उपद्रवोंको देखकर भी किसीके ज्ञाननेत्र नहीं खुले; किसीने भी इन उपद्रवोंके शांत करनेका विचार नहीं किया। लडाई झगडेने ही पूर्वोक्त रोगको पिछली हद्तक पहुंचा दिया। हीथाके अधिकारकी बाबतमें फिर खुमानसिंह और शक्तावतोंमें जो झगडा पैदा हुआ, उसने ही इस रोगकी पीडाको बढाया। महाराज नाथजीका भयानक वध और उससे देवगढके राजा जसवंतसिंहका वैरभाव व एकांतवास, अपनृपति रत्नसिंहका खडा होना।

(क) माधवसिंहको अम्बेरके सिंहासनपर स्थापित करनेके समय जो उपद्रव हुआ था, यहांपर उसको ही लक्ष किया गया है।

"झाला रघुदेवका कठोर उद्यम और अमरचन्दके द्वारा सिन्धीसेनाके पालन होने, इत्यादि अनर्थोंने पूर्वोक्त रोगको अधिकाईसे बढाकर मेवाडको भयंकर विपत्तिमें डाला। इसके ऊपर राणाने भोग विलासमें मग्न होकर जो राजकार्यका देखना छोड दिया इसने और राणा अरिसिंहके धाईभाइयोंके कपटजालमें मिलकर राज्यमें अनर्थका ऐसा बीज बोया कि फिर उस संकटसे मेवाडको कोई भी न छुडा सका। संवत् १८२९में बूंदीके राजाके विश्वासघातकतासे राणाके मारे जानेपर राज्यमें सबही कोई अपनेको बडा समझने लगे। बालक हमीरको किसीने कुछ न समझा। दुष्टोंके अत्याचारसे राज्यमें राजश्रीकी परछाई तक भी न रही। इस समय आप (राणा भीमसिंहसे), शालुम्ब्रासरदार भीमसिंह और उसके भाई अर्जुनकी परामर्शसे विदेशीय सेनाको बेतन देकर रख रहे हैं; क्या इसके द्वारा आप समस्त प्राचीन भ्रम और अनर्थोंको दृढ नहीं करते हैं? स्वयं आप और श्रीबडजीराज (राजमाता) विदेशी और दक्षिणियोंका विश्वास करके राज्यके पहिले रोगको संक्रामक किये डालते हैं; इसके अतिरिक्त राज्यकार्यमें श्रीमानका मन नहीं लगता है। इस समय क्या किया जा सकता है? अब भी औषधि पानेका उपाय है। आइये! हम लोग एक प्राण होकर मन्त्रीके कर्तव्यकर्योंका उद्धार करनेकी चेष्टा करें; इस कार्यमें जीत होगी; यदि जीत न हुई तथापि यह बढता हुआ वेग रुक तो अवश्य ही जायगा। परन्तु अब भी यदि ध्यान न दिया जायगा तो इस रोगका दूर करना मनुष्यकी सामर्थ्यसे बाहर समझिये, यह दक्षिणी लोग घावकी नाई हैं। आइये उनका हिसाब चुका दें और सर्वप्रकार उनके संसर्गको छोडनेका यत्न करें;-नहीं तो हम लोग सदाके लिये जननी जन्मभूमिसे हाथ धो बैठेंगे। इस समय राज्यमें सब कहीं संधि बन्धनादिका आडम्बर हो रहा है। मैंने सब ही बातोंको देखा है यदि इसमें कुछ अयोग्य-

असार संसारको छोड परलोकवासी हुआ । जो दुराकांक्षा किसी प्रकारसे तृप्त नहीं हुई थी आज न जाने वह कहां चली गई ? रत्नोंके ढेरसे भी जिसको सन्तोप नहीं हुआ था वह आज वस्त्रोंके कई एक टुकडे लेकर ही अनन्त धामको चला गया । जो मस्तक किसीको भी नहीं झुकाया गया था आज गीदड और

-बात हुई हो तो क्षमा कीजिये; आइये हम लोग होनहारकी प्रतीक्षा करें । सरदार, सामन्त, मन्त्री, सभासद सब ही एक प्राण हो जायँ । राज्यका मंगल होगा और इस विषयके साथ सब ही मंगल होगा परन्तु विचार कर देखिये कि यह प्रयोग साधारण नहीं है, यदि यह दूर न होगा तो हम सबकी दुर्दशा हो जायगी ।"

दूसरा पत्र भी नीचे प्रगट किया जाता है ;--

देशमें जिस रोगका आगमन हुआ है, उसको सविराम रोग विचार कर उसके अनुसार चिकित्सा करना चाहिये ।

अमरसिंहने इसको आरोग्य करके पूर्ण शासन और न्यायका प्रकरण विधिबद्ध किया ।

संग्रामसिंहके समयमें भी इसकी अवाई हुई थी ।

जगत्सिंहके समयमें इसका बीज बोया गया ।

प्रतापसिंहके समयमें अंकुर फूटा

राजसिंहके समयमें उसमें फल आया ।

राणा उरसीके समयमें वह फल पका ।

हमीरके समयमें वह फल बाँटा गया और सब हीको उसका एक २ अंश प्राप्त हुआ ।

और आप (राणा भीमसिंह) ने पेट भरकर इस फलको खाया । आप इसके गुण, दोष, स्वाद व गंध सबको ही जान गये हैं देश भी ठीक वैसा ही है; इस समय यदि आप औषधि नहीं खायँगे तो बहुतसा कष्ट भोगना पडेगा । देश विदेशके रहनेवाले आपको घृणित समझेंगे ! अतएव अब आलस्य न कीजियेगा आलस्य करनेसे धर्मके साथ राज्य भी आपके हाथसे जाता रहेगा । राज्यलक्ष्मी सदाके लिये आपको छोड़ जायगी ।"

तीसरा पत्र ।

उस समयके मन्त्री अग्रजी महताके शिरनामेसे;–

"दूध यदि दही होजाय तो इससे कुछ नहीं आता जाता । बुद्धिमान् मनुष्य उस दहीसे मक्खन निकाल सकता है । मक्खनको निकालकर मट्ठेको फेंक देनेसे कुछ हानि नहीं होती । परन्तु दूध जमकर यदि काला हो जाय तो फिर उसको शुद्ध करनेके लिये विशेष बुद्धिमानीकी आवश्यकता है । मेवाडरूपी घने दूधके बर्त्तनपर विदेशीलोग काली रेखाके समान दिखाई देते हैं । प्राणका दाव लगाकर भी उस कलंकरूपी कालोंसको दूर कीजिये । परदेशियोंका विश्वास करनेसे देश नष्ट होजायगा।"

चन्द्रमाकी कमल मुसकानके सामने, "चंद्रज्योति" (क) लेकर क्या होगा ?"

"पंखसे कबूतर उत्पन्न करनेको जो लोग कहते हैं उनकी बातका कभी विश्वास न कीजियेगा । देश विदेशमें इधर उधरसे सब ही कहते हैं कि मेवाडमें कोई भी चतुर नहीं है । मेवाडके श्वेत यशरूपी मंदिरपर यह साधारण कलककी बात नहीं है ।"

(क) "चन्द्रज्योति" चन्द्रमाको कहते हैं; परन्तु राजपूतलोग एक प्रकारके नीले प्रकाशको इस नामसे पुकारते हैं ।

कुत्ते उसको ठुकराने लगे। आश्चर्य इतना ही है कि ऐसा देखकर भी मोहसे अन्धे हुए मनुष्यके ज्ञाननेत्र नहीं खुलते! यह सुनकर भी परहिंसा, परनिंदा, विद्वेष,विश्वासघातकता और कृतघ्नता करनेकी इच्छा करता है। मनुष्यका यह जीवन क्षणभंगुर है। समयरूपी समुद्रमें एक छोटे बबूले के समान है। सूर्यकी किरणोंमें क्षणभरतक वर्त्तमान रहकर फिर न जाने कहांको बिलाय जाता है। यदि इस थोडेसे समयमें कोई अच्छा कार्य न सध सका तो फिर मनुष्यके जीवनकी सार्थकता ही क्या हुई? यों पेट भरनेके तो पशु भी अपना पेट भर ही लेता है;यहां प्रश्न यह है कि तो फिर मनुष्य और पशुमें अन्तर ही कौनसा रहा? माधवजी सेंधिया अपने सौभाग्यसे अनन्तधाम विशाल-राज्य और प्रचंड सामर्थ्यका अधिकारी हुआ था; परन्तु जननी जन्मभूमिका उसने कौनसा उपकार किया? यदि वह असमि धन और सामर्थ्यको भलेकार्यमें लगाता तो भारतकी दुःखरूपी रात्रि दूर होकर शीघ्र ही आनन्दमय प्रभातका उदय हो जाता। ऐसा होनेपर आज इस महाराष्ट्री वीरका नाम भी स्वदेशप्रेमी संन्यासियोंकी पवित्र नाममालाके साथ भारतवासियोंके लिये प्रातःसमयकी जपमालामें मिल जाता। परन्तु वह मोहान्ध था,इसही कारण वृथा गर्वमें मत्त होकर अपने गौरवके अनन्त मार्गमें कांटा बोया, अभागिनी जन्मभूमिको दुर्दशाके अँधियारे कुएँमें डुबाया। उसने लोभमें आकर जो अगणित भारत सन्तानका नाश किया था, उससे कौनसा फल हुआ? परग २ पर भारत—भ्राताओंका घृणित पात्र होकर उसने जीवनको बिताया और अन्तमें पश्चात्ताप करके संसारसे बिदा ली। अन्तसमयमें उसके आत्मीय व कुटुंबवालोंके अतिरिक्त और किसीके नेत्रसे एक बून्द आँसू भी उसके लिये न निकला। बहुत समय हुआ कि वह दिन अनन्तकालके विराट् शरीरमें समा गया, परन्तु आजतक भी भारतवासीगण उनके नामपर शतसहस्र धिक्कार दिया करते हैं। उसका अत्याचार सताना और प्रचण्ड लोभ इन सबका प्रमाण राजस्थानभूमिका दीनावस्थाको प्राप्त होना ही है। उस श्मशानभूमिकी अगणित चिताओंसे प्रकृति सती करुणाको ज्ञापन करती हुई उसके पैशाचिक कार्योंका वृत्तान्त संसारको सुना रही है।

माधोजी सेंधियाकी मृत्युके पीछे उसका भतीजा दौलतराव बलपूर्वक सिंहासनपर बैठा। सेंधियाका पुत्र उस समय नाबालिग था, इसलिये दौलतरावने सरलतासे ही चचाके सिंहासनको अपने अधिकारमें किया। सिंहासनपर बैठते ही दौलतरावने सेंधियाकी विधवा पत्नियोंके साथ घोर झगडा आरम्भ किया। तथा शैनवी सरदारोंका वध करके घोर हत्याका भागी हुआ। इन बातोंके ऊपर मेवाडकी भीतरी उन्नति और अवनतिका होना निर्भर था। कारण कि सेंधियाके प्रतिनिधि अम्बाजीके हाथमें उस समय मेवाडका भाग्यचक्र सौंपा हुआ था। राजकुमार सेंधियाके बालक होनेके कारण अम्बाजीको अपना स्वार्थ सिद्ध करनेको अच्छा अवसर मिला। तथापि सहजसे ही उसकी मनोकामना सिद्ध न हुई। कारण कि बहुतसे परा-

क्रमी मनुष्योंने उसके अभिलाषित मार्गमें कांटे बो दिये थे । इन काँटा बोनेवालोंमें सेंधियाकी विधवा स्त्रियें, लखवादादा, खीचीका ठाकुर दुर्जनशाल और दतियाका राजा था । इन सब लोगोंने ही अनाथा राजपत्नियोंकी ओर होकर प्राणपणसे युद्ध किया था। पहले तो मेवाडसे अम्बाजीका आधिपत्य नष्ट करनेके अभिप्रायसे लखवादादाने मेवाडके राणाको एक गुप्त पत्र भेजकर अनुरोध किया कि " आप अम्बाजीको किंचित् भी न मानैं और उसकी ओरके अधिकारीको दरबारसे निकाल दें । " इससे पहिले जिन शैनवी * सरदारोंका वर्णन किया गया है यह सब लखवादादाकी ओर थे । मेवाडमें इनकी बहुतसी भूसम्पत्ति थी । लखवादादाके प्रतिकूल व्यवहारको जानते ही अम्बाजीने अपने प्रतिनिधि गणेशपंतको लिख भेजा कि शैनवी ब्राह्मणोंकी सब जमीन छीन लो । इस आज्ञाको पाकर अम्बाजीके प्रतिनिधि गणेशपंतने राणाके मन्त्री और सरदारोंको बुलाकर परामर्श की। सरदारोंने बाहरसे तो प्रतिनिधि की हाँमें हाँ मिलाई और भीतर ही भीतर कपटजाल फैलानेकी तैयारियें करने लगे । उन्होंने गुप्त रीतिसे शैनवी ब्राह्मणोंसे सब हाल कहला भेजा और जतला दिया कि " आपलोग दलसहित जावदमें जाकर गणेशपंतपर चढाई करें, हम तुम्हारी सहायता करनेको तैयार हैं । " राणाके मंत्री और सरदारोंका यह पत्र पाकर शैनवी लोग सेनासहित चले । इस ओर गणेशपंत उनके आक्रमणको व्यर्थ करनेके लिये अपनी विशाल सेनाको लेकर जावदकी ओरको चला । साला नामक स्थानमें दोनों दल आमने सामने डटकर खडे हो गये । युद्ध होने लगा, नाना गणेशपंत हारा, उसकी सेना चारों ओरको भागी;. उसकी बहुतसी तोप और बन्दूकें विजयी सैनवी लोगोंके हाथ लगीं । नाना गणेशपंतकी बहुत हानि हुई और वह चित्तौरकी ओरको भागा । चन्दावत लोगोंने सहाय देनेका लोभ दिखाकर फिर उसको युद्ध करनेके लिये उभारा । उनके वचनोंपर भरोसा रखके अभागे नानाने अपनी तित्तर बित्तर हुई सेनाको फिर इकट्ठा किया और खड्गकी सहायतासे भाग्यरूपी नदीकी गतिको फिरानेके लिये और एकबार संग्रामभूमिमें आया । चन्दावतोंके ऊपर भरोसा रखके वह युद्ध करनेके लिये तैयार हुआ था, परन्तु उसकी वह आशा पूर्ण न हुई । कूटनीतिवाले चन्दावतोंने किसी प्रकारकी सहायता उसको न दी । सहायता करना तो एक ओर रहा वे उसके प्रतिकूलमें कार्य करने लगे । दूसरी बार भी गणेशपंत हारकर हमीरगढको भाग गया । उस काल चन्दावतोंने उसके शत्रुओंसे मिलकर पंद्रह हजार सेनाको ले हमीरगढको घेरा । उस भयंकर विपत्तिसे अपनी रक्षा करनेके लिये तेजस्वी गणेशने अत्यन्त साहस और विक्रमके साथ क्रमानुसार नौ युद्ध किये । परन्तु उसका सारा परिश्रम वृथा गया । हमीरगढके राणा धीरजसिंहके दो पुत्र भी इन भयंकर संग्रामोंमें मारे गये थे ।

---

* महाराष्ट्री ब्राह्मण तीन भागोंमें विभक्त हैं;-शैनवी,पूर्व और माईत । उपरोक्त लखवा दादा,बालाबातातया; जीवबादादा, शिवाजीनाना, लालाजी पंडित व यशवन्तराव भाऊ, यह समस्त महाशय मेवाडकी बन्धकी भूमिको भोगनेवाले शैनवी जातिके ब्राह्मण थे ।

अम्बाजीने इस महाविपत्तिसे शीघ्र ही गणेशपंतको छुटाया। सूबेदारने उसको विपत्तिमें घिरा हुआ जानकर गुलाबराव कदम नामक एक सेनापतिके साथ थोडेसे सवार भेजे। उन लोगोंके द्वारा विपत्तिसे छूटकर गणेशपंत अजमेरकी ओरको गया। कुछ ही दूर गया होगा कि मूसामूसी नामक स्थानमें शत्रुओंने फिर उसको घेर लिया। दोनों दलोंमें घोर युद्ध होने लगा। चन्दावतलोग रणोन्मत्त होकर प्राणका दाव लगाय युद्ध करने लगे। उनके भयंकर भुजबलके प्रभावसे गणेशकी सेना पीछेको पग धरने लगी। विजय लक्ष्मी सुवर्णका मुकुट लेकर चन्दावतोंके मस्तकपर पहिराना ही चाहती थी, कि इस ही समयमें शत्रुओंकी ओरका एक सिपाही भागती हुई घोडीको पकडनेके अभिप्रायसे "भागा! भागा!" कहकर चिल्लाने लगा। कुछ ही देरमें वह घोडी पकडी गई। तब सब लोग एकसाथ "मिल गई! मिल गई!" कहकर ऊंचे स्वरसे चिल्लाने लगे। चन्दावतोंने जब इस शब्दको सुना तब उन लोगोंको मनमें खटका सा हो गया। "मिल गई" शब्दको सुनकर उन्होंने ऐसा समझा कि हमारी सेना शत्रुओंके साथ मिल गई। इस अमूलक विश्वासके उत्पन्न होते ही चन्दावतगण रणमें पीठ दिखलाकर चारों ओर भाग गये। उन्हें भागता हुआ देखकर शत्रुओंने पीछा किया और जिसको सामने पाया तत्काल मार डाला। इस प्रकारसे सिन्धीसेनाका जमादार चन्दन मारा गया व और भी बहुतसे अफसर मरे व घायल हुए। भागे हुए राजपूत शहापुरमें जा पहुंचे। देवगढके * ठाकुरने शहापुरके द्वार खोलकर उन सबको आश्रय दिया। उस दिन उस मूसामूसी क्षेत्रमें चन्दावतलोग घोरतासे पराजित हुए थे, शक्तावत सरदारोंके भट्टकविगण, चन्दावतोंकी इस पराजयके गीत अत्यन्त उत्साहके साथ गाने लगे। यद्यपि अम्बाजीके प्रतिनिधि गणेशपन्तने इस युद्धमें जय पाई, तथापि वह इस भयंकर संघर्ष कालमें अपनी रक्षा करनेको समर्थ न हुआ। राजपूत सरदारगण गणेशको दुर्बल हुआ जानकर उसके नेत्रोंके सामने ही अपनी भूसम्पत्तियोंका उद्धार करने लगे। इस सुअवसरमें राणाजीने भी मेवाडकी आमदनी बहुतायतसे बढा ली।

जिस दिन मूसामूसीके मैदानमें नाना गणेशपंत जयी हुआ। उस ही दिनसे भारतमें सेंधियाका प्रतिनिधिपद पानेके लिये अम्बाजी और लखवादादा इन दोनोंमें बडा झगडा उत्पन्न हुआ। मेवाडभूमि इस भयंकर झगडेका खेल करनेके लिये रंगभूमि हो गई। जिन महाराष्ट्रियोंने विकट जोककी नाई मेवाडके हृदयका रुधिर चूसा था, लखवादादा उनके ही विरुद्धमें खडा हुआ; इस ही कारणसे मेवाडके सरदारगण, सहानुभूति प्रगट करके उसकी ओर हो गये। उनको ज्ञात हो गया कि नानाकी सहकारी सेना अबतक

---

* देवगढके ठाकुरसे टाडसाहबकी अत्यन्त मित्रता थी। वह कहते हैं कि;-"यह ठाकुर ६॥ फुट ऊंचा था। उंचाईके समान ही अंग हृष्ट पुष्ट था। इसके अंग प्रत्यंग अत्यन्त बलवान और कडे थे। इसके पिता इससे भी और आध फुट ऊंचे थे। सात फुट ऊंचा (प्रायः पांच हाथ) का मनुष्य तो निःसन्देह एक विराट पुरुषके समान है। यह २२वर्षकी उमरमें मरा था।"

हमीरगढमें ठहर रही है । तब लखवादादाने फिर हमीरगढको घेरा और कोटकी दीवारको तोडनेके लिये बराबर गोला बरसाने लगा । दो हजार गोलोंके लगनेसे परकोटेकी दीवारका एक भाग भहरा पडा । लखवादादा यह देखकर उत्साहित हुआ और सेनासहित उस छिद्रमें होकर किलेमें जाना ही चाहता था कि इतनेमें ही बालाराव इँगले बापू सिन्दा; और यशवन्तराव सिन्दा यह लोग अपनी २ सेना लिये हुए महाराष्ट्रीय प्रतिनिधिकी सहायता करनेको हमीरगढपर पहुँच गये । कोटेके जालिमसिंहने भी प्रतिनिधिकी सहायता करनेको अपनी एक गोलन्दाज सेना भेजी थी । अंबाजीका पुत्र उस सहकारी सेना और सेनापतियोंका सरदार था । इस नई आई हुई विशाल सेनाका आना सुनकर लखवादादाने अपनी सेनाको वहांसे उठा लिया और सहकारी सेनाके साथ चित्तौरकी गढखाईके ऊपर छावनी जमाई । इस ओर नाना गणेशपंत अरक्षणीय हमीरगढको छोडकर गोसुन्दनगरमें नई आई हुई सेनाके साथ जा मिला । दोनों प्रति-द्वन्द्वी वीरोंने क्षीणाङ्गिनी बेरीस नदीके दोनों किनारोंपर अपनी २ तोपें लगा दीं और युद्ध होनेकी बाट देखने लगे । दोनों ओरसे युद्धकी तैयारियें होने लगीं । परन्तु उस ही समय सेनाके वेतनके विषयमें नाना और बालाराव इंगलेके बीचमें एक झगडा खडा हो जानेसे संग्रामके होनेमें विघ्न पडा । उस झगडेकी कुछ भी मीमांसा न हुई । अंतमें नाना गणेश उस स्थानको छोडकर संगानेर नामक गांवको चला गया । इस भीतरी झगडेका विचार करते हुए अचानक मनमें यह बात उदय होती है कि कदाचित् महाराष्ट्रियोंकी सेना छिन्न भिन्न होकर परस्पर लड मरी होगी और राजपूतोंने इस अवसरपर उनमें प्रवेश करके भलीभांतिसे महाराष्ट्रीयसेनाका संहार किया होगा, परन्तु इतिहास उस ही समय गंभीर बाणीसे कह उठता है कि " यह महाराष्ट्रीयलोग इस प्रकारकी राजनीति नहीं पढे हैं कि साधारण झगडेसे अलग होकर शत्रुओंको शिर झुकावेंगे ।

नाना गणेशपंतके अलग हो जानेपर दोनों दल बराबर होकर खडे हुए । चतुर बालाराव इंगलेने उस समय युद्ध करना स्वीकार नहीं किया । गोगुल छप्राके उपद्रवमें लखवादादाने बालाराव इंगलेके प्राण बचाये थे । इस समय महाराष्ट्रीय सेनापतिने पहिले किये हुए उस ही उपकारका स्मरण करके उसके धन्यवादमें इस समय युद्ध न करनेका बहाना किया । सेनापतिके संग्राम न करनेका यहां एक और कारण भी पाया जाता है; कहते हैं कि उसके पास इस समय धनका बहुत अभाव था । लखवादादाने उस अभावको पूर्ण करनेका वचन दिया इस ही कारण दोनों दलमें सन्धि हो गई थी। दोनों सरदारोंने मिलकर उस सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर किये । शीघ्र ही संग्रामकी तैयारियां लोप हो गई, लखवादादा अपनेको बेखटका जानकर परम प्रसन्न हुआ । कुछ कालके लिये दोनों पक्ष शान्त रहे। परन्तु अम्बाजीने शीघ्र ही इस शान्तिको भंग करके दोनों दलोंको फिर रण-रंगमें उन्मादित किया । नानाकी सहायता करनेके लिये उसने सदलैण्ड नामक एक अंगरेज वीरको बहुतसी सेना और तोपोंके साथ भेजा । परन्तु किसी कारणसे विवाद होनेपर वह इस नई सेनाकी सहायता पानेसे वंचित रहा,

वरन उसने जार्जटैमस् नामक और एक प्रसिद्ध युद्धविशारद अंगरेज सेनापतिसे सहायता मांगी। इस पिछले अंगरेज वीरकी अनुकूलताको प्राप्त होकर अम्बाजीका प्रतिनिधि नाना और लखवादादा यह दोनों बराबर हो गये। दोनों ही बुनास नदीके दक्षिण किनारे पर * अपनी २ सेनाको सजाये हुए वर्षाकालमें बराबर छः सप्ताहतक युद्धके लिये खडे रहे ! इससे पहिले राणा और उनके सरदार व प्रजाने केवल लखवादादाका ही पक्ष अवलम्बन किया था; परन्तु इस समय वह दोनों ओर होने लगे, कारण कि दोनों ही दल इस समय उनका सन्मान करते थे।

जिससे नानागणेश बाहरकी सहायताको प्राप्त न कर सके, इसका प्रबन्ध करनेके लिये खीचीका राजा दुर्जनसाल मेवाडके सरदार और ५०० सवारोंको साथ ले उसकी छावनीके चारों ओर घूमने लगा। परन्तु साहसी टैमससाहबने दुर्जनसालके समस्त उद्यम व्यर्थ कर दिये और शाहपुरेसे नई सेनाको साथ लिये हुए नानाके निकट पहुंच गया, कुछ दिन पीछे ही लखवादादाको घेरनेके लिये प्रधान सेनाको छोड अपने गोलन्दाजोंके साथ बुनाश नदीकी तरफ बढा। लेकिन उसकी कामना पूरी न हुई। लखवादादाके साथ लडाई होने ही चाहती थी कि उसी समयमें एक प्रचण्ड आंधी आई; साथमें पानी भी मूसलधारसे पडने लगा। उस भयंकर आंधी और वर्षाके होनेसे टैमसकी सेना तितर बितर हो गई और उसके रहनेका मुकाम शाहपुरका किला एक साथ ही विध्वंस हो गया×। इस अवसरपर लखवादादाने मेवाडके सरदारोंकी सहायतासे उस भागी हुई सेनाका पीछा किया और उनको भलीभांतिसे दलित करके १५ तोपें और बहुतसे अस्त्र शस्त्र भी अपने अधिकारमें कर लिये। इससे पहले शाहपुरके राजाने सेना और रसदसे नानाकी सहायता की थी; परन्तु इसमें कर्मरेखके प्रभाव और बन्धुबांधवोंके ताडनाके डरसे उसको सहायता नहीं की। तब नानागणेश विवश होकर संगनेरको भागा। मेवाडके सरदारोंने उसके प्रचण्ड शत्रु लखवादादाकी सहायता की और नानाका भलीभांतिसे सत्यानाश किया, इस कारणसे गणेशपंतको अत्यन्त क्रोध आया, वह जितना ही इस बातका विचार करता था उतना ही उसका क्रोध दूना बढता था। उसने प्रतिज्ञा की कि अवसर पाकर इन दुष्ट सरदारोंसे भलीभांति बदला लूंगा, बदला लेनेका उचित अवसर भी आ गया। वर्षा बीती। शरदकी तीखी धूपसे मार्ग और घाट सूख गये, गणेशपन्तने अम्बाजीसे सेना पाकर लखवादादासे भयंकर संग्राम करनेकी तैयारियां की। जो क्रोधाग्नि अत्यन्त तीक्ष्णतासे उसके रोयेंरोयेंमें

---

* शाहपुरके १० मील दक्षिणको अमलीनामक नगरमें लखवादादाकी और इन दोनों नगरोंके बीचमें कदैरानामक स्थानके बीच नानापंतकी छावनी पडी थी।

× संवत् १८५६ (सन् १८०० ई०) में यह घटना हुई थी; लखवादादाने शाहपुरके राजाको झाझपुर पर्गना दे दिया। कहते हैं कि राणाने गुप्तभावसे शाहपुरके राजासे दो लाख रुपये लेकर तब इस कार्यमें सम्मति दी थी। राणाके ऐसे आचरणसे लखवादादा और मेवाडके सरदारगण उनसे अत्यन्त अप्रसन्न हुए थे।

जल रही थी, उसके ठण्ढा करनेको अपनी कठोर प्रतिज्ञा पालन करनेके अर्थ वह मनुष्य वध, लूट, खसोट, इत्यादि समस्त भयंकर कार्योंके करनेपर उतारू हुआ। आरावलीशैलमालाकी तराईमें चन्द्रावतलोगोंकी जो जागीरें थीं उन सबको घेरकर क्रोधित नानाने वहांके रहनेवालोंको सताना आरम्भ किया उसके कठोर व्यवहारसे सैकडों घर एक साथ ही भस्म हो गये, पशुओंके समान अनेक नरनारी मारे और सताये गये, कितने ही गृहस्थोंकी सम्पत्ति लुटने लगी! परन्तु इस पर भी छुटकारा नही था। जिन लोगोंने उस निठुर महाराष्ट्रीय सेनापतिके पशुतुल्य व्यवहारसे किसी तरह अपने प्राणोंको बचाया, वह भी किसी प्रकारसे उसके क्रोधसे छुटकारा न पा सके। नानाने कठोर कर लगाकर उन अभागोंको तबाह कर दिया, इस ओर टैमसने देवगढ और अमाइतको घेरकर वहांके राजाको कर देनेके लिये विवश किया, इसी प्रकारसे काखीतल और लुसानी यह दोनों किले उसके अधिकारमें आये। परन्तु लुसानीके नगरवासियोंने अपनी रक्षा करनेके लिये घोर वीरता प्रकाश की थी इस कारण विजयी टैमस साहबने उस नगरका नाश कर डाला। जयके ऊपर जय प्राप्त करके कठोरताकी सीमा दिखाता हुआ नाना गणेशपंत जिस समय धीरे २ रुधिरके तालाबमें पैर रहा था उसी समयमें सेंधियाने अम्बाजीको बरतरफ करके और उस पदपर लखवादादाको नियत किया * अम्बाजीकी समस्त आशा लोप हो गई। उसने गर्वित होकर जिन शैनवी ब्राह्मणोंका सत्यानाश करना चाहा था, आज विधाताने उन्हीं लोगोंके द्वारा अम्बाजीको नीचा दिखाया। अम्बाजीकी दुर्दशा होनेपर उसके प्रतिनिधि नानापंतने मेवाडके उन समस्त किलों और नगरोंको कि जिनको उसने अपने आधिकारमें कर लिया था, लौटा दिया। इस प्रकारसे दो हिंदूवीरोंकी प्रचण्ड लडाई शांत हुई। परन्तु इससे मेवाडका कोई लाभ नहीं हुआ; वरन अनर्थ दिनपरदिन बढने लगे यदि मानाजाय तो मेवाडके लिये यह विपत्तिका समय था; कारण कि उस समयसे ही सेंधिया मेवाडको अपना करद राज समझने लगा।

नवीन प्रतिनिधि लखवादादा सेंधियाकी आज्ञासे एक बडी सेनाको साथ ले मेवाडमें आया। इस बातको कोई न समझा कि यह मेवाडमें किस अभिप्रायसे आता है; परन्तु सेंधियाके प्रतिनिधिको आता हुआ देखकर मेवाडवालोंका हृदय कांपने लगा। अग्रजी मेहता फिर मंत्री बनाये गये और चन्दावत लोग भी अपनी पहिली प्रतिष्ठाको पाकर पूर्वकालके समान राणाको परामर्श देने लगे। लखवादादाने छः लाख रुपया इकट्ठा करनेके लिये अभागे शाहपुरके राजासे उसका नया पाया हुआ जिहाजपुर पर्गना छीन लिया और उन ३६ नगरोंको जो उसमें शामिल थे गिरबी रख दिया। जालिमसिंहकी इच्छा बहुत दिनसे यह थी कि इस जिहाजपुरको ले लिया जाय, इसपर अधिकार

* बालोबा तात्या और बकसीनारायणराव यह दोनों इस समय सेंधियाके दीवान थे। इन दोनोंका जन्म शैनवी गोत्रमें हुआ था अतएव यह सहजसे अनुमान हो सकता है कि स्वजातीय लखवादादाकी सहायता करनेमें इन्होंने भी अत्यन्त चेष्टा की होगी।

करनेके लिये उसने बहुत सी चेष्टायें की थीं! परन्तु उसकी कोई चाल पूर्ण न हुई तो भी वह जिहाजपुरके पानेकी आशाको न छोड सका। आशाके प्रेममें भूलकर वह इसके पानेका अवसर खोज रहा था, इस समय उस अवसरको आया हुआ जानकर क्या वह निश्चिन्त रह सकता है? लखवादादा आज धनके लिये जिहाजपुरको गिरवी रख रहा है। गिरवीकी चीज एक दिन अपनी ही हो जाती है; अतएव जालिमसिंह ऐसा सुयोग कब छोड सकता था? हुंडीसे लखवादादाको मांगी हुई रकमको देकर उसने अपने प्यारे जिहाजपुरके साथ उन समस्त ग्राम और पल्लियों (मजरों) को ले लिया कि जो उसके अन्तर्गत थे! छः लाख रुपया लेकर भी लोभी लखवादादाका हृदय शीतल न हुआ। वह चौबीस लाख रुपया और भी मांगने लगा और राणाके द्वारा इस कामका होना असंभव समझकर स्वयं ही बलपूर्वक उनके इकट्ठा करनेको तैयार हुआ। यमदूतोंके समान मरहटोंकी सेना मेवाडके ग्राम २ और नगर २ में घूमी और २४ लाख रुपया इकट्ठा कर लिया। लखवादादा प्रसन्न हो गया,कुछकालके लिये उसका लोभ शान्त हुआ,उसने यशवंतरावभाऊ नामक एक मरहटेको अपना सहकारी कर्मचारी बनाया और उसको मेवाडमें ही छोड स्वयं जैपुरकी ओर चला। इस समय भारतवर्षमें विलायतवाले धीरे २ आते थे इसी कारण उनकी रणनीतिका समस्त राजालोग वर्त्ताव करने लगे। उक्त रणनीतिकी सफलता देख कर राजमंत्री अग्रजीके सहकारी प्रतिनिधि मौजीरामने भी इसके अनुसार कार्य करनेका विचार किया। परन्तु वेतनभोगी विदेशी सेना और विशाल गोलंदाज सेना रक्खी जाय तो इसमें बहुतसे धनका प्रयोजन है, राज्यकर इतना थोडा आता था कि उसकी सहायतासे उस बडे खर्चका होना किसी तरहसे सम्भव नहीं था। अतएव सरदारोंसे कुछ २ अनुकूलता पानेकी आशासे मौजीरामने उनके पास एक २ आज्ञापत्र भेजा। परन्तु सरदारलोग ऐसे अनुगत थे कि उन्होंने आज्ञापत्र पाते ही उक्त मंत्रीको कैद करके अपने देशानुरागका पूर्ण परिचय दिया।सतीदासको उसकी पहिली प्रतिष्ठा प्राप्त हो गई। चन्दावतलोगोंके डरसे सतीदासका भाई शिवदास कोटेमें जाकर रहा था इस समय वह भी बुलवाया गया। परन्तु बलवान् चन्दावत लोग अपने पहिले पदोंपर विराजमान रहकर राजपरिवारकी भूमि संपत्तिका अधिकांश भाग निर्विघ्नतासे भोग करने लगे।

सन् १८०२ ई० में इन्दौरकी विशाल समरभूमिके बीच महाराष्ट्री राज्यके शासनसम्बन्धमें अपने २ भाग्यकी परीक्षा करनेके लिये जो १ लाख ५० हजार आदमी इकट्ठा हुए थे उन्होंने मिलकर हुल्करके मस्तकसे राजमुकुट उतार लिया;हुल्करकी राजधानी हाथी घोडे बंदूक तलवार इत्यादि और बहुतसे अस्त्र शस्त्रके साथ शत्रुओंके हाथ लगी थी।अवशेषमें विवश होकर मेवाडकी ओर भागा।परन्तु वहां भी छुटकारा न मिला। विजयी सेंधियाकी जयोन्मत्त सेनाने वहां पर भी उसका पीछा किया। उस समय सदाशिवराव और बालाराव सेंधियाके मुख्य सेनापति थे। मेवाडकी ओर भागनेके समय रतलामका किला बीचमें पडा, उसको भी हुलकरने लूटा और शक्तावतोंके प्रधान वास-

स्थान भैंदर दुर्गको घेरकर वहांसे खंडनी मांगने लगा। भयके मारे शक्तावत लोग अत्यन्त व्याकुल हुए। महाराष्ट्रियोंसे छुटकारा पानेका वह कोई भी यत्न न सोच सके। धीरे२ यह समाचार राणाजीने सुना। उस काल राणाजीके हृदयमें यह शंका उत्पन्न हुई कि भैंदरको छोडते ही सेंधिया उदयपुरको घेरेगा फिर उसके क्रोध और लालचसे उदयपुरकी रक्षा कौन करेगा? उन्होंने अपनी रक्षा करनेका उपाय सोचना निश्चय कर लिया। परन्तु राणाजीको इस विषयमें परिश्रम नहीं करना पडा। कारण कि जब हुलकरके निकट सेंधियाकी सेना जो उसका पीछा करती हुई आती थी--पहुंची, तब उसने विवश हो भैंदरको छोड दिया। भगवानकी दयासे भैंदरनगरकी विपत्ति टल गई। अपनी आशाको पूर्ण न होता हुआ देखकर हुलकर निराशहृदय पुण्यतीर्थ नाथद्वारा * में पहुंचा। अपना अभिप्राय व्यर्थ होनेसे वह अत्यन्त ही मर्मपीडित हुआ था। परन्तु उसके मुखपर निराशाके कोई चिह्न भी अबतक दिखलाई नहीं दिये थे। कारण कि उसने धीरता और सहनशीलताके सहारेसे उस धुएँवाली अन्तराग्निको अबतक दबा रक्खा था। परन्तु अब धीरज छूट गया। अन्तरमें छिपी हुई दुःखरूपी आग एकसाथ ही भडक उठी। उस अग्निकी विकट ज्वालाने हुलकरको उद्भ्रान्त बना दिया। नाथद्वारेके पवित्र मन्दिरमें भगवान् श्रीकृष्णजीकी पवित्र मूर्तिके आगे निराश हृदय हुलकरने देवमूर्तिको सैकडों धिक्कार दिये और श्रीकृष्णभगवानको शतशः दुर्वचन कहने लगा। तदुपरान्त अपनी क्रूरमूर्ति धारण करके नाथद्वारेके पुरोहित और वहांके सहवासियोंसे तीनलाख रुपये ले लिये। जो लोग उसकी लालसाको पूरी न कर सके उनको अत्यन्त सताया गया। हुलकर उनको कैद करके अपने डेरोंमें ले गया और जबतक धन नहीं ले लिया, तबतक उनको बरावर सताता रहा।

नाथद्वारेका प्रधान पुजारी दामोदरजी इस बातको नहीं समझा था कि हुलकर हिन्दू होकर देवता और देवभूमिपर ऐसा अत्याचार करेगा। अब उसने समझा कि नाथद्वारा निरापद नहीं है; जो कोई दुष्ट चाहेगा वही यहाँ आकर ब्रजाधीशका अपमान तथा पुजारी और यात्रियोंपर अत्याचार करता रहेगा। अतएव देवमूर्तिको किसी रक्षित स्थानमें रखना चाहिये। दामोदरजीने नाथद्वारेके ठाकुर कोटारियोंसरदारसे इस विषयमें परामर्श ली। परामर्शमें निश्चय हुआ कि देवविग्रहके रखनेको उदयपुर ही निरापद स्थान है। तदुपरान्त दामोदरजीकी देवभोग्य समस्त द्रव्यादिके साथ देवमूर्तिको उदयपुरमें रखनेके लिये गये। कोटारियोंसरदार बीस सवारोंको साथ लेकर अति दुर्गम व घने वनोंमें होता हुआ उसको बे खटके राजधानी उदयपुरमें पहुँचा आया। जिस समय वह सरदार लौटकर अपने नगरमें पहुँच ही चुका था, उस ही समयमें हुलकरके थोडेसे सिपाहियोंने उसकी गतिको रोककर रूखे स्वरसे कहा "तुमलोग अपने घोडे हमको दो नहीं तो दण्ड पाओगे।"

* उदयपुरसे २५ मील उत्तरको नाथद्वारा बसा हुआ है। आगे नाथद्वारेका वर्णन भलीभांतिसे किया जायगा।

क्या पृथ्वीराज चौहानका वंशधर आज थोडेसे महाराष्ट्री चोरोंकी भ्रुकुटि देखकर भीत हो जायगा ? क्या सिंहके ऊंचे कुलमें जन्म लेकर किसीने शृगालको शिर नवाया है ? हुलकरके सिपाहियोंका यह अपमानकारी वचन सुनकर कोटारियोंके सरदारको अत्यन्त क्रोध हो आया। उसने तत्काल प्रतिज्ञा की "चाहे प्राण जाते रहें, परन्तु दुष्टोंको अपने घोडे देकर कभी अपमानका भागी न हूंगा।" जिसप्रकार वीरोंकी प्रतिज्ञा होती है, उस ही भांतिसे इस वीरने भी अपनी प्रतिज्ञाका पालन किया। अपने घोडेसे पृथ्वीपर उतर कर कोटारियोंके सरदारने उसके दोनों अगले पांवमें जंजीरें भर दीं और अपने सिपाहियोंको भी ऐसा ही करनेकी आज्ञा दे, नंगी तलवार हाथमें लिये वेगसे शत्रुओंकी ओर झपटा; उसके विश्वासी वीरगण भी उसकी सहायता करने लगे। केवल उन बीस सिपाहियोंको साथ लेकर कोटारियोसरदार भयरहित हो शत्रुओंकी बडी सेनाके सन्मुख जा पडा और अपने बहुतसे बलवान सिपाहियोंके साथ संग्रामभूमिमें प्राण दे दिये। कोटारियों चौहान राजपूतोंकी वीरताके तथा निडरताके ऐसे बहुतसे प्रमाण मेवाडके इस घटना पूर्ण कालमें पाये जाते हैं। कोटारियोसरदारके मारे जानेसे ऐसा कोई नहीं रहा कि जो नाथद्वारेकी रक्षा करे। हिन्दूकुलकलंक हुलकरने उस अरक्षित तीर्थ स्थानमें प्रवेश करके देवालयकी समस्त सामग्री लूट ली। लूट खसोटको वह इतना पसंद करता था कि देवसम्पत्तिके लेनेमें भी कोर कसर न की। उसके पिशाच तुल्य अत्याचारोंसे नाथद्वारेके रहनेवाले अत्यन्त दुःखी हुए और नगरको छोडकर भागे। इस ही कारणसे वह पवित्र स्थान शीघ्र ही श्मशानके समान भयंकर हो गया। विष्णुभक्त और शुद्ध चित्तवाले यात्रियोंके निरन्तर आवागमनसे जो स्थान परम रमणीक ज्ञान पडता था, गवइये वैष्णवोंका अमृतमय भगवन्नामकीर्तन जहां चारों ओर सुनाई दिया करता था, आज वही स्थान निर्जन होकर छोड दिया गया, आज यह रमणीक स्थान शोकोद्दीपक भावको प्राप्त हो गया।

उदयपुरमें पहुँचकर भी प्रधान पुजारी दामोदर निश्चिन्त होकर पूजापाठमें मन नहीं लगा सका। आलसी राणाकी राजपुरीमें भी उसको विघ्न घेरने लगे। इस कारण छःमासके पश्चात् ही पुजारीजी, भगवान् कृष्णचन्द्रकी मूर्ति लेकर गासियर नामक शैलमालापर चले गए और वहां एक मन्दिर बनाया मन्दिरकी चाहरदिवारी अत्यन्त ऊंची और दृढ थी, यहां पर वह निर्विघ्न होकर रहने लगे, परन्तु क्रमशः उनके मनमें धारणा हुई कि केवल ब्रह्मतेजके बलसे ही देवताकी रक्षा नहीं हो सकती। इस ही कारणसे उन्होंने खड्गबलके ऊपर निर्भर करनेका विचार किया तथा शीघ्र ही ढाल तलवार धारण करके उस पवित्र तीर्थकी तस्करोंके आक्रमणसे रक्षा करने लगे। कुछ ही कालमें चारसौ सवार दामोदरजीके दलमें मिल गये। उन विष्णुपरायण धर्मवीरोंके साथ दामोदरजी बहुधा गासियर गिरिप्रदेशसे उतरते और अपने अधीनकी समस्त विष्णुपीठोंकी देखभाल किया करते थे।

सेंधियाके विकट भयसे हुलकरको कहीं भी छुटकारा नहीं मिलता था। नाथद्वारेकी संपत्तिको लूट खसोट कर वह बनैडा और शाहपुरसे धन लेता हुआ अजमेरमें पहुँचा। अजमेरमें ख्वाजेसाहबकी एक जियारत है। हुलकरने अपने लूटे हुए उस धनके कुछ अंशको—जो कि उसने नाथद्वारसे लूटा था—उस जियारतके मुजाविरोंको बांट दिया तथा अजमेरको छोडकर जयपुरकी ओर चला। सेंधियाके सरदारलोगोंने जब मेवाड़में आकर हुलकरको न देखा तब उसका पीछा छोडा और राणाजीसे तीनलाख रुपये मांगे। खजानेमें इतना रुपया नहीं था फिर किस प्रकारसे इन दुराचारियोंकी लालसा पूर्ण होती। इधर विना रुपया दिये भी काम नहीं चलता। अन्तमें कोई उपाय न देखकर राणा भीमसिंहने निजकी द्रव्यसामग्री और स्त्रियोंके मणिरत्न बेचकर लोभी महाराष्ट्रियोंकी धनरूपी प्यासको कुछ एक शान्त किया। परन्तु मरहटे इसपर भी छोडनेवाले नहीं थे। यद्यपि तीन लक्ष रुपया पाकर सेंधिया चुपका तो हो गया परन्तु मेवाडके सूबेदार यशवन्तरावभाऊने एक दूसरी फहरिस्त बनाई और उसके अनुसार रुपया वसूल करनेके लिये अपने सहकारी तात्याको नियुक्त किया तत्पश्चात् रुपया वसूल करनेकी महा धूम पड गई। राज्यके सरदार और सामन्तलोग किसान और बनिये रक्षसोंके समान महाराष्ट्रियोंके लट्ठप्रहारसे उच्छिन्न हो अपनी सर्वस्व उनको देने लगे। निर्धन, अन्नहीन, अभागे किसानोंके हल बैल भी छीन लिये गये। यह सब कुछ देकर भी उन बेचारोंका छुटकारा नहीं था। सर्वस्व छीनकर फिर उन किसानोंको कैद करके मुक्तिपण मांगा गया। जिनलोगोंसे वह कर न दिया गया उनको देशनिकाला दे दिया।

जिस समय मेवाडकी अभागी प्रजा (संवत् १८५९ सन् १८०३ ई० में) इस प्रकारसे सताई जा रही थी, उस ही समयमें प्रसिद्ध लखवादादाने अपने स्वामीसे अपमानित हो महा दुःख पायकर शालुम्ब्राकिलेमें देहत्याग किया। लखवादादाके मरनेपर उसकी जगह अम्बाजीका भ्राता बालाराव नियत हुआ। इसके साथ शक्तावतोंका और दीवान सतीदासका भी मेल हो गया, इन लोगोंने चन्दावतोंको मंत्रभवनसे निकाल दिया। जालिमसिंह हृदयसे चंदावतोंको घृणित समझता था। अतएव उनके दूर होनेसे अत्यानन्द हुआ। इस अवसरमें जालिमसिंहने अपना कार्य भी सिद्ध करना चाहा तथा इस ही कारण शक्तावतोंसे मेल करके राणाजीके मंत्री देवीचन्दको कैद किया। देवीचन्दपर जालिमसिंह इस कारण क्रोधित हुआ कि वह चन्दावतोंका बनाया हुआ मंत्री था। इसके उपरान्त बालाराव इंगलेने चन्दावतोंकी जागीरें भलीभांतिसे लूटीं और उनपर कठोर अत्याचार करने लगा। उसके दुराचारोंसे चन्दावतोंका सर्वनाश हो गया, बहुतसे घर भस्म हो गये। बालाराव इंगलेके प्रचण्ड अत्याचारसे अत्यन्त दुःखित हो चन्दावत लोग अपने उद्धारका उपाय विचारनेके लिये एक साथ मिलकर परामर्श करने लगे। इस ओर बालारावने सेनासहित राणाजीके महलपर पहुंचकर मंत्रीके कार्याध्यक्ष मौजीरामको देखना चाहा। परन्तु राणाजी किसी भांतिसे

मौजीरामके देनेको सम्मत न हुए। उनकी दृढ प्रतिज्ञा थी कि मौजीरामको किसी प्रकारसे भी शत्रुओंको न देंगे। दुराचारी मरहटोंने विनती की, भय दिखाया, परन्तु राणाजीकी प्रतिज्ञा अचल और अटल रही। तदुपरान्त वालाराव इंगलेने अपनी सेनाको महलकी ओर जानेकी आज्ञा दे दी। परन्तु उनकी कोई दुराभिसन्धि पूर्ण न हुई। कारण कि तेजस्वी मौजीरामने अपने आदमियोंसे उन सबको कैद करा लिया। नानागणेशपंत, जमालकर और ऊदाजीकुँवर यह तीनों कैद हुए। इनमें ऊदाजीकुँवर अत्यन्त दुष्ट व क्रूरकर्मकारी था, इस ही कारणसे इसके गलेमें हाथीके पांवकी जंजीरें भरवा दी गईं। व और भी सबको उचित फल दिया गया। दुष्ट बालाराव इंगले एक स्नानघरमें छिपा था, इसको भी पकड कर कैद किया। जब मरहटे सरदार इस प्रकार कैद हो गये तब चन्दावत लोग अत्यन्त तेजके साथ नगरसे निकले और महाराष्ट्रियोंके उस गोटपर आक्रमण किया कि जो पर्वतपर बसा हुआ था। वहां पर जो कुछ था, सबपर ही चन्दावतोंने अधिकार किया। हियर्से नामक एक अंग्रेज सेनापति महाराष्ट्रियोंकी सहायता करनेको सेनासहित आया था। परन्तु वह अपना कार्य विनाही पूरा किये भयभीत हो उन्हें छोडकर चला गया और उसने अपनी अधीन सेनाको साथ ले एक बडे मैदानमें चौकोन व्यूह बनाया, तथा गडरमाला नामक नगरमें कुशलपूर्वक चला गया।

अभागे बालाराव इंगलेकी दुर्दशाका वृत्तान्त श्रवण करके जालिमसिंहको अत्यन्त दुःख हुआ, शत्रुके कारागारसे विना अपने मित्रको छुटाये हुये वह कैसे निश्चिन्त रह सकता है? जालिमसिंह मित्रको छुडानेके लिये निश्चय करके भाइन्दर और लावाके सरदारोंके साथ राजधानीके सामनेको जानेवाले चैजाघाट नामक गिरिमार्गकी ओर सेनासहित बढा। जो राणाजी इन दुष्ट विद्रोही सरदारोंको पकडते ही मारडालते तो उनका अत्यन्त मंगल होता। इस कारणसे संपूर्ण मरहटे क्रोध करके उनपर चढ दौडते परन्तु राणाका इससे कुछ अमंगल न होता। परन्तु उनका दुर्भाग्य था; इसी कारण पलभरको भी इस बातका विचार करके सिंधी, अरब, और गोसाानी इत्यादि अनेक जाति और सम्प्रदायोंसे ६०००: छःहजार सेना चुनकर साहसी जैसिंह अपनी बलवान खीचियोंकी सेनाको लेकर विद्रोहियोंसे लडनेके लिये आगे बढा। राणाजी सेनासहित उस चैजाघाटको रोककर खडे हो गये पांच दिनतक बराबर घोर युद्ध हुआ। महाराष्ट्रियोंने सहस्रों गोले बरसाये परन्तु पांच दिनतक राणाजीकी सेना बराबर डटी रही। छठे दिन पराजित होकर राणाजीने बालाराव इंगलेको छोड दिया। इस समय जो सन्धि स्थापित हुई उसके अनुसार विजयी जालिमसिंहको सम्पूर्ण जिहाजपुर पर्गना मिल गया परन्तु इससे भी छुटकारा नहीं हुआ परन्तु राणासे महाराष्ट्रियोंने लडाईका खर्च मांगा, इस रुपयेको मरहटोंने अत्यन्त अत्याचार करके इकट्ठा किया।

संवत् १८६० (सन् १८०४) में निराश हुए हुलकरने अपनी सेनाका नाश और बदला लेनेकी आशा त्याग कर दक्षिणके राजाको छोडा। जिस भाइन्दर नगरके

सरदारने उसकी इच्छा पूर्ण नहीं की थी; इस समय उसके ऊपर ही इस प्रचण्ड मरह-टेका अधिकार हुआ। हुल्करने सेनाके साथ जाकर उस किलेको घेरा। कोई भी उसकी भयंकर सेनाको न रोक सका। भाइन्दरके शक्तावत सरदारने किलेकी रक्षाका कोई उपाय न देखकर हुल्करको दो लाख रुपये दिये और उससे सन्धि कर ली। भाइ-न्दरके सरदारका रुधिर चूसकर भी इस राक्षसको प्रसन्नता न हुई और तत्काल उदय-पुरकी ओर चला। उसके आनेका समाचार पाकर राणाजीने सन्धि स्थापन करनेके लिये अजितसिंह नामक राजपूतको दूत बनाकर उसके पास भेजा।

हुल्कर उदयपुरमें प्रवेश करना ही चाहता था कि उसी समय अजितसिंहसे उसकी मुलाकात हुई। अजितसे राणाकी अभिलाषाको जानकर लालजी महाराष्ट्रने उत्तर दिया कि विना चालीस लाख रुपये लिये मैं कभी उदयपुरको नहीं छोडूंगा इस समा-चारको राणाजीने सुना जिससे उनका भय और भी दूना हो गया। रक्षाका कोई उपाय न देखकर चालीस लक्ष रुपया देना स्वीकार कर लिया। कैसा आश्चर्य है और कैसे शोककी बात है! राणा भीमसिंह क्या इतना डरपोक और कायर था? क्या गिह्लौटकुलके योग्य साधारण गुण भी उनके शरीरमें विद्यमान नहीं था? वह अप-नेको वीरकेशरी प्रतापसिंहका वंशधर कहा करते थे, क्या उन प्रतापसिंहकी शोणित-धाराका एक बिन्दु भी अभागे भीमसिंहकी नाडियोंमें प्रवाहित नहीं होता था? फिर किस कारणसे भीमसिंहने उस जगन्मान्य वीरपूज्य पवित्र गिह्लौट कुलमें जन्म लिया था? यदि शत्रुओंके आक्रमणसे मेवाडको बचानेकी सामर्थ्य उनमें नहीं थी, तो किस कारणसे वीरवर प्रतापसिंहके सिंहासनपर बैठे? लोभी मरहटोंके बारम्बार सतानेसे मेवाडकी सुनहरी जमीन आज श्मशानसी बनगई है;—प्रजाका सर्वस्व लूटा गया; नगरनिवासी लोग भयके मारे चोरोंकी सेवा कर रहे हैं? जिस तुच्छ जीवनके लिये राणाने असंख्य प्रजाका कुछ भी ध्यान न किया उस जीवनसे प्रयोजन क्या है? दीन, हीन, मलीन, क्षीण प्रजाका उद्धार करनेके लिये जो प्राण तैयार नहीं हुआ, जिसने सदा ही शत्रुओंके चरणचोटसहे, उन घृणित, कलंकित और तुच्छ प्राणोंसे क्या प्रयोजन है? उनको स्वदेशकी रक्षाके लिये शत्रुओंके साथ प्राणका दाँव लगाकर युद्ध करना चाहिये था परन्तु बात इससे विपरीत हुई, उदयपुरके राणा शत्रुओंके चरणोंमें गिर गये। ऐसा करनेसे जो कलंक उनके नामपर लगा यदि उसको सात समुद्रोंके जलसे धोया जाय तो भी नहीं छूटैगा।

सन्धि करनेके बदलेमें हुल्करने ४० लाख रुपये मांगे परन्तु मेवाडकी अवस्था उन दिनोंमें ऐसी हो रही थी कि उतने रुपयेका दियाजाना असम्भव था। राणाने समझ लिया कि विना इस रुपयेके दिये पीछा न छूटेगा। उन्होंने अपनी सुवर्ण की बनी हुई चीजोंको बेचडाला और स्त्रियोंके गहने भोजनपात्रोंको गिरवी रख दिया ऐसा करनेसे और नगरवासियोंसे केवल १२ लाख रुपये इकट्ठा हुए। परन्तु इनसे क्या होता है चालीस लाख रुपयेके लिये १२ लाख रुपया तो तिहाई हिस्सा भी नहीं है बाकी

रुपयेके बदलेमें राजपरिवारके प्रधान २ मनुष्य और कितने एक नगरवासियोंके शरीर गिरवी रक्खे गये, रुपया न देनेतक उनको महाराष्ट्रियोंके डेरेमें रहनेकी आज्ञा हुई। इस भांतिसे चालीस लाख रुपयेके पानेमें निःसन्देह हो निठुर हुल्करने राणासे मुलाकात की; इस ओर हुल्करकी आज्ञाके अनुसार महाराष्ट्री सेनाने लावा और बिदनौरके किलेको घेरकर सरलतासे अपने अधिकारमें कर लिया, वहांके ठाकुरोंने बहुतसा धन देकर उन नगरोंको लौटाया। इतना रुपया पाकर भी इस दुराचारीका लोभ दूर न हुआ। तदुपरांत देवगढके किलेपर अधिकार करके वहांसे साढेचार लाख रुपये लिये। इस प्रकार आठमहीनेतक मेवाडके रुधिरको चूसकर वह दुराचारी उत्तरकी ओर सिधारा। राणाजीके ऋणके बदलेमें अजितसिंह उसके साथ गये, और उस रुपयेके इकट्ठा करनेको बलरामसेठ मेवाडमें रह गया। * जो जो प्रबल पराक्रमी स्वेच्छाचारी मरहटेलोग स्वार्थपरता और कठोरतासे उत्साहित होकर दुर्बल राजपूतोंपर कठोर अत्याचार करते थे, विधाताके निरपेक्ष नियमके अनुसार उनके अत्याचारका प्रायश्चित्त करानेके लिये सात समुद्रोंके पार होकर श्वेतद्वीपवाले बलवान ब्रिटनगण भारतवर्षमें आ पहुँचे। उनकी विकट भ्रुकुटीको देखकर कुटिल महाराष्ट्रियोंके हृदय थरथर कांपे; उनका सिंहासन इस तरहसे बारम्बार कांपने लगा कि जिस तरह आंधी और पानीसे पुराना घर कांपा करता है। भारतवर्षमें क्रमानुसार अंगरेजोंकी उन्नति देखकर उनको अनेक प्रकारकी शंका हुई उनसे छुटकारा पानेके लिये बृटिश शासनकी मूलमें कुल्हाडी चलानेका महाराष्ट्रियोंने निश्चय कर लिया। अंगरेजोंकी जड उखाडनेके लिये वह सब मरहटे भी परस्पर मिल गये कि जो एक दूसरेके जातीय दुश्मन थे। इस समय हुल्कर और सेंधियामें कोई झगडा न रहा। जो हुल्कर इससे पहिले अपने भयंकर शत्रु सेंधियाके डरसे राज्यको छोड भारतके नगर २ में भागता फिरता था, आज इस साधारण संकटके समयमें उसने समस्त अपमान और निरादरको भूलकर उस भयंकर शत्रु सेंधियाको मित्रभावसे गले लगाया और अंगरेजोंको भारतभूमिसे निकालनेकी प्रतिज्ञा की। हुल्कर मेवाडको लूटकर शाहपुरमें आया इसी समयमें सेंधियाने अपनी सेनाके साथ मेवाडमें गर्जना आरम्भ किया। शीघ्र ही दोनोंकी भेंट हो गई। अंगरेजोंके विषयमें बहुतसी बात चीत होनेपर यह निश्चय हुआ कि सब महा-

* हुल्करके यहां हरनाथचेला नामक एक कर्मचारी था, यह सरदार बनसेन नामक नगरके भीतर होकर जा रहा था, इतने हीमें सातौलागांवके कुछेक भीलजातिके चोरोंने बाहर निकलकर उसके ऊंटोंको ले लिया और चले गये। हरनाथने उन चोरोंको दमन करनेके लिये चन्दावत गुलाबसिंहको पुकारा; गुलाबसिंह अपने आठ कुटुम्बियोंके साथ वहां आया, उस समय हरनाथने कहा "हमारे ऊंट जबतक न मिलें तबतक आप नहीं जा सकेंगे" गुलाबसिंह इस बातको सुनकर विस्मित हुआ। दूसरे दिन प्रभातकाल ही हरनाथ मरहटेने हाथीपर सवार होकर अपनी सेनाको आज्ञा दी कि चन्दावत सरदार गुलाबसिंहको घेर लो। गुलाबसिंह इस बातको समझ गया और नंगी तलवार लेकर उसकी तरफ दौडा, परन्तु शोककी बात है कि उसकी तलवार लोहेके हौदेमें लगकर टुकडे २ हो गई। तब गुलाबसिंहने अपनी तेज छूरी हाथीके पेटमें घुसाड दी; लेकिन दुष्ट मरहटोंने उसको टुकडे २ कर डाला।

राष्ट्रियोंको उनसे संग्राम करना चाहिये । परन्तु बुरे मुहूर्तमें इन लोगोंने अंगरेजोंसे युद्ध करनेका विचार किया । उनकी आशा लोप हो गई थी * परन्तु राजस्थानका अभाग्य समझना चाहिये कि महाराष्ट्रियोंके हारनेपर उस हारकी बडी हानि राजपूतोंको सहनी पडी थी ।

जब अंगरेजोंके प्रचंड विक्रमसे महाराष्ट्रीगण हारे तब हुलकर और सेंधिया अपने अपमानका बदला लेनेके लिये पुनर्वार सेना इकट्ठी करने लगे । उनका आशा भरोसा समस्त ही लोप हो गया था । तथापि बदला लेनेकी चिन्ता उनका पीछा नहीं छोडती थी । यद्यपि डाह बढता गया परन्तु इतना साहस तो नहीं था कि प्रगटमें अंगरेजोंसे संग्राम करें । पीछे साहस करके सन् १८०५ ई० के वर्षाकालमें हुलकर और सेंधियाने बिदनोरके अच्छे मैदानमें अपनी २ सेनाको डाला और युद्धका परामर्श करने लगे । उस परामर्शका प्रतिपाद्य विषय यही था कि अंगरेजोंके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिये ? सहस्रशः अत्याचार करते भारतके नगर २ से जो धन महाराष्ट्रियोंने लूटा था, तथा जो बल प्राप्त किया था आज वह समस्त धन और बल उनके हाथसे निकल गया । जिस प्रचण्ड सेनाकी सहायतासे एक दिन भारतवर्षमें केवल अपना ही डंका बजा रहे थे आज वेतन न पानेसे वह सेना भी बिगड रही है । इसके ऊपर अपमान और पराजय पाकर आज दोनों ही भूपाल राक्षसोंके समान बन गए हैं । किसीकी भक्ति नहीं करते, न किसीका मान करते हैं । केवल मतवाले हाथियोंके समान कुरूप किये हुए चारों ओर घूमते हैं । उनकी गतिका रोकनेवाला कौन है ? ऐसा कौन है जो खड्ग धारण करके उनकी गतिको रोके ? कोई भी नहीं; कोई भी आगे नहीं बढा । उस रोमहर्षण पैशाचिक अत्याचारके निवारण करनेका किसीने साहस नहीं किया । आज वीरजननी मेवाडभूमि वीरशून्या है; आज महाराष्ट्री लोगोंने भलीभांतिसे उसे दलित किया है ! आज सुवर्णभूमिने श्मशानभूमिका रूप धारण किया है । महाराष्ट्री सेनाने उस समय ऐसी विकट मूर्त्ति बनाई थी कि यदि उनका राजा भी उस समय उनको रोकता तो भी उनके रुकनेमें सन्देह ही था । परन्तु आश्चर्यकी बात यह थी उनके राजाओंने उनको पापकार्य करनेके लिये दूना उत्तेजित किया । फिर किसकी सामर्थ्य थी जो मरहट्टोंकी अनिवारित गतिको रोक सकता । वह सेना

* यद्यपि महाराष्ट्रियोंने अंगरेजोंके आगे शिर झुका दिया; परन्तु कितने दिनोंमें उनको अपने अधिकारमें किया था । क्या एक ही दिनमें बलवान सेंधिया और हुलकरने श्वेतद्वीपके बनियोंके हाथ अपना मान अपमान बेंचा था ? जिनके प्रचण्ड विक्रमसे एक समय समस्त भारतभूमि कम्पायमान हुई थी, उन महाराष्ट्री वीरोंको अंगरेजोंने क्या एक बारही जंजीरोंमें बांध लिया था ?- इस प्रकारका प्रश्न स्वयं ही पाठकोंके हृदयमें उत्पन्न हो सकता है । इसका उत्तर प्राप्त करनेके लिये भारतका एक इतिहास पढना चाहिये । तथापि इतना निवेदन किये देते हैं कि भयंकर महाराष्ट्रियोंको सीधा करनेमें अंगरेजोंका बहुतसा धन, बहुतसा रुधिर और बहुतसा समय लगा था । वहलोग एकदिन एकवर्ष या एक ही बारकी चढाईमें मरहट्टोंको विनीत नहीं कर सके थे । ३१ दिसम्बर सन् १८०३ ई० को बेसिन स्थानमें जिस संधिपत्रपर हस्ताक्षर हुए थे, उस ही संधिपत्रने अंगरेज और महाराष्ट्रियोंमें-

इस भांतिसे चारों ओरको धाई कि जिस प्रकारसे बनैले हाथी बनमें भ्रमण किया करते हैं। नगरवासियों और गांवके रहनेवाले पर घोर अत्याचार होने लगा। सबका धन लूटा गया; जिन्होंने उन्हें धन न दिया वह तिनकेके समान उनकी क्रोधाग्निमें भस्म हो गये। सताई हुई प्रजाके हाहाकारसे मेवाडभूमि शब्दायमान हो गई; मनुष्योंके रुधिरसे पृथ्वी गीली हुई। महाराष्ट्रियोंने बराबर दशवर्षतक यह घोर अत्याचार करके मेवाडभूमिको विध्वंस कर दिया। इस अत्याचारसे मेवाडकी जो भयानक दशा हो गई थी, उसका स्मरण करनेसे भी हृदय कटा जाता है। चारों ओर महल दुमहलोंके खंडहर दिखाई देते थे। कहींपर आधा जला हुआ गांव अपनी विकट मूर्तिको दिखला रहा था;—कहींपर भस्म हुए नगर और गांवके बाग अपना शोकोद्दीपक श्मशानमय वेश बनाए हुए थे। जिस ओरको आंख फिराइये, उस ही ओरसे प्रकृतिका हृदय स्तंभनकारी चित्र दिखाई देता था। जहांको कान लगाया जाता था वहींसे नर नारियोंका हृदयभेदी आर्त्तनाद और विलाप सुनाई आता था। वीरभूमि राजस्थानकी ऐसी दुर्दशा किसी समय नहीं हुई थी। मुसलमानोंने दीर्घकालतक जो अत्याचार किया था, उसको सहकर भी राजपूतोंका बल कुछ २ वर्तमान था; परन्तु मरहटोंने घोर अत्याचार करके उसको एक साथ ही लोप कर दिया * मरहटे लोग इस प्रकारसे अत्याचार करते

—वैर बढाया। जिस दिन वह संधिपत्र समाप्त हुआ उसही दिनसे महाराष्ट्रीलोग अंगरेजोंको शत्रु समझने लगे। पेशवाने संधिपत्रपर हस्ताक्षर करके यह समझा कि मैंने स्वयं ही अपने पांवमें कुल्हाडी मारी। तेजस्वी सेंधियाने भी दुःखित होकर कहा था। "इस संधिपत्रने मेरे राजमुकुटको शिरसे उतार लिया।" उस दिनका उठा हुआ झगडा सहजसे नहीं दबा। वर्षपर वर्ष बीत गये, भारतके अन्यान्य राजोंमें कितना ही फेर फार हो गया, अंगरेज और महाराष्ट्रियोंके रुधिरसे अनेकबार पृथ्वी लाल हो गई; तथापि उस झगडेका अवसान नहीं हुआ। कभी अंगरेज लोग जीतकर मरहटोंको चारों ओर भगा देते थे और कभी महाराष्ट्रीगण उनकी भलीभांतिसे खबर लेकर सारी कसर निकाल लिया करते थे। इस प्रकार बहुत दिवस बीत गये। आसाई, असीरगढ, आरगांव, दिल्ली, लासवाडी इत्यादिके संग्रामोंमें कभी अपने वीर विक्रमसे अंगरेजोंको चमत्कृत किया और कभी स्वयं आप भी अंगरेजोंकी चालसे मात खा गये। इन लडाइयोंके पीछे जौलाई सन् १८०३ ई० में अंगरेजोंके सेनापति कर्नेल मनसनसाहब महाराष्ट्रियोंकी वीरताके जालमें ऐसे फँस गये थे, कि बडी कठिनाईसे अपना प्राण बचाकर आगरेमें पहुँचे थे। इस पराजयसे अंगरेजोंकी बहुत ही हानि हुई थी। सन् १७८०ई० में कर्नेल बेलीकी पराजयके पीछे ऐसी हानि कभी नहीं हुई। परन्तु महाराष्ट्रियोंकी इस विजयने अगरेजोंकी उस पराजयपर भी परदा डाल दिया। महाराष्ट्रियोंका विक्रम उस दिनसे इस प्रकार बढने लगा कि जैसे शुक्लपक्षका चन्द्रमा दिन २ बढता जाता है।

Marshman's History of India. Part I. P.P. 72-100

* अंगरेजोंके आनेके समयमें भारतके जिन राजाओंने उनकी सहायता की थी उनमें गोहुद, ग्वालियर, राघोगढ और बहादुरगढके राजा और भूपालका नब्बाब ही प्रधान था। वारनहेस्टिंगके साथ मिलकर इन लोगोंने अंगरेजोंकी सहायता की थी। परन्तु शोकके साथ लिखना पडता है कि इनमें कोई भी स्वाधीन नहीं है।

हुए उस श्मशानभूमिमें पिशाचोंके समान घूमने लगे। उनको उनके अत्याचारका बद-ला देनेवाला कोई भी नहीं था; ऐसा कोई राजपूत नहीं था कि जो संजीविनी विद्या-के मंत्रबलद्वारा उस श्मशानभूमिकी चिता भस्मसे फिर असंख्य महावीरोंको उत्पन्न कर सकता? अतएव राजस्थान दीन दशामें ही रहा।

जिस समय राजस्थानमें ऐसा उपद्रव मच रहा था, उस काल कितने एक अंगरे-जवीरोंने धीरे २ इस श्मशानभूमिमें प्रवेश करके महाराष्ट्रियोंको बलपूर्वक वहांसे निका-ल दिया और इस देशको धीरे २ अपनी शक्तिसे जिलाया। जिस समय भारतवर्षमें अंगरेजोंकी प्रभुता पहले पहिल स्थापित हुई थी, उस समय जिन लोगोंने इनकी बहुत-सी सहायता की; आज वही लोग निर्बल, निराश्रय और दीन हीन होकर अत्यन्त दुर्दशाको प्राप्त हुए। किसीने भी हाथ बढाकर उनका उद्धार नहीं करना चाहा। यहां-तक कि जिन राजाओंने अंगरेजोंकी ओर होकर बहुतसे संग्राम किये थे आज एकवार भी अंगरेजोंने उनके मुखकी ओर न देखा। मुख देखना तो दूर रहा वरन उनको दुर्द-शाग्रस्त होते हुए देखकर बृटिनवीरोंने कुछ भी चिन्ता न की और चालाकीसे उन-का राज्य लेनेकी इच्छा करने लगे। इस प्रकारसे बहुतसे राज्य ले लिये।

अंगरेज और महाराष्ट्रियोंका भयंकर संग्राम कुछ दिनके लिये शान्त रहा। पर-न्तु उसके फिर होनेकी शंका करके मरहटे लोग अपने २ परिवार और धन रत्नको मेवाडके किलोंमें छिपाने लगे। आज सब ही लोग आसपासके घरोंका और मित्रों-का सहारा तकने लगे। चन्दावतोंका मुख्य पात्र सरदारसिंह सेंधियाकी सभामें राणाजी-का प्रतिनिधि नियत हुआ। अम्बाजीने पुनर्वार सेंधियाके मंत्रभवनमें ऊंचे आसनको पाया * मेवाडके राणाने इससे पहिले लखवादादाकी सहायता की थी, अम्बाजीने इस बातको अपने हृदयमें रक्खा। राणाके इस व्यवहारने महाराष्ट्री मंत्रीके हृदयमें जो आग जला दी थी, वह किसी भांतिसे नहीं बुझी। इतने दिन तक जो धीरे २ सुलग रही थी इस समय वह एक साथ धधक उठी। अंबाजीने राणासे बदला लेनेका विचार किया और मेवा डके राज्यको प्रधान२ महाराष्ट्रियोंको बांटदेनेकी इच्छा करने लगा। परन्तु उसकी यह इच्छा पूर्ण नहीं हुई। इस निश्चयको जानकर शक्तावत सरदार संग्रामसिंहने उस मार्गमें विघ्न उत्पन्न करनेका पक्का इरादा कर लिया। संग्रामसिंहने इस कार्यको हुलकरके साथ मिल-कर करना चाहा। परन्तु एक और भी सदाशय स्त्री–जो कि संग्रामसिंहसे अधिक बुद्धि-मती और बलवती थी अम्बाजीकी विरुद्धता करनेको तैयार हुई। सेंधियाकी स्त्री बायजी बाईने आज अम्बाजीके कार्यमें विघ्न डालना चाहा। यद्यपि बायजी बाई राज-पूतोंके शत्रु सेंधियाके साथ ब्याही गई थीं, परन्तु राजपूतजातिके सन्तान और गौरवको वह भलीभांतिसे जानती थीं। राजस्थानके समस्त स्थानोंकी तथा विशेष करके मेवाड-भूमिकी वह हृदयसे पूजा करती थीं। वह जानती थीं कि, मेवाडभूमि ही हिन्दूस्वाधी-

* अम्बाजी, बापू चितनवीस, माधव हजूरिया और अन्नाजी भास्कर सेंधियाके मन्त्री थे।

नताकी रंगभूमि तथा गिह्लौटवीरोंकी माता है। शूरजी राव जो कि उन दिनोंमें प्रसिद्ध क्रूरनीति जाननेवाला कहा जाता था बायजी बाईका पिता था। ऐसे पिताके औरससे जन्म लेकर भी बायजी बाई स्त्रियोंमें शिरोमणि थीं। अम्बाजीका अभिप्राय जानकर वह उसके विफल करनेको तैयार होकर समस्त राजपूतोंमें मेल करानेकी चेष्टा करने लगीं। जो चंदावत और शक्तावत सरदारगण परस्पर घोर शत्रु समझे जाते थे, आज मेवाड़के सौभाग्यसे वह लोग समस्त शत्रुता भूलकर एक प्राण दो देह हो गये। उन सबने मिलकर अम्बाजीके विरुद्ध कार्य करनेका विचार किया। क्या वह लोग प्राण रहते हुए दादा परदादाकी जन्मभूमि "स्वर्गादपि गरीयसी" मेवाडभूमिको खंड २ में विभक्त और शत्रुओंके हाथमें जाती हुई देख सकेंगे ? चन्दावतोंका मुखिया सरदारसिंह पहिलेसे ही सेंधियाकी सभामें वर्त्तमान था, परन्तु अपने मंत्रीके अभिप्रायको जानकर उससे अलग हो अपने विपक्षी संग्रामसे जा मिला। तथा अम्बाजीका कार्य बिगाडनेके लिये परामर्श करने लगे। आज. बहुत दिनोंके पीछे शक्तावत और चंदावतगण एक साथ मिल गए। बडे शत्रुने कनिष्ठ शत्रुको गले लगाया। पीछे यह सब पंचौली किसनदासके साथ मिलकर हुलकरके पास गये और गर्व तथा अभिमान सहित कहा "महाराष्ट्रनाथ ! क्या आपने दुष्ट अम्बाजीको मेवाडके बेचनेकी सम्मति दे दी है ?" सरदारोंका वचन सुनकर हुलकर अत्यन्त दुःखित हुआ। उस समय सम्पूर्ण मेवाड भूमि और मेवाडेश्वर राणाकी दुर्दशाका चित्र उसकी आंखोंके सामने खिंच गया इस लिये हृदयकी पीडा दूनी हो गई। उसने गंभीरकंठसे कहा "नहीं ऐसा कभी नहीं होने दूंगा। मैं आपलोगोंके सामने शपथ करके कहता हूं कि मेवाडकी ऐसी दुर्दशा कभी न होगी। आप लोग एक प्राण होवें; आज पुरानी शत्रुता भूलकर परस्पर एक दूसरेको हृदयसे धारण कीजिये और एक साथ अफीम सेवन करके एक प्राणताका परिचय दिखाइये।" हुलकरका वचन सुनकर सबको धीरज आया और एकसाथ अफीमका सेवन करके एक प्राणताका प्रमाण दिखाया। चन्दावत और शक्तावतोंको धीरज देकर ही हुलकर मौन नहीं हुआ, वरन वह सबको साथ लेकर सेंधियाके डेरोंमें गया और वातों ही बातोंमें राणाजीके ऊंचे कुलकी पवित्रता और मानमर्यादाका वर्णन करके गंभीर भावसे कहने लगा। "इस बातको आप भलीभांति जानते हैं कि राणाजीने कैसे ऊंचे बंशमें जन्म लिया है। जो हमारे माननीय हैं वह भी राणाजीको पूजनीय समझते हैं * फिर क्या उनके विरुद्ध शत्रुता करना हमको शोभा देता है ? इस संकटके समयमें उनके सर्वनाशसाधनका व्रत धारण करना क्या हमलोगोंका उचित कर्म है ? मेवाडकी समस्त बन्धनकी भूसम्पत्तिको जो हमारे पितृपुरुषगण बहुत दिनोंसे सरलतापूर्वक भोगते आए हैं, उचित तो यह था कि हम उसको लौटा देते और अब उसके बदलेमें उनके राज्यको टुकडे २ करके बांटेंगे ? हमलोगोंके राज्यको धिक्कार है ! आपकी

* पूजनीय कहनेका यह कारण था कि पेशवा, सेंधिया और हुलकरका राजा था, पेशवाके राजा सितारेके छत्रपति हुए और छत्रपतिके राजा उदयपुरके राणा थे। इस कारण राणाको पूजनीय कहा।

जैसी इच्छा हो वैसा कीजिये; परन्तु मैं शपथ कर चुका हूं कि राणाके पक्षको किसी प्रकार नहीं छोडूंगा । यदि विश्वास न हो तो इसका प्रमाण लीजिये कि, मैंने अभी अपना अधिकार किया हुआ नीमबहेडा जनपद राणाजीको दिया । " हुलकरके इन तेजस्वी वचनोंको सुनकर सब ही मौन हो गये, सेंधियासे भी कुछ न कहा गया । हुलकरके वाक्यने उसके हृदयकी तलीमें प्रवेश करके सेंधियाके मनरूपी राज्यमें एक प्रकारकी चपलता उत्पन्न कर दी, हुलकर समझ गया कि मेरी बातने अपना प्रभाव दिखाया,इस कारण उसको अधिक तेज करनेके लिये फिर कहने लगा, " और यह भी तो आप विचार कर देखिये कि इस समय राणा यदि अलग हो जायँ तो हमारी कितनी हानि होगी ? यदि फिरंगिलोगोंके साथ फिर लडाई होने लगे तो अपने कुटुम्ब और द्रव्य सामग्रीको कहांपर रक्खेंगे ? जो राणाजीके साथ मेल न होगा तो उनके दुर्ग किस भांतिसे हमको मिलेंगे विचार कर देखिये कि उनको अप्रसन्न करनेसे हम लोगोंको विपद ही विपद है । " हुलकरके तेजयुक्त वाक्यसे सेंधियाके मनमें जो चपलता उत्पन्न हुई थी, वह इस समय दूर हो गई, और हृदयमें एक अपूर्व भावका उदय हुआ । हुलकरके वचनोंको मंत्रकी नाई पवित्र समझकर वह उनके अनुसार कार्य करनेके लिये सब प्रकारसे तैयार हो गया और राणाके दूतोंको अपने डेरोंमें ठहरनेको स्थान दिया । हुल्कर और सेंधियाके डेरे दश कोशकी दूरी पर थे इस लिये प्रत्येक दिन उनमें बात चीत नहीं हुआ करती थी । जिन दिनोंका यह वर्णन है उस समयमें कई दिनतक मूसलधारसे जल वर्षा, इस कारणसे दोनोंकी बात चीतका मार्ग बन्द हो गया । जब कि वर्षाकालके उस भयंकर समयमें हुलकर अपने डेरेमें बैठा था, तब उस समय प्रतिहारीने आकर उसके हाथमें एक समाचार पत्र दिया । हुलकर दिल लगाकर उसको पढने लगा; कुछ दूरतक पढकर क्रोधसे उसको दूर फेंका और पृथ्वीकी ओर देखता हुआ बारम्बार अपने अधर काटने लगा, क्रोधके मारे उसके नेत्रोंसे चिनगारियाँ निकल रही थीं । कुछ देर तक इसी प्रकारसे रहकर उसने अपने नौकरोंको आज्ञा दी कि " राणाके दूतोंको अभी बुलाकर लाओ " हुलकरके अचानक बिगड जानेका एक कारण था । समाचार पत्रके पढनेसे उसको यह मालूम हुआ, कि राणाजीका भैरवबकश नामक एक दूत महाराष्ट्रियोंको मेवाडसे दूर करनेके लिये बृटिश सेनापति लार्ड लेकके साथ टोंकमें परामर्श कर रहा था ।

कुछ विलंबके पीछे किशनदास और मेवाडके दूसरे दूतगण हुलकरके डेरेमें पहुंचे । क्रोधित मरहटेने वह समाचारपत्र शीघ्रतासे किशनदासकी ओर फेंका और लाल आँखें करके कहने लगा " विश्वास घातक मेवाडवालोंने क्या अंतमें हमारे साथ इस प्रकारसे विश्वासकी रक्षा की ? क्या तुम सबके साथ इसी प्रकारसे विश्वासकी रक्षा किया करते हो ? विचार देखो कि तुम्हारे स्वामीके लिये मैंने अपने कुटुम्बियोंको छोडा, सेंधियाके क्रोधका कुछ डर न किया । आज फिरंगियोंके साथ घोर युद्धके समयमें समस्त हिंदू-जातिको एक होजाना चाहिये था; परन्तु तुम्हारे राणा साहब इसके विरुद्ध सबको

छोडकर फिरंगियोंके साथ संधि करनेको आगे बढे ? वह तो कहा करते थे कि हम दि-ल्लीकी अधीनताको स्वीकार नहीं करते; क्या उनके इस गर्वका यही परिणाम हुआ ? क्या तुम लोगोंसे इस प्रकारकी भलाई पानेको ही मैंने अम्बाजीको तुम्हारे विरुद्ध नहीं भेजा था " राणाके मंत्री किशनदास हुलकरको शांत करने की चेष्टा करने लगे परन्तु इतनेमें हुलकरका तात्या नामक मंत्री किशनदासको रोककर स्वामीसे कहने लगा "महाराज ! आपने इन रांगड लोगोंका व्यौहार अपनी आखोंसे देखा * यह आपके साथ सेंधियाका झगडा कराके दोनों राज्योंको नष्ट करेंगे इनके पक्षको छोडकर सेंधि-यासे मिलिये, सुरजीरावको दूर करके अम्बाजीको मेवाडका सूबेदार बनानेकी चेष्टा करिये नहीं तो मैं आपको छोड सेंधियाके पास जाकर उसको साथ ले मालवे चला जाऊंगा "

केवल भाऊ भास्करके अतिरिक्त और सब मंत्रियोंने तात्याकी रायको ठीक ठहराया। हुलकरने भी तात्याका परामर्श माना और सुरजीरावको बिदा करदिया और अँगरेजी सेनाका सामना करनेके लिये उत्तरकी ओरको चला। परन्तु अभाग्यके कारण उसका बल कम होता गया । सामना न करने पर भी उसने अंगरेजोंके क्रोधसे छुटकारा न पाया—रणदक्ष लार्ड लेकने पीछा करके उसको संधि करनेके लिये विवश किया, प्रसिद्ध व्यासानदीके किनारे लार्ड लेकके साथ हुलकरकी संधि स्था-पित हुई ।

मेवाड पर क्रोधित होनेसे भी हुलकरने राणाजीका कोई अमंगल नहीं किया; वरन मेवाडको छोडनेके समय राणा और राजस्थानको निरापद रखनेके लिये सेंधियासे कहता गया कि; "मैंने राणाजीके राज्यको अम्बाजीकी चढाईसे बेखटके रखनेकी प्रतिज्ञा कर ली है, कहीं ऐसा न हो कि मेरी प्रतिज्ञा टूट जाय । यदि इस अनुरोधको न मानेंगे तो आपको इसका उत्तरदायी होना पडेगा " भय भक्ति अथवा अनुरागके कारण सेंधियाने हुलकरके अनुरोधको कुछ दिनतक माना; परन्तु जब देखा कि हुलकर पर विपत्ति पडी है तब सब बातें भूल गया और मेवाडसे १६ लाख रुपया वसूल करने-के लिये शीघ्रतासे सदाशिव रावको भेजा, सदाशिवराव आहत मेवाडका रुधिर चूसनेके लिये जान व्याप्टिसृकी कवायद सिखाई हुई गोलंदाज पल्टन लेकर मेवाडकी ओरको चला, सन् १८०६ के जून मासमें यह सेना मेवाडकी ओरको बढी । सेंधियाने दो कार्योंका साधन करनेके लिये अपनी सेनाको मेवाडके विरुद्ध भेजा था। पहिला सो-लह लाख रुपयोंका वसूल करना । दूसरा, महाराज जयपुरकी सेनाको उदयपुरसे दूर करना। राणाकी बेटीके साथ जयपुरके राजाका विवाह निश्चय होनेसे दोनों ओरके समाचार और दान दहेज ले जानेके लिये कछवाहे राजकुमारकी सेना उस काल मेवाडमें ही थी।

---

* महाराष्ट्री लोग राजपूतोंको रांगडा नामसे पुकारा करते हैं। रांगडा शब्दका अर्थ प्रचंड है।

परन्तु अब उनको मेवाडमें नहीं रक्खा गया जैसे ही उन लोगोंने मेवाडको छोडा वैसे ही राणाके कुभाग्यने अपने चक्रके आगे बढाया।

भाग्यकी कठोर ताडनाके द्वारा उन्नतिके शिखरसे अवनतिके मैदानको पहुंच कर हत-भाग्य राणा भीमसिंह किसी प्रकार दुःख सुखसे अपने दिनोंको काट रहे थे; उनके पितृपुरुषोंका मान और गौरव समस्त ही चला गया, सौभाग्यरूपी सूर्यका प्रकाश लोप हो गया है;तो भी राणाजी अपनी आशाके भुलावेमें आकर पहिली बातोंका स्मरण करते हुए किसी प्रकारसे दिन व्यतीत कर रहे थे; परन्तु विधातासे यह भी न देखा गया। समस्त उपाय और अवलम्बनसे अलग रहकर केवल नाममात्रका राजसन्मान पाये हुए अपनी आनन्ददायी बेटी कृष्णकुमारीका मुख देखकर जीते थे; कठोर विधाताने इस कृष्णकुमारीको भी उठा लिया, राणाजीका समस्त आशा भरोसा लोप हुआ। आज स्नेहका सोत भी सूख गया। पीडाके ऊपर पीडा और दुर्भाग्यके ऊपर दुर्भाग्य उदय होने लगा। सर्वस्व खोकर और सब सुखोंसे अलग होकर भी वह जिस कृष्णकुमारीका मुखकमल देखकर जीते थे, अन्तमें उसके ही कारण घोर विपत्ति आ पहुंची। पहले ही कह आये हैं कि कृष्णकुमारीके साथ जयपुरके राजाका विवाह होना निश्चय हो चुका था और इस ही शुभ बन्धनको पूर्ण करनेके लिये जयपुरकी सेना उदयपुरको गई थी परन्तु नरवरके राजा मानसिंहने इस सम्बन्धके होनेमें विघ्न उत्पन्न कर दिया। जगत्-सिंहके साथ कृष्णकुमारीका विवाह न होने पावै इस कारण महाराजा मानसिंहने उदय-पुरको तीन हजार सेना भेज दी। मानसिंह स्वयं कृष्णकुमारीसे विवाह करना चाहता था। अपनी बात बढानेके लिये उसने कहला भेजा कि "राजकुमारी कृष्णाके साथ मारवाडके मृतक राजाका सम्बन्ध हुआ था, अतएव उसको मारवाडके वर्तमान राजासे किस कारण न विवाह देना चाहिये।" मानसिंहकी यह युक्ति अति विचित्र थी मानसिंहने यह भी कहा था कि कृष्णकुमारीका सम्बन्ध मारवाडके सिंहासनके साथ होना निश्चय हुआ था। उस सिंहासनपर चाहे जो कोई बैठा हो इस बातका यहां विचार नहीं करना चाहिये। वह सिंहासन जैसा पहिले था, वैसा ही अब है, फिर कृष्णकुमारी उस सिंहासनको किस कारणसे समर्पित नहीं की जायगी? अन्तमें उसने भय दिखाकर यह भी कहा कि "यदि राणा मेरी अभिलाषा पूर्ण न करके अम्बेरके जगत्सिंहसे कृष्णकुमारीका विवाह करेंगे, तो मैं किसी भांति भी उस विवाहको न होने दूंगा। जहांतक सामर्थ्य है उपद्रव करता रहूंगा।" कहते हैं कि मानसिंहने अपने सरदारोंसे यह असत्परामर्श प्राप्त की थी।उस समयमें चन्दावतलोगोंपर राजाकी कृपा-दृष्टि रहती थी। दुष्ट राठौर सरदारोंने अपना अभिप्राय सिद्ध करनेके लिये उनके सर-दार अजितसिंहको रुशवत दी और यह अनुरोध किया कि जगत्सिंहके साथ कृष्ण-कुमारीका विवाह न होने पावै।

ललनाललाम हेलेना*की अनुपम सुन्दरताने जिस प्रकार उसके स्वामी और शत्रुओंको सदाकी नींदमें सुला दिया था, वैसे ही सुरसुन्दरी कृष्णकुमारीके ललित लावण्यने भी उसके पिता और प्रेमियोंको सदाके लिये नष्ट कर दिया, फिर उस सुन्दरीके भी प्राण ले लिये। उसकी सुन्दरता ही उसका काल हो गया। कृष्णाके पानेकी अभिलाषासे मारवाडका राजा मानसिंह अम्बेरके राजापर अपनी सेना लेकर चढ धाया। महाराष्ट्री लोगोंने भी इस अवसरमें एक ओरका पक्ष अवलंबन करके इस झगडेको अत्यन्त ही बढा दिया। थोडे दिन हुए कि सेंधियाने महाराजा जयपुरसे कुछ धन मांगा था; जगत्‌सिंहने न दिया; इस ही कारणसे वह भी जगत्‌सिंहसे शत्रुता निकालनेके लिये चला और कृष्णकुमारीका विवाह जगत्‌सिंहके साथ न होनेका यत्न करने लगा और मारवाडके राजा मानसिंहसे मिल गया। उसने राणाजीसे कहला भेजा कि जयपुरकी सेनाको शीघ्र ही मेवाडसे निकाल दीजिये। सेंधियाको विश्वास था कि राणा मेरे कहनेको नहीं टाल सकेंगे। परन्तु वह विश्वास आज मिथ्या हो गया, राणाजीने उसके कहनेपर कुछ भी ध्यान न दिया। पीछे सेंधिया अपनी गोलन्दाज सेना लेकर मेवाडपर चढा। उसकी गतिको रोकनेके अभिप्रायमें राजा जगत्‌सिंहकी सेनाको साथ लेकर राणाजी आरावलीके प्रवेशमार्गमें खडे हो गये। वहां पर कुछ कालतक संग्राम हुआ। परन्तु आखिर कार राणा ही हारे और अपनी रक्षा करनेके लिये सेनाके साथ नगरको लौट आये। विजयी सेंधियाने आठ हजार सेना लेकर उनका पीछा किया और उदयपुरकी उपत्यकामें पहुँचकर नगरसे कुछ ही दूर पर अपनी छावनी डाल दी। राणा भीमसिंह बडे संकटमें पडे। अपने सरदारोंके साथ वह इस विपत्तिसे निस्तार पानेका उपाय करने लगे। अनेक तर्क वितर्क होनेके पश्चात् निश्चय हुआ कि जयपुरके महाराज जगत्‌सिंहसे कृष्णाका विवाह न होना ही ठीक है। यह विचार कर जयपुरकी सेनाको बिदा करदिया और दूसरा उपाय न देखकर सेंधियोंके लोभको पूर्ण करनेकी इच्छा बताई।

---

* इस लावण्यमयीको नायिका बनाकर ग्रीसदेशके महाकवि होमरने इलियड ग्रन्थको बनाया है। ग्रीस इतिहासके मतानुसार हेलेनाने जूपिटरके औरससे स्पार्टाकी रानी लीडरके गर्भसे जन्म लिया था। केष्टर और पोलक्स नामक इसके दो भ्राता थे। एथेनका महावीर थिसियस यौवन कालमें ही उसको हरण करके लेगया; परन्तु पोलक्स और केष्टरने उसके हाथसे अपनी बहनका उद्धार कर लिया। हेलनाकी अपूर्व सुन्दरताका वृत्तान्त ग्रीसराज्यमें चारों ओर फैल गया जिसको सुनकर उस देशके समस्त राजालोग विवाह करनेकी इच्छासे उस मनमोहिनीके घरपर आने लगे। अनन्तर मिजिलस नामक एक राजाके साथ उसका विवाह हुआ। विवाहके कुछ ही दिन पीछे ट्रपेका प्रसिद्ध राजकुमार हेलेनाको हरण करके ले गया। कहते हैं कि हेलेना इच्छापूर्वक उसके साथ गई थी। इस ही झगडेके कारणसे ट्रीजनकी लडाई हुई। इस युद्धके समाप्त होजानेपर हेलेना अपने पहिले स्वामी अभागे मिनिलसके पास गई। हेलेनाके वृत्तान्तको लेकर जो इलियड ग्रन्थ बनाया गया है, उसके साथ भगवान् बाल्मीकिजीकी रामायणमें बहुतसा मेल पाया जाता है।

सेंधिया एक महीने तक उदयपुरको घेरे रहा । उस ही समयमें भगवान् एकलिंगजीके पवित्र मन्दिरमें राणाजीके साथ उसका दरबार हुआ । *

मेवाडसे जयपुरवालोंके दूत जब अपमानके साथ दूर किये गये तब जयपुरके राजाको अत्यन्त क्रोध आया। उन्होंने जिस स्त्रीरत्नके रूप लावण्यपर मोहित होकर उसको अर्द्धांगिनी बनानेके लिये जो आशा मनमें पुष्ट की थी उसका क्या हुआ ? जब उसके सफल होनेका समय आया था तब राणाजीने उसको अपने हाथसे उखाड डाला;–जगत्सिंहके लिये क्या यह कम सन्तापकी बात थी; वह जितना ही राणाके व्यवहारका विचार करते थे उतना ही उनका हृदय दुःखित होता था, अन्तमें निश्चय कर लिया कि मेवाडवालोंसे इसका बदला लेंगे । तदनुसार एक बडी सेना ले मेवाड पर चढाई की, उसवक्त जितनी सेना तैयार की गई थी, अम्बेरराजके स्थापन समयसे लेकर वैसी सेना कभी भी नहीं तैयार हुई थी । इधर मारवाडके राजा मानसिंहने अपने शत्रुकी मेवाडपर चढाई सुनकर स्वयं उससे लडनेका विचार किया और अपनी सेनाको ले मेवाडकी ओर आया । लेकिन उसके राज्यमें इस समय भीतरी झगडे उत्पन्न हो गये कि जिन्होंने इस कार्यमें अत्यन्त विघ्न किया । सिंहासनके लिये ही यह झगडा पैदा हुआ था । राज्यकी इच्छा करनेवाले मनुष्योंने मारवाडके सामन्तोंको पृथक्२ श्रेणीमें विभक्त करदिया था । सहजसे इन झगडोंका निवारण नहीं हुआ,इनमें बहुत सा धन और रुधिर खर्च हुआ था; इस अवसरको उत्तम समझकर मरहटे लोग भी भीतर घुस गये और राज्यके बलको बहुतायतसे घटा दिया । जातिका विवाद ही राज्यके लिये अनर्थका प्रधान कारण है । मारवाड बहुत दिनसे इस विवादकी रंगभूमि हो रहा था । इन झगडोंसे कभी किसीका भला हुआ और किसीका बुरा । मानसिंह

---

* यहांपर सेंधियाने अपना भारीपन दिखलानेके लिये अंगरेजी एलचीको मय उसकी फौजके न्योता दिया था । दरबारमें सूर्यवंशी बाप्पारावलके वंशवाले और उनके पुत्रोंके राजलक्षणोंके साथ किसानोंके कुलमें पैदा हुए मरहटोंके अस्वाभाविक राजलक्षणोंकी पृथकता भलीभांतिसे दिखलाई देती थी । सेंधियाके बडे बूढे हल चलाया करते थे इस समय वह इन्हीं बडे बूढोंके आशीर्वादसे हिन्दोस्तानका एक प्रसिद्ध राजा था । किसानोंके कुलमें जन्म लेकर वह सदा ही यह इच्छा करता था कि मैं सूर्यवंशके राजाओंका सिंहासन लूं । दरबारके समय उदयपुरके महल दुमहलोंको और फुलवाडियोंको जिस वक्त उसने देखा तब उसकी यह इच्छा दूनी बढ गई । बहुतसे लोगोंका यह अनुमान है कि जयपुरका राजा सेंधियाको कर देनेमें असम्मत हुआ था इस लिये उसने उनके राज्यमें आक्रमण नहीं किया, वरन इसका कारण कुछ और ही था;दुराचारी सेंधिया कृष्णकुमारीके साथ विवाह करनेकी इच्छा रखता था । इसग्रंथके लिखनेवाले टाडसाहब भी इस दरबारमें मौजूद थे । सूर्यवंशदीपक राणा भीमसिंहका तेजस्वी आकार और शोचनीय दुरवस्था देखकर वह अत्यन्त दुःखी हुये थे, परन्तु अधिक कातर न होकर उनके दुःख दूर करनेका उपाय करने लगे । राणाजीकी सहाय करनेकी इच्छा टाडसाहबके हृदयमें इतनी बलवती हो गई थी कि वह स्वजातीय विजातीय भूलकर इस कार्यको सिद्ध करनेमें तैयार हुये थे तथा इसीकी चेष्टामें अपने प्राण दे दिये; अनन्तर अपने महान व्रतको साधन करके भारतवर्षमें अनन्त कृतज्ञताके पात्र हुए ।

इन्हींकी सहायतासे मारवाडके सिंहासनपर बैठा था । उसने समझ लिया था कि विना विवादकी सहायताके अपना अभिप्राय सिद्ध न होगा;इसी कारण सेना और सामन्तोंमें ऐक्यता फैलानेकी चेष्टा उसने नहीं की थी ।

मानसिंह जगतूसिंहसे लडनेको चला । इतने दिनतक जो लोग सतानेसे दुःखी हो गये थे अब उन्होंने अवसर पाकर शत्रुओंकी तरफदारी की, और मेवाडकी दुर्नीतिका अनुसरण करके एक कल्पित राजाको अपना सरदार बनाकर कार्य सिद्धि करनेको आगे बढे । उस कल्पित राजाकी प्रचण्ड पताका जयपुरके राजाकी विशाल फौजके बीचमें उडी, महाराज जयपुर एक लाख २० हजार सेना लेकर चढे थे,मानसिंहके पास इनसे आधी सेना थी,मारवाड और अम्बेरके पुरुवुतसर नामक स्थानमें दोनों सेनाओंका सामना हुआ । जिस उत्साहके साथ संग्राम आरंभ हुआ था उससे ज्ञात होता था कि घोर रण होगा परन्तु वह न हुआ, कारण कि कुछ देरतक युद्ध होनेके पश्चात् मानसिंहके बहुतसे सरदार कल्पित राजाकी तरफ चले गये । मानसिंहकी आशा लोप होगई;जिनके ऊपर विश्वास करके संग्राममें आया था, अन्तमें वही लोग छोडकर चले गये यह क्या साधारण दुःखकी बात है ? इस दुःखसे दुःखी होकर मानसिंह स्वयं ही अपनी गर्द-नपर तलवार चलानेको तैयार हुआ । परन्तु इसी समयमें उन सरदारोंने जो अबतक इसकी ओर थे, हाथसे तलवार छीन ली और उसको अपने साथ संग्रामभूमिसे अलग ले गये। परन्तु इससे भी निस्तार न मिला,शत्रुगण पीछा करते हुए राजधानीके सिंहद्वा-रपर पहुंचे । परन्तु मानसिंहके सामंतोंने नगरका द्वार बंद करके शत्रुओंको उसमें न घुसने दिया। वहांसे हटकर शत्रुओंने जोधपुरको घेरा । यहां छः मासतक घोर युद्ध हुआ। नगरवासीगण छःमहीने तक अत्यंत उत्साहके साथ शत्रुओंका सामना करते रहे। फिर अत्यंत निस्तेज और हीन हो गये, जोधपुर शत्रुओंके हाथमें गया, खूब लूट खसोट मची । परन्तु शत्रुओंके दलमें जातीयताके मानने उत्पन्न होकर उन सबके परिश्रमको व्यर्थ कर दिया । कछवाहे राजपूतोंमें यह भाव इतनी शीघ्रतासे फैला कि एक २ दल एक २ तरफको तित्तर वित्तर हो कर चला गया । इस तरफ राठौरगण समय पाकर उन दलोंपर चढे और बहुतोंका संहार करडाला ।

तत्पश्चात् महाराज जगतूसिंह प्राणभयसे रणभूमिको छोडकर भगे उनकी समस्त तैय्यारियां व्यर्थ हो गईं । उन्होंने लूट खसोटकी समस्त वस्तुएं इस डरसे कि हमपर कोई चढ न आवे जयपुरको प्रथमसे ही भेज दीं । परन्तु समस्त सामग्रीको जयपुरमें पहुंचनेसे पहिले ही मार्गके मध्य राठौर सरदारोंने लूट लिया, यह वही सरदार थे कि जो संग्रामके समय राठौरोंका पक्ष छोडकर जयपुरवालोंकी तरफ चले आये थे; परन्तु जन्मभूमिका अनुराग जो उनके मनमें था तिलभर भी नहीं घटा। इस समय देशकी दुर्गति देखकर उनके ज्ञाननेत्र खुल गये; वह समझ गये कि हमारे कायरपनसे ही मार-वाडके महाराजकी यह दुर्दशा हुई है। अगर हम लोग अम्बेरवालोंकी तरफ न चले आते तो कछवाहे राजपूतलोग राठौरोंके किलेको कैसे लूटते । अतएव कछवाहोंका लूटा हुआ

समस्त द्रव्य इन सरदारोंकी भीरुताका कलंकित नमूना था । इस समय उस कलंकित नमूनेका जयपुरमें जाना उनसे न सहा गया और इसी कारणसे महाराज जयपुरकी भेजी हुई द्रव्यराशिको मार्गमें ही लूटा ।

जगत्सिंह जिस बडी सेनाको लेकर मेवाडभूमिपर चढा था वह छिन्न भिन्न हो गई । अति कष्टसे वह अपने प्राण लेकर मारवाडके भीतर होता हुआ अपने नगरको भागा; जगत्सिंह और उसकी सेनाकी जो दुर्दशा हुई उसका बखान नहीं किया जा सकता । बुरी घडीमें वह कृष्णकुमारीके प्रेमका प्यासा हुआ था;बुरा समय था कि जब उसने मानसिंहपर चढाई की । अपने कुकर्मका फल बहुत दिनतक उसको भोगना पडा । अपने नगरमें पहुंचकर भी वह सुखी नहीं हो सका, पराजित होकर अनेक कष्ट पानेसे उसकी सेना अत्यन्त अधीर हो गई थी; तिसपर वेतन न मिलनेसे उसका दुःख और भी बढ गया था । वेतन पानेकी आशासे बहुत दिनतक वह सेना जयपुरमें रही कि जहां उसको अत्यन्त कष्ट प्राप्त हुआ।उन सिपाहियोंकी चिताभस्म और उनके घोडोंकी हड्डियां वहुत दिनोंतक जयपुरकी चहारदिवारीके निकट पडी हुई थीं,—शोभायमान जयपुरने वहुत दिनोंके लिये श्मशानभूमिका रूप धारण किया था । * भगवानकी क्या विचित्र लीला है;—भाग्यतरङ्गका कैसा अद्भुत परिवर्तन है; जो मानसिंह अपने सामन्त और सरदारोंके द्वारा त्यागा जाकर दुर्दशाके शिखरपर पहुंच चुका था आज वही समस्त विपत्ति और सङ्कटोंसे छुटकारा पाकर राजकार्य करने लगा । उसके शत्रुओंका नाश हो गया । गया हुआ गौरव पुनः प्राप्त हुआ । इस विषयमें उसको अमीरखाँनामक एक दुर्द्धर्ष पठानकी सहायता मिली थी । भारतवर्षमें जितने पाखण्डी मुसलमानोंको आश्रय प्राप्त हुआ है;-जिनकी कलंकमयी नामावली इतिहासके पवित्र पत्रोंका कलंकित कर रही है, अमीरखाँ उन सबमें प्रधान था । इससे पहिले यह अमीरखाँ मानसिंहका शत्रु होकर कल्पित राजाकी तरफदारी करने लगा परन्तु पश्चात् लोभके वश हो कर यह राक्षस कल्पित राजाको छोड मानसिंहकी ओर जा मिला । जिस कल्पित राजाने इतने दिनोंतक अत्यन्त आदर मानसे उसको टिकाया था अब यह पापी उसका ही नाश करनेको तैयार होने लगा । कल्पित राजा और उसके सेवकोंका संहार करनेकी इच्छासे अमीरखांने उससे मिलना चाहा और एक मसजिदके भीतर दोनोंमें मित्रताका वचन हुआ । अभागा कल्पित राजा अमीरखांके कपटको नहीं जान सका,बरन अमीरखांके अपनी ओर चले आनेसे बहुत ही प्रसन्न हुआ । तथा उसकी कपट मित्रताईको ईश्वरानुग्रह समझकर मन ही मनमें भगवानका स्मरण करने लगा । उसने अपने डेरोंमें नाच गाना आरम्भ करा दिया । जिस समय नाचना गाना हो रहा था उस ही समय दुष्ट अमीरखांने सेनासहित उनके ऊपर चढाई करके डेरोंकी रस्सियां काट डालीं, और वहीं पर घेरकर सबको गोलियोंसे मार डाला ।

* टाड्साहबने अपनी आंखोंसे इस शोचनीय घटनाको देखा था । जो आदमी इस कार्यमें शामिल थे उनसे बात चीत भी हुई थी । सन् १८०८ ई० के जनवरीमासमें जयपुरके भीतर होकर जानेके समय टाडसाहबने इस नगरके रेतीले मैदानमें उक्त युद्धके ३१४ चिह्न देखे थे ।

राजस्थानकी रङ्गभूमिमें इस भांतिसे यह वियोगान्त नाटक खेला गया। राजपूत-जातिके सर्वनाशकारी कपटजालका आज अन्त हो गया; परन्तु इसके बादको जो एक दूसरा शोकोद्दीपक कार्य्य हुआ उसको सुनकर पाखण्डियोंका हृदय भी फट जाता है। शिशोदिया कुलकी लक्ष्मी राजस्थानकी फूली हुई कमलिनी श्रीमती कृष्णकुमारीने आततायी और विश्वासघातक तथा पाखण्डियोंके लिये अपने पवित्र प्राणोंको दे दिया! मारवाड और अम्बेरके बीचका संग्राम एक प्रकारसे थम गया था परन्तु उन दोनों राजाओंमेंसे कृष्णाकी आशाको कोई भी नहीं छोड सका। दोनोंमें शत्रुता जागती रही पीछे उस शत्रुतासे जो आग लगी वह सहजसे नहीं बुझ सकी थी; उसको बुझानेके लिये सुकुमारी बालिका कृष्णाके पवित्र रुधिरका प्रयोजन हुआ था। जिस नरपिशाच अमीरखाँने कल्पित राजाका नाश किया इस घोर दुष्कर्मको भी उसने ही कराया था;—स्वर्गीय बालाके प्राणोंका पवित्र दीपक इसी दुष्टने बुझाया था। अभागे राणा भीम अमीरखाँके हाथकी कठपुतली थे; स्वयं उनमें कुछ भी सामर्थ्य न थी। पवित्र शिशोदियाकुलमें जन्म लेकर भी वह अत्यन्त हीन और कायर हो गये थे। यदि कायर न होते तो छातीपर पत्थर बांधकर उस निरपराधा सरला कृष्णकुमारीके प्राण लेनेकी सम्मति न देते! नहीं तो प्रजाके सुख दुःखका कुछ भी विचार न करते? मेवाडकी आनन्ददायिनी कृष्णाको संहार करनेकी कैसे आज्ञा देते। यदि भीमसिंहको शिशोदिया कुलका अयोग्य संतान,—बाप्पारावलका अयोग्य वंशधर और राजपूतोंका अयोग्य राजा कहा जाय तो ठीक ही होगा। पाठकगण! यदि उस सुन्दरी कृष्णकुमारीके लिये दो बूँद आंसू डालनेकी इच्छा हो, यदि उसकी अभागिनी माताके हृदयविदारी रोनेके साथ हृदय मिलाकर रोनेकी वासना हो, यदि पराये दुःखसे स्वर्गीय सुंदरताके अकाल और अयोग्य विनाशसे देवताके शोचनीय अपमानमें सहानुभूति प्रकाश करना अच्छा जानते हो तो चलिये एक बार उस उदयपुरके मैदानमें हो आवें कि जिसकी मुसकान एक समय जगत् प्रसिद्ध थी; चलिये उदयपुरनिवासियोंके साथ एकबार हृदयका तार मिलाकर कृष्णकुमारीके लिये हाहाकार कर लें।

कृष्णकुमारी सोलह वर्षकी अनुपम अवस्थाको पहुंच चुकी है। युवावस्थाकी समस्त सुंदरताने उसके अंगमें बास कर लिया है। माता पिता दोनों ही ऊंचे कुलमें उत्पन्न हुये हैं। जिन प्राचीन सूर्यकुलके राजाओंने बहुत समयतक अनहलवाडा पट्टनमें राज्य किया था, कृष्णाकी माताका जन्म उसी प्राचीन और पवित्र कुलसे था। कृष्णकुमारीने अपने वंशके समान ही ऊंचे गुण पाये थे। इसी कारणसे "राजस्थानकी कमलिनी" के नामसे विख्यात थी। परन्तु भारत अपने दुर्भाग्यसे उस देवबालाकी अनुपम सुन्दरता तथा लावण्यराशिको देखकर अपने नेत्र तृप्त नहीं कर सका, उस कमलिनीके स्वर्गीय सौरभकी सुगन्ध प्राप्त नहीं करसका। जिस समय उस अनुपम सुन्दरताका प्रगट होना आरम्भ हुआ था, उसी समय वह कल्पवृक्षका सुमन टूटकर अनन्त कालके जलमें मिल गया। इस संसारमें कृष्णाके समान सर्वांगसुन्दरी और अभागिनी स्त्रियें दो

ही चार जन्मी हैं; ऊंचे राजकुलमें जन्म लेकर ऐसे असहनीय कष्टको दो चार ही स्त्रियोंने सहा है और जन्मभूमिके लिये उस प्रकारकी पीडामयी मृत्युको आलिंगन करते जगत्में दो चार ही स्त्रियोंने अपने प्राणोंको बलिहार किया है अथवा विश्वासघातीके कपटजालमें थोडी ही वीरबाला इस प्रकारसे पीसी गई हैं। कृष्णाका अमूल्य जीवन वृथा ही गया। रोमकी रहनेवाली अभागिनी वर्जिनियाने भी * निराश्रय हो पिताकी छूरीकी नोकपर अपने हृदयको रख दिया था और ग्रीसकी सुन्दरी इफीजिनिया × ने भी खम्भेपर अपने प्राणोंको न्यौछावर किया था। परन्तु इनके अभागे कुटुम्बियोंने इनके पवित्र जीवनके बदलेमें भलीभांतिसे शांति पाई थी। विचार कर देखनेसे यद्यपि पवित्रहृदया सुन्दरी कृष्णाके समान ललना, यूरोपमें नहीं देखी जाती; तो भी विशेष मिलान करके देखनेसे उसकी असीम सुन्दरता, अनुपम गुणराशि, और कठोर अभाग्यके साथ उस देशकी दो स्त्रियोंका किसी २ अंशमें मिलान हो सकता है। कृष्णाके उस शोकोद्दीपक मरण वृत्तांतको श्रवण करनेसे छाती फटती है और आंसू रोकेसे नहीं रुकते। जिस दिन वह सती, सीमन्तिनी प्राण बलिहार करनेका प्रकाशमान उदाहरण रखकर इस संसारसे बिदा ले गई; बहुत समय हुआ कि वह दिन कालरूपी समुद्रकी पिछली तलीमें लीन हो गया; परन्तु मेवाडके रहनेवाले आजतक कृष्णाकी हृदयविदारक मृत्युको नहीं भूल सके हैं; अब भी ऐसे राजपूत हैं जो कृष्णाकी याद करके आंसू बहाया करते हैं। कृष्णाकी शोचनीय मृत्युने मेवाडवासियोंके हृदयपर जो प्रहार किया है उसका पक्का प्रमाण आज भी उनके अधमरे चेहरेकी चेष्टापर देखा जाता है। यदि उन लोगोंसे आज भी कोई कृष्णाका वृत्तान्त पूछने लगे तो उसको वर्णन करते हुए वह रोया करते हैं।

दुष्ट अमीरखाँ विश्वासघातकताके द्वारा कल्पित राठौर राजाका नाश करके उदयपुरमें आया। उसने जो भयंकर कार्य किया उस कार्यने सदाके लिये उसके नामपर कलंक लगाया, सम्पूर्ण भारतवर्षके लोग उसको विश्वासघाती और क्रूरकर्मकारी जानते थे। इस पापीके नामको सुनते ही मनुष्य कानोंमें अंगुली दिया करते थे। परन्तु आश्चर्य यह

---

* श्रीमती वर्जिनिया रोमके विख्यात महारथी विर्जूसियस वर्जिनियसकी बेटी थी। कहते हैं कि एपियस क्लडियस नामक एक दुष्टने वर्जिनियाको माता पिताके निकटसे बलपूर्वक हरण करनेकी चेष्टा की थी। अपनी प्यारी बेटीके सतीत्व और उसके सन्मानके बचनेका कोई उपाय न देखकर विर्जूसियसने सबके सामने फोरमक्षेत्रमें उसको अपने हाथसे मार डाला। कहते हैं कि यह घटना सन् ई० से ४४९ वर्ष पहिले हुई थी।

× इफीजिनिया ग्रीसके महावीर एगेमेमननकी बेटी थी। जब अलिसनामक द्वीपमें ग्रीसवालोंका जंगी जहाज रुक गया तब डियाना देवीकी प्रसन्नता प्राप्त करनेके लिये एगेमेमननने अपनी बेटीको उसके सामने बलि दिया था। परन्तु ग्रीसवालोंके पुराणोंको पढनेसे जाना जाता है कि देवी डियानाने इफीजिनियाको बलि नहीं देने दिया तथा उसको हरण करके ले गई और टरिस नगरके मंदिरमें उसको अपनी योगिनी बनाकर रक्खा।

था कि चन्द्रावतोंके सरदार अजितसिंहने उसको आदर मानसे ग्रहण किया, अजितसिंह स्वभावसे ही शान्त और शिष्ट था। बाहरका आडम्बर इसमें किंचित् भी नहीं पाया जाता था, यह सन्मानको अच्छा नहीं समझता था। परन्तु ऊंचे पद गौरवसे प्रेम रखता था। धर्मानुराग इसके हृदयमें प्रबल था। हृदयमें धर्मभावके प्रबल होनेसे मनुष्यमें हिंसा, द्वेष, स्वार्थपरता, दुराकांक्षा आदि अवगुण उदय नहीं होते, परन्तु अजितसिंह इस प्रकारका नहीं था। उसके हृदयमें जो दुराकांक्षा धीरे २ बढ रही थी, धर्मभाव उसके रोकनेको समर्थ नहीं हुआ। अपनी उस दुराकांक्षाको साधन करनेके लिये अजितसिंह संसारके उजाड करनेमें भी नहीं हिचकिचाता। फिर धर्मभाव ऐसी कुप्रवृत्तिको किस प्रकारसे रोक सकता है? अजितका वह धर्मभाव अत्यन्त विचित्र और अद्भुत था। दुष्ट अमीरखाँको आदरमानके साथ ग्रहण करके अजितसिंह उससे कृष्णाके विषयका परामर्श करने लगा। दुराचारी पठानने साफ २ कह दिया कि "या तो राजकुमारी मानसिंहसे विवाह करे और नहीं तो अपने प्राण देकर राज्यमें शान्ति फैलावे। इसके सिवाय दूसरा उपाय नहीं है, इसके अतिरिक्त दूसरा उपाय करनेसे राणाजी विपत्तिमें पडेंगे।" राणा भीमसिंहने इस समाचारको सुना। हृदय व्याकुल होने लगा, प्राणप्यारी बेटीकी अवस्था विचारते २ वह अत्यन्त अधीर होगये। उनसे अपनी और कृष्णाकी रक्षाका कोई भी उपाय नहीं विचारा गया वह समझ गए कि दुराचारी अमीरखाँका परामर्श न मान लेनेसे उदयपुरका सत्यानाश हो जायगा। एक ओर से स्वर्गीय सुकुमार संतानस्नेह उनके रोम २ में अमृतकी वर्षा करने लगा, दूसरी ओरसे अमीरखाँका कठोर उपाय मेवाडकी रक्षाका होनहार कठोर चित्र सामने लाकर उस सुकुमारहृदयको कठोर करने लगा। एक साथ ही कोमल और कठोर वृत्तियोंसे मथे जानेके कारण राणाजीका हृदय पैशाचिक पीडासे दुःखित होने लगा। उनसे स्थिर न रहा गया और उन्मत्तके समान होगये। क्रमानुसार सुकुमार संतानके स्नेहको पानी देकर उन्होंने अपने हृदयको पत्थर बनाया और मेवाडकी रक्षाका दूसरा उपाय न देखकर कृष्णाके मरणको स्वीकार किया।

कृष्णकुमारी मृतक होगी;—राजस्थानकी फूली हुई कमलिनी ललनाललाम राजकुमारी कृष्णकुमारी मेवाडभूमिकी रक्षाके लिये बलि दी जायगी! परन्तु कौन उसको उत्सर्ग करेगा? संसारमें ऐसा कौनसा पाखंडी है, मनुष्योंमें ऐसा कौनसा राक्षस है जो हृदयमें पत्थर बांधकर अपने हाथसे उस सुकुमारीके कमलके समान कोमल कलेजेमें तीखी छूरी चलावेगा? ऐसा कौन है जो उस शान्त विकच नलिनीको नखाघातसे छिन्नभिन्न करेगा? इस समस्याकी मीमांसा करनेके लिये राणाजी रनिवासमें ही कई एक सरदार और कुटुम्बियोंको बुलाकर अनेक प्रकारके तर्क वितर्क करने लगे। बहुतसा वाद विवाद होनेपर निश्चय हुआ कि इस क्रूर कार्यको करनेके लिये किसी पुरुषको ही नियत करना चाहिये। यदि पुरुषसे यह कार्य न हो सके तो कोई स्त्री नियत होगी। भारतवर्षीय राजाओंके रनिवासको यदि एक २ स्वतंत्र राज्य भी कहा जाय तो ठीक ही है;

कारण कि रनिवासकी बातोंमें बाहरकी बातोंका कुछ दखल ही नहीं रहता इस बातका अनुमान करना कठिन है कि उस रनिवासकी निबिड छायाके भीतर कितने अभागोंकी दुर्भाग्यरूपी गांठ लगी रहती है। उसमें धीरे २ प्रजाके सुख दुःखका बीज अंकुरित हुआ करता है। जिनके हाथमें उस बीजके पालन पोषणका भार रहता है, उसके अतिरिक्त और कोई भी उसे नहीं देख सकता। आज मेवाडके दुर्भाग्यसे राणाजीके विशाल रनिवासकी एक सूनी कक्षामें अभागिनी कृष्णकुमारीके भाग्यकी कठोर लिखाई लिखी जाने लगी। प्रथम तो मनुष्य ही उस कार्यके करनेपर नियत होना निश्चय हुआ! शिशोदीयकुलके महाराज दौलतसिंह * उस समय रनिवासमें थे राणाजी परमकुटुम्बी होनेके कारण सबसे पहिले यही नियत हुए। सरला कृष्णकुमारीके हृदय-रुधिरसे उदयपुरका सन्मान बचानेके लिये सबसे पहिले वही निर्वाचित हुए। परन्तु इस कठोर कार्यका वृत्तान्त श्रवण करते ही उन्होंने भय, विस्मय और घृणासे दुःखित हो चिल्लाकर कहा। "जिस रसनासे ऐसा कठोर वाक्य निकला है उसको सौ बार धिक्कार है। महाराज! मेरे ऐसा कहनेसे राजभक्तिमें किंचित् भी अन्तर नहीं पड सकता; परन्तु यदि ऐसे पिशाचके समान कार्य करनेसे राजभक्ति समझी जाय तो वह राजभक्ति पातालमें समाजाय।" महाराज दौलतसिंह जब छूरी लेनेमें असम्मत हुए तब जवानदासको यह घोर कृत्य सौंपा गया। जवानदास भीमसिंहके स्वर्गवासी पिताकी उपपत्नीसे उत्पन्न हुआ था। वेश्यागर्भ संभूत होनेके कारणसे हो अथवा और किसी कारणसे हो, उसका हृदय कठोर था। घोर कार्यको श्रवण करनेपर उसका पत्थरसा हृदय एक पलभरको भी नहीं कांपा। वह हँसता हुआ उस कठोर कार्यके करनेको तैयार हो गया। परन्तु जिस समय वह लावण्यमयी प्रस्फुटित कमलके समान मुखमण्डलको कुछेक नवाय उसके सन्मुख आनकर खडी हो गई; उस काल जवानदासका सर्वांग कांपने लगा, हाथसे छूरी गिर पडी। शोक और दुःखसे उसका हृदय व्याकुल होने लगा, वह अत्यन्त दीन होकर वहांसे चला गया। धीरे २ राणाके इस धूर्त्तपनकी गन्ध सब रनिवासमें फैल गई। जवानसिंहके हाथमें छूरी देखते ही कृष्णाकी माताने कहा "यह छूरी मेरी बेटीका प्राण लेनेके लिये यहां आई थी।" यह कहकर मूर्छित हो गई। सहेलियोंकी सेवासे रानीकी मूर्च्छा गई, परन्तु शोकने उनको उद्भ्रान्त बना डाला। पृथ्वीसे उठते ही "हा कृष्णा! हा कृष्णा!" इत्यादि हृदय विदारी शब्द कहती हुई अपनी प्राणप्यारी बेटीको गोदमें छिपानेका यत्न करने लगीं। उन्होंने घातकको सहस्रों दुर्वचन कहे और कभी उसके चरणोंमें गिरकर बेटीके प्राणोंकी भिक्षा चाही कभी कृष्णाको साथ लेकर अभिमान सहित दूसरे गृहमें चली गईं। वह विचारी कहां जायँगी? कहां आश्रय लेंगी? किस उपायसे कृष्णकुमारीके प्राणोंकी

---

* टाड साहब कहते हैं कि "मैं दौलतसिंहको भलीभांति जानता था। वह सरल और उत्तम स्वभावके थे।"

रक्षा करेंगी ? महाराणा भीमसिंहने जो कृष्णाके प्राण लेनेकी आज्ञा दी है; फिर महारानी किस भांतिसे उस आज्ञाका पालन होना रोक देंगी ?

महारानीजी सब ओरसे निरास हो गयीं। निराशाके हृदयभेदी रोदनसे सारा रानेवास हाहाकार करने लगा। समस्त नरनारी शिर पीटने लगे। परन्तु कोई क्या करसकता था। आज विधाताकी "भाललिखी लिपि को सके टार" के अनुसार अभागिनी कृष्णकुमारीका काल पूर्ण होगा। क्या उसके स्वर्गीय सुकुमार प्राण कठोर छूरीसे बाहर निकाले जायँगे ? क्या वह कोमल कमल किसी शस्त्रसे टुकडे २ किया जायगा ? कभी नहीं ! जिस लोहके आघातसे कठोर पत्थरके भी टुकडे हो जाते हैं, आज वही लोहा एक अबलाका हृदय वेधनेमें हार खा गया। आज उस स्वर्गीय दीपकको निर्वाण करनेके लिये विषकी आवश्यकता हुई। एक स्त्रीने वह विष तैयार करके राणाजी के नामसे कृष्णाके हाथमें दिया। सुकुमारी कृष्णाने सरल और धीरभावसे उस विषको अपने हाथमें ले लिया, उसके शिरका एक केशतक नहीं कांपा। न कोई लम्बी श्वास ली। भगवानसे अपने पिताके दीर्घ जीवन और संपत्तिवृद्धिकी प्रार्थना करके अचल होकर उस विषको पी गई। महारानीजी वहीं थीं, वह राणाजीको बारंबार शाप देने लगीं, उनको मूर्च्छा आने लगी। परन्तु सरला सुकुमारी कृष्णाके बडे २ नेत्रोंमें आंसूकी एक बूंद भी नहीं पाई गई ! वह अपने दुपट्टेके आंचलसे माताके आंसू पोंछकर धीर और नम्रभावसे बोली—"मा तुम क्यों रोती हो मैं तो संसारकी पीडासे छुटकारा पाती हूं फिर तुम शोक किस कारणसे करती हो ? मैं मरनेसे नहीं डरती और क्यों डरूं ? मैंने क्या तुम्हारे गर्भसे जन्म नहीं लिया है ? क्या मैं तुम्हारी बेटी नहीं हूं ? तब मैं मृत्युका भय क्यों करूँगी ? मैया जब कि मैंने राजपूतकुलमें स्त्री होकर जन्म लिया है तब मैंने निश्चय जान लिया था कि एक दिन अपघात मृत्यु से मरना ही पडेगा। अभागिनी राजपूत कन्या जिस घडी माताके गर्भसे उत्पन्न होती है उस घडीमें ही उसका मरण * निश्चय है; तो भी मैं इतने दिन तक बच गई, इसके लिये अपने पिताजीको बारम्बार धन्यवाद देती हूं।" प्राणोंका नाश करनेवाला विष आज कृष्णकुमारीके प्राणोंसे पराजित हुआ। एक प्याला जहर भी उसका कुछ न करसका। अतएव दूसरा प्याला तैयार किया गया, कृष्णा उसको भी प्रसन्नतासे पी गई, इस विषने भी कृष्णाके प्राणोंपर दया की। अनंतर मानो मानवी सहन शीलताकी अंतिम परीक्षा करनेके लिये तीसरी बार विषका प्याला तैयार हुआ ! सुकुमारी कृष्णा उसको भी सरल स्वभावसे पान कर गई; एक पलभरके लिये भी उसका हाथ न कांपा उसकी आखोंमें आंसू की एक बूंद भी न देखी गई। इस बार भी विधाताने उन पाखण्डियोंका मनोरथ पूरा न होने दिया। तीसरी बार भी विषके प्यालेको व्यर्थ देखकर सबने अपने मनमें यह निश्चय किया कि जिस मोहिनी मायाने वरि-

* यहां पर राजपूतोंके बालकवधका घिनौना आचार सूचित किया है।

वर बाप्पारावलके जीवनकी रक्षा की थी आज उसी मायाने कृष्णकुमारीके शरीरमें प्रवेश किया, यह सोचसाचकर सभी चुप रहे। परन्तु अमीरखाँ और अजितसिंह यह दोनों नारकी चुप न रहे। जबतक उनका यह घिनौना कार्य पूरा न हुआ, जबतक उनकी पाशवी स्वार्थपरायणताको तृप्त करनेके लिये वह निरपराधिनी बाला अनन्त सेजपर न सोई तबतक उन दोनों दुष्टोंको किसी प्रकारसे आराम न मिला। बारम्बार पराजित होनेसे उनकी कठोरता और भी बढी। अनन्तर अफीम और कुसुम्बेको एक साथ मिला एकप्रकारका अति उग्र हालाहल तैयार किया। कृष्णकुमारी समझ गई कि यही पिछली बार है, अबकी बार मेरे प्राण सदाके लिये शरीरसे बाहर निकल जायँगे, अबकी बार संसारसे बिदा लेनी पडेगी। शांत और मुसकानसे उसके कुछेक अधर कांपे चौथा प्याला तैयार होकर आया; कृष्णकुमारीने हँसकर हाथमें लिया और "इससे शीघ्र मृत्यु आवे" यह कहकर शीघ्रतासे उसको पी गई। पाखण्डी और पिशाचोंका निठुर कार्य पूरा हुआ! सुवर्णकी प्रतिमा विसर्जन की गई। अभागे भीमसिंहकी सौभाग्य रंगभूमिपर गम्भीर परदा पड गया! उस विषके खाते ही शीघ्रतासे कृष्णकुमारीको नींद आई। वह महानिद्रा फिर न टूटी। कृष्णा नहीं जागी, उस अनन्त शयन करनेके समय निद्राके वेगसे जो उसकी भ्रमर निंदित आंखें बन्द हुईं उनको फिर किसीने खुलते हुये न देखा। कृष्णा फिर न उठी, पाखण्डियोंके दुराचारसे यौवनके आरम्भकालमें ही उस सुन्दरीको इस पापरूपी संसारसे अमरधामकी यात्रा करनी पडी। आज राजस्थानकी फुलवाडीका कल्पवृक्ष सूख गया, राजस्थानकी कमलिनी भस्म होगई; भारतका एक प्रकाशमान तारा सदाके लिये अपने स्थानसे टूट पडा।

कृष्णाके स्वर्गवासी होनेपर उसकी माता भी शरीरको छोड संसारसे मुहँ मोड स्वर्गको चली गई। जिस दिन गोदकी पाली हुई बेटी छातीके नीचेसे निकल गई उसी दिनसे महारानीजीने समस्त सुखोंको पानी दिया, सब प्रकारकी आशाको छोड और अन्न जलको त्याग कर अकेले घरमें शोक किया करती थीं, इस प्रकार कठोर क्लेश सहन करने पर थोडे ही समयमें उनकी प्राणवायु उड गई; थोडे ही दिनोंके बीचमें वह इस पृथ्वीको छोडकर प्राणप्यारी बेटीसे अनंत सुखके धाममें जा मिलीं!

कहते हैं कि दुराचारी अजितसिंह ही इस अनर्थका मूल कारण था। उस पापीने ही पठान अमीरखाँको इस प्रकारका कार्य करनेके लिये उकसाया था। अमीरखाँका भी हृदय पत्थरके समान कठोर था, परन्तु जब यह भयंकर कार्य पूरा हो गया और जिस समय यह वृत्तान्त अमीरखाँने सुना तब वह उस स्वदेशद्रोही पाखण्डी अजितको बारंबार धिक्कार कठोर स्वरसे कहने लगा "अरे दगाबाज! राजपूतोंके लायक क्या यही काम है? हट मेरे सामनेसे दूर हो; मैं तेरे मुखको नहीं देखना चाहता।" पाखण्डी अजितसिंहका, शक्तावत सरदार वीर, धीर, न्यायपरायण संग्रामसिंहने भी अत्यंत ही तिरस्कार किया थ; सत्य मार्गपर घूमते हुए यह सरदार अपने राजाका भी डर नहीं मानता था; अथवा शत्रुकी तीखी तलवारका भी कुछ ध्यान

नहीं करता था। कृष्णाके मरनेके चार दिन पीछे संग्रामसिंह राजधानीमें आया और अपने आनेकी सूचना विना ही दिये तीव्र वेगसे राणाके सामने आकर अति कठोर वाणीसे कहने लगा "हा कायर! शिशोदीयकुलके पवित्र और निर्मल मस्तकपर किसने धूल डाली? शिशोदियाकुलके पवित्र रुधिरको कि जो हजारों वर्षसे बहा चला जाता था आज किसने दूषित करादिया? विना दोषके सरला कृष्णाका संहार करनेसे आज शिशोदियाकुलको जो घोर पाप लगा है उस पापके फलसे निश्चय ही इसका नाश हो जायगा। आज मेवाडके इतिहासमें–और वीरवर बाप्पारावलके पवित्र कुलमें जिस गंभीर कलंककी स्याही लगी है वह किसीसे न छुटाई जायगी। अबसे कोई शिशोदिया वीर अपना शिर नहीं उठा सकेगा। हाय! विधाताने क्षत्रियोंके कुलको निर्मूल करनेकी पूरी प्रतिज्ञा कर ली है; आज उसके कठोर लेखसे क्षत्रियोंकी दुर्दशा निकट आन पहुंची है। आज बाप्पारावलका वंश लोप हुआ।" तेजस्वी संग्रामसिंहके इन कठोर वचनोंको सुनकर सारी राजसभा कांप गई। लाज, शोक और विषादसे राणा भीमसिंह हाथोंसे बदनको छिपाकर दीनभावसे आंसू बहाने लगे।

इसके उपरान्त पाखंडी अजितको ओर मुख फिराकर वज्रगंभीर वाणीसे कहा! "रे शिशोदीयकुल–कलंक! तुझमें राजपूतोंका रुधिर नहीं बहता है। तूने जिस प्रकार हमलोगोंको कलंक लगाकर दूषित किया, वैसे ही तेरे शिरपर खाक पडे। तू निःसन्तान रहकर मरे, तुझ पापीका नाम तेरे पापजीवनके साथ पृथ्वीसे लोप हो जाय। यह सर्वनाशकारी शीघ्रता किसके लिये थी? क्या पठानने राजधानीको दलित करदिया था? रनिवासकी पवित्रताको क्या उसने नष्ट करना चाहा था? अच्छा, यदि यह मान भी लियाजाय कि उसने ऐसा करनेकी इच्छा की थी, तब क्या तुमपर अपने बडे बूढोंके समान और यथार्थ राजपूतोंके समान प्राण देने नहीं आते थे? पहले वीरगणोंने क्या इस ही प्रकारके कार्योंको करके गौरवको पाया था? क्या हमारा वंश इस ही भांतिसे संसारमें विख्यात हुआ है? क्या इस ही प्रकारसे वह लोग राजाओंकी गतिको रोका करते थे? क्या तू चित्तौरके * शाखेकी बात भूल गया? परन्तु मैं किससे यह बातें कह रहा हूं? यदि तुम्हारी स्त्रियोंके सम्मानपर इस प्रकारसे विपत्ति आन पडती, यदि तुम लोग उनका संहार करके तलवार हाथमें ले शत्रुओंके सामने पहुंच जाते तो सदाके लिये तुम्हारा नाम अमर हो जाता और सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर बाप्पारावलके वंशकी अनंत विनाशसे रक्षा करता। परन्तु यह घिनौना और कायरपनका कार्य करके भी जीवित रहनेकी इच्छा करते हो? धिक्कार है! जिस शंकासे तुम्हारा हिया धडक रहा था; उस विपत्तिके आनेतक तो ठहरे होते। भय और कायरपनने तेरे समस्त गुणोंको दूर कर दिया है। नहीं तो किस कारणसे तू श्रीजी× के रुधिरको गिराता? यदि प्रतारणाकी सहायतासे अपनी रक्षा

* चित्तौरके ध्वंसको राजपूत लोग शाखे नामसे पुकारा करते हैं। अंगरेजीके "Sack" शब्दसे इस शब्दका मेल है।

× राणाजीका उपनाम है।

करनेको घृणाका कार्य न समझता तो किसी साधारण बलिसे भी यह कार्य चल जाता! परन्तु इस महान् राजपूत कुलका नाश शीघ्र ही होनेवाला है। ''

विश्वासघातक राजद्रोही संग्रामसिंहके तेजस्वी वचनोंका उत्तर नहीं दे सका, साहसी संग्रामसिंहको स्वर्ग सिधारे हुए बहुत दिन हुए। परन्तु मेवाडके होनहार आकाशकी ओर देखकर जो वाक्य उसने कहे थे, उनका अक्षर २ सत्य हुआ। राणाके सब मिलाकर ९५ लडका लडकी थे, उनमेंसे कृष्णकुमारीके सगे भाई जवानसिंहके अतिरिक्त और सब ही तेजस्वी संग्रामसिंहके उन भविष्यद्वचनोंको पूर्ण करनेके लिये इस संसारसे बिदा हो गये, इनके अतिरिक्त राणाकी और दो लडकियें थीं। इनमेंसे एक जैसलमेर और दूसरी बीकानेरके राजकुमारसे व्याही गई थी। परन्तु उनके गर्भमें जो कई एक पुत्र उत्पन्न हुये, भारतकी सनातन रीतिके अनुसार उन्होंने नानाके सिंहासनको नहीं पाया; राणाके बचे हुए पुत्रका नाम जवानसिंह था * इस पर ही राणा भीमसिंहका भरोसा था, इसी पुत्रके मुखको देखकर वह सब कष्ट और पीडाको भूल गये थे और समझे थे कि पुत्र गिह्लौटकुलकी रक्षा करेगा पितरोंको इसके द्वारा जल मिलता रहेगा, परन्तु दुर्भाग्यसे जवानसिंहके कोई पुत्र न हुआ।

स्वदेशकी दारुण दुरवस्था देखकर अत्यन्त पीडित हो वीर संग्रामसिंहने स्वदेशद्रोही अजितसिंहको जो शाप दिया था वह भली भांतिसे पूरा हुआ। इस शोचनीय कार्यके एक महीना बीतनेसे पहिले ही उसकी भार्य्या अपने दो पुत्रोंके साथ कालकवलित हुई, उसके समस्त सुख जाते रहे, संसारकी ओर माया ममता कुछ न रही। आज स्वार्थी अजितसिं संसारसे उदासीन हो गया, आज बुढापेकी संकुचित सीमापर पहुँचकर वह पाप छुडानेके लिये प्रार्थना करने लगा। जिन कुटिल कटाक्षोंसे दिन रात कपटता निकला करती थी आज वह सरल हो गये, जिस पापरसनासे दिनभर पराई निन्दा, पराई बदनामी, पराया द्वेष और पापमन्त्र निकला करता था, आज वही राम राम करने लगी और जो हाथ पापकार्योंके साधनमें सहायता किया करते थे अब उनमें नारायणके नामकी माला रहने लगी, परन्तु उसका हृदय आजतक भी पवित्र नहीं

---

* टाडसाहब कहते हैं ''विशूचिकारोगसे ग्रसित होकर एकबार जवानसिंह मृतकतुल्य होगये थे; आश्चर्यका विषय यह है कि उदयपुरमें सबसे पहिले जवानसिंहको यह रोग हुआ था, जिस समय राजकुमारको यह पीडा हुई उस समय घडीभरको भी मैं उनके बिछौनेके निकटसे अलग नहीं हुआ था, कुछ काल निद्रा लेनेके पीछे जिस समय उन्होंने आनन्दभरी आंखोंसे मुझको देखकर जो कृतज्ञता प्रकाश की थी, उसको मैं इस जन्ममें कभी नहीं भूल सकूंगा।'' जवानसिंहने इस करालरोगसे छुटकारा पाया, तदुपरांत कुमारका मुख्य मन्त्री शिरजी मेहता इस रोगमें पडा, इस ग्राससे उसको छुटकारा नहीं मिला, यह शिरजी मेहता कपट जाल फैलानेमें विशेष पारदर्शी था उसने मानो अम्बाजीकी पाठशालामें यह बातें सीखी थीं; टाडसाहब कहते हैं ''ऐसे चालचलनके आदमी जबतक मेवाडसे दूर न होंगे तबतक मेवाड़का किसी भांति मंगल नहीं होगा।

हुआ। एक समय जो हृदय हिंसा,द्वेष,स्वार्थपरता और विश्वासघातकताका आगार बन रहा था वह आजतक उस नारकीभावसे भली भांतिसे नहीं छूट सका है। वह अपने पापोंका प्रायश्चित्त करनेको मन्दिरमें घूम कर तप किया करता था; दीन, दरिद्र, और उपवासियोंको धन रत्न और अन्न देता था परन्तु उस पाशवी दुराकांक्षाको हृदयसे दूर न कर सका। पाठकगण ! इस समय उस पापीका नाम लेनेकी अधिक आवश्यकता नहीं है; आओ हम लोग संग्रामसिंहके साथ मिलकर कहें; कि "उसके शिरपर खाक पडे" दुराचारी अजितने मोहसे विमूढ होकर जो घोर पाप किये हैं उनसे छूटना कठिन है। वृथा ही सरला, अबला, बाला कृष्णकुमारीका प्राण नाश करनेपर जो कलङ्क उसको लगा यदि गंगाके समस्त पानीसे धोया जाय तो भी वह न धुल सकेगा।

पूर्वोक्त वार्त्ताके होनेपर अजितके मित्र पाखण्डी अमीरखाँने भारतवर्षके समस्त राजाओंसे मित्रता और सन्धि कर ली, वह अपने घोर पापोंके अपराधको अन्तिम जीवनके दान ध्यान आदि सत्कर्मोंसे भी दूर नहीं कर सका। लूट खसोट करके अमीरखाँ मनुष्योंके लिये डाकूके समान हो गया था, पीछे विश्वासघात करनेसे वह पिशाच गिना जाने लगा। परन्तु उस ही विश्वासघातकताने उसको सौभाग्यके ऊंचे शिखरपर पहुंचाया था,खड्गकी सहायतासे वह वहांपर कभी नहीं पहुँच सकता। शोक है ! कि यह संसार स्वार्थपरायणता और विश्वासघातकताकी ही साधन भूमि है ; नहीं तो पापी और पाखंडियोंकी वृद्धि किस कारणसे होती, परन्तु विश्वासघातकताका मूल कारण कौन था ? किसने उसकी प्रचंड स्वार्थपरतारूपी आगमें ईंधन डालकर विश्वासघात करनेके लिये उकसाया था ? अमीरखाँ स्वभावसे ही क्रूर,स्वार्थपर और विश्वासघातक था; परन्तु बृटिश गवर्नमेंट अपना अभिप्राय सिद्धि करनेके लिये यदि उसको लाभ न दिखाती तो अमीरखाँ ऐसा विश्वासघातकताका कार्य करता या नहीं इसमें भी संदेह ही है। अमीरखाँने हुल्करके विदेशीय प्रसिद्ध सामंतोंमें विशेष प्रतिष्ठा और धनकी प्राप्ति की थी; परन्तु बृटिश गवर्नमेंटने "मित्रभेद" नीतिका अवलम्बन करके उससे कहला भेजा कि "यदि तुम हुल्करका पक्ष छोड दोगे तो हम तुमको सिरौंज, टोंक, रामपुरा, और नीमबहेडा आदि स्थान दे देंगे और बहुतसी सम्पत्ति तथा जागीर भी दी जायगी,परन्तु तुम अपनी फौजको निरस्त्र कर दो।" बहुत सोच विचार कर अमीरखाँने इसमें सम्मति दी और भारतके उस समयके शासनकर्त्ता लार्ड हेस्टिंगससे अपने प्रभुके राज्यका तीसरा अंश उसने प्राप्त कर दिया। फिर अमीरखाँ सिरौंज, टोंक, रामपुरा,और नीमबहेडा इत्यादि पर्गनोंको पाकर बृटिशसिंहकी छायाके तले नव्वाब अमीरखाँ बन बैठा। अमीरखाँको महाराष्ट्रियोंकी ओरसे इस भांति अलग करके बृटिशगवर्नमेंटने राजपूतानेके जलते हुए हृदयपर शांतिरूपी जल छिडका था; अतएव भारतवर्षके लिये इसको भी मंगलकार्य ही समझना चाहिये।

कपटीकी कपटता और पाखण्डियोंके भयंकर अत्याचारसे नन्दनकाननके समान मेवाडभूमिकी जो दुरवस्था हो गई उसका विचार करनेसे भी हृदय फटता है। कष्टपर कष्ट झेलकर भी मेवाडभूमिको छुटकारा न मिला; अत्याचार पर अत्याचार सहते हुए जो घाव मेवाडभूमिके अंगमें हो गए थे, उसके ऊपर भी उसको दो भारी प्रहार सहने पडे । उनके लगनेसे मेवाडकी हड्डी पसलियें टूट गई और उस ही अवस्थामें बहुत दिन तक यह भूमि श्मशानके समान बनी रही । अनन्तर अंगरेज गवर्नमेंटने राणाजोके साथ सन्धि करके मेवाडवालोंको ढाँढस बँधाया ।

सन् १८०६ ई० के वसंतकालमें अंगरेजोंके दूतने श्मशानके समान मेवाडभूमिमें प्रवेश किया । मेवाडकी दुरवस्थाका शोचनीय चित्र उनके नेत्रोंके सामने दिखाई देने लगा । जो मेवाड एक समयमें राजस्थानका नन्दनकानन गिना जाता था; जिसके हरे २ खेतोंमें अनेक प्रकारके नाज लहराया करते थे, जिसके नगर गाँव और बस्तियोंमें दिनरात चुहल मची रहती थी आज उसके चारों ओर अगणित खँडहर और टूटे फाटे स्थान दिखाई देते हैं।जिधरको आँख फिराइये उस ही ओरको प्रकृतिकी शोचनीय और हृदयभेदी मूर्ति दिखाई देगी । कहींपर तो दो चार गांवोंका खेडा नजर आता है-कहीं-पर कोई नगर बिलकुल सूनासा पडा है; गृहमें गृहस्थ नहीं हैं,बाजारोंमें दूकानदार नहीं हैं-खेतोंमें किसान नहीं हैं,अन्नका नाम ही न पाया जाता । सब ही सूना पडा है;-जो कुछ है वह रुलानेवाला ही है । जहांपर एकबार भी महाराष्ट्रियोंका आगमन होता, वहांकी दुर्दशा शेष सीमाको पहुँच जाती और आठ पहरके भीतर ही वह सुन्दरसे सुन्दर स्थान शोकालय बनजाता था । जहांपर महाराष्ट्री सेना गई, वहींपर सबका विध्वंस किया । परन्तु सुखकी बात यह थी कि समस्त दुष्टोंनें अंतिम समयमें अपने २ पाप कर्मोंका फल भलीभांतिसे पाया था । अम्बाजीने मेवाडकी सम्पत्ति लूटी थी, परन्तु पश्चात् उसको वह सब ही लौटानी पडी थी । उसकी कठोरता और स्वार्थपरतासे जो मेवाडकी भारी हानि हुई थी, उसका प्रतिफल उसको भली भांतिसे प्राप्त हो गया था । जिस सेंधियासे उसके सौभाग्यका मार्ग साफ हो गया था,अम्बाजोने उसको ही निरादर करके ग्वालियरमें अपनी स्वाधीनताकी ध्वजा उडायी थी । इस कारण सेंधिया उससे घोर विद्वेष करने लगा । अम्बाजीको दंड देनेके लिये अवसर देखने लगा । फिर एक दिन उसको एक साधारण छोटेसे तम्बूमें कैद करके जलते हुए अंगारोंसे उसके हाथ पांवकी अंगुलियां जला दीं और उसका समस्त धन रत्न छीन लिया । सामने ही अपने समस्त धन रत्नका जाना लोभी अम्बाजी-से न देखा गया । सन्मुख ही एक छोटी विलायती छूरी रक्खी थी अभागेने उसको मार कर आत्महत्या करनी चाही । उसने छूरी मार ली, परन्तु अंगरेज दूतके साथ जो डाक्टर साहब थे उन्होंने तत्काल घावको सी दिया ।अम्बाजीके अचेत न होनेपर उसके खजानेकी ताली सहज से ही सेंधियाके हाथ आई;उस समय ५५ लाख रुपया सेंधियाको

अम्बाजीके खजानेसे प्राप्त हुआ था।सेंधियाने दुबारा मेवाडभूमिमें उसको अपना सुबेदार बनाकर भेजा,परन्तु वह बहुत दिनतक इस पदको न भोग सका।शोक,दुःख और दारुण मनस्तापसे वह अत्यन्त ही दुःखित होकर थोडे ही समयमें परलोकको सिधारा। कहते हैं कि अम्बाजीके मरनेके पश्चात् उसकी समस्त धन सम्पत्तिको उसके प्राचीन मित्र जालिमसिंहने अपने अधिकारमें कर लिया था। संवत् १८४८ के भयंकर चक्रान्तका यह भी एक फल था परन्तु वह समस्त फल अम्बाजीको नहीं भोगने पडे थे।*

राणाजीके मन्त्री सतीदासने ७००००) रुपये देकर यशवंतरावभाऊसे कुमलमेरका किला ले लिया और उस विपुल धनके शोध करनेको उस जनपदकी अन्तर्गत अनेक भूमि सम्पत्तिको नये २ आदमियोंको ठेकेपर दिया। दुराचारी अमीरखाँने सन् १८०९ ई० में अपनी प्रचण्ड सेनाको साथ ले मेवाडको घेर लिया और राणासे ग्यारह लाख रुपये मांगकर कहला भेजा कि"अगर ग्यारह लाख रुपया न दोगे तो तुम्हारा एकलिंगका मन्दिर तोडताडकर बरबाद कर दिया जायगा।" मेवाडकी दशा इस योग्य नहीं थी कि राणा ग्यारह लाख रुपया अमीरखाँको दे सकते? परन्तु विना दिये भी तो निस्तार नहीं है; अतएव विवश होकर नौ लाख रुपया देनेका इकरार किया। परन्तु राणाजीपर यह रुपया भी इकट्ठा न हो सका।इस कारण पाखण्डी अमीरखाँने भलीभांतिसे राणाके दूतोंका अपमान करके उनको सताना आरम्भ किया। उस अत्याचारके दवानेमें मन्त्री किशनदास घायल हुआ ×इसके उपरान्त दुराचारी पठानने उदयपुरके गिरिमार्गोंमें बलपूर्वक प्रवेश किया। इस ओर उसके जामाता पाखण्डी जमशेदने चिरवाघाटा गिरिमार्गमें प्रवेश किया। दूसरी ओरसे स्वयं अमीरखाँ दोवारीजनपदमें अपनी सेनाको ले गया। उनकी प्रचण्ड गतिको कोई भी नहीं रोक सका,पठानोंने नगरमें प्रवेश किया। राणाजीसे उनका दमन न हो सका, राणाका अपमान करके वे लोग नगरवासियोंपर अत्याचार करने लगे, कितने ही अभागोंकी समस्त सम्पत्ति लुट गई, बहुतसे लोगोंकी प्रतिष्ठा धूलमें मिल गई, उन दुराचारियोंका अत्याचार यहांतक बढ गया कि कोई आदमी भी अपने स्त्री पुत्रोंके साथ सुखसे नहीं रह सकता था; उनके डरसे कोई स्त्री घरके बाहर पांव नहीं रखती थी, कोई आदमी भलेमानसका वेष

---

* सेंधियाका श्वशुर उस सेनापतिके डेरेसे चला गया, तब संधिपत्रके अनुसार कुछ कालके लिये वह राणाका मन्त्री हुआ था। इतने दिनोंमें उसने राणाके समस्त मूल्यवान कागजोंको अपने अधिकारमें कर लिया था।

× टाडसाहब कहते हैं कि"किशनदास उस विपत्तिके समय सदा मेरे पास रहता था।" राणाके साथ जिस समय टाडसाहबकी बातचीत हुई थी, उस समय किशनदास ही दुभाषियेका कार्य करता था। यद्यपि चन्दावतोंके साथ उसका चक्रान्त चलता था, परन्तु वह सम्पूर्ण भावसे प्रभुभक्त था। टाडसाहबने अपने नेत्रोंसे उसकी मृत्यु देखी थी। किशनदासकी मृत्यु देखकर टाडसाहब और अंगरेजडाक्टरके मनमें अत्यन्त संदेह हुआ था। उनके मनमें यह संदेह हुआ कि किसी दुष्ट मनुष्यने जहर देकर किशनदासको मारा है। किशनदासके मरनेपर हजारों आदमी रोते थे। इससे मालूम होता है कि वह सबका ही प्यारा था।

बनाकर उसके सामने नहीं जा सकता था, लूट खसोटका यह हाल था कि यदि किसीके पास कोई उत्तम पगडी या अँगरखा देखते तो पाखण्डी गण उसके लेनेकी इच्छा करते थे । इन पिशाचोंके अत्याचारके कुछ चिह्न अबतक उदयपुरके टूटेफूटे खँडहरोंमें पाये जाते हैं । आज भी प्रकृतिसती उस भग्नावशेष राशिमेंसे करुणापूर्वक शब्द करती हुई पठानोंके पाशविक अत्याचारका वृत्तान्त कह रही है ।

परन्तु इस दुःखको पाकर भी मेवाड भूमि इन पाखण्डियोंके हाथसे नहीं छूटी, विना अन्नके पाये नगरके नगर उजड गये, राजपूतजातिका जीवन लोप हो गया, तो भी यह लोग कंकालमालिनी मेवाडभूमिका रुधिर पीनेके लिये तैयार थे । संवत् (१८६७ सन् १८११) में क्रूरचरित्र बापूसोंधियाजी सुबेदारकी उपाधि धारण करके सेनासहित उदयपुरमें आ पडा।दूसरी ओर अमीरखाँकी पठानसेना राजधानीके एक स्थानमें प्रवेश करके भयंकर अत्याचार करती हुई इस प्रकारसे घूमने लगी कि जैसे श्मशानभूमिमें प्रेत फिरा करते हैं। कभी २ इन दोनों दलोंके बीचमें किसी लूटी हुई वस्तुके ऊपर घोर झगडा हुआ करता था । इस प्रकारसे परस्पर विवाद करनेवाले दो वैरियोंके बीचमें गिरकर मेवाडभूमि अत्यन्त कष्ट पाने लगी। उस कष्टका विचार करनेसे हृदय कम्पायमान हो जाता है। दुराचारी पठान और पिशाचोंके समान मरहटोंके सताने और परस्पर विवादसे उत्पन्न हुए अत्याचारसे मेवाडभूमिकी रक्षाका कोई उपाय न देखकर राणाजीने निश्चय कर लिया कि अपनी मातृभूमि शत्रुओंको भाग करके दे दी जाय । इस वार्त्ताको निश्चय करनेके लिये "धवलमँगरा (धवलमेरु) नामक स्थानमें एक सभा बुलाई गई * राणाजीके कई एक प्रतिनिधि उस सभामें गयेथे,सभाका अभिप्राय शीघ्र ही सबको सुनाया गया । दोनों पिशाचोंकी मनोकामना पूर्ण हुई, मेवाडके घायल शरीरमें फोडे निकल आये ।आज श्मशानको लेकर प्रेत और पिशाचगण आनन्द कर रहे हैं, मृतक शरीरको लेकर गीदड और कुत्ते महोत्सव कर रहे हैं! मेवाडभूमि आज श्मशान है,—मेवाडके हीनजीवन मनुष्य अगणित मृतकशरीरोंके समान पडे हुए हैं । उनमें प्राणसंज्ञा, चेतना और उत्साह कुछ भी नहीं है; एक समय जो हृदय शत्रुके साधारण अत्याचारसे ही दारुण क्रोध और गर्वसे कम्पायमान होने लगता था आज वही शरीर निर्जीव है, चरणप्रहारको सहते २ आज उस शरीरमें जान नहीं रही । हम समझ गये कि विधाता ही मेवाड भूमिसे विमुख हैं, नहीं तो सुवर्णप्रतिमाके समान कृष्णकुमारी विना कारण ही क्यों त्याग कर दी जाती, नहीं तो बाप्पारावलके वंशधर होकर भीमसिंह इतने कायर और डरपोक क्यों हो जाते ? मेवाडकी सुन्दरता वह आज कहाँ है ? जिस सुन्दरताके प्रभावसे एक समय यह मेवाडभूमि राजस्थानमें नन्दनकानन गिनी जाती थी; आज मेवाडकी वह सुन्दरता कहाँ है ? एक समय जो मेवाडभूमि देशानुरागके कारण वीरोंके प्राण निछावर करनेसे समस्त भारतमें शिरमौर हुई थी, सम्पूर्ण जगत् जिसको वीरजननी

* सतीदास, किशनदास और रूपराम इस सभामें थे ।

कहा करता था; वह स्वदेशानुरागी महावीरगण आज अनन्त शय्यापर शयन कर रहे हैं।—क्या वह लोग अब न उठेंगे? देशवैरी दुष्टोंका दमन करनेके लिये क्या अब वह वीरगण कमर नहीं बाँधेंगे? जिस जन्मभूमिका साधारण अपमान होनेसे भी मारे क्रोधके वह वीरगण उन्मत्त हो जाते थे, उनकी "प्राणेभ्योऽपि गरीयसी" वह जननी जन्मभूमि आज शत्रुओंके द्वारा घोररूपसे सताई जा रही है; क्या इस दशाको देखकर भी वह श्मशानसे नहीं जागेंगे? प्रतापसिंह कहां हो? अरिदुर्मद, यवनदर्प खर्वकारी, आर्य्यकुल गौरवरवि, वीरकेशरी प्रतापसिंह;—तुम कहां हो? हे देव! पचासि वर्षतक अनाहार व्रत धारण करके कठोर वनवास सहन करते हुए तुमने जिस जन्मभूमिको अकबरके ग्राससे बचाया था आज वही भूमि अनाथ, निराश्रय और निःसहायके समान पिशाचोंके द्वारा बराबर सतायी जा रही है। तुम्हारी २५ वर्षकी तपस्याका फल शत्रुओंके पैरोंसे ठुकराया जाता है;—क्या तुम इसको आकाशसे नहीं देख रहे हो, हे संन्यासिश्रेष्ठ! एकबार अपने अलौकिक आत्मत्याग और कठोर संन्यासका प्रकाशमान चित्र इन निर्जीव और आलसी राजपूतोंके सामने धारण करो, तुम्हारी महानवीरता, महानता और स्वदेश प्रेमिकताको देखकर वह लोग फिर जागें, जगत्में राजपूतोंके नामको सार्थक कर दिखावें और जननी जन्मभूमिके दुःखको छुडा कर लोक परलोकके सुखपर अपना अधिकार करें।

वीरजननी मेवाडभूमि वीरोंसे रहित होकर आज पातालको चली जाती है, आज सुवर्णभूमिने श्मशानका रूप धारण किया है! अब मेवाडकी वह सुन्दरता नहीं है, अब मेवाडका वह ऊंचा सन्मान नहीं है, अब मेवाडकी वह सभ्यता तेजस्विता और शूरता नहीं है, आज मेवाड भयंकर श्मशान है, चिताभस्मको हृदयपर लिये हुए अग्निमें श्मशान बना हुआ है। इसके खेत सूने पडे हैं, नगर गाँव विध्वंस हुए हैं, घर रीते दिखाई देते हैं, शहरवाले निकाल दिये गये हैं, सरदार और सामन्तलोग डरपोक व कायर कहलाते हैं; राजा और राजपरिवार दुःखित, निरुपाय और निरवम्बल हैं। ऐसा कोई नहीं है कि जो महाराजा बाप्पारावलके वीरवंशकी इस घोर दुर्दशासे रक्षा करे! अब ऐसा कोई महापुरुष नहीं है कि जो संजीवन-मन्त्रके बलसे मेवाडकी अगणित चिताओं पर संजीवन मन्त्रका जल छिडके और नये वीरोंको उत्पन्न करे। इस लिये कहा जाता है कि सुवर्णपुरी मेवाडभूमि आज चिताभस्मयुक्त श्मशान बन गई है। श्मशानभूमिके हृदय-विदारी भयंकर चित्रको सौगुण बढाते हुये राक्षस पठान और मरहटेलोग मेवाड-वालोंका जो कुछ पाते थे, वही छीन लेते थे; भिखारी कहींसे भीख माँगकर चावल लाया है उसके चावल भी छीन लिये गये, कोई विचारा मैले कुचेले कपडे पहिनकर निकला कि उसके कपडे भी उतार लिये गये। आज मेवाडमें कौनसी बात बाकी है। राजस्थानकी महारानी मेवाडभूमि आज भिखारिन है, बरन भिखारिनसे भी दीन और हीन है। मेवाड-

भूमिकी यह दशा थी, उस समय भी दुराचारी बापूजी सेंधिया * मेवाडका बचा बचाया धन और सरदार, सामन्त, बनिये, व किसानोंको कैद करके अजमेरमें ले गया। अजमेरके उन अँधियारे कारागारोंमें मेवाडबासी जंजीरोंसे जकडे हुए पडे थे । बहुतसे कैदी छूटनेके लिये रुपया देकर छूट गये और जिनके पास कुछ नहीं था उन्होंने उस अंधियारे स्थानमें ही लोहेकी जंजरिसे पीडा पानेके कारण प्राण त्याग दिये और जो लोग सन् १८१७ ई० तक जीते रहे, वह उक्त वर्षको संधिके अनुसार छुटकारा पाकर कंकाल शरीरको साथ लिये हुए जेलखानेसे बाहर आये ।

* अंगरेजोंके साथ राणाकी संधि होनेपर बापूजी सेंधिया अजमेरसे निकाल दिया गया । उस काल वह मेवाडके भीतर होकर उस स्थानको चला गया कि जहांपर उसने रहनेका विचार किया था । मेवाडके रहनेवाले उससे यहांतक अप्रसन्न हो गये थे कि जानेके समय उसके शरीरपर थूका था और अनेक प्रकारके दुर्वचन कहे थे। अहंकारसे पीछे वही दशा होती है जो बापूजी सेंधियाकी हुई।
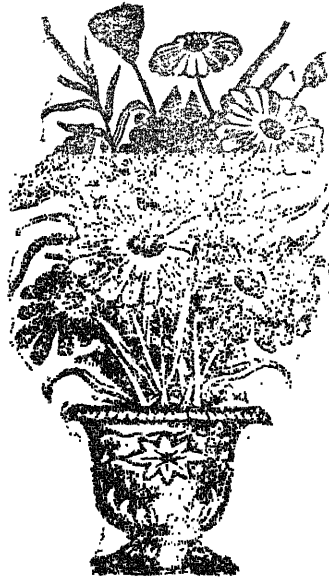
सत्रहवाँ अध्याय १७.

लूट खसोटका दूर होना;–राजपूतराजाओंके साथ अंगरेजोंकी मित्रता;–मेवाडमें अंगरेजोंके दूतका आना;–दूतका नियत होना;–राणाके द्वारा उसकी प्रतिष्ठा;–राणाके चरित्रका वर्णन;–स्वदेशकी श्रीवृद्धिके लिये राणाका उपाय करना;–निकाले लोगोंको फिर देशमें बुलाना;–व्यौपारियोंका बुलाना भीलवाडेका स्थापन करना;–सरदारोंका एकसाथ मिलना;–अधिकारपत्रका दृढ करना;–भूमिसम्पत्तिका पुनर्ग्रहण;–अन्य सरदारोंकी कई एक बातें;–बेदनूर, भदेश्वर, अमाइत;–मेवाडकी जमींदारी;–गांवखातेके नियम;–मेवाडका बापेता;–(मेरासजारी);–भोमिये या स्वतंत्र सरदार;–उनसे किये हुए करारमदार;–और उनका अधिकार;–फरमानकी दरबारी टिप्पणी मेवाडेश्वरके सम्बन्धमें एक पुरानी कहावत;–पटैल, उनका मूल व कर्त्तव्य;–भूमि करके नियम;–साधारण फलाफल।

गिह्लौट कुलके भाग्यचक्रकी अदल बदलके साथ महाराज कनकसेनके वंशका इतिहास ईसवीकी दूसरी शताब्दीसे आरम्भ करके उन्नीसवीं शताब्दीतक भलीभांति कहा गया। लगभग दो हजार वर्षके बीचमें सूर्यवंशीय महाराज कनकसेनका लगाया हुआ वंशवृक्ष उत्पन्न परिपुष्ट होकर दुरवस्थाको भी प्राप्त हुआ। यह हम पहले ही वर्णन कर चुके हैं। पारद, भील, तुर्की, तातार आदि बहुत जातियोंने चढाई करके इस वृक्षके उखाडनेकी चेष्टा की थी। बहुतसे प्रबल आंधी और तूफानोंने इसकी शाखाओंके तोडनेका उद्यम किया। सैकडो वर्षतक बराबर पीडित रहनेसे मेवाडके कलेजेसे बहुत सा रुधिर निकल गया, कि जिससे मेवाडभूमि बलहीन होकर अनाथ हो गई। सबके ऊपर महाराष्ट्रियोंने इस स्वर्गभूमिकी बची बचाई जान निकाल ली। इन सब अवस्थाओंका वर्णन पहिले ही लिखा जा चुका है अतएव उसका दिग्दर्शन कराना यहांपर पुनरुक्ति दोषमें गिना जायगा। केवल इतना ही कहना उचित है कि उस समय राजपूत लोग अपने प्राणोंको भी भारी समझने लगे थे। उस ही संकटके समय मंगलमय विधाताने राजपूतजातिके हृदयमें नवीन बलका संचार किया। महाराष्ट्रीय पठान, पुर्तगीज,

फरासीसी आदिने चोर डाँकुओंकी सहायतासे बडे २ अड्डे अनेक स्थानोंमें बना लिये और बडे बडे भयंकर दल स्थापन किये थे। इनके द्वारा बहुधा अनर्थ ही हुआ करता था। भारतके तप्त हृदयपर शान्तिरूपी जल छिडकनेकी इच्छा करके अंगरेजोंने सबसे पहिले उन दुष्ट दलोंके दमन करनेका विचार किया। अक्टूबर सन् १८१७ ई० में भारतवर्षके शासनकर्त्ता लार्ड हेस्टिंगसकी चतुरताके प्रभावसे उन पाखंडियोंके समस्त उद्यम व्यर्थ हो गये, उनका दलबल चारों ओरको छिन्न भिन्न हो गया। उन समस्त पाखंडियोंके अत्याचारसे छुटकारा पाकर बहुत दिनके पीछे जिस दिन भारतवासियोंने शान्ति प्राप्त करके अपने कलेजेको ठंढा किया उस ही दिन सात समुद्रके पार रहनेवाले वणिकवेशी बृटिनलोगोंकी प्रभुता भारतवर्षमें दृढ हुई।

अंगरेज शासनकर्त्ताके कठोर यत्नसे पाखाण्डियोंके दल तितर बितर हो गये। परन्तु इस कारणसे सब राजाओंका परस्पर मेल कराना राजनीतिसे सिद्ध समझा गया कि जिससे दुष्टोंका दल इकट्ठा होकर फिर बलवान न हो जाय। यह विचार कर अंगरेज शासनकर्त्ताने राजपूत राजाओंके साथ मन्तव्यपत्र प्रेरण करके मेल करानेके लिये सबको बुलाया। महाराज जयपुरके अतिरिक्त और सब ही राजाओंने इस प्रस्तावमें अपनी सम्मति दी। दिल्लीमें इस विराट सभाका होना नियत किया गया। इस निमंत्रणके अनुसार अनेक देशोंके राजदूत दिल्लीमें पहुँचे। कई एक सप्ताहोंके बीचमें ही समस्त राजपूत जातिका भाग्यसूत्र बृटिन लोगोंके हाथमें पहुंच गया। उस सन्धिपत्रमें यह निश्चय हुआ कि भीतर ही भीतर राजपूत लोग राजनैतिक स्वाधीनताका सुख भोगें; अंगरेजगवर्नमेन्ट उनको शत्रुओंके आक्रमण और अत्याचारसे रक्षा करेगी, इसके बदलेमें उसको राजस्वका थोडासा अंश करस्वरूपमें दिया जाय। *

* इष्ट इण्डिया कम्पनीके साथ राणा भीमसिंहकी जो संधि हुई थी उसके प्रत्येक सूत्रका अविकल अनुवाद नीचे लिखा जाता है।

(१) अंगरेज और राणाजीकी परस्पर मित्रता, सख्यता और ऐक्यता पीढी दरपीढी तक चली जाय; एकके मित्र या शत्रु दूसरेके भी मित्र या शत्रु समझे जायँ।

(२) अंगरेज सरकार राणाजीका समस्त राज्य कायम रक्खेगी और उसको उपद्रव नहीं पहुंचने देगी।

(३) उदयपुरके महाराणाजी सदा अंगरेज सरकारके अधीनमें रहकर कार्य करें और अंगरेजोंको अपनेसे वरिष्ठ समझें। इस ही भांति अन्यान्य राजा या सरदारोंसे महाराणाजी किसी प्रकारका सम्बन्ध न रक्खें।

(४) विना अंगरेज सरकारकी परवानगी तथा मंजूरीके राणाजी, किसी राजा या राजकुलके साथ किसी प्रकारकी संधिआदि राजनैतिक कार्य नहीं कर सकेंगे। साधारण व नियमित स्नेह व कुशलादिके पत्र भेजनेमें कोई हानि नहीं।

(५) उदयपुरके महाराणासाहब किसीके ऊपर किसी प्रकारका अत्याचार या किसी राज्यपर चढाई न कर सकेंगे। यदि किसीसे उनका कोई वादविवाद हो जाय तो बृटिश गवर्नमेंटके हाथमें उसकी मीमांसा और विचारभार अर्पित रहैगा।—

जिन देशी राजाओंने अत्याचारी लोगोंके हाथसे छुटकारा पानेके लिये संधिकी इच्छा की उन सबमें अधिक राणाजीको संधि करनेकी आवश्यकता थी, इस संधिके द्वारा राणाजीको ही अधिक शांति मिली थी। १६ वीं जनवरी सन् १८१८ को राणाजीने उस सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर किये। पीछे फर्वरी मासमें ही उस नई सन्धिके नियमोंकी रक्षा करनेके लिये अंगरेजोंका एक दूत राणाजीके दरवारमें आया। सेंधियाके सेवकोंने राणाजीके देशपर अन्यायसे अपना अधिकार कर लिया था, उन समस्त देशोंका उद्धार करने तथा उपद्रवी सरदार और सामन्तोंका दमन करनेके लिये अङ्गरेजोंका सेनापति मेजर जनरल सर.आर.डंकिन सेना लेकर तैयार हुआ। * रायपुर, राजनगर

---

(६) उदयपुरके यथार्थ प्रादेशिक विभागसे जो आमदनी होगी, उसका एक चतुर्थांश ¼ पांचवर्ष तक राणाजी अंगरेज सरकारको करकी भांति देंगे तदुपरान्त तीन अष्टमांश ⅜ (अर्थात् रुपयेमें छः आनेके हिसाबसे) राणाजी सदा ही देते रहेंगे। कर लेनेमें और किसीका राणासाहबसे कोई दावीदावा न रहेगा, यदि कोई करके लिये किसीप्रकारका दावा करे तो बृटिश गवर्नमेंट उसका उत्तर देनेके लिये तैयार है।

(७) इस समय महाराणा साहब कहते हैं कि कितने एक लोगोंने उन परगनोंपर जो कि उदयपुरके ताल्लुक हैं बेजाप्ता दखल कर लिया है, राणाजी चाहते हैं कि वह पर्गने फिर दिला दिये जाय; लेकिन इस बातका पूरा प्रमाण न मिलनेसे इस वक्त ब्रिटिश गवर्नमेंट इस कार्यमें हस्तक्षेप नहीं कर सकती, परन्तु उदयपुरकी तरफ उन्नति करनेपर जहांतक होगा, अंगरेज सरकार ध्यान देगी। तथा प्रत्येक बातका भलीभांतिसे अनुसंधान करके योग्यतानुसार उस अभिप्रायको सिद्ध करनेकी चेष्टा की जायगी। बृटिश गवर्नमेंटकी अनुकूलतासे महाराणा इस प्रकार जिन देशोंको लौटा लेंगे उनकी आमदनीसे भी तीन अष्टमांश ⅜ (अर्थात् रुपयेमें छः आनेके हिसाबसे) अंगरेजसरकारको देना होगा।

(८) बृटिश गवर्नमेंट प्रयोजनके अनुसार उदयपुरके राजकीय सेनाको ले सकेगी।

(९) उदयपुरके राज्यमें महाराणासाहबकी आज्ञा और अधिकार पूर्णरीतिसे चलेंगे, उनके राज्यमें अंगरेजोंकी प्रभुताका प्रचार नहीं होगा।

(१०) इन दश नियमोंका संधिपत्र दिल्लीमें लिखा गया। इसपर अंगरेज सरकारकी ओरसे मिस्टर चार्लस थिआफिलस मेफकाट और महाराणाजीकी तरफसे ठाकुर अजितसिंह बहादुरने हस्ताक्षर और मोहर की है। इसकी मञ्जूरी महानुभाव गवर्नर जनरल और महाराणा भीमसिंहके द्वारा होजानेपर एक महीनेके बीचमें ही यह संधिपत्र परस्परको दिये जायँगे, मुकाम दिल्ली ता० १३ माह जनवरी सन् १८१८ ई०।

हस्ताक्षर सी, टी, मेटकाफ।
हस्ताक्षर ठाकुर अजितसिंह।

*लार्ड हेस्टिङ्गसके द्वारा टाडसाहब ठीक इसी समयमें;"पश्चिम राजपूतप्रदेशोंके पोलिटिकेल एजेंट" उपाधि प्राप्त होकर राणाकी राजसभामें लार्डसाहबके प्रतिनिधि नियत हुए थे। सन् १८१७ व १८ ई०के युद्धमें टाडसाहबके अधीनमें उत्तरभागका अंगरेजी लश्कर था और यह अपनी सेनाके समस्त भागोंपर सावधानी रखते थे। उस समय उन्होंने हुलकर और बूंदीके राजाओंसे संग्राम किया और कोटेके राजासे संधि की।

इत्यादि जो किले थे उनपर विद्रोही सरदारोंने अपना अधिकार कर लिया था। परंतु इस समय वह सब ले लिये गये। सौभाग्यवान्, चतुर अंगरेजोंने उसके साथ ही एक विशाल किला अपने आप भी ले लिया। कमलमेरमें जो राजकीय सेना रहती थी उसने बहुत दिनोंसे तनख्वाह नहीं पाई थी। अंगरेज सरकारने उस सब वेतनका भुगतान करके किलेको अपने अधिकारमें कर लिया।

कमलमेरके पूर्वभाग स्थित जिहाजपुरसे अंगरेजोंका दूत उदयपुरकी ओर चला। उस स्थानसे उदयपुर कोई १४० मील होगा। दूत लिखता है कि "इतने लम्बे मैदानमें मुझे केवल दो शहर ही बीचमें पडे, वह भी ऊजड हो रहे थे। उनकी घनी बस्ती इस समय वीरान हो गई थी, मनुष्योंका चिह्न तक दिखलाई नहीं देता था, चारों ओर वन, वृक्ष और कीकर, करील खडे हुये थे; झाडियोंमें भयङ्कर वाघोंने अपना स्थान बना लिया था, बडे २ राजमार्ग नष्ट हो गये थे। रमणीय देशोंकी आज यह दुर्दशा हो रही थी; विपरीत कालका वह चित्र अबतक नेत्रोंके आगे फिरता है। राजपूतानेमें भीलवाडा नामक एक बडा शहर था, बारह वर्ष पहिले अर्थात् सन् १८०६ ई०के मई महीनेमें मैं इस शहरकी ओर गयाथा उस समय वहां पर ६००० कुटुम्ब अपने परिवारके साथ रहते थे, साधारण शहरोंके समान उस समय यह नगर उत्तम श्रेणीका गिना जाता था, परंतु इस समय (फर्वरी सन् १८१८) में पहिली बस्तीका पता भी नहीं लगता! भीलवाडेसे निकलकर मैं उसके पूर्वकी नगरवीथियोंमें जाने लगा, वह सब सूनसान थीं! जीता-हुआ एक भी प्राणी मुझको उस शहरके राजमार्गमें नहीं मिला। केवल एक कुत्ता एक देवमन्दिरमें बैठा हुआ था। वह भी हम अनजानोंको देखकर शीघ्र ही भागा। यह दशा देखकर अत्यन्त शोक हुआ। मेरे साथ आये हुये एक लश्करी सिपाहीने उस देवा-लयके आदिनाथ नामक विवस्त्र देवताको अपने अंगका लाल वस्त्र देकर उसका शरीर ढका * !"

बृटिश एजेंटकी अगवानी करनेके लिये राणाजीने एक राजदूतको भेजा, अंगरेजलोग अपनी छावनी नाथद्वारमें डाले हुए पडे थे, राणाजीका दूत सेनासहित वहां पहुँच कर एजेंटसे मिला। संधिकी कथा वार्त्ताके पश्चात् वह उदयपुरको इस कारणसे लौट गया कि एजेंटके आनेके समय भलीभांतिसे नगरको सजाया जावे। उसी समयमें कमलमे-रका किला भी एजेंटको दे दिया गया। इस ओर राणाजीके प्रथम पुत्र जवानसिंहने असंख्य सामन्त, सेनापति, सिपाही और सेवकोंको साथ ले उत्तम उत्तम वस्त्र पहिन कर आगे जाय एजेंटको लिया। नगरसे कोशभरकी दूरीपर एक बडे और उत्तम तालवनमें दरबार बनाया गया। जवानसिंह वहीं पर जाकर एजेंटसे मिला और उसको राजधा-नीमें ले आया। इस समयकी शोभाका वर्णन कर्नल टाडने बहुत ही उत्तम किया है वह कहते हैं कि:-

* मई सन् १८०६ ई० में टाडसाहब एक बार भीलवाडेके भीतर होकर गये थे उस समय यह नगर चढती दशामें था।

"राणाकी और हमारी मुलाकात ।। उदयपुर नगरमें एक कोठारकी दूरीपर एक स्थान तैयार किया गया था । वहां पर शतरंजियें और गलीचे बिछाकर उत्तम प्रकारकी बैठक तैयार की हुई । वहां पर पहिले राजपुत्र जवानसिंह युवराज मुझसे मिला । इस राजपुत्रको प्रथम देखते ही मैंने उसके समस्त गुणोंको जान लिया । उसका [illegible] वदन, दरबारी सभ्यतासे बोलने चालनेकी रीति, राजकुलको शोभायमान करनेवाला ऐंठदारपन, विनयसम्पन्नता, यह समस्त गुण कुमारके कीर्तिवान [illegible] लेनेका पक्का प्रमाण दे रहे थे । पहले जब कुमार बहुत ही छोटा था तब मैंने उसको देखा था उस समय मुझको यह कल्पना नहीं हुई थी कि कुमार इस प्रकारसे अधीनतापूर्वक मुझसे मिलेगा । परन्तु समयके हेरफेरसे उस महापराक्रमशाली प्रतापसिंहका वंशधर इस प्रकार मेरा स्वागत करनेके लिये आया; यह देखकर जो अवस्था मेरी हुई वह कही नहीं जाती । कालकी गति विचित्र है, इस राजकुमारका मुख उसके इतिहासप्रसिद्ध, पराक्रमशाली राजकुलको शोभायमान करनेवाला था ।

"मैंने सूरज दरवाजेसे उदयपुरमें प्रवेश किया । गमन मार्गके दोनों ओर वृक्ष लगाये गये थे । उस समय भी ज्ञात होता था कि हम लोग एक ऊजड और वीरान शहरके भीतर चले जाते हैं । प्रसिद्ध रामप्यारीका (इसका वर्णन पन्द्रहवें अध्यायमें आ चुका है) महल यही था । यह महल राजपूतानेके साधारण राजमहलोंके समान ही चौकोन व अनेक मंजिलवाला था । उसकी शोभा अत्यन्त उत्तम और वर्णन करनेके योग्य थी। चारों ओर जालीदार काम व पृथक् २ दालानोंमें आमने सामने कोठरियें और बीच २ में खुला हुआ दीवानखाना शोभायमान हो रहा था, इसी स्थानमें हमारे स्वागतकी तैयारियां की गई थीं । अंगरेज सरकारका रसीडेण्ट पीछे यहीं रहने लगा। इसी महलकी एक कक्षामें हमारे लिये भोजन बना था । उस भोजनकी तैयारीका क्या वर्णन करें ? पृथक् २ नमकीन और मीठे सैकडों पकवान तैयार किये गये थे, ताजे व सूखे हुए फल भी बहुतायतसे थे । एक हजार रुपयेकी थैली भी वहां रक्खी गई । राणाके निजके नौकरोंको उस समयके आनन्द दिखानेके लिये यह रुपये बटनेको आये थे । कारण कि अंगरेजकम्पनीके एजेंट साहबका आना राजधानीमें जिन लोगोंने सूचित किया था उनको इस प्रकारका पुरस्कार देना राजपूत राजाओंकी रीतिके अनुसार ही था । राणाजीकी दूसरी मुलाकातका होना दूसरे दिन निश्चित हुआ ।

परन्तु दिनके चार बजेनपर राणाजीका मुख्य दीवान, चन्दावतोंका सरदार चोबदार, भालेदार,इत्यादि हमारे पास आये और कहा कि;–'राणाजीने आप लोगोंके स्वागत करनेकी तैयारियें आज ही कर ली हैं,जहांपर हम लोग ठहरे हुए थे उस स्थानके सामने थोडे ही देरमें लोगोंकी भारी भीड हो गई । सब ही कोई उत्तम २ वस्त्र भूषण धारण किये चुपचाप * हमारी ओरको देख रहे थे । राजभवनमें जानेके लिये हम

* हम लोग अर्थात् एजंट, मिशनके सेक्रेटरी कप्तान वाघ, लेफ्टिनेंट केरी और डाक्टर डंकन यह चार यूरोपियन थे ।

लोग मार्गमें आये। उस काल चारों ओरसे "जय जय! फिरंगीका राज!" यह शब्द प्रत्येक मनुष्यके मुखसे निकल रहा था। भाट लोग ऐसे अवसर पर भला कब चुप-चाप रह सकते हैं? उन्होंने अंगरेजोंके एजंटका नाम अपनी कवितामें डालकर भांति २ से स्तुति करना आरम्भ किया। स्थान २ पर बाजेवाले तालळयसे युक्त मनोहर बाजा बजा रहे थे।

बाजोंका शब्द श्रवणसुखदायी होनेपर अपनी मंजुल आवाजसे श्रोताओंके चित्त चुराता था। रमणीगण जलके भरे हुए कलश लिये बीच २ में खडी होकर हमारी मंगलकामना कर रही थीं। उनके गीत अत्यन्त ही मनोहर ज्ञात होते थे। गीत सुनकर प्रत्येक मनुष्य उन स्त्रियोंको कुछ न कुछ दिया करता है। इस प्रकार भारी भीड होनेके कारण राज-मार्गमें कहीं तिल धरनेकी भी जगह नहीं थी। राजभवनके निकट पहुँचनेपर हम सब लोगोंने हाथी घोडोंसे उतर कर पैदल ही राजभवनमें प्रवेश किया। इस बाडेमें बडी २ गच्चियां थीं, इनपर हाथी और घोडे नाच कूद कर रहे थे इस प्रकार कौतुक देखनेका राणाजीको बहुत ही शौक था।

"राजभवन अत्यन्त बडा और दृढ बना हुआ है। इसमें संगमरमर तथा और दूसरे पत्थर भी बहुतायतसे लगे हुए हैं। शिखर तक इसकी उंचाई ७० हाथकी है। इस भवनके पार्श्वोंमें आठ कोनेके बुर्ज बनाकर उनपर मेघडंबरी या गुंबज चढाया हुआ था। एक ही बारमें यह राजभवन नहीं बना था। पृथक् २ समयमें भिन्न २ राजाओंने इसमें अनेक प्रकारके संस्कार किये थे। यही कारण हुआ जो इसकी सुन्दरता सीमाको पहुँची है। पूर्वीय देशोंमें ऐसा स्थान कदाचित् ही कहीं बना होगा। उदयपुरकी तलीसे समान्तर स्थित पर्वतके ऊपर बनाये जानेसे वह बहुत ही ऊंचा दिखाई देता है। इस राजभवनके अग्रभागमें एक बडी गच्ची बनी हुई है। उसकी लम्बाई भवनकी चौडाईके बराबर है। इस हीपर राणाजी अपने हाथी घोडोंको खिलाया करते थे। तीन कमानी-दार ऊंचे खम्भोंपर यह गच्ची बनी हुई है और यह कमानियां उपरोक्त पहाडीके उतरावपर लगाई हैं। राजभवनमें सबसे आगे जो कमानी लगी हुई है उसकी भीतकी उंचाई लगभग ३२ हाथकी है। इस कमानीके नीचे खुल्ल जगह है, यहांपर अस्तबल और फीलखाने बने हुए हैं। गच्ची और कमानीकी दृढतामें किसीको भी शङ्का करनेका कारण नहीं मिलता। इस गच्चीपर चढनेसे उदयपुर तथा उसके समस्त मैदान और पर्वतका पूर्ण दृश्य देखनेवालेके मनको मोहित करता है। केवल पहाडियों और टीलोंकी उंचाईसे उदयपुरके बाहरका कोई २ मयदान दिखाई नहीं देता। परन्तु यहींसे बुर्जके ऊपर चढजाने पर वह दृश्य भी भलीभांतिसे दिखाई देता है। वहांसे उदयपुरका बडा तालाब, छोटे २ पर्वतोंके शिखरके मयदान इस भांतिसे दिखाई देते हैं कि मानो सब एक ही सपाटी पर हैं। यदि इस राजभवनको उदयपुरका भूषण कहा जाय तो ठीक ही होगा। इस ही भवनमें हमारे स्वागतकी तैयारियां की गई थीं।

"इस राजवाडेके बडे दरवाजेपर सिन्धी सिपाहियोंका पहिरा था । शनिवार होनेके कारण नियमानुसार उस दिन शक्तावत सरदार लोग दीवानखानेमें आगत स्वागतका प्रबन्ध कर रहे थे । राजभवनसे लेकर दीवानखानेतक पहुँचनेके मार्गमें दोनों ओर राजपूत लोग शस्त्र बांधे खडे थे । राजभवनकी भीतरी बगलमें एक गणेशदरवाजा है, इसके भीतर प्रवेश करनेपर दीवानखानेके जानेका मार्ग मिलता है । दीवानखानेकी सीढियोंपर-जो कि पत्थरसे बनी हुई थीं-हम लोग चढकर गये । जीनेपर जानेके समय ललकार कर आगमनकी सूचना देनेवाले बहुतसे चोबदार भी खडे हुए वहांपर दिखाई दिये । दीवानखानेमें जानेके लिये कितने एक दालानोंको लांघकर जाना पडता है । दीवानखानेके द्वारपर पहुंचते ही भालेदारने चिल्लाकर सूचित किया कि "अंगरेजोंका वकील महाराजसे मुलाकात करनेके लिये हाजिर है ।"यह सुनते ही राणाजी सिंहासनसे उठकर कई परग आगे आये, उनके उठते ही साथमें सरदारोंने भी उठकर हम लोगोंको खडी ताजीम दी । दिल्लीदरबारके समान यहांकी सजावट दिखलाई देती थी । सिंहासनके सन्मुख ही हमारे लिये स्थान मिला था, मरेठोंकी चढाईके समय उदयपुरके दरबारमें बैठनेके लिये पेशवाको जो स्थान दिया गया था वही स्थान आज अंग्रेजी वकील मंडलीको मिला । जिस महलमें यह दरबार हुआ था उसको 'सूर्यमहलके' नामसे पुकारते हैं । 'सूर्यमहल' नाम रखनेका यह कारण था कि इसमें जो चित्रादि बनाए गये थे उनमें सूर्यका चित्र मुख्य और मध्यभागमें खेंचा गया था । जहां सूर्यका चित्र था, वहीं पर राणाजीका सिंहासन शोभायमान था । उस सिंहासनपर चांदीके चार पतले खंभोंमें मखमली चन्दोवा बना हुआ था । यह सिंहासन या राजगद्दी ऊंची बैठकपर है; उसपर कलाबत्तूके कामकी मखमली चादर बिछ रही थी । दरबारके मुख्य सोलह सरदार अपनी २ योग्यताके अनुसार राणाजीके दाहिने और बांयें बैठे हुए थे । उनसे नीचे एक बगलको राजकुमार जवानसिंह व उमरावसिंह बैठे हुए थे और २ स्थानोंपर दूसरे सरदार लोग विराजमान थे । राणाजीके सन्मुख मुलकी दीवानका आसन था । पिछली ओर राणाजीके विशेष कर्मचारी व अधिकारी व नौकर चाकर आदि: विश्वासी लोग बैठे थे । उस समय राणाजीका यह आनन्द मानसिक और अनिर्वचनीय था । अंगरेजी वकीलसे मुलाकात होनेपर आजतक जो जो दुःख व संकट राणाजीको भोगने पडे थे, उन सबका थोडे हीमें परन्तु श्रवणकरनेवालेके हृदय पर प्रभाव करनेवाला वर्णन राणाजीने एजंटसे कह सुनाया ।तदनुसार यह भी कहा कि;-"अब अंग्रेज सरकारने इस कार्यमें मन लगाकर हमारे दुःखोंको दूर करनेका निश्चय किया है" मेवाड राज्यपर यह बडा उपकार हुआ है । फिर यह कहा कि; "जन्मसे लेकर मैं कभी सुखकी नींद नहीं सोया,अब अंगरेजोंके स्नेह तथा उनकी मित्रतासे वह नींद मुझे आवैगी ।" राणाजीका यह कहना आवेशयुक्त अस्खलित अंगरेजोंमें पूज्यबुद्धि और कृतज्ञताको दिखलाता हुआ था । इसको सुनकर हमें बडी करुणा आई व उनका दुःख दूर करना अपना कर्तव्य समझा । पीछे एजंटने ममतापू-

वक राणाजीसे कहा कि "हमारे गवर्नर जनरलको आपके कीर्तिमान् और वैभवशाली कुलका इतिहास भलीभांतिसे विदित है, तथा आपपर जो जो संकट पडे हैं उनका वृत्तान्त भी उनको सब प्रकारसे ज्ञात है और इस समस्त जानकारीसे गवर्नर जनरल साहबकी इच्छा है कि यथासम्भव आपकी कीर्ति तथा वैभव और राज्यकी शान्ति बढावें।" इस प्रकार परस्पर वार्त्तालाप होनेपर राणाजीने एजेंट साहब व उनके साथकी दूसरी मंडलीको बहुतसे पुरस्कार दिये। एजेंट साहबको एक उत्तम प्रकारका सजासजाया हाथी, एक उत्तम घोडा, रत्न जडित जवाहिरोंके गहने, मोतियोंका एक कंठा, एक शाल व एक कीमखाबी पहिरावा दिया। इस प्रकार पुरस्कार बँटनेपर पान व अतर गुलाब देकर अंगरेजपार्टीको जानेकी आज्ञा दी। तदुपरान्त वकीलमंडलीने उठकर राणाजीको मान देकर सलाम किया और अपने स्थानपर जहांपर वह ठहरे हुए थे चले गये। वकील मंडली जब वहां पहुंच गई, उस समय राणाजी अपने दूसरे कुमारको साथ ले दीवान और मुख्य २ सरदारोंके संग अंग्रेज वकील मंडलीसे प्रति साक्षात् करने गये। कुमारके साथ राणाजीका आना सुन कर एजेंट साहबने अपने स्थानसे बहुत दूरतक पैदल आकर राणाजीकी अभ्यर्थना की तथा राजकुलको सन्मान देनेके लिये अपनी सेनासे सलामी कराई। राणाजीके बैठनेको वहां पहिलेसे ही ऊंचा आसन बनाया गया था उस हीपर मेवाडनाथ विराजमान हुए। राणाजी आनंदपूर्वक वहां पर बैठकर एजेंट साहबसे बातचीत करने लगे। अंगरेजी सेना व उसकी स्थितिमें राणाजीको जो कुछ न्यूनाधिक ज्ञात हुआ उस हीको उन्होंने एजेंट साहबसे पूछा। इस प्रकार आधघण्टे तक बात चीत होती रही। तब एजेंट साहबने राणाजीको एक हाथी, दो घोडे, उनपर भांति२ के सुनहले, रुपहले तथा मुलम्मेके जेवर, कलाबत्तूकी एक मखमली झूल, यह सब वस्तुऐं नजरमें दीं; इन वस्तुओंके अतिरिक्त अनेक प्रकारके रत्नोंसे भरे हुए २१ पात्र भी नजर किये। युवराज उमरावसिंह बीमार होनेके कारण पिताके साथ नहीं आया था, परन्तु एजेंट साहबने उसके लिये भी एक घोडा, व ऊपर उक्त वस्तुओंसे भरे हुए ११ पात्र नजरानेके राणाजीके आगे रक्खे। राणाजीका दूसरा पुत्र उमरावका भ्राता जवानसिंह साथ ही था, उसको एजेंट साहबने एक घोडा व ९ पात्रोंका नजराना दिया। इनके अतिरिक्त कर्मचारी व सरदारादिकोंभी उनकी योग्यताके अनुसार नजराना दिया गया। इस भेटमें, ऐजेंट साहबको २००००) रु० खर्च करने पडे। इस साक्षात् प्रतिसाक्षात् व भेंट लेने देनेकी वार्त्ताका वर्णन राणाके सरदार तथा सेवक लोग कई सप्ताहतक परस्पर करते रहे। उनको इसका वर्णन करते हुए आनन्द सा ज्ञात होता था।

राणाजीका चरित्र अत्यंत महान, मर्य्यादाके सर्वथा योग्य नहीं था। प्रजापालनके समस्त गुण उनमें थे परन्तु मनकी दुर्बलताके कारण उनसे कोई कार्य नहीं हो सकता था। आडम्बर और दिखावेने तथा साधारण आनंद और वृथा उदारताने उनके हृदयपर अपना अधिकार कर लिया था। जिस समय यह प्रवृत्तियां जोर पकड आती थीं

उसी समय वह उनके पूर्ण करनेकी चेष्टा करते थे; तबतक राजकार्यमें उनका मन नहीं लगता था। उस कालतक वह अपनी न्यायानुसार प्रभुताके स्थापन करने और राज्यका संस्कार करनेमें दूसरे आदमीका मुँह देखा करते थे। चित्तमें स्थिरताका नामतक नहीं था। जन्मसे दुःख ही देखे थे, इस कारण शान्तिका न होना कोई विचित्र बात नहीं थी। बहुत दिनोंतक दुःख पाकर जिस समय सबसे पहिले विश्रामदायिनी निद्राका सुख भोगा उस समय वह किसी झंझटमें नहीं पडना चाहते थे। राजस्थानमें उनके समान मंत्रणाकुशल राजा दूसरा कोई नहीं था; परन्तु दुःखकी बात यह है कि वह कदाचित् ही अपने सिद्धान्तके अनुसार कार्य करते थे। उनके परामर्शदाताओंमें केवल किशनदास दृढप्रतिज्ञ और चतुर था, यह बहुत दिनोंतक राणाजीका दूत रहा; उसके यत्न और चेष्टासे मेवाड और राणाजीका बहुत कुछ उपकार हुआ था, परंतु दुःखकी बात है कि मेवाड भूमि शीघ्र ही उस पुरुष रत्नको खो बैठी, राजनीतिविशारद किशनदास अकालमें ही परलोकवासी हुआ।

मेवाडराज्यका संस्कार करनेकी इच्छासे बृटिश एजेंटने सबसे पहिले उपद्रवी सरदार तथा सामन्तोंको राणाके वशमें लानेका यत्न किया। उसको भलीभांतिसे ज्ञात था कि इन लोगोंको राजसभामें लाते ही अभिप्राय सिद्ध हो जायगा, जिन सरदारोंपर यह इशारा किया उनमेंसे बहुतसे राजसभामें नहीं आते थे; बल्कि बहुतोंने तो सभाको आंखोंसे नहीं देखा था और जिन्होंने देखा था वह लोग स्वार्थसिद्धिके लिये ही वहांपर आते थे, जबतक अभिप्राय पूरा न होता तबतक रहते और पश्चात् एक साथ चले जाते थे;--जानेके समय एक बार राणाके मुँहकी ओर भी नहीं देखते थे, अतएव उन समस्त विद्रोही सरदारोंका दमन करना सहलकार्य किसी प्रकारसे नहीं माना जा सकता। परन्तु मेवाडवालोंने विस्मयके साथ देखा, कि कई एक सप्ताहके मध्यमें ही देशके समस्त सरदार और सामंत राणाकी सभामें आ पहुंचे। पचास वर्षसे मेवाडवालोंमें यह शोभा नहीं देखी थी। परन्तु आज बहुत दिन पीछे शिशोदिये कुलकी राजसभाको सरदार सामंतोंसे परिपूर्ण देखकर नगरवासियोंको अत्यन्त आनन्द हुआ। जो सरदार सामन्त और सैनिकगण बहुत दिनसे परस्पर विरोध रखते थे, न जाने आज वह किस दैवी शक्तिके प्रभावसे फिर इकट्ठे हुये हैं; राजसभामें आनेसे कोई सरदार विमुख न हुआ। यहांतक कि उपद्रवकारी जिस दुष्ट हमीरने कुछकाल पहिले हाडीरानीका विवाहपण लूट लिया था और जिस संगावत सरदारने शपथ करके कहा था कि "चाहे मैं स्त्रीके निकट शिर झुका दूं परन्तु राजाको नहीं झुकाऊंगा--" वह दोनों ही भदेश्वर और देवगढको छोड राजाज्ञाको शिरमाथे चढाय राणाजीके समीप आये। इस प्रकार थोडे ही दिनोंमें मेवाडके समस्त सॉवत राजधानीमें आन पहुँचे। आज सबके मुखमण्डलपर आशा, आनन्द और उत्साहकी हास्यमयी प्रभा दिखलाई दे रही है। देशकी दुरवस्था और अपने बुरे व्यवहारोंका विचार करके सब ही मनमें पछताने लगे। परन्तु उस व्याकुल हृदयमें शोककी जो छोटीसी रेखा दिखलाई दी वह आनन्दके प्रभावसे उसी समय धुल गई।

सरदारोंके इकट्ठा करनेके साथ साथ ही एक दूसरा कार्य भी विशेष आवश्यकीय और भारी समझा गया। मरहटोंके घोर अत्याचारसे जो नगरवासी और जनपदवासी जन्मभूमिको छोडकर दूसरे देशोंको चले गये थे उनको बुलानेकी इच्छा करके राणाजी उपाय शोचने लगे। परन्तु वह काम अतिकठिन और बहुत समयमें पूरा होने योग्य समझा गया। कारण कि संकटके समयमें जिन्होंने उन भागे हुओंको सहारा दिया था, उन लोगोंके साथ निर्वासित मेवाडवासियोंके अनेक सम्बन्ध हो गये हैं। उस बाध्य बाधकता और सम्बन्धोंका छोडना कोई साधारण बात नहीं थी। परन्तु जहां मेवाडका एक भी आदमी बस गया था उसके पास वहींपर विज्ञापनपत्र भेजा गया। उसको पाते ही उसने राणाजीको सन्तुष्ट कर उत्तर दिया। उन वाक्योंके भीतर जो गम्भीर और हृदय उत्तेजक भाव विराजमान था, उसका विचार करनेसे स्वदेशद्रोही और पाखण्डियोंके हृदयमें भी देशानुरागका प्रकाश हो जाता है और जिन लोगोंके मनमें ऐसा निश्चय है कि राजपूतलोग स्वदेशप्रेमिक नहीं हैं उनके भी ज्ञाननेत्र खुलकर उनको समझा देंगे कि स्वदेशप्रेमिकताका हिंदूसंतानको सदासे अभ्यास है। भारतके जिस किसी स्थानमें जो कोई मेवाडी गुप्त या प्रगट रीतिसे बसता था उस विज्ञापनपत्रके पाते ही वह उत्साहके साथ कह उठा कि;—"शत्रुका अत्याचार अथवा देशद्रोही पाखण्डियोंके सतानेको कुछ भी न समझेंगे; कोई किसी प्रकारसे हमको अपने "बापोता" * से अलग न कर सकेगा" यद्यपि वह समय बीत गया है, यद्यपि राजपूतोंकी वह महानता वह वीरता और वह गौरवगरिमा कालरूपी समुद्रमें लीन हो गई है, तो भी मेवाडके किसानोंकी अटल भक्ति जिसको कि वह जन्मभूमिमें रखते हैं, उसके दशवें भागका एक भाग भी लेखनी द्वारा लिखकर प्रगट नहीं किया जा सकता। दरिद्रताके विराटचक्रमें जो लोग कभी नहीं पिसे हैं, निराशाके हृदयवेधी अंकुश लगनेके पीछे जिनको आशारूपी जीवनदायिनी शांति नहीं मिली है उनके लिये तो यह समस्त वृत्तान्त किस्सा कहानी जान पडेगा; परन्तु जो लोग इन सताये हुए आर्यसंतानोंका हृदयविदारक आर्त्तनाद अपने कानोंसे सुन चुके हैं, जिन्होंने आंखोंसे देखा है कि मरहटोंके घोर अत्याचारसे राजस्थानका एक २ देश एक बार ही विध्वंस हो गया है; कितने नगर भस्म हो गये हैं, बिचारे किसानलोगोंके कितने ही खेत उजड हो चुके हैं और महाराष्ट्रियोंके घोडोंने अपने दांतोंसे जिनको छिन्न भिन्न कर दिया है, कितने गृहस्थोंका सर्वस्व लूटा गया और गाय, बैल, मरहटोंके डेरोंमें पहुंचे, तथा नगरवासी और गांवके रहनेवाले भेड बकरियोंकी नाई जंजीरोंसे बांधकर देशसे निकाले गये हैं;—वही लोग केवल समझ सकेंगे, कि बहुत दिनोंके पीछे दुःखसे छुटकारा पाकर मेवाडवासियोंने सुखका कैसा अनुभव किया था। जिस दिन उनके हाथ पैरोंसे जंजीरें दूर हुई, जिस दिन वह वनवासके लम्बे दुःखसे छुटकारा पाय विदेशसे चलकर अपने घर आये, जिस दिन मातृभूमिके शांति निकेतनमें आय पिता, पुत्र, भ्राता बहिन, बंधु, बांधव, इत्यादि बहुत दिनके पीछे एक

---

* दादे परदादेके रहनेकी भूमिको राजपूतलोग "बापोता" कहते हैं।

दूसरेको हृदयसे लगाकर आनंदके आंसू बहाने लगे;-शांतिका सुखदायी स्थान, संसाररूपी मरुभूमिकी शीतल छाया कुंज, हृदयकी आशा पिपासाका केन्द्रस्थल जो गृह इतने दिनोंसे छूट गया था,-जिस दिन वह समस्त लोग उन घरोंको लौट आये,-उस दिन उन लोगोंके हृदयमें आनंदकी जो मूर्त्ति स्थापन हुई थी उस मूर्त्तिको वह अपने वर्त्तमान जन्ममें नहीं भूल सके। श्रावण मासका वह तीसरा दिन मेवाडके लिये एक सुखमय दिन;-शिशोदियोंके आनंदका एक महायोग था। इसी दिन मेवाड-के छिन्न भिन्न और सताये हुए निवासी बहुत दिनोंके पीछे इकट्ठे होकर शांति सुखामृत-का पान कर रहे थे। समस्त प्रकारके प्रायः तीन सौ आदमी अपने अपने छकडे बहल इत्यादिकोंको ले हाथमें पताका उठाये गीत गाते हुए कुपासनकी ओर आगे बढने लगे। सबने अपने अपने छोडे हुए घरोंमें प्रवेश किया। पीछे समस्त घरोंको झाड बुहारकर भगवान् गणेशजीकी मूर्त्ति अपने अपने दरवाजोंपर लगाई और आनंदसहित अपने २ घरोंमें बास करने लगे। उस दिन (अंगरेज सर्कारसे संधि होने) से आठ मास पीछे ही मेवाडके तीन सौ नगर और ग्राम मनुष्योंसे भर गये। सभी अपनी जन्म भूमिमें आकर दोनों हाथ उठाय अंगरेज सर्कारको आशीर्वाद देने लगे। जो खेत बहुत दिनोंसे हलको नहीं छूने पाये थे, आज वह फिर अपनी रत्नभरी छातीको फाडकर अनंत धान्य देने लगे। कुसंस्कारसे ढके हुए लोग इन अद्भुत बातोंको देखकर समझने लगे "कदाचित् किसी दैवी शक्तिके प्रभावसे मेवाडका भाग्य फिरा है। नहीं तो जिन स्थानोंमें उलूक और गीदड व कुत्ते रहा करते थे, अतिशीघ्र वह किस प्रकारसे साफ सुथरे होजाते ?-नहीं तो वह खेत जो कि बन होगये थे,-जहांपर जंगली सूआ और हत्यारे जीवजंतु निष्कंटक राज्य भोगते थे,-अब किस मोहिनी मायाके प्रभावसे अपने स्वामियोंको कंदमूल, फल और धान्य देते हैं ? अंगरेज सर्कारके लिये यह साधारण गौरवकी बात नहीं थी कि उसकी असीम दयासे केवल सताये, दुःखपाये और निकाले हुए राजपूतगण गम्भीर दुःखसे छुटकारा पाकर फिर उन्नतिके सोपानपर पहुँचे। इस संसारमें जितने दिनोंतक राज-पूतोंका नाम रहेगा, जितने दिनतक सभ्यता, गौरव और स्वाधीनताका आदि स्थान, इस भारतवर्षका गौरव और इसकी दुर्दशाका बखान करनेके लिये एक भी इतिहासलेखक जीता हुआ बचेगा, उतने दिनतक बृटिनके इस महत्त्वको कोई नहीं भूल सकेगा।

मेवाडकी उन्नति करनेके लिये जो उपाय किये गये थे वही इस कार्यके लिये पूरे नहीं समझे जा सकते। विना उनकी सहायतासे मुख्य अभिप्राय किसी प्रकारसे सिद्ध नहीं हो सकते। बहुतसे नगरवासी और ग्रामवासी परदेशमें रहनेके क्लेशसे छुटकारा पाकर अपने देशको लौट आये, परंतु उनके पास ऐसा कोई सहारा नहीं था कि जिसकी सहायतासे वह शिल्प और वाणिज्य व्यौपारकी उन्नति कर सकें। जो विदेशी वणिक्, और व्यौपारी तथा सेठलोग मेवाडमें रहते थे महाराष्ट्रियोंके उपद्रवमें वह लोग मार-वाडको छोड कर अपने २ देशको चले गये और मेवाड जिनकी जन्मभूमि थी और जिन्होंने प्रचंड अत्याचारको सहन करके भी जन्मभूमिका रहना नहीं छोडा, ऐसे लोग

अन्यान्य मेवाडवालोंके समान अत्यंत ही दरिद्र हो गये थे। राजकोष सूना है, प्रजाके पास पैसा नहीं। जिन्होंने समस्त अत्याचारोंको सहन करके हृदयका दाव लगाय अपने इकट्ठे किये हुए धनको बचा लिया था, राणाजीने जब उन लोगोंसे ऋण माँगा तब वे ३६) सैकडेका सूद माँगने लगे। विवश होकर वही सूद देना पडा। इस लिये राणाजीका ऋण अधिक बढ गया था। इन समस्त संकटोंसे उद्धार प्राप्त होनेका दूसरा उपाय न देखकर राणाजीने विदेशीय वणिक और सेठोंको बुलाया। मेवाडकी दुर्दशा देखकर कदाचित् किसी बनियें या सेठको राणाका विश्वास न हो, इस शंका से बृटिश एजेंटने राणाका और अपना लिखा हुआ एक २ प्रतिज्ञापत्र उनके पास भेजा। परन्तु इसके सम्बन्धमें जो कुछ शंका एजेंटसाहबको हुई थी, वही आगे आई। भारतके वाणिकोंने मेवाडके समस्त नगरोंमें शाखा कार्यालय स्थापन किये; परन्तु मूल कार्यालयके स्थापन करनेकी किसीको हिम्मत नहीं पडी। उन समस्त शाखा कार्यालयोंमें उनका एक २ कारिन्दा देश काल और पात्रका विचार करके अपने कार्यका निर्वाह करने लगा। जिन बुरे नियमोंसे बाहिरी वाणिज्यकी उन्नतिके मार्गमें रोक होगई थी वह सब रोक टोक एक साथ ही जाती रही। तथा पण्यद्रव्यादि लाने ले जानेके लिये देशके स्थान २ में बहुत खर्चके कार्यालय स्थापन किये थे वह सब उठाकर उनके बदलेमें बहुत उत्तम बंदोबस्त किया गया। इस प्रकार मेवाडके वाणिज्य स्रोतके विरुद्ध जो रुकावटें थीं, उनके दूर होनेसे धीरे २ मेवाडकी उन्नति होने लगी।

मेवाडमें भीलवाडा नामक एक प्रसिद्ध वाणिज्य नगर है। पहिले ही कह आये हैं कि इस ही भीलवाडेको महाराष्ट्रियोंने भलीभांतिसे लूट लिया था। इसकी दुर्दशा पहिले ही कही जा चुकी है। आज बृटिश एजेंटके उत्तम बन्दोबस्तसे फिर भी यह नगर पहिली शोभाको प्राप्त करनेमें समर्थ हुआ। मानो उसकी ध्वंसराशिमेंसे अगणित बनियें और सेठ उत्पन्न होने लगे। इस प्रकार अल्पकालके मध्य ही भीलवाडेमें बनियोंकी बारह सौ दुकानें हो गई। इनमेंसे ६०० दुकानें विदेशी बनियोंकी थीं।

भीलवाडेकी गलियाँ जो कि टूटी फूटी पडी हुई थीं, आज वही बनठनकर अत्यन्त शोभायमान दिखाई देने लगीं। जहाँपर मनुष्यका नाम भी नहीं था, आज वहाँ दूरदूरके देशोंसे छकडोंमें भरकर व्योपारकी सामग्री आने लगी। सामग्रीकी खरीद बेचके लिये प्रतिसप्ताह पेंठ लगने लगीं और व्यौपारियोंका उत्साह बढानेको चारों ओर इस मर्मका घोषणापत्र प्रचारित हो गया कि "जो कोई इस पेंठमें बेचनेके लिये सामग्री लावैगा, उससे पहिले १ वर्षतक किसी प्रकारका राज्यकर नहीं लिया जायगा।" जिससे नगरमें शान्ति हो जाय, जिससे बनियोंके वाणिज्यको किसी प्रकारका नुकसान न पहुँचे इसके लिये भी राणाजीने भलीभांतिसे उपाय किये और ऐसे नियम चलाये कि नगरनिवासी अपने शांतिरक्षक और महसूल लगानेवालोंको स्वयं ही मनोनीति कर लेते थे। उन नियमोंका यथाविधिसे पालन होता है कि नहीं और नगरनिवासी गण

अपनी पूर्व स्वाधीनताको भोगते हैं या नहीं इन बातोंका विचार करनेके लिये एक कार्य-कारिणी सभा स्थापित हुई थी। इसीसे अनुमान किया जा सकता है कि उस काल भील-वाडेकी अत्यन्त उन्नति हुई थी। यहांतक कि जिस समय यह नगर दुबारा बसा उसके दो चार वर्ष पीछे ही प्रायः ३००० अटारियां बन गई। उन अटारियोंमें अधिकांशसे बनियें, सेठ और कारीगरलोग रहते थे। इसके अतिरिक्त नगरके बीचमें एक नया मार्ग बनाया गया, उसका समस्त व्यय महसूलकी आमदनीसे दिया गया था।

यद्यपि भीलवाडेके रहनेवाले शांति सुखको प्राप्त करते हुए उन्नतिके सोपानपर चढने लगे; परन्तु इस असार संसारमें सदा ही किसीको सुख नहीं मिला करता है यही दशा भीलवाडेके निवासियोंकी हुई। भीलवाडेमें जब विदेशी बनियें आ गये थे उनके साथ उनका घोर विवाद होने लगा। एक दूसरेको उन्नतिका मार्ग दिखाने और हिलमिलकर चलनेके स्थानमें परस्पर शत्रुता होने लगी। सभी अपने २ स्वार्थके वश होकर यह चाहने लगे कि अमुक२वस्तुका व्यापार हमीं करें दूसरा कोई न कर सके। परन्तु उनकी यह चेष्टा व्यर्थ हो गई इस विषमताके दूर होनेपर राणाजीने समझा था कि भीलवाडेमें शांति हो जायगी; परन्तु उनकी यह आशा फलवती न हुई। व्यौपारका वाद विवाद मंद हो जानेपर उन लोगोंमें धर्मका घोर विद्वेष होने लगा। भीलवाडेके हिन्दू वणिक और व्यौपारियोंमें वैष्णव और जैन नामक दो तन्त्र दिखलाई देते हैं इन दोनों सम्प्रदायोंमें विद्वेषकी अग्नि ऐसे प्रचण्ड वेगसे जल उठी कि शांतिके लिये दोनों दलवालोंको न्याया-लयका आश्रय लेना पडा। इससे दोनों ओरकी हानि हुई। कारण कि अवसर पाकर विचारालयके कीडे चालाकीके द्वारा उन सबसे ही धन लिया करते थे, इन्हीं समस्त कार-णोंसे भीलवाडेकी उन्नति बहुतायतसे रुक गई। राणाजीने समझा था कि भीलवा-डेको मध्य भारतका प्रधान वाणिज्य स्थान बनावेंगे; परन्तु उनकी वह आशा पूरी न हुई।

मेवाडमें शांति स्थापन और उन्नति करनेके लिये दो तीन उपाय विचार कर प्रयोग किये गये थे, उनमेंसे केवल व्यौपारियोंका वृत्तांत यहांपर वर्णन किया गया। शेष दोमेंसे सामन्त प्रथाका संस्कार साधन करना सबसे कठिन जान पडने लगा, किसान और बनियोंको तो उत्साहने ही ठीक कर दिया, वह लोग उसीसे अपने देशकी वृद्धि करनेके लिये प्राणपणसे परिश्रम करेंगे। परन्तु सामन्त लोगोंका संस्कार साधन कर-नेमें बहुतोंको कुछ २ छोडना पडेगा। उस स्वार्थत्यागका उचित बदला किसीसे नहीं हो सकता। परन्तु यह बात नहीं थी कि समस्त सामन्तोंको ही अपना स्वार्थ छोडना पडे। वरन दो चार ऐसे भी हैं कि जिनको इस अनुष्ठानसे लाभ भी होगा। इसके प्रमाणमें कोठारियोंके सरदारका नाम लिया जा सकता है, इस कार्यसे उसकी कोई हानि नहीं हो सकती। परन्तु देवगढ, सलम्बूर या बिदनौरके समान जो लोग विदेशियोंकी सहायतासे कपटजाल फैला कर अथवा खड्गके बलसे अपनी प्रभुताको अखण्ड रखनेका सदा यत्न करते हैं; उनके मनमें ऐसी शंका हुई कि इस कार्यसे हमारी बहुत हानि

होगी। क्यों कि उन्होंने अपना स्वार्थ साधनके लिये जिस टेढी चालको ग्रहण किया था, राज्यमें शांति होनेसे उनकी वह चाल बिगड जायगी। पचास वर्षकी अराजकतासे जो अत्याचार करके अपनेको तृप्त किया जो आज उनका हिसाब देना पडेगा; आज उनको अपनी२ भूमिवृत्तिके पट्टे बदलने पडेंगे। इसी प्रकारकी शंका उनके हृदयको व्याकुल करने लगी। इसके अतिरिक्त सरदारोंमें जो साम्प्रदायिक विद्वेष विराजमान था उसका दूर करना तथा परस्परमें एक दूसरेकी भूमि सम्पत्तिके छीननेवालेका निराकरण करना यह दो कर्तव्य भी आवश्यकीय समझे गये। इनमेंसे पहिले कर्तव्यका विचार करके राणाजी अत्यन्त दुःखित हुए। वह जानते थे कि;-"शेर और बकरीको एक घाटपर पानी पिला लिया जा सके परन्तु राजा और राज्यके मंगलार्थ चंदावत और शक्तावतोंको एक-साथ मिलाकर कार्य्य कराना सब प्रकारसे असम्भव है।" इसी कारण मेवाडका संस्कार साधन करनेमें सभीलोग हताश हो गये। शक्तावत सरदार जोरावरसिंहने हताश होकर कहा "अगर स्वयं परमेश्वर भी अवतार ले आवे तो वह भी मेवाडका संस्कार नहीं कर सकेगा।"

इस महान कर्तव्य साधनके लिये जो उपाय किये गये उन सबका वर्णन करना यहां-पर निष्प्रयोजन है। बहुतसी सभा की गई, बहुतसे तर्क वितर्क हुए परन्तु किसीसे कुछ न हुआ। मेल मिलापके स्थानमें चंदावत और शक्तावतोंमें शत्रुता दिन २ बढने लगी। अंगरेज सरकारके साथ जो संधि हुई थी, वह उसी वर्षकी २७ अप्रैल को सबके सामने पढी गई और संधिसे उनकी सरदारीमें जिस प्रकार अदल बदल किया गया था वही भलीभांतिसे समझाया गया। पीछे एक अधिकारपत्रिका बनाई गई। उसमें यह लिखा था कि राजा और सामन्तोंका अधिकार किस किस विषयमें पूर्ण रह सकता है। प्रगट सभामें उस पत्रिकापर हस्ताक्षर करनेके लिये राणाजीने एक दिन नियत किया, सबके मता-नुसार मईकी पहिली तारीख इस कार्य्यको निर्वाह करनेके लिये सोची गई। वसन्तके सखा अप्रैल मासके बीतनेपर सूर्य्यभगवानकी किरणोंको शिरपर धारण किये हुए मई मास संसारमें दिखाई दिया। सामन्त लोग अपने २ भाग्यकी परीक्षा करनेके लिये इकट्ठे हुए, अधिकारपत्रिका पढी गई; उसके सूत्रोंपर अनेक प्रकारका वादानुवाद होने लगा, उस दिन कोई बात निश्चय न हुई, बहुत आंदोलनके पीछे भी जब कुछ निश्चय न हुआ तब देवगढका गोपालदास सब सरदारोंकी ओरसे मुखिया बनकर खडा हो राणा-जीसे कहने लगा, "महाराज! आज कुछ नहीं हो सका; सबकी यही इच्छा है कि मेरे स्थानपर इकट्ठे होकर यह लोग इस बातका विचार करेंगे; इसमें महाराजका क्या अभिप्राय है?" राणाजीने इसमें कुछ आपत्ति न की और भी दो दिन बीत गये सब ही इस कठिन मीमांसाको जाननेकी बाट देखने लगे। चौथे दिनके आते ही उदयपुरकी विशालसभामें बहुत भारी भीड हुई। समस्त दर्जोंके सरदार, सेनापति और सिपाही आये। जो लोग पीडा अथवा और किसी कारणसे नहीं आ सके उन्होंने अपने२ प्रतिनि-धिको भेजा। अपने पुत्रोंके साथ राणाजी अपनी ऊंची गद्दीपर बैठे थे। परंतु उस दिन

भी सहजसे इस बातकी मीमांसा न हो सकी। समस्त दिनको बिता कर भगवान दिननाथ अस्ताचलको चले गये तो भी कुछ न हो सका। धीरे २ रात हो आई, आधी रात हुई तो भी किसी बातकी मीमांसा न हुई;--अनंतर जिस समय प्रभातकालकी छटादार ललाई आकाशमें थोडी २ दिखाई देने लगी;--उस काल पांचवीं मईके दिन आधी रातके तीन बजे समस्त सरदारोंने उस पत्रिकापर हस्ताक्षर किया इन पन्द्रह घंटोंमें राणाजीने जैसे सुविचार और जैसी दृढताके साथ कार्य किया था उससे बहुतोंको यह आशा होगई थी कि राणाजीसे मेवाडकी बहुत कुछ उन्नति होगी।

इस प्रकार निश्चय और अधिकार पत्रिकापर हस्ताक्षर होजाने पर सन्धिके * नियमोंका पालन करना और कराना विशेष प्रयोजनीय होगया। सबने ही

---

* राणाजीकी की हुई संधि इस प्रकारसे है;--

" सिद्धश्रीमहाराजाधिराज महाराणा भीमसिंहके द्वारा,--हमारे राज्यके समस्त सरदार, बन्धुवर्ग व आप्तइष्ट, राजा, पटैल, झाला, चौहान, चन्दावत, पँवार, सारंगदेवत, शक्तावत, राठौर और राणावत् इत्यादिकोंको।"

"गत संवत् १८२२ (सन् १७७६ ई०) से जबसे कि राणा अरिसिंहजी गद्दीपर बैठे थे उस समयसे मेवाड़में अस्वास्थ्य उत्पन्न हुआ। पुरानी रीति और कारभार दूर होकर अव्यवस्थाने देशपर अधिकार किया। इस कारण आज वैशाख वदी १४ संवत् १८७४ (सन् १८१८ ई०) के दिन मैंने अपने समस्त सरदार, माननीय व मांडलीक ठाकुरोंकी सभा करके उनको अपने २ कर्त्तव्य पालनके लिये सन्मार्ग बतानेको नवीन रीति व नये प्रकारका एक निश्चय प्रगट किया है।"

" (१) राणाकी मालिकीके या राणाजीके आधीन जो देश उपरोक्त अंधाधुन्धके समय जिस किसीके पास चली गयी है; अथवा किसी सरदारकी ज़मीन किसी दूसरे सरदारके पास चली गयी है, अथवा कोई ठाकुर उसका मालिक बन बैठा है समस्त देश या ज़मीन उस असली मालिकको मिलना कर्त्तव्य है।"

"(२) उपरोक्त समयसे ही रखवाली, भूमि (लोकसंरक्षण कर) व लगान, कर जो लगाये गये वह इस समय उठा दिये गये।"

"(३) धन और विश्वनामक कर कि जिनपर केवल राणाका ही अधिकार था उठा दिये गये।"

"(४) प्रत्येक सरदार तथा ठाकुरको अपनी २ सीमामें अत्याचार, बलात्कार, चोरी, लूट खसोट नहीं करना चाहिये, या नहीं करने देनी चाहिये। उनको उचित है कि अपनी सीमामें ठग, बटमार, लुटेरे आदिको मार्ग न दें। परन्तु वहलोग जो अपने धन्धेको छोड देशमें निरुपद्रवसे रहकर अपना कुछ दूसरा कार रोजगार करें, तो उनको रहनेकी आज्ञा दें। यदि उनमेंसे फिर कोई लुटारूपनका कार्य करके प्रजाकी शांतिको भंग करे तो उसका शिर काटना उचित है। वह धन जो ऐसे लोगोंके पाससे निकले वह उसको जब्त करलेना उचित है कि जिसकी सीमामें यह लूट खसोट हुई हो।"

"(५) देशी, परदेशी, उद्यमी, व्यापारी, काफले, बनजारे या और जो कोई अपने देशमें आवें अथवा अपने देशमें भ्रमण करें; सब प्रकारके उपद्रवोंसे उनकी रक्षा करनी चाहिये। जो कोई इस नियमको पालन न करके व्यौपारियोंको हानि पहुंचावेगा; उसकी समस्त मिलकियत जब्त होकर दंड स्वरूप सरकारी खजानेमें दाखिल हो जायगी।"

"(६) जैसी आज्ञा हो, उसके अनुसार मेवाड या मेवाडके बाहर समस्त सरदार आदिको अपनी अपनी नोकरी करनी चाहिये। सरदार व ठाकुरोंके चार भाग हुए, प्रत्येक भागको तीन २ मास--

यह निश्चय किया कि शीघ्रतासे हो या विलम्बसे हो इन सूत्रोंका यथाविधिसे पालन करना चाहिये । थोडे ही महीनोंमें सन्धिपत्रके नियम पालन किये गये । जिस प्रकारकी शान्ति और भलमनसाहतके साथ इस संधि पत्रपर हस्ताक्षर हुए थे और जैसे इसका कार्य सिद्धि हुआ था इससे किलीमें कोई लडाई झगडा न हुआ, एक बार भी किसीको बंदूक न चलानी पडी, यहां तक कि उदयपुरके आसपास सौ मीलतक एक भी ब्रिटिश सिपाहीकी आवश्यकता नहीं हुई ।

एक २ करके समस्त संस्कार पूरे हुए । देशसे निकाले हुए सरदारोंको बुलाया गया, उपद्रवी सरदार दबाये गये, वणिज व्यौपारकी उन्नति हुई:—यह समस्त कार्य्य बृटिश एजंट महात्मा टाडसाहबकी चेष्टा और यत्नसे पूरे हुए थे । परन्तु विद्रोही और अत्याचारी सरदारोंने मेवाडकी जिन जमीनोंको अन्यायसे ले लिया था, उन समस्तका उद्धार करना सब कार्योंकी अपेक्षा कठिन ज्ञात हुआ । क्योंकि उन भूमियोंके छुडानेमें अत्याचारी सरदारोंसे जरूर झगडा होनेकी सम्भावना है, वह लोग सहजसे उन जमीनोंको नहीं देना चाहेंगे । कोई तो चार पुरुषके स्वत्वाधिकारका प्रमाण दिखावेगा, कोई वि-

---

—दरबारकी सेवामें हाजिर रहना उचित है । प्रत्येक भागकी नौकरी तीन मासकी हुई अब उन भागोंके समस्त सरदारोंको नौ महीनेतक अपने २ स्थानमें रहनेकी आज्ञा मिलेगी । केवल दशहरेपर समस्त सरदारोंको अपने २ प्रबन्धसे उदयपुरमें आना चाहिये । दशहरेसे १० दिन पहिले और २० दिन पीछे अर्थात् एक मासतक उनको अपनी हाजिरीसे अतिरिक्त उदयपुर "राजधानीमें रहना" योग्य है । तदुपरान्त उसको घर जानेकी आज्ञा मिलेगी । आवश्यकीय समयपर या दूसरे किसी अवसरपर जब दरबार चाहेगा सरदारोंको बुला लेगा, उस समय भी सबको आना उचित है ।"

"(७) प्रत्येक पट्टावतको दरबारसे स्वतन्त्र पट्टा लेना चाहिये व उसको स्वतन्त्रतासे दरबारकी सेवा करना योग्य है । बडे पट्टेवालेसे उसका कोई सम्बन्ध नहीं रहेगा, तथा उसकी सेवामें रहनेकी भी आवश्यकता उस पट्टेदारको नहीं । प्रत्येक सरदारके दखलमें जो कोई सहकारी हो, उसको निकट रहते हुए पट्टावतसे सम्बंध या अवलम्ब रखना चाहिये ।"

"(८) महाराणाकी ओरसे प्रत्येक सरदार और ठाकुरको उसकी योग्यताके अनुसार मान सन्मान दिया जायगा ।"

"(९) प्रजापर किसी प्रकारका अत्याचार नहीं होगा, नवीन प्रकारके कर भी नहीं लगाये जायँगे । और विशेष कुछ दण्ड भी नहीं किया जायगा ।

"(१०) ठाकुर अजितसिंहके द्वारा अंगरेजोंसे की हुई संधिको मैं स्वीकार कर चुका हूं, सबको ही उसको मान्य करना चाहिये ।"

"(११) इन नियमोंके अनुसार व्यवहार करनेमें जो कोई त्रुटि करेगा अथवा कोई अपमान या उपेक्षा दिखलावैगा, उसको मैं दंड दूंगा । तदनन्तर उसकी कोई शिकायत मुझपर न रहैगी । इन समस्त नियमोंको जो कोई न माने उसको राजशासनके अतिरिक्त एकलिङ्गजीकी व स्वयं महाराणाकी शपथ है ।"

इस प्रकारका यह संधिपत्र लिखा गया था । समस्त सरदार और ठाकुरोंके जो हस्ताक्षर हुए थे उनके लिखनेकी आवश्यकता यहांपर नहीं समझी जाती ।

द्रोही हो जायगा। इसी कारणसे यह कार्य कठिन समझा गया। बहुत दिनतक तर्क वितर्क हुए परन्तु शीघ्र कोई फल न निकला। राणाजी सब सरदारोंको बुलाकर अनेक प्रकारके मधुर वाक्योंसे सबके हृदयको नरम करने लगे, और अतीत घटनाओंका चित्र सामने लाकर अनेक प्रकारसे समझानेकी चेष्टा करने लगे। मेवाडके उस स्वर्ण युगमें गिह्लौटकुलकी स्वाधीनताके गौरवकालमें तुम्हारे ही पुरुषोंने मेवाडकी स्वाधीनता, मेवाडके गौरवगरिमा, मेवाडकी सुखशांति बचानेके लिये किस प्रकार वीरोंकी नाई अपने प्राण दिये थे और तुम लोग उन्हींके वंशधर होकर अपने देशका नाश करोगे? क्या तुम-लोगोंका जन्म मेवाडमें नहीं हुआ है? क्या तुम उन सरदारोंके वंशधर नहीं हो कि जिन्होंने चित्तौडके लिये, मेवाडके लिये, अपने तन, मन, धनको वार कर दिया था? उस स्वाधीनताके लीलाक्षेत्र मेवाडमें जन्म ग्रहण करके स्वदेशानुरागी महात्माओंके पवित्ररक्तसे देह परिपुष्ट करके क्या मेवाडके वर्तमान सरदार अपने स्वार्थके आगे "स्वर्गादपि गरीयसी" जन्मभूमिकी ओर दृष्टि न डालेंगे इत्यादि बहुतसी बातें राणाजीने कहीं। आनंदकी वार्ता है कि धीरे २ उनकी चेष्टा फलवती होने लगी, सरदारोंका कठोर हृदय धीरे२ नरम होने लगा, ज्ञानके नेत्र खुलने लगे। जैसे जैसे समय बीतता था वैसे ही वैसे वह चित्र उनके हृदयपर गहरा खुदता जाता था। मानो किसी अपूर्व दैवी शक्तिके प्रभावसे सरदारोंका पूर्वभाव लोप होने लगा। अपना कर्तव्य, और मातृभूमिकी अवस्थाका विचार करके राणाजीकी सम्मतिका अनुमोदन किया और जिनके बडे बूढोंने मेवाडकी भूमि सम्पत्तिको अन्यायसे ले लिया था वे सब उनके देनेको राजी हो गये। इस प्रकार छः महीनेके ही बीचमें यह कठिन कार्य होगया।

जिस समय मेवाडका यह संस्कार हो रहा था उस समय बहुतसे राजपूतोंका वीरचरित्र प्रस्फुटित हो गया था। उनमें दो एकका वृत्तान्त नीचे लिखा जाता है। मेवाडमें अरझा नामक एक किला है, यह किला पहले राणाजीके अधिकारमें था अनन्तर पुरावत गोत्रके सरदारोंने बलपूर्वक उसको अपने अधिकारमें कर लिया। फिर प्राय: १५ वर्ष पीछे शक्तावतोंने पुरावतलोगोंके हाथसे अरझाको छीन लिया और राणाजीको दश हजार रुपये देकर उसकी सनद अपने नाम करा ली। शक्तावत लोग इस अरझा किलेको अपनी जीतका एक प्रधान निदर्शन समझते थे। भाइन्दरके ठाकुरका बिचला भाई इस समय उस दुर्गपर अधिकार कर रहा था। इस समय अरझाको लौटा लेना अत्यन्त आवश्यकीय समझ कर राणाजीने फतेसिंहको इसकी सूचना दी। इससे शक्तावत वीर दुःख और अभिमानसे अत्यन्त पीडित होकर कह उठा "अरझा, हमारे हृदयका रुधिर है, हृदयके रुधिरको देकर हमने अरझा पायी है, इसको लौटा देनेसे हमारी मान मर्यादा नष्ट हो जायगी।" क्रमानुसार समस्त शक्तावतोंने इसके वृत्तान्तको सुना उनका हृदय अत्यन्त व्याकुल हुआ। यदि उनके ४३ शहर और गांव ले लिये जाते तो भी वह इतने व्याकुल न होते। राणाजी अत्यन्त विपत्तिमें पडे। शक्तावत ठाकुर मेवाडके प्रधान बल हैं, इनके विद्रोही होनेसे देश रसातलको

जायगा । अतएव उनके सम्मानकी रक्षा करना सब प्रकारसे उचित है । अन्तमें यह निश्चय हुआ कि अरझा पुरावत लोगोंको न देकर राजकोषमें मिला दिया जायगा । इसमें फिर कोई झगडा न हुआ । तब फतेसिंह और उसके बडे भाईने सहजसे ही राणाजीको अरझाका अधिकार दे दिया । मई मासकी चौथी तारीखको जो सन्धि हुई थी उसके कार्यमें विघ्न करनेवाले बिदनूर और अमायतके दो भयंकर सरदार थे । यह दोनों ही ऊंची श्रेणीके सरदार थे । दोनोंहीके बडे बूढोंने मेवाडके पूर्व गौरवकी रक्षा की थी । परन्तु दुःखकी बात है इन दोनोंने बडे बूढोंकी चालपर न चलकर अपने पवित्र वंशको कलंकित किया । पहले सरदारका नाम जैतसिंह था । राठौर कुलकी अत्यन्त शूर मैरितिया नामक शाखामें इसका जन्म हुआ था । राणा कुम्भकी प्रियतमा भार्य्या मीराबाईके साथ जैतसिंहके बडे बूढे मारवाडको छोडकर मेवाडमें आये थे ।

जयमलकी जो अलौकिक वीरता आज भी राजपूत लोग अभिमानके साथ बखान किया करते हैं; इसकी अनुपम वीरता और शूरतासे मोहित होकर परम शत्रु अकबरने अपनी राजधानीके तोरणद्वारपर उसकी पत्थरकी मूर्ति बनाई है । उस वीरश्रेष्ठ महात्मा जयमलने इसी पवित्र मेडतागोत्रमें जन्म लिया था । जयमलके वंशवालोंने अबतक अपनी मान मर्यादाको भलीभांतिसे बनाये रक्खा, यदि जैतसिंह इस समय उस ऊंचे सम्मानसे अलग कर दुष्टोंका सा कार्य करेगा तो उस वंशका अपमान होनेमें सन्देह नहीं। राणा समझे थे कि राठौर सरदार जैतसिंह हमारा कहना मान लेगा, परन्तु यह उनकी भूल थी, सन्मान छीन लेनेवालेके गुण किसीने नहीं गाये हैं ! कोई बुद्धिमान् ऐसा नहीं करेगा । जैतसिंहके साथ राणाजी जैसा व्यवहार करनेके लिये तैयार हुए, उससे जैतसिंहने समझ लिया कि अब राणाकी सामर्थ्यका दबाना कठिन है । यह समझ कर उसने अत्यन्त शोकसे राणाजीकी प्रार्थना की । "आपकी आज्ञा हो मैं अपनी भूमिवृत्तिको त्यागकर मेवाडको छोडे जाता हूं ।" इस अभिप्रायको सिद्ध करनेके लिये जैतसिंह महलके आंगनमें खडा हो गया । बहुतोंने समझाया बुझाया परन्तु वह वहींपर खडा रहा । अन्तमें दूसरा उपाय न देखकर राणाजीने इसकी मीमांसाका भार पोलिटिकेल एजेन्ट टाडसाहबके हाथमें सौंपा ।

प्राचीन कालसे ही पवित्र गिल्हौटकुलमें यह नियम चला आता है कि कोई सरदार मुख्य करके अपने अभिप्रायको सिद्ध करनेके लिये किसी समय स्वयं राणाजीसे प्रार्थना नहीं कर सकता । कारण कि ऐसा करनेसे राजसन्मानमें बाधा पडती है । जैतसिंह मेवाडके मन्त्रियोंसे आन्तरिक घृणा करता था । उसके मनमें यह निश्चय था कि यह मन्त्री लोग रिश्वत लेकर प्रत्येक मनुष्यका काम कर दिया करते हैं । इससे ही यह रिश्वत देनेको बहुत बुरा समझता था । यही कारण था जो राणाजीकी मन्त्रीसभामें इसके बहुतसे शत्रु थे । उसके अधिक शोकित होनका विशेष कारण यह भी था कि बिदनौरका यह स्वामी था । ३६० बस्तियें और मौजे बिदनौरके अन्तर्गत थे । उन

सबका भी स्वामी जैतसिंह ही था। सामन्त प्रथाके अनुसार वह समस्त बस्तियें और मौजे उसने अपने अधीनके सरदारोंको बांट दिये थे। जैतसिंह उन कार्योंको करनेके लिये तैयार होता था जो कि उसकी सामर्थ्यसे बाहर होते थे। जिन कार्योंमें राणाजीके अतिरिक्त और किसीको हस्तक्षेप करनेका अधिकार नहीं था यह उनमें भी हाथ डालना चाहता था। इससे राजतन्त्रका अपमान होता था। जिन लोगोंके हाथमें उन बस्ती और मौजोंका शासनभार अर्पित था, वह समस्त ही तीसरे दरजेके सामन्त थे। मेवाडवाले उनको "गोल" नामसे पुकारा करते थे। मेवाडमें जिस समय वेतनभोगी सेना रखनेकी रीति नहीं थी, उस समय यह "गोल" नामक सरदारगण मेवाडकी स्वाधीनता तथा गौरवको बचानेके लिये संग्राममें अपने प्राण दे दिया करते थे। उस समय उनकी वीरता ही राणाकी प्रभुताके रक्षा करनेमें प्रधान उपाय समझी जाती थी। अस्तु;-राजपूत हितैषी राजनीतिज्ञ महोदय टाडने उस विषादित सरदारके पास पहुंचकर धीरे २ कहा, सरदार चूडामणि आपने वीर केशरी जयमलके पवित्र वंशमें जन्म लिया है; जिसके वंशमें जन्म लेनेके कारण आपकी बडाई है। एक बार उसकी अलौकिक वीरता और अद्भुत प्राणोत्सर्गका कार्य विचार कर देखिये, जरा ध्यान तो कीजिये कि उस स्वर्गीय वीरने मुगल बादशाह अकबरके आक्रमणसे चित्तौरपुरीको बचानेके लिये संसारमें कैसा प्रकाशमान चित्र छोडा है! परन्तु आप क्या करते हैं? इसमें कोई सन्देह नहीं कि आप उस वीरकेशरीके योग्य वंशधर हैं; परन्तु आपका वह आत्मोत्सर्ग तथा आपकी वह अपूर्व राजभक्ति कहां है?" टाडसाहवकी इन बातोंने सरदार जैतसिंहके हृदयमें जादूका सा काम किया;-उसका कठोर हृदय पानी हो गया, नेत्रोंसे आंसू गिरने लगे। अब अधिक न रहा गया और अपने हाथसे वह दानपत्र एजेंट साहबके हाथमें दिया। इस कार्यका सिद्ध करना बहुत ही कठिन था। इस बातका प्रमाण जैतसिंहके लिखे हुए मन्तव्यको पढनेसे प्राप्त होता है। जैतसिंहने अपनी प्रार्थनामें लिखा था; कि-"जब कि उनके (राणाके) कुटुम्बी भी उनको छोडकर चले गये थे तब मैंने प्राणपणसे उनकी सेवा की थी। विद्रोहके समय जब कि समस्त सरदारोंने उनके विरुद्ध खड्ग धारण किया था उस समय भी हम चार आदमियोंने उनके लिये प्राण तक देनेमें कसर नहीं की। परन्तु आज जयमलके वंशधरके वह समस्त कार्य भूल गये, इस समय एक "लुटेरा" उनका प्यारा मुसाहिब है। * वीरवर जयमलके वंशधर जैतसिंहका वाक्य सुनकर राणाजीने परम प्रसन्न हो उसको बिदनौरमें भेज दिया। इस ओर भदेश्वरका सरदार मानसिक दुःखके मारे शिर झुकाए हुए अपने नगरको चला गया।

भदेश्वरके जिस सरदारका वर्णन ऊपर किया गया उसका नाम हमीर था। चन्दावत गोत्रमें इसका जन्म हुआ था; दूसरी श्रेणीकी सरदारी उसको मिली थी। जिस सर-

* भदेश्वरके सरदार हमीरने रानीके विवाहका दहेज लूट लिया था; इससे ही वह "लुटेरा" कहा गया।

दारसिंहने × अभागे प्रधानमन्त्री सोमाजीको मार डाला था, वह हमीर उसका ही पुत्र था। हमीरको पिताकी सम्पत्तिके मिलनेपर साथ २ में ही गर्व और आभिमान भी प्राप्त हो गया। हमीर उपद्रवी सरदारोंका नायक था। समस्त राजस्थानके लोग उसको "दौरात्" (दौरात् शब्दका अर्थ तेज चलनेवाला है;--परन्तु राजपूतगण दस्यु हमीरके लूट खसोट करनेकी शीघ्रता सूचित करनेको "दौरात्") कहा करते हैं। अपने पदानुसार यद्यपि वह वार्षिक ३००००) रुपयेसे अधिककी सम्पत्तिको नहीं भोग सकता था, तथापि वह बल विक्रमकी सहायतासे अस्सी हजार रुपयेकी सम्पत्तिको अपने दखलमें किए हुए था। हमीरसिंह कपटकी राजभक्ति दिखाय राणाजीको लुभाता हुआ सदा ही सभामें विराजमान रहता था। लाव्हाका शक्तावत सरदार उसका भारी मित्र था। उस समय इसके पास खैरोदा किलेका अधिकार था। इन दोनोंका स्वभाव एकसा ही था, दोनोंने ऐसी चालाकीसे राणाके मनको मोहित किया था कि यह लोग उस समय भी अपनी भूमि सम्पत्तिको बेखटके भोग रहे थे कि जिस समय राणाजीने दूसरे सरदारोंकी जागीरें छीन ली थीं इस प्रकारसे कुछ दिन बीत गये। अनन्तर मंत्रीने लाव्हा सरदारपर राणाजीकी आज्ञा प्रचारित की "जबतक आप खैरोदा किला तथा छीनी हुई अन्यान्य भूसम्पत्ति न लौटा देंगे तबतक राजसभामें आपका प्रवेश करना वर्जित है।" इस आज्ञाको सुनते ही हमीर जल गया और गर्वसहित अपनी मूछोंपर हाथ फेर कर बोला कि "अपने पूर्वपुरुष सोमाजीकी दुर्दशा याद रखना!"

तेजस्वी हमीरका स्वभाव दिन २ प्रचंड होने लगा। यद्यपि उसके दुर्द्धर्षभावका अनुकरण करनेकी किसीको सामर्थ्य नहीं थी, परन्तु आश्चर्यकी बात है कि बहुतसे आदमी उसकी प्रशंसा किया करते थे। विशेष करके उसके साथी इस बातका बहुत ही आनन्द करते थे। हमीरका दुर्द्धर्ष व्यवहार दिन २ बढने लगा। उसको दमन करनेमें राणाजीको चुपचाप देखकर सबको स्पष्ट विदित हो गया कि भय या अनुग्रहके कारण राणाजी उससे कुछ नहीं कहते। एजेंट साहब उस कार्यका भार लेकर अवसरकी बाट देखने लगे। शीघ्र ही वह सुअवर भी आ गया। जो राजकर्मचारी उस

× सरदारसिंहको इस कुकर्मका फल भलीभांतिसे मिल गया था। उस प्रायश्चित्तका वृत्तान्त पढनेसे मालूम हो जाता है कि राजपूतजातिमें बदला लेनेका कैसा घोर उत्साह है। मरहठोंके उपद्रवके समय अमीरखाँ और उसका जमाई तथा प्रतिनिधि जमशेद उदयपुरमें अपनी सेनाको डाले हुए राजधानीको तथा उसके मौजोंको लूट रहे थे। सरदारसिंहका प्रताप उस समय बहुत बढ गया था। एक दिन जमशेदने उसको पकडकर ३००००) रुपयोंके लिये अपने डेरेमें कैद रक्खा। सरदारसिंह ३००००) रुपया न दे सका। उस समय दीवान सोमजीके दोनों भ्राताओंने यह रकम देकर सरदारसिंहको जमशेदसे मोल ले लिया। सरदारसिंहके सरदार और सामन्तोंने जैसे ही इस समाचारको सुना वैसे ही वह अपने स्वामीका उद्धार करनेका उपाय करने लगे। इस ही अवसरमें दीवान सोमजीके शिवदास और सतीदास नामक दोनों भाइयोंने अपने भाईका बदला लेनेको सरदारसिंहका शिर काट डाला और वह शिर रामपियारीके महलके द्वारपर लटकवाया। इस क्रूर कार्यको करनेके उपरान्त शिवदास और सतीदास भी शत्रुकी छूरीसे मारे गये थे।

किलेको अधिकारमें करनेको गये थे, किलेवालोंने उनका अपमान करके उनको किलेमें नहीं घुसने दिया। अपमानके सहनेके कारण वे उदयपुरमें चले आये। राजाज्ञा * के ऐसे अपमानसे एजेंट साहब बहुत ही दुःखित हुए; उन्होंने अपमानकर्त्ताको भारी दंड देना निश्चय किया। जिस समय वह समाचार आया उस समय राणाजी अपने समस्त इष्टमित्रोंके साथ सूर्यद्वारकी सभामें बैठे थे। अन्यान्य सर्दारोंके साथ हमीर भी वहाँ बैठा था। एजेंट साहबने वहां पहुंचकर मंत्रियोंके द्वारा अपने आनेका समाचार राणाजीको दिया, तदुपरान्त सभामें जाकर शिष्टाचार सहित मंत्रीसे कहा; "आपके राणाजीका जो दुर्ग हमीरके पास था, उसका अधिकार ले लिया गया ?" सबको ही शंकित देखकर एजेंट साहब समझ गये कि पूर्वोक्त वृत्तान्तको समस्त उदयपुरवाले जान गये हैं। परन्तु उन्होंने राणाजीसे इस प्रकार वाक्यारंभ किया कि मानों उस अपमानकी उन्हें खबर ही नहीं है। कुछ बातचीत होनेके उपरान्त राणासे कहा--"श्रीमान्‌की आज्ञाका ऐसा अपमान हो जाता है,यदि मैं इस समय उदयपुरमें रहूंगा तो बृटिशगवर्नमेंट मुझको दोषी समझेगी। अतएव श्रीमान्‌के अपमानकर्त्ताको यथायोग्य दंड देनेके लिये विशेष चेष्टा की जायगी।" एजेंटसाहबके ऐसे उत्साहित वचन सुन कर राणाजीको भी साहस हुआ और उन्होंने अपने सन्मानको अचल रखनेके लिये यह कहना आरंभ किया--"सर्दार और सेनापतिगण ! मेरी इच्छा नहीं है कि आप लोगोंके ऊपर किसी प्रकारका कठोर अथवा अन्याय व्यवहार किया जाय; परन्तु इसके द्वारा आप लोग ऐसा न समझें कि अपनी मर्यादा और सन्मानके अचल रखनेको मैं उचित कार्य न करूंगा।" फिर उसी समय "बीडा" लानेकी आज्ञा दी। शीघ्र ही उनकी आज्ञाका पालन किया गया। पीछे हमीरको कठोर वाणीसे आज्ञा दी। "तुम अभी मेरे सामनेसे दूर होकर एक घंटेके बीच इस नगरको छोड कर चले जाओ।" राणाजी इतने कोपित हो गये थे कि यदि एजेंट साहब उनको न रोकते तो वह निश्चय ही हमीरको देशसे निकलवा देते। साथ २ में इस आज्ञाका भी प्रचार हुआ कि जबतक हमीर छीनी हुई भूमि सम्पत्तिको वापिस न करे,तबतक उसकी समस्त सम्पत्ति सरकारमें जप्त रहेगी। हमीर निराश हुआ, इस समय उसकी चाल चूक गई,कार्य उलटा हुआ। वह अत्यन्त दुःखित हो उस ही रात्रिमें उदयपुरको छोडकर चला गया। अपने नगरमें पहुँचकर केवल छीनीहुई सम्पत्ति ही राणाको नहीं दी, वरन उसने वह भी दे दिया कि जिसका विचार राणाजी या टाडसाहबको भी नहीं हुआ था। हमीरने अपने भदेश्वर किलेका अधिकार भी राणाजीको सौंप दिया। सबहीने आश्चर्यके साथ देखा कि--शिशोदीयकुलकी लाल पताका भदेश्वर दुर्गके ऊपर फहरा रही है। *

---

* हमीर और लाल्हासरदारका अभिमान व दुराचार बढता हुआ देखकर राणाजीकी आंखें खुलीं; तब उन्होंने उनके दुर्गपर अधिकार करनेको आदमी भेजे थे।

* टाडसाहब कहते हैं कि "इस बातसे एक वर्षके पीछे सरकारी कार्यके लिये मुझको कोटे जाना पडा मार्गमें नीमबहेडा भी देख लिया, घोडेपर जानेसे नीमबहेडेसे हमीरका दुर्ग प्रायः एक घण्टेका मार्ग

एक सरदारका वृत्तान्त यहां पर और भी लिखा जाता है। आमली किला और उस-की समस्त सम्पत्ति २७ वर्ष तक अमाइतके सरदारके पास थी। प्राय: ५० वर्षसे उस सम्पत्तिपर अमाइतवालोंका अधिकार था। अमाइतके सरदार गण जगवतकुलमें उत्पन्न होकर मेवाडके सोलह सरदारोंमें गिने जाते थे। बिदनोरके सरदारके नीचे यदि कोई राजभक्त समझा जाता था तो वह अमाइतका ही सरदार था। जिस जगवतकुलमें वीर बालक फत्तेने जन्म लिया था--उस ही कुलसे अमाइतके सरदारकी उत्पत्ति हुई थी। यद्यपि वीरपुत्र फत्तेकी ही वीरता और अद्भुत स्वार्थत्यागको जगवतकुलकी राजपरायणताका पक्का प्रमाण मानकर ग्रहण किया जा सकता है; परन्तु जगवतकुलके राजानुरागका केवल एक यही प्रमाण नहीं है। विगत महाराष्ट्रीय उपद्रवके समय फत्तेसिंहके पिता प्रतापसिंहने भी महाराष्ट्रियोंसे अपने देशको बचानेके लिये प्राण दे दिये थे। प्राणोंके पुरस्कारमें ही उस-के पुत्रको आमलीका किला दिया गया था। फत्तेसिंहने अपने किसी चतुर सम्बन्धीकी चालाकीमें आकर चंदावतोंका कोई विशेष कार्य करना चाहा। परन्तु इसमें बुद्धि कम और ऊधमीपन अधिक था, यही कारण हुआ जो उस कार्यको वह किंचित् भी न कर सका। फत्तेसिंहका अंत:करण सरल था इससे अपने क्रोधको नहीं छिपा सकता था। एक समय एजेंट साहब मुलाकातको गये तब उसका उत्साह भडक उठा था। यद्यपि कुछ कहा नहीं तथापि लाल लाल आँखें क्रोधका पूर्ण परिचय दे रही थीं। राणाजी उसका कुछ फैसला न कर सके और एजेंट साहबको सब बातोंका भार दिया गया। तदनुसार एजेंट साहब उसके मकानमें पहुँचे। एक श्रेष्ठ गृहमें उनको आसन दिया गया। उस बडे गृहमें दीवारोंपर फत्तेसिंहके दादे परदादोंकी उत्तम २ तसवीरें लग रही थीं। बृटिश एजेंट टाडसाहब अपने सेवकवर्गके साथ उसी घरमें आनकर बैठ गये। फत्तेसिंह भी वहीं पर आया और उसके नौकर चाकर भी उसके सामने एकसाथ खडे हो गये। टाडसाहबने उसके सामने आसन ग्रहण किया। परन्तु आश्चर्य है कि मिहमानदारी तो दूर रही। उसने एजेंट साहबसे बात तक न की, और अपने हाथकी ढालको जांघोंके ऊपर रख कर उस पर अपने शिरको लगाय टेढा बैठ गया। अंगरेज एजेंट अत्यन्त घबडाया; जिसके स्थानपर आया उसने बात तक न की; यह क्या साधारण दु:खकी बात है? परन्तु टाडसाहब छोडनेवाले नहीं थे। सामने ही फत्तेसिंहके पिताकी एक तस्वीर रक्खी थी उसको उठाकर टाडसाहबने फत्तेसिंहके सामने रख अंगुलीसे दिखाला कर कहा "आपके समान व्यवहार करके इस सरदारने स्वामिधर्मके लिये प्रशंसा नहीं पायी थी।" यह बात सुनते ही फत्तेसिंहके हृदयमें एक अपूर्व भाव उदय हुआ। नेत्रोंसे अपूर्व ज्योति निकलने लगी; बदनमें मुसकानकी रेखा खिंच गई, उसने उत्सा-हके साथ एजेंट साहबकी ओर देख कर कहा— "यह क्या आपने यह चित्र कहां पाया? और यह चित्र ही आपको क्यों इतना अच्छा लगा?" यह कहते २ फत्ते-

—है। टाडसाहबका आना सुनकर हमीर मिलनेके लिये आया और उनको अपना सर्वश्रेष्ठ मित्र कहकर माना और खड्गको छूकर कहा कि "मैं अपनी तलवारको छूकर शपथ करता हूं कि मैं यथार्थ राजपूत हूं सदा ही आज्ञाकारी और राजभक्त रहूंगा"।

सिंहका बदन गम्भीर हुआ। विशाल नेत्रोंसे दो एक आंसू गिर पडे, उसने शोकाकुल होकर कहा कि "यह मेरे स्वर्गीय पिता हैं!"-"हां समझ गया" एजेंट साहब बोले "हां समझ गया, वीरश्रेष्ठ राजभक्त प्रतापसिंह यही हैं। इसी मूर्त्तिसे और इसी वेषसे इन्होंने उस पिछले दिन अपने देशके लिये प्राणोंको न्योछावर कर दिया था। बहुत दिन हुए कि वह दिन बीत गया; तथापि उनका नाम आजतक वर्तमान है;-और आज एक विदेशी भी भक्तिभावसे उनकी पूजा कर रहा है। " एजेंट साहबकी यह बात सुनते २ फत्तेसिंहके मुखमंडलका भाव एक २ पलमें बदल रहा था उसके हृदयमें चिंताकी लहरें उठ रही थीं। साहबका वाक्य अभी पूरा भी न हुआ था कि वह शीघ्रतासे बोल उठा "आप आमली लें;-आमली लें परंतु देखिये,--स्वार्थत्यागकी महिमाको न भूलियेगा" फत्तेसिंहके इस प्रचंड उत्साहको देखकर एजेंट साहबने विलंब करना उचित नहीं समझा और तत्काल "छोड चिट्ठी" लानेका अनुरोध किया। टाडसाहिबकी आज्ञा उसी समय पालन की गई।

इस बातकी समालोचना करनेसे पहले कि इस प्रबन्धका क्या फलाफल हुआ है। और एक बातके विचार करनेको तैयार होते हैं। जिन लोगोंकी चोटीका पसीना एँडी-तक पहुँचता है, जो लोग दिनभर कठोर परिश्रम करते हैं, जिनके परिश्रमसे पृथ्वी सुवर्णरूपी फल उत्पन्न किया करती है, मनुष्य समाजके एक प्रधान अंग होकर भी जो लोग स्वार्थी जमींदारोंके कठोर अत्याचारकी कठिनाईसे अपने दिन बिताया करते हैं, उन लोकहितकारी भले मनुष्य किसानोंकी अवस्थाका संक्षेपसे विचार करना हमको बहुत ही उचित जान पडता है। इस विचारके साथ हम उनका अतीत और वर्तमान चित्र पाठकोंके सामने रखकर अपनी बुद्धिके अनुसार उनके अधिकार अनधिकारका विचार करेंगे।

मेवाडराज्यमें किसान ही भूमिका अधिकारी होता है। मेवाडकी भूमिमें उनका जो अधिकार है उसको वह लोग अपने देशमें उत्पन्न हुए अमरधव * के साथ उपमा दिया करते हैं। उस अमर तृणके समान वह अधिकार भी दृढ और अमर होता है, भाग्यकी अदल बदलसे भी उस अधिकारमें कुछ अंतर नहीं आता। वे किसान लोग अपनी भूमिको (बापोता नामसे पुकारा करते हैं। उनकी मातृभाषामें पैतृक अधिकार समझानेके लिये इ बापोताके अतिरिक्त और कोई शब्द अति प्राचीन, अति शुद्ध, अति भावपूर्ण और अत्यंत तेजयुक्त नहीं समझा जाता। यदि कोई स्वार्थी और अभिमानी राजा उनके इस पुराने अधिकारको छीनना चाहता है; तब वह भगवान मनुजीके अमृतमय वाक्योंको उच्चारण करके गंभीर कंठसे कह उठते हैं कि "जिन्होंने वनको

---

* अमरधव नामक तिनुका सब ऋतुओंमें एकसा रहता है। विशेष करके प्रचंड धूपके समय इसकी सजीवता अधिकाईसे दिखाई देती है। यह केवल अमर ही नहीं है वरन् इसको अक्षय कहा जाय तो भी ठीकही होगा। पृथ्वीके साथ अछेद सम्बन्ध होनेके कारण राजपूत किसानलोग इससे अपने भूम्यधिकारकी बराबरी किया करते हैं।

काट छांट कर खेतोंको साफ किया और जोता, वह भूमि उनकी ही है" × जबतक संसारसे प्रेम करनेवाले व्यवस्थाकारोंके ऊपर भगवान मनुजीका नाम विराजमान रहेगा, जितने दिन तक उनकी बनाई हुई विधिका एक सूत्र भी इस जगतमें व्यवहार किया जायगा, उतने दिनतक कभी कोई इस अमृतमय वाक्यको नहीं भूल सकेगा । उतने दिनतक हजारों लडाई झगडे होनेपर भी हिंदू जातिकी यह पुरानी रीति कभी भी नहीं उठेगी । इस विधिके अनुसार ही मेवाड--केवल मेवाडके ही क्या समस्त राजस्थानके रहनेवाले अत्यंत प्राचीन कालसे कहते हुए आये हैं कि, 'भोगरा धनी राज हो; भोमरा धनी मा छो, अर्थात् राजा भोगका (राजकरका) अधिकारी है; परंतु भूमिके अधिकारी हम हैं । भगवान मनुजीके समयसे हिंदुओंका यह विश्वास चला आता है और सदा यही विश्वास चला जायगा । त्रिकालके विधान कर्ता मनुजी इस लोकसे चले गये, भारतभूमिके उस दिनसे कितने ही लौट फेर हुए, कितने ही विदेशी विधर्मी और अत्याचारी लोगोंने यमराजकी समान भारतका राज्य किया, भाव, वर्ण और आचार व्यवहारका कितना ही अंतर हो गया । तथापि यह विश्वास पूर्ववत् ही बना हुआ है;इसका एक परमाणु भी नहीं बदला । क्या करनाटक देशमें, क्या कण्वदेशमें, क्या राजस्थानमें यहांतक कि भारतके चाहै जिस प्रदेशवाली हिन्दूजातिके विधान ग्रंथको देखिये, तो उसमें सुवर्णाक्षरसे यही लिखा हुआ है कि "स्थाणुच्छेदस्य केदारम्"

एरियन, कार्टियस और डियोडोरस इत्यादिक विलायतके प्राचीन पंडितोंने जिस समयका इतिहास संकलन किया है, यदि हम उस समयका वृत्तांत लेकर विचार करें कि प्रत्येक नागरिक तन्त्र, प्रत्येक राज्यमें एक २ राज्यके समान बिराजमान है । उसकी शासनविधि राज्य चक्रवर्त्तीसे भी अलग होती है; केवल वह लोग शत्रुकी चढाईसे देशकी रक्षा करते थे, इस लिये उनसे नियमित भाग अर्थात् करमें एक अंश प्राप्त होता था वैसे ही राजस्थानके प्रत्येक राज्यमें लाखों बस्तियोंका चित्र देखा जाता है । उनकी उन पृथक् २ बस्तियोंका एक दूसरेके साथ कोई संबंध नहीं दिखाई देता । उन समस्त बस्तियोंके अध्यक्ष लोग अपनी २ शासनाधीन समाजमें हर्ता, कर्त्ता और विधाता होते हैं । वह लोग सार्वभौमिक स्वामीको अपने धन धान्यसे किसी एक प्रकारका नियमित भाग देते हैं परन्तु राजा उनके लिये विधिव्यवस्था नहीं बनाता, न उनकी शांति बनाये रखनेका कोई उपाय करता है, न रक्षक ही नियत होते हैं । टाडसाहिब कहते हैं कि "इस पृथ्वीव्यापी शासन विधिके अभावसे गाँवके रहनेवाले शांतिकी रक्षा, विचार तथा दंडादिकका जो अपने आप ही प्रयोग किया करते हैं उससे ही यह पंचायतकी रीति निकली है, दादा परदादाकी अधिकार की हुई भूमिको राजपूत किसान

× भगवान् मनुजीने पुरुषके शुक्रन्यासका कर्तव्याकर्तव्य विचारने और न्यस्त शुक्रजाति संतानके ऊपर न्यासकर्त्ताका अधिकार अनधिकारका विषय विधान करनेके समय कहा है, "स्थाणु च्छेदस्य केदारम्" जो आदमी जंगल काटकर खेत तैयार करे वह खेत उसका ही है।"

"बापोता" नामसे पुकारते हैं; परन्तु बापोताका वह अधिकारी यदि युद्धजीवी हो तो "भोमिया" नामसे पुकारा जायगा। दिल्लीके मुसलमान बादशाह अपने गौरवके मध्याह्न समयमें करद हिन्दू राजाओंके ऊपर "जमीदार" आख्या दिया करते थे। भूमिके यथार्थ अधिकारी ही उस समय जमीदारके नामसे पुकारे जाते थे।

भलीभांतिसे विचार करनेपर यह प्रमाणित हो जायगा कि भूमिपर किसानका ही पूरा अधिकार होता है, उस अधिकारके ऊपर निर्भर करके भूमियां जब चाहै तब अपनी जमीनको जोत सकता है, उनकी भूमिके ऊपर कभी कोई पैमायशकी लकडी न डाल सकेगा या उसमेंसे किसीको किसी प्रकारका कर न मिल सकेगा। न कोई कर लगाने पावेगा।तथापि वह अपने दिये हुए करसे इस बातको प्रमाणित करते हैं कि हम सार्वभौम राजाके अधीन हैं। राणाकी परोक्षमें इन भूमियां किसानोंसे अनुकूलता पाया करते हैं; परन्तु बृटिश प्रभुताके स्थापन करनेके समय जब मेवाडभूमिने बहुत दिनोंके पीछे शांतिका सुख प्राप्त किया तब उस समय वहांके मौजोंमें उसकी रक्षा अरक्षाका कोई विचार न हुआ, उस समयसे राणाजीने पूर्व करसे उनको छुटकारा देकर उन भूमियां लोगोंको साधारण वेतनभोगीके समान देशकी शांति, रक्षा अथवा सैनिक पदपर नियत करना आरंभ किया।

बापोताके ऊपर राजपूत किसानोंका अधिकार कहांतक दृढ है और वह लोग कैसी दृढताके साथ उस पर अधिकार किया करते हैं; इस बातको हम कई एक पुराने प्रमाणोंसे प्रमाणित करेंगे। जिस समयमें मन्दौर नगर मारवाडकी राजधानी गिना जाता था। उस समय कोई गिह्लौट राजकुमार एकदिन मारवाडकी राजकुमारीको विवाहनेके लिये चला। राजपूतोंमें ऐसी रीति चली आई है कि यदि कोई नया जामाता विवाहकी रात्रिमें कन्याके पितासे दहेजमें कोई सम्पत्ति मांगे तो वह उसको अवश्य ही देनी पडती है। इस रीतिने राजस्थानमें बहुत ही अनर्थ किये हैं। तदनुसार उस नए गिह्लौट राजकुमारने मेवाडमें बसानेके लिये अपने मंत्रीके परामर्शसे दश हजार जाट जो कि किसानीका काम करते थे अपने श्वशुरसे मांगे। इस अद्भुत दहेजका मांगना सुनकर मारवाडके राजाको आश्चर्य हुआ, परन्तु जामाताकी प्रार्थनाको पूर्ण तो करना ही होगा। इस कारण उन्होंने आज्ञा दी कि दश हजार जाटोंको इस देशसे जाना पडेगा। इस आज्ञाको सुनते ही जाट–किसान लोग अत्यन्त घबडाये और महाराजकी आज्ञा पालन करनेको किसी प्रकार सम्मत न हुए। अनन्तर जब राजाने बहुत ही कडाई की तब सबने इकट्ठे होकर एक साथ कहा; "क्या हमलोग अपना बापोता और अपने पुत्रोंकी सम्पत्ति छोडकर एक अपरिचित मनुष्यके लिये परिश्रम करनेको उसके साथ परदेशमें जायँ? महाराज! आप अपनी इच्छानुसार हमारा वध करा सकते हैं; परन्तु प्राण रहते हुए हमलोग बपौतेको नहीं छोड सकते।" मन्दौरके राजाने पहिले ही समझ लिया था कि जाटलोग इसमें यह आपत्ति उठावेंगे। जाटोंके असम्मत होनेसे यद्यपि महाराजकी प्रतिज्ञा भंग हुई, परन्तु वह इसके लिये कुछ दुःखित या चिन्ताग्रस्त न

हुए; कारण कि उन्होंने इतने किसानोंके चले जानेसे राज्यकी हानि ही समझी थी। परन्तु विधाताकी इच्छा कुछ और ही थी । मेवाडके राणाने उन किसानोंको अपनी बहुतसी जमीन सदाके लिये लिख दीं । इस कारणसे जाट लोगोंने वहांका जाना स्वीकार कर लिया । कारण कि मारवाडके बदले उनको मेवाडकी हरी भरी जमीनका अधिकार सदाके लिये मिला, फिर वह किस कारणसे वहां न जाते ?

जिन नगरोंके राजा भूमिके विषयमें नये नये नियमोंका प्रचार नहीं कर सकते थे, उन समस्त नगरोंमें प्रजाका दखली अधिकार प्रबल पाया जाता है । उदाहरणमें जिहाजपुर जनपदका नाम लेना ही अलम् होगा । इस नगरमें १०६ गांव लगते हैं । बडेभारी इस नगरके इलाकेमें खास जमीनके केवल दो टुकडे पाये जाते हैं । कहते हैं कि उस ही समय में जमीनके यह दो टुकडे भी खजाना बाकी रह जानेसे कुडक होनेको थे, उस ही समयमें राणाके राजस्व मन्त्रीने उनको मोल लेकर राजसम्पत्तिमें मिला दिया । इस ही भांतिसे लोहारियों और इतोंडा नामक दो तालाब तथा उनके किनारेकी भूमि भी खजानेमें मिला ली गई । एक समय जो भूमि, भोमिया मीनलोगोंका विशाल बापोता कहकर जिहाजपुरके अन्तरगत समझी जाती थी; वही भूमि आज राणाकी हो गई । हा ! इस संसारमें सबके ही लिये उलट फेर लगा रहता है । आगे इसका भी एक उदाहरण दिया जाता है कि किसानोंके हाथसे छूटकर भूमि किस प्रकारसे खजानेमें मिल जाती है । कोटेके इतिहासमें ऐसे बहुतसे उदाहरण दिये जायँगे ।

भगवान मनुजीने ग्राम्य समाजका जैसा विधान किया है, मेवाडमें ठीक वैसा ही वर्त्ताव पाया जाता है । पूर्वकालमें किस प्रकार पांच सात गांवको लेकर एक एक ग्रामीण रहता था; मेवाडमें भी वैसे ही पंचग्रामपति या सप्तग्रामपतिका वृत्तान्त पाया जाता है । मेवाडमें इन लोगोंको पटैल कहते हैं । सन्यासी अथवा भिखारी सब ही पटैलको जानते और मानते हैं । गांवकी रक्षा भी यही करता है । पटैली अधिकारके लिये वह पटैल सरकारको कुछ नहीं देते केवल प्रति तीन वर्षमें नियत किया हुआ कुछ महसूल और दो युद्धकर देने पडते हैं ।

बहुतोंका ऐसा अनुमान है कि मानव धर्मशास्त्रमें जिन ग्रामाणियोंका वर्णन है, उनके कर्त्तव्यसे मेवाडके पटैलका कर्त्तव्य अलग है । इस ही कारण पटैल शब्दकी व्युत्पत्तिमें अनेक प्रकारके मतभेद पाये जाते हैं । परन्तु विशेष विचार कर देखनेसे भलीभांति ज्ञान हो जायगा कि पटैल शब्द संस्कृत पति शब्दसे उत्पन्न हुआ है । मेवाडवाले ठीक ऐसे ही अर्थमें इसका व्यवहार किया करते हैं । पूर्वकालमें निर्वाचनके सिवाय पटैलका और कोई कर्त्तव्य नहीं था । गांवमें वह सबसे अच्छा गिना जाता था । राजाके यहां गांवका प्रतिनिधि तथा किसान और राजाका मध्यस्थ भी पटैलको ही समझते थे । इस कारण राजा, प्रजा दोनोंमें पटैलजीका सन्मान था । पटैलके पास बापोता भी होता है, तथा किसान जो धान्य उत्पन्न करता है, उसका चालीसवां

भाग भी उसको मिला करता है। राजाकी ओरसे एक कृपा उसपर और भी की जाती है। अपने बापोताके अतिरिक्त वह जिस जमीनको जोतता है, राजाज्ञाके द्वारा वह उसपर नियत हुए करके तीसरे अंशसे भी छुटकारा पा जाता था। इस प्रकार मेवाडभूमिके पटैलोंका कर्त्तव्य निश्चय किया गया। पटैल ही राजा और किसानको एक बन्धनमें जोड सकता है। किसानोंका प्रतिनिधि, ग्रामीण समाजका अगुआ पटैल ही है। राजा पटैलके द्वारा ही असामी किसानोंकी अवस्थाको जान लिया करता है। महाराष्ट्रियोंके कठोर अत्याचारसे मेवाडकी भाग्यतरंग जब दूसरी ओरको फिरी थी, उससे पहिले स्वाधीनकी लीलाभूमि मध्यपाटक्षेत्रमें पटैलोंकी ऐसी ही सामर्थ्य थी। परन्तु जैसे २ महाराष्ट्रियोंकी लूट खसोट बढने लगी उसही के साथ पटैल लोग भी अपनी सामर्थ्यको बढाते गये और यहाँ। तक बढे कि फिर तो गांवमें जो कुछ थे सो पटैल ही थे। महाराष्ट्री लोग जो कर किसानोंपर लगाते थे उसको यही वसूल करते थे और कभी २ यही लोग जामिनकी भांति उन दुष्टोंके डेरोंमें पडे रहते थे। शत्रुओंने जितनी बार चढाई करके मेवाडवालोंसे कर मांगा, उतनी ही बार पटैलोंने आनन्दसे उस करको भुगताया किया। प्रगटमें तो पटैल लोग अपनेको किसानोंका प्रतिनिधि बताते थे,परन्तु अवसर पाते ही विचारे किसानका नाश कर देते थे। अगणित किसान लोग पटैल लोगोंका ही भरोसा करके निश्चिन्त रहते थे, परन्तु लालची पटैल मौका पाकर उन्हींकी सम्पत्तिसे अपना पेट भरते थे। पठान या महाराष्ट्रीलोग जिस समय चढाई करते थे उस समय पटैलोंकी पौवारह होती थी। सबसे पहिले तो वह अपनी रक्षाका उपाय सोचते थे तथा किसानोंका सत्यानाश करके अपनी गोडी—बना लेते थे। पहिले तो वह किसानोंसे रुपया ही लेते थे,—रुपया न मिला तो उनकी जमीन तथा जमीन भी हाथ न लगती थी तो उनके बरतन भांडे गिरों रखकर अपना काम चलाया करते थे। इस प्रकारसे जबतक अभिप्राय पूरा न होता था; तब तक दीन हीन मूर्ख किसानके रुधिरको जोकके समान चिपटकर पीते थे। अभागे किसान लोग भी समझते थे कि पटैल हमारा गुप्त शत्रु है तथा महाराष्ट्री और पठानोंने इसको ही अपना भेदुआ बनाया है।इस ही डरसे वह राजद्वारमें उसपर फरियाद नहीं करते थे;वह जान बूझकर ही उसके आगे अपना हृदय खोल देते थे। पटैल इच्छानुसार किसानोंका रुधिर पीकर पीछा छोडता था। हा मन्दभाग्य कृषकगण! तुमको इस भारतभूमिमें सुख शान्ति कहां है? जिनको तुमलोग परम हितकारी मित्र समझकर निश्चिन्त रहना चाहते हो,विना ही अपनी अवस्थाका विचार किये एकसाथ जिसके विषैले डंकपर अपना हृदय रख देते हो; जब वही तुम्हारा नाश करनेको तैयार है तो तुम्हारे लिये सुख शान्ति कहां है? और कबतक तुमलोग अंधकारमें रहोगे?कितने दिनतक अपने अधिकारको न समझोगे? तुमलोग अत्यन्त परिश्रम करके जिन लोगोंकी मृत्युसे रक्षा करते हो, धूप और जाडेका कुछ ध्यान न करके जिनकी विलास सामग्रीको इकट्ठी करते हो, वह लोग एकबार भी तुम्हारी दशाका विचार नहीं करते।

क्रमानुसार पटैल लोग भी किसानोंके हर्ता कर्त्ता और विधाता हो गये । प्रतिष्ठा और सम्मानके पानेसे लोग जैसे अभिमानी और अत्याचारी हो जाते हैं, मेवाडके पटैल भी अंतमें वैसे ही हो गये । इतने दिनोंतक वह किसानोंके प्रतिनिधि थे, उनके दुःखमें दुःखी और सुखमें सुखी होते थे, परन्तु इस समय दुष्ट बनकर उनसे शत्रुता करने लगे और भांति २ के अत्याचार करते गये । जिस जातिमें किसी प्रकारका प्रबंध नहीं होता जिसके मनुष्य परस्परके सुख दुःखका विचार नहीं करते और अपने सुखकी चिंतामें ही जो लोग दिन रात लगे रहते हैं, उस जातिको शीघ्र ही अनेक प्रकारके अनर्थ दबा लेते हैं । पटैल लोगोंने अपना उदर भरनेके लिये पहिले ही भली-भांतिसे किसान लोगोंका रक्त चूसा ! परन्तु किसान लोग कल्पवृक्ष तो थे ही नहीं कि बराबर उनकी अभिलाषाको पूरी करते जाते । अतएव कुछ ही दिनमें वह निराधार हो गये, इनके साथ ही पटैलजीके विश्राममें भी विघ्न पडा और किसके रुधिरसे अपने उदरको भरें ? जिनके रुधिरको सोखते थे उनका तो सर्वस्व नाश हो गया, वे लोग अधमरेसे हो गये । पिंडारोंकी कठोर चढाई होनेपर किसान लोग देश छोडकर भाग जाते थे, मेवाडके बहुतसे खेत सूने पडे रहते थे । उसी समय पटैलोंके स्वार्थमें कुछ बाधा पडती थी परन्तु बहुत दिनोंके लिये नहीं । शान्ति स्थापित होनेपर किसान लोग फिर अपने देशमें आते और उन खेतोंसे सुवर्णमय फल उत्पन्न किया करते थे; पटैलोंके घरमें फिर घीकी कडाही चढ जाती थी, किसानोंके साथ फिर उनका वही बर्ताव हो जाता था । बिचारे किसानोंको देशमें लौटनेपर भी शांति नहीं मिलती थी । पिशाचरूपी पटैलोंके घोर अत्याचारसे किसानोंका जीवन दुःखमय हो जाता था । इस प्रकार दुःखके ऊपर दुःख पाकर मेवाडका कृषककुल निर्मूल होने लगा; मेवाडकी सुख शांति नष्ट हुई । धीरे २ सभी लोग इस बातको जान गये कि पटैललोग मेवाडके सुखरूपी सूर्यके लिये छद्मवेशी राहु हैं । सभी समझ गये कि विना शत्रुको पराजित किये हुए देशका मंगल न होगा । परन्तु शत्रु तभी पराजित होंगे कि जब इन पटैल-जीका मेवाडसे नामतक लोप हो जाय । परन्तु यह कार्य कुछ सरल न था । क्योंकि बहुतसे बडे राजकर्मचारी उन लोगोंकी तरफदारी करते थे । उनको पदच्युत करनेसे बडों २ के स्वार्थमें आघात लगेगा । और वह लोग पटैलोंकी तरफदारी करनेके लिये राज्यमें अशांतिका बीज बोवेंगे ।

जिस समय दीन जन हितकारी टाड साहबने किसानोंकी दुर्दशाका यह वृत्तांत सुना, वह तत्काल उस विपत्तिको दूर करनेके लिये तैयार हो गये । प्रथम तो उन्होंने सब प्रकारसे पटैलोंकी अवस्थाका विचार कर दिया । मेवाडके पुराने इतिहासको विचारनेसे उनको ज्ञात हो गया, कि गाँववाले लोग ही पटैलोंको चुना करते थे, वह लोग एकमत होकर जिसको चाहते थे उसको पटैल बनवा दिया करते थे । राजा भी उसीको स्वीकार करके पटैलकी सनद दे देता था । तदनुसार मेवाडमें इस समय वही रीति चलाई गई । मेवाडवालोंने एकसाथ परामर्श करके उसको ही निर्वाचित किया ।

राणाजी भी उसीको मंजूर करते और सबके सामने उसके शिरपर पगिया बँधवाकर पटैलका पद देते थे। निर्वाचित हुआ नया आदमी राजाको "नजर" देकर नये पद-पर विराजमान हो जाता था। पटैलका उहदा पहले विका करता था। राजा कुछ बंधा हुआ धन लेकर चाहे जिसको पटैल बना दिया करते थे, ऐसा करनेसे राज्यका अत्यंत अमंगल होता था कहीं वही रीति इस समयमें फिर न चल जाय उसको रोकनेके लिये टाड साहबने उत्तम प्रबंध कर लिया। उन्होंने राणासे प्रतिज्ञा करा ली, जिसमें राणाजीने यह कहा था कि "पटैलके चुनावमें हम कभी दखल न देंगे और न उनके साथ कोई गुप्त सलाह की जायगी।"

मेवाडमें राजकर किस प्रकारसे वसूल होता था, यहांपर उसकी दो चार बातें कहेंगे और अंगरेजोंसे संधि होनेके चार वर्ष पीछे मेवाडको कैसा फलाफल हुआ उसकी संक्षेप समालोचना करके मेवाड इतिहासके इस बढे परिच्छेदको समाप्त करनेका विचार है।

धान्यके ऊपर मेवाडमें दो प्रकारका महसूल लिया जाता था। यह दोनों कर कंकूट और भुट्टाई कहे जाते हैं। गन्ना, पोस्ता, सरसों, सन, तमाखू, रुई, नील और बागोंमें उत्पन्न हुए फल फूलोंके ऊपर प्रति बीघा २) से लेकर ६) रुपये तक महसूल लिया जाता है। जब धान्य खेतमें ही रहता है उस समय खेतका मालिक पटैल, पटवारी और राजकर्मचारीगण जो उसके ऊपर आनुमानिक अर्थात् तखमीनन महसूल लगा देते हैं मेवाडके लोग उसको कंकट कहते हैं। बहुधा यह कंकट ठीक ही अनुमान किया जाता है। परन्तु तो भी खेतका स्वामी यदि उसको अधिक समझे तो वह भुट्टाई करनेकी प्रार्थना कर सकता है। जब वह नाज काटकर और खलिहानमें डाल अनाज माँडकर उसे इकट्ठा करके बटाई करते हैं उसको भुट्टाई कहते हैं। भुट्टाई (बटाई) अति प्राचीन रीति है इससे दोनों तरफवालोंको संतोष रहता है। भुट्टाई रीतिके अनुसार राजाको जौ गेहूं और अन्यान्य वस्तुओंमें रब्बीकी फसलका एक तृतीयांश अथवा दो पंचमांश प्राप्त हुआ करता है और कभी २ हैमंतिक धान्यका आधा भाग भी मिल जाता है। कंकूट और भुट्टाई रीतिके अनुसार बाजार दरसे मिलाकर धान्यका मूल्य नियत किया जाता है। बहुधा कंकूट प्रथासे कभी २ अन्याय भी हो जाता है। कारण कि किसान लोग अपना अभिप्राय सिद्ध करनेके लिये राजकर्मचारीको रिश्वत दे देते हैं। राजकर्म-चारी अर्थात् संग्राहक लालचके वश होकर समस्त धान्यको थोडा बतलाया करता है। इस प्रकारसे जिस समय वह अपने उदरको भरकर चला जाता है तब पहरेदार आता है। अभागा किसान उसकी भी पूजा करता है। यदि वह पूजा न करे तब पहरेदार पटवारी-के पास जाकर उसकी झूँठी शिकायत करता है। किसानलोग इसी कारण पहरेदारको भी संतुष्ट रखते हैं। किसानोंको किसी प्रकारसे आराम नहीं मिलता। इस प्रकार प्रगट तथा अप्रगटमें राजकर्मचारियोंकी तृप्ति करनेमें उन अभागोंके प्राणोंपर आ बनती है। इस बातके श्रवण करनेसे अचानक यह विचार पैदा होता है, कि ये किसान लोग ही

अनर्थकी जड हैं; क्योंकि ये अपने स्वार्थकी रक्षा करनेके लिये राजकर्मचारियोंको रिश्वत दिया करते हैं। परन्तु यदि विशेष विचार कर देखा जाय तो ज्ञात होगा कि यह सब संस्कार अमूलक और भ्रमयुक्त हैं। कारण कि अधिकांश किसान लोग वर्णज्ञान हीन होनेके कारण राज्यविधिको किञ्चित् भी नहीं जानते हैं। राजकर्मचारी ही अपना मतलब सिद्ध करनेके लिये उनको भय दिखाते और अनेक प्रकारके अत्याचार करते हैं; उनका प्रतिनिधि पटैल भी अपना पेट भरनेके लिये तैयार होकर किसानोंके सुख दुःख-को नहीं विचारता। यही कारण है जो किसानगण कष्टके मारे उन नरपिशाच कर्म-चारियोंकी पूजा करते हैं। मूल बात तो यह है कि किसानोंको कहीं पर भी सुख नहीं है। जब तक वह स्वयं विद्याको न सीखकर स्वयं अपनी रक्षा न कर सकेंगे तबतक कि-सी प्रकारसे उनका मंगल नहीं होगा। हाय! वह दिन कब आवेगा? वह समय कब आवेगा कि भारतके किसान लोग अज्ञानरूपी अँधेरेसे छुटकारा पाकर स्वयं अपनी अवस्थाको समझ जायँगे?--वह कौन सी घडी होगी कि जब जमीदार और प्रजाकी विषमता जडसे उखड जायगी? वह कौन सा युग होगा कि जिस दिन भारतके भ्राता-गण ऐक्यताके पवित्र मंत्रसे दीक्षित होकर परस्पर एक दूसरेको हृदयसे लगाय जातीय बलको इकट्ठा करेंगे? क्या वह दिन आवेगा? रुधिरकी प्यासी कूट सामाजिक और राजनैतिक विषमता जब उठ जायगी?--कह नहीं सकते।--परंतु आशा होती है कि-गिरा हुआ भारत फिर उठेगा। भारतवासीगण इस जमींदार और प्रजाकी घोर विषम-तासे छुटकारा पाय एक साथ ऐक्यताके सुखको अनुभव करेंगे। हमको आशा है कि फिर कोई शाक्यसिंह और गुरु गोविंदसिंह उत्पन्न होकर ऐक्यताकी विजयदुंदुभीको बजाय;--जन्मभूमिका दुःख दूर बहाय;--इस असार संसारमें प्राणोत्सर्ग और देशानुराग-का प्रचंड प्रमाण दिखावेंगे।

जिस दिन परम हितकारी ब्रिटिश गवर्नमेंटने मेवाडके दग्ध हृदयपर शान्तिका जल छिडका उस ही दिनसे मेवाडकी अवस्था उन्नत वा अवनत होने लगी, इस बातका विचार करना इस समय हमारा मुख्य कर्तव्य है। अतएव आगे उसका ही विचार किया जाता है। फरवरी सन् १८१८ ई० से मई सन् १८२२ ई० तक मेवाडमें जिस शासन विज्ञापनका प्रचार हुआ था, उसका पाठ करनेसे स्पष्ट ही समझमें आ सकता है कि मेवाडकी दशा बहुतायतसे उन्नतिपर पहुँची है। मेवाडकी यह उन्नति किस प्रकारसे हुई उसका निश्चय करनेके लिये सन् १८२१ ई० के शेष भागमें मेवाडके मऊ, वरक और कुपाशन इन तीन जनपदोंकी मनुष्यगणना की गई थी। दूसरे अंशोंको छोड देने पर केवल नगरविभागको ही ग्रहण करनेसे पूरा प्रमाण मिलेगा। सन् १८१८ ई० के मध्य इस नगरविभागके अन्तर्गत २६ गांवों-मेंसे केवल ६ में मनुष्योंका निवास पाया गया था। उन छः गावोंमें सब मिलाकर केवल ३५९ मनुष्य बास करते थे। इनमेंसे भी तीन चतुर्थांश आमली दुर्गके थे कि जिसपर महाराणाने पुनः अपना अधिकार किया था। सन् १८२१ ई० के बीचमें उन

समस्त गावोंमें मनुष्योंका रहवास हो गया और उनमें ९२६ गृहस्थोंका निवास पाया गया। इस लेखसे साफ मालूम होता है कि केवल तीन वर्षके बीचमें ही मनुष्यसंख्या तिगुनी हो गई थी। मनुष्योंके बढनेके साथ२ही खेती और शिल्प विद्याकी भी उन्नति हुई थी। पहिले जितने हल चला करते और जितने खेत जोते जाते थे, इस समय उसमें चौगुने खेत जोते जाते थे और चौगुने ही हल चलते थे। यदि शहर विभागकी बात छोडकर खास विभागकी उन्नतिका ही विचार किया जाय तो भलीभांतिसे ज्ञान होगा। कि इस विभागकी उन्नति भी इस ही भांतिसे इतनी हो गई थी। महाराष्ट्रियोंके ग्राससे कुम्भलमेर, रायपुर, राजनगर, साद्री और कुनेडा, कोटे से जिहाजपुर और सरदारोंके हाथसे छीनी हुई भूमिसम्पत्तियोंका पुनरुद्धार तथा पर्वती लोगोंके हाथसे मैरवाडा देश की जीतके कारण कुछ ही समयमें एक हजार नगर और ग्राम मेवाडमें मिल गये यह नगर और गांव चौबीस जनपदोंके मध्यमें प्राचीन: रीतिके अनुसार विभक्त होकर दश ग्रामीण या सौ (१००) ग्रामीणोंके * हाथमें समर्पण किये गये। इस भांतिके उत्तम प्रबन्धसे मेवाडकी उन्नति हुई। इस प्रकारसे जो राजकर आता था उसकी सहायतासे मेवाडके राणा भलीभांतिसे अपनी प्रतिष्ठा और मान मर्यादाकी रक्षा करनेमें समर्थ हुए।

सन् १८१८ ई० से सन् १८२२ ई० तक मेवाडसे जो राजकर वसूल हुआ था उसकी फहरिस्त नीचे लिखी जाती है। इसके पढनेसे भलीभांति मेवाडकी उन्नतिका वृत्तान्त जाना जायगा। ×

वासान्तिक धान्य	सन्	१८१८ ई० का	४००००)	रु०
,, ,,	,,	१८१९ ई० का	४५१२८१)	रु०
,, ,,	,,	१८२० ई० का	६५९१००)	रु०
,, ,,	,,	१८२१ ई० का	१०१८४७८)	रु०
,, ,,	,,	१८२२ ई० का	९३६६४०)	रु०

* भगवान् मनुजीने गांवोंका विधान इस प्रकारसे किया है-

ग्रामस्याधिपतिं कुर्याद्दशग्रामपतिं तथा।
विंशतीशं शतेशञ्च सहस्रं पतिमेव च ॥ ११५ ॥ मनु० ७ अध्याय ॥

× टाडसाहब कहते हैं कि संधि होनेसे पहिले और चार वर्षके पीछे यदि प्रधान २ नगरोंकी मनुष्य-संख्याका मिलान किया जाय तो देशकी उन्नतिका होना भलीभांतिसे निर्णीत हो जायगा। इस ही कारणसे मेवाडके पांच नगरोंकी मनुष्य संख्या नीचे प्रगट की जाती है।

सन् १८१८ई० में		गृहसंख्या	सन् १८२२ई० में		गृहसंख्या।
उदयपुर	,,	३५००	,,	,,	१००००
भीलवाडा	,,	९०००	,,	,,	२७०००
पुरा	,,	२००	,,	,,	१२००
मंडल	,,	८०	,,	,,	४००
गोसुन्द	,,	६०	,,	,,	२५०

यह समस्त गृह मनुष्योंसे भरे हुए थे।

पिछले दो वर्षोंकी एजेंट साहबने कुछ विशेष देखभाल नहीं की थी, तथापि यह बडी आमदनी हुई थी ।

पूर्वोक्त पांच वर्षोंमें जो आमदनी वाणिज्य करसे हुई थी, उसकी सूची नीचे लिखी जाती है।

सन् १८१८ ई०	नाममात्र आमदनी। (कुछ थोडी)
” १८१९ ई०	९६६८३) रु०
” १८२० ई०	१६५१०८) रु०
” १८२१ ई०	२२००००) रु०
” १८२२ ई०	२१७०००) रु०

ऊपरकी जो दो सूची लिखी गई यदि उनका मिलान मेवाडकी पूर्वावस्थाके साथ किया जाय तो साफ मालूम हो जायगा कि अंगरेज एजेन्टकी सहायतासे राणाजीने भलीभांति से अपने देशकी दशाका सुधार किया था। खेती शिल्प और वाणिज्यको एक ओर रखकर मेवाड भूमिकी उन धातु खानोंका विचार किया जाय कि जो पृथ्वीके नीचे छिपी हुई हैं; यदि उनका उचित व्यवहार हो तो थोडे ही समयके बीच में मेवाडभूमि नन्दन काननके समान शोभायमान हो सकती है। ५० वर्षसे कुछ पहिले जावडा और दुरेवाड * की टीन खानिसे ही प्रतिवर्ष ३०००००) रु० की आमदनी होती है। इसके अतिरिक्त मेवाडमें तांबेकी खानि भी हैं । इसमें कोई सन्देह नहीं कि इन खानोंसे मेवाडको बहुत सी आमदनी होती थी । परन्तु मेवाडके दुर्भाग्यसे खानोंके खोदनेवाल कालके गालमें चले गये । अब तो कोई इन रत्न-भाण्डारोंका नामतक भी नहीं लेता । न राणाजीमें ही खान खुदवानेका कुछ उत्साह है । इस समय वह खानें छूटी हुई जंगलोंके बीचमें पडी हुई हैं । जिन खानियोंको मेवाडवाले लक्ष्मीका भंडार समझते थे, जहांपर, अगणित आदमी रत्नोंको निकालनेमें लगे रहते थे, आज वही खानें अपार जलसे भरी पडी हैं । जलको निकालकर कोई भी उनका उद्धार नहीं करना चाहता । बहुतसे आदमी उन खानोंका उद्धार करना असंभव समझते हैं । परन्तु हमारे विचारमें उनका मत ठीक नहीं है । आज उन्नीसवीं शताब्दीके वैज्ञानिक जगतमें यदि कितनी एक खानोंका जल निकालना और उद्धार करना मनुष्यके द्वारा असाध्य समझा जाय तो फिर विज्ञानबल क्या शहदसे चाटनेमें काम आवेगा, जिस विज्ञानके बलसे आज संसारमें अद्भुत २ कार्य हो रहे हैं, उस विज्ञानकी अनन्त सामर्थ्य आज खानोंका पानी निकालने और उद्धार करनेमें रुक जायगी, इस बातका विश्वास कोई किस प्रकारसे कर सकता है, यदि राणाजी विज्ञान बलसे काम लेते तो आज अवश्य इस खानसे भी मेवाडको भारी आमदनी होती।

राजकीय वृत्तान्त बहुत लिखा जा चुका अब पूर्ण करना उचित है, अंग्रेजोंसे सन्धि करनेके पीछे राणाजीके सम्बन्धमें कोई वर्णन करने योग्य बात न हुई, पीछे सन् १८२९ में राणा भीमसिंह परलोकवासी हुए ।

---

* संवत् १६१८में जावडाकी टीनखानिसे २२२०००) रु० दुरिबाडसे ८००००) रु० की आमदनी हुई थी । यहांसे टीनके साथ थोडी२चांदी भी निकलती थी ।

अठारहवां अध्याय १८.

महाराणा जवानसिंह;-उनका चरित्र;-मेवाडकी शासन शृंखला, माहिरवाडाके सम्बन्धमें बृटिश गवर्नमेन्टके साथ राणाका नव सन्धिबन्धन;-राणाकी अपारीमित व्ययिता;-ऋण बृद्धि;-राजधनकी कमी;-बृटिश गवर्नमेन्टको कर देनेमें राणाकी असामर्थ्यता;-राणाके ऊपर कोर्ट आफ डाइरेक्टरकी अनुज्ञता;-राणा जवानसिंहका प्राणत्याग, राणा सरदारसिंह;-सामन्तोंके साथ उनका विवाद;-नवसंधि बंधन;-उदयपुरकी बृटिशसेनाके लिये राणाकी प्रार्थना,-उसमें अंग्रेज गवर्नमेन्टकी असम्मति;-राणा सरदारसिंहका प्राणत्याग ।

महाराणा भीमसिंहके औरससे पन्द्रह पुत्र उत्पन्न हुए; परन्तु एक मात्र कुमार जवानसिंहके अतिरिक्त और सभी असमयमें मृत्युको प्राप्त हो गये, भीमसिंहके स्वर्गबासी होनेपर जवानसिंह ही मेवाडके राज्यसिंहासनपर सन १८२८ ईसवीमें बैठे । आदिपुरुष बाप्पारावलके समयसे लेकर जो राणागण वीरता, विक्रम शूर वीरताका चमत्कार, जातीय स्वाधीनताकी रक्षा, स्वराज और स्वजातीयका गौरवबर्द्धन तथा अपने जीवनका कर्तव्य कर्म प्रकाश कर गये हैं; जो उस कर्तव्यके पालन करनेमें एक मुहूर्तमात्रको भी शान्त नहीं हुए, जिन्होंने अपने प्राणोंकी भी बाजी लगा दी थी, मेवाडकी हीन दशामें वही राणाओंके वंशधर आलस्य तथा विलासिताकी दासत्व शृंखलाको धारण कर एक साथ ही उसके विपरीत आचरण करनेमें प्रवृत्त हो गये । महाराणा भीमसिंहने सबसे पहिले इस प्रकार विलासिताकी उपाधि ग्रहण करनेमें कुछ भी लज्जा न की, उनके पुत्र नवीन राणा जवानसिंह उनसे भी अधिक बासनाओंमें आसक्त, अधिक खर्चालू और राज्यशासनमें एक बार ही कर्महीन हो गये । इन्द्रियोंकी आसक्ति वा मद्यपान दोषसे ही वह इस अवस्थाको पहुंच गये कि अपनेको भूलकर दिनरात केवल उसीमें मग्न रहते थे । भीमसिंहके परलोक जानेके पहिले ही मेवाडकी अवस्था पहिलेके समान शोचनी हो गई थी; इस समय नवीन राणाको पितासे भी अयोग्य देखकर सामन्तोंकी मंडलीने

निर्भय होकर अपना पहला स्वरूप धारण कर चारों ओर जहाँ तहाँ घूमना आरम्भ कर दिया; राज्यके प्रत्येक प्रान्तमें पहिले से भी अधिक अत्याचार होने लगे; यहां तक कि प्रजाके प्राणधनकी रक्षा भी दुर्लभ हो गयी। अपनी सम्पूर्ण प्रजाके कल्याणकी अभिलाषा, राज्यमें सुशासन स्थापन, राजस्वकी अवस्थाका परिवर्तन, राणा जवानसिंहका यह मुख्य कर्तव्य था, परन्तु वह इसको एक बार ही भूल गये। वह तो केवल अपने दुष्ट मनोरथोंको सफल करनेमें अपनी सम्पूर्ण शक्ति और मनको लगाने लगे।

दुष्ट चरित्रवाले अधार्मिक रिश्वत लेनेवाले राजकर्मचारियोंने सुअवसर जानकर अपने २ स्वार्थको पूर्ण करनेके लिये राज्यके प्रत्येक भागमें विश्रृंखला उपस्थित कर दी। अब तक भी राणा जवानसिंहने राज्यकी ओर आँख उठाकर नहीं देखा, इसीसे राजकर्मचारी निर्भय हो कर प्रजाके ऊपर घोर अत्याचार कर उनका धन छीन यथाशक्ति उनको मारने लगे। यद्यपि उस समय बृटिशका दूत उदयपुरमें आया था परन्तु अंगरेज गवर्नमेंटकी आज्ञासे उसने शासन भागमें हाथ न डाला, उस समय उससे विश्रृंखलाके दूर करनेका कुछ भी उपाय न हो सका; इस कारण धीरे २ विश्रृंखलता बढ गई, और कुछ ही समयमें मेवाडकी अवस्था अत्यन्त ही शोचनीय हो गई।

राणा भीमसिंहने माहिरवाडा देशके सम्बन्धमें १८२१ ईसवीमें अंग्रेज गवर्नमेंटके साथ जो व्यवस्था करके तीन देशके शासनका भार और सम्पूर्ण सेनाका व्ययस्वरूप वार्षिक पन्द्रह हजार मुद्रा देनेको राजी होकर दशवर्षके लिये अर्पण किया था, सन् १८३३ ईसवीमें वह दशवर्ष पूर्ण हो गये, बृटिश गवर्नमेन्टने उक्त देशके सम्बन्धमें नवीन व्यवस्थाका प्रस्ताव किया; राणाको जवानसिंहने शीघ्र ही इस बातको स्वीकार कर लिया गत दशवर्षकी व्यवस्थासे राणाको अच्छा फल प्राप्त हुआ, बृटिशदूत (पोलिटिकेल एजेन्ट) लेफ्टिनेन्ट कर्नल लकिटके प्रस्तावके अनुसार वहां स्थित सेनाके व्ययस्वरूप वार्षिक पन्द्रह हजारके पलटे बीस हजार रुपये देनेको राजी हुए। महाराणा भीमसिंहने केवल वचनकी व्यवस्थासे ही माहिरवाडेमें स्थित अपने तीन प्रदेश अंग्रेज गवर्नमेन्टको जो दिये थे, महाराणा जवानसिंहने एक लिखे हुए संधिपत्रमें * आठ वर्षके लिये

---

* सन्धिपत्र।

"(१) पहिली धारा। मूगरा माहिरवाडाके देशमें उदयपुरकी राजधानीमें जितने भी ग्राम हैं, उनके शासनके सम्बन्धमें इस समय जो रीति प्रचलित है, वह और भी आठवर्षतक प्रचलित रहेगी।"

"(२) दूसरी धारा। प्रचलित व्यवस्थाके मतसे बृटिश गवर्नमेंटके अतिरिक्त खर्चके भारसे ग्रस्त वरन उदयपुरके राज्यमें अधिक सुभीता होनेसे भी यह प्रस्ताव स्थिर हुआ कि उदयपुरके दरबारमें पहले जैसे वियायोर सेनाके निवासी पन्द्रह सहस्र रुपया सालियाना देते थे, इस समय और भी अधिक पांच हजार रुपये अर्थात् बीस हजार रुपये देने लगे, उससे और भी आठवर्षतक राज्यका काम काज चला सकता है।"

"(३) तीसरी धारा। दो मुसद्दी रक्खे जायँ और वह मेजारहलके पास जाकर माहिरवाडाके देश उदयपुरके अधिकारी सम्पूर्ण ग्रामोंमें सदूग्रहीत राजस्वके हिसाबकी परीक्षा करें; और वह बृटिश गवर्न-

उनको फिर लौटा दिये, सन् १८३३ ईसवीमें सात मार्चको दियायोर नामक स्थानमें संधिपत्र लिखा गया, अंग्रेज गवर्नमेंटकी ओरसे लेफ्टिनेन्ट कर्नल केटने और महाराणा-की ओरसे प्रधानमन्त्री महता शेरसिंह, प्रधान श्यामनाथ पुरोहित और राय चिरंजवि लालने उसपर हस्ताक्षर किये। आलस्य विलासिता और इंद्रियोंकी आसक्ति जिस राजा के ऊपर अपना अधिकार कर लेती हैं, उस राजाका खजाना अतुल धनसे पूर्ण होने पर भी बहुत जल्दी खाली हो जाता है। महाराणा जवानसिंहने विलास भोगमें मोह-मंत्रसे मोहित हो बहुत थोडे ही समय में अपना सम्पूर्ण धन उठा दिया, इसी कारणसे उनका सम्पूर्ण खजाना खाली हो गया, जैसे २ उनकी आयु बढती जाती थी वैसे २ ही उनकी इंद्रियोंमें आसक्ति और पाप करनेमें अधिक मन बढता जाता था, इसी कारण राज्यके पालनमें उनको पहलेकी भांति राज्यके देखने भालनेका अवकाश न मिला और इसीसे राज्यकी अवस्था धीरे २ अत्यन्त ही शोचनीय हो गयी। और अन्तमें राणा जवानसिंहने धनहीन होकर सामन्त और धनवान प्रजासे ऋण करनेमें भी कसर न की। भोग विलासताके कारण वह ऋण दिनपर दिन बढता ही गया।

राणाने शासन भागकी ओरको आँख उठाकर भी न देखा, इसीसे प्रत्येक वर्षमें दो लाख रुपयेका खर्च होने लगा। इधर गवर्नमेंटको जो संधिपत्रके अनुसार कर देते थे, इस समय वह कर भी अत्यन्त बढ गया, राज्यके चारो ओर असन्तोषदायक चिह्न और अत्याचारोंसे पीडित तथा हृदयके भेदन करनेवाले दृश्य क्रमशः दिखाई देने लगे। राणाको नियुक्त कर देनेमें असमर्थ देखकर माननीय ईष्ट-इन्डिया कम्पनीने लंदनमें स्थित कोर्ट आफ डाइरेक्टरको सूचना दी वहांसे यह आज्ञा हुई कि यदि राणा हमारा नियमित कर न देंगे और हमारे पिछले शेष करको अदा न कर सकेंगे तो उस करको लेनेके लिये राणाके अनेक देशोंको गवर्नमेन्ट स्वयं अपने हाथमें लेगी, अथवा वह किसी न किसी प्रकारसे अपने करके पलटेमें कुछ न कुछ ले ही लेगी।

कोर्ट अब डिरेकोर्सने जिस वर्षमें राणाको यह सूचना दी, उसी वर्षमें अर्थात् १८३८ ईसवीके अगस्त महीनेमें विलासी राणा जवानसिंह पुत्रहीन होनेसे स्वर्गको चले गये, इनके सम्पूर्ण चरित्रोंका वर्णन पहले ही हो चुका है, इस कारण इस स्थानपर उसका पुनः उल्लेख करना निष्प्रयोजन है।

राणा जवानसिंहने अपने गोद लिये हुए पुत्र सरदारसिंहको राज्यसिंहासनपर बैठाया राणा जवानसिंहजी जीवित अवस्थामें ही (१९६७०००)रुपया कर्ज कर गये थे, जिसमें गवर्नमेन्टको आठ लाख रुपया देना था। गद्दीपर बैठते ही सरदारसिंहने उस ऋणके

मेंटके मुसद्दियोंसे प्राप्त हुए उन ग्रामोंसे संग्रह किये हुए राजधनकी तालिका और हिसाबको मिलाकर दिखावैं, बरन उनके आगे रक्खैं।"

"(४) चौथी धारा। इस संधिपत्रपर जब महामाननीय गवर्नमेन्ट जनरलके हस्ताक्षर हो जायँ तब इसके एक खण्डकी नकल उदयपुरके दरबारमें भेज दी जाय।"

भारको अपने शिरपर धारण किया, इस ऋणकी संख्याको देखकर पाठकगण इस बातको तो भलीभांतिसे जान जायँगे कि राणा भीमसिंह कैसे अधिक खर्चालू थे ।

यद्यपि राणा सरदारसिंह आलसी और विलासी नहीं थे परन्तु इनकी प्रकृति अत्यन्त ही कड़ी थी; और यह अपनी कड़ी अभिलाषा सबको दिखाने लगे, भीमसिंह और जवानसिंहके राज्यके समयसे ही मेवाड़के सम्पूर्ण सामन्त भलीभाँतिसे अप्रसन्न हो गये थे; परन्तु इस समय राणा सरदारसिंहकी कठोर दृष्टिके पडनेसे तथा अनेक स्थानोंमें अनेक कठोर व्यवहार करनेके कारण वह लोग अत्यन्त ही असंतुष्ट होकर विद्रोही हो गये । इधर राणा सरदारसिंहने बृटिश गवर्नमेन्टको यह कहला भेजा कि सम्पूर्ण सामन्त कबूलनामेके अनुसार कोई कार्य भी नहीं करते और इसीसे सभी विद्रोही हो अपनी इच्छानुसार जहाँ तहाँ घूमते हैं । राणा सरदारसिंह और सम्पूर्ण सामन्तमण्डलीमें अधिक झगडा बढनेकी सम्भावना जानकर बृटिशके दूत (पोलिटिकेल एजेन्ट) मेजर रबिन्सनने सन् १८४० ईसवीके पहिले महीनेमें दोनोंमें एक संधिबंधन * नियुक्त कर दिया । यद्यपि मेजर रबिन्सनके मध्यस्थ होनेसे महाराणा भी सामन्तोंके साथ संधि करनेमें सम्मत हो गये

---

* कबूलनामा ।

"१८१४ ई० वैशाखमें (मे० १८१८ ईसवीमें) कप्तान टाडसाहबने मध्यस्थ हो दोनोंके हितकी इच्छासे महाराणा और उनके सामन्तोंके हस्ताक्षर कराय दशधारासे पूर्ण एक कबूलनामा (स्वीकारपत्र) नियुक्त कर दिया था ।

बहुतसे स्थानोंमें सामन्तोंने उस स्वीकारपत्रकी ओर ध्यान भी न दिया और उसके विपरीत आचरण करने लगे, इसमें महाराणा भी सम्मत हुए उनकी यह राय हुई कि कप्तान कविके उपदेशसे तथा उनकी सम्मतिसे एक दूसरा नया कबूलनामा बनाया जाय और उसमें पहिले कबूलनामेकी सम्पूर्ण धाराओंके साथ महामान्य राणा एवं सामन्तगण दोनों पक्षमें उपकारी जिन नवीन धाराओंकी आवश्यकता विचारें, वैसी धारा और रक्खी जायँ, अर्थात् दशहरेके उत्सवके उपलक्षमें संपूर्ण सरदार ईकट्ठे हों और कबूलनामेकी संपूर्ण धाराएँ पढी जाकर उसका मतलब प्रत्येक सरदारको समझाया जाय तथा उसपर सामन्त और महामान्य (राणा) के हस्ताक्षर कराये जायँ । और कबूलनामेकी प्रत्येक धाराका पालन नियम सहित हो और प्रतिभूस्वरूप महाराणा तथा संपूर्ण सरदार पोलिटिकल एजेन्टको साक्षी बनाकर इसपर उसके हस्ताक्षर करानेको कहैं । कितने ही वर्षके बीत जानेपर वह कबूलनामा बनाया गया, परन्तु उसपर महाराणा सरदार अथवा पोलिटिकल एजेन्टके हस्ताक्षर नहीं हुए । इस समय मेवाडके सामन्तोंने भ्रमजालमें पडे हुए । मनुष्योंके अनुरोधसे उपरोक्त कबूलनामेके बिना अदल बदल किये अथवा कोई नयी धारा कायम न करके उसमें अपनी सम्मति देकर उसको स्वीकार किया और वह मेवाडके प्रतिनिधि पोलिटिकल एजेन्ट मेजर रबिन्सनके सामने नियमसहित १८४०ई०के (१ म)विधिमें बँध गये और उसपर महाराणा तथा मेवाडके सरदार और भ्रान्तचित्त हुए मनुष्योंने भी अपने हस्ताक्षर कर दिये ।

दोनों पक्षोंके हितकारक अतिरिक्त धारावली ।

१ म—प्रथम कबूलनामेकी नवीं धारामें लिखा गया है कि सरदारगण उनके आधीनकी प्रजाके ऊपर किसी प्रकारके अत्याचार न करने पावें और ऐसा भी कोई काम न करें कि जिससे प्रजाको पीडा पहुंचै;

परन्तु कुछ ही कालके बीचमें फिर पहलेके समान मनमें भेद पड जानेसे अनेक भाँतिकी विशृंखलता उपस्थित कर दी। परस्परका लडाई, झगडाही मेवाडकी अवनतिका कारण हुआ, इसकारण बृटिश गवर्नमेन्टके कल्याणमें महाराष्ट्र चोरोंके भयंकर अत्याचारोंसे मेवाड छुटकारा पाकर भी इस परस्परकी अग्निसे धीरे २ जर्जर होने लगा; राणा प्रतापसिंह व राणा राजसिंहके प्रबल प्रतापके समयमें किसी सामन्तका उनके विरुद्ध शिर उठाना

राज्यकी विशृंखलताके समयमें जो नये दंड कर आदि देने निश्चुक्त हुए हैं, वह एकबार ही छोड दिये जांय, परन्तु वह इस संधिबंधनतक उस प्रकारका कार्य न करैं और उसके पीडित सूत्रमें बँधकर बहुत सी प्रजा जो मेवाडसे भाग गयी है, ऐसी यह विधि रक्खी जाय कि वह अब ऐसे आचरण करनेमें कसर न करैं कि जिससे प्रजा फिर वास करनेकी इच्छा करै, तथा भूमिकी आमदनी अधिक बढा दी जाय इस सूत्रसे नगरकी सफाई होगी।

२ य-प्रत्येक सरदार अपनी नियुक्त की हुई सेनाके साथ एक वर्षके बीचमें तीन मासतक राजधानीमें रहैं, यह रीति इस समय प्रचलित है। धीरे २ जब यह नियम प्रचलित हो जायगा, तथा नियमित समयके अतिरिक्त किसी सरदारको भी उदयपुरमें जानेकी आज्ञा न दी जायगी, कारण कि सामन्तोंके अतिरिक्त समयके रहते हुए उन्हींको अधिक व्यय और कष्ट सहन करना होगा, जिस किसी सरदारके विना हाजिर हुए आज्ञा देनेमें राणाकी इच्छा रह गयी तो वह गैर हाजिर विना आज्ञा प्राप्त किया सरदार उस समय नियमानुसार हाजिर रहेगा, उस समयके बीच विना राणा और किसी दूसरे सरदारको उस कार्यके करनेको आज्ञा नहीं दे सकेंगे, प्रत्येक सरदार ही अपनेपूर्ण संख्यक सेवकोंकी रक्षा करेगा; यदि वह, उससे थोडी संख्यावाले सेवक लावेंगे तो वह लोग राणाके असंतोषके पात्र होंगे।

३य-विदेशी शत्रुओंके हाथसे मेवाडकी रक्षा करनेके लिये राणाने बृटिश गवर्नमेंन्टको खालस अर्थात् अपने अधिकारकी पृथ्वीके राजस्वके आठवें भागका तीसरा अंश करस्वरूप दिया है, इस हिसाबसे जागीरदारोंसे साधारण भग्न अंश भी नहीं ले सकते। यहां यह भी कहा गया है कि एक मात्र विदेशियोंके आक्रमणसे राज्यकी रक्षा करनेके लिये ऐसा कर दिया गया था, कारण कि सामन्तोंके सेनादलकी संख्या उनके आक्रमणके रोकनेको असमर्थ थी, इसी कारण सामन्तोंने इनसे बहुतसे उपकार प्राप्त किये। पहिले दक्षिणके निवासियोंको (महाराष्ट्रियोंको) राज्यकी आमदनीके चौथे अंशका एक अंश देना होता था और वही राज्यका अधिक अनिष्ट करनेका मूल कारण था, इस समय वह सम्पूर्ण अनिष्ट और उपद्रव शान्त हो गये हैं। जो सामन्तगण सम्पूर्ण सेनाकी रक्षा करनेमें सामर्थ्ययुक्त थे वह इस समय आधी सेनाकी रक्षा कर रहे हैं और वह अपने कर्तव्य पालनमें हताश हो गये हैं; इसी कारणसे राणा सामन्तोंके अधिकारी देशोंके ऊपर दुष्ट व्यवहार कर रहे हैं, इसीसे सरदारोंकी आमदनीमें बडी भारी हलचल पड गयी है, और उनका कष्ट दिनपर दिन बढता जा रहा है। राणाने जिस भांति संपूर्ण खालीभूमिकी आमदनीका कर बृटिश गवर्नमेंटको दिया है उसी भांति सरदारोंको भी अपने२ अधिकारी देशकी आमदनीमेंसे राणाको कर देना उचित था; परन्तु सरदारोंने विचारा कि इस आमदनीमें तो मेरे कुटुम्ब और सेवकोंका ही खर्च चलैगा, इसी कारण उन्होंने कर देना स्वीकार न किया, राणाने उसी हिसाबसे सामन्तोंसे कुछ भी कर न लेकर अपने अधिकारी देशोंकी आमदनीमेंसे कर देना निश्चय कर लिया महाराणाने यह विचारा था कि सरदारगण जो नियमित की हुई व्यवस्थाके अनुसार आधी सेनाकी रक्षा करनेमें समर्थ हुए हैं, इस समय उस व्यवस्थाको दूर कर दिया जाय; और उस आधी सेनाके खर्चके पलटेमें नगद रुपयेके पीछे दो आनेके हिसाबसे आधी सात पाई दी जायँ, और वह छातून नामसे पुकारा जाय, और उसी धनसे राज्यके समस्त कार्य करनेके लिये एक सेना बनाई जाय; जिससे कि सरदारोंको यह बात न विचारनी पडे कि जो कर गवर्नमेंटको दिया जाता है उसीके लिये धन लिया जाता है, कारण कि वह एक सेनादलकी रक्षा और उसीके काममें खर्च होनेके अतिरिक्त और

तो दूर रहा वरन उनके विरुद्ध बोलनेकी सामर्थ्य भी नहीं थी, यदि राणा प्रतापसिंह वा राजसिंह अपने किसी सामन्तके ऊपर अत्याचार भी कर लेते तो भी वह सामन्त उनका सामना करनेको अत्यन्त ही घृणित कार्य विचारता, उस समय राणागण तथा सामन्तमंडली जातिके सन्मानकी रक्षाके लिये एकमत हो कार्यक्षेत्रका विचार करते थे, परन्तु इस समय दोनोंके हृदयकी अवस्थाके बदल जानेसे देशके अधःपतनके सूत्रमें शीघ्र ही दोनोंके बीचमें विवादकी आग भयंकर रूपसे प्रज्वलित हो गयी । इस सूत्रसे बहुतसी प्रजा मेवाडको छोडकर जहां तहां भाग गयी । अपना बल अत्यन्त ही घटाहुआ जानकर राणा सरदारसिंहने १८४१ ईसवीमें बृटिश गवर्नमेन्टके सन्मुख यह प्रस्ताव किया, कि एक दल तो अंग्रेजी पैदल सेनाका उनकी सामर्थ्यको चलाने और उत्तेजित करनेके लिये सामन्तोंको शासन करनेके निमित्त उदयपुरकी रक्षा करनेमें नियुक्त रहै, परन्तु इसका विचार विशेष होनेके कारण अंग्रेज गवर्नमेन्टने उसमें अपनी सम्मति नहीं दी ।

राणा सरदारसिंहने १८४२ ईसवीमें इस मायामय शरीरको छोड दिया । राणा भीमसिंह और राणा जवानसिंह भोग विलासिताके वशीभूत होकर जिसभाँति राज्यके शासनमें कर्महीनता प्रकाश कर गये हैं, सरदारसिंह उस चरित्रके मनुष्य न होनेपर भी केवल अपने ऊधमी स्वभावके कारण सम्पूर्ण सामन्तोंको अप्रिय हो गये ।

किसीके काममें नहीं आवेगा ।समस्त वर्षोंके लिये पूर्ण सेनाकी रक्षा करना सामन्तोंके पक्षमें जिस भांति उसका खर्च कष्टसाध्य था, यदि उसकी तुलना छातूनके साथ की जाय तो उनके पक्षमें कभी कष्टदायक नहीं जान पडेगी । यदि किसी आवश्यकीय कार्यके उपस्थित होनेपर उसके बदलेमें राणा समस्त सेनाको हाजिर होनेकी आज्ञा दें और उनको मेवाडकी सीमाके बाहर भेज दें तो जो सरदार इस प्रकारसे सेनाकी सर्वराही करैं उनको छातूनके कर देनेसे छुटकारा मिल जायगा ।

४–र्थ राणाने यह मनादी कर दी है कि किसी विशेष कारणके अतिरिक्त और किन्हीं सरदारोंके अधिकारी ग्रामोंको उनसे लेकर अन्य किसी दूसरे सामन्तको नहीं दिये जायँगे ।

५–म कितने ही सामन्त इच्छानुसार छातूनका कर देनेमें असम्मत होकर विलम्ब करते हैं;तब राणा बलपूर्वक कर लेनेके निमित्त घुडसवार पैदल सिपाहियोंको भेजा करते हैं।

इस सूत्रसे सामन्तोंके सैकडों रुपयोंकी हानि हो रही है. और फिर इससे राणाका कुछ उपकार भी होता हुआ दिखाई नहीं देता, इसलिये महामान्य राणाने समस्त सरदारोंके पक्षके प्रतिनिधियोंको बुलाकर मन्त्रियोंके साथ सलाह कर पांच वर्षके बीचमें दो बार छातूनके कर देनेका विचार किया है । इससे रोजाना हस्ताक्षर करानेकी आवश्यकता न रहैगी । जिस दिन छातूनका कर दिया जायगा यदि उसी दिनसे सामन्तगण कर देनेमें असमर्थ होंगे तो उनकी असामर्थ्यके अनुसार उनके अधिकारी समस्त ग्रामोंसे तथा भूमिसे वह वसूल किया जायगा तथा वह ग्राम ले लिये जायँगे और फिर न लौटाये जायँगे ।

एकबार माघके महीनेमें और एकबार ज्येष्ठके महीनेमें छातूनके कर देनेका समय निश्चय हुआ ।

बेदलाके राव भक्तसिंह ।	महाराज हमीरसिंह ।
सलम्बूरके राजा पद्मसिंह ।	रावत अमरसिंह ।
देवगणके रावत लहरसिंह ।	रावत ईश्वरीसिंह ।
रावत सलीमसिंह ।	रावत दुनियासिंह ।

उन्नीसवां अध्याय १९.

महाराणा स्वरूपसिंह-राज्यकी विशृङ्खलता;-सामन्तोंके साथ विवाद;-नया कबूलनामा;—बृटिशगवर्नमेण्टको कर देनेमें ह्रास;-सामन्तमण्डलीके सहित पुनर्वार विवाद;-राणाके द्वारा सलूम्बूर तथा देवगणोंके दोनों सरदारोंको भूसत्वमें बहुत अंशका अधिकार;-दोनों सामन्तोंका इसपर फिर अधिकार;-बृटिश गवर्नमेण्टकी मध्यस्थता; दोनोंमें नवीन सन्धि;-फिर विवाद;-बृटिश गवर्नमेण्टकी फिर मध्यस्था;-विवादम-अन स्वरूपसिंहका परलोक जाना।

राणा सरदारसिंहने पुत्रहीन अवस्थामें इस संसारको छोडनेके पहले अपने छोटे भाई स्वरूपसिंहको पुत्रभावसे गोद ले लिया था, इस कारण वही इस समय १८४२ ई०में मेवाडके राज्यसिंहासनपर विराजमान हुए। राणा स्वरूपसिंहने गद्दीपर बैठते ही देखा कि राज्यके चारों ओर विशृङ्खलता फैल रही है, इसीसे राज्यकी अवस्था अत्यन्त ही शोचनीय हो गई है, सम्पूर्ण सामन्त स्वतन्त्र हैं, वाणिज्यकी गति अत्यन्त ही अप्रीतिदायक हो गयी है, नवीन राणा बडी सरलतासे शासनके पलटेमें सब सामन्त मण्डलीके साथ झगडा करनेमें प्रवृत्त हुए परन्तु इससे उनका मनोरथ सिद्ध न हुआ वरन् इससे विशृङ्खलता अत्यन्त ही बढ गयी। सभी सामन्त राणाको अपना परम शत्रु मानने लगे।

राणा स्वरूपसिंहने ऊधमी सामन्तमण्डलीको दमन करनेके निमित भयंकर मूर्ति धारणकर कठोरतासे शासन करना आरम्भ किया। राणा सरदारसिंहके सामनेसे जितने सरदार नर्म गये थे इस समय राणा स्वरूपसिंहके कठोर शासन और दुष्ट अत्याचारोंसे वह पहले भी अधिक द्रोही हो गये, राणा और सामन्तोंमें जो विवादकी आग भडक गयी थी उसको बुझानेके लिये अपना मुख्य कर्तव्य जानकर अंग्रेजी पक्षके दूत लेफ्टिनेन्ट कर्नल रविन्सनने फिर दोनोंमें संधि करानेका निश्चय किया, अन्तमें १८४५ इसवीके फरवरी महीनेकी आठ तारीखको वह संधि बन्धन समाप्त हो गया।×

× " पहले कप्तान टाडसाहबके समयमें महाराणा भीमसिंह और सरदारोंके बीचमें दश धाराओंसे युक्त एक स्वीकारपत्र बनाया गया।पीछे कप्तान कबिके समयमें पांच धारावाला और एक कबूलनामेका निश्चय किया, और अंतमें कर्नैल रविन्सनके सामने महाराणा सरदारसिंह और सामन्तोंने एक स्वीकार-

यद्यपि महाराणा स्वरूपसिंह सामन्तोंके साथ इस नवीन सन्धि बन्धनमें सम्मत हो तो गये परन्तु उनके राज्यकी अवस्था किसी प्रकार भी सन्तोषदायक न हुई, विशृङ्खलताके कारण राणाकी आमदनी बहुत ही घट गयी, तब वह बृटिश गवर्नमेण्टसे करको कमती

पत्रको स्थितकर दोनों पक्षवालोंने उसपर हस्ताक्षर कर दिये; परन्तु सामन्तोंने कबूलनामेकी धाराके अनुसार एक भी कार्य न किया, उन धाराओंकी भलीभांति रक्षा करनेकी इच्छासे महाराणाने सामन्तोंके साथ मिलकर अपने पक्षावालोंसे सम्मतिकर निम्नलिखित अतिरिक्त धाराओंसे युक्त किया, और इन्हीं कर्नल रबिन्सनको इसका मध्यस्थ बनाया दोनों पक्षवालोंने उसपर अपने हस्ताक्षर किये।

१ म--जब पत्र स्वीकार किया गया उस समय स्वीकारपत्रकी समस्त धारा बडी प्रबलतासे प्रचलित हुई। प्रत्येक वर्षकी बिजयादशमीसे दश दिन पहले सब सरदारोंकी एक साधारण समिति बनाई जाय उस सेना दलको देखने उपरान्त राणा अपनी इच्छानुसार चाहे जिस सामन्तको तीन महीनेके लिये जानेकी आज्ञा दें; और किस सामन्तको किस किस समयमें हाजिर होना होगा उसको भलीभांति सुनाकर उनको अपने२स्थानपर जानेकी आज्ञा दी जाय। सम्पूर्ण सरदारोंकी सेना किसी प्रकार भी अपने कर्तव्यपालनेमें शान्त न हो। यदि वह नियत किये हुए समयमें हाजिर न हो सकेगी, या वह अपने कर्तव्यपालनेमें ध्यान न देगी, अथवा सम्पूर्ण सेना एकत्रित न हो सकेगी तो जिस सरदारके आधीनकी वह सेना है उसका सेनाके कार्य ठीक न करनेसे राणाको रुपये देने होंगे।

२ य--जो सरदार नियम सहित जितनी सेनाकी रक्षा करता है वह अपनी उससे आधी सेना देकर ही छुटकारा पावेगा, और उस रुपये पीछे दो आनेके हिसाबसे सप्ताहके आधे दिनोंमें छातूनका कर जो पहले कबूलनामेके अनुसार स्थिर किया हुआ है वह इस समय नियम सहित देना होगा।

३ य---सम्पूर्ण सामन्त अपने २ अधिकारी देशोंको रक्षा भलीभाँतिसे करें; और न वह किसी अन्य राज्यके चोर तथा हत्या करनेवाले व डाकू आदिको अपने नगरमें स्थान दें। और ऐसा करनेपर भी यदि कोई अपराधी उनकी सीमामें आनेकी इच्छा करै तो उसको पकड लें, और उसपर जो कुछ भी वस्तु मिलै, वह उसको लेकर जयपुर तथा जोधपुर राज्यके साथ हमारी जो संधि हो गई है; उस धनको वह जिस राज्यकी प्रजा है उसको उसी राज्यमें समपर्ण करैं।

४ थं-सरदारोंकी अनुमतिमें महाराणाकी भी संमति रहै, यदि उनमें सीमाके लिये अथवा और किसी कारणसे झगडा उत्पन्न हो जाय, तो उस स्थानमें एक पंचायत नियुक्त की जाय। वह उस पंचायतमें सरदारोंके पक्षके चार जन और राणाके पक्षका एक मनुष्य नियत किया जाय। वह भलीभांतिसे न्याय करके उस परस्परके झगडेको सरलतासे निबटा दें, और उनका विचार दोनों पक्षवालोंको मानना होगा।

५ म--दोनों पक्षके मनुष्य अपनी २ इच्छानुसार ही इस स्वीकारपत्रको माननेके लिये राजी हों, और दोनों पक्ष एक मत होकर बराबर भावसे इसकी संपूर्ण धाराओंका पालन करैं। संपूर्ण सरदार कबूलनामेके अनुसार महाराणा जवानसिंहके शासनकालकी समान छातूनका कर दें, और आनंदित हो अपने २ कर्त्तव्यको पालन करैं। यदि कोई स्वीकारपत्रकी किसी धराको भी पालन करनेमें असमर्थ होगा, तो पहले कबूलनामेके समान राणाका अप्रीति पात्र होगा।

राणाकी आज्ञासे महता शेरसिंह।
रावत लहरसिंह।
रावत पृथ्वीसिंह।
महाराज हमीरसिंह।
रावत दुनियासिंह।"

करानेके लिये गये। राजधनकी अवस्था अत्यन्त ही शोचनीय देखकर गवर्नमेंटने १८२६ ईसवीमें जिस करकी संख्या तीन लाख रुपया की थी, जब राणाने कहा कि इस समय तो राजधनकी अवस्था अत्यन्त ही शोचनीय हो रही है, तब गवर्नमेन्टने राणाकी प्रार्थनापर सम्मत हो १८४६ ईसवीमें दो लाख रुपये देनेके लिये कह दिया।

यद्यपि कर्नल रविन्सनने मेवाडमें शान्ति और महाराणा तथा सामन्तोंमें मेल कराने की इच्छासे १८४५ ईसवीमें नवीन संधि करा दी, परन्तु दुर्भाग्यके वशसे दो वर्षके बीचमें ही महाराणा और सामन्तोंके साथ अत्यन्त असंतोषकारी कार्य हो गया। न्यायसहित राजधनका बढाना, राज्यसंस्कार, दुष्टचरित्र कर्मचारियोंको उचित दंड देनेके बदले महाराणा स्वरूपसिंह उत्तम प्रबंधके बदले सामन्तोंके साथ धीरे २ विवादकी अग्नि भडकाने लगे। किसी पक्षके मनुष्य भी वृटिशदूतके सन्मुख परस्परके दोषका वर्णन, अत्याचार तथा स्वीकारपत्रकी धाराके भंग करनेमें शान्त न हुए, राणा स्वरूपसिंहने यह कहकर सम्मति दी कि कबूलनामेके मतसे सम्पूर्ण सामन्तगणोंको जिस कर्तव्यपालनमें दृढ प्रतिज्ञ होना चाहिये वह उस कर्त्तव्यको पालनेमें राजी नहीं है, राणाने उससे भी अधिक समय तक कार्य करनेकी आज्ञा दी; उनके आधीनके सम्पूर्ण ग्रामोंमें विना कारणके अथवा अत्यन्त ही सामान्य सूत्रमें अधिकार और धनके दंड करनेमें भी त्रुटि नहीं की। दोनों ही पक्षोंका विवाद क्रमशः बढने लगा। महाराणा स्वरूपसिंहने एक पक्षमें जिस भाँति अपने भयंकर प्रतापसे सामन्तोंकी मंडलीके ऊपर अत्याचार करनेकी दृढ प्रतिज्ञा की, दूसरे पक्षके सरदारोंने भी उसी मतसे उनके ऊपर घृणा दिखाना प्रारंभ किया तथा उनकी आज्ञाको न मान कर किसी २ ने तो उनके विरुद्धमें खडे होनेके लिये किंचित् भी विलम्ब नहीं किया। यही नहीं कि राणा और सामन्तोंमें इस विवादका फल केवल दोनोंके ही भोगनेके लिये हुआ हो। बरन सम्पूर्ण प्रजाने भी इसी चक्रमें पडकर अनेक भांतिके कष्ट सहन किये।

सबमें प्रधान मेवाडके सुलम्बूरके अधिपति और देवगणके सरदारोंके साथ महाराणाका विवाद अत्यन्त ही बढ गया। राणा स्वरूपसिंह इनके नीच आचरणोंसे ऐसे क्रोधित हुए कि १८५० ईसवीमें उनके आधीनके सम्पूर्ण ग्रामोंको अपने कब्जेमें करनेका विचार किया। राणा स्वरूपसिंहने उसी सालमें बहुत सी सेना भेजकर सलम्बूर और देवगणोंके नायकोंके अधिकारी सम्पूर्ण ग्रामोंको बल करके अपने अधिकारमें कर लिया, जैसे ही सेनापर इन्होंने अपना अधिकार किया कि वैसे ही दोनों सरदारोंने अपनी बचीबचाई सेनाको साथ ले राणाकी सेनाको परास्त करके छिन्न-भिन्न कर दिया, और शीघ्रतासे अपनी सम्पूर्ण सेनापर अपना अधिकार कर लिया, जब इस प्रकारसे दोनों सामन्तोंने राणाकी सेनाको छिन्न भिन्न कर दिया, तब स्वरूपसिंहके हृदयमें भयंकर क्रोधानलके प्रज्वलित होनेमें क्षणभरका भी विलम्ब न हुआ, परन्तु वह उन ग्रामोंपर अपना अधिकार करनेके लिये असमर्थ हो चुपचाप अपमानकी अग्निसे स्वयं भस्मीभूत होने लगे।

अंतमें राणा स्वरूपसिंह और असन्तुष्ट हुए सरदारोंने अपने झगडेकी मीमांसाके लिये बृटिश गवर्नमेन्टके दूतको मध्यस्थके पदपर वरण किया। उस तत्त्वकी खोजका फल बृटिश गवर्नमेन्टको शुभ सुयोग्य जानकर पोलिटिकल एजेन्टकी सामर्थ्य बढाने और प्रधान विस्तार सहित मेवाडाधिपति राणाकी सामर्थ्यको अधिक घटानेकी चेष्टा करने लगा। बाप्पारावल, राणा प्रतापसिंह और राणा राजसिंहके वंशवालोंने केवल नाममात्रको ही मेवाडके अधिपति होकर एजेन्टकी पूर्ण आधीनतामें समय व्यतीत किया। गवर्नमेन्टने उसपर ही अधिक दृष्टि डाली; राणा और सामन्तोंके झगडेको दूर करनेकी इच्छासे १८५५ ईसवीमें सर हेनरी लारेन्सने एक नया कबूलनामा अर्थात् स्वीकारपत्र नियत कर दिया। × पाठक मंडली उस कबूलनामेको पढकर भलीभाँतिसे समझ जायगी कि महात्मा टाडसाहब पोलिटिकल एजन्टके पदपर स्थित हो राजपूत जातियोंका आचारव्यवहार और धर्मरीतिसे सन्मानकी रक्षा कर मेवाडका अपार हित कर गये हैं इस पदपर स्थित हुए मनुष्यको इस समय कैसा सामर्थ्य करना होगा।

×"तीस वर्षसे महाराणा और उनके सामन्तोंमें मतभेद चला आ रहा है, पहले पक्षमें तो परिश्रमसे शान्त हुए सामन्तोंको राजद्रोही और दूसरे पक्षमें राणाको अत्याचारी कहा है।

केवल राज्यकी शांति और समस्त श्रेणीकी प्रजाके सुखके निमित्त अनेक प्रति निधि दोनों पक्षोंकी मध्यस्थता करनेके लिये बुलानेसे आये हैं।

उसीके अनुसार कितने ही कबूलनामे बने, और उनपर हस्ताक्षर होकर उनमें अपनी सम्मति भी प्रगट की गयी, परन्तु क्रमानुसार दोनों पक्षवालोंने उन संपूर्ण धाराओंको भंग कर दिया है।

यह बात सामन्तोंने पेश की कि राणा उनके अधिकारकी भूमिके ऊपर अन्यायसे अपना अधिकार कर रहे हैं। राणाने इसका जो उत्तर दिया है उससे यह भलीभांतिसे जाना जाता है कि राणा केवल भूमिका संपत्तिको अपने अधिकारमें करके शांत न हुए हैं इससे उन्होंने बहुतसे ग्राम अपने अधिकारमें कर लिये हैं, महामाननीय राणाने लाउयाके सामन्तके ऊपर जैसा व्यवहार किया, इससे जाना जाता है कि उन्होंने अपराधके अन्यायसे ऐसा कठोर दंड दियाहै दूसरे पक्षके सरदारोंने प्रतिवादता प्रकाश की, अधिक कहां तक कहें उसमें उन्होंने अनेक विद्रोहके उत्पन्न करनेवाले आचरण करे, उन्होंने इनको भी अस्वीकार नहीं किया।

दोनों पक्षवालोंको इस प्रकारके आचरणोंसे रहित होना अवश्य ही कर्त्तव्य है। अथवा जबतक महाराणाने न्यायके अनुसार प्रजाओंको संतोषका देनेवाला और पोलिटिकेल एजेन्टके उपदेशके अनुसार कार्य किया, गवर्नमेन्टने भी उतने दिनोंतक महाराणाके न्यायशासनकी सामर्थ्यमें पक्षता की, इस बातकी मेवाडकी सभी प्रजा जानतीहै कि भारतवर्षमें गवर्नमेन्टका ऐसा आशय था। पहिली पहल कबूलनामेके बननेके समयमें निम्नलिखित कबूलनामा बनाने और प्रचलित करनेकी आज्ञा गवर्नमेन्टने दी, कि जो कोई कबूलनामेकी लिखी हुई धाराओंके अनुसार कार्य नहीं करेगा वह बृटिश गवर्नमेन्टके विरुद्धमें अपराधी होकर दंडका भागी होगा। किसी झगडेके संबन्धका विचार पोलिटिकेल एजेन्ट और गवर्नर-जनरलके राजपूतानेमें स्थित एजेन्टके सन्मुख हाजिर करना होगा, और वह वर्त्तमान कबूलनामे और प्राचीन रीति नीतिके मतसे जो भी विचार करेगा, वही वृत्तान्तर स्वरूपमें मान्य होगा।

नवीन कबूलनामेके ऊपर केवल महाराणा और चार प्रधान सामन्त उसपर हस्ताक्षर करें, परन्तु अधिक दिनोंके उपरान्त वह कबूलनामा खारिज हो जायगा। फिर उस धारा के पालनेमें सामन्त अथवा महाराणा कोई भी अगुआ नहीं होगा; इसी कारण पहले ही के समान विशृंङ्खलता चारों ओर फैलती जाती है। हमें ऐसा जान पडता है कि बृटिश

पहिली धारा। सामन्तगण, दिसम्बर या जूनके महीनेमें किसी महाजन अथवा वकीलके द्वारा, संपूर्ण उत्पन्न हुए धान्यका रुपयेके प्रति आधा दो आनेके हिसाबसे छातूनका कर आनाहार होकर मेवाड़के अधिनायकको दें।

यदि कोई सामन्त इस करके देनेमें असमर्थ हो जाय तो उसको अवश्य ही वार्षिक शतकरा सैकडे-पर महसूल आधा बारह रुपया कुसीद (ब्याज) स्वरूप देना होगा; बारह महीनेके उपरान्त सब भूमिका कर चुक जानेके समयतक राणाका अधिकार समाप्त हो जायगा।

और जो लोग अपनी २ भूमि में उत्पन्न हुए धान्यका यथार्थ परिमाण देनेमें राजी होंगे तो उनके ऊपर मध्यस्थके द्वारा कर नियत किया जायगा, परन्तु परिमाणके अतिरिक्त करका भागी नहीं किया जायगा।

यद्यपि सलम्बूरके सामन्त छातूनका कर नहीं देंगे। परन्तु वह बारह महीनेतक राजधानीमें रहकर राणाकी आज्ञाका पालन करते रहैंगे।

आधे दो आना हारमें छातून करके अतिरिक्त जो सामन्तगण वर्तमान नियमके अनुसार उत्पन्न हुए धान्यका प्रत्येक १०००, रुपये मूल्यके ऊपर जिस भांति दो अश्वारोही और चार पैदल देते हुए आये हैं, अब उसके बदलेमें एक अश्वारोही और दो पैदल एक वर्षके बीचमें तीन मासके लिये स्वदेश वा विदेशमें नियुक्त होनेके लिये सरबराही करते रहैंगे। यदि इसके अतिरिक्त सेनाकी आवश्यकता होगी तो राणा प्रत्येक अश्वारोहीके निमित्त १६, रुपये और प्रत्येक पैदलको ६ रुपये महीना और खुराक देंगे, यदि सेना काम करनेमें ठीक न होगी तो सामन्तोंसे उस खुराकके दाम ले लिये जांयगे, प्रत्येक सामन्त अपनी २ सेना ले दशहरेसे दश दिन पहले महाराणाका सन्मान करनेके लिये उदयपुरमें जांय, और दशहरेके पांच दिन पीछे तक वहां रहैं, उस समय उनको अपने २ कामोंका समय बताना होगा, और यदि जो कुछ विशेष आवश्यकता हुई तो प्रत्येक सामन्तको राणाके हस्ताक्षर और मोहर लगे हुए आज्ञापत्रको पानेके लिये प्रत्येक सामन्तको अपनी २ सेनाके साथ हाजिर होना होगा।

जिनको राणासे पृथक् भावसे जागीर मिली है, उनको छातून देना या पृथक् भावसे कार्य साधन करना होगा।

दूसरी धारा। "तलोयाका बंधन" अर्थात् सामन्तके पदपर अभिषेकित सामन्तोंके अधिकारी देशोंमें एक वर्षतक जबतक कि धान्य उत्पन्न न हो तबतक उसके मूल्यके ऊपर रुपये पीछे बारह आनेके हिसाबसे देना होगा, इससे वह उस वर्षके छातूनसे छुटकारा पा जाँयगे। आमाइत गोइन्दा और बाणेरियाकी सामन्त मंडलीने कृष्णावत गणोंने इस प्रकार अभिषेकके कर देनेसे छुटकारा पाया था, कारण कि वह नियम सहित नजराना देते थे, वह नजराना राणाकी इच्छाके आधीनमें न रहकर उससे भी अधिक उत्पन्न हुए धान्यके ऊपर मूल्य शतकरा ८, रुपया नियत हुआ।

तीसरी धारा। चोर और डकैतोंके लिये राणाने प्रजाओंकी हानि पूर्ण करनेके लिये जो धन दिया था, वा जितना उसके लिये नियत किया; जिन सामन्तोंके अधिकारमें उस चोरी व डकैतीका प्रमाण मिल जाय वह सब सरदार राणासे परिशोधित रुपयेके शतकरा छः रुपये कुसीदके हिसाबसे तथा परिमाणमें परिशोध्य रुपयेके शतकरा बारह मुद्रा व्याजके राणाको परिशोध कर दें।

दूतको अधिक सामर्थ्य देनी होगी, अधिक क्या महाराणाकी अपेक्षा उसकी सामर्थ्य बढानेके लिये दोनों पक्षके हस्ताक्षर कबूलनामेके अनुसार कार्य करनेमें सम्मत होंगे। कबूलनामेके पढनेसे सरलतासे जाना जायगा कि राणाकी सामर्थ्य एक बार ही घटाकर बृटिश दूतको यथार्थ पक्षमें मेवाडके सर्वमय कर्त्ताके पदपर बरण करना ही गवर्न-

चौथी धारा। सामन्तमंडली चोर, डकैत, ठग, बाहरि, मदी और हत्या करनेवालोंको आश्रय न देने पावें। जो चुराई हुई वस्तुको तथा उसके अंशको ग्रहण करेंगे, तथा चोरसे धन ही लेंगे, या चोरोंकी रक्षा करैंगे, वह चोरोंके समान अपराधी ठहरेंगे। पोलिटिकेल एजन्टकी सम्मतिके अनुसार उनको अर्थदण्ड वा कर देना पडेगा। सामन्तोंके अधिकारी देशोंमें जो वणिक, व्यवसायी, बेचनेकी सामग्री ले जानेवाले सौदागर, बंजारे और मुसाफिर जांयगे, सामंतमंडलीको उचित है कि उनकी रक्षा भलीभांतिसे करें और यदि उनके धन आदिको किसीने लूट लिया तो वह उसके देनदार होंगे, परन्तु उन वणिक आदिकोंको सामन्तोंसे अपने आनेकी वार्ता तथा अपनी रक्षाका उचित उपाय करनेके लिये कहना होगा। सब श्रेणियोंके लूटनेवालोंको पकडकर महाराणाके सन्मुख ले जाना होगा। यदि सामन्त उस कार्यमें असमर्थ हुए तो इस समाचारको अवश्य ही महामाननीय राणाके सन्मुख निवेदन करें, और पोलिटिकल एजन्ट राणाके साथ मिलकर उन सामन्तोंके साथ सुव्यवस्था करैंगे। मेवाडके जिन ग्रामोंमें चोरोंकी शेष उपस्थितिके चिह्न पाये जांय तो उन ग्रामोंके निवासियों-को उस चोरीकी हानि पूरी कर देनी होगी।

पांचवीं धारा। सामन्तोंने महाराणासे जिस धनको कर्ज लिया है, अथवा महाराणाके प्रतिभूसे लिया है वह सभी चुकाना होगा; पहला ऋण शतकरा छः रुपया हारा, और शेषोक्त ९ रुपया हारा कुसीदके साथ देना होगा, यदि प्रतिभूके समय अन्य कोई हार नियुक्त हुआ हो तो वह उस हार के ही मतसे देना होगा, पोलिटिकल एजेन्ट इस प्रकार कर चुकानेका समय नियत कर देंगे।

छठी धारा। निम्नलिखितके अतिरिक्त और सबको नजरानेसे रहित किया गया;–

क–राणाके सिंहासनपर बैठने वा युवराजके पहले विवाहके समयमें सोलह सरदार और पहली श्रेणी के दो जने राजाके पाससे ८००) रुपये और जो नियम प्रचलित है उसके अनुसार एक २ दो २ घोडे लें; और जो सरदार नीचे पदपर स्थित हैं वह दूसरोंसे जितने धान्य उत्पन्न हुए हों उनका मूल्य प्रति सैकडे दो रुपयेके हिसाबसे लेलें।

ख–राणाकी भगिनी तथा कन्याओंके विवाहके समयमें एक वर्षमें जो धान्य उत्पन्न हुए हैं उनके ऊपर प्रत्येक रुपयेके आधे दो आनेके हिसाबसे राणा भीमसिंहके राज्यके समयके समान सामन्त घोडे आदि भी राणाको दें।

ग–जब राणा तीर्थकी यात्रा करनेको जाँय तो जो धान्य एक वर्षमें उत्पन्न हुए हैं उनके रुपया कर, उन रुपयोंमेंसे ५ हारे राणाको दें।

सातवीं धारा। वर्तमान कालके राणाकी भगिनीके विवाहके हिसाबमेंसे जो रुपया सामन्तोंपर बच रहा है, वह वर्तमानके एक वर्षमें उत्पन्न हुए धान्योंके मूल्यके ऊपर रुपयेके आधे दो आनेके हिसाबसे चुका देना होगा।

आठवीं धारा। सामन्तगण अभिषेक होनेके समयमें जो नजराना राणाको दें, उसके अतिरिक्त रुपया वह लोग अपनी २ प्रजासे नहीं ले सकेंगे।

नवीं धारा। ऐसे अनेक सामन्त हैं कि जिन्होंने राणाकी आज्ञाको नहीं माना है और राजमें अभक्ति दिखानेके कारण वह लोग अपराधी ठहराये जाकर धनका दंड दे चुके हैं। परन्तु महाराणाने एजेन्टकी

मेन्टका मुख्य उद्देश था। परन्तु यह उद्देश वृटिश गवर्नमेन्टके पक्षमें शुभदायक जानकर भी मेवाडके निवासी राजपूतोंने इसमें अपनी स्वाधीनता और राणाके अधिक सामर्थ्यका व्याघात करनेवाला विचार किया। जिस कारणसे भी हो नवीन कबूलनामेके व्यर्थ होनेपर गवर्नमेन्टने सामन्तमंडलीको जो आश्रय देनेकी प्रतिज्ञा की, उस प्रतिज्ञाके

सम्मतिके अनुसार सलम्बूर और देवगणोंके दोनों सामन्तोंके अतिरिक्त और सबका अपराध क्षमा कर दिया है। और बाकी देवगणके नायकोंने राणाके अधिकारी ग्रामोंपर बलपूर्वक अपना अधिकार कर राणाकी सेनाको छिन्न भिन्न कर दिया है, उस अपराधके कारण प्रत्येक मनुष्यको पचीस हजार रुपया दंडमें देना होगा। मनुष्यकी हत्याके अतिरिक्त और सभी अपराध महाराणाने क्षमा कर दिये अन्तमें विचार करनेपर जैसी आज्ञा होगी अपराधियोंको वैसा ही दंड मिलेगा।

दशवीं धारा। करद जमी-बाटी, जागीर, ग्रीम, बन्धकी, जमीखंड, दलील, दानपत्र, दातव्य जमी इत्यादि इस समय यह जिन मनुष्योंके अधिकारमें है वह सब उन्हींके अधिकारमें रहेगी।

भीमसिंहके राज्यके समयसे जो भूमि आदि दी गई है और कप्तान टाड तथा कप्तान कबिके समयमें जो समसत्की दलील लिखी गई है, उपयुक्त कारणके विना उनको फिर ग्रहण नहीं किया जायगा; और उसके अधिकारके विषममें पोलिटिकेल एजेन्ट उसका अनुसन्धान करेंगे, और यदि उन्होंने आवश्यक विचारा तो यह तो विदित ही नहीं है कि सामन्त राणाके विपक्षी हैं इस कारण ऐसे चार व छः सामन्तोंके साथ मिलकर उस तत्वका पता लगावैं।

जो भूमिके अधिकारी महाराणासे राजधनमें भूमि लेते हैं वह पहलेके समान अपने २ ग्रामोंकी रक्षाके निमित्त तथा चोर और डकैतोंसे जो हानि हुई है उसको पूरा करनेके लिये जिम्मेवार रहेंगे।

ग्यारहवीं धारा। दान, वाणिज्य, शुल्क, लगान (कर) खड, तूस, काष्ठ, ऊंटका लगान खानासुमारी (घरका कर) सभी राणोंको मिल सकता है. परन्तु जिन्हें टाड और कबिके समयसे सम्पूर्ण कर देनेकी सामर्थ्य है और जिन्हें नियमकी सनद मिल गई है वही उसे अदा करते रहेंगे।

बारहवीं धारा। कप्तान टाड और कप्तान कबिके समयमें जो कर नियत हो गया है--वह अचल भावसे प्रचलित रहैगा, इसके पीछे जो सम्पूर्ण कर अर्थात् वाणिज्य शुल्क कर अर्थ दंड इत्यादि नियत हुआ है, वह दूर हो जायगा, गत कालमें पहले महाराणाओंने और वर्तमानके महाराणाओंने जो क्षमा पत्रमें लिखी है, उसके ऊपर सन्मान दिखाकर उसको समभावसे प्रचलित रक्खा जाय।

तेरहवीं धारा। कारागार, डाइन, तोषा, त्याग, भाट, चारण इत्यादिके सम्बन्धमें गवर्नर जनरलके राजपूतानेमें स्थित एजेन्टने जिस कार्यकी आज्ञा दी है और जिसमें महाराणाने अपनी सम्मति भी दे दी है मेवाडके सभी श्रेणीके मनुष्योंको उस आज्ञाका पालन करना होगा, कैदियोंको उनकी अवस्थाके अनुसार भरण पोषण करना होगा, परन्तु प्रत्येक कैदीको प्रतिदिन, व्ययस्वरूप एक आनासे कमती व आठ आनेसे अधिक नहीं देना होगा। किसीको भी किसी भांतिका दुःख न होगा।

चौदहवीं धारा। महाराणा पोलिटिकेल एजन्ट और सरदारोंकी मंडली तीन जने स्थिर कर सच्चरि[illegible] और शिक्षित बनाकर प्रतिनिधिके पदपर नियुक्त करै; और वह नियुक्त हुए प्रतिनिधि और एक [illegible]सेनिधिको बनाकर सात जने भविष्यमें दिवानी और फौजदारीके मुकद्दमेके राजधारा प्रचलित [illegible] होगा आचार व्यवहार और व्यवस्थाके मतसे विधान की रीति बनावै। और आगेको उन विधा[illegible] विद्या सम्प्रदायोंका विचार शेष हो जायगा। सम्मति लेनेके लिये वह विधान पोलिटिकल [illegible]द्धि थे वह हाजिर किया जाय। [illegible] इस बातको

पालनेमें शान्त न हुए। महाराणा स्वरूपसिंहने जो मेहता शेरसिंहकी सम्पत्ति अपने अधिकारमें कर ली थी, गवर्नमेन्टने उस कबूलनामेके अनुसार राणासे वह देश लौटानेके लिये अत्यन्त आग्रह किया; राणाने१८६१के सालमें उस अनुरोधका पालन किया उस समय राणाका झगडा जो सामन्तोंसे था वह भी शान्तसा हो गया, १८६१

पद्रहवीं धारा। नियमित विचारालय सभी प्रयोजनीय अभियोगोंकी मीमांसा करें, और जो दूसरे अनुयोग हाजिर हों तो उनका भी विचार करें, सामन्तोंके आधीनवाले अनुचर तथा प्रजामें जो सामान्य अभियोग उपस्थित हो जाय, सामन्तगण स्वयं उसका विचार कर सकते हैं, और अपराधियोंको एक महीनेतक कर दंड देनेकी सामर्थ्य रहेगी,परन्तु उनके ऊपर किसी प्रकारका भी अत्याचार न हो सकैगा, सामन्तोंके विचारके विरुद्धमें मंत्रियोंके निकट और उनके सन्मुखसे पोलिटिकेल एजेन्टके सन्मुख अपील हो सकैगा।

सोलहवीं धारा। हत्या करनेवाले, डकैत और विश्वासघातकोंके अतिरिक्त और सभी सरणागत हो सकैंगे, जो शरणागतोंको आश्रय देनेमें क्षमा करते हैं वह उनको पहली नीतिके मतसे आश्रय दे सकैंगे।

सत्रहवीं धारा। भंजगुरिया अर्थात् उत्तराधिकारीके क्रमसे मन्त्रिपदके पानेकी रीति कप्तान टाड दूर कर दें, और वह कभी प्रचलित न हो। इसके उपरान्त किसी विशेष प्रयोजनके होनेपर महाराणाकी इच्छानुसार विशेष स्थानमें पोलिटिकेल एजेन्ट और चार पांच जने राजभक्त तथा अच्छे चरित्रवाले सरदारकी सलाह और उपदेशके मतसे परिणाममें कार्य करें।

अठरहवीं धारा। सामन्तोंके देवमंदिर और धर्मशाला इत्यादिमें प्राचीन आचार व्यवहार और सामार्थ्य अचल भावसे रहैं, प्राचीन रीतिके अनुसार राजभक्तिको दिखानेवाली शपथ ग्रहण करनेकी रीति मान्य करनी होगी।

उन्नीसवीं धारा। जादूमंत्रके चलानेवाले, डाइन वा इन्द्रजाली कहकर किसीको नहीं पकडना होगा, विष देनेसे जो विचार धर्मानुसार राणाको करना योग्य है उसमें किसी प्रकार भी उदासीनता न करें।

बीसवी धारा। महाराणा केवल मंत्रियोंके ही लिखे हुए आज्ञापत्रसे अर्थदंड कर सकते हैं, उस आज्ञापत्रके दंडका कारण, और जितना भी दंड हुआ हो उसकी समान बिधिके अनुसार निश्चय कर लिखना होगा। जो सामन्त पहलेसे ही सामान्य दण्ड देनेमें सामर्थ्य रखते हैं, उनके ऊपर भी यह दृढ नियम चलैगा और जो हार अथवा नियममें अर्थ दण्ड करें उसे पोलिटिकेल एजेंटके कार्यालयमें लिख देना होगा। धौस दसतक (सम्मन) केवल मंत्रियोंसे ही लिखा जायगा, अथवा टाड और कविके समयमें जिन्होंने उसे लिखा है वही लिखैंगे।

इक्कीसवीं धारा। एक गवर्नमेन्टकी सेनाका कर्मचारी वर्तमान और भविष्यत्में भूमिकी सीमाके सुकार्ष्यकी समस्त विवादकी मीमांसा कर देगा, जिसने एक पक्षके सीमाके चिह्नको नष्ट कर दिया है आठ ना जाने हुए, दोनों ओरके खर्चेका भार उसे उठाना होगा; और जिसने एक पक्षकी सीमाके रुपया वह र दिये हैं यह विदित हो गया तो अपराधीके पक्षवालेको संपूर्ण व्यय देना होगा और नवीं धारा र उसको दंड भी होगा।

दिखानेके कारण महाराणाकी सम्मतिसे प्रचलित आचार व्यवहारके अनुसार और हिन्दू विधनाके

ईसवीमें यह नवेश्वरके महाराणा स्वरूपसिंह इस जगत्‌को छोडकर दूसरे जगत्‌को चले गये। इन्होंने अपने नामका सिक्का चलाया जो अबतक उदयपुरमें चलता है।

इस समय समस्त मेवाडके राज्यकी संख्या ११६१४ वर्गमील थी और जनसंख्या ११६१४०० थी। राज्यकी मोटी आमदनी ४००००००) रुपया थी; इसमें सामन्त

अनुयायीको सामन्तगण पोष्यपुत्र वा उत्तराधिकारी कर सकते हैं। किसी सामन्तके परलोकगामी होनेपर उसकी विधवा स्त्री अपने कुटुम्बियोंकी सलाहसे पोष्यपुत्रको गोद ले ले। यदि इस विषयमें कुछ हलचल हो जाय तो पोलिटिकल एजेन्टके सन्मुख कहा जाय।

तेईसवीं धारा। एक लिंगजी, नाथद्वारा, पांचोली विहारीदास और चौबोंको जो भूमिकी वृत्ति दी गई है उसके अधिकारी उसको भोग करते हैं, जो नायकियोंको मिलता है और जो अदालतके कर-संग्रहमें अधिकारी हैं उनको वह सब मिलता रहे, और छातूनके करके साथ उसका संग्रह और कोई भी नहीं कर सकैगा।

चौबीसवीं धारा। सरदारोंके जो घर उदयपुरकी राजधानीमें हैं जबतक वह वहां निवास करें तबतक उत्तम अवस्थामें रहैं, वह तबतक अपने अधिकारको पोलिटिकल एजेन्टकी सम्मतिके अतिरिक्त और किसीको भी नहीं दे सकेंगे। पीसोला सरोवरसे बिना मूल्य दिये ही अपने २ बगीचे-को सींच सकेंगे।

पच्चीसवीं धारा। यदि कोई घर या कुछ पृथ्वी इत्यादि दान की जाय तो राणा उसपर हस्तक्षेप नहीं करेंगे। परन्तु जिससे प्रजाके लोग उस विषयमें अधिक लिप्त न हों, उसके सम्बन्धमें उत्साह हीनता दिखावें। ऐसा करना होगा वह जो सेनाको अग्रिम तनख्वाह देते हैं इसलिये उनसे उस धनका ब्याज नहीं लिया जायगा, और प्रत्येक चार महीनेके भीतर नियमितभावसे तनख्वाह दी जायगी। यदि-वह किसी प्रकारका व्यापार करके अपनी रक्षा करै तो उसको किसी प्रकारसे ऐसा कार्य न करने दिया जाय।

छब्बीसवीं धारा। पहली पहलके कबूलतनामेके मतसे सरदारोंको एक साथ दल बाँधकर आनेका निषेध हो चुका था। इस निषेधकी आज्ञाको उन्होंने नहीं माना, इस समय उस प्रकारका एक साथ सम्मिलन होना निष्प्रयोजन है, कारण कि यदि कोई भी किसी प्रकारका यथार्थ अनुयोग करें तो उसका विचार वह शीघ्र ही न्यायपूर्वक कर सकते हैं, इसके उपरान्त फिर जो दल बांधे तो वह राज्यके शत्रु माने जांयगे और उनके ऊपर उसीके अनुसार व्यवहार किया जायगा।

सत्ताईसवीं धारा। प्रत्येक सरदार एक २ प्रतिनिधि राणाकी सभामें भेजें, और उन्हींसे सब कार्य करवावें केवल सम्मानित मनुष्य ही प्रतिनिधि रूपसे चुने जांयगे, और उनको स्वामीके पदोचित और रीतिके अनुसार सन्मान मिलैगा।

अट्ठाईसवीं धारा। राणा वा सामन्तोंके सम्पूर्ण किसान प्रजाके किसी भीर स्थानमें इच्छानुसार निवास कर सकेंगे, उसके ऊपर कोई भी अत्याचार नहीं कर सकैगा। यदि कभी उनके विरोधमें कोई [illegible] होगा योग विचारालयमें उपस्थित हो वह छोटा हो या बडा, सभी श्रेणीकी प्रजाको उसका अपील [illegible] दिया [illegible]टिकल एजेन्टके सन्मुख करना होगा।

उन्तीसवीं धारा। राणा जिस भांति वृटिश गवर्नमेन्टको डाक और वंगीकी रक्षाके [illegible]द्धि थे वह सरदारवृन्द भी उसी भांति अपनी २ जागीरमेंसे कर दें; जिस भांति राणा डाक [illegible] इस बातको जानेपर उनकी हानिको पूरा करते हैं उसी भांति इनको भी इनकी हानि पूरी क[illegible]

१२०००००) रुपया राजधन भोगते थे, परन्तु वह इसके छः अंशोंमें एक अंश नियम सहित राणाको देते थे। जो कर ब्रटिश गवर्नमेन्टको दिया जाता था वह धर्मसम्बन्धी खर्चमें लगता था, और सामन्तोंकी उपरोक्त आमदनीके अतिरिक्त राणाको मोटा १४०००००) रुपया मिलता था।

सन् १८५७ के सिपाही विद्रोहमें राणाजीने अंग्रेज सरकारसे अत्युत्तम वर्त्ताव किया, अंग्रेज लोग महाराणाके आश्रयमें चले गये उनके खानेपीनेका प्रबन्ध उत्तम था जिनको अपने प्राणोंका भय था उनकी रक्षा भलीभांतिसे की गयी इस व्यवहारके लिये अंग्रेजों ने राणाजीको कोई भी देश भेंट आदिमें नहीं दिया, वरन राणाजीके नीमच जावद गढ्वाड यह तीन प्रदेश जो सरकारमें चले गये थे वह भी न लौटाये।

तीसवीं धारा। इस कबूलनामेपर जब हस्ताक्षर हो जायँ तो इससे पहले कबूलनामेकी सभी धारा खारिज हो जायँगी। यदि इसके उपरांत राणा और सामन्तोंमें कोई विवाद हो जायगा, जो कि इसमें नहीं लिखा गया है, या जिस सम्बन्धमें कोई सन्देह उपस्थित हो जाय तो वह सभी तीन दिनके बीचमें मेवाडमें स्थित पोलिटिकेल एजेंट और गवर्नर जनरलके राजपूतानेमें स्थित एजेन्टके निकट विचारके लिये भेजना होगा, और उसका विचार ही कालांतरतक माना जायगा, यदि ऊपर कहे हुए निश्चित समयमें कोई अभियोग उपस्थित न होगा तो उसको अयोग्य मानकर त्याग दिया जायगा।

बीसवाँ अध्याय २०.

महाराणा स्वरूपसिंह;—शासनसमिति स्थापन;—शासनकर्त्ताओंके अत्याचार;—शासनसमिति भंग,—पोलिटिकल एजेन्ट को मेवाडके आसनके भारकी प्राप्ति;—मेवाडमें शान्ति स्थापन; महाराणा शंभुसिंहके राज्यशासनकी आकांक्षा;—बृटिश गवर्नमेन्टके द्वारा महाराणाको पोष्यपुत्रके ग्रहण करनेकी सामर्थ्य देनी;—महाराणाको उपाधिकी प्राप्ति;—बृटिश गवर्नमेन्टका अविचार;—महाराणा शंभुसिंहको शासनकी सामर्थ्य प्राप्त होना;—उनका अकालमें प्राणत्याग;—।

महाराणा स्वरूपसिंहके पुत्रहीन अवस्थामें मरजानेपर उनके भतीजे सत्रह वर्षकी अवस्थामें व्यवहारोंके न जाननेवाले शार्दूलसिंहके बेटे शंभुसिंह १८६१ ईसवीमें राणाके पदपर विराजमान हुए; बृटिश गवर्नमेन्टके प्रस्तावके मतसे शीघ्रही एक शासनसमिति स्थानपर कितने ही सम्मानित सरदारोंको उनके सदस्य पदपर नियुक्त किया गया, वही राणाके नामसे मेवाडको पालन करने लगे। परन्तु शासनके विषयमें अपनी पूरी सामर्थ्य न रखनेके कारण बृटिश गवर्नमेन्टके उपदेशानुसार कार्य करने लगे; शासनकी समितिके सभ्यगणोंके न्याययुक्त प्रचलित विधानके मतसे शासनके बदलेमें इच्छानुसार शासनका आरंभ कराकर शीघ्र ही विपरीत फल फलना आरंभ हुआ। और फिर चारों ओर अत्याचार होने लगे, अविचार और स्वेच्छाचारितासे, तथा उत्पीडितानलके प्रज्वलित होनेसे मेवाडनिवासी फिर अत्यन्त ही व्यथित हो गये। पोलिटिकल एजन्टकी उक्ति और परामर्शके प्रतिशासन समितिके मतकी ओर दृष्टि न करनेके कारण बृटिश गवर्नमेन्टने मेवाडके शासनकी नवीन व्यवस्था करनी अपना एकान्त कर्तव्य विचारा अन्तमें विशेष चिन्ता और तर्कवादके उपरान्त उक्त प्रतिष्ठित शासनकी समितिको भंग करके गवर्नमेन्ट नवीन व्यवस्थामें प्रवृत्त हुई। सबसे प्रथम एक नवीन शासनकी समिति स्थापन कर दूसरे सुयोग्य सामन्तोंको उसके सभासद पर वरण करें अथवा केवल एक सुयोग्य सामन्तको राणाके प्रतिनिधि स्वरूपमें नियुक्त करके उसके हाथमें मेवाडके शासनका भार अर्पण करना कर्तव्य विचारनेका आन्दोलन होने लगा परन्तु पोलिटिकल एजेन्टकी उक्तिके अनुसार इस समय प्रतिनिधि पदके उपयुक्त विद्या प्राप्त न हुए, इस लिये प्रतिनिधि नियोगका प्रस्ताव शीघ्र ही तोड दिया गया बुद्धि थे वह हम कहते हैं कि सम्पूर्ण मेवाडोंके सामन्तोंमें प्रतिनिधियोंके योग्य है इस बातको

भी दृष्टि नहीं आया । यह बात सरलतासे अविश्वासके योग्य है । इसमें अवश्य ही कोई गुप्त कारण था । " प्रतिनिधि प्राप्तिके अभावमें अन्तमें तीन सामन्तोंको शासनकी समितिके सभ्यपदपर नियुक्त कर और उनमें एक जनेको सभापतिके पदपर वरण करनेका प्रस्ताव उपस्थित किया गया । पोलिटिकल एजेन्टने उस सभापतिके पदपर एक सामन्तको चुना । उस स्वभावसे सरल राजपूतने साहसमें भरकर कहा कि जबतक शासनके सम्बन्धमें उनको पूर्ण सामर्थ्य न होगी तो वह शासनके भारको ग्रहण नहीं करेंगे । बृटिश गवर्नमेन्टकी यह इच्छा नहीं थी कि किसी सामन्तको भी पूर्ण सामर्थ्य न दी जाय,इस कारण पोलिटिकेल एजेन्ट स्वयं उन दोनों सदस्योंके साथ नवीन शासन समितिके सभापतिके पदपर स्थित हुए । बहुतोंको इस बातका विश्वास था कि पोलिटिकल एजेन्टने अपनी पूर्ण सामर्थ्यसे अथवा शासन विभागमें करतत्त्व करनेकी इच्छासे ही एक राजपूत सभापतिके नियोगके बिरुद्धमें भयंकर बाधा देनेके लिये स्वयं करतत्त्वका भार लिया है ।

जिस समय पोलिटिकल एजेन्टने शासनका भार ग्रहण कर लिया उस समय स्वजातिके राजनीति मतसे राज्यके प्रत्येक भागमें संस्कार साधन और आमदनीके बढनेका विशेष यत्न होनेमें कुछ भी विलम्ब न हुआ । अधिक कहना व्यर्थ है कि एक नवीन व्यवस्थाका मत शीघ्र ही मेवाडकी सम्पूर्ण विशृङ्खलताको दूर करके प्रजामें फिर शान्ति करनेके लिये समर्थ हुआ । इस समय बृटिश गवर्नमेन्टकी यह व्यवस्था अत्यन्त ही प्रशंसनीय है । यद्यपि राणा शंभुसिंह अभी अपनी ठीक अवस्थापर नहीं पहुँचे हैं परन्तु अत्यन्त बालक भी नहीं हैं, बृटिश गवर्नमेन्टने महाराणाको राज्यशासनकी शिक्षा देनेके लिये इस समय पोलिटिकल एजेन्टको आज्ञा दी, पोलिटिकल एजेन्टने उसी आज्ञाके मतसे शीघ्र ही शासन विभागकी सम्पूर्ण रीति महाराणाको सिखा दी, ऐसा होनेसे महाराणा शीघ्र ही राजधर्ममें विलक्षण रूपसे शिक्षा पा गये। इस समय मेवाडका राजस्व भी प्रीतिप्रद रूपसे बढ रहा है । सिपाही विद्रोहके अन्तमें भारतवर्षके गवर्नर जनरल और प्रथम राजप्रतिनिधि लार्ड क्यानिंगने भारतके समस्त देशीय राजाओंको उत्तराधिकारीके बनानेमें सामर्थ्य दी । महाराजा शंभुसिंह देशीय राजाओंके शिरमौर हुए, इस कारण उन्हें भी इस समय क्रमानुसार उत्तराधिकारीके लिये पुत्रको गोद लेनेकी सामर्थ्य प्राप्त हुई × सिपाही विद्रोहके उपरान्त भारत साम्राज्यको ईष्टइन्डिया

महामान्य (रानी विक्टोरिया) की यह अभिलाषा है कि जो भारत वर्षके सम्पूर्ण राजा इस [illegible]रने २ देशको शासन कर रहे हैं वह सब देश चिरकालके लिये उनके वंशधरोंसे शासित और [illegible] सन्मान अक्षत भावसे रक्षित होते रहैं; उस अभिलाषाको पूर्ण करनेके निमित्त हम आप [illegible]रना विदित करते हैं कि यदि आपके पुत्र उत्पन्न न हों तो आप अपने वा अपने रा-[illegible]कर्ता गण हिन्दू विधिसे अपने वंशकी रीतिके अनुसार पुत्रको गोद ले लें, गवर्नमेण्ट [illegible]ऐसी भांतिकी आनाकानी नहीं करैगी ।

कंपनीके हाथसे इंगलैन्डेश्वरीने स्वयं ग्रहण किया, देशी राजाओंके सन्मान बढानेके निमित्त एक प्रकारके नवीन मान्यसूचक उपाधिकी सृष्टि हुई। उसका नाम भारतनक्षत्र हुआ। बृटिश गवर्नमेन्टने पहली श्रेणीके पदक सहित "ग्रान्ड कमान्डार ष्टार आफ इन्डिया" की उपाधिरूपी भूषणसे महाराणा शंभुसिंहको भूषित कर दिया। १८५७ सन्तावन ईसवीमें सिपाहियोंके विद्रोहके समय उदयपुरकी महाराणाकी सेनाने बृटिश गवर्नमेन्टकी विशेष सहायता की थी, यद्यपि यह उसीकी पुरस्कारस्वरूप उपाधि मिली। और मेवाडेश्वर भी भलीभांतिसे पुरस्कारको प्राप्त हुए, परन्तु इस स्थानपर हम एक अत्यन्त अप्रीतिकारक विषयका उल्लेख करना आवश्यक समझते हैं। यह हमारे पाठकोंको विलक्षणभावसे विदित है कि महाराष्ट्रियोंमें सिन्धिया और हुलकरने अन्याय करके मेवाडके बहुतसे देशोंपर अपना अधिकार कर लिया था, और जिस समयमें बृटिश गवर्नमेन्टके साथ महाराणा भीमसिंहका प्रथम संधिबन्धन हुआ उस समय बृटिश गवर्नमेन्टने प्रतिज्ञा की थी कि किसी अच्छे अवसरके आनेपर वह सब देश जिससे राणाको फिर मिल जाँय, उस विषयमें विशेष यत्न किया जायगा। राणा उसी आशयसे सावधान होकर समय व्यतीत करते थे १८५७ ईसवीमें विद्रोहके समयमें मेवाडके राजपूत सैन्यदल और स्वयं राणा स्वरूपसिंहने बृटिश गवर्नमेन्टका विशेष पक्ष समर्थन किया; उस समय मेवाडके पोलिटिकल एजन्ट कप्तान साडयार्सने राणाके बहुत समयसे प्रार्थना करने पर पूर्वाधिकृत निस्तारियादेशमें अपना फिर अधिकार करनेके लिये राणाकी सेनाको आज्ञा दी। उस आज्ञाके पाते ही अत्यन्त प्रसन्नताके साथ मेवाडवाहिनीने निस्तारियापर अपना अधिकार कर लिया, परन्तु अत्यन्त ही दुःखका विषय है कि विग्रह शान्तिके उपरान्त बृटिश गवर्नमेन्टने राणाके हाथसे फिर उस निस्तारिया देशको ले लिया। केवल इतना करके भी गवर्नमेन्ट शान्त न हुई। कई महीने तक निस्तारिया राणाके द्वारा शासित हुई थी और उन्हीं कई महीनोंमें उपरोक्त देशोंसे संग्रह किया हुआ समस्त राजधन भी राणाके पाससे ले लिया। इसका कहना वृथा है कि गवर्नमेन्टका यह कार्य अत्यन्त ही अनुचित और अन्यायकारक हुआ। प्रगटमें पोलिटिकेल एजन्ट कप्तान साडयार्सने गवर्नमेन्टकी विना अनुमति लेकर राणाको निस्तारिया देश दे दिया, परन्तु यह बात कहांतक सत्य है, इसको गवर्नमेन्ट ही बता सकती है, यद्यपि निस्तारिया देश गवर्नमेन्टने टोंकके नव्वाब अमीरखाँको दे दिया था, परन्तु न्यायसे यह देश महाराणाको ही मिलना था, इसको कौन ज-नहीं मानैगा ?

तासे
ना होगा

जबतक आपके वंशधर राजभक्तरूपसे रहेंगे, और जिन संध्यादिकोंसे बृटिश गवर्नमेन्टके ाने विद्या ता स्थापित हुई है, उन संध्यादिकोंके प्रति जबतक स्वस्थ भावसे दृष्टि रक्खेंगे तबतक बुद्धि थे वह भी स्वीकारको भंग नहीं किया जायगा। है इस बातको

(हस्ताक्षर) क्यानिंग।"

महाराणा शंभुसिंह १८६९ ईसवीकी १७ वीं नवम्बरको मेवाडके सिंहासनपर विराजमान हुए, और मेवाडके शासनकी पूर्ण सामर्थ्यको भी तभीसे ग्रहण किया। परन्तु दुःखका विषय है--महाराणा शंभुसिंहका अधिकार प्रजाके ऊपर अधिक दिनतक नहीं रहा। बहुत थोडे दिनोंमें ही अर्थात् १८७४ ईसवी की ७ अक्टूबरको सत्ताईस वर्ष की अवस्थामें पुत्रहीन अवस्थामें उन्होंने शरीर छोड दिया। अकालमें ही शंभुसिंहके स्वर्गजानेपर मेवाडकी सम्पूर्ण प्रजा मारे शोकके अधीर हो गई। प्रजाको यह विलक्षण आशा थी कि राणा शंभुसिंहके राज्यमें बडे आनंदके साथ समय व्यतीत करेंगे, परन्तु निर्दयी विधाताने उस आशाकी जडको एक बार ही काट डाला।

इस समय मेवाडके राज्यकी सीमा ११६२४ मील थी, प्रजाकी संख्या ११६१४०० थी पैदल सेनाकी संख्या १५१०० थी, घुडसवारोंकी संख्या ६२४० थी और कमान ५३८ थीं। राजधन ४००००००) रुपया था।

इक्कीसवां अध्याय २१.

महाराणा सज्जनसिंह;—मेवाडकी शासन व्यवस्था;—शिक्षाका प्रयोजन;—भारतके भावी सम्राट्के साथ महाराणाका साक्षात्;—विक्टोरियाके राजसूययज्ञमें महाराणाका जाना;—मेवाडका वर्तमान संक्षेप विवरण;—महाराणा फतहसिंहका राज्यशासन और उपसंहार;—।

महाराणा शंभुसिंहके अकालमें ही मरजानेके पीछे उनके भतीजे शक्तसिंह और सोहनसिंह इन दोनोंमें किसीको भी मेवाडके राज्य पानेकी संभावना नहीं थी, परन्तु शंभुसिंहने अपने बचनेकी आशा एक बार ही छोड दी थी,अंत समयमें अंग्रेज गवर्नमेन्ट के दिये हुए पोष्यपुत्रको गोदलेनेकी सामर्थ्यके अनुसार अपने बडे भतीजे सोळह वर्ष की अवस्थावाले सज्जनसिंहको अपने उत्तराधिकारीके पदपर नियुक्त किया, इस कारण शंभुसिंहके परलोक जानेपर वही आजकलके महामान्य महाराणा सज्जनसिंह मेवाडके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए।

महाराणा सज्जनसिंहके गद्दीपर बैठते ही मेवाडके शासनकी अवस्था भी शीघ्र ही बदल गई। महाराणा अभी व्यवहारोंको नहीं जानते थे, इस कारण फिर शासनसमिति स्थापित कर मेहता गोकुलचन्द और अर्जुनसिंहको मंत्रीके पदपर वरण किया। वह दोनों और चारों सरदारोंके साथ शासनकार्यमें लगे,तथा पोलिटिकेल एजन्टने उस समितिके सभापतिके पदको ग्रहण किया, शासन समितिने मेवाडमें सुख और शांतिके उपायका अवलम्बन करनेमें क्षणभरका भी विलम्ब न किया,और शीघ्र ही उस विषयमें अधिक कार्यकी सफलता दिखाई।

नवीन शासनसमितिने सबसे पहिले एक विशेष प्रार्थनीय और प्रयोजनीय विषय पर हाथ डाला। यद्यपि मध्यकालके देशीय राजाओंमें बहुतसे ऐसे हैं कि जो राजनीतिज्ञताका विलक्षण परिचय दिखाते हैं, और बहुतोंने अपने बाहुबलकी वीरतासे अपने वंशवालोंका सन्मान और गौरव बढाया है, परन्तु यह अवश्य ही मानना होगा कि उनमेंसे दो एक जनोंको छोडकर और शेष सभी ऐसे हुए कि जिन्होंने विद्या शिक्षाके अमृतमय फलको न पाया; जितने राजा शिक्षित और मार्जित बुद्धि थे वह राजधर्ममें अभिज्ञ और सुनीतिके जाननेवाले हुए, राज्यका जो मंगल है इस बातको

कौन नहीं मानेगा कि इसीसे प्रजामें सुख और शान्तिकी सम्भावना है ? देशी राजाओंको जो सर्वसाधारण शिक्षा मिली, उसे कभी भी सर्वाङ्ग सुन्दर नहीं कहा जा सकता, वह शिक्षा केवल नाममात्रकी शिक्षा है । नीति जाननेवालोंका यह कथन है कि पूर्णरूपसे विद्या शिक्षा करना कर्त्तव्य है, और जो ऐसा न हो तो मूर्ख ही रहना ठीक है । आधी शिक्षा सब विषयोंमें भयंकर अनिष्ट करनेकी जड है । देशीय राजाओंको जो शिक्षा मिलती थी वह सर्वसाधारण आधी शिक्षासे भी कहीं थोडी होती थी। विद्याकी एक विधि नहीं है अठारह विधि हैं; उन अठारहों विधियों पर एक मनुष्यका अधिकार होना अवश्य ही असम्भव है, परन्तु जिस मनुष्यके हाथमें हजारों लाखों मनुष्योंके जीवनका भार है और जो मनुष्य अपने भाग्यबलसे ही राजसिंहासनपर विराजमान हुआ है जिसका ज्ञान, बुद्धि और विचारकी शक्तिके ऊपर राज्य, स्वजाति और समाजके श्रेष्ठ साधन निर्भय होकर रहते हैं,जिसकी एकमात्र उदारताके ही बलसे जातिका साधारण सब प्रकार उन्नतिका द्वार खुल सकता है, केवल जिसके एकमात्र उत्साह और उद्योगके प्रकाशसे जीवनकी शक्ति संघटित होती है--जातीयमें भ्रातृभाव बढता है--जातिमें बल विक्रमका विस्तार होता है, शान्तिके बढनेकी पूर्ण सम्भावना होती है, वही मनुष्य है, उस राज्यसिंहासनपर बैठे हुए मनुष्यके पक्षमें अपने पदकी उचित शिक्षाके भूषणसे भूषित होना उसका अवश्य कर्तव्य है । सब देशोंमें सभी जातियोंने इस बातको मान लिया है कि जबतक राजा भलीभांतिसे शिक्षापूर्ण न होगा तबतक वह कदापि अपने भारी दायित्वके अनुभव करनेमें किसी प्रकार समर्थ न होगा । सब विषयोंकी उन्नतिकी जड एकमात्र शिक्षा है, शिक्षाके अतिरिक्त किसी विषयकी भी विना प्रयोजनके भलीभांतिसे सिद्ध होनेकी कुछ भी सम्भावना नहीं है । मानसिक, शारीरिक और नैतिक जिस स्थानपर इन तीनों श्रेणीकी शिक्षाका अभाव है वह स्थान कभी भी उन्नतिका स्थान नहीं हो सकता । ज्ञान, बुद्धि और विचारशक्ति यह केवल ग्रन्थोंके पढनेसे ही नहीं आती है; ग्रन्थोंको विद्या तो केवल अनुष्ठान मूलक शिक्षा है; वह शिक्षा तो केवल मार्ग साफ करती है, देशमें भ्रमण, स्वभाव सन्दर्शन, पंडितोंके साथ सम्भाषण और कार्यमूलक तत्वके अनुसंधानसे ज्ञान और बुद्धिके बढनेकी अधिक सम्भावना है, उसीसे यथार्थ शिक्षा प्राप्त होती है और वही शिक्षा मनुष्यको संसारमें देवताकी समान पूजनीय कर देती है । उस मानसिक शिक्षाके साथ फिर नैतिक शिक्षाका संयोग साधन सबसे पहले प्रार्थनीय है, नैतिक बल ही इस संसारमें सबसे श्रेष्ठ बल है । जिनमें नैतिक बल नहीं है, या जिन्होंने नीतिकी शिक्षाके समयमें उदासीनता प्रकाश की है, पंडितोंके विचारसे उनकी मानसिक शिक्षा एकबार ही कर्महीन हो जायगी । मनुष्य संसारमें एक श्रेष्ठ जीव है। मनुष्य अपने आप ही अपने आचार व्यवहारसे ऋषिके समान, देवताके समान, सर्वत्र पूजने योग्य और सभी मनुष्योंके हृदयमें अधिकार करता है, फिर नरकके कीडोंको देखकर घृणा होती है । जो मनुष्य नैतिक बलसे बलवान है उस मनुष्यके भाग्यकी

लक्ष्मी प्रधान सहायक होकर उसको दूसरोंके निकट यशकी अधिकारिणी बना देती है और जो मनुष्य नैतिक बलसे हीन है, वह मनुष्य सहस्रों ग्रन्थोंके पढजानेसे भी सर्व साधारणमें घृणास्पद है इस कारण राजाओंके पक्षमें निस्सन्देह नैतिक शिक्षाका विशेष प्रयोजन है। राजा जितना सच्चरित्र, सुशील और नीतिसम्पन्न होगा, उतने ही उसके चारित्रोंके आदर्शमें प्रजाके चरित्र विगठित होंगे; सब प्रकारसे शारीरिक शिक्षाका भी विशेष प्रयोजन है। अमूल्य जीवनकी रक्षाके लिये शारीरिक शिक्षाका प्रचार बहुत कालसे सभ्य जगत्में है। मानसिक नैतिक और शारीरिक इन तीन श्रेणियोंकी शिक्षा जिस राजाको मिल गई है, उस राजासे प्रजा अधिक सुखपानेकी अधिकारिणी है। मेवाडकी नवीन शासन समितिने उदार नीतिके वश होकर महाराणा सज्जनसिंहको यथार्थ शिक्षा देनेमें सबसे प्रथम हाथ डाला।

दीवान जानि बिहारीलालने महाराणाके शिक्षकपदपर नियुक्त हो महाराणा सज्जन सिंहको नैतिक और दैहिक श्रेष्ठ शिक्षाके देनेमें क्षणभरका भी विलम्ब न किया। यह निर्वाचित शिक्षक सब अंशोंमें योग्य पुरुष हैं, इन्हींकी अध्यक्षतामें महाराणाने इस समय अङ्गरेजी, उर्दू और मातृभाषामें भलीभांतिसे अभ्यास कर लिया, बाप्पारावलके वंशधरोंमेंसे इन्हींने इस पहली रीतिके मतसे अंग्रेजी भाषामें अधिकार प्राप्त किया है। महाराणाका स्वभाव और इनके चरित्र भी सन्तोषदायक हुए, हमने इस विषयमें बहुतसे प्रमाण पाये हैं।

शासनसमिति केवल वर्तमानके महाराणा सज्जनसिंहको शिक्षाकी व्यवस्था करके ही शान्त न हुई, बरन सर्व साधारणको अंग्रेजी पढानेक लिये उदयपुरकी राजधानीमें एक स्कूल प्रतिष्ठित किया और उसमें एक अंग्रेज तत्त्वावधान एवं शिक्षा देता है उस विद्यालयमें अंग्रेजी, उर्दू और मातृभाषाकी शिक्षा दी जाती है। अनेक सामन्तोंके लड़के इसी विद्यालयमें पढ़ते हैं; जितना २ शिक्षाका विस्तार होता जायगा उतनी उतनी ही राजपूत जातिकी उन्नति बढ़ती जायगी, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं।

जिस समयसे नवीन शासन समितिने शासनका भार लिया उसी समयसे राज्यके प्रत्येक भागमें विशृंखलता दूर होकर सुरीतिका प्रचार हुआ और क्रमानुसार उसी दिनसे राज्यकी आमदनी भी बढती जा रही है। विचार विभाग और शांतिकी रक्षाके विभागमें योग्य मनुष्य नियुक्त हुए, इसीसे उन दोनों कामोंके सरलतासे सिद्ध होनेमें कोई विघ्न भी उत्पन्न न हुआ। मेवाडमें जिस भाँति पहले प्रजाका धन और प्राण सर्वदा ही अत्याचारियोंके द्वारा नष्ट होता था, जिस भाँति चोर निर्भय होकर इच्छानु-सार प्रजाका धन लूटते थे, इस समय भलीभांतिसे शासनके होनेसे वह उपद्रव एक साथ ही दूर हो गये हैं, इस समय सामन्तोंमें भी लडाई झगडा होता हुआ दिखाई नहीं पडता। मेवाडके प्रत्येक प्रान्तमें शान्तिसती निर्भय होकर नृत्य कर रही है; यद्यपि दुर्बुद्धि भीलगण बीच २ में विद्रोहानल और उपद्रव करना आरंभ करते हैं, परन्तु

उससे राणाकी शासनशक्तिकी अयोग्यता किसी प्रकार भी नहीं पाई जाती । भीलगण तो अपने स्वभावसे ही सैकडों वर्षोंसे उपद्रव करते चले आये हैं, इस कारण जबतक बनेले पहाडियोंकी भीलजातिमें शिक्षाकी पूर्ण ज्योतिका प्रकाश न होगा, तबतक वह इस प्रकारके उपद्रव करनेसे न चूकेंगे ।

महामाननीय भारतेश्वरीके ज्येष्ठपुत्र भारतके भावी सम्राट प्रिन्स ऑफ वेल्स बहादुर १८७५ सालके नवम्बर महीनेमें भारतवर्षको देखनेकी इच्छासे बम्बईमें आये, महाराणा सज्जनसिंह बहादुर गवर्नमेन्ट और बृटिशदूतकी सम्मतिसे बम्बईमें गये और ५ वीं नवम्बरको प्रिन्स ऑफ वेल्सने बम्बई बन्दरमें आकर महाराणा तथा अन्यान्य राजाओंसे साक्षात् कर उनका सम्मान ग्रहण किया । और छठी नवम्बरके (१८७५ ईसवीमें) प्रिन्स ऑफ वेल्स बम्बईमें ही गवर्नमेन्टके मकानोंमें बडे आदर-भावके साथ महाराणा सज्जनसिंहको भी ले गये और कई दिनतक वहां रहकर महाराणाके सन्मानके निमित्त उनके निवास स्थानमें जाकर साक्षात् करके लौट आये । कालकी कैसी विचित्र गति है ! कि जिस मेवाडके राणा प्रबल प्रतापशाली होकर यवन सम्राटके साथ साक्षात् करनेके लिये राजधानी दिल्लीमें जानेसे अपने गौरवकी हानि समझते थे, उन्हीं महाराणाओंके वंशधर इंगलैन्डेश्वरीके ज्येष्ठपुत्रके साथ साक्षात् करनेके लिये कितनी दूर बम्बईमें जाकर उनके आनेकी बाट जोह रहे थे !

१८७७ ईसवी जनवरीमें जिस समय बृटिशरानी महामान्या श्रीमती विक्टोरियोंके प्रतिनिधि लार्ड लिटनने भारतकी प्राचीन राजधानी दिल्लीमें राजसूय यज्ञका अनुष्ठान किया और जनवरी महीनेकी पहली तारीखको बृटिश राज्ञीकी "भारतेश्वरी" उपाधि बडे आडम्बरसे विघोषित हुई। महाराणा सज्जनसिंह भी उस विक्टोरिया राजसूय यज्ञमें निमन्त्रित होकर गये, उस समय महाराणाके साथमें बहुतसे सामन्त और सेवक भी गये थे । जब १८७६ ईसवीकी २६ वीं दिसम्बरमें महाराणा सज्जनसिंह बहादुरने दिल्लीमें स्थित बृटिशराजप्रतिनिधियोंके वस्त्रावासमें गमन किया तब उनके सन्मानके लिये सत्रह तोपोंका फैर कर उनके यानसे उतरते ही अंग्रेजी सेनाने समरकी रीतिसे अस्त्र दिखाकर मान किया । इसके उपरान्त भारतवर्षकी गवर्नमेन्टके वैदेशिक सेक्रेटरीने उनको सन्मानके साथ ग्रहणकर राजवस्त्रावासके भीतर लेजाकर राज प्रतिनिधियोंके निकट परिचित कर दिया । महाराणाके जाते ही माननीय राजप्रतिनिधि लार्ड लिटन (इस समय अर्ल) ने उनको आदरसहित लेकर अपने दक्षिण पार्श्वमें ऊंचे आसनपर बैठाला और फिर आप सिंहासनपर बैठे; मेवाडके पिछले महाराणाओंने गवर्नमेन्टके साथ जिस प्रकार मित्रताकी रक्षा की थी इस बातका कथन किया गया, पश्चात् हाइलाण्डक सैनिकने एक रमणीय पताका* लाकर सिंहासनके सामने उपस्थित की । महाराणा

* यह पताका देखनेमें बडी शोभायमान थी, सोनेके डंडेके ऊपर एक छोटा सोनेका मुकुट और उसके कुछ नीचे सुवर्णसे रंजित दोमुखा दंड था उसके अवलम्बमें तांबूलाकार झालरके साथ चीनी वस्त्रकी पताका लटक रही थी, पताकाकी एक ओर हिन्दीअक्षरोंमें "विक्टोरिया कैसरहिन्द" और दूसरी ओर महाराणाके वंशके राजचिन्ह अंकित थे ।

प्रतिनिधिके सहित पताकाकी ओरको आगे बढे और निम्नलिखित युक्तियोंके साथ महाराणाके हाथमें वह पताका दी गई अपने वंशके राजचिह्नोंसे अंकित यह पताका महामाननीया महारानीकी स्वयं उपहारस्वरूप है यह भारतेश्वरीके उपाधि धारणके स्मरणमें आपको उपहारस्वरूप दी जाती है।

इंगलेंडके सिंहासन और आपके राजभक्त वंशके बीचमें जो दृढ सम्बन्ध है तथा प्रधान शासनकी सामर्थ्य (अंग्रेज गवर्नमेन्ट) अपने वंशकी प्रबलता, सुख स्वच्छन्दता और अविनाशिताके दर्शनाभिलाषी आप जबतक इस पताकाको उडावेंगे तब तक इससे आपका स्मृतिमार्ग उदय होगा यह महामान्यको विश्वास है।

महाराणा सज्जनसिंह बहादुरके सन्मानसहित उस पताकाको ग्रहण करनेके उपरान्त माननीय राजप्रतिनिधि बहादुरने लालसूत्रमें पोया हुआ एक सुवर्ण पदक * महाराणाके गलेमें डालकर कहा भारतेश्वरीकी आज्ञाके अनुसार मैंने आपको इससे विभूषित किया है आप इसको दीर्घकालतक धारण करें इसमें जो तारीख लिखी गई है उसे स्मरण करनेके लिये आपके वंशधर इसकी दीर्घकालतक उत्तराधिकारी पदकरूपसे रक्षा करनेमें समर्थ होंगे। पदक पानेके उपरान्त महाराणाको एक और सन्मानसूचक संवाद मिला। पहले भारतवर्षीय महाराणाओंको गवर्नमेंटसे उनके सन्मानके लिये उन्नीस तोपों की सलामी होती थी परन्तु इस सनंद उनकी संख्या बढाकर २१ तोपें नियत की गईं, महाराणाके समान उनके राजस्व विभागके प्रधान मंत्री महता पन्नालाल और कोषागारके अध्यक्ष छगनलालको राजप्रतिनिधिसे सन्मानसूचक रायकी उपाधि मिली।

पहिली जनवरीकी राजसूय यज्ञमें अंग्रेज राजप्रतिनिधि लार्ड लिटिन बहादुरसे महा बृटिश रानीके भारतेश्वरी उपाधि धारण करनेका समाचार सुनतेही महाराणा सज्जन सिंह बहादुरने उठकर कहा कि महामान्या श्रीमती बृटिशराज्ञीके भारतेश्वरीकी उपाधि धारण करनेसे सम्पूर्ण राजपूतानेके अधिकारी इकट्ठे होकर उनकी राजभक्तिका प्रकाशक अभिनन्दन करते हैं और शीघ्रही तारद्वारा यह समाचार उनके पास भेजा जाय महाराणा सज्जनसिंह बहादुर इस विक्टोरिया राजसूय यज्ञमें अधिक सन्मानित होकर अपने देशको लौट आये; राजसूय यज्ञमें जो उनको सन्मान मिला था वह शेष सन्मान नहीं था उनको फिर भी भारत गवर्नमेन्टने १८८१ ई० में G.C.S.I. जी. सी. एस. आई. "ग्रेट कमाण्डर स्टार आफ इण्डिया" अर्थात् भारतवर्षके प्रथम नक्षत्रकी उपाधिसे भूषित किया, इन्होंने महद्राजसभाके नामसे एक कौंसिल बडे २ मुकदमों और राजकार्योंके लिये नियत की, योग्य व ईमानदार अहल्कारोंकी पदोन्नति और वेतनवृद्धि की, सडक पाठशालायें अस्पताल बनाये और एक यंत्रालय स्थापन किया जिसमें एक उत्तम समाचारपत्र 'सज्जनकीर्ति सुधाकर' नामक निकलने लगा; यह प्रतिसप्ताह

* सुवर्णपदकके एक ओर भारतेश्वरी विक्टोरियाका मुख और दूसरी ओर उर्दू अंग्रेजी और हिन्दीभाषामें 'कैसरहिन्द' लिखा था।

उदयपुरसे निकलता है शहरके बाहर पश्चिमोत्तर तरफ सज्जनगढ नामक किला बनवाया और शहरके पश्चिम दक्षिण ओर सज्जन निवास नामक बाग लगवाया इसमें तरह तरहके मेवेक फूलफलके वृक्ष लगवाये । सन् १८८४ में महाराणा सज्जनसिंहजी २५ वर्षकी अवस्थामें कुछ दिन अस्वस्थ रह कर परलोक सिधारे तो समस्त मेवाड नहीं किन्तु समस्त राजस्थान मेवाडमें डूब गया । राजस्थान बाहर भी भारतवर्षके निवासियोंको इनकी अकाल मृत्युसे बडा खेद हुआ क्योंकि यह महाराणा साहब बडे तीव्र बुद्धि, परोकारी, गुणग्राही, उच्च मनस्क, और देशहितैषी थे, और इनकी सत्कीर्ति भारतवर्ष भरमें फैल गई थी । यद्यपि ये मेवाडके राज्याधीश थे परन्तु इन्होंने उच्च विचार और शुभ गुणोंसे समस्त भारतकी आर्य्य सन्तानेक हृदयमें ऐसा प्रभाव जमाया था कि वह इनको वास्तविक हिन्दूपति समझती थी ।

मेवाडके राज्यका परिमाण पहिलेहीके समान अर्थात् ११६१४ वर्गमील था यह कलकत्तेकी राजधानीसे ११३६ मील दूर है । सुशासनके गुणसे राजधनकी संख्या इस समय अधिक बढ गई है । राजधनका परिमाण ६४०००००) रुपया है; इसमें महाराणा अंग्रेज गवर्नमेंटको कर स्वरूपसे दो लाख रुपया और भीलसेना दलका व्ययस्वरूप वार्षिक ५००००) रुपया देते हैं । सुखशांतियुक्त मेवाडके निवासियोंकी संख्या जो इस समय क्रमशः बढती जा रही है उसका अनुमान सरलतासे हो सकता है । महाराणाके अधीनमें इस समय २५३ कमान १३३८ गोलन्दाज ६२४० अश्वारोही और १३२९०० पैदलोंकी सेना है । लफ्टिनैन्ट कर्नल सी.के.स्मिथ.सी.एस. आई.उस समय रजिडेन्टरूपसे उदयपुरमें निवास करते थे ।

श्री १०८ श्रीमहाराणा फतहसिंहजी जी. सी. एस. आई.

श्रीमान् महाराणा सज्जनसिंहजीके निस्सन्तान परलोकवास होनेपर महीमहेन्द्र यावदार्यकुलकमल दिवाकर श्री १०८ श्रीमान् महाराणा फतहसिंहजी २४ दिसम्बर सन् १८८४ ई० को राजगद्दीपर विराजे ।

किसी क्षत्रिय नरेशमें जो गुण होने चाहिये वे प्रायः सभी आपमें वर्तमान हैं । आपके विशुद्ध जीवन और सदाचरणसे पूर्वसमयके क्षत्रिराजा महाराजाओंके धर्माचरण और शास्त्रोक्त मर्य्यादा पालनका स्मरण होता है । आप बडे पराक्रमी श्रमशील, संयमी, बुद्धिमान, गम्भीर, मितभाषी, दूरदर्शी, दृढप्रतिज्ञ और न्यायशील हैं । शस्त्रसंचालन और अश्वारोहणमें सुदक्ष हैं । आपको सिंहके आखेटका बडा अनुराग है परन्तु हमने सुना है कि सिंहनी या मृग आदिका आखेट आप कभी नहीं करते । राज्यके मुख्य २ काम आपकी निरीक्षणतामें ही होते हैं और प्रतिदिन प्रायः सात घंटे स्वयं राजकाज करते हैं । छोटे २ आदमी तकको प्रार्थना स्वय सुनते हैं । यह आपके राजशासनकी उत्तमताका ही कारण है कि मेवाडकी प्रजा सर्वथा शान्त और सन्तुष्ट है । गत मासमें राजपूतानेके एजेन्ट गवर्नर जनरल मिस्टर मारटि

न्डेलने अपनी स्पीचमें श्रीमान् महाराणा साहबके सद्गुणोंकी प्रशंसामें कहा था कि महाराणा साहब आदर्श नरेश हैं। वर्तमान महाराजोंको इनका अनुकरण करना चाहिये। श्रीमान्‌को अपने महत्त्व और कुलमर्य्यादाका पूर्ण ध्यान है। प्राचीन रीति नीति और राजसी ठाट जैसा उदयपुर दर्बारमें दृष्टिगत होता है वैसा अन्यत्र देखनेमें नहीं आता।

सबसे अधिक प्रशंसा आपकी इस बातकी है कि आप पूर्ण सदाचारी हैं और आपकी एक ही महारानी हैं। श्रीमानका चरित्र नवयुवा नरेशोंके अनुकरण योग्य है।

श्रीमानके राज्यशासन समयमें विद्याकी उन्नति हुई है। उदयपुरके स्कूल (जो पहले सामान्य अवस्थामें था) में एन्ट्रैंस तक की पढाईका उत्तम प्रबन्ध हो गया है। सर्व साधारणके उपकारके लिये पुस्तकालय और म्यूजियम (अजायबखाना) स्थापित हुआ है। चिकित्सालयकी भी उन्नति हुई है। राजधानीके सिवाय गावों और कसबोंमें भी मदर्से और अस्पताल स्थापित हुए हैं। सर्व साधारण सम्बन्धी कितने ही काम हुए और पूर्व प्रचारित कार्य्योंमें उन्नति हुई। श्रीमानके नामपर फतहसागर तालाव बडा प्रजोपयोगी बना है।

श्रीमान्‌को सन् १८८७ में महाराणी विक्टोरियाके जुबिली उत्सवमें जी. सी. एस. आई. की पदवी मिली है।

श्रीमान्‌के अब एक महाराजकुमार और दो महाराजकुमारी हैं। महाराज कुमारका नाम श्रीभूपालसिंहजी है। कई वर्षसे महाराजकुमार रोगग्रसित थे परन्तु अब ईश्वरकी कृपासे आरोग्य हैं।

मेवाडके घटनापूर्ण इतिहासकी यहींपर पूर्ति हुई, जगत्पूज्य गिह्लौटकुलके रंगस्थलमें यहींपर यह जवनिका गिर गई बहुत अभिलाषा थी कि वर्तमान महाराजा साहब बहादुरका वृत्तान्त विस्तारके साथ लिखा जाय पर वह इस समय उपलब्ध न हो सका, उपसंहारमें जो दो एक प्रश्न हमारे हृदयमें उठते हैं उनको यहां लिखना उचित है, जगतका इतिहास इस विषयकी साक्षी देता है कि यह जगत् परिवर्तन शील है, इसकी उन्नति अवनति कालचक्रके आधीन है इस निमित्त ही हम अनन्त धन रत्नकी खान, महावीरोंकी प्रगट करनेवाली, अनन्त साध्वी रानियोंकी जननी मेवाडभूमिके भाग्यका परिवर्तन होता हुआ देखेंगे, हृदय कहता है कि मेवाड एकदिन फिर उन्नतिके शिखरपर पहुंचैगा, पहली दशाका मिलान कर इस समयकी मेवाडकी दशा देखकर किसका हृदय व्यथित नहीं होता कौन ऐसी आर्य्यसन्तान है जो राजपूत जातिको आलस्य शयन करता हुआ देखकर दुःखित न हो! जिसके हृदयमें एक बूंद भी आर्योंका रक्त है वह मेवाडकी शोचनीय अवस्थापर अवश्य दुःखी होगा।

हाय! एकदिन वह थे और एकदिन आज हैं वह मेवाड वह वीरक्षेत्र चित्तौर वह वीरलीला भूमि उदयपुर वह राजपूत जातियोंका 'शिव' 'शिव' उच्चारण, वह पवित्र हिन्दू रक्तका प्रवाह, वह अभ्रभेदी आरावलीकी भूधरमालाकी शोभा अब कहां है। वह

राजपूतोंकी शक्ति अब कहां चली गई ? वह वीरव्रत वीराचार शूरता, बाहुबल, विक्रम, साहस, प्रतिभा, एकता, उद्दीपना आरावलीके किस गढेमें जा छिपी,आज मेवाड अन्तसार शून्य हो रहा है मणि मुक्ताओंसे खचित सूर्यके समान प्रकाशमान् महलोंमें वीरों के अस्त्रागारोंमें मेवाडके प्रत्येक प्रान्तमें कवियोंकी अमृतमय लेखनीसे निकली गाथा अब नहीं गाई जाती, अब मृतसंजीवनी मंत्रका प्रचार नहीं होता, धनुष बाणका सन् सन् शब्द, तलवारोंकी कनकनाहट, गगनभेदी जयशब्द, दृढ प्रतिज्ञाका जविन परिचय आज कहां चला गया,भारतका गौरव स्वरूप मेवाड इस समय भी निद्रित है,प्रत्येक प्रान्तमें यह शब्द गूँज रहा है कि अमित तेजस्वी प्रबल पराक्रमी दृढ प्रतिज्ञ महावीर दुर्धर्ष साहसी राजपूतोंकी राणा जातीय जीवनी शक्ति लोप सी हो गई है, बाप्पारावल राणा प्रताप, राजसिंहकी चिताभस्मसे मेवाड ढक गया है ऐसा क्यों हुआ इस प्रश्नका उत्तर कौन दे सकता है ?

एक श्रेणीका इतिहास कहता है कि मेवाड स्वाधीन है आजतक भी स्वाधीन है राजपूतजाति स्वाधीन है मेवाडेश्वर राणाजी स्वाधीन हैं परन्तु हाय!राजनीतिके जाननेवालों से क्या यह बात छिपी है कि इस समय बृटिशनीतिके बलसे कोई भी भारतमें स्वतन्त्र नहीं है; जिन्होंने स्वाधीनताके अमृतमय चित्रका दर्शन किया है, जिन्होंने मेवाडका अतीत इतिहास देखा है, जो अनन्त वीरताओंकी गाथासे पूर्ण इतिहासको हृदयंगम- करनेमें समर्थ हुए हैं यह बात कभी भी उनके हृदयको तृप्त नहीं कर सकैगी, एक बार नहीं सहस्रवार मानना होगा कि बृटिश जातिने मुगल पठान और महाराष्ट्रियोंसे विदलित राजपूत जातिको आश्रय देने और उद्धार करनेमें अपनी महिमाका परिचय दिया। अवश्य ही मानना होगा कि,आलस्य विलासिताके वशीभूत होनेसे ही राजपूत जातिकी ऐसी शोचनीय अवस्था हुई अधिक क्या कहैं हुआ तो ऐसा था कि संसारकी गोदीसे मेवाडके चिह्नतक मिटजाते परन्तु जिस दिन महाराणा भीमसिंहके प्रतिनिधि ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ संधिबन्धनमें नियुक्त हुए तभी मेवाडका बचाव हुआ, उस समय मेवाडका कैसा दृश्य था वह हमारी आंखोंके सामने घूम रहा है।

राजपूत जाति इस बातके माननेको तैयार है कि कर्नल टाडसाहबके सुशासन सुव्यवस्थाके समय मेवाडमें अमृतमय फल उत्पन्न हुआ था, परंतु परवर्ती इतिहास क्या कह रहे हैं कि बृटिश जातिने फिर वह शक्ति संग्रह करानेमें उदासीनता प्रकाश की जिसका फल संतोषदायक न हुआ, जिस नीतिसे भारतका शासन होता है उस नीतिसे मेवाडकी राजपूत जातियोंकी उन्नति असंभव है, नीति जाननेवाले अपनी दिव्य दृष्टिसे देखते हैं कि राजपूत जातिका उदय राजपूत जातिके ही हाथमें है ।

जगत्की वयोवृद्धिके साथ प्रत्येक विषयका परिवर्तन देखा जाता है केवल साहस, शूरवीरता, एकता, उद्दीपना और बाहुबलसे जातिकी उन्नति करनेका समय अतीत उपाधिके धारण करनेसे अदृश्य हो रहा है, इस समय साधारण लोकशिक्षा और विज्ञानशिक्षा ही जातिकी उन्नतिका प्रधान उपाय है, मेवाडवासी इस विज्ञान शिक्षाके

संग्रह करनेमें तत्पर हो बराबर शांतिभोगके लिये राजपूत जातिने वीरदल वीराचरण वीरधर्म और महाशक्तिको आराधनाका बीजमंत्र एकबार ही विस्मृतिके जलमें फेंक दिया था, उनका जाति स्वभाव लुप्त होकर स्वप्नमेंही दृश्य दिखा रहा है। राजपूत जातिका नवः शिवाय शब्द नवीन रुधिरका स्रोत प्रवाहित करके हृदयके भीतर लुप्त हुए जातीय गौरवको फिर उद्दीप्त करके विज्ञान शक्तिका संचार करेगा, ऐसा करनेको कौन तयार हुआ ? मेवाडके अधिपति राणा और राजपूत जाति भी दूसरी बार साव- धान होकर अपने दुर्भाग्यरूपी जलके जालसे ढके हुए गौरवरूपी सूर्यको उदय कर स्वजातिका मेवाडका राजवाडेका और भारतका मुख उज्ज्वल करनेको समर्थ न हुए।

यद्यपि लगभग आधी शताब्दीसे अधिक समयसे मेवाडकी राजपूतजाति बृटिश गवर्नमेन्टके साथ संधिका नियम पालन कर अपना समय सुखसे बिता रही है यद्यपि इस समय चिर अवलम्बनीय तलवारोंकी वर्षा आरावलीकी गुफामें निक्षिप्त है उदयसागरके गंभीर जलमें गगनभेदी जयशब्द विसर्जित प्राचीन राजधानी चित्तौरके विध्वंस हो जानेपर शेष चित्तौरके ऊपर असीम साहस, शौर्य्य, विक्रम और उद्दीपनका त्याग तथा संहारकर्ता एकलिंग महादेवके मंदिरके सन्मुख जातीय स्वभाव सुलभ वीरप्रतिज्ञाके बलिदानसे अन्तःसार शून्य अवस्थामें निद्रित है तथापि हमें विश्वास है कि प्रतापवान राजसिंहके समान मृतसंजीवनी मंत्रके प्रचार करनेवाले नेताका इस सुशासनमें प्रचार होते ही राजपूतजाति अपने गौरवको फिर भारतमें प्रकाश कर दिखावेगी, साधारण लोगों तक शिक्षाका फैलाना नेताका प्रधान कार्य होगा, शिक्षापाते ही निर्मल बुद्धिवाले राजपूत फिर अपने गौरवको प्राप्त हो सकते हैं। इस मेवाडमें फिर कब प्रतापसिंह राजसिंह नेतारूपसे दर्शन देंगे ? राजपूतजाति फिर कब उन्नतिके शिखरपर चढकर भारतके अनन्त गौरवका प्रकाश करेगी ? क्या वह प्रार्थनीय शुभदिन फिर नहीं आवैगा ? अवश्य आवैगा। संसारकी उक्ति है कि सर्वदा किसीके एकसे दिन नहीं रहते।

इस समय जगतके सप्तम अंशमें बृटिशराजकी पताका फहरा रही है, यद्यपि सूर्य भगवान एक मुहूर्तको इस राज्यमें अस्त नहीं होते कहीं न कहीं दर्शन देते ही रहते हैं, सम्पूर्ण संसार एक स्वरसे कह रहा है कि बृटिश शासनका सूर्य ग्रीष्मकालिक मध्याह्न मार्तण्डके समान अपने किरणजालका विस्तार कर रहा है परन्तु विचारकर देखाजाय तो भारतके बलसे ही ग्रेट ब्रिटिनका बल है, आर्यक्षेत्र बृटिशराजकी मुकुटमणि है, इस बातको अवश्य ही मानना होगा कि बृटिशके शासनसे बृटिशके प्रतापसे बृटिशके राजनीतिबलसे इस समय भारतके प्रत्येक प्रान्तमें शान्ति विराज रही है, यह अंग्रेजी राज्यका ही प्रताप है कि देशीय राजाओंने तथा भिन्न २ धर्मावलम्बी अनेक जातियोंमें विद्रोह अत्याचार निर्बलको सताना इत्यादि सभी बातें दूर हो गई हैं। सब अंशोंमें सभी विषयोंमें न भी हो परन्तु ऐसे अनेक स्थान हैं जिनमें न्यायशासनकी पराकाष्ठा दृष्टिमें आ रही है परन्तु इस शान्तिमें सौरभसे आमोदित भारतवर्षमें हमारा कर्तव्य क्या है ?

शान्तिके आलिंगनमें आलस्य विलासिताके वशीभूत न होकर शासनविधिके ऊपर अपना पूर्णसन्मान दिखाते हुए हमारे प्रत्येक जातिके सत्त्वकी रक्षा तथा लुप्तहुए सत्त्वका उद्धार यही हमको इस समय प्रार्थनीय है, राजपूत बंगाली सिक्खमहाराष्ट्र तथा आर्य्यावर्तनिवासी सब कोई प्राचीन द्वेषभावको भारतके महासमुद्रके अगाध जलमें विसर्जन कर परस्पर सहानुभूति प्रकाशकर एक दूसरेके हृदयसे हृदयको मिलाय फिर जन्मभूमि भारतका मुखकमल खिलानेके लिये विशेष यत्नवान हो यही भारतहितैषी और नीतिज्ञोंकी आन्तारिक प्रार्थना है, यह प्रार्थना करके ही हम राजपूत भ्राताओंके पुनर्वार उदय होनेकी अभिलाषा करते हैं, क्या समाज क्या स्वजाति तथा स्वधर्मके निकट प्रत्येक पुरुष ही समभावसे दायी है ईश्वरके दिये हुए दायित्वके पालनकरनेमें जो मनुष्य कातर हैं वा इस दायित्वके पालन करनेमें जो मनुष्य प्रतापसिंह और राजसिंहके समान जीवन उत्सर्ग करनेमें तइयार नहीं हैं वे मनुष्य अवश्य ही स्वजातिके कलंकस्वरूप हैं ।

भारतहितैषी नीतिके जाननेवाले इस समय दिव्यनेत्रोंसे देख रहे हैं अंग्रेजी शासनके फलसे अंग्रेजी शिक्षाके गुणसे हमारे परम सौभाग्यके बलसे इस समय नवीन युगकी सृष्टि हुई है, आर्यसंतानकी अवस्था नवीन भावमें बदल गई है, आर्यजातिकी जीवनी शक्ति अलक्ष्यभावसे नवीन रीतिके उपकरणमें प्रस्फुरित हुई है,इस परिवर्तनशील जगतके नियमके अनुसार तथा प्राकृतिक नियमके आधीन होकर अलक्ष्यका नवीन प्रकाश, नवीन हृदय, नवीन भाव, नवीन आशा मधुर मूर्तिसे भारतहिताभिलाषीके चित्तको तृप्त कर रही है,इस समय सबसे पहले हमारी यही प्रार्थना है कि जातिमें सहानुभूति हो मेवाडका इतिहास क्या इस सहानुभूतिकी शिक्षा नहीं कर सकता है, राजपूत बंगाली महाराष्ट्र सिक्ख सहानुभूतिके प्रकाशमें उदारतासे प्रफुल्लितमुख होकर मातृभूमि संतान कहकर परस्पर एकताका हार पहरकर अमृतमय स्वर्गीय फलकी उत्पत्तिकी संभावना कर सकते हैं मेवाडका इतिहास क्या हमारे हृदयपर इसबातकी शिक्षा नहीं दे सक्ता है ।

क्रिया प्रतिक्रियाकी विधिका विधान है आर्यजाति वीरसाजसे सजकर वीरमदसे मतवाली हो वीरव्रतको धारण कर जगतकी वीरताका अभिनय दिखाकर इस समय प्रतिक्रियाके वशीभूत हो शान्तिकी गोदीमें सो रही है, किस बलसे भारतका सुखसूर्य भारतके गौरवका मार्तण्ड चिरकालके लिये अस्ताचलको चला गया, किस कारणसे भारतमें कुछ भी नहीं रहा, भारतमें सब कुछ है, ऐसे दिन सुशासनकी कृपासे फिर आवैंगे कि जिस दिन यह भारत फिर अनन्त चिताभस्मको दूरकर नवीन मूर्तिको धारण करैगा, ऐसे दिन फिर आवैंगे कि जिस दिन हिन्दूवंशधर पैतृकगुणोंसे भूषित होकर नवीन जीवनी शक्तिके बलसे जगत्में नवीन लीलाका आरंभ करैंगे, ऐसे दिन अवश्य आवैंगे कि जिस दिन संसारके प्रत्येक प्रान्तमें भारतवर्षीय जयजयकारकी ध्वनि उठैगी, फिर गवर्नमेन्टके प्रतापसे देश सुधर जायगा यह जनश्रुति चरितार्थ होगी कि सदा किसीके एकसे दिन नहीं रहते ।

इस प्रकारसे मेवाडकी कथा पूर्ण हुआ चाहती है महात्मा टाडसाहबने केवल महाराणा भीमसिंहके समयतकका ही वर्णन किया है महाराणा भीमसिंहको स्वर्गवासी हुए इस समय ७१ इकहत्तर वर्षके लगभग हुए हैं, इस ७१ वर्षके इतिहासका हमने संक्षेपसे वर्णन किया है यद्यपि यह बात उचित नहीं,कारण कि संक्षेपसे वर्णनकरनेमें इतिहासका अंग विकृत हो जाता है,इससे उसका वर्णन विस्तारसे करना चाहिये । भला विचार तो कीजिये अंग्रेजीके केवल एक दो ग्रंथोंकेपढनेसे मेवाडकी परिशिष्टि किस प्रकारसे बनसकती है, इतिहासके प्रेम रखनेवाले चतुर पाठक अवश्य ही समझ गये होंगे कि भारतहितैषी महात्मा टाड साहबने अत्यंत क्लेश और कठोर परिश्रमके साथ विशेष यत्न करके मेवाडके जिस इतिहासको बनाया है, उस इतिहासकी परिशिष्टिको घरके कोनेमें बैठकर केवल अंग्रेजी पुस्तकोंकी सहायतासे दो चार दिनके बीचमें बना लेना प्रथम श्रेणीकी मूर्खता है, इस प्रकारका कार्य करना मानो मान्यका अनादर करना है, इस प्रकारका कार्य कोई निरपेक्ष लिखनेवाला किसी प्रकार नहीं कर सकता, कोई भी सहृदय ऐसा कार्य करके वीरजननी मेवाडभूमिका निरादर न करेगा, मेवाडकी परिशिष्टि लिखनेके लिये सबसे पहले तो यह कर्तव्य है कि मेवाडमें भलीभांति भ्रमण करके भट्टग्रंथोंको संग्रह करे फिर अंग्रेजी रिपोर्ट और गजेटियरके साथ मिलाकर स्वतंत्र भावसे लेखनी चलाना चाहिये संक्षेपसे इस कारण लिखा है कि ग्रंथका अंग भंग न हो जाय, मेवाडकी परिशिष्टि लिखनेकी बडी अभिलाषा है, परंतु यह नहीं कहा जा सकता कि इस जीवनमें यह कार्य पूरा हो सकैगा या दूसरे जन्ममें, इस जीवनमें यदि इस व्रतका उद्यापन पूर्ण हो जाय तो बहुत ही अच्छा हो, भगवानको सब सामर्थ्य है, इस वर्तमान व्रतको निर्विघ्नतासे पूर्ण करके यह सम्पूर्ण पवित्र राजस्थान पाठकोंके करकमलोंमें पहुँचा दूंगा तब एक बार अवश्य ही राजस्थानकी परिशिष्टि लिखनेका यत्न करूंगा, यदि इसमें कुछ विघ्न हुआ तब मनकी अभिलाषा मनमें ही रह जायगी ।

मान्यवर टाडसाहबने इस ग्रंथमें महाराणा भीमसिंहके चरित्रतकका उल्लेख किया है इससे आगे अठारहवें अध्यायसे महाराणा फतहसिंहजी तकके चरित्रका दिग्दर्शन अन्यत्रसे किया है जो महाराणा भीमसिंहजीसे पीछेकी शताब्दीमें मेवाडभूमिको सुशोभित कर गये हैं और इस समय मान्यवर श्री १०८ महाराणा फतहसिंहजी महोदय उदयपुरके सिंहासनको सुशोभित रहे हैं ।

चारण सामलदास ।

महाराज पृथ्वीराजसे चारण लोगोंकी उत्पत्ति हुई है । राजपूत लोग गुरुवत् जानकर इनको दान दिया करते हैं, दानमें जमनि धन और गांव इनको दिये जाते हैं, इस ही चारण वंशमें कविराज सामलदासका जन्म १८३७ में हुआ, महाराणा स्वरूपसिंहके दरबारमें इनका आगमन हुआ, सामलदासके बडे बूढें जब स्वर्गवासी हुए तब स्वरूपसिंहके चिरंजीव शंभुसिंह उनके घरपर सहानुभूति दिखाने गये थे । सामलदासके

रहनेको एक घर भी राणाजीने बनवा दिया, और दरबारमें इनको तीसरे नम्बर पर बैठनेकी आज्ञा दी पीछे १८७७ में महाराणा सज्जनसिंहने कविराजके स्थान पर जाकर उनको प्रतिष्ठा तथा चांदीकी छडी दी, पीछे पांवमें डालनेको सोनेका लंगर दिया पश्चात् कविराजकी उपाधिसे भूषित किया, सन् १८८४ में उदयपुरके राणा सज्जन-सिंह, जोधपुरके महाराज यशवन्तसिंह, कृष्णगढके महाराज शार्दूलसिंह यह तीनों उदयपुरके सामलबागमें न्योंते हुए आये थे। सन् १८८८ में अंग्रेज सरकारने कविराज सामलदासको महामहोपाध्यायकी उपाधि दी। कलकत्तेकी एशियाटिक सोसाइटीने इनको अपना मेम्बर बनाया, यह उदयपुरमें नेकसलाहकार मुसाहिब अदालत व इजलास खासके मेम्बर हुए, कविराज महोदयने बहुत पुस्तकें बनाई हैं। इन्होंने अपने भतीजे गोपालदासके पुत्र यशकर्णको गोद लिया है।

॥ भजन ॥

कर मन भानुवंश को ध्यान ॥ टेक ॥
नेक हिये बिच धार चित्र वह, गुणयुत महा महान ॥ १ ॥
दशरथ सुवन भक्तहितकारी, सब शोभाकी खान ॥
अंशन सहित मनुजतन धरिके, प्रगटे यहि कुल आन ॥ २ ॥
बाप्पा समर साँग लछमनसिंह, राजसिंह बलवान ॥
भयो प्रताप प्रताप भानुसम, कीरति छई जहान ॥ ३ ॥
वर्त्तमान रविवंश दिवाकर, देत प्रजहि कल्यान ॥
फतहसिंह प्रभु युगयुग जीवो, यह मांगहुँ बरदान ॥ ४ ॥
धन चित्तौर उदयपुर धनधन, को करसकै बखान ॥
मिश्र धन्य वे टाड कियो जिन, राजपूत गुणगान ॥ ५ ॥

मेवाडका इतिहास समाप्त ।

मेवाडके षोडश प्रधान सरदारोंकी उपाधि कुल तथा भूमिसम्पत्तिका नाम-

	उपाधि	नाम.	गोत्र.	कुल.	भूमिसम्पत्ति	ग्राम संख्या.
१	राजा	चंदनसिंह	झाला	झाला	सादरी	१२७
२	राव	प्रतापसिंह	चौहान	चौहान	बेदला	८०
३	राव	मोहकमसिंह	चौहान	चौहान	कोटारिया	६५
४	रावत	पद्मसिंह	चन्दावत	शिशोदीय	सलम्बूर	८५
५	ठाकुर	जोरावरसिंह	मैरतिया	राठौर	गानौर	१००
६	राव	केसोदास	,,	परमार	बिजौली	४०
७	रावत	गोकुलदास	संगावत्	शिशोदीय	देवगढ	१२५
८	रावत	महासिंह	मेघावत	शिशोदीय	बेगू	१५०
९	राजा	कल्याणसिंह	झाला	झाला	दैलबाडा	१२५
१०	रावत	सालिमसिंह	जगावत्	शिशोदीय	अमाइत	६०
११	राजा	छत्रसाल	झाला	झाला	बोंगुडा	५०
१२	रावत	फतहसिंह	सारंगदेवत	शिशोदीय	कानोड	५०
१३	महाराजा	जोरावरसिंह	शक्तावत	शिशोदीय	भाइन्दर	६४
१४	ठाकुर	जैतसिंह	मैरतिया	राठौर	बिदनौर	८०
१५	रावत	सालिमसिंह	शक्तावत	शिशोदीय	बानसी	४०
१६	राव	सूरजमल	चौहान	चौहान	पारसौली	४०
१७	रावत	केशरीसिंह	किसनावत	शिशोदीय	भैसरौड	६०
१८	रावत	जवानसिंह	किसनावत	शिशोदीय	कुरावड	३५

साठ वर्ष पहिले भैंसरौड और कोरावडके सरदार दूसरी श्रेणीके सरदारोंमें गिनेजाते थे इस कारण इन दोनोंको छोडकर शेष सबकी भूमिसम्पत्तिसे यह आमदनी होती थी इनसे नीचेके सरदार अधिक भूमिसम्पत्ति भोगते थे उनकी आमदनी ३००००००) तीस लाख रुपये थी।

जोड़। ११८१

प्रत्येकका अधिकृत ग्राम इन सबकी सूची नीचे लिखी है.

स. १७६०में प्रत्येक भूमिसंपत्तिका जो मूल्य निश्चित हुआ.	मन्तव्य.
१०००००)	इन सरदारोंकी भूमिसम्पत्ति केवल नाममात्रको आधी बटाई गई इन सबका राजकर बहुतायतसे आता है ।
१०००००)	
८००००)	
८४०००)	इनकी यह समस्त भूमि जोतीजाय तो इतनी उत्पत्ति होगी ।
१०००००)	जिस समय गदवाडाराज्य राणाजीसे निकल गया उसी समय यह सरदार १६ सरदारोंसे अलग किया गया ।
४५०००)	इसकी सब भूमि जोती जाय तो यह रुपया पैदा हो ।
८००००)	सब भूमि जोती जाय तो इससे अधिक रकम उठै ।
२०००००)	इसकी बहुतसी भूमि इस समय सैंधियाके पास चली गई है सब भूमि जोती जाय तो इस समय ७००००) की आमदनी हो सकती है ।
१०००००)	जोतने से इसकी ⅔ दो तृतीयांश आमदनी हो सकती है ।
६००००)	,, ,, ,, ,,
५००००)	जोतनेसे आमदनी होगी ।
९५०००)	जोतनेसे आधी आमदनी होगी ।
६४०००)	जोतनेसे यह आमदनी होगी ।
८००००)	,, ,, ,, ,,
४००००)	इस सरदारने अपनी समस्त प्रभुता और आधी आमदनी खो दी।
४००००)	,, ,, ,, ,,
६००००)	उपरोक्त दोनों सरदारोंके पडतेके समय यह दोनों सरदार मेवाडके १६ सरदारोंमें गिने गये एक साथ यह दोनों कभी राजसभामें नहीं गये ।
३५०००)	
जोड १३१००००)	

मेवाडमें धर्मप्रतिष्ठा, पर्वोत्सव व आचार-व्यवहार।

बाईसवाँ अध्याय. २२.

पौराणिक इतिहासकी उपकारिता,—भारतके पुराणोंका फल,—मेवाडकी शिवपूजा;—भगवान एकलिंगजीका मंदिर;—शैव,—गोसाईं,—जैनसमिति;—नाथद्वारेमें श्रीकृष्णजीका मंदिर और पूजाकी रीति;— राजपूतोंमें वैष्णवधर्मसे उपकार।

भारतवर्षके सनातन धर्मावलम्बियोंकी रीति, नीति, आचार, व्यवहार, इतिहास व धर्मतत्त्व इत्यादि समस्त प्रयोजनीय बातें पौराणिक इतिहासोंमें सन्निवेशित हैं। जगत्पूज्य विद्वान् और वीरलोगोंको जिन्हें हम अपना पितृपुरुष कहकर श्लाघा किया करते हैं;—जिनके अमानुषीय कार्योंका विचार करके विलायतके विद्वान् लोग आश्चर्य करते हैं; जिनकी स्मृति और जिनके विज्ञान, काव्य अलंकार और तर्कशास्त्रद्वारा आज यूरोप देशमें ज्ञानके नये २ प्रकाश हो रहे हैं, उनकी पवित्र चरित्रमाला भी आज पौराणिक इतिहासके जटिल और निबिड आवरणमें छिपी हुई है। विलायतके बहुतसे अभिमानी पंडितगण पुराणोंके इतिहासको मिथ्या और अत्युक्ति समझते हैं। परन्तु ऐसे लोगोंको एक बार यह विचार लेना चाहिये कि संसारके सब देशोंकी आदि घटनावली पौराणिक इतिहासके नीचे छिपी रहती है। जो इङ्गलैण्ड भूमि आज इस संसारमें सभ्यताके मदसे गार्वित होकर खडी हो रही है, उसके प्रथम पुत्रका आचार व्यवहार भी पुराणोंके जटिल वर्णनमें ऐसा छिप गया है कि उसमेंसे सत्यका निकालना जरा कठिन कार्य है। संसारकी चाहे जिस प्राचीन जातिका आचार व्यवहार देखिये, तो सबसे पहिले आपको पुराणरूपी समुद्र ही मथना पडैगा। किंचित् विचारके साथ देखनेसे भलीभांतिसे ज्ञात हो जायगा कि संसारकी आदिम अवस्थाका जो कोई इतिहास पाया जाता है तो वह पुराण ही है। क्लार्कनामक एक वैज्ञानिक परिव्राजकने कहा है कि मनुष्योंके पुराने कुसंस्कारोंके भीतर प्रवेश करके विचारपूर्वक अनुसन्धान करनेपर हम उनके बडे बूढोंका रीति नीति और आचार व्यवहारोंका जिस प्रकार निश्चयसे उद्धार कर सकते हैं, उनकी भाषाकी समालोचना करैं तो वैसा ज्ञान नहीं प्राप्त हो सकता। कारण कि कुसंस्कार राशि उन पुराणोंके रोम २ में घुसी हुई रहती है; परन्तु जल वायुके बदलनेसे भाषा भी बदला करती है।" क्लार्कसाहबकी इस ध्वनिसे विस्मित होकर टाडसाहबने मेवाडके पर्वोत्सव और कुसंस्कारोंकी समालोचना करनेके लिये इसको अपना मानदंड माना है। इसी कारणसे टाडमहोदय अपने परिश्रममें कृतकार्य हुए थे। टाडसाहबने कहा है कि धनुर्वेद, आयुर्वेद, स्मृतिशास्त्र, राजनीति या

बिज्ञान, चाहे जो कोई शास्त्र हो जिसके मूलमें पौराणिक इतिहास नहीं है वह निश्चय ही अपूर्ण है । पौराणिक कथामालाके भीतर जो लोग केवल तेजस्विनी कल्पनाकी अधिकाई देख पाते हैं उन्होंने विज्ञानके मूल सूत्रोंको थोडा ही पढा है । पुराण ही जगत्की पहिली अवस्थाके विषयमें साक्षी देते हैं और सकल देशोंके इतिहासकी जड केवल पुराणोंपर ही लगी हुई है । संसारके और दूसरे देशोंको पौराणिक इतिहासका फल चाहे जैसा मिलता हो परन्तु सभ्यताके आदिस्थान इस भारतवर्षके लिये वह अत्यन्त उपकारी है । सनातन हिन्दूधर्म विज्ञानमूलक है, विज्ञान स्वभावसे ही नीरस और कठोर होता है । परन्तु पुराणोंमें इस रसहीन और कठोर शास्त्रको ऐसे सुन्दर ढकनेसे ढक रक्खा है कि करोडों वर्षोंके हेरफेरसे भी वह पर्दा दूर नहीं हुआ । हिन्दूलोग इन पुराणोंको वेदके समान पवित्र माना करते हैं । इन पुराणोंमें जिन महा-पुरुषोंको देवभावसे पूजा गया है वह लोग आजतक भी देवभावसे पूजित हुआ करते हैं । भगवान् शिव और श्रीविष्णुजी आजतक भी इस विशाल भारतभूमिके करोडों मनुष्योंसे पूजे जाते हैं । भारतके और देशोंकी अपेक्षा राजस्तानमें पुराणोक्त धर्मका आदर भलीभांतिसे देखा जाता है । शताब्दी पर शताब्दी बीत गई राजस्तानके बहुतसे स्थान श्मशानभूमिके समान हो गये कितने ही प्राचीन राजवंश इस संसारसे लोप हो गये कितने ही स्थानोंमें कितना ही घोर परिवर्तन हो गया है; तो भी इस राजपूत जातिके बडे बूढे दो हजार वर्ष पहले जिस पौराणिक धर्मको अपना मूलमन्त्र समझते थे, आज-तक भी वह जाति उसी प्रकारसे अनुसरण किया करती है । नहीं मालूम होता कि इस सनातन धर्मके भीतर कौनसी मोहिनी माया छिपी हुई है । परन्तु जिस समय देखते हैं कि इसके भीतर सुन्दर वैज्ञानिक तत्व लगा हुआ है । जब देखते हैं कि शतसहस्र वर्षोंके कठोर कष्टने भी हिन्दुओंके हिंदुपनको सम्हाले हुए रक्खा है, तब एक साथ उसको सारासार कहना कुछ अनुचित न होगा । ऐसा भी दिन आवेगा, कि जिस दिन भारतवासी उस विज्ञानकी सहायतासे कि जो इसके भीतर छिपा हुआ है, दीन हीन मनमलीन जन्मभूमिको फिर भी सुख और स्वाधीनताके ऊंचे शिखरपर पहुंचा देवेंगे । जिस दिन भारतवर्षके समस्त हिन्दूगण इस सनातनधर्मको ही ग्रहण करने योग्य मुख्य धर्म समझ लेंगे, उस ही दिन भारतके नगर २ और ग्राम २ में आनन्दका भंडार खुल जायगा;–पुनर्वार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र वर्णभेदकी कुछ चिन्ता न करके विपक्षपक्षनाशिनी जगज्जननी, भगवती महामायाको आनन्दसे आवाहन करेंगे ।

वीर्यवान राजपूतगण पुराणोंको भी वेदके समान अति पवित्र मानते हैं । उनके पूजनीय पितृपुरुषोंकी महान कीर्ति और लीलाकी साक्षी इन पुराणोंमें ही है । राजपूतगण वीरता, महानता और संन्यासधर्मका प्रकाशमान आदर्श समझकर देवदेव महादेवजीकी पूजा किया करते हैं, भगवान् भूतभावन राजदूतोंके और विशेष करके मेवाडी राजपूतोंके प्रधान उपास्य देवता हैं । गंगा यमुनाके किनारे बसे हुए देशोंमें अनेक प्रकारके देवताओंकी पूजाका प्रचार होनेसे यद्यपि राजस्थानके और २ देशोंमें

भगवान् शूलभावनकी पूजा किंचित् कम हो गई है, तथापि वीरता और स्वाधीनताकी जन्मभूमि मेवाडभूमिमें, आजतक भी पहिलेके समान उनकी पूजा होती है । गिहौट-वंशके राजालोग महादेवजीकी पूर्णमूर्ति और लिंग इन दोनों मूर्तियोंकी पूजा करते हैं । तथापि महादेवजी बहुधा यहांपर एकलिंग×के नामसे पुकारे जाते हैं । एकलिंगजीके जितने मन्दिर मेवाडमें हैं, उन सबमें देवमूर्तिके आगे उनके वाहन वृषभकी धातुमय मूर्ति स्थापित हुई देखी जाती है ।

गिहौटकुलके प्रधान उपास्यदेवता भगवान् एकलिंगजीका पवित्र मन्दिर उदयपुरसे तीन कोश उत्तरको एक गिरिमार्गके बीचमें बना हुआ है । चारों ओर बडे २ पर्वत और वनके वृक्ष शोभायमान हैं । पर्वतमालाकी शोभा भी अत्युत्तम दिखाई देती है । औषधियोंका नयनरंजनकारी हराभरा दृश्य और कल २ शब्द करनेवाली छोटी२ नदियोंके मनोहर शब्दने इस स्थानकी शोभाको और भी अधिक बढा रक्खा है ।

एकलिंगजीके पुरोहितगणोंको गोस्वामी कहते हैं । यह लोग विवाह नहीं करते हैं; अतएव अन्तिम समयमें पाले हुए शिष्यको पूजा पाठ और मन्दिरादिका सम्पूर्ण भार दे जाते हैं । शैवपुरोहितगणोंके माथेपर अर्द्धचन्द्र चिह्न लगा रहता है, उनके मस्तकपर जटा कछुएके समान लगी रहती है । उन जटाओंमें एक २ बेलपत्र और कमलमाला गुथी रहती है। सब अंगोंमें भस्म और गेरुआवस्त्र यह लोग धारण किया करते हैं। यह लोग अपने कुटुम्बीलोगोंके शरीरको जलाते नहीं तथा उसको समाधिमें विराजमान कर देते हैं और उस समाधिके ऊपर एक २ छत्रीसी बना दिया करते हैं । वह समस्त मृत्तिका शिखरकी नाई ऊपरको उठा करती हैं। कभी२ शुद्धाचारिणी योगिनियोंको भी पुरोहितोंके कहीं चले जानेपर यह कार्य करना पडता है।मेवाडमें ऐसे बहुतसे गुसाईं हैं कि कौमारव्रतका अवलम्बन करनेपर भी शिल्प, वाणिज्य और युद्धकार्यके द्वारा अपनी जीविकाको निर्वाह किया करते हैं। गोस्वामीलोग भारतवर्षमें विशेषतासे धनवान होते हैं । मेवाडमें ऐसी बहुत जातियां हैं ।

राणाजी उनपर अत्यन्त ही अनुग्रह करते हैं । अस्त्रधारी लोग मेवाडके भिन्न२विभागवाले मठ या आश्रमोंमें वास किया करते हैं । थोडी२भूसम्पत्ति भी यह लोग भोगते हैं, कभी २ भिक्षासे भी इन लोगोंकी जीविकाका निर्वाह हुआ करता है । यह गोस्वामीलोग अपनी कानोंको बेधकर उनमें शंखनिर्मित कुंडल धारण किया करते हैं।इन कुंडलोंको वह रणभेरीके समान समझा करते हैं । ब्राह्मण और राजपूत दोनों ही बरन गुर्जर लोग भी इस सम्प्रदायमें मिल सकते हैं।महाकवि चंदवरदाईने कन्नौजके महाराजा जयचंदकी ऐसी ही एक शरीर रक्षक सेनाका वर्णन अत्यन्त मनोहरतासे किया है ।

मेवाडके राणागण "एकलिंगका दीवान" इस उपाधिको पाया करते हैं । राणाजी जब कभी मंदिरमें जाते हैं उस समय पूजाका बडा समारोह होता है ।

× सूरत और सिन्धुनदीके पूर्व मुहानेपर सहस्रलिंग और कोटिलिंग नामक दो मूर्ति दिखाई देती हैं;ग्रीस और मिसर देशमें जो बेकशर लिंगमूर्ति दिखाई देती हैं; उनके साथ इन समस्त मूर्तियोंका कुछ२ मेल पाया जाता है ।

शैवलोगोंका वृत्तान्त कहा जा चुका । अब जैनलोगोंका * विचार किया जाता है । इनकी सामर्थ्य और संख्याके विषयमें विलायतवाले बहुत ही कम जानते हैं । वह कहते हैं कि संसारमें जैनियोंकी संख्या बहुत थोडी है, तथा यह लोग अलग २ छितराये हुए पडे हैं । जैन लोगोंके धर्म और राजनैतिक विचारोंके सम्बन्धमें केवल यही कहना पूरा होगा कि केवल क्षत्रगाछा × शाखाके प्रधान पुरोहितके * ग्यारह हजार दीक्षित चेले भारतके भिन्न २ स्थानोंमें निवास करते हैं । केवल यही नहीं वरन इन जैनलोगोंकी एक ओसवाल * नामक शाखासमिति है । इसके एक लाख परिवार राजस्थानमें वास करते हैं और भारतके वाणिज्यसे जो धन उत्पन्न हुआ करता है उसका आधेसे अधिक भाग जैन सरावगियोंके हाथसे परिचालित हुआ करता है । प्रथम राजस्थान और सूरतमें जैन तथा बौद्धलोगोंका आगमन हुआ । यह लोग जिन पाँच पर्वतोंको पवित्र समझते हैं, उनमें आबू, पालिथान × और गिरनार यह तीन पर्वत ही उनके धर्मयुद्धके प्रधान रंगस्थल हैं । मेवाडकी मन्त्रीसभा और राजस्वविभागके बहुतसे कर्मचारी जैन ही हैं और पंजाबसे लेकर समुद्रके किनारेतकके प्रायः सब ही नगर जैन सेठोंसे शोभायमान हैं । उदयपुर तथा अन्यान्य नगरके शांतिरक्षक और करसंग्रहकारक भी इसही सम्प्रदायके लोग होते हैं । 'अहिंसा परमो धर्मः' जैनलोगोंका मूलमंत्र है, जहाँतक सम्भव होता है, यह लोग जीवहत्या नहीं करते; इस ही कारणसे जो लोग दीवानी विभागके कर्मचारी हैं वह फौजदारी विभागके स्वधर्मानुरागी कर्मचारियोंकी अपेक्षा अधिक चतुरतासे अपना काम

---

* शैवगण जैनलोगोंको परिहासके द्वारा "विद्यावान" नामसे पुकारा करते हैं । विद्यावान शब्दके भीतर बाजीगर अर्थ मिला हुआ है । बहुतसे आदमियोंका विश्वास है कि जैनीलोग जादूगर होते हैं । कहते हैं कि प्रसिद्ध कोषकार अमरसिंहने अपनी जादूविद्याके बलसे अमावस्याकी रात्रिमें चन्द्रमा दिखला दिया था ।

× कहते हैं कि सन् ११०० ई० में ही अनहलवाडा पट्टनके प्रसिद्ध जैन नरपति सिद्धराजके शासन समयमें उसकी राजधानीमें धर्मका एक बडा विचार हुआ था । विचारके समय सिद्धराजने जैन सम्प्रदायकी एक शाखाको क्षत्रगाछा नामसे पुकारा था । जैनलोगोंके मतानुसार क्षत्रशब्दका अर्थ सत्य है विख्यात हेमचन्द्र आचार्य इस क्षत्रगाछानामक सम्प्रदायका गुरु था । महात्मा टाडसाहबने जिस जैन यतीकी सहायतासे राजस्थान लिखनेके उपकरणको बहुतायतसे पाया था वह हेमचन्द्र आचार्यका एक चेला था ।

* टाडसाहबके समयमें यह वर्तमान था । टाडसाहब इसको महाविद्वान् बतलाते हैं । प्राचीन शिलालेखोंकी कठिन भाषा भी यही समझ लेता था । राणा भीमसिंह इसको बहुत मानते थे ।

* मारवाडमें अपस नामक एक नगर है, टाडसाहब कहते हैं कि ओसवालोंका निकास इस ही अपसवालसे हुआ है ।

× पालीथाना वा पालिस्तान, यह प्रसिद्ध जैन तीर्थ शत्रुंजय पर्वतकी तराईमें है। टाडसाहबने निःसंदेह ऐसा निर्णय किया है, कि शाकद्वीपसे जो भिन्न २ जातियें भारतवर्षमें चढकर आई थीं उनमें ही एक पाली भी थी । उस पाली जातिसे ही उक्तनगरका नाम पालीथाना हुआ है ।

किया करते हैं । अहिंसाको परम धर्म समझनेके कारण ही राजनीति विद्यामें जैन लोग पीछे पडे रहते हैं । अनहलवाडा पट्टनका पिछला राजा कुमारपाल जैन एक घोर जैनी था । वर्षासे उत्पन्न हुए कीडे मकोडे मार्गमें दबकर मर जाते हैं, इसी कारणसे असल जैन लोग वर्षाकालमें चलना फिरना बंद कर देते हैं । जैनी लोगोंको वर्षाकालके समयमें ही जीवनाशकी विशेष शंका रहती है । यह लोग हत्यासे यहांतक भय करते हैं कि वर्षाकालमें लालटैन जलाकर भी कहीं नहीं आते जाते; कारण कि लालटैनपर गिरकर पतंगकुलका नाश हो जाता है । "एक महाशयने एक जैनी लडकेसे वैद्यकका एक निघण्टु लिखवाया तब उस लडकेने जीवहत्या न करना, इस वाक्यके अनुसार निघंटुके मांसप्रकरणको ही संपूर्णतः छोड दिया था कि जिसके कारण उक्त ग्रंथ लिखानेवालेकी ग्रन्थ छप जानेपर वडी हानि हुई । इस प्रकारसे जैनियोंकी धर्मभीरुताके और भी बहुतसे प्रमाण पाये जाते हैं ।"

हिन्दोस्थानमें बौद्ध, वैष्णव, शैव और शाक्तोंमें जो घोर मतभेद उत्पन्न हुआ था, भगवान भाष्यकार शंकराचार्य्यजीके अनुग्रहसे वह सब झगडा दूर हो गया । उन्होंने अपनी दैवी सामर्थ्यके प्रभावसे उस विषमताको दूर कर समस्त धर्मोंको समीकरणके द्वारा एक करके अपने देशानुरागका उत्तम प्रमाण दिखाया था । अब वह बात नहीं है कि शैव या शाक्त तथा वैष्णव जैन इत्यादि सामने आते ही एक दूसरेसे लाठी या तलवार चला बैठते हों । सब ही उस कठोर विद्वेषको भूलकर आज शांतिरसमें मग्न हो रहे हैं । जिस जैन और ब्राह्मण धर्ममें भयंकर शत्रुता थी, जिस समयमें प्रतिदिन अगणित जैन और ब्राह्मणलोग उस विद्वेषाग्निमें पतंगके समान गिरकर मृत्युका आश्रय हो रहे थे उस ही समयमें बहुतसे जैनी भागकर मेवाडमें आन बसे थे। मेवाडमें अत्यन्त प्राचीन कालसे जैनधर्मकी आलोचना हो रही है । यद्यपि मेवाडके दो एक राजा शैव धर्मको छोड कर जैनधर्मावलम्बी हो गये, परन्तु शैवधर्मकी सबने ही विशेष सहायता की और उत्साह देते रहे । गिह्लौटकुलके आदि पुरुष वलभीलोग भी जैनधर्म्ममें दीक्षित थे । ज्ञात होता है कि गिह्लौटकुलके राजालोग इस ही कारणसे पितृपुरुषोंके अवलम्बित धर्मपर अनुराग दिखाते थे। इसमें अकाट प्रमाण चित्तौरमें बना हुआ पार्श्वनाथका स्तंभ ही है । मध्य, पाश्चात्य और दक्षिण भारतमें हिन्दू शिल्पविद्याके जो अनुपम निदर्शन विद्यमान हैं, उनको देखनेसे साफ मालूम होता है कि एक समय हिन्दू लोग थवई विद्याकी सीमा पर पहुँच गये थे । जैनलोगोंने एक अमूल्य रत्नको अपने हृदयसे लगाकर रक्षा की है। भयंकर यवनविप्लवक दिग्दाही तेजसे जिस समय भारतके रत्नभाण्डारोंकी ग्रन्थावली भस्म हो रही थी, जैनलोगोंने उस ही समय हृदयसे लगाकर उनकी रक्षा की थी । इतिहासतत्त्वके जाननेवाले विलायतके अंगरेजोंको आजतक उन रत्नोंका पता नहीं लगा है । मारवाडके जैसलमेर, प्राचीन अनहलवाडा, कम्बेर और अन्यान्य जैन पीठोंके पुस्तकालय आजतक भी रत्नोंसे पूर्ण हो रहे हैं । कठोर शासन और भयंकर अत्याचारोंको सहन करके भी परम धार्मिक जैनलोगोंने उन समस्त रत्नोंकी रक्षा कर ली है ।

मेवाड सब भाँतिसे ही हिन्दूधर्मका आदर्शस्वरूप है। समय २ पर इसके पर्वतयुक्त उद्यानोंमें सकल धर्मोंकी ही उत्कर्षता साबित हुई है। इस देशके धर्मपरायण राजा केवल शैव या जैनधर्मके पृष्ठपोषक नहीं थे; वरन वैष्णवधर्ममें भी उनका विशेष अनुराग पाया जाता था। मेवाडके अन्तर्गत नाथद्वारेमें भगवान् श्रीकृष्णजीका पवित्र मंदिर ही इस बातका साक्षी दे रहा है। हिन्दूविद्वेषी औरंगजेबके कठोर अत्याचारोंसे सताये जाकर जब परम पवित्र वैष्णवलोग श्रीव्रजधामसे दूर किये गये; वह किसी स्थानमें भी अपने उपास्य देवताकी रक्षा करनेका स्थान नहीं पा सके; तब उदयपुरके राणाने अपना हृदय लगाय मुगलोंके अत्याचारोंको सहन करके भी श्रीकृष्णजीकी पवित्र मूर्तिको अपने राज्यमें आश्रय दिया था।

उदयपुरसे ११ कोश पूर्व उत्तरको यह पवित्र मंदिर विराजमान है। इसकी संगमरमरसे बनी हुई सफेद सीढियोंको धोता हुआ बूनाश नद कल कल शब्द करता हुआ बहा जाता है। यद्यपि नाथद्वारा वैष्णवोंका एक प्रधान तीर्थस्थान है, परन्तु उसमें श्रीकृष्ण भगवानके अतिरिक्त और कोई दूसरा दृश्य दर्शन करनेके योग्य नहीं है। नाथद्वारेकी मंदिरकी बनावटमें किसी भाँतिकी अपूर्व कारीगरी नहीं पाई जाती। नाथद्वारेका जो कुछ नाम है और जो कुछ पवित्रता है वह केवल श्रीकृष्णभगवानजीके पवित्र समागमसे है महानुभाव ईसामसीहके जन्मसे दो हजार वर्ष पहिले पवित्र जलवाली यमुनाजीके पवित्र किनारेपर श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्दकी जो मूर्त्ति प्रतिष्ठित हुई थी, बहुतसे महाशयोंका अनुमान है कि यह वही मूर्ति है। गयाजीकी गिरिकन्दरामें, द्वारकाके उपकूलमें अथवा हृदयानंदकारी श्रीवृन्दावविपिनमें जो हृदयमोहन चित्र दिखाई देते हैं, नाथद्वारेमें वह दिखलाई नहीं देते; तथापि मेवाडके इस पवित्र तीर्थमें प्रत्येक वर्ष अगणित यात्री भारतके अनेक देशोंसे आया करते हैं।

हजार वर्षोंसे जो व्रजधाम गोपीमोहन श्रीकृष्णभगवान्‌का प्रधान पीठस्थान गिना जाता था, वैष्णवगण मुगललोगोंके अत्याचारसे उस पवित्र तीर्थभूमिको छोडकर देवमूर्तिकी रक्षा करनेके लिये भारतके अनेक स्थानोंमें भ्रमण करने लगे। यद्यपि महमूदगजनवीके कठोर अत्याचारसे भी भगवान् विष्णुजीका कमलासन कम्पायमान हो गया था, यद्यपि उनके भक्तगण भगवान्‌की मान मर्यादाको रक्षित करनेके लिये व्याकुल होकर एक स्थानसे दूसरे स्थानमें भागते फिरते थे, तो भी श्रीभगवान् राधारमणजी अपनी प्यारी व्रजभूमिसे सम्पूर्णतः अलग नहीं हुए थे। हिन्दूहितैषी उदारचरित अकबर तथा जहाँगीर और शाहजहाँने फिर श्रीमहाराज वृन्दावनविहारीजीको उनके प्राचीन मंदिरमें ही स्थापन कर दिया था। परन्तु बहुत लोग इसमें सन्देह करते हैं कि अकबरने उस सर्वमंगलमय वैष्णवधर्मके सुन्दर गुण गौरवसे मोहित होकर अपने लौकिक धर्मके साथ उसकी बराबरी दिखलाकर एक नवीन धर्मके चलानेकी चेष्टा की थी। यदि अकबरका अभिप्राय पूरा हो जाता, यदि अकबर जहाँगीर और शाहजहाँके धर्मान्ध स्वजातीयगण, इस बडी शिक्षाके माहात्म्यको समझ गये होते तो वीरवर बाबरका विशाल वंशवृक्ष इतनी शीघ्रतापूर्वक

भारतभूमिसे न उखड जाता। यदि वह वृक्ष नहीं उखडता तो हिन्दू मुसलमानोंकी एक नई जाति उत्पन्न होकर भारतके वक्षस्थल पर विचरण करती। परंतु भगवानको यह कार्य अभिप्रेत नहीं था, इससे ही पापी अवरंगको इस भारत वर्षमें जन्म दिया।

राजपूत बालाके गर्भसे उत्पन्न होनेके कारण जहांगीर हिन्दू धर्मपर विशेष अनुराग करता था। वह अपने उदार नीतिवाले पिता अकबरके समान ही भगवान् श्रीकृष्ण-चन्द्रजीकी पूजा करता था। परन्तु जहाँगीरका पुत्र धार्मिकप्रवर शाहजहाँ शैव धर्ममें दीक्षित हुआ था। सिद्धरूप नामक एक संन्यासीने शाहजहाँको इस धर्ममें दीक्षित किया था। बादशाहके शैव हो जानेसे उस समय शैव धर्मकी विशेष उन्नति हुई थी। शैवलोग राजाका अनुग्रह प्राप्त करके वैष्णवोंके ऊपर अनेक प्रकारका अत्याचार करने लगे। उनके अत्याचारोंसे घबड़ाय वैष्णव लोग भगवान्की मूर्तिको साथ ले श्रीव्रज-भूमिको छोडकर इधर उधर भटकने लगे। अनन्तर उदयपुरकी किसी राजकुमारीने विशेष चेष्टा करके विष्णु भगवान्की मूर्तिको फिर उसके पूर्व आसनपर विराजमान कर दिया था। परन्तु वह वहांपर अधिक दिनतक नहीं रह सके। अल्पकालके बीचमें ही नर राक्षस निठुर कठोर औरंगजेबने अवतार लेकर एक बार ही सदाके लिये उस यमुना पुलिनसे बाँकेबिहारीको हटा दिया। इस ही कारणसे हिंदूलोग औरंगजेबको कालयवनका अवतार कहा करते थे।

कालयवनरूपी औरंगजेबने गोहत्या और ब्रह्महत्याद्वारा समस्त व्रजभूमिको अपवित्र करके कृष्णचन्द्र आनन्दकंदके मंदिरको भी अपवित्र किया। उसका यह कठोर अत्याचार देखकर शिशोदीय वीर राणा राजसिंहके हृदयमें दारुण क्रोध हुआ था। भगवान्को अपमानसे बचानेके लिये उन्होंने औरंगजेबके विरुद्ध अपने प्रचंड खड्गको उठाया। राणाजीके प्रचंड उत्साहको निहारकर एक लक्ष राजपूत वीरोंने यवनोंके हाथसे देवमूर्तिकी रक्षा करनेके लिये अपने प्राणोंको नेवछावर कर दिया। उन स्वर्गीय वीरोंके अनुभव प्राणोत्सर्गके प्रभावसे पापी अवरंग हिंदू देवताके पवित्र अंगको स्पर्श नहीं कर सका। उस काल श्रीविष्णु भगवान् कोटेके बीचमें हो रामपुरकी ओरसे मेवाडमें आन पहुँचे। राणाजीकी इच्छा थी कि उदयपुरमें ही मूर्तिको ले आवें, परन्तु मार्गमें एक अनहोनी बातने होकर उनकी इस इच्छाको विफल कर दिया, मेवाडके ही शियोर नामक गाँवके भीतर होकर श्रीभगवानजीका रथ चल रहा था उस ही समय रथका पहिया इस प्रकारसे पृथ्वीमें प्रवेश कर गया कि अनेक यत्न करनेसे भी न निकला। तब एक ज्योतिषी आया उसने विचार कर कहा कि "भगवान् यहींपर रहना चाहते हैं। नहीं तो उनके रथका पहिया किस कारणसे अचल हो जाता" ज्योतिषीका यह वचन सुनकर राणाको पूरा विश्वास हो गया, उन्होंने वहीं पर श्रीकृष्णजीका मंदिर बनानेकी आज्ञा दी। शीआर ग्राम मेवा-डके दैलवाडा सरदारकी जागीरमें था। भगवान्के अनुग्रहका वृत्तान्त सुनकर दैलवाडाका सरदार वहांपर आया और शीघ्र ही एक मंदिर बनवा दिया, भगवत्सेवाके लिये बहु

गाँव तथा और भी बहुतसी जमीन लगा दी । राणाजीने उसका पट्टा मान लिया । तदनन्तर भगवान् नाथजी विधिपूर्वक रथसे उतारे जाकर मंदिरमें विराजमान किये गये । उसी दिनसे शीआरग्राम नाथद्वारा हुआ और थोडे ही समयके बीचमें एक नगर सा बन गया । मेवाडके प्रसिद्ध पुरुषतीर्थ नाथद्वाराकी उत्पत्ति इस प्रकारसे हुई ।

नाथद्वारेके पूर्वकी ओर पर्वतोंकी दीवार सी बनी हुई है; और पश्चिम उत्तरके किनारेको धोता हुआ बूनास नद गढखाईके समान प्रवाहित हुआ है । नद और पर्वतके बीचमें भगवान् श्रीकृष्णजीका अत्यन्त पवित्र मंदिर स्थापित है; राजपूतोंका विश्वास है कि घोर पापी भी यहां आकर पवित्र हो जाता और अन्त समय स्वर्गको गमन करता है, इस देशके सिवानेके भीतर राजदण्डका भी प्रवेश नहीं हो सकता । घोर अपराधी भी यदि नाथद्वारेमें चला आता तो राजा उसको दंड नहीं दे सकता । क्योंकि यह स्थान शांतिमय और साम्यमय है । लडाई, झगडा, क्लेश, डाह इत्यादि किसी प्रकारकी विषमता यहाँपर नहीं रह सकती । सभी आनन्द पूर्वक वेद वेदान्तका विचार किया करते हैं । यद्यपि नाथद्वारा एक साधारण ग्राम है; परन्तु इसकी सीमाके भीतर अगणित मनुष्य विश्राम कर सकते हैं । स्थान २ में इमली, पीपल और बडके वृक्ष लगे रहकर दूरसे आये हुए यात्रियोंपर छाया करते हैं । वैष्णव लोग इन छायाकार वृक्षोंके नीचे बैठकर ग्रीष्मकालकी धूपसे बचते हुए परमानन्दसे विश्राम करते हैं।कोई गाता है कोई बजाता है कोई नाचता है कोई गीतगोविंदको पढता हुआ बहुतसे मनुष्योंको उसका अर्थ समझा रहा है । संसार विरागियोंके लिये नाथद्वारा अनुरागका स्थान है,उदासीनके लिये शान्तिकुटीर है,निराशके लिये आशाकुंज है । सम्पूर्ण संसारमें जिसको पापी समझकर त्याग दिया है,जिसके सुखका आशारूपी दीपक सदाके लिये बुझ गया है; एक समय जो महाधनवान था परन्तु भाग्यदोषसे इस समय वह अन्न भी नहीं पाता, संसारके सुखका देनेवाला प्रेम भी जिसका पीछा छोड गया है, जो शोकाप्त और इच्छाहीन है;-यह नाथद्वारा उसको भी रहनेके लिये स्थान देता है-त्रिविधतापसे सताये हुए मनुष्योंको भी यहींके वृक्षोंकी छायामें विश्राम मिलता है । बहुतसे धनी अपनी भार्य्या, कन्या और प्राणप्यारे पुत्रोंको छोड इसी शांतिदायक स्थानमें आकर रहते हैं । उन सबके मनमें दृढ विश्वास और हृदयमें प्रबल आशा है कि हम लोग संसारको छोडकर जिसकी शरणमें आये हैं अंतकालमें वह अवश्य ही अपने चरणोंके बीचमें स्थान देगा । उनके चरणोंमें स्थान प्राप्त करनेसे बारम्बार पृथ्वीमें नहीं आना पडेगा, उदयपुरकी ज्वाला नहीं सतावेगी और संसारबंधन छूटकर सदाके लिये स्वर्गसुखकी प्राप्ति होगी ।

टाडसाहब कहते हैं कि "राजपूतलोग यदि महादेवजीके विकट धर्मको छोडकर केवल शांतिमें वैष्णवधर्मका आचरण करें तो राजपूत जातिका विशेष उपकार हो सकता है " राजपूत जातिकी राजनैतिक उन्नतिका विचार करनेपर हम शांतिमय वैष्णव धर्मको तेजयुक्त शैवधर्मपर प्रधानता नहीं दे सकें । जगतमें सभी कोई शांतिको चाहते हैं;

परन्तु जिस शान्तिसे मनुष्यके तेजका नाश हो जाता है, जो शांति मनुष्यको आलसी और अचल बना देती है हम उस शांतिके अभिलाषी नहीं हैं। आज राजपूतलोग जिस जड और निर्जीव अवस्थाको पहुँच गये हैं यदि इस समय उनमें शांतिका सचार हो जाय तो राजपूतोंका नाम शीघ्र ही इस संसारसे लोप हो जायगा। आज भी उनके हृदयके भीतर वीर्य्यके जो अग्निकण छिपे हुए पडे हैं शांतिरूपी जलको पाकर वहीं बुझ जायंगे। यथार्थ वैष्णवधर्म जब सृष्टिके आरम्भकालसे संसारमें विस्तारित हो रहा है, वह संपूर्णतः शांतिमय नहीं है। विष्णुजी जगतका पालन करनेवाले हैं। जहाँ पालन है वहीं संहार है; एक ओर जिस प्रकार पालन होता है वैसे ही दूसरी ओर संहार होता है; एक ओर मुर मधुकैटभ संहारक वेश दूसरी ओर गोपाल नारायण मूर्ति। जहांपर दो आदमियोंके स्वार्थमें संघर्ष होगा वहांपर विना एक आदमीका संहार किये दूसरेकी रक्षा नहीं की जा सकती। जहाँ शान्ति स्थापन करनी होगी वहांपर विना अशांतिका नाश किये हुए काम नहीं चलेगा। बस यही यथार्थ वैष्णवधर्म है। राजपूतलोग यदि इसी वैष्णव धर्मका अवलम्बन करें तो उनका विशेष उपकार हो सकता है;नहीं तो मिथ्या वैरागी और हठीले वैष्णवधर्मको ग्रहण करनेसे उनकी शोचनीय दशा और भी बुरी हो जायगी। वैष्णवधर्मका एक गुण यह भी है कि अकारण रुधिर गिराना या इधर उधर खड्ग चला बैठना उसको अच्छा नहीं लगता। जहाँपर एकके स्वार्थसे बहुतोंको हानि पहुँचती है, जहाँपर एकके मंगलसे बहुतोंका अनिष्ट हुआ है,विष्णुजीने वहाँपर अपने अमोघ चक्रको चलाया है। नहीं तो हजारों मधुकैटभ जन्म ले लेते तो भी उनको क्या चिंता थी। विष्णुजी न्याय और धर्मके पक्षपाती हैं। यदि कोई अन्यायी और अधर्मी आदमी उनका प्रसाद प्राप्त करनेके लिये सामने ही प्राणतक दे दे तो भी वह उसकी ओरको नहीं देखते; परन्तु जहाँपर न्यायका अपमान होता है; जहाँपर धर्मके मस्तकपर लात मारी जाती है, विष्णुजीका मन वहींपर पडा रहता है; उस दुःख पाये सताये हुए मनुष्यका उद्धार करनेके लिये श्रीविष्णुभगवान्‌जी प्राणपणसे चेष्टा करते हैं। भगवान् श्रीकृष्णजीने अवतार होनेके कारण इसी श्रेष्ठ और सूक्ष्म नीतिका अवलम्बन किया था। हम भी इसी वैष्णवधर्मके पक्षपाती हैं। यदि राजपूतगण इसी वैष्णव धर्मको स्वीकार कर लें, यदि वह इसकी यथार्थ नीतिका व्यौहार करने लगें तो हमको कुछ भी आपत्ति नहीं है। समस्त भारत इस वैष्णवधर्मसे दीक्षित हो जाय, पुनर्वार भगवान् श्रीकृष्णजी अवतार लकर इस श्रेष्ठ धर्मका विस्तार करें; नगर नगर, गाँव गाँव और स्थान २ में भ्रमण करके " हरे मुरारे मधुकैटभारे " इत्यादि नारायणजीके यथार्थ मंत्रोंका प्रचार करें;-तो निश्चय ही सताये दुःख पाये राज्यहीन पाण्डवकुलकी जय होगी।

तेईसवां अध्याय २३.

वसंतपंचमी;--भानुसप्तमी;--शिवरात्रि;--अहेरिया;--फागोत्सव;--शीतलाषष्ठी;--राणाका जन्मदिन;--फूलडोल;--अन्नपूर्णा;--अशोकाष्टमी;--राम--नवमी;--मदनत्रयोदशी;--नवगौरी--पूजा;--सावित्री--व्रत;--रंभातीज;--अरण्यषष्ठी;--रथयात्रा;--पार्वतीतीज;--नागपंचमी,--राखीपूर्णिमा,--जन्माष्टमी,--पितृदेवता,--खड्गपूजा;--दशहरा,--गणेशपूजा;--लक्ष्मीपूजा;--दिवाली;--अन्नकूट;--झूलन--यात्रा;--मकर--संक्रान्ति;--मित्रसप्तमी;--

इस समय मेवाडके पर्वोत्सव और आचार व्यवहारका वर्णन क्रमशः किया जाताहै। जिस समय शीतकी कठोरता चली जाती है और वसंतकी दूती कोयल संसारमें बोलने लगती है, तथा समस्त संसारके नये जीवनको पूर्ण कर डालती है;जिस समय प्रकृतिकी सजीवताके साथ २ मनुष्यका मन एक अद्भुत आनन्दमें मग्न हो जाता है, उस ही मधुर वसंत कालसे मेवाडके घर २ में पर्वोत्सवका आरंभ होता है।

वसन्तपंचमी।--मेवाडमें माघशुक्ला ५ को इस उत्सवका आरंभ होता है।सम्पूर्ण भारतवर्षमें यह उत्सव विख्यात हैं।जिस शुभदिनसे समस्त हिन्दूगण विद्याकी प्राप्तिके अर्थ सरस्वतीजीकी पूजा करते हैं,उस ही दिन राजपूतलोग जहांतक सम्भव होता है अश्लील और घृणित व्यवहारका अवलम्बन करके उन्मत्त भावसे नाचा गाया करते हैं। वसन्तपञ्चमीके दिन ऊंच नीचमें कोई अन्तर नहीं रहता।साधारण लोग भांग,धतूरा गांजा,मद, अफीम इत्यादि अनेक प्रकारके मादक द्रव्य खा पीकर अश्राव्य और अश्लील भाषामें गीत गाते हुए नगरके चारों ओर घूमा करते हैं। जो भले आदमी किसी समय एक अप्रिय वचन कहते हुए भी शरमाते हैं आज वह लोग भी लोकलाजको पानी देकर साधारण लोगोंके साथ उपरोक्त प्रकारका आनन्द लूटते हैं। जिस समय राजस्थानकी चारों सीमाओं पर इस प्रकारका आनन्द उकना करता है, उस ही समय असभ्य भील लोग भी अपने २ वनोंसे आनकर राजपूतोंमें मिल जाते हैं। राजपूतोंको भी भीलोंके मिलानेसे परमानन्द होता है।

भानुसप्तमी।--वसंत पंचमीके दो दिन पीछे भानुसप्तमीका आगमन होता है। कहते हैं कि सूर्य भगवान्‌का जन्म इस ही तिथिको हुआ था। सूर्यवंशीय राणागण अपने कुलदेवताकी जन्मतिथिको अनेक प्रकारके उत्सव किया करते हैं। इस दिन राणाजी अपने सरदार और सामन्तोंको साथ लेकर चौंगा नामक पवित्र स्थानमें जाया करते हैं; वहा पर सूर्य भगवान्‌की पूजा की जाती है। इस दिन जयपुरमें सूर्य भगवान्‌की पूजा कुछ विशेष धूमधामके साथ होती है। कुशावह (कछवाहे) राजा

उस दिन सूर्यनारायणके मंदिरमें प्रवेश करके उनके रथको जिसमें आठ घोड़े जुते हुए होते हैं, बाहर लाते हैं। नगरवासी और जनपदवासी उस रथको खैंचकर महा आनन्दके साथ नगरके चारों ओर फिराते हैं।

शिवरात्रि।–फाल्गुन मासकी कृष्ण चतुर्दशीको यह उत्सव होता है। प्रत्येक हिंदू और विशेष करके राणाजी इस शिवरात्रिको परम पवित्र मानते हैं। घोर पापी निषद सुन्दरसेन जिस दिन अपने समस्त पापोंसे छूटकर शिवलोकको चला गया; उस दिनको सब ही हिन्दूगण पवित्र मानेंगे। भारतवर्षमें चित्तौरके राणाजी "शिवके प्रतिनिधि" समझे जाते हैं; इस ही कारणसे वह धूमधामके साथ शिवजीकी पूजा किया करते हैं। राजपूतलोग शिवरात्रिके दिन निर्जल व्रत रखते हैं। प्रत्येक शैव इस पवित्र दिनमें किसी प्रकारका कोई संसारी कार्य नहीं करते और सारी रात्रि जागरण करके केवल महादेवजीका ही भजन करते हैं।

अहेरिया।–अहेरिया अर्थात् वासन्तिक शिकारके साथ २ संसारमें मधुरतामय फाल्गुन मासका प्रवेश होता है। इसके पहिले दिन राणाजी अपने सरदार और नौकर चाकरोंको एक हरे रंगका अँगरखा दिया करते हैं। राणाजीके दिये हुए उस अँगरखेको पहिने हुए समस्त सरदार और सेवकलोग ज्योतिषीकी बनाई हुई शुभ लग्नमें राणाजीके साथ वराहका शिकार करनेके लिये नगरके बाहर जाते हैं। तदनन्तर वह बनैला सूकर भगवती पार्वतीजीके सामने उत्सर्ग किया जाता है। ज्योतिषीके बतानेपर मृगयाकी लग्न नियत होती है, इस कारणसे अहेरियाका दूसरा नाम "महूरतका शिकार" है। इस महान् शिकारके समयमें राजपूतलोग अपने २ भाग्यकी परीक्षा किया करते हैं। जो उस दिन किसीका निशान चूक जाय तो जान लो कि उसका मंगल नहीं है; इस वर्षमें उस पर बहुतसी विपत्तियें पडती हैं। इस ही कारणसे कोई भी अपनी शक्तिके अनुसार अपने निशानेको भागने नहीं देता; कोई २ अपने सेवकोंसे वराहोंके वासस्थानको जान लेते हैं। परन्तु मृगको देखते ही सब ही प्राणोंका दाव लगाकर उसका संहार करना चाहते हैं। मेवाडके सरदारगण अपने घोडोंपर सवार होकर राजा और राजकुमारोंके साथ उस कठोर मृगयाके लिये जंगलको जाते हैं। प्रत्येकके हृदयमें मृग वध करनेकी इच्छा होती है। उदयपुरकी विशाल उपत्यकामें अथवा बगलके बनोंमें या पर्वतकी कन्दराओंमें, तथा जनहीन बनोंमें बहुधा मृग विश्राम किया करते हैं। प्रथम तो यह शिकारी लोग बन अथवा पर्वतकी कन्दराओंको घेरकर विकट शब्दसे चिल्लाना आरम्भ करते हैं। उनके गगनभेदी स्वरसे अस्त्रोंकी झनझनाहटसे और घोडोंके हिनहिनानेसे भीत होकर वराहगण अपने स्थानको छोडकर भागनेकी चेष्टा करते हैं। उनकी इस प्रकारकी चेष्टा बहुधा उनके प्राण जानेका कारण होती है। यदि दो एक जीव वहांसे अपना प्राण लेकर भागते हैं तो शिकारीलोग तत्काल उनके पीछे घोडा डालते हैं। उस समय वह मतवालेसे हो जाते हैं। अपने २ प्राणोंकी कुछ भी परवाह नहीं करते

हैं, इष्ट मित्रोंका स्नेह भी नहीं रहता । मियानसे खड्ग निकाले अथवा भालेको हाथमें लिये हुए प्रचण्ड वेगसे भागते हुए उस वराहका पीछा करते हैं । उस समय वन, उपवन, वृक्ष, शिलाखण्ड, अथवा पहाडी नदी इनमें कोई वस्तु भी उनकी तेज चालको नहीं रोक सकती । वह लोग प्राणपणसे उस मृगका पीछा करते हैं और शीघ्र ही उसके खूनसे अपनी तलवारको रँग देते हैं । उस रुधिरमें बहुधा अश्व और मनुष्यका रुधिर मिला होता है । उस शिकारके समयमें राजकीय रसोइया भी शिकारियोंके संग रहता है । भगवती गौरीके शत्रु वराहका शिकार राजपूतोंके तीखे खड्गसे दो टुकडे होते ही वह रसोइया उसमें अनेक तरहके मसाले मिलाकर राँधना आरम्भ करता है । जब वह मांस पक चुकता है तो राणाजी सब शिकारियोंके साथ उसका भोजन करते हैं । उस आनन्द भोजके समय राजपूतोंका प्रिय पानपात्र "मनौआका प्याला" प्रस्तुत नहीं होता ।

फागोत्सव ।—फागुनका रंगीली महीना जैसे २ वीतता जाता है मेवाडियोंका विकट आनन्द बढता जाता है । नगरवासी और जनपदवासी आनन्दसे उन्मत्त होकर चारों ओर फाग खेलते फिरते हैं । अबीरकी झडी और पिचकारियोंकी धारोंसे घर द्वार लाल ही लाल दिखलाई पडते हैं । समस्त मेवाडमें एक मनुष्य भी श्वेत वस्त्र धारण किये हुए दिखलाई नहीं देता । चोटीसे लेकर चरणतक अबीर गुलाल और रंग पडा होता है—वस यही कहावत चरितार्थ होती है कि "लाल लालके लाले लोचन लाले मुखमें लाले बीरा।" स्त्री पुरुष बालक बूढे सभी अबीरसे शरीरको चित्रित करते फिरते हैं । सभी कुंकुम और पिचकारीको हाथमें लिये स्त्रियोंकी सारी रंगनेके कारण मार्गघाटमें घूमते हुए फिरते हैं । जिन्होंने कभी भी घरके भीतरसे बाहर—पांव नहीं दिया होता, भुवनप्रकाशक सर्वत्रगामी, भगवान् मरीचिमाली भी और समय जिनके मुखकमलको नही देख सकते वह भी आज घरसे बाहर आकर होरी २ कहा करती हैं ।

मेवाडी लोग इस उत्सवको फागके नामसे पुकारा करते हैं । इन दिनों राणाजी भी रनवासमें जाकर रानी और उनकी सहेलियोंसे अबीरका खेल खेलते हैं । उस समय किसीको जरा भी शरम नहीं रहती;—किसीके मुखमंडलपर तिलमात्र भी निरानन्दकी छाया नहीं दिखाई देती । उन सुन्दरी नारियोंके साथ होरी खेलनेमें राणाजीको अपार आनंद प्राप्त होता है,। परन्तु सबसे अधिक वह होली अत्यन्त अद्भुत होती है जो कि घोडेपर चढकर खेली जाती है । सरदार और सामंतगण कुंकुम और अबीर लेकर अपने घोडोंपर चढे हुए महलोंके मैदानमें फाग खेला करते हैं । कोई अत्यन्त चतुरताके साथ अपने घोडेको झपटाकर कुंकुमरूपी शस्त्रसे शत्रुको आक्रमण करता है, दूसरा आदमी भी अपने अंगको बचाकर उसके आक्रमणको व्यर्थ कर देता है। कहीं पर एक आदमीको पांच आदमी घेर रहे हैं, कहीं पर एक ही बलवान और चतुर सवार दूसरे पांच सवारोंपर अबीर कुंकुमकी बौछार करता हुआ शीघ्रतासे अपने घोडेको

भगाये हुए आता है। कहींपर एक साथ दश आदमी मिलकर परस्पर एक दूसरेको रंगसे सराबोर कर रहे हैं। पिचकारियोंके रंग और अबीर फेंकनेका ढंग सरदार लोगोंको बेरंग कर देता है।

जिस दिन इस होलीलीलाकी समाप्ति होती है उस दिन किलेके तीन मंजिले पर बराबर एक नगाडा बजा करता है। उस गम्भीर डफके शब्दको सुनते ही सरदार लोग अपनी २ सेना और सामन्तोंके साथ राणाजीके निकट पहुंचते हैं। राणाजी उन सबको साथ लिये हुए चौगान महलको चले जाते हैं। यह स्थान राजपूतोंका प्रधान रंगस्थल है। लीलायुद्ध अथवा कोई नई कौशलका अभिनय दिखानेके लिये राजपूत लोग इसी स्थानपर इकट्ठे हुआ करते हैं। इस स्थानके बीचमें एक छाया हुआ बडा आंगन है बडे २ खम्भोंपर यह बडी छत ठहरी हुई है, चौगानके चारों ओर किसी भांतिकी कोई दीवार नहीं है इस कारणसे चारों ओरसे खुला हुआ है। राणाजी सरदार और मुसाहिबोंके साथ भीतर प्रवेश करके आसनपर विराजमान होते हैं। सरदार चारों ओरसे उनको घेरकर बैठ जाते हैं, तदुपरान्त संकीर्तन प्रारम्भ होता है। अनेक प्रकारके बाजोंको बजाकर एकस्वरसे हरिनामके गीत गाये जाते हैं; अभिप्राय यह है कि उस समय चारों ओर आनन्द दिखाई दिया करता है। कोई गाता है, कोई बजाता है, कोई नाचता है। कोई २ बिकट स्वरसे शृंगार रसका अश्लील श्लोक पढकर बावली गतिसे नाचना आरम्भ करता है। आनन्दके उस प्रचण्ड प्रवाहमें राजा, प्रजा, सरदार, सिपाही सभी एकसे हो जाते हैं। मेवाडके प्राय: सभी रहनेवाले उस उत्सवमें मिल जाते हैं। चौगानके भीतर जिस प्रकारसे गीत और बाजे बजा करते हैं, वैसे ही उसके साथ २ होली-लीलाका प्रचण्ड आचरण हुआ करता है। फिर सब ही एक २ अद्भुत जीवकी मूर्ति धारण करके उस रंगभूमिसे बाहर हुआ करते हैं। उस समय वह जिसको सामने पाते हैं उसको अबीर गुलालसे बेहाल कर देते हैं। वह मनुष्य चाहें किसी धर्म्मके हों परन्तु होलीके मतवालोंसे किसी प्रकार नहीं बचने पाते।

फाल्गुन मासके अन्ततक फागोत्सव हुआ करता है। पिछले दिन राणाजी अपने प्यारे सरदारको "खाँडा नारियल" अर्थात् खड्ग और नारियलको बाँटा करते हैं, बहुधा यह खड्ग कागज अथवा काठके बनाये जाकर भांति२ से चित्रित किये जाते हैं। इसके बाद चांचरका लेबहार होता है। चांचर नगरके चारों ओर अग्निक्रीडा हुआ करती है। देशके सभी लोग अबीर और गुलालसे उस अग्नि क्रीडाके चारों ओर पिशाचोंके समान नृत्य करते फिरते हैं। सारी रात इस प्रकारसे खेलकूदमें बिताई जाती है। फिर जब तक चैत्रमासका पहिला दिन अरुणोदयके साथ प्रकाशित नहीं होता तबतक वह लोग भी अपने उत्सवको नहीं छोडते हैं। जिस समय सूर्य भगवान् मीनराशिमें प्रवेश करते हैं, राजपूतलोग उसी लग्नमें सन्ध्यावन्दन करके अपने कपडोंको बदलकर घरोंको लौट आते हैं। उस दिन सेवक लोग भी अपने २ प्रभुको अनेक प्रकारके द्रव्य उपहारमें दिया करते हैं।

शीतला षष्ठी ।—चैत्रमासके शुक्लपक्षमें छठके दिन यह उत्सव होता है । राजपूतोंका कथन है कि शीतलादेवी बच्चोंकी रक्षा करती है, राजपूतोंकी स्त्रियें अपने २ पुत्रोंकी मंगलकामनासे इस छठकी तिथिको शीतलादेवीके मंदिरमें आया करती हैं । उदयपुरकी उपत्यकाके एक पहाडी गिरिशिखरपर शीतलाजीका मंदिर बना हुआ है राजपूतोंकी स्त्रियां वहां पर भलीभांतिसे शीतलाजीदेवीकी पूजा करके अपने २ घरोंको लौट जाती हैं ।

मेवाडकी इस शुक्ला छठको टाडसाहबने और एक उत्सव देखा था । उत्सव राणा भीमसिंहकी जन्मतिथिको हुआ करता था । राजपूतलोगोंमें पुरानी रीति है कि वे अपने अपने जन्म दिनको एक २ उत्सव किया करते हैं । वर्षगांठका उत्सव तो अंगरेजोंमें भी हुआ करता है । जिस दिन अनंत कालसागरमें एक नवीन तरंग उठती है, जिस दिन दश महीनेकी कठोर पीडासे छुटकारा पाकर संसारमें पहुंच होती है, जिस दिन अनंत भूत और होनहारके मध्यमें नये उत्पन्न हुए जीवका वर्तमान रूप, एक संधि कर देता है, जीवनके उस श्रेष्ठ दिनको संसारके समस्त सभ्य लोग मानते आये हैं । देवताके निकट राणाजीका मंगल और दीर्घजीवनकी प्रार्थना करके मेवाडके रहनेवाले अनेक प्रकारकी भेंटें लेकरके उदयपुरके राजभवनमें आया करते हैं । यह उत्सव रनवासमें हुआ करता है । दूसरा कोई मनुष्य नहीं देखने पाता । इसी कारणसे उस दिन राणाजी नये वस्त्र और नये गहनोंसे भूषित होकर भांति २ के भोजन सेवन किया करते हैं । राजभवनके चारों ओर नाचना गाना हुआ करता है । रनवासकी स्त्रियां मंगल और संगीतको गाकर भगवानसे राणाजीका मंगल मनाती हैं ।

फूलडोल ।—महाराज राज्यचक्रवर्ती श्रीमान् विक्रमादित्यके चान्द्र सौर वर्षारंभके साथ ही मेवाडमें इस उत्सवका आरम्भ होता है । कार मासकी नवरात्रिमें जो अनुष्ठान हुआ करता है, अधिकांशसे फूलडोलमें भी वही विधि हुआ करती है । इस पर्वका पहिला अनुष्ठान खड्गपूजा है । राणाजीके महलमें यह पूजाविधि समाप्त होती है। परन्तु भगवती वासन्तीकी पूजाके लिये जो समस्त उत्सव हुआ करते हैं, उनके सामने खड्गपूजा तो साधारण ही ज्ञात होती है । वसंतकालके आगमनसे सारा संसार आनन्दमय ज्ञात हुआ करता है । आकाशसे निशानाथ अमृतकी वर्षा किया करते हैं, अंतरिक्षमें पवनदेव मधुरताका विकाश किया करते हैं ।

मानवलोकमें कुसुमकुन्तला वनदेवियाँ आनन्द सौरभको प्रगट किया करती हैं । सिद्धान्त यह है कि वसन्तकालमें जो कुछ है सब ही आनन्दमय है । इस समयमें राजपूतोंके घरमें आनन्द हुआ करता है । कमलके समान सुकुमार राजपूतवाला गण और कामदेव विजयी पुरुषगण फूलोंके गहनोंसे अपने अंगोंको सजाकर फुलवाडीमें था प्रमोदवनमें जाते हैं । वहांपर फूली हुई वेलों और फूलें वृक्षोंकी चिकनी छायाके नीचे बैठा हुआ वह जोडा भी फूल के ही समान जान पडता है मस्तकपर फूलोंका ही मुकुट, गलेमें

फूलोंका हार, यहांतक कि सब ही अंगोंके फूलोंका शृंगार होता है । स्त्रियां भी फूलोंसे सजी हुई वनदेवीसी जान पडती हैं । बस यही बहार होती है कि;—"फूलनको हार हिय, फूलनके कर्नफूल, फूलनको बेंदा सोहै, राजसुकुमारीके । फूलनके बाजूबंद, फूलनके झूलै झूलै, फूलें फलें भाग सदा, लाडली हमारीके ।" कोई २ तो ऊंचे २ वृक्षकी डालियोंमें झूला डालकर आनन्दके साथ झूलती हैं;—कोई मल्हार गाती है, कोई राजपूतबाला अपनी सहेलीको राधा बनाकर और वंशी धारण करके कन्हैयाजी बनती है, और दूसरी सखियोंके हाथ पकडे हुए रासमंडलकी लीला करके अपना जन्म सुफल करती है । निकट ही सुन्दर २ युवा पुरुष भी इस ही भांतिकी लीला किया करते हैं, उनमेंसे कोई कृष्ण, कोई राधा, चन्द्रावली बनकर नाचते गाते हुए व्रजभूमिके समान रंग और उमंग दिखलाते हैं, कोई कोई झूलता है, कोई झुलाता है, कोई आन बान तानके साथ गीतगोविन्दको गाता है;—कोई २ रास करता है । कोई राधा बनकर मान करता है, कोई कृष्ण बनकर "देहि पदपल्लवमुदारम्" कहकर मनाता है, जो पुरुष हिंडोला नहीं ले सकते वह वृक्षोंमें रस्सी डालकर अपनी अभिलाषाको पूर्ण किया करते हैं । इस प्रकारसे सब ही कोई अपने २ आनन्दमें मतवाले होकर झूमते रहते हैं ।

अन्नपूर्णा ।—जिस दिन भगवान् दिनानाथजी मेषराशिमें शुभागमन किया करते हैं, उस ही समय राजपूत भगवती अन्नपूर्णाजीकी पूजा करते हैं । सिंहासनपर आदिशक्ति अन्नपूर्णाजीकी मूर्ति विराजमान होती है । उनके बाँये हाथमें सुवर्णका थाल, और दहिनेमें दर्वी होती है । सन्मुख ही सर्वमंगलमय पुरुषप्रधान महादेवजी खडे हुए अन्नकी भिक्षा माँगते होते हैं । आद्याशक्ति प्रकृतिके सामने संसारका मंगल करनेके कारण पुरुष प्रधान स्वयं विश्वनाथजी खडे हैं । सर्व मंगलकारी इस युगलमूर्तिके देखनेसे किसके हृदयमें आनन्दके साथ २ भक्तिका उदय नहीं होता है ?

हरगौरीकी इस मूर्तिके सामने राजपूत थोडीसी जमीन खोदकर उसमें जौ बोया करते हैं । बनावटी तापकी सहायतासे बोये हुए बीज दो ही दिनमें अंकुरित हो जाते हैं । उस समय राजपूत बालागण एक दूसरेका हाथ पकडे हुए कलकंठसे गीत गाती हुई भगवती भवानीके आशीर्वादको मांगती हैं । तथा मूर्ति और उपजे हुए जौके खेतोंकी परिक्रमा करती हैं । तदुपरान्त उन उपजे हुए जवोंको उखाड कर अपने सम्बन्धी लोगोंमें बांट देती हैं । सब मनुष्य उनको अपनी २ पगाडि-योंमें रख लेते हैं । मेवाडका प्रत्येक पुरुष अपनी सामर्थ्यके अनुसार भगवतीकी पूजा करता है ।

भगवतीकी पूजा आरम्भ करनेसे पहिले राजपूतोंकी स्त्रियें देवीजीको वरण कर लेती हैं । तदनुसार जैसे ही उनकी सरोवर यात्राकी तइयारियें होती हैं, वैसे ही कुलकामि-नियें उनको वरण करनेका सामान करती हैं । राजपूतोंकी स्त्रियें वरण डला हाथमें लिये, सुन्दर २ गीत गाती हुई प्रतिमाकी प्रदक्षिणा करती हैं । बस यहीं पर वरण शेष हुआ । उस ही समयमें आकाश मंडलको विदारण करता हुआ नगाडेका शब्द होने लगता है ।

नगाडेका यह शब्द देवीकी यात्राका प्रचार करता है । उस घोर नगाडेके बजते ही एक-लिंगगढके शिखरसे तोप भी गंभीर कडकडाहटसे गर्ज उठी । तोपके शब्दको सुनते ही नगरवासी अनेक प्रकारके वस्त्रोंको धारण किये हुए पेशोला सरोवरके किनारे इकट्ठे होने लगे ।

पेशोला सरोवरका किनारा इस उत्सवके दिन अत्यन्त शोभायमान दिखाई देता है । चारों ओर किनारेकी भूमिके बीचमें जो ऊंचा चबूतरा बना हुआ है, उसके ऊपर समस्त सरदारोंके साथ खडे हुए राणाजी देवीके आनेकी बाट देखते हैं । ढक्के ढोल नगाडे इत्यादि अनेक प्रकारके बाजे गाजेके साथ जब वह प्रतिमा वहांपर आ जाती है, तब नगरवासी देवीजीका नौकारोहण देखनेके लिये सरोवरके किनारे पर उत्तमतासे खडे हो जाते हैं । बहुतसे आदमी ऊंचे २ महलों पर चढकर इस अपूर्व शोभाको निहारते हैं । उपरोक्त चबूतरेके सामने ही बडा घाट है; घाटकी उत्तम सीढियाँ संगमर-मरकी बनी हुई हैं । सरोवरमें अगणित नावें सीढियोंके निकट ही लगी रहती हैं, उस समय सरोवरके जिस किनारेको देखिये वहींपर लावण्यवती स्त्रियोंकी अगणित मूर्तियां दिखाई देती हैं । वह स्त्रियें अनेक प्रकारके रंगबिरंगे कपडे और रत्नजडित जेवर पहरे रहती हैं । जूडेमें फूलोंका हार भी अपनी न्यारी ही बहार दिखाता है । उनके चंद्रवदन फूले हुए कमलके समान मुस्कानयुक्त दिखाई देते हैं । आश्चर्यकी बात यह है कि उन स्त्रियोंमें पुरुष एक भी दिखाई नहीं देता । इस शुभलग्नमें पेशोलाके किनारेकी भूमि जो मनमोहन वेश धारण करती है, उसका वर्णन करना असंभव है । हम नहीं कह सकते कि इससे अधिक सुंदर और भी कोई चित्र कल्पनामें आ सकता है ? नगरके युवा वृद्ध बालक सब ही उत्तम वस्त्राभूषण पहिरकर उस स्थानमें आते हैं । सबके ही मुखपर प्रसन्नता, नेत्रोंमें आनन्द ज्योति और मुखमें संगीतध्वनि विराजमान रहती है । वसंतका आकाश साफ व निर्मल होता है, कहींपर मेघका लेशमात्र भी दिखाई नहीं देता । पेशोला सरोवर भी निर्मल और अचल दिखाई देता है । पानीमें वृक्ष, अटा अटारी और आका-शका अत्यन्त सुन्दर प्रतिबिम्ब दिखाई देता है । किनारेका लोकारण्य निबिडवनके साथ मिल जाता है । सरोवरके गर्भमें भी अगणित मनुष्य वनके साथ मिले हुए दिखाई देते हैं । मानो उस स्वच्छ जलराशिके भीतर एक नया राज्य उत्पन्न होता हुआ दिखाई देता है । मानो उस दूसरे राज्यके मनुष्य इस राज्यको न देख पाकर पृथ्वीको चरण दिखाते हुए चले जाते हैं । इस प्रकार क्रमशः मनुष्योंकी भीड बढने लगी । धीरे २ वह विराट लोकसमाज मानो अधिकतर सजीवसा दिखाई देने लगा । इतनी भीड होने-पर भी कहीं वादविवादका नाम तक नहीं था । सब ही भगवती गौरीके आगमनकी बाट देख रहे हैं । स्त्रियां परस्पर एक दूसरेका हाथ पकडे हुए ताल लय स्वरसे ऐसे गीत गाती हैं कि श्रवण करनेवाले मोहित होकर बारम्बार उनको धन्य २ कहते हैं । धीरे २ बाजोंका शब्द हुआ । शब्दको सुनते ही चबूतरके नीचे अपार भीड हो गई । उसके बीचमें ही देवीजीकी प्रतिमा दिखाई दी । देवीजोके वस्त्र पीले होते हैं वह सुवर्ण

और चांदीके गहने पहने हुए होती हैं। इधर उधर दो सहेली जो कि अत्यन्त सुन्दर हैं, देवीजीपर व्यजन कर रही हैं। प्रतिमाके सामने आते ही राणाजी सेनासहित खडे हो जाते हैं। तदनन्तर वाहक लोग उस प्रतिमाको सरोवरके किनारे ही रत्नासनपर विराजमान करते हैं। देवीजीके विराजमान होते ही सबने प्रणाम किया और राणाजी अपने सब इष्टमित्रोंको साथमें लेकर नावपर जा विराजे। स्त्रियां जो देवीजीके साथ २ बाजे बजाती हुई आती हैं, उनमें किसी पुरुषके प्रवेश करनेका अधिकार नहीं है। यदि कोई राजपूतकुलाङ्गार इस शिष्टाचारके विरुद्ध कार्य करता है, उसको तत्काल ही प्राणदंड दिया जाता है।

इस ओर देवीके नहानेकी तैयारियें हुई। शुभलग्नमें प्रतिमा काष्ठमंचसे उतारी जाकर जलमें न्हवाई गयी। जबतक वह सरोवरके किनारे रहती है तबतक उसको स्नान कराया जाता है। स्नान समाप्त होनेपर धूमधामके साथ ही प्रतिमा चली जाती है। उस समय राणाजी भी आप नावसे उतरकर अपने सरदार सामन्तोंके साथ घाटपर देवीका स्नान देखते हुए फिरते हैं। पेशोलाके किनारे उस दिन देवीकी बहुतसी प्रतिमा इस प्रकारसे स्नान करनेके लिये आती हैं। इस प्रकार दिनके बीतनेपर राणाजी नाव पर चढे हुए इधर उधर घूमने लगे। क्रमानुसार सन्ध्याकी निबिड छाया पेशोलीके वन और नीले जलमें गिरकर और भी घनी हो गई। तदुपरान्त शुक्ल सप्तमीकी शशिकला धीरे २ आकाशमें दिखाई दी। उस समय महाराणाजी राजभवनको चले। तीन दिन-तक देवीकी पूजा होनेपर चौथे दिन अग्निक्रीडाके साथ २ ही समस्त उत्सवका अंत होता है।

अशोकाष्टमी।–इस त्यौहारको सम्पूर्ण: राजपूत लोग विश्वमाता भगवतीकी पूजा किया करते हैं। राणाजी अपने सम्पूर्ण सरदार और सामन्तोंको साथ ले चौगान महलमें जाते तथा सारे दिन वहीं रहकर आनन्द किया करते हैं। आजके दिन समस्त राजपूत भगवती भवानीकी उपासना करते हैं।

रामनवमी।–अशोकाष्टमीका दूसरा दिन रामनवमीके नामसे प्रसिद्ध है। इस ही शुभ तिथिको पुनर्वसु नक्षत्रमें रघुकुल–कमल–दिवाकर भगवान् श्रीरामचन्द्रने जन्म लिया था। यही कारण है जो उनके वंशवाले इस दिनको अत्यन्त ही पवित्र समझते हैं। आजके दिन हाथी घोडे और अस्त्र शस्त्रोंकी पूजा हुआ करती है। राणाजी आजके दिन भी महा धूमधामसे चौगान महलमें जाते हैं। वहांपर अनेक प्रकारके आनन्द होते हैं। हिन्दूशास्त्रमें लिखा है कि इस दिन जो कोई श्रीरामचंद्रजीकी पूजाके लिये जो कुछ करता है उसको बहुत ही पुण्य होता है। विशेष करके जो उपवास और जागरण करके पितृलोगोंका तर्पण करते हैं, उनको ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है। यथा;–

" तस्मिन् दिने महापुण्ये राममुद्दिश्य भक्तितः॥
यत्किंचित् क्रियते कर्म तत्तदक्षयकारकम्॥ १॥

उपोषणं जागरणं पितृनुद्दिश्य तर्प्पणम् ॥
तस्मिन् दिने तु कर्तव्यं ब्रह्मप्राप्तिमभीप्सुभिः ॥ २ ॥ " अगस्त्यसंहिता ।

मदनत्रयोदशी ।–चैत्रशुक्ल त्रयोदशीके दिन सनातन धर्मावलम्बी लोग पंचबाणकी पूजा किया करते हैं । यद्यपि इससे पहिलेकी और पीछेकी द्वादशी तथा चतुर्दशीमें भी पूजा करनेकी व्यवस्था है, तथापि राजपूत इस ही दिवसको बहुत अच्छा समझते हैं । मधुमास व्यतीत हो गया है; धीरे २ ग्रीष्मकालकी तप्ती २ पवनके झकोरे आने लगे हैं । सुमनोलंकारयुक्त वनदेवीके फूलदार जूडेसे सुगन्धित पुष्प धीरे २ गिरते चले जाते हैं । परन्तु फूलरानी चमेली अबतक भी प्रकृतिके अंगसे अलग नहीं हुई है । राजपूतोंकी स्त्रियां इस ही चमेलीके हारोंको अपने जूडोंमें लपेटकर पंचबाणकी पूजा करती हैं । टाडसाहब कहते हैं कि जैसी भक्तिके साथ उदयपुरमें मीनकेतनकी पूजा होती है; भारतवर्षकी और कोई रमणी वैसी भक्तिसे कामदेवकी पूजा नहीं करती-राजपूतसुन्दरी इस प्रकारसे भगवान मन्मथकी स्तुति किया करती हैं; यथा—

" पुष्पधन्वन् ! नमस्तेऽस्तु नमस्ते मीनकेतन ! ॥
मुनीनां लोकपालानां धैर्यच्युतिकृते नमः ॥ १ ॥
माधवात्मज ! कन्दर्प ! शम्बरारे ! रतिप्रिय ! ॥
नमस्तुभ्यं जिताशेषभुवनाय मनोभवे ॥ २ ॥
आधयो मम नश्यन्तु व्याधयश्च शरीरजाः ॥
सम्पद्यतामभीष्टं मे सम्पदः सन्तु मे स्थिराः ॥ ३ ॥
नमोऽमायाय कामाय देवदेवस्य मूर्त्तये ॥
ब्रह्मविष्णुशिवेन्द्राणां मनःक्षोभकराय च ॥ ४ ॥"

सनातन धर्मावलम्बियोंको दृढ विश्वास है कि जो अनंगदेवकी स्तुति इस प्रकारसे करता है, उसको किसी प्रकारकी आधि व्याधि वा विपत्ति उपस्थित नहीं होती ।

नवगौरीपूजा ।–मदनोत्सवके साथ २ ही चैत्रमास समाप्त हो गया । इसके संग ही अतीतवर्ष भी कालरूपी अनंत समुद्रमें डूब गया । वैशाखमासकी कठोर तपनको माथेपर धारण करके संसारमें नये वर्षने दर्शन दिये । हिन्दूशास्त्रके मतानुसार वैशाख परम पवित्र मास है; परम श्रेष्ठ होनेके कारण भगवान् माधव उसे अत्यन्त ही स्नेह करते हैं । इस महीनेमें नियम करके जो माधवकी पूजा करते हैं; अन्तमें वह लोग विष्णुपदको प्राप्त होकर भगवान विष्णुजीके साथ विहार करते हैं । परन्तु राजपूतोंके यहाँ इस पवित्र मासमें केवल एक ही उत्सव हुआ करता है;– और वह भी अतिसाधारण उस उत्सवका नाम नवगौरीपूजा है । इस पूजाका आरम्भ होनेके पहिले मेवाडके सोलह सर्दार अपने २ घोडोंपर सवार होकर राणाजीके साथ पेशोलाके निकट बने हुए चबूतरेको जाते हैं उस समय उनका जाना

बडी धूमधामके साथ होता है। इस पात्रका नाम "नगाडेका असवार" है, वहांपर विधिविधानसे भगवती गौरीको स्थापन करके अनेक प्रकारके आनन्द उत्सव किया करते हैं। पहिले यह मेळा नहीं होता था। राणा भीमसिंहने सन् १८१७ ई० में आरम्भ किया था।

मेवाडके रहनेवाले इस उत्सवको सम्पूर्ण हिन्दूधर्मके विपरीत समझते हैं। जिस वर्षमें इस उत्सवका आरम्भ हुआ था उसी वर्ष पेशोलाका जल प्रचंड वेगसे उमड आया था जलके चढ आनेसे मेवाडकी बहुत ही हानि हुई थी। नगरके तिहाई रहनेवाले मर गये थे, धन और रत्नके नाश होनेका कुछ ठिकाना ही नहीं था। कहते हैं कि उसी विप्लवके दिन राणाजीका एक पुत्र भी अचानक मर गया था। कुसंस्कारसे ढके हुए नगरवासी जो चाहैं सो कहैं परन्तु राणाजी इन बातोंपर ध्यान नहीं देते। वह अपने सर्दारोंके साथ नावपर चढकर आनन्दपूर्वक पेशोला सरोवरकी छातीपर भ्रमण किया करते हैं। उस दिन राणाके सर्दार ही नावको चलाया करते हैं; वह नाव प्रचंड वेगसे चलाई जानेके कारण सरोवरके घने जलको खलबलाती हुई चारों ओरको दौडती है। इस प्रकार संध्यातक आनन्द विहार करके राणाजी सर्दारोंके साथ घरको लौटते हैं। इस नये उत्सवके समयमें भगवती गौरीकी पूजा बासन्ती अन्नपूर्णाके समान होती है।

सावित्रीव्रत।–ज्येष्ठकृष्ण चतुर्दशीको सावित्रीव्रत होता है इसमें जो स्त्रियें उपवास करके पतिव्रता सावित्रीकी पुण्य कथा सुनती हैं और उनकी पूजा करती हैं, विधवापनका कष्ट उन्हैं कभी नहीं भोगना पडता। मेवाडकी राजपूत स्त्रियां उस दिन एक नियत किये हुए बटके निकट जाकर विधि विधानसे सावित्रीकी पूजा करके उसकी पुण्यमय कथाको सुनती हैं।

रम्भातृतीया।–ज्येष्ठशुक्ल तृतीयाको स्त्रियें यह व्रत करती हैं। रम्भा भगवती गौरीकी दूसरी मूर्ति है। बारहों महीनेमें बारह मूर्तिसे हिन्दू लोग जो पूजते हैं यह मूर्ति भी उन्हींमेंसे एक है, राजपूत बालागण धनकी कामना करके खिली हुई शतपुष्पीके फूलसे देवीकी आराधना किया करती हैं।

अरण्यषष्ठी।–ज्येष्ठ महीनेके शुक्लपक्षमें देवसेना भगवती षष्ठी देवीकी जो पूजा हुआ करती है उसको ही अरण्यषष्ठी कहते हैं। बारह महीनेमें भगवती महामायाकी जो बारह मूर्त्तियें * प्रसूतियोंके द्वारा पूजी जाती हैं। यह भी उनमेंसे एक है

---

* "प्रसूतया द्वादशे मासि सम्पूज्यापत्यवृद्धये ॥
सुते जाते तथा षष्ठ्यां षष्ठी द्वादशरूपिणी ॥ १ ॥
वैशाखे चांदनी षष्ठी ज्येष्ठे चारण्यसंज्ञिता ॥
आषाढे कार्दमी ज्ञेया श्रावणे लुण्ठनी तथा॥ २ ॥
भाद्रे चपेटिनी ख्याता दुर्गाख्याश्वयुजे तथा॥
नाडाख्या कार्तिके मासि मार्गे मूलकरूपिणी ॥ ३ ॥
पौषे मास्यन्नरूपा च शीतला तपसि स्मृता ॥
गोरूपिणी फाल्गुने वै चैत्रेऽशोका प्रकीर्तिता ॥ ४ ॥" स्कन्दपुराणे।

इस पर्वके दिन पुत्रके चाहनेवाली अथवा पुत्रका मंगल चाहनेवाली हिन्दूललनागण वनमें प्रवेश करके बट या पीपलकी जडमें देवीकी पूजा किया करतीं हैं ।

रथयात्रा ।—आषाढ शुक्ल तृतीयाको भगवान् विष्णुजीकी रथयात्रा हुआ करती है । हिन्दूशास्त्रमें नारायणजीकी एक २ महीनेमें एक २ यात्रा कही है । इस प्रकारसे एक वर्षकी यह बारह यात्रा भिन्न २ नामोंसे प्रसिद्ध हैं * उनमेंसे रथयात्रा भी एक है इस उत्सवमें कुछ विशेष धूमधाम नहीं होती ।

पार्वतीतृतीया ।—श्रावणमासकी शुक्ल तृतीयाको राजपूत लोग पार्वतीतृतीयाका व्रत पालन करते हैं । कहते कि इसी दिन भगवती गौरीजी पुनर्वार भगवान भूतभावन महादेवजीसे मिलीं थीं । राजपूतगण इस पर्वको अत्यन्त पवित्र और अवश्य पालनीय समझते हैं, उनका विश्वास है कि इस दिन जो कोई स्त्री भगवती पार्वतीजीकी भक्तिसहित पूजा करती है वह उसके सर्व काम पूर्ण करके अन्त समयमें उसको वह अपनी सहेली बना लेती हैं । इसीलिये राजपूतबालागण भक्तिके साथ देवीकी पूजा करती हैं यद्यपि राजपूत लोग इस व्रतका पालन नहीं करते परन्तु उनके मतसे यह व्रत अत्यन्त पवित्र और पुण्यमय है । भूमि अधिकार करने अथवा छोडे हुए घरमें फिर आनेके विषयमें इस दिनको वह अत्यन्त ही अच्छा समझते हैं । अंगरेज लोगोंसे जब मेवाडवालोंकी संधि हुई थी तब दूरदेशोंको भागे हुए आदमी इसी पुण्य तिथिको अपने २ घर आये थे ।

इस दिन प्रत्येक राजपूत लाल रंगके वस्त्र पहिरते हैं । जयपुरके महाराज इस उत्सवके समय अपने सरदारोंको लालरंगका एक २ वस्त्र दिया करते हैं । उदयपुरकी अपेक्षा जयपुरमें यह व्रत कुछ विशेष धूमधामसे होता है । जयपुरकी स्त्रियें भगवती पार्वतीजीकी एक २ प्रतिमा बनाकर भलीभाँतिसे सजाय बाजे गाजेके साथ गीत गाती हुई उनको अपने कन्धोंपर ले जाती हैं । स्वयं महाराज और सरदारलोग उन स्त्रियोंके पीछे २ चला करते हैं । इस उत्सवके दिन समस्त राजपूत ही अपनी बेटियोंको एक २ लाल पोशाक देते हैं ।

नागपंचमी ।—श्रावणशुक्ल पंचमीको नागमाता भगवती मनसाकी पूजा हुआकरती है । जिस समय अत्यन्त वर्षाके होनेसे सर्पगण गाँवमें चले आते हैं, उस समय वह अधिकतासे दिखाई देते हैं । भगवती मनसा नागेश्वरी और विषहरी हैं । उक्त पंचमी तिथिमें उनकी पूजा करनेसे नागभय दूर होता है । इसी कारणसे समस्त हिन्दूलोग विधिविधानसे जगतगौरी मनसाकी पूजा किया करते हैं ।

राखी पूर्णिमा ।—श्रावणी पूर्णिमाको मेवाड़ी राजपूत लोग इस उत्सवको किया करते हैं । कहते हैं कि मुनिश्रेष्ठ दुर्वासाके उपदेशानुसार श्रवणने सब प्रकारके विघ्न और विपत्तिसे दूर रहनेके लिये अपने प्रकोष्ठमें एक वलय धारण किया था उसीको राजपूतलोग

---

* वैशाखमें चन्दन, ज्येष्ठमें स्नान, आषाढमें रथपर बैठना, श्रावणमें शयन, भाद्रमासमें करवट, आश्विनमें बांई करवट, कार्तिकमें उठना, अगहनमें प्रावरण, पौषमें पुष्यस्नान, माघमें शाल्योदन, फाल्गुनमें डोलारोहण और चैत्रमें मदनभंगकी यात्रा होती है । स्कन्दपुराणमें भगवान विष्णुजीकी यह बारह यात्रा लिखी हुई हैं ।

राखी कहा करते हैं। राजपूतोंके मतानुसार केवल धर्मयाजक और स्त्रियाँ ही इस बल-यको वितरण करसकती हैं और किसीको इनके बाँटनेका अधिकार नहीं है। राजपूतों-की स्त्रियां जिसको अपना भ्राता बनानेकी इच्छा करती हैं अपनी सखियोंके हाथ अथवा कुलपुरोहितोंके हाथ उसके पास राखी भेजती हैं। राखी पानेवाले भी विधिविधानसे अपनी बहनोंको यथाविधिसे दक्षिणा दिया करते हैं। मेवाडके इतिहासमें पहिले ही कहा जा चुका है कि राखीबंधन एक पवित्र और दृढसम्बन्ध है।

जन्माष्टमी।—भादों कृष्ण अष्टमीकी तिथि भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रका दिन है। समस्त हिन्दू ही इस दिनको अत्यन्त पवित्र समझते हैं। भादों वदी तीजको राणाजी अपने सरदार सामन्तोंके साथ चौगान महलको चले जाते हैं। उस तीजसे लेकर अष्टमी तक वहांपर बराबर श्रीकृष्णजीकी पूजा होती है, अष्टमीको प्रातःकालसे ही उदयपुरके घर २ में उत्सव आरम्भ होता है। सबके कपडे हल्दीसे रँगे होते हैं, सभी कन्हैयालालकी जय बोला करते हैं। मेवाडके घर २ में बाजेगाजे और आनन्दका शब्द होता रहता है।

इसके उपरान्त राणाजी एक पक्ष तक बराबर अपने पितरोंका तर्पण किया करते हैं। निसधारानामक नगरमें राणाके पितृपुरुषोंका एक समाधिमंदिर है, वहां पर जाकर राणाजी धूप, दीप, फूलोंके हार और कई प्रकारकी नैवेद्यसे उनकी पूजा किया करते हैं। मेवाडके प्रत्येक सरदारको ही इसी प्रकारसे तर्पण करना पडता है।

खड्गपूजा।—जिस उत्सवमें राजपूत लोग खड्गकी पूजा करते हैं उसका नाम नवरात्रोत्सव है। यह उत्सव राजपूतोंके समरदेवताकी पूजाका होता है, आश्विन शुक्ल पडिवासे जिस समय पूजा आरम्भ होती है उस समय राणाजी उपवास करते हैं। प्रातःकाल होते ही प्रातःकृत्यादि समाप्त करके खड्गपूजामें निमग्न होते हैं। गिह्लौट-कुलका प्रसिद्ध दुधारा खड्ग इस समय शस्त्रागारसे बाहर लाया जाता है फिर विधा-नसे उसकी पूजा होती है। तदनन्तर राणाजी अपने सरदार लोगोंके साथ उस पवित्र खड्गको कृष्णपौर नामक एक प्रसिद्ध तोरणद्वारमें ले जाते हैं। वहींपर भगवती अष्टभु-जाका मंदिर विराजमान है। मंदिर द्वारपर राजयोगी * अपने अनुगत महंत और दूसरे योगियोंके साथ पहुँचकर राणाजीके हाथसे उस खड्गको लेलेता है और देवीजीके सामने स्थापन करके अतिसावधानीसे उसकी रक्षा करता है। उसी दिन तीसरे प्रहर (दिन) को नगरके तीनों द्वारोंसे नगाडोंकी गंभीर ध्वनि होती है। नगाडोंकी इस संकेतध्वनिको सुनते ही राणा अपने सर्दार और सामंतोंको साथ लेकर महिषशालाकी ओर जाते हैं और उनमेंसे एक भैंसेको निकालकर रणवोडेके आगे बलि देते हैं। तदनन्तर दलसहित भगवती चतुर्भुजाके मंदिरमें आय राजयोगीके पास ही आसनपर बैठकर

---

* राजस्थानमें एक प्रकारके योगी हैं जो कि आवश्यकता पडनेपर तलवार बांधकर संग्राम भूमिमें जाते हैं। उन योगियोंके सरदारका नाम राजयोगी है।

उसको दो रुपये और एक नारियल देते हैं । तदनन्तर विधिविधानसे खड्गकी पूजा कर अपने २ घरको चले जाते हैं ।

दूसरा दिन ।–पहिले दिनके समान आज भी राणाजी चौगान महलको जाकर एक भैंसेको बलि देते हैं, उदयपुरके तोरणपालनामक द्वारपर भी उस दिन एक भैंसाको बलि दिया जाता है, सन्ध्याके समय राणाजी जगन्माताके मंदिरमें जाते हैं । वहां पर भी बहुतसे बकरे और भैंसे उच्छिन्न होते हैं ।

तीसरा दिन ।–दिनके पहिले भागमें राणाजीकी चौगान यात्रा;–वहांपर भैंसेका बलिदान । तदुपरान्त संध्याके समय भगवती हर्षिता माताके पवित्र मंदिरमें आकर राणाजी पाँच भैंसोंकी बलि देते हैं ।

चौथा दिन ।–आज भी चौगान महलमें जाकर राणाजी एक भैंसेकी बलि देते हैं तदनन्तर चतुर्भुजा देवीके मंदिरमें जाय देवीकी पूजा करनेके पीछे राजयोगीको मिष्टान्न और फूलोंका हार उपहार देते हैं । उसी मंदिरके सामने एक बडे खम्भेमें एक भैंसा बँधा रहता है, राणाजी उस यज्ञके पशुको अपने हाथसे संहार करते हैं । परन्तु इस कार्यमें राणाजीकी विशेष चतुराई देखी जाती है । मंदिरके निकट ही वह भैंसा खम्भेसे बँधा रहता है । राणाजी एक सिंहासनपर जिसको वाहक लोग अपने कन्धेपर उठाये हुए होते हैं–बैठकर हाथमें धनुष्य बाण ले अव्यर्थ तीरसे उस पशुका वध करते हैं ।

पाँचवाँ दिन ।–चौगान महलमें नियमित बलिदान करनेके पीछे राणाजीकी आज्ञासे वहां पर गजयुद्ध होता है । तदुपरान्त सब ही भगवती आशापूर्णाके मंदिरमें चले जाते हैं । वहांपर एक भैंसा और एक मेंढा उत्सर्ग करके चौहानकुलकी अधिष्ठात्री देवीका प्रसाद पाते हैं ।

छठा दिन ।–इस दिन भी राणाजी नियमानुसार चौगान महलको जाते हैं, परन्तु आज यहां पर किसी प्रकारके बलिकी तैयारी नहीं होती। देवीकी पूजा समाप्त करके वह कनफटे योगियोंके महंत भिखारीनाथसे मिलते हैं ।

सातवाँ दिन ।–चौगान महलकी नियमित क्रियाओंको समाप्त करके राणा साहब अश्वपालको आज्ञा देते हैं कि समस्त घोडोंको ले आवो, वह तत्काल समस्त घोडोंको स्नान कराय और सजायकर ले आता है । महलमें रात्रिके समय उस दिन होमकी धूम पड जाती है । एक मेंढे और एक भैंसेको भी उस दिन बलि दिया जाता है । उस दिन राणाजी कनफटे योगियोंको निमन्त्रण करके अनेक प्रकारके अन्न व्यंजन भोजन कराते हैं ।

आठवाँ दिन ।–महलमें होम होता है, संध्याके समय राणाजी कई एक मुख्य सरदारोंके साथ नगरके बाहर शमीनानामक गांवमें जाकर वहांके गोस्वामीसे साक्षात् करते हैं ।

नौवाँ दिन ।—आज चौगान अर्थात् और किसी स्थानमें नहीं जाना पडता । राणाजी की आज्ञासे अश्वपाल गण अस्तबलसे घोडोंको नहलानेके लिये सरोवरमें ले जाते हैं, स्नान समाप्त होनेपर फिर उनको सजधजके साथ महलमें लाते हैं । सरदार और सामन्तगण उस समय घोडोंकी पूजा किया करते हैं, अश्वपाललोगोंको राणाजीसे बहुत इनाम मिलता है । उसी दिन दुपहरकी तीन घडी पर एक साथ तीन बार नगाडा बजता है, उस समय राज्यके समस्त सरदार सामन्त और सिपाही लोग माताचलनामक पहाडमें जाकर उस प्रसिद्ध दुधारे खड्गको लेकर आते हैं । सब लोगोंके लौट आते ही राणाजी आसनसे उठकर विधिपूर्वक बंदना करनेके पीछे राजयोगीके हाथसे उसको ग्रहण करते हैं । अनन्तर उन योगिराजको राणाजीकी ओरसे कुछ पुरस्कार मिलता है । जो महन्त ५ दिन तक व्रत करके उस खड्गकी पूजा करता है, राणाजी काक (लोटा) पूर्ण करके उसको अशर्फी और रुपये देते हैं फिर समस्त योगियोंको भलीभांतिसे भोजन कराया जाता है *

दशवाँ दिन ।—भारतके समस्त सनातन धर्मावलम्बी इस दशमी तिथिकी महिमाको जानते हैं । कहते हैं कि भगवान् श्रीरामचन्द्रजीने भगवती सीताजीका उद्धार करनेके लिये इसी पवित्र तिथिको दुर्धर्ष लंकानाथके विरुद्ध यात्रा की थी । संग्रामके कार्योंमें राजपूत लोग इस दिनको बहुत अच्छा समझते हैं । इस दिन प्रभात होते ही राणाजी अपने दीक्षा गुरुसे मिलते हैं । इस ओर चौगान अथवा माताचलके शिखर पर अनेक प्रकारके आसन बिछाये जाते हैं । वहां पर समस्त गोलंदाजसेना सजी हुई खडी रहती है । सन्ध्याके समय समस्त सरदार और सामन्तोंको साथ लिये हुए वहां पहुँचकर सबसे पहिले कैजरीनामक किसी एक वृक्षकी पूजा करते हैं और तदुपरान्त पींजरेमें फसे हुए नीलकंठ पक्षीको उडाकर छूटती हुई तोपोंके बीचमें होकर अपने स्थानोंमें चले जाते हैं ।

ग्यारहवां दिन ।—आज सामरिक व्यापार कुछ अधिकतासे होता है । प्रातःकाल ही राणाजी अपनी राजकीय सेनाको साथ लेकर माताचल गिरिकूटकी ओर जाते हैं । सेनाके पीछे पीछे धोसा बजता जाता है । समयानुसार उस मेरुशृंगपर पहुँचते ही राजपूत वीरगण अपने राणाजीको अनेक प्रकार करतब दिखाया करते हैं । कोई तोप छोडता है, कोई घोडेको चलाता है, और कोई शूल या भालेको चला कर राणाजीको प्रसन्न करता है । यह शोभा देखते ही बनती है । यद्यपि शिशोदियाकुलकी पडतीके साथ २ इन उत्सवोंकी शोभा भी बहुत घटगयी है तथापि इनकी मनोहरता और सुन्दरता आजतक भी घटीहुई दिखाई नहीं देती । इन घोडोंका शृंगार और नाच तथा सरदारोंका प्रफुल्लित वदन, मनोहर वेष; अश्व व हथियारोंका चलाना,—और आस्फालन देखकर प्रत्येक दर्शकका हृदय आनन्दमें मग्न हो जाता है । इसके ऊपर जब

* इसी दिन राजपूत कुमारगण अपने पिताकी पूजा करते हैं, इन दिनोंमें समस्त राजपूत बहुधा कन्द मूल फल ही खाते हैं ।

शरद्की तीक्ष्ण किरणोंसे उनकी दमकती हुई संगीन, नंगी तलवार और भूमिमें सैकडों सूर्य प्रकाशमान होकर आज सूर्यवंशीय महाराणाजीका लीलाभिनय देखते हैं। इस रंगस्थलके उस अपूर्व सौन्दर्य व गौरवको देखकर मेवाडका वह पाहिला गौरव याद आता है ! तत्काल ही वीरकेशरी संग्रामसिंह व प्रतापसिंहकी अद्भुत वीरता देवताओंके समान कार्य जीवित भावसे स्मृतिके मार्गपर विस्तारित होकर हृदयको वर्त्तमान मेवाडकी निर्जीव अवस्थासे उस अतीव गौरवमय राज्यमें ले जाते हैं। परन्तु केवल क्षणभरके लिये; दूसरे ही क्षणमें स्मृति उदित होकर मेवाडके वर्त्तमान शोचनीय चित्रको मानसिक नेत्रोंके सामने प्रगट करदेती है;—हृदय व्याकुल हो जाता है; वह मनमोहन चित्र अन्तःकरणसे न जाने कहांको बिलाजाते हैं।

आजके शुभ दिनमें प्रत्येक व्यौपारी अपनी २ दूकानको बंदनवार और फूलोंके हारसे सजाता है उन बाजारोंकी गलियोंके सामने मूल्यवान वस्त्रका एक एक परदा पडा होता है। डेरोंके सामने एक तोरणद्वार बनाया जाता है जो कि फूलोंके गजरों और हारोंसे सजा हुआ होता है। राणाजी उस गिरिकूटसे उतर कर उस तोरणको स्पर्श करके उसकी प्रदक्षिणा करते हैं, उत्सवके समयमें वहांपर जितने राजपूत उपस्थित होते हैं, वह सब ही राणाजीको भांति २ की भेंट और नजरें देते हैं। उस समय तोपें बराबर छूटती रहती हैं, और बन्दी तथा भाटगण मेवाडके व्यतीत वीरोंकी गुणावलीका गान करते हुए राणाजीकी स्तुति किया करते हैं उस दिन बहुतसे नये खरीदे हुए घोडे रंगभूमिमें लाये जाते हैं।सेनासहित राणाजी जैसे गिरिकूटसे उतरना आरम्भ करते हैं, वैसे ही अश्वपालगण उन नवीन घोडोंके नामोंका बखान किया करते हैं। उन घोडोंमें किसीका नाम मानक किसीका नाम बाजीबाज होता है। इस प्रकार नये २ नाम सुनते हुए राणाजी राजभवनमें आकर सरदारोंको उचित पुरस्कार देते हैं। उस दिन जो पोशाक राणाजी पहरते हैं, उत्सवके अन्तमें कोटारिओंका चौहान सरदार उसको प्राप्त कर लेता है। जिस दिन दुराचारी यवनवीरके अत्याचारसे उदयसिंहकी जानके लाले पडे थे, जिस दिन परम विश्वासिनी धात्री पन्नाने अपने प्राणप्यारे पुत्रके हृदयरुधिरसे उस पिशाचकी प्यास बुझाकर अनाथ राजकुमारके जीवनकी रक्षा की थी, उस ही दिन जिस चौहान सरदारने राणा उदयसिंह और पन्नाको अपने घरमें रक्खा था, वर्तमान कोटारियों सरदार उसी चौहान सरदारका वंशधर है। राणाजी उस ही राजभक्तिके बदलेमें उसके बंशवालोंको अपनी पोशाक दिया करते हैं।

गणेशपूजा—प्रत्येक सनातन धर्मावलम्बी सिद्धदाता गणेशजीकी पूजा करते हैं। कोई भी राजपूत गणेशजीका नाम लिये विना किसी कार्यको आरम्भ नहीं करता है। वारिलोग भी उन्हीको मनाते हैं, बनिये भी अपने बहीखातेमें पृष्ठके ऊपर श्रीगणेशाय नमः लिखते हैं। स्थान या मंदिरादि बनानेके समय भी उनकी प्रतिमाको भीतमें बनवा लेते हैं। राजस्थानमें राजपूतोंका ऐसा कोई घर नहीं दिखाई देता जिसके द्वारकी चौखटपर अथवा किवाडमें गणेशजीकी मूर्ति नहीं बनी होती। बहुतसे हिन्दू नगरोंमें

गणेशपौर नामक एक २ द्वार भी गणेशजीके नामपर बनाया जाता है। उदयपुरमें भी गणेशद्वारनामक एक तोरणद्वार है। राजस्थानके प्रायः प्रत्येक शैलकूटपर चढनेके समय मार्गके आरम्भमें ही गणेशजीका एक एक मंदिर दिखलाई देता है। गणेशजीकी पूजाके साथ उनका प्रिय वाहन चूहा भी पूजा जाता है।

गणेशजीकी पूजाका वर्णन करते हुए, हम उस देवीके दिये हुए दुधारे खड्गका वृत्तांत लिखना भूल गये कि जो राजपूतोंका प्रधान अवलम्ब है और उनके वीर्यका प्रधान परिचायक है। इस खड्ग विषयके राजपूतोंमें अनेक प्रकारके गूढ व अद्भुत वृत्तान्त पाये जाते हैं। राजपूतोंका विश्वास है कि भगवती चतुर्भुजाने विश्वकर्मासे निर्माण कराकर यह खड्ग बाप्पारावलको दिया था। उस ही दिनसे गिह्लौटकुलके राजकुमारोंने दीर्घकालतक उस खड्गको अस्थावर सम्पत्तिके समान भोग किया। अनन्तर जिस दिन दुर्धर्ष तातारीवीर अलाउद्दीनने यमदूतके समान चित्तौरपर चढाई की; जिस दिन चित्तौरके बारह राजकुमारोंने यवनग्राससे मातृभूमिकी रक्षा करनेके लिये संग्रामभूमिमें अपने प्राण दे दिये। जिस दिन सतीशिरोमणि रानी पद्मिनीजी अगणित राजपूत ललनाओंको संग लेकर चितामें जलगई, उसही दिनसे लेकर कुछकालतक उस खड्गका आधिकार गिह्लौटकुलके हाथसे निकल गया। इतिहासमें पहिले ही वर्णन किया जा चुका है कि अलाउद्दीनने चित्तौरको विजय करते ही मालदेव नामक एक शोनगडे सरदारको वहांका राज्य दे दिया। चित्तौरको पाते ही मालदेवने चित्तौर के रत्नभांडारको अपने अधिकारमें करना चाहा। उसको विश्वास था कि यहां पर जमीनके नीचे सुरंगें बनी हुई हैं, उनमें ही चित्तौरकी पतिव्रता नारियोंने अपने प्राण दिये हैं; इस कारण निश्चय ही वहां बहुतसे रत्न पडे होंगे। अतएव उसने भयंकर गुफामें प्रवेश करनेका निश्चय कर लिया। यद्यपि उसके मनमें गुफाओंके सम्बन्धमें बहुतसे कुसंस्कार थे तथापि लोभने उसके भयको मिटा दिया। बहुतसे आदमी गुफाओंकी डरावनी बातें कहकर उसको डराने लगे। किसीने कहा कि एक भयंकर अजगर सुरंगकी रक्षा करता है; किसीने कहा कि एक विकट प्रेतिनी सुरंगमेंके चारों ओर घूमती रहती है। किसीने भय दिखाया कि जो कोई इस भयंकर सुरंगमें प्रवेश करता है वह फिर जीता हुआ नहीं निकलता। मालदेव इन बातोंको सुनकर किंचित् भी भीत नहीं हुआ उसकी प्रतिज्ञा अटल और अचल रही। उसने गुफामें प्रवेश करनेका दृढ विचार कर लिया। भट्टग्रन्थोंमें इसका कोई वृत्तान्त नहीं लिखा कि मालदेवने कौनसे मार्गसे सुरंगमें प्रवेश किया था।

उस गंभीर अन्धकारयुक्त सुरंगमें प्रवेश करते हुए साहसी मालदेवकी प्राणवायु क्रमशः रुकने लगी। प्रत्येक मुहूर्तमें प्राणनाशकी शंका होनेसे ऐसी विपत्तिसे भी वह वीर नहीं घबडाया। अपनी पैरके आहटसे वह स्वयं ही विचलित और चकित होने लगा। परन्तु डरका नामतक नहीं था। केवल साहसपर ही भरोसा रखकर और अनुमानका ही आश्रय लिये हुए ठुकराता हुआ एक ओरको बढने लगा। कुछ दूर चलने

पर सुरंगके बीचमें एक प्रकारका निबिड नीला प्रकाश-उसको दिखाई दिया । मालदेवका साहस दृढ हुआ, हृदय प्रफुल्ल हो आया । उसने इस बातका विचार नहीं किया कि यह विकट प्रकाश किसी भूत प्रेत पिशाच अथवा सर्पद्वारा तो उत्पन्न नहीं हुआ है; बरन दूने साहसके साथ निडर हृदयसे उस प्रकाशकी ओर बढता गया । इस प्रकार आगे चलनेपर कुछ ही दूरतक एकसाथ हकाबका सा होकर खडा होगया । सम्पूर्ण अंग शिहरित हुआ; हृदय बारम्बार धडकने लगा, रोम २ खडा होगया; उसने देखा कि एक बडे भारी चूल्हेके भीतर नीली और लाल आग जलती है उस ही अग्निके प्रकाशसे सुरंगमें कुछ देर तक उजाला था । बीभत्स वेष धारिणी कई एक नागिनी उस बडे कडाहको चारों ओरसे घेरे हुए विकट गंभीर शब्दसे मंत्र पढती हुई ताण्डव नृत्य करतीं और एक एक बार अपनी उस मायामयी लकडीसे जो उनके हाथोंमें थीं उस कडाहको स्पर्श कर रही हैं । मालदेव इस अद्भुत दृश्यको देखकर कुछदेर भौंचक सा खडा रहा । क्या करूं किस प्रकारसे मंगल होगा, इन बातोंका वह कुछ भी निश्चय न कर सका । उसका पिछला पद-शब्द उस गंभीर मन्त्रोच्चारण और नृत्यके शब्दमें जब लीन हो गया तब नागिनियोंने स्थिर भावसे खडे होकर उसकी ओर देखा । अंगारके समान उनके लाल २ नेत्र और विकट मुखको देखकर मालदेवका हृदय भयभीत हुआ । परन्तु मुखपर भयके कुछ भी चिह्न न थे । वह स्थिरभावसे खडा हो गया । तब उन भयंकर भुजंगिनियोंने उसके आनेका कारण पूछा । शोनगडे सरदारने धीरे २ उत्तर दिया कि " यक्ष, रक्ष, गन्धर्व, किन्नर अथवा नाग आपलोग जो कोई भी हों मैं आपके चरणोंमें प्रणाम करता हूं । आपकी गंभीर शान्तिको भंग करने अथवा आपके गूढ स्थानका भेद खोलनेके लिये मैं यहांपर नहीं आया हूं । गिल्हौटकुलके अधीश्वर वीरवर बाप्पारावलको जो दैवी खड्ग चतुर्भुजा देवीने दिया था, अबतक वह चित्तौरमें ही था, परन्तु गत यवनविप्लवके समयसे न जाने कहां चला गया सो ज्ञात नहीं । अतएव निवेदन यह है कि यदि आपलोगोंने उसको रख लिया हो तो मुझको दे दीजिये" भुजंगनियोंने मालदेवका निडरपन देखनेके लिये उस कडाहका ढकना खोल दिया । ढकना खुलते ही मालदेवको बीभत्स दृश्य दिखाई दिया । मालदेवने देखा कि उस कडाहमें अनेक प्रकारके जन्तुओंके अंग खण्ड २ होकर पडे हुए हैं । उन अंगोंके बीचमेंसे एक बच्चेकी कोमल बांह उसको दिखाई दी । मालदेवने चकित होकर विचार किया कि यह बालक कौन है ? कुछ देर पीछे उन नागिनियोंने रक्त मांस व चर्बीसे मिले हुए उन अंग प्रत्यंगोंको एक पात्रमें रखकर मालदेवके सामने ला धरे और उसको भोजन करनेके लिये संकेत किया । पिशाचोंके खाने योग्य उन दुर्गन्धमय पदार्थोंके खानेमें मालदेवने कुछ भी सोच विचार न किया; उसने तत्काल खा पीकर रीता पात्र नागिनियोंको लौटा दिया । इस कठोर और निडर कार्यसे यह भलीभाँति प्रमाणित हो गया कि उस देवीके दिये हुए खड्गको भलीभाँतिसे मालदेव

व्यवहार करनेके योग्य है। नागिनियोंने प्रसन्न होकर वह खड्ग दे दिया । मालदेव भी उस खड्गको लिये:हुए अपनी विजयका होना समझकर विकट सुरंगके बाहर आया।*

शौनगडे सर्दारकी बेटीसे विवाह करके जिस दिन हमीरको चित्तौरका सिंहासन मिला था, उस ही दिन यह खड्ग भी मिला था, किसी भट्टग्रन्थमें ऐसा लेख है राणा हमीरने ही भगवती चारणीदेवीकी पूजा करके फिर इस खड्गको पाया था।

लक्ष्मीपूजा।--कार्तिकी शुक्ला पूर्णिमाको परम श्रद्धा भक्तिके साथ राजपूत लोग सौभाग्यदायिनी लक्ष्मीजीकी पूजा करते हैं । इस उत्सवके समय भी बडी धूम-धाम होती है।

कार्तिक वदी ३० अमावस्याको मेवाडमें दीवाळी (दीवाली, दीपावली, दीपदान) का उत्सव हुआ करता है। इस दिनकी रात्रिको समस्त राजस्थानमें रोशनी होती है। नगर, गाँव और प्रत्येक छावनीमें ऐसी रोशनी होती है कि रातका भी दिन ही मालूम होता है। राजासे लेकर निर्धन भिखारी तक भी सामर्थ्यके अनुसार अपने २ स्थानपर दीपक जलाते हैं। मेवाडके सब ही लोग इस उत्सवके दिन नैवेद्य लेकर लक्ष्मीजीके मंदिरमें जाते हैं। राणाजी भी आज अपने प्रधान मन्त्रीके सन्मुख बैठकर भोजन करते हैं; और वह मन्त्री उस दीप वृक्षके अग्रभागमें कि जिसको राणाजी स्थापित करते हैं,—तेल डालता रहता है। राणाजीके इष्ट मित्र और सम्बन्धी ऐसा ही करते हैं । जिस अक्षक्रीडा (जुआ) को त्रिकालदर्शी भगवान मनुजीने अत्यन्त अनिष्टकर समझके बर्ज दिया है, राजपूत लोग दिवालीके उत्सवमें उस ही जुएको खेला करते हैं । आजके दिन जिसकी जीत होती है, उसका सम्पूर्ण वर्ष आनन्दसे व्यतीत होता है; ऐसा उन सबका विश्वास है ।

इसके आगे दोयजको भइयादोयज (भ्रातृद्वितीया) का उत्सव होता है। कहते हैं कि सूर्यकी पुत्री यमुनाने इस तिथिको अपने भ्राता यमको नेवता देकर अपने घरपर भोजन कराया था । इसही कारणसे हिन्दूशास्त्रमें भ्रातृप्रेमका पवित्र: प्रकाश करनेके लिये यह दिन श्रेष्ठ माना गया है। शास्त्रग्रन्थोंमें लिखा है कि जो कोई स्त्री कार्तिक शुक्ल २ को चन्दन व ताम्बूलआदि द्वारा अर्चनाकरके अपने घरपर भोजन कराती है विधवापनके कष्टको वह कभी नहीं भोगती और उसका भ्राता भी दीर्घायुको प्राप्त करके अंतसमय यमराजके दंडसे छुटकारा पा जाता है।

---

* मालदेवने जिस प्रकार इस खड्गको उद्धार किया था, उस ही भाँतिसे जिन स्त्रीहारका त्रिशृंगनामक खड्ग भी उद्धार हुआ था। राजपूत जो प्राचीन वीरगण खड्गको प्रधान सहायक समझते थे । इतिहासमें भलीभाँतिसे इसका समस्त प्रमाण पाया जाता है। अभी जिस स्त्रीका नाम लिखा गया. यह एक प्रसिद्ध जितवीरकी लडकी थी। पिताकी मृत्युके उपरान्त अपने पवित्र खड्गको न देखपाकर उसने अनेक प्रकारकी मन्त्रीकी सहायतासे उसका उद्धार किया था। इसका वर्णन "हर्वराका शाग" नामक आइसलेण्डके इतिहासमें पाया जाता है।

इस ही तिथिको राजपूतगण गोपार्वणको आरंभ करते हैं। संध्याके समय जब गायें गोधूलिको उडाती हुई अपने २ घरको आती हैं, उस ही समय उनकी पूजा होती है।

अन्नकूट ।--भगवान् श्रीकृष्णजीकी पूजाके लिये राजस्थानमें जितने उत्सव होते हैं, उन सबमें अन्नकूट प्रधान है। नाथद्वारेमें यह उत्सव बडी धूमधामके साथ होता है । भारतवर्षके अनेक स्थानोंसे वैष्णव, साधु संत और कृष्णभक्तगण आकर इस उत्सवकी शोभाको बढाते हैं। राजस्थानके भिन्न २ नगरोंमें भगवान् विष्णुकी जो सात मूर्तियें विराजमान हैं, इस उत्सवके आरम्भमें ही वह समस्त नाथद्वारेमें जाकर विधिपूर्वक पूजी जाती हैं। उन सात मूर्तियोंको संतुष्ट करनेके लिये नाथजीके मंदिरके आँगनमें अन्नव्यंजनकी राशियोंके कूट लगाये जाते हैं। राजपूतजातिके गौरवकालमें यह अन्नकूट महोत्सव अत्यन्त ही धूमधामके साथ होता था । जिस समय अनर्थकारी युद्धोंकी दिग्दाही आगसे राजस्थान भस्म नहीं हुआ था; जिस समय विष्णुपरायण राजपूतगण अपने महाराणाओंके ऊंचे गौरवसे गौरवान्वित होकर परमानंदसे परमेश्वरके चरणोंमें भक्तिपूर्वक कुसुमांजलिको दे सकते थे, राजस्थानके उस सौभाग्य दिनमें अन्नकूट उत्सवके समय राजपूतोंके चार प्रधान राजा नाथद्वारेमें आकर अमूल्य मणिरत्न दान करते हुए राजपूतोंके गौरवका प्रकाशमान परिचय देते थे। मेवाडके राणा अरिसिंह (उरसी) मारवाडके राजा विजयसिंह, बीकानेरके महाराजा गजसिंह और किशनगढके महाराजा बहादुरसिंह यह चारों महाराज अपनी २ शक्तिके अनुसार एक एक रत्नालंकार दान करके भगवानकी प्रसन्नताको प्राप्त करते थे । यदि महाराजाओंकी बात छोडकर साधारण अवस्थावाली राजपूतबालाओंके दानका वर्णन श्रवण करते हैं तो बहुत ही आश्चर्य होता है । कहते हैं कि ऊपर कहे हुए चारों महाराजाओंके आनेके समयमें सूरतकी एक विधवास्त्रीने ७००००) रुपये ठाकुरजीको चढाये थे । यद्यपि आज राजस्थानकी शोचनीय दुरावस्थाके समयमें ऐसा विवरण असम्भव समझा जायगा । परन्तु उस समय कि जब राजस्थानका गौरव उन्नतिके शिखरपर पहुँच चुका था, राजपूतलोग देवसेवामें इस प्रकार और कभी इससे भी अधिक धन उत्सर्ग कर देते थे, इस बातका स्पष्ट प्रमाण मेवाडके बहुतसे स्थानोंमें पाया जाता है।

यहांपर प्रयोजन समझकर भगवान श्रीकृष्णजीकी पूर्वोक्त सात मूर्तियोंका वृत्तान्त लिखा जाता है। प्रसिद्ध वैष्णव वल्लभाचार्यजी महाराजने इन सात मूर्तियोंको एकत्र करके इन महान अन्नकूट उत्सवकी प्रतिष्ठा की थी। बहुत दिनतक यह सातों मूर्तियें एक ही मन्दिरमें रक्खी हुई थीं, पीछे श्रीमान् वल्लभाचार्यके पोते महाराज गिरिधारीजीने अपने सातपुत्रोंको श्रीभगवानजीके यह सात रूप बाँट दिये । उन सात पुत्रोंके वंशधरगण आजतक प्रधान पुरोहित बनेहुए सात देवमूर्तिके मन्दिरोंमें विराजमान हैं।

भगवानजीके सात रूपोंका नाम, आधुनिक वासस्थानका नाम तथा अपरापर प्रयोजनीय विषय नीचे लिखे जाते हैं।

	श्रीनाथजी	नाथद्वारा।
१	नवनीत	नाथद्वारा।
२	मथुरानाथ	कोटा।
३	द्वारकानाथ	कंकारावली [काकरौली]
४	गोकुलनाथ वा गोकुलचन्द्रमा ...	जयपुर।
५	यदुनाथ	सूरत।
६	वेतालनाथ	कोटा।
७	मदनमोहन	जयपुर।

भगवान श्रीनाथजीको सर्वप्रधान होनेके कारण इन सातमूर्तियोंमें नहीं मिलाया है। नवनीतजीका मन्दिर नाथजीके निकट ही बना हुआ है। इनका दूसरा बालमुकुन्द है इन बालकमूर्तिके दहिने हाथमें लड्डू रक्खा हुआ है। प्राचीन कालसे श्रीबालमुकुन्दजी महाराज गृह–देवताओंमें गिने जाते हैं। मुसलमानोंके द्वारा मंदिर तोडे जानेपर भगवान मुकुन्दजी बहुत दिनोंतक यमुनाजलमें स्थित रहे। एक समय श्रीवल्लभाचार्यजीने स्नान करनेके समय उनको पाया। उन्होंने इस मूर्तिको अपने स्थानपर लायकर गृहदेवताके मन्दिरमें स्थापन किया और भक्तिके साथ उनकी पूजा करने लगे। उस दिनसे श्रीभगवानजी नवनीतवल्लभके कुलदेवता होकर आजतक उस ही भाँतिसे पूजा ले रहे हैं। आज भी उन प्रधान वैष्णवाचार्यकी सन्तान परम भक्तिके साथ बालमुकुन्दजीकी पूजा करती है। भगवान श्रीकृष्णजीकी दूसरी मूर्ति मेवाडके अन्तर्गत कामनरनगरमें विराजमान थी परन्तु किसी कारणवश वहांसे चलकर इस समय कोटेमें स्थित है।

वल्लभाचार्यके तीसरे परपोते बालकृष्णको भगवान श्रीकृष्णजीकी द्वारकानाथनामक मूर्ति मिली थी। कहते हैं कि सत्ययुगमें अमरिक नामक एक राजाने सूर्यवंशमें जन्म लेकर एक विष्णुमूर्तिकी पूजा की थी; बर्तमान द्वारकानाथकी यह मूर्ति उसकी प्राचीन मूर्तिके अनुसार बनाई गई है। चौथी मूर्ति गोकुल चन्द्रमाका भी ऐसा ही वर्णन पाया जाता है; सुनते हैं कि वल्लभाचार्यजीको यह मूर्ति यमुनातीरके किसी बिलमें मिली थी; उन्होंने अपने सालेको दे दी। तदनन्तर गोकुलचन्द्रमाजी, गोपजीवन गोकुलपुरीमें प्रतिष्ठित हुए। यद्यपि वर्तमान समयमें वह जयपुरके मध्यमें विराजमान हैं तथापि गोकुलवासी भक्तजन प्रतिदिन उनके पुराने मन्दिरमें जाकर विधिविधानसे उनकी पूजा करते हैं।

भगवानजीकी पंचम मूर्ति यदुनाथजी पहिले मथुराके निकट महावन स्थानमें विराजमान थी। महाबली महम्मद गजनबीने जिस समय मथुरानगरीको उजाड किया उस समय यदुनाथजी सूरतनगरमें लाए गए। छठी मूर्ति;–बेतालनाथ या पाण्डुरंगजी संवत् १५७२ वै० में गंगाजीमें पाये गये थे। सातवीं मदनमोहनजीकी मूर्तिकी पूजा आजतक एक स्त्री ही करती है।

जिस अन्नकूट उत्सवका वर्णन करते २ हम भगवान श्रीकृष्णजीकी सात मूर्तियोंका वर्णन करने लगे थे, उसकी दो चार बातें अभी और लिखनेसे रह गई हैं। अन्नकूटके दिन राजाजी दिनभर आनन्द मनाते हैं। उदयपुरके प्राचीन रंगस्थल चौगान नामक स्थानमें जाकर मैदानमें घुडदौड और गजयुद्ध इत्यादि खेल देखा करते हैं,--संध्याके समय आतिशबाजी छूटती है और अन्नकूटका उत्सव समाप्त होता है।

मकरसंक्रान्ति।--टाडसाहबने भ्रमसे कार्तिकी विष्णुपदी संक्रान्ति मकरकी संक्रान्ति लिखी है, अस्तु! इस बातको सम्पूर्ण सनातन धर्मावलम्बी जानते हैं कि कार्तिकमासकी संक्रान्तिका दिन परम पवित्र है। इस दिन भी राणाजी अपने सरदार और सामन्तोंको साथ लेकर चौगाननामक प्रासादमें जाते हैं सरदारोंके साथ घोडेपर चढकर उस दिन राणाजी गोलकनामक खेल करते हैं।

मार्गशिर और पौष मासमें ऐसा कोई विशेष पर्व नहीं होता। यद्यपि तिथि और नक्षत्रोंका संयोग होनेसे इन दो महीनोंमें भी दो एक दिन पवित्र गिने जाते हैं; तथापि राजपूतलोग उनको विशेष त्यौहार नहीं मानते। केवल मार्गशिर शुक्लसप्तमीको उनका एक उत्सव होता है। इस तिथिको वह मित्रसप्तमी कहते हैं। भगवान् दिवाकरजी इस ही तिथिको अपनी माता अदितिके गर्भसे उत्पन्न हुए थे। इस ही कारणसे सूर्यवंशीय राणाजी इस दिनको पवित्र मानते हैं।

राजपूत स्वाधीनताकी लीलाभूमि, वीरता और महानताकी साधन पीठ, हिन्दूगौरवकी खानि, वीरमाता मेवाडभूमिमें जितने त्यौहार और पर्व होते हैं, उनका वर्णन भलीभांतिसे हो गया। जिस लेखनीकी सहायतासे बाप्पारावलकी वीरता, समरसिंहका समरकौशल, प्रतापसिंहका स्वदेशप्रेम और प्रतापराजसिंहका निडरपन और तेजवर्णन किया गया; उस ही लेखनीकी सहायतासे उनकी संतानकी विलासप्रियता; भीरुता और अन्तमें वीरवंदनीय गिह्लौटकुलकी शोचनीय दुर्दशा भी लिखी गई है: जो गिह्लोट वंश एक समय वीरता, सभ्यता, तेजस्विता और महानुभावतामें संसार शिरमौर समझा जाता था; जिसकी वीरताके डंकेका शब्द हिन्दुकुशपर्वतको तोडकर पौराणिक शाकद्वीपकी छाती तक पहुँच गया था, जिसके अकेले वंशधरकी अलौकिक वीरतासे एक समय, शाहन्शाह अकबरका सिंहासन कंपायमान हुआ था आज उस ही कुलका एक साधारण

* मान्यवर टाडसाहबने अंग्रेज होकर राजपूतोंके धर्म और उत्सवादिका कैसा उत्तम वर्णन किया है यद्यपि कहीं २ पर उन्होंने धोखा भी खाया है, परन्तु विचारकर देखनेसे वह भ्रम भी मार्जन करनेके योग्य है। जो उक्तमहोदय संस्कृत विद्या जानते होते तो उनसे कभी भी यह दो चार भ्रम न होते। इस अध्यायके प्रथमांशमें जिस भानुसप्तमीका विवरण लिखा गया है, वह इस मित्रसप्तमीका दूसरा नाम होनेके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। टाडसाहबने इस भानुसप्तमीको ही सूर्यभगवानका जन्मदिन बताया है; परन्तु हम देखते हैं कि आदित्य भगवान्‌ने मार्गशिर मासकी शुक्ला सप्तमीको जन्म लिया है। पाठकगणोंको समझानेके लिये भविष्यपुराणका एक प्रमाण नीचे लिखा जाता है। यथा—"अदित्यां कश्यपाज्जज्ञे मित्रो नाम दिवाकरः। मार्गशीर्षस्य मासस्य शुक्लपक्षे शुभे तिथौ। सप्तम्यां तेन सा ख्याता लोकेऽस्मिन् मित्रसप्तमी॥" भविष्यपुराणे।

वंशधर अत्यन्त दीन तन छीन और मन मलीन होकर समयको व्यतीत कर रहे हैं । जिसके पूर्व पुरुषोंके रोम २ से अग्निकी चिनगारियाँ निकलकर भारतवर्षको ही नहीं बरन ईरान तूरान तकको डावाँडोल कर देती थीं; आज दुर्भाग्यरूपी कठोर शीतके लगनेसे वही चिनगारियें निर्वाण हो गई हैं । अब वह तेज नहीं है !—वह दमक नहीं है ! वह विश्वदाही उत्ताप नहीं है ! सबका ही अन्त हो गया ! सबहीको शीतने जकड लिया !—आज कल तो जडता, निस्तब्धता और मौनताने मेवाडके सम्पूर्ण अंगोंमें निवास कर लिया है ! उन्नत, प्रतिष्ठित, गौरवान्वित मेवाडका दारुण शोचनीय और हृदयविदारक विध्वंस हुआ है । उसके आकाशस्पर्शी गौरवरूपी शिखर खंडखंड होकर आज पृथ्वीसे लिपटरहे हैं, आज मेवाडमें उठनेतककी सामर्थ्य नहीं है ! जो मेवाड शक्तिका आगार समझा जाता था; आज वही मेवाड शक्तिहीन है ! परन्तु अब मेवाड क्या उठैगा ही नहीं ? क्या इस दारुण दुर्दशाके होनेसे अब मेवाड अपना शिर नहीं उठा सकेगा ? हम कहते हैं कि अवश्य उठावैगा; आशा होती है कि—मेवाड फिर जी उठैगा । चित्तौरकी प्रकार और ध्वंसराशिसे फिर भी मेवाडका अवतार होगा । हम कह सकते हैं कि पुनर्वार वाप्पारावल, समरसिंह, प्रतापसिंह, राजसिंह, तथा संग्रामसिंहकी चिताभस्मसे नये २ महावीर उत्पन्न होकर जननी जन्मभूमिके गौरवको आकाशतक पहुँचा देंगे । पुनर्वार चित्तौर प्रफुल्लित होगा, उसके प्रफुल्लित होनेसे सम्पूर्ण भारतभूमि उज्ज्वल हो जायगी । आशा तो होती है;—परन्तु इस आशाके पूर्ण होने न होनेका कौन ठिकाना है ? आशा ! हा कपटिन् ! हा मायाविन् ! तेरा रूप हमारे ध्यानमें नहीं आ सकता ।—

गीतिका ।

गंभीरतम छायो चराचर, झार नहिं सूझत मही ।
बेताल भूत पिशाच डोलत, दुर्दशा न परे कही ॥
जहँ सघन उपवन हैं प्रफुल्लित, सुमन नित वरषावते ।
तँह काक कीट उलूक बैठे, विकट शोर मचावते ॥
चित्तौर उन्नति व्योमदेखी, दुर्दशा अब अतिभई ।
स्वर्गहि रसातल भेद व्याप्यौ, सुखद जो भइ दुखमई ॥
गिह्लोट रविकुल कमल प्रगटे, वीर अगणित बाँकुरे ।
सो वंश अजहूँ रह्यौ पर नहिं, वीर वैसे अवतरे ॥
कहँ समरसिंह कराल कहँ भट, विकट वीर प्रतापसों ? ।
कहँ धीर लछमनसिंह रण मद, भरयौ रवि उत्तापसों ? ॥
वह धवल सुभट हमारि कहँ, संग्राम राणा अति बली ? ।
वे आज भुजकोदंड कहँ जिन, चलत नित वसुधा हली ? ॥

धन धन्य नगर चित्तौर जग, शिर-मौर वीर शिरोमनी।
अब हाय!क्या अवनत भयो,नितरविपति बाढत घनी॥
अनुपम अनूपम रूप खोयो, केतु अरु आयुध विना।
कब बहुरि देखहिं नयनभर, तेरी मनोहर सुरचना ?॥
कब उदय होंगे सुदिन तेरे, उच्च पदवी सो लहै ?।
पुनि वीरभूमि शिरोरतन, निजछत्र तेरे शिर रहै ?॥
अब लही छाया वृटिनगणकी, कामना सब पूरहीं।
सम्पति सुजस आनन्द आदि, विभूति सकल बहोरहीं॥
श्रीकृष्णचन्द्र कृपाल आनँद-कन्द, यह बर दीजिये।
चित्तौरके सँग बाँह द्विज, बलदेवकी गह लीजिये॥

पर्वोत्सव समाप्त ।

चौबीसवाँ अध्याय २४.

समाजनीतिमें ज्ञानकी आवश्यकता; धर्मविधिकी अपेक्षा समाजके आचार व्यवहारकी प्रबलता; तथा उनकी परिवर्तन शैली; राजस्थानकी अनेक जातियोंमें आचार व्यवहारकी भिन्नता; राजस्थानकी स्त्रियोंपर राजपूतोंकी भक्ति और सन्मान; रनवासकी रीतिका उपयोगी होना; राजपूतोंका राजकुमारियेंके गौरवको रखना; राजपूतनियोंकी असीम पतिभक्ति; इतिहास तथा काव्योंके लेख इससमय उसके सम्बन्धके उदाहरण; राजपूत स्त्रियोंका उदारता साहस प्रत्युत्पन्नमतित्व; पुगालके साधु मालिनी देवीका विवरण; रनवासकी प्रथा; राजपूतस्त्रियोंकी प्रधानताका विस्तार; ऐतिहासिक प्रमाण; संसारकी अन्यजातिकी स्त्रियोंके साथ हिन्दू स्त्रियोंकी तुलना.

सर्वसाधारणमें प्रचलित हुए इतिवृत्तसे हम केवल जातिकी बाहिरी अवस्था तथा वीर नीतिसे शासन करनेवाले अधीश्वरों तथा मनुष्योंके चरित्रोंको जाननेके लिये समर्थ हुए हैं। उस जातिके भीतरी और बाहिरी चरित्रोंकी व्यवस्था किस प्रकार थी, उस साधारण इतिहासमें उसके जाननेका सुभीता हमको नहीं मिला। इसी कारण बुद्धिमान् टाडसाहबकी युक्तिमें "सामाजिक आचार व्यवहार ही किसी जातिके इतिवृत्तका अधिक प्रयोजनीय अंश है"। उस जातीय आचार व्यवहारके प्रति बहुत समय तक तीव्र दृष्टि पूर्वक देखनेसे उसका फलस्वरूप उस जातिकी आभ्यन्तरिक अवस्थाके सम्बन्धमें निश्चित ज्ञान प्राप्त हो सकता है। अनेक प्रकारके हृदयोंसे पूर्ण इस बृहत् इतिवृत्तके चित्रपटपर उस राजपूत जातिका आभ्यन्तरिक, सामाजिक, परिवारिक और मनुष्यगत चरित्रोंका अंश चित्रित करना अत्यन्त प्रयोजनीय है, बिना इसके हमारा संचित किया हुआ उपकरण मानो सभी असम्पूर्ण रहेगा, इससे हम उस कार्यके साधनेके लिये आगे बढें। नैतिक कारण और इसके फलके ऊपर दृष्टि न रखकर इतिवृत्तके हृदयमें वर्णन किये हुए अविश्रान्त समरके वृत्तान्तको पढनेसे मनुष्य समाज कैसे उपकार प्राप्त कर सकता है ? धर्मनीतिके साथ समाजनीतिका विलक्षण संयोग है, इस बातको कोई अस्वीकार न करेगा। हमारे प्राचीन इतिहासवेत्तागण वर्णनीय इतिहासोंमें धर्मनीति और समाजनीतिकी विलक्षण अवतारणा कर गये हैं। परन्तु प्राचीन जगत्के वर्तमान उदारचेता मनुष्योंका मत है कि इतिवृत्त, समाजनीति और

धर्मनीति इन तीनोंको इकट्ठा न जडकर एक एकका स्वतंत्र स्वतंत्र रूपसे वर्णन करना उचित है, हमलोग इस बातके बहुतसे अंश सत्य मानने में तैयार हैं । आर्य इतिहासवेत्तागण कल्पना और कविताकी सहायतासे इतिवृत्त दामको संग्रथित कर गये हैं, इतिहासकी गोदीमें धर्मनीति, समाजनीति और राजनीति इन तीनोंको छिन्नभिन्न भावसे स्थान मिला है. ऐसा बहुतोंका विश्वास है कि इसका फल एक पक्षमें ऐसा प्रीतिकारक नहीं है,एक वीरपुरुष अपने प्रबल प्रताप और असीम विक्रमके साथ सेनाको चला रहा है; पृथ्वीमें वीरोंके मदसे मतवाले होकर—वीररसके सोते चारों ओर बह रहे हैं । आकाशभेदी, रणभेदी शब्द, प्रतिज्ञा उद्दीपना जीवन्तमूर्त्तिका आविर्भाव हो रहा है, कवि इतिहासवेत्ताओंने सहसा उस ही समय समाप्तिके पहिले मुहूर्तमें ही धर्मनीतिका प्रसङ्ग लाकर फिर एक रसका आविर्भाव कर दिया। इस रसको भंग हुआ देखकर हमारे रसिक पाठक अवश्य ही जल उठेंगे। इतिहासवेत्ताके पक्षमें प्रत्येक कार्य प्रत्येक घटनाका फलाफल स्वतंत्ररूपसे प्रकाश पाजाता है, यद्यपि हम उपरोक्त रूपसे इतिहासवृत्तद्वारा जातिके नैतिक जीवनकी गतिका पीछा नहीं कर सकते, परन्तु परिवारिक जीवनके चित्रकी प्रत्येक रेखा और प्रत्येक अंगकी पूर्ण मूर्ति देखनेमें हमारी सामर्थ न हुई। जातीय आचार व्यवहार ही एकमात्र: उसके पक्षमें प्रधान सहायकारी है। सामाजिक नीति वा जातीय आचार व्यवहार ही जातीय भीतरी अवस्था का पूर्ण परिचारक है। किसी देशकी किसी जातिका आचार व्यवहार किसी समय भी समभावसे स्थित हुआ दृष्टि नहीं आता। आचार व्यवहारका सर्वदा परिवर्तन होता रहता है। जातीय धर्मनीति सीमाबद्ध और परिवर्तन रहित है। परन्तु जगत्की प्रत्येक जातिका आचार ही निरन्तर परिवर्तनके चक्रमें घूमता रहता है। महामाननीय टाडसाहब कह गये हैं, कि रोमकोंके 'मोरेस (Mores) तथा मध्य इटालियों कष्टामि' (Costumi) बराबर अर्थके जाननेवालेकी धर्मनीतिके सन्मुख यह राजपूतजातिकी चाल प्राचीन साधु और ऋषियोंके द्वारा चलाई हुई अनुसरणके योग्य और समाजनीतिके संमुख अपरिहार्य (छोडनेके अयोग्य) है। धर्मनीतिके उपदेशक राजपूत इस बातको कहते हैं कि "कैसी बुरी चाल चलते हो"। अर्थात् कैसे दुराचारियोंके मार्गपर पैर धरा है, तथा समाजनीतिके ऊपर अधिक निष्ठा रखनेवाले राजपूतोंकी कहावत है कि "बाप दादेकी चाल छोड दो" अर्थात् उन्होंने बाप दादेके आचार व्यवहारोंको एकसाथ ही छोड दिया है। धर्मनैतिक और सामाजनैतिक आचारोंके पालन करनेका राजपूतजातिको भलीभांतिसे अभ्यास था।

महात्मा टाडसाहबका कथन है कि अत्यन्त ही बन्यजातिके अतिरिक्त और सब जातियोंका धर्म समान है। मनु, मुहम्मद, मोजस अथवा क्राइष्ट इन सभीका धर्म एक मूल अर्थका बोधक था। प्रत्येकका उद्देश एक ही प्रकारका था। प्रत्येकका लक्ष्य एक ही पदार्थपर था।यद्यपि हम कर्नेल टाडसाहबकी इस कहावतको समर्थन करनेके लिये सम्मत नहीं हैं, दुःखका विषय है कि उनके समान मनुकी विधान करी हुई स्मृतिको यहूदि-

योंके धर्मके अनुरूप बनाकर हम उसको स्वीकार नहीं कर सकते।राजपूतोंके बांधव टाड-साहबने कहा है कि एक धर्मके भिन्नजातिमें प्रचलित होते ही उस भिन्नजातिकी मानसिक अवस्थाएँ कई प्रकारकी होंगी, यदि उनमें धर्मनीतिके सम्बन्धका पृथक्‌भाव कुछ है तो वह बडी सरलतासे पाया जा सकता है, परन्तु भिन्न स्थानकी जातियोंका आचार व्यवहार इतनी दूर पृथक् वा ऐसा असमान है कि चिंताशील मनुष्य इसको सरलतासे जान सकता है । इसमें कुछ भी संदेह नहीं है कि शिशोदियोंकी निवासभूमि मेवाडके वालुकामय मारवाडपर पैर धरते ही इस उक्तिकी सत्यता सरलतासे जानी जा सकती है । अधर्माचरण करनेवालोंके द्वारा पराजय होकर नवीन नवीन मतवाले सम्प्रदायोंके आचार व्यवहारोंका बदल होता रहता है. यह सब बातें सत्य हैं, इसीसे प्रकाशमान हैं, इतिहासकी गोदमें जो उज्ज्वल और सशंकित थे, इस समय हम उनमेंसे एक २ का वर्णन करनेकी अभिलाषा करते हैं । हमारे पाठकगण इसको पढकर बडी सरलतासे राजपूतजातिके गुणागुण, पापपुण्योंकी कल्पना,सामाजिक विधान,उनका प्रकाश्य और गुप्त जीवनका आनंद, एवं उत्सव और राजपूतजातिमें प्रसिद्ध अतिथेयता किस भाँति होती थी, उसको सहजसे जान सकते हैं । इसमें कुछ भी संदेह नहीं ।

विख्यात गोगेट्का कथन है, कि "जो जाति शिल्प और विज्ञानकी जितनी उन्नति करै, उस जातिके सामाजिक आचार भी उतने ही उन्नति पाकर प्रकाशमान होते हैं।" हिन्दुओंके बान्धव टाडसाहबने कहा है कि, "यदि इसी कथनके अनुसार हम लोग राजपूतजातिके प्रधान और आधुनिक आचार व्यवहारोंकी बराबरी करैं तो निश्चय करके इस बातको शीघ्र ही कह सकते हैं कि राजपूतजातिकी अवश्य ही अवनति हुई है ।" भारतहितैषी टाडसाहबने उसी समय भारतवर्षकी प्राचीन अवस्थाको स्मरण करके कहा था कि "यह सम्पूर्ण हिन्दू साधुओंकी मंडलीमें न्यायशास्त्रके समान ग्रीकोंका आदर्श स्थल है,प्लेटोश्वेलस और पिथागोरस आदि जिनके शिष्य थे वह इस समय कहां पाये जायँ ? जिन ज्योतिषियोंको सौरजातिक ज्ञानसे आजतक यूरोपके निवासी आश्चर्यमें हो रहे हैं ।" जो सूर्य और शिल्पियोंकी कार्यावली हमारे सन्मुख प्रशंसा पानेकी अधिकारिणी है और जो संगीत विद्याके जाननेवाले "सुर और स्वरके ही अदल बदलसे आनंदित चित्तको शोकित और शोकितचित्तको आनंदित कर देते थे वह इस समय कहा हैं ?" महात्मा टाडसाहबने इस सपरितापोक्तिको क्यों समर्थन किया ? उन्नतिकी उन्नत अवस्था आर्यजातिके आचार व्यवहारोंको जहांतक अच्छा कहनेकी सम्भावना है, वह जैसे हुए थे, उन सबका वर्णन इतिहासके सन्मुख भलीभांतिसे हुआ है । यह कहना तो ठीक न होगा कि आर्यजातिके पतनके साथ ही साथ आचार व्यवहारोंका भी अदल बदल हो गया, इसका कहना तो बाहुल्यमात्र है। कि तब तो आर्यवंशधर गण पैत्रिक आचार व्यवहारोंके ऊपर विशेष निष्ठा करते थे, उस जातिके आचार व्यवहार यत्न सहित रक्षित होनेके कारण चिरकाल तक उसका अभ्यास करनेसे आजतक प्राचीन उन्नति पवित्र सभ्यताके उपयोगी

अनेक आचार्य आर्यक्षेत्रमें अचल भावसे विराजमान हैं । प्रचलित हुए प्राचीन आचारोंमें जो आचार भिन्नभावसे दिखाई देते हैं उनमें बहुतसे जीवनी शक्तिसे हीन हैं और बहुतसे विपरीत फल देनेवाले होकर खडे हैं, उनका अनुमान बडी सरलतासे हो सकता है, राजपूतजातिकी अवस्था बदलनेके साथ ही साथ कितने ही प्राचीन आचारोंका स्वरूप इस समय उपहासस्थल हुआ है, इसका कहना बाहुल्यमात्र है ।

"इस बातको सभी मान लेंगे कि किसी जातिकी स्त्रियोंकी अवस्था ही उस जातिकी उन्नतिका कारण है ।" पंडितवर महात्मा टाडसाहबके वचन माननेमें समाजतत्वके जाननेवाले सदा तैयार रहते हैं । किस जातिने जगत्में जीवित रूपिणी स्त्रीके ऊपर किस प्रकारका आचरण किया, समाजमें उस स्त्रीके स्वामित्वकी सामर्थ्य, सन्मान, आदर, यत्न और प्रबलताका विस्तार किस प्रकारसे हुआ, समाजनीतिने स्त्रियोंको किस प्रकारकी विधिसे जडकर कितनी स्वाधीनता दी और उन रमणियोंके कुलका कर्त्तव्य कर्म किस प्रकारसे नियुक्त कर दिया था, सबसे प्रथम उनकी ओर दृष्टि करनेसे नीतिके जाननेवाले मनुष्य सरलतासे इसका पीछा कर सकते हैं; उस जातिकी सभ्यता उन्नतिकी कितनी ऊँची सीढियोंपर चढी है । महात्मा टाडसाहबका अनुसरण करनेके पहले ही हम इस स्थानपर आर्य धर्मशास्त्र और पुराण आदिमें जिनका वर्णन हुआ है उसको हिन्दूलोग अवश्य जानते हैं, दूसरे लोग भी जाने इसीलिये आर्यस्त्रियोंके सम्बन्धकी कितनी ही कथाओंको वर्णन करनेकी अभिलाषा करते हैं । हिन्दूसमाजमें, राजपूतसमाजमें स्त्रीजातिका ऊँचा सम्मान चिरकालसे विराजमान है । आर्यजातिने स्त्रियोंको जगत्की जीवितरूपिणी लक्ष्मी स्वरूपणी जाना है । मनुष्योंका सुख, सम्पत्ति एकमात्र पतिव्रता सतीके कल्याणसे होती है, जिस स्थानमें भार्या है, वही स्थान संसारका गृह है, भार्यासे रहित जो गृह है वह गृह नहीं कहाता, भार्याहीन मनुष्य गृहस्थी नहीं कहा जा सकता । पराशर स्मृतिकी यही प्रधान उक्ति है. भार्याहीन मनुष्यको तो वनमें ही निवास करना कल्याणकारी है, * अथवा उसका रमणीय घर भी गहन वनके समान है; संसारमें जितने भी रत्न हैं, उनमें स्त्री रत्न सबसे श्रेष्ठ है, एकमात्र स्त्री ही संसारका जीवन है, शक्ति है, बल है, तथा सम्पूर्ण पुराणोंका भी यही मत है × इस कारण आर्य मुनि ऋषिगण आर्यस्त्रियोंका सन्मान कितना ऊँचा नियुक्त कर गये हैं, उसी उक्तिसे वह भली-

---

* " भार्याधीनं सुखं पुंसां भार्याधीनो धनागमः ।
भार्याधीना मखोत्पत्तिर्भार्याधीनः सुखोदयः ॥
यत्र भार्या गृहं तत्र भार्याधीनं गृहे वसेत् ।
न गृहेण गृहस्थः स्यात् भार्यायाः कथ्यते गृही ॥ " पराशरस्मृति ।

×" यस्य नास्ति सती भार्या गृहेषु प्रियवादिनी ।
अरण्यं तेन गन्तव्यं यथारण्यं तथा गृहम् ॥ "

भांतिसे प्रकाश पा रही है। स्त्रियोंकी एकमात्र पुरुषजातिकी पशुवृत्तिको चरितार्थ करनेहीके लिये सृष्टि नहीं हुई है, सुख, शांति, मंगल, पवित्रता, पुण्य, धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी प्राप्तिका मूलकारण जिसस्त्रीको आर्यशास्त्रोंने जलद गंभीर श्वरसे वर्णन किया है। जगत्‌के प्रत्येक जातिके धर्मशास्त्रको बारम्बार पढो आपको कहीं भी ऐसा ऊँचा विधान नहीं मिलैगा। पुराण यही कह रहे हैं, कि साध्वी सती पतिव्रता स्त्री को त्याग करके यदि कोई मनुष्य संन्यासी, ब्रह्मचारी, या यती होकर पारलौकिक पुण्यसंचय करनेके लिये चेष्टा करै। वा यदि कोई वाणिज्य करनेके लिये बहुत दूर चला जाय, अथवा मोक्ष प्राप्तिके लिये तीर्थमें निवास करै, या तपस्यामें मनको लगावै तो उसको मोक्ष कदापि नहीं मिल सकती, वह धर्मसे पतित है; इसी जन्ममें उसका यश लोप हो गया है और उसको सती स्त्रीके शापसे मरणकालतक नियम सहित वनमें निवास करना होता है। अनन्त महिमामय जगदीश्वरने स्त्रियोंकी स्वभावसे ही कोमलांगी अबलारूपसे सृष्टि की है, इस कारण आर्य शास्त्रकारक गण उस ईश्वर-सृष्टिके नियमके ऊपर तीक्ष्ण दृष्टिसे स्त्री जातिकी रक्षाविधान उक्त रूपसे स्थिर कर गये हैं। पिता, पति और पुत्र यह तीनों ही स्त्री जातिके तीन समयोंके उपयुक्त रक्षक हैं। धर्म नीति, समाजनीति–पवित्र सभ्यता और जगदीश्वरके अभिप्रायकी ओर दृष्टि करके पुरुषके समान स्त्रियोंकी पूर्ण स्वाधीनता अवश्य ही अप्रार्थनीय है–और उस पूर्ण स्वाधीनताके सूत्रमें स्त्रियोंको एक मात्र सार धन सतीत्वकी रक्षामें विषम व्याघात होनेकी पूर्ण संभावना है, प्राचीन आर्यजाति उसको भलीभाँतिसे जानकर उन स्त्रियोंके कुलकी स्वाभाविक शक्तिमती स्वाधीनताके देनेमें पक्षपातिनी थी। अन्यायके अतिरिक्त स्त्रियोंकी स्वाधीनता यद्यपि आसुरिक सभ्यताके उपयोगी हो सकती थी, परन्तु आर्यधर्मका विधान और कार्य सम्मतिके मतसे तथा आर्यसमाज नीतिके मतसे वह अनुपयोगी है, इसीसे पिता, पति, पुत्र और बंधुओंके ऊपर उनकी रक्षाका विधानका भार सौंप गये हैं; आर्यस्त्रियोंमें अन्तःपुरके निवासकी प्रथा पश्चिमी जगत्‌में आसुरिक सभ्यताके सन्मुख अत्यन्त ही दूषित है और उन्हें यही असभ्यताका चिह्न स्वरूप दृष्टि आया है, परन्तु आर्यमुनि, ऋषिगण अपनी बहुत कालकी परीक्षाके फलसे इस बातको भलीभांतिसे जान गये थे, कि परदेकी रीतिका प्रचार हुए बिना समाजकी सुनीति; संसारकी पवित्रता, धर्मनीतिका आदेश, जगत्‌की शान्ति, पतिका चित्त स्थिर, तथा स्त्रियोंके सारधन सतीत्वकी रक्षाका होना असम्भव है। आर्यजातिकी स्त्रियोंकी सीमाबद्ध स्वाधीनता है, जिस स्वाधीनतासे उनकी मानसिक धर्मसंगतिकी कोई इच्छा भी अपूर्ण नहीं रहती–उसी स्वाधीनताको संभोगकर संसारको पवित्र पुण्यक्षेत्रमें परिणत करते हैं, आर्यशास्त्रकारोंका यही मूल लक्ष था, इसी लिये अंतःपुरकी रीतिकी सृष्टि हुई और इसी लिये वह यह आज्ञा कर गये हैं कि स्त्रियोंकी रक्षा भलीभाँतिसे करै। *

---

* पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने। रक्षन्ति स्थविरे पुत्रा न स्त्री स्वातंत्र्यमर्हति। मनुः

जो लोग आर्यशास्त्रको नहीं जानते हैं, अथवा जो हिन्दुओंके अन्तःपुरके निवास-को नहीं जानते हैं, उनका तथा पाश्चात्यजातिका यह विश्वास है कि हम लोग घरके भीतर निवास करनेवाली स्त्रियोंके ऊपर मोल ली हुई दासीके समान व्यवहार करते हैं; उनका यह अनुमान और ऐसा विश्वास कदापि ठीक नहीं हो सकता। परन्तु स्त्रियोंके ऊपर किस प्रकारसे दृष्टि रखनी उचित है, आर्य शास्त्रकारोंने उसके सम्बन्धमें क्या कहा है ? जो पुरुष स्त्री के मानकी रक्षा करता है, उसको पग २ पर कल्याणकी प्राप्ति होती है और जो मनुष्य स्त्रीका अपमान करता है वह मनुष्य अधम और उसके भाग्यमें अशुभ होते रहते हैं। हमारे प्रधान धर्मशास्त्रके नेता महात्मा मनुजी स्वयं कह गये हैं *" कि जो मनुष्य स्त्रियोंके सन्मानकी रक्षा करता है, देवता उसके ऊपर प्रसन्न होते हैं और जो मनुष्य स्त्रियोंका अपमान करता है, उसके सम्पूर्ण धर्म कर्म और पुण्यों-का नाश हो जाता है, और जिस संसारमें स्त्रीयोंके सन्मानकी रक्षा भलीभाँति से नहीं होती वहां स्त्री शाप देती हैं, इसीसे वह संसार एक बार ही विध्वंस हो जाता है। " आर्य संसारमें स्त्रियोंका कैसा उत्तम सन्मान होता था, कहां तक उनको दयादृष्टिसे देखा जाता था, मनुकी उक्ति उसकी चूडान्ततक का परिचय देती है।अबलाके ऊपर किसी भाँतिका भी प्रहार करना उचित नहीं, इस बातको मनुजी स्पष्टतासे कह गये हैं। उसका विधान यह है कि चाहे स्त्रियें सहस्रों अपराध भी करलें परन्तु उनको फूल से भी न मारैं। आर्यजातिमें स्त्रियोंका मारना किसी भांति उचित नहीं, हम सबसे पहिले यही पूछते हैं कि संसारमें किस जातिके धर्मशास्त्रमें ऐसा विधान है ? ऐसी कौन सी जाति हैं कि जिनमें स्त्रियोंको ऐसा ऊँचा सन्मान दिया गया है।

आर्यशास्त्रकारोंने स्त्रियोंको किसप्रकारके कर्तव्य कर्म बताये हैं ? पुराणोंका कथन है--कि स्त्री सूर्योदयसे प्रथम उठकर देवता और पतिको प्रणाम करके घरको झाड बुहार कर गोवरमें स्वच्छ जल डालकर आँगन और घरको लीपे,इसके उपरान्त घरके अन्या-न्य कार्योंको समाप्त कर स्नान करै फिर देवता, ब्राह्मण और पतिको प्रणाम करके घरके देवताकी पूजामें लगे, इसके उपरान्त रसोई तैयार कर पतिको भोजन कराय अतिथि सेवाके उपरान्त फिर स्वयं भोजन करै, आजकल आसुरिक सभ्यताके ऊँचे

---

* मनुः--यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः ।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः ॥
शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम् ॥
न शोचन्ति तु यत्रैता वर्द्धते तद्धि सर्वदा ॥ ५७ ॥
जामयो यानि गेहानि शपन्त्यप्रतिपूजिताः ॥
तानि कृत्याहतानीव विनश्यन्ति समन्ततः ॥ ५८ ॥
स्त्रियां तु रोचमानायां सर्वं तद्रोचते कुलम् ॥
तस्यां त्वरोचमानायां सर्वमेव न रोचते ॥ ६२ ॥ अ० ३ ॥

शिखरपर पहुँचे हुए पाश्चिमी संसारके निवासियोंने आर्यशास्त्रकारोंकी इस विधिको पढकर हिन्दू स्त्रियोंको मोल ली हुई दासीके समान जाना है और कहते हैं कि जो कुछ भी इस समय इस देशमें है वह विलायतकी ही शिक्षा है, जो विलायती सभ्यताके तरंगमालाके प्रवल आघातसे चोट खाये हुए हैं, यद्यपि उनमेंसे किसी २ ने तो समयके अनुसार इस विधिको भारतके महासमुद्रमें डालकर यूरोपीय सभ्यताका अनुकरण करनेका साहस किया है, परन्तु यह विधान उनको अथवा उनके वंशधरोंको अवश्य ही स्मरण कराना होगा, कि आर्यशास्त्रकारोंने स्त्रियोंके चरित्रोंको भलीभाँतिसे जानकर, उनके चरित्रोंके दोष, गुण, तथा उनके चरित्रोंकी दुर्वलता उन चरित्रोंकी प्रत्येक अवस्था-उन चरित्रोंकी शक्ति-तथा उनके चरित्रोंकी पूर्ण स्वाधीनताका विषमय फल-समाजका विध्वंस करनेवाला फल—और शांतिका नाश करनेवाला फल भलीभाँतिसे जानकर बहुत सी परीक्षाओंके उपरान्त इस विधिकी सृष्टि की हैं । स्त्रियें जिस भाँति कोमल स्वभावसे युक्त हैं, स्त्रियोंका हृदय जिस प्रकारकी धातुसे बना हुआ है, स्त्रियोंका शरीर जैसा कोमल है, उसमें विधाताकी सृष्टिके अतिरिक्त संसारमें सुख शान्ति और मंगलप्राप्तिकी कुछ भी आशा नहीं है, आजकल विलायती सभ्यताके सोतेमें मग्न हुए बहुतसे मनुष्य इस देशकी स्त्रियोंको घरके कार्य करते हुए देखकर तथा उनके कामोंको सुनकर अत्यन्त क्रोधित हो जाते हैं, परन्तु सत्यके सन्मानकी रक्षा अवश्य करनी होगी, इस बातको हम अवश्य ही कहेंगे कि वह लोग जो कि विलायती संसारमें हैं और उन नवीन जगत्के निवासियोंको इन्द्रका ऐश्वर्य भोगनेके लिये कि जिनके पास प्राणप्यारी स्त्रियोंके लिये अनेक दास दासी विद्यमान हैं और जिन्हें ऊँचे ऊँचे महल दुमहलोंके ऊपर आलस्य विलासिताकी गोदीमें शयन करता हुआ देखकर सभ्यताके सन्मानकी रक्षाके लिये उनके अनुकरणमें अपनी २ गृहिणियोंकी उस भावसे रक्षा करनेके लिये सर्वदा तैयारी करनी होती हैं. हमारा कहना केवल उन्हींसे है कि अनेक बड़े २ घरानोंमें नौकर चाकरोंके न मिलनेसे उनको अपने घरके काम स्वयं अपने हाथसे करने पडते हैं, इसलिये हमें यही पूछना है कि उस समय उनके स्वामी और उनकी स्त्रियोंका चिह्नस्वरूप आलस्य विलासिता न जाने कहाँ अदृश्य हो जाती है ? उस समय क्या उनकी सभ्यता नहीं रहती; स्त्री जातिके कर्त्तव्य कर्म सांसारिक कार्योंसे उनको छुटकारा देनेसे ही यदि उनको सभ्य बनाते हों तो वह सभ्यता संसारसे जितनी जल्दी बिदा हो जाय उतना ही कल्याणका विषय है ।

आर्यजाति स्त्रियोंको मोल ली हुई दासीके समान नहीं जानती, इस विषयमें हम दो एक प्रमाण और भी उद्धृत करते हैं । आर्यशास्त्रकारोंका कथन है, कि कार्यावस्थामें स्त्री पतिकी मंत्रीके समान है, सलाह देनेमें सखीकी तुल्य है और स्नेहमें माताके समान आचरण करती है ।× भला यह तो विचारो कि यह कहीं मोल ली हुई

× "कार्येऽपि मन्त्री पत्नी स्यात्सखी स्यात्करणेषु च ।
स्नेहेषु भार्या माता स्याद्वेश्या च शयने शुभा ॥"

गरुड पुराण ।

दासीके लक्षण हो सकते हैं ? संसारका मंगल-समाजमें शान्ति, संसारकी उन्नति और जातिकी पवित्रताके संग्रहमें क्या यह मूलसूत्र नहीं है ? शास्त्रको क्या भलीभाँतिसे नहीं विचार सके हो ? भारतवर्षमें आर्यजातिके बीचमें विषमय बहुतसे विवाहकी रीति प्रचालित देखकर विलायतके निवासियोंने यह सिद्धान्त स्थिर कर लिया है कि आर्यजातिमें केवल भोगविलासकी इच्छाको चरितार्थ करने हीके लिये स्त्रीजातिकी सृष्टि हुई है, अथवा स्त्रीजातिको मोल ली हुई दासीके समान न जानकर क्यों बहुविवाहकी रीति प्रचालित हुई ? परन्तु इस प्रश्नका उत्तर देनेके पहले हम अहंकार, गौरव और साहसके साथ कह सकते हैं कि आर्यशास्त्रकार अनेक विवाहोंके पक्षपाती नहीं हैं । जिस मनुष्यके पुत्र विद्यमान है उसको दूसरा विवाह करना किसी प्रकार भी उचित नहीं । यदि स्त्री सर्वदा रोगी रहती हो, या वंध्या हो तो ऐसे स्थानपर दूसरे विवाह करनेकी प्रथा है । जो पुरुष बहुत सी स्त्रियोंका पति है वह अधम है, महापापी है, पुराणोंमें ऐसा भी कहा है । *

इस समय यह प्रश्न हो सकता है कि आर्यशास्त्रकारोंने विधिके विरुद्ध आर्यगणोंकी किस प्रकारसे बहुतसे विवाहकी रीति प्रचलित की ? हम कह सकते हैं कि दो कारणोंसे बहुविवाह भारतवर्षकी एक श्रेणीमें प्रचलित हुए । एक तो जो राजा आलस्य विलासिताके मोल लिये हुए दास थे, केवल वही अधिक स्त्रियोंको ग्रहण करते थे और इस समय उनके वंशधर उस पैत्रिक आचारकी रक्षा करते आये हैं । भारतवर्षमें सर्वसाधारणमें बहुत विवाहकी रीति प्रचलित नहीं थी । रघुकुलतिलक रामचंद्रजीने कितने विवाह किये थे ? महात्मा सत्यवान्‌के केवल एक सती साध्वी सावित्री ही स्त्री थी ? बहुतसे विवाहके प्रचारका दूसरा कारण सामाजिक प्रयोजन था । समाजमें शांति, मंगल, नीति और आज्ञाकी रक्षा करनेके लिये ही बहुतसे विवाहोंकी रीति प्रचलित हो गई और पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंकी संख्या अधिक बढनेसे बहुतसे विवाहोंका होना आवश्यक विचारा गया ।--इसका प्रत्यक्ष उदाहरण बंगालमें विराजमान है । देवीश्रेष्ठ घटकने कुलीन श्रेणियोंमें मेल बढानेके साथ विवाहकी विधिको उसके मेलमें बाँध दिया, अब वह सामाजिक विधिमें गिना गया है, उस विधिको पालन करनेके ही लिये

---

* " बहुदारः पुमान् यस्तु रागादेकां भजेत्स्त्रियम् ॥
स पापभाक् स्त्रीजितश्च तस्याशौचं सनातनम् ॥ १ ॥
यद्दुःखं जायते स्त्रीणां स्वस्यासंभोगजं यथा ॥
न तस्य सदृशं दुःखं किंचिदन्यद्धि विद्यते ॥ २ ॥
सतीमृतुमतीं जायां यो नेयात् पुरुषाधमः ॥
ऋतुधर्मेषु शुद्धेषु भ्रूणहा तस्य जायते ॥ ३ ॥
बहुभार्यस्य भार्याणामृतुमैथुननाशनम् ॥
न किंचिद्विद्यते कर्म शास्त्रेणापि यदीरितम् ॥ ४ ॥"

कालिका पुराण २० अध्याय ।

उस मेलबंधनकी रक्षाके निमित्त ही देवीश्रेष्ठ घटकरके बहुत वर्षोंके उपरान्त धीरे २ बहुत विवाहकी प्रथा प्रबल हो गई। कुलीन कुलोंमें लडकोंकी अपेक्षा कन्या अधिक हैं, बहुत विवाहके अतिरिक्त उस मेलबंधनकी रक्षा असंभव विचार कर बंगालमें केवल कुलीनोंमें ही बहुविवाह प्रचलित हैं; यदि चारों मेलोंमें पुरुष और स्त्रियोंकी संख्या समान होती, तो पात्रके अभावमें बहुविवाहकी कुछ भी आवश्यकता नहीं होती। अच्छा--माना, हमलोग अशिक्षित हैं, बनवासी हैं, बर्बर हैं, मूर्खजाति हैं, हमने उस समाजके मानकी रक्षा करके बहुविवाह स्वरूप विषम अग्निमें बंगालको प्रज्वलित कर दिया था, इस समय वह अग्नि प्रायः निर्वाण ही हो गई है परन्तु कहना यह है कि नवीन जगत् अमेरिका जो बडा देश है--इस समय सभ्यता विज्ञानके वह ऊंचे आसनपर विराजमान है, इस सभ्य अमेरिकामें हम लोगोंने उन्नीसवीं शताब्दीमें बहुविवाहकी रीति प्रचलित होती हुई क्यों देखी? विख्यात कोपेकारकी सम्प्रदायमें आजतक इस बहुविवाहकी प्रथाकी समभावसे रक्षा करते हैं? एक नहीं, दो नहीं, बरन् सैकडों हजारों स्त्रियें एक एक मनुष्यको पतिभावसे वरण कर रही हैं? उन्हें क्या अमेरिकाकी उच्च सभ्यताका उज्ज्वल प्रकाश प्राप्त नहीं हुआ? उनको क्या विलायतकी उच्च शिक्षा नहीं मिली? अच्छा हमने बहुतसे तर्क कुतर्क न करके इस बातको भी मान लिया कि कोपेकारके ऊपर वहांके सर्व साधारणने सहानुभूति न दिखाई, परन्तु यहां पर हमारा यह प्रश्न है कि कई वर्षके बीत जानेपर अमेरिकामें स्त्रियोंकी संख्या अधिक बढ गई, क्या समाजके नेताओंने इसका प्रस्ताव तक भी नहीं किया कि समाजमें शान्तिकी रक्षाके लिये बहुविवाहकी रीतिका प्रचार करना आवश्यक है? प्रधान २ समाचारपत्रोंमें क्या इस बातका विचार नहीं हुआ? आजतक भी क्या अमेरिकाके समाजनेता गण स्त्रियोंकी संख्याको बढता हुआ देखकर उस बहुविवाहकी रीतिको चलाकर समाजनीतिके मानकी रक्षाके अभिलाषी नहीं हुए? पात्रके न मिलनेसे अमेरिकामें बहुत सी युवतियें दीर्घकालतक विवाह न करके समाजको बराबर कलंकित कर रही हैं, इसे क्या वह अपनी दिव्यदृष्टिसे नहीं देखते हैं? इसीलिये हम कहते हैं कि केवल समाजनीतिके सन्मानकी रक्षाके लिये असवर्णा विवाह अप्रार्थनीय है. निम्न लिखित वंशोंमें कन्यादान निन्दनीय है--और सवर्णमें तथा बराबरके वंशमें पात्रके न मिलनेसे बहुविवाहकी रीतिका प्रचार करना अत्यन्त आवश्यक है। परन्तु इस समय स्थान २ पर उस रीतिके परिवर्तनका पूर्ण लक्षण प्रकाश पा रहा है।

इस समय महात्मा टाडसाहबका अनुकरण करना ठीक होगा, वह इतिवृत्तके उपाख्यानमें कह गये हैं कि अपने दुर्भाग्यवशसे ही विलायती जगत् होते हुए भी ऊँची श्रेणीकी महिलामंडली स्वभावसे अंतःपुरमें बंद रहती है, तथापि समाजके ऊपर उनकी प्रभुत्व शक्ति कहाँतक पहुँची है, उसका जानना अत्यन्त कठिन है। परन्तु महामाननीय टाडसाहबने इस बातको स्वयं कहा है कि राजस्थानमें अंतःपुरकी रीतिके प्रचलित होनेसे समाजके ऊपर उनकी प्रधानताका विस्तार कुछ कम नहीं था, चुम्बक पत्थरको गुप्त

स्थानमें रक्खो या न रक्खो उसकी आकर्षणीय शक्ति जिस भाँति निश्चित है, उसी प्रकार अंतःपुरमें रहनेवाली कुल युवतियोंका प्रभुत्व था। वीरश्रेष्ठ राजपूत इस बातको भलीभाँतिसे जानते थे कि उनका वीरत्व, विक्रम, असाध्यसाधन और मनुष्यत्व प्रदर्शनका संवाद चाहे किसी गुप्त स्थानमें भी क्यों न हो परन्तु वहाँ पहुँचना ही होगा। स्त्रियोंके अंतःपुरनिवासिनी होते ही राजपूतोंकी वीरता जानकर वह उन वीरोंके ऊपर आकृष्ट हुई हैं यही उनका दृढविश्वास था। राजवाराके भट्ट कविकुल तिलक महलसे सामान्य कुटी तक गये थे और उनकी कविता शीघ्रगामी धूमकेतुके समान जिस किसी राजपूत वीरके बल विक्रमकी प्रशंसामें हुई कि उस वाणीरूपी पुत्रकी सहायतासे भारतके मरुप्रान्तसे यमुनाजीके किनारे तक प्रत्येक अंतःपुरके भीतर चली गई. अंतःपुरमें निवास करनेवाली स्त्रियें उस भट्टकविके मुखसे निकली हुई राजपूतवीरोंकी जयगाथा सुनकर सरलतासे उन वीरोंकी प्रशंसनीय प्रतिकृतिको हृदयपट पर अंकित करनेको समर्थ हुई। महामाननीय टाड साहबने कहा है कि यद्यपि राजपूतोंकी स्त्रियोंको अंतःपुरमें रहकर भी उनकी यथार्थ अवस्थाको जाननेका अवसर नहीं मिला था परन्तु वास्तवमें उनकी अवस्था शोचनीय नहीं थी।

महात्मा टाड साहब इस बातको कह गये हैं कि प्राचीन जर्मन और स्कन्दनेवियोंके समान राजपूत जाति प्रत्येक कार्यमें स्त्रियोंके साथ परामर्श करती थी और स्त्रियोंके आचरणके ऊपर अपने शुभाशुभको निश्चय करती थीं, यह भी उनका विश्वास था और वह स्त्रियोंका कितना सन्मान करते थे, कि उनसे स्त्रियोंको गौरवकी देनेवाली "देवि" नामकी उपाधि मिली। जो मनुष्य इस बातको नहीं जानते हैं वह हिन्दू स्त्रियोंको पराधीन बताकर शोक प्रकाश कर उनके अंतःपुर निवासको कारागारका वास बताते हैं। उदारचित्त टाड साहब इस बातको स्वयं कह गये हैं कि, राजपूतोंकी स्त्रियें कैसी स्वाधीन, सन्मान और सुखभोगनेकी अधिकारिणी थीं, इस विषयमें हमने जहां तक जाना है, इससे उनको वंदिनी स्वरूप विचार कर हम शोक प्रकाश करनेमें सम्मत नहीं होते, कर्नेल टाड साहबने यहां उल्लेख किया है कि नैयायिकोंके मतके अनुसारसे "स्पिरिट अवल" नामके ग्रंथकारके मतसे उष्णप्रधान देशोंमें ऋतु और जलवायुकी प्रबल शक्तिके कारण मनुष्योंका कामशत्रु प्रबल होता है, इस कारण उन देशोंकी स्त्रियोंको अंतःपुरमें निवास करना अत्यन्त आवश्यक है। सिसरनामके फरासीसी विज्ञानके ज्ञाता इससे सम्पूर्ण विपरीत मत प्रकाश कर गये हैं। उनका कथन है कि सुनीतिकी रक्षाके पक्षमें स्त्रीजातिका एकान्त निवास अत्यन्त ही अनिष्ट कारक है। यद्यपि उपरोक्त नैयायिकके मतमें बहुत कुछ सार भी है, परन्तु हम भारतके अंतःपुरकी रीतिकी प्रतिष्ठा करनेमें कोई भी उचित कारण ठीक नहीं मानते। हम इस बातको भलीभाँतिसे मानते हैं कि महात्मा टाड साहबने सत्यताकी मृदुल उन्नतिकी अवस्थाके ही लिये स्त्रियोंको एकान्तमें निवास करनेके लिये कहा है। उनके इस मतको हम लोग भी माननेके लिये समर्थ हैं। इस बातको हम कह सकते हैं कि जिस समय विलायती जग-

तूमें वर्तमान आसुरिक सभ्यताकी चूडान्त उन्नतिके पीछे हिन्दू समाज स्त्रियोंकी स्वाधीनताका विषैला फल भोग करैगी। उस समय जगत्‌में शान्ति, समाजका मंगल और संसारमें पवित्रताकी रक्षा करनेके लिये स्त्रीजातिको अंतःपुरमें रखकर उनके यथोचित अवस्थाके उपयोगी और विधिकी विधिके मतसे सीमाबद्ध स्वाधीनताका देना ठीक विचारा जायगा। सभ्यताके बीचमें उन्नतिकी अवस्था और अंतःपुरकी रीतिकी प्रतिष्ठा किस प्रकारसे सम्भव हो सकती है? अंग्रेजजातिकी आदि मध्य और वर्तमान अवस्थाकी ओर आँख उठाकर देखनेसे हमलोग देख सकते हैं कि अंग्रेज जाति इस समय सभ्यताके ऊँचे शिखरपर पहुँच गई है और इसीसे वह अहंकारसे युक्त है, परन्तु जिस समय यही अंग्रेज जाति सभ्यताकी मध्य अवस्थामें थी उस समय क्या ग्रेटब्रिटनमें अंतःपुरकी रीतिका प्रयोजन नहीं था? इंग्लेण्डकी स्त्रियोंको सभ्यताकी वृद्धिके साथ ही साथ अधिक स्वाधीनता मिली है और किसी समयमें पुरुषोंके समान स्वाधीनता पानेके लिये महायुद्ध करैंगी। उसके पूर्व लक्षण भी दीख रहे हैं, परन्तु जब उनको पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त हुई अंग्रेज धवलांगिनियोंमें स्वेच्छाचारिताका भयंकर अभिनय होगा, उनके उस आचरणसे जब अंग्रेजसमाज भयंकरतासे लुप्त होगा, अंग्रेजजाति जब उनके विषमय फलको भोग करैगी तब तो अवश्य ही उनको भारतवर्षमें प्रचलित हुई रीतिका अनुसरण करना होगा। भारतके महात्मा ऋषि मुनियोंने स्त्रियोंके चरित्रोंको किस प्रकार कहा है और स्त्रियोंकी स्वाधीनतासे कैसा विषैला फल उत्पन्न हुआ है, उसको भलीभाँतिसे जानकर स्त्रियोंके कर्तव्य कर्मोंको विचार तथा स्वाधीनताकी सीमा बताकर धर्मनीति, समाजनीति और स्त्रियोंके सारधन सतीत्वकी रक्षाकी उचित व्यवस्था की है।

पंडितश्रेष्ठ टाड साहबने कहा है कि, प्राचीन यहूदी जाति स्त्रियोंको अंतःपुरमें नहीं रखती थी; राजपूतानेमें नीचजातिकी स्त्रियें जिस प्रकार घरके कामकाजके लिये कुँएसे जल भरकर लाती थीं और वहाँ जाकर पुरुषोंके साथ वार्तालाप करती थीं वहींसे उनका पति भी वरण हो जाता था, उसी प्रकार प्राचीन यहूदी कुमारियें भी साधारण कुए आदिसे जल लानेके समयमें विवाहका सम्बन्ध निश्चय कर आती थीं, पीछे नीलनदीके भयंकर वनमें नदीके किनारे निवास करनेवालोंका समूह पृथक् होगया, उसी सूत्रसे इजिप्ट (मिसर) में अंतःपुरकी रीति प्रचलित हुई। महात्मा टाड साहबको यह अनुमान था कि सिन्धु और गंगाके निकट निवास करनेवालोंकी जनसंख्या बढ़नेके साथ ही साथ यह प्रथा भी प्रचलित हुई होगी परन्तु उनका कथन है कि जब आर्यजाति मध्य एशियासे भारतवर्षमें आई उस समय उसने वहाँके आचार व्यवहारोंको यहां प्रकाश तक भी नहीं किया. कारण कि उस काल सिथियन स्त्रियोंकी अतिरिक्त स्वाधीनता थी अर्थात् एक २ स्त्री एक समयमें ही बहुतसे पतियोंका सेवन करती थीं। परन्तु भारतकी स्त्रियोंमें तो केवल एकमात्र विवाहकी रीति ही प्रचलित है। भारतवर्षके किसी २ पहाडी देशोंकी स्त्रियें आजतक एक समयमें अधिक स्वामीके साथ भोग करती हैं, ऐसा होनेपर भी राजपूतजातिमें वह रीति दिखाई

नहीं देती । कर्नेल टाड साहब इस बातको कह गये हैं, कि प्राचीन ग्रीक, रोमक, मिसर और चैनेय इत्यादि प्राचीन जातियोंमें अंतःपुरकी रीतिके चलानेसे समाजके ऊपर स्त्रियोंकी प्रधानताका लोप करता है, राजपूतजाति उनके समान निन्दनीय नहीं है; स्त्रियोंके ऊपर सन्मान और यत्न यदि सभ्यताका लक्षण है, तो राजपूतजाति सबसे श्रेष्ठ है, वर्तमान समयमें राजपूतजाति क्षीण कहकर विख्यात है। परन्तु हमारे मतसे वे लक्ष्मीस्वरूपिणी स्त्रियोंके उपयुक्त सन्मानकी रक्षामें उनको नियुक्त कहकर स्त्रियोंको ही सर्वस्व जानते थे।

राजपूतजातिने स्त्रियोंके ऊपर क्यों इतना ऊँचा सन्मान दिखाकर यत्न प्रकाश नहीं किया। स्त्रीजाति स्वामीकी आज्ञाकारिणी होकर स्वामीकी प्रत्येक न्याययुक्त आज्ञाका पालन करै, राजपूतनी दृढतापूर्वक यह दिखानेकी अभिलाषिणी है। कर्नल टाड साहेबने इसका उदाहरण लिखा है कि जिस २ समयमें राजवारामें आपसमें क्लेश तथा जातीय संग्राममें भयंकर रूपसे गडबड मच गया था। जिस समय मेवाडेश्वर राणाने अन्यान्य अधीश्वरोंके साथ सम्पूर्ण ऐश्वर्यको छोडकर अपनी कुटम्बकी मंडलीके साथ वैवाहिक सम्बन्ध बंधनमें पडकर विदेशीय सम्भ्रान्त सामन्तोंको कन्या दी थी उस समयका वृत्तान्त इतिवृत्तमें वारम्बार लिख रहा है कि सादरीके सामन्तको राणाने कन्या दान की थी। कुमेलसे सांसारिक सुखमें बाधा पडा करती है यह बात निश्चित है। सादरीके सरदारके आगे शीघ्र ही यह बात आई. एक समय उसने राणाकी कन्याको बुलाकर कहा—कि "हे राणाकी बेटी पीनेके निमित्त एक पात्र जलका लाओ" राणाकी कन्याने अपने पतिके वचनोंका तिरस्कार करके उत्तर दिया कि " सैकडों वरन हजारों राजेश्वर राणाकी कन्या सादरीके समान सामान्य देशके सामान्य सरदारको जलके पात्रकी देनेवाली नहीं हो सकती।" यह वचन सुनकर वीरश्रेष्ठ सरदारने क्रोधित हो शीघ्र ही उत्तर दिया कि, "अच्छा यदि तुमसे मेरा कुछ भी उपकार नहीं होता तो तुम इसी समय अपने पिताके यहां चली जाओ।" इसके पीछे सामन्तने शीघ्र ही अपने एक दूतको बुलाकर समस्त समाचार राणासे कहनेके लिये कहा और उसी दूतके साथ राणाकी कन्याको भी भेज दिया. उस दूतने जाकर समस्त वृत्तान्त राणाको सुनाया। यह समाचार सुनकर राणाने कुछ ही समयके उपरान्त सादरी सामन्तको अपनी सभामें बुलानेके लिये दूत भेजा। राणा सभासदोंसे युक्त हो राजकार्य कर रहे थे कि इसी समयमें राणाके जामाता सादरीके सरदार वहाँ आ पहुँचे, उनको देखते ही राणाने बडे आदरभाव से उनको अपनी दाहिनी ओर सिंहासनपर बैठाला; सभाके सम्पूर्ण होजानेपर पूर्व इशारेके अनुसार नीचेके आसनके ऊपर खडे हुए युवराजको, अत्यन्त नीचे सेवक अर्थात् सादरीके सामन्तको उसकी रक्षामें तथा सत्कारमें नियुक्त देखकर अपनेको ऊँचे सन्मानका पात्र जान सामन्तने आश्चर्यमें भर विस्मित और विचरित चित्तसे राणाके सम्मुख बडी नम्रतासे शिष्टता प्रकाश की, राणाने उत्तर दिया, कि " अब तुम अपनी स्त्रीको अपने घर ले जाओ, अब यह कभी भी तुम्हें जलका पात्र देनेको मना न

करेगी"। * ऐसा ही हुआ जीवनपर्यन्त परस्परमें जो विश्वास है संक्षेपयुक्तिसे स्त्रीपुरुषोंके पक्षमें इसीको प्रधान रीति जाने।" मनुकी आज्ञाको पालनेके लिये राजपूतजाति तनमनसे यत्न करती है, इस कारण उनमें स्वर्गीय दाम्पत्यभावकी प्रबलता कैसी विलक्षणतासे प्रकाश पा रही है; महामान्यनीय टाडसाहबका भी यही मत है। वह इस बातको लिख गये हैं। इसमें कुछ भी संदेह नहीं है कि "अन्यान्य देशके अन्यान्य समाजमें यह विधि जिस प्रकारसे प्रबल है राजपूतसमाज भी उसी प्रकारकी रीतिसे शासित होता है"। राजपूतोंकी स्त्रियोंमें जैसी पतिभक्ति है, इससे उनके पातिव्रतका यथार्थ परिचय पाया जाता है और किसी जातिमें ऐसा दिखाई नहीं देता; यह पतिव्रत धर्मके ऊपर अधिक सन्मान दिखाती थी। यदि हम लोग असीम पतिभक्तिमती स्वार्थ त्यागकारिणी और पतिमें प्रेमार्थिनीके चित्र देखनेकी इच्छा करैं तो सीताजीके आलेख्यकी ओर ध्यान देना चाहिये, त्रेतायुगमें वाल्मीकिजी सीताजीके चरित्रोंको जिस भावसे चित्रित कर गये हैं, उसकी कल्पना [illegible] और हृदयग्राही स्त्रियोंके चरित्र मिलटन प्यारे डाइज केलष्ट अर्थात् स्वर्गभ्रष्ट काव्यमें भी दृष्टि नहीं आता। महात्मा रामचन्द्रजी अपनी प्यारी स्त्री सीताजीको [illegible] जानेके अभिलाषी हुए थे, उस समय सीताजीने उनकी सहगामिनी [illegible] होनेके लिये अपने स्वच्छ हृदयसे कहा था—

* स्वामीके प्रति स्त्रीजातिका क्या कर्तव्य है उसके सम्बन्धमें यहांपर हम दो एक प्रमाण देते हैं।

"या स्त्री भर्तुरसौभाग्या सौभाग्याय च सर्वतः। शयनं भोजनं तस्या न सुखं जीवनं वृथा॥
यस्या नास्ति प्रियप्रेम तस्या जन्म निरर्थकम्। तत्किं पुत्रे धने रूपे सम्पत्तौ यौवनेऽथवा॥
यद्भक्तिर्नास्ति कान्ते च सर्वप्रियतमे परे। साऽशुचिर्धर्महीना च सर्वकर्मविवर्जिता॥
पतिर्बन्धुः पतिर्भर्त्ता दैवतं गुरुरेव च। सर्वस्वाच्च गुरुः स्वामी न गुरुः स्वामिनः परः॥
पतिभक्तिविहीना या भस्मीभूतं निरर्थकम्। पतिसेवा व्रतं स्त्रीणां पतिसेवा परं तपः॥
सर्वदेवमयः स्वामी सर्वतीर्थमयः शुचिः। सर्वपुण्यस्वरूपश्च पतिरूपी जनार्दनः॥
या सती भर्तुरुच्छिष्टं भुंक्ते पादोदकं सदा। तस्या दर्शमुपस्पर्शं नित्यं वाञ्छन्ति देवताः॥

ब्रह्मवैवर्तपुराण, ५१ अध्याय।

"भर्ता हि दैवतं स्त्रीणां भर्त्ता च गतिरुच्यते। जीवपत्न्याः स्त्रियो भर्त्ता दैवतं प्रभुरेव च॥
या धर्मचारिणी नारी पतिव्रतपरायणा। नानुवर्तेति भर्त्तारं सा सद्भिर्न प्रशस्यते॥
पतिव्रता भर्तृपरा नारी भर्तृपरायणा। इह कीर्तिं परां प्राप्य प्रेत्य स्वर्गे महीयते॥"

वह्नि पुराण.

"स्वामिसाध्वी च या नारी कुलधर्मभयस्थिता। कान्तेन सार्द्धं सा कान्ता वैकुंठं याति निश्चयात्॥"

ब्रह्मवैवर्तपुराण १८ अध्याय.

"सा भार्या या गृहे दक्षा सा भार्या या प्रियंवदा। सा भार्या या पतिप्राणा सा भार्या या पतिव्रता॥
नित्यं स्नाता सुगन्ध्या च नित्यञ्च प्रियवादिनी। अल्पभुक् स्वल्पभाषी च सततं मंगलैर्युता॥
सततं धर्म्मबहुला सततञ्च पतिप्रिया। सततं प्रियवक्त्री च सततं चर्तुकामिनी॥
पितृदेवक्रियायुक्ता सर्वसौभाग्यवर्द्धिनी। यस्येदृशी भवेद्भार्या देवेन्द्रो न स मानुषः॥"

गरुड पुराण, १०८ अध्याय।

"पिता, माता, आत्मीय और मित्रोंका आदर सहित सम्भाषण, प्रीति यह स्त्रियोंके लिये सुखका देनेवाला नहीं, एकमात्र पति ही स्त्रियोंको संसारमें सुखका निदान और मोक्षका देनेवाला है। यदि आप आज अवश्य ही वनको जायँगे तो मैं भी आपके आगे आगे चलकर पैरोंसे कुशाओंके अंकुरोंको निर्मूल कर मार्गको सरल कर दूंगी।

निर्जन वनमें आनन्द सहित आपकी सेवा करूंगी, मधुर मलयपवनसे चलायमान हुए फूलोंके सौरभसे आमोदित प्रत्येक कुंजोंमें भ्रमण करके मैं अत्यन्त ही सुखी हूँगी। जब आप यहां न रहकर मेरी रक्षा नहीं कर सकते तब मेरे लिये आत्मीय स्वजनोंका क्या प्रयोजन है? आज मैं अवश्य ही आपके साथ चलूँगी; मेरा जब ऐसा विचार है तब आप मुझे साथ चलनेमें क्यों बाधा देते हैं? वनके फल मूलोंको खाकर मैं जीवन धारण करूँगी; मेरे साथ चलनेसे आपको कुछ भी कष्ट नहीं होगा, मैं आपके साथ चलनेमें किसी भांतिका क्लेश नहीं मानूंगी और वनके कन्द मूल फल खानेमें कभी अनिच्छा प्रकाश नहीं करूंगी।

इस प्रकारसे मैं सहस्र वर्ष तक व्यतीत कर सकती हूँ; परन्तु प्रीतम! आपके विरहमें स्वर्ग भी मुझे सुखका देनेवाला नहीं है।

दोहा—प्राणनाथ करुणायतन, सुन्दर सुखद सुजान।
तुम विन रघुकुल कुमुद विधु, सुरपुर नरक समान ॥

स्वामी! मैं आपके चरण छूती हूँ मेरे ऊपर दया करो, मैं उस गहन वनको पित्रालय स्वरूप जानकर वहां निवास करूंगी। मेरी अब कोई इच्छा नहीं है. केवल आपके चरणकमलोंका सर्वदा दर्शन होता रहै यही मेरी अभिलाषा है. मेरे इस अनुरोधकी आप रक्षा कीजिये। वनके बीचमें मैं किसी समय भी शोक प्रगट नहीं करूंगी, आपको कंठग्रही स्वरूप नहीं हूंगी। राघव! यदि आप इस दासीकी इस प्रार्थनाको स्वीकार न करेंगे तो अवश्य ही मैं प्राण त्याग दूंगी।"

हिन्दुओंके चरित्रोंको जाननेवाले महात्मा टाडसाहबने इस बातको लिखा है कि विलसन साहबने जो हिन्दूजातिके नाटकोंका अनुवाद किया है उससे उन्होंने प्राचीन हिन्दुओंके आचार विचार विशेषकर स्त्रीपुरुषोंका परस्पर प्रेम परस्पर स्वामी और नारीका विश्वास तथा उनका अकृत्रिम प्रेम इस बातको सर्वसाधारण अंग्रेज जातिपर भलीभांतिसे प्रगट कर दिया है. उत्तर रामचरित्र, विक्रमोर्वशी और मुद्राराक्षसमें इस विषयके अनेकों उदाहरण पाये जाते हैं, दूसरे ग्रन्थोंमें भी गृहस्थ हिन्दुओंके कुटुम्बोंमें पतिके ऊपर स्त्रियोंकी प्रबल प्रेमभक्ति विलक्षणरूपसे दीखती है शेक्सपियरके मर्चेण्ट आफ वेनिस नामक नाटकमें अन्त न्यायके समान चन्दनदासने जब अपने प्यारे भाईकी रक्षाके लिये प्राणदंडकी आज्ञा प्राप्त की थी और उनकी स्त्री अपने इकलोते पुत्रको साथ लेकर स्वयं वधस्थानमें आई तब नीचे लिखे अनुसार बातचीत हुई।

चन्दनदास।—प्रिये! तुम यहां क्यों आई? पुत्रको अपने साथ लेकर घर चली जाओ।

स्त्री।—नाथ! क्षमा करो—आप भिन्न जगत्में प्रस्थान करते हैं; आप क्या दूर नहीं जाते हैं? फिर क्या नियत समयमें आपके चरणकमलोंका दर्शन कर-सकती हूं? इस समय साधारण बातोंसे मेरी बिदाका कार्य शेष नहीं हो सकता और आपके सुख दुःखकी भागिनी कभी आपको इकला नहीं जाने देगी।

चन्दनदास।—यह क्या बात है?—तुम क्या कह रही हो?

स्त्री।—आपके साथ ही साथ मैं भी अपने प्राणत्याग करूंगी?

चंदनदास।—मनमें भी ऐसी बातको स्थान नहीं देना,—हमारी सन्तान अत्यन्त बालक है उसको कौन स्नेहसहित लालन पालन करेगा?

स्त्री।—मैंने घरके देवताओंके चरणकमलोंमें इसको समर्पण किया वह इसको आश्रय देनेमें विमुख न होंगे,आप ऐसा विचार न करें—हे वत्स! आओ अपने पिताको सदाके लिये बिदा दो।"

पंडितवर टाडसाहब इन दोनों अंशोंको उद्धृत कर गये हैं, हम लोग इसी भाँति आर्यजातिमें शास्त्र, पुराण, इतिहास और काव्योंसे सैकडों हजारों हिन्दू स्त्रियोंके पति-व्रतधर्म पालनेका वृत्तान्त पा चुके हैं. जिनको सुनकर अत्यन्त आश्चर्य होता है, संसारमें प्रत्येक जातिमें ही स्त्रियोंके पक्षमें शिक्षा देनेवाले उदाहरण प्रकाश कर सकते हैं; परन्तु यहां तो उनका कुछ प्रयोजन नहीं है। विलसन, जोन्स, कोलब्रुक, ग्रिफिथ, सेरिंग, टार्न, काडयेल, मानियार, बिलयमस और भट्ट मोक्षमूलर आदिने टाडके समान एक वचनसे हिन्दूस्त्रियोंकी पतिसेवा, पतिभक्ति, पतिप्रेम और दाम्पत्यसुखका निदर्शन पूर्ण संस्कृतकाव्योंका अंग्रेजीमें अनुवाद करके विलायतके निवासियोंको भलीभाँतिसे विदित करा दिया है, कि आर्यास्त्रियोंके समान साध्वी सती स्त्रियें दूसरी जातिमें आजतक देख-नेमें नहीं आई। भट्ट मोक्षमूलर कहते हैं, कि यदि संसारमें सती स्त्रियें हैं तो एकमात्र भारतमें हैं, हिन्दुओंके अंतःपुरमें हैं, विलायती शिक्षा पाये हुए आजकलके नवीन भार-तीय गण चाहें जो कुछ क्यों न कहें, हम निर्भय होकर कहते हैं कि एकमात्र अंतः-पुरकी रीति ही—केवल स्त्रियोंकी न्यायमतसे स्वाधीनताकी सीमा दिखाकर आजतक हमारी इस अवनतिकी दशामें भी हमारी भगिनी, स्त्री और कन्याका संसारमें उन विश्वपूजनीय आर्यस्त्रियोंके गौरवकी रक्षा कर रही है। जिस दिन देखोगे कि पींजरेमें रहनेवाले पक्षियोंने द्वार तोड़ दिया है, जिस दिन देखोगे कि कृतविद्या कहकर अभि-मानी आसुरिक सभ्यतामें दीक्षित हुए विद्यार्थी विजातिके अनुकरणसे आर्यजातिकी अमृतमय फलकी रीति तोड़ कर अबलाओंके कुलकी पूर्ण स्वाधीनता केवल एकमात्र सबल पुरुषजातिने विचारशून्य होकर दे दी. उसी दिन देखोगे कि, आर्यावर्त्तकी स्त्रियें विला-

यती स्त्रियोंके समान अपने सत्त्व और अधिकारको लेकर महा आन्दोलन मचा रही हैं; उसी दिन जानोगे कि आर्यावर्त्तकी स्त्रियोंके गौरवका सूर्य चिरकालके लिये अस्त हो गया; उसी दिन जानोगे कि "सती" शब्दका अभिधान भारतसे लुप्त हो गया. यह बात तो सत्य है कि हम कुछ भविष्यद्वक्ता नहीं हैं, परन्तु जो स्त्रियोंके चरित्रको जानते हैं, जिन्होंने विलायती जगत्‌की सामाजिक अवस्थाके यथार्थ तत्त्वको जान रक्खा है, जो विलायती स्त्रीपुरुषोंके हृदयके भावको जानते हैं, वह अवश्य ही हमारी उक्तिको समर्थन करेंगे ।

महामाननीय टाडसाहब पीछे इस बातको लिखते हैं कि केवल देवीमें जैसी पतिभक्तिकी पराकाष्ठा थी-वह स्वामीके ऊपर स्त्रीका अनुराग ऊँचे हृदयमें चूडान्त तक दिखागये हैं; अन्य समस्त जातियोंमेंसे किसी जातिके इतिहासमें इस भाँति दिखाई नहीं देता; उसके पढनेसे राजपूत-बालाओंके चरित्र कैसे थे और समाजके ऊपर उनका प्रभुत्व तथा सामर्थ्य किस प्रकार था वह भलीभाँतिसे जाना जाता है ।

दिल्लीके शेष हिन्दूसम्राट् चौहानजातीय पृथ्वीराज समेताकी राज्यकन्याको हरण करके ले गये, भागनेके समय जो सेना उनके पीछे रक्षा करनेके लिये गई थी, महोबानामक स्थानमें चन्दाइलजातीय राजा परिमालने उसको पकडकर मार डाला । इसी अपमानका बदला लेनेके लिये चौहान बादशाहने उस कुमारीको महलमें लाकर शीघ्रतासे सेनाको आगे कर उसके राज्यकी शेष सीमामें स्थित चन्दाइल राज्यपर आक्रमण किया और सिरसानामक स्थानमें * अपमान करनेवाली सेनाको नष्ट कर दिया; जब पृथ्वीराज इस भाँतिसे प्रतिहिंसा करनेमें प्रवृत्त हुए, तब चन्दाइलने एक सभितिको बुलाकर रानी मालिनी देवीके परामर्शके अनुसार आल्हा और ऊदल नामक अपने प्रधान दो सामन्तोंको गैरहाजिर कहकर पृथ्वीराजके पास एक महीनेके लिये समर न करनेकी प्रार्थनाका विचार किया । महोबेके प्रधान राजकविके भ्राताने दूतरूपसे आगे बढकर देखा, कि चौहान पृथ्वीराज पहोजनदीके पार जानेका उपाय कर रहे हैं । कविश्रेष्ठने पृथ्वीराजके साथ साक्षात् कर नजर देनेके उपरान्त यथार्थ राजपूतोंके विषयमें इस प्रकारकी असहाय अवस्थामें स्थित छिन्न भिन्न राज्यपर आक्रमण करना अत्यन्त बुरा कार्य बताकर समर मुलतूवी करनेके लिये उनसे विशेष आग्रह किया । भारतसम्राट् इस बातपर राजी हो गये और उन्होंने कुछ दिनके लिये संग्राम नहीं करूंगा यह प्रतिज्ञा कर उस श्रेष्ठकविको बिदा दी. पीछे अपने प्रधान कवि चन्दसे इसबातका प्रश्न किया कि ये दोनों वीर कौन हैं और इन आल्हा और ऊदलने किस कारण महोबेको छोडकर अन्य स्थानमें गमन किया है, विख्यात चंदकविने कुछ देरके पीछे उत्तर दिया कि वत्सराजनामक एक महावीर्य्यी पुरुष महोबेके सेनापति थे, एक

* पहोजनामक स्थान यहां स्थापित है । इस समय यह देश दतियाके बुन्देलाराज्यके आधीन है । महामाननीय इस समरक्षेत्रको देखनेके लिये गये थे ।

समय बनैली गौंदजातिने महोबेके राज्यको परास्त किया और चन्देले परिमाल प्राण-रक्षाके लिये वहांसे चले गये, तब प्रधान सेनापति वीरश्रेष्ठ वत्सराजने अपने बाहुविक्रमसे गौंदजातिको परास्त कर तथा उनकी राजधानीमें अपना पूरा अधिकार जमाकर महोबेका राज परिमालको प्रत्यर्पण कर उन्हींके चरणतलमें अपना ममोहत जीवन विसर्जन किया. राजा परिमाल इस जयसे बडे प्रसन्न हुए और महोबेमें आकर वत्सराजकी भक्ति और वीरत्वके पुरस्कारमें वत्सराजके दोनों पुत्र आल्हा और ऊदलको आलिंगन कर उनके निमित्त महान पद और भूवृत्ति दी, रानी मालिनी देवी भी इन दोनोंको अपने प्राणप्रिय पुत्रके समान जानकर उनपर बडा स्नेह और ममता करने लगी।

यह दोनों वीर सामन्त विख्यात कालिंजर दुर्ग और वहांकी भूवृत्तिके अधिकारी हुए, दैवात् एक समय वहां परिमाल गये और आल्हाके पास एक श्रेष्ठ तुरंगिनी देखकर उसके लेनेकी इच्छा की, आल्हाने उसको देना न चाहा, इस पर रुष्ट हो परमालने कहा तुम दोनों मेरे देशसे निकल जावो, यह वचन सुन दोनों वीरोंने तत्काल वहाँसे अपनी गर्भधारिणी माताके सहित गमन किया और यह बात सोचकर कि परिमालने पुरोहित माहिलके कहनेसे हमको यह दंड दिया है इस कारण उसकी नगरीमें आग लगा दी, और माता तथा अपनी स्त्रियों सहित दोनों वीर कन्नौजराजकी सभामें गये कान्य-कुब्जपतिने बडे आदर सत्कारसे अपने राज्यमें रख भूवृत्तिका अधिकारी किया।

जिस समय भारतके शेष हिन्दू राजेश्वर पृथ्वीराजने महोबेपर आक्रमण किया उस समय अपने नगरकी रक्षाके लिये मालिनी देवीने दोनों वीर आल्हा और ऊदलके पास कन्नौजमें अपने एक दूतको भेज दिया, उस श्रेष्ठ दूतने उस स्थानपर जाकर उन दोनों वीरोंसे क्या कहा था, महामाननीय टाड साहबने चन्दकविके ग्रन्थसे निम्न लिखितरूपसे उसे उद्धृत किया है,-" चौहान सम्राट्ने महोबेके भीतर अपने डेरे डाल दिये हैं, नरसिंह और वीरसिंहने समरकी अग्निमें अपना जीवन विसर्जन किया है, शिरसा देश भस्म हो गया है और परिमालका राज्य भी चौहानोंके द्वारा विध्वंस होता चला है। एक महीनेके लिये समर रोका गया है, इस समय इस महाविपत्तिसे आप ही हमारा उद्धार करैंगे; आपकी सहायताकी इच्छासे ही मैं यहां पर आया हूं। हे वत्सरा-जके दोनों पुत्रो ! सुनो, जबसे आपने महोबेको छोड दिया है, उसी दिनसे मालिनी-देवी घोर शोकमें मग्न होकर समय व्यतीत कर रही है; उनकी दृष्टि सदा कान्यकुब्जकी ओर ही रहती है और जब आपका स्मरण होता है तब उनके नेत्रोंसे बराबर आंसु-ओंकी झडी लग जाती है और वह दीर्घ श्वास लेकर यह कहा करती हैं; कि चन्देलोंका यशका गौरव अस्त होता चला है ! हे वत्सराजनन्दन ! जब आप वहां जायँगे तब आपका हृदय भी अत्यन्त दुःखी होगा, अब भी समय है, आप महोबेको न भूलिये।"

कविके यह वचन सुनकर वीरश्रेष्ठ आल्हाने उत्तर दिया कि, महोबा चाहे विध्वंस हो जाय और चंदेलोंका भी मूलसहित वंश नष्ट हो जाय, परन्तु हम किसी प्रकार भी

महोबेमें नहीं जायँगे कारण कि विना अपराध ही हमें हमारी मातृभूमिसे निकाल दिया है उनके कार्यमें हमारे पिताने अपने जीवनका बलिदान कर दिया और हमारे मृतक पिताने ही उनके राज्यकी सीमाका विस्तार कर गये हैं । विश्वनिन्दक पुरीहर पतिको ही समरक्षेत्रके सन्मुखसे दिल्लीके महावीरोंके विरुद्धमें तुम्हारी सेनाको चलानेके लिये कह गये हैं । हमारे मस्तकपर महोबा स्तम्भस्वरूप था; हमारे द्वारा ही गौन्द-गण परास्त होकर उनके प्रबल दुर्ग देवगढ और चांदबाटी महोबेके आधिकार भुक्त हुए हैं । हमने यादुनोंके विरुद्धमें समरभूमिमें जय प्राप्त की है, हिन्दोल * को विध्वंस कर दिया और परिमालकी विजय पताकाको कात्वाइरदेशमें उडा दिया है । हम विजयी बीरोंने कुशावहरके जयके स्रोतको रोक दिया था मुलतानके अमीरोंने उनके सन्मुख ही रणमें भंग डाल दिया था । गयाके समरमें हमें जयलक्ष्मी प्राप्त हुई थी—और वेगुया राज्य × बीचके देशों ? में भयंकर अग्निने उनको भस्म कर मेवात + को भी समभूमि करादिया था । वत्सराजने अपने ही बाहुबलसे दश राजाओंको परास्त कर उनके धनको लेकर महोबेके अधिपतिको दे दिये थे । अब हमने भी यही कार्य किया था, परन्तु उसका पुरस्कारस्वरूप हमलोग अपनी जन्मभूमिसे निकलकर महोबेके अधिपतिके कार्यमें सातवीं वार रणभूमिमें शत्रुओंके अस्त्राघातसे घायल हुए हैं और पिताके स्वर्ग जानेके पीछे चौबीस बार समरभूमिमें उतरे हैं; सात संग्रामोंमें जय प्राप्त करके ऊद-लने जयपत्र परिमालके हाथमें समर्पण करादिया है । तीन बार मेरी मृत्यु सन्मुख आ पहुँची थी । उनके राज्यके सन्मानसे मैंने इस प्रकारकी रक्षा की है—परन्तु यह निकालना इस समय उसका पुरस्कार है । ”

कविने उत्तर दिया कि “परिमाल जिस समय अत्यन्त बालक थे उनके पिताका उसी समय देहान्त हो गया, उन्होंने प्राणत्याग करनेके समय अपने पिता वत्सराजके हाथमें उनको समर्पण कर दिया । इस कारण आपके पिता परिमाल भी पिताके ही समान हैं; जब वह अत्यन्त विपत्ति पड़नेसे आपको बुला रहे हैं तब आप उन पिताके पुत्र होकर उनको किसी प्रकार भी न छोडें । जो राजपूत विपत्तिके समयमें अपने

---

* हिन्दोल देश यादुनगरकी राजधानी वियानाके आधीनमें स्थिर एक नगर है । यादुनगरियोंके उत्तराधिकारी गण आजतक करौली और श्रीमथुराजीमें अधिनायकत्व कररहे हैं ।

× चौहानराजके अधीनमें स्थित प्रधान वीर अम्बेरके राउ पूजाउन यह जयपुर राज्यके पूर्व पुरुष थे।

? चन्दकविने अपनी पुस्तकमें इस स्थानका नाम “चन्दाइल” रूपसे वर्णन किया है । अमलवाराके सोलंकी राजवंशकी एक शाखा बाघेला राजपूतोंके द्वारा यह राज्य प्रतिष्ठित था, इस समय इस देशका नाम बाघेलखण्ड है और इसकी राजधानी रेउयानामसे विख्यात है ।

+ दो—आव गंगा और यमुनाके मध्यमें है ।

दिल्लीसे दक्षिण पश्चिमको स्थापित है । इस स्थानके निवासी अत्यन्त ही दुष्टचरित्रवाले हैं और बहुत निवासियोंने तो मुसलमानधर्मको ग्रहण कर लिया है । पृथ्वीराजके शासनके समयमें मेवातका अधीश्वर उसके आधीनमें कर दिया था ।

अधीश्वरोंको छोड देतेहैं वह जन समाजमें निंदित होते हैं.अपने पिताकी उस राजभक्तिको आप स्वयं धारण कीजिये, आपने इस संसारमें जिन महा उत्सवोंमें आनंदित हो सैकडों हजारों रुपये खर्च किये थे, न जाने इस समय उनपर घोर विपत्ति पडनेसे आप कान्यकुब्जमें किस प्रकारसे रहते हैं ? रानी मालिनी देवी आपको अपने प्राण-प्रिय पुत्रके समान जानती हैं, इस समय उन्होंने आपके बुलानेके लिये विशेष आग्रह किया है । आपकी माता नलिनी देवी सर्वदा उनके सन्मुख प्रतिज्ञा करती रहती है कि आपके जीवन तथा महोबेपर विपत्ति पडनेके समय वह दोनों कुँवर कभी भी अलग नहीं रह सकते. रानीने इस समय उस प्रतिज्ञाके पूर्ण करनेके लिये उनको याद दिलाई है, प्रतिज्ञा भंग करनेवाले मनुष्यसे इस संसारमें लोग घृणा करने लगते हैं और जब-तक चंद्रमा सूर्य उदय होते रहेंगे तबतक उसको नरकमें निवास करना होता है । "

देवलदेवीने रानी मालिनीदेवीके भेजे हुए दूतके मुखसे यह समाचार सुनकर कहा, कि "चलो मैं इसी समय महोबेको चलती हूं ।" आल्हा चुप रहा; ऊदलने ऊँचे स्वरसे कहा कि "महोबेका चाहे सर्व नाश क्यों न हो जाय–जिस दिन परिमालने हमको वहांसे निकाल दिया था वह दुःखके दिन क्या हम भूल सकते हैं ? क्या महोबेमें फिर जायँगे ?–कभी नहीं चाहे वह विध्वंस हो जाय, अथवा चाहे पहली सी अवस्था रहै, हमारे लिये तो दोनों ही समान हैं, कान्यकुब्ज ही इस समय हमारा वासस्थान है ।"

पुत्रके ऐसे वचन सुनकर देवलदेवीने कहा, "हाय ! विधाता ! तैंने मुझे बंध्या क्यों न किया, राजपूत जातिके जानेयोग्य मार्गका त्यागन करनेवाले तथा विपत्तिग्रस्त राजा-ओंकी सहायता न करनेवाले ऐसे पुत्रको गर्भमें धारण करनेसे क्या होता है ।" वीरांगना देवलदेवीके दोनों नेत्रोंसे अग्निकी चिनगारियें निकलने लगीं, समस्त शरीर मारे क्रोधके काँपने लगा, शोक और दुःखके मारे हृदय टुकडे २ होने लगा, पृथ्वीकी ओर देखकर फिर कहना आरंभ किया "हा जगदीश्वर ! तैंने इन यशनाश करनेवा-लोंके लिये मुझे गर्भकी पीडा क्यों दी थी कुलांगनाओंकी सन्तानोंका हृदय युद्धके नाम-मात्रसे ही तथा राजपूत जातिका हृदय अनन्त आनंदसे पूर्ण हो जाता है–परन्तु पितृधर्म भ्रष्ट !–तू कभी भी वत्सराजका पुत्र नहीं है,–ऐसा विदित होता है कि किसी कुत्तेने मुझे आलिंगन किया था जिससे कि तू उसीके औरससे उत्पन्न हुआ है ।

गर्भधारिणी माताके इस वीरतापूर्ण वचनोंने दोनों वीरोंको चैतन्य कर दिया । उन दोनों वीरश्रेष्ठोंने खेदित हो खडे होकर कहा कि " जब हम शत्रुओंके ग्रासमें पडकर महोबेकी रक्षाके लिये प्राण त्याग देंगे और शरीरमें घाव लगाकर वीरत्वताके प्रकाश करनेवाले कार्यमें अपने नामको अमर करेंगे; जब हमारा मस्तक संग्राम भूमिमें पडा होगा; जिस समय हम रणभूमिमें बडे २ वीरोंके साथ समरके आलिंगनसे लिप्त और साहसी वीरोंके अनुकरणसे महावीर चौहानोंके सामने दोनों ओरके रुधिरको बहादेंगे तब हमारी माता प्रसन्न होगी ।"

राजपूत वीरांगना देवलदेवीकी वीरबालाके समान वाणीने कविदूतके मनोरथको सिद्ध कर दिया । दोनों वीर भ्राताओंने शीघ्र ही कान्यकुब्ज पतिके निकट * जाकर महोवेमें जानेके लिये आज्ञा माँगी; राजाने उसी समय उनके सन्मानके लिये राजप्रसाद देकर वहां जानेका हुकुम दे दिया । उनके साथ ही कविदूतको राजाने पुरस्कार दिया × कान्यकुब्ज राजाने विदा देनेके समय दोनों भाइयोंको "राजपूत जातिके कर्त्तव्य पालन" करनेके लिये भलीभाँतिसे समझा बुझा दिया । सेनासहित कान्यकुब्जसे बिदा हो मार्गमें जाते समय अनेक कुलक्षण दिखाई दिये, यह देखकर कविवर दूत अत्यन्त भयभीत हुआ, तब वीरश्रेष्ठ आल्हाने साहसके साथ कहा कि "कविवर ! यद्यपि घोर अंधकारके होनेसे आप भविष्योदयको नहीं देख सकते हैं, परन्तु साहसी बीरोंके सन्मुख सभी कुलक्षण सुलक्षण रूपसे दिखाई देते हैं । यद्यपि हमारे पक्षके सम्पूर्ण वीरोंके निधन और चन्देला जातिके गौरवका सूर्य सदाके लिये अस्ताचलपर पहुँच गया है, परन्तु भीतर ही भीतर हम इस प्रकारके विचार कर रहे हैं; तथापि इन लक्षणोंको अमंगलका करनेवाला नहीं मानते हैं।" दाहिनी ओरको इकले सारसका जाना; उडते हुए शकुनि(पक्षी) के मुखसे भोजनका गिर जाना, चकवे×का अपनी स्त्रीके विरहमें निवास, समरकी तुरंगिनियोंके नेत्रोंसे आँसुओंकी धाराका निकलना, समस्त शृगालोंका रुदन करते हुए उन्मत्त हो जाना; सूर्यके बीचमें कालापन दिखाई देना इत्यादि कुलक्षणोंका वर्णन कविवर दूतने किया; तब कान्यकुब्जकी सेनाके मुखमंडलपर उदासी आगई, परन्तु आल्हाने राजपूत बीरोंके समान कहा कि "यद्यपि यह सम्पूर्ण कुलक्षण मृत्युकी सूचना देनेवाले हैं परन्तु साहसी बीरोंके लिये और सरल विश्वासियोंकेलिये वह मृत्यु दुःखका कारण नहीं है, राजपूत जातिके जीवन मार्गपर अनेक विपत्तियें पडती हैं, परन्तु राजपूत उनकी ओर आंख उठाकर भी नहीं देखते । फिर अब जो कुछ भी हो, तन मनसे समर भूमिमें डटेंगे।"

नरश्रेष्ठ आल्हा और ऊदल महोबेके समीप ही आगये हैं यह सुनकर चन्देले राजा परिमालने अत्यन्त प्रसन्न हो उनको आलिंगन किया और रानी मालिनी देवीने वीरांगना देवलदेवीको आदर सहित लानेके लिये क्षणमात्रका भी विलम्ब न किया । साक्षात् होनेके उपरान्त सभी राजधानीमें चले आये। पहली पहल बहुतसे मूल्यवान द्रव्योंको देकर समाधान किया । रानी मालिनीदेवीने आल्हाको बुलाकर उसके शिरपर हाथ

---

* इस समय जयचन्द कान्यकुब्जके राजा थे । बाहुबल, वीरत्व और सन्मानमें वह भारत सम्राट् पृथ्वीराजके निम्न पदवर्ती थे । ११९३ ईसवीमें शहाबुद्दीनने पृथ्वीराजको पराजय कर जयचन्दको कान्यकुब्जसे निकाल दिया । जयचन्द भागनेके समय गंगाजीमें कूदकर अपने प्राण दे दिये ।

× कविदूतके दो ग्राम थे । एक तो हस्ती और एक मूल्यवान परिच्छद मिला था ।

× लोहितवर्णके बडे हंस । राजपूत इनको कार्यसिद्धिका लक्षण जानते हैं ।

धरकर आशीर्वाद * दिया; आल्हाने हाथ जोडकर प्रतिज्ञा की कि महोबेकी जय पराजयके ही ऊपर हम जीवन धारण करते हैं। रानीने एक मुट्ठी मोतियोंकी वर्षा कर उसके सेवकोंको बाँट दिये × जो कविवर कान्यकुब्जमें जाकर निकाले हुए दोनों वीरोंको महोबेमें लाया था उसने भी शीघ्र ही कार्यसिद्धिके पुरस्कारमें चार ग्रामोंको पाया।

हमने काव्यमें इसके उपरान्त भारतसम्राट् पृथ्वीराजके डेरोंकी घटना देखी। सेनासहित दोनों वीरोंके आनेका समाचार सुनकर कविश्रेष्ठ चाँदने पृथ्वीराजसे कहा कि "समरस्थितिका समय बीत गया है इस कारण क्या तो आप शीघ्र ही चंदेलेपति परमालके पास दूत भेजिये जिससे कि वह समरभूमिमें आजायँ और नहीं तो महोबेसे चले जानेकी आज्ञा दीजिये।" कविवरने उसी समय आर्यक्षेत्रके शेष आर्यसम्राट् परमालके पास एक दूतको एक पत्र लेकर भेज दिया। परमाल आहत हुई सेनाको भी निर्दयीपनेसे नियत कर रहा था, इस समरके उपस्थित हुए पत्रमें भी सबसे आगे यही लिखा था। पृथ्वीराज इसको लिखकर भी शान्त न हुए जिस समय तक समरको स्थित रखनेकी बात निश्चय हुई थी, उन्होंने राजपूत जातिकी रीतिके अनुसार और भी सात दिन तकका समय दिया है "और बहुत दिन हुए कि जब कन्नौजसे सेना सहायताके लिये आई थी उस समय सिंहनाद भी नहीं किया था। यदि परमाल युद्ध करनेकी इच्छा छोड दे तो वह अपनेको दिल्लीके आधीनमें विचारैं अथवा वह महोबेको ही छोड दें।

वीरश्रेष्ठ परमालने निराश हृदय हो उस शत्रुके भेजे हुए समाचारको ग्रहण किया। परन्तु कुछ ही कालके उपरान्त उन्होंने अपनी सम्पूर्ण सेनाके वीरोंको बुलाकर कहा कि चौहानराजके दूतको बुलाकर कहो कि "मैं महीनेके पहले दिन रविवासरमें उनके साथ समरभूमिमें साक्षात् करूंगा।"

शुक्रवारके दिन ही पृथ्वीराजके शंखध्वनि करते ही जयके डङ्केके बजनेके साथ ही समरस्थित समयकी समाप्ति सुनाई आई ✤ राजपताकोंके उठते ही सारी सेनाके मनु-

---

* कर्नेल टाड साहब टीकामें लिख गये हैं कि एकमात्र पूजनीय स्त्री और पुरोहित आशीर्वाद देते हैं। आशीर्वाद पात्रके मस्तकपर सुवर्ण वा चांदीकी मुद्रा स्थापित कर दोनोंको मिलानेसे ही आशीर्वाद हुआ। वह सुवर्ण वा चांदीकी मुद्रा दीन दुःखियोंको बांट दी जाती है।

× यह रीति अत्यन्त प्राचीन है और "नत्थरावली" के नामसे विख्यात है। महात्मा टाडसाहब लिख गये हैं कि नित्य उनके शिरके ऊपर पात्र पूर्ण चांदीकी मुद्रा आशीर्वादके समयमें वर्षाई जाती हैं और फिर वह सेवकोंको बांट दी जाती हैं। अन्तःपुरमें निवास करनेवाली रानी और राजकुमारियें इस प्रकारसे अपने २ सेवक और पुरोहितोंको प्रतिनिधिरूपसे भेजकर कर्नेल टाडसाहबको आशीर्वाद देती थीं।

✤ राजपुत जातिमें समरके समयमें यह रीति है कि तीन बार शंखध्वनि करके और तीन बार विजयका डंका बजाकर पीछे समरभूमिकी ओरको सेनाको चलाते हैं. यदि उसी भाँति शंखध्वनि और विजयके डंके बजनेके पीछे यदि किसी कारणसे सेना न चलाई जाय, तो राजवस्त्रागारके सन्मुख एक बकरेकी बलि दी जाती है।

ष्य उसके चारों ओर आकर इकट्ठे हो गये । सभीने एक एक ठंढे जलके पात्रको ग्रहण किया, रणके आनन्दसे उनके हृदय उन्मत्त हो गये । सभीने अपने २ शिरमें सुगन्धित तेल लगाया । "इस ओर विजयके धाममें अप्सरागण समर क्षेत्रमें निहत हुए वीरोंके साथ सम्भावण करनेके निमित्त स्वर्गीय सुगन्धित तेल और सुगंधित द्रव्योंको अपने २ कोमल शरीरमें मलकर नेत्रोंमें अंजन लगाय सजी धजी बैठी हुई बाट देख रही हैं । युद्धकी भेरीका भयंकर शब्द कैलासके शिखर तक पहुँच गया, इस शब्दने शिवजीके भी योगको भङ्ग कर दिया, अपने गलेमें बहुतसे मुंडोंकी मालाओंकी संख्या विचार कर अत्यन्त ही आनंदित हुए । योगिनियोंके आनंदकी सीमा न रही, रण-भूमिमें निहत हुए मनुष्योंके रुधिरपानकी इच्छासे योगिनियोंने महाआनंदित हो नृत्य करना आरम्भ किया, चौहान और चन्देलोंमें युद्ध होता हुआ देख कर मनुष्योंके मांसको भक्षण करनेवाले पिशाचोंने आनंदसे उत्साहित हृदय हो विजय संगीतसे प्रकृतिको भी कंपित कर दिया ।"

राजपूतजातिका यह विचार है कि समरभूमिमें जो मनुष्य प्राणत्याग करते हैं, उन्हें स्वर्गकी अप्सरा बडे आदरसे आकर ले जाती हैं । चन्दकविने इस स्थानपर समरके पहले ही वीर और अप्सराओंके सजनेका वर्णन किया है । वीरोंके अस्त्रोंके शरीर पर सजाते ही स्वर्गकी विद्याधरियोंने अपने २ शरीरोंको अलङ्कारोंसे सुशोभित कर लिया । छोटे छोटे वीर घन्टाओंसे युक्त सरपेच वीरोंके शिरपर लगाये गये,अप्स-राओंने किरीट धारण किये; सैनिकमंडलीने समरकी तुरङ्गिनियोंके ऊपर वेशबन्धन कर दिया; लोहेके जालसे वीरोंके उष्णीष दृढबन्धनसे बँध गये; सुरपुर निवासी गण कनककुंडल और मणिमुक्ताओंकी वेणीको सुशोभित कर रहे हैं, सेनाके नायक जिस समय अपनी २ तलवारोंको निकालैंगे, अप्सरागण उसी समय अपने विशाल नेत्रोंमें अंजनकी रेखा लगावेंगी. साहसी वीरोंके किरच ग्रहण करते ही सुरपुरकी सुन्दरियें अपने मस्तकपर सिंदूरका टीका लगेली वीरोंके ढालको ग्रहण करते ही, अमरकी संगिनियें अपने कानोंमें कुंडल धारण करेंगी । वीरोंके भुजाओंपर उज्ज्वल पीतलके वर्मको धारण करते ही अप्सरागण अपने करकमलोंमें खडुये धारण करेंगी, जिस समय सेना व्याघ्रके नखोंसे अपने हाथोंको सुशोभित करेंगी उसी समय सुवर्णकी अगूँठी और अलंकारोंसे सुन्दरियोंके हाथोंकी प्रभा और भी अधिक प्रकाशमान होगी, वीरोंके बडे बडे वल्लभोंके उठाते ही अप्सरागण युद्धक्षेत्रमें निहत हुए वीरोंके लिये वरमाल्यके बनानेमें विलम्ब न करेंगी; सुन्दरियोंके गलेमें सूंगोंकी माला और वीरोंके गलेमें तुल-सीकी माला विराजमान होगी । वीरोंके धनुषको खैंचते ही सुन्दरियें अपने नेत्रोंके कटाक्षरूपी बाणोंके वर्षानेका उद्योग करेंगी । वीरोंके घोडों पर सवार होते ही अप्स-रायें अपने २ रथोंके सजानेमें लगैंगीं ।

चन्दकवि इस बातको लिख गये हैं कि उन्होंने जिस बातको अपने नेत्रोंसे देखा था; काव्यमें भी उसीका वर्णन किया है । राजपूतगण स्मरणातीत समयसे जातीय

प्रधान कविको त्रिकालदर्शी कहते आये हैं। चन्दकवि भविष्यद्वक्तारूपसे पूजे जाते थे। दुःखका विषय है कि उनके परलोक चले जानेपर रजवाडोंमें फिर इस प्रकारके कविकी अमृतमयी लेखनीसे निकली हुई कविता आजतक दृष्टि नहीं आई। चन्द ही राजपूतजातिके शेष भविष्यद्वक्ता कवि थे।

इस समय महोबेका वृत्तान्त वर्णन करनेके योग्य है। सबसे पहले परमाल प्रधान २ सेनानायक और मंत्रियोंके साथ मिलकर कर्तव्याकर्तव्यके विचारनेमें नियुक्त हुए। परदेके भीतर रानी मलिनदे विराजती थीं। रानी मलिनदेने सबसे पहले क्रोधित हो दीर्घश्वास लेकर कहा, "आल्हाकी जननि! पृथ्वीराजके विरुद्धमें हमारी विजय किस प्रकारसे होगी? यदि हार गये तो सदाके लिये महोबा छोड देना होगा; यदि हम उनके वशमें होना स्वीकार कर कर देना विचार लें, तो अपमानका शेष हो जायगा" देवलदेवीने सन्मुख बैठे हुए वीरोंकी सम्मतिको सुनकर रानीको अनुरोध किया कि, आल्हाने वीरताके गर्वमें भर कर कहना प्रारम्भ किया, "हे मातः! आप अपने पुत्रोंके निवेदनको सुनिये-जो मनुष्य भलीभांतिसे राजभक्तिकी रक्षा करके अपने सम्पूर्ण सुख और स्वार्थोंको छोडकर अपने अधिराजके निमित्त प्राण तक दे देते हैं, वही मनुष्य वीर हैं; उन्हीं मनुष्योंका जन्म धन्य है। मैं केवल परमालके कल्याणकी अभिलाषा करता हूं। मेरे वियोगमें यदि वह * जीवित रहे तो अवश्य ही वह साध्वी स्त्रीके समान आचरण कर पर्वतियोंका अनुकरण करेगी। सम्मलकी सेनाका दल अवश्य ही खंड २ हो जायगा मैंने पूर्वपुरुषोंके रुधिरको इस प्रकारके भावसे चित्रित कर दिया है इससे मेरा नाम इस संसारमें निश्चय ही अमर रहैगा। महाराज! मैंने अपने पुत्र इन्दलको आपके हाथमें समर्पण किया। और जननी देवलदेवीके यशकी रक्षाका भार आपके हाथमें रहा।"

रानी मलिनदे देवीने कहा, " कि चौहानोंकी सेनाकी संख्या जितनी अधिक है, वह लोग उसी प्रकार असीम साहसी हैं; इस कारण उनको कर देकर महोबेकी रक्षा करो।" रानीके इस विचारसे ऊदलका हृदय कंपायमान हो गया और महाक्रोधित हो वीरतामें भरकर रानीको बुलाकर कहने लगा " जिस समय आपने अपनी रक्षामें असमर्थ होकर घायल हुओंकी हत्या की थी उस समय वह चिन्ता क्यों नहीं करी? तब तो मेरी बातको किसीने भी न सुना। यह विचारशक्ति इस समय कहाँसे आई। मैंने उन घायल हुए मनुष्योंको क्षमा करनेके लिये तीन बार प्रार्थना की थी। अच्छा, मेरे शरीरमें जबतक प्राण रहैंगे तबतक महोबेके ऊपर कोई विपत्ति नहीं आवेगी परमाल भी आपके ही निमित्त रणभूमिमें प्राण त्यागकर अप्सराओंके साथ आलिंगन करनेके अभिलाषी हुए हैं।

---

* आल्हाके प्राणत्याग करनेपर उसकी स्त्री सती हो जाय। यही आल्हाका अभिप्राय था। राजपूतजातिमें यह रीति थी कि वह प्रगटमें अपनी स्त्रीका नाम नहीं लेते थे।

वीरमाता देवलदेवीने अपने दोनों पुत्रोंकी यह वीरोचित वीर प्रतिज्ञाको सुनकर वीरांगनाओंके समान कहा, " पुत्र ! राजपूतवीरोंके करने योग्य यही वचन हैं । इस समय केवल वीरता दिखाकर ही अपने पूर्वपुरुषोंके मुखको उज्ज्वल करना बाकी रहा है,–रणभूमिमें घरसे किसानोंके आनेका शब्द कानोंमें सुनाई आ रहा है, इस कारण हम इस समय वृथा समयको खोना नहीं चाहते अवश्य ही शत्रुओंके दलसे ग्रामोंमें भयंकर अग्नि प्रज्वलित हो जायगी । "

चन्देल राज परमालने कहा, कि " आज शनैश्चर है यह बडा शुभ दिन है, कल हम लोग समररूपी समुद्रमें झम्प देकर शत्रुओंके सन्मुख होंगे ।

वीरोन्मत्त आल्हाने राजाके यह वचन सुनकर क्रोधित होकर कहा, " जो विध्वंसोन्मुख ग्रामोंसे प्रज्वलित हुई अग्निकी शिखा और धूमराशिको उडता हुआ देखकर मौन होकर बैठ रहते हैं, वह कभी राजपूत नहीं हैं–जिस राजाका राज्य शत्रुओंसे घिर जाता है यदि वीर पुरुष यह बात देखकर डर जाँय तो उनके शरीर बडे भारी नरकमें पडते हैं। और उनकी आत्मा छः हजार वर्षतक भूतयोनिमें पडकर संसारमें घूमती रहती है, परन्तु जो वीर अपने कर्त्तव्यको पालन करते रहते हैं, अंतमें उनको सूर्यलोकमें स्थान मिलता है और उनकी कीर्ति अक्षय रहती है । "

भीरुता और निष्ठुरताके अनुगामी सहचर दोनों वीर भ्राताओंके वीरोचित बचनोंसे परमालका हृदय किसी भाँति भी साहस करनेमें समर्थ न हुआ । परमाल अपनी रानीके सन्मुख जाकर शोच करने लगा । रानी मालिनी देवीने अपने पतिकी कायरकी भाँति भयमाने देख उनको प्रोत्साहित कर सेना लेकर रणक्षेत्रमें जानेको राजी किया और सेनामें सूचना दे दी कि राजा युद्धक्षेत्रमें जायँगे । काव्योंमें ऐसा लिखा है कि उसके पीछे वीर पुरुषोंने अपनी प्राणप्यारी स्त्रियोंके साथ अन्तिम प्रेमालिङ्गन किया और प्रातःकालके सूर्य्योदयके साथ ही साथ सबोंने रणभूमिमें जानेसे पहले संध्यावंदन पाठ-पूजा आदि नित्यकर्म्म कर लिये । आल्हाने नवग्रहोंकी पूजा करके अपने पूर्वजोंकी स्थापित हनूमानजीकी मूर्तिका पूजन किया और उनको फूलोंकी माला पहराकर अपने पुत्र इन्दल और छोटे भाई ऊदलको बुलाकर आद्याशक्तिका स्मरण कर प्रतिज्ञा करी " जो जस्सराजका नाम अक्षय रखनेकी अभिलाषा है और जो देवलदेवीका पवित्र रक्त अपने नसोंमें धारण करके गर्वित होना चाहते हो तो आज रणभूमिमें जहाँ शत्रुओंको देखो वहीं उनका संहार कर डालो । " बडे भाईकी इस प्रतिज्ञाको सुन ऊदलने कहा आपने वीरपुरुषोंके समान प्रतिज्ञा करी है । मेरी चमचमाती हुई तलवारकी धार भी क्या पृथ्वीराजके नेत्रोंको न झुलसा देगी वह क्या मेरे साथ संग्राममें ठहर सकेंगे?" रणके मदसे उन्मत्त राजपूत प्रतिज्ञाके पालन करनेमें उद्यत हुए रणके भेषको धारे दोनों वीर पुत्रोंको आशीर्वाद देकर वीरभार्या-वीर माता देवलदेवीने कहा, " युद्धमें प्राणोंको निछावर करके प्रतिज्ञा पालन करना; यदि तुम्हारा शिर अपने स्वामीके कारण समरक्षेत्रमें कट जाय तो निश्चय जान लो कि तुम उसके पुरस्कारमें देवताओंके सिंहासनपर

विराजमान होंगे।" वीरमाताके कहचुकने पर दोनों वीरोंकी साध्वी स्त्रियें उठकर बोलीं, "जो रमणी साध्वी सती है वह क्या पतिके मरनेके उपरान्त जीवित रह सकती है ? गौरी देवीका कथन है--कि जो स्त्री स्वामीको समर क्षेत्रमें सोते देख जीवित रहनेकी इच्छा करती है उसको किसी समय मुक्ति नहीं मिल सकती वरन् पिशाचलोकमें पिशाचिनी होकर वह अनन्त काल तक भ्रमण करती है।"

माननीय टाड साहेब चन्दकविके काव्यसे यहां तक उ़ृत कर गये हैं कि समाजके ऊपर राजपूतरमणियोंकी कैसी प्रभुता थी उनका उद्धृत किया अंश ही उसका उदाहरणस्वरूप है। जिस समय माता देवलदेवीने वीरनारियोंके समान अपने प्राणरत्न दोनों पुत्रोंको संग्रामके आँगनमें भेजकर कहा कि जय प्राप्ति करो नहीं तो वहीं कट मरो, उस समय राजपूतजातिका आचार व्यवहार सभी भाँतिसे शुद्ध था और उस समयमें चौहानसम्राट्का सम्पूर्ण भारतके ऊपर राज्य था। टाड साहबने इस घटनाके साथ भारतमें यवनोंके अधिकारकी छठी सदीके पीछे हुई घटनाकी समानता दिखाई है। यद्यपि गजनी, गौरी, खिलजी, सैय्यद,लोदी और मुगल इन छः वंशके महान पुरुष छः सदीके बीचमें भारतके सम्राट् आसनपर विराजमान हो अपने प्रबल प्रतापसे भारतका शासन कर गये हैं.इनके समयमें राजपूत जातिकी अवस्था कुछ कालको अत्यन्त शोचनीय हो गई थी, तथापि राजपूत नारियोंके स्वभाव पूर्वके समान वीराङ्गनाओंकी भाँति अटल रहे थे। क्या हिन्दू क्या मुसलमान इतिहासके जाननेवाले सभीने मुक्तकंठसे उन घटनाओंकी प्रशंसा करी है। टाड साहब उन हिन्दू वा मुसलमान इतिहासलेखकोंके ग्रंथोंसे उन प्रशंसनीय घटनाओंके समाचार संग्रह करनेके बदले उस समय भारतमें विद्यमान सामने देखनेवाले मिस्टर वार्णियरके ग्रंथसे उसको नीचे लेखानुसार उद्धृत करते हैं।

पापी दुरात्मा औरंगजेब अपने जन्म देनेवाले पिताको तख्तसे उतार और अपने सगे भाईको मारकर जिस समय भारतमें अपनी लालसाओंको फैला रहा था उस समयमें राजपूतजाति अपने स्वाभाविक राजभक्तिके वश हो बंदीसम्राट्के पक्षको लेकर औरंगजेबकी पापमयी आशाको एक साथ ही व्यर्थ कर देनेके लिये अपनी भरपूर शक्तिसे यत्न करने लगी। असीम साहसी महावीर राठौर जशवंतसिंहके अधिकारमें तीस हजार राठौर राजपूत बडे पराक्रमसे नर्मदाकी ओर आगे बढे और मुरादके साथ जो औरंगजेबकी सेना थी उस पर टूट पडे. मुराद साहसी सेनापतियोंके द्वारा गोलन्दाजोंके सहारे गोले वर्षाता हुआ नर्मदाको पार कर अपने भाईके साथ जा मिला। दूसरे दिन सूर्य्योदयसे पहले ही लडाई होने लगी, नर्मदाके किनारे पिताद्रोही, भाईको मारनेवाले औरंगजेबके साथ राजपूत सेना बिना विश्राम लिये सारे दिन संग्रामके आँगनमें अपनी स्वाभाविक महावीरता दिखाते रही किन्तु दुर्भाग्यवश सायंकालके समय जब चारों ओरसे शत्रुओंकी सेनाने घेर लिया तब राजपूतगण घायल दश हजार सेनाको छोड भाग खडे

हुए । * महाराजा जशवन्तसिंह अपने राज्यमें लौट आये, किन्तु फरिस्ता अपने ग्रंथमें लिखता है कि वह उदयपुरके महाराणाकी पुत्रीसे व्याहा था, इस कारण उस प्रधान रानीने अपने पराजित स्वामीको नहीं अपनाया और किलेका दर्वाजा बंद करा लिया ।

इतिहासवेत्ता वार्णियर जो उस समय वहीं उपस्थित था वह अपने ग्रंथमें लिख गया है कि, "यशवंतसिंहके परास्त होने और भागनेके पीछे उनकी रानी राणाकी पुत्रीने जो उनसे तिरस्कारसूचक वचन कहे मैं उनको विना लिखे नहीं रह सकता । जब रानीने सुना कि महाराज अपने स्वाभाविक वीरतासे संग्राममें लडे हैं,जब उन्होंने अपने अधिकारी सेनाके दलमें चार वा पांच सौ सेना जीवित रही देखी तब शत्रुदलमें रहना असम्भव जान समरक्षेत्रको छोडा है, इस बातको सुनकर भी राजाको इस घोर विपत्तिमें ढाढस देनेके लिये प्रतिनिधि भेजनेके बदले रानीने दुःखित होकर महलका द्वार बंद कराकर उस कलंकित वीरको न आनेको आज्ञा दी । रानीने महाराजके आचरणपर आक्षेप किया, कि वह मेरे स्वामी नहीं हैं; महाराणाके जमाईकी आत्मा कभी ऐसी नीच नहीं होसकती; उनको स्मरण करना चाहिये था कि श्रेष्ठवंशमें सम्बन्ध होनेसे श्रेष्ठ ही कार्य्य करना उचित है; ऐसा विचार कर महाराज समरभूमिमें जय प्राप्त करते यदि जय न पा सके थे तो शत्रुओंके सन्मुख ही अपने जीवनको विसर्जन कर देते. क्रोधित रानीने कुछ देरके पीछे दूसरे भावमें बदलकर चिता जलानेकी आज्ञा दी और जलती हुई चितामें स्वामीके वर्तमान रहते ही अपने शरीरके भस्म करनेकी मनमें ठान ली। रानीकी यह अखंडनीय आज्ञाको अन्तःपुरवासिनी रमणीमंडलीने सुन विनयपूर्वक प्रार्थना करी कि तुम्हारे ऐसा करनेसे राजाको भी तुम्हारे साथ जीते हुए जलना पडेगा; नहीं तो यह कार्य पूर्ण नहीं हो सकता । थोडी देर विचार कर क्रोधमयी रानी महाराजपर कटाक्ष करके अनेक प्रकारसे तिरस्कार करने लगी । राणाकी पुत्रीने इस भाँतिसे आठ नौ दिन तक स्वामी का दर्शन नहीं करा और एकान्तमें इकली कोठरीमें पडी रही, इसको सुन जब रानीकी माता उदयपुरसे आई और उन्होंने अनेक भाँतिसे रानीको समझा बुझा कर कहा कि महाराज ! रणकी थकावटको दूर कर शीघ्र ही फिर नवीन सेनाको इकट्ठी कर रणभूमिमें जाय औरंगजेबको परास्त कर अपने यशके सूर्यको प्रकाशित करेंगे । वार्णियरने अन्तमें कहा है कि यह उपाख्यान राजपूत नारियोंके साहस और वीरताका उदाहरणस्वरूप है ।

दिल्लीके अन्तिम चौहान सम्राट् पृथ्वीराजके राज्य समयमें राजपूतनारियोंके चरित्रोंमें ऐसे असंख्य उदाहरण पाये जाते हैं । पृथ्वीराजने जब कन्नौजके राजा जयचंदकी पुत्री संयुक्ताका हरण किया था उसके विवरणमें हम केवल वीराङ्गना संयुक्ताका चरित्र

---

* वार्णियर लिख गया है राजपूतजाति रणभूमिमें जानेके पहिले जीवन विसर्जन करनेमें संकल्प कर जब परस्परमें भेंटते और विदा मांगते हैं वह दृश्य बडा ही मनोहर होता है ।

ही नहीं बरन् राजपूत रमणीमात्रका शुद्ध चित्र अंकित देखते हैं। अनुपम रूप लावण्यमयी संयुक्ताने जिस दिन स्वयम्बरकी सभामें खड़े होकर सैकडों राजोंका मान गारकर दिल्लीके महावीर सम्राट् पृथ्वीराजकी मूर्तिके गलेमें वरमाला पहराई थी, उसी समयसे उनका चरित्र किस प्रकारसे चित्रित देखते हैं? उस वरमालासूत्रमें उनके निमित्त ही चौहान और राठौरसेनाके दलमें (एक ओर पृथ्वीराज और दूसरी ओर सैकडों राजाओंकी सहायतासे जयचंदके बीचमें) क्रमानुसार पाँच दिन तक अतुलनीय घोर संग्राम हुआ था। अन्तमें कन्नौजके महाराजकी हार हुई तब कन्नौजकी राजबालाने अपने विश्वमोहनीय रूप लावण्यके बलसे वीर तेजस्वी पृथ्वीराजको एक बार ही मोहित कर राजकार्यमें सब प्रकारसे उनकी अनिच्छा कर दी। संयुक्ता अवश्य ही एकमात्र प्रेमपात्री बनी और भारतकी अनिष्ट कारिणी कहाकर हमको दिखाई दी, किन्तु उस राठौरकी राजकुमारी चौहानवंशकी रानी संयुक्ताके वास्तविक चरित्रका प्रकाश होनेसे जगत्की कोई भी ऐसी जाति नहीं जो संयुक्ताको रमणीमंडलीके ऊंचे सिंहासनपर न बिठलावे। जब दुर्द्दान्त महम्मद गोरी सिन्धनदको पार कर पृथ्वीराजकी गौरवताको धूलिमें मिलाने और भारतके पवित्र हृदयमंदिरमें यवनपताकाको फहरानेके लिये तथा आर्यशासनको लोप करनेके निमित्त आगेको बढा है, तब यह समाचार दिल्लीके राजमहलोंमें प्रेम, आनन्द और विलाससे उन्मत्त पृथ्वीराजके कानोंतक पहुंचा। राठौरकी राजबालाने जब यह संवाद सुना उसी समय उसकी प्रेमविलासकी निद्रा भंग हो गई। सचेत होकर उसी घडीसे ही वह विलासवृत्तिको छोड राजपूत वीराङ्गनाके स्वाभाविक साहस और वीरभावको प्राप्त हो नवीन मूर्तिको धारण कर अपने प्राणप्यारे पतिको समरके आँगनमें भेजनेके लिये सूचना देनेमें विलम्ब न करती हुई। हृदयवल्लभको रणके भेषसे सजाकर जातीय स्वाधीनता और अपने अतुल गौरवकी रक्षाके लिये प्राण त्यागनेका उपदेश देकर बोली, "हे नाथ! अन्तमें मेरा और आपका सूर्यलोकमें अवश्य ही मिलाप होगा।"

प्रसिद्ध चंदकविके ग्रंथमें यह घटना भारतका अधःपतन और संयुक्ताके वीरनारियोंके समान आचरण प्रशंसाके साथ पाये जाते हैं। पृथ्वीराजने भारतमें यवनोंके आनेसे पहले नीचे लिखे अनुसार स्वप्न देखकर रानीसे कहा, "आजकी रातमें जिस समय मैं निद्रादेवीकी गोदमें अचेत था, उस समय रम्भाके समान एक अनुपम सुन्दरी रमणीने आकर दृढताके साथ मेरी दोनों भुजाओंको पकडकर हिला दिया फिर उसने तुम पर आक्रमण किया और जिस समय तुमने अपने छुटानेकी चेष्टा की थी उसी समयमें एक विराट् मूर्ति पिशाचके समान विकटाकार क्रोधसे उन्मत्त हाथीने आकर मुझे दबा लिया।* फिर निद्रा भंग होगई तब रम्भा वा उस विराट्मूर्तिको नहीं देखा, किन्तु मेरा हृदय धडधडाने लगा. काँपते हुए अधरोंसे शिव! शिव! इस नामका उच्चारण किया। भाग्यमें क्या होगा इसको विधाता जानै।"

* स्वप्नमें ऐसी मूर्तिका देखना अशुभ है।

संयुक्ताने इस स्वप्नको सुनकर उत्तर दिया "प्राणनाथके गौरवकी वृद्धि और जय होगी। हे चौहानकुलसूर्य! आपके समान इस जगत्में किसने विशाल आनन्द और असीम गौरवको भोगा है। केवल मनुष्योंका ही मरण निश्चित है ऐसा नहीं बरन् देवताओंको भी मरण प्राप्त होता है। सभी प्राचीन शरीरके बदलनेकी अभिलाषा करते हैं, चिरकाल तक जीवित रहनेसे मृत्युका होना ही श्रेष्ठ है। केवल अपने स्वार्थपर ही दृष्टि नहीं रखना चाहिये, अक्षय कीर्तिके संचय करनेमें ध्यान देना योग्य है. आपकी तीक्ष्ण तलवारसे शत्रुओंका नाश होगा और मैं अधम भी परलोकमें आपकी अर्द्धाङ्गिनी हूंगी।

पृथ्वीराजने कविकुल चूडामणि चंदको बुलाया और स्वप्नका समस्त वृत्तान्त सुनाया। कविने स्वप्नके अर्थकी व्याख्या कर दी कि राजगुरु अमुक २ मंत्रोंका अमुक २ वर्णोंसे पुटितकर सम्राट्की पगडीपर लिखें फिर सूर्य्य और चन्द्रमाके उद्देशसे हजार दूधसे भरे कलशोंके द्वारा अखंडधारा बाँधकर पगडीपर लिखे मंत्रका अभिषेक करें।

पृथ्वीके धारण करनेवाले अनन्त देवताके निमित्त दश भैंसोंका बलिदान किया और ब्राह्मण तथा अनाथोंको बहुत सा धन दान किया। कविका वचन है कि– "विधाताको जो करना होता है, वह बलिदान करने और दूध चढानेसे क्या दूर हो सकता है? यदि ऐसा करनेसे मनुष्य विधाताको लिखे हुएके खंडित कर सकते तो राजा नल और पाँचों पांडवोंकी ऐसी दुर्दशा क्यों होती?"

इसके उपरान्त फिर हमने अनेक काव्योंमें भी देखा है, कि यहां यह सम्मति हुई कि गजनीके सुलतानके विरुद्धमें किस प्रकारसे भयंकर समरानलको प्रज्वलित करना कर्तव्य है; समस्त आये हुए वीर इसीकी सलाह करने लगे महावीर पृथ्वीराज इस विषयकी सलाह करनेके लिये अपनी प्राणप्यारी स्त्रीके पास महलमें गये ललनाकुल-ललाम संयुक्ताका वचन है कि "कहीं कोई स्त्रियोंसे भी सलाह लेता है, संसारका विश्वास है कि स्त्रीजातिको बहुत थोडा ज्ञान होता है, अधिक क्या कहें स्त्रियोंके मुखसे सत्य वचन निकलनेपर भी कोई उसको सुनना नहीं चाहता" हम आद्य प्रतिमा हैं–शिवजीके समान तेजको धारण करती हैं हम धर्माधर्म पाप पुण्य और ज्ञान मूर्खताका आधार हैं। गंभीर ज्ञानी तो ज्योतिष शास्त्रके ग्रंथोंको देखकर ही ग्रह और नक्षत्रोंकी गति बता देते हैं, परन्तु स्त्रियोंके चरित्रोंकी पुस्तकके देखनेमें वह अज्ञानी हैं, यह बात कुछ आजकी नहीं है चिरकालसे चली आ रही है; हमारे चरित्रोंकी पुस्तकके पढनेको कोई मनुष्य भी आजतक समर्थ न हुआ इसी कारण पुरुषजाति अपनेको ज्ञानी बताती है, स्त्रियोंको बुद्धि ज्ञान कुछ भी नहीं है. ऐसा कहती हैं परन्तु स्त्रियोंकी जाति अपने सुख दुःखमें समभावेक अंशकी अधिकारिणी हैं। जब आप सूर्यलोकमें चले जायँगे तब भी हम आपका साथ नहीं छोडेंगी मैं आनंद सहित आपके साथमें रहकर भोजन प्यासका कष्ट सहन करूंगी; हमलोग सरोवरके

समान हैं; आप उस सरोवरमें रहनेवाले राजहंस हैं, जब आप हमारे हृदयसे दूर चले जायँगे, उस समय क्या आपका फिर वह सुख दिखाई देगा ?" ।

भारतके राजनैतिक आकाशको मेघोंके जालने ढक लिया दुर्भाग्यवश विषम वदन फैलानेके लक्ष्यमें भयंकरी विभीषिकाको देखकर सब उन्मत्त होगये—विधर्मी यवनोंकी सेनाके दलने पलभरमें भारतका हृदय कंपायमान कर दिया, स्वाधीनताके निमित्त जन्मभूमिके निमित्त हिन्दूजातिके गौरवकी इच्छासे भारतके प्रत्येक प्रान्तके प्रायः सभी अधिपति अपनी २ सेनाके साथ यवनोंको दमन करनेके लिये इकट्ठे हुए, सेनादल रणभूमिमें जा पहुँचा; इसी समयमें दिल्लीके रनवासमें संयुक्ताने अपने प्राणपतिको युद्धमें जानेके लिये सजा दिया । संयुक्ताके बडे २ नेत्र मानो पृथ्वीराजको ही देख रहे हैं । रणका बाजा बजने लगा मानो मृत्युके समाचारने आकर उस रनवासमें स्थित राजरानीके हृदयपर भयंकर आघात किया । वीरश्रेष्ठने अपनी प्राणप्यारीसे जन्मभरके लिये बिदा ली, संयुक्ताने प्रतिज्ञा की कि जबतक समर समाप्त नहीं होगा तबतक मैं केवल जल पान करके ही अपने जीवनको धारण करूंगी । संयुक्ताके शेष वचन "इस योगिनीपुरमें* अब प्राणेश्वरके दर्शन नहीं मिलेंगे; सूर्यलोकमें फिर साक्षात् होगा, उसका यह अनुमान सफल हुआ । उस महासमरमें, भारतके भाग्यका पतन, हिन्दूजातिकी स्वाधीनताका लोप, पृथ्वीराज पराजित बन्दी और निहत हुए । वीरबाला संयुक्ताने चिताकी प्रज्वलित अग्निमें अनुपम रूप लावण्यमय शरीरको समर्पण कर अपनी प्रतिज्ञाके पूर्ण करनेमें एक मुहूर्त्तका भी विलम्ब न किया ।

अंग्रेजी पढे हुए युवक अंग्रेजी साहित्यमें लुकेशियाके चरित्रोंको पढकर उसकी ऊँची प्रशंसासे उन्मत्त हो जाते हैं, उनको सावधान करनेके लिये ही उस लुक्रेशियाकी अपेक्षा साध्वी सती और बुद्धिमती राजपूत वीरबालाओंके चरित्रोंको यहां लिखना आवश्यक विचारते हैं । गानोरकी राजरानी हमारी वह राजपूत लुक्रेशिया हो कठिन यवनोंकी सेनाके दलने यमराजके समान जब गानोरपर आक्रमण किया राजरानीने राजपूत वीरांगनाओंके समान असीम साहससे, क्रमानुसार शत्रुओंके कराल गालसे पाँच दुर्गोंकी रक्षा कर—पाँच स्थानोंमें महावीरता दिखाकर अंतमें नर्मदानदीके किनारे उनके राज्यके शेष दुर्गका आश्रय किया । रानी अपनी सेनादल और अपने सेवकोंके साथ तरणीमें उतरने भी न पाई थीं कि शत्रुओंकी यवनसेना वहां आ पहुँची । रानीके साथमें उस समय बहुत थोडी सेना थी; वह लोग शत्रुओंके आते ही हताश हो गये, इस कारण किला शीघ्र ही यवनोंकी सेनापतिके अधिकारमें हो गया । भूपालमें जो नवाबका वंश आजतक विराजमान है इस विजय पाई हुई यवनोंकी सेनामें उसी वंशके आदिपुरुष हैं । वह गानोरकी उक्त वीरबाला राजरानीके अनुपम रूप लावण्यको देखकर मोहित हो गानौर राज्यके अधिकारके साथ

---

* दिल्लीका दूसरा नाम योगिनीपुर है, चंदकविके ग्रंथोंमें भी इसी प्रकारका लेख है ।

ही-साथ उक्त स्त्रीरत्नके हृदयमें अधिकारकी इच्छासे सेना लेकर आगे बढे । दुर्गको अधिकारमें करनेके उपरान्त यवनोंकी सेनाने एक दूतके हाथ रूपवती वीरबालाके पास अपना संदेशा भेज दिया । गानोरकी रानी किलेके ऊपरके कमरेमें बैठी हुई थीं, उन्होंने दूतके मुखका समाचार सुनते ही उसी समय उसके हाथ कहला भेजा कि, "वह सेनापतिको शीघ्र ही हृदय देनेमें तैयार हैं; परन्तु नियम सहित विवाहका कार्य करना सबसे प्रथम कर्तव्य है; उनकी वीरता और उनके कार्यकी शीघ्रतामें निपुण देखकर मैं अत्यन्त प्रसन्न हुई हूं । ऐसे वीर स्वामीका प्राप्त होना बडे सौभाग्यका विषय है । परन्तु इस शुभ विवाहकी तैयारी करनेके लिये सेनापतिको कै घंटेका अवकाश दिया जायगा । किलेके भीतर ही इस सम्मिलनके लिये मैं शीघ्र ही तैयार हो गई हूं । उस देवताओंको भी दुर्लभ स्त्रीरत्नका मिलना निश्चय जानकर खाँ साहबने प्रसन्न चित्त हो युवती रानीके योग्य और उसके सम्मानके लिये विवाहके निमित्त दो घंटेका समय दिया ।

जितना थोडा समय दिया गया था उतने ही समयमें विवाहकी समस्त तैयारियाँ हो गईं । समरका बाजा, रणभेरी और जय गाथाके स्थानमें उनके लिये मंगलध्वनि, मिलन संगीत और मधुर २ बाजोंका बजना प्रारंभ हो गया, रानीने यवनोंके सेनापतिके पहरनेके निमित्त महामूल्यवान वरके पहरने योग्य हीरे और मणिमुक्ताओंके अनेक आभूषण बडे यत्नके साथ भेज दिये । यवनसेनाके नायक खाँ साहब हिन्दू रूपवती स्त्रीके प्राणवल्लभ हुए हैं यह विचार कर अनुपम आनंदके समुद्रमें मग्न हो गये; अंतमें खाँ साहबने वरके पहरने योग्य समस्त वस्त्राभूषणोंको धारण कर लिया और रानीके बुलानेसे शीघ्र ही उनके स्थानके समीप जा पहुँचे । वहाँ पहुँचते ही वरवेशसे सजे हुए खाँ साहब राजपूत रानीकी अतुलनीय सुन्दरताको देखते ही एक साथ संज्ञाहीन हो गये । इस जीवनमें उन्होंने ऐसी सर्वाङ्गसुन्दरी रत्नको कभी नहीं देखा था, उनके दोनों नेत्र पलकहीन होकर उस रूपरूपी अमृतका पान करने लगे, खाँ साहबने विचारा कि इतने दिनोंके पीछे हमारा मनुष्यजन्म सार्थक हुआ, रानीने खाँसाहबको सुवर्णके आसनपर बैठनेके लिये दूतसे कहला भेजा और आप एक स्वतंत्र आसनपर देवताओंमें पतिव्रता इन्द्राणीके समान अपनी सखियोंके साथ विराजमान हुईं इनके विराजते ही स्वर्गके समान ज्योतिका प्रकाश हुआ । रूपसे मोहित हुए खाँ साहबको तो एक २ मुहूर्त एक २ युगके समान जान पडने लगा । राजपूत रानीने खाँ साहबकी अधिक प्रशंसा करके अपने मधुर वचनोंसे उनके हृदयको भलीभाँतिसे अपने वशमें कर लिया । परन्तु अचानक ही खाँ साहबका वह गंभीर मुख मुरझा गया, वह भयंकर गरमीके तापको अनुभव करके एक वार ही विचलित हो गये । उसी समय शीतल पवन करके तथा निर्मल जल छिडक कर उनको चैतन्यमें लानेके लिये अनेक उपाय किये; परन्तु किसीसे भी उस दारुण ताप और जीवनमें ही नरककी पीडा दूर न हुई; अंतमें खाँ साहबने मतवाले हाथीके समान खडे होकर दोनों हाथोंसे उन मूल्यवान आभूषणोंको फेंकना प्रारंभ किया; राज-

पूत सतीके साथ विवाह करनेकी इच्छा करनेवाले यवनोंके सेनापतिको पुकारकर गानोर-की रानीने कहा; खाँ साहब ! आपका अन्तिम समय आ पहुँचा है ! विधाताको यही करना था कि आपका शुभ विवाह और हमारा प्राणत्याग यह दोनों कार्य एक ही समयमें होंगे । जो भेष आपने धारण किया है यह कालकूट विषमय है, आपके सन्मुख राजपूत स्त्री अपने सतीत्वकी रक्षाके लिये और क्या उपाय करें ?'' राजपूत वीर बालाके यह वचन महाभयंकर थे; इनसे सभीको महाविस्मय हुआ. कहाँ तो वह विवाह-की तैयारियाँ थीं और कहाँ यह समाधिका स्थान है. कहां तो मिलनेका उद्योग था और कहाँ यह सदाके लिये वियोग हो गया । विवाहके उत्सवके स्थानमें जीवान्तका विषाद दिखा दिया । जरा देरमें ही क्यासे क्या हो गया;--वह राजपूत वीरबाला राजपूत सती श्रेष्ठ गानोरकी रानी धीरे २ उस किलेकी छतपर जा चढी और एक बार उस यम यंत्रणाके भोगी खाँ साहबकी ओर देखकर उस विश्वमोहिनीने हँसते २ ऊँची छतपरसे अनुपम रूपराशियुक्त अपने शरीरको किलेके नीचे बहनेवाली परिखा न-दीकी गोदीमें डाल दिया ! अभागे खाँ साहबका प्राणवायु भी उस विषम यंत्रणासे शीघ्र ही पापयुक्त शरीरको छोडकर पंचभूतमें लीन हो गया, भूपाल जानेके मार्गमें वह चाँदखाँकी समाधिका मंदिर आजतक बना हुआ है । इस देशके लोगोंका यह विचार है कि इस समाधिमंदिरको देखनेके लिये जो मनुष्य जाते हैं तीन ही दिनमें कोई रोग भी क्यों न हो उसी समय दूर हो जाता है ।

राजपूतोंकी स्त्रियें अपना सन्मान और अपने गौरवकी रक्षाके लिये कितना यत्न करती थीं उनका एक चूडान्त निदर्शन महामाननीय टाड साहबने यहां पर दिखाया है । अम्बेरके विख्यात महाराज जयसिंहने कोटेकी राजकुमारीके साथ विवाह किया था । उस कोटेकी राजबालाका स्वभाव, उसकी आचरण और पहनावा साधारण रानियोंके समान अत्यन्त सरल और आडम्बरहीन था । परन्तु सभ्य समृद्धिशाली अम्बेरराजके रनवासमें रहनेवालियोंके बीचमें राजरानियोंके समान अत्यन्त मूल्यवान वस्त्र और आभूषणोंके धारण करनेकी रीति प्रचलित थी, कोटेकी राजकुमारी इनको पहलेसे ही अच्छा नहीं मानती थी । एक समय अम्बेरके महाराज जयसिंह कोटेकी राजकुमारीके साथ बैठे हुए थे,उन्होंने बातों ही बातोंमें कहा कि कोटेकी राजरानियोंकी अपेक्षा हमारे राजकी नीच जातिकी स्त्रियें भी अच्छे सुन्दर रमणीय वस्त्र और आभूषण पहरती हैं । अम्बरके महाराज कुछ कालके उपरान्त एक कांचका टुकडा लेकर रानीके पहरे हुए वस्त्रोंको काटने लगे।कोटेकी राजकुमारीने विचारा कि इससे तो मेरा घोर अपमान हुआ है; उसने उसी समय अपने थोरेसे तलवार निकाल कर क्रोधित हो वज्रके समान गंभीर वचनसे कहा कि मैंने जिस वंशमें जन्म लिया है वह राजवंश कदापि इस प्रकारकी घृणा और उपहास-के योग्य नहीं हो सकता। इस बातको आप स्मरण रक्खें परस्परके प्रति सन्मान दिखा-नेसे केवल दम्पत्तिका सुख नहीं मिल सकता--धर्मकी भी रक्षा होती है । '' फिर उस वीरबालाने कहा-कि "महाराज ! यदि आप मेरा इस प्रकारसे अपमान करेंगे तब

और इस बातको भलीभांतिसे समझ जायँगे कि अम्बेरके महाराज काँचके टुकडेको चलानेमें इतने चतुर नहीं हैं कि जितनी कोटेकी राजकुमारी तलवारके चलानेमें निपुण होंगी ।" कोटेके राजवंशकी किसी स्त्रीका भी ऐसा अपमान न हो इस लिये उस बीरबालाने राजासे शपथ भी ले ली । महात्मा टाड साहब कह गये हैं कि उस शपथकी आजतक अटल भावसे रक्षा होती है ।

राजपूत स्त्रियोंके सतीत्व, साहस और शारीरिक बलके सम्बन्धमें कोटेके विख्यात वीर जालिमसिंहके मुखसे निकले हुए वचनको कर्नेल टाड साहब इस स्थानपर वर्णन कर गये हैं । नीचजातिकी राजपूत स्त्रियें अपने २ पतिको कृषिकार्यमें सहायता देती थीं । और अन्नादिको बनाकर खेतपर ही स्वामीके लिये ले जाती थीं, यह बात सबको विदित है । एक समय एक किसानकी स्त्री इस प्रकार पंचपहाडनामक शिखरसे लगे हुए बनके भीतर अपने स्वामीके लिये भोजन बनाकर लिये जाती थी । इसी समयमें अचानक एक बडा भारी शूकर वनसे आकर उस किसानकी स्त्रीको पकडनेकी इच्छासे उसके पीछे २ दौडा । शूकर भोजनके लालचसे इसके पीछे आ रहा है,या मेरे पकडनेकी इच्छा से भागा चला आता है;इस बातको न समझ कर किसानकी स्त्री एक वृक्षके नीचे खडी हो गई । शूकर उसी भावसे देहको ऊंचा करके उस स्त्रीके पकडनेकी चेष्टा करने लगा। वह स्त्री अपनी रक्षाके निमित्त वृक्षके चारों ओर घूमने लगी,उसके पकडनेके लिये शूकर भी वृक्षकी परिक्रमा करने लगा।इसके उपरान्त जब वह स्त्री अपनी रक्षा करनेमें असमर्थ हो गई तब प्रबल साहस करके अपने दोनों हाथोंसे भलीभांति उस शूकरको पकड लिया;वह शूकर बलहीन होकर अपने छोट शरीरसे उस प्रबलशक्तियुक्त हाथोंके काटनेको किसी भाँति भी समर्थ न हुआ । इसी समय एक सैनिकको जाते हुए उस स्त्रीने देखा तब उससे करुणा युक्त वचन कहकर अपनी सहायताके लिये उसे बुलाया । स्त्रीके करुणायुक्त वचनोंको सुनकर वह सैनिक उसी समय वहाँ गया और शूकरको अपने दोनों हाथोंसे पकड लिया,स्त्री छूटकर दो चार पैर आगे बढी थी कि इसी समयमें वह सैनिक पुरुप उसको ऊँचे स्वरसे पुकारकर बोला कि मैं इस बलवान शूकरको किसी प्रकार नहीं पकड सकता । कृषककुमारी सैनिकके यह वचन सुनकर हँसती हुई शीघ्रतासे चली और बडी शीघ्रतासे स्वामीके पास आकर उसकी तलवार ले जाकर शूकरको मारकर उस सैनिक पुरुषका उद्धार किया । इस बातको टाड साहब लिख गये हैं कि राजपूतोंकी स्त्रियोंका साहस,शक्ति और उनके सतीत्वके उदाहरण अनेक पाये जाते हैं ।

बडे प्रसिद्ध इतिहासोंमें राजपूतनारियोंकी वीरता और उनके चरित्रोंका गठन तथा राजपूत स्त्रियोंकी सामर्थ्यके सम्बन्धमें और एक उदाहरण दिखाकर महामाननीय टाड साहबने अध्यायका उपसंहार किया है । यह घटना राजवाडेके सब प्रान्तोंमें थी मरुभूमिमें स्थापित जयशालके इतिवृत्तसे गृहीत हुई थी । जयशाल मीरके आधीनमें पुगालनामक देशका रणङ्गदेव नामवाला एक सामन्त था। उसका उत्तराधिकारी पुत्र साधु उस मरुभूमिके सब मनुष्योंमें भयका कारण हो गया । साधु ऐसा साहसी वीर और

अत्याचारी था कि वह दक्षिणमें तो सिन्धनदतक पूर्वमें नागोरतक उपद्रव करता हुआ घूमता था । एक समय वह दुर्द्धर्ष साहसी साधु एक स्थानपर लूटनेकी वृत्तिको चरितार्थ करनेके उपरान्त बहुतसे ऊँट और हाथियोंको हस्तगत कर १४४० खण्डके ग्रामोंके अधीश्वर महीलजातिके नायक माणिकरावकी राजधानी अरिन्त नगरकी ओरको जा रहा था । माणिकरावने उसके आनेका समाचार सुनते ही उसको उसी समय अपनी राजधानीमें बुला भेजा । वीरश्रेष्ठ साधु महीलपतिका आतिथ्य स्वीकार करनेके लिये आया, सबने उसका बडे सन्मानके साथ आदर सत्कार किया । वृद्ध माणिकरावके कर्मदेवी नामकी परमसुन्दरी युवती कन्या थी । वह युवती साधुको मरुभूमिमें सबसे श्रेष्ठ अश्वारोही जानती थी । इस समय उसी साधुको स्वयं अपने नेत्रोंसे देखकर कि जिसका सम्बन्ध मंदौरके राठौरसे नियत हो चुका था उसने सिंहासनकी आशा छोडकर पुगालके सामन्तके पुत्रको पति रूपसे वरण करनेका संकल्प किया मंदोरके राजकुमार प्रबल बलशाली थे और जब कि उनके साथ विवाहका सम्बन्ध निश्चय हो गया है, तब वह सम्बन्ध न होनेसे भयानक विपत्ति पडैगी । यह जानकर भी महिलपति माणिकरावने उस वीरसे विवाहका प्रस्ताव किया और साधुने इस बातको बडे आनंदसे स्वीकार कर लिया. पीछे साधुने वहांसे बिदा ली । फिर ठीक समयमें पुगालमें उनके पास नारियल * भेज दिया । उन्होंने साधुके द्वारा ग्रहण होनेमें कुछ भी विलम्ब न किया । शुभ दिन शुभ मुहूर्त्तमें अरिन्त नगरके साधुके साथ कर्मदेवीका शुभ विवाहका कार्य समाप्त हो गया । महिलपतिने विवाहके कौतुकमें साधुको बडे मूल्यके वस्त्र और आभूषण तथा सोने चांदीके पात्र और एक सुवर्णका बैल, तथा तेरह मंगलप्रदीपका धारण करनेवाली सहेलियां दीं ।

मंदौरके युवराजने आरण्यकमल साधुके साथ अपनी निर्वाचित पत्नीके संग विवाहका समाचार सुनकर क्रोधके मारे प्रज्वलित हृदय हो उसका मार्ग रोकनेके लिये चार हजार राठौरसेनाको भेज दिया । साधुने इससे पहले संकल मेहराज नामके सामन्तके प्राणप्यारे पुत्रको मार डाला था; उस सामन्तने भी इस समय अपना बदला लेनेके लिये शुभ अवसर जानकर शीघ्र ही मन्दौरके क्रोधित और अपमानित हुए युवराजके साथ सेनाकी तैयारी करनेमें सहायता की. इस बातको माणिक राव पहलेसे जान गये थे कि इस समय युवराज अरण्यकमल भयंकर उपद्रव मचावैंगे । इस समय यह युद्धका समाचार सुनकर उसने अपने नवीन जामाता साधु और प्राणप्यारी पुत्री कर्मदेवीके निर्विघ्नतासे जानेके लिये उनके साथ चार हजार महीलोंकी सेना कर दी, वीर तेजस्वी साधुने कहा कि हमारे साथमें जो सात सहस्र भट्ट वीरोंकी सेना है, वही हमारी नवीन विवाहिता स्त्रीको निर्विघ्नतासे हमारे निवासस्थान मरुभूमिमें पहुँचा देगी ।

---

*राजपूत जातिमें यह रीति प्रचलित है कि विवाहके सम्बन्धके प्रस्तावके पीछे पात्रके पास नारियल भेजा जाता है, पात्रके उस फलको लेनेसे यह जाना जाता है कि यह विवाह करेंगे ।

बहुतसे अनुरोध करनेपर भी कर्मदेवीके बडे भाईने मेघराजके अधीनकी पचास जन महीलोंकी सेनाको साथमें ले जानेकी सम्मति दी ।

प्रबल पराक्रमशाली साधु अपनी नवीन विवाहिता भार्या और सेनाको शुभ मुहूर्त्तमें अपने साथ लेकर अपने देशकी ओर चले । साधु इस समय चन्दननामक स्थानमें पहुँच कर विश्राम कर रहे हैं; इसी समयमें बदला लेनेवाले आरण्यकमलकी सेनाके शत्रुओंने आकर दर्शन दिया । वीरश्रेष्ठ साधु अपनी पंचकल्याणनामक समरकी घोडीकी पीठ-परके शोभायमान वस्त्रको पृथ्वीपर बिछाये हुए उसके ऊपर शयन कर विश्रामका सुख अनुभव कर रहे थे । अश्वकी डोरी उनकी भुजापर बँध रही थी कि इसी समयमें शत्रु-ओंकी सेनाने अचानक आकर उनके विश्रामके सुखमें बाधा दी । संकल पहलेसे ही साधुको पहचानता था, इस समय उसको सावधान करनेके लिये शीघ्र ही दूतको भेज दिया ।

सोते हुए साधुके एक ओर खडी हुई प्रवीण रणकी पंचकल्याण घोडीने शत्रुदलके आनेका समाचार पाते ही शीघ्रतासे अपने श्वेतपैरोंके आघातसे स्वामीको जगा दिया । शत्रुपक्षके दूतने आकर देखा, कि पंचकल्याणीने अपने पैरोंके सरल आघातसे साधुकी निद्राको भंग कर दिया, इससे वीरश्रेष्ठ साधु उसका तिरस्कार कर रहे हैं । दूतने सन्मान दिखाते हुए कहा कि आरण्यकमल तुम्हारे साथ अपने बाहुबलकी परीक्षा करनेकी अभिलाषा करते हैं । साधुने यथार्थ राजपूतवीरके समान विना उत्तर दिये समरके प्रस्तावको स्वीकार कर लिया । परन्तु उन्होंने दूतसे कहा, कि हम अपने साथमें जो अफीम लाये थे न जाने वह कहां खो गई, इसलिये तुम थोडी सी अफीम अपने स्वामीसे लेकर भिजवा देना. शत्रुओंके अनुचरोंके द्वारा शीघ्र ही साधुके सेवन कर-नेके लिये अफीम भेज दी गई, साधु उसे सेवन कर फिर थकावट दूर करनेके लिये शय्यापर लेट रहा । कुछ कालके उपरान्त उठकर अपने वीर शरीरको रणकी पोशाकसे सुसज्जित कर फिर समस्त अस्त्रोंको धारण किया; इसके पीछे अपनी उस घोडीको बुला कर उसे स्मरण दिलाया, कि अन्य समरोंमें जिस भांति मुझे अपनी पीठपर चढाकर विजयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त कराया है उसी प्रकार आज भी मुझे वहन करना । चन्दनकुमार साधुको अपनी घोडीसे इस प्रकारके वचन कहते हुए देखकर विशेष प्रशंसा करके अपनी सेनादलके नेता चौहानजातिके योधाको पाहुसम्प्रदायके जयत्-अंगके साथ सबसे प्रथम बाहुबलकी परीक्षा करनेका हुक्म दिया । दोनों वीरोंके घोडोंपर सवार होकर भयंकर मूर्त्तिसे अस्त्रोंके चलाते ही शत्रुपक्षके चौहान भट्टवीरोंके अस्त्राघातसे वीरगण शीघ्र ही पृथ्वीपर शयन करने लगे । जयकी इच्छासे उन्मत्त हुए भट्टवीर रुद्रके समान तेजसे शत्रुओंके पक्षमें नक्षत्रवेगके समान जाकर अपने सम्पूर्ण बराबरवाले वीरोंके साथ बाहुबलकी परीक्षा दिखाने लगे ।

इस प्रकारसे दोनों ओरके वीरोंमे घोर युद्ध होने लगा । दोनों प्रतिद्वन्द्वी चुपचाप उस वीरयुद्धको देखने लगे, एक२ पक्षके दूसरे पक्षके वीरोंके साथ जा भिडे अन्तमें वीरश्रेष्ठ

साधु प्रलयकालीन प्रज्वलित मूर्ति धारण कर घोडेपर सवार हो अपनी तीक्ष्ण तलवारके आघातसे राठौरसेनाके संहारमें मतवाले हो गये। प्राणप्यारी कर्मदेवी रथपर बैठी हुई साधुकी महावीरताको देखने लगीं और वीरपति जितनी बार शत्रुओंको मारकर लौटते थे कर्मदेवी उतनी ही बार आनंदित हृदय हो ऊंचे स्वरसे उनकी प्रशंसा करती हुई साधुको उत्तेजित करती थीं। इस प्रकारसे शत्रुओंके ओरके छः सौ मनुष्य मारे गये और अपनी आधी सेना मारी गई। अमित पराक्रमी साधुने कर्मदेवीके समीप जाकर अंतिम बिदा ली। राजपूत वीरबाला कर्मदेवीने स्वयं अपने पतिको युद्धमें जानेके लिये उत्साहित करके कहा, "आपकी वीरता और आपका बाहुबल आज मैंने अपने नेत्रोंसे स्वयं देख लिया; यदि आप समरभूमिमें शयन करेंगे तो याद रक्खो कि यह दासी भी अवश्य अपने प्राण त्याग कर आपकी संगिनी होगी।" वीरश्रेष्ठ साधु अपनी स्त्रीसे बिदा होकर आरण्यकमलसे युद्ध करनेके लिये समरभूमिकी ओरको चले। इस समय आरण्यकमल भी साधुके साथ युद्ध करके उसके रुधिर पीनेसे युद्धकी समाप्ति और अपने कलंकको दूर करनेके लिये इनकी बाट देख रहा था। शीघ्र ही दोनों वीर पुरुष अस्त्रसहित एक दूसरेके सन्मुख हुए। दोनों वीर वीरोचित वचनोंसे एक दूसरेका तिरस्कार करते हुए अस्त्र चलानेकी चेष्टा करने लगे; युद्धविद्यामें विशारद साधुके चलाये हुए बरछेने सबसे पहले आरण्यकमलके गलेको जा भेदा और उसी समय बिजलीके वेगके समान आरण्यकमलने उसका बदला दिया, महीलकुमारी कर्मदेवीने देखा कि शत्रुके चलाये हुए बरछेने मेरे प्राणपतिका मस्तक भेदन करदिया। दोनों वीर दोनोंके ही अस्त्राघातसे पृथ्वीपर गिर पडे, परन्तु साधुके जीवनका दीपक उसी समय निर्वाण हो गया और राठौरके आरण्यकमल तो केवल मूर्छित ही हुए थे। जब दोनों ओरके नेताओंका पतन होगया तब शीघ्र ही युद्धकी भी समाप्ति हो गई। इस युद्धमें हजारों मनुष्योंके नाशका कारण कर्मदेवी थीं। कर्मदेवी अपने प्राणपतिके साथ चलनेके लिये तैयारी करने लगी। एक तीक्ष्ण तलवार लेकर उस वीरबालाने सबसे पहले अपनी बाँई भुजाको काट कर कहा कि "यह पूजा मानो मेरे प्राणेश्वरके पिताके चरणकमलोंमें उपहारस्वरूप भेजी जाती है। उनसे जाकर कहना कि उनकी पुत्रीने स्वयं अपने हाथसे काट डाली है।" इसके उपरान्त अपनी दूसरी भुजाको काटकर आज्ञा देकर कहा, कि "यह मेरी भुजा विवाहका कंकण पहरे हुए महीलियोंके कविश्रेष्ठको उपहारमें देना।" इसके पीछे मनुष्योंके रुधिरसे भीजी हुई रणभूमिमें शीघ्र ही चिता बनाई गई। राजपूत वीरबाला अपने मृतक हुए स्वामीके शरीरको आलिंगन कर प्रसन्न मुखसे भयंकर चिताकी अग्निमें जा बैठी! राजपूत वीरबालाकी जयध्वनिसे रणभूमि गुंजार उठी। कर्मदेवीकी आज्ञानुसार उसकी दोनों भुजा यथास्थानपर भेज दी गई। पुगालके वृद्ध राउने अपनी पुत्रवधूकी उस कटी हुई भुजाको दाह करके उस स्थानपर एक बडा भारी सरोवर खुदवा दिया। आज तक वह "कर्म देवीके सरोवर" नामसे विख्यात है।

पूर्वोक्त घटना १४९२ संवत्में (१४०७ ईसवीमें) हुई थी । इस युद्धमें संकलके पक्षकी बहुत सी सेना मारी गई । साढे तीन हजार सेनामेंसे केवल पांच सौ मनुष्य जीवित रहे थे और उनके प्रधान नेता मेघराज बहुत घायल हुए थे । आरण्यकमलके चार भाइयोंके भी बडी भारी चोट आई थी और आरण्यकमलके जो बडे २ घाव हो गये थे उनको छः महीने तक चिकित्सा होने पर भी आराम न हुआ और वह सुरलोकको सिधार गये । इतिवृत्तके आख्यायकने लिखा है, कि जिस दिन साधुका दशमासिक श्राद्ध होता है, उसी दिन आरण्यकमलका चातुर्मासिक श्राद्ध होता था ।

यद्यपि वीरबालाकी प्रशंसा इसी स्थानपर समाप्त हो गई थी तथापि इस घटनासे राजवाडेके एक प्रान्तमें जो भयंकर विवादकी अग्नि प्रज्वलित हुई थी, वह प्रसंगरहित होनेपर भी उसका वर्णन टाड साहब इस स्थान पर कर गये हैं । राजपूतजातिमें अपना सन्मान अपने गौरवके रक्षाकी अभिलाषा तथा, शत्रुसे उसका बदला लेनेकी वृत्तिको चरितार्थ करनेकी इच्छासे वह लोग कैसे प्रबल पराक्रमी थे । पुगाल और मन्दौरके राजा अपने २ पुत्रोंका बदला लेनेके लिये वीरतेजसे मतवाले हो गये । मन्दौरके आधीनमें संकलके सामन्तोंसे मारे हुए वीरोंसे साधुकी सेनाका दल विध्वंस हो गया था. इस कारण वृद्धवीर रणंगदेवने शीघ्र ही बदला लेनेके लिये पुगालकी समस्त वीरसेनाको अपने साथ लेकर मेहराजके अधिकारी देशोंपर लूट मार करनी प्रारंभ कर दी । चाहैं ऐसा हो कि मेहराज अपनी रक्षा करनेमें तैयार थे अथवा रणङ्गदेवकी सेनाकी संख्याके अधिक होनेसे हो तीन सौ आतिमयोंके रुधिरसे लूनीका बालुमय शिखर लाल हो गया। वीर रणङ्गदेवने जय प्राप्त करके प्रसन्नचित्त हो लूटे हुए बहुतसे द्रव्योंको साथ लेकर अपने देशकी सीमाके अन्तमें जाते ही देखा कि भयंकर विपत्ति उपस्थित है, मन्दौरके अधीश्वरने अपनी बहुत सी सेना लेकर अपने प्राणप्यारे पुत्र आरण्यकमलकी अकाल मृत्यु होनेसे अपने सामन्तोंके अपमानका बदला देनेके लिये विजयी रणङ्गदेवपर आक्रमण किया । दोनों ओरके वीरोंने असीम साहस करके रणकी अग्नि प्रज्वलित कर दी । अन्तमें वृद्ध रणङ्गदेव समरभूमिमें मारे गये। मन्दौरपतिने देखा कि अब शत्रु मारा गया तब महा आनंदित हो अपने नगरकी ओरको चले ।

जब रणङ्गदेवके तनू और महीरनामके दोनों पुत्रोंने देखा कि मन्दौरके नृपतिने हमारे पिताको मार डाला है इस लिये इसको इसका उचित दंड दिया जाय, ऐसा विचार कर दोनों भाई मन्दौरके अधीश्वरके नाश करनेका उपाय सोचने लगे । जिस प्रकारसे भी हो चाहैं हमारा जातिधर्म भी चला जाय परन्तु शत्रुसे बदला तो ले लिया जाय;सोचते २ शीघ्र ही एक उपाय दृष्टि आगया इसी समयमें दिल्लीके बादशाह खिजीरखाँ मुलतानको जा रहे थे उन दोनों वीर भाइयोंने उनके साथ मिलकर इसलामधर्मको स्वीकार किया और उनसे अपने इस कार्यको पूर्ण करनेके लिये कहा, यवनके बादशाहने उन दोनों भाइयोंको भलीभाँतिसे विश्वास दिला दिया । यथासमयमें उन

दोनों भाइयोंने अपने पिताके शत्रुसे बदला लेनेके लिये प्रगटरूपसे मुसलमानी धर्मका आश्रय ग्रहण किया, खिजीरखाँने मंदोरके अधीश्वरको दंड देनेके निमित्त अपनी बहुत सेना उन दोनों भाइयोंको दे दी। मंदोरपति चंडने इसी समयमें महावीरता दिखाकर अपनी सेनाके बढानेकी इच्छासे नगरके देशोंको अपने आधीनमें कर लिया। तनू और माहीर सम्राट् यही उपाय सोच रहे थे कि मन्दोरराजके ऊपर किस प्रकारसे चढाई करैं, कि इसी समयमें जयशाल पतिके भी तीसरे कुमार कल्याणने आकर उनको धीरज दिया. राजकुमार कल्याणके परामर्शसे यह निश्चय हुआ कि गुप्त भावसे चक्रान्त जालका विस्तार कर भिन्न उपायोंसे मंदोरपतिको उचित दंड देकर बदला लिया जाय। राजकुमार कल्याणने जयशालमीकी सीमामें स्थित निवासियोंके साथ सामन्तोंमें विवाद विसंवाद अत्याचार उपद्रव, समरको एक बार ही गुप्त रखनेकी इच्छासे मंदोरराज चंडके पास यह प्रस्ताव भेज दिया कि, वह अपनी कन्याको चंडके साथ विवाह करनेमें राजी हैं। यदि इसमें चंड कुछ संदेह करैं तो सामाजिक रीतिके विरुद्धमें और अपना अपमान मूलक होनेपर भी वह अपनी कन्याको नागर देशमें विवाहके निमित्त चंडके पास भेजनेको राजी हैं। मंदोरपति चंडने यही ठीक जानकर समाचार भेज दिया।

पाँच सौ रथ शीघ्र ही सजाये गये और चतुर कल्याणके प्रस्तावसे उनमें पात्री और उसकी सहेलियोंके बदलेमें पुगालके असीम साहसवाले वीर इकट्ठे किये गये। रथके आगे बहुतसे घोडोंको लेकर राजपूत चले और सैकडों राजपूत भोजनकी सामग्रीको ऊँटोंपर लादकर आगे २ चले और सामान्य सेना अस्त्र धारण करके सेनाके पीछे भागकी रक्षा करती हुई चली। चंड अपनी होनहार प्राणप्यारीको आदर सहित लानेके लिये नागरसे आगे बढे। परन्तु रथके पास जाते ही उनको महा संदेह हो गया। जब चंडने इनके और ही ठाट देखे तब वह भागनेका उपाय करने लगा। जैसे ही चंड भागा कि वैसे ही रथपर बैठे हुए भट्टियोंने शीघ्रतासे उसका पीछा कर नागरदेशके तोरणद्वारपर चंडको पकडकर मार डाला। शत्रु लोग उठती हुई तरंगमालाके समान नगरमें जाकर चारों ओरसे लूट करने लगे।

इस प्रकारसे दोनों ओरके वीरोंने अपना २ बदला ले लिया। फिर दोनों पक्षमें सन्मान और गौरवकी रक्षाके निमित्त संधि हो गई.दोनों ही पक्षके जातीय शत्रु सम्राट् सेनाको उचित दंड देनेमें राजी हुए। दोनों पक्षने एक ही मनुष्यके समान खडे होकर बादशाह खिजीर खाँ साहबकी भेजी हुई सेनाको छिन्न भिन्न कर दिया; उसकी सेनाका एक मनुष्य भी जीवित न रहा। रणङ्गदेवके दोनों पुत्र मुसलमान होकर पुगालराज्यके अधिकारसे बाहर हो आभोरिकयाके भट्टियोंके साथ जा मिले। अबतक उनके वंशधर मूमान मुसलमान भट्टी नामसे विख्यात हैं। राजकुमार कल्याण सबकी सम्मतिसे पुगालके राजा हुए।

महामाननीय टाड साहब कह गये हैं कि अपने सन्मानकी रक्षाके निमित्त राजपूत-जाति कितना यत्न करती थी, उपरोक्त घटना उसीके प्रमाणस्वरूप उदाहरण हैं और

जो लोग ऐसा कहते हैं कि राजपूतोंका रनवासमें रहनेवालियोंके ऊपर पुरुष जातिका प्रभुत्व नहीं था वह लोग भी इससे अपनी सम्पूर्ण भ्रान्तियोंको दूर कर सकते हैं। समाज तत्त्वके जाननेवाले महात्मा टाड साहबने जिनका वर्णन इस स्थानपर किया है, कि हिन्दू स्त्रियोंके अन्तःपुरमें निवास करनेपर भी उनके गुणग्राम और व्यक्तिगत सुन्दरताको भ्रमण करनेवाले कविकुलकी मधुरमयी कविताकी लीला मलयानिलमें वहन करनेवाली बसन्ती फूलके सौरभके समान सर्वत्र व्याप्त करती है। यद्यपि वह सर्वसाधारणकी दृष्टिसे बाहर रहती है, परन्तु वह उन अन्तःपुरकी निवासियोंको भिन्न उपायसे देखनेमें समर्थ है। साधु और कर्मदेवीका सम्मिलन उसको उज्ज्वलतासे प्रकाशित कर रहा है। वह यवनोंके अधीनमें रहकर सभी देशके युवकोंको देख सकते थे वीरोंके परस्परमें अस्त्रोंका बल दिखानेके लिये साधारण कार्यके अनुष्ठान आदिमें उनका विक्रम, प्रताप उन स्त्रियोंके नेत्रोंके सन्मुख सुअवसर उपस्थित कर देता था, राजपूत वीरबाला किसप्रकारकी वीरताकी पक्षपातिनी थी—उन्होंने वीरस्वामीके प्राप्त होनेके निमित्त कहांतक गंभीर संकट और विपत्तियोंको निर्भय होकर सहन किया था,कर्मदेवीकी अतुलनीय लीलाने उसे भलीभाँतिसे चित्रित कर दिया है। मन्दोरके युवराजने आरण्यकमलके साथ कन्याके विवाहका सम्बन्ध जो स्थिर हो गया था उसको दूर करके दूसरे पात्रको आत्मसमर्पणका विचार किया, इससे पिताके वंशका कुछ अनिष्ट नहीं होता था, वरन् पतिके वंशकी अनिष्ट होनेकी पूर्ण संभावना थी, इसपर कर्मदेवीने किंचित् भी ध्यान न दिया।

महामाननीय टाड साहेब और भी कह गये हैं, कि चिरकालसे हिन्दूजातिके इतिहासोंके प्रत्येक पत्रेमें राजपूतोंकी समाजके ऊपर स्त्रियोंके प्रभुत्व प्रबलता किस प्रकारसे उज्ज्वल अक्षरोंमें लिखी है। महाराज रामचन्द्रने किस कारणसे युद्ध किया था?—एक मात्र सीताजीके सतीत्वकी रक्षा और उनके उद्धार हीके लिये तो।कौरव और पांडवोंमें किस कारणसे भयंकर शत्रुताकी अग्नि प्रज्वलित हुई थी?-एक मात्र द्रौपदीका अपमान ही उसका मूल कारण था। किस निमित्त राजा भर्तृहरिने अपना राजसिंहासन त्याग दिया था? केवल एक पिंगालके ही वियोगसे,हिन्दू जाति किस निमित्त मुसलमानोंके विरोधमें एक मनुष्यके समान खडी हुई थी। यवनोंके द्वारा कन्नौजकी सुन्दरी राजकुमारीके सतीत्वनाशके निमित्त ही उन्होंने भयंकर समरमें जीवनकी आहुति दे दी। विद्वान् टाडसाहब इस बातको फिर कह गये हैं कि, हिन्दूजातिके राज्यनाशका कारण एक मात्र स्त्रियोंके सन्मानका लोप होना था। उनमें प्रत्येक प्रधान २ काव्योंकी सृष्टिका मूल कारण भी स्त्रियें थीं, अत्यन्त प्राचीन कालसे अधिक क्या मध्यकालमें भी हिन्दूस्त्रियें अपनी इच्छासे ही मनमाने पतिको स्थिर कर लेती थीं और वीर तथा साहसी पात्र ही उनके मनको हरण करनेमें समर्थ होते थे। सुन्दरी कृष्णाने अद्वितीय धनुष धारण करनेवाले अर्जुनको प्राप्त किया था--और वीरश्रेष्ठ धनंजयने सैकडों राजाओंके सन्मुख उसकी रक्षा अपने बाहुबलसे की थी। कन्नौजके राजा जयचन्दकी

कन्या संयुक्ताने क्या किया था। भारतके प्रत्येक प्रान्तोंसे जो हजारों राजा आकर इकट्ठे हुए थे उनको न वरकर उसने यथार्थ वीरके सन्मानकी रक्षाके निमित्त द्वाररक्षक-स्वरूपको धारण करनेवाले पिताके परम शत्रु भारतके सम्राट् पृथ्वीराजके ही गलेमें जयमाल डाली थी। भय पाये हुए पिता कठिन यवनदन्तके हाथमें समर्पण करनेके लिये तैयार हुए, रूपनगरकी अनुरूपवती राजकुमारीने किस प्रकारसे महाराणा राजसिंहकी सहायताके लिये प्रार्थना की थी, उससे हमारे पाठकोंका हृदय अवश्य ही शंकित हुआ होगा। राजपूतजातिके हिन्दूजातिके इतिहासमें इस भांतिके सैकडों उदाहरण विद्यमान हैं; महामाननीय टाडसाहब उनकी यथार्थता कह गये हैं। उनका अंतिम कहना यह है--कि राजपूत स्त्रियोंकी सुन्दरता और राजपूत स्त्रियोंके गुण कविकुलके काव्योंमें आज तक गाये जाते हैं। राजपूत जननी अपने पुत्रके यश और गौरव, तथा वीरता और जय प्राप्तके निमित्त अनन्त आनन्दसे उनके अंशकी भागिनी हुई थीं। राजपूत वीरमाता बालक पनसे ही अपने पुत्रोंको उपदेश देती थीं--" वत्स ! तुम अपनी माताके दूधको उज्ज्वल कर दो " अर्थात् वीरनामसे विख्यात होकर माताके जीवनको सार्थक करनेमें त्रुटि न करना। पुत्र तुम सर्वत्र ही विजयी हो, वीररूपसे सन्मान पाओ, यह इच्छा राजपूतोंकी माताओंके हृदयमें कितनी प्रबल थी, अपने प्राणप्यारे पुत्रकी वीरता प्रकाश करनेके साथ समरभूमिमें प्राण त्यागनेका समाचार पाकर बूँदीकी राजरानीने शोकके बदलेमें आनन्द प्रकाश किया था, वह भी यहांपर साक्षी दे रहा है। कविका वचन है कि " राजकुमार जिस माताके दूधको पीकर पाले गये थे; उनकी मृत्युका समाचार पाकर उसी माताके उन दूधहीन दोनों स्तनोंमें दूध भर आया, जिससे कि वह दोनों स्तन दूधके वेगको न सहन करके तरने लगे; शीघ्रतासे उनमेंसे दूधकी बूँदें गिरने लगीं। " कविके लिखनेके उपरान्त इस बातको अनुभव हम स्वयं भी कर सकते हैं। अपने पुत्रको वीरगति प्राप्त होनेपर वीरमाताका हृदय किंचित् भी दुःखित न हुआ राजपूतोंकी स्त्रियें अपने छोटे २ सुकुमार लडकोंको पालनेमें न सुलाकर बडी २ ढालोंमें शयन कराती थीं और उनके खेलनेके लिये छोटी २ तलवारें उनके हाथमें दे देती थीं। तथा वह वीरगर्भधारिणी उन बालकोंके कानोंमें यह बीजमंत्र देती थीं-कि " पिताके शत्रुका संहार करना " राजपूत वीरकुमार उसी मंत्रके बलसे आयुवृद्धिके साथ ही साथ महर्षि द्वैपायनप्रणीत काव्योंमें भारत तथा कविश्रेष्ठ चन्दकी लेखनीसे निकले हुए काव्यमें वीरता विलासके प्रभामय चित्रको देखकर उसीका अनुकरण करते थे, इस समय इस बातको कौन कह सकता है कि अंतःपुरके निवासकी राजपूतोंकी स्त्रियें समाजके प्रति अथवा पुरुषजातिके प्रति अपनी प्रधानताका विस्तार नहीं करती थीं ? कौन कह सकता है कि वीरसमाज राजपूतोंकी स्त्रियोंके निकट कृतज्ञताके ऋणसे नहीं बँधी थीं ?

राजपूतोंकी स्त्री-हिंदूस्त्रियोंके सम्बन्धमें एक विजातीय मनुष्यके कथनका हमने वर्णन किया। जो अन्तःपुरकी रीतिसे भयंकर विरोध करनेवाले हैं जो हिन्दूस्त्रियोंको

कारागारमें रहनेवाली जानते हैं-जो इनको मोल ली हुई दासीके समान जानते हैं । कर्नेल टाड साहबका कथन उनको सावधान करदेगा हम गर्व्व गौरव और साहसके साथ सभ्यजगत्के सन्मुख कहते हैं कि हिन्दूरमणी राजपूतरमणियोंकी भाँति साध्वी सती पतिव्रता वीरमाता संसारकी किसी जातिमें आज लों नहीं जन्मी हैं । पश्चिमी जगत् आज नयी सभ्यताके प्रभावसे उन्नतिके शिखरपर विराजमान रमणीमंडलीको पूर्णरूपसे स्वाधीनता दे रहा है, किन्तु हम पतित अशिक्षित-खरीदे हुए दास हिन्दूजाति आज इस अपनी जातिको ऐसी शोचनीय अवस्थामें कह सकते हैं कि पश्चिमी विदुषी और सभ्यता युक्त रमणीके साथ अन्तःपुरमें रहनेवाली हिन्दूरमणीकी तुलना करो, प्रत्येक कार्यमें प्रत्येक विषयमें न्यायी और सच्चे विचार करनेवालेको यही कहना पडेगा कि यदि सती रमणी हुई है तो वहीं हिन्दुओंके अन्तःपुरमें, यदि वीरजननी हुई हैं तो वहीं राजपूतोंके अन्तःपुरमें, वर्तमान समयके अंग्रेज विद्वान् मनियर विलियम देखो क्या कहते हैं ? संस्कृतशास्त्रके ज्ञाता प्रसिद्ध विद्वान् मोक्षमूलर बिजलीके समान कड़ककर विलायतमें क्या कहते हैं ? हिन्दू समाजके तत्त्वको देखनेवाले टाड साहबके समान वह एकस्वर होकर कहते हैं, हिन्दू रमणी जगत्में अतुलनीय हैं, प्राचीन मिश्र, ग्रीक, रोम और आधुनिक ग्रेट ब्रिटेनिया, फ्रान्स, जर्म्मन, आस्ट्रेलिया, स्पेन और नयी दुनियाँ अमेरीकाके इतिहासके पत्रे २ और पंक्ति २ में दृष्टि डालकर देखो, देवलदेवीके समान कितनी वीरमाता दीख पड़ेंगी ? सतीत्वकी रक्षाके लिये किस रानीने गन्नौरकी राजभामिनीके समान, चित्तौरकी राजसती पद्मिनीके समान किशोर अवस्थामें अपने जीवनको विसर्जन किया है ? यूरोपमें सैकडों वीर भार्या दृष्टि आती हैं,किन्तु कर्म्मदेवीके समान किस वीरपत्नीने पतिके गौरव और मानकी रक्षाके लिये प्राणपतिको समरभूमिमें जानेको उत्साहित किया है ? किस यूरोपकी वीरनारीने संयुक्ताके समान अपने पतिको रणके भेषमें सजाकर साहसके साथ युद्धक्षेत्रमें जानेको शीघ्रता की है ? कौन यूरोपकी कुमारी अपने पतिको रणके सन्मानें, अपनी जातिके गौरव अपने और अपने देशकी भलाईके लिये कृष्णकुमारीके समान नवयौवनमें विषके द्वारा अपने प्राणोंको छोड जगत्में अक्षय कीर्तिका स्तम्भ स्थापित कर गई है ? सतीत्व, पातिव्रत्य, हृदयकी सरलता, साहस, बुद्धिबल और धर्म्मके पालन करनेमें सदासे हिन्दू रमणी जगत्में अतुलनीय होती आई हैं यह बातें हिन्दू रमणीके-चरित्रमें सत्यप्रिय और न्यायी पुरुषको अवश्य माननी होगी । वही आर्य सन्तान इस समय मोल लिये हुए दासकी जातिमें बदल गई है किन्तु इस मोल ली हुई दासजातिकी स्त्रियां आज लों आदर्शस्वरूप हैं ।

यद्यपि उस राजवाडेमें उस आर्यक्षेत्र भारतमें आज देवलदेवी, कर्मदेवी, पद्मिनी, कृष्णकुमारी, संयुक्ताकी लीला प्रकाशित नहीं होती हैं,यद्यपि हमारी हिन्दूजातिकी माता, भगिनी, वधू और कन्यागण इस समय वीरनारियोंके अभिनयको नहीं करती हैं, किन्तु जगत् स्वतः ही घोषण कर रहा है कि इस पतित दशामें भी हिन्दू रमणी अखंड भावसे अपने सतीत्वकी रक्षा करके ही अपने अन्तःपुर और अपने घरको शान्ति,

सन्तोष, सुख और मंगलकी गंधसे सुगन्धित बनाये हुई हैं । सती द्रौपदीके अपमानमें कुरु और पांडवोंके महायुद्धसे भारत महास्मशानके रूपमें बदल गया है, उस सतीकुलके ही पुण्यसे, उस सतीकुलकी कृपासे, उस सतीकुलके सतीत्वके अक्षय तेजसे और उस सतीकुलके बीजमंत्रसे भारत अवश्य ही फिर अपने शिरको उठावेगा, लक्ष्मी-स्वरूपिणी–शक्तिरूपिणी हिन्दूरमणी अवश्य ही फिर अपने सोते हुए पतिपुत्रोंकी नसोंमें शक्ति उत्पन्न करेंगी, यह निश्चय है कि समय २ पर अवश्य ही केवल राजवाडेमें ही नहीं वरन् हिमालयसे कन्याकुमारी तक और अरबके उपसागरसे ब्रह्मपुत्र पर्यन्त आर्य-क्षेत्रमें हजारों देवलदेवी, कर्मदेवी, पद्मिनी, कृष्णकुमारी उत्पन्न होकर नवीन लीलाओंसे भारतके यशकी पताकाको फैलाती रहेंगी ।

पचीसवाँ अध्याय २५.

सतीदाह;—शिशुकन्याकी हत्या;—जुहारकी रीति;—राजपूतोंके चरित्रोंका संक्षिप्त विवरण;—शिकार खेलना;—व्यायाम क्रीडा;—युद्धशाला;—गानाबजाना,—महाराज शिवधनसिंह;—राजपूतोंकी शिक्षा;—घरका सजाना और वेष ।

महामाननीय टाड साहेब इस अध्यायमें राजपूतोंके चरित्रका एक दृश्य अङ्कित करते हैं। एक समयमें हिमालयसे कन्याकुमारी तक और अरबके उपसागरसे ब्रह्मपुत्र तक हिन्दूजातिमात्रके बीचमें सतीदाहकी रीति प्रचलित थी, इसमें कहना केवल बाहुल्यमात्र है । राजपूतजातिमें जो सतीदाहकी रीति प्रचलित थी उसके सम्बन्धमें महामाननीय टाड साहबने उस रीतिके जातीय धर्मविधानकी अथवा दाम्पत्यप्रणयसूत्रकी सृष्टि हुई है या नहीं पहिले उसीकी समालोचना की है । सतीदाहके सम्बन्धमें उनका पहला कहना यह है कि जिन धर्मग्रन्थोंमें इस रीतिकी प्रथम घटना दिखाई पड़ी है सतीका आदर्श सबसे पहले उन्हीं धर्मग्रन्थोंमें विद्यमान है। इसमें राजा दक्षप्रजापतिकी कन्या सती ही प्रधान आदर्शके स्थानपर थीं । राजा दक्षने अपने महायज्ञसे चारों लोकके निवासियोंको निमंत्रण देकर बुलाया । परन्तु अपने जामाता शिवजी महाराजको किसी प्रकार भी निमंत्रण देनेमें उसकी सम्मति नहीं हुई । सतीने सुना कि मेरे पिताने बड़ा भारी यज्ञ किया है और मुझे निमंत्रण भी नहीं दिया, यह विचार कर विना ही बुलाये यज्ञके देखनेके लिये इकली ही अपने पिताके घरको चली गईं । राजा दक्षने उस बडी सभामें क्रोधित होकर महादेवजीकी अत्यन्त निंदा की; सतीने उन प्राणपतिकी निंदाको सहन करनेमें असमर्थ हो अपना प्राण उसी समय त्याग दिया । फिर उन्हीं सतीने राजा हिमालयके यहां जाकर जन्म लिया;फिर शिवजीके साथ उनका सम्मिलन हुआ । साधु टाड साहेब कह गये हैं कि राजपूतोंकी स्त्रियें भी आदर्शके अन्तमें फिर प्राणपतिके साथ मिलनेकी आशासे प्रज्वलित हुईं; चितामें निर्भय होकर भक्तिसहित अपने शरीरको त्याग देती थीं । उन्होंने कहा है कि इस रीतिका प्रचार सबसे पहले शैवियोंके द्वारा हुआ है और प्राचीन जातिमें भी इस रीतिका प्रचार भलीभाँतिसे था। वह इसके प्रमाणस्वरूप उदाहरण दिखा गये हैं । जाक्षारती सती वासी प्राचीन सिखीयाजित और जूटवीरजातिमें किसी वीरने भी इस प्रकारसे शरीर त्याग नहीं किया । मृतक हुए वीरोंकी प्रज्वलित चिताके ऊपर उनकी स्त्रियें अपने स्वामीके सम्पूर्ण अङ्गोंको भस्म कर देती

थीं। बाल्टीक सागरके तीरवासी स्कन्धनेबियाके जितृगणोंमें भी इस रीतिका प्रचार था और फिरेसियन प्राङ्कसे निकली सैक्सन जाति भी चिरकाल तक इस रीतिको उत्तम प्रकारसे रक्षा करके बहुत वर्षोंके पीछे केवल मात्र स्त्रीको मृतक पतिके साथ जलानेकी रीतिको रोक सकी थी।

टाड साहबने पीछे कहा है कि इस रीतिका प्रधान उद्देश्य रमणीके सतीत्वका प्रकाश है। इस सहमरणसे भार्य्या केवल अपने स्वामीके पापोंको और अपने पापोंको ही नहीं दूर करती है बरन् अंतमें मृतक स्वामीके साथ पुनः स्त्रीका मिलन अवश्य होगा उनको ऐसा अटल विश्वास है। एक वार इस विश्वासमें दृढ होकर राजपूत वीर-नारियोंके वीरचरित्र-साइस शक्तियें इस रीतिके सहायता करती थीं। कर्नल टाडने इसी प्रसंगमें कहा है कि बंगालकी भयनामसे डरनेवाली स्त्रियें भी प्रसन्न चित्तसे अपनी इच्छानुसार जलती हुई चिताकी अग्निमें स्वामी केशवको आलिंगन करनेमें नहीं हिचकती थीं।

सतीदाहकी रीति हिन्दुओंके धर्मसंगत है वा नहीं यहांपर इसीकी आलोचना करते हैं। टाड साहबका कथन है कि प्राचीन शास्त्र ही निश्चित मीमांसाके प्रधान सहायक हैं। जिन्होंने इस सहमरणकी रीतिके सम्बन्धमें शास्त्रके विधानको देखा है वह अवश्य ही बिना दुहराये मान लेंगे कि इसमें बडा मतभेद है। महार्षि वेदव्यासजी महाभारतमें इस सहमरणकी रीतिको दृढतासे समर्थन कर गये हैं। किन्तु विधानकारोंमें श्रेष्ठ महा-राज मनुने इस रीतिकी प्रथम व्यवस्था नहीं दी है और आर्यविधवानारियोंके आचार व्यवहारके सम्बंधमें मनुने जिस प्रकारकी निर्धारणा की है, विलायतकी स्त्री-समाजके नेत्रोंमें वह वडी कठोर होने पर भी भारतवर्षमें हिन्दूस्त्रियोंके हृदयमें वह बडी सरल प्रतीत होती है. विधवा हिन्दूरमणीके प्रति मनुका आदेश है-"विधवा स्त्री अपने जीवनको केवल कंदमूल ही खाकर बिता दे और अपने स्वामीके परलोक जानेपर भ्रमसे भी वह दूसरे पुरुषका नाम न ले।" * उनका दूसरा विधान यह है-"पतिके परलोक जाने-पर जो साध्वी रमणी पवित्र होकर रहती और धर्म्मका आचरण करती है अन्तमें उसको स्वर्ग प्राप्त होता है, किन्तु जो विधवा स्त्री फिर विवाह करके अपने मृतक पतिकी अवज्ञा करती है, इस लोकमें वह अपनेको कलुषित कर अन्तमें अपने पतिके निकट स्थानसे वंचित रहती है।" ×

---

* मनु०-कामं तु क्षपयेदेहं कन्दमूलफलैः शुभैः। न तु नामापि गृह्णीयात्पत्यौ प्रेते परस्य तु॥ मनु. अ. ५ श्लो. १६०। १६१ देखो।

× टाड साहबके समयमें केवल रजवाडेमें ही नहीं बरन् भारतवर्षके सभी स्थानोंमें सहमरणकी रीतिका प्रचार था. वह टीकामें लिख गये हैं कि इस रीतिको अवश्य उठाना चाहिये। उन्होंने लिखा है कि जहाँगीरने अपने राज्यकालमें यह आज्ञा दी थी कि जिस हिन्दूविधवाके पुत्र वा कन्या है वह कभी अपनी इच्छानुसार मरे हुए पतिके साथ नहीं जल सकेगी, कुछ समयके पीछे जहाँगीरने स्वयं ही एक साथ इस आज्ञाको उठा दिया। लाट विलियम बेन्टिककी कृपासे सहमरणकी रीति भारतमेंसे एक साथ ही उठ गई है।

टाड साहबका कथन है कि हिन्दू समाजके प्रधान शास्त्रकार विधवाओंके पवित्र आचरण, शुद्धतासे रहना, संसारके सुखकी इच्छाओंको त्यागना—इत्यादि नियमोंके सम्बन्धमें ऐसे अनेक विधान करके इस जगत्में यश और परलोकमें पतिके साथ स्थान पानेकी आशा दिला गये हैं किन्तु किसी विधिमें वैसी कठोर सहमरणकी रीतिकी व्यवस्था नहीं दी है । इस सहमरणकी रीतिके सम्बन्धमें कर्नल टाडने अन्तमें कहा है कि इस सम्बन्धमें पंडित मंडलीने इतना लिखा है कि उससे हमें अधिक कहनेकी आवश्यकता नहीं है ।

सहमरणके सम्बन्धमें हमने ऊपर जो टाडसाहबका मत प्रकाश किया है उसका अधिकांश ही समर्थन करने योग्य है । हमारे प्रधान शास्त्रकार मनुने सीताको जीते हुए ही चिताकी प्रज्वलित अग्निमें जलनेकी व्यवस्था नहीं दी है किन्तु परिवर्तन समयके केवल व्यासने ही नहीं अन्यान्य शास्त्रकारोंने भी इस प्रथाका बडा समर्थन किया है । हमारा कथन है कि विना कारणके कोई कार्य नहीं हुआ करता है। हमारा विश्वास है कि मनुके समयमें सहमरणकी आवश्यकता नहीं थी, इसीसे उन्होंने व्यवस्था नहीं दी है। परिवर्तनशील समयके अनुसार अवश्य ही कोई बडा कारण उपस्थित हो जानेपर और और शास्त्रकारोंने सती दाहकी रीति चलाई है। शास्त्रकार कभी ऐसे नरपिशाच नहीं थे, जो बल पूर्वक विना कारणसे विधवाओंको जलती चिताकी अग्निमें भस्मीभूत कर देते । बडी खोज, बडी चिन्ता, हजारों परीक्षाओंके पीछे समाजकी शान्ति, मंगल और सन्तोषके लिये ही जब उन्होंने सब व्यवस्था बनाई है तब निश्चय ही हमें मानना पडेगा कि यह व्यवस्था भी वैसी ही खोज, चिन्ता और परीक्षाओंके द्वारा बनाई गई है। केवल एक कारणसे नहीं बरन् अनेक कारणोंसे इस सहमरणकी रीतिका प्रचार हुआ है किन्तु उन अनेक कारणोंमेंसे कोई मूल और प्रबल कारण उसका इस समय घोर अंधकारसे ढक गया है । उस मूल कारणसे ही यह रीति प्रचलित हुई थी, वह मूल कारण आजतक भी विद्यमान है। हमारी समाज इस समय अस्तव्यस्त हो रही है, समाजकी रीति छिन्न भिन्न हो गई है, समाजके नेताका इस समय पूर्णतासे अभाव है. समयके करसे हमारी इच्छा भिन्न हो गई है. सारांश यह है कि हम उन्हीं कारणोंसे इसका उद्धार करनेमें सब प्रकारसे असमर्थ हैं; अथवा उन्हीं आदिकारणोंसे इस समय हमारे चित्तपर इतना प्रबल आघात नहीं होता है; इस महामाननीय गवर्नमेण्टके सुराज्यमें सतीदाहकी रीति × लुप्त हो गई है, तब उस रीतिके बदलेमें क्या फल हो सकता है ? इस समय हम साहसके साथ केवल इतना ही कह सकते हैं कि इस रीतिके लोप होनेके पहले अवश्य ही करोडों भस्म हुई सतियोंमें बहुत सी ऐसी हुई थीं कि जो यथाथ

× अब भी सती विद्यमान हैं पतिके परलोकगमनमें अब भी कितनी एक साध्वी अपने प्राण दे देती हैं ।

दाम्पत्यप्रेमके वशीभूत होकर अपनी इच्छासे ही मृतकपतिके साथ एक ही चितापर भस्म हो गई हैं। आज तक भी ऐसी अनेक हिन्दूस्त्रियें हैं कि जिन्होंने अपने पतिके परलोक चले जानेपर उसीके साथ ही साथ अन्य उपायोंसे अपने प्राणोंका त्याग कर दिया है। जैसी हिन्दूजातिकी स्त्रियोंमें यथार्थ पतिभक्ति, शुद्ध दाम्पत्यप्रेम और प्रबल साहस पाया जाता है, हम इस बातको इसके साथ कह सकते हैं कि भारतवर्षमें अन्य किसी जातिकी स्त्रियोंमें इस प्रकारकी प्रबल सामर्थ्य नहीं पायी जाती।

इस समय हम राजपूतोंकी समाजमें प्रचलित हुई और भी एक रीतियोंकी समालोचना करनेकी अभिलाषा करते हैं; टाड साहबके समयमें उस रीतिका प्रचार राजबारेके राजपूतसमाजमें बडी दृढतासे था। परन्तु इस समय गवर्नमेन्टके शासनसे उस रीतिका सहमरणकी रीतिके समान एक साथ ही लोप हो गया है। जब उस रीतिका प्रचार नहीं है तब उसकी समालोचनाके करनेकी भी आवश्यकता नहीं जान पडती, परन्तु जब कि महात्मा टाडसाहब ही उसका वर्णन कर गये हैं और उस रीतिके लोप होनेका मूल कारण भी जब कि आजतक विद्यमान है तब उस प्राचीन रीतिके संबन्धमें दो एक कथाओंका कहना प्रसंगरहित न होगा,ऐसा हमें विश्वास है सहमरणके समान वह रीति भी हृदयको भेदन करनेवाली है! महात्मा टाड साहब कह गये हैं कि यद्यपि सतीदाहकी रीति समाज विधि और धर्मविधानके संगत थी, परन्तु नवीन जन्मा कन्याकी वधरीति कदापि धर्मसंगत नहीं हो सकती। राजपूतसमाजमें शिशुकन्याकी हत्याकी रीतिका प्रचार बहुत समयसे था! टाड साहब इसको कह गये हैं, कि "स्त्रियें जिस भाँति राजपूतपतिकी आत्मप्रशंसाके निमित्त प्रज्वलित चिताकी अग्निमें अपना शरीर समर्पण कर देती थीं; उनके गर्भसे उत्पन्न हुई कन्यायें भी उसी प्रकारसे अपने राजपूत पिताके गौरवकी रक्षाके निमित्त पृथ्वीपर आते ही प्राण छोड देती थीं। यदि किसी कन्याने ज्ञानहीन होनेके कारण किसी प्रकारसे पिताके क्रोधसे गर्भमें ही रक्षा पाली, तो उसी समयसे उसका दीर्घजीवन माना जाता था। उसी समयसे उसके जीवनके नाशके निमित्त अन्य उपाय किये जाते थे-जिस समय कन्याका जन्म होता था उस समय प्रसूतीके स्वास्थ्यके सम्बन्धमें कोई कार्य नहीं किया जाता था। नवप्रसूता कन्याको कोई भी प्रसन्न नहीं करता था वह मानो अयाचित होकर स्वयं ही आगई है और उसका जीवन कुछ कालमें ही समाप्त कर देते थे, राजवाडेके इतिवृत्तके आख्यायकका यह कथन है कि यह बात सब प्रकारसे सत्य है इसमें कुछ भी संदेह नहीं। वह यथार्थ ही कह गये हैं; कि विधवा भार्याके अनुगामिनी होनेपर पतिके कुटुम्बी जिस प्रकारके गौरवका अनुभव करते थे कन्याके पृथ्वीपर आते ही उसके प्राणनाशक कार्यमें कोई राजपूत भी उस प्रकार के गौरवसे अपनेको गौरवान्वित नहीं मानता था।"

किस कारणसे वीरक्षेत्र राजवाडेमें इस भयंकर रीतिका प्रचार हुआ था, किस कारणसे राजपूत पितावात्सल्य स्नेहके बदलेमें ऐसा पैशाचिक कार्य करते थे । साधु टाड साहबने इस स्थानपर उसीके कारणकी खोज की है. स्नेह वात्सल्यताके अभावमें जो राजपूत पिता सुकुमार कन्याके प्राण हरण करते थे उन्होंने इस बातको स्वीकार नहीं किया। नीतिज्ञ टाड साहबकी उक्ति और उद्देशसे जिस निमित्त यूरोपके प्रत्येक खंडमें असंख्यों धर्मशाला * बन गई हैं. विलायतमें माता पिताके जिस उद्देशसे, जिस कारणसे उन संपूर्ण धर्मशालाओंमें स्त्रियोंको जन्मभर तक बंदी रखते हैं × उसी उद्देशसे और उसी कारणसे राजपूत लोग शिशुकन्याको मार डालते थे, इसमें कुछ भी संदेह नहीं । यह रीति कितनी ही हृदयको विदीर्ण करनेवाली क्यों न हो कन्याको जन्मभर कारी रखनेकी अपेक्षा इस रीतिको अच्छा कहना होगा, फ्रान्सके फिरिसियान: गण इटालीके लाङ्गों वार्डिगण और स्पेनरके भिसिगोथ गण जिन कन्याओंको जन्मभरतक कुमारी अवस्थासे धर्मशालामें कारावासिनीके समान बंद करके रखते थे वही रीति जिन गोथियोंके + जन्मक्षेत्रमें आकर मानी गई है इसमें और कुछ भी संदेह नहीं है। राजपूत और प्राचीन जर्मनके वीरोंमें भी ऊपर उक्त कारणसे ही अर्थात् स्त्रियोंके कलंकके भयसे ही इस रीतिका प्रचार था. प्राचीन जर्मनके वीर अपनी २ स्त्रियोंको दूसरेके हाथमें नहीं देख सकते थे, इसीसे वह अपनी स्त्रीके हृदयमें छूरी मार देते थे और इसी कारणसे राजपूत भी अपनी २ कन्याओंको बराबरवाले पात्रके हाथमें समर्पित करनेमें असमर्थ हो वंशमें कलंक लगनेकी अपेक्षा उस सुकुमारी कन्याको अफीम देकर मार डालते थे । ”

यह तो हम पहिले ही कह आये हैं कि इस समय सुकुमार कन्याके प्राणनाशकी रीति दूर हो गई है, परन्तु इसका मूल कारण अभीतक दूर नहीं हुआ है । वह मूलकारण क्या है और किस कारणसे यह रीति प्रबल होगई है टाड साहबकी उक्तियोंके पठ-

---

* CONVENT

× आजतक विलायतमें यह रीति प्रचलित है ।

+ सिंधुनदीके समीपमें रहनेवाली धाईकार नामकी सिक्खजाति शिशुकन्याका वध इस प्रकारसे करती थी । फिरस्ता प्रकाशमें, इस प्रकारकी रीति थी, कि "कन्याके उत्पन्न होते ही उसी समय वह उसको बाजारमें ले जाते थे, एक हाथमें तो उनके तीक्ष्ण छूरी होती थी और एकहाथमें वह तुरन्तकी उत्पन्न हुई कन्या होती थी, इस भांति कन्याको बाजारमें ले जाकर वह ऊँचे स्वरसे कहते कि यदि कन्याके विवाह करनेकी किसीको इच्छा हो तो वह इसको ले ले; यदि कोई कन्याके लेनेमें सम्मत न होता तो उसी समय उस छूरीसे उसके प्राण ले लेते ।" टाड साहबका कथन है कि इसी कारणसे उनमें स्त्रियोंकी संख्या अधिक न थी और उसीसे एक स्त्री बहुतसे पति प्राप्त करती थी । जिस समय एक पति स्त्रीके पास जाता उस समय घरके द्वारपर एक प्रकारका संकेत (चिह्न) रक्खा जाता था; उसी चिह्नको देखकर दूसरा पति उसके यहां नहीं जा सकता था । जब वह चिह्न मिट जाता तब दूसरा पति उसके पास जाता था ।

नेसे इसका निश्चय हमारे पाठकोंको भलीभाँतिसे हो जायगा। टाड महोदय कह गये हैं "यद्यपि धर्मकी विधिसे इस नृशंसाचारको किसी प्रकारसे भी समर्थन नहीं किया है परन्तु राजपूत जातिमें प्रचलित विवाहकी रीतिने इस शिशुकन्याकी हत्याको भयंकरतासे बढा दिया है। राजपूतोंमें अपनी शाखा और अपने गोत्रमें विवाह किसी प्रकारसे नहीं किया जाता–यद्यपि बहुतसी शताब्दी बीत गई हैं वह लोग परस्परमें छिन्न भिन्न हो गये हैं। यद्यपि वह छिन्न भिन्न शाखा भिन्न स्थानपर स्थापित है और इसीसे उनके आदि पुरुषोंका नामतक भी लोप होगया है तथापि वह लोग किसी प्रकारसे भी आदिके वंशके साथ विवाहका सम्बन्ध नहीं कर सकते। इसका प्रमाण यह है कि यद्यपि आठ सौ वर्ष बीत गये हैं, गिह्लौटियोंकी दोनों प्रधान उपशाखा छिन्न भिन्न हो गई हैं। कनिष्ठ शाखासे उत्पन्न हुए शिशोदीयगणने ज्येष्ठ शाखासे उत्पन्न हुए आहारियादियोंके ऊपर मस्तक उठाया है, दोनो शाखाओंसे दो भिन्न देश शासित हो रहे हैं, तथापि दोनों शाखाओंमें कोई विवाहका कार्य नहीं हुआ; वह इसको व्यभिचारस्वरूप मानते हैं। शिशोदीयगणोंका आजतक आहारियादियोंके साथ भ्रातृसम्बन्ध है और दोनों जने दोनोंकी शाखाओंकी स्त्रियोंके भगिनीके समान जानते हैं इसी कारणसे ही प्रत्येक राजपूत अपनी २ कन्याओंके लिये भिन्न गोत्रमें सुयोग्य पात्रकी खोज करते थे। विदेशिक समर, आत्मविग्रह इत्यादि शोचनीय घटनाओंसे भिन्न गोत्रको, और भी अधिक दूर स्थित कर देते थे, यदि मारवाडमें किसी कारणसे दुर्भिक्ष हो जाता तो उस कारणसे जिस भाँति वहांके पुरुषोंकी संख्या घटती जाती थी उनके साथ ही साथ अम्बेर राज्यकी स्त्रियोंकी भी संख्या घटती जाती थी; इस भांति दोनों राज्योंमें बराबर दुगनी हानि पहुँचती थी।"

यद्यपि अंग्रेजी राज्यमें यह हृदयको विदीर्ण करनेवाली रीति लोप हो गई है तथापि इससे प्रथम इस शोचनीय रीतिको दूर करनेके निमित्त राजपूतगण स्वतःही सावधान हो गयेथे या नहीं। महात्मा टाड साहबके निम्नलिखित मन्तव्योंको पढनेसे इस बातको भलीभांतिसे जान सकोगे कि "जिस कुरीतिको दूर करनेमें पितातककी सहानुभूति स्वतः ही उद्वेजित हो गई थी अनेक राजाओंने इस शोचनीय रीतिको दूर करनेके लिये विशेष यत्न किया था। अम्बेरके विख्यात राजा जयसिंहने जो प्रस्ताव किया था, उसके द्वारा जितना भी कुछ हो सका था सावधानताके साथ यदि उसका अनुसरण किया जाता तो उसके सफल होनेकी पूरी संभावना थी। उन्होंने प्रत्येक राजपूतोंके अधिनायकके संमुख जो प्रस्ताव उपस्थित किया था, उसको प्रत्येक राजा अपने२सामन्तोंके सन्मुख उपस्थित कर दें। इससे वह ऐसा नियम कर देंगे कि जिससे विवाहके सम्बन्ध और उस सम्बन्धके अन्य विषयोंमें कोई सामन्त भी अपनी१एक वर्षकी आमदनीसे अधिक खर्च नहीं कर सकैं। जब यह प्रस्ताव निश्चय हो जायगा, तब सलम्बूरके सरदार यश और गौरवकी आशाके वश होकर सबसे पहले ही इस विधिको भंग कर देंगे। वह अपनी कन्याओंके विवाहके समयमें इतना अधिक धन खर्च करते थे कि उनके स्वामी राजाको इतना धन उठाने

की सामर्थ्य नहीं थी । कवि और वंशकारिकाओंने उनकी उस दानशूरताकी ऊँची प्रशंसासे राजवाडेको प्रतिध्वनित कर दिया था, उन्होंने अपने नाम जातीयके काव्यमें उज्ज्वलरूपसे चित्रित करके राजपूत ज्ञानी श्रेष्ठ महाराजा जयसिंहके इस शुभ उद्देशपर कुठाराघात किया, जितने दिनोंतक वृथा गौरवकी इच्छाका दमन तथा आडम्बर प्रिय राजपूत सरल सामान्य भावका अवलम्बन न करें, उतने दिनतक विवाहके समयमें अधिक धनके खर्चका विषमय फल दूर नहीं होगा । दुर्भाग्यकी बात है कि जो लोग इस रीतिको दूर करनेमें भलीभाँतिसे समर्थ हैं इस अधिक धनके व्ययने उनके स्वार्थको और भी सिद्ध कर दिया है । उन्होंने इसकी और भी पुष्टता कर दी थी, अर्थात् कवि, ब्राह्मण, गाथाके बाँचनेवाले और रहस्य क्रीडकगण विवाहकी सभामें दलके दल बांधकर आते थे और कन्याके पिताकी उच्च प्रशंसा करके दानशूरताको अधिक बढा देते थे।राजपूत कवियोंका कुल ही प्रधान यशका घोषक था,वह लोग पहले२ सामन्तोंकी कन्याओंके विवाहमें अधिक धनव्यय करके कन्याके पिताको अधिक धन देनेमें उत्तेजित करदेते थे । यदि कन्याका पिता उनकी उस प्रार्थनाको पूरा न करता तो कविगण उसके अपमानकी कविता बनाकर उसका घोर तिरस्कार करते थे । इसी डरसे कन्याके पिताके अधिक धनमें सामर्थ्य न भी होती तो भी वह उस समय किसी न किसी प्रकारसे अधिक धन खर्च करता था । राजपूतोंके कविश्रेष्ठ चंदकवि इस बातको लिख गये,– "कि पृथ्वीराजके साथ अपनी कन्याके विवाहके समयमें दाहिमाने अपने खजानेको खाली कर दिया था और उसका फल उनको यह मिला कि मनुष्योंके समाजसे उनको अनन्त यश मिला । विवाहके समयमें राजकविको पुरस्कारमें एक लाख रुपया मिलता था ।" महात्मा टाड साहब इसको लिख गये हैं कि अपनी शोचनीय अवस्थाके समयमें भी महाराणा भीमसिंहने अपनी कन्याके विवाहके समयमें प्रधान राज कविको एक लाख रुपये दान करके दिये थे ।

बहुत छोटी सी कन्याके हत्याके सम्बन्धमें हमें यह कहना है; कि यद्यपि प्रबल प्रतापशाली बृटिश गवर्नमेंटकी आज्ञासे इस समय यह रीति दूर हो गई है, परन्तु वंशका गौरव और अपने सन्मानकी आजतक अचलभावसे रक्षा की जा रही है । अंग्रेजी ऊँची शिक्षा और कुलीनताकी रीति जिस भाँति बंगाल देशमें विवाहके समयमें अधिक धनव्ययकी रीति भयंकरतासे बढ गई है, उसी भाँति अनेक माता पिता कन्याके विवाहमें अपना सब धन खर्च कर निर्धन होगये हैं राजपूतोंकी समाजमें भी आजतक इसी प्रकारके दृश्य दृष्टि आते हैं । भारतवर्षमें हमने राजपूत जातिके समान वंशकी मर्यादा और अपने गौरवकी रक्षा करनेवाली दूसरी जातिको नहीं देखा। राजपूतजाति अपने वंशकी मर्यादा और गौरवकी रक्षा करनेमें अपने प्राणतक भी देनेमें भयभीत नहीं होती; वह जाति केवल इसी कारणसे धनके न होनेपर कन्याको उत्पन्न होते ही मार डालती थी, यह क्या आश्चर्यका विषय नहीं है । प्रत्येक राजपूत ही पिशाचके समान आचरण करके कन्याको जन्मते ही मार डालते थे, हमारे

पाठकगण इस बातका विश्वास न करें कि राजपूत समाजमें ही यह कुरीति प्रचलित थी. जो लोग उनको बनैला बर्बर मानते हैं हमें केवल उन्हींसे कहना है कि उन्होंने क्या सभ्य यूरोप और अमेरिकाखंडमें 'रोमन-क्याथलीक सम्प्रदायकी गुप्त धर्मशाला-ओंके इतिहासको नहीं पढा है ? कर्नेल टाड साहब इस बातको स्वयं कह गये हैं क्या वह इस बातको नहीं जानते थे ? साधु सभ्यप्रिय टाड साहबकी आत्मा इस समय स्वर्गमें विराजमान है; परन्तु उनकी इच्छासे राजवाडेसे-और उस बन्य बर्बर राजपूत समाजसे उस तुरन्तकी जन्मी कन्याकी हत्याकी रीति तो दूर होगई परन्तु यूरोप और अमेरिकामें आजतक इस उन्नीसवीं शताब्दीके प्रबल शासनसे उस सभ्यताके पूर्ण पदपर पहुँचे हुए रोमनक्याथालिककी गुप्त धर्मशालामें सैकडों हजारों स्त्रियें मानो महा अपराधिनीके समान जन्मभरके लिये नरककी पीडाको भोग रही हैं ! राजपूतोंकी कन्याके हत्याकी रीतिके साथ इस सभ्यसमाजमें यदि उन निरपराधिनी कुमारियोंके कारावासकी बराबरी की जाय तो सत्यता और न्यायके साथ किस जातिको "बन्य और बर्बर " की उपाधिसे भूषित करनेके लिये आगे बढना होगा ? पश्चिमकी सम्पूर्ण धर्मशालाओंमें आजतक क्या यह भयंकर लोमहर्षण करनेवाला कार्य नहीं होता है; "मेरियामंक " नामक ग्रंथको पढकर पाठकगण इसके अभिप्रायको भलीभाँतिसे समझ जायँगे ।

इस समय हम और एक दूर कीहुई रीतिका वर्णन करनेमें प्रवृत्त हुए हैं । सतीका दाह और कन्याहत्याकी रीतिके समान बहु रीति अन्य जातियोंमें अत्यन्त भयंकर मानी जाती थी । उस रीतिका नाम जुहार है । यह जुहारकी रीति एक २ समयमें इकट्ठी हुई हजारों राजपूत बालाओंको प्रज्वालित हुई चिताकी अग्निमें भस्म कर देती थी । मेवाडके इतिहासमें कई स्थानोंमें हमारे पाठकोंने इस जुहारकी रीतिका वृत्तान्त पढा होगा । कर्नेल टाड साहबके समयमें इस रीतिका प्रचार बडी प्रबलतासे था; अंगरेजी राज्यके शासनसे इस समय भारतके प्रत्येक प्रान्तमें शान्तिमति सती विराजमान हो रही है । देशीय राजाओंमें परस्परके लडाई झगडोंका नाश जडसे होगया है, जिस कारणसे पहले जहर दिया जाता था इस समय वह कारण स्वयं ही दूर होगया है, इस रीतिका एक साथ लोप होते ही हम यहांपर इतिहासवेत्ता टाड साहबका अनुसरण करते हैं। महामाननीय टाड साहब लिख गये हैं कि "अन्य देशोंकी स्त्रियोंके सन्मुख राजपूतोंकी स्त्रियोंका भाग्य अत्यन्त ही शोचनीय विदित होता है।जविनके एक२ पगपर मानों उनके लिये मृत्यु मुँह फैलाये खडी रहती थी; सुकुमार अवस्थामें अफीमका सेवन और बडे होनेपर प्रज्वालित हुई चिताकी अग्नि उन राजपूत वीरबालाओंके प्राण लेनेको तैयार रहती थी और यदि इन दोनोंके बीचमें जो कुछ उपद्रव होगया तो जहर देकर प्राण ले लिये जाते थे । सारांश यह है कि पग २ पर उनकी मृत्यु समीप खडी रहती थी; जिस समय राजपूतोंकी युद्धमें पराजय होगई अथवा अपना नगर शत्रुओंके अधिकारमें होगया तो राजपूत वीरबाला अपने सतीत्वकी रक्षाके लिये मृत्युका

होना कल्याणकारक मानती थीं । यूरोपकी स्त्रियें युद्धमें विपत्ति पडनेपर जिस भाँति निर्विघ्नतासे रहती हैं, एकमात्र ईसाई धर्म ही उसका मूल कारण है और मध्यकालकी कुलीन वीरबाला भी निस्संदेह अबलाओंको निर्विघ्नतासे रहनेमें सहायता करती थीं । परन्तु बडे आश्चर्यका विषय है कि जो सभ्य राजपूत स्त्रियोंके सन्मानकी रक्षाके लिये इतना यत्न करते थे उन्होंने अपनी जातिमें इस विधिको नियुक्त नहीं किया । जिससे युद्धके समयमें स्त्रियोंके ऊपर ऐसे अन्यायके अत्याचार दूर हो सकते ।''

टाड साहब इसको पीछे लिख गये हैं, कि " बर्बरके तातारियोंके समान पाखंडी शत्रुके उपस्थित होनेपर हम इस भयंकर विषप्रयोगकी रीतिसे स्त्रियोंके सतीत्वके सन्मानकी रक्षाकी प्रशंसा करके सहानुभूति कर सकते हैं । परन्तु यह रीति राजपूतोंकी अन्तर जातिके समरमें भी प्रचलित थी । इस प्रकारके सैकडों खुदे हुए पत्र हमने पाये हैं; इससे प्रकाशित होता है कि शत्रुपक्षकी स्त्रियोंके बंदी होते ही युद्धमें विजयका होना पाया जाता है ।'' महात्मा टाड साहबने ऐसे बहुतसे प्रमाण उद्धृत किये हैं "श्रीशिरकी माताने झरोखेमेंसे ऊँचे स्वरसे पूछा कि, तुम्हारा पुत्र रथचक्र इस समय क्यों मौन हो रहा है ?–क्या उससे चला नहीं जाता है, क्या वह प्रत्येक करके एक दो स्त्रीको नहीं भोग सकता ?'' इससे प्रकाशित होता है कि श्रीशिर अपने दलके साथ भिन्न देशोंको लूटकर धन और रत्नोंके साथमें बहुतसी स्त्रियोंको भी लाये थे । उनके सेवकोंने उन स्त्रियोंका बाँट कर लिया है या नहीं, राजपूतमाताने यह प्रश्न किया ।

युद्धमें बंदिनी होनेवाली स्त्रियोंके सम्बन्धमें जिस प्रकारकी विधिका वर्णन मनुजी कर गये हैं, यहूदियोंके सम्बन्धमें इस विधिका प्रचार उसी प्रकार था । दोनोंका ही यह विचार था कि ऐसी बंदनी स्त्रियें, "विधिसंगत पुरस्कार'' स्वरूप थीं और मनु और मोजिसने उन बंदिनी स्त्रियोंकी बंदीकारकोंके साथ ही विवाहकी व्यवस्था भी नियत कर दी थी । मनुकी उक्ति है कि "किसी युवतीका प्रणयपात्र यदि युवतीके कुटुम्बके मनुष्यको युद्धमें पराजित करके अपनी प्रणयिनीका उद्धार कर ले तो दोनोंका विवाह विधिसंगत है ।''हिन्दूशास्त्रके मतसे अधम विवाह राक्षसविवाह है । "यदि कोई मनुष्य बल करके किसी युवतीको हरण करनेके लिये उद्यत हो और उस स्त्रीके चिल्लानेसे उसके कुटुम्बी लोग आकर उसके उद्धारके लिये उस मनुष्यके द्वारा एक २ करके मारे जायँ और वह मनुष्य उस स्त्रीको बल करके ले जाय तो उस विवाहको राक्षसविवाह कहते हैं ।''स्ववंश और स्वजातिके गौरवका नाश करनेवाले,अपने परिवारकी स्त्रियोंके कुलका सतीत्व लोप करनेवालोंने इस घटनाको दूर करनेके लिये असीम साहसी राजपूतजातिकी यह रीति अर्थात् शत्रुओंसे स्वपरिवारके स्त्रियोंके सतीत्वके नाशकी अपेक्षा उनके सतीत्व और सन्मानकी रक्षाके लिये एक साथ जीवनके नाशकी रीति नियत कर रक्खी थी ।

महामाननीय टाड साहब कह गये हैं, कि "राजवाडेकी स्त्रियें जैसी शिक्षित थीं उससे वह कलंकिनी होनेकी अपेक्षा आनंदके साथ उस प्रकारके उपायोंसे सतीत्वके सन्मानकी रक्षा करती थीं। ऐसा कौनसा राजपूत था कि जिसको ऐसी घटनाके उत्पन्न होनेकी अभिलाषा न हुई हो ? विधवा शब्द ही तिरस्कारका कारण समझा जाता था।" * अंतमें इतिहासवेत्ता इस बातको लिख गये हैं "कि मनुकी आज्ञा है कि यदि कोई पुरुष पराई स्त्रीको भगिनी कहकर पुकार ले, तब उसको, वृद्धको, पुरोहितको; राजाको और नवविवाहिता वधूको मार्ग छोड़ देना होगा और अतिथिसेवाकी प्रशसंनीय विधिसे उन्हें नियुक्त कर दिया है कि गर्भवती स्त्री, नवविवाहिता वधू और सुन्दरी युवती स्त्रीको अन्य अतिथियोंके पहले भोजन करावे।" इस प्रकारकी अन्य विधियें भी भलीभाँतिसे प्रकाशित होरही हैं। एक समयमें स्त्रीजातिको इतना बंद करके नहीं रक्खा जाता था; मुसलमानोंके प्रबल प्रतापके समयसे इस रीतिका प्रचार हुआ है और हिन्दुओंने उनका अनुकरण कठोरतासे किया है। परंतु मनुके ग्रंथोंमें ऐसी परस्परमें विवाद करनेवाली रीतियें अनेक दृष्टि आती हैं कि जिनसे हम कह सकते हैं कि वह समस्त रीतियें मानों एक शास्त्रकारकी बनाई हुई नहीं हैं, कारण कि इन रीतियोंमें स्त्रियोंके प्रति सन्मान और अवज्ञामूलक दोनों विधियोंकी व्यवस्था देखी जाती है। × मनुके नियत किये हुए निम्नलिखित विधान अवश्य ही प्रशंसाके साथ ग्रहण किये जाते हैं, "पर्व और आनन्द उत्सवके समयमें स्त्रियोंको रत्नोंके आभूषण देने उचित है. कारण उसका यह है कि यदि भार्या सुन्दर वस्त्रभूषणोंसे न सजाई जाय तो वह भार्या स्वामीको प्रफुल्लित नहीं करती है. यदि स्त्रीको सुन्दर २ वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित किया जाय तो वह स्त्री पतिको अत्यंत प्रसन्न करती है।" निम्नलिखित विधिसे मनुजीने स्त्रियोंकी सामर्थ्यमें निःसान्दिग्ध शक्ति स्वीकार की है, "स्त्रियें केवल इस जीवनमें अज्ञानी अथवा मूर्ख नहीं हैं, वह ऋषियोंको भी पुण्य मार्गसे हटाकर पापकी ओर ले जा सकती हैं।" इस कारण सर्वश्रेष्ठ शास्त्रकारोंकी

---

* महात्मा टाड साहब इस स्थानपर लिख गये हैं कि जिस समयमें सामान्य सैनिकके पदपर जाकर राजवाडेके अपरिचित स्थानोंमें घूम रहा था उस समय उनके आधीनमें स्थित एक राजपूत-सैनिकने कुएँसे जल लानेके लिये व्यग्र होकर हाडाजातिकी एक विधवाको 'राँड' कहकर पुकारा था और उसके निकटसे पात्र और रस्सीको मांगा। राजपूत स्त्रीने उसके इस वचनसे महाकोपित होकर कहा, "महाराज! मैं राजपूतनी हूं; अर्थात मैं राजपूतकी स्त्री हूं और राजपूतोंकी जननी भी हूं। उसके इस क्रोधभरे वचनको सुनकर कल्याणनामक उक्त सैनिकने हाथ जोडकर अपने अपराधकी क्षमा मांगी और माता कहकर उसके क्रोधको शान्त किया। इसके पीछे उस राजपूतकी स्त्रीने जलके पात्र उठाकर अपने पुत्रको बुला उसको उपदेश दे समझा बुझाकर जल दे बिदा किया। १८०७ ईसवीमें यह घटना हुई थी, यह सैनिक विशेष साहसी था। १८१७ ईसवीमें जब टाड साहबने ७२ बंदूकधारी शरीररक्षकोंके साथ १५०० पिंडारिको परास्त किया था यह कल्याण भी उन्हीं ७२ जनोंमेंका एक मनुष्य था।

× यह बात निरीभ्रमकी है कि यह बातें भिन्न २ ग्रंथकारोंकी हैं. मनुजी सबके गुण और दोष दोनों ही लिखते हैं।

उक्तिके मतसे जाना जाता है कि यद्यपि हिन्दू स्त्रियें इस भावसे अंतःपुरमें रक्खी जाती हैं परन्तु उसको प्रगटमें समाजके सन्मुख प्रकाश किया जाय तो उस समाजके ऊपर जिस भांतिसे अपनी प्रबल सामर्थ्यका विस्तार करतीं, उसकी अपेक्षा किंचित् सामर्थ्य भी विस्तार नहीं कर सकतीं ।"

विषप्रयोगकी रीतिके विषयमें महात्मा टाडसाहब एक कथा लिख गये हैं; उनको बहुतसे अंशोंको हम प्रसन्न हृदयसे समर्थन करनेको तैयार हैं। तब हमको केवल इतना ही कहना है कि हिन्दूजाति अपने प्राण, स्वाधीनता और जन्मभूमिकी अपेक्षा स्त्री भगिनी और कन्याओंके सतीत्वकी रक्षाके सब अंशोंमें भलीभांतिसे शिक्षित थी। शत्रु स्वजातिके आर्यरुधिरके धारणसे और बर्बर म्लेच्छ यवनोंसे उनके सन्मुख परास्त होनेपर भी अपनी स्त्री, बहन और कन्याओंको वह कुलकलंकिनी तथा सतीत्वसे भ्रष्ट नहीं होने देते थे–हिन्दुओंका अन्तःकरणसे यही अभिप्राय था। प्राचीन हिन्दूजातिने परास्त होकर शत्रुओंकी कन्या और उनकी स्त्रियेंके हरण करनेकी रीतिको दूर नहीं किया; इसी कारणसे पंडितश्रेष्ठ टाडसाहब अत्यन्त दुःखप्रकाश कर गये हैं. इस बातको हम कह सकते हैं कि किसी विशेष कारणसे ही इस रीतिकी सृष्टि नहीं हुई। एक समय हिन्दूजातिमें भारतके बीच पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंकी संख्या अधिक थी उस कारणसे ही उनके विवाहकी असम्भवता जानकर हरण की हुई स्त्रियोंके साथ विवाहका सम्बन्ध नियत हुआ है। दुराचारी यवनोंके समान हिन्दूजातिने जयकी इच्छासे स्त्रियोंके सतीत्वको नाश करके अपने आर्यनामको कलंकित नहीं किया, विजयी हिन्दुओंका दल कभी भी शत्रुपक्षकी विवाहिता स्त्रीको हरण नहीं करता था। इसी कारण कर्नेल टाडसाहबके प्रस्तावके मतसे इस प्रकारकी सृष्टि अन्तर जातियोंमें नहीं हुई। विषकी रीति पाखंडी यवनोंके अत्याचारके ही समयसे प्रबल हो गई थी। जहां-पर कठोर हृदय दुराचारी यवनोंने विजय पाई है साधु टाड साहब उसी स्थान पर विषकी रीतिकी दृढतासे सहानुभूति प्रकाशित कर गये हैं। जिन धर्मोंसे मनुका नाम प्रचलित है, महात्मा टाड साहब विशेष स्थलोंके होनेसे उनको परस्परमें विसम्वादी जानकर मनुको सब विधानोंका प्रणेता स्वीकार करनेमें राजी नहीं हुए। परन्तु इस बातको हम कह सकते हैं कि यदि मनुकी सम्पूर्ण विधियोंको भली-भांतिसे हृदयंगम करा जाय तो जो सन्देह हृदयमें वृथा उत्पन्न हुए हैं वह शीघ्र ही दूर हो जायँगे।"

उदारचित्त टाड साहब हिन्दू स्त्रियोंकी शिक्षा और ज्ञान बुद्धिके सम्बन्धमें जो कुछ वर्णन कर गये हैं "जो मनुष्य किसी समयमें भी गंगाजीके पार नहीं जा सकते थे उनके द्वारा जो हिन्दू स्त्रियोंके चित्र अंकित हुए हैं, ऐसा देखा जाता है कि उनसे बहुतसे मनुष्योंके हृदयमें सन्देह उत्पन्न हुआ है। उन हिन्दू जातिकी स्त्रियोंका वर्णन मोल ली हुई दासी कह कर किया है और सैकडों हजारों स्त्रियोंमेंसे एक भी ग्रन्थ नहीं पढ सकती थी। उनको ऐसा विश्वास था कि मैं उन सब भ्रमण करने वालोंसे प्रश्न करूंगा

कि उन्होंने "राजपूत" इस नामको सुना है या नहीं ? कारण कि राजपूत जातिकी नीच जातियोंके सामन्तोंकी कन्याओंमें भी ऐसी अल्प संख्यक हैं, कि जो लिखना पढना नहीं जानती हैं अपने अपने अप्राप्त व्यवहारी पुत्रोंको धन सम्पत्तिके अविभाविका पदपर नियुक्त हुई राजपूतजननीके साथ जो वार्तालाप किया है वह अवश्य ही उन राजपूतोंकी स्त्रियोंकी बुद्धि और समाज तत्त्वके ज्ञानके सम्बन्धमें अपना मन्तव्य प्रकाश करेंगे * यद्यपि भारतवर्षमें स्त्रियें राज्यशासनकी अधिकारिणी नहीं होती थीं, परन्तु अपने अपने पुत्रोंके अप्राप्त व्यवहारके समय प्रतिनिधिरूपसे राज्यशासनमें पूर्ण सामर्थ्य रखती थीं, अब भारतके इतिहासको पढनेसे उसी भांति असीम साहस और योग्यतायुक्त बहुतसी स्त्रियोंका शासन विवरण, उज्ज्वलतासे वर्णित हुआ है।×

महात्मा टाड साहबने इसी अभिप्रायसे कि राजपूतजातिके चरित्रोंके प्रधान प्रधान लक्षण और उनके गुणोंकी विलक्षणता हमारे पाठकगणोंको भलीभांतिसे दृष्टि

---

* महात्मा टाड साहब अपने टीकेमें लिख गये हैं, कि " बूंदीके राजाने अपनी मृत्युके समयमें मुझे अपने पुत्रके अभिवाचक पदपर नियुक्त कर गये । उस सुकुमार पुत्रके कल्याणके निमित्त और राज्यके शासनके निमित्त मैंने एक २ समयमें बहुत सी घटनाओंकी बातचीत बूँदीराजकी माताके साथ की थी। उन्होंने मेरे साथ भ्रातृसम्बंध स्थापन किया परन्तु सर्वदा उनके एक विश्वासी तीसरे मनुष्यके सामने मेरे चर्चा हुआ करती और एक परदा हम दोनोंके बीचमें पडा रहता उनकी उक्ति जैसी निर्भ्रान्त थी और सब प्रकारसे वह गाढज्ञानकी प्रकाशक थीं, उसी भांतिसे उसके पत्र भी उसके प्रकाश करनेवाले हैं। उस प्रकारके बहुतसे पत्र मेरे पास विद्यमान हैं। मैं ऐसे अनेक प्रमाण दिखा सकता हूं ।"

× फरिश्ता अपने इतिहासमें अकबरके आक्रमणके विरुद्ध अपने सुकुमार पुत्रके स्वत्वकी रक्षाके निमित्त गाड़ेकी रानी दुर्गावतीकी वीरताको उज्ज्वलतासे चित्रित कर गया है। वोडिसियाके समान उन्होंने वीरसाजसे सुसज्जित होकर चतुरंगिणी सेनाकी सहायतासे अकबरके भेजे हुए आसफखाँ सेनापतिके साथ घोर युद्ध किया था और उसी समयमें वह घायल होकर पराजित हुए थे। उन्होंने विचारा कि यदि भागते हैं तो कायर कहलावेंगे और जब कि हमारी स्वाधीनता हीका नाश होगया तो जीवन किस भाँति बच सकेगा ? तब उन्होंने उसी समय प्राचीन रोमक वीरोंके समान रणभूमिमें अपने हाथसे अपने जीवनकी बलि दे दी।

यह गाड़ाराज्य जबलपुरके अत्यन्त निकट है, एक महाशय १८७९ ईसवीमें उत्तर पश्चिमाचल और मध्यदेशोंमें जानेके समय कौतूहलके वश हो इस गाड़ेके राज्यमें गये थे। रानी दुर्गावतीकी राजधानी एकबार ही विध्वंस होगई थी राजवाटी और बडे सरोवरके सामान्य चिह्न पाये जाते थे। केवल ऊँचे शिखरके ऊपर एक गोल पत्थरका बना हुआ मदनमहल नामका तिमंजला आजतक भी हिन्दू भास्कर कार्यकी पराकाष्ठा दिखा रहा है, इस शिखरके ऊपर उक्त तिमंजले मकानको छोडकर शिखरके भीतरी भागमें घर बने हुए दिखाई पडते हैं, वह सभी खंडहररूपमें हैं, वहांपर यह कहावत है कि रानी दुर्गावती उस ऊँचे शिखरसे सुरंगके मार्गसे नर्मदानदीमें स्नान करनेके लिये जाती थीं, वह गुप्त मार्ग इस समय दृष्टि नहीं आता, मध्यदेशमें यह कहावत है कि मदनमहलकी रानी दुर्गावती इसी स्थानमें असंख्य धन और रत्नोंको रख गई हैं। इसके सम्बन्धमें एक कविता भी आजतक वहांके लोगोंके मुखसे सुनाई आती है अंगरेज भी इस अतुल धनको पानेमें सफल मनोरथ न हुए मदनमहलसे सूर्यके अस्ताचल जानेके दृश्य अत्यन्त रमणीय हैं।

आ जाय, इसी कारणसे उनका वर्णन करना आवश्यक विचारा; उस वर्णन किये हुए आख्यानोंको पढकर पाठकमंडलीको स्वतः ही राजपूतोंके चरित्रोंके सम्बन्धमें अपना मन्तव्य प्रकाश करनेका अनुरोध कर गये हैं । परन्तु महात्मा टाड साहबका वचन है कि "प्रबल साहस और देशके हितकी इच्छा, राजभक्ति, सन्मान, आचरण, आतिथ्य और सरल व्यवहार इन कितने ही गुणोंसे उनको विभूषित करनेमें विना कुछ कहे मानना होगा । संसारके प्रत्येक प्रान्तमें मनुष्य स्वभावके दोषोंके समान अपराधी होता है, यदि हम उनको नहीं छुडा सकते तो क्रमानुसार भिन्न २ जातियोंके द्वारा आक्रान्त और दुर्दान्त विजातिओंके साथ संघर्षणके कारणसे वह नैतिक अवनतिके अगाध समुद्रमें निमग्न हो जाते हैं. यद्यपि इस बातको स्वीकार करना होगा तथापि वह कठोर विजातीयकी पीडासे यह भयंकर आदर्श आज उनके जातीय गुणोंको लोप करनेमें समर्थ नहीं हुआ, यह देखकर अवश्य ही प्रशंसा करनेमें सामर्थ्य होगी।जातिके चरित्रोंकी अवनतिके प्रकाश करनेवाले जो छल कपट हैं और जो मिथ्याप्रियताके अभेद आसियिकजातिमें भली भाँतिसे देखे जाते हैं यद्यपि राजपूतजातिमें कई एक सम्प्रदाय विजातियोंके द्वारा पीडित होकर अपनी रक्षाके लिये दुर्बलके बलस्वरूप उस प्रवंचना और मिथ्या वचन रूप अस्त्रोंकी सहायता करते हैं, परन्तु यह प्रवंचना और मिथ्याप्रियता राजपूतजातिमें सर्वसाधारणमें प्रबलरूपसे प्रचलित थी । हम इसको स्वीकार नहीं करते,राजस्थानकी प्रत्येक राजसभाको ही अपने २ कार्यके अनुसार उपाधि प्राप्त हुई है। और जयपुरकी राजसभाके प्रति जैसी "झूँटे दरबार" की उपाधि मिली है × राजसभाके पक्षमें उसकी अपेक्षा अपमानकारी शब्द दूसरा नहीं है । सामान्य सत्य उपाधि राजदरबारके समान सुविचार और प्रशंसापूर्णकी परिचय देनेवाली है । शठता और प्रतारणामें बहुत सी भिन्न छाया दृष्टि आती हैं; स्वाभाविक नीतिकी हीनताके हेतुमें शठताने जन्म ग्रहण किया है; परन्तु इस स्थानपर प्रतारणका राजपूतजातिकी आत्मरक्षाके अर्थ ही अवलम्बित कहना ठीक होगा । परन्तु किसी एक जातिके चरित्रोंके सम्बन्धमें न्यायसे मन्तव्योंके गठनके पाहिले अवश्य ही उस जातिके विधिसमूह, उन समस्त कार्योंके परिणत करनेकी प्रक्रिया और आभ्यन्तरिक उपद्रवोंको शान्त करनेकी रीतिको मन लगाकर समालोचना करनी उचित है । जिस समय राजपूतजातिके हाथमें राजनैतिक स्वाधीनता विराजमान थी, हम अवश्य ही उस समयके योग्य मनुष्योंके मन्तव्योंकी परीक्षा करनेके अभिलाषी हैं । केवल कितने विपक्षके काल्पनिक भ्रान्त ज्ञानके ऊपर निर्भर करके किसी एक जातिके प्रति मन्तव्य प्रकाश करनेको हम आगे नहीं बढे हैं हमने इस स्थानपर उसीका अनुसरण किया है कि जिसका वर्णन वह हिन्दू जातिके सम्बन्धमें कर गये हैं । यदि कोई बुद्धिमान् मनुष्य प्रत्येक हिन्दुओंके स्वभाव और उनके मनकी वृत्तिकी परीक्षा करै तो प्रत्येक मनुष्यको ही किसी न किसी

× सुखका विषय है कि इस समय जयपुर राजदरबारके प्रति इस प्रकारकी परितापदायक उपाधिका प्रयोग नहीं है ।

भिन्न विषयका अवलम्बन करते देखा जायगा । उनमें कितने तो ऐसे होंगे कि जिनके चरित्र अत्यन्त ऊँचे हैं और कितने ऐसे होंगे कि जिनके चरित्र अत्यन्त दुष्ट हैं । उनका यह ज्ञान है कि निःस्वार्थ मित्रता स्वामीकी भक्ति और अन्यान्य श्रेष्ठ गुणोंसे विभूषित कहे जाकर विख्यात हैं; परन्तु उसके साथ ही साथ उनमेंसे बहुतोंका अंतः-करण कठोर है वह निर्लज्ज, ऊधमी और साधारण झगडोंसे प्रबल अत्याचारोंके करनेमें भी शान्त नहीं होते ।" यवनोंके मंत्रीने फिर कहा है कि हिन्दू जाति धार्मिक, मधुर-भाषी और अपरिचितोंके ऊपर दया करनेवाली, आनंदस्वभाव, सुशिक्षित, न्याय-विचार प्रिय, कार्यमें कुशल, सभ्यप्रिय और सम्पूर्ण कार्योंमें असीम विश्वासके पात्र हैं । विपत्तिके समयमें उनके चरित्र उज्ज्वलतासे प्रकाशमान हुए हैं । उनकी सेना युद्धभू-मिसे भागनेके नामको भी नहीं जानती थी, परन्तु जिस युद्धमें अपने विजयमें संदेह देखा उस स्थानपर वह लोग घोडेपरसे उतरकर साहसके साथ उसी युद्धभूमिमें अपना प्राण छोड देते थे ।

उदारचित्त महात्मा टाड साहब तथा मुगल सम्राट् कुलतिलक अकबरके विद्वान् मंत्री आबुलफ़ज़ल हिन्दुओंके चरित्रोंको जिस प्रकारसे मथन करके अपने मन्तव्योंको प्रकाश कर गये हैं, उसका वर्णन ऊपर किया गया है;परन्तु भारतके धनसे धनी—भार-तीय नवाब लार्ड मेकालेने कई महीनेतक भारतवर्षमें रहकर भारतवासियोंके चरि-त्रोंका वर्णन जिस भावसे किया है,यदि उसके साथ इन दोनो साधुपुरुषोंके मन्तव्योंकी तुलना की जाय, तो न्याय और सत्यताके साथ क्या लार्ड मेकालेकी विकट प्रेतात्माके सन्मुख उंगली उठाकर कलंकित रसनाके ऊपर वज्राघात नहीं किया जायगा । वह भारतवासियोंको "मिथ्यावादी, ज्वारी, चोर, शठ, प्रवर्तक, धूर्त" इत्यादि उपाधियें देकर सत्यता और न्यायका निरादर कर गये हैं । जिनके संकीर्ण हृदय—विजातीय लार्ड मेकालेकी उक्तिके मतसे भारतवासियोंको आजतक उन उपाधियोंसे भूषित करते चले आते हैं क्या वह महात्मा टाड साहब और साधु आबुलफ़ज़लकी उक्तिको पढ-कर चैतन्य नहीं हुए ? क्या उनकी भ्रान्ति इस समय भी दूर नहीं हुई ? वह जो कहना चाहते सो कह जाते उनका जैसा स्वभाव था--उनकी जैसी इच्छा थी वह उसी प्रकारसे बराबर हमारी निन्दा कर जाते, हम इस समय कुछ भी कहना नहीं चाहते। हमारा हृदय इस समय धकधक कर रहा है,हमारा हृदय इस समय भलीभाँतिसे दग्ध हो गया है, हमारा हृदय इस समय अविश्रान्त होकर बहुतसे वर्षोंसे कठोर पीडा पा रहा है; कठोर अत्याचार और पराधीनताके प्रचंड संघर्षणसे विध्वंस हो गया है, इस समय हमारे सहन करनेका ही समय है; विधाताकी गतिसे इस समय हम चुपचाप सब कुछ सहन करेंगे. परन्तु कहे देते हैं कि इस राजस्थानके इतिहासमें अनुवादका पृथ्वीसे नामतक भी लोप हो जायगा, परन्तु ऐसा समय फिर आवैगा, कि जिस समय हमारे उत्तराधिकारी गण इन सहनीय गुणोंके अमृतमय फलको संचय करनेमें निस्संदेह साम-र्थ्यवान होंगे; ऐसा समय अवश्य ही आवेगा कि जिस समय हमारे उत्तराधिकारी गण

हमारी उक्त उपाधियोंके दाताके साथ निर्विघ्नतासे उस विक्रमकी उपाधि धारण कर सकेंगे। संसारमें दो सार शब्द हैं--एक आशा और दूसरा प्रतीक्षा। वह आशा प्रतीक्षाका मृतसंजीवनी मंत्र है सदा एकसे दिन नहीं रहते इस मरुमय भारतवर्षमें वही मंत्र एकमात्र जीवनस्वरूप है।

इतिहासवेत्ता टाड साहबने राजपूतोंके और भी दो एक चरित्रोंका वर्णन करके इस प्रसंगको समाप्त किया है उनकी उक्तिसे प्रकाशित होता है, कि मुगलसम्राट्के आदि पुरुष बाबरके द्वारा भारतवर्षमें सबसे पहले अंगूर आये थे और उनके पोते जहाँगीरने तमाखूकी रीति चलाई थी, भारतवर्षमें सबसे पहले किसी समय अफीमका सेवन भी आरंभ हुआ था. टाड साहब इस बातको कह गये हैं कि इसको मैं नहीं जान सका। विशेष करके चंदकविने अपने काव्यमें कहीं भी इसका उल्लेख नहीं किया। उनका यह मत है कि अफीमने राजपूत जातिके बहुतसे उपकारी गुणोंको एक बार ही विनष्ट कर दिया था। स्वाभाविक वीरताके स्थानपर उन्मत्तता क्रूरता और मुखमंडलमें ज्ञानके प्रकाशकी प्रभाके स्थानपर दुर्बलताने सशंकित कर दिया है समस्त मादक द्रव्योंके समान इस अफीमका फल क्षणिक इंद्रजालके समान है; परंतु उसकी प्रतिक्रिया भी कुछ अल्प नहीं है। शरीर और मनके प्रति इस मादक द्रव्यको अनिष्ट करनेवाली शक्ति भलीभाँतिसे सर्वदा प्रकाश पाती है। यद्यपि राजपूत जाति "माधवा वा थाला" अर्थात् मत्तताको देनेवाले द्रव्यके पूर्ण पात्रका व्यवहार बहुत दिनोंसे था; परन्तु इस समय जिस प्रकार जलमें मिलाकर अफीमको सेवन करते थे, अत्यन्त प्राचीन कालके किसी काव्यके ग्रन्थमें भी इस प्रकारसे अफीमके सेवनका वृत्तांत दृष्टि नहीं आया। पुष्प, मूल और सस्यसार युक्त पानी यद्यपि इस समय आमंत्रियोंमें दिया जाता है परन्तु अफीमके सारका पानी मुख्यरूपसे व्यवहार करते देखा जाता है। सबजने एक साथ अफीमको सेवन करते थे, राजपूतजातिमें यह प्राणपणसे रक्षणीय प्रतिज्ञाका प्रमाणस्वरूप था। राजपूत इस प्रकारसे परस्परमें एक साथ बैठकर अफीमका सेवन करते हुए जिस प्रतिज्ञाको करते थे वह प्रतिज्ञा शपथकी अपेक्षा भी कहीं श्रेष्ठ थी। कोई राजपूत अपने सम्बन्धी तथा मित्रके यहां जाकर यह प्रश्न करता,--कि "अमल खाया" अर्थात् अफीमका सेवन किया है ? जिस किसी सामन्तके पुत्रका जन्म होता तो उत्सवके समयमें अन्यान्य सामन्त भी उसके अभिनंदनके निमित्त जाते और एक बडा पात्र सभामें लाया जाता, तथा उसमें जल डालकर तालके प्रमाण बराबर अफीम डाली जाती और एक बडी लकडीसे घोलकर पीनेके निमित्त तैयार किया जाता। पानीके तैयार होते ही एकत्रित हुए सभी एक२पात्रके ग्रहण करनेके बदलेमें अंजली भर२कर देते थे। इस पीनेके समयमें उनके मुखचंद्रको देखनेसे ऐसा बोध होता था कि कोई भी इच्छानुसार उसके पीनेका अभिलाषी नहीं हो सकता। वमनको दूर करनेके लिये पीनेके उपरान्त मीठे लड्डू प्रत्येक राजपूतको दिये जाते थे। अफीम जैसी शक्तिका प्रकाश आत्मामें करती है वह देखनेमें अत्यन्त ही विचित्र है, अफीमके विना सेवन किये हुए राजपूत अत्यन्त ही

निकम्मे रहते थे और मैं बहुधा राजपूत कर्मचारियोंको अफीमके सेवनसे कार्यकारिताकी शक्तिको संग्रह करनेके लिये बिदा देता। कारण कि जिस समय अफीमका गुण कम हो जाता है उस समय मनुष्य सूखे हुए काठकी लकडीके समान हो जाता है * आज-कलके राजपूतोंके पक्षमें आहार्य द्रव्यकी अपेक्षा अफीम अधिक प्रयोजनीय कही गई है और यदि कोई मनुष्य इसके प्रति उच्च शुल्कव्यवस्था करनेका अनुरोध करता तो वह उसे अत्यन्त आपत्तिके साथ त्याग देते थे।

महात्मा टाड साहब यहां तक अफीमके गुण और उसके द्वारा राजपूत समाजके शुभा-शुभ फलको भलीभांतिसे वर्णन कर गये हैं, कि सामन्तमण्डलीके वंशधर नवीन राज-पूतोंको इस प्रकारसे प्रतिज्ञाके सूत्रमें बांध लेते थे, जिससे वह लोग आगेको अनिष्ट करनेवाली इस अफीमका सेवन नहीं करें। इसी कारणसे ऐसे बहुतसे राजपूत हैं कि जिनको आजतक अफीमका स्वाद विदित नहीं हुआ। कर्नेल टाड साहबका अंतिम कहना यह है कि "जो मनुष्य इस कुरीतिको दूर कर सकते हैं वही राजपूत जातिमें सबसे श्रेष्ठ बन्धु गिने जायँगे; उदयपुरक पर्वत अनेक प्रकारके रंगाविरंगे सुगन्धित फूलोंसे बगीचास्वरूप था। नीलनदीके किनारेवाले देशोंमें इसके शिखरपर जिस प्रकारका राजमुकुट शोभायमान था, हिन्दुस्थानकी राजलक्ष्मी उसकी अपेक्षा अनेक प्रकारके रंगोंसे मुकुटको इस स्थानपर पा सकती थी।"

---

*महात्मा टाड साहब अपनी टीकामें प्रकाशित कर गये हैं-"अधिक क्या कहैं बहुतसी वार्तालाप कर-नेके समयमें वह अपने दोनों नेत्रोंको मींच लेते थे, मत्तता दूर होनेके साथ ही साथ मस्तक नाडीमें रहता है और दृष्टि सम्पूर्णतः शून्य दृष्ट आती है। मेरे साथ साक्षात् करते समयमें अनेक सामन्त आसनपर बैठकर निद्राको भोगते थे। हलदियाघाटके समरमें राणा प्रतापसिंहके दहिने हाथस्वरूप साहसी श्यामके वंशधर सादरीके सामन्त उनके प्रियमित्र राजा कल्याण यह अफीमके सेवन करनेसे ही एक साथ कर्म-हीन हो गये हैं वह अपनी स्वजातिकी चिह्न स्वरूप पगडीको धारण करते थे। अनेक समय जब उनको तंद्रा आती थी तब उनकी वह पगडी मस्तकपरसे उतरकर गोदमें आ पडती थी। यदि सामन्तोंको अफीमके सार पानको पीनेंकी सुविधा न मिलती तो वह उसको अपने अंगरखेके दामनमें बांधकर ले जाते थे। हमने जिस प्रकारसे यूरोपके निवासी अपने मित्रोंको नसा दिया है, वह भी उसी प्रकारसे अपने बंधुवर्गोंको अफीम देते हैं। जिस समय हम सामान्य सैनिक पदपर स्थित थे उस समय जय-पुरके अन्तर्गतके स्थानोंसे अनेक सामन्त आकर मेरे साथ साक्षात् करके कुछ एक अफीम मांगते थे। मैंने उसको लेकर मेजके ऊपर रख दिया। मुझे जब किसीने अफीमको सेवन करते हुए न देखा, तब उन्होंने "फिरङ्गीका अमल" अर्थात् अङ्गरेज लोग किस प्रकारके नसीले द्रव्यका सेवन करते हैं इसको जानना चाहा, मैंने उनके समीप एक बोतल मद्यकी भेज दी और उन्होंने पूछा कितनी मात्रा सेवन करें; इस प्रश्नके करनेपर आनंद भोगनेके निमित्त मैंने आधा पात्र सेवन करनेके लिये कहा। दूसरे दिन हम दोनों जनोंकी एक साथ शिकारको जानेकी इच्छा थी और उस समय इस विषयकी बातचीत हो गई थी। परन्तु जब हमने देखा कि हमारे बंधुके आनेके कोई लक्षण न दिखाई दिये, तब फिरङ्गीके देशकी मद्य किस प्रकार शक्ति उत्पन्न करती है उसका बिना ही अनुसन्धान किये हम यह समझ गये थे कि वह मद्यसेवनसे अत्यन्त अचेत हो गये थे।

बहुत दूरके निवासी चैनेय लोग भी भारतकी अफीमको सेवन करके निकम्मे हो जाते थे। बहुत वर्षोंसे भारतवर्षमें गवर्नमेन्ट भी इसका वाणिज्य करनेके लिये महा-आन्दोलन मचा रही है और शीघ्र किरीटानी-इंगलेण्डके अनेक उदारनीति अंग्रेज समाजमें बँधकर भारतवर्षीय गवर्नमेन्टको इस अपकार करनेवाली अफीमके प्रबल वाणिज्यको रोकनेके लिये बडी बडी सभाएँ हो रही हैं, और पार्लिमेन्ट भी घोर आन्दोलन मचा रही है, परन्तु भारतवर्षमें राजपूत वीरोंके वंशधर इस हालाहलस्वरूप अफीमका सेवन करके कर्महीन हो गये हैं, इस विषयमें आजतक भी किसीने दृष्टि नहीं डाली ! इस बातको कौन नहीं कहैगा कि वीर राजपूतजातिकी जीवनी शक्ति खोई गई है और इसका दूसरा प्रबल कारण क्या यह विषमय अफीम नहीं हो सकती ? सुराकी प्रबलअग्निसे बंगालका प्रत्येक प्रान्त जल रहा है। विश्वविद्यालयकी ऊँची उपाधि धारण करनेवालोंसे लेकर कृषकतक भी सुराके रंगमें निमग्न हो रहे हैं, सहस्रों कुटुम्ब इसी सुराके निमित्त घर घर के भिखारी हो गये हैं । जब गवर्नमेन्टने इसके रोकनेका यत्न न पाया तो बंगालको छारखार करनेकी सहायता करनेके लिये प्रत्येक ग्राममें मदकी भट्टीस्वरूप विषके कुएँ खुदवा दिये हैं । तब हम किस प्रकारसे आशा कर सकैं कि हमारी गवर्नमेन्ट अफीमभक्त राजपूत जातिके प्रति दयादृष्टि करनेमें आगे बढैगी ? राजपूतजातिके भाग्यके परिवर्तनका भार राजपूतजातिके ही हाथमें है। यही विचार कर नीतिके जाननेवालोंने अपने चित्तको स्थिर किया है ।

प्रतिज्ञा शब्दका यथार्थ अर्थ क्या है, किस प्रकारसे प्रतिज्ञाका पालन होता है, इस बातको जिस भांतिसे वीर राजपूतजाति जानती थी हम साहसके साथ इस बातको कह सकते हैं कि अन्य कोई जाति भी इस प्रकारसे प्रतिज्ञाके सन्मानकी रक्षा करनेमें समर्थ न हुई. महात्मा टाड साहब कह गये हैं कि, एक साथ अफीमका सेवन, पगडीका बांधना, अथवा अत्यन्त सामान्य कार्य दाहिने हाथमें हाथ मिलाना, इन तीनोंमें जिसके भी द्वारा राजपूत एक बार प्रतिज्ञा करते हैं, सहस्रों विघ्न और सहस्रों विपत्तियोंके पडनेपर भी राजपूत जाति अचलभावसे उसकी रक्षा करती है, आत्मजीवन देकर भी वह प्रतिज्ञा पालन करनेमें शान्त नहीं होते, हम लोग गर्वके साथ यह प्रश्न करते हैं कि संसारमें कोई जाति है जो सभ्यजाति राजपूतोंके समान प्रतिज्ञाकी रक्षाके निमित्त अपने प्राणतक देनेमें भी कातर नहीं होती थी ? ।

राजपूतजातिकी प्रधान मृगयाका वृत्तान्त यथा स्थानपर विस्तारसे वर्णन किया गया है । चिरकालसे राजपूतजातिके कुत्ते बंदूक भक्त कहाकर प्रसिद्ध हैं। शूकर और शशकके शिकारके समयमें कुत्ते राजपूतोंकी विशेष सहायता करते थे और राजपूतगण उग्र तेजस्वी घोडोंपर चढकर विना विश्राम लिये अधिक समय तक मृगयामें लिप्त रहकर कुछ भी कष्ट नहीं पाते थे । प्रत्येक प्रधान २ सामन्तोंके अधिकारी देशोंमें "रूमना" अर्थात् मृगयाके निमित्त वनकी रक्षा की जाती थी । यदि कोई मनुष्य उस वनमेंसे किसी जन्तुको भी पकड लेता, तो उसी समय पकडा जाकर दंड पानेका अधिकारी

होता था और उस रक्षित वनमें राजपूत लोग आनन्दित होकर मृग, शूकर, हिरन, व्याघ्र, बनैले कुत्ते, नेकडे, इत्यादि जन्तुओंके शिकारमें मग्न रहते थे, वीराभिनय-के स्थानपर परस्परमें अस्त्रकी शिक्षा और बाहुबलको दिखानेके लिये घोडेपर सवार हो केवल तलवारकी सहायतासे चलाये हुए बरछेके विरुद्धमें जिस प्रकार नाना प्रकारकी चतुरताके साथ अश्वको चलाकर अपनी रक्षा करते हैं, इनसे यदि कोई यूरोपका चतुर अश्वारोही भी बरछेके चलानेमें प्रवृत्त हो तो इसमें कुछ भी संदेह नहीं कि राजपूत उसका नाश करदेंगे। राजपूत लोग किसी निर्दिष्ट वस्तुकी ओर गोली चलानेमें बडे चतुर माने जाते थे, उनका निशाना सब प्रकारसे प्रशंसनीय था। राजवाडेके किसी २ स्थानपर घोडेकी पाठिपरसे ही बडे वेगसे बरछेका चलाना राजपूतोंमें आनंददायक क्रीडास्वरूप गिना जाता था। धनुषपरसे बाणका चलाना भी उसी प्रकारसे एक प्रधान क्रीडा है और वह जिस भावसे चलाया जाता है उसमें विशेष चतुरता और बाहुबलकी अत्यन्त आवश्यकता है। जबतक छोडे हुए बाणोंसे सम्पूर्ण अंश मृत्तिकानिर्मित लक्ष्य स्थान वा महिषकी देह बिंधजाती है तब तक कोई राजपूत भी संतुष्ट नहीं होता। धनुषबाणका चलाना राजपूतजातिमें चिरकालसे प्रचलित है। इस सम्पूर्ण वीरतामूलक शिक्षामें राजपूतोंके बालक छोटेपनसे ही नियुक्त होते थे। रुधिरको देखकर जिससे मनमें अन्यभावका उदय न हो जिससे बालकपनसे ही वीरतामें साहस उत्पन्न हो जाय इस निमित्त राजपूतोंके छोटे २ बालक खेलकूदके समयमें छोटी २ तलवारें अपने हाथमें ले बकरे और मेषशावकोंके शिरको काटा करते थे उनके माता पिता बालकपनसे ही ऐसी शिक्षा देते थे। जिस दिन राजपूतोंके बालक सबसे पहले अपने बाहुबलकी परी-क्षाके निमित्त अस्त्र चलाकर हरिण आदिका शिकार करते थे उस दिन उनके कुटम्बके मनुष्य उनको अभिनंदन करके महा आनंदसे उन्मत्त हो जाते थे। * महामाननीय टाड-साहब कह गये हैं कि इस प्रकारसे राजपूतोंके बालक वीरधर्ममें दीक्षित हो साहस, शूरता और वीरताके अभ्यासमें निपुण हो जाते थे। राजपूतोंका आनंद उत्सव ही समररंजक था, जातीय नृत्य और वीरत्वताका प्रकाशक संगीत उनको अधिक साहसी और प्रबल विक्रमशाली करदेता था, कसरत करनेवालोंकी कुस्तीको देखकर राजपूत अत्यन्त आनंदित होकर समय व्यतीत करते थे। राजवाडेके प्रत्येक राजा कितने ही बलवान कसरतमें चतुर कुस्ती करनेवालोंका पालन करते थे। प्रसिद्ध २ कुस्ती करनेवाले मनुष्य भिन्नराज्यमें विख्यात कुस्ती करनेवालोंको अपनी योग्यता दिखानेके निमित्त बुलानेमें भी त्रुटी नहीं करते थे। उसी भाँति प्रतियोगिताके दिखानेमें असंख्यों राजपूत उसके घर जाकर जेताको उत्साहित करते थे।

---

* महात्मा टाड साहब लिख गये हैं कि बूँदीके राजकुमार व्यवहार जाननेमें रहित हो जिस दिन प्रबल साहसके साथ वीरता करके मृगका शिकार करते थे, उस दिन उनकी माताने आनंदित होकर टाड साहबको एक पत्र लिख दिया था, उस दिन बूँदीमें एक बडा भारी दरबार हुआ था और सम्पूर्ण सामन्तोंको बहुमूल्य द्रव्य उपहारमें दिये गये थे।

प्रत्येक सामन्तका ही एक २ अस्त्रागार स्थापित है और हर एक सामंत प्रतिदिन वहाँ जाकर अपने अस्त्रोंकी परीक्षा करते हुए नियमके अनुसार कुछ समय उस स्थानपर रहते हैं। तलवार, बंदूक, बरछा, छूरी और धनुष—आदि अनेक प्रकार अपने प्रिय अस्त्रोंका राजपूतोंने एक २ नाम धरा है। अस्त्रागारका स्वामी राजपूतोंका बडा विश्वासी होता है। अस्त्र जैसे सुन्दर मनको हरनेवाले होते हैं वैसे ही वह बडे मूल्यके भी होते हैं। सब प्रकारकी तलवारोंमें "शिरोही" नामकी तलवार सब राजपूतानेमें सबसे अच्छी मानी जाती है, दोनों ओर धारवाला (खाँडा) और बडी तलवार भी उनको विशेष प्रिय है। लाहौर और राजवाडेमें अनेक प्रकारकी बन्दूकें बडी उत्तमतासे बनती और मुक्ता तथा सुवर्णसे रञ्जित होकर मनोहारिणी हो जाती हैं। बूँदीकी बन्दूक सब स्थानोंकी बन्दूकोंसे श्रेष्ठ होती है। गैंडेके चमडेकी ढाल अपनी रक्षा करनेके लिये प्रसिद्ध है। राजपूत गण गैंडेकी ढालमें अनेक भांतिके सुन्दर चित्र चाँदी और सोनेके चित्रित कराते हैं। राजपूतानेमें अर्द्ध चन्द्राकार त्रिशूलके आकार और सर्पकी जिह्वाके समान आकारवाले सुन्दर बाण बनते हैं।

महात्मा टाड साहब राजपूतजातिमें प्रचलित गाने बजानेके विषयका भी वर्णन करते हैं। वह लिखते हैं, महाराज शिवधनसिंह प्रतिदिन ही हमसे मिलनेको आते और वह मेरे साथ भाईचारा मानते थे कभी २ वह विना ही कारण बहुत समयतक मेरे पास बैठे रहते थे। महाराज शिवधनसिंह अनेक गुणोंसे भूषित थे और बन्दूकके चलानेमें वह मेवाडमें एक ही गिने जाते, अपनी जातिकी प्राचीन साहित्य विद्यामें बडे प्रवीण और केवल मेवाडके ही नहीं बरन् समस्त राजवाडेमें ऐतिहासिक गुप्त तत्त्वोंके जानकार प्रसिद्ध थे बातचीत करनेमें कवियोंके समान कल्पना करते और मीठी बोलीसे कविता करते हुए कभी २ सदुपदेशोंसे श्रोतासमाजको तृप्त कर देते थे यह उनमें पूर्ण शक्ति थी। संगीतविद्यामें पारदर्शी होनेके कारण संगीत विद्याके प्रत्येक विषयमें ही वह उत्तमतासे मतभेद दिखाते थे। महादेवके पंचमुखसे निकले प्रत्येक रागोंके प्रकरण, रागोंकी असंख्य मूर्ति और प्रत्येक रागोंकी छः रागिनी वह बडी व्याख्याके साथ दर्शाते थे। मेवाडके बीचमें सबसे श्रेष्ठ गानेवाले पुरुष और स्त्रियें उनके निकट ही रहते थे इस कारण वह कभी २ उन सब सबको हमारे यहां लाकर हमें गाना बजाना सुनवाते थे। उनकी प्रधान गानेवालीका स्वर जैसा ऊँचा था वैसा ही मधुर था। उनके उस सुन्दर कंठसे निकले वसंत और मेघरागके संगीत बडी मीठी सुरीली तानसे युक्त गानेमें प्रतीत होते थे।जो उज्जयिनीसे उनकी एक गानेवाली आई थी,वास्तवमें वह बहुतसे गानेवालोंमें अद्वितीय थी,मैंने उन दोनोंको एक स्थानपर बैठके एक साथ गानेके लिये कहा। शक्तावतोंके अधिनायक सलम्बूरके सामन्त और अन्यान्य सरदार प्रायः महाराज शिवधनके समान इस गानेको सुनने आये; कारण कि सभी गाने बजानेके परमभक्त थे और सभी उस समय अपने हृदयमंदिरके किवाडोंको खोले हुए गाना सुनकर मुक्तकंठसे कहने लगे कि जैसे सादुल्लानामक प्रसिद्ध बजानेवालेके बाजेको सुन विलायतकी बाजा बजाने

वाली समाज भी ऊंचे स्वरसे प्रशंसा करनेमें नहीं हिचकी थी, वैसे ही हम सब इस समय उज्जयिनीकी साधारण टप्पेकी कलीसे मुग्ध होकर मूकके समान मौन हो गये हैं। ग्रीष्म ऋतुमें इसी भाँति छोटी २ संगीतसमिति बरोडेमें वा छत्तोंके ऊपर एकत्रित होती थीं तभी चन्द्रदेवकी निर्मल चांदनीमें सुन्दर बिछे हुए बडे गलीचे पर बैठनेसे स्वच्छ जल वाले सरोवरके जलसे शीतल हुआ पवन दिनके प्रचंड सूर्यके तापसे तप्त शरीरोंको शीतल कर देता था। इसी अवसरपर उनका प्रेम, व्यंग और वीररससे युक्त संगीत हम सबको उन्मत्त कर देता था। ऐसे गानेकी समितियोंमें सरदार लोग मुझे भी बुलाते थे। पुत्रोत्सव और विवाहोत्सवमें विशेष करके प्रधान २ कवि और गाने बजानेवाले और २ देशोंसे आते जाते थे।

महाराज शिवधनसिंहके सम्बन्धमें कर्नल टाडने पीछेसे कहा है कि यूरोपके डलके समान वह अपनी सन्तानके शिरपर एक द्रव्य रखकर बन्दूककी गोलीसे उडा देते थे लेकिन संतानके शिरमें कोई कष्टका अनुभव नहीं होता था। परवाले उडते हुए पक्षीको वह गोलीसे मार गिराते थे और सामनेसे आती हुई बंदूककी गोलीके छूरीसे दो टुकडे करदेते थे। जब इन बातोंमें कोई अविश्वास करता तो वह सत्य दिखाने के लिये किसी दिनको नियत करदेते और उस दिन उससे पहले यही कहते कि सामनेसे तुम बंदूकमें गोली भरकर मेरे ऊपर छोड दो और आती हुई गोलीको छूरीसे दो टुकडे कर डालते ऐसे ही वह अनेक विचित्र चरित्र दिखाया करते थे। एक दिन उन्होंने एक मिट्टीकी हाँडीमें जल भर कर छूरी रख दी और बन्दूककी गोली दूसरेसे भरवाकर अपने हाथमें ले बीसकदम हाडीसे दूर खडे होकर कहा कि मैं इस गोलीसे हांडीमें स्थित छूरीके दो टुकडे करता हूं यह कह कर गोली छोडी मैंने स्वयं जाकर देखा तो हांडीके बीच छूरीके दो टुकडे पडे हैं। सबसे बढकर एक उसका चमत्कार बडा ही विलक्षण यह था कि वह एक लकडीके ऊपर एक नींबू को रखवाते और दूसरे मनुष्यसे गोली बंदूकमें भरवाकर अपने हाथमें लेकर दूर खडे हो सबके सामने उस नींबूपर गोली मारते, गोलीके लगनेसे नींबू पृथ्वीपर गिरपडता परन्तु नींबूमें गोलीके लगनेका कोई चिह्न नहीं दीख पडता और न बारूदके धुँएसे नींबूका रंग बदलता; नींबू ज्योंका त्यों रहता और गोली अदृश्य हो जाती, चतुरंगक्रीडामें भी वह बडे दक्ष थे। उदयपुरका एक अन्धा इस क्रीडामें उनका प्रधान प्रतिद्वन्द्वी था। महात्मा टाड लिख गये हैं कि विलायतकी सबसे बडी सभ्य और सुनीतिपूर्ण राजसभाके मध्यमें भी महाराज एक ही यथेष्ट पारिषद हो सकते हैं।

प्रत्येक सामन्तके यहां कंठसे और यंत्रसे संगीत जाननेवाली संप्रदायके मनुष्य नियुक्त रहते हैं किन्तु कर्नल टाडने लिखा है कि "कुछ वर्षोंके पहले महाराज सेंधिया (जो इस समय परलोकवासी हैं) उदयपुरके सबमें श्रेष्ठ और प्रसिद्ध गाने बजानेवालोंको अपने यहाँ ले आये हैं।" प्रत्येक राजपूत ही संगीतप्रिय हैं और वह सबसे बढ़कर टप्पेको ही मानते हैं।

शिल्प-संगीत-विज्ञानके प्रधान उत्साह देनेवाले राणा भीमसिंहके यहाँ कुछ एक गाने और बजानेवाले नियुक्त थे। इतिहास लिखनेवालोंका कथन है कि वह गानेवाले बडे चमत्कारसे जातीय टप्पेको गान करते थे । निर्जन रात्रिमें महलोंकी छतोंपर गानेवाले ऊँची तानसे गान प्रारंभ कर अपार आनन्दमें सबको मग्न करदेते थे । राणाके यहाँ एक संप्रदाय वंशीबजानेवालोंकी थी, वह भी अपनी वंशीकी सुरीली तानसे श्रोता समाजके कर्णके छिद्रोंको आनन्दसे तृप्त कर देती थी। कर्नल टॉड कह गये हैं कि गाना बजाना राजपूतोंके जातीय आनन्द सम्भोगका प्रधान अङ्ग स्वरूप और संगीतविज्ञान राजपूत जातिके शिक्षाका एक प्रधान अंग विशेष है । *

जिन्होंने भारतवर्षमें पर्वती मार्गपर गंभीर रात्रिमें जानेके समय शिखरपर स्थित हुए पहरेवालेंके द्वारा भेरीसे निकले हुए शब्दको सुना है वह लोग कभी उस भेरीके क्रमक्रमसे बढ़नेवाले प्रबल ऊँचे और विरामकालके पूर्व क्षणस्थ घनघनशब्दको कभी नहीं भूल सकैंगे।

महात्मा टाड साहब कह गये हैं यूरोपखंडकी कल्ट जातिमें व्यागपाइप नामका जो बाजा प्रचलित था,वह राजपूतजातिसे छिपा नहीं था। राजवाडेमें इसका नाम "मेसेक" था । दोमुखवाली वंशी भी राजस्थानमें बजाई जाती थी । अनेक भाँतिके बाजोंको पढ़कर इनको निरस विचार महात्मा टाड साहबने इसीसे इनका विशेष वर्णन नहीं किया है ।

राजपूतोंके बंधु इस स्थापपर राजपूत राजाओंकी विद्याशिक्षाके विषयमें उल्लेख करके कह गये हैं, दानपत्र वा "रेकउयाली" का कारण स्वीकारपत्रके पढ़नेमें किसी प्रकार भी चतुर नहीं है, राजाओंमें ऐसा कोई भी नहीं है और इंग्लैण्डके महान् कुलीन वंशधरगण जिस प्रकारसे पैत्रिक ज्ञानके अधिकारी कहा कर गर्वित थे और

---

* चन्दकविने लिखा है कि सम्राट् पृथ्वीराज यन्त्रद्वारा और कंठसे गानेको भलीभांतिसे जानते थे । कर्नल टाडका मत है कि भारतमें किसी समय अश्लील वा अपवित्र सङ्गीत साधारणमें प्रचलित था या नहीं इसमें सन्देह है, किन्तु पवित्र धर्म्मसङ्गीत राजपूतोंकी शिक्षाके अंगस्वरूपमें गिने जाते थे । प्रमाणस्वरूपमें वह भ्रमसे कुश और लवकी रामायण कीर्तन करनेके बदले रामचन्द्रिका रामायण कीर्तन करना लिखगये हैं । जयदेवके पवित्र संगीत आजतक सर्वत्र गाये जाते हैं । उन्होंने और भी कहा है कि "अनेक स्थानके देव मंदिरोंके पुजारी और भक्तगण अपने इष्टदेवके सन्मुख धर्म संगीत कीर्तन करते हैं, और आबू पहाडकी चोटीपर स्थित होकर यति और संन्यासी जब अपने आराध्य देवता वाटलीश्वरकी महिमासूचक सङ्गीत एक स्वर हो गाते हैं मुझे उसको सुननेसे बडा आनन्द प्राप्त होता है ।" राजस्थानके प्रसिद्ध २ कवियोंके बनाये जो संगीतोंको गानेवाले गाया करते हैं कर्नल टाड साहबने उसकी बडी प्रशंसा की है । स्मरणके अतीतकालके पूर्वसे सङ्गीतशास्त्र जिस शिक्षाके अंग विशेषमें गिना जाता था पुराणोंमें उसका यथेष्ट प्रमाण विराजमान है । सुख, शांति और सन्तोषके समयमें ही राज्यमें संगीतविद्याकी अधिकता बढती है । भारतके पतन (गिरने) के साथ साथ ही अशांति निग्रह, उत्पीडन और अत्याचार बढनेके साथ हमारे संगीतशास्त्रकी भी शोचनीय दशा हो गई है ।

फिर वह अपनी प्रधानता स्वाधीनताके सानन्दमें पत्रपर अपने नामके हस्ताक्षर तक भी नहीं कर सकते थे राजपूत राजा वा सामन्तोंमें उस प्रकारके मूर्ख और गर्वित आजतक कहीं दिखाई नहीं पडे । लेखनीके चलानेमें उदयपुरके महाराणामें असीम शक्ति थी, उनके लिखे हुए पत्रोंकी अत्यन्त प्रशंसा होती थी । परन्तु दूसरे इंग्लैंडे-श्वरके प्रति जैसी उक्तिका प्रयोग किया था राणाके सम्बन्धमें भी हम उसी प्रकार कह सकते हैं,—"उन्होंने कभी मूर्खता मूलक पत्र नहीं लिखा, वरन् वह विद्वत्ताका प्रकाश करनेवाला पत्र लिखते थे ।" राजस्थानके राजा और सामन्तोंने आत्मीयताकी सूचना करनेवाले जो पत्र लिखे थे उनसे उनके मनकी वृत्ति अत्यन्त ऊँची पाई जाती है । उन समस्त पत्रोंमें प्राचीनग्रन्थोंसे उपमा उद्धृत की गई और अनेक प्रकारके चरित्रोंका ज्ञान भी उनके सम्बन्धमें दृष्टि आया । प्रत्येक राजपूत राजा और प्रत्येक सामन्त ही इन सम्पूर्ण पत्रोंकी रक्षा बडे यत्नसे करते थे, इससे भलीभाँतिसे जाना जा सकता है कि वह शिक्षाके सम्बन्धमें मनुष्यजातिकी अन्यान्य सम्प्रदायोंकी बराबरी करनेमें समर्थ नहीं थे और शिक्षाकी चर्चामें भी वह विशेष चतुर थे । यूरोपखंडके राजा इलियट् और होमरकी कविता पत्रोंमें उद्धृत कर तो सके थे परन्तु राणाने जिस भाँतिसे व्यास और वाल्मीकिजीके श्लोकोंको उद्धृत किया था वह अत्यन्त आश्चर्यदायक है और राणा उनके प्रधान धर्मविधानके कर्ता मनुके वचनोंको जिस प्रकारसे चतुरताके साथ प्रयोग करनेमें सामर्थ्यवान् थे उस प्रकारसे विलायतके पंडितगण भी मोजिसकी विधानावलीको कदापि प्रयोग नहीं कर सके थे। जिस समय राजपूत उनके पूर्व पुरुषोंके ज्ञान और शिक्षाका उल्लेख करके गौरव प्रकाश करते थे, उस समय उनका वह उल्लेख और गौरव केवल वचनमें ही नहीं होता था वरन् उनके हृदयके भीतरसे उठता था । प्राचीन वैदिक रीतिके मतसे राजकुमार विद्याकी शिक्षा पाते थे और वह यूरोपके विश्वविद्यालयकी शिक्षाकी रीतिकी अपेक्षा कहीं कठिन होती थीं; कारण कि मनुष्य समाजकी ज्ञातव्य किसी शिक्षाके प्रति भी उपेक्षा दिखाना उचित नहीं, जातिगत सुखकी शान्तिके समयमें मनोवृत्तिकी उत्कर्षताकी प्राप्तिमें सभ्यता बढती है । जिस दिनसे शान्तिका अभाव हुआ है उसी दिनसे राजपूतजातिके अनेक विषयोंका भी पतन आरंभ हो गया है, इसको हम निःसंदेह कह सकते हैं, कि ज्योतिषशास्त्रके जाननेवालेको इस समय उत्साह और पुरस्कार देकर उसकी प्रतिपोषकता करनेवाला मनुष्य राजवाडेमें कोई भी नहीं है । अम्बेरके महाराज जयसिंह दिल्ली, काशी, उज्जयिनी और अपनी राजधानी जयपुरमें बहुत व्ययसे जिस भाँति बडे २ मंदिर बनवा गये हैं इस समय उस प्रकारके ज्योतिर्विद्याके उत्साहदाता देखनेमें नहीं आते, उन्हीं महाराज जयसिंहने इडिलाहेयार और उलूकबेगके द्वारा बनाये हुए गणनाके यंत्रोंकी एकताके साधनमें दिल्लीके शेष यवनसम्राट्के नामसे "जिज आहम्मदसाही" अभिधान करके बना दिया । उन्हीं महामाननीय जयसिंहने राजपूतजातिमें विवाहके समयमें अधिक धनका उठाना कम किया था और उसी कारणसे शिशुकन्याकी हत्या रीतिको दूर करनेके निमित्त समस्त राजवाडेमें एक प्रस्ताव उपस्थित

कर दिया था और उन्होंने अपने राज्यमें राजपूतनामकी जो राजधानी स्थापित की थी उसे इस समय सभी भलीभाँतिसे जानते हैं ।

टाड साहबका अंतिम कहना यह है, कि राजवाडेमें पचीस कोश तक जाते हुए स्थानोंमें अतीत समयकी प्रतिभा, बुद्धि और धनके अनेक प्रकारके चिह्न पाये जाते थे । राजपूतजातिमें शत्रुओंके लूटनेसे जो निर्मूल हो गई थी, इस समय उसमें जैसी शान्ति है, इस कारणसे ही राजपूतजातिकी वह लोप हुई शिल्पविद्याका ज्ञान पुनर्वार पूर्व गौरवके प्रकाश करनेमें समर्थ होगा या नहीं और राजपूतजाति फिर भी उन्नतिके शिखरपर पहुँचेगी या नहीं ? इस कठोर समस्याको एकमात्र भविष्य समयमें पूर्ण करनेमें समर्थ होंगे ! ऐसी आशा की जाती है ।

आधी शताब्दीके समयमें पहले महात्मा टाड साहब वीर राजपूतजातिकी शिक्षाके सम्बन्धमें जो कुछ वर्णन कर गये हैं, हमने ऊपर उसका वर्णन अविकल किया है । परन्तु आजकलके समयके साथ उस समयकी यदि तुलना की जाय तो हमको अवश्य ही मानना होगा कि महात्मा टाड साहबकी उपरोक्त उक्ति वर्तमान राजपूतजातिके प्रति प्रयोग नहीं की जा सकती । राजवाडेके राजपूतोंमें इस समय शिक्षादानके सम्पूर्ण रूप बदल गये हैं । महामाननीय गवर्नमेन्टकी कृपासे राजस्थानके राजपूत राजा, राजपूतसामंत, राजपूत राजकर्मचारी और राजपूत सामर्थ्यशाली मनुष्योंमें विलायती शिक्षाकी ज्योति धीरे २ प्रवेश कर रही है । इस समय अंग्रेजी भाषामें बहुतोंको अधिकार हो गया है । प्रत्येक व्यवहारको न जाननेवाले अनेक राजा भारतके अन्य प्रान्तोंके राजाओंके समान अंग्रेजी पढनेके लिये देशी वा अंग्रेजी शिक्षकोंके आधीनमें रहते हैं और बडे सामंतोंके पुत्रोंकी विद्याशिक्षाके लिये स्थान २ पर अनेक कालेज बन गये हैं । राजपूतोंके महान परिवारके पुत्र जिससे भली भाँतिसे अंगरेजी भाषा पढ सकें उस विषयमें अंगरेजोंकी अधिक दृष्टि है, इस बातको माननेके लिये हम सदा तैयार रहते हैं, परन्तु हम इतना तो कहे देते हैं कि राजवाडेमें मध्य श्रेणी अथवा नीची श्रेणीके मनुष्योंकी शिक्षाके लिये आज तक उपयुक्त प्रयोजनोंकी खोज नहीं की जाती है । यद्यपि शिक्षित देशके राजा अपने २ राज्यमें लोकशिक्षाको प्रचालित करनेके लिये तैयार रहते हैं, तथापि हमें ऐसा विश्वास है कि गवर्नमेंट वा असीम सामर्थ्यवाले अंगरेजोंके रेसिडेंटगणके इस विषयमें राजपूतोंकी सहायताके बिना किये आशाके पूर्ण होनेकी संभावना अत्यन्त कठिन है । समयके गुणसे देशके भूपाल इस समय अंगरेजोंके रेसिडेन्टके क्रीडाकी पुतलीस्वरूप हैं । इस कारण महात्मा टाडके समान कितने ही उदार हृदय रेसिडेंट वा पोलिटिकेल एजंटोंका भारतवर्षमें विना प्रादुर्भाव हुए राजवाडेमें सर्व साधारणमें यथार्थ लोकशिक्षाकी आशा नहीं की जा सकती ।

राजपूतोंके बंधु महात्मा टाड साहब राजपूतजातिके नित्य व्यवहारके कई एक द्रव्योंको उल्लेख करके प्रसंगका उपसंहार कर गये हैं । उनका कथन है कि सहस्रों

वर्षोंके बीत जानेपर भी राजपूतोंके नित्य व्यवहारके द्रव्य, शय्याकी रीति, सब प्रकारसे अचल भावसे स्थित रही है. यद्यपि राजपूतोंके महल रमणीय स्तंभोंसे शोभायमान थे-घरके भीतरकी दीवारोंपर विचित्रतासे चित्र खुद रहे थे, समस्त घर मुकुर मर्मर इत्यादिसे ढक रहे थे, परन्तु इनमें किसी प्रकारका काष्ठासन वा कमनीय कौंच आज तक दिखाई नहीं दिया, केवल घरके भीतर कोमल गलीचा बिछा हुआ रहता था और उसकी रक्षा सफेद वस्त्रोंसे की जाती थी; उस शय्याके ऊपर आये हुए मनुष्य अपने २ पदके अनुसार बैठ जाते थे। साधु टाड साहब इस बातको लिख गये हैं, कि उनके समयके सौ अधिक वर्ष पहले इंग्लैण्डेश्वरका जो पहला दूत दिल्लीके बादशाहके निकट आया, उस दूतके साथवाले पादरियोंके सम्बन्धमें जो वर्णन कर गये हैं वह इस प्रकारसे आजकलके समयमें प्रयोग नहीं किया जा सकता, उस समयसे लेकर दो सौ वर्ष पीछे तक इस प्रकारसे प्रयोग करनेकी सम्भावना हो सकती है। उक्त पादरी लिख गये हैं; कि "महान् मनुष्योंके सन्मुख अत्यन्त सामान्य घर सजाये हुए दृष्टि आते थे; समस्त घर झाड और फानूसोंसे सजाये जाते थे अनेक प्रकारके रंग बिरंगे चित्र दिवारपर लगाये जाते थे। काष्ठासन, कौंच, मेज, कुरसी, चंद्रातप या वृत्तशय्या अथवा परदे इत्यादिसे कोई घर नहीं सजा था। सत्य बातके कहनेमें क्या आपत्ति है, यदि यह सजाव इनके यहां होता तो भयंकर गरमीके कारण उन सबके बहुतसे अंशोंको व्यवहार करनेमें वह लोग असमर्थ हो जाते। घरके भीतर सुंदर रमणीक गलीचेको बिछाकर उसके ऊपर सब लोग बैठ जाते थे। * इतिहासवेत्ता राजपूत जातिके पहरावेके समयमें भी

---

* सभ्यताप्रिय टाड साहब इस बातको लिख गये हैं कि, आधुनिक ईसाई और पादरियोंके मतसे हिन्दूजातिमें माता पिताके प्रति भक्ति आज तक भी नहीं है, उस मिथ्या उक्तिके खण्डन करनेके लिये महात्मा टाड साहबने उक्त मिशनरीके ही मन्तव्योंसे उद्धृत कर दिया है, कि हिन्दूजातिमें सबसे श्रेष्ठ नैतिक गुण दृष्टि आते हैं। पिता माताके प्रति भक्तिके सम्बन्धमें मिशनरीका मत है "यहांपर हम और भी दो एक आवश्यकीय घटनाओंके वर्णन करनेकी अभिलाषा करते हैं; उन विषयोंके निमित्त यहांके निवासी इतने दरिद्री और नीच क्यों हुए जो अत्यन्त ऊँची प्रशंसाके पात्र थे; अर्थात् वे माता पिताके प्रति सहानुभूति प्रकाश कर यथेष्ट भक्ति सेवा और शुश्रूषा करते हैं. उनकी आमदनी अत्यन्त सामान्य होनेपर भी-कुछ एक धनको उपार्जन करके उस उपार्जन किये हुए धनका आधा भाग माता पिताको दे देते हैं। यह लोग माता पिताके कष्टको नहीं देख सकते वरन् अपने कष्ट उठानेमें कुछ भी कातर नहीं होते।" टाड साहबका कथन है कि यही हिन्दूधर्मकी प्रधान और पहली आज्ञा है। उक्तपादरी साहब हिन्दुओंकी नैतिक प्रधानताकी प्रशंसा भलीभांतिसे कर गये हैं।

ईसाई पादरियोंके द्वारा हिन्दुओंको ईसाईधर्ममें दीक्षित होनेके सम्बन्धमें जेसूठ मिशनरीने भारतवर्षके बहुतसे हिन्दुओंको ईसाईधर्ममें दीक्षित किया था. यद्यपि विलायतमें इसका विज्ञापन भी भेज दिया था परन्तु वह ईसाईधर्म की दीक्षा केवल विज्ञापनसे ही शेष हो गई है। सारांश बात यह है कि दीन दरिद्री हिन्दुओंको अन्नके अभावसे कातर होनेके कारण मिशनरियोंने उनको सहायता दी है और इसीसे वह ईसाईधर्ममें हो गये हैं। वह हिन्दू ईसाई धर्ममें दीक्षित होकर ईसाई धर्मको कुछ भी नहीं जानते वह केवल नाममात्रके ईसाई हैं। तीन सौ वर्षके पहले उक्त मिशनरीने जो कुछ भी कहा है, आज हम भी उसी उक्तिकी प्रतिध्वनि करते हैं। भारतवर्ष ईसाई धर्मके प्रचारका स्थान नहीं था।

कह गये हैं, इसका विस्तार करना अत्यन्त निष्प्रयोजन है—एक प्रकारके उपकरणमें, एक प्रकारकी रीतिके प्रचलित होनेपर देशभेद, जातिभेद और वर्णभेदोंका वेष भी भिन्न २ होता है । ग्रीष्मकालके सूक्ष्म वस्त्र और शीतकालके स्थूल चित्रित वस्त्रोंके भीतर रुई पूर्ण करके उसके द्वारा वेष बनाया जाता है; राजपूतोंकी स्त्रियोंका पहरावा केवल घांघरा, चोली और दुपट्टेका प्रचलित था । दुपट्टेसे ही घूँघटका कार्य भी चलता है, वह अगणित प्रकारसे अलङ्कारोंको पहरती हैं, पुरुष अनेक प्रकारके पैजामें अंगरखे और चादरोंका व्यवहार करते हैं । उनके सब वस्त्रोंमें प्रधान पगडी है । वर्णभेदकी पगडी अनेक भांतिकी है और समय तथा अवस्थाके भेदसे राजपूत लोग उसको भिन्न प्रकारसे बांधते हैं. यूरोपके राजा जिस प्रकार समान पदकी सूचना करनेवाली कुलीनता पदकके साथ फीता देते थे एक समयमें राजपूत लोग भी उसी प्रकारसे निवासियोंके द्वारा राजप्रसादस्वरूप "बालाबंध" नामक महानतामूलक वंदिनी भेषकी प्राप्तिमें महा-गौरवका अनुभव करते थे । ऋतुके बदलनेके साथ ही साथ राजपूतगण पगडी और अंगरखेके वर्णको भी बदल लेते हैं, यद्यपि सफेद वर्णका प्रचार सर्वसाधारणमें है परन्तु लाल, कुंकुमाभ और बैंगनका रंग सबसे श्रेष्ठ और आदरणीय गिना जाता है; नीची श्रेणीके मनुष्य एक ही प्रकारकी पादुकाका व्यवहार करते हैं इससे पैरके ऊपरका भाग नहीं ढकता । यहांके निवासी युद्धके समयमें और शिकारके समयमें बकरेके चमडेसे बने हुए बूट पहरते हैं और चमडेके ही बने हुए अँगरखे पहरते हैं, बखतरकी अपेक्षा बकेरके चमडेका अँगरखा उनको अल्पकष्टदायक होता है, राजपूतोंकी कमरमें एक बडी लम्बी छूरी लटकती रहती है ।

राजपूतजातिकी भोजनविद्या, चिकित्साविद्या, कुसंस्कारमंत्र, जादूके मंत्र, शारीरिक और मानसिक विपत्तियोंको दूर करनेके लिये अनुष्ठान इत्यादि विषयोंका वर्णन यथा-स्थानपर हो गया है, इसी कारणसे महात्मा टाड साहबने यहां पर मेवाडके धर्मानुष्ठान पर्वोत्सव और सामाजिक आचारोंका उपसंहार कर दिया है । इसी कारणसे हमलोग भी इस स्थानपर उनका अनुसरण करनेमें समर्थ हुए ।

अन्तमें हमें केवल इतना ही कहना है कि यद्यपि साधु टाड साहब अर्द्धशताब्दीके अधिक काल पहले राजपूतजातिकी धर्मनीति और समाजनीतिको उपरोक्त प्रकारसे चित्रित कर अंकित कर गये हैं परन्तु इस अर्द्धशताब्दीका समय बीत जानेपर भी वह धर्मनीति और समाजनीति इस प्रकारके अचल भावसे विराजमान है। विजातीय उच्च शिक्षाके बलसे ऊत्तर भारत और बंगालकी धर्मनीति और समाजनीति जिस प्रकार इस समय एकसाथ ही अस्तव्यस्त हो गई है विद्यालयमें ईश्वरके नामसे हित नीति और उपदेशसे शून्य शिक्षा—धर्मनीतिकी शिक्षाके न होनेसे और समाजकी शासन-शक्तिकी हीनतासे बंगाली जातिने जैसी शोचनीय मूर्ति इस समय धारण की है वीर राजपूतजातिमें आज तक ऐसा दृश्य न देखा होगा । राजवाडेमें अब भी समाज है, समाजका शासन है, धर्मनीतिके उपदेश दिये जाते हैं, धर्मकी शिक्षाका भी अभाव नहीं

है ! इसी कारणसे प्राचीन कालके पैत्रिक आचार व्यवहार और धर्मके विधान आज तक अटलभावसे विराजमान हो रहे हैं ।

परन्तु संसारमें इतिहास वज्रगंभीर शब्दसे क्या कह रहा है ? चारों ओर प्रत्येक प्रान्तोंमें दृष्टि उठाकर देखनेसे हम लोग क्या देखते हैं ? कि संसारके सन्मुख इस समय क्रमशः उन्नतिकी सुवर्णमयी मूर्तिका रेखा अंकित हो रही है । परिवर्तन शील चक्रकी भाँति प्रत्येक देशकी—प्रत्येक जातिकी—प्रत्येक समाजकी अवस्था बदलकर नये दृश्य—नये भाव—नये विधान नवीन रुचिके अनुसार अपना परिचय दे रहे हैं । कई सौ वर्षोंके बीचमें यूरोप आज दूसरी मूर्तिको धारे हुए दृष्टि आता है और साक्षी देता है कि जातिगत--समाजगत-रुचिगत परिवर्तन निवारण करनेके अयोग्य है । प्रत्येक समयकी रीतिनीति आचार व्यवहार रुचि अवश्य ही समय २ में बदलती रहती है । नीतिशास्त्रके जाननेवाले अपने दिव्य चक्षुसे देखते हैं कि दूसरी जातिके सहवाससे—विदेशी शिक्षासे समयके गुणसे आर्यक्षेत्र भारतवर्षके एक २ प्रान्तमें प्रबलरूपसे परिवर्तन हो रहा है । वीरभूमि राजवाडेमें यद्यपि वह परिवर्तनचक्र नहीं दृष्टि आता यद्यपि प्राचीन जातिका आचार व्यवहार, रीति नीति, विधि रुचि अभी नहीं बदली है किन्तु कुछ समयमें अवश्य ही बदल जायगी । सामयिक शिक्षा और सामयिक आदर्श ही बदलनेका मूल कारण है । राजवाडेमें जिस दिन सामायिक शिक्षाकी प्रबलतरङ्गें प्रवेश करेंगी मुझे दृढ विश्वास है कि उसी दिनसे ही वहाँ नये युगका आरंभ हो जायगा । किसी एक परिवर्तनके आदिमें ही उसका शुभाशुभ निर्द्धारण न्याययुक्त नहीं है । उस परिवर्तनके समाप्त होते ही उन क्रियाओंके देखनेसे नीतिशास्त्रके जाननेवाले मन्तव्य संगठन कर देते हैं । उत्तर पश्चिम तथा बंगालके वर्तमान परिवर्तनके अनेक प्रकारसे विचित्र दृश्य दृष्टि आते हैं किन्तु जब परिवर्तन समाप्त होगा, तब दीख पडैगा कि इस परिवर्त्तनसे हमारी कितनी उन्नति हुई है । राजवाडेमें उस परिवर्तनके आरंभमें अब भी बडा विलम्ब है । उस परिवर्तनमें कैसा फल प्राप्त होगा उसको एक मात्र भविष्यकाल ही कह सकता है ।

मेवाडका धर्म्मानुष्ठान, पर्वोत्सव और सामाजिक आचार समाप्त ।

कर्नल टाडके मारवाड़ जानेका वृत्तान्त ।

छब्बीसवाँ अध्याय २६.

उदयपुरकी उपत्यका;–मारवाड़की ओर गमन;–तुषारशिखरपर विश्राम;–यात्रारंभ;–दूरसे उदयपुरका–दृश्य;–देवपुर;–जालिमसिंह;–पुलानी;–रामसिंह मेहता;–माणिकचंद;–नरसिंहगढ़के भूतपूर्व राजा;–पुलानीसे गमन;–इस स्थानका भूतत्त्वमूलक विवरण;–नाथद्वारेका ऊंचा मार्ग;–नाथद्वारेमें आगमन;–मन्दिराध्यक्षके संग साक्षात्;–असुरवासग्रामकी ओर जाना;–जलमें हाथीका गिरना;–असुरवास;–एक संन्यासी;–सुमाइचाकी ओर जाना;–शिरोनाडा;–पङ्कपाल;–ठंढीवायु;–सुमाइचा;–राजधानी केलवारामें जाना;–करीसरोवर महाराज दौलतसिंह;–कमलमीर दुर्गका विवरण और ध्वंसावशेष इतिहास;–मारवाडमें जाना;–गन्तव्य मार्गका संकट;–अश्वारोही सम्प्रदाय उपत्यकामें विश्राम ।

भारतकी गौरवस्वरूप वीर राजपूतजातिके वीरक्षेत्र रजवाडेके विशाल इतिहास कल्पवृक्षके प्रथमकाण्डकी नयी २ कोंपल और फूले फले फल फूलोंसे शोभित अन्तिम शाखा इतने दिन पीछे पाठकोंके दृष्टिपथका पथिक होना चाहती है । इस बातको कौन स्वीकार नहीं करैगा कि हिन्दूबान्धव टाड साहबको भाग्य लक्ष्मीकी सुदृष्टिसे वञ्चित, अत्याचारी जीवित नरपिशाचस्वरूप विभिन्नजातिके द्वारा बहुत कालसे पीडित, निगृहीत, पग २ पर दलित और सर्वस्वान्त राजपूत जातिके तथा वीरस्थान सुखमय मेवाडके उस शोचनीय भाग्यपरिवर्तनके निमित्त ही जगदीश्वरने भेजा था ? यद्यपि टाड साहब ईस्ट इंडिया कम्पनीके प्रतिनिधि बनकर रजवाडेमें गये थे और ईस्ट इंडिया कम्पनीने ही इनको भेजा था, तथापि सूक्ष्मदृष्टिसे देखा जाय तो यही ज्ञात होगा कि, दयामय जगदीश्वरने राजपूतजातिकी उस हृदयभेदी शोचनीय दशा परिवर्तन करनेके लिये उदारचेता टाडको ही ईस्ट इण्डिया कम्पनीद्वारा भिजवाया था । देवस्वभाव टाडने इस दायित्वभारको स्वीकार करके किस योग्यता–चतुरता, विज्ञता, न्यायपरता और और सुविचारोंके संग गहरे अवनतिसागरमें मग्न हुए शिशोदीय लोगोंका अल्पकालमें ही उद्धार करलिया था तथा अत्याचार, उत्पीडन, लूटमार, आत्मनिग्रह, विद्रोहिता अशान्ति और जातिके द्वेषानल प्रज्वालित मेवाड़में कैसे शान्ति सन्तोष और सुखरूपी जल वर्षाकर मेवाडकी अनन्त

चितानलको बुझा दिया था, पाठकमंडली उचित स्थानमें उसको पढकर अवश्य ही हमारे समान राजपूत गतप्राण टाडकी पवित्र आत्माको सत्यचित्तसे अनेक धन्यवाद देगी। राजनीति विशारद टाडने प्रायः दो वर्ष तक सुखमय उदयपुरकी उपत्यकामें विश्राम करके अपना कर्तव्य पालन किया, अनन्तर मारवाडकी यात्रा की थी। यात्रा कालमें वह अनेक स्थानोंकी आवश्यकीय बातोंको अपनी नोटबुकमें लिखते गये। वह नोट किया हुआ भ्रमणवृत्तान्त इस प्रथमकाण्डके शेषांशमें दिया गया है; इसकारण हम भी उस ही प्रणालीका अनुकरण करनेके लिये वाध्य हैं। साथी यात्रीरूपसे पाठकमंडली हमारा अनुगमन करनेसे, आगे कहनेयोग्य अशेक सत्य घटनापूर्ण बहुतसे चित्तविनोदक उपाख्यान, अनेक स्थानोंका अप्रकाशित विवरण और कौतूहल तृप्ति करनेवाला इतिहास आपके हृदयको अनुपम सुगन्धिसे अवश्य भर देगा। यद्यपि इतिहासलेखक टाडके इस भ्रमण वृत्तांतके दो एक स्थान किसी पाठकको कुछ नीरस मालूम होंगे, किन्तु पीछे वर्णन किये हुए वा आगे लिखे जानेवाले इतिहासके किसी विषयके संग उस नीरस अंशका सम्बन्ध रहनेसे उसका लिखना आवश्यक है। हमको दृढ विश्वास है कि पाठकगण इसको पढ़कर अवश्य तृप्त होंगे।

महाशय टाडने सन् १८१९ ईसवीकी ११वीं अक्टूबरको लिखा है कि "जिस समय हमने भारतवर्षमें अनुपम प्राकृतिक सौन्दर्य्य विभूषण ।विभूषित बहुतसे मनोहर दृश्योंसे पूर्ण उदयपुरकी उपत्यकामें चरण रक्खा था, उस समयसे प्रायः दो वर्ष बीती हुई उपाधिधारणमें अनन्त काल सागरके गर्भमें लीन हो गये हैं। हमारी निर्द्धारित सीमा चारों ओर तीन कोशके भीतर है; किन्तु अबतक हममेंसे कोई भी इस सीमाके बाहरी दृश्यको नहीं देख सका था। प्रत्येक शिखर और पहाडी मार्ग ऊंचे २ महल और वृक्षोंको हमने भली भाँति पहचान लिया है प्रत्येक देवालय, धर्मशाला, प्राचीन तत्त्व अनुसन्धान और खोज समाप्त होगई है। समस्त ध्वंसावशिष्ट स्थानोंके इतिहासकी खोज, उन सबकी खुदी हुई लिपियोंका उद्धार, प्रत्येक शिखरका नाम कारण तथा सामन्त मंडली और राजसभाके प्रधान २ कर्म्मचारियोंके गुण और स्वभावका पता देनेवाला एक२ उपाधिदानका कार्य भी समाप्त हो गया। नगरमें महल, सरोवरमें, नाव, कुंजकाननमें मनोहर वाटिका, बडे सरोवरके निकट रमणीय द्वीप हम लोगोंके निमित्त निर्द्धारित हैं। हमारे शिकारके लिये वनमें मृग, तालाबमें मछलियें क्रीडा करती हैं; हमारे नयनोंकी तृप्ति और चित्तरञ्जनके निमित्त किसी बातका भी अभाव नहीं है-किंतु इस भूधरवेष्टनीके बाहर क्या है? यह देखनेके निमित्त सब ही इस 'सुखमय' उपत्यकाको छोडनेके लिये अभिलाषी हैं। अबतक दोवारीके विराट काय ! तोरणद्वारने एक बार भी बाहर जानेके लिये मार्ग नहीं दिया और यद्यपि निर्दिष्ट कार्यमें अविश्रान्त तृप्त रहनेसे मैं एक स्थानमें बहुत समय तक रहनेसे उत्पन्न होनेवाली चित्तकी भ्रान्तिको दूर करसका हूं, किन्तु मेरे अनुचरोंको वैसे कार्य्यमें समय काटनेका अवसर नहीं मिला, इस कारण मैं उनको इस "सुखपूर्ण बन्दीदशामें रहकर मानसिक थकावट दूर करनेका

विशेष अनुरोध करनेपर भी कृतकार्य्य नहीं हो सका। धीरे २ सब दृश्य चक्षुशूल होगये और मुझे विश्वास हो गया कि यदि शिशोदीय लोगोंकी राजधानीमें पंख बनानेवाले कारीगर होते तो सरोवरमें गिरना निश्चित जानकर भी वह (अनुचरगण) उन पंखोंको लगाकर आकाश मार्गसे भागनेकी चेष्टा करते । उनके समान रासेलालने भी कभी भागनेकी चेष्टा नहीं की थी" ।

अन्तमें प्रार्थनीय दिन आकर उपस्थित हुआ; यद्यपि मनोरम काम दृश्यावली पूर्ण-वन सरोवर, पर्वत और शिखरपथ, श्यामल तृण और फल फूल शोभित वृक्षोंसे रँगे हुए मेवाडसे मारवाडकी रेतली भूमिमें जाना होगा, तथापि उसको स्थानपरिवर्तन समझकर सबके मुखपर प्रसन्नता झलकने लगी । हमारे यात्री सम्प्रदायमें कप्तान वाघ, लेफ्टिने-न्ट केरि, डाक्टर डनकान और दो दल पैदल तथा स्किनरके ६० घुडसवार थे । उपत्य-का छोडनेसे सब ही प्रसन्न थे क्योंकि उनमेंसे सभी वर्षाकालके ज्वरका स्वाद ले चुके थे;वर्षाऋतुमें उदयपुर सर्वसाधारण और विशेष करके विदेशी लोगोंके लिये बडा अस्वा-स्थ्यकारी बन जाता है; उस समय सब झरने और नदियोंका जल प्रबल होकर कुएँ और खाइयोंको भर देता है । गले हुए उद्भिज्ज और विषाक्त खनिज़ पदार्थोंको दूषित कर डालता है, और एक प्रकारका काला तेलसा पदार्थ उसके ऊपर तैरने लगता है । राजपूतजाति इस शिक्षाको बिलकुल नहीं जानती कि किस उपायसे यह दूषित जल शुद्ध होता है और मुझे लज्जितभावसे यह बात कहनी पडती है कि इस विषयमें मैं भी उनको कुछ शिक्षा नहीं दे सका । किन्तु राजपूत लोग समग्र मारवाडमें प्रचलित एक बहुत सरल उपायसे क्षार और आमलद्वारा यह कार्य सिद्ध करलेते हैं । क्षारद्वारा जलका लवणाक्त दोष दूर होने पर, वह रन्धनकार्यके विशेष उपयोगी होता है और ऊपर कहे द्रव्यके मिलानेसे ऊपर तैरता हुआ दूषित पदार्थ जलके नीचे बैठ जाता है । कपडा धोनेवाले राजपूत लोग एक प्रकारका साबुन भी व्यवहार करते हैं ।

बारह अक्टूबरको सबेरे पाँच बजे घोडोंपर चढ़नेके लिये सांकेतिक बिगुल बजा । हमने भी संकेतके अनुसार कार्य्य करनेमें देर न की; आगे बढकर देखा कि पीले कपडे पहरे हुए सेनादेशी बूढे सेनापतिके सामने.एकत्र खडी है।इस्किनरकी घुडसवार सेना पीला अँगरखा लाल पगडी और पेटी पहरती है । इस बातको कौन नहीं जानता ? कि कम्प-नीके सेनादलमेंसे इस्किनरके घुडसवार खूब शिक्षित और जितनी बातें चतुरसैनिकोंमें होनी चाहियें वह सब ही उनमें पाई जाती थीं । महलके नगाडेकी ध्वनिने निकलकर सूचित किया कि सूर्य्यवंशके राजा शय्यासे उठे हैं; हम लोग उस नीरव निस्तब्ध निद्रि-तराजधानीके बीचमें होते हुए सूर्य्य तोरणद्वार पर पहुँचे, वहां जाकर भिन्दीर, दैल-वारा, अमाइत और वंशीके चार सामन्त अपनी सजी हुई सेना लिये राणाकी आज्ञासे हमको सीमान्ततक ले जानेके लिये खडे हैं । किन्तु उस सुन्दर शिक्षा और नीतिहीन सेनाके संग जानेसे अपने लिये भार और देशके लिये असुविधाजनक विचार कर

उनके नेतालोगोंके संग हम पहाडी मार्ग तक गये, वहां जाकर हमने राणा और सामन्त लोगोंको अभिनन्दन सूचित करनेके लिये अनुरोधपूर्वक लौटा दिया । आठ बजते २ हम साढे छः कोशकी दूरी पर डेरेमें पहुँच गये । जो स्थान डेरा गाडनेके लिये नियत किया गया था, (जहाँ पीछे मैंने रेजिडेन्सीका मकान बनवाया था) वह मैरसा और तुपग्रामोंके बीचकी ऊंची भूमि है। इधर उधर वृक्ष लगे हुए हैं और जो वन उपत्यकाकी भूमिके झालरस्वरूपसे शोभायमान है उस काननसीमासे दो कोश परिमित स्थान वनशून्यरूपसे स्थित है, यहांसे चित्तौडकी ओरको नीची भूमि और जगह २ कर्षणक्षेत्र आज तक दिखाई देते हैं। इसके डेढ कोश उत्तरमें राणा और उनके सामन्त लोगोंका मृगोंसे भरा हुआ शिकारस्थान—व्याघ्र शिखर है; दाक्षिणमें—आध कोश उत्तरकी ओर बहुत मछलियोंसे भरी हुई वारीश नदी और पश्चिममें डेढकोशकी दूरीपर बहुत बडा उदयसागर है । कई विशेष कारणोंसे राजधानीके बाहर रेजिडेन्सी स्थापन करना परमावश्यक समझा गया । यद्यपि स्वास्थ्यरक्षा तो सबका उद्देश ही है किन्तु राजमहलसे इतनी दूर रेजिडेन्सीके स्थापन करनेका केवल यही कारण नहीं था। प्रथम तो राजधानीको हमने जिस शोचनीय दशामें गिरा हुआ देखा, उससे वहां कुछ कालतक अपना कर्तव्य चलानेकी आवश्यकता जान पडी, किन्तु राजपूत लोगोंकी स्वाधीनता रक्षा करनेके निमित्त उस कर्तव्यको छोड देना पडा । हम जब पहले उनके पास गये तो राजाको भारी शोचनीय दशामें पाया, राजाने हमसे सहायताके लिये अनुरोध किया, हमने भी सोचा कि सहायताके बहानेसे प्रत्येक विषयमें हस्तक्षेप कर सकेंगे तथा उन लोगोंको कोई शंका भी नहीं होगी;इससे ही यह बात निश्चय हो गई । राजमहलसे बृटिशगवर्नमेंटके प्रतिनिधिका डेरा दूर होनेसे उनकी व : शंका न्यून हो गई और शासनयन्त्र भली भाँति चलने लगा, उनको आत्मज्ञान बुद्धिबलके ऊपर निर्भर करना पडा । तुंग शिखरके ऊपर हमारा वस्त्रालय स्थापित हुआ, सैन्यदल परिचालित और सेंट जार्ज्जकी जयपताका मन्दवायुमें उडाई गई । यहाँ बनैले ऊंटोंकी पीठपर लाद २ कर हमारी सामग्री लाई जाने लगी । उनके विकट चीत्कारसे ऐसा मालुम होता था कि वह शोकके संग अपने भाग्यको धिक्कार दे रहे हैं, केवल यह सौभाग्यका विषय था जो उनको यह अनुभवशक्ति नहीं थी कि, हमको सुखमय उपत्यकाकी हरी घासको छोडकर मारवाडके कठोर तृण खाने होंगे ।

पुलानो—१३ वीं अक्टोबर- "बहुत कालतक स्थानमें रहनेके पीछे अन्य यात्राकी तैयारी करते समय मनुष्यके धीरजकी जैसी भारी परीक्षा होती है, वैसी और किसी समय नहीं देखी जाती । तरुण अरुणोदयके संग २ ही हमने डेरेको छोड दिया । उस समय मारवाडी सैकडों बनैले ऊंटोंके चिल्लानेकी ऐसी बिकट ध्वनि सुनी जाती थी कि दूसरा कोई शब्द ही सुनाई नहीं देता था; इधर हाथी हृदयमें आनन्दानुभव करके एक प्रकारका विचित्र शब्द बोलने लगे; उन हाथियोंमेंसे एक बच्चा शृंखलाबद्ध और बोझ उठानेमें नियुक्त न होनेके कारण स्वाधीन भावसे इधरउधर दौडने लगा,कभी सिपाहियों-

की वस्तु लेता कभी शीघ्रतासे एक वस्ता मैदा लेकर दूर भाग जाता, उसकी इस क्रीडासे सब हँसने लगे; उस हँसीसे डेरा गूँज गया। यह हाथीका बच्चा आठ वर्षका है और देखनेमें भी वैसा ऊंचा नहीं है, यद्यपि यह चञ्चल बच्चा भोजन बनाते हुए लोगोंको बहुत दिक्क करता था, तौ भी यह सबका प्रियपात्र और क्रीडास्थल बन गया है । वर्षाऋतुको अधिक विलम्बसे पृथ्वीशासन करनेको आई हुई देखकर हमने विचारा कि हमको तो जल-मयी भूमिसे जाना होगा और भारवाही पशुओंका उसमेंसे चलना कठिन हो जायगा। हमने अनेक भाँतिके वृक्ष और जलाशयपूर्ण स्थानोंमें होकर चलना आरम्भ किया । इस मार्गके किनारे बहुतसे बडे २ गांव बसे हुए हैं, किन्तु सबमें ही लूटमार और समराग्नि-के चिह्न दिखाई देते हैं । बहुत कालतक एक स्थानमें स्थित रहनेसे इस प्राकृतिक दृश्यने भलीभांति संतोष दे दिया । हमारे वामभागमें उदयपुर नगरकी घेरास्वरूप ऊंची पर्वतोंकी शृङ्गमाला हमारे दृष्टिगोचर हुई; उस शिखरावलीके सबसे ऊंचे शिखरपर राताकोटका ध्वंसावशेष आजतक देदीप्यमान है और वहाँसे चारोंओरका सब दृश्य देखा जा सकता है । हमारे पूर्वमें आसीमप्रान्तर था, जिसकी सीमा दिखाई नहीं देती। हम लोग देवपुरमें हाते हुए आगे बढ गये, यह ग्राम एक समय बडा समृद्धिशाली, तथा मारवाडके उत्तराधिकारी भानाइज* जालिमसिंहके अधिकारमें था । उक्त जालिमसिंह-का वृत्तान्त यहाँ लिखनेसे (राजपूतानेके संभ्रान्तलोग विद्या सीखनेमें यत्न नहीं करते थे) यह कलंक दूर हो जायगा । हमारे परमपूज्य पाद गुरु× ने शस्त्रके समान शास्त्रमें भी विलक्षण पांडित्य उक्त सामन्तसे शिक्षा और ज्ञान प्राप्त किया था । जालिमसिंहने राजा विजयसिंहके औरस मेवाड राजनन्दिनीके गर्भमें जन्म लिया था, किन्तु कुटुम्बमें विशेष कलह होनेसे वह पिताका घर छोडकर मामाके घर रहने लगे, इस कारण राणाने उनको अलग सम्पत्ति देकर अपने पुत्रके समान सन्मानसे रहनेका सुविधा कर दिया । राजपूत स्वभावसिद्ध व्यायाम और समरकौशल शिक्षाके ऊपर कुछ ध्यान न देकर संभ्रान्त हो जिस समयको आलस्यके मुखमें बलिदान करदेते हैं उन्होंने उस कालको विद्याशि-क्षामें काटा । उन्होंने न्यायतत्त्व, विज्ञान, ज्योतिर्विद्या और अपने देशकी इतिहास शिक्षा-में पारदर्शिता लाभ करनेके संग २ जयदेवकी मधुमयी कवितावली और आधुनिक कवियोंकी कविताको विलक्षणरूपसे कंठस्थ कर लिया। वह स्वयं कल्पनाके एक प्रिय पुत्र और सुकवि थे, इस कारण मनोहर कविता रचकर काव्यशास्त्रकी विशेष उन्नति करते और प्रसिद्ध २ कविजन सदा उनके स्थानपर उपस्थित रहते थे । मेरे महामान्य शिक्ष-

---

* कर्नेल टाडने लिखा है कि "राणाके जामाता वा उनकी किसी आत्मीय स्त्रीको जिस सामन्तने विवाह किया, वह आत्मीयता सूचक भानाइज नामसे विख्यात हुआ।" किन्तु हमारी समझमें जामाताको भानाइज नहीं कहा जा सकता, भागिनेय (बहनोई) ही "भानाइज" नामसे कहा जा सकता ह । टाड साहबने भ्रमसे यह बात लिख दी है। कहीं भानाइज भानजेको कहते हैं ।

× टाड साहबने अपनी टीकामें लिखा है कि "मेरे शिक्षादाता यति ज्ञानचन्द्र जैनमतावलम्बी थे और वह दशवर्षतक मेरे सङ्ग रहे । मैं उनके निकट विशेषरूपसे ऋणी हूँ; मेरे प्रत्येक गवेषणा और तत्त्वानुसन्धान कार्यमें उन्होंने विशेष उत्साहके संग सहायता दी थी।"

कने जालिमसिंहके पाण्डित्य और ज्ञानकी प्रशंसा नहीं की, यह उन गुरुदेवके ज्ञान और शिक्षा द्वारा मैंने ज्ञान प्राप्त किया है,(जालिमसिंहके संग गुरुदेवकी शिक्षा और ज्ञान-तुलनाके समय गुरुदेव अपनी शिक्षाको सामान्य कहकर शान्त नहीं होते थे) कारण कि मारवाडके उक्त उत्तराधिकारीके निकटसे ही उन्होंने विद्याशिक्षा और ज्ञान प्राप्त किया था । जालिमसिंह मरुमय क्षेत्रके पैतृक सिंहासन अधिकार सूत्रमें ही मरे थे ।

हम लोग कीचड और संकटपूर्ण मार्गमें चारघण्टे बराबर चलनेके पीछे पुलानोंके अग्रवर्ती शिखरपर पहुँचे । देवपुरके समान यह भी ध्वंसप्राप्त दृश्य दिखाई देता है । अब केवल नगरके एक प्रान्तमें ही अधिवासी लोग रहते हैं; यह स्थान पहिले कैसा जन-समृद्धि सम्पन्न था ? इस बातको यहांके देवमंदिर और मकानोंके खंडहर भलीभांति प्रकट कर रहे हैं; यह दोनों नगर पहिले राणाके अधिकारमें थे, अनन्तर निज भागि-नेयकी परलोक प्राप्ति होनेपर उन्होंने यह सम्पत्ति कनाइयाकी सेवाके लिये निर्द्धारित कर दी । वस्त्रागारमें मैंने राजमंत्रीके दक्षिण हस्तस्वरूप रामसिंहमहता, भिन्दीके देव-यान माणिकचंद; नरसिंहगढके पदच्युत राजा,(जो अब उदयपुरमें समय काटते हैं) उनको देखा । रामसिंह इस देशकी असामरिक व्यवसाई जातिका श्रेष्ठ आदर्शस्वरूप है और यद्यपि उन्होंने मेवाडकी सीमाके बाहर पैर नहीं रक्खा, किन्तु किसी देशमें उनके समान मितभाषी और भद्रपुरुष नहीं है,उनका शरीर दीर्घ, अंग प्रत्यंग सुगठित और मनोहर, वर्ण गोरा, बाल काले और घुँघुरारे तथा मुखमंडलपर गलमुच्छें विराज रही हैं । रामसिंह इस बातको भलीभांति जानते थे कि, प्रकृतिदेवी उनसे विशेष प्रसन्न है । तोषामोदके अतिरिक्त उन्होंने लोगोंके हृदयमें भी अधिकार कर लिया था । वह सदा सुन्दर वस्त्र पहरते रहे । रामसिंह जैनधर्मावलम्बी और ओसिजातके हैं । इस ओसिजातकी संख्या सब राजवाडेमें लगभग एक लाखके होगी और यह सब ही अग्निकुल राजपूतवंशमें उत्पन्न हुए हैं,इन्होंने बहुत काल पहिले हिन्दूधर्म छोडकर जैनधर्मा-वलम्बन और मारवाडके अन्तर्गत ओसिनामक स्थानमें रहना आरंभ किया था, तथा उस स्थानके नामानुसार ही ओसवाल नामसे विख्यात हुए। अग्निकुलके प्रमार और सोलङ्की राजपूत शाखाके लोग ही सबसे पहिले जैनधर्ममें दीक्षित हुए थे ।

मानिकचन्द भी जैनधर्मावलम्बी थे, किन्तु वह समरजातीय थे और उनका स्वभाव चरित्र रामसिंहके बिलकुल विपरीत था. उनका शरीर जैसा दीर्घ था वैसा ही कृश और देखनेमें काला था तथा उनकी जिह्वा और मस्तक सब समय हिलते रहते थे ! गत पचीस वर्षतक वह सब षड्यन्त्रोंमें लिप्त रहे थे और कोटेके जालिमसिंहके सिवाय और कोई जीवित मनुष्य समान प्रबल प्रभुत्व विस्तार करनेमें समर्थ नहीं हो सका । वह शक्तावत् सम्प्रदायके मुख्य यन्त्रस्वरूप और उक्त सम्प्रदायके नेता भिन्दीपातिके एक प्रधान मन्त्री और कर्मचारी थे, इस कारण वह चन्दावत सम्प्रदायके दुर्दान्त शत्रु थे तथा उन्होंने उक्त सम्प्रदायको पदराहित करनेके लिये अपनी विद्या और बुद्धिके लगानेमें कोई त्रुटि शेष नहीं छोडी । उन्होंने इस शत्रुता साधनके निमित्त प्रतिहिंसा चरितार्थ

करनेके लिये सैन्धवी पठान और महाराष्ट्रियोंके संग मेल किया। इस शत्रुताके कारण ही वह एक समय पकडकर बन्दी बनाये गये, तथा जुरमानेका रुपया न दे सकनेके कारण इनको शारीरिक कष्ट भोगना पडा। उनकी तीक्ष्ण बुद्धि और सब विषयोंमें विशेष जानकारीने उनको निज संप्रदायका शिरमाग बना दिया था । इस समय उनकी ५० वर्षकी आयु थी, किन्तु अनुमानसे उनकी आयु और भी अधिक जान पडती थी। वह सदा प्रसन्नचित्त, रहस्यालापी और समयके नानाविषयोंमें तत्त्वदर्शी-रूपसे बातचीत करते थे। अन्तमें उन्होंने राणाका अनुग्रह भलीभाँति प्राप्त कर लिया था और राणाने माणिकचन्दके बडे पुत्रको एक भारी विश्वस्त पदपर नियुक्त कर दिया। वह पुत्र यदि जीवित रहता तो निश्चय ही प्रसिद्ध मनुष्य हो जाता क्योंकि वह पिताकी तीक्ष्णबुद्धि तथा समस्त गुणोंका अधिकारी और रामसिंहके समान स्वरूपवान था। किन्तु उसने अभिमानके वशीभूत होकर विषप्रयोगसे अकालमें अपना जीवन निर्वाण कर दिया। प्रसिद्ध तो यह है कि, पिता माणिकचन्दने अकारण किसी विषयमें बहुत फटकारा था, उसको न सहकर ही उसने आत्महत्या करली थी । यहांपर मैं माणिक-चन्दके परलोक प्राप्तिका विवरण लिखना चाहता हूँ। हम इससे पहिले जिस स्थानको वस्त्रागार लिख चुके हैं, उस स्थानपर ही मेरा और उनका शेष साक्षात् हुआ था।

माणिकचन्दने मेवाड राज्यके समय शुल्क संग्रहका भार वार्षिक २५०००० रुपया देना स्वीकार किया। वह अपने आधीनस्थ सहकारी शुल्क संग्रहकारियोंके विश्वास-घातकताके दोषसे वा स्वयं मन न लगानेके कारणसे उक्त व्यवस्थाके अनुसार सब रुप-येका छठा अंश देनेमें भी असमर्थ हो गये। उनकी तीक्ष्ण बुद्धि और चतुराई देखकर आशा की गई थी कि, दूसरोंके हाथसे इस भारको उनके हाथमें सौंपनेसे राज्यके इस प्रयोजनीय विभागका कार्य अति उत्तमताके सङ्ग चलेगा। उन्होंने मेरे वस्त्रागारके पास अपना वस्त्रागार स्थापन करके मेरे संग मुलाकातकी प्रार्थना की । साक्षात्के समय मैंने उनको बहुत व्याकुल पाया, तथा उन्होंने प्रगट किया कि "मैं कई बार आपके दर्शन करनेकी इच्छासे बाहर निकला किन्तु सब ही समय विपरीत दशामें कुलक्षण-सूचक पक्षियोंको उडता हुआ देखकर लौट २ गया।" अन्तमें उन्होंने राणाके विश्वाससे गिर जानेकी बातको विचार भविष्यत्की ओर दृष्टि न करके मुलाकात करनेकी प्रतिज्ञा की थी। "निज अधीनस्थ कर्मचारियोंके ऊपर यथोचित तीक्ष्ण दृष्टि न रखनेके कारण ही उन्होंने विश्वासघातकता की" इस बातको स्वीकार करके उन्होंने प्रतिज्ञा की कि "मेरे ऊपर जितना रुपया चाहिये उतना सब दे दूंगा।" किन्तु वह षड्यन्त्री नामसे विख्यात हो गये थे इस कारण उनकी इस प्रतिज्ञाके ऊपर सन्देह हुआ । मानिकचन्द इस प्रतिज्ञाको पूरी न कर सकनेके कारण अर्थात् हमारे अनुमानके अनुसार सब धन अपनी सम्पत्तिमें लगाकर साहपुरेके राजाकी शरणमें चले गये। इस शोचनीय दशामें उनके शत्रुओंने महाआनन्द प्रगट करके उनके हृदयमें अपमानका बाण मारा, इस कारण उन्होंने इस देशमें प्रचलित सहज उपाय विषदानसे इस शरीरको छोड दिया।

ऊपर लिख चुके हैं कि तीसरे दर्शक नरसिंहगढके राजा यहां देश निकालेकी दशामें वास करते हैं । प्रमारजातिके छत्तीस शाखाके अन्तर्भूत उच्च जातिमें इनका जन्म हुआ । पन्द्रह पीढीसे यह मध्यभारतमें वास करते हैं । इनके क्षुद्र-राज्यका नाम उमतवाडा और राजधानीका नाम नरसिंहगढ है । लुटेरे और उत्पीडक अत्याचारी पिण्डारी और महाराष्ट्रियोंके अधिकृत स्थानके ठीक बीचमें यह प्रदेश स्थापित होनेसे उक्त पिण्डारी और महाराष्ट्रीलोगोंने इनके अधीनस्थ प्रत्येक ग्राममें अधिकार कर लिया तथा अन्तमें इनकी राजधानीमें हुलकरकी जयपताका फहराने लगी,यह अपमानित होकर उनके आधीन रहनेको बाध्य हुए। उस समय महाराष्ट्रियोंके हुलकर और सेंधिया इन दो नेतालोगोंकी अधीनता शृंखलामें सब राज्य ही करदायीरूपमें बँध गये थे और उमतवाडाके राजा सबसे पहिले अस्सी हजार रुपये कर देना स्वीकार करके हुलकरके अधीन हो गये थे,तथापि अन्यान्य अत्याचारी जाति और हुलकरकी सेना सदा ही उनके राज्यको लूटमारसे विध्वंस करती थी। अनेक शताब्दीके पीछे सन् १८२१ ईसवीमें जब यह प्रदेश शान्ति प्राप्त करनेमें समर्थ हुआ तो मेवाडके समान उमतवाडा भी टूटे फूटे स्तंभोंसे आच्छादित हो गया और इसके उर्वर क्षेत्रोंमें कणकमय सिमोसा और उपकारी क्रिओना तृण जम गये । शोक दुःख और दीनता भूलनेके निमित्त राजा उस समयमें अफीम और मत्ततासूचक पानीके सेवनसे बिलकुल निकम्मे हो गये थे, इस कारण वह ग्रहदशा सुधरनेपर भी शासनका कार्य्य अच्छी रीतिसे करनेमें असमर्थ गिने जाने लगे । उनका पुत्र चैनीसिंह पिताके समान उक्त कुरोगाक्रान्त नहीं था, बरन् शासनभारमें सहायता करनेमें सब प्रकारसे योग्य था, इस कारण बृटिश एजेंटकी व्यवस्थानुसार राजाके वृत्तिग्रहणमें राज्यभार छोडनेपर उक्त चैनीसिंह ही अपने नामसे राज्यशासन करने लगा ।

उपरोक्त दोनों सम्भ्रान्त अधिनायकोंके संग कुछ काल तक कथोपकथन करनेके पीछे नियमानुसार पान और अतरदान किया, अनन्तर दोनों बिदा लेकर अपने स्थानको चले गये ।

नाथद्वारा,-१४ वीं अक्टूबर-अरुणोदयके संग संग ही यात्राका आरंभ हो गया और कुछ दूर ही आगे जाकर देखा कि, आगेका मार्ग दलदलमय है, इस कारण भारवाही ऊंटोंके ले जानेमें बडी कठिनता हुई।इस प्रदेशके चारों ओरकी भूमि ऊँची नीची और पथरीली है।बडी कठिनतासे प्रायः चार सौ फिट ऊँचे नाथद्वारेके शिखरको अतिक्रम किया। यह स्थान चतुःपार्श्ववर्ती शिखरमालाके समान लाल पत्थरोंका है । यह नाथद्वारेसे डेढकोश पूर्वकी ओर स्थापित और समतल क्षेत्रके समान है; इस स्थानके दो क्षुद्र सरोवरोंसे मार्गके दोनों ओर दो नहरें नगरकी ओर बहती हुई पुजारिओंका जलकष्ट दूर करती हैं । नहरोंके दोनों ओर वृक्षोंकी श्रेणियें चली गई हैं,वह अपूर्व शोभासम्पादनके संग२पथिकोंकी थकावट दूर करनेमें यथेष्ट सहायता देनेके निमित्त नियुक्त हैं। हम लोगोंका वस्त्रागार नाथद्वारे नगरके नीचे बहनेवाली बुनाश नदीके दूसरी पार स्था-

पित हुआ, इस कारण जब हम नगरके बीचमें होते हुए चले तो सब नगरवासियोंने राजमार्गमें एकत्र होकर महाआनन्द प्रगट किया, जिस अंग्रेजी शासनद्वारा उन्होंने विजातीय अत्याचारियोंके हाथसे उद्धार पाया है, तथा जिस शासनसे कन्हैयाजीके पवित्र मंदिरकी रक्षामें पूर्ण सहायता की है वह सबै ही एक स्वरसे उस अंग्रेजी शासनकी प्रशंसा करने लगे और आग्रह सहित अन्नकूट पर्वके पुनः प्रतिष्ठा दिनकी बाट जोहने लगे ।

१५ वीं अक्टूबर—अब आगे मार्ग जलमय, अत्यन्त दुर्गम है और भारवाही पशु अवाध्य प्रकृति होनेके कारण मेरतानामक मरुस्थानमें हमारा तथा बोझा ढोनेवालोंका बिछोह हो गया, अतः फिर मिलनेके लिये इस स्थानपर ठहर गये । श्रीमंदिरके प्रधान धर्म्मयाजकने सुराटवासी एक धनी महाजनके संग आकर हमारा अभिनन्दन किया । एक सुनहरी अँगरखा और एक सुवर्णमंडित नीले रंगका डुपट्टा धर्म्मयाजकने मूर्तिका उपहारस्वरूप लाकर मुझको दिया । इसके अतिरिक्त एक बडे पात्रमें पूर्वदेशके अनेक प्रकारके पके और स्वादिष्ट फल मूल देकर मुझे सन्मानित किया । अपराह्नमें भोगका दूध और अनेक प्रकारके मिष्टान्न भोजनके लिये भेजे गये थे, किन्तु दुःखका विषय है कि, सामान्य रीतिसे भोग राग बनानेके दिनमें अब विशेष उपाधि धारण कर ली है, कारण कि अब दुग्ध आदिमें गुलाबका जल और इतर मिला दिया गया ।

लोर्दीनामक जिस स्थानका मंदिर बहुत प्रसिद्ध है, वहांके देवमंदिरके अधीन जैसे चालीस हजार दूध देनेवाली गौ हैं, नाथद्वारेकी गौसंख्या उससे दशांशका एक अंश परिमित होनेपर भी भारतवर्षमें यहांके समान दूध देनेवाली गायें और कहीं नहीं हैं । इन चार हजार गौओंके दूधसे खीर, रबडी, मक्खन आदि बनाकर भोग लगानेके पीछे सर्व साधारणको प्रसादरूपसे बाँट दी जाती है । सुराट्के उक्त वृद्ध वणिकने मूर्तिकी आश्चर्य्य शक्ति और दैवशक्तिके विषयमें मुझसे अनेक बातें कहीं । यमुनातटसे श्रीकृष्ण जिस रथमें नाथद्वारे आये थे; यह बनिया उसीके सामने प्रणत होकर पूजा करता है । भक्त और धार्म्मिकके अतिरिक्त साधारणको यह रथ पूजाके लिये नहीं दिया जाता । नारायणने श्रीकृष्ण अवतार लेकर जिस आयुमें जैसा शृंगार किया था, मूर्तिको भी दिनमें क्रमसे वैसे ही सजाया जाता है । बालवेषसे कंसवधकारी धनुर्बाणधारी राजवेश तक दिखाया जाता है । मैंने मंदिरके प्रधान पुजारीके हाथमें एक इस विषयका आदेश पत्र दिया कि, भविष्यत्में बृटिशगवर्नमेन्टके कर्मचारियोंमें किसीको भी इस स्थानके मयूर और पीपलके वृक्ष नष्ट नहीं करने होंगे और इस पवित्र धर्म्मस्थानके बीचमें किसी प्रकारकी जीवहत्या नहीं होगी । उनकी अप्रसन्नताके भयसे मैंने नदीपार अपने वस्त्रागारमें जाकर मुर्गोंको भोजनके निमित्त वध किया और उनके सब पंखोंको मट्टीके भीतर छिपा दिया ।

असुरवास—१६ वीं अक्टूबर—जब चित्त किसी एक कार्यके करनेमें व्यग्र हो, उस समय उसका काय्यसाधनके बदले निश्चेष्ट भावसे बेकार बैठना जैसा कष्टदायक है

वैसा और कभी नहीं। हमारे सेवकोंका अबतक हमसे मेल नहीं हुआ था, इस कारण मैंने असुरवासको अपना वस्त्रागार भेजकर अपराह्णमें वहांकी यात्रा की। यद्यपि असुरवास यहांसे चार कोशकी दूरीपर था, किन्तु मार्गमें संध्या हो गई। मार्गमें हमने फते (जयी) नामक हाथीको पानीमें गिरकर महा क्रोधसे उद्धारकी चेष्टा करते हुए देखा। केवल हाथीवानके दोषसे ही ऐसी दुर्घटना घटती है, क्योंकि हाथी यहां तक बुद्धिमान होता है कि चलते समय पैरसे मार्गकी परीक्षा करता जाता है, यदि एक पग रखनेके लिये भी स्थान मिले तो विपत्तिमें नहीं गिरता, वरन् संकेतशब्दसे हांकनेवालेको निरापद सम्वाद सूचित कर देता है। फतेने भी वैसा ही संकेत किया था, किन्तु हाथीवानने उसके संकेतपर कान नहीं दिया उसका संध्याका भोजन १५ सेरकी रोटी न देनेसे हाथीने अपनेको महा अपमानित समझा। फतेकी उस अवस्थासे उद्धार करनेके निमित्त बडे बडे लक्कड उस स्थानमें फेंके गये; अनन्तर वह धीरे धीरे महाबलसे पैर उठाकर आगे बढा। फतेको ऐसी सहायता करनेकी कुछ आवश्यकता नहीं थी, केवल हाथीवानके अपने दोषसे यह घटना घटनेके कारण उसने इच्छानुसार अपने उद्धारकी चेष्टा नहीं की थी। फतेने उद्धार पाते ही पीठ हिलाई, इससे इसके ऊपरकी सब चीजें चारों ओर गिर गई।

हम लोग बुनाश नदीको उतरकर आगे बढे। नदीका जल जैसा गंभीर है, वैसा ही कांचके समान स्वच्छ है। किनारेकी भूमि नीची और अनेक प्रकारकी घाससे भरी हुई है। यह जैसा प्रिय दृश्य युक्त और निर्ज्जन प्रदेश है, इस स्थानके विषयमें एक प्रवाद भी वैसा ही विचित्र है। वह यह है कि "पूर्वकालमें जिस समय म्लेच्छ (यवन) लोग इस देशमें नहीं आये थे उस समय बुनाश नदीकी अधिष्ठात्री देवी जलमेंसे हाथ बाहर निकालती थीं, तब वहांके निवासी उनके हाथ पर नारियल रख देते थे, किन्तु एक दिन देवीके वैसे ही हाथ निकालनेपर एक म्लेच्छने नारियलके बदले मट्टीका ढेला दे दिया, तबसे देवी हाथ नहीं निकालती है।" ठीक आधी रातको हम लोग यथेष्ट स्थान पर पहुँचे।

बोझा उठानेवाले ऊंट और अनुचर लोगोंके मिलनेकी आशासे १७ वीं तारीखको हमें यहीं विश्राम करना पडा। असुरवास एक समृद्धिशाली ग्राम है, किन्तु अब यहांके निवासियोंकी संख्या बहुत न्यून है। चारण कविके एक पुराने संगीतसे मुग्ध होकर राणा भीमसिंहने भविष्यकी चिन्ता छोड अब यह गांव उक्त कविको दे दिया है। हमारे वस्त्रागारके निकट ही ऊंचे शिखरके ऊपर एक संन्यासीका आश्रम था, संन्यासी मुझसे साक्षात् करने आये और मैंने भी उनके आश्रममें जाकर प्रति साक्षात् किया। साधारण संन्यासियोंके समान यह भी एक बुद्धिमान् और देशविदेशकी बहुतसी बातें जानते हैं यह भगुवा वस्त्र पहरते हैं और पगडीके ऊपर एक कमलगट्टेकी माला लगी हुई है, तथा कमलगट्टेकी माला हाथमें लिये सदा इष्टदेवका नाम जपते रहते हैं। उन्होंने अंग्रेजी शासनमें साधारण प्रजा निर्विघ्न शान्तिके संग संग परमसुखसे वास करती है,

इस बातका उल्लेख करके यह भी प्रगट किया कि अंग्रेजशक्ति मनुष्यशक्तिकी अपेक्षा प्रबल है और वास्तवमें एक समय राजा और सामन्तलोगोंने इन संन्यासीके समान अंग्रेजोंको दैवशक्ति सम्पन्न कहनेका सिद्धान्त कर लिया था ।

१८ वीं अक्टूबर—नवीन सूर्योदयके संग संग ही छः कोशकी दूरी पर सुमाइचा नामक स्थानकी ओर यात्रा कर दी । जिस मार्गमें हम चल रहे थे वह वृक्षमार्गके समान बहुत संकीर्ण, तथा नाथद्वारेसे टेढा, ऊँचा नीचा और उच्चभूमिका सीमा-प्रान्त मात्र है; चारों ओर खैर, कीकड और बबूलके वृक्ष लग रहे हैं । हम बीच मार्गमें स्थित गङ्गुडानामक ग्राम होकर शिरनालानामक ग्राम होकर शिरनाला नामक उपत्यकामें पहुँचे । विस्तृत विराट्काय शिखरके जिस मूलसे नदी कलकल शब्द करती हुई बही है, गोडाग्राम उस स्थानपर ही बसा हुआ है । नदीकी कुण्डलाकार टेढी गति देखकर हमने सहजमें ही अनुमान कर लिया कि, इस विशाल उपत्यकाका केवल एक यही मार्ग है । उपत्यका सर्वत्र असमभावसे फैली हुई है, किन्तु किसी स्थानका परिमाण आध कोशसे कम नहीं है । उपत्यकाके निकटसे ही शिखरश्रेणी ऊपरको उठी है, किसी शिखरके ऊपर आमके वृक्ष लगे हुए हैं और कोई २ शिखर अभ्रभेदी रूपसे खडा हुआ है । इस रमणीय दृश्यपूर्ण स्थानके ऊपर प्रकृतिकी भी विशेष शुभ दृष्टि देखी जाती है । गूलर, सीताफल तथा बादामके वृक्ष अधिकाईसे उत्पन्न होते हैं; नदीके तटकी भूमि लताओंसे घिरी हुई तथा आम, तेन्दू, पीपल, वट आदि बडे २ वृक्षोंसे चारों ओर समाच्छन्न है । मनुष्यकी बुद्धि और कारीगरी भी यहांकी प्राकृतिक शोभाके वढानेमें सहायता दे रही है। अधिवासियोंने नदीके दोनों ओरके पर्वतके ऊपर२ आल बाँधकर साधारण उपायसे वहां जल पहुँचाया है, तथा उस जलसे पर्वतके ऊपर जहाँ मटीली भूमि है वहीं ईख,धान्य और रुई आदिकी खेतीका कार्य किया जाता है। इसविचित्र प्रदेशकी उत्पन्न हुई ईख अति उत्तम होती है और इसकी चाष सबसे अधिक आमदनी की है । किन्तु अब तीन वर्षसे एक प्रकारका कीडा इस उपत्यकामें घुस आया है, इससे ईखको बहुत हानि पहुँचती है; इस पञ्चपाल मरुक्षेत्रसे आकाशतक प्रकृति घोर अन्धकारमें घिरकर उपस्थित हुई है । वह पञ्चपाल दो श्रेणियोंमें विभक्त है । एक श्रेणीका नाम कारका और दूसरी श्रेणी तिरिनामसे विख्यात है । पहली श्रेणी ही सबसे अधिक सस्य नष्ट करती है । यह पञ्चपाल यहांके कृषिकार्यमें विशेष हानि पहुँचाता है ।

सुमाइचा ग्राम तीन पल्लियोंमें विभक्त है, तथा प्रत्येक पल्लीमें एक सौ परिवारका वास है । यह ग्राम प्रसिद्ध " राणाराज " नामक पर्वतकी तलैटीमें स्थापित है । जिस समय दुर्दान्त मुगल राणाको पराजित करके पीछे दौडे थे,उस समय राणा अपनी रक्षा करनेके लिये इस पहाडी मार्गसे होतेहुए ऊंचे बनसे घिरे हुए स्थानमें भाग गये थे, इस ही कारणसे यह स्थान उक्त नामसे विख्यात है इस ग्राममें विख्यात राणा कुम्भके उत्तराधिकारी कुम्भावत लोग रहते हैं । कुम्भावत लोग अपने अधिनायकोंसहित मुझसे

साक्षात् करनेके लिये आये तथा यहांकी बनी हुई प्रसिद्ध कुकडी (एक प्रकारका पहाडी शस्त्र है यह तीन फिट लम्बी होती है,) घी और बकरीका बच्चा मुझे भेंटमें दिया। मैं उन राजपूत और भूमियां लोगोंको लेनेके लिये उठा तथा उनकी सजधज सामान्यताकी सी होनेपर भी उनकी उत्पत्ति ऊंचे कुलमें जानकर सम्वर्द्धना की। वास्तवमें उनकी शारीरिक शोभा बढानेके लिये अच्छी पोशाककी कुछ भी आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि उनकी आकृति ऐसी चित्ताकर्षक थी कि, मेरे अनुचर लोग उनको देखकर वारम्वार "यह कैसे सुन्दर हैं ?" यही बात कहने लगे. इनका ऊंचा और स्थूल शरीर, वीरमूर्ति और लम्बी मूछोंकी सबने प्रशंसा की. नेता लोग शिरपर केवल लम्बी पगडी और दुपट्टा धारण कर रहे थे, अन्यान्य सब लोग श्रमजीवियोंके समान पायजामा और साधारण पगडी पहर रहे थे। पूर्वकालमें यह लोग कमलमीरके दुर्गरक्षाकार्यमें नियुक्त होनेके निमित्त एक सौ बन्दूकधारी सिपाही देते थे, किन्तु अब महाराष्ट्रियोंने इनका तख़्ता तमाम कर दिया है। यह ही लोग असली आधीन कर देनेवाली प्रजा हैं, एक ओर राणाका स्थानीय श्रमसाध्य कार्य्य करते हैं और दूसरी ओर नियमित वार्षिक कर देते हैं। पूर्वकालमें इनके पूर्वपुरुष जैसी वीरता दिखला गये हैं, मेरे उन सब बातोंका उल्लेख और प्रशंसा करनेपर वह मुझसे बहुत प्रसन्न हुए, कोई राजपूत भी अपने पूर्व पुरुषोंकी वीरताको कभी नहीं भूल सकता। डुम्मुर वृक्षके नीचेकी इस समितिने वास्तवमें ही अधिक शोभा पाई थी। हमारे बोझा उठानेवाले ऊंट इस सुमाइचामें आकर हमसे मिल गये।

१९ अक्टूबर-राणा लोग चित्तौड और बुनाश नदीके समतल प्रदेशसे विताडित होकर तुङ्ग शृंगमाला वेष्टित पहाडी स्थानमें रहनेको बाध्य हुए थे, तथा इस सम्बन्धसे मेवाडकी बहुत सी प्रजाने आकर निज उपत्यकाओंमें वास किया था. हमने वहांके प्रधान नगर कैलवाडाकी ओर यात्रा की। उक्त प्रदेशमें जितने पर्वत और नादियें हैं उन सबके संग ही उपरोक्त समयकी किसी न किसी ऐतिहासिक घटनाका सम्बन्ध अवश्य लगा हुआ है। पूर्व वर्णित उपत्यकाके समान यह स्थान प्राकृतिक रमणीय सौन्दर्यसे शोभायमान है। यहीं विदीर्ण पर्वतमें होकर जो मार्ग गया है उसके वाम भागमें "करी सरोवर" नामक एक छोटी नदी हमारे दृष्टिगोचर हुई। यद्यपि पैदल चलनेवाले पथिक यहांसे एक सीधे मार्गमें होकर कैलवारा नगरमें जा सकते हैं, किंतु वह स्थान ऐसे घने जंगल और विपत्तियोंसे भरा हुआ है कि, अपरिचित मनुष्यको वहां जानेमें सहसा साहस करना असंभव है। इसका नाम "करी सरोवर" क्यों पडा? इस बातका हमें कुछ भी पता नहीं चला, कदाचित् प्राचीन कालके किसी समरोपलक्ष्यमें ही यह नाम रक्खा गया होगा। हम मूर्च्छनामक ग्राममें होते हुए आगे बढे। यह ग्राम एक राठौर सामन्तके अधीन है। उक्त ग्रामसे लगे हुए एक क्षुद्र सरोवरके तटपर एक अत्यन्त रमणीक नीचे मंदिरने हमारी दृष्टिको आकर्षण किया। एक मनुष्यसे प्रश्न करनेपर ज्ञात हुआ कि यह सती मंदिर है। किन्तु इस सामान्य उत्तरसे प्रसन्न न होकर ग्रामके अध्यक्षको साक्षात्के लिये बुलाया। उसके आनेपर प्रगट हुआ कि उक्त मंदिर उस ग्रामाध्यक्षके पूर्व पुरुषोंने

बनवाया था । जब औरंगजेबने इस प्रदेशमें समराग्नि प्रज्वालित कर दी, तब इस ग्रामके स्वामीने युद्धमें लडकर अपने प्राण दे दिये थे; उसकी अर्द्धांगिनीने पतिभक्ति प्रगट करनेके लिये अपने स्वामीका स्मरण चिह्न छातीपर रखकर इस स्थानमें अपने शरीरको चितामें भस्म कर दिया था । मंदिरमें उस वीरपुरुषकी अश्वारोही स्वरूपसे निर्मित प्रतिमा स्थापित है, इस कारण सहजमें ही जाना जा सकता है कि किसी साधारण ग्रामीण मनुष्यके स्मरणार्थ यह मंदिर नहीं बना है ।

" करवीर सरोवर" और खिरली ग्रामके निकट दो मार्ग दो ओर को गये हैं । वीर गुलामार्गमें होकर नाथद्वार तक बराबर जाया जा सकता है; दूसरा मार्ग चिराई और विख्यात चतुर्भुज देवके तीर्थस्थानकी ओर गया है; यात्रासमय हमारे चलनेके मार्गमें सहसा शिखरश्रेणी एकत्र हो गई, इस कारण हम ओलद्वार से होते हुए कैलवारा-की ओर चलने लगे और कैलवारा नगरसे डेढकोश उत्तरकी ओर एक समतलक्षेत्र ग्रामके बनमें बस्त्रागार स्थापन किया । यहांकी उपत्यका क्रमानुसार विस्तृत हुई है, तथा इस स्थानकी स्वाभाविक शोभा जैसी बनैली और असरल है वसी ही सुंदर दृढता-पूर्ण है । वायु नापनेवाले यंत्रकी सहायतासे हमको ज्ञात हुआ कि यह स्थान उदयपुरसे हजार फिट और समुद्रसे तीन हजार फिट ऊंचा है; इसके ऊपर चारो ओर मोटी २ बहुतसी शिखरश्रेणियें खडी हैं । इस स्थानसे अनगिन्त झरने झर २ करते हुए पश्चिममें मारवाडको सींचते हैं और पूर्वमें मेवाडके सरोवर भरनेके लिये नाचते २ चले गये हैं । वांध २ कर यहांके " कङ्करोली" नामक छोटे सरोवरके निर्माणसे पहिले यह समस्त झरने मेवाडकी ओरको ही बहते थे, मरुक्षेत्रगामी झरनोंकी संख्या बहुत न्यून देखी जाती है ।

राजाके निकट आत्मीय और कमलमीरके शासनकर्त्ता महाराज दौलतसिंहने बहुतसी लालपताका, तुरही और ध्वजदंडधारी अनुचरगण और कविके संग मुझसे मुलाकात करने तथा किलेके भीतर जानेके निमित्त कईकोश आगे बढकर अगौनीकी शिष्टाचारकी रीतिके अनुसार हम दोनोंने ही घोडेसे उतरकर एक दूसरेका आलिङ्गन किया, फिर घोडोंपर चढकर संग २ चलते हुए वहांकी सर्व साधारणकी परिवर्तित दशाके विषयकी बातोंमें तत्पर हो गये । दौलतसिंह महाराणा भीमसिंहके बहुत निकटके रिश्तेदार और महाराजकी उपाधिसे भूषित होनेके कारण समान श्रेणीमें गिने जाते थे । राणाके कोई पुत्र नहीं था, इसी कारण महाराज शिवधनसिंहके पीछे इन्होंने मेवाडका सिंहासन ग्रहण किया । भ्रष्टाचार और निन्दनीय आचरण मेवाडके संभ्रान्त लोगोंके बीचमें जिन अल्प संख्यक कई लोगोंके ऊपर प्रबल प्रभुत्व विस्तारमें स्वभाव परिवर्त्तित और नैतिक बल विलुप्त करनेमें समर्थ नहीं हुआ, उनमेंसे एक यह भी थे । यह जैसे सरल चित्त और सब कार्योंमें अग्रसर रहते थे, वैसे ही महान् नम्र, गर्वहीन और अल्पभाषी थे । मेवाड प्रवेशके प्रथमरूप इस पाश्चात्य सीमान्तमें वह जिस पद पर नियुक्त थे उनके गौरव और स्वभावने उनको इस पदके सम्पूर्ण उपयोगी बना दिया । सन् १८१८

ईसवीके फर्वरी मासमें मैंने कमलमीर दुर्गमें स्थित सेनाको शेष वेतन चुकाकर दुर्ग अधिकार कर लिया था। जिस श्रेणीकी अर्थ लिप्सु सेना सरलतासे ही अपनी पगडी बदलनेके समान स्वामीके परिवर्तन करनेमें अभ्यस्त है, पाश्च्यजगत्के सेनापतियोंके पक्षमें उस श्रेणीकी सेनाको हस्तगत करनेका मुद्रा ही एक प्रधान, निश्चित और सरल उपाय है। चौवीस घंटेके वीचमें हमने दुर्गमें अधिकार पा लिया, किन्तु जितना रुपया देना निश्चित हुआ हमारे पास उसके तीन अंशका एकांशाधिक नगद रुपया न होनेसे उन्होंने मारवाडके पालिनामक वाणिज्य नगरकी वराती चिट्ठी लेनेमें कुछ भी इधर उधर नहीं किया। भारतकी नितान्त निधान भङ्गकारी जाति तक भी बृटिश जातिका ऐसा ही विश्वास करती है। दूसरे दिन प्रातः काल हमने देखा कि, उस दुर्गकी सेना पश्चिमी पहाडी मार्गसे जा रही है; उस समय टूटेफूटे प्राचीन देवमन्दिरमें बैठे हुए हम भोजन कर रहे थे। मेरे अनुगामी सेनादल और अनुचरोंने एक सप्ताहतक दुर्गका अधिकार अपने हाथमें रक्खा, पीछे राणाकी भेजी हुई सेनाके आनेपर दुर्गका भार उसके हाथमें सौंप दिया गया। इस विभिन्न दृश्य पूर्ण स्थानके असंख्य स्मरण स्तंभोंमें खुदे हुए लेखोंकी वर्णावलीका उद्धार और उन सबकी नकल करनेमें उक्त आठदिन बीत गये। यद्यपि इस सुप्रसिद्ध स्थानका बाह्यदृश्य चित्रपटपर अंकित हो गया था, किन्तु इसके भीतरी दृश्यके वर्णन करनेकी चेष्टा करना मानो वृथा साहस करना है। दुर्गके चारों ओर अभेद्य विशाल प्राकार है, अनगिन्त बहुत ऊंचे गोलाकार दुर्गालय और बाण च-लानेके लिये छेदवाली परकोटाश्रेणी इटस्कानके समान दिखाई देती है। पत्थरोंके ऊपर क्रमसे बाण, बन्दूक और गोला चलानेके निमित्त छेदयुक्त परकोटा ऊपर उठ गया है और सबसे अन्तिम चोटीमें "बादलमहल" नामक राणालोगोंका वर्षानिवास बना हुआ है। उस बादलमहलसे बालुकामय मरुप्रान्तर और चारो ओर विराजित अनेक शिखरश्रेणियें दृष्टिगोचर होती हैं। कमलमीर दुर्गपर चढनेके प्रथम संकीर्ण मार्गमें कैलवारासे सिकि कोशकी दूरीपर "अराइतपोल" नामक पहली तोरण दिखाई देती है। उसके आगे ही "हुल्लापोल" और हनुमानपोल नामक और दो तोरण बने हुए हैं। यह तीन तोरण ही दुर्गके ऊपरतक "जयतोरण" "निधनतोरण" तथा "रामतोरण" नामक शत्रुओंको दुर्गम तोरण बनी हुई है। भीतरकी सबसे अंतिम तोरणका नाम "चौगानपोल है"। कमलमीरका शेष शिखर समुद्रतलसे ३३५३ फिट ऊंचा है। यहाँसे मैंने मरुक्षेत्रके बहुदूरवर्ती स्थानोंका प्रान्त निश्चय कर लिया। यहां ऐसे कितने ही दृश्य विद्यमान हैं जिनका चित्र अंकित करनेमें लगभग एकमासका समय लगनेकी सम्भावना है, किन्तु हमने केवल उक्त दुर्ग और एक बहुत पुराने जैन मंदिरका चित्राङ्क समाप्त करनेका समय पाया था। इस मंदिरकी गठन प्रणाली सब प्रकारसे बहुत प्राचीन कालके समान है। मंदिरके बीचमें केवल खिलानयुक्त ऊंची चोटीका विग्रह कक्ष (कमरा) है और उसके चारो ओर स्तम्भावली शोभित गोल बरामदा है। यह निश्चय ही जैनमन्दिर है; कारण कि जैनधर्मके संग हिन्दूधर्मका जैसा प्रभेद है, हिन्दूमंदिरके संग इस मंदिरकी विभिन्नता भी वैसे ही विद्य-

जान है । भारतवर्षके बहुतसे देवार्चक और शैवलोगोंकी अधिकाईसे कारीगरी की हुई मंदिरावलीके संग इस जैनमंदिरकी तुलना करनेसे,अधिक विभिन्नता और इस मंदिरका सरल गठन और अनाडम्बरता दृष्टिगोचर होता है । मंदिरके बहुत प्राचीन होनेका प्रमाण उसकी कारीगरीकी न्यूनतासे ही प्रगट होता है और इस ही सूत्रसे हम स्थिर कर सकते हैं कि जिस समय चन्द्रगुप्तके वंशधर राजा सम्प्रीति इस प्रदेशके सर्वश्रेष्ठ राजा थे (ख्रिस्टजन्मके दो सौ वर्ष पहिले) उस समय यह बनाया गया है । किम्वदन्तीसे ज्ञात होता है कि रजवाडे और सौराष्ट्रमें जितने प्राचीन मंदिर आजतक विद्यमान हैं, वही उन सबके निर्माता हैं । मंदिरके स्तंभोंका आकार और परिमाण दूसरे मंदिरोंकी स्तम्भश्रेणीके समान नहीं है, वरन् बिलकुल अलग है; हिन्दू देवमंदिरोंके स्तंभ जिस प्रकारसे गठित और स्थूल होते हैं यह वैसे न होकर पतले तथा नीचेसे ऊपरका भाग सूक्ष्म हो गया है ।

राजा सम्प्रीति चन्द्रगुप्तके वंशमें चार पुरुषोंके पीछे उत्पन्न हुए । यह जैनधर्मावलम्बी और बक्रिथानके ग्रीक अधीश्वर सिल्यूकसके प्रियमित्र थे । सिल्यूकसके भोगस्थितिसके लिखे हुए विवरणसे प्रगट होता है कि, दोनोंमें अकृत्रिम मित्रता थी और जैनधर्मावलम्बी राजपूत राजाकी एक कन्याके संग सिल्यूकसका परिणय कार्य पूर्ण हुआ था । हस्तीयूथ और अन्यान्य उपहार द्रव्य पाकर सिल्यूकसने चन्द्रगुप्तके आधीन रहनेके लिये एक दल ग्रीक सेनाको भेजा था । * पाठकोंके सामने जो जैनमंदिर उपस्थित है वह ग्रीक शिल्पकारोंके द्वारा बनाया गया है । अथवा राजपूत शिल्पकारोंने ग्रीकशिल्पकारोंके आदर्शपर इसे बनाया है इसे सत्य वा सम्भव कहकर अनुमान करनेसे कौतूहल उपस्थित होता है । यही हमारे सिथरका × मेवाडवाला मंदिर है । जैनियोंके इस मंदिरमें हिन्दुओं द्वारा "जीवपितृ" का कृष्ण पाषाण निर्मित खण्ड अन्यायसे ही स्थापित कर दिया गया है । × यह मंदिर पर्वतके ऊपर बना हुआ है और वह पर्वतपृष्ठ ही इसका भित्तिस्वरूप

---

* महात्मा टाडकी इस उक्तिको हम भूल समझते हैं; अन्यान्य इतिहासोंमें देखा जाता है कि मगधके स्वामी चन्द्रगुप्तके संग सिल्यूकसकी विशेष मित्रता हो गई थी और चन्द्रगुप्तने उनको एक कन्या दान कर दी । यहां कर्नल टाड लिखते हैं कि राजा सम्प्रीति चन्द्रगुप्तके प्रपौत्र थे । यही बात यदि सत्य हो तो हम यह कैसे कह सकते हैं कि सिल्यूकस उस समय जीवित थे ? और यदि उनका जीवित होना भी मान लिया जाय तो सिल्यूकसकी आयु उस समय सौ वर्षके लगभग कहनी होगी ? उस समय इस अत्यन्त वृद्धके हाथमें सम्प्रीतिका कन्या सौंपना कैसे सम्भव हो सकता है ? और यदि इस बातको स्वीकार कर लिया जाय तो चन्द्रगुप्तके जीवित होनेका क्या प्रमाण है ? तथा संप्रीतिकी कन्या के संग विवाह होनेपर सम्प्रीतिके आधीनमें रक्षाके निमित्त ग्रीक सेना न भेजकर चन्द्रगुप्तके निकट ही क्यों भेजी ? ज्ञात होता है कि टाड साहब भ्रमसे ही सिल्यूकसके संग सम्प्रीतिकी मित्रताकी बात लिख गये हैं । ग्रीकदूत भोगा स्थिनिसने सम्प्रीतिका कुछ भी उल्लेख नहीं किया ।

× ग्रीकदेवता ।

+ कर्नल टाडने केवल बहुत पुराने साधारण हिंदूमंदिरोंकी विचित्र कारीगरी इस मंदिरमें न पाकर अनुमान किया है कि यह जैनमंदिर है । किंतु "जीवहित" का चिह्न देखकर हम टाड साहबके अनुमानको निर्भ्रान्त नहीं समझ सकते । जैनमंदिरमें हिन्दुओंके देवताकी प्रतिष्ठा होना किसी प्रकारसे सम्भव नहीं हो सकता ।

होनेसे यह कालके कराल दांतोंसे चूर चूर न होकर अबतक खडा है । इसके पास ही जैनियोंका एक और पवित्र देवालय दिखाई देता है, किन्तु बिलकुल दूसरी रीतिसे बनाया गया है । यह तिमंजला बना हुआ है, प्रत्येक मंजिल छोटे २ असंख्य स्थूल स्तंभोंसे शोभायमान है,वह सब स्तंभ खोदे हुए प्राकारके ऊपर स्थापित है और स्तंभोंके ऊपर इस प्रकारकी छत है कि सूर्यकी किरणें उसके भीतर जाकर अन्धकार दूर करनेमें समर्थ हैं।

जहांतक दृष्टि जाती है दुर्गके ऊपर वा नीचे जितने देवालय वा मंदिर विद्यमान हैं उन सबका एक २ करके विवरण करते समय विभिन्नता नहीं ज्ञात होगी । जैनमंदिरसे नीचे पहाडी मार्गकी ओर दृष्टि करनेसे केवल ध्वंसावशेष ही दिखाई देता है । मैं केवल दो प्रधान देवालयोंका विवरण लिखता हूं । पहिला "मामा (माता) देवी" का अर्थात् देवगढकी जननीका मंदिर है । यह पहाडी मार्गकी ओर जानेवाले शिखरकी चोटीपर बना हुआ है । चारों ओर स्थापित प्रधान और अप्रधान असंख्य देवमूर्तियोंके बीचमें मातादेवीकी प्रतिमा विराजान है । सब प्रतिमा सफेद मर्म्मर पत्थरकी बनी हुई हैं और प्रत्येककी उँचाई प्राय: तीन फिट है । यद्यपि शिल्पविद्याकी अवनतिके समय गत सात शताब्दीके बीचमें श्रेष्ठ भास्कर कार्य दो एक ही देखनेमें आये हैं,किन्तु यह देवमूर्तियें बडे चमत्कार रूपसे बनाई गई हैं । मंदिरकी गढनप्रणाली सादी और बहुत प्राचीन है केवल एक बडे कमरेके भीतर देवमूर्तियें वेदी वा आसनके बदले भूमिमें ही चारों ओर सजी हुई हैं।

इन देवालयोंके सामनेवाले बडे आँगनके चारों ओर जो दृढ प्राकार खडा है, वही इस मंदिरका विशेष दर्शनीय अंश है । यह प्राकार काले मर्मर पत्थरका बना हुआ है और इसके पाषाणखण्डोंमें देव देवीका विवरण खुदा हुआ है । यह इस कारण और भी दर्शनीय है कि, जितने राजालोगोंने आत्मगौरवके निमित्त यह पाषाण लगवाये हैं, उन सबका विशेष विवरण भी इनमें खुदा हुआ है । किंतु प्राचीन तत्त्वसंग्रह करनेवालोंके लिये ऐसा शोचनीय दृश्य है । उन सैकडों पाषाण खण्डोंमेंसे एक भी पूरा नहीं है । समस्त खंड विखंड अंश चारों ओर विच्छिन्न और ऐसे भावसे स्थापित हैं कि धनके लालची रुहेले अफगान इस भाईलके वंशवालोंने * उनके ऊपर मांस पात्र रखकर मांस भोजन किया ।

---

* "इन्होंने प्रगट किया कि इजिप्ट (मिसर) के फारावलोगोंमेंसे एक मनुष्यने इनको ताडन किया इन्होंने पूर्वकी ओर भ्रमण करते २ अंतमें सिंधुनदीके सुलेमान-ए-खो अर्थात् सलमन शिखरपर जाकर विश्राम किया। इनमेसे फिर किसीने प्रगट किया कि, वह जिस जातिसे उत्पन्न हुए हैं, वह जाति नष्ट हो गई है वह लोग वीर जाति और पूर्व पुरुषोंके समान एक स्थानमें न रहकर सर्वत्र सैनिकोंका कार्य करते हैं । यह देखनेमें वीरपुरुषोंके समान हैं तथा सिकन्दरके समान सेनापतिके अधीनमें खादकके नियुक्त होनेपर अतिश्रेष्ठ सैनिक बन सकते हैं । किन्तु यह लोग शूकर खादकको अत्यन्त घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं । "

मातादेवीका मंदिर छोडनेके पीछे उपत्यकाके दूसरी ओर पहाडी मार्गके कंठस्थित एक सामान्य स्मारक मंदिरने मेरी दृष्टिको आकर्षण किया । यह मंदिर जहां बना हुआ है,वह स्थान बडा रमणीक है और वहांसे मारवाड जानेका मार्ग दृष्टिगोचर होता है।मंदिरकी चोट मध्यमें है चारों ओर केवल स्तंभ हैं, इस कारण मंदिरके भीतरकी ऊंची छोटी स्मारक वदी सहजमें ही देखी जा सकती है । यह टिभोलीके मंदिरका नमूना है । मैं इस मंदिरके ऊपर, शिखर और ध्वंशावशिष्ट स्थानोंपर चढ गया । मेवाडके सुप्रसिद्ध महावीर पृथ्वीराज और उनकी वीर सहधर्मिणी ताराबाईकी भस्म इसके बीचमें स्मरणार्थ स्थापित है । उनकी जीवनी और वीरताका प्रशंसनीय विवरण मेवाडके उपन्यासमें आजतक जीवितभावसे अंकित है ।

सुन्दरी तारा विदनरके अधिनायक राओ सुरतानकी प्यारी लडकी थी।राओ सुरतान सोलंकी जातीय और अनहलवाडाके सुप्रसिद्ध वलहर राजवंशमें उत्पन्न हुए हैं । सुरतानके पूर्व पुरुषलोग सन् १३ शताब्दीमें अनहलवाडासे विताडित होकर मध्यभारतमें आये और टंकखोदा तथा वुनाश नदीके समस्त प्रदेशको अधिकारमें कर लिया । तक्ष जातिने स्मरणातीत कालसे पहिले उक्त टंकखोदा राज्यमें वास वा उसको स्थापित किया। उन तक्षोंके नामानुसार उक्त स्थान तक्षशील नगर वा साधारणमें तक्षपुर अथवा खोदा नामसे विख्यात हुआ * अफगानवीर लिल्लाखुदाने इसपर अधिकार करके सुरतानको वहाँसे निकाल दिया, इस कारण सुरतान मेवाडके सीमान्तवर्ती आरावली भूधरकी तलैटीमें स्थापित वर्त्तमान त्रिदनौरमें आश्रय लेनेको बाध्य हुआ । सुन्दरी ताराबाईने अपने पिताके इस भाग्यपतन और पूर्व गौरवगरिमाको लुप्त देखकर वस्त्राभूषणोंसे घृणा की तथा युद्धमें घोडा चलाने और नक्षत्रगतिसे दौडते हुए घोडेकी पीठसे बाण छोडनेकी शिक्षामें आग्रहसहित नियुक्त हुई ।जिस समय दुर्दान्त अफगानियोंके बलसे थोडा उद्धार करनेके निमित्त सुरतानकी सेना वीरवेशसे आगे बढी । वीरकुमारी ताराबाई भी इस समय वीरसाजसे सज,धनुर्बाण हाथमें ले काठियावाडी घोडेपर चढकर बडे साहसके संग उस सेनामें जा मिली । दुर्भाग्यताके कारण उक्त सेना उस समय जयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त करनेमें असमर्थ हो गई ।

राणा रायमलके तीसरे पुत्र जयमलने ताराके साथ विवाहका प्रस्ताव किया तब विदनौरके सूर्य (तारा) ने उत्तर दिया कि पहले थोडाका उद्धार करो पीछे मैं तुम्हारी हूंगी । जयमलने इस बातको स्वीकार कर लिया, परन्तु इसके पहले कि वह अपना

* उक्त स्थानके ध्वंशावशिष्ट मंदिरोंमें तक्षक जातिके निर्माण चिह्न अधिक देखे जाते हैं,इस स्थानके चारों ओर मनोरम दृश्य हैं;उनमेंसे वुनाशनदीके तीरवर्ती राजमहाल तथा गोकर्ण आदि स्थान सब से अधिक रमणीक हैं। हारवर्टने लिखा है कि सबसे अधिक चित्तौरग्रीफ वीर अलेक जेंडरके परममित्र तक्षशीलोंका निवासस्थान था।तक्षलोग पुरुवंशसे उत्पन्न हुए हैं; इस कारण पौरस किसी व्यक्तिविशेषका नाम नहीं है, केवल वंशपरिचायक मात्र है । तक्षशील नगर देखनेमें बहुत बडा था ।

अभीष्ट सिद्ध करै ढिठाईके साथ ताराके पास जानेकी अभिलाषाके उद्योगमें होनेके कारण ताराके क्रोधी पिता राव सुरतानके हाथसे मारा गया, मृत जयमलका भाई पृथ्वीराज जो उस समय मारवाडमें देशनिकालेमें था और जिसने गोद्वारको छुडाकर उसी समय अपने पौरुषको विख्यात किया था और इसीसे अपने पिताकी दयाका पात्र हो चुका था, विदनौरकी दुःखमय अवस्थाने उसको इस बातपर आरूढ कर दिया कि वह उस जयमलसे न होनेवाले प्रणको पूरा करे। पृथ्वीराजका यश और भाटोंद्वारा उसकी की हुई प्रशंसा दूर दूर तक फैली हुई थी, ताराको उसका विख्यात नाम ही मोहित कर रहा था और जब पृथिवीराजकी वडाई करनेवाले पुरुषने उससे यह कहा कि जिस भांति वह अपनी घुडसवार सेनाकी तैयारी करता है तथा उसकी रणकौशलता अनुकरणीय है, तब चौहानवंशी ताराबाईने अपने पिताकी आज्ञासे पृथिवीराजके संग उसी नियम पर विवाह करना स्वीकार कर लिया कि वह उसका थोडा छुडा देगा नहीं तो वह सच्चा राजपूत नहीं है, अलीके पुत्रोंके धर्महेतु मरणके पारितोषिकका समय उस कठिन कार्यके निमित्त निश्चय किया गया; पृथिवीराजने ५०० मनोनीत घुडसवारोंका एक दल एकत्रित करलिया, उसकी प्रियतमा सुन्दरी ताराने भी उसके यश और दुःखमें भाग प्राप्त करनेके निमित्त उससे अनुरोध किया तब पृथ्वीराजने उसको साथ लिया, पृथ्वीराज उस समय थोडामें पहुंचा, जब कि ताजिया अर्थात् दोनों धर्मके हेतु मरनेवाले (हसनहुसेन) भ्राताओंका जनाजा आंगनमें रक्खा था, राजकुमारी ताराबाई और पृथ्वीराजका सत्यस्नेही सदा संगी मित्र सेंगराधिपति यह तीनों घुडसवार दलको छोडकर उस समारोहमें उस समय मिल गये, जब वह महलकी गोखके नीचे होकर आ रहा था और जिस गोखमें अफ़गान सरदार नीचे आनेके लिये पोशाक पहर रहा था और जब उसने पूछा कि यह तीन अपरिचित घुडसवार कौन हैं, जो इस समारोहमें आकर मिल गये हैं। वह यह कह ही रहा था कि पृथ्वीराजके बरछे और उसकी सहधर्मिणीके तीरने उस अफ़गान सरदारको धराशायी कर दिया, जबतक वह समारोह अपने आतंकसे सचेत हो तबतक यह तीनों नगरके फाटकपर पहुँच गये. जहां एक हाथीके द्वारा इनका साथी मारा गया ताराबाईने अपने खांडेसे इसकी सूंड काट डाली और हाथीके भागते ही वे लोग अपनी सेनामें जो पास ही थी जा मिले, अफगानोंपर चढाई कर दी गई और वह उस वेगके सामने न ठहर सके, जो नहीं भागे उनको वहीं चकनाचूर कर दिया गया और इस भांति पृथ्वीराजने अपनी प्राणप्यारीके पिताके उत्तराधिकारको ग्रहण किया, अफगानके एक भाईने उसके फेर लेनेके लिये युद्धमें अपने प्राण दे दिये, अजमेरके नवाब मूलूखांने शिशोदीय राजकुमारके सन्मुख स्वयं युद्ध करनेका विचार किया, पृथ्वीराजने इस अभिप्रायको जानकर स्वयं अजमेरपर चढाई की, अरुणोदयके समय वह शत्रुके शिबिरमें पहुँच गये और भीषण मार काटके उपरान्त बितलीगढके नगरको दूसरे भगेडों सहित जय कर लिया. चारण कहता है इस कार्यसे रजवाडेमें पृथ्वीराजका यश छा गया, एक सहस्र राजपूत श्रद्धा और भक्तिसे पृथ्वीराजके नक्कारेके चारों ओर एकत्रित हो गये, उनकी तलवार आकाशमें

चमचमाती थी और पृथ्वीको भयभीत करती थी यह सब निर्बलके सहायक थे। मुसलमान लेखकों द्वारा लिखित और प्रमाणित बात उसके यशमें * एक और ही है चाहे वह उस आकस्मिक घटनासे अनभिज्ञ हैं। एक समय पृथ्वीराजने राणाको मालवेके बादशाहके दूतके साथ नम्रतापूर्वक संभाषण करते देखा, पृथ्वीराजको यह नम्रता असह्य हुई और--उत्तर दिया, राणाने व्याजस्तुतिसे कहा वास्तवमें तुम बडे प्रबल बादशाहोंके बांधनेवाले हो परन्तु मुझे अपने राज्यकी रक्षा करनी है, पृथ्वीराज सक्रोध वहांसे चला गया और सेनाको एकत्रित करके नीमच गया, वहां उसने पांच सहस्र घुडसवार इकट्ठे किये, देपालपुरमें पहुंचकर उसे लूट लिया और वहांके सरदारको मार डाला, इस उपद्रवके समाचार पाकर बादशाह सेना इकट्ठी कर मंडूसे चला, राजपूतकुमारने गुप्त होकर भागनेके बदले आगे बढकर धावा किया, जिस समय शत्रु अपने ठहरनेका प्रबन्ध कर रहे थे शिबिरपर छापा मारा, बादशाही मण्डपको पहचानकर कि जहां खोजे और स्त्री ही थीं बादशाहको बाँध लिया और पृथ्वीराजके पीछे एक शीघ्रगामी सांडनीपर बैठा दिया गया, पीछा करनेवालोंसे कह दिया कि यदि शान्त न रहोगे तो बादशाहके प्राण जाते रहैंगे और नहीं तो बादशाहको कोई दुःख देनेकी इच्छा नहीं है, केवल अपने पिताके चरणोंमें डालकर उसको स्वतंत्र कर दिया जायगा, वहांसे बादशाहको सीधा चित्तौर लाया गया और राणाके सन्मुख खडा करके पृथ्वीराजने कहा कि अपने दीन अहदीको बुलाओ और उससे पूँछो कि यह कौन है, मालवेका बादशाह एक मास तक चित्तौरमें बन्दी रहा और अपनी स्वतंत्रताके निमित्त अनेक घोडे देकर सम्मान सहित स्वतंत्र कर दिया गया. पृथ्वीराज अपने निवासस्थान कमलमेरको चला गया, और इसी प्रकारके ऐश्वर्यशाली कर्म १३ वर्षकी अवस्थासे तेईस वर्षकी अवस्था तक--करता रहा, यह कर्म इस देशके लिये आश्चर्यजनक घटनायें थीं और भाटोंके वह परमप्रिय विषय थे।

जिसने इस भांतिसे ऐश्वर्य प्राप्त किया उससे कब आशा की जा सकती है कि उसके भागमें अधिक दिन जीवित रहना हो, इसका जीवन किसी तीर या खङ्गसे शेष नहीं हुआ परन्तु विष द्वारा तब हुआ जब वह अपने भाई सांगाके भृत्यको बंधन कर रहा था। इस भृत्यके छिपे रहनेका स्थान उसके विवाहके कारण ज्ञात हो गया था कि श्रीनगरके नायककी कन्यासे उसका विवाह होता है उस नायकने भयसे उसकी रक्षा की थी।

उसी समय उसको उसकी बहनका पत्र मिला जो बडे शोकके साथ लिखा गया था, कि उसका पति सिरोहीकुमार उसके साथ अत्याचार करता है उस आपत्तिसे

---

* अपने मूलग्रंथमें टाड साहबने सहधर्मिणीका विशेषण एमेजोनियन लिखा है जिसका तात्पर्य एमेजन नदीके किनारेके देशकी पत्नी है, उस देशकी स्त्री युद्धमें अपने पतियोंका साथ देती थीं।

बचनेके लिये वह पिताके यहां आना चाहती है ! जबसे वह अफीमका सेवन करने लगा है तबसे अपनी खाटके नीचे उसे पृथ्वीमें सुलाता है पृथ्वीराज तुरंत चल पडा और आधी रातको सिरोहीमें पहुँचा और महलमें घुसकर बंदूककी नली अपने बहनोईके कंठमें रखकर उसकी निद्रा भंग कर दी । उसकी स्त्रीने उसके अत्याचारोंपर ध्यान न देकर मनुष्यतासे दयार्द्र हो भाई पृथ्वीराजसे उसके प्राणदानकी भिक्षा मांगी पृथ्वीराजने उसको क्षमा किया और यह कहा यदि वह दासभावसे अपनी स्त्रीके जूते शिरपर रखकर स्त्रीके समीप खडा हो और उसके चरणोंको स्पर्श करे तो क्षमा करूंगा, यह अपमानकी पराकाष्ठा थी उसने पृथ्वीराजकी आज्ञाका पालन किया और उसका अपराध क्षमा कर दिया गया. पृथ्वीराजने उसे अंकभर लिया और पांच दिन उसके यहां अतिथिरूपसे निवास किया, इस पाभूरावको एक प्रकारके बहुत उत्तम लड्डू बनाने आते थे, अपने सालेको बिदाके समय उसने उसमेंसे थोडेसे लड्डू दिये,: कमलमीरके पास आकर पृथ्वीराजने उन लड्डुओंमेंसे एक दो खाये परन्तु जब मामादेवीके मन्दिरके समीप आया तब उससे आगे न बढा गया, यहांसे उसने अपनी प्राणप्यारी ताराके पास संदेशा भेजा कि वह आकर उससे अन्तिम भेंट करले, परन्तु वह विष इतना तीव्र था कि ताराके गढीसे नीचे आनेके पूर्व ही उसको मृत्युने दाब लिया, ताराने तुरन्त आकर विचार कर लिया, चिता चिनी गई और वह वीर पृथ्वीराजके मृतक शरीरको गोदमें लेकर सूर्य्य लोककी इच्छा करके उसमें बैठ गई, इस भाँति शिशोदिया राजकुमार और विदनौरके सूर्य्यका अस्त हुआ.ऐसे उदाहरणोंसे ही हम इन मनुष्योंके रहनसहनपर सम्मति प्रगट कर सकते हैं, यदि सिरोहीका नायक अपना विषमय मिष्टान्न पृथ्वीराजको न देता तो पृथ्वीराज अपने वीर और उत्तराधिकारी भ्राता सांगासे कहीं बढकर यशके साथ बाबरका सामना करता, इस बातका विचार कर्तव्य है कि वह अपने रणकौशलसे और विजयकी लालसासे जो उसके यशको बढाती थी अधिक सफलता प्राप्त करता ।

२० अक्टूबर हम दुपहरतक रुके रहे जिससे कि नौकर चाकर भोजन बना लें और मारवाड अर्थात् मृत्युलोकमें जानेको उद्यत हो लें, वह घाटी जिसमें होकर हमको उस देशमें जाना होगा बहुत भयानक बताई गई थी, फिर इस ध्यानसे कि हाथी और घोडे अंकुश तथा चाबुकके प्रयोगसे उस स्थानमें होकर चले जाया करते हैं,हमने वहां होकर जानेका निश्चय किया । दुपहरको डेरे उखाड दिये और जब असबाब बांधा जा रहा था, हम तीन बजेतक रुके रहे, लैनडोरी अगाडीका डेरा और मार्गशोधक मंडली भेज दी गई, हम अपने चित्तमें ध्यान कर रहे थे कि रात्रि वहां बीतैगी जहां मेवाड और मारवाडकी प्राकृतिक सीमा है और जिस स्थानके लिये हम सुन चुके थे कि बहुत चौडा है, उस घाटीकी चर्चाने यदि हमारी विपत्तियोंको न बढा दिया होता,: यदि जहां तहां फैले हुए गड्डोंको आगे बढानेमें पूरा घंटा न लग गया होता, तो हम शीघ्र पहुँचते, परन्तु एक मील तक हमको इतना चौडा मार्ग भी नहीं मिला जिसमें होकर लदा हुआ

हाथी सुखपूर्वक चला जाय, यह मार्ग क्षितिजसे ५५ अंशपर था और उसके दोनों ओरको ऊंची नीची घाटियोंमें होकर जलके सोते कलकल शब्द करते बह रहे थे, जब हम इस पहले मार्गके नीचे तक पहुँच गये, तब विदित हुआ कि मेरे मित्र बूँदीनरेशका दिया हुआ चैतन्यमनिका (घोडा) पैर फिसलनेसे लुढककर नीचे जा पडा है, उसकी काठीका तंग टूट गया था, उससे कुछ आगे बबर्ची दिखाई पडा, वह दुःखी बिखरी हुई बबर्चीखानेकी चीजोंको बटोर रहा था और उसका ऊंट झोलेको फिरसे लादनेमें दुःखी करता था, अगले मीलमें जाकर जब हम कमलमीरके दुर्गके नीचे पहुँचे तब बहुत सीधा हो गया यह बुर्ज चटानके ऊपर पच्चीकारीके कामका ५०० फुट ऊँचा खडा था, यह दृश्य बडा ऐश्वर्यशाली और रमणीय था, नाना प्रकारके ऊंचे नीचे शिखरवाले पर्वत चारों ओर विराज रहे थे, अस्ताचलको जाती हुई सूर्यकी किरणें प्रतिबिम्बित होकर कुछ समयके लिये हमारे अंधेरे मार्गमें चमकने लगीं और गुलाबी मार्गपर गुलाबी रंगकी दीखने लगीं। वनके फूले फले वृक्षोंको देखकर जो पहाडीपर फैले हुए थे और उस अलबेली धाराके किनारे किनारे पर थे जिसको हमने अपने मार्गमें कई बार पार किया था, इन सब विपत्तियोंके विद्यमान रहते भी जो उस विशाल और अपरिचित दृश्यके कारण अथवा असह्य ठंढी हवाके कारण उपस्थित हुई थी मेरा आनंद बढता ही गया, मैं एक सप्ताह पूर्व सहस्रों विपत्तियें भोग चुका था और अब पैदल उस ऊंचे नीचे मार्गमें होकर जा रहा था, इस जगहके गोल पत्थरोंपर होकर कूदना पडता था जो नदीमें लुडक आये थे।

एक ऐसे स्थानपर जहाँ जलने रुककर एक सरोवर बना दिया था, छोटे कैदीको विश्वास था कि वह अपने घोडेको पार कुदा ले जायगा जैसे ही वह बाईं ओर मुडा और जिस समयमें एक ऊंचे स्थानको कूद रहा था, अकस्मात् एक भयानक दृश्य हुआ कि घोडा अपने सवार सहित जलमें मग्न हो गया; यह कष्ट बहुत ही अल्पसमय तक रहा कि वह एक गोता खाकर बाहर निकल आया, यह उसके जन्ममें बहुत ही सुअवसर हुआ हस्तीदुर्गमें (यह उचित नाम उस स्थानका है चट्टानोंने जहांके मार्गको परकोटेकी भांति रोक रक्खा है) हमारा विचार हुआ कि रातभर रहैं, परन्तु वहां कोई इतना चौडा भी स्थान नहीं था कि जिसमें एक डेरा भी खडा कर दिया जाता, पिछले दलको आज्ञा दी गई कि वह अपने गट्ठे वहां इकट्ठे करैं और प्रातःकाल तक जब अगाडी प्रस्थानका समय हो सके रहैं। रात्रिका अन्धकार बडी शीघ्रतासे बढता चला आ रहा था और हम उस घने अन्धकारमें नदीके किनारे २ आगेको बढ रहे थे, नदीके जलका कलकल शब्द हमारा पथदर्शक था, प्रत्येक विवरसे जल निकलकर जो बडे उद्वेगसे नदीमें मिलता था, उसके कारण हम बडी दुविधामें पड जाते थे, उस उतारके अन्तमें मार्ग कुछ चौडा हो गया और गहरी नदी मारवाडके मैदानसे मिलनेके लिये बडे शब्दसे बहने लगी, मेघरहित आकाशमंडल हमारे चारों ओरकी पर्वतश्रेणियोंके ऊपर गुम्मजके समान था, उस समय किसी एक स्थानसे देखनेमें तारागण बडे चमत्कृत जान पडते थे, हम मौनरूपसे आगेको बढ जा रहे थे और इसी विचारमें मग्न

थे कि हमारे इस दलपर बनैले बाघ और लुटेरे पर्वतियोंका क्या अत्याचार होगा, कि अकस्मात् एक झाडमेंसे कुछ प्रकाश दृष्टि पडा और वहां वटवृक्षके नीचे अग्निके चारों ओर उतरे हुए घुडसवारोंका एक दल जान पडा।

हम वहां ठहर गये और युद्धका मन्तव्य करने लगे। हमारे पथदर्शकोंने हमको सुभीतेका स्थान बता दिया और मैदानमें पहुँचनेसे पहले हमको ओससे बचनेका समय मिला, वहां जलकी भी बहुतायत थी उस समय सचेत रहना अच्छा था, परन्तु हम ठहर गये कारण कि अन्धकारके कारण पांच मीलके अगम्य वन, जिसमें किंचित् भी दायें बायें होनेसे हिंसक बाघोंके मुखमें पहुँच जाते अथवा वैसी ही मैर जातिके दलमें जा फँसते, अब हमने एक बार फिर उपरोक्त समूहकी ओर देखा, चाहैं प्रातःकाल होनेकी लालसा शीत और भूँखके कारण बिलकुल मन्द हो चुकी थी, परन्तु यह बात असंभव थी कि बिना किसी उत्कंठाके हम अपने सामनेके दृश्यका विचार करते। पचीस या तीस लम्बे शस्त्रधारी मनुष्य अपने रात्रिके अलावके चारों ओर बैठे थे और परस्पर धीरे २ बात चीत कर रहे थे और परस्पर एक दूसरेको हुक्केकी नगाली देते थे, उनके काले घूँघरवाले बाल और पचरंगी पगडी कहे देती थी कि यह मरुदेशके रहनेवाले हैं। कभी काले पर्वतियोंने किसी सत्पुरुषको मार डाला होगा, उसके स्मरणकी चबूतरी इस दलके नायककी बैठनेका स्थान था. नायककी पगडीमें उसकी श्रेष्ठताकी जतानेवाली एक सोनेकी शृंखला बँध रही थी और वह मृगचर्मकी बंडी पहरे हुए था, मैंने उसको और उसके दलकी नियामित प्रणाम अर्थात् [राम राम] किया और उनके सरदार गनोहापातिकी कुशल क्षेम पूछी; जिसके अनुग्रहसे उन लोगोंने ध्यान पूर्वक बात चीत की, पचास वर्ष पहले जबसे गोद्वारके जिलेको मेवाड खो चुका था यह स्थान मेवाड और मारवाड राज्योंकी सीमा थी, इसस्थानपर अनेक क्लेशभरी घटना हो चुकी थीं, उसके समीप पहुँचनेसे ज्ञात हुआ कि यहां अनेक मृतपुरुषोंके स्मारक बने हुए हैं, प्रत्येक स्मारक पर अपने युद्धके घोडेपर चढे बल्लम साधे हुए उस सवारकी मूर्ति खडी है और यह मूर्ति इस बातका स्मरण दिलाती थी कि अमुक पुरुष इस प्रकारसे इस घाटीकी रक्षा करता हुआ अथवा मैरजातिसे पशुओंको छुडाता मारा गया है। प्रत्येक समाधिपर एक वर्गाकार पत्थरमें मिती आदि लिखी हुई थी, कि वह वीर कब सूर्यलोकको गया। अर्धरात्रिसे अधिक होचुकी थी और अब कोई आशा नहीं थी कि हमको अपनी क्षुधा शांत करनेको कुछ मिल सकेगा, डाक्टर डंकन और केप्टिन बौने हाथीपरसे झूल उतार ली और उसमें लिपट गये, और सरदारके समान उसके पास ही वीर मनुष्योंके किसी स्मारक पर बैठ गये, मैं तुरन्त ही उनको चीते मैर भूंख और थकावट आदिके ध्यानकी सुखमई विस्मृतिमें छोड उस दलमें मिलकर उस कहानीको सुनने लगा जिसे वे कहकर अपनी आधी रातके समयको व्यतीत कर रहे थे, उसको मैं दूसरी वार कह भी सकता हूं, परन्तु उस

दृश्यका चित्र खींचना चतुर चितेरेकी लेखनीका काम है यह सल्वेटर रोजाके करनेका काम था, केप्टिन बोका चित्र भी यदि उसको चित्रकारीका अवसर मिलता तो मुझको भली भांति प्रसन्न कर देता । मेरे अनेक मित्रोंने इसी स्थानपर पहाडियोंसे युद्ध किया था और इन क्षत्रियोंमें उनके कुटुम्बियोंकी भस्म दब रही थी, उन घटनाओंका लौटना इस शांतिके समयमें असंभव था, कारण कि भील और मैर शब्द अब लुटेरे वाचक नहीं रहे थे इससे अच्छा अवसर पर्वतियोंके प्रसंगका और नहीं होगा, मैं पाठक महोदयोंको लौटाकर फिर कमलमीरके खड्डोंमें ले चलता हूं कि वहां जाकर राजस्थानकी बन्य जातियोंका इतिहास सुनें ।

सत्ताईसवाँ अध्याय २७.

माहीर वा मीराजाति;-उनका इतिहास और आचार व्यवहार;-गोकुलगढके डांकू;-गाडोराके सामन्त अजीतसिंह-मारवाडका समतल क्षेत्र;-रूपनगरके सामन्त;-द्वैसुरीसम्बन्धी इतिहास;-मेवाडके शीशोदियोंके साथ मारवाडके राठोरोंकी तुलना;-राजपूतोंके प्रमादमूलक इतिहास;-गोडारा राणाके दूत कृष्णदास;-मेवाड और मारवाडमें स्थानीय विभिन्नता;-प्राचीन विवादका कारण;-आओनला और बाबुल, नादोल, चौहान जातिकी श्रेष्ठता;-वातिन्दाके गोगा;-आजमीरके लाक्षा;-उनका नादोलास्थ प्राचीन दुर्ग;-जैनियोंके वहांके स्मरणचिह्न;-हिन्दुओंके प्राचीन तोरण;-खोदितलिपि;-नादोलाका प्राचीन इतिहास;-इन्दुरि,वाणिज्य-प्रधान नगर पाली;-वाणिज्यद्रव्यावली;-कवि और कारिकाकारगण;-"पुण्य-गिरि" कङ्कमी;-वाणिज्यद्रव्य लेजानेवाले दो सम्प्रदायोंमें विवाद;-भाटों-का निष्ठुरतामूलक आत्मनाश;-झालामन्द जोधपुरमें यात्रा; पोकर्ण और निमाज इन दो सामन्तोंद्वारा संवर्द्धना;-दोनों सामन्तोंका जीवनचारित्र;-निमाजके सुरतानका स्वार्थत्याग;-राजधानीमें वस्त्रालय स्थापन;-जोधपुरराजसभामें संवर्द्धनाकी व्यवस्था ।

माहीर वा मीराजाति पहाडकी रहनेवाली है और यह लोग जिस प्रदेशमें रहते हैं साधारण लोगोंमें उसका नाम माहीरवाडा है । माहीरशब्द केवल स्थानान्तरका परिचय देता है; पुराने माहीर लोग भारतवर्षके प्रसिद्ध आरम्भके अधिवासी मीना वा माहीना जातिसे उत्पन्न हैं; यह माहीरोत वा माहीरावत नामसे पुकारे जाते हैं । कमलमीरसे आजमीरतकके स्थानोंमें आरावलीकी जो शिखरश्रेणी विराजमान है, उसको ही माहिरवाडा कहते हैं,इसका परिमाण लम्बाईमें पैंतालीस कोश और चौडाई-में जगह२तीनसौ दश कोशतक है।इस मनोरम दुर्गप्राकारस्वरूप शिखर श्रेणीका विवरण राजपूतानेके प्राकृतिक भूवृत्तमें विस्तारसे लिख दिया है । यह समुद्रतटसे तीन सहस्रसे लेकर चार सहस्र फीट तक ऊँची उठी हुई है और अनेक प्रकारके प्राकृतिक पदार्थोंसे परिपूर्ण है । आरावलीके इस अंशमें वैज्ञानिक पर्य्यटक और तत्त्वानुसन्धानकारी लोगों-के लिये अवश्य जाननेके योग्य इतने पदार्थ विद्यमान हैं कि सम्पूर्ण संसारके दूसरे

किसी प्रान्तमें उतने नहीं हैं । इतिहास जाननेवालोंके लिये प्राचीन रहनेके मन्दिर दुर्गादिका लुप्त विवरणसंग्रह, आविष्कार, गवेषणा और उसके साथ प्राकृतिक विज्ञानके प्रत्येक विभागका विशेषतः उद्भिज्जतत्त्व और प्राणितत्त्व सम्बन्धी जानने योग्य बहुतसे विषय इस प्रान्तमें विराजमान हैं ।

माहीरजातिका सविस्तार विवरण, उनका आचार व्यवहार अप्रयोजनीय नहीं है किन्तु यहांपर उसको अनावश्यक समझकर ही हम केवल कई मोटी २ बातोंको लिख कर उस अभावको दूर करेंगे ।

माहीर लोग मीनाजातिके अत्यन्त प्रधान विभाग चिता नामक शाखासे उत्पन्न हैं । हम स्थानान्तरमें इस जातिके वृत्तान्तको विस्तारसे लिखेंगे । मीनालोगोंकी जेता जाति राजपूतोंके समान अनेक शाखाओंमें विभक्त है । यह अनेक शाखाओंमें विभक्त पहाडी जाति अपनेको जेता राजपुरुषोंके साथ समरक्षेत्रसे उत्पन्न हुआ कहकर बडे गौरवके साथ परिचय देती है किंतु इस बातसे उनके वंशका कलंक ही प्रगट होता है । चिता-मीना लोग दिल्लीके अंतिम चौहान सम्राट्के पौत्रको अपना आदिपुरुष कहते हैं । चौहा-नराजके भतीजे लाक्षाके अनल और अनूप नामक दो पुत्र थे । जयशालमीरकी कई राकुमारियोंके साथ उक्त वंशवालों का विवाहप्रस्ताव करके जयशालमीरराजने नारि-यल भेजा, किन्तु कन्याओंके मातामह वंशके तत्त्वानुसंधानसे ज्ञात होता है कि वह मीनाजातिकी एक वेश्याके गर्भसे उत्पन्न हुई थी; अतः वह शीघ्र ही अजमेरसे निकाली जाकर अपने मातामह वंशके लोगोंमें आश्रय लेनेको बाध्य हुई थी ।

एक मीनासामन्तकी कन्याके साथ अनलका विवाह हुआ और उस स्त्रीके गर्भसे चित्ताका जन्म हुआ । चित्ताके वंशवाले माहीरवाराका सर्वोपरि एकाधिपत्य करते आये हैं, चित्ताके जो उत्तराधिकारी लोग अजमेरकी उत्तर सीमामें रहते हैं, पन्द्रह पुरुष हुए * जिस समय इस जातिके सोलहवें पुरुष अजमेरके हाकिमद्वारा मुसलमानधर्ममें दीक्षित होकर दाऊदखाँ नाम धारण किया, उस समय यह लोग मुसलमानजातिमें मिल गये । दाऊदखाँ आथुननामक गाँवमें रहता था इस कारण उस सम्बन्धसे महारोतोंका अधि-पति "आथुनकाखाँ" इस नामसे विख्यात है । आथुनके ग्रामोंमेंसे चाङ्ग, झक और राजसिनगर इस नामसे सबमें प्रधान हैं । अनूपने भी एक मीनाकुमारीके साथ विवाह किया, इस सम्बन्धसे उसके बुडानामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ । बुडारके वंशवाले अपनी प्राचीन रीति नीति और धर्म्मकी बराबर रक्षा करते चले आते हैं । बुडार, बाहि-रवाडा, मंदिला आदि नगर उनके प्रधान निवासस्थान हैं । यद्यपि इन मीनालोगोंके वंशमें राजपूतोंका रक्त मिलनेसे उत्कर्षता आगई है, तथापि वे दुश्चरित्रता, अत्याचार उपद्रव आदिके लिये बहुत दिनसे प्रसिद्ध हैं । विख्यात चंदकविने लिखा है कि, अजमेरके सुप्रसिद्ध राजा विशालदेवने इस मीनाजातिको ऐसा दमन किया कि

---

* महाशय टाडके समयकी गणनासे १५ पुरुष समझने चाहिये ।

वे लोग अजमेरकी सडकोंपर जल ढोनेका कार्य्य करनेको बाध्य हुए। इससे प्रगट है कि इस जातिका बहुत कालसे दुर्दान्त स्वभाव था। अन्यान्य पहाडी जातियोंके समान उन लोगोंने जब अधीश्वरशक्तिका ह्रास देखा, तबसे ही अत्याचार करना आरम्भ कर दिया। अजमेरके चौहानोंके साथ मन्दरके पुरीहरलोगोंके युद्धमें जब पृथ्वीराज प्रथम रणक्षेत्रमें गये थे तब उनके विरुद्ध गिरिपथरक्षाके निमित्त चार सहस्र धनुर्धारी माहीर नाहर रावोंके आधीनमें नियुक्त हुए थे। कविवर चन्दने अपने काव्यमें उनकी वरिताके सम्बन्धमें निम्नलिखित प्रकारसे वर्णन किया है;–*"जहां अगणित शिखरश्रेणी आपसमें मिली हैं"माहीर और मीनागण उस स्थानमें एकत्र हुए। मन्दराजने आज्ञा दी कि गिरिपथ रक्षा करना ही होगा,–चार सहस्र वीरोंने इस आज्ञाको सुनकर कालान्तक कालदूतके समान उसका पालन किया। शुभलक्षणोंके विना मीनाजाति कभी आगे चरण नहीं धरती;–उनका बाण छोडना अव्यर्थ है,शरीर इन्द्रवज्रके समान है और वह लोग प्राणपणसे प्रतिज्ञाका पालन करते हैं-वह मन्दौरके सम्मान और भूरक्षक स्वरूप हैं, आजकल उनके दुर्गकी चोटीपर स्वाधीनताकी जयपताका उड रही है–समतल स्थानोंसे बहुतसा द्रव्य लूटकर वह अपने स्थानोंमें लाते हैं। गिरिपथके अन्धेरे स्थानमें उस जातिके चार सहस्र वीर अर्द्धचन्द्राकार धनुर्बाण सहित अति छिपे स्थानमें विषधर सर्पके समान चुप चाप शत्रुओंके आनेकी प्रतीक्षामें बैठ गये।

"चौहानके पास समाचार आया कि अत्यन्त साहसी मीनालोग धनुष बाण हाथमें लिये पहाडी मार्गपर खडे हैं। बलात्कारसे उस स्थानको भेदकर जानेका किसे साहस होगा? भूखासिंह अपने लक्ष्य पशुको देखनेके समय जैसे महा क्रोधके साथ तर्जन गर्जन करता है, उसको भी वैसा ही भयानक क्रोध आगया। उसने साहसी काणाको बुलाकर उन हतभाग्य मीनालोगोंको उचित दण्ड देनेके लिये और पहाडी मार्ग साफ करनेकी आज्ञा दी। पर्वतके समान अटल काणा मस्तक नवाकर बिदा हुआ और अभीष्टकार्य्य साधनेके लिये अग्रसर हुआ। यद्यपि ससैन्य काणाने आगे बढनेमें देर नहीं की थी, तथापि इस अवसरमें मीनालोग सुमेरुके समान अचलभावसे स्थित हो गये। देवराज इन्द्रके वज्रके समान उनके बाणोंने साक्षात् मृत्युके समान निकलकर सूर्य्यके प्रकाशको ढक लिया। प्रबल वायुके लगनेसे वृक्षसमूह भयानक शब्दसे जैसे उखडते हैं, उसी प्रकार उनके बाणोंसे बिधकर घुडसवार लोग एक २ करके गिरने लगे और उसके साथ ही कवच और अस्त्रादिकोंकी विचित्र ध्वनि रणक्षेत्रमें सुनाई देने लगी। काणेने घोडेसे उतरकर शत्रुओंके साथ खड्गयुद्ध आरम्भ करादिया। जलते हुए अग्निकुण्डसे बचनेकी इच्छासे पक्षीगण जिस प्रकार पंख फैलाकर आकाशमें उडनेकी चेष्टा

---

* कर्नल टाडने यहांपर टीकेके बीचमें वर्णन किया है कि आरावलीके किस प्रान्तसे मन्दर आक्रमण करनेका उद्योग हुआ, मैं उस स्थानके आविष्कार करनेमें असमर्थ हूं हम इस समय जिस पहाडी मार्गपर उपस्थित हैं कदाचित् यही मार्ग होगा, क्योंकि यह प्रगट है कि अजमेरकी सीमान्तसे आक्रमणका उद्योग नहीं किया गया।

करते हैं, वैसे ही उस प्रधूमित रणक्षेत्रसे पक्ष पुच्छ वाण आकाशमें उठने लगे । जैसे मीनालोग जालके छिद्रोंमें होकर भाग जाते हैं, वैसे ही सैनिकोंके हृदय विदीर्ण करके बाण वर्षा पीठद्वारा निकलने लगी । पिशाचगण रक्तकी नदीमें बडे आनन्दसे नाचने लगे।"

पहाडी वीर नेताने काणाके साथ युद्धमें प्रवृत्त होकर एक अस्त्राघातसे ही उसको विचलित कर दिया;किन्तु कुछ क्षणमें ही काणाने शीघ्रतासे एक चोटमें ही उस वीरनेताको भूतलशायी करदिया; सुमेरुके कांपनेसे जैसा शब्द होता है उसके गिरनेपर भी वैसे ही शब्द सुनाई दिया । उस ही मुहूर्त्तमें क्रुद्ध हुए व्याघ्रके समान नाहरआजा दिखाई दिया; उस वीरने अपने मृत अधिनायक और भ्राता * की प्रातिहिंसा चरितार्थके लिये बडे भीषण स्वरसे मीनलोगोंको उत्तेजित किया और उनके हृदयमें दूने उत्साहको भर दिया। इधर पहाडी सेनापतिके गिरनेपर चौहानपतिने अपनी सेनाको भीषण जयध्वनि करनेकी आज्ञा दी । आज्ञा पाते ही उन्होंने आकाशभेदी शब्दसे जयध्वनि की यद्यपि उसको सुनकर मीना लोग क्षणमात्रके लिये स्तंभित हो गये, परंतु कुछ ही देर पीछे उनका साहस चमक उठा । चौहान सेनापति स्वयं रणक्षेत्रमें अवतीर्ण हुआ । सोमेशनंदन की पताकाएँ वर्षाकालीन आषाढकी प्रथम जलधाराकी सपत २ शब्दसे उडने लगीं और उसकी सेनाके अजमेर और मन्दोरके बीचकी सीमा अतिक्रम करते ही चारों ओरसे जयजयकी ध्वनि सुनाई देने लगी । हाथियोंकी चिंघाड और घोडोंके हींसनेसे चारो ओर भय छागया । उसी समय गिरनार और सैंधवी सेना वसंतकालीन फूलोंके नाना प्रकारके रंगोंके समान पताकाएँ हाथमें लिये मंदोरके पक्षमें आकर मिल गई । दोनो सेनाके लोग कवचधारी थे; केवल नेत्र और नखोंके अग्रभाग ही खुले हुए थे । प्रत्येक वीर खड्ग निकालते समय निज २ कुलदेवताके नामोच्चारणसे रणक्षेत्रको प्रकम्पित करने लगा ।

पृथ्वीराजकी कान्ति इन्द्रके समान और पुरीहरपतिकी प्रभा प्रभातकालके तारोंके समान हो गई, दोनोंके शरीर अभेद्य कवचोंसे ढके हुए थे । चौहानपतिने बडे बेगसे अपने खड्गको घोडेपर रक्खा, घोडा तत्काल ही पृथ्वीपर गिर गया, नाहर भी तत्काल सावधान हो गया और दोनों परस्पर खड्गयुद्ध करने लगे दोनों ओरके सैनिकोंने दुर्गाकारसे दोनोंको घेर लिया । प्रमारपतिके पताकाधारी वीर दौडते हुए काले बादलोंके समान आगे बढे और चमकते हुए खड्ग म्यानसे बाहर निकाल लिये । मन्देश्वरका भ्राता मोहन उनके साथ लडनेके लिये आगे बढा, एक दूसरेको देखनेके पीछे खड्गयुद्ध आरंभ हुआ प्रमारपतिका शिरस्त्राण खड्गकी चोटसे दो टुकडे हो गया । कुछ देरमें ही चाओन्द दाहिमा क्रोधमें भरकर आगे बढा और बडाभारी बल्लम उठाकर पुरीहरके मारा । एक चोटमें ही उसका प्राणपक्षी शरीररूपी पींजरेसे उडगया और जीवनशून्य शरीर कटे हुए वृक्षके समान पृथ्वीपर गिर गया ।

---

* मीनालोगोंके,अधिनायकको सम्मानार्थ भ्राता कहकर पुकारते हैं ।

"चंदकविने अपनी कविताको अत्युक्तियोंसे रंगा है" यह बात मान लेनेपर भी यह अवश्य मानना होगा कि वर्त्तमान उन्नीसवीं शताब्दीमें माहीरलोग जैसे असीम साहसी और दुर्दान्त लुटेरे कहे जाते हैं, बारहवीं शताब्दीमें वह ठीक वैसे ही थे । मुगलोंके शासनमें वह एक २ बेर शिर नवाकर फिर शिर उठाते चले गये यहांतक कि जब महाराष्ट्र जाति इस प्रदेशमें आई तबसे माहीर लोगोंने फिर सम्पूर्ण शक्तिका सञ्चय करके अपने शासक राजपूतोंके संग अत्याचार उपद्रव करना आरंभ किया । किन्तु सन् १८२१ ईस्वीमें जब उनका भीषण अत्याचार उपद्रव निवारण करना अत्यन्त प्रयोजनीय हो गया, तब उनके दमन करनेके निमित्त सेनाके तीन दल भेजे गये, उनसे परास्त होकर सबने अधीनता स्वीकार की, किन्तु उससे बुडार और चित्ताके वंशवाले अनेक लोग व्यक्तिगत-सम्पत्तिगत क्षतिग्रस्त हुए थे । कई शताब्दीतक इनमेंसे बहुतसे पहाडी माहीरलोग देशवासियोंको महाभयके कारण हो रहे थे । हमने सहजमें ही उनको दमन और वशमें कर लिया, यह देखकर हमारे मित्रोंने बडा आश्चर्य्य माना । माहीरलोग अपनी रक्षाके लिये जिस भावसे खडे होते हैं, वह बिलकुल साधारण है; राजपूतलोग जो इतने समयतक उन क्षीणबल पहाडियोंके अत्याचार उपद्रवको सहते रहे यह उनके लिये लज्जाकी बात है । माहीर, महाराष्ट्र, पिण्डारी और पठानलोग किस कारणसे बलवान और प्रताप और प्रभुत्वके प्रकाश करनेमें समर्थ हो उठे थे, यह बात गूढतत्त्वानुसंधानसे सहजमें ही जान ली गई अर्थात् राजवाडाके राजपूतोंमें आत्मविग्रह और राजनैतिक विप्लव ही इसका मूल कारण है। उक्त चारों जातियोंने सामान्य लूट मार करनेवालोंके रूपमें राजपूतोंके आत्मविग्रहकी सहायतामें मस्तक उठाया जब मेवाडके सामन्तगण पहाडी माहीरोंके दमन करनेके लिये एकत्रित होते, तब मारवाडके सामन्तलोग उनको आश्रय और सहायता देते; मारवाडियोंके किले सब समय शरणागतोंके आश्रय देनेमें प्रस्तुत रहते थे, इस लिये वह मारवाडके रावत वा अधिनायक लोग सब सम्प्रदायोंसे धन लेने और सबको आश्रय देनेमें कुण्ठित नहीं होते थे । किंतु जिस समय अंग्रेजी सेना उन माहीरलोगोंके दमन करनेके लिये आगे बढी थी, तब उनको पहलेके समान कहीं भी सहायता नहीं मिली । प्रत्येक आश्रय स्थानका द्वार उनके विरुद्धमें बंद हो जानेपर उन्होंने चारों ओर शत्रुओंको देखा—इन्द्रजालके समान सहसा दशाका परिवर्त्तन देखकर वह स्तंभित हो गये और जिस समय माहीरलोगोंका नायक और उसके अनुचर कल्पित आश्रयस्थानमें पकडे गये तथा मध्यरजनीके आक्रमणसे उनका दलबल छिन्नभिन्न हो गया, उस समय उन्होंने जिधर दृष्टि डाली उधर ही प्रत्येक पहाडी मार्गपर लालवस्त्र धारिणी सेनाको देखा; तब उनका साहस जाता रहा और क्षमा मांगनेको बाध्य हुए ।

इस समय एक अंग्रेज सेनापतिके अधीनमें इस पहाडी माहीर जातिका एक सेनादल तैयार हुआ है और समय पर यही एक उपकारी सेना गिनी जायगी, इसमें कुछ भी

सन्देह नहीं है । * यद्यपि यह लोग उपद्रवकारी और अत्याचारी हैं, किन्तु शिरोमालामें जो बांधका वर्णन किया है, यह लोग उसी प्रकारका बाँध बंधन वा खेतीका काम करेंगे । माहीरवारामें एक ऐसा जिला स्थापित हुआ है कि किसी समय उसके द्वारा राणाको लक्षमुद्रा वार्षिक आय हो सकेगी ।

इन लोगोंके कितने ही आचार व्यवहार इनसे नीचेकी भूमिमें रहनेवाले प्रतिवादियोंकी अपेक्षा ऐसे विचित्र और विभिन्न हैं कि उनमेंसे कई एक वर्णन हम यहां कर सकते हैं । मीनालोगोंका चरित्र और इतिहास आगे विस्तारके साथ लिखा जायगा, इसलिये उसी जगह उनके चरित्रके प्रधान अंश--शुभाशुभ लक्षण सम्बन्धमें कुसंस्कारादि वर्णन करनेकी इच्छा है; इस समय केवल स्त्रियोंके साथ उनके आचरणकी दो एक बातें लिखते हैं । माहीरलोगोंके पूर्वपुरुषोंने जो विधान बांधा था, यह लोग आजतक उस ही विधिका पालन करते हैं । यह लोग विधवा स्त्रीके संग विवाह करनेमें कुछ भी संकोच नहीं करते । इसका नाम "नाथ" विवाह है और माहीरलोगोंके सभ्य प्रभु राजपूत विवाहके समय कागालि नामक दण्डस्वरूप पाँच रुपये लेते हैं । ऐसे विवाहके समय वरके शिरपर प्रचलित खजूरके मुकुटके बदले पगडीके ऊपर पीपलकी पवित्र शाखा लगाते हैं । साधारण हिन्दूविवाहकी अनेक रीति नीति ही पालन करते हैं । "सातफेरे" अर्थात् सात अन्नसे भरे हुए कलश तलाऊपर रखकर सात बेर प्रदक्षिण,—"गठजोडा" अर्थात् वरकन्याके वस्त्रमें ग्रन्थिबन्धन और वरकन्याका पाणिग्रहण आदि प्रथा माहीरलोगोंमें प्रचलित है । यहांतक कि उत्तर प्रान्तके जो माहीर मुसलमान हो गये हैं वे भी इस विवाहके समय अपने पूर्वपुरुषोंकी अवलम्बित प्रथाका ही अनुसरण करते हैं और ब्राह्मण पुरोहित परिणय कार्य्य कराते हैं । माहीर जातिके आचार व्यवहारके तत्त्वानुसन्धान कालमें मुझको ज्ञात हुआ कि केवल यह लोग ही विधवा विवाह करते हैं ऐसा नहीं किन्तु अतिप्राचीन कालसे ब्राह्मण और राजपूत जाति भी विधवा विवाहमें कोई दोष नहीं मानती × गिह्लोटगणके मेवाडमें राज्यविस्तार करनेके बहुतकाल पहिले जो याचक नागद ब्राह्मणलोग इस नगरमें आकर बसे थे उनमें इस प्रथाका प्रचलन रहा है । जिन राजपूतोंमें इस विधवा विवाहकी प्रथा प्रचलित है वह सब इस स्थानके अतिप्राचीन निवासियोंके वंशधर हैं और इस समय राजपूतानेमें भूमिया नामसे कहे जाते हैं । पुराने काव्यग्रन्थोंमें जो चिनानो, खारबार, उत्ताइन, दया आदि जातिका नामोल्लेख और इतिहास लिखा है, यह लोग उनके ही वंशमें उत्पन्न हैं, आरावली शिखरके स्थान २ में

* कर्नल टाड साहबने जिस सेनाके तैयार होनेकी बात ऊपर लिखी है, यह आजतक भारतेश्वरीकी सेनामें है और यह सेना "माहीरवारा सैन्य" नामसे गिनी जाती है ।

× यहांपर कर्नल टाड साहबने अनुसंधानमें धोखा खाया है क्योंकि द्विजातियोंमें विधवा विवाहका कभी प्रचार न था केवल शूद्रोंमें था सो अब भी है । इस बातकी साक्षी इतिहास पुराण सब दे रहे हैं, और न धर्म्मशास्त्रमें विधवा विवाहकी आज्ञा है ।

इस जातिके किसी २ मनुष्यको अब भी निवास करते देखा जाता है। किन्तु यह विधवा विवाह इस प्रदेशमें इतना अप्रकाशित बोध होता है कि नारीजाति सम्बन्धनी वर्त्तमान विधिव्यवस्था और भी आधुनिक ब्राह्मण मंडलीके द्वारा राजपूत समाजमें प्रचलित हुई है। माहीर लोगोंमें विवाहबन्धन जैसे सहज उपायोंसे सम्पादित होता है, वैसे ही सहज उपायोंसे उस बंधनका विच्छेद भी हो जाता है। यदि स्त्रीपुरुषोंमें परस्पर एक दूसरेका मन फट जाय, अथवा और किसी विशेष कारणसे परस्परका चिर विच्छेद आवश्यक हो तो स्वामी अपने दुपट्टेका कुछ हिस्सा फाडकर स्त्रीके हाथमें देकर अपना स्वामी स्त्री सम्बन्ध छुडा लेगा। त्यागी हुई स्त्री वह वस्त्रका टुकडा हाथमें ले शिरपर जल से भरे दो कलश तले ऊपर रखकर जिस मार्गसे इच्छा होगी उसीसे चली जायगी; और जो पुरुष पहिले उस त्यागी हुई स्त्रीके शिरसे जलकलश उतारना स्वीकार करेगा स्त्री उसको ही अपना भावीपति समझेगी। यह स्त्री त्याग प्रथा केवल मीनालोगोंमें ही प्रचलित नहीं है किन्तु जाट गूजर, अहीर, माली और अन्यान्य बनैली शूद्र जातियोंमें भी भलीभांति प्रचलित है। "जेहर लेआउर निकेला" अर्थात् "कलश लेकर चली जाओ" यह बात माहीरवाराके पहाडियोंमें साधारण रीतिसे व्यवहार की जाती है।

इन लोगोंका देवाराधन, शपथग्रहण और अभिसम्पात् प्रदान बडा विचित्र है। मुसलमान धर्मावलम्बनमें "अल्ला" के नामसे वा प्रथम विधर्म्मी पूर्वपुरुष "दूधदाऊदखाँ" के नामसे अथवा और भी प्राचीन पूर्वपुरुष "चित्तावडाकी आन" कहकर शपथ ग्रहण करते हैं। दक्षिण प्रान्त निवासी माहीरगण भी शेषोक्त प्रकारसे शपथ ग्रहण करते हैं। वह लोग सूर्य्यके नामसे "सूर्यकालेगान" कहकर शपथ लेते हैं। अथवा अपने योगी याजकनाथके नामसे "नाथका आन" कहकर शपथ लेते हैं। मुसलमान माहीरलोग इस समय शूकर नहीं खाते, किन्तु दक्षिण प्रान्त निवासी माहीर-लोग सब कुछ खाते हैं, केवल अपने प्रतिवासी लोगोंके आदर्श और अपने प्राचीन योगी याजकनाथकी प्रीतिके निमित्त गो अक्षण नहीं करते। तीतर और मालेली नामके दो पक्षियोंको वह लोग शुभ लक्षणवाले समझते हैं। माहीरलोग जिस समय लूटनेके अभि-प्रायसे बाहर निकले उस समय यदि बाईं ओर तीतरपक्षी बोले तो उस दिन अपनी कार्य्य सिद्धि निश्चय ही समझते हैं। माहीरजातिका निवास सौराष्ट्रसे लेकर उत्तरमें चम्बल तक विस्तृत है। माहीरवाडा इस समय मेवाडके राणाके अधिकारमें है। जितने माहीर सम्प्रदाय अत्यन्त दुर्दान्त हैं उनके दमन करनेके लिये राणाने उनके गाँव २में छोटे२ दुर्ग बनवा दिये हैं। सब प्रदेशोंसे ही इस समय कर लिया जाता है। प्रत्येक विभागके माहीरपति राणाके निकट लाये जाते हैं, वह जब शपथ खाकर राणाकी अधीनता स्वीकार करते हैं तब अपने २ पदोचित स्वर्ण केयूर और दुपट्टे राणासे पारितोषिक पाते हैं। माहीरवाराके ीडियोंको दमन करके जिस दिन उदयपुर राजमहलके आँगनमें उन लोगोंके अस्त्र शस्त्र इकट्टे हुए उस दिन मेवाडके इतिहासका युगान्तर आरम्भ कहना चाहिये। किन्तु यह घटना हमारे कमलमीर उपत्यकामें वास कर-ने से पहिले ही घटी है।

छब्बीसवीं अक्टूबर—दिनका प्रकाश होते ही सबलोग प्रसन्न हुए । कप्तान वाघ और डाक्टर डनकानने हाथीकी " झूल " कपडे छोडे और मैं भी पालकीके भीतरसे बाहर निकला । रातकी ओससे शरीररक्षाके लिये वह पालकी विशेष उपकारी हुई । भूख प्यासके लगनेसे प्रकृतिके रमणीय दृश्य देखनेकी इच्छा कम हो गई । जो कुछ भी हो यदि मैं अपनी इच्छानुसार कार्य्य करनेके लिये आगे बढता तो अपने मित्र-वर्ग और अनुचरोंको दक्षिणके भयानक पहाडीमार्गसे चलकर डाँकुओंको खोजनेके लिये अपना अनुसरण करनेको कहता ।

यह छोटा सामन्त वडबटिया नामसे सर्व साधारणमें विख्यात है यह व्यक्ति चौहानोंकी दूसरी शाखा शनि गुरु जातीय है इस जातिमें कई शताब्दी तक झालोरमें राज्य किया । उक्त सामन्त पहिले मारवाडके अधीन था, किन्तु अत्यन्त औद्धत्यके कारण मारवाडेश्वरने उनको निकाल दिया, तब उन्होंने आरावली शिखरके दुर्गम स्थान अतिप्राचीन गोकुलगढके ध्वंसावशिष्ट दुर्गमें आश्रय लिया और चारों ओरके निवासियोंको भय देने लगे । दुर्गम भयानक मार्गोंको वह लोग भलीभाँति जानते थे इस कारण कोई भी उनको नहीं पकड सका । वह अत्याचार उपद्रव करके जितनी धन सम्पत्ति लूटकर लाते, देवगढका सामन्त भी उसमें अंशभागी था, क्योंकि वह लोग देवगढके अधीनस्थ प्रदेशोंमें ही लूटमार करते थे; इस कारण उनको किसी दूसरेके द्वारा बंदी होनेका कुछ भय न था । पकडने वा इनके आश्रय स्थानसे इनको दूर भगानेके सब उपाय व्यर्थ हो जाते थे । इन शनिगुरु जातीय डाँकुओंका शेष अत्याचार बहुत कठोर है । एक समय कोई मनुष्य विवाहके पीछे नई विवाहिता स्त्रीको लेकर गदवाराके मार्गसे जा रहा था, उस समय यह लोग उन दोनोंको पकड कर गोकुलगढमें ले आये । वर और कन्या दंडस्वरूप धन देनेमें असमर्थ होनेके कारण बहुत दिनोंतक कैदमें रहे । इनको पकडनेके लिये मनुष्योंका एक दल छिपा हुआ रहता था, परन्तु यह लोग समाचार पाते ही वहांसे भाग जाते थे, पीछे शून्यस्थान देखकर वह लोग लौट आते थे । इस स्थानमें ऐसी दस्युता बहुत स्थानोंमें देखी गई है । पकडनेके पीछे निकाल देना ही शेष दण्ड निश्चय हुआ निर्वासन दण्डाज्ञा प्राप्त अपराधी पकडा जाकर अधि-पतिके सामने लाया जाता है, फिर काले वस्त्र पहराकर कालोजीनसे कसे हुए घोडेपर चढते हैं और ढाल तलवारको अपमान जनक काले रंगमें रँगकर राज्यसे बाहर निकाल देते हैं । यह प्रथा बहुत पुरानी है ।

हम लोग अपने मेवाडी बंधुओंसे ऐसी प्रकारकी बातें करते हुए अपने गंतव्य वनैले मार्गके ढाईकोश समाप्त कर गये, उस समय गाडोराके अधिनायकने अनुचरों सहित अपने भूतपूर्व प्राचीन स्वामी राणाको सम्मान दिखाकर मेरा सम्मान किया । परि-णाममें आत्मविपद् और अपने स्वामीके क्रुद्ध होनेकी शंका होनेपर भी उसने राजपूत जातिकी स्वभाव सलभ राजभक्तिके वशीभूत होकर जिस भावसे मेरा अभिनंदन किया

उससे मैं बहुत प्रसन्न हुआ और उसको मैं बहुत बडा सम्मान समझता हूं। घोडेसे उतरकर परस्पर आलिंगन किया, फिर इस प्रदेशके अतीत इतिहास मारवाडेश्वर और राणाके विषयमें विचार करते हुए वस्त्रालयको घोडा फेर दिया। उसने आग्रह पूर्वक राणासे कुशल पूछी सांमत अजितसिंह एक श्रेष्ठ मनुष्य हैं; आयु ३० वर्ष, लम्बाशरीर, सुन्दर और साहसी राठौर घुडसवारकी तरह वह घोडेपर बैठते हैं। गदवार प्रदेशमें वाणिज्य प्रधान पाली और सेना निवास द्वैसुरीको छोडकर गाडोरा सर्व प्रधान नगर है। इस धनधान्य सम्पन्न प्रदेशसे राणा पहिले चार सहस्र राठौरसेना युद्धके समय प्राप्त करते थे। यह सेना वेतनके बदलेमें विना कर दिये भूमिको भोगते थे। मेवाडके सोलह प्रधान सामन्तोंमें यह गाडोरा पति भी एक थे। यद्यपि कालक्रमसे यह प्रदेश मारवाडमें मिलाया गया और उदयपुरके राणाके बदले मारवाडेश्वर स्वामी हुए हैं, किन्तु मेवाडपतिके ऊपर गाडोराके अधिनायककी प्राचीन राजभक्ति और प्रेम इतना प्रबल है कि वर्त्तमान ठाकुर अभिषेक समयमें अपने वर्त्तमान असली स्वामी मारवाडराज्यके बदले प्राचीन स्वामी राणासे अभिषेक अभिनन्दन करा लेते हैं। इस प्रगट राजभक्तिको देखकर मारवाडेश्वर बहुत क्रुद्ध हुआ और बदला लेनेके अभिप्रायसे गाडोराका प्राकार गिरा दिया। उसका यह कार्य्य निःसंदेह कलङ्कचिह्न है। अब भी जब कभी राणाका दूत आकर गाडोरापतिको कमलमीरमें जानेका स्मरण दिलाता है वह तत्काल सम्मानसहित राणाकी आज्ञाका पालन करता है। शत्रुओंके कराल गालसे इस प्रदेशकी रक्षा करना गाडोरा वंशका बडा भारी कार्य्य है और प्रायः वर्त्तमान सरदारके पूर्व पुरुषोंने गाडोरा रक्षाके लिये दुर्दान्त मुगलसेनाके विरुद्ध भयंकर संग्राम किया था, यहांतक कि किसी२ ने बडी भारी वीरता दिखाकर अपने प्राणतक दे दिये. गाडोरा प्रदेश यद्यपि इस समय मेवाडसे अलग है, तथापि राजपूत जातिके चिरप्रचलित सम्मान दिखानेका इतना अभ्यास है कि, अब भी गाडोराका सामन्त अथवा उनका कोई निकटका कुटुम्बी सभामें आवे तो पुरानी रीतिके अनुसार एक अनुचर चांदीका आसा हाथमें लेकर युद्धमें आगे आता है पुराना सामरिक आह्वान-"कमलमीरका स्मरण करेंगे" कहकर सम्मान दिखाता है। प्रत्येक उत्सव और पर्वमें राणा अबतक पुरानी रीतिके अनुसार गाडोरापतिको उपहार देता है। गाडोराका स्वामी राणाके समान समरक्तवाहीके नामसे गौरव पाता है और सर्व साधारणमें "मेवाडका भतीजा" इस नामसे सन्मानके साथ पुकारा जाता है। अपने घर चलनेके लिये ठाकुरने बडी नम्रताके साथ मेरा निमंत्रण किया; मैं जानता था कि वहाँ यदि अनुरोधपूर्वक जाऊंगा तो स्वामी क्रुद्ध होकर उसको महा विपत्तिमें डालेगा, अतः "मार्गकी थकावट और सबेरे प्रभात ही यात्रा करनी होगी।" कह कर मैंने क्षमा करनेको कहा। निमन्त्रण अस्वीकार करनेके असली कारणको वह भी भलीभाँति समझ गया था।

आज मारवाडके समानभूमिमें होते हुए केवल एक कोश ही चले। बीचमें केवल एक साधारण पर्वत देखा। यहांपर केरी आकर हमारे साथ मिल गये।

२७ अक्टूबर—अनुचरमण्डलीको विश्राम करनेके लिये समयदान और सब सामग्री इकट्ठा करनेके लिये इस स्थानमें डेरा डाला । संध्या होनेसे पहिले २ सब आकर मिल गये, किन्तु सब ही पर्वतसे उतरते समयके शोचनीय कष्टका वर्णन करते थे । रूपनगरके सामन्त मुझसे मिलने आये। गाडोराके ठाकुरके समान यह भी पर्वतके दो ओरके दो प्रदेशोंके दो स्वामीकी अर्थात् राणाकी और मारवाडराजकी आज्ञा पालन करते हैं। यह पाहिले राणाके अधीनस्थ दूसरी श्रेणीके सामन्तगणमें सबसे प्रधान गिने जाते थे । उनके महल और दुर्ग हमारे कैम्पसे दिखाई देते थे । वह दुर्ग पर्वतमालाके पाश्चिम प्रान्तमें है और उसके सामने एक दुर्गम मार्ग बना है ।वह उस ऊँचे दुर्गसे द्वैसुरी और अपने पैतृक भूखण्ड जो अब गदवाराके साथ राठौर राज्यके अधिकारमें है उनको देखते हैं । रूपनगरके स्वामी अपने उक्त पैतृक खण्डको फिर अधिकारमें लानेके लिये वर्त्तमान अधिकारीके साथ प्रायः युद्ध किया करते हैं । कृषिकार्य्य सम्बन्धसे उक्त भूखण्डके ऊपर उनका स्वत्त्वाधिकार है । रूपनगराधिश्वर शोलङ्की जातीय, नाहरवालाके राजगणोंके वंशधर हैं और सुप्रसिद्ध राजा सदराजका विख्यात सामरिक शंख इस समय इनके ही पास है । * सदराजके समान महाबली कोई राजा भी अबतक पाश्चात्य सिंहासनपर नहीं बैठा । उसने १०९४ ईस्वीसे आधी शताब्दीतक अनहलवारा अपने अधिकारमें रक्खा, वह शिक्षा और शिल्पका परमबन्धु और उत्साह दाता रूपसे प्रशंसित था । हम ऊपर लिख चुके हैं कि इस ही वंशकी शाखाने मेवाडमें आकर आश्रय लिया । रूपनगरके वर्त्तमान सामन्तके पूर्वपुरुष विदनौरकी प्रसिद्ध ताराबाईके चचा थे । वीरके समान तेजस्विनी ताराबाईके स्वामी महाधनुर्धर पृथ्वीराजने जिस प्रकारसे अपने बाहुबलसे शत्रुओंके करालगालसे श्वशुरका राज्य उद्धार कर दिया था उस ही प्रकार उस महावीरने भी द्वैसुरी और सम्पूर्ण प्रदेशका उद्धार करके रूपनगरके स्वामीके हाथमें सौंप दिया । उस घटनाका वर्णन करना परम आवश्यक है, क्योंकि उसके वर्णन करनेसे यह बात भलीभांति समझमें आ जायगी कि पैतृक भूस्वत्व अधिकार करनेके लिये राजपूत जातिको कोई काम असाध्य नहीं है ।

राणा रायमलके पुत्रोंमें परस्पर कलह और दिल्ली मालवाधिश्वरको इन दोनोंके संग राणाके सदा संग्रामद्वारा बलपरीक्षा देखनेसे गदवार प्रदेशमें उनका स्वामित्वबडी अनिश्चित दशामें हो गया । मीना और माहीरलोग इस प्रदेशकी समतल भूमिमें रहते थे। इस प्रान्तकी पुरानी राजधानी नादोलके भूतपूर्व स्वाधीन चौहान राजगणके वंशधर षण्डद्वारा विशेष सहायता प्राप्त होती थी । उक्त षण्डसैनाने द्वैसुरी अधिकार कर लिया । उनको दूर करनेके लिये वीरवर पृथ्वीराजने शुद्धगढके सोलंकी जातीय सामन्तकी सहायता ली । उक्त सामन्तके पुत्रके संग षण्डकी एक कन्याका विवाह हुआ था । गुप्त षड्यन्त्रजाल विस्तारसे निश्चय हुआ कि षण्डके भगानेमें सहायता करनेपर उक्त सामन्तको उसकी स्त्री सहित द्वैसुरी और उससे मिली हुई सब भूमिका अधिकार दिया जायगा, किन्तु निद्धारित कर देना होगा । सामन्त-

* सदराजने १०९४ ईस्वीसे लेकर सन् ११४४ ईस्वीतक राज्य किया था ।

पुत्रने इस बातको सहजमें ही मान लिया और कार्य्योद्धारकी सहायताके लिये स्त्री सहित द्वैसुरीमें रहनेके बहाने वहां चला गया। किन्तु बहुत कालतक कोई अवसर नहीं मिला; अन्तमें षण्डके एक पुत्रके साथ बोलचोके सामन्त सागरकी एक कन्याका विवाह निश्चय हुआ, शुद्धगढके सामन्तपुत्रने छिपे २ यह संवाद लिखकर अपने पिताके पास भेज दिया उसने अपने पिताको यह लिखकर सतर्क कर दिया कि षण्ड अपने पुत्र सहित बालेचोमें जायगा, मैं द्वैसुरीके दुर्गके ऊंचे शिखरपर अग्नि जला दूंगा, आप उस संकेतके अनुसार सेनासहित आकर द्वैसुरी अधिकार कर लेना। पुत्रका पत्र पढकर शुद्धगढपति उस संकेतकी प्रतीक्षा करने लगे। किन्तु अधिक समयतक उनको ठहरना नहीं पडा। एक दिन उन्होंने किलेकी चोटीपर धुआं उठता देखा तत्काल सेनासहित आरावलीसे उतरकर कार्य्य सिद्ध करनेके लिये आगे बढे। इधर उस धुएँको देखकर षण्डकी स्त्रीने अपने जामाताको कहला भेजा कि मेरा पुत्र शीघ्र ही नई बहूके साथ आवेगा, इसलिये शव दाहके समान अशुभ लक्षण स्वरूप यह अग्निकुण्ड क्यों प्रज्व-लित किया है? इतनेमें शीघ्र ही तलवारकी झनकार षण्डकी स्त्रीके कानमें सुनाई दी उसने सुना कि सोलंकीलोग नगरमें घुसकर चारों ओर आग लगा रहे हैं। किन्तु शुद्ध-गढपति और महावीर पृथ्वीराजके जयलक्ष्मीका आलिंगन करनेसे पहिले ही षण्ड अपने पुत्र और पुत्रवधू सहित आ पहुँचा। भयंकर युद्धाग्नि प्रज्वलित हो उठी। शुद्ध-गढपतिने वेगसे शत्रुके सन्मुख खडे होकर अभिमानके साथ कहा कि "षण्ड कहां है? मेरा नाम सिंह है; मैं आज षण्डको खाकर फेंकूंगा।" क्रमसे युद्धाग्निने प्रचण्डमूर्ति धारण करी। अन्तमें षण्ड मारा गया। दूसरे दिन पृथ्वीराजने द्वैसुरी दुर्गपर अपनी जयपताका फहरा दी। विजयी पृथ्वीराजने वहीं भूवृत्ति दान पत्रमें लिख दिया कि राठौर लोगोंके हाथमें यह गदवारप्रदेश सौंपा गया, कोई शीशोदीयवंशवाला किसी समय भी इसको फिर अपने अधिकारमें न लावे। यद्यपि सत्रह पुरुष पहिले यह घटना घटी थी, किन्तु आजतक शुद्धगढपतिके वंशवालोंके संग षण्डके वंशवालोंकी वैसी ही शत्रुता बनी हुई है।

गाडोराके सामन्त फिर दुबारा मुझसे मिलनेको आये। उनके अनुचरोंके आनेसे उर्वर मेवाडके राठौर लोगोंकी शारीरिक तुलना करनेका अच्छा अवसर मिला। उदय-पुर उपत्यका और उसका दाक्षिण सीमाप्रान्तस्थ पहाडी प्रदेश जहांका जल वायु बहुत ही अस्वास्थ्यकर है यदि केवल उसी जगहके शीशोदियोंके साथ मिलान करें तो चौ-हान लोगोंको हम श्रेष्ठ कहेंगे। इस स्थानके राजपूत केवल शारीरिक गठन और बल-हीन ही नहीं हैं, किन्तु जिस गौर वर्णसे नीची श्रेणीके हिन्दुओंसे उनको अलग जाना जाता उस गोरे रंगका भी अभाव है। किन्तु उक्त अस्वास्थ्यकर प्रदेशके रहनेवालोंका जल वायुके दोषसे गठन बलसम्बन्धी हीनताका निवृत्त करनेवाला एक बड़ा कारण है; अर्थात् राजवाडाके प्रत्येक प्रान्तवासियोंके साथ वैवाहिक सम्बन्धके कारण शुद्ध रक्तके संयोगसे बलवान, दीर्घकाय और गोरे रंगकी सन्तान उत्पन्न होती है। यदि

केवल पहाडी शालम्बूके चन्दावत और गोगुन्दाके झाला लोगोंमें यह वैवाहिक सम्बन्ध बन्धन सीमाबद्ध होता तो निश्चय ही इस विषयमें अवनति बढ जाती, किन्तु उसके बदले गदवारके राठौर, हारावतीके चौहान और मारवाडकी भट्टजातिके साथ परस्पर कन्या लेने देनेकी प्रथा प्रचलित है । यद्यपि गोगुन्दाके सामन्तका गठन मूर्ति और रंग मेवाडके सर्व प्रधान सोलह सामन्तोंकी बराबर नहीं है, तथापि उनका राठोरस्त्रीके गर्भसे जो पुत्र उत्पन्न हुआ है, वह ठीक झाला जातिके समान है । साक्षात्के समय सामन्त और उनके अनुचर लोग सुन्दर वस्त्राभूषण धारण करके मुलाकात करते हैं । पगडी बांधनेसे उनके मुखकी शोभा बहुत ही सुन्दर दिखाई देती है ।

पिछले समयकी बहुतसी बात चीत होनेके पीछे गाडोराके सामंत नम्र बचनोंसे बिदा लेकर चले गये । इतिहास संबंधमें मैंने इनको भी प्रत्येक संभ्रान्त राजपूतके समान चतुर पाया । इस प्रकारकी मीठी बात चीतके पीछे जो लोग उनके मनको जाननेमें समर्थ हैं, वह अवश्य इन सामंत लोगोंके शिक्षा और ऊंचे ज्ञानकी प्रशंसा करेंगे । मैं केवल इन गाडोराके अधिनायककी ही नहीं किंतु सामंतमात्रकी ही बात कहता हूं । क्रमसे संघटित घटनाओंके प्रधान प्रधान विवरणको यदि इतिहास कहा जाय तो सम्पूर्ण राजपूत उस इतिहासको जानते हैं । क्योंकि वह लोग अपने पूर्व पुरुषोंका वीरत्व विलासादि भलीभाँति वर्णन करते हैं और अपने बहुत पुराने अधीश्वरोंके शासनकालकी घटनायें (जिनका कि उनके समाजके साथ सबन्ध है) अच्छी तरह जानते हैं । उन्होंने इतिहासकी पुस्तक वा इतिहास जाननेवालोंसे यह ज्ञान पाया है, इसका अनुसन्धान करना अनावश्यक है । यह इतिहासज्ञान केवल उनकी मूर्खता और अज्ञानताको ही दूर नहीं करता है किन्तु जो लोग जातीयचरित्र समालोचक हैं, उनका बराबरीका परिचय भी देता है ।

२८ वीं अक्टूबर—बहुत सवेरे ही यात्राका आरंभ कर दिया । ठाकुरके राज्यमें हो कर जाते समय उन्होंने सहायताके लिये अपने एक विश्वासी मनुष्यको मेरे पास भेजा । आरावली शिखरमालाके पार होजानेके कारण हम लोगोंको चारोंका दृश्य दिखाई दिया। गदवारके उर्वर समतल क्षेत्रने किसी ओरसे भी हमारी दृष्टिके मार्गको नहीं रोका । हम गाडोराके पाससे होकर चलने लगे । दुर्ग और महलोंसे ही ऊंची चोटियां और द्वारशून्य तोरण गाडोराकी अत्यन्त अपमानजनक हीन अवस्थाको जता रहे थे । गाडोराके सामन्तलोगोंने पीछे पुराने स्वामी मेवाडके रानाकी अधीनता स्वीकार करके इस प्रदेशको मेवाडमें मिला दिया था, इस कारण बीस वर्ष पहिले मारवाडके अधीश राणा भीमसिंहने इस प्रकारसे गाडोराके नगर प्राकार और दुर्गादि तुडवा दिये । वास्तवमें यह प्रदेश इस समय जिस प्रकार मारवाडराजमुकुटकी एक उज्ज्वल मणि है, उसी प्रकारसे निश्चय ही यह राणाके मुकुटका चमकता हुआ रत्न था । जब हम इस प्रदेशके नद नदी जलाशयपूर्ण, नाना प्रकारके सुन्दर वृक्षोंसे घिरा हुआ, चारों ओर सुन्दर नगरोंसे शोभित, समृद्धिशाली और रमणीय समतल क्षेत्रमें होकर चल रहे

थे उस समय राणाका दूत हमारे पास आया, हम लोग उसके साथ बात-चीत करने लगे। ऊपर लिख चुके हैं कि देशहितसाधक कई सरल और ज्ञानियोंमें कृष्णदास भी एक प्रधान मनुष्य हैं। वह प्राचीन शिक्षाके खान हैं और उनकी वृद्ध वयस, उनका पद, उनका चरित्र, उनकी स्वाधीन मनोवृत्ति परिचायक उक्तियोंको बलवान कर देते हैं। उन मित्रके संग मेरा प्रायः ही वाक्य-युद्ध हुआ करता, किन्तु उनका मैं कितना बडा आदर करता हूँ इस बातको वह भली-भाँति जानते हैं। मार्गमें मेरा उनका साक्षात् हुआ; प्रणाम करनेके पीछे उन्होंने मुझसे कहा कि "गदवारप्रदेश मुझको लौटा दीजिये।" हमारी गवर्नमेंट इस प्रश्नका आन्दोलन नहीं कर सकती; यह कहकर मैंने कुछ विरक्तताके साथ पूछा कि "आपलोगोंने उसको इस स्थानका अधिकार क्यों करने दिया था? इस आधी शताब्दी तक शीशोदिया लोगोंकी तलवार कहां सो रही थी? सर्वशक्तिमान् परमेश्वरका कभी ऐसा अभिप्राय नहीं है कि पर्वतमालाका यह निकटवर्ती प्रदेश मेवाडमें मिला रहेगा, प्रकृतिने अपने हाथसे आपलोगोंके मध्यमें सीमा निर्द्धारित कर दी है।" वृद्ध दूतका रक्त गरम हो उठा, उन्होंने कहा, "उस प्रकारसे सीमानिर्द्धारण होनेपर भी गदवारा हम लोगोंका है, क्योंकि प्रकृतिने पर्वतकी अपेक्षा सुदृढ सामग्रियोंसे हमारी सीमा निर्द्धारण कर दी है। आप जब इस स्थानसे आगे बढैंगे, तब मेवाडकी साधारण भूमिमें जो फल मूल उत्पन्न होते हैं, वही देखेंगे, आप सीमा अतिक्रम करनेके पीछे कुछ ही दूर जाकर उनको नहीं देखेंगे।"

"आँवला आँवला मेवाड।
बबूल बबूल मारवाड" ॥

"आँवलेका फूला हुआ पीला फूल जहांतक दिखाई देगा वहांतक भूमिका अधिकार हमारा है; हम इससे अधिककी कुछ भी आशा नहीं करते। वह लोग अपने बबूल खैर और ईखके वृक्षोंको भोगें; हम लोगोंके पवित्र पीपल और आँवले हमको लौटा दीजिये। वास्तवमें यह प्रमाण बहुत ही सत्य है। दोनों प्रदेशके सीमान्तमें एक छोटीसी नदी है, उसके पार होते ही सम्पूर्ण रमणीय तृण वृक्षादि दृष्टिसे छिप गये और पीपल, वट तथा गदवारमें जितने वृक्ष बहुतायतसे होते हैं, उनके बदले बबूर और बनैले तृण दिखाई देने लगे। यद्यपि यह सम्पूर्ण वृक्ष देखनेमें रमणीय नहीं हैं, तथापि उपकारी हैं और ऊंटोंके दलकेदल उन सब वृक्षोंको भोजन करते हैं। वृद्धदूतका उक्त प्रमाण और उक्ति तथा न्यायमूलकी अपेक्षा विज्ञतासूचक है, क्योंकि उसने अपना कार्य्य सिद्ध करनेके लिये ऐसा पुष्ट प्रमाण दिया था। किन्तु दुर्गस्वरूप पर्वतमालाको सीमान्तका चिह्न न मानकर तृण वृक्षोंको क्यों सीमान्तका परिचायक कहा? यहां इस बातका लिखना आवश्यक है। प्रधान मूल घटना इतिहासमें कई जगह लिखी हुई है, इस कारण कविकी लेखनीसे निकली हुई उक्त उद्धत कविता किस कारणसे सीमानिर्द्धारण सबसे बडा प्रमाण माना गया है? पाञ्चोली द्वारा लिखित उस विवरणको मैं बहुत संक्षेपसे लिखनेका अभि-

लाये हूँ। यह कविता बहुत काल पहिलेसे एक वंशधरसे दूसरे वंशधर तक क्रमसे अतीत इतिहासका प्रमाणस्वरूप प्रचलित होती आई है । चौदहवीं शताब्दीके शेष भागमें चन्दावत सम्प्रदायके आदि पुरुषने चण्डमन्दरके अधीश्वर रणमलकी की हुई विश्वासघातकताके दण्डमें उसका जीवन नाश करके उक्त राजधानी और राठौर लोगोंका सम्पूर्ण प्रदेश (उस समयमें राज्य बहुत छोटा था) कई वर्ष तक अपने अधिकारमें रक्खा । मन्दोरेश्वरके उत्तराधिकारी आरावलीकी दुर्गम गुफाओंमें छद्मवेषमें छिपे हुए रहते हैं; उस समय उसने भूलसे भी अपने मनमें नहीं विचारा था कि मेरा नाम एक वंशका आदिपुरुष मानकर लिखा जायगा, वह अपने वंशका दूसरा राज्यस्थापक माना जाकर सब जगह सम्मानित होगा और मन्दौर उस नवीन राज्य जोधपुरमें मिलाया जायगा । मन्दौर प्रदेश मेवाडके अन्तर्गत होनेके समयको जब बहुत वर्ष बीत गये तो दोनों पक्षने विवादके मूल कारणको विस्मृतिके जलमें छोड दिया । मेवाडका अप्राप्त व्यवहार राणा राजपूतजातिकी निर्द्धारण की हुई आयुमें आया; इधर निकाला हुआ योध कई घुडसवारोंके संग मारवाडके कई स्वाधीन मनुष्योंके अनुग्रहसे जीवन धारण करने लगा । एक दिन योधके एक चारण व कविका साक्षात् हुआ; कविवरने भविष्यत् वक्ता रूपसे परिचित होनेकी आशा न करके उससे कहा कि चित्तौडकी राजमाताके अनुरोधसे राणाने तुमको मन्दौर लौटा देनेकी इच्छा की है। योधके इस मन्दौरके अधिकार विषयमें दो प्रकारकी कथा प्रचलित है । मेवाडके इतिहासमें लिखा है कि राणाने दयाके वशीभूत होकर योधको राज्य लौटा दिया; किन्तु मारवाडके इतिहासमें लिखा है कि राजा योधने युद्धमें जय प्राप्त करके हृत पैतृकराज्यको फिर प्राप्त किया। वास्तवमें योधकी भगिनीने अपने भ्राताकी इस दुबारा राज्यप्राप्तिकी जय सूचना करनेके लिये एकान्तमें कौशल किया अथवा मनुष्य श्रेष्ठ योधने शुभ अवसर पाकर मन्दौरमें प्रवेश करके जयपताका उडाई और अपने पिताका कलङ्क छुडाया;इन दोनोंमें कौन सी बात ठीक है इसका निश्चय करना बहुत कठिन है। यदि इस प्रश्नकी मीमांसा बहुत आवश्यक हो तो हम कह सकते हैं कि दोनों बातें ही सत्य हैं ।

राणाने मन्दौरके शासनकर्ता चण्डको वहांसे चले आनेकी आज्ञा दी, किन्तु असली उद्देश छिपा हुआ रक्खा । दूसरे पक्षमें राजा योधने राणाके पाससे मंदौर लौटा देनेका पत्र पानेपर अवकाश पाते ही अपना पूर्व कलंक छुडा लिया। निर्वासित योध मारवाडके हरवा संकल, प्रभुजी आदि डाँकुओंके नेतालोगोंको कविवरका दिया हुआ समाचार सुनानेके लिये गया, वहां उसने सुना कि राणाकी आज्ञा पालनेके लिये चण्ड मंदौरको छोडकर चित्तौरकी ओर जा रहा है। मंदौरके पूर्व वर्णित कविने उस राजनीतिसे ही योध और उसके सहचरोंसे कहा कि "भगवान् आप लोगोंसे प्रसन्न हुए हैं । नक्षत्रोंके पूर्व सागरमें डूबनेसे पहिले ही आपकी विजय पताका मंदौरके दुर्गके शिखरपर फहरावेगी "। कविका यह नक्षत्रोदय कल्पनामात्र है क्योंकि संकलनी नदी जिस स्थानमें बहती है वहां होकर जानेसे उन नक्षत्रोंका उदयास्त दिखाई देता है ।

चण्ड जब राणाकी आज्ञानुसार अपने ज्येष्ठपुत्र सहित मंदौरसे दोकोशकी दूरीपर पहुँचा तो सहसा उसने मन्दौरके ऊपर उजाला देखा; चण्ड चित्तौरकी ओर फिर चलने लगा उसका बडा पुत्र मञ्ज मन्दौरमें लौट आया। किन्तु उसके लौटनेसे पहिले ही चण्डके दूसरे दो पुत्र मन्दौरकी रक्षा करनेके कारण योधके हाथसे मारे गये। विजयी योधने अपनी जयघोषणा करके मन्दौरदुर्गकी चोटीपर विजयपताका गाड दी। मञ्ज अपने दो भ्राताओंकी मृत्यु और सेनाके पराजयका समाचार सुनकर वहांसे भागा किन्तु योधके सैनिकोंने उसको सीमान्तमें पकडकर मार डाला। चण्ड जिस समय आरावली-के दुर्गम मार्गमें चल रहा था तब उसके कानमें यह शोकसमाचार पहुंचा, वह तत्काल ही मन्दौरको लौट गया। विजयी योधने उसके साथ साक्षात् होते ही राणाका दिया हुआ मन्दौर प्रत्यर्पण दिखा दिया और कहा कि आप मन्दौरकी सीमा निर्द्धारण कीजिये। चण्डने विचारा कि प्रकृतिने अपने हाथसे जो सीमा निर्द्धारण करदी है, उसको छोडकर अन्य सीमा चिह्न स्थापन करना असम्भव है, उसीके अनुसार उसने निर्द्धारण करके कहा कि जहांतक पीले फूलवाले आँवले दिखाई देते हैं, उस स्थानतक राणाकी राज्यसीमा निर्दिष्ट रही। उस सीमांसाके अनुसार कविने तत्काल कविता बनाई कि-

"आँवला आँवला मेवाड।
बबूल बबूल मारवाड"॥

परमोत्साही और राजभक्त चण्डने अपने प्रभु राणाकी आज्ञासे दुःसह पुत्रशोकको विस्मृत करके बदला लेनेकी इच्छा छोड दी, मन्दौरके अधीन सम्पूर्ण गदवार प्रदेश मेवा-डके राज्यान्तर्गत हो जानेसे उसका बदला अन्य प्रकारसे पूरा हो गया। चण्डपुत्र मञ्ज सीमान्तके आँवलापूर्ण प्रदेशमें मारा गया था, इसी कारण पुत्रके प्राणनाशके पीछे वह प्रदेश राणाके अधिकारमें आजानेसे वह जैसा प्रसन्न हुआ, मेवाडवासी लोग भी वैसे ही इस आँवलेको अपने गौरवका बढानेवाला समझने लगे। मन्दौरसे जितने खुदे हुए पत्थर मिले हैं, वह सब ही इस प्रचलित जनश्रुति वाक्यके समर्थक हैं।

यद्यपि इस समय खेतोंसे सब अन्न संचित कर लिया था और अधिवासियोंकी सामान्य बची हुई धन सम्पत्तिमें लूटने और अत्याचार करनेके चिह्न भी हमने देखे और अमीरखाँके नर पिशाचस्वरूप अनुचरोंने अधिवासियोंके जो अकथनीय अत्याचार किये थे उनमेंसे बहुत सी बातें सुनी थीं, तथापि मेवाडके साथ तुलना करनेपर मैं इस प्रदेशको ही उत्तम समझता हूं। आरावली शिखरसे जो अगणित नदियें निकल कर लूनी अर्थात् लवणाक्त नदीमें मिली हैं, यात्राके समय उनमेंसे कई नदियोंको हमने पार किया था। ग्राम बडे और अधिक प्रजासे भरे हुए हैं; किन्तु मेवाडके किसानलोग दारिद्रदशामें होनेपर भी जैसे प्रसन्न दिखाई देते हैं, इस स्थानके किसान वैसे नहीं हैं, मानो निर्जीव और अन्तःसार शून्य हैं। मेवाडमें जैसी शोचनीय दशा प्रतिक्रियाके समय अतिक्रम करती है, मारवाडमें अब उस प्रतिक्रियाका समय उपस्थित है। मारवा-

ईश्वरके हृदयमें इस समय अतिआग जल रही है, इधर चतुर प्रधान मंत्री राजाको अपने हस्तगत करके अपनी स्वार्थसिद्धिके साथ२ मारवाडको अवनतिके समुद्रमें डुबाना चाहता है, अतः साधारण प्रजा जन्मभूमिकी इस शोकदायक अवस्थाके कारणसे ही दुःखी और निरानन्द है ।

शीतल और आच्छादित स्थानमें केम्प स्थापित होनेपर हृदयमें स्वयं ही संतोष उदय होता है; नादोल नामक स्थानमें हमने उस आनन्दको भोगा । यहां भी हमने लिखने योग्य इतनी सामग्री देखी कि मौन होकर बैठना असम्भव हो गया । पाठकोंको यह हमारे थोडे लेखसे ही प्रसन्न होना चाहिये । नान्दोल प्रदेश मन्दरावलीके कारण यद्यपि अब भी प्रधान गिना जाता है, किन्तु यह इस प्रदेशकी राजधानी था ऐसा चिह्न कुछ नहीं दिखाई देता । पश्चिम प्रान्तमें ढाई कोशकी दूरीपर नादोलय नगरके सहित यह नादोल बहुत प्राचीन कालमें अजमेरके चौहानोंकी एक शाखासे उत्पन्न हुए राजपूतोंकी वासभूमि था । इस नादोल से ही शिरोहीके देवर और झालौरके शनि गुरु लोगोंकी उत्पत्ति है । राठौर जातिके विशेष विघ्नबाधा और उत्पडिन अत्याचार करने पर भी उपरोक्त शाखा आजतक अपने अधिकृत स्थानोंकी रक्षा करती चली आ रही है; किन्तु जिन शनिगुरुजातीय राजपूतोंने दूसरे अलाउद्दीनके विरुद्ध बडा भारी युद्ध करके अपना नाम अक्षय किया था, स्वाधीन राज्योंके नामोंकी सूचीमें उनके राज्यका नाम बिलकुल लुप्त है और यह तीन सौ साठ नगर पूर्ण प्रदेश इस समय जोधपुरराज्यके अन्तर्गत है ।

सम्पूर्ण राजवाडेमें ऐसा कोई स्थान नहीं है जहां प्रतिष्ठित वंशवाले चौहानोंकी वीरताका गौरवचिह्न नेत्रोंके सामने न आवे । यद्यपि प्रत्येक जातिके इतिहासमें गौरव-गरिमा वीरत्व विलास वर्णन किया गया है तथापि शीशोदियालोगोंका वीरत्व विक्रम, प्रताप प्रभुत्व कैसा महान और उज्ज्वल है,इतिहासपाठक लोग उसको भलीभांति जानते हैं और जिस जातिके साथ मैंने बहुत कालतक वास किया है, जिनके इतिहासको मैं बहुत अच्छी तरह जानता हूं, विवेक बुद्धिकी आज्ञानुसार मैं यह अवश्य ही कहनेको बाध्य हूं कि चौहान लोग भारतवर्षके सब राजकुलोंमें श्रेष्ठ हैं । यहांतक कि सब जातिके कवियोंने चौहान नामको विचित्र मंत्रविजडित, अनुपमेय वीरत्वप्रकाशक माना है । वह लोग हृदयका द्वार खोलकर अपनी लेखनीसे इस चौहानजातिकी अनन्त प्रशंसा लिखकर भी शांत नहीं हुए हैं ।

यद्यपि वीरश्रेणीमें चौहान लोग सबसे श्रेष्ठ आसन लेनेमें सब प्रकारसे समर्थ हुए थे, किन्तु प्रत्येक राजपूतके आदर्शस्वरूप अनन्त गौरवगरिमान्वित पृथ्वीराजके पतनसमयसे चौहान नामधारी प्रत्येक राजपूतका भाग्य बदल गया है । वीरत्व विक्रम,गौरव गरिमा, प्रताप प्रभुत्व इस समय उनको स्वप्नके समान मालूम होता है । राजवाडेके बडे २ वीर चौहानोंके जितने नाम कवि लोग जानते हैं, उनमें भटण्डानामक स्थानके पुरुषसिंह गोगा एक शीर्षस्थानीय मनुष्य है। जिस समय गजनीका बादशाह महमूद आर्य्य-

क्षेत्र भारतवर्षको लूटनेके लिये आया उस समय यह महावीर चौवालीस पुत्रोंके साथ मातृभूमिकी स्वाधीनता और पितृधर्म्म रक्षाके लिये सतलजके किनारे पर युद्ध करने गया, और उस महमूदके विरुद्ध भयानक युद्धाग्नि जलाकर बडा भारी युद्ध किया. यहां तक कि अन्तमें उस ही समराग्निमें अपने सब पुत्रोंसहित जीवनाहुति दे दी। विजयी महमूद मरुभूमिमें होकर चौहानजातिकी प्रधान वासभूमि अजमेर पर अधिकार करनेके लिये गया, वहां चौहानलोगोंने उचित शिक्षा देकर युद्धमें परास्त और घायल किया, इस कारण वह लूटनेकी आशा छोड शिरपर कलङ्क लेकर भागा। फिर महमूद नांदोल होकर नाहरवाला और सोमनाथको गया। नादोलेश्वरने बडी वीरतासे महमूदके साथ युद्ध किया। मैंने सौभाग्यसे इस नादोलेश्वर सुविख्यात लाक्षाके नामकी एक खुदी हुई लिपि पाई। उसमें लिखा है कि लाक्षा ही अजमेरसे आई हुई इस चौहान शाखाका आदि पुरुष है। संवत् १०३९ (सन् ९८३ ई०) में यह नादोल अजमेरको कर देता था। लाक्षाने जो दुर्ग बनाया है वह नगर पश्चिमी शिखरके ढालू स्थानपर बना है। उसमें बहुत प्राचीन कालकी रुचिका पारिचायक ऊँची चोटीवाला चौकोण दुर्ग बना है। पर्वत जिन विचित्र पत्थरोंसे आच्छादित है, दुर्ग भी उन्हीं पत्थरोंसे बना हुआ है। एक दूसरी खोदित लिपि मेरे हाथ लगी है, वह संवत् १०२६ (सन् ९६८ई०) की है, उसमें लिखा है कि लाक्षा मेवाडेश्वर राणा भीमसिंहके पूर्वपुरुष आइतपुरके शक्तिकुमारके समयमें थे। वह नगर भी महमूदके पिताने नष्ट किया ऐसा अनुमान है। चौहान कविने अपनी लेखनी द्वारा राओ लाक्षाके वीरत्व विक्रमकी बहुत प्रशंसा करते हुए इस स्थानपर लिखा है कि " वह अनहलवाडाके शेष प्रवेश द्वारसे शुल्कसंग्रह कर लेते थे और चित्तौरके अधीश्वर उनको कर देते थे। महल मन्दिर और दुर्गादिके जितने ध्वंशावशिष्ट दिखाई देते हैं तुलिकाके सिवाय उन सबका वर्णन करना असम्भव है।इस स्थानके प्रत्येक पदार्थसे मालूम होता है कि एक समय जैनधर्मका इस स्थानपर बडा प्रभुत्व रहा था। जैनियोंके धर्म्मके समान शिल्पकार्य्य भी शैवोंसे बिलकुल अन्य प्रकारके थे।" जिनके चिह्न अब तक पाये जाते हैं।जैनियोंके चौबीस देवताओंमेंसे अन्तिम देव महावीरका मन्दिर अतिरमणीय शिल्पकार्य्यका आदर्श स्वरूप है। इस मन्दिरके गुम्बजकी आकृति प्राच्यजगत्के अतिप्राचीनकालके गठनके समान है कदाचित् रूमियोंके मन्दिर निर्माणके बहुत पहिले ऐसी गठन प्रणालीका आरंभ हुआ होगा। महावीरके मन्दिरके सामनेकी तोरण बडी विचित्र कारीगरीसे खोदी गई है और वहां कई पाषाण प्रतिमाओंका भास्कर कार्य्य भी परम रमणीय है। यह सब प्रतिमायें डेढ सौ वर्ष पहिले नदीसे निकालकर यहां स्थापित की गई हैं। जिस समय महमूद भारतवर्षपर अधिकार करनेके लिये आया था, उस समय उसके भयसे यह प्रतिमा नदीमें डाल दी थीं यह असम्भव नहीं है। नादोलका सबसे विचित्र दृश्य "चनेकी बा-

---

१ फरिश्ता वा उनके अनुलिपिकार. लोगोंने भूलमें पडकर नादोलके स्थानमें बाजोला लिख दिया है।

ओली'' नामक बडा जलाशय है । अधिवासी एक एक मुट्ठी चनेके दानोंकी विक्रीके धनसे यह जलाशय (चौबच्चा) बनाया गया था। यह बहुत गहरा है और नीचे उतरनेके लिये इसमें लाल पत्थरकी सीढियां बनी हुई हैं, इसके चारों ओर लाल पत्थर लगे हैं । यह किसी वस्तुसे चिपकाये न जाकर वैसे ही तले ऊपर रख दिये हैं।

यहां पर मैंने बहुत पुराने इतिवृत्तका तत्त्वानुसंधान पाया। मेरे नियुक्त किये हुए संस्कृतज्ञ लेखकोंने खोदित पत्रावलीका नकल उतारी । इसके सिवाय मैंने दो टुकडे पुराने ताम्रानुशासन पत्र पाये । इनमेंसे एक अनल देवके स्मरणार्थ संवत् १२१८ में लिखा गया था । * मैंने इस प्रकारके पुराने कई अमूल्य हस्तलिखित ग्रन्थ भी संग्रह किये उन सबसे छत्तीस राजवंशका विवरण है, भारतवर्षकी अतिप्राचीन पृथ्वीका वृत्तान्त और पुराने नगरोंका वर्णन है। उद्भिज्ज और प्राणियोंके नामोंकी सूची और विक्रम तथा महावीरका प्रादुर्भाव समयके जैनधर्मावलम्बी नरपतियोंमें सबसे श्रेष्ठ श्रीनीक और सम्प्रीतिके वंशधर लोगोंका इतिहासमूलक भी एक ग्रन्थ पाया है । महमूद, बुलबन, हत्याकारी नामसे परिचित अल्ला और भारतविजेता नादिरशाहकी नामांकित मुद्रा मैंने इस स्थानमें संग्रह की। किन्तु मेरे दूत लोग नादोलासे चौहानोंकी नामाङ्कित जो एक विचित्र सांकेतिक छोटी मुद्रा लाये थे, उन सबके साथ तुलना करनेसे यह

---

* नादोलमें प्राप्त चौहान नरपतिसम्बन्धी ताम्रानुशासनपत्रकी नकल ।

"सर्वशक्तिमान् जिनके ज्ञानकोषने मनुष्यजातिकी विषयवासना और ग्रन्थि मोचन कर दी। अहङ्कार, आत्मश्लाघा, भोगेच्छा, क्रोध और लोभ, स्वर्ग, मर्त्य और पातालको विभिन्न कर देते हैं । महावीर (क) आपको सुखसे रक्खें ।

अति प्राचीन कालमें महान् चौहानजाति समुद्रके तटतक राज्य करती और नादोलद्वारा शासित होती थी। उनका लोहिया नामक एक कुमार था और उसका पुत्र वलराज हुआ; उसका पुत्र विग्रहपाल; विग्रहपालका महीन्द्रव,महीन्द्रपालके श्रीअनल पुत्र हुए, यह उस समयमें प्रधान अधिपति थे और उनका सौभाग्य सर्वत्र विदित है।उनके पुत्र श्रीबालप्रसाद हुए,किन्तु श्रीबालप्रसादके पुत्र न होनेके कारण उनके छोटे भाई जैत्रराजने सिंहासन पाया । उनके पृथ्वीपाल नामक महाबली गुणवान् पुत्र उत्पन्न हुआ किन्तु उनके भी पुत्र न होनेके कारण उनके छोटे भाई जालने राज्य पाया । जालके पीछे उनके छोटे भाई सौभाग्यशाली मानराजा उस सिंहासन पर बैठे थे । उनके ही नन्दन आलनदेव हैं । (ख) कुछ काल राज्य करनेके पीछे उन्होंने इस संसारको असार और मांस रक्त धूलि आदि अपवित्र पदार्थोंसे बने इस शरीरको केवल दुःखके भोगका कारण समझा । अनेक धर्म्मशास्त्रोंका पाठ करके उन्होंने निश्चय किया कि यौवन पटवीजनेके चमकनेके समान क्षणिक है; क्षणकाल चमककर लुप्त हो जाता है; धन सम्पत्ति कमलके पत्तेपर गिरी हुई ओसकी बूंदके समान है; थोडी देर मोतीके समान शोभा पाकर अदृश्य हो जाती है । ऐसा निश्चय करके उन्होंने अपने अनुचरोंद्वारा सामन्तलोगोंके पास यह आज्ञा-

---

(क) जैनियोंके चौबीस धर्म्मप्रचारकोंमेंसे सबसे अन्तिम प्रचारक महावीर हुए। शैव चौहानराजने इनके ही नामपर मन्दिर उत्सर्ग और वृत्ति निर्द्धारण की है।

(ख) अनल देवलक्षणसे बारह पुरुष पीछेके हैं। यह सन् ८९८ ईसवीमें उत्पन्न हुए थे।

सामान्य मूल्यकी जचती है । * एक मुद्रामें एक तरफ एक घुडसवारकी मूर्ति और कई सांकेतिक चिह्न अङ्कित हैं । कईमें बैलकी मूर्ति खुदी है; जैसे फ्रांसके एक समयकी मुद्राके एक तरफ चौदह लुईसकी मूर्ति और दूसरी ओर साधारण तंत्र सभाका निदर्शन रहता था, इस प्रकार कई मुद्राके एक तरफ आदि निदर्शन सहित पहिले मुसलमान विजेताका नाम देखा जाता है । जो कोई इस नादोलमें आता है, निश्चय ही परिश्रमका उचित पुरस्कार प्राप्त कर लेता है । यह स्थल प्राचीन निदर्शन प्राप्तिका उपयुक्त क्षेत्र है; मैंने कई एकका संग्रह कर लिया है। जैनियोंकी प्राचीन वासभूमि नादोल, वालि, द्वैसुरी और सादरीमें पुरानी मुद्रा हस्तलिखित पुरानी पुस्तकें और विचित्र भास्कर कार्य्य शोभित ध्वंसावशिष्ट महल मंदिरादिकका निदर्शन बहुतायतसे मिलता है । प्राचीन तत्त्वानुसंधानकारी लोग आबूशिखरसे लेकर मन्दरतक घूमनेपर इस प्रदेशके निवासियोंके पुराने इतिहासकी अपरिमित सामग्री सहजमें ही संग्रह कर सकते हैं, क्योंकि यह प्रदेश ही जैन धर्म्मकी प्रधान लीलाभूमि है। इस प्रदेशमें शीघ्रतासे यात्रा करनेके समय मैंने जो अल्पकालमें ही इतने निदर्शन एकत्रित कर लिये, उसका कारण यह है कि इस सम्बन्धमें पहिलेसे ही मेरा कुछ २ जाना हुआ था और विशेष करके जाते समय मैं दायें बायें जिन अनुचरोंको भेजता हूं उनके साथ प्रत्येक नगरके शिक्षित देशी लोग रहते हैं और

–भेजा कि "आप लोग परस्पर एक दूसरेको सुख वितरण करते हुए धर्म्मके मार्गपर चलैं। "

संवत् १२१८ श्रावणमासकी शुक्ल चतुर्दशी तिथिमें २९ वीं तारीखको होमकार्य समाप्त हुआ और विपत् निवारणके उद्देशसे जलदानपूर्वक सर्वज्ञ तथा चराचर जगत्के प्रभु सदाशिवकी मूर्तिको पञ्चामृतसे स्नान कराया और अपने ज्ञानगुरु, शिक्षादाता और ब्राह्मणोंको उनकी इच्छानुसार सुवर्ण, अन्न और वस्त्र दिये। उँगलियोंमें कुशकी पवित्री धारण कर तिल, चावल और जल लेकर महावीरके मन्दिरमें व्यवहारके निमित्त कुंकुम, चन्दन और घी नगरके बाजारसे खरीदनेके लिये पाँच मुद्रा मासिकका संकल्प छोडा और यह भी कहा कि यह धन सुन्दर गाछा (ग) लोगोंकी वंशपरम्पराको बराबर मिलता रहेगा। यही वह वृत्तिनिर्द्धारणपत्र है। जब तक सुन्दरगाछा लोगोंके वंशका कोई और हमारे वंशका कोई जीवित रहेगा तबतकके लिये मैंने यह वृत्ति निर्द्धारण कर दी है।

इसका जो कोई स्वामी होगा मैं उसका हाथ पकडकर कहता हूं कि यह वृत्ति वंशपरम्परा तक चली जावे। जो इस वृत्तिको दान करेगा वह साठ सहस्र वर्ष तक स्वर्गमें बसेगा, जो इस वृत्तिको तोडेगा वह साठ सहस्र वर्ष नरकमें रहेगा।

प्राग्वंशीय (घ) धरणीधरके पुत्र करमचन्द मेरे मंत्री और शास्त्री मनोरथराम, इनके विशाल और श्रीधर दो पुत्र, इतने लोगोंने इस अनुशासनलिपिको खोदित करके मेरा नाम उज्ज्वल कर दिया है। श्रीआलनने अपने हाथसे यह पत्र प्रदान किया। संवत् १२१८।

* रायल एशियाटिक सोसाइटीके मासिकपत्रमें कर्नल टाड साहब भारतमें प्राप्त प्राचीन मुद्रावलीके विषयमें जो प्रस्ताव प्रकाश कर गये हैं, पाठकगण उसके पढनेसे इस विषयमें विशेष विवरण प्राप्त कर सकेंगे ।

(ग) जैनियोंकी ८४ शाखाओंमेंसे यह एक शाखा है ।

(घ) जैनधर्म्मावलम्बी ओसवास लोगोंकी एक शाखा है ।

खोदित स्मारकपत्रावलीकी नकल तथा तत्त्वानुसन्धान विषयमें विशेष प्रयोजनीय सामग्रीके संग्रह करनेके लिये योग्य पंडितोंको उनके साथ भेज देता हूं । वे सब-लोग सन्ध्याको दिनके अनुसन्धानका फल मुझसे कह देते हैं । जहां कहीं कोई विशेष प्रयोजनीय आविष्कार होता है, वहां मैं स्वयं जाता हूं वा विश्वासी मनुष्योंको भेज देता हूं । मैं अपना गौरव दिखानेके लिये यह बात नहीं कहता; मेरे इस कथनसे दूसरे सब लोग इसी प्रकार तत्त्वानुसन्धान करनेके लिये विशेष छानबीन करेंगे, इस कारणसे ही मैंने यह बात लिखी है ।

२९ वीं अक्टूबर—साढे पाँच कोशकी दूरीपर इन्दुरा नामक स्थानमें हमारा केम्प पडा । लूनी अर्थात् लवणनदीके साथ जैसे अगणित नामशून्य नदियें मिली हैं, यह छोटा सा नगर वैसी ही एक नदीके तटपर बसा हुआ है और यही गदवारराज्यकी अन्तिम सीमाका चिह्नस्वरूप है । यहांसे पीले आँवलेका वृक्ष अदृश्य और मरु-मय मारवाडराज्य आरंभ होता है । इन्दुरेसे ही प्रत्येक विषयमें—प्रत्येक पदार्थमें-प्रत्येक दृश्यमें नवीन भाव, नवीन मूर्ति दिखाई देने लगती है । मेवाडमें कहीं भी हमने वालुकाका साधारण स्थान भी नहीं देखा, किन्तु इस स्थानमें बहुता-यतसे रेत है । असंख्य नदियोंके तटकी भूमि सफेद रंगके लवणाक्त पदार्थसे भरी हुई है और वृक्षोंकी श्रेणी क्रमसे अदृश्य होती चली गई है । बडे २ पवित्र बडआदि वृक्षोंके बदले छोटे २ वृक्ष लगे हुए हैं । इस दृश्यको देखकर मुझे एक कविकी उक्ति याद आ गई; राणाके दूत कृष्णदासको वह कविता कई बार पढकर सुनाई । उसने उस कविताके लक्ष्य करते हुए कहा कि, प्रकृतिने स्वयं ही हम लोगोंकी राज्यसभा निर्द्धा-रित कर दी है । कविता यह है;—

"आखाँरा झोंपडा,
फोगाँरी वाड,
वाजरारी रोटी,
मोठाँरी दाल,
देखिये हो राजा तेरी मारवाड़ ।"

सब ग्राम विचित्रप्रणालीसे बने हुए हैं; प्रत्येक मोहल्लेके चारों ओर काँटोंकी बाढ है और बीच २ में वह काँटोंकी बाढ भूसीसे ढकी हुई होनेके कारण देखनेमें दुर्गके पर-कोटेके समान है. जिस समय खेत अन्नसे भर जाते हैं अथवा वर्षाकालमें गोआदिके लिये आहार नहीं मिलता उस समय यह भूसी ही उनके खानेके काम आती है । इस भूसीको तेरह वा बीस हाथ ऊंची रखकर मट्टी और गोबरसे लहेस देते हैं, बीच २ में पक्षियोंसे बचानेके लिये कांटे लगा देते हैं । इस तरह बीच २ में गोबर लीप देनेसे

* इस कविताका अर्थ आकोंका झोपडा (घर) फोगों (टीबोंमें होनेवाला झाड) की बाड़,बाजरे-की रोटी और मोठकी दाल मारवाडका परिचायक है।

दश वर्ष तक रहती है, और देशमें जब गौआदिका आहार बिलकुल दुष्प्राप्य हो जाता है तब इसीसे ही सब पशु प्राणधारण करते हैं। मरुक्षेत्रमें क्रमसे एक ही प्रकारका दृश्य देखनेके कारण चित्त अप्रसन्न हो जाता है, किन्तु लूनी नदीके पार होते ही विचित्र परकोटेके देखनेसे चित्त अवश्य ही प्रसन्न हो जाता है।

३० वीं अक्टूबर।—साढे दश कोश मार्ग चलनेके पीछे हम लोग राजवाडेके वाणिज्य प्रधान नगर पालीमें पहुंचे। इस प्रदेशके दिखाई देते हुए निदर्शनके साथ २ अत्याचार उत्पीड़नके चिह्न भी इस नगरमें दिखाई दिये। जिस समय इस राज्यमें परस्पर भयंकर युद्ध हुआ, उस समय दोनों पक्षोंने पालीको अधिकारमें लाना आवश्यक समझा। अधिवासियोंने नगरके भीतर युद्धके कोलाहल सुननेकी अनिच्छासे एक बडा परकोटा बना लिया। उक्त उद्देशके वशीभूत होकर पासके वाणिज्यप्रधान देश भीलवाडेको भी इसी परकोटेसे वेष्टित करनेका प्रस्ताव करनेपर आपत्ति उठाई गई थी। पालीके उस पुराने परकोटेका कुछ हिस्सा अबतक मौजूद है। इस कारण वह नगरके उपद्रव अत्याचारका चिह्न ही समझा जाता है। इस नगरमें दश सहस्र मनुष्य बसते हैं। बहुत पुराने समयसे यह वाणिज्यके लिये प्रसिद्ध है और वर्तमान मारवाड़ राजवंशके इस मरुक्षेत्रमें शासनके अधिकारकी प्राप्तिके साथ भी इसका राजनैतिक सम्बन्ध है। पुराने समयमें मंदौरराजने एक ब्राह्मण सम्प्रदायको वृत्तिस्वरूप यह पालीप्रदेश भोगनेके लिये दे दिया था। इस संबंधसे पालिवाल नामक अनेक श्रेणीकी उत्पत्ति है। केवल वाणिज्यकार्य्यमें ही वे लोग लगे रहते थे। संवत् १२१२ (सन् ११५६ ईसवी) में मरुक्षेत्रके राठौर राजवंशके आदि पुरुष कान्यकुब्ज राजवंशीय शियोजी जिस समय द्वारकासे गंगातटतक तीर्थयात्रा करके लौटे उस समय वह इस पाली नगरमें विश्राम करनेके लिये बाध्य हुए थे। अधिवासी ब्राह्मणोंने जब शियोजीके आनेकी बात सुनी तो उनके द्वारा आरावलीके पहाडी मीना और बनैले व्याघ्रोंके उपद्रवसे उद्धार पानेकी आशासे उनके पास कई प्रतिनिधि भेजे। वीरवर शिवजीने उनका उन शान्तिनाशक दोनों शत्रुओंके गालसे उद्धार कर दिया। किंतु राज्याधिकारका शुभ अवसर पाकर उन्होंने फागोत्सवके पालके प्रधान२ ब्राह्मण नेताओंको मार डाला और नगर अपने अधिकारमें कर लिया।

इस प्रदेशमें वाणिज्य ही स्वाधीनताकी मूल भित्तिस्वरूप है; यहांतक कि भयानक स्वेच्छाचार शासन भी उस स्वाधीनताके ऊपर हस्तक्षेप करनेमें असमर्थ है। भीलवाडा, झालरापाटन, रानाई और दूसरे वाणिज्यप्रधान स्थानोंके समान पालीके निवासी भी स्वास्थ्यरक्षा विधिका निर्द्धारण, वाणिज्यसम्बंधी गोलमाल, विवादमीमांसा और अपराधके विचारके लिये अपनेको ही विचारक चुननेमें समर्थ हैं। भीलवाडेके समान पालीनगरकी भी स्वतंत्र हुंडी चलती है; राज्यके गडबड हो जानेपर भी हुंडीका वैसा ही आदर होता आया है। बहुत पुराने समयसे ही यह पालीनगर समुद्रोपकूलके साथ उत्तरभारतका संयोग शृंखलास्वरूप समझा जाता है। मस्कत, मालद्वीप, सुराट

और नाऊनगरके वाणिज्यागारोंसे, पारस, अरब, आफ्रिका और योरूपके बने हुए वाणिज्यद्रव्य यहां भेजे जाते हैं और इस पालीसे ही भारतवर्ष और तिब्बतका बना हुआ व्यौपारी माल उक्त स्थानोंमें भेजा जाता है, । समुद्रके किनारेवाले देशोंसे हाथी-दाँत, गैंडेका चमडा, ताँबा, टीन, जस्ता, सूखी खजूर और पिण्डखजूर (जिनका इस देशमें अधिकतासे व्यवहार होता है) अरबका गोंद, सुहागा, नारियल, बनात, रेशमी कपडा, तरह २ के रंग (विशेष करके लालरंग बहुतायतसे) औषध गन्धक, पारा, मसाला, चन्दनकी लकडी, कपूर, चाय, औषधी बनाने योग्य मोम * और हरे रंगका काच आता है । भावलपुरसे सज्जीमिट्टी, आल और मजीठ नामक रंग, बन्दूक, पक्के फल, हींग,मुलतानी छींट, और संदूक तथा पलंगआदिके लिये लकडी आती है। कोटा और मालवेसे अफीम और छींट आती है । भोजसे तलवार और घोडे भेजे जाते हैं।

इस स्थानसे लवण और पशम भेजा जाता है । पालीनगरका जो एक प्रकारका कागज और सूतका मोटा कपडा प्रसिद्ध है, सौदागर लोग इन वस्तुओंको भी बहुतायतसे दूसरे नगरोंको ले जाते हैं, । भारतवर्ष के सब स्थानोंके निवासी यहां की लोई ओढते हैं और उसका मूल्य८)जोडेसे ६०) तक है। ओढनी और पगडी भी उसी साम-ग्रीसे तैयार होती है, किन्तु वह दूसरे देशोंमें विक्रयार्थ नहीं भेजी जाती । रवाना होनेवाली वस्तुओंमेंसे लवण ही सबसे प्रधान है, इस लवणवाणिज्यसे जो शुल्क एकत्रित होता है वह देशके भूराजस्वके आधे अंशके बराबर है । लवणके चौबचोंमें पञ्चभद्रा, फिलोदी और दिदोवाना प्रधान हैं । पञ्चभद्राका परिमाण कई कोसतक है ।

पालीमें प्रतिवर्ष वाणिज्यशुल्कके ७५००० रुपये आते हैं। मारवाडसे दरिद्र राज्य-के लिये यह अवश्य ही अधिक धन माना जायगा ।

चारण और भाट अर्थात् कवि और वंशका उच्चारण करनेवाले लोग ही इस प्रदेशमें वाणिज्य द्रव्य एक देशसे दूसरे देशमें भेजनेके समय रक्षक होकर जाते हैं । कवि और भाट लोग पूजनीय और मान्य गिने जाते हैं; कट्टर लुटेरे सामन्त यहांतक कि जंगली कोल, भील और मरुक्षेत्रके सराई लोग तक इनके अभिशापसे बहुत डरते हैं, इस कारण कवि और भाट लोग बडे२भयंकर और संकटयुक्त मार्गसे निर्भयचित्तसे वाणिज्यद्रव्य सहजमें ही ले जाते हैं;कोई भी भयसे उनको नहीं लूटता । जितने पथिक समुद्रोपकूलवर्ती प्रदेशोंमें जाना चाहते हैं, वह सब उन वाणिज्यद्रव्यके संरक्षक भाट

* इस स्थलपर कर्नेल टाड साहबने टीकामें लिखा है कि "जिस समय मैं सेंधियाकी राजधानीमें गया, उस समय साधारण लोगोंने मेरे पास सब प्रकारके रोगोंकी औषधि होनेका निश्चय किया था । एक सामन्तकी स्त्रीको कुछ मोमकी आवश्यकता हुई, उसने मेरे पास एक अनुचरको भेज दिया । यद्यपि मेरे पास मोम नहीं था, परन्तु अनुचरको किसी प्रकारसे भी इस बातका विश्वास न हुआ, जब उसने रीते हाथ लौट जानेकीअनिच्छा दिखाई तो मजबूर होकर मैंने हिन्दुस्तानी रबडका एक टुकडा दे दिया, वह मनुष्य उसीको मोम समझकर ले गया ।"

और कावियोंके साथ मिलकर, झालर, वीनमहल, साँचोर और राधानपुर होकर सुराट और सस्कतमान द्वीपमें निःशंकचित्तसे पहुँच जाते हैं ।

पालीनगरके पाँच कोश पूर्वमें "पुण्यगिरि" नामक एक पर्वत है । शिखरके ऊपर एक मन्दिर बना हुआ है । सुनते हैं कि, सौराष्ट्रके अन्तर्गत पालितानाके एक बौद्ध ऐन्द्रजालिकने इस मन्दिरको बनाया है । जिस प्रदेशमें इन अति प्राचीन अगणित शाखाओंमें विभक्त बौद्धलोगोंका वास है उस प्रदेशमें ही उनको इन्द्राविद्या जाननेवाले कहते हैं । यहांपर हमारे पुराने मित्र गफके साथ हमारी मुलाकात हुई । उनको . इस दक्षिण पश्चिम प्रदेशकी सरई, कोशा आदि पहाडी जंगली और असभ्य जातियोंमें घोडे इकट्ठे करनेके अभिप्रायसे घूमते हुए देखा ।

२९ वीं अक्टूबर पाली ।
३० वीं अक्टूबर खरैरा ।
३१ वीं अक्टूबर रोहित ।

१ ली नवम्बर ।–लूनीके उत्तर तटपर सङ्कली स्थापित है । पालीसे लूनीतक १५ कोश स्थानमें टूटी फूटी वस्ती हैं; विशेष दर्शनीय दृश्य कोई भी नहीं देखा । खरैरा-नामक स्थानमें हमने कैम्प डाला । यहांपर लवणके दो तालाव हैं । इनमें बहुतायतसे लवण उत्पन्न होता है इस सम्बन्धसे ही इस नदी और नगरका नाम खरैरा (खारीर) हुआ है । खरैरा और रोहित यह दो प्रदेश दो सामन्तोंके अधीन हैं । दोनों सामन्त इस समय आपसकी लडाईमें मतवाले हैं । रोहितके सामन्तकी अवस्था बहुत ही शोचनीय हो गई है ।

यहांपर मैं दो बणिकोंके विवादका विषय लिखना चाहता हूँ । पाइमा नायक इस प्रदेशका एक प्रसिद्ध व्योपारी है अर्थात् अधिक लवण उसीके द्वारा आता जाता है । अन्य एक वाणिज्य द्रव्यवाही वणिकके साथ उसका झगडा है इस झगडेमें उसके शिरमें चोट लगी, वह इस घावके दिखानेके लिये अपने कुटुम्बवालोंके पास गया । वादी प्रतिवादी दोनों ही भाट जातिके हैं; पाइमा भूमानिया भाट लोगोंका नेता है । * उसके पास चार सहस्र पशु बोझा ढोनेके लिये रहते हैं । जब वाणिज्य बन्द रहता है, उस समय साधारण दुर्गम मार्गोंमें जाकर आश्रय लेता है । इस श्रेणीके लोगोंको "उभय पन्थी" कहते हैं । श्यामाने अवसर पाकर प्राचीन शत्रुताका बदला लेनेके लिये पाइमाके सौदागरी वस्तुओंसे बचे हुए बहुतसे छकडे अपने अधिकारमें कर लिये और शत्रुके शिरपर लकडी मारकर घाव कर दिया । उन दोनोंका झगडा निबटाना असम्भव होगया । यहांपर यह रीति है कि जो सबसे अधिक कर देता है मुकदमेमें उसीकी जीत होती है, इस कारण पाइमा सरसरी विचारमें विजयी हुआ और प्रति-वादी श्यामाको दूर कर दिया गया ।

---

* भूमानिया नामक स्थानमें निवास करनेके कारण इन लोगोंका नाम भूमानिया हुआ है ।

हम ऊपर लिख चुके हैं कि राजपूतजातिमें भाट लोग अपने पवित्र चरित्रके कारण ही सौदागरी मालके संरक्षक होकर जाते हैं, किन्तु अत्याचार करने और कर दान न करनेसे वह संरक्षक पदके अनधिकारी समझे जाते हैं । उक्त पाइमाके पूर्व पुरुषोंके साथ राणा अमरसिंहका एक विशेष स्मरणीय झगडा हुआ था । भाटलोगोंने बडे अन्यायके साथ अपने वाणिज्य शुल्कके कम कर देनेकी राणाके निकट प्रार्थना की, राणा अमरसिंहने उस प्रार्थनाको अस्वीकार कर दिया । सम्पूर्ण भाटलोग अपना काम सिद्ध करनेके लिये ब्रह्महत्याका भय दिखाया करते हैं, राणा अमरसिंहको भी उसी आत्मघातका भय दिखाने लगे । साहसी अमरसिंहने उनकी किसी बातपर भी ध्यान नहीं दिया । तब भाटलोगोंने अपने प्रचलित उपायका अवलम्बन किया अर्थात् प्रायः (८०) अस्सी स्त्री पुरुषोंने राणाके महलके सन्मुख आकर छूरीसे आत्मघात कर डाला; राणा महापातकके भागी हुए । भाटलोगोंका सपरिवार यह आत्मघात राणाके लिये जातिसे बाहर कर देनेका कारण हुआ; क्योंकि भविष्यद्वक्ता भाटलोगोंके प्राणनाशका कारण बननेपर राजपूतलोग इस लोक और परलोक दोनोंमें नरक भोगते हैं । जो एक बार स्वामी इस भाटजातिकी प्रार्थना पूरी कर दें तो यह लोग अन्यायसे बारम्बार प्रार्थना पूरी करानेपर भी शान्त नहीं होते । अमरसिंहने शेष जीवित बचे हुए भाटोंको अपने राज्यसे निकाल दिया और भूमानिया प्रदेश अपने अधिकारमें कर लिया ।

राणा अमरसिंहने इन भूमानिया भाटोंको अपने राज्यसे निकालकर मेवाडराज्यमें घूसनेका निषेध कर दिया, इस आज्ञाका अबतक पालन होता था । अन्तमें जिस समय राणा भीमसिंहके घोषणापत्रद्वारा मेवाडकी भागी और निकाली हुई प्रजाको फिर वास करनेकी आज्ञा मिली, उस समय उक्त पाइमालोग भी अपने कुटुम्बसहित मेवाडमें फिर आ बसे । जिस कारणसे पाइमाके पूर्व पुरुष मेवाडसे निकाले गये थे, उस कारण सम्बन्धी प्रवादका सर्व साधारणमें प्रचार है—यद्यपि यह बात पाइमाके हृदयपर भी विशेषरूपसे अङ्कित है, तथापि वह अपनी निष्ठुर चाल छोडनेके बदले सदा स्वार्थ साधनमें तत्पर रहता है; और अन्यायभरी प्रार्थनायें पूरी करानेके लिये अपने प्राण बलिदानार्थ कमरमें एक बडी छूरी लटकाये रहता है । पाइमाने अपना वाणिज्य बिलकुल उठा देनेके लिये राणाको भी अनेक स्थानोंमें घेरा परन्तु प्रार्थना पूरी न हुई । अन्तमें छूरी हाथमें लेकर राणा भीमसिंहके सामने आत्मघात करनेको उद्यत हुआ । राणा भीमसिंह अमरसिंहके समान कठोर न थे, राणाने डरकर इस विषयमें मुझको मध्यस्थ बनाया । राणाके संवाददाताके साथ मैंने अपने एक संवाददाताको भी पाइमाके बुलानेके लिये भेज दिया । उसकी स्थूलकाय, सुन्दर और साहसी मूर्ति शीघ्र ही मेरे दृष्टिगोचर हुई । हमलोग तत्काल इस प्रश्नकी मीमांसा करने लगे । मैंने कहा कि, "जो कोई मेवाडके राजपथसे सौदागरी माल ले जायगा उसको अवश्य ही कर देना होगा । और यदि आपलोग इस जघन्य उपाय (आत्महत्याका भय दिखाने) को उद्यत होंगे, तो निश्चय ही कुछ फल प्राप्त न होगा । सर्वसाधारणसे जो कुछ कर लिया जाता है, यदि आपलोग उसीके अनुसार

स्वीकार पत्र लिखकर हस्ताक्षर कर देंगे तो तुम्हारे चालीस सहस्र बोझा उठानेवाले बैलोंमें पांच सौका कर क्षमा करके भामुनियामें रहनेकी आज्ञा दी जायगी, यदि यह बात अस्वीकार हो तो यह छुरियें रक्खी हैं (टेबिलके ऊपर बहुत सी छुरियां रक्खी थीं) जितनी शीघ्र इच्छा हो आत्मघात कर डालो।" मैंने और भी कहा कि "राणा अमरसिंह जो देश निकालेका दण्ड नियत कर गये हैं, उसके आतिरिक्त मैं तुम्हारे सौदागरी मालसे भरे हुए सब छकडोंके छीन लेनेका भी राणासे अनुरोध करूंगा।" पाइमा बुद्धिमान् था उसने शीघ्र ही मेरे प्रस्तावको मान लिया। राणाने उसको भामुनियाप्रदेश और ५०० बैलोंका करदान क्षमा कर दिया। राणा भीमसिंहने उस दिन पाइमाको भूमानिया प्रदेशका अधिकारी मानकर उसको सुवर्णके बाजूबन्द और वस्त्र दिये।

२ री नवम्बर।-पांच कोशकी दूरीपर झालामन्दमें पहुंचे। यद्यपि जोधपुर राज० धानी यहांसे बहुत निकट है, तथापि किस ढँगसे हम सभामें ग्रहण किये जाँयगे, उसकी मीमांसाके लिये यहां विश्राम करना उचित समझा। पश्चिमी जगत्में इस प्रकारकी दूत परिग्रहणादि प्रणाली निर्द्धारण एक विषम समस्या है; राजालोग पूर्व पुरुषोंकी अवलम्बित प्रणालीके अनुसार ही दूतोंको ग्रहण करते हैं। मरुक्षेत्रकी राजसभामें अंग्रेज दूतको कैसे भावसे ग्रहण किया जायगा, यह प्रश्न हमलोगोंको विषमस्थ रूप मालूम होने लगा। राजाके भेजे हुए राजदूतकी किस प्रणालीसे अभ्यर्थना करनी उचित है, इस बातको वे लोग भलीभांति स्थिर कर सकते हैं; और राजप्रतिनिधिके पाससे आये हुए दूतकी किस प्रकारसे अभ्यर्थना करनी चाहिये, यह भी जानते हैं। किन्तु वर्त्तमान प्रश्न बिलकुल विभिन्न है; सम्पूर्ण भारतवर्षके शासनकर्त्ता अंग्रेज केवल "बणिक" संप्रदायके कर्मचारी रूपसे गिने जाते हैं, और उनके हाथमें चाहे कितना ही शक्ति और प्रभुत्व सौंपा जाय, किन्तु वे कभी राजाके वा उसके निम्नपदस्थ व्यक्तिके समकक्ष नहीं हो सकते। इस कारण राजनैतिक दूतोंको इस प्रकारकी अभ्यर्थनामें बहुत सी कठिनाइयें उपस्थित होती हैं। शेष शतलजसे समुद्रतक हम लोगोंका शासन विस्तृत हो जानेसे ईष्टइण्डिया कम्पनीके दूतोंकी अभ्यर्थना सम्बंधी गडबड दूर हो गई है। एक दूसरे कारणसे भी इस अभ्यर्थना सम्बंधी गडबडके मिटानेमें सहायता मिली है। सेंधिया और हुल्करके दुर्दान्त अत्याचारी सेनानायकोंने उक्त राज्योंके आक्रमणकालमें राजालोगोंके पदमर्य्यादा और सन्मानको छोटा कर दिया था। अमीरखाँ, जैनबपटिष्टी और बापूसेंधियाके समान जितने लोग इससे पहिले ऊंचे आसन पाकर अपनेको महा सन्मानित समझते थे, वही इस समय अन्य राजालोगोंके समान सन्मान पानेकी इच्छा करते हैं और कान्यकुब्ज सम्राट्के उत्तराधिकारी वा रामचन्द्रके वंशधरको किसने किस प्रकारसे क्षतिग्रस्त, परास्त और निगृहीत किया है, उसका उल्लेख करके आत्मश्लाघा करनेमें तत्पर हैं। बाहरी सन्मान और आडम्बरसे ही संसार प्रवंचित होता आया है। इस कारण महाराष्ट्र डाकूदलके नेताको जैसा सन्मान दिखाया गया, उससे हीन सन्मा-

नके साथ अभ्यर्थनामें सम्मति ज्ञापन असंभव हो गया। अमीरखाँकी अभ्यर्थनाके लिये राजाने अपने प्रतिनिधिको कितनी दूर आगे जाकर अभ्यर्थना करनेकी आज्ञा दी थी? वह भेजा हुआ प्रतिनिधि किस श्रेणीका सामन्त था? और सूर्यवंशावतंस राजाने कितनी दूरतक आगे जाकर सामयिक प्रभुको स्वयं ग्रहण किया था ? मैंने यह सब प्रश्न अपने पास बहुत कालसे रहनेवाले वकीलसे किये, उक्त वकील इन सब प्रश्नोंकी मीमांसाके लिये राजदरबारमें भेजा गया, इस अवसरमें मैंने राजधानीसे ढाई कोशकी दूरीपर झालामांदमें केम्प डाला। यद्यपि मैं स्वयं इस प्रकारके बाहरी सन्मानसे बहुत ही घृण करता हूं, तथापि ईष्टइण्डिया कम्पनीके प्रतिनिधि पदपर स्थित होनेके कारण उक्त कम्पनीके उपयुक्त सन्मान प्राप्तिके लिये यथोचित उपायावलम्बन करनेमें बाध्य हुआ; इस विषयमें अपनी इच्छानुसार किसी कामके करनेकी मेरी शक्ति नहीं है। वर्त्तमान मीमांसा ही भविष्यत्के निर्द्धारित होकर रहेगी, यही विचारकर मैं राजाके निकट इसको सूचित करनेके लिये बाध्य हुआ कि "मैं जिनका प्रतिनिधि हूं तुम उनके और अपने दोनोंके सन्मानपर समान दृष्टि रखना।" और यह भी स्पष्ट प्रगट कर दिया कि "जिस प्रकार अमीरखांकी अभ्यर्थनाके लिये आपने दुर्गके नीचे आकर अपेक्षा की थी, उसी प्रकार अंग्रेज प्रतिनिधिकी ग्रहण करनेकी व्यवस्था करना।" इस प्रश्नकी मीमांसा होकर यही निश्चय हुआ कि राजा दुर्गके मध्यद्वारसे नवीन गाडीद्वारा उपस्थित होकर अभ्यर्थना करेंगे * अभ्यर्थना सम्बन्धी मीमांसा समाप्त होनेपर हम लोगोंने झालामन्दसे राजधानीकी ओर अपराह्नमें यात्रा किया। मार्गमें जोधपुरके उस समयके सर्व प्रधान शक्तिशाली राजाके उपदेष्टा पोकर्ण और निमाज दो सामन्त आगे बढकर मेरी मुलाकातको आये। हमने घोडेसे उतरकर परस्पर आलिङ्गन किया। प्रचलित नियमानुसार कुशल प्रश्नादि पूछनेके पीछे फिर घोडेपर सवार होकर साथ २ चलने लगे। नगरमें प्रवेश करते ही हमने राजासाहबको उनका अभिनन्दन करनेके लिये कहला भेजा कि "प्रणामादिके पीछे वे राजभवनमें चले जावें।"

पोकर्णके सामन्तका नाम सालिमसिंह है, यह मारवाडकी सामन्तश्रेणीमें सबसे अधिक धनी हैं। इनका दुर्ग और अधिकृत प्रदेश मरुक्षेत्रके बीचमें है। यह प्रदेश जयसलमेरके राज्यसे अलग कर लिया है। दुर्ग बहुत मजबूत है। इन पोकर्णसामन्तके द्वारा मारवाडके राजासिंहासनकी जड वारम्बार प्रकम्पित हुई थी। इस सामन्तवंशके चार पुरुषोंके प्रबल प्रतापने क्रमसे मारवाडके बडे बडे साहसी राज लोगोंको भी महा भयजालमें जकड दिया था। वर्त्तमान सामन्तके प्रपितामह देवसिंह कम्पावत

---

* सन् १८१८ ईसवीके दिसम्बर मासमें जनरल एक्टर लोनिके द्वारा अजमेरके सुपरेण्टेण्डेंट मिस्टर विल्डर जोधपुर राजसभामें भेजे गये थे. तब राजाने इनको बडे आदरके साथ ग्रहण किया था।

नामक अपने सम्प्रदायके पांचसौ योद्धाओंके साथ राजमहलके बडे भारी कमरेमें रातको शयन किया करते थे। वह उद्धत सामन्त अभिमानके साथ अपने स्वामीसे कहते कि "मारवाडका सिंहासन मेरी इस तलवारमें है।" देवीसिंहके पुत्र सुबलसिंहनेभी पिताके मार्गमें चरण रक्खा और अन्तमें मारवाडराज विजयसिंहको सिंहासनच्युत कर दिया। एक कमानके गोला अधीश्वरने विजयसिंहका उस महाभयके कारणरूप शत्रुके हाथसे उद्धार किया। सुबलसिंहके पुत्र और उत्तराधिकारी सवाईसिंह भी राजा भीमसिंहके ऊपर पिताके समान व्यवहार करनेसे शान्त न हुए और सन् १८०६ ईसवीमें उन्होंने युद्धाग्नि प्रज्वलित करके धौंकुलसिंहको मारवाडके सिंहासनपर अभिषिक्त करनेका यत्न किया था। नागोरनामक स्थानमें अमीरखाँने कम्पावत लोगोंके नेता सवाईसिंह और उनके अनुचरोंको विश्वासघात करके मार डाला, राजा मानसिंहने कुग्रहके हाथसे अपने वंशका उद्धार किया और सवाईसिंहके पुत्र वर्त्तमान सामन्तको अपने राज्यके प्रधान कर्मचारी पदपर अभिषिक्त करके बडा सन्मान किया, यहांतक कि प्रसन्न करके अपनी मुट्ठीमें कर लिया। चतुर सामन्तने समय पाकर अपना सहजमें ही उद्धार कर लिया, यदि सामन्त ऐसा न करते तो उनका जीवन और पोकर्ण प्रदेश दोनों नष्ट हो जाते। मेरे साथ मुलाकातको आये हुए पोकर्ण अधिनायक वंशका यही संक्षिप्त इतिहास है। इनकी आयु लगभग पैंतिस वर्षकी है मूर्ति यद्यपि मनोहर नहीं है, तथापि वीरोचित और गम्भीर है। शरीर लम्बा और बलवान है, गठनप्रणाली सुन्दर है किन्तु मारवाडके अन्य सामन्तोंके समान उजला रंग नहीं है।

पोकर्ण सामन्तके साथी और राजसभामें सहयोगी निमाजके सामन्त सुरतानसिंहकी आकृति, बनावट आदि सालिम बिलकुल विपरीत था, सुरतानसिंह उदावत सम्प्रदायके नेता थे, यह आराबलीके सीमान्तस्थ स्थानके निवासी चार सहस्र वीरोंके एकत्रित करनेकी शक्ति रखते थे। इनके अधिकृत प्रदेशोंमें निमाज, रायपुर और चन्दावन सबसे प्रधान थे; सुरतानसिंह राजपूत जातिके श्रेष्ठ आदर्शस्वरूप थे; इनका शरीर लम्बा और सुडौल था, रंग गोरा, मूर्ति वीरोचित और नम्रभावसूचक थी, यह बडे बुद्धिमान और शिक्षित मनुष्य थे।

जिस विपदचक्रसे सुरतानके सहकारी सलीमने उद्धार पाया था, वह किस लिये इस विपत्तिमें फसाये गये थे, उसका प्रत्येक कारण इस स्थानमें लिखना असंभव है। सालिमसिंहके साथ मित्रता ही उनके इस दुर्भाग्यका मूल है, पुरवत्सारके उस घोरतर कलंकजनक युद्धमें पराजयके समय जब मारवाडेश्वरने अपने पेटमें छूरी झोंकना चाहा था, उस समय इन सामन्त सुरतानने ही उनको आत्मघात करनेसे रोका था; और जिस समय अनेक राज्योंकी सेनोंने एकत्रित होकर मारवाडको घेरा था, उस समय भी राजपक्षके चार सामन्तोंमेंसे यह सुरतान भी एक थे। सन् १८०६ ईसवीमें जब उक्त दुर्दान्त सम्मिलित सेना मारवाडको विध्वंस करके असंख्य धन लूटकर ले गई, तब उपरोक्त जिन चारसामन्तोंने उनके पीछे दौडकर लूटे हुए धनको छीना और असंख्य शत्रुओंको मारकर रजवाडेमें रुदनकी आग जला दी थी, यह वीरवर सुरतान भी उन चार सामन्तोंमेंसे एक वीर

थे । * सुरतानके मरनेपर सम्पूर्ण राजस्थानने शोक मनाया और मुझे स्वयं शोक हुआ था। अपने वीरोचित चरित्रोंके कारण ही के सर्वसाधारणके प्रशंसापात्र हुए थे । मेरी जोधपुरयात्राके आठ मास पीछे उस महावीर राजपूतके मृत्युसमाचारका सूचक जो पत्र मेरे पास आया था, उसका अनुवाद नीचे दिया जाता है, उसको पढकर पाठकगण इस बातको भलीभाँति समझ जायँगे कि सुरतान कैसा असमसाहसी वीर पुरुष था।

जोधपुर २ आषाढ ।

(२८ वीं जून सन् १८२० ई.)

"ज्येष्ठ मासके अन्तिम दिन (२६ वीं जून) सूर्य्योदयके एक घडी पहिले राजा आलिगोल × और सम्पूर्ण सामन्तसेना अर्थात् अस्सी हजार सेनाको सुरतानसिंहके ऊपर आक्रमण करनेकी आज्ञा दी गई । वह सेना नगरके मध्यस्थ और उनके निवासस्थानको घेरकर तीन घडीतक बन्दूकोंकी गोली चलाती रही । इसके पीछे सुरतान निजभ्राता सूरसिंह, आत्मीयवर्ग और सम्प्रदायसहित महावीरताके साथ तलवार लेकर निकले और शत्रुओंपर आक्रमण करके दूर भगा दिया । किन्तु अपने अधीश्वरके विरुद्ध कौन जीत सकता है ? राजाके पक्षमें बहुत सी सेना थी, इस कारण दोनों भ्राता ही बडी भारी वीरता दिखानेके पीछे युद्धमें मारे गये । नागोजी और बडे साहसी चालीस वीर दोनों भ्राताओंके साथमें मारे गये और चालीस वीर घायल हुए । जो अस्सी वीर जीवित बचे थे, वह अस्त्र शस्त्र लेकर निमाजके सामनेसे भाग गये । * राजाकी सेनामें चालीस मनुष्य मरे और सौ१०० घायल हुए, तथा बीस नगरनिवासियोंको इस युद्धमें हानि पहुंची ।

"पोकर्णके सामन्त इस समाचारके पाते ही घोडेपर चढ़कर नगर छोडनेको उद्यत हुए; किन्तु महाराज, कोचामुनके शिवनाथसिंहने भद्रार्जुनके सामन्त और दूसरे सामन्तोंको उनके पास भेजकर आश्वासित किया और रहनेकी आज्ञा कहला भेजी किन्तु वह इस स्थानके छोडनेके लिये बडे उत्सुक हुए । मेरा भतीजा और पच्चीस अनुचर भी इस युद्धमें मारे गये । सब संसार उनकी प्रशंसा करता है और हिन्दू तुरक दोनों जातियें ही यह कहते हैं कि वह वीर गतिको पहुंच गये । शिवनाथसिंह, बखतावरसिंह; रूपसिंह और अनारसिंहने उनकी दाहक्रिया समाप्त करी है । " ×

अपनी सन्मानरक्षाके लिये राजपूत जाति इस प्रकारसे ही जीवन बलिदान कर देती है ! जबतक सुरतानके शरीरमें प्राण रहे तबतक उनके किसी अनुचरने आत्मसमर्पण नहीं किया, और जो लोग भागे थे उन्होंने केवल उदावत सम्प्रदायके बालक प्रभु—सुरतानके पुत्रकी रक्षाके लिये ही जीवन धारण किया है !

* पाठक लोगोंको कदाचित् स्मरण होगा कि राणा भीमसिंहकी लडकीके लिये ही जयपुरराजके साथ, मारवाडेश्वरका यह भयङ्कर युद्ध हुआ था ।

× धनके लोभी रुहेलोंकी सेना इस नामसे ही पुकारी जाती है ।

* इन्होंने निमाजप्रदेश कई मासतक बडी वीरताके साथ रक्षा किया था ।

× यह शेषोक्त मनुष्य ही पत्रलेखक है, यह जैसा साहसी है वैसा ही गुणी है। अपने अधीश्वर मारवाडराजकी रक्षाके लिये अपनी संपूर्ण संपत्ति (यहांतक कि अपनी स्त्रीके अलंकारतक) फेंक डाले और अन्तमें अपने प्राणरक्षाके लिये छिपकर विदेशमें चला गया । कर्नल टाड लिखते हैं कि अंग्रेजी गवर्नमेंटके इन सब राज्योंपर उदासीनता प्रकाश करनेसे ही यह सब अनिष्ट हुए थे ।

अट्ठाईसवाँ अध्याय २८.

जोधपुर राजधानी;-राजा मानसिंहद्वारा अभ्यर्थना;-राजा मानसिंहका स्वभावचरित्र;-उनके इतिहासकी घटनावली;-राजा भीमसिंहकी मृत्यु;-मारवाड़के प्रधान पुरोहित देवनाथ;-उनका हत्याकाण्ड;-उससे आगेकी घटना;-राजाके विरुद्ध षड्यंत्र;-धनकुलसिंहका किया हुआ सिंहासनाधिकारका आयोजन;-राजाकी असली वा कल्पित उन्मत्तता;-उनके कुमारकी राज्यप्राप्ति;-राजा मानसिंहद्वारा फिर राज्यभार ग्रहण;-प्राचीनराजधानी मन्दौरमें गमन;-राठौरलोगोंका स्मारक मन्दिर-मन्दिरकी विराटकाय हर्म्यावली;-नगरप्राकार,- प्रासादकाध्वंशावशेष;-जयतोरण,-थानका थानापीर;-पुसकुण्डकी उपत्यका,-पर्वतके ऊपर खोदी हुई प्रतिमावली,-मन्दौरका वन;-एक संन्यासी;-राजमहलमें उत्सव;-अंगरेजदूतके साथ राजाकी मुलाकात;-जोधपुर परित्याग ।

लूनी नदीके पार होते ही हम लोग रेतीले मैदानमें पहुंचे। क्रमसे बालूकी संख्या बढती गई, जितना २ हम मरुक्षेत्रकी राजधानीके निकट होते गये, उतना ही उतना बालूका ढेर कष्टदायक मालूम होने लगा; किन्तु हमारे अनुचर लोग गङ्गातटके समतल क्षेत्रमें जितनी शीघ्रतासे चल सकते हैं, इसी प्रकार मारवाडी लोग, इस बालुकापूर्ण क्षेत्रमें विना कुछ कष्टके शीघ्रतासे आते जाते हैं। राजा जोधका नगर कैसा है, उस कष्टसाध्य वर्णन युक्त पाठके बदले, साधारण दृश्यपर दृष्टि डालनेसे पाठकमण्डली सहजमें भी उस राजधानीकी असली मूर्तिकी कल्पना नेत्रोंके सन्मुख लानेमें समर्थ होगी। दुर्ग चारों ओरसे कुछ उठी हुई शिखर मालाके बीचमें समतलस्थानमें बना हुआ है, इस कारण निकटके सब स्थानोंसे ऊंचा और स्वतन्त्र भावसे स्थित है। जिस स्थानपर दुर्ग बना है वह तीन सौ फुटसे अधिक ऊँचा नहीं है, इस कारण इसको पर्वत दुर्ग नहीं कह सकते; किन्तु मरुक्षेत्रमें इतना ऊंचा दुर्ग अवश्य ही विचित्र दृश्य है। इसकी लंबाई साढ़े बारह कोशतक है; और जहांतक मैंने दृष्टि डालकर देखा है उससे अनुमान होता है कि इसकी चौडाई एक कोशसे अधिक नहीं है । राजधानी दक्षिणकी

और सबसे ऊंचे स्थानपर है । उत्तर प्रान्तके जिस सबसे ऊंचे स्थानपर राजमहल बना हुआ है उसकी उंचाई ३०० फुट है । स्थान सब तरफ ढालू है । विशेष करके १८०६ ईसवीमें जिस समय संमिलित सेनादलने जिस स्थानपर गोले बरसाये थे, तबसे वह स्थान टेढा होकर केवल एक सौ बीस फुट ऊंचा रह गया है । अभेद्य महल श्रेणी और बीच २ में गोल और चौकोने असंख्य बुरजोंसे शिखरके चार कोशका व्यास दृढताके साथ संरक्षित है । नीचेसे ऊपरकी ओर जो टेढ़ा मार्ग गया है, वह सात प्राकार और बहुतसे तोरणोंसे घिरा हुआ है । प्रत्येक परकोटेके द्वारपर अलग २ सैनिक पहरेवाले रक्षा करते रहते हैं । इन सब परकोटोंमें दो सरोवर हैं । पूर्वकी ओरके जलाशयका नाम "रानी सरोवर" और दूसरा "गुलाब सागर" के नामसे विख्यात है । गुलाबसागर दक्षिणकी ओर है और दुर्गके सैनिक लोग अपने २ व्यवहारके लिये उससे जल लाते हैं । इन सब परकोटोंके बीचमें एक कुण्ड भी है; यह पर्वतको खोदकर बनाया गया है और नब्बे फुट गहरा है । उपरोक्त दोनों सरोवरोंसे जल लाकर यह कुण्ड भरा गया है; यद्यपि भीतरी भागके स्थान २ में बहुतसे कूप हैं; किन्तु उनका जल शुद्ध नहीं है । अनगिन्त महल और छोटे बडे मकानोंसे इसका भीतरी भाग परम रमणीय है प्रत्येक राजाने अपनी २ महलनिर्माणकी रुचिके स्मरणचिह्नरूपसे ही मानो एक २ महल बनवा दिया है, इस कारण महलोंकी आकृति क्रमसे बढती चली गई है । दुर्गके पश्चिमप्रान्तवर्त्ती राजधानी तीन कोशतक अभेद्य परकोटेसे वेष्टित है; और परकोटेमें एकसे एक बुर्ज लगे हैं, तथा परकोटेके ऊपर पाइकलानामक बहुतसी तोपें रक्खी हैं । राजधानीमें प्रवेश करनेके सात सिंहद्वार हैं, जिस द्वारसे होकर बाहरके जिस स्थानको जाते हैं वह द्वार उसी नामसे विख्यात है । राजमार्ग बहुत सुन्दर रीतिसे बने हैं और मार्गके दोनों ओर पत्थरोंकी मनोहर सीढियें विराजमान हैं । सुनते हैं कि कई वर्ष पहिले यह नगर २०००० परिवारकी अर्थात् सम्भवतः ८०००० प्रजाकी वस्ती था । वर्त्तमानकालमें उपरोक्त संख्या बहुत अधिक मालूम होती है । नगरनिवासियोंके लिये गुलाबसागर प्रधान विश्रामस्थान है, सब लोग उसके तट और निकटके वनोंमें वायु सेवन करके आनन्द भोगते हैं । बडे आश्चर्य्यका विषय है कि, इस वनमें एक ऐसा चमत्कारिक फल उत्पन्न होता है जो काबुलके अनारसे भी बहुत बातोंमें श्रेष्ठ है । काबुलके अनारको अन्यायसे बेदाना कहते हैं, क्योंकि उसमें दाने होते हैं; किन्तु यहांके इन फलोंका बीज इतना छोटा होता है जो कि न होनेके ही समान है । "कागलिका बाग" अर्थात् "दाडिमीके वन" में उत्पन्न हुए यह मनोहर और स्वादिष्ट फल उपहारस्वरूप भारतके अनेक स्थानोंमें भेजे जाते हैं । इन फलोंका पद्मराग मणिके समान रमणीय रस देखकर कविलोग अमृतके साथ इसकी तुलना करते हैं ।

चौथीतारीखको महाराजा साहबने दूसरे सिंहद्वारतक आगे बढकर मुझको यथारीतिसे सन्मानके साथ ग्रहण किया, और प्रणामपूर्वक कुशल प्रश्नके पीछे प्रचलित रीतिके

अनुसार राजमहलकी ओर चले गये। महलमें जाकर जितने समयमें महाराज मेरी अभ्यर्थनाका सामान ठीक कर सकें उतने समयमें ठहर गया, और फिर धीरे २ श्रेणीबद्धभावसे खडे हुए राजवंशीय और राजाके आत्मीयलोगोंके बीचमें होकर आगे बढा; जाते समय मेरे नेत्रोंके सामने जितने चमक दमक और ऐश्वर्य्याडम्बर-युक्त दृश्य आये, मुझको पहिले उतने दृश्योंके देखनेकी आशा नहीं थी। यह सब मेवाडपति राणाके सरल और अनैश्वर्य्यप्रकाशक अभ्यर्थनानुष्ठानके बिलकुल विपरीत थे। राठौरलोगोंने बहुत कालतक " जगत्के अधिराजके दक्षिण हस्त स्वरूप " रहकर राज्य किया था, इस कारण यहांका प्रत्येक अनुष्ठान दिल्लीके शहंशाहका अनुकरण मालूम हुआ। सुवर्ण और चांदीके आसे आदि राजचिह्नधारी लोगोंने "राजराजेश्वर!" शब्दके उच्चारणसे मेरे कानोंको बहरेके समान कर दिया। अन्तमें हम लोग मौन और निस्तब्धभावसे खडे हुए वीरोंसे भरे अनेक कमरोंको अतिक्रम करके राजसभामें पहुँचे।

मारवाडके अधीश्वर सिंहासनसे उठ खडे हुए और कई पग आगे बढकर सन्मानके साथ मुझे ग्रहण किया। यह अभ्यर्थनागार बहुत बडा और एक सहस्र स्तम्भोंसे शोभित होनेके कारण " सहस्र स्तंभकक्ष " नामसे पुकारा जाता है। स्तम्भावलीकी सुन्दरताकी अपेक्षा दृढता अधिक है। यह प्रत्येक स्तंभ बारह२ फुटके अन्तरपर श्रेणीबद्धभावसे खडे हैं, इस कारण देखनेमें वे सिलसिले हैं। इसकी छत बहुत ऊंची नहीं है। सभागृहके बीचमें एक वेदीके ऊपर राजसिंहासन स्थापित है उसके ऊपर चांदीके बने स्तम्भोंके सहारे एक सोनेके बेलबूटोंवाला चंदोवा लगा है। राणाके दक्षिण ओर पोकर्ण और निमाजके दोनों सामन्त बैठे। इन दोनों सामन्तोंने यद्यपि महाराजसे ऊंचा सन्मान पाया था, किन्तु यदि वह किसीप्रकारसे जान पाते कि, उनके विपत्तिमें डालनेके लिये ही महाराजने प्रगटमें इतना अधिक सन्मान दिखाया है तो कभी वह प्रसन्नचित्त होकर नहीं बैठते। दूसरे कई सामन्त और अन्यान्य कर्मचारी चारों ओर बैठे थे। उनके नाम लिखनेकी आवश्यकता नहीं है। वकील विष्णुरामने राजाके सन्मुख मेरे पास आसन ग्रहण किया। साधारण बात चीत होनेके पीछे अन्यान्य अनेक विषयोंमें कथोपकथन आरंभ हुआ। मारवाडेश्वरने हिन्दीभाषाके बोलनेमें विलक्षण शक्ति दिखाई। दिल्लीके बादशाहकी सभामें जितने सामन्त रहते थे उनमेंसे इनके समान कोई भी शुद्ध हिन्दी भाषा नहीं बोल सकता था, महाराजका शरीर न बहुत लम्बा न बहुत छोटा अधिक गम्भीरता युक्त किन्तु स्वाभाविक अनमनी प्रकृतिवाला ह। यद्यपि इनकी मूर्ति बिलकुल राजोचित और वीरोंके समान है, किन्तु स्वाभाविक महत्त्व और सरलताके द्वारा मेवाडके राणाने जिस प्रकार सहजमें ही मुझसे सम्मानाधिकार किया था, इनकी मूर्तिमें उन सबका बिलकुल अभाव है। राजा मानसिंहका अंग प्रत्यङ्ग बहुत मनोहर हैं; इनके दोनों नेत्र ज्ञानसूचक हैं। और यद्यपि इनकी आकृतिके बाहर वदान्यताकी आभा प्रगट है किन्तु बीच २ में

क्षणस्थायी ऐसे कितने ही लक्षण दिखाई देते हैं, जिनके द्वारा मानसिक भाव स्वतः ही प्रकाशित हो पडता है कि यह मानो सरलताके निदर्शनस्वरूप हैं। यह प्रतारित होकर जो बहुत कालतक बन्दी अवस्थामें रहे थे और जिसके कारणसे उन्मत्तप्राय हो गये थे कदाचित् इनकी प्रकृति उस सम्बन्ध से ही इस भावमें बदल गई होगी।

हाराज मानसिंहने सब देश और सब कालमें अपने मानकी रक्षा की थी। किन्तु घोरतर क्लेशमें गिरकर वह कुछ कठोर होगये और मानसिक कल्पनाको किस प्रकार छिपाकर रखना चाहिये इस विषयमें विशेष शिक्षित होगये थे। यद्यपि यह बाघके समान कठोरता नहीं दिखलाते थे, किन्तु उस पशुकी भयंकर वृत्ति-धूर्त्तताको इन्होंने अर्जन कर लिया था। बहुत थोडे समयमें ही महाराज बन्दी दशासे छूट गये थे, किंतु अब भी इनकी मूर्तिमें नम्रता, आत्मतुष्टि और सुख ऐश्वर्य्यका तिरस्कार प्रदर्शकभाव होनेपर भी अपने अधीनस्थ अगणित मनुष्योंको (जो इनके अनुग्रहसे सन्मानसुख भोग रहे हैं उनको) यह एकदम विध्वंस कर डालनेके लिये भीतर२ जाल फैला रहे थे। इस कारण समयपर इनकी यथार्थ प्रकृति प्रगट हो जाती है। उन नष्ट किये हुओंमेंसे सुरताननामक एक मनुष्यका वर्णन ऊपर कर चुके हैं।

केवल प्राच्य जगत् ही नहीं—अन्यान्य देशोंके समान राठौर लोग भी अपनेको देववंशसंभूत कहते हैं। हमको निश्चितरूपसे ज्ञात हुआ है कि पाँचवीं शताब्दीमें कन्नौजमें एक जाति अधीश्वर थी और वह ईसवी सन्के आरंभसे पहिले राज्य करती थी। राठौर लोगोंके ऊंची जातिमें होनेके विषयमें भाट वा कवियोंकी कविताकी आवश्यकता नहीं है; कारण कि वीरत्व विक्रम, प्रताप प्रभुत्व प्रकाशक कार्य्यावलीने इतिहासके पत्रोंमें राठौरलोगोंका नाम जिस भावसे अंकित कर दिया है वह कभी लुप्त नहीं होगा। रजवाडेकी इन राठौर, चौहान आदि समस्त राजपूतजातियोंने यशरूपी मन्दिरके किस स्थानमें किसने कैसा आसन पाया था, उसका निर्वाचन असंभव है, किन्तु सत्यके अनुरोधसे मैं अवश्य ही राठौर लोगोंको चौहानोंके साथ समान यशवाले शिखरपर आसन देनेको बाध्य होता हूं। मारवाडके आदि राठौरराज शिवजीके वंशसंभूत चण्ड और योध तथा उनके उत्तराधिकारी राजा मानसिंहका वीरत्व विलास अवश्य ही चिर स्मरणीय है।

अन्तमें महाराजके पवित्र हाथसे इत्र और पान लेकर सन्मानके साथ प्रणाम किया, और फिर प्रचालित रीतिके अनुसार राजाके सामने ही शिरपर टोपी रक्खी। सम्पूर्ण देशी राजसभाओंमें शिरपर पगडी धारण और नंगेपैर बैठनेकी रीति प्रचलित है। साधारण लोगोंके बैठनेके लिये सफेद चादरसे ढका एक बहुत बडा गलीचा बिछा था, किन्तु उसके ऊपर जूता पहरकर बैठना अवश्य ही अशिष्टाचारसूचक है। राजद्वारपर जूता उतारकर आना होता है, किन्तु मोजा पहरे हुए उस कमनीय शय्या के ऊपर बैठना कभी

अपमानसूचक नहीं हो सकता। महाराजने मुझको सजी हुई सवारी, घोड़ा, भाला, सुनहरे और रुपहले कामके वस्त्र उपहारमें दिये। मेरे साथमें जितने भद्रलोग थे महाराजने उनको भी पद मर्य्यादाके अनुसार उपहार दिये।

राजशासनसम्बन्धी सुव्यवस्थाके निमित्त छठी तारीखको मैंने दुबारा महाराजसे मुलाकात की। कई घंटेतक हम दोनों बराबर बातचीत करते रहे, उस समय वहांपर महाराजके विशेष विश्वासी एक कर्म्मचारीके सिवाय और कोई नहीं था। बातचीत करनेसे मुझको यह भलीभाँति ज्ञान हो गया कि महाराज एक बहुत बुद्धिमान् पुरुष हैं, और केवल स्वदेशका ही नहीं किंतु सम्पूर्ण भारत वर्षके इतिहासके साधारण विषयोंको भलीभाँति जानते हैं। यह प्रशंसनीय रूपसे शिक्षित हैं, और मुलाकातके समय इन्होंने मुझको वर्त्तमान और भविष्यकालके अनेक विषयोंसे जानकार कर दिया। महाराजने अपने वंशके इतिहासकी पुस्तकका जो अनुवाद मुझे दिया था वह इस समय रायल एशियाटिकसोसाइटीके पुस्तकालयमें रक्खा है। उन्होंने अपने जीवनमें इतिहासकी घटनावली विशेष आग्रहके साथ कही, और उनके गुरु (केवल दीक्षागुरु ही नहीं किन्तु मंत्री और मित्र भी थे,) जिस समय मारे गये थे उस समय उन्होंने अपना राज्यभार पुत्रको देकर आत्मरक्षाके लिये जो २ उपाय किये थे, वह सब एक २ करके मुझसे कहे। यह सब घटनाएं विचित्र रहस्यजालमें जकडी हुई हैं, और केवल महाराज ही उस रहस्यजालको भेदन करनेमें समर्थ हैं किन्तु जिस उद्देशसाधनके लिये इस लिये साहसी वीर सुरतानका जीवन नष्ट किया गया। मैं वह उद्देश आविष्कार करनेके लिये उस गुप्त रहस्यका वह परिमित अंश भेदन करके एक प्रधान याजकका पाठकोंको अवश्य ही परिचय दूंगा।

अभयसिंहने अपने पिता राजा अजीतसिंहका जीवन नष्ट किया था, उस महापापसे ही मारवाडके और उनके परवर्त्ती तीन चार पुरुषोंका सर्वनाश हुआ। पापिको उपयुक्त दण्डके देनेके लिये ही मानो जगदीश्वरने मारवाडकी वह शोचनीय दशा उपस्थित कर दी थी। जिन परमोत्साही महावीर राजा अजीतसिंहने बडी वीरताके साथ बादशाह औरंगजेबके कराल गालसे अपना पैतृक राज्य उद्धार कर लिया था, उनके ही ज्येष्ठ पुत्र अभयसिंहने राजमुकुट धारणके लिये पिताके स्वर्गारोहणसमयकी बाट न देखी, और नरपिशाचके समान अधीर होकर अपने अपवित्र हाथसे जन्मदाता पिताका दीप निर्वाण कर दिया। सुना जाता है कि दिल्लीके बादशाहने अभयसिंहको गुजरातके राजप्रतिनिधिपर नियुक्त करनेकी आशा देकर उनको इस महापातकरूप गहरी कीचमें डुबाया था। अभयसिंहके छोटे भाई भक्तसिंहने राजाकी उपाधिधारणके साथ नागर प्रदेश पाया। अभयसिंहने उक्त प्रदेश अपने भ्राताके हाथमें सौंप दिया; किन्तु समय पलटनेपर उनके ही उत्तराधिकारियोंने भयानक युद्धाग्नि प्रज्वलित करके सहस्रों नररक्तसे बालुकापूर्ण मरुक्षेत्रको सींचा था। रजवाडेकी सामन्त शासनप्रणालीका यही विषमय फल है। इस शासनप्रणालीके द्वारा जैसा

एक पक्षमें अत्यन्त प्रशंसनीय–चिरस्मरणीय कार्य्य सिद्ध हुआ, दूसरे पक्षमें वैसा ही बडा भारी पाप भी हुआ।

पूर्वोक्त प्रकार राजनैतिक विप्लवके समय जितनी विपत्तियोंकी संभावना थी, राजा मानसिंहको इस समय सिंहानपर बैठकर वह सब विपत्तियां भोगनी पडीं। जिस समय वह झालामन्दमें अपने अधिनायक और ज्ञातिभ्राताके आक्रमणके विरुद्ध आत्मरक्षामें नियुक्त थे, उस समय यह एक अभावनीय घटनाके द्वारा उस विपत्तिसे उद्धार पाकर राजसिंहासनपर बैठे। राजा भीमसिंहने साक्षात् नरपिशाचके समान मारवाडके राजवंशकी प्रत्येक शाखाके मनुष्योंको मारा और प्राणनाशसे बचे हुए मानसिंहको मारकर अपनी बुरी अभिलाषा पूरी करनेकी विशेष चेष्टा करने लगे। भीमसिंहके इस शोचनीय पैशाचिक आचरणसे मारवाडमें राज्यविध्वंसकारी भयङ्कर युद्धाग्नि जल उठी। जहांतक शोचनीय और निराश दशा होनेकी संभावना हो सकती है, राजा मानसिंहको उस समय वह सब प्राप्त हुई थी और जिस दिन वह विवश होकर अत्याचारीके हाथमें आत्मजीवनके साथ२ झालोर प्रदेश सौंपनेको उद्यत हुए, उस ही दिन उन्होंने इस घोर विपत्तिसे उद्धार पाया था। उन्होंने मुझसे कहा कि, "राठौर जातिके प्रधान गुरु–मारवाडके सर्वप्रधान धर्म्मयाजकके करुणाबलसे ही मैंने उद्धार पाया था।" उक्त गुरुवर सर्वसाधारणमें नाथजी नामसे विख्यात हैं, उनका असली नाम देवनाथ है। इन पूजनीय गुरुदेवने निःस्वार्थभावसे न्यायके वशीभूत होकर राजा मानकी जीवनरक्षा की थी, यह बात ठीक है अथवा केवल सामान्य देवाराधनके बदले अन्य किसी विचित्र उपायसे इस नश्वर संसारस्वर्गमें भेजा, इस विषयमें अनेक लोग अनेक प्रकारकी बातें कहते हैं, किन्तु यह बात सब लोग स्वीकार करते हैं कि यदि यह गुरुदेव राजा मानसिंहकी रक्षा न करते तो भीमसिंहका मनोरथ पूरा हो जाता। अतः भीमसिंहके प्राणनाशमें मानसिंहका ही विशेष उपकार दिखाई देता है। मारवाडके पाषाणहृदय भीमसिंहके हाथमें आत्मसमर्पण करके घोर कष्ट भोगनेके बदल जब राजा मानसिंह आत्महत्या करनेको उद्यत हुए तब उक्त प्रधानधर्म्मयाजकने भविष्यद्वक्ताके समान कहा कि, "आपकी जन्मपत्रीमें आत्मसमर्पणका कोई योग नहीं है, अन्तमें आपकी ही विजय होगी।" इस प्रकारके भविष्यद्वक्ता लोग राजा लोगोंके लिये भयानक अनिष्टसाधक हैं, क्योंकि वह अपनी बात सत्य करनेके लिये अनुचित उपायोंके करनेसे भी नहीं डरते। सुनते हैं कि उक्त धर्म्मयाजकने राजा भीमसिंहके मरणके लिये जो उपासना की थी उसके फलीभूत होनेके लिये विषप्रयोग आवश्यक समझा, इस कारण उस उपासना और हलाहलने राजा मानसिंहकी मृत्युका निवारण करके मारवाडके राज्यसिंहासन पर बैठा दिया। देवनाथने मानसिंहका जो उपकार किया था, उसके लिये बडा भारी सन्मान और अगणित वृत्ति निर्द्धारण करके भी राजा मानसिंह अपनेको उन धर्म्मयाजकका ऋणी समझते हैं। उक्त याजकने जब मंत्रसे पवित्र करके राजवेश उतारा और स्वयं अपने प्रभु राजा मानसिंहके साथ राजकार्य

करनेकी सम्मति दी तो राजसिंहासन भी पवित्र माना गया। देवनाथने जिस समय आशीर्वाद देकर मानसिंहके गलेमें जयमाला डाली उस समय राजा हाथ जोडकर उनके सामने खडे थे। धर्मयाजकके लिये राज्यके प्रत्येक प्रदेशमें इतनी अधिक भूवृत्ति निर्द्धारित कर दी गई है कि वह जिस देवालयके प्रधान याचक हैं उस देवताकी सम्पत्ति मारवाडके श्रेष्ठतम सामन्तोंकी अपेक्षा बहुत अधिक है, और सम्पूर्ण मारवाडका जितना कर एकत्रित होता है उनकी आय उसका दशांश है। कई वर्षतक देवनाथने अपने अधीश्वर मानसिंहको अपनी मुट्ठीमें रक्खा और उतने समयमें उन्होंने राज्यके कोषागारसे असंख्य धन लेकर ८४ चौरासी मन्दिर और उनके साथ धर्मशाला बनवा दी। उन धर्मशालाओंमें इनके शिष्यलोग सुखपूर्वक स्वच्छन्दतासे निवास करते हैं और वहांके कारीगरोंसे धन लेकर अपना पालन करते हैं। इङ्गलैण्डके बिलसिके समान मरुदेशके यह देवनाथ प्रतिक्षण अपनी शक्तिको इस प्रकारसे काममें लाते हैं कि हतबुद्धि मानसिंहके सिवाय और सब लोग उनसे हो गये हैं और भीतर २ शत्रुता रखते हैं। इनकी और राजमन्त्रीकी ऊपरी मित्रता है दोनों ही राजाको हस्तगत करके मारवाड शासनमें स्थित हुए हैं। उक्त प्रकारके स्वभाव चरित्रवाले याजकगण अपनी निर्द्धारिक कर्तव्य सीमासे बाहर कार्य करें तो सहजमें ही धर्मके नाममें कलङ्क लग जाता है। मारवाडकी उद्धत प्रकृतिसामन्त मण्डली इन गर्वित याजकोंके द्वारा जिस प्रकार अपमानित, लुप्तप्रताप और हतगौरव हुई थी उससे उन्होंने नरहत्याको अति सामान्य अपराध समझा। विख्यात इतिहासवेत्ता गिबनसाहब सामोसाटाके पालके विषयमें जो वचन लिख गये हैं मारवाडके देवनाथके विषयमें भी ठीक वही बात प्रयोगकी जा सकती है; "उनकी धर्मयाजक पद सम्बन्धी शक्ति केवल अर्थसंग्रह और लूटमारमें ही लगाई जाती है, यह धर्म विश्वासियोंमेंसे जो बडे बडे धनी लोग हैं उनके निकटस सदा बलपूर्वक धनका संग्रह कर लेते हैं और साधारण राजकरका बहुत सा धन अपने कामोंमें व्यय करते हैं। उनका जिस प्रकारका मन्त्रणा सभागार और सुवर्ण सिंहासन था वह जिस महा आडम्बर नहैश्वर्य्य प्रकाशके साथ सर्वसाधारणके सन्मुख उपस्थित होते, विनयावनत साधारण लोग जिस भावसे उनसे दयाकी प्रार्थना करते और अनेक कार्य्योंमें उनकी जैसी व्यग्रता दिखाई देती, उससे वे सब सामान्य विनयी याजकोंके बदले एक विचारके मालूम होते थे।" किन्तु देवनाथका पूर्ण विकसित गर्वप्रसून अन्तमें छिन्न भिन्न हो गया। देवनाथने अपने अधीनस्थ देवालय समूह और शिष्योंके व्ययका धन तथा मारवाडके प्रधान २सामन्तोंके अधीनस्थ प्रदेशोंके अनेकांश धीरे२ अपने कर लिये थे; सम्पूर्ण सामन्तोंके अनुचरोंकी जितनी संख्या थी, उतनी संख्या अकेले देवनाथके अनुचरोंकी थी। मारवाडेश्वर जिन राजचिह्नित ध्वजा पताका दण्डधारी शरीररक्षकोंके साथ बाहर निकलते थे, देवनाथकी सन्मान वृद्धिके लिये भी बीच २ में वे सब अनुचर उनके पीछे चलते थे। जिस समय गर्वित राजपूत सामन्तगण हाथ जोडकर देवनाथके सन्मुख खडे होते थे, उस समय अपने २ मनमें समझते थे कि "मारवाड पतिके अधिराजके निकट—प्रतिहिंसा प्रदानार्थी वृथा दर्पी याजक तथा धर्म्मविधानके बहानेसे आत्मगौरव

सुखेच्छा पूर्ण करनेवालेके सन्मुख नम्र होते हैं।" इधर उन याजकने ही इनके गर्वका चूर्ण और राजकर न्यून कर दिया था, यह बात भी उनके हृदयमें भली भाँति अंकित थी । यह सम्पूर्ण अपमानित सामन्त शीघ्र ही बदला लेनेको उद्यत हो गये, यद्यपि वह लोग उन धर्म्मयाजकके रक्तमें अपनी २ तलवार रंगनेको प्रस्तुत न थे, किन्तु शीघ्र ही उनके मनोरथ पूरा होनेका अवसर आ गया । दया किस चिड़ियाका नाम है जो जाति इस बातको बिलकुल नहीं जानती उस जातिके दुर्दांत डाँकू अमीरखाँकी सेनाने अपनी तलवारसे उसके प्राण ले लिये । सुनते हैं कि राजा मानसिंह भी उस हत्याकाण्डमें गुप्तरूपसे मिले हुए थे; यद्यपि उन्होंने उस हत्याकी आज्ञा वा अनुमति नहीं दी थी, किन्तु हत्या निवारण करनेकी भी कुछ चेष्टा नहीं की । इस समय उस रहस्यको प्रगट करनेवाले केवल दो मनुष्य जीवित हैं--एक राजा मानसिंह और दूसरे राजस्थानके डाँकू अमीरखाँ ।

सर्वश्रेष्ठ धर्म्मयाजककी मृत्युके पीछे शोचनीय दशाके आनेका आरम्भ हुआ । उस दशामें अत्यन्त विश्वासघातकताके साथ किस प्रकार निमाजके सामन्त और उनके कुटुम्बी लोग मारे गये और राजस्थानकी प्रफुल्ल कमलिनी कृष्णाकुमारीके नवीन जीवनकी वेल अकालमें सूख गई, यह सब बातें पीछे लिख आये हैं । मुझको झाला-मन्दसे राजधानीमें लानेवाले वीरवर सुरतानपर जो आक्रमण किया गया था, इतने वर्ष पहिले बोया हुआ यह बीज ही उसका मूल कारण है। केवल सुरतानका ही जीवन नष्ट किया हो ऐसा नहीं; किंतु मरुक्षेत्रके अधीश्वर मानसिंह क्रमसे प्रथम श्रेणीके शक्तिशाली सामन्तोंमेंसे किसीको निर्वासित और किसीको निर्धन कर रहे हैं। यद्यपि इन सब षड्यन्त्र जालभेदका वर्णन अत्यन्त नीरस मालूम होना सम्भव है तथापि उनमेंसे कई बातोंका लिखना आवश्यक है, कारण कि उसको पढकर पाठक लोग राजा मानसिंहके (जो इस समय बृटिश गवर्नमेंटके मित्र हैं) हिंस्रस्वभावका पूर्ण परिचय पासकैंगे ।

संवत् १८६० (सन् १८०४ ईस्वी) में माघमासकी पाँच तारीखको मानसिंह जालो-रसे जोधपुरमें आकर अभिषिक्त हुए । मानसिंहसे पहिलेके राजा भीमसिंह अपनी एक गर्भवती स्त्रीको छोड गये थे । विधवा रानीने पतिके परलोक सिधारनेपर अपने गर्भकी बात छिपाकर रक्खी, और यथासमय एक पुत्र उत्पन्न किया रानीने उस बाल-कको एक छबडीमें रखकर पोकर्णके सामन्त सवाईसिंहके पास भेज दिया । उक्त साम-न्तने दो वर्ष तक उस बालकको छिपाकर रक्खा अन्तमें मारवाडकी सामन्त समितिमें इस बातको प्रकट किया और सबकी सम्मतिसे राजा मानसिंहसे यह सब रहस्य वर्णन करके कहा कि "मारवाडका असली उत्तराधिकारी यह बालक धौंकुलसिंह है, अतः नागर और उसके अधीनस्थ प्रदेशको इसे दे दीजिये ।" राजा मानसिंहने कहा कि यदि बालककी माताने इसको सत्य सत्य ही भीमसिंहका औरस पुत्र बताया है तो मैं इस अनुरोधका अवश्य ही पालन करूंगा । रानीने अपने प्राणनाशके भयसे अथवा पोक-

र्णके सामन्तके षड्यंत्रजाल विस्तारसे उस बालकको अपना पुत्र नहीं माना। सामन्त मण्डली इस बातको असत्य समझकर भी कई वर्षतक चुप रही। प्रकृतिकी शान्तमूर्ति जिस प्रकार प्रबल वायुके आनेका पूर्व लक्षण प्रकट करती है, सामन्तलोगोंकी इस निर्बलताने भी उसी प्रकार मारवाडमें राजनैतिक आंधी की सूचना दी थी; शीघ्रही उस प्रचण्ड वायुसे मारवाडके राजनैतिक महलकी जडतक काँप गई, स्थान २ में लुटेरे और विजातीय शत्रु घुस गये, राजाको सिंहासनसे उतार दिया और उन प्रधान षड्यन्त्र-कारीने भूलसे भी अपने मनमें जिस बातकी कल्पना नहीं की थी वह सामने आगई अर्थात् सेनासहित नष्ट हो गया। उस विश्वासघातकताके कारण सामन्त शासन प्रणालीके ऊपरसे बहुत दिनोंके लिये राजालोगोंका विश्वास उठ गया। पोक-र्णके सामन्त सवाईसिंह धौंकुलसिंहको मारवाडके सिंहासनपर न विठा सके। अन्तमें उन्होंने धौंकुलसिंहको जयपुर वंशके खेतडी नामक प्रदेशके शिखावत सम्प्रदायके स्वा-धीन सामन्तके निकट बेखटक रहनेके लिये भेज दिया। कुछ काल पीछे मारवाडके राणाकी पुत्री कृष्णकुमारीके निमित्त मारवाड और जयपुरराजमें भयानक युद्ध उप-स्थित हुआ; यह उपयुक्त अवसर समझकर सवाईसिंहको उस समय वहांसे कार्य्य रंग भूमिमें ले आये। कृष्णाकुमारीके निमित्त मानसिंहके साथ जयपुरपतिका जो भयंकर युद्ध हुआ था उसका फल ऊपर लिख चुके हैं। यह सहजमें ही अनुमान किया जा सकता है कि सवाईसिंहके षड्यन्त्रसे ही उत्तरभारतके संपूर्ण राजा लोग इस युद्धमें संमिलित हुए थे। राजा मानसिंह जिस समय परम रूपवती कृष्णाकुमारीके पाणिग्रह-णकी आशासे समराग्नि प्रज्वलित करनेको उद्यत हुए थे उस समय मारवाडकी प्रजा उनसे विरक्त हो गई, यह देखकर चतुर सवाईसिंहने राजा भीमसिंहके औरस पुत्र धौंकुलसिंहको मारवाडका असली राजा बताकर घोषणा कर दी, तब सब राजालोग सवाईसिंहके पक्षमें हो गये। इसके पीछे कैसे २ उपाय किये, क्या २ लोमहर्षण काण्ड घटा, किस प्रकार कृष्णाका जीवनदीप अकालमें बुझाया गया, उसको पीछे लिख आये हैं, इस घटना सूत्रमें ही पोकर्णके सामन्त सवाईसिंह मारे गये, और उनके कुछ ही दिन पीछे धर्म्मयाजक देवनाथ अमीरखाँके अनुचरों द्वारा शोचनीय रूपसे नष्ट हुए।

अपनी प्रबल मानसिक शक्तिके बल और कई मित्रोंकी सहायतासे अपने सब शत्रु-ओंका नाश करके राजा मानसिंह विक्षिप्तसे हो गये। प्रत्येक स्त्री पुरुषपर उनको सन्देह होने लगा, केवल रानीके हाथके बने हुए भोजनके सिवाय और सब भोजन करना बन्द कर दिया; उनका विराग क्रमसे बढता गया, अन्तमें राजकार्य और सबका संग छोडकर एकांतमें रहने लगे। उनकी असली वा नकली उन्मत्तताके दूर करनेके लिये जितने उपाय किये गये वह सब निष्फल हुए, वह दिन रात केवल देव-नाथकी मृत्युपर शोक प्रकाश करने और देवताओंकी स्तुति करनेमें लगे रहते थे। जिस समय राजा मानसिंहके चित्तकी ऐसी दशा हुई उस समय उनसे पुत्रके ऊपर राज्य-

शासनका भार समर्पण करनेका अनुरोध किया गया । तब उन्होंने अपने हाथ अपने पुत्रके मस्तकपर राजतिलक लगाया । नवीन राजा छत्रसिंह उस समय व्यवहारशून्य थे, यह जैसे विवेक बुद्धि हीन थे वैसे ही लंपट थे । राज्यप्राप्तिके पीछे अक्षयचन्द बनियेंको उन्होंने मन्त्री बनाया ।

सन् १८०९ ईसवीसे-१८१७ ईसवीतक मारवाडकी दशा बहुत बुरी रही । उस ही समय घटनाचक्रसे राजस्थानका भाग्य अंग्रेजोंके हाथमें आया । छत्रसिंहने बृटिश गवर्नमेण्टके साथ संधि स्थापन करनेके लिये एक दूतको भेजा, किन्तु संधिस्थापनसे पूर्व ही छत्रसिंह स्वर्गको सिधार गये । उनकी इस अकालमृत्युके विषयमें अनेक लोग अनेक बात कहते हैं । कोई २ कहते हैं कि अतिशय लम्पटताके कारण शरीरकी दुर्बलताने उनके जीवन दीपको अकालमें निर्वाण कर दिया, दूसरे लोग कहते हैं कि उन्होंने एक राजपूतयुवतीका सतीत्व नष्टकरनेकी चेष्टा की थी इस कारण युवतीके पिताने अपनी तलवारसे उनके प्राण ले लिये । छत्रसिंहकी मृत्यु और राजनैतिक दशा परिवर्तित देखकर मारवाडकी सामन्तमण्डली एकान्तवासी मानसिंहके ऊपर दृष्टि डालनेके लिये बाध्य हो गई । मैंने जो कुछ बातें लोगोंसे सुनी उनमें यदि आधी बातें भी सत्य हो तो मैं यह कह सकता हूं कि देवनाथके हत्याकाण्डसे छत्रसिंहकी मृत्युतक जितने समय तक महाराज इस दशामें रहे वह समय उनके पापोंका प्रायश्चित्तस्वरूप था । जिस समय संवाददाताने छत्रसिंहकी मृत्युका समाचार सुनकर उनको राज्यशान्ति रक्षाके लिये प्रस्तुत होनेको कहा, उस समय वह दोनों बातोंका भाव कुछ भी नहीं समझ सके । दीर्घकालतक उन्मत्तता प्रगट करनेके कारण वह वास्तवमें विक्षिप्तके समान हो गये थे । क्षौर न करानेके कारण उनकी डाढी मूछें और जटाजालने उनकी आकृतिको पागलोंके समान बना दिया था । किन्तु इस विरक्तिके समयमें उन्होंने अपने जीवनकी रक्षामें विशेष यत्न किया था । जो कई सामन्त छत्रसिंहकी राज्यशासन सहायता करते थे उन्हींके अनुचर राजा मानसिंहकी सेवा करते थे, सुनते हैं कि इन सेवकोंने राजा मानसिंहकी हत्या करनेको कई बार विष दिया था । उनका यह बुरा उद्देश सिद्ध न होनेके कारण लोग सत्य सत्य ही उनको विक्षिप्त समझने लगे, और इस बातको भी भलीभांति समझ गये कि इनका जीवन दैवमन्त्रसे रक्षित है । यथार्थमें बात यह थी कि राजा मानसिंहका एक अति विश्वासी सेवक था, उसने इस घोर विपत्तिमें भी राजाका संग नहीं छोडा था, वह अपना लाया हुआ भोजन ही राजाको खिलाता था ।

राजा मानसिंहने धीरे २ अपनी उन्मत्तताको छोड दिया । अंग्रेजोंके साथ संधि होते ही उन्होंने इस बातको भलीभांति समझ लिया कि राज्यकी शान्ति रक्षा करनेके लिये सेना लेकर युद्धमें जाना ही उचित है । उन्होंने अपनी इस इच्छाको स्वयं ही प्रगट कर दिया । राजा मानसिंहने बृटिश गवर्नमेन्टकी सहायतासे सम्पूर्ण शत्रुओंको दमन कर दिया ।

राजा मानसिंहने गुप्त उद्देश सिद्ध करनेके लिये अपने बाहुबलके अतिरिक्त एक अन्य अस्त्रका आश्रय लिया । उन्होंने अपनी स्वाभाविक चतुरतासे प्रगटमें ऐसी दया दिखाई कि सम्पूर्ण सामन्त उनका विश्वास करने लगे, और मन २ में सोचने लगे कि "महाराज हमारे पिछले अपराधोंको भूलकर हमारा विश्वास करते हैं।" इस कारण वे सब ही असावधान रहने लगे । इधर सामन्त लोग राजदरबारमें अपनी २ प्रभुता बढाने लगे, महाराज प्रगटमें इधर कुछ भी ध्यान नहीं देते थे । उसी समय सामरिक नेता पोकर्णके सालिमसिंह और प्रधान मंत्री अक्षयचंदको शक्तिहीन करनेके लिये योधराजने अपने दलबलके साथ विवाद बढाना आरंभ किया । राजा मानसिंह उनके इस विवादसे मनमें बडे प्रसन्न हुए । परंतु प्रगटमें उदासीनता दिखाने लगे । उन दोनोंने भूलसे भी यह इस बातका अनुमान नहीं किया कि राजाने अपना मनोरथ सिद्ध करनेके लिये ही यह जाल रचा है । जितने दिन तक मारवाडका राज छत्रसिंहके शिर पर रहा, उतने समयतक ही अक्षयचंदने प्रधानमंत्रीत्व किया था । मारवाडके आर्थिक और राजनैतिक सब विषय उस को ही मालूम थे; इस कारण सहसा राजा मानसिंहने उसको नहीं मारा, किन्तु जो बातें उनकी विक्षिप्त दशामें हुई थीं उन सब बातोंको जानकर उसके मारने और उसकी सम्पत्ति अपने हस्तगत करनेकी चेष्टा करने लगे। मानसिंह अपने मन ही मन सोचने लगे कि केवल प्राणनाशद्वारा यह दो उद्देश सिद्ध नहीं हो सकते । चतुर अक्षयचन्दने भी अपनी इस शोचनीय दशाको जान लिया । अंग्रेजोंके साथ राजाकी मित्रता हो जानेके कारण वह डरने लगा; और अंग्रेजोंकी ओरसे राजाको विरुद्ध कर देनेकी चेष्टा करने लगा । राजा मानसिंह भी दिखानेके लिये उसकी हांमें हां मिलाने लगे । प्रधान मंत्री और उसके साथी गुप्तरूपसे राजाके वशमें आ गये ।

जिस समय यह गुप्त षड्यंत्र जाल फैल रहा था, उस समय ही मैं राजसभामें पहुँचा था । मैंने राजा मानसिंहको मनमलीन, गहरी चिंतामें मग्न, प्रत्येक कार्य्य सावधानीके साथ करते हुए, और कुचक्की अक्षयचंदका पक्ष समर्थन करनेवालोंसे घिरा हुआ देखा। अक्षयचन्द यद्यपि प्रतिद्वन्द्वियोंको बन्दी करनेमें समर्थ नहीं था, तथापि शत्रुओंकी ओरसे राजाको विरुद्ध करनेके यत्नमें कोई त्रुटि शेष नहीं रक्खी । किन्तु उसके जीवन नष्ट करनेके लिये जो जाल फैलाया जा रहा था, उसकी उन समस्त चातुरी छलना, धूर्त्तता और षड्यंत्रने उसको उस जालमें और भी जकड दिया। राजा मानसिंहने पहिले ही अक्षयचंदके द्वारा सामन्त मण्डलीका जीवन हनन कार्य्य पूरा कर लिया। उसके उस हत्याकाण्डनाटकका प्रथम अभिनयस्वरूप सुरतानका स्वर्गवास सबसे पहिले समाप्त हुआ; इसके पीछे बहुतसे सामन्त इसी प्रकारसे मारे गये, यहां तक कि राजा मानसिंहका प्रथम उद्देश सिद्ध होनेमें कुछ भी शेष नहीं रहा । अन्तमें प्रतिहिंसाके फल देनेका समय उपस्थित हुआ; मंत्रीवर अक्षयचंद और उसके साथी लोग राज्यके पदोंसे अलग करके बन्दीभावसे कारागारमें भेजे गये । राजा मानसिंहने अक्षयचंदको जीवनदानकी आशा

देकर ठग लिया; उसने अपनी चालीस लाख रुपयेकी सम्पत्तिकी एक सूची राजाके हाथमें सौंप दी। राजाने उस सब सम्पत्तिको अपने हस्तगत करके अन्तमें अक्षयचंद-को मार डाला। दुर्गाध्यक्ष नागजी और मल्लजी धोन्धलनामक दो मनुष्य राजाके मृतपुत्रके परम प्रेमपात्र और उपदेशक थे; जब राजाने निकाले हुए अपराधियोंको क्षमा कर देनेका ढंढोरा पिटवाया तो उपरोक्त दोनों व्यक्ति राज्यमें फिर लौट आये और अपनेको अविद्रोही समझकर निवास करने लगे। छत्रसिंहके शासनसमयमें इन्होंने जितना धन राजकोषसे संग्रह कर लिया था, उस सब धनको राजाने अपने हस्तगत करके उन दोनोंको विष दे दिया और उन दोनोंके शवको परिखाकी धारमें डाल दिया। उपरोक्त हत्याओंके कर डालनेपर भी राजा मानसिंहकी पैशाचिक कामना निवृत्त न होकर क्रमसे प्रबल होने लगी। इनके नवीन मन्त्री फतेहराज, अक्षयचन्द और सम्पूर्ण चम्पावत सम्प्रदायके प्रबल शत्रु थे;कारण कि उसकी धारणा यह थी कि, "यही सब मेरे भ्राता इन्दुराजको याजक देवनाथके जीवन हनन कालमें मारनेके कारणस्वरूप थे।" इस कारण उसने इस लोमहर्षण अभिनयकालमें पूर्ण उद्योगके साथ राजा मानसिंहकी सहा-यता की थी। राजा मानसिंह भी इसी प्रकार प्रतिदिन अगणित मनुष्योंमेंसे किसीके प्राणनाश, किसीको बन्दी और किसीकी समस्त सम्पत्ति छीननेकी आज्ञा देते थे। सुनते हैं कि राजा मानसिंहने इस प्रकार एक करोड रुपया अपने राजकोषमें बढाया।

इस राजसभामें मेरे जानेके छः मास और बृटिश गवर्नमेंटके साथ मित्रता स्थापनके अठारह मास पीछे उक्त शोचनीय हत्याकाण्डादि किये गये थे। राजपूतानेके देशी राजा लोगोंके साथ अपना औदास्य भाव सूचक राजनीतिका विषय ऊपर लिख चुके हैं। रक्तपिपासु दुर्दान्त अत्याचारी राजा महताजातीय प्रत्येक वणिकका वाणिज्यद्रव्य अपना कर लेंगे और प्रतिष्ठित निर्दोषी सामन्तलोगोंको अपनी इच्छानुसार देशसे बाहर निकाल देंगे, तथा "उनके आभ्यन्तरिक शासनमें मैं हस्तक्षेप नहीं करूंगा" इस प्रतिज्ञाने ही मेरे हाथ पैर बांध रक्खे थे। राजा मानसिंहने जितने आत्मीय और सामन्तोंके प्राणसंहार किये थे मारवाडके इतिहासमें किसी राजाके शासनमें भी इतने लोमहर्षण काण्ड नहीं घटे थे।

जो इतिहास भविष्यत्‌में जाननेके योग्य है, पाठक मण्डली उसको वर्त्तमान स्थान-पर पढनेसे अवश्य ही राजा मानसिंहके दोषोंको भूलकर उनको गंभीर, नम्र और पूर्णशिक्षित राजा समझेगी। मैं समझता हूँ कि मानसिंहने विचारपूर्वक ही यह संहा-रमूर्ति धारण की थी। जो कुछ भी हो इन सब बातोंके लिखनेके लिये अधिक समयकी आवश्यकता है। राजा मानसिंह पूर्ण शिक्षित थे, वह फारसी भाषा और अपनी जा-तीय भाषामें भलीभांति बातचीत करते थे। उन्होंने अपनी कवितामें लिखे हुए अपने वंशके छः इतिहास मुझको उपहारमें दिये उनमेंसे जिन दोमें सात हजार कविता थीं उनका मैंने अनुवाद लिख लिया। प्रत्युपहारस्वरूपमें मैंने भारतवर्षमें मुसलमानोंके शासनका बडा इतिहास और "खोलासात् उल तवारीख" अर्थात् भारतवर्षका संक्षिप्त

इतिहास भेज दिया, मुलाकातके समय महाराजको मैंने जैसा पंडित और सज्जन समझा था परिणाममें ठीक उसके विपरीत हुआ। महाराजके साथ बातचीतके समय राज्यकी शासनप्रणाली और राजपूतोंके कर्त्तव्यता संबंधी उपदेश उनसे सुनकर मुझे परमानन्द हुआ। महाराज मुझको केवल एक अनुचरके साथ महलके अनेक कमरोंमें ले गये और वहांसे बडे लम्बे चौडे मरुक्षेत्रकी ओर मेरी दृष्टिको फेरा, पासके छोटे २ शिखर दृष्टिको दूरतक जानेमें रोकते थे। इतने बडे मैदानमें केवल दो एक नीमके वृक्षोंके सिवाय और कोई वृक्ष दिखाई नहीं दिया। कई घंटे तक बातचीत होनेके पीछे मैं डेरेपर लौट आया, वहां आकर देखा कि मेरे दोनों मित्र कप्तान बाघ और मेजर गफ कई रोहिल्ला कुत्तोंकी सहायतासे एक मृगका शिकार कर लाये हैं।

८ वीं नवंबर-मरुक्षेत्रकी "पंचरंगी" राजपताका यवनशासनके निकट झुकनेसे पाहिले इस प्रदेशकी प्राचीन राजधानी मन्दौर थी उसके ध्वंस स्तूपोंमें घूमकर इतिवृत्त जाननेकी इच्छासे उस दिन प्रातःकाल ही मैंने यात्रा की राजाके भेजे हुए अनुचरोंके साथ आगे बढा; अभीष्ट स्थानपर पहुंचनेमें एक घंटेसे कुछ अधिक समय लगा, यद्यपि यह स्थान ढाई कोशसे अधिक दूर नहीं था, किंतु हम लोग बहुत धीरे २ चले थे। राजधानीसे नगरकी ओर जो मार्ग गया है, उस मार्गसे जानेके लिये मैंने सुजात तोरणमें होकर राजधानीको छोडा। कुछ ही दूर चलनेपर "महामन्दिर" को देखा। राजा मानसिंहने ध्वंसप्राय जालौरसे उद्धार पाकर अपने व्ययसे इस विशाल मंदिरको बनवाया था। डेढ़ कोश मार्ग आगे २ को पूर्वको नीचा होता चला गया है। मैं उस मार्गसे होता हुआ पश्चिमकी ओर जानेवाले मार्गमें चलकर चारों ओर शिखर मालासे घिरे हुए मारवाडके राजवंशके प्राचीन कीर्तिपूर्ण स्थानमें पहुँचा। यह मार्ग बहुत छोटा है; शिखर बहुत ऊंचे तक सीधे चले गये हैं और पर्वतमें सैकडों गुफा संन्यासियोंका निवास स्थान बनी हुई हैं; पूरिहर लोगोंकी प्राचीन राजधानी इस मन्दिरमें शत्रुओंका प्रवेश रोकनेके लिये चारों ओर दुर्ग प्राकार बना था, उसका ध्वंसावशेष अब भी दिखाई देता है। इस स्थानसे, निर्मल और स्वादिष्ट जलवाली नदी नाचती हुई चली है और एक सुन्दर खिलानमें होकर जलधार चली गई है। कुछ दूर चलनेके पीछे मार्ग क्रमसे चौडा आने लगा; और दो सौ घरोंसे युक्त ग्रामके अतिक्रम करनेपर एक ऊंचे स्थान पर बने हुए मंदिरोंने हमारी दृष्टिको आकर्षित किया। यह सब राठौर राजालोगोंके समाधि मंदिर हैं; मरुक्षेत्रके चिरस्मरणीय अधीश्वरोंके शव जिस स्थानपर रानियोंके साथ भस्मीभूत किये थे उस २ स्थानपर उनके स्मरणार्थ यह मंदिरावली बनाई गई है। दक्षिणसे उत्तरकी ओरतक जितने प्रधान मंदिर हैं यह क्षुद्र नदी उनके दक्षिणमें होकर मन्द चालसे चलती है। पूर्वोक्त मंदिर श्रेणीके आरम्भमें सुविख्यात राव मालदेवका स्मारक मंदिर है, उसमें उनकी विक्रम प्रताप गौरवोचित मूर्ति स्थापित है। साहसी शेरशाह जिसने बडी वीरताके साथ मुगलसिंहासनपर आक्रमण किया था, इन मालदेवने बडे विक्रमके साथ उन शेरशाहके विरुद्ध तलवार चलाई

थी। सबसे अन्तमें महाराज अजितसिंहका स्मारक मंदिर है, और बीचमें सूरसिंह उदयसिंह, गजसिंह और यशवन्त सिंह आदिके स्मारक मंदिर दिखाई देते हैं।

जातीय इतिहासकी मूल आख्यायिकास्वरूप इस स्मारक मंदिरावलीने मारवाडके गौरवगरिमाका समय निर्द्धारण कर दिया है। मालदेवके समयसे राठौर कीर्तिभूधर शृङ्ग आकाशभेद करके अजितसिंहके पुत्रोंकी शासनलीलातक नीचे झुके रहे। वीरवर मालदेवका स्मारक मंदिर जो बहुत सीधे और सामान्य भावसे बना हुआ है और जिसने चण्ड और योधके स्मारक मंदिरोंको अपनी छायामें ढक लिया है उस मंदिरके साथ राजा अजितके स्मरणार्थ बने हुए परम रमणीय महलकी तुलना करनेपर हम स्वयं ही समझ सकते हैं कि, इस मरुक्षेत्रमें बाहरी सौन्दर्य्य और विलासिता क्रमशः बढती गई है। जो मालदेव अमित तेजके साथ अफगान साम्राट्के विरुद्ध युद्ध करनेको खडे हुए थे, (अफगानसम्राट्की चिरस्मरणीय उक्ति "मैंने एक मुठी गेंहूके लिये भारतसिंहासन खो दिया था।" यह प्रगट कर रही है कि उस समय सम्राट्ने जिन राठौर लोगोंको आक्रमण किया था वह महा दीनदशायुक्त और महावीर थे।) उनके समयसे लेकर अजितसिंहके शासन समय तक इन स्मारक मंदिरोंकी आकृति परिवर्द्धित और बाहरी सुंदरतायुक्त की गई, राजा गजके स्मारक मंदिरके साथ उनके उत्तराधिकारीके मंदिरकी तुलना करने पर गजका मन्दिर सरल और साधारण मालूम होता है। यह सम्पूर्ण मन्दिर लाल रंगके छोटे २ पत्थरोंसे बने हैं; यह पत्थर इतने कोमल हैं कि इनपर बेल बूँटा खोदनेमें कारीगरोंको कुछ भी श्रम नहीं होता। इन मन्दिरोंकी गठन प्रणाली शिव और बुद्ध दोनोंके मन्दिरके समान है, किन्तु अधिक भाग और विशेष करके स्तम्भश्रेणी जैनियोंके अनुकरणमें कमलमीरके स्तभोंके समान बनी है। विशेष करके मैं राजा यशवन्तसिंह और अजितसिंहके स्मारक मंदिरोंके विषयमें कहता हूं; राजाके प्रधान द्वारा इन दोनों मन्दिरोंका नकशा तैयार कराके मैं यूरुपमें लाया हूँ; किन्तु खुदाईके काममें बहुत धन खर्च होता है। साफ और ऊँचे पाषाण स्तूपोंके ऊपर यह मन्दिर स्थापित है यशवन्तसिंहका मन्दिर कुछ अधिक दृढ है, किन्तु आकृति और परिमाणमें ठीक अजितसिंहके स्मारक मन्दिरके समान है।

मन्दिरके सन्मुख आंगनमें होकर रमणीय स्तम्भोंसे शोभित संपूर्ण चांदनीके प्रवेशद्वारोंसे होते हुए भीतरके प्रधान मन्दिरमें पहुंचना होता है; शिवालयके समान यह चारतल ऊँचा और शिखर तथा कलशयुक्त है। गठन और खोदित भास्करकार्य्य प्रशंसाके योग्य है, मन्दिरके मूलमें और ऊर्द्धभागके अनेक स्थानोंमें जिस प्रकार अगणित स्तम्भ शोभायमान हैं देखनेमें भी उसी प्रकार अत्यन्त मनोहर हैं। यह स्मारक मन्दिर इजिपटके प्राचीन मन्दिरके समान हैं। इन स्मारकमन्दिरोंके साथ२ स्मरणीय राजकुलके ऊपर दृष्टि डालनेपर सहजमें ही यह ज्ञात हो सकता है कि, इस मारवाडराजवंशमें जिस प्रकार उपरोक्त महा २ वीरोंने जन्म लिया था, उस प्रकार किसी देशके किसी इतिहासमें भी नहीं दिखाई देता। उन राजालोगोंकी नामाव-

लीके साथ हम मेवाड सुप्रतिष्ठित वंशवाले राणागण और तैमूरवंशके सुप्रसिद्ध उत्तराधिकारियोंकी नामावली संयुक्त करके बडे अभिमानके साथ यूरूपके राजालोगोंसे पूंछते हैं कि यूरूपमें किसी समय एक कालमें क्या ऐसे महावीर सुशासन कर्त्ता और विद्वानोंने जन्म लिया था ?

मेवाड	मारवाड	दिल्ली
राणासांगा	रावमालदेव	बाबर और शेरशाह
⊂⊃	रावसूरसिंह	हुमायूं
राणा प्रतापसिंह	राजा उदयसिंह	अकबर
राणा अमरसिंह (१ म) राणाकर्णसिंह	राजा गजसिंह	जहांगीर और शाहजहां
राणा राजसिंह	राजा यशवंतसिंह	औरंगजेब
राणा जयसिंह राणा अमरसिंह (२य)	राजा अजितसिंह	फरुखसियादके परवती दिल्लीके सिंहासनप्रार्थी गण

मालदेव और अकबरके मित्र और मारवाडके प्रथमराजोपाधि धारी (इससे पहिले रावोंकी उपाधि थी) उदयसिंहसे आरंभ करके औरंगजेबके प्रबल शत्रु यशवन्तसिंह और अजितसिंह (जिन्होंने निज बाहुबलसे मुगलोंके भयंकर अत्याचारसे अपने राज्यका उद्धार किया) आदि यह सब ही राजा बडे वीर और स्वदेशहितैषी थे।

मैंने अपने साथी प्रदर्शकसे पूंछा कि "अजितसिंहके बच्चोंके समान साहसी सन्तानगण –जिन्होंने उनके स्मरणार्थ यह मन्दिर बनवाया है और जो अपने राज्यका परिमाण बढा गये हैं उनका स्मारक मन्दिर कहां है ?" उसने छोटे २ दो कमरोंकी ओर संकेत करके कहा कि "इस स्थानमें उनका प्रेतकृत्य समाप्त हुआ था। बडे ऊंचे मनोरम मन्दिरोंसे सहसा एक साथ ही इतनी बडी अवनतिका क्या कारण है, यह दोनों कमरे बडी तीव्र और प्रबलभाषामें उसको और मारवाडके राजसमूहकी घटनापूर्ण जीवननाट्यके चरम नैतिक फलको प्रगट कर रहे हैं। अभयसिंहने अपने जन्मदाता पिताके प्राणसंहार किये थे, यद्यपि इनका शासनकाल सन्मानके साथ समाप्त हुआ, तथा इन्होंने अपने राज्यका परिमाण दूना कर लिया था, तथापि उनके पुत्रके साथ उनके भ्राता भक्तसिंहके बडे भारी अपराधी होनेके कारण ही मारमाडको असीम निग्रह भोगना पडा। उनकी विशेष इच्छा होनेपर भी अपनी शवभस्म रक्षाके लिये कुछ शक्ति नहीं थी। जिस श्रेणीमें उक्त पितृहन्ता और उनके साहसी भ्राताका मंदिर स्थापित है उस ही श्रेणीमें अपने जीवनके शेष अंश तक अविश्रान्त वीरता दिखानेवाले महावीर विजयसिंहका था। मैंने आश्चर्यमें भरकर प्रदर्शकसे कहा कि " महावीर और परम श्रेष्ठ स्वामीकी शवभस्मको जो देश मनोहर मंदिरमें रखना नहीं जानता उस देशको धि-

कार है । " विजयसिंहके तीन पुत्रोंके (उनमेंसे बडे जालिमसिंहकी बात ऊपर लिख चुके हैं) स्मारक मंदिर उनके पिताके मन्दिरके पास बने थे, उनसे कुछ ही दूरीपर राजा भीमसिंह और उनके अग्रज (वर्त्तमान अधीश्वर राजा मानसिंहके पिता) गुमाकको (यह अप्राप्त व्यवहारावस्थामें परलोक सिधार गये थे) मन्दिर था । इस श्रेणी के सबसे अन्तमें छत्रसिंहका स्मारक मंदिर विराजमान है । मैंने अनादरके साथ उसको देखकर साथी प्रदर्शकसे पूछा कि " छत्रसिंहसे श्रेष्ठ बहुतसे राजालोगोंके स्मारक मंदिर न बनवाकर किस मूर्खने इनका ऐसा स्मारक मंदिर बनवाया है ? " उसने कहा कि माताका प्रेम ही इस मंदिरके बननेका मूलकारण है ।

प्रत्येक मासकी अमावास्या और संक्रांति तिथि पितरोंका पवित्र दिन है; मारवाडमें ऐसी रीति है कि इन दोनों दिन राजा स्मारक मंदिरोंके निकट जाकर जलदान करते हैं । मैं जिन बातोंके जाननेकी इच्छासे इस स्थानपर आया था साथमें मूर्ख प्रदर्शक होनेके कारण उनमेंसे बहुतसी बातोंको नहीं जान सका । यदि मैंने राठौरजातिका इतिहास पहिले अच्छी तरह न पढा होता तो इस समाधि क्षेत्रमें आकर कुछ जाननेमें समर्थ न होता । किंतु उस प्रदर्शकने एक असली घटना प्रकाशित कर दी। राजा अजितसिंहके शवके साथ चौंसठ रानियें जलती हुई चितामें शरीर जलाकर सूर्य्यलोकको चली गईं; किन्तु बूंदीके राजा बुधसिंह जिस समय जलमग्न हुए थे उस समय उनकी ८४ रानियें अपने अपने जीवित शरीरको भस्मीभूत करके सतीनामको चरितार्थ किया था! हाडाजातीय उक्त संभ्रांत वंशके सम्पूर्ण स्मारक मंदिर राठौर लोगोंकी अपेक्षा अधिकतासे असली उद्देश ज्ञापक हैं, क्योंकि उनमेंसे प्रत्येक सतीकी पाषाणकी बनी हुई मूर्ति समाधि मंदिरोंमें छोटी २ वेदीके ऊपर स्थापित है । बुधसिंह अजितसिंहके समसामयिक और औरंगजेबके अत्यन्त साहसी सेनानायक थे । उनके समयसे प्रायः एक सौ बीस वर्षकालके गर्भमें विलीन हो गये हैं, इस समय पाठकगण उलटफेरका चूडांत निदर्शन देखिये!–जिस समय वह बुधसिंहके वंशधर मेरे प्रिय मित्र राजा विष्णुसिंहने सन् १८२१ ईसवीमें प्राण छोडे,उस समय उन्होंने आज्ञा दी कि "हमारी कोई स्त्री भी पतिभक्ति और प्रेमका परिचय देनेके लिये चितामें न जले । वह मुझको अपने बालकपुत्रके अभिभावक पदपर वरण कर गये,–कुछ दिन पीछे मैं बून्दीमें चला गया और उनकी इस आज्ञाका भलीभांति पालन कर दिया ।

दुर्गके नीचेवाले स्मारक चिह्नोंके विषयमें भी लिखते हैं । पर्वतके ऊपर और मंदिर दुर्गप्राकारके बाहरी स्थानमें रावरणमल्ल,राव गङ्गा और पुरीहर लोगोंके हाथमेंसे जिन्होंने मंदौर छीन लिया था उन चंडका मंदिर विराजमान है । इन राजवंशीय तीनों महावीरोंका उक्त मंदिरके दो सौ हाथकी दूरीपर एक स्वतंत्र स्थान है स्वाभाविक रोगसे जिन रानियोंने प्राणत्याग किये थे उनके लिये निर्द्धारित है । प्रिय पाठक ! अब राठौर लोगोंके इस समाधिक्षेत्रसे बीभत्स दृश्यमें परिणत पुरीहर लोगोंकी राजधानी देखनेके लिये आगे बढिये ।

जिन्होंने प्राचीन टास्कोनका कार्टोना, वलटेरा अथवा, अन्यान्य नगर देखे हैं, वह लोग मन्दौरके प्राकारकी असली आकृति सहजमें ही कल्पना कर सकेंगे, क्योंकि यह नगरप्राकार ठीक वैसा ही विराटकाय है। यह बडी विचित्र बात है कि, यूरोपके समान भारतवर्षके प्राचीन जातियों (यूरोपके गालाटी और केल्टो जातिके समान पालिनाम तुल्यार्थबोधक है) में यंत्र विज्ञानशिक्षाके अभावसे एक ही प्रकारकी प्रणालीसे यह सब विराटकाय प्राकार एक दूसरेके ऊपर स्तूपाकारसे निर्माण किये गये हैं; उत्तराधिकारी लोग इन ऊंचे प्राकारोंको देखकर विचार सकते हैं कि पूर्वकालमें इस प्रदेशमें बडे २ शरीरवाले राक्षस रहते थे। सम्पूर्ण राजपूताना और सौराष्ट्रसहित भारतके इस पाश्चात्य प्रदेशके राजा लोग जिस भावसे अपने नामको अक्षय करनेके लिये अगणित कीर्त्तिस्तंभ और स्मारक मंदिरादि निर्माण तथा जिस भावसे अपनी धर्म्मप्रणाली और पवित्र चरित्र चिह्न अङ्कित कर गये हैं, वह सब उनके प्रतापप्रभुत्व और बडी भारी शक्तिका परिचय देनेवाले हैं। प्राचीन भारतके छत्तीस राजवंशोंमें "राजपालि" भी एक प्रधान गिना जाता है। सौराष्ट्रमें सतरञ्ज शिखर नामका जो बौद्धोंका पवित्र तीर्थस्थान उस शिखरकी तलैटीमें "पालिथाना" अर्थात् पालियोंकी जो वासभूमि है और गदवारका पालिनगर उस पालिजातिकी प्राचीन राजनैतिक शक्ति और धर्म्मप्रावल्यकी विशेष साक्षी दे रहे हैं। सम्पूर्ण राजपूतानेमें ऐसा एक भी प्राचीन नगर नहीं देखा जहां यथाकार स्तंभावली, शिखरमालासे मैंने खोदित स्मारकाचिह्न-अनुलिपि और प्राचीन समयके स्वर्ण रौप्य और ताम्रमुद्रा वा पदक न पाये हों। पुरीहर जाति अग्निकुलकी चार शाखाओंमेंकी एक शाखासे उत्पन्न है, तथा यह लोग चन्द्र और सूर्य्यवंशके राज्यविस्तारसे पहिले ही भारतवर्षमें प्रविष्ट हुए थे। * पुरीहर लोगोंके इतिहास वर्णन करनेके समय मैं यह बात लिखना भूल गया हूँ कि, पुरीहर लोग कहते हैं कि "हम लोग कश्मीरसे भारतवर्षमें आये थे। जिस समय बौद्धोंके साथ शैवोंका धर्म्मयुद्ध हो रहा था, उस समय यह लोग भारतवर्षमें आये थे और अनेक बौद्ध धर्म्मावलम्बी उस धर्म्मके उत्साहदाता हुए थे, यह बातें भी उन्हींके इतिहाससे प्रगट है। इस धर्म्म संप्रदायकी अधिक संख्या देखकर मालूम होता है कि इन पाश्चात्य प्रान्तका वणिक जातिके चार अंशके एक अंश परिमित लोग भारतविजयी लोगोंके उत्तराधिकारी हैं और उन बौद्धोंकी अनगिन्त उपशाखाओंके साथ साढे दश शाखाओंमें सात शाखा अब भी जैन धर्म्मावलम्बी हैं, इस कारण यह अनुमान होता है कि उक्त धर्म्म बहुत वर्षोंतक भारतमें प्रबल रहा होगा।

पाठकगण! आइये अब हम लोग पत्थरकी सीढियोंपर चढकर इस विराटकाय ध्वंसराशिके ऊपर गमन करें। उसकुण्डके पास नागदानामकी जो छोटी नदी है,

* हम कर्नेल टाड साहबकी इस बातको किसी प्रकारसे भी समर्थन नहीं कर सकते। क्योंकि टाड महोदय इनके जिस समय भारतमें प्रगट होनेकी बात लिखते हैं, उसके सैकडों वर्ष पहिले भी चन्द्र और सूर्य्यवंशके राजा भारतमें राज्य करते थे।

पहिले उसका वर्णन करते हैं। जानेके मार्गकी आधी दूरीपर एक बडी बावडी अर्थात् चौवचा दिखाई देता है। यह बडा जलाशय पर्वतको खोदकर बनाया गया है। इसके भीतरी भागमें एक बडी सीढी बनी है। खेदकी बात है कि निकटके दो बडे प्राचीन गूलर और उदुम्बर वृक्षकी जडें इसका भीतरी भाग आक्रमण करके अकालमें गिरनेका डर दिखा रही हैं। पुरीहरलोगोंके अन्तिम महाराज नाहरराव इसके निर्माणकर्त्ता प्रसिद्ध हैं। ऊँचे विराट प्राकारके ऊपर दृष्टि पडते ही मेरे मनमें विचित्र भावका उदय हुआ। जिस समय यह प्राकार बनाया गया, तबसे कई सौ वर्ष बीत गये। और भी कई सौ वर्ष बीत जायँगे, किन्तु यह दुर्ग उस समय भी ठीक इसी प्रकारसे खडा रहेगा। उक्त प्राकार शिखरकी ओरको क्रमसे सीधा चला गया है, और तोप बननेके बहुत वर्ष पहिले इसके निर्माण होनेके कारण पुरीहर और पालीके स्वामीने यह महल बहुत ठीक स्थानपर अर्थात् दुर्गके बीचोंबीचमें निर्माण कराया है। इसके सब बुर्ज दृढ और चौकोन हैं। जब मैं इस स्थानपर पहुँचा तो मुझको थकावट और ज्वर आ गया था इस कारण इस प्राकारकी भूमिका परिमाण नहीं जान सका, किन्तु ऊपरके भागमें पुरीहरलोगोंके प्राचीन महलके ऊपर चढकर चारों ओर ध्वंस स्तूपोंपर दृष्टि डालनेसे मेरा वह क्षोभ जाता रहा। यद्यपि ध्वंस चिह्न बहुत साधारण हैं, तथापि अबतक दिखाई देते हैं। जिन उपकरणोंसे यह सब बने थे उन्हीं उपकरणोंसे नवीन जोधपुर राजधानी और उपरोक्त सम्पूर्ण स्मारक मन्दिर बनाये गये हैं। राजमहलसे मिले हुए कितने देवमन्दिर और महलके कितने ही कमरे अब भी स्पष्टरूपसे दिखाई देते हैं। इन सब कमरोंके बाहरकी खुदाईका काम देखकर अनुमान होता है कि यह तक्षक अथवा बौद्धोंके हाथके बने हैं। महलकी दीवारोंपर धर्म्मसम्बन्धी बहुतसे साङ्केतिक चिह्न अंकित हैं। यह सब बौद्ध और जैनियोंके निदर्शन चिह्नके समान हैं, किन्तु शैवोंके त्रिकोण चिह्न भी कई स्थानोंमें खुदे हैं। पुरीहरलोगोंके सर्व प्रधान चिह्नोंमें दुर्गके दक्षिण पूर्वमें बना हुआ सिंहद्वार (सदरदरवाजा) और जयतोरण परम रमणीक है। यह देखनेमें बहुत बडा है; मन्दौरके प्राचीन राजालोगोंमेंसे किसी एक राजाने अपनी विजय घटना चिरस्मरणीय करनेके लिये ही इसको बनवाया है। अवकाशाभावके कारण मैं इस जयतोरणका नकशा नहीं ले सका।

उत्तर प्रान्तके कुछ ही दूर थानापीरका थान है। थानशब्द स्थानका बोधक है। अजमेरमें जिन ख्वाजाकुतुबकी प्रसिद्ध मसजिद है, उक्त थानापीर उन्हीं कुतुबके शिष्य थे। इस प्रदेशमें बहुत कालसे जितने धनके लोभी सैंधवी और अफगान लूटमार और डकैती करते चले आ रहे हैं, यह सब अपवित्र काफर लोग प्राय: इन ही पीरकी मसजिदमें एकत्रित होते हैं। उक्त उत्तरकी ओर ही परकोटेके बाहर पुराने राठौर राजगणों और उपरोक्त वर्णित सती स्त्रियोंके मन्दिर बने हैं। किन्तु पुरीहर राजकुलके शव किस स्थानमें जलाये जाते थे और किस स्थानमें उनके समाधिमन्दिर बनाये गये थे जनश्रुति वा इतिहाससे इस बातका कुछ भी पता नहीं चलता। पूर्व और उत्तर पूर्व प्रान्तमें प्रकृतिने

अपने हाथ से प्राचीन दुर्गका अभेद्य परकोटा बना दिया है। वह स्थान नगर निवासियोंके थकावट दूर करनेके लिये सर्वांशमें उपयुक्त है।

हम लोग जिस मार्गसे ऊपर चढे थे, उस ही मार्गसे होकर पुसकुण्डकी ओर आगे बढे। स्थान २ में जिस प्रकार अनेक तरहके मनोहर दृश्य दृष्टिगोचर हुए उसी प्रकार पुराने महल भी दिखाई दिये। उक्त मार्गकी तलैटीमें निर्मल जलका जलाशय और दो सिंहद्वार हैं; एक द्वारमें होकर मनोहर वन और राठौर लोगोंके द्वारा बने हुए उसके बीचवाले प्रासाद पुञ्जमें पहुँचते हैं। और दूसरे मार्गसे होकर वहां पहुँचते हैं जहां मारवाडके प्रसिद्ध वीरवृन्द-राठौर लोगोंकी प्रतिमायें स्थापित हैं। इन समस्त रमणीय प्राचीन स्मरणाचिन्होंको देखकर मनमें जिस एक प्रकारके अनिर्वचनीय विचित्र भावका आविर्भाव होता है, मैं यहांपर उस भावसे युक्त होकर कुछ देरके लिये उस ही ध्यानमें मग्न हो गया था। एक गुफाके भीतर मंदौरके सुप्रसिद्ध अधीश्वर (नाहरराव जिन्होंने आरावलीके दुर्गम पथपर चौहानोंके साथ घोर युद्ध करके बडी वीरतासे अपने प्राण छोडे थे) के स्मरणार्थ एक वेदी बनी है; चन्द्रकविने अपनी कवितामें राजपूत वीरश्रेष्ठ नाहररावकी बडीभारी प्रशंसा लिखी है। एक क्षौरकार इस समाधि मन्दिरके सेवाकार्य्यमें नियुक्त है। यह काम नाईको क्यों सौंपा गया? इसका कारण मैं नहीं जान सका किन्तु यह नाई लोग जब राजपूत लोगोंके गृहस्थीके अनेक कामोंमें नियुक्त हैं, तब अवश्य ही किसी विशेष कारणसे इस पदपर क्षौरकारको नियुक्त किया होगा। इस बातके असली कारणको यहां कोई भी नहीं जानता। इस स्थान पर एक मन्दिरमें नौ मूर्तियें हैं। सुनते हैं कि रावणने अपने द्वीपसे आकर इन मंदरेश्वरकी पुत्रीका पाणिग्रहण किया था, उस सम्बंधमें ही यह मूर्तियें खोदी गई हैं। नागदा नामकी जो एक नदी यहां बहती है उसके विषयसे भी एक जनश्रुति सुनी; किन्तु वह बात बहुत लम्बी चौडी होनेके कारण नहीं लिखी, झरनेके निकट ही महावीर पृथ्वीराज और उनकी सुप्रसिद्धा सहधर्म्मिणी ताराबाईका समाधिमन्दिर है। उक्त मार्गकी तलैटीसे कुछ दूर एक तोरणमें होते हुए चारों ओरसे प्राकारवेष्टित एक बडे भारी मैदानमें पहुंचते हैं। उस भूखंडके शेषप्रान्तमें पर्वतके ऊपर एक बडा कमरा दिखाई दिया। जैनियोंके मन्दिरमें जिस प्रकार छोटे २ स्तंभ दिखाई देते हैं, उसी प्रकार त्रिश्रेणिबद्ध स्तम्भावलीके अवलम्बनसे उक्त कमरेकी छत स्थित है। इस कमरेके भीतर मारवाडके बडे २ तेजस्वी वीरोंकी प्रतिमायें विराजमान हैं। सब मूर्तियें वस्त्रालंकार और अस्त्रशस्त्रोंसे युक्त हुई अश्वारूढ हैं। पर्वतकी चट्टानोंको काटकर यह मूर्तियें बनाई गई हैं। किन्तु यह सब मूर्तियें स्वतंत्र भावसे स्थापित हैं, मनुष्यके स्वाभाविक शरीरकी अपेक्षा बडी हैं और पर्वतके साथ इनका कुछ संबन्ध नहीं है। इनके अङ्ग प्रत्यङ्ग ठीक परिमाणमें न होनेपर भी इनकी आकृतिसे वीरता, तेज, साहस और शोभा टपकती है; प्रत्येक वीरके साथ उनके प्रिय सेवककी मूर्ति होनेसे देखनेमें परम सुन्दर है। प्रत्येक सामन्तके हाथमें बरछा, तलवार, ढाल, पीठपर धनुष बाण और कम-

रमें लम्बी छूरी बँधी है। सबका रंग देखनेमें सुन्दर है; किन्तु मैं यह नहीं कह सकता कि इन वीरोंका असली शरीर ऐसा ही था अथवा कारीगरोंने अपनी इच्छानुसार बना दिया है। इस कमरेमें प्रविष्ट होनेसे पहिले एक बडी गणेशजीकी मूर्तिके दर्शन होते हैं। गणेशजीकी मूर्तिके निकट रणदेवके भीरू नामक दो पुत्रोंकी मूर्तियें विराजमान हैं। उनके अनन्तर चण्डमुण्डा और कङ्काली देवीकी मूर्तियें स्थापित हैं। कालीकी मूर्ति कृष्णकाय भयङ्कर महिषासुरकी छातीके ऊपर एक चरण और सिंहकी पीठपर दूसरा चरण रखकर खडी है; सिंह उक्त राक्षसकी छातीको भयानक रूपसे काट रहा है। देवीके हाथोंमें अस्त्र शस्त्र शोभायमान हैं। कालीकी मूर्ति और रणधर्म्ममें दीक्षित संग्रामभूमिमें मरे हुए वीरोंकी मार्तियोंमें राठौर लोगोंके सर्वप्रधान धर्म्मयाजक नाथजीकी प्रतिमूर्ति स्थापित है। नाथजीके एक हाथमें माला और दूसरे हाथमें धर्म्मदण्ड है। मल्लीनाथ सफेद घोडेके ऊपर चढे हुए हैं, उनके हाथमें स्थित बरछेके शिरपर एक झंडी है और तरकस घोडेके नितम्बोंपर लटकता है; उनकी भार्य्या पद्मावती भोजनपूर्ण-पात्र हाथमें लिये मल्लीनाथके समरक्षेत्रसे लौटनेकी अभ्यर्थना कर रही हैं। मल्लीनाथके युद्धमें मारे जानेपर पद्मावती अपने शरीरको उनके शवके साथ भस्मीभूत करके सूर्य्य-लोकको चली गई।

इसके अनन्तर कृष्णकाली नामक भयङ्कर घोडेपर सवार प्रभुजीकी प्रतिमा है। कवि और प्रदर्शक लोग प्रतिवर्ष मारवाडके अनेक प्रान्तोंमें घूमकर इन प्रभुजीकी कीर्त्ति गान और महावीरत्व सूचक चित्रावली ग्रामीण लोगोंको दिखाकर बहुत सा धन संग्रह करते हैं।

इसके पीछे सुप्रसिद्ध वीर रामदेव राठौरकी मूर्त्ति दिखाई दी। इनके सन्मानके लिये इस प्रदेशके प्रत्येक राजपूतग्राममें एक २ वेदी बनाई गई है।

हरवसङ्कल नामक जिन वीरवरने निर्वासित राजा योधकी विशेष सहायता की थी तथा चित्तौरके राणाका मन्दौरपर अधिकार करलेनेपर उसके पुनरुद्धारके लिये बडी भारी चेष्टा की थी उनकी प्रतिमूर्त्तिको इसी स्थानपर देखा।

सुलतान महमूदके भारताक्रमणके लिये सेनासहित आनेपर गोगा नामक जिन चौहान वीरने जन्मभूमि–स्वाधीनता और पितृधर्म्म रक्षाके निमित्त अपने सैंतालीस पुत्रोंसहित शतद्रू नदीके तटपर प्राण विसर्जन किये थे, इसके अनन्तर उनकी प्रतिमाको देखा। सबसे पीछे गिह्लोट जातिके मधु मङ्गल नामक जगत्प्रसिद्ध अधिनायककी प्रतिमाको देखा। इन सम्पूर्ण वीरोंकी वीरत्व कहानी यहां पर लिखनेसे पाठकोंको नीरस लगेगी, इस कारण उधरसे मौन होते हैं।

ऊपर वर्णन किये हुए कमरेके निकट ही उसी प्रकारके बनावटका उससे भी बडा एक दूसरा कमरा विराजमान है। यह "तैंतीस कोटि देवताओंका स्थान" इस नामसे प्रसिद्ध है। इसकी सब मूर्त्तियें आकारमें बडी और पत्थरकी बनी हैं। सबसे प्रथम

सृष्टिकर्त्ता ब्रह्माकी मूर्त्ति है; दूसरी सात घोडोंपर सवार सूर्य्यकी प्रतिमा है; इसके अनन्तर हनुमानजीकी मूर्त्ति है, उन्हींके निकट प्रियतमा सीताजीके साथ रामचन्द्र-जीकी मूर्त्ति विराजमान है। इसके अनन्तर गोपांगनाओंसे परिवेष्टित श्रीकृष्णजीकी मूर्त्ति है। फिर विराटकाय महादेव और उनके बाहन सांडकी मूर्त्ति स्थापित है। इनके अतिरिक्त लक्ष्मी और सरस्वतीजीकी मूर्त्तियें भी स्थापित हैं।

इसके अनन्तर मैं राजा अजितसिंहके बनाये हुए बाग और महलमें गया। महल इतना मनोहर बना है कि लेखनी द्वारा उसके रूपका वर्णन करना असम्भव है। महलके कमरोंके स्तंभ जिस प्रकार अगणित अद्भुत स्तम्भोंसे शोभायमान हैं दीवारोंमें बेलबूटेका काम भी उसी प्रकार चित्ताकर्षक और प्रशंसनीय है। अन्तःपुरमें रहनेवाली स्त्रियोंको कोई भी न देख सके इस कारण बारीक बुनावटके परदे लटक रहे हैं। बाग बहुत बडा नहीं है और प्राकृतिक दृढ परकोटेसे घिरा हुआ है, इस कारण ग्रीष्मकालमें भी शीतल रहता है। कृत्रिम झरने जलाशय और जलके नाले प्रत्येक स्थानमें विद्यमान हैं। वृक्ष और फल फूलोंकी ओर भी दृष्टि डाली। बडे वृक्षोंके अतिरिक्त फलवाले वृक्ष अधिक हैं। स्वर्ण चम्पक (जिसकी तीव्र सुगंधि असह्य है और सेजपर रखनेसे शिरमें पीडा होने लगती है) रमणीक फल फूल शोभित दाडिमी सीताफल; (जिसको हम लोग लड्डूकी समान समझते हैं) रमणीय केला, (जिसके बडे २ पत्तोंके हिलनेसे शरीर शीतल हो जाता है वह कदली वृक्ष), मोगरा, चमेली और फल फूलरानी "बारह मासा" (जो बारहों महीने खिला रहता है जिनके होनेसे यह सम्पूर्ण बाग शोभायमान है)। यह स्थान अत्यन्त चित्ताकर्षक है यहां आनेसे मुझको बडा आनन्द हुआ। पाठकगण! एक बेर कल्पनाक्षेत्रमें घूमकर स्मरण कीजिये—एक अँग्रेज मन्दिरके ध्वंस-स्तूपोंमें बैठा हुआ खोज और अनुलिपिके कार्य्यमें तत्पर है; सन्मुख आमके बडे २ वृक्ष शोभायमान हैं; कुछ दूरी पर एक विशाल तिन्दूका वृक्ष है। "पुरीहर लोगोंके अन्तिम अधीश्वर नाहररावके संमुख अपनी इन्द्रजाल विद्याशक्ति दिखानेके लिये एक ऐन्द्रजालिकने इस वृक्षको आरोपण किया था।" जनश्रुति यह है कि उक्त वृक्षकी शाखासे गिरनेके कारणसे ही उस ऐन्द्रजालिकका जीवनरूपी दीपक बुझ गया था। * इस वृक्षकी बडी २ डालियोंपर बन्दर निर्भय होकर कूदते और विचरण करते हैं। वृक्षकी जडमें दो राठौर राजपूत शयन किये हुए हैं और बडे २ दो घोडे भी तन्द्रामें हैं। यह उस शान्त निर्जन प्रदेशका कमनीय दृश्य है।

पर्वतकी चोटीपर नीचे जानेवाली उपत्यकाके सामने बहुत सी गुफायें हैं, जिनमें संन्यासीलोग निवास करते हैं। हमको इस बातका बडा ही आश्चर्य है। कि प्रबल गर्म्मीके दिनोंमें यह लोग ऐसे संकीर्ण और पवनरहित स्थानमें किस प्रकारसे रहते

---

* प्राच्यभाषा तत्त्वविद् मेजरप्राइस साहबने जहांगीरके हाथकी लिखी हुई जहांगीर जीवनीका जो अनुवाद किया है, उसके पढनेवाले पाठक जानते होंगे कि, यह ऐन्द्रजालिकलोग अपनी इन्द्रजाल विद्याके बलसे केवल वृक्ष ही नहीं बरन फलतक क्षणमात्रमें उत्पन्न करके आश्चर्य्यमें डाल देते थे।

होंगे ? संध्या हो जानेके कारण मेरे केम्पमें लौटनेका समय आ गया, इस कारण फिर एक बेर मारवाडके वीरोंकी प्रतिमाओंके दर्शन कर और "कृष्णकाली" घोडेके चरणतलपर अपना नाम लिखकर प्राचीन मन्दरसे लौट आया।

१३ वीं नवम्बर–आज राजा मानसिंहने अपने महलमें भोजन करनेके लिये मुझे निमन्त्रण दिया था, इस कारण मैं नई पोशाक पहनकर राजपूतका आतिथ्य ग्रहण करनेके लिये गया। राजाने मुझसे एक अनुरोध किया, जो मुझको कुछ एक विचित्र मालूम हुआ,–उन्होंने यह विचारकर कि "देशी भोजन साहबको अच्छा नहीं लगेगा और न इससे उनकी तृप्ति होगी" मुझसे मेरे खानसामाको पहिलेसे मांग लिया। सेंधियाके केंपमें मैं प्रायः ऐसा ही किया करता था। वहां महाराष्ट्रीय भोजनके साथ २ अपने देशका भोजन भी खाता था। मैंने मारवाडेश्वरको कहला भेजा कि "जोधपुरके भोजनकी सामग्रीसे मेरी उदरपूर्ति और तृप्ति अवश्य हो जायगी।" मैंने अपनी टेबिल और मारवाडाधीश्वरके दीर्घजीवनलाभ और स्वास्थ्योद्देशसे पान करनेके लिये "क्लारेट" नामक सुरा महलमें भेज दी। मेरे वहां पहुंचने पर महाराजने मुझको बड आदरके साथ ग्रहण किया और भोजनगृहमें जानेका अनुरोध करके महलमें चले गये। सुवर्ण और चांदीके आसे लिये बहुतसे अनुचर मेरे पीछे पीछे चले। भोजनगृहमें प्रविष्ट होकर मैंने देखा कि, पुलाव, मांस और मिष्टान्न आदि विविध प्रकारके भोजन यथोचित स्थानपर रक्खे हैं। हिंदू और मुसलमान दोनोंके खाने योग्य भोजन तैयार कराके चांदीके पात्रोंमें रक्खे गये थे। सब भोजन स्वादिष्ट और उत्तम बने थे। भोजनगृह शिखरके उत्तर प्रान्तमें नवीन बनाया है और नाम उसका मानमहल है। सभागृहके समान यह भी अगणित स्तंभोंसे शोभित है। सुनते हैं कि शरत्कालमें प्रकृति परिच्छिन्न होनेपर चालीस कोशकी दूरीपर कमलमीरके दुर्गकी चोटी इस स्थानसे दिखाई देती है।

१६ वीं नवम्बर–आजका दिन महाराजका मेरे साथ मुलाकात करनेके लिये निश्चित था। अपना बडा भारी ऐश्वर्य दिखानेके लिये महाराजा मानसिंहने अपना केंप मेरे केंपके पास स्थापित कराया। डेरा बहुत बडा और लाल रंगका था। यह देखनेमें एक महलके बराबर है और कपडेके परकोटेसे घिरा हुआ है। बीचके वेदीके ऊपर राजसिंहासन रक्खा गया और उसके ऊपर छत्र लगाया गया। तीसरे पहरके समय महल और दुर्गमें बडा भारी कोलाहल मच गया। चारों ओर नगाडे और तुरत ही ढँढोरा पिटवा दिया कि "मारवाडके महाराज आज फिरंगीके वकीलके साथ मुलाकात करने जायँगे"। झंडी और राज चिह्नोंको दूरसे देखते ही मैं अनुचरों सहित घोडेपर सवार होकर नगरके मार्गसे आगे बढा और मार्गमें महाराजके साथ मुलाकात और कुशलप्रश्नादि करके डेरेपर लौट आया। महाराजके आनेपर मैंने बड आदरसे उनको लिया मेरी सेनाके लोगोंने अपने अस्त्र नीचे करके महाराजको आदर दिखाया। महाराज इससे बहुत

ही प्रसन्न हुए । महाराज मानसिंहके एक घंटे तक बैठनेके पीछे हीरे और रत्नोंके अलंकार सुनहरी कामके वस्त्र, शाल और अनेक प्रकारकी रमणीक वस्तुओंसे सजाकर उन्नीस ढालें (उदयपुरके राणाको इक्कीस दी गई थीं) उपहारस्वरूपमें महाराजको दीं। मैंने इंग्लेण्डके बने हुए कितने ही अस्त्र, एक अण्डवीक्षण यंत्र (खुर्दबीन) और राजपूतोंकी विशेष इच्छित कितनी ही छोटी २ चीजें भी उपहारमें दीं । इसके अनन्तर अतर और पान देकर मुलाकात समाप्त की । मैंने जो सजा हुआ हाथी और घोडा महाराजके लिये दिया था, वह उनके सामने लाया गया । डेरेके द्वारपर आकर मैंने महाराजको सलाम किया, उन्होंने मुझसे हाथ मिलाया । यह हाथ मिलाना राजपूतजातिकी प्राचीन प्रथा है ।

२७ वीं नवम्बर-को मैं महाराजके पास बिदा मांगनेके लिये गया । इस अन्तिम मुलाकातमें विशेष प्रयोजनीय विषयोंपर बहुत देर तक बातचीत हुई । महाराज अपने उद्यम और प्रतिभाकी शक्तिसे सम्पूर्ण विपत्तियोंका निवारण, अत्याचारियोंको-उनके मृतपुत्रके कुपरामर्शदातागणोंको-मंत्रीवर और प्रधान धर्म्मयाजक देवनाथके हत्याकारी लोगोंको और महाराजके बहुत काल बन्दी दशाके कारणस्वरूप लोगोंको उपयुक्त दण्ड देकर शीघ्र ही निश्चिन्त हो सकेंगे मैं उनको इस प्रकारका धीरज दे आया ।

"नियमित बिदायी उपहारकी सामग्रीके साथ महाराजके व्यक्तिगत अनुग्रहका चिह्नस्वरूप उनके एक सुप्रसिद्ध पूर्वपुरुषकी एक तलवार, एक छूरी और एक ढाल मुझको मिली । तलवार इतनी भारी है कि उसको देखकर सर्वसाधारण भी यह समझ सकते हैं कि जिस हाथमें यह तलवार शोभा पाती थी वह बडा बलिष्ठ था । सादर संभाषणके पीछे परस्परमें पत्रआदि भेजनेके लिये अनुरोध हुआ (यह पत्रादि भेजना आरंभ तो हुआ था किन्तु शीघ्र ही बंद हो गया) इसके अनन्तर महाराज मानसिंहसे बिदा ली ।"

(कर्नेल टाड साहबके मारवाडमें जानेका विवरण समाप्त हुआ)

कर्नेल टाडके मारवाडसे लौटनेका वृत्तान्त ।

उनतीसवाँ अध्याय २९.

नादोला;–विशालपुर;–एक प्राचीन नगरका ध्वंसावशेष;–पाँच कुल्हा वा बिच कुल्हा;–खोदितपत्थर;–पीपल;–मेवाडकी प्राचीन इतिहासमूलक खोदित लिपि;–साँपूसागरोत्पत्तिके प्रवादवाक्य;–लक्खाफुलानि;–माद्रीयभूरुण्डा;–बदनसिंह;–उनका वीरत्व;–प्रतापके स्मरणार्थवेदी;–इन्दावर;–जाट कृषकजाति;–मैरता;–औरंगजेबके द्वारा निर्मित मसजिद;–धौंकुलसिंह;–राठौर वीरश्रेष्ठ जयमल;–उनका वीरत्वस्वीकार;–मैरतानगरका वर्णन;–समाधिमन्दिर;–राजाअजित;–दो पुत्रोंद्वारा उनके प्राणहनन;–उसी सूत्रसे मारवाडमें विद्रोहानलविस्तार;–अजितका परिवार;–राठौरोंमें दत्तक पुत्र ग्रहणसम्बन्धी विचित्र व्यवस्था;–रामसिंह;–सामन्तमण्डलीकी और उनका अशिष्टाचार;–आत्म निग्रह;–रामसिंहके साथ वख्तसिंहका युद्ध;–रामसिंहका पराजय और मैरतीय राजपूतशाखाका ध्वंस,–मैरताके अधीन मिथरिके सामन्त;–समरक्षेत्रवर्णन;–रामसिंहका अपने राज्यमें महाराष्ट्रोंको बुलाना;–वक्तसिंहका मारवाड राजसिंहासन अधिकार;–जयपुराधीशका आत्मघात;–उनके पुत्र विजयसिंहका अभिषेक;–जयआप्पा सेंधिया और रामसिंहका मारवाड आक्रमण;–विजयसिंहका व्याघातदान और पराजय;–उनका नगरमें भागना और शत्रुओंका उक्त प्रदेशावरोध;–शत्रुओंके डेरेमें होकर उनका पलायन;–बीकानेर और जयपुरराजसे उनकी सहायता प्रार्थना;–जयपुराधीश्वरकी विश्वासघातकता;–रियाके सामन्तद्वारा पराजय;सेंधियाका प्राणवध ।

२९ नवम्बरको कर्नेल टाड साहब अनुचरोंके साथ राजधानी जोधपुरको छोडकर तीन कोशकी दूरीपर नन्दोलाकी ओर आगे बढे । वह लिखते हैं कि, "राजधानीसे एक कोश तक रेतीला मार्ग है; और उससे आगेके मार्गमें लाल पत्थरका रेत है, इस लिये एक कोशसे आगे चलकर पथिकोंको चलनेमें कुछ सुभीता हो जाता है । आधा मार्ग समाप्त करने पर हमने एक छोटा सा सरोवर देखा । उसको मारवाडसिंहासनके लोभी धौंकुलसिंहकी माता शिखावतीने बनवाया था, इस कारण इसका नाम "शिखावत तलाब" विख्यात है । शिखावतीने इस सरोवरके तटपर एक धर्म्मशाला और एक

हनुमानजीकी मूर्ति प्रतिष्ठित करा दी है, तथा अपनी पवित्र कीर्त्तिका चिह्नस्वरूप एक स्तंभ बनवा दिया है। इस प्रदेशमें कहीं भी बेलबूटा दिखाई नहीं देता। झाला-मंदसे जोधपुर जाते समय हमने योगिनी नामकी जिस नदीको पार किया था जो मंदौरके निकट नागदाके साथ मिलकर लूनी नदीमें गिरी है, हमने इस ग्रामप्रान्तमें फिर उस ही नदीको पार किया। नदीके पास जो कूयें बने हुए हैं ग्रामवासी लोग उन ही का जल व्यवहार करते हैं। इन दोनों कुओंमें यथेष्ट जल है परन्तु जल साफ नहीं है। नँदोला ग्राम एक सौ पचीस घरोंकी बस्ती है। यह प्रदेश आहोरके सामन्तके अधीन है। यहां शुष्क प्राय एक पुष्करिणी है। उसके तटपर समाधिके मन्दिर बने हुए हैं। मैंने वहां जाकर एक एक करके सबको देखा, परन्तु उनके ऊपर जिन लोगोंके नाम खुदे हुए हैं वह सब अप्रसिद्ध हैं;

आगेका ग्राम बीसलपुर यहांसे छः कोशकी दूरीपर है; मार्ग गहरी बालूसे ढका हुआ है। बीसलपुर ऊंची भूमिके ऊपर बसा हुआ है रहनेके घर सब एकसे बने हैं; घरोंकी दीवारें मट्टी और भूसीसे लिहसी हुई होनेके कारण देखनेमें बडी विचित्र हैं। जैसे इन्दुराग्राम भूसी और कांटोंके बने हुए परकोटेसे ढका हुआ है, वैसे ही यह ग्राम भी भूसी और कंटकसंलिप्त परकोटेसे वेष्टित है इस प्रदेशमें यह दृश्य शिल्पकार्य्यका परिचय देनेसे देखनेमें सुन्दर मालूम होता है। बहुत प्राचीन कालमें यहां एक नगर था, किन्तु भूकम्पसे वह बिलकुल नष्ट हो गया। तोरणके कई अंश और परकोटेका एक भाग अब भी उस नगरका पूरा परिचय दे रहा है। यहां पर हमको कोई प्राचीन खोदित लिपि नहीं मिली। यहांके अधिवासी लोग एक बडे सरोवरसे नित्य व्यवहारके योग्य जलको ले जाते हैं।

२१ वीं नवम्बर।--पाँचकुला वा बिचकुला पाँच कोस की दूरीपर है; जो जुरी नदीके पार उतरकर उसके तटपर डेरा डाला। क्रमसे मट्टीकी उत्कर्षता देखी; यहांकी मट्टी लाल बालूके समान है। नदीतटके खेतोंमें बहुत श्रेष्ठ गेहूं और जौ पैदा होते हैं। यहांपर दो एक बबूल और नीमके वृक्ष भी दिखाई दिये। यद्यपि यह ग्राम अब केवल सौ घरोंकी बस्ती है किन्तु एक समय यह महा समृद्धिशाली था। मैंने यहांपर एक खोदित पत्थरके टुकड़े पर केवल "सोनंगके पुत्र १२२४ संवत्" खुदा हुआ पाया। दुर्दान्त पठान डाँकुओंने सम्पूर्ण प्राचीन कीर्त्तिको बिलकुल नष्ट कर दिया है। यह ग्राम एक भट्टी सामन्तका वृत्तिस्वरूप है। अधिवासी लोग नदीके निकट खुदे हुए कुओंसे अपने व्यवहार योग्य जल ले जाते हैं।

२२ वीं नवम्बर।—पीपलनगर चार कोशकी दूरीपर है। यहांकी भूमि काली और बालुकापूर्ण है, सर्वसाधारण उसको धामुनी कहते हैं। पीपलनगर डेढ सौ घरोंकी बस्ती है। यहांके निवासियोंमें तीन हिस्सेमेंसे एक हिस्सा मनुष्य जैनी हैं, और इस प्रदेशके प्रधान व्यापारी ओसवालजातिके हैं। दो सौ माहेश्वरी बनिये शैवधर्म्मावलम्बी भी रहते

हैं । यहां व्यापारका काम बहुत भारी होता है । यहांके छींटके वस्त्र बहुत प्रसिद्ध हैं; तीन सौ व्यौपारी केवल इसी कामको करते हैं । निमाजके जिन सामन्तकी मृत्युका विवरण ऊपर लिख चुके हैं यह नगर उन्हींके अधीन है । इन निमाजसामन्तके एक सुप्रतिष्ठितपूर्व पुरुषके नामसे पीपलनगरमें जो एक स्मारक मन्दिर बनवाया गया था, दुर्दान्त महाराष्ट्रियोंने उसका आधा भाग नष्ट कर दिया । मारवाडके इतिहाससे प्रगट है कि ईसवी सन्के आरंभसे बहुत वर्ष पहिले अवन्तके पमार वंशीय अधीश्वर गन्धर्वसेनने इस पीपलनगरको स्थापन किया था । यहां लक्ष्मीदेवीके मन्दिरमें मैंने एक खोदित पाषाण खण्ड देखा उसमें गिह्लौल वंशीय रावल उपधिधारी राजपूत विजयसिंह और दइलब्जीका नाम खुदा है । यह खोदित लिपि मेवाड इतिहासके एक बहुत प्राचीन विषयका बिलकुल समर्थन करती है । गिह्लौट लोग चौबीस शाखाओंमें विभक्त हैं, उनमेंसे एक शाखाका नाम " पिपालिया " है । तक्षकवंशीय पमार लोगोंके निकटसे इस पीपरनगर के अधिकारसम्बंधसे ही इस पिपालिया उपाधिकी उत्पत्ति हुई, इस खोदित लिपिसे निःसदेह वही बात प्रगट होती है ।

इस स्थानमें साठसे लेकर अस्सी फुट तक गहेरे बहुतसे कुएँ हैं । यहांके सांपू (सर्प) सरोवरमें भी बहुत उत्तम जल है । उक्त सरोवरके साथ पीपल नगरकी प्रतिष्ठाका एक प्राचीन प्रवाद सुना जाता है कि, पालीजातीय पीपानामका एक ब्राह्मण उक्त सरोवरके तटपर रहनेवाले एक तक्षकजातीय सर्पको प्रतिदिन दूध पिलाया करता थ, और सर्प उसकी सेवासे प्रसन्न होकर प्रतिदिन दो सुवर्णमुद्रा दिया करता था । किसी कारणसे नगरमें जानेको बाध्य होनेके कारण पीपा अपने पुत्रको सब बातें समझाकर उस कामको सौंप गया । ब्राह्मणकुमारने विचारा कि यदि इस सर्पको मारडालूं तो सब धन एक साथ ही मिल जायगा । यह विचार, दूध और लकडी दोनों हाथमें लेकर उस सरोवरके तटपर पहुँचा । सर्प प्रतिदिन जिस समय दूध पीता था, ठीक उसी समय बाहर निकलकर दूध पीने लगा, धनके लोभी ब्राह्मणकुमारने तत्काल उसके शिरपर लकडी मारी। उसके लगनेसे सर्पके प्राण नहीं निकले, किन्तु सामान्य चोट लगी, सर्प तत्काल बिलमें घुस गया । ब्राह्मण उदास होकर अपने घर आया और मातासे सब वृत्तान्त निवेदन किया; ब्राह्मणी डरी और सोचने लगी कि सर्प अवश्य ही बदला लेगा । उसने स्थिर किया कि "कल प्रभातमें पुत्रको पतिके पास भेज दूंगी ।" यह विचारकर पुत्रके साथ भेजनेके लिये एक बैल और सेवक वहीं रक्खा । रात्रिमें ब्राह्मणीको नींद नहीं आई, प्रभात ही उठकर वह अपने पुत्रको जगानेके लिये उस शयनागारमें गई, वहां उसने देखा कि पुत्रके बदलेमें वहीं बडा भारी सर्प शयन कर रहा है । इसी अवसरमें पीपा ब्राह्मण भी नगरसे लौट आया, अपने पुत्रको सर्पसे भक्षित हुआ सुनकर शोकसागरमें डूब गया, फिर बडे कष्टसे प्रतिहिंसावृत्तिको शान्त करके दुग्धद्वारा उस सर्पको प्रसन्न करने लगा । सर्प ब्राह्मणकी इस सेवासे फिर प्रसन्न हो गया और अपने बहुत कालसे रक्षा किये हुए बडे भारी धनको ब्राह्मणको दिखाकर बोला कि "इसघटनाके

बहुत काल तक स्मरण रहनेके लिये यहां कोई चिह्न अवश्य कर देना, यह सब धन अब तुम्हारा है।" इस सम्बन्धसे ही पाली जातीय पीपाने यह पीपल नगर और धन दाता सर्पके नामसे "साँपूसरोवर" बनवाया था। यह रूपक प्रवाद बौद्ध वा जैन-धर्मावलम्बी तक्षकजातिके साथ ब्राह्मणोंके विवादकी सूचना देता है।

इस नगरमें लक्षफुलानीके नामसे एक कुण्ड है। अति प्राचीन कालमें मारवाडके बहुत दूरवर्त्ती प्रांतके फुलैरानामक स्थानमें लक्षफुलानीका राज्य था, और सुनते हैं कि एक समय उनकी जयपताका समुद्रके किनारे तक उडी थी। लूनी नदीके तटसे सिन्धुतक मैं जिस २ स्थानमें गया, उसी २ स्थानमें लक्षफुलानीकी प्रशंसा सुननेमें आई। *

२३ वीं नवम्बर।–माद्रीयनामक स्थान यहांसे पांच कोशकी दूरीपर है। जानेका मार्ग उत्तम है किन्तु सूनसान है। ग्राम मध्यमकक्षाका है। इस गाँवमें उत्तम जलवाला एक सरोवर है।

२४ वीं नवम्बर।–भूरुण्डानामक ग्राम आठ कोशकी दूरीपर है। हम ज्यों २ आगे चलते जाते थे प्रकृतिकी दशा भी त्यों २ बदलती जाती थी। मार्ग तरङ्गाकारमें बांधके समान चला गया है और पथरीला तथा रेतीला है। मार्गके निकट उस देश के छोटे२वृक्ष लगे हैं। मार्ग इस स्थानपर ऐसा ऊंचा हो गया है कि इसको "गाशुघाटा" नामसे पुकारते हैं, तथा राजाकी कितनी ही सेना शत्रुओंके आक्रमण निवारण और वाणिज्य शुल्क संग्रहके लिये उस स्थानमें नियुक्त है। मैरताजातीय प्रबल बलशाली कुचामुनके सामन्त गोपालसिंह इस भूरुण्डाके अधीश्वर हैं। यह गांव डेढ सौ घरकी बस्ती है और किसान लोग नगर और ग्रामोंके समान जाटजातिके हैं।

मैंने भूरुण्डामें सामान्याकारके स्मारक मन्दिर देखे उनमें एकके ऊपर बदनसिंहका नाम खुदा है। बदनसिंह कुचामुनके अधीन सरदार थे मैरताके महासंग्राम में वह स्वदेशके लिये फरासीसी सेनापति डिबोइनके संग बडी वीरताके साथ लडकर स्वर्ग सिधारे। जो लोग राजपूतजातिके स्वाभाविक पैत्रिक गुण—राजभक्ति और स्वदेशहितैषिताकी प्रशंसा करते हैं, उनके निकट बदनसिंहका नाम बहुत दिनतक ऊंची प्रशंसाका संग्रह करेगा। मारवाडेश्वर राजा विजयसिंहने बदनसिंहसे भूरुण्डा प्रदेश किसी विशेष कारणसे छीन लिया; विवश होकर ठाकुर बदनसिंहने जयपुर राज्यमें जाकर वहांके अधीश्वरकी शरण ली। जयपुराधीशने राजपूतप्रथाके अनुसार उनको

* जनश्रुतिसे जो कविता पाई जाती हैं, उनके द्वारा प्राचीन इतिहास और भूवृत्तके अनेक वृत्तान्त संगृहीत हो सकते हैं। लक्षके विषयमें प्रवाद है कि,

"कुशपगढ सूरज पूरा; बासुकगढ और तक्ष।
अन्धानिगढ जगर पुर, जो फुलगढई लक्ष॥"

उक्त कवितासे प्रगट है कि तक्षक जातीय लक्षके अधिकारमें उपरोक्त कवितामें लिखे हुए प्राचीन छः नगर थे।

आश्रय देकर अपने अधीनमें नियत किया । जिस समय ठाकुर बदनसिंह जयपुरमें प्रबल शक्ति सम्पन्न हो गये, उसी समय महाराष्ट्रियोंने मारवाडके आक्रमणसम्बन्धसे उनका "बापोता" विध्वस्त करना चाहा । जब इस बातको बदनसिंहने सुना तो अपने पूर्वस्वामी विजयसिंहके विरुद्ध उनके हृदयमें जो शत्रुता थी, स्वदेशहितैषिताके निकट उस शत्रुताको बलिदान कर दिया और एकसौ पचास घुडसवार सेनाके साथ अपने स्वामी और जन्मभूमिकी सहायताके लिये तत्काल चले गये । दुर्भाग्यके कारण स्वजातियोंके साथ मिलनेसे पहिले ही महाराष्ट्रियोंने उनको मार्गमें ही रोक लिया । बदनसिंह और उनके महाबली साथी लोग बडे साहसके साथ शत्रुओंका चक्रव्यूह भेदकर आगे बढे यद्यपि नंगी तलवार लिये कई राजपूत वीर शत्रुकी सेनामें घुस गये किन्तु इनके सिवाय शेषसैनिक पशुओंके समान मारे गये । बदनसिंह अपने प्राचीन पितृभूमिमें जीवित दशामें ही पहुंच गये बदनसिंहकी इस राजभक्ति और असीम वीरताके पुरस्कारमें विजयसिंहने यह भूरुण्डा प्रदेश उनके वंशवालोंको भोगनेके लिये दे दिया । इस प्रदेशकी वार्षिक आय सात सहस्र मुद्रा है शत्रुओंके कराल गालसे इस प्रदेशकी रक्षाका भार भी सामंत ही को सौंप दिया है ।

उक्त स्मारकमन्दिरोंमें प्रतापके नामका एक मंदिर देखा । इस प्रदेशकी रक्षाके लिये औरङ्गजेबकी सेनाके विरुद्ध बडी वीरताके साथ उन्होंने युद्ध किया था, परन्तु अन्तमें कृतकार्य्य न होकर स्वर्ग सिधारे ।

२५ वीं नवम्बर ।—पाँच कोशकी दूरी पर इंदुवर ग्राम है यह दो सौ घरोंकी बस्ती है; यहांके सब किसान जाटजातिके हैं इन भूस्वामी जाटोंके विषयमें मैंने अबतक कुछ नहीं लिखा । जाटलोग बलिष्ठ, स्वाधीन और परिश्रमी हैं यह हल चलानेमें अनुरक्त असंग्राम प्रिय हैं, यदि सामन्त वा अधीश्वर उनके ऊपर अन्यायसे कर स्थापित न करे तो उनको समाचार तक न मिले । इनका शरीर स्थूल अंग प्रत्यङ्ग बलिष्ठ और कृष्ण वर्ण है । पिछले अध्यायमें हमने एक किसानका चित्र भी दिया है । यह इंदुवर ग्राम सिंधुप्रदेशके भूतपूर्व अधीश्वरको प्रदान किया गया है; वह मारवाडाधीश्वरके उदारता से दिये हुएइस ग्रामसे ही अपना निर्वाह करते थे, उक्त सेंधवी कनीरा जातिके थे और अपनेको पारासियोंका वंशधर बताते थे । बिलोचिस्तानके नुमरी (शृखाल) संप्रदाय की तालपुरी शाखाके साथ मिलनेसे उक्त सेंधवीके कुटुंबकी संख्या बहुत बढ गई है । नुमरी लोग इस समय अपनेको अफगान बताते हैं । किन्तु वास्तवमें वह मध्य एशियाकी असंख्य जातियोंमेंसे एक शाखा विशेष हैं ।

२६ वीं नवम्बर ।—मैरता नामक ग्राम इस स्थानसे चार कोशकी दूरीपर है । हम चौडे मैदानमें होते हुए वहां पहुँचे । हमने साढे बारह कोशकी दूरीपर दक्षिणकी ओर आरावलीकी आकाश भेदी शिखरमालाको देखा । पश्चिममें बहुतसी बडी गिरी हुई पृथ्वी और बीच २ में बेलबूटोंसे आच्छादित तरंगाकारमें नाच ऊंचे

समतलक्षेत्र दिखाई देते हैं इस स्थानकी मट्टी उर्वरा है, किन्तु जल पृथिवीके बहुत नीचे होनेसे खेतीका सुभीता नहीं है। ग्रामोंके पासवाले खेतोंमें ज्वार, मक्का और तिल बहुतायतसे उत्पन्न होते हैं। यह नगर ऊंची भूमिके ऊपर स्थापित है, इस कारण देखनम बडा रमणीय है। अत्याचारी औरंगजेबने एक हिंन्दूमान्दिर विध्वंस करके उसके ऊपर जो एक मसजिद बनवा दी है उसकी चोटी चारों ओरके बडे २ हिन्दू मन्दिरोंसे ऊंची है। यद्यपि उक्त मुगलसम्राट् सम्पूर्ण हिंदूजातिके—विशेप करके राठौरलोगोंके (जिस राठौर जातिके साहसी राजा यशवन्त और उनके ज्येष्ठ पुत्रको विप देकर मारा तथा आजितको बीस वर्प तक राज्यच्युत करके सैकडों राठौरोंके रक्तसे मारवाडको सींचा था) क्रोधके पात्र थ, किन्तु हिन्दूजातिकी सहनशीलता और राजभक्ति इतनी प्रबल ह कि एक पत्थर फारसी और हिंदीभाषामें सब प्रकारके अत्याचार करनेका निषेध लिखकर उस मसजिदमें लगा दिया है। सुनते हैं कि मारवाडासिंहासनके लोभी धौंकुल सिंहने इन हत्यारे पठानोंकी सहायता की और उनके प्रसन्न करनेके लिये उक्त पत्थरको उस मसजिदमें लगा दिया था। किन्तु अन्तमें वह किस प्रकार ठगा गया था और उस धनेक पठान नायक अमीरखाँने कैसे कठोर चित्त और अकृतज्ञतासे धौंकुलसिंहकी सेनाको मारा था, पाठक गण इस बातको भलीभाँति जानते हैं।

मन्दोरके राव दूधाने इस मैरतानगरको बसाया था और उनके प्रसिद्ध पुत्र मालदेवने मालकोट नामक दुर्ग बनवाया था। * उन्होंने यह तीन सौ साठ ग्राम नगर पूर्ण मैरता प्रदेश अपने पुत्र जयमलको प्रदान किया और साहसी राठौर जातिके सबसे श्रेष्ठ सम्प्रदायको इस प्रदेशके नामपर मैरतीया उपाधि दे गये। महावीर जयमल मारवाडके बाहर अपना नाम अक्षय करनेके लिये ही उत्पन्न हुए थे। जयमलने युद्धके समय दिल्लीश्वर शेरशाहके साथ वीरोचित कार्य्य नहीं किया उनकी इस असावधानीसे यवनसम्राट विश्वासघात करके भाग गये थे, इस अपराधपर मालदेवने जयमलको मन्दौरसे निकाल दिया। निकाले हुए राठौर राजकुमार जयमल मेवाडपति राणाकी शरणमें गये मेवाडपतिने उनको बडे आदरके साथ लिया और अपने राज्यके समान बडा और समृद्धिशाली विदनौर प्रदेश उनको दे दिया। जयमल जिस प्रदेशसे सत्वच्युत हुए थे, विदनौर उसकी अपेक्षा आधिक उपजाऊ और मूल्यवान प्रदेश था जयमलने मेवाडेश्वरकी इस कृपाका ऋण किस प्रकार उतारा था उस उत्तम वृत्तान्तको हम लिख ही चुके हैं। मुगलकुलतिलक अकबरने अपने हाथसे इन महावीर जयमलके प्राणनाश करनेके समय अपनेको महा सन्मानित समझा था, और जिस बन्दूकसे उक्त वीरके प्राण लिये थे उसको बडी प्रतिष्ठाके साथ स्थापन किया। सम्राट् जहाँगीरने वीरश्रेष्ठ जयमल्ल की बडी भारी प्रशंसा करके बालक राणाको स्वाधीन कर दिया, और चित्तौडकी रक्षाके लिये

* राव दूधाके मालदेनके अतिरिक्त और भी तीन पुत्र थे, पहिले वीरमल दूसरे वीरसिंह थे, इन्होंने मालव प्रदेशमें अमजेरा नामक राज्य स्थापन किया था वह राज्य अबतक उनके उत्तराधिकारियोंके हाथमें है; तीसरें रत्नसिंह थे, यह राणा कुम्भकी सुविख्यात रानी मीराँवाईके पिता थे।

बडी वीरताके साथ मरे हुए उन जयमलके स्मरणार्थ एक कीर्तिस्तंभ बनवा दिया । विख्यात इतिहासवेत्ता अव्वुलफज़ल अंग्रेज दूतके पुरोहित हरबर्ट और वार्नियर आदि सब ही महाशयोंकी लेखनीसे जयमलकी जय घोषणा और बडी भारी प्रशंसा लिखी गई है । इधर परम तेजस्वी लार्ड हेष्टिंग्स जो राजपूत जातिके वीरत्व विक्रम प्रताप प्रभुत्वके एक विलक्षण पक्षपाती थे उन्होंने भी जयमलके अनुपमेय विक्रम स्मरणमें उनके सम्मानार्थ उन जयमलके वंशधर बिदनौरेके वर्त्तमान साहसी सामन्तको प्रसन्न किया था ।

मेडतानगर बडे भारी दृढ परकोटे और बुर्जोंसे भलीभांति रक्षित है । पश्चिमका परकोटा मट्टीका बना है और पूर्ववाला पत्थरका है नगरके समान भीतरके सम्पूर्ण दृश्य टूटे फूटे हैं। यह नगर बीस हजार घरोंकी बस्ती है समग्र हिन्दू नगरोंके समान धनी लोगोंके मनोहर पक्के महलोंके निकट दीन हीन लोगोंके पर्णकुटीर दीखाई देते हैं। नगरके दक्षिण पश्चिम प्रान्तमें दुर्ग है, उसका परिमाण लगभग एक कोशके होगा दुर्गके पूर्व और पश्चिम प्रान्तमें छोटे २ सरोवर हैं । नगरके भीतर कूप भी बहुत हैं परन्तु जल सबका खराब है। नगरके चारों ओर "दूधसार" "बाइजपा" "दुराणी" "धलगोलिया" आदि नामवाले बहुतसे बडे २ जलाशय हैं ।

मेडताका समतल क्षेत्र अगणित समाधिमन्दिर वा स्मारक स्तम्भोंसे सुशोभित है । जिन महावीर लोगोंने परस्पर विग्रहके समय अथवा दुर्दान्त महाराष्ट्रियोंके कराल गालसे स्वाधीनताकी: रक्षा करनेके समय अपने रक्तसे जन्मभूमिको सींचा था उनकी कीर्तिके घोषण और स्मरणार्थ यह मन्दिर बने हैं । किस कारणसे राठौर लोगोंमें जातीय एकताका बंधन छिन्नभिन्न हुआ ? किस कारणसे दक्षिणी लोग मारवाडमें घुसे ? और किस कारणसे मारवाडियोंकी जातीय जीवनशक्ति अत्यन्त दुर्बल हो गई ? इन मूलघटनाओंके स्मरण बिना इस चिरस्मरणीय क्षेत्रको अतिक्रम करके जाना अवश्य ही असंभव है। राजा अजितसिंहके हत्याकाण्डका आंशिक विवरण मैं पीछे लिख चुका हूं। साक्षात् नरपिशाचस्वरूप दो सय्यद भ्राताओंने सम्राट् फर्रुख सियरको सिंहासनच्युत करके जिस समय अपने कीडकस्वरूप एक दूसरे मनुष्योंको भारतके सम्राट्आसनपर बैठाया था, उसी समय उन सय्यदोंकी अवलंबित राजनीतिके फलसे अजितसिंह अपने औरस पुत्रके पापरूप कलुषित हाथोंसे शोचनीय दशामें मारे गये थे। अजितसिंह अपने पुत्र अभयसिंहको दिल्लीमें छोड अपनी कन्याको (जिसके साथ सम्राट् फर्रुखसियरके विवाहके उपलक्षमें ईष्ट इण्डिया कम्पनीको भारतमें प्रथम भूवृत्ति प्राप्त हुई ।) लौटनेका कारण यह था कि, वह इन दोनों सय्यद भ्राताओंकी घृणित, जघन्य राजनीतिका पक्ष समर्थन करना किसी प्रकारसे भी नहीं चाहते थे । राजा अजितको उस भावसे षड्यंत्र जालमें न फँसता हुआ देखकर इसने अपनी स्वाभाविक मूर्ति धारणकी और उनके पुत्र अभयसिंहको बुलाकर कहा कि "तुम यदि अपने पिताका जीवन नष्ट करके हमारी अवलंबित नीतिका अनुसरण कर सको तो

मारवाडके राज्यसिंहासनपर बैठाल दिये जाओगे, अन्यथा मारवाडराज्य नष्ट कर दिया जायगा। " नरपिशाचरूपी उन दोनों सय्यद राक्षसोंने जो उपाय अवलम्बन किया और जिस उद्देशको पूर्ण करनेके लिये यत्न किया, उसके द्वारा राजपूत जातिके स्वभावका एक दूसरा अंश उज्ज्वलरूपसे चित्रित हो रहा है। जब अभयसिंहने अपने पिताका जीवनदीप निर्वाण करना स्वीकार न किया तब दोनों सय्यदोंने प्रश्न किया कि "मा बापकी शाखा, या जमीनकी शाखा ? " अर्थात् ". तुम मातापिताकी शाखा हो वा जन्मभूमिकी शाखा हो " हम ऊपर लिख चुके हैं कि मातृभूमि ही राजपूत जातिका सर्वस्व है और उसके लिये वह सब कुछ कर सकते हैं। इस कारण अभयसिंहको मारवाडके राजसिंहासनका लोभ आ गया। अजितसिंहके समान साधु राठौर राजपूतके औरससे अभयसिंह और वक्तसिंह इन दो नरराक्षसोंने जन्म लेकर सय्यदोंका उद्देश सिद्ध कर दिया था यह बात यद्यपि कभी विश्वासमें नहीं आसकती, किन्तु प्रत्यक्ष प्रमाण पूर्ण घटना उस संदेहको दूर कर देती है। मैं राजपूत जातिका बडा भारी आदर करनेवाला और उनका प्रबल पक्ष समर्थक हूं, इस कारण मेरी इच्छा नहीं थी कि उस घोर कलंकजनक घटनाको लिखूं; किन्तु राजपूतोंके चरित्रकी अपेक्षा सत्यको विशेष आदरकी वस्तु समझकर मैं यहांपर खेदके साथ उस विषयके प्रकाशित करनेको बाध्य हूं। अजितसिंहके बारह पुत्रोंमें अभयसिंह और बख्तसिंह बडे थे, यह दोनों बूंदीकी राजकुमारीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे।

राठौर कुल कलंक अभयसिंह जिस समय साक्षात् कालके समान दोनों सय्यद भ्राताओंके प्रस्तावानुसार महापातकमें संलिप्त होनेको प्रस्तुत हुआ, उस समय मारवाडेश्वर अजितसिंह मध्यमकुमार उक्त वक्तसिंहके सहित नागरमें स्थित थे। अभयसिंहने चुपचाप वक्तसिंहको पत्रद्वारा लिख भेजा कि, " यदि तुम:पिताके प्राणनाश कर सको तो उसके पुरस्कारमें मैं तुम्हें पांच सौ पैंसठ नगर पूर्ण नागर प्रदेश दे दूंगा और तुम उसको स्वाधीन भावसे राजाकी उपाधि धारण करके शासन कर सकोगे। " दुरात्मा वक्तसिंह भाईके इस प्रस्तावसे कुछ भी विचलित न: हुआ, वरन बडे साहसके साथ अपने हाथसे जन्मदाता पिताके प्राण संहार करनेको उद्यत हो गया इसकी माता इसको दुर्दान्तप्रकृति, उग्रस्वभाव, असमसाहसी, क्रोधी और नररक्त बहानेवाला जानकर सदा भयभीत रहने लगीं और अपने स्वामीसे एक दिन अवसर पाकर कहा कि " सन्ध्याके पीछे कभी आप अकेले न रहें और एकान्तमें कभी वक्तसिंहके पास न जावें।" किन्तु राजा अजितसिंह जैसे साहसी थे वैसे ही बलिष्ठ थे, इस कारण उन्होंने रानीकी बातपर कुछ ध्यान न दिया और कहा कि "वह क्या मेरा औरस पुत्र नहीं है ? मैं उसको एक थप्पड मारकर सीधा कर सकता हूं।" हा ! साधु अजितसिंहने भूलसे भी इस बातको नहीं विचारा कि कुघडीमें उन्होंने कालसर्पको उत्पन्न किया था।

महापातकी वक्तसिंह अभयसिंहका पत्र पाते ही राजाकी आज्ञासे उस कमरेमें रहने लगा जो राजाके शयन करनेके कमरेसे मिला हुआ था। वह बडी भारी तपप-

ङ्कमें डूबने और निर्मल राठौर राजपूतकुलमें कलङ्का टीका लगानेके लिये समयकी प्रतीक्षा करने लगा । अजितसिंहके लिये उस कालरात्रिने शीघ्र ही भयानक मूर्ति धारण करके संसारको निद्रित कर दिया; महलमें सन्नाटा छा गया; निद्राकी मोहिनी शक्तिने महलके प्रत्येक स्त्रीपुरुषके ऊपर अपना अधिकार जमा लिया । उस सन्नाटेके मयदानमें भयङ्कर अन्धकार भी चारों ओर नाचने लगा । महाराज अजितसिंहके रानीसहित निद्राकी गोदमें शयन करनेपर वक्तासिंह कालकूट विषधरके समान निर्भय चित्तसे धीरे २ कमरेमें आया, और बिस्तरेके नीचेसे अजितसिंहकी तलवार लेकर उस नारकीने अपने जन्मदाता पिताके पवित्र जीवनको नष्ट कर दिया । जब अजितसिंहके शरीरसे उष्ण रक्त निकलकर उनकी रानीके शरीरसे लगा तो उसकी निद्रा भंग हो गई, उसने आश्चर्यमें भरकर क्या देखा कि, जिस पुत्रको नौ मास गर्भमें रक्खा था, जिसके चरित्रके ऊपर उसको विषम सन्देह था उसी नरकके कीडे वक्तासिंहको अपने पतिके प्राण संहार करते हुए देखा । रानी पतिवियोगसे उन्मत्त होकर रोने लगीं, उनके रोनेसे निकटके कमरेमें सोये राजपूत रक्षक जाग उठे । सब शीघ्रतासे कमरेका द्वार तोडकर भीतर आ गये, उन्होंने वहां आकर महाराज अजितसिंहको मृतक पाया ।—उनका प्राण शून्य रक्तमें सना हुआ शरीर शय्याके ऊपर पडा था। रानी पतिके शोकमें उन्मत्त थीं।

पितृघाती वक्तसिंह रक्षकोंके आनेसे पहिले ही महलकी छतके ऊपर भाग गया और भागते समय सब द्वारोंके किवाड बन्द कर गया । सब लोग विशेष चेष्टा करके भी प्रातःकालसे पहिले सम्पूर्ण द्वार नहीं तोड सके । प्रातःकाल होनेपर वक्तासिंहने महलकी छतसे बडे भाई अभयसिंहका पत्र आंगनमें फेंककर कहा कि "मैंने अपनी इच्छासे महाराजके प्राण नहीं लिये, किन्तु इस पत्रने मुझको उनके प्राणनाशकी आज्ञा दी थी।" राजपूत लोग बडे भारी राजभक्त हैं, इस कारण जब उन्होंने जाना कि अभयसिंह मारवाडके अधीश्वर हुए, तो और कुछ बात न कहकर उस पितृघातकको ही भक्ति दिखाना स्थिर कर लिया । महाराज अजितसिंहकी उस अकाल मृत्युसे उनकी चौरासी रानियें उनके शरीरके साथ चितामें जल गईं, और इस नश्वर संसारको छोड पतिलोकको चली गईं. अजितसिंह और उनकी रानियोंके चिता धूमसे सम्पूर्ण मारवाड मानो घोर अन्धकारसे ढक गया । महाराज अजितसिंहने प्रजाके हृदयमें जैसा अधिकार पाया था वैसा और किसी कालमें भारतमें नहीं दीखा, उनकी भस्मीभूत चितामें उनके प्रेमी बहुतसे पुरुषोंने जीवन विसर्जन किया था! महाबली अजितसिंहकी इस वियोगान्त लीलाने सम्पूर्ण सामन्त; प्रजा और मारवाडके आबाल वृद्ध नरनारियोंके हृदयभेदी रुदनसे मारवाडको प्रतिध्वनित कर दिया । इतिहास इन राठौरकुलके घृणित कीट अभयसिंह और वक्तासिंहकी घटनाको बहुत काल तक कीर्तन करेगा । कवियोंकी लेखनीने शोकमयी मूर्ति धारण करके इन महापातकियोंको धिक्कार देनेमें क्षणमात्र भी विलम्ब नहीं किया। उनमें की एक शोकमयी कविता यहां लिखते हैं;—

"बख्त, बख्त, बाइरा,
क्यों मारा अजमाल,*
हिन्दुयानीको सेवरा,
तुर्कानीका शाल ?"

कविताका आशय यह है कि, "रे वक्त ! कुसमयमें क्यों तैंने अजमलकी हत्या करी ? वह हिन्दुओंके प्रबल रक्षक स्वरूप और मुसलमानोंके शाल स्वरूप थे ?"।

पिताकी हत्या करनेके अपराधमें बक्तसिंहने बडे भाईसे नागर प्रदेश और पापी अभयसिंहने नरपिशाच सय्यदोंकी मनकामना पूरी कर देनेसे पुरस्कारमें मारवाडका सिंहासन तथा गुजरातका राज प्रतिनिधिपद पाया। जब मुगलसम्राटके घोर दुर्दिन उपस्थित हुए तब अभयसिंहने गुजरातराज्य महाराष्ट्रोंमें विभक्त करनेका सुभीता साधन और गुजरातके अधीन बीणमहल, सांचार और दूसरे समृद्धिशाली प्रदेश मारवाडमें मिला लिये, तथा उस अवसरमें मारवाडके कवियोंने जिसको "बदबक्त" की उपाधि दी थी, उस छोटे भाई बक्तसिंहको झालोरप्रदेश दिया। उस पितृहत्याके फलसे शीघ्र ही सम्पूर्ण मारवाडमें भयानक आत्मविग्रहानल प्रज्वलित होगया।

अपने औरस पुत्र द्वारा मरे हुए महावीर अजितसिंहके अन्यान्य जिन कई पुत्रोंके साथ रजवाडेका राजनैतिक सम्बन्ध है उनका संक्षिप्त विषय नीचे लिखते हैं।—अजितसिंहके पुत्रोंमें देवीसिंह चम्पावत् सम्प्रदायके नेता अपुत्रक महासिंहके द्वारा पोष्य पुत्ररूपसे ग्रहण किये गये थे। देवीसिंह उस समय बीणामहलके अधीश्वर थे, किन्तु उक्त स्थानके चारों ओरके निवासी जब कोली जातिके उपद्रवोंको न सहकर बीणामहलकी रक्षा करनेमें असमर्थ हो गये तो देवीसिंहको उसके बदलेमें पाकर्णप्रदेश दे दिया। सुबलसिंह और सालिमसिंह (निमाजके सामन्त जिन्होंने मारे न जाकर अपना उद्धार आप कर लिया था) उक्त देवीसिंहके पुत्र और पौत्र थे।

अजितसिंहके अन्य पुत्र आनन्दसिंह इन्दारके स्वाधीन महाराज द्वारा दत्तक पुत्ररूपसे गृहीत हुए थे। मारवाडका राजसिंहासन शून्य होनेपर अर्थात् वर्त्तमान महाराजके अपुत्रक अवस्थामें प्राणत्याग करनेपर आनन्दसिंहके वंशधर लोगोंमें जो सबसे बडा हो वही मारवाडराजके छत्र तले बैठनेका अधिकारी है।

राठौरजातिमें एक विचित्र प्रथा प्रचलित देखी जाती है। छोटा भाई यदि किसी भिन्न स्वाधीन राज्यमें दत्तक पुत्ररूपसे गृहीत हो तो मारवाडके राजसिंहासनके ऊपर उनके वंशधरोंका स्वत्वाधिकार रहता है। किन्तु यदि वह पुत्र स्वदेशके किसी सम्प्रदायके सामन्त द्वारा पोष्य पुत्ररूपसे ग्रहण किया जाय तो उक्त सिंहासनके ऊपर उस पोष्य पुत्र वा उसके वंशवालोंका किसी प्रकारका स्वत्व वा सम्पर्क नहीं रहता, अधीन साम-

---

* अजितको अजेय समझकर कविने यहां "अजमल" शब्द प्रयोग किया है।

न्तके पोष्य पुत्ररूपसे ग्रहण किये जानेके समय उसका सम्पूर्ण पैतृक स्वत्वाधिकार लुप्त हो जाता है। और वह उस सामन्तके स्वत्वसे स्वत्ववान होता है । इस चिर प्रचलित प्रथाके अनुसार ही देवीसिंह चम्पावत् सम्प्रदायके नेता महासिंहके पोष्य पुत्र होनेके कारण मारवाडके सिंहासनपर उनके उत्तराधिकारियोंका कुछ भी स्वत्व न रहा।

पितृघातक अभयसिंहके शिरपर जिस समय मारवाडका राजछत्र रक्खा गया, उस समय दिल्लीके यवन सम्राट्की बडी भारी शासनशक्ति बिलकुल छिन्न भिन्न, प्रतापलुप्त, विशाल राज्य. अङ्ग प्रत्यङ्ग खण्ड २ और सिंहासन कांपता था। अवसर पाते ही अभयसिंहने उस समयके सम्राट्के अधीन दूसरे राजप्रतिनिधियोंके समान बहुतसे प्रदेश अपने राज्यमें मिला लिये थे, इस कारण उसने अपनी शासन शक्तिका चूडान्त निदर्शन रखकर शरीर छोडा। अभयसिंहके मरनेपर उनके पुत्र रामसिंहके हाथमें मारवाडका राज्यभार सौंपा गया। वक्तसिंह उस समय नागरमें राज्य करता था। भतीजेके राजतिलकके समय राजटीका और अभिनन्दन चिह्नस्वरूप बहुत उपहार द्रव्योंके साथ अपनी पालन करनेवाली वृद्ध धायको जोधपुरमें भेज दिया। पालनेवाली धायोंका रजवाडेमें बडा आदर होता है। रामसिंह राजपूत स्वभावसिद्ध उग्र प्रकृतिके थे; इस कारण चचाके उस धायको दूतीरूपसे भेजनेपर बडे क्रुद्ध हुए और धात्रीसे बोले कि "नये अधीश्वरकी संवर्द्धनाके लिये क्या चचाको दूतपदके योग्य कोई और मनुष्य नहीं मिला ?" यह कह उसको अपमानके साथ बिदा कर दिया। नागर जोधपुरके अधीन है, इस कारण वक्तसिंह नागरके स्वामी और रामसिंहके चचा होनेपर भी राजनैतिक सम्बन्धसे वह अवश्यही छोटे थे, अतः वक्तसिंहके स्वयं न आने और उपयुक्त प्रतिनिधि न भेजनेके कारण रामसिंहने उनके सब उपहार लौटाकर धायके द्वारा कहला भेजा कि "चचा शीघ्र झालौर प्रदेश लौटा दें यह मेरी आज्ञा है। अपमानित धायने रामसिंहकी सब कटूक्तियोंको वक्तसिंहसे कह दिया। वक्तसिंहने भतीजेके इस उद्दण्ड आचारण और अन्याय आज्ञाको सुनकर विनयके साथ मधुर शब्दोंमें यह उत्तर भेजा कि "झालौर और नागर दोनों प्रदेश आपके स्वाधीन हैं।" इस व्यंगोक्तिके कारण दोनोंमें झगडा बढ गया, उसका जो कुछ फल हुआ पाठकोंके जाननेके निमित्त उसको नीचे लिखते हैं।

मारवाडेश्वर रामसिंह जिस प्रकार उद्धत प्रकृतिके थे, उसी प्रकार शिष्टाचारहीन थे। अपने अधीनस्थ सामन्त मण्डलीके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिये इसविषयमें कुछ भी शिक्षित नहीं थे, आहोयाके अधिनायक कुशलसिंह मारवाडकी सामन्त मण्डलीमें सबस श्रेष्ठ और चम्पावत संप्रदायके नेता थे, उनका शरीर छोटा और बलिष्ठ था; तथा वह असभ्य और स्थूल बुद्धिके थे, इस कारण वह नये महाराजके उपहासपात्र बन गये। रामसिंहने उनको "गुराजिगंडक" अर्थात् घृणित कुत्तेकी उपाधि दी । एक दिन महाराजने कुशलसिंहको स्पष्ट अक्षरोंमें "गुराजि" कहकर पुकारा। महाराजके उस

अपमानजनक पुकारनेसे सामन्त श्रेष्ठने तत्काल उत्तर दिया कि, "यह गुरजी सिंहको काट खानेका साहस रखता है"

यद्यपि रामसिंह इस उत्तरसे मन २ में बडे अप्रसन्न हुए परन्तु प्रगट कुछ न बोले। इसी प्रकारकी एक और बातसे उन दोनोंका परस्परका प्रेम दूर हो गया। एक दिन राजा रामसिंह और कुशलसिंह दोनों मन्दौरके बनमें टहल रहे थे, टहलते २ महाराजने एक वृक्षको संकेत करके कुशलसिंहसे पूंछा कि "इस वृक्षका नाम क्या है"? कुशलसिंहने आग्रह और घमण्डके साथ उत्तर दिया कि "आपकी राजपूत जातिके बीचमें जिस प्रकार मैं गौरवस्वरूप हूँ, उसी प्रकार यह चंपेका वृक्ष भी इस बनकी शोभा बढा रहा है।" यह उत्तर सुनकर रामसिंहने क्रोधमें भरकर कहा कि अभी इस वृक्षको जडसे उखाडकर फेंक दो। मारवाडमें चंपेनामवाला कोई पदार्थ भी नहीं रहेगा।" कुशलसिंह उस समय तो मौन हो गये, परन्तु हृदयमें क्रोधको बढाने लगे।

चम्पावत नेता कुशलसिंहके समान मारवाडके कम्पावत नामक और एक महान साहसी सम्प्रदायके नेता आसोपके अधिनायक कुन्नीराम भी रामसिंहकी विरद्दृष्टिमें गिरे। उनके मुखकी बनावट कुछेक बुरी थी। एक दिन रामसिंहने उनको "बुड्ढे बन्दर" कहकर पुकारा। इस पुकारनेसे उत्तेजित होकर कुन्नीरामने कहा कि, "जिस समय यह बन्दर नाचेगा उस समय आपको खूब आनन्द मिलेगा।" यह कहकर कुन्नीराम शीघ्र ही आहोयाके सामन्तसहित राजसभासे चले गये और नागरमें जाकर सेनाका संग्रह करने लगे। जिस समय अपमानित दोनों सामन्त नागरमें पहुँचे उस समय वहां वक्तसिंह उपस्थित नहीं थे, उनके आनेकी बात और भतीजेकी कठोरतासे ही वह तत्काल राजधानीमें पहुँच गये। सुनते हैं कि वक्तसिंहने उन दोनों सामन्तोंको शान्त करके कहा कि "मैं मध्यस्थ बनकर तुम्हारे इस विवादको शान्त कर दूंगा। किन्तु अपमानित सामन्तोंने किसी प्रकारसे भी इस बातको नहीं माना और वक्तसिंहके सामने प्रतिज्ञा करी कि "हम कभी स्वामी समझकर रामसिंहका दर्शन नहीं करेंगे।" उन्होंने यह भी कहा कि "हम आपके जोधपुरके सिंहासनपर बैठनेमें यथोचित सहायता देंगे और यदि आप हमारी बातको नहीं मानेंगे तो हम सदाके लिये मारवाड छोडकर दूसरे राज्यमें चले जायेंगे।" वक्तसिंहने कुछ दिनतक इंगलेंडेश्वर रिचर्डके समान आचरण किया, किन्तु उनके भतीजेकी स्वाभाविक उग्रताने शीघ्र ही भयानक काण्ड संघटित कर दिया।

"मारवाडकी सामन्त मण्डलीमें सबसे श्रेष्ठ कुशलसिंह और कुन्नीरामको चचाने आश्रय दिया है" इस बातको सुनकर रामसिंहने चचाको फिर पत्र लिखे कि "झालोरका राज्य शीघ्र ही लौटा दो।" वक्तसिंहने फिर कुछ नम्र शब्दोंमें इसका उत्तर लिखा कि, "मैं अपने स्वामीके विरुद्ध विवाद करनेका साहस नहीं रखता, यदि आप

स्वयं यहां आ सकें तो मैं अभिषेकजलसे भरा हुआ कलश हाथमें लेकर आपसे भेंट करूंगा। '' उत्तर प्रत्युत्तरके पीछे दोनोंने युद्ध करना स्वीकार किया। मैरता मैदानमें दोनों अपनी २ सेना लेकर मतवाले हाथियोंके समान पहुंच गये। मारवाडके सम्पूर्ण साहसी सम्प्रदायोंमें मैरतीय सम्प्रदायके वीर सबसे अधिक साहसी हैं, यह सब लोग रामसिंहके झंडेके नीचे एकत्रित हो गये। रिया, वुदसु, मिथरि, खोलर, भरावर, कोचामुन, अलनिवास; जुसुरि, वकरि, भूरुन्दा, दूर हो और चन्दारुणके सामन्त लोग अपनी २ सेनाके साथ युद्धमें जाने लगे। जोधपुरके अधिकांश सम्प्रदाय राजभक्तिके वशीभूत होकर मैरतीय लोगोंमें आ मिले; यद्यपि लाण्डु, निम्बी आदिके कई सामन्त शत्रु पक्षमें मिल गये, किन्तु खैरोया, गोविन्दगढ और भद्रार्जुन आदिके नेतृस्थानीय सामन्त इस समय राजभक्तिको न भूले। इधर रामसिंहका अशिष्टाचरण याद करके उनका साथ नहीं दिया। दूसरे कई सामन्त इस जातीय युद्धमें लडना अनुचित समझकर तटस्थ हो गये।

उद्धतस्वभाव रामसिंह अपनी असभ्यता और दुर्बुद्धिके कारण पाँच सहस्र साहसी सेनाकी सहायतासे सर्वथा वंचित हो गये। रामसिंहका विवाह भोजकी राजपुत्रीके साथ हुआ था; उस राजकुमारीके साथ वे रामसिंहके सहायता करनेके लिये पांच सहस्र सेना लेकर आये थे। इनके डेरे राजधानीके बाहर रक्खे गये, उस समय एक घटनाके द्वारा रामसिंहकी सिंहासन च्युतिका असली कारण और राजपूत स्वभावका एक विचित्र लक्षण प्रगट हो गया। अर्थात् जिस डेरेमें रानी थी, उसकी कनातके ऊपर एक कुलक्षण सूचक काक बैठ गया। रानी उस कुलक्षणकी निवृत्तिका उपाय जानती थी, इस कारण तत्काल उसका उद्योग किया। राजपूत वीरोंके समान राजपूत स्त्रियें भी बंदूक चलानेमें चतुर होती हैं। भोजराजपुत्रीने तत्काल बंदूक हाथमें ली और उस काकके प्राण वध करके कुलक्षण दूर कर दिया। क्रुद्धस्वभाव रामसिंहने उस बन्दूकका शब्द सुनकर अपना अनादर समझा और तत्त्वानुसंधानके विना ही बन्दूक छोडनेवालेको अपने सन्मुख लानेकी आज्ञा दी; रानीका नाम बतानेपर भी उनके क्रोधकी शांति न हुई। रानीको कटुभाषामें गाली देकर कहा कि "रानीसे कहो कि अभी हमारे राज्यसे निकल जायँ और जिस देशसे आई हैं वहीं चली जावें।'' अपने क्रुद्ध स्वामीकी उक्त आज्ञा सुनकर रानी महाराजकी मङ्गल कामना के लिये ही बडी विनयके साथ क्षमा प्रार्थना करने लगी। किन्तु रामसिंहने किसी प्रकारसे भी उस प्रार्थनाको स्वीकार नहीं किया। अन्तमें रानीने कहा कि "आप विना ही कारण मुझको दूर किये देते हैं, इसके परिणामसे मारवाडका राजमुकुट आपके शिरसे अवश्य गिर जायगा।'' यह कहकर रानी उस समय अपनी पांच सहस्र सेनासहित मारवाड छोडकर पिताके घर चली गई। वह पांच सहस्र सेना इस समय अवश्य ही हतबुद्धि रामसिंहके बडे काम आती।

निमाज, रायपुर और राउसके आधीन सम्पूर्ण उदावत सम्प्रदाय और किउवनसारके ठाकुरके अधीनमें सम्पूर्ण करुणातीत सम्मिलित होकर वक्तसिंहके झंडेके नीचे २ खडे हुए चम्पावत और कम्पावत लोगोंमें आकर मिल गये।

यद्यपि रामसिंहकी सेना शत्रुओंकी सेनासे कम थी । किन्तु मारवाडके स्वामी होनेके कारण उनका साहस शत्रुओंकी अपेक्षा अधिक था । रामसिंहने मैरताके अजमेर तोरणद्वारपर पहुँचकर अपने डेरे डाल दिये । उनके चचा वक्तसिंह भी नगरके द्वारपर डेढ कोशकी दूरीपर पडाव डालकर समयकी प्रतीक्षा करने लगे । वक्तसिंहकी सेनाका पडाव जिस स्थानपर था, वह पवित्र स्थान " माताजीका स्थान " इस नामसे विख्यात है । इस स्थानमें आद्याशक्तिका एक मन्दिर और पांचों पाण्डवोंका बनाया हुआ एक कुण्ड है ।

सबसे पहिले वक्तसिंहने युद्धकी भेरी बजाई और रामसिंहके आगे बढनेसे पहिले ही तोपोंके गोले बरसाने लगे । कुछ देर पीछे रामसिंहके गोलन्दाज भी भयानक शब्द करके गोलोंकी वर्षा करने लगे । सारे दिन तोपें ही चलती रहीं, इस कारण खड्गयुद्ध करनेका किसीको अवसर न मिला । जातीय समरने क्रमसे भयानक मूर्ति धारण करी । इस युद्धमें विदेशी, विधर्म्मी और विजातीय कोई पुरुष नहीं था, केवल भ्राताके विरुद्ध भ्राता और मित्रके विरुद्ध मित्र खडे थे । सबकी नाडियोंमें समभावसे रक्त बह रहा था । सन्ध्या होते ही एक आश्चर्य्य घटनाके द्वारा यह युद्ध बन्द हो गया ।

रणक्षेत्रके निकट वाजिवा सरोवरके तटपर दादूपन्थी संन्यासीका एक आश्रम है । सुनते हैं कि राजा सूरसिंहने इस आश्रमको बनवाया था । यह आश्रम रणोन्मत्त दोनों पक्षवालोंके ठीक बीचमें स्थापित है । इस आश्रममें बाबा कृष्णदास अपने शिष्योंसहित रहते थे । शिष्यलोग तोपके गोलोंके भयसे भाग गये । परन्तु कृष्णदास शिष्योंके समझानेपर भी वहांसे नहीं भागे, जब दोनों ओरके सैनिकोंने उनसे दूसरे स्थानमें चले जानेका बहुत अनुरोध किया तो उन्होंने कहा कि " यदि तोपके गोलेसे निश्चय ही मेरी मृत्यु होनी लिखी है, तो मैं उसको किसी प्रकारसे नहीं हटा सकूँगा और यदि परमात्माकी वैसी इच्छा नहीं है तो यह तोपके गोले मेरी कुछ हानि नहीं कर सकते ।" यह उत्तर सुनकर सब मौन हो गये । सारे दिन आश्रममें गोले बरसते रहे । यद्यपि उन गोलोंके लगनेसे कृष्णदासका आश्रम और उद्यान नष्ट भ्रष्ट हो गया, परन्तु बाबाजीके शरीरको कुछ हानि नहीं पहुँची और न वह इन गोलोंके गिरनेसे कुछ भयभीत हुए । सन्ध्या होनेपर दोनों ओर युद्ध बन्द कर देनेके लिये कहला भेजा । दोनों दलोंने दादूपन्थी संन्यासीकी दैवी शक्तिसे भयभीत होकर युद्ध बंद कर दिया और रणक्षेत्र छोडकर अपने २ घरको चले गये ।

दूसरे दिन प्रातःकालसे ही फिर जातीय समरानल भयानक वेगसे प्रज्वलित करनेके लिये दोनों ओरके सैनिक सज गये आज राजा रामसिंहने सबसे पहिले अपनी सेना सहित आगे बढकर चचाको आक्रमण किया । थोडी देरमें ही तोपोंके धुएँसे आकाशमें घोर अन्धकार छा गया, इन तोपोंके शब्दसे प्रकृति प्रकम्पित और वीरोंके हृदय उत्तेजित हो गये । अपमानकी अग्निमें दग्धहृदय दृढप्रतिज्ञ अयोके सामन्त शुभ अवसर

पाकर " कुत्ता भी सिंहको काटनेमें समर्थ है " इस बातके दिखानेके लिये बडी वीरताके साथ अपनी चंपावत सेनासहित आगे बढे । रामसिंहके अत्यन्त उद्धत और हिताहित विचार शून्य होनेपर भी साहसी मैरतीय वीरगण राजभक्तिके वशीभूत होकर तत्काल आगे बढे । " संग्राम जय पाकर हटावेंगे अथवा प्राण त्याग करेंगे " इस प्रतिज्ञाने और भी उन वीरोंके हृदयको दूने साहससे भर दिया, इस कारण दोनों ओरके वीर अपने भाई बन्धु और इष्ट मित्रोंकी ममता छोडकर एक दूसरेको निर्मूल करनेके लिये तलवार चलाने लगे । मारवाडके वीरोंमें मैरतीय लोग सबसे श्रेष्ठ वीर गिने जाते हैं; इस कारण उस अपने नामकी रक्षा करनेके लिये वे अत्यन्त साहसके साथ लडनेका उद्योग करने लगे। इन मैरतीय वीरोंका यश चम्पावत लोगोंको सदासे असह्य है, इस कारण चम्पावतलोग अपने नेताके उस अपमानको स्मरण करके बडी वीरताके साथ शत्रुओंका हृदय प्रकम्पित करने लगे । चारों ओर भयङ्कर सामरिक ध्वनि तलवारकी झनकार, बाणका सन् २ शब्द और तोपोंकी आकाशभेदी ध्वनि सुनाई देने लगी। रणक्षेत्रने क्रमसे वीभत्स मूर्ति धारण कर ली । प्रबल उद्दीपना और साहसकी जीवित मूर्तियोंने प्रगट होकर शत्रुओंके संहारमें दोनों पक्षवालोंको दृढप्रतिज्ञ कर दिया। प्रत्येक सम्प्रदायके वीरनेता दोनों पक्षके सामन्तोंका नाम लेकर पुकारने लगे और परस्पर अस्त्र शिक्षा,-बाहुबल,-साहस-और वीरता दिखानेमें सम्पूर्ण शक्तिका प्रयोग करने लगे ।

राजभक्तिके चूडान्त निदर्शन स्वरूप मैरतीय अधिनायक शेरसिंहके सबसे पहिले शत्रुके शस्त्रने प्राण लिये । शेरसिंहका भाई यह देखकर अपनी सेनासहित आगे बढा । इसके पीछे घोर संग्राम होने लगा, अहोयाके वीर सामन्त अपनी वीरता दिखानेके पीछे स्वर्ग सिधारे; चम्पावत लोगोंने उनको तत्काल स्थानान्तरित कर दिया । दोनों पक्षके सामन्तोंके मरनेपर उनके अधीनस्थ वीर जयलक्ष्मीकी इच्छासे बडी वीरताके साथ लडने लगे । बहुत कालतक युद्ध होनेपर भी कोइ वीर पीछे नहीं हटा। किन्तु बक्तसिंहकी सेना अधिक थी, वह जहां अपने भतीजेको देखता वहीं बारम्बार दौडता; मारवाडके श्रेष्ठ मैरतीय वीर दूने शत्रुओंके साथ लडकर जबतक सर्वथा निर्मूल न हुए तथा जबतक प्रत्येक सामन्त एक२कर पृथ्वीपर न सो गया,तबतक वक्तसिंहकी विजय नहीं हो सकी।अन्तमें वाध्य होकर जयलक्ष्मीने वक्तसिंहका आश्रय लिया।इस जातीय महा संग्राममें मैरतीय वीर सर्वथा समूल नष्ट हो गये। रियाके सामन्त श्रेष्ठके अतिरिक्त इरोहा, शिडरा, जुसुरी और मिथरीके अधीन सामन्तगण तथा मिथरीके सामन्तके तीन साहसी पुत्र और प्रत्येक सामन्तकी समस्त सेनाने इस भयानक संग्राममें जीवन बलिदान कर दिया था ।

मिथरीके सामन्तके उत्तराधिकारीने जिस अत्यन्त वीरता और असीम साहसके साथ संग्रामभूमिमें प्राण दिये थे, इंग्लैण्डके और कोशिके शासनकालमें भी वह वीरता किसीमें नहीं देखी गई । उक्त सामन्तके पुत्र अपने पिता और भाइयोंके साथ प्राणदान करके राजभक्तिका अतुलनीय परिचय दे गये हैं। मारवाडके सर्वनाशकारी इस जातीय महा-

समरके बहुत दिन पहिले उक्त सामंत कुमारके साथ जयपुरके अधीन निरुकाकी सामंत पुत्रीका विवाह संबंध स्थिर हुआ था। जिस समय साहसी सामंत कुमार पात्रीका पाणिग्रहण कर रहे थे, उस समय उन्होंने सुना कि विद्रोहियोंकी सेना मैरताके निकट आ गई है। वीरका हृदय प्रफुल्लित हो उठा; उसी समय गंठबंधन खोलकर नई बहूका हाथ छोड दिया और शिरपर सेहरा गलेमें जयमाला पहरे हुए ही घोडेपर चढकर सूर्यलोकमें अप्सराओंको प्राप्त करनेकी इच्छासे रणभूमिमें पहुँच गये। दूसरे दिनके युद्धमें यह सामंत बडी भारी वीरता दिखानेके पीछे स्वर्ग सिधार गये। मारवाडके कवियोंने मिथरीके उत्तराधिकारीका अनुपमेय वीरत्व विक्रम गौरव अक्षय करनेकी इच्छासे लिखा है कि;—

"काणेमतिबुलबुला
गल्लादोलिएमाला;
अस्सीकोशखाडा हो आया
कन्‌वारमिथरिवाला।"

स्वामीके युद्धकी ओर प्रस्थान करते ही नवपरिणीता पात्री भी जयपुर छाडकर मिथिरीके और आगे बढी। किन्तु शोक ! मिथरीमें पहुँचते ही उत्सव सूचक शंखआदि मांगल्य ध्वनिके वदले रोदन और हाहाकारका शब्द उसके कानमें पडा। तत्काल उसने एक चिता जलवाई और उसमें स्वामीके शवके साथ भस्मीभूत होकर सूर्यलोकको चली गई। इस युद्धभूमिमें जाकर मैंने उपरोक्त सामन्त पुत्रका स्मारक चिह्न खोजा परन्तु उक्त कविताके सिवाय और कुछ न पाया।

मारवाडेश्वर रामसिंहके पक्षवाले मैरतीय तथा अन्यान्य संप्रदायके सैनिकोंने यद्यपि शत्रुओंकी बहुतसी सेनाको संहार किया था किन्तु अंतमें उन्होंने अपनी पराजयके विषयमें सूचित कर दिया कि केवल शत्रुओंकी गोलन्दाजोंके द्वारा यह पराजय हुई है। मैरतीय लोगोंके असीम साहसी और प्रबल राजभक्त नेतारियाके सामन्त शेरसिंहने इस जातीय युद्धके होनेसे पहिले अपने साले उक्त अहोयाके सामन्तको रामसिंहके विरुद्ध युद्ध करनेसे बहुत रोका, परन्तु अहोयाके सामन्तने इस बातको किसी प्रकारसे भी नहीं माना, अन्तमें शेरसिंहने व्यङ्ग भावसे कहा कि "वक्तसिंहकी सहायतामें रामसिंहके परास्त करनेकी तुममें जितनी शक्ति है वह किसीसे छिपी नहीं है।" अहोयाके सामन्तने इसके उत्तरमें कहा कि "और कुछ हो या न हो मैं इस राज्यको अवश्य ही छिनवा दूंगा।" इस गर्वभरे उत्तरको सुनकर शेरसिंहने महा क्रोधके साथ प्रतिज्ञा करी कि "मैं भी यथासाध्य तुम्हारी इस इच्छाको अपूर्ण रखनेकी चेष्टा करूं-गा।" मैरताकी उस भयंकर रणभूमिमें परस्पर खड्गयुद्धके पहिले दोनों वीरोंमें फिर दुबारा मुलाकात नहीं हुई थी।

जिस स्थानपर इस शोचनीय हत्याकाण्डमें आत्मीय, ज्ञाति, भ्राता, मित्रोंने आपसमें एक दूसरेको मारकर जातीय एकताकी हीनताका परिचय दिया था, उस स्थानपर एक

भी ग्राम नहीं है चारों ओर बडा भारी मैदान है । उस युद्धभूमिके स्थान २ में उन मृतक वीरोंके स्मारक मंदिर और छोटे २ स्मरणाचिह्न विद्यमान हैं । जो वीर जैसे पद-पर था उसके सन्मानार्थ वैसा चिह्न ही स्थापित किया है । किसीके स्मरणार्थ मनोरम स्तंभ श्रेणीके शोभित ऊंची चोटीके महल, किसीका स्मरणाचिह्न सामान्य मंदिर, किसीके शव स्थानपर पाषाण स्तूप स्थापन कराके उसके ऊपर उस वीरका नाम गोत्र और शाखा अङ्कित है । मैंने उन स्मारक मान्दिरोंकी खोदित लिपियोंमेंसे बीसकी नकल उतार ली है । यह सब लिपियें राजपूतजातिके प्रशंसनीय चरित्रको सूचित करती हैं ।

इस भयङ्कर जातीय समरमें पराजित होनेके पीछे मारवाडेश्वर रामसिंह चहार दिवारीवाले मैरता नगरके भीतर आश्रय लेनेको बाध्य हुए, किन्तु इस इतने बडे नगरकी अल्प सेनाद्वारा शत्रुओंके कराल गालसे रक्षा करना असंभव समझकर बुरे अवसरमें मारवाडकी सर्वनाश करनेवाली एक कल्पनाको मनमें सोचा महाराष्ट्र डॉकू उस समय बडे प्रबल हो गये थे, रामसिंहने उनकी सहायतासे चचाको परास्त करनेका निश्चय कर लिया और आधीरातको उठकर अवशिष्ट सेनाके साथ दक्षिणको भाग गये । उन्होंने उज्जैनीमें पहुंचकर महाराष्ट्र दस्युदलके नेता जयआप्पा सेंधियाके साथ मुलाकात करी, रामसिंह अपना राज्य प्राप्त करनेके लिये उनसे परामर्श करने लगे ।

रामसिंहके मारवाड छोडते ही उनके चचा वक्तसिंह जयलक्ष्मीका आलिङ्गन करके तत्काल जोधपुरमें पहुंच गये और राजसिंहासनपर बैठकर सम्पूर्ण राज्यमें अपने नामका घोषणापत्र प्रचारित कर दिया । कालकी कैसी विचित्र गति है ! संसारकी कैसी विचित्र लीला है ! पितृघातक वक्तसिंहके शिरपर ही मारवाडका राजछत्र शोभित हुआ ! दृढप्रतिज्ञ और चतुर वक्तसिंहने विचारा कि, "रामसिंह जब महाराष्ट्र दस्यु-दलकी सहायता लेने गये हैं तब निष्कण्टक राज्य भोगना असम्भव है" वक्तसिंह पूरे राजनीतिज्ञ और रणपण्डित थे, इस कारण उन्होंने राजनैतिक अवस्था देखनेके लिये क्षणमात्र भी विलम्ब नहीं किया । वह अपने राज्यकी सीमान्तपर शत्रुओंके साथ समर और महाराष्ट्र दस्युनेता, तथा रामसिंहके श्वशुर जयपुर राजा जिससे रामसिंहको किसी प्रकारकी सहायता न दे सकें, उसके लिये उपयुक्त उपाय करनेके लिये विजयी सेनासहित अजमेरकी ओर आगे बढे ।

जयपुरेश्वर ईश्वरीसिंह कई प्रबल कारणोंसे वक्तसिंहकी सहायता करनेमें असमर्थ थे; किन्तु वह वक्तसिंहके बाहुबल और वीरतासे बहुत ही डरते थे । किंकर्त्तव्यविमूढ होकर ईश्वरीसिंहने वर्त्तमान विषम संकटावस्थामें साधारण राजपूतोंके अवलम्बित उपायको करनेकी इच्छा की । मृत महाराज अजितसिंहके एक पुत्र उस समय इन्दौरमें राज्यशासन कर रहे थे । उनकी ही एक कन्याके साथ ईश्वरीसिंहका विवाह हुआ था । जयपुरराजा उन रानीके महलमें जाकर विपत्तिसे बचनेका परामर्श करने लगे । ईश्व-

रीसिंहने अजितसिंहकी शोचनीय हत्याका बदला लेने और रामसिंहके स्वत्वाधिकार प्राप्त करनेमें सहायता करनेके निमित्त रानीसे विशेप अनुरोध किया और वक्तसिंहके प्रेरित उक्त पत्रका उल्लेख करके कहा कि, "मैं जिस पक्षमें सम्मत हूंगा उसी ओर तलवार चलाना होगा क्योंकि दोनों ओर ही युद्धकी आवश्यकता है। किन्तु वक्तसिंहके विरुद्ध होकर मैं जयलाभकी आशा नहीं करता और यदि मैं पितृहन्ता और अन्यायसे सिंहासन अधिकार करनेवालेकी सहायता करूं तो मनुष्यसमाज मुझको धिक्कार देगा।" ईश्वरीसिंहने इन्दौरकी राजपुत्रीसे यह भी प्रगट कर दिया कि"इस महा उद्धार करनेकी केवल तुममें ही शक्ति है।" परामर्शके पीछे यह निश्चय हुआ कि एक महापापी द्वारा एक महापापीको दण्ड देना ही होगा। ईश्वरीसिंहने इसको स्वीकार कर लिया। ईश्वरीसिंहकी रानी इन्दौरराजपुत्री वक्तसिंहकी भतीजी थी। इस कारण उन्होंने इस सम्बन्धसे अपने चचाके साथ साक्षात् करनेकी प्रार्थना करी,वक्तसिंहने मेवाड,मारवाड और अम्बेर तीन राज्योंकी सम्मिलित सीमान्तके बीचोंबीच स्थानमें स्थापित अपने डेरेपर आनेकी आज्ञा दे दी। रानी प्रतिहिंसा चरितार्थ करनेवाले अन्यर्थ अस्त्ररूप एक मूल्यवान राजवेशको हलाहल विषसे मिश्रित करके चचाको उपहार देनेके लिये अपने साथ ले गई।

जयपुरराजरानीके डेरेमें पहुंचनेके कुछ ही पीछे वक्तसिंहको भयङ्कर ज्वर चढ आया, तत्काल चिकित्सक बुलाया गया। किंतु राजवैद्यने रोगके सम्पूर्ण लक्षण देखकर कहा कि, "इस रोगका निवारण किसी औषधिसे नहीं हो सकता, इस कारण आप परलोक जानेके लिये तैयार हो जाइये।" निर्भीकहृदय राठौरराजने वैद्यकी इस उक्तिको व्यङ्ग समझकर कहा कि, "क्या तुम आरोग्य नहीं कर सकोगे? मेरे इस रोगके आरोग्य करनेकी यदि तुममें शक्ति ही नहीं है तो क्यों मेरी दी हुई भूवृत्तिका भोग करते हो? और तुम्हारी इस चिकित्साविद्यासे क्या लाभ है?" राजाके इस उत्तरको सुनकर वैद्यने शीघ्र ही डेरेके निकट एक गढा खोदकर उसमें जल डाला और जलमें एक औषधि डाली, औषधिके डालते ही जल बहुत शीतल हो गया। मृत्युके मुखमें गिरे हुए वक्तसिंहको पुकारकर वैद्यने कहा कि–"महाराज! आप जिस रोगसे पीडित हैं उसकी केवल यही एक अंतिम औषधि है, किंतु आपके रोगके लक्षण देखकर मैं समझता हूं कि इससे भी कुछ उपकार नहीं होगा। अब देर करनेका समय नहीं है अन्त समयके धर्म्म कर्म्म समाप्त कर लीजिये।" राजवैद्य यह बात भलीभांति जानते थे कि विष मिली हुई पोशाक ही वक्तसिंहकी मृत्युका मूल कारण है, किन्तु उन्होंने इस बातको प्रगट नहीं किया। राजवैद्यके अन्तिम शब्द सुनकर वक्तसिंहने शीघ्र ही सब सामन्तोंको डेरेमें आनेकी आज्ञा दी। सब सामन्तोंके आ जानेपर उन्होंने मारवाड और निजपुत्रकी स्वार्थरक्षाके लिये उनसे अंतिम अनुरोध किया, वह सब इस बातको स्वीकार करके विदा हुए। इसके पीछे राजगुरुको बुलाकर वक्तसिंहने इष्टदेव और देवालयके उद्देशसे भूवृत्ति निर्द्धारण कर दी। इसी अवसरमें उनके निर्भय और वीरचित्तमें एक शापवाणी प्रतिध्वनित हुई। वक्तसिंहने जिस समय अपने पिताकी हत्या करी

थी उस समय अजितसिंहकी अस्सी विधवा रानियोंने चितामें जलनेके अवसर कहा था कि "भिन्नदेशमें तुम्हारा शव भस्म होगा।" इस बातके याद आने पर व क्तसिंह अपने मन ही मन में कहने लगे कि "वास्तवमें मैं अपने राज्यकी सीमान्तपर स्थित हूं अब उन सती स्त्रियोंका वाक्य सफल होना चाहता है" उस समय पितृघाती वक्तसिंहके हृदयमें कैसा दृश्य उदय हुआ कैसी अनन्त नरक यंत्रणासे हृदय जला था, यह बात अनुमानके बाहर है। वक्तसिंहने सती स्त्रियोंके शाप वाक्य उच्चारण करते २ ही अपना पापकलुषित शरीर छोड दिया। जिस स्थानपर वक्तसिंहका शव भस्मीभूत हुआ था, वहांपर एक स्मारक मंदिर इस समय बना हुआ है। सर्वसाधारणमें इस मंदिरको "बुरोदेवल" अर्थात् पिशाच मंदिरके नामसे पुकारते हैं।

राजा वक्तसिंह यदि बडे भाई अभयसिंहकी पापाज्ञाके वशीभूत हो कर अपने जन्मदाता पिताका प्राण संहार न करते, तो वह मारवाडकी राजमण्डलीमें एक प्रथम श्रेणीके राजा गिने जा सकते थे। मारवाडमें उनके समान साहसी राजा एक भी नहीं उत्पन्न हुआ। उनमें जैसी विलक्षग बुद्धि थी वैसे ही बीरता थी। पितृहत्याके पहिले सम्पूर्ण राठौर राजपूत उनको हृदयसे प्यार करते थे। अभयसिंहने जो गुजरातराज्य का अधिक भाग जय कर लिया था, यह वक्तसिंह ही उसके प्रधान कारण और सहायकारी थे। दूसरे—गुजरात जय करनेके पीछे अभयसिंहने केवल अकेले वक्तसिंहकी सहायतासे दिल्लीसम्राट्के प्रतिनिधि शेर बुन्दलको भयंकर संग्राममें परास्त कर दिया था। रामसिंह जब अपनी उग्र प्रकृति, अशिष्ट आचारण और निन्दनीय स्वभावके कारण मारवाडसिंहासनके सर्वथा अयोग्य पात्र समझे गये थे, इस दशामें वक्तसिंहके सिंहासन अधिकार कार्य्यको किसी प्रकारसे अन्याय नहीं कह सकते; विशेष करके मारवाडकी सामन्तमण्डली मारवाडेश्वरके समान एक राजरक्तधारी और राजनिर्वाचन करनेमें समर्थ है, इस सामन्तमण्डलीने रामसिंहको अयोग्य देखकर उस पदपर वक्तसिंहको अभिषिक्त करके किसी प्रकार भी न्यायका अपमान नहीं किया। मारवाडकी सामन्तमण्डली यह राजनिर्वाचन शक्ति धारण करती चली आ रही है; और श्रेष्ठ राज्य स्थापन करनेके लिये यह व्यवस्था बहुत ही प्रयोजनीय है। वक्तसिंहकी मृत्युके समय मारवाडके सम्पूर्ण सामन्तोंने उनकी अनुष्ठित नीतिका समर्थन और उनके पुत्र विजयसिंहकी स्वार्थरक्षाके लिये प्रतिज्ञा करी। बीकानेर और कृष्णगढके स्वाधीन राजाओंने भी इस ही पक्षका समर्थन किया। वक्तसिंहका प्राणवियोग होनेपर सामन्तमण्डली शीघ्र ही उनके पुत्र विजयसिंहको मायोरात नामक स्थानमें अभिषिक्त करके मैरतेमें ले गई।

सिंहासनभ्रष्ट रामसिंहने महाराष्ट्रदस्युनेता जयआप्पा सोंधियाके साथ मिलकर कोटा राज्यपर आक्रमण किया। फिर मेवाडका विध्वंस करके अजमेरमें पहुंचे। इस स्थानपर साहसी राठौर रामसिंहके साथ जयआप्पा सोंधियाका कुछ विवाद हो गया था किन्तु दोनोंके सौभाग्यसे यह विवाद दूर हो गया, दोनों सीमान्त पार होकर संहारमूर्तिसे मारवाडमें घुसे। नवीन मारवाडेश्वर विजयसिंह राजपूत स्वभाव सुलभवीरत्व

विक्रम साहस उद्दीपना भूषणोंसे विलक्षणरूपसे भूषित थे । विदेशी डाकुओंके साथ रामसिंहका आगमन समाचार सुनकर वह भी शीघ्र ही मारवाडके सम्पूर्ण सामन्त और अपने अधीनस्थ २००००० दो लाख सेनाको साथ लेकर बडी वीरतासे आगे बढे।

जिस प्रकार दो भिन्न प्रान्तोंसे उत्ताल तरंगमाला विस्तारके साथ हुङ्कार शब्दसे दौडते हुए दो समुद्रोंके संघर्षणसे भयंकर काण्ड संघटित होता है, उसी प्रकार इन दोनों सेनाओंके साक्षात् दर्शनसे हुआ । जातीय महासंग्राममें जन्मभूमिकी छातीपर विजातीय महाराष्ट्रियोंके आनेसे महावीर राठौर लोगोंका रक्त जिस भयानकरूपसे गरम हो उठा होगा; एकता, उद्दीपना, शौर्य्य, वीर्य्य, विक्रमने उनके हृदयमें जिस पूर्ण शक्तिका स-श्चालन कर दिया होगा, उसका सहजमें ही अनुमान हो सकता है । यदि सिंहासनभ्रष्ट रामसिंह अकेले ही मारवाडी सेनाके साथ संग्रामसागरमें कूदते, यदि वह मारवाडका सर्वनाश साधनेके लिये विजातीय महाराष्ट्रियोंको सहायताके लिये मातृभूमिमें न लाते तो इस संग्राममें इतनी उद्दीपना कभी दिखाई नहीं देती । रामसिंहने सिंहासनके लाभकी इच्छासे समरक्तवाही भ्राता, आत्मीय मित्र, स्वजातीय सबके प्राणसंहारके लिये जो दुर्दा-न्त महाराष्ट्रियोंको प्रमत्त कर दिया था, अन्तमें उस मत्तताने ही वीरक्षेत्र मारवाडको ठीक मरुक्षेत्र बना दिया । रजवाडेके प्रत्येक राज्यके अधःपतनका मूल कारण निश्चय ही लुण्ठनप्रिय पैशाचिक स्वभाववाली यह महाराष्ट्र जाति ही है ।

दोनों पक्षके सैनिकोंने मैरताकी बहुत दूरीपर एक दूसरेको देखते ही गोली चलाना आरंभ कर दिया।धुएँसे चारोंओर अन्धकार छा गया,तोपोंके वज्रके समान गंभीर शब्दसे मारवाड कॉंप उठा।उस दिन दोनों पक्ष ही समान साहस, और समान तेजसे बडी वीर-ताके साथ गोले बरसानेमें लगे रहे,खङ्गयुद्ध बहुत कम हुआ । मैरताके निवासियोंने इस युद्धमें सैनिकोंके भोजनकी सामग्री संग्रह कर दी; किन्तु इस सम्बन्धसे बहुतसे मारे भी गये;यहांतक कि दादूपन्थी वृद्ध संन्यासीके बहुतसे शिष्यभी आहार्य्यसंग्रह करनेके समय यमराजकेघर सिधार गये।दूसरे दिनका युद्ध भी उसी भयानक मूर्त्तिसे आरंभ हुआ,विशेष करके विजयसिंहके पॉंच सहस्र तेजस्वी अश्वारोहियोंने अपने भयानक आक्रमणसे सैकडों महाराष्ट्रियोंको मार गिराया । यद्यपि विजयसिंहने मारवाडके सम्पूर्ण साम-न्तोंसहित युद्ध आरंभ कर दिया था, यद्यपि उनकी सेनामें वीरता,साहस और उद्दीपना दिखाई देती थी,किंतु शत्रुसेनाकी अधिक संख्या देखकर पराजयकी संभावनासे उन्हों-ने भागनेका उपाय भी पहिलेसे ही निर्द्धार कर लिया था । पहिले और दूसरे दिनकी लडाईमें युद्धकी सामग्री ढोंनेवाले सब पशु भलीभॉंति रक्षित रहे । तीसरे दिन उन सब पशुओंको जल पिलानेके लिये एक छोटी नदीके तटपर ले गये। जाते समय मार्गमें एक शोचनीय काण्डघटा विजयसिंहके पक्षकी एक प्रबल बलशाली अश्वारोही सेना महाराष्ट्रियोंकी एक सेनाको विध्वंस करके ठीक उसी समय वहां आ निकली । उन्होंने रामसिंहके पशु समझकर रक्षकोंको गोलियोंसे मार गिराया और भारवाही पशुओंको छीन लिया । दुर्भाग्यके कारण उन्होंने यह नहीं समझा कि, यह हमारे ही

पक्षके पशु और रक्षक हैं । वह उस समय भ्रमसे इतने उद्दीप्त होकर बडी वीरताके साथ अपने ही पक्षके वीरोंको मार रहे थे कि उसको देखकर महाराष्ट्रियोंके सैनिक स्तंभित और भयभीत हो जानेके कारण इस शुभ अवसर पर आक्रमण करनेके लिये किसी प्रकारसे आगे नहीं बढे । उन मरे हुए वीरोंको विजयसिंहके शिबिरमें लानेपर सब ही भयभीत हो गये । भ्रमसे उस सेनाके द्वारा अपने ही पक्षके सैनिक मर जानेपर भी विजयसिंहके अधीनस्थ अत्यन्त साहसी राठौर वीरवृन्दने जिस महाप्रतापसे संहारमूर्त्ति धारण करी थी, जिस उद्दीपना, साहस और वीरताने उनके हृदयको उत्तेजित कर दिया था, महाराष्ट्री लोग किसी प्रकारसे भी उस उद्दीपना, साहस और एकताको नष्ट नहीं कर सकते थे । परन्तु महाराष्ट्रियोंके सौभाग्यसे एक दारुण कुसंस्कार पैदा हुआ । राठौर जाति महाबलीके नामसे विख्यात होने पर भी जिस कुसंस्कारके हाथसे आज तक अपना उद्धार करनेमें समर्थ नहीं हुई है, उस कुसंस्कारने ही उस उद्दीपना, साहस और एकताको तत्काल बिलकुल छिन्न भिन्न कर दिया । राजा विजयसिंहकी उस समय बीस वर्षकी अवस्था थी । वह जैसे साहसी थे वैसे ही बुद्धिमान भी थे, इस कारण वह उस कुसमयमें अपनी बुद्धिके अनुगामी न होकर वयोवृद्ध बुद्धिमानोंकी मंत्रणानुसार चलनेके लिये प्रस्तुत हुए । राठौरराज विजयसिंहकी नस २ में उत्तेजनाका रक्त दौड रहा था, यद्यपि विजयसिंहकी सलाह युद्ध करनेकी थी, परन्तु उनके साहायकारी बीकानेरके महाराजने युद्धसे भागनेका परामर्श दिया। बीकानेरके महाराजने युद्धकी दशा देखकर मन ही मन निश्चय कर लिया कि महाराष्ट्रीय डाकुओंके हाथसे बीकानेरकी रक्षा करनेके लिये भागना ही उचित है । इस महासंकटके समय वक्तसिंहके समान परमसाहसी सेनापतिकी आवश्यकता थी, किन्तु विजयसिंहकी सेनामें वैसा साहसी और निर्भयचित्त कोई भी नायक नहीं था, इस कारण इस भागनेके प्रस्तावमें अधिक सामन्तोंने सम्मति दे दी; यह भागनेका समाचार शीघ्र ही सब सेनामें फैल गया, यहां तक कि शत्रुओंको भी इस बातका पता लग गया । सन्ध्या होते ही बीकानेरके महाराजने सेनासहित अपनी राजधानीका मार्ग लिया । इधर रामसिंह राजपूत और महाराष्ट्रीयसेनाको साथ लेकर विजयसिंहके शिविरकी ओर दौडे । यद्यपि सब सेनाका मेरताकी ओर भागना निश्चय हो गया था, परन्तु रामसिंहके सेनासहित आते ही राठौर लोग अपनी २ सेना लेकर अपने २ प्रदेशोंको भाग गये । रामसिंह और महाराष्ट्रनेताने विना ही युद्धके रणक्षेत्रमें अपनी जयपताका फहरा दी । भागे हुए राठौर लोग तोपोंको युद्धमें ही छोड गये थे, इस कारण महाराष्ट्रियोंने बडे आनन्दसे जयध्वनिके साथ उनपर अधिकार कर लिया । राठौर लोगोंने भागनेसे पहिले शोच लिया था कि भगवान् हमारे और विजसिंहके विरुद्ध है यदि प्रसन्न होता तो क्या भ्रान्तिसे हम अपने ही पक्षकी सेनाके साथ परस्पर युद्ध करते ? इस कारण युद्धसे भागना ही उचित है । यदि यह कुसंस्कार राठौर लोगोंके चित्तमें न घुसता तो निश्चय ही महाराष्ट्रीय लोग जयलक्ष्मीका आलिङ्गन करनेमें समर्थ न होते ।

बीकानेरके महाराजके समान कृष्णगढके राठौरराज भी तत्काल अपने राज्यकी ओर भाग गये थे। सम्पूर्ण सैनिक इसी प्रकार हतवीर्य्य, भंगसाहस और भयभीत होकर भाग गये, जब विजयसिंह अकेले रह गये तो उन्होंने भी भागनेका निश्चय कर लिया। खूब अँधेरा हो जानेपर विजयसिंहने भी राहिनके सामन्त और बचे हुए रक्षकोंको साथ लेकर नागरकी ओर घोडा हांक दिया। हा! भाग्य क्या ही प्रबल है! कई दिन पहिले जिन मारवाडेश्वरके लिये दो लाख मनुष्य जीवनदान करनेके लिये प्रस्तुत थे; इस समय वही मारवाडेश्वर साधारण पुरुषके समान असहाय अवस्थामें जा रहे हैं। समयके प्रभावसे विजयसिंहके सहगामी राहिनके सामन्तने राजाके स्वार्थकी ओर दृष्टि न देकर अपना स्वार्थ सिद्ध किया। विजयसिंहकी इच्छा थी कि नागरमें पहुँच कर फिर सेनाका संग्रह करेंगे। और सेना लेकर विजातीय महाराष्ट्रियोंके कराल गालसे अपने राज्यकी रक्षा अवश्य करेंगे। किन्तु उस अँधेरी रातमें वह नागरका मार्ग भूल गये, अथवा राहिनके सामंत इच्छापूर्वक अपने प्रदेशमें पहुँचनेके लिये विजयसिंहको राहिनके मार्गपर ले गये। मार्गकी सुध आते ही विजयसिंहने राहिनाधीश्वर लालसिंहको पुकार कर कहा कि, "हम भूलसे इधर आ गये, अब नागरकी ओर घोडा फेर दो।" किन्तु शोक! मारवाडेश्वरकी उस आज्ञाको उस समय कौन पालन करता? यद्यपि राजपूतजाति परम राजभक्त है, किन्तु विजयी राजाकी आज्ञा और पराजित होकर भागे हुए सहायहीन राजाकी आज्ञा कौन समान समझता है। विजयसिंह जिस समय दो लाख सेनाके साथ युद्धमें पहुँचे थे, उस समय प्रत्येक सामंत मस्तक नवाकर उनकी आज्ञाको स्वीकार करते थे; किंतु इस समय उनका भाग्य लौट गया है, इस कारण लालसिंहने प्रगटमें क्षमा प्रार्थना करके कहा कि,- "मेरा स्थान अब निकट ही आ गया है, आज्ञा दीजिये कि मैं एक बेर अपने कुटुंबको देखकर सबको साथ ले आऊं।" चतुर विजयसिंहने सामंतके मनका भाव समझकर उस अनुचित प्रार्थनाका कुछ भी उत्तर नहीं दिया और अपना घोडा धीरे २ चला दिया। इधर उस अंधेरी रातमें लालसिंह ठाकुर विजयसिंहको उस अपरिचित मार्गमें छोडकर अपने स्थानको चले गये। विजयसिंह इस अवस्थासे भी कुछ भयभीत न होकर केवल पांच शिलापोस नामक विश्वासी शरीररक्षकोंके साथ जवाना नामक स्थानमें पहुंच गये।

कुजवाना नामक स्थानमें निर्भयताके साथ रहना असंभव है; सहसा शत्रुलोग आकर बन्दी कर सकते हैं; यह विचारकर विजयसिंहने उस स्थानको भी छोड दिया, वह घोडेपर सवार होकर नक्षत्रगतिसे चलने लगे; सीमान्तपर पहुंचते ही उनके स्वामिभक्त घोडेने थकावटसे अपने प्राण छोड दिये। भाग्यलक्ष्मीकी क्रोधदृष्टिमें पडे हुए विजयसिंह विवश होकर अपने एक अनुचरके घोडेपर सवार हुए और बडे वेगसे घोड़ेको दौड़ाते हुए डेढ कोशकी दूरीपर देशवाल नामक स्थानमें पहुंचे। विजयसिंह

विपत्तिमें पडकर जिस घोडेपर सवार होकर यहां आये थे, लोहकवचधारी सवारोंके प्रवल भारसे और सारे दिन विश्राम न मिलनेसे वह घोडा भी चलनेमें असमर्थ हो गया । नागर उक्त स्थानसे आठ कोशकी दूरीपर है इस कारण यही निश्चय हुआ कि, चाहे कोई उपाय किया जाय परन्तु वहां यथा संभव शीघ्र पहुंचना चाहिये । अनुचर लोगोंके भी सब घोडे थक गये थे और इस अँधेरी रातमें उक्तग्राममें भी घोडेके मिलनेकी संभावना नहीं थी; परन्तु विजयसिंह स्वयं ही घोडेकी खोजमें घूमने लगे ।

विशेष अनुसंधान करनेके पीछे एक जाट कृपकसे भेंट हुई, विजयसिंहने अपना असली परिचय छिपाकर उससे निश्चय कर लिया कि " वह उनको सूर्य्योदयसे पहिले नगर पहुंचा देगा और उसके बदले पांच रुपये लेगा । " किसानने यह भी कहा कि " वाजी साही अर्थात् प्रचलित मुद्रा लूंगा । छद्मवेषी महाराजने इसको स्वीकार कर लिया । वह जाट किसान शीघ्र ही अपने खेतीके कामकी एक साधारण बैल गाड़ी ले आया । मारवाडके रत्नासनपर बैठनेवाले महाराज विजयसिंह उसके ऊपर बैठे। विजयसिंह बहुत शीघ्र नागरमें पहुंचनेके लिये व्याकुल थे; इस कारण दोनों बैलोंके मध्यमगतिसे दौडनेपर भी महाराज " हांक ! हांक" शब्द कहकर गति वृद्धिकी चेष्टा करने लगे । सरलस्वभाव जाटने देखा कि बैल पूरी शक्तिसे दौड रहे हैं । इस कारण विजयसिंहके बारबार हांक २ शब्द कहनेसे उसका धीरज जाता रहा; उसने क्रोधके साथ कहा कि हांक ! हांक ! तुम हो कौन ? इतनी शीघ्रतासे जानेका क्या प्रयोजन है? तुमसे बलिष्ठको इतनी शीघ्रतासे पहुँचनेकी अपेक्षा विजयसिंहको सेनासहित मैरताके युद्धमें रक्षा करना शोभनीय है । तुम्हारे व्यवहारसे मालूम होता है कि महाराष्ट्री लोग तुम्हारे पीछे आ रहे हैं । अब वृथा हांक २ शब्द मत कहना कारण कि इससे अधिक वेगसे मैं गाडी नहीं ले जा सकूंगा । मारवाडेश्वरने अपनी अवस्था समझ कर यद्यपि उसको कुछ प्रत्युत्तर नहीं दिया; परन्तु बीच २ में फिर भी "हांक२शब्द कहकर विरक्त करने लगे । जाट पहिलेके समान ही बैलोंको चलाने लगा । जब नागर एक कोशकी दूरीपर रह गया तो प्रभात हो गया, ऊषादेवी हास्यमयी मूर्ति धारण करके दिखाई दीं । उस धुँधले प्रकाशमें अधीर आरोहीकी मूर्ति पूर्ण रूपसे देखनेके लिये सरल जाट किसानने अपना मुख फिराया और मारवाडाधीश्वर विजयसिंहको पह-चान कर भय और विस्मयसे व्याकुल हो गया । राज्येश्वरके साथ एक आसनपर बैठा था, इस कारण भयभीत होकर पृथ्वीपर कूदकर क्षमा प्रार्थना करने लगा । जाटकी सरलतासे प्रसन्न होकर विपत्तिमें पडे हुए विजयसिंहने मुस्कराकर धीरेसे कहा कि "डरो मत,मैंने तुमको क्षमा कर दिया,गाडी हांको।"राजाकी आज्ञा पाकर जाट फिर अपने आसनपर बैठ गया।गाडी जब तक राजधानीके द्वारपर न पहुँची--विजयसिंह तबतक बराबर हांक हांक शब्द कहते रहे।इसके अनन्तर नागरमें पहुँचकर विजयसिंहने जाटको पांच रुपये दिये और कहा कि " अवसर आनेपर तुमको इसका उचित पुर-स्कार दिया जायगा । " सारी रातके जागे हुए राजा विजयसिंहने नागरमें पहुँचते ही

हरसोलाके सामन्तको जोधपुरकी रक्षाके लिये भेजा और मारवाडके सब सामन्तोंको नागरमें एकत्रित होनेके लिये घोपणापत्र प्रचार कर दिया । विजयी रामसिंहने भी महाराष्ट्रियोंके साथ आकर उसी दिन नागर राजधानीको घेर लिया ।

परम साहसी विजयसिंहने छः मासतक शत्रुओंके कराल गालसे नागरकी रक्षा करी, महाराष्ट्रसेना नागरके अधिकार करनेमें बिलकुल अशिक्षित थी, इस करण उन्होंने जब २ विजयसिंहपर आक्रमण किया तब २ हानि उठाई । राजा विजयसिंह स्वजातीय महावीरोंके समान सब गुणोंसे भूषित और अपने पिता वक्तसिंहके समान परम साहसी थे, इस कारण उन्होंने शत्रुओंकी यह दशा देखकर जिससे रजवाडेके इतिहासमें उनका नाम अक्षय हो जाय ऐसे एक बडे भारी साहसका काम करनेको उद्योग किया । उन्होंने यह बिचारा कि "मेरे पास नगरमें जितनी सेना है, उससे महाराष्ट्रियोंको भगाना असम्भव है, और मारवाडमें अन्य सेना संग्रह होनेकी आशा भी नहीं है, इस कारण स्वयं ही रजवाडेके राजालोगोंकी सहायता लेनेके लिये बाहर निकलना उचित है । क्योंकि रजवाडेके परम शत्रु महाराष्ट्रियोंके भगानेके लिये इस समय सब ही राजपूत रक्तधारी राजा लोग मेरी सहायता करेंगे । " विजयसिंहके पास नागरमें पाँचसौ उष्ट्रारोही बडे साहसी सैनिक वीर थे, उन्होंने उनको और एक सहस्र महाबली शिक्षित राजपूत सैनिकोंको साथ लेकर आधी रातमें नागरसे प्रस्थान किया । चौबीस घंटे बराबर चलनेके पीछे बीकानेर राज्यमें पहुंचे । यद्यपि बीकानेरके स्वामीने इनको बडे आदरके साथ लिया, परन्तु इस घोर विपत्तमें सेनाकी सहायता देनेसे साफ इन्कार करके उनको निराशाके समुद्रमें डुबा दिया । विजयसिंह उनके इस व्यवहारसे क्रुद्ध होकर एक और साहसके काममें प्रवृत्त हुए । जयपुरेश्वर ईश्वरीसिंह जो यथासाध्य रामसिंहकी सहायता करते थे, विजयसिंह उनसे सहायता मांगनेके लिये शीघ्र ही बीकानेर छोडकर चले गये । जयपुरमें पहुंच कर दूत द्वारा अम्बेरराजसभामें यह समाचार भेजा कि, मैं इस विपत्ति कालमें आपसे सहायता मांगनेकी इच्छासे आया हूं, आशा है कि आप अवश्य सहायता देंगे । "

अम्बेरके सुप्रसिद्ध अधीश्वर सवाई जयसिंह जैसे महाबली, परमसाहसी और बुद्धिमान थे; उनके पुत्र ईश्वरीसिंह वैसे ही उन सब गुणोंसे शून्य थे । वह प्रतिद्वन्द्वी राठौर लोगोंसे बहुत ही डरते थे । पाठकोंको स्मरण होगा कि, भयके कारण ही ईश्वरीसिंहने जघन्य उपायसे वक्तसिंहके प्राण संहार किये थे, विजयसिंहके सहायता मांगनेपर वह भयभीत हो गये और जिस अतिथि धर्म्मको राजपूतजाति सदासे पालन करती चली आ रही है उस आतिथ्य धर्म्मके शिरपर लात मार कर विजयसिंहको बन्दी करना निश्चय कर लिया । किन्तु व्यक्ति विशेषकी राजभक्ति और अनुरक्तिसे उनकी वह पापवासना सर्वथा व्यर्थ हो गई । सत्यप्रिय इतिहासलेखक राजपूत जातिकी समालोचना करनेके अवसर समय २ पर अप्रिय बातें

लिखनेको बाध्य हैं, किन्तु उस राजपूत चरित्रका उज्ज्वलांश कहांतक है इस बात-को भी उपरोक्त राजभक्ति और अनुरक्ति भलीभाँति प्रगट किये देती है। जिस राज्यमें आत्मविग्रहानल प्रज्वलित हो उठे उस राज्यके अधिवासी लोग सर्वथा हिताहित-ज्ञान-शून्य और आत्मीय मित्र भ्रातृ राजनैतिक सम्बन्ध भूलकर किसी पापके करनेमें भी पराङ्मुख नहीं होते। संसारके प्रत्येक भागकी प्रत्येक जातिमें यह शोचनीय दृश्य दिखाई देता है। अतः राजपूत जातिमें यह दृश्य न होगा " ऐसी आशा अनुचित है। इंग्लैंड और फ्रांसके आत्मविग्रहानलमें जैसी अत्यन्त भयङ्कर और लोमहर्षण घटनायें घटी थीं, उनको स्मरण करनेपर कौन इस बातको स्वीकार नहीं करेगा " कि आपसकी लडाईके समय अधिवासी लोग विचार-बुद्धि-शून्य होकर मनुष्यके न करने योग्य कामोंको कर डालते हैं। हम जिस घटनाद्वारा उस आत्मविग्रहके समय राजपूत चरित्रका प्रशंसनीय अंश प्रगट करना चाहते हैं, उसको नीचे लिखते हैं।

मैरतीय लोगोंके सर्वप्रधान अधिनायक शेरसिंहके राजभक्ति दिखानेके लिये जीवन-दान करनेका वर्णन ऊपर लिख चुके हैं। वीरश्रेष्ठ शेरसिंह जिस ओरसे लड़े थे उस पक्षकी पराजय हुई थी, इस कारण वक्तसिंहने शेरसिंहके अधिकृत प्रदेश रियापर अधिकार करके उस परिवारकी एक कनिष्ठ शाखाके अधिकारमें उसका सब स्वत्व दे दिया था। वक्तसिंहद्वारा अनुगृहीत उस रियाके नवीन सामन्तका नाम जवानसिंह है। विजयसिंह जिस समय सेनाकी सहायता मांगनेके लिये जयपुरमें पहुंचे थे, जवानसिंह भी उस समय निजहित साधक प्रभुपुत्र विजयसिंहके साथ वहां गये थे। जवानसिंहने जयपुर राज्याधीन अटचोलनामक स्थानके प्रबल शक्तिसम्पन्न सामन्तकी पुत्रीका पाणिग्रहण किया था। उक्त सामन्त जिस प्रकार शक्तिशाली थे उसी प्रकार जयपुर राजके विश्वासपात्र थे। अम्बेरपति ईश्वरीसिंहने षड्यंत्र जालके समय केवल इनहीं सामन्तको यह आज्ञा दी थी कि, मुलाकातके समय विजयसिंहको बन्दी कर लेना।" विश्वासी सामन्तने स्वामीके इस अत्यन्त निन्दित और राजपूत जातिको कलङ्कित करनेवाले परामर्शको एकान्तमें केवल अपने जमाईसे कह दिया। जवानसिंहने अपने मनमें निश्चय कर लिया कि "विजयसिंहकी रक्षा अवश्य ही करना उचित है।"

राठौरराज जयपुरकी धर्म्मशालामें ठहरे हुए ईश्वरीसिंहकी मुलाकात की बाट जोह रहे थे। ईश्वरीसिंह अपना अभिप्राय सिद्ध करनेके लिये सब सामग्रीसे सज्जित होकर धर्म्मशालामें आये। विजयसिंहको इस बातकी कुछ भी खबर न थी कि "नर-राक्षस ईश्वरीसिंह वक्तसिंहके समान विजयसिंहके भी प्राण लेनेका संकल्प कर चुके हैं।" विजयसिंहने परम मित्रभावसे आगे बढकर ईश्वरीसिंहको बडे आदरके साथ लिया; दोनो एक आसनपर बैठकर कुशल प्रश्नमें नियुक्त हुए। इधर राजभक्त जवानसिंह अपनी प्रतिज्ञानुसार धीरेसे ईश्वरीसिंहके पीछे जाकर बैठ गये। मारवाडके प्रचलित नियमानुसार मैरताके सामन्त श्रेष्ठ राजाके दक्षिण ओर आसन पाते

हैं किन्तु मारवाडके वीराग्रगण्य जवानसिंहको पीछे बैठा देखकर ईश्वरीसिंहने कहा कि, "ठाकुर आप पीठपीछे क्यों बैठे हैं ?" जवानसिंहने तत्काल उत्तर दिया कि "महाराज ! आज इसी स्थानपर बैठनेकी आवश्यकता है ।" फिर कुछ देरके पीछे विजयसिंहको लक्ष्य करके राजभक्त जवानसिंहने कहा कि, "महाराज ! उठिये, शीघ्र चलिये, नहीं तो आपका जीवन वा स्वाधीनता महा विपत्तिमें होंगे। विजयसिंहने राजभक्त सामन्तके वाक्यसे ईश्वरीसिंहका चक्रान्त समझ गये, और द्विरुक्ति न करके बड़ी शीघ्रताके साथ उठे, विश्वासघाती ईश्वरीसिंहने भी उनके पीछे भागनेकी चेष्टा करी, परन्तु आशा व्यर्थ हो गई, क्योंकि राजभक्त जवानसिंह उनके पिछले दामनपर अपनी इच्छानुसार सावधानीके लिये बैठ गये थे इस कारण ईश्वरीसिंह उस बाधाको अतिक्रमण करनेमें समर्थ न हुए । ईश्वरीसिंहने पीछे फिर कर देखा कि "जवानसिंह नंगी तलवार लिये महाक्रोधमें बैठा है ।" भयके मारे उनका शरीर काँपने लगा और विश्वासघातका फल तत्काल मिला हुआ समझकर गला सूख गया, मन विक्षिप्त हो गया । जवानसिंहने बडे गर्व और साहसके साथ उस पूर्ण सभामें कहा कि, "अम्बेरश्वर ! यदि मेरे स्वामीका कुछ अनिष्ट हुआ तो तलवार आपके पेटमें झोंक दूंगा ।" फिर विजयसिंहसे कहा कि "महाराज ! आप घोडेपर सवार होते ही मुझे समाचार दीजिये ।" सामन्त जवानसिंहने जिस प्रकार अतुलनीय राजभक्ति दिखाई थी। विजयसिंहने भी उनके साथ उसी प्रकारका व्यवहार किया । उन्होंने घोडेपर चढकर समाचार भेजा कि "मैं आपके आनेकी बाट देख रहा हूँ ।" विश्वासघाती ईश्वरीसिंहने भी इस बातका अर्थ भलीभाँति समझ लिया । भैरतीय सामन्त नेताने समाचार पाते ही अपनी. तलवार म्यानमें कर ली; और ईश्वरीसिंहके सन्मुख आकर आदरके साथ प्रणाम किया । जवानसिंहकी यह राजभक्ति मनुष्यके हृदयपर जिस विचित्र भावका उदय करनेमें समर्थ है, उस राजभक्तिने ईश्वरीसिंह नरपिशाचके हृदयतकमें उस विचित्र भावका उदय कर दिया था । ईश्वरीसिंहने प्रत्यभिवादनपूर्वक सामन्त मण्डलीको लक्ष्य करके कहा कि "इस अभूतपूर्व प्रशंसनीय राजभक्तिको देखो ! ऐसे राजसामन्तसे रक्षित राजाके विरुद्ध जय प्राप्त करनेकी आशा वृथा है ।

राजपूतजातिके प्रबल शत्रु महाराष्ट्रियोंको मारवाडसे निकाल देनेके लिये ही विजयसिंह उस शोचनीय दुरवस्थाके समय अन्यत्र सहायप्राप्तिकी आशासे स्वयं बाहर निकले थे, किन्तु कहीं भी उनका मनोरथ सिद्ध न हुआ, अन्तमें हताश होकर जिस साहस और सावधानीके साथ बाहर निकले उसी साहस और सावधानीके साथ नगरमें फिर लौट आये । देखते देखते छः मास और समाप्त हो गये, तथापि महाराष्ट्री लोग नागरके भीतर रामसिंहकी जयपताका न फहरा सके । किन्तु रामसिंहका भाग्यचक्र बदल जानेके कारण मारवाडके अन्यान्य प्रदेशोंको महाराष्ट्रियोंने अपने अधिकारमें कर लिया । मारावोत, पूरवत्सार, पाली

और सुजात आदिके निवासी रामसिंहकी अधीनता स्वीकार करनेको बाध्य हो गये। केवल राजधानी जोधपुर, नागर झालोर सिउवाली और फलोदी प्रदेश उस समय तक विजयसिंहके ही शासनमें रहे। जब एक वर्ष इसी प्रकार घोर विपत्तिमें समाप्त हो गया तब इस विपत्तिसे बचनेके लिये विजयसिंहने एक ऐसे प्रस्तावमें सम्मति दी, जिसके कारणसे मारवाड राजका चमकता हुआ रत्नस्वरूप प्रधान प्रदेश बहुतकालके लिये मारवाडसे विछिन्न हो गया था।

विजयसिंहके अधीनस्थ एक राजपूत और एक अफगानी सैनिकने प्रस्ताव किया कि "महाराज यदि हमारे कुटुम्बका भरण पोषणभार लेना स्वीकार करें तो इस सम्पूर्ण विपत्तिके मूलकारण महाराष्ट्रियोंके सेनानायकका हम दोनों मिलकर प्राण संहार कर दें। विजयसिंहने इस बातको स्वीकार कर लिया। दोनों पदाति महाशत्रुताके बहानेसे विषम विवाद करते हुए महाराष्ट्र नेताके शिबिरकी ओर चलने लगे। जयआप्पा सेंधिया उस समय हाथ मुँह धोनेके काममें लगे हुए थे। उनको देखकर दोनों एक दूसरेको बहुत ही कटु वाक्य कहने लगे, उनके सामने पहुंचते ही एक ने हिसाबका कागज फेंक दिया और विवाद निबटानेके लिये महाराष्ट्रनेता को मध्यस्थ हो जानेकी प्रार्थना करने लगा। क्रमसे दोनोंने जयआप्पा सेंधियाके बहुत निकट जाकर विवादका कारण कहना आरम्भ कर दिया। जयआप्पा सेंधिया धीर चित्तसे उस सब विषयको सुन रहे थे, इसी अवसरमें अफगानी प्यादेने, "यह लो नागर" कहकर जयआप्पा सेंधियाके हृदयमें अपनी तलवार घुसेड दी; तत्काल दूसरे राजपूतने भी "यह लो जोधपुर" कहकर अपनी तलवार मारी। दोनो शीघ्रता से भागे, अफगानी उसी समय पकड कर टुकडे २ कर दिया गया; किन्तु चतुर राजपूत बहुतसे लोगोंमें जा मिला और सिपाहीके समान "चोर चोर!" पुकारता हुआ बेखटके नगरके भीतर पहुँच गया। विजयसिंहने इस समाचारको सुनकर प्रतिज्ञानुसार पुरस्कार तो दे दिया परन्तु हत्यारेका मुख देखना स्वीकार न किया।

जयआप्पा सेंधियाके परलोक सिधारनेपर माधोजी सेंधिया सेनापतिके पदपर प्रतिष्ठित हुए। महाराष्ट्र सेना पहिलेके समान ही नागरको घेरे रही, यथासाध्य चेष्टा करके भी दूसरे स्थानोंसे आती हुई सेना और भोजनसामग्रीको नागरमें जानेसे न रोक सके। इन महाराष्ट्रियोंको एक स्थानसे दूसरे स्थानमें जानेका पूरा अभ्यास था, इस कारण एक वर्ष से अधिककालतक एक स्थानपर खाली बैठना उनको अत्यन्त कष्ट दायक हो गया। विशेष कर नागरकी अपेक्षा किसी समृद्धिशाली देशपर आक्रमण करनेसे विशेष लाभकी संभावना समझकर माधोजी विजयसिंहके साथ संधि करनेके लिये विवश हो गये। विजयसिंहने महाराष्ट्रियोंके ध्वंसका कोई उपाय न देखकर संधि करनेमें सम्मति सूचित कर दी। अन्तमें यह निश्चय हुआ कि महाराष्ट्री लोग रामसिंहका पक्ष छोडकर मारवाडसे बिलकुल चले जायँगे; विजयसिंह तीन वर्ष पीछे उनको निर्द्धारित कर दिया करेंगे; "मुंड-

काटी" अर्थात् जयआप्पाके प्राणसंहारके बदलेमें "दुर्गसहित सम्पूर्ण अजमेर प्रदेश महाराष्ट्रियोंके अधिकारमें दे दिया जायगा और सेंधिया उस प्रदेशमें अपनी पूर्ण राजशक्ति सञ्चाल कर सकेंगे।" वर्षाकाल निकट देखकर माधोजी सेंधिया उक्त निर्द्धारित संधिबन्धनमें बँधकर अजमेरको चले गये।

उस अजमेर दुर्गकी चोटीपर इससमय वृटिश जयपताका फहरा रही है। यदि राजनैतिक घोषणामें सत्य उक्ति है तो वह पताका समग्र रजवाडेका अधिकार वृटिश भारतका खजाना भरनेके लिये नहीं उड रही है, वरन केवल अति प्राचीन राजपूतराज्योंकी स्वाधीनता और शान्तिरक्षाके लिये, तथा लूटमार अत्याचार और उपद्रवके हाथसे रक्षा करनेके लिये ही बडे अभिमानके साथ फहरा रही है।

महाराष्ट्रियोंसे त्यागे हुए रामसिंह राजसिंहासनपर अधिकार और अपनी शासन शक्ति फैलानेके लिये विशेष चेष्टा करने लगे। रामसिंहने अपने चचा और उनके पुत्र विजयसिंहको जीतनेके लिये क्रमसे अठारह बार अपने प्राण संशयमें डाले थे। रामसिंहके प्रधान सहायक ईश्वरीसिंह जब परलोक सिधार गये तो वह निर्बल हो गये, तब विजयसिंहके प्रस्तावानुसार केवल संबर सरोवर जिसके अर्द्धांशमें मारवाडराज्यका अधिकार था, वह अर्द्धांश और उस सरोवरमें जयपुरपति ईश्वरीसिंहका जो आधा स्वत्व था, उसको लेकर जीवनपर्य्यन्त उसी स्थानपर रहनेको विवश हो गये थे।

तीसवाँ अध्याय ३०.

माधोजी सेन्धिया;–राठौर और कछवाहा लोगोंका मिलन; तथा महाराष्ट्रियोंके विरुद्ध युद्धमें उनके साथ इसमाइलबेग और हामदानीका सम्मिलित होना;–तङ्गाका समर;–सेंधियाका पराजय;–राठौरोंका अजमेरपर फिर अधिकार; और करदान सन्धिभंजन;–डिबेनीकी सहायतासे माधोजी सेंधियाका सेनासंग्रह;–जयपुरके सीमान्तमें सम्मिलित राजपूतसेनाका साक्षात;–सम्मिलित राजपूतमित्र राजगणमें जातिविद्वेष;–ग्लानिसूचक संगीतसूत्रसे राठौर लोगोंके साथ कछवाहगणका विच्छेद;–पातनका समर;–जयपुरसेनाके कृतघ्नतासूत्रसे राठौरोंका पराजय;– कछवाहे कविकी कविता;–विजयसिंहका सन्धिबंधन प्रस्ताव;–मारवाडसामन्तोंका उसमें असम्मतिज्ञापन और मारवाडेश्वरद्वारा महासमरायोजन;–कृष्णगढके राठौर सामन्तकी कृतघ्नता; महाराष्ट्रियोंके द्वारा मारवाडआक्रमण;–आहोया और आसोपके सामन्तोंकी " जीतेंगे वा प्राण देंगे " ऐसी प्रतिज्ञा;–मैरताके मैदानमें राठौरसेनाका शिबिरस्थापन;–महाराष्ट्रसेनाका विनाश शुभ अवसरका परित्याग;–सामन्तमंडलीद्वाराशासनविभागी राजमंत्रीका शोचनीय फलदायक आदेशपालन;–सेनाका शिबिर छोडकर भागना;–राठौरोंकी वीरता;–उनका नाश;–सिङ्गुई सम्प्रदायकी कृतघ्नता;–प्रधान मंत्रीका विषपानसे प्राणत्याग;–ब्रूटिशगवर्नमेंटके साथ रक्षणपीडन सन्धिबन्धनसे राजपूतजातिका मनोभाव;--भ्रमणारंभ;–हिसार;–झारोरणक्षेत्रमें होकर गमन;–शीतकोट अर्थात् मरुक्षेत्र अदृष्टपूर्व रमणीक दृश्यका दर्शन;–सगादियानाका मरुप्रान्तर;–हिसार;–झागेका विवरण;–हरकर्णदासका स्मारकमन्दिर;–अलनिवास;–रिया;–पहाड़ी माहीरजाति;–पहाडियोंके द्वारा रियाका आक्रमण और सामन्तनिधन;–गोविन्दगढ़;–पुष्करसरोवर–सरोवरका विवरण–तन्मूलकजनश्रुति–(अजमेर) स्थापक अजपाल;–विशालदेव वा अजमेरके चौहानसिंह;–सर्पागिरिकी चोटीपर निर्मित्त भजनालय;--अजमेर;--धारबल-खैरका दृश्य;–अजमेरनगर ।

महाराष्ट्र दस्युदलके नेता जयअप्पा सोंधियाके परलोक सिधारनेपर उनके

कुटुम्बी माधोजी सेंधिया उस पदपर सर्व सम्मातिसे अभिषिक्त हुए । माधोजी बडे तेजस्वी पुरुष थे; राठौर राजपूतोंके साथ युद्ध करनेसे उनको यह भलीभाँति निश्चय हो गया था कि "दक्षिणवासी अश्वारोही किसी प्रकारसे भी राजपूत घुडसवारोंकी बराबरी नहीं कर सकते।" माधोजीने सर्वत्र अपने अश्वारोहियोंको शिक्षित करना आरंभ कर दिया, और अपने सौभाग्यके कारण थोडे ही कालमें सफलमनोरथ हो गये, क्यों कि इन रणकुशल अश्वारोहियोंके द्वारा ही अन्तमें उनकी विजय हुई थी । चतुर माधोजीने विचारा कि "राजस्थानके प्रधान २ राज्योंकी इस समय जैसी अवस्था है उसके द्वारा इस प्रदेशमें अपना प्रभुत्व फैलानेका अच्छा अवसर है । ऐसा अवसर फिर नहीं मिलेगा, नवीन बलसे उद्दीप्त जातिके भिन्न प्रान्तमें राज्य स्थापन करनेके लिये जितनी सामग्रियोंकी आवश्यकता होती है, सौभाग्यलक्ष्मीने मेरे लिये वह सामग्री उपस्थित कर दी है । मारवाडके राजा लोग केवल स्वजातीय मित्र राजगणोंके साथ विषम शत्रुतानल प्रज्वलित करके ही शान्त नहीं हैं, किन्तु उनके राज्यमें आभ्यन्तरिक जातीय विग्रहआग्नि भी भयङ्कर वेगसे प्रज्वलित होकर उनको क्रम २ से अन्तःसारशून्य बना रही है । राजा लोग एक दूसरेके ध्वंस साधने और भीतर २ भारत विख्यात महाबली राजपूतजातिकी प्रशंसनीय कीर्तिको लुप्त करनेमें हैं; इस कारण यह सब लक्षण हमारी विजयको सूचित कर रहे हैं ।"

उस जातीय विग्रह और आभ्यन्तरिक विद्रोहमें नवीन शक्तिशाली उन्नतिशील महाराष्ट्रियोंकी सहायता पानेके लिये रजवाडेके सब राजा लोग उस समय व्यग्र हो उठे । और दुर्भाग्यका परिचय देनेवाली दुर्बुद्धिके वशीभूत हुए उन महाराष्ट्रियोंको बडे आदरपूर्वक अपने २ राज्यमें बुलाने लगे । इसका परिणाम यह हुआ कि सब राजा लोग महाराष्ट्रियोंकी अधीनतारूपी जंजीरमें बँध गये इस कारण सेंधियाके समान क्षमताप्रिय और नवीन राज्यके स्थापन करनेमें उद्यत व्यक्तिकी आशा अपूर्ण रहनेकी संभावना कहां ? पाठकोंको याद होगा कि उदयपुरके महाराणाने अपने भानजे मधुसिंहके जयपुरके सिंहासनको अधिकारमें करनेके लिये महाराष्ट्रियोंकी सहायता ली; और अन्तमें मारवाडके समान महाराष्ट्रियोंको निर्द्धारित कर देनेके लिये बाध्य हुए थे ।

यद्यपि उस समय महावीर राजपूत राजा लोगोंमें एकता अदृश्य हो गई थी तथापि कुछ शेष थी । ऐसी विजयी ऐसी साहसी वीर जातिमें जो एकता सदा चली आ रही है, वह सहसा नष्ट नहीं हो सकती । चौहानोंके साथ जयपुरके राजा लोगोंकी शत्रुता कुछ प्रबल होनेपर भी राठौरोंके साथ कुछ २ मित्रता बनी हुई थी । मधुसिंह यद्यपि मामा उदयपुरेश्वरकी दया और महाराष्ट्रियोंकी सहायतासे अम्बेर सिंहासनपर बैठ गये थे, किन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि वह बहुत दिन इस जगत्में नहीं रह सके । मधुसिंहके परलोक सिधारनेपर अम्बेरका राजछत्र प्रतापसिंहके शिरपर सुशोभित हुआ । साहसी अम्बेरवासी गण नये अधीश्वर प्रतापसिंहकी उत्तेजनासे महाराष्ट्रियोंकी अधीनता शृंखलको दुर्वह समझकर दृढप्रतिज्ञ हो उठे ।

वीरश्रेष्ठ प्रतापसिंहने अपना प्रताप दिखानेके लिये जब महाराष्ट्रियोंकी अधीनता अस्वीकार करी, तब माधोजी सेंधिया संहारमूर्ति धारण करके अम्बेर अधिकार करनेके लिये आगे बढे। हम इस बातको ऊपर ही लिख चुके हैं कि मारवाडेश्वर विजयसिंह भी घोर विपत्तिमें घिरे होनेके कारण अनिच्छासे ही माधोजीके साथ संधि करके मूल्यवान अजमेर प्रदेश और त्रैवार्षिक करदानद्वारा महाराष्ट्रियोंकी अधीनतारूपी शृंखल अपने गलेमें डालनेको बाध्य हुए थे। प्रतापसिंहने देखा कि विजातीय शत्रुदल केवल अम्बेरका ही नहीं मारवाडका भी भयंकर शत्रु है, इस कारण उन्होंने शीघ्र ही उन राजपूत जातिके महाराष्ट्रियोंके समूल नष्ट कर देनेकी इच्छासे राठौर लोगोंको युद्धमें सम्मिलित होनेके लिये बुला भेजा। जातीय एकता फिर पूर्णरूपसे प्रगट हुई। शुभ अवसर जानकर अजमेर प्राप्तिकी फिर आशासे विजयसिंहने अम्बेरेश्वरकी सहायता के लिये तत्काल राठौर सेना भेज दी। यद्यपि जयपुरपति ईश्वरीसिंहने घोर विपत्तिके समय भी विजयसिंहकी सहायता नहीं की थी; किन्तु पिशाचमूर्तिसे वक्तसिंहको मरवाकर विजयसिंहके भी प्राण लेनेका उद्योग किया था, और इसी कारणसे दोनों राज्यों-में विषम विद्वेषाग्नि बढ गई थी, तथा दोनों राज्येश्वर एक दूसरेको प्रबल शत्रु समझते थे, किन्तु इस राजपूत जातिगत युद्धमें-सबके लक्ष्यस्थल-और सबके शत्रु महाराष्ट्रियों के मथन करनेके लिये उस शत्रुताको भूलकर विजयसिंहने परम साहसी, महाबली, राजभक्त रियाके सामन्त जवानसिंहको सबसे श्रेष्ठ राठौर सेनाके साथ युद्धमें भेज दिया। * तङ्गानामक स्थानमें रणोन्मत्त दोनों पक्षके सैनिकोंका साक्षात् हुआ (जो "लालसन्तका समर" इस नामसे विख्यात है)। उसी समय विख्यात इसमाईलबेग और हामदाननामक दो मुगलसेनापति दुर्द्धर्ष साहसी राठौरोंके साथ आकर मिल गये। शीघ्र ही भयंकर युद्धाग्नि प्रज्वलित हो उठी, राठौर सेनाने प्रबल पराक्रम और महावीरताके साथ शत्रुओंको विध्वस्त कर दिया। रियाके सामन्त जवानसिंहने राठौर अश्वारोहियोंको दलबद्ध करके पृथ्वीको कम्पित और सेंधियाके श्रेष्ठ दलको छिन्न भिन्न कर दिया। सेंधियाके सैनिक यद्यपि सुविख्यात फरासीसी सेनापति डिवाइनके द्वारा भलीभांति रणशिक्षित हुए थे, किन्तु राठौर अश्वारोहियोंके अतुलनीय बाहुबलके निकट खडे रहनेमें समर्थ न होकर क्षणमात्रमें नष्ट हो गये, और शेष सैनिक प्राणोंके भयसे भाग गये। सम्मिलित सेनादलने थोडे कालमें ही जयलक्ष्मीका आलिङ्गन प्राप्त कर लिया। सेंधियाने भी कलङ्कका भार लेकर भागती हुई सेनाका अनुसरण किया और मथुरामें

---

* राठौर कविकुलने दोनो राज्यकी द्वितीय बेर मित्रता स्थापनके विषयमें निम्न लिखित कविता लिखी है:-

"पति राखो परतापकी, नये कोटके नाथ;
अगला गुनहा बकुस कर, अब मम पकडो हाथ।"

अर्थात-हे नवदुर्गेश्वर! विजयसिंह प्रतापके सन्मानकी रक्षा कीजिये। उनका पिछला अपराध क्षमा करके इस समय उनका हाथ पकडिये।

आकर आश्रय लिया। सुनते हैं इस महासंग्राममें राजपूतोंने सेंधियाकी जो दुर्दशा और हानि की थी, माधोजी बहुत काल तक उसको विस्मृत और क्षतिपूर्ण न कर सके थे। जवानसिंहने महाराष्ट्रियोंके भागनेसे विजयलक्ष्मी प्राप्त करनेके पीछे अजमेरपर द्वितीय बार अधिकार करनेके लिये एक सेनादल भेज दिया। यह कहनेसे अत्युक्ति न होगी कि विजयी सेनादलने विना ही युद्धके अजमेरपर अधिकार करके उसको फिर मारवाड राज्यके अन्तर्भुक्त कर दिया। मारवाडेश्वर विजयसिंहने माधोजीके साथ संधि करके प्रति तीन वर्षके पीछे जो वहुतसा धन देना स्वीकार किया था, इस विजयप्राप्तिसे वह सन्धि टूट गई, परम तेजस्वी दुर्द्धर्ष साहसी राजपूतजाति-मेवाड मारवाड अम्बेर आदिके चौहान राठौर लोग यदि एकताकी जंजीरमें बँधे रहें तो बिदेशी कोई जाति भी रजवाडेमें किसी प्रकार अपना अधिकार नहीं जमा सकती; तंगाका युद्ध इस बातकी पूर्ण साक्षी दे रहा है।

माधोजी तंगाके महासमर क्षेत्रमें जयलक्ष्मीकी गोदसे गिर कर यद्यपि दुःखित हृदयसे लौट आये थे, किन्तु बदला लेने और महाराष्ट्र प्रताप प्रभुत्व फिर स्थापित करनेके लिये फिर बडी भारी चेष्टा करने लगे। वह फिर फरासीसी सेनापति डिबाइनके साथ मिलकर श्रेष्ठ सेना संग्रह करने और उसको श्रेष्ठ युद्धशिक्षा दिलानेके लिये व्यग्र हो उठे। रणचतुर विजातीय वीर डिबाइनकी शिक्षा और माधोजीकी सहायतासे जैसी प्रबल बलशाली और समर कुशल सेना बनी थी, भारतमें वैसी सेना किसी समय भी नहीं देखी गई। डिबाइनकी पाश्चात्य प्रतिभाके साथ भारतीय शौर्य्य, वीर्य्य और साहसने एकत्रित होकर उस सेनादलको सर्वसाधारणके भयका कारणस्वरूप बना दिया। तंगाके रणक्षेत्रमें जिस घोर कलङ्ककी स्याहीने महाराष्ट्र वीरत्व गौरव रविको ढक लिया था, माधोजी नवीन सेनाकी सहायतासे उस कलङ्कको दूर करनेके लिये शीघ्र ही संहारमूर्ति धारण करके रजवाडको चल दिये।

राठौर राज्यमें समाचार आया कि; माधोजी सेंधिया बडी भारी सेना लेकर रजवाडा आक्रमण करनेके लिये बड़े घमंडसे आ रहे हैं। चिरवीरव्रतावलम्बी राठौर जाति इस समाचारको सुनकर कुछ भी भयभीत न हुई, वरन दुबारा अपने बाहुबल वीरत्व दिखाने--और अपनी जातिके प्रबल शत्रुदलके मथनेका विशेष सुभीता जानकर आनन्दसे उन्मत्त हो गये। मारवाडेश्वर विजयसिंह विलक्षण राजनीतिकुशल थे; उन्होंने विचारा कि महाराष्ट्रियोंको अपने राज्यके भीतर न घुसाकर राज्यके बाहर ही युद्धाग्नि प्रज्वलित करना उचित है। शीघ्र ही जयपुरपतिके पास समाचार भेजा गया। अम्बेर और राजपूतसेनाने दुबारा अपने आकाशभेदी शब्दद्वारा पृथिवीको कम्पित करके अपने २ प्रदेशोंसे युद्धकी ओर प्रस्थान किया। जयपुर राज्यकी उत्तर सीमान्तके पातन नामक नगरमें (तुवारावती) राठौर और जयपुरकी सेना परस्पर मिलकर बडी वीरताके साथ आगे बढने लगी। उस समय पर राठौर कविकुलने जिन

सामरिक संगीतोंसे सेनाको उत्तेजित कर दिया था, वह सब संगीत मारवाडमें अबतक सुनाई देते हैं ।

यद्यपि एकताका अमृतमय हार धारण करनेसे राठौर और जयपुरके सैनिक एक मनुष्यके समान शत्रुओंके विरुद्ध खडे हुए थे, यद्यपि जातीय गौरव--जातीय सन्मान --जातीय स्वाधीनता और जन्मभूमिहितैषितामूलक सामरिक संगीतोंने सब के ही हृदय प्रबल उत्साहसे भर दिये थे, किन्तु एक सामान्य कारणसे मारवाडके अल्पवयस्क एक कविके एक संगीतने वह एकताकी जंजीर गुप्तरूपसे तोड दी । तङ्गाके युद्धमें राठौर लोग ही बडी भारी वीरता दिखाकर जयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त करनेमें समर्थ हुए थे, जयपुरके सैनिक वैसी वीरता नहीं दिखा सके थे । इस कारण उक्त मारवाडवासी कविने अम्बर सेनाका श्लेष व्यंजक एक संगीत रचना किया। दुर्भाग्यके कारण उस समय वह संगीत राठौर सेनादलमें गया जानेपर अम्बेरके सैनिकोंने अपनेको घोर अपमानित समझा । उस संगीतका एक चरण नीचे लिखा जाता है ।--

" उदल ताइन अम्बररा राठौरराण । "

इसका अर्थ यह है कि राठौर वीरोंने ही युद्धस्थलमें नारीस्वरूप अम्बरीय सेनादलकी रक्षा करी थी । विश्वजनीन साक्ष्यको यदि प्रमाणस्वरूप गिना जाय तो कहना होगा कि इस संगीतने ही युद्धमें शोचनीय फल उत्पन्न किया और राजपूतजातिके स्वाधीनतारूपी सूर्यको अस्ताचलकी चोटीपर प्राप्त होनेको बाध्य कर दिया ।

जब राठौर कविकुलके उस संगीतनेअम्बरीय सैनिकोंके हृदयमें अपमानाग्नि प्रज्वलित कर दी, तब उन्होंने छिपे २ महाराष्ट्रियोंके साथ यह संधि करी कि जिस समय राठौर वीर महाराष्ट्रियोंके विरुद्ध युद्धक्षेत्रमें अवतीर्ण होंगे, अम्बरीय सेनादल उस समय उनके साथ सम्मिलित न होकर अलग खडा रहेगा और महाराष्ट्र सेना उसके बदलेमें अम्बेर राज्यको विध्वंस नहीं करेगी।राठौर सैनिक युद्ध करनेसे इस षड्यन्त्रका कुछ भी समाचार न जान सके, वह इस विचारमें थे कि तङ्गाके युद्धके समान यहां भी दोनों सेनादल मिलकर महाराष्ट्रियोंको पराजित कर देंगे । शीघ्र ही रणभेरी बजाई गई । दुर्द्धर्ष साहसी राठौरगण स्वभावसिद्ध तेजसे प्रबल तरंगके समान फरासीसी सेनापति डिवाइनके अधीनस्थ गोलन्दाज दलको आक्रमण पूर्वक गोलोंकी वर्षा करके सामनेके सब पदार्थोंको विध्वंस करने लगे,उन्होंने अपने आकाशभेदी शब्दसे युद्धस्थलको कम्पायमान कर दिया । किन्तु कुछ देरके पीछे वह सब वीर कृतघ्न जयपुरीय सेनादलकी सहायता न पानेसे बहुत गुणयुक्त महाराष्ट्रियोंकी सेनाद्वारा चारों ओरसे घिर गये, इस कारण उपायान्तर न देखकर असहाय अवस्थामें राठौर वीर रणक्षेत्र छोडनेको बाध्य हुए । विजयलक्ष्मीने महाराष्ट्रियोंका आश्रय लिया । सुनते हैं कि राठौर वीर "पर भूमि" अर्थात् विदेश और स्वदेशमें समान भावसे नहीं लड सकते, यह पातनका

युद्ध ही उसका प्रमाण है। इस युद्धमें राठौर लोगोंकी ऐसी दुर्दशा हुई थी कि स्त्रियों-तकने उनके अश्वादि लूट लिये थे। हम निःशंक होकर कह सकते हैं कि जयपुरियोंके विश्वासघातने ही पातनके युद्धमें उपरोक्त शोचनीय दृश्य उपस्थित किया। तंगाके युद्धके पीछे मारवाडके कवियोंने अम्बरीय सेनाके अपमान सूचक जैसे संगीत रचे थे, पातनके इस युद्धमें राठौर वीरोंकी पराजयमें अम्बेरके कवियोंने भी वैसे ही संगीत रचे थे। जयपुरनिवासी कवियोंके संगीतका एक अंश नीचे लिखते हैं;

"घोडा, जोडा, पागडी,
मुटचा,-खड्ग मारवाड।
पाँचरकुंभेमेल- लिदा,
पातनमें राठौरि।"

अर्थात् पातनके युद्धमें राठौर सैनिकोंको घोडा, जोडा, पगडी, गोंप और खड्ग शत्रुओंके हाथमें सौंपा देना पडा था।

अम्बरीय सेनाने यद्यपि स्वजातिके उस अपमानका बदला लेनेके लिये इस युद्धमें राजपूत जातिके साथ वैसा अनुचित व्यवहार किया और यद्यपि उक्त संगीतकी रचनासे मनोरथ सफल भी समझ लिया था, किन्तु यथा समयपर उनको इसका प्रतिफल भोगना पडा था, पातनके युद्धमें दोनो जातियोंके बीचमें जो शत्रुताकी आग प्रज्वलित हुई थी, आजतक उन दोनों जातियोंके हृदयमें वह वैसी ही जल रही है। हम निःसंदेह यह कह सकते हैं कि आपसका विरोध और जघन्य आचरण ही रजवाडेका अनिष्ट साधन कर रहे हैं।

पातनके युद्धके उस शोचनीय पराजयका समाचार और जयपुरी सेनाकी अत्यन्त कृतघ्नताका संवाद जिस समय जोधपुर राजधानीमें विजयसिंहके कर्णगोचर हुआ, उस समय उनके मनमें जिस भावका उदय हुआ था, पाठक मण्डली उसका भलीभाँति अनुमान कर सकती है। विजयसिंह क्षुभित हृदयसे सब सामन्तोंको सभामण्डपमें एकत्रित करके परामर्श करने लगे। बीकानेर और रूपनगरके स्वाधीन नृपति भी इसमें परामर्शके लिये बुलाये गये थे। "जातीय स्वाधीनता विपत्तिके मुखमें गिरी हुई है" इस प्रश्नकी मीमांसा करनेमें सम्पूर्ण सामन्त राठौर मात्र आकर उपस्थित हुए। बहुत सी बातें होनेके पीछे विजयसिंहने कहा कि "इस समय जैसी विपत्तिका सामना है, अम्बेरी सेनाने जैसी कृतघ्नता दिखाई है, शत्रुओंने नई सेनाकी प्राप्तिसे जैसी शक्ति प्राप्त की है, विजय प्राप्त करके शत्रुलोग जैसे उत्तेजित हो रहे हैं इन सब बातोंके विचारनेसे मैं यह उचित समझता हूं कि शत्रुताके बदले माधोजीके साथ पहिले जो संधिबन्धन हुआ था उसका पालन करके जयआप्पाकी हत्याके बदलेमें जो कर देना निश्चित हुआ था, वह देना उचित है तथा जो अजमेर राज्य हमने अपने बाहुबल द्वारा शत्रुओंके गालसे निकाल लिया था, वह फिर महाराष्ट्रियोंके हाथमें सौंप देना चाहिये।" राठौर जातिके अपमान सूचक इस प्रस्तावसे साहसी सामन्त मण्डलीने उत्तेजित होकर एक स्वर-

से कहा; "शत्रुओंके चरणोंपर इस प्रकार गिरनेसे पहिले फिर एक बेर युद्धस्थलमें जातीय गौरवार्जन, जातीय कलंकापनोदन और स्वाधीनताके रक्षा करनेकी पूरी चेष्टा करनी उचित है।" वीर सामन्तमण्डलीकी उस उग्रतेजोमय वक्तृतामें सबको एक मत देखकर विजयसिंहने भी इस बातको स्वीकार कर लिया। शीघ्र ही मारवाडके प्रत्येक प्रान्तमें विजयसिंहके नामसे घोषणापत्र प्रचारित करके जातीय महासंग्राममें सम्मिलित होनेके लिये मैरताकी युद्ध भूमिमें शीघ्रताके साथ आनेकी आज्ञा दी गई। मारवाड फिर रणरंगसे प्रकम्पित हो गया। मैरताके उस चिरस्मरणीय युद्धस्थलमें अनेक प्रान्तोंसे राठौर वीर आने लगे। जितने राठौर युवक तलवार चलाना जानते थे, वह सब स्वजातीय गौरव और जन्मभूमिके आनन्दसे आ आकर सम्मिलित हुए। इस प्रकार सन् १७९० ईस्वीकी १० वीं दिसंबरको तीस सहस्र राठौर सैनिक पातनके युद्धकी कलंककालिमा दूर करनेके लिये बडे आग्रहके साथ आकर सम्मिलित हुए।

उस समय राठौर कुलकलङ्क कृष्णगढके राजा बहादुरसिंह स्वजातिके गलेमें पराधीनताकी जंजीर डालनेकी विशेष सहायता करके अपना नाम इतिहासमें घृणितरूपसे लिखा गये हैं। राठौर राज और राठौर जातिके विश्वासहन्ता बहादुरसिंह रूपनगरके अधिपतिसहित दो सौ (२००) नगर पूर्ण प्रदेशका एकत्र उपभोग करते थे। मारवाडेश्वरने वृत्तिस्वरूप ही यह समस्त प्रदेश दोनोंको समर्पण किये थे। यद्यपि यह दोनो स्वाधीनभावसे अपने २ राज्यमें रहते थे, तथापि मारवाडेश्वर अभिषेकके समय आजतक राजटीका अपने हाथसे करते हैं और यह भी जोधपुरेश्वरको शीर्षस्थानीय रूपसे माननेके लिये बाध्य हैं। रूपनगरके स्वामीका बहादुरसिंहके साथ भ्रातृसम्बंध था। किसी कारणसे दोनोंमें विवाद हो जानेपर बहादुरसिंहने अपने भ्राताकी सब सम्पत्ति लूट ली। इस विवादमें बहादुरसिंहने जब मध्यस्थताका प्रस्ताव किसी प्रकारसे स्वीकार नहीं किया तो अन्तमें विजयसिंहने वहां स्वयं सेनासहित जाकर उनका राज्यभार और सब सम्पत्ति बहादुरसिंहसे दिलवा दी थी।

उपरोक्त घटनाके कुछ ही काल पीछे यह पातनका शोचनीय युद्ध हुआ। बदला लेनेके लिये बहादुरसिंह शीघ्र फरासीसी सेनापति डिवाइनका आश्रय लेकर उनको बडे आदरके साथ अपनी जन्मभूमिको विध्वंस करानेकी इच्छासे ले आये। डिवाइनने सबसे पहिले रूपनगरपर आक्रमण करके उसको २४घंटेमें अपने अधिकारमें कर लिया। फरासीसी सेनापतिका गोलन्दाज दल कैसा सुशिक्षित था उपरोक्त घटना इस बातको भलीभाँति सूचित कर रही है। इसके पीछे डिवाइनने अजमेर पर आक्रमण किया। राजा विजयसिंहने उस समय माधोजी सेंधियाके निकट अजमेर प्रत्यर्पण और पूर्व संधि प्रबल रखनेका प्रस्ताव भेजा। माधोजीने अजमेरपर अधिकार करके वहीं निवास किया और लकवा, जावदादा सदाशिवभाऊ तथा अन्यान्य अश्वरोही सैनिकोंके नेता द्वारा संचालित महाराष्ट्रसेना, डिवाइनके अधीनस्थ अस्सी तोपोंके साथ गोलन्दाज

दल शीघ्र राठौरोंके विरुद्ध युद्धाग्नि प्रज्वलित करनेके लिये भेजा। महाराष्ट्रसेना एक दिनका मार्ग आगे बढाई, और डिवाइनने नेत्रीय नामक स्थानमें शिबिर डाला।

महाराष्ट्रियोंके आनेका समाचार सुनकर राठौर वीर श्रेणीबद्ध भावसे मैरताके बाहरी मयदानमें आकर प्रतीक्षा करने लगे और केवल एक दल राठौर सेना दंगीवास नामक स्थानमें शिबिर स्थापन करके रही। महाराष्ट्र लोग जिस समय ढाई कोशकी दूरीपर आकर एकत्रित हुए, डिवाइन उस समय भी उनके साथ आकर न मिल सके क्योंकि उनकी तोपैं लूनी नदीके तटकी गहरी कीचडमें फँस गई थीं। राठौर वीर यदि उस शुभ अवसरमें महाराष्ट्रियोंके ऊपर आक्रमण करते तो निश्चय ही दोनोंके खड्गबल और घोडेपर चढनेकी दक्षताकी भलीभाँति परीक्षा हो जाती, महाराष्ट्रगण निश्चय ही राजपूत वीरताके निकट मस्तक झुकानेको बाध्य हो जाते; किन्तु दुर्भाग्यके कारण राठौर वीरोंने उस अवसरको हाथसे खो दिया। पातनके युद्धमें जयपुरी राजपूतोंने जिस प्रकार कृतघ्नता दिखाकर राठौरोंका भाग्यचक्र बदल दिया था,इस युगमें भी उसी प्रकार एक जघन्य घटनाने उनकी विजय प्राप्तिमें बडाभारी धक्का दिया। मारवाडेश्वर विजयसिंहके मन्त्रियोंमें परस्पर अनैक्यता और ईर्षा प्रबल हो जानेसे शोचनीय दृश्य दिखाई दिया।

रजवाडेके संपूर्ण राजपूत राज्योंमें यह नियम प्रचलित है कि अधीश्वर यदि स्वयं युद्धमें न जा सके तो उस सेनाके साथ राजाका एक मन्त्री जाता है। वह मंत्री चाहे युद्धविद्यामें पारदर्शी और क्षत्रिय राजपूत हो, वा न हो परन्तु सम्पूर्ण अधीन सामन्त सेनासहित उसी मंत्रीकी आज्ञानुसार काम करते हैं। विशेष अनिष्टकी सम्भावना विना सामन्तगण उस क्षेत्रमें सर्वप्रधान सामन्तकी आज्ञानुसार युद्धारम्भ नहीं कर सकेत। वर्त्तमान युद्धमें राजा विजयसिंह स्वयं रणक्षेत्रमें न जाकर राजधानीमें ही रहे, इस कारण प्रधान मंत्री खूबचंद भी महाराजके साथ महलमें रहनेको बाध्य हुए। गंगाराम विन्दारी, और भीमराज सिंगुई नामक दूसरे दो मंत्री सेनादलके साथ भेजे गये थे। प्रधान खूबचंदके साथ भीमराजका विशेष सद्भाव नहीं था, बरन प्रधानमंत्री खूबचंद भीमराजकी उन्नति और श्रीवृद्धि देखकर मन २ में जलते थे। उस ईर्षाके सम्बन्धसे ही राठौरवीर उक्त शुभ योग पाकर भी अपने सुप्रसिद्ध बाहुबलको नहीं दिखा सके थे।

फरासीसी सैनिक डिवाइनको एक दिनकी दूरीके मार्गपर स्थित और उनकी तोपोंको कीचडमें फँसा हुआ सुनकर पातन युद्धका जातीय कलङ्क छुडाने और महराष्ट्रियोंको उचित प्रतिफल देनेके लिये अहोयाके सामन्त माहीदासने बडे साहसके साथ प्रतिज्ञा करी कि "या तो इस युद्धमें जन्मभूमिको बहुत कालके लिये शत्रुओंके कराल गालसे उद्धार करके जातीय स्वाधीनता प्राप्त करैंगे नहीं तो युद्धमें लडकर प्राण देंगे। यह प्रतिज्ञा करके उन्होंने भीमराजसे सेना आगे बढानेका प्रस्ताव किया, अन्यान्य सम्पूर्ण सामन्त इस प्रस्तावको बडे आनन्दसे समर्थन करके शत्रुओंकी छातीमें तलवार मार-

नेके लिये अधीर हो उठे । विशेष करके उस समय एक दल राठौर सेनाने महाराष्ट्रियोंके बोझा ढोनेवाले पशुपालकोंपर आक्रमण करके सब पशु छीन लिये थे; इस कारण राजपूत वीर स्वभाविक उत्साह, उत्तेजना और आग्रहसे और भी बलिष्ट दिखाई देने लगे । तब सामन्तोंने भीमराजसे कहा कि-"जिस डिवाइनके अधीनस्थ सुशिक्षित गोलन्दाज दलने पातनके युद्धमें केवल अपना रणकौशल दिखाकर पराजित कर दिया था, वह गोलन्दाज दल इस समय नहीं है, इस कारण इस शुभ अवसरपर समराग्नि प्रज्वलित करनेसे अवश्य ही विजय प्राप्तिकी संभावना है, किन्तु दुर्भाग्यके कारण भीमराज इस प्रस्तावको स्वीकार नहीं कर सके । हतबुद्धि भीमराजने खूबचन्दका भेजा हुआ एक पत्र बाहर निकालकर दिखाया, प्रधानमंत्रीने उसमें लिखा था, कि " जबतक इसमाईलबेग न पहुंच जाय तबतक किसी प्रकार शत्रुओंपर आक्रमण न करना । " इसमाईलबेग उस समय नागरमें थे, इस कारण राजभक्त और चिरप्रचलित प्रथाके ऊपर विशेष सन्मान दिखानेवाले राठौर वीर अनिच्छापूर्वक प्रधानमंत्रीकी उस विषमय फलदायक आज्ञाको पालन करनेमें बाध्य हो गये । शुभ अवसर व्यर्थ ही चला गया । यदि भीमराज प्रधानमंत्रीकी वह आज्ञा प्रबल रखनेकी चेष्टा न करके उपस्थित राजनैतिक अवस्थानुसार सामन्तलोगोंकी कामना पूरी कर देते, तो हम निश्चयके साथ कह सकते हैं कि राठौरवीर दुर्द्दान्त महाराष्ट्रियोंके एक मनुष्यको युद्धस्थलसे जीवित न लौटने देते ।

समरकुशल डिवाइनने उन कीचडमें आधी घुसी हुई तोपोंको अनेक युक्तियोंसे निकाल लिया और वहांसे बडी शीघ्रताके साथ चलकर प्रधान सेनाके साथ आ मिले । राठौर सैनिक जिस समय स्वतः ही बदला लेनेके लिये अधीर हो गये थे, उस समय भीमराजके उस शोचनीय व्याघातसे दुःखित होकर निश्चेष्ट हो गये । डिवाइनके आनेकी बात सुनने और राठौरसेनाकी अवस्था तथा प्रधान मंत्रीकी मूर्खताको विचारनेसे कायर बीकानेरके स्वामी अपने २ मनमें कहने लगे कि "महाराष्ट्र लोग अवश्य ही इस युद्धमें विजय प्राप्त करेंगे, इसकारण उनके अत्याचारसे अपनी राज्यरक्षाके लिये विशेष उपाय अवलम्बन करना उचित है । " बहुत सी बातें सोचनेके पीछे बीकानेरके स्वामीने सेनासहित अपने राज्यकी ओर प्रस्थान किया । प्रभात होनेके एक घंटे पहिले ही रणकुशल डिवाइनने राठौर वीरोंको असावधान जानकर अपनी गोलन्दाज सेनासहित भयानक वेगसे आक्रमण किया । उस अकस्मात् आक्रमण और गोलोंके भयङ्कर शब्दोंसे जागकर राठौर भयभीत हो गये और उसी दशामें छिन्न भिन्न होकर भागने लगे । सबसे पहिले प्यादे और गोलन्दाज दल शिबिर छोडकर भैरताकी ओर भागे । उसके पीछे गङ्गारामविन्दारी और भीमराजसिंगुई महाविपत्ति देखकर प्राणोंके भयसे भाग गये । अहोया और आसोपके दोनों सामन्तोंने शिबिरके बहुत दूरवर्ती स्थानमें अपना डेरा डाला था; इस अकस्मात् आक्रमण और अपने पक्षके वीरोंके भागनेका समाचार शीघ्र उनको मिला ।

आसोपके सामन्त बहुत अफीम खाते थे; जिस समय यह समाचार वहां पहुंचा उस समय वह अफीमके प्रतापसे गाढी नीदमें शयन कर रहे थे। अहोयाके सामन्तने बडी कठिनाईसे उनको जगाया और शोकके साथ कहा कि, "भाई! शिबिरके सब लोग भाग गये, केवल हम और तुम अकेले रह गये हैं!" निद्रासे उठे हुए वीरने अभिमानके साथ उत्तर दिया कि, "भय क्या है? चलो घोडेपर सवार होकर चलैं।" दान वीरोंने रणभेरी बजाई और अपनी सेनाको लेकर बाहर निकले। बाईस सामन्तोंने एक साथ अफीम मिला हुआ जल पी लिया। डिवाइनके आक्रमणसे केवल प्यादे और गोलन्दाज लोग ही कायर पुरुषोंके समान युद्धस्थलसे भाग गये थे, किन्तु उस समयतक अन्यान्य सामन्तमण्डली युद्धस्थलमें ही थी। अहोया और आसोपके सामन्तोंकी सेनाको रणसज्जित देखकर वह भी अपनी २ सेनाको सजाने लगे। सबसे पहिले साहसी श्रेष्ठ मेरतीय दलके नेता रियाके सामंत और अलनिवास, इरोया, चानोद तथा गोविन्दगढके सामन्त एकत्रित हुए। सब चार सहस्र साहसी राठौर एकत्रित हुए, तब रियाके सामन्तने सबको पुकारकर कहा कि, "भ्रातृगण हम कहां भागैं?–इस स्थानमें कोई ऐसा राठौर है, जो लज्जासे अधिक अपना कोई प्रियपात्र इस संसारमें रखता हो? यदि कोई हममें स्त्री पुत्रको अधिक समझता हो तो वह अभी यहांसे चला जाय।" इस बातको सुनकर सब ही मौन हो गये। थोडी देरमें सब राठौरोंने अपने माथेपर हाथ रक्खा, तब आहोयाके सामन्तने उत्साहित हृदयसे कहा, "युद्धस्थलमें चलो।" जन्मभूमि और स्वजातिके निमित्त प्राण देनेका संकल्प करके चार सहस्र राठौर वीर घोडोंपर सवार हुए और बहुत शीघ्रतासे युद्धमें पहुंच गये।

महाराष्ट्रियोंके प्रधान सेनापति डिवाइन अस्सी तोपोंको चतुराईके साथ स्थापित करके प्रतीक्षा कर रहे थे, प्राणोंकी ममता छोडकर उन चार सहस्र दृढ प्रतिज्ञ राठौर अश्वारोहियोंको नंगी तलवार हाथमें लिये आता हुआ देखकर डिवाइनकी तोपैं जलते हुए गोले उगलने लगीं; किन्तु थोडी देरमें ही "पातनकी बात मत समझना" कहकर उन जलते हुए तोपके गोलोंको अग्राह्य करके वह चार सहस्र साहसी राठौर वीर तोपोंके निकट पहुंच गये। सामनेके प्रत्येक पदार्थको नष्ट भ्रष्ट करके तोपोंकी रक्षा करनेवाले महाराष्ट्रियोंको छिन्न भिन्न कर दिया और आकाशभेदी शब्दसे शत्रुव्यूहको भेदकर शत्रुओंका नाश करने लगे। उस भयङ्कर आक्रमणसे भयभीत हुए महाराष्ट्रीलोग पहिले तोपैं छोडकर भाग गये थे, हा शोक! उस समय यदि वहां राठौर पैदल सेनाका एक दल पहुँचकर तोपोंपर अधिकार कर लेता तो उस प्रथम आक्रमणमें ही वह चार सहस्र राठौरवीर महाराष्ट्रियोंको पराजित कर देते–तङ्गाके युद्धकी अपेक्षा मैरताका यह समर राठौरोंके वीरत्व यश गौरवको प्रबल रूपसे बढा देता, किन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि राठौर पदातिसैनिक सबसे पहिले ही भाग गये थे।

राठौरवीर महाराष्ट्रियोंके गोलन्दाजोंको यद्यपि छिन्न भिन्न करके लौट आये थे, किन्तु चतुर डिवाइन उनके लौटते ही सम्पूर्ण तोपोंको फिरसे श्रेणीबद्ध करके राठौरोंके आनेकी

प्रतीक्षा करने लगे। रणोन्मत्त राजपूत अश्वारोही एक श्रेणीके महाराष्ट्रियोंको मार कर दूसरी ओर जा रहे थे, इतनेमें डिवाइनके गोलन्दाज बदला लेनेकी इच्छासे उत्तेजित होकर बडे २ गोलोंकी वर्षा करने लगे तथा उसी समय अन्यान्य सेनादलने आकर उनको चारों ओरसे घेर लिया,परमसाहसी राठौर वीर अपनी वीरता दिखाके पीछे एक २ करके सम्पूर्ण वीर पृथ्वीपर शयन कर गये । यह सब वीर चौबीस घंटे तक अचेतन अवस्थामें पडे रहे, इसके पीछे उनका एक विश्वासी पुराना सेवक वहां आया । रात्रिका समय था और युद्ध समाप्त होनेके पीछे मूसलाधार पानी बरस गया था । इस कारण चलनेकी शक्तिसे हीन होकर घायल वीर विषम यंत्रणा भोग रहे थे । उस सेवकने सबसे पहिले अपने स्वामीको खोजकर थोडी सी अफीम सेवन कराई जब उनको चैतन्यता हुई तो कई चरोंकी सहायतासे उनको युद्धकी भूमिसे उठा ले चले । जब यह लोग जा रहे थे, उसी समय प्रधान सामन्तोंकी टटोलमें जाते हुए महाराष्ट्रियोंके कई सैनिक इनको मिल गये, और घायल अहोयाके सामन्तको अनुचरोंसे छीनकर मैरताके प्रधान शिबिरमें ले गये ।

उसी समय अहोयाके सामन्तकी चिकित्सा करनेके लिये महाराष्ट्रियोंका चिकित्सक आया; साहसी सामन्तने चिकित्सकसे कहा कि "जबतक हमारे अधीनस्थ सब सरदारोंकी चिकित्सा न की जायगी तबतक मेरी चिकित्सा करनेसे कुछ प्रयोजन सिद्ध न होगा।" साहसी वीरके इस वचनसे महाराष्ट्रियोंका भी हृदय दहल गया,जो कुछ भी हो सहानुभूतिप्रकाशक महराष्ट्री शत्रुओंने सेवा शुश्रूषा करनेमें कोई त्रुटि न की । थोडे दिनोंमें ही सामन्तके सब घाव अच्छे हो गये । महाराष्ट्र सेनापतिने उनसे क्षौरकार्य्य और स्नान करनेका अनुरोध किया सामन्तने उत्तर दिया कि "जबतक मैं अपने प्रभु मारवाडेश्वरका दर्शन न कर लूंगा, तबतक इसी दशामें रहूंगा, इस समय मेरी यही प्रार्थना है । " थोडे दिन पीछे राजा विजयसिंह जोधपुर छोडकर राठौरकुल गौरव उन सामन्तकी संवर्द्धनाके लिये आये । दोनोंकी मुलाकात होनेपर विजयसिंहने उनके वीरत्व, साहस और स्वदेशानुरागकी बडीभारी प्रशंसा करके उनका कष्ट दूर कर दिया । राजाकी प्रसादरूप सन्मानसूचक पोशाक पहरनेसे पहिले सामन्त स्नान करने लगे, दुर्भाग्यसे उनके घावोंमेंसे फिर रक्तकी धारें बहने लगीं और उसीके द्वारा वह प्रशंसनीय वीर इस असार संसारको छोडकर स्वर्ग सिधार गये ।

जिस हतभाग्य मंत्री भीमराजने अपनी मूर्खतासे मैरताके युद्धमें वह शोचनीय दृश्य उपस्थित कर दिया था वह जब नागरमें पहुंचा तो विजयसिंहने उनको अपमान सूचक पत्र लिखा; अपमानित भीमराजने हलाहल पान करके अपने प्राण छोड दिये । यद्यपि उनके अविचार और कलङ्कसूचक भागनेसे ही राठौर वीर इस युद्धमें पराजित और समूल विध्वंस हुए थे, किन्तु सुनते हैं कि प्रधानमंत्री खूबचन्दके दोषसे ही राठौर उस शुभ अवसरपर महाराष्ट्रियोंके समूल नष्ट करनेसे रोके गये थे । खूबचन्द भीमराजकी उन्नतिसे बहुत जलते थे, इस कारण भीमराजके युद्धमें जानेपर प्रधान

मंत्रीने सोचा कि "यदि भीमराज इस युद्धमें महाराष्ट्रियोंको पराजित करके जयमाला धारण करेंगे, तो जयपताका उडाते हुए बडे सन्मानके साथ राजधानीमें प्रविष्ट होंगे, उस समय उनका यश चारों ओर फैल जायगा और मेरा आदर न्यून हो जायगा।" यह विचारकर उन्होंने विजयप्राप्तिमें शंका पहुंचानेके लिये ही भीमराजको इस आशय का पत्र लिखा था कि "जबतक इसमाईलबेग न पहुंचे तबतक युद्ध मत करना।" खूबचन्दको जब अपने पक्षकी पराजय करना स्वीकार थी तो उसने ऐसे जघन्य उपायको अवलम्बन किया, इसमें आश्चर्य क्या है?

जातिविद्वेष और आभ्यन्तरिक ईर्षाने ही राठौरोंको महाराष्ट्रियोंके द्वारा दो बार पराजित कराया। यदि जयपुरकी सेनाके विरुद्ध राठौर कवि निन्दासूचक कविता न बनाता, तथा खूबचन्द और भीमराजके बीचमें ईर्षाग्नि प्रज्वलित न होती तो साहसी राठौर सैनिकवीर निःसंदेह पातन और मैरताके युद्धमें अपनी विजयपताका उडाकर जातीय गौरव रविकी तीक्ष्ण किरणोंसे भारतवर्षको दीप्तिमान कर देते। यद्यपि मैरताके अन्तिम युद्धमें चार सहस्र राठौर वीर अपनी जाति और स्वाधीनताके लिये बडी भारी वीरता दिखानेके पीछे जीवन बलिदान करके स्वर्ग सिधार गये थे और यद्यपि इसी कारणसे महाराष्ट्रियोंका प्रताप विशेषरूपसे फैल गया था, तथापि राठौर जातिके वीरत्व विक्रम और साहस शौर्य्यमें बिन्दुमात्र भी लघुता नहीं आई वह क्षत्रियतेज, वह दृढ प्रतिज्ञा, वह असीम साहस, वह महावीरत्व राठौर जातिको ऊंची कक्षाकी वीरश्रेणीमें आजतक परिगणित करा रहे हैं इसमें कुछ सन्देह नहीं है। *

जिन घटनाओंके द्वारा यह साहसी जातिसमूह वर्त्तमान राजनैतिक दशामें गिरा है, अनुसन्धानद्वारा उन सब घटनाओंका यथार्थ तथ्य खोज करके प्रधान शक्ति (बृटिश

---

* कर्नेल टाड इस स्थानपर टिप्पणीमें लिखते हैं कि, "तीन वर्ष हुए जब मैं इन राजपूत विजेता डिवाइनकी जन्मभूमि कैंबोरिकी उपत्यकामें गया था, दो दिनतक इनके साथ बडे आनन्द पूर्वक रहा। चार सहस्र राजपूतोंने महाराष्ट्र राजपताकाके विरुद्ध युद्ध करके राजपूत स्वाधीनताके लिये अपने प्राण न्योछावर कर दिये थे, यद्यपि मैं इन डिवाइनके दीर्घजीवनकी इच्छा करता हूं किन्तु इस बातका मुझे बडा दुःख है कि "यह उन राजपूतोंको अधीनताकी जंजीरसें बाँधनेकी इच्छासे अपने संपूर्ण ज्ञान और साहसको लगा देनेके लिये ही जीवित थे। यह राठौर वीरोंकी खूब प्रशंसा करते हैं। जब मैंने इनसे मैरताके युद्धकी बात कही, उस समय पिछले सब दृश्य इनके मनमें जाग उठे, इन्होंने कहा कि "वह सब बातें स्वप्नके समान अब मालूम होती हैं।" स्वदेशी अधीश्वर द्वारा पुरस्कृत, असंख्य प्रिय आत्मीय स्वजनोंद्वारा प्रसन्न और स्वदेशी लोगोंद्वारा सन्मानित होकर वह अस्सी वर्षकी अवस्थामें अपनी जन्मभूमिमें निवास करके शान्ति भोग रहे हैं वह जिस गलीमें रहते हैं वह गली प्राच्य जगत्के महा ऐश्वर्य और आडम्बरोंसे सजी हुई है और उन्होंने अपने मकानको भी उसी प्रकारकी सजावटसे मनोहर बना रक्खा है बडे आश्चर्य्य की बात है कि जिस समय मैंने इस इतिहासका लिखना आरंभ किया, उस डिवाइनकी एक जीवनी मेरे हाथ लग गई थी। उसके देखनेसे ज्ञात हुआ कि डिवाइन इस बातको नहीं जानते थे कि मैरताके क्षेत्रमें आभ्यन्तरिक ईर्षा और गुप्त षडयन्त्रके कारण राठौर परास्त हुए थे"

गवर्नमेंट) इस बातका भलीभाँति निश्चय कर सकती है कि "इस जातिसमूहको शत्रुके पदपर स्थापन करना उचित है अथवा मित्रके ?" इन सब जातियोंके पृथक् रहने अथवा एकत्र मिलकर रहनेसे हमारे लिये भयका कारण कुछ भी नहीं है, वरन आभ्यन्तरिक वा वैदेशिक जो कोई शत्रु हमारी शासनशक्तिके विरुद्ध खडा हो तो हम उस शत्रुके विरुद्ध इन साहसी जातियोंके हृदयका रक्त अपने अनुकूल प्रयोग कर सकते हैं, अर्थात् हम लोग इन जातियोंकी चिर प्रचलित रीति नीतिके ऊपर सन्मान दिखानेसे उनके विश्वासपात्र हो सकते हैं-इनकी आपसकी लडाईके समय निस्वार्थ भावसे मध्यस्थता की जायगी तो यह साहसी जातियें एक मनुष्यके समान खडे होकर हमारे शत्रुओंके विरुद्ध तलवार चलानेके लिये प्रस्तुत हो सकते हैं। इस प्रकारकी नीतिके अवलम्बन करनेमें किसी प्रकारकी विघ्नबाधा भी नहीं है; यदि हम इन वीर जातियोंको एक बार सरल भावसे यह विश्वास दिला सकें कि "हमारी राज्य फैलाने वा और किसी बुरे विषयकी इच्छा नहीं है" तो यह सब जातियें निश्चय ही हमारी सब विषयोंमें मध्यस्थता सन्मानके साथ स्वीकार कर लेंगे । शान्ति स्थापकको यह हृदयसे सन्मान करती हैं। किन्तु कलकत्तेसे राजपूताने तक हमारी शासनशक्ति और राज्यसीमा बडी शीघ्रताके साथ फैल गई है, "हमको अब राज्याधिकारकी इच्छा नहीं है" अधिवासी लोग जितना इस बातका विश्वास करेंगे उतना ही मंगल है । कोटके जालिमसिंहके साथ बातचीत करनेके समय यद्यपि मैंने बारम्बार यही कहा कि हम लोगोंकी अब राज्यसीमा वृद्धि करनेकी इच्छा नहीं है, किन्तु उन्होंने उसमें विश्वास न करके कहा कि "मेरा तो यही विश्वास है कि एक समय ऐसा अवश्य आवेगा, जिसमें सारे भारतवर्षमें एक सिक्केका प्रचार हो जायगा । महाराज ! आपने शुभ समयमें भारतमें पदार्पण किया है; फूटके फल पककर खानेके योग्य हो आये हैं, इस समय आप क्रम २ से सब फलोंको अवश्य ही खा जाँयगे । × आपने केवल अपने बाहुबलसे ही नहीं वरन हम लोगोंकी अनैक्यताके बलसे ही राजशक्ति प्राप्त करी है, और वह आपसकी फूट ही आपकी उस राजशक्तिको दृढ कर देगी ।" जालिमसिंहकी यह बात यद्यपि सर्वथा आग्रह नहीं है, किन्तु मेरा विश्वास यही है कि उनकी यह भविष्यद्वाणी कभी सफल न होगी । *

२८ वीं नवम्बर--उस दिन पाँच कोशकी दूरीपर झारो नामक स्थानमें डेरा डाला गया । मैरता छोडनेके पीछे–जिस रणक्षेत्रमें चार सहस्र राठौर वीर जन्मभूमि और

× फूट पकनेपर स्वयं ही विदीर्ण होकर खण्ड २ हो जाती है, जालिमसिंहने भारतकी अनैक्यता लक्ष्य करके ही फूटका नाम लिया था ।

* खेदका विषय है कि समयने टाड महोदयकी ही भविष्यद्वाणीको व्यर्थ करदिया । जालिमसिंह समान पञ्जाबके रणजीतसिंहने भी भारतवर्षके नकशेमें वृटिशगवर्नमेंटके शासित स्थानोंमें लाली देखकर कहा था कि " एक दिन सब लाल हो जायगा ।" इस समय वही बात सत्य हुई है । यद्यपि देशी राजा लोगोंमें अब भी दो एक नृपति अपनेको स्वाधीन मानते हैं, परन्तु यह उनकी भूल है ।

स्वाधीनताके लिये बडी वीरताके साथ प्राण न्योछावर करके इतिहासमें अपनी जातिका नाम अक्षय कर गये हैं, उनकी उस पवित्र लीलाभूमिको देखते हुए आगे बढे। हम जिस मार्गसे चल रहे थे; यदि उसी मार्गमें चले जाते तो सीधे दिल्ली पहुंच जाते, इस कारण उस मार्गको छोडकर फिर आरावलीको पार किया और अजमेर पहुंचनेके लिये पूर्व-प्रान्तके दक्षिणांशमें होकर चलने लगे। मार्ग श्रेष्ठ और मट्टी उत्तम है। यद्यपि ग्रामोंके निकट कृषिकार्य्यके चिन्ह दिखाई देते हैं, किन्तु गिरी हुई भूमिकी संख्या अधिक है; बेलबूटे भी दिखाई देते हैं। बहुत दूरीपर आरावलीकी आकाशभेदी चोटी क्रम २ से दक्षिण पूर्वमें हमारे नेत्रोंसे छिप गई और बीच २ में बहुत ऊंचे २ भूखंण्ड दृष्टिको रोकने लगे।

उस दिन प्रातःकाल ही हमने एक बडा विचित्र और मनोहर प्राकृतिक दृश्य देखा; हम जहांतक सोचते हैं ऐसा बडा अनेक मूर्तियुक्त दृश्य हमने किसी समय किसी स्थानपर भी नहीं देखा। उस समय बडी भारी सर्दी थी तथा उत्तर पूर्व प्रान्तसे ठंढी २ वायु आ रही थी। पृथ्वी बडे भारी बरफसे ढकी हुई थी। छोटी २ जडी बूटियें विशेष करके गन्ने उस भयंकर शीतसे बिलकुल विध्वस्त हो गये थे इससे पहिले शीतका प्रादुर्भाव मध्यम होनेसे, अकस्मात प्राकृतिक परिवर्त्तनके कारण चेतन और अचेतन सब ही पदार्थ चञ्चल हो उठे। केवल शीतकालमें ही यह रमणीक दृश्य दिखाई देता है। मारवाड निवासी इसको "शीतकोट" अर्थात् शरत् कालका महल कहते हैं। पश्चिम प्रान्तमें विस्तृत मरुभूमिके किसान लोग इस दृश्यको "चित्राम" अर्थात् तसवीर और यमुना तथा चम्बलवासीगण इसको "देशासुर" कहते हैं। बहुत कालसे इस मरीचिका दृश्यका उल्लेख देखा जाता है। भविष्यद्वक्ता ईसायाने उसका उल्लेख करके कहा है कि "विदग्धभूमि नदीमें परिणत हो जायगी।" * समालोचकने उसका असली अर्थ यह किया है कि "सिराव असली जलमें परिणत हो जायगा" × सगदियानेकी मरुभूमिकी मृगतृष्णाके विषयमें कुइन्टास-कर्टियस लिख गये हैं कि "चार सौ फरलांग (क) परिमित स्थानमें एक बूँद जल भी दिखाई नहीं देता और ग्रीष्मकालमें यह बालुकाक्षेत्र सूर्यकी किरणोंसे इतना गरम हो जाता है कि सब पदार्थ दग्धीभूत हो जाते हैं। उस समय पृथिवीमेंसे ऐसा धुआं निकलता है कि जिससे वह भूमि गहरे समुद्रके समान मालूम होने लगती है। भार-

---

* इसाया ३५ वें अध्यायमें देखो।

× मरुक्षेत्रका नाम साहारा और अरबीसी तथा वहां पारसके निवाइकी मरीचिकाको "सिराव" कहते हैं किन्तु युक्ति अनुवादकने भूलसे अनुवाद किया है कि, "मैं साहाराको असली जलसे भरूंगा सिराव मरीचिका अर्थात् मरुभूमिके जलका नाम विख्यात है, अनुवादकने उसको न जाननेके कारण ही इस स्थानमें "साहाराको जलमें परिणत करनेकी बात लिखी है साहाराके बदले सिराव अर्थात मरीचिका जलमें परिणत करूंगा, इसायाकी यही प्रतिज्ञा थी और यही अर्थ असली है।

(क) एक मीलके आठवें हिस्से लगभग ४५० हाथ लम्बे स्थानको एक फरलाङ्ग कहते हैं।

तीय मरुक्षेत्रके "चित्राम्" दृश्यका यही असली वर्णन है। किन्तु सिराव और चित्राम् तथा इसायायाके "मरीचिका" "शीतकोट" नामक नैसर्गिक दृश्यसे बिलकुल अलग है। यद्यपि यात्री लोग उस शीतकोट अर्थात् शरतकालीन महलमें भूलसे रात्रि व्यतीत करनेके लिये जा सकते हैं; किन्तु मैं यह नहीं समझता कि वह लोग उस दृश्यको देखकर जल पीनेकी इच्छासे वहां जानेकी इच्छा करते हों। एक प्रकारसे "शीतकोट" दृश्य ठीक महलके समान है, इस कारण मरुभूमिके तृष्णातुर लोग वहां क्यों जानेकी इच्छा करेंगे ?

हमने जिस समय इस दृश्यको देखा, उस समय सबसे पहिले एक गहरे धुएँके महलने हमारी दृष्टिको खैंचा, ऐसा मालूम हुआ मानों वह धुएँका महल प्रान्तभागसे उठा हुआ है क्रम २ से वह धुआं प्रकाशमान और परिवर्तित दृश्यपूर्ण दिखाई देने लगा। क्षेत्रके छोटे २ तिनके बडे २ वृक्षाकार और छोटे २ खैरके वृक्ष मरुभूमिमें उत्पन्न हुए इमली वृक्षकी अपेक्षा दशगुने दिखाई देने लगे। अकस्मात् सूर्य्यकी किरणोंने उस धुएँके महलमें घुसकर रूपान्तर कर दिया और ऐन्द्रजालिकके दण्ड स्पर्शसे मानों महल, दुर्ग, ऊंची चोटियां और वृक्ष एक साथ हो गये, केवल बीच २ में रमणीक वृक्षोंके पत्तोंमें एक एक स्थानका दृश्य ढका रहा। उस विचित्र दृश्यके ऊपर जितना २ प्रकाश गिरने लगा, यह "चित्राम्" उतना २ ही बदलता हुआ दिखाई देने लगा। सबसे पहिले गंभीर धुएँका परकोट दिखाई दिया, फिर महल, दुर्ग, ऊंची चौटियें आदि रूपसे दिखाई दियां, अब वही सहस्र खण्डोंमें विभक्त अति सूक्ष्म तथा विराटकाय रंगे हुए काचके समान आकृतियुक्त हो गया क्रमसे वह समस्त रमणीक महल, दुर्ग ऊंची चोटी आदि मानों गली हुई धातुके समान शून्य हृदयमें विलीन हो गये।

बहुत दिनतक मेरी यही धारणा थी कि इस प्रदेशकी मृत्तिकाके गुणसे ही यह नैसर्गिक दृश्य दिखाई देते हैं, विशेष करके यह "चित्राम्" केवल सज्जी अर्थात् क्षारयुक्त इस भूमि में देखा जाता है। किन्तु इसके अनन्तर मैंने इस प्रदेशके सब स्थानोंमें इस प्रकारके दृश्य देखे। इस प्रदेशकी मट्टी लवण मिलि हुई है; इस कारण उसके द्वारा इस प्रकारके दृश्य उत्पन्न होनेकी संभावना है। किन्तु "सिराव" वा "चित्राम्" वा "शीतकोट" वा "देशासुर" दृश्योंमें यह भेद है कि "देशासुर" केवल शीतकालके सिवाय और कभी दिखाई नहीं देता। मैंने सबसे पहले जयपुरमें इस दृश्यको देखा था, बृटिश साम्राज्यके किसी स्थानमें भी मैंने इसको नहीं देखा। जयपुरमें यह पहिले बडे लंबे चौडे दुर्ग प्राकार वेष्टित और बुर्ज युक्त नगरके समान हमारे दृष्टिगोचर हुआ। पथ प्रदर्शकने इसको "शीतकोट" कहकर परिचय दिया। किंतु हमने सहसा उसके वचनमें विश्वास नहीं किया। मैंने इस जीवनमें फिर एक वेर इस प्रकारके विचित्र चित्तहारी दृश्यको देखा किन्तु यह दृश्य अतुलनीय है।

कोटेके जिस बागकी कोठीमें मैं रहता था; एक दिन प्रभात ही उसकी छत पर चढकर टहलने लगा, सूर्योदय होते ही वह दृश्य दृष्टिगोचर हुआ। कोटेके दक्षिण

पूर्व प्रांतमें कुछ ऊँची शिखरावलीपर दृष्टि डालते ही यह मालूम हुआ कि शिखरमाला मानों तरंगाकारसे शून्य मार्गमें उठती चली जा रही है । वृक्ष और महलोंकी श्रेणियें विचित्र चमत्कार मूर्तिमें मानों इन्द्रजाल मन्त्रसे बनी हुई हैं । मैं कई मिनटतक इस आश्चर्य्यरूप दृश्यका असली कारण नहीं समझा सका; अन्तमें निश्चय किया कि मरीचिका द्वारा ही यह दृश्य पूर्ण रूप धारण करके धीरे पवनसे आकाशमें उठाया जाता है। देखते २ वह सम्पूर्ण दृश्य धीरे २ शिखरके निकट होकर चला गया ।

यद्यपि उक्त दृश्य नवीन और परमानन्ददायक है । किन्तु मैंने हिसारमें इससे पहिले जो परिवर्त्तन और गमनशील मरीचिका देखी थी, वह इसकी अपेक्षा अत्यन्त आश्चर्यदायक थी । हिसारमें मैं अपने एक मित्रके पास मुलाकात करनेके लिये गया था (हा ! वह मित्र ! इस समय परमधाममें स्थित हैं) उन उदारचित्त और पवित्रहृदय मित्रके अनुरोधसे ही मैं अपने जीवनके इस प्रधान व्रतके अवलम्बन करनेमें अग्रसर हुआ। मेरे उन प्रिय मित्र जेमसलैंसडोनका घर फीरोजदुर्गके ध्वंसस्तूपोंमें बना हुआ था, चारों ओर विस्तृत मरुभूमि है और अधिवासियोंमें सिंहकी संख्या अधिक है । उस मकानकी छतपरसे मैंने वह दृश्य देखा, वास्तवमें वह जैसा बडा था वैसा ही आश्चर्यदायक था । प्रिय पाठक ! कल्पना करो कि एक बडी लम्बी चौडी मरुभूमि है, उसमें चारों ओर दृष्टिका रोकनेवाला कोई पदार्थ नहीं है, दूरपर घोर काली वेष्टनी चारों ओर खडी है, अकस्मात् बालरविकी किरणें उस वेष्टनीके ऊपर गिरते ही मानो ऐन्द्रजालिकके मंत्रपूत दण्ड स्पर्श द्वारा हजारों बडे २ मूर्तियुक्त दृश्य नेत्रोंके सन्मुख आने लगे । एक स्थानपर छोटी २ शिखामाला, कहीं ऊँची चोटीके महल, दृष्टिगोचर हुए, देखते ही देखते वह सम्पूर्ण एक साथ ही अन्तर्द्धान हो गये इस देशके निवासी उस दृश्यको " हरिश्चन्द्र राजाकी पुरी " कहते हैं । हरिश्चन्द्र * सत्ययुगमें भारतवर्षके एक प्रसिद्ध राजा थे । यह रमणीक दृश्य किस रूपमें दिखाई दिया था; इस विषयमें इतना ही कह देना यथेष्ट होगा कि छः कोशसे भी अधिक दूरीपर स्थित बहुत पुराने अगरोया × नामक स्थानका दुर्ग, महल, बुर्ज आदिका ज्योंका त्यों दृश्य इसमें दिखाई देता है ।

झारोग्राम समृद्धिशाली है और रियाके मैरतीय सामन्तके अधीनस्थ एक सरदार इसका स्वामी है । ग्रामके बांई ओर बहुत निकट एक छोटा सा सरोवर है । सरोवरके तटपर निम्बवृक्षपूर्ण एक कानन है, उसके भीतर अधीश्वरके पूर्व एक पुरुषका स्मारक मंदिर बना है । मंदिर के भीतर उन वीर पुरुषकी मूर्ति अस्त्र शस्त्र लिये घोडेपर सवार

---

* राजा हरिश्चन्द्रका अवस्थान विवरण पाठक लोग भलीभांति जानते हैं । ज्ञात होता है कि उन्हीं हरिश्चन्द्रको कर्नेल टाडने " हरचन्द " लिखा है ।

× यह हरयानावालोंके बहुत प्राचीन रहनेका स्थान और अग्रवालोंकी निवासभूमि है । अग्रवाल लोग सब ही वैश्य और वैष्णव हैं । ऐसा ज्ञात होता है कि यह अगरोया नगर उग्रमकी राजधानी थी । उग्रमने प्रबल सेनासहित अलकजण्डरके भारत विजयमें विघ्न कर दिया था, यह पुरुजातिके थे ।

है और पास ही उनकी स्त्रीकी मूर्ति हाथ जोडे खडी है । यह स्त्री अपने स्वामीके शवके साथ चितामें भस्मीभूत होकर स्वर्गलोकको सिधारी थी । उस मंदिरकी दीवार पर यह खुदा है-" १६८९ संवत्‌के (सन् १६३३ ईस्वी) माघकी द्वितीयाको महाराज जशवन्तसिंहने शत्रु (औरंगजेब) की सेनाको आक्रमण किया था उसी समय मैरतीय सम्प्रदायके ठाकुर हरकर्णदास मारे गये थे । उन्हींके स्मरणार्थ संवत १६९७ के माघ मासमें यह स्मारक मंदिर बनाया गया है । "

२९ वीं नवम्बर ।-पांच कोशकी दूरी पर अलनिवासमें डेरा डाला गया । मार्गके अधबिचमें रियानगर विराजमान है । मैरतीय सम्प्रदायके जिन सर्व प्रधान नेताका विषय हमने कई जगह लिखा है यह रिया ही उन सामन्तकी निवासभूमि है । नगर बडा है, निवासियोंकी संख्या भी अधिक है, नगरके चारों ओर दृढ पत्थरका परकोटा है, उक्त पत्थरको यहांके लोग मरूर कहते हैं, रियाके वर्त्तमान सामन्तका नाम बदनसिंह है । मारवाडके सर्व श्रेष्ठ आठ सामन्तोंमें यही एक प्रधान है । नगर अब भी "शेरसिंहकारिया" इस नामसे पुकारा जाता है । पाठकोंको याद होगा कि, महावीर शेरसिंहने अपने अधीश्वर रामसिंहकी ओरसे वक्तासिंहके विरुद्ध युद्ध करके अपने प्राण न्यौछावर किये थे । नगर ऊंची भूमिके ऊपर स्थापित है, इसके ऊपरसे पर्वतमालाके सन्मुखवाले प्रदेशोंका रमणीक दृश्य दिखाई देता है । नगरसे आरंभ करके सीमान्ततक ऊंची चोटीके पर्वततक बडे २ समृद्धिशाली ग्राम बसे हुए हैं । बीच २ में इस प्रदेशके आसाधारण बेल बूटे दिखाई देते हैं ।

आरावली पर्वतवासी दुर्दान्तचरित्र माहीर लोग कैसे अत्याचारी और दुर्द्धर्ष साहसी हैं, मैंने यहांके बने एक समाधिमंदिरकी दीवारपर खुदे हुए लेखद्वारा इस बातका विलक्षण प्रमाण पाया । उस लेखकी नकल यह है,- "संवत् १८३५ के (सन् १७७९ ईस्वी) माघ कृष्ण तृतीया सोमबारके दिन माहीर लोगोंके आक्रमणसे नगररक्षाके लिये भूपालसिंहने युद्ध किया था, वह अपनी स्त्रीकी सतीत्त्व रक्षा करनेके लिये उसका शिर अपने हाथसे काटकर युद्धभूमिमें शयन कर गये थे ।" * पचास वर्ष पहिले माहीर जाति उपरोक्त प्रकारसे विक्रान्त और दुर्द्दान्त थी, उससे आगे इनके अत्याचार बढते ही गये । शिखरके दोनों प्रान्तमें जो राठौर सामन्तोंके ग्राम हैं, उनमें एक घर भी ऐसा नहीं है, जिसके पूर्व पुरुषोंमें किसी एकने इन असीम साहसी पहाडी माहीरोंके द्वारा आक्रान्त होकर जीवन विसर्जन न किया हो । स्मारक मन्दिरावलीमें कोई न कोई सामन्त इसी कारणसे मरा है, ऐसा देखा जाता है । हम लोगोंके द्वारा जितने उपकार राजपूतानेको प्राप्त हुए हैं उनमें कई सौ ग्रामवासी इन असंख्य पहाडियोंको दमन करके उनको शान्तिप्रिय करदाता बना देनेका वह बडा भारी उपकार मानते हैं । सुप्रसिद्ध चौहानराज विशालदेव जिनका स्मारक चिह्न आजतक फीरोजके दिल्लीवाले

* यहांके एक और स्मारक मंदिरमें लिखा था कि, रिया लोगोंके सम्वत् १८१३ में मैरिया आक्रमण करनेपर वाओरिजातिके सिवया मारे गये थे ।

महलमें विराजमान है, उनके समान हम भी कह सकते हैं कि हमने " माहीर लोगोंको अजमेरके राजमार्गपर जल लानेके कार्य्यमें नियुक्त किया था" और उनके सब अस्त्र,शस्त्र छीनकर उदयपुरके राणाके महलमें भेज दिये थे। विशेषकरके हमने उन शान्तिभंगकारी डाँकुओंको इस समय सर्वसाधारणके शान्तिरक्षक सैनिक बना डाला है।

रिया और अलनिवासेक मध्यस्थलमें लूनीनदी बहती है। इसेक ही तटपर डिवाइनकी तोपैं कीचडमें फँस गई थीं। अलनिवास एक मैरतीय सामन्तका प्रदेश है। नगर बडा और बहुत प्रजाकी वस्तीका है। इस नगरमें एक और वीरकी कीर्त्ति मेरे दृष्टिगोचर हुई आपसकी लडाईके समय मैरताके युद्धस्थलमें मैरतीय वीर जिस समय चम्पावत, सम्प्रदायेक विरुद्ध घोर युद्ध करके विध्वस्त हुए थे उसमें "सोनमल्ल" नामके एक मैरतीय वीर मारे गये थे उनके स्मरणार्थ एक मंदिर बना था।

३० वीं नवम्बर---इस दिन अलनिवाससे तीन कोशकी दूरीपर गोविन्दगढमें पहुंचे। मार्ग साधारण तथा अच्छा था, कोई २ स्थान कठोर होनेपर भी पहिले दिनकी अपेक्षा मृत्तिका अल्प क्लेशदायक ज्ञात हुई। गोविन्दनगर और दुर्ग जोध सम्प्रदायके एक सामन्तके अधिकारमें है। इस नगरके स्थापक गोविंद महाराज उदयके पोते थे। स्थूलकाय होनेके कारण सम्राट् अकबरने उदयको " मोटा राजा " की उपाधि दी थी। खैरवारके सामन्त इस सम्प्रदायके नेता हैं और सोलह करदाता नगर इनके अधीन हैं। बुनाई और मासूदके दोनों सामन्त भी इस सम्प्रदायके दूसेर नेता हैं। वह दोनों पचास नगरके अधीश्वर हैं। उक्त दोनों सामन्त इस समय अजमेरमें रहते हैं। यद्यपि इस समय इष्ट इण्डिया कंपनी उनका स्वामी है किन्तु, इन दोनोंमें किसीकी भी मृत्यु होनेपर उनके उत्तराधिकारी जोधपुरमें जाकर महाराजके द्वारा अभिषिक्त होते हैं। उक्त नगर शिखरके बाहर स्थापित है, किंतु पूषानगर और उससे मिले हुए बारह ग्राम, विजाथाल और उसके पश्चिम प्रांतवर्त्ती सम्पूर्ण करद ग्राम भी अजमेरके अंतर्भूत हैं; यह सब प्रदेश यदि पुराने अधीश्वर मारवाड राजको लौटा दिये जावें तो वह उनको बडी कृतज्ञताके साथ स्वीकार कर सकते हैं।

गोविंदगढके कुछ दूरीपर पश्चिममें एक नदीको पार करके, आगे चले। उसका नाम शुभ्रमती है, कोई २ इसको लूनी नदी भी कहते हैं। उक्त शुभ्रमती और सरस्वती नामकी एक दूसरी नदी, दोनों पुष्कर सरोवरसे बाहर निकलकर आपसमें मिल गई हैं।

१ ली दिसम्बर।--वहांसे चलकर चार कोशकी दूरीपर सुप्रसिद्ध हिन्दूतीर्थ पुष्कर सरोवरपर पहुँचे इस मार्गको भूमि रेतसे भरी है। नन्दनाम सरस्वतीको उतरकर आये। उक्त नदीके दोनों किनारोंपर दश २ फिट ऊँची घास उत्पन्न होती है। आभ्यन्तरिक प्रदेशके अनेक स्थानोंमें वह सब घास गाडियोंद्वारा पहुँचाई जाती है।यह घास छप्पर छाने के लिये बहुत उपयोगी है। तथा हाथियोंका यूथ भी इसको बडे आनन्दसे खा लेता है

वर्त्तमान पुष्कर सरोवरके दो कोशकी दूरीपर प्राचीन पुष्कर विराजमान है; मन्दौर के पुरीहरलोगोंके अन्तिम राजाने इसको खुदवाया था । उस प्राचीन सरोवरसे निकली हुई सरस्वती नदी हमने फिर उपत्यकाके निकट बहती हुई देखी । उपत्यकाके मुहानेपर बालूका स्तूप आधे कोशतक चला गया है । समतल भूमिसे आई हुई बायुके द्वारा यह रेतका स्तूप बन गया है । बीच २ में यह रेतका स्तूप बहुत ऊँचा हो गया । यह स्तूप मानों उपत्यकामें प्रवेशद्वारके परकोटेरूपसे विराजमान है । दक्षिणभागके पर्वतके लाल पत्थरोंमें बडा मनोहर दृश्य दिखाई देता है । उस नन्दनामक शृङ्गके ऊपर आद्याशक्तिका मन्दिर बना हुआ है। उस प्रान्तके पर्वतके वैसेही रंगके पत्थर हैं; चोटी बहुत ऊँची चली गई है । दक्षिणभागकी पर्वतमाला लाल पत्थरोंकी है; तथा उसके शिखर सफेद रंगके हैं ।

भारतवर्षमें पुष्कर बहुत प्रसिद्ध और पवित्र तीर्थ है । इसकी पवित्रताकी तुलना केवल तिब्बतके मानसरोवरके साथ की जा सकती है पुष्कर सरोवर उपत्यकाके ठीक मध्यस्थलमें विराजमान है । यहांपर उपत्यकामें बहुतसे मकान बने हुए हैं । भारत वर्षके धर्मानुरागी राजा और धनाढ्य लोगोंने इस सरोवरके तटको अनगिन्त मन्दिर, देवालय, संगीतशाला स्मारकचिह्न आदिके द्वारा अत्यन्त शोभायमान कर दिया है। पूर्व प्रान्तके सिवाय सरोवरके तीनों ओर रेतके शिखर हैं । सरोवरकी आकृति वृत्ताभासके समान है । केवल पूर्वका तट छोडकर शेष तीनों तटकी भूमियोंमें अनेक प्रकारकी मूर्तियोंके असंख्य मन्दिर महल बने हुए हैं । भारतवर्षके प्रत्येक महान राजा और धनीलोगोंका तीर्थकार्य सम्पन्न होनेके लिये ही यह सरोवरतटपर देवालयादि बनवाये गये हैं । उनमें जयपुरके प्रसिद्ध राजा मानसिंह, महाराज हुल्करकी भारत विख्यात रानी अहल्याबाई, भरतपुरके प्रसिद्ध जौहरीमल और मारवाडेश्वर विजयसिंहके बनवाये मन्दिर सबसे श्रेष्ठ और रमणीक हैं । समाधिमन्दिर भी बहुतसे हैं । जयआप्पा सेंधिया (जो नागरमें शोचनीयरूपसे मारे गये थे) और उनके भ्राता शान्ताजी (जिन्होंने नागर घेरनेके समय प्राण त्याग किये थे)इन दोनोंके स्मारक मन्दिर बहुत अच्छे बने हैं ।

इस तीर्थमें जितने देवालय विराजमान हैं, उनमें सृष्टिकर्त्ता ब्रह्माका मन्दिर सबसे बडा, श्रेष्ठ और अत्यन्त चित्ताकर्षक है । चार वर्ष हुए तब सेंधियाके मंत्री गोकुलपालने इस मन्दिरको बनवाया था । यद्यपि मन्दिर बनानेकी सब सामग्री इसी देशमें मिलती है और कारीगरोंने साधारण मजदूरी पाई थी, तथापि सुनते हैं कि इस मन्दिरके बनवानेमें १३००००) एक लाख तीस हजार रुपया व्यय हुआ था ।

इस पुष्कर तीर्थके विषयमें यहां बहुतसी जनश्रुति प्रचलित हैं । सुनते हैं कि जीवसृष्टि आरंभके पहिले सृष्टिकर्ता ब्रह्माने सम्पूर्ण देवताओंसे घिरकर इस पवित्र स्थान-

पर यज्ञ किया * और उसमें असुरोंका प्रवेश रोकनेके लिये एक परकोटा बनाकर रक्ष-क नियत कर दिये थे। इस कथनकी सत्यताके लिये यहांके लोग सरोवरके चारों ओर चार पर्वतके परकोटे निर्देश करते हैं। दक्षिणकी ओरके पर्वतका नाम रत्नागिरि है, उसकी चोटीपर सावित्री देवीका मन्दिर विराजमान है। उत्तरवाले पर्वतका नाम नी-लगिरि है। पश्चिमकी ओर सोनाचूडा नामका पर्वत है। असुरोंका यज्ञभूमिमें प्रवेश रोकनेके लिये महादेवके वाहन नन्दीकी एक सुवर्णमूर्ति उपत्यकाके मुंहपर स्थापित है; उत्तरके भागमें स्वयं श्रीकृष्णजी रक्षा करनेमें नियुक्त हैं।

सुनते हैं कि; ब्रह्माजीने प्रज्वलित अग्निकुण्डमें आहुति देनेके समय अपनी स्त्री सा-वित्रीको अन्तर्धान पाया; बिना स्त्रीके यज्ञ संपन्न नहीं हो सकता, इस कारण गूजरी स्त्रीको सावित्रीके आसनपर बैठा दिया गया। इसी अवसरमें सावित्री प्रगट हुई, अपने आसनपर अन्य स्त्रीको बैठा देख महाक्रोधके साथ रत्नगिरिपर जाकर अदृश्य हो गई। जिस स्थानसे सावित्री अंतर्द्धान हुई थीं अकस्मात् उस स्थानपर एक झरना उत्पन्न हो गया। वह इस समय "सावित्री झरना" इस नामसे विख्यात है। उस झरनेके निकट ही सावित्री देवीका मन्दिर विराजमान है। पुष्कर तीर्थ यह एक सामान्य दृश्य नहीं है।

पुष्कर सरोवरके पास जो बहुत ऊंचा रेतेका स्तूप दिखाई देता है, उसके विषयमें ऐसी जनश्रुति है कि, यज्ञस्थलमें देवदेव महादेव प्रज्वलित आहुति दान करके धतूरा पीनेके कारण अग्निके विना निवारण किये विह्वल चित्तसे अपने स्थानको चले गये। धीरे २ अग्नि भयंकर रूप धारण करके संसारके जलानेको उद्यत हुई। तब ब्रह्माजीने वहां आकर वालुकाद्वारा अग्निको बिलकुल बुझा दिया। इस कारणसे ही उपत्यकाके मूलमें वालुका पर्वत उत्पन्न हुआ है।

एक और जनश्रुति है कि, कलियुगमें मंदौरके एक राजा शिकार खेलते हुए वहां आ पहुंचे; इस सावित्री झरनेमें स्नान करनेसे उनका एक असाध्य रोग दूर हो गया। महाराजने जाते समय मार्गकी पहिचानके लिये अपनी पगडी एक वृक्षकी शाखामें बांध दी। वह अपने राज्यसे बहुतसे मनुष्योंको साथ लेकर यहां फिर आये और उनके द्वारा उक्त सरोवर खुदवाया। यहांके ब्राह्मण लोगोंने मुझसे कहा कि "हमारे पूर्वपुरुषोंने उक्त पुरीहर राजाके निकटसे पुष्करतीर्थकी भूप्राप्ति प्राप्तिके बहुतसे अनुशासनपत्र प्राप्त किये थे। किन्तु मैंने केवल एक ताम्रानुशासन लिपिका फार-सी भाषामें अनुवाद पाया। अनेक समयपर अनेक प्रान्तके अधीश्वरोंने देवलों और धर्मशालाओंके व्यय निर्वाहार्थ जितने अनुशासनपत्र दिये हैं मुझको उनमेंसे बहुतसे अनुशासनपत्रोंकी नकल मिली।

* टाड महोदय यद्यपि इस बातको जनश्रुति मानते है, किन्तु पद्मपुराणमें लिखा है कि "सत्ययुगके आरंभमें सृष्टिकर्ता ब्रह्माजीने देवगणोंके साथ इस तीर्थपर यज्ञ किया था।

अजमेरकी चौहानजातिके सुप्रसिद्ध महाराज विशालदेवका नाम इस पवित्र तीर्थमें आजतक प्रतिध्वनित हो रहा है। विशालदेवके प्रतिष्ठित आदिपुरुष अजपाल इस सरोवरके ठीक दक्षिण भागमें "नागपहाड" अर्थात् सर्पगिरिपर जिस स्थानमें निवास करते थे, ब्राह्मण उस स्थानको भी यात्रियोंको दिखाते हैं। वास्तवमें उस स्थानपर "अजपालका" ध्वंसावशिष्ट दुर्ग अबतक दिखाई देता है। यह आदिपुरुष बकरियोंके पालनेके कारण "अजपाल" नामसे विख्यात हुए थे। अजपाल इस तीर्थके एक संन्यासीको प्रतिदिन बकरीका दूध दिया करते थे; संन्यासीके सन्तुष्ट होनेपर उनके ही बरदानसे राज्येश्वर हुए थे। यह पुष्कर तीर्थ उनकी जन्मभूमि थी, इस कारण ममताके कारण उन्होंने सबसे श्रेष्ठ सर्पगिरिके ऊपर अभेद्य दुर्ग बनवाना आरम्भ किया था। किन्तु यह बडे ही आश्चर्य्यकी बात है कि दिनमें वह दुर्गका जितना हिस्सा बनवाते थे, रात होनेपर वह सब गिर पडता था; जब प्रति दिन यही दशा देखी तो उन्होंने पर्वतके दूसरी ओर एक नवीन राज्य स्थापन किया। इसका ही नाम अजमेर है।

अजमेरके स्थापक पालिजातीय चौहान आदिपुरुष अजपालसे आरम्भ करके महाबली विशालदेव तक जितने राजा हुए; उनमें माणिकराय एक बहुत प्रसिद्ध योद्धा गिने जाते हैं। "जिस समय वालीदकी सेना गङ्गातटवर्त्ती प्रदेशको जीतनेके लिये आई थी; उस समय अर्थात् हिजरीकी प्रथम शताब्दीमें माणिकराय विजातीय और विधर्मियोंके विरुद्ध बडी बीरताके साथ युद्ध करनेके पीछे स्वर्ग सिधारे थे।" महमूदके उत्तराधिकारी जिस समय फिर आर्य्य क्षेत्र भारतवर्षपर अधिकार करनेके लिये आये, चौहानराज विशालदेव उस समय भारतीय बहुतसे राजाओंके साथ सम्मिलित होकर नेताके पद पर नियुक्त हुए उन्होंने संहार मूर्ति धारण करके यवनोंको भारतवर्षसे मार भगाया था। वीर श्रेष्ठ विशालदेवकी कीर्तिमें एक लोहेका विजयस्तंभ दिल्लीमें गाडा गया वह कीर्तिस्तंभ अबतक उस स्थानमें विराजमान है। खोदित लिपिके द्वारा ज्ञात हुआ है कि विशाल देव चित्तौराधीश्वर रावल तेजसिंहके समयमें थे। यह तेजसिंह रजवाडेके सबसे प्रधान वीर समरसिंहके प्रपितामह थे। समरसिंह दिल्लीके चौहानसम्राटके बहनोई थे। उन्होंने पृथ्वीराजके साथ मिलकर यवनोंके विरुद्ध कग्गरके समरक्षेत्रमें जन्मभूमिस्वाधीनता और आर्य्य गौरवकी रक्षाके लिये युद्ध किया और १३००० तेरह हजार राजपूत सेना सहित बडी वीरताके साथ लडकर प्राण विसर्जन किये थे। विशालसिंह किस समयके राजा थे, इस विषयमें यह ज्ञात हुआ है कि प्रमार जातिके राजा उदयादित्य सन् १०९६ ई. में परलोक सिधारे उस समय उदयादित्यने विशालदेवके साथ मिलकर यवनोंके विरुद्ध युद्ध किया था, इस कारण विशालदेव ग्यारहवीं शताब्दीमें अजमेरमें राज्य करते थे।

"नागपहाड" वा सर्प गिरि एक दूसरी घटनाके द्वारा विख्यात है। जनश्रुति है कि, उज्जयनीके अधीश्वर भर्तृहरि जब राज्य छोडकर संन्यासी हुए तब वह सर्पगिरि पर निवास करके योग साधने लगे। उनके उस योगसाधन स्थानमें अब भी एक पत्थरकी वेदी बनी हुई है। यात्री लोग भक्तिके साथ उसकी पूजा करते हैं। जगद्विख्यात महाराज विक्रमादित्यके भ्राता भर्तृहरिका नाम भारतके अनेक प्रांतोंमें प्रतिध्वनित हो रहा है और उनके स्मरणार्थ अनेक दूर देशोंमें बहुतसे चिह्न देदीप्यमान हैं। सिन्धु नदीके

तटपर सिवयानका दुर्ग अलवरकी गुफा और आबू शिखर तथा काशीमें उनके योग साधनके स्थान अबतक विराजमान हैं। यदि ऐसा स्वीकार कर लिया जाय कि वास्तवमें वह भारतवर्षके इन सब दूर२ देशोंमें गये थे, तो उनको एक दीर्घजीवी प्रधान संन्यासी कहना उचित है। विक्रमादित्य और भर्तृहरि प्रमारजातिके थे। कवियोंकी कवितासे प्रगट है कि "सम्पूर्ण संसार प्रमार राजवंशाधीन" था। यह नागपहाड वा सर्पगिरि अत्यंत रमणीक और पवित्र दृश्ययुक्त है। सुनते हैं कि सदासे बहुतसे ऋषि, मुनि; यती, संन्यासी इस पर्वतगुफामें आश्रय लेकर योग साधन किया करते थे। ब्राह्मण उन सब पवित्र गुफाओंको यात्रियोंको भलीभांति दिखाते हैं। वह सम्पूर्ण आश्रम इस समय नयनानन्ददायक कानन और निर्झरमालासे सुशोभित हैं। जिन अगस्त्य मुनिने समुद्र पान किया था, एक झरना उनके नामका भी इस सर्पगिरिपर विद्यमान है।

२ री दिसम्बर।—पुष्करसे अजमेर तीन कोशकी दूरीपर है। हम पुष्कर छोडकर उपत्यकाकी ओर आगे बढे। शिखरपर चढनेके समय देखा कि, आकाशभेदी दोनों पर्वत पीतवर्ण आंवलेसे शोभित होकर खडे हैं। उस आंवलेके देखनेसे यह ज्ञात होता है कि, शिखर हमारी इस आरावलीका अंशमात्र है। हम जितना २ शिखरके ऊपर चढते जाते थे उपरोक्त बालुका शिखर उतना२ ही छोटा होता जाता था। एक छोटी नदी उपत्यकासे बहकर घूमती हुई चली गईहै। सहसा हमारे उत्तरकी ओरसे पूर्वप्रान्तके मार्गमें चरण रखते ही शिखरमालाके एक ओरसे "धारवलखैर" दृश्य दृष्टिगोचर हुआ यह दृश्य जैसा रमणीक है, वैसा ही विचित्र है हमारे निम्नस्थानमें स्थित उस कुञ्जकाननसे घिरा हुआ विशालदेवका खुदाया हुआ बडे सरोवरसे शोभित वह विस्तृत प्रान्त अनिर्वचनीय है। निकट ही एक बहुत ऊंचे पर्वतके ऊपर अजपालका वह विध्वंस दुर्ग भी नेत्रोंको बहुत आनन्द देता है। इस पर्वतपर बहुतसे चमत्कार और उत्तम मर्मर पत्थर देखे जाते हैं।

उपरोक्त दृश्योंको देखते हुए अन्तमें अजमेर नगरके भीतर पहुँचे। यद्यपि अजमेर नगर एक समय राजधानी था, किन्तु हमने इसको जैसा समृद्धिशाली देखनेकी आशा की थी, वैसा नहीं पाया। वर्त्तमान समयमें भारतके अन्यान्य प्राचीन प्रधान २ नगरोंके समान इस प्राचीन अजमेरमें भी दीनता और अशान्तिके चिह्न दिखाई देते हैं। संतोषका विषय है कि बृटिश गवर्नमेंटके अधीन और इस प्रदेशके सुपरिन्टेन्डेण्ट मि० विलडरकी अध्यक्षतामें अजमेरके एक अंशकी क्रमशः शोभा बढाई जाती है। अजमेरके सौदागरोंके लिये एक प्रधान बाजारका राजमार्ग बनाया जा रहा है, इसके समाप्त हो जानेपर उन लोगोंका विशेष उपकार होगा। रजवाडेके जितने सौदागर व्यापार सम्बन्धमें अजमेरमें रहते हैं वह सब मेरी अभ्यर्थनाके लिये आये। बृटिश शासन द्वारा निर्भय शान्ति भोग करने और वाणिज्यमें विशेष सुभीता मिलनेके कारण उन्होंने आन्तरिक हृदयसे आनन्द प्रगट किया था। भीलवारेकी उन्नतिके साथ २ अजमेरकी उन्नतिका भी सम्बन्ध है।

मिष्टर वालडरके साथ प्रातःकालके भोजनके समय मैंने इसी विषयका परामर्श किया था कि "अजमेर और भीलवारेकी सबसे श्रेष्ठ उन्नति किस प्रकारसे होना सम्भव है?।

इकतीसवाँ अध्याय ३१.

अजमेर;—प्राचीनजैनमन्दिर;—अजमेरदुर्ग;—विशालसरोवर;—अन्नसागर;—चौहान राजगणके स्मृतिचिह्न;—अजमेर परित्याग; धुनाई; उसका दुर्गप्रासाद; देवडा;—देवला;—बाणेरा;—राजाभीम;—उनका वंश;—उनके अधिकृत प्रदेश;—दुर्गप्रासादमें गमन;—भीलवारा;—वणिकोंके साथ साक्षात्;—नगरकी श्रीवृद्धि;—मंडल;—वहां का सरोवर;—आर्य्य—पुर,—दरबार;—पुरवर्तोका विभक्त प्रदेश;—पुरका प्राचीन इतिहास;—मेवाडके राजकुमार;—रशमि वा राश्मि;—मेवाडके किसानोंद्वारा सम्वर्द्धना;—सुहेलिया;—बुनाशनदी;—मैरता;—बारीश नदीका उत्पात्तिस्थान दर्शन;—उदयसागर;-उपत्यकामें प्रवेश;-उदयपुर; प्राचीनआहर;-राणाके पूर्व पुरुषोंका स्मारकमन्दिर; आहर सम्बन्धी जनश्रुति;-अग्निके उत्पातसे उसकी ध्वंसता प्राप्ति;-प्राचीन ध्वंसावशेष;-रानाके साथसाथ साक्षात्;—उदयपुरमें प्रत्यावर्त्तन ।

भारतवर्षमें अजमेर जिस प्रकार बहुत पुराना प्रदेश है, उसी प्रकार विदेशीय—विजातीय विधर्मी लोग स्वर्णपुष्प भारत वर्षकी छातीपर पापचरण रखते ही सबसे पहिले इस अजमेरके विजय करनेकी चेष्टा करते हैं। दुर्दान्त मुगल पठानोंने बहुत कालतक इस अजमेरमें अपना पैशाचिक लीलाभिनय दिखाया था । उन मुगल पठानोंके अत्याचार, उपद्रव लूटमारसे सौभाग्यवश हिंदुओंके प्राचीन कीर्तिचिह्न जो कुछ शेष रह गये थे अन्तमें यवनोंके द्वारा वह भी नष्ट हो गये । हिंदुओंके जितने विचित्र कारीगरीके साथ बने हुए चित्ताकर्षक स्थान थे, विजयी यवनोंने उन सबको मसजिद बना लिया । परन्तु सबका भक्षण करनेवाला काल इस समय उनकी मसजिदोंको ग्रास करनेमें प्रवृत्त हुआ है ।प्राचीन मंदिरोंको बनावटके द्वारा यह भलीभाँति प्रगट हो जाता है कि वह सब भिन्न २ दो जातियोंके द्वारा बने हैं अर्थात् कुछ भाग स्वाधीन हिंदुओंके द्वारा और कुछ भाग भारतविजेता मुसलमानोंके द्वारा बनाया गया है।

अजमेर दुर्गके पश्चिम प्रांतमें एक बहुत ही पुराना जैनमंदिर है। किसी कारणसे यवनोंने इसको नहीं गिराया है। इसका नाम "ढाई दिनका झौंपडा" अर्थात् जैनी शिल्पियोंने इंद्रजाल मंत्रकी शक्तिसे इसको ढाई दिनके भीतर बना दिया था इस कारण इसका नाम ढाई दिनका झौंपडा रक्खा गया है ऐसी जनश्रुति है। भारतके तीन प्रधान पवित्र स्थानोंमें जैनियोंने जैसे चित्ताकर्षक मंदिर बनवाये हैं, उनके द्वारा जैन शिल्पियोंकी योग्यता भलीभाँति प्रगट हो रही है। ज्ञात होता है कि यथेच्छ सामग्री मिल जानेके कारण यह मन्दिर बहुत शीघ्र तैयार हो गया होगा। मन्दिरके चारों ओर परकोटा है इस परकोटेका प्राचीनत्व और सरल गठन देखकर मेरा विश्वास है कि, प्रथम भारतविजेता गोरीका सुलतान वंश ही इसका निर्माता है। मन्दिरके उत्तरीय भागमें सिंहद्वार और सोपानावली (जीना) विद्यमान है। विशेष परीक्षाके द्वारा मैंने निश्चय कर लिया है कि मंदिर जैनियोंने बनाया है। प्रवेशद्वारके परकोटेकी दीवारपर अरबी अक्षरोंमें कुरानकी आयतें लिखी हैं। तोरणके ऊपर मैंने संस्कृतके अक्षर भी लिखे देखे, वह अरबी अक्षरोंके साथ मिश्रित और विकृत हो गये हैं मंदिरकी बनावट अतिश्रेष्ठ और मनोहर है। तोरण देखनेके पीछे जैनियोंके द्वारा बने हुए मूल मंदिरको देखनेके लिये मैं आगे बढा। मंदिर पुराने जैनमंदिरोंके समान बना है। मंदिरका भीतरी भाग खूब लम्बा चौडा है। तीन श्रेणियोंमें विभक्त रमणीक स्तम्भोंके ऊपर छत स्थापित है। सम्पूर्ण स्तंभ विशेष दर्शनीय और प्रशंसनीय हैं। कमरेके भीतर चालीस स्तम्भ विराजमान हैं, किंतु यह बडे आश्चर्यकी बात है कि सबके बेल बूटेका काम अलग २ है। मेरा विश्वास है कि, तुरकलोगोंने भारतवर्षसे इस गठन प्रणालीको सीखकर यूरोपमें प्रचार किया था।

सुनते हैं कि भारतविजेता रोशन अलीकी सेनाके सबसे पहिले इस अजमेरमें युद्धाग्नि प्रज्वलित करने पर चौहानराज मानिकरायने उस युद्धमें जीवनाहुति दान करी। यवन सेनादलने बेतालगढ नामक दुर्ग विजय कर लिया था। दुर्ग जैसा प्राचीन है वैसा ही दृढ है। अजपाल निर्मित शिखरके ऊपर बडा परकोटा और ऊँची चोटीका महल अबतक विचित्र दृश्य प्रगट कर रहा है। उस दुर्गकी चोटी पर इस समय बृटिशपताका फहरा रही है।

"विशालतालाब" नामका अजमेरमें एक बहुत बडा सरोवर है। इसकी परिधि चार कोश परिमित है। सुविख्यात विशालदेवने इस विराट जलाशयको बनवाया था। यह जिस प्रकार अजमेर उपत्यकाका परम शोभावर्द्धक है उसी प्रकार लूनी नदीके साथ इसका संयोग होनेसे यह एक विशेष द्रष्टव्य स्थल है। इसके उत्तरके भागमें "दौलतबाग" नामक मनोरम बाग है। दिल्लीपति जहांगीर जिस समय राजपूतोंकी पराजयके लिये आगे बढे उस समय यह बाग निर्म्माण कराया था। इस बागके जिस मर्म्मर महलमें इंग्लेण्डेश्वर प्रथम जार्जके द्वारा भेजे हुए राजदूत ग्रहण किये गये थे, वह महल इस समय ध्वस्तप्राय है और इंग्लेण्डेश्वरके द्वारा उपहारमें दी हुई सवारी-

पर चढकर दिल्ली-सम्राट् जिस मार्गमें वायु सेवन करते थे वह मार्ग भी इस समय लता औषधियोंसे घिरा हुआ है ।

उक्त विशालतलावक आधकोश पूर्वमें अन्नासागर नामका एक दूसरा बडा भारी सरोवर है । सुनते हैं कि विशालदेवके पोतेने उसको खुदवाकर अपने नामसे विख्यात किया था । विशालदेवके उक्त पौत्र बडे उदार और दाता थे । उन्होंने उस सागरके बीचकी द्वीपाकार भूमिके ऊपर और तटपर बडा भारी महल बनवाया था, उसके द्वारा एक समय उस सागरकी परम रमणीक शोभा थी, किन्तु दुर्दान्त पठान उसको विध्वस्त करके सब सामग्री अन्यत्र ले गये । इस सागरके निकटवर्ती शिखरके ऊपर "खाजाकुतुब" और अन्य कई मुसलमान पीरोंकी मसजिदें बनी हुई हैं ।

खेदका विषय है कि प्राचीन चौहान अधिराजोंके शासनमूलक इतिहास वा खोदित लिपियोंके संग्रह करनेमें सफलता न हुई । किन्तु सौभाग्यसे मैंने उन पुराने राजालोगोंके शासन समयके कई सिक्के प्राप्त कर लिये थे। वह सब बौद्ध और जैनियोंके प्राचीन वित्ररण संकलनमें विशेष सहायक हैं । सिक्केके एक ओर बहुत प्राचीन अक्षर लिखे हैं, तथा दूसरी ओर राजपूत जातिके पूजनीय अश्वकी मूर्ति अङ्कित है । ऐसा अनुमान होता है कि, अग्निकुल चौहानलोग इस चिह्नको उत्तर एशियासे लाये थे। इस देशकी प्राचीन गवेषणासे उस अनुमानके सत्य वा मिथ्या होनेका पता लग सकता है । पुष्कर तीर्थमें भी मैंने कई पुरानी मुद्रा पाई थी। हिन्दू जातिके प्रधान शत्रु सम्राट् औरंगजेबके भारत-सिंहासनारोहणसे पहिले यदि कोई पुरुष खोजके लिये इस देशमें आता तो निःसन्देह वह विशेष प्रयोजनीय अनेक प्राचीन स्मृतिचिह्न और द्रव्यादि आविष्कार करनेमें समर्थ होता। दुर्दान्त मुगलसम्राट् औरङ्गजेब एक पक्षपाती कट्टर मुसलमान था, इस कारण उसने हिन्दुओंके वह सब चिह्न बिलकुल लुप्त और ध्वस्त कर दिये । प्राचीन सिक्के भी औरङ्गजेबके द्वारा नष्ट हो गये । उनमेंसे बहुतसे सिक्के अब भी अनेक स्थानोंमें पृथ्वीके भीतर दबे हुए हैं । विशेष तत्त्वानुसंधानके समय वह अवश्य ही प्रगट हो जायँगे । मुगलसम्राटोंमें औरंगजेब वीर राजपूत जातिके प्रधान शत्रु थे, इस कारण उन्होंने राजपूतोंके वीरत्व विक्रम प्रताप प्रभुत्व समूल नष्ट करनेके लिये कोई यत्न चेष्टा और उद्योग शेष नहीं रक्खा था । किन्तु वह वीर राजपूतजाति उस साक्षात् नरपिशाच औरंगजेबके घृणित अत्याचार, उपद्रव और उत्पीडनके बदलेमें मुगलवंशका ध्वंस करके फिर उन्नतिके शिखरपर चढ गई है ।

५ वीं दिसम्बर ।–इस दिन बहुत सबेरे ही माणिकरायका दुर्गप्रासाद छोडकर उदयपुरमें लौटनेके लिये दक्षिण ओर घोडा हांक दिया । अजमेरमें निवास करनेके समय मुझे कोटेके अधीश्वरकी मृत्युका समाचार मिला था इस कारण शाहपुरा और बूंदी होकर कोटे जानेका विचार किया, किन्तु एक प्रबल कारणसे वह विचार छोड देना

पडा, अर्थात् यद्यपि मुझे मेवाड छोडे हुए केवल दो ही मास हुए थे, किन्तु मैंने मेवा-डके जिस राजनैतिक अनुष्ठानकी सहायता की थी, इस अल्पकालमें ही उसके छिन्न हो जानेका उपक्रम होनेसे राणाने शीघ्र ही मुझको राजधानीमें आनेके लिये आग्रहपूर्वक निवेदन पत्र भेजा। दो अन्य कारणोंसे भी मेरे कोटा जानेमें विघ्न हो गया। पहाडी माहीरजातिको वशवर्त्ती और भील रखनेके लिये जो दुर्ग प्रस्तुत हो रहा है, उसका देखना और भीलवाडाके कई सम्प्रदायके सौदागरोंके भीतरी झगडेकी मीमांसा करना इस समय बहुत आवश्यक समझा गया, कारण कि भीलवाडेमें वाणिज्यकार्य्य फिर भलीभाँति चलनेके लिये मैंने जो विशेष चेष्टा और यत्न किया था उस वणिक्‌मण्डलीके झगडे द्वारा उसके व्यर्थ होनेका उपक्रम हो गया।

मार्गमें दो ग्रामोंमें विश्राम लेनेके पीछे हम लोग बुनाई नामक स्थानमें पहुंचे। एक राठौर सामन्त इस बुनाईके अधीश्वर हैं। बुनाई प्रदेश अजमेरके अधीन है, इस कारण सामन्त बृटिशगवर्नमेंटको नियमित कर देनेमें बाध्य हैं। यद्यपि बृटिशगवर्नमेंट उनकी स्वामी है, और राठौराधीश्वरके साथ उनका कुछ राजनैतिक सम्बन्ध नहीं है, तथापि वह मारवाडेश्वरको विशेष मान्य समझते हैं। बुनाईके किसी सामन्तके परलोक सिधा-रनेपर अभिषेक समय मारवाडेश्वर तिलकदान करते हैं। इस समतल प्रदेशके बीचमें बुनाई दुर्गप्रासादका दृश्य परम रमणीय है। आरावलीके पूर्वप्रान्तमें जैसे सुंदर तृण उत्पन्न होते हैं, इस प्रदेशमें वह बहुतायतसे होते हैं। पहिले मंदरके पुरीहर राजवंशके एक सामन्त इस प्रदेशके स्वामी थे और अजमेरके चौहान राजको वह कर दिया करते थे। राठौर राजपूतके साथ यहांके आरंभके अधिवासियोंके मिलनेसे पुरीहर मीना नामक एक मिश्रजातिके बहुतसे लोग यहां उत्पन्न हुए थे।

६ दिसंबर।—इस दिन अजमेर और मेवाडके वर्त्तमान सीमान्तमें खाडी नदीके पास देवर नामक स्थानमें पहुंचे। अजमेरसे देवर वा देवडा दक्षिणपूर्वकी ओर वीस कोशकी दूरीपर है। सन् १८१८ ईसवीमें राजपूतानेके बीचमें यह प्रयोजनीय जिला और सीमा तथा मऊ प्रदेश सोंधियाके निकटसे बृटिशगवर्नमेंटको मिला। यह जिला बहुत बडा है अर्थात् इसके पूर्व प्रान्तमें बुनाश और पश्चिममें आरावलीके बीचमें चालीस कोश परिमित पृथ्वी होगी। देवरसे कृष्णगढ राज्यका सीमांत दिखाई देता है। अजमेरकी मृत्तिका वैसी उपजाऊ नहीं है, साधारण शस्य ही अधिक उपजते हैं। इस प्रदेशके सब स्थानोंमें युद्ध, अत्याचार और उपद्रवके चिह्न दृष्टिगोचर होते हैं।

७ दिसंबर।—देवल यह नगर बनेडा राजके अधीनस्थ एक सामंतके अधिकारमें है। जिस समय महाराष्ट्रियोंने राजपूतानेमें प्रबल अत्याचार किये थे, उस समय यह देवलके सामन्त उनकी सहायतासे बडे उद्धत हो उठे, और महाराष्ट्रियोंका अत्याचार निवृत्त होनेपर भी उन्होंने किसी प्रकार बनेडा पतिकी अधीनता स्वीकार नहीं करी। विशेष करके कोटेके वृद्ध अधिनायकके साथ उनका वैवाहिक संबन्ध था, इस

कारण वह कोटापतिकी सहायतासे और भी उद्धत हो गये। कोटेके अधीश्वरने उनकी सहायतामें बनेडाके दुर्गपर तक आक्रमण किया। बहुत काल तक आधीनता स्वीकार न करनेके कारण देवलाके सामन्त एक प्रकारसे स्वतंत्र बन बैठे। यद्यपि अन्तमें वह बीस अनुचरोंके साथ बनेडाराजकी सभामें निर्द्धारित काल तक रहनेके लिये सम्मत हुए, किन्तु बनेडाराजके अनगिन्त प्रमाणित पत्रों द्वारा प्रमाणित करनेपर भी उन्होंने देवलाके लिये निर्द्धारित कर देना किसी प्रकार भी स्वीकार नहीं किया। बनेडापतिने परम अनुग्रहके साथ यह भी कहा कि, अन्यान्य निष्कर भोगनेके लिये दे सकता हूं, परन्तु देवलाके निमित्त उपयुक्त निर्द्धारित कर देना ही होगा। उद्धत सामन्तने जब एक भी प्रस्तावको स्वीकार न किया, तो बनेडाधीश्वरने देवलके प्रत्यर्पण करनेकी आज्ञा दी। यथार्थ राजपूतवीरके समान सामन्तने उत्तर दिया कि, "जब तक मेरे शरीरपर मस्तक रहेगा, तबतक देवला प्रदेश पर बनेडापति अधिकार नहीं कर सकेंगे।" इस उत्तरसे बनेडाराजने महा क्रुद्ध होकर, शीघ्र ही देवला अधिकार करनेके लिये महाराष्ट्र सेनाका एक दल भेज दिया। देवलाके सामन्त जैसे वीर और साहसी थे, वैसे ही समरकुशल भी थे, उन्होंने बडे साहसके साथ कई मास तक बहुतसे महाराष्ट्रियोंके कराल गालसे देवलाकी रक्षा की थी। उनकी इस वीरताके कारण ही देवला "छोटा नागपुर" नामसे विख्यात हुआ। प्रबल महाराष्ट्र सेनासे जब देवलाका बचाना असंभव हो गया तो सामन्त अपनी शोचनीय दशासे विचलित होकर कोटेके वकीलद्वारा मेवाडेश्वर राणाको २०००० बीस हजार रुपये नजर देकर उनसे उक्त प्रदेशका स्वत्वाधिकार मांगा, किन्तु राणाने उसको स्वीकार नहीं किया, बनेडाराजने देवला अधिकार कर लिया। देवला मेवाडका सीमान्त प्रदेश है, इस कारण राणाने उसको अपने अधिकारमें रखना उचित समझकर बनेडाराजसे उसको ले लिया, और इसके बदलेमें दूसरे उपायसे बनेडाराजकी वृत्ति पूर्ण कर दी।

सुप्रसिद्ध महावीर राठौर जयमाल, जो मारवाड छोडकर मेवाड चले गये थे, उनहीके वंशधर लोग ३६० ग्रामोंसे पूर्ण विदनौर प्रदेशका स्वत्वोपभोग करते हैं। यह प्रदेश जैसा उपजाऊ है, वैसा ही समृद्धिशाली है। बिदनौरके प्रधान सामन्त राजधानीमें मुझसे मिले थे; किन्तु महावारेमें जाना असंभव समझ कर मैंने कप्तान वाघको अपना प्रतिनिधि बनाकर भेज दिया। प्रधान सामन्तने उनको बडे आदरके साथ बिदनौरमें ग्रहण करके संवर्द्धना करी। कप्तान वाघ राजपूत स्वभाव सिद्ध सरल हृदय वृद्ध सामन्तके साथ मृगया और फाग क्रीडामें सम्मिलित हुए थे। फाग उत्सवके समय राजपूतजातिके बिलकुल सामाजिक स्वाधीनता भोगनेके कारण सुनीति दूर हो जाती है। इस कारण उस समय सामन्त यथेच्छ क्रीडा विहार करते हैं।

८ दिसम्बर।--बनेडा। मेवाडकी सामन्तमण्डलीके अधिकृत प्रदेशोंमें बनेडाका दुर्गप्रासाद दृश्य सबसे मनोहर है, और बनेडाके अधिनायक भी मेवाडकी सामन्त श्रेणीमें

सबसे श्रेष्ठ हैं। बनेडापति केवल राजाकी उपाधि ही पाकर शान्त नहीं हैं, बरन राज-पदोचित सब सन्मान प्राप्त करते हैं, और ध्वजा पताका दण्ड आदि सब राजचिह्न व्यवहार करनेके अधिकारी हैं। वनेडाके वर्त्तमान स्वामीका नाम उनके स्वामीके ही नाम पर है। इनका नाम राजा भीम है और मेवाडेश्वरका नाम राणा भीम है। × अधीश्वर और सामन्त संबन्धके अतिरिक्त दोनों समरक्तवाही और सांसारिक सम्बन्ध-बंधनमें बँधे हुए हैं। दुर्भाग्यके कारण ही राजा भीम इस समय बनेडाके सिंहासनपर विराजमान हैं; नहीं तो यही यथा समयपर मेवाडके राजछत्रके नीचे बैठ सकते थे।पूर्व-पुरुषोंके द्वारा ही भाग्य परिवर्तित हो गया है। पाठकोंको स्मरण होगा कि मुगल सम्राट कुलकलङ्क औरंगजेबके परम साहसी शत्रु राणा राजसिंहके एक समय पर दो पुत्र उत्पन्न हुए थे। उनमें एकका नाम भीमसिंह और दूसरेका नाम जयसिंह था। भीमसिंह पिताकी आज्ञासे सदाके लिये मेवाड छोडकर मुगलोंकी सेनामें चले गये, और राजपूत सेनाके साथ कन्धारमें जाकर रहने लगे। एक दिन दौडते घोडेकी पीठसे वृक्षकी शाखा पकडनेके कारण घोडेसे गिरकर प्राण छोड दिये, इस बातको हम पीछे लिख चुके हैं। बनेडाके वर्त्तमान राजा उन्हीं भीमसिंहके वंशधर हैं। राजसिंहके पुत्र भीमके बेटे सुराजसिंह मुगल सम्राटके द्वारा विशेष सन्मानित और पुरस्कृत हुए थे। उन्होंने मुगलसेना सहित बीजापुर अधिकारके समय युद्धमें जीवन विसर्जन किया। सुराजके परलोक सिधारनेपर यवन सम्राटने बडा शोक किया और उनके शिशुपुत्रके लिये राणाके अधिकार भुक्त चार प्रदेश लेकर उनको उस प्रदेशके स्वामी रूपसे अभिषिक्त कर दिया था। सुनते हैं कि सुराजसिंह मुगल सम्राटके इतने प्रियपात्र बने थे कि, सम्राट्ने उनके सन्मानके लिये "सुलतान" की उपाधि दी थी। मुगलोंकी शासन शक्तिके नष्ट होजानेपर सुराजपुत्र सरदारसिंह अपने असली स्वामी राणाके साथ मिले। सरदार-सिंहके परलोक सिधारनेपर रायसिंह और उनके पीछे हमीरसिंह बनेडाके सिंहासनपर बैठे थे। हमारे मित्र राजा भीमसिंह हमीरके पुत्र हैं। राजा भीमसिंह मेरे आनेका समाचार सुनकर मुझको महलमें ले जानेके लिये एक कोशतक आगे आये और बडे आदरके साथ महलमें ले गये, उन्होंने मेरे सन्मान और सेवा शुश्रूषामें किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं की। सामन्त मण्डली अपने २ अधिकृत प्रदेशोंमें किस प्रकारसे रहती है? और सामन्त लोग किस प्रकार अपनी शक्तिको काममें लाते हैं? प्रदेशीय रीति नीति कैसी है? तीन घंटे तक राजा भीमसिंहके साथ इसी विषयमें बात चीत होती रही। राजा भीमसिंह पूर्ण शिक्षित और मिष्टभाषी हैं। उन्होंने आंतरिक सरलभावसे मेरे साथ बातचीत की, इस कारण मैं उनको विशेष प्रिय समझता हूं। मेवाडके राणावंशके साथ उनका बहुत समीपका संबंध होने तथा मुगल सम्राटकी आज्ञानुसार राजचिह्न धारण और ध्वजा पताका दण्डादि व्यवहारमें शक्ति संपन्न होनेके कारण मेवाडेश्वर उनके

× पाठकलोगोंको इस बातका स्मरण कराना विशेष आवश्यक नहीं है कि टाड साहब यह अपने समयकी बात कह रहे हैं इस समय मेवाड और बनेडा दोनों प्रदेशके स्वामी स्वतंत्र हैं।

प्रभुत्व, क्षमता और सन्मानका द्वेष करते हैं । राणा बनेडा राजके बिलकुल हस्तगत करनेके लिये ही, बनेडाके नीची श्रेणीके सामन्तोंके ऊपर बनेडा राजका प्रभुत्व न्यून करनेकी चेष्टा करने लगे; देवलाके सामन्तकी ओर राजाका आचरण ही उसका प्रत्यक्ष प्रमाण है । राणा भीमसिंहके साथ बनेडाधीश राजा भीमसिंहकी जो सामान्य शत्रुता थी, उसके दूर करनेमें मैं सफल मनोरथ हुआ । राजा भीमसिंहके केवल उदयपुर नगरमें ही नहीं--प्रासादके सन्मुख त्रिपालियाके बीचमें आनेपर सन्मान सूचक नगाडेकी ध्वनि होती है, तथा राणाके सामने बैठनेपर उनके सेवक उनका चँवर डुलाते हैं, यही राणाको असह्य हो गई थी । अन्तमें निश्चय हुआ कि, "मेवाडके प्रधान शत्रु मुगलसम्राट्ने बनेडाराजके ऊपर अनुग्रह करके जो चँवर और बाजे आदिकी व्यवस्था कर दी है, राणा अपने शत्रुद्वारा निर्द्धारित उस चँवरका दर्शन वा नगाडेकी ध्वनिका श्रवण करना न्यायानुसार नहीं चाहते, तब ऐसी दशामें बनेडाराजके उदयपुरमें आनेपर वह चँवर व्यवहार वा त्रिपालियाके बीचमें नगाडेके साथ प्रविष्ट नहीं हो सकेंगे, किन्तु अपने अधिकृत प्रदेशमें वह यथेच्छ व्यवहार कर सकेंगे ।" यह व्यवस्था ही न्यायसंगत थी और बुद्धिमान राजा भीमने भी अपने ज्ञाति भाई राणा भीमकी प्रसन्नताके लिये इसके स्वीकार करनेमें कुछ आपत्ति न की । यदि राजा भी इसको स्वीकार न करते तो राणा बल प्रकाश करनेको बाध्य होते ।

बनेडाप्रदेशकी वार्षिक आय ८०००० अस्सी हजार रुपयेकी है, इसका आधा भाग बनेडाराजको अधीन सरदारोंसे प्राप्त होता है । सरदारोंमें राठौर ही अधिक हैं । बनेडाके राजा भीम भीलवाडके वाणिज्य स्थानके व्यय निर्वाहार्थ कर दान करते हैं, और नियमित रूपसे उदयपुरमें रहकर राणाके राजकार्य्य साधनकी सहायता करते हैं । यह बनेडाप्रदेश अत्याचारी पहाडी लुटेरोंकी निवासभूमिके निकट होनेके कारण अत्याचारोंसे निःसार हो गया है । यहांकी भूमि बहुत उपजाऊ है; यथासमय कृषिकार्य्य द्वारा विशेष श्रीवृद्धिकी संभावना है ।

बनेडाप्रासादके प्रधान सभागृहके सामनेवाले बरामदेमें मनोहर गलीचे पर बैठे हुए राजाके सब अधीनस्थ सरदार मेरे आनेकी प्रतीक्षा कर रहे थे । मेरे पहुँचते ही सबने उठकर आदरके साथ ग्रहण किया, और मुझे राणाके पास ले जाकर सिंहासनके एक ओर बैठा दिया । राजा भीमने उस समय अपने प्रदेश सम्बन्धी तथा सांसारिक सब विषय एक २ करके मुझे सुना दिये, और मुझको भ्राता कह कर सब विषयोंमें परामर्श पूँछने लगे । मैंने इस सभास्थानमें अपने प्राचीन मित्र बिदनौरके सामन्तके साथ राजा भीमका जो वैवाहिक सम्बन्धी झगडा था उसको भी तय करा दिया । बनेडाके उत्तराधिकारीके साथ बिदनौर सामन्तकी पोतीका शुभ विवाह हुआ । राजा भीमके साथ उनके अधीनस्थ कई सरदारोंका जो भूमि सबन्धी झगडा था, मैं बहुतसे हिसाबपत्र लिखित आदेश सनद आदिको पढकर उस सबकी मीमांसा कर देनेको बाध्य हुआ । इनका यह झगडा बहुत कालसे चला आ रहा था, इस कारण इसकी मीमांसा परमावश्यक

समझी गई। मैं जिस पदपर नियुक्त था, केवल उस पदके कारण मुझको मध्यस्थ स्वीकार नहीं किया था, किन्तु राजा भीमके साथ विशेष मित्रता होनेके कारण उन्होंने मुझसे बहुत अनुरोध किया था मैं इस बातसे बहुत प्रसन्न हूँ कि साधारणकी सुख शान्ति वृद्धि भी हो गई, और विवाद भी निबट गया। बिदा होनेके समय मेरे मित्र राजा भीम उपहारकी सामग्री सजाकर लाये, मैंने उसको स्वीकार तो कर लिया परन्तु लिया नहीं किसी प्रकारका असन्तोष बिना उत्पन्न किये ऐसा किया जा सकता है। माननीय बिशप हेवर मेवाडकी यात्राके समय राजा भीमके जिस प्रकार सम्बर्द्धित और सन्मानित हुए थे मैं उस सब विषयको सुनकर बडा प्रसन्न हुआ।

बनेडाराज्य राठौरोंके अधिकृत प्रदेशोंके साथ मिला हुआ है और आरावलीके मूलमें ही संगावत और जगवत सम्प्रदायके प्रदेशोंके भी निकट ही है। मुगल, पठान और महाराष्ट्रगण इन सब प्रदेशोंमें बहुत काल तक अत्याचार उपद्रव करके अधिवासियों की जैसी शोचनीय दशा कर गये हैं दीर्घकालस्थायी शान्ति और यत्नके बिना उनकी उस दशाका परिवर्तन असम्भव है। मेरे मित्र राजा भीम डेरे तक मेरे साथ आये, डेरे पर पहुंचकर मैंने उपहारमें उनको पिस्तौल और एक दूरवीक्षण (दूरबीन) यन्त्र दिया। हम दोनों प्रीतिभाव और आन्तरिक दुःखसे परस्पर एक दूसरेको बिदा करनेके लिये बाध्य हुए।

९ दिसम्बर।-भीलवाडा। हमने भीलवाडेसे लगभग एक कोशकी दूरीपर डेरा डाला। इस समय नगर निवासियोंमें सांप्रदायिक मनोविवाद बढा हुआ होनेपर भी इस क्रमिक उत्कर्षता साधनमें कुछ विघ्न नहीं हुआ। अधिवासियोंके विवादसे मैं यहांतक अप्रसन्न हुआ कि, उनके विवादका कारण बिना दूर हुए मैंने नगर-के भीतर जाना स्वीकार न किया। झगडा करनेवाले दोनों सम्प्रदायोंके प्रतिनिधि जब मेरे डेरे पर आये तो मैंने उनको यथोचित उपदेश करके खूब लताडा। और नगरकी उन्नति रुक जानेसे मैंने शोक प्रकाशित किया। यद्यपि मैंने उनके इस मनोविवादको दूर करके मित्रता करा दी थी, परंतु जबतक नगरकी पूरी उन्नति न हुई, तब तक मैंने उनकी प्रतिज्ञाके ऊपर विश्वास नहीं किया। संतोषका विषय है कि उन्होंने उस प्रतिज्ञा के पालनेका भलीभाँति यत्न किया, और जिस समय बूंदीके राजा स्वर्ग सिधारे, उस समय बूंदी जाते समय मैंने अपनी पूर्व प्रतिज्ञाका पालन किया अर्थात् भीलवाडा देखने गया। बडे आडंबरके साथ मेरी अभ्यर्थना हुई। अधिवासियोंने मुझसे जैसा मंतव्य प्रकाश किया बिशप हेवर साहबसे भी वैसा ही मंतव्य प्रकाशित किया था। बिशप हेवर साहबने उनसे उस समय कहा था कि भीलवाडेको "टाडगंज" की उपाधि देना उचित है। किन्तु मेरे अनुरोधसे वह बात रद्द कर दी गई, क्यों कि मैंने उन लोगोंसे कहा कि "यदि तुम लोग इसका नाम टाडगंज रक्खोगे तो मैं भीलवाडेकी फिर किसी प्रकार सहायता न करूँगा" स्वयं राणाने बात चीतके समय इसका

"टाड साहबकी बस्ती" नाम लेकर कहा था; और यदि यह नाम रक्खा जाता तो वह बडे प्रसन्न होते, किन्तु मैंने उनके इस मनोरथको पूरा करना अन्याय समझा था।

१० दिसम्बर ।–यह स्थान पहिले एक समृद्धिशाली प्रदेशका शीर्षस्थानीय था, परन्तु इस समय विध्वंसप्राय है। इस रमणीक प्राकृतिक दृश्यपूर्ण स्थानको देखनेके लिये उदयपुरका मार्ग छोडकर मण्डलकी ओर चले । मण्डल प्रदेशसे प्रथम जो राजस्व संगृहीत हुआ था, उसके द्वारा जिस सरोवरके तटपर यह स्थापित है, उसका बाँध बन्धन कर दिया गया। उस सरोवरके जलसे खूब लंबे चौडे धान्यक्षेत्र कर्षणका विशेष सुभीता होता है। उक्त बाँधके ऊपर और सरोवरके तटपर जितने बडे २ वृक्ष उत्पन्न हुए थे, महाराष्ट्री और पठानोंने उन सब वृक्षोंको काटकर फेंक दिया और सरोवरके वक्षस्थ कृत्रिम द्वीपके ऊपर जो रमणीय सरोवर बना था अत्याचारियोंने उसको भी विध्वंस करा दिया। सुनते हैं कि अजमेरके सुप्रसिद्ध विशालदेवने गिह्लोटपतिको पराजय करनेके स्मरणमें उक्त द्वीपपर जो विजयस्तंभ निर्म्माण कराया था, लूट मार करनेवालोंने उसके सब चिह्न विलुप्त कर दिये। विध्वस्त मण्डल अब फिर उन्नतिकी ओर बढ रहा है; और इसकी शोचनीय दशा धीरे २ बदलती जाती है। विध्वंसावस्थामें जो लोग मण्डल छोडकर दूसरे स्थानोंमें भाग गये थे, उनमेंसे एक मनुष्यने फिर यहां आकर अपने पैतृक घरके ध्वंसस्तूप खोदे, खोदते २ उसको सुवर्ण और अलङ्कारोंसे भरा हुआ एक पात्र मिला। उसके किसी पूर्व पुरुषने उस पात्रको गाड दिया था । नियमके अनुसार यह राणाका हुआ. किन्तु राणाने उसको नहीं लिया। आज मैंने पानसाल और आर्य्या-प्रदेशोंमें होकर गमन किया। प्रथमोक्त प्रदेश आजतक शक्तावत् लोगोंके अधिकारमें हैं। आर्य्यप्रदेशके विषयमें जो शक्तावत और पुरावत लोगोंमें विवादकी अग्नि प्रज्वलित हुई, उसका विशेष विवरण अन्यत्र लिखा गया है। मेवाडमें यह आर्य्याका दुर्ग सबसे अधिक अभेद्य है, और इसके अधीनमें ५२००० बावन हजार बीघे भूमि निर्द्धारित है, इस कारण इसके लाभके लिये विवाद होना न्याय संगत है। यद्यपि आर्य प्रदेश शक्तावत् लोगोंके अधिकृत प्रदेशके बीचमें ही स्थित है, परन्तु शक्तावत् लोग कहते हैं कि उक्त प्रदेशमें पुरावतोंका कुछ अधिकार नहीं है ।

११ दिसंबर ।–पुर । मेवाडके बहुत प्राचीन नगरोंमें यह एक प्रधान है और यदि हम जनश्रुतिपर विश्वास करलें तो कह सकते हैं कि, यह नगर राजा विक्रमादित्यके शासनसे बहुत पुराना है । मण्डलसे पुरतक कोटीश्वरी नामकी जो नदी बहती है। हम लोग उसके पार होकर दरीबाके टीन और ताम्रखानके निकट होकर पुरावतोंके अ-धिकृत पीतवास नामके प्रदेशमें होते हुए यहाँ पहुंचे । पुर एक निःसंदेह पुराना नगर है। राणाके अधिकृत सब नगरोंमें यह एक प्रधान है। जिस साढेदश कोश परिमित स्थानमें मेवाडके राजकुमारगण वास करते हैं यह पुर ठीक उस भूमिके बीचमें स्थापित है आरावलीकी विच्छिन्न शिखरमाला, उत्तरमें बनेडा और दक्षिणमें गुरलाप्रदेश होती हुई भूखण्डमें चली गई है; राजा शिवधनसिंहका अधिकृत वा गोरप्रदेश इसके पश्चिममें

स्थित है। मेवाडके ठीक बीचवाले इस भूखण्डमें राज रक्तधारी राणा वंशके निवासके लिये इसे निर्द्धारित करके, राणालोगोंने उत्कृष्ट परिचय दिया है कारण कि यह राजकुमारगण स्वदेश वा विदेशके करदाता सामन्तोंके साथ किसी प्रकारका राजनैतिक संबंध नहीं रखते, इस निमित्त ही यह राजवंशधर विश्वासके साथ मेवाडकी दुर्ग रक्षाका भार प्राप्त और युद्धके समय राणाके प्रतिनिधि रूपसे सामंतोंकी सेनाके नेता बनकर गमन करते हैं। इनके बैठनेके लिये राणाकी सभामें स्वतन्त्र स्थान और आसन निर्दिष्ट हैं वह "बाबाका बल" नामसे चिह्नित, सामन्तोंके आसनोंसे पृथक् और राणाके सिंहासनके सामने ही स्थापित हैं। यह पुरमें बास करनेके कारण उसी नामसे विख्यात हैं; पहले यह राणा उदयसिंहके पच्चीस पुत्रोंमेंसे पुरुके वंशधर होनेके कारण उसी नामसे विख्यात थे। पुरके आधकोश पूर्वमें नीले पत्थरोंका एक पर्वत विराजमान है। उस पत्थरकी सिलेट बन सकती है; यदि कोई उद्योगी पुरुष चेष्टा करे तो इसके द्वारा बहुत लाभ उठा सकता है इस प्रकारके पत्थर अजमेर और कृष्णगढकी उत्तर सीमान्त तथा मारवाडमें पाये जाते हैं गुरला और गदरमालाके दो राजकुमार मेरे साथ मुलाकातके लिए आये थे। वह दोनों ही सन्मानेक योग्य हैं। उनका अधिकृत प्रदेश जैसा समृद्धिसम्पन्न है दुर्ग भी वैसा ही अभेद्य है। दूसरे दिन मैंने उन दोनोंके दुर्गको देखकर गमन किया।

१२ दिसम्बर।—बूनाश नदीके तट पर ही रशमि वा रश्मि स्थापित है। हम मेवाडकी सबसे अधिक उपजाऊ भूमिमें होते हुए वहुत दूरतक चले गये। यह प्रदेश खास राणाके अधिकारमें है, किसी सामन्तके अधिकारमें नहीं है। इस प्रदेशकी जैसी उन्नति दिखाई देती है, उसको श्रेष्ठ उन्नति कह सकते हैं। प्रत्येक ग्रामके समान इस रशमिकी उन्नति विशेष प्रीतिदायक है। आते समय मार्गमें किसानोंने आनन्दसंगीतसे मेरी अभ्यर्थना करी, प्रत्येक ग्राममें घुसते ही जयजयकारकी ध्वनि होती थी। पाटल और अन्यान्य नीची श्रेणीके ग्रामीण राजकर्म्मचारी निकटके अनेक ग्रामोंकी कृपकमण्डलीसे घिरकर अभिनन्दनमें नियुक्त हुए और ग्रामीण स्त्रियें भरे हुए पीतलके कलश शिरपर धरे ग्रामके प्रवेश मार्गपर दल बांधकर खडी हो गई। उनके मुखपर आधा २ घूंघट पडा था, उन्होंने प्राचीन रीतिके अनुसार मान्यपुरुषोंके समानसूचक गीत गाते २ मेरी अभ्यर्थना करी। इस सन्मानयुक्त अभ्यर्थनामें—कृतज्ञता प्रकाश करनेसे मेरे वृथा गौरवकी कांक्षा पूर्ण हुई, अथवा उसके बदलेमें मेवाडवासी स्त्री पुरुषोंके प्रति मेरे मनमें अकृत्रिम प्रीतिभाव उत्पन्न हुआ, इसका निर्णय पाठकगण स्वयं ही कर सकते हैं। वास्तवमें यह दृश्य अत्यन्त मनोहर है, मैं मेवाडके जिस २ स्थानमें गया, उसी २ स्थान में यह सामाजिक सम्बर्द्धनाकी रीति दृष्टिगोचर हुई। शिरके ऊपर जलभरा कलश धरे हुए स्त्रियोंने सब स्थानोंमें मेरी सम्बर्द्धना करी थी। इन स्त्रियोंमें प्रधानतः किसानोंकी स्त्रियें और दुहिता थीं; सामन्तोंके अधीनस्थ सरदारोंकी स्त्रियें भी बीच २ में सम्मिलित हुई थीं। किसानोंकी स्त्रियोंमें सर्वाङ्गसुन्दरी कोई नहीं थी, किन्तु साधारण-

तथा उनके नेत्र सुरमें और देहकी गठनप्रणाली मनोरम थी । रशमिनामक स्थानमें हमने बहुतसे प्राचीन स्मृतिचिह्न पाये थे ।

१६ दिसम्बर ।–मैरता । * हमने जिस स्थानसे भ्रमण आरंभ किया था, मेवाड, मारवाड देखनेके अन्तमें दो मास पीछे हम फिर उसी मैरतेमें आकर उपस्थित हुए और फिर "सुखमय उपत्यकामें" शीघ्र प्रविष्ट होसकनेके कारण सब ही आनन्दसागर में मग्न हो गये । दोआब अर्थात् बारीश और बुनाश नदीसिक्त प्रदेशमें होते हुए चार स्थानोंमें विश्राम करनेके पीछे आगे बढे । यह प्रदेश स्वाभाविक उपजाऊ है, पहले इस प्रदेशमें कई समृद्धिशाली नगर थे उनकी ऋद्धिशालीके कुछ लक्षण अबतक दिखाई देते हैं । सम्पूर्ण भारतवर्षमें ऐसी उपजाऊ भूमि दूसरी जगह नहीं है; यथोचित व्यय करनेपर खेतीसे उत्पन्न हुई वस्तुएं विशेष लाभ दे सकती हैं । किन्तु सबसे पहिले किसानोंको कई वर्ष तक विशेष उत्साह दान, राणाद्वारा न्यूनकर निर्द्धारण और इसी प्रकारसे बृटिशगवर्नमेंट द्वारा राणाका देयकर ह्रास करना सब प्रकारसे उचित है ।

भयङ्कर मरुक्षेत्रमें चलनेके समय हमारे बोझा ढोनेवाले ऊंटोंको सबसे अधिक कष्ट हुआ, यहां तक कि उनमेंसे आधे बिलकुल निकम्मे हो गये । "वाटीमें" लौटानेके कारण राणाने बडे आनन्दसे अभिनन्दन भेजा । उनका वह लेख जैसा मित्रतासूचक है वैसा ही मेरे दर्शनके लिये उनकी अधीरताका प्रकाशक है । किन्तु दुःखका विषय है कि, राणा ज्योतिषीसे पूँछनेपर उन्होंने कहा कि "अभी शुभ मुहूर्त नहीं है ।" इस कारण मैं राजधानीमें न जाकर उस शुभ दिनकी प्रतीक्षामें मैरता वा उपत्यकामें रहने को बाध्य हुआ । मैंने उक्त अवसरपर रेजिडेन्सि अर्थात् अपने रहनेका स्थान तुष शिखर के ऊपर निर्वाचन किया और वारी नदीमें मछली पकडकर समय विताने लगा ।

१९ दिसंबर ।–दो दिन तक अलसभावसे रहनेके पीछे हमलोग देवारिके द्वारमें होकर अर नामक स्थानकी ओर चले । क्योंकि राणाने यह कहला भेजा था कि "राजधानीसे मैं स्वयं उक्त स्थानमें आकर लेजाऊंगा ।" इस समाचारसे मुझको बडा आनंद हुआ, किन्तु मेरे साथ राणाका यह सन्मान अचिंतनीय है । पूर्व प्रांतसे निकटवर्ती होने पर उदयपुर राजधानीका दृश्य परम मनोहर दृष्टिगोचर होता है । राणा और युवराज का प्रासाद, ऊंचे २ मंदिर, बडे सामंतोंके ऊंचीचोटीवाली हर्म्यावलीके साथ निम्न तलस्थ राजधानीके चारों ओरके ऊंचे परकोटे और छिद्रयुक्त बुर्जोंका दृश्य देखनेपर चित्त मोहित हो जाता है। परकोटा चाहे बहुत ऊंचा न हो, परंतु बडी दूर तक चला गया है परकोटेके बहुत दृढ न होनेके कारण ही उसके पास छोटे २ दुर्ग श्रेणीबद्ध भावसे बने हुये हैं । जितने प्रधान २ मार्ग नगरकी ओर गये हैं, युद्धके समय यह छोटे २ दुर्ग उन सबकी रक्षा कर सकें इस प्रणालीसे बनाये गये हैं; ग्रीष्मकालमें एक २ सामंत एक २

* पाठकलोगोंको यह स्मरण कराना अनुचित न होगा कि "मैरता नामक ग्राम मेवाड़ और मारवाड दोनों राज्योंमें है"

दुर्ग के ऊपर वायु सेवनादि करते हैं । एक सलम्बूरके सामंत व्यवहार करते हैं । अरवा आहर नामक जिस स्थानमें हमने डेरा डारा था, वह उदयपुरके अधीश्वरोंका स्मारक क्षेत्ररूपसे पवित्र स्थान है । उदयपुर जबसे राजधानी बनाया गया है, तबसे जितने राणालोगोंके ऊपर राजमुकुट सुशोभित हुआ, उन सबका एक स्मारक मंदिर इस आहर नामक स्थानमें बना है उन सब मंदिरोंके भीतर मृतराणा लोगोंकी शवभस्म रक्खी है । इस पवित्र क्षेत्रमें केवल राणालोगोंकी ही नहीं, वरन जिन्होंने अधीनस्थ सामन्तोंके साथ जीवन मरणमें पृथक् होनेकी इच्छा नहीं की थी, उन सब सामंतोंके स्मारक मंदिर भी यहां बने हुए हैं, इस कारण यह स्थान मंदिरोंसे भर गया है, किन्तु राणालोगोंके मंदिर बहुत बडे २ हैं । उन स्मारक मंदिरोंमें यद्यपि सुप्रसिद्ध अमरसिंहका मंदिर सबसे श्रेष्ठ है; किन्तु राणा भीमसिंहके पितातक जितने राणा हुए हैं, उनके स्मारक मंदिर भी देखने योग्य हैं; इस श्रेणीके मंदिर जिस प्रकारसे बनने उचित हैं, ठीक उसी प्रकारसे बने हुए हैं । स्तंभावलीके ऊपर बने हुए गुंबज विशेष चित्ताकर्षक हैं । यह सब कंकरोली कानसे लाये हुए मर्म्मर पत्थरके बने हुए हैं । इनमें कई मंदिर ऐसे छोटे और सरलभावसे बने हैं कि बहुत पुराने ज्ञात होते हैं; इस कारण यह आहर पहिले एक पुराना नगर था, उपरोक्त मंदिर इस बातकी साक्षी दे रहे हैं । आहरकी भूमि अनगिन्त विध्वंस मंदिर और स्मारक स्तूपोंसे ढकी हुई है । सुनते हैं कि इस बडे नगरमें पहिले राणाके पूर्वपुरुष निवास करते थे । जनश्रुति है कि, आशादित्य इस आहर नगरके स्थापक हैं और आहर नगरकी उत्पत्तिके बहुतकाल पहिले इस स्थानमें विक्रमादित्यके एक पूर्वपुरुष अवन्ती वा उज्जयनी प्राप्त होनेसे पहिले निवास करते थे, उस समय इसका नाम " तम्बनगरी " था । तम्बनगरीके पीछे इसका नाम आनन्दपुर हुआ और उसके पीछे आहर हुआ । आहरसे ही गिह्लोटजाति आहारिया नामसे विख्यात हुई। नगरके पूर्वप्रान्तमें एक बडा दुर्गबांध विराजमान है, उसका नाम "धूलकोट" है । सुनते हैं कि पर्वतकी अग्निके उत्पातसे धूलद्वारा नगर बिलकुल नष्ट हो गया था । वास्तवमें जिस अग्निके उत्पातसे आहर नगर नष्ट हुआ, उससे ही उपत्यका सरोवर उत्पन्न हुआ, वा नहीं ? इस बातको केवल भूतत्त्वानुसंधायी विशेष अनुसंधानसे बता सकता है । नगरके मध्यसे प्रधान मार्ग इस बांधके ऊपर होकर चला गया है। उस बांधका जो जो स्थान खोदा गया है, उसी २ स्थानसे खोदित पाषाणखण्ड और मृतपात्रावली प्राप्त हुई थी, इस कारण पुराने पदक रुपये आदि मिलनेकी आशासे हमने भी उस बांधके खोदनेकी आज्ञा दी, सौभाग्यसे कई पुरानी मुद्रा मुझको भी मिलीं । उन सिक्कोंके एक ओर किसी पशुकी मूर्त्ति अङ्कित है; मेरे अनुमानमें वह सिंहकी मूर्त्ति है। अन्य कई सिक्कोंके ऊपर गधेकी मूर्ति बनी है। सुनते हैं कि विक्रमादित्यके भ्राता गन्धर्वसेन अपने सिक्केमें गधेकी मूर्ति अंकित करते थे, इस कारण यह सब उन्हींके प्रचलित किये हुए सिक्के हैं सिक्केमें गधेकी मूर्ति व्यवहारके कारण इस विषयमें एक बहुत बडा प्रवाद प्रचलित है ।

यह आहर एक बहुत प्राचीन और बहुत बडा नगर था, इस बातको सब लोग निस्संदेह होकर स्वीकार करेंगे । इस समय स्मारक मंदिर परिशोभित इस आहरके चारों ओर जो प्राचीन परकोटा विराजमान है, वह परकोटा भी उसी प्राचीन विध्वंस मंदिरावलीके उपकरणसे बनाया गया है । कई देवालय प्रधानतः जैनमंदिर आजतक ध्वंसावस्थामें देदीप्यमान हैं यह भी बहुत पुराने हैं । इन मंदिरोंमें जितनी मूर्तियें खुदी हैं, सब उलटी हैं अर्थात् मस्तक नीचे और पैर ऊपर है, महावीर और महादेव दोनोंकी मूर्तियें एकत्र रक्खी हैं और दोनों सफेद पत्थरपर खुदी हैं । दो खोदित लिपि भी मिलीं एक जैनभाषामें है और दूसरी किस भाषेमें है इसका अभी पता नहीं चला ।

हिन्दुकुलसूर्य्य राणाके साथ मेरी मुलाकातके लिये शुभ नक्षत्रका अभाव होनेसे फिर यही निर्द्धारित हुआ कि, मुझको अभी एक दिनतक इसी स्थानमें रहना होगा, किन्तु केवल मेरे ही ऊपर उस नक्षत्रकी शुभ दृष्टि न होने से मैं उसकी कुदृष्टिका फल भोगने के लिये सम्मत हुआ । नक्षत्रका प्रकोप न्यून करनेके लिये अन्तमें ज्योतिषीने यह निर्द्धारण किया कि, मुझको पूर्व द्वारके बदले दक्षिण द्वारसे नगरके भीतर प्रवेश करना चाहिये । इस दिन राणा भीमसिंहने अपने पुत्र; सम्पूर्ण सामन्त; मन्त्रीवर्ग; एक प्रकार से मानों समग्र नगरवासियोंके सहित आगे बढकर मुझसे मुलाकात करी । सबने ही शुद्धान्तःकरणसे हमलोगोंको महासन्मानके साथ सम्बर्द्धित किया हजारों मुखोंसे राम २ टाड साहब ! " हिन्दूप्रथानुसार सम्बर्द्धना सूचक वाक्य प्रतिध्वनित होने लगे । मैंने प्रत्येक सामन्तसे अलग २ कुशल प्रश्न किया । यह संमिलन–साक्षात्सन्दर्शन प्रीतिसंभाषण कृत्रिम नहीं है; बरन सुदृढ मित्रतामूलक है । राणाने मुझको दूसरे दिन महलमें आनेके लिये अनुरोध करके बिदा ली। वह सीधे मार्गसे बराबर महलकी ओर चले गये, हमलोग ग्रहकी कुदृष्टि निवृत्त करनेके लिये उक्त मार्गको छोडकर दक्षिणके सिंहद्वारसे होते हुए अपने निवासस्थान रामप्यारीके बागमें प्रविष्ट हुए ।"

राजपूत बांधव, उदारचित्त टाडमहोदयने अपना भ्रमण वृत्तांत जिस भावसे वर्णबद्ध किया है, हम उसका ज्योंका त्यों अनुवाद लिखते चले आ रहे हैं । वह जिस समय मेवाड, मारवाड और अजमेरमें गये थे, उस समयके साथ वर्त्तमान समयकी तुलना करने पर, निःसंदह अनेक स्थानोंकी दशा बदल गई है । किंतु उनके इस भ्रमणाविवरणको पढकर पाठक लोग बहुतसी विनाजानी सत्य घटनाओंको जान सकेंगे । इसमें रजवाडेके भूवृत्तका अधिकांश अंकित कर दिया गया, यह कहना बाहुल्य मात्र है ।

(कर्नल टाडके मारवाडसे लौटनेका विवरण समाप्त)

बत्तीसवां अध्याय ३२.

राजस्थानकी सामन्त शासनकी रीति।

उपक्रमणिका;-राजस्थानकी शासनविधि;-एशिया और यूरोपकी पुरातन शासनरीतिमें साधारण समानता;-राजपूत जातिकी श्रेष्ठवंशकी उत्पत्ति;-मारवाडके राठौरगण;-अम्बेरके कछवाहे;-मेवाडके सिसोदिया;-पदमर्यादाका श्रेणीविभाग;-राजसम्बन्धी अधिकार;-राजधन-संग्रहकी रीति;-वराड खरलकड।

परब्रह्म परमात्माकी कृपाकटाक्षसे उतने दिनके उपरान्त इस बडे इतिहासके प्रथमखण्डके शेषभागमें हम एक बडे कठिन विषयके प्रतिपादन करनेमें आगे बढते हैं वह कार्य इस ग्रंथकी प्राणप्रतिष्ठा है, इस इतने बडे इतिहासकी अपने जातिके भ्राता राजपूतोंके वंशकी प्राणप्रतिष्ठाकी आवश्यकता है, महागुणी, पंडित टाड साहबके अनुगामी होकर हम उनके ही अवलम्बित किये मूलमंत्रसे इस ग्रंथकी प्राणप्रतिष्ठा करना चाहते हैं, किसी एक प्राचीन राज्यकी किसी जगतविख्यात प्राचीन जातिकी, क्रमानुसार घटनायें,समरके वृत्तान्त,सामाजिक आचार,व्यवहार और धर्मानुष्ठान उस जातिके इतिहासके साधारण अंग प्रत्यंग प्राणप्रतिष्ठाके बिना प्राणहीन देहके समान हैं, इतिहासका जीवन क्या है ? प्रजाशासन रीतिका वृत्तान्त ही इतिहासका प्राण है, इस समय आर्योंके निवासस्थान राजस्थानकी हिन्दूवंशोत्पन्न राजपूतजातिके इतिहासकी वह प्राणप्रतिष्ठा ही अवशेष है, हमको आशा है कि पाठकगण इसको पढकर अवश्य लाभ उठावेंगे।

साधारण क्रमानुसार घटनायें-समरके वृत्तान्त, जातिकी वीरता, पराक्रम, गौरव, गुरुता, प्रताप और प्रभुताईको प्रगट करती है, समाजकी रीति, नीति, आचार, व्यवहार, सभ्यता और जातिके चरित्रका प्रकाश करती है। धर्मका अनुष्ठान तथा धर्मका शासन जातिकी पवित्रता और नीतिका विख्यात करनेवाला है, परंतु शासनकी रीति जातिसम्बंधी इतिहासके सर्व श्रेष्ठ गौरवका स्थान है, शासन नीति और राजनीति इनमें नाम मात्रका भेद है वास्तवमें एक हैं,जातिमें प्रधान संग्रहके योग्य, प्रथम शिक्षाके योग्य, तथा यत्नपूर्वक शिक्षाके योग्य क्या वस्तु है, राजनैतिक अधिकार, कौन जाति कहांतक सुखी है, कहांतक शांतिरूप भूषणसे भूषित है, इस बातको इतिहासमें केवल शासनकी रीति ही सिखाती है। शासनकी रीति ही जातिका और जाति संबंधी इतिहासका प्राण है, हम इसी बातकी प्राणप्रतिष्ठा करना

चाहते हैं, जिस इतिहासमें शासनकी रीति नहीं लिखी गई वह इतिहास निर्जीव है, इस बातको नीति और इतिहासके ज्ञाताओंने सर्वथा स्वीकार कर लिया है ।

विश्वविजयी ग्रेटबृटेन--सभ्यताके ऊंचे शृंगपर आरूढ हुई बृटिश जातिके हाथमें भारतवर्षकी सत्ताईस करोड प्रजाका भाग्य समर्पित है । किस उद्देशसे करुणामय परमेश्वरने अंग्रेज जातिके हाथमें इन करोडों आर्य संतानका शासन भार सौंपा है, केवल भविष्य इतिहास ही इस बातके प्रगट करनेमें समर्थ है। जिस महादेशकी प्रजा संख्या सत्ताईस करोड है, उस महादेशको आज बृटिश जाति सत्तरह सहस्र अंग्रेजी सेनाकी सहायतासे प्रबल प्रतापके साथ इच्छानुसारसे शासन करती है, यह क्या सांसारिक इतिहासका अभूतपूर्व उदाहरण नहीं है । बृटिश गवर्नमेन्टकी यह इच्छानुसार शासन-रीति क्या भारतवर्षके अनेक भाषा भाषी अनेक धर्मावलम्बी सत्ताईस करोड प्रजाकी राजनैतिक अवस्थाका सम्पूर्ण चित्रितजगत्के सन्मुख धारण नहीं करती,केवल यह इच्छा-नुसारकी शासनरीति ही भारतमें बृटिशशासनसे हमारे समाजके पुरुषोंके जातिके सत्त्वाधिकारोंको, भिन्नदेशवासी जातिके नेत्ररूपी दर्पणमें असली मूर्तिसे प्रतिबिम्बित कर देती है इस बातको कौन स्वीकार नहीं करैगा ?

एलफिनष्टोन, म्याकले, मिल मार्समेन, हण्टर लेथब्रज, हुईलर, मेरे म्यालिसन आदि पंडितमंडलीके लोग भारतके जिन सम्पूर्ण इतिहासमें बृटिश जातिके विक्रम, वीरत्व, प्रताप, प्रभुताईका बखान कर गये हैं । हम इस बातको अवश्य ही कहेंगे कि वह सम्पूर्ण इतिहास प्राणशून्य हैं। एक ओर उन सब इतिहासोंको रक्खो और दूसरी ओर लाल अक्षरोंमें लिखो कि " भारतमें बृटिश जातिका यथेच्छाचारशासन " नीतिज्ञ लोग निर्भय होकर कह देंगे कि यह सम्पूर्ण इतिहास धारावाहिक समदृष्टि मात्र है, प्रजाके राजनैतिक सत्त्वके प्रकाश विषयमें यह सब ही मौन हैं और अंतिम लेख पढ-नेके पीछे आँखोंमें उंगली देकर कह देंगे कि सत्ताईस करोड भारतसंतान बृटिश यथे-च्छाचार शासनके क्रीत दास हैं । इसी लिये हम कहते हैं कि शासन शैली ही प्रधान लक्ष्यका स्थल है ।

अनेक लोगोंके हृदयमें यही विश्वास है कि भारतमें बहुत कालसे यथेच्छाचार शासन प्रचलित होता आ रहा है मनुष्य जन्मका जो ईश्वरका दिया हुआ प्रधान व्यक्ति-गत स्वत्त्व है, स्वाधीनभावसे मतवादका प्रकाश, स्वाधीनभावसे चिन्ता और अपनी अवस्थानुसार सत्त्वका चलाना है । भारतवासी बहुतकालसे ही उस स्वत्त्वसें वंचित हैं बहुतोंका यही विचार है, किन्तु हम साहसके साथ कह सकते हैं कि वह विश्वास-वह विचार सर्वथा भ्रान्त है। भविष्य इतिहास मेघके समान गंभीर शब्दसे कीर्तन कर रहा है कि भारतमें प्रजाओंका व्यक्तिगत राजनैतिक स्वत्त्व अधिकताके साथ था और अब भी देशी राज्योंमें वह विद्यमान है । बृटिश भारतके यथेच्छाचार शासनके समान देशी शासनकी शक्ति प्रजाओंके राजनैतिक स्वत्त्वको लोप ही नहीं करती है बरन

इतिहास और भी दिखा रहा है कि पश्चिमी जगतने इस समय प्रजामें साधारण स्वतंत्र शासन प्रचलित करके यहांके निवासियोंके बीचमें जो राजनैतिक स्वत्त्व विभाग कर दिया है उसी पश्चिमी जगत्ने इस समय अवनतिके सागरमें मग्न हुए इस आर्य-क्षेत्र भारतवर्षसे ही शासन प्रणालीका मूलबीज संग्रह कर लिया है।

अब टाडमहोदयका अनुसरण किया जाता है। वह सबसे पहले लिखते हैं कि इन मेवाड मारवाड आदि राजपूत राज्योंमेंसे किसी एक राज्यमें पहले किसी समय दीवानी और फौजदारीकी कार्यविधि वा दंडविधिकी (कानूनी) पुस्तक प्रचलित थी अथवा नहीं, यह एक वडे संदेहका स्थल है? इस समय भी उन महाराजोंकी राजसभामें उस प्रकारकी कार्यविधि वा दंडविधिकी पुस्तक नहीं है, यह भी निश्चित है, किन्तु इन राजपूत राज्योंमें युद्धके नियमोंकी रीति ऐसे विस्तृत भावसे प्रचलित है कि समाजका सब प्रकारका उद्देश, शासन विभागका प्रत्येक अंग ही उसके द्वारा पूर्ण हो जाता है। पश्चिमी राज्य जिस समय ज्ञान शिक्षा सभ्यताके प्रथम प्रकाशमें प्रकाशित हुआ था, उस समय उस यूरोपकी सम्पूर्ण प्राचीन सामन्त शासनकी रीतिके साथ राजपूत राज्यकी सामन्त शासनकी प्रथा इतनी समान थी कि मैं दोनोंके बीचमें समानताका निर्द्धारण करता हूं। इस प्राचीन शासनरीतिके सम्बन्धकी लिखित पुस्तकका सर्वथा अभाव है, किन्तु बहुत कालतक दृढ मन लगाकर विचारनेपर मैंने इस विषयमें जहाँतक ठीक बात समझी है उसके द्वारा इस शैलीका मूल अंग चित्रांकित करनेमें मैं समर्थ हो सकता हूं, सबसे पहले कौतूहलके वश होकर और उसके पीछे साधारण रीतिसे उस कार्यके पूर्ण करनेवाले बहुत पुराने परम्परासे प्राप्त हुए शासन विधानकी प्रत्येक यथार्थ रीतियें भलीभाँतिसे जाननेके लिये मैंने विशेष चेष्टा करी। केवल यह शासनकी रीति ही नहीं, उसके विषयकी सब घटनाओंके जो सम्पूर्ण बाहरी दृश्य बहुत सामान्यरीतिसे निश्चित हो सकते हैं, अथवा जो घटनाएँ उक्त विस्तारवाली शासन प्रणालीके प्रत्येक अंगकी यथार्थ मूर्ति प्रगट कर देती हैं, मैंने उन सबके ऊपर भी विशेष दृष्टि दी थी। यद्यपि उस शासनरीतिके अंग प्रत्यंग इस समय प्रायः छिन्न भिन्न हो गये हैं तथापि वह सहस्रों मनुष्योंसे पूर्ण समाजके प्रत्येक उद्देश प्रत्येक कार्य साधनकी न्याय मूलक व्यवस्था निर्द्धारण कर देती है और यह भी निश्चयके साथ कहा जा सकता है कि एक समय यह शासन प्रणाली अपनी सर्वाङ्ग सम्पन्नमूर्ति धारण करनेमें समर्थ हुई थी।

टाडमहोदयकी ऊपर कही उक्तिके एक २ अंशका हम अवश्य ही समर्थन कर सकते हैं परंतु शिक्षा, ज्ञान, और सभ्यताकी जन्मभूमि भारतमें राजधर्म तथा श्रेष्ठ शासनकी शिक्षामें विशेष शिक्षित क्षत्रिय राजगणोंमें शासन प्रणालीके सम्बन्धीकी कोई लिखित (कानूनी) विधिकी व्यवस्था नहीं थी दीवानी वा फौजदारी दंडविधिका सर्वथा अभाव था, इस बातको हम सत्य नहीं मान सकते; मनुका राजधर्म और शासन विधान दृढताके साथ प्रमाणित कर रहा है कि समाज सृष्टिके पहले ही सर्वांग सम्पन्न विधा-

नकी व्यवस्था भारतमें प्रचलित हुई थी । महाभारतका राजधर्म पर्व इस बातकी पूरी साक्षी दे रहा है कि यहांकी शासनविधि सबसे बढी चढी थी, जिस समय भारतकी पवित्र भूमिपर बिजातीय विधर्मियोंके पैर नहीं रक्खे गये थे, उस समय आर्यजाति सर्वथा स्वाधीन भावसे राज्य करती थी, जिस समय ब्राह्मणमंडली राजसभामें पूर्ण प्रभुत्व करनेमें समर्थ थी उस समय निःसन्देह उन मनुके विधानके अनुसार नरपतिवृन्द प्रजा शासन करते थे । भारतके पतन तथा भिन्न धर्मके प्रभुत्व और समयके परिवर्तनके संग २ वह विधिव्यवस्था भी दूसरी मूर्तिमें बदल गई है । युगधर्मानुसार नवीन नवीन राजसृष्टिके साथ नवीन २ जातिकी सृष्टिके संग वह शासनशैली मनुकी निर्दिष्ट विधि व्यवस्थानुसार न होकर अनेक स्थानोंमें ही उनके प्रयोजनके अनुसार अपनी बनी बनाई व्यवस्थाके द्वारा सम्पन्न होनी आरंभ हो गई है,इसी कारणसे भारतके सर्वत्र सब राज्योंमें एक प्रकारका लिखा शासन विधान देखनेमें नहीं आता । राजपूत राज्यमें भी यही दशा हुई, इसी कारण इतिहासलेखक टाड महोदयो इस देशमें प्राचीनकालका लिखित शासनविधान ग्रंथके आकारमें प्राप्त नहीं हुआ और इस कारणसे ही वह यह लिख गये हैं कि, " राजपूत राज्योंमें किसी समय फौजदारी और दीवानी कार्यविधि वा दंडाविधिकी पुस्तक थी अथवा नहीं यही सन्देह है ?

कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि, "जिस समय बृटिशगवर्नमेंटके साथ रजवाडेके राजागण किसी प्रकारकी सम्बन्धशृंखलामें नहीं बँधे थे, जिस समय हमलोग राजपूतानेका भूवृत्तान्त और इतिहास समान्यरूपसे जानते थे, उस समयके बहुत काल पहलेसे रजवाडेकी शासनशैलीके सम्बन्धमें मेरे हृदयमें ऊपरवाली धारणाने स्थान पाया था । उस समय मैं प्रायः ही आनन्द प्राप्तिके लिये राजपूतोंमें भ्रमण करता था और उस कारणसे ही अपने भ्रमणका मुख्य उद्देश उक्त शासन प्रणालीका विवरण, भूवृत्ति और इतिहास संकलन करके मैं अपनी गवर्नमेंटके पास भेज देता था । मन्टेकुहूम, मिलर और गिबिन आदि प्रसिद्ध इतिहासवेत्तागण सामन्त शासन प्रणालीके विषयमें जितने अमूल्य ग्रंथ लिख गये हैं, मैंने उन सबके अवलम्बनसे पश्चिमी राज्यकी शासनप्रणालीके साथ राजपूतोंकी सामन्तशासन प्रणालीकी समानता निर्द्धारणके लिये अनेक प्रकारसे यथायोग्य तत्त्वानुसंधान और खोजमें सहायता पाई, किन्तु मैं उस समय संगृहीत विवरणके साथ केवल दोनों जातिकी शासनप्रणालीके साधारण सादृश्य निर्द्धारणमें प्रवृत्त हुआ था, उसके उपरान्त ही विख्यात इतिहासवेत्ता हालमका सर्वाङ्ग सम्पन्न इतिहास प्रकाशित हुआ । इस सामन्त शासन प्रणालीका मूलरहस्य जो इतने दिनतक छिपा हुआ था, उक्त इतिहासके द्वारा वह एक साथ प्रगट हो गया । मैंने उक्त इतिहास चित्रके साथ राजपूत समाजके सम्पूर्ण दृश्यमान लक्षण विशेष रूपसे तुलना करे हैं और इतने दिनतक जो सामन्त शासनशैली केवल यूरोप खंडके निवासियों द्वारा बनाई हुई विख्यात थी इस समय वह शासन शैली इस राजपूत जातिके द्वारा सबसे पहिले बनाई गई थी इस बातको दृढरूपसे प्रतिपादन कर सकनेपर

मुझको अवश्य ही बडा भारी आनन्द मिलेगा; मैं इस बातको भली भांति समझता हूं कि केवल अनुमानके ऊपर निर्भर करनेसे मनोरथ सफलकी संभावना नहीं हो सकती किंतु मैं विवाद रहित प्रमाणोंको छोडकर केवल अनुमान द्वारा यह सिद्ध नहीं करना चाहता कि इस सामन्त शासन प्रणालीकी बनानेवाली केवल राजपूत जाति ही है।

जो अर्द्ध जंगली जातियाँ किसी एक निर्द्धारित स्थानमें वास न करके सदा अनेक स्थानोंमें घूमती रहती हैं, उनके बीचमें शासनरीतिके जितने प्रधान २ लक्षण दिखाई देते हैं, उन सब लक्षणोंके साथ स्वाधीन सभ्यजातियोंकी शासनरीतिके प्राधान लक्षण सादृश्यरूपसे विराजमान हैं; समाजकी एक प्रकारकी अवस्थामें सब देशोंके मनुष्योंका अभाव ही एक प्रकारका है। बर्बर, तातार, संप्रदाय वा जर्मन जातिवालोंके विभिन्न वर्णकालिडोनियन शाखा, राजपूत जाति वा झारिजा भायाद अर्थात् संसारी भाई-चारावाली जाति इन सबके बीचमें ही एक प्रकारसे मूल शासन नीतिकी समानता देखी जाती है। यूरोपके प्रत्येक देशमें सामन्त शासनकी रीति प्रचलित थी और ककेसस पर्वतसे लेकर भारत महासागर तक उसी प्रकारसे वह शासनरीति कहीं पूर्ण और कहीं अपूर्ण अवस्थामें विराजमान है, यह बात हम विलक्षण रूपसे देखते हैं, किंतु सभ्यताके उस आदि जन्मके वृत्तांत तथा प्राचीन स्मृति चिह्नोंके फिर उद्धार कार्यमें मुझसे अधिक परिश्रमी और शिक्षित विभागकारी मनुष्य ही अधिक समर्थ हैं; यद्यपि समयके प्रभाव और विजातीय उत्पीडनके उपद्रवने मेवाडकी प्राचीन शासनरीतिको बिलकुल अंधकारसे ढक दिया है, तथापि उसका मूलरहस्य जान लेना दुःसाध्य नहीं है, उस लुप्तरूप शासनशैलीका पता लगाना परमावश्यक है।

धूर्त्त महाराष्ट्रियोंके लूट मार उपद्रवोंके साथ मुसलमानोंके अवर्णनीय अत्याचारोंने मिलकर उस शासनरीतिको बिलकुल अंधकारमें डाल दिया है। राजपूत जातिके प्राचीन नेता शीघ्र २ इस संसारको छोड रहे हैं, जातित्वभाव शिथिल हो रहा है तथा जातिके विधान और रीतियाँ सब इस समय विध्वंस सी हैं। जाति फिर पूर्वावस्थाको प्राप्त हो सकती है, राजपूतोंका शारीरिक बल फिर प्रबल हो सकता है. किन्तु समाजनीति फिर नये प्रकारसे गठित करना उचित है, रजवाडेकी इस समय जैसी विशृं-खला अवस्था है उससे कोई तत्त्ववेत्ता सहसा शासनरीतिके किसी एक प्रयोजनवाले लक्षणद्वारा आकर्षित नहीं हो सकता। मैं इस बातको स्वीकार करता हूं, वह तत्त्वा-नुसंधान करनेवाला देखेगा कि हमारा शासन विधान जैसा शृंखलाबद्ध है, राजपूतोंके शासनकी रीति उसके विपरीत है। वह बाहरी लक्षण देखकर कह उठेगा कि राजपूतोंकी शासनशैलीके बीचमें जितने लक्षण विराजमान हैं, वह सब ही आकस्मिक कारणोंसे प्रगट हैं। कोई भी शृंखलाबद्ध नहीं है, किसी निर्द्धारित मूलनीतिपर बने दिखाई नहीं देते, यह शासन प्रणाली अपूर्ण अंगवाला एक यंत्र है।

किन्तु यह सिद्धान्त विशेष तत्त्वानुसंधानका फल नहीं है, इस मन्तव्यको कभी एक साथ संकलित हुआ समझ सकते हैं। रजवाडेकी वर्तमान शासनशैलीके प्रत्येक

दीखनेवाले लक्षणपर तीक्ष्णदृष्टि देनेसे यद्यपि वह पहले साधारण विदित होंगे किन्तु एक समय इस रजवाडेकी शासनशैली सर्वांगसम्पन्न थी, विजातियोंके द्वारा आक्रांत होकर भी शासनरीतिने अटल भाव धारण किया था, सामन्तोंकी शासनशैलीका जन्म इसी रजवाडेमें हुआ था इन सब बातोंके प्रगट करनेमें वह दीखनेवाले सम्पूर्ण लक्षण पूर्ण सहायताके साधक हैं। जो सामन्त शासनशैलीरूप बीज पहले यूरोपमें गिरा था, वह इस दूरवर्ती देश अर्थात् पश्चिमी राज्यमें जो देश सर्वथा अपरिचित था, जिस देशके आचार व्यवहारादि विजेतालोगोंके आचार व्यवहारादिके द्वारा ढक रहे हैं, ऐसे इस रजवाडेसे ही वह सामन्तोंकी शासनप्रणालीका बीज यूरोपमें गया था अथवा नहीं ? हम इस राजपूतानेमें उसका खोज कर सकते हैं; पूर्वी राज्यमें हमारे जितने स्वजातीय (यूरोपियन) वास करते हैं; वह ऐशियाकी किसी रीति, किसी व्यवस्था अथवा किसी पदार्थके ऊपर घृणित दृष्टि डालते हैं; परन्तु एक ऐसा समय था कि जिस समय इस घृणित दृष्टिके विपरीत दृश्य दिखाई देता था ।

कर्नैल टाडकी यह उक्ति अभ्रान्त और सत्यपूर्ण है, इसके द्वारा उनके उदार हृदयका निःसन्देह परिचय मिलता है । अब यह देखना उचित है कि वह इस विषम रहस्यको किस प्रकारसे प्रगट कर गये हैं ।

यूरोपखण्डके मध्य समयके निवासियोंमें जैसा आचार व्यवहार संस्कार और शासनरीति प्रचलित थी, उन सबके साथ रजवाडेके आचार व्यवहार आदिकी विचित्र समानताका उल्लेख करनेपर भी हमको ऐसे बडे विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है कि एक प्रकारकी शासनशैलीका परस्पर एक दूसरेने अनुकरण कर लिया है । वास्तवमें दोनों महादेशके प्रयोजनके अनुसार ही नृपतिवृन्दके साथ प्रजाओंके सांसारिक पितापुत्रके सम्बन्ध बंधनकी बतानेवाली रीतिसे इस अभिन्न शासनरीतिकी सृष्टि हुई है इसमें संदेह नहीं ।

विख्यात इतिहासवेत्ता गिबिन साहबने हमारे पूर्व पुरुषोंकी शासनरीतिको असभ्यतापूर्ण और घटना क्रमसे रचित हुआ लिखा है, मैं समयपर उनके इस मतका समर्थन करनेको तैयार हूं ।

ऊपर इस बातको लिख आये हैं कि राजपूतानेके सम्पूर्ण राज्योंमें भी उसी प्रकार यह सामन्तोंके शासनकी रीति एक आदि मूल सम्बन्धवाले नरपति समूहोंके साथ निवासियोंके पैतृक सम्बन्धवाले कारणसे ही उत्पन्न हुई है; रजवाडेके अधिकांश सामंत सबसे ऊंची श्रेणीके सोलह सामन्तोंमेंसे एक चरसेके परिमाणवाली × भूमिका अधि-

× चरस शब्दका अर्थ चमडा है । किन्तु जितना खेत केवल एक हलके द्वारा जोता जा सके, वा केवल एक मनुष्य जिस खेतमें जलसिंचन करसके उतने क्षेत्र खंडका नाम भी चरसा है ।

कारी मनुष्य भी अपना अधीश्वरके साथ समान रक्तबन्धनको विख्यात कर देता है।*
स्वाभाविक बीज अनेक देशोंकी चाहें किसी भूमिमें क्यों न बोया जाय, परन्तु ऊपर श्रेष्ठ मृत्तिकाके बिना वृक्ष कभी भी तेजवाला और बलवान नहीं हो सकता। इंग्लैंड-में यह जो सामन्त शासन प्रणालीका बीज बोया जाकर; समयपर शाखा प्रशाखा और नवीन २ कोंपलोंसे शोभायमान हुआ था, केवल मरमेन जातिका यत्न, चेष्टा और उद्योग ही उसका मूल कारण है। मरमेनलोग वह शासनप्रणालीका बीज स्कन्दनेरिया-से लाये थे। वर्दीन और साकासिन तथा उससे पूर्ववर्ती मनुष्योंके द्वारा वह शासन प्रणालीका बीज मध्य एशियासे उस स्कन्दनेरियामें गया होगा, रिचर्डसन्का अनुमान है कि तातारसे यह स्कन्दनेरियामें प्रचलित हुआ, यद्यपि हमको अनुमान प्रमाणका ही अवलम्बन नहीं करना चाहिये, किन्तु जहां २ आलोचना योग्य विषय प्राचीन जर्म्मन जाति फ्रेंच और वागथिक जातियोंमें परस्परके आचार व्यवहारकी समानता दिखाई देगी, उसी उसी स्थानमें इसको लिखेंगे। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि पूर्व जगत् से पश्चिमी जगत्में वहांके निवासियोंके साथ २ ज्ञान और शिक्षाका स्रोत भी प्रवाहित हुआ था, तथा उच्च एशियासे ही मशीकाट्टि और कोम्ब्रिक लोम्बर्ड जातिने बाहर निकल कर स्कन्दनेरिया फ्रिसलैण्ड और इटलीमें पूर्वरीति फैलाई थी।

मध्य समयकी सामन्त शासन रीतिके विख्यात इतिहासलेखक हालम साहब कहते हैं कि "मूलकारणसे जागीरदानकी रीति वा सामन्त शासन प्रणाली बनाई गई है; और अनेक देशोंके इतिहासोंमें उस रीतिका अनुरूप किसी प्रणालीसे विद्यमान है वा नहीं इसकी खोज लेनेके लिये बहुतसे लोग उत्कंठित देखे जाते हैं; यद्यपि जगत्के भिन्न २ देशोंकी रीतिकी समानताके प्रगट करनेका बडा प्रयोजन है; किन्तु तर्कनाके साथ उस ही रीतिकी समानताका देखना उचित है, क्योंकिं अनेक स्थलोंपर सूक्ष्मदृष्टि डालनेपर कुछ भी सादृश्य नहीं दीखता, सामन्त शासन रीतिकी कुछ समानता सहजमें ही दिखाई गई, रोमके साधारण तंत्र शासनकालमें उच्च अधिकारी रक्षकोंके साथ नीची कोटिके निवा-सियोंका जैसा सम्बन्ध विराजमान था, और वर्वर तथा वीरगण जिस प्रकार आत्मरक्षा और सीमान्त रक्षाके लिये सीमान्तकी भूमि जागीरके निज स्वत्वसे भोग करते थे, इस सामंत शासन प्रणालीके साथ उसकी कुछ समानता देखी जाती है। किंतु वह लोग किसी व्यक्ति विशेषका अनुसरण स्वीकार न करके राज्यके लिये उसके करनेमें बाध्य होते थे। हिन्दुस्थानकी जिमीदार मण्डली और तुरस्कके टिमारियटोंमें प्रचलित भूवृत्तिकी रीतिमें भी एक प्रकारकी समानता देदीप्यमान है। हाइलेंडर और आइरिस जातिकी नाना सम्प्रदाय अपने २ ऊपरवाले सामन्तोंके अधीनमें युद्धके लिये जाते हैं, किन्तु उनका वह जाना स्वेच्छानुसार नहीं है, उस सामन्त मण्डलीके साथ वह लोग समानरक्त सम्बन्धका बंधन कल्पना करके ही उस प्रकारसे युद्धमें जानेकी इच्छा करते हैं।

* राजपूतजाति राजाको "बाप्पाजी" नाम लेकर व्यवहार करती है। राजकुमारगण सर्वसाधा-रणमें "बावा" अर्थात् बालक कहे जाते हैं।

इसके अनन्तर इतिहासवेत्ता टाड लिखते हैं कि "मैंने इस स्थलमें इस उद्देशसे उस मन्तव्यको उद्धृत कर दिया है, कि यद्यपि मैं राजपूत शासनरीतिको केवल विशुद्ध समान रक्तसम्बन्धके बन्धनसे उत्पन्न हुई सिद्ध करनेका यत्न कर रहा हूं, तौ भी पूर्वोक्त समानतारूप संकट एशिया मेरे नेत्रोंके सामने उपस्थित होता है। किंतु उसके साथ प्रकाशित किये दानपत्र सनदोंकी नकलें और जनश्रुतियाँ मेरे मंतव्योंकी दृढता समर्थन करती हैं, हिंदुस्तानेक उत्तर प्रांतकी रहनेवाली जातियोंमें यह रीति प्रचलित थी, मैं इस बातके समर्थन करनेकी आशा करता हूं। उस प्रदेशसे ही यह प्रथा रजवाडेमें प्रचलित हुई और सातवीं शताब्दी तक मुगल पठानोंके अकथनीय अत्याचार और उपद्रवोंसे राजपूत जातिको विध्वस्त करनेपर भी उस नियमके मूल लक्षण आजतक प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं, राजपूतानेके जिस २ राज्यमें विजातियोंके आक्रमणसे थोडासा विध्वस्त हुआ है उस २ राज्यमें वह प्राचीन शासनप्रणाली उसी प्रकारसे अबतक वर्तमान है। जो कुछ भी हो विशेषकर केवल मेवाडके इतिहास और शासननीतिके द्वारा ही मैं सामंतशासनरीतिका सबसे प्राचीनताका उदाहरण दिखाना चाहता हूं क्योंकि विजातीय आक्रमणसे मेवाडकी भीतरी राजनीति और शासननीतिमें सामान्य रीतिसे ही भेद पडा है। यहां तक कि जिस समय दिल्लीके मुगलसम्राट् की शासनशक्ति सर्वथा निर्जीव हो गई उस समयमें भी मेवाडकी शासन प्रणालीमें कुछ भेद नहीं पडा।

यूरोपखंडमें जिस प्रकार बहुत समयतक परम्परा प्राप्त विधानके अनुसार भूमिके ऊपर स्वत्वाधिकार निर्द्धारित होता रहा उसी प्रकार रजवाडेमें भी वह परम्पराका विधान एक समय भूमिके स्वत्वाधिकारादिको निर्द्धारण कर देता था, समयके परिवर्तनके साथ उन परम्पराके सुनेहुए विधान और प्रवाद वाक्योंने एकत्रित होकर अपनी पूर्ण मूर्ति धारण करी थी; ऐसा लेख देखा जाता है कि मेवाडके राणावंशके कई राजालोगोंने अपने राज्यके लिये कई नियम निर्द्धारित किये थे, किन्तु उन प्रत्येक विधानके नियुक्त होनेके पहले जिस कारणसे वह विधान रचे गये थे उनके कारण राजाकी आज्ञाके पत्र, दानपत्र और परम्परा श्रुत प्रवाद वाक्योंमें बँधकर इस समय चारों ओर विच्छिन्न हो गये हैं, पाषाणोंकी स्तंभावलीकी दीवारपर आजतक वह सब विधान और राजाकी आज्ञा खुदी हुई दिखाई देती है, उन सबके एकत्रित करनेपर यह अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि वह विधानावली समाजकी बाल्यावस्थाके लिये यथेष्ट है। उन सबके इकट्ठा करनेके पहले वह विषय निर्द्धारित करके पीछे वह स्तंभावली स्थापित की जाती थी; जिन सात शताब्दीतक निरंतर विजातीय शत्रुओंके द्वारा यह राजपूत राज्य आक्रांत और नष्ट होते रहे, उस घोरतर दुर्दिनमें जातिकी शोचनीय अवस्थामें भी रजवाडेने अनेक गंभीर ज्ञानी और नरपति उत्पन्न किये थे; राणा संग और उनके शत्रु सुलतान बाबरके समान दोनों पौत्र अकबर और राणा प्रतापने भी बडी प्रसिद्धि प्राप्त की थी, जहांगीरके वैरी प्रतापके पुत्र अमरसिंहकी वीरता और पराक्रम कैसा असाधारण था इसको कौन नहीं जानता ? ।

राजपूत भूपालवंशकी ऐश्वर्य प्रकाशक जितनी विधानलिपियां लिखी गईं और जन-श्रुतिद्वारा रचित होती चली आई हैं, उन सबके द्वारा विलक्षणतासे जाना जा सकता है कि वह राजपूत नरपतिगण कैसे नीतिकुशल शासनकर्त्ताओंमें समर कुशल वीर थे, तथा उच्चश्रेणीकी मर्यादाका निर्णय, वणिक और कृषक मंडलोंके सम्बन्धकी रीतिके निर्द्धारणमें कैसी अच्छी योग्यता दिखा गये हैं, उन पाषाण स्तंभोंकी खोदित लिपियोंके पाठ करनेसे यह भी विदित हो जाता है कि राजा लोग सामंत शासनके संबन्धवाली आमदनी और खर्चकी व्यवस्था भी कैसे अच्छे प्रबंधके साथ कल्पना कर गये हैं, एक चेंटिया वाणिज्यके सिवाय कर ग्रहणमें निषेध, वाणिज्यपर महसूलके नियम, पवित्र और पर्वके दिन नौकरी करनेवालोंकी छुट्टियां, मुक्तिदान, अनुग्रह-वाणिज्यकी प्रधान सनदें, शांति और श्रेष्ठताकी रक्षाके लिये प्रजाके बीचमें समानरूपसे पञ्चायत स्थापन और प्रजाकी स्वतंत्रतामें रहनेकी विधि जिसके द्वारा वह राजनीतिके कार्यमें सर्वसा-धारणका मत जाननेमें समर्थ हो, इन सब विषयोंकी व्यवस्था भलीभाँति कर दी थी, शासनप्रणालीके सम्बन्धवाले नियम व्यवस्थाकी रीतियां जब मुझको राज्यप्रासादमें नहीं मिलीं तो मैंने दूसरे प्राचीन चिह्न, खोदित लिपि, अनुशासनपत्र और पाषाणस्तंभोंपर खोदे हुए आदेश तथा पत्रावलीके तत्त्वानुसंधानसे उनको प्राप्त किया; यद्यपि अत्याचारी मुसलमानोंने सभ्यताके स्मृतिचिह्नोंमेंसे बहुतसे विध्वंस कर दिये हैं,तथापि अब भी बहु-तसे चिह्न ज्योंके त्यों बने हुए हैं, वह सब चिह्न विशेष कौतूहलके दिखानेवाले हैं। रज-वाडेकी वाणिज्य व्यवसायके एक चेंटिया और वाणिज्य कार्यमें किसी प्रकारका भी व्याघात नहीं हो सकता था, उन सब विधानोंके द्वारा यह भी दृढ रूपसे प्रमाणित होता है, यह सब खोदे हुए अनुशासन पत्र स्तंभोंका निर्माण बहुत पुराने समयसे ही प्रच-लित होता आ रहा है स्तंभावलीका नाम शिवरा अर्थात् शाल है । उन सब खोदे हुए आदेश विधान वा व्यवस्थामें सबसे पहले सूर्य और चंद्रको साक्षी देकर मूल विषय लिखनेके अन्तमें लिखा है कि जो पुरुष इस विधान, व्यवस्था वा आज्ञाको अमान्य करेगा उसको बडा भारी दंड वा नरक भोग करना होगा । मैंने बारह और चौदह सौ वर्षोंसे पहलेकी लिखी हुई ऐतिहासिक स्मारक लिपियां पाई हैं, किन्तु जो भूवृत्तिदान वा किसी प्रकारकी राजपुरस्कार दान सम्बन्धी खोदी हुई लिपियां पाई हैं, उनमें एक हजार वर्षोंसे पहलेकी कोई नहीं है।यद्यपि सर्व संहारी काल भी अनेक स्मृतिचिह्न और खोदी हुई लिपि-योंको ग्रास कर गया है,किन्तु उसकी अपेक्षा मनुष्योंके द्वारा ही अधिक नष्ट हुई हैं। गत तीन शताब्दीके भीतर उस प्रकारकी अनुशासन रीति और खोदित स्तंभ अधिकाईके साथ बनाये गये थे, कारण कि उन तीन शताब्दियोंमें राणालोग विजातीय शत्रुओंके विरुद्ध युद्धमें विजय पाकर अनेक लोगोंको भूवृत्ति दान, अनेक विषयोंमें अनुग्रह प्रकाश और इधर उधर भागी हुई प्रजाके एकत्रित करनेके लिये नई २ व्य-वस्था करनेमें प्रवृत्त हुए थे, एक खोदे हुए स्तंभके पढनेसे यह भी विदित हुआ कि उसके

द्वारा तांबेका मुकुट वाणिज्यका एक चेटिया सर्वथा रहित कर दिया गया* छींटके वस्त्रके ऊपर महसूल छोड दिया गया और स्थानीय वस्त्र बनानेवालोंपर विना महसूलके निकटवर्ती ग्राम और नगरोंमें विक्रय करनेकी व्यवस्था हुई थी, यह एक दूसरे खोदे हुए स्तंभके ऊपर लिखा था। एक दूसरे स्तंभमें व्यापार प्रधान नगरसे युद्धसंबन्धी कर ग्रहणका निषेध और स्थानकी भीतरी शासन व्यवस्था लिखी है × सामाजिक आचार व्यवहारका भी पता चलता है, एक खोदे हुए स्तंभसे प्रगट है कि "साधारण प्रकाशित भोजन सभासे कोई मनुष्य किसी प्रकार भोजन अपने घर नहीं ले जा सकैगा।"** जैनियोंके लिये एक विधान हुआ कि "संध्याके पीछे कोई मनुष्य किसी प्रकारका भोजन नहीं कर सकैगा" पवित्र अमावस्या तिथिमें गौ आदि पशुओंको जो कोई श्रमके कार्यमें नियुक्त करैगा वह दंड पावैगा।

×* यह विधान भी खोदित स्तंभके ऊपर विराजमान है। राजकर्मचारीगण राजकार्यके लिये किसी नगर वा ग्राममें जाकर शय्या और शीतवस्त्र नगर वा ग्रामवासियोंसे लेते थे उस प्राचीन विधानके पुनः प्रचारकी आज्ञा भी स्तंभके ऊपर लिखी है × * साधारण राजकार्यके लिये किसानोंकी गाडी और गौ आदि पशु तथा अन्यान्य सवारी बलपूर्वक लेनेका निषेध भी खुदा है। उपरोक्त और अन्यान्य विधानोंकी जो नकलें परिशिष्टमें लिखी गई हैं उन सबके फिर लिखनेकी आवश्यकता नहीं है।

इसके पीछे टाड महोदय लिखते हैं कि, "प्राचीन कालसे अबतकके प्रत्येक राणाके समयकी उक्त स्मारक लिपियां, अनुशासनपत्र, आज्ञाविधान और व्यवस्थावली यदि हम बहुतायतसे संग्रह कर सकैं तो उन सम्पूर्ण राणा लोगोंकी प्रतिभा, ज्ञान, बुद्धि, राजनीतिज्ञता, प्रजापुंजका अभाव, आचार व्यवहार और उनकी अवलम्बन की हुई कार्यप्रणाली जाननेके लिये इससे अधिक और किस सामग्रीकी आवश्यकता है? पश्चिमी राज्यके बीचमें फ्रांसका बहुत पुराना विधान सन् १०८८ ईस्वीमें लिखा गया × किन्तु उस समय मेवाड, उन्नतिकी सबसे ऊंची सीढीपर आरूढ था, और उसका व्यवहार वीरत्व, विक्रम, यश गौरव और सामन्तशासन सर्वत्र विदित था; तथा उस समय राणागण जैसी प्रबल सेनाकी सहायतासे राष्ट्रविप्लव और विजातयि शत्रुओंके आक्रमण निवारणमें अग्रवर्ती हुए थे, फ्रांस बहुत पुरुष पीछे भी वैसी प्रबल सेना उत्पन्न करनेमें समर्थ नहीं हुआ। दुर्भाग्यसे कई सौ वर्षोंतक विजातीय वैरियोंके आक्रमण; उपद्रव, अत्या-

---

*	परिशिष्ट-	१२	संख्यक अनुलिपि देखो।	
×	"	१३	"	"
**	"	१४	"	"
×*	"	१३	"	"
×*	"	१५	"	"

× हालमें पहिला अध्याय देखो। १९७ पृ०

चार और अज्ञता तथा आलसताने इन मेवाडके निवासियोंको अपने पूर्वपुरुषोंके ज्ञान नीतिज्ञता और विद्याके परिचय स्वरूप उन स्मृति चिह्न और खोदे हुए स्तंभावलीके यत्न तथा सन्मानको भुला दिया; राजपूत जातिने एक समय कहांतक गौरवगरिमा वीरत्व-विलास और प्रताप प्रभुत्वसे जगत्में अक्षय यश संग्रह किया था, वह संपूर्ण स्मृतिचिह्न ही इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं, किन्तु अब सौभाग्यलक्ष्मीकी गोदसे गिरी हुई राजपूतजाति अंतिम दशामें पूर्वपुरुपोंके उन सम्पूर्ण कीर्तिचिह्नोंके ऊपर यहां तक अनादर दिखा रही है, कि उन सब स्मृतिचिह्नोंको तोड कर उनकी सामग्रीसे अपने घर निर्माण करनेमें भी लज्जित नहीं होती, इस कारणसे ही बहुतसे स्मृतिचिह्न राजपूत सामन्तोंके मकान बनानेमें लग गये और बहुतसे पृथ्वीके गर्भमें समा गये है ।

यहां पर हम दो एक बातैं लिखते हैं । इतिहासलेखक टाड साहबने पहले तो यह स्वीकार नहीं किया कि राजपूत राज्योंमें दीवानी तथा फौजदारी दंडाविधि और कार्य-विधिकी लिखी हुई कोई पुस्तक थी, किन्तु अन्तमें उन्होंने बडी दृढताके साथ प्रमाणित कर दिया कि बहुत वर्ष पहिलेसे ही मेवाडेश्वरगण समयपर प्रयोजनीय विधान रचकर राज्य और समाज शासनका सम्पूर्ण अभाव दूर कर रहे थे । हमारा दृढ विश्वास है कि कुरुक्षेत्रमें महाभारतके युद्धके पीछे जब चन्द्र और सूर्यवंशका रवि क्षीणकान्ति हो गया, अर्थात् भारतके महाश्मशानमें चलनेके पीछे भारतवर्षमें व्यवस्थाकी जाननेवाली ब्राह्मण जातिका प्रभुत्व भी क्रमशः न्यून हो गया । उसी प्रकारसे मनुजीके लिखे राज्यशासन नियम और समाज शासनकी व्यवस्था भारतके अनेक स्थानोंमें ज्योंकी त्यों प्रचलित न होकर उन २ स्थानोंके प्रयोजनके अनुसार नवीन २ विधिकी व्यवस्थाओंमें परिणत हो गई । रजवाडेकी राजपूतजातिके प्रधानपुरुप बाप्पारावलने जिस समय अमित तेजसे दुबारा शिर उठाकर नवीन् राज्यके नवीन नवीन अनुष्ठान किये, उस समयसे ही नये २ विधान भी प्रयोजनके अनुसार प्रगट हुए देखे जाते हैं, टाड साहबके समान हम भी कह सकते हैं कि, दुर्दान्त मुगल पठान और महाराष्ट्री लोग यदि उन खोदे हुए पाषाण स्तंभ चिह्नोंको और स्तंभावलीको विध्वंस न करते तो इस विधि व्यवस्थाके आरंभके भेद निःसंदेह सहजमें ही उद्धार हो जाते, कर्नेल टाडकी उक्तिसे यह भी सिद्ध होता है कि जिस विश्वविजयी बृटिशजातिने इस समय भारतकी सत्ताईस करोड प्रजाका शासनभार प्राप्त किया है, वह बृटिशजाति जिस समय संसारमें थोडी और अर्धजंगली थी तथा जिस समय वर्तमान सभ्य जगत् घोर अज्ञान और असभ्यताके अन्धकारसे ढका हुआ था उस समय यह राजपूतजाति प्रबल प्रतापसे राज्यशासन और सभ्यताके अङ्गपुष्टि करनेमें नियुक्त थी। यूरोपमें सामन्त शासन नियम रचनेके बहुत शताब्दी पहले भारतमें यह नियमावली चल रही थी, यह बात भी भलीभाँति सिद्ध होती है, ज्ञानशिक्षा और सभ्यताका बीज जिस प्रकार आर्य-क्षेत्र भारतसे ही ले जाकर यूरोपमें बोया गया था यह सामन्त शासन विधि भी उसी

प्रकार भारतकी रीतिपर ही वहां प्रचलित हुई थी; यथार्थके ज्ञाता इस बातको अवश्य ही स्वीकार करेंगे ।

इसके पीछे टाड साहब फिर लिखते हैं कि, "प्रधान २ सामन्तमण्डली और सरदारोंको जो भूवृत्ति दी गई है, उसकी और राज्यके साधारण प्रधान राजनियम तथा धनकी सूचीकी पुस्तक लिखी हुई विद्यमान है । इन सबको अत्यन्त मूल्यवान पत्र मानना चाहिये । उनमें जिस समयतकका विवरण लिखा हुआ है, यदि हम उससे पहिले समयके इसी प्रकार लिखित पत्र प्राप्त कर सकते तो उनके द्वारा निःसंदेह ही मेवाडके प्राचीन शासनमें भूवृत्तिका पूरा विवरण प्रगट हो जाता । प्रत्येक सामन्तको जो भूवृत्ति दी गई है, पूर्वलिखित ग्रन्थमें उस विषयकी प्रत्येक बात लिखी हुई है, यहांतक कि, सामन्तगण भूवृत्ति पाकर उसके बदलेमें कई अश्वारोही और पदाति सेनाका संग्रह करके मेवाडेश्वरके अधीन किस प्रकार कितने दिन नियुक्त रहनेको बाध्य हैं, यह सब बातें भी उसको पढकर विदित हो सकती हैं । राजस्थानकी सामन्त शासनकी रीति और राजधनके साधारण नियम उक्तलिखित पत्रावलीके पाठसे विलक्षणरूपसे विदित हो सकते हैं और वह सब लिखावटें विधानस्वरूप हैं, यह अवश्य ही स्वीकार करना होगा । यूरोपखण्डके फ्रांसराज्यमें खृष्टीय सोलह शताब्दीमें ऐसी सामन्तशासनकी रीति और राजस्व निर्द्धारण विषयमें २८५ दो सौ पचासी विधान थे, यह बात हालमके इतिहाससे प्रगट है, किन्तु उनमें केवल साठ विधान ही बहुत आवश्यकीय समझे जाते थे। परन्तु मेवाडकी विधानसंख्या जो मुझको विदित हुई है वह अधिक है, और उन सबमें जितनी विशेष प्रयोजनीय रीति हैं वह परिशिष्टमें लिख दी गई हैं ।

राजपूत जातिकी श्रेष्ठ वंशमें उत्पत्ति ।—राजस्थानके छोटे राज्यसमूहोंके जितने प्रतिष्ठायुक्त और बहुत प्राचीन वंशके लोग शासन कर गये हैं, और अब भी शासन कर रहे हैं, उनके साथ यदि यूरोपखण्डके प्रसिद्ध वंशवालोंकी हम तुलना करें, तो यह अवश्य ही कहेंगे कि उनकी अपेक्षा राजपूतगण ही श्रेष्ठ हैं। राजपूत जातिकी उत्पत्ति विषयमें बहुत पुराने समयके वृत्तान्त पढनेसे मैं यह कह सकता हूं कि यह जाति नीच वंशमें उत्पन्न वा करद राजवंशावली नहीं है।यद्यपि राजपूत जातिके गौरव गरिमा प्रताप प्रभुत्व और शक्ति इस समय बिलकुल ह्रास हो गई है यद्यपि उनके अधिकृत राज्य इस समय क्षीण हो गये हैं, यद्यपि वह वंशका गौरव प्रकाशक और पदमर्यादाके जतानेवाले ऐश्वर्याडम्बरके चिह्न छोडनेको बाध्य हो गये हैं, तथापि प्रसिद्ध बडे ऊंचे राजवंशोंमें उत्पन्न होनेके कारण वह अब भी विलक्षणरूपसे परिचित हैं, और उन्होंने उस पुराने ज्ञानसे उत्पन्न हुए दर्प और गर्वको किंचिन्मात्र भी नहीं छोडा है। इस नीतिके अनुसार ही असंख्य राष्ट्रविप्लवोंके बीचमें भी राणाका परिवार अविचल भावसे अपने वंशकी पवित्रता और गौरवरक्षा करता आ रहा है ! प्रबल बलशाली मुगल सम्राट् जहांगीरने शजरेके समान इस शिशोदीय जातिका इतिहास स्वयं

लिखा है। * मेवाडेश्वरने उनके साथ संधि करके वश्यता स्वीकार करनेके कारण अपनेको विशेष गौरवान्वित समझा था। भारतमें मुगलराज शासनशक्ति संस्थापक उनके पूर्वपुरुष बाबर जिस कामको सिद्ध न कर सके, हुमायूं जिस विषयमें कृतकार्य न हुए तथा उनके पिता जिस काममें कुछेक सफल मनोरथ हुए थे, जहांगीर पूर्णरूपसे उस काममें सफलता प्राप्त करनेके कारण जगदीश्वरको हृदयके साथ धन्यवाद दे गये हैं। विजेता बाबर और जहांगीर इन राजपूतोंके विषयमें जैसे महान् ऊंचे मन्तव्य प्रकाशकर गये हैं। उनको पढते समय चित्तमें अभूतपूर्व आनन्द उदय होता है। इङ्गलैंडकी अधीश्वरी एलिजबेथके द्वारा दूतरूपसे भेजे हुए सरटामस जिस समय भारतमें आये थे, वह उस समय इन राजपूत भूपालके ऐश्वर्य आडम्बर और बाहुबलके विषयमें जितनी अधिक प्रशंसा कर गये हैं, वह ऐश्वर्य्य आडम्बर और प्रताप प्रभुत्व राजपूतजातिके इतिहासमें विशेषरूपसे प्रकाशमान हैं।

मारवाडके राठौरगण—राठौरजाति सम्मानित और महोच्च वंशमें उत्पन्न होनेसे गर्व कर सकती है। राणाके परिवारके बहुत प्राचीन कालके वंशवृत्तान्तको मैं जिस निश्चयताके साथ प्रगट कर सकता हूं, यद्यपि राठौरोंके प्राचीन कालका वंश विवरण मैं उतनी निश्चयताके साथ वर्णन नहीं कर सकता, किन्तु यह मैंने सब विषयोंमें निःसंदेहरूपसे प्रगट कर दिया है कि, जिस समय फ्रांसवालोंके एक अपरिचित सम्प्रदायके नेता भविष्य फ्रांसराज्य स्थापनके लिये मार्ग साफ कर रहे थे, उस समय राठौर राजके हाथमें कान्यकुब्ज देशका राजदण्ड समर्पित था। उस राठौर जातिकी प्रबल क्षमता और असीम शासनशक्ति व्यवहारहीन अवस्थामें होनेके कारण ही अकस्मात् बारह शताब्दीमें केवल उस कान्यकुब्जदेशका ही पतन हुआ, किन्तु मारवाड राजछत्रके नीचे वह राठौरराजवंशधर ही बैठते चले आते हैं।

अम्बेरके कछवाहे—बहुत प्राचीनकालमें भारतमें निषधनामक जो प्रसिद्ध राज्य था, जो इस समय नरवर नामसे विख्यात है, और इस राज्यके स्वामी महाराज नल और महारानी दमयन्तीका उपाख्यान सब संसारमें विख्यात है, अम्बेरेश्वरगण उस नैषध राजवंशमें उत्पन्न हुए हैं। राज्यकी अदल बदल और दूसरोंके आक्रमणसे ही नैषध राजवंशवाले पैतृक राज्य छोडनेमें बाध्य हुए थे। उस समय भारतवर्ष चार प्रधान राज्योंमें विभक्त था। अरबके यात्री उन चार राज्योंका जो विवरण लिख गये हैं, उसके द्वारा हम उन चार राज्योंका विशृंखल भाव देखते हैं। किन्तु अन्यान्य जितने क्षुद्र राज्य पश्चिमप्रान्तमें स्थापित थे; जिस समय फ्रांस और इंग्लेंडकी सामन्त

* मेवाडकी राजपूतजाति बहुत कालसे ही अनेक घटनाओंसे अनेक उपाधियां प्राप्त करती आती है। पहिले राजपूतजाति "सूर्यवंशीय" नामसे विख्यात थी, उसके पीछे ग्रहलोट वा गिह्लोट उपाधि प्राप्त हुई। उसके पीछे आहारिया उपाधि मिली, और इस समय सिसौदीय नामसे विख्यात है। राष्टविप्लव और अन्य घटनाओंसे ही यह उपाधियाँ बदलती रही हैं।

शासनशैली पूर्णावयवमें परिणत हुई; वह सब राज्य उस समयके स्थापित हुए थे।
अन्यान्य राजवंश अल्प प्रसिद्धियुक्त हैं, कारण कि वह सब प्राचीन राजगणके प्रधान २ कर देनेवाले सामन्तोंके वंशमें उत्पन्न हैं ।

मेवाडके सिसोदीयगण--मेवाडकी राजनीति, समाजनीति और शासननीति अन्यान्य राज्योंसे सर्वथा पृथक् है, इस बातको सब जानते हैं । नवीन स्थापित राज्योंकी जिस समय बाल्यावस्था थी, मेवाडके राजवंशने उस समय प्राचीन पदवीमें पदार्पण किया था । मेवाडकी अवनति--राज्यक्षय किस प्रकार किस कारणसे होते रहे, इस बातको हम प्रगट कर सकते हैं, किन्तु मेवाड राज्य किस प्रकारसे विस्तृत हुआ, इस विषयको बडी कठिनतासे प्रकाश कर सकते हैं; इधर मारवाड, अम्बेर और अन्यान्य छोटे २ राज्योंने किस प्रकार राज्यसीमा बढाई, इसका लिखना भी बहुत सहज है । कई छोटे २ राज्य लेकर ही मारवाडकी उत्पत्ति हुई है; वह प्राचीन छोटे २प्रदेश अन्तमें नवीन राठौर राजवंशके अधीन करदरूपसे वर्तने लगे । राजगण सामन्त मण्डलीके ऊपर जिस विशेष स्वाधीनभावसे शासनशक्ति सञ्चालनमें समर्थ हुए, वह केवल उनके देशाधिकारकी रीतिसे ही स्थिर है । यूरोपकी सामन्त शासन प्रणाली जिस समय प्रचलित थी उस समयके सामन्तोंके स्वत्वाधिकारके समान इनका स्वत्वाधिकार ज्योंका त्यों है ।

अति दीन अवस्थामें प्राप्त होकर भी निर्बल राजपूत आजतक अपना पैतृक स्वत्व--वंशगौरव बडे अभिमानके साथ रक्षा कर रहे हैं; वह कृषिकार्य्य--हल चलाने और अश्वारोहणके सिवाय अन्य समयमें बरछा चलानेमें आन्तरिक हृदयसे घृणा प्रकाश करते हैं । बडे ऊँचे वंशमें उत्पन्न होनेके कारण राजपूतोंके हृदयमें जो अभिमान विद्यमान है, उनके ऊपरके स्वामियोंके प्रीति बढानेवाले आचरण और नीचे पदोंके स्थित जनोंके विशेष सन्मान द्वारा वह गर्व समर्थित होता हुआ आ रहा है, राणाओंने जैसा पदसन्मान अनुग्रह और पद श्रेणी विभाग कर दिया है, वह सब ही समाजकी बहुत ऊँची और निर्मल अवस्थाका बतानेवाला है ।उच्च पदमें स्थित प्रत्येक पुरुष ही सन्मानसूचक एक२ पताकाका व्यवहार बाजा और चांदीका आसाधारी अनुचर साथमें रखनेका अधिकारी है । इसके सिवाय किसी २ सामन्तके पूर्वपुरुषोंने राजभक्तिप्रकाशक वा वीरतासूचक कार्य्य करनेसे राजप्रसाद और अनुग्रहस्वरूप जितने स्मरणीय सन्मानचिह्न प्राप्त किये थे, उनके उत्तराधिकारी उन सन्मानसंभोग वा गौरवचिह्नोंको आजतक व्यवहार करते आ रहे हैं ।

आजकल यूरोपके राजगण, वीरवृन्द और महान् पुरुष जैसे आत्मपरिचय देनेवाले समरके अस्त्र विशेष २ चिह्नोंसे पृथक् २ अंकित करते हैं, प्राचीन राजपूतजाति वैसे चिह्नव्यवहारमें अनभिज्ञ नहीं थी । × मेवाडकी प्रधान राजपताका लाल

× इस बातको सब लोग स्वीकार करते हैं कि, पहिले केवल पूर्वजगतमें ही यह चिह्न व्यवहार-

रंगकी है और उस पताकाके ऊपर सूर्यकी सुवर्णकी मूर्ति अङ्कित है । मेवाडके सामन्तों की पताकापर एक २ खड्गकी मूर्ति चित्रित है अम्बेरकी राजपताका पाँच रंगयुक्त है । चन्देरी नामक छोटे राज्यकी पताकापर प्रमत्तसिंहकी मूर्ति चांदीद्वारा रञ्जित है । *

यूरोपखण्डमें यह प्रथा क्रूसेडके पहिले प्रचलित नहीं थी; किन्तु विख्यात ट्रयराज्यके युद्ध होनेसे बहुत काल पहिले राजपूत जातिकी सब सम्प्रदायोंमें ही यह प्रबल रूपसे देदीप्यमान थी । खृष्टजन्मके बहुत शताब्दी पहिले जिससमय महाभारतका युद्ध हुआ था, उस समय अर्जुनकी पताकामें हनुमानजीकी मूर्ति अंकित थी । यह बात महाभारतके पढनेसे विदित हो सकती है ।

यह व्यवहारके सम्पूर्ण चिह्न हिन्दुओंके धर्म्मनिधान मूलक हैं और अपने देव देवियोंकी मूर्तियोंसे ही यह निर्वाचन कर लिये हैं ।

प्रत्यक राजपूतके राजमहलमें एक २ रक्षाकर्त्ता कुलदेवता है, और वह प्रायः ही युद्ध क्षेत्रमें ले जाया जाता था । राजा स्वयं घोडेपर सवार होकर उस मूर्तिको अपने साथ ले जाते थे । कोटेके राओ भीमहरने युद्धके समय अपने कुलदेवताके साथ जीवन विसर्जन किया था । खीची जाति नेताके स्वर्गवासी विख्यात् जयसिंह अपने कुल विग्रहको विना साथ लिये कभी इकले युद्धभूमिमें नहीं जाते थे । × वह जिस समय "हुंहुं" शब्दके साथ कुलदेवताकी जय उच्चारण करके युद्धसागरमें कूदते थे शत्रु महाराष्ट्र सेनादल उस समय महा भयभीत हो जाते थे । जयसिंहके वह कुलदेवता स्वपक्ष और विपक्षके सैनिकोंके रक्तसे स्नान किया करते थे ।

हिन्दू राजाओंके जितने पूर्व पुरुष ग्रीक विजेता अलिकजण्डरका भारतपर आक्रमण निवारणके लिये युद्धमें प्रवृत्त हुए थे, उन्होंने उक्त प्रथाके अनुसार अपने कुलदेवता बलदेवकी मूर्ति सेनाके शीर्ष स्थानपर रखकर समराग्नि प्रज्वालित की थी ।

ग्रीक इतिहासवेत्ता एरियन लिखते हैं कि अधीन सामन्तोंके ऊपर राजाकी प्रभुता जतानेवाली पताका दानकी रीति सिन्धुनदके तीरवर्ती राज्योंसे ही ग्रीक लोगोंने ग्रहण की है ।

–किया जाता था, क्रूसेडके पीछे यूरोपमें इसका प्रचार हुआ । इसरायलके बारह सम्प्रदाय अपनी २ पताकाके ऊपर अङ्कित पशुके चित्रानुसार ही भिन्न २ नामसे विख्यात थे । मोरका चिह्न ही राजपूत वीरोंका प्रिय अस्त्र चिह्न है; क्योंकि मयूर उनके प्रधान समर सेनापति कुमारका वाहन है । पश्चिमी जगत्में रणदेवकी माता मयूरप्रिया थी । राजपूतवीर मोरका पंख पगडीके ऊपर लगाते हैं; क्रूसेड लोगोंने भी यवनोंके निकटसे उस मोरपंखका व्यवहार करनेका आरंभ किया ।

* कर्नेल टाड लिखते हैं कि "इस वन्य प्रदेशमें यूरोपियन लोगोंमेंसे केवल मैं ही सबसे पहिले सन् १८०७ ईस्वीमें गया था, उस यात्रामें मुझको बडे संकट भोगने पडे थे । उस समय यह प्रदेश स्वाधीन था । तीन वर्षके पीछे इसपर सेंधियाने अपना अधिकार कर लिया ।"

× खीची जाति चौहानराजपूत जातिकी शाखाविशेष है । हारावतीके पूर्वप्रान्तमें खीचीवारा राज्य विराजमान है ।

अलिकजंडर जिस समय उक्त प्रदेश विजय करनेके लिये बाहर हुए थे और उन्होंने कम्पियन सरोवरके पूर्वतीरवासी राज्योंको जयपूर्वक उन प्रदेशोंको विभाग करके वहांके प्राचीन राजवंशियोंको दिये, उस समय उक्त राजाओंने अलिकजंडरकी अवश्यता स्वीकार करके करदान और निर्द्धारित संख्या सेनाद्वारा उनके भारत विजयमें सहायता करनेकी प्रतिज्ञा करी थी, अलिकजंडरने अपने हाथसे उन राजालोगोंको प्रचलित रीतिके अनुसार पताकायें दी थीं । स्थानीय किसी रीतिके मानने और उसके अनुसरण करनेमें वह असम्मत नहीं हुए सामन्त शासनकी रीतिका यह केवल बाहरी आभासमात्र है, इस कारण हम और भी जितने पिछले समयके इतिहासमें पहुंचेंगे उतने ही प्रणालीके अङ्ग-प्रत्यंग हमारे नयनदर्पणमें प्रतिबिंबित होने लगेंगे । मुसलमान जातिकी प्रथम शताब्दीमें ही जब प्रथम नवीन धर्म प्रचारार्थ भयङ्कर उत्पात हुए थे उस समय मेवाडेश्वर कैसे शक्तिसम्पन्न थे ? उस शक्तिका एक बडा चित्र यथोचित स्थानमें चित्रित हुआ है । उस चित्रमें क्या दिखाई देता है ? जिस समय खड्गबलकी सहायतासे दुर्दान्त यवन गण भारत आक्रमण और नवीन धर्म्मसे भारतको नष्ट करनेके लिये संहारमूर्ति धारण करके आगे बढ रहे थे, उस समय आत्मरक्षाके लिये मेवाडपति अपने अधीनस्थ सैकडों मित्र और कर देनेवाले सामंतोंके साथ युद्धके लिये भलीभाँति सज्जित हुए थे ।

सिन्धुनदीकी पश्चिम सीमामें स्थित पहाडी प्रदेशमें जिस समय यह धर्म्मयुद्धाग्नि प्रज्वलित हुई थी, उसके बहुत काल पहिले युधिष्ठिरके राजछत्रके नीचे यवनोंने आश्रय पाया था । चन्दकवि उस समयकी बहुतसी प्रयोजनीय बातैं लिख गये हैं; वह सब बातैं इतिहास और सामरिक वृत्तांतमें प्रयोग की जा सकती हैं; महाबली विशालदेव, जिनका नाम दिल्लीके विजय स्तम्भोंपर आजतक खुदा हुआ है, वह वीरश्रेष्ठ भारतआक्रमणके अभिलाषी यवनोंके विरुद्ध जितनी सेना ले गये थे, उस में ८४ चौरासी हिंदू नरपतियोंकी पताका एकत्रित हुई थीं । विशालदेवने इस जातीय महायुद्धमें सहायता देनेके लिये अन्तर्वेद * प्रदेशसे पश्चिम सागरके किनारेके स्थानोंके राजा लोगोंको जो निमंत्रण पत्र भेजा था; चंद्रकवि उस निमंत्रणपत्रको स्पष्टरूपसे लिख गये हैं । उन एकत्रित सेनादलोंने विशालदेवके द्वारा परिचालित होकर यवनोंके विरुद्ध जो जय प्राप्त की थी, उसके इतिहासमें भी भलीभांति प्रमाण पाया जाता है। चन्द्रकवि अपने काव्यमें भारतसम्राट् पृथ्वीराजके शासन समयकी सामंत शासन विधिका जैसा उत्तम वर्णन लिख गये हैं;वैसा दूसरे किसी ग्रंथमें दृष्टिगोचर नहीं होता । बडे आश्चर्यकी बात है कि यह महाकाव्य इतने अधिक समय तक अनादरमें पडा रहा । चंद्रकविके उस महाकाव्य और उसी प्रकारके अन्यान्य काव्योंके पढनेसे आर्य्योंके शासन और इतिहास सम्बंधी बहुतसे विवरण: मालूम हो सकते हैं । विशेष करके उसके पाठसे

---

* गङ्गा और यमुनाके मध्यवर्ती प्रदेशोंको अन्तर्वेद कहते हैं । यह सर्व साधारणमें दोआब नामसे विख्यात है ।

राजपूतोंके आचार व्यवहारादि अनेक विषयोंमें विभिन्न जातिके साथ तुलना किये जा सकते हैं ।

उस अतीत कालकी उक्त घटनाओंको पढकर हम सहजमें ही निर्द्धारित कर सकेत हैं कि "तातारियोंकी कौरलताई, राजपूतोंकी चौगान और फ्रांसजातिका केम्पडिमार्स (Champde le Mars) एक ही कारणसे उत्पन्न है।"

वीर राजपूत समाज जिस भावसे अत्यन्त प्राचीन कालसे गठित है, जातिभेद जिस प्रकार प्रबल भावसे प्रचलित है, उससे नीची श्रेणियोंके निवासियोंके साथ उच्च वंशमें उत्पन्न हुये राजपूतोंका सामाजिक संमिलन असम्भव कर रक्खा है। ऐसा भेद भाव बहुत पुरातनकालसे ही भारतमें प्रचलित है। इस जाति या वर्णभेदके विषयमें यहां पर कर्नल टाडने अच्छा बुरा मन्तव्य कुछ भी प्रकाशित नहीं किया, किन्तु अवसर समझ कर हम यहां दो बातें लिखते हैं। अंग्रेजी शिक्षित युवक मंडली आजकल जातिभेद प्रथा भारतवर्षसे बिल्कुल ही दूर करनेके लिये बडी भारी चेष्टा कर रही है। अनेकोंका यही दृढ विश्वास है कि, हमारे पूर्वपुरुष मूर्खताके कारण ही यह जाति भेद रीति चला गये हैं। एक दूसरी श्रेणीके लोग कहते हैं कि "यह बद्धमूल जाति भेद प्रथा बिना दूर हुए हमारी राजनैतिक उन्नति होना असंभव है।" तथा एक श्रेणीके अंग्रेज भी हृदयके साथ हमारे इस जातिभेदकी निंदा करते हैं। किन्तु हम सबसे पहले यह कहना चाहते हैं, अत्यन्त गूढ कारणसे समाजकी विशेप प्रयोजनीयता देखकर ही हमारे पूर्व पुरुष गण यह जातिभेद प्रथा प्रचलित कर गये हैं समाजका मंगल साधन ही उनका मुख्य उद्देश्य था। शान्ति और समाजरक्षा करनेके लिये निर्द्धारित रीतिके अनुसार एक २ श्रेणिके ऊपर एक २ प्रकारका कार्य्यभार समर्पण अवश्य कर्तव्य है, उन्होंने विशेष परीक्षाके पीछे इस बातको निर्द्धारित किया था जिस श्रेणिके लोग जिस कार्य्यमें विशेष दक्ष हैं; उस श्रेणीको केवल उसी कार्य्यमें नियुक्त रखकर उस कार्य्यका क्रमसे उत्कर्ष साधनभार समर्पण करना कर्तव्य समझकर ही हम एक २ श्रेणीके ऊपर एक २ प्रकार का सामाजिक कार्य्य समर्पित हुआ देखते हैं, धर्म्मसाधनज्ञान शिक्षा विस्तारमें ब्राह्मण मण्डलीको सर्वांशमें योग्य जानकर ही ब्राह्मण वर्णके ऊपर वह भार समर्पित हुआ, राज्यशासन, प्रजापालन, शत्रुके भय निवारण पक्षमें बलिष्ठ वीर क्षत्रिय जातिको सर्वांगमें योग्य जानकर ही उनके हाथमें राज्यभार समर्पित हुआ और उसी प्रकारके दूसरी जातियोंकी योग्यतानुसार ही उनके ऊपर भी स्वतंत्र २ भार रक्खा गया इसका फल यह देखा जाता है कि, जिस श्रेणीके ऊपर जो जो भार समर्पित था, वह २ श्रेणी वंशानुक्रमसे उसी २ विषयका अधिक उत्कर्ष साधन कर गई है। विधि व्यवस्था और ज्ञानशिक्षाकी जहांतक उन्नति हो सकती है, ब्राह्मण वर्णने उसके करनेमें कोई त्रुटि नहीं रक्खी। राज्यरक्षा, पुत्रके समान प्रजापालन और बाहुलसे भारतभूमिका गौरव जहांतक विस्तृत हो सकता है, सूर्य्य और चन्द्रवंशके भूपालकुल उसको विस्तृत कर गये हैं। शिल्पी भास्करआदि अपने अवलम्बित विभागके उन्नति

साधन विषयमें कहांतक सचेष्ट थे, प्राचीन कार्त्तिस्तंभ आदि उसकी पूरी साक्षी दे रहे हैं। हमारा विश्वास है कि एक २ श्रेणीके ऊपर ऐसा धारावाहिक भार बिना सौंपे कभी भी कोई कार्य्य सर्वांगसुन्दररूपसे सम्पादित नहीं हो सकता। किसी एक नाट्यशालामें यदि बीस अभिनेताओंको एक दृश्यकाव्य अभिनयके लिये एकत्रित करके उनमेंसे प्रत्येक अंशको बिना निर्द्धारण किये इच्छानुसार कार्य्य करने दिया जाय, यदि उसमें एक अंशका दश मनुष्य अभिनय करने लगे और दूसरे अंशको कोई न करे तो क्या वह दृश्य सुन्दररूपसे संपादित हो सकता है? एक राजकार्यालयमें यदि प्रत्येक राजपुरुषके कर्त्तव्यकार्य स्वतन्त्र २ निर्द्धारित न करके सबको ही कार्य सिद्ध करनेको कहा जाय तो क्या कार्यालयका फल सन्तोषजनक हो सकता है? भारतमें जिस समय इस जातिभेद वा वर्णभेदसे कार्य्यभेदकी व्यवस्था हुई, उस समय समाजकी कुमार अवस्था थी। समाजकी अवस्था देखकर पूर्व पुरुषोंने समाजकी मंगलकामनासे ही जातिभेद वा वर्णभेदके अनुसार कार्य्य सीमा निर्द्धारण किये हैं। बहुतसे लोगोंका विश्वास है कि, ब्राह्मण जातिने विद्या बुद्धिबलसे सर्व श्रेष्ठ होकर अन्यान्य जातियोंको दास बनानेके लिये ऐसी व्यवस्था बना दी है जिन लोगोंका ऐसा विश्वास है वह भूले हुए हैं ×इस संसार राजपदके अतिरिक्त और कोई बडा और सुखदायक नहीं है। ब्राह्मणजाति यदि सबको दास बनाना चाहती तो वह स्वयं राजमुकुट धारण न करके क्षत्रियोंको राज्य पर क्यों अभिषिक्त करती और संसारके सब ऐश्वर्य छोड गहरे बनमें जाकर क्यों फल मूल भोजन करती? उनको सर्वसुख छोडने से क्या प्रयोजन था? वह सहजमें ही राज्येश्वर होकर सबको क्रीतदास क्यों नहीं बना देते? इसमें कोई महाशय यह कहेंगे कि ब्राह्मणोंमें शारीरिक बल न्यून था इस कारण वह राज्य न पा सके। यह बात भी बिलकुल भ्रांतिपूर्ण है क्योंकि पहिले समयके ब्राह्मण क्षत्रियोंसे भी अधिक बलिष्ठ थे। ऋषि मुनि और साधारण ब्राह्मणमण्डल दीर्घ कालतक जीवित रहकर संसारका हित साधन कर गये हैं। जो लोग भारतके पुराने भीतरी तत्त्वोंको जानते हैं वह लोग उपरोक्त बातके स्वीकार करनेको अवश्य ही बाध्य हैं, इसी कारण कहते हैं कि ब्राह्मणों ने अपने स्वार्थ साधनके लिये इस जातिभेद व वर्णभेद से कार्यभेद निर्द्धारण न करके समाजके मंगलके लिये ही इसको न्यायानुसार स्वीकार किया था। इस बातको ब्राह्मण जातिका त्याग स्वीकार ऐश्वर्य आडम्बर धनागमके ऊपर सर्वथा अनादर दिखाना ही विशेष रूपसे प्रमाणित कर रहा है।

वर्त्तमान समयमें जो लोग भारतसे जाति उठा देनेके लिये बडे भारी उत्कंठित हैं, तथा जो लोग प्राचीन समाज शासन नीतिके मूलमें कुठाराघात करके विजातीय आद-

---

× यजुर्वेदके ३१ वें अध्याय पुरुषसूक्तमें परमात्माके मुख बाहु जंघा और चरणोंसे चारों वर्णोंकी उत्पत्ति लिखी है।

ऐसे समाजमें यथेच्छाचार शासनकी रीति चलानेके अत्यन्त अभिलाषी हैं; वह निश्चय ही घोर अन्धकारयुक्त भ्रांतिकूपमें गिरे हुए हैं। यदि उनका मनोरथ सिद्ध हो जाय तो समाज उन्नतिके बदले अवनतिके सागरमें डूब जायगा। यद्यपि हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं कि इस समय हमारी उस प्राचीन जातिभेद प्रथाके मूलमें दारुण वज्राघात हो रहा है, सामाजिक सुधामय रीति नीति धीरे २ अदृश्य होती जाती है। समाज-नेताओंका अभावसा है। यहां तक कि मूल समाजतक विध्वंसप्राय है तथापि इसको समूलै नष्ट कोई नहीं कर सकता। देश काल और अवस्था भेदसे परिवर्त्तनको कोई निवारण नहीं कर सकता। यह हम भी स्वीकार करते हैं, किन्तु हमारा भाग्यचक्र इस समय जैसा परिवर्त्तित हो रहा है; उससे हमारी यह अवस्था परिणाममें अवश्य ही शोचनीय हो जायगी। हम यदि इस समय विजातीय अनुकरण विजातीय शिक्षाके गुण और विजातीय शिक्षाके सबल स्रोतमें भासमान न होकर अपने पूर्व पुरुषोंके अवलंबित मार्गमें चलनेकी चेष्टा करें और समयकी अवस्थानुसार धर्मपर: दृष्टि रखते हुए साधारण बातोंको कुछ बदल दें तो हमारा आर्य्यनाम अक्षय होगा, समाज शान्ति सौरभसे पूर्ण होगा और जातीय गौरव रवि प्रबल तेजके साथ पूर्णरूपसे चमकेगा। नहीं तो हम लोग इस जगतमें एक अभूतपूर्व जातिमें परिणत हो जायँगे। जो लोग पूर्व पुरुषोंको अज्ञ, मूर्ख आदि उपाधि देनेमें लज्जित नहीं होते; वह लोग निश्चय जानैं कि एक ऐसा समय आवेगा जिस समय उनके उत्तराधिकारी भी अधिक घृणाके साथ उनके प्रति उक्त उपाधियें वर्षानेमें कुछ भी लज्जित न होंगे। इस कारण पूर्व पुरुषोंका दिखाया मार्ग ही हमको सबसे पहिले अवलम्बन करना उचित है। एक श्रेणीके अंग्रेज यदि हमारे जातिभेदकी निन्दा करते हैं तो क्या हम भी उसका विशेष तत्त्वानुसंधान न लेकर अपनी प्राचीन प्रथाकी निन्दा करने लगें, ? यदि अंग्रेजोंकी सामाजिक दशाके ऊपर हम तीक्ष्ण दृष्टि डालें तो हमारे नेत्रदर्पणमें कैसा दृश्य प्रतिबिम्बित होगा ? हमारे समाजमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र यह चार वर्ण सृष्टिके पूर्वसे ही विराजमान हैं। हम इस बातको मानते हैं कि अंग्रेजोंमें प्रगटमें वैसा वर्णभेद नहीं देखा जाता। किन्तु हम पूँछते हैं कि क्या इस सभ्य शिक्षित विश्वविजयी अंग्रेज जातिमें जात्यभिमान नहीं है ? हम लोगोंमें जैसा जात्यभिमान प्रचलित है, उनमें भी क्या वैसा जात्यभिमान स्थान नहीं पाता ? अवश्य ही मस्तक नवाकर स्वीकार करना होगा कि अंग्रेज जातिमें विलक्षण जात्यभिमानकी अग्नि भयानक वेगसे प्रज्वलित है। अंग्रेज जातिके बीचमें उत्तम, मध्यम और अधम श्रेणीके सब लोग सबके साथ क्या एकत्र भोजन करते हैं ? हम कहते हैं नहीं। अधिक प्रमाणकी क्या आवश्यकता है ?—भारतवर्षके भूत पूर्व स्टेटसेक्रेटरी डयूकऑफ अर्गालके ज्येष्ठ पुत्र मार कुईसआफलारेन्सके साथ महारानी विक्टोरियाकी कन्याके परिणयके दिन भोजसभामें केवल जात्यभिमानके लिये ही भारतके सम्राट् ७ सप्तम एडवर्डने एकत्र भोजन करना स्वीकार न किया। सामयिक समाचार पत्रोंमें यह बात भलीप्रकारसे छपी हुई है।

लेने देनेके विषयमें भी प्रबल जात्याभिमान अंग्रेज समाजमें बिराजमान है । कितने ही डिउक, मारकुईस, अर्ल और लार्डपुत्र मध्य वा अधम श्रेणीकी सुन्दरी युवतियोंके रूपमें मुग्ध हो पिता माताकी आज्ञाके विना विवाह करके कैसी २ घोर विपत्तियोंमें पड चुके हैं- उस सम्बन्धसे कितने काण्ड हो चुके हैं और होते हैं, भला ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदिके समान विभिन्न वर्ण विना उत्पन्न हुए ही जब अंग्रेजसमाजमें जात्यभिमान ऐसा प्रबल देखा जाता है तो अंग्रेजदल हमारे जात्यभिमानसे घृणा करते हैं; उस अंग्रेज सम्प्रदायके कथनपर हम क्यों कर्णपात करें ? जात्याभिमान सृष्टिके प्रथमसे ही प्रभुत्व करता चला आ रहा है, इतिहासवेत्ता इसको मुक्तकंठसे स्वीकार करेंगे। जहांपर जात्यभिमान नहीं है, वहांपर महत्त्व भी स्थान नहीं पा सकता। हम "आर्य्यवंशधर हैं" यह एक महान जातीय गर्व है, दुर्भाग्यसे यह गर्व इस समय हमारे हृदयसे लुप्तप्राय हो गया है, इसी कारण एक श्रेणीके अंग्रेजी शिक्षित युवक पूर्वपुरुषोंको अज्ञ, मूर्ख उपाधियोंद्वारा ढककर विजातीय अनुकरण कर रहे हैं ।

एक सम्प्रदायके लोग ऐसे भी हैं जो कहते हैं कि "इस जन्ममें जाति बदल जाती है।" यह लोग या तो संस्कृत विद्याका विशेष ज्ञान न होनेके कारण ऐसा कहते हैं, अथवा पक्षपातसे कहते हैं। उनको इतनी बातोंका विचार करना चाहिये कि स्वभाव माता पिताके रज और वीर्य्यसे बनता है और जन्मसे मरणपर्य्यन्त रहता है, जैसे अग्निका जलानेका स्वभाव अग्निके साथ ही उत्पन्न होता है और अग्निके नष्ट होनेपर साथ ही नष्ट होजाता है। स्वभाव प्रत्येक मनुष्यका भिन्न२ उत्पन्न होता है। माता पिताका रज वीर्य तानेबानेकी तरह सम्पूर्ण शरीरमें रहता है। रज वीर्य्यके अनुसार स्वभाव बनता है और स्वभावके अनुसार प्राणी कर्म्म करता है। जैसे कर्म्म करता है उसीके अनुसार जीवकी गति होती है। इसी कारण भगवान् कृष्णचन्द्र श्रीमद्भगवद्गीतामें लिख गये हैं कि "चारों वर्ण मैंने गुण कर्म्मके अनुसार ही उत्पन्न किये हैं, शम, दम, तप, शौच, शान्ति, आर्जव, ज्ञान, विज्ञान और आस्तिक्य यह ब्राह्मणके स्वाभाविक कर्म्म हैं। शौर्य्य, तेज, धृति, चतुराई, युद्धसे न भागना, दान, स्वामित्व यह क्षत्रियोंके स्वाभाविक कर्म्म हैं। कृषि, गोरक्षा, वाणिज्य यह वैश्यका स्वाभाविक कर्म्म है । और सेवाकार्य्य शूद्रका स्वाभाविक कर्म्म है।" यह भगवद्वाक्य कभी अन्यथा नहीं हो सकता। इस वर्णव्यवस्थाका भलीभाँति पालन न करनेसे ही भारतकी यह दुर्दशा हो रही है। जाति बदलनेकी प्रथा चलानेसे वर्णसंकर संतान होने लगेंगी और सन्तानके वर्णसंकर होनेपर जातिधर्म्म और कुलधर्म्म नष्ट हो जायगा। क्या ही अच्छा हो कि सब लोग वर्णव्यवस्थाके अनुसार अपने स्वाभाविक कर्मकी चरमोन्नति करके भारतका पुनरुद्धार कर लें ।

इसके अनंतर कर्नेल टाड लिखते हैं कि--" रजवाडेकी प्रचालित समाजनीतिके अनुसार केवल जिन मनुष्योंके पिता माता दोनोंके कुल ऊँचे वंशसे उत्पन्न शुद्धरक्तधारी

हैं; केवल उस वंशके लोग ही मेवाडेश्वरके अधीनमें सामन्त पदपर अभिषिक्त होकर भूवृत्ति संभोग कर सकते हैं। जिनकी नाडियोंमें शुद्ध राजपूतरक्त बह रहा है, वह राजपूत यदि अत्यन्त निर्द्धन और एक चरसा भूमिके अधीश्वर हों तो उनके साथ सर्वश्रेष्ठ सामन्त भी आदान प्रदान चलन द्वारा अपनेको अपमानित नहीं समझते। केवल वह वंशगौरव ही उन निर्धन राजपूतोंके अकुंठित सन्मानकी रक्षा करता है। ऐसा संमिलन किसी प्रकारसे दूषणीय वा राजनैतिक अशान्ति उत्पन्न करनेवाला नहीं समझा जाता। मंत्री आदि राजपुरुष और साधारण कर्म्मचारीलोग जो राजपूत नहीं हैं, यद्यपि उनको भी उपाधि और भूवृत्ति दी जाती है, किन्तु उस भूवृत्तिमें उनका चिरस्थायी वंशानुक्रमिक स्वत्व नहीं रहता; जितने दिनतक वह अपने २ पदपर रहते हैं, उतने दिनतक ही भोगनेका अधिकार है। जिस कारणसे यूरोपमें राजमंत्री और प्रधान २ राजपुरुषोंको भूवृत्ति देनेकी प्रथा प्रचलित थी, उसी कारणसे रजवाडेमें भी यह प्रथा प्रचलित हुई। प्रारंभमें सिक्का बननेसे पहिले मंत्री वा राजपुरुषोंको वेतन देनेका कोई विशेष सुभीता न होनेके कारण ही यह भूवृत्तिदान प्रचलित हुआ होगा। मेवाडके मंत्रिवर्ग वेतनके बदले इस भूवृत्तिको ही सबसे श्रेष्ठ समझते हैं। यूरोपकी आरंभिक अवस्थामें फ्रांसराज सालेमेनके राजसंसारमें, पानपात्रके लानेवाले, मद्यभाण्डारके रक्षक, प्रासादके प्रधान तत्त्वके ज्ञाता, वस्त्रागारके अध्यक्ष, पाकशालाके प्रधान परिचारक और अश्वशालाके अध्यक्ष आदि ऊंचे पदके राजकर्म्मचारीलोग जिस प्रकार मंत्रिसमाज भुक्त गिने जाते थे, * हम इस राजपूत राजमें भी ठीक उसी प्रकार देखते हैं। मेवाडेश्वरके प्रधान प्रासाद निम्मीता चित्रकार, चिकित्सक, वंशकारिकाकार, दूत और राजधानीके प्रत्येक वंशधर भूवृत्ति पाते हैं। राजके सब पदोंपर वंशानुक्रमसे ही नियोग होता है, अर्थात् जिस पदपर जो पुरुष नियुक्त किया गया है, उस पदपर केवल उसके ही पुत्र पौत्र आदि उत्तराधिकारी लोग नियुक्त होते हैं। उन सबको उपाधि भी दी जाती है यदि किसी विशेष कारणसे किसीकी भूवृत्ति लौटा ली जाय तो वह उसके लिये सर्वथा अनधिकारी नहीं हो जाता। मेवाडमें समय समय पर तीन चार पुरुषोंको "प्रधान" अर्थात् मंत्री उपाधिधारी भी देखा गया है। *

---

* हालमका इतिहास, १९५ पृष्ठसंख्या। कर्नल टाड लिखते हैं कि, "ठिउटनोंके द्वारा यह प्रणाली प्रथम प्रचलित हुई थी।" किन्तु हमारा विश्वास है कि भारतवर्षसे ही इसकी शिक्षा पश्चिममें पहुंची थी।

* राजकर्म्मचारी पदपर नियोग किस प्रकार वंशकी परम्पराका है, उसका निदर्शनरूप टाड साहब टीकेमें लिख गये हैं कि, "सात सौ वर्ष पहिले दिल्लीसम्राट् पृथ्वीराजके अधीनस्थ एक मंत्री मेवाड़के राणाके मंत्रिपदपर नियुक्त हुए थे। उनके उत्तराधिकारीलोग क्रमशः उस पदपर नियुक्त होते आये और उनके वर्त्तमान वंशधर भी उसी पदपर नियुक्त हैं। यह केवल नाममात्रके मंत्री नहीं हैं। इनके प्रधान मंत्रीरूपसे प्रबल शक्ति दिखा गये हैं। केवल दुर्भाग्यके कारण इस वंशके एक मनुष्यने,-

इसके अनन्तर कर्नेल टाड लिखते हैं कि, "इस प्रकार साधारण मंतव्य प्रकाशके पहिले मैं यह सामन्तशासन रीतिका नियम पूर्वकालमें जिस प्रकार था और राणाके राज्यमें इस समय उसका जो २ अङ्ग जिस २ भावसे विराजमान है मैं उसको नीचे लिखता हूं; ।

मेवाडराज्यकी भूसंपात्ति बहुत श्रेष्ठरीतिसे विभक्त श्रेणीबद्ध और निर्णीत हुई है। राज्यके दक्षिण, पूर्व और पश्चिम इन तीनों सीमा प्रांतमें लुटेरे भील, मीरा और मीना जातिके लोग निवास करते हैं। राज्यके चारों प्रांतके परिधिके मध्यवर्त्ती सम्पूर्ण प्रदेश सामन्तोंके लिये निर्द्धारित हैं, और राज्यके मध्यस्थलमें उर्व्वर और धनशाली प्रदेश खालिसा अर्थात् राणाके साक्षात् सम्बन्धमें अपने अधिकारकी करद भूमि विराजमान है। उक्त खालिसा भूमिके चारों ओर ही सामन्तमण्डलीके अधिकृत प्रदेश होनेसे वह भूमि विशेष रूपसे रक्षित है।

सामन्तगणोंको जितना भूभाग वृत्तिरूपसे दिया गया है, खालसा भूमिका परिमाण उसके चौथाई अंशके समान होनेमें भी संदेह है। राणाकी निज अधिकारवाली खालसाभूमि ही राजशक्तिकी धमनी और मांसपेशी स्वरूप है, इस बातको पहिले राणालोगोंने भलीभाँति हृदयङ्गम कर लिया था। विशेष प्रशंसनीय और राजका शुभ मूलक कार्य्य बिना किये कोई पुरुष भी इस खालसा भूमिका थोडा अंश भी नहीं पाता था; उदयपुर राजधानीके निकट कुछ बीघे भूमि यदि कोई सामन्त बगीचा लगानेके लिये प्राप्त करलेता था तो वह अपने आपको महा सन्मानित समझता था जिस अर्धचन्द्राकार उपत्यकाके बीचमें उदयपुर राजधानी विराजमान है, उसमें कोई ग्राम किसी सामन्त वा किसी उच्चपदस्थ व्यक्तिको किसी विशेष क्षति पूर्णके लिये ही दिया जाता था। किन्तु राणा भीमसिंह इतने हिताहित विचारशून्य दाता थे कि कुछ अधिक बारह कोश परिधियुक्त इस खालसा भूभागमेंसे एक ग्राम भी राजभुक्त न रख गये, अर्थात् उन्होंने सब ग्राम ही वृत्तिरूपसे अनेक व्यक्तियोंको दे दिये।

इस भूभागके कारण, सीमान्तवर्त्ती पहाडी जातिके उपद्रवसे और मुगल, पठान, महाराष्ट्रियोंके आक्रमणसे सामन्तलोगोंको बराबर युद्धमें संलिप्त रहना होता था। अर्थात् वीर सामन्तगण प्रायः सदा ही किसी न किसी कारणसे भूवृत्तिके बदलेमें सेनासहित राणाके अधीनमें नियुक्त होनेको बाध्य होते थे।

सम्पूर्ण प्रदेश जिले २ में विभक्त हैं; पचाससे सौ वा किसी २ स्थानमें इससे अधिक संख्यक नगर और ग्राम लेकर एक २ जिला बनाया गया है। सम्पूर्ण उपविभाग

-अभिषिक्त राणाके विरुद्ध आचरण किया, और एक दूसरे पुरुषके सिंहासनप्रार्थीका पक्ष समर्थन किया था, इस कारण अब इस वंशके किसी पुरुषको भी राणा किसी विशेष विश्वासके कार्य्यमें नियुक्त नहीं करते।

" चौरासी " नामसे विख्यात हैं। आजतक बहुतसे उपविभाग " चौरासी " नामसे कहाते हैं; जिहाजपुर और कमलमीरके " चौरासी " उपविभाग अबतक विराजमान हैं। कर्नेल टाड कहते हैं कि "हमलोगोंका स्यक्सन पूर्वपुरुषोंके समयमें सैकडों ग्राम नगर मिलकर एक एक विभाग बनाया जाता था। "

मेवाडराज्यके चारों ओरके विभिन्न स्थानोंमें एक २ सीमान्तरक्षक नियुक्त हैं और निकटवर्त्ती सामन्तमण्डलीके सैनिक उस रक्षकके अधीनमें रहकर रक्षा करते हैं। राणा स्वयं उन सामन्तरक्षकोंको नियुक्त करते हैं और वह कई राजकीय चिह्न पताकाका व्यवहार, मान्यसूचक बाजे और घोसकदूत रखनेके अधिकारी हैं। सर्वसाधारणमें वह दीवानी राजपुरुष रूपसे गिने जाकर सामरिक कार्य्यके साथ २ विचारासनपर भी बैठते हैं। * उच्च श्रेणीके सामन्तगण किसी समय भी स्वयं उस सीमान्तमें उपस्थित नहीं होते, केवल अपनी सेनाके साथ अपने परिवारके किसी विश्वासी मनुष्यको प्रतिनिधिरूपसे भेज देते हैं। जिलोंका विचार भार एक दीवानी कर्म्मचारी और एक सैनिकके ऊपर अर्पित है। दूसरी श्रेणीके अधीन सामन्त मंडलीमेंसे प्रायः ही उक्त सैनिक विचारपति नियुक्त होते हैं। वह प्रत्येक जिलेके प्रधान स्थान अथवा दुर्गमें निवास करते हैं।

मेवाडके सामन्तगण जैसी भिन्न स्वतंत्र २ श्रेणियोंमें विभक्त हैं, उसको देखकर अनुमान होता है कि समाजकी अवस्था बहुत श्रेष्ठ न होनेपर ऐसा कभी नहीं होता। साधारणतया सामन्तमंडली तीन श्रेणियोंमें विभक्त है। यथा,–

प्रथम श्रेणी–सब सोलह सामन्त इस श्रेणीमें हैं; इनके प्रत्येकके अधिकार भुक्तभूभारकी वार्षिक आय पचास सहस्रसे एक लक्ष मुद्रातक होगी। यह प्रथम श्रेणीके सामन्त गण राणा द्वारा किसी विशेष कार्यमें आमंत्रित होनेपर, पर्वोत्सवादिके और किसी धर्म्मानुष्ठानके समय राजभवनमें जाते हैं। प्रथम श्रेणीके सामन्तगण वंशानुक्रमसे बहुत कालसे राणाका मंत्रित्व करते आते हैं।

दूसरी श्रेणी–इस श्रेणीके सामन्तोंकी वार्षिक आय पाँच सहस्रसे पचास सहस्र मुद्रातक है। यह सदा राणाके निकट रहनेको बाध्य हैं। इस दूसरी श्रेणीकी सामन्त मण्डलीमेंसे ही प्रधानतः सीमान्तरक्षक फौजदार और सैनिक कर्मचारी चुने जाते हैं।

तीसरी श्रेणी–सामन्तोंमें यह तीसरी श्रेणी "गोल" नामसे विख्यात है। यह वार्षिक पाँच सहस्र मुद्राकी भूमिवृत्ति पाते हैं। और कभी २ राणा विशेष अनुग्रह दिखानेके लिये इस श्रेणीके किसी २ सामन्तको इससे अधिक आयकी भूमि भी दे देते

* कर्नेल टाड लिख गये हैं कि " प्रत्येक सामन्त अपने २ अधिकृत प्रदेशमें इस समय दीवानी विभागके प्रत्येक मुकदमेकी विचार क्षमता चलानेके लिये दावेदार हैं; किन्तु फौजदारी अपराधका विचारभार राणाकी विशेष अनुमतिके विना नहीं दिया जाता। जितने भूसत्त्व सम्बंधी दीवानी अभियोग हैं, वह सब प्रायः स्वतः सृष्ट विचारालय अर्थात् पञ्चायतोंके द्वारा ही निष्पादित होते हैं।

हैं । यह साधारणतया स्वतंत्र भावसे ग्राम और भूमि भोगते आते हैं; पूर्वकालमें इस श्रेणीके सामन्तगण राणाके विशेष उपकारमें आते थे । इनका सदा ही राणाके निकट रहनेका नियम है । वास्तवमें यह सामन्तमण्डली ही राणाकी राजशासनशक्ति संचालन और दृढ करनेकी प्रधान सहायकस्वरूप हैं,कारण कि, उच्चश्रेणीकी सामन्तमंडली यदि किसी समय राजभक्तिके शिरपर लात मारकर राणाके विरुद्ध खडी हो तो उस घोर विपत्तिके समय यह सामन्तगण राणाका पक्ष अवलम्बन करके विद्रोही सामन्तोंकी पाप आशा व्यर्थ करनेमें समर्थ होते हैं ।

चौथी श्रेणी—राणाके परिवारकी कनिष्ठ शाखामें उत्पन्न राजकुमारगण कुछ दिन तक मान्यसूचक "बाबा" उपाधि धारण करते हैं, और उनके भरण पोषणके लिये स्वतंत्र भूवृत्ति निर्द्धारित की जाती है । वही चतुर्थ श्रेणी भुक्त हैं । इस श्रेणीमें शाहपुरा और बनेडाके राजगण प्रबल क्षमताशाली हैं । प्रधान २ सामन्तोंके समान राणाके साथ इनकी किसी प्रकारकी अधीनता सूचक व्यवस्था न होनेपर भी वह अपनेको राणाके अधीन समझकर राणाकी आज्ञा पालनेके लिये यथा समयपर अग्रसर होते हैं । यह राणाके बहुत ही अनुगत हैं । इस समय श्रेणीमें राणाके अति निकट आत्मीयके अतिरिक्त दूसरोंने भी पोष्य पुत्र ग्रहणकी क्षमता पाई है, पहिले यह क्षमता बिलकुल नहीं थी । इस श्रेणीमें किसीके अपुत्रक अवस्थामें प्राण त्याग करनेपर पहिले समयके राणा ही उनकी सब भूवृत्ति ले लेते थे ।

ऊपर लिखित सामन्तश्रेणीसे लेकर एक चारिसा परिमित भूमिके अधिकारीतक प्रत्येकके ऊपर किस प्रकारका कार्य्य समर्पित है और कैसी विधि व्यवस्थासे उनको भूवृत्ति दी गई है, इतिहासलेखक टाड इस स्थानपर उसीका वर्णन कर गये हैं । ×

राजकीय स्वत्त्व और राजधन ।--मेवाडेश्वरके राजस्वके प्रधान २ अंगोंका केवल स्थूल २ विवरण यहां लिखते हैं, विशेष विवरण यथोचित स्थानपर लिखा जायगा । खालिसा भूमिका कर ही राणाकी प्रधान आय है; उसके पीछे व्यवसाय, वाणिज्य-शुल्क और प्रधान २ नगर और बाजारोंका कर आता है । पहिले राणालोग राजस्वके इस विशेष प्रयोजनवाले अंग, बाजारके ऊपर अधिक दृष्टि देते थे और उस समय कर अधिक न होनेसे वाणिज्य द्रव्य भी बहुतायतसे आते थे । राणागण व्यापारियोंके ऊपर बहुत न्यून शुल्क निर्द्धारण द्वारा बडी ऊंची उदारता दिखाते थे, इधर व्यापारी भी निर्द्धारित करको प्रसन्न चित्तसे देते थे । परस्परके सदाचरणसे ही विश्वास और प्रीति बढती थी । कर्नेल टाड जिस समय मेवाडके वाणिज्य विस्तारके लिये विशेष यत्नशील हुए थे, उस समय राणाके साथ पूर्वोक्त भावका बहुत ही

× कर्नेल टाडके समय मेवाडमें जो भूकर शुल्क आदि प्रचलित था, इस समय उसका कोई २ अंश बदल गया है ।

अभाव था; वाणिज्य शुल्क अधिक परिमाणसे लिया जाता था, इससे व्यापारी लोग विरक्त हो गये थे और वह शुल्कसंग्रहकी रीति भी बहुत बुरी थी। उस समय एक व्यापारीने कर्नेल टाडसे आकर कहा, "हमारे पूर्वपुरुष सीमापर स्थित प्रथम वाणिज्य करके अधिकारीसे वाणिज्य सनदपत्र लेकर बैलके सींगपर लगा देते थे, (क) किन्तु वह दूसरी सीमाके पार करने वा बाजारमें न बेचनेपर, मध्यवर्त्ती प्रदेशोंके शुल्क अधिकारी उनकी सनद देख कर फिर शुल्क नहीं लेते थे। बिक्रीका काम समाप्त होनेपर उचित शुल्क लिया जाता था; किन्तु इस समय मार्गके प्रत्येक नगरमें शुल्क देना होता है।" व्यापारीकी उक्त बात उद्धृत करके कर्नेल टाड लिख गये हैं कि, "पूर्वकालमें राणा और व्यौपारियोंमें जैसा सद्भाव और एक दूसरेके ऊपर विश्वास विराजमान था वैसा प्रीतिभाव और विश्वास स्थापन करनेमें अभी बहुत दिन लगेंगे।" किन्तु हम सन्तोषके साथ कह सकते हैं कि, मेवाडके वर्त्तमान वाणिज्यकी अवस्था पहिलेकी अपेक्षा बहुत बातोंमें श्रेष्ठ है। दीर्घस्थायी शान्ति संभोग और अच्छे शासनके गुणसे मेवाडका वाणिज्य इस समय क्रमशः उन्नतिकी ओर बढ रहा है। शिक्षित और योग्य राजपुरुषोंके कार्यसे व्यौपारियोंके ऊपर अविचार, उत्पीडन और अन्याय पूर्वक कर-ग्रहण इस समय प्रायः दूर हो गया है।

पूर्वकालमें मेवाडके कई स्थानकी खानोंसे राणा लोगोंको प्रतिवर्षमें कई लक्ष मुद्राकी आय होती थी। मेवाडके अन्तर्गत जौयाके टीनकी खानसे एक समय बहुतसी चांदी प्रतिवर्ष प्राप्त होती थी। चम्बल संलग्न जो देश पहिले मेवाडके आधीन था, उसमें बहुत लोहा, तांबा और सीसा उत्पन्न होता था। * पत्थरकी खानें भी राजधनकी वहुत पुष्टि करती थीं, किन्तु इस समय राणाका इन सब उपायोंके ऊपर विशेष ध्यान नहीं है।

बरार।—बरार शब्द कर अर्थका बोधक है। साधारणतासे निम्नलिखित कर प्रचलित हैं,—"गनीमबरार" अर्थात् युद्ध सम्बंधी कर। "घरगुंती बरार" अर्थात् घरका कर; "हल बरार" अर्थात् कृषि कर। "न्योता बरार" अर्थात् विवाह कर। यह सब और

(क) रजवाडेके भीतर व्यौपारकी चीजें ले जानेके लिये बैलगाडी व्यवहार की जाती हैं; वैदेशिक वाणिज्यमें ऊंट नियुक्त होते हैं।

* कर्नेल टाड टीकेमें लिखते हैं कि, "केवल राणाके सिवाय राज्यमें दूसरा कोई मनुष्य भी मुद्रा निर्माण करानेका अधिकारी नहीं है, यद्यपि शेलम्बूरके सामन्त तांबेका पैसा बनवा सकते हैं, किन्तु किसी प्रकारकी सुवर्ण वा चांदीकी मुद्रा निर्माण करानेमें अधिकारी नहीं हैं। पूर्वकालमें टकशालद्वारा राणाको यथेष्ट आय होती थी, अब फिर भी राज्यमें शान्ति और राणाकी शासनशक्तिके ऊपर सर्व साधारण प्रजाका विश्वास स्थापन होनेपर नई मुद्रा चलानेसे राणाकी आय वृद्धि हो सकती है। प्राचीन भीलवाडेकी मुद्राके साथ चित्तौरके रुपयेकी तुलना करनेपर सैकडा पीछे ३१ अंश न्यून ज्ञात हुई थी। मध्यकालमें राजधानीमें एक दूसरे प्रकारकी मुद्रा भी प्रचलित हुई थी, वह और भी निकृष्ट है।" हम इस समय कह सकते हैं कि, मेवाडकी वर्त्तमान मुद्रा उपयुक्त रूपसे प्रचलित हो रही है।

अन्यान्य कई प्राचीन और आधुनिक कर संग्रहीत होते आते हैं। युद्धका कर इस समय प्रजासे संग्रहीत नहीं किया जाता। पूर्वकालमें सदा ही युद्धविग्रह उपस्थित रहते थे, इस कारण उसी कालसे अर्थसंग्रह भी राणाके लिये अत्यंत आवश्यक हो गया था। शान्तिके समय जिस प्रकार खेतीके उत्पन्न द्रव्योंका परिमाण स्थिर करके कर लिया जाता है युद्धके समय शीघ्रताके कारण उस प्रकारका परिमाण स्थिर असंभव और राणाके लिये सुबीता जनक न होनेके कारण ही, अनुमानके ऊपर निर्भर करके उक्त सामरिक कर संग्रहीत होता था। पहाडी प्रदेशोंमें यह कर निर्द्धारण ही अधिक सुबीतेका है, क्योंकि राज्यमें प्रचलित नियमानुसार अन्नका परिमाण देखकर वहां कर ग्रहण करना सर्वथा असंभव है। पहाडी प्रदेशमें पृथ्वीके परिमाणके अनुसार अन्न उत्पन्न नहीं होता, इस कारण अनुमानके ऊपर निर्भर करके कर लेना आवश्यक हो गया है।

किसी सामंत वा सरदारके नवीन अभिषेकमें अथवा किसी सरदारके पट्टपरिवर्त्तनके समय सामन्त वा सरदार लोग राणाको जो नजर भेंट करते हैं, वह सामान्य होनेपर भी एक आयका उपाय कही जा सकती है। इसके अतिरिक्त भूमिया सरदारगण निर्द्धारित नियमानुसार वार्षिक वा त्रैवार्षिक राजधन देते हैं। नियमादि भङ्गकारी और अन्यान्य अपराधियोंके ऊपर जो अर्थ दण्ड होता है, वह भी आयमें गिना जा सकता है। कर्नल टाड लिख गये हैं कि, राणालोग अपराधीके पकडने और दण्ड देनेमें विशेष यत्न करें तो इस आयके अधिक वृद्धि होनेकी संभावना है।

दण्ड विधानके अनुसार कठोर दण्ड देनेमें राणालोग अनिच्छा दिखाते हैं। अपराधियोंको प्राणदण्डकी अपेक्षा अर्थदण्ड देनेमें अधिक लाभकी संभावना है क्यों कि अपराधी लोग विशेष करके पहाडी जाति कायदण्डकी अपेक्षा अर्थदण्ड वा संपत्तिक्षयको बहुत भारी मानती है प्राणका मोह किसको कहते हैं? वीर राजपूतजाति और पहाडी जाति इसको बहुत कम जानती है।

खड लकड।—कर्नल टाड लिख गये हैं कि इसके द्वारा यथेष्ट धन संग्रहीत होता है। बहुत काल पहिलेसे ही यह काष्ठ और खडका कर चला आता है। जिस समय राणालोग महल छोडकर युद्धक्षेत्रमें सेनासहित अवतीर्ण होते थे, उस समय प्रत्येक अधिवासी राणाकी सेनाके व्यवहारके लिये काष्ठ और खड देनेके लिये वाध्य होते थे। किन्तु अन्तमें यह प्रथा यहांतक बढी कि किसी युद्धके विना उपस्थित हुए भी वह कर लिया जाने लगा। इस समय खड और काष्ठके बदलेमें धन लिया जाता है। नगरोंसे सेना दलके लिये रसद संग्रह करनेकी प्रथा थी। युद्धक्षेत्रमें जाते समय राणा जिस नगरमें विश्राम करते, उस: नगर वा ग्रामका प्रत्येक पशुफल एक २ बकरा वा मेंढा और प्रत्येक किसान मैदा वा दूध देता था। वह प्रथा अब भी कर रूपसे प्रचलित देखी जाती है। फ्रांसकी सामन्त शासन रीतिमें भी यह प्रथा इसी

प्रकारके कारणोंसे प्रचलित हुई थी, और अन्तमें राजालोग उसके बदलेमें धन लेने लगे, यह बात हालमके इतिहाससे भलीभाँति प्रगट है। फ्रांसके राजा जिस समय अपने अपने राज्योंमें परिभ्रमण करनेके लिये बाहर होकर किसी सामन्तके अधिकृत प्रदेशमें पहुंचते, उस समय सामन्त बड़े आदरके साथ राजाको ग्रहण करके उनके सन्मानके लिये घोड़ा और वस्त्रादि उपहार देते थे। राजाके सन्मानमें जो व्यय होता था स्थानीय किसान और व्यापारी लोग उसमें अंश देते थे।

मेवाड़में मद्य, अफीम और ताम्रमुकुटके ऊपर भी कर निर्द्धारित है। इसके द्वारा भी राणालोगोंको विशेष आय होती है।

तैंतीसवां अध्याय ३३.

व्यवस्था और विचार विभाग;—रोजाना भूवृत्ति प्राप्त सामन्त वा सर्दारोंका सामरिक कर्त्तव्य निर्णय;—शासनप्रणालीकी अपूर्णता;—पट्टावतोंका कर्त्तव्य कर्म ।

कर्नल टाड मेवाडके जिस समयका इतिहास लिख गये हैं, इस समय समयपरिवर्त्तनके साथ उस शासन विभागके सामान्य २ विषयोंमें कुछ २ रूपान्तर हो गया है। टाड साहब मेवाडके जिस समयतकका इतिहास लिख गये हैं, हमने उससे आगे के समयका इतिहास यथोचित स्थानोंमें लिख दिया है; उसके पढनेसे पाठकोंको यह अवश्य ही विदित हो जायगा कि, मेवाडेश्वर राणाके साथ अधीन सामन्त मण्डलीके सम्बन्धके बन्धनका इस समय कितना रूपान्तर हो गया है इस समय हमको उस रूपान्तरका पुनरुल्लेख न करके कर्नल टाडका अनुसरण करना ही उचित ज्ञात होता है।

इतिहासलेखक लिख गये हैं कि, जिस समय मेवाडने धन, मान, गौरव व वीरता विक्रममें बहुत ऊंचा स्थान पाया था, जिस समय राणालोगोंके प्रबल प्रतापसे मेवाडके प्रत्येक प्रान्तमें पूर्णरूपसे शान्ति विराज रही थी, उस सुखमय समयमें राणागण व्यवस्थापिका सभामें चार प्रधान मन्त्री और उनके सहकारी मंत्रियोंके साथ बैठकर-साधारणत्व निर्णय और प्रजाके सम्पूर्ण अभाव दूर करनेके लिये प्रयोजनीय विधि व्यवस्थाओंकी रचना किया करते थे । केवल दीवानी कर्म्मचारियोंके सिवाय सैनिक सामन्तमण्डली भी उस व्यवस्थापक सभामें प्रवेश नहीं कर सकती थी ।

मेवाडकी पतन दशामें—जिस समय राज्यके चारों ओर ही विशृंखलता हो रही थी, जिस समय शान्तिदेवी एक साथ अन्तर्द्धान हो गई थीं, जिस समय राजशासन शक्ति बहुत दुर्बल हो गई थी, उस समय व्यवस्थापन और विचार विभागका कार्य प्रायः रुक गया था, किन्तु सन्तोषका विषय है कि, स्थानीय प्रयोजन सम्बंधी सब व्यवस्थाके कार्य उन स्थानोंकी स्वयं सिद्ध विचारालय पञ्चायत मंडली द्वारा नियमित रूपसे संपन्न होते थे । इस हितकारी पञ्चायत समाजका विषय पीछे भलीभाँति लिखचुके हैं, इस स्थानपर उसका लिखना अनावश्यक है । प्रत्येक विभागमें एक एक स्थायी कर्मचारी नियुक्त हैं और इसके अतिरिक्त प्रत्येक सीमान्तमें स्थित छावनीमें एक २ शासनकर्त्ता नियुक्त हैं, यह बात ऊपर यथोचित स्थानमें लिख चुके हैं । शेषोक्त राजपूत तीन प्रकारके कामों-

में नियुक्त हैं, प्रथम सामन्तोंके द्वारा प्रेरित हुई सामाके रक्षार्थ सेनाका एक संयोग करके उनको नियमित रखते हैं। दूसरे वाणिज्य शुल्क संग्रह और तीसरे—विचारकार्य्य संपन्न करते हैं। विचार कार्यकी "चबुतर" अर्थात् धर्माधिकरणसे ही निष्पत्ति होती है और "चोटिया" लोग उस धर्माधिकरणमें एकत्रित होकर विचार करके विचार कार्यमें विशेष सहायता करते हैं। प्रत्येक नगर और ग्रामसे प्रजा द्वारा प्रतिनिधि-स्वरूप एक २ मनुष्य चोटिया चुना जाता है, और निर्द्धारित चोटिया निरपेक्ष भावसे जबतक न्याय विचारकी सहायता कर सके और विचार योग्य विषयके कूट प्रश्नोंकी यथार्थ व्याख्या करे उतने दिन तक उसके उस प्रतिनिधि पदपर बैठनेमें कोई विघ्न नहीं किया जाता।

राजस्थानके प्रत्येक प्रधान २ नगरमें "नगरसेठ" नामक एक प्रधान विचारक हैं। नगर वा ग्रामके विशेष मान्यपुरुष क्रमशः उस पदपर नियुक्त होते रहते हैं उक्त चोटिया लोग उस प्रधान विचारकके सहकारी माने जाते हैं। साधारणतः पाटल और पटवारी लोगोंमेंसे चोटिया चुने जाते हैं। प्राचीन इंग्लेंडके दशमांश करसंग्राहक फ्रांसके डिकेनस, और महाराष्ट्रियोंके दशन्दीके समान पाटललोग करसंग्राहक हैं। पूर्वकालमें फ्रांसराज्यके "स्कावनी"× नामक विचारक सहकारीगण जिस प्रकार प्रजाके द्वारा निर्वाचित होते थे, रजवाडेके चोटिया और पञ्चायतें भी उसी प्रकार विचारक सहकारी रूपसे निर्वाचित होती हैं। किन्तु यह सब विचारालय केवल प्रत्येक प्रधान २ नगरके लिये विशेष रूपसे निर्द्धारित हैं, इसके सिवाय किसी २ साधारण आवश्यकीय विषयकी मीमांसाके लिये नगर वा ग्रामके सम्पूर्ण प्रतिष्ठित लोग पञ्चायत रूपसे बैठते हैं, पूर्वकालमें समाजकी प्रत्येक श्रेणीसे ही वह पञ्चायत निर्वाचित होती थी।

जिन लोगोंका विश्वास है कि "भारतवर्ष बहुत दिनसे यथेच्छाचार नीतिके अनुसार शासित होता चला आता है और पहिले भी शासन विभागमें प्रजाको किसी प्रकारका अधिकार नहीं था।" वह ऊपरके प्रस्तावको पढकर क्या फिर ऐसा कहेंगे? वर्त्तमान सभ्य जगतमें समाजसृष्टिके बहुत काल पहिले भारतवर्षकी साधारण प्रजाको शासन विभागके अनेक बिषयोंमें जो शक्ति थी, इतिहासके पढनेवाले उसको भलीभाँति जानते हैं। केवल तब ही नहीं अब भी भारतके अनेक प्रान्तोंमें इस प्रकारकी पञ्चायतशैली विराजमान है। एक समय बङ्गदेशमें भी पंचायती शासन प्रचलित था—उत्तरप्रान्तमें अबतक है। दुर्दान्त यवनोंके शासनमें भी उस रीतिका कुछ व्यत्यय नहीं हुआ था। बङ्गालमें बृटिश शासन जैसे प्रबल प्रभुत्व विस्तार कर रहा है, भारतके अन्यान्य प्रान्तोंमें—भारतके देशी राजोंके अधिकारमें वैसा प्रभुत्व विस्तार नहीं कर सका। प्रबल प्रभुत्व विस्तारके साथ बृटिश शासनने प्राचीन पंचायतप्रथा भी एक

× रोमके विचारालयके "जुडिसेस सिलेक्टिके" समान यह लोग एक प्रकारके जूरी गिने जाते थे।

साथ लुप्त कर दी है। इस कारण स्वदेशमें उस पंचायत प्रथाका दीर्घकालसे अभाव देखकर ही बहुतोंको विश्वास हो गया है कि "विचार वा शासन विभागमें पहिले भी हमारी कुछ क्षमता नहीं थी।" यद्यपि बृटिश गवर्नमेंटने इस समय भारतके अनेक स्थानोंमें इस देशवालोंको अवैतनिक विचारके (मजिष्ट्रेट) और जूरी पदपर स्थापन करनेकी विधि बना दी है, किन्तु प्राचीन पंचायतके साथ तुलना करनेपर इसका फल बहुत सामान्य ज्ञात हुआ जो लोग भारतसे शासन रीति सीख कर मनुष्य नामसे गिने गये हैं—इस समय वह लोग ही भारतके नेता बनकर उस भारतकी प्राचीन प्रथाके स्थानमें नवीन प्रथा प्रचलित कर रहे हैं! कालकी क्या ही विचित्र गति है! जो जाति एक समय जगतकी शिक्षक थी, उस जातिको इस समय अन्य जातियाँ शिक्षा दे रही हैं? कालचक्रकी अधीनतामें ही यह परिवर्त्तन होता है, कौन कह सकता है कि, उस कालचक्रके अधीनमें अब फिर परिवर्त्तन न होगा।

टाड साहब लिखते हैं कि; पूर्वकालमें चबूतरे अर्थात् विचारालय केवल खालिसा जमीन अर्थात् राणाके अधिकृत भूखण्डमें ही स्थापित होती थीं। किसी सामंतके आधीनवाले देशमें वैसे विचारालयका अधिवेशन होनेपर सामंत लोग उसके द्वारा अपनेको बहुत ही कलङ्करूप समझते हैं। सामान्त वृंद यद्यपि राणाके अधीन हैं, किन्तु वह अपने अपने देशमें बिलकुल स्वाधीनता भोगते हैं; इस कारण शत्रुओंका आक्रमण निवृत्त करनेके लिये राणा यदि किसी सामन्तके अधिकृत देशमें छावनी स्थापनके कारणसे वा बाणिज्य शुल्क संग्रहके लिये राजपताका स्थापन करें तो सामन्त लोग उससे अपने लिये अपमानित समझते हैं, और यदि राणाकी पताका किसी सामन्तके अधिकारी दुर्गके ऊपर उडाई जाय तो लोग यह समझते हैं कि इस सामन्तका सम्पूर्ण देश राणाने अपने अधिकारमें कर लिया। सामन्तमण्डली वा उनके अधीनस्थ लोगोंके ऊपर प्रायःही अनेक कारणोंसे दण्ड देनेकी आवश्यकता होती है,किन्तु उससे आभ्यन्तरिक मनोविवाद और अबाध्यता प्रबल होनेपर, राणा बलात्कारसे उनको दंड देते हैं।

रोजाना।—सामन्तोंमें कोई किसी प्रकारके अपराधमें अपराधी होकर, दंड देनेमें विलम्ब, वा राणाकी किसी प्रकारकी आज्ञाका अनादर, अथवा राणाके बुलानेके अनुसार राजसभामें उपस्थित होनेमें बिलंब करे तो राणाका एक दूत वा राजकर्म्मचारी दश बीस अश्वारोही और पदातियोंकी सेनाके साथ उस सामन्तके अधिकारके देशमें जाकर, राणाके हस्ताक्षर और मोहराङ्कित आदेशपत्र सामन्तके हाथमें देता है और अपने लिये रोजाना अर्थात् रसद मांगता है। अपराधी सामन्त जितने दिनतक राणाकी आज्ञाका पालन न करें उक्त दूत वा राजकर्म्मचारी सेनासहित उतने दिनतक उस सामन्तके घर रहनेको बाध्य है। यद्यपि राजपूत सामन्तगण दंड देनेमें अबाध्य अथवा राजसभामें उपस्थित होनेमें देर करते हैं तब यही उपाय ठकि बैठता है। किन्तु इससे कभी२ अत्यन्त शोचनीय कांड हो जाते हैं, और सामन्तोंको अत्यन्त निग्रह भोगना होता है।

इस विषयमें अनेक समय सामन्तमण्डलीके निकटसे अनुयोग भी उपस्थित होता है।

सामन्तमंडलीके अधिकृतदेशोंमें विचार वा राजस्व विभागमें राणाके नियुक्त किये राजपुरुष प्रायः हस्तक्षेप नहीं करते। सामन्तगण स्वाधीन भावसे ही अपने २ प्रदेशोंका विचारकार्य्य सम्पन्न करते हैं। किन्तु कोई सामन्त यथेच्छाचार शासन नहीं कर सकता। सामन्तोंके अधिकृतदेशोंमें पञ्चायतकी प्रणाली भली भांति प्रचलित है। देवगढके सामन्तने अपने अधीन सरदारोंके निकट एक समय दृढ रूपसे प्रतिज्ञा की थी कि "हम तुम लोगोंके मन्तव्य और परामर्शके विना कभी किसी साधारण विषयमें हस्तक्षेप, किसी प्रकारका अनुष्ठान वा विधि व्यवस्था प्रचलित नहीं करेंगे। *

राज्यमें विग्रह और अशान्ति उत्पादित वा विजातीय आक्रमणकी संभावना होनेपर मेवाडके सम्पूर्ण सामन्त राणाकी सभामें जाकर अपना२ मन्तव्य प्रकाश करते हैं। राणा एकत्रित सामन्त मंडलीका मन्तव्य सुनकर ही कर्त्तव्याकर्त्तव्यका निर्णय करते हैं, अपनी इच्छानुसार किसी प्रकारके कार्य्य करनेमें अग्रसर नहीं होते। मेवाडके राजनैतिक किसी गूढ प्रश्नके उपस्थित होनेपर सबसे पहिले प्रत्येक सामन्त अपनी२ सभामें उसका विशेष आन्दोलन करके यह निश्चय कर लेते हैं कि राणाकी सभामें कैसा मंतव्य प्रकाशित करना उचित है, इसके अनंतर प्रधान सभामें जाकर प्रत्येक सामंत युक्ति और प्रमाणसहित अपना २ मंतव्य सूचित कर देते हैं।

यदि किसी सामन्तको उपरोक्त मंत्रणा सभामें स्थान न मिले तो वह अपनेको महा अपमानित समझता है। उस महासभामें उक्त श्रेणीके प्रश्नके आन्दोलन और सभालोचनासे सामन्तोंके द्वारा जो मंतव्य दिया जाता है, वह सामान्य नहीं होता। मेवाडेश्वर राणा राज्यशासनके लिये जिस प्रणालीसे सभा स्थापन और कर्मचारी नियुक्त करते हैं, सामन्त मंडली भी उसी रीतिपर अपने २ अधिकृत प्रदेशोंमें पुरातनकालसे उसी प्रकार सभा और कर्म्मचारियोंको नियुक्त करती चली आती है। सामन्तके अधीनमें स्थित सरदारगण प्रधान राजस्वकर्मचारी, पुरोहित, कवि और दो तीन प्रजाके प्रतिष्ठित लोग प्रत्येक सामन्तकी सभामें एकत्रित होकर साधारण गंभीर प्रश्नके विषयमें मतवाद संगठन करते हैं। राणा स्वयं जिस प्रकार अपने मंत्री और सभासदोंके साथ उस श्रेणीका प्रश्न लेकर आन्दोलन करनेमें नियुक्त होते हैं सामन्तगण भी उसी प्रकार आन्दोलन करके अपना २ मंतव्य स्थिर करते हैं, अन्तमें महासभामें जाकर सब पृथक्२ मंतव्य प्रगट कर देते हैं। इस प्रकार प्रत्येक राजनैतिक अनुष्ठान वा साधारण कार्य्य विशेष आन्दोलन और तर्कवादके पीछे राणा द्वारा निर्द्धारित होता है।

उपरोक्त वाक्य हमारे हृदयपर किस भावका आविर्भाव करते हैं? अब कौन कहेगा कि भारत चिरकालसे यथेच्छाचार शासनद्वारा शासित होता आता है? वर्त्तमान सभ्य जगतमें पार्लियामेंट महासभा वा साधारण तंत्र सभा स्थापनके बहुतकाल पहिले रजवाडेमें साधारण मतवाद के ऊपर ही सब कार्य्य निर्भर रहते थे। इसके द्वारा क्या यह

* परिशिष्ट--तीसरी अनुलिपिका अनुवाद देखो।

निःसंदेह रूपसे प्रतिपन्न नहीं होता है ? अनेक अंग्रेजोंका विश्वास है कि-"भारतमें अब भी स्वाधीन मतवादकी उत्पत्ति नहीं हुई।"हम कहते हैं कि यह उनकी भूल है।चाहे जाती समस्त शक्ति लुप्त हो जाय,जातित्व बिन्दुमात्र भी न हो;परंतु जहां मनुष्य हैं;वहां साधारण मतवाद चिरकालसे अवस्थान करता आता है। असभ्य जंगली जातिमें भी साधारण मतवाद बहुत कालसे विराजमान है। जिस देशमें साधारण मतवादके ऊपर राजा वा शासक सम्प्रदायका आदर अधिक है, उस देशमें ही साधारण मतवाद है; ऐसा सब ही स्वीकार करते हैं, किन्तु जिस देशके शासक वा भूपाल साधारण मतवादका अनादर करते हैं, तथा साधारण मतानुसार राज्यशासन वा किसी प्रकारका राजनैतिक अनुष्ठान, अथवा शासन विभागका कोई परिवर्त्तन वा संस्कार नहीं करते, उस देशमें साधारण मतवाद होनेपर भी सब उसका अस्तित्व नहीं देख पाते। सामन्त शासन-प्रणालीके अनुसार ही जब पश्चिमी जगत् एक समय उस शासन प्रणालीसे शासित होता था, तब उस पश्चिमी जगतने भारतके नृपति वृन्दके अनुकरणसे ही साधारण मतवादके ऊपर आदर करना सीखा था, यह अनुमान कल्पित नहीं है। किन्तु कालकी कैसी विचित्र लीला है ! उस पश्चिमी जगत्की एक जाति इस समय हमारी अधिनायक होकर भारतके साधारण मतवादके ऊपर आदर दिखानेमें बिलकुल उदासीन है, यथेच्छ शासनकारी उपाधि लेनेमें वह जाति इस उन्नीसवीं शताब्दीमें कुछ भी लज्जित नहीं होती। जितने अंग्रेज प्रसन्न होकर यह कहते हैं कि भारतमें साधारण मतवाद पहिले नहीं था, हम कहते हैं कि, वह सब भारतसे ही साधारण मतवादका आदर करना सीख कर कैसी भ्रान्तिमें पडे हुए हैं। और नवीन रोशनीकी चकाचौंधमें आये हुए जितने मनुष्य राजनीतिका क, ख; सीखकर ही यह कहते हैं कि "इस देशमें साधारण मतवाद नहीं है, उन लोगोंको इस समय उपरोक्त बातोंको विचारकर मौन धारण करना उचित है।

मेवाड जिस समय उन्नतिके ऊँचे शिखरपर आरोहण करनेमें समर्थ हुआ था, राजपूत जातिकी बाहुबल गौरव प्रतिमा जिस समय भारतके प्रत्येक प्रान्तमें व्याप्त हुई थी जिस समय जातीय एकता, साहस, शौर्य्य, उद्यम और उद्दीपनाने राजपूत जातिको सुधामय फल भोगनेमें समर्थ कर दिया था उस समय मेवाडपतिके अधीनमें पन्द्रह सहस्र अश्वारोही सेना अनेक प्रान्तोंसे आकर सम्मिलित होती, और संग्राम भूमिमें संहारमूर्ति धारण करके दौडती थी। वह सैनिक राणाके निकटसे वेतनमें कुछ नहीं पाते थे।केवल भूवृत्ति संभोगके बदलेमें युद्धके लिये जानेको बाध्य होते थे।यही सामन्तशासन-प्रणालीका मूल उद्देश है। प्रथम श्रेणीके सामन्त जिस प्रकार अपने २ देशकी आयके अनुसार पचाससे अधिक सेनाको प्रत्येक युद्धके लिये उपस्थित करते हैं, उसी प्रकार सामान्य भूवृत्ति प्राप्त मनुष्य केवल एक अश्वारोही उपस्थित करनेको बाध्य है। प्रधान २ सामन्त जिस प्रकार भूवृत्तिके बदलेमें राणाके निकट सेना भेजनेको बाध्य हैं, वह स्वयं भी उसी प्रकार अधीनके सरदारोंको भूवृत्ति देकर उनके निकटसे सेना संग्रह

कर लेते हैं । वर्त्तमानमें चारों ओर शान्ति विराजित होने और बाहरी शत्रुओंका भय बिलकुल दूर हो जानेसे भूवृत्तिके बदलेमें सेना भेजनी नहीं होती । इस कारण उस प्रथाका थोडा परिवर्तन हो गया है मेवाड इतिहास वृत्तिके शेष अंशमें हमने यह विवरण लिख दिया है । इस कारण उसका यहां लिखना अनावश्यक है ।

भूवृत्ति प्राप्त होकर उसके बदलेमें सामन्तोंको कितनी सेना भेजनी होती थी, वह निर्द्धारित रीति बद्ध नहीं है । पृथक् २ देशके सामन्तगण भिन्न २ संख्याके अनुसार ही सेना रखते हैं । किंतु प्रत्येक सहस्र मुद्रा आयके लिये तीन वा दो से कम नहीं होते । इस प्रकार अश्वारोही सेनाके देनेकी व्यवस्था है । विशेष करके जिस समय सनद वा भूवृत्ति दी जाती है; उस समयकी व्यवस्थाके अनुसार किसी २ को तीन अश्वारोही और तीन पैदल प्रतिसहस्र मुद्रा आयके लिये देनेकी व्यवस्था है । भिन्न २ भूवृत्ति दानपत्रोंको पढकर ही पाठक गण इन भिन्न२ व्यवस्थाओंका विशेष विवरण जान सकेंगे । × इंग्लेण्डके राजा विलियमने * जिस समय अपना राज्य साठ हजार भागोंमें विभक्त किया था, उस समय प्रत्येक अंश प्रत्येक सेनाके लिये (२००) दो सौ रुपये देनेको बाध्य होते थे, अर्थात् प्रत्येक सेनाके लिये गढमें इतने रुपये व्यय होते थे । जो विभक्त देश सेना उपस्थित न कर सकता, उस देशको उपरोक्त धन देना होता था । मेवाडके प्रत्येक सेनापतिके ऊपर (२५०) ढाई सौ निर्द्धारित हैं ।

इंग्लेण्डमें सामन्त शासन रीति बहुत कालसे तिरोहित हो गई है । किन्तु जिस समय वहां उक्त प्रणाली पूर्णरूपसे प्रचलित थी, उस समय राजा उक्त प्रकारके सेनादलके ऊपर सब समय क्षमता नहीं चला सकते थे । एक वर्षमें केवल चालीस दिन प्रत्येक सैनिक राजकार्य्यमें नियुक्त होता था, अधिपतिके बुलानेपर स्वदेश वा विदेशमें जाकर संग्राम करना होता था । इस विषयमें रजवाडेके अधीश्वर भूतपूर्व इंग्लेण्डेश्वरोंकी अपेक्षा अधिक सुवीता संभोग और सामर्थ्य संचालन करते थे तथा करते हैं ।

राजकार्य्य साधन और राणाका ऐश्वर्य्याडम्बर देखनेके लिये कुछ सामन्तलोग एक वर्षके भीतर निर्द्धारित कई मासतक उदयपुर राजधानीमें रहते हैं; उनका निर्द्धारित समय समाप्त होनेपर, दूसरे कई सामन्त उसी प्रकार अपनी सेना सहित आकर पूर्वोक्त कार्य्यमें नियुक्त होते हैं, उस समय पहिले सामन्त अपने २ देशोंको चले जाते हैं । प्रधान २ सामरिक पूर्वोत्सवके समयपर सब सामन्त राणाकी आज्ञानुसार राजधानीमें आते हैं, और किसी शत्रुके साथ युद्ध उपस्थित होनेपर सब सामन्त सेना और रसद सहित उपस्थित होते हैं, केवल विदेश वा बहुत दूरके स्थानमें युद्धकी आवश्यकता होनेपर, राणा सामन्तोंके सेनादलके लिये कुछ रसद देते हैं ।

सामन्तोंको अर्थदण्ड वा पदच्युति ।—यूरोपखण्डमें जिस समय सामन्त शासनरीतिके अनुसार राज्य शासित होता था । उस समय अधीश्वरकी आज्ञाका पालन न

× परिशिष्ट—चौथी, पाँचवीं और छठी अनुलिपि देखो ।

* William the Conqueror.

करनेपर राजा उनके ऊपर अर्थदण्ड करते थे। मेवाडकी सामन्तमण्डलीको दिये हुए भूवृत्ति दानपत्रमें भी इसका विशेष उल्लेख देखा जाता है। * किसी सामन्तके उद्धतता प्रकाश, बुरा आचरण वा गर्वित व्यवहार करनेपर उनको भारी अर्थदण्ड देते हैं, और कभी कभी उनका सम्पूर्ण प्रदेश अपने अधिकारमें कर लेते हैं× रजवाडेके अधीश्वर सामन्तोंको पदच्युत करके उनका देश छीन लेनेकी अधिक इच्छा रखते हैं। सामन्तोंके प्राचीन भूवृत्तिकी रीति रहित कर सकनेपर; उस भूभागकी आमदनीसे स्थायी खास सेना नियुक्त कर सकनेके कारण ही अधीश्वरगण इस विषयमें सचेष्ट रहते हैं, सामन्तगण यद्यपि राजकार्यके किसी अंशसे निष्कृति पानेके लिये अर्थ दण्ड देनेको प्रस्तुत रहते हैं, परन्तु भूवृत्ति छोडनेकी किसी प्रकार इच्छा नहीं करते; कभी २ पैतृक भूभाग रक्षाके लिये प्राणोंका मोह छोडकर राणाके विरुद्ध भी खडे हो जाते हैं। कर्नल टाडके समयमें इस अर्थदण्ड और सामन्तोंके देश अपने अधिकारमें करनेके लिये राणा जिस प्रकार चेष्टा करते थे, इस समय उस प्रकार नहीं देखे जाते । इस समय विश्वविजयी बृटिश गवर्नमेंटने सबके ऊपर स्वामी बनकर, इस विषयमें राणाकी पूर्वशक्ति बहुत न्यून कर दी है।

शासन शैलीकी अपूर्णता—जिस सामन्त शासन प्रणालीका जन्म आर्यक्षेत्र भारतवर्षमें हुआ, जिस सामंत शासनशैलीके आदर्शपर एक समय पश्चिमीजग शासित होता था, अब भी जो सामंत शासनप्रणाली कुछ २ रूपांतरित होकर रजवाडेमें विराजमान है, कर्नल टाडका मत है कि वह शासनशैली सर्वांग संपन्न नहीं है उसकी अनेक विषयोंमें अपूर्णता देखी जाती है। उनकी इस उक्तिको अनेक अंशोंमें अवश्य ही सत्य कहना होगा, किंतु सामंतशासन प्रणाली शुभ फलदायक नहीं, यह बात नहीं मानी जा सकती। कर्नल टाड लिखते हैं कि सम्पूर्ण राजस्थानमें केवल नरपति वृन्दके चरित्रके ऊपर ही राज्यकी उन्नति और मंगल निर्भर है। प्रचलित शासन रीतिके केवल वही मूलदण्ड हैं; विधिके अन्यान्य बिखरे हुए अंशोंको यथोचित स्थानमें रखने और कार्य्यमें नियोग करनेकी शक्ति केवल वही रखते हैं। राजा यदि क्षणमात्र भी अपनी कार्य्य सिद्धिसे मुंह मोड ले तो सब रीतियाँ अपनी इच्छानुसार छिन्नभिन्न होकर गिर पडें। ऐसे समयमें अशान्ति, उपद्रव, अत्याचार सब ही प्रबल वेगसे दिखाई देने लगे । यदि एक प्रबल क्षमताशाली राजा उस शासनयंत्रको भलीभाँति तीव्रतासे चला सकें तो उनके परलोक जानेपर क्रमसे तीन राजा अत्यंत अयोग्यता दिखानेपर भी उस शासन रीतिसे पहिलेके समान ही अपना कार्य्य सिद्ध कर सकते हैं। उस समय यदि कोई बाहरी शत्रु प्रगट हो तो अवश्य ही विपरीत फल हो। इस सामंतशासनशैलीके अनेक अंग अपूर्ण हैं; परंतु राजपूत जातिकी राजभक्ति, देशहितैषिता, समाजविधि धर्म्मविधानके ऊपर दृढभक्ति और जन्मभूमिके ऊपर गाढी प्रीति इस प्रणालीके अनेक शोचनीय

* परिशिष्ट–१६ सोलहवीं अनुलिपि देखो ।

× कर्नल टाड लिखते हैं कि, "अर्थदण्ड और पदच्युति इन दोनोंको मैंने देखा है।"

काण्डोंको भुला देती है। यूरोप वा एशियाके किसी देशमें भी यह सामन्तशासन शैली सब अंशमें शुभफल नहीं उत्पन्न कर सकती। यह रीति एक समय केवल राज्यमें अशांति, आत्मनिग्रह और यथेच्छाचारका स्रोत प्रवाहित करती थी। किसी समय यदि कोई बाहरी शत्रु उपस्थित न होता तो भी राज्यमें भयंकर अशांति उत्पन्न होकर अन्तमें शोचनीय दशा परिवर्तित कर देती थी। चन्दावत और शक्तावत् दोनों संप्रदाय चिरकालतक परस्पर शत्रुताका आचरण करते रहे। राणाका बल क्षीण होनेसे और तीसरी श्रेणीके सामन्तोंकी राणाकी वश्यता स्वीकारमें असंमति होनेपर वह दोनों संप्रदाय परस्पर एक दूसरेके ऊपर अत्याचार, उपद्रव और राणाकी आज्ञा अमान्य करके राज्यमें हृदयभेदी काण्ड उपस्थित कर देते थे। दोनों सम्प्रदायोंके आत्मनिग्रहमें प्रमत्त होनेपर, उस समय यदि कोई बाहरी शत्रु मेवाड आक्रमणके लिये संहारमूर्त्तिसे दिखाई देता तो उस समय प्रबल ऐश्वर्य और प्रतापशालीके सिवाय क्षीणबल और साहसहीन राणा कभी उनके दमन करनेमें समर्थ न होते। किन्तु यह शासन शैली अनेक अंशोंमें अपूर्ण होने पर भी विपत्तिके समय और विजातीय आक्रमणके समय उन दोनों सम्प्रदायोंमें वीरता दिखानेका सुबीता कर देती, और वह वीरता दूसरोंको शासन प्रणालीका शुभदृश्य दृष्टिगोचर कर देती। इसके उदाहरणमें इतिहास लेखक टाड साहब एक घटना लिख गये हैं, पाठक लोगोंके जनानेके लिये उसको नीचे लिखते हैं।

जिस समय मुगल सम्राट जहांगीरने मेवाडकी प्राचीन राजधानी चित्तौर और दुर्ग अधिकार करके राणाको मेवाडकी पश्चिम प्रांतके पहाडी प्रदेश और गहन वनमें भगादिया, उस समय सीमामें स्थित कुछ भूमिको शत्रुओंसे फिर उद्धार करनेका अवसर मिला। राणा सब सामन्तोंको एकत्रित करके उस कार्य्यमें अग्रसर हुए। किसी प्रदेशके अधिकारके निमित्त राणाके किसी समय अग्रसर होनेपर, चन्दावत सम्प्रदाय ही सबसे आगे सेना सहित गमन करता था। यह सेना सहित सबसे आगे जाना राजपूत जातिके महा सन्मानका करानेवाला बहुत दिनसे गिना जाता है। किन्तु उपस्थित घटनामें शक्तावत अपने प्रतिद्वन्द्वी चन्दावतकी समान हिरोल अर्थात् अग्रगामी रूपसे जाने और सन्मानपात्र होनेके लिये आग्रह करने लगे। वास्तवमें शक्तावतगण अन्यान्य सम्प्रदायोंकी अपेक्षा जैसे बलशाली और महा साहसी थे उसके द्वारा वह अवश्य ही इस सन्मान प्राप्त करनेके सब अंशोंमें अधिकारी थे। शक्तावत् लोगोंके उपरोक्त प्रस्ताव उपस्थित करनेपर चन्दावत लोगोंने सूचित कर दिया कि "हम लोग परम्परासे यह हिरोल अर्थात अग्रगमनका सन्मान प्राप्त करते चले आते हैं, अतएव हम ही सबसे आगे जाकर वीरता दिखावेंगे।" धीरे २ यह विवाद यहांतक बढा कि दोनों सम्प्रदाय ही परस्पर आक्रमणपूर्वक तलवारद्वारा इसकी मीमांसा करना उचित समझने लगे किन्तु बुद्धिमान राणाने यह संकट देखकर कहा कि "अन्तला नामक जिस स्थानके अधिकार करनेकी बात हो रही है, जो सम्प्रदाय सबसे पहिले उस अन्तला दुर्गमें

प्रवेश कर सकेगा, वह संप्रदाय ही हिरोल प्राप्त करेगा । राणाकी यह बात सुनकर शक्तावत संप्रदायके लोग विवाद छोडकर सन्मान संग्रह करनेके लिये शीघ्र ही अन्तलाकी ओर दौडे और इधर चन्दावत् संप्रदायने भी वीरत्व, विक्रम प्रकाशकी शुभ अवसर प्राप्तिमें द्विरुक्ती न करके प्रतियोगी सम्प्रदायके समान जय प्राप्तिके लिये बाहर होनेमें क्षणमात्र भी विलम्ब न किया ।

अन्तला राजधानी उदयपुरके पूर्वप्रान्तमें नौ कोशकी दूरीपर सीमाका दुर्गस्वरूप है । इस स्थानसे चित्तौरकी ओर एक बहुत पुराना मार्ग गया है । अन्तला ऊँचे भूखण्डके ऊपर स्थापित है चारों ओर अभेद्य पत्थरका बना ऊँचा परकोटा है और उसके बीच २ में ऊँची चोटीके महल विराजमान हैं। एक नदी परकोटेके नीचे २ निकल गई है । * उस बीचमें शासनकर्त्ताका निवास भवन है, उसके चारों ओर भी परकोटा है। केवल एक द्वारमें होकर ही उस दुर्गमें प्रवेश किया जाता है ।

सामर्थ्य और प्रभुत्वके लिये सदाके प्रति द्वन्द्वी वह शक्तावत् और चन्दावत गण गौरव प्राप्त करनेकी इच्छासे प्रतियोगी बनकर एक समयमें ही सूर्योदयके पहिले अपने २ लक्ष्य स्थल अन्तलाकी ओर बडी वीरताके साथ दौडे, हिरोलका सन्मान लाभ ही उनका उद्देश था । दोनों सम्प्रदायके हृदय आशासे भरे थे इस कारण दोनों ओरके कवियोंने वीर राजपूतोंके हृदयोद्दीपक सङ्गीत रचनासे प्रत्येकको रणोन्मत्त कर दिया। प्रबल उद्दीपना दोनों सम्प्रदायोंको बडे वेगसे ले चली ।

शक्तावत सम्प्रदायने अन्तला दुर्गके द्वारकी ओर ही चरण बढाये थे, इस कारण उन्होंने सूर्य्योदयके पहिले ही वहां पहुंचकर असावधान शत्रुसेनाको चौंका दिया । यवन सैनिक अकस्मात् राजपूतोंको आया हुआ देखकर तत्काल दुर्गके परकोटेमें आत्मरक्षाके निमित्त शस्त्र लेकर खडे हो गये । उस समय समराग्नि प्रज्वलित हो गई ।

चन्दावतलोग भी यद्यपि उस ही समय बडे वेगसे बहिर्गत हुए थे, किन्तु वह भिन्न मार्गमें जाने और मार्गके न जाननेसे एक जलाशयपर जा पहुंचे । वह उसमें कुछ दूर जाकर लौटनेको बाध्य हुए उसी समय सौभाग्यसे एक अन्तलावासी गडरिया वहां आ गया, उसने उनको मार्ग बता दिया। रणोन्मत्त चन्दावत लोग बडे साहससे उसको पार करके अन्तला दुर्गकी ओर दौडे । शक्तावत लोगोंकी अपेक्षा चन्दावत विशेष समर कुशल और दुर्गके आक्रमणकी सामग्री रखनेमें बहुत शिक्षित थे, इस कारण वह अपने साथ सीढी ले आये थे ।

जिस समय शक्तावतलोग दुर्गमें प्रवेश करनेकी यथासाध्य चेष्टा कर रहे थे उसी समय चन्दावतलोग वहां पहुंच गये, और हुंकार शब्दसे दुर्गके भीतर रहनेवाले शत्रुओंके हृदय प्रकम्पित करके दुर्गके अधिकार करनेमें प्रवृत्त हुए ।

---

* कर्नेल टाड साहब लिख गये हैं कि "यह दुर्ग इस समय बिलकुल ध्वस्त हो गया है, किन्तु ऊँची चोटीके महल और प्राकारके कुछ अंश अब भी पाये जाते हैं ।"

चन्दावत सम्प्रदायके नेताने दुर्गप्राकारमें सीढी लगाई और उसके ऊपर चढकर अपने सब अनुगामियोंको आनेकी आज्ञा दी। सीढीपर चढते ही शत्रुओंका गोला आकर गिरा।—उनकी आशा पूरी न हुई—हिरोलका सम्मान नहीं प्राप्त हुआ—उस गोलेके लगनेसे उनका शरीर प्राणशून्य होकर कटे हुए वृक्षके समान सेनामें गिर पडा।

शत्रुओंकी सेना दोनों सम्प्रदायको ही व्यर्थ मनोरथ करनेकी चेष्टा कर रही थी। जिस समय चन्दावत सम्प्रदायके नेताके भाग्यमें यह शोचनीय बात उपस्थित हुई उस समय दुर्गके द्वारपर शक्तावत सम्प्रदायके नेता क्रोधोन्मत्त सिंहके समान महा गर्जन और महा विक्रमसे दुर्गाधिकार करनेकी विशेष चेष्टा कर रहे थे। शक्तावत नेता सबसे पहिले बडे डीलवाले प्रमत्त हाथीपर चढे और भीतर जानेके लिये दुर्गद्वार तोडनेकी चेष्टा करने लगे। उन्होंने हाथीको आगे बढाना चाहा, परन्तु किवाडोंमें बडी २ तीक्ष्ण कीलें लगी हुई थीं, इस कारण हाथी उसके तोडनेमें सम्मत न हुआ। शत्रुओंकी गोलियोंसे अपने सैकडों सैनिकोंको मरता हुआ देख और चन्दावत सम्प्रदायका भयानक शब्द सुनकर शक्तावत नेताको अपने पक्षकी जीतमें संशय हो गया। उन्होंने विवश हो अपने प्राणोंका मोह छोडकर केवल अपने सम्प्रदायको हिरोल समान दिलानेके लिये बडे साहसके साथ उन तीक्ष्ण कीलयुक्त किवाडोंपर अपना शरीर लगा दिया; और महावतको उसके प्राणदण्डका भय देकर अपने शरीरके ऊपर हाथी चलानेकी आज्ञा दी। यद्यपि हाथीवान यह जानता था कि स्वामीके ऊपर हाथी चलानेसे अवश्य ही उनके प्राण निकल जायँगे; तथापि अपने प्राणदण्डके भय और रणोन्मत्त प्रभुकी आज्ञासे उस विराटकाय हाथीको प्रभुके शरीरके ऊपर चला दिया। अमित बलशाली हाथीके देहभारसे दुर्गका द्वार उसी समय टूट गया, तत्काल हाथीसे पिसे हुए अपने स्वामीके शवपर होते हुए शक्तावत सैनिक दुर्गमें घुसकर यवनोंका संहार करने लगे। किन्तु शोक! यद्यपि शक्तावत सम्प्रदायके नेताने अपने सम्प्रदायको हिरोल सन्मान दिलानेके लिये अपना अमूल्य जीवन छोड दिया, किन्तु उस सम्प्रदायको वह सन्मान नहीं मिला, कारण कि शक्तावत सम्प्रदायके नेताके इस प्राण त्याग और शक्तावत लोगोंके दुर्गमें प्रवेश करनेसे पहिले ही अर्थात् जिस समय उन्होंने चन्दावत लोगोंकी भयङ्कर जयध्वनि सुनी थी, उसी समय प्रतिद्वन्दी चन्दावत सम्प्रदायके नेताका जीवन हीन शरीर अन्तला दुर्गमें गिर गया, और चन्दावत सैनिक दुर्गके भीतर घुस गये थे।

चंदावत सम्प्रदायके नेता गोला लगनेके कारण जिस समय सीढीसे नीचे गिर गये, उसी समय उनके नीचेके अधिकारी और अतिनिकट आत्मीयने चन्दावतदलकी अध्यक्षताका भार ग्रहण किया। वह नवीन अधिनायक देवगढके सामन्त थे। वह जैसे गर्वी और निडर थे, वैसे ही सब विपत्तियोंमें आगे बढनेके साहसी थे, और भयङ्कर सिंहके साथ भी युद्ध करनेमें नहीं डरते थे। देवगढपतिके इस अनुपम

साहसको देखकर सबने उनको बातुल ठाकुरकी उपाधि दी थी । चंदावत सम्प्रदायके नेताके गिरते ही देवगढपतिने उनके शवको अपनी चादरमें बांधकर पीठपर लाद लिया, और भाला हाथमें लिये साक्षात् यमराजके समान संहार मूर्ति धारण करके सीढीपर चढ़ गये, दुर्गके परकोटेपर पहुंचकर बडी वीरताके साथ युद्ध करने लगे और मुहूर्त्तमात्रमें ही यवनोंकी सेनाका संहार कर दुर्गप्राकारके ऊपर स्वामीका शव स्थापन कर दिया, उस समय उन्होंने भयङ्कर शब्दसे जय घोषणा करके कहा कि, "हमने ही पहिले प्रवेश किया है ? हिरोल चदावत सम्प्रदायको मिलेगा ।" देवगढपतिका वह शब्द क्षणमात्रमें ही सम्पूर्ण चंदावत सैनिकोंद्वारा प्रतिध्वनित हुआ, और जिस समय शक्तावत लोग दुर्गद्वारमें प्रविष्ट हुए उसी समय दुर्गप्राकार चंदावत सैनिकों द्वारा अधिकृत हो गया । यद्यपि उन शक्तावत सैनिकोंके द्वारा ही मुगल सेना बिलकुल नष्ट भ्रष्ट और मेवाडकी जयपताका उडी थी, परन्तु हिरोल सन्मान चंदावत सम्प्रदायको ही प्राप्त हुआ था । *

साम्प्रदायिक प्रतिद्वन्दिता और स्वदेश हितैपिताके साधनमें प्रतियोगिताका केवल यही एक निदर्शन नहीं है, तथा साम्प्रदायिक द्वेषभावके जातीय शुभ साधनमें परिणतिकी केवल यही एक घटना नहीं है, किन्तु ऐसी घटनायें रजवाडेके प्रधान २ राज्योंमें विशेष करके मारवाडके साहसी राठौरोंमें सैकड़ों बार हो गई हैं ।

सम्प्रदाय समूहको परस्पर एक दूसरेके विरुद्ध इस द्वेषभाव युक्त कर रखनेसे एक पक्षमें अवश्य ही मंगल होता है । उनके परस्परके विवाद समय २ पर देशके बडे २ हित साधन करते हैं, और अधिपतिगण यदि शासन कुशल हों तो इन झगडालू सम्प्रदायोंके द्वारा बहुत इच्छित कामोंका उद्धार कर लेते हैं । शक्तावत और चन्दावत इन दोनों सम्प्रदायोंमें एक न एक समय समय पर राणाके पक्षमें रहते थे, इस कारण से ही उपरोक्त अनिष्ट फल लुप्त हो गया था । कर्नेल टाड जिस समय मेवाडमें थे, उस

* कर्नेल टाड टीकामें लिखते हैं कि, "हमारे मित्र अमरने (यह चन्दावत सम्प्रदायकी महाबली शाखा संगावतके कवि थे । सङ्गावत लोगोंके नेता देवगढपति थे; उनका विषय कई जगह लिखा गया है; यह प्रायः ही दो सहस्र सेना सहित रणक्षेत्रमें उपस्थित होते थे) एक विश्वासयोग्य घटना मुझसे कही थी । जिस ससय राजपूत सेनाने अन्तला दुर्ग आक्रमण किया, उस समय दो ऊंचे पदके मुगल चतुरङ्ग क्रीडामें मत्त थे जब उन्होंने राजपूतोंके आक्रमणका समाचार सुना तो उन्होंने यह सिद्धान्त करके कि "मुगलसेनाकी अवश्य ही विजय होगी ।" युद्ध करनेके बदले उस खेलमें और भी मन लगाया । जिस समय भीतरका दुर्गप्राकार राजपूत सेनाने अधिकार कर लिया, उस समय उनको चेतनता हुई । दूसरे मुहूर्त्तमें ही राजपूत सेनाने उस कमरेमें घुसकर दोनों खेलनेवालोंको घेर लिया । खेलमें उन्मत्त हुए दोनों मुगलोंने विजेता लोगोंसे यह प्रार्थना करी कि "हमारा खेल समाप्त हो जाने दो ।" राजपूत लोगोंने इस बातको स्वीकार कर लिया, किन्तु शक्तावत और चन्दावत दोनों सम्प्रदायके नेताओंके स्वर्ग सिधारनेसे राजपूतोंके हृदयसे दया बिलकुल दूर हो गई थी, इस कारण खेल समाप्त हो जानेपर उन खेलनेवाले दोनों मुगलोंका जीवन दीप निर्वाण कर दिया गया था ।"

समय दोनों सम्प्रदाय ही राजभवनमें क्षमता और प्रभुत्व प्राप्तिके लिये बड़ी चेष्टा कर रहे थे। बहुत शताब्दी पहिलेसे ही दोनों सम्प्रदायोंमें पर्याय क्रमसे कोई न कोई "राजभक्त" अथवा "विद्रोही" उपाधिको प्राप्त होते आते थे। जो सम्प्रदाय राणाका अनुग्रहपात्र हो वा जिस सम्प्रदायके नेता अपनी बुद्धि और बाहुबलसे राजमहलमें सबसे ऊंचा सन्मान प्राप्त कर सकें, वह सम्प्रदाय ही प्रायः राज्यके सम्पूर्ण विषयोंमें सामर्थ्यका चलाना और प्रभुत्व प्रकाश कर सकता है। इस कारण पूर्वकालमें एकपक्षके राणाका अनुग्रह भाजन होते ही दूसरा पक्ष विद्वेषके वशीभूत होकर समय २ पर बहुतसे अनिष्टकारी कार्य्य करनेसे भी नहीं चूकता था। ऐसे साम्प्रदायिक विद्वेष इस समय प्रायः बिलकुल दूर हो गये हैं। कालचक्रके अनुसार राजपूत जातिकी जीवनगति, राजपूत जातिका नित्यकर्म, राजपूत जातिका चिर अवलम्बनीय व्रत इस समय रूपान्तरित हो गया है। इस कारण उस विद्वेष भावका अभाव भी स्वतः ही दिखाई देता है। कर्नेल टाड लिख गये हैं कि, "शक्तावत लोगोंकी संख्या बहुत न्यून है, किन्तु वह लोग प्रतिद्वन्दी चन्दावत लोगोंकी अपेक्षा कई अंशमें साहसी और बलशाली विदित हैं।" कर्नेल टाड मेवाडकी राजपूत जातिके बीचमें शक्तावत लोगोंको ही अधिक वीर और साहसी कहकर सन्मान दे गये हैं।

इसके अनन्तर कर्नेल टाड लिखते हैं कि, "भारतवर्षका प्रत्येक राज्य जबतक एक प्रकारकी मूल शासननीतिके अनुसार शासित हुआ था, एक प्रकारकी सामन्त शासन प्रणाली जबतक सम्पूर्ण भारतवर्षमें प्रचलित थी, तबतक निःसंदेह ही यह शैली शुभ फल उत्पन्न करती थी, किन्तु राजशासन शक्ति प्रबल होनेपर यह प्रणाली कभी कार्य्यकर नहीं हो सकती। जिस स्थानमें किसी पुरुष विशेषका स्वेच्छाचार सम्पूर्ण जातिको शासित करता है, उस स्थानमें उस जातिकी स्वाधीनता अवश्य ही परिणाममें बहुत न्यून हो जाती है।" कर्नेल टाडकी यह उक्ति वास्तवमें नीतिपूर्ण है।

फिर टाड साहब लिखते हैं कि अपने प्रभुत्व और सामर्थ्यकी रक्षाके लिये रजवाडेके राजालोग दिल्लीके यवन सम्राटके हाथमें कुछ सामर्थ्य और स्वाधीनता समर्पण करनेमें बाध्य हुए थे। राजपूत नरपतियोंने यवन सम्राटोंके हाथोंमें नाममात्रको अपने २ राज्य सौंपकर सम्राटोंसे फिर सनदद्वारा राज्य ग्रहण किये थे। प्रत्येक राज्यके प्रत्येक राजाके पीछे नवीन भूपाल इसी प्रकार सम्राटोंके निकटसे राज्यशासनके लिये सनद ग्रहण करते थे, इस कारण ही वह यवन सम्राटको अपना सर्वोपरि स्वामी मान लेते थे। उस सनद देनेके समय सम्राट देशी राजोंको मान्यसूचक खिलअत स्वरूप हाथी, घोडा, अस्त्र और रत्नालङ्कारादि पुरस्कार देकर "महाराज" वा "राणा" की उपाधिके साथ सन्मानसूचक मनसबदारकी उपाधिसे भूषित करते थे। देशी राजा सम्राटकी वश्यता स्वीकार करके मुसलमानोंके नौ वर्ष पीछे सम्राटको नजराना अर्थात् धनादि देनेको बाध्य होते थे। सम्राटके साथ देशी राजालोगोंका इस प्रकारका सन्धिबन्धन निश्चित था

कि, सम्राटके बुलानेपर निर्द्धारित संख्या सेनासहित प्रत्येक राजा सम्राटभवन वा युद्ध-क्षेत्रमें उपस्थित होनेको बाध्य थे । यवन सम्राट प्रत्येक देशी राजाको एक २ राजपताका, एक २ जयघोषणाका बाजा और अन्यान्य राजचिह्न भी दिया करते थे; राजालोग अपनी २ सेनाके साथ उन सबका व्यवहार किया करते थे । * इन सब लक्षणोंद्वारा हम यह देखते हैं कि यवन शासनमें महान सामन्त शासन प्रणाली प्रचलित थी । दिल्लीके तातारी सम्राटोंने यह पताका आदि देनेकी प्रथा अपने अधीनवाले देशी राजाओंसे सीखी थी अथवा मध्य एशियासे सीखी थी, यह बात अन्य स्थानमें प्रगट होगी ।

भारतके नाना प्रान्तों से उन सुसज्जित देशी राजा लोगोंका सेनासहित मुगल सम्राट् राजधानीमें अथवा समरक्षेत्रमें सम्मिलन, कैसा ऐश्वर्य्य आडम्बर और महान प्रभुत्व प्रकाशक था, उसका सहजमें अनुमान नहीं हो सकता ।

यद्यपि सम्राट हुमाय़ूँने भी कई राजपूत राजाओंको अधीनताकी जंजीरमें बांध लिया था, किन्तु उन वशीभूत राजपूतोंकी सहायता प्राप्ति उनके लिये अनिश्चित थी । उनके पुत्र अकबर ही सबसे पहिले राजपूत राजाओंके ऊपर पूर्ण प्रभुत्व दिखानेमें समर्थ हुए थे और अपने सिंहासनको आश्रय और उज्ज्वल अलङ्कार रूपमें परिणत करनेके लिये उन्होंने राजाओंको हस्तगत कर लिया था। जो प्रबल शासनशक्ति उन्होंने संकलन करी थी और जिस शासनशक्तिके चलानेमें वह विशेष शिक्षित थे, वह शक्ति जैसी दुर्द्दमनीय थी वैसी ही अभेद्य थी, इधर उनकी सच्चरित्रता, साधुता और उनकी अनुष्ठित शासननीतिकी श्रेष्ठताने उनके बाहु बलसे अधिकार किये देशोंकी रक्षा की थी । उन्होंने बहुत विचारके पीछे निश्चय किया था कि, देशी राजाओंके ऊपर प्रताप विक्रम दिखाने और कठोर शासन करनेसे केवल बुरा ही फल नहीं उत्पन्न होगा; बरन उसके द्वारा महा विपत्तिमें पडनेकी संभावना है, इस कारण ही वह देशी राजाओंके हृदय अधिकार, सन्मान संग्रह और भारतमें मुगल शासन जिससे विना विघ्न बाधाके रह सके उसके लिये उनके साथ सांसारिक सम्बन्धमें भी अग्रसर हुए थे ।

विख्यात मुगल आगाजखांसे जंगेज; तैमूर और बाबरकी नाडियोंके रक्तके साथ अकबरने शुद्ध राजपूत रक्तके मिलानेकी विशेष चेष्टा की । उन्होंने अनुमान किया कि "वैवाहिक सम्बन्धबंधनमें बँधकर मुगल सम्राटके निकट और फिर राजपूत वीरांगनाके

---

* सन् १८७७ ईसवीमें दिल्लीके महा दरबारमें उस समयके राजप्रतिनिधि लार्ड लिटनने जिस समय बृटिश राज्ञीकी "भारतेश्वरी" उपाधि धारणा घोषणा करी थी, उस समय भारतवर्षके प्रत्येक प्रान्तसे आये हुए हिन्दू और मुसलमान नरपतियोंको उसी प्रकार एक २ पताका दी गई थी । जयघोषण करनेवाले बाजेके बदले एक एक स्वर्णपदक भी दिया गया था । आर्य्यजातिके निकटसे यवनोंने और उनके निकटसे बृटिश जातिने यह पताका देनेकी प्रथा सीखकर, उन हिन्दू जातिके राजा लोगोंको फिर कई सौ वर्ष पीछे पताकायें दीं । कालकी लीलाको कौन समझ सकता है ?

गर्भसे उत्पन्न हुए मुगल सम्राटके औरसपुत्रके निकट, राजपूत लोग जैसी अवश्यता स्वीकार करेंगे केवल तातार सम्राटके निकट वैसी वश्यता कभी स्वीकार नहीं करेंगे। दूसरे-एक बेर राजपूतोंके साथ विवाह बंधन प्रचलित कर सकनेपर-यथा समयपर सब ही कन्यादानमें सम्मत हो जाँयगे। वास्तवमें सम्राट अकबरका यह अनुमान कभी भ्रान्त नहीं माना जा सकता। यथा समय पर राजपूत वीरबालाके गर्भसे उत्पन्न हुए मुगल सम्राटके निकट राजपूत लोगोंने अनेक स्थानोंमें भक्ति और स्नेह दिखाया था। किन्तु सम्पूर्ण राजस्थानमें केवल मेवाडके राणावंशने सम्राट अकबरका मनोरथ पूर्ण नहीं किया था। यद्यपि बलप्रयोग; भयप्रकाश, नाना कौशल और षड्यंत्र जाल विस्तारसे अकबरके पीछे गद्दीपर बैठनेवाले यवन सम्राटोंने अनेक हिंदू ललनाओंका पाणिग्रहण किया था, किंतु सूर्यवंशावतंस मेवाडके राणा लोगोंने प्राणान्तमें भी म्लेच्छके हाथमें कन्या देकर पवित्र रक्तको कलङ्कित नहीं किया। आजतक उसके कारण ही उदयपुरका राणावंश देशी राजालोगोंमें सबसे अधिक मान्य और पवित्र गिना जाकर आदरके साथ पूजा जाता है।

* अम्बेर वा वर्तमान जयपुर राज्य दिल्लीके पास है, इस राज्यके उस समयके राजा अत्यन्त क्षीण बल थे। उन्होंने ही सबसे पहिले भारतके इतिहासकी इस चिरस्मरणीय कलङ्कजनक घटनाको अर्थात् यवन रक्तके साथ पवित्र राजपूत रक्त मिलानेमें प्रधान सहायता करी थी।

अम्बेरपति राजा भगवान्दासने सम्राट हुमायूंके हाथमें अपनी कन्याका दान किया था, अंतमें यह प्रथा यहांतक बढी कि सुप्रसिद्ध मुगल सम्राटोंमेंसे बहुतसे राजपूत राजनंदनीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे।

मुगल सम्राटके औरससे, राजपूत क्षेत्रमें उत्पन्न उन विख्यात सम्राटोंके मध्यमें सम्राट जहांगीर एक प्रधान हैं; उनके हतभाग्य पुत्र खुसरू; शाहजहां * कामबक्स और औरंगजेबके विद्रोही पुत्र अकबर, × राजपूत राजकुमारीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे। औरंगजेबके पुत्र पूर्वोक्त अकबरके साथ राजपूत जातिका सम्बंध बंधन होनेसे अर्थात् अकबरके राजपूत कन्याके गर्भसे उत्पन्न होनेके कारण सब ही औरंगजेबको सिंहासन च्युत करके उन अकबरको ही भारतसम्राट पदपर अभिषिक्त करनेमें सेनासहित सज्जित हुए थे। राजपूत राजवंशके साथ मुगल सम्राटके वैवाहिक सम्बन्ध बंधनसे दोनोंके मध्यमें कैसी आत्मीयता और स्नेहभाव उत्पन्न हुआ था, अकबरके प्रति राजपूतोंका आचरण ही उसका पूरा उदाहरण है। जिस समय मुगलोंकी शासनशक्ति छिन्नभिन्न हो गई

* सम्राट् शाहजहां राजकुमारी जोधबाईके गर्भसे उत्पन्न हुए थे। आगरेके निकट सिकन्दरेमें इन जोधबाईका परम रमणीय समाधिमन्दिर अबतक विराजमान है।

× यह अकबर बादशाह अकबर नहीं है औरंगजेबका पुत्र है।

उस समय भी उस आत्मीयता और स्नेह रक्षाके लिये सम्राट् फर्रुखसियरने मारवाडपति राजा अजित सिंहकी कन्याका पाणिग्रहण किया था । *

जिन राजपूतोंने सम्राटोंको भगिनी प्रदान करी थी, उन सम्राटोंके परलोक सिधारनेपर व्यवहारके न जाननेवाले भाञ्जों (सम्राटों) का संपादनभार उनके ही हाथमें समर्पित होता था और वह लोग साम्राज्य शासनमें पूर्ण शक्ति चलानेके साथ २ अपने राज्यमें भी श्रीवृद्धि कर लेते थे ।

अकबर जिस समय भारतके सिंहासनपर विराजमान थे, उस समय उनके अधीन दोसौसे दश सहस्र तक अश्वारोही सैनिकोंके नेता, चारसौ सोलह मनसबदारोंमें सैंतालीस राजपूत थे, और उन राजपूत सेनापतियोंके अधीनमें (५३) तिरपन हजार अश्वारोही सेना थी । सम्पूर्ण मनसबदारोंके अधीन अश्वारोही सैनिकोंकी संख्या ५३०००० पाँच लाख तीस हजार थी, अबुलफजलके ग्रंथमें ऐसा लिखा है, इस कारण मनसबदारोंके अधीन अश्वारोही संख्या दशांशका एक अंश थी । सम्राटके अधीनमें पदाति संख्या ४०००००० चालीस लाख थी, उक्त ग्रंथके पढनेसे यह बात भी जानी जा सकती है ।

सैंतालीस राजपूत मनसबदारोंमें सत्तरह पुरुषोंके अधीनमें एक सहस्रसे पाँच सहस्र अश्वारोही और तीस पुरुषोंके अधीनमें ५०० से १००० अश्वारोही थे ।

अम्बेर, मारवाड, बीकानेर, बूंदी, जयसलमेर, बुन्देलखण्ड और सिखावतके राजालोग एक हजारसे अधिक अश्वारोहियोंके मनसबदार थे; किन्तु अम्बेर राजके साथ मुगल सम्राटके वैवाहिक सम्बंध बन्धनसे केवल उन्होंने ही महा सन्मानसूचक पाँच हजार अश्वारोहियोंका मनसबदार पद पाया था ।

मारवाडके राठौरराज स्थूलकाय नामसे विख्यात राजा उदयसिंह एक हजार अश्वारोहियोंके मनसबदार थे, किन्तु उन मारवाड राजवंशकी शाखामें उत्पन्न हुए बीकानेरके रायसिंहने चार सहस्र अश्वारोहियोंका मनसबदार पद प्राप्त किया था चंदेरी, करौली,

---

* कर्नैल टाड लिखते हैं कि, "केवल यह विवाह ही हमलोगोंके शासन संग्रहका मूल है। जिस समय विवाहका आयोजन हुआ, उस समय सम्राट् रोगी हो गये । उस समय सूरतमें हम लोग (अंग्रेज) वाणिज्य करते थे; सूरतसे दिल्लीमें उस समय जो दूत आये थे, उनके साथ मिष्टर हेमिल्टन नामक एक डाक्टर भी आये थे । उन डाक्टरने सम्राटको आरोग्य कर दिया, विवाह समाप्त हो जानेपर पुरातन रीतिके अनुसार सम्राट्ने चिकित्सकसे पूंछा कि "आप इसका क्या पुरस्कार चाहते हैं ?" किन्तु डाक्टरने अपने लिये किसी पुरस्कारकी प्रार्थना न करके सम्राट्से कहा कि "मेरे नियोगकर्त्ता अंग्रेजलोगोंके वाणिज्यकार्य्यके लिये कोठी बनानेको हुगलीमें थोडीसी भूमिकी आवश्यकता है ।" उनकी यह प्रार्थना तत्काल पूरी की गई और वही प्राच्यजगतमें बृटिश साम्राज्यके प्रताप प्रभुत्वका मूलकारण हुई । कर्नैल टाड अन्तमें लिखते हैं कि "जो पुरुष स्वार्थ छोडकर ऐसा उपकार कर गये हैं, उनके स्मरणार्थ उनके समाधि स्थानमें अवश्य ही एक स्मारक स्तंभ स्थापन करना उचित है। और मालका महसूल भी माफ कराया था ।"

दतियाके स्वाधीन राजगण और प्रधान २ राजपूत राज्यके कर देनेवाले राजालोग तथा सम्लित सिखावतलोग नीची श्रेणीके मनसबदार पदपर नियुक्त होकर चार सौ से सात सौ तक अश्वारोहियोंके मनसबदार हुए थे इस सम्प्रदायमें हम शक्तावत सम्प्रदायके आदिपुरुषको भी देखते हैं; यही अपने भ्राता राणा प्रतापके साथ विवाद करके सम्राट अकबरके अधीनमें नियुक्त हुए थे। एक प्रकारसे इस मनसबदार पदपर भारतके प्रायः सब श्रेणीके राजा ही नियुक्त हुए थे। मुगल सम्राटने देशी राजालोगोंको यह मनसबदार पद ग्रहण करनेके लिये पहिले बल प्रयोजन और भय दिखाया था किन्तु अन्तमें सब राजालोगोंने समयके प्रभावसे इच्छानुसार इस पदको ग्रहण करके अपनेको सम्मानित समझा था।

जिन हिन्दू रक्तधारी राजालोगोंने यवन सम्राटोंको कन्या वा भगिनी प्रदान करी थी, वह निःसन्देह अपनी जाति और अपने देशके कलङ्क स्वरूप थे। सम्राट भवनमें अपनी शक्ति, प्रभुत्त्व और सन्मान अर्जन ही उनका मुख्य उद्देश था, यह बात इतिहासके पढनेसे मालूम होती है। अपने स्वार्थके लिये जो पुरुष जातीय गौरव और सन्मानका बलिदान कर सकता है, जो पुरुष वंशगौरवको विस्मृतिके जलमें विसर्जन करके अस्पृश्य यवनके साथ वैवाहिक सम्बन्ध करनेमें कुछ भी लज्जित नहीं होता, वह पुरुष अवश्य ही जातिका शत्रु है, इस बातको कौन नहीं स्वीकार करेगा? राजनीति कुशल अकबरका मुख्य उद्देश क्या था, उस समयके राजा इस बातको बिलकुल नहीं समझ सके थे, अथवा वह ऐसे बलहीन हो गये थे कि, यवनोंके साथ वैवाहिक सम्बंध करनेको बाध्य हुए थे। किन्तु सूर्य्यवंशावतंस मेवाडेश्वर महाराणा लोगोंकी कन्या वा भगिनीको विवाह करनेमें कोई सम्राट जब किसी प्रकारसे भी समर्थ न हुए तो और राजालोग भी उनका अनुसरण करके इस कलंकसे बच सकते थे इसमें क्या संदेह है? भारतका भाग्य उस समय मानों बिलकुल दग्ध हो गया था, इसी कारण आर्य्यवंशी राजालोगोंने अपनी शास्त्रविधिके ऊपर लात मारके विजातीय और विधर्म्मियोंके साथ वैवाहिक सम्बंध किया था। केवल उदयपुरके महाराणा वंशने अपनी जातिके गौरवकी रक्षा करी थी, इतिहास अनन्तकालतक उस राणावंशका जयकीर्त्तन करेगा, इसमें क्या संदेह है?

कर्नेल टाड लिखते हैं कि, "देशी राजाके साथ वैवाहिक सम्बन्ध बन्धनसे अकबरने दो विषयोंमें बड़ा लाभ उठाया। प्रथम आत्मीयताके कारण मुगल सम्राटके ऊपर राजाओंका विजातीय भाव दूर होकर प्रीतिभाव बढ़ना, और दूसरे उस आत्मीयताके कारणसे क्रम २ से सब देशी राजाओंकी सेना सम्राटके कार्य्य साधनमें नियुक्त हो सकै।" हम भी कहते हैं कि राजनीतिकुशल अकबरने इन दो उद्देशोंके सिद्ध करनेके लिये ही देशी राजाओंके साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापनमें बडी भारी चेष्टा की थी। अथवा उसने मनमें यह कल्पना करी होगी कि, देशी राजाओंकी कन्याओंको दिल्लीके महाराणी पदपर वरण करनेपर यथा समय उनके माता पिता और

कुटुम्बी लोग भी उस संलवसे पैतृक धर्म्ममें जलाञ्जलि देकर महम्दीय धर्म्मका आश्रय लेनेको बाध्य हो जायँगे और परिणाममें इस बीजके फलस्वरूप सम्पूर्ण देशी राजाओंके क्रम २ से यवन हो जानेपर विजातीय भाव सर्वथा दूर हो जायगा। यद्यपि यह बात इतिहाससे प्रगट नहीं है और सम्राट अकबरने भी इस बातको कभी अपने मुंहसे प्रगट नहीं किया था किन्तु चतुर नीतिज्ञ लोग अवश्य ही अनुमान कर सकते हैं कि, अकबरके हृदयमें यह गुप्त अभिप्राय अवश्य ही बद्धमूल था। जो कुछ भी हो कर्नेल टाड लिखते हैं कि, अकबर, "जहांगीर और शाहजहांने जैसी उदार नीतिके अवलम्बन और सदाचरणद्वारा देशी राजा और साधारण प्रजाके हृदयमें जैसा आधिकार किया था, अत्याचारी औरंगजेब यदि हिन्दुओंके प्रति अवर्णनीय अत्याचार, उत्पीडन, उपद्रव और हिन्दूधर्म्ममें हस्तक्षेप न करके पूर्वोक्त नीतिका अनुसरण करता और यदि परवर्त्ती मुगल सम्राटगण सदाचरणद्वारा यहांके निवासियोंके हृदय आकर्षण कर सकते तो तैमूरका सिंहासन कभी बिचलित न होता। दुराचारी औरंगजेब यद्यपि निज क्षमता और बाहुबलसे विशाल भारतका सम्राज्य प्रबल प्रतापके साथ स्वेच्छानुसार शासन करनेमें समर्थ हुआ था, किन्तु हिन्दुओंके ऊपर दारुण अत्याचार करनेके कारण ही, जिस हिन्दू जातिने मुगल शासनशक्ति प्रबल करनेके लिये यथेष्ट सहायता करी थी वह हिन्दू जाति उन मुगल वंशधर औरंगजेबके आचरणसे अत्यन्त क्रुद्ध होकर भक्ति-शून्य हो गई थी। अकबर जहांगीर और शाहजहांके प्रति साधारण प्रजा और देशी राजा लोगोंकी जो भक्ति थी, औरंगजेबके दुर्दान्त शासनसे वह बिलकुल ही विलुप्त हो गई; फिर औरंगजेबके परलोक सिधारने पर निर्बल फर्रुखसियरकी अयोग्यतासे उस प्रचण्ड मुगल शासनशक्तिने सर्वथा खण्ड खण्ड होकर तैमूर सिंहासन विचलित कर दिया।

मुगल शासनशक्ति विध्वस्त होनेपर परस्पर आक्रमण, लूट मार और युद्धादि प्रबल वेगसे दिखाई देने लगे। यद्यपि इस शुभ अवसरपर राजपूत नरपतिगण पूर्व प्रताप गौरव और सामर्थ्य संग्रह करनेकी इच्छासे स्वाधीनताका सुधामयफल भोगनेके लिये एकताके सूत्रमें बँधे थे, किन्तु भारतके भाग्य पतनके समयसे जो एक दूसरेके प्रति विद्वेषाग्नि भीतर २ सुलग रही थी उसने उस समय प्रज्वलित होकर इस एकताको समूल भस्म कर दिया। तथापि मुगल शासनशक्तिकी क्षीणता देखकर सम्पूर्ण देशी राजाओंने अपने राज्य परिमाणकी वृद्धि और स्वाधीनता सञ्चय कर ली थी। किन्तु केवल मेवाडेश्वर महाराणा म्लेच्छाधम मुगल सम्राटके हाथमें किसी प्रकार किसी कालमें किसी कारणसे कन्या वा भगिनी प्रदान द्वारा राजपूत जातिका प्रधान गर्वस्वरूप जात्याभिमानसे हीन वा पवित्र आर्यरक्त कलंकित करके साधारण राजाओंके समान पतित नहीं हुए थे, इस कारण सब ही राजा उनके ऊपर ईर्षा दिखानेमें प्रमत्त हो उठे। कई शताब्दीतक राणाओंने अनेक प्रकारसे उत्पीडित और मेवाड राज्यकी सीमा क्रम २ से क्षय प्राप्त होनेपर भी किसी प्रकार सम्राटोंकी पाप आज्ञा हरी न करके अपने गौरवको निष्कलंक रक्खा था, उस गौरवको देखकर ही दूसरे राजा जल

उठे थे। यद्यपि मुगल शासनके समय मारवाडराज सम्राटके साथ वैवाहिक सम्बन्ध करनेके कारण अपनेको "राजराजेश्वर" और अम्बेरपति अपनेको "राजराजेन्द्र" के नामसे विख्यात करते थे। परन्तु सूर्यवंशावतंस मेवाडेश्वर सामान्य भावसे अपनेको "अरिसिंहके पुत्र महाराणा भीमसिंह" कह कर परिचय दिया करते थे। *

यद्यपि इस समय परिवर्त्तनके साथ प्रबल बृटिश शासन और बृटिश गवर्नमेंटके साथ सन्धिबंधनसे रजवाडेमें सामन्तशासन प्रणालीका बहुत कुछ रूपान्तर हो गया है, यद्यपि कर्नेल टाडने उस शासन प्रणावलीकी जो अवस्था देखी थी, इस समय ठीक वही दशा नहीं है यद्यपि सामन्तोंके साथ अधिपति लोगोंके सम्बंधने अब कुछ नवीन मूर्ति धारण करली है, तथापि कर्नेल टाड उस समयकी शासनप्रणालीकी दशा देखकर जो कुछ लिख गये हैं, वह समयके गुण और परिवर्त्तनके कारणसे अप्रासङ्गिक होनेपर भी हम यहां इतिहासके सन्मानकी रक्षाके निमित्त लिखते हैं। टाड साहब लिखते हैं कि "देशी राज्योंके शासनमें किस प्रकारकी प्रणाली सबसे श्रेष्ठ हो सकती है, इस समय उसकी ठीक २ कल्पना करना कठिन है। इन सम्पूर्ण राज्योंकी सामन्त शासन प्रणालीने सर्वांगसुन्दर रूपसे कार्य्य साधन किया है, ऐसा देखा जाता है। बहुत शताब्दीतक परीक्षाके द्वारा इस सामन्त शासन शैलीने राजनैतिक दृढता विलक्षण रूपसे संपादन कर दी है। इधर आठ सौ वर्षका समय मुगल पठानोंके प्रबलशासनकी भयंकर लीला करके इस समय अतीत उपाधि धारणमें अदृश्य हो गया है।

यदि राजपूत राज्य कुछ और अधिक उन्नतिकी सढिपिर चढ़ सकते, यदि राजा अपने अधिकारमें किये देशोंकी दुर्दान्त लुटेरोंके ग्राससे वा अन्यायसे अधिकार करनेवाले सामन्तोंके हाथसे उद्धार और उन सबको उपजाऊ करनेकी चेष्टा करते, तथा सामंतगण यदि राज्यकी शांति रक्षा और विजातीय आक्रमणसे राज्य रक्षाके लिये निर्द्धारित संख्यक सेना एक स्थानमें एकत्रित करते तो कभी भी धनके लोभी विधर्मी विजातीय सेनादलकी सहायता करनी नहीं पडती। यदि इसी प्रकार विधर्मी विजातीय सेनाको बहुत कालतक स्थान दिया गया तो निश्चय ही सामंत शासन प्रणालीका बिलकुल रूपान्तर हो जायगा। धनके लोभी महाराष्ट्र और सैंधवीय सेना दलकी सहायता लेनेसे रजवाडेकी जैसी दुर्दशा हो गई है उसी प्रकार यूरोपमें भी इस श्रेणीकी सेना सहायतासे विषमय फल उत्पन्न हुआ था।

सम्पूर्ण यूरोपखण्डके मध्यमें सबसे पहिले फ्रांसके अधीश्वर सप्तम चार्लसने जिस समय अपने राज्यमें अपनी स्थायी सेना नियत करके "टालि" नामक कर,

---

* अब बृटिश गवर्नमेंटके शासन समयमें भारतवर्षके राजाओंको अनेक प्रकारकी विलायती उपाधियां मिली हैं। जातीय उपाधिके साथ २ दिल्लीके सम्राट्की दी हुई फारसी शब्दोंकी उपाधियोंका पहिले संयोग था, इस समय अंग्रेजी भाषाकी उपाधियोंके संयोग होनेसे वे सुननेमें बडी ही विचित्र हो गई हैं।

प्रचलित किया, उस समय फ्रांसके सामंतगण विद्रोही हो गये थे। चार्लसके इस अनुष्ठानके पहिले यूरोपके किसी राज्यमें किसी राजाकी स्थायी सेना नहीं थी; सामंतोंकी सेना द्वारा ही सब कार्य्य सम्पन्न होते थे। फ्रांसके समान कोटेके अधीश्वर द्वारा प्राचीन प्रथाका परिवर्त्तन करनेपर, वैसा ही शोचनीय काण्ड उपस्थित हुआ। साठ वर्ष पहिले जब मेवाडके सामंतगण विद्रोही हो गये, और दूसरी ओरसे दुर्दान्त विजातीय लोगोंने आक्रमण आरंभ किया, तब मेवाड़ेश्वरने विशेष प्रयोजन समझकर ही अर्थकी लोभी सैन्धवी सेनाकी सहायता ली, किंतु उसका फल अत्यन्त हृदय भेदी उपस्थित हुआ और सामंतगण परस्पर एक दूसरेसे लडकर क्षीणबल हो गये, तथा राणाके ऊपरसे सर्वसाधारणकी भक्ति भी उठ गई थी। जयपुरपतिने यह प्रथा अधिकताके साथ अवलम्बन करी थी, यद्यपि उन्होंने बहुतसे वेतनभोगी सैनिक नियत किये थे, किंतु वह यथा समय वेतन न पानेसे राज्यकी रक्षा नहीं करते थे और विदेशमें भी उनका कोई भय नहीं करता था। मारवाडकी सामंतमण्डली प्रबल सामर्थ्यशालिनी थी, इस कारण मारवाड राज पहिले विजातीय सेनाकी सहायता लेनेमें किसी प्रकार समर्थ न हुए थे; किंतु परिणाममें मुगलोंके अत्याचार उपद्रवके पीछे पठानोंकी सेनाने संहारमूर्त्तिसे मारवाडमें प्रविष्ट होकर सब ही छार खार कर दिया। रजवाडेका प्रत्येक राज्य इसी प्रकार विध्वस्त होनेपर प्रबल क्षमताशाली जातिने आकर उनके ऊपर अधिकार स्थापन कर लिया।"

पट्टावत संप्रदायके कर्त्तव्य कर्म्म।—विख्यात इतिहास लेखक हालम लिखते हैं कि, "राजा आश्रय दे और सामंतगण राजभक्ति दिखानेके साथ २ अपना २ निर्द्धारित कर्त्तव्य पालन करें, सामंत शासन शैलीकी यही दोनोंके द्वारा निर्द्धारित मूलनीति है। एक पक्षमें यह नीति सामंत मण्डलीको अपने प्रभुके निर्द्धारित कार्य्य करनेमें बाध्य करती है, दूसरे पक्षमें अधीनतामें स्थित सामंतोंको अत्याचार, उत्पीडन वा शत्रुओंके आक्रमणसे सदा रक्षा करनेमें उसी प्रकार समर्थ हैं। यदि दोनों २ के निर्द्धारित कार्य्योंको न सिद्ध करें तो एक ओर सामंत जिस प्रकार अपना प्रभुत्व खो देते हैं, राजा भी उसी प्रकार सामंतोंके ऊपर प्रभुत्व और शक्तिसंचालनकी प्रभुतासे हीन हो जाते हैं।"

सामन्त शासन प्रणालीका मूल उद्देश उक्त लेखसे भलीभाँति प्रगट है; इसके द्वारा यह भी प्रगट है कि राजा और सामन्त परस्पर एक दूसरेकी सहायता करनेके लिये सम भावसे बाध्य हैं। सामन्त शासन नीतिका यह सरल सत्य उद्देश राजपूतोंके द्वारा अति विशद रूपसे दो लिपियोंमें प्रकाशित हुआ है। मारवाडकी सामन्तमण्डली, अधिपति और सामन्तोंका परस्पर कर्त्तव्य कर्म्म क्या है इस विषयमें एकलिपि है, ×

---

* हालम, १ लावालम, १७३ पृष्ठ।

× परिशिष्ट–पहिली अनुलिपि देखो।

और दूसरी लिपिमें राणाके अधीन देवगढके सामन्तके सरदारोंका स्वत्व निर्णय, देवगढपति द्वारा उस स्वत्वमें हस्तक्षेप और उसका अन्तिम फल वर्णन किया गया है। *

पूर्वकालमें मारवाडके कोई नरपति यदि उस प्रकारसे सामंतमण्डलीके ऊपर अन्याय प्रभुत्व दिखानेमें अग्रसर होते तो किसी प्रकार कृतकार्य्य नहीं हो सकते थे, बरन सम्मिलित दुर्द्दान्त सामंतगण उनके जीवन और सिंहासनको महा विपत्तिमें डाल देते थे। सामंतोंकी उक्ति एक पक्षमें जिस प्रकार न्यायमूलक है, अन्य पक्षमें राजाके प्रति उसी प्रकार समान प्रकाशक है। सामंतलोग कहते हैं, "महाराज यदि हमलोगोंको अपने अधीनमें नियुक्त रखकर, हमसे प्रसन्न रहेंगे तभी वह हमारे स्वामी और नेता स्वरूप हैं, यदि वैसा न करें तो वह हमारे समान हैं और हम उनके भ्राता रूपसे भूस्वत्वके समान अधिकारी हैं, तथा अधिकार लाभके लिये दावा भी करते हैं। नरपति और सामन्तका कर्त्तव्य इसके द्वारा ही विलक्षण रूपसे जाना जाता है। प्रत्येक प्रत्येकके निर्दिष्ट कर्त्तव्य पालनके लिये यथासाध्य सचेष्ट रहनेपर सामन्त शासन प्रणालीमें कोई विघ्न नहीं हो सकता, मारवाडके सामन्त यह बातें कह गये हैं। इधर राजा यदि अपनी निर्द्धारित सामर्थ्यको वृथा चलावै तो वह उस सामर्थ्यसे हीन होकर, सामन्तोंके समान पदवाले हो जाते हैं, यह भी उक्त व्याख्याका यथार्थ अर्थ है।

देवगढ़के सामन्तके साथ उनके अधीनवाले सरदारोंका जिस समय मनोविवाद हुआ, उस समय उन सरदारोंने भी मारवाडके सामन्तोंके कहे हुए मन्तव्यके अनुसार ही कथन किया था। मारवाडेश्वरके साथ उनके सामन्तगण जिस प्रकार संधिबंधनमें बँधे थे, देवगढपतिके साथ उनके अधीन सरदारगण भी उसी प्रकार संधिमें जडित थे, इस कारण दोनों ही जातीय नीतिके पिष्ट पेषणमें समभावसे यत्नवान् थे।

रजवाडेके अधीन स्थित सरदारोंके साथ सामन्तोंकी जैसी मूलनीति अनुगत शासन प्रणाली वा सम्बंधबंधन विराजमान है पूर्वकालमें यूरोपकी सामन्त मण्डलीके साथ उनके अधीनके सरदारोंका वैसा ही सम्बंध बंधन और वैसी ही एक प्रकारकी शासन प्रणाली प्रचलित थी वा नहीं ? कर्नल टाड यहांपर उसकी भी मीमांसा कर गये हैं। यूरोपके व्यवस्थाविद् लोग दीर्घकालसे जो यह प्रश्न करते हैं कि; "सरदार गण अपने प्रभु सामन्तके पताकाश्रयमें एकत्रित होकर अपनी आत्मीय मण्डली अथवा देशके स्वामी राजाके विरुद्ध यात्रा करनेको वाध्य हैं कि नहीं ?" राजपूत जातिने बडी सुगमताके साथ विख्यात प्रमाणोंद्वारा उसकी मीमांसा कर दी है। इस कारण वह मीमांसा ही प्रमाणित कर सकती है कि, यूरोप और रजवाडेमें उक्त प्रणालीके विषयमें किसी पकारकी भिन्नता है वा नहीं ? यदि किसी राजपूतसे प्रश्न किया जाय कि "तुम अपने

* परिशिष्ट—दूसरी और तीसरी अनुलिपि देखो।

स्वामी सामन्तकी आज्ञा पालनेके लिये बाध्य हो अथवा राजाकी आज्ञा पालन करनेमें बाध्य हो । " वह तत्काल उत्तर देगा कि, "राजके मालिक वह, मस्तकका मालिक यह ।" इसका अर्थ यह है कि, राजा तो अपने राज्यके मालिक हैं, किन्तु मेरा मस्तक मेरे प्रभुका है । यथार्थ बात यही है कि सरदार लोग अपने प्रभु सामन्तकी आज्ञा पालना ही सब प्रकारसे उचित समझते हैं ।

ऊपरके सामन्तोंसे लेकर नीचेके सरदारतक प्रत्येक श्रेणी ही प्रबल पक्षके अत्याचारसे उद्धार प्राप्तिके लिये उपाय करनेमें सचेष्ट है । सामन्तोंके साथ आधीनके सरदारोंका मनोविवाद वा किसी प्रकारका भारी विवाद उपस्थित होनेपर राजा ही उस स्थानमें विचारभार पाते हैं । राजाके साथ सामन्तोंकी जैसी बाध्यबाधकता—प्रभु भृत्य सम्बन्ध है, सामन्तमण्डलीके आधीनमें स्थित सरदार वा किसी प्रजाके साथ राजाका वैसा कोई सम्बन्ध वा किसी प्रकारका मेल नहीं है । वह सरदार वा प्रजागण साक्षात सम्बन्धमें राजाकी किसी आज्ञाके पालन करनेमें बाध्य नहीं हैं । दूसरे पक्षमें राजाके निकटसे किसी प्रकारका अनुग्रह वा पुरस्कार भी वह नहीं पा सकते। सामन्तकी आज्ञानुसार राजाके लिये कोई कार्य्य करते हैं किन्तु राजा कभी किसी सामन्तके किसी सरदार वा प्रजा मण्डलीको स्वयं बुलाकर किसी कार्यमें नियुक्त नहीं कर सकते । दूसरे सरदार और प्रजावर्ग सामन्तोंके यहांतक अनुगत हैं कि सामन्त यदि राजाके विरुद्ध कोई अन्याय कार्य्य करें अथवा विद्रोह सूचक कार्य्यमें किसी सरदार वा प्रजाको नियुक्त होनेकी आज्ञा दें तो वह शीघ्र विना किसी विचारके उस कार्य्यमें तत्पर हो जाते हैं; सामन्तके उस दुष्ट अभिप्राय वा अन्याय मूलक उद्देशके विरुद्ध वह किसी प्रश्नके उठानेमें साहसी नहीं होते । सामन्त जिस समय जैसी नीति अवलम्बन और जैसा आचरण करें, आधीनके सरदार और साधारण प्रजावर्ग द्विरुक्ति न करके उसीका अनुसरण करना सिद्धान्त कर लेते हैं । सामन्त यदि राजभक्त हो तो वह राजभक्तिके वशीभूत होकर जन्मभूमि और स्वजातिके गौरव वर्द्धनमें जीवन उत्सर्ग कर देते हैं और यदि सामन्त विद्रोही और स्वाजातिके शत्रु हो जायँ तो वह उसी प्रकार विद्रोह करनेमें कुछ भी नहीं हिचकते । इसके प्रमाणमें यहां बहुतसे प्रमाण उद्धृत किये जा सकते हैं किन्तु हम उन प्रमाणोंको अनावश्यक समझते हैं क्योंकि मूल इतिहासके पढनेसे पाठकोंको भलीभाँति विदित हो गया है कि कई स्थानोंपर विद्रोही सामन्तके अधीनमें और उनकी आज्ञामें सम्पूर्ण सम्प्रदायने राजाके विरुद्ध खडे होकर अत्यन्त भयंकर और शोचनीय अभिनय कर दिखाया है । * सामंत केवल आत्मीय वा समरक्तवाही हो, तभी अधीनस्थ सरदार वा प्रजावर्ग उनकी आज्ञानुसार राजाके विद्रोही होनेसे भी भय नहीं करते थे, ऐसा ही नहीं, बरन सामन्त शासनकी मूल नीतिके अनुसार स्वामीकी आज्ञापालन अवश्य कर्त्तव्य और कृतज्ञता प्रकाश उचित समझ कर ही भिन्न रक्तवाही सरदारगण भी सामंतकी आज्ञा शिरपर धारण करते हैं और उसके लिये जीवन बलिदान करदेनेमें भी भयभीत नहीं होते ।

* मारवाडके इतिहासमें निजाम सामन्तकी मृत्यु और शिवगढका विवाद इसका पूर्ण प्रमाण है ।

साक्षात् सम्बन्धमें राजाके साथ जिन सरदारोंका कोई मेल नहीं है, जो राजाके निकटसे प्रवृत्ति न पाकर सामन्तोंसे पाते हैं, राजाको उनके ऊपर किसी प्रकारके प्रभुत्त्व चलानेकी सामर्थ्य नहीं, यह बात ऊपर लिखी जा चुकी है। विशेष करके जो सरदार अपने प्रभु सामन्तका मनोरञ्जन और तुष्टि साधन करके उनके अनुग्रहपात्र होनेके अत्यन्त अभिलाषी हैं, वह राजाके निकट सामन्तके अज्ञातमें किसी प्रकारका अनुग्रह चिह्न वा पुरस्कार कभी नहीं लेना चाहते। क्यों कि यदि किसी सामन्तका कोई सरदार राजाका अनुग्रहपात्र होनेकी चेष्टा करे वा किसी प्रस्तावमें वह अनुग्रह वा किसी प्रकारका सन्मानचिह्न प्राप्त करे तो वह सरदार उस समय ही अपने स्वामी सामन्तकी विषदृष्टिमें गिरता है। देवगढके सामन्तने एक समय किसी कार्य्यके लिये अपने एक सरदारको राणाके भवनमें भेजा था; भेजे हुए सरदारकी मिष्ट भाषिता, दक्षता, विज्ञता और व्यवहारसे महाराणाने महासन्तुष्ट होकर अनुग्रह प्रकाशरूप उनको राजसभामें बैठनेको अधिकार देकर सन्मानित किया, कार्य्य समाप्त होनेपर सरदारने देवगढमें आकर सुना कि "सामन्त मेरे सन्मान लाभसे वहुत क्रुद्ध हुए हैं।" सामन्तने उन सरदारसे कहा कि "यह वडा अन्याय हुआ।" तबसे वह सरदार सामन्तके अनुग्रहसे बिलकुल वंचित रहे थे।

अधीनस्थ सरदारवृन्द क्या २ आज्ञा पालन करनेमें बाध्य हैं उसकी सूची लिखना असंभव है, क्योंकि वह प्रायः सब ही आज्ञाओंका पालन करते हैं। सामन्तकी सभामें सदा उपस्थिति, उनका मृगयामें जाना, उनके साथ राजसभा वा युद्धक्षेत्रमें गमन, यहांतक कि सामन्तके शत्रुद्वारा वंदित होनेपर भी सरदार उनके साथ ही शत्रुके डेरेमें रहते हैं।

यहांपर हम कई बातें लिखते हैं। जिनका यह विश्वास है कि " भारत सदा यथेच्छाचार शासनमें दग्ध होता आता है यहांके निवासियोंकी व्यक्तिगत स्वाधीनता कुछ भी नहीं थी।" वह इस शासन प्रणालीका मूल मर्म्म समझनेपर अवश्य ही अपना भ्रान्त मत छोडनेमें बाध्य होंगे। रजवाडेकी शासनशैली इस बातको भलीभाँति प्रगट कर रही है कि,—नरपतिगण, सामन्तवृन्द और उनके आधीन स्थित सरदार यह तीनों ही परस्पर एक दूसरेके ऊपर अकृत्रिम विश्वास स्थापनसे जातीय शक्ति प्रबल, स्वाधीनता रक्षा और गौरव अर्जन कर गये हैं। शासन प्राणालीके अनुसार राजोंकी जितनी शक्ति और प्रभुत्त्व निर्द्धारित है उससे अधिक क्षमता वा प्रभुत्त्व प्रकाशद्वारा सामन्तोंके प्रति अन्यान्य आचरण करनेपर विपरीत फल मिलता था, उस समय सब सामन्त एकत्र सम्मिलित होकर राजाका जीवन और सिंहासन तक विचलित कर डालते थे। दूसरे पक्षमें वह सामन्तमण्डली यदि अपने अधीनस्थ सरदारोंके प्रति अत्याचार करनेमें उद्यत होती तो वह सरदारलोग भी उसी प्रकार उनको विपद ग्रस्त कर डालते थे, इस कारण कोई भी साहसके साथ यथेच्छाचार करनेमें अग्रसर नहीं हो सकता था। सबकी क्षमता, सबका दायित्त्व और सबका कर्त्तव्य कर्म्म शासन नीतिके द्वारा ही बहुत समय पहिले ही निर्णीत हो गया है, इस कारण चिर प्रथा रक्षाके लिये जो जाति प्राणतक देनेमें भयभीत नहीं हुई; वह जाति किस कारणसे यथेच्छाचार शासनके मुखमें स्वाधीनताको बलिदान करेगी ?

चौंतीसवां अध्याय ३४.

सामन्तोंकी शासन रीतिकी प्रधान प्रधान व्यवस्था;-- भूमिवृत्तिके संभोगका समय निर्णय;-उसके सम्बन्धका वृत्तान्त।

पश्चिम देशकी शासन रीतिमें जितनी व्यवस्थायें प्रचलित थीं; राजपूतानेके राज्योंमें भी उसी प्रकार वह सब व्यवस्थायें आजतक वर्तमान हैं टाड साहब इस बातको स्वीकार करते हैं, उन्होंने उन व्यवस्थाओंमेंसे छः व्यवस्था यहां लिखी हैं। नजरानेका देना १, अधिकारका दूसरेके हाथमें जाना २, पुत्रहीन दशामें सामन्तके परलोक जानेपर उसकी भूमिवृत्तिको अधिपतिका ग्रहण करना ३, अधीश्वरका प्रयोजनीय कार्य होनेपर वा सांसारिक कार्य होनेपर सामन्त और प्रजाके निकटसे धनकी सहायता लेना ४, सामन्तके पुत्रके नाबालिग रहने पर सामन्तके पुत्रकी अधीश्वर द्वारा रक्षा होना ५, विवाह ६.

नजराना-सामन्त शासन रीतिका प्रधान चिह्न नजराना देना है, इसके द्वारा राजाकी प्रभुताई और सामन्तकी अनुकूलता प्रगट होती चली आती है, सामन्त शासनकी रीतिकी उत्पत्तिसे पहले सामन्तोंने जिस प्रतिज्ञाके वशीभूत होकर अपने राजाके निकटसे भूमिवृत्ति पाई थी, किसी सामन्तके परलोक सिधारनेपर उसका उत्तराधिकारी उतना ही नजराना देकर उस भूमिवृत्तिकी प्रतिज्ञाको अटल रखता है, मेवाड राज्यमें इस नजरानेके द्वारा प्राचीन भूवृत्तिका स्वत्त्व सर्वथा लोप होकर फिर नवीन भूवृत्तिका दान स्वीकार होता है। पश्चिमी राज्यकी व्यवस्थाओंके जाननेवाले इस नजरानेका इस प्रकार अर्थ कर गये हैं कि, प्रत्येक सामन्तके पुत्र अधिकारी होकर पिता सम्बन्धी भूमिवृत्ति अधिकारके समय महाराजको जो धन देता है उसीको नजराना कहते हैं। पश्चिमी राज्योंमें पहले इस नजरानेके धनकी संख्या नियत थी, अधिपति अपनी इच्छाके अनुसार इस संख्याको नियत करते थे। इस कारण उस रीतिसे विशेष असन्तोषकी अग्नि भी प्रज्वलित हो जाती थी। कई सौ वर्ष पहिले किसी प्रकारका कर भी पश्चिमी राज्यमें प्रचलित न था।

इंग्लेण्डके अधीश्वरका घोरतर यथेच्छाचार शासन जिस समय निवारित हुआ, जिस समय इंग्लेंडराजने सामन्त और प्रजाका पक्ष प्रबल देखकर प्रजाकी स्वाधीनताकी सनदपर (Magna charta) हस्ताक्षर किये उस समयसे उस सनदके अनुसार सामन्तोंके अभिषेक समयमें नजराना निर्द्धारित संख्याके अनुसार गृहीत होने

लगा।* फ्रांसके नये अभिषिक्त सामन्तकी एक वर्षमें जितनी आय होती, राजा उसीको नजरानेमें लेते थे। मेवाड राज्यमें इस फ्रांसकी व्यवस्थाके अनुसार ही प्रत्येक नवीन सामन्त अभिषेकके समय राणाके निकटसे नई सनद लेकर अपने अधिकृत प्रदेशकी एक वर्षकी आयके रुपये नजरानेमें देते आते हैं। फ्रांसकी उक्त प्रथाकी रीतिपर मेवाडमें यह प्रथा प्रचलित हुई; पाठक ऐसा अनुमान न करें, क्योंकि फ्रांसकी उक्त रीतिके चलनेके बहुत काल पहिले मेवाडमें यह प्रथा प्रचलित थी।

मेवाडके किसी सामन्तके स्वर्ग सिधारनेपर, राणा शीघ्र ही जुबतिनामक सम्प्रदाय-को × उस मृत सामंतके अधिकृत प्रदेशमें भेजते हैं। उस सम्प्रदायके अध्यक्ष एक दीवानी कर्म्मचारी और उनके अधीन कई सैनिक राणाके नामसे उक्त प्रदेश तत्काल अधिकार कर लेते हैं। जब राणाके कर्म्मचारी देश अधिकारमें कर लेते हैं तब मृतसामंतके पुत्र वा उत्तराधिकारी उसी समय पिताके पदपर अभिषिक्त और भूवृत्ति प्राप्तिके लिये राणाके निकट प्रार्थनापत्र भेजते हैं, और उसमें नियमानुसार नजराना देनेकी प्रतिज्ञा भी कर देते हैं। उक्त उत्तराधिकारीके निर्द्धारित नियमानुसार राणा भवनमें नजराना भेजनेपर राणा उनको तत्काल राजसभामें बुलाते हैं। उक्त उत्तराधिकारी राजसभामें जाकर राणाकी चरण वंदना करते हैं और सामंत पदके प्रत्येक कर्त्तव्य कर्म पालन और प्रत्येक आज्ञा साधनकी प्रतिज्ञा करनेपर राणासे सामंतपदकी नई सनद लेते हैं। सनदके साथ राणा प्राचीन वीर प्रथाके अनुसार नवीन सामन्तोंकी कमरमें एक तलवार बांधकर उनका अभिषेक कार्य्य सम्पन्न करते हैं। यह अभिषेककार्य्य बहुत मनोहर है; सम्पूर्ण सामंतोंसे भरे हुए सभामण्डपमें यह कार्य्य सम्पादन किया जाता है। नजराना देते ही राणा उक्त प्रकारसे तलवार बांधकर सन्मानस्वरूप घोडा, दुपट्टा और दुशाला देते हैं। अभिषेककार्य समाप्त होनेपर वह जुबति संप्रदाय राणाके निकट लौट आता है, अभिषिक्त सामंत राजप्रसाद पाकर अपनेको महा सन्मानित समझते हैं और अपने पिताके देशमें आकर अपने स्वजनोंका आशीर्वाद लेते हैं। उनके अधीनके सरदारलोग भी उस समय नवीन स्वामीके प्रति विशेष सन्मान दिखाते हैं।

नवीन सामंतके अभिषेकके समयके समान ऊपर कही हुई "खड्गबन्धी" प्रथा राजपूतोंके प्रत्येक बालक जब बालकमात्रमें अस्त्र धारणमें समर्थ होते हैं तब यह रीतिकी जाती है। अर्थात् राजपूत बालकोंके खड्गधारणमें उपयुक्त होनेपर ही रजवाडेके चिर प्रचलित वीराचारकी सन्मान रक्षाके निमित्त उनकी कमरमें तलवार बांध दी जाती है।

---

* अर्ल लोगोंके उत्तराधिकारी पिताके पद और सम्पत्ति लेनेके समय १०० मुद्रा देते हैं। बैरन लोगोंके उत्तराधिकारी एक सौ मार्क और नाइट लोगोंके उत्तराधिकारी ५० मुद्रा नजरानेमें देते हैं। मागनाकार्टा तीसरी धारा देखो।

× जो लोग सामन्तके परलोक सिधारनेपर उनके प्रदेशको राणाके अधिकारमें करनेके लिये जाते हैं, उस सम्प्रदायको जुबति कहते हैं।

कर्नेल टाड लिखते हैं कि, "प्राचीन जर्म्मन जातिमें भी इसी प्रकार बालकोंके भाले आदि दिये जाते थे । रोमके युवकगण भी इसी प्रकार नवीन अस्त्रोंसे विभूषित होते थे । " रजवाडेमें यह प्रथा यहांतक प्रबल है कि, स्वयं महाराणाका यह वीराभिषेक कार्य उनके अधीनमें स्थित एक प्रधान वीर सलम्बूरके सामन्त द्वारा सम्पन्न हुआ था । अर्थात् सलम्बूर पतिने राणाकी कमरमें तलवार बाँधकर उनका वीराभिषेक कार्य्य संपादन किया था ।

जिस समय रजवाडेके प्रायः संपूर्ण राजपूत राज्य विजातीय आक्रमण, अत्यन्चार और उत्पीडनसे बहुत ही हीन दशामें पहुँच गये थे, उस समय कई बलशाली सामंतोंने अभिषेक कालमें दिये जानेवाले नजरानेसे अपनेको मुक्त कर लिया था । उनके इस छुटकारेके द्वारा मूल प्रणाली गुप्तरूपसे बदल गई; अर्थात् नजराना लेना अधीश्वरका आधिपत्य सूचक है, अतएव उस नजरानेके छूट जानेसे अधीश्वर उन सामन्तोंके अधिकृत प्रदेशोंपर फिर अधिकार नहीं कर सके; यह नजराना छुडानेका कार्य बडे शोचनीय समयमें संपादित हुआ था । अधीश्वरकी पूर्ण शक्ति वा प्रताप रहते ऐसा कभी नहीं हो सकता ।

भूस्वत्त्वका हस्तान्तरित होना । सामन्त शासन प्रणालीमें भूस्वत्त्वके हस्तान्तरित होनेकी व्यवस्था नहीं है । भूस्वत्त्व क्रय वा हस्तांतरित प्रथा प्रचालित रहनेसे मूल प्रणालीके सर्वथा नष्ट होनेकी संभावना है । अधिपति किसी प्रकारसे भी किसी सामन्तकी किसी भूमिका स्वत्त्व दूसरे सरदारको विक्रय नहीं करने देते तथापि विशेष प्रयोजनीय स्थलमें हस्तांतरित व्यवस्था रक्खी गई है ।

कच्छके झारिजा । * यद्यपि संप्रदायके मध्यमें सामन्तोंके अधीन स्थित सरदारगण, सामन्तोंके निकटसे अपना भूस्वत्त्व स्वतंत्र कर सकते हैं, किन्तु वहांकी सामन्त मंडली सबका स्वत्त्व दूसरेके हाथमें नहीं कर सकती । रजवाडेमें केवल धर्म्मोद्देश वा किसी प्रकारके धर्म्मानुष्ठानके लिये सामंतगण भूमिके स्वत्त्वको हस्तांतरित करनेमें समर्थ हैं, किन्तु उसमें भी राजाकी अनुमतिकी आवश्यकता है । देवगढके सामन्तने राणाके विना अनुमतिके और सर्दारोंकी अनिच्छासे एक बार भूमिका स्वत्त्व हस्तांतरित कर दिया था, यह देखकर राणाने उनकी सब भूवृत्ति छीन ली, अंतमें जब उन्होंने फिर पहिली व्यवस्था अवलंबन करी तो उनको भूवृत्ति लौटा दी गई थी ।

जितने किसान साक्षात् राणाके निकटसे पट्टा ग्रहण करके कृषिकार्य का निर्वाह करते हैं, वह कुछ धन दण्डमें देकर भूस्वत्त्व सर्वथा अपने अधिकारमें कर सकते हैं । अधिपति उनके निकटसे केवल कर लेनेके अधिकारी हैं ।

---

* कच्छकी राजपूत जाति झारिजा नामसे विख्यात है । यह अपनेको यदुवंशी श्रीकृष्णके वंशधर बताते हैं । पूर्वकालमें यह लोग सिन्धु नदीके तटकी भूमिमें वास करते थे ।

भूवृत्तिका प्रतिग्रहण ।—जिन सामन्तोंको इस प्रतिज्ञासे भूवृत्ति दी जाती है कि वह वंशानुक्रमसे भूवृत्ति भोग करेंगे, किन्तु पोष्यपुत्र ग्रहण वा अन्य किसीको भी नहीं दे सकेंगे, उनमेंसे किसीके अपुत्रक दशामें प्राण त्यागने पर अधिपति वह भूमिवृत्ति लौटा लेते हैं। कर्नेल टाड लिखते हैं कि, मैंने उक्त कारणसे राणा द्वारा भूवृत्तिका लौटा लेना स्वयं देखा है और यदि पोष्यपुत्र ग्रहणकी रीतिका प्रबल सोत निवारित हुआ तो यह प्रथा और भी देखनेमें आवेगी। कोई सामंत किसी प्रकारके अपराधमें अपराधी हो जाय तो उसके हाथसे भी भूवृत्ति प्रतिग्रहण कर ली जाती है। अपराधके परिमाण-के अनुसार किसीका सम्पूर्ण भूखण्ड और किसीका अर्द्धांश ले लिया जाता है। पश्चि-मके राज्योंमें भी पहिले यह रीति प्रचलित थी ।

कर्नेल टाड लिखते हैं कि, " इस समय मारवाड राज्यकी सामंत मण्डलीमें प्रथम श्रेणीके प्रायः सब सामंत ही निर्वासित होकर भिन्न देशोंमें बास करते हैं । मारवाड राजवंशीय इंदौरके महाराज भी उस दृष्टान्तके अनुसार अपने राज्यके सब सामन्तोंको निर्वासित करनेमें उद्यत हुए थे, किंतु बम्बई प्रेसीडेंसीके उस समयके गवर्नर मि० एलफिनिष्टनने राजाकी उस आज्ञाको व्यर्थ कर दिया था।

जितने लोग व्यक्तिगत परिश्रम, वीरत्व वा बुद्धि संभूत कार्य्य द्वारा राणाका और राज्यका उपकार साधन करते हैं; उनको जीवन पर्यन्त संभोग करनेके लिये राणाने एक श्रेणीकी भूवृत्ति दे दी है । इस कार्य्यके लिये ही वह भूमि स्वतन्त्र निर्दिष्ट है, इसका नाम " चारउत्तर " है। जिसके पास यह भूमि है, उसके परलोक सिधारने पर उस भूमिपर राणाका फिर अधिकार हो जाता है। इसके अतिरिक्त वंशा-नुक्रमसे सम्भोग करनेके लिये भी राणागण उक्त श्रेणीके बहुतसे लोगोंको यह भूवृत्ति देते आते हैं । इस श्रेणीके पुरुषके परलोक गामी होने पर उसके उत्तराधिकारीका उस भूमिके ऊपर अधिकार हो जाता है ।

नरपतिकी सहायता करण ।—राज्यमें समर उपस्थित वा अधिपतिका कोई सांसा-रिक कार्य उपस्थित होनेपर धनकी विशेष आवश्यकता होती है, उस समय राजा साधा-रण प्रजाके निकटसे सहायतामें आयके दशांशका एक अंश संग्रह करते हैं । राजाके समान सामन्तलोग भी ऐसा ही किया करते हैं । राजकन्याका विवाह उपस्थित होनेपर उसी प्रकार सर्व साधारणसे सहायता ली जाती है। कर्नेल टाड लिखते हैं कि, कई वर्ष पहिले राणाकी दो कन्या और एक पुत्रके साथ जयसलमेर, बीकानेर और कृष्ण-गढके अधिपति लोगोंके विवाहकालमें राणाने प्रजाको छः अंशके एक अंश परिमित धन देनेकी आज्ञा दी, किंतु सम्पूर्ण धन संग्रहीत नहीं हुआ। इसी प्रकार विवाहके समय दूसरे साधारण लोगोंके समान राजकर्म्मचारी लोग भी राणाको धनकी सहा-यता देते हैं ।

केवल महान और शक्तिमान् लोगोंसे ही उक्त प्रकारसे धन लिया जाता हो ऐसा नहीं, सामन्त मण्डली अपने अधीन साधारण प्रजासे भी धन लेती है । ऐसा धनदान कभी२होता है,इस कारण प्रजा भी इसकोआनन्दके साथ देनेमें कोई कष्ट नहीं समझती।

पूर्वकालमें पश्चिमी राज्योंमें भी इस निमित्तसे धन संग्रह किया जाता था। इतिहासलेखक हालम साहब लिखते हैं कि, "सामन्त शासन प्रणालीकी आरंभिक अवस्थामें किसी प्रकार भी कर निर्द्धारित नहीं था, केवल आवश्यकताके अनुसार उक्त प्रकारके धनकी सहायता ली जाती थी। किंतु अन्तमें राजालोग धनवान् होनेपर भी इस निमित्तसे कर लेने लगे थे।

अधिपति वृंदोंकी रीतिपर प्रधान २ सामन्तगण भी अपनी कन्याके विवाहके समय उक्त प्रकारका धन संग्रह करते हैं; प्रजा भी आनन्दसे ऐसे धनको इच्छानुसार देती है, आधिपति वा सामन्तकी कन्याके विवाहमें सहायता देना वह सन्मानका विषय समझती है। फ्रांसकी प्राचीन सामंत शासन प्रणालीके अनुसार ऐसे धन देनेकी प्रथा प्रचलित थी और मागनाकार्टा अर्थात् इंग्लेण्ड सम्बधी साधारण प्रजाकी प्रधान स्वाधीनताकी सनदके अनुसार वहांके सामंतलोग अपने ज्येष्ठ पुत्रके कुलीनताके पदग्रहण, बडी कन्याके विवाहमें तथा वैरियोंके द्वारा स्वयं बंदी हो जानेपर दण्डरूप धन देकर छुटकारा पानेकी आवश्यकता पडनेपर साधारण प्रजा तकसे धनकी सहायता लेते थे। राजपूत राज्योंमें भी जिस समय मुगल पठान उपद्रव अत्याचार और हमले करके सामंतोंको बंदी कर ले जाते थे, उस समय उनकी प्रजा धन देकर सामंतोंको वैरियोंके हाथसे छुटाती थी। कर्नेल टाड लिखते हैं कि, इंग्लेण्डेश्वर विख्यात सिंहविक्रमी वीर रिचर्ड यदि राजपूतोंके अधिपति होते तो दीर्घकालतक उनको बन्दी दशामें आष्ट्रियामें रहना न पडता।

कर्नेल टाड लिखते हैं कि, अम्बेर अर्थात् वर्त्तमान जयपुर राज्यमें इस प्रकारकी सहायता केवल युवराजके विवाहमें ही ली जाती है सामंत पुत्रकी नाबालिग अवस्थामें उसके देशका प्रबंध किसी सामन्तके परलोक सिधारनेपर यदि उनका पुत्र नाबालिग हो तो उसके देशका प्रबन्ध करनेके लिये यथोचित व्यवस्था कर दी जाती है उस सामंत पुत्रके समर्थ होते ही उसके हाथमें फिर उसके देशका अधिकार सौंप दिया जाता है। टाड साहब लिखते हैं कि, यह प्रबन्धका भार समय समयपर राणाके अनुग्रह प्राप्त किसी सामन्तके धन प्राप्तिके निमित्त उसके हाथमें देनेसे बुरे परिणाम भी निकलते हैं, यूरोपमें भी इसी प्रकार होता था मृत सामन्त जिस अवस्थामें है। जिस सम्प्रदायमें है, उस सम्प्रदायके नेताके हाथमें ही राणा उस असमर्थ सामन्त पुत्रके ऐश्वर्य और देशरक्षाका प्रबंध सौंपते हैं। कभी २ स्वयं राणाजी भी प्रबंध करते हैं और कभी २ उस असमर्थ (नाबालिग) सामंतकी माता भी देशका प्रबंध अपने हाथमें लेकर सब कार्योंको स्वयं सँभालती हैं।

विवाह–विवाहके पहिले प्रत्येक सामंत अपने अधिपतिकी इस विषयमें आज्ञा ले लेते हैं, विवाहके समय सामंतकी पदमर्यादाके अनुसार अधीश्वर उनको वस्त्र तथा दूसरे पदार्थ भी यौतुक स्वरूप देते हैं।

कोई राजपूत अपने सम्प्रदायके किसी पुरुषकी कन्याका पाणिपीडन नहीं कर सकता। जर्मन शासनमें इसी प्रकार अपनी श्रेणीके और अपने राजाके पक्षके किसी पुरुषकी कन्याका पाणिग्रहण करनेकी आज्ञा नहीं थी।

भूस्वत्वाधिकारमें समय निर्णय।-कर्नेल टाड लिखते हैं कि, मेवाडमें दो श्रेणीके भूम्याधिकारी [जमीदार] हैं, उनमें एक श्रेणीकी संख्या ही अधिक है। एक श्रेणीका नाम ग्रास्य ठाकुर और दूसरी श्रेणी भूमियां नामसे विख्यात है। जितने सामन्त राणाके निकटसे पट्टा लेकर ग्रास अर्थात् आत्मपालनके लिये भूमि पाते हैं; वह लोग ही ग्रास्य ठाकुर अर्थात् सामंत नामसे विख्यात हैं। भूवृत्ति पाकर यह लोग सामंत शासन प्रणालीकी रीतिके अनुसार निर्दिष्ट संख्यक सेना रखते हैं। राज्यमें किसी समय समर उपस्थित होनेपर; राणाके विदेशमें समरके निमित्त गमन करनेपर वह अपनी २ सेना सहित राणाके पीछे चलनेको बाध्य हैं। और इसके सिवाय वर्षमें कई मास मेवाडकी राजधानी उदयपुरमें रहकर राणाके कार्य्य साधन भी करते हैं। इस श्रेणीके किसी सामंतके प्राण त्यागनेपर उनके पुत्र राणाके चरणोंमें नजराना रखकर अपनी पैतृकपद प्राप्तिके लिये प्रार्थना करते हैं, राणा प्रसन्न चित्तसे उनको सामंत पदपर अभिषिक्त करते हैं।

जो लोग भूमियाँ नामसे विख्यात हैं उनमें किसीके स्वर्ग सिधारनेपर उनके उत्तराधिकारीको दुबारा भूवृत्तिके लिये सामंतोंके समान सनद लेनी होती है। नवीन भूमियां लोग वार्षिक निर्द्धारित करदानके द्वारा ही उत्तराधिकारी उस पदको प्राप्त कर सकते हैं। भूमियांलोग जिस देशमें रहते हैं, वर्षके भीतर कई मास उस देशके राजकार्य्य निर्वाहके लिये नियुक्त होते हैं। "भूमियां" शब्द ही प्रगट किये देता है कि, यही वास्तविक मेवाडके जमीदार हैं। भारतमें जमीदार शब्द प्रचलित होनेके पहिलेसे भूमियाँ शब्दका व्योहार होता आता है, भूमियां और जमीदार समार्थ सूचक हैं। यवनोंके समयसे ही जमीदार शब्दने हम लोगोंकी भाषामें स्थान पाया है। बङ्गालके जमीदार और मेवाडके भूमियां समान स्वत्व के अधिकारी हैं।

ग्रास्य-ग्रास शब्दसे ही ग्रास्य शब्द प्रगट हुआ है, ग्रास अर्थात् अपने पोषणपालनके निमित्त भोजन सामग्रीका स्थापन दान-इससे ही यह ग्रास्य शब्द निर्द्धारित हुआ है। हमारे देशमें साधारण बातोंमें जिस प्रकार रोटी कपडेका दान, यह शब्द उच्चारण किया जाता है, रजवाडेमें भी उसी अर्थको लेकर ग्रास और ग्रास्य शब्दका प्रयोग हुआ है इस विषयमें कर्नेल टाड साहब कहते हैं कि, पश्चिमी राज्योंकी कैलटिक, भाषामें जो गोयास (Gwas) शब्द प्रचलित है उसका अर्थ दास है। वह गोयास और ग्रास समान भावसे उत्पन्न हैं वा नहीं, इसकी मीमांसा वह शब्द शास्त्रके जाननेवालोंके हाथमें सौंप गये हैं। हम कहते हैं-दोनों शब्दोंका कुछ २ उच्चारण समान होनेपर और अर्थ भी प्रायः दोनोंका समान होनेपर भी दोनों शब्द समान भावसे उत्पन्न हुए हैं, यह कभी स्वीकार नहीं किया जा सकता।

भूवृत्तिका पुनर्ग्रहण।--कर्नेल टाड लिखते हैं कि सामन्त मण्डली बहुत काल पूर्वसे राणाके निकटसे प्राप्त हुई जिस भूमिको भोगती आती है, उन सामन्तोंके किसी प्रकारके अपराध, अराजभक्ति, नियमभङ्ग वा किसी विशेष कारणके विना राणा अपनी इच्छानुसार वह प्रदेश पुनर्ग्रहण कर सकते थे या नहीं इसमें संदेह है। यूरोपमें जो सामन्त शासनकी रीति प्रचलित थी; उस शैलीके निर्द्धारित विधानके अनुसार सामन्तलोग जितने दिन जीवित रहते हैं; केवल उतने ही दिन उसको भोगते हैं, उनके परलोक सिधारनेपर वह देश फिर स्वामीके अधिकारमें हो जाता है। किंतु मेवाड राज्यके किसी सामन्तके परलोक सिधारनेपर जितने कार्य प्रचलित होते आते हैं उनके द्वारा उस प्रश्नकी पूरी मीमांसा हो गई है। मेवाडके किसी सामन्तके मरनेपर उनके उत्तराधिकारी, राणाके सन्मानार्थ जिस प्रकार नजराना देकर फिर सनद प्राप्त करते और राणाके द्वारा सामन्त पदपर अभिषिक्त होते हैं उसके द्वारा भलीभांति प्रगट है कि राणा इच्छा करनेपर भूवृत्ति रहित करके उस देशको अपने अधिकारमें करनेकी शक्ति रखते हैं, किंतु राणालोग उस सामर्थ्यको कार्य्यमें न लाकर पूर्व समयसे सामन्तोंके यथार्थ उत्तराधिकारियोंको ही देते चले आते हैं, इस कारण उनकी वह शक्ति मृतप्राय सी हो गई है। राणालोग सत्य२ही प्रतिग्रहणकी शक्ति रखते थे, उसके प्रमाणके लिये कर्नेल टाड लिखते हैं कि; राणा संग्रामसिंहके शासन समयमें मेवाडके सामन्तोंके अधिकृतदेश वास्तवमें ही दूसरोंके हाथमें भी जाते थे। प्रायः दो शताब्दीसे यह प्रथा बिलकुल बंद है। उक्त समयके पहिले किसी राठौर सामन्तका अधिकृत देश निर्द्धारित समयके पीछे अधीश्वर दूसरे सामन्तको दे देते थे, उस समय वह राठौर सामन्त परिवार गौ आदि पशु और अनुचरों सहित उत्तर प्रान्त छोडकर 'चुप्पान'* की बनैली भूमिमें जाकर वास करते थे; इधर उसी भावसे कोई शक्तावत सामंत आरावलीकी तलैटीमें आकर नये देशमें आश्रय लेते थे; उधर चंद्रावत सामन्त चम्बलतीरवर्ती देश छोडकर किसी प्रमार वा चौहान सामंतके अधिकार किये मेवाडके पूर्व सीमान्तवर्त्ती पहाडी देशमें रहनेको बाध्य होते थे। आशय यह है कि, पूर्व कालमें पट्टेका निर्द्धारित समय बीत जानेपर अधिपति सामन्त मण्डलीको भिन्न देशमें भूवृत्ति देते थे। इस कारणसे एक देशके सामन्त दूसरे देशमें भेजे जाते थे।

कर्नेल टाड लिखते हैं कि, " प्रति तीन वर्षके पीछे इसी प्रकार सामन्तगण स्थान परिवर्तन अर्थात् नये देशमें भूवृत्ति पाते थे। " महाराणा भीमसिंहने रजवाडेके इतिहासवेत्ताके सन्मुख प्रगट किया कि, यह परिवर्त्तन प्रथा सामाजिक नियमके साथ ऐसी जडित थी कि सामन्तलोग प्रति तीन वर्ष पीछे इस परिवर्त्तनसे कुछ भी असन्तोष प्रगट नहीं करते थे। किन्तु कर्नेल टाड इस विषयमें संदेह

* मेवाड और गुजरातके जिस वनमय पहाडी देशको विभाग कर दिया है, दक्षिण पश्चिममें स्थित उस देशको चुप्पाम कहते हैं।

प्रगट कर गये हैं। संदिग्ध होनेपर भी वह लिख गये हैं कि, इस परिवर्त्तन प्रथाके द्वारा राणा लोगोंकी अवलंबित राजनीति–गुप्त अभिलाषा पूरी होनेमें कोई विघ्न नहीं होता था। एक देशमें सदाके लिये एक सामंत वंशका अधिकार रहनेसे, उस प्रदेशपर उस सामन्त वंशकी अधिक ममता हो जायगी, निवासी लोग उस सामन्त वंशके अत्यन्त वशीभूत हो जायँगे, इस कारण सामंत प्रबल शक्तिशाली होकर यथा समयपर राणाकी आज्ञाका अनादर करेंगे; अतः राजनीतिज्ञ राणा लोगोंने इस परिवर्त्तन प्रथाका प्रचार किया था। यह प्रथा जबतक प्रचलित थी, तबतक कोई सामंत प्रबल प्रभुत्त्व अर्ज्जन करके, राणाकी आज्ञा अमान्य करनेके साहसी अथवा अपनी सामर्थ्य और प्रताप वृद्धिके लिये अधिकारी देशमें अभेद्य दुर्ग आदि भी निर्माण नहीं कर सके थे। इस रीतिने मुख्य उद्देश पूर्ण अर्थात् सामन्तोंको दृढरूपसे राणाकी आज्ञाके आधीन कर रक्खा था, और दुर्दान्त मुगल सम्राटोंके विरुद्ध सबको एकता भावमें बांधकर सदा जन्मभूमिकी रक्षाके लिये प्रमत्त रक्खा था। कर्नेल टाड यह भी स्वीकार करते हैं कि, इस शैलीके कारण ही भारतके सर्वनाशकारी दुर्दान्त यवन सम्राटगण सात सौ वर्षतक मेवाडपर अधिकार करनेमें समर्थ नहीं हुए थे। अंतमें मुगल सम्राटोंकी सामर्थ्य, प्रताप, वीरत्व और विक्रम दूर होनेके साथ साथ ही जातीय अनेकता, जातीय विद्रोहने ही मेवाडकी शोचनीय दशा उपस्थित कर दी और अंतमें लुटेरे महाराष्ट्र दस्युदलने मेवाडको बिलकुल विध्वस्त कर डाला था।

जिस समय उक्त प्रकारसे परिवर्त्तन रीति प्रचलित थी, उस समय सामंतगण चिरस्थायी अधिकारका पट्टा नहीं पाते थे। विख्यात इतिहासवेत्ता गिबिन लिखते हैं कि, "फ्रांसकी आरंभिक दशामें वहां ऐसी व्यवस्था प्रचलित थी। मेवाडमें तीन श्रेणीकी भूसनद प्रचलित है; पहिली मियादी, दूसरी चिरस्थायी स्वत्त्व मूलक और तीसरी वंशानुक्रमके अधिकारी है। किसी सामंतके परलोक सिधारनेपर उनके पुत्र पौत्र लोग उत्तराधिकारी क्रमसे भोग करते आते हैं, इस समय उस भावसे ही अधिकृत देशोंमें सामंतोंका चिरस्थायी स्वत्त्व वर्त्त रहा है। और उस देशमें राणाका निःसंदेह पूर्णस्वत्त्व विराजमान है अर्थात् वह इच्छानुसार किसी सामंतके वंशधरको वृत्तिरहित कर सकते हैं। इतिहास लेखक लिखते हैं कि, यह प्रथा बहुत पुरानी है, सामयिक राजनीतिके अनुसार सामंत मंडलीको आज्ञाधीन रखनेके लिये निःसंदेह इसका जन्म हुआ था।

साधु टाड यहांपर लिखते हैं कि, जो राणागण गर्व्वित और उद्धत सामन्त मण्डलीके हृदयमें प्रबल भाव उद्दीपन करनेमें समर्थ थे, उनके प्रति अवश्य ही उच्च मन्तव्य प्रकाश करनेको बाध्य हैं। पुत्र अपने पिताकी उपाधि और सत्त्वके अधिकारसे आधीनके सरदारोंके प्रति पितासम्बन्धी सामर्थ्य विस्तार करनेमें समर्थ और पिताके समान अपने प्रभु अधीश्वरकी अनुकूलता स्वीकार करनेमें बाध्य हैं, किन्तु उसके उल्लंघन करनेमें किसी प्रकार समर्थ नहीं हैं, यह भाव बहुत ऊंचा है और इसीसे शुभफल होता है।

सामन्त मण्डली जिससे परस्पर वैवाहिक भावमें बँधकर प्रबल शक्ति संग्रह पूर्वक राणाके विरुद्ध न उठे और राज्यमें विद्रोह फैलानेमें समर्थ न हो सके उसके लिये गूढ राजनीतिज्ञ राणाओंने सामन्तोंको भिन्न सम्प्रदाय भोगी और विदेशी सामंतोंके साथ मिलाकर मङ्गलमय फल उपजाया था । किंतु समयपर उस अवलम्बित नीतिका अनादर करनेसे आत्मविग्रह और विद्रोहाग्निने मेवाडकी जातीय भीतरी दशाको अत्यंत हृदय-भेदी और शोचनीय कर दिया था ।

मेवाडकी भिन्न श्रेणी भोगी सामंत मण्डलीमें भिन्न रक्तधारी, भिन्न देशीय राजपूत सामन्तोंको बुलाकर मेवाडमें रखनेसे राजनैतिक महान उद्देश पूर्ण होगा, पूर्व राणालोगोंने इस बातको भलीभाँति समझ लिया था; और उसी उद्देशको कार्य्यमें लाये थे । राठौर, चौहान, प्रमार, सोलंकी और भट्टजातीय सामन्तोंके साथ राणालोग वैवाहिक प्रबन्ध बंधन द्वारा मिल गये थे । उक्त राठौर चौहान आदि जातिके सामन्तोंमें कई वंश दिल्ली और अनहलवाड़ा नगरके बहुत पुराने हिन्दू राजवंशमें उत्पन्न हैं । शुद्ध आर्य्यरक्त पवित्र रखनेके लिये ही मेवाडके राणालोग उक्त सामन्तोंकी कन्याका पाणिग्रहण करते थे, राणा लोग जिस प्रकार उक्त भिन्न देशीय राजपूतोंकी कन्याओंको स्त्रीरूपसे ग्रहण करते थे, राणा वंशके सामन्त भी उसी प्रकार जातीय रक्त पवित्र रखनेकी इच्छासे उक्त राज-पूतोंके साथ वैवाहिक सम्बन्ध करते थे । विदेशके राजपूतगण इस प्रकार मेवाडके अधि-पति और राणा वंशीय सामन्तमण्डलीके साथ वैवाहिक सम्बन्ध करनेसे वह भी राज्यका मंगल मनाने लगे, और मेवाडके ऊपर उनकी भी ममता और आसक्ति बडी थी, उसी वैवाहिक सम्बन्धसे ही मेवाडमें आत्मविग्रह और विद्रोह उपस्थित होनेपर, वह प्राणपणसे राणाका पक्ष समर्थन और सहायता करनेमें अग्रसर होते थे । किन्तु जिस समयसे उक्त मंगलमय प्रथाके ऊपरसे सबकी दृष्टि हट गई, जिस समयसे मेवाडकी प्रधान २ राजपूत शाखाकी पुरुषसंख्या प्रबल हो गई, जिस समयसे सबने दल बांधना आरंभ किया, उस समयसे ही राणाकी अधिकार की हुई भूमिकी सीमा क्रमशः घटने लगी, चारों ओर आत्मविग्रहकी अग्नि प्रज्वलित हुई और अत्याचारी दुर्दान्त महाराष्ट्र दल मेवाडमें घुस कर मेवाडको बिलकुल अन्तस्सार शून्य करने लगे थे । दिल्लीके मुगल सम्राटोंका जबतक अखण्ड प्रभुत्त्व था, तब तक उन निष्ठुर हृदय महाराष्ट्रियोंके समान किसी जातिने साम्राज्यमें किसी प्रकार अत्याचार वा अनिष्ट करनेका साहस नहीं किया । जिस समय मुगल शासनशक्ति सर्वथा विलुप्त हो गई, घटना क्रमसे उस समय ही मेवाडकी गौरवगरिमा-सिसोदिया कुलका वीरत्व विक्रम भी सर्वभावसे अदृश्य हो गया । यदि उस समय मेवाडके सिंहासनपर राणा प्रताप, जयसिंह, राजसिंह आदिके समान कोई राणा विराजमान होते, यदि उस समय राजपूतजाति आत्मविग्रहानलसे मेवाडके छार खार न करती, तो महाराष्ट्रीलोग किसी प्रकार मस्तक ऊपर उठानेमें समर्थ न होते, यह सहजमें ही स्वीकार किया जा सकता है ।

राठौर, चौहान, प्रमार आदि वैदेशिक सामन्तगण मेवाडमें बद्धमूल और सिसोदीय वंशके साथ वैवाहिक सम्बंध बंधनमें बँधनेके कारण राणालोग भिन्न श्रेणीका पट्टा प्रचलित करनेमें बाध्य हुए। यद्यपि समयके प्रभावसे वह भिन्नता सर्वथा दूर हो गई, यद्यपि समर्थ होनेपर भी राणालोगोंने किसी सामन्तको किसी देशकी भूवृत्तिसे सर्वथा च्युत नहीं किया; वरन् सब ही सम भावसे स्थायी स्वत्व भोगते चले आते हैं, तथापि मूल पट्टा देनेके समय स्थायी स्वत्व नहीं दिया जाता था, और अब भी नहीं दिया जाता; यह .बात निम्नलिखित विवरणके पढनेसे भलीभाँति जानी जा सकती है।

कालापट्टा।—यथा स्थानमें लिखा जा चुका है कि राणा रायमल और राणा उदयसिंहके वंशधरलोग जिन दो प्रधान शाखाओंमें विभक्त हुए थे; उनके ही असंख्य वंशधर यथासमय भिन्न भिन्न पैतृक उपाधियोंकी प्राप्तिसे होकर अनेक उपशाखाओंमें विभक्त होकर,मेवाडके प्रधान सामन्त और सरदार श्रेणीमें गिने गये थे।

चन्दावत और शक्तावत यह दो प्रधान शाखा हैं। पहिली दश और दूसरी छःशाखाओंमें विभक्त हैं। राजपूतोंमें चिर प्रचलित नियमके अनुसार वह कभी अपने वंशवालोंके साथ कन्याके लेने देनेका सम्बंध नहीं कर सकते। यह बात सर्वथा निषिद्ध है। उक्त शाखा और उपशाखामें विभक्त सम्पूर्ण राजपूत एक जाति अर्थात् "सिसोदीयकुल" नामसे विख्यात हैं; सिसोदीय-स्त्रीके साथ सिसोदीय-पुरुषका विवाह किसी प्रकारसे भी नहीं हो सकता; सिसोदीय लोग सब ही राजरक्तधारी रूपसे प्रसिद्ध हैं।

भूवृत्तिके ऊपर सिसोदीय राजपूतोंका जैसा प्रबल स्वत्वाधिकार है, वह राठौर, प्रमार, चौहान आदि जितने विदेशीय राजपूत मेवाडमें सामन्त पदपर प्रतिष्ठित हो कर भूवृत्ति भोगते आते हैं उनका वैसा प्रबल स्वत्वाधिकार नहीं है। सिसोदीय गण राजवंशी हैं इस कारण उनका स्वत्व बलवान है। सिसोदीय सामन्तोंकी भूवृत्ति यद्यपि चिरस्थायी पट्टेके अनुसार नहीं है और राणालोग किसी सिसोदीय सामन्तको भी अपनी इच्छानुसार वृत्तिसे रहित नहीं करते तथापि भूवृत्तिमें उनका माने एक स्थायी स्वत्व वर्त्त रहा है। किन्तु प्रमार, चौहान आदि सामन्तोंके परवर्त्ती बीस पुरुष क्रमानुसार किसी भूवृत्तिके संभोग करनेपर भी वह यह नहीं कह सकते कि "भूवृत्तिमें हमारा स्थायी स्वत्व हो गया है।" जो वैदेशिक सामन्तोंको पट्टा दिया जाता है, वही "कालापट्टा" नामसे विख्यात है। वैदेशिक सामन्तगण विख्यात भी करते हैं कि, "हम कालापट्टा धारी हैं" किन्तु उनके आत्मीय सिसोदीय सामन्तगण उस काले पट्टेके अधीन न होनेके कारण गर्व कर सकते हैं। कालपट्टेका असली अर्थ यह है किजब इच्छा हो तभी वह भूवृत्ति लौटा ली जा सकती है, दूसरे पक्षमें सिसोदीय सामन्तगण राणाके दिये हुए पट्टेके अनुसार अपनेको जिस प्रकार अनेक विषयोंमें सुविधा सुयोग सम्पन्न समझते हैं, विदेशी सामन्तगण उस प्रकार अनुभव नहीं कर सकते।

महामना टाड जिस समय विध्वस्त मेवाडका सुखसूर्य्य फिर उदित करने और अशान्ति, अत्याचार, उपद्रव, उत्पीडन दूर करने और बलहीन राणा भीमसिंहकी साम-

र्य्य प्रताप फिर विस्तृत करने और यहांके निवासियोंके मंगल साधन कार्य्यमें प्रवृत्त हुए, उस समय मेवाडके सब सामन्तोंको पट्टे और सनदें उपस्थित करके महाराणा भीमसिं-हके हस्ताक्षर युक्त नये पट्टेका ग्रहण करना आवश्यक हो गया। उक्त उद्देश साधनके लिये राणाके प्रधान मंत्रीने स्वयं चन्दावतोंके नेता सलम्बूराधिपतिके उदयपुरवाले वास-स्थानमें जाकर उनसे प्राचीन पट्टा दिखानेके लिये प्रार्थना की। राणाके दुःसमयमें सलम्बूरके सामन्तने राणाके अधिकृत कई ग्राम अन्यायसे अपने अधिकारमें कर लिये थे, इस कारण प्राचीन पट्टा उपस्थित करनेसे उनका वह निन्दित कार्य्य प्रगट हो जाता। जब मंत्रीने पट्टा दिखानेके लिये विशेष अनुरोध किया, तब सामन्तने राणाके प्रासादकी ओर लक्ष्य करके साहसके साथ उत्तर दिया कि, "मेरा पट्टा इस प्रासादकी भीतकी जडमें है।" वीर तेजस्वी चंदके उत्तराधिकारीका यह ठीक ही उत्तर है, इसको कौन अस्वीकार करेगा? राजपूत सामन्तमण्डलीकी नस २ में कैसे तीव्र रसका सोत बह रहा है, यह उत्तर उसकी पूर्ण साक्षी दे रहा है। इस उत्तरको स्मरण करके कर्नैल टाड लिख गये हैं कि, "हमारे स्वदेशके अर्ल आफ वारनने ऐसे ही कारणसे एडवर्डके प्रति-निधिको जो उत्तर दिया था, वह यह है 'मेरे पूर्व पुरुषोंने अपनी तलवारके बलसे इस भूमिपर अधिकार किया था, मैं भी उसी तलवारके बलसे इसकी रक्षा करूंगा।' उस समय यह उत्तर मुझे स्मरण हो आया था।"

ऊपर हमने पुरानी दशाका ही वर्णन किया है। वर्त्तमान नियमानुसार वर्त्तमान सामन्तगण चिर जीवनके लिये पट्टा पाते हैं और अपनी उपस्थितिमें अपने पुत्र वा राणा-की सम्मति लेकर किसीको भी पोष्यपुत्र ग्रहण करनेपर वही सामन्तपदपर अभिषिक्त होकर भूवृत्ति संभोग करते हैं। किन्तु कोई सामन्त यदि राणाके विरुद्ध कोई कार्य्य करे अथवा सामन्त पदवीकी अयोग्यता दिखावे तो राणा भूवृत्ति लौटा लेनेके अधिकारी हैं। किसी सामन्तके परलोक सिधारनेपर उनके उत्तराधिकारीको किस रीतिसे अभि-षिक्त करना होता है, यह बात हम यथोचित स्थानमें लिख आये हैं। सिसोदीय सामन्तके साथ प्रमार भट्टी आदि जातिके सामन्तोंके भूस्वत्त्वकी कुछ भी भिन्नता नहीं है। किन्तु संवत् १८२२ के विद्रोहके पहिले इन वैदेशिक सामन्तोंके स्वार्थके ऊपर राणा लोग बहुत ही कम दृष्टि रखते थे। विदेशी सामन्तोंमें वैदला और कोथारियाके चौहान और मेवाडके मध्यवर्ती देशोंके प्रमार सामन्तगण प्रथम श्रेणीके सामन्त पदपर प्रतिष्ठित हैं।

रजवाडके अधीश्वर यद्यपि अपनी इच्छानुसार किसी सामन्तको पदच्युत करके उसको भूवृत्ति रहित और उसके अधिकृत देशको अपने अधिकारमें करलेनेके अधिकारी हैं। किन्तु किसी प्राचीन प्रबल शक्तिमान सामन्तको उस प्रकार पदच्युत करनेमें उद्यत होनेपर अधिपतिको अनेक विघ्न और विपत्तियाँ भोगनी होती हैं, यद्यपि रजवाडेके राज्योंमें विदेशी सामन्तोंकी संख्या भी सामान्य नहीं है किंतु स्वजातीय सामन्तलोग ही प्रबल शक्तिवाले हैं, और उन स्वजातीयसामन्त मण्डलीमेंसे एक सामन्त सबके नेता

पदपर प्रतिष्ठित होते हैं यदि उनको स्वजातीय नेता प्राप्त न हो तो वह निकटवर्ती समीपी सामन्तको नेता पदमें वरण कर लेते हैं। सम्पूर्ण आधीनके सरदार ही उस नेताके आज्ञाधीन रहते हैं। इस कारण किसी नेताको पदच्युत करनेमें उद्यत होनेपर वह आधीनके सब सरदार और उस सम्प्रदायके दूसरे सामन्त इकट्ठे होकर महा विघ्न करते हैं। अत: एक सामन्तको पदच्युत करने पर उस संप्रदायके सब ही विरुद्ध हो जाते हैं। यदि कोई सामन्त राणाके विरुद्ध भारी अपराध करै: वा सामन्त पदकी अयोग्यता दिखावे तो अधिपति उस संप्रदायके किसी योग्य पुरुषको उस पदपर अभिषिक्त कर देते हैं। सब प्रकारसे योग्य पुरुपको निर्द्धारित करनेके लिये राणाके समान दूसरे सामन्त और सरदार भी विशेष तीक्ष्ण दृष्टि रखते हैं। यदि राणा किसी सामन्तका पद सर्वथा खाली कराके अपने अधिकारमें कर लें तो उन सामन्तके अधीनस्थ सरदारगण अपना पूर्वस्वत्त्व अपने हाथमें ही रखकर साक्षात् संबंधमें राणाकी आज्ञाके आधीन रहते हैं।

जिस समय मेवाड उन्नतिकी ऊँची सीढीसे गिरकर अवनतिके समुद्रमें डूब गया-जिस समय राणाकी शासन शक्ति बिलकुल क्षीण हो गई-प्रताप प्रभुत्त्व लुप्त होकर चारों ओर विद्रोह और आत्मविग्रहाग्नि प्रज्वलित हो गई, उस समय चतुर प्रबल सामन्तोंने बल प्रकाश, भय प्रदर्शन और अन्यान्य अनेक प्रकारके असत उपायोंसे राणाके अधिकारके अनेक देशोंको अपने अधिकारमें कर लिया। बलहीन और लुप्त प्रताप राणा तथा उनके मंत्रीके दुर्बुद्धि दोषसे भी अनेक ग्राम उसी प्रकार सामन्तोंके अधिकारमें हो गये थे। कर्नेल टाडने मेवाडमें पहुँच कर जिस समय सब सामन्तोंके पट्टेके अनुसार उपभोग्य देशका निर्णय और व्यवस्था निर्द्धारण करी उस समय उन उदार नीतिवाले टाडने उन सामन्तोंके करकमलसे उक्त प्रकारसे अनेक देशोंको निकाल लिया था। वर्त्तमान शासनमें कोई सामन्त भी बल प्रकाश वा भय दिखानेसे राणाके अधिकृत किसी देश वा ग्रामके स्वत्त्वाधिकार करनेका साहस न कर सके। इस समय चारों ओर शान्ति विराजमान है;विद्रोह, आत्मविग्रह वा विदेशियोंके आक्रमणका भय बिलकुल दूर हो जानेसे और शासन बिभागमें सच्चारित्र उपयोगी कर्मचारी नियुक्त होनेसे मेवाडकी सामंत मण्डलीका उस प्रकारका अन्याय आचरण द्वार बिलकुल बंद हो गया है।

भूमियाँ।-- मेवाडके इतिहासमें हमने लिखा है कि इस राज्यकी आरंभिक दशामें प्राचीन राणागणके वंशधरलोग भूमियाँ नामसे विख्यात थे और राज्यके प्रधान २ बडे पदोंपर प्रतिष्ठित होनेसे विशेष सन्मानित होते थे। मुगल सम्राट सुलतान बाबरके समय और प्रतिद्वन्दीराणा संघके शासन समयसे पहिले उस प्राचीन राजवंशी भूमियाँ संप्रदायकी अवनति हुई, अर्थात् परवर्त्ती राणागणके उत्तराधिकारी लोग सामन्तपद और सर्वत्र बहुत ऊंचा सन्मान पानेसे, उनकी सामर्थ्य प्रताप और प्रभुताई सहजमें बढ गई। और वह राज्यके सबस ऊंच पदपर अभिषिक्त होकर विशेषशक्ति अर्जन

करते थे, इस कारण प्राचीन राजवंशधरगण भूमियां उपाधि धारण करके युद्ध सम्बन्धी स्वामीरूपसे रहनेको बाध्य हो गये । भूमिके साथ उनका जो अखण्डनीय सम्बन्ध है, "भूमियां" उपाधि ही उसकी बतानेवाली है। मुसलमानोंने जिस जमींदार शब्दका प्रचलन किया, बङ्गदेशमें जिन जमींदारोंकी संख्या असंख्य है उस जमींदार शब्दकी अपेक्षा यह भूमियाँ शब्द ही अधिक भूस्वत्त्वको प्रकट करता है । मेवाडके आरम्भिक अधिपतियोंके वंशधर यह भूमियां लोग इस समय मेवाडके अनेक प्रान्तोंमें निवास करते हैं। कमलनारि चप्पनके वनमय देश और मण्डलगढके समतल क्षेत्रमें यह भूमियां लोग बहुत कालसे राणाके अधीनमें अतुल वीरत्व विक्रम प्रकाश और विजातीय आक्रमण कारियोंके उत्पीडन अत्याचारसे अपनी सुधामय स्वाधीनता रक्षा करते आते हैं । उक्त प्रदेशोंमें वह भूमियांगण बहुत कालसे कृषि कार्य द्वारा संसार यात्रा: निर्वाह करते हैं ।

मेवाडके उस आरंभिक राणा वंशधरगण किस २ समय किस २ अधिपतिके वंशमें जन्म ग्रहण करके विभिन्न शाखाओंमें हुए, यह बात उनके कुम्भावत्, लुनवत्, रणावत् आदि साम्प्रदायिक नामोंसे ही प्रगट है । यथासमय परवर्त्ती राणावंशवालोंकी सन्मानशक्ति और प्रभुत्व वृद्धिके साथ वह भूमियांगण राजसभामें गमन और राजकार्य्यमें नियोगकी प्रार्थना अनुचित समझ कर ही जीविका निर्वाहके लिये कृषिकार्य्यमें नियुक्त हुए। यद्यपि वह वीर राजपूतजाति राणाके वंशकी होकर भी साधारण कृषिकार्य्य अवलम्बन करनेमें बाध्य हुई थी, तथापि उन्होंने कभी जातिके अवलम्बित वीरव्रतको नहीं छोडा। तलवार, भाला और धनुष बाण उनके चिर सहचर बने हुए हैं। यद्यपि वह आरावलीके स्थान २ में हल चलाने और पशुपालनेमें आनन्दपूर्वक नियुक्त हैं, किन्तु वह जातीयदर्प, वीरतेज, गौरवगरिमा और वंशमर्य्यादा उनके हृदयमें उसी प्रबल भावसे विराजमान है । भूमियां लोगोंके वर्त्तमान आत्मीय कुटुंब सामन्त जो इस समय शिक्षित, सभ्य और राणाकी संगतिसे अपनेको बहुत ऊंचा मानते हैं, कर्नेल टाड लिखते हैं कि उनकी अपेक्षा उक्त भूमियांगण अधिक बुद्धिमान् शान्त और धीर हैं । भूमियांलोगोंमें बहुतसे लोग प्राचीन समयसे अपनेसे छोटी जातिवाले आरंभिक निवासियोंकी कन्याका पाणिग्रहण करते आते हैं, इस कारण: वर्त्तमान राजवंशधरगण उनका उपहास करते हैं । उपहासका कारण यह है कि उन विवाहोंसे जितनी सन्ताने उत्पन्न हुई हैं, वह परिचय देते समय दादा और नाना दोनों गोष्ठीकी मिली हुई उपाधियाँ प्रगट करती हैं ।

उक्त भूमियां लोगोंमें बहुतसे एक २ ग्रामके अधिकारी हैं । वह उसके लिये बहुत साधारण कर देते हैं । आवश्यकता होनेपर स्थानीय शासनकर्त्ता उनको स्थानीय सेनारूपसे दलबद्ध करते हैं । उस समय अर्थात् जिस समय वह राणाकी आज्ञानुसार राज्यरक्षा, विग्रह निवारण वा शत्रुओंके विरुद्ध खडे होनेके लिये सेना दलमें नियुक्त होते हैं, उस समय वह केवल भोजनके सिवाय और कुछ नहीं पाते।

सामन्त शासन शैलीके अनुसार यही लोग मेवाडकी अधीन प्रजा हैं * और मेवाडके अनेक स्थानोंमें बन्दूक, तलवार, और ढालधारी भूमियां विराजमान हैं। मंडलगढ नामक देशमें जिस समय इन भूमियां और राणाका स्वार्थ विपदयुक्त हो जाता, दुर्दान्त महाराष्ट्र और अन्यान्य लुटेरे लोग जिस समय प्रबल अत्याचार, उत्पीडन और लूट-मारमें प्रमत्त हो उठते, उस समय यह अस्त्रधारी प्रायः चार सहस्र भूमियां रणवेषसे सजते थे। भूमियांगण राणा वा किसी दूसरेकी सहायता न लेकर क्रमसे आधी शताब्दीतक घोर विद्रोह और अराजकतामें इस प्रयोजनीय देशके दुर्गकी राणाके लिये रक्षा करनेमें समर्थ हुए थे। मेवाडमें मण्डलगढ एक विस्तृत प्रदेश है। इसके अन्तर्भुक्त तीन सौ साठ खण्ड नगर और ग्रामोंमें प्राचीन आचार व्यवहारके अनेक चिह्न देदीप्यमान हैं। पूर्व कालमें यह देश सोलङ्कियोंके अधिकारमें था वही लोग इसमें निवास करते थे। यवन राजवंशके बहुतसे उत्तराधिकारी राव उपाधि धारण करके अब भी इस देशमें भूमि संभोग करते हैं। +

यह सम्पूर्ण भूमियां लडनेके उपयोगवाली प्रजा राणाको साधारण कर देती है, और स्थानीय युद्धके कार्य्यमें अर्थात् सीमान्तमें स्थित दुर्गकी रक्षा आदिमें नियमित समयतक सेनारूपसे अवस्थान करती है। किन्तु यदि कोई विदेशका शत्रु आकर मेवाड आक्रमणका उद्योग करै तो उस समय राणाके घोषणापत्र प्रचार करते ही यह भूमियां लोग अपने २ अस्त्र शस्त्र लेकर आक्रमणकारियोंके विरुद्ध खडे होते हैं। किंतु उस समय वह विना वेतनके केवल भोजनमात्रकी प्राप्तिसे ही जन्मभूमिकी रक्षाके लिये संग्राममें कूदते हैं। × यह भूमियां बहुत दिनसे यह कहकर आपत्ति कर रहे हैं कि, "राणाको हमलोगोंसे कर लेना किसी प्रकार उचित नहीं है, क्योंकि हम युद्धकार्य्यमें जब विना वेतनके नियुक्त होते हैं तो न्यायानुसार हमको कर दानसे छुटकारा देना उचित है।"

* पश्चिमी देशकी सामन्त शासन शैलीके अनुसार विख्यात इतिहासलेखक हालम इस श्रेणीके स्वत्व सम्बन्धमें लिखते हैं कि "यह भूस्वत्त्व उत्तराधिकारी भावसे प्राप्त है और इसके अधिकारी स्थानीय शान्ति स्थापनके लिये सेनामें भरती होनेको बाध्य हैं, किन्तु अन्य किसी प्रकारके कर देनेमें बाध्य नहीं हैं। इस भूस्वत्त्वको पिताके सब पुत्र समान भागमें विभक्तकर सकते हैं;सन्तानके अभावमें ज्ञातिगण उस भूस्वत्त्वका विभाग करलेनेमें समर्थ हैं।" मेवाडमें भूमियां स्वत्व उत्तराधिकारियोंके बीचमें कुछ अंशोंमें विभक्त हो सकता है किन्तु कच्छमें यह अंश बहुत भागोंमें विभक्त हो जाता है और उक्त स्वत्व के अधिकारी स्थानीय आवश्यक कार्योंमें सेनादलमें प्रविष्ट होते हैं। मेवाडके भूमियां लोग कहते हैं कि, "हमारा यह भूस्वत्त्व राज्य स्थापनके आरंभसे प्रचलित है। किसी लिखित विधान वा सनद द्वारा यह स्वत्त्व उनके पूर्व पुरुषोंने नहीं पाया, उत्तराधिकारी रूपसे ही अधिकार करते चले आते हैं।

+ कर्नेल टाडने गहन वनको प्राप्त हुए उक्त प्रदेशके भीतर परिभ्रमण करनेके समय दो स्मारक लिपि पाई थी। उनके द्वारा आरंभिक वंशकी बहुत सी बातें विदित हो सकती हैं

× परिशिष्ट—पन्द्रहवीं और सोलहवीं अनुलिपि देखो।

यह भूमियांलोग राणाके निकटसे इस भूस्वत्त्व संभोगके लिये किसी प्रकारका पट्ट नहीं लेते। विना पट्टेके भूमिका अधिकार स्वत्त्व मिलना यह लोग महा सन्मान और गौरवका विषय समझते हैं। " साकाभूम " अर्थात् मेरी भूमि यह सगर्व उक्ति सदा उनके मुखसे निकलती रहती है।

पूर्वकालमें कोई उक्त श्रेणीकी स्वतन्त्र प्रजा सामन्त पद पाने और पूर्ण शक्ति चलानेके लिये विशेष चेष्टा करती थी। किंतु उनकी वह इच्छा प्रायः पूर्ण नहीं होती थी। देवलाके राठौर सरदारने अपने प्रभु बनेडाके राजासे पट्टा ग्रहण करके तीन प्रधान २ देशोंका अधिकार पाया था। क्रमसे सामर्थ और प्रभुत्व अर्ज्जनके साथ उस सरदारने अपनेको सामंत रूपसे गिनानेके लिये बनेडा राजकी अधीनता अस्वीकार करी। बनेडा राजको वह जिस प्रकार निर्द्धारित कर देते आते थे उसमें कोई व्यत्यय न करके निर्दिष्ट व्यवस्थाके अनुसार बनेडा राजके दरबारमें गमन और वहां रहनेमें सर्वथा उदासीनता दिखाने लगे। यह निश्चित था कि, किसी विदेशी शत्रुके आक्रमणके उपस्थित होनेपर उक्त सरदार पैंतीस सवार देंगे। किंतु वैसी घटना अर्थात् विदेशी शत्रु उपस्थित होनेपर देवलापति सेना भेजनेमें सर्वथा उदासीन हो गये। युद्ध समाप्तिके पीछे बनेडा राजने उक्त सरदारके ऊपर महा क्रुद्ध होकर उनको राजसभामें बुला भेजा। देवलाके सरदार पूर्ण स्वाधीनताका सुधामय फल भोग रहे थे, उनके स्वाधीनता स्वीकार न करनेपर बनेडा राजने देवला लौटा देनेकी आज्ञा दी। उसके उत्तरमें उक्त सरदारने सूचित किया कि, "मेरा मस्तक और देवला दोनों एक साथ बँधे हैं।" उनके इस उत्तरका अर्थ यह है कि देहमें प्राण रहते २ देवला कभी नहीं लौटा सकता। अन्तमें बनेडाधीश्वरने सरदारके इस गर्वित आचरणको राणासे कहला भेजा, तब देवलादेश बलपूर्वक छीन कर राणाके अधिकृत भूखण्डके अंतर्गत कर लिया गया। देवलाके अतिरिक्त और जितनी भूमि उस सरदारके पास थी वह केवल उसी भूमिमें राणाके आधीन रहने लगे, और उस भूवृत्तिके बदलेमें उनको स्थानीय युद्धसम्बंधी कार्य्य साधनेकी आज्ञा हुई। बनेडा राज्यमें बहुतसे स्वाधीन भूमियां रहते हैं।उनमें बहुतसे लोग छोटे २ ग्रामोंके भी स्वामी हैं। वह लोग किसी प्रकारके निर्द्धारित कर दानके बदले स्थानीय कार्य्य सम्पादन करते हैं। राजाके साथ किसी स्थानमें गमन करनेपर बनेडापति उनके भोजनकी सामग्रीका सब प्रबन्ध कर देते हैं।

रजवाडेमें यह भूमियां स्वत्त्व इतना संमान सूचक है कि, प्रधान २ सामंततक अपने सम्पूर्ण आधीनके ग्रामोंमें इस भूमियां स्वत्त्व पानेके लिये सदा चेष्टा करते हैं। साधारणतया पट्टेके द्वारा जो भूस्वत्त्व मिलता है; विना पट्टेका यह भूमियां स्वत्त्व उसकी अपेक्षा विघ्नरहित और दीर्घस्थायी है इस कारण सामंतलोग इस स्वत्त्वके प्राप्त करनेके लिये सदा सचेष्ट रहते हैं।

यह भूमियांस्वत्व किस प्रकार उत्पन्न हुआ ? भूमियां लोग किस२ विषयमें मेवाड की अन्यान्य पट्टाधारी प्रजाकी अपेक्षा अधिक सुबीता पाते हैं; ? साधारण प्रजाके साथ

भूमियां लोगोंका क्या भेद है ? परिशिष्ट पत्रमें हमने जितने ताम्रशासन; राजाकी आज्ञासे और स्मारक लिपियोंका अनुवाद दिया है पाठक लोग उनको पढकर यह सब बातैं भलीभांति जान सकेंगे ।

बनेडा और शाहपुरके दो राजा ।—मेवाडकी सबसे ऊंची सामन्त श्रेणीमें बनेडा और शाहपुरेके दो अधिपति सबकी अपेक्षा मान्य महान और शक्तिशाली हैं । वह दोनों यद्यपि सामंत पदवीपर हैं; किंतु राजाकी उपाधिसे भूषित हैं और उनमें एक यहां तक प्रभुता और प्रताप शाली हैं कि, उनको सामंतके नामसे पुकारा जा सकता है । यह दोनों ही राणाके समान समरक्तवाही हैं । राणा जयसिंहके जो यमज पुत्र उत्पन्न हुए थे । बनेडाके राजा उनमेंसे एकके वंशधर हैं और शाहपुरेके अधीश्वर राणा उदय सिंहके वंशमें उत्पन्न हुए हैं ।

दोनोंमेंसे किसी एकके परलोक सिधारने पर नवीन राजा मेवाडेश्वर राणाके निकट-से राज्यशासनकी सनद लेते हैं । राणा स्वयं उनका अभिषेक कार्य्य संपन्न करके राज-प्रसाद स्वरूप खिलअत अर्थात् महामूल्यके वस्त्राभूषण देते हैं । यह बनेडा और शाह-पुरेके राजा यद्यपि राणाके अधीन हैं, किंतु अन्यान्य सामंतोंके समान नये अभिषेक के समय राणाको किसी प्रकारका नजराना नहीं देते किंतु राणाकी सभामें वर्षमें निर्द्धारित कई मासतक स्थिति और मेवाडके जिस सीमान्तमें बनेडा और साहपुरा स्था-पित है वहांके सामरिक कार्य्यकी सहायता करनेमें भी वाध्य हैं। कर्नल टाड लिखते हैं कि, "वह बहुत कालसे अपने इस कर्त्तव्य पालनमें पराङ्मुख हैं । केवल समयके गुणसे ही राणालोगोंके प्रताप प्रभुत्व घटनेके साथ ही वह उक्त कर्त्तव्य पालनमें उदासीन हो गये। बनेडा और शाहपुरा दोनों ही देश दिल्लीके मुगल सम्राटके आधीन स्थित अजमेर देशके बहुत निकटवर्त्ती थे,इस कारण दोनों राजा अवस्था और समयकी विशेषतासे मुगल सम्राट्की आज्ञा पालनेमें बाध्य हो गये । मुगल सम्राटने ही दोनोंको राजाकी उपाधि दी थी, और शाहपुरेके अधिपतिने मुगलसम्राटके अनुग्रहसे अजमेरका कुछ भाग पाया था । वर्त्तमान शाहपुराधीश्वर बृटिश गवर्नमेन्टको वार्षिक कर देकर मुगलसम्राटके दिये हुए अजमेर प्रान्तके उस अंशको भोगते हैं । •

पट्टेका आदर्श और उसमें लिखित व्यवस्था । राणा सामन्त और अधीनके प्रधान२ पुरुषोंको भूवृत्ति देनेके समय जितने प्रकारके पट्टे और सनदें देते हैं परिशिष्टमें उनके कई नमूने लिखे गये हैं । उनके देखनेसे सामन्तोंका स्वत्व, अधिकार, सन्मान,अनुग्रह-अर्थसंग्रहका मूलकारण और किस व्यवस्थाके अनुसार वह भूवृत्ति दी गई यह सब बातें भलीभांति ज्ञात हो सकती हैं । अनेक वृत्ति प्राप्त राजासे अनुगृहीत सामन्तोंने समयके गुणसे राणाकी निर्बुद्धिता देखकर, अनेक विषयोंमें अपनी स्वाधीनता संग्रह कर ली थी । एक २ राणाने यहांतक अविवेकताका कार्य्य किया कि नवीन सामन्तके अभिषेक कालमें जो नजराना लिया गया, वही अपने प्रभुत्वका परिचायक जान

कर दो एक सामन्तोंको उस नजरानेसे भी सर्वथा रहित कर दिया । आने और जाने-वाली वस्तुकी चुंगी(पारावार शुल्क) और दूसरी इसी श्रेणीके अंश भी अनेक सामन्तोंने अपने संभोग करनेके लिये हतप्रताप मेवाडपतिके निकटसे सम्मति कर ले लिये। बहुतसे अपने २ देशमें अपने २ नामसे ताम्रमुद्रा चलाने और दूसरे अनेक विषयोंमें राणाका प्रभुत्व प्रताप लोप करके अपना भण्डार पूर्ण करते थे । यह चित्र इस बातको भलीभाँति प्रगट कर देता है कि, मेवाडपतिके भाग्यमें घोर काल रात्रि आगई थी इसी कारण सामंतगण अपनी स्वार्थ पूर्त्तिके साथ२ अन्यायसे शक्ति संग्रह करते थे।

महात्मा टाड यहांपर लिखते हैं कि, " बहुत वर्ष हुए; जिस समय सबसे प्रथम पश्चिमी राज्यकी सामंत शासन रीतिके साथ रजवाडेकी सामंत शासन शैलीकी एकताने मेरे चित्तको आकर्षित किया,उस समयमें जयपुरके अधीश्वरकी आधीनतामें स्थित एक सर्वप्रधान सामंतकी सनद वा पट्टा लेकर, उसको क्रमानुसार देखने और प्रत्येक धारा और व्यवस्थाको पृथक् करनेमें नियुक्त हुआ ।उक्त सामंतके एक प्रधान कर्म्मचारी ने उस विषयमें मेरी विशेष सहायता की । उस सनद वा पट्टेमें सामंतके अधीनस्थ सरदार और अन्य भूम्यधिकारियोंके स्वत्वाधिकारादि भी विशेष रूपसे विवृत देखे गये और उसी समय से ही मैं इस प्रणालीके यथार्थ वृत्तांत संग्रहमें कौतूहलयुक्त हुआ था । "

रजवाडेके राजा लोगोंके आदर्शपर ही आधीनमें स्थित प्रधान २ सामंत भी अपने सम्पूर्ण कार्य करते हैं; प्रधान अर्थात् मंत्रीसे लेकर पनवाडी तक उसी प्रकार प्रत्येक नामके कर्मचारी नियुक्त हैं, यहांतक कि सांसारिक सम्पूर्ण विषय ही अधिपतिकी स्वीकार की हुई रीतिके अनुसार अवलम्बन करते आते हैं । सामंत अपने स्वामाकी समान स्वाधिकृत प्रदेशमें "शीशमहल" * "बाडी महल" × और देवालय आदि निर्माण करके सुख स्वच्छन्दसे राजपदपर अभिषिक्त पुरुषोंके समान वास करते हैं । अधिपतिके समान सामन्त अपनी "दरिशाला" में + जिस समय प्रवेश करते हैं, उस समय गाने बजानेवाले गीत बाजेके साथ सामन्तकी जयघोषणा करते हुए आगे बढते हैं । अंतमें सामन्तके सिंहासनपर बैठते ही सम्पूर्ण कर्म्मचारी और अनुचरवर्ग पदमर्य्यादाके अनुसार दाहिनी और बाईं ओर श्रेणी बांध खडे होकर जय उच्चारण करते हैं । सामन्तके प्रत्याभिवादन करनेपर सब अपने२ आसनपर बैठ जाते हैं । जिस समय सब लोग पास २ होकर बैठते हैं, उस समय परस्पर ढालोंके संघातसे उत्पन्न हुए शब्द द्वारा सभागृह गूँज उठता है ।

---

* दर्पणागार ।

× प्रासाद वा उद्यानवाटिका ।

+ मनोहर गलीचे आदिसे सज्जित सभागृह ।

पश्चिमी राज्यमें किसी नवीन सामन्तके अभिषेकके समय वह सामन्त जिस प्रकार अधिपतिका हाथ चुम्बन और राजाकी अनुकूलता सूचक शपथ करते हैं, रजवाडेमें वैसी प्रथा प्रचलित नहीं है। कोई सामंत अपने पैतृक पदपर अभिषिक्त होनेपर वह अपने नामसे अपने अधिकृत देशके सब स्थानोंमें "आन" * अर्थात् राजाके अनुकूलताका सूचक घोषणापत्र प्रचार करते हैं। "मैं आपका पुत्र हूं, मेरा मस्तक और तलवार आपके अधीन है, मैं जीवन पर्यन्त आपकी आज्ञा पालन करूँगा।" राजपूतोंकी यह उक्ति ही राजभक्तिकी सन्मान रक्षाके लिये यथेष्ट है। अराजभक्ति और प्रभुके प्रति अवज्ञा किसको कहते हैं, राजपूत जातिने इसको किसी समय नहीं सीखा, बरन् उनकी अटल राजभक्ति, गाढ अनुरक्ति, प्रभुके प्रति दृढ आसक्ति और स्वार्थ त्याग यहांतक है कि, उनके अमूल्य प्राणतक देनेके असंख्य उदाहरण इस विस्तृत इतिहासमें विलक्षण रूपसे दृष्टिगोचर होंगे। "स्वामी ही धर्म स्वरूप है यह जिस जातिका ध्यान है सदासे जो जाति अधिपतिको देववंशावतंस कहती चली आती है, वह जाति राजभक्तिका महान् दृष्टांत अनंतकालतक दिखावेगी इसमें आश्चर्य क्या है? राजपूत कविके संगीतमें ही राजपूत बालकपनसे यही सीखते हैं कि, राजभक्ति इस संसारमें सम्मानका कारण स्वरूप है और परलोकमें सुखका बीजस्वरूप है। राजपूत कविकुल केशरी चंद्रकविने अपने सुधामय काव्यमें राजभक्तिका जो मनोहर दृश्य खैंचा है; उस राजभक्ति सम्मान रक्षामें जो अक्षय अमृतमय फल घोषित किया है, वही राजपूत जातिको सदा जातीय गौरव रक्षामें नियुक्त रक्खेगा। एक ओर सामन्तमण्डली जिस प्रकार राजभक्त रूपसे विख्यात और राजाकी आज्ञा पालनमें प्राणपणसे यत्नवान् है, दूसरी ओर उन सामंतोंके आधीनवाले सरदार और प्रजावर्ग भी उसी प्रकार उनके प्रति अनुरक्ति, भक्ति और अनुगमन प्रकाश करनेमें सदा यत्नवान् हैं। राजाके समान सामंत भी अपने अधिकृत देशमें पूज्यपाद स्वामी रूपसे सम्मानित होते आते हैं। उनकी प्रजामण्डली भी उनके लिये जीवनदान और उनकी आज्ञासे सम्पूर्ण स्वार्थ छोडनेमें कुण्ठित नहीं होती। सामंतके अभिषेक दिनसे ही उनके हाथमें अपने जीवन मरणका भार आनंदपूर्वक सौंप देती है। मृगयाके समय सरदारलोग सामंतके साथ दुर्गम वनमें गमन करके पहाडोंकी चट्टानोंपर एकत्र खान पान करते हैं। सामंतभवनमें सदा ही उनका आदर होता है, जिस समय सामंत सर्वप्रधान प्रभु राणाकी सभामें जाते हैं, उस समय सरदार भी उनके साथ जाते हैं। आशय यह है कि वह सदासे सामंतके साथ अभिन्न भावसे रहते आते हैं। यद्यपि समयके प्रभाव और दीनताके दोषसे इस समय सामन्तमण्डलीके साथ उनके अधीनस्थ सरदारोंकी अब वैसी घनिष्ठता नहीं है, किंतु कर्नल टाडके समान हम भी

---

* वश्यता सूचक शपथ। मेवाडके निवासी लोग तीन विषयोंमें किसी प्रकारका व्यतिक्रम नहीं कर सकते। प्रथम "आन" अर्थात् अधीनता सूचक शपथ, द्वितीय "दान" अर्थात् वाणिज्य शुल्क प्रदान, तृतीय "कान" अर्थात् हीरे आदिकी खानोंका राजाके विना जाने उपभोग।

आशा कर सकते हैं कि, मेवाडका सुखसूर्य्य फिर उदय होनेपर, अवश्य ही वह प्रीतिमय दृश्य नेत्रोंके सामने प्रतिबिंबित होगा।

कई शताब्दीतक वर्णनके अयोग्य अत्याचार, दुःसह उपद्रव और भयानक पीडा सहकर भी राजपूत जाति जिस भावसे अपना जातीय आचार, व्यवहार और नियम प्रणालीकी रक्षा करती आ रही है, उससे वह सामाजिक आचार व्यवहार जातीय विधिव्यवस्थावली उनकी आत्माके साथ मिल गई है। जिस राजपूत वीरका चरित्र जातीय प्रत्येक उपकरणसे गठित है, वह राजपूत आत्मगौरव रक्षामें जीवनतक त्याग करनेमें नहीं डरते। जहां सन्मानको लेकर बात है, वहां यदि कोई भ्रमसे साधारण त्रुटि भी करै तो वहां वीरगण उसको घोर अपराध समझकर प्रतिकारके लिये तलवार हाथमें लेते हैं। आत्मसन्मानके प्रति राजपूत जातिकी प्रबल दृष्टि इस घोर दुर्दिनमें भी देदीप्यमान है। यद्यपि स्वजातिका गौरवगरिमारवि अस्ताचलकी चोटीपर पहुंच गया है यद्यपि मेवाडकी वह विजय वैजन्ती अब उस बल विक्रम और अहंकारके साथ भारतक्षेत्रमें नहीं फहरा रही है, यद्यपि वीरव्रत पालन-शक्तिके साधनका समय भूतकालकी उपाधि धारण करके इस समय अदृश्य हो गया है, यद्यपि जातीय जीवनशक्ति इस समय लुप्त हो गई है। तथापि वह राजपूत जाति अपने प्राण देकर भी सन्मान रक्षा करनेको दौडती है। पराधनिताकी जंजीर अब भी राजपूत जातिके चरणोंमें नहीं बँधी है; अब भी उनको स्वाधीनताकी ज्योति चमक रही है, इस कारण किस लिये वह विश्व विख्यात रघुवंशधर लोग मौनावलम्बन करके अपना अपमान सहेंगे? प्रतिहिंसा किसको कहते हैं; राजपूत जाति इस बातको अभीतक नहीं भूली है। कौन कह सकता है कि अन्तःसारशून्य निद्रित भारतमें यथा समय वह राजपूत जाति प्रतिहिंसाका असली अर्थ कार्य्यद्वारा दिखानेमें अग्रसर न होगी? इस विशाल देशके अधिकारी प्रधान २ प्रत्येक सामन्तने ही अपनी २ आमदनीके अनुसार अपने २ पुत्र भ्रातृ और बहुत निकट कुटुम्बियोंकी जीवन यात्रा निर्वाहके लिये उपयोगी उपाय निर्देश कर दिये हैं। सामन्तके ज्येष्ठपुत्र प्रधान उत्तराधिकारी स्वरूपसे पिताके पद, उपाधि और सन्मान सहित सम्पूर्ण सम्पत्ति पाते हैं। जिस सामन्तकी वार्षिक आय साठसे अस्सी सहस्र मुद्रा है; उस देशके सामन्तके दूसरे पुत्र तीनसे पाँच सहस्र मुद्राके वार्षिक आयवाले एक ग्रामको पाते हैं। यही उनकी "बापोता" अर्थात् पैतृक सम्पत्ति है। वह दूसरे पुत्र अपने अधीश्वर प्रभु राणाकी सभामें वा विदेशमें राजकार्य्यमें नियुक्त होकर धन उपार्जन करते हैं। छोटे पुत्रोंको वंशके अनुसार भूवृत्ति दी जाती है। प्रत्येक सामन्त पुत्र जितना २ अंश पाते हैं वह अंश फिर उन पुत्रोंके परिवारके खण्ड २ में विभक्त होते हैं। प्रत्येक परिवारसे एक २ नवीन नामधारी सम्प्रदायकी उत्पत्ति देखी जाती है। जातिके आदि पुरुषके नामके साथ पिता और निवास भूमिका नाम मिलाकर वह लोग अपना परिचय देते आते हैं। जैसे-" मानमेघसिंहोत् शक्तावत्।" इसका अर्थ यह है कि "शक्तावत जाति मेवपरिवारका नाम है।"

वंश वृद्धिसे इस प्रकारकी भिन्न २ नामधारी परिवारकी संख्या दिन २ बढती जाती है, और उसके साथ ही साथ भूवृत्ति भी खण्ड २ में विभक्त होती जाती है ।

चरसा ।—चरसा शब्दका अर्थ चर्म्म है । भूमिके परिमाणके निमित्त इस चरसा शब्दका प्रयोग हुआ है । अंग्रेजीमें इसको (Hide) हाइड कहते हैं । एक अश्वारोही सैनिकके भरण पोषण और घोडा रखनेके लिये जितनी भूमि दी जाती है, मेवाडमें वही एक चरसा भूमि नामसे विख्यात है । बडे आश्चर्य्यकी बात है कि, रजवाडेकी सामंत शासन रीतिके अनुसार नीची श्रेणीके सामरिक भूवृत्तिधारी लोग जितनी भूमि प्राप्त करते आते हैं, इंग्लेण्डकी शासन शैलीके अनुसार उस श्रेणीके सैनिक ठीक उतनी ही भूमि वृत्तिस्वरूप पाते हैं । रजवाडेमें यह जिस प्रकार चरसा अर्थात् चर्म्म नामसे कही जाती है, इंग्लेण्डमें भी उसी प्रकार हाइड अर्थात् चर्म्म शब्दसे विख्यात है; और दोनोंका ही परिमाण समान है । ग्रेट बृटनके ऐंग्लोसेक्सन शासनारंभ समयसे ही सम्पूर्ण भूमि हाइड परिमाणमें विभक्त होती थी । राजपूतानेकी एक चरसा भूमिके अर्थसे जिस प्रकार केवल एक हलसे खैंचने योग्य भूमि समझी जाती है, इंग्लेंडमें उसी प्रकार उस अर्थमें वह गृहीत होती थी । ÷ इंग्लेंडके नाइट (Knight) उपाधिधारी एक २ वीरको चार हाइड परिमित भूमि वृत्तिस्वरूप दी जाती थी; + उसका परिमाण वर्त्तमान समयमें प्रायः दश एकडकी बराबर है; × मेवाडमें एक चरसा भूमिका परिमाण पचीससे तीस बीघेतक है, अर्थात् सेक्सनके एक हाईडकी समान है ।

प्रधान २ पट्टावत् सामन्तोंके अधीनस्थ नीची श्रेणीके पट्टाधारी सरदारोंका स्वत्वाधिकार, शक्ति कैसी है ?, दोनोंके बीचमें विधि व्यवस्था निर्द्धारित है, किस २ कार्य्य पालनमें दोनों भाग लेते हैं ? देवगढ देशके नीची श्रेणीके पट्टाधारी सरदारोंने उक्त देशके सामन्तके विरुद्ध जो व्यवस्था पत्र एक समय उपस्थित किया था, पाठकगण उसके पढनेसे सब विषय भलीभाँति जानकर उस संबन्धमें अपना मन्तव्य निश्चित कर सकेंगे । यह विचित्र बात है कि, देवगढके सामन्तके साथ उनके आधीनके सरदारोंका जिस कारणसे विवाद हुआ था इस्लिके प्रथम श्रेणीके सामन्तोंके साथ उनके अधीनस्थ सरदारोंका उसी प्रकार विवाद उपस्थित होनेसे, सन् १०३७ ईस्वीमें कनराडने जो विधान निर्द्धारित किया; * देवगढके नीची श्रेणीके सरदारोंने उसी प्रकारका विधान करनेके लिये मेवाडेश्वरके निकट प्रार्थना करी थी ।

÷ Millars Historical view of the English Government, P.85.
+ Hume, History of England, Appendix 2d, vol, ii. P. 261.

× ४४ हाथ लम्बी और ४४ हाथ चौडी भूमिमें एक एकड़ होता है ।

* जो पुरुष सम्राट अथवा सामन्तसे पट्टा लेकर भूमिका अधिकार भोगता आता है साम्राज्यके विधान और स्वजातीय विचारको निर्द्धारित व्यवस्थाके विना कोई उसको उस स्वत्वसे खारिज नहीं कर सकता ।

कर्नल टाड यहांपर लिखते हैं कि, "सामन्तोंके अधीनके पट्टाधारी सरदारोंके अधिक परिवारके कारण भूवृत्ति इतने भागोंमें खण्ड २ हो गई है कि, वह राज्यके साधारण मंगल और विजातीय आक्रमणके हाथसे राज्य रक्षाके पक्षमें विशेष विध्वंसकारी गिनी जा सकती है । एक २ देशमें यह भूस्वत्व इतने अधिक खण्डोंमें विभक्त होता जाता है कि, वह विभक्त एक २ अंश एक मनुष्यके भी भरण पोषणयोग्य नहीं है । इस कारण से अधिपति भी प्रजाओंके द्वारा इच्छित सहायता नहीं पा सकते । सामान्य भूखण्डके अधिपति सामन्तोंके अधिकारमें यह घटना जितनी देखी जाती है प्रधान प्रधान सामन्तोंके अधिकार भुक्त देशोंमें उतनी नहीं देखी जाती । कच्छके झारिजा, काठियावाडके साधारण निवासी और प्रधान२ पश्चिमी राजपूत राज्योंके सीमामें स्थित गुजरातके छोटे २ स्वाधीन देशोंमें यह भूविभाग बहुत अधिक होता है। इंग्लेण्डमें मेंगनाकार्टा अर्थात् जाति संबन्धी प्रधान स्वाधीनता सनद द्वारा * ऐसा भूविभाग जिस प्रकार रहित हो गया है; उसी प्रकार राजविधान द्वारा यह भूविभागका विषैला फल निवारण होना अत्यन्त आवश्यक है ।"

"राजपूतानेका भूस्वत्व जो बहुतसे भागोंमें खण्ड २ होता जाता है, सधारणतया उसको "भायाद" अर्थात् भ्रातृभाव सूचक कहना चाहिये । फ्रांसमें एक समय फिरेज (Frerage)शब्द उस भावसे ही इस श्रेणीमें प्रचलित था।राजपूत युवा होते ही कहते हैं कि "भायादमें मेरा जितना अंश है वह मुझको समझा दो ।" उस नवीन वंशाधिकारीकी परिवारवृद्धिके साथ वह साधारण अंश यथा समय सैकडों अंशोंमें विभक्त होकर अन्तमें सबको दीनदशामें गिरा देता है । फ्रांसकी सामाजिक विधिव्यवस्था जिस जिस भावसे प्रचलित थी × और अब भी वर्त्तमान है । उससे किसी सामन्तका आधीनस्थ देश वा किसी पट्टाधारी सामन्तके आधीनका प्रदेश उत्तराधिकारियोंके लिये खण्ड २ में विभक्त नहीं हो सकता, ज्येष्ठपुत्र ही सब स्थावर संम्पत्तिका अधिकारी होता है, और मध्यम वा छोटे पुत्रोंको मार्गका भिखारी वा दूसरेका गलग्रह होकर जीव-

२–विचारकगण जो आज्ञा देंगे वह पुरुष उसके विरुद्ध सम्राटके निकट अभियोग कर सकेंगे । ३–किसी भूमिके अधिकारीकी मृत्यु होनेपर उसके पुत्र, पौत्र अथवा वंशका लोप होनेपर एक पिताके और सगे भ्राता उसके स्वत्वाधिकारी होंगे ।–सामन्त अपने आधीनके सरदारोंकी सम्मतिके विना उस भूमिके स्वत्वको विच्छिन्न नहीं कर सकेंगे ।

* इंग्लेंडके सामन्तगणने सन् १२१४ ईसवीमें एकत्रित होकर;इंग्लेंडेश्वर जानके निकटसे एक स्वाधीनताकी सनद ली थी । उसीको पहिले मेंगनाकार्टा (Mangna charta) कहते थे । फिर इंग्लेंडराज तीसरे हेनरीने उसी प्रकारकी स्वाधीनता साधारण प्रजाको दी । उसके द्वारा उन्होंने प्रजाके हाथमें अपनी बहुतसी राज संबन्धी सामर्थ्य दे दी थी । वही इस समय मेंगनाकार्टा समझी जाती है । अन्तमें इंग्लेंडपति प्रथम एड्वर्डने उस सनदको सुधारकर उसमें अपने हस्ताक्षर कर दिये । एडवर्डकी व्यवस्थाके अनुसार निश्चित हुआ कि सामन्तगण इसके अतिरिक्त परिमाणमें भूभाग नहीं करने देंगे, इसके विरुद्ध करनेपर उनका भूस्वत्व छीन लिया जायगा ।

× हालम, प्रथम वालम, १९६ पृष्ठ ।

नयात्रा निर्वाह करना नहीं होता । राजपूतानेमें प्रचलित उत्तराधिकारियोंके मध्यमें भूस्वत्व खण्ड खण्ड का विभाग प्रथा यदि कुछ सीमाबद्ध करी जा सकती तो राजपूत जातिको अधिक उपकार लाभ और जातीय उन्नतिकी सम्भावना थी, किन्तु इस रोग-की औषधि प्रगट करना दुस्साध्य है । कच्छ और काठियावाड देशमें जितना भूस्वत्व भाग अंश २ में विभक्त होता जाता है, उतने ही वहां मामले मुकद्दमे भारी अपराध और कष्ट बढते दिखाई देते हैं । जहां २ इस भूस्वत्वके अधिक अंशोंमें विभाग करनेकी प्रथा नहीं है, वहां २ उसके द्वारा उपकार देखा जाता है । यद्यपि प्रत्येक उत्तराधिका-रीको एक २ विभागकी भूमि पालन करती है, और यह बात देखनेमें भी सुन्दर है, किन्तु कार्य्य साधनमें यह किसी प्रकार अच्छा फल उत्पन्न नहीं कर सकता । मेवा-डमें यह भूस्वत्व कितनी अधिकताके साथ विभक्त होता है ? हम इस बातके कहनेमें असमर्थ हैं । केवल इतना ही कह सकते हैं कि, मेवाडके रहनेवाले अपने अपने भूस्वत्वको अधिक अंशोंमें विभाग न करके अनेक उत्तराधिकारियोंको विदेशमें जीवि-काके लिये भेज देते हैं। यह विभागकी रीति और कन्याके विवाहके दहेजकी रीति ही शोचनीय शिशुहत्याका प्रधान कारण है ।"

कर्नल टाडकी ऊपर लिखी बातके पढनेसे ज्ञात होता है कि, बहुत काल पहलेसे शास्त्र विधानके अनुसार भारतमें जो दायभाग व्यवस्था प्रचलित है, सामन्त शासन शैलीके लिये वह कार्य्य साधक न होकर अनिष्ट साधन कर रही है । देशभेद और समाजभेद-से दायभागप्रणाली भिन्न प्रकारकी है । हमारे देशमें पिताका प्रत्येक पुत्र ही समभावसे पैतृक धन सम्पत्तिमें उत्तराधिकारी है।आर्य्य सम्राट् भी ज्येष्ठ कुमारको सिंहासन देकर दूसरे पुत्रोंको भिन्न२छोटे २राज्य दिया करते थे।राजपूत राजगण उसी मर्यादा पर-बडे पुत्रको राजसिंहासन और दूसरे पुत्रोंको राज्यका एक २ देश देते आते हैं । प्राचीन जातीय प्रथाके सन्मान रक्षा करनेमें उसीके अनुसार अटल रूपसे चलनेके हम दृढ अभि लाषी हैं । विजातीय किसी विषयकी रीतिका अनुकरण करनेमें हम घृणा करते हैं । हमारी जातीय प्रथामें जो शुभ विधान नहीं है, उसको ही हम दूसरी जातिके निकटसे लेनेको आग्रह पूर्वक तैयार हैं,जो है उसको अन्य प्रकारके होनेपर भी, सहसा उसे क्यों छोड दें ? देशकाल और पात्रभेदसे जिस किसी विधिके परिवर्त्तन करनेकी अत्यन्त आवश्यकता हो, उसको अवश्य बदल दे । परन्तु इस परिवर्त्तनमें धर्म्मके ऊपर अवश्य ही लक्ष्य रखना होगा, कारण कि जिस आर्य्यजातिका धर्म्म ही प्राण है वह धर्म्मके ऊपर पैर रखकर उन्नतिकी ओर नहीं बढ सकती । आज उन पूज्यपाद महर्षियोंके बनाये मार्गपर न चलनेके कारण, अन्य विदेशी लोगोंकी शिक्षा, रीति, नीति, आचार, व्यवहारमें लिप्त होनेसे भारत वासियोंकी यह दुर्दशा हो रही है।समाज इस समय नष्ट हो रहा है, समाजके नेताओंका सर्वथा अभाव है । धर्मसे पराङ्मुख होनेके कारण ही भारतवासियोंकी यह दुर्दशा हुई है, इस कारण उस धर्म्मपर आरूढ होनेसे ही भारतकी उन्नति हो सकती है ।

हम यह कभी नहीं कह सकते कि अंग्रेजोंके समान हमारे देशमें दायभागकी प्रथा चलाई जाय । जिनको अंग्रेज समाजकी दशा विदित है, वह भलीभाँति जानते हैं कि, अंग्रेजके ज्येष्ठ पुत्र ही पिताकी सम्पूर्ण स्थावर सम्पत्ति और उपाधिके अधिकारी होते हैं इस कारण वह ज्येष्ठ पुत्र विना परिश्रमके अतुल विपय सम्पात्ति पानेकी आशासे, बाल्यावस्थासे ही विद्या शिक्षामें मन नहीं लगाते और सम्पत्ति मिलने पर भोगविलास- में तत्पर होकर समाजका कुछ भी उपकार नहीं करते; और न देश और जातिके उपकारमें मन लगाते हैं । सबसे छोटा पुत्र अंग्रेज पिता माताके आदरका धन है; इस कारण अस्थावर सम्पात्तिका अधिक अंश उसको ही मिलता है। यह भी समाजका उपकार नहीं करता । मध्यम तीसरे और चौथे पुत्र ही परिश्रमसे धन संग्रह करके आजीविका चलाते हैं और समाजका उपकार करते हैं । यह कितने अन्धेरकी बात है कि एक पुत्र तो सम्पात्ति लेकर भोग विलास करे और दूसरा मार्गका भिखारी बने । बडा भाई राजठाट भोगे, और अन्य भ्राता घोर परिश्रम करके परि- वारका पालन करै । इस दृश्यको हम कभी अच्छा नहीं कह सकते । इस कारण हमारे प्राचीन महर्षियोंने सब पुत्रोंको यथोचित भाग मिलनेकी व्यवस्था करी थी ।

पैंतीसवां अध्याय ३५.

रेकोयाली कर;---दासत्व; -बसी [शी] गोला और दास-- राजपूतप्रधान वा मन्त्री ।

रेकोयाली-पूर्वीराजकी सामन्त शासन शैलीके साथ पश्चिमी राजकी सामन्त शासन शैलीकी समानता पहिले अनेक विषयोंमें दिखा चुके हैं, कर्नेल टाड-साहब यहां पर और एक विषयकी समानता लिख गये हैं पश्चात्वर्ती प्रबन्ध शिथिल होने तथा चारों ओर अशान्ति फैलानेसे और उस समयके अधीश्वरकी शासन शक्तिका ह्रास होनेसे प्रजाके धन और प्राणकी रक्षामें असमर्थ होनेके कारण रजवाडेमें जिस प्रकार रेकोयाली करका प्रचार हुआ । यूरोपमें भी इसी कारणसे सालवामेण्टा (Salvamenta) का जन्म हुआ, रेकोयाली शब्दका अर्थ रक्षा करना और आश्रय देनेके सम्बन्धका है, कर्नेल टाड लिखते हैं कि राजपूत राज्योंमें इस प्रकारका कर पूर्वकालमें भी कुछ २ प्रचलित था, जिस समय मेवाडमें महाराष्ट्र पठान आदि दस्यु-दलने संहारमूर्ति धारण करके अत्याचार, लूट मार और उपद्रव आरंभ किया था, जिस समय मेवाडकी प्रत्येक प्रजाके धन प्राणकी रक्षा अत्यन्त दुस्साध्य हो गई उस समयमें ही यह रेकोयाली कर शोचनीय रूपसे प्रजाओंका खून चूसता था, धन, प्राण और भूमि सम्पत्तिकी रक्षाके लिये ही प्रजा सबल सामन्तोंके आश्रयको ग्रहण करके रक्षाके बदलेमें यह रेकोयाली कर देनेको विवश हुई थी, प्रायः नगद रुपये अथवा रक्षा करनेवाले अधीश्वरकी भूमिको कई मास तक बिना कुछ लिये यह जोत देते थे, इसके सिवाय आश्रय देनेवाले सामन्त इन आश्रित जनोंसे अपनी इच्छानुसार दूसरे स्वार्थ भी पूर्ण करलेते थे । विशेष कर सामन्तगण भूमियां लोगोंके निकटसे अनेक उपाधियोंसे उनकी भूमिका अधिकार ले लेनेका विशेष यत्न करते थे, कारण कि सामन्तगण यदि राणाके द्वारा किसी प्रकारसे सामन्त पदसे विच्युति-पट्टाधीन भूस्वत्व छोडनेमें बाध्य होते, तो इस भूमियांस्वत्व संग्रह द्वारा सहजमें जीविका निर्वाह करते थे । भूमियांस्वत्व राणा किसी प्रकार भी अपने अधिकारमें नहीं कर सकते । इस कारण चतुर सामन्तगण भूमियांस्वत्व संचयके लिये ही आश्रय दान करके रेकोयाली स्वरूप अपनी आश्रित प्रजाको सर्वस्व रहित करके, उनका भूमियाँस्वत्व अपना कर लेते थे ।

दासत्व ।-राणाके निज अधिकारवाले भूखण्डकी विपदयुक्त प्रजा कभी २ धन प्राण रक्षाके लिये निकटवर्ती सामन्तोंके आश्रयमें रहनेकी प्रार्थना करै तो राणा उस-को अस्वीकार नहीं कर सकते । सामन्तमण्डली जिन प्रजाके धन और प्राणोंपर आक्र-

मण करनेवाले अत्याचारियोंके हाथसे रक्षा करनेका भार लेती, आश्रित प्रजागण नगद रुपयोंके बदले समय २ पर उनका दासत्व करनेमें बाध्य होती। वह प्रजा वर्षके भीतर निर्द्धारित कई मासतक आश्रय दाता सामन्तोंकी आज्ञानुसार उनका कृषिकार्य्य निर्वाह करती थी। यथा समय पर इस रेकोयाली नियमसे मेवाडमें बहुतसे स्वतन्त्र दारुण कष्ट आरंभ हुए थे। अन्तमें सन् १८१८ ईसवीमें राणाके साथ सामन्तमण्डलीका जो नवीन सन्धि बंधन हुआ उससे वह शोचनीय काण्ड सर्वथा दूर हो गये।

कर्नेल टाड लिखते हैं कि मेवाडमें जिस समय चारों ओर अशान्ति, विद्रोह अत्याचार और विजातीय आक्रमण प्रबल होते उस समय साधारण प्रजा दल बाँधकर, रक्षाकर्त्ताके मोल लिये दास रूपसे चाहे न हों, पर उसीके समान पद अपनी इच्छानुसार लेनेको बाध्य होती * जो सामन्त उन उपायहीन क्षीणबल प्रजाओंके ऊपर यह भयानक प्रभुत्व स्थापन करते थे; वह प्रथम भलीभाँतिसे उनके रक्षण कार्य्यमें यथासाध्य श्रम और यत्न करते थे यह अवश्य ही स्वीकार करना होगा।

बसी।—यद्यपि क्रीत दास रखनेकी प्रथा पश्चिमसे इस समय बिलकुल दूर हो गई है। तथा बृटिश शासनमें भारतवर्षसे भी दास व्यवसायने इस समय भूत उपाधि धारण कर ली है। किन्तु कर्नेल टाड लिखते हैं कि, पूर्वकालमें पश्चिमी राज्य की सामाजिक प्रत्येक अवस्थामें ही जिस प्रकार कृषिदास देखे जाते थे रजवाडेमें पूर्वकालमें उस प्रकारके कोई नहीं थे। स्वाधीन राजपूत और राजालोगोंके अधीन स्थित गोला नामक × उपाधिकारी दासोंमें बसी नामक एक श्रेणी में दासोंका उल्लेख देखा जाता है। यह बसीगण सालिकफ्रांकोंके प्राचीन साराभिनामक दास श्रेणीके प्रायः समान हैं। हालम साहब लिखते हैं कि, सराभिदासों की निजकी सम्पत्ति होनेपर भी वह अपने प्रभुके अधीनसे कृषिकार्य्य और प्रभुके अधिकृत देशमें ही निवास करनेको बाध्य होते

---

* रजवाडेके इस रेकोयाली करके समान इंग्लैंडमें भी एक समय इसी प्रकारका कर प्रचलित हुआ था सन् १७२४ ईसवीमें लार्ड लवार्टने इंग्लैण्डेश्वर प्रथम जार्जके निकट हाईलैंडकी इस प्रकारकी दशाके विषयमें सूचित किया था कि, "जिस समयमें निरन्तर लूट मार और चोरोंके अत्याचारसे प्रजाका सर्वस्व स्वाहा हो गया, उस समय उन लुटेरोंके नेता वा उनके किसी मित्रने दुःखी प्रजाओंके निकट प्रस्ताव किया कि, यदि वह लोग प्रतिवर्ष नियमित रुपये कर स्वरूपसे देनेमें सम्मत हों तो अस्त्रधारी सेना उत्पन्न करके उनकी और जो लोग कर दानमें सम्मत हों उनकी भूसम्पत्तिकी रक्षाका भार अपने ऊपर ले सकता हूं। पीडित प्रजाके उक्त प्रकारसे कर दानमें सम्मत होतेही उस देशसे चोरी, डकैती और लूटमार बिलकुल दूर हो गई। यदि कोई पुरुष निर्द्धारित कर देनेमें असम्मति सूचित करता तो उसका सर्वस्व लूट लिया जाता। प्रगटमें अपनी निर्दोषता दिखानेके लिये जो लोग नेताके अधीनमें डकैती करते हैं, वह भी दूसरे साधारणोंके समान कर देते हैं।

* यवनोंका "गुलाम" शब्द जिस अर्थका बोधक है, राजपूतोंका "गोला" भी उसी अर्थका सूचक है।

थे। आरावलीकी एक श्रेणीके किसान जो इस समय हाली नामधारी हैं; उनकी दशा भी अब ऐसी ही हो गई है। पूर्वकालमें जो खेत उनकी निजकी सम्पत्ति थे, इस समय सामन्तगणोंका उन क्षेत्रोंके ऊपर अधिकार हो जानेसे वह हाली लोग × उस सामन्त मण्डलीके दासरूपसे उन प्रभुकी आज्ञानुसार खेत जोतनेमें नियुक्त होते हैं।

हालम लिखते हैं कि, "छोटे २ भूस्वामिगण लूट मार और अत्याचारके समय भूस्वत्वसे वंचित होनेपर अपनी व्यक्तिगत स्वाधीनता भी खो बैठते हैं।" कर्नल टाड लिखते हैं कि; "हारावली देशके हालीगण इस उक्तिकी सत्यता भलीभाँति प्रगट करदेते हैं। विद्रोह विदेशीय आक्रमण आदिके कारणसे पहिले छोटे २ भूस्वामी जनोंके सामन्तोंका आश्रय लेनेपर उनके द्वारा ही बसी दास श्रेणीकी उत्पत्ति हुई हो, ऐसा ही नहीं किन्तु भीतरी अत्याचार उत्पीडन भी इसका मूल है। कोटा राज्यके हालीगण यद्यपि दासस्वरूप हैं, किन्तु वह दास उपाधिको धारण नहीं करते। बसी लोगोंकी दशा उनकी अपेक्षा शोचनीय है। क्योंकि उनकी निजकी किसी प्रकारकी धनसम्पत्ति वा भूमि नहीं है। पहिले जिस भूमिमें उनका अधिकार था, इस समय उस भूमिमें ही वह सामन्तोंकी आज्ञानुसार जीविका निर्वाहके लिये कृषिकार्य्य करनेमें बाध्य हैं, और दूसरे पक्षमें सामन्तके ऋणजालमें फँसे हुए हैं। अन्यत्र भागनेकी कोई भी आशा नहीं है; क्योंकि उनके ऊपर तीक्ष्ण दृष्टि रखनेके लिये पहरेवाले नियुक्त हैं। किन्तु इस समय इस बसी श्रेणीकी शोचनीय दशा सब प्रकार दूर हो गई है।

गोला—दास—केवल दुर्भिक्ष ही रजवाडेमें पहिले व्यक्तिगत स्वाधीनता अधिकताके साथ नष्ट कर देता था। एक २ प्रबल दुर्भिक्षके समय सहस्र २ मनुष्य दास रूपसे बाजारमें बेचे जाते थे। लूटमार करनेवाले पिण्डारी और पहाडी दुर्दान्त जातियोंके द्वारा यह दास बेचनेकी प्रथा बहुत कालसे प्रचलित थी। वह लोग निरीह राजपूतोंको पकडकर अन्यत्र बेच आते थे। फ्रांकोंमें दासगण जिस प्रकार अपनी माताके द्वारा स्वाधीनता पाते थे, रजवाडेमें भी उसी प्रकार गोलालोग माताके गुणके अनुसार स्वाधीनता पाते थे। गोली अर्थात् दासीके पुत्रगण अवश्य २ ही गोला अर्थात् दास बननेमें बाध्य हो जाते थे। इस कारण ही राजपूत परिवारोंमें जो अनगिन्त गोला थे, उनकी उपपत्नियोंके गर्भसे उत्पन्न हुई सन्तान आजतक मेवाडमें देखी जाती है। पश्चिमी देशके, प्राचीन सेक्सन दासोंकी समान वह भी दास चिह्न स्वरूप गलेके बदले बाम हाथमें चांदीका खडुआ पहरते हैं। उनके स्वामी उनके प्रति बहुत सद्व्यवहार करते हैं और उनमेंसे बहुतसे शिक्षित सैनिकोंमें गिने जाते हैं। * किन्तु पहिले ही

× हाली शब्द कृषिकार्य साधक हलसे उत्पन्न हुआ है सेक्सन लोगोंके हलका नाम Sye था, मारवाडमें "स" वर्णके स्थानमें "ह" वर्णका व्यवहार होताहै, यथा;—सालिमसिंह नाम "हालिम सिंह" रूपसे उच्चारण किया जाता है।

* परिशिष्ट—उन्नीसवीं, अनुलिपि देखो।

लिखचुके हैं कि वह अपनी माताके वंश और गुणके अनुसार ही आदर पाते हैं। राजपूतानी, मुसलमानी वा नीच जातिकी गोली अर्थात् दासियोंके गर्भसे उत्पन्नहुए पुत्र भिन्न २ प्रकारसे अनुग्रह भोग करते हैं। राजपूत सामन्तोंके औरस और दासियोंके गर्भसे जो लोग जन्म लेते हैं, उनका भी देशमें अनादर नहीं होता, वरन उन सामन्तके अधिकृत देशके सब विश्वस्त पदोंपर ही वह नियुक्त होते थे। कर्नल टाड लिखते हैं कि, "देवगढके मृत सामन्तके प्रापितामह अपने सेनादलके साथ राजपूत औरससे उत्पन्न तीन सौ अश्वारोही गोलों सहित उदयपुर राजधानीमें आया करते थे। उस प्रत्येक दासके बायें हाथमें एक २ सुवर्णका खडुआ पडा रहता था। और उनका जीवन सब प्रकारसे उन सामन्तके अधीन था। उक्त सामन्त उस समय अपने अधीनस्थ सरदारोंमेंसे दो सहस्र सैनिक लेकर रणक्षेत्रमें जाते थे।" ×

पूर्वकालमें जर्म्मन जातियोंके मध्यमें द्यूतक्रीडा प्रचलित होनेसे किस प्रकार विषमय फल उत्पन्न और व्यक्तिगत स्वाधीनता लुप्त होती थी, टासिटस उसका भलीभाँति वर्णनकर गये हैं; जुयेमें परास्त होने पर वह दासरूपसे बाजारमें बेचे जाते थे। उस जर्म्मन जातिके समान राजपूत जाति भी अत्यन्त द्यूतक्रीडाके आसक्त है, यह बात यथास्थानमें लिखी जा चुकी है। टासिटसने जर्म्मनकी जिस समयकी द्यूतक्रीडाका उल्लेख किया है, उसके सैंकडों वर्ष पहिले—यहांतक कि टुइष्टों देवोपासकोंके द्वारा जर्मनके गहनवन वस्ती पूर्ण होनेके बहुत वर्ष पहिले राजपूत वीरोंमें यह सर्वनाशकारी द्यूतक्रीडाकी रीति प्रचलित थी, भारतवर्षके इतिहास पुराणोंसे इस बातका पता चलता है। इस द्यूतक्रीडाने भारत वर्षके कितने प्राचीन वंशोंका नाश किया है, इस बातको हिन्दूपाठक भलीभाँति जानते हैं। महाराज युधिष्ठिर यदि द्यूतक्रीडामें आसक्त न होते, यदि वह पणमें राज्यधन—और अन्तमें प्राणप्यारी कृष्णा तकको न हार देते तो कभी कुरुक्षेत्रका महासमर न होता, कभी भी उस युद्धाग्निमें करोडों भारत सन्तानकी जीवनाहुति न दी जाती, तथा भारत अनन्त श्मशानमें परिणत—हिंदूजाति अन्तःसारशून्य और उस कारणसे भारतका गौरव-रवि अस्ताचल चूडावलम्बी न होता। उस द्यूतक्रीडासे ही भारतके सम्राट् युधिष्ठिरको दासत्व करना पडा था। भारतवर्षके रजवाडोंमें अब भी अनेक हिन्दूजातियें जुआ खेलनेमें उन्मत्त हैं। प्रबल बृटिश शासनने यद्यपि इस विषमयकी प्रथाको बहुत कुछ दूर कर दिया है, किंतु अब भी छिपे २ बहुत लोग उस खेलमें आसक्त रहते हैं।

राजपूत सामन्तोंके औरससे उत्पन्न दासीगर्भ संभूत पुत्र जिस प्रकार गोला नामसे विख्यात है। राणा लोगोंके औरससे उसी प्रकार राजपूतानी दासियोंके गर्भसे जो जन्म लेते हैं, वह भी उसी प्रकार दासकी उपाधि प्राप्त करते आते हैं। यह दासलोग यद्यपि राणागणके द्वारा जीवनयात्रा निर्वाहके लिये भूवृत्ति और धनादि पाते हैं किन्तु उनको सभी पंचायतमें कोई प्रतिष्ठित पद नहीं दिया जाता। बसी

× कर्नल टाड इन गोला लोगोंके द्वारा ही प्रथम श्रेणीके सामन्तोंसे ठीक २ राजनैतिक संवाद पाते थे।

लोग अपनी इच्छानुसार दास नामसे विख्यात हैं, और गोलालोग वंशानुक्रमिक दास नामसे कहे जाते हैं । गोला केवल गोली अर्थात् दासीके ही साथ विवाह कर सकते हैं । राणालोगोंके औरससे उत्पन्न जाति दासोंको बहुत साधारण दशावाले राजपूत भी अपनी कन्या देना नहीं चाहते । वसीगण भाग्य परिवर्त्त-नके साथ अपना क्रीत दासत्व छुडाकर व्यक्तिगत स्वाधीनता फिर प्राप्त कर सकते हैं किन्तु गोलालोग वैसी स्वाधीनता पाना नहीं चाहते क्योंकि वह भूवृत्ति पानेपर भी अपनी दशाको श्रेष्ठ नहीं बना सकते हैं, अर्थात् जन्म दोषसे राजपूत समाजमें वह किसी उपायसे भी सन्मान संग्रह वा शुद्ध राजपूत रक्तधारि-योंके साथ मिश्रित होनेमें सर्वथा असमर्थ हैं । वसी लोगोंको ऐसा कोई जन्मका कलंक नहीं है वह क्रीत दास होनेपर भी अपने चिर अवलंबित कार्य साधन और सामाजिक रीति नीतिके अनुसार आदान प्रदान कर सकते हैं । किंतु वह स्वामीकी अनुमतिके विना स्वाधीनता संग्रह नहीं कर सकते ।

रजवाडेमें दूसरी श्रेणीका दासवंश विराजित था । शत्रुगण विजातीय वा डाकु-ओंके द्वारा जो लोग पहिले बन्दी होते थे, जो सामंत वा राजपूत वीर उन बंदियोंका उद्धार कर देते वह उद्धार पाये हुए बंदीलोग उसके बदलेमें छुडानेवालोंके दास हो जाते थे। यहां तक कि किसी२समय इसी प्रकार विपत्तिमें पडकर किसी२विभागके संपूर्ण नर नारी धन प्राण धर्म्म सन्मान रक्षाके लिये उद्धारकर्त्ताके दास दासी पदपर इच्छा पूर्वक नियुक्त होते थे। कर्नेल टाड लिख गये हैं कि, ऐसी घटनाके बहुतसे उदाहरण देखे जाते हैं। बिजली देशके अधिकांशवासी ही वहांके प्रमार जातीय सामन्तोंके वशीस्वरूप हैं । इस समय वह सब उनकी प्रजा हैं, राणा यद्यपि सबके प्रभु हैं । किन्तु उन वशीलोगोंके ऊपर उनका कोई अधिकार नहीं है । कर्नेल टाड लिखते हैं, "बारह वर्ष हुए उस समय वर्तमान सामन्तके पूर्वपुरुष इस वशी श्रेणीके साथ मेवाडमें आये थे, राणाने उनका बडा आदर किया, और मेवाडके सीमामें स्थित भूखण्डका बडा देश उन संपूर्ण लोगोंके निवास करनेके लिये दिया था।" *

गोलालोग जिस प्रकार अपने बायें हाथमें दासके चिह्नरूप खडुआ पहरते हैं, वशी दासोंके मस्तकपर उसी प्रकार एक बालोंका गुच्छा रहता है । वशी शब्द गोलाशब्दके समान अत्यन्त अपमानसूचक नहीं है। वसना वा वस्ती शब्दसे ही वशी शब्द बना है। वशी शब्दका यथार्थ अर्थ उपनिवेशी वा निवासकारी है । पूर्वकालमें बहुतसे सामन्त अनेक कारणोंसे अपनी पैतृक भूमि छोडकर अपने२संपूर्ण अनुचरोंके साथ भिन्न२ देशोंमें जाकर वास करते थे; उस भावसे ही भारतके अनेक प्रान्तोंमें बहुतसे देश वस्ती वशी नामसे

---

* उक्त प्रमार, जिन्होंने वशी लोगोंको लेकर सबसे प्रथम मेवाडमें आकर निवास स्थापन किया उन्होंने उक्त वशी लोगोंको दुर्दान्त तातारियोंके हाथसे उद्धार किया अथवा महादुर्भिक्षमें उनकी प्राण रक्षा करके दासपद दिया था, कर्नेल टाड इस विषयमें संदेह प्रगट कर गये हैं । (वशी शब्द वशमें रहनेका बोधक हो तो वशी ठीक है निवासके अर्थमें वसी ठीक है-अनुवादक)

पुकारे जाते हैं।टोंक (रामपुरा) राज्यके निकटमें विख्यात वशी नगरका नाम इसी कारणसे उत्पन्न हुआ है । सबसे पहिले सोलङ्की राजने विजातीय आक्रमणसे अपना पैतृक राज्य गुजरात छोड कर उक्त देशमें वस्ती स्थापन करी थी। उनके आधीनकी सब प्रजाने भी उस कारणसे विजातीय शासनमें रहना अनुचित समझ अपनी इच्छानुसार उनके साथ आकर ऊपर कहे स्थानमें निवास करना आरंभ किया । कर्नैल टाड लिखते हैं कि,बिजलीकी मूल घटना भी कदाचित् इसी प्रकार हुई थी।किंतु इसके निवासी लोग अबतक वशी नामसे गिने जाते हैं।कृतज्ञ चित्तसे बहुतसे राजपूत यही कहते हैं कि, 'मैं आपका वशी हूं, आप मुझको दास रूपसे बेच सकते हैं ।'' ×

आत्मकलह ।–कर्नैल टाड लिखते हैं कि, '' राजपूत समूहके जिस समयकी अवस्थाका चित्र यहां अंकित होता है, जिस समय राणाके व्यक्तिगत चरित्रके ऊपर सब ही निर्भर होता था, उस समय सबको ही स्वेच्छाचार वृत्तिके पूर्ण करनेकी इच्छा और राजपूत जातिको दुर्दमनीय बदला लेनेकी इच्छा अवश्य ही प्रबल हो गई थी । समयके गुणसे जातिसाधारण अवनतिके साथ आत्मक्लेशने भी इस देशका सर्वनाश साधन किया है । इस आत्मक्लेशकी अग्निने भयानक रूपसे प्रज्वलित होकर बीती हुई अर्द्धशताब्दीके समयमें मेवाडको जैसी शोचनीय दशामें फेंक दिया है, जो आत्मक्लेश और कुछ समयतक प्रबल रहता तो मेवाडको अनंत श्मशान और गहन वनमें परिणत कर देता, उस आत्मकलहके कई दृष्टांत और किस उपायसे आत्मकलहमें उन्मत्त हुए राजपूतलोग बदला लेकर अपना नाम चरितार्थ कर लेते थे, इस स्थानमें उस विवरणके पढनेसे समाजकी उस समयकी अवस्था पाठकगण बहुत कुछ जान सकेंगे। सौभाग्यवश इस समय धीरे २ ऐसा शुभ समय आता जाता है कि, राजस्थानका परम रमणीक उद्यानस्वरूप मेवाड फिर पहिलेके समान सुखशान्ति और सौन्दर्य्यसे विभूषित हो सकेगा । मेवाड ध्वस्त होनेमें कुछ शेष न था । भयानक हिंस्र व्याघ्र और बनैले शूकरोंने राजधानी उदयपुरमें भी आश्रय लिया था । राजप्रासादके रमणीक कमरोंमें गीदड निर्भय होकर रहने लगे थे, प्रासादके सन्मुखस्थ जिस बडे आंगनमें सामन्तगण अपनी २ सेनासे घिरकर एक समय परम शोभाकी वृद्धि करते थे, वह

× एक समय महाराष्ट्र लोगोंने कई युवक राजपूत सामन्तोंको युद्धसम्बन्धी करदानके बदलेमें बन्दी कर लिया । कर्नैल टाडने मध्यस्थ बनकर उनको छुडाया । उन सामन्तोंमें पूरवत् सम्प्रदायके नेताके छोटे भ्राता भी थे; उनकी माता मृत्यु शय्यामें गिरकर उनको देखनेके लिये अधीर हो गई,किन्तु कर्नैल टाड टीकामें लिख गये हैं कि, यद्यपि वह छुटकारा पाये हुए राजपूत मार्गमें अपनी उन माताका दर्शन कर सकते थे, किन्तु उनके हृदयमें कृतज्ञता यहांतक प्रबल हुई कि, वह वैसा न करके पहले सीधे कर्नैल टाडके पास पहुंचे और कृतज्ञताके साथ गद्गद हृदयसे बारम्बार यही कहने लगे कि '' मैं आपका राजपूत, आपका गोला और आपका वशी हूं, आप मुझको जो आज्ञा देंगे उसको तत्काल पालन करूंगा ।''कर्नैल टाडने उनको उसी समय उनकी पुत्र देखनेकी उत्कंठावाली माताके पास भेज दिया।

भूमि भी घास फूँससे भर गई, और "सौराज वंशधर राणा एक समय उस घास फूँसवाले आंगनके मध्यमें बहुत छोटी पगडंडीसे होकर अपनी ध्वंसावशिष्ट राजधानीमें प्रविष्ट होते थे।" यह चित्र अत्यन्त हृदयभेदी है, स्वदेशहितैषी मात्र ही मेवाडकी उस शोचनीय दशाको स्मरण करके निःसन्देह दुःखी होंगे। कर्नेल टाडके समान हमने भी इस विस्तृत इतिहासके अनेक स्थानोंमें प्रगट किया है कि, आत्मकलह ही राजपूत जातिके पतनका दूसरा प्रधान कारण है। कर्नेल टाडने यहांपर भी हमारी उक्तिको सत्य प्रमाणित कर दिया है।

रजवाडेके प्रत्येक राज्यमें ही बदला लेनेकी प्रवृत्ति अधिक प्रबल है, प्रत्येक राजपूत उस बदला लेनेके दास हैं। किसीसे किसीका अपमान वा किसी प्रकारकी स्वार्थहानि करने पर चाहे वह कितनी ही सामान्य क्यों न हो, कोई राजपूत यदि उसका बदला न लेकर चुप हो जाय तो सब उसको घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं। जिस देशमें राजानियम व्यक्तिगत अत्याचार और स्वेच्छाचार दमन करनेमें असमर्थ है, उस देशके मनुष्य जिस प्रकार यथेच्छाचरण करनेमें निर्भय प्रवृत्त होते हैं, राजपूत जातिमें भी हम उसी प्रकार देखते हैं। राजपूत जातिकी बदला लेनेकी वृत्ति यहां तक प्रबल है कि, दो भिन्न वंश वा सम्प्रदायोंमें एक बेर किसी कारणसे विवाद हो जानेपर, बहुत पीढीतक परस्पर बदला लेते चले जाते हैं। जितने दिनतक वह बदला सर्वथा न निबट जाय, उतने दिन तक तलवार म्यानमें रखना कलंक समझते हैं और राजपूत कहते हैं कि, वह कलङ्क कभी छूट नहीं सकता। कर्नेल टाड लिखते हैं कि, "आत्मसन्मान रक्षाके लिये हमारे सेक्सन पूर्वपुरुषसे बहुत शताब्दीके अग्रवर्ती हैं।" प्राचीन सेक्सन लोगोंमें यह विधि प्रचलित थी कि, यदि कोई किसीके शरीरका कोई अंग नष्ट करता तो उसको हानिपूरण स्वरूप अर्थदण्ड देना होता था। उँगली अँगूठे आदि प्रत्येक अवयवका मूल्य निर्द्धारित था * किन्तु वीरतेजा राजपूत जाति रक्तके लिये रक्त ही लेती है।जो राजपूत नरपति बदला लेकर अथवा शत्रु राजाके किसी पुत्र वा प्रधान आत्मीयका शिर काटकर, उस राजाको "मुण्डकाटा" के लिये क्षतिपूर्ण स्वरूप धन वा देश लेनेमें बाध्य कर सकते हैं, वह राजा ही राजपूत जातिके निकट प्रबल प्रतापयुक्त गिने जाते हैं, अर्थात् शत्रुपक्ष यदि प्राणनाशके कारण बदला लेनेके लिये प्राणनाशक राजाके प्राणनाश करनेमें तत्पर न होकर, केवल दूसरी प्रकारसे हानि भरकर ही प्रसन्न हो जाय तो बदलेकी वृत्ति पालनमें शिक्षित राजपूत जाति उस राजाको महाबली कहकर पूजा करनेमें स्वतः ही बाध्य है। ×

* (Turners Anglo-Saxons, Vol, ii P. 133.)

× परिशिष्ट–१८ वीं अनुलिपि देखो। ऐंग्लोसेक्सन लोगोंके शरीरकी अङ्गहानिकी क्षतिपूरणके लिये जो विधि निर्द्धारित थी, कर्नेल टाड स्वयं स्वीकार कर गये हैं कि, उसकी अपेक्षा विवाद विधि बहुत काल पहिलेसे हिन्दू जातिमें प्रचलित होती आती है। मनुके विधानमें ब्रह्महत्यासे लेकर एक कुत्तेकी हत्यातकका दण्ड और प्रायश्चित्त लिखा है। पाठकगण शब्दकल्पद्रुममें प्रयश्चित्त शब्दका अर्थ देखनेपर इस विषयमें बहुत सी बातें जान सकेंगे। वह लेख बहुत बडा है, इस कारण हम इस स्थानमें उसको उद्धृत न कर सकते।

इतिहासलेखक टाड लिखते हैं कि, केवल एक उपायके द्वारा ही यह विषम आत्मकलह वा प्रतिहिंसा निवारित हो सकती है, किन्तु वह कार्य्य राजपूत जातिमें घृणित समझा जाता है । परस्परमें विवाद आरंभ और उस कारणसे दोनोंके बदला लेनेमें प्रमत्त होनेपर, यदि क्षतिग्रस्त पुरुष क्षमा प्रार्थना करे, अथवा अत्याचारी यदि उसके अधिकारके स्थानमें जाकर क्षमा चाहे तो परस्परकी शत्रुता दूर हो जाती है । क्यों कि ऐसे किसी बदलेके लेनेपर समाजमें अत्यन्त कलङ्कित और अपमानित होता है । ऐसी घटना पाहिले प्रायः नहीं घटती थी, अर्थात् राजपूतगण पूर्वकालमें किसी प्रकार ऐसे आत्मक्लेशमें अग्रसर नहीं होते थे । वर्त्तमान निर्जीव और जातीय गुणोंसे हीन राजपूतगण ही अब इस मार्गका अवलम्बन करते हैं ।

हम यह ऊपर ही लिख चुके हैं कि शाहपुराके राजा राणावंशमें उत्पन्न और मेवाडमें एक प्रबल बलशाली पुरुष थे । एक समय उन शाहपुराके उमेदसिंह नामक अधिपतिके साथ अमरगढके भूमियां स्वत्वाधिकारी राणावत् सामन्तका महाक्लेश उपस्थित हुआ । शाहपुराधीश्वर केवल राणाके दिये हुए भूखण्डके अधीश्वर ही नहीं थे,किन्तु दिल्लीके सम्राटका दिया हुआ एक और देश भी उनके अधिकारमें था। वाणिज्य शुल्कके सिवाय उक्त दोनों देशोंकी उस समय की वार्षिक आय १००००००) दस लाख रुपये थी । मेवाडके मंडलगढ नामक जिस देशमें उन्होंने राणाके निकटसे भूवृत्ति पाई थी, उस मंडलगढमें ही उनके शत्रुका भी अधिकार था । दोनोंके देश परस्पर संलग्न और कुछ भूमि दोनों देशोंमें मिश्रित होनेके कारण सदा विवाद, भयदर्शन यहांतक कि युद्ध भी हो जाता था । दोनों देशके किसान लोग भी उस विवादमें प्रमत्त होकर परस्पर विना रक्त पात किये शान्त न होते थे । दिलालनामधारी उक्त भूमियां शाहपुरापतिकी अपेक्षा अल्प शक्तिशाली थे; केवल देश ग्राम उनके अधिकारमें होनेसे, वह वार्षिक कुछ अधिक १२०००) बारह सहस्र रुपये अपने धनके पाते थे । किन्तु सम्पूर्ण प्रजाको न्यायानुसार शासित करनेसे दिलाल सबके प्रिय हो गये, और उनके स्वजातीय भ्रातागण उनके लिये सब समय तलवार धारण करनेमें तत्पर रहते थे । एक शिखरके ऊपर दिलालका दुर्ग महल स्थापित और उसमें पश्चिम मुखवर्ती (साहपुराके सम्मुख) ऊंची चोटीवाले महलके ऊपर कई तोपें सज्जित रहती थीं । दुर्गप्रासादके चारों ओर ही गहन वन है, केवल दो तीन दुर्गम मार्गोंमें होकर उस प्रासादमें प्रवेश किया जा सकता है, उस कारण कोई शत्रु सहसा उसमें घुसकर आक्रमण नहीं कर सकता था । अतएव शाहपुरा पतिके प्रबल सामर्थ्ययुक्त और रणक्षेत्रमें सहस्र योद्धा उपस्थित करनेमें समर्थ होनेपर भी दिलाल निर्भय वास करता था । दोनोंमें विवादाग्नि समय २ पर भयानक वेगसे प्रज्वलित और कभी २ क्षीणशक्ति भी हो जाती थी । राजाके अधिकारके ग्राम दुर्गबद्ध न होनेसे वा अन्य किसी प्रकारके उपायसे आत्मरक्षामें असमर्थ होनेसे दिलाल सहजमें ही निकृष्ट उपायसे उन ग्रामोंके प्रति अपनी बदलेकी वृत्ति चरितार्थ कर लेते थे । दिलाल समय २ पर

शाहपुरा राजके अधिकारी ग्राममें घुसकर गौ आदि पशु लूट लेते और धनवान प्रजाओंको बन्दी करके अमरगढके भयङ्कर कारागारमें डाल देते थे। वह बहुतसा धन देने पर छुटकारा पाते थे। इस निरन्तर रहनेवाले विवादसे दोनों पक्षके किसानोंकी यथेष्ट हानि होती थी, कृषिकार्य्य बिलकुल बन्द हो गया और शाहपुरके पति उम्मेदके मण्डलगढके समीपी ग्रामोंकी आधी प्रजा प्राण लेकर अन्यत्र भागनेको बाध्य हुई। शाहपुरके राजाकी अपेक्षा उनके शत्रु दिलाल अपने निवासियोंके अधिक सहानुभूतिके पात्र थे, क्योंकि शाहपुराधीश्वर स्वेच्छाचारसे सर्वसाधारणके अत्यन्त अप्रिय हो गये थे, और दिलालको पदानत करनेके अभिलाषी होनेसे दूसरे भूमियां लोग उनसे महारुष्ट हो गये। इस निरन्तर विवादसे प्रजा पुञ्ज भी "बरसादोहाई" * कर देते देते सर्वस्वान्त हो गई।

शाहपुराके राजा उम्मेद एक अस्थिरचित्त और कठोरहृदय पुरुष थे। एक समय उन्होंने क्रुद्ध होकर अपने पुत्रकी कमरमें रस्सी बाँधी और शाहपुरके देवालयकी ऊंची चोटीमें बांधकर नीचे लटका दिया, तथा उसीकी माताको बुलाकर वह हृदयभेदी दृश्य दिखाया था! वह सदा घोडेपर अथवा शीघ्रगामी ऊंटपर चढकर अनेक स्थानोंमें अकेले घूमा करते थे। बीच २ में कई दिनतक उनका कुछ समाचार नहीं पाया जाता था। एक दिन राजा उम्मेद इसी प्रकार अकेले भ्रमण करते हुए अपने शत्रु दिलालके अमरगढमें पहुँच गये, और दैवयोगसे दिलालकी दृष्टिमें पड गये। दिलालने देखा कि एक ऊंचे पदके सामन्त उनकी दयाके अधीन हैं, उस समय उन्होंने कोई शत्रुताका आचरण नहीं किया, और विनय नम्रभावसे प्रणाम करके उनको अपने दुर्गप्रासादमें ले गये। बडे आदरसे राजाके पदोचित सन्मानके साथ उनका अतिथिसत्कार करके राजाके स्वास्थ्यकी कामनासे "मनुवार प्याला" × पिया, फिर दोनोंने परमानन्दके साथ भोजन करके परस्परकी शत्रुता सदाके लिये छोड देनेकी प्रतिज्ञा करी थी।

राजा उम्मेद और सामन्त दिलालके मध्यमें इस शत्रुताकी अग्नि बुझ जानेके कुछ दिन पीछे दोनों ही उदयपुर राजधानीमें राणाकी सभामें बुलाये गये। राणाके साथ मुलाकात होनेके पीछे राजाने प्रस्ताव किया कि; दोनों एक साथ ही स्वदेशमें जायँगे। अन्तमें दिलालको अपने घर ले जानेके लिये सादर निमन्त्रण दिया। दिलालने उस आमन्त्रको स्वीकार करके अपने बीस अश्वारोही राजपूत सैनिक और आवश्यकीय वस्तु साथ लीं,

* जिस समय मेवाडके चारों ओर अराजकता, अत्याचार और लूटमार प्रबल हो गई, उस समय डाकू लोग भिन्न २ ग्रामोंमें जाकर लूटमार और अत्याचार आरंभ कर देते थे। असहाय निवासियोंकी छातीपर बरछा लगा कर प्राणनाशका भय देकर धन संग्रह कर लेते थे। छातीपर बरछा घुसेडनेमें उद्यत होनेपर प्रजा "दोहाई" देकर छुटकारा चाहती थी, इसी कारण उसका नाम "बरसादोहाई" हुआ है। कृषिकार्य्यके समय डाकुओंके हाथसे धान्यरक्षाके लिये भी प्रजा "बरसादोहाई" देती थी।

× अतिथिसन्मानार्थ अफीम पीनेका प्याला।

तथा राजाके साथ शाहपुराकी ओर घोडा हांक दिया। राजा उम्मेदने सामन्त दिलालको अपनी राजधानीमें ले जाकर बडा आदर किया और यथेष्ट आत्मीयता दिखाकर दोनोंने एकत्र भोजन किया × दिलालके प्रसन्न करनेके लिये नाचरंग भी खूब हुए। बीती हुई शत्रुता सदाको भूल जानेके लिये शपथ करनेकी इच्छासे दोनों देवमन्दिरमें गये। किंतु दोनोंके सीढियोंपर चढते ही अमरगढके सामन्तका शिर कटकर गिर गया।—उनके रक्तसे सम्पूर्ण मंदिर रँग गया। अत्यन्त निष्ठुर कायर आतिथ्य धर्मविधानके भङ्गकारी राजा उम्मेद नीच पुरुषके समान केवल दिलालका शिर काटकर ही प्रसन्न न हुए बरन उनके शरीरपरसे सब भूषण भी उतार लिये। पापरूप बदलेकी वृत्ति चरितार्थ करनेकी इच्छासे उसने अत्यन्त नीचजातिके समान सुननेके अयोग्य दुर्वचनोंको कहकर कटे हुए शिरपर लात मारकर अपने नीच हृदयका और भी पूरा प्रमाण दिया। विश्वासघाती उम्मेदद्वारा अपने पिताकी उस शोचनीय मृत्युको सुनकर दिलालके पुत्रने बदला लेनेके लिये अधीर चित्तसे अपनी सेनाको सज्जित किया। फिर पहिलेके समान अत्याचार, उत्पीडन प्रबल वेगसे बहने लगे। राणा इस समाचारको सुनकर शान्ति स्थापन, दुष्टदमन और दिलालपुत्रकी हानि पूर्ण करनेके लिये मध्यस्थ हुए। राजा उम्मेदने दिलालके जितने अलंकार, धन और अनुचरोंके घोडे आदि जो कुछ ले लिये थे, राणाने वह सब लौटवा दिये और शाहपुराधीश्वरके पाँच ग्राम :मुण्डकाटी अर्थात् दिलालके क्षतिपूरण स्वरूप उनको देकर, शाहपुरापतिके अधिकारके मण्डलगढके शेष ग्रामोंको राणाने अपने अधिकारमें कर लिया।

आर्य्या और शिवगढके दो सामन्तोंने प्रतिहिंसावृत्ति चरितार्थ करनेके लिये पिशाचमूर्त्ति धारण करके जो संहारनाटक किया था, वैसे सैकडों दृष्टान्त यहाँपर दिये जा सकते हैं। स्पष्टाक्षरोंमें दोषस्वीकार, क्षमाप्रार्थना और शत्रुपुत्रके साथ अपनी कन्याका विवाह करके भी राजपूत जाति इस आत्मक्लेशकी निवृत्ति कर लेती है। परस्पर मित्रभावसे मुलाकात और शत्रुता छोडनेकी प्रतिज्ञा करनेकी अपेक्षा यही उत्तम उपाय है। *

× एकत्र भोजन करना राजपूत जातिमें घनिष्ठ मित्रताका कारण समझा जाता है।

* मेवाडके इतिहासमें पाठकोंने बूंदीके युवराजद्वारा महाराणा भीमसिंहके पिताकी हत्याका विवरण अवश्य पढा होगा। केवल बदलेकी वृत्ति चरितार्थ करनेके लिये ही बूंदी राजने मृगया स्थानमें नृशंसभावसे राणाके प्राण लिये थे। बूंदीके युवराज जिस अपराधसे अपराधी हुए वह किसी प्रकारसे क्षमा करने योग्य नहीं था। उस समय यदि मृत राणाके दोनों पुत्र युवा होते और मेवाडकी अवस्था यदि अत्यन्त शोचनीय न होती तो हत्याकारीको अवश्य उपयुक्त दण्ड मिलता। कर्नेल टाड जो कुछ लिख गये हैं उससे प्रगट है कि,—हत्याकारी विष्णुसिंहने दोनों राजवंशोंमें प्रज्वलित विवादाग्निको बिलकुल शान्त कर देनेके लिये विशेष चेष्टा करी थी। उनके घर यदि कन्या होती तो वह अवश्य ही महाराणा भीमसिंहको दान करके विवादको दूर कर सकते। अन्तमें उन्होंने कर्नेल टाडके साथ छद्मवेषसे जाकर राणाके निकट क्षमा प्रार्थना करनेकी इच्छा करी। किन्तु छद्मवेषके पहिले ही प्रगट-

सीमा विवाद लेकर ही सामन्तोंमें सदा विवाद और आत्मकलह उपस्थित होता था। जयसलमेर और बीकानेर इन दोनों राज्योंके सीमान्तवर्त्ती दोनों देशोंके सामन्तोंमें सीमान्त विषयपर कभी २ ऐसा क्लेश उपस्थित होता था कि, अन्तमें उस कारणसे दोनों राज्यके अधिपति युद्ध करनेको बाध्य हुए थे। प्रतिहिंसा प्रवृत्ति यद्यपि आजतक राजपूत जातिके हृदयमें विराजमान है, किन्तु समयके गुण और कठोर शासनसे सामन्त मण्डली वा साधारण प्रजामें संहारमूर्त्ति धारण करके यथेच्छाचार नहीं हो सकता। सीमान्त विषयका विवाद इस समय बिलकुल दूर हो गया है। इस समय केवल रजवाडेमें ही नहीं, बरन् भारतके सम्पूर्ण देशी राज्योंमें शान्ति नृत्य कर रही है।

राजपूत मंत्री।--रजवाडेकी सामन्तमण्डली अधीश्वरोंकी किस २ आज्ञा पालनमें बाध्य है, और राजसभामें कितने दिनतक रहकर क्या क्या कार्य्य करती है, इन सब बातोंको यथास्थानमें लिख चुके हैं। सामन्तगण जिस समय राजकार्य्यसे सीमान्तमें गमन वा सीमान्त रक्षामें नियुक्त अथवा अधिपतिकी आज्ञानुसार अपने अपने अधिकृत देशमें नहीं रहते, उस समय वह सपरिवार राजधानीमें ही रहनेको बाध्य हैं। पूरे वर्षभर किन्हीं सामन्तोंको भी राजधानीमें रहना नहीं पडता; एक एक सम्प्रदायके कई २ पुरुष करके सामन्त अपनी निर्द्धारित संख्यक सेना और अनुचर सहित राजधानीमें स्थिति और राजसभाका कार्य्य निर्वाह करते थे। इस सुन्दर नियमके अनुसार उदयपुर राजसभा सदा ही सामंतोंसे पूर्ण रहती थी। किन्तु मेवाडमें ऊंची श्रेणीके सामंत अधिक अनुग्रह और स्वाधीनता भोगते हैं। रजवाडेके अन्यान्य राज्योंके सामन्तोंको जितना शृंखलाबद्ध और अधीश्वरकी आज्ञा पालनमें सदा बाध्य देखा जाता है, मेवाडकी ऊंची श्रेणीकी सामंतमण्डली उतनी अधीनता शृंखलामें बद्ध नहीं है। मेवाडमें विशेष २ पर्वोत्सव और राजकीय नवीन अनुष्ठानोंके समय वह प्रधान श्रेणीकी सामन्तमण्डली सेनासहित राजसभामें आकर राणाकी सेनाके साथ योगदान नहीं करती। कोई राजनैतिक साधारण प्रश्न उपस्थित होनेपर मेवाडके सम्पूर्ण सामन्त पञ्चायत स्वरूप उस प्रश्नकी समालोचना और उस विषयमें मतवाद प्रगट करते हैं। राणा उनका मतवाद बिना सुने वैसा धारण कोई राजनैतिक कार्य्य अनुष्ठान नहीं कर सकते। उस प्रकारका कोई राजनैतिक प्रश्न उपस्थित होनेपर उस विषयमें मतवाद प्रकाश के लिये, अथवा किसी विदेशी राजदूतको सन्मान सहित ग्रहण करनेके लिये प्रथम श्रेणी के सामन्तोंका राजधानीमें उपस्थित होना आवश्यक होनेसे राणा निमंत्रण सूचक पत्रके साथ एक राजकर्मचारीके द्वारा उनको बुलाते हैं। किसी प्रधान २ पर्वोपल-

---

–होनेके भयसे और विष्णुसिंहके किसी क्रोधी राजपूत द्वारा प्राण संहार कर देनेके भयसे कर्नैल टाड साहस करके उनको राणाके निकट न ले जा सके थे। कर्नैल टाड लिख गये हैं कि महाराणा भीमसिंह जैसे उदारहृदय और ऊंची प्रकृतिके थे, उससे अनुमान होता है कि बूँदीराज स्वयं उनके निकट क्षमा मांगनेपर सफल मनोरथ हो सकते थे।

क्षमें त्रिपोलियासे तीन बार निर्द्धारित समयपर नगाडा बजाया जाता है । तीसरी बेर-के बाजेका शब्द सुनते ही सामन्तगण अपने २ भवनसे निकलकर शीघ्र राणाके साथ संमिलित होते हैं ।

सामन्त लोग जिस समय राजधानीमें स्थिति करते हैं; उस समय प्रत्येकको सप्ताहमें एक २ दिन अपने २ अनुचरों सहित सभागृह और प्रासादकी रक्षामें नियुक्त होना होता है । उक्त कार्य साधनके लिये सामन्त अपने अनुचरों सहित प्रासादके सन्मुख स्थित आंगनमें प्राप्त होकर बाहर प्रतीक्षा करते हैं । अंतमें उनके आनेका समाचार सुनकर राणा उनका सन्मानके साथ अभिनन्दन लेते हैं । इसके अनंतर अनुचरोंसहित सामंत बडे "दरीखाने" अर्थात् सभामण्डपमें प्रविष्ट होते हैं । वहां उनके बैठनेके लिये बडा गलीचा पहिले ही से बिछा दिया जाता है । भोजनके समय जब राणा उक्त सामंतको भोजन करनेके लिये बुलाते हैं तब सामंत "रसोरा" * अर्थात् भोजनशालामें जाकर राणा के साथ भोजन करते हैं । उक्त प्रासादके रक्षणका भार लेकर सामन्त रातको उसी कमरेमें शयन करते हैं और दूसरे दिन प्रातःकालमें पहिले दिनके समान राणाके प्रति सन्मान दिखाकर विदा होते हैं । यदि किसी समय राणा किसी कारणसे सामन्तोंको बुलावें तो सामन्त शीघ्र ही वहां उपस्थित हो जाते हैं । सामन्तोंकी पदमर्यादाके अनुसार ही रोकवा अर्थात् वह आह्वानपत्र लिखकर भेजा जाता है । प्रधान२ सामन्तोंका आह्वानपत्र राणाके गोपनीय पुरुष अपने हाथसे लिखकर राणाके नामकी मनोहर अंकित करते हैं और उसको बंद करके उसके ऊपर राणाकी गुप्त अंगूठिका चिह्न भी अंकित कर देते हैं ।

कर्नेल टाड लिख गये हैं कि, रजवाडेके सम्पूर्ण राज्योंमें ही सामन्त श्रेणीमें जो सबसे चतुर, वीर, साहसी बुद्धिमान और षडयंत्रकुशल हैं, वही राजाका चित्त प्रसन्न करके मंत्रीपदपर अधिकार कर लेते हैं । अधिराज उन प्रियपात्रके अत्यन्त वशीभूत होकर, उनकी इच्छा, योग्यता और आकांक्षाके अनुसार मंत्रित्व भार उनके हाथमें सौंपते हैं । किन्तु वह राजपूत सामन्त मन्त्री; दीवानी शासन विभागमें किसी प्रकार हस्तक्षेप नहीं कर सकते; एक स्वतंत्र मंत्री उस विभागका सम्पूर्ण कार्य्य सम्पन्न करते हैं । किन्तु वह दोनों ही एकमत होकर कार्य्य करनेमें विरत नहीं होते। राजपूत मंत्री देशके युद्धविभागके अमात्य रूपसे गिने जाते हैं । और अधीनकी सामन्त श्रेणीका राजनैतिक शासन-भार उनके हाथमें समर्पित होता है।दीवानी विभागके मंत्री पदपर राजपूत जातिका कोई पुरुष नियुक्त नहीं हो सकता । देशभेदसे मंत्रियोंकी उपाधियाँ भी विभिन्न हैं । उदयपुरमें "भञ्जगड" जोधपुरमें "प्रधान" जयपुरमें (दिल्लीकी सम्राट् सभाके अनुसार जयपुर पतिने अपने कर्म्मचारियोंके नाम यावनी भाषामें रक्खे हैं) "मुसा-

* पाकशाला एक छोटे दुर्गके तुल्य है, उसमें अलग २ भोजनागार बने हैं । कर्नेल टाड लिखते हैं कि, उसमें प्रतिदिन सात सौ मनुष्योंके उदरपूर्तिके योग्य भोजन बनता है । इसके अतिरिक्त राणाके भृत्य, अनुचर और दासी आदिके लिये अलग भोजन बनता है ।

हिब" और कोटेमें "किलेदार" तथा "दीवान" नामसे यह लोग विख्यात हैं। यह राजपूत सामरिक मंत्री अपने गुणोंसे अधीश्वरको वशीभूत करके राज्यमें एक सर्वप्रधान शक्तिशाली पुरुष हो जाते हैं, सर्व साधारण ही उनकी आधीनता स्वीकार करके उन्हींके द्वारा अधिराजाके निकट सब प्रार्थनायें भेजते हैं, क्योंकि उनके अनुरोध करनेपर सफलता की पूरी संभावना रहती है। राजपूत मंत्री राज्यकी सामरिक श्रेणी और नीची श्रेणीके कर्म्मचारियोंके ऊपर पूरी सामर्थ्य रखते हैं।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि, रजवाडेके कई राज्योंमें वंशानुक्रमसे मंत्रित्व प्राप्तिका विधान प्रचलित है किन्तु हम कहते हैं कि, प्रबल बृटिश शासनमें कूटनीति चक्रके घुमानेके लिये वह प्रथा इस समय बंद हो गई है। भारतवर्षके प्रत्येक प्रधान २ देशी राज्योंके प्रधान मंत्रीपदपर नरपतिगण अपनी इच्छानुसार अब किसीको भी नियुक्त नहीं कर सकते। राजगणके इस समय किसी व्यक्तिको मंत्री पदपर नियुक्त करनेकी इच्छा करनेपर; स्थानीय पोलिटिकल एजेंट उस विषयमें मतवाद प्रकाश करके उसको राजप्रतिनिधिके पास भेजते हैं। राजप्रतिनिधि यदि उसमें सम्मत हों तो उक्त इच्छित पुरुष नियुक्त हो सकते हैं, अन्यथा नहीं। दूसरे एक मंत्री सदाके लिये किसी राजाके अधीन नहीं रह सकता। मूलबात यह है कि मंत्रीगण पोलिटिकल एजेंटकी आज्ञामें रहकर जिससे चल सकें, कूट राजनीतिने इस समय वही [illegible] कर दिया है। किन्तु कर्नेल टाडकी उक्तिके अनुसार पूर्वकालमें मंत्रियोंमेंसे किसीकी मृत्यु होनेपर उनके पुत्र उस पदपर अभिषिक्त होते थे, मेवाडके इतिहासमें पाठकगण इस बातको जान चुके हैं। भारतवर्षके अन्यान्य राज्योंमें जिस प्रकार मंत्री राजाका जीवन नाश करके अपने शिरके ऊपर मुकुट धारण कर गये हैं, रजवाडेके मंत्रीवर्ग राजाके समान प्रभुतायुक्त होनेपर भी उस प्रकार सिंहासनपर नहीं बैठ सकते थे।

जिस समय मेवाडेश्वर राणाके साथ बृटिश गवर्नमेंटका सबसे प्रथम सन्धि बंधन हुआ, उस समय राणाके दूतोंने अंग्रेज प्रतिनिधिके निकट यह अभिलाषा प्रगट करी कि, सन्धिपत्रमें एक यह धारा लिखी जाय कि "मेवाडके प्रधान अर्थात् सामरिक मंत्री पदपर सलम्बूरका सामन्तवंश जिस प्रकार सदासे नियुक्त होता आ रहा है; वह पद उसी प्रकार उक्त वंशधरोंको ही मिल सकेगा, गवर्नमेंट ऐसी प्रतिज्ञा करै।" कर्नेल टाडने कहा कि, यथार्थमें ही उक्त पद सदासे सलम्बूर सामन्तलोगोंको मिलता चला आता है, और प्राचीन सलम्बूरके सामन्तगण वीरत्व, साहस, क्षमता और योग्यताके बलसे उस पदको पाते चले आते हैं, किंतु यथासमय उस प्रणालीके द्वारा ही मेवाडका सर्वनाश और चारों ओर विद्रोहाग्नि फैली थी।

जिस दूतन यह प्रस्ताव किया था, वह उस समयके सामन्तके पितामह थे। सलम्बूरके सामन्त उस समय छोटे थे, इस कारण वही अपने बडे भाईके पोतेके प्रतिनिधि होकर तीस वर्ष तक मेवाडकी राजनैतिक प्रत्येक घटनामें सम्मिलित और राणाकी सभामें

विशेष प्रभुत्व करते थे। उन्होंने अपनी चतुरता, राजनीतिज्ञता और बुद्धिमानीके बलसे राणाको बिलकुल वशीभूत कर लिया था। कर्नेल टाडने अनुमान किया था कि, उक्त प्रधान प्रतिनिधिने मरणपर्य्यन्त अपनी सामर्थ्य और प्रभुत्व प्रकाशके लिये प्रधान पदपर स्थिति करनेकी कल्पना कर ली थी। वह उक्त अप्राप्त व्यवहार (नाबालिग) सलम्बूरके सामन्तको जिस भावसे राजनीति शिक्षादान, षड्यंत्र सृष्टिके उपाय निर्देश और प्रभुत्व प्रकाशका मार्ग प्रगट करनेकी शिक्षा देते थे, उससे राणाको अवश्य ही उनकी आज्ञामें चलकर अत्यन्त असुविधा भोगना होता। समय परिवर्त्तनके साथ २ राणाने इन प्रबल प्रतापशाली सलम्बूर सामन्तके हाथसे छुटकारा पाया। बृटिश गवर्नमेंटके साथ सन्धिबन्धनके समयसे ही षडयन्त्र जाल फैलानेवाले सामन्तोंका प्रताप प्रभुत्व बिलकुल दूर हो गया है।

हिंदूकुलसूर्य्य राणा जिस समय किसी कारणसे राजधानी छोडकर बाहर जाते, उस समय उक्त सलम्बूर सामन्तके हाथमें ही नगर शासन और प्रासाद रक्षणका भार सौंपा जाता था। राणाके वंशधरगण जिस समय तलवार धारण करनेमें समर्थ होते, उस समय केवल यह सलम्बूरके सामन्त ही अस्त्रदीक्षा गुरु पदपर वरण होते थे। अर्थात् सबसे पहिले "खड्गबंधन और नवीन राणाके अभिषेकके समय यह सलम्बूरके सामन्त ही राणाके माथेपर राजटीका लगाते थे। राणाके साथ चलनेके समय वह दाहिनी ओर चलना युद्धके समय सबसे आगे सेना ले जाना और किसी विदेशीके, राजधानी उदयपुरपर आक्रमण करनेपर वह सूर्य्यकुल और उससे लगे हुए दुर्गकी रक्षा करते थे। उस दुर्गमें ही सलम्बूरके सामन्त सपरिवार एक मनोरम महलमें रहते थे। वह महल इस समय विध्वंस प्राय है।

कर्नेल टाडके समय सलम्बूर देशके सामन्त पदपर जो प्रतिष्ठित थे, वह पद्मसिंह उनके (कर्नेल टाडके) परम प्रियपात्र हुए थे, उनकी माता बडी बुद्धिमती थीं। प्राणान्तके समयतक उन्होंने अपने पुत्रको नेत्रोंके सामने रक्खा। किसी कार्य्यसे राजधानीमें जानेपर सामंत सदा ही कर्नेल टाडके स्थानमें स्थिति, उनके ग्रंथोंका निरीक्षण, उनके साथ मृगयामें गमन और मत्स्य पकडनेमें सम्मिलित होते थे। कर्नेल टाड लिखते हैं कि, वह एक अद्वितीय अश्वारोही थे। अपने पुत्रके कल्याण साधन और तीक्ष्ण दृष्टि रखनेके लिये उनकी माता बीच २ में कर्नेल टाडको बडे २ पत्र लिखा करती थीं। पद्मसिंहके एक पूर्व पुरुषने राणाके विरुद्ध विद्रोही होकर एक दूसरे पुरुषको राणा पदपर प्रतिष्ठित करनेके लिये विशेष चेष्टा करी थी, मेवाडके इतिहासमें पाठक इस बातको पढ चुके हैं। किन्तु राजपूत जातिके हृदयमें स्वदेश हितैषिता इतनी प्रबल है कि, राणा जब अपने राज्यमें शान्ति स्थापनके लिये विदेशियोंकी सहायता लेनेमें उद्यत हुए तब वह विद्रोही सलम्बूरपति शीघ्र ही विद्रोहिता छोड राणाके साथ मिलकर राजधानीकी रक्षामें नियुक्त होते थे। मेवाडकी चिर प्रचलित रीतिके अनुसार सलम्बूरके वीर सामन्तगण "प्रधान" पदपर नियुक्त होते थे, इस कारण कर्नेल टाड गुप्त रीतिसे उसके विषमय फलका उल्लेख कर

गये हैं किन्तु हम कहते हैं कि, यह सलम्बूरके सामन्तगण पहिले २ देश स्वजाति और मेवाडेश्वर राणाके लिये जैसा असीम साहस, विषम वीरत्व और प्रबलप्रतापसे युद्ध सागरमें कूदकर जातीय गौरव गरिमा उद्दीप्त कर गये हैं, उससे परवर्त्ती समयमें देश और जातिके अवस्था गुणसे कई सामन्तोंके षड्यन्त्र जाल फैलानेसे, उक्त रीतिका विषमय फल घोषणा करना उचित नहीं है। मेवाड अधःपतनके समयमें चारों ओर जैसे शोचनीय दृश्य दृष्टिगोचर होते थे उससे सामन्तोंका विपरीत आचरण समयके प्रभावसे ही स्वीकार करना उचित है ।

मेवाडके समान मारवाड राज्यमें अहोयाके सामन्तके वंशधर उत्तराधिकारी क्रमसे वहाँके "प्रधान" अर्थात् सामरिक मन्त्रीका पद और बडा सन्मान पाते थे। मारवाडके प्रतिहिंसाप्रिय और दुर्दान्त महाराज मानसिंहके साथ अहोयाके सामन्त कुशलसिंहके बादका विषय पाठकगण इतिहासलेखकके भ्रमण वृत्तान्तमें पढ चुके हैं। वह सामन्त कुशलसिंह राजाके विरुद्धमें जिस समय मरे थे, उस समय वह शपथपूर्वक कह गये थे कि, "अबसे हमारे वंशका कोई पुरुष राजसभामें पूर्वपद अर्थात् "प्रधान पद न लेवे।" कुशलसिंहके परलोक सिधारनेपर मारवाडके "प्रधान" पदपर आसोपका सामन्त वंश नियुक्त हुआ था। कर्नेल टाडके समय आसोपके जो सामन्त जीवित थे, वह मारवाड राजके जीवित पिशाचके समान राज्यमें हत्याका सोता बढ़ते देखकर राजसभा छोडनेको बाध्य हुए थे। इस कारण निमाज और पोकर्णके दोनों सामन्तोंने एकत्र सम्मिलित होकर कुछ दिनतक राज्यमें प्रधान मन्त्रीकी प्रभुता चलाई थी। किन्तु अन्तमें निमाजके सामन्त राजाकी विषम दृष्टिमें पडकर अपने प्राण बलिदान करनेमें बाध्य हुए थे। निमाजके उन राठौर राजपूतके असीम साहस और वीरत्व विषयको पाठकलोग भलीभाँति जानते हैं।

पोकर्णके उस समयके सामन्तके परदादा देवसिंह अपने पाँच सौ सैनिक सहित जोधपुरके प्रासादके प्रधान सभाकक्षमें रात्रिके समय सोते थे। देवसिंह जैसे साहसी और पराक्रमी थे, वैसे ही वीर भी थे। वह सदा ही घमण्डके साथ कहा करते थे कि "मारवाडका सिंहासन मेरी इस तलवारके ऊपर है।" उनकी वह उक्ति साफ कहती थी कि, उनका अथवा मारवाडराजका जीवन एक दिन शोचनीय रूपसे नष्ट होगा। मारवाडराजने घटना क्रमसे पोकर्णके उक्त सामन्तको अपने आधीन करके तत्काल उनके प्राणदण्डकी आज्ञा दी। उसके शिरके ऊपर तीक्ष्ण तलवार उठने पर भी उस वीर सामन्तने अभूतपूर्व साहसके साथ अपने सम्प्रादायके राठौरोंसहित सभास्थानमें बैठकर अपनी निर्भयताका पूरा प्रमाण दिया था। उस समय मारवाडराजने तीव्र स्वरसे प्रश्न किया था कि, "विश्वासघाती ! जिस तलवारके ऊपर मारवाडका भाग्य निर्भर करते थे, अब वह तलवार कहां है ?" मृत्यु मुखमें गिरे हुए उस सामन्तने तत्काल उत्तर दिया कि "पोकर्णमें अपने पुत्रके पास उसको रख आया हूं।" उस गर्वभरे उत्तरसे महारा-

जने अपनेको महा अपमानित समझकर तत्काल उस सामन्तके शिर काट लेनेकी आज्ञा दी; घातकने सङ्केत पाते ही उस वीरश्रेष्ठका शिर दो टुकडे कर दिया ! देवीसिंहके पुत्र सुबलसिंहने पिताके समान संहारमूर्ति धारण करके राजाके विरुद्ध विषम विपदउपस्थित कर दी थी। मारवाडराज विशेष चेष्टा करके भी पोकर्णके अभेद्य दुर्गपर अधिकार नहीं कर सके थे।

कोटा और जयसलमेरके दोनों सामन्तोंकी शक्ति असीम थी। फरासीसी इतिहास-लेखक मान्टेस्कू प्राचीन फ्रांसके मन्त्री पिपिल लोगोंकी क्षमताके विषयमें जो कुछ वर्णन कर गये हैं, यहां पर उसके उद्धृत करनेसे कोटा और जयसलमेरके मन्त्रियोंकी समान ही प्रभुता जँचेगी।वह लिखेत हैं कि, "पिपिल लोग अपने राजाको मानों बन्दी दशामें प्रासादके भीतर ही रखते थे, केवल वर्षमें एक दिनही बाहर निकालकर प्रजाको दर्शन-कराते थे। उस दिन वह मन्त्रीवर्ग जो कुछ कह देते, राजा प्रजाके सन्मुख वही बोलते थे, और किसी विदेशी राजदूतको ग्रहण करनेकी आवश्यकता होनेपर उन मंत्रियोंके सिखाये वाक्योंसे ही उस दूतके साथ बातचीत करते थे।" *

कर्नेल टाड रजवाडेके जिससमय तकका इतिहास लिख गये हैं, और जिस समयके मंत्रियोंकी योग्यता प्रभुत्व और प्रतापके परम प्रमाणसे जो मन्तव्य प्रगट कर गये हैं अब वह समय नहीं है। समय परिवर्त्तनके साथ २ रजवाडेके राज्योंकी अनेक विषयोंमें अवस्था बदल गई है। जो कुछ भी हो मंत्री नियुक्त करनेके विषयमें हम केवल इतना ही कह सकते हैं कि बृटिशगवर्नमेंट यदि अपने स्वार्थके ऊपर अधिक दृष्टि न देकर कर्नेल टाडके समान देशी राज्योंकी सब प्रकारसे मंगल मूलक राजनीति अवलम्बनके साथ वर्तमान शिक्षित राजालोगोंको उनकी इच्छानुसार योग्य पुरुषोंको मंत्री पदपर वरण करने की पूर्ण सामर्थ्य दे तो बहुतसे विषयोंमें विशेष लाभकी सम्भावना हो सकती है।

Lesppit des loix, chap. vi. Iiv. 31.

छत्तीसवाँ अध्याय ३६.

पुत्रके गोद लेनेकी रीति;—सामन्त शासन रीतिके विषयमें कर्नेल टाडका मत;— उपसंहार ।

वंशके क्रमानुसार उत्तराधिकारकी रीति जिस प्रकार रजवाडेकी राजपूत जातिके गुण दोष और धर्म अधर्म कार्योंको सदा अटलभावसे रक्षा करती आती है, वही रीति वीर राजपूत जातिकी राजनीति सम्बन्धी स्थिति और जातिके चरित्रोंकी ज्योंकी त्यों स्थितिमें रखनेकी सहायक है, यह उत्तराधिकारकी नीति सदा रहनेवाली है, समयका फेर और जातिके चरित्रकी अवस्था बदलनेपर यह रीति उसका विरोध करनेमें समर्थ है, राजपूत जातिमें अटल भावसे यह रीति विराजमान होनेसे समाज सम्बन्धी, धर्म सम्बन्धी, जाति और राजनीति सम्बन्धी पुरानी शैलीको किसी प्रकारसे नहीं बदलने देती। टाड साहब लिखते हैं कि, अपने राजाके समान मेवाडके किसी सामन्तने भी किसी समय प्राण नहीं त्यागे, वह केवल पुनर्जन्म धारणके लिये ही संसारमें अदृश्य हुए थे, यथार्थमें यह बात सत्य है। राजपूतानेके उत्तराधिकारकी रीति जिस प्रकार सनातनसे चली आती है, उससे कोई सामन्तवंश सर्वथा लुप्त नहीं हो सकता, मेवाडके अधिपति राणाके समान उनकी आधीनमें रहनेवाली मण्डलीके उत्तराधिकारीका अभाव कभी नहीं होता, सन्मान उपाधि और वंशरक्षाके निमित्त ही पुत्रके गोद लेनेकी रीति प्रचलित है, इस कारण राजस्थानके प्रधान २ सामन्त औरस पुत्रके न होनेपर गोद लिये हुए पुत्रसे वंशकी रक्षा करते हैं, कर्नेल टाड लिखते हैं कि, "यह पुत्रका गोद लेना चाहै कितना ही मूल्यवान समझा जाय और चाहै देशी पंचायत सभायें इस रीतिको पुष्ट करें किन्तु जिस भावसे पुत्र गोद लिया जाता है वह अत्यन्त बुद्धिहीनताका जतानेवाला और शोचनीय है, केवल युद्ध सम्बन्धवाली जातिकी दुर्दशा और राणाओंकी शक्तिके लोपसे ही यह शोचनीय दृश्य समय २ पर देखे जाते थे।"

जिस समय सन्तानोत्पत्तिकी किसी प्रकार आशा नहीं रहती। प्रायः उस समय ही सामन्तगण अपनी जीवन दशामें पुत्र गोद लेते हैं। सामन्त सबसे पहिले अपनी स्त्रीके साथ एकान्तमें परामर्श और विचार करते हैं। किसीको पोष्यपुत्र बनाना उचित है, स्त्री पुरुष पहिले यह स्थिर करते हैं, फिर सामन्त अपने आधीनके सरदारोंको बुलाकर अपने मनका भाव प्रगट कर देते हैं। जिसको पोष्यपुत्र बनाया जायगा,

वह यदि अति निकट आत्मीय और गुणवान् हो तो सरदारगण उसको स्वीकार करके राणाके निकट निवेदन करते हैं, राणा उस बातको ठीक जानकर सरदारोंकी वह इच्छा पूर्ण करते हैं। इस पुत्रके गोद लेनेके समय सामन्तको अनेक विषयोंमें तीक्ष्ण दृष्टि, विशेष विचार और बहुत सी चिन्ताओंमें निमग्न होना होता है; वह अपनी इच्छानुसार किसी प्यारे बालकको भी पोष्यपुत्र पदपर वरण नहीं कर सकते हैं। आधीनके सम्पूर्ण सरदार पहिले परीक्षा करके देखते हैं कि, मनोनीत शिशु, सामन्तका अति निकट सम्बन्धी, राजपूत सामन्तोंके सब गुणोंसे भूषित, प्रतिभाशाली और नेतापदके योग्य है वा नहीं। यदि निकटका सम्बन्धी न हो तो परिणाममें दूसरा समीपी विवाद खडा करके विद्रोहकी अग्नि प्रज्वलित कर देते हैं। इस कारण वह पहिले सब अंशमें योग्य और आत्मीय पुरुषको ही नियत करते हैं।

यदि किसी अपुत्रक सामन्तकी पुत्र गोद लेनेसे पहिले ही सहसा मृत्यु हो जाय तो प्रचलित विधानके अनुसार उनकी स्त्री निकटके सम्बन्धी और सरदारोंके साथ संमिलित होकर पोष्यपुत्रको निर्वाचन करलेती हैं। जबतक पोष्यपुत्र नाबालिग रहै, तबतक उस सामन्तकी पत्नी प्रतिनिधि रूपसे वह देश शासन करती हैं।

कर्नेल टाड कहते हैं कि, मेवाडके सोलह प्रधान सामन्तोंमेंसे देवगढके एक सामन्त अपुत्रक दशामें परलोक सिधार गये। मृत्युशय्यामें शयन करके उन्होंने अपनी स्त्री और सरदारोंसे अनुरोध करदिया कि, "आपलोग नाहरसिंहको ही पोष्यपुत्र बनावें।" नाहरसिंह संग्रामगढके स्वाधीन सामन्तके पुत्र थे। नाहरसिंहके साथ उक्त सामन्तका ग्यारहवीं पीढीका सम्बन्ध था, किंतु सातवीं और आठवीं पीढीके भी कई पुरुष उस समय जीवित थे। देवगढके विराटकाय * तीन सामन्त अपुत्रक दशामें प्राण छोड देंगे; यह किसीने नहीं विचारा था, यदि सोचते तो उनके अति निकट आत्मीयगण उनके पदपर प्रतिष्ठित होनेके लिये भली प्रकार शिक्षित हो जाते। उक्त सामन्तकी मृत्युके समय निकट आत्मीय लोगोंमें जितने पुरुष जीवित थे, वह राजसभामें शिक्षित न होकर दूसरे स्थानोंमें सैनिक रूपसे जीविका अर्जन और कृषिकार्य्यमें समय काटते थे। दो पुरुषोंमेंसे एक राणाकी सेनाके अश्वारोही पदपर नियुक्त थे और दूसरे निष्कर्म रूपसे राणाकी सभामें आते जाते थे। वह दोनों ही देवगढके सामन्त पदके अयोग्य थे किंतु कई पुरुषोंके अनुरोधसे राणाने उनमेंसे एकको देवगढके सामन्त पदपर वरण करनेकी इच्छा की।

---

* कर्नेल टाड टीकेमें लिखते हैं कि, "अन्तिम सामन्त गोकुलदासके समान बलिष्ठ पुरुष मैंने कभी नहीं देखा। उनका शरीर लम्बाईमें छः फुट ऊंचा था, और अंग प्रत्यंग भी वैसे ही बलिष्ठ थे। उनके पिताकी आयु जिस समय बीस वर्षकी थी, उस समय वह भी लम्बाईमें सातफुट ऊंचे और उनसे भी अधिक बलिष्ठ थे। आश्चर्य्यकी बात तो यह है कि, इस सामन्त वंशके बहुत पुरुष स्वाभाविक मृत्युसे मरे थे। इस वंशमें बहुतसे महान् राजपूत उत्पन्न हुए थे।

देवगढके प्रथम श्रेणीके पट्टावत् लोगोंमें बहुतसे पुरुष प्रतिभाशाली, वीर और बुद्धिमान् थे। राणाकी सभामें यह षड्यंत्रजाल जिस समय फैलाया जा रहा था, उस समय पट्टावत् लोगोंने मृत सामन्तकी इच्छा और आज्ञानुसार नाहरसिंहके शिरपर मृत सामन्तकी पगडी बांध दी और उनके नामसे उक्त सामन्तका मृत्यु सम्वाद घोषणा कर दिया। उस घोषणापत्रमें यह भी लिखा था कि, आशौचके समाप्त होनेपर नाहरसिंह अपने इष्ट मित्रोंके साथ मुलाकात करेंगे। इसके पीछे नाहरसिंहने देवगढके मृत सामन्तके पुत्र रूपसे उनका प्रेतकृत्यादि सब कार्य्य सम्पन्न कर दिया।

देवगढके सरदारोंके उक्त आचरण और नाहरसिंहके सामन्त पदपर प्रतिष्ठित होनेके समाचारसे राणा बहुत ही क्रुद्ध हुए। संवत् १८४७ (सन् १७९२ ईस्वी) में मेवाडमें जो विद्रोहाग्नि प्रज्वलित हुई थी, मृत देवगढपति उस समय उस विद्रोही दलमें सम्मिलित हुए थे। यद्यपि राणाने परिणाममें देवगढपतिका वह विद्रोहिताका अपराध क्षमा कर दिया था, किन्तु इस समय उनकी विना अनुमति सरदारोंके नाहरसिंहको सामन्त पद पर वरण करनेसे राणाके हृदयमें वह विद्रोह फिर जाग उठा, उन्होंने महाक्रुद्ध चित्तसे देवगढके साम्प्रदायिक संगावतोंका नाम सर्वथा लुप्त कर देनेकी इच्छा कर ली।

क्रुद्ध राणाने शीघ्र ही देवगढ देश अपने अधिकारमें करके, एक राजपुरुषको यह आज्ञा देकर वहां भेजा कि, देवगढके निवासियोंने जो अन्न बोया है, वह सब काट कर ले आओ, क्योंकि स्थानीय सरदारोंने मेरी विना सम्मति लिये मेरा अपमान करनेके निमित्त अपनी इच्छानुसार एक पुरुषको सामन्त पदपर स्थापित कर लिया है। देवगढके सरदारोंने राणाकी आज्ञा सुनकर विशेष चतुरताके साथ उत्तर दिया कि, "हमनेके केवल गोकुलदासका एक पुत्र निर्वाचन कर दिया है, देवगढका उत्तराधिकारी निर्वाचन नहीं किया है। यह निर्धारणकी सामर्थ्य केवल राणाको ही है, हमारा दृढ विश्वास है कि, राणा देवगढके सहस्रों राजपूतोंके नेता पदपर किसी योग्य पुरुषको ही निर्वाचित कर देंगे। सरदार लोगोंने उक्त निवेदनके साथ नाहरसिंहके गुणग्राम प्रकाश और उनको ही सामन्त पद देनेका भी सङ्केत कर दिया था। देवगढके कविवर उस समय राणाके चिकित्सकरूपसे राजधानीमें नियुक्त थे। * उन्होंने सरदारोंके दूत बनकर अपनी विज्ञता और चतुराईके द्वारा राणाको प्रसन्न करके उनकी क्रोधाग्नि बिलकुल शान्त कर दी। अन्तमें राणाके नाहरसिंहको अभिषिक्त करनेमें सम्मत होनेपर, युवक नाहरसिंह राजधानीमें आये। उसी समय नाहरसिंह मेवाडमें सबसे अधिक समृद्धिशाली और विक्रमी राजपूतोंकी

* कविवर केवल चिकित्सा गुणके कारण ही नहीं बरन् अपनी विज्ञताके गुणसे भी राणाके भवनमें सन्मानके साथ रहते थे। उन्होंने राणाको सूचित किया कि, "जो राणा सर्वेश्वर हैं, अफीमसेवी विदूषकगण कभी उनकी सेवाके उपयुक्त नहीं हो सकते। यदि युवक नाहरसिंह राणाकी सभामें शिक्षा पावेंगे तो यथासमय उनके द्वारा देशका विशेष उपकार होगा। इसके सिवाय नाहरसिंहके अभिषेकसे तलवार बन्धीस्वरूप एक लक्ष मुद्रा नजराना आपको शीघ्र ही मिलेगा।"

वासभूमि देवगढ मदारियाके सामन्त पदपर वरण किये गये । देवगढका प्राचीन नाम मदारिया है । नाहरसिंह जिस संग्रामगढके उत्तराधिकारी थे, वह संग्रामगढ यथासमय मदारियासे विच्छिन्न हो गया और अंतमें किसी उपायसे राणाके अधिकारमें हो गया ।

कर्नल टाड रंजवाडेकी सामन्त शासन प्रणालीके विषयमें सबसे अन्तमें लिखते हैं कि, "राजपूत जातिके मध्यमें सामंत शासन शैलीने अवश्य ही दृढरूपसे स्थान पाया था और उस कारणसे ही राजपूत राज्य अवनतिके सागरमें निमग्न और राजपूत जातिकी दशा शोचनीय होने पर भी उस रीतिके प्रबल चिह्न आजतक दिखाई देते हैं । किन्तु वर्त्तमान समयमें विशेष तर्कनावाली राजनीतिका अनुष्ठान करनेपर, निश्चय ही इन संपूर्ण चिह्नोंके सब प्रकार विलुप्त हो जानेकी संभावना है । हम लोग यदि राजपूत राज्योंकी भीतरी शासन प्रणालीमें हाथ डालें तो राजपूत राजगण अपने आधीनके सामन्तों और सरदारोंके साथ जिस सम्बन्ध शृंखलामें बँधे हैं, हम उस शृंखलाके तोडनेमें कारण होंगे और उससे राजपूत राज्योंमें सनातनसे प्रचलित शासनरीतिका समूलोच्छेदन करके उसके बदलेमें किसी दूसरी रीतिके चलानेमें समर्थ न हो सकेंगे । दूसरे विचारमें राजपूत जाति, सामन्त शासन प्रणालीके सिवाय और किसी प्रकारकी शासन रीतिमें अभ्यस्त नहीं है । हम लोगोंके साथ राजपूत राजगण मित्रतामें बँधनेसे उनको बाहरी शत्रुओंका भय बिलकुल दूर हो गया है और यथासमयपर वह दूसरे शत्रुओंसे भी छुटकारा पा सकेंगे । राजपूत राजोंका प्रताप प्रभुत्व फिर जितना विस्तृत और सामन्त तथा प्रजाके ऊपर आधिपत्य जितना ही प्रबल होगा, उतनी ही प्राचीन राजसम्बन्धी रीति नीति फिर प्रतिष्ठित और नजराना, खड्गबन्धी तथा शुल्कप्रदान आदि जो इस समय पुरानी प्रथा कहकर प्रचलित हैं यथासमय वह यथार्थरूपमें प्रचलित हो सकेंगे । राजगणकी शक्ति प्रभुत्व फिर विस्तृत और प्राचीन राजनैतिक प्रबन्ध फिर प्रचलन करनेकी सहायता करना प्रत्येक उदारनीतिक पुरुष और बृटिश गवर्नमेंटका अभिप्राय है । किन्तु हम जिन विषयोंमें बिलकुल अनभिज्ञ हैं, उन सब विषयोंमें हस्तक्षेपके बदले निरपेक्षभावसे स्थिति करनेपर वह उद्देश बहुत सहजमें उत्तमरूपसे सिद्ध होंगे यही मेरा विश्वास है ।" *

---

* कर्नल टाड इस स्थानकी टीकामें लिख गये हैं कि;—अतिश्रेष्ठ उद्देशके वशवर्ती होकर यदि निवासियोंकी प्राचीन रीति नीति और अभिलाषाके विरुद्धवाले किसी कार्यमें हस्तक्षेप किया जायगा तो वह उद्देश भी अवश्य ही व्यर्थ होगा । श्रेष्ठ शासन और न्याय विचारके लिये राजपूत राज्योंकी वर्त्तमान शासनरीति अचल रखना ही बृटिश गवर्नमेंटके कर्त्तव्य हैं । प्रचलित शासन शैलीको बृटिश गवर्नमेंट स्वयं संस्कृत न करके, संस्कारका परामर्श देना और देशी राजालोग जिससे स्वयं ही अपने २ मंत्रियोंके उपदेशके अनुसार परिवर्त्तित कर लें, बृटिश गवर्नमेंटको केवल ऐसी नीतिका अवलम्बन करना ही सब प्रकारसे उचित है।"यदि हमलोग स्वयं संस्कार करनेमें उद्यत हो जाँयगे, तो इलायचीके स्तंभमें केरिन्थिनका स्तम्भ शिर संयोग और बलदेवकी मूर्तिमें हरक्युलसका पञ्जर संयोग करनेसे-

कर्नेल टाड साहब जिस समय राजपूतानेके पोलिटिकल एजेण्ट पदपर स्थित थे, उस समय बृटिश जाति जिस प्रणाली और नीतिसे भारतका शासन करती थी, उस समय राजनीतिज्ञ टाड साहबकी नीति बहुत कुछ काममें लाई जाती थी किन्तु उनके जानेके साथ साथ ही बृटिश नीतिने भिन्न मूर्ति धारण की, जिससे राजपूत राज, राजपूत नरपति, राजपूत सामन्त, राजपूत सरदार, राजपूत प्रजाकी दशाका ही परिवर्तन हो गया। यद्यपि गवर्नमेंटने इस समय देशी राजाओंकी भीतरी नीतिमें सर्वथा हस्तक्षेप नहीं किया है, किन्तु मूलतत्त्वके जाननेवालोंको इतना अवश्य ही कहना पडेगा कि, इस समय राजा महाराजाओंको रेजिडेण्ट वा पोलिटिकल एजेण्ट लोगोंकी आज्ञाके आधीन ही सर्वथा रहना पडता है, जिस प्रकार मुगल शासनके समयमें राजा महाराजा अपने २ राज्यमें स्वाधीनताके साथ प्राचीन रीति नीतिका पालन तथा सामाजिक विधानके अनुसार अपने कार्य करनेमें समर्थ थे, यदि सत्यताका सन्मान रखनेके लिये इस समय उस बातकी तुलना की जाय तो यह स्वीकार करना होगा कि इस समय उस प्रकारकी पूर्ण स्वाधीनता संभोग वा उस प्रकार शक्तिका व्यवहार अब नहीं कर सकते। साथमें यह भी मानना पडता है कि राज्योंमें अब वैसा प्रताप भी नहीं है। कर्नेल टाडका उपदेश अब सब प्रकारसे ग्रहण नहीं होता, उन्होंने कहा है कि देशी राजा जितने शक्तिसम्पन्न सामर्थ्यवान् प्रभुतायुक्त होंगे, जितने ही वे राजा धनधान्य सैन्यबल सम्पन्न होंगे उतना ही बृटिश गवर्नमेण्टके शासनमें मंगल होगा। इस कारण देशी राजाओंको वैसी स्वाधीनता समर्पणमें मंगल है परन्तु इस समयकी नीतिसे यह देखा जाता है कि देशी राज्य दुर्बल निस्तेज और शक्तिहीन होते जाते हैं, और जहांतक देखा जाता है वीरत्व, प्रताप, प्रभुता प्रायः लोप सी होती जाती है। हमारा इसमें यह कहना है कि जो लोग राजपूत जातिके चरित्र प्रतिज्ञा और व्यवहारोंको भली भांतिसे जानते हैं वह लोग इसी बातका समर्थन करेंगे कि देशीराज्योंके बलकी जितनी २ वृद्धि होती जायगी उतना ही बृटिश राज्यका प्रताप बढकर भारतका मंगल होगा।

राजपूत राजोंके कुल गवर्नमेण्टका किसी प्रकार अनिष्ट नहीं कर सकते इस बातको कर्नेल टाडने रजवाडेमें बहुत कालतक निवास करके राजासे लेकर साधारण सरदार तक, प्रत्येक श्रेणीके सरदारके साथ अभिन्न मित्रता, बातचीत और सुहृदतासे भली भाँति जान लिया था, इस ही कारण वह लिख गये हैं कि, राजपूत राजा यदि पूर्वके समान; बल, पराक्रम, गौरव, धन, मर्यादाके संग्रह करने-

---

—जैसा दृश्य दिखाई देगा, वैसा ही होनेकी सम्भावना है। हमको केवल अरक्षित उत्तरपश्चिमकी सीमा अत्यन्त दृढ करनेकी इच्छा होनेपर यहांके देशी राज्योंको समृद्धिशाली और स्वाधीन भावसे रखना ही उचित होगा; और हम उन देशी राज्य समूहोंके उच्छेद साधनमें किसी प्रकारकी कभी अभिलाषा नहीं रखते, ऐसा भाव विदित करनेके साथ साथ इस उदारनीतिका अवलम्बन करना ही अत्यन्त आवश्यक है।"

में समर्थ हों तो हमारे भयका विषय कुछ भी नहीं है, राजपूत जातिके इतिहासके ऊपर गहरी दृष्टि डालनेसे यह भलीभाँति सिद्ध हो जाता है कि, राजपूत जातिमें एकता नहीं है; यहां तक कि जन्मभूमिकी रक्षाके निमित्त भी यह कभी एक न हुए। एक जातिके कविने अपनी कवितामें यदि दूसरी जातिपर आक्षेप युक्त शब्द लिख दिये तो इसपर दूसरे पक्षमें विद्वेषकी अग्नि प्रबल हो उठती थी, इसी प्रकार महाराष्ट्रियोंमें भी सम्पूर्ण महाराष्ट्रदलके नेता पदपर कभी एक पुरुषको प्रतिष्ठित होते हुए नहीं देखा, दूसरे प्रत्येक राजपूत राजा केवल अपने ही राज्यमें शक्ति प्रकाशित करनेको समर्थ हैं इस कारण अनेकताकी दशामें स्वतंत्र रूपसे यह प्रत्येक कभी हमारे लिये भयका कारण नहीं हो-सके यह कहना बाहुल्यमात्र है ।

राजनीतिके ज्ञाता टाड साहब फिर लिखते हैं कि, "प्रतिवासी राज्योंमें यदि सामन्त शासनकी रीति चलती रहे तो वह राज्य कभी अनिष्ट साधनमें समर्थ नहीं हो सकते। जिस देशमें ऐसी शासनरीति प्रचलित है देखा गया है कि वह देश अपनी रक्षामें सर्वथा ही असमर्थ निकले। दूसरे वे देश परराज्योंके आक्रमणमें भी सदा अयोग्य रहे,राजपूत राजाओंके साथ हमारी सब प्रकारसे निष्कपट मित्रता स्थापन और दोनोंके कल्याण साधन तथा दोनोंका निज २ स्वार्थपूर्णमें यत्नवान होना उचित है, वह कार्य ठीक है जिससे देशी राजोंका विराग उत्पन्न न हो, उनसे अनुचित कर लेने तथा उनके विरुद्ध चर आदिके नियुक्त करनेमें विरत होना ही उचित है, किसी प्रकारका उनको संकट न हो ऐसा उपाय किया जाय अथवा उनके साथ इस भावसे सन्धि स्थापन करी जाय जिससे दोनोंमें अकृत्रिम मित्रता उत्पन्न हो, वाणिज्य स्वाधीनता फैले और परस्पर शत्रु, मित्रता मित्रकी पहिचान कर सकें। इस प्रकारकी मित्रता उनके साथ उत्पन्न करनेपर यदि विदेशीय तातार, वा रूसी लोग हम लोगोंके पूर्वी राज्यमें आक्रमण करनेको उद्यत हों तो उस समय समरक्षेत्रमें पचास सहस्र राजपूत सेनाकी सहायता कभी भी असम्भव ज्ञात नहीं होगी।" उदार नीतिक टाड यह जो ज्ञानगर्भसार वचन स्वर्णाक्षरोंमें लिख गये हैं वर्त्तमान अंग्रेज राजपुरुषोंको उन वचनोंका स्मरण करके उनके उपदेशानुसार नीति अवलम्बन करना उचित है; यथार्थ राजनीतिज्ञ इस बातको अवश्य स्वीकार करेंगे।

राजपूत बांधव टाड फिर लिखते हैं कि औरङ्गजेबकी आज्ञासे समरक्षेत्रमें राजपूत जातिने कैसा व्यवहार किया था, वह हमको स्मरण रखना उचित है; अब भी उनके हृदयमें वही भाव विराजमान है। कृतज्ञता, आत्मसन्मानरक्षा और विश्वासपालन एक समय राजपूत जातिके समस्त सद्गुणोंकी मूल भूमि थे। आजतक प्रत्येक राजपूत उस कृतज्ञता, आत्मसन्मान और विश्वस्तताका मूल अर्थ समझते हैं; किन्तु केवल अपने भाग्यके बलसे ही समय परिवर्त्तनके साथ वह लोग उस कृतज्ञताका प्रकाश आत्मसन्मानरक्षा और विश्वासपालनके पूर्ण उदाहरण दिखानेका कोई उपलक्ष नहीं पाते हैं। किसी राजपूतसे यह प्रश्न किया जाय कि, "सबसे भारी अपराध क्या है? वह

तत्काल उसके उत्तरमें कहेगा कि "गुणछोड" अर्थात् कृतघ्नता। राजपूत जातिकी आत्माके साथ मानो कृतज्ञता जडी हुई है, वह लोग जीवनके प्रत्येक अनुष्ठानमें कृतज्ञताकी पूजा करते हैं, और उस कृतज्ञताके मान रक्षाके लिये ही वह समधर्म्मी राजाके साथसे वियुक्त नहीं हो सकते। जो राजपूत उस कृतज्ञतासे हीन है, वह राजपूत इस संसारमें रहनेके योग्य नहीं है, उसको दूसरे जन्ममें साठ सहस्र वर्षतक नर्कमें निवास करना पडता है, यही उसके लिये निर्द्धारित है; राजपूत जातिका यही विश्वास है।" *

इसके अनन्तर कर्नेल टाड लिखते हैं कि, "राजपूत जाति चाहे कितनी ही उग्र स्वभावयुक्त हो उसके हृदयमें राजभक्ति और देश हितैषिता भलीभाँति विराजमान है। यद्यपि राजपूत लोग बीच २ में अपने पिता और अधीश्वर × के प्रति उद्धतता सूचन करते रहते हैं किन्तु किसी विजातीय शत्रुके जन्मभूमि अधिकारमें उद्यत होनेपर वह किस प्रकार वीरमूर्त्ति धारण कर एकता पूर्वक राणाका अनुगमन स्वीकार करके कैसा अनुष्ठान करते हैं? मेवाडके इतिहास और राजा अजितसिंहके समयसे मारवाडके इतिहास पढनेसे हम लोग वह बात भलीभाँति जान सकते हैं। शेष इतिहासमें हम असीम राजभक्तिका निदर्शन देखते हैं। जिन मारवाडराजको उनकी प्रजाने भी नहीं खाया, जो नरपति दुर्दान्त अत्याचारी, नराधम औरंगजेबके कराल गालसे अपनी प्राणरक्षाके लिये जन्मसे व्यवहारको न जानकर एकान्तवास करनेको बाध्य हुए थे, वह केवल अपने नामके मोहमंत्रसे सामन्तमंडलीको एकतामें बाँधकर जिस दिन तलवार चलानेमें समर्थ हुए, उसी दिन उन्होंने संपूर्ण सामन्त और सेनाके साथ अपना पैतृक राज्य अधिकार मुक्त कर लिया था। बीस वर्ष तकके मारवाडके उस महोच्च गौरवसूचक इतिहासको सर्वांशमें योग्य लेखककी लेखनी ही लिख सकती है। दुर्भाग्यवश हमने उस युद्धका धारावाहिक सम्पूर्ण वृत्तान्त नहीं पाया, केवल किसी स्थलके किसी २ युद्धका आंशिक विवरण हमको मिला है। उसमें हम राजपूत जातिकी राजभक्ति और स्वदेशहितैषिता भलीभाँति देखते हैं।" कर्नेल टाड राजपूत जातिके राजभक्ति विषयमें जो कुछ लिख गये हैं उससे अधिक एक बात भी लिखनेकी आवश्यकता नहीं है। पाठकगण इसको अवश्य स्वीकार करेंगे।

---

* कर्नेल टाड टिप्पणीमें लिखते हैं कि, "गुणछोड अर्थात् कृतघ्नता और सतछोड अर्थात् विश्वासघात करनेवाले साठ हजार वर्षतक नर्कमें वास करते हैं, राजपूत कविगण ऐसा वर्णन कर गये हैं। जितने यूरोपियन अपने बुद्धिमान होनेका अभिमान करके यह कहते हैं कि, देशी लोग कृतज्ञता किसको कहते हैं यह नहीं जानते, और देशीय लोगोंकी भाषामें कृतज्ञता शब्द ही नहीं है। ऐसे लोग केवल गंगातीरवर्त्ती देशोंमें प्रचलित केवल नमकहराम शब्दको ही जानते हैं। गुणछोड शब्द कृतघ्नताका पूर्ण अर्थ प्रकाशक है। विश्वासघातका भी राजपूत जातिमें सबसे प्रधान अपराध गिना जाता है।"

× जिस राजपूतके पास केवल एक प्रकार परिमित भूखण्ड है, वह व्यक्ति भी अपनेको अधीश्वरके समान समरक्तवाला समझकर राणाको "बापजी" अर्थात् प्रजामात्रका पिता और जाति मात्रका प्रतिनिधि समझता है। राजभक्तिका क्या पूर्ण नमूना है?

कर्नेल टाड हमारे समधर्म्मावलम्बी राजपूत भ्राताओंके चरित्रके सम्बन्धमें फिर लिखते हैं, "सम्राट अकबर, जहांगीर और औरंगजेब आदि राजइतिहास वेत्ता स्वयं राजपूतोंके चरित्रोंके विषयमें जो सिद्धान्त प्रकाश कर गये हैं, उसपर हम दृष्टि डालनेसे क्या देखते हैं ? कि उक्त मुगल सम्राटोंने भारतके अनेक स्थानोंके जिन युद्धोंमें विजय और गौरव पाया था, उनके राजपूतमित्र ही उस विजय और गौरवके मूल हैं । जिस आसाम देशके विजय करनेके लिये इस समय बृटिश वाहिनी नियुक्त हुई है, और जिस युद्धका परिणाम देखनेके लिये बृटिश भारतकी राजधानी भयपूर्वक प्रतिज्ञा करती है, उस आसामको केवल एक राजपूत राजाने विजय कर लिया था, और उन राजाके उत्तराधिकारी इस समय बृटिश गवर्नमेंटके करद मित्र हैं । वह आसाम विजेता राजपूत नरपति जयपुरके अधीश्वर राजा मानसिंह थे । उन्होंने आसामके सिवाय आराकान और उडीसामें भी विजयपताका फहरा दी थी । कोटाके राजा रामसिंहने मुगल सम्राटकी आज्ञानुसार कई प्रबल युद्धोंमें विजय पाई थी और उनके पौत्र राजा ईश्वरीसिंह और अन्य पाँच भ्राताओंने युद्धस्थलमें शयन किया था ।"

राजनीतिज्ञ टाडकी अन्तिम उक्ति, "जो लोग केवल बाहरी दृश्य देखकर सिद्धान्त गठन करते हैं; वह सहजमें ही अनुमान कर सकते हैं कि, दीर्घकालतक विजातीय आक्रमणसे राजपूत जातिके उद्यम,प्रतिभा, वीरत्व, विक्रम बिलकुल दूर हो गये हैं किन्तु यह कल्पना बिलकुल भ्रांतिपूर्ण है । विजातीय उत्पीडन तथा अत्याचारसे राजपूत चरित्रमें इस समय जितने शोचनीय लक्षण दिखाई देते हैं, शान्ति विस्तारके साथ २ ही वह सब दूर हो जायँगे और स्वदेशकी सुख समृद्धि जितनी ही बढैगी, उतने ही उनके हृदयमें नये २ भाव उत्पन्न होकर प्रत्येक जातिसम्बन्धी आचार व्यवहार तथा सद्गुण पूर्ण मूर्त्तिसे दिखाई देंगे।राजपूत जाति उस समय कुंकुमवर्णकी पौशाक धारण करके × [जो लोग निःस्वार्थ भावसे उनके मंगल साधनमें सदा तत्पर हैं उनके लिये] संग्राम स्थलमें। निश्चय ही उपस्थित हो सकेंगे। इतिहासके ऊपर लक्ष्य रखकर हमको राजनैतिक मार्गका अवलम्बन करना उचित है । बहुत बडे साम्राज्य शासन और अनगिन्त मित्रराज्यके साथ सम्बन्धसे जो महाविपत्ति निवारण नहीं हो सकती उसके प्रमाण संग्रहके लिये हमको प्राचीन रोमके ऊपर दृष्टि देनेकी आवश्यकता न होगी । भारतवर्षमें बाइसदेशी प्रधानराज्य–जिनमें अधिकांश बृटिश साम्राजके अधीन हुए हैं, यहांतक कि एक सौ वर्ष पहिले उन सबने राजशासनके परमरमणीय दृश्य दिखाये थे । एक सम्राटके जिस विशाल साम्राज्यका सफलतासे शासन करना अत्यन्त कठिन था, उसको कई सौ वर्ष तक मुगल शासन कर गये हैं । किंतु जब उन सम्राटोंने देशीय राजा और राजपूत नरपतियोंके स्वत्त्व पर हस्तक्षेप करके उनके सामाजिक आचार व्यवहार और धर्म्मके प्रति अत्याचार आरंभ किया, उस समयसे ही सम्पूर्ण देशी राजा और राजपूत भूपालोंने

× राजपूत जाति अपने जीवनत्यागकी प्रतिज्ञा करके जिस समय युद्धक्षेत्रकी यात्रा करती थी, उस समय कुंकुम वर्णके वस्त्र धारण करती थी ।

सम्राट्की अधीनता अस्वीकार करके सर्वथा पृथक्भाव अवलम्बन किया, तथा दाक्षिणी लोग इसी कारणसे उत्तेजित होकर मुगल अत्याचारियोंके विरुद्ध खडे हुए। "एक समय, जिस मुगल सम्राट् औरङ्गजेबके नामसे सम्पूर्ण भारत काँपता था यथासमय उस मुगल सम्राटका वह विश्वविख्यात सिंहासन एक ब्राह्मणके करुणाधीन हुआ था और खानदेशके एक किसानके पौत्रने * तैमूरवंशके लोगोंको वृत्ति भोगी करके रक्खा था" राजनीतिज्ञ कर्नेल टाडके इन गंभीर उपदेशपूर्ण वचनोंके ऊपर विशेष दृष्टि रखकर बृटिश गवर्नमेंट राजपूतोंके प्रति उदार व्यवहार करे, उपसंहारमें हमारी यही अंतिम प्रार्थना है। सबको ही स्वीकार करना होगा कि, छोटे द्वीप बृटेनके गौरांग जिस प्रबल प्रतापसे भारत शासन करते हैं, वह शासन केवल सेना और नीतिके बलसे नहीं है किन्तु परम करुणामय परमेश्वरके बलसे है। वह अनुग्रह स्मरण करके उदार-नीतिद्वारा भारतवासियोंका मंगल साधन करनेमें बृटिश गवर्नमेण्ट जबतक यत्नवान रहे-गी, कर्नेल टाडके समान हम भी कहते हैं कि उतने दिन तक वह सर्वशक्तिमान अव-श्य ही भारतमें बृटिश शासनशक्ति प्रबल रक्खेंगे। इतिहासके ऊपर दृष्टि रखकर भार-तके शुभसाधनमें सदा तत्पर रहना ही बृटिश गवर्नमेंटका प्रधान कर्त्तव्य है। उस कर्त्त-व्य पालनमें त्रुटि होनेपर अत्यंत संकीर्ण अनुदारनीतिका अवलम्बन करनेपर कैसे फल उत्पन्न होने की सम्भावना है, भारतका इतिहास उसको गम्भीर शब्दसे कीर्त्तन कर रहा है।

* महाराज सेंधिया।

[राजस्थानकी सामन्तशासनप्रणाली समाप्त हुई.]
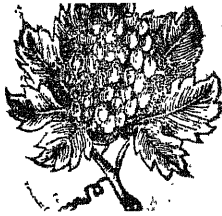
परिशिष्ट ।

कर्नेल टाड द्वारा लिखित ।

प्रथम-संख्या १.

ताम्रानुशासनपत्र;-सनद;-दानपत्र;-व्यवस्था पत्र;-राजके प्रादेश-पत्र;-आवेदनपत्र और खोदित लिपियोंका अविकल अनुवाद । +

मारवाडके निर्वासित सामन्तों × के द्वारा पश्चिमी. राज्योंमें स्थित बृटिशगवर्नमेंटके पोलिटिकल एजेंटके निकट प्रेरित पत्रका ज्योंका त्यों अनुवाद ।

यथोचित सम्भाषणके अनन्तर निवेदन यह है कि, हम आपके निकट एक विश्वासी पुरुषको भेजते हैं, वह हमारी दशाके विषयमें आपको सब बातें सूचित करेंगे । सरकार कम्पनी ईष्ट इंडियाकम्पनी हिन्दुस्थानकी अधिपति है; हमारी दशा इस समय कैसी शोचनीय है, इस बातको आपलोग भलीभांति जानते हैं । यद्यपि हमारे और हमारे देशका कोई विषय भी आपसे छिपा नहीं है, किन्तु अपने विषयका एक विशेष वृत्तांत आपको सूचित करना अत्यन्त आवश्यक है ।

श्रीमहाराज और हमलोग एक ही वंशमें उत्पन्न हैं और सब ही राठौर हैं । वह हमारे अधिपति, हम उनके अनुगत दास हैं किंतु इस समय वह महा क्रोधमें भरे हुए हैं, और उसीसे हम अपने स्वदेशके सम्पूर्ण स्वत्व और विषय विभवसे वञ्चित हो गये हैं । हमारे पिताके अधिकारकी भूमि महाराजने खालिसा अर्थात् अपने अधिकारमें कर ली है और जितने सामन्त वर्त्तमान राजनैतिक विप्लवके समयमें दूर रहनेकी इच्छा करते हैं उनके भाग्यमें भी वैसे ही फल लाभकी संभावना है। महाराजने अनेक सामन्तोंको अभयदान और प्राणरक्षाकी दृढ प्रतिज्ञापूर्वक आधीन करके, अन्तमें अनेकोंको वञ्चित, निहत और दूसरे सबको कारागारमें डाल दिया है । मुसद्दी और राजकर्म्मचारी पकडे जाकर बन्दी हो रहे हैं, और उनके ऊपर ऐसे २ शोचनीय अत्याचार किये जा रहे हैं, जिनका लिखना हमारी लेखनीसे बाहर है । महाराज ! इस समय ऐसे नृशंसचित्त हुए हैं कि जोधपुरके राजालोगोंमें वैसा किसीको भी नहीं देखा जाता । उनके पूर्व पुरुषगण बहुत शताब्दीतक राज्य शासन कर गये हैं;-हमारे पूर्व पुरुषगण उनके मंत्री और

+ इनमेंसे बहुतसे पत्र कर्नेल टाड अपने देशमें ले गये थे। उनके स्वर्ग सिधारनेके पीछे वह सब पत्र किसके हाथ लगे, इसके जाननेका कुछ उपाय नहीं है ।

× क्रोधोन्मत्त मारवाडपति जिससे उक्त पत्र प्रेरकोंके प्रति अत्यन्त क्रुद्ध होकर उनपर विपत्ति उपस्थित न करें, कर्नेल टाडने इस निमित्त ही पत्र प्रेरक सामन्तोंके नाम नहीं लिखे ।

उपदेष्टा स्वरूप थे, और राज्यके सब विषयोंके कार्य उसी सम्मिलित सामन्त मण्डली-की इच्छानुसार सम्पन्न होते थे । महाराजके पूर्वपुरुषोंके लिये उनकी आज्ञानुसार और उनके ही सामने हमारे पूर्वपुरुष समर क्षेत्रमें मरे थे, और सम्राटगणके * अधीनमें नियुक्त रहकर वही जोधपुरको वर्त्तमान धन,मान और गौरवसे पूर्ण कर गये हैं । मारवाडमें जब जो कुछ घटना हुई है, विपद और विजातीय आक्रमणमें हमारे पूर्व पुरुष सबसे आगे उपस्थित होकर तथा समय विशेषमें जीवन दान करके मारवाड राज्यकी रक्षा कर गये हैं । जिस २ समय नाबालिग नरपति मारवाडसिंहासनपर बैठ गये हैं; उस २ समय हमारे पूर्व पुरुषोंके ज्ञान बुद्धि और कर्त्तव्य कार्य्यसे ही मारवाडमें पूरी शान्ति विराज गई है तथा इस प्रकारसे ही नरपतिगण मारवाडके सिंहासनपर एक एक पुरुषसे दूसरे २ पुरुषतक बैठते आते हैं । उन (राणा मानसिंहके) नेत्रोंके सामने हमने राजभक्ति प्रकाशक बहुतसे कार्य्य किये हैं, जिस घोर संकट समयमें (सन् १८०६ ईसवी) जयपुर राजने सेनासहित जोधपुर घेर लिया उस समय युद्धमें हमने जयपुर राज्यको आक्रमण किया; हमारा जीवन और भाग्य विपत्तिमें पड गया; किन्तु दयामय भगवानने हमलोगोंको ही विजय दी थी, वह सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर ही हमारा साक्षी है । इस समय उच्च पदस्थ उदार चित्त कोई पुरुष भी महाराजके निकट नहीं है, इस कारणसे ही यह विपरीत घटना उपस्थित है । यदि वह हमको अनुगत करें और हमारे स्वस्वाधिकार हमको प्रदान करें तभी वह हमारे अधीश्वर और प्रभु हैं; अन्यथा वह हमारे भ्राता ज्ञाति और देशोंके अधिकारी हैं और वही अधिकार पानेके लिये हम प्रार्थना करते हैं । वह हम लोगोंको हमारे भूमिस्वत्वसे बिलकुल वञ्चित करना चाहते हैं किन्तु हमलोग क्या वह स्वत्व सहजमें ही छोड सकते हैं ? अंग्रेजलोग सब हिंदुस्तानके स्वामी हैं । ''''''सामन्तने अपने प्रतिनिधिको अजमेर भेजा था । उनसे दिल्ली जानेके लिये कहा गया । उस उपदेशके अनुसार ''''''ठाकुर दिल्ली गये, किन्तु उनको कुछ आज्ञा नहीं दी । यदि अंग्रेज अधीश्वर हमारी प्रार्थना न सुनेंगे तो फिर कौन सुनेगा ? अंग्रेज कभी एकका स्वत्व दूसरेको अन्यायरूपसे अधिकार नहीं करने देवे मारवाड हमारी जन्मभूमि है इस कारण हम लोग मारवाडसे अवश्य ही अन्नजल ग्रहण करेंगे । हजारों राठौर शोचनीय दशामें पडे हैं वह कहां जायँ ? केवल अंग्रेज जातिके प्रति अखण्डनीय सन्मानके कारण ही हमलोग इतने दिनोंतक मौन रहे हैं । हमारा अभिप्राय क्या है, वह पहिले विदित न कर-

---

* दिल्लीके सम्राटोंको लक्ष्य करके इस स्थलमें ऐसा लिख गये हैं । कर्नेल टाड लिखते हैं कि, दिल्लीके परम रमणीक उज्वल दीवान खास नामक दरबारके रौप्यमंडित स्तंभके पार्श्वमें ७६ देशी राजा खडे होकर यवन सम्राट्की सन्मान वृद्धि करते थे । उनमेंसे मारवाडके महाराज ही सबसे श्रेष्ठ सन्मानस्वरूप सम्राट्के दाहिनी ओर स्थान पाते थे । मारवाड राजा मानसिंहके परदादाने दिल्लीकी सम्राट् सभामें सन्मान पानेसे मेवाडके राणाके निकट गर्वोक्तिसे पूर्ण जो पत्र लिखा था, कर्नेल टाडको वह मूलपत्र मिल गया था ।

नेसे आप पीछे हमको अपराधी बता सकते हैं, इस कारण ही इस समय आपको सब बातें विदित करके आपके निकट हम निर्दोषी होते हैं। मारवाडसे हम जो कुछ धन रत्न लाये थे और यहां ऋण लेकर जो कुछ संग्रह किया था, वह सब ही समाप्त हो गया है। इस समय अन्नाभावसे जब हम नष्ट हुआ चाहते हैं, तो उस अन्नके लिये हमारी जो इच्छा है उसीके करनेमें उद्यत हैं।

अंग्रेज हमारे शासनकर्त्ता और स्वामी हैं, श्रीमानसिंहने हमारी भूसम्पत्ति पर अन्यायरूपसे अधिकार कर लिया है; आपके मध्यस्थ होनेपर वह सब विवाद मिट सकता है। आपके निर्णेता और मध्यस्थ विना हुए हमको किसी विषयमें कुछ विश्वास नहीं है। आप हमारी इस प्रार्थनाका उत्तर देंगे। हम आग्रहके साथ उत्तरकी प्रतीक्षामें हैं; किंतु यदि हमको कुछ उत्तर न मिला तो परिणाममें जो कुछ काण्ड उपस्थित होगा उसके लिये हम अपराधी वा उत्तरदाता न होंगे; क्योंकि सर्वत्र ही हम प्रार्थना विज्ञापन और संवाद दे चुके हैं। अनाहारका दारुण कष्ट मनुष्यको उपयोग उपायके खोजनेमें विवश करेगा ही। एक मात्र आपलोगोंके प्रति हमारा जो प्रबल सन्मान विराजमान है, केवल उसके ही कारणसे हम इतने दिनतक मौन रहे हैं। हमारे सरकार (राजा) बहिरे हो गये हैं, कोई निवेदन न सुनेंगे। किन्तु फिर कितने कालतक उपेक्षा करेंगे? हमारी आशा पूर्ण कीजिये। संवत् १८७८, श्रावण (सन् १८२१ ईसवी, अगस्त)

अविकल नकल।

(हस्ताक्षर) जेम्स टाड।

दूसरी संख्या २.

देवगढके सामन्त गोकुलदासके विरुद्ध उनके अधीनस्थ सरदारोंका अनुयोग।

१ म। बहुत प्राचीन कालसे प्रचलित विधिव्यवस्था और राजनीतिके प्रति वह (सामन्त) सन्मान नहीं दिखाते।

२ य। प्रत्येक राजपूतकी ही एक २ चरसा परिमित भूमि है किन्तु उन्होंने वह भूमि अपने अधिकारमें कर ली है।

३ य। जो पुरुष उनको रिशवत दे सकता है वही उनके निकट सच्चरित्र गिना जाता है, और जो लोग उसके देनेमें असमर्थ हैं वह चोर और घृणित समझे जाते हैं।

४ र्थ। उनके अधीनस्थ पट्टाधारियोंने जो १०। १२ ग्राम स्थापन किये थे, वह उन्होंने अपने अधिकारमें कर लिये हैं और उक्त पट्टाधारी अन्नाभाव और स्थानके अभावसे महाकष्ट पाते हैं।

५ म। सनातनसे देवालयमें शरणागतको अभय देकर आश्रय दान और उसके ऊपर किसी प्रकारका दण्ड वा अत्याचार न करने की प्रथा प्रचलित है, किन्तु उन्होंने वह प्रथा बिलकुल उठा दी है।

६ ष्ठ । किसी विशेष विपदमें गिरकर अथवा अपना स्वार्थ साधनेके लिये वह अपनी प्रजाके निकट शपथपूर्वक प्रतिज्ञामें बँधते हैं, किंतु उसके पीछे उनका सर्वस्व लूट लेते हैं ।

७ म । पूर्वकालमें ऐसी रीति प्रचालित थी कि, किसी समय सामन्तके (देवगढके) अधीनस्थ सरदार वा आत्मीयलोगोंके सामन्त सभामें उपस्थित होनेकी अवश्यकता होनेपर पत्रद्वारा उनको बुलाया जाता था, किन्तु वह उसके बदलेमें इस समय अर्थ-दण्डके द्वारा बुलवाते हैं । इसके द्वारा सबकी ही पद मर्य्यादा नष्ट करी जाती है ।

८ म । उक्त पत्रवाहक भत्तेमें एक रुपया पाता था, इस समय दो रुपये लिये जाते हैं।

९ म । पहिले देवगढ़की सीमान्तके पहाडी देशमें किसी व्यक्तिके डाकूद्वारा आक्रान्त वा सर्वस्वान्त होनेपर सामन्त उसकी क्षति पूर्ण कर देते थे, किन्तु इस समय किसी व्यक्तिके उस प्रकार आक्रान्त वा धन नष्ट होनेपर यथास्थानमें हानि पूर्तिके लिये प्रार्थना करनेपर कोई फल नहीं दीखता, क्यों कि डाकू लोग लूटे हुए द्रव्यका चतुर्थांश फौजदारको * देते हैं । मीरा अर्थात् पहाडीलोग इस समय बिलकुल स्वाधीन हो गये हैं, पहिले कभी कोई हत्या नहीं करते थे किन्तु इस समय वह जिस प्रकार हमारे आत्मीय लोगोंका सर्वस्व लूटते हैं उसी प्रकार हत्या भी करते हैं । इस डकैती और नर-हत्या निवारणका कोई उपाय नहीं दीखता, यहांतक कि डाकूलोग देवगढनगरमें लूटका माल बेचते हैं ।

१० म । केवल अर्थदण्ड करनेकी इच्छासे वह निरपराधियोंका अधिकार किया भूमिस्वत्त्व अपने अधिकारमें कर लेते हैं और अर्थदण्ड दिये जानेपर वह खेतोंका सब अन्न अपने घोडोंके लिये कटवा मँगाते हैं ।

११ श । अधीनस्थ सरदारोंके खेतोंमेंसे सब किसानोंको बलात्कारसे पकड कर अर्थदण्ड करते हैं और उनके गौ आदि पशु और हल बेचकर धन वसूल कर लेते हैं । इस कारण खेतीका काम बिलकुल बंद हो गया है और निवासी लोग देश छोडकर अन्यत्र भाग रहे हैं ।

१२ श । देवगढ नगरके विचारपतिगण × उनके प्रबल अत्याचारके कारण राय-पुरमें भागनेको विवश हुए हैं । वह उनको पकडवाकर उनसे भी धनदण्ड लेनेके लिये तीक्ष्ण दृष्टि रक्खे हुए हैं ।

१३ श । बलपूर्वक अकारण अर्थसंग्रहके लिये वह आधीनके सरदारोंको अपने पास बुलाते हैं । यदि वह किसी उपायसे भाग जाँय तो उनकी स्त्री और कन्याको कारागारमें डाल देते हैं। इस घोरतर अपमानसे अनेक स्त्रियोंने कुएँमें गिरकर आत्माघात किया है ।

---

* प्रत्येक राजपूत सामन्तके अधिकृत प्रदेशमें फौजदार नामका एक सामरिक नेता है । वह आधीनके सरदारोंको सैन्यदल भुक्त और उनका प्रभुत्व करता है । अन्य जातिके राजपूत ही इस पदपर नियुक्त होते हैं ।

× प्रत्येक नगरमें ही एक २ विचारालय है । नगरसेठ अर्थात् प्रधान अधिवासी चार चोटियाके साथ मिलकर दीवानी विचार करते हैं । वह किसी प्रकारका वेतनादि नहीं पाते ।

१४ श । यदि कोई पुरुष किसीका ऋणी हो तो वह मध्यस्थ बनकर उसका ऋण चुकवा देनेमें प्रवृत्त होते हैं। और उस ऋणीकी स्थावर जंगम सब सम्पत्ति बिकवाकर आधा धन आप ले लेते हैं ।

१५ । श यदि किसी मनुष्यके पास कोई उत्तम घोडा हो तो सदुपाय अथवा अंतमें असत् उपायोंसे उसको ले लेते हैं ।

१६ श । देवगढ देश जिस समय प्रथम स्थापित हुआ, उस समय हमारे पूर्व पुरुषों-को भी भूमि मिली थी। इस कारण देवगढ जिस प्रकार उनकी पैतृक सम्पत्ति है।उसके भीतरकी वह भूमि भी उसी प्रकार हमारी पैतृक सम्पत्ति है । उक्त भूमियोंकी श्रेष्ठता साधनादिके लिये हजारों रुपये खर्च हुए हैं। किन्तु वह हमारे सन्मान अनुग्रह स्वत्त्वाधि-कारमें अपमानके साथ हस्तक्षेप करते हैं।

१७ श । हमारे पूर्व पुरुषगण उक्त जितने ग्राम स्थापित कर गये हैं। वह अपनी इच्छानुसार उन सब ग्रामोंसे चार वा पाँच चरसा भूमि लेकर विदेशियोंको दे रहे हैं और उससे प्राचीन भूमिके अधिकारी गण क्रमशः दीन दशामें गिर कर नष्ट होते जाते हैं।

१८ श । बहुत प्राचीन कालसे ही देवगढके सामरिक सामन्तगण अपने २ आत्मीय कुटुम्बियोंको प्रतिदिन भोजन अथवा अन्न देते आते थे, किन्तु चार वर्षसे उन्होंने यह प्रथा बिलकुल बंद कर दी है ।

१९ श । प्राचीन कालसे प्रचलित रीतिके अनुसार देवगढके सामन्तगण पट्टावत् अर्थात् पट्टाधारी आधीनके सरदारोंके साथ मिलकर परामर्श पूर्वक कार्य करते थे। किन्तु वह इस समय केवल विदेशी लोगोंके साथ परामर्श करते हैं । उसका फल यह हुआ कि, पहाडी देशोंसे जो सैकडों रुपये राजधनके संगृहीत होते थे, इस समय वह आमदनी बिलकुल बन्द हो गई है ।

२० श । भायादोंके अधिकारवाले प्राचीन भूखण्ड समूहोंसे पहाडी डाकू निवासियों-के गौ आदि पशु लूटकर ले जाते हैं । फौजदार वह सब लौटाकर अधिकारीको नहीं देते, बरन् चातुरी पूर्वक डाकुओंको निवासियोंके निकटसे रेकोयाली कर लेनेमें उद्दीप्त कर देते हैं।

२१ श । धनद्वारा विचार बेचा जाता है, धनके विना विचार नहीं होता । जिसके पास धन है, वही न्यायविचार पाता है। धन प्राण रक्षाके लिये महाजन और व्यौपारी विदेशमें भाग रहे हैं किन्तु वह एक बार पूंछते भी नहीं कि वह कहां गये ?

२२ श । हमारे गौ आदि पशुओंके पहाडके ऊपर चले जानेपर, पहाडी उनको पक-ड लेते हैं, और हम स्वयं वहां जाकर उनसे वह पशु छीन लाते हैं तो वह हमारे ऊपर धनदण्ड करके कहते हैं कि, "पहाडियोंको उक्त प्रकारसे पशु रोक लेनेकी शक्ति हमने दी है। इस प्रकार वह हमारी मर्य्यादा घटा देते हैं। अथवा हम उक्त हत्याकारी डाकुओं-मेंसे किसीको भी पकडते हैं तो वह छुडानेके लिये एक अस्त्रधारी दल भेजते हैं और उससे फौजदार रिशवत लेते हैं। फिर छूटे हुए डाकुओंके साथ कलह होता है और उससे

निराश्रय राजपूत अपनी पैतृक भूमि छोडनेको विवश हो जाते हैं। देवगढमें अब प्रजाको सहायता और आश्रय पानेका कोई उपाय नहीं है। सामन्त बिलकुल हिताहित विचारशून्य हैं और सन्मान रक्षाके प्रति यहांतक उदास हैं कि, "पहाड़ियोंको धन देकर अपनी लुटीहुई सम्पत्तिका उद्धार कर लो, ऐसा कहते हैं। जबसे वर्त्तमान फौजदार नियुक्त हुए हैं तबसे हमारे अदृष्टमें हालाहल विष लिखा गया है। विदेशी लोग सर्व कर्ता धर्त्ता हैं, देशी दूर फेंक दिये हैं। दक्षिणी (महाराष्ट्र) और लुटेरे उनके(सामन्तके) स्वजातीय लोगोंकी भूमि भोग रहे हैं। विना अपराधके सरदारोंकी भूमि छीन ली जाती है। उसके फिर प्राप्त करनेमें बहुत सा समय और धन व्यय करना होता है। न्याय विचार बिलकुल लुप्त हो गया है।

राणा भवनमें उन (सामन्त)का जैसा अनुग्रह भोग और स्वत्वाधिकार विराजित है, उनके निकट भी हम उसी अनुग्रहके अधिकारी और स्वत्ववान हैं। जबसे आप(कर्नल-टाड) ने मेवाडमें पदार्पण किया है, उससे बहुत पहिले दूसरोंके द्वारा अन्यायसे अधिकृत भूमियोंका उद्धार किया जाता है। हमने ऐसा क्या अपराध किया है जो अब अपने पैतृक स्वत्वसे वञ्चित रहें ?

हमलोग महा विपत्ति सागरमें मग्न हैं।

तीसरी संख्या ३.

महाराज श्रीगोकुलदास ।

देवगढके चार मिसल अर्थात् चार श्रेणीके

पट्टावत् गणके प्रति आदेश करते हैं।

विदित हो-

विना अपराधके किसी सरदार वा भूमि अधिकारीकी सम्पत्ति वा चरसा भूमि नहीं छीनी जायगी।

यदि कोई व्यक्ति किसी प्रकारका अपराध सूचक कार्य्य करेगा तो हमारे स्वजातीय चारामिसल अर्थात् चार श्रेणीके द्वारा उसका विचार और दण्ड व्यवस्था होगी।

उनके साथ किसी विषयमें किसी समय विना परामर्श किये मैं किसीको भी किसी प्रकारका दण्ड नहीं करूंगा।

श्रीनाथजीके नामसे मैं यह शपथपूर्वक कहता हूं और इस* प्रतिज्ञासे मैं किसी समय नहीं हटूंगा। संवत् १८७४, षष्ठी, पौष।

चौथी संख्या ४.

मेवाडपति महाराणा अरिसिंहद्वारा सैन्धवी सेनाके नेता अब्दुलरहीम बेगको वृत्ति दानपत्र।

---

* इंग्लेण्डके अधीश्वरने भागनाकार्टामें विधिबद्ध ४३ धारामें अपने सामन्तोंके निकट ऐसी ही प्रतिज्ञा करी थी।

श्रीरामो जयति ।

श्रीगणेशः प्रसीदतु । श्रीएकलिङ्गः प्रसीदतु ।

श्रीमहाराजाधिराज महाराणा अरिसिंह मिर्जाअब्दुलरहीमबेग आदि लवेगोतके प्रति आदेश करते हैं;—

इस समय हमारे अधीनस्थ कई सामन्तोंके विद्रोही होने और धूर्त्त रत्नसिंहको अधिपति रूपसे वरण करने, दक्षिणी सेनादल (महाराष्ट्रियों) को बुलाने तथा उदयपुर राजधानीपर अधिकार करनेके लिये तोपें सज्जित करनेसे उनको निवारण करके आपके द्वारा हमारी राजशक्ति रक्षामें यथेष्ट सहायता पहुंची है, इसी कारण आपके ऊपर अनुग्रह प्रकाश करनेके लिये मैंने यह भूवृत्ति दान निर्द्धारित कर दी, यह आप और आपके पुत्र पौत्रगण सदा भोगते रहैं । आप विश्वासके साथ कार्य करते हैं । यदि हमारे वंशका कोई आपके उत्तराधिकारियोंसे इस स्वत्वको छीनेगा तो उसको एकलिङ्गजीका शाप और चित्तौर नष्ट करनेका पाप स्पर्श करेगा ।

विशेष विवरण ।

१ म २०००००) दो लाख रुपये मूल्यकी भूसम्पत्ति ।

२ य । वार्षिक नगद २५०००) रुपये ।

३ य । देवारितोरणके बहिर्देशमें स्थित १०००० बीघे भूमि ।

४ र्थ । रहनेके लिये " भारत सिंहकी बाटी " नामक घर ।

५ म । उद्यान बनानेके लिये नगरके बाहर एक सौ बीघे भूमि ।

६ ष्ठ । काष्ठ और तृणादिके निमित्त उपत्यकाका भितुना नामक ग्राम ।

७ म । अजमेरीबेग, जो युद्धभूमिमें मारे गये थे, उनके समाधिमन्दिरकी रक्षाके कारण एक सौ बीघे भूमि ।

अनुग्रह और सन्मान ।

८ म । दरबारमें एक आसन और सादरिके सामन्तके समान सब विषयोंमें सन्मान और पदमर्य्यादा । *

९ म । राजप्रासादस्थित तोरणके बहिर्देशमें अपना नगाडा बजा सकेंगे, किंतु केवल एक लकडी द्वारा ।

१० श । दशहरा उत्सवमें अमर घोडा और × सन्मान सूचक पोशाक ।

११ श । आहरमें विजयढक्का बजा सकेंगे । अन्यान्य सब विषयोंमें सलम्बूरके सामन्तके समान आपका वंश भी सदा सन्मान पासकेगा । इस कारण अपनी भूवृत्ति मूल्यके अनुसार आप राजाकी आज्ञा पालन करते रहेंगे ।

---

* सादरिके अधिपति राणाकी सभाके प्रथम वैदेशिक सामन्त हैं ।

× राणा सामन्तको जो घोडा देते हैं, उसके मरजानेपर फिर दूसरा घोडा देते हैं । इस कारण इसमें अमरशब्दका प्रयोग है ।

१२ श । आप स्वयं जिस किसी भ्राता वा भृत्यको पदच्युत करेंगे मैं उनको आश्रय न दूंगा और मेरे सामन्तलोग भी उनको आश्रय न दे सकेंगे ।

१३ श । राजसभाके सिवाय अन्यत्र जब आप अकेले रहेंगे तब चमर, और किरनिया व्यवहार कर सकेंगे ।

१४ श । मुनवरबेग, अनवरबेग, चमनबेगको सिंहासनके सम्मुख आसन लेनेकी आज्ञा दी गई । अमरघोडा और दशहरेके समय मानसूचक पोशाक आपको दी जायगी और आपके दूसरे दो तीन आत्मीय सन्मानके योग्य होनेपर राजसभामें आसन पासकेंगे।

१५ श। आपके वकील अपने पदोचित सन्मानके साथ राजसभामें स्थिति कर सकेंगे।

संवत् १८२६ (सन् १७७०) ई० } आदेशक्रमसे—
११ शी । भाद्र सोमवार } साअतिरामबालिया ।

पाँचवीं संख्या ५.

मेवाडके सर्वश्रेष्ठ सोलह सामन्तोंमेंसे अन्यतर रावत् लालसिंहको भैंसोरका पट्टा—दानपत्र ।

महाराज जगत्सिंह—रावत लालसिंह किशोरी सिंहोतके * प्रति आदेश करते हैं;—

इस समय आपका ग्रासस्वरूप आपको सम्पूर्ण भैंसोर परगना×प्रदान किया गया;—

भैंसोर नगरकी वार्षिक आय ...३०००) १५००) +

अन्य ५२ खण्डग्राम (सबके नाम अनावश्यक हैं) और राजधानीसे संलग्न उपत्यका मध्यमें स्थित—

एक अन्य ग्रामकी पूरी वार्षिक आय ...६२०००) ३१०००)

दो सौ अडतालिस अश्वारोही और दो सौ अडतालिस पैदल सेना सहित (श्रेष्ठ घोडा और राजपूत सेना सहित) आपको राजाकी आज्ञाका पालन करना होगा ।

उक्त सेनामेंसे अडतालिस अश्वारोही और अडतालिस पैदल आपके दुर्गकी रक्षामें सदा नियुक्त रहेंगे । इस कारण आप दो सौ सवार और दो सौ पैदल सहित जिस किसी स्थानमें आवश्यकता हो आज्ञा पाते ही कार्य्य साधनको उपस्थित हों । संवत् १७९८ के पौषमासमें आपको प्रथम पट्टा दिया गया था किन्तु उस समय आपकी आय अनुमानसे करी गई थी, यह जानकर महिमवरने इस समय आपको वार्षिक साठ सहस्र मुद्रा आयकी भूवृत्ति दानकी आज्ञा दी ।

---

* चन्दावत सम्प्रदायके मध्यमें किशोरीसिंह एक प्रबल शक्तिशाली सामन्त थे । उनके ही नामके अनुसार स्वतन्त्र गोत्र उत्पन्न हुआ है । लालसिंह उसी गोत्रमें उत्पन्न हुए हैं ।

× यह देश चम्मल नदीके उत्तर पारमें स्थित है ।

+ दो स्थानमें अङ्क लिखनेका कारण यह है कि, एक यथार्थ मूल्य निर्णायक है और दूसरा अनुमानसे निर्णीत हुआ है ।

छठी संख्या ६.

मेवाडके महाराणा संग्रामसिंहद्वारा अपने भानजे जयपुर सिंहासनके उत्तराधिकारी मधुसिंहको भूवृत्ति दानपत्र ।

श्रीरामो जयति ।

श्रीगणेशः प्रसीदतु ।　　श्री एकलिंगः प्रसीदतु ।
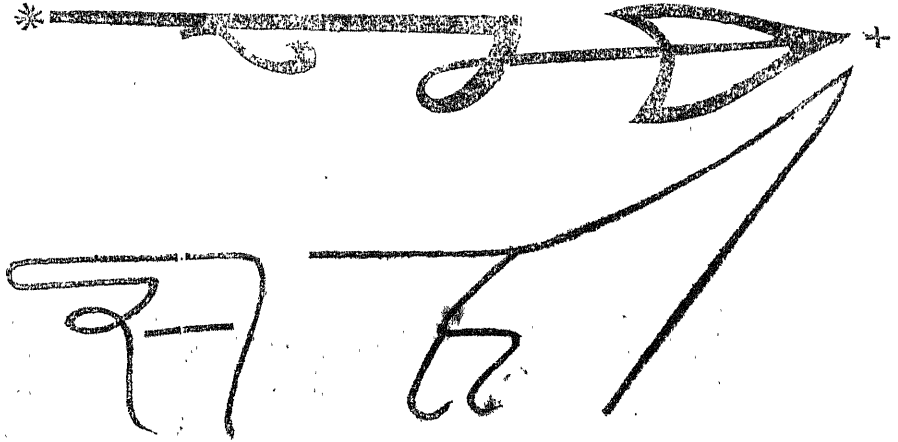
महाराजाधिराज महाराणा संग्रामसिंह आदेश करते हैं;–मेरे भानजे कुमार मधुसिंह-जीको ग्रास प्रदान किया गया;–

रामपुरा प्रदेशका पट्टा ।

अतएव एक सहस्र अश्वारोही और दो सहस्र पदाति सहित तुम वार्षिक छः मासतक राज्य कार्य्यमें नियुक्त रहोगे और किसी समय विदेश जानेकी आवश्यकता होने पर, तीन सहस्र अश्वारोही और तीन सहस्र पैदल सहित तुमको युद्ध क्षेत्रमें उपस्थित होना होगा ।

उक्त प्रदेश (रामपुरे) में जबतक महिमवर राणाका प्रभुत्व विस्तृत रहेगा, तबतक तुमको इस अधिकारके जानेका कुछ भय नहीं है ।

आदेशक्रमसे

संवत् १७८५ (सन् १७२९ ईसवी) ७ मी चैत्र सुदि, मंगलवार ।　　पांचोली रायचन्द और महता मल्लदास ।

---

* मेवाडके वंशानुक्रमिक सामरिक मन्त्री सलम्बूरके सामन्तके स्वाक्षर चिह्नस्वरूप भाला ।

\+ राणाके सांकेतिक निज अक्षर ।

(राणाके निज हाथसे लिखित)

मदीय भागिनेय मधुसिंहसमीपेषु—

प्रियवत्स ! मैंने तुमको रामपुराप्रदेश प्रदान किया, जितने दिनतक मेरे अधिकारमें रहेगा उतने दिनतक तुमको इस अधिकारसे वञ्चित नहीं होना पडेगा। इति।

सातवीं संख्या ७.

रक्षण और आश्रय दानके कारण संवत् १८०६ (सन् १७५० ईसवी) पहले श्रावणमें दोंगला ग्रामके निवासियोंने महाराज खुशाल सिंहको रेकोयाली स्वरूप जो भूमिदान और अर्थादि दान किया, उसकी अनुलिपि।

१ म। डेढ सौ बीघे कृषिक्षेत्र, उसमें छत्तीस बीघे कुएँके सहित खेत।

२ य। एक सौ दो बीघे पतित और कुएँसे रहित भूमि यथा;—

तेली गोबिन्दद्वारा कर्षित छः बीघे।

तेली हीरा और ताराके अधीनकी तीन बीघे।

हंस और तेली लालद्वारा कर्षित सत्तरह बीघे।

गोविन्द और हीरा आदिके अधिकारकी चार बीघे।

पतित और वनकी भूमि। उक्त समस्त विविध भूमि।

अर्थादिदान।

मुद्रा ... ... १२ बारहखण्ड।

अन्न ... ... २४ मन।

राखी, दिवाली, होली उत्सवके समय ग्रामके प्रत्येक घरसे एक २ ताम्रमुद्रा दी जायगी।

सेरानो * ... ... धान्य काटनेके समय।

ब्राह्मणोंके निकटसे सुकराई।

वाणिज्यके द्रव्य रक्षणके कारण प्रत्येक माल लदे छकडे [गाडी] पर एक २ पैसा और प्रत्येक बोझा ढोनेवाले बैलपर आधा पैसा।

प्रत्येक परिवारके विवाहके समय दो पात्र अन्न।

आठवीं संख्या ८.

अमलीके निवासियोंने संवत् १८१४ (सन् १७५८) में आमाइतके रावत् फतेसिंहको जो भूमि दी थी, उसका दानपत्र।

राणावत् सामन्तसिंह और सौभाग्यसिंहने वृत्तिस्वरूप आमिली पाइ थी। किंतु वह वहांके रहनेवालोंके प्रति अत्यन्त अत्याचार और उत्पीडन करते थे, पटैल जोध और

* अन्न काटनेके समय प्रति मनपर एक २ सेर अन्न लेनेको सेरानो कहते हैं।

भाग्यको मार डाला और ब्राह्मणोंके ऊपर ऐसा अत्याचार और उत्पीडन किया कि, कुशल और लालने जलती हुई आगमें जीवन विसर्जन किया । तब प्रजाने राणसे सहाय और आश्रय मांगा । पट्टावत्गण बदल गये हैं और इस समय ग्रामवासीगणोंने रेकोयाली स्वरूप फतेसिंहको एक सौ पचास बीघे भूमि दान करी । ×

नवीं संख्या ९.

दोंगलानगरवासी जनोंद्वारा भिन्दीरके महाराज जोरावरसिंहको भूमिदान ।

श्रीमहाराज जोरावरसिंहके निकट हम पटैलगण, व्यापारीवृन्द, व्यवसायी मंडली, ब्राह्मणवर्ग और दोंगलाके सम्पूर्ण निवासी एकत्रित होकर दानपत्र लिखे देते हैं ।

इससे पहिले दोंगलामें डाकुओंका भय अत्यन्त प्रबल था; महाराजने उनके हाथसे हमारी रक्षा करी, इस कारण हम निम्न लिखित भूम्यादि दान करते हैं । यथा;—

तेली हीराका अधिकृत एक कुआँ ।

तेली दीपाका अधिकृत एक कुआँ ।

तेली दीवाका एक कुआँ ।

कुल तीन कुएँ चौवालीस बीघे पीवुल (कूपसहितभूमि) और एक सौ इक्यानवे बीघे मालभूमि और एक ज्वारका खेत ।

रेकोयाली भूमि सम्बन्धी मर्य्यादा ।

१ म । प्रत्येक परिवारके विवाहसमय एक पात्र अन्न ।

२ य । वार्षिक नगद छः सौ रुपये ।

३ य । चोर और डाकू, भूमियां और ग्रामवासियोंके ऊपर किसी प्रकारका अत्याचार, उपद्रव, उत्पीडन वा शान्ति भङ्ग करेंगे तो महाराज अवश्य उनको निवारण कर देंगे ।

महाराज स्वयं जिस समय अपनी इच्छानुसार दोंगलाके निवासियोंको फिर अपने वासस्थानमें आकर रहनेकी अनुमति देंगे, केवल उस समय ही वह आकर वास कर सकेंगे, अन्यथा नहीं । *

× भूमियां स्वत्त्वका कैसा आदर है, वह इसके द्वारा प्रमाणित होता है । फतेसिंह यद्यपि राणाके निकटसे सर्व देशके पट्टा ग्रहणमें अधिकारी थे, किन्तु उनका भूमियां स्वत्त्व नहीं था । उन्होंने वह स्वत्त्व ही संग्रह कर लिया । यद्यपि यथा समयपर राणाने असली देश अपने अधिकारमें कर लिया, किन्तु भूमियां स्वत्त्व सामन्तके अधिकारमें रहा ।

* इसके द्वारा प्रमाणित होता है कि, जिस समय मेवाडके चारों ओर अत्याचार आरंभ हुआ था, उस समय सामन्तलोग निवासियोंके ऊपर कैसा कठोर व्यवहार करते थे और रेकोयाली स्वरूप किस प्रकार भूम्यादि हस्तगत कर लेते थे । व्याकुल हुए प्रजा लोग अपने रहनेके घरतक देकर प्राण-रक्षामें विवश होते थे ।

हिसाब रक्षक कुचिया द्वारा संवत् १८५८ के ज्येष्ठमासकी पूर्णिमा तिथिमें लिखा गया और सम्पूर्ण व्यवसायी, ब्राह्मण और नगर निवासियोंने अपने हस्ताक्षर किये।

दशवीं संख्या १०.

मेवाडेश्वर द्वारा निम्न श्रेणीके सामान्तको

भूवृत्ति दान।

महाराणा श्रीभीमसिंह बाबा रामसिंहके प्रति आदेश करते हैं;–

जिहाजपुर देशके मध्यवर्ती दो सौ पच्चीस बीघे क्षेत्र, उसके साथ श्यामबाग [बाग] और गौ आदि पशुओंके कारण नोहारा [गोलावाटी] तुमको प्रदान करी गई।

तुम्हारे पूर्वपुरुषोंने मेरे लिये जिहाजपुर शत्रुओंके हाथसे उद्धार किया और विश्वस्तताके साथ मेरे आधीनमें कार्य्य किया था इसी कारणसे यह भूवृत्ति दी गई । यह निश्चय जानो कि, तुम्हारे ऊपर कभी कोई अत्याचार उत्पीडन नहीं किया जायगा और पट्टावत् लोग तुम्हारे साथ किसी प्रकारका गोलयोग न कर सकेंगे।

अनुग्रह;–

एक सेरानो अर्थात् शस्यकाटनेके समय प्रत्येक किसानके निकटसे मनपीछे एक सेर अन्न पाओगे।

दो हनमो। *

होली और दशहरा पर्वोंके समयमें नारियल मिलेगा।

बोझा ढोनेवाले प्रति सौ बैलोंपर बारह आने शुल्क ले सकोगे। ×

जिहाजपुरके भीतर जितने घोडे बिकेंगे, उनमें प्रति घोडा दो आने मिलेंगे।

जितने ऊंट बिकेंगे, उनमें एक ऊंट पीछे एक आना पाओगे।

तेलीकी घानीपर एक २ पला पाओगे।

प्रत्येक लोह खानसे सिकीमुद्रा।

प्रत्येक सुरा प्रस्तुतके कारखानेसे सिकीमुद्रा।

प्रत्येक छाग बलिदानमें एक पैसा।

जन्म और विवाहके समय पाँचपात्र अन्न। ×

---

* निवासी किसानोंमें पर्य्याय क्रमसे हलके साथ दो मनुष्योंसे किसानका निर्द्धारित खेत कर्षणका नाम हनमो है।

× जिस समय मेवाडके चारों ओर विप्लव, अशांति, अत्याचार प्रबल हुआ, उस समय सामन्तोंने अनेक प्रकारका कष्टदायक कर संग्रह करना आरंभ किया था। उसीसे वाणिज्य कार्य्य प्रायः बिलकुल बन्द हो गया, स्थानान्तरमें आनेजानेमें भी बहुतसे विघ्न पड गये। उस समय प्रत्येक विषयमें कर लिया जाता था। दुर्गसंस्कार, पार जानेके कारण नौकाकी रक्षा, साधारण मार्गमें चौकीदारोंका नियत करना और रात्रिमें रक्षक नियोगादि अनेक विषयोंके कर देनेको प्रजा विवश होती थी।

+ राजपूत सामन्तोंके आधीनके सरदार वा प्रजाके लोगोंमेंसे किसीका विवाह होनेपर सामन्त लोग भोज्यद्रव्य अथवा उसके बदलेमें नगद रुपये पाते हैं। किन्तु फ्रांसमें इस विषयमें सामन्तगण नियमित धन ग्रहणके सिवाय और भी बहुत दुःखदायक कार्य्य करते थे। वह अथवा उनके प्रतिनिधि कन्याके सन्मुख जाकर बैठते थे।

प्रत्येक नाजरा फलकी एक २ अंजुली ।
भूमि सम्बन्धी अन्यान्य अधिकार और अनुग्रह ।

कूपादियुक्त भूमि (पिवुल)	... ...	५१ बीघे ।
कूपहीन भूमि (माल)	... ...	११० बीघे ।
पहाडी भूमि (मुग्र)	... ...	४० बीघे ।
तृणाछादित भूमि (बीडा)	... ...	२५ बीघे ।
कुल ...	... ...	२२६ बीघे ।

आषाढ संवत् १८५३ (सन् १७९७ ईसवी)

ग्यारहवीं संख्या ११.

झालरापाटन नगरमें संस्थापित स्तम्भकी खोदित लिपिका अनुवाद ।

संवत् १८५३ (सन् १७९७ ईसवी) १७१८ शकाब्द, दक्षिणायन शीतऋतुका सुखमय कार्तिकमास पूर्णिमा, सोमवार ।

महाराजाधिराज उमेदसिंह देव * फौजदार × राजा आलिमसिंह और कुमार माधोसिंह, झालरापाटनके संपूर्ण निवासी, पटैलगण, ÷ पटवारी समूह + महाजनगण और सम्पूर्ण ३६ जातियोंके प्रति जो आदेश करते हैं; वह लिखा गया ।

इस समय सब निर्भय और निरापद होकर गृह निर्माण और निवास करते हैं । इस बल पूर्वक कर आदि ग्रहण और भूवृत्ति अपने आधीन करनेकी प्रथा उठाई गई। बलमनसी (क) नामसे चलित कर आन्नाईकर (ख) और रेकवरार कर (ग) और उसके साथ भेंटबेगार [घ] बिलकुल बन्द किया गया ।

उक्त उद्देशसे ही यह स्तम्भ स्थापित किया गया और इसीके अनुसार सदा मंगल रहै । इस देशमें अब कोई किसीके ऊपर किसी प्रकारका पीडन नहीं करेगा । हिन्दूके लिये गोवध और मुसलमानके लिये शूकरवधकी शपथ दी गई । कप्तान दिलालखां, चौधरी स्वरूपचन्द, पटेल लल्लू, माहेश्वरी पटवारी बालकृष्ण, भास्कर कालूराम और पत्थर खोदक बालकृष्णके सामने यह खोदित लिपि संस्थापित हुई ।

---

* कोटेके राजा ।
× कोटेके सेनापति और राजप्रतिनिधि ।
÷ राजके कर्म्मचारी ।
\+ भूराजस्वका हिसाब रक्षक ।
(क) सच्चरित्रताका कर ।
(ख) खेती सम्बन्धी कर ।
(ग) रजिष्टरी कर ।
(घ) श्रमजीवियोंको बलपूर्वक विना परिश्रमके दिये कार्य्यमें लगानेका नाम भेंट बेगार है ।

पारमो प्रथा * बिलकुल उठा दी गई । जो मनुष्य नगरमें वास और वाणिज्य करेंगे, द्वारावतीमें साधारण रीतिसे जो शुल्क लिया जाता है, उन सबका आधा कर छोड़ा गया और मापुथा × सबका पद बिलकुल उठा दिया गया ।

बारहवीं संख्या १२.

अकोला नामक स्थानके लक्ष्मीनारायण विग्रहके मंदिरमें खोदिति लिपि ।

पूर्वकालमें केवल एक बाजारमें ताम्रकूट वेचा जाता था, राणा राजसिंहने ठेकेकी वह प्रथा बिलकुल उठा देनेकी आज्ञा दी । संवत् १६४५ ।

राणा जगत्सिंह अपने आधीनके राजकर्म्मचारियोंको अकोलाके शिल्पियोंके निकटसे बलात्कारसे खाट और रजाई लेनेमें निषेधकी आज्ञा दे गये ।

तेरहवीं संख्या १३.

मेवाडके अन्तर्गत बडा अकोला नगरके निवासी और छीट वस्त्र रंगने-वालों (रंगरेजों) के प्रति राजानुग्रह प्रकाशक स्मरण स्तंभकी खोदित लिपि ।

बडा अकोला नगरके निवासियोंके प्रति
महाराणा भीमसिंह आदेश करते हैं;—

मण्डलगढके दुर्गकी सेनाके खर्च निर्वाहके निमित्त इस ग्रामके निवासियोंके निकट से जो कर लिया जाता था, वह उठाया गया और किन उपायोंके द्वारा यह ग्राम फिर समृद्धिशाली हो सकता है? निवासियोंके निकट उपस्थित करनेपर सब एक स्वरसे कहेंगे कि, " बहुत प्राचीन कालसे जिस रीति और दरसे निर्दिष्ट कर लेते आते हैं उसके सिवाय कर कभी न लिया जाय, एक ऐसा स्तंभ बनवाकर उसपर प्रतिज्ञा खुदा दी जाय कि, खेतोंमें जितना अन्न उत्पन्न होगा; उसके आधे भागसे अधिक कर कभी नहीं लिया जायगा ; और जो लोग उक्त नियमसे कर देंगे, वह किसी प्रकारसे पीडित वा दण्डित नहीं किये जायँगे । "

राणा इसमें सम्मत हुए और उनकी ही आज्ञानुसार यह स्तंभ स्थापित किया गया । जो पुरुष इस आज्ञाका तिरस्कार करेगा, उसके ऊपर एकलिंगजीका शाप गिरेगा । मुसलमानोंके लिये शूकरवध और हिन्दूओंके लिये गोहत्याकी शपथ दी गई ।

पारमो और पूली + कर चिर प्रचलित नियमके अनुसार देना होगा ।

अकोला ग्रामके भीतर किसी पुरुषके किसी प्रकारका अपराध करनेपर ग्रामके

---

* राजप्रतिनिधि कोटेके कृषि विभागके सर्वाध्यक्ष थे; वह जैसा मूल्य निर्द्धारित कर देते, वणिक उसी मूल्यपर द्रव्य बेचनेको विवश होते थे । इसीका नाम पारमो है ।

× परिमापक (नापने सम्बन्धका)

+ हेमन्तऋतुके धान्य काटनेके समय एक मुट्ठी शस्यको पूली कहते हैं ।

निवासीलोग ही उसका विचार करेंगे। सब निवासी एकत्रित होकर विचारासनपर बैठेंगे और अपराधानुसार दण्ड विधान करेंगे।

प्रति अमावस्या तिथिको खेतमें पानी देना,+ तेलीको तेलका पेरना बन्द करना होगा और रंगरेजलोग उक्त तिथिको रंगका वर्त्तन अग्निपर नहीं रख सकेंगे ।×

जो पुरुष उक्त आदेशका अनादर करेगा,उसको चित्तौर ध्वंसका पाप स्पर्श करेगा ।

मेहता सरदारसिंह, सुबलदास, चौधरी भूपतराम, चौधरी दौलतराम अकोलाकी एकत्रित पञ्चायतके सामने यह स्तंभ स्थापित हुआ ।

यह चौधरी भूपजी द्वारा लिखित और पाषाणखोदक भमिद्धार खोदित हुआ ।

संवत् १८५६ [सन् १८०० इसवी]

चौदहवीं सं १४.

साधारण भोज सभासे आमंत्रितोंके द्वारा विशेष भोजनकी सामग्री लेजानेके विरुद्ध आदेश। *

मारमिके निवासियोंके प्रति श्रीमहाराणा संग्रामसिंहका आदेश;-

सब प्रकारके उत्सवोंके भोजन और श्राद्धसे कोई व्यक्ति भी भोजनसे अधिक पदार्थ नहीं लेजा सकेगा । जो इस आज्ञाका अनादर करेगा,इसको अधीश्वरके निकट एक सौ रुपये दण्डके देने होंगे ।

+ इसका आशय यह है कि उस दिन कोई कृषिकार्य्य नहीं कर सकेगा। कारण कि अमावास्या तिथि पवित्र गिनी जाती है ।

× ज्ञात होता है कि जैनराजमंत्रियोंकी उत्तेजनासे यह व्यवस्था करी गई ।

* हमारे देशके पल्लीग्रामोंमें श्राद्ध और विवाह आदि क्रियामें आमंत्रित गण ग्राम ग्रामन्तरसे केवल गृहिणी और युवा कन्या, वधू और भगिनीके सिवाय अन्य सव बालक बालिका और आत्मीय लोगोंको ले आकर, भोजन करके भी जिस प्रकार एक २ पुरुष अधिक २ मिष्टान्न और अन्यान्य भोजनके पदार्थ ले जाते हैं, रजवाडेमें भी उसी प्रकारकी प्रथा प्रचलित थी। इस प्रथाके द्वारा निमंत्रणकर्त्ताका यथेष्ट धन व्यय होता है । बहुतसे इसी कारणसे ऋणी हो जाते हैं। कर्नेल टाड टिप्पणीमें लिखते हैं कि, वहां ऐसा सामाजिक विधान प्रचलित था कि स्त्रियें कई दिनतक भोजन करनेके योग्य भोजन सामग्री ले जाती थीं। अम्बेर (जयपुर) पति विख्यात जयसिंह इस कुरीतिको दूर करनेके लिये निमंत्रित जनोंकी संख्या निर्द्धारित कर गये । उन्होंने केवल ५१ इक्कावन पुरुषोंको निमंत्रण करनेकी आज्ञा दी । उन्होंने निर्द्धारित किया कि, केवल चार श्रेणीके प्रतिष्ठित धनवान लोग निमंत्रित लोगोंको श्रेष्ठ मिष्टान्न दे सकेंगे; अन्य श्रेणीके लोग केवल गुड और लाल बूरा देंगे। किसान और नीची श्रेणीके लोग ज्वारका आटा, तेल और शाक देंगे। एक समय फागुनके उत्सवके समय किसी रंगरेजने अपने आत्मीय मित्रोंको श्रेष्ठ खांडके बने हुए लड्डू बांटकर उस आज्ञाका अनादर किया था, महाराजने उससे पांच सौ रुपये दण्डमें लिये। पुत्रवधूके गर्भवती होनेपर उसके श्वशुर,वधूके पिताके निकट भेजते थे। महाराजने इसका भी निर्द्धारण कर दिया। पूर्वकालमें इस अवसरपर बहुतसा धन दिया जाता था । महाराज जयसिंह इसी प्रकार सामाजिक बहुतसे विधान कर गये और उन्होंने विशेष करके शिशुहत्या निवारणके लिये विशेष व्यवस्था कर दी थी ।

संबत् १७६९ (सन् १७१३) शुक्ला ७ मी चैत्र ।

पन्द्रहवीं संख्या १५.

बाकरोल वणिक् और महाजनोंके प्रति महाराणा संग्रामसिंहका आदेश ।

राजधनके लेनेवाले कर्म्मचारियोंके शीतवस्त्र दानके विरुद्धमें तुम लोगोंने जो अभियोग उपस्थित किया है, वह शीतवस्त्र देनेकी रीति बहुत कालसे प्रचालित है । इस समय राजधन और शुल्क संग्रह करनेवाले और उनके आधीनके कर्म्मचारी गण जब बाकरोलमें पहुंचेंगे, उस समय वणिक उनको शय्या और शीतवस्त्र देंगे तथा दूसरे निवासीगण दूसरे कर्म्मचारियोंको उक्त वस्तुयें देंगे ।

यदि नदीका बांध किसी कारणसे किसी प्रकार टूटा तो उसकी मरम्मतमें जो मनुष्य सहायता न करेगा, उसको उस दण्डमें एक सौ ब्राह्मण जिमाने होंगे ।

संबत् १७१५ (सन् १६५९ ईसवी) आषाढ ।

सोलहवीं संख्या १६.

दिल्लीके सामन्त द्वारा अपने आधीनस्थ सरदार
गोकुलदास शक्तावतके प्रति आदेश ।

महाराज मान्धाता, शक्तावत् गोपालदासके प्रति
आज्ञा करते हैं । विदित होवे;-

वर्त्तमानमें तुम्हारे ऊपर प्रतिदिन चार रुपयेके हिसाबसे अर्थदण्ड चलता है । इस समय उसमेंके अस्सी रुपये तुमपर चाहिये; गंगारामके तुम्हारी ओरसे निवेदन करनेसे उसमें ४०) रुपये क्षमा कर दिये जायँगे । तुम एक पत्रमें ऐसी प्रातिज्ञा लिख दो कि, जिससे तुम निर्द्धारित संख्यक सेना सहित समरक्षेत्रमें उपस्थित हो सको, यदि न हो सको तो उचित दण्ड मिल सके ।

एक श्रेष्ठ सवार और एक बन्दूकधारीको सम्पूर्ण युद्ध सम्बन्धी आवश्यकीय सामग्रीसहित स्वदेश और विदेशमें कार्य्य पडनेपर देना होगा ।

जिस समय सेनादल समरभूमिमें पहुँचेगा, उस समय गोपालदासको वहां स्वयं उपस्थित होना होगा यदि उस समय वह स्वदेशमें न हों तो उनके अनुचरोंको अवश्य ही उपस्थित होना होगा और राणा उनके भोजनकी सामग्री देंगे ।

श्रावण सुदी १० मी संवत् १७८२ ।

सतरहवीं संख्या १७.

शक्तावत् शम्भूसिंहके प्रति महाराज उदयकर्ण का आदेश ।

विदिहो;-

मैंने गूढ ग्राम अपने अधिकारमें कर लिया था; किन्तु इस समय अनुग्रह पूर्वक तुमको लौटाता हूं । तुम अब उस ग्रामकी उन्नति साधन करते रहो और स्वदेश विदेशमें एक अश्वारोही तथा एक पैदल सैनिक देकर मेरी आज्ञा पालन करते रहो ।

विदेश जानेके समय तुम निम्नलिखित प्रकारसे भत्ता पाओगे ।

मैदा डेढसेर ।

दाल एक पाव ।

घृत दो पैसेका ।

घोडेका खाद्य प्रतिदिन चार सेर ।

यदि दुर्ग रक्षाकार्य्यमें तुमको नियुक्त किया जाय तो तुमको अपने आधनिके सम्पूर्ण अनुचरोंसहित उपस्थित होना होगा और तुमको अपनी स्त्री कन्या आदि परिवार वर्गको भी दुर्गमें लाना होगा। उस दुर्गरक्षा कार्य्यमें नियुक्त होनेपर तुमको आगेके दो वर्षोंके कार्य्यसे छुट्टी दे दी जायगी ।

आषाढ १४ श, संवत् १८३४ ।

अठारहवीं संख्या १८.

जयत्सिंह चन्दावत्को मुण्डकाटि अर्थात् क्षतिपूरण स्वरूप भूमि दान ।

पटेलके पुत्रने अपने गृहमें अपनी स्त्रीको लानेके लिये जैत्सिंहके राजपूत सैनिकोंकी रक्षामें गमन किया। वह सब मार्गमें ताडित हुए, रक्षक सैनिक मारे गये और हत्याकारियोंको दंड विधान तथा क्षतिपूर्णका कोई उपाय न होनेसे, मुण्डकाटि स्वरूप यह छब्बीस बीघे भूमि दी गई ।

उन्नीसवीं संख्या १९.

रावत् मेघसिंह द्वारा उनके भ्राता यमुनादासको पट्टा प्रदान किया गया;—

रायपुरग्राम मूल्य	४०१) रुपये ।
मोगरा पुष्पका एक उद्यान	११) रुपये ।
	कुल ४१२) रुपये ।

विश्वासके साथ स्वदेश और विदेशमें कार्य्य करते रहो तथा प्रचलित रीतिके अनुसार कर और शुल्क दान करने तथा अधीनस्थ सरदारोंके समान आज्ञा पालनमें तत्पर रहो।

बीसवीं संख्या २०.

तक्षकजाति और जैनियोंके द्वारा राजपूत इतिहासके समय
निर्द्धारक खोदित लिपिका अनुवाद ।

पञ्चमशताब्दीके जित जातीय नरपतिके स्मरणार्थ एक ताम्रलिपि ।

यह सन् १८२० ईसवीमें कोटा राज्यके दक्षिणमें चम्बल नदके तटस्थ
कंसनाम स्थानके एक मन्दिरमें पाई गई ।

जटायें आपकी रक्षक हों ! जो जटायें जीवनसमुद्र पारको नौकास्वरूप हैं, जो कुछेक श्वेतवर्ण और कुछ लालवर्ण युक्त हैं, उन जटाओंका विभव देखा जाता है ? जिन जटाओंमें क्रुद्ध भीषण शब्दकारी सर्प विराजमान हैं, वे जटायें कैसी प्रकाशमान हैं ? जिन

जटाओंके मूलसे प्रबल तरंगें निकल रही हैं उन जटाओंके साथ क्या किसीकी तुलना करी जासकती है ? उन जटाओं द्वारा आप रक्षित हों (१) ?

जिनके वीरत्व बाहुबलसे शालपुरी देश रक्षित होता था; मैं अब उन राजा जित्का यश वर्णन करूंगा । प्रबलाग्निशिखा जिस प्रकार अपने शत्रुको भस्मीभूत करके फेंक देती है; राजाजित्का प्रताप भी उसी प्रकार प्रबल था । महा बलशाली जित् शालेन्द्र (२) परम रूपवान् पुरुष थे, और वह केवल अपने बाहुबलसे वीर पुरुषोंके अग्रणी हुए थे; चन्द्र जिस प्रकार पृथ्वीको प्रकाशमान करते हैं, वह भी उसी प्रकार अपने शासित देश शालपुरीको देदीप्यमान करते थे। सम्पूर्ण संसार जित्राजकी जयघोषणा कर रहा है; वह मनुष्यलोकमें चन्द्रस्वरूप--दुर्द्धर्ष साहसी महा २ बलिष्ठ लोगोंमें पङ्कके बीचमें कमलके समान बैठकर स्वजातीय गौरवगरिमा प्रकाश करते थे । भुवनमण्डलके राजालोगोंके शिर उनके चरणके अंगूठेकी पूजा किया करते थे। उनकी अमित बलशाली दोनों भुजाओंके मनोहर मणिमाणिक्यके आभूषणोंका प्रकाश उनकी मूर्त्तिको उज्ज्वल कर देता था । असंख्य सेनाके अधिनायक थे; और उनका धन रत्न असीम था, वह उदारचित्त और समुद्रके समान गंभीर थे । जो राजवंश महाबली वंशोंमें विख्यात है, जिस वंशके राजालोग विश्वासघातियोंके परम शत्रु थे, जिनके चरणोंपर पृथिवीने अपना सम्पूर्ण धनधान्य अर्पण किया था और

(१) कर्नल टाड मंगलाचरण पढकर लिखते हैं कि, यद्यपि यह मंगलाचरण कविका वर्णनामूलक है, किन्तु इसके द्वारा जित जातिकी उत्पत्तिका निर्णय किया जा सकता है । वह कहते हैं;–रणदेव शम्भूसे रजवाडेकी अनेक जातियाँ अपनी उत्पत्ति कहती हैं, वह कहते हैं;–शिवके बाहुसे वीरगण; मेरुदण्डसे चारणगण, जिह्वासे भविष्यद्वक्ता भाटगण और उनके शिरकी जटासे जाट वा जित्लोग उत्पन्न हुए । शिवकी जटामें सर्प और महाकाल रहते हैं । कर्नल टाड कहते हैं, इसके द्वारा विदित होता है कि, जित्गण तक्षकजातीय अर्थात् सर्पके वंशधर हैं. वह उन जटासे रक्षित हों । जटासे जिस प्रबल तरंगकी बात उल्लेख करी गई है वह तरंग पवित्र जलवाली गंगा है । शिवकी मूर्ति अर्द्धनारी युक्त है, इसी कारणसे उनके केश श्वेत और लाल आभाके लिखे हैं । कर्नल टाड कहते हैं,शिखोय जित्गण रणदेवकी यह मूर्ति कल्पना जाक्षरतीसके किनारेसे भारतमें लाये थे वह लोग वहां इसको बालनाथ और यम नामसे पूजा करते थे ।

(२) उक्त जित्राजकी राजधानीका नाम शालपुरा था, और वह शालेन्द्रके नामसे कहे जाते थे, यह उनका असली नाम नहीं है, शालनगरके अधीश्वर होनेसे ही शालेन्द्र शब्द प्रयोग किया है । यह शालपुरी किस स्थानमें थी ? कर्नल उसके विषयमें लिखते हैं कि, संवत् १२०७ में अनहलवाडेके नरपति कुमारपाल जो खोदित स्तंभ स्थापन कर गये थे, कर्नल टाड उसके विचारसे जान सके कि, यह शालपुरी पंजाबके "शिवलोक" पर्वतमूलमें स्थापित थी । कर्नल टाड इस उक्तिके प्रमाणमें महाराज कुमारपालकी उक्त खोदित लिपिका अनुवाद यथास्थल (२५ संख्या) में प्रकाश करके कहते हैं कि, डि० गुइगनेश (D. Guegnes.) लिख गये हैं कि, पञ्चम शताब्दीमें जाक्षरतीस तीरसे जुतिगणने सिन्धुनदी पार होकर,पंजाबमें अधिकार करनेपर उन्होंने वहीं स्थानस्थापन किया । पंजावके अन्तर्गत यह शालपुरीकी जित्जाति उस सम्प्रदायकी ही नेता थी, उनके मतमें पंजाबके नानकके शिष्य [सिक्खगण] जित्जातिके हैं।

जिस वंशके नरपतियोंने शत्रुओंके सब देश अपने अधिकारमें कर लिये थे, यह वही सूर्य्यवंशधर हैं । (३) होम यज्ञादिके द्वारा यह नरेश्वर पवित्र हुए थे, इनका राज्य परम रमणीय तथा तक्षका दुर्ग भी अजेय है । इनके धनुषकी टंकारसे सब ही महा भयभीत होते थे।यह क्रुद्ध होनेपर महा समराग्नि प्रज्वलित कर देते थे,किन्तु मोती जिस प्रकार गलेकी शोभा बढाती है; अनुगत लोगोंके प्रति इनका आचरण भी वैसा ही था, लाल तरंगोंसे समरक्षेत्र रँगनेपर भी यह संग्रामसे नहीं हटते थे । प्रचंड मार्त्तण्डकी प्रखर किरणोंसे पद्मिनी जिस प्रकार मस्तक नवाती हैं, उसी प्रकार इनके शत्रुदल इनके चरणोंपर नवते थे; और भीरु कायर लोग युद्ध छोडकर भागते थे ।

इन राजा शालेन्द्रसे देगलाकी उत्पत्ति हुई, आज इतने समयके पीछे भी उनका यश सर्वत्र फैला हुआ है ।

उनसे शम्बुकने जन्म लिया । शम्बुकके औरससे देगालीने जन्म लिया । उन्होंने यदुवंशकी दो कन्याओंके साथ विवाह किया था । (४) उनमें एकके गर्भसे प्रफुल्लित कमलके समान वीर नरेन्द्र नामक पुत्रने जन्म लिया था । आमके कुञ्ज अर्थात् जिन आमके वृक्षोंकी खिली हुई मञ्जरीमें सहस्रों मधुमक्षिकाऐं विराजमान हैं, जिन वृक्षोंके नीचे थके हुए यात्री आनकर विश्राम करते हैं उन आमके वृक्षोंकी कुञ्जमें यह मन्दिर स्थापित हुआ । जबतक समुद्रकी तरङ्गें बढेंगी, और जबतक चन्द्र, सूर्य्य और पर्वत-माला विराजमान् रहेगी, तबतक मानों इस मन्दिर और मन्दिर प्रतिष्ठाका यश फैला रहेगा । ५९७ संवत् तावेली नदीके तटपर मालवमेंके शेष सीमान्तमें वीरचन्द्रके पुत्र शालिचन्द्रके द्वारा (५) मन्दिर प्रतिष्ठित हुआ ।

जो पुरुष इन वचनोंको स्मृतिपटपर अङ्कित कर रक्खेंगे, उनके सब पाप दूर हो जायँगे ।

द्वार शिवके पुत्र खोदक शिवनारायण द्वारा खोदित और कविराज बुत्तेनाने यह कविता निर्माणकी है ।

---

(३) भारतके वंश लिखनेवाले भारतकी ३६ राजपूत जातियोंमें इस सर्पजातिका भी उल्लेख कर गये हैं । कुमारपाल चरित्र पुस्तकमें जिस सर्पजातिका उल्लेख है, सम्भवतः यह भी वह सर्प जाति हो सकती है ।

(४) कर्नेल टाड कहते हैं कि, यह जितगण जब यदुवंशके साथ वैवाहिक सँबन्ध प्रचलित करनेमें समर्थ हुए थे. तब अवश्य ही वह भारतके छत्तीस राजवंशोंमेंसे एक राजवंश गिने गये । किंतु यथा समय वह फिर जातिच्युत हुए । क्योंकि कोई राजपूत भी जितलोगोंको कन्यादान नहीं करता, और न उनकी कन्याका पाणिग्रहण करता है ।

(५) शालिचन्द्र पहिले कहे हुए जित शालेन्द्रसे पाँच पुरुष पीछेके हैं । उक्त शासनपत्रमें लिखे समयके अनुसार ईसवी सन्की उत्पत्तिके ४०९ वर्ष पहिले जाक्षरतीसके किनारेसे जती लोगोंने पञ्जाब अधिकार करके वहां नगर स्थापन किया था, ऐसा जाना जाता है ।

इक्कीसवीं संख्या २१.

बूँदी राज्यके तीन कोश पूर्वमें रामचन्द्रपुरा नामक स्थानमें एक कूप खोदनेके समय जित्‌जातिके सम्बन्धकी निम्नलिखित खोदित लिपि पाई गई। कर्नल टाडने उसको लेकर, लन्दनकी एशियाटिक सोसायटीकी चित्रशालामें भेज दिया।

वृत्तिवंशमें राजा थोतने जन्म लिया; उनकी यश किरण सब पृथ्वीमण्डल पर व्याप्त हुई।

राजा चन्द्रसेन पवित्रचित्त; अमित बलशाली और प्रजापुञ्जके परम प्रियपात्र थे। (१) जिन्होंने अपने शत्रुओंको बिलकुल दुर्बल कर दिया, और जिन्होंने युद्धमें तलवार चलाते समय ऐन्द्रजालिकके समान विचित्र बाहुबल प्रकाश किया; उसका विषय किस प्रकार कहा जासकता है ? प्रजाके प्रति वह बडा उदार व्यवहार करते और उस कारणसे वह शुभमय फल पाते थे। उन विख्यात चन्द्रसेनके औरससे कार्त्तिकने जन्म लिया। उन कार्त्तिकका बाहुबल सर्वत्र विख्यात था और मनुष्य समाजमें उनकी बडी प्रशंसा थी। वह अपनी जिन रानीको प्राणोंके समान चाहते थे, उन रानीका विषय किस प्रकार वर्णन किया जाय ? जिस प्रकार अग्निसे शिखाको अलग नहीं किया जासकत उसी प्रकार वह रानी अपने पतिके साथ मिलित थीं—वह सूर्य्यकी किरणके समान थीं और उनका नाम गुणनिवास था, उनका आचरण उनके नामके समान था; उन रानीके गर्भसे कार्तिकके माणिक्यके समान भुवनरञ्जन दो पुत्र उत्पन्न हुए, बडेका नाम मुकुन्द छोटेका नाम दारुक था। उनके सौभाग्यको देखकर शत्रुओंका हृदय विदीर्ण होता था। और उनके अनुगामी लोग अनन्त सुख भोगते थे। देवताओंको जैसे कल्पवृक्ष प्यारा है, वैसे ही यह दोनों भ्राता अपनी प्रजाके प्रिय थे। वह प्रजाकी प्रार्थना पूर्ण करके जिस वंशमें जन्म लिया था उस वंशकी गौरवगरिमा फैलाते थे। कर्नल टाडने यहाँके कई श्लोक निष्प्रयोजन समझ कर उनका अनुवाद नहीं किया। मूल लिपिके अभावसे हम भी अनुवाद नहीं कर सके।

दारुकके कुहल नामक एक पुत्र उत्पन्न हुए। कुहलके औरससे धुनकका जन्म हुआ। उन्होंने बडे २ कार्य्य सिद्ध किये। वह मनुष्यके हृदयका भाव अनुभव कर सकते थे, उनका चित्त समुद्रके समान गंभीर था। उन्होंने पहाडी मीना जातिको परास्त, विताडित और सर्वथा विध्वस्त कर दिया था, उनको फिर कहीं स्थान न मिला, वह अपने छोटे भ्राता दोकके सहित देवता और ब्राह्मणोंकी पूजा करते थे। उन्होंने अपने धनसे अपनी प्राणप्यारीकी प्रसन्नताके लिये सूर्यके उद्देशसे यह मंदिर स्थापन किया।

(टीका १) चन्द्रसेन प्रमार जातिके राजगणोंमेंसे एक महाप्रसिद्ध राजा थे। उन्होंने बहुतसे नगर स्थापन किये। उनमें मालवाके उत्तर भागमें चन्द्रभागा और आबू शिखरके निकट चन्द्रावती है।

जबतक सुमेरु सुवर्ण बालुकाके ऊपर खडा रहेगा, तबतक यह मंदिर विराजमान रहेगा। जबतक जगद्धारिणी हथनियोंके देहमें प्राण रहेगा (१) जबतक आकाश रहेगा, जबतक लक्ष्मी धनदान करेंगी तबतक उनका यश और मन्दिर अक्षयभावसे विराजमान रहेगा।

कुहलने यह मन्दिर और इसके पूर्व पार्श्वमें महेश्वरके मन्दिरकी प्रतिष्ठा करी थी। महाबली महाराज यशोवर्म्माके पुत्र अचलके द्वारा इसकी प्रसिद्धि फैली है।

बाईसवीं संख्या २२.

चित्तौरनगरके मध्यस्थ मानसरोवरके तटमें मरिराजगणके द्वारा संस्थापित स्तंभपर खोदित लिपि।

जलपति वरुणदेवके द्वारा आप रक्षित हों! जिस नीरनिधिके किनारेपर स्थित मधुपूर्ण लाल फलोंसे शोभित वृक्षावलीमें मधुमक्षिकादल विहार करता है, जिस समुद्रमें सैकडों शाखारूप तरङ्गिणियाँ मिल कर उसकी शोभा बढारही हैं,इस जगत्में उस जलधिका उपमा स्थल और क्या है? जो जलनिधि पारिजात [२] की गन्धसे आमोदित है जिस समुद्रने करस्वरूप सुरा,रत्न और अमृत प्रदान किया था,वह समुद्र आपकी रक्षा करै।

यह एक बडी उदारताका स्मारक चिह्न है। यह सरोवर दर्शकमात्रके नेत्रोंको मोहित करता है। इसके ऊपर अनेक जातिके जलचर पक्षी बडे आनन्दसे जलक्रीडा करते हैं तथा इसके तटकी भूमि प्रत्येक प्रकारके वृक्षोंसे शोभित हैं। आकाशभेदी शिखरसे गिरकर स्वाभाविक मनोहर सुन्दरता प्रगट करती हुई उस सरोवरमें तरंग आकर, प्रबल वेगसे गिरती है। सर्पराज मातोलीने [३] समुद्र मन्थनके पीछे थकित चित्तसे इस सरोवरमें विश्रामके निमित्त आश्रय लिया था।

इस पृथ्वी मण्डलपर महेश्वर [४] नामक एक महाबली राजा थे। उनके राज्यमें उनके किसी शत्रुका भी नाम नहीं सुना जाता था,उनकी गौरवगरिमा आठों ओर [५]

(टीका १) शास्त्रमें दिग्गज आठ दिशाओंके रक्षक हैं।

(२) रजवाडेमें पारिजात नाम एक प्रकारके फूल, "हरसिहार" नामसे विख्यात हैं। कर्नैल टाड लिखते हैं कि, यह फूल थोडी देर रहकर सूख जाते हैं।

(३) बासुकीके स्थानमें कर्नैल टाड यहांपर मातोली नाम लिख गये हैं। ज्ञात होता है रजवाडेमें वही नाम प्रचलित है।

(४) तक्षक वंशके प्रमारजातिवाले राजगणकी वंशकारिकामें इन महाराज महेश्वरका नाम प्रशंसा और विख्यातीके साथ लिपिबद्ध हुआ दीखता है। इस तक्षक प्रमार जातिमें मरी नामक एक शाखा सबसे प्रधान है। उक्त महाराजने नर्मदा नदीके दक्षिण तीरमें सुविख्यात "महेश्वर" नामक नगर प्रतिष्ठित किया था। अवन्ती और धार (मरिराजगणकी दो प्रधान राजधानी) नगरसे जो छोटी नदी दक्षिणकी ओर गई है, यह नगर उसके ही पूर्वभागमें स्थापित है। "यहां अहल्याबाईके घाट बहुत सुन्दर बने हैं, पूजा स्थान बहुत सुन्दर हैं, मैंने स्वयं देखा है।" (अनुवादक)

(५) हिन्दू शास्त्रोंमें ऐसा लिखा है कि,पृथ्वीकी आठ दिशाओंमें आठ हाथी स्थित होकर पृथ्वीको धारण कर रहे हैं।

फैली थी। वह जगत्के निर्मल चन्द्रमाके समान थे । स्वयं ब्रह्माजीने अपने मुखसे तस्थ [१] जातिकी प्रशंसा विख्यात करी थी।

राजा भीम [२] कामदेवके समान परम सुन्दर और पराक्रमी थे, वह सैकडों कमलोंमें जलविहारके समय राजहंसोंको अपने हाथसे भोजन दिया करते थे। उनकी मधुर मूर्तिसे यशकी किरण निकलती थीं। वह राजा भीम संग्रामसमुद्रमें एक चतुर पैरनेवाले थे। यहांतक कि, जिस स्थानमें पवित्र जलवाली गंगाने अपनी तरंगें विस्तार करी हैं (३) उन्होंने वह दूरवर्ती स्थान भी विजय कर लिया था। उनकी राजधानी अवन्ती थी (४) वह अपने शत्रुओंकी जिन स्त्री कन्या आदिकोंको हरण करके लाते, जिन स्त्रियोंके मुखमण्डल शरदऋतुके चन्द्रमाके समान निर्मल थे, जिन कामिनियोंके अधरोंमें उनके पतियोंके प्रेमानुराग सूचक काटनेके चिह्न दिखाई देते थे, राजा भीम उन सुन्दरियोंके हृदयपर भी अधिकार करते थे। वह अपने बाहुबलसे अपने शत्रुओंका भय दूर करते थे। वह यहां तक उदार थे कि शत्रुओंको सर्वथा विध्वस्त न करके उनको भ्रान्तिकूपमें गिरे हुए कहकर क्षमा कर देते थे। उनकी मूर्ति अग्निके समान प्रकाशमान थी। वह समुद्रगामी नाविक लोगोंको भी शिक्षा देनेमें समर्थ थे। (५)

उन राजा भीमके औरससे महाराज भोजने (६) जन्म लिया। जिन महाराज भोजने अपने बाहुबलसे रणक्षेत्रमें तलवारद्वारा विशाल हाथीका मस्तक

---

(१) तस्थ वा तक्षक जाति विख्यात प्राचीन नागवंशीय है। सब ही अग्निकुल हैं। चित्तौर राज्य यदि तक्षक जातिके द्वारा प्रतिष्ठित हुआ था तो हरवर्टसाहब, चित्तौरको ही प्राचीन "तक्षशीलनगर" अर्थात् तक्षकोंके द्वारा निर्मित नगर लिख गये हैं, यह अवश्य ही सम्भव हो सकता है।

(२) मालवके महाराज अवन्ती वा उज्जयिनीके अधीश्वर राजा भीमकी बहुत सी प्रशंसाका वर्णन जैनग्रन्थोंमें पाया जाता है। उनके ही एक पुत्रने मारवाडके राज्यके अनेक स्थानोंमें नगर स्थापन किये और लूनी नदीसे आरावली शिखरतक स्थलके अनेक स्थानोंमें उनके द्वारा अनेक नगर स्थापित हुये। किन्तु उन नगर निवासियोंमेंसे पीछे सब ही जैनधर्ममें दीक्षित हुए। उनके उत्तराधिकारी लोग इस समय सबसे अधिक धनशाली और वाणिज्य व्यवसायी महाजन नामसे विख्यात हैं। वह राजपूत रक्तधारी होनेसे सर्वत्र गर्व करते हैं और उनको किसी विश्वासी राजकीय पदपर नियुक्त करनेपर, वह लोग लेख चलानेके समान स्वच्छन्दतासे तलवार चलानेमें भी समर्थ हैं।

(३) गंगासागर। सुनते हैं कि, महाराज भीमने अपने बाहुबलसे इस गंगासागरके निकटके देशतकको विजय किया था। जैन ग्रन्थोंसे प्रगट है कि यही महाराज भीमकी राज्यसीमा थी। कर्नल टाड अनुमान कर गये हैं कि, गंगासागरमें कदाचित् महाराज भीमका कोई स्मरणचिन्ह अब भी हो सकता है।

(४) अवन्ती अर्थात् उज्जयिनी नगरी ।

(५) इस स्मारक लिपिके द्वारा भलीभांति ज्ञात होता है कि, पूर्वकालमें समुद्रद्वारा गमनागमन देशी राजोंमें प्रचलित था। महाराज भीम नौका जहाज विद्यामें भलीभांति शिक्षित थे, इस स्मारक लिपिसे यह भी प्रगट होता है।

(६) राजपूत जातिके इतिहास और काव्यसाहित्यमें राजाभोजके समान किसीका भी नाम प्रशंसानीय और सुप्रसिद्ध रूपसे नहीं देखा जाता। प्रमार जातिके रापूतोंमें भोजनामधारी तीन राजा थे। कर्नल टाड बहुतसे ताम्रानुशासन और दूसरे प्राचीन खोदित लिपिकी सहायतासे उदयादित्यके पिता—

दो टुकडे कर दिया था, उस हाथी (१) के शिरके गजमोती उनकी छातीपर परम रमणीय रूपसे शोभा पाते थे, राहु केतु जैसे चन्द्र और सूर्य्यका ग्रास कर लेते हैं, वह भी वैसे ही अपने शत्रुओंको समूल नष्ट करते थे। जो इस विषयको चिरस्मरणीय करनेके लिये विशाल जयस्तंभका निर्माण करा गये हैं, उन महाराज भोजकी महिमा किस प्रकार वर्णन करी जा सकती है ?

उनके ही औरससे माननामक पुत्रने जन्म लिया वह बडे गुणवान् थे और सौभाग्य लक्ष्मीने उनके निकट आश्रय लिया था। एक समय एक वृद्धके साथ उनका साक्षात् हुआ;उस वृद्धका जीर्ण, शीर्ण और दुर्बल देह देखकर उन्होंने मनमें निश्चय किया कि, यह मनुष्यदेह केवल छायास्वरूप--क्षयशील है, देह पिञ्जरमें जो आत्मा वास करता है, केवल वही सुवासित पुष्प कदम्ब केशरके समान है। राजपद, धन, ऐश्वर्य्य सब ही तृणांकुरके समान असार हैं और प्रचण्ड सूर्यकी किरणोंसे प्रकाशित दिनमें जैसे दीपक प्रज्वालित करनेपर वह दीपक प्रभाहीन और पवनके चलते ही बुझ जाता है, मनुष्यका जीवन भी वैसे ही कभी है कभी नहीं। ऐसा मनमें विचारनेके पीछे उन्होंने अपने पूजनीय पूर्वपुरुष और अपने सत्कार्य्योंका कीर्तिस्वरूप यह सरोवर प्रतिष्ठित किया। यह सरोवर जैसा महान् लम्बा चौडा है, वैसा ही असीम गंभीर है। जब मैंने समुद्र के समान इस विशाल सरोवरके प्रति दृष्टि डाली, उस समय मेरे मनमें यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि, इस सरोवरसे ही महाप्रलय संसिद्ध होगी।

महाराज मानके आधीनमें सामन्त मण्डली और वीर पुरुष अत्यन्त समरकुशल, महासाहसी, पवित्र चरित्र और विशेष विश्वासी थे। (२) राजाधर्म्ममें मेरुके समान थे। जो सामन्त उनके अनुग्रहकी दृष्टिमें गिरे थे;वह सौभाग्य लक्ष्मीका सम्पूर्ण अनुग्रह भोगनेमें समर्थ हुए। जब उनके चरणकमलोंपर दूसरे राजोंका मस्तक अर्पित हुआ, तब उनकी चरणरेणुने उस मस्तककी अनुपम शोभा बढाई।

–शेष राजा भोजका समय सन् १०३५ ईसवी निर्द्धारण कर गये हैं। अन्य भोजनामधारी दो राजाओंके समयके सम्बन्धमें कर्नैल टाड नादोलके देवालयमें प्राप्त एकबहुत प्राचीन जैन हस्तलिखित ग्रन्थके पत्राङ्कसे६३१ और ७२१ संवत् अर्थात् ५७५ खिष्टाब्द और ६६५ खिष्टाब्द निर्द्धारण कर गये हैं। सम्राट अकबरके मन्त्री अबुलफजल प्रथम राजाभोजका समय५४५ संवत् लिख गये हैं,किन्तु कर्नैल टाड बहुत प्राचीन और विश्वस्त हस्तलिखित ग्रन्थसे जिस प्रकार शेष भोजराजका समय निर्द्धारण कर गयेहैं,उसी प्रकार उनके पुत्र द्वारा दी हुई इस लिपिसे भी वैसे ही सं० ७७० प्रमाणित होता है,इस कारण यह समय ही हम ठीक समझते हैं। अब तीन भोजनामधारी राजाओंका समय निम्न लिखित प्रकारसे स्थिर होता है,प्रथम भोजराजका समय संवत् ६३१ (सन् ५५७ ईसवी), दूसरेका समय संवत् ७२१ (सन् ६६५ ईसवी) और तृतीयका समय संवत् १०९१ (सन् १०३५ ईसवी)।

(१) इस श्रेणीके हाथी भद्रनामसे पुकारे जाते हैं। इनके ही मस्तकमें महामूल्यवान् मोती होते हैं।

(२) उदयपुरके महाराणाके प्रासादमें जो हस्तलिखित प्राचीन इतिहास विद्यमान है, उससे प्रगट है कि, राणागणके आदिपुरुष बाप्पाराओने मानमोरिके निकटसे चित्तौर राज्य अधिकार कर लिया। इस कारण गिह्लोटोंके द्वारा चित्तौर अधिकारका समय इस अनुलिपिके द्वारा निश्चित रूपसे सिद्ध होजाताहै।

जिस सरोवरके चारों ओर अनगिन्त वृक्ष विराजमान हैं, अनेक जातिके पक्षी जिन वृक्षोंकी शाखामें रहकर निरन्तर मधुर शब्द करते हैं, परम सौभाग्यवान श्रीमान् राजा मानने बहुत धन व्यय और बहुत परिश्रमसे यह सरोवर खुदवाया था । प्रतिष्ठाके पवित्र नामके अनुसार ही इस सरोवरका नाम "मानसरोवर" रूपसे जगत्में विख्यात है। नागभट्टके पुत्र अलंकार शास्त्र विशारद पुष्यने यह श्लोक रचे हैं । सात सौ सत्तर वर्ष बीते कि, मालवके अधीश्वर द्वारा (१) यह सरोवर निर्म्मित हुआ । क्षेत्री खड्गके पौत्र शिवादित्यने यह श्लोकावली खोदी ।

तेईसवीं संख्या २३.

सौराष्ट्रके निकटवर्ती सोमनाथ पत्तनमें सन् १८२२ ईसवीमें मिली हुई प्राचीन वल्लभी राजाओंके शासन समयकी करनेवाली देवनागरी अक्षरोंमें खोदित लिपिका यथार्थ अनुवाद ।

जगत्के प्रकाशस्वरूप सर्वान्तर्यामी प्रभुकी चरण वन्दना करता हूं । जिनकी मूर्ति अवर्णनीय है, जिनके चरणोंमें सब प्राणी सदा नमस्कार करते हैं उनके चरणकमलोंमें प्रणाम करता हूं । (२)

मोहम्मदी वर्ष ६६२, विक्रमाब्द १३२०, श्रीमत् वल्लभी संवत् ९४५ (३) और शिवसिंह संवत् १५१ रविवार त्रयोदशी १३ आषाढ ।

असंख्य नरपतियोंके द्वारा वन्दित अलपुर पत्तनके अधीश्वर चालुक्य जातीय भातरिक श्री अर्ज्जुनदेव (४) उनके प्रधानमंत्री श्रीमालदेव, राज्यके सम्पूर्ण कर्मचारियोंके साथ और अमीर रुकनुद्दीनके शासकदेशके कर्म्मचारी त्रिनाकुलके हरमुज और नाखोदा नूरुद्दीन फीरोजके पुत्र हरमुजेर ख्वाजा इब्राहीम और पालक देव, रामाणिक श्रीसोमेश्वर देव और भीमसिंह जातिक चार सामन्त और समस्त चौरा तथा अन्यान्य सब जातिके सब श्रेणीके लोगोंके एकत्रित होनेपर;--

---

(१) राजा मान मालवेश्वर रूपसे वर्णित हुए हैं । इसके द्वारा जाना जाता है कि, चित्तौर राजधानी धार और अवन्ती राजधानीकी अपेक्षा श्रेष्ठ थी । वर्त्तमान् चित्तौरमें "मानमरि" नामसे एक बहुत प्राचीन महल दिखाई देता है ।

(२) मंगलाचरण बहुत बडा होनेके कारण कर्नेल टाडने उसका अनुवाद प्रकाश नहीं किया । सोमनाथ नगरमें जिस मूर्तिकी पूजा होती थी वह "बालनाथ" नामसे भी विख्यात । जो राजवंश इस देशका शासन करते वह भी बालराज नामसे पुकारे जाते थे, और राजधानी भी उसी कारणसे "बालिकपुरी" उपाधिसे भूषित हुई थी । साधारणतया यह "बालाभि" अथवा वल्लभीनामसे कही जाती थी । कर्नेल टाडने कई दिनतक दीर्घ मार्गमें चलनेके पीछे टूटी फूटी राजधानीके दर्शन किये और वहां यह अनुलिपि प्राप्त करी । राणाके सूर्योपासक पूर्वपुरुषोंने इस देशका नाम "सौराष्ट्र" रक्खा था । कर्नेल टाड लिखते हैं कि, अन्तमें पार्थवगणके द्वारा वह लोग विताडित होनेपर, चौरा और चालुक्य वा सोलंकी राजवंशने यह स्थान अधिकार करके "बालिकाराय" नामसे विख्यात किया ।

(३) वल्लभी संवत्की उत्पत्तिका समय इसके द्वारा प्रगट होता है ।

(४) बाणराज चौराने संवत् ८०२ में जो अनहलपुर वा अनहलवारा स्थापन किया, बालाभी व वल्लभी-

देवपत्तन निवासी चौराजातीय नानसिराज सब वणिकोंको (१) एकत्रित करके, देवालयोंके संस्कार और मूर्तियोंकी सेवाके निमित्त यह विधि निर्द्धारित करते हैं कि, जो पुष्प, तेल और जल नियमित रूपसे रत्नेश्वर, (२) चौलेश्वर, (३) पालिन्दा देवीके (४) मन्दिरमें और अन्यान्य मूर्तियोंके मन्दिरोंमें देने होंगे तथा सोमनाथ-के मन्दिरके चारों ओर ऊँचा परकोटा और उत्तरांशमें तोरण बनवाना होगा । चौरा-जातयि मदौलाके पुत्र कीलनदेव और जवानके पुत्र लुनासि, बालजी तथा करुणा नामक दो वणिक उस कार्यके साधनार्थ व्यापारकी सम्पूर्ण साप्ताहिक आमदनी देनेकी प्रतिज्ञा करते हैं । जबतक सूर्य चन्द्र उदित रहेंगे तबतक यह प्रतिज्ञा स्खलित न होगी । जिससे यह आज्ञा पालित हो और पर्वोत्सवके समय जिससे नियमित पूजाका उपहार दिया जाय, और इसके सिवाय धनादि और उपहार द्रव्य जिससे प्रथमोक्त उद्देशसाधनके लिये धनागारमें रक्खा जाय, उसके प्रति दृष्टि रखनेके लिये फीरोजको आज्ञा दी गई। एकत्र उपस्थित चौरा सामन्तवर्ग और नाखोदा नूरउद्दीनके प्रति यह आदेश दिया गया कि, वह सब श्रेणियोंके ऊपर इस आज्ञाको प्रबल करनेका यत्न करें । जो लोग इस आज्ञाका पालन करेंगे उनको स्वर्ग मिलेगा और जो लोग इस आज्ञाका अनादर करेंगे, उनको निश्चय ही नरकवास मिलेगा ।

चौवीसवीं संख्या २४.

आइतपुरके ध्वंसावशेषमें मिली हुई खोदितलिपि ।

संवत् १०३४ वैशाख मासके सोलहवें दिन नानकस्वामीने यह आवासमंदिर प्रति-ष्ठित किया ।

आनन्दपुरसे विप्रकुलसंभूत महीदेव श्रीगोहादित्य आये थे। उनसे ही गोलजाति इस जगत्में सर्वत्र विख्यात और प्रबल शक्तिशालिनी हुई ।

उनके पुत्र [२] भोज [३] महीन्द्र (४) नागादित्य (५) शिलादित्य (६) अपराजित (७) महीन्द्र, पृथिवीमण्डलपर इनके समान महाबली कोई भी न था। (८) । कालभोज सूर्य्यके समान दीप्तिमान थे। (९) खुमान, यह बडे वीर थे; उनके पुत्र (१०) भ्रातृपद, त्रिभुवनके तिलक थे, उनके औरस पुत्र [११] सिंह-जी, वरिव्रतावलम्बी राष्ट्र (राठौर) जातिकी महालक्ष्मी उनकी रानी थी, उनके गर्भसे जिन पुत्रने जन्म लिया उनका नाम [१२] श्रीउल्लुत । वह सागरपर्य्यन्त पृथ्वीका अधिकार करके उसके अधीश्वर हुए । उनके औरससे हरियादेवीने जन्म लिया । उन

–राज्यवंशके पीछे जो बालिक वा वाल्हीक जातिकी राजधानी रूपसे गिना जाता था, चालुक्य जातीय अर्जुन देव उसके ही अधीश्वर थे ।

(१) इसके द्वारा जाना जाता है कि,उस समय अनहलवाडेके वाणिज्यकी विशेष श्रीवृद्धि हुई थी,और वाणिज्यके कारण अनेक देशोंसे असंख्य व्यापारी आते थे ।

(२) सुप्रसिद्ध सोमनाथकी मूर्ति ।

(३) चालुक्य जातिके कुलदेवता ।

(४)भीलजातिकी कुलदेवी ।

हरियादेवीकी प्रशंसा हर्षपुरतक फैली थी। उनके गर्भसे महाबलवान एक वीरने जन्म लिया। उन वीरकी भुजामें जयलक्ष्मीने आश्रय लिया था। वह वीर रणक्षेत्रमें अपने शत्रुओंको बिलकुल निर्मूल कर देते थे। वह परम सौभाग्यशाली और महापंडित थे। उनके पुत्र (१३) नरवाहन, चौहानजाति श्रीजाइजाकी कन्याके गर्भसे उनके एक पुत्रने जन्म लिया था। उनका नाम (१४) शालिवाहन, मैंने ऊपर जिन राजा लोगोंके नाम लिखे हैं, वह सब ही गुणवान् थे। शालिवाहनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उनका नाम (१५) शक्तिकुमार। इस जगत्में इनकी तुलना कहां है ? इन्होंने त्रिविधशक्ति * को जीतकर अपने अधीन कर लिया था। वह भ्रातृपदके, समान सौभाग्यवान् थे। धनद्वन्दके कोषस्वरूप श्रीआइतपुरमें वह राजालोगोंसे वेष्टित होकर बास करते थे। वह अपनी प्रजाके लिये कल्पवृक्षस्वरूप थे। इनके पैदल सैनिक असंख्य थे, उनका कोषागार अपरिमित धनसे पूर्ण था। उनके सौभाग्यचन्द्रकी किरणें स्वर्गतक पहुँची थीं। अनेक स्थानोंके असंख्य व्यौपारियोंके आनेसे उनकी राजधानीने परम रमणीय मूर्त्ति धारण करी थी। उस राजधानीमें केवल एक ही अनिष्ट विराजमान था—अर्थात् अनुपम लावण्यमयी युवती कामिनियोंके प्रथम कटाक्ष उन राजाकी प्रजाओंका हृदय विद्ध कर लेते थे।

पचीसवीं संख्या २५.

महाराज कुमारपालने सोलंकी पंजाबके अन्तर्गत शालपुरी जीत कर चित्तौरमें स्थित ब्रह्माके मन्दिरमें जो स्मारक लिपि खोदित करी थी, उसका अनुवाद।

जो देवदेव महादेव समुद्रके जलमें शयन करके परम संतोष प्राप्त करते हैं, जिनके जटाजूटसे अविश्रान्त अमृत निकल रहा है, उन महादेवजी द्वारा आप सपरिवार रक्षित हों।

जो चालुकजाति अतुल ऐश्वर्य्य बाहुबलसम्पन्न थी, जिस जातिमें बहुतसे गुणवान् वीर उत्पन्न हुए थे, वह चालुकवंशीय मूलराज इस जगत्के अधीश्वर थे।

प्रकाशमान पद्मरागमणिके समान उनके यशकी प्रभा पृथ्वीमंडलपर फैली थी और वह मनुष्यसमाजमें सुख और शान्तिकी वर्षा करते थे। इस जगत्में उनकी तुलना कहां है ? यद्यपि उनके पूर्वपुरुषोंमें बहुत लोग महाबली थे; किन्तु उनके समान कोई भी महादाता अथवा पवित्रचित्त नहीं था।

बहुत वर्षके पीछे उस वंशमें विश्वविख्यात सिद्धराजने जन्म लिया। विजयप्राप्त धन रत्नोंसे उनका शरीर भूषित हुआ था, और उनकी यशोध्वनि पृथ्वीपर सर्वत्र प्रतिध्वनित हुई थी। उन्होंने अपने बाहुबल और सौभाग्यबलसे अक्षय, असीम धन रत्न उपार्जन किया था।

---

* १–प्रभुत्वशक्ति।
२–उच्चताशक्ति।
३–मंत्रशक्ति।

उनके औरससे कुमारपाल देवने जन्म लिया । उन्होंने अपनी दृढ प्रतिज्ञा और बाहुबलसे अपने सम्पूर्ण शत्रुओंको विध्वस्त किया था । उनकी आज्ञा संसारके सब राजा मानते थे । उन्होंने शाकम्बरीके अधीश्वरको अपने चरणोंमें गिरनेके लिये विवश किया था । उन्होंने शिवलोकतक अपनी सेना चला करके, शालपुरी नगरमें पहाडी अधिराजको प्राप्त किया था ।

छत्रकोटेश्वरके देवालयोंके मध्यस्थलमें सबसे ऊंची चोटीपर उन्होंने यह खोदित स्मारक लिपि स्थापित करी । कारण कि, जिससे यह मूर्खोंके हस्तगत न हो सके, इस कारण ही सबसे ऊंचे शिखरपर स्थापित हुई ।

निशानाथ जिस प्रकार पृथ्वीकी सुन्दरी कामिनियोंके निर्मल मुखमंडल देखकर अपने शरीरके कलंक चिह्नोंके स्मरणसे लज्जित होते हैं, उसी प्रकार इस शिखरकी चोटीपर इस लिपिके प्रतिष्ठित होनेसे छत्रकोट लज्जित होता है ।

संवत् १२०७ (तारीख और महीना लुप्त हो गया है) ।

[समाप्त]

दोहा-सीता लक्ष्मण भरतयुत, वंदौं श्री रघुराज ॥
जिनकी कृपाकटाक्षसे, सिद्ध हुए सब काज ॥ १ ॥
रिपुसूदन पदकमल गहि, वंदौं श्रीहनुमान ॥
भानुवंशको चरित यह, बरनो सुखद महान ॥ २ ॥
राजस्थान सुग्रंथको, प्रथमखंड अनुवाद ॥
हिन्दीभाषामें कियो, द्विज बलदेवप्रसाद ॥ ३ ॥
मेवाडेश्वरको चलै; युग युग वंश अपार ॥
रहै राज सुस्थिर सदा, जबतक जगसंसार ॥ ४ ॥
सेठ शिरोमणि सकलगुण-मंडित पंडित पाल ॥
वेंकटेश्वरयन्त्रपति, खेमराज गुणमाल ॥ ५ ॥
कियो प्रकाशित ग्रंथ यह, राजनीतिको सार ॥
पढै सुनै मन लाय जे, पावहिं मोद अपार ॥ ६ ॥
चन्द्र ऋतुग्रह भूमियुत, संवत् शुभ मधुमास ॥
पूर्ण कियो शुभ ग्रंथ यह, बुधजनको सुखरास ॥ ७ ॥

शुभमस्तु ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-
खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-बंबई.

तथा-
गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेंकटेश्वर" स्टीम्-प्रेस, कल्याण-बम्बई.

परिशिष्ट

अध्याय १.

राजपूत जातिकी वंशावली; पुराणराजपूतोंकी सीथिक (शक) जातियोंका सम्बन्ध निरूपण।

भारतकी मध्य और पश्चिम जातियोंका इतिहास संक्षेपसे लिखनेके प्रथम हम इस बातका निर्णय करना उचित समझते हैं कि उनकी उत्पत्ति कहांसे हुई है, वे किस वंशमें हैं, इस कार्यके निमित्त मैंने उदयपुरके महाराणाके पुस्तकालयसे उनके पवित्र ग्रन्थ पुराणोंको लेकर उन्हें पंडितोंके सामने रक्खा, इन सबका अधिष्ठाता पंडितवर यति ज्ञानचन्द्र था, इसके द्वारा इन ग्रन्थोंसे सूर्य्य और चन्द्रवंशके महान् कुलोंकी वंशावली तथा इतिहास और भूगोल सम्बन्धी विषय छांटे गये।

बहुधा पुराणोंमें[1] इतिहास और भूगोलसम्बन्धी वृत्तान्तका अंश थोडा बहुत मिलता है परन्तु भागवत, स्कन्द, अग्नि और भविष्य इनमें मुख्य है, हिन्दुओंकी सृष्टिकी उत्पत्तिक वर्णन जिनेसिसकी[2] उसी घटनासे आरम्भ होता है जो सब जातियोंके इतिहासमें पाई जाती हैं, जो प्रलय मनु [नूह] ने देखी थी, यह मनु हिमालय पर्वतके निकट रहते थे, कृतमाला नदीमें तपर्ण करते समय मछलीसे संवाद हुआ और प्रलय देखी, इन मनुके पुत्र ककुत्स्थने अयोध्याका राज्य प्राप्त किया था।

मेरी समझमें हिन्दूलोग पृथ्वीके उत्तरी ध्रुवको सुमेरु कहते हैं परन्तु यह लोग इस नामका एक पवित्र पर्वत भी मानते हैं मेरुका अर्थ पर्वत और सूपसर्गका नाम अच्छा है इससे सुमेरका अर्थ पवित्र पर्वत है।

अग्निपुराणमें दिये हुए भूगोलमें इस शब्दका प्रयोग वास्तविक भूगोलसम्बन्धी सीमाके समान किया गया है कितनी ही नदियाँ उस पर्वतसे निकली हैं और सुमेरुके संग सम्बन्ध दिखानेवाला भी स्थान उक्त पुराणके १०८ अध्यायमें दिया हुआ है, वे अब तक अपने पुराने नामोंसे ही पुकारी जाती हैं, स्पष्ट बातोंका वर्णन जो अलंकारके

---

१ पुराणोंमें पाँच विषय होते हैं सृष्टिकी उत्पत्ति, स्थिति, लय, देवता और पुरुषोंके वंशके कल्पित रीतिके अनुसार ऐतिहासिक घटना, वीरकथा अवतारी पुरुषोंका वर्णन, यह वर्णन यूनानियोंके देवताओंकी उत्पत्तिके वर्णनसे मिलता है, एच. टीकोलब्रुक साहबके संस्कृत और प्राकृत भाषा सम्बन्धी निबन्ध एशिया टिकारिसचैंज जिल्द ७ पृष्ठ २०२ में है।

२ जिनेसिसके संस्कृतमें जन्म और ईश (इश्वर) दो खण्ड हो सकते हैं।

साथ किया गया है उसका लक्षणावाला अर्थ ही ग्रहण करके हमको वह विषय गूढ नहीं करना चाहिये, हिन्दुओंके सात द्वीपोंका विभाग कर उनके मध्यमें दूध, दही, घृत, रस, मद्य, आदिके सात समुद्र लिखे गये हैं और पीछे अज्ञानी पुरुषोंने उनमें बहुतसा क्षेपक मिला दिया है तो भी उनमें बहुतसी बातोंको निरर्थक मानकर हम छोड नहीं सकते यूनानी लोग इस सुमेरुको वेकसका स्थान बताते हैं और वहांसे यह कथा चली है कि यह "जुपिटर" देवताकी जाँघसे प्रगट हुआ है, इस कारण भारतके इस देवताके पर्वतको भ्रमसे मेरोस [जंघा] समझ लिया है, इस स्थानके समीप सिकन्दरके साथियोंको सैंटरमेलिया नामक त्यौहार पडा था, जिसमें उन्होंने वहांके उत्पन्न हुए अंगूरोंका मद्य विशेषरूपसे पान किया था, और अपने माथोंपर आइवी नामक बेल बांधी, जो पूर्व पश्चिमके वाचेशके निमित्त अधिक पवित्र है जिसके उपासक समानभावसे मद्य पीते हैं। इन कथाओंसे सबकी उत्पत्तिका एक ही केन्द्र विदित होता है ।

हिन्दूलोग सुमेरुका ऐसे स्थानपर होना बताते हैं जिसकी बाहरकी सीमापर वामिया काबुल और गजनी होंगे इन नगरोंमें और इनके समीपकी गुफाओंमें बुद्धधर्मके चिह्न और उनकी टूटी मूर्त्तियें अब भी पाई जाती हैं पैरोंपै मिसेन इस्कन्दरिया वामियाके समीप है परन्तु यूनानके ग्रंथकारोंने सिकन्दरके समयमें निसा और मेरुको अधिक पूर्वकी ओर माना था और सावधान इतिहास लेखक ऐरियनके कथनानुसार यह काबुल नदी और सिन्धुनदीके बीचमें स्थित है कितने एक प्रमाणयोग्य ग्रंथोंमें इसे पेशावर और जलालाबादके बीचमें माना है और इसका नाम मेरकोह वा मारकोह लिखा

---

१ महादेवको लता अधिक प्रिय है इनके पुजारी भी मादक पदार्थोंमें रुचि करते हैं अमरवेल एक उत्तम लता हैं, यह महादेवकी पवित्र वाटिकामें छाई होती है ।

२ वामियांदेशमें जो द्वाक नामक एक बहुत पुराना किला अभीतक अच्छी दशामें वर्त्तमान है पर वामियांका किला सर्वथा टूट फूट गया है पर्वतोंकी चट्टानोंमें १२००० गुफा कटी हुई हैं, जिनकी खुदाई बहुत सुन्दर हुई है, इनको समाज कहते हैं जहां शीतकालके समय देशीलोग जाकर रहते थे यहांपर तीन मूर्तियां बडी अद्भुत हैं एक पुरुषकी मूर्ति ८० एल (पौनेचार फुटका एल होता है) ऊंची है, दूसरी स्त्रीकी ५० एल और तीसरी बालककी पचास एल ऊंची है, इन समाजोंमें एक कब्र है, जिसके सन्दूकमें एक शव रक्खा है, इसके विषयमें वृद्धसे वृद्ध भी कुछ नहीं जानते इसको लोग बडी श्रद्धासे देखते हैं, पुराने लोग कोई ऐसा मसाला जानते थे जो मृतकपर लगा देनेसे वह सडता नहीं था आईन अकबरी जिल्द २ पृ० १६९ ।

३ पुराणोंमें निषध एक पर्वत का नाम पाया जाता है, कदाचित् इस निसानगरके नामपर षष्ठी बिभक्तिमें हो, और यह उन लोगोंकी भाषा का शब्द हो ।

४ फारसीमें कोह पर्वतको कहते हैं ।

विलफर्ड साहबने एशियाटिक रिसर्चेज जिल्द छठीके पृ० ४९७ में सर वालटर रेलेके दुनियांकी तवारीख [हिस्ट्री आफ दी वर्ल्ड] नामक ग्रन्थसे (जैसा कि हिंदू कहते हैं) बहुत कुछ लिया हो ऐसा प्रतीत होता है उस महान् पुरुषने जो कुछ विचित्रताके साथ संग्रह किया और लिखा उसके-

है, इस नंगे पहाडकी ऊँचाई २००० फुट है जिसके पश्चिम तरफ गुफायें हैं हुमायूं बादशाहने इसका भयंकर रूप देखकर इसका नाम बेदौलत रक्खा परन्तु यह दस्ते बेदौलत वा हीनभाग मैदान नाम उस पृथ्वीके भागका रक्खा गया है जो इन नगरों के मध्यमें है, सुमेरुके विषयमें इतनी आलोचना करनेका प्रयोजन केवल इस

साथ अपने संग्रहको विलफर्ड साहब ने मिलाकर अपने लेखनशक्तिकी सहायतासे उसे बहुत रोचक बना दिया, परन्तु जब उन्होंने सम्पूर्ण पृथ्वीके स्वर्ग (ईसायोंके अदनका वर्णन किया तो मुझे इस बातसे आश्चर्य होता है कि उस समय उन्होंने प्रलयके प्रथम और पश्चात्के मनुष्य जातिके उत्पत्तिके स्थानोंको पृथक् २ नहीं बताया, सर वाल्टररैलेका एक वाक्य है जिससे उनको उनकी कल्पनामें सहायता प्राप्त हो सकती कि अदन एशियाके ऊपरीदेशोंमें जेहून और दूसरी बडी २ नदियोंके साधारण सोतोंके मध्यमें था, जहां बहुत से वटके वृक्ष हैं जो आदिनाथ वा महादेवजीके लिये पवित्र हैं।

पाप पुण्यके ज्ञान करानेवाले वृक्षके विषयमें अनेक मनुष्योंने अपनी कल्पनायें दौडाई हैं। विशेषकर गोरोप्यस वेक्कानस कहता है कि मैंने उस वृक्षकी एक जातिका पता लगा लिया है जिसका* प्राचीनग्रन्थकार अनुमानतक नहीं कर सके हैं। इसपर बडा आश्चर्य करता है।

आदम और हव्वा दोनों एक साथ वनमें गये और वहां उन्होंने अंजीर जातिके एक वृक्ष (वट) को पसन्द किया, जिसका फल कोई बडी प्रसिद्धि नहीं रखता, उससे दक्षिण मालाबार वा उत्तरके भारतवासी परिचित हैं जिसकी शाखा बहुत लम्बी होती है तथा जिसकी जटा भूमिकी ओर लटककर पृथ्वीमें प्रवेश कर स्तम्भके आकार बन जाती हैं और उनके मध्यमें ऊँची महराबदार कुंजें बनकर पत्तोंसे आच्छादित हो जाती हैं और जिसकी छायामें बैठकर चरवाहे पशु चराते हैं उसके बडे २ पत्तोंको उन्होंने इकट्ठा किया जो एमजानकी ढालके समान चौडे थे। पैरेडाइज लास्ट पुस्तक ९ सर वाल्टररैले मनुष्य जातिकी उत्पत्तिके विषयमें पुराणके सिद्धान्तको ही पुष्ट करते हैं कि प्रलयके पीछे सबसे पहले मनुष्यजातिकी उत्पत्ति भारतवर्षमें ही हुई थी, देखो पृ० ९९ वह प्रमाणमें यह कहते हैं। कि वह वही स्थान है कि जहांके देशी वृक्ष दाख और जैतून हैं, जिसप्रकार कि शकजातिके सेथियनलोगोंके यहां होते हैं और वे इस समयतक भी काबुल और बामियांके बीच जईके रंगके उत्पन्न होते हैं। दूसरी बात यह है कि अरराट् पर्वत अरमेनियामें नहीं हो सकता, कारण कि गार्डियन पर्वत जिसपर नूहकी नाव ठहरी थी ७५ रेखांशमें और शिनारकी वादी ७९० से आरम्भ कर ८० रेखांशमें है इस प्रकार स्थानान्तरमें जानेका रास्ता उलटा हो जायगा, जैसे कि उन्होंने पूर्वसे गमन किया तो उनको शिकारकी मिका एक जंगल मिला और वे वहां रहे जिनेससकी पुस्तक अ० २ आयत २ और उनका यह भी कहना है कि मूसाने जिसको अराण्ट कहा है वह किसी एक पहाडका नाम नहीं किन्तु काकेशशकी विशाल श्रेणीका एक साधारण नाम है, इस कारण हमको इस आरण्टको उडा देना वा उसे अलगकर आर्मीनियासे दूर ले जाना अथवा उसको गरम देशमें किसी दूसरे स्थानपर और शिनारके पूर्वमें खोजना चाहिये, इससे वह उसको १४० रेखांश और, ३५० से ३६० अक्षांशके मध्य इण्डो सीथियामें नियत करते हैं।

जहाँ बहुत ऊंची पर्वतमाला हैं पीछे सर वाल्टररैलेने यह कहा है कि वह स्थान जहाँ नूहने स्थिति की थी, बहुत गरमीवाले पूर्वदेशमें था, उस स्थानपर उसने अंगूरके वृक्ष लगाये, तथा खेती की, जिससे उसका जीवन निर्वाह हुआ, ऐरियस मानटेनस् एक बडा विद्वान् लिखता है कि इस कृषिकर्मसे नूहको बडी प्रसन्नता हुई, और कहा जाता है कि इस विषयमें वह सबसे अधिक हो-

बातको दिखाना है कि हिन्दूजाति अपने जन्मका आदिस्थान सिन्धुके इस ओर वाले भारतको नहीं किन्तु पश्चिम और काकेशश पर्वतोंके मध्यमें बताती है, जहांसे चलकर वैवस्वतमनु सिन्धु और गंगाजीके तटपर आये और, कोशलदेशमें अयोध्या की नीवँ डाली ।

बहुतसी जातियोंने अपने मूल स्थानके नियत करनेमें जहांसे कि उनका निकास है बडी अभिलाषा की है, और इस ऊंची मध्यभूमि वा एशियाकी मध्यदेशकी अपेक्षा ऐसे बहुत थोडे सुन्दर स्थान होंगे, जहांसे आमू आक्सस जेहून और दूसरी नदियाँ निकली हैं और जिसके मध्यमें सूर्य्य और चन्द्रवंशके पुरुष उस पर्वतके होनेका विश्वास करते हैं जो उनके आदिपुरुषके नामसे पवित्र गिना जाता है, और जहांसे चलकर पूर्व की ओर उनका आगमन हुआ है ।

-गया, और उस समय वह अपनी भाषामें [ईश आदमठ] पृथ्वीके कार्यमें तत्पर रहनेवाला पुरुष कहलाता था, यह पदवी, प्रकृति और निवासस्थान जैनसम्प्रदायके पहले तीर्थंकर आदिनाथके चरित्रके साथ बहुत कुछ मिलते हैं, जिन्होंने मनुष्योंको कृषिकार्य, और अन्न गाहनेके समय मनुष्यके मुहमें छींका लगाना सिखाया था ।

यदि सर वालटर इस बातको जानते होते कि हिन्दुओंकी धर्मपुस्तकमें उनके देशका नाम आर्य्यावर्त * लिखा हुआ है,और यह बृहत् इमास उसके उत्तरकी सीमा है तो अवश्य उसको अपना अरांद्र स्वीकार कर लेते ।

काकेशशको हिन्दूकुश वा इन्दूकुश (कोह) कहते हैं, जिसका अर्थ चन्द्रका पर्वत होता है ।

१ मेरुका अर्थ पर्वतका ह, यथा जैसलमेरशब्दमें (जो पश्चिम मरुदेशमें भाटी राजपूतोंकी राजधानी है) जैसलका पर्वत यह अर्थ होता है । मेरवाडा पहाडीदेश और उसके रहनेवाले मेर अर्थात पर्वतनिवासी जाने जाते हैं, इसी प्रकार रामायण महाकाव्यके बालकांड पृष्ठ२३६ में एक पर्वती अप्सराका नाम मेरी लिखा है जो मेरुकी पुत्री और हिमालयकी स्त्री थी, जिसके गंगादेवी और पार्वती अप्सरा यह—

---

१ संस्कृतमें ईशका अर्थ स्वामी है, आद आदिका बिगाडा है जिसका अर्थ प्रथमका है, माठ व मठ पृथ्वी वा मट्टी है, इस स्थलमें संस्कृत और इब्रानी भाषाका अर्थ समान है, इसका अर्थ यह निकालता है कि पृथ्वीका पहला स्वामी, दूरके राजपूतदेशोंमें जहाँ अबतक पुरानी भाषा और रीति नीति चली आती है मनुष्यके निमित्त जो बलिष्ठ शब्द है वह मट्टी है जिसका अर्थ भूमि है अपने मनुष्य और सीमाके मनुष्योंको मध्यकी लडाईका वृत्तान्त कहनेके समय कि जिसमें कोई मारा गया हो तो सरदार कहता है कि "मेरा भाटीमारा" अर्थ यह कि मेरी भूमि मारी गई यह ऐसा वचन है कि इसपर टिप्पणीकी आवश्यकता नहीं इसका आशय यह है कि वह रुधिरके बदलेमें रुधिर चाहता है ।

* आर्य्यावर्त वा पवित्रभूमि हिमालयसे दक्षिण ओरके भारतके समान मैदानोंको नहीं कह सकते कारण कि पुराणोंमें तो इन देशोंके लिये इसके सर्वथा विरुद्ध कुकर्म देश वा पापभूमि नाम लिखा है। (कुकर्मभूमि पुराणोंमें इसका नाम नहीं है यह टाड साहबका भ्रम है) (अनुवादक)

२-मेरुकी पुत्री मेरा नहीं मैना है इससे पार्वतीका जन्म हुआ है (अनुवादक)

राजपूत जातियाँ भारतके गरम मैदानोंमें साथियन जातिसे मिलते हुए अपने कितने एक स्वभाव और असत्य विश्वासोंको कठिनाईसे प्राप्त कर सकती थीं। और वह अबतक उनमें विद्यमान हैं यहां इतनी अधिक गरमी होती है कि वे पुरुष बडे उत्साह के साथ दक्षिणके मार्गसे आकर उत्तरके अर्धगोलेको खिलानेवाले भगवान भास्करका स्वागत प्रसन्नतापूर्वक कभी नहीं कर सकते यह धर्म विशेषकर शीतप्रधान देशोंका ही हो सकता है, जिस धर्मको वे अपनी आदिजन्मभूमिसे लाये थे जहाँसे जेहून [आक्सस वा आमूदरिया] और जेगजार्टिस (सेहन वा सिरेदरिया) नदियें निर्गत हुई हैं, और यह विशेषरूपसे सम्भव है, कि अश्वमेध वा घोडेका यज्ञ (सूर्यका चिह्न) नामक पर्वोत्सव अर्थात् बडासंक्रान्तिका त्यौहार जिसे सूर्यके पुत्र वैवस्वतमनुकी सन्तति मानती थी, उसको सीथियन देशसे एक ही समय उन लोगोंने भारतमें लाकर प्रचलित किया, और ओडिन वोडेन वा बुधके पुत्रोंने पश्चिमकी ओर स्केराडीने वियामें ले जाकर प्रचलित किया, जहाँ यह शीत समयकी संक्रान्तिका हिएल वा हिडल नामक पर्व विख्यात हुआ, वह उत्तरकी जातियोंका एक बडा महोत्सव था. और ईसाई धर्मके आरम्भके समयमें इसके प्रचलित होनेका समय समीप होनेसे ईसाइयोंके आरम्भके पादरी उस घटनाके स्मरण रखनेके लिये इसको प्रसन्नतापूर्वक मानते थे।

—दो कन्या जन्मीं महाभारतमें यहशैलकी पुत्री लिखी है शैल हिमालयका दूसरा नाम है,इसीकारण पर्वत मूलवाली नदियोंको संस्कृतमें शैलेती वा शैलोदका कहते हैं शैलाके गुण एशिया माइनरके एक देश फ्रिगियाके मनुष्योंकी साइबेली (जुपिटरकीमा) से मिलते हैं वह भी इसी नामके पर्वतसाइबालकी कन्या थी, शैलासिंहपर चढती है, साईबेलीके रथमें सिंह जुता होता है, इसी प्रकार यूनानियोंने पर्वत पामीरको पैरोपैमिसेन लिखा है, और उन्होंने यह नाम वामियांके पश्चिम ओरके पर्वत हिन्दूकोह (हिन्दूकुशका) रक्खा था परन्तु पर्वतपति पामीरको चन्द नामक कविने उस देशके महापूर्वमें होना लिखा है, जिसकी तराईमें दिल्लीपति पृथ्वीराजका सामन्त हमीर निवास करता था, यदि वह पैरोपैपिसन होता जैसा कि,कई ग्रन्थकार अनुमान करते हैं तो जहां इसका नाम पडा है उसके साथ अधिक संयोग मिलता कारण कि निसा और मेरुके समीप होनेसे उसका नामान्तर पर्वत वा पहाड होता, और पैरोपै पिसन पुराणोंका निषध पर्वत वा निसाका पर्वत माना जाता।

१ हय वा ही संस्कृतमें घोडेका नाम है एल सूर्यका नाम है जिससे इप्योस और इलिओस यह दो यूनानी शब्द निर्मित हुए हैं सूर्यका वाचक हेलशब्द सीथियन जातिका विदित होता है।

२ हरि वा भारतका अपोलो सूर्यका नाम है, उत्तरकी जातिके हिडल या जुल शब्द और फ्रांस जातिका नोइल शब्द हिन्दुओंके इस पवित्र पर्व संक्रांतिके नामान्तर हैं, जिसका विशेष वर्णन आगे चलकर करेंगे।

मैलेटकी नार्दन एण्टीकिटीज नामक पुस्तक देखो।

दूसरा अध्याय २.

वंशावलियें;–पुराणकथा;–राजासम्बन्धी और धर्माचार्यसम्बन्धी गुणोंकी एकता;-यूनानी इतिहासलेखकोंकी पुष्ट की हुई पुराणसम्बन्धी कथाएँ।

इस समय हम भागवंत तथा अग्निपुराणमें लिखी हुई इतिहास सम्बन्धी सूर्य और चन्द्रकुलोंकी वंशावलीकी परीक्षा करते हैं, इनमें पहला ग्रन्थ तो वंशकी गणना करनेसे विक्रमादित्यके ६०० सौ वर्ष पहिलेतक पहुँचता है, जिससे विदित होता है कि इस समयके और धीरे ही इन ग्रन्थोंका दूसरा, नवीन संस्कार हुआ होगा वा उनपर टिप्पणी लिखी गई होगी पर हम किसी प्रकार भी इसको बनावटी नहीं मान सकते।

यद्यपि सर विलियम जौन्स, मिस्टर वैटले और कर्नल विल्फर्डने इन वंशावलियोंका कुछ भाग एशियाटिक रिसर्चेजकी जिल्दोंमें प्रकाशित किया है, तो भी किसी पुरुषार्थीको केवल दूसरेकी खोज पर ही सन्तोष नहीं करना चाहिये, यदि वह मूल सोतेतक पहुँच सके तो उसको स्वयं खोज करनी चाहियें।

और यदि विवादकी बातोंको छोडकर यह स्वीकार कर लिया जाय कि भारतवर्षके प्राचीन कुलोंकी यह वंशावली काल्पित है तो भी यह मानना ही पडेगा कि यह कल्पना भी प्राचीन है, और पुराने लेखकोंकी जानकारी यही है, जातियोंके यथार्थ पुराने इतिहाससे पूरा परिचय प्राप्त करनेका दूसरा वह श्रेष्ठ उपाय है कि जिन घटनाओंसे वे जातिकुल विख्यात हैं उनका पूरा ज्ञान प्राप्त कर लिया जाय।

इसमें सन्देह नहीं कि पुराणोंमें जब कि वे प्रारम्भमें लिखे गये थे बहुतसा उपयोगी ऐतिहासिक विषय विद्यमान था, परन्तु जिस समय रूपक मिलानेवालों और टिप्पणीकारोंने स्वार्थवश उसमें निकृष्ट मिलावट की है तो इस समय थोडी शुद्ध बातोंका भी उनमेंसे निकाल लेना कठिन हो गया है, मैंने तो केवल इनके ऊपरी भागपर ही भ्रमण किया है परन्तु हमारे योग्य पुरुषकी खोज करनेसे बहुतसे छिन्न-भिन्न हुए उपयोगी विषय और वृत्तान्त जो इस समय अज्ञान और रूपककी जवनिकाके भीतर छिपे पडे हैं प्राप्त हो सकते हैं।

प्राचीन हिन्दुओंमें बुद्धि और बल किस प्रकारका था इस बातका प्रमाण उनकी बची खुची इमारतोंके सुडौलपन और खुदे हुए पुराणसम्बन्धी चित्रोंकी उत्तमतासे पाया जाता है, परन्तु ज्यों ही उनकी बुद्धि और बल घटा उसके साथ ही उनमेंसे सत्यकी सरलता भी जाती रही और उसके स्थानमें अपने लेखों और इबारतोंमें विचित्र विषयोंको ग्रहण कर लिया, यदि बनावटके खुल जाने और लज्जाका भय न होता तो यूरोपके सभ्य देशोंमें भी ऐतिहासिक विषयोंकी इसी प्रकार गडबडी होती, परन्तु पूर्वके

देशोंमें पुरातन ऐशियाके सत्य व्यवहारकी कमीके समय किसी ज्ञानी आलोचक और सत्य प्रशंसा करनेवालेके न होनेसे यहांके भाष्यकार ब्राह्मणोंने बन्धनमुक्त होकर मनमानी कलम चलाई होगी ऐसा अनुमान होता है उन्होंने यह समझा होगा, कि अपने ग्रन्थोंमें हम जितनी अधिक आश्चर्यकी * बातें लिखेंगे उतनी ही हमारी विशेष बडाई होगी, इस बनावटी कल्पनाके फेरमें पडकर इनको सत्य ऐतिहासिक बातें सुनने और स्पष्ट लिखनेको बहुत कालसे अरुचि हो गई है।

इसी प्रकार इससे पहले समयमें अर्थात् इससे तीन सौ वर्ष पहले वैबिलौनियां देशके इतिहास लिखनेवाले वैरीससने इस प्रकार अपनी कल्पित कहानियां रचीं कि जिनसे अपने राज्यको इतना प्राचीन ठहराया है जो विश्वासके योग्य नहीं हो सकता, परन्तु उसके पहलेके बहुतसे विख्यात इतिहास लेखकोंके लेखोंसे उसकी कल्पनाओंका खण्डन हो जाता है परन्तु भारतवर्षकी कल्पनाओंकी परीक्षाका ऐसा कोई साधन नहीं है, यदि इस समयकी विद्यमान कथाओंकी स्वयं व्यासजीका लिखा मान लें तब तो इतिहासका प्रवाह मूल सोतेसे ही बिगडा हुआ समझना चाहिये; जब मूलकी दशा ऐसी हो तो अज्ञताके जुगोंसे निथरती चली आनेवाली धारामें केवल मलीनताकी बढवार ही मानी जायगी, जब कि पुरातन बातोंकी सत्यतामें सन्देह करते रहें अथवा आज तो यह समझना तो बहुत ही कठिन होगा कि कला कौशल और विद्याओंकी उन्नति किस प्रकार हुई थी, और फिर यह जानना तो और भी कठिन होगा कि पिछले अवनत पुरुष उसमें संस्कार कर सकें इस समयके धर्म्माचार्य पंडितोंकी पीढियोंसे यही इच्छा चली आती है, कि जो कुछ पुराना लिखा हुआ है हम उसके जानने योग्य बनें, और पिछले निर्माण किये हुए ग्रन्थोंपर भाष्य लिखें, उन भाष्योंपर सैकडों भाष्य लिखे जा चुके हैं, और उन्हीं पर बराबर लिखे जा रहे हैं, यदि कोई उनमें सुधारका साहस भी करे तो उसे इस भेदको मनमें ही गुप्त रखना पडता है वे पुराने धर्मग्रन्थोंका टीकामात्र करनेवाले हैं, इससे कुछ विशेष करें तो उनपर धर्म विद्रोहकी आशंका आ पडती है, परन्तु इस प्रकारकी दशा सदा नहीं रही होगी।

हिन्दू संतानने भी दूसरी जातियोंके समान विद्याओंमें धीरे २ ही पूर्ण उन्नतिकी होगी, और यदि हम उनका उन विद्याओंके आविष्कारका यशोभाजन न मानें और

---

* बहुतसी जातियें अनादिकालसे अपनी उत्पत्ति बताना चाहती हैं, उनकी इस अज्ञानतापर विख्यात गोगट अपनी सम्मति प्रगट करता है कि बैबिलौनियां मिसर सीथियाके रहनेवाले अपनी प्राचीनताका विशेष अभिमान करते हैं बैबिलौनियांवाले तो हिन्दुओंके समान अपनी प्राचीनताका डंका बजाते हैं कि वे ४७३००० चार लाख तिहत्तर सहस्र वर्षोंसे नक्षत्रगति देखते चले आते हैं, इस प्रकार प्रत्येक जातियोंमें युगपर युग लगा दिये हैं, परन्तु इस काल्पनिक बनावटी प्राचीनताके आधारकी पुष्टि अनुमानसे नहीं होती, और यह सब कल्पनाएँ अर्वाचीन विदित होती हैं।

दूसरोंको उन विद्याओंका निकालनेवाला मानें तो इसके विरुद्ध हो सकता है, यह पिछले समयकी बनावट ही बुद्धिके निमित्त दासवत् बन्धन है और इसके द्वारा सहजमें ही यह जान लिया जा सकता है कि एक संग ही विद्या और धर्मका अवरोध भारतमें हुआ है, बुद्धिकी सामर्थ्य और प्रवृत्तिपर इस प्रकारके धर्मका अवरोध किस प्रकारसे पडा होगा यह सहजमें अनुमान हो जाता है, जहां ऐसा विषय है वहांकी विद्या किस प्रकार चिरस्थायी रह सकती है, वह अवश्य अवनतिको प्राप्त होगी, यदि हम इतना भी जान जायँ कि यह धर्मकार्य्य * किस समयसे सर्वसाधारणके करनेका पेशा न रहकर पैतृक हो गया (वंशावलियोंके देखनेसे इस बातका प्रमाण मिलता है) तो हम उस समयका अनुमान कर सकैंगे जब कि विद्या उन्नतिके शिखरतक पहुँच चुकी थी ।

जिस समय सूर्य और चन्द्रवंशोंका आदिकाल था, उस समय नियत कुटुम्बोंमें धर्मगुरुका पद परम्परासम्बन्धी नहीं था, किन्तु यह एक साधारण वृत्ति थी, और यह भी देखा जाता है कि इन जातियोंकी शाखा अपने क्षत्रियकृत्यको पूर्ण करके धर्मसम्बन्वी शाखा वा गोत्र आरम्भ करनेमें प्रवृत्त हुई तथा उनके वंशवालोंके पुनः अपना क्षत्रियधर्म धारण करनेके वंशावलियोंमें उदाहरण मिलते हैं । इक्ष्वाकुके दश पुत्रोंमेंसे तीन पुत्रोंके विषयम लिखा है कि वे संसारके व्यवहारोंको त्यागकर धर्मकार्यमें प्रवृत्त हो गये, और इनमेंसे एक कानिनके विषयमें लिखा गया है कि वह प्रथम पुरुष था, जिसने अग्निहोत्र ग्रहण किया, अग्निकी पूजा की एक दूसरे पुत्रने व्यापारमें मन लगाया, चन्द्रवंशी पुरुषोंके छः पुत्रोंमेंसे चौथेका नाम रेह [रय] था इसकी पन्द्रहवीं पीढीमें हारीति हुआ, यह अपने आठ भ्राताओंके साथ धर्मकार्यमें प्रवृत्त हुआ, इसीने कौशिक गोत्र चलाया जो ब्राह्मणोंकी शाखा एक कहाती है ।

---

* ऐसा कहा जाता है ब्राह्मणोंका मत अन्यदेशसे भारतवर्षमें आया था परन्तु इसके समयके निरूपण विषयमें हमारे पास कथनमात्र है हम सहजमें यह विश्वास कर सकते हैं कि इस समयकी पुस्तकोंके निर्माण होनेसे पहले समय २ पर भाँति २ के मतसम्बन्धी विश्वास और सिद्धान्त मिलाये गये थ और उससे पहले केवल राजवंशको ही यह अधिकार था, इस प्रकार हमको वर्ण परिवर्त्तनके भी प्रमाण मिलते हैं; जिस प्रकार मिस्टर कोलब्रुक अपने इण्डियन क्लासेज (भारतकी जातियाँ, नामक ग्रन्थमें लिखते हैं कि ब्राह्मणजातिके एक मुखियाको विष्णुजीका गरुड शाकद्वीपसे ले गया था, इसीसे जम्बूद्वीपम शाकद्वीपी ब्राह्मण कहलाते हैं, शाकद्वीपसे सीथियाका अनुमान होता है, जिसका वर्णन आगे करेंगे । तारीख फरिश्तेमें भी प्राचीन ग्रन्थोंसे अनुवाद करके ऐसा ही लेख लिखा है ।

कन्नौजके राजा मेघराजके समय एक ब्राह्मण ईरानसे आया था जिसने जादू मूर्तिपूजन तथा नक्षत्रपूजन चलाया इससे विदित है कि मतसम्बन्धी नवीन बातोंके प्रवेश होनेके अनेक प्रमाण हैं । (ब्राह्मणमत कोई नहीं है यह वैदिक सिद्धान्त है वैदिकधर्मको ब्राह्मणमत मानना टाड साहबकी भूल है) (अनुवादक) ।

भरद्वाज नामक राजाके नामसे ययातिकी चौबीसवीं पीढीमें "भरद्वाज" नामक प्रसिद्ध गोत्र निकला, इस गोत्रवाले इस समय भी इसी नामसे विख्यात होकर राजपूत जातियोंके पुरोहित हैं।

छब्बीसवें राजा मन्युके दो पुत्रोंने धर्मात्मा होकर प्रसिद्ध गोत्र स्थापन किये अर्थात् महावीर्य-कि जिनके सन्तान पुष्कर ब्राह्मण हुए और संस्कृति कि जिसकी संतति वेदपाठी हुई यह धर्मगुरुओंकी शाखा अजमीढके वंशसे बराबर विभक्त होती रही।

मिसर तथा रोमन देशके पुरुषोंके समान बहुत पुरातन समयसे सूर्यवंशी नरपति राज्याधिकारके साथ साथ धर्माचार्यका काय भी करते थे, चाहे वह ब्राह्मणधर्मावलम्बी हों, चाहे बौद्धमतावलम्बी; महाराज रामचन्द्रके पहले और पीछे बहुतसे राजाओंने अपने जीवनका अवशेष समय तपस्वियोंके समान व्यतीत किया था, इसीसे पुरानी मूर्ति और चित्रोंमें उन महीपतियोंके मस्तक योगियोंकी जटाओंके समान राजमुकुटोंसे शोभित मिलते हैं। *

इन राजर्षि और महर्षियोंके संग बडे २ महाराजा अपनी कन्याओंका विवाह करते थे, महावीर पाँचालकी कन्या अहल्या गौतम ऋषिको व्याही गई, यदुकुलकी बडी शाखा अर्थात् हैहयवंशमें उत्पन्न माहिष्मतीके राजा सहस्रार्जुनकी पुत्रीसे महर्षि जमदग्निका विवाह हुआ था।

---

१ सनातन धर्मको ब्राह्मणधर्म कहकर टाड साहबने भूल की है, और अंग्रेजोंने भी ऐसा लिखा है यदि यह ब्राह्मणोंका चलाया है तो ग्रन्थकारको बताना चाहिये था कि इसका चलानेवाला प्रथम पुरुष कौन था (अनुवादक)

२ जैनोंके २४ तीर्थंकरोंमेंसे कई एक पहले तीर्थंकर अपनी उत्पत्ति सूर्यवंशी राजाओंसे बताते हैं।

३ मेवाडके राणा इस समय भी राजकाजके साथ धर्माचार्यका काम करते हैं जब वे अपने कुलदेव एकलिंगजीके मंदिरमें जाते हैं, तो उस दिन मुख्य पुजारीका सब कार्य अपने हाथसे करते हैं, यह सादृश्यता सब प्राचीन जातियोंमें अबतक पाई जाती है।

* चौथेपनमें राजाओंको वनमें जाकर तपस्या करना धर्मशास्त्रमें लिखा है इसमें धर्माचार्यता नहीं हुई (अनुवादक)

४ पंजाब--सिन्धुके पूर्वकी पाँच नदियोंके देशका राजा।

५ इस राजाने अपने जामाता वशिष्ठकी गौ हरण की थी जो रामायणमें दूसरी प्रकारसे वर्णन किया गया है, और जमदग्निके पुत्र परशुरामके अवतार लेने और क्षत्रियोंके नष्ट करनेकी ऐसे अलंकारसे लिखी है जिससे स्पष्ट होता है राजाओंने पृथ्वीको पवित्र गौरूपसे वर्णन किया है. जब कि ब्राह्मणोंकी सामर्थ्य क्षत्रियोंसे राज्य ले लेनेकी हुई, तब सहजमें जाना जाता है कि यह संख्यामें कितने अधिक हो गये थे।

गोशब्दकी व्युत्पत्तिअनुसंधानके निमित्त लिखता हूं। गैय्या, गिया, गौऔर गा, जो सब वस्तु प्रगट करनेवाली है, गाओ -पैदा करनेवाली होनेसे पृथिवी है।

हेरोडाटसके कहनेके अनुसार मिसरदेशमें धर्माचार्यको राजसिंहासन मिला करता था, कारण कि वे वावीरजातिके पुरुष ही पृथ्वीके स्वामी होसकते थे, और बलकनके पुजारीसे थोसने भी वीर जातिकी पृथ्वी छीनकर विद्रोह उपस्थित कर दिया था ।

जमदग्निसे आरम्भ कर महाराष्ट्र पेशवातक ब्राह्मणोंके युद्धके बहुतसे उदाहरण भारतवर्षमें राज्य अधिकारके निमित्त मिलते हैं, मिथिलाके महाराज जनक जिन राजर्षि विश्वामित्र और वशिष्ठजीको पूज्य जानकर उनके आगे हाथ जोड

—गाला—दूध। ग्वाला—चरवाहा संस्कृतमें गैलेटिकाय, कल्टोइ, गैलेटियन्स वा गाल्स और कैल्टस जो एक ही है यह सब चरवाहोंकी जातिसे होंगे जिन्होंने यूरोपपर आक्रमण किया था ।

१ वशिष्ठ ऋषिके पास एक सबलानामक कामधेनु थी, जिनसे वह अपनी सम्पूर्ण कामना पूरी कर लेते थे, इसीकी सहायतासे उन्होंने विश्वामित्रका सेनासहित अतिथिसत्कार किया था, इस कथासे वह बात स्पष्ट जानी जाती है कि यहां गऊसे किसी देशविशेषका अभिप्राय है जो वशिष्ठ ऋषिके अधिकारमें था, जब कि गऊका अर्थ पृथ्वी और गाय दोनोंसे है तब निःसंदेह यह विश्वामित्रके किसी ज्ञानशून्य पूर्वजका दान था, जिसे विश्वामित्र फेर लेना चाहते थे, वहां लिखा है उस गऊसे देवता और पितरोंके कार्य सिद्ध होते थे नैवेद्य अग्निहोत्र यज्ञकार्य सब इसीपर निर्भर थे, यह सबला ही वसिष्ठजीकी धर्मानुष्ठानकी मूलकारण थी, इसके बदलेमें विश्वामित्र लाख गऊ देना चाहते थे, वास्तवमें यह रत्न राजाओंके ही योग्य था, विदित होता है जब वसिष्ठकी प्रजाने ऐसे बदलेको स्वीकार न किया, तब सबलाके आक्रमण करनेके कारण उसके रांभनेसे बहुतसे विदेशी सहायक वहां आकर उपस्थित हो गये, जिससे वशिष्ठजी विश्वामित्रसे युद्ध करनेको समर्थ हुए, इनमेंसे पल्हव(ईरानी) राजा, भयंकर शक तथा खड्ग और सुवर्ण कवचधारी यवन (यूनानी) और कम्बोजी आदि वीर इससे प्रगट हो गये, विश्वामित्रने पल्हव राजाओंकी सेनाको छिन्नभिन्न कर दिया, और फिर विश्वामित्रको निरन्तर सहायक सेनाके प्रगट होनेसे अन्तमें वशिष्ठजीसे हार माननी पडी ।

इन प्राचीन ईरानी शक यूनानी आसाम तथा दक्षिण भारतके निवासी सहायक पुरुषोंके नामसे यह विदित होता है कि, यह हिन्दूधर्मके न माननेवाले प्राचीन जातियोंके पुरुष थे, यहांके लोग इन सबको म्लेच्छ कहकर पुकारते थे, यह शब्द यूनानियों और रोमवालोंके बारबेरियन (असभ्य) शब्दके समान है ।

राजा विश्वामित्र वसिष्ठजीसे पराजित होकर भग्नदन्त सर्प और ग्रहणलगे सूर्यके समान तेजरहित होनेसे बहुत व्याकुल हुए अपने पुत्र और सेनाके नष्ट होनेसे पंखहीन पक्षीके समान निराधार होकर पुत्रको अपना राजभार समर्पण कर तपस्याचरणके द्वारा ब्राह्मणत्व प्राप्तिका दृढसंकल्प किया, जिस प्रकार कि आपत्कालमें हिन्दू राजा किया करते थे ।

पुष्करक्षेत्रमें जाकर कन्द मूल भक्षण कर विश्वामित्र तपस्या करने लगे, और मन स्थिर करके कहा कि मैं ब्राह्मण बनूंगा, इस प्रकारके तप करनेसे उनकी अध्यात्मशक्ति इतनी प्रबल हो गई कि वह ब्राह्मणत्व ग्रहण करनेमें समर्थ हुए, उस समय देववाणी हुई कि वेद पढनेके वही अधिकारी हैं जो उनके तत्त्वोंको समझते हैं, तुमको यह उचित नहीं कि प्राचीनाकी बांधी हुई मर्यादाका भंग करो ।

कर निवेदन करते थे उस समयका स्मरण कर अब भी यहांके ब्राह्मणगणोंकी अधिकार और सत्कारकी बडी इच्छा रहती है।

बहुतसी राजपूत जातियोंमें इस प्रकारका ब्राह्मणोंका सन्मान बहुत कम है पूर्व प्रवृत्ति-के कारण वे उनका बाहरी आदर करते हैं जबतक उनको कोई भय वा प्रयोजन उनसे न आन पडै तबतक चारण और भाटोंकी अपेक्षा भी उनका सन्मान कम करते हैं।

गाधिपुरके नरेश विश्वामित्र और ब्राह्मणकुलकमलदिवाकर वशिष्ठजीकी कथा जो वाल्मीकिरामायणके बालकाण्डके कितने ही अध्यायोंमें लिखी गई है, अलंकारकी ओट में अधिकारके निमित्त ब्राह्मण और क्षत्रियोंमें संग्राम होनेका उदाहरण बताती है, उससे वर्णव्यवस्थाके स्थिर होनेका समय भी विदित हो सकता है, यदि हम उसके अलंकार भागको छोडदें तो यह कथा उस समयको बताती है जब कि वर्णव्यवस्थाकी दशा अपूर्ण थी, और युद्धकी प्रबलतासे हम यह फल निकाल सकते हैं कि क्षत्रियोंको ब्राह्मणत्व प्राप्त करनेका यह अंतिम समय था।

यह विश्वामित्रजी कौशिक वंशी गाधिपुरके राजा गाधिके पुत्र थे और इक्ष्वाकुकी चालीसवीं पीढीमें उत्पन्न अवधके राजा अम्बरीषके समकालीन थे इससे भगवान् रामचन्द्रसे दो सौ वर्ष पहले उत्पन्न हुए थे जिस वर्णव्यवस्थाकी स्थिरताका हम प्रमाण करना चाहते हैं वह ईसासे १४००० वर्ष प्रथम विदित होती है।

—उनके भ्रमण तपस्याके भंग करनेके जो जो उपाय किये गये उन सबका वर्णन किया है, उनका तप भंग करनेके निमित्त अप्सरायें भेजी गईं कामदेवकी जननी उनके पास गईं; ब्राह्मणोंका पक्ष लेकर इन्द्रने कोकिलाका रूप धारण किया, रम्भाके मनोहर नृत्य तथा शीतल मन्द सुगन्ध लिये वसंत ऋतुके स्पर्श से भी उनका चित्त चलायमान न हुआ, और अन्तमें विश्वामित्रने रम्भाको शिला स्तंभ हो जानेका शाप दिया, जब तक उनकी सब वासनायें दमन न हुईं और जबतक पापका लेशमात्र भी उनमें न रहा, बराबर तप करते रहे; जिसके कारण ब्राह्मण लोग बहुत व्याकुल हुए, कि कहीं विश्वा-मित्रकी परम पवित्रता हमारे लिये हानिकारक न हो, और यह भी भय हुआ कि मनुष्यजातिनास्तिक हो जायगी। अन्तमें देवगण और उनके अधिष्ठाता ब्रह्माजीने विवश होकर उनको ब्राह्मणपद प्रदान किया, और देवताओंके कहनेसे वशिष्ठजीने भी यह बात मान ली, और उनकी अभिलाषामें सहमत होकर उनसे मित्रता स्थापन कर ली।

१ भारतवर्षमें संख्यामें ब्राह्मण विशेष हैं,इनमें वीरता भी है सिखानेसे यह अच्छे सिपाही बन सकते हैं, परन्तु हमारे अनुभवी अधिपति रिसाले वा पल्टनमें इनको विशेषकर भरती नहीं करते, कारण कि उनमें अबतक बखेडा करनेका स्वभाव बना हुआ है, मैंने कम्पनियोंमें ब्राह्मण और वीरजातियोंके सिपाहियोंकी संख्या बराबर देखी है यह भयंकर भूल है।

२ अब यह कन्नौज कहाता है यह वर्तमान मारवाडके राजवंशकी पुरानी राजधानी थी।

३ जब कि वर्णव्यवस्था वेदमें प्रतिपादित है तब टाड महोदयका यह कथन असंगत है (अनुवादक) टाड साहबका यह अनुमान प्रमाणरहित है [अनुवादक]

यह वंशावली सिकंदरके समयमें विद्यमान थी, यदि इस बातका प्रमाण मिल सके तो बहुत काम सिद्ध हो सकता है, पुराणोंमें लिखी हुई चन्द्रवंशकी उत्पत्तिकी कथा इस विषयकी साक्षीरूप है ।

महाभारतनामक वीररसात्मक वृहत्काव्यके निर्माता व्यासजी इन्द्रप्रस्थके राजा शान्तनु (हरिकुल) के पुत्र थे जो योजनगन्धा नामवाली एक धीमर × कन्यासे जन्मे थे इस कारण यह अनौरस पुत्र थे वह शान्तनुके दूसरे पुत्र तथा उत्तराधिकारी विचित्र वीर्यकी पुत्रियों अर्थात् अपनी भतीजियोंके धर्मपिता वा शिक्षक नियत हुए थे ।

विचित्रवीर्यके कोई पुत्र नहीं था, उसकी तीन कन्याओंमेंसे एकका नाम पाण्डया था और शान्तनुके कुलमें केवल एक व्यास ही पुरुष रहजानेसे वह अपनी भतीजी तथा धर्मपुत्री पाण्डयाको अपनी स्त्री* बनाकर पाण्डुके पिता बने, पीछे जो पाण्डु इन्द्रप्रस्थका राजा हुआ ।

× यह बडे अचम्भेकी बात है कि हिन्दुओंमें महापवित्र दो प्रसिद्ध ग्रन्थकर्ताओंकी उत्पत्ति भारतकी जंगली तथा संकरजातियोंसे लिखी है, व्यासजी धीमरीसे और वीररसात्मक रामायणकाव्यके निर्माता बाल्मीकीजी एक वधिक लुटेरेसे जो आबू पर्वतके निकट रहनेवाली भीलजातिका साथी था उत्पन्न हुए हैं, जब यह किसी देवमंदिरमें चोरी करते थे उस समय वाल्मीकिके वर्णपरिवर्तनका वृत्तान्त आश्चर्यरूपसे हुआ था, चन्दकविने अपने काव्यमें पुराने प्रमाणोंको लेकर [illegible]वशाली कवितामें इसे लिखा है ।+

* इस पाण्डया नामका कारण यह है कि इन कन्याओंमेंसे एकका जन्म दासीसे हुआ था, इस बातके निर्णय करनेकी आवश्यकता हुई कि इनमें दासीसे कौनसी जन्मी है, परदेमें रखे जानेके कारण इस बातका निर्णय करना कठिन था, इससे वंशकी शुद्धिकी परीक्षा व्यासजीको सौंपी गई उन्होंने उसका निश्चय कर लिया और आज्ञा दी कि राजकन्या नग्न होकर मेरे सामने निकलै बडी कन्या नेत्र बंदकर व्यासजीके आगे निकली जिसके अंध धृतराष्ट्र जन्में, दूसरीने लज्जासे अपने शरीरपर पीली मट्टी लेप ली, इसीसे इसका नाम पाण्ड्या पडा और इसका पुत्र पाण्डु नामक हुआ, तीसरी कन्याने कुछ संकोच न किया और निर्लज्जतासे व्यासके आगे होकर निकल गई वह शुद्ध कुलकी नहीं समझी गई उससे दासी पुत्र विदुर हुए ।

१ यह सारी कथा टाड्महोदयने अट्टसट्ट लिख दी है या तो इसमें उनकी भूल है वा एरियनसे मिलानेकी यह मनगढन्तकी हो, महाभारतमें इस प्रकार लेख है कि राजा शान्तनुके दो पुत्र थे चित्राङ्गद और विचित्रवीर्य दोनों निःसन्तान मरे । विचित्रवीर्यके काशीराजकी पुत्री अम्बिका और अम्बालिका दो स्त्री थीं इनके कोई सन्तान न होनेसे विचित्रवीर्यकी माता सत्यवतीने कुरुवंशको नष्ट होता देख भीष्मकी सम्मतिसे व्यासजीको बुलाकर वंशरक्षाके लिये कहा व्यासजीने कहा कि

+ यह कथा टाडमहोदयने बहुत ही भूलसे लिखी है व्यासजी पराशरऋषिके पुत्र थे, योजनगंधा धीमरी नहीं है एक राजा वसुका वीर्य पानीमें गिरा उसे मछली निगल गई उससे एक कन्या जन्मी उसको धीमरने पाला था ।

एरियनने इस कथाको इस प्रकार लिखा है कि उस हर्क्यूलीजके बुढापेमें एक पुत्री जन्मी और उसके योग्य वर न मिलनेसे उस हर्क्यूलीजने * स्वयं उसके साथ अपना विवाह कर लिया।

—वे एक वर्ष व्रत रक्खैं पीछे मेरे सन्मुख आवैं तब पुत्र होंगे; और ऐसा ही हुआ, जो आखें मींचकर सामने आई उसके धृतराष्ट्र और शरीरमें पाण्डु लपेटकर आई उसके पाण्डु हुए इन दोनों पुत्रोंको रोगी जान सत्यवतीने फिर पुत्रके लिये प्रार्थना की और अम्बिकाको व्यासजीके समीप भेजा वह उन से इतनी भीत थी कि उसने अपनी दासीको अपने बदलेमें भेज दिया, उसने व्यासजीका बडा सत्कार किया उसके विदुरजी हुए, विचित्रवीर्यके कोई कन्या नहीं थी न व्यासजी उनके शिक्षक थे यह कथा साहित्यके बिगाडनेके अभिप्रायसे वा अन्यसम्प्रदायके द्वेषसे ऐसी लिखी गई है। (अनुवादक

पराशरद्वारा उसमें व्यासजी जन्मे। आनन्द रामायण और वाल्मीकिमें वाल्मीकिजी प्रचेताके पुत्र लिखे हैं, यह बालकपनमें लुटेरोंके हाथ पड गये और वही काम करने लगे एक समय जब सप्तऋषियोंको लूटनेपर उतारू हुए तब उनके उपदेशसे इनको ज्ञान हुआ और मरा मरा जप-कर सिद्ध हो गये। 'प्राचेतसमकल्मषम्' (अनुवादक)

* यह जातिबाचक शब्द हरिवंशीराजाओंके निमित्त है परन्तु एरियनने इसका प्रयोग एक मुख्यपुरुषके समान किया है, जिस हरिकुलमें व्यासजी थे महाभारतके एक अंशमें उसका वर्णन है।

एरियनने थीब्सवालों और हिन्दुओंके हर्क्यूलीजकी + समानता प्रतिपादन की है और सल्यूकसके राजदूत मेगेस्थिनीजके लेखका इस विषयमें प्रमाण दिया है उसने लिखा है कि हिन्दुओंके हर्क्यू-लीज तथा थीब्सवालोंके हर्क्यूलीजका वेश एकसा है, विशेषकर शूरसेनदेशके निवासी उसकी पूजा करते हैं जिनके अधिकारमें मथुरा और क्लसोबोरस दो बडे बडे नगर हैं।

डायोडोरसने भी कुछ २ हेरफेर कर इसी कथाको लिखा है, उसने लिखा है कि हिन्दूजातिमें हर्क्यूलीज जन्मे यूनानियोंके समान वे भी उसको दण्ड और व्याघ्रचर्मका धारण करनेवाला बताते हैं। उनका बल सबसे विशेष था, और पृथ्वीके सब राक्षस तथा हिंसक जीवोंको उन्होंने नष्ट कर दिया था, उसके बहुतसे पुत्र और एक कन्या थी, कहा जाता है उसीने पाली बोथा [पालटीपुत्र] नगर बसाया, और अपने पुत्रों [बलिके बेटों] को अपना सारा राज्य बाँट दिया, उन्होंने कभी कोई वस्ती नहीं बसाई, परन्तु समयान्तरमें सिकन्दरके आक्रमणतक प्रजातंत्र शासनप्रणाली कासा राज्य हो गया था, जिन हर्क्यूलीजके संग्रामोंका उल्लेख डायोडोरसने किया है वे वही युद्ध हैं जो हरिकुलियोंने-अपने पैतृक स्थानसे निकाले जाकर द्वादश वर्ष पर्य्यन्त वनवासके समय किये थे जिनका वर्णन कथाओंमें पाया जाता है।—

+ हर्क्यूलीज यूनानियोंका अवतारी पुरुष था यह जुपिटर इन्द्रका पुत्र माना गया है यह वीर-ताके लिये विख्यात था, कहते हैं कि इसने बहुत दूरदूरके देश विजय किये थे, वह हिन्दुस्थानमें भी आया था, भारतवर्षके सम्बन्धके लेखमें यूनानियोंने यह नाम शिवकृष्ण और बलदेवके लिये कदा-चित् लिखा हो टाड साहबने इस हर्क्यूलीज शब्दको हरकुलईश संस्कृतका शब्द बनाकर चन्द्रवंशी राजाओंका साधारण शब्द बताया है परन्तु किसी संस्कृत पुस्तकमें यह प्रयोग नहीं पाया जाता, टाड साहबने इस यूनानियोंके हर्क्यूलीज, और भारतवर्षके चन्द्रवंशियोंके एक ही होनेके सिद्ध करनेकी इच्छासे बहुत खेंचतान की है इसी प्रकार पुराणोंके शिशु नागवंशको शेष नागवंश समझ लिया है पर पुराणोंमें ऐसा नहीं है [अनुवादक]

–इस हरिकुलवंशके पुराने बचेखुचे वृतान्त बडे अनमोल हैं, यमुनाके किनारे खडहरोंमें हर्क्यूलीज [बलदेव बलके देवता] की मूर्ति धनुष और व्याघ्रचर्म धारण किये बलदेवजीके स्थानमें चौकीपर खडी हुई मूर्ति शूरसेनियोंमें अवतक पूजी जाती हुई देखकर कितना सुख होता है वह शूरसेननाम मथुरा अथवा शूरपुरके समीपके एक बडे भागका नाम है, यह शूरपुर भारतके अपोलो और हर्क्यूलीज अर्थात् कृष्ण और बलदेव दोनों भाइयोंके दादा शूरसेनकी बसाई हुई पुरानी राजधनी थी, यद्यपि बलदेवका अर्थ बलका देवता है, तो भी यह पदवी दोनों [हर्क्यूलीज] में चरितार्थ हो सकती है दोनों हरिकुलके–ईश हैं-यूनानवालोंने इन तीन शब्दोंका समास करके हर्क्यूलीज शब्द निर्माण किया होगा। इसमें आश्चर्य नहीं कि महाभारत संग्रामके पीछे कुछ लोगोंने पश्चिममें जाकर निवास किया हो (अडारियस--अत्रि हरिकुलका आदि पुरुष है, उसकी सन्तति हेराव लाइट (हर्क्यूलीजके सन्तान) के सन्तानके पश्चात् लौटनेका समय इस प्रश्नका उत्तर दे सकता है और अनुमान होता है, कि महाभारतके संग्रामसे पचास वर्षके पीछे यह घटना घटी हो ।

हमें इस बातका खेद है कि हिंदूजातिके गुप्त भेदोंको सिकन्दरके इतिहासलेखक न भेद सके जैसा कि हेरोडाटस मिश्रवालोंके भेदोंको जाननेवाला प्रतीत होता है, एक तो हिन्दूजातिके धर्म्म-ग्रन्थ विद्या और इतिहास इस भाषामें थे जिसका जानना सिकन्दरको दुःसाध्य था, दूसरे वह भारतमें बहुत थोडे दिनोंतक ठहरा इससे उसको यहांके भेदोंकी यथार्थता न खुल सकी । हिन्दू भाषाकी समानताके जाने विना, उनकी भाषाके अध्ययनमें उनकी उन्नति बहुत अल्प हुई होगी ।

इन बातोंमें एरियनने अपनी बुद्धि बहुत २ लगाई है और उसने इसमें शीघ्र ही विश्वास भी नहीं किया है उसने कहा है कि हर्क्यूलीज की कहानीके विषयमें मेरी यह सम्मति है कि यदि हर्क्यूलीज अपनी कन्याके साथ विवाह करनेके योग्य था तो वह ऐसा वृद्ध नहीं था जैसा कि लोग हमको विश्वास उत्पन्न कराना चाहते हैं।

सण्ड्रोकाटस् (चन्द्रगुप्त) का भी एरियनने इसी वंशमें होना लिखा है, इसी कारण हमको ययातिके द्वितीय पुत्र पुरुषकी वंशावलीमें उसको स्थान दान करनेमें शंका नहीं होती, जहांसे इस जातिके वंशका नाश चला है, और जो कुल अब नष्ट हो गया है जैसा कि पुरुके बडे भाईका वंश विख्यात नाम यदु हुआ था, इस प्रकारसे यदि चन्द्रगुप्त स्वयं पुरुवंशी नहीं है तो भी उसका उसवंशसे सम्बन्ध है, जिसमें जरासन्ध (मगधेश्वर) और तेईसवीं पीढीमें रिपुंजय हुआ; जिस समय खीष्टसे ६०० छः सौ वर्ष पहले एक नवीन कुलने जिसके अधिनायक शुनक और शेष नाग थे पुरुवंशियोंसे राज्य छीन लिया; इस विजेताघरानेमें ही मोरी जातिका चन्द्रगुप्त जन्मा है जो सिकन्दरके समयका सैण्ड्रोकाटस गिना जाता है, यह मोरी जाति शेष नाग तक्षक वा नागवंशकी एक शाखा विशेष है, जिसका अवसर आनेपर अलंकार भाग छोडकर वर्णन होगा, जिनको एरियनने प्रासी बताया है, वे पुरुराजाके वंशमें होंगे; उनका उत्पत्तिस्थान उनके इतिहासके अनुसार प्रयाग जाना जाता है, जो इस समय इलाहाबाद भी कहाता है और जिसका नाम इरनवोअस है वह यमुना होगी जहाँ गंगा यमुना मिलती है, प्रासी (प्लासी) पुरुषोंकी वह राजधानी हम मानते हैं।

---

१ सिकन्दरके लेखकोंको यदि आर्यजातिका भेद न मिला तो कोई खेद नहीं पर हमको इस बातका आश्चर्य है कि वीसवर्षतक परिश्रम करके टाड महोदय हिन्दूजातिके पुराणसम्पादित सत्य कथानकको ज्योंका त्यों न लिख सके, भारतमें न कोई हर्क्यूलीज है, उसने वा किसीने भी आजतक अपनी कन्यासे विवाह नहीं किया न मालूम यह मनगढन्त कथा किस प्रकारसे लिखी गई (अनुवादक)

जिससे भारतवर्षका राजगद्दीके निमित्त कोई पुरुष उत्पन्न हो उस कन्याका नाम पाण्डया था, और जिस ओर वह उत्पन्न हुई थी उसीके नामसे उस प्रान्तका नाम विख्यात * हो गया।

यह वही पुराणोंकी गाथा है जिसमें व्यासजी हरिकुल ईश अर्थात् हरिकुलके मुख्य पुरुष थे, और उसकी धर्मपुत्री पाण्डयाका उल्लेख है, जिनसे पाण्डुका महान् वंश प्रचलित हुआ जिससे दिल्ली और उसके आधीनके सम्पूर्ण राज्योंका नाम पाण्डुराज्य हुआ था।

उस कन्याके वंशधरोंने ईसासे ११२० वर्ष पूर्वसे लेकर ६१ वर्षतक इकतीस पीढीतक राज्य किया जब कि वहांके सरदारोंने अन्तिम पाण्डुवंशके महीपालको राज्याधिकारके सब कार्योंमें असावधान देखकर उसके विरुद्ध विद्रोह उपस्थित करके इसी कुलके सम्बन्धी एक सैनिक मंत्रीको राजा चुना, पाण्डु राजाके पदच्युत होने तथा परलोकगामी होनेपर वहां नये वंशका प्रवेश हुआ।

इस प्रकार सैनिक मंत्रियोंके × राज्य अतिक्रमण करनेके कारण राजा विक्रमादित्यके समयतक दो दूसरे वंशोंने राज्य किया, उसके साथ युधिष्ठिरके संवत् और पाण्डवोंके राज्य इन दोनोंकी समाप्ति हो गई।

जब उत्तरकी ओरसे भारतकी राजधानी उठकर दक्षिणमें नियत हुई तब विक्रमके ४०० संवत्तक वा कितने एक ग्रन्थकारोंके लेखानुसार ८०० संवत् तक दिल्लीमें कोई

---

* पाण्डयाके नामसे देशकी प्रसिद्ध मनमानी गढंत है यूनानी भारतके इतिहाससे सर्वथा अनभिज्ञ थे इससे उन्होंने मनमानी बातें लिख दी हैं उनके साथ पुराणादि कथाओंकी सादृश्यता किस प्रकार हो सकती है जैसे विचित्र वीर्यकी कन्याओंका कहीं उल्लेख नहीं, इसी प्रकार शांतनुका पांड्या देश नहीं वह तो दक्षिणके एक देशका नाम है। बहुत क्या यह सारी कथाएँ मनगढंत हैं। इसी प्रकार आगे इरनवोअसको यमुना बताया है यह हिरण्यवाह शब्दका अपभ्रंश और स्वर्णनद (सोनभद्र) का नाम हो सकता है जो पलि पाटली पुत्रसे कुछ दूर गंगामें गिरती है (अनुवादक)

× जिसमें भारतवर्षके महाराजाओंका पुत्रके क्रमानुयायी होनेका नियम तोडा गया हो उसका यह पहला ही उदाहरण नहीं है, अनहलवाडा पट्टनके राज इतिहासमें इसके दो उदाहरण मिलते हैं, दत्तक पुत्र जब अपने गोद लेनेवाले पिताकी पगडी बांधता है, तो वह अपने जन्मदाता पिताके गोत्रसे पृथक हो जाता है।

(टाड साहब अनहिलवाडा राज्यमें दो बार राजाओंका गोद आना मानते हैं परन्तु वहां तो एक बार भी यह घटना नहीं घटी, चावडा कुलके अन्तिम राजा सामन्तसिंहको उसके मामा मूलराज-सोलंकीने मारकर उसका राज छीना था और सिद्धराज जयसिंहके उत्तराधिकारी कुमारपालका चौहान होना और सोलंकियोंके यहां उसका गोद जाना जो उन्होंने माना है यह भी भूल है, कारण इसका यह है कि कुमारपाल सोलंकी प्रसिद्धराज जयसिंहके दादा पहले भीमदेवके वंशका था, चौहान नहीं था, पृथ्वीराज न तो अनंगपालका धेवता ही था और न इसे अनंगपालने देहलीका राज दिया था परन्तु अजमेरके चौहान राजा वीसलदेवने अपने भुजबलसे संवत् १२२० के लगभग तुंवरोंसे राज छीना था तभीसे उसपर चौहानोंका अधिकार था. (अनुवादक)

राजा न रहा, इसके पीछे अपनेको पाण्डवोंके वंशमें माननेवाली राजपूत तुवर जातिने फिर युधिष्ठिरके सिंहासनपर अधिकार किया, और उसी समय यह प्राचीन इन्द्रप्रस्थनाम देहली वा दिल्ली नामसे विख्यात हुआ, और इसके पश्चात स्थापन पहले अनंगपालका वंश बारहवीं शताब्दीतक स्थित रहा, इसके पश्चात उसने अपने धेवते भारतके अन्तिम राजपूत सम्राट् पृथ्वीराजको अपना सिंहासन सौंप दिया, जिस महाराजके पराजय होनेपर भारतमें मुसलमानोंका प्रवेश हुआ।

इस खान्दानकी पूर्ति भी एक नाममात्रके बादशाहके साथ हो गई और इस समय केवल पश्चिम ओरके बडी दूरसे आये हुए वीर पुरुष ही पाण्डु तथा तैमूर राजासिंहासनके अधिकारी हैं।

जो बुद्ध और इलाके वंशधरोंने बनवाये थे इन्द्रप्रस्थके वे स्मारक चिह्न पाण्डवोंके लोहस्तम्भ * जिनकी नीवँ पातालतक पहुँची है जो स्तम्भ विजयके स्मारकमें बनाये गये थे, और जिनके लेख इस प्रकारकी लिपिमें हैं जो इस समय पढे नहीं जाते और उन प्राचीन नगरोंके खण्डहर जो संसारके सबसे बडे नगरकी अपेक्षा भी विशेषकर भूमिको घेरे हुए हैं और जिनके बृहत् आकारसे बडे दृढ किले और बुर्जोंके

* चन्दकविके बृहत् काव्यमें इस पाण्डवोंके लोहस्तम्भका वर्णन है कि एक श्रद्धाहीन तुँवरराजाने इसकी गहराईके विषयमें सत्यताकी परीक्षा करनी चाही थी, पंडितोंने कहा था यह कीली शेषनागके शिरपर गडी है राजाने जब उसे उखडवाया तो पृथ्वीमेंसे रुधिर लगा हुआ स्तम्भ उठा, स्तम्भ ढीला होनेसे यह कीली ढीली हो गई, और इस गर्हितकार्यसे उस कुलका प्रारब्ध भी ढीला पड गया यही दिल्लीके नामका मूल कारण है। "यदि यह पुरानी दिल्लीवाले स्तम्भका वर्णन है जो कुतुबके हातेमें है तो यह पाण्डवोंका निर्माण किया नहीं है, कहते हैं कि यह गुप्तवंश प्रतापवान महाराज चन्द्रगुप्तने दूसरे किसी विष्णुपदनामक पर्वतपर विष्णुमंदिरके आगे खडा किया था, यह बात उसपर खुदे लेखसे पाई जाती है तुंवरोंने उसे लाकर यहाँ गाड दिया है परन्तु यह कीली ढीली होनेकी बात बडी विख्यात है, देहलीके म्यूजियममें संवत् १३८४ का एक पाषाण खुदा हुआ है उसपर लिखा है "देशोऽस्ति हरियानाख्यः पृथिव्यां स्वर्गसन्निभः ॥ ढिल्लिकाख्या पुरी तत्र तोमरैरस्ति निर्मिता ॥ १ ॥ प्रतोल्यां च वलभ्यां च येन विश्रामितं यशः" यह तोमरोंकी बसाई ढिल्ली फारसीवालोंने देहली की, फरिस्ता कहता है यहाँकी मिट्टी नरम है, और ढीली है, उसमें कठिनाईसे मेख दृढ गडती है, उसीसे उसका नाम ढिल्ली रक्खा गया है, मोरीवंशके राजा अशोकके पाषाणस्तम्भ विजयस्तम्भ नहीं किन्तु धर्मस्तम्भ हैं १३५६ ई० के लगभग टोपरासे फीरोजशाह तुगलक लाया था वही दिल्लीमें गाड दिये। (अनुवादक)

१ कदाचित् शाहपुरको लोग अब न जानते हों मुझ एक बुर्जके खण्डहरसे उसके विस्तारका पता लगा यह कुतुबमीनार और हुमायूंके मकबरेके मध्यमें है, जब कि सन् १८०९ ई० में मैंने चार महीनेतक अवधके वर्तमान शाहके पूर्वज सफदरजंगके मकबरेमें निवास किया था जो वर्तमान दिल्लीसे कई मीलकी दूरीपर इन्द्रप्रस्थके खण्डहरोंमें है, जो खंडहर देहलीतक बराबर चले गये हैं मैं अपने मित्र लफटिनेण्ट मेकार्टनी (जो अब संसारमें नहीं हैं और जिनका नाम बडी प्रतिष्ठाके साथ विख्यात है) के साथ इस एकान्तस्थानमें गया था, यमुनाके आरंभ अर्थात् शिवालक—

नष्ट होनेसे उनके नामतक मिट गये, जो संसारके बल तथा प्रतापकी क्षणभंगुरता दिखानेके लिये एक बडा दृश्य उपस्थित करते हैं, अब इन स्थानोंका अधिकारी ब्रिटिन है परन्तु यह ब्रिटिन अपने इस राजके होनेवाले आगामी उत्तराधिकारीके निमित्त भी कोई चिह्न स्मारकरूपसे छोडेगा, कोई नहीं, इसके सिवाय जातीय उपकार-रूपी अधिक चिरस्थाई रहनेवाला भी स्मारक चिह्न है तथा और भी अनेक बातें हमारे अधिकारमें हैं बहुत कुछ स्वत्त्व दिया गया है. और आनेवाले अधिकारियों को इसका फल प्राप्त होगा ।

–पर्वतमालासे कि जहांसे यह नदी पर्वतोंसे निकलकर भारतवर्षके मैदानोंमें प्रवेश करती है वहांसे जो नहरें निकलती हैं उनकी नाप करनेके लिये ही हम दोनों नियत हुए थे यमुनाजीसे यह नहरें दोनों ओर जल लेती हैं, और एक देहली नगरसे और दूसरी सामनेकी ओरसे फिर यमुनामें ही मिल जाती है ।

अध्याय तीसरा ३.

शेष वंशावलियें;–सर विलियम जौन्स;–मिस्टर वेटले कप्तान विलफर्ड;–और ग्रन्थकर्त्ता (टाड) की दी हुई वंशावलीकी सूचियोंका परस्पर मिलान;–उस समयकी घटनाओंका वर्णन ।

वैवस्वतमनुसे आरम्भ कर भगवान् रामचन्द्रतक व्यासजीने ५७ राजाओंकी नामावली दी है, मेरे देखनेमें उस समयकी ऐसी कोई वंशावली नहीं आई कि जिसमें उसी समयके होनेवाले चन्द्रवंशी राजाओंकी संख्या ५८ से विशेष हो, मिश्रके धर्मगुरुओंकी दी हुई संख्यासे यह संख्या बहुत थोडी है जिन्होंने हेरोडाटसके लेखानुसार अपने पहले राजा अर्थात् सूर्यपुत्र मीनससे आरम्भ कर उस समय ३३० राजाओंकी नामावली दी है ।

मनुका पुत्र इक्ष्वाकु सबसे पहला राजा था जिसने पूर्वकी ओर आकर अयोध्या नगरी बसाई ।

बुध चन्द्रवंशका मूलपुरुष है परन्तु हमको इस बातका भेद नहीं खुला कि उनकी प्रथम राजधानी प्रयागकी स्थापना किसने की, कई प्रमाणोंद्वारा इतना पता मिलता है कि बुधसे छठीं पीढीमें पुरुने इसकी नीम डाली थी ।

इक्ष्वाकुसे आरम्भ कर श्रीरामचन्द्रतक क्रमशः ५७ राजा अयोध्याके सिंहासनपर स्थित हुए हैं, और ययातिके पुत्रोंसे जो चन्द्रवंशकी शाखाओंका विस्तार हुआ है, उनकी पीढियाँ संख्यामें समान नहीं हैं, यदुवंशकी वह शाखा जो कृष्ण और उनके मामा कंसतक पहुँचकर समाप्त हो जाती है, ययातिसे लेकर ५७ और ५९ पीढियां होती हैं, और युधिष्ठिर (दिल्लीपति) शल्य जरासंध बहुरथतक जो सब ही श्रीकृष्ण तथा कंसके समसामयिक थे, उनके एक ही वंशधर ययातिसे क्रमानुसार ५१

१ मिसरदेशवासी सूर्यको ही अपना प्रथम राज्यस्थापनकर्ता मानते हैं ।

२ हेरोडाटस मेलपियोमेनी प्रकरण १४ पृ० २० ।

३ जैसलमेरकी ख्यातिमें लिखा है कि भारतके युद्धके पहले प्रयाग मथुरा कुशस्थली द्वारका यह क्रमसे चन्द्रवंशकी राजधानी रही हैं, हस्ती राजाने इससे बीस पीढी पीछे हस्तिनापुर बसाया जिससे अजमीढ और पुरमीढ यह तीन बडी शाखा चली, इनमें यदु (इन्दु) वंशकी अनेक शाखा हो गईं ।

४६ । और ४७ पीढियाँ होती हैं, सूर्यवंश और चन्द्रवंशके यदुकुलकी शाखामें बडा भेद है, परन्तु यहां जो वंशावली दी गई है, वह मुझे प्राप्त हुई अन्यवंशावलियोंकी अपेक्षा बहुत पूर्ण है, जो वंशावली सर विलियम जौन्सकी दी हुई है, उसमें सूर्यवंशकी नामावलीमें ५६ और चन्द्रवंशकी सूचीमें बुद्धसे युधिष्ठिर पर्यन्त ४६ नाम हैं अर्थात् इसके साथ दी हुई वंशावलीमेंसे प्रत्येकमें एक २ नाम कम है; और जो प्रधान शाखा कृष्णजीके साथ समाप्त होती है उसका नाम तो उसने दिया ही नहीं, सर विलियम जौन्सने और मैंने जो वंशावलियें भिन्न २ ग्रन्थोंसे संग्रह की हैं उनमें इतना सादृश्यता पाई जाती है जिनके अवलोकनसे यह प्रतीत होता है कि वह सब एक ही विश्वास योग्यमूलस्थानसे प्रगट हुई हैं।

मिस्टर बेंटलेने (एशियाटिक रिसर्चेज जि० ५ पृ० ३४६) में जो नामावली दी हैं वे सर विलियम जौन्सकी नामावलीसे मिलती हैं, उन्होंने भी सूर्यवंशकी ५६ और चन्द्रवंशकी ४६ पीढियां लिखी हैं, परन्तु विशेष ध्यान करनेसे जाना जाता है या तो उसने नकल उतार ली है या दोनोंने एक ही पुस्तक लिखी है, पीछे उसने कुछ नामोंको ऊँचे नीचे रख दिया है, जिससे उसकी कल्पनाका प्रमाण मिलता है, परन्तु वह लेख इतिहासविषयक विश्वासके अनुकूल नहीं समझा जाता।

कर्नल विलफर्डकी लिखी हुई सूर्यवंशकी सूची तुच्छ है, परन्तु चन्द्रवंशकी पुरु और यदुकुलकी दोनों वंशकी सूची बहुत अच्छी है और जरासन्धसे लेकर चन्द्रगुप्ततककी पुरुवंशशाखाकी प्रकाशित हुई सब नामावलियोंमें उन्हींकी अच्छी और शुद्ध है।

हमको इस बातका आश्चर्य है कि विलफर्डने सर विलियम जौन्सके लिये सूर्यवंशके समयका निरूपण नहीं किया। कदाचित् वह श्रीरामचन्द्रको श्रीकृष्णके समयके निकटवर्ती कहनेसे घबराये, कारण कि रामचन्द्रजीका होना महाभारत युद्धसे चार पीढी पहलेका निश्चित होता है।

हमको विश्वास है कि चन्द्रवंशकी वंशसूची हमको पूर्ण नहीं मिली है और उक्तदोनों महाशयोंका भी इसमें ऐसा ही विश्वास है और विलफर्डने तो उसीको प्रमाणिक मानकर सूर्यवंशकी सूचीको उससे मिलान करनेके लिये कम करके उसकी अशुद्धताको और भी बढा दिया है।

मिस्टर बेंटलेकी रीतिको इस कारण विशेष उपयोगी मानते हैं कि उसका यह अनुमान है कि चंद्रवंशकी सूचीमें राजा जन्मेजय और प्राचीनवानके बीच ग्यारह नरपतियोंके नाम छूट गये हैं, परन्तु जब कि इसमें कोई प्रमाण नहीं है, इस कारणसे वंशसूचीमें चन्द्रवंशी राजाओंकी नामावली सूर्यवंशी राजाओंके सम्मुख दी है, कि जिससे उनका समकालीन सम्बन्ध बना रहे, और उनका एक ही समयमें होना सिद्ध भी हो जाय, इस रीतिसे सब शंका मिट जायगी और वंशावलियोंकी शुद्धता, चन्द्रवंशकी जिस प्रधानशाखामें पुरु, अजमीढ, हस्ती, कुरु, शान्तनु और युधिष्ठिर बडे विख्यात

पुरुष हुए उनकी जो नामसूची सर विलियम जौन्स और कर्नल विल्फर्डने लिखी हैं उनमें परस्पर बहुत थोडा भेद है, और इतनी अधिक सादृश्यता पाई जाती है कि इसमें शंका नहीं रहती कि यह दोनों एक ही स्थानसे दी गई हैं पर विचारनेसे हमको यह विदित होता है कि विल्फर्डके पास विशेष सामग्री थी जिससे कि हस्ती और कुरु इन दोनों वंशकी नई शाखायें उनके लेखमें पाई जाती हैं अन्तमें एक 'भीमसेन' नाम उसने और भी दिया है जो मेरी वंशावलीमें है और जौन्सकी वंशावलीमें नहीं है, भीमसेनके पश्चात् दोनों वंशावीलियोंमें राजा दिलीपका नाम है, जो मेरे पासकी भागवत पुस्तकमें नहीं लिखा और अग्निपुराणमें लिखा है इससे यह बात सिद्ध हो सकती है कि इन्होंने अपनी २ सामग्री भिन्न २ ग्रन्थोंसे संग्रह की है,और जब उन ग्रंथोंकी प्राचीनताका विचार किया जाता है तो चित्तमें बडा संतोष होता है, मेरी वंशावलीमें बुधसे १९ वां नाम तन्सु (रंतितार लिखा) है वह जौन्स और विल्फर्डकी वंशसूचीमें नहीं है उसके सिवाय विल्फर्डने हस्तीसे पहले सुहोत्रका नाम लिखा है,जो जौन्सीकी वंशावलीमें नहीं है और अग्निपुराणमें लिखा हुआ है ।

आगे उसने जह्नुको कुरुका क्रमानुयायी लिखा है पर पुराणोंमें उद्धृत की हुई वंशावलीमें परिक्षितको कुरुका क्रमानुयायी लिखा है, जिसने जह्नुके पुत्रको दत्तक किया था, यह पुत्र सुरथ नामवाला था. जिसका नाम तीनों वंशावलियोंमें पाया जाता है कहीं भेद है तो मात्रा मात्रका ।

यदि मेरे निर्माण किये हुए सूर्यवंशके वंशवृक्षसे सर विलियम जौन्सकी सूर्यवंशावलीसे मुकावला किया जाय तो असली मुख्य बातें प्रायः एक ही होंगी, मैं सर विलियम जौन्सकी वंशावलीके विषयमें इस कारण कहता हूं कि इसके सिवाय पूर्ण वंशावलीमें अनपृथु और उनकीमें अनेना और पृथु ये दो नाम हैं, फिर अठारहवें नाम पुरुकुत्समें केवल अक्षरोंका भेद है, मेरी सूचीमें इरीशौक (त्रिशंकु) का नाम २३ सवां है और जौन्सवालीमें छव्वीसवाँ है, एक नामावलीका कारण तो ऊपर कह चुका हूं और हरिसदश्व और हयाश्व × यह दो नाम मेरी वंशसूचीमें नहीं हैं, इनके सिवाय हम दोनोंकी वंशावली एकसी हैं हाँ अक्षर मात्रामें अन्तर है, परन्तु विहारमें चम्पापुरके बसानेवाले सत्ताइसवें राजा चम्पके वंशानुयायियोंके विषयमें मैं सहमत नहीं हूं सर विलियमने सुदेवको चम्पका उत्तराधिकारी लिखा है, उसके पिछे विजयको राजा हुआ लिखा है, परन्तु जो प्रमाण मुझे मिले हैं उनके अनुसार यह दोनों चम्पके पुत्र थे, जब सुदेव तप करने चला गया तब छोटे विजयने चम्पका राज्य पाया, जौन्सने ३३ और ३६ वें दो नाम केशी और दिलीप छोड दिये हैं, इसके सिवाय और भी एक बडे विख्यात अंवरीप राजाका नाम उसने छोड दिया है, जिसका पिछले वंशके साथ बडा सम्बन्ध है, और जिससे पुरातन इतिहासकी समकालीनताका बहुत पता चल सकता है, जो कन्नौज बसानेवाले गाधिका समसामयिक था; नल, सुरूर (सर्वकाम)

× केशी ।

और दिलीप मेरी वंशावली ४४ । ४५ । ५४ नम्बरपर है सर विलियम जौन्सने यह सब नाम छोड दिये हैं ।

इन बडे वंशोंकी सूचीका मिलान कर जो वृत्तान्त लिखा गया है वह संतोषप्रद होगा, ऐसी मुझे आशा है, मेरी दी हुई नामावली उस राजपुस्तकालयकी वंशावली-से तथा पुराणोंसे उद्धृत की गई है, जो अपनेको सूर्यवंशका वंशधर कहता है, जिसमें न्यूनाधिककी बहुत कम सम्भावना है, ऐसा कोई ही महाराज होगा जिसको अपने पुरुषोंकी वंशावली कण्ठ न हो, मेवाडके महाराणा भीमसिंहकी स्मरणशक्ति इसमें विशेष है इसका पेशा करनेवाले भाट और चारणोंने इन वंशावलियोंको अवश्य कण्ठ किया होगा, पहले वंशवृक्षमें सूर्यवंशमें होनेवाले अयोध्यानरेश और मिथिला, तिरहुत-वाली मैंने और कहीं नहीं पाई उसमें चन्द्रवंशकी चार बडी और तीन छोटी शाखा भी लिखी हैं और यदु (इन्दु) वंशकी आठवीं शाखाको जैसलमेरके भाटियोंके इति-हाससे संग्रह किया है।

इस प्रकार प्राचीनजातियोंके वंश इतिहासकी समाप्ति करनेके पहले श्रीरामचन्द्र, श्रीकृष्ण और युधिष्ठरजीके साथ हिन्दुओंके द्वापरयुगकी समाप्ति और कलियुगका आरम्भ होता है,मैं उनकी समकालीनताको थोडे विषयमें शीघ्र ही वर्णन करूँगा,जिसको भिन्न २ ग्रन्थकर्ताओंने स्वीकार किया है ।

इस प्राचीन निर्णय करनेमें हमारा यही ध्यान है जहांतक बने यह निर्णय सत्य २ हो हम समकालीनता रामायण और पुराणोंद्वारा स्थिर करते हैं ।

प्रथम समय तो सूर्यवंशके विख्यात त्रिशंकुके पुत्र राजा हरिश्चन्द्रके साथ आरम्भ होता है कि जिनका नाम सत्यवचनके लिये विशेष प्रसिद्ध है, यह उस वंशका चौबी-सवाँ राजा है [देखो स्कन्दपुराणका सह्याद्रि खण्ड] और नर्मदा नदीके तटपर स्थित माहिष्मतीके हयहयवंशमें उत्पन्न हुए विख्यात नरपति सहस्रार्जुनको वध करनेवाले

---

१ भविष्यपुराणमें सहस्रार्जुनको चक्रवर्ती निर्देश किया है, इसके निमित्त यह कहा गया है कि इसने तक्षक तुरुष्क अथवा नागवंशके कर्कोटकको विजय किया, माहिष्मतीकी प्रजाको अपने साथ लेकर वहांके राज्यसे च्युत होनेपर इसने भारतके उत्तरमें हेमनगर बसाया । नर्मदाकिनारेके देशोंमें इस राजाके विषयमें कितनी एक कहावतें प्रसिद्ध हैं, उसको सहस्र भुजावाला कहा जाता है और अलंकाररूपसे इसके बहुत सन्तान बताई जाती हैं । तक्षक वा नागकुलके विषयमें हम आगे चलकर विचार करेंगे, पुराने समयकी ऐसी रीति थी कि अनेक जातियें जन्तुग्रह वा जड पदार्थोंके नामसे पुकारी जाती थीं, हमारी धर्मपुस्तक बाइबिलमें भी इसी प्रकार मिश्र साम मकदनियोंके नरपतियोंको मक्खी और मेढा कहकर निर्देश किया है, और भारतमें नाग तुरंग और वानर नामसे संकेत किया है ।

यह नागवंश एशियाके ऊंचे देशोंमें प्राचीनकालसे भी बहुत फैला हुआ था, और बडा विख्यात था, जिसका वर्णन कुछ आगे करेंगे, रामायणके लेखसे जाना जाता है कि एक तक्षक नागने अश्वमेध यज्ञके घोडेको अनन्तका रूप धारण करके चुराया था ।

(तुरुक्ष वंश तक्षकवंशसे भिन्न है देखो राजतरंगिणी) । (अनुवादक)

परशुरामका समसामयिक माना गया है, रामायणमें इसका प्रमाण भी है जिसमें इक्कीसबार क्षत्रियोंके नष्ट किये जाने और ब्राह्मणोंको परशुरामके अधिष्ठातृत्वमें राज्य अधिकारका वर्णन किया गया है, इसके साथ उस समयका भी पता लगता है कि जब क्षत्रियोंने राजसिंहासन खो दिया, जिसके विषयमें ब्राह्मण उपहास करते हुए कहते हैं कि उन्होंने अपने वंशकी पवित्रता गँवा दी, और इस पिछली बातका खंडन स्वयं उन्हींके ग्रन्थोंमें स्पष्टरूपसे पाया जाता है. जैसा कि आगेकी समकालीनता पर लिखा है ।

यही समय सूर्यवंशकी सूचीके बत्तीसवें राजा सगरसे सम्बन्ध रखता है जो चन्द्रवंशी सहस्रार्जुनके छठे वंशधर तालजंघके समसामयिक या जिस समय परशुरामके पराक्रमसे क्षत्रियजाति विनष्ट हुई उस समय उनके हाथसे सहस्रबाहुके पांच पुत्र बचे थे, जिनकी नामावली भविष्यपुराणमें है ।

परस्पर स्पर्द्धा करनेवाले चन्द्र और सूर्यवंशके बीचमें कठिन संग्राम रहते थे पुराण और रामायण इसके साक्षी हैं, भविष्य पुराणमें सगर[1] और तालजंघके युद्धका वृत्तान्त है जिसमें हयहयवंशवालोंको इतनी हानि उठानी पडी जैसी उनके पुरुषाओंने सगरके पुरुषाओंके साथ युद्ध करके उठाई थी, परन्तु परशुरामजीके पीछे उन्होंने अपना बल फिर बढाया, जिसका परिणाम यह हुआ कि सगरके पिताको राजधानी अयोध्या छोडकर वनमें जाना पडा, यह सगर और तालजंघ हस्तिनापुरके राजा हस्ती और अंगदेश[2] तथा अंगवंशके स्थापक बुधके वंशधर अंगके समकालीन पाये जाते हैं ।

एक और दूसरी समकालीनताका पता रामायण बताती है, वह यह कि सूर्यवंशके चालीसवें वंशधर अयोध्याधिपति महाराज अंबरीप कन्नौजके स्थापक महाराज गाधि और अंगदेशाधिपति महाराज लोमपादके समकालीन थे ।

---

१ सगरके पिता असित जब हयहय तालजंघ और शिशुविन्धी राजाओंसे युद्धमें पराजित होकर हिमालयकी ओर दो रानियोंके साथ चले गये * और अपनी एक रानीको गर्भवती छोड परलोकवासी हुए, वहां उस गर्भवती रानीको उसकी सौतने विष दिया पर वह विष ऋषिके आशीर्वादसे कुछ न कर सका, और गर (विष) सहित बालक उत्पन्न होनेसे उसका नाम सगर रक्खा, जब इस प्रकार सूर्यवंशको चन्द्रवंशद्वारा हानि उठानी पडी तब उनकी सहायताको परशुरामने शस्त्र धारण किया, इससे स्पष्ट है कि सूर्यवंशी ब्राह्मण धर्मके माननेवाले थे, और चन्द्रवंशी इसके विरुद्ध अपने मूलपुरुष बुद्धधर्मको मानते थे और इसीसे सूर्यवंशके ऋषि चन्द्रवंशोत्पन्न विश्वामित्रके ब्राह्मणमत ग्रहणमें विरोधी हुए थे और यह भी सिद्ध हो सकता है कि चन्द्रवंशोत्पन्न श्रीकृष्ण अपने नवीन मतकी स्थापना करनेसे पहले बुधकी पूजा करनेवाले थे ।

२ यह अङ्गदेश तिब्बतके समीप है इसके रहनेवाले अपनेको हुंगी कहते हैं जिससे विदित होता है कि चीनके ग्रन्थकारोंके लिखे हुए होंगे ।

---

* वा० रामयण बालकाण्ड अ० ४१,

अन्तकी समसामायिकता श्रीकृष्ण और युधिष्ठरकी है जिनके साथ द्वापर युगकी समाप्ति और कलियुगका आरम्भ होता है, परन्तु यह समसामयिकता चन्द्रवंशकी है, हम ऐसा कोई साधन नहीं रखते कि जिसके द्वारा सूर्यवंशके श्रीरामचन्द्र और चन्द्रवंशके श्रीकृष्णके मध्यका समय निर्णय हो सके।

इस भांति क्रोष्टाकुलका मथुरापति कंस बुधसे उनसठवां था और उसके भानजे श्रीकृष्णजी अट्ठावनके पाये जाते हैं और पुरुकुलमें अजमीढ, देवमीढके वंशधर शल, जरासंध तथा युधिष्ठर क्रमानुसार ५१। ५३। और ५४ वें वंशधर होते हैं।

अंगवंशोत्पन्न पृथुसेन बुधसे त्रेपन ५३ वां था जो भारतके युद्धमें युद्ध करके बच रहा था।

इस प्रकार सबका औसत लगानेसे बुधसे श्रीकृष्ण और युधिष्ठरतक पचपन पीढी होती हैं, और प्रत्येकका शासनकाल बीस वर्षका लगावें तो इतनी पीढियोंमें ११०० वर्ष होते हैं, फिर यदि यह ग्यारह सौ वर्ष ईसासे ५६ वर्ष पहले होनेवाले विक्रमादित्य और श्रीकृष्णके मध्यवर्ती राजाओंके समयके साथ जोड दिये जायं तो सूर्य और चंद्रवंश दोनोंके समयका निर्णय ईसासे २२५६ वर्ष पहलेका निकलता है, कि जिसके कुछ दिनों पीछे ही मिश्र चीन और असीरियाके राज्योंका स्थापित होना बहुधा माना जाता है, और यह आरम्भ महाप्रलयकी घटनासे डेढसौ वर्ष पीछेसे जानना चाहिये।

---

१ यूरुप तथा भारतवर्षके हनहूँण होंगे अनुमान होता है कि यह तातारीजाति चन्द्र अथवा बुधके वंशमें हों। *

---

* यह दो नोट भी टाडसाहबकी सर्वथा मनगढन्त हैं परशुरामने सूर्यवंशकी सहायताके निमित्त शस्त्र धारण नहीं किया किन्तु सहस्रार्जुनके पुत्रोंने जब इनके पिता जमदग्निको मार डाला तब उनसे वैर लेनेके लिये इन्होंने क्षत्रियमात्रपर शस्त्र उठाया था। राजा दशरथ सूर्यवंशोत्पन्न थे उनसे तथा रामचन्द्रसे युद्धकी इच्छा की. (अनुवादक)

श्रीकृष्ण तो बौद्धधर्मावलम्बी न थे न उन्होंने कोई मत चलाया और न चन्द्रवंशियोंका बौद्धमत था यह बुद्धमत तो बहुत पीछेका है।

मिसरवालोंने सन् ई० से २१८८ वर्ष पहले मिसराइम, असीरियावालोंने ई० २०५९ पूर्वमें और चीनियोंने २२०७ में अपने देश बसाये थे।

यह बात कदाचित् जैन पंडितकी कृपासे वा सहायतासे लिखी होगी; चंपा जिसको अंगपुरी कहते हैं, गंगाके किनारे भागलपुरके समीप थी टाड साहबका इसको तिब्बतके समीप लिखना भ्रम है हूणोंके विषयकी कल्पना भी अप्रमाण है। न अग्निपुराणके देखनेसे यह बात पाई जाती है कि सूर्यवंशका मुख्य पुरुष मध्यएशियासे आया था, इसी प्रकार वंशवृक्षमें भी बहुत गडबड है जैसा कि तालजंघको उन्होंने सहस्रार्जुनकी छठी पीढीमें लिखा है, परन्तु वंशवृक्षसे उसमें अन्तर आता है; समसामयिकताका समाधान हमने पहले पृ० ९८० के नोटमें कर दिया है, सृष्टिके वर्षोंका समाधान तो सहजमें हो सकता—

अग्निपुराणके एक लेखसे ऐसा पाया जाता है कि इक्ष्वाकुके अधिष्ठातावाले सूर्यवंशी पुरुष मध्यएशियासे आकर भारतके वसनेवालोंमें सबसे पहलेके थे तो भी हमें चन्द्र-वंशके आदि पुरुषको समकालीन मानना पडता है, कारण कि ऐसा लेख है कि उसमें एक दूरदेशसे आकर इक्ष्वाकुकी भगिनी इलासे अपना विवाह किया ।

चन्द्रवंशकी वृद्धि करनेवाले कृष्ण और अर्जुनके वंशधरोंका वृत्तांत लिखनेसे पहले हम उनके पुरुषाओंके बसाये हुए मुख्य २ राज्योंपर प्रथम विचार प्रगट करेंगे और पश्चात् उनके वंशधरोंका वर्णन करेंगे ।

–है, इस समय जब कि विक्रम संवत्तक युधिष्ठिर संवत्को ही ३०५० वर्ष होते हैं, तब इक्ष्वाकुसे लेकर ईसातकके वर्षोंकी गणना २२५६ वर्ष बताना सर्वथा निर्मूल है और युधिष्ठिरसे ईसवी संवत्के प्रारम्भतक ३१०७ वर्ष होते हैं तथा १९०५ ई० तक ५०१२ वर्ष होते हैं और इक्ष्वाकुसे ईसूतकके वर्षोंकी गणना २२५६ वर्ष मानना सर्वथा अशुद्ध है । (अनुवादक)
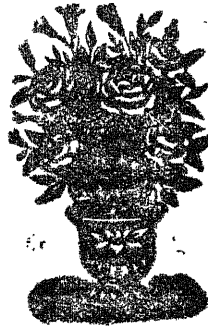
चौथा अध्याय ४.

भिन्न २ जातियोंद्वारा राज्यों और नगरोंका स्थापित होना ।

सूर्यवंशियोंने सबसे प्रथम अयोध्यानगरी बसाई जो बडी ऐश्वर्यशालिनी थी उससे अवधका नाम आजतक प्रसिद्ध है और यह नाम उस देशका भी है जो मुगल बादशाहके नाममात्र मन्त्रीके अधिकारमें है, और जिस देशकी पचीस वर्ष पहले प्रायः वही सीमा थी जो सूर्यवंशियोंके पुराने राज्य कौशलकी थी एशियाकी सब ही पुरानी राजधानियाँ बडी ही ऐश्वर्यसम्पन्न थीं, उनमें अयोध्याका वैभव सबसे अधिक था, इस समय प्रसिद्ध लखनऊ नगर प्राचीन अवधनगरके बाहरी भागोंमेंसे एक है जिसका नाम भगवान् रामचन्द्रने अपने भ्राता लक्ष्मणके सन्मानके निमित्त लक्ष्मणपुर रक्खा था ।

इस समयके निकट ही इक्ष्वाकुके पोते मिथिलेने मिथिलापुरी बसाई रोहतस और चम्पापुर इन दोनों राजधानियोंके पीछे बसे हैं, प्राचीन हैहयवंशकी एक छोटी शाखा इस समय भी नमर्दाके निकट बघेलखण्डके अन्तर्गत घाटीकी चोटीके निकट सुहागपुरमें विद्यमान है, यह अपनी प्राचीन वंशपरम्पराको नहीं जानते परंतु यह वीरतामें बडे प्रसिद्ध हैं ।

---

१ वाल्मीकिजीने रामायणमें इस प्रकार इसका वर्णन लिखा है कि--सरयूके तटपर कौशलनाम एक बडा देश है जो धनधान्यसे पूर्ण है, उसके भीतर बारह योजनके विस्तारमें मनुकी बसाई अयोध्या नगरी है, तीन योजनकी चौडाई है जिसके राजमार्ग यथोचित निर्माण हुए हैं, जहाँ छिडकाव होता रहता है, इसमें सुन्दर वाटिका लगी हैं, यह व्यापारियोंसे पूर्ण है, विशाल द्वार और ऊंचे महराबदार दालानोंसे शोभित; अस्त्र शस्त्रोंसे सम्पन्न; रथ हाथी घोडे और दूसरे देशके राजदूतोंसे संगठित है। पर्वत शृंगोंके समान गुम्मजवाले राजमहलोंसे शोभित, बडे ऊंचे २ महल हैं । जिनमेंसे बाँसुरी वीन पखावजकी ध्वनि गूंजती रहती है । नगरीके चारोंओर गहरी खाईं खुदी हुई है; बडे २ धनुषधारी योधाओंसे वह नगरी रक्षित है, महाराज दशरथ इसके अधिपति हैं, यहाँके सब पुरुष धर्मात्मा हैं, कोई नास्तिक नहीं है, सब अपनी २ स्त्रियोंसे प्रेम रखते हैं, स्त्रियें सुन्दर चतुर मधुर बोलनेवाली, विवेकिनी परिश्रमशीला पतिव्रता पतिकी आज्ञा माननेवाली उत्तम भूषण और वस्त्र धारण किये रहती हैं, पुरुष सत्यवादी अतिथिसत्कार करनेवाले गुरुजनों पितरों और देवताओंकी पूजा करनेवाले हैं, वहाँ आठ राजमंत्री, दो उत्तम शास्त्रके ज्ञाता धर्माचार्य, तथा दूसरे छः उपमंत्री हैं, यह जितेन्द्रिय निर्लोभी सहनशील धैर्यवान् हैंसमुख तथा सन्तोषी हैं अपने कार्यदेशके व्यवहारमें बडे चतुर सेना और खजानेपर ध्यान रखनेवाले अपराधी होनेपर पुत्रको भी दंड देनेवाले, शत्रुओंपर भी अन्याय न करनेवाले अभिमानरहित स्वच्छ वस्त्र धारण करनेवाले संदेहके विषयोंमें निश्चिन्त न रहनेवाले पूरे राजभक्त हैं ।

२ सीता रामचन्द्रजीकी पत्नीके पिता कुशध्वज भी जनक कहलाते हैं, यह इस वंशका साधारण नाम है, जिसको मिथिलाके सुवर्णरोमा राजासे तीसरे राजाने ग्रहण किया था (सीताके पिताका नाम कुशध्वज नहीं सीरध्वज था) । (अनुवादक)

३ बुधके हयहयवंशी लोग चीनजातिमें हुए पहले राजा लोगोंसे अपना सम्बन्ध बताते हैं ।

भागवतमें लिखा है कि इक्ष्वाकुके भाई आनर्तने कुशस्थली द्वारका बसाई, प्रयागराज जो गंगा यमुनाके संगम पर स्थित है, प्रासी पुरुष प्रयागके राजा पुरुके वंशधर थे, शकुन्तलाका विख्यात पति भरत भी प्रयागमें ही रहता था ।

रामायणमें लिखा है कि जब सूर्यवंशियोंसे हयहयवंशवालोंका युद्ध हुआ तो शशविन्धी (यदुवंशियोंकी एक शाखा) पुरु भी उनमें संयुक्त थे और इसी वंशमें चेदीको बसानेवाला शिशुपाल कृष्णके शत्रुओंमेंसे एक था शूरसेननामक दो राजा हुए हैं, इसमेंसे एकने शूरपुर बसाया है ।

---

१ आनर्त इक्ष्वाकुका भ्राता नहीं किन्तु उनके भाई शर्यातिका पुत्र था; और कुशस्थली उसने नहीं बल्कि उसके पुत्र रेवतने बसाई थी ।

२ भरत शकुन्तलाका पति नहीं किन्तु पुत्र है, यहाँ ग्रन्थकर्ताने बडी भूल की है

(अनुवादक)

३ शशविन्धी शिशोदिया शब्दकी उत्पत्ति भी इसी शब्दसे कही जाती है (पुराणोंमें इनको शशबिन्दु लिखा है सिसोदा ग्राममें रहनेसे सिसोदिया कहाये) । (अनुवादक)

४ चेदी राजधानी नहीं है, किन्तु जब्बलपुरके समीपके विस्तृत देशका नाम है जिसकी राजधानी त्रिपुरी थी जिसे अब तेवर कहते हैं ।

५ यह देश इस समय यमुनामें डूब गया है सन् १८१४ में मैंने इसके शेष भागकी खोज की थी जिससे मुझे हर्ष प्राप्त हुआ, इसके एक भागमें तो वटेश्वरका पवित्र तीर्थस्थान है, उसकी खोजसे मुझे दूना आनन्द मिला, जब कि मैंने यदुनिवोंके वहे शूरसेन देशका पता लगाया, उस समय मुझे अपोलोडोटस नामक एक प्रसिद्ध राजाके समयका सिक्का मिला, जिसने सिन्धुके मुहानेतक और यह भी संभव हो सकता है कि यादवोंके राज्यके मध्यतक आक्रमण किया था, वाकूट्रियाके नरेशोंकी नामावलीमें वेयरने इस नामका उल्लेख नहीं किया है, हमको भी उस वंशका वृत्तान्त अपूर्ण ही मिला है श्रीमद्भागवतमें × लिखा है कि बल्किदेश वा वाकूट्रियामें १३ यवन वा आयोनियन नरपति हुए, इसमें दुर्मित्रको भी संयुक्त करते हैं,--हमारे विचारमें (यूथिडिमिस) का पुत्र (डेमिट्रियस) ही था, परन्तु मिनेण्टरके मध्यमें सिंहासनपर स्थित होनेके कारण अपने पिताके सिंहासनका अधिकारी न हो सकता, मेरे पास एक सिक्का इस अंतिम विजेता 'मिनेनडर' का भी विद्यमान है यह मुझे शूरसेन देशसे मिला था, यह पदक विजयके स्मरणके निमित्त निर्मित किया गया था, उसके ऊपर एक चित्र स्वर्गीय शान्तिके पंखवाले दूतका है, वह हाथमें ताडवृक्षकी शाखा लिये है यह दोनों नाम बाकट्रियाके इतिहासकी अपूर्णताको पूरी कर देंगे, कारण कि मिनेनडरको लोग भलीभांतिसे जानते हैं. यदि एरियन इतिहासलेखक न होता तो अपोलाडेटसका नामतक लुप्त हो जाता, जिसने [पेरीप्लस् आफ दी इरीथियनसी] नाम पुस्तक दूसरी शताब्दीमें बनाई थी, जब कि एरियन भडौचको संस्कृतमें भृगु कच्छ और यूनानी वरुगज कहते हैं । और यह बात सत्य है यदि एरियन न होता तो—

× भागवतमें १३ वाह्लीक राजाओंके नाम है जो शिशुनन्द और उनके भाई यशोनन्दीके पुत्र माने गये हैं स्कन्द० १२ अ० १ श्लो० ३३ । ३४ परन्तु उसके पहले जहाँ यवनराजाओंके--होनेकी बात लिखी है वहां आठ राजाओंके नाम लिखे हैं, पुष्प, मित्र और दुर्मित्रको यवन और बाह्लीक राजाओंसे पृथक् माना है ।

१० सिकन्दरका सामना करनेवाले पोरसनामके दो महाराजाओंमेंसे एक पुरु वंशकी नगरी हस्तिनापुरमें निवास करता था, संभव है कि वह चन्द्रगुप्तका पुत्र कर्पन हो जिसके लिये ऐसा अनुमान है कि वे यूनानियोंके उल्लेख किये हुए लेक्षी फ्रीयस और अविसरस हों, सिकन्दरके इतिहास लेखकोंने जिन दो पोरसराजाओंका वृत्तान्त लिखा है उनमेंसे एक तो ऊपर लिखे पुरुवंशियोंके आदि स्थानमें ही रहता था, और दूसरा पंजाबकी सीमापर था, जिससे यह बात कि सिकन्दरके समय पोरो चन्द्रवंशी थे सिद्ध होती है तथा अनेक ग्रन्थकारोंने मेवाडके नरपतियोंको जो पोरस कुलमें होना बताया है उसको निर्मूल सिद्ध करता है।

११ अजमीढकी चौथी पीढीमें बाजस्व (बाह्यारव) राजा हुआ जिसके पांच पुत्रोंके नामसे देशका नाम पांचालिक पडा।

१२ कुशनाभने गंगाकिनारे जो नगर बसाया वह कन्नौज कहाता है, अब्दुल फजलने इसके लिये लिखा है कि प्राचीनकालमें यह नगर ३५ मीलके घेरेमें था, इसमें पान बेचनेवालोंकी ३०००० दुकानें थीं, छठी शताब्दीमें इसकी बडी शोभा थी, और यह नगरी पांचवीं शताब्दीसे राठारोंके अधिकारमें थी, जो अधिकार बारहवीं शताब्दीमें जयचन्दके साथ समाप्त हो गया. इसका विशेष वृत्तान्त चन्दकविके लेखसे विदित होता है।

—मेर. अपोलो डोटसके पदककी आधी प्रतिष्ठा होती, और यूनानमें आनेके पीछे मुझे डेमीट्रियसके बुखारामें प्राप्त हुए, एक पदकके विद्यमान होनेका भी पता मिला, जिसपर सेंटपिटर्सवर्ग (रूसकी राजधानी) के निवासी एक विद्वानने निबन्ध लिखा है।

१ गंगाजीकी एक तीव्र बाढसे हस्तिनापुर बह गया है, विल्फर्ड साहबका कथन है कि महाभारतके पश्चात् छठी वा आठवीं पीढीमें यह घटना हुई होगी, दोआबेकी यात्रा करनेवालोंने उस स्थानको देखा होगा, जहाँ गंगा और यमुनाने अपने स्थानको परिवर्तन किया है।

२ सर टामस रो सर, टामस हर्बर्ट, सर होल्सटीन, राजदूत ओलीरियस, डेलाविलों, चार्लेसने अपने संग्रहों और इन्हींकी पुस्तकोंसे लेकर एन्थ्रिलबेचर और आर्मी तथा रेनल आदिने लिखा है।

३ यदि किसी दूसरी रीतिसे यह बात प्रमाणित हो तो केवल मेवाडके वंशकी इस बातसे अजानकारी थी इसके विरुद्ध कोई दृढ प्रमाण हो ही नहीं सकता, परन्तु उस समय सिंधु और पश्चिम ओरसे भारतमें आनेवाली चन्द्रवंशीय तथा अन्यजातियोंसे सूर्यवंशी राजा दब गये थे, और उनके द्वारा उनको राज्यसे च्युत होना पडा।

४ अजमीढकी भार्या नीलासे पांच पुत्र हुए जिनकी शाखाएँ सिंधुनदीके दोनों किनारे फैल गई इनके तीन पुत्रोंके विषयमें पुराणोंने कुछ नहीं लिखा, जिससे पाया जाता है वे लोग कहीं दूरदेशको चले गये, ऐसा भी हो सकता है कि उन्हींसे मीढ वंशकी उत्पत्ति हुई हो, मीडीलोग मनुके तीसरे पुत्र ययातिकी संतान हैं मीडियोंका मूलपुरुष मेडाई जाफेटके वंशमें हुआ है, बाजस्व (बाजसनेई) शाखाके मूलपुरुष अजमीढका नाम अज अर्थात् बकरेके नामसे लिखा गया है, बाइबिलमें असीरिया देश मोंडीबकरेके नामसे उल्लेख किये गये हैं।

५ पांच पांडव भ्राताओंकी स्त्री द्रौपदी इसी घरानेकी थी, वह अनोखी चाल सीथियादेशमें पाई जाती है।

कुरुके सुधनु और परीक्षित हुए, सुधनुका वंश जरासन्धके साथ जिसकी राजधानी राजगृह, इस समय जिसको राजमहल[1] कहते हैं, जो सूबे बिहारमें गंगाके किनारे है समाप्त हुआ, परीक्षितिके वंशमें शान्तनु और बाह्लीक हुए बाह्लिकके पुत्रोंने दो राज-स्थापन किये गंगाके निचले भागमें पालीबोथरा [पाटलीपुत्र] और शलने सिन्धु नदी के पूर्वी किनारेपर अरोर[2] बसाया ।

---

१ राजगृहको इस समय राजगिरि कहते हैं, पहले इसको गिरिव्रज कहते थे; चीनी यात्री हुएन्सगने इसका नाम कुशाग्रपुर लिखा था राजमहल इसका नाम नहीं है, इस नामका एक दूसरा शहर है बंगालदेशके संताल परगनेमें है ।

२ अरीर वा आलोर पहले समय सिन्धदेशकी राजधानी था जो सिंधुनदीकी एक शाखा दराके समीपसे निकली है, उसके ऊपरका पुल ही सिकन्दरके समयकी सोगडीकी इस राजधानीका बचाकुचा चिन्हमात्र है, मरुस्थलके गडरियोंने अब उस स्थानपर एक बडी बस्ती बसाई है जो भक्खर के टापूसे सात मीलकी दूरीपर पूर्वकी ओर सिंधुके बाढकी पहुँचके बाहर सिलीसस जातिके भाषणकी पहाडीपर बसी हुई है । प्रमारवंशकी सोढानामक एक प्रबल शाखाके लोग बहुत पुराने समयसे इन देशोंके अधिकारी थे और बहुत कालतक उमरकोट और उमर सुमरा उनके अधिकारमें रहा, जिस देशमें अरीर नगर था ।

अब्बुलफजलको कोशल और उसकी राजधानीका नाम विदित था पर इस स्थानका पता नहीं जानता था, जिसको उसने देविल वा देवल लिखा है, जो इस समय नगरठट्ठा कहाता है, इस परिश्रमी इतिहासलेखकने उसके लिखनेमें इस प्रकार लेखनी चलाई है कि पुराने समयमें सिहरिस (शल) नामक एक राजा था, जिसकी राजधानी आलोर थी, उत्तरमें काश्मीर और दक्षिणमें सागरपर्यंत उसका राज फैला हुआ था । उस देशका प्रलंब सिहर और वहांके राजाओं तथा निवासियोंके सहराई[1] उपनाम पड गया ।

इससे यह विदित होता है कि आलौर सिगटिसे राज्यकी राजधानी थी जिसको बाक्ट्रियाके मिनेनडरने जीता था, भूगोलवेत्ता अरबनिवासी इनहौकलने इसका वृतान्त लिखा है, परंतु कदाचित् लिखनेमें एक बिंदु अधिक लगजानेसे आरोरके बदले आजोर वा अजोर हो गया हो जैसे कि सर डब्लूऔसूलेने अपने अनुवादमें लिखा है ।

विख्यात डैनविलने भी इसका वृत्तान्त लिखा है परंतु वह इसके स्थानको न जानता था, उसने अब्बुलफिदाके लेखको उद्धृत करके लिखा है कि आजोर ऐश्वर्यमें मुलतानके समान था ।

यदि भारतवर्षके उत्तरीभागकी राजधानियोंका पता लगानेवाले पुरुषका नाम पूछा जाय तो वह, पता लगानेवाला 'मैं' कहा जा सकता हूं जैसे कि यादवोंकी राजधानी शूरपुर यमुना नदीपर-सोढोंकी, राजधानी आलौर सिंधुके तटपर, पडिहारोंकी राजधानी; मैन्दोद्री[3] (मंदोर), चन्द्रावती

---

१ सहराशब्द फारसीमें जंगलवाचक है कदाचित् उससे सहराई शब्द बना हो ।

२ कदाचित् यह नाम कच्छसागरके तटके लिये दिया गया हो ।

३ मन्दोद्री नाम नहीं संस्कृतमें इसको माण्डव्यपुर लिखा है, अब मण्डोर है (अनुवादक)

ययातिके वंशकी एक बृहत शाखा जो उस बाउर वसुके नामसे विख्यात है जिसको दूसरे लेखकोंने तुर्वसु लिखा है चली, उसका वर्णन अभी शेष है।

उसके वंशजोंने अनेक राज्य स्थापन किये। उससे आठवें राजा विसतके आठ बेटे हुए जिनमेंसे द्रुह्यु तथा बभ्रुनामकी दो शाखाओंका विशेष वृत्तान्त पाया जाता है।

द्रुह्युसे उत्तरदेशमें एक वंश स्थापित हुआ, कहा जाता है कि आरद्वान और उसके पुत्र गांधारने राज्य स्थापन किया और प्रचेत म्लेच्छ वा असभ्य देशका अधिकारी हुआ।

भरतराजाकी स्त्री विख्यात शकुन्तलाके पिता दुष्यन्तके संग यह वंश पूर्ण हो गया, जिसके विषयमें हिंदूजातिका कथन है कि कोई देवता उनसे अप्रसन्न हो गया था, और उसीने इस वंशपर अनेक आपत्तियें डालीं।

दुष्यन्तक पोते केरलके विषयमें यही कह सकते हैं कि, वह बारहवीं शताब्दीमें होनेवाले छत्तीस राज्य वंशोंकी नामावलीमें नाम पाता है पर इसकी राजधानी हमको विदित नहीं।

मालावारमें चौबोल (चोल प्रसिद्ध है)

—अर्वलीकी तलैटीमें। बाह्लीकराजाओंकी राजधानी बल्लभीपुर गुजरातमें, जिनको अरबयात्रियोंने वलेहरा नाम दिया है, बाह्लीकवंशी अरोरके शलके वंशधर सौराष्ट्रके वल्लीराजपूतोंने इसका नाम बल्लीपुर रक्खा होगा, उन लोगोंको ठट्ठामुलतानका राव कहकर आजतक भाटलोग आशीर्वाद देते हैं, वह ठट्ठा और मुलतान बाह्लीकके पुत्रोंकी राजधानियां थीं, और यह बात भी संभव हो सकती है कि महाभारतके युद्धके पीछे जब भारतवर्षके हर्क्यूलीज (बलराम) भारत वर्षको त्याग कर चले गये तब उनकी अधीनतामें रहनेवाले इस कुलकी एक शाखाने बल्कि वा बरख बसाया हो जो नगरोंकी जननीके नामसे विख्यात हैं, जैसलमेरके इतिहासमें लिखा है कि चन्द्रवंशकी यादव तथा बलिक (बाह्लीक) शाखायें महाभारतके पश्चात् खुरासानमें राज्य करती थीं, जिनको इनडोसीथिक जातिके नामसे यूनानी ग्रन्थकारोंने लिखा है।

—बलिक (बाह्लीक) तथा इण्डोमीडिज अनेक शाखाओंके सिवाय कुरुके बहुतसे पुत्र भी इन देशोंमें फैल गये थे जिनमें हम पुराणमें लिखे हुए उत्तरकुरुको भी संयुक्त कर सकते हैं, यूनानी इसको आटरीकुरी लिखते हैं, जब सूर्यचन्द्रके अधिकृत प्रदेशोंमें जनसंख्या विशेष बढ जाती थी तब वे अपने यहाँके मनुष्योंको उन दूरदेसोंमें सदाके लिये रहनेको भेज देते थे और संभव है कि उस कालमें सिन्धुनदीके पूर्व पश्चिममें निवास करनेवाली इन जातियोंमें अनादिकालका एक ही धर्म माना जाता हो।

१ टाड साबने यह बडे भ्रमकी बात लिखी है, शकुन्तलाके पिता दुष्यन्त नहीं किन्तु पति हैं, और भरत शकुन्तलाका बेटा है, शकुन्तलाका चरित्र तो बहुत विख्यात है। टाड साहबसे यह बडी भूल कैसे हुई [अनुवादक]

२ समुद्रकिनारेके चौबालसे जूनागढकी ओर जातेमें सात मीलपर एक प्राचीन नगरके खण्डहर पाये जाते हैं [अनुवादक]

---

१ अरबवालोंने बलहराशब्द दक्षिण राठौरोंको लिखा है, बल्लभीपुरके राजाओंको नहीं कारण कि अरबवालोंने उनकी राजधानी मानकेर वा मान्यखेट लिखा है जो दक्षिणमें राजधानी है (अनु०)

२ शलवंशी राजपूत चन्द्रवंशी हैं और बल्लभी पुरवाले सूर्यवंशी हैं (अनुवादक)

जो दूसरी शाखा बभ्रुसे निकली वह भी प्रसिद्ध हुई, इसके चौंतीसवें राजा अंगने अंगदेशको बनाया, चम्पा मालिनी इसकी राजधानी थी, जो ईसासे १५०० वर्ष पहले कन्नौजके संग बसाई गई थी, उसके साथ इस वंशका नाम भी बदल गया, और यह लोग इतिहासमें अंगवंशी कहलाने लगे, और इस समय तक चीनी तातारकी सीमापरका तिब्बतका उच्च प्रदेश अंगदेशसे विख्यात है ।

प्रस्तुसेन (पृथुसेन) पर अंगवंशकी पूर्ति हो गई महाभारतके युद्धमें यही राजा बचा था, संभव है कि इसके वंशके लोग उन देशोंमें फैले हों जहां कि, जाति-भेद न माना जाता था ।

इस प्रकार मनु बुधसे लेकर भगवान् राम और श्रीकृष्णजीतक सूर्य और चन्द्रवंशी राजाओंकी संक्षेपसे समालोचना की गई हमको आशा है कि इससे कई एक नई बातें सिद्ध हो गई होंगी और इससे हमारे मनोरथमें कुछ दृढ़ता भी हुई होगी ।

इन महाराजाओंके स्थापित किये बडे २ नगरोंके खँडहरोंका अबतक पता लगता है इक्ष्वाकुवंशकी राजधानी सरयूके किनारे अयोध्या, इन्द्रप्रस्थ, मथुरा, सूरपुर और प्रयाग यमुनाके किनारेपर, गंगाजीके किनारे हास्तिनापुर, कान्यकुब्ज, और राजगृह, नर्मदाके किनारे माहेश्वर, सिन्धुके किनारे अरोर, पश्चिम सागरके किनारे कुशस्थली द्वारका इनमें अबतक पुराने समयका कोई २ चिह्न पाया जाता है यदि विशेष पता लगाया जाय तो अब भी बहुतसे चिह्न पाये जा सकते हैं ।

पांचालिकमें अभी एक देश और भी पता लगानेको है; जिसमें उनकी राजधानी काम्पिलनगर तथा वे सब नगर संयुक्त थे जो बाजस्व पुत्रोंद्वारा सिंधुके पश्चिममें बसाये गये थे ।

यदि कोई यात्री साहस करके आक्सस नदीके आगेके देशोंमें जाकर साइरोपोलिस और इस्कन्दरियाके सबसे उत्तरी स्थानोंमें बलख तथा बामियाकी कन्दराओंमें ढूंढभाल करै तो हो सकता है कि पुराने इण्डोसीथिक [भारतकी शक) जातिके चिह्नोंकी खोज लग सकै ।

अबतक अनेक प्राचीन नगर भारतभूमिमें विद्यमान हैं जिनके खँडहरोंसे कुछ २ वृत्तान्त जाना जा सकता है जहाँ ऐसे लेख शिलाओंपर लिखे पाये जाते हैं जो अबतक पढे नहीं जाते परन्तु उनकी सदा न पढनेकी सी दशा नहीं रहैगी यदि इस विषयकी बराबर खोज होती रही और एक दिन उनके पढनेकी कुंजी हाथ लग गई तो इस

---

१ अंगदेशके स्थापन करनेवाले राजा अंगसे लोमपाद छठी पीढीमें था, इसने चम्पा मालिनी बसाई, राजा दशरथके यहाँ जानेकी कथा रामायणमें पाई जाती है, जिससे वह पहाडी देश पाया जाता है इसके सघन वन और नदियोंके कारण यात्रामें बडा कष्ट हुआ था, इससे अनुमान होता है, कि, कर्नेल फ्रैंकलिनने चम्पा मालिनी नामक स्थानवाले जिस बंगालभागको पाली बोथराके निबन्धमें लिखा है और उसे अंगदेश माना है यह उनका कथन असंगत है । (अनुवादक)

हमारी समझमें टाडसाहबका कथन असंगत है फ्रंकलिनका कथन सत्य है—(अनुवादक)

विषयमें बडी सहायता प्राप्त होगी जिस २ स्थानमें कुरु उरु और यदुवंशियोंका राज्य रहा है वहां वहां ऐसे शिलालेख मिले हैं जो अबतक पढनेमें नहीं आते * ।

यदि पुराणोंमें लिखे हुए ऐतिहासिक और भूगोलिक वृत्तान्तको कोई विशेषरूपसे मनन करे तो उसको बडा लाभ हो सकता है परन्तु मैं इस बातका विश्वास नहीं करता कि, भगवान रामचन्द्रका इतिहास और कृष्णजी तथा पांडवोंका महाभारत × इतिहास रूपकमात्र है मुझे आश्चर्य है कि उनके वंश नगर तथा मुद्रा आदिके इस समय तक रहते भी कितने एक लोग ऐसा क्यों कहते हैं । जिस समय हम दिल्ली, प्रयाग और मेवाडके स्तम्भों तथा जूनागढ और अर्बलीकी विजोल्याके चट्टानों और भारतवर्षके पृथक् २ जैन मंदिरोंके शिलालेखों को पढकर उनका ज्ञान प्राप्त कर सकें तो हमको और भी सन्तोषदायक निर्णय प्राप्त हो सकता है ।

---

* परन्तु अब ऐसी शिलालिपिकी पुस्तक बन गई है कि, जिससे सब प्रकारके लेख पढे जा सकते हैं (अनुवादक)

× पाण्डवोंका और हरकुलियों (कृष्ण बलदेवजी) का वृत्तांत और उनके पराक्रमके कार्य भारतके प्रत्येक प्रान्तमें दूर २ तक प्रसिद्ध हैं, सोराष्ट्रदेशकी घने वृक्षोंसे आच्छादित पर्वतमालामें हिडम्ब तथा विराटके घने वन और कन्दराओंमें जहां अबतक जंगली भील और कोलिये रहते हैं और चम्बलके पथरीले किनारोंमें अबतक जनश्रुति चली आती है कि, यमुनातटसे हटाये जाकर इन स्थानोंमें वे पांडव वीर निवास करते थे (जब उनको बनवास हुआ था) पर्वतोंकी गुफाओंमें काटकर बनाई मूर्तियें विशाल मंदिर और गुफाओंके शिलालेख जो पढे नहीं जाते वे सब ही पुराणसम्बन्धी कथाओंके पुष्टिकारक हैं ।

१ जूनागढ गिरनार पर्वतकी तलैटी उसकी रक्षा करनेवाली प्राचीन राजधानी है, अब्बुलफजल कहता है कि, बहुत दिनोंतक यह अज्ञात अवस्थामें उजाड पडी रही, अकस्मात् ही इसकी खोज लग गई, विशेष वृत्तांत विदित न होनेसे इसे जूना पुराना गढ—कोट कहते हैं परन्तु मैं विश्वासके साथ कहता हूँ कि, गिह्लोटोंका लिखा हुआ यह असिल दुर्ग या असिल गढ है उसमें उल्लेख है कि, असिलने डावीवंशके राजा अपने मामाकी अनुमतिसे गिरनारके समीप अपने नामपर एक दुर्ग निर्माण कराया था ।

---

१ जूनागढके समीप एक चट्टानपर राजा अशोककी चौदह धर्माज्ञाएं और दूसरी ओर क्षत्रियवंशी संवत् २१५ में होनेवाला राजा रुद्रदामाका लेख है जिसपर एक मंदिर बनवाकर उनकी रक्षा कर सर्वसाधारणका धन्यवाद लिया है। बीजौल्यां (मेवाड) से एक मील दूर दो चट्टानों पर खुदे लेख हैं वहां संवत् १२२६ का चौहानवंशके राजा सोमेश्वरका लेख है जिससे चौहानोंके इतिहास विषयमें बहुत कुछ जाना जा सकता है । इसपर भी मकान बना हुआ है । कोई कहते हैं असिलगढका नाम जूनागढ नहीं है कारण कि, यहांके शिलालेखमें महाक्षत्रप रुद्रदामाका २१५ संवत खुदा है और उसका नाम गिरिनगर है । इस चतुर्थ अध्यायका [illegible] प्रथमभागके तृतीय अध्याय में आ गया है इस कारण उसका पुनः उल्लेख नहीं किया है. (अनुवादक)

पाँचवाँ अध्याय ५.

भगवान् रामचन्द्र और श्रीकृष्णचन्द्रजीके पश्चात्की वंशावली।

महाराज इक्ष्वाकुसे लेकर श्रीरामचन्द्रजीतक और बुध [चन्द्रवंशका * आदि पुरुष जो शाकद्वीप अथवा सीथियासे भारतवर्षमें आया था] से आरम्भ कर श्रीकृष्णजी तथा युधिष्ठिरपर्यन्त बारहसौ वर्षके समयकी आलोचना करके अब वंशसूचीके दूसरे भाग और दूसरे वंशवृक्षकी समालोचना करनेमें प्रवृत्त होते हैं।

मेवाड, जयपुर, मारवाड और बीकानेरके नरेश अपनेको महाराज रामचन्द्रका वंशधर कह कर सूर्यवंशी बताते हैं और उनकी शाखाएँ भी अपनेको सूर्यवंशी कहती हैं, इसी प्रकार जैसलमेर और कच्छके राजपुरुष (भाटी और जाडेजा जो सतलज नदीसे समुद्रपर्यन्त भारतवर्षके मरुस्थलमें सब जगह फैले हुए हैं, अपनी उत्पत्ति चंद्रवंशमें बुध और श्रीकृष्णजीसे बताते हैं।

श्रीरामचन्द्रजी श्रीकृष्णजीसे बहुत पहले नहीं हुए कारण कि, उनके इतिहासलेखक वाल्मीकि और व्यासजी समकालीन थे जिन्होंने अपनी आँखों देखी घटनाएँ लिखी हैं।

सूर्यवंश, इन्दुवंश और जरासन्धकी वंशावलियाँ भागवत, अग्निपुराण और पाण्डु वंशमें राजतरंगिणी तथा राजावलीसे उतद्धृ की गई हैं। सूर्यवंशी राजपूत

---

* संस्कृतमें चन्द्रका नाम इंदु और सोम है,इससे इनको सोमवंशी भी कहते हैं, संभव है कि, इंदुशब्दसे ही हिन्दूशब्दकी उत्पत्ति हुई हो।

१ एकांतमें स्थित घाट जिसकी राजधानी अमरकोट भाटियोंको जाडेजोंसे पृथक् करता है, घाटको अब सिन्धदेशमें मिला लिया है, यहांका राजा परमार सोडा जातिका है, जो पहले समस्त सिन्धुदेशके स्वामी थे।

२ व्यास और वाल्मीकि समकालीन नहीं यह व्यास २८ वें हैं बाल्मीकि के समयमें यह व्यास नहीं थे; और ऋषि दीर्घायुवाले होते हैं, इनका समकालीन होनेसे राजाओंका समकाल नहीं हो सकता। (अनुवादक)

३ यह तीन वंशावली दी हैं चौथे और पांचवें वंशकी वंशावली भी हम देते परन्तु वे पूर्णरूपमें नहीं हैं उनमें पहले तो रामचन्द्रके दूसरे पुत्र कुशका वंश जिसमें नरवर तथा आमेरके राजा संयुक्त हैं, दूसरे वंशमें श्रीकृष्णजीके वंशधर जिनके कुलमें जैसलमेरके राजा हैं [रामचन्द्रके बडे पुत्रका नाम लव नहीं किन्तु कुश है]। (अनुवादक)

अपनेको रामचन्द्रके दूसरे पुत्रों तथा भ्राताओंके वंशमें होना बताते हैं ऐसा मुझे विश्वास नहीं है।

मेवाडके राणा अपनेको सूर्यवंशी बताते हैं इसी प्रकार बडगूजरलोग जो पहले वर्त्तमान आमेरदेशमें बडे पराक्रमी थे और जिनके वंशवाले अब गंगाजीके किनारे अनूपशहरमें रहते हैं उसी वंशसे अपना उत्पन्न होना बताते हैं।

नरवर और आमेरके कुशवाहे (कछवाहे) राजा और उनकी अनेक शाखायें कुशसे निकली हैं यद्यपि ऐश्वर्यमें आमेर सबसे प्रथम है, परन्तु वह नरवरकी एक शाखा है जो लगभग एक वर्ष पहले वहांसे आकर बसी थी, जिसका राजा विख्यात राजा नलका प्रतिनिधि है, जो अपने पुरांने राज्यके एक छोटेसे जिलेका अधिपति है।

इसी कुलमें अपनेको मारवाड राज्यवंश कहते हैं, पर यह बात वंशावली लिखनेवालोंकी भूलसे उन्होंने मानी है, जिन्होंने कुशके वंशको कन्नौज तथा कौशाम्बी नगरीके कौशिक वंशसे मिलाकर बडा धोखा खाया है, और परम्परा सूचीको गडबडा दिया है सूर्यवंशकी वंशावली लिखनेवालोंने भी इस मनमानी वंशपरम्पराको स्वीकार नहीं किया है।

आमेरके राजाने जो अपनी वंशावली तयार की है उसमें मेवाडके राजवंशकी नामावली श्रीरामचन्द्रके ज्येष्ठपुत्र लवसे सुमित्रतक दी गई है, कुशसे नहीं जैसा कि सर विलियम जौन्सने जिस ग्रन्थसे वंशावली तैयार की है उस ग्रन्थमें और कई एकपुराणोंमें ई जाती है।

---

१ इस समय कछवाहा लिखा और बोला जाता है (कुशवाहा) शब्द टाडसाहबका कल्पित विदित होता है, पुराने लेखोंमें कच्छपघात और कच्छपारि लिखा मिलता है। (अनुवादक)

२ आमेरके कछवाहे नरवरसे आये हुए ग्वालियरके कछवाहोंकी छोटी शाखाके अन्तर्गत हैं। ग्वालियरके राजा वज्रदामाके पुत्र मंगलराजाके दो पुत्रोंसे दो शाखा चली थी। इनमें कीर्तिराजा के वंशधर कुतुबुद्दीनके समयतक जयपुरमें राज करते रहे, और छोटे पुत्र सुमित्रके परपोते देवानीकके बेटे सीढदेवने संवत् ११२५ में राजपूतानेमें आकर राज्य स्थापन किया। (अनुवादक)

३ यह मध्यभारतके उच्च प्रदेश शाहाबादके निकट है।

४ इस वंशावलीका सत्य असत्य रूपसे चाहे जैसा सम्मान किया जाय परन्तु प्रत्येक राजा और प्रत्येक पढा लिखा हिंदू इस बातको मानता है कि, मेवाडके राणा भगवान रामचन्द्रके वंशधर सूर्यवंशी हैं, इससे उन्हींका नहीं उनकी राजधानीका भी प्रत्येक हिंदूजाति सन्मान करती है।

५ जिस समय मेवाडके राणाने एक राजद्रोही सरदारको जो चित्तौरमें था सर करनेके लिये माधोजी सेंधियाको सहायतार्थ बुलाया उस समय उस निश्शंक माधोजीपर उस स्थानका प्रभाव ऐसा पडा कि, जिसके भीतर सर्व्वसम्मतिसे श्रीरामचन्द्रकी गद्दी स्थापित होनी मानी गई है उस किलेकी दीवारोंपर वह गोली चलानेको राजी न हुआ, तब राणाने स्वयं गोली चलाकर उसके संकोचको दूर कर दिया।

६ एनेलीसिस पुस्तकमें ब्रायण्टने लिखा है कि कुशाइट हामके वंशधर सलाम करनेके समयमें उसके आदरके निमित्त उसका नाम उच्चारण करते थे, इस विषयमें हिंदूजातिमें राम राम और दूसरा पुरुष उत्तरमें सीताराम कहता है (यह बात तो नहीं है रामरामके बदलेमें रामराम ही कहा जाता है। (अनुवादक)

जिस ग्रन्थके सहारे सर विलियम जौन्सने अपनी वंशावली तयार की है परंतु नामों-का हेर फेर करके उसको विगाड दिया है और उसके लिये जो प्रमाण दिये हैं, वे भी अधूरे हैं, तथा वह हिंदुओंके सिद्धांतके विरुद्ध हैं, जिनको युधिष्ठरका समसामयिक माना है उन बृहद्बल और बृहन्शूरके नामोंको देखकर उन्होंने अपनी वंशसूचीमें तक्षक तथा बहुमानके मध्यके दश राजाओंके नाम उलट पुलट कर दिये हैं ।

* बहुमान [लम्बी भुजावाला] राजा श्रीरामचंद्रजीसे चौंतीसवीं पीढीमें है, और उसके राज्यशासनका समय रामचंद्रजीसे छःसौ वर्षः पीछे वा सुमित्रसे उतना ही प्रथम होना चाहिये, कारण कि यह रामचंद्र और सुमित्र वा उसके समकालीन विक्रमके बीचमें है ।

भागवत पुराणके देखनेसे सुमित्रके साथ सूर्यवंशकी समाप्ति होती है, और मेवाडके वर्तमान वंशका जिस जयसिंहके साथ सम्बंध बताया गया है, उसका मिलान कई वंश-सूचियोंसे किया, और विशेषकर जैनियोंकी वंशसूचीसे मिलान किया गया है जैसा कि मेवाडके इतिहासमें लिखा गया है ।

भगवान रामचन्द्रसे आरम्भ कर पुराणोंमें लिखे इस वंशके अन्तिम राजा सुमित्रतक सूर्यवंशमें ५६ राजा हुए, जौन्सने ५७ लिखे हैं, यदि हम इनमें प्रत्येकका राज्य-शासन समय बीस २ वर्ष मानें तो सुमित्रतक जो विक्रमादित्यसे थोडे ही काल पूर्वमें हुआ है, रामचन्द्रजीसे लेकर ११०० वर्षोंकी संख्या हम पूर्वमें लगा चुके हैं, इससे यह सिद्ध हो गया कि, महाराज इक्ष्वाकुसे सुमित्रतक २२०० वर्ष बीते हैं ।

---

१ मेरी वंशावलीमें यह नाम पचीसवाँ और बेंटलेकी वंशावलीमें रामचन्द्रसे पच्चीसवीं पीढीमें है ।

२ यह नाम मेरी सूचीमें ३४ वां और बेंटलेकी नामावलीमें तीसवाँ है, परन्तु बीचके नाम रामचन्द्रजीके पीछे तथा बाहुमान (जिसको बेंटलेने बाहुमत लिखा है) का नाम तक्षकके पीछे लिखा है ।

* लोगोंने समय मिलता हुआ देखकर मिथरस–सूर्यको पूजनेवाले दाराके पिता और अर्तजर्क-सीजके पुत्रको सूर्यवंशमें संयुक्त कर लिया हो, राजा जयसिंहने इस वंशावलीके पिछले एक पुरुषको नौशेरवाँ लिखा है, जिससे इस मिलानकी और भी पुष्टि होती है, अवश्य ही एक बडी भारी सेना लेकर बाहुमानने मिथिला और मगधके सूर्यवंशी नरेशोंपर आक्रमण किया था, उस समयमें ठीक प्रथम दारा और उसके पिताका होना पाया जाता है, हेरोडोटस कहता है कि, दाराके राज्यका सबसे अधिक ऐश्वर्यसम्पन्न सूबा हिंदूजातिका देश था । डीहवेंलाटकी बाइबिल और अंटल बहमन-का निबंध देखो ।

३ टाड साहबकी यह कल्पनामात्र है, बीस ही वर्षका औसत क्यों लगाया जाय जब कि महारानी विक्टोरिया पचास वर्षसे अधिक राज्य कर चुकी थीं, तब पहले पुरुष तो बडे बली और निरोग होते थे, फिर उनकी आयु बडी होती थी इससे यह वर्षगणनाका अनुमान ठीक नहीं ।

(अनुवादक)

इन्दुवंश अर्थात् पाण्डुवंशी युधिष्ठिरकी सन्तानकी वंशावली राजतरंगिणी तथा राजावलीसे संग्रह की गई है, यह दोनों ग्रन्थ पंडित विद्याधर जैन और पंडित रघुनाथके निर्माण किये हुए राजवाडेमें वंशावली और ऐतिहासिक घटनाके लिये विख्यात हैं, यह उस समयके सबसे अधिक विद्वान् आमेरके सवाई जयसिंहके समयमें निर्माण हुए थे, जिनमें युधिष्ठिरसे आरम्भ करके विक्रमादित्यतक इन्द्रप्रस्थमें शासन करनेवाले पृथक् २ वंशोंकी वंशसूची लिखी है, उनमें यद्यपि ऐतिहासिक वृत्तान्त नहीं है, तो भी ऐसे अन्धेरेके समयमें कुछ यह उपयोगी ही समझे जा सकते हैं।

तरंगिणीमें जैन देवताओंकी वंशावली है, उसका प्रारम्भ आदिनाथ वा ऋषभदेवसे हुआ है, जिनकी समालोचना ऊपर लिख चुके हैं उन कुलोंके मुख्य २ नरपतियोंका समाचार लिखकर उन्होंने धृतराष्ट्र, पाण्डु तथा उनकी सन्तानोत्पत्तिका वृत्तान्त लिखा है और उनका परस्पर विद्वेष तथा विस्तारसे महाभारत युद्धका वर्णन किया है।

पूर्व और पश्चिम सभी देशोंके राजवंशोंकी उत्पत्तिके साथ बहुतसी कल्पित कहानियाँ लिखी गई हैं, पाण्डुकी उत्पत्ति उसी प्रकारसे विश्वासके योग्य हो सकती है, जिसप्रकार कि, रोमूलस वा दूसरे वंशके स्थापन करनेवालोंकी है।

हम अनुमान करते हैं कि, पाण्डुवंशकी किसी बडी दुर्नामता छिपानेके लिये ऐसी कथाओंकी कल्पनाएँ की गई हों, जिनका सम्बन्ध ऊपर लिखी हुई व्यासजीकी कथा तथा हरिकुल वंशकी शाखाके हलकेपनसे हो, पाण्डुराजाके परलोकवासी होनेपर उसके भतीजे तथा अन्धे धृतराष्ट्रके पुत्र दुर्योधनने हस्तिनापुरमें अपने बन्धुवर्गोंके समीप युधिष्ठिरादिको पाण्डवोंका क्षेत्रज अनौरस होना बताया। तिसपर भी ब्राह्मणों तथा अंधे धृतराष्ट्रकी सहायतासे पाण्डुके ज्येष्ठपुत्र युधिष्ठिरको हस्तिनापुरका राज्य अधिकार सौंप दिया गया, तब दुर्योधन पांडव और उनके सहकारियोंके विरुद्ध षड्यन्त्र करने लगा, जिसके कारण विवश होकर पाँचों भ्राताओंको अपनी पैतृक राजधानी छोडकर कुछ समयके लिये गंगाकिनारे जाना पडा। पीछे उन्होंने सिन्धुके निकटवर्ती

१ पाण्डुको शाप था कि स्त्रीसंगम करते ही मृतक हो जायगा, जब वह वनमें तपस्या करने गये तब उनकी रानीने मंत्रबलसे देवताओंको बुलाया युधिष्ठिर (धर्मराज मिनौस) से, भीमसेन-पवन (इयोलस) से, अर्जुन इन्द्र (जुपिटरसिरोलस) से उत्पन्न हुए, इन्द्रने ही अर्जुनको धनुर्विद्या सिखाई, जिससे महाभारतमें सहस्रोंका संहार हुआ, नकुल और सहदेव दूसरी रानी माद्रीमें देवताओंके वैद्य अश्विनीकुमार (ऐक्यूलेपियस) से उत्पन्न हुए।

२ हम आमेरके राजाकी बुद्धिमानीकी प्रशंसा करते हैं जिन्होंने बहुतसी जनश्रुतियोंको संग्रह करके अपनी वंशसूचीमें संयुक्त कर दिया, वह राजा सवाई जयसिंह कि, जिन्होंने पुर्तगालके नरेश तीसरे एमेनुएलके यहांसे यूरोप और एशियाके ज्योतिषसम्बन्धी नकशोंको मिला देनेवाले डिसिल्वाको बुलाया, और भारतके सम्पूर्ण मुख्य नगरोंमें अपने प्रिय ज्योतिषशास्त्रसम्बन्धी चतुराईके स्मारक चिह्न (वेधशाला) ऐसे समय निर्माण कराये जब कि, वह बहुतसे राजनैतिक बखेडे तथा युद्धसम्बन्धी कार्योंमें लगे हुए थे जो अब मानमंदिर कहलाता है, जिसकी प्रशंसा तथा प्रतिपादकी आवश्यकता नहीं है।

दूसरे देशोंमें निवास किया सबसे प्रथम पंचालके राजा द्रुपदने[1] उनकी रक्षा की, द्रुपद-की राजधानी काम्पिल नगर थी, जब उसने अपनी पुत्री द्रौपदीका स्वयंवर किया; तब समीपके कितने ही नरेश उपस्थित हुए, पर यह कन्या तो निजदेशसे निर्वासित हुए पाण्डवोंके भागमें थी, वहां अर्जुनने अपनी धनुर्विद्याके प्रभावसे उसको प्राप्त किया, उस सुन्दरीने अर्जुनके गलेमें जयमाला पहराई, उस समय दूसरे राजाओंने निराश होकर पाण्डवोंसे युद्ध किया परन्तु अर्जुनने उन सबकी वह दशा की जैसी पैति-लोमसे विवाहकी इच्छा करनेवालोंकी हुई थी, विजयी अर्जुन दुलहिनको अपने घर लाया वह समानरूपसे पाँचों भ्राताओंकी स्त्री हुई,[2] निःसन्देह यह रीति शक लोगोंकी है, हस्तिनापुरमें इन पाँचों भाइयोंके इस कामकीचर्चा फैल गई और धृतराष्ट्रने अपने पुत्र दुर्योधनको दबाकर उन्हें फिर हस्तिनापुर बुलाया और भीतरी द्वेष मिटानेके लिये पाण्डुराजके विभाग कर दिये। दुर्योधनके अधिकारमें हस्तिनापुर रहा और इन्द्रप्रस्थ-नामक एक राजधानी युधिष्ठिरने स्थापित की, फिर जब महाभारतका युद्ध हो गया तब युधिष्ठिरने अपने नामका संवत् चलाकर अपने भतीजे परीक्षितको वहां का राज्य सौंप दिया, ११००× वर्ष तक यह संवत् चलता रहा पीछे उसी वंशके तुवर राजा विक्रमादित्यने इन्द्रप्रस्थको विजय करके अपना संवत् चलाया।

जब राज्य विभक्त हो चुका तब हस्तिनापुरकी अपेक्षा इन्द्रप्रस्थका राज्य बहुत ऐश्वर्य-सम्पन्न हो गया, इन पांचों भ्राताओंने समीपी सब राजाओंको अपने वशीभूत करके इनसे कर देनेके पायनामे[3] लिखा लिये।

इस प्रकार अपने राज्यको दृढ करके युधिष्ठिरने अपने "राजाधिराज" पद प्राप्तिके स्मरणमें पवित्र अश्वमेध[4] और राजसूय यज्ञ करनेका संकल्प किया।

---

१ यह द्रुपद अजमीढका वंशधर वाजस्व वा हयास्वके वंशमें अश्ववंशी था।

२ यद्यपि यह विवाह हिन्दूरीतिके विरुद्ध हुआ है पर इस पर बडी कलई की गई है, बहुपतिकी जातीय रीति न होनेसे उसके निमित्त ओछेपनकी दलीलें दी गई हैं, जैसलमेरके पूर्वपुरुष उसी वंशके हैं।

उनके पुराने इतिहाससे प्रगट होता है कि, छोटे पुत्रको राजगद्दी मिली है यह रीति सीथिया (शक) वा तातारवालोंकी है.

शकलोगोंकी रीतिका जो हेरोडाटसने वर्णन किया है वह उनके वंशोंमें अबतक चलती है 'अपनी स्त्रीके द्वारपर जूतोंकी जोडी' इमाक जातिके सब पुरुष इस संकेतको भलीभाँतिसे जानते हैं। देखो फिन्सटनकी काबुल नामक पुस्तक जिल्द २ पृ० २५१।

× टाड महोदयने ११०० वर्षतक युधिष्ठिरका संवत् चलाना माना है परन्तु यह बात प्रमाण बिरुद्ध युधिष्ठिर संवत् ३०५० वर्षतक चला है। (अनुवादक)

३ पायनामा यह एक मुख्य शब्द है, जो बडे राजाओंकी अधीनता सूचन करता है, चाहे वह अधी-नता धन वा सेवाके द्वारा होती हो; इसकी उत्पत्ति पाय-पैरसे हुई है।

४ इसमें सूर्यको अश्वकी बलि दी जाती है, जिसका वर्णन आगे करेंगे।

इन महायज्ञोंके सम्पूर्ण कार्य राजा ही सम्पादन करते हैं, यहाँतक कि इनमें द्वारपालतकका कार्य राजा ही करते हैं।

अर्जुनकी रक्षामें अश्वमेधका घोडा छोडा गया जो एक वर्षतक अपनी इच्छानुसार अनेक नगरोंमें भ्रमण करता रहा, जब उसको पकडकर कोई युद्ध न कर सका तब वह फिर इन्द्रप्रस्थमें लाया गया, इस अवसरमें यज्ञशाला निर्माण हो चुकी थी, और सब देशोंके राजा यज्ञमें बुलाये गये थे।

कौरवोंका हृदय पाण्डवोंके इस महान पद प्राप्त होनेसे जलने लगा, कारण कि हस्तिनापुरके राजाको प्रसाद बाँटनेपर नियुक्त होना पडा था।

इन दोनों कुलोंमें फिरसे वैरानल धधक उठी, परन्तु दुर्योधन अपने शत्रु युधिष्ठिरको हानि पहुँचानेके लिये जितने उपाय करता सबमें विफल मनोरथ होता तब उसने युधिष्ठिरके धस्मार्तमापनको अपनी सफलता का साधन बनानेकी दृढ प्रतिज्ञा की और जुआ खेलकर उसमें लाभ उठाना चाहा जो सीथियन जातिसे मिलती हुई रीति राजपूतोंमें आजतक चली आती है, युधिष्ठिर उसके प्रपंचमें फँसगये और द्यूतमें अपना समस्त राज्य-श्री तथा अपनी और अपने भ्राताओंकी स्वतन्त्रता बारह वर्षके लिये हार दी और सब कुछ छोडकर यमुनाकिनारेपर अपने देशसे बाहर हो गये।

हिन्दूजातिकी पुरानी कथाओंमें पाण्डवोंके बनवासके समयके आख्यान उनके अज्ञातवासके स्थान इस समय अति पवित्र माने जाते हैं जब वह पीछे अपने स्थानपर लौटे और फिर जो महासमर हुआ उसकी आख्यायिका बहुत ही मनोहर है।

इस परस्पर होनेवाले युद्धके निमित्त काकेशससे लेकर सागरपर्यन्त प्रत्येक जातिके विख्यात राजा कुरुक्षेत्रमें आये थे, और उस स्थानमें इस महाभारतके पीछे भी भारत-साम्राज्यके निमित्त अनेक बार संग्राम हुए और यह देश एकके हाथसे दूसरेके पास जाता रहा[३]।

इस युद्धमें यदुकी छप्पन शाखाओंका प्रबल प्रभाव प्रायः नष्ट हो गया, यह युद्ध बराबर अठारह दिनतक होता रहा, और इसमें सहस्रों मनुष्य काम आये, उस युद्धमें पिताने पुत्रको और गुरुने शिष्यको न पहचाना।

---

१ दुर्योधनने बडे वंशमें होनेके कारण वंशके आदि पुरुष कुरुका पद ग्रहण किया, और पृथक् राज्य स्थापन करनेके कारण युधिष्ठिरने अपने पिता पाण्डुके नामसे उपाधि धारण की, इन दोनोंके युद्धका नाम कुरुक्षेत्र युद्ध कहाता है।

२ हेरोडाटस सीथिक लोगोंमें द्यूत खेलनेकी विनाशकारी प्रकृतिका वर्णन करता है, जिस रीतिको ओडन पश्चिमकी ओर स्कण्डी, नेविया और जर्मनीमें ले गया होगा, टैसिटसका कथन है कि, जर्मन लोग पाण्डवोंके समान अपनी शारीरिक स्वतंत्रता भी दाँवपर लगा देते थे और जीतनेवालेको यह अधिकार प्राप्त था कि, वह चाहै तो हारे हुएको दासके समान बेंच दे।

३ इसी रणक्षेत्रमें अन्तिम हिन्दूपति महाराज पृथ्वीराजने अपनी स्वतंत्रता और राज्य तथा जीवन त्याग कर दिया था।

अन्तमें युधिष्ठिरकी विजय हुई, पर विजय प्राप्त करके भी उनको कोई सुख न हुआ, इष्ट बन्धुजनोंके मारे जानेसे उनको संसारमें विराग हुआ और इसको छोडनेकी इच्छा की, और भीमसेनके हाथसे मृतक हुए दुर्योधनकी दाहक्रिया सम्पादन की थी, जिस दुर्योधनकी ऐश्वर्यकी आकांक्षा और अधर्मने इस सर्व नाशकारी संग्रामको उठाया था।

अपने राज्यपर स्थित होकर युधिष्ठिरने संवत् चलाया और अर्जुनके पोते परीक्षित्को इन्द्रप्रस्थका राज्य देकर कृष्ण बलदेवके संग द्वारकाको चले गये। उस युद्धके लगातार इस पुस्तकके लिखने तक४६३६ वर्ष बीत चुके हैं [देखो राजतरंगिणी १७४० सन्‌कीबनी]

इस युद्धसे बचे हुओंको संग लेकर युधिष्ठिर बलदेव और श्रीकृष्णजी जब द्वारकाको चले कि, शीघ्र ही युधिष्ठिर और बलदेवजीको श्रीकृष्णके गोलोक जानेका दुःख भोगना पडा, जिनका गोलोकगमन एक अनार्य भीलजातिके बाणसे हुआ जिससे वह अशक्य होनेके कारण युद्धके योग्य न रहे, तब युधिष्ठिर और बलरामजी कुछ मनुष्योंको संग लेकर सर्वथा भारतको छोडकर चले गये और सिन्धुके मार्गसे उत्तरमें हिमालयके पर्वतोंमें गये, यहांतककी कथा हिन्दूपुराणोंमें लिखी है, और आगे लिखा गया है कि वे हिमालयमें गल गये *।

---

१ यह कथा टाड साहबने बहुत भ्रमसे लिखी है, परीक्षित्को राजसिंहासनपर बैठानेसे पूर्व ही प्रभासक्षेत्रमें श्रीकृष्ण और बलरामजीने अपनी मानवलीला संवरण की। राजतरंगिणीका कर्ता जैन पंडित है, उन्होंने भी इस वृत्तांतको बहुत बिगाडकर लिखा है, तथा जैनी पंडित पास रहनेके कारण पौराणिक वृत्तांतोंमें टाड साहबसे बहुत स्थलोंमें भूलें हुई हैं बलदेवजी कृष्णसे पूर्व ही अपने स्वरूपमें मिल गये, युधिष्ठरके साथ उनका जाना कैसे हो सकता है,पांच पांडव और द्रौपदी भी हिमालय गलनेको महाप्रस्थान कर गये।

* पश्चिम और पूर्वके मध्यकी हक्यूलीजकी समानताका अनुमान करके पीछे में उसे और भी आगे ले चलनेका परिश्रम करूंगा, यद्यपि पुराणकथा हरिकुलियोंको उनके मुखिया युधिष्ठिर और बलदेवजीकी अधीनतामें काकेशशपर्वतके हिममें छोड देती है, परन्तु जो सिकन्दरने पांलिकमें अपनी वेदिकायें निर्माण की हैं जहांपर कि, पुरु और हरकुलियोंके वंशधर निवास करते थे, तो–

---

१ पुराणकथा तो बीचमें नहीं छोडती, पुराणकथाने तो युधिष्ठिरको स्वर्गतक पहुँचाया है और बताया है, पाचँ पाण्डव और एक उनकी स्त्री हिमालयको गये टाड साहबने अपना मेल मिलाने और पुराने देशोंके नामोंकी एकता करनेकी धुनमें कथाओंको कुछका कुछ कर दिया है, इसी प्रकार राजतरंगिणी और राजावलीके आधारसे जो दिल्लीके राजाओंकी सूची राजपालतक दी है उसमें भी गडबड है कारण कि, उसके लिये न तो कोई प्रमाण है न कोई ऐसा शिलालेख पाया जाता है।

(अनुवादक)

इसी प्रकार भारतके प्राचीन राजाओंके नामोंको यूरोपके प्राचीन राजों तथा बाइबिलमें लिखित नामोंके साथ मिलानेकी बडी कोशिश करके खैंच तान की है, यूनानके युरिस्थिनीजको युधिष्ठिर बताया है जो माना नहीं जा सकता और ययातिकी तेरहवीं पीढीमें कोई यवन राजा भी नहीं पाया जाता।

(अनुवादक)

—ऐसा मानने से हमें क्या हानि है कि, युधिष्ठिर और बलदेवकी अधीनतामेंका एक दल उससे आठ सौ वर्ष पहले यूनानमें जाकर बस गया हो, वे अस्त्र शस्त्र और वैज्ञानिक व्यवहारोंमें अधिक चतुर तो थे ही, संभव है कि, सरलतासे उन्होंने यूनानियोंको जीत लिया हो, जिस समय पांचालिक के स्वतंत्र नगरोंपर सिकन्दरने आक्रमण किया तब तो अपनी पताका पर अपने पूर्वपुरुष था, उस समय जब पुरुवंशी और हरिकुलियोंने उसका सामना किया हक्यूलीजका चित्र दिखाया यदि हिन्दू जाति और यूनानियोंकी देवकथाका परस्पर मिलान किया जाय तो सिद्ध हो जायगा कि, वह एक ही सिद्धांतसे प्रगट हुए हैं, और प्लेटो अर्थात् अफलातून कहता है कि, यूनानियोंने अपनी देवकथाओंका मिश्र और पूर्वी देशोंसे संग्रह किया है, मैं पूछता हूं यह हरकुलियोंका दल क्या हेराक्लाइडी लोग नहीं हो सकते जो वालनेके कहनेके अनुसार पेलोपानेससमें ईसासे १०७८ वर्ष पहले जा बसे थे, और यह समय हमारे निर्धारण किये हुए महाभारतके समयके बहुत ही समीप समयका है।

हेराक्लाइटीलोग अटरियसके वंशधर होनेका दावा करते हैं, और हरिकुलि पुरुष अत्रिके वंशधर अपनेको कहते हैं।

हेराक्लाइडियोंका यूरिस्थेनीज प्रथम राजा था, स्पार्टाके इस प्रथम राजाके साथ युधिष्ठिरका नाम ऐसी समानता रखता है कि मेरे इस लेखसे शब्द व्युत्पत्ति विद्याके जाननेवाले नहीं चौंकेंगे, कारण कि, संस्कृतमें र और उ सदा एक दूसरेके स्थानमें आ सकते हैं।

यूनानी वा आयोनियन यवन वा जवनके वंशधर हैं, जो जेफेटकी सातवीं पीढीमें उत्पन्न हुआ था, हरिकुली भी अपनेको यवन वा जवनके वंशधर बताते हैं, जो उनके आदिपुरुषके तीसरे बेटे ययातिसे तेरहवीं पीढीमें जन्मा था।

यूनान देशके पुराने हेराक्लाइडी लोगोंका कथन है कि, वे सूर्यके समसामयिक और चन्द्रमासे बहुत पुराने हैं, क्या इस अहंकारमें यह बात नहीं छिपी है कि, यूनानके हेलियाडी (सूर्यवंशी) उस स्थानमें हरिकुलके चन्द्रवंशवालोंके बसनेसे पहले वहाँ स्थिति कर चुके थे। भारतके अवतारधारी पुरुष बलदेवजी (हक्यूलीज) कृष्णजी वा कन्हैयाजी (अपोलो) और बुध (मर्क्यूरी के पुराण सम्बन्धी इतिहासोंसे सम्बन्ध रखनेवाले सब विषयोंकी हिन्दुओं यूनानियों और मिस्रानी कथाओंमें बहुत ही कुछ समानता विदित होती है, हरिकुल (बलदेवजी) की अबतक वैसी ही पूजा होती है, जिस प्रकार कि, सिकन्दरके समय हुआ करती थी, व्रजमें बलदाऊ स्थानपर बलदेवजीका मंदिर है, (इसीको यूनानियोंने सूरसेनी कहा है) आयुध उनका हल और सिंहचर्म वस्त्र हैं।

भारतवर्षसे मिले हुए एक दुष्प्राप्य नगरपर हक्यूलीजकी ठीक वैसी ही प्रतिमा बनी है, जिस प्रकार कि, एरियनने उसका वृत्तान्त लिखा है, उस नगरके ऊपर दो पुराने अक्षरोंमें एक नामका उल्लेख भी है, वे अक्षर इस समय पढे नहीं जाते, परन्तु जहाँ कहींकी कथा कहानियोंमें हक्यूलीजका कुछ सम्बन्ध मिलता है, वहां वह मूर्ति अवश्य मिलती है, और जहाँपर वे दिल्लीसे निकलकर सौराष्ट्रदेशमें बहुत कालतक रहे थे वहां वह मूर्ति विशेषकर पाई जाती है।

हम विश्वासके साथ कहते हैं कि, हक्यूलीजकी यह वैसी ही प्रतिमा थी जैसा कि एरियनने लिखा था, कि--सिकन्दर और पोरसके युद्धमें पोरसने जो मूर्त्ति अपनी ध्वजापर दिखाई थी इस नगका चित्र रायल एशियाटिक सोसाइटीके ट्रानसैकशनमें दिया जायगा।

---

१ बलदेवजी सिंहका चर्म धारण नहीं करते उनका नीलाम्बर प्रसिद्ध है, हक्यूलीजसे संयोग मिलानेको ग्रन्थकारकी यह कल्पना है (अनुवादक)

महाराज युधिष्ठिरके पीछे उनके उत्तराधिकारी परीक्षितसे लेकर विक्रमादित्यतक चारों वंशावलियां बराबर दी गई हैं जिनमें राजपालपर्यन्त छयासठ राजाओंकी नामावली लिखी है जो राजपाल शुकवंतके हाथसे कुमाऊंके आक्रमणमें मारा गया, विजयी कुमाऊंपतिने दिल्लीको अपने अधिकारमें किया, परन्तु विक्रमादित्यने अल्पकालमें ही दिल्लीको उससे ले लिया, और इंद्रप्रस्थके बदलेमें अपनी राजधानी उज्जैन [अवन्ती] में स्थापनकी,और उसी समयसे उज्जैन हिंदूजातिके ज्योतिश्शास्त्रका याम्योत्तर वृत्त माना जाने लगा ।

फिर आठ सौ वर्षतक इन्द्रप्रस्थ राजधानी नहीं रही । पीछे तुवर वंशके स्थापन करनेवाले राजा अनंगपालने दिल्लीको फिर अपनी राजधानी बनाया यह अपने आपको पाण्डववंशी कहता था और इसके समयसे ही इंद्रप्रस्थका नाम दिल्ली हुआ ।

राजा शुकवंत कुमाऊंके उत्तरीपर्वतोंसे आया था, और इसने चौदह वर्षतक राज्य किया,इसको विक्रमादित्यने मार डाला और भारतके युद्धसे इस वृत्तांततक २९१५ वर्ष बीते हैं ।

हम इतना समय ६६ राजाओंके राज्यका मानें तो औसतसे ४४ वर्ष आते हैं यदि इस विषयको हम असम्भव मानें तो सर्वथा विश्वास भी नहीं कर सकते ।

दूसरे स्थानमें ग्रंथकर्त्ता रघुनाथ कहता है कि, मैंने बहुतसे ग्रंथ पढे हैं सबका निचोड यही निकलता है कि युधिष्ठिरसे पृथ्वीराज पर्यन्त ४१०० वर्षोंमें, सवासौ क्षत्रिय राजा दिल्लीकी गद्दीपर बैठे हैं इनके पीछे यह गद्दी रावरे जातिके

---

१ युधिष्ठिरके उत्तराधिकारी परीक्षित्के वंशका अट्ठाईसवां अन्तिम राजा खेमराज था, प्रथम वंश तो १८६४ वर्षतक चला दूसरे विसर्ववंशमें १४ राजा हुए यह वंश पांचसौ वर्षतक चलता रहा, तीसरे वंशका वंशधर अन्तिम महाराज उन्तिनय पन्द्रहवां था, और दूधसेन चौथे वंशका प्रथम पुरुष था फिर नवें और पिछले राजपालके साथ इस वंशकी पूर्ति होगई । (राजतरंगिणी) ।

२ राजा अनंगपालका समय राजतरंगिणीमें संवत ८४८ सन् ७९२ दिया गया है वहां यह भी वर्णन है कि शिवालक अर्थात् उत्तरीय पर्वतोंके नरपतियोंने आकर इसको अपने वशीभूत कर लिया और तुंवरोंके अधिकार आनेतक यह नगर बहुत समयतक उजाड रहा ।

३ जिस समय संग्रहकर्ताने रघुनाथपंडितके इस कथनको मान लिया होगा कि भारतयुद्धसे विक्रमादित्यपर्यन्त २९१५ वर्ष होते हैं उस दशामें ४१०० वर्षका समय स्वीकार किया होगा--जिसका जन्म संवत १२१५ में हुआ कारण कि यदि ४१०० में से २९१५ घटा दें तो ११८५ शेष रहते हैं और चौहानोंके इतिहासके अनुसार पृथ्वीराजके जन्मसे पूर्वका है ।

१२२५में पृथ्वीराजका जन्म नहीं किन्तु १२२५ के लगभग होना चाहिये कारण कि पृथ्वीराज विजय काव्यमें सोमेश्वरके देहान्त समयमें पृथ्वीराजको बालक लिखा है, सोमेश्वरका स्वर्गवास १२३६ में हुआ १२१५ में जन्म होनेसे पृथ्वीराज २१ वर्षका होनेसे बालक नहीं लिखा जा सकता । (अनुवादक)

४ पृथ्वीराजके पीछे दिल्लीपर रावरोंका नहीं मुसल्मानोंका अधिकार हुआ था । (अनुवादक)

लोगोंके अधिकारमें आई, हमको इस बातसे बडा हर्ष है कि ग्रन्थकर्त्ताओंने केवल राजाओंके राजत्व समयकी वृद्धि ही की है परन्तु राजाओंकी संख्या ज्योंकी त्यों रहने दी है, इससे बचेकुचे ऐतिहासिक तत्त्वोंका पता मिलता है, युधिष्ठिर और विक्रमादित्यके मध्यमें ६६ पीढियोंका उल्लेख सर्वथा सत्य है ।

हमको युधिष्ठिरसे पृथ्वीराजपर्यन्त १०० राजाओंके होनेमें कोई विरोध नहीं है यद्यपि विक्रमादित्यसे पहले और पिछले राजाओंकी संख्याका कोई ठीक विभाग नहीं हुआ है, कारण कि उससे पहले ६६ और पीछे होनेवाले ३४ राजा बताये जाते हैं, तथापि इन दोनों समयोंमें पचास वर्षोंका भी अन्तर नहीं पड सकता ।

हमारी परीक्षाके अनुसार युधिष्ठिरसे पृथ्वीराजतक १०० राजाओंका समय २२५० वर्ष होना चाहिये ।

हमारी यह जांच रजवाडेके मुख्य २ राजाओंके राजत्वके समयके × ६३३ से ६६३ वर्षतक अथवा पृथ्वीराजसे इस कालतकका औसत निकालकर की गई है ।

मेवाडके राजा ३४ * प्रत्येक राजाके निमित्त वर्ष १९
मारवाडके ...२८ ... ... २३
आमेरके ...२९ ... ... २२
जसलमेरके...२८ ... ... २३

इस क्रमसे प्रत्येक राजाके राजत्वकालका औसत २२ वर्ष निकलता है राजाके शासनके लिये इससे विशेष समय मानना ठीक न होगा, और जिन वंशोंकी नामावली विस्तारवाली है उनके लिये तो औसत समय कमसे कम १८ वर्ष ही मानना ठीक होगा, युधिष्ठिरसे लेकर विक्रमादित्य पर्यन्त ६४ राजाओंके निमित्त तो इतना समय माननेकी भी आवश्यकता नहीं, कारण कि उतने समयके बीचमें राज्यका उलटफेर बार बार हुआ¹ था, और राज्य एकके हाथसे दूसरेमें गया ।

भागवतसे ग्रहण की हुई जरासन्धकी शेष वंशावली बहुत कामकी है उससे भी हमको दूसरे विचारका समय मिलैगा ।

जरासन्ध राजगृह वा विहारका² शासन करनेवाला था इसका पुत्र सहदेव और पोता मार्जारी था वह दोनों भारतमें समसामयिक हैं, इससे दिल्लीके सम्राट् महाराज परीक्षितके समसामयिक हुए ।

× संवत् १२५० अर्थात् ११९४ ई० से अर्थात् पृथ्वीराजके सिंहासनसे च्युत होने और बन्दी होनेके समयसे ।

* संवत् १२१२ अर्थात् ११५६ ई० में जब जसलने जैसलमेर बसाया तबसे वर्तमान महाराज गजसिंहके राज्याभिषेक सं० १८७६ वा सन् १९२० तक ।

यहांके आरम्भके बहुतसे राजा लडाईमें मारे गये, वर्तमान महाराजके पिता अपने भतीजेके उत्तराधिकारी हुए जिससे समय बहुत न्यून लगा।

१ इतिहास लिखनेवाले इन परिवर्तनोंका होना उचित समझते हैं, और अपनी समीक्षामें लिखते हैं कि जो राजा पदभ्रष्ट होते थे, उनमें राज्यकी संभालकी योग्यता नहीं होती थी ।

२ यह देश विहारकी राजधानी राजगृह वा राजमहल है ।

जरासन्धके स्ववंश में २३ राजा लिखे हैं उनमें पिछला राजा रिपुंजय हुआ, इसके सचिव शुनकने इसको मारकर यह सिंहासन अपने अधिकारमें किया, इस शुनक का वंश पांच पीढीतक चला; इसमें पिछला राजा नंदिवर्णन था, इस राजके छीननेसे शुनकको कुछ लाभ नहीं हुआ कारण कि उसे उसी समय अपने बेटे प्रद्योतको सिंहासनपर बैठाना पडा इन पांचो राजाओंका समय १३८ वर्ष माना जाता है ।

शेषनाग[1] नामक विजेताकी आधीनतामें शेषनाग देशसे कितने एक नवीन जातिके पुरुष भारतवर्षमें आये जिन्होंने पाण्डुके सिंहासनपर अपना अधिकार जमाया, और दश पीढीतक जिनका वंश चलकर अंतमें अनौरस राजा महानन्दके साथ पूर्ण हुआ, इस वैकत नामक अंतिम राजा शुद्धवंशी राजाओंसे ऐसा युद्ध किया कि उनका सर्वथा विनाश कर दिया, पुराणोंमें ऐसा आया है कि शेषनागके समयसे ही राजा शूद्र हो गये, इन दश राजाओंके राजत्वका समय ३६० वर्ष माना गया है ।

इसी तक्षकवंशके चन्द्रगुप्त मोरीवंशसे[2] चौथी वंशावलीका आरम्भ होता है, इस वंश में दश राजा हुए और १३७ वर्ष पर्यन्त इनका राज्य रहा ।

पांचवंशके आठ राजाओंने शृंगी[3] देशसे आकर १०२ वर्षतक राज्य शासन किया, और कण्व देशके एक राजाने आकर अन्तिम[4] राजाको मार डाला, और उसका राज हरण कर लिया; इनमें चार तो शुद्धवंशके थे; और पीछे शूद्राणीसे उत्पन्न कृष्ण[5] नामक राजा हुआ; यह कण्वदेशी वंश २३ पीढीतक चलता रहा और इसके पिछले राजाका नाम सुलोमधी था ।

---

१ अलंकारके अनुसार विचार किया जाय तो यह सर्पराजका देश कहावैगा, कारण यह कि नाग तक वा तक्षक यह तीन शब्द एक ही अर्थके कहनेवाले हैं, मैं इस देशको स्ट्रबोंके लिखे हुए पुराने सीथिक टाचरिका वा चीनियोंके तक इउकोका तुर्किस्तानके वर्तमान ताजकोंका निवासस्थान मानता हूं, मेरी समझमें जिसको पुराणोंमें तुरुष्क कहा है और जो शाकद्वीप और सीथियामें अर्वर्क्ष्या (अरवसीज) पर राज्य करती थी, यह वही जाति विदित होती है टाड साहबने जो शिशुनागदेशको शेषनाग मानकर इस देशसे उस वंशका आना लिखा है, पुराणोंमें शिशुनागवंश वर्णनमें शेषनाग देशका कोई वृत्तान्त नहीं है, और शिशुनागके वंशधर मगधकी गद्दीपर बैठे न कि पाण्डुकी गद्दीपर (अनुवादक)

२ शिशुनाग वा मोरीवंशियोंको तक्षकवंशी मानना टाड साहबका भ्रममूलक है, बौद्ध जैन लेखकोंने इनको सूर्यवंशी लिखा है [अनुवादक]

३ यहां भी शृङ्गी नाम भ्रमसे लिखा गया है वास्तवमें शुंग शब्द है पुराणोंमें शृंगी देशसे आना नहीं लिखा । (अनुवादक)

४ पुराणोंमें यह बात पाई जाती है कि शुंगवंशके पिछले राजा देवभूतिको उसके कण्ववंशी मंत्रीने मारा; भूमित्र उसका पुत्र था । [अनुवादक]

५ कृष्ण राजा शूद्राणीसे उत्पन्न नहीं किन्तु यह आन्ध्रवंश पुराणोंमें शूद्र ही लिखा है इसका प्रथम राजा सिमुक लिखा है । पुराणोंमें कण्वदेशसे आना नहीं लिखा । (अनुवादक)

इस प्रकार महाभारतसे पीछेकी छः वंशावली दी गई हैं जिनमें जरासन्धके उत्तराधिकारी सहदेवसे आरम्भकर बयासी राजाओंकी अविच्छिन्न शृंखला सुलोमधीतक बराबर चली गई है।

कितनी एक छोटी वंशावलियोंके निमित्त भी उचित समय दिया गया है तिसपर प्रथम और अंतिम वंशावलीके लिये ऐसा नहीं हुआ है इस कारण पहली जांच की रीति काममें लानी चाहिये, जिससे उनका समय विक्रमके संवत् ६०४ तक १७०४ वर्ष होंगे, इस रीतिसे राजा वसुदेव विक्रमका समकालीन होगा, जो राजा सहदेवसे छठी वंशावलीमें पचपनवां है, और कत्तरदेशसे आकर राज्य जीतनेवाला माना जाता है, और यदि ये गणनायें किसी प्रकारसे सत्य हों तो भागवतमें जो वंशावली विक्रमादित्यके पीछेकी पांचसौ ५०० संवत्के * अन्ततक दी है, हम उसको भविष्यवाणीरूपसे तो नहीं मानेंगे, बरन हम उससे यह अनुमान करते हैं कि उन्होंने सलोमधीके राज्यमें अर्थात् संवत् ६०० और सन् ५४६ के लगभग इस अपने पुराने इतिहासका नया संस्कार किया होगा।

ऊपर जिन वंशावलियोंका वृत्तान्त लिखा गया है, उनके राज्यशासन वर्षोंके औसत निकालनेमें पहले हमने जो गणना की है, उससे संसारके दूसरे देशोंके राज्यशासनका समय निकालनेमें बड़ा लाभ होगा, और उनके इतिहासोंका मिलान करनेसे अपनी मानी रीतिकी सत्यता जाननेका भी हमको अवसर मिलेगा।

जिस समय दश जातियोंने रेहोबोमके[2] विरुद्ध विद्रोह किया था, उस समय जेरूस[3]लमके विजय होनेतक जो ३८७ वर्षका समय आता है, जिस कालमें २० बीस राजा जिहूदाके[4] सिंहासनपर स्थित हुए जिन प्रत्येकका समय १९ वर्ष औसत निकलता है,

१ नकशेमें सात वंशावली दी हैं और वंशनाममें भी अन्तर है। (अनुवादक)

* विस्टर बेंटलेका हिन्दुओंकी ज्योतिषप्रणालीपर एक लख एशियाटिक रिसर्चेज जि० ८ पृ० २३६--३७ में पाया जाता है, उसमें लिखा है कि संवत् * ५८३ अर्थात् सन् ५२७ ई० में ब्रह्मगुप्त ज्योतिषी हुआ, जिसका समय सलोमधीके राज्यशासनसे कुछ ही पहला है, उसने ब्रह्माके कल्पकी रीति स्थापन की इसके अनुसार सृष्टिकी इस समयकी गणना चल रही है, इस रीतिसे उसके ऐतिहासिक समयका भी परिवर्तन हुआ, इससे मेरी गणनाकी और भी दृढता होती है, परन्तु इस अनुचित कटाक्षने मि० बेंटलेके प्रमाणकी दृढताको बहुत शिथिल कर दिया है, जो उन्होंने मिस्टर कोलब्रुकपर किया, जिसका विस्तारपूर्वक ज्ञान अनुमानकी बातोंको सर्वथा न माननेके कारण बहुमूल्य है।

२ यह सुलेमानका बेटा और जहूदाका राजा था।

३ यह एशिया माइनरका बाइबिल प्रसिद्ध प्राचीन नगर है।

४ यह एशिया माइनरके एक विभागका नाम है।

* सलोमधी राज्यकी समाप्ति सन् ५४६ में नहीं सन् ३०० के पहले ही हो चुकी थी, ब्रह्मगुप्तने ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त संवत् ६८५ सन् ६२८ में बनाया है यह ५२७ में नहीं हो सकता।

(अनुवादक)

और यदि इससे पहले साउलडेविड दाऊद और सुलेमान इन पहले राजाओंका समय और मिला देवें जो कि विद्रोहके पहले गद्दीपर बैठे थे तो प्रत्येकका राजत्वसमय औसत २६ वर्ष निकलेगा ।

सार्डना पोलसके अधीनमें ईसासे ९०० वर्ष पहले असीरिया × राज्यके छिन्नभिन्न होनेके समयसे आरम्भ करके बेबलोनिया असीरिया और (२) मीडियाकी पीछेवाली तीन मिलाई हुई वंशसूचियोंका मिलान करनेसे पृथक् २ औसतके वर्ष निकलते हैं ।

जब हम औसारियाकी वंशावली देखते हैं तो इससे मध्यम औसतका समय दीखता है, बेबलोनियां और मीडियाकी वंशसूचीका औसत बहुत अधिक निकलता है, बेबलोनियां देशपर असीरियासे पृथक् होनेके समयसे आरम्भकर पीछे उसीमें संयुक्त होनेतक राज्य करनेवाले नौ राजाओंके समयके ५२ वर्ष आते हैं परन्तु साठ वर्षतक जिसने राज्य किया वह मीडियाका राजा दारा सबसे अधिक दिनोंतक जीवित रहा । इन दोनों राज्योंके अलग होनेके समयसे लेकर उनके फिर संयुक्त होनेतक दाराके वंशके छः राजा १७४ वर्षके मध्यमें हुए जिनमें प्रत्येकके राज्यशासनका औसत २९ वर्ष निकलता है ।

यदि देखा जाय तो असीरियाके नरपतियोंके राज्यका समय बहुत मध्यमश्रेणीका है, प्रत्येक राजाका राजत्व समय नेवुकेट नेजरसे आरम्भ कर सार्डना पालसतक औसत २२ वर्ष होता है, परन्तु उस समयसे समामितक औसत निकालें तो १८ वर्ष ही निकलते हैं ।

ईसासे १०७८ वर्ष पहलेके लेसी डीमनकाहेरोक्लाइडी कहलानेवाले यूरिस्थीनीससे लेकर पहले ११ राजोंका राज्यशासनका समय औसतसे ३२ होता है, और लगभग उसी समयसे आरम्भकर येथेन्सके प्रजातन्त्र राज्यमें मृत्युपर्यन्त स्थित रहनेवाले प्रधान अधिपतिके शासनकालसे आरम्भ कर उस समय पर्यंत जब कि यह पद सातवें ओलैम्पियडके समयमें दश २ वर्षका हो गया था, जबतक मुख्यशासनोंकी संख्या बारह हुई थी जिसका औसत २८ वर्ष निकलता है ।

इस प्रकार यहूदियोंका स्पार्टावालोंका और एथियनलोगोंके राजत्वकालका समय मिलता है जिनका आरम्भ ईसासे ११०० वर्ष पहले हुआ था अर्थात् महाभारतसे

---

१ असीरियाका एक बादशाह ।

× मैंने इन संवतों और पीछेके संवतोंको मैनगोगट साहबकी ओरिजन आफ लाज पुस्तकमेंकी लिखी हुई वंशसूची कालक्रमके मानचित्रोंसे ग्रहण किया है ।

२ एशियाखण्डके पश्चिमी विभागका एक खण्ड ।

३ यूनानके स्पार्टानगरका नाम लेसिडिमोनियावाले सिडिमन था ।

४ यूनानमें प्रति पांच वर्षके पीछे कसरती खेल होते थे, उनको ओलिपिक गेम कहते थे और चार वर्षका खेल ओलम्पियड कहलाता था ।

पचास वर्षसे भी अधिक दूर नहीं, और इनके सङ्ग ही वैविलन, असीरिया, मीडियाके राज्यका समय है, जिनका प्रारम्भ यूनानी राज्यकालको छोडनेके समयसे होता है, यह ईसासे आठवीं शताब्दीमें और यहूदियोंका राजत्वकाल पिछली छठी शताब्दीमें हुआ था।

हमारे सूर्य और चन्द्रवंशके मुकाबलेमें चाहे यह औसत कम भी हों तो भी इस समयके हिन्दू राजवंशोंके राजत्वकालके औसत समयके साथ मिलकर उस समयका अनुमान करनेमें विचारको बड़ी भारी सहायता देगा, जो समय उन ज्ञात वंशोंके लिए नियत किया जायगा और जो ब्राह्मणोंने असम्भव काल नियत किया है उसके अनुकरणकी अपेक्षा इस विचारमें अधिक सहायता प्राप्त होगी।

और अनुमानसे काल निर्णयमें यह बात जानी जाती है कि जिस देशका जल वायु स्वच्छ होता है और जहांके नरेश सादगीसे रहते हैं वे बहुत कालतक जीते हैं, इसी हेतु स्पार्टीके राजाका राजत्वकाल अधिकतर ३२ वर्ष और विषय वासनामें लिप्त ऐथेन्सवालोंका औसत २८ आता है, सौलके समयसे आरम्भ कर वैबलनको निकालनेके समय तक यहूदीराजाओंका औसत २६ वर्ष होता है, मीडियावालोंका औसत लेसिडिमोनियांवालोंके समान है, तात्पर्य यह कि सब इतिहासोंके समीक्षणसे यह बात जानी जाती है कि इनकी समानता अनहलवाडादेशके राजाओंके साथ की जा सकती है, और जिसमें चामुण्डका राजत्व समय तो दाराके[1] ही लगभग समान था।

और विद्रोहके समयसे आरम्भ कर पृथक् की हुई दश जातियोंमें बन्धमें होनेके समयतक इसराईल जातिके बीस राजाओंके राज्यका समय दो सौ वर्ष है इसका औसत निकालनेसे प्रत्येक राजाका समय दश वर्ष आता है।

असीरिया और स्पार्टावालोंका राजत्वकाल अधिकसे ३२ और न्यूनसे न्यून १८ वर्ष निकलता है आर प्रत्येकका औसत २५ वर्ष आता है और सातसौ वर्षके मध्यमें हमारे चार हिन्दू वंशका औसत २२ वर्ष आता है।

इस प्रकार ऊपर लिखे प्रमाणोंसे पचास राजाओंकी शृंखलाके निमित्त वर्षोंका औसत २० से २२ वर्ष तक होनेकी मेरी सम्मति है।

यदि मेरी इस खोजका परिणाम संतोषदायक हो और उन ग्रन्थकारोंकी उल्लिखित वंशसूची ठीक हो तो बेंटले साहबके समान हमारा भी सिद्धांत होगा।

---

१ दारा और अनहलवाडेके चामुण्डका राजत्वकाल समान नहीं गिना जाता, चामुण्डने १३ वर्ष प्रथम दाराने ३६ दूसरेने १९ और तीसरेने पाँच वर्ष राज्य किया था।

जिसने बडी पंडिताईके साथ ज्योतिष तथा वंशसूची सम्बन्धी नियमोंका मिलान कर जगत्की उत्पत्तिसे २८२५ वर्ष पीछे युधिष्ठिरके संवत्का समय माना है, यदि सृष्टीसे लगाकर ईसाके जन्मतक ४००४ मेंसे निकाल दिया जाय तो ईसाके ११७९ वर्ष पहले अर्थात् विक्रमादित्यसे ११२३ वर्ष पहले युधिष्ठिरके वंशका प्रारम्भ सिद्ध हो जायगा * ।

पुराणोंमें तुरुष्क कहा है यह वही जाति जान पडती है जो शाकद्वीप वा सीथियोंमें अरक्सीजपर राज्य शासन करती थी ।

* प्रायःअंग्रेजोंके लिखे निबन्धोंमें सबका यही सिद्धान्त रहता है कि सृष्टिकी उत्पत्तिको पांच सहस्र वर्षसे कुछ अधिक हुए हैं, परन्तु हिंदूशास्त्रके परंपरा सिद्धवंशसे तथा पंचागसे और राजतरंगिणी आदिके मतसे ५००० हजार वर्षसे कुछ विशेष कलियुगको बीते हैं, और सृष्टिकी उत्पत्ति तो करोडोंकी है, जिसका वृत्तान्त प्रतिदिनतकके संकल्पमें बद्ध रहता है, इसके लिये विशेष कहनेकी आवश्यकता नहीं, संस्कृतके ज्ञाता विज्ञ पुरुष इसको जानते हैं ।

छठा अध्याय ६.

विक्रमादित्यके पश्चात्की राजपूतजातियोंका वंश सूची सम्बन्धी इतिहास;–
विदेशी जाति भारतमें कब आई;-सीथिया राजपूत और
स्कैण्डेनेवियाकी जातिका परस्पर मिलान ।

इस अध्यायका बहुत सा अंश प्रथमके पांचवें अध्यायमें आ चुका है उसके सिवाय जो कुछ अधिक कहना है उसीको यहां लिखा जायगा ।

इस भांतिसे भारतकी प्राचीन जातियोंका इतिहास सृष्टिके आरम्भसे युधिष्ठिर और श्रीकृष्णजीके समयतकका तथा युधिष्ठिरसे विक्रमादित्यके समयतकका लिखकर अब उन जातियोंका वर्णन करते हैं जिन्होंने उस समय भारतवर्षपर आक्रमण किया, और इस समय राजस्थानके ३६ राजवंशोंमें जिनका उल्लेख पाया जाता है और जिनका वृत्तान्त लिखनेसे कितनी एक आश्चर्यजनक घटनायें प्रकाशित हो जायँगी ।

तातारियोंके आदि पुरुष मुगलके पुत्र ओग्जके[1] छः पुत्र थे पहला कायन वा किउन दूसरा अये[2] यही पुराणोंके चन्द्रसूर्य समझे जा सकते हैं ।

पुराणके अयके एक पुत्र यदु हुए जिसे जदु भी कहते हैं, जिसके तीसरे पुत्र हय [हू] से हिन्दू, इतिहास लिखनेवाले किसी वंशकी उत्पत्ति नहीं मानते और उसीके द्वारा चीनियोंने अपनेको इन्दुवंशोत्पन्न बताया है[3] सीथियनलोग आरकसीज नदीके[4] किनारे निवास करते थे, इलामें[5] जुपिटर [बृहस्पति] से एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम सीथिस था; इसके पलस [पालास] नापस वा [नापान] दो पुत्र हुए

---

१ मुगल और ओग्ज शब्दोंका समास करें तो मैगाग शब्द बन जायगा जो बाइबिलमें लिखे जेफेटका पुत्र था ।

२ बाकी चार पुत्र चार तत्त्व हैं जिनका वर्णन रूपकके समान किया है ।

३ सरविलियम जौन्सने कहा है कि, चीनवाले अपनेको हिन्दुओंसे उत्पन्न मानते हैं, पर यह दोनों इंदुजाति विचारनेसे सीथियन लोगोंसे उत्पन्न विदित होती हैं ।

४ पुराणोंमें शाकद्वीप वा सीथियालिखा है अरकससको अरवर्मा जैगजर्टीजदासे हुन । डायाडोरसने हैमोडसको शाकद्वीप और भारतवर्षकी सीमापर बताया है ।

५ चन्द्रवंशकी माता इला पृथ्वी है इसको मनुष्यरूप माना है सैकसन इसको अर्था, यूनानी हरा, और इरानी अदे कहते हैं ।

हम पूछते हैं क्या यह तातारियोंकी वंशावलीका नागवंश है जो अपने महान् कार्योंके निमित्त प्रसिद्ध था, जिन्होंने देशोंके विभाग किये, उन्हींके नामसे उनके नाम पालियन वा पाली विख्यात हुए, उनकी सेना नीलनदीतक मिसरमें पहुँची, बहुतसी जातियोंको अपने अधीन किया और अपने सीथियन राजकी पूर्वमें महासागर कासापियन सागर और मोईटिसकीलतक बढाया, इस जातिके अनेक राजा हुए जिनके वंशमें सैकैन्स [सैकी] मैसेजेटी [जटवाजिट] एरा अस्पियन एरियाके अश्वनामक पुरुष और दूसरी अनेक जातियां हैं जिन्होंने असीरिया और मीडियां जीतकर राज्यको तहस नहस कर दिया, और वहांके निवासियोंको अरक्सस नदीके किनारेपर ले जाकर बसाया।

हमारे छत्तीस वंशोंमें सकी,जट, अश्व और तक्षक ऐसे नाम पाये हैं और यही नाम यूरोपके प्रारंभिक सभ्यताके समयकी दूसरी जातियोंमें भी पाये जाते हैं, इससे उन मूल निवासस्थानके खोजनेमें और भी बहुतसे प्रमाण खोजनेकी आवश्यकता है।

देवोंका कथन है कि जो समस्त जातियां कास्पियनझीलके पूर्वमें रहती हैं उन सबको सीथिक कहते हैं, उसमे उसी समुद्रके निकट डाही (दाँही) जाति निवास करती हैं, इनमें प्रत्येक जातिके एक मुख्य नाम होते हैं, यह सब एक स्थानपर नहीं रहतीं यह भ्रमण करती हैं, इनमें असी पसियानी टाचरी सैकरै-न्ली सबसे अधिक प्रसिद्ध हैं, इन्होंने बाक्ट्रियादेश यूनानियोंसे ले लिया था इन शकजातियोंके एशियामें वैसे ही आक्रमण हुए हैं,जिस प्रकार कमेरियनलोगोंने किये थे,उन लोगोंका बाक्ट्रियाको अपने अधिकारमें कर लेना ज्ञात होता है, इसी प्रकार उन्होंने आर्मोनियाके सबसे श्रेष्ठ देशको भी अपने अधीनमें कर लिया था जो उनके नामसे सैकै-सैनी कहलाता है।

---

१ क्या यह पालियन मिसरके गडरिये नहीं हो सकते, पाली अक्षर इस समय तक चलते हैं, और वे बौद्धोंके शिलालेखके टुकडोंकी समान अब भी पाये जाते हैं वे मेरे पास हैं और बहुतसे अक्षर कापटिक वर्णमालासे मिलते हैं।

२ चन्द्रवंशकी तीन महान् अश्वजातिकी शाखा मीढ कहलाती हैं, यथा पुरमीढ, अजमीढ और देवमीढ,बाजस्वके पुत्र अश्वजातिके लोगोंने असीरिया और मीडियापर आक्रमण किया, जब उन्होंने अपने पैतृक स्थान पांचालिक देशसे चलकर सिंधुनदीके पश्चिमदेशमें आगमन किया वहांपर उनकी संख्या बहुत बढ गई थी यह स्पष्ट है।

३ दाहिया जाति राजपूतोंके ३६ वंशोंमें से एक थी जो अब लुप्त हो गई।

४ पुराणोंमें इन शाकद्वीपकी असी और टाचरी जातियोंको अश्व तक्षक और तुरुष्क नामसे लिखा है।

५ मेरी समझमें शकीशब्द संस्कृतकी शाखा शब्दका अपभ्रंश है जिसका अर्थ शाक वा जाति है।

६ टर्नर साहबके ऐंगलेसैक्सन जातिके इतिहासमें सैकेसेनी लोगोंको सैक्सन लोगोंका पुरुषा लिखा है।

राजस्थानकी कौन २ सी जातियां इन्दुवंशक अश्व और मीडियाकी संतान हैं और जिनके नये नये नाम हो गये हैं, इनके खोज करनेके लिये अब हमको ठहरनेकी आवश्यकता नहीं है।

केवल आक्रमणके विषयमें ही अब हम अपनी चित्तवृत्ति लगाते हैं और इस बातका प्रमाण भी देंगे कि यह आक्रमण उसी समय हुए थे जब कि इनका दल यूरोपमें प्रविष्ट हुआ था, इसी हेतु यूरोप तथा राजपूतोंकी उत्पत्तिका एक ही मूल पुरुष होनेका सिद्धांत निकल आता है, जिसकी पुष्टिमें हम उनके देवी देवताओंकी कथा, वीरताकी रीतियोंकी कविता, शिल्पकी सुंदरता, भाषा गानकी समानता भी दिखा सकते हैं, हिन्दू सीथिक, जेटी, तक्षक और असी जातिका भारतमें प्रथम आना और शेषनागतक्षकका [टीचरिस्थान] शेषनागदेश वा शेषनागसे आना. हिसाब लगानेसे जिसका समय ईसासे छःसौ वर्ष पहिलेका निश्चित होता है, पुराणोंमें प्रथम यह सूचित किया है कि इसी समयके ओरे धोरे इन जातियोंने चढाई करके एशिया माइनरको जीत लिया था और पीछे स्कैंडिनेवियाको तथा वाकट्रियाके यूनानी राज्यको असी और टाचरी जातिने उलट पुलट कर दिया, उसके पीछे असी * काही और किम्बरीजातियों तथा रोमनलोगोंने बालटिक समुद्रके किनारेपरसे चढाई की।

यदि हम पहले जर्मनलोगोंको सीथियनें वा गाथ जेटी वा जिट होना सिद्ध कर सकें तो शासनरीति और आचार विचार आदिके विषयमें [illegible] एक बडा स्थान प्राप्त हो सकेगा; यूरोपकी सम्पूर्ण पुरानी बातोंका रूपक ही नया हो जायगा और जर्मनवालोंके समूहोंसे उनका पता लगानेके स्थानपर जिस प्रकार किमाण्डेस्क्यू और बडे२ लिखनेवालोंने इस समयतक किया है उनकी खोज सीथियन आदि जातिके आचार विचारकी विस्तारपूर्वक घटनाओंसे जो हेरोडाटसने लिखी हैं लगाया जा सकता है, सीथियन्‌जातिने सन् ई० से ५०० वर्ष पहले स्कैडिनेवियाको अपने अधिकारमें कर लिया था इन सीथियनलोगोंमें मर्क्यूरी (बुध) वोडन वा ओडनकी पूजा होती थी, तथा अपनेको बुधका वंशधर मानते थे यदि गाथलोगोंकी देवकथाओंका मिलान करें तो

---

१ हेरोडाटसने कहा है कि जबमेसे जेटी लोगोंने मेरियन लोगोंको निकाल दिया, और वे क्रीमियामें जाकर रहे उस समय यहांपर थिसिजेटी वा पश्चिमके जेटी लोग निवास करते थे, और उसी समयसे जेटी और किम्बरी जातियाँ बाल्टिक सागरके किनारे जा वसीं।

डेस्टीकिपचकके जहांसे इन जातियोंका निकास है, पाहरीस्वरूकिस कोमानी जातिके स्मारक चिन्होंके वृत्तान्त लिखते हुए कहते हैं, कि उनके स्मारक चिन्ह और पत्थरोंके निर्मित चकर हमारे [illegible] वा ड्रुइड पुरुषोंके बचे कुचे स्मारक चिन्होंके समान हैं।

सौराष्ट्रकी काठीजातिकी एक शाखा कौमानीलोग हैं जिनके अन्त्येष्टिक्रिया सम्बन्धी स्मारक स्तंभ जिनको पालिये कहते हैं, प्रत्येक नगर और गाँवमें बहुतायतके साथ पाये जाते हैं, यह काठी जाति भी जर्मनकी आरम्भक जातियोंमेंसे एक थी।

* यह असी शब्द जेटीयूट वा जटलोगोंके निमित्त उस समय उच्चारण किया जाता था जब कि उन्होंने स्कैण्डिनेवियापर चढाई की थी, और यूटलैण्ड वा जटलैण्ड नामक नगर उन्होंने बसाये।

वे यूनानियोंकी विदित होती हैं जिनके देवता केलस और टेरा बुध और इलाके सन्तान विदित होते हैं, जितनी यूनान और रोमकी मिथ्या विश्वासकी बातें हैं जैसे वनदेवी वनदेवता और परियें इन्हीं सब बातोंका स्कैंडिनेवियावाले भी विश्वास करते हैं, गाथलोगोंका बलिके हृदयसे शकुन लेना; और भविष्य कहनेवाले स्त्री पुरुषोंपर पूरा विश्वास था, और यह लोग वीनसके स्थानपर फ्रेयाको और पारसीके स्थानपर वल्काइरीको मानते थे× ।

इन देवकथाओंकी समानताका पता लगानेसे प्रथम हमारी यह इच्छा है कि यूरोपकी प्राचीन जातियोंके और सीथियन राजपूतोंके एक ही मूलके निकासको सिद्ध करनेके लिये हम कुछ और सम्मतियोंको खोज कर लिखैं ।

जिसने अब्बुलगाजीकी पुस्तकका अनुवाद किया है, वह अपनी भूमिकामें लिखता है कि हमारा तातारियोंको घृणाकी दृष्टिसे देखना न्यून हो जायगा, जब कि हम उनके साथ निकटवर्ती सम्बन्धको विचारैंगे, वह यह कि हम लोगोंके पूर्वपुरुष पहले एशियाके उत्तरसे आये, हमारी रहन सहन आचार विचार पहले उन्हींके समान था, परिणाम यह निकलेगा कि हम लोग तातारियोंकी एक नवीन बस्ती ठहरेंगे ।

जिन्होंने क्रमसे किम्ब्रियन+केलट और गालके नामसे यूरोपका सम्पूर्ण उत्तरीय भाग जीता था; वे लोग तातारसे आये थे गाथहून् (हूण) एनल; स्वीड, वांडल, फ्रैंक एक ही छत्तेकी मक्खियां थे, इसके सिवाय और क्या थे, स्वेडनके इतिहासोंके अवलोकनसे जाना जाता है कि स्वीड * लोगोंका काशगरसे आगमन

× गाथलोगोंके विषयमें पिंकर्टनका लेख जिल्द ७२ पृ० ९४ देखो ।

+ अब्बुलगाजीने कैमेरीको जेफटके आठ पुत्रोंमेंसे लिखा है, और उसीसे कैनेरी किमेरियाई वा किम्बरीकी उत्पत्ति मानी है, सौराष्ट्र जातियोंमेंसे कैमेरी एक जाति है ।

* डिगिगनीजके लिखनेके अनुसार सूएवी वा सू अर्थात् सूयूचीवायटीजेटी जाति हैं, मार्कोपोलोने अपने निवासस्थान काशगरकी जहांपर वह ईशाकी छठी शताब्दीमें रहता था, स्वीड जातिकी जन्मभूमि माना है ।

तथा डीलाकाइसका भी यही कथन है कि सन् १६९१ में सर्विन् फेलटने जो पैरिसमें स्वेडनका राजदूत नियुक्त था, मुझसे बातचीतमें कहा कि स्वेडनके इतिहासको पढकर काशगरको मैंने उनका देश जाना, जिस समय हूनलोग उत्तरी चीनसे निकाले गये, तब वे अपने विशेष समूहको यूरोपसे मिले दक्षिणी देशोंमें ले गये, शेष पुरुषोंने सीधे आक्सस्जेगजर्टीसके किनारेपर गमन किया, वहांसे वे कास्पियनसागरके किनारेके देशोंमें और फारिसके सीमावाले देशोंमें फैल गये और मावेरुन्नहर [आक्सज नदके पारके देश] में महा पराक्रमी सूयूचीव जेटीलोगोंके साथ संयुक्त हो गये, और सारे यूरोपमें बस गये, किसीके विचारमें यह बात आवैगी कि वे उन्हीं जेटियोंके पूर्व पुरुष हैं, जो यूरोपदेशमें विख्यात थे उसी प्रकार सुएवी नामधारी सूजातिके भी समूहने यूरोपके उत्तरमें गमन किया होगा ।

हुआ था, और सैक्सन और किप्चक लोग जो भाषा बोलते हैं इन दोनो भाषाओंके मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध पाया जाता है ब्रिटनी और वेल्समें जो अबतक केलटिकभाषा बोली जाती है इस बातका पूरा प्रमाण देती है कि वहांके निवासी तातारीजातियोंके ही वंशधर हैं।

यह जातियां ३०० और ५०० उत्तर अक्षांश और ७५० से ९५० अंश पूर्व देशान्तरके बीच मध्यएशियाकी उच्चभूमिसे जो उष्णप्रधानतावाली विषुवत रेखासे और शीतप्रधानवाली उत्तरीय ध्रुववृत्तसे बराबर दूर है चलकर यूरोप और सिन्धुनदीके इस पारतक चली आई, इस कारण अब हम सिन्धुके पार चलकर पैरोपैमिसनको उल्लंघन कर जैगजार्टीज वा जैहूनपर होकर सकिटाई * वा शाकद्वीपमें पहुँचनेकी इच्छा करते हैं और वहांके इसी प्रकार हेस्टी किपचकसे तक्षकजेटीकैमेरीकट्टी और हूनजातिको भारतवर्षके मैदानोंमें लानेकी इच्छा करते हैं बहुतसे विषयोंकी इन अजान देशोंसे हमको जानकारी प्राप्त करनेकी इच्छा है; यहां पुराने समयमें सभ्यताको स्थान मिला था, और यह बडे २ नगर चंगेजखाँकी चढाईके समयतक विद्यमान थे, जो यह सोचते हैं कि एशियाकी उच्च भूमिकी जातियां पशुमात्रको चराया करती थीं वे बडी भूलमें पडे हैं, डिडिगनीजने पुराने प्रमाणोंसे इस बातको सिद्ध कर दिया है कि जबहूनलोगोंने यूची वा जिट जातिपर चढाई की तो उन लोगोंका ऐसे नगर संख्यामें सौसे अधिक मिले जिनमें भारतकी सौदागरीकी वस्तुएँ थीं, और उन लोगोंमें जो मुद्रा प्रचलित थी, उसपर वहांके राजाओंकी मूर्ति अंकित थीं।

मध्य एशियाकी यह दशा सन् ई० से बहुत पहले की थी जो इन देशोंमें होनेवाली लडाइयोंसे बरबादी हुई जिसका निदर्शन यूरोपमें नहीं पाया जाता, और जिसके कारण यह देश निर्जन और उजाड हो रहा है और इस कालमें, जैटिक जातिके साथ तैमूरकी लडाईमें उसके लुब्ध पूर्वजोंके संहारकारी जीवनका निदर्शन होगा।

साइरिसके समयमें ईसासे छः सौ वर्ष पहले इस बडी जटिक जातिके राजकीय प्रभावकी यदि हम परीक्षा करें तो यह बात हमारी समझमें आ जायगी कि तैमूरकी उन्नत दशामें भी इन जातियोंका पराक्रम ह्रास नहीं हुआ था यद्यपि २० बीस शताब्दीका समय व्यतीत हो चुका था, उस [१३३० ई.] में जटिक जातिके पिछले राजा तुग़लक तैमू-

---

* पिंकर्टनने सकिटाईजातिकी खोज की है, यद्यपि जिस शाकद्वीपका पुराणोंमें वर्णन आया है, उसके लिये उन्होंने डियन बिलका कोई प्रमाण नहीं दिया है, यह सकिटाई आक्सस और जेगजार्टीजनामवाली नदियोंके निकासका देश है, जिसको सकीलोगोंके निवासके कारण सकिटा कहा जाता है। जो जाबुलिस्तानका शासन करते थे तथा जिन्होंने गजनी बसाई वह जैसलमेरकी यदुजाति चकताई जातिको अपने इन्दुवंशसे होना मानते हैं, और यह कहते हैं कि गूढ विचारके विना यह बात मानने योग्य विदित नहीं होती, परन्तु मेरी समझमें यह विश्वासके योग्य है।

रखांके राज्यशासनमें चगताई × राज्यकी पश्चिम ओरकी सीमा जेस्टी किप्चिप् और दक्षिण ओरकी जैगजार्टीज और जेहून नदी थी और जिसके तटपर टोमिरिसके समान जेटीजातिके खानकी राजधानी थी । कोजेन्ट, ताशकन्द उट्रार * साइरो पोलिस और सबसे उत्तरकी ओर इस्कन्दरिया चकताईराज्यकी सीमाके भीतर थे ।

जेटी, जोट वा जिट और तक्षक जातियां जो भारतवर्षके छत्तीस राजवंशोंमें संयुक्त हैं, यह सब ही सकटाईदेशसे आई हैं हम पुराणोंसे सबसे पहले समयमें उनके दूसरे स्थानमें जानेका पता लगावेंगे, परन्तु उनकी इस समयकी चढाइयोंके विषयमें जो कुछ वृत्तान्त है उस बातको महमूदगजनवी और तैमूरका इतिहास हमको भलीभांतिसे परिचित करता है ।

जो ऊदके + पर्वतोंसे आरम्भ करके मकरानके किनारेतक और श्रीगंगाजीके किनारे २ जिटजाति ÷ बहुतायतसे फैली हुई है और केवल शिलालेख वा पुराने ग्रन्थोंमें तक्षकजातिका नाम पाया जाता है ।

उनके आदिनिवासस्थानोंमें और उन जातियोंके बीच जिनको इस समयके पुरुष पृथक् २ नामोंसे पुकारते हैं; विशेष खोज करनेसे उनका असली नाम प्रकाशित होगा; जिसको इस समय सिन्धुनदीके तटपरके रहनेवाले भलीभाँतिसे जानते हैं, और संभव है कि ताजक लोगोंमें तक्षक वा तकिउकका पता लग जाय, जो अबतक अपने पुराने स्थानमें रहते हैं, जो पुराने ग्रन्थकारोंका लिखा हुआ ट्रांसआक्सियाना और चौरस्मिया, ईरानवालोंका मावेरुनहर देशी भूगोलमें दिया हुआ, तुरान, तुर्किस्तान वा टोचारिस्तान और टाचरी तक्षक वा तुरुश्क नामके भारतवर्षपर चढाई करनेवालोंका निवासस्थान है, जिनका वर्णन विद्यमान शिलालेख और पुराणोंमें मिलता है ।

जेटीलोग बहुत समयतक अपनी स्वाधीनता बनाये रहे जिससमय साइरसने उनको अपने वशीभूत करनेके लिये चढाई की तो टोमरिस उसके सन्मुख हुआ, जब निरन्तर लडाई करते २ उनको सतलजके पार उतरना पडा तो भी उनका पुराना स्वभाव न गया, जिसका वर्णन हम आगे चलकर करेंगे, यद्यपि वह अपने प्राचीन

× पुराणोंमें लिखा चगिताई वा सकिटाई शाकद्वीप है यूनानियोंने इसे विगाडकर सीथिया किया है जो लोग सूर्य पूजते और अरवर्मा नदीको अपना निकास मानते हैं ।

* उट्रार कदाचित् यह प्राचीन भूगोलवालोंका ओटोराकुरी हो, उत्तरीकुरु यह इन्दुवंशकी एक शाखा है ।

+ रैनलेके नकशेमें दिया हुआ जिद्का डांगजौडीज है यदुनामक एक पर्वत जो पंजाबमें ऊपर की ओर है और जहांपर सौराष्ट्र देशसे निकाले जानेके पीछे यदुजातिने अपनी एक बस्ती बसाई थी ।

÷ नूमरी वा लूमडी जातिके लोग बलूचिस्थानके रहनेवाले जिट हैं, यह लोग वही हैं जिनको रेनेलने लोमडी भी लिखा है ।

इतिहासको नहीं जानते, तो भी यह अपने पुराने नियमके अनुसार लाहौरके जिट अ-धिपतिके अधिकारमें रंगरूट सवारोंके समान बीकानेर और भारतवर्षके मरुस्थल और दूसरे प्रदेशोंमें भी चरवाहों [राजचरवाहों] के समान रहते हैं, थोडे समयसे ही इन्होंने चरवाहोंका कार्य छोडकर किसानी करनी आरम्भ कर दी है, ट्रान्स और आक्सियानाकी जो निरन्तर भ्रमण करनेवाली जातियाँ थीं उनके वंशधर अब भारतके जंगलोंमें सबसे उत्तम खेतीका कार्य करनेवाले हैं ।

विचारसे यह बात जानी जाती है कि इन हिन्दूसीथिक जातियों अर्थात् जेटी,तक्षक, असीकट्टी, राजपाली, हूनकैमेरीकी चढाइयोंके कारणसे ही चन्द्रवंश वा इन्दुवंशके स्थापन करनेवाले बुधकी पूजा आरम्भ हुई है ।

हेरोडाटसने जेटीलोगोंको आस्तिक*बताया है, और कहा है कि वे आत्माके अमर होनेका सिद्धान्त रखते थे, यही बौद्धलोगोंका सिद्धान्त है ।

परन्तु हम पहले असी वा अश्वजातिके विषयमें कुछ आलोचना करके पीछे असी, जेटी वा स्कैण्डेनेवियाके जट जिनके द्वारा किम्बरीक चिरसोनीजका नामकरण हुआ है और सीथिया तथा भारतवर्षकी जेटीजातिके धर्मविषयकी समानताका उल्लेख करेंगे ।

अश्वका इन्दुवंश [देवमीढ और बाजश्वके वंशधर] सिन्धुनदीके दोनों तटों-पर बस गया, और संभव है कि इस अश्वनामसे ही 'एशिया' खण्डका नाम पड गया हो ।

हेरोडाटस लिखता है कि यूनानवालोंने प्रोमिथियसकी स्त्रीके नामपर एशिया नाम रक्खा है, और कोई ऐसा कहते हैं कि यह मेनेसके एक पोतेके नामसे हुआ था, जिससे आदिपुरुष मनुके वंशधर अश्व जातिका ही ज्ञान होता है ।

आशाशकम्भरी × माता आशाकी देवी है, जो जातियोंकी रक्षा करने-वाली माता है ।

सब ही राजपूत आशा पूर्ण मनोरथकी पूर्ण करनेवाली देवीकी पूजा करते हैं अथवा शाकम्भरी अर्थात् रक्षा करनेवाली देवी प्रत्येक कार्यके आरम्भमें स्तुति प्रार्थना पूर्वक पूजी जाती है ।

---

* यह सूर्यको अपना सबसे बृहत् देवता मानते थे, इतनेपर जोमौल्कसिज इनके भयका देवता था, जो हिन्दुओंके प्लुटोयमके समान है, इसी प्रकार 'यमल्द' सीथिक जातिके फ्रैंसलोगोंका मुख्य देवता था पिंकर्टनकी हिस्टी आफ दी गाथ जिल्द २ पृष्ठ २१५ ।

× शाकंभरी शाकम्-शाखाका बहुवचन और अम्बर रक्षा करना (टाड् साहबकी यह व्युत्पत्ति ठीक नहीं शाकन् शब्द बहुवचन नहीं एकवचन है और शाकादिपत्रोंका वाचक है, अम्बरका अर्थ भी रक्षा करना नहीं बल्कि है, शाकम्भरीका अर्थ शाकादिकेद्वारा भक्तोंको पोषण करनेवाली शाकम्भर यह दो शब्द हैं ।

यह अश्व जाति इन्दु वंशकी ही थी, पर यह नाम सूर्यवंशकी एक शाखाका भी था, इससे विदित होता है कि यह लोग एक विख्यात अश्वारोही थे * इस जातिमें अश्वकी पूजा होती थी, और सूर्यके निमित्त उसीकी बलि देते थे, शीतकालकी संक्रांतिपर अश्वमेध महायज्ञ होता था, यह इस बातका एक बडा निदर्शन है, कि इन अश्वजातिका तथा जेटिक जातिका निकास सीथियनजातिसे ही है जो पिंकर्टनके इस सिद्धान्तको प्रमाणित करती है कि कास्पियन समुद्रसे लेकर गंगा पर्यन्त सीथियन लोगोंकी एक बडी जाति फैली हुई थी ।

सन् ई० से १२०० वर्ष पहले तक सूर्यवंशी राजा गंगा और सरयूके किनारे अश्वमेध यज्ञका अनुष्ठान करते थे, जिस प्रकार जेटी जाति साइरसके समय करती थी, हेरोडाटसने कहा है कि सृष्टिक्रममें जितने जीव उत्पन्न हुए हैं उनमें सबसे अधिक शीघ्रगामी जीवको ही अपने इष्ट देवताके निमित्त बलि देना यह जाति उचित समझती थी, इस समय तक राजपूतोंमें घोडेकी पूजा और बलिकी रीति चली आती है इस बडे नियमका वृत्तान्त अपने मुख्य देवता सूर्यके प्रतिरूपी इस अश्वपूजनकी जेटीजातिके असीलोग स्कैण्डिनेवियामें ले गये, और इसी प्रकार सू सुएवीकट्टी (कत्ती) सुकीम्ब्री और जेटीनामक सब पुरानी जर्मनजातियोंने इस रीतिका जर्मनके जंगलों और एल्प तथा बेजर नदियोंके किनारों पर प्रचार किया ।

दूधके समान श्वेतरंगका घोडा देवताओंकी सूचना देनेवाला समझा जाता था, उसके हींसनेसे भविष्य बातोंका निर्णय करते थे बुध (बोडन) के वंशधर अश्वजातिके लोगोंका यमुना और गंगाके किनारेपर भी उस समयसे यही विश्वास था, जब कि स्कैण्डिनेवियाके पर्वतों और बालटिक सागरके किनारोंपर किसी मनुष्यका पांव भी नहीं रक्खा गया था, और इसी शकुनसे डेरियस हिस्टास्पस [हींसने हिनहिनाने] को राजछत्रकी प्राप्ति हुई थी, चन्द्रभाट भी इसके शब्दसे अपने मुख्य वीरोंकी मृत्यु सूचना मान गया है ।

अपसालाके मंदिरमें स्कैंडिनेवियाकी लडाईके देवताका घोडा स्थापित किया जाता था, जो लडाईके पीछे सदा ही पसीनेसे भीजा हुआ और मुंहसे झाग उगलता पाया जाता था, टसीटसने लिखा है कि घोडेकी आकृति बनी हुई देखकर ही जर्मनलोग मुद्रा (सिक्के) का व्यवहार करते थे अन्यथा नहीं ।

एड्डामें लिखा है कि स्कैण्डिनेवियामें प्रवेश करनेवाले जेटी वा जिटलोग असीनामसे विख्यात थे उनकी प्रथम वस्ती असगई थी × परन्तु पिंकर्टनएड्डाका प्रमाण

---

* संस्कृतमें घोडेका पर्याय शब्द अश्व और हय है, फारसीमें इसे अस्प कहते हैं ई० से ६०० वर्ष पहले जेटीलोगोंने जब सीथियापर चढाई की थानवीइजाकीलने इस शब्दका प्रयोग उस चढाईमें किया है, डायोडारसका कथन है कि तोगरमाहके बेटे घोडोंपर सवार होते हैं, यह समय भारतपर तक्षक जातिकी चढाईका ही जानना चाहिये ।

× असगई—असीगढ अर्थात् असीलोगोंका गढ ।

स्वीकार नहीं करते, और टर्फियसकी सम्मतिमें अपनी सम्मति मिलाते हैं, जिसने आइस-लैण्डके इतिहास और वंशसूचियोंके लेखोंसे सन् ई०से ५०० वर्ष पहले डेरियस हिस्पास्टसके समयमें ओडनका स्कैण्डिनेवियामें आना माना है।

यही अन्तिम बुद्ध वा महावीरका समय है ई०से५३३ और विक्रमसे ४७७वर्ष पहले जिनका संवत् चला था।

ओडनका उत्तराधिकारी गौतम स्कैण्डिनेवियामें था, और यह गौतम अंतिम बुद्ध महावीरका उत्तराधिकारी था। जिसकी पूजा अबतक मलकाके जलडमरूमध्यसे लेकर कास्पियन समुद्रतक गौतम वा गोदम नाम से होती है।

पिंकर्टन साहब कहते हैं जो ईसवीसे एक सहस्र वर्ष पहले मुख्य देवता गिना जाता था वह सरा ओडन दूसरा प्राचीन वृत्तान्त बतलाता है।

मैलेटने भी दो ओडनका होना माना है, परन्तु पिंकर्टनकी सम्मति है कि उस मैलटको टार्फियसके मतके अनुसार ई० से ५०० वर्ष पहले ओडनका मानना उचित था।

यह एक बडे अचम्भेकी बात है कि स्कैंडिनेवियाके निवासी दोनो ओडिनोंका समय बाईसवें बुद्ध नेमिनाथ और चौबीसवें तथा पिछले बुद्ध महावीरके समयसे मिल जाता है। इनमें पहलेका समय कृष्णके समयके साथ ईसवीसे लगभग १००० वा ११०० वर्ष-पहले और पिछला ५३३ वर्ष पहले हुआ था, यूरोपके असीजेटी आदिलोग पूर्वके असीतक्षक और जेटियोंके समान मर्क्यूरी (बुध) को अपने वंशका आदिपुरुष मानकर उसका पूजन करते थे।

चीन और तातारके इतिहासवेत्ताओंका मत है कि ईसासे १०२७ वर्ष पहले बुद्ध वा फोका जन्म हुआ था।

वाकट्रिया और जोहूननदीके किनारेपर रहनेवाली यूची जाति पीछेसे जेटा वा पेटन ÷ कहाने लगी, जिसका प्रयोजन जेटियोंसे है, एशियाके इस प्रान्तमें बहुत समयतक इनका अधिकार रहा, इतना ही नहीं किन्तु हिन्दुस्थानके भीतर भी कहीं २ इनका अधिकार था, इन्हीं लोगोंको यूनानी इण्डोसीथीके नामसे पुकारते थे, उनका आचार विचार * तुर्कोंकी समान ही है, पूर्वके देशोंमें जो राज्यके उलटफेर हुए थे उनका परिणामी प्रभाव दूरदूरतक व्यापा था ×।

---

१ महावीर–बडा युद्ध करनेवाला।

÷ पिंकर्टनका गाथ-लोगोंपर जो लेख है उसमें वह कहते हैं, युटलैंण्ड यह नाम है जो सब किंम्रिकचेर्सोनीज वा जटलैण्डका था।

* अब्बुलगाजीके बनाये इतिहाससे तुर्क तुरुष्क तक्षक वा तानक (टानक) यह तुर्कोंक नाम हैं।

× हूणलोगोंका इतिहास जि० १ पृ० ४२।

इन इतिहासलेखकोंने जो समय इन सीथिक जातियोंका यूरोपमें आकर निवास करनेका नियत किया है वही समय उनका भारतमें पदार्पण करनेका है ।

छठी शताब्दीमें शेषनाग देशसे तक्षक जातिके आनेका समय माना गया है और इसी घटना वा राज्य समयसे आरंभ कर पुराणोंमें लिखा गया है कि इससे आगे "शुद्ध वंशका कोई राजा नहीं पाया जायगा, किन्तु शूद्र तुरुष्क और यवन सर्वत्र फ़ैल जांयगे"।

चढाई करनेवालों और इन सब हिन्दू सीथिकलोगोंका बुद्ध धर्म था, और इसीसे स्कैण्डिनेवियावालों और जर्मन जातियों और राजपूतोंके आचार विचार और देवता-सम्बन्धी कथाओंकी सदृशता तथा उनके वीर रसात्मक काव्योंका मिलान करनेसे यह बात अधिकतर प्रमाणित हो जाती है ।

भाषाबोलीकी अपेक्षा धर्मविषयक व्यवहारोंकी समानता ही मूल उत्पत्तिकी एकताका दृढ प्रमाण है, भाषा सदा बदलती रहती है परन्तु बदलते हुए भी रीतिभाँतिमें मुख्य बातें शेष रह जाती हैं, और जब छुटी हुई रीतियोंका पता उनके मूलतक लगाया जाय जो जल वायुके विरुद्ध होने तक भी मानी गई हों तो इस प्रमाणको कोई अस्वीकार नहीं कर सकता ।

जातीय स्वभाव और पहरावा टैसिटसके लेखानुसार प्रत्येक जर्मनका बिस्तरेपरसे उठकर स्नान करनेका स्वभाव जर्मनीके शीतप्रधान देशका नहीं हो सकता, परन्तु यह पूर्वीदेशका है और दूसरी रीति नीति जातीय स्वभाव तथा सीथियन, किम्ब्री, जरकट्टी, सुएवी जातिके मिथ्या विश्वासोंका हुआ होगा, जो उसी नामकी जेटी जातियोंके सदृश ही है, जिनका वृत्तान्त हेरोडाटस, जसटिन, और स्ट्रैबोने किया है और जो व्यवहार राजपूतशाखामें इस समयतक विद्यमान है ।

अब हमें वह समानता मिलानी उचित है जो इतिहाससे धर्म और आचार विषयमें पाई जाती है, सबसे प्रथम धर्मविषयक समानताकी आलोचना करते हैं। देववंश तथा देवोत्पत्ति जर्मनियोंके आदि देवता टुइसटो मर्क्यूरी (बुध) और अर्था (पृथ्वी) थे।

टुइस्टो ×—इला और मनुसे उत्पन्न हैं, लोगोंने भूलसे उसको ओडिन वा वोडेन समझा है, जो पूर्वी जातियोंका बुध है, इससे बडी गडबड हुई है यद्यपि वे इन जातियोंके मंगल और बुध हैं ।

× सूलपुरमें जिटजातिके राजाका लेख पांचवीं शताब्दीका है उसमें उसको तुष्टा जातिका लिखा है, वह वर्णन कीलकी आकृतिके शिरवाली लिपिमें है जिसका प्रचार भारतके प्राचीन बोद्धोंमें था जिसे तातारी अपनी पवित्र लिपि मानते हैं, जिसे पाली कहते हैं । मेरे पास जितने प्राचीन शिलालेख अग्निकुलके चौहान परमार सोलंकी और परिहारोंके हैं वह सब इन्हीं अक्षरोंमें हैं, जिटराजाके शिलालेखमें उसको जितके थोडा [प्रश्न कैथे वाडा] लिखा है हमारे यहाँके टुइजडे और वेडनेसडे यह मंगल और बुधके नाम टुइसटो और वोटडेनसे पडे हैं यह च्यूजडे फरासीसियोंका मडी है ।

धर्मसम्बन्धी रीति–सुओनीज वा सुएवी [शैवी] जो स्कैंडिनेवियाकी जेटी-जातियोंमें सबसे अधिक बलिष्ठ जाति थी, वह बहुतसे सम्प्रदाय जातियोंमें विभक्त हो गई, जिनमें सेलू [शूची वा जिट] लोग अपनी बगीचियोंमें अर्थाको मनुष्यबलि देते थे और अर्थाका रथ एक गाय खैंचती थी।

सुएवी लोग ईसिसकी पूजा करते थे जो राजस्थानके ईसिस और सीरीस अर्थात् हरगौरी हैं, जिसकी रीतिमें एक जहाजकी मूर्त्ति होती है, टसिटस कहता है कि यह रीति विदेशी होनेकी सूचना देती है, जिस प्रकार मिसर देशमें, ईसिस और असिरिसका उत्सव होता है, उदयपुरकी झीलपर वैसा ही ईश गौरीका उत्सव होता है, हेरोडाटस इसके वृत्तान्तको इस प्रकार लिखता है कि ओसिरिसके हाथमें जो अपनी खसे दूसरे कक्षाके हैं खिले हुए प्याजके फूलोंकी एक लकडी रहती है, जिसको मिसरके लोग पवित्र मानते हैं, परन्तु हिंदू जाति इससे घृणा करती है।

उप सालाका प्रसिद्ध मंदिर सुएवी वा सुइयोनीज लोगोंने बनवाया था, और उसमें उन्होंने थोर, वोडेन और फ्रेयाकी मूर्तियोंकी स्थापना की, यही स्कैंडिनेविया (स्कन्धावार) के त्रिदेव कहाते हैं, यह सूर्य चन्द्र वंशकी त्रिमूर्ति है, थोर अर्थात् गर्जनेवाला युद्धका देवता, यही हर वा महादेव–संहारकर्ता। दूसरा वोडन-बुध-रक्षाकर्ता, और तीसरी फ्रेया उमा उपन्न करनेवाली शक्ति है।

टैसिटसे पचास वर्ष पीछे होनेवाले टालेमीके लेखको उतद्धृ करके पिंकर्टन कहता है कि जेटलोगोंके देश युटलैण्ड वा जटलैण्टमें छः जातियाँ थीं जिनमें लिंगई (सुएवी × वा सुइयोनीज) कट्टी और हेमन्द्री भी संयुक्त थी, जो एल्ब और वेजर नदीके मुहानेतक फैल गई थी, उस स्थलमें उन्होंने 'युद्धके देवताके नामपर' इर्मन-स्युल नामक एक स्तंभ खडा किया था, जिसके निमित्त सैसिज इस प्रकारसे वर्णन करता है कि कोई लोग इसे मार्स (मंगल) का और कोई हर्मीज साल अर्थात् मर्क्यूरी (बुध) का स्तंभ कहते हैं, उसने स्वभावसे ही यह प्रश्न किया है कि बुध (मर्क्यूरी) के यूनानी नामसे सैक्सनलोग कैसे परिचित हुए।

संस्कृतमें यज्ञके स्तंभोंको सुर वा सूल कहते हैं जिसे भारतके युद्ध देवता हरके साथ जोड देनेसे हरसूल हो जाता है। राजपूत तर्वारयुद्धके समय अपनी सहायताके लिये हरको त्रिशूल सहित बुलाता है, उनका रण शब्द मार मार कहा जाता है।

---

१ हिन्दुओंके देवता मुख्य तीन हैं कृष्ण रक्षा करनेवाले हैं यह इन्दुवंश बुधके बराबर हैं कि जिनका पूजन स्वयं देवता माने जानेके प्रथम करते थे। कृष्णका वेद धर्म है। (अनुवादक)

× जिसको टैसिटसने सीवीजाति लिखा है।

२ यज्ञस्तम्भका नाम संस्कृतमें सुर वा सूल नहीं उसका नाम स्तम्भ है और यह शब्द शूल है जो लोहेका नोकदार एक आयुध होता है शिवके पास त्रिशूल है [अनुवादक]

३ हरस्कैंडिनेवियाका थोरहरी बुध हर्मीज वा मर्क्यूरी है।

युटलैण्डकी छः जातियोंमेंसे किंब्री जाति अधिक विख्यात है वह कहती है हमने अपना नाम अपनी वीरताकी नामवरीसे पाया है।

कुमार जो युद्धके देवता हैं उनके सातें शिर हैं।

किम्ब्रीचेर्सोनीजका छः शिरवाला मार्स वेजर नदीके किनारे जिसके नामसे इर्मनस्थोल बनाया गया था, सैकेसनी, कट्टी, सीवी वा सुएवी (शैवा) जोटी वा जेटी और किंब्री जातिके लोग उसकी पूजा करते थे जिनके नाम तथा धर्म सम्बन्धी आचार विचारसे भारतवर्षके वीर पुरुषोंके आचार विचारका एक ही मूलसे प्रगट होना विदित होता है।

इतने बडे विस्तारित विषयके मिलान करनेमें उनकी समस्त रीति और व्यवहार तथा धर्मसम्बन्धी विश्वास भी संयुक्त किये जायँगे, इस कारण हम इस विषयको एक पृथक् ग्रन्थके लिये रख छोडते हैं। हेवियोंकी अप्सराओंमेंसे दो जोंरिया बहने सुएवी * वा सीवजातिकी वल्काइरी वा नाश करनेवाली भगिनियोंकी अप्सराओंमेंसे जाननी चाहिये, जो समरभूमिसे वीरराजपूतोंको अपने समीप बुलाती हैं, तथा जो यूनानियोंके हेलियाडी लोगोंके एल्यूसियम [स्वर्ग] के समान है, ऐसे सूर्य-लोकमें उन वीरोंको ले जाती हैं, जहां पहुँचनेकी स्कैंडिनेविया (स्कन्धावार) को रीवासी ओडिनके वंशधर तथा सीथियाके मैदानोंके रहनेबाले तथा गंगातटवासी, बुध और सूर्यके वंशधर सब ही इच्छा करते हैं।

युद्धके दिन प्रत्येक वीरजातिमें हम देखते हैं कि यशके निमित्त वे उत्तेजित होकर मृत्युकी कुछ भी चिन्ता नहीं करते और युद्धकी रणरंगभूमिपर नाट्य

---

१ मेलेटने इसको कम्पाकरसे निकाला है जिसका अर्थ लडना है।

२ कु उपसर्ग है जिसका अर्थ बुरेका है इससे कुमारका अर्थ बुरा मारनेवाला होता है कदाचित् इसीसे रोमके युद्ध देवमार्सकी उत्पत्ति हुई हो, जैसी हिन्दुजातिमें कुमारकी उत्पत्ति है वैसे ही जाह्नवी देवी [जूनो] से विना मैथुनके यूनानियोंके युद्धदेवकी उत्पत्ति हुई है, इनके साथ सदा मोर रहता है जो जूनोका पक्षी है।

३ कुमारके सात शिर नहीं छः शिर है और कुमारका अर्थ बुरा मारनेवाला भी नहीं है इसका अर्थ क्वाँरा है। (अनुवादक)

* मैं ऐसा विचार कर रहा हूँ कि हिन्दुस्थानके पिछले महाराज पृथ्वीराजके अन्तिम महाकवि चन्दरचित काव्यके ६९ अध्यायोंमेंसे कुछ अनुवाद करके पाठकोंके सन्मुख धरूँ, जिसमें वीररसका चित्र खिंचा हुआ है उस वीरपुरुषोंमें अग्रगण्य राजाके एक २ वीरतामयकार्यके विषयमें एक २ अध्याय लिखा गया है, उनसे स्कैंडिनेविया और राजपूतोंके भाटोंके मध्यमें मिलान करेंगे तो बडी सहायता मिलैगी और उनसे यह बात दीखजायगी कि प्रोवेंकलके ट्राबेडर, न्यूसट्रियाके टाड वियर और जर्मनीके मिनेसिंगरके साथ राजपूतोंके वरदाई भाटोंमें कितनी समानता पाई जाती है।

४ एल्यूसिओस शब्दकी उत्पत्ति इलियससे हुई है जिसका अर्थ सूर्य है यह उपाधि भारतके (अपोलो) हरिकी भी है।

करनेवाले यह पात्र चाहे देवलोक चाहे मर्त्यलोक सम्बन्धी हों दोनो एक ही प्रकारसे आचार विचार करते तथा अभिनय करते दिखाई देते हैं, थोर अर्थात् गर्जनेवाले देवताको सीथिजातिके लोग लडाईमें ले जाते हैं, और शिवजी तथा हरजी भारत वासियोंके जीव जावे हैं, अपने ही उपासकोंको युद्धमें ले जाते हुए युद्धमें देखते हैं, जिसमें रक्षा करनेवाले स्वयं भगवान कृष्ण और फ्रेया अर्थात् भवानी भी संयुक्त होती हैं।

युद्धका रथ-दशरथ * तथा महाभारतमें भी रथोंसे युद्ध होना लिखा है, जेग्जर्टीजके किनारे जेटियोंने यूनानमें जर्कसीजको, अर्बेलामें दाराको सहायता दी थी उस समय उनके साधन रथ ही थे।

सौराष्ट्रकी काठी × कोमानी और कौमारी जातियोंमें सीथियन रहन सहन इस समयतक वर्तमान है।

स्त्रियोंके सन्मान भी राजपूतोंमें जर्मनकी भाँति हैं सन्मानके लिये उनके पीछे देवी वा देव शब्द लगाते हैं, उनके लिये ही जुहारव्रतको करते हैं। शाकाबन्धकी उपाधिपर राजपू-

---

* दशरथ रामचन्द्रजीके पिताका नाम है और रथीका बोधक है।

१ हेरो डाटसने इस प्रकार लिखा है कि, ईरानके सूबोंमें डेरियस वा दाराका भारतीय सूबा सबसे अधिक धनसम्पन्न था, उससे उसको सोनेके छः से टैलैण्ट मिलते थे, और एरियनके लेखसे यह बात सूचित होती है कि, उसकी इण्डोसीथिक प्रजाकी उस समय उसके पास सर्वोत्तम सेना थी जब कि सिकन्दरके साथ दाराका संग्राम हुआ था, सैकसेनीके सिवाय हम लोगोंके और भी ऐसी जातियोंके नाम ३६ राजकुलोंके समान हैं और विशेषकर डाही (दाहिया) छत्तीस कुलोंमेंसे एक नाम है।

इस इण्डोसीथिक सेनामें १५ हाथी और दोसौ युद्धके रथ थे जो पार्थियन पुरुषोंके साथ दाहनी ओर तथा दाराके समीप रक्खे गये थे, सिकन्दरने जिस सेनाकी कमान स्वयं की थी उस सेनाके सामने वे लोग उठे थे।

जिस समय रथियोंने युद्ध आरम्भ किया और बाईं ओरसे जब सिकन्दर ईरानियोंकी सेनाको हटानेका प्रयत्न करने लगा तब उन्होंने उसके इस यत्नको रोक दिया, उसके अश्वारोही गणोंका वर्णन बडे सन्मानके साथ लिखा गया है कि वे पर्मिनियोंकी कमानवाली सेनामें प्रवेश कर गये, जिसकी सहायताके लिये सिकन्दरको और सेना भेजनी पडी। इन इंडोसीथिक लोगोंकी वीरताका वर्णन यूनानी इतिहास लेखकोंने प्रसन्नतापूर्वक लिखा है कि, अश्वारोहियोंने कोई कर्तब नहीं दिखाया न बाणोंसे दूरकी लडाई हुई, परन्तु प्रत्येक इण्डोसीथिक वीरने युद्धके समय ऐसा पराक्रम किया कि मानो यह अपने बाहुबलके भरोसे विजयकी अभिलाषा करता है वे यूनानियोंके साथ संग्राममें भिड गये थे, परन्तु अर्बेलाके इस युद्धमें दाराके भाग्यमें पराजय थी और यूनानी यवनोंके पराक्रमसे शक तथा इण्डोसीथिक जातिको अपनी जन्मभूमिसे बहुत दूर राजाधिराजकी सहायतामें प्राण न्यौछावर करनेकी प्रतिष्ठा प्राप्त हुई।

× सिकन्दरके संग्रामोंमेंकाठी जाति प्रसिद्ध है, काठिवाडके काठियोंकी खोज प्राचीनस्थानसे लगाई जासकती है, दाहिया (डाही) जोहिया [पिछले हुन] और काठी यह ३६ राजकुलोंके अन्तर्गत हैं, यह सब पंजाबकी पांच नदियोंके अन्तर्गत और गाराके दक्षिण मरुभूमिमें छः सौ वर्ष पहले रहते थे, पिछली दो जातियोंका केवल नाममात्र शेष रह गया है।

तोंको गर्व रहता है, जो यह रीति शाका करनेसे ही प्राप्त होती है, यह सीथियन और जटीलोगोंकी सैसिया रीतिसे मिलती है जैसा कि; स्ट्रौबोने लिखा है ।

मस्तिष्कसम्बन्धीकार्योंमें प्रवृत्ति न रहनेसे वीर राजपूत गण बहुधा आलसी और इन्द्रियोंकी विषयासक्तिमें मग्न रहते हैं, और जब उनको इन बातोंसे सचेत किया जाता है तो उत्साहके मारे उन्मत्त हो जाते हैं और जिस समय किसी ऐश्वर्य-सम्पन्न बडे राज्यके प्रबन्ध और यथार्थ शैलीपर चलनेकी शिक्षा रहती है तो उसमें भी वैसे ही आमोद और प्रमोद तथा प्रसन्नताके कई एक अंश वैसे ही पाये जाते हैं,

१ सैकी जातिका आक्रमण पण्डिक सागरके किनारे रहनेवाली जातिपर हुआ था, जिस समय वे लोग लूटका माल बांट रहे थे कि, अकस्मात् रातमें आकर यूनानी सेनाने उनकोमार डाला, इस विजयके स्मरणके लिये यूनानियोंने उस युद्धक्षेत्रमें एक चट्टानके चारोंओर मट्टीका एक बडा टीलाकर दिया, उसपर दो मंदिर निर्माण कराये गये, एक तो ओमेनस, और अनेनडेट देवताओंका और एक अनाइटिस देवीका बनवाया और उसी समयसे वहां सैथियानामक वार्षिकोत्सव आरम्भ हुआ, जिसको अवतक जेलाके अधिकारी करते हैं, सैसियाकी उत्पत्तिके विषयमें कई--ग्रंथकारोंका यही मत है, और दूसरे लोग तो यह कहते हैं कि, उसका आरम्भ साइरसके राजत्वकालसे ही है, वह कहते हैं कि, इस बादशाहने जब सैकी (हेरोडाटसके मानेमेंसे जेटी) लोगोंके देशमें जाकर युद्ध किया तो एक लडाई में इसकी पराजय हुई, तब वह विवश होकर अपने मेगजीनकी ओर लौट आया जिसमें बहुतायतसे खानेके पदार्थ और विशेषकर मदिरा थी, और कुछ समयतक अपनी सेनाको विश्राम देनेके निमित्त शत्रुकी सेनाके सामनेसे हट गया, और शत्रुलोग यह समझे कि,यह भाग गया है । अपने उस स्थानको खाद्य पदार्थोंसे भरा छोड गया, जब शत्रुसेनाके लोग पीछा करते हुए उस स्थान में पहुँच तब उस स्थानको खाद्य पदार्थों भरा हुआ देखकर मद्यपान करनेमें लग गये, तब साइरसने पीछेसेलौट कर उन असभ्य मूर्खोंको आक्रमणकिया, उस सेनामें कोई तो सोते ही मारे गये,कोई मद्यपानमें आसक्त और नृत्यमें मग्न होनेके कारण न चल सके, और शस्त्रधारी वैरियोंके हाथमें पड गये, इस प्रकार वह सब सेना मारी गई विजेताने यहविजय देवताद्वारा समझकर इस दिनको अपनी उपास्य देवीके नामसे पवित्रमाना और सर्वत्र यह आज्ञा प्रचार कर दी कि, आजसे यह दिन सिसोदियाका दिन समझा जाय* ।

राजपूतशाखाओंमें जो सबसे बडी सर्वनाशकारी लडाइयां होती थीं. वह शाका कहलाती हैं, जब राजपूत सब प्रकारसे घिर जाते हैं और सहायताकी आशा नहीं रहती, तब विवश होकर अपनी स्त्रियोंका भी वध कर डालते हैं, और केसरिया बागे पहनकर मृत्युमुखमें कूद पडते हैं इसीका नाम शाका है इसमें प्रत्येक शाखा नष्ट हो जाती हैं, चित्तौडको साढेतीन वार शाकेका अभिमान है, और चित्तौडकी महाशपथ "चित्तौडशाकेका पाप" है जिसको गिह्लोटकुलके लोग किया करते हैं ।

यदि टौमिरिसको सेकी जातिके विनाशसे इस उत्सवकी उत्पत्ति हुई तो वह सिन्धुके पूर्व और पश्चिमीय देशोंमें निवास करनेवाले सैकी लोगोंकी समानताको जिसपर कि, इतना विवाद हो रहा है पुष्टि करनेके लिये प्रमाणस्वरूप हो सकता है ।

* यह वही लडाई है, हेरो डाटसने इसका वर्णन किया है यह लडाई जिटि लोगोंकी रानी टोमिरिस और ईरानके बादशाहके बीचमें हुई थी, और इसका उल्लेख स्ट्रोबोने भी किया है ।

जो जेहूनके तटपर रहनेवाले जेटियों और स्कैण्डिनेवियाके निवासियों और यहांके राजपूतोंमें समानरूपसे मिलती जुलती पाई जाती है।

जर्मन जातिसे मिलते हुए ही राजपूतोंके शकुन और भविष्य हैं. मद्यप्रचार-मद्यपानमें राजपूत सीथिया वा यूरोपके लोगोंसे कम नहीं है, यद्यपि इनके शास्त्रोंमें मादकद्रव्योंके पानका निषेध है और तो भी इस रीतिसे मुझे विश्वास हुआ है कि यह बात इनको भारतवर्षसे प्राप्त नहीं हुई है। ओडिन निवासी मीडनामक मद्यको इतने प्रेमसे कभी नहीं पीते कि जितने प्रेमसे राजपूत अपना मध्वा* पीते हैं, वरदाईने उसको अमृतका × प्याला कहा है वह कहता है कि, लाल माणिके समान अनारके दानोंसे चमकता हुआ अमृतका प्याला पीकर भाट + निर्भय हो, जातिका बखान करने लगा कि, हे राजन् ! आप भाट और शत्रुको दान देनेमें समान उदारतावाले हो, आप दीर्घजीवी हो।

वल हलाके समान जो इन्द्रलोक हिन्दुजातिका स्वर्ग है वहां स्कैनियाकी स्वर्गीय हीबीकी जौरिया बहनें वीर राजपूतोंको अपने हाथसे मद्यका प्याला देती हैं जिसकी जिटी÷वीर इच्छा करता है।

राजपूतोंकी मदोन्मत्त दशा बहुत ही कम प्रतीत होती है परन्तु इस समय एक विशेष हानिकारक और नवीन कुचालकी रीतिने निमंत्रणके उस प्यालेकी प्रतिष्ठा बहुत घटा दी है, और उस पवित्र पुष्पके स्थानपर अफीम खानेकी रीति बहुत प्रचलित हो गई है, उससे प्रत्येक उत्तम गुण नष्ट हो जाते हैं, जो बात जर्मनीके इतिहास लिखनेवाले लोगोंने बेजर और एल्बनदीके किनारोंपर रहनेवाली जातियोंके विषयमें उनके उन्मत्त बनानेवाले नशीले द्रव्योंकी प्रीतिके विषयमें लिखी हैं इस हानिकारक स्वभावके विषयमें इनके निमित्त हम भी उन्हीं शब्दोंका प्रयोग करेंगे, वह उन

---

* मध्वा एक मादक रस है यह मधुशब्दसे निकलता है जिसका अर्थ संस्कृतमें मधुमक्खी है, मीड-नामक मद्यका शहदसे बनना प्रसिद्ध है, यदि जर्मनवालोंका मीड शब्द हिन्दुस्थानियोंके मधुसे निकला हो तो यह एक बडे आश्चर्यकी बात होगी, ऐसा होनेसे प्याला और खर्बरा रस इन दोनोंके नाम अन्यस्था-नसे लिये प्रतीत होंगे।

× अमृतमें अकार मृत्युका निषेध करनेवाला उपसर्ग है, इस भाँतिसे इस स्थल अर्थात् मृत्युका दरा जो न्यूफ चैटलमें है यह जर्मनका और संस्कृतवालोंकी समानताका प्रगट करनेवाला है।

+ मारवाडेश्वर राजा अभयसिंहने भाटको भोजनके समय जब अपने हाथसे प्याला दिया तब उसने यह शब्द कहे थे।

÷ यह ऊपरके वाक्य रेगनर लाड ब्रागने उस जेटीवीरकी मृत्युकालके गीतोंमेंसे लिखे हैं, जब उसे उसके भाग्यकी उपयुक्तदेवी उसे बुलाती हैं।

१ यह फूल महुएका है राजपूत इसकी मद्य बडे चावसे पीते है, संस्कृतमें इसका नाम मधूक पुष्प है, एशियाटिक रिसर्चेज जि० १ पृ० ३००।

लोगोंके लिये शब्द यह है कि उनको करवाला हाथमें हो उनके निमित्त तुमको अपने आयुधोंका भय दिखानेकी आवश्यकता न होगी, उनकी कुरीतियाँ उनको स्वयं तुम्हारे अधीन बना देंगी।

स्कैंडेनेवियोंके लडाईके देवताका नाम थोर है शत्रुकी खोपडी उनका मानपात्र है ।

हर उन सब लोगोंकी रक्षा करते हैं जो लडाई या तीव्र मादक द्रव्योंसे प्रेम रखते हैं, राजपूत वीरोंकी विशेषकर उनमें शक्ति होती है, इस कारण रक्त वा मद्य इस देवताके अर्थके मुख्य द्रव्य हैं, हरबल वा सूर्यके मुख्य पुजारी गुसांई[२] लोग होते हैं यह सब मादक पदार्थ और पोदों सेवन करते हैं व्याघ्र चीते वा मृगचर्मपर बैठा करते हैं, केशोंका जुडा बांधे शरीरमें भस्म लगाये चीमटा लिये अग्निको चिताते रहते हैं, इनका यह जंगलीरूप इस बातकी सूचना देता है कि, यह रक्त तथा वधके देवताकी आज्ञा पालन करनेवाले योग्य पुरुष हैं ।

यह यदि युद्धके देवता हरका पुजारी साधारण व्यवहारके विरुद्ध मृत्युको प्राप्त हो जाय तो उसे भूमिमें गाड देते हैं, उसके ऊपर एक गोल समाधी बनाते और किसी २ सम्प्रदायके गुसाँइयोंमें छोटी २ समाधी बनाते हैं, जिनकी आकृति अग्रभाग विहीन शंकुके समान होती है, एक ओर सीढियां बनी होती हैं और उस समाधिकी चोटीपर एक बेलनकी समान पत्थर * रख दिया जाता है ।

मृतक क्रिया ओडन बुधने पिछली रीति चलाई और शरीरके भस्म होनेके पीछे वहां समाधिका बनाना प्रचलित किया, स्त्रीकी पतिके साथ सती होनेकी रीति उनके सीथियन पुरुषाओंके द्वारा प्रचलित हुई थी जिस समय वे ऐशियाके गरम देशमें निवास करते थे, जो उनका आदि निवासस्थान कहा जाता है ।

जेटी जातिके मृतक वीरके साथ उसका घोडा× भी गाड दिया जाता था मृतक वीरका जलाया जाना और उसके साथ उसकी स्त्रीका सती होना यह विख्यात रीतियां हैं, तो भी जहां वे वीर जलाये जाते हैं, उस स्थानपर बडी २ छत्रियें बनाई जाती हैं, जिन छत्रियोंके विषयमें यूरोपियन लोग कम परिचय रखते हैं, वा उनके देखनेको वे

---

१ यह देशमें खप्पर कहलाता है, क्या यह सैक्सन लोगोंका कप हो सकता है।

२ कनफटे योगियोंकी सैकडों जमातें होती हैं, और विशेष कर रक्षा वा युद्धमें सहायताके निमित्त इनको बुलाते हैं राजपूतोंमें जो नवरात्रमें युद्धके देवताके निमित्त बडा उत्सव किया जाता है उसमें खड्ग जो मार्सका चिह्न है गिह्लोटकुलके वंशधर जिसका पूजन करते हैं इन्ही लोगोंको सौंप दिया जाता है ।

* मैंने इनके सब समाधिस्थान तथा और भी बहुत सी पृथक् २ समाधियें अवलोकन की हैं, और तपस्याके इन्हीं स्थानोंमें रहनेवाले शिष्य अपने गुरुकी पूजा करते पाये जाते हैं, आकके फूल हरे वृक्षोंकी पत्तियां और शुद्ध जल समाधियोंपर चढाया जाता है ।

× फैलट जातिके फ्रैंकलोगोंमें भी यही रीति प्रचलित थी, चिल्पैरिकके शस्त्र और उसके घोडेकी अस्थियें जिसपर वे ओडनके समीप उपस्थित किया जानेवाला था उसकी समाधियें मिली थीं।मिलेटकी नार्दर्न ऐंटिकिटीज अध्याय १२ देखो ।

बहुत कम जाते हैं, हम सात राजपूतोंके राज्यकी उन्नति और अवनतिका बहुत बडा स्मारक छत्रियोंको मानते हैं पुत्र अपने पिताके स्मारक चिह्नरूप उस छत्रीको बनवाता है, भक्ति वा कीर्त्ति बडाई और अहंकारका यह मानो पिछला स्मारक खजानेकी दशाके अनुसार होता है, उस सन्तानके राज्यका ऐश्वर्य इसी कार्यसे स्मरण होता है जब कि उसके पिताकी छत्री उसके पूर्व अधिकारीसे विशेष हो, यह बात प्रत्येक राजा और सरदारोंके लिये एकसी है।

कहा जाता है जहां सती होती है उनके पवित्र मंदिरोंमें डाकिनी * निवास करती हैं, समाधिपर भोजन द्रव्यादि जो चढाये जाते हैं, जो लोग समाधिपरसे बिस्तरे वा भोजनको उठा ले जाते थे सैलिक आईन दशवाँ अध्याय उन लोगोंके दण्डविधानमें है ऐसे पवित्र स्थानमें जो लोग चोरी करते थे उनको जल और अग्नि कोई नहीं दे सकता था।

शहावा × एक प्रकारकी अग्नि है जो स्थानपरिवर्तन करक फिर फिर दीखती है युद्धक्षेत्र वा महासतीके स्थानोंमें यह बडी मनोहर दिखाई देती ह, तो भी इससे उदासीनताका भाव प्रगट होता है हिन्दू जातिके हृदयमें इससे मिथ्या विश्वासका भय और भक्ति उत्पन्न होती है, जिसकी उत्पत्तिका स्वाभाविक कारण वही है जो ओडिनकी स्थानपरिवर्तनशील ज्वालाका है अर्थात् मृतकोंके सडनेसे फास्फोरस सम्बन्धी एक प्रकारका खार उत्पन्न होता है।

स्कैंडिनेवियाके रहनेवाले मृतकोंकी राखपर गुम्बज बनाते थे और जैगजर्टीज नदीके किनारेपर रहनेवाले भी इसी प्रकार करते थे और इसी प्रकार हिन्दुओंके देवता हरेक पुजारी भी गुम्बज बनाते हैं।

जेटिक अलारिकके मकबरेका जो गेविनने उत्तम वर्णन किया है चंगेजखाँकी कबर ही उसकी बराबरी कर सकती है, उसका ऊँचा घेरा बनानेके समय उसके चारों ओर दूरतक जंगल लगा दिया था, जिससे उसकी अस्थियोंके समीप तक किसीकी गति नहीं।

---

* यह डाकिनी सिंधदेशकी जीवित कलेजा भक्षण करनेवाली है, उदयपुरके कबरिस्तानमें एक लकड बग्घा रहा करता था; कप्तान डब्लू साहबने बहुत कालतक पीछा करके उसको बरछेसे मारा जिसे प्रसिद्ध होहाडकी डाकिनीका घोडा कहते थे, जिसपर वह चढकर रातम फिरा करती थी, लोगोंने समझा कि; इसके मारनेसे कुछ आपत्ति आवैगी, और जब वह साहब एक बार हरिंगेका पीछा करते हुए घोडेपरसे गिर पडे तो लोगोंने यही कहा कि, उस डाकिनीके वाहनके मारनेसे ऐसा हुआ है।

× ग्वालियरके विख्यात किलेकी पूर्व ओर जहां सहस्रों योधा जल गये थे इस फास्फोरस सम्बन्धी ज्वालाका आश्चर्यजनक दृश्य दिखाई देता है मैंने अपने मित्रोंके साथ इस दृश्यको जाकर देखा था, जब हम उस चंचल ज्वालाकी ओर आगे बढे तो देखा कि, एक जगह बुझकर फिर वह दूसरी जगह प्रकाशित होती थी, और विषम दूरीपर होनेके कारण महाराष्ट्र राजाके दिनभर शिकार करने और रातको मशालचियोंसहित फिर लोटनेका भ्रम उत्पन्न करती है, मैंने एक बडे हिम्मतवाले राजपूतसे उस ज्वालासमूहके समीप जानेके लिये कहा, उसकी आकृति और बातोंसे यह झलक गया कि, उसने मेरे इस कथनको व्यर्थ समझा, उसने यह उत्तर दिया कि, मैं मनुष्योंसे युद्ध करनेको सन्नद्ध हूं परन्तु पूर्व युद्धोंमें मृतक हुओंकी आत्माके साथ युद्ध नहीं कर सकता वर्षाके अन्तमें यह ज्वाला दीखती है जिस समय दल दल वाले खार भरे स्थानोंसे भाफ निकलती है।

सौराष्ट्रदेशमें काठी कोमानी बल्ला और दूसरे सीथिक वंशके पुरुषोंमें पालिये वा युद्धमें मरनेवाले वीरोंके स्तंभ प्रत्येक नगरकी चहारदिवारीके नीचे कहीं पंक्तिके आकारमें, कहीं वृत्ताकार और कहीं विषम समूहोंमें निर्मित हुए देखे जाते हैं और उनमें उस वीरकी मूर्ति भद्देपनसे खुदी होती है तथा उसके मृतक होनेका ढंग भी उसमें होता है हाथमें बरछा, घोडेपर वा रथपर सवार हुए वा समुद्रके तटपर बुद्ध × [विष्णु] के जहाजी लुटेरे जहाजके थामनेवाले रस्सोंके द्वारा जहाजसे उतरते हुए खोदे गये हैं ।

पादरी लोगोंको तातारकी कोमानी जातिमें पत्थरके चक्कर मिले थे वह उस स्थानमें पाये जानेके समान थे जहाँ पर केल्ट जातिकी रीतियोंका प्रचार था, और अब ड्रुइड लोगोंके चक्करों और इण्डोसीथियन जातिके स्मरणचिह्न सम्बन्धी बची कुची वस्तुओंकी एकता सिद्ध करनेमें बडी बुद्धि लगानेकी आवश्यता नहीं है चाहै उनका एक ही मूलसे उत्पन्न होना न दिखा सकै ।

न्यायालयके वृक्षके केन्द्रमें जो आसन वा तीन पत्थरसे निर्मित त्रिलिथोन होता है उसका निर्माण उसी संख्यासे होता है जो हरबल वा सूर्यके नामपर पवित्र है जिनके पुजारी कानूनकी व्याख्या किया करते हैं ।

शस्त्रपूजा--राजपूतखड्गपूजा बडे आदरसे करते हैं खड्ग (असि) वा घोडे (अश्व) की पूजासे ही एसिया महाद्वीपका नाम पडा हो, जो रीति सीथियन और जेटी लोगोंमें प्रचलित थी, जिसका वर्णन हेरोडाटसने बहुत उचित रीतिसे किया है इस रीतिको जेग्जर्टीज नदीके किनारेपर रहनेवाले डोसिया और थ्रेसमें अपने साथ ले गये और जब इन्होंने यूरोप पर आक्रमण किया तब इन स्वतन्त्रताके प्रेमियोंने वहां भी इस रीतिको प्रचलित किया ।

जेटी अटीलाने जो ऐथन्सके किलेमें खड्गपूजा की थी वह बडे समारोहसे हुई थी, रोमकी अवनति और जबालके इतिहासमें यह एक प्रशंसाके योग्य लेख है, मेवाडके महाराणाको अपने समस्त सरदारोंसहित यदि दुधारी धारकी पूजा करते गिबिन साहब देख लेते तो वह मार्स अर्थात् मंगलके चिह्नरूप तलवारकी पूजाको और भी अपनी भडकदार लेखनीसे लिखते ।

शस्त्रविद्यामें प्रवेश—सैनिक कार्यमें प्रवेश करने के समय जिस प्रकार जर्मन लोगोंमें कार्यवाहीकी जाती है, वही प्रथा राजपूतोंमें है अर्थात् सेनामें प्रवेश करनेके समय युवकको एक बर्छा मिलता है वा डाल बांधकर तलवार बाँधते हैं जागीरदारोंकी रीतियें वर्णन करनेके समय हम इन रीतियोंका वर्णन करैंगे, तथा दूसरे गुणोंका उल्लेख भी वहीं करैंगे ।

इसप्रकारकी समानता दिखानेवाली रीतियोंको लिखकर उनकी सूचीका बढाना, एक ऐसा सरल कार्य होगा, जिनमें जो वस्तुएँ उनके यहां अभक्ष्य समझी जातीहैं, उनका मुकाबिला राजपूत और प्राचीनके लूटाके बीच सम्बन्ध दिखानेमें काम आवेगा, हम सबसे पुरानी रीतियोंके विस्तारपूर्वक वर्णनके साथ इन रीतियोंके वर्णनको समाप्त करैंगे ।

× चोरोंके देवताको द्वारकामें बुध त्रिविक्रम कहते हैं जिसका अर्थ तीन प्रकारके बल दिखानेवाला है, मिसरके तीन शिरवाले मर्क्यूरी (बुध) के समान यह देवता है, जिसको हर्मीज ट्रिमेजस कहते हैं ।

अश्वमेध यज्ञ—सूर्य चन्द्र स्वर्गका समस्त समूह तारागण तलवार रेंगनेवाले जीव सर्प जानवर यह कई एक जड और चैतन्य वस्तुएँ जगतकी जातियोंमें पूजाके साधारण पदार्थ गिने जाते हैं, उसमें अश्व सबसे श्रेष्ठ है, इस अश्वकी अन्तिम भक्तिकी साक्षात् वस्तुकी नाईं ही नहीं पूजा होती थी, किन्तु उस कान्तिसे पूर्ण बिम्बवाले भास्करके चिह्नके समान जिसका आदर प्रकृतिका प्रत्येक सन्तान करता है लीबियाकी मरुभूमि, तातारके मैदान, ईरानके पहाड गंगाकी रेतीली भूमिके समीप तथा ओरिनेकोंके जंगलोंमेंसे प्रत्येक स्थानमें ही उनकी कान्ति अर्थात् इस बडे जगत्के नेत्र और सूर्यके समान ही उत्साहवाले भक्त जन्मे हैं ।

उसके प्रतिरूपकी पूजा और चढावा जलवायुके स्वभावके अनुसार भिन्न भिन्न प्रकारका होता था, उस समय इस एशियामें बलकी और गोल तथा ब्रिटिन देशके कैल्ट लोगोंके बेलिनसकी वेदिकाएं मनुष्यके बलिदानके धुएँसे आच्छादित रहती थीं, मिथ्रास [सूर्य] के सांडकी * वैवलिनमें बलि चढाई जाती थी। तथा जैग्जरटीज और गंगाके तटोंपर सूर्यके निमित्त अश्वकी बलि चढाई जाती थी ।

हेरोडाटस जो इतिहासका आदि निर्माता है उसने लिखा है कि, मध्य एशियाकी बडी जेटी जातिमें इस बातका विश्वास था कि, जो जीव सृष्टिमें उत्पन्न हुए जीवोंमें सबसे अधिक चलता है वह सृष्टिक्रमसे रहित पदार्थमें जो सबसे अधिक शीघ्रगामी है उसकी भेंट किया जाय, उनका यह अनुमान उचित था, शीतकालकी संक्रांतिपर स्कैंडिनेवियांवालों तथा जेहून नदीके किनारे पर निवास करनेवाली अश्व और जेटी जातियोंका यह सूर्य सम्बन्धी त्यौहार शीतकालकी संक्रांति पर होता था, जिस प्रकार संक्रांत का त्योहार राजपूत तथा हिन्दूजातिमें होता है ।

संस्कृत तथा उससे निकली भाषाओंमें घोडेको ही हय हयवर और अश्व कहते हैं गाथिकमें उसका नाम हार्ा, टयूटानिकमें हार्स और सैक्सनमें हार्स है ।

वाल्टिक सागरके किनारे रहनेवाली जर्मन जातियोंको बृहत् उत्सव पूर्व लिखित हीउल वा हिएल था, और गंगाकिनारे पर निवास करनेवाली सूर्यकी सन्तानोंको अश्वमेध बडा उत्सव था ।

अश्वमेधमें * बहुतही व्यय होता है, और भयके कारण इस समयके राजा उसे नहीं कर सकते इसके द्वारा जो भयंकर परिणाम हुए हैं भारतीय इतिहासके प्रारम्भसे अंतिम राजा पृथिवीराजतक इसके बहुत उदाहरण हमारे पास हैं रामायण महाभारत और चन्द-

---

* प्राचीन समयमें भारतमें भी बलदेवके लिये जो बलनाथ है यही बलि उनको दी जाती थी, अर्थात सूर्यको सांडका बलिदान अच्छी तरहसे लिखा हुआ है बालिनके अनेक मंदिर राजस्थानमें विद्यमान हैं, और सौराष्ट्रमें कई एक बलपुर [महादेवके] मन्दिर हैं, यह सबही सूर्यके रूप हैं बलहीके नामपर सुलेमानका मंदिर बना था, हिन्दूधर्मके स्थूल विश्वासोंको उस समयके सब ही मूर्ति पूजक मानते थे, ऐसा पाया जाता है [बलदेवकेनिमित्त किसी भी पशु आदिकी बलिनहीं दीजाती थी, नहीं मालूम टाड साहबने यह बात कहांसे लिखी न सांडकी बलिका लेख है।] (अनुवादक)

* अश्व [मेध--मारना] इस शब्दसे वाजस्वके पुत्रोंसे उत्पन्न पुरानी जातियोंके नामोंकी उत्पत्ति हमको प्राप्त होती है, जिनका सिन्धुनदीके दोनों किनारोंपर निवास था, और सम्भव है कि एशिया नामकी उत्पत्तिका कारण भी यही शब्द हो, सिकन्दरके इतिहास लिखनेवालोंने जिसको अरिअस्पी लिखा है, वह अश्वसेनी जाति, और अस्पासियानी, जिसकी शरणमें असीसिज सेलस

कविके महाकाव्यमें इस प्रभावशाली यज्ञ और उसके परिणामके उदाहरण विद्यमान हैं+.

वाल्मीकिरामायणमें अश्वमेधका वर्णन बडी उत्तमतासे किया है रामचन्द्रके पिता महाराज दशरथने यज्ञके निमित्त इस प्रकारकी आज्ञा दी थी यज्ञका सामान इकट्ठा करके सरयूके * उत्तर किनारेपर यज्ञभूमि विधानकी जाय।

जब वर्षदिन बीत गया और समस्त देशोंमें घूमकर घोडा लौट आया तब जहांसे वह छोडा गया था वहाँ यज्ञभूमि निर्माण की गई + केकय, काशीके राजा अंगदेश तिब्बत वा आवा के राजा लोमपाद, मगधदेशके कोशल और सिन्धुदेश सौवीर (जिस का पता मैं नहीं जानता) और सौराष्ट्र (काठियावाडका प्रायद्वीप) देशके राजाओंके बुलानेको निमन्त्रण भेजागया।

यज्ञस्तम्भ खडे हो चुकनेके उपरान्त यज्ञ आरम्भ हुआ, इसमें एक रीति जिसे यूप चर्य्या कहते हैं उसका वर्णन इस प्रकार किया है।

केसके पाससे पलायन करके गया था, और ट्रैबोंने जिसको एक जेटीजाति लिखा है, यह सब एकही मूलकारणसे निकली हैं, इस कारण असिगढ अर्थात् असिलोगोंका गढ जिसको भ्रमसे हांसी कहा जाता है, और असगर्ड स्कैंडिनेवियामें जेटी जातियें जो असीलोगोंकी थीं यहां निवास करती थीं। मिलटनने जिससे अपना भूगोल लिया है उस मार्कोपोलोके लिखनेके अनुसार सिकन्दरने इन सब जेटीजातिवालोंकी वश्यतासूचक सेवा (नगरोंकी माता) बलख नगरमें स्वीकार की थी, जिस स्थान पर मेरे कैथियन खानकी राजगद्दी थी, जो मेरे शिलालेखका जिटकैथीजहै। मेधका अर्थ मारना नहीं है किन्तु पवित्रता और बुद्धिका है (सम्पादक)

+ आमेरके प्रसिद्ध राजा सवाई जयसिंहने पिछला अश्वमेध किया था, परन्तु मुझे विश्वास है कि उस समय दुग्धवर्णके समान श्वेत घोडा नहीं छोडा गया था नहीं तो राठौर अवश्ययुद्ध करते (घोडेके बिना अश्वमेध कैसा (अनुवादक)

* यह सरयू (गण्डक) कमायूंके पर्वतोंसे निकलकर कोशलदेशमें बहती है घोडेका एक वर्षमें लौटकर आना, सूर्यका क्रान्तिमण्डलमें लौटकर एक वर्षमें आनेकी ज्योतिषकी गतिको प्रगट करता है, जिस समय सूर्य दक्षिणायनसे लौटता है उस समय सीथियन और स्कैण्डिनेवियाके निवासी बडा उत्सव करते थे, इसमें गिबनने यह लिखा है कि जब उत्तरीय शीतल पवन चलती होगी, तब वे अपने उस बडे रहनेके स्थानको नरकसे भी अधिक कष्टकर मानते होंगे, इस देवताके निमित्त दक्षिणकी ओरको वह दृष्टि दिये रहते होंगे, इसीसे धर्मानुसार राजपूत गण अपने घरका दर्वाजा उत्तरको ओर रखते हैं।

१ अश्वमेधका घोडा लक्षण देखकर चुना जाता है, छोडनेके समय उसकी भलीभांति रक्षा की जाती थी, वह अपनी इच्छानुसार विचरता है, इसका यह प्रयोजन है जो युद्ध करना चाहे वह घोडेको पकडे, युधिष्ठिरके अश्वमेधसम्बन्धी घोडेका रक्षक अर्जुन हुआ था, जब परीक्षितने अश्वमेधसम्बन्धी घोडा छोडा था उसे उत्तरके तक्षकलोगोंने पकडा था यही दशा दशरथके पिता सागरके अश्वकी हुई इसीके कारण उनका राज्य गया, सगर दशरथके पिता नहीं किन्तु दशरथसे कितनी ही पीढी पहलेके पुरुष थे (अनुवादक)

× डाक्टर कैरे जिन्होंने रामयणका अनुवाद किया है वह केकयको ईरानका राजा मानते हैं, दारासे कैदंश पहले हुआ था, यह उपाधि हिन्दुओंके एक देशसे मिलती है, यह मुझे स्मरण है कि वह जयपुर राज्यके अन्तर्गत अभयनेरके पुराने खंडहरोंसे सम्बन्ध रखता है जिसमें कैकम्बकी बेटीके साथ एक राजाके विवाहका वर्णन है यथा—"तू बेटीकैकम्बकी, नाम परमला होय"।

अर्थात् तू कैकम्बकी कन्या और तेरा नाम परमिला है, ईरान राजवंशकी कैनामक उपाधि थी, इस प्रमाणसे यूनानियोंका काम्बसस कैम्बिसेज नहीं होसकता।

इक्कीस स्तम्भ अठपहलू खडे किये गये जो इक्कीस २ फुट ऊँचे थे, और जिनका व्यास चार फुट था, उनके शिखरपर मनुष्य हस्ती वा बलीवर्दकी मूर्ति बनी हुई थीं, वे यज्ञसम्बन्धी भिन्न २ प्रकारके काष्ठके बनाये गये और उनपर सुवर्णके पत्तर मढे हुए थे, उनपर जरीकलाबत्तूके काम हुए कपडे लपेटे गये, उनपर फूलोंकी तोरण बन्दनवार लटकाई गई, जिस समय वे यज्ञस्तम्भ खडे किये गये उस समय यज्ञके आचार्य होतासे आज्ञा पाकर अध्वर्यु मंत्रोंको उच्चारण करने लगे।

गरुडके आकारवाले यज्ञकुण्ड तीन पंक्तियोंमें निर्माण किये गये थे, और इनकी संख्या अठारह थी, इन्हीं कुंडोंके समीप पक्षी जलजन्तु और घोडा यह बलिके निमित्त रक्खे गये थे।

महारानी कौसल्याने तीन बार इस अश्वको यज्ञकुण्डकी प्रदक्षिणा कराई और जिस समय ब्राह्मण मंत्रोच्चारण कर प्रसन्नतासे कोलाहल करने लगे उस समय उसका बलिदान * किया गया, ।

उस समय मुख्य ऋत्विजने महाराज और महारानीको अश्वके समीप बैठाया, वहां वे पक्षियों का निरीक्षण करते हुए सब रात बैठे रहे, पुरोहितने शास्त्रानुसार जीवोंके हृदय निकालकर तैयार किये जिस समय उन हृदयोंका हवन किया गया महाराजने उनकी सुगंध ली, और जिस क्रमसे अपराध किये थे उसी क्रमसे महाराजने उनको स्वीकार किया।

उस समय यज्ञ करानेवाले ९६ ऋत्विज शास्त्रानुसार घोडेके अवयवोंको अग्नि में हवन करने लगे, इनमें घोडेका हव्य बेतके शरवेसे, और शेषजीवोंका हव्य लकडीके शरवेसे किया गया।

जिस समय यज्ञ पूर्ण हुआ, तब भविष्यद्वक्ताओंको पृथिवी दान की गई, उनमें जो पवित्र पुरुष ब्राह्मण थे, उन्होंने केवल सुवर्णदान स्वीकार किया, इस कारण उनको एक करोड जाम्बुनद × दिये गये।

---

१ पाषाणनिर्मित यज्ञस्तम्भ बहुत पुराने समयके मैंने देखे हैं, बहुत काल हुआ जब कि राजपूत राज्योंमें मरहटे उत्पात मचा रहे थे, सूरतके एक बडे धनी त्रिवेदी उपाधिवाले एक बडे योग्य पुरुषने जिसे राम और कृष्णके वंशवालोंको उनके हाथसे दुःखी होता देखकर बडी करुणा हुई था, आंखोंमें आंसू भरकर मुझसे कहा, कि मेरी समझमें जयपुर राज्यकी आपत्तियोंका कारण यह विदित होता है, कि यज्ञस्तम्भोंके सुवर्णपत्र उखडवाकर वहांके राजा जगतसिंहने अपने खजानेमें भिजवाकर महापाप किया है, रहोंवासके कुकर्मसे भी यह कर्म गर्हित समझा गया, जिसने सुलेमानकी निर्माण कराई हुई सोनेकी ढालोंको खजानेमें पहुंचाकर उनके स्थानमें मंदिरमें पीतलकी ढालें रखा दी थीं, जिस समय उनके सिक्के ढाले गये, और लडाईके व्ययके निर्वाहार्थ मरहटोंके पास भेजे गये वा उससे भी अधिक निकृष्ट कार्य अर्थात् रसकपूर नामक पासवानके निमित्त लगाये गये जैसी इस राजाकी मूर्खताकी कार्यवाही होती थी वैसी ही यह भी इस राजाकी मूर्खताकी कार्यवाही थी, यह स्तंभ जयसिंहके निर्माण किये हुए थे, और अपने देशका गौरव बढाया था, यह इसका दूसरा संस्थापक था और उसके राजत्व समयमें उसकी उन्नति हुई थी अब उसकी अवनति हुई।

* नये वर्षके उत्सवमें मुगलबादशाह अपने हाथसे ऊंटका वध करते हैं वह मर्जीदानोंमें विभक्त कर दिया जाता है और वे उसे भक्षण कर जाते हैं।

× यह एक प्रकारका देशी सोना होता है, जिसका रंग चमकदार श्यामता लिये हुए होता है, जिसकी उपमा जम्बूफल (जामन) (जो डिम्सनामक बेरसे मिलता हुआ है) से दी जाती है हिन्दु-

इस प्रकार यह सबसे पुरातन और अधिक प्रभावशाली अश्वमेधका वृत्तान्त मूर्ति-पूजकोंके यहां विस्तार पूर्वक लिखा हुआ है दूसरी जातियोंमें भी जो इसी प्रकारकी रीतियें हैं उनमेंकी रीतियोंमें इश्वरके निर्णीत लोगोंसे आरंभ करके रोमके ऑरसेक्स अनुष्योंतक, और कैथलिकधर्मकी पापस्वीकारकी रीतियोंके मध्यमें समानता दिखानेकी आवश्यकता नहीं है ।

शीतकालमें ही संक्रान्ति* वा शिवरात्रि पडती है इसी समयमें सूर्य वा वालिनाथके निमित्त अश्वका बलिदान किया जाता था ।

सबसे बडी रातको स्कैंडिनेवियावाले रात्रिमाता × पुकारते थे तथा उनका सिद्धान्त यह था कि इसी रातमें संसार उत्पन्न हुआ है, इसी कारणसे बलटानी अर्थात् बलबाविलनसकी ज्वाला, उत्तरमें निवास करनेवाली जातियोंका हियुल और अश्वमेध वा सूर्यकी पूजाके यज्ञकुण्डकी अग्नि है, सूर्यवंशकी गंगाके तटपर, सोरायन और सोरामैटी लोग भूमध्यसमुद्रके तटपर जिसकी पूजा करते थे ।

फिनीसियावाले हलिओपोलिश बालबेक* वा टाडमोरकी + वेदियाँ उसी देवताके निमित्त पवित्र थीं, सरयूके किनारे वा सौराष्ट्रदेशके अन्तर्गत जिसकी वेदियें वलपुरमें विद्यमान थीं जिनके कुण्डोंमेंसे शत्रुओंके विजय करनेके निमित्त उनके ले जानेको सूर्यके घोडे निकलते थे ।

केलटिक ड्रुइड लोगोंके शिक्षकोंका सोरियोंसे आगमन हुआ था इनके यहां मनुष्योंका बलिदान होता था, जिन्होंने बेलनसके नामपर कैम्ब्रिया और कैलीडोनियाके पर्वतोंके ऊपर स्तम्भ खडे किये थे ।

जिस समय परमेश्वरकी दृष्टिमें जूडह पापी ठहरा तब उसने प्रत्येक ऊंचे पर्वतोंपर प्रत्येक वृक्षके नीचे ऊंचे२ चौंतरे मूर्ति और बगीचे बनाये जो बलिके निमित्त थे और स्तम्भ भी अनेकप्रकारके निर्माण किये जिससे यह रीति निकली हुई विदित होती है ।

इस प्रकारके मिलान करनेसे सहजसे ही यह बात सिद्ध हो जाती है कि सबका आदि मूल एकही पुरुष है और एकही जातिकी रीतियें रूपान्तरको प्राप्त हो गई हैं ।

ओंमें प्रायः सभी बातें रूपकके साथ लिखी जाती हैं, इसकी उत्पत्ति उस समय मानी है जब कि गंगाने अग्निदेवसे गर्भ धारण कर युद्धके देवता कुमारको उत्पन्न किया था, जो देवताओंके सेनापति हैं यह वृत्तान्त उस समयकाहै जब कि गंगाजीने अपने पिता हिमालय(जो सब खनिज पदार्थोंका भंडार है) को त्यागा इससे हमको बहुत ही प्राचीनकालका बोधहोता है, जब कि गंगाजीने अपने शिलामय मार्गको विदीर्ण कर अपनी कुक्षिसे बहुमूल्य धातुकी खान दिखाई थी, यह इसकीबहुत पुरातनता है।

* तिलके दाने और तिलके लड्डू जिनमें भरे रहते हैं ऐसे छोटे छोटे कीमखावके बटुए इस अवसरमें राजोंद्वारा मित्र मण्डलीमें बाँटे जाते हैं, मैं (टाड) इस ग्रन्थको जिस समय लिख रहा हूं सुवकमरहटा महाराज हुलकरके भेजे हुए ऐसे दो बटुए मेरे सामने धरे हैं ।

× कदाचित् पितृरात्रि शिवरात्रि हो जगत्पिता ही शिव कहाते हैं ।

* भारतके बादशाहोंके इतिहासलेखक फरिश्तेने इसे फारसी आरबी शब्दोंसे बना हुआ बताया है बल सूर्य–बेक मूर्ति ।

+ यह शब्द बिगडकर पालमाइरा हो गया मेरे विश्वासके अनुसार इसकी उत्पत्ति अबतक कभी नहीं दी गई हमारी समझमें यह टाडमोरका ही रूपान्तर है ताडका वृक्ष संस्कृतमें तालवृक्ष कहाता है, मोरका अर्थ मुख्य है, भारतमें एक नगर तालपुर वा ताडोंका नगर है. और सिन्धदेशके हैदराबादमें जो जाति शासन करती है, उसीसे उसका नामतालपूर है जहांसे उसका प्रथम आविष्कार हुआ है ।

परिशिष्ट सम्पूर्ण ।